॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

'जैनाचार्य'-जैनधर्मदिवाकर'-पूज्यश्री-घासीलालव्रति-विरचितया

भावबोधिन्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्—

श्री-समवायाङ्गसूत्रम् ॥

मङ्गलाचरणम् ।

स्याद्वादसार्वैश्च नयैः प्रमाणै-
जीवादिभावप्रतिबोधको यः ।
यः शोभतेऽनन्तचतुष्टयैश्च,
वन्दे मुनीन्द्र तमहं जिनेन्द्रम् ॥ १॥

कमलकोमलमञ्जुपदद्विकं
विमलबोधदबोधविबोधकम् ।
मुखसदरदोरकवस्त्रिकं,
गुरुवर प्रणमामि विशोधकम् ॥ २॥

समवायाङ्गसूत्र का हिन्दी अनुवाद प्रारंभ—

मंगलाचरण—

जिन जिनेन्द्रदेव ने स्याद्वादसिद्धान्त के सार्थभूत नयों और प्रमाणों से जीवादि पदार्थों के वास्तविक स्वरूप का प्रतिपादन कर उन्हें समझाया है और जो स्वयं अनंत चतुष्टयों से विराजमान हैं, ऐसे उन मुनीन्द्र जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूं ॥१॥

जिनके दोनों मनोहर चरण, कमल के जैसे कोमल हैं, विमलबोधि को प्रदान करने वाले बोध को जो जगाने वाले है, तथा मुख पर जिनके सदोरकमुखवस्त्रिका सदा शोभित होती रहती है तथा और जो अपनी और पर की आत्मा के विशोधक हैं ऐसे गुरुवर को मैं प्रणाम करता हूं ॥२॥

સમવાયાંગ સૂત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ પ્રારંભ—

મંગલાચરણ—

જે જિનેન્દ્ર દેવે સ્યાદ્વાદનાસિદ્ધાંતના સહાયક નયો અને પ્રમાણો દ્વારા જીવાદિ પદાર્થોના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરીને તેમને સમજાવ્યા છે, અને જે પોતે અનંત ચતુષ્ટયોથી વિરાજમાન છે, એવાં એ મુનીન્દ્ર જિનેન્દ્રને હું નમન કરું છું ॥૧॥

જેમના બન્ને મનોહર ચરણ, કમલ સમાન કોમળ છે, વિમલ જ્ઞાન અને બોધના જે દેનાર છે, જેના મુખ પર દોરા સહિત મુહપત્તી શોભે છે અને જે પોતાના તથા અન્યના આત્માના વિશોધક (શુદ્ધ કરનાર) છે, એવા ગુરુવરને હું પ્રણામ કરું છું ॥૨॥

कृतमस्माभिरतस्तज्जिज्ञासुभिस्तत्र द्रष्टव्यम्। जीवाजीवादिपदार्थसमुदायस्य संख्यानमस्मिन्नङ्गे प्रतिपाद्यतया वर्तते, अतएवास्य समवायाङ्गमिति संज्ञाऽन्वर्था भवति।

तत्र-किल श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य श्री वर्धमानस्वामिनः पञ्चमो गणधरः श्री सुधर्मास्वामी श्री जम्बूनामानं स्वान्तेवासिनं समवायाङ्गस्यार्थं विवक्षुः स्वधर्माचार्यस्य तस्य भगवतो महावीरस्य महिमानं प्रदर्शयन् केवलालोकमाक्षात्कृतलोकालोकस्वरूपस्य वीतरागस्य वचनमनुसृत्य प्रवृत्तस्य स्वकीयवचनस्य प्रामाण्यं श्रद्धयत्वं चापि समुद्भावयन्निदमाद्यं सूत्रमाह—

मूलम्—सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं ॥ सू. १॥

टीका-'आउसं' आयुष्मन्! हे चिरजीविन! जम्बूः!, आयुष्मन्निति पदं शिष्यस्य जम्बूस्वामिनः कोमलवचनामन्त्रणं विनयित्वबोधनार्थम्। किं च तस्याशेषश्रुतज्ञानो-

---

में मैंने किया है। अतः जिज्ञासु इस विषय को उसमें से जान सकते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि जीव अजीव आदि पदार्थ समूह की गणना इस अंग में प्रतिपाद्यरूप से करने में आई है, इसलिये इसकी समवाय यह संज्ञा सार्थक है।

श्रमण भगवान् महावीर श्री वर्धमान स्वामी के, पंचम गणधर श्री सुधर्मास्वामी, अपने शिष्य जंबूस्वामी के प्रति, समवायांग के अर्थ को कहने की इच्छा से, निज धर्माचार्य उन भगवान् महावीर की महिमा को दिखलाते हुए, अपने वचन में कि जो, केवलज्ञान रूप आलोक (प्रकाश) से लोक और अलोक के स्वरूप को साक्षात् करने वाले एसे वीतराग प्रभु के वचन के अनुसार ही प्रवृत्त हुए अपने वचन में प्रमाणता और श्रद्धयता प्रकट करने के अभिप्राय से इस प्रथम सूत्र को कहते हैं—'सुयं मे इत्यादि।

સ જીવની ટીકામા મેં કરેલ છે-તો જિજ્ઞાસુ તે વિષયને ત્યાથી જાણી શકે છે તાત્પર્ય એ જ છે કે આ અગમા જીવ, અજીવ આદિ પદાર્થસમૂહની ગણના પ્રતિપાદ્યરૂપે કરવામા આવી છે તેથી તેની 'સમવાય' એ સજ્ઞા સાર્થક છે

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના પાચમા ગણધર શ્રી, સુધર્માસ્વામી, પોતાના શિષ્ય જબૂસ્વામીને, સમવાયાગનો અર્થ સમજાવવાની ઈચ્છાથી, પોતાના ધર્માચાર્ય એવા તે મહાવીર પ્રભુનો મહિમા બતાવતા, કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી લોક અને અલોકનુ સ્વરૂપ પ્રત્યક્ષ જોઇ શકનારા વીતરાગ પ્રભુના વચનાનુસાર જ પ્રવૃત્ત થયેલ પોતાના વચનોમા પ્રમાણતા અને શ્રધ્ધેયતા દર્શાવવાના હેતુથી આ પ્રથમ સૂત્ર કહે ને—"सुय मे" ઇત્યાદિ।

समवायाङ्गसूत्रस्य, वृत्तिं सरलभाषया ।
घासीलालेन मुनिना, क्रियते भावबोधिनीं ॥ १॥

स्थानाङ्गतृतीयाङ्गानन्तरं समवायनामकमिदं चतुर्थमङ्गं क्रमप्राप्तमेवास्ति। अथ च समवायाङ्गशब्दार्थ उच्यते-सम्=सम्यक्, अव=स्वरूपमर्यादया, अय=अयनं-परिच्छेदः सम्यक् अवाः जीवाजीवादिपदार्थसमूहाः अयाः यत्र स समवायः । यद्वा -समवयन्ति संमिलन्ति जीवादयो भावा विषयतया-प्रतिपाद्यतया यत्र स समवायः इति । समवाय एवाङ्ग-समवायाङ्गम् । एतद् हि प्रवचनरूपस्य पुरुषस्य चामत्कारस्थानीयं भवति । प्रवचनाङ्गानां सविस्तरवर्णनमुपासकदशाङ्गसूत्रव्याख्यायां

मैं मुनि घासीलाल समवायांग सूत्र के ऊपर सरल भाषा में भाव बोधिनी नामकी वृत्ति रचता हूँ ॥१॥

स्थानाङ्ग नामक तृतीय अंग के अनन्तर समवायांग नाम का यह चौथा अंग क्रमप्राप्त है। इस समवायांग शब्द का वाच्यार्थ क्या है? इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है समवाय पद में सम्' 'अव' 'अय' ऐसे ये तीन शब्द हैं सो 'सम्' का अर्थ सम्यक् 'अव' का अर्थ स्वरूप मर्यादा और 'अय' का अर्थ परिच्छेद-संख्या है। इससे यह तात्पर्य निकलता है कि इस शास्त्र में जीव अजीव आदि पदार्थ समूह की अच्छी तरह से उन के स्वरूप प्रदर्शन पूर्वक संख्या-गणना की गई है। अथवा जीवादिक पदार्थों का इसमें प्रतिपादन किया गया है। इसलिये प्रतिपाद्य रूप से वे सब इसमें एकत्रित हुए हैं। यह समवायरूप अंग प्रवचनरूप पुरुष की चामत्कारिता के स्थानापन्न है। प्रवचनरूप पुरुष के समस्त अंगों का सविस्तरवर्णन उपासकदशांग सूत्र की अगारधर्म संजीवनी टीका

---

१ मुनि घासीलाल " समवायांग सूत्र " उपर सरल भाषामां "भावबोधिनी" नामनी वृत्ति-टीका रचे छे ॥१॥

अनुक्रमे चोथा, स्थानांग नामना त्रीजा अंग पछी समवायांग नामनु आ चोथु अंग आवे छे. अ समवायांग शब्दनो वाच्यार्थ शो छे ? आ प्रश्ननो उत्तर आ प्रमाणे छे—

समवाय पदमा सम्' 'अव' अने 'अय' एवा त्रण शब्दो छे 'सम्' नो अर्थ सम्यक् 'अव' नो अर्थ स्वरूपमर्यादा अने 'अय' नो अर्थ परिच्छेद-संख्या छे तेनो भावार्थ एवो छे के आ शास्त्रमां जीव, अजीव आदि पदार्थसमूहनी सारी रीते, तेमना स्वरूप प्रदर्शन पूर्वक संख्या-गणना करवामां आवेल छे अथवा आ शास्त्रमां जीवादि पदार्थनु प्रतिपादन करायु छे तेथी ते सौ प्रतिपाद्य रूपे आमां एकत्रित थया छे आ समवायरूप अंग प्रवचन रूप पुरुषनी शोभा वधारवा जेवु छे प्रवचन रूप पुरुषनां समस्त अंगोनु सविस्तरवर्णन उपासक दशांग सूत्रनी अगारधर्म

श्रुतवचनश्रवणं च नोपपद्यते । भगवया भगवता=भग.-ज्ञान सकलपदार्थविषयकम् (१), माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसम्पन्नत्वम् (२), यशः-विविधानुकूलप्रतिकूलपरीषहोपसर्गसहनसमुद्भूता जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था वा कीर्तिः (३) वैराग्यं=सर्वथा कामभोगाभिलाषपराङ्मुखत्वम्, यद्वा- क्रोधादिकषायनिग्रहलक्षणम् (४), मुक्ति -सकलकर्मक्षयलक्षणो मोक्षः (५), रूपं-सुरासुरनरनिकरहृदयहारि सौन्दर्यम् (६), वीर्यम्-अन्तरायान्तजन्यमनन्तसामर्थ्यम् (७), श्रीः-घनघातिकर्मपटलविघटनसमुद्भूतानन्तचतुष्टयलक्ष्मीः (८), धर्मः अपवर्गद्वारकपाटोद्घाटनसाधनं श्रुतचारित्रलक्षणम्

से यह बात अपने आप लभ्य हो जाती है कि मैंने गुरु के समीप निवास किया है। क्यों कि गुरु के पासमें निवास किये विना उनके चरणकमलों का स्पर्शपूर्वक अभिवादन करना और उनके मुखारविन्द से निकले हुए वचनो का सुनना बन नहीं सकता है। 'भगवान्' पद में जो भग शब्द है उसके दश अर्थ हैं उनसे युक्त को भगवान् कहते हैं जैसे -ज्ञान-सकल पदार्थो को विषय करने वाले ज्ञान से१, माहात्म्य-अनुपम महनीय महिमा से२, यश-विविध अनुकूल एवं प्रतिकूल परीषह और उपसर्गों को सहन करने से उत्पन्न हुई कीर्ति से, अथवा जगत् को रक्षण करने वाली प्रज्ञा से उत्पन्न हुई कीर्त्ति से३, वैराग्य-सर्वथा कामभोगों की अभिलाषा के त्याग से, अथवा क्रोधादिकषायों के निग्रह से४, मुक्ति-सकलकर्मक्षयरूप मुक्ति से५, रूप-सुर और असुरों के हृदय को हरण करने वाले सौन्दर्य से६, वीर्य-अन्तरायकर्म के अन्त होने से जनित अनन्त शक्ति से७, श्री-घनघातिक कर्मों के सर्वथा क्षय से जन्य अनन्तचतुष्टयरूप अन्तरंग लक्ष्मी से८ धर्म-मोक्ष के कपाट को उद्घाटन करने में साधन भूत

છે ગુરુના પાસે નિવાસ કર્યા વિના, તેમના ચરણકમલના સ્પર્શપૂર્વકનુ અભિવાદન અને તેમના મુખારવિંદમાથી નિકળતા વચનોનુ શ્રવણ શકય બનતું નથી "भगवान्" પદમા જે 'भग' શબ્દ છે તેના દસ અર્થ છે,તે અર્થથી જે યુકત હોય તે ભગવાન્ કહેવાય છે તે દસ અર્થ નીચે પ્રમાણે છે [૧] જ્ઞાન-સઘળા પદાર્થોને વિષય કરનાર જ્ઞાન. [૨] "माहात्म्य"-અનુપમ મહનીય મહિમા [૩] યશ-વિવિધ અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ પરીષહ અને ઉપસર્ગો સહન કરવાથી પ્રાપ્ત થયેલી કીર્તિ અથવા જગતનુ રક્ષણ કરનાર પ્રજ્ઞાથી ઉત્પન્ન થયેલી કીર્તિ [૪] "वैराग्य"-સર્વદા કામભોગોની ઇચ્છાનો ત્યાગ અથવા ક્રોધાદિ કષાયોનો નિગ્રહ [૫] "मुक्ति"-સકલ કર્મોના ક્ષયરૂપ મુક્તિ (૬) રૂપ-સુર અસુરોના હૃદયને હરનાર સૌન્દર્ય (૭) વીર્ય-અન્તરાય કર્મનો નાશ થવાથી પેદા થયેલ અનન્ત શક્તિ (૮) શ્રી ઘનઘાતિક-કર્મોનો તદ્દન ક્ષય થવાથી પેદા થયેલ અનન્ત ચતુષ્ટયરૂપ અંતરંગ લક્ષ્મી (૯) ધર્મ-મોક્ષના દરવાજાના કમાડ

पदेशश्रवण-ग्रहणधारण-रत्नत्रयाराधन-मोक्षसाधनयोग्यतासम्पादनमित्यर्थः । विनाऽऽयुषा श्रुतश्रवणादिमोक्षपर्यन्तसिद्धिर्न कस्यचित् संभवतीति भावः । एतद्वचनप्रभावादेव जम्बूस्वामी मोक्षपदं तस्मिन्नेव जन्मनि प्राप । श्रुतं=श्रवणविषयीकृतं, 'मे' मया, साक्षाद्भगवन्मुखात् नतु परम्परया, यतो गणधराणामनन्तरागमो भवति । 'मयाश्रुतम्' इत्यनेन 'गुरुसमीपे निवसता मया' इत्यर्थः सूचितो भवति । गुरुसमीपे निवासप्रकारश्चैवं हि गुरुचरणसरोजस्पर्शपूर्वकाभिवादनं तत्सुखारविन्दविनि

टीकार्थ-(आउसं) हे चिरजीविन् जम्बू ! (मे) मैंने (सुयं) सुना है (तेणं भगवया एवमक्खायं) उन भगवान ने ऐसा कहा है। सूत्र में "आउसं" यह पद शिष्य जंबूस्वामी को कोमलवचन से आमन्त्रण करने के लिये प्रयुक्त किया गया है जो उनमें विनीतता प्रकट करता है। "आयुष्मन्" इस संबोधन पद से जो सुधर्मास्वामीने अपने अन्तेवासी जंबूस्वामी को संबोधित किया है उससे यह उनकी इच्छा उनके प्रति जाहिर होती है कि वे अशेष श्रुतज्ञान के उपदेश को श्रवण करने की, उसे ग्रहण करने की, धारण करने की रत्नत्रयको आराधन करने की और मोक्ष के साधने की योग्यता प्राप्त कर लेवें। क्यों कि विना आयु के श्रुतश्रवणादि से लेकर मोक्षपर्यन्त की सिद्धि किसी भी जीव को संभवित नहिं होती है। इस वचन के प्रभावसे ही जम्बूस्वामी ने मोक्षपद उसी भव में प्राप्त कर लिया। "मैंने सुना है" इस वाक्य का तात्पर्य ऐसा है कि मैंने जो सुना है वह साक्षात भगवान् के मुखसे ही सुना है परंपरा से नहीं, कारण गणधरों का आगम अनन्तर आगम होता है। मैंने सुना है" इस तरह के कथन

ટીકાર્થ-"आउसं" હે દીર્ઘાયુ જંબૂ ! "मे सुयं" મેં સાંભળ્યું છે "तेणं भगवया एवमक्खायं" તે ભગવાને આ પ્રમાણે કહ્યું છે સૂત્રમાં "आउस" શિષ્ય જંબૂસ્વામીને મૃદુવચનોથી સંબોધવાને વપરાયું છે, જે તેમની નમ્રતા દર્શાવે છે "आयुष्मन्" આ સંબોધનથી સુધર્મા સ્વામીએ પોતાના અંતેવાસી જંબૂસ્વામીને સંબોધ્યા છે, તેથી તેમની એ ઇચ્છા પ્રગટ થાય છે કે તેઓ સમસ્ત શ્રુતજ્ઞાનના ઉપદેશને સાંભળવાની, તેને ગ્રહણ કરવાની, ધારણ કરવાની, રત્નત્રયનું આરાધન કરવાની અને મોક્ષ સાધવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરે આયુષ્ય વિના શ્રુતશ્રવણ આદિથી લઈને મોક્ષ સુધીની પ્રાપ્તિ કોઇ પણ જીવને માટે શક્ય નથી. આ વચનને પ્રભાવે જ જંબૂસ્વામીએ એજ ભવમાં મોક્ષપદ પ્રાપ્ત કરી લીધું "મે સાંભળ્યું છે" આ વાક્યનો તાત્પર્ય એ છે કે મે જે સાંભળ્યું છે તે પ્રત્યક્ષ ભગવાનને મુખે સાંભળ્યું છે પરંપરાથી નહીં કારણકે ગણધરોના આગમ ત્યારપછીના આગમ હોય છે "મે સાંભળ્યું છે" આ પ્રકારના કથનથી એ વાત આપોઆપ સમજાય છે કે મે ગુરુની પાસે નિવાસ કર્યો

श्रुतवचनश्रवणं च नोपपद्यते । भगवया भगवता=भग.–ज्ञानं सकलपदार्थविषयकम् (१), माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसम्पन्नत्वम् (२), यशः–विविधानुकूलप्रतिकूलपरीषहोपसर्गसहनसमुद्भूता जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था वा कीर्तिः (३) वैराग्यं=सर्वथा कामभोगाभिलाषराहित्यम्, यद्वा- क्रोधादिकषायनिग्रहलक्षणम् (४), मुक्ति – सकलकर्मक्षयलक्षणो मोक्षः (५), रूपं–सुरासुरनरनिकरहृदयहारि सौन्दर्यम् (६), वीर्यम्–अन्तरायान्तजन्यमनन्तसामर्थ्यम् (७), श्रीः–घनघातिकर्मपटलविघटननिर्तानन्तचतुष्टयलक्ष्मीः (८), धर्मः अपवर्गद्वारकपाटोद्घाटनसाधनं श्रुतचारित्रलक्षणम्

से यह बात अपने आप लभ्य हो जाती है कि मैंने गुरु के समीप निवास किया है। क्यों कि गुरु के पासमें निवास किये विना उनके चरणकमलों का स्पर्शपूर्वक अभिवादन करना और उनके मुखारविन्द से निकले हुए वचनों का सुनना बन नहीं सकता है। 'भगवान्' पद में जो भग शब्द है उसके दश अर्थ हैं उनसे युक्त को भगवान कहते हैं जैसे –ज्ञान–सकल पदार्थों को विषय करने वाले ज्ञान से१, माहात्म्य–अनुपम महनीय महिमा से२, यश-विविध अनुकूल एवं प्रतिकूल परीषह और उपसर्गों को सहन करने से उत्पन्न हुई कीर्ति से, अथवा जगत् को रक्षण करने वाली प्रज्ञा से उत्पन्न हुई कीर्त्ति से३, वैराग्य–सर्वथा कामभोगों की अभिलाषा के त्याग से, अथवा क्रोधादिकषायों के निग्रह से४, मुक्ति–सकलकर्मक्षयरूप मुक्ति से५, रूप–सुर और असुरों के हृदय को हरण करने वाले सौन्दर्य से६, वीर्य–अन्तरायकर्म के अन्त होने से जनित अनन्त शक्ति से७, श्री-घनघातिक कर्मों के सर्वथा क्षय से जन्य अनन्तचतुष्टयरूप अन्तरंग लक्ष्मी से८ धर्म–मोक्ष के कपाट को उद्घाटन करने में साधन भूत

છે ગુરુના પાસે નિવાસ કર્યા વિના, તેમના ચરણકમલના સ્પર્શ પૂર્વકનુ અભિવાદન અને તેમના મુખારવિંદમાથી નિકળતા વચનોનુ શ્રવણ શકય બનતું નથી "भगवान्" પદમા જે 'भग' શબ્દ છે તેના દસ અર્થ છે,તે અર્થોથી જે યુકત હોય તે ભગવાન્ કહેવાય છે તે દસ અર્થ નીચે પ્રમાણે છે [૧] જ્ઞાન–સઘળા પદાર્થોને વિષય કરનાર જ્ઞાન. [૨] "माहात्म्य"–અનુપમ મહનીય મહિમા [૩] યશ–વિવિધ અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ પરીષહ અને ઉપસર્ગો સહન કરવાથી પ્રાપ્ત થયેલી કીર્તિ અથવા જગતનુ રક્ષણ કરનાર પ્રજ્ઞાથી ઉત્પન્ન થયેલી કીર્તિ [૪] "વૈરાગ્ય"–સર્વદા કામભોગોની ઇચ્છાનો ત્યાગ અથવા ક્રોધાદિ કષાયોનો નિગ્રહ [૫] "મુક્તિ"–સકલ કર્મોના ક્ષયરૂપ મુક્તિ (૬) રૂપ–સુર અસુરોના હૃદયને હરનાર સૌંદર્ય (૭) વીર્ય–અન્તરાય કર્મનો નાશ થવાથી પેદા થયેલ અનંત શકિત (૮) શ્રી ઘનઘાતિક–કર્મોનો તદ્દન ક્ષય થવાથી પેદા થયેલ અનંત ચતુષ્ટયરૂપ અંતરંગ લક્ષ્મી (૯) ધર્મ–મોક્ષના દરવાજાના કમાડ

(१०) ऐश्वर्य-त्रैलोक्याधिपत्यं यास्यास्तीति भगवान् (१०), तेन भगवता-ज्ञानादिगुणेन, 'तत्थ' तत्र तीर्थंकरेण वक्ष्यमाणार्थस्य तीर्थंकरभाषितत्वात् तस्य कत्तार तीर्थंकर परामर्शः। उक्तं च—

'अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा॥" इत्यादि,

भगवतार्थरूपतया दृष्टमर्थस्वरूपमागमस्वरूपतया गणधरानुपकल्पमागम निबध्नतामागमः।

'तत्थ" तत्र वक्ष्यमाणप्रकारेण, 'भरसार्थं' आख्यातं कथितं द्वादशपरिषत्सु। भगवतीर्थंकरत्वविशेषणेनार्थस्यातिशयानुगुण्य वक्ष्यमाणं दर्शयति यदित्यादीति

श्रुतधर्मादिरूप अग स०, पञ्चक-तीन लोक के आधिपत्य से १० जो युक्त होता है वह भगवान कहे जाते हैं। तात्पर्य यह है कि भग शब्द के ये जो ज्ञानादिरूप छह अर्थ ऊपर कहे गये हैं, भगवान उन समस्त अर्थों से संयुक्त होता है। "तेणं" यह पद भगवान का विशेषण है जो इस बात को बतलाता है कि ये भगवान तीर्थंकर थे। जो भी विषय इस शास्त्र में कहा जायगा वह उन तीर्थंकर प्रभु-भगवान द्वारा भाषित ही कहा जायगा कहा भी है-"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा" इति। अर्थात्-सर्व प्रथम अर्हंत प्रभु ही अर्थरूप आगम की प्ररूपणा करते हैं और बाद में निपुण गणधर उस अर्थ को सूत्र रूप में आगमरूप में-ग्रथित करते हैं। भगवान ने क्या कहा? यह कहते हैं-भगवान ने इस रूप से-वक्ष्यमाण प्रकार से-बारह प्रकार की परिषद् में कहा है अतः उन भगवत् तीर्थंकर कथित अर्थ के अनुसार ही मैं वक्ष्यमाण-आगे कहे

ભોક્તવાના શાશ્વતરૂપ શ્રુતધર્માદિરૂપ ધર્મ આપ (૧૦) ઐશ્વર્ય એટલે ત્રૈલોક્ય અધિપત્ય આ રીતે જ્ઞાન આદિ છએ ગુણોવાળા જે યુક્ત હોય છે તેમને ભગવાન કહેવામાં આવે છે. તેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે 'ભગ' શબ્દના આ જે જ્ઞાનાદિરૂપ છએ અર્થ બતાવ્યા છે, આ અર્થોથી ભગવાન યુક્ત હોય છે 'તેણં' આ પદ ભગવાનનું વિશેષણ છે જે એ વાત બતાવે છે કે ભગવત્તીર્થંકર કહેવાનો જે કોઈ વિષય આ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવ્યો તે વિષય તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા ભાષિત હોય એટલે કહ્યું પણ છે-"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा" અર્થાત્ કે તીર્થંકર પ્રભુ જ અર્થરૂપ આગમની પ્રરૂપણા કરે છે, અને ત્યાર બાદ નિપુણ ગણધરો તે અર્થને સૂત્ર-સૂત્રરૂપે-ગ્રથિત કરે છે ભગવાને શું કહ્યું છે? આ પ્રશ્નના ઉત્તરરૂપે તેઓ કહે છે કે ભગવાન આ પ્રમાણે-નીચે કહેવામાં આવનારી પ્રમાણે-બાર પ્રકારની પરિષદોમાં કહેલ છે તો તે તીર્થંકર ભગવાને કહેલ અર્થ પ્રમાણે જ હું આગમ લખવામાં આવતા અર્થ

वाक्यार्थः। आगमोक्तार्थस्य काल्पनिकत्वाभावाद् द्रव्यार्थिकनयेनार्थरूपोऽयमागमोऽनादिरिति भावः।

एषा परम्परा परिपाटी वरीवर्ति सर्वेषा गणधराणाम्-यद् विनीतैः स्वस्वान्तेवासिभिर्मोक्षमार्गं सविनय पृष्टा गणधराः 'सुयं मे' इति वाक्य प्रथम वदन्ति। उक्तं च—

निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितै-
र्विमलभावयुतैः परिसेवितैः।
गणधरैरखिलैः प्रथम वचः,
खलु 'सुयं म' इति प्रतिभाषितम् ॥सू० १॥

जाने वाला अर्थ कहूंगा। आगमोक्त अर्थ कल्पित नहीं होता है। वह तो तीर्थंकर परंपरा से जैसा भाषित होता हुआ चला आता है वैसा ही गणधर आदि द्वारा प्रकाशित किया जाता है-वे अपनी ओर से उस में कुछ भी परिवर्द्धन या परिवर्तन नहीं करते हैं। इसीलिये आगमोक्त अर्थ में काल्पनिकत्व का अभाव होने से वह अर्थरूप आगम द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से अनादि माना जाता है। समस्त गणधरों की परंपरा से ऐसी ही परिपाटी चली जाती है कि जब विनीत अपने २ शिष्य उनसे मोक्षमार्ग को विनय के साथ पूछते हैं-तब वे उनसे सर्व प्रथम "सुय मे" इस प्रकार से कहते हैं! कहाभी है—

"निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितैः विमलभावयुतैः परिसेवितैः।
गणधरैरखिलैः प्रथम वचः-खलु 'सुय म' इति प्रतिभाषितम्" ॥१॥

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा पंचम गणधर श्री सुधर्मास्वामी अपने

કહીશ. આગમોક્ત અર્થ કલ્પના જેવો નથી. તે તો તીર્થંકર પરંપરાથી જે પ્રમાણે કહેવાતો આવે છે એજ પ્રમાણે ગણધર આદિ દ્વારા પ્રકાશિત કરવામા આવે છે-તેઓ પોતાનું કઇ પણ તેમા ઉમેરતા નથી કે તેમા કઈ પણ પરિવર્તન કરતા નથી તેથી આગમોકત અર્થમા કાલ્પનિકપણાનો અભાવ હોવાથી તે અર્થરૂપ આગમ દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ અનાદિ મનાય છે સમસ્ત ગણધરોની પરંપરાથી એવી રૂઢિ ચલી આવે છે કે જ્યારે તેમના પોત પોતાના શિષ્યો તેમને મોક્ષ માર્ગ વિષે વિનયથી પૂછે ત્યારે તેઓ સૌથી પહેલા તેમને "सुयं मे" (મે તીર્થંકર પ્રભુ પાસે સાભળ્યુ છે એ રીતે તેમના જવાબની શરૂઆત કરે છે કહ્યુ પણ છે—

"निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितैः, विमलभावयुतैः परिसेवितैः
गणधरैरखिलः प्रथम वचः, खलु "सुयं म" इति प्रतिभाषितम्" ॥१॥

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમા પાચમા ગણધર શ્રી સુધર્મોસ્વામી પોતાના શિષ્ય શ્રી

(९) ऐश्वर्ये—त्रैलोक्यप्रभाविपत्य पाल्यास्तीति भगवान् (१०), तेन भगवता—ज्ञानादियुक्तेन, 'तेणं' तेन तीर्थंकरेण वक्ष्यमाणार्थस्य तीर्थंकरभाषितत्वात् तच्छब्दनात्र तीर्थंकर परामर्शः। उक्तं च—

"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा॥" इत्यादि,

भगवत्तीर्थंकरापदिष्टमर्थरूपमागममुपादाय मेघार्जवनो गणधरास्सूत्ररूपमागमं निबध्नन्तीत्यर्थः।

"दुवे" वक्ष्यमाणप्रकारेण, 'आइक्खइ' आख्याति कथित द्वादशपरिषत्सु। भगवत्तीर्थंकरकथितार्थेनातर्थयानुसृत्य वक्ष्यमाण पावर्य वदिष्यामीति

श्रुतचारित्ररूप धर्म से९, ऐश्वर्य—तीन लोक के आधिपत्य से १० जो युक्त होते हैं वे भगवान् कहे जाते हैं। तात्पर्य यह है कि भग शब्द के ये जो ज्ञानादिरूप दश अर्थ प्रकट किये गये हैं, भगवन् उन समस्त अर्थों से संपन्न होते हैं। "तेणं" यह पद भगवान् का विशेषण है जो इस बात को कहता है कि ये भगवान् तीर्थंकर थे। जो भी विषय इस शास्त्र में कहा जावेगा वह उन तीर्थंकर प्रभु-भगवान् द्वारा भाषित ही कहा जावेगा कहा भी है—"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा निउणा" इति। अर्थात्—सर्व प्रथम अर्हन्त प्रभु ही अर्थरूप आगम की प्ररूपणा करते हैं और बाद में निपुण गणधर उस अर्थ को मूल सूत्ररूप में आगमरूप में-ग्रथित करते हैं। भगवान् ने क्या कहा? यह कहते हैं—भगवान् ने इस रूप से—वक्ष्यमाण प्रकार से—बारह प्रकार की परिषद् में कहा है अतः उन भगवत् तीर्थंकर कथित अर्थ के अनुसार ही मैं वक्ष्यमाण—आगे कहे

ભોલવાના સામર્થ્યરૂપ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ અને (૧૦) ઐશ્વર્ય એટલે ત્રણ લોકનું આધિપત્ય આ રીતે જ્ઞાન આદિ દસ પ્રકારોથી જે યુક્ત હોય છે તેમને ભગવાન કહે છે એવો તાત્પર્ય એ છે કે 'ભગ' શબ્દના આ જે જ્ઞાનાદિરૂપ દસ અર્થ બતાવ્યા છે એ સઘળા અર્થોથી ભગવાન યુક્ત હોય છે 'तेणं' આ પદ ભગવાનનું વિશેષણ છે જે એ વાત બતાવે છે કે ભગવન તીર્થંકર દેવ હતા જે કોઈ વિષય આ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવશે તે વિષય તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા ભાષિત હશે. કહ્યું પણ છે—"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा" એટલે કે સૌથી પહેલાં અર્હંત પ્રભુ જ અર્થરૂપ આગમની પ્રરૂપણા કરે છે અને ત્યાર પછી નિપુણ ગણધરો તે અર્થને મૂળ-સૂત્રરૂપે-ગ્રથિત કરે છે ભગવાને શું કહ્યું છે? એ પ્રશ્નના ઉત્તરરૂપે તેઓ કહે છે કે-ભગવાને આ પ્રમાણે-નીચે કહેવાના પ્રમાણે-બાર પ્રકારની પરિષદોમાં કહેલ છે તો તે તીર્થંકર ભગવાને કહેલ અર્થ પ્રમાણે જ હું આગળ કથન કરવામાં આવનો. અર્થ

मूलम्—इह खलु समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं सयं संबुद्धेणं पुरिसुत्तमेणं पुरिससीहेणं पुरिसवरपुंडरीएणं पुरिसवरगंधहत्थिएणं लोगुत्तमेणं लोगनाहेणं लोगहिएणं लोगपईवेणं लोगपज्जोगरेणं अभयदएणं चक्खुदएणं मग्गदएणं सरणदएणं जीवदएणं धम्मदएणं धम्मदेसएणं धम्मनायगेणं धम्मसारहिएणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टिएणं अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेणं

भग शब्द के दश अर्थ कहा है। जो भग शब्द के इन अर्थों से युक्त है वे ही भगवान होते हैं। शब्द और उनका अर्थ अनादि है। ये किसी के द्वारा किये हुए नहीं है। परन्तु तीर्थंकर भगवान् उस अर्थरूप आगम के उपदेष्टा होते है, इस अपेक्षा वे उस अर्थरूप आगम के कर्त्ता माने जाते हैं। इस तीर्थंकरोपदिष्ट अर्थरूप आगम को लेकर ही मेधावी गणधर मूलरूप आगम की रचना करते हैं, अतः पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा आदिमान् होता हुआ भी आगम द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा से अनादि कहा जाता है। इस सूत्र में जो "सुयं मे" ये पद आये है वे इस गणधरों की परपरा से चली आई परिपाटी के परिचायक हैं, कि जब वे अपने शिष्य जनों को पूछने पर मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं तो सर्व प्रथम वे उस समय उनसे ऐसा ही कहते हैं। इससे उनके वचनों में प्रमाणता और श्रद्धेयता आ जाती है ॥सू. १॥

ભગવાન શબ્દનો વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ કરેલ છે. 'भग' શબ્દના એ અર્થોથી જે યુકત હોય છે તેઓ જ ભગવાન કહેવાય છે. શબ્દ અને તેમનો અર્થ અનાદિ છે તે કોઈના વડે કરાયેલ નથી પણ તીર્થંકર ભગવાન તે અર્થરૂપ આગમના ઉપદેષ્ટા હોય છે, તે અપેક્ષાએ તેમને તે અર્થરૂપ આગમના કર્તા માનવામા આવે છે તીર્થંકરો વડે ઉપદેશાયેલ તે અર્થરૂપ આગમને આધારે જ મેધાવી ગણધરો મૂલરૂપ આગમની રચના કરે છે તેથી પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાએ આદિમાન્ હોવા છતા પણ દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ આગમોને અનાદિ કહેવામા આવે છે આ સૂત્રમા આવેલ "सुयं मे" પદો તે ગણધરોની પરંપરાથી ચાલતી આવતી તે રૂઢિના સૂચક છે કે જ્યારે તેઓ પોતાના શિષ્યો વડે પૂછાતા મોક્ષમાર્ગનો ઉપદેશ દે છે ત્યારે સૌથી પહેલા તેમને તેઓ એ પ્રમાણે "सुयं मे" જ કહે છે તેથી તેમના વચનોમા પ્રમાણુતા અને શ્રદ્ધેયતા આવી જાય છે. ॥સૂ ૧॥

शिष्य श्री जम्बूस्वामी को 'समवायांग में क्या २ विषय प्रतिपादित हुआ है' इस बात को समझाने के लिये सर्वप्रथम उन्हें यही कहते हैं कि इस अंग में जो भी विषय मैं प्रतिपादित करूँगा-वह भगवान के मुखारविन्द से जैसा मैंने सुना है वैसा ही कहूंगा-अपनी तरफ से उसमें कुछ भी कमी बेशी नहीं करूँगा। 'आयुष्मन' शब्द से जो सुधर्मा स्वामी ने उन्हें आमन्त्रित किया है इससे यह बात जाहिर होती है कि जंबू स्वामी बहुत अधिक विनयी थे। अपने विनीत शिष्य में प्रत्येक गुरुजन की यही भावना रहा करती है कि हमारा शिष्य अशेष श्रुतज्ञान के उपदेश को श्रवण करने योग्य बन जावे, इसे अपने हृदय में उतारने की शक्ति वाला हो जावे, उसकी स्मृति इतनी अधिक विकसित हो जावे कि जिससे यह उस गूढ़तम उपदेश को विस्मृत न कर सके, सदा उसके अन्तःकरण में उसकी धारणा बनी रहे-निरतिचार रत्नत्रय की आराधना करने में यह पटु हो जावे और मोक्ष के साधने की उसमें अधिक से अधिक योग्यता का विकास हो जावे। यह प्राकृतिक नियम है कि सच्चि भावना का असर अवश्य ही होता है-यही हुआ। गुरुमहाराज की सच्ची भावना के प्रभाव ने जंबूस्वामी को इस योग्य बना दिया-और उन्होंने उसी भव में मुक्ति प्राप्त करली। भगवान् शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ सूत्रकार ने

જ જંબૂસ્વામીને "સમવાયાંગમાં કયા કયા વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવું છે" આ વાતને સમજાવવાને માટે સૌથી પહેલાં તેમને એ જણાવે છે કે આ અંગમાં જે કંઈ વિષય હું પ્રતિપાદન કરીશ. તે ભગવાનના મુખારવિન્દમાંથી મેં જે રીતે સાંભળેલ છે તે પ્રમાણે જ કહીશ માટે પોતાનું તેમાં કંઈ પણ ઉમેરીશ નહીં સુધર્માસ્વામીએ તેમને 'આયુષ્મન્ જંબૂ' એ સંબોધ્યા છે તેથી એ વાત પ્રગટ થાય છે કે જંબૂસ્વામી અત્યંત વિનયી હતા પોતાના વિનીત શિષ્ય પ્રત્યે પ્રત્યેક ગુરુજનની એવી ભાવના રહે છે કે અમારો શિષ્ય અશેષશ્રુતજ્ઞાનના ઉપદેશનું શ્રવણ કરવાને યોગ્ય બને તેને પોતાના હૃદયમાં ઉતારવાને શક્તિમાન બને, તેની સ્મૃતિ એવી સબળ બિલ્યે કે તે અહિંય કરેલ ઉપદેશથી ચૂકી ન જાય, તેના અંતઃકરણમાં એવી તેની ધારણા કાયમ રહે નિરતિચાર રત્નત્રયની આરાધના કરવામાં તે નિપુણ બને, અને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવા માટેની તેનામાં ચમારેમાં ચમારે યોગ્યતાનો વિકાસ થાય પ્રત્યેકનો એવો નિયમ છે કે જેવી ભાવનાની અંદર અવશ્ય થાય છે-એવું જ આ મુ ગુરુમહારાજની આવી ભાવનાના પ્રભાવે જ જંબૂસ્વામીને તેને યોગ્ય બનાવી દીધા-તેમણે એ જ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરી લીધી. 'ભગ' શબ્દના દસ અર્થ બતાવીને સૂત્રકારે

सूत्रकृतम् २, स्थानम् ३, समवायः ४, विवाहप्रज्ञप्तिः ५, ज्ञाताधर्मकथाः ६, उपासकदशाः ७, अन्तकृद्दशाः ८, अनुत्तरोपपातिकदशाः ९, प्रश्नव्याकरणम् १०, विपाकश्रुतम् ११, दृष्टिवादः १२। तत्र खलु यत् तत् चतुर्थमङ्गं 'समवाय' इति 'आहिए' आख्यातम्, तस्य खलु अयमर्थः प्रज्ञप्तः, तद् यथा ॥ सू. २॥

भगवता यदाख्यात तदाह–'एगे आया' इत्यादि।

मूलम्—एगे आया ॥ सू. १॥

टीका—'आया' आत्मा–जीवः, 'एगे' एकः–एकत्वसंख्यावान्, कथंचिदिति भावः। यद्यपि जीवस्य सिद्धसंसारिभेदेन द्वैविध्याद् उभयरूपत्वमस्ति, यथाप्युपयो-

---

वह इस प्रकार से है–(आयारे १ सूयगडे २ ठाणे ३ समवाए ४ विवाहपन्नत्ती ५ णायाधम्मकहाओ ६ उवासकदसाओ ७ अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइदसाओ ९ पण्हावागरणं १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाए १२) आचारांग १ सूत्रकृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ विवाह प्रज्ञप्ति ५ ज्ञाताधर्मकथांग ६ उपासकदशांग ७ अंतकृद्दशांग ८ अनुत्तरोपपातिकदशांग ९ प्रश्नव्याकरण १० विपाकश्रुत ११ और दृष्टिवाद १२। (तत्थणं) इनमें (जे से) जो यह (चउत्थे अंगे) चौथा अंग (समवाए त्ति) 'समवाय' इस नाम से (आहिए) कहा गया है (तस्सणं) उसका (अयमट्ठ) यह अर्थ (पण्णत्ते) कहा है (तं जहा) वह इस प्रकार ॥सू. २॥

अब सूत्रकार उसी भगवान् द्वारा कथित प्रकार को प्रकट करते हैं—'एगे आया' इति।

टीकार्थ—(आया एगे) कथंचित्–किसी अपेक्षा से–जीव एक है। यद्यपि सिद्ध और संसारी जीव की अपेक्षा से जीव के दो प्रकार हैं तो भी उपयो-

---

તે આ પ્રમાણે છે– આયારે १, સૂયગડે २, ઠાણે ३ સમવાએ ४, વિવાહપન્નતી ५, णायाधम्मकहाओ ६, उवासकदसाओ ७, अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइदसाओ ९, पण्हावागरण १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाए १२) (१) આચારાંગ, (२) સૂત્રકૃતાંગ (३) સ્થાનાંગ (४) સમવાયાંગ, (५) વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિ, (६) જ્ઞાતાધર્મકથાંગ (७) ઉપાસકદશાંગ, (८) અંતકૃદશાંગ, (९) અનુત્તરોપપાતિક દશાંગ, (१०) પ્રશ્નવ્યાકરણ, (११) વિપાકશ્રુત અને (१२) દૃષ્ટિવાદ. 'तत्थणं' તેઓમાથી 'जे से' આ જે 'चउत्थे अंगे' ચોથું અંગ 'समवाए त्ति' 'સમવાય' નામનું 'आहिए' કહેલ છે 'तस्सणं' તેનો 'अयमट्ठे' આ અર્થ 'पण्णत्ते' કહેલ છે. 'तं जहा' તે અર્થ આ પ્રમાણે છે ॥ સૂ ૨ ॥

હવે સૂત્રકાર ભગવાન દ્વારા કથિત તે અર્થ પ્રગટ કરે છે–"एगे आया" ઈતિ

ટીકાર્થ—'आया एगे' અમુક દૃષ્ટિએ જોતા જીવ એક છે જો કે સિદ્ધ અને સંસારી જીવની અપેક્ષાએ જીવના બે પ્રકાર છે, છતા પણ ઉપયોગની દૃષ્ટિએ જોતા તેમનામા

वियट्टच्छउमेणं जिणेणं जावएणं तिन्नेणं तारएणं बुद्धेणं बोहएणं मुत्तेणं मोयगेणं सव्वन्नुणा सव्वदरिसिणा सिव-मयल-मरुय-मणंत-मक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपाविउकामेणं इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पन्नत्ते, तं जहा-आयारे १, सूयगडे २, ठाणे ३, समवाए ४, विवाहपन्नत्ती ५, णायाधम्मकहाओ ६, उवासगदसाओ ७, अंतगडदसाओ ८, अणुत्तरोववाइदसाओ ९, पण्हावागरणं १०, विवागसुयं ११, दिट्ठिवाए १२, । तत्थणं जे से चउत्थे अंगे समवाएत्ति आहिए तस्स णं अयमट्ठे पन्नत्ते तं जहा ॥ सू ५॥

टीका—"इह खलु समणेणं" इत्यादि । इदं च प्रथमसूत्रसंगृहीतार्थस्यैव सविस्तरप्रतिपादनपरम् । 'समणेणं' इत्यारभ्य 'संपाविउकामेणं' इत्यन्तस्य व्याख्या ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रे प्राग्व्याख्यातत्वात्तत्रैवावधार्यतामिति विरम्यते । जिज्ञासुभिस्तत्र गन्तव्यमिति । इदं द्वादशाङ्गं गणिपिटकं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा आचारः १,

अब सूत्रकार द्वितीय सूत्र को कहते हैं—'इह खलु' इत्यादि।

टीकार्थ—यह सूत्र प्रथम सूत्र द्वारा संगृहीत हुए अर्थ का ही विस्तार पूर्वक प्रतिपादन करने के लिये कहा गया है। इस सूत्र में जो "समणेणं" पद से लेकर "संपाविउकामेणं" तक जितने भी पद तृतीयान्त विभक्ति वाले आये हुये हैं इन सबकी व्याख्या ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र में हमने पहिले ही कर दी है। अतः यहां इनकी व्याख्या नहीं की है। जिन्हें इनके अर्थ को जानने की इच्छा हो वे वहां से जान लें। (इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पन्नत्ते) इन पूर्वोक्त विशेषणों से विशिष्ट श्रमण भगवान महावीर ने यह द्वादशांग रूप गणिपिटक प्रकल्पित किया है। (तं जहा)

હવે સૂત્રકાર બીજુ સૂત્ર કહે છે—"इह खलु" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—આ સૂત્ર પહેલા સૂત્ર દ્વારા સંગ્રહિત અર્થનું જ વિસ્તારથી પ્રતિપાદન કરવાને માટે કહેવાયું છે આ સૂત્રમાં "समणेणं" પદથી લઈને "संपाविउकामेणं" સુધીના ત્રીજી વિભક્તિના જેટલા પદો આવ્યાં છે એ બધાં પદોની વ્યાખ્યા જ્ઞાતા ધર્મ કથાંગ સૂત્રમાં આ અગાઉ આપી દીધેલ છે તેથી તેમની વ્યાખ્યા અહીં આપી નથી. તેનો અર્થ સમજવાની જેમને ઈચ્છા હોય તેઓ તેનો અર્થ તે સૂત્રમાંથી વાંચી લે "इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पन्नत्ते" એ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી વિશિષ્ટ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે આ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટકની પ્રરૂપણા કરી છે "तं जहा"

हैं वह अनादिसिद्ध स्वतन्त्र द्रव्य है। तात्त्विक दृष्टि से अरूपि होने के कारण उसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा नहीं हो सकता है तथापि साधारण जिज्ञासुओं के लिये एक ऐसा लक्षण कह देना आवश्यक हो जाता है कि जिससे आत्मा की पहिंचान की जा सके। उसी अभिप्राय से प्रस्तुत सूत्र में उसके टीकाकार ने उसका लक्षण उपयोग कहा है। और इसी उपयोग लक्षण की एकता से उसमें एकत्व प्रकट किया है। आत्मा लक्ष्य और उपयोग उसका लक्षण-जानने का उपाय है। जगत अनेक चेतन जड पदार्थों का मिश्रण है। उसमें से जड और चेतन का विवेक पूर्वक निश्चय करना हो तो उपयोग के द्वारा ही हो सकता है। क्यों कि यह उपयोग तरतमभाव से सभी जीवों में पाया जाता है। जड में यह उपयोग नहीं पाया जाता। बोधरूप व्यापार का नाम ही उपयोग है। आत्मा में हा बोधरूप क्रिया होती है-जड में नहीं होती-इसका कारण चेतनाशक्ति है। आत्मा जब स्वतंत्रद्रव्य है तो उसमें अनेक गुण होना चाहिये, फिर उपयोग को ही लक्षण क्यो कहा? तो इस शंका का समाधान यह है कि आत्मा में अनंतगुणपर्याये हैं, पर उन सबमें उपयोग ही मुख्य है, क्यों कि स्व पर प्रकाश रूप होने से उपयोग ही अपना तथा इतर पर्यायों का ज्ञान करा सकता है। आत्मा जो कुछ भी जानता है-

---

તાત્ત્વિક દૃષ્ટિથી જોતા તે અરૂપી હોવાથી ઇન્દ્રિયો દ્વારા તેનુ જ્ઞાન થઈ શ-તુ નથી, છતા પણ સાધારણ જિજ્ઞાસુઓ માટે એક એવુ લક્ષણ બતાવી દેવાનુ આ-શ્યક થઈ પડે છે કે જેનાથી આત્માને ઓળખી શકાય તે કારણે જ આ સૂત્રના ટીકાકારે તેનુ લક્ષણ ઉપયોગ બતાવેલ છે અને એ જ ઉપયોગ લક્ષણની એકતાથી તેમાં એકત્વ દર્શાવ્યુ છે આત્મા લક્ષ્ય છે અને ઉપયોગ તેનુ લક્ષણ જાણવાનો ઉપાય છે જગત અનેક ચેતન અને જડ પદાર્થોનુ મિશ્રણ છે તેમાથી જડ અને ચેતનનો વિવેકપૂર્વક નિર્ણય કરવો હોય તો ઉપયોગ દ્વારા જ થઈ શકે છે કારણકે તે ઉપયોગ વધુ ઓછા પ્રમાણમા સમસ્ત જીવોમા નજરે પડે છે જડમા તે ઉપયોગ નજરે પડતો નથી બોધરૂપ વ્યાપારનુ નામ જ ઉપયોગ છે આત્મામા બોધરૂપ ક્રિયા થાય છે-જડમા થતા નથી- તેનુ કારણ ચેતનાશક્તિ છે આત્મા જો સ્વતત્ર દ્રવ્ય હોય તો તેમા અનેક ગુણ હોવા જોઇએ, તો પછી ઉપયોગને જ લક્ષણ કેમ કહ્યુ? તો તે શકાનું સમાધાન એ છે કે આત્મામા અનંતગુણ પર્યાયો છે, પણ તે સૌમા ઉપયોગ જ મુખ્ય છે, કારણકે સ્વ તથા પર પ્રકાશરૂપ હોવાથી ઉપયોગ જ પોતાનું તથા અન્ય પર્યાયોનું જ્ઞાન કરાવી શકે છે. આત્મા જે કંઇ જાણે છે-અનુભવે છે

गरूपेण तयोर्भेदाऽसद्भावात्। किं च-इत्थमपि नयाऽऽश्रयेण एकत्वम्, एकत्वमापन्नस्यात्मनः द्रव्यार्थता नाम यत्प्रदेशगुणपर्यायाधारता, अवयवद्रव्यनैरपेक्ष्यं, यच्छेषांशसत्या तु अनेकत्वमात्मनः, असंख्यातप्रदेशात्मकत्वात् तस्य। सकलपदार्थानां ज्ञानादिभिर्विषयीकरणादात्मनः स्वेतरपदार्थापेक्षया प्राधान्यमस्तीत्यतः प्रथमतस्निर्देशः ॥सू १॥

गरूप से उनमें भेद का असद्भाव है अतः वह इस अपेक्षा एक भी है, तथा-द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से आत्मा में एक द्रव्यार्थता होने से एकत्व माना जाता है। प्रदेश, गुण और पर्यायों की आधारता का नाम ही द्रव्यार्थता-द्रव्यार्थिक नय है। यह द्रव्यार्थता मुख्यरूप से एक अखंड द्रव्य को ही विषय करती है। उस विषयभूत द्रव्य में प्रदेश गुण और पर्यायें रहती है। इन पर उसकी दृष्टि नहीं रहती है। इन सब पर दृष्टि रखने वाली प्रदेशार्थता-असंख्यातप्रदेशयुक्तता-पर्यायार्थिकनय है। उसकी अपेक्षा आत्मा में अनेकता मानी जाती है। आत्मा एक प्रदेशवाला नहीं है वह तो असंख्यात प्रदेशों वाला है। आत्मा सकल पदार्थों का ज्ञानादिगुणों द्वारा विषयकरता है इसलिये उसकी अपने से भिन्न पदार्थों की अपेक्षा प्रधानता है। इसीलिये सूत्रकारने यहां सब प्रथम उसका निर्देश किया है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा आत्मा का जो एक कहा है उसका कारण उपयोग लक्षण की अभिन्नता है। क्यों कि जीव का उपयोग कहा गया है। जीव जिसे आत्मा और चेतन भी कहते

ભેદનો અભાવ છે, તેથી એ અપેક્ષાએ તે એક પણ છે તથા-દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ તે આત્મામાં એક દ્રવ્યાર્થતા હોવાથી એકત્વ મનાય છે દ્રવ્યાર્થતા દ્રવ્યાર્થિક નય એટલે પ્રદેશ ગુણ અને પર્યાયોનું આધારપણું તે દ્રવ્યાર્થતા મુખ્યપણે એક અખંડ દ્રવ્યને વિષય કરે છે તે વિષયભૂત દ્રવ્યમાં પ્રદેશ, ગુણ અને પર્યાયો રહે છે તેમના પર તેની દૃષ્ટિ રહેતી નથી એ બધા પર દૃષ્ટિ રાખનારી પ્રદેશાર્થતા-અસંખ્યાત પ્રદેશયુક્તતા-પર્યાયાર્થિક નય છે તેની અપેક્ષાએ આત્મામાં અનેકતા મનાય છે આત્મા એક પ્રદેશવાળો નથી તે તો અનેક પ્રદેશવાળો છે આત્મા સમસ્ત પદાર્થોને જ્ઞાનાદિ ગુણો દ્વારા વિષય કરે છે તેથી ચેતનાકરતા ભિન્ન પદાર્થોની અપેક્ષાએ તેની પ્રધાનતા છે તે કારણે સૂત્રકારે સૌથી પહેલા અહીં તેનો નિર્દેશ કર્યો છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા આત્માને જે એક બતાવ્યો છે તેનું કારણ ઉપયોગ લક્ષણની અભિન્નતા છે કારણકે જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ બતાવવામાં આવેલ છે જીવ કે જેને આત્મા તથા ચેતન પણ કહે છે તે અનાદિ સિદ્ધ સ્વતંત્ર દ્રવ્ય છે

मूलम्--एगे अणाया ॥ सू. २ ॥

टीका--'अणाया' अनात्मा=आत्मभिन्नः घटादिपदार्थः, 'एगे' एकः-एकत्वसंख्यावानस्ति कथंचिदित्यर्थः, अनात्माऽपि यद्यपि प्रदेशार्थतया कश्चित् संख्यातप्रदेशः, कश्चिदसंख्यातप्रदेशः, कश्चिदनन्तप्रदेशोऽप्यस्ति, तथापि परिणा-

---

को यहां सूत्रकार ने एक कहा है-और कहीं २ पर अनेक भी प्रकट किया है-तो फिर इस प्रकार से यह मान्यताएँ परस्पर में विरुद्ध दिखलाई देती हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न हो सकता है कि इन दोनों मान्यताओं में परस्पर विरुद्धता वास्तविक है या अवास्तविक है। तब नयवाद यह कहता है कि यह ऊपर से दिखनेवाली विरुद्धता वास्तविक नहीं है, क्यों कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में एकत्व है और प्रदेशार्थता-पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा आत्मा में अनेकत्व है। यही विषय संक्षेप में टीकाकार ने इस सूत्रद्वारा समझाया है ॥सू० १॥

'एगे अणाया' इति।

टीकार्थ-(अणाया एगे) आत्मा से भिन्न घट पटादिपदार्थ रूप अनात्मद्रव्य किसी अपेक्षा से एकत्वसंख्या विशिष्ट है। जिस अपेक्षा से यह अनात्मद्रव्य एक है वह अपेक्षा परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता है। पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल ये सब अनात्म-अजीवद्रव्य हैं। इनमें यद्यपि कोई द्रव्य संख्यात प्रदेशवाला, कोई द्रव्य असंख्यातप्रदेशवाला और कोई द्रव्य अनंत प्रदेशवाला भी है तौ भी इस

છે અહીં સૂત્રકારે આત્માને એક બતાવ્યો છે અને કોઈ કોઈ સ્થળે અનેક પણ બતાવ્યો છે, તો એ રીતે તે માન્યતાઓ એક બીજાની વિરોધી જણાય છે એ પરિસ્થિતિમાં એવો પ્રશ્ન ઉદ્ભવી શકે છે તે માન્યતાઓ વચ્ચેની વિરુદ્ધતા વાસ્તવિક છે કે અવાસ્તવિક છે? તો નયવાદ એ દર્શાવે છે કે ઉપરથી દેખાતી તે વિરુદ્ધતા વાસ્તવિક નથી, કારણકે દ્રવ્યાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામા એકત્વ છે અને પ્રદેશાર્થતા-પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામા અનેકત્વ છે એ જ વિષય સંક્ષેપમા ટીકાકારે આ સૂત્ર દ્વારા સમજાવ્યો છે. ॥ સૂ. ૨ ॥

"एगे अणाया" इति ।

ટીકાર્થ-'अणाया एगे' આત્મા કરતા ભિન્ન ઘટ પટ (ઘડો, પડદો) આદિ પદાર્થરૂપ અનાત્મદ્રવ્ય કયી દૃષ્ટિએ એકત્વ છે? જે અપેક્ષાએ તે અનાત્મદ્રવ્ય એક તે પરિણામિત્વરૂપ એક દ્રવ્યાર્થતા છે. પુદ્ગલ દ્રવ્ય, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય, આકાશદ્રવ્ય, અને કાળ એ બધા અનાત્મ-અજીવદ્રવ્ય છે. તેમનામા જે કે કોઈ દ્રવ્ય સંખ્યાત પ્રદેશવાળુ, કોઈ દ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશવાળુ, અને કોઈ દ્ર અનંત પ્રદેશવાળું પણ

अनुभव करता है वह स्वयं उपयोग से ही करता है। इसलिए यह ही सब पर्यायों में प्रधान है। द्रव्यार्थिकता का तात्पर्य एक अखंड द्रव्य से है। द्रव्यार्थता में द्रव्य के आधार पर हुए प्रदेश, गुण और पर्याय, इन पर दृष्टि नहीं जाती है, प्रस्तुत केवल एक द्रव्य पर ही दृष्टि रहती है। इसी दृष्टि का नाम द्रव्यार्थिक नय है। द्रव्यार्थिक नय अपने विषय को ग्रहण करते समय उसमें रहे हुए अन्य गुणादिकों का लोप नहीं करता है, परन्तु उन्हें गौण कर देता है और अपने विषय को मुख्य।

किसी भी एक या अनेक चीजों के बारे में एक या अनेक व्यक्तियों के विचार अनेक तरह के होते हैं। अर्थात् एक वस्तु के विषय में भिन्न २ विचारों की परिगणना की जाय तो वे अपरिमित प्रतीत होंगे, अतः तद्विषयक प्रत्येक विचार का बोध करना असंभव हो जाता है। इसलिए इनका अतिसंक्षिप्त और अतिविस्तृत प्रतिपादन छोड़ करके मध्यममार्ग से प्रतिपादन करना यही नयवाद का काम है। जैन दर्शन में द्रव्यार्थिक, और पर्यायार्थिक, ऐसे दो नयों का उपदेश हुआ है। यद्यपि द्रव्य को विषय करने वाला द्रव्यार्थिक नय है और पर्याय को विषय करने वाला पर्यायार्थिक नय है, फिर भी गुणों को विषय करने वाला गुणार्थिक नय जो नहीं माना है उसका कारण यही है कि पर्यायार्थिक नय में ही इसका अन्तर्भाव हो जाता है। क्यों कि गुण सहभावी पर्याय हैं। अतः

તે બધુ નયપ્રયોગથી જ કરે છે તેથી તે જ સઘળી પ્રયોજનમાં મુખ્ય છે દ્રવ્યાર્થિક એટલે એક અખંડ દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતામાં દ્રવ્યને આધારે રહેલ પ્રદેશ, ગુણ અને પર્યાય પર દૃષ્ટિ જતી નથી કેવળ એક દ્રવ્ય પર જ દૃષ્ટિ રહે છે એ દૃષ્ટિનુ નામ જ દ્રવ્યાર્થિક નય છે દ્રવ્યાર્થિક નય પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરતી વખતે તેમાં રહેલા અન્ય ગુણોનો લોપ કરતો નથી પણ તેને ગૌણ કરે છે અને પોતાના વિષયને મુખ્ય કરે છે

કોઈ એક કે અનેક વીસે વીસ અથવા અનેક વ્યક્તિઓના વિચાર અનેક જાતના હોય છે એટલે કે એક જ વસ્તુની બાબતમા ભિન્ન ભિન્ન વિચારો ની સંખ્યા કરવામા આવે તો તે અપરિમિત થાશે, તેથી તે બાબતના દરેક વિચારનો બોધ કરવો અશક્ય અને વ્યર્થ છે. તેથી જેમનુ અતિસંક્ષિપ્ત કે અતિવિસ્તૃત પ્રતિપાદન કરવાનુ જોખમ ભરેલી મધ્યમમાર્ગની પ્રતિપાદન કરવુ એ નયવાદનુ કામ જૈન દર્શનમા દ્રવ્યાર્થિક અને પર્યાયાર્થિક એવા નયનો ઉપદેશ અપાયેલ છે એ કે દ્રવ્યનો વિષય કરનાર દ્રવ્યાર્થિક નય છે અને પર્યાયને વિષય કરનાર પર્યાયાર્થિક નય છે છતાં પણ ગુણોને વિષય કરનાર ગુણાર્થિક નયને નહીં માનવાનુ કારણ એ છે કે પર્યાયાર્થિક નયમાં જ તેનો સમાવેશ થઈ જાય છે, કારણકે ગુણ સહભાવી પર્યા

मूलम्—एगे अणाया ॥ सू. २ ॥

टीका—'अणाया' अनात्मा=आत्मभिन्नः घटादिपदार्थः, 'एगे' एकः—एकत्वसंख्यावानस्ति कथंचिदित्यर्थः, अनात्माऽपि यद्यपि प्रदेशार्थतया कश्चित् संख्यातप्रदेशः, कश्चिदसंख्यातप्रदेशः, कश्चिदनन्तप्रदेशोऽप्यस्ति, तथापि परिणा-

---

को यहां सूत्रकार ने एक कहा है—और कहीं २ पर अनेक भी प्रकट किया है—तो फिर इस प्रकार से यह मान्यताएँ परस्पर में विरुद्ध दिखलाई देती हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न हो सकता है कि इन दोनों मान्यताओं में परस्पर विरुद्धता वास्तविक है या अवास्तविक है। तब नयवाद यह कहता है कि यह ऊपर से दिखनेवाली विरुद्धता वास्तविक नहीं है, क्यों कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में एकत्व है और प्रदेशार्थता—पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा आत्मा मे अनेकत्व है। यही विषय संक्षेप में टीकाकार ने इस सूत्रद्वारा समझाया है ॥सू० १॥

'एगे अणाया' इति।

टीकार्थ—(अणाया एगे) आत्मा से भिन्न घट पटादिपदार्थ रूप अनात्मद्रव्य किसी अपेक्षा से एकत्वसंख्या विशिष्ट है। जिस अपेक्षा से यह अनात्मद्रव्य एक है वह अपेक्षा परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता है। पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल ये सब अनात्म—अजीवद्रव्य हैं। इनमें यद्यपि कोई द्रव्य संख्यात प्रदेशवाला, कोई द्रव्य असंख्यातप्रदेशवाला और कोई द्रव्य अनंत प्रदेशवाला भी है तो भी इस

છે અહીં સૂત્રકારે આત્માને એક બતાવ્યો છે અને કોઈ કોઈ સ્થળે અનેક પણ બતાવ્યો છે, તો એ રીતે તે માન્યતાઓ એક બીજાની વિરોધી જણાય છે એ પરિસ્થિતિમા એવો પ્રશ્ન ઉદ્ભવી શકે કે તે માન્યતાઓ વચ્ચેની વિરુદ્ધતા વાસ્તવિક છે કે અવાસ્તવિક છે? તો નયવાદ એ દર્શાવે છે કે ઉપરથી દેખાતી તે વિરુદ્ધતા વાસ્તવિક નથી, કારણકે દ્રવ્યાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામા એકત્વ છે અને પ્રદેશાર્થતા-પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામા અનેકત્વ છે એ જ વિષય સંક્ષેપમા ટીકાકારે આ સૂત્ર દ્વારા સમજાવ્યો છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

"एगे अणाया' इति ।

ટીકાર્થ-'अणाया एगे' આત્મા કરતા ભિન્ન ઘટ પટ (ઘડો, પડદો) આદિ પદાર્થરૂપ અનાત્મદ્રવ્ય કયી દૃષ્ટિએ એકત્વ છે? જે અપેક્ષાએ તે અનાત્મદ્રવ્ય એક તે પરિણામિત્વરૂપ એક દ્રવ્યાર્થતા છે. પુદ્ગલ દ્રવ્ય, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય, આકાશદ્રવ્ય, અને કાળ એ બધા અનાત્મ-અજીવદ્રવ્ય છે. તેમનામા કોઈ દ્રવ્ય સંખ્યાત પ્રદેશવાળું, કોઈ દ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશવાળું, અને કોઈ દ્ર અનંત પ્રદેશવાળું પણ

परिणामित्वरूपैकद्रव्यार्थतया एक एवेति भाव । धर्माधिकायादीनामनात्मनां स्वरूपपरिणामवत्त्वापेक्षया तु कथंचिद्भिन्नस्वरूपाणामपि अनुपयोगरूपैकस्वभावाद्वैकत्वं द्योत्यम् ॥ सू २॥

परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता की अपेक्षा से सबही एक हैं। धर्मास्तिकायादिक अनात्मद्रव्यों में स्वद्रव्यपरिणमन की अपेक्षा से कथंचित भिन्न स्वरूपता है तो भी अनुपयोग रूप एक स्वभाव से युक्त होने के कारण एकत्व जानना चाहिये।

भावार्थ—जीव के लक्षण से जो शून्य होता है वह अजीव है। इसी का नाम अनात्मा है। यह आत्मा—जीव का विरोधी भावात्मक तत्त्व है वह केवल अभावात्मक नहीं है। यह अजीवतत्त्व पांच प्रकार है। पुद्गलास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और काल। अस्तिकाय का तात्पर्य है प्रदेशों का समूह। धर्म, अधर्म, और आकाश ये ३ तीन द्रव्य तो प्रदेश समूह रूप हैं और पुद्गल अणुरूप तथा अणु संघ समूहरूप है। काल को अस्तिकाय नहीं कहने का यही तात्पर्य है कि वह प्रदेशसमूह रूप नहीं है। यदि इस प्रकार की मान्यता से उसे अस्तिकाय नहीं कहा जाता है—तो फिर पुद्गल परमाणु को अस्तिकाय आप कैसे कह सकते हो? सो इस प्रकार की शंका करना उचित नहीं है, कारण कि-पुद्गल का परमाणु यद्यपि एक प्रदेशवाला

છતાં પણ આ પરિણામિત્વરૂપ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તે બધા જ છે અને ધર્માસ્તિકાય આદિ અનાત્મ દ્રવ્યોનાં સ્વભાવ પરિણમનની અપેક્ષાએ ભિન્નસ્વરૂપતા છતાં પણ અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવ (લક્ષણ)થી યુક્ત હોવ ને કારણે એકત્વ જાણવું જોઈએ.

ભાવાર્થ—જીવના લક્ષણથી જે રહિત હોય તે અજીવ કહેવાય છે એનું જ નામ અનાત્મા છે તે આત્મા—જીવનું વિરોધી ભાવાત્મક તત્ત્વ છે, તે કેવળ અભાવાત્મક નથી તે અજીવ તત્ત્વ પાંચ પ્રકારનું છે-પુદ્ગલાસ્તિકાય, ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અને કાળ. અસ્તિકાયનું તાત્પર્ય પ્રદેશોનો સમૂહ થાય છે ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ એ ત્રણ દ્રવ્ય તો પ્રદેશસમૂહરૂપ છે, અને પુદ્ગલ અણુરૂપ તથા અણુસંઘ સમૂહ રૂપ છે કારણે અસ્તિકાય નહીં કહેવાનું કારણ એ છે કે તે પ્રદેશસમૂહરૂપ નથી એ તે પ્રકારની માન્યતાથી તેને અસ્તિકાય કહેવાય નહીં તો પુદ્ગલ પરમાણુને આપ કેવી રીતે અસ્તિકાય કહી શકો. મતલબ કે એ પ્રકારની શંકા કરવી એ ઉચિત નથી, કારણકે પુદ્ગલનું પરમાણુ એ કે એક

होता है तो भी वह अनेक स्कधों का कारण होने से बहुप्रदेशी उपचार से माना गया है। ऐसा काल नहीं है। जितने आकाशक्षेत्र में एक अविभागी पुद्गल परमाणु रहता है उस भाग को प्रदेश कहते हैं। एक जीव द्रव्य के धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के असंख्यप्रदेश हैं। पुद्गल द्रव्य में कोई पुद्गल संख्यात प्रदेशी, कोई असंख्यातप्रदेशी और कोई अनंत प्रदेशी होता है। प्रदेश का दूसरा नाम निरंश अंश भी है। पुद्गल और दूसरे द्रव्यों के बीच इतना अन्तर है कि पुद्गल के प्रदेश अपने स्कंध से अलग २ हो सकते हैं पर अन्य चार (जीव, धर्म, अधर्म-और आकाश) द्रव्यों के प्रदेश अपने २ स्कंध से भिन्न-अलग-नहीं हो सकते हैं। इसका कारण यह है कि पुद्गल के सिवाय अन्य चारों द्रव्य तथा काल अमूर्त और अप्रदेशी माना गया है। जो अमूर्त होता है उसका स्वभाव खंडित होने का नहीं होता है। मूर्त द्रव्य का ही खंड हो सकता है, क्यों कि संश्लेष और विश्लेष के द्वारा मिलने की तथा अलग होने की शक्ति मूर्तद्रव्य में देखी जाती है। इसी के कारण पुद्गल द्रव्य के छोटे बडे सभी अंशों को अवयव कहते हैं।

जिस प्रकार पराणु पुद्गल का अविभाज्य अंश है उसी प्रकार प्रदेश भी एक अविभाज्य अंश-भाग है तब परमाणु और

પ્રદેશવાળું હોય છે, તો પણ અનેક સ્કંધોનું કારણ હોવાથી તેને ઔપચારિક રીતે બહુપ્રદેશી માનવામા આવ્યો છે કાળ એવો નથી જેટલા આકાશક્ષેત્રમા એક અવિભાગી પુદ્ગલ પરમાણુ રહે છે તે ભાગને પ્રદેશ કહે છે એક જીવ દ્રવ્યના ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશ છે પુદ્ગલદ્રવ્યમા કોઈ પુદ્ગલ સંખ્યાત પ્રદેશી, કોઇ અસંખ્યાત પ્રદેશી અને કોઇ અનન્ત પ્રદેશી હોય છે પ્રદેશનુ બીજુ નામ 'નિરંશ અંશ' પણ છે પુદ્ગલ અને બીજા દ્રવ્યો વચ્ચે એટલુ અંતર છે કે પુદ્ગલના પ્રદેશો સ્કંધથી અલગ અલગ થઇ શકે છે પણ બીજા ચાર (જીવ ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ) દ્રવ્યોના પ્રદેશો પોત પોતાના સ્કંધોથી અલગ થઇ શકતા નથી. તેનુ કારણ એ છે કે પુદ્ગલ સિવાય બીજા ચારે દ્રવ્યો તથા કાળ અમૂર્ત અને અપ્રદેશી માનવામા આવેલ છે જે અમૂર્ત હોય તેનો ખંડિત થવાનો સ્વભાવ હોતો નથી મૂર્ત દ્રવ્યના જે ખંડ થઇ શકે છે, કારણ કે સંશ્લેષ અને વિશ્લેષ દ્વારા મળવાની તથા અલગ થવાની શકિત મૂર્ત દ્રવ્યમા જ નજરે પડે છે તે કારણે પુદ્ગલ દ્રવ્યના નાના મોટા બધાજ અંશોને અવયવ કહે છે.

જેમ પુદ્ગલનું પરમાણુ પુદ્ગલનો અવિભાજ્ય અંશ છે એ જ રીતે પ્રદેશ પણ

पदेश में अन्तर पर्यो माना गया है— तो इस शंका का समाधान इस प्रकार है कि यदि परिमाणु की अपेक्षा विचार किया जावे तो पुद्गल परमाणु और प्रदेश में कोई अन्तर नहीं है, परन्तु जिस प्रकार परमाणु अपने स्कंध से अलग हो सकता है उस प्रकार प्रदेश अपने स्कंध से अलग नहीं हो सकता है। सूत्रकार ने जो अनात्मद्रव्यों में परिणामि स्वरूप एक द्रव्यार्थता की अपेक्षा एकत्व प्रकट किया है उसका तात्पर्य इस प्रकार से है—

जैनसिद्धान्त की मान्यता के अनुसार सभी सत् कहलानेवाली वस्तुएँ उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यरूप वाली हैं। प्रत्येक वस्तु में दो अंश मौजूद रहते हैं। एक अंश वह है जो तीनों कालों में शाश्वत रहता है और दूसरा अंश वह है जो अशाश्वत रहता है। शाश्वत अंश के कारण वस्तु में ध्रौव्य रूप की प्रतीति और अशाश्वत अंश के कारण उत्पाद और व्ययरूप की प्रतीति होती है। अर्थात् उत्पाद व्यय ये दोनों धर्म वस्तु में अशाश्वत अंश को लेकर आते हैं। ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो सर्वथा शाश्वत हो या सर्वथा अशाश्वत हो या कुछ अंश उसका सर्वथा नित्य हो या कुछ अंश उसका सर्वथा अनित्य हो। जब वस्तु गत इन दो अंशों में से किसी अंश की तरफ विचारकर्ता दृष्टि जाती है तो वह

અવિભાજ્ય અંશ આત્ર છે તો પરમાણુ અને પ્રદેશમાં કોઈ ભેદ કેમ પડવામાં આવ્યો છે ? તે શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે—જો પરમાણુની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો પુદ્ગલ પરમાણુ અને પ્રદેશમાં કોઈ તફાવત નથી, પણ જે રીતે પરમાણુ પોતાના સ્કંધથી અલગ થઈ શકે છે તે પ્રમાણે પ્રદેશ પોતાના સ્કંધથી અલગ થઈ શકતો નથી અનાત્મદ્રવ્યોમાં પરિણામિત્વરૂપ ભેદ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ જે એકત્વ પ્રગટ કર્યું છે તેનું તાત્પર્ય નીચે મુજબ છે—જૈન સિદ્ધાંતની માન્યતા પ્રમાણે સઘળી અસ્તિત્વ ધરાવતી વસ્તુઓ ઉત્પાદ, વ્યય અને ધ્રૌવ્યરૂપ વાળી છે પ્રત્યેક વસ્તુમાં કિ અંશ બે પ્રકાર હોય છે એવો અંશ જોયો છે કે જે ત્રણ કાળમાં શાશ્વત રહે છે અને બીજો અંશ જોયો છે કે જે અશાશ્વત રહે છે શાશ્વત અંશને કારણે વસ્તુમાં ધ્રૌવ્ય રૂપની પ્રતીતિ થાય છે અને અશાશ્વત અંશને કારણે ઉત્પાદ અને વ્યય રૂપની પ્રતિતિ થાય છે એટલે કે ઉત્પાદ અને વ્યય એ બન્ને ધર્મ વસ્તુના અશાશ્વત અંશને લીધે થાય છે એવી કોઈ પણ વસ્તુ નથી કે જે ત્રણ શાશ્વત હોય કે સર્વથા અશાશ્વત હોય કે તેનો કોઈ અંશ કંઈક નિત્ય હોય કે કોઈ અંશ કંઈક અનિત્ય હોય અર્થાત્ વસ્તુમાં પ્રદેશ એ બન્ને અંશોમાંથી કોઈ એક અંશ તરફ વિચારકની દૃષ્ટિ

वस्तु या तो स्थिर रूप प्रतीत होती है या अस्थिर रूप। एतावता इतने मात्र से वस्तु का पूर्ण यथार्थरूप नहीं सध सकता है-वह दोनों अशों की ओर दृष्टि देने से ही सधता है। इसी का नाम परिणामिनित्य है और यह परिणमन प्रत्येक वस्तु में हरएक समय होता रहता है-इस परिणमन से कोई भी वस्तु किसी भी समय में अछूती नहीं रहती है। अतः इस परिणमन की अपेक्षा समस्त अनात्मा पदार्थ एक है। परिणमन दो प्रकार का होता है-एक सदृश परिणमन और एक विसदृश परिणमन,-जीव और पुद्गल इन दो द्रव्यों में दोनों प्रकार का परिणमन होता रहता है। पर धर्मास्तिकायादिक द्रव्यों में केवल सदृशपरिणमन ही होता है, विसदृश परिणमन नहीं। इस अपेक्षा धर्मास्तिकायादिक द्रव्य अपने २ सदृश परिणमन की अपेक्षा आपस में भिन्न २ है-फिर भी इन सबमें अनुपयोग रूप एक स्वभावता रहने से इस अपेक्षा वे सब एक हैं। यही टीकाकार का अभिप्राय है। इस प्रकार इस भावार्थ द्वारा प्रदेश, परिणामि नित्यत्व और सदृशपरिणमन के ऊपर यह संक्षिप्त विवेचन किया है। इस तरह अनात्म द्रव्यों में एकत्व के बोधक परिणामिरूप एक द्रव्यत्व और अनुपयोगरूप एक स्वभावत्व है, यह बात सध जाती है ॥सू०२॥

જાય છે ત્યારે તે વસ્તુ કાંતો સ્થિર રૂપ લાગે છે અથવા અસ્થિર રૂપ લાગે છે તો એમ કરવા માત્રથી જ તે વસ્તુનું પૂર્ણ યથાર્થ રૂપ જાણી શકાતુ નથી તે જાણવા માટે તો બન્ને અશો તરફ દૃષ્ટિ પડવી જોઇએ એનું નામ જ પરિણામિનિત્ય છે. અને તે પરિણમન દરેક સમયે ચલ્યા કરે છે-આ પરિણમનથી કોઈ પણ વસ્તુ કોઇ પણ સમયે અલિપ્ત રહી શકતી નથી તેથી તે પરિણમનની અપેક્ષાએ સમસ્ત અનાત્મ પદાર્થ એક છે

પરિણામ બે પ્રકારના હોય છે-સદૃશ પરિણમન (સમાન પરિણમન) અને વિસદૃશ પરિણમન (અસમાન પરિણમન) જીવ અને પુદ્ગલ બે બન્ને દ્રવ્યોમા બન્ને પ્રકારના પરિણમન થયા કરે છે પણ ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોમા ફકત વિસદૃશ પરિણમન થતું નથીતે દૃષ્ટિએ જોતા ધર્માસ્તિકાયાદિક દ્રવ્ય પોતપોતાના સદૃશ પરિણામનની અપેક્ષાએ અન્યોન્ય ભિન્ન ભિન્ન છે-છતા પણ તે બધામા અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવતા હોવાથી તે દૃષ્ટિએ જોતા તે બધા એક જ છે એજ ટીકાકારના કથનનુ તાત્પર્ય છે. આ રીતે ભાવાર્થ દ્વારા પ્રદેશ, પરિણામિનિત્યત્વ, અને સદૃશ પરિણમન ઉપર સંક્ષિપ્ત વિવેચન કરવામાં આવ્યું છે એ જ પ્રમાણે અનાત્મદ્રવ્યોમા એકત્વના બોધક પરિણામિરૂપ એક દ્રવ્યત્વ અને અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવત્વ છે, તે વાતની પ્રતીતિ થાય છે ॥સૂ. ૨॥

आत्मनः निष्क्रियत्वं केषाञ्चिदङ्गीकृतं, तन्निराकरणायात्मनः क्रियावत्त्वं दर्शयन् सूत्रकारः क्रियाजनकत्वेन प्रथमं दण्डस्वरूपमाह—

मूलम्—एगे दंडे ॥ सू ३ ॥

टीका—'दंडे' दण्डः=दण्डयते=ज्ञानापराधारेण पीड्यते निःसारीक्रियते वा आत्माऽनेनेति दण्डः, स च द्रव्यतो यष्टि र्मानसा दुष्प्रयुक्तमनोवाक्कायरूपा, हिंसारूपा वा, स च 'एगे' एकः, एकत्वमत्र सामान्यनयापेक्षया। एवमन्यत्रापि सर्वत्रैकत्वं बोध्यम् ॥ सू ३ ॥

मूलम्—एगे अदंडे ॥ सू ४॥

टीका—'अदंडे' अदण्डः=पापव्यापारप्रत्ययरूपः, अहिंसारूपा वा। सामान्यनयापेक्षया एकत्वमदण्डस्यापि भावः ॥सू ४॥

आत्मा में सर्वथा निष्क्रियत्व कितनेक वादियों ने अंगीकार किया है परन्तु यह उनकी मान्यता ठीक नहीं है, क्यों कि आत्मा सक्रिय है। इसी बातको दिखलाने के लिये सूत्रकार दंड का स्वरूप कहते हैं—'एगे दंडे' इत्यादि।

ज्ञानादिकों के अपकार से आत्मा जिसके द्वारा पीडित किया जाता है, अथवा सारहित किया जाता है उसका नाम दंड है। यह दंड दो प्रकार का होता है एक द्रव्यदंड और दूसरा भावदंड। यष्टि आदिक बाह्य पदार्थ द्रव्य दंड है और मन वचन एवं काय की दुष्प्रवृत्ति भावदंड है। अथवा हिंसा रूप व्यापार भावदंड है। यह दंड भी सामान्य की अपेक्षा एक है। इसी तरह से अन्यत्र भी एकत्व की सिद्धि जानना चाहिये ॥सू० ३॥

'एगे अदंडे' इति।

प्रशस्त योगमयरूप अदंड भी सामान्यनय की अपेक्षा एक है ॥सू० ४॥

કેટલાક કોએ મત બતાવે છે કે આત્મા સર્વથા નિષ્ક્રિય છે, પરંતુ તેમનો તે મત બરાબર નથી, કારણ કે આત્મા સક્રિય છે તે વાત બતાવવાને માટે સૂત્રકાર દંડનું સ્વરૂપ બતાવે છે—"एगे दंडे" ઇત્યાદિ!

ટીકાર્થ—જ્ઞાનાદિના અપકારમાં આત્માને જેના દ્વારા પીડવામાં આવે છે, અથવા સારરહિત કરવામાં આવે છે તેને દંડ કહે છે તે દંડના બે પ્રકાર છે—(૧) દ્રવ્યદંડ અને (૨) ભાવદંડ દાંડો વગેરે બાહ્ય પદાર્થ દ્રવ્યદંડ છે અને મન, વચન અને કાયાની દુષ્પ્રવૃત્તિ ભાવદંડ છે અથવા હિંસારૂપ પ્રવૃત્તિ ભાવદંડ છે તે દંડ પણ સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ એક છે એ જ રીતે અન્યત્ર પણ એકત્વ સિદ્ધ થયેલું જાણવું ॥સૂ. ૩॥

"एगे अदंडे" इति

પ્રશસ્ત યોગત્રયરૂપ અથવા અહિંસારૂપ અદંડ પણ સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ એક છે ॥સૂ૦ ૪॥

मूलम्--एगा किरिया ॥ सू. ५ ॥

टीका--'किरिया' क्रिया=कायिकी प्रभृतयः आस्तिक्यं वा । संग्रहनयाश्रित-सामान्यरूपापेक्षया एकत्वमस्ति क्रियायां अपीतिभावः ॥ सू. ५॥

मूलम्--एगा अकिरिया ॥सू. ६॥

टीका--'अकिरिया' अक्रिया=योगनिरोधरूपा, नास्तिकत्वं वा ॥ सू. ६॥

मूलम्--एगे लोए ॥सू. ७॥

टीका--'लोए' लोकः, 'एगे' एकः, यद्यपि लोकस्य त्रैविध्यम्, असंख्यातप्रदेशकत्वं च, तथापि द्रव्यार्थतया एकत्वमितिभावः ॥सू० ७॥

'एगा किरिया' इति।

टीकार्थ-कायिक आदि क्रियाओं में अथवा अस्तिकाय में संग्रहनय के आश्रित सामान्य रूप की अपेक्षा से एकता है ॥सू० ५॥

'एगा अकिरिया' इति।

योगों को निरोध करने रूप अक्रिया में अथवा नास्तिकत्व में भी इसी तरह से एकता है ॥सू० ६॥

'एगे लोए' एगे अलोए' इति।

टीकार्थ-लोक एक है। अलोक एक है-यद्यपि उर्ध्वलोक,, तिर्यग्लोक और अधोलोक, इस प्रकार से लोक के तीन भेद किये गये हैं। तथा लोक-असंख्य प्रदेशवाला माना गया है। फिर भी द्रव्यार्थिकता की अपेक्षा उसमें एकत्व आ जाता है। इसी तरह अलोक में भी प्रदेशार्थता को लेकर यद्यपि अनेकता है फिर भी द्रव्यार्थिकता की अपेक्षा उसमें एकता

"एगा किरिया" इति--

કાયિક આદિ ક્રિયાઓમા અથવા આસ્તિકયમા સંગ્રહનયને આશ્રિત સામાન્ય રૂપની અપેક્ષાએ એકતા છે ॥સૂ ૫॥

"एगा अकिरिया" इति--

યોગોનો નિરોધ કરવારૂપ અક્રિયામા અથવા નાસ્તિકત્વમા પણ એજ રીતે એકતા છે ॥સૂ ૬॥

"एगे लोए" "एगे अलोए" इति--

લોક એક છે અલોક એક છે-જો કે ઉર્ધ્વલોક, તિર્યગ્લોક અને અધોલોક, એવા લોકના ત્રણ ભેદ પડાય છે તથા લોકને અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો માનવામા આવ્યો છે તો પણ દ્રવ્યાર્થિકતાની અપેક્ષાએ તેમા એકત્વ રહેલ છે એજ પ્રમાણે અલોકમા પણ પ્રદેશાર્થતાને લીધે જો કે અનેકતા છે, છતાં પણ દ્રવ્યાર્થિકતાની

एगे अलोए ॥सू ८॥

टीका—'अलोए' अलोक, 'एगे' एक एवास्तीत्यर्थः, द्रव्यार्थतया एक एवास्तीति भावः। यद्वा ये केचिद् लोका अलोका अपि बहव इति मन्यन्ते, तन्मतनिराकरणार्थमिदं, लोकालोकयोर्बहुत्वं नास्तीति सारः ॥सू ८॥

हो है। अथवा जो कोई 'लोक बहुत हैं अलोक भी बहुत हैं" ऐसा मानते हैं उनकी एकान्तरूपमान्यता का निराकरण करने के लिये यह सूत्र कहा गया है। लोक और अलोक में अनेकता नहीं है।

भावार्थ—आकाश द्रव्य के ही ये दो भेद सिद्धान्तकारों ने कहे हैं, एक लोक और दूसरा अलोक। इनमें लोकाकाश असंख्यात प्रदेशवाला और अलोकाकाश अनन्तप्रदेशवाला माना गया है। जिस में जीव पुद्गल आदि द्रव्य रहते हैं वह लोक है और जिसमें केवल आकाश ही आकाश है वह अलोक है। तात्पर्य यह है कि जीव पुद्गल आदि द्रव्य समग्र आकाश में नहीं रहते हैं किन्तु असुक परिमित भाग में ही रहते है। जितने भागमें इनका निवास है उतना आकाशभाग लोक और इसके बाहर चारों ओर अनंत आकाश विद्यमान है वह अलोक है। यद्यपि देव नारकी और मनुष्यादि के निवास की अपेक्षा लोक के तीन भेद ऊर्ध्वलोक-अधोलोक एवं तिर्यग्लोक, इस तरह तीन भेद माने गये हैं परन्तु द्रव्यार्थिकता-द्रव्यरूप लोकाकाश की अपेक्षा से इनमें अभेद-एकत्व या

અપેક્ષાએ તેમાં એકતા જ છે અથવા જે કોઈ "લોક ઘણા છે અલોક પણ ઘણા છે" એવી માન્યતા ધરાવે છે તેમની એકાન્તરૂપ માન્યતાનું નિરાકરણ કરવાને માટે આ સૂત્ર કહેવામાં આવ્યું છે લોક અને અલોકમાં અનેકતા નથી.

ભાવાર્થ—આકાશ દ્રવ્યના જ આ બે ભેદ સિદ્ધાંતકારોએ કહ્યા છે—(૧) લોક અને (૨) અલોક તેમાંના લોકાકાશ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળુ અને અલોકાકાશ અનંત પ્રદેશવાળુ માનવામાં આવેલ છે જેમાં જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્ય રહે છે તે લોક છે, અને જેમાં કેવલ આકાશ જ છે તે અલોક છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્ય સમગ્ર આકાશમાં રહેતુ નથી, પણ અમુક પરિમિત ભાગમાં જ રહે છે જેટલા ભાગમા તેમનો નિવાસ છે એટલો આકાશભાગ લોક કહેવાય છે અને તેની બહાર ચારપાસ, ચોમેર જે અનંત આકાશ આવેલુ છે તેને અલોક કહે છે એ કે દેવ નારકી અને મનુષ્ય આદિના નિવાસની અપેક્ષાએ લોકના પણ ઉર્ધ્વલોક અધોલોક અને તિર્યગ્લોક એ ત્રણ ભેદ માનવામાં આવ્યા છે તો પણ દ્રવ્યાર્થિક-દ્રવ્યરૂપ લોકાકાશની અપેક્ષાએ તેમનીમાં અભેદ-એકતા આવી જાય છે

मूलम्—एगे धम्मे ॥सू. ९॥

टीका—'धम्मे' धर्मः=धर्मास्तिकायः, एक. । जीवपुद्गलाः स्वभावतः सक्रियाः सन्ति, तेषां गतिपरिणामवतां तत्स्वभावं यो धारयति स धर्म इत्युच्यते, स चास्तीनां प्रदेशानां संघातरूपत्वात् कायः, अतोऽसावस्तिकाय इति व्यपदिश्यते। धर्मास्तिकायस्यासंख्यातप्रदेशकत्वेऽपि द्रव्यार्थतया स एक एवेतिभावः ॥सू ९॥

एगे अधम्मे ॥सू. १०॥

टीका—'अधम्मे' अधर्मः—अधर्मास्तिकायः 'एगे' एकः द्रव्यत इतिभावः । न धर्मः—अधर्मः, जीवपुद्गलानां गत्युपष्टम्भको धर्मस्तद्विपरीतः स्थित्युपष्टम्भकत्वादधर्म इत्युच्यते ॥सू. १०॥

जाता है। इसी प्रकार अनंतप्रदेशात्मक अलोकाकाश है-अतः अनंतप्रदेशों की अपेक्षा उसमें अनेकता आती है फिर भी अलोकाकाशरूप द्रव्यत्व की अपेक्षा उसमें भी एकत्व बन जाता है। जिस प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि की अपेक्षा मनुष्यों में अनेकता होने पर भी मनुष्यत्व की अपेक्षा एकता घटित होती है। द्रव्यों को अपने में अवकाश देने रूप कार्य से इस आकाश की सिद्धि होती है ॥७॥८॥

'एगे धम्मे' 'एगे अधम्मे' इति ।

धर्मास्तिकाय एक है, अधर्मास्तिकाय एक है। स्वभावतः गतिक्रियाशील जीव और पुद्गलों को चलनेमें जो निमित्त कारण होता है वह धर्मद्रव्य है। द्रव्य प्रदेशों का संघातरूप है इसलिये इसको अस्तिकाय कहा है। इस तरह धर्मास्तिकाय में असंख्यातप्रदेशात्मकता होने पर भी द्रव्यार्थता की अपेक्षा एकत्व माना गया है। स्थिति क्रिया परिणत जीव

એ જ પ્રમાણે અનંત પ્રદેશવાળુ અલોકાકાશ છે તેથી અનંત પ્રદેશોની અપેક્ષાએ તેમા અનેકતા લાગે છે છતાં પણ અલોકાકાશરૂપ દ્રવ્યત્વની અપેક્ષાએ તેમા પણ એકત્વ આવી જાય છે જેમ બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય આદિની અપેક્ષાએ મનુષ્યોમાં અનેકતા હોવા છતા પણ મનુષ્યત્વની અપેક્ષાએ તેમનામાં એકતા ઘટાવી શકાય છે દ્રવ્યોને પોતાનો અંદર સ્થાન દેવાના કાર્યથી તે આકાશની સિદ્ધિ થાય છે. ॥૭।૮॥

"एगे धम्मे" "एगे अधम्मे" इति—

ધર્માસ્તિકાય એક છે, અધર્માસ્તિકાય એક છે સ્વભાવથી જ ગતિ ક્રિયાશીલ જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિમાં જે નિમિત્ત કારણરૂપ હોય છે તે ધર્મદ્રવ્ય છે તે દ્રવ્ય પ્રદેશોના સંઘાતરૂપ છે, તેથી તેને અસ્તિકાય કહેલ છે એ રીતે ધર્માસ્તિકાયમા અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા હોવા છતાં પણ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમા એકત્વ માનવામાં આવ્યુ છે સ્થિતિ ક્રિયા પરિણત જીવ અને પુદ્ગલોને થોભવામા જે

और पुद्गलों को जो ठहरने में निमित्त-सहायक होता है वह अधर्मद्रव्य है। यह अधर्मद्रव्य भी धर्मद्रव्य की तरह असंख्यात प्रदेशवाला है यह भी द्रव्यार्थता की अपेक्षा माना गया है।

भावार्थ—धर्म, अधर्म और आकाश ये तीनों अमूर्त होने से घट पटादि की तरह इन्द्रियगम्य नहीं हैं। इसलिये इनकी सिद्धि लौकिक प्रत्यक्ष से नहीं हो सकती है। यदि कहा जावे कि आगमप्रमाण से इनकी सिद्धि होती है सो यह बात तो ठीक है परन्तु आगमाश्रय हेतु उस सिद्धान्त के अनुयायियों में ही अपनी महत्ता का प्रख्यापक हो सकता है। आगमोक्त अर्थ को पोषण करने वाली युक्ति भी तो होनी चाहिये, वही युक्ति यहां टीकाकार ने उपस्थित की है—जगतमें गतिशील और गतिपूर्वक स्थिति शील पदार्थ जीव और पुद्गल ये दो ही हैं। धर्मास्तिकाय या अधर्मास्तिकाय इन दोनों द्रव्यों को प्रेरणा करके न चलाते हैं और न ठहराते हैं। यदि ये चलते हैं तो धर्मास्तिकाय इन्हें चलनेमें मदद कर देता है, जैसे चलने के स्वभाववाले मत्स्यों को चलनेमें जल सहायक हो जाता है। इसीतरह जीव और पुद्गल यदि ठहरते हैं तो छाया जिस प्रकार पथिकों को ठहरने में सहायता पहुंचाती है उसी प्रकार उन्हें ठहरने में अधर्मास्तिकाय सहायक हो जाता है यह फलितार्थ निकलता है कि गति और स्थिति का उपा

निमित्त-सहायक होय छे ते अधर्म द्रव्य छे ते अधर्मद्रव्य पण धर्म द्रव्यनी पेम असंख्यात प्रदेशवाळु छे तेने पण द्रव्यार्थतानी अपेक्षाओ एम मानवामां आव्यु छे

भावार्थ—धर्म अधर्म अने आकाश ए त्रणे अमूर्त होवाथी घट, पट आदिनी पेम इन्द्रियगम्य नथी तेथी लौकिक प्रत्यक्ष थी सिद्ध करी शकाय नथी एम कहेवामां आवे के आगम प्रमाणथी तेमनु प्रतिपादन करी शकाय छे तो ते बात बराबर छे पण आगमोनो आधार ते सिद्धांतना अनुयायीओमा ज तेनी महत्ता स्थापी शके छे तेथी आगमोक्त अर्थने पुष्टि आपनार युक्ति पण होवी जोईओ ए युक्ति ज टीकाकारे अही बोली छे—जगतमां गतिशील अने गतिपूर्वक स्थितिशील पदार्थ जीव अने पुद्गल ए बे ज छे धर्मास्तिकाय के अधर्मास्तिकाय ए बन्ने द्रव्योने प्रेरणा आपीने चलावता नथी के अटकावता नथी एम ते आपे तो धर्मास्तिकाय तेमने चालवामां मदद करे छे जेम चालवाना स्वभाववाळा मत्स्योने चालवामां पाणी सहायक थाय छे तेम धर्मास्तिकाय तेमने चालवामां सहायक थाय छे एज प्रमाणे जीव अने पुद्गल ए थीने तो जेम मुसाफरोने थोभवामां छाया सहायक थाय छे तेम तेमने थोभवामां अधर्मास्तिकाय सहायक थाय छे तेथी ए साबित थ य छे के

मूलम्—एगे पुण्णे ॥सू. ११॥

टीका—'पुण्णे' पुण्य–'पुण शुभे' इति वचनात् पुणति–शुभं–करोति–आत्मानं पवित्रीकरोतीति पुण्यं–शुभकर्म तच्च 'एगे' एकम्। यद्यपि अन्नपुण्यादिभेदेन नवप्रकारकमस्ति, यद्वा–पुण्यानुबन्धि पापानुबन्धि चेति द्विविधमपि, यद्वा–

दान कारण जीव और पुद्गल ही हैं। तथापि निमित्त कारण जो कार्य की उत्पत्ति में अवश्य अपेक्षित है वह उपादान कारण से भिन्न होना ही चाहिये। इसीलिये जीव पुद्गल की गति में निमित्तरूप से धर्मास्तिकाय की और स्थिति में अधर्मास्तिकाय की सिद्धि हो जाती है। इसी अभिप्राय से "गतिस्थित्युपग्रहोधर्माधर्मयोरुपकारः" ऐसा कहा गया है। आकाशद्रव्य की सिद्धि के विषय में इतना ही दिया गया है कि–'आकाशस्यावगाहः अपने में इन धर्मादिक द्रव्यों को स्थान देना आकाश का कार्य है। इस कार्य से उसकी भी अबाध सिद्धि हो जाती है ॥९॥१०॥

'एगे पुण्णे' 'एगे पावे।

एक पुण्य है, एक पाप है। पुण धातु से पुण्य बनता है। पुण का अर्थ शुभ होता है। जो आत्मा को पवित्र करे उसका नाम पुण्य है। शुभ कर्म ही आत्मा को पवित्र किया करते हैं, अतः शुभ कर्म ही पुण्य हैं। यह पुण्य भी सामान्य की अपेक्षा एक है। यद्यपि पुण्य प्रकृतियों के भेद से पुण्य नौ प्रकार है, तथा पुण्यानुबंधी पुण्य और पापानुबंधी पुण्य के

ગતિ અને સ્થિતિનું ઉપાદાન કારણ જીવ અને પુદ્ગલ જ છે. છતા પણ નિમિત્ત કારણ કે જે કાર્યની ઉત્પત્તિમા અવશ્ય અપેક્ષિત છે તે ઉપાદાન કારણથી જુદું હોવુ જ જોઇએ. તેથી જીવ, પુદ્ગલની ગતિમા નિમિત્તરૂપે ધર્માસ્તિકાય અને સ્થિતિમા નિમિત્તરૂપે અધર્માસ્તિકાય સિદ્ધ થઇ જાય છે. આ જ કારણે " गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्मयोरुपकारः એવુ કહેવાયુ છે આકાશ દ્રવ્યની સિદ્ધિના વિષયમા એ બતાવી દેવામા આવ્યું છે કે–"आकाशस्यावगाहः" પોતાની અદર એ ધર્માદિક દ્રવ્યોને સ્થાન દેવાનુ કાર્ય આકાશનુ છે તેકાર્યથી તેની પણ સિદ્ધિમાં મુશ્કેલી નડતી નથી ॥૧૦॥

'एगे पुण्णे' 'एगे पावे' इति

પુણ્ય એક છે, પાપ એક છે 'पुण' ધાતુમાથી પુણ્ય બને છે. પુણ એટલે શુભ આત્માને જે પવિત્ર કરે તેનું નામ પુણ્ય છે. શુભ કર્મ જ આત્માને પવિત્ર કર્યા કરે છે, તેથી શુભ કર્મ જ પુણ્ય છે. તે પુણ્ય પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે જો કે પુણ્ય પ્રકૃતિયોના ભેદ પ્રમાણે પુણ્ય નવ પ્રકારનુ છે, તથા પુણ્યાનુબંધી પુણ્ય અને પાપાનુબંધી પુણ્ય એવા બે પ્રકારના પણ ભેદ છે અથવા પ્રત્યેક જીવમા

पतिभीव भिन्नभिन्नपरावर्तं भवति, तत्प्रान्तमेदमाश्रित्य, तथापि सामान्यं विवक्षया तदेकमिति भावः ॥सू० ११॥

पापे ॥सू० १२॥

'पाप' पापम्-अशुभकर्म, 'एगे' एकम् अस्ति। तच्च यद्यपि ज्ञानावरणीयादिरूपमनेकप्रकारकम्, पुण्यानुबन्धिपापानुबन्धिभेदाद् द्विविधम्, अनन्तजीवाश्रितत्वादनन्तमपि अशुभस्वरूपसामान्यापेक्षयैकमित्याशयः। सू० १२॥

भेद दो प्रकार का भी है। अथवा हरएक जीव में पुण्य प्रकृति योग्य शुभ अध्यवसाय से सम्बन्ध होने से उनकी अपेक्षा यह अनेक प्रकार का भी हो सकता है, इस तरह अनन्त जीवों में इसका अस्तित्व पाया जाने के कारण यह अनन्त भेद वाला भी हो जाता है। फिर भी पुण्यत्व सामान्य की अपेक्षा यह एक माना गया है, क्यों कि सामान्य अपने विशेष व्यक्तियों में रहता है। इसी तरह ज्ञानावरणीय आदि अशुभकर्म भी अनेक प्रकार का होने पर भी अशुभस्वरूप सामान्य की अपेक्षा से एक है ॥११॥

पाप शब्द का अर्थ अशुभ कर्म है। यह भी ज्ञानावरणीय आदि पापप्रकृतियों की अपेक्षा से अनेक प्रकार का, पुण्यानुबंधी पाप, पापानुबंधी पाप के भेद से दो प्रकार का, और अनंत जीवों में आश्रित होने से अनंत प्रकार का भी होता है तो भी सामान्यकी अपेक्षा से एक होने में इसमें कोई बाधा नहीं है।

भावार्थ—शास्त्र में अनुपुण्य आदि भेद से पुण्य नौ प्रकार का कहा है। तथा जिस पुण्य से पुण्य का बंध हो वह पुण्यानुबंधीपुण्य, और जिससे

પુણ્યપ્રકૃતિનો બન્ધ કે અધિક પ્રમાણમાં શુદ્ધભાવ હોવાથી તેમની અપેક્ષાએ તે અનેક પ્રકારનું પણ હોઈ શકે છે, આ રીતે અનંત જીવોમાં તેનું અસ્તિત્વ હોવાને કારણે તે અનંત ભેદવાળું પણ થાય છે છતાં પણ સામાન્ય પુણ્યત્વની અપેક્ષાએ તેને એક ગણવામાં આવે છે, કારણ કે સામાન્ય પોતાની વિશેષ વ્યક્તિઓમાં રહે છે એ જ પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણીય આદિ અશુભ કર્મ પણ અનેક પ્રકારના હોવા છતાં પણ અશુભસ્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે ॥૧૧॥

પાપ શબ્દનો અર્થ અશુભકર્મ છે તે પણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ પાપપ્રકૃતિ ભેદની અપેક્ષાએ અનેક પ્રકારનું છે પુણ્યાનુબંધી પાપ અને પાપાનુબંધી પાપના ભેદથી તે બે પ્રકારનું છે, અને અનંત જીવોમાં આશ્રિત હોવાથી તે અનંત પ્રકારનું પણ છે તે પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેને એક ગણવામાં કોઈ બાધા નથી

ભાવાર્થ—શાસ્ત્રોમાં અનુપુણ્ય આદિ ભેદથી પુણ્ય નવ પ્રકારનું કહેલ છે, તથા જે પુણ્યથી પુણ્યનો બંધ બંધાય તે પુણ્યાનુબંધી પુણ્ય અને જેનાથી પાપના

पाप का बंध होता है वह पापानुबंधी पुण्य इस प्रकार से पुण्य दो प्रकार का भी होता है। तथा भिन्न २ जीवों में पुण्यकर्म की सत्ता हीनाधिकरूप में पाई ही जाती है, अतः इस अपेक्षा वह अनंतभेद वाला भी है। फिर भी यहां पर सूत्रकार ने इन सब भेदों को पुण्यत्वरूप सामान्य में अन्तर्हित कर उसे एक ही माना है, क्यों कि सामान्य में समस्त अपने भेदों का समावेश हो जाता है।

इसी तरह पाप भी प्राणातिपात आदि के भेद से अठारह प्रकार का, पुण्यानुबंधी पाप, पापानुबंधी पाप के भेद से दो प्रकार का और अनंतजीवों में रहने की अपेक्षा अनंत प्रकार का है, फिर भी पापत्वरूप अशुभ सामान्य की अपेक्षा ये सब एक है।

जिन २ कर्मों का बंध होता है उन सभी का विपाक केवल शुभ या अशुभ ही नहीं होता बल्कि अध्यवसाय रूप कारण की शुभाशुभता के निमित्त से वे शुभाशुभ दोनों प्रकार के निर्मित होते हैं। शुभ अध्यवसाय से निर्मित विपाक शुभ होता है और अशुभ अध्यवसाय से निर्मित विपाक अशुभ होता है। जिस परिणाम में संक्लेश जितना ही कम होगा, वह उतना ही अधिक शुभ, और जिस परिणाम में संक्लेश जितना अधिक होगा वह परिणाम उतना ही अशुभ होगा। शुभ परिणाम से पुण्यप्र-

---

બંધ બંધાય-તે પાપાનુબંધી પુણ્ય, એ પ્રમાણે પુણ્યતા બે પ્રકારના ભેદ થાય છે તથા જુદા જુદા જીવોમા પુણ્ય કર્મની સત્તા ઓછા વધુ પ્રમાણમા જોવા મળે છે, તેથી તે દૃષ્ટિકોણથી જોતા તે અનત ભેદવાળુ પણ છે છતા પણ સૂત્રકારે અહીં તે બધા ભેદોને પુણ્યત્વરૂપ સામાન્યમા સમાવી લઈને એક જ માનેલ છે. કારણ કે સામાન્યમાં તેના સઘળા ભેદોનો સમાવેશ થઈ જાય છે

એ જ પ્રમાણે પાપ. પણ પ્રાણાતિપાત આદિના ભેદથી અઢાર પ્રકારનુ છે. પુણ્યાનુબંધી પાપ અને પાપાનુબંધી પાપના ભેદથી બે પ્રકારનુ, અને અનત જીવોમાં રહેવાની અપેક્ષાએ અનત પ્રકારનુ છે તો પણ પાપત્વરૂપ અશુભ સામાન્ય અપેક્ષાએ તે બધા એક જ છે

જે જે કર્મોનો બંધ પડે છે તે બધાનો વિપાક (ફળ) કેવળ શુભ કે અશુભ જ નથી હોતો પરન્તુ અધ્યવસાયરૂપ કારણની શુભાશુભના નિમિત્તથી તે શુભાશુભ બન્ને પ્રકારનુ થાય છે. શુભ અધ્યવસાયથી થયેલ વિપાક શુભ હોય છે અને અશુભ અધ્યવસાયથી નિર્મિત વિપાક અશુભ હોય છે. જે પરિણામમાં સકલેશ જેટલો ઓછો હશે, તે પરિણામ એટલુ જ વધારે શુભ હશે. જે પરિણામમા સકલેશ વધારે હશે તે પરિણામ એટલ જ અશુભ હશે શુભ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિયોનો

कृतियों का बंध होता है, और अशुभ परिणाम से पाप प्रकृतियों का बंध होता है, ऐसा जो शास्त्रीय विधान है वह आपेक्षिक है। क्यों कि जैसे अशुभ अध्यवसाय के समय प्रथम आदि गुणस्थानों में ज्ञानावरणीय आदि सभी पुण्य पाप प्रकृतियों का यथासंभव बंध होता है वैसे ही छठे आदि गुणस्थानों में शुभ अध्यवसाय के समय भी सभी पुण्य पाप प्रकृतियों का यथासंभवबंध होता ही है, अतः शुभ अध्यवसाय से पुण्य का और अशुभ अध्यवसाय से पाप का बंध होता है, यह कथन एकान्ततः संगत कैसे माना जा सकता है, इसलिये यह कथन आपेक्षिक ही मानना चाहिये। और अनुभाग एवं स्थितिबंध की अपेक्षा इसकी संगति कर लेनी चाहिये। कोई भी एक परिणाम ऐसा नहीं जो एकान्ततः शुभ या अशुभ कहा जा सके। हरएक परिणाम शुभ, अशुभ, अथवा उभयरूप होने पर भी उसमें जो शुभत्व, अशुभत्व का व्यवहार किया जाता है वह गौण मुख्य भाव की अपेक्षा से समझना चाहिये, इसी लिये जिस शुभ परिणाम से पुण्य प्रकृतियों में शुभ अनुभागबंधता है उसी परिणाम से पाप प्रकृतियों में अशुभ अनुभाग भी बंधता है। इसके विपरीत जिस परिणाम से अशुभ अनुभाग बंधता है उसी परिणाम से पुण्य प्रकृतियों में शुभ अनुभाग भी बंधता है। अन्तर इतना ही है–जैसे प्रकृष्ट शुभ परिणाम से होने वाला

બંધ બંધાય છે, અને અશુભ પરિણામથી પાપપ્રકૃતિઓનો બંધ બંધાય છે એવું જે શાસ્ત્રીય વિધાન છે તે આપેક્ષિક છે કારણ કે જેમ અશુભ અધ્યવસાય વખતે પ્રથમ આદિ ગુણસ્થાનોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ સઘળી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિઓનો જે પ્રમાણે બંધ બંધાય છે એ જ પ્રમાણે છઠ્ઠા વગેરે શુભસ્થાનોમાં શુભ અધ્યવસાયને વખતે પણ સઘળી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિઓનો યથાસંભવ બંધ બંધાય છે જ તો શુભ અધ્યવસાયથી પુણ્યનો અને અશુભ અધ્યવસાયથી પાપનો બંધ બંધાય છે, તે કથન એકાન્તતા કેમ કરી રીતે માની શકાય ? તેથી તે કથન આપેક્ષિક જ માનવું જોઇએ અને અનુભાગ અને સ્થિતિબંધની અપેક્ષાએ તેની સંગતતા સમજી લેવી જોઇએ કોઇ પણ એક પરિણામ એવું નથી કે જે એકાન્તતા શુભ કે અશુભ કહી શકાય દરેક પરિણામ શુભ, અશુભ અથવા બન્ને રૂપ હોવા છતાં પણ તેમાં જે શુભત્વ અશુભત્વનો વ્યવહાર કરવામાં આવે છે તે ગૌણ મુખ્ય ભાવની અપેક્ષાએ માનવો જોઇએ તેથી જે શુભ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિઓમાં શુભ અનુભાગ બંધાય છે એ જ પરિણામથી પાપપ્રકૃતિઓમાં અશુભ અનુભાગ પણ બંધાય છે તેથી ઉલટું જે પરિણામથી અશુભ અનુભાગ બંધાય છે એજ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિઓમાં શુભ અનુભાગ પણ બંધાય છે તેમાં જરાયે વિરોધ નથી કે—જેમ પ્રકૃષ્ટ શુભ

मूलम्—एगे बंधे ॥सू. १३॥

टीका—'बंधे' बन्धः-बन्धनं बन्धः, यदि जीवः कषायवान् भवति तदा स कषायसद्भावात् कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् उपादत्ते गृह्णाति, स कर्मपुद्गलसंश्लेषो बन्ध इत्युच्यते, स 'एगे' एकोऽस्तीत्यर्थः। बन्धस्य प्रकृति-स्थितिप्रदेशानुभावभेदाच्चातुर्विध्यमस्ति, तथापि सामान्यतः स एक इति भावः। यद्वा-द्रव्यभावभेदाद् बन्धो द्विविधः-द्रव्यतो निगडादिभिः, भावतस्तु कर्मणा, तयोश्च बन्धनसामान्यविवक्षया एको बन्ध इति भावः ॥सू. १३॥

शुभ अनुभाग प्रकृष्ट होता है और अशुभ अनुभाग निकृष्ट होता है वैसे ही प्रकृष्ट अशुभ परिणाम से बँधने वाला अशुभ अनुभाग प्रकृष्ट होता है और शुभ अनुभाग निकृष्ट होता है। इसी तरह स्थितिबंध में भी यही बात समझना चाहिये। इस तरह पुण्य पाप प्रकृतियों भिन्नता आने पर भी उनमें जो शास्त्रकार ने एकता का कथन किया है वह पुण्यत्व और पापत्वरूप सामान्य की अपेक्षा से किया है ॥११॥१२॥

'एगे बंधे' 'एगे मोक्खे' इति।

बंध एक है मोक्ष एक है। यदि जीव कषाय युक्त होता है तो वह कषाय के सद्भाव से कर्म के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है वह बंध कहलाता है। यह बंध एक है। यद्यपि प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध और अनु-भागबंध, इस तरह से बंध के चार भेद हैं तो भी वह सामान्य की अपेक्षा एक है। अथवा द्रव्यबंध और भावबंध इस प्रकार से भी बंध

પરિણામથી બનાર અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ (બળવાન) હોય છે અને અશુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ (નબળો) હોય છે એ જ પ્રમાણે પ્રકૃષ્ટ અશુભ પરિણામથી બધાનાર અશુભ અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ હોય છે અને શુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ હોય છે એ જ પ્રમાણે સ્થિતિબધમા પણ એ જ વાત સમજવાની છે. આ રીતે પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોમાં ભિન્નતા હોવા છતાં પણ શાસ્ત્રકારે જે એકતા દર્શાવી છે તે પુણ્યત્વ અને પાપત્વ રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ દર્શાવેલ છે ॥૧૧॥૧૨॥

'एगे बंधे,' 'एगे मोक्खे' इति—

બધ એક છે, મોક્ષ એક છે જીવ કષાય યુકત થાય છે તો કષાયના સદ્ભાવથી કર્મનાં યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, તેને બધ કહે છે તે બધ એક છે જો કે પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, પ્રદેશબધ અને અનુભાગબધ, એ રીતે બધના ચાર ભેદ પડે છે, છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક છે અથવા દ્રવ્યબંધ અને

एगे मोक्खे ॥सू १४॥

'मोक्खे' मोक्षः-मोचनम्-आत्मन कर्मपाशाद् वियोजन मोक्ष, 'एगे' एकः, ज्ञानावरणीयादिकर्मापेक्षया अष्टकर्मतो मोक्षोऽप्यष्टविधः, तथापि मोचनसामान्यापेक्षया स चैक इतिभावः। यद्वा द्रव्यभावभेदाद् द्वैविध्येऽपि मोक्षसामान्यापेक्षया एक इति भावः। यद्वा जीवस्य मोक्षः सकृदेव भवति, तथा चैकैकस्य जीवस्य एकैक एव मोक्षः, मुक्तस्य पुनर्मोक्षासम्भवात्, तदपेक्षया एको मोक्ष इति भावः ॥सू १४॥

दो प्रकार का है। निगड आदि से जो बधन होता है वह द्रव्य बंध है। तथा कर्म पुद्गलों का और आत्मप्रदेशों का एकक्षेत्रावगाहरूप सश्लेष होता है वह भावबंध है। इस प्रकार से बंध दो प्रकार का होकर भी बंधन सामान्य की विवक्षा से एक ही है ॥१३॥

आत्मा का कर्मरूप पाश से अलग होना इसका नाम मोक्ष है। यह मोक्ष यद्यपि ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों में से सब कर्मों छूटने से आठ प्रकार का है, फिर भी मोचन सामान्य की अपेक्षा से वह एक प्रकार का ही है। अथवा द्रव्य और भाव के भेद से यह मोक्ष दो प्रकार का भी है तो भी मोक्षसामान्य की अपेक्षा यह एक ही है। इसमें भेद नहीं है। अथवा जीव की मुक्ति एक ही बार होती है, बार २ नहीं होती। इसलिये एक एक जीव का एक एक ही मोक्ष है। मुक्त हुए जीव को पुनः मोक्ष का अभाव है। इस अपेक्षा से मोक्ष एक है। ॥१४॥

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा बंध और मोक्ष में सामान्य

બાવબંધ નામના પણ તેના બે ભેદ છે. નિગડ આદિથી જે બધ બંધાય છે તે દ્રવ્યબંધ છે, તથા કર્મપુદ્ગલોનો અને આત્મપ્રદેશોનો જે ક્ષેત્રાવગાહરૂપ શ્લેષ થાય છે તે ભાવબંધ છે આ પ્રમાણે બે પ્રકારના બંધ હોવા છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ બંધ એક જ છે ॥૧૩॥

કર્મરૂપી બધનથી આત્માનુ અલગ થવુ તે મોક્ષકહેવાય છે, તે મોક્ષ પણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના છૂટવાને લીધે આઠ પ્રકારનો છે પણ મુક્ત થવારૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક પ્રકારનો જ છે અથવા દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બે ભેદથી મોક્ષ બે પ્રકારનો પણ છે, છતાં મોક્ષ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક પ્રકારનો જ છે તેમાં ભેદ નથી. અથવા જીવની મુક્તિ એક જ વાર જ થાય છે. વાર વાર નહીં તેથી પ્રત્યેક જીવનો એક એક જ મોક્ષ છે મુક્ત થયેલ જીવને ફરી મોક્ષનો અભાવ હોય છે તે અપેક્ષાએ મોક્ષ એક જ છે ॥૧૪॥

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા બંધ અને મોક્ષમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતા

की अपेक्षा एकत्व-भेदाभाव-कहा है। बंध का लक्षण-"सकषायत्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् आदत्ते स बंधः' अर्थात् जीव जब कषाय से संतप्त होता है तब वह अनेक प्रकार की पौद्गलिक वर्गणाओं में से कर्मरूप परिणाम को प्राप्त करने की योग्यता रखनेवाली वर्गणाओं को ग्रहण करता है। और ग्रहण करके उन्हें आत्मप्रदेशों के साथ विशिष्टरूप से जोड लेता है। यद्यपि जीव स्वभावतः अमूर्त है और पौद्गलिक कर्मवर्गणाएँ मूर्त हैं, अतः अमूर्त के साथ मूर्त का विशिष्ट रूप से जुडना असंभव जैसी बात है फिर भी आत्मा अनादि काल से कर्म संबंध वाला होने के कारण मूर्त जैसा हो जाने से मूर्त कर्मपुद्गलों को ग्रहण कर लेता है और उन्हें कर्मरूप में परिणमा लेता है। जिस प्रकार खाये हुए भोजन का विविध रस रुधिर आदि रूप में परिणमन हो जाता है उसी प्रकार गृहीत कर्मवर्गणाओं का भी ज्ञानावरणीय आदि रूप से परिणमन हो जाता है। आत्मप्रदेशों के साथ कर्मरूप में परिणत हुए पुद्गलों का यह संबंध ही-संयोगरूप संबंध ही-बंध है। शास्त्र में मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये कर्मबंध के हेतु कहे गये है। तात्पर्य यह है कि प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध और प्रदेशबंध, इस प्रकार से जो चार प्रकार का

દર્શાવી છે બંધનું લક્ષણ આ પ્રમાણે છે-सकषायत्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् आदत्ते स बंधः એટલે કે જ્યારે જીવ કષાયયુક્ત થાય છે ત્યારે તે અનેક પ્રકારની પૌદ્ગલિક વર્ગણાઓમાંથી કર્મરૂપી પરિણામને પ્રાપ્ત કરવાની યોગ્યતાવાળી વર્ગણાઓને ગ્રહણ કરે છે અને તેમને ગ્રહણ કરીને આત્મપ્રદેશની સાથે વિશિષ્ટ રીતે જોડી દે છે. જો કે જીવ સ્વભાવથી અમૂર્ત છે, અને પૌદ્ગલિક કર્મવર્ગણાઓ મૂર્ત છે, તેથી અમૂર્તની સાથે મૂર્તનું વિશિષ્ટ રીતે જોડાવું તે વાત અસંભવિત જેવી લાગે છે છતા પણ આત્મા અનાદિ કાળથી કર્મસંબંધવાળો હોવાને કારણે મૂર્ત જેવો થઈ જવાથી મૂર્ત કર્મપુદ્ગલોને ગ્રહણ કરી લે છે, અને તેને કર્મરૂપે પરિણમાવે છે જેમ ખાધેલ ભોજનનો વિવિધ પ્રકારનો રસ રકત આદિ રૂપે પરિણમે છે એ જ પ્રમાણે ગ્રહણ કરાયેલ કર્મવર્ગણાઓ પણ જ્ઞાનવરણીય આદિ રૂપે પરિણમે છે આત્મપ્રદેશોની સાથે કર્મરૂપે પરિણત થયેલ પુદ્ગલોનો તે સંબંધ જ-સંયોગરૂપ જ 'બંધ' ગણાય છે. શાસ્ત્રમાં મિથ્યાદર્શન અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, આ બધાને કર્મબંધના હેતુ બતાવ્યા છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ, અને પ્રદેશબંધ એ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના જે બંધતત્વ દર્શાવ્યા છે તેમાના પ્રકૃતિ

बंधसत्त्व कहा गया है उनमें प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध, ये दो योग से होते हैं, तथा स्थितिबंध, और अनुभागबंध ये दो कषाय से होते हैं। बंधसत्त्व के ये चार प्रकार एक ही कर्म में समयित चार अंशरूप हैं। गुणस्थानों को लेकर जब बंधबंध के कारणों का विचार किया जाता है तब वहां पर ऐसा विचार किया जाता है कि प्रथमगुणस्थान में बंध का कारण मिथ्या दर्शन है, चौथे गुणस्थान तक अविरति, छठवें गुणस्थानतक प्रमाद, दशवें गुणस्थान तक कषाय और तेरहवें गुणस्थान तक योग। इस तरह इन पांच बंध हेतुओं में से जहां २ पूर्व २ के बंध हेतु होंगे, वहां उसके बाद के भी सभी होंगे ऐसा नियम है। परन्तु जब उत्तर का होगा तब पूर्व का बंध हेतु हो भी और न भी हो। इस तरह बंध में मिथ्यात्व आदि अनेक कारण पड़ते हैं फिर भी यहां जो "सकषायत्वज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् उपादत्ते स बन्धः" ऐसा कहा गया है वह अन्य हेतुओं की अपेक्षा कषाय की प्रधानता प्रदर्शित करने के लिये ही कहा गया जानना चाहिये।

शंका—कषाय से जो कर्मबंध होता है वह तो दशवें गुणस्थान तक ही होता है, परन्तु योग से जो बंध होता है वह तेरहवें गुणस्थान तक होता है, इस तरह बंध हेतुओं में कषाय में प्रधानता न बनकर केवल योग में ही प्रधानता आती है?

બંધ અને પ્રદેશબંધ, એ બન્ને યોગથી થાય છે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ એ બન્ને કષાયથી થાય છે એપ્રમાણે આ આત્મા પ્રત્યેક જ કર્મમાં ચાર પ્રકારનો બંધ કરે છે ગુણસ્થાનોને લઈને જો કર્મબંધના કારણોનો વિચાર કરવામાં આવે તો પહેલા ગુણસ્થાનમાં બંધનું કારણ મિથ્યાદર્શન છે બીજા ગુણસ્થાન સુધી અવિરતિ, છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી પ્રમાદ, દશમા ગુણસ્થાન સુધી કષાય અને તેરમા ગુણસ્થાન સુધી યોગ આ રીતે એ પાંચ બંધહેતુઓમાંથી જ્યાં જ્યાં પૂર્વના (આગળના) બંધ હેતુ હશે ત્યાં તેમની પાછીના પણ બધા બંધહેતુ હશે એવો નિયમ છે પણ જ્યારે પાછીના—હશે ત્યારે પૂર્વના આગળના બંધહેતુ હોય પણ ખરા અને ન પણ હોય આ રીતે બંધમાં મિથ્યાત્વ આદિ અનેક કારણો રહેલા હોય છે છતાં પણ અહીં જે "सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् उपादत्ते स पुद्गलबन्धः" એવું કહેવામાં આવ્યું છે તે બધા હેતુઓ કરતાં કષાયની પ્રધાનતા બતાવવાને માટે જ કરવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવાનું છે

શંકા-કષાયથી કર્મનો જે બંધ છે તે તો દશમા ગુણસ્થાન સુધી જ બંધાય છે પણ યોગથી જે કર્મબંધ બંધાય છે તે તેરમા ગુણસ્થાન સુધી બંધ છે, આ રીતે બંધ હેતુઓમાં કષાયની પ્રધાનતાને બદલે યોગની પ્રધાનતા શું આવી જતી નથી?

समाधान—योग के निमित्त से जायमान प्रकृति और प्रदेशबंध आत्मा को उतना पराधीन नहीं बनाति है कि जितना पराधीन स्थितिबंध और अनुभाग बंध बनाते है अतः बंधों में इन दो बधो की मुख्यता प्रदर्शित करने के लिये ऐसा कहा गया है

कर्म पुद्गलों में जो आत्मा के ज्ञानादिक गुणों को रोकने की तथा सुख दुःख आदि देने की प्रकृति की निर्मिति होती है–स्वभाव–बनना है–इसी का नाम प्रकृतिबंध है १। प्रकृति का कर्मपुद्गलो में अमुक समयतक च्युत नहीं होना–इसी प्रकृति का उनमें अमुक समय तक बने रहने का निर्माण होना इसका नाम स्थितिबंध है २। तीव्रता मंदता आदि रूप में कर्मपुद्गलों का फल देना इसका नाम अनुभागबंध है ३। कर्मपुद्गलो में स्वभावानुसार अमुक २ परिमाण में बट जाने का निर्माण होना इसका नाम प्रदेशबंध है ४। प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध में यही अन्तर है कि आत्मा के साथ बंधदशा को प्राप्त हुए कर्मपुद्गलों में जो ज्ञानादिगुणों को रोकने का स्वभाव निर्मित होता है वह तो है प्रकृतिबंध, और कर्मपुद्गल जो आत्मा के साथ बंध को प्राप्त हुए हैं वे कितने हुए है, इस प्रकार प्रदेशगणना का नाम प्रदेशबंध है। इस तरह यह बंध अनेक प्रकार का है, फिर भी बध सामान्य की अपेक्षा वह एक है। उसमें भेद नहीं है। चाहे प्रकृतिबंध हो, चाहे प्रदेशादि-

---

સમાધાન—યોગના નિમિત્તથી પેદા થયેલ પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ આત્માને એટલો પરાધીન બનાવતા નથી કે જેટલો પરાધીન સ્થિતિબંધ અને અને અનુભાગબંધ બનાવે છે, તેથી બંધોમા તે બે બંધોની પ્રધાનતા બતાવવાને માટે એવુ કહેવાયુ છે

કર્મપુદ્ગલોમા આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોને રોકવાની તથા સુખદુઃખ આદિ દેવાની જે પ્રકૃતિનુ નિર્માણ થાય છે સ્વભાવ બને છે તેનુ નામ જ પ્રકૃતિબંધ છે. (૧) પ્રકૃતિનુ કર્મપુદ્ગલોમા અમુક સમય સુધી ચ્યુત ન થવુ–એ જ પ્રકૃતિનુ તેમનામાં અમુક સમય સુધી સ્થિર રહેવાનુ નિર્માણ થવુ–તેનુ નામ સ્થિતિબંધ (૨) તીવ્રતા મંદતા આદિ રૂપે કર્મપુદ્ગલોનુ ફળ દેવુ તેનુ નામ અનુભાગબંધ છે (૩)કર્મપુદ્ગલોમા સ્વભાવાનુસાર અમુક પ્રમાણમા વહેચાઈ જવાનું નિર્માણ થવુ તેને પ્રદેશબંધ કહે છે (૪) પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધમા એટલો જ તફાવત છે કે આત્માની સાથે બંધદશા પામેલ કર્મપુદ્ગલોમા જે જ્ઞાનાદિક ગુણોને રોકવાનો સ્વભાવ નિર્મિત થાય છે તે પ્રકૃતિબંધ છે, અને આત્માની સાથે બંધ પ્રાપ્ત જે કર્મપુદ્ગલો છે તે કેટલા થયા છે, તે પ્રદેશ ગણનાને પ્રદેશબંધ કહે છે આ રીતે તે બંધના અનેક પ્રકાર છે, છતા પણ બંધ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક છે તેમા ભેદ નથી માટે પ્રકૃતિ-

पद हो-कोई भी पद हो है तो वह सामान्यतया पद ही, अतः इस विवक्षा से वह एक है। इसीलिये सूत्रकारने "एगे पदे" ऐसा कहा है ॥१३॥

ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का आत्म से आत्यन्तिक विनाश होना इसका नाम मोक्ष है। एक बार बंधा हुआ कर्म कभी तो क्षय को प्राप्त होता ही है, पर वैसे कर्म का बंधन फिर सम्भव हो अथवा उस प्रकार का कोई कर्म अभी शेष हो तो ऐसी स्थिति में 'कर्म का आत्यन्तिक क्षय हुआ है" ऐसा नहीं कहा जा सकता। आत्यन्तिक क्षय का तात्पर्य है पूर्वबद्धकर्म का और नवीन कर्म के बाँधने की योग्यता का अभाव। मोक्ष की प्राप्ति आत्यन्तिक कर्मक्षय हुए बिना कदापि सम्भव नहीं हो सकती है, इसलिये ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों के क्षय की अपेक्षा मोक्ष भी आठ प्रकार का माना जा सकता है परन्तु कर्मविमोचन रूप सामान्य की अपेक्षा वह भी एक है। अथवा जो जीव एक बार मोक्ष प्राप्त कर लेता है वह फिर से संसार में जन्म के कारणों का अभाव होने से जन्म धारण नहीं करता है, अतः जो स्थिति प्राप्त हो गई वह सादि होकर भी अपर्यवसित बनी रहती है, इसलिये पुनः प्राप्ति का अभाव होने से मोक्ष एक ही है ॥१४॥

બંધ હોય છે પ્રદેશાદિ બંધ હોય- કોઈપણ બંધ હોવ-પણ સામાન્ય રીતે તો તેમાં બંધ જ છે, આ દૃષ્ટિકોણથી જોતાં તે બોધ જ છે તેથી સૂત્રકારે એમ કહ્યું છે ॥૧૩॥

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોનો આત્મામાંથી તદ્દન નાશ થવો તેનું નામ મોક્ષ છે બોક્ષ થવા બધાયેલ કર્મનો કયારેક તો ક્ષય થાય છે જ, પણ જેવાં કર્મનું બંધન દ્વારા સર્જાયેલ પણ છે-અથવા એવા પ્રકારનું કોઈ પણ કર્મ હજી બંધન હોય તો એવી સ્થિતિમાં કર્મોનો આત્યંતિક ક્ષય થયો છે" એમ કહી શકાય નહીં આત્યન્તિક ક્ષય નું તાત્પર્ય એ છે કે પહેલા બધાયેલા કર્મોનો તથા નવીન કર્મો બધાવાની યોગ્યતાનો અભાવ આત્યન્તિક કર્મક્ષય વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ કદી પણ સંભવી શકતી નથી, તેથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ મોક્ષ પણ આઠ પ્રકારનો માની શકાય છે, પણ કર્મવિમોચન રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે પણ બોધ જ છે આશય કે જે જીવ બોધ પ્રાપ્ત કરી લે છે તે જીવને સંસારમાં ફરી જન્મ ધારણ કરવાના કારણોનો અભાવ હોવાથી ફરી જન્મ પ્રાપ્ત કરવો પડતો નથી તેથી જે સ્થિતિ પ્રાપ્ત થઈ જાય તે આદિ હોવા છતાં પણ અપર્યવસિત (અનન્ત) બની જાય છે, આ રીતે પુનઃ પ્રાપ્તિના અભાવને કારણે પણ મોક્ષ બોધ જ છે ॥૧૪॥

मूलम्—एगे आसवे ॥सू. १५॥

टीका—जीवस्य पुण्यपापकर्मभ्यां सह यः संयोगः स बन्धः इत्युक्तं, तस्य कारणं निरूपयितुमाह—'एगे आसवे' इति। एक आस्रवः, आस्रवन्ति =प्रविशन्ति येन कर्माण्यात्मनि स आस्रवः कर्मबन्धकारणमित्यर्थः। आस्रवस्य मिथ्यात्वादिभेदादनेकविधत्वेऽपि आस्रवसामान्यादेकत्वमिति भावः।

यद्वा—द्रव्यभावभेदादास्रवो द्विविधः, यथा जलोपरिवर्तिनावादौ छिद्रद्वारेण जलप्रवेशो भवति, यथा वा नालीरूपेण मार्गेण सरसि जलस्य प्रवेशः तत्र च्छिद्रा-द्रव्यास्रवः, भावास्रवस्तु इन्द्रियादिः, तेन द्वारेण हि जीवप्रदेशेषु कर्मपुद्गलानां संश्लेषो भवति। एवमास्रवस्य द्वैविध्येऽपि सामान्यादेकत्वमिति भावः॥सू. १५॥

'एगे आसवे' इति।

एक आस्रव है, एक संवर है। जीव का पुण्य और पाप के साथ जो संबंध होता है उसका नाम बंध है, ऐसा जो अभी कहा है सो इस बंध का जो कारण है वह "आत्मा में जिससे कर्म प्रवेश करते है" इस व्युत्पत्ति के अनुसार आस्रव है। यह मिथ्यात्व आदि के भेद से अनेक प्रकार का है, तो भी सामान्य की अपेक्षा से एक है।

अथवा—द्रव्य और भाव के भेद से भी आस्रव दो प्रकार का होता है। जल के ऊपर रही हुई नाव में छिद्र द्वारा जलका आना नाली मार्ग से तालाब में पानी का आना यह सब जैसे द्रव्यास्रव है। इसी तरह इन्द्रियादि द्वारा जीव के प्रदेशों में जो कर्मपुद्गलों का संश्लेष होता है यह भावास्रव है इस तरहआस्रव में द्विविधता होने पर भी सामान्य की अपेक्षा यह एक ही है॥१५॥

'एगे आसवे' इति'

આસ્રવ એક છે સવર એક છે જીવનો પુણ્ય અને પાપની સાથે જે સબધ થાય છે. તેનુ નામ બધ છે, એવુ હમણા કહેવામા આવ્યુ છે તો તે બધનુ જે કરણ છે તે "આત્મામા જે વડે કર્મ પ્રવેશ કરે છે" તે વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આસ્રવ છે તે મિથ્યાત્વ આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારના છે છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે અથવા દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બે ભેદથી પણ આસ્રવ બે પ્રકારના છે પાણી ઉપર તરતી હોડીમા છિદ્ર દ્વારા જલનુ પેસવુ, નાળામા તળાવમા પાણીનુ આવવુ, એ બધા જેમ દ્રવ્યાસ્રવ છે તેમ ઇન્દ્રિયાદિ દ્વારા જીવના પ્રદેશમા જે કર્મપુદ્ગલોનો સશ્લેષ થાય તે ભાવાસ્રવ છે આ રીતે આસ્રવમાં દ્વિવિધતા હોવા છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક જ છે॥૧૫॥

एगो संवरो ।सू ८६॥

आस्रवप्रतिपक्षभूतं संवरं निरूपयति-'एगो संवरो' इति, एकः संवरः । संक्लिष्टकर्मणः कारणभूतानां प्राणातिपातादीनां यत्परिणामेन यः संवरः । आस्रवनिरोध इत्यर्थः । स च गुप्त्यादिभिरुपायैर्भवति । संवरोपायभूतानां गुप्त्यादीनां नामतोऽनेके भेदाः सन्ति, तान् भेदानाश्रित्य संवरोऽनेकविधः, किं च द्रव्यभावभेदाद् द्वैविध्यमपि संवरस्य संभवति, तथापि संवरसामान्यादेक इति भावः ॥स १६॥

'एगो संवरो' इति।

आस्रव का प्रतिपक्षी तत्त्व संवर है। प्राणातिपात आदि जो कर्म के आने के कारण हैं वे जिस आत्मपरिणामद्वारा रोक दिये जाते हैं वह आत्मपरिणाम संवर है। अर्थात् आस्रव का निरोध होना ही संवर है। यह संवर गुप्ति आदि उपायों द्वारा होता है। संवर के उपायभूत गुप्ति आदि के अनेक भेद हैं, अतः इन भेदों की अपेक्षा संवर भी अनेक प्रकार का है, तथा द्रव्यसंवर, और भावसंवर इस तरह से भी संवर दो प्रकार के कहे गये हैं तो भी संवर सामान्य की अपेक्षा यह एक ही है।

आचार्य-जिस प्रकार छिद्र द्वारा नाव में पानी आता है इसी प्रकार मिथ्यात्व आदि द्वारा आत्मा में कर्मरूपपानि का आना होता है। यह आना ही आस्रव है। यह आस्रव संसार का कारण है। आस्रव से बंध होता है, अतः आस्रव को बंध का कारण माना गया है। यह कर्मबंध हेतु रूप जो आस्रव है वह मिथ्यात्वादि के भेद से विविध प्रकार का है-फिर भी यहां जो इसे सूत्रकार ने एक कहा है। वह आस्रव सामान्य की अपेक्षा से कहा है। जिस प्रकार विविध वृक्षों में वृक्षत्व सामान्य

'एगो संवरो' इत्यादि

આસ્રવથી ઉલટો પ્રકાર સંવર છે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મને આવવાના જે દ્વારો છે તેમને જે આત્મપરિણામ દ્વારા રોકવામાં આવે છે તે આત્મ પરિણામને સંવર કહે છે એટલે કે આસ્રવનો નિરોધ થવો તે જ સંવર છે તેમ સંવર ગુપ્તિ આદિ રૂપ જે ઉપાયો દ્વારા થાય છે સંવરના ઉપાયભૂત ગુપ્તિ આદિના અનેક ભેદ છે તેથી તે ભેદોની અપેક્ષાએ સંવર પણ અનેક પ્રકારનો છે તથા દ્રવ્યસંવર અને ભાવસંવર એવા તેના બે ભેદ પણ છે છતાં સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક જ છે

આચાર્ય—જેમ નૌકામાં છિદ્ર દ્વારા પાણી પ્રવેશે છે તેમ આત્મામાં મિથ્યાત્વ આદિ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોનો પ્રવેશ થાય છે આ પ્રમાણે આવવું એને જ આસ્રવ કહે છે આ આસ્રવ જ બંધનું કારણ છે આસ્રવથી બંધ થાય છે, તેથી આસ્રવને બંધનું કારણ માનવામાં આવ્યું છે તે કર્મબંધના હેતુરૂપ જે આસ્રવ છે તે મિથ્યાત્વ આદિના ભેદથી વિવિધ પ્રકારનો છે, છતાં પણ તેને સૂત્રકારે એક કહેલ છે તે આસ્રવ સામાન્યની અપેક્ષાએ કહેલ છે જેમ જુદાં જુદાં વૃક્ષોમાં એક વૃક્ષત્વ

मूलम्--एगा वेयणा ॥सू १७॥

टीका-'एगा वेयणा' एका वेदना, स्वभावेन, उदीरणा करणेन वा उदयावलिकाप्रविष्टस्य कर्मणोऽनुभवनं वेदना। यद्यपि-ज्ञानावरणीयादिभेदात् कर्मणोऽष्टविधत्वे तद्वेदनाऽप्यष्टविधा भवति, किं च विपाकोदय-प्रदेशोदय भेदाद् वेदनाया द्वैविध्यम्, तथापि वेदनासामान्यादेका भवतीति भावः ॥सू. १७॥

रहता है और उस अपेक्षा से समस्त वृक्ष एक माने जाते हैं उसी प्रकार मिथ्यादर्शन आदि में तथा द्रव्यास्रव, भावास्रव रूप एक सामान्यधर्म रहता है। इस कारण वह भी एक है। भिन्न २ नहीं।

संवर का अर्थ है-आस्रव का रुकना-जिन मार्गभूत कारणों से कर्मों का आना होता था उन मार्गों का बंद हो जाना इसी का नाम संवर है। यह संवर गुप्त्यादिक उपायों द्वारा साध्य होता है। यहां आदि पद से समिति, धर्म, अनुप्रक्षा परीषह जय और चारित्र का ग्रहण हुआ है। गुप्ति समिति आदि के भेद से यह संवर तत्त्व अनेक प्रकार का है फिर भी आस्रव प्रतिपक्ष रूप संवर सामान्य की अपेक्षा यह तत्त्व एक ही है ॥१६।१६॥

'एगा वेयणा' इति।

टीकार्थ-एक वेदना है, एक निर्जरा है। स्वभाव से अथवा उदीरणा कारण से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्म का अनुभव करना इसका नाम वेदना है। यह वेदना ज्ञानावरणीय आदि के भेद से आठ प्रकार के कर्मों की

સામાન્ય રહે છે અને તે અપેક્ષાએ સમસ્ત વૃક્ષોને એક માનવામાં આવે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યા દર્શન આદિમાં તથા દ્રવ્યાસ્રવ, ભાવાસ્રવમાં આસ્રવરૂપ એક સામાન્ય ધર્મ રહે છે તે કારણે તે પણ એક છે તેમનામાં ભિન્નતા નથી

સંવર એટલે આસ્રવને રોકવા તે—જે માર્ગભૂત કારણોથી કર્મોનું આગમન થતુ હતુ તે માર્ગોનુ બંધ થઈ જવુ તેનુ નામ સંવર છે તે સંવર ગુપ્તિ આદિ ઉપાયોથી સાધી શકાય છે અહીં 'આદિ' પદથી સમિતિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષહ, જય અને ચારિત્ર ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે- ગુપ્તિ, સમિતિ આદિના ભેદથી તે સંવર તત્વ અનેક પ્રકારનું છે છતા પણ આસ્રવથી ઉલટો 'સંવર' તો સામાન્ય ધર્મની અપેક્ષાએ તે તત્વ એક જ છે ॥૧૬॥

"एगा वेयणा" इति।

ટીકાર્થ-વેદના એક છે નિર્જરા એક છે સ્વભાવથી અથવા ઉદીરણા કરણથી ઉદયાવલિકામાં પ્રવેશ થયેલ કર્મનો અનુભવ કરવો તેનુ નામ વેદના છે તે વેદના પ્રત્યેક જીવને જ્ઞાનાવરણીય આ આઠ પ્રકારના કર્મોની હોય છે કર્મ આઠ પ્રકારના

तपसा निर्जरा च ॥सू ४८॥

एवमाश्रवस्य सप्तभेदत्वमुक्त्वा बन्धस्वरूपनिरूपणानन्तरं क्रमप्राप्तत्वात् निर्जरां निरूपयन्नाह—'तपसा निर्जरा' चेति। तपसा निर्जरा—निर्जरणं निर्जरा विशरणं परिशटनमित्यर्थः यद्यपि साऽनेकविधा—तथापि—अष्टविधकर्मभेदाद् भवति निर्जराऽप्यष्टविधा, किंच—सा द्वादशविधतपोऽन्वयतया द्वादशविधा, किंच—अकाम क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंशमशकनग्नत्वारतिस्त्रीचर्यानिषद्याक्रोशवधयाचनालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनरूपपरीषहाणामुदयेन सम्यक्सहनतया नानाविधा, किंच—द्रव्यतो निर्जरा यस्मात्सचेतनस्तु कर्मणोऽष्टविधत्वात् द्रव्यभावभेदाद् द्विविधाऽपि सती पुनरपि निर्जरा—सामान्यात्तथा भवतीति भावः।

सम्यक् जीव को होती है—अब कर्म आठ प्रकार का होने से उनका वेदना भी आठ प्रकार की होती है। तथा विपाकोदय और प्रदेशोदय के भेद से यह वेदना दो प्रकार की भी होती है। इस तरह वेदना में विविधता आने पर भी यह वेदना सामान्य की अपेक्षा से एक ही है ॥४७॥

'तपसा निर्जरा' चेति।

तात्पर्य—वेदना के होने पर आत्मप्रदेशों से जो कर्मों का परिशाटन—अलग होना होता है इसी का नाम निर्जरा है। यह निर्जरा भी आठ प्रकार के कर्मों में से अपने अपने भेदों के भेद से आठ प्रकार की, तथा बारह प्रकार के तप से अन्य होने से बारह प्रकार की, और बिना किसी इच्छा के क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नग्नत्व, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, अदर्शन इन रूप बाईस परीषहों के सहन करने से बाईस प्रकार की, तथा द्रव्य निर्जरा और भाव निर्जरा इस तरह से दो प्रकार की है। इनमें वस्त्रादिकों की निर्जरा—जीर्णदशा—द्रव्यनिर्जरा और कर्मों की निर्जरा

કે બધી તેમની વેદના પણ આઠ પ્રકારની હોય છે, તથા વિપાકોદય અને પ્રદેશોદયના ભેદથી તે બે પ્રકારની હોય છે આ રીતે વેદનામાં વિવિધતા હોવા છતાં પણ વેદના સામાન્યની અપેક્ષાએ એક જ છે ॥૪૭॥

"तपसा निर्जरा"

વેદના કર્મવિપાક આત્મપ્રદેશોમાંથી કર્મોનું જે પરિશટન—અલગ થવાની ક્રિયા થાય છે તે નિર્જરા પણ આઠ પ્રકારના કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના જે બધી—છએ બધા આઠ પ્રકારના અને બાર પ્રકારના તપથી પોતે પોતે કરેલ ઇચ્છાથી અને પ્રાપ્તની તથા કોઈ પણ પ્રકારની ઇચ્છા વિના ક્ષુધા તૃષા શીત અને ઉષ્ણના સહન કરવાથી અને દંશમશક આદિ રૂપ વિવિધ પ્રકારના કારણોથી ઉત્પન્ન થવાથી અનેક પ્રકારની છે તથા દ્રવ્યનિર્જરા અને ભાવનિર્જરા એવા તેના બે ભેદ છે તેમાં વસ્ત્રાદિકની નિર્જરા એ દ્રવ્યનિર્જરા—જીર્ણદશા—રૂપ નિર્જરા છે અને કર્મોની નિર્જરા એ ભાવનિર્જરા

ननु निर्जरामोक्षयोः को भेद ? इति, उच्यते—देशतः कर्मक्षयो निर्जरा, सर्वथा सकलकर्मक्षयो मोक्ष इति ॥सू. १८॥

इतः प्रभृति आश्रयविशेषबोधकानि सप्तसूत्राण्याह—

मूलम्—जंबूदीवे दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयाम विक्खंभेणं पण्णत्ते ।१। अप्पइट्ठाणे नरए एगं जोयण सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।२। पालए जाणविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।३। सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ॥१—४॥

टीका—उक्तरीत्याऽऽत्मादीना सर्वपदवचनगतानामर्थाना प्रत्येकमेकत्वमुक्त्वाऽऽत्मपरिणामरूपाणामर्थानामेकत्व निरूपयति—"जंबूदीवे" इत्यादि। जम्बूद्वीपो द्वीपः—जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, 'एगं जोयणसयसहस्सं' एकं योजनशतसहस्रं लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः, 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भेण—आयामेन दैर्घ्येण, विष्कम्भेण—विस्तारेण च 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तः—प्रवेदितः। सू. १॥

भावनिर्जरा है। इस तरह से यह निर्जरा यद्यपि अनेक प्रकारकी है—फिर भी अपने भेदों की अपेक्षा न करके यह स्वरूप सामान्य से एक ही है। निर्जरा में कर्मों का एक देश से क्षय होता है और मोक्ष में सम्पूर्णरूप से क्षय होता है ॥१८॥

अब सूत्रकार यहां से आश्रय विशेष को बोध कराने वाले सात सूत्र कहते हैं—'जंबूदीवे दीवे' इत्यादि।

टीकार्थ—जम्बूद्वीप नामका द्वीप लम्बाई चौड़ाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। अप्रतिष्ठान नामका नरक—सप्तम नरक भूमि का

છે આ રીતે તે નિર્જરા જો કે અનેક પ્રકારની છે, તો પણ ભેદોની અપેક્ષાએ ન લેતા સ્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ જોતા તે એક જ છે નિર્જરામા કર્મોનો એકદેશથ ક્ષય થાય છે અને મોક્ષમા સપૂર્ણપણે ક્ષય થાય છે ॥૧૮॥

હવેના સાત સૂત્રમા સૂત્રકાર આશ્રય વિશેષની સમજૂતી આપે છે—

'जंबूदीवे' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપની લમ્બાઇ તથા પહોળાઇ લાખ લાખ યોજનની કહેવી છે. અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરક ભૂમિના મધ્યમ આવાસની લ બાઇ તથા પહોળાઇ

एगा णिज्जरा ॥सू १८॥

वेदनायां सत्यामात्मप्रदेशेभ्यः कर्मपरिशटनमिति यदनन्तरं कर्मपरिशटनरूपां निर्जरां निरूपयति–'एगा णिज्जरा' इति। एका निर्जरा–निर्जरणं निर्जरा विशरण परिशटनमित्यर्थः यद्यपि साऽनेकविधा–तथाहि–अष्टविधकर्मभेदात् तन्निर्जराऽप्यष्टविधा, किंच–सा द्वादशविधतपोजन्यतया द्वादशविधा, किंच–अकाम क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंशमशकपरिषहधारणादि नानाविधकारणजन्यतया नानाविधा, किंच–द्रव्यतो निर्जरा यद्यप्यागमतस्तु कर्मणामेव द्रव्यभावभेदाभ्यां द्विविधाऽपि भवति परन्तु निर्जरा-सामान्यादेका भवतीति भावः।

प्रत्येक जीव को होती है–अतः कर्म आठ प्रकार का होने से उनकी वेदना भी आठ प्रकार की होती है। तथा विपाकोदय और प्रदेशोदय के भेद से यह वेदना दो प्रकार की भी होती है। इस तरह वेदना में विविधता आने पर भी यह वेदना सामान्य की अपेक्षा से एक ही है ॥१७॥

'एगा णिज्जरा' इति।

पदार्थ–वेदना के होने पर आत्मप्रदेशों से जो कर्मों का परिशटन–अलग होना होता है इसी का नाम निर्जरा है। यह निर्जरा भी आठ प्रकार के कर्मों में से स्वस्वकर्मों के झरने से आठ प्रकार की, तथा बारह प्रकार के तप से जन्य होने से बारह प्रकार की, और बिना निर्जरा इच्छा के क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण के सहन करने से एवं ब्रह्मचर्य के धारण करने आदिरूप नाना प्रकार के कारणों से उत्पन्न होने से नाना प्रकार की है। तथा द्रव्य निर्जरा और भाव निर्जरा इस तरह से दो प्रकार की है। इनमें वस्त्रादिकों की निर्जरा–जीर्णदशा–द्रव्यनिर्जरा और कर्मों की निर्जरा

કર્મોની તેમની વેદના પણ આઠ પ્રકારની હોય છે તથા વિપાકોદય અને પ્રદેશોદયના ભેદથી તે બે પ્રકારની હોય છે આ રીતે વેદનામાં વિવિધતા હોવા છતાં પણ વેદના સામાન્યની અપેક્ષાએ એક જ છે ॥૧૭॥

"एगा णिज्जरा"

વેદના દરમિયાન આત્મપ્રદેશોમાંથી કર્મોનું જે પરિશાટન–અલગ થવાની ક્રિયા થાય છે તે નિર્જરા પણ આઠ પ્રકારના કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના ઝરવાથી–છૂટવાથી આઠ પ્રકારની અને બાર પ્રકારના તપથી પેદા થતી હોવાથી બાર પ્રકારની તથા કોઈ પણ પ્રકારની ઈચ્છાવિના ક્ષુધા (ભૂખ), તૃષા, શીત, અને તડકાના સહન કરવાનો અને બ્રહ્મચર્ય પાલન કરવા આદિ રૂપ વિવિધ પ્રકારના કારણોમાંથી ઉત્પન્ન થવાથી અનેક પ્રકારની છે તથા દ્રવ્યનિર્જરા અને ભાવનિર્જરા એવા બે ભેદ છે તેમાં વસ્ત્રાદિકની નિર્જરા એ દ્રવ્ય નિર્જરા–જીર્ણદશા–દ્રવ્ય નિર્જરા છે અને કર્મોની નિર્જરા એ ભાવનિર્જરા

ननु निर्जरामोक्षयोः को भेद? इति, उच्यते–देशतः कर्मक्षयो निर्जरा, सर्वथा सकलकर्मक्षयो मोक्ष इति ॥सू. १८॥

इतः प्रभृति आश्रयविशेषबोधकानि सप्तसूत्राण्याह—

मूलम्—**जंबूदीवे दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयाम विक्खंभेणं पण्णत्ते ।१। अप्पइट्ठाणे नरए एगं जोयण सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।२। पालए जाणविमाणे एगं जोयण-सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।३। सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ॥१—४॥**

टीका—उक्तरीत्याऽऽत्मादीनां सर्वप्रवचनगतानामर्थानां प्रत्येकमेकैकत्वमुक्त्वाऽऽत्मपरिणामरूपाणामर्थानामेकत्वं निरूपयति–"जंबूदीवे" इत्यादि। जम्बूद्वीपो द्वीपः–जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, 'एगं जोयणसयसहस्सं' एकं योजनशतसहस्रं लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः, 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भेण–आयामेन दैर्घ्येण, विष्कम्भेण–विस्तारेण च 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तः–प्रवेदितः। सू. १॥

भावनिर्जरा है। इस तरह से यह निर्जरा यद्यपि अनेक प्रकारकी है–फिर भी अपने भेदों की अपेक्षा न करके यह स्वरूप सामान्य से एक ही है। निर्जरा में कर्मों का एक देश से क्षय होता है और मोक्ष में सम्पूर्णरूप से क्षय होता है ॥१८॥

अब सूत्रकार यहां से आश्रय विशेष को बोध कराने वाले सात सूत्र कहते हैं—'जंबूदीवे दीवे' इत्यादि।

टीकार्थ–जम्बूद्वीप नामका द्वीप लंबाई चौडाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। अप्रतिष्ठान नामका नरक–सप्तम नरक भूमि का

છે આ રીતે તે નિર્જરા જો કે અનેક પ્રકારની છે, તો પણ ભેદોની અપેક્ષાએ ન લેતા સ્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ જોતા તે એક જ છે નિર્જરામા કર્મોનો એકદેશથ ક્ષય થાય છે અને મોક્ષમા સંપૂર્ણપણે ક્ષય થાય છે ॥૧૮॥

હવેના સાત સૂત્રમા સૂત્રકાર આશ્રય વિશેષની સમજૂતી આપે છે—

'जंबूदीवे' इत्यादि ।

ટીકાર્થ–જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપની લમ્બાઇ તથા પહોળાઇ લાખ લાખ યોજનની હોવી છે અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરક ભૂમિના મધ્યમ આવાસની લંબાઇ તથા પહોળાઇ

'अप्पइट्ठाणे णरए' अप्रतिष्ठानो नरकः—अप्रतिष्ठाननामको नरक —सप्तम्या नरकभूम्या मध्यम आवास इत्यर्थः । 'एगं जोयणसयसहस्सं' एकं योजन शतसहस्रं—एकलक्षयोजनप्रमाण इत्यर्थः 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भेण—दैर्घ्यविस्तारेण 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तः ॥सू २॥

'पालए' पालक—सौधर्मेन्द्रसम्बन्धी आभियोगिक पालकनामको देवस्वकृतं यद् वैक्रियं तत् पालक, 'जाणविमाणे' यानविमान यान—गमन, तदर्थं विमान मित्यर्थः यद्वा—यायतेऽनेनेति यान—यानं, तदेव विमान परियानिकमित्यर्थः । एकं योजनशतसहस्रम् आयामविष्कम्भेण प्रज्ञप्तम् । सू ३॥

'सव्वट्ठसिद्धे' सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरदेवलोकसम्बन्धि सर्वार्थ—सिद्धनामक पञ्चमं विमान तत् सर्वेषां श्रेष्ठमस्तीत्याह—'महाविमाणे' महाविमानम्, एकं योजनशतसहस्रम् आयामविष्कम्भेण प्रज्ञप्तम् ॥सू ४॥

मूलम्—अद्दा—नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू ५॥

चित्ता—नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू ६॥

साति—नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू ७॥

मध्यम आवास—पीठ का प्रस्तर—पाथडा—लंबाई चौड़ाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। इसी तरह आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा पालक नामका यानविमान एक लाख योजन का कहा गया है। सर्वार्थ सिद्ध नामका पांचवां महाविमान भी आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है।

भावार्थ—यह कि लंबाई चौड़ाई की अपेक्षा जंबूद्वीप नामका प्रथम द्वीप अप्रतिष्ठान नामका सातवीं नरक भूमि का मध्यम आवास, सौधर्मेन्द्र का पालक नामका यानविमान, और अनुत्तर लोक संबंधी सर्वार्थ सिद्ध नामका पंचमविमान ये चारों एक-एक लाख योजन के हैं ॥१-४॥

લાખ લાખ યોજનની બતાવી છે જેમ રીતે પાલક નામનું યાનવિમાન આયામ અને વિષ્કંભની અપેક્ષાએ જો. લાખ યોજનનું પ્રમાણ છે સર્વાર્થસિદ્ધ નામનું પાંચમું મહાવિમાન પણ આયામ અને વિષ્કંભની અપેક્ષાએ જો. લાખ યોજનનું કહેલ છે

ભાવાર્થ—લંબાઈ પહોળાઈની અપેક્ષાએ જ જંબૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરકભૂમિનો મધ્યમ આવાસ સૌધર્મનું પાલક નામનું યાન વિમાન અને અનુત્તર દેવલોકનું સર્વાર્થસિદ્ધ નામનું પાંચમું વિમાન, તે બધે જો. લાખ યોજનના છે ॥૧-૪॥

टीका-'अद्दानक्खत्ते' आर्द्रानक्षत्रम्, 'एगतारे' एकतारं पण्णत्ते' प्रज्ञप्तम् ॥सू ५॥

'चित्तानक्खत्ते' चित्रानक्षत्रम् 'एगतारे' एकतारं 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तम् ॥सू.६॥

'सातिनक्खत्ते' स्वातिनक्षत्रम् एकतारं प्रज्ञप्तम् ॥सू ७॥

इतः प्रभृति अष्टादशसूत्राणि आश्रयिणां स्थित्यादिधर्माणां बोधकान्याह—

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।१। इमीसेणं रयणप्पभाए पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ।२। दोच्चाए पुढवीए नेरइयाणं जहन्नेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ॥३॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि । अस्यां खलु 'रयणप्पभाए' रत्नप्रभायां 'पुढवीए' पृथिव्याम् 'अत्थेगइयाणं' अस्त्येकेषाम्—अस्ति—विद्यते, एकेषां—केषांचित्, 'नेरइयाणं' नैरयिकाणां—नारकिणाम्, 'एगं' एकं 'पलिओवमं पल्योपमं, 'ठिई' स्थितिः, इति कृत्वा 'पण्णत्ता' प्रज्ञप्ता—प्रवेदिता जिनैरित्यर्थः । सा पल्योपमस्थितिश्चतुर्थे प्रस्तटे मध्यमाऽवगन्तव्या ॥१-३॥

'अद्दानक्खत्ते' इत्यादि ।

टीकार्थ—आर्द्रा नक्षत्र एकतारा वाला कहा है। चित्रा नक्षत्र एक तारावाला कहा है। स्वातिनक्षत्र एक तारावाला कहा है ॥७॥

अब यहां से लेकर आश्रयी जीवों की स्थिति आदि धर्मों के बोधक अठारह सूत्रों को सूत्रकार कहते हैं—'इमीसेणं रयणप्पभाए' इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की एक पल्य की स्थिति जिनदेव ने कही है ॥१॥ इस रत्नप्रभा पृथिवी में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर की कही है ॥२॥ द्वितीय पृथिवी में नारकियों की जघन्य स्थिति एक सागर की कही गई है ॥३॥

'अद्दानक्खत्ते' इत्यादि।

ટીકાર્થ-આર્દ્રા નક્ષત્ર એક તારા વાળું છે. ચિત્રા નક્ષત્ર એક તારા વાળું છે. સ્વાતિ નક્ષત્ર પણ એક તારા વાળુ છે. ॥૭॥

હવે પછીન અઢાર સૂત્રોથી સૂત્રકાર આશ્રયી જીવોની સ્થિતિ આદિ ધર્મોની સમજૂતી આપે છે—'इमीसे णं रयणप्पभाए' इत्यादि ।

ટીકાર્થ-આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ જિનદેવે એક પલ્યની કહી છે॥૧॥ આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરની કહેલ છે ॥૨॥

બીજી પૃથ્વીમા નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ એક સાગરની કહેલ છે. ॥૩॥

मावार्थ—लोक के अधः मध्य और ऊर्ध्व, इस प्रकार तीन भाग हैं। अधोभाग मेरुपर्वत के समतल के नीचे नौसौ योजन की गहराई के पास गिना जाता है। जो आकाश में औंधे किये हुए सकोरे के समान नीचे २ विस्तीर्ण है। समतल के नीचे के तथा ऊपर के नौ सौ नौ सौ योजन मिलाकर कुल अठारह सौ योजन का मध्यलोक है। जो आकार में झालर के समान एकसा ऐंचाई चौड़ाई वाला है। मध्यलोक के ऊपर का सम्पूर्ण लोक ऊर्ध्वलोक है जो आकार में पल्यासन-मृदङ्ग विशेष के समान है। अधोलोक में नरकभूमियां हैं। ये सात हैं, जो समश्रेणि में न होकर एक एक के नीचे हैं। इनका विशेष वर्णन शास्त्रों में है। पहिली भूमि का नाम रत्नप्रभा है। इसमें तेरह प्रस्तर हैं। ये मंजिल वाले घर के तले समान होते हैं। इनमें जो चौथा प्रस्तर है उसमें मध्यम स्थिति एक पल्य की है। इसी अपेक्षा सूत्रकार ने यहां एक पल्य की स्थिति "कितनेक नारकियों की है" ऐसा कहा है। इसी प्रथम नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। मध्यक गति के जीवों की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट दो तरह से कही जा सकती है। जिससे कम न पाई जा सके उसे जघन्य और जिससे अधिक न पाई जा सके उसे उत्कृष्ट कहते हैं। एक सागर की जो उत्कृष्ट स्थिति पहिले नरक

ભાવાર્થ—લોકના ત્રણ ભાગ છે—અધોલોક, મધ્યલોક અને ઉર્ધ્વલોક. મેરુ પર્વતના સમતલની નીચે નવસો યોજનની ઊંડાઈ પછીના ભાગને અધોલોક સમજવામાં આવે છે, જે આકાશમાં ઊંધા પડેલા શકોરાના જેમ નીચે જતાં તેમ વિસ્તીર્ણ થતો જાય છે. સમતલની નીચે તથા ઉપરના નવ નવસો યોજનો મળીને કુલ અઢારસો યોજનનો મધ્યલોક છે, જે આકારમાં ઝાલરના જેવો સરખાજ લાંબો પહોળો છે. મધ્યલોકના ઉપરનો બધો ભાગ ઉર્ધ્વલોક છે, જેનો આકાર મૃદંગ જેવો છે. અધોલોકમાં નરકભૂમિઓ છે તે સાત છે તે એક બીજાની નીચે જુદી જુદી રીતે આવેલ છે. તેનું વધુ વર્ણન શાસ્ત્રોમાં છે. પહેલી ભૂમિનું નામ રત્નપ્રભા છે. તેમાં તેર પ્રસ્તર-ઘર-છે. જે માળ માળા વચ્ચના તળ સમાન હોય છે. તેમાં જે ચોથું પ્રસ્તર છે તેમાં મધ્યમ સ્થિતિ એક પલ્યની છે. જે અપેક્ષાએ સૂત્રકારે કેટલાક નારકીઓની" એમ પલ્યની ત્યાં સ્થિતિ છે એમ કહ્યું છે. જે આ પહેલી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે. પ્રત્યેક પ્રકારના જીવોની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ એમ બે પ્રકારે કહી શકાય છે. જેના કરતાં ઓછી સ્થિતિ બીજે નહીં તેને જઘન્ય કહે છે અને જેનાથી વધારે ન મળી શકે તે સ્થિતિને ઉત્કૃષ્ટ કહે છે. પ્રથમ નરકમાં જે એક સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ

मूलम्--असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पालिओवमं ठिई पण्णत्ता ।४। असुरकुमाराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं साहियं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ।५। असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमिज्जाणं देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ॥सू. ६॥

टीका--'असुरे'त्यादि । असुरकुमाराणां देवानाम् 'अत्थेगइयाणं' अस्ति=विद्यते, एकेषां=केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'अस्ति' इत्यस्य' प्रज्ञप्ता' इत्यनेन सहान्वयः । असुरकुमाराणा देवानाम् उत्कर्षेण एक साधिकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'असुरकुमारिंदवज्जियाण' असुरकुमारेन्द्रवर्जितानां=चमरबलिवर्जितानामित्यर्थः, 'भोमिज्जाणं' भूमिजाना-भूमौ=रत्नप्रभाभिधाया पृथिव्यां जायमानत्वाद् 'भूमिजाः' उच्यन्ते, भूमिजाः=भवनवासिनइत्यर्थः, तेषां, एकं पल्योपम मध्यमा स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू. ४-६॥

में कही है वही द्वितीय नरक में जघन्यस्थिति है ॥सू. १ २-३॥

'असुरकुमाराणं' इत्यादि०।

टीकार्थ-असुर कुमारों में कितनेक असुरकुमारों की एक पल्य की स्थिति है ॥४॥ असुर कुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम से कुछ अधिक है ॥५॥ असुरकुमारों के इन्द्रों को छोडकर भूमिजों की एक पल्योपम की स्थिति है ॥६॥

भावार्थ--ये भवनवासी निकाय हैं-असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार पवनकुमार और स्तनितकुमार। इन में कितनेक असुरकुमारों की स्थिति-उत्कृष्ट स्थिति-एक पल्योपम की है। तथा-दक्षिणार्ध और उत्तरार्ध के असुरेन्द्रों

કહી છે એ જ બીજી નરકમા જઘન્ય સ્થિતિ છે ॥સૂ. ૧-૨-૩॥

'असुरकुमाराण' इत्यादि ।

ટીકાર્થ-અસુરકુમારોમા કેટલાક અસુરકુમારોની એક પલ્યની સ્થિતિ છે ॥૪॥ અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમથી સહેજ વધારે છે ॥૫॥ અસુરકુમારોના ઇન્દ્રોને બાદ કરતા ભૂમિજોની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ છે ॥૬॥

ભાવાર્થ--ભવનવાસી નિકાય આ પ્રમાણે છે--અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુપર્ણકુમાર વિદ્યુતકુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, પવનકુમાર અને સ્તનિતકુમાર તેમાના કેટલાક અસુરકુમારોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે

भावार्थ—लोक के अधः मध्य और ऊर्ध्व, इस प्रकार तीन भाग हैं। अधोभाग मेरुपर्वत के समतल के नीचे नौसौ योजन की गहराई के पाद गिना जाता है। जो आकाश में औंधे किये हुए सकोरे के समान नीचे २ विस्तीर्ण है। समतल के नीचे के तथा ऊपर के नौ सौ नौ सौ योजन अर्थात् कुल अठारह सौ योजन का मध्यलोक है। जो आकार में झालर के समान परावर लंबाई चौडाई वाला है। मध्यलोक के ऊपर का संपूर्ण लोक ऊर्ध्वलोक है जो आकार में पल्यासन—पद्मासन विशेष के समान है। अधोलोक में नरकभूमियां हैं। ये सात हैं, जो समश्रेणि में न होकर एक एक के नीचे हैं। इनका विशेष वर्णन शास्त्रों में है। पहिली भूमि का नाम रत्नप्रभा है। इसमें तेरह प्रस्तर हैं। ये मंजिलवाले घर के तले समान होते हैं। इनमें जो चौथा प्रस्तर है उसमें मध्यम स्थिति एक पल्य की है। इसी अपेक्षा सूत्रकार ने यहां एक पल्य की स्थिति "कितनेक नारकियों की है" ऐसा कहा है। इसी प्रथम नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। प्रत्येक गति के जीवों की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट दो तरह से कही जा सकती है। जिससे कम न पाई जा सके उसे जघन्य और जिससे अधिक न पाई जा सके उसे उत्कृष्ट कहते हैं। एक सागर की जो उत्कृष्ट स्थिति प्रथम नरक

ભાવાર્થ—લોકના ત્રણ ભાગ છે— અધ હે ૬, મધ્યલોક અને ઉર્ધ્વલોક મેરુ પર્વતના સમતલની નીચે નવસો યોજનની ઊંડાઈ પર્યંતના ભાગને અધોભાગ સમજવામાં આવે છે, જે આકાશમાં ઊંધા પડેલા શકોરાની જેમ નીચે અધ તેમ વિસ્તીર્ણ થતો જાય છે સમતલની નીચે તથા ઉપરના નવ નવસો યોજનો એટલે કે કુલ અઢારસો યોજનનો મધ્યલોક છે, જે આકારમાં ઝાલરના જેવો અર્થાત્ ઉપર નીચે સરખો વિસ્તાર ધરાવે છે મધ્યલોકના ઉપરનો બધો ભાગ ઉર્ધ્વલોક કહેવાય છે, જેનો આકાર મૃદંગ જેવો છે અધોલોકમાં નરકભૂમિઓ જે તે સાત છે તે એક જ ઠેકાણે નથી પણ એકની નીચે બીજી એવી રીતે આવેલ છે. તેનું પણ વર્ણન શાસ્ત્રોમાં છે પહેલી ભૂમિનું નામ રત્નપ્રભા છે તેમાં તેર પ્રસ્તર-પાથરા છે જે ભાગ વાળા ઘરના તળ સમાન હોય છે તેમાં જે ચોથુ પ્રસ્તર છે તેમાં મધ્યમ સ્થિતિ એક પલ્યની છે જે અપેક્ષાએ સૂત્રકારે કેટલાક નારકીઓની" એક પલ્યની ત્યાં સ્થિતિ છે એમ કહ્યું છે એ જ પહેલી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે પ્રત્યેક પ્રકારના જીવોની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ એમ બે પ્રકારે કહી શકાય છે જેના કરતાં ઓછી સ્થિતિ બને નહીં તેને જઘન્ય કહે છે અને જેનાથી વધારે ન બની શકે તે સ્થિતિને ઉત્કૃષ્ટ કહે છે પ્રથમ નરકમાં જે એક સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ

पण्णत्ता ।९। जोइसियाणं देवाण एगं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १०॥

टीका—'असंखिज्जे' त्यादि । 'असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं' असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंख्येयानि वर्षाणि आयुर्येषां ते, असंख्येयवर्षायुष्काः, संज्ञिनः=समनस्काः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः=पञ्चेन्द्रियाः=पञ्चेन्द्रियविशिष्टाः तिर्यञ्चो योनिर्येषां ते, एषा कर्मधारय., हेमवतैरण्यवतवर्षयोरुत्पन्नानामित्यर्थः, केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'असंखिज्जवासाउयगब्भवक्कंतियसंणिमणुयाण' असंख्येयवर्षायुष्कगर्भव्युत्क्रान्तिकसंज्ञिमनुजानाम्, असंख्येयवर्षायुष्काः, गर्भव्युत्क्रान्तिकाः=गर्भे व्युत्क्रान्तिरुत्पत्तिर्येषां ते, गर्भोत्पन्नाः, इत्यर्थः, संज्ञिनः= समनस्काः, मनुजाः=मनुष्याः, एषा कर्मधारयः, एकेषां केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'वाणमंतराणं' व्यन्तराणां अन्तरं नामावकाशाः, तच्चेह स्थानरूपं ज्ञेयम्, विविधं भवननगरावासरूप अन्तरं स्थानं येषां ते, व्यन्तराः, तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे उपर्यधश्च योजनशतमपहाय शेषे अष्टयोजनशतप्रमाणे मध्यभागे सन्ति । यद् वा विविधम् अन्तरं पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा क्रीडाया आश्रयरूपं स्थानं येषां ते व्यन्तराः, पर्वतादि स्थानेषु एते क्रीडाप्रिया भवन्ति, अतो व्यन्तरा उच्यन्ते । अथवा 'वाणमन्तरा' इत्यस्य 'वानमन्तरा' इतिच्छाया । व्युत्पत्तिस्तु वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः । अत्र मकारागमः आर्षत्वाद्वा पृषोदरादित्वात् तेषाम् उत्कृष्टा एका पल्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'जोइसियाणं' ज्यौतिष्काणां देवानां चन्द्रविमानदेवानामित्यर्थः, उत्कर्षेण 'वाससयसहस्समब्भहियं' वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू.७-१०॥

'असंखिज्जवासाउय' इत्यादि ।

टीकार्थ–असंख्यातवर्ष की आयुवाले संज्ञीपचेन्द्रियतिर्यंचों की-अर्थात् हैमवत और ऐरण्यवतवर्ष में उत्पन्न हुए कितनेक तिर्यञ्च योनि वालों की–एक पल्योपम की स्थिति है॥७॥ असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भजसज्ञी मनुष्यों में से कितनेक मनुष्यों की स्थिति एक पल्योपम की है ॥८॥ व्यंतर देवों

"असंखिज्जवासाउय" इत्यादि ।

ટીકાર્થ—"અસંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા સંજ્ઞીપંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની–એટલે કે હૈમવત અને ઐરણ્યવત ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક તિર્યંચ યોનિવાળાની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ હોય છે ॥૭॥ અસંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા ગર્ભજ સંજ્ઞી મનુષ્યોમાંથી કેટલાક મનુષ્યોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની ॥૮॥ વ્યંતરદેવોની

मूलम्—असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।७। असंखिज्जवासाउय गब्भवक्कंतियसण्णिमणुयाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।८। वाणमंतराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं ठिई

की उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः एक सागरोपम की और एक सागरोपम से कुछ अधिक की है। दक्षिणार्ध का अधिपति चमर और उत्तरार्ध का अधिपति बलि है। असुरकुमारों के इन दो इन्द्रों को छोड़कर बाकी नौ भवनवासियों की जो एक पल्योपम की स्थिति कही है वह मध्य स्थिति की अपेक्षा कही गई जानना चाहिए। असुरकुमार भूमिज नहीं कहलाते हैं क्यों की वे बहुत करके आवासों में और कभी भवनों में बसते हैं। तथा नागकुमार आदि नौ भवनपति प्रायः भवनों में ही रहते हैं। आवास रत्नप्रभा के पृथ्वीपिंड में से ऊपर नीचे के एक एक हजार योजन छोड़कर बीच के एक लाख अठहत्तर हजार योजन परिमाण भाग में सब जगह हैं पर भवन तो रत्नप्रभा के नीचे नब्बे हजार योजन परिमाण भाग में ही होते हैं। आवास बड़े मंडप जैसे होते हैं और भवन नगर सदृश। भवन बाहर से गोल भीतर से समचतुष्कोण और नीचे में पुष्करकर्णिका जैसे होते हैं ॥७०४।७।

તથા દક્ષિણાર્ધ અને ઉત્તરાર્ધના અસુરેન્દ્રોની જઘન્ય સ્થિતિ ક્રમશઃ એક સાગરો. પમની અને એક સાગરોપમથી કાંઈ વધારે છે દક્ષિણાર્ધના અધિપતિ ચમર અને ઉત્તરાર્ધના અધિપતિ બલિ છે અસુરકુમારોના બે બે ઈંદ્રો સિવાયના બાકીના નવ ભવનવાસીઓની જે એક પલ્યોપમની સ્થિતિ બતાવવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિ ની અપેક્ષાએ બતાવેલ છે તેમ સમજવું અસુરકુમારો ભૂમિજ કહેવાતા નથી કારણકે તેઓ ઘેરે આવે આવાસોમાં અને કયારેક ભવનોમાં વસે છે તથા નાગકુમાર આદિ નવ ભવનપતિ સામાન્ય રીતે ભવનોમાં જ રહે છે રત્નપ્રભાના પૃથ્વી પિંડમાંથી ઉપર નીચેના એક એક હજાર યોજન બાદ કરીને વચ્ચેના એક લાખ અઠોતેર હજાર યોજન પરિમાણ ભાગમાં સર્વત્ર આવાસો છે, પણ ભવન તો રત્નપ્રભાની નીચેના નેવું હજાર યોજન પરિમાણ ભાગમાં જ હોય છે આવાસ મોટા મંડપ જેવા હોય છે, અને ભવન નગર જેવા હોય છે ભવન બહારથી ગોળ અંદરથી સમચતુષ્કોણ અને તળિયેથી પુષ્કરકર્ણિકા જેવા હોય છે ॥૪-૫-૬ ॥

पण्णत्ता ।९। जोइसियाणं देवाणं एगं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १०॥

टीका—'असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं' असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंख्येयानि वर्षाणि आयुर्येषां ते, असंख्येयवर्षायुष्काः, संज्ञिनः=समनस्काः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः=पञ्चेन्द्रियाः=पञ्चेन्द्रियविशिष्टाः तिर्यञ्चो योनिर्येषा ते, एषा कर्मधारयः, हैमवतैरण्यवतवर्षयोरुत्पन्नानामित्यर्थः, केषाचित् एक पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता। 'असंखिज्जवासाउयगब्भवक्कंतियसंणिमणुयाणं' असंख्येयवर्षायुष्कगर्भव्युत्क्रान्तिकसंज्ञिमनुजानाम्, असंख्येयवर्षायुष्काः, गर्भव्युत्क्रान्तिकाः=गर्भे व्युत्क्रान्तिरुत्पत्तिर्येषां ते, गर्भोत्पन्नाः, इत्यर्थः, संज्ञिनः= समनस्काः, मनुजाः=मनुष्याः, एषा कर्मधारयः, एकेषां केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता। 'वाणमंतराणं' व्यन्तराणां अन्तरं नामावकाशाः, तच्चेह स्थानरूपं ज्ञेयम्, विविधं भवननगरावासरूपं अन्तरं स्थानं येषां ते, व्यन्तराः, तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे उपर्यधश्च योजनशतमपहाय शेषे अष्टयोजनशतप्रमाणे मध्यभागे सन्ति। यद् वा विविधम् अन्तरं पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा क्रीडाया आश्रयरूपं स्थानं येषां ते व्यन्तराः, पर्वतादि स्थानेषु एते क्रीडाप्रिया भवन्ति, अतो व्यन्तरा उच्यन्ते। अथवा 'वाणमन्तरा' इत्यस्य 'वानमन्तरा' इतिच्छाया। व्युत्पत्तिस्तु वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः। अत्र मकारागमः आर्षत्वाद्वा पृषोदरादित्वात् तेषाम् उत्कृष्टा एका पल्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। 'जोइसियाणं' ज्योतिष्काणां देवानां चन्द्रविमानदेवानामित्यर्थः, उत्कर्षेण 'वाससयसहस्समब्भहियं' वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू.७-१०॥

'असंखिज्जवासाउय' इत्यादि।

टीकार्थ–असंख्यातवर्ष की आयुवाले संज्ञीपंचेन्द्रियतिर्यंचों की-अर्थात् हैमवत और ऐरण्यवतवर्ष में उत्पन्न हुए कितनेक तिर्यञ्च योनि वालों की–एक पल्योपम की स्थिति है॥७॥ असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भजसज्ञी मनुष्यों में से कितनेक मनुष्यों की स्थिति एक पल्योपम की है ॥८॥ व्यंतर देवों

"असंखिज्जवासाउय" इत्यादि।

ટીકાર્થ—"અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા સંજ્ઞીપંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની–એટલે કે હૈમવત અને ઐરણ્યવત ક્ષેત્રમા ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક તિર્યંચ યોનિવાળાની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ હોય છે ॥૭॥ અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા ગર્ભજ સંજ્ઞી મનુષ્યોમાથી કેટલાક મનુષ્યોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની ॥૮॥ વ્યંતરદેવોની

की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है ॥९॥ ज्योतिष्क देवों की—चन्द्रविमान देवों की-उत्कृष्टस्थिति एक लाखवर्ष अधिक एक पल्योपम की है ॥१०॥

भावार्थ—असंख्यात वर्षजीवी भोगभूमिया मनुष्य और तिर्यञ्च ही होते हैं। हैमवत और हैरण्यवत ये क्षेत्र भोगभूमि हैं। भोगभूमि में असंज्ञीजीव नहीं होते हैं। असंख्यात वर्ष जीवी मनुष्य तीस अकर्म भूमियों में उत्पन्न अन्तर्द्वीपों में और कर्मभूमियों में उत्पन्न युगलिक ही हैं, परन्तु असंख्यातवर्ष जीवी तिर्यञ्च तो उक्त क्षेत्रों के अलावा ढाईद्वीप के बाहर के द्वीप समुद्रों में भी पाये जाते हैं। अकर्मभूमियों आदि में उत्पन्न मनुष्य और तिर्यञ्च की अवस्थिति एक सी नहीं है। एक पल्य से भी अधिक है। किसकी कितनी २ है ? यह आगमशास्त्रों से जानी जा सकती है। यहां तो असंख्यातवर्ष जीवी जिन संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्यों की एवं तिर्यञ्चों की स्थिति एक पल्योपम की कही गई है उनका निर्देश है। हैमवत और हैरण्यवत क्षेत्रों के संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च और गर्भज संज्ञी पञ्चेन्द्रिय मनुष्य इन दोनों की एक पल्योपम की स्थिति-अवस्थिति कही है। वैसे तो तिर्यञ्चों और मनुष्यों की स्थिति उत्कृष्ट तीन पल्य की मानी गई है। व्यन्तर देवों के भवन, और नगर रूप

उत्कृष्ट स्थिति એક પલ્યોપમની છે ॥૯॥ જ્યોતિષ્ક દેવોની-ચંદ્ર વિમાન દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્યોપમ કરતાં એક લાખ વર્ષની વધારે હોય છે ॥૧૦॥

ભાવાર્થ—ભોગભૂમિના મનુષ્ય અને તિર્યંચ જ એક પલ્યના આયુષ્ય વાળા હોય છે હૈમવત અને હૈરણ્યવત એ ક્ષેત્રો ભોગભૂમિના હોવા છે ભોગભૂમિમાં અસંજ્ઞી જીવ હોતા નથી અસંખ્યાત વર્ષ જીવનારા મનુષ્યો ત્રીસ અકર્મભૂમિઓમાં છપ્પન અંતર્દ્વીપમાં અને કર્મભૂમિઓમાં ઉપજે। વળી યુગલિકો જ છે, પણ અસંખ્યાત વર્ષ જીવનારો તિર્યંચ તો ઉપરોક્ત ક્ષેત્રો ઉપરાંત અઢી દ્વીપની બહારના દ્વીપ સમુદ્રોમાં પણ મળે છે અકર્મભૂમિમાં આદિમાં જ થયા મનુષ્ય અને તિર્યંચની અવસ્થિતિ એક પલ્યની નથી એક પલ્યથી પણ અધિક છે કોની કેટલી છે તે બીજા શાસ્ત્રોની મદદથી જાણી શકાય છે અહીં તો અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્ય વાળા જે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય મનુષ્યોની અને તિર્યંચોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની બતાવવામાં આવી તેમનો નિર્દેશ કર્યો છે હૈમવત અને હૈરણ્યવત ક્ષેત્રોના સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને ગર્ભજ સંજ્ઞીપંચેન્દ્રિય મનુષ્ય એ બન્નેની એક પલ્યોપમની અવસ્થિતિ કહેવી છે આમ તો તિર્યંચો અને મનુષ્યોની સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ ત્રણ પલ્યની માનવામાં આવે છે વ્યંતરદેવોનાં ભવન, અને નગરરૂપ આવાસ અનેક

मूलम्—सोहम्मे कप्पे देवाणं जहन्नेणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।११। सोहम्मे कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं

आवास अनेक प्रकार के होते हैं इसलिये ये देव व्यन्तर कहलाते हैं। इनकी वि-विविधं, अन्तरं-स्थानं येषां ते व्यन्तराः" इस प्रकार व्युत्पत्ति है। इनके भवन रत्नप्रभापृथिवी का जो प्रथम रत्नकाण्ड है उसमें ऊपर नीचे सौ सौ योजन छोडकर शेष आठ सौ (८००) योजन प्रमाण मध्य-भाग में हैं। अथवा ये विविध प्रकार के पहाड और गुफाओं के अन्तरों में बसने के कारण व्यन्तर कहलाते हैं। या ये सब स्थान इनको क्रीडा करने के होते हैं, क्यों कि ये पर्वतादि स्थानों में क्रीडाप्रिय होते हैं, इसलिये भी व्यन्तर कहे जाते हैं। अथवा "वाणमन्तरा" इसकी संस्कृत छाया 'वानमन्तरा' भी होती है। वनों के अंतरों में जो हों वे वानमन्तर हैं। यहां पृषोदरादि से "म" का आगम हुआ है। इन व्यंतरदेवों की स्थिति एक पल्योपम की मानी गई है। ज्योतिष्क देवों से यहां चन्द्र के विमान के देव गृहीत हुए हैं, क्यों कि उन्हीं की स्थिति कुछ अधिक एक पल्योपम की कही हुई है। वैसे तो ग्रहों की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है। नक्षत्रों की उत्कृष्ट स्थिति अर्ध पल्योपम की है। तारों की उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम का चौथा भाग है ॥७।८।९।१०॥

પ્રકારના હોય છે, તેથી તે દેવોને વ્યન્તર કહેવાય છે તેમની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે—वि=विविधं, अन्तरं-स्थानं येषा ते व्यन्तराः તેમના ભવનો રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો જે પહેલો રત્નકાંડ છે તેમા ઉપર અને નીચે સો સો યોજન છોડીને બાકીના આઠ સો યોજન પ્રમાણ મધ્યભાગમા છે અથ વિવિધ પ્રકારના પહાડો અને ગુફાઓના અન્તરોમાં (સ્થાનોમા) તથા વનોની અદર વસવાને કારણે તેમને વ્યન્તર કહે છે અથવા તે સઘળા સ્થાનો તેમની ક્રીડા કરવાને માટે હોય છે કારણકે પર્વતાદિ સ્થાનોમા ક્રીડા કરવી તેમને ગમે છે, તેથી પણ તેમને વ્યન્તર કહે છે. અથવા "वाणमन्तरा" ની સસ્કૃત છાયા "वानमन्तरा" પણ થાય છે વનોમા સ્થાનોમા જે હોય તેમને વાનમન્તર કહે છે અહી પૃષોદરાદિથી "म" નો આગમ થયો છે. તે વ્યન્તરદેવોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમન માનવામા આવે છે જ્યોતિષ્ક દેવોથી અહી ચન્દ્રના વિમાનના દેવો ગ્રહણ કરેલ છે, કારણકે તેમની સ્થિતિ એક પલ્યોપમ કરતા કઇક વધુ કહેલ છે આમ તો ગ્રહોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે. નક્ષત્રોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ અર્ધ પલ્યોપમની છે તારાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પલ્યોપમના ચોથા ભાગની છે. ॥૭-૮-૯-૧૦॥

ट्ठिई पण्णत्ता ।१२। ईसाणे कप्पे देवाणं जहण्णेणं साइरेगं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।१३। ईसाणे कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० १२॥

टीका—'सोहम्मे' इत्यादि । सौधर्मे कल्पे देवानां जघन्येन एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मे कल्पे परतः केषांचिद् देवानामेकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ईशाने कल्पे जघन्येन सातिरेकम्=साधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ईशाने कल्पे परतः केषांचिद् देवानाम् एकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । सू० १२—१३॥

सोहम्मे कप्पे' इत्यादि ।

शब्दार्थ—सौधर्मकल्प में देवों की जघन्य स्थिति एक पल्योपम की सौधर्म कल्प में किसनक देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। ईशानकल्प में देवों की जघन्यस्थिति कुछ अधिक एक पल्य की है। ईशानकल्प में किसनक देवों की जघन्यस्थिति एक सागरोपम की है ॥

भावार्थ—सौधर्मकल्प में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और ईशानकल्प में कुछ अधिक दो सागरोपम की कही गई है। तो सौधर्मकल्प में किसनक देव ऐसे हैं कि जिनकी स्थिति एक ही सागर की होती है। इसी तरह ईशानकल्प में भी जानना चाहिये। जघन्यस्थिति सौधर्मकल्प में एक पल्योपम की, और ईशानकल्प में कुछ अधिक एक पल्योपम की है ॥१२—१३॥

"सोहम्मे कप्पे" इत्यादि ।

ટીકાર્થ—સૌધર્મકલ્પમાં દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે સૌધર્મ કલ્પમાં કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે ઈશાન કલ્પમાં દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યથી કંઈક વધારે છે ઈશાનકલ્પમાં કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે

ભાવાર્થ—સૌધર્મકલ્પમાં દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને ઈશાન કલ્પમાં બે સાગરોપમથી કંઈક વધારે કહેવામાં આવી છે સૌધર્મકલ્પમાં કેટલાક કિલ્બિષ દેવો છે કે જેમની સ્થિતિ એક સાગરની હોય છે અને એ પ્રમાણે ઈશાનકલ્પમાં એક પલ્યોપમથી કંઈક વધારે છે ૧૨-૧૩॥

मूलम्--जे 'देवा सागरं सुसागरं सागरकंतं भवं मणुं माणुसोत्तरं लोगहियं [illegible] देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णता ।१५। ते णं देवा एगस्स अद्धमासस्स आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ।१६ तेसिं णं देवाणं एगस्स वाससहस्सस्स आहारट्ठे समुपज्जइ ।१७। संतेगइया भवसिद्धिया जे जीवा ते एगे णं भवग्गहणेणं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ।सू० १८॥

टीका--'जे देवा' इत्यादि । ईशानाभिधेयस्य द्वितीयदेवलोकस्य सप्तमे प्रस्तटे स्थितानि यानि सागर-सुसागर-सागरकान्त-भवमनु-मानुषोत्तर-लोकहिताख्यानि सप्तविमानानि सन्ति, तत्र उत्पन्ना ये देवास्तेषामुत्कर्षेण एक सागरोपम स्थितिः । अत्र देवानामेव एक सागरोपमं स्थितिः, न तु देवीनाम तासां सागरोपमस्थितेरभावात् । ते खलु देवा अर्द्धमासस्यान्ते आनन्ति=अन्तरुच्छ्वासं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=अन्तर्निःश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्यमुच्छ्वास

'जे देवा सागरं' इत्यादि ।

टीकार्थ-ईशान नामक द्वितीय देवलोक के सातवें प्रस्तर में सागर, सुसागर सागरकान्त, भव, मनु, मानुषोत्तर और लोकहित, ये सात विमान हैं । इन विमानों में उत्पन्न हुए जो देव हैं उनकी उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की होती है। सागरोपमकी स्थिति देवों की ही होती है, देवियों की नहीं । ये देव एक पक्ष के अन्त में भीतर में उच्छ्वास लेते है और एक पक्ष के अन्त में ही भितर में निःश्वास लेते है इसी प्रकार

"जे देवा सागरं" इत्यादि ।

ટીકાર્થ-ઈશાન નામના બીજા દેવલોકના સાતમા પ્રસ્તરમાં સાગર, સુસાગર, સાગરકાન્ત, ભવ, માનુષોત્તર, અને લોકહિત, એ સાત વિમાન છે તે વિમાનોમા ઉત્પન્ન થયેલા જે દેવો છે તેમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની હોય છે, દેવોની જ સ્થિતિ સાગરોપમની હોય છે દેવીઓની નહી તે દેવો એક પખવાડિયાને અંતે અંદર ઉચ્છવાસ લે છે અને એક પખવાડિયાને અંતે અંદર નિ:શ્વાસ લે છે

एकान्ति, नि श्वसन्ति-आनिश्वासन्ति एकान्ति, नेवमाहारसज्ञा च मनसापीत्यर्थः भवति। 'सगगइया' सन्ति एके च कचिद् भवसिद्धिका जीवास्ते एकेन मनुष्यग्रहणेन सेत्स्यन्ति, भात्स्यन्ति, भोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखाना मन्तं करिष्यन्ति ॥सू० १५-१८॥

सामान्यनयमाश्रित्य अथ द्वितीय समवायाङ्गम् एकत्वेन वस्तु मभिधाय साम्प्रत विशेषनयमाश्रित्य द्वित्वेन वस्तूपाह—

मूलम्—दो दंडा पन्नत्ता, त जहा—अट्ठादंडे चेव अणट्ठादंडे चेव। दुवे रासी पण्णत्ता, त जहा—जीवरासी चेव अजीवरासी चेव। दुविहे बन्धणे पण्णत्ते, त जहा—रागबधणे चेव दोसबधणे चेव। पुव्वाफग्गुणी नक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते, उत्तराफग्गुणी नक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते। पु०षाभद्दवया नक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते। उत्तराभद्दवया नक्खत्ते। दुतारे पण्णत्ते ॥सू० ८॥

एक महिने के अन्त में बाहर में उच्छ्वास लेते हैं और एक महिने के अन्त में बाहर में निश्वास लेते हैं। इन्हें आहारसंज्ञा एक हजार वर्ष बाद होती है। कितनेक ऐसे जीव होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं, ये एक ही भव करके सिद्ध अवस्थारूप प्राप्त करने वाले होंगे आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करने वाले होंगे, समस्तकर्मों से छूटने वाले होंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जायेंगे, और सब प्रकार के दुःखों का अंत करने वाले होंगे ॥सू० १५-१८॥

इस प्रकार सामान्य नय की अपेक्षा से वस्तुओं में एक संख्या का कथन कर अब सूत्रकार उनमें विशेष नयकी अपेक्षा लेकर द्वितीय

આ પ્રમાણે એક મહિનાને અંતે અહીં ઉચ્છ્વાસ લે છે અને એક મહિનાને અંતે અહીં નિશ્વાસ લે છે તેમને એક હજાર વર્ષ પછી આહાર કરવા થાય છે. કેટલાક એવા જીવો હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ એક ભવ કરીને સિદ્ધિ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનારા થશે, આત્માના અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરનાર થશે, સમસ્ત કર્મોમાંથી છૂટનારા થશે, કૃતકૃત્ય થશે અને બધા પ્રકારના દુઃખોનો અંત લાવનાર થશે ॥સૂ૦ ૧૮॥

આ પ્રમાણે સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ વસ્તુઓમાં એક સંખ્યા નું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર તેમનામાં વિશેષ નયની અપેક્ષાએ કરીને દ્વિતીય સમવાયમાં બે, જેની

टीका-'दो दंडा' इत्यादि। द्वौ दण्डौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-अर्थदण्डश्च अनर्थदण्डश्चैव। दण्डः प्राणातिपातादिः, अर्थाय=इन्द्रियादिप्रयोजनाय यो दण्डः सोऽर्थदण्डः, तद्भिन्नो दण्डोऽनर्थदण्डः। द्वौ राशी प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-जीवराशिश्च, अजीवराशिश्च। द्विविधे बन्धने प्रज्ञप्ते, तद्यथा रागबन्धन च दोषबन्धन च। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र द्वितारं प्रज्ञप्तम्। उत्तराफल्गुनी नक्षत्र द्वितारं प्रज्ञप्तम्। पूर्वभाद्रपद नक्षत्र द्वितारं प्रज्ञप्तम्। उत्तराभाद्रपदं नक्षत्रं द्वितार प्रज्ञप्तम् ॥सू. ८॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। दोच्चाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। दोच्चाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमिज्जाणं देवाणं उक्कोसेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउयसन्निपंचेंदिय तिरिक्खजोणियाणं अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउय-

समवाय में दो दो की संख्या का कथन करते हैं-'दो दंडा पन्नत्ता इत्यादि।

टीकार्थ-दंड तीर्थंकरों ने दो प्रज्ञप्त किये हैं वे इस प्रकार हैं-एक अर्थदंड और दूसरा अनर्थदंड। राशी दो कही हैं, वे इस प्रकार है-एक जीवराशि दूसरी अजीव राशि। बंधन दो प्रकारके कहे है, वे ये है-एक रागबंध और दूसरा द्वेषबंध। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र दो तारोंवाला उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र दो तारोंवाला, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र दो तारोंवाला और उत्तराभद्रपदनक्षत्र दो तारोंवाला कहा है ॥८॥

સંખ્યાનુ કથન કરે છે—दो दंडा पन्नत्ता इत्यादि।

ટીકાર્થ—તીર્થંકરોએ દંડ બે બતાવ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે-પહેલો અર્થ દંડ અને બીજો અનર્થદંડ રાશી બે બતાવી છે-પહેલી જીવ રાશિ અને બીજી અજીવ રાશિ બંધન બે પ્રકારના છે—(૧) રાગબંધ અને (૨) દ્વેષબંધ પૂર્વાફાલ્ગુની નક્ષત્ર બે તારાવાળુ ઉત્તરફાલ્ગુની નક્ષત્ર બે તારાવાળુ, પૂર્વાભાદ્રપદ નક્ષત્ર બે તારાવાળુ, અને ઉત્તરા ભાદ્રપદ નક્ષત્ર બે તારાવાળુ કહ્યું છે ॥૮॥

गब्भवक्कंतिय सन्निमाणुस्साण अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू. ९ ॥

टीका—'इमीसे' इत्यादि । नैरयिकाणां रत्नप्रभायामाद्यप्रस्तटे प्रस्तट इति क्वोपमा मध्यमा स्थितिः, तथा द्वितीयायां पृथिव्यां पञ्चमे प्रस्तटे त्रिसागरोपमा मध्यमा स्थितिर्ज्ञेया। असुरकुमारेन्द्र (चमरबलि) वर्जितभवनवासिनामीशानदेवानां 'देसूणे' देशोने द्वे पल्योपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता । हरिवर्षरम्यकवर्षयोर्मनुष्यस्त्रीणां यायुषां पञ्चेन्द्रियाणां तिरश्चां मानुषाणां च द्विपल्योपमा स्थितिर्निर्दिष्टा ॥९॥

'इमीसे णं' इत्यादि।

टीकार्थ-इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की चौथे प्रस्तर में दो पल्योपम की मध्यम स्थिति कही गई है। द्वितीय पृथिवी में कितनेक नारकियों की भी स्थिति दो पल्योपम की कही गई है। और इसी द्वितीय पृथिवी में कितनेक नारकियों की दो सागरोपम की स्थिति कही गई है। सो यह छठवें प्रस्तर की अपेक्षा मध्यमस्थिति कही हुई है ऐसा जानना चाहिये। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की पल्योपम की स्थिति कही गई है। असुरकुमारों के चमर और बलि, इन दो इन्द्रों को छोड़कर जो उत्तरार्ध के नागकुमार आदि भवनवासी देवों के भूतानन्द आदि नव इन्द्र हैं उनकी देशोन दो पल्य की स्थिति कही गई है। अकर्मभूमिगत हरि वर्ष और रम्यकवर्ष में उत्पन्न कितनेक भोगभूमिगत पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की दो पल्योपम की स्थिति कही गई है। इसी तरह अकर्मभूमि हैमवत वर्ष की आयुवाले गर्भज संज्ञी पंचेन्द्रिय

"इमीसे णं" इत्यादि।

ટીકાર્થ-આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીયોની ચોથા પ્રસ્તરમાં બે પલ્યોપમની સ્થિતિ બતાવવામાં આવી છે બીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીયોની સ્થિતિ પણ બે પલ્યોપમની કહેલ છે અને બે જ બીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીયોની સ્થિતિ બે સાગરોપમની કહેલ છે તો તે છઠ્ઠા પ્રસ્તરની અપેક્ષાએ મધ્યમ સ્થિતિ કહેલ છે તેમ સમજવું અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેલ છે અસુરકુમારોના ચમર અને બલિ બે બે ઇંદ્રો સિવાયના ઉત્તરાર્ધના નાગકુમાર આદિ ભવનવાસી દેવોના ભૂતાનંદ આદિ જે નવ ઇન્દ્રો છે તેમની બે પલ્યથી કંઇક ઓછી સ્થિતિ બતાવી છે અકર્મભૂમિ વર્ષોના આયુષ્યવાળા હરિવર્ષ અને રમ્યક વર્ષમાં ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક ભોગભૂમિના પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની સ્થિતિ બે પલ્યોપમની કહેલ છે બે જ પ્રમાણે અકર્મભૂમિ હૈમવત વર્ષોના આયુષ્યવાળા ગર્ભજ સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જેવા

मूलम्--सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। ईसाणे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ईसाणे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साहियाइं दो सागरोमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। माहिंदे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १० ॥

टीका—'सोहम्मे' इत्यादि। सौधर्मे ईशाने च कल्पे केषांचिद् देवानां द्विसागरोपमा स्थितिः। सौधर्मे कल्पे केषांचिद् देवानामुत्कृष्टतो द्विसागरोपमा स्थितिः। ईशाने कल्पे तु देवानामुत्कृष्टतः साधिका द्विसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारे कल्पे देवानां जघन्यतो द्विसागरोपमा स्थितिः : माहेन्द्रे कल्पे तु देवानां जघन्यतः साधिका द्विसागरोपमा स्थितिरवसेया ॥सू.१०॥

कितनेक मनुष्यों की दो पल्योपम की स्थिति कही गई है। यह स्थिति भी हरिवर्ष और रम्यक वर्ष क्षेत्र की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥९॥

'सोहम्मे कप्पे' इत्यादि।

टीकार्थ-सौधर्मकल्प में और ईशानकल्प में कितनेक देवों की दो सागरोपम की स्थिति कही गई है सो सौधर्मकल्प में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की है, परन्तु जो दूसरा ईशानकल्प है उस में देवों की स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक स्थिति है। सनत्कुमार कल्प में देवों की जघन्य स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक है ॥१०॥

કેટલાક મનુષ્યે ની સ્થિતિ બે પલ્યોપમની કહેલ છે તે સ્થિતિ પણ હરિવર્ષ અને અને રમ્યકવર્ષ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ કહેવામા આવી છે તેમ સમજવું ॥૯॥

"सोहम्मे कप्पे" इत्यादि।

ટીકાર્થ-સૌધર્મકલ્પમાં અને ઇશાનકલ્પમા કેટલાક દેવોની બે સાગરોપમની સ્થિતિ કહેલ છે તો સૌધર્મકલ્પમાં કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની છે. પણ જે બીજુ ઇશાનકલ્પ છે તેમા દેવોની સ્થિતિ બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે. સનત્કુમાર કલ્પમા દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ બે પ્રકારની છે, પણ માહેન્દ્રકલ્પમા દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે ॥૧૦॥

मूलम्—जे देवा सुभ सुभकत सुभवण्ण सुभगंध सुभलेस सुभफास सोहम्मवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं ण देवाणं उक्को सेण दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, ते ण देवा दोण्ह अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं दोहिं वाससहस्सेहि आहारट्ठे समुप्पज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे दोहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंत करिस्संति ॥ सू. ११॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि । ये देवाः शुभ-शुभकान्त-शुभवर्ण-शुभगन्ध-शुभलेश्य-शुभस्पर्श-सौधर्मावतंसकनामकेषु सप्तसु विमानेषु देवतया उत्पन्नाः, ते खलु देवा बाह्याभ्यन्तरिकयोच्छ्वासनिःश्वासयोः द्वाभ्यामर्धमासाभ्याम्-मास नेत्यर्थः । आहारसंज्ञा च तेषां द्विसहस्रवर्षानन्तरमुत्पद्यते । ये खलु तस्य भवसिद्धिका जीवाः सन्ति ते द्विभवग्रहणेन सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू. ११॥

'जे देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ—जो देव शुभ, शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगंध, शुभलेश्य, शुभस्पर्श और सौधर्मावतंसक, इन सात विमानों में जो जीव देवरूप से उत्पन्न होते हैं उनकी स्थिति उत्कृष्टरूप से दो सागरोपम की होती है। ये देव दो पक्षमें अर्थात् एक माह में—बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निश्वास लेते हैं। इन देवों को आहार संज्ञा दो हजार वर्ष के अनन्तर उत्पन्न होती है। जो वहां भवसिद्धिक जीव होते हैं वे मनुष्य के दो भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनन्त ज्ञानादिक गुणों का

"जे देवा" इत्यादि ।

ટીકાર્થ શુભ શુભકાન્ત, શુભવર્ણ, શુભગંધ શુભલેશ્ય શુભસ્પર્શ, અને સૌધર્માવ તંસક, એ સાત વિમાનોમાં જે જીવ દેવ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે તેમની સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ રૂપે બે સાગરોપમની હોય છે તે દેવો બે પખવાડિયામાં એકવાર બે અહોરાત્ર તથા અર્ધ ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસ લે છે તે દેવોને બે હજાર વર્ષ બાદ આહાર ની ઇચ્છા ઉત્પન્ન થાય છે જે જીવ ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ મનુષ્યના બે ભવ કરીને સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માના અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરશે, સમસ્ત

अथ तृतीयसमवायाङ्गमाह—

मूलम्—तओ दंडा पण्णत्ता, तं जहा—मणदंडे, वयदंडे, कायदंडे। तओ गुत्तीओ पण्णत्ता, तं जहा—मणगुत्ती, वयगुत्ती, कायगुत्ती,। तओ सल्ला पण्णत्ता, तं जहा—मायासल्लेणं, नियाणसल्लेणं, मिच्छादंसणसल्लेणं। तओ गारवा पण्णत्ता, तं जहा—इड्ढीगारवे णं रसगारवे णं सायागारवे णं। तओ विराहणा पण्णत्ता, तं जहा—नाण विराहणा, दंसण विराहणा, चरित्तविराणा। मिगसिर नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते पुस्स नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, जेट्ठा नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, अभिइ नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते सवण नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, अस्सिणि नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, भरिणी नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ॥१२॥

टीका—'तओ दंडा' इत्यादि। दण्ड्यते=चारित्र्यादिविनाशेन निःसारी क्रियते आत्मा येनासौ दण्डः, स हि त्रिविधः-मनोदण्डः, वचोदण्डः, कायदण्डश्च। दुष्प्रयुक्तेन मनसाऽऽत्मसंबन्धो दण्डः मनोदण्डः, एवमितरावपि विज्ञेयौ। त्रिस्रो गुप्तयः—मनोगुप्तिः, वचोगुप्तिः, कायगुप्तिश्चेति। गुप्तिर्गोपनम्—अशुभप्रवृत्तिनिरोधपूर्वकं शुभप्रवृत्तौ प्रवर्तनम्, त्रीणि शल्यानि प्रज्ञप्तानि—शल्यं हि शल्यते—

उपभोग करेंगे, समस्तकर्मों से आत्यंतिक रूप में छूट जावेंगे। तदा कृतकृत्य हो जावेंगे और समस्तप्रकार के दुःखों का अन्त करेंगे ॥११॥

अब सूत्रकार तृतीय समवाय को प्रकट करते हैं 'तओ दंडा' इत्यादि।

टीकार्थ—चारित्र आदि को विनाश के द्वारा निःसार बना दी जाती है उसका नाम दंड है, यह दड तीन प्रकार का भगवान् ने कहा है। वे उसके तीन प्रकार ये हैं—मनोदड, वचनदंड और कायदंड। गुप्ति—तीनप्रकार की है, जैसे—मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति। शल्य तीन प्रकार के हैं,

---

કર્મોનો આત્યંતિક ક્ષય કરશે, તથા કૃતકૃત્ય થઇ જશે, અને સમસ્ત પ્રકારના દુઃખોનો અન્ત લાવશે ॥૧૧॥

હવે સૂત્રકાર ત્રીજુ સમવાય પ્રગટ કરે છે—"तओ दंडा" इत्यादि।

ટીકાર્થ—ચારિત્ર આદિના વિનાશથી આત્માને જેનાથી નિસાર બનાવી દેવામાં આવે છે તેનુ નામ દંડ છે તે દંડ ત્રણ પ્રકારના ભગવાને બતાવ્યા છે—(૧) મનોદંડ, (૨) વચનદંડ (૩) કાયદંડ ગુપ્તિ ત્રણ પ્રકારની છે—(૧) મનોગુપ્તિ, (૨) વચનગુપ્તિ

मूलम्—जे देवा सुभ सुभकत सुभवण्ण सुभगंध सुभलेस सुभफास सोहम्मवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं ण देवाणं उक्को सेण दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, ते ण देवा दोण्ह अद्धमासाण आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं दोहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे दोहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंत करिस्संति ॥ सू. ११॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि । ये देवाः शुभ-शुभकान्त-शुभवर्ण-शुभगन्ध-शुभलेश्य-शुभस्पर्श-सौधर्मावतंसकनामकेषु सप्तसु विमानेषु देवतया उत्पन्नाः, ते खलु देवा आभ्यन्तरिकोच्छ्वासनिःश्वासौ द्वाभ्यामर्धमासाभ्याम्-मास नेत्यर्थः । आहारसंज्ञा च तेषां द्विसहस्रवर्षानन्तरमुत्पद्यते । ये खलु शुभ भवसिद्धिका जीवाः सन्ति ते द्विभवग्रहणेन सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामंतं करिष्यन्ति ॥सू. ११॥

'जे देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ—जो देव शुभ, शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगंध, शुभलेश्य, शुभस्पर्श और सौधर्मावतंसक, इन सात विमानों में जो जीव देवरूप से उत्पन्न होते हैं उनकी स्थिति उत्कृष्टरूप से दो सागरोपम की होती है। वे देव दो पक्षमें अर्थात् एक माह में—आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निश्वास लेते हैं। उन देवों का आहार संज्ञा दो हजार वर्ष के अनन्तर उत्पन्न होती है। जो यहां भवसिद्धिक जीव होते हैं वे मनुष्य के दो भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनन्त ज्ञानादिक गुणों का

"जे देवा" इत्यादि ।

ટીકાર્થ શુભ શુભકાન્ત શુભવર્ણ, શુભગંધ શુભલેશ્ય શુભસ્પર્શ અને સૌધર્માવ તંસક, એ સાત વિમાનોમાં જે જીવો દેવ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે તેમની સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ રૂપે બે સાગરોપમની હોય છે તે દેવો બે પખવાડિયામાં એટલે કે બે મહિને—આભ્યંતર તથા શ્વાસ ઉચ્છ્વાસ-નિઃશ્વાસ લે છે તે દેવોને બે હજાર વર્ષ બાદ આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે જે અહીંયા ભવસિદ્ધિક જીવ હોય છે તેઓ મનુષ્યના બે ભવ કરીને સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માના અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપયોગ કરશે, સમસ્ત

भावार्थ—जिसके संबंध से आत्मा अपने चारित्र का विनाश कर निस्सार बन जाता है उस का नाम दंड है। दुष्प्रयुक्त मन के संबंध से आत्मा में कर्म वर्गणाओं का जो कर्मरूप से परिणमन होता है इसका नाम मनोदंड है। इसी तरह दुष्प्रयुक्त वचन के द्वारा और दुष्प्रयुक्त काय के द्वारा भी आत्मा को दंड का पात्र होना पडता है इसलिये मन वचन और काय के भेद से दंड को तीन प्रकार का कहा गया है। मन वचन और काय का भले प्रकार निरोध करना इसका नाम गुप्ति है। यह गुप्ति भी तीन प्रकार की है-मनोगुप्ति-मन को अशुभ प्रवृत्ति से हटाकर शुभ प्रवृत्ति में लगाना, वचनगुप्ति-वचन को अशुभ प्रवृत्ति से हटाकर शुभ प्रवृत्ति में लगाना अर्थात्-बोलने के प्रत्येक प्रसग पर या तो वचन का नियमन करना या प्रसंग पाकर मौन धारण कर लेना वचनगुप्ति है। कायगुप्ति-किसी भी चीज के लेने व धरने में अथवा बैठने, उठने, चलने आदि में कर्तव्य अकर्तव्य का विवेक हो ऐसे शारीरिक व्यापार को नियमन करना ही कायगुप्ति है। गुप्ति का जीवन के निर्माण में बडा हाथ है। क्यों कि अनर्थन से मुक्ति इसके बिना नहीं मिलती। गुप्ति में मात्र अशुभ प्रवृत्ति से हटकर शुभप्रवृत्ति में प्रवृत्त होना होता है। चारित्र के साथ

छे જ્યેષ્ઠા નક્ષત્ર ત્રણ તારાવાળુ છે અશ્વિની નક્ષત્ર ત્રણ તારાઓવાળુ છે અને ભરણી નક્ષત્ર ત્રણ તારાઓવાળુ છે

ભાવાર્થ—જેના સબંધથી આત્મા પોતાના ચારિત્રનો વિનાશ કરીને નિઃસાર બની જાય છે તેનુ નામ દંડ છે દોષયુકત મનના સબંધથી આત્મામા કર્મવર્ગણાઓનુ જે કર્મરૂપે પરિણામ થાય છે, તેનુ નામ મનેદંડ છે એ જ રીતે દોષયુકત વચન દ્વારા અને દોષયુકત કાયા દ્વારા પણ આત્માને દંડને પાત્ર થવુ પડે છે તેથી મન, વચન અને કાયાના ભેદથી દંડના ત્રણ પ્રકાર દર્શાવ્યા છે મન, વચન, અને કાયાનો સારી રીતે નિરોધ કરવો તેને ગુપ્તિ કહે છે. તે ગુપ્તિ પણ ત્રણ પ્રકારની છે—મનોગુપ્તિ-મનને અશુભ પ્રવૃત્તિથી દૂર રાખીને શુભ પ્રવૃત્તિમા જોડવુ વચનગુપ્તિ—વચનને અશુભ પ્રવૃત્તિમાથી હટાવી લઈને શુભ પ્રવૃત્તિમા જોડવા, એટલે કે બોલવાના દરેક પ્રસંગે વાણીનુ નિયમન કરવુ કે પ્રસંગોપાત મૌન ધારણ કરવુ તે વચનગુપ્તિ છે કાયગુપ્તિ-કોઇ પણ ચીજ લેવામા કે મુકવામા અથવા બેસવા ઉઠવા, ચાલવા આદિ ક્રિયામા કર્તવ્ય અકર્તવ્યનો વિવેક રહે એ રીતે શારીરિક પ્રવૃત્તિઓનુ નિયમન કરવુ તે કાયગુપ્તિ કહેવાય છે જીવનનિર્માણમા ગુપ્તિનો મોટો ફાળો રહે છે કારણ કે તેના વિના ભવભ્રમણમાથી મુકત થઇ શકાતુ નથી ગુપ્તિમા માત્ર અશુભ પ્રવૃત્તિઓથી દૂર રહીને શુભ પ્રવૃત્તિઓમા પ્રવૃત્ત થવાનુ હોય

—मायाशल्यम्, निदानशल्यम् अने मिथ्यादर्शनशल्यम्। त्रीन गौरव छे ते ये छे—ऋद्धिगौरव, रस गौरव अने सातागौरव। त्रीन विराधना छे ते ये छे—ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना अने चारित्र विराधना। मृगशिरा नक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे। पुष्यनक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे। ज्येष्ठा नक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे। अभिजित् नक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे। श्रवणनक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे। अश्विनी नक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे, भरणी नक्षत्र त्रीन तारानो वाळा छे।

अने (३) शल्यरहित. शल्य एटले भेद—(१) मायाशल्य, (२) निदान शल्य, अने (३) मिथ्यादर्शन शल्य अने गौरव त्रण छे—(१) ऋद्धिगौरव (२) रसगौरव अने (३) साता गौरव. विराधना त्रण छे—(१) ज्ञान विराधना, (२) दर्शन विराधना अने (३) चारित्र विराधना मृगशिर नक्षत्र त्रण तारावाळु छे. पुष्य नक्षत्र त्रण तारावाळु

अस्थिर चित्त और लक्ष्य से व्यग्र बना देता है उसी प्रकार ये शल्य भी व्रती को अपने व्रतों की सच्ची आराधना करनेरूप लक्ष्य में अकुशल परिणाम और व्यग्र बना देते है। व्रतों को प्राप्त करना और बात है और उन्हें अपने जीवन में उतार लेना और बात है।

शल्यों के सद्भाव में व्रती अपनी मानसिक स्थिति का सन्तुलन खो बैठता है, अतः व्रतों के आराधन के लिये मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखना इन शल्यो के अभाव का कार्य है। व्रतों के पालन करने में कपट, ढोंग और ठगने की वृत्ति का बना रहना मायाशल्य है। देवादिकों की ऋद्धियों का अवलोकन कर या सुनकर सा मन में सकल्प करना की मुझे भी ब्रह्मचर्य आदि व्रतों के अनुष्ठान से ये ऋद्धियां प्राप्त हों इसका नाम निदानशल्य है। यह निदानशल्य मोक्षरूप फल को उच्छेद करने वाला होता है। व्रतो का पालन करते हुए भी सत्यपर श्रद्धा न लाना अथवा असत्यका आग्रह रखना मिथ्यादर्शनशल्य है। मानकषाय और लोभकषाय से जनित अशुभभावों की गुरुता का आत्मा में होना इसका नाम गौरव है। यह गौरव ऋद्धि गौरव, रसगौरव, और सात गौरव के भेद से तीन प्रकार का है। यह गौरव चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण कराने के कारणभूत कर्म का हेतु होता है। नरेन्द्र आदि द्वारा पूजित होने

કરી નાખે છે એ જ પ્રમાણે એ શલ્ય પણ વ્રતીને પોતાના વ્રતની સાચી આરાધ ના કરવા રૂપી લક્ષ્યથી અકુશલ પરિણામ યુકત તથા વ્યગ્ર બનાવે છે વ્રતોને અ ગી કાર કરવા તે એક વાત છે અને તેમને પોતાના જીવનમા ઉતારવા તે અલગ વાત છે

આ શલ્યોના સદ્ભાવમા વ્રતી પોતાની માનસિક સ્થિતિનુ સમતોલપણુ ગુમાવી બેસે છે તેથી વ્રતોની આરાધનાને માટે માનસિક સ્વ સ્થ્ય બનાવ રાખવુ તે શલ્યોનો અભાવ હોય તોજ સભવી શકે છે વ્રતોનુ પાલન કરવામા કપટ ઢોગ, અને ઠગવાની વૃત્તિ રાખવી તેનુ નામ માયા શલ્ય છે દેવા દકોની ઋદ્ધિયોનુ અવલોકન કરીને કે તેનું વર્ણન સાભ ળીને મનમા એવો સ કલ્પ કરવો કે મને પણ બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતો આચરવાથી તે ઋદ્ધિયો પ્રાપ્ત થશે, તેનુ નામ નિદાન શલ્ય છે તે નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફળનો ઉચ્છેદ કરનાર હોય છે વ્રતોનુ પાલન કરતી વખતે પણ સત્ય પર શ્રદ્ધા ન રાખવી, અથવ અસત્યનો આગ્રહ રાખવો તે મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે માનકષ ય અને લોભકષાયથી ઉત્પન્ન થયેલ અશુભ ભાવોની ગુરુતાનુ આત્મામા અસ્તિત્વ હોવુ તેનુ નામ ગૌરવ છે ગૌરવના ત્રણ પ્રકાર છે–ઋદ્ધિગૌરવ રસગૌરવ અને સાત ગૌરવ તે ગૌરવ ચાર ગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણ કરાવવાના કારણરૂપ કર્મનો હેતુ હોય છે નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજવાનુ

सेवन होने के कारण इसमें अप्रशस्त क्रियाओं का निग्रह करना इष्ट होता है। समिति में सक्रिया में प्रवर्तन मुख्य होता है। तात्पर्य यह है। प्रशस्त क्रियाओं में भी मन का नियमनकरना, मौन धारण करना और शारीरिक क्रिया को नियमन के जीवन की रक्षा करना क्रमशः मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति है। शल्य शब्द का अर्थ काँटा या वैसी कोई तीक्ष्ण वस्तु है—जो शरीर में चुभ जाने पर शरीर को और मन को अस्वस्थ बना देती है, और आत्मा को किसी भी कार्य के करने में एकाग्र नहीं होने देता है अतः आत्मा शल्य से बाधित होता रहता है। ये शल्य तीन हैं—माया, मिथ्या, निदान। ये तीनों भावशल्य हैं। बाण आदि शरीर में चुभने वाली वस्तुएँ द्रव्यशल्य हैं। व्रती बनने के लिये आवश्यक है कि वह इन तीन भावशल्यों का सर्वथा परित्याग कर दे। जहां व्रती बनने का विधान है वहां उस व्रती आत्मा को इन शल्यों का सर्वथा परित्याग करने का उपदेश इसलिये है कि इनके प्रभाव से अव्रत भी व्रतों के जैसे प्रतीत होता है। अहिंसा आदि व्रतों को अंगीकार कर लेने मात्र से कोई सच्चा व्रती नहीं बन जाता है। सच्चा व्रती बनने के लिये उस इन शल्यों का सर्वथा परित्याग कर देना आवश्यक हो जाता है। जैसे—स्वस्थ भी मनुष्य के पैर आदि में लगा हुआ काँटा उसे

છે વ્યક્તિની સાથે સમ્બન્ધ હોવાને કારણે અપ્રશસ્ત ક્રિયાઓનો નિગ્રહ કરવો તે ઇષ્ટનીય છે સમિતિમાં સક્રિયામા પ્રવર્તન મુખ્ય હોય છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે પ્રશસ્ત ક્રિયાઓમાં પણ મનનુ નિયમન કરવુ, મૌન ધારણ કરવુ, અને શારીરિક ક્રિયાઓનુ નિયમન કરીને જીવોનુ રક્ષણ કરવુ તે અનુક્રમે મનોગુપ્તિ વચનગુપ્તિ અને કાયગુપ્તિ છે શલ્ય કાંટાને કાઢો અથવા કોઈ પણ તીક્ષ્ણ વસ્તુ, કે જે શરીરને વાગતાં જ શરીર તથા મનને અસ્વસ્થ કરી નાખે છે, અને કે ઈ પણ કાર્ય કરવા માટે આત્માને એકાગ્ર થવા દેતી નથી તેથી આત્મા શલ્યથી બાધકોથી કહેવાય છે તે શલ્યના ત્રણ પ્રકાર છે માયા મિથ્યા, અને નિદાન જે ત્રણે ભાવશલ્ય છે બાણ આદિ પ્રહાર કરવાવાળી વસ્તુઓ દ્રવ્યશલ્ય છે વ્રતી બનવાને માટે તે જરૂરી છે કે તેણે ત્રણે ભાવશલ્યોનો સ્પષ્ટપણે પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. જ્યાં વ્રતી બનવાનુ વિધાન છે ત્યાં તે વ્રતી આત્માને તે શલ્યોનો સ્પષ્ટપણેતે પરિત્યાગ કરવાનો આદેશ એ કારણે છે કે તેના પ્રભાવથી અવ્રત પણ વ્રતના જેવા લાગે છે માત્ર અહિંસા આદિ વ્રતો અંગીકાર કરવાથી જ કોઇ સાચો વ્રતી બની જતો નથી સાચો વ્રતી બનવાને માટે તેણે એ શલ્યોનો તન પરિત્યાગ કરવો આવશ્યક છે જેમ કે-સ્વસ્થ મનુષ્યના પગ આદિમાં વાગેલ કાંટો તેના ચિત્તને અસ્થિર બનાવી નાખે છે અને તેથી સ્વસ્થ

अस्थिर चित्त और लक्ष्य से व्यग्र बना देता है उसी प्रकार ये शल्य भी व्रती को अपने व्रतों की सच्ची आराधना करनेरूप लक्ष्य में अकुशल परिणाम और व्यग्र बना देते है। व्रतों को प्राप्त करना और बात है और उन्हें अपने जीवन में उतार लेना और बात है।

शल्यों के सद्भाव में व्रती अपनी मानसिक स्थिति का सन्तुलन खो बैठता है, अतः व्रतों के आराधन के लिये मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखना इन शल्यों के अभाव का कार्य है। व्रतों के पालन करने में कपट, ढोंग और ठगने की वृत्ति का बना रहना मायाशल्य है। देवादिकों की ऋद्धियों का अवलोकन कर या सुनकर सा मन में संकल्प करना की मुझे भी ब्रह्मचर्य आदि व्रतों के अनुष्ठान से ये ऋद्धियां प्राप्त हों इसका नाम निदानशल्य है। यह निदानशल्य मोक्षरूप फल को उच्छेद करने वाला होता है। व्रतो का पालन करते हुए भी सत्यपर श्रद्धा न लाना अथवा असत्यका आग्रह रखना मिथ्यादर्शनशल्य है। मानकषाय और लोभकषाय से जनित अशुभभावों की गुरुता का आत्मा में होना इसका नाम गौरव है। यह गौरव ऋद्धि गौरव, रसगौरव, और सात गौरव के भेद से तीन प्रकार का है। यह गौरव चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण कराने के कारणभूत कर्म का हेतु होता है। नरेन्द्र आदि द्वारा पूजित होने

કરી નાખે છે એ જ પ્રમાણે એ શલ્ય પણ વ્રતીને પોતાના વ્રતની સાચી આરાધના કરવા રૂપી લક્ષ્યથી અકુશલ પરિણામ યુકત તથા વ્યગ્ર બનાવે છે વ્રતોને અંગીકાર કરવા તે એક વાત છે અને તેમને પોતાના જીવનમા ઉતારવા તે અલગ વાત છે

આ શલ્યોના સદ્ભાવમા વ્રતી પોતાની માનસિક સ્થિતિનુ સમતોલપણુ ગુમાવી બેસે છે તેથી વ્રતોની આરાધનાને માટે માનસિક સ્વસ્થ્ય બનાવી રાખવું તે શલ્યોનો અભાવ હોય તોજ સંભવી શકે છે વ્રતોનુ પાલન કરવામા કપટ ઢોંગ, અને ઠગવાની વૃત્તિ રાખવી તેનુ નામ માયા શલ્ય છે દેવા દેવોની ઋદ્ધિયોનુ અવલોકન કરીને કે તેનુ વર્ણન સાંભળીને મનમા એવો સંકલ્પ કરવો કે મને પણ બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતો આચરવાથી તે ઋદ્ધિયો પ્રાપ્ત થશે, તેનુ નામ નિદાન શલ્ય છે તે નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફળનો ઉચ્છેદ કરનાર હોય છે વ્રતોનુ પાલન કરતી વખતે પણ સત્ય પર શ્રદ્ધા ન રાખવી, અથવ અસત્યનો આગ્રહ રાખવો તે મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે માનકષ ય અને લોભકષાયથી ઉત્પન્ન થયેલ અશુભ ભાવોની ગુરુતાનુ આત્મામા અસ્તિત્વ હોવુ તેનુ નામ ગૌરવ છે ગૌરવના ત્રણ પ્રકાર છે–ઋદ્ધિગૌરવ રસગૌરવ અને સાત ગૌરવ તે ગૌરવ ચાર ગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણ કરાવવાના કારણરૂપ કર્મનો હેતુ હોય છે નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજવાનુ

रूप अथवा पूज्य आचार्य आदि की पदवी प्राप्ति होने रूप अभिमान द्वारा अपना गौरव प्रदर्शित करना इसका नाम ऋद्धिगौरव है। ऋद्धि प्राप्ति के अभिमान से और उसकी अप्राप्ति में अशुभभाव करने से यह ऋद्धिगौरव होता है। रसना इंद्रिय के विषयभूत मनोज्ञ मधुर आदि रसों की प्राप्ति में आनंद मानना और उनकी अप्राप्ति में आत्मा में आकुल व्याकुलरूप अशुभ परिणति करना यह रसगौरव है। 'मैं ही सुखी हूं' इस प्रकार का अभिमान करना सातगौरव है। इस सातगौरव में अपने को सुखी होने का अभिमान रहता है और दूसरों का ऐसा सुख प्राप्त न हो ऐसी भावना रहती है। विराधना शब्द का अर्थ है नाश करना। यह निन्दा अथवा निन्हव से होती है ज्ञान विराधना, दर्शनविराधना और चारित्र विराधना, इस प्रकार से यह विराधना तीन प्रकार का है। ज्ञान की निंदा करना अथवा ज्ञान के साधनभूत पुस्तकादिकों का निह्नव (छिपाना) करना यह ज्ञानविराधना है। क्षायिक सम्यक्त्व आदि की निंदा या उनके धारकों का निह्नव करना यह दर्शन विराधना है। सामयिक आदि चारित्र की निंदा करना या व्रत आदि का खंडन करना इसका नाम चारित्रविराधना है। सू० १२।

અથવા પૂજ્ય આચાર્ય આદિની પદવી પ્રાપ્ત થવાનુ અભિમાન દ્વારાને પોતાનુ ગૌરવ પ્રદર્શિત કરવુ તેને ઋદ્ધિગૌરવ કહે છે ઋદ્ધિ પ્રાપ્તિના અભિમાનથી અને તેની અપ્રાપ્તિના અશુભ ભાવ કરવાથી તે ઋદ્ધિગૌરવ પેદા થાય છે રસનેન્દ્રિયના વિષય ભૂત મનોજ્ઞ, મધુર આદિ રસોની પ્રાપ્તિમા આનદ માનવા અને તેમની અપ્રાપ્તિમાં આત્મામાં આકુળ વ્યાકુળ અથવા રૂપ અશુભવૃત્તિ થવી તેને રસગૌરવ કહે છે "હું જ સુખી છુ" આ પ્રકારનુ અભિમાન કરવુ તે સાતગૌરવ છે સાત ગૌરવમાં સુખી હોવાનુ પોતાને અભિમાન રહે છે, અને બીજા સુખ પ્રાપ્ત ન થાય એવી ભાવના રહે છે વિરાધના એટલે નાશ કરવો તે નિન્દા અથવા નિન્હવથી-વિપરીત તત્વ બતાવવાથી થાય છે જ્ઞાન વિરાધના દર્શન વિરાધના, અને ચારિત્ર વિરાધના, એવા તેના ત્રણ પ્રકાર છે જ્ઞાનની નિંદા કરવી અથવા જ્ઞાનદાતા ગ્રંથાદિકોનુ નિન્હવ કરવુ (વપરીત તત્વ બતાવવુ) તેને જ્ઞાન વિરાધના કહે છે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ આદિની નિંદા અથવા તે ધારણ કરનારનુ નિન્હવ કરવુ તે દર્શન વિરાધના છે સામયિક આદિ ચારિત્રની નિંદા કરવી અથવા વ્રત આદિનુ ખંડન કરવુ તેને ચારિત્ર વિરાધના કહે છે સૂત્ર ૧૨૫

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं तिन्नि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। दोच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं जहण्णेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउय सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउयसन्निगब्भवक्कंतियमणुस्साणं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमार माहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० १३ ॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्ति एकेषां नैरयिकाणां त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। द्वितीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां जघन्येन त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानामुत्कर्षेण त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः

'इमीसे णं' इत्यादि।

टीकार्थ-इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तीन पल्योपम की होती है। द्वितीय पृथिवी में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। तीसरी पृथिवी में नारकियों की जघन्यस्थिति तीन सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की तीन पल्योपम की स्थिति है। असंख्यातवर्ष की आयुवाले भोगभूमिया

'इमीसे णं' इत्यादि।

ટીકાર્થ-આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની હોય છે, બીજી પૃથ્વીમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે, ત્રીજી પૃથ્વીમાં નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની ત્રણ પાલ્યોપમની સ્થિતિ છે અસંખ્યાત વર્ષ

मूलम्- जे देवा आमकर पमकर आमकरपमकर चद चदावत चदप्पभ चदकत चद्दवण्ण चदलेस चदज्झय चदसिंग चदसिट्ठ चदकूड चउत्तरवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसि ण देवाण उक्कोसेण तिण्णि सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता, ते ण तिण्ह अद्धमासाण आणमति वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा, तेसि ण देवाण उक्कोसेण तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जेइ। सतेगइया भव सिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति, बुज्झिस्सति मुच्चि स्सति परिनिव्वाइस्सति, सव्वदुक्खाणमंत करिस्सति ॥१४॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा आमङ्कर१, प्रमङ्करम्२, आमङ्क रप्रभङ्कर३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रप्रभ६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण ८, चन्द्रलेश्य९, चन्द्रध्वज१०, चन्द्रशृङ्ग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतंसक१४ चन्द्र विमानेषु=एतेषु चतुर्दशसङ्ख्यकेषु विमानेषु देवतयेन उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमाणि स्थिति प्रज्ञप्ता, ते खलु देवाः 'तिण्ह अद्धमासाण' त्रयाणामर्धमासानाम् आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,

है। अतः यहां जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक देवों की प्रकट की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ—जो देव आमकर,१ प्रभकर,२ आमकर-प्रभंकर३ चन्द्र,४ चन्द्रा वर्त,५ चन्द्रप्रभ,६ चन्द्रकान्त,७ चन्द्रवर्ण,८ चन्द्रलेश्य,९ चन्द्रध्वज,१० चन्द्रशृंग११ चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट १३ और चन्द्रोत्तरावतंसक इन १४ विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। वे देव सेढ माह के अन्त में बाह्य आभ्यन्तर

ઘોષમણી જેવી પ્રભાવાળે છે તેથી અહીં જે ઉત્કૃષ્ટ દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે એમ સમજી લેવું ॥સૂ ૧૩॥

टीकार्थ—'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ—જે દેવો આભકર ૧ પ્રભકર ૨ આભકર-પ્રભકર ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫, ચન્દ્રપ્રભ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેશ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રશૃંગ, ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ, ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતંસક ૧૪એ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી પેદા થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દોઢ

तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रिभिर्वर्षसहस्रैः 'आहारट्ठे' आहारार्थः—आहारसंज्ञेति समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये त्रिभि र्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ति मोक्ष्यंति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१४॥

अथचतुर्थसमवायाङ्गमाह—

मूलम्—चत्तारि कषाया पण्णत्ता, तं जहा—कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए। चत्तारि झाणा पण्णत्ता, तं जहा—अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, धम्मज्झाणे, सुक्कज्झाणे,। चत्तारि विकहाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा। चत्तारि सण्णा पण्णत्ता—तं जहा—आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा। चउव्विहे बंधे पण्णत्ते—तं जहा—पगइबंधे, ठिइबंधे, अणुभाववंधे, पएसबंधे। चउगाउए जोयणे पण्णणे। अणुराहानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। पुव्वासाढानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। उत्तरासाढा नक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते ॥ १५ ॥

टीकार्थ'—चत्तरि कषाया' इत्यादि। चत्वारः कषायाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—क्रोधकषायः, मानकषायः, मायाकषायः लोभकषायः। चत्वारि ध्यानानि-प्रज्ञप्तानि तद्यथा—आर्तध्यानम्, रौद्रध्यानम्, धर्मध्यानम्, शुक्लध्यानम्। ध्यानं हि—अन्तर्मुहूर्तं यावच्चि

रिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को आहारसंज्ञा तीन हजार वर्ष के बाद उत्पन्न होती है। उनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भव सिद्धिक होते हैं। वे तीन भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करेंगे, समस्तकर्मों से आत्यंतिक रूप में छूट जावेंगे। तथा कृतकृत्य बन जावेंगे और समस्त प्रकार के दुःखों का अन्त करने वाले होंगे ॥सू० १४॥

માસને અન્તે અ દર તથા બહાર શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને ત્રણ હજાર વર્ષ બાદ આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમનામાંથી કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે, તેઓ ત્રણ ભવ કરીને સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માનાઅનન્ત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરશે, સમસ્ત કર્મોનો આન્ય તિક રીતે ક્ષય કરશે, કૃતકૃત્ય થઈને સમસ્ત પ્રકારના દુ ખોનો અ ત કરનાર થશે ॥સૂ ૧૪॥

पक्षसा। असंख्यवर्षायुष्कसंज्ञिगर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्याणामुत्कर्षेण तीणि पल्यो-पमानि स्थिति प्रज्ञप्ता दक्षकुलपक्षकम मनाक्संख्येयवर्षायुषां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च तत्रैव अपि पल्योपमा स्थितिर्निर्देष्टव्यस्तथैव। सौधर्मेशानेषु अस्ति एकेषां देवानां तीणि पल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां तीणि सागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता ॥१३॥

संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंचगति के जीवों की उत्कृष्टस्थिति तीनपल्योपम की होती है। इसी तरह असंख्यातवर्ष की आयुवाले भोगभूमिया (अकर्मभूमि) गर्भज संज्ञी मनुष्यों की भी उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम की है। सौधर्म ईशान देवलोकों में किसनेक देवों की तीन पल्योपम की स्थिति कही गई है। सनत्कुमार माहेन्द्रकल्पों में किसनेक देवों की तीन सागरोपम की स्थिति कही गई है।

भावार्थ—पहिली पृथिवी में नारकियों की जघन्यस्थिति दशहजार वर्ष की और उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की कही गई है। पर यहां जो किसनेक नारकियों की स्थिति तीन पल्योपम की कही गई है वह मध्य स्थिति को लक्ष्य में रखकर कही गई है। दूसरी पृथिवी में उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की है वही तीसरी पृथिवी में जघन्य है। तीसरी पृथिवी में उत्कृष्ट स्थिति सातसागरोपम की है। असुर कुमार देवों में जो किसनेक देवों की स्थिति यहां तीन पल्योपम की कही गई है वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा कथन की है। वर्षों की असुरकुमारों की स्थिति एक सागरोपम और एक सागरोपम से कुछ

આયુ વાળા ભોગભૂમિયા સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ્ યોનિના જીવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની હોય છે એ જ પ્રમાણે અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા ભોગભૂમિયા અકર્મભૂમિ સંજ્ઞી મનુષ્યોની પણ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની છે સૌધર્મ અને ઇશાન દેવલોકમા કેટલાક દેવોની ત્રણ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહોવી છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની ત્રણ સાગરોપમની સ્થિતિ બતાવી છે

ભાવાર્થ-પહેલી પૃથ્વીમા નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની કહેલ છે પણ અહિ જે કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની કહોની છે તે મધ્યમ સ્થિતિને ધ્યાનમાં લઈને કહેવેલ છે બીજી પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની છે, એ જ ત્રીજી પૃથ્વીમા જઘન્ય છે ત્રીજી પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવો માંના કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અહી જે ત્રણ પલ્યોપમની બતાવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ છે કારણ કે અસુરકુમારોની સ્થિતિ જોઇ સાગરોપમ અને

अधिक कही गई है। भोगभूमि के उत्तम मध्यम और जघन्य की अपेक्षा तीन भेद हैं। जघन्य भोगभूमि में एक पल्योपम की. मध्यम-भोगभूमि में दो पल्योपम की और उत्कृष्ट भोगभूमि में तीन पल्योपम की उत्कृष्ट स्थिति होती है। सो देवकुरु और उत्तर कुरु में तिर्यञ्चों और मनुष्यों की यह स्थिति होती है। विदेहक्षेत्र में मेरु और नील पर्वत के बीच का अर्धचन्द्राकार भाग, कि जिसकी पूर्वपश्चिम सीमा वहां के दो पर्वतों से निश्चित होती है वह उत्तरकुरु कहलाता है। और मेरु तथा निषध पर्वत के बीच का वैसा ही अर्धचन्द्राकार भाग देवकुरु कहलाता है। देवकुरु और उत्तरकुरु ये दोनो क्षेत्र विदेह क्षेत्र के ही भाग हैं। परन्तु उन क्षेत्रों में युगलियों की वस्ती होने से वे भिन्नरूप से जाने जाते है। सौधर्म और ईशान कल्प में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और दो सागरोपम से कुछ अधिक की कही हुई है। अतः यहां जो तीन पल्योपम की स्थिति कही हुई है वह मध्यमस्थिति कही है। जघन्यस्थिति यहां एक पल्योपम की और एक पल्योपम से कुछ अधिक की है। सनत्कुमार और माहेन्द्रकल्प में उत्कृष्टस्थिति क्रमशः सात सागरोपम की और सातसागरोपम से कुछ अधिक की है। और जघन्यस्थिति दो सागरोपम की और दो सागरोपम से कुछ अधिक की

એક સાગરોપમથી થોડી વધારે દર્શાવેલ છે ભોગભૂમિના ઉત્તમ, મધ્યમ અને જઘન્યની અપેક્ષાએ ત્રણ ભેદ છે જઘન્ય ભોગભૂમિમા એક પલ્યોપમની, મધ્યમ ભોગભૂમિમા બે પલ્યોપમની અને ઉત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિમા ત્રણ પલ્યોપમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હોય છે. દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુમા તિર્યંચો અને મનુષ્યોની આ સ્થિતિ હોય છે. વિદેહ ક્ષેત્રમા મેરુ અને નીલ પર્વતની વચ્ચેનો અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ કે જેની પૂર્વ પશ્ચિમ સીમા ત્યાના બે પર્વતે થી નિશ્ચિત થાય છે, તેને ઉત્તર કુરુ કહે છે અને મેરુ તથા નિષધ પર્વતની વચ્ચેનો એવો જ અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ દેવકુરુ કહેવાય છે દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુ એ બન્ને ક્ષેત્રો વિદેહ ક્ષેત્રના જ ભાગ છે પણ તે ક્ષેત્રોમા યુગલિકોની વસ્તી હોવાથી તેમને ભિન્ન રૂપે ઓળખવામાં આવે છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે બતાવેલ છે. તેથી અહી જે ત્રણ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામા આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિ કહેલ છે. ત્યા જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની અને એક ાપમથી થોડી વધારે છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્રકલ્પમાં ઉતકૃષ્ટ સ્થિતિ ક્રમશ સાત સાગરોપમની અને સાત સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ બે સાપરોપમની અને બે સાગ

मूलम्- जे देवा आमकर पमकर आमकरपमकर चद चदावत्त चदप्पभ चदकत चदवण्ण चदलेस चदज्झय चदसिंग चदसिह चदकूड चदुत्तरवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं ण देवाण उक्कोसेण तिण्णि सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता, ते ण तिण्ह अद्धमासाण आणमति वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा, तेसिं ण देवाण उक्कोसेण तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जेइ। सतेगइया भव सिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति, बुज्झिस्सति मुच्चिस्सति परिनिव्वाइस्सति, सव्वदुक्खाणमत करिस्सति ॥१४॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा आमङ्कर१, ममङ्करम्२, मामङ्करपमङ्कर३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रप्रभ६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण ८, चन्द्रलेश्य९, चन्द्रध्वज१०, चन्द्रशृङ्ग११, चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतंसक१४ चन्द्र विमानेषु=एतेषु चतुर्दशसङ्ख्यकेषु विमानेषु देवतया उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण प्राणि सागरोपमाणि स्थिति प्रज्ञप्ता, ते खलु देवाः 'तिण्ह अद्धमासाण' त्रयाणामर्धमासानाम ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,

---

है। अतः यहां जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक देवों की बतलाई गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ-जो देव आमंकर,१ ममंकर,२ आमंकर-ममंकर३ चन्द्र,४ चन्द्रावर्त,५ चन्द्रप्रभ,६ चन्द्रकान्त,७ चन्द्रवर्ण,८ चन्द्रलेश्य,९ चन्द्रध्वज,१० चन्द्रशृंग११ चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट १३ और चन्द्रोत्तरावतंसक इन१४ विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। वे देव दो माह के अन्त में आभ्यन्तर

શ્રેષ્ઠમથી મોટી બધાને છે તેથી અહીં જે ૩ સાગરની સ્થિતિ કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે એમ સમજી લેવું ॥સૂ ૧૩॥

टीकार्थ—'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ—જે દેવો આમંકર૧, મમંકર૨ આમંકર-મમંકર૩, ચન્દ્ર૪, ચન્દ્રાવર્ત૫, ચન્દ્રપ્રભ૬, ચન્દ્રકાન્ત૭ ચન્દ્રવર્ણ૮ ચન્દ્રલેશ્ય૯ ચન્દ્રધ્વજ૧૦ ચન્દ્રશૃંગ ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ૧૨ ચન્દ્રકૂટ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતંસક૧૪ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી પેદા થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દો

तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रिभिर्वर्षसहस्रैः 'आहारट्ठे' आहारार्थः—आहारसंज्ञेति समुत्पद्यते। सन्त्येकेके भवसिद्धिका जीवा ये त्रिभि र्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ति मोक्ष्यंति, परिनिर्वास्यन्ति. सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१४॥

अथचतुर्थसमवायाङ्गमाह—

मूलम्—चत्तारि कषाया पण्णत्ता, तं जहा—कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए। चत्तारि झाणा पण्णत्ता, तं जहा—अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, धम्मज्झाणे, सुक्कज्झाणे,। चत्तारि विकहाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा। चत्तारि सण्णा पण्णत्ता—तं जहा—आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा। चउव्विहे बंधे पण्णत्ते—तं जहा—पगइबंधे, ठिइबंधे, अणुभावबंधे, पएसबंधे। चउगाउए जोयणे पण्णणे। अणुराहानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। पुव्वासाढानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। उत्तरासाढा नक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते ॥ १५ ॥

टीकार्थ'—चत्तरि कषाया' इत्यादि। चत्वारः कषायाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—क्रोधकषायः, मानकषायः, मायाकषायः लोभकषायः। चत्वारि ध्यानानि-प्रज्ञप्तानि तद्यथा—अर्तध्यानम्, रौद्रध्यानम्, धर्मध्यानम्, शुक्लध्यानम्। ध्यानं हि—अन्तर्मुहूर्त्त यावच्चि

रिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते है। उन देवों को आहारसंज्ञा तीन हजार वर्ष के बाद उत्पन्न होती है। उनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भव सिद्धिक होते हैं। वे तीन भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करेंगे, समस्तकर्मो से आत्यतिक रूप में छूट जावेंगे। तथा कृतकृत्य बन जावेंगे और समस्त प्रकार के दुःखों का अन्त करने वाले होंगे ॥सू० १४॥

ભાસને અન્તે અ દર તથા બહાર શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને ત્રણ હજાર વર્ષ બાદ આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમનામાથી કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે, તેઓ ત્રણ ભવ કરીને સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માનાઅનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરશે, સમસ્ત કર્મોનો આત્યંતિક રીતે ક્ષય કરશે, કૃતકૃત્ય થઇને સમસ્ત પ્રકારના દુ.ખોનો અ ત કરનાર થશે ॥સૂ ૧૪॥

मूलम्- जे देवा आभंकरे पभंकरे आभंकरपभंकरे चंदे चंदावत्ते चंदप्पभे चंदकंते चंदवण्णे चंदलेसे चंदज्झए चंदसिंगे चंदसिट्ठे चंदकूडे चंदुत्तरवडिंसगे विमाणे देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, ते णं तिण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जेइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥१४॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा आभङ्कर१, प्रभङ्कर२, आभङ्करप्रभङ्कर३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रप्रभ६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण ८, चन्द्रलेश्य९, चन्द्रध्वज१०, चन्द्रशृङ्ग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतंसक१४ चन्द्र विमानेषु=एतेषु चतुर्दशसङ्ख्यकेषु विमानेषु देवतया उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता, ते खलु देवाः 'तिण्हं अद्धमासाणं' त्रयाणामर्धमासानाम् ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,

---

है। अतः यहां जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक देवों की प्रकट की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ-जो देव आभंकर,१ प्रभंकर,२ आभंकर-प्रभंकर३ चन्द्र,४ चन्द्रावर्त,५ चन्द्रप्रभ,६ चन्द्रकान्त,७ चन्द्रवर्ण,८ चन्द्रलेश्य,९ चन्द्रध्वज,१० चन्द्रशृंग११ चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट १३ और चन्द्रावतंसक इन १४ विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। वे देव बेड माह के अन्त में आभ्यन्तर

૩૦૫મથી ત્રીજી વધારે છે તેથી અહીં જે ૩૮૬૪૪ દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગર ૩૦૫મની પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે એમ સમજવું જોઈએ ॥સૂ. ૧૩॥

टीकार्थ—'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ—જે દેવો આભંકર ૧ પ્રભંકર ૨ આભંકર-પ્રભંકર ૩, ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫, ચન્દ્રપ્રભ ૬ ચન્દ્રકાન્ત, ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેશ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રશૃંગ, ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ, ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતંસક ૧૪એ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી પેદા થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો ૩૪

भावबंधे' 'पएसबंधे' प्रदेशबन्धः=सकषायजीवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्त्रा भिन्नभिन्नस्वभावानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसार तत्तत्परिमाणभागेन संबन्धः=प्रदेशबन्धः, इति चतुर्विधो बन्धः । 'चउगाउए' चतुर्गव्यूत योजन प्रज्ञप्तम् क्रोशचतुष्टयस्य योजनं भवति । अनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । पूर्वषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । उत्तराषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् ॥१५॥

योजन कहा गया है। अनुराधानक्षत्र चारताराओं वाला, पूर्वाषाढा नक्षत्र चारताराओं वाला, और उत्तराषाढानक्षत्र चार तागओं वाला कहा गया है।

भावार्थ—चारित्ररूप आत्मपरिणामों में अनिर्मलता का नाम ही कषाय है। कषायमोह के उदय से क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चार कषायें उत्पन्न होती है। मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर यह कषाय-न्यूनाधिकरूप में दसवें गुणस्थानतक पाई जाती है। आगे के गुणस्थानों में या तो चारित्रमोहनीय का उदय नहीं रहता या चारित्रमोहनीय कर्म ही नहीं रहता इसलिये आगे यह नहीं पाई जाती। ध्यान शब्द का अर्थ है अन्तर्मुहूर्त तक चित्त की एकाग्रता। उत्तमसंहनन वालों के यह चित्त की एकाग्रता प्रशस्तरूप में रहती है और इनके अतिरिक्त जीवों में अप्रशस्तरूप में रहती हैं। प्रशस्त रूप ध्यान में ही संवर और निर्जरा का हेतु होता है, अप्रशस्त ध्यान नहीं इसीलिये ध्यान के ये चार भेद किये है—आर्तध्यान, रौद्रध्यान, और शुक्लध्यान। ऋत नाम दुःख का है, जिसके होने में दुःख का उद्वेग अथवा तीव्रता निमित्त हो या

બતાવ્યો છે અનુરાધા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ વાળુ પૂર્વાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ-વાળુ, અને ઉત્તરાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓવાળુ બતાવ્યું છે

ભાવાર્થ—ચારિત્રરૂપ આત્મપરિણામોમા અનિર્મળતા નુ નામ જ કષાય છે. કષાયમે હના ઉદયથી ક્રોધ, માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયો ઉત્પન્ન થાય છે મિથ્યાત્વ ગુણસ્થાનથી લઈને દસમા ગુણસ્થાન સુધી કષાય વધુ ઓછા પ્રમાણમા રહેલ હોય છે પછીના ગુણસ્થાનોમા કા તો ચારિત્ર મોહનીયનો ઉદય રહેતો નથી અથવા તો ચારિત્ર મોહનીય કર્મ જ નથી રહેતા, તેથી પછીના ગુણસ્થાનોમા કષાય હોતો નથી ધ્યાન એટલે અન્તર્મુહૂર્ત સુધી ચિત્તની એકાગ્રતા ઉત્તમ સંહનન વાળા ઓને ચિત્તની તે એકાગ્રતા પ્રશસ્ત રૂપમા રહે છે અને તે સિવાયના જીવોમા

પ્રશસ્ત રૂપે રહે છે પ્રશસ્ત રૂપ ધ્યાન જ સંવર અને નિર્જરાનો હેતુ હોય છે, અપ્રશસ્ત ધ્યાન નહી, તેથી ધ્યાનના આ ચાર ભેદ કહેલ છે—આર્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન, અને શુકલધ્યાન 'ઋત' એટલે દુ ખ જે થવાને માટે દુ:ખનો ઉદ્વેગ

नास्यैकाग्रतारूपम् । तत्र चतुर्विधध्यानेषु आर्तध्यानं त्रिगतिक-दुःख-तस्य निमित्तं तत्र भवं वा आर्तम्, आर्तं च तद्ध्यानम् आर्तध्यानम्, अथवा आर्तस्य =दुःखितस्य वा ध्यानम्=आर्तध्यानम्=मनोज्ञामनोज्ञवस्तुसंयोगवियोगादि निबन्धन चित्तविकल्पलक्षणम् । रौद्रध्यानम्=रौद्रयन्त्यपरानिति रुद्र =प्राण्युपघातादि परिणतो जीवस्तस्य कर्म=रौद्रम्-हिंसादितिक्रूरता रूपम्, तद्रूप ध्यानम्=रौद्रध्यानम् । धर्म ध्यानम्=धर्मः=चर्वङ्गस्य आज्ञादि , तस्य ध्यानम्=अनुचिन्तनम्=धर्मध्यानम् । शुक्ल ध्यानम्=शुचं क्लाक्लमयति=अपनयतीति शुक्ल=मलमपकारणम्=शुक्लं च तद्ध्यानम् =शुक्लध्यानम् । चतस्रो विकथाः महाहाः, विरुद्धा धारि[1] यति याः कथास्ता विकथा , ता हि-स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा, देशकथा चेति चतस्र । चतस्र संज्ञा महाहा संज्ञा हि-असातवेदनीय मोहनीय कर्मोदयसंपाद्या आहारादयि लषाविरूपाभवना विशेषा । ताश्चु-आहारसंज्ञा-अपसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा-परिग्रहसंज्ञाश्च । चतुर्विधो बन्ध महात्मः, बन्धन बन्ध , स हि -कर्मवर्गणायोग्यपुद्गलाना-मात्मप्रदेशैः सह क्षीरनीरवत्सम्बन्धो बन्धः। स च 'पगइबंधो' प्रकृतिबन्धः=प्रकृतयः =कर्मणोऽष्टाज्ञानावरणीयादयः, तासां बन्धः प्रकृतिबन्ध । 'ठिइबंधे' स्थितिबन्धः, अघन्यादिभेदभिन्ना स्थितिः, प्रकृतिनामवस्थानं स्थितिः तस्या बन्ध =स्थितिबन्धः। अनुभावबन्धः, अनुभावो विपाकस्तीव्रादिभेदो रसस्तस्य बन्धोऽनुभावबन्धः । 'अणु

अब सूत्रकार चतुर्थ समवायांग को प्रतिपादित करते हैं—'चत्तारि' इत्यादि।

कषाय चार कही गई गई हैं। वे इस प्रकार हैं—क्रोधकषाय, मान कषाय मायाकषाय और लोभकषाय। चार ध्यान कहे गये हैं वे ये हैं-आर्तध्यान, रौद्रध्यान धर्मध्यान और शुक्लध्यान। चार विकथाएँ कही गई हैं, वे इस प्रकार है-स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा और देशकथा। चार संज्ञाएँ कही गई हैं, वे इस प्रकार हैं-आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रह संज्ञा। चार प्रकार का बंध प्ररूपित हुआ है वह इस प्रकार है-प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभावबंध और प्रदेशबंध। चार कोश का एक

[1] चत्तारि समवायांगसूत्रं प्रतिपादयन् कषे छे—'चत्तारि' इत्यादि। टीकार्थ-कषाय चार छे-(१) क्रोध कषाय (२) मान कषाय, (३) माया कषाय अने लोभ कषाय. ध्यान चार प्रकारना छे-(१) आर्तध्यान, रौद्रध्यान, (३) धर्मध्यान अने (४) शुक्ल ध्यान. चार विकथाओ कहेल छे-स्त्रीकथा, भक्तकथा राजकथा अने देश कथा. चार संज्ञाओ आ प्रमाणे छे- (१) आहार संज्ञा, २) भय संज्ञा (३) मैथुन संज्ञा (४) परिग्रह संज्ञा चार प्रकारना बंध प्रज्ञापेल छे-(१) प्रकृतिबंध, (२) स्थितिबंध, (३) अनुभावबंध अने (४) प्रदेशबंध. चार कोशनो एक योजन

भावबंधे' 'पएसबंधे' प्रदेशबन्धः=सकषायजीवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्त्रा भिन्नभिन्नस्वभावानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसार तत्तत्परिमाणभागेन संबन्धः=प्रदेशबन्धः, इति चतुर्विधो बन्धः । 'चउगाउए' चतुर्गव्यूत योजन प्रत्तसम् क्रोशचतुष्टयस्य योजनं भवति । अनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । पूर्वाषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । उत्तराषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् ॥१५॥

योजन कहा गया है। अनुराधानक्षत्र चारतारावाला, पूर्वाषाढा नक्षत्र चारतारावाला, और उत्तराषाढानक्षत्र चार तारावाला कहा गया है।

भावार्थ—चारित्ररूप आत्मपरिणामों में अनिर्मलता का नाम ही कषाय है। कषायमोह के उदय से क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चार कषायें उत्पन्न होती है। मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर यह कषायन्यूनाधिकरूप में दशवें गुणस्थानतक पाई जाती है। आगे के गुणस्थानों में या तो चारित्रमोहनीय का उदय नहीं रहता या चारित्रमोहनीय कर्म ही नहीं रहता इसलिये आगे यह नहीं पाई जाती। ध्यान शब्द का अर्थ है अन्तर्मुहूर्त तक चित्त की एकाग्रता। उत्तमसंहनन वालों के यह चित्त की एकाग्रता प्रशस्तरूप में रहती है और इनके अतिरिक्त जीवों में अप्रशस्तरूप में रहती है। प्रशस्त रूप ध्यान में ही संवर और निर्जरा का हेतु होता है, अप्रशस्त ध्यान नहीं इसीलिये ध्यान के ये चार भेद किये है-आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, और शुक्लध्यान। ऋत नाम दुःख का है, जिसके होने में दुःख का उद्वेग अथवा तीव्रता निमित्त हो या

બતાવ્યો છે અનુરાધા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ વાળુ પૂર્વાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓવાળું, અને ઉત્તરાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓવાળુ બતાવ્યું છે

ભાવાર્થ—ચારિત્રરૂપ આત્મપરિણામોમા અનિર્મળતા નુ નામ જ કષાય છે. કષાયમોહના ઉદયથી ક્રોધ, માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયો ઉત્પન્ન થાય છે મિથ્યાત્વ ગુણસ્થાનથી લઇને દસમા ગુણસ્થાન સુધી કષાય વધુ ઓછા પ્રમાણમા રહેલ હોય છે પછીના ગુણસ્થાનોમા કા તો ચારિત્ર મોહનીયનો ઉદય રહેતો નથી અથવા તો ચારિત્ર મોહનીય કર્મ જ નથી રહેતા, તેથી પછીના ગુણસ્થાનોમા કષાય હોતો નથી ધ્યાન એટલે અન્તર્મુહૂર્ત સુધી ચિત્તની એકાગ્રતા ઉત્તમ સંહનન વાળા ઓને ચિત્તની તે એકાગ્રતા પ્રશસ્ત રૂપમાં રહે છે અને તે સિવાયના જીવોમા પ્રશસ્ત રૂપે રહે છે પ્રશસ્ત રૂપ ધ્યાન જ સંવર અને નિર્જરાનો હેતુ હોય છે, અપ્રશસ્ત ધ્યાન નહી, તેથી ધ્યાનના આ ચાર ભેદ કહેલ છે-આર્ત્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન, અને શુક્લધ્યાન 'ઋત' એટલે દુ ખ જે થવાને માટે દુ:ખનો ઉદ્વેગ

जो दुःख में होनेवाला हो उसका नाम आर्तध्यान है। अथवा दुःखित व्यक्ति का जो ध्यानहै वह आर्तध्यान है। यह आर्तध्यान चार प्रकार का होता है अभिष वस्तुके प्राप्त होने पर उसके वियोग के लिये चिन्तासातत्य का होना यह प्रथम आर्तध्यान है १। प्रियवस्तु के वियोग होने पर उसकी प्राप्ति के लिये सतत चिन्ता करना दूसरा आर्तध्यान है २। वेदना होने पर उसके दूर करने के लिये निरन्तर चिन्ता करना तीसरा आर्तध्यान ३ है। आगामी विषय की प्राप्ति के लिये निरन्तर चिन्ता करना चौथा आर्तध्यान है ४ यह आर्तध्यान चौथे, पांचवें और छठवें गुणस्थान में अर्थात् प्रारम्भ से लेकर छठवें गुणस्थानतक होता है, परन्तु इसमें का चौथा भद छठवें गुणस्थान में नहीं होता १। दुःख की उत्पत्ति के मूल में चार कारण हैं–अनिष्ट वस्तु का संयोग१, इष्टवस्तु का वियोग२, प्रतिकूल वेदना३ और भोगलालसा४। इन कारणों को लेकर ही आर्तध्यान के ये चार भेद किये गये हैं। जो दूसरे प्राणियों को सतावे–कष्ट देवे, ऐसे क्रूर दुष्ट–जीव के, प्राणियों को उपमर्दन आदि करने वाले जितने भी कार्य हैं वे सब रौद्र हैं। इस रौद्ररूप जो ध्यान होता है वह रौद्रध्यान कहलाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि जिसका चित्त अतिकठोर और क्रूर है ऐसे जीव का जो ध्यान है वही रौद्रध्यान

અથવા તીવ્રતા નિમિત્ત લોભ અથવા જે ધ્યાન દુઃખમાં જ ઉત્પન્ન કરનાર લોભ લોભ હેતુ નામ આર્તધ્યાન છે અથવા દુઃખિત વ્યક્તિનુ જે ધ્યાન લોભ તે આર્ત ધ્યાન કહેવાય છે તે આર્તધ્યાન ચાર પ્રકારનુ છે (૧) અભિમ વસ્તુ પ્રાપ્ત થતા તેના વિયોગને માટે ચિન્તિત રહેવુ તે પ્રથમ આર્તધ્યાન છે (૨) પ્રિય વસ્તુનો વિયોગ થતા તેની પ્રાપ્તિને માટે સતત ચિન્તા કરવી તે બીજુ આર્તધ્યાન છે (૩) વેદના થતાં તેને દૂર કરવાને માટે નિરંતર ચિન્તા કરવી તે ત્રીજુ આર્તધ્યાન છે (૪) આગામી વિષયની પ્રાપ્તિને માટે નિરંતર ચિંતા કરવી તે ચોથુ આર્તધ્યાન છે તે આર્તધ્યાન ચોથા પાંચમા અને છઠ્ઠા ગુણસ્થાનમાં એટલે કે પ્રારંભથી લઇને છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી થાય છે પણ તેમાનો ચોથો ભેદ છઠ્ઠા ગુણસ્થાનમા થતો નથી. દુઃખની ઉત્પત્તિના મૂળમાં ચાર કારણ છે–(૧) અનિષ્ટ વસ્તુનો સંયોગ, (૨) ઇષ્ટ વસ્તુનો વિયોગ, (૩) પ્રતિકૂલ વેદના અને (૪) ભોગલાલસા એ કારણોને લીધે જ આર્તધ્યાનના જે ચાર ભેદ પડેલ છે જે જીવ જીવોને સતાવે–કષ્ટ દે, જેવા ક્રૂર દુષ્ટ જીવોનાં પ્રાણીઓનુ ઉપમર્દન કરનારા જે કોઇ કાર્યો લોભ તે સઘળા રૌદ્ર કહેવાય છે એ રૌદ્રરૂપ જે ધ્યાન લોભ છે તેને રૌદ્રધ્યાન કહે છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે જેનુ ચિત્ત અતિ કઠોર અને ક્રૂર લોભ છે એવાં જીવનુ જે ધ્યાન લોભ છે તેને

है। चित्त में कठोरता का जागरण हिंसा, झूठ, चोरी प्राप्तविषयों का संरक्षण इन बातों से ही होता है, अतः इसके भी हिंसानुबंधी, मृषानुबंधी, स्तेयानुबंधी और संरक्षणानुबंधी, ऐसे चार भेद है। यह ध्यान पहिले से लेकर पांचवें गुणस्थान तक के जीवों को होता है।२। सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा आदि का नाम धर्म है। इस धर्म का बार २ चिन्तवन करना सो धर्मध्यान है। इसके आज्ञाविचय१, अपायविचय२, विपाकविचय३ और संस्थानविचय४, ऐसे चार भेद हैं।३। जो शोक को दूर करे उसका नाम शुक्ल है ऐसा शुक्ल का यह व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ होता है। भवके क्षय का कारण यही ध्यान है। धर्मध्यान सातवे गुणस्थान से लेकर बारहवे गुणस्थान तक और शुक्लध्यान ग्यारहवे गुणस्थान से चौदवे गुणस्थान तक के जीवों के होता है। पृथक्त्व वितर्क सविचार१, एकत्ववितर्कअविचार२, सूक्ष्मक्रिया अनिवृत्ति३, और समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती४ ये चारभेद शुक्लध्यान के हैं। इनका विशेष वर्णन आगमों से जाना जा सकता है। चारित्र के प्रति जो कथाएँ विरुद्ध पडती हों वे विकथा है-स्त्री संबंधी कथा का नाम स्त्रीकथा१, भोजन से संबंध रखनेवाली कथा का नाम भक्तकथा२, राजा से संबधित कथा- बातचीत का नाम राजकथा३ और देश से

રૌદ્રધ્યાન કહે છે ચિત્તમા કઠોરતાની ઉત્પત્તિ હિંસા, અસત્ય, ચોરી અને પ્રાપ્ત વિષયોના સરક્ષણ, એ ચાર કારણે જ થાય છે, તેથી તેના પણ આ પ્રમાણે ચાર ભેદ છે-(૧) હિંસાનુબંધી (૨) મૃષાનુબંધી, (૩) સ્તેયાનુબંધી, અને સંરક્ષણાનુબંધી આ ધ્યાન પહેલેથી લઇને પાચમા ગુણસ્થાન સુધીના જીવોને થાય છે ॥૨॥ સર્વજ્ઞ ભગવનની આજ્ઞા આદિને ધર્મ કહે છે. તે ધર્મનું વારવાર ચિંતન કરવું તે ધર્મધ્યાન છે તેના ચાર ભેદ આ પ્રમાણે છે-(૧) આજ્ઞાવિચય, (૨) અપાયવિચય, (૩) વિપાકવિચય, અને (૪) સસ્થાન વિચય. ॥૩॥

જે શોકને દૂર કરે તેનું નામ શુક્લ છે, એવો શુકલનો વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ થાય છે આ ધ્યાન જ ભાવના ક્ષયનું કારણ છે. ધર્મધ્યાન સાતમાં ગુણસ્થાનથી લઇને બારમા ગુણસ્થાન સુધીના અને શુકલધ્યાન અગિયારમાં ગુણસ્થાનથી લઇને ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીના જીવોને થાય છે. શુકલધ્યાનના આ પ્રમાણે ચાર ભેદ છે— [૧] પૃથક્ત્વ વિતર્ક સવિચાર, [૨] એકત્વવિતર્કઅવિચાર, [૩] સૂક્ષ્મક્રિયા અનિવૃત્તિ અને ૪ સમુચ્છિન્ન ક્રિયા અપ્રતિપાતી તેમનું વિશેષ વર્ણન આગમોમાંથી જાણી શકાય છે. જે કથાઓ ચારિત્રથી વિરૂદ્ધની હોય છે તેમને વિકથા કહે છે [૧] સ્ત્રી વિષેની કથાને સ્ત્રીકથા કહે છે. [૨] ભોજન વિષેની કથાને ભક્તકથા કહે છે. [૩] રાજા સબધી કથાને રાજકથા કહે છે અને [૪] દેશ વિષેની કથાને દેશ કથા કહે

मूलम्—जे देवा किट्ठिं सुकिट्ठिं किट्ठिआवत्तं किट्ठिप्पभं किट्ठिजुत्तं किट्ठिवण्णं किट्ठिलेसं किट्ठिज्झयं किट्ठिसिंगं किट्ठिसिट्ठं किट्ठिकूडं किट्ठुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिणं देवाणं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा चउण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं चउहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्संति ॥१७॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवाः कट्ठिं सुकट्ठिं कट्ठावर्तं कट्ठिप्रभं कट्ठियुक्तं कट्ठिवर्णं कट्ठिलेश्यं कट्ठिध्वजं कट्ठिशृङ्गं कट्ठिसृष्टं कट्ठिकूटं कट्ठोत्तरावतंसकं विमानं एतन्नामकेषु द्वादशविधविमानेषु देवतया उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चत्वारि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा षण्णामर्द्धमासानाम्=मासद्वयानन्तरमित्यर्थः आनन्ति=आन्तरं श्वासं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=आन्तरं निश्वासं मुञ्चन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्यमुच्छ्वासं गृह्णन्ति, निश्वसन्ति=बाह्यं निःश्वासं मुञ्चन्तीत्यर्थः। तेषां देवानां चतुर्भिर्वर्षसहस्रैः आहारसंज्ञा समुत्पद्यते।

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ—जो देव, कट्ठिं, सुकट्ठिं कट्ठावर्त, कट्ठिप्रभ, कट्ठियुक्त, कट्ठिवर्ण, कट्ठिलेश्य, कट्ठिध्वज, कट्ठिशृङ्ग, कट्ठिसृष्ट कट्ठिकूट और कट्ठोत्तरावतंसक, इन बारह प्रकार के विमानों में देव की पर्याय में उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति चार सागरोपम की होती है। वे देव चारपक्ष में अर्थात् दो माह के बाद में आन्तर श्वास लेते हैं, आन्तर निःश्वास लेते हैं बाह्य उच्छ्वास लेते हैं, और बाह्य निःश्वास लेते हैं। उन देवों को चार हजार वर्ष के

'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ—જે દેવો, કટ્ઠિં સુકટ્ઠિં, કટ્ઠાવર્ત કટ્ઠિપ્રભ કટ્ઠિયુક્ત, કટ્ઠિવર્ણ, કટ્ઠિલેશ્ય, કટ્ઠિધ્વજ, કટ્ઠિશૃંગ કટ્ઠિસૃષ્ટ કટ્ઠિકૂટ અને કટ્ઠોત્તરાવતંસક એ બાર પ્રકારનાં વિમાનોમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ચાર સાગરોપમની હોય છે તે દેવો ચારપક્ષમાં એટલે બે મહિને આંતર શ્વાસ લે છે આંતર નિઃશ્વાસ લે છે બહાર ઉચ્છ્વાસ લે છે તે દેવોને ચાર હજાર વર્ષ પછી

सन्ति एके भवसिद्धिका जीवाः ये चतुर्भिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१७॥

पञ्चमं समवायाङ्गमाह— तजरा

मूलम्—पंच किरिया पण्णत्ता, तंजहा—काइया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया पाणाइवाय किरिया। पंचमहव्वयापण्णत्ता—तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं। पंचकामगुणा पण्णत्ता, तं जहा सद्दा रूवा रसा गंधा फासा। पंच आसवदारा पण्णत्ता, तं जहा मिच्छत्तं, अविरई, पमाया, कसाया, जोगा। पंच संवरदारा पण्णत्ता, तं जहा—सम्मत्तं, विरई, अप्पमत्तया, अकसाया, अजोगया। पंच निज्जरट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं। पंच समिईओ पण्णत्ता, तं जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवण खेल-जल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया समिई। पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए। रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। पुणव्वसु नक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। हत्थनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते विसाहानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ॥१८॥

अनन्तर आहारसज्ञा उत्पन्न होती है—इन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो चार भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, कर्मों से छूट जावेंगे, परिनिवृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अंत कर देंगे ॥सू० १७॥

આહાર સજ્ઞા થાય છે તે દેવોમા કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે, જેઓ ચાર ભવ કરીને સિદ્ધ બનશે, બુદ્ધ થશે, કર્મોથી મુકત થશે, પરિનિવૃત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અત કરશે ॥સૂ. ૧૭॥

संयुक्त कथा का नाम देशकथा है। इन कथाओं का सम्यक् चारित्र की आराधना के साथ कोई प्रयोजन नहीं है, प्रत्युत ये उस चारित्र को मलिन करने वाली होती हैं इसलिये विकथाएँ हैं। असातवेदनीय और मोहनीय कर्म के उदय से जो जीवों को आहार आदि की अभिलाषा रूप परिणति है इसका नाम संज्ञा है। ये आहारसंज्ञा आदि के भेद से चार प्रकार की हैं। एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियपर्यन्त के जीवों में ये सब पाई जाती हैं। बंध चार प्रकार का है—प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभावबंध और प्रदेशबंध। कर्मवर्गणा योग्य पुद्गलों का आत्मप्रदेशों के साथ क्षीरनीर की तरह जो संबंध हो जाता है इसका नाम बंध है। गृहीत कर्मों के जो ज्ञानावरणीय आदि रूप अंश हैं उन अंशों का बंध, अंबन्ध आदि के भेद से युक्त प्रकृतियों का आत्मा में ठहरने की मर्यादा रूप से बंधना इसका नाम स्थिति, बंध की गई प्रकृतियों का अपनी कालमर्यादा के अनुसार उदय में आना और मन्दतीव्रादिरूप से रस—फल—देना इस प्रकार का बंध होता है उसका नाम अनुभावबंध है। कषाययुक्त बने हुए जीव के द्वारा मनो, वाग् आदि योग प्रणाली से गृहीत भिन्नभिन्न स्वभाव में परिणत होनेवाली कर्मपुद्गल राशि का जो अमुक अमुक विभाग रूप में बँट जाना होता है इसका नाम प्रदेशबंध है ॥सू० १५॥

છે તે કથાઓ સમ્યક્ ચારિત્રની આરાધનામાં કોઇ પણ રીતે ઉપયોગી નથી, પણ તે કથાઓ ચારિત્રને મલિન કરનારી હોય છે, તેથી જ તેમને વિકથાઓ કહે છે અસાતવેદનીય અને મોહનીય કર્મના ઉદયથી જીવોને આહાર આદિની અભિલાષા રૂપ જે પરિણતિ થાય છે તેને સંજ્ઞા કહે છે આહાર સંજ્ઞા આદિ તેના ચાર ભેદ છે બેઇન્દ્રિયથી પંચેન્દ્રિય સુધીના સઘળા જીવોમાં આહારસંજ્ઞા હોય છે બંધના ચાર પ્રકાર છે—પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાવબંધ, અને પ્રદેશબંધ કર્મરૂપ થવા યોગ્ય પુદ્ગલદ્રવ્યોનો આત્મપ્રદેશોની સાથે ક્ષીરનીર [દૂધ અને પાણી] ની જેમ જે સંબંધ થઈ જાય છે તેને બંધ કહે છે ગૃહીત કર્મોના જ્ઞાનાવરણીય આદિરૂપ જે અંશો છે તે અંશોનો બંધ પ્રકૃતિબંધ છે બંધન આદિના લીધે મૂલ પ્રકૃતિઓનું આત્મામાં કેટલાની મર્યાદા સુધી રહેવું તેનું નામ સ્થિતિબંધ કહેવાય પ્રકૃતિઓનું પોતાનો ફલ આપવા અનુસાર ઉદયમાં આવવું અને મન્દતીવ્રાદિ રૂપે રસ-ફલ-દેવું જે પ્રકારનો જે બંધ હોય છે તેનું નામ અનુભાવબંધ છે કષાય યુક્ત બનેલ જીવોના દ્વારા મન વચન આદિ યોગ પ્રણાલીઓ વડે ગૃહીત ભિન્ન ભિન્ન સ્વભાવમાં પરિણમતી કર્મ પુદ્ગલ વર્ગણાનું જે અમુક અમુક વિભાગરૂપે બટેકાઇ જવાનું થાય છે તેનું નામ પ્રદેશબંધ છે ॥સૂ. ૧૫॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवाए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥१६॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभाया पृथिव्यामस्ति एकेषां नैरयिकाणां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्या खलु पृथिव्याम् अस्त्येकेषा नैरयिकाणा चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणा देवानामस्त्येकेषां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता॥१६

'इमीसेण' इत्यादि।

टीकार्थ–इस रत्नप्रभापृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति चार पल्योपम की है। तृतीय पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति चार सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कीतनेक देवों की स्थिति चार पल्योपम की है। सौधर्म और ईशान इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति चार पल्योपम की है। सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति चार–पल्योपम की है। इस सूत्र द्वारा यह मध्यस्थिति ही कही गई है ॥१६॥

'इमीसे ण' इत्यादि ।

ટીકાર્થ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે ત્રીજી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ચ ર સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પાલ્યોપમની છે. સૌધર્મ અને ઈશાન, એ બે કલ્પોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર, એ બે કલ્પોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે. આ સૂત્ર દ્વારા આ મધ્યમસ્થિતિ જ બતાવવામા આવી છે ॥૧૬॥

मूलम्—जे देवा किट्ठं सुकिट्ठं किट्ठियावत्तं किट्ठिप्पभं किट्ठिवुत्तं किट्ठिवण्णं किट्ठिलेसं किट्ठिज्झयं किट्ठिसिंगं किट्ठिसिट्ठं किट्ठिकूडं किट्ठुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिणं देवाणं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा चउण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं चउहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्संति ॥१७॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा कृष्टिं सुकृष्टिं कृष्टयावर्तं कृष्टिप्रभं कृष्टियुक्तं कृष्टिवर्णं कृष्टिलेश्यं कृष्टिध्वजं कृष्टिशृङ्गं कृष्टिसृष्टं कृष्टिकूटं कृष्टयुत्तरावतंसकं विमानं एतन्नामकेषु द्वादशविधविमानेषु देवतया उत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चत्वारि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः चतुर्णामर्द्धमासानाम्=मासद्वयानन्तरमित्यर्थः आनन्ति=आन्तरं श्वासं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=आन्तरं निःश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्यमुच्छ्वासं गृह्णन्ति, निःश्वसन्ति=बाह्यं निःश्वासं गृह्णन्तीत्यर्थः। तेषां देवानां चतुर्भिर्वर्षसहस्रैः आहारसंज्ञा समुत्पद्यते।

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ—जो देव, कृष्टि, सुकृष्टि कृष्टयावर्त, कृष्टिप्रभ, कृष्टियुक्त, कृष्टिवर्ण, कृष्टिलेश्य, कृष्टिध्वज, कृष्टिशृंग, कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट और कृष्टयुत्तरावतंसक, इन बारह प्रकार के विमानों में देव की पर्याय में उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति चार सागरोपम की होती है। वे देव चार पक्ष में अर्थात् दो माह के बाद में आन्तर श्वास लेते हैं, आन्तर निःश्वास लेते हैं बाह्य उच्छ्वास लेते हैं, और बाह्य निःश्वास लेते हैं। उन देवों को चार हजार वर्ष के

'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ—જે દેવો, કૃષ્ટિ સુકૃષ્ટિ, કૃષ્ટયાવર્ત કૃષ્ટિપ્રભ, કૃષ્ટિયુક્ત, કૃષ્ટિવર્ણ, કૃષ્ટિલેશ્ય, કૃષ્ટિધ્વજ, કૃષ્ટિશૃંગ, કૃષ્ટિસૃષ્ટ, કૃષ્ટિકૂટ, અને કૃષ્ટયુત્તરાવતંસક એ બાર પ્રકારનાં વિમાનોમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ચાર સાગરો પમની હોય છે તે દેવો ચાર પખવાડિયામાં એટલે કે બેમહિને આંતર શ્વાસ લે છે આંતર નિઃશ્વાસ લે છે બહાર ઉચ્છ્વાસ લે છે અને બહાર નિઃશ્વાસ લે છે તે દેવોને ચાર હજાર વર્ષ પછી

सन्ति एके भवसिद्धिका जीवाः ये चतुर्भिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१७॥

पञ्चमं समवायाङ्गमाह— तंजहा

मूलम्—पंच किरिया पण्णत्ता, तद्यथा—काइया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया पाणाइवाय किरिया। पंचमहव्वयापण्णत्ता—तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं। पंचकामगुणा पण्णत्ता, तं जहा सद्दा रूवा रसा गंधा फासा। पंच आसवदारा पण्णत्ता, तं जहा मिच्छत्तं, अविरई, पमाया, कसाया, जोगा। पंच संवरदारा पण्णत्ता, तं जहा—सम्मत्तं, विरई, अप्पमत्तया, अकसाया, अजोगया। पंच निज्जरट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं। पंच समिईओ पण्णत्ता, तं जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवण खेल-जल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया समिई। पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए। रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। पुणव्वसु नक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। हत्थनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते विसाहानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ॥१८॥

अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है—इन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो चार भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, कर्मों से छूट जावेंगे, परिनिवृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अंत कर देंगे ॥सू० १७॥

આહાર સજ્ઞા થાય છે તે દેવોમા કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે, જેઓ ચાર ભવ કરીને સિદ્ધ બનશે, બુદ્ધ થશે, કર્મોથી મુક્ત થશે, પરિનિવૃત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અત કરશે. ॥સૂ. ૧૭॥

टीका—'पंच किरियाओ' इत्यादि। पञ्च 'किरियाओ' क्रियाः=व्यापारविशेषरूपा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-'काइया' कायिकी, कायेन निर्वृत्ता कायस्य वा क्रिया, कायकी=कायचेष्टारूपेत्यर्थः। 'अहिगरणिया' अधिकरणिकी, आधिक्रियते नारकादियोनिषु विशेषेषु स्थाप्यते आत्माऽनेनेति अधिकरणम् अनुष्ठानविशेषो बाह्यवस्तु खड्गपरशवादि च, तत्र भवा, तेन निर्वृत्ता वा अधिकरणिकी=खड्गादिनिर्वर्तनादिस्वरूपेत्यर्थः 'पाउसिया' प्राद्वेषिकी, प्रद्वेषः=मत्सरः कर्मबन्धहेतुरकुशलो ज्ञानपरिणामविशेषः, तत्र भवा, तेन निर्वृत्ता वा प्राद्वेषिकी, मत्सरादिजन्याक्रियेत्यर्थः। 'पारियावणिया' पारितापनिकी, परितापनम्=ताडनादिदुःखविशेषलक्षणम् पीडाकरणमित्यर्थः, तेन निर्वृत्ता, पारितापनिकी। 'पाणाइवायकिरिया' प्राणातिपातक्रिया=प्राणा प्राणिनः तेषामतिपातो विनाशः, तद्रूपया, एव सा क्रिया=प्राणातिपातक्रिया। पञ्च महव्वया' महाव्रतानि=महान्ति सत्यानि नियमा महाव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तानि च पाणातिपाताद् 'वेरमण' विरमण=निवृत्तिः सर्वतः मृषावादात्=असत्यभाषणात् विरमणम्। सर्वतः अदत्तादानात्, विरमणम्। सर्वतः मैथुनाद् विरमणम्। सर्वतः परिग्रहात् धर्मोपकरणातिरिक्तात् विरमणम्। पञ्च कामगुणा=कामयन्ते अभिलष्यन्ते ये ते कामाः=अभिलाषविषयाः ते च ते गुणाः=गुणयन्त्यध्यवसायन्ति ये ते कामगुणाः शब्दादयः इति कामगुणा इन्द्रियसुखदाः सद्वस्त्रसस्य मिष्टान्नपुष्पचन्दननाटकगीतवाद्यवेणुवीणाकलगीतताडकलगीतादिपदार्थाः इत्यर्थः अथवा कामस्य=मदनोद्दीपकस्य गुणाः वर्द्धका कामगुणा शब्दादय महात्मा कथिता-

---

अब सूत्रकार पञ्चम समवायांग को कहते हैं-'पंचकिरिया' इत्यादि।

टीकार्थ-पांच क्रियाएं कही गई हैं। वे इस प्रकार हैं-कायिकी क्रिया, अधिकरणिकी क्रिया, पारितापनिकी क्रिया और प्राणातिपातक्रिया। पांच महाव्रत होते हैं वे ये हैं-सर्व प्रकार के प्राणातिपात से विरमण होना१, सर्व प्रकार के मृषावाद से विरमण होना२, सर्व प्रकार के अदत्तादान से विरमण होना३, सर्वप्रकार के मैथुन से विरमण होना४, और सर्वप्रकार के परिग्रह से विरमण होना ५। पांच कामगुण होते हैं वे इस प्रकार से

હવે સૂત્રકાર પાંચમા સમવાયાંગનું કથન કરે છે—

"पंच किरिया" इत्यादि।

ટીકાર્થ—ક્રિયાઓ પાંચ છે—કાયિકી ક્રિયા, અધિકરણિકી ક્રિયા પ્રદ્વેષિકી ક્રિયા પારિતાપનિકી ક્રિયા, અને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા, મહાવ્રત પાંચ છે—(૧) સર્વ પ્રકારના પ્રાણાતિપાતનો વિરમણ (૨) સર્વ પ્રકારના મૃષા વાદનું વિરમણ, (૩) સર્વ પ્રકારના અદત્તાદાનનું વિરમણ, (૪) સર્વ પ્રકારના મૈથુનનું વિરમણ (૫) અને સર્વ પ્રકારના પરિગ્રહનું વિરમણ કરવું પાંચ કામગુણ હોય છે તે આ પ્રમાણે છે— શબ્દ, રૂપ

तद्यथा-शब्दाः, रूपाणि, रसा, गन्धाः, स्पर्शाः। पञ्च 'आसवदारा' आस्रवद्वाराणि=कर्मोपादानोपायभूतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा मिथ्यात्वम् अविरतिः, प्रमादाः कषायाः, योगाः। पंच 'संवरदारा' संवरद्वाराणि=संवरस्य=कर्मानुपादानस्य द्वाराणि=उपायाः-संवरद्वाराणि प्रज्ञप्तानि= तानि च सम्यक्त्व-विरत्य-प्रमत्तता ऽकषायाऽयोगकनामानि। पञ्च 'पञ्च 'णिज्जराट्ठाणा' निर्जरास्थानानि निर्जरणं-निर्जरा=परिपक्वानां कर्मावयवानामात्मप्रदेशात्पृथग्भवनम्। तस्याः स्थानानि-निर्जरास्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्राणातिपाताद् विरमणम्, यावत् परिग्रहाद् विरमणम्। पञ्च 'समिईओ' समितयः=सम् सगता इतयः प्रवृत्तयः=समितयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-ईर्या समितिः=ईर्यायां गमने सम्यक्तया जीवरक्षणपूर्वकं प्रवृत्तिः, भाषासमितिः=भाषायां भाषणे सम्=सम्यक्तया अवद्यपरिहारपूर्वकमिति यावत्

हैं-शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श। पांच आस्रवद्वार होते हैं-वे इस प्रकार से हैं-मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद कषाय और योग। पांच संवरद्वार होते हैं, वे इस प्रकार से हैं-सम्यक्त्व, विरति, अप्रमत्तता, अकषाय, और अयोग। पांच निर्जरास्थान होते हैं-वे ये हैं-प्राणातिपात से विरक्त होना मृषावाद से विरक्त होना, अदत्तादान से विरक्त होना, मैथुन से विरक्त होना और परिग्रह से विरक्त होना। पांच समितियां होती हैं-वे इस प्रकार हैं-ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदान भाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति और उच्चारप्रस्रवणखेलजल्लसिंघाणपरिष्ठापनिकासमिति। गमन-करते समय किसी भी जीव को क्लेश न हो इस प्रकार की सावधानी रखते हुए चलना इसका नाम ईर्यासमिति है१। भाषा बोलने में सत्य, हित, परिमित और संदेह रहित निरवद्य वचन बोलना इसका नाम भाषा समिति है २। संयम जीवनयात्रा में उपयोगी

२५, अने ७५ अने २५र्श पांच आस्रव द्वार होय छे ते मे प्रमाणे छे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय अने योग. पांच संवरद्वार होय छे ते आ प्रमाणे छे-समभ्यक्त्व विरति, अप्रमत्तता, अकषाय, अने अयोग पांच निर्जरास्थ न होय छे ते आ प्रमाणे छे प्राणातिपातथी विरक्त थवुं, मृषावादथी विरक्त थवुं, अदत्तादानथी विरक्त थवुं मैथुनथी विरक्त थवु अने परिग्रहुथी विरक्त थवुं पांच समितियो छे ते आ प्रमाणे छे-ईर्यासमिति भाषा समिति, એषणासमिति आदान भांड मात्र निक्षेपणा समिति अने उच्चार-प्रस्रवणुખेल જલ્લ शिधाण परिष्ठापनिका समिति चालती वખते કોઈ પણ જીવને કલેશ ન થાય તે પ્રકારની सावचेती राખવી तेनुं नाम ઇर्या समिति छे (१) भाषा બોલવામા सत्य हित, परिमित अने संदेह रहित वचन બોલવા तेनुं नाम भाषा समिति छे (२) स य-

पवृत्ति, एषणासमिति:=भक्तादीनामादान द्विचत्वारिंशद्दोषवर्जनपुरस्सर प्रवृत्ति, आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति =आदाने=ग्रहणे=ग्रहणे च भाण्डमात्राणामेव, भाण्डमात्राणां=उपकरणानां-निक्षेपणे मुक्तस्थापने समिति सूक्ष्मस्थूरेक्षिताप्रतिलेखनादिरूपेण प्रवृत्ति । 'उच्चारपासवणखेल्लसिंघाणजल्लपारिट्ठावणियासमिई' उच्चारप्रस्रवण खेलजल्लसिङ्घाणपरिष्ठापनासमिति -उच्चार -पुरीष, प्रस्रवण=मूत्र, खेल= निष्ठीवन जल्ल=देहमल, सिङ्घाण=नासिकामल, तेषां परिष्ठापनाया=परिष्कारणे समिति:=स्थण्डिलादि दोषपरिहार पूर्वक प्रवृत्ति । पञ्च 'अत्थिकाया' अस्तिकाया = प्रदेशराशय तद्यथा-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय:, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय । रोहिणीनक्षत्र पञ्चतार प्रज्ञप्तम् । पुनर्वसु नक्षत्र पञ्चतार प्रज्ञप्तम् । हस्तनक्षत्र पञ्चतार प्रज्ञप्तम् । धनिष्ठानक्षत्र पञ्चतारं प्रज्ञप्तम् ॥१८॥

ऐसे आहार आदि को बयालीस ४२ दोष टालकर लेने में प्रवृत्ति करना इसका नाम एषणासमिति है ३। संयमोपकारी भाण्डमात्रों-उपकरणों के रखने में और उठाने में यतनापूर्वक पडिलेहणादिरूप से प्रवृत्ति करना अर्थात् वस्तुमात्र को भलीभांति देखकर एवं प्रमार्जित करके यतनासे लेना या रखना इसका नाम आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति है ४ उच्चार-बडी नीत, प्रस्रवण-लघुनीत, खेल-थूक, जल्ल-देहमल और सिंघाण-नाक का मल, इनको प्रासुक भूमि में देख भालकर यतना से परिठवना, इसका नाम उच्चारप्रस्रवणखेल जल्ल सिंघाण परिष्ठापनिकासमिति है ५। पांच अस्तिकाय हैं-वे ये हैं-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्ति काय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय। रोहिणीनक्षत्र, पुनर्वसुनक्षत्र हस्तनक्षत्र विशाखानक्षत्र और धनिष्ठानक्षत्र ये पांच नक्षत्र पांच पांच ताराओं वाले हैं।

અનુવાદ છવનધારણમાં ઉપયોગી એવા આહાર આદિને ૪૨ દોષથી બચીને લેવારૂપવાની પ્રવૃત્તિ કરવી તેનું નામ એષણા સમિતિ છે (૩) સંયમોપકારી ભાંડમાત્રો-ઉપકરણોને મૂકવા તથા લેવામાં યતનાપૂર્વક પડિલેહણા આદિ પ્રવૃત્તિ કરવી એટલે કે પ્રત્યેક વસ્તુને સારી રીતે જોઈને અને પ્રમાર્જિત કરીને મૂકવી કે લેવી તેનું નામ આદાન ભાંડમાત્ર-નિક્ષેપણા સમિતિ છે (૪) ઉચ્ચાર એટલે પ્રસ્રવણ-મૂત્ર ખેલ થૂક, જલ્લ-દેહમળ અને સિંઘાણ-નાકનો મળ તેમને પ્રાસુક (જીવરહિત) ભૂમિમાં જોઈ તપાસીને યતના પૂર્વક પરઠવવો તેનું નામ ઉચ્ચાર પાસવણ ખેલ જલ્લ સિંઘાણ પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ છે (૫) અસ્તિકાય પાંચ છે તે આ પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય આકાશાસ્તિકાય જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય રોહિણી નક્ષત્ર પુનર્વસુ નક્ષત્ર, હસ્તનક્ષત્ર, વિશાખા નક્ષત્ર અને ધનિષ્ઠા નક્ષત્ર એ પાંચ નક્ષત્રો પાંચ પાંચ તારાઓવાળાં છે

भावार्थ—सूत्रकार इस सूत्रद्वारा पंचम समवायांग को प्रकट कर रहे हैं, इसमें क्रिया, महाव्रत कामगुण, आस्रवद्वार, संवरद्वार, निर्जरास्थान, समिति, अस्तिकाय और रोहिणी नक्षत्र के तारे आदि पांच २ कहे गये हैं। शारीरिक चेष्टामात्र का नाम कायिकी क्रिया है १। जिसके कारण-आत्मा नरक आदि कुयोनियों में जाने के योग्य बनाया जाता है ऐसे अनुष्ठानविशेष का नाम आधिकरणिकी क्रिया है २। तलवार आदि हिंसा के साधनों का आविष्कार इसी क्रिया के अन्तर्गत जानना चाहिये। कर्मबंध का हेतुभूत जीव का जो अकुशलपरिणाम होता है इसका नाम प्रद्वेष है। इस प्रद्वेष से जो क्रिया उत्पन्न होती है वह प्राद्वेषिकी क्रिया है ३। ताडनादि के दुःख से जो क्रिया होती है वह परितापनिकी क्रिया है ४। जिस क्रिया में जीवों के प्राणों का विनाश हो ऐसी क्रिया का नाम प्राणातिपातक्रिया है ५। गृहस्थव्रतों की अपेक्षा जो व्रत महान् होते हैं उन्हें महाव्रत कहते हैं। ये महाव्रत अहिंसा महाव्रत आदि के भेद से पांच कहे गयेहैं-मन, वचन और काय द्वारा हर-तरह से हिंसा का त्याग कर देना अहिंसा महाव्रत१, मन वचन और काय द्वारा हर तरह से झूठ का त्याग कर देना सत्यमहाव्रत२, इसी तरह से अदत्त के आदान का त्याग कर देना अचौर्यमहाव्रत३, कुशीलका त्याग

ભાવાર્થ--સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા પાચમા સમવાયાગનુ વર્ણન કરે છે. તેમા ક્રિયા, મહાવ્રત કામગુણ, આસ્રવદ્વાર, સવર દ્વાર નિર્જરાસ્થાન, સમિતિ, અસ્તિકાય, અને રોહિણી આદિ નક્ષત્રના તારા આદિ પાંચ પાચ હોય છે. તેમ બતાવ્યુ છે દરેક શારીરિક ચેષ્ટા ને કાયિક ક્રિયા કહે છે. (૧) જેને કારણે આત્મા નરક આદિ કુયોનિયોમા જવાને પાત્ર બને છે તેવા અનુષ્ઠાન વિશેષોને અધિકરણિકી ક્રિયા કહે છે (૨) તલવાર આદિ હિંસાનાં સાધનોનો સમાવેશ આ ક્રિયાની અદર થાય છે કર્મબધના હેતુરૂપ જીવનુ જે અકુશલ પરિણામ હોય છે તેને પ્રદ્વેષ કહે છે તે પ્રદ્વેષથી ઉત્પન્ન થતી ક્રિયાને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે (૩) મારપીટ આદિ દુ ખથી જે ક્રિયા થાય છે તેનુ નામ પરિતાપનિકી ક્રિયા છે (૪) જે ક્રિયામા જીવોના પ્રાણોનો વિનાશ થાય એવી ક્રિયાને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે (૫) ગૃહસ્થના વ્રતો કરતા જે વ્રતો મહાન હોય છે તેમને મહાવ્રત કહે છે તે મહાવ્રતો અહિંસા આદિ ભેદથી પાચ બતાવ્યા છે મન, વચન અને કાયા દ્વારા દરેક પ્રકારે હિંસાનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ અહિંસા મહાવ્રત (૧) મન, વચન, અને કાયા દ્વારા હિંસાનો ત્યાગ કરવો તે અહિંસા મહાવ્રત છે મન વચન અને કાય દ્વારા દરેક રીતે અસત્યનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ સત્ય મહાવ્રત છે (૨) તે જ પ્રમાણે ન દીધેલું ગ્રહણ ન કરવુ તેનું નામ અચૌર્ય મહાવ્રત છે. (૩) કુશીલના ત્યાગ કરવો તે બ્રહ્મચર્ય

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं पंच पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं पंच सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं पंच पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं पंच पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं पंच सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥सू० १९॥

कर देना ब्रह्मचर्यमहाव्रत४, और धर्मोपकरण के सिवाय अन्यवस्तु का त्याग देना परिग्रह महाव्रत है ५। अभिलाषा के विषयभूत बने हुए पुद्गल के धर्म शब्दादिक कामगुण कहलाते हैं।

ये सचक्ष, मिष्टान्न, पुष्प, चन्दन, आदि समस्त पदार्थ कि जो भिन्नर रूप में इन्द्रियों को सुखप्रदान करते हैं। मिथ्यात्व, अविरति प्रमाद, कषाय और योग ये पांच आस्रवद्वार हैं। सम्यक्त्व, विरति अप्रमत्तता अकषाय, अयोग ये पांच संवरद्वार हैं, क्यों कि आचरण से नवीन कर्मों का आगमन रुक जाता है। प्राणातिपात आदि से विरमण होने से संचित कर्मों की निर्जरा होती है, इसलिये प्राणातिपातविरमण आदि पांच निर्जरा स्थान हैं ईर्यासमिति आदि पांच समितिपद हैं। समितियों का स्वरूप सूत्र के अर्थ में स्पष्ट कर दिया गया है। पदेशों के समुदाय से युक्त पदार्थों को अस्तिकाय कहा गया है। धर्मादिक पांच अस्तिकाय हैं॥सू १८॥

મહાવ્રત છે (૪) અને ધર્મોપકરણ સિવાયની અન્ય વસ્તુનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ પરિગ્રહ મહાવ્રત છે (૫ અભિલાષાના વિષય બનેલ પુદ્ગલના ધર્મ શબ્દાદિકને કામગુણ કહે છે જેમ મિષ્ટાન્ન, પુષ્પ, ચંદન આદિ પદાર્થો સુંદર સુંદર રીતે ઇન્દ્રિયોને સુખ આપે છે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ પાંચ આસ્રવ દ્વાર છે સમ્યક્ત્વ, વિરતિ, અપ્રમત્તતા, અકષાય અને અયોગ એ પાંચ સંવર દ્વાર છે, આત્મા કે તેના આશ્રયથી નવાં કર્મોનું આગમન અટકી જાય છે પ્રાણાતિપાત આદિનું વિરમણ થી સંચિત કર્મોની નિર્જરા થાય તેથી પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ નિર્જરાસ્થાન છે ઇર્યા સમિતિ આદી પાંચ સમિતિઓનું સ્વરૂપ સૂત્રના અર્થમાં સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યુ છે પ્રદેશોના સમુદાયથી યુક્ત પદાર્થોને અસ્તિકાય કહેવાય છે ધર્માદિક પાંચ દ્રવ્યને અસ્તિકાય કહે છે ॥સૂ ૧૮॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्या खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां पञ्चसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानाम् अस्त्येकेषां पञ्चपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां पञ्चपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमार माहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां पञ्चसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥१९॥

मूलम्—जे देवा वायं सुवायं वायावत्तं वायप्पभं वायकंतं वायवण्णं वायलेसं वायज्झयं वायसिंगं वायसिट्ठं वायकूडं वाउत्तरवडिंसगं सूरं सुसूरं सूरवत्तं सूरप्पभं सूरकंतं सूरवण्णं सूरलेसं सूरज्झयं सूरसिंगं सूरसिट्ठं सूरकूडं सूरुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं पंच सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा पंचण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसिं णं देवाणं पंचहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ, सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे पंचहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करिस्संति ॥२०॥

'इमीसे णं इत्यादि।

टीकार्थ–इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति पांच पल्योपम की है। तृतीय पृथिवी में कितनेक नारकियो की स्थिति पांच सागरोपम काल की है। असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमारों की पांच पल्य की स्थिति है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की पांच पल्योपम की स्थिति है। सनत्कुमार माहेन्द्र कल्पों में कितनेक देवों की पांच सागरोपम की स्थिति है। इस सूत्र द्वारा यह मध्यम स्थिति प्रदर्शित की गई है ॥सू० १९॥

"इमीसे णं" इत्यादि।

ટીકાર્થ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પાંચ પલ્યોપમની છે ત્રીજી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પાંચ સાગરોપમ કાળની છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક અસુરકુમારોની પાંચ પલ્યની સ્થિતિ છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની પાંચ પલ્યોપમની સ્થિતિ છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમા કેટલાક દેવોની પાંચ સાગરોપમનીસ્થિતિ છે. આ સૂત્ર દ્વારા આ મધ્યમ સ્થિતિ બતાવવામા આવી છે. ॥સૂ ૧૯॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा वात सुवात वातावर्त वातप्रभ वातकान्त वातवर्ण वातलेश्य वातध्वज वातशृङ्ग वातसृष्ट वातकूट वातोत्तरावतंसक सूर सुसूर सुरावर्त सूरप्रभ सूरकान्त सूरवर्ण सूरलेश्य सूरध्वज सूरशृङ्ग सूरसृष्ट सूरकूट सूरोत्तरावतंसक च विमानेषु=षट्सु चतुस्त्रिंशतिविमानेषु देवतयेन उत्पन्नाः, तेषां खलु देवानां सोत्कृष्टा पञ्चसागरोपमा स्थितिः। प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा पञ्चानामार्द्धमासानामानन्ति=आनुपूर्व्या श्वासमादद्दति, प्राणन्ति=आभ्यन्तरिकमुच्छ्वास गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्य श्वास गृह्णन्ति, नि श्वसन्ति=बाह्य श्वासं गृह्णन्ति। तेषां खलु देवानां पञ्चभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते भवति। सन्त्येकेके भवसिद्धिका जीवा ये पञ्चभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति 'जाव' यावत्—पावक्ष्यन्ति,—मोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति। २०॥

'जे देवा इत्यादि।

नीकार्थ—जो देव, वात१, सुवात२, वातावर्त३, वातप्रभ४, वातकान्त५, वातवर्ण६, वातलेश्य७, वातध्वज८, वातशृङ्ग९, वातसृष्ट१०, वातकूट११, वातोत्तरावतंसक१२, सूर१३, सुसूर१४, सूरावर्त१५, सूरप्रभ१६, सूरकान्त१७, सूरवर्ण१८, सूरलेश्य१९, सूरध्वज२०, सूरशृङ्ग२१, सूरसृष्ट२२, सूरकूट२३, और सूरोत्तरावतंसक २४ इन चौंतीस विमानों में देव की पर्यायसे उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति पांच सागरोपम की होती है। वे देव ढाई २॥ माह के बाद आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं, उन देवों को पांचहजार वर्ष के बाद आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। उन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो पांच भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध अवस्था प्राप्त करने वाले होंगे यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥सू० २०॥

"जे देवा" इत्यादि।

ટીકાર્થ—જે દેવો (૧) વાત, (૨) સુવાત, (૩) વાતાવર્ત, (૪) વાતપ્રભ (૫) વાતકાન્ત, (૬) વાતવર્ણ (૭) વાતલેશ્ય (૮) વાતધ્વજ, (૯) વાતશૃંગ (૧૦) વાતસૃષ્ટ (૧૧) વાતકૂટ (૧૨) વાતોત્તરાવતંસક, (૧૩) સૂર (૧૪) સુસૂર (૧૫) સૂરાવર્ત (૧૬) સૂરપ્રભ, (૧૭) સૂરકાન્ત (૧૮) સૂરવર્ણ (૧૯) સૂરલેશ્ય (૨૦) સૂરધ્વજ (૨૧) સૂરશૃંગ, (૨૨) સૂરસૃષ્ટ (૨૩) સૂરકૂટ અને (૨૪) સૂરોત્તરાવતંસક એ ચોવીસ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પાંચ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો અઢી માસે આભ્યંતર અને બાહ્ય શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે તે દેવોને પાંચ હજાર વર્ષે આહારની સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે જે પાંચ ભવ કરીને સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરશે ત્યાંથી ચ્યવીને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે ત્યાં સુધીનું કથાનક જ્ઞાતાજી સૂત્રના સમજવું ॥સૂ ૨૦॥

अथ षष्ठ समवायाङ्गमाह—

मूलम्—छ लेसाओ पण्णत्ता, तं जहा—कण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा पम्हलेसा सुक्कलेसा। छ जीवनिकाया पण्णत्ता, तं जहा—पुढवीकाए, आऊकाए, तेउकाए, वाउकाए, वणस्सइकाए, तसकाए। छव्विहे बाहिरे तवोकम्मे पण्णत्ते, तं जहा—अणसणे ऊणोयरिया, वत्तीसंखेवो, रसपरिच्चाओ, कायकिलेसो, संलीणया। छव्विहे अब्भितरे तवोकम्मे पण्णत्ते, तं जहा—पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ झाणं उस्सग्गो। छ छाउमत्थिया समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा—वेयणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए, मारणंतिअ समुग्घाए, वेउव्वियसमुग्घाए, ते य समुग्घाए, आहारसमुग्घाए। छव्विहे अत्थुग्गहे पण्णत्ते, तं जहा—सोइंदिय अत्थुग्गहे, चक्खुइंदिय अत्थुग्गहे, घाणेंदियअत्थुग्गहे, जिब्भिदिय अत्थुग्गहे, फासिंदिय अत्थुग्गहे, नोइंदियअत्थुग्गहे। कत्तियानक्खत्ते छतारे पण्णत्ते। असिलेसानक्खत्ते छतारे पण्णत्ते ॥२१॥

टीका—'छ लेसाओ' इत्यादि। षड्=षड्विधाः 'लेसाओ' लेश्याः=प्रज्ञप्ताः, तत्र लिश्यते श्लिष्यते कर्मणा सह आत्माऽनेनेति लेश्या कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात् आत्मपरिणामविशेषः, तदुक्तम्-'कृष्णादि-द्रव्यसाचिव्यात् परिणामो य आत्मनः। स्फटिकस्येव तत्राय लेश्या शब्दः प्रवर्तते' इति। प्रज्ञप्ता=कथिताः, तद्यथा-कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ल-

अब छठवां समवायांग कहते हैं—'छ लेसाओ इत्यादि।

छह लेश्याएं कही गई हैं। वे इस प्रकार है—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या पद्मलेश्या, और शुक्ललेश्या। छह जीवनिकाय

હવે છઠ્ઠું સમવાયાંગ કહે—'छ लेसाओ' इत्यादि।

ટીકાર્થ—લેશ્યાઓ છ બતાવી છે તે આ પ્રમાણે છે—

(૧) કૃષ્ણલેશ્યા (૨) નીલલેશ્યા, (૩) કાપોત લેશ્યા (૪) તેજો લેશ્યા, (૫) પદ્મ લેશ્યા અને (૬) શુકલ લેશ્યા જીવનિકાય છ છે તે આ પ્રમાણે છે-(૧) પૃથ્વીકાય

लेश्या । षड्=षड्विधा जीवनिकाया=जीवानां निकाया=समूहाः प्रज्ञप्ता=कथिता, तद्यथा-पृथिवीकाय अप्कायः, तेजस्कायः, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय । षड्भिः बाह्य तपः षड्विधम् तपति दहति अष्टविधकर्माणि इति तपः, अष्टविधकर्मनिर्जरकारकमित्यर्थः, तद्यथा-'अणसणे' अनशनम्=अशनम्=चतुर्विध आहार, तत्परित्यागोऽनशनम्, 'ऊणोयरिया' ऊनोदर्यम्=ऊन न्यूनमुदरं यस्य सः, तस्य भावः, स्वल्पाहारतेत्यर्थः, अवमौदर्यमिरपि पाठः, 'वित्तीसंखेवो' वृत्तिसंक्षेप=वृत्तिः-भक्ष्यं तस्या संक्षेपः वृत्तिसंक्षेप, स च उत्तिष्ठतनिषिद्धाशने कर्तव्य, 'रसपरिच्चाओ' रसपरित्यागः=रस्यते समास्वाद्यते सादरमिति रसः-मधुरादिलक्षणः, तस्य परित्याग=प्रत्याख्यान रस परित्यागः । 'कायकिलेसे' कायक्लेशः=कायस्य-शरीरस्य क्लेशो यापनम्, स तु वीरासनोत्कुटुकासनकेशलुञ्चनादिरनेकविध । 'संलीणया' सलीनता=कूर्मवदिन्द्रियगोपनता । अनेन बाह्यतपसा बाह्यशरीरपरिशोषणेन सहत्यागः-शरीरममत्वेन्द्रियविजय-संयमरक्षण-कर्मनिर्जरादिकं भवति । 'छव्विहे' इत्यादि-षड्विधमाभ्यन्तरं तपः कर्म प्रज्ञप्तम्, आभ्यन्तरत्वं हि-चित्तनिरोध प्रायान्येन कर्मक्षपणकारणत्वात्, तद्यथा-'पायच्छित्त' प्रायश्चित्त, पापोच्छेदकारित्वात्प्रायश्चित्तम्, तच्च आलोचनाद्यनेकविधम् । विणओ' विनयः-विनीयतेऽष्टविध कर्म येनासौ विनयः ज्ञानादि स चेह विध । 'वेयावच्च' वैयावृत्त्य=शुभोपयोगेन व्यावृतः-सेवार्थं गृहीत, तस्य भावः, वैयावृत्यम् बालग्लानादीनां सेवाकरणम् । 'सज्झाओ' स्वाध्याय=सु=शोभनो=मर्यादया अध्यायः स्वाध्यायः, मूलसूत्रस्यावर्तनमित्यर्थः । झाणे' ध्यान बाह्यार्थचिन्तानामार्गमनिरोधेन निरोधो ध्यानम्, तच्च धर्मध्यानाद्यनेकविधम् । 'विउस्सग्गो' व्युत्सर्ग=विशेषेण उत्सर्गः=व्युत्सर्गः, अतीचारादि निवारणार्थं कायोत्सर्गो धर्मशुक्लध्यायिन कायोत्सर्गो वा । 'छ

कहे गये हैं, वे इस प्रकार हैं-पृथिवीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रसकाय। छह प्रकार के बाह्य तप कहे गये हैं वे इस प्रकार हैं-अनशन, ऊनोदरिका, वृत्तिसंक्षेप रसपरित्याग, कायक्लेश और सलीनता। छह प्रकार के आभ्यन्तर तप कहे गये हैं, वे इस प्रकार से हैं प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान, और व्युत्सर्ग। छह

---

(२) अप्काय (३) तेजस्काय, (४) वायुकाय, (५) वनस्पतिकाय, अने (६) त्रसकाय ७ प्रकारना बाह्य तप बताव्यां छे ते आ प्रमाणे छे—(१) अनशन (२) ऊणोदरिका (३) वृत्तिसंक्षेप, (४) रसपरित्याग (५) काय क्लेश अने (६) सलीनता ७ प्रकारना आभ्यन्तर तप बताव्यां छे ते आ प्रमाणे छे-(१) प्रायश्चित्त, (२) विनय (३) वैयावृत्य, (४) स्वाध्याय, (५) ध्यान अने (६) व्युत्सर्ग ७ छठ्ठास्थिक समुद्घात छे, ते

षड्=षड्विधाः 'छाउमत्थिया' छाद्मस्थिकाः–छद्मस्थोऽकेवली, तत्र भवाः छाद्मस्थिकाः=छद्मस्थसमुद्भवाः 'समुग्घाया' समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, समुद्घातो हि यथास्वभावस्थितानामात्मप्रदेशानां वेदनादिभिः कारणैरन्यथा परिणमनम्। समुद्घातानां षड्विधत्वं दर्शयति–वेदनासमुद्घातः, कषायसमुद्घातः, मारणान्तिकसमुद्घातः, वैकुर्विकसमुद्घातः, आहारकसमुद्घातः तैजससमुद्घातः,। षड्विधोऽर्थावग्रहः प्रज्ञप्तः-अवग्रहणमवग्रहः–अर्थस्य=स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दाद्यात्मकस्य वस्तुनः अवग्रहः=अर्थावग्रहः=सकलरूपादिविशेषनिरपेक्षानिर्देश्य सामान्यमात्ररूपार्थग्रहणम्=षड्विधत्वमस्य दर्शयति–'सोइंदिय' इत्यादिना–श्रोत्रेन्द्रिया यावत् नो इन्द्रियार्थावग्रहः, चक्षुरिन्द्रियार्थावग्रहः, घ्राणेन्द्रियार्थावग्रहः, जिह्वेन्द्रियार्थावग्रहः, स्पर्शेन्द्रियार्थावग्रहः, नो इन्द्रिय=इन्द्रियसदृशं मनइत्यर्थः, नो शब्दः सदृशार्थकः मनस इन्द्रियवर्थपरिच्छेदकत्वात्तस्य नो इन्द्रियत्वम्। तस्य अर्थो विषयः, नो इन्द्रियार्थः, तदवग्रहः, नो इन्द्रियार्थावग्रहः। कृत्तिकानक्षत्रं षट्तारं प्रज्ञप्तम्। अश्लेषानक्षत्रं षट्तारं प्रज्ञप्तम् ॥ सू. १९ ॥

छाद्मस्थिक समुद्घात हैं, वे इस प्रकार हैं-वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, मारणांतिकसमुद्घात, वैक्रियसमुद्घात, तैजससमुद्घात, और अहारकसमुद्घात। छह प्रकार का अर्थावग्रह कहा गया है, वह इस प्रकार है–श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह, चक्षुरिन्द्रिय अर्थावग्रह, घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह, जिव्हेन्द्रिय अर्थावग्रह, स्पर्शनेन्द्रिय अर्थावग्रह और नोइन्द्रिय अर्थावग्रह। कृत्तिका नक्षत्र और अश्लेषानक्षत्र ये दोनों नक्षत्र छह छह ताराओं वाले कहे गये हैं।

भावार्थ—कषाय के उदय से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति का नाम लेश्या है। इसके प्रभाव से आत्मा कर्मों के साथ संबंधित हो जाती है। लेश्या दो प्रकार की होती है–एक द्रव्यलेश्या और दूसरी भाव लेश्या।

આ પ્રમાણે છે-(૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાય સમુદ્ઘાત, (૩) મારણાંતિક સમુદ્ઘાત (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત, (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત, અને (૬) આહારસમુદ્ઘાત, છ પ્રકારનો અર્થાવગ્રહ બતાવેલ છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ (૨) ચક્ષુરિન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, (૩) ઘ્રાણેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, (૪) જિહ્વેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, (૫) સ્પર્શેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ અને (૬) નોઇન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, કૃત્તિકા નક્ષત્ર અને અશ્લેષા નક્ષત્ર એ બન્ને નક્ષત્રો છ, છ તારાઓ વાળા છે.

ભાવાર્થ—કષાયના ઉદયથી અનુરંજિત યોગથી પ્રવૃત્તિનું નામ લેશ્યા છે તેના પ્રભાવથી આત્મા કર્મોની સાથે સંબંધિત થઈ જાય છે લેશ્યા બે પ્રકારની હોય છે–[૧] દ્રવ્યલેશ્યા અને (૨) ભાવલેશ્યા. દ્રવ્ય લેશ્યા બાહ્ય શરીરનો રંગ છે. ભાવ-

द्रव्यलेश्या बाह्य शरीरका रंग है। भावलेश्या आत्मा के शुभ अशुभ परिणाम हैं। जिस प्रकार स्फटिकमणि में जपापुष्पादि द्रव्य की सहायता से विशेष प्रकार का परिणमन हो जाता है उसी प्रकार बाह्य कृष्ण आदि द्रव्यकी सहायता से आत्मा में जो परिणमन होता है वह लेश्या है। कृष्ण, नील, कापोत, ये तीन अशुभलेश्याएँ हैं और तेज, पद्म एवं शुक्ल, ये तीन शुभलेश्याएँ हैं। जीवनिकाय का तात्पर्य है छह-प्रकार के जीवों का समुदाय। वैसे तो दो प्रकार का ही जीव है। त्रस और स्थावर, परन्तु यहाँ पर जीव में षट्प्रकारता बोधन करने के लिये स्थावर निकाय के पृथिवीकाय आदि ये पाँच भेद किये हैं। "तेजोवायुद्वीन्द्रियादयश्च त्रसा" इस सूत्र के अनुसार यद्यपि तेज और वायुकाय को भी त्रस कहा गया है, परन्तु यहाँ पर जो इन्हें त्रसकाय में परिगणित नहीं किया गया है उसका कारण यह है कि इन में त्रस नामकर्म का उदय नहीं है। स्थावर नाम कर्म का ही उदय है। शास्त्र में जो इन्हें त्रस कहा गया है वह गति त्रस की अपेक्षा लेकर कहा है। स्थावर नामकर्म का उदय होने पर भी त्रस जैसी गति होने के कारण जो त्रस कहलाते हैं वे गतित्रस हैं। लब्धित्रस नहीं। लब्धित्रस तो त्रस नाम कर्म के उदयवाले जीव ही होते हैं। वासनाओं को क्षीण करने के लिये

લેશ્યા આત્માના શુભ અશુભ પરિણામ છે જે પ્રમાણે સ્ફટિક મણિમાં જપાપુષ્પ આદિ દ્રવ્યની મદદથી વિશેષ પ્રકારનું પરિણમન થઈ જાય છે તે જ પ્રમાણે બાહ્ય કૃષ્ણ આદિ દ્રવ્યની મદદથી આત્મામાં જે પરિણામ થાય છે તે લેશ્યા છે, કૃષ્ણ, નીલ કાપોત, એ ત્રણ અશુભ લેશ્યાઓ છે અને તેજ પદ્મ અને શુક્લ એ ત્રણ શુભ લેશ્યાઓ છે જીવનિકાય એટલે છ પ્રકારના જીવોનો સમુદાય આમ તો જે પ્રકારના જ જીવો છે-ત્રસ અને સ્થાવર, પણ અહીં જીવોના છ પ્રકાર સમજાવવા માટે સ્થાવર નિકાયના પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ ભેદ કર્યા છે તેજોવાયુદ્વિન્દ્રિયાદ્ યશ્ચ ત્રસાઃ" એ સૂત્ર પ્રમાણે જો કે તેજ અને વાયુકાયને પણ ત્રસ કહેવામાં આવેલ છે, પણ અહીં ત્રસ કાયમાં તેમની ગણતરી કરવામાં આવી નથી તેનું કારણ એ છે કે તેમનામાં ત્રસ નામકર્મનો ઉદય નથી સ્થાવર નામકર્મનો જ ઉદય છે પ્રાચીનમાં એમને જે ત્રસ કહેલ છે તે ગતિત્રસની અપેક્ષાએ કહેલ છે સ્થાવર નામ કર્મોને ઉદય થતા પણ ત્રસના જેવી ગતિ હોવાને કારણે જેમને ત્રસ કહેવામાં આવે છે ગતિત્રસ છે, લબ્ધિત્રસ નહીં લબ્ધિત્રસ તો ત્રસ નામકર્મના ઉદય વાળા જીવો હોય છે વાસનાઓને ક્ષીણ કરવાને માટે તથા સમુચિત આધ્યાત્મિક

तथा समुचित आध्यात्मिक बल की साधना के लिये इन्द्रिय और मन को जिन उपायों से तपाया जाता है वे सभी तप है। तप के बाह्य- और आभ्यन्तर, ऐसे दो भेद है बाह्य जीवों को दो देखने में आवे तथा जिनमें शारीरिक क्रिया की प्रधानता रहे और जो बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा से युक्त हों वे बाह्यतप है, और जिनमें बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा न हो और इसी कारण जो बाह्यजनों की दृष्टि के अविषय हों वे आभ्यन्तर तप हैं। बाह्यतप आभ्यन्तरतप की पुष्टि का कारण होता है। बाह्यतप के छह भेद इस प्रकार है--नियमरूप से चतुर्विध आहार का परित्याग करना इसका नाम अनशन है१। भूख से कम आहार लेना इसका नाम ऊनौदर्य है२। भिक्षा का संक्षेप करना इसका नाम वृत्तिसंक्षेप है, यह उत्क्षिप्त आदि के भेद से अनेक प्रकार का है।३। घी दूध आदि का परित्याग कर देना इसका नाम रसपरित्याग है ४। ठंडी गरमी या विविध आसनादि द्वारा शरीर को कष्ट देना इसका नाम कायक्लेश है। यह वीरासन, उत्कुटकासन और केशलुचन आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। ५। बाधारहित एकान्तस्थान में रहना अथवा कूर्म की तरह इन्द्रियों का गोपन करना इसका नाम संलीनता है ६। आभ्यन्तर तप के छह भेद

બળની સાધનાને માટે ઇન્દ્રિયો તથા મનને જે ઉપાયો વડે તપાવવામા આવે છે તે ઉપાયોને તપ કહે છે તપના બાહ્ય અને આભ્યન્તર એવા બે ભેદ છે જે બાહ્ય જીવોના જોવામા આવે તથા જેમા શારીરિક ક્રિયાની પ્રધાનતા રહે તથા જે બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષાથી યુકત હોય તે બાહ્યતપ છે, અને જેમા બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષા ન હોય અને એજ કારણે જે બાહ્યજનોની દૃષ્ટિનો વિષય બની ન શકે તે તપને આભ્યન્તર તપ કહે છે બાહ્યતપ આભ્યન્તર તપની પુષ્ટિનું કારણ બને છે. છ બાહ્ય તપના છ ભેદ આ પ્રમાણે છે- (૧) નિયમથી ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ અનશન છે (૨) ભૂખ હોય તેના કરતા પણ ઓછો આહાર લેવો તેનુ નામ ઉણોદર્ય છે [૩] ભિક્ષાનો સક્ષેપ કરવો તેનુ નામ વૃત્તિ સક્ષેપ છે, તે ઉત્ક્ષિપ્ત નિક્ષિપ્ત આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારનુ છે. (૪ ઘી, દૂધ વગેરેનો પિરત્યાગ કરવો તેનું નામ રસપરિત્યાગ છે (૫) શીત, ગરમી કે વિવિધ આસનાદિ દ્વારા શરીરને કષ્ટ આપવુ તેનુ નામ કાયકલેશ છે તેના વી સન, ઉત્કુટુકાસન, અને કેશલુચન આદિ અનેક ભેદ છે (૬) બાધારહિત એકાન્તસ્થાનમા રહેવુ અથવા કાચબાની જેમ ઇન્દ્રિયોનુ ગોપન (આકુચન) કરવુ તેનુ નામ સલીનતા છે. આભ્યાન્તર તપના છ ભેદ આ પ્રમાણે છે—

ये हैं–धारण किये हुए व्रत में प्रमाद जनित दोषों का जिससे शोधन किया जा सके उसका नाम प्रायश्चित्त है, यह आलोचना आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। ज्ञान आदि सद्गुणों में बहुमान रखना इसका नाम विनय है २। गाम्य साधनों को जुटाकर अथवा अपने आपको काम में लगाकर गुरु आदि पूज्यजनों की सेवा शुश्रूषा करना वैयावृत्य है। विनय और वैयावृत्य में केवल इतना ही अन्तर है कि विनय तो मानसिक धर्म है और वैयावृत्य शारीरिक धर्म है ३। ज्ञान प्राप्ति के लिये विविध प्रकार का अभ्यास करना तथा मूलसूत्रों को पढ़ना इसका नाम स्वाध्याय है ४। चित्त के विक्षेपों का त्याग करना अथवा सुधार्य का चिन्तन करना भी ध्यान है ५। और अतीचारादि निवारण करने के लिये कायोत्सर्ग करना व्युत्सर्ग है। अथवा धर्मध्यानी शुक्लध्यानी के कायोत्सर्ग को व्युत्सर्ग कहते हैं।६। मूल शरीर को न छोड़कर आत्मा के प्रदेशों का बाहर निकालना इसका नाम समुद्घात है। यह समुद्घात सात प्रकार का होता है, इनमें जो केवलिसमुद्घात होता है उसकी यहां विवक्षा नहीं है, क्यों कि वह केवली के सिवाय छद्मस्थों में नहीं पाया जाता है। यहां तो जो छद्मस्थ जीवों में पाये जाते हैं उनका वर्गीकरण किया गया है। इसलिये यह छह प्रकार का है, यह इस प्रकार–तीव्र वेदना के निमित्त

(१) બારમા ગુણસ્થાનમાં પ્રમાદ જનિત દોષોનું જેનાથી શોધન કરવામાં આવે તેનું નામ પ્રાયશ્ચિત્ત છે તે આલોચના આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારનું છે (૨) જ્ઞાન આદિ સદ્ગુણોમાં બહુમાન રાખવું તેનું નામ વિનય છે (૩) ગૌરવ સાધનોને ભેગા કરીને અથવા પોતાની જાતથી ગુરુ આદિ પૂજ્ય જનોની સેવા શુશ્રૂષા કરવી તેને વૈયાવૃત્ત કહે છે વિનય અને વૈયાવૃત્યમાં એટલો જ તફાવત છે કે વિનય તો માનસિક ધર્મ છે અને વૈયાવૃત્ય શારીરિક ધર્મ છે (૪) જ્ઞાનપ્રાપ્તિને માટે વિવિધ પ્રકારનો અભ્યાસ કરવો તથા મૂળ સૂત્રોનું અધ્યયન કરવું તેનું નામ સ્વાધ્યાય છે (૫) ચિત્તના વિક્ષેપોનો ત્યાગ કરવો તેનું અથવા સુધાર્યનું ચિંતન કરવું તે પણ ધ્યાન છે (૬) અતીચાર આદિના નિવારણ માટે કાયોત્સર્ગ કરવો તેને વ્યુત્સર્ગ કહે છે મૂળ શરીરને છોડ્યા વિના આત્માના પ્રદેશોનું બહાર કાઢવું તેનું નામ સમુદ્ઘાત છે તે સમુદ્ઘાત સાત પ્રકારના હોય છે, તેમાંનો જે કેવલી સમુદ્ઘાત છે તેનું વર્ણન અહિં કર્યું નથી, કારણકે તે કેવલી સિવાયના છદ્મસ્થોમાં જોવા મળતો નથી અહીં તો જે છદ્મસ્થ જીવોમાં હોય છે તેનું વર્ગીકરણ કરવામાં આવ્યું છે તેથી તે છ પ્રકારનો છે તે છ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે–(૧) તીવ્ર વેદનાને કારણે જે આત્માનાં પ્રદેશોનું બહાર

को लेकर जो आत्मा के प्रदेशों का शरीर से बाहर निकालना होता है उसका नाम वेदना समुद्घात है १। क्रोधादिकषाय के तीव्र उदयरूप निमित्त को लेकर जो आत्मा के प्रदेशों का पर का घात करने के लिये बाहर निकलना होता है उसका नाम कषायसमुद्घात है २। मरण होने के कुछ समय पहिले जो समुद्घात होता है वह मारणांतिक समुद्घात है ३। अणिमा, महिमा आदि नाना प्रकार की शारीरिक विक्रियाओं को करने के लिये आत्मा के प्रदेश बाहर निकलते हैं उसका नाम वैक्रिय समुद्घात है ४। तैजस समुद्घात दो प्रकार का होता है-एक शुभ तैजस दूसरा अशुभतैजस। जगत को मारी रोग आदि से पीडित देख कर संयमी महातेजस्वी साधु के हृदय में प्राणियों की रक्षार्थ दया उत्पन्न होने पर उनको बचाने के लिये शुभतेज का निकालना शुभ तैजस समुद्घात हैं। और जो क्रोधादि कषाय के निमित्त को लेकर भस्म करने के लिये तेज का निकालना अशुभ तैजस समुद्घात है ५। छठवें गुणस्थानवर्ती किसी परम तपस्वी मुनीजन के लिये शंका आदि के होने पर जो उनके शरीर से एक हाथ का पुतला निकलता है कि जो पुरुषाकार होता है और शंका की निवृत्ति ही अपने उद्गम स्थान में प्रविष्ट हो जाता है उसका नाम आहारक समुद्घात है ३। अर्थावग्रह के छह भेद ये है-नाम जाति आदि की विशेष कल्पना से रहित सामान्य मात्र रूप अर्थ का जो अवग्रह-ग्रहण होता

કાઢવાનુ બને છે તેનુ નામ વેદના સમુદ્ઘાત' છે (૨) ક્રોધાદિ કષાયના તીવ્ર ઉદયરૂપ નિમિત્તને લીધે જે આત્માના પ્રદેશોનુ અન્યના ઘાતને માટે બહાર કાઢવાનુ થાય છે ત કષાય સમુદ્ઘાત' કહે છે (૩) મૃત્યુ પહેલા થોડા સમયે જે સમુદ્ઘાત થાય છે તેને 'મારણાતિક સમુદ્ઘાત' કહે છે અણિમા, મહિમા આદિ વિવધ પ્રકારની શારીરિક વિક્રિયાઓ કરવા ને માટે આત્માના પ્રદેશો બહાર નીકળે છે, 'વૈક્રિય સમુદ્ઘાત' કહે છે (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાતના બે પ્રકાર છે-(૧) શુભ તૈજસ અને બીજો અશુભ તૈજસ જગતને મહામારી આદિથી પીડીત જોઈને સંયમી મહાતેજસ્વી સાધુના હૃદયમા પ્રાણીઓની રક્ષાર્થે દયા ઉત્પન્ન થવાથી તેમને બચાવવાને માટે શુભ તેજને છોડવુ તેને "શુભ તૈજસ સમુદ્ઘાત" કહે છે અને ક્રોધાદિ કષાયને કારણે ભસ્મ કરવાને માટે તેજને છોડવુ તેનુ નામ 'અશુભ તૈજસ સમુદ્ઘાત" છે (૬) છઠ્ઠા ગુણસ્થાનવર્તી કોઇ કોઇ પરમ તપસ્વી મુનિજનને શંકા આદિ ઉત્પન્ન થતા શરીરમાથી એક હાથનુ પુતળુ નીકળે છે તેનો આકાર પુરુષ જેવો હોય છે શંકાનુ નિવારણ થતા જ તે પોતાના ઉંડા સ્થાનમા પ્રવેશ કરે છે તેનું નામ "આહારક સમુદ્ઘાત" છે અર્થાવગ્રહના આ પ્રમાણે છ ભેદ છે-નામ, જાતિ આદિની વિશેષ કલ્પનાથી રહિત સામાન્ય માત્ર અર્થનો જ જે અવગ્રહ થાય છે-જ્ઞાન થાય છે તે અવગ્રહને 'અર્થા-

है-ज्ञान है-उसका नाम अर्थावग्रह है। अवग्रह अर्थावग्रह और व्यञ्जनावग्रह के भेद से दो प्रकार का होता है। अर्थ-पदार्थ-वस्तु, बहुविध क्षिप्र, अनिश्रित, असंदिग्ध और ध्रुव, इस तरह छ-प्रकार के हैं। दो या दो से अधिक पदार्थों का जो अवग्रह रूप ज्ञान होता है वह बहुग्राही अवग्रह ज्ञान है। बहुत प्रकार के पदार्थों का जो अवग्रह रूप ज्ञान होता है वह बहुविधग्राही अवग्रहज्ञान है। शीघ्रता से पदार्थ का जो ज्ञान होता है वह क्षिप्रग्राही अवग्रह है। क्षयोपशम आदि की मंदता से जो पदार्थ का शीघ्र ज्ञान नहीं होता है उसका नाम अक्षिप्रग्राही अवग्रह है। अनिश्रितपदार्थ का जो अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह अनिश्रितग्राही अवग्रह है। असंदिग्ध पदार्थ का जो अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह असंदिग्धग्राही अवग्रहज्ञान है तथा ध्रुवपदार्थ का जो ज्ञान होता है वह ध्रुवग्राही अवग्रहज्ञान है। इस प्रकार के इन पदार्थों का जो यह अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह पांच इन्द्रिय और छठे मन से होता है। इसलिये अर्थावग्रह छह प्रकार का हो जाता है। शास्त्र में बहु आदिक के भेद से अर्थ बारह प्रकार के कहे गये हैं। पूर्वोक्त ये छ और इनके इतरे एक, एक विध आदि और छह भेद हैं। इनका भी जो अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह भी इसी प्रकार पांच इन्द्रिय और एक मन से होता है, इसलिए

વગ્રહ કહે છે અવગ્રહના બે પ્રકાર છે—અર્થાવગ્રહ અને વ્યંજનાવગ્રહ અર્થ-પદાર્થ-વસ્તુ, બહુ, બહુવિધ, ક્ષિપ્ર, અનિશ્રિત, અસંદિગ્ધ અને ધ્રુવ, એમ છ પ્રકારનો છે બે કે તેથી વધારે પદાર્થોનું જે અવગ્રહ રૂપ જ્ઞાન થાય છે તે બહુગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે વિવિધ પ્રકારના પદાર્થોનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે બહુવિધગ્રાહી અવગ્રહજ્ઞાન છે શીઘ્રતાથી પદાર્થનું જે જ્ઞાન થાય છે તે ક્ષિપ્રગ્રાહી અવગ્રહ છે ક્ષયોપશમ આદિની મંદતાથી પદાર્થનું જે શીઘ્ર જ્ઞાન થતું નથી તેનું નામ અક્ષિપ્રગ્રાહી અવગ્રહ છે અનિશ્રિત પદાર્થનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે અનિશ્રિતગ્રાહી અવગ્રહ છે અસંદિગ્ધ પદાર્થનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે અસંદિગ્ધગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે તથા ધ્રુવ પદાર્થનું જે જ્ઞાન હોય છે તે ધ્રુવગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે આ પ્રકારના તે પદાર્થોનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે પાંચ ઇન્દ્રિયો અને છઠ્ઠા મનથી થાય છે તેથી અર્થાવગ્રહ છ પ્રકારનો થાય છે શાસ્ત્રમાં બહુ આદિના ભેદથી અર્થ બાર પ્રકારના કહ્યા છે પૂર્વોક્ત તે છ ભેદ અને તે દરેકનો ઉલટો ભેદ એક એક ભેદ એમ બીજા છ ભેદ પડે છે તેમનું પણ જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોય છે તે પણ પાંચ ઇન્દ્રિયો અને એક મનથી થાય છે, તેથી અર્થાવગ્રહ છ પ્રકારનો કહ્યા મેં છે વ્યંજનાવગ્રહ

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं छ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं छ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं छ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं छपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारमाहिंदेसु अत्थेगइयाणं देवाणं छ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ २० ॥

टीका—'इमीसे' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां षट्पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां षट् सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां षट् पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां षट्पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु अस्त्येकेषां देवानां षट्सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥२०॥

अर्थावग्रह छह प्रकार का कहा गया है। व्यंजनावग्रह मन और चक्षु इन्द्रिय से नहीं होता है इसलिये उसके चार ही भेद होते है। इन सब का विशेष खुलासा शास्त्र से जानना चाहिये ॥१९॥

टीकार्थ-'इमीसे णं' इत्यादि।

इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है। तृतीय पृथिवी मे भी कितनेक नारकियों की छह सागरोपम की स्थिति कही गई है। असुर कुमार देवो में भि कितनेक देवों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है। सौधर्म, ईशान कल्प में भी कितनेक देवों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है। इसी तरह

મન અને ચક્ષુ ઇન્દ્રિય વડે થતો નથી, તેથી તેના ચાર જ ભેદ છે તે બધાનો વધુ ખુલાસો શાસ્ત્રોમાથી જાણી લેવો ॥૧૯॥

"इमीसेणं" इत्यादि।

ટીકાર્થ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ છ પલ્યોપમની કહેવી છે ત્રીજી પૃથ્વીમા પણ કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ છ સાગરોપમની બતાવવામા આવી છે અસુરકુમાર દેવોમા પણ કેટલાક દેવોની સ્થિતિ છ પલ્યોપમની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પોમા પણ કેટલાક દેવોની સ્થિતિ છ પલ્યોપમની કહેલ છે–એ જ

मूलम्- जे देवा सयंभु सयंभूरमण घोस सुघोस महाघोस कुट्ठिघोस वीर सुवीर वीरगत वीरसेणिय वीरावत्त वीरप्पभ वीरकत वीरवण्ण वीरलेस वीरज्झय वीरसिंग वीरसिट्ठ वीरकूड वीरुत्तरवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं ण देवाण उक्कोसेण छ सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा छण्ह अद्धमासाण आणमंति वा । पाण मंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसिं ण देवाण छहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । सतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे छहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणमन्तं करिस्संति ॥सू २१॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि । ये देवाः स्वयंभुव स्वयंभूरमण घोष सुघोषं कुष्टिघोषं वीरं सुवीरं वीरगत वीरसैनिकं वीरावर्तं वीरप्रभं वीरकान्त वीरवर्णं वीरलेश्य वीरध्वजं वीरशृङ्ग वीरसृष्टं वीरकूटं वीरोत्तरावतंसक विमानेषु विंशतिविमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण षट्सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः षण्णामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा

सनत्कुमार माहेन्द्र कल्पों में भी कितनेक देवों की छ सागरोपम की स्थिति कही गई है ॥सू० २०॥

'जो देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ-जो देव स्वयंभु,१ स्वयंभूरमण,२ घोष,३ सुघोष,४ महाघोष,५ कुष्टिघोष,६ वीर,७ सुवीर,८ वीरगत,९ वीरसैनिक,१० वीरावर्त,११ वीर प्रभ,१२ वीरकान्त,१३ वीरवर्ण,१४ वीरलेश्य,१५ वीरध्वज,१६ वीरशृङ्ग,१७ वीरसृष्ट,१८ वीरकूट,१९ और वीरोत्तरावतंसक२०, इन २० बीस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की

પ્રભાવે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમા પણ કેટલાક દેવોની ૬ સાગરોપમની સ્થિતિ કહેવ માં આવી છે ॥સૂ. ૨૦॥

'जो देवा' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જે દેવો સ્વયંભૂ, સ્વયંભૂરમણ, ઘોષ, સુઘોષ, મહાઘોષ કુષ્ટિઘોષ, વીર સુવીર, વીરગત, વીરસૈનિક, વીરાવર્ત, વીરપ્રભ, વીરકાન્ત, વીરવર્ણ, વીરલેશ્ય વીરધ્વજ, વીરશૃંગ, વીરસૃષ્ટ, વીરકૂટ અને વીરોત્તરાવતંસક એ વીસ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૬ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો ૬ મહિને

प्राणन्ति वा, उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां षड्भिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येकके भवसिद्धिका जीवाः, ये षडभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, 'जाव' यावत्–यावत्पदेन भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥२१॥

अथ सप्तमं समवायमाह—

मूलम्—सत्तभयट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा–इहलोगभए, परलोगभए। आदाणभए, अकम्हाभए, आजीवभए, मरणभए, असिलोगभए। सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा–वेयणासमुग्घाए, कसायसमुग्घाए, मारणंतियसमुग्घाए, वेउव्वियसमुग्घाए, तेयससमुग्घाए, आहारकसमुग्घाए, केवलिसमुग्घाए। समणे भगवं महावीरे सत्तरयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। इहेव जंबूदीवे दीवे सत्तवासहरपव्वया पण्णत्ता, तं जहा–चुल्लहिमवंते, महाहिमवंते, निसढे, नीलवंते, रुप्पी, सिहरी, मंदरे। इहेव जंबूदीवे दीवे सत्तवासा पण्णत्ता, तं जहा–भरहे, हेमवते, हरिवासे, महाविदेहे, रम्मए, एरण्णवए, एरवए। खीणमोहेणं भगवया मोहणिज्जवज्जाओ सत्तकम्मपयडीओ वेएइ। महानक्खत्ते सत्ततारे पण्णत्ते। कतिआइआ सत्तनक्खत्ता

उत्कृष्ट स्थिति छह सागरोपम की होती है। वे देव छह अर्धमासों के अन्त में बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निःश्वास ग्रहण करते है। उन देवों को छह हजार वर्ष व्यतीत होने पर आहार की संज्ञा उत्पन्न होती है इनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। वे छह भवों को ग्रहण करने के बाद सिद्ध अवस्था को प्राप्त करने वाले होंगे यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥सू० २१॥

બાહ્ય આભ્યન્તરિક ઉચ્છવાસ નિશ્વાસ લે છે તે દેવોને છ હજાર વર્ષે આહારસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે–તેમા કેટલાક દેવો ભવસિધ્ધિક પણ હોય છે તેઓ છ ભવો કરીને સિધ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરશે ત્યાથી લઇને સમસ્ત દુ ખોનો અ ત કરશે ત્યા સુધીનો અર્થ પૂર્વોક્ત સૂત્રોમાથી જાણી લેવો ॥સૂ ૨૧॥

पुव्वदारिआ पण्णत्ता महाइया सत्तनक्खत्ता दाहिण दारिआ पण्णत्ता। अणुराहाइआ सत्तनक्खत्ता अवरदारिआ पण्णत्ता धणिट्ठाइया सत्त नक्खत्ता उत्तरदारिआ पण्णत्ता ॥२३॥

टीका—'सत्तभयट्ठाणा' इत्यादि। सप्त 'भयट्ठाणा' भयस्थानानि, भयस्य मोहनीयमकृतिविशेषात्मपरिणामविशेषस्य स्थानानि प्रकाशानि, तद्यथा—इहलोकभयम्=मनुष्याणां यदन्यस्माद् मनुष्यादेर्भयम्, तत् इहलोकभयम्, परलोकभयम्=परस्मात् लोकात् देवतिर्यञ्चादेर्यद् भयम्, तत् परलोकभयम्। आदानभयम्—आदीयते गृह्यते यत्तदादानं धनम्, तन्निमित्तं चौरादिकर्तृकापहरणाद् यद् भयं तदादानभयम्। अकस्माद्भयम्' अकस्मादेव, अकस्मादेव चौरादिनिमित्तमनपेक्ष्यैव रात्र्यादौ यद्भयं तदकस्माद्भयम्। आजीवभयम्—आजीवस्य जीविकाया भयम् आजीवभयम्। मरणभयम् 'अस्सिलोगभय' अश्लोकभयम्, अश्लोकोऽपयशः,

अब सूत्रकार सातवें समवाय को कहते हैं—'सत्तभयट्ठाणा' इत्यादि।

टीकार्थ—सात भयस्थान कहे गये हैं। यह भय नोकषाय मोहनीय के उदय से होता है। भय आत्मा का ही एक परिणाम विशेष है। इस भय के सात स्थान हैं वे इस प्रकार से हैं—इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्मात्भय, आजीवभय, मरणभय और अश्लोकभय। मनुष्यों को जो दूसरे मनुष्यों से भय होता है वह इहलोकभय है १। देव तिर्यंच आदिरूप परलोक से जो भय होता है वह परलोकभय है २। आदान शब्द का अर्थ धन आदि है। इस निमित्त को लेकर जो चौरादिकर्तृक अपहरण से भय होता है वह आदानभय है ३। चौरादिनिमित्त की अपेक्षा किये बिना ही रात्रि आदि के समय जो भय होता है वह अकस्माद्रूप है ४।

હવે સૂત્રકાર સાતમું સમવાયાંગ કહે છે—"सत्तभयट्ठाणा" इत्यादि।

ટીકાર્થ—સાત ભયસ્થાનો કહ્યાં છે તે ભય નો કષાય મોહનીયના ઉદયથી થાય છે ભય આત્માનું જ કોઇ પરિણામ વિશેષ છે તે ભયનાં સાત સ્થાન છે—

(૧) ઇહલોક ભય (૨) પરલોક ભય (૩) આદાનભય, (૪) અકસ્માત્ ભય, (૫) આજીવ ભય, (૬) મરણભય અને (૭) અશ્લોક ભય મનુષ્યોનો ભય કોઇ છે તે ઇહલોકભય' કહેવાય છે દેવ તિર્યંચ આદિરૂપ પરલોકનો જે ભય હોય છે તેને પરલોકભય કહે છે આદાન એટલે ધનના નિમિત્તને લઇને ચોર આદિ દ્વારા અપહરણ થવાનો જે ભય રહે છે તેને 'આદાનભય' કહે છે ચોર આદિ નિમિત્તની અપેક્ષા કર્યા વિના જ રાત્રિ આદિ સમયે જે ભય થાય છે તે

तस्य भयम् अश्लोकभयम्-निन्दाभयमित्यर्थः । सप्त समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-वेदनासमुद्घातः, कषायसमुद्घातः मारणान्तिकसमुद्घातः, वैक्रियिकसमुद्घातः, तैजससमुद्घातः, आहारकसमुद्घातः, केवलिसमुद्घातः । वेदनादिसमुद्घातपरिणतो ह्यात्मा बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरानुभवयोग्यान् उदीरणाकरणेनाकृष्य उदयावलिकाया च निक्षिप्य अनुभूय निर्जरयति । तत्र वेदना समुद्घातस्त्वसातवेद्यकर्माश्रयः, वेदना पीडितो जीवः अनन्तानन्तकर्मस्कन्धवेष्टितान् स्वात्मप्रदेशान् शरीराद् बहिर्निस्सरति, तैः प्रदेशैः स वदनजठरादिरन्ध्राणि कर्णस्कन्धाद्यन्तरालानि च आपूर्य आयामविस्तारतः शरीरमात्रं क्षेत्रमभिव्याप्य

जीविका का जो भय है वह आजीवभय है ५। मरण से जो भय होता है वह मरणभय है ६। अकीर्ति-अपयश का जो भय होना है वह अश्लोकभय है। इसका दूसरा नाम निन्दाभय है ।७। समुद्घात सात होते हैं, वे इस प्रकार से हैं-वेदनासमुद्घात१ कषायसमुद्घात२, मारणांतिकसमुद्घात३, वैक्रियिकसमुद्घात४, तैजससमुद्घात५, आहारकसमुद्घात६, और केवलिसमुद्घात७। इन वेदनादिसमुद्घात से युक्त हुआ आत्मा कालान्तर में अनुभव करने योग्य अनेक वेदनीयादि कर्मपुद्गलों को उदीरणाकरण से खेंचकर और उदयावलि में निक्षिप्तकर उन्हें अनुभव करके निर्जीर्ण कर-देना है। इन सात समुद्घातों का स्वरूप इस प्रकार से है-तीव्र वेदना से पीडित हुआ जीव अनतानंत कर्मस्कन्ध से वेष्टित अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहिर निकालता है। वह उन प्रदेशों से वदन जठर आदि के छिद्रों को, और कर्ण, स्कंध आदि अंतरालों को पूरण कर आयाम विस्तार की अपेक्षा शरीरमात्र क्षेत्र को व्याप्त कर

'अकस्मातभय' છે જીવનનિર્વાહનો જે ભય હોય છે તેને આજીવભય કહે છે અને મરણનો જે ભય છે તેને 'મરણભય' કહે છે અકીર્તિનો જે ભય છે તેને 'અશ્લોકભય' કહે છે તેનુ બીજુ નામ નિન્દાભય' છે સાત સમુદ્ઘાત હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-[૧] વેદના સમુદ્ઘાત, [૨] કષાયસમુદ્ઘાત, [૩] મરણાંતિક સમુદ્ઘાત, [૪] વૈક્રિયિકસમુદ્ઘાત, (૫) તૈજસસમુદ્ઘાત, (૬) આહારકસમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિસમુદ્ઘાત છે વેદના દે સમુદ્ઘાતથી યુક્ત થયેલ આત્મા કાલાન્તરે અનુભવ કરવા યોગ્ય અનેક વેદનીયાદિ કર્મપુદ્ગલોને ઉદીરણા કરણથી ખેચીને અથવા ઉદયાવલિમા નિક્ષિપ્ત કરીને તેમને અનુભવીને નિર્જીર્ણ કરી નાખે છે તે સાત સમુદ્ઘાતનુ સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-તીવ્ર વેદના વડે પીડાતો જીવ અનતાનત કર્મસ્કધથી વીટળાયેલ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરમાથી બહાર કાઢે છે તે જીવ તે પ્રદેશોમાથી વદન, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્ણ, સ્કંધ આદિ અંતરાલોને પૂરી દઇને લંબાઇ પહોળાઇની અપેક્ષાએ

तस्मिंश्चान्तर्मुहूर्ते प्रभूतानासातवेदनीयकर्मपुद्गलपरिशाटनं करोति। कषायसमुद्घातं कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्मोदयतः, तीव्रकषायोदयाकुलो जीवः स्वात्मप्रदेशान् बहिर्निःक्षिपति, तैः प्रदेशैर्वदनोदरादिरन्ध्राणि कर्णस्कन्धान्तरालानि वाऽपूर्यं आयामविस्ताराभ्यां देहमात्रक्षेत्रमभिव्याप्य वर्तते, तथाभूताश्च प्रभूतान् कषायकर्मपुद्गलान् परिशाटयति। मारणान्तिकसमुद्घातं =अन्तर्मुहूर्ते शेषायुः कर्मा अपि, मरणमेव मारणान्तिकं तदेव प्रयोजनमस्येति मारणान्तिकः, स चासौ समुद्घातश्च मारणान्तिकसमुद्घातः। मरणसमुद्घातगतो विक्षिप्यात्मप्रदेशा वदनोदरादिरन्ध्राणि स्वकर्णस्कन्धान्तरालानि चापूर्य विष्कम्भबाहल्याभ्यां

के अन्तर्मुहूर्तकाल में प्रभूत असाता वेदनीय कर्मपुद्गलों को परिशटित कर देता है। इस तरह यह वेदना समुद्घात असातवेदनीय कर्म के आश्रय से होता है १। कषायसमुद्घात कषायनामक चारित्रमोहनीय कर्म के उदय को लेकर होता है, वह इस प्रकार से है तीव्र कषाय के उदय से आकुल बना हुआ जीव अपने आत्मप्रदेशों को बाहर निकालता है। उन प्रदेशों से वह वदन उदर आदि के रन्ध्रों को और कर्ण स्कंध आदि के अन्तरालों को पूरित करके देहप्रमाण लंबे चौडे क्षेत्र में ठहर कर तथाभूत प्रभूत कषायपुद्गलों को परिशाटित कर देता है २। मारणान्तिक समुद्घात अन्तर्मुहूर्त की शेष आयु जब रह जाती है तब होता है। मारणान्तिक समुद्घात का तात्पर्य है—मरण के अन्त समय में होने वाला समुद्घात। इस समुद्घात को करने वाला जीव अपने कुछेक आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर फैलाता है और उनसे वदन उदर आदि के रन्ध्रों को तथा स्कंध आदि के अन्तरालों को पूरित करके

અર્થાત્ પ્રમાણ ક્ષેત્રને અન્તર્મુહૂર્ત કાળમા પ્રભૂત (અનેક) અસાતવેદનીયકર્મ પુદ્ગલોને પરિશાટિત કરી નાખે છે એટલે કે આ રીતે તે વેદના સમુદ્ઘાત અસાતવેદનીય કર્મને આશ્રયે થાય છે (૧) કષાય સમુદ્ઘાત કષાય નામના ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી થાય છે તે આ પ્રમાણે—તીવ્રકષાયના ઉદયથી આકુલવ્યાકુલ બનેલ જીવ પોતાના આત્મ પ્રદેશોને બહાર કાઢે છે તે પ્રદેશો વદન પેટ આદિના છિદ્રોને અને કર્ણસ્કંધ આદિના બે વચ્ચેના અંતરાલોને પૂરી દઈને દેહપ્રમાણ લાંબા પહોળા ક્ષેત્રમા રહીને તે પ્રમાણે રહેલા પ્રભૂત કષાયપુદ્ગલોને પરિશાટિત કરી નાખે છે—ખેરવી દે છે (૨) જ્યારે અન્તર્મુહૂર્ત આયુષ્ય બાકી રહે ત્યારે મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત થાય છે મારણ એટલે મરણ તેના માટે સમુદ્ઘાત એટલે મરણના અન્ત સમયે કરાતો સમુદ્ઘાત. આ સમુદ્ઘાત કરનાર જીવ પોતાના કેટલાક આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર કાઢે છે, અને તેમનાથી વદન, પેટ આદિના છિદ્રોને તથા કર્ણ આદિના અન્તરાલોને પૂરી દઈને પહોળાઈ અને જાડાઈની અપેક્ષાએ

स्वशरीरप्रमाणमायामतः स्वशरीरातिरेकतो जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागम्, उत्कर्षतोऽसंख्येयानि योजनान्येकदिशि क्षेत्रमभिव्याप्य आयुष्कर्मपुद्गलान् परिशाटयति । वैकुर्विकसमुद्घातः-वैक्रियशरीरकर्माश्रयः । वैक्रियसमुद्घातगतः पुनर्जीवः स्वात्मप्रदेशान् शरीराद् बहिर्निःसार्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमानमायामतः संख्येययोजनप्रमाणं दण्डं निसृजति, निसृज्य च यथा स्थूलान् वैक्रियशरीरनामककर्मपुद्गलान् प्राग्वच्छातयति । तैजससमुद्घातः तैजसशरीरकर्माश्रयः । तेजो निसर्गलब्धिमान् क्रुद्धःसाध्वादिः सप्ताष्टपदानि गत्वा विष्क-

---

विष्कंभ चौडाई और बाहल्य-ऊँचाई की अपेक्षा अपने शरीर प्रमाण तथा आयाम की अपेक्षा अपने शरीर से अधिक-जघन्य की अपेक्षा अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट की अपेक्षा असंख्यात योजन प्रमाण, ऐसे एकदिशा संबंधी क्षेत्र को व्याप्त कर लेता है। फिर वह अपने आयुकर्म के पुद्गलों को परिशटित कर देता है ३। वैक्रिय समुद्घात वैक्रिय शरीरकर्म के आश्रय होता है, इस समुद्घात को करने वाला जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर शारीरिक विष्कम और बाहल्य के अनुसार उन्हें आयाम की अपेक्षा संख्यात योजन प्रमाण वाले दण्डाकाररूप में बनाता है। बनाकर फिर वह यथास्थूल वैक्रिय शरीर नामकर्म के पुद्गलों की पहिले की तरह परिशटित कर देता है ४। तैजससमुद्घात तैजस शरीर नामकर्म के आश्रय से होता है, जो विशिष्ट तपस्वी तपस्या जन्य प्राप्त तेजोलब्धि प्राप्त कर लेता हैं वह जब कुपित होता है तो सात आठ पद अपने स्थान से आगे जाकर

પોતના શરીર પ્રમાણ તથા લંબાઈની અપેક્ષાએ પોતાના શરીર કરતા અધિક-જઘન્યની અપેક્ષાએ અંગુલના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ, એવા એક દિશા સંબંધી ક્ષેત્રને વ્યાપ્ત કરી લે છે. પછી તે પોતાના આયુકર્મના પુદ્ગલોને પરિશટિત કરી દે છે-જોડી દે છે. (૩) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત વૈક્રિય શરીરકર્મને આશ્રયે થાય છે તે સમુદ્ઘાત કરનાર જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર કાઢીને શારીરિક વિષ્કંભ-પહોળાઈ અને બાહલ્ય-ઊંચાઈ પ્રમાણે તેમને આયામ-લંબાઈની અપેક્ષાએ સંખ્યાત યોજન પ્રમાણવાળા દંડાકાર રૂપમા બનાવે છે બનાવ્યા પછી તે યથા સ્થૂલ વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોનેપહેલાની જેમ પરિશટિત કરી નાખે છે (૪) તૈજસ સમુદ્ઘાત તૈજસ શરીર-નામ કર્મને આશ્રયે થાય છે જે વિશિષ્ટ તપસ્વી તપસ્યાજન્ય આસ લબ્ધિ પ્રાપ્ત કરી લે છે તે જ્યારે ક્રોધે ભરાય છે ત્યારે પોતાના સ્થાનથી સાત આઠ ડગલા આગળ

मवगाहपार्श्वं शरीरप्रमाणमायामतस्तु जघन्येनाङ्गुलासंख्येयभागमात्रं उत्कर्षतोऽसंख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलान् आहारकशरीरनामकर्मपुद्गलान् शातयति। केवलिसमुद्घात=सातवेदनीयं शुभनामोच्चैर्गोत्रकर्मांशयः। केवलिनः समुद्घातः केवलिसमुद्घातः। अन्तर्मुहूर्तमात्रेऽवशिष्टे परमपदे केवल्यपि आयु

पिण्डकम और बाहल्य की अपेक्षा अपने शरीर प्रमाण तथा आयाम-लम्बाई की अपेक्षा संख्यात योजन प्रमाण तक अपने आत्मप्रदेशों को बाहर निकाल कर दण्डाकाररूप में बाहिर फैलाता है। और क्रोध के विषयभूत बने हुए मनुष्य आदिकों को भस्मसात् कर देता है। यह उस अवस्था में प्रभूत तैजस शरीर नामक कर्मपुद्गलों को परिशटित कर देता है ५। आहारकसमुद्घात आहारक-शरीरकर्म के सहारे से होता है, जब जीव आहारक समुद्घात करता है तो उस समय वह आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर बाहल्य-ऊँचाई की अपेक्षा शरीर प्रमाण तथा आयाम की अपेक्षा संख्यात योजन तक दण्डाकाररूप में परिण माता है, और परिणमा कर फिर यथास्थूल आहारकशरीर नामकर्म के पुद्गलों को परिशटित कर देता है ६। केवलिसमुद्घात साता, असाता वेदनीयकर्म, शुभ अशुभ नामकर्म, और ऊँच नीच गोत्रकर्म के सहारे से होता है। परमपद की प्राप्ति जब अन्तर्मुहूर्त काल में होने वाली होती

જઘન્યે પહોળાઇ અને જાડાઇની અપેક્ષાએ પોતાના શરીર પ્રમાણ તથા લંબાઇની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ સુધી પોતાના આત્મ પ્રદેશોને બહાર કાઢીને દંડા કાર રૂપે બહાર ફેલાવે છે અને ક્રોધના કારણરૂપ બનેલ મનુષ્ય આદિને બાળીને ભસ્મ કરી નાખે છે એ અવસ્થાના તે પ્રભૂત તૈજસ શરીર નામના કર્મપુદ્ગલોને પરિશટિત કરે છે (૫) આહારક સમુદ્ઘાત આહારક શરીર કર્મની મદદથી થાય છે જ્યારે જીવ આહારક સમુદ્ઘાત કરે છે ત્યારે તે આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર કાઢીને જાડાઇની અપેક્ષાએ શરીર પ્રમાણ તથા લંબાઇની અપેક્ષાએ સંખ્યાત યોજન સુધી દંડાકાર રૂપમાં પરિણમાવે છે અને પરિણમાવીને તે યથાસ્થૂલ આહારક શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોને પરિશટિત કરી દે છે (૬) કેવલિસમુદ્ઘાત સાતા, અસાતા વેદનીયકર્મ શુભ અશુભ નામકર્મ, અને ઊંચ નીચ ગોત્રકર્મને આશ્રયે થાય છે— પરમપદની પ્રાપ્તિ જ્યારે અંતર્મુહૂર્ત કાળમાં બનવાની હોય છે ત્યારે કેવલી ભગવાન

वेदनीयकर्मदलिकसमीकरणार्थं प्रथमसमये बाहल्यतः स्वशरीरप्रमाणमूर्ध्वमधश्च लोकान्तपर्यमात्मप्रदेशानां दण्डमारचयति । द्वितीयसमये पूर्वापरयोर्दिगयोर्विस्तृतात्मप्रदेशाना कपाटाकारत्वं कुरुते । तृतीयसमये दक्षिणोत्तरदिशयोःप्रसृतात्मप्रदेशानां मन्थानाकारत्वं कुरुते । चतुर्थे समयेऽन्तरालपूरणेन चतुर्दशरज्ज्वात्मक सकललोकपूरण कुरुते । एवं समुद्घातं कुर्वन् केवली चतुर्भिःसमयैःसकललोकव्यापी भवति । एवं कर्मणोंऽशान् समीकृत्य पञ्चमे समयेऽन्तरालपूरकान् आत्मप्रदेशान् सकोचयति षष्ठे समये मन्थानं, सप्तमे समये कपाटं च संकोचयति । अष्टमे समये दण्डमुपसहरन् स्वशरीरस्थो भवति । केवलि समुद्घातवर्जाः शेषाः षट्समुद्घाताः

है तब केवली भगवान् आयु और वेदनीय कर्म के दलिकों को समीकरण--समान करने के लिये प्रथम समय में बाहल्य की अपेक्षा स्वशरीरप्रमाण तथा उर्ध्व और अधः लोकान्त पर्यन्त आत्मप्रदेशों को दण्डरूप मे बाहर निकालते हैं । द्वितीय समय में पूर्व और पश्चिम दिशा में विस्तृत आत्मप्रदेशों को कपाटरूप में, तृतीय समय में दक्षिण और उत्तर दिशा में प्रसृत आत्मप्रदेशों को मन्थान दंडरूप में और चतुर्थ-समय में अन्तरालों को पूरणकरने से चौदह राजूप्रमाण सकललोक को भर देते है। इस प्रकार समुद्घात करते हुए केवली भगवान् चार समय मे समस्त लोकव्यापी बन जाते हैं। इस तरह कर्मों के अंशों को समान करके पचम समय में वे अन्तरालपूरक आत्मप्रदेशों को, छठवें समय में मन्थान-दंड को और सातवें समय में कपाट को संकुचित करते है। तथा आठवें समय में दण्डाकाररूप आत्मप्रदेशों को सहृत कर वे केवली स्वशरीरस्थ हो जाते है। केवलिसमुद्घात को छोडकर छह समुद्घातों का समय एक

આયુ અને વેદનીય કર્મના દલિકોને સમાન કરવાને માટે પ્રથમ સમયે બાહલ્ય ઊંચાઈની અપેક્ષાએ સ્વશરીર પ્રમાણ તથા ઉર્ધ્વ અને અધ લોકાન્ત સુધી આત્મપ્રદેશોને દંડરૂપે બહાર કાઢે છે દ્વિતીય સમયે પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામા વિસ્તૃત આત્મપ્રદેશોને કપાટરૂપે, ત્રીજા સમયે દક્ષિણ અને ઉત્તર દિશામાં પ્રસ્તુત આત્મપ્રદેશોને મન્થાન દંડરૂપે અને ચોથે સમયે અન્તરાલોને પૂરીને ચૌદ રાજૂપ્રમાણ સમસ્ત લોકને ભરી દે છે આ પ્રમાણે સમુદ્ઘાત કરતા કરતા કેવલી ભગવાન ચાર સમયમા સમસ્ત લોકવ્યાપી બની જાય છે આ રીતે કર્મોના અંશોને સરખા કરીને પાચમા સમયમા તેઓ અન્તરાલ પૂરક આત્મપ્રદેશોને, છઠ્ઠા સમયમા મન્થાન દંડને, અને સાતમા સમયમા કપાટને સકુચિત કરે છે તથા આઠમા સમયમા દંડાકાર રૂપ આત્મપ્રદેશોને સંહૃત (વિસ્તૃત) કરીને તે કેવલી સ્વશરીરસ્થ થઇ જાય છે કેવલી

भान्तर्मौहूर्तिकाः, केषाञ्चित्समुद्घातस्य अष्टसामयिक षण्मासावुष्काकस्ततो न्यूनायु ष्काश्च केवलिनो नियमत समुद्घात कुर्वन्ति । षण्मासाधिकायुषां केवलिनां समुद्घातस्य भजना । उक्त च—

छम्मासाऊसेसे, उप्पन्नं जस्स केवलं नाणं ।

से नियमा समुग्घाया सेसा समुग्घायभइयव्वा ।

छाया—षण्मासायुषि शेषे उत्पन्नं यस्य केवलं ज्ञानम् ।

ते नियमात्समुद्घाता शेषा समुद्घातभक्तव्याः ॥ इति । समुद्घाता=समुद्घातवन्त । समुद्घातभक्तव्या=समुद्घाते भक्तव्याः समुद्घातभक्तव्या, समुद्घातवन्तो भवन्ति नवा भवन्ति इत्यर्थः । समणो भगवान् महावीर सप्त 'रयणीओ' रत्नय, रत्नि=विस्तृतहस्तलिङ्गस्त, 'उड्ढमुच्चत्तेण' ऊर्ध्वोच्चत्वेन न तु तिर्यगुच्चत्वेन 'होत्था' अभूत्। इमे जम्बूद्वीपे द्वीपे 'सत्त' सप्तसङ्ख्याका 'वासहरपव्वया' वर्षधरपर्वता प्रज्ञप्ता, तद्यथा—'चुल्लहिमवते' क्षुद्रहिमवान्, महा

अन्तर्मुहूर्त है और केवलिसमुद्घात का आठ समय है। जो कदाचित् छहमास की लघुशेष आयुवाले होते हैं अथवा इससे भी कम जिनकी आयु होती है वे नियम से समुद्घात करते हैं। परन्तु जिन केवलियों की आयु छह मास से अधिक की है उनमें समुद्घात कि भजना मानी गई है। कहा भी है—

"जिन केवलियों को आयु छह मास की बाकी रह जाती है और तब जिन्हें केवलज्ञान उत्पन्न होता है वे नियम से समुद्घात करते हैं। परन्तु जिनकी आयु छह मास से अधिक है ऐसे केवली समुद्घात करते भी हैं और नहीं भी करते हैं ॥१॥"

श्रमण भगवान् महावीर सात रत्नि प्रमाण ऊँचे थे। इस जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में सात वर्षधर पर्वत हैं वे ये हैं—चुल्ल हिमवान्, महाहिमवान्,

---

સમુદ્ઘાત ક્રિયાના જે સમુદ્ઘાતોનો સમય જોઇ અન્તર્મુહૂર્ત છે, અને કેવલિ સમુદ્ઘાતનો આઠ સમય છે જે કેવલીનું આયુષ્ય છ માસનું બાકી હોય છે અથવા તેના કરતા પણ ઓછુ જેનું આયુષ્ય હોય છે તેઓ સમુદ્ઘાત કરે જ છે એવો નિયમ છે પણ જે કેવલીઓનું આયુષ્ય છ માસથી વધારે બાકી હોય, તેમનામાં સમુદ્ઘાતની ભજના (થાય કે ન થાય એવી હાલત) મનવામાં આવેલ છે કહ્યું પણ છે—

'જે કેવલીઓને છ માસનું આયુષ્ય બાકી રહેલ હોય ત્યારે કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેઓ નિયમથી જ સમુદ્ઘાત કરે છે પણ જેમનું છ માસથી વધારે આયુષ્ય બાકી હોય છે એવા કેવલીઓ સમુદ્ઘાત કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા ॥૧॥"

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સાત રત્નિ પ્રમાણ ઊંચા હતા. આ જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં સાત વર્ષધર પર્વતો છે—ચુલ્લ હિમવાન મહા હિમવાન, નિષધ,

हिमवान् 'निसढे' निषधः, नीलवान् 'रुप्पी' रुक्मी 'सिहरी' शिखरी मन्दरः। इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे 'सत्तवासा' सप्तवर्षाणि क्षेत्राणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—भरतम्, हैमवतम्, हरिवर्षम्, महाविदेहम्, रम्यकम्, ऐरण्यवतम्, ऐरवतम्। क्षीणमोहेन भगवता मोहनीयवर्जाः सप्तकर्मप्रकृतयः 'वेएई' वेद्यन्ते अनुभूयन्ते, 'वेएई' इत्येकवचनमार्षत्वात्। मघानक्षत्र सप्ततार प्रज्ञप्तम्। कृत्तिकादिकानि सप्तनक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि। (अभिजिदादिकानि सप्तनक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि इति केचित्) मघादिकानि सप्तनक्षत्राणि दक्षिणद्वाराणि प्रज्ञप्तानि। अनुराधादिकानि सप्तनक्षत्राणि अपरद्वारकाणि पश्चिमद्वारकाणीत्यर्थः प्रज्ञप्तानि। धनिष्ठादिकानि सप्तनक्षत्राणि उत्तरद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि ॥२२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं सत्तपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थीए णं पुढवाए नेरइयाणं जहण्णेणं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं सत्तपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मी-

निषध, नील, रुक्मी, शिखरी और मन्दर। इस जबूद्वीप नामके द्वीप में सात क्षेत्र हैं, वे इस प्रकार हैं—भरत, हैमवत, हरिवर्ष, महाविदेह, रम्यक, ऐरण्यवत् और ऐरवत्त। बारहवें गुणस्थानवर्ती वीतराग भगवान् मोहनीय कर्म को छोडकर शेष सात कर्म प्रकृतियों का अनुभव करते है। मघानक्षत्र सात ताराओं वाला कहा गया है। कृत्तिका आदि सात नक्षत्र पूर्व द्वार वाले कहे गये हैं (अभिजित् आदि सात पूर्वद्वार वाले है एसा कोई २ कहते है) मघा आदि सात नक्षत्र दक्षिण द्वारवाले अनुराधा आदि सात नक्षत्र अपर द्वार वाले,—पश्चिम द्वार वाले, और धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले कहे गये हैं ॥सू०२२॥

નીલ, રુકમી, શિખરી અને મન્દર આ જંબૂદ્વીપમા સાત ક્ષેત્ર છે—ભરત, હૈમવત, હરિવર્ષ, મહાવિદેહ, રમ્યક ઐરણ્યવત, અને ઐરવત. બારમા ગુણસ્થાનવર્તી વીતરાગ ભગવાન મોહનીયકર્મોને છોડીને બાકીની સાત કર્મ પ્રકૃતિયોનો અનુભવ કરે છે મઘા નક્ષત્ર સાત તારાઓ વાળું છે કૃતિકા આદિ સાત નક્ષત્ર પૂર્વદ્વાર વાળા કહેવાય છે (કોઇ કોઈ લોકોનુ એવુ માનવુ છે કે અભિજીત આદિ સાત નક્ષત્રો પૂર્વદ્વાર વાળા છે) મઘા આદિ સાત નક્ષત્ર દક્ષિણદ્વાર વાળાં, અનુરાધા આદિ સાત નક્ષત્ર પશ્ચિમદ્વાર વાળા અને ધનિષ્ઠા આદિ સાત નક્ષત્ર ઉત્તર દ્વારવાળા છે ॥સૂ ૨૨॥

साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं सत्त पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणकुमारे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं उक्कोसेणं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। माहिंदे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साइरेगाइं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं सत्त साहिया सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा सम सममप्पभ महापभ पभास भासुर विमल कंचणकूड सणंकुमारवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा सत्तण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसिं णं देवाणं सत्तहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे णं सत्तहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू० २३॥

टीका-'इमीसे णं' इत्यादि अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणं सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणामुत्कृष्टा सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता चतुर्थ्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां जघन्या सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां

'इमीसेणं' इत्यादि।

भावार्थ-इस रत्न प्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति सात पल्योपम की है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। चौथी पृथिवी में नारकियों की स्थिति जघन्य सात सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है।

"इमीसे णं" इत्यादि।

ટીકાર્થ-આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે ત્રીજી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે ચોથી પૃથ્વીમાં નારકીઓની સ્થિતિ જઘન્ય સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની

केषां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारे कल्पेऽस्त्येकेषां देवानामुत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। माहेन्द्रे कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेकाणि=साधिकानि सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां सप्त 'साहिया' साधिकानि किंचिदधिकानीत्यर्थः, सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता।

ये देवाः सम१ समप्रभ२ महाप्रभ३ प्रभास४ भास्वर५ विमल६ काञ्चनकूट७ सनत्कुमारावतंसक८ विमान=एषु अष्टसु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानाम् उत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः सप्तानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा=आभ्यन्तरिकौ श्वासनिश्वासौ गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति वा=निःश्वसन्ति वा बाह्यं श्वासं निःश्वासं च गृह्णन्ति। तेषां खलु देवानां सप्तभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा संजायते। सन्त्येके भवसिद्धिका

सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है। सनत्कुमार में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। माहेन्द्रकल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक सात-सागरोपम की है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की सातसागर से कुछ अधिक स्थिति है। जो देव सम१, समप्रभ२, महाप्रभ३, प्रभास४, भास्वर५, विमल६, काञ्चनकूट७ और सनत्कुमारावतंसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते है। उन देवों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की होती है। वे देव सात अर्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को सात हजार वर्ष के बाद आहार की अभिलाषा होती है। इन देवों में कितनेक देव ऐसे होते है जो

સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સૌધર્મ, ઇશાન કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સનત્કુમારકલ્પમા કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ સાત સાગરોપમની કહેલ છે માહેન્દ્ર કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત-સાગરોપમથી થોડી વધારે છે બ્રહ્મલોક કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થતિ સાતસગરોપમ કરતા થોડી વધારે છે જે દેવો (૧) સમ, (૨) સમપ્રભ, (૩) મહાપ્રભ, (૪) પ્રભાસ, (૫) ભાસ્વર, (૬) વિમલ, (૭) કાચનકૂટ અને (૮) સનત્કુમારાવત સક, એ આઠ વિમાનોમા દેવોની પર્યાએ ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની હોય છે તે દેવો સાત અર્ધ મહિને આહાર તથા અદર શ્વાસોચ્છવાસ

છે તે દેવોને સાત હજાર વર્ષ આહારની અભિલાષા થાય છે તે દેવોમાથી

साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं सत्त पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं उक्कोसेणं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। माहिंदे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साइरेगाइं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं सत्त साहिया सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा सम समप्पभ महापभ पभास भासुर विमल कंचणकूड सणंकुमारवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा सत्तण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसिं णं देवाणं सत्तहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे णं सत्तहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू० २३॥

टीका-'इमीसे णं' इत्यादि अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां सोत्कृष्टा सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता चतुर्थ्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां सप्तपल्या सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्य

'इमीसेणं' इत्यादि।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में किन्हीं नारकियों की स्थिति सात पल्योपम की है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। चौथी पृथिवी में नारकियों की स्थिति जघन्य सात सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में किन्हीं देवों की स्थिति सात पल्योपम की है।

"इमीसे णं" इत्यादि।

ટીકાર્થ—આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે ત્રીજી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે ચોથી પૃથ્વીમાં નારકીઓની સ્થિતિ જઘન્ય સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની

केषां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारे कल्पेऽस्त्येकेषां देवानामुत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। माहेन्द्रे कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेकाणि=साधिकानि सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवाना सप्त 'साहिया' साधिकानि किंचिदधिकानीत्यर्थः, सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता।

ये देवाः सम१ समप्रभ२ महाप्रभ३ प्रभास४ भास्वर५ विमल६ काञ्चनकूट७ सनत्कुमारावतंसक८ विमानं=एषु अष्टसु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानाम् उत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः सप्तानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा=आभ्यन्तरिकौ श्वासनिश्वासौ गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति वा=निःश्वसन्ति वा बाह्यं श्वासं निःश्वासं च गृह्णन्ति। तेषां खलु देवानां सप्तभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा संजायते। सन्त्येके भवसिद्धिका

सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है। सनत्कुमार में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। माहेन्द्रकल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक सात-सागरोपम की है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की सातसागर से कुछ अधिक स्थिति है। जो देव सम१, समप्रभ२, महाप्रभ३, प्रभास४, भास्वर५, विमल६, काञ्चनकूट७ और सनत्कुमारावतंसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते है। उन देवों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की होती है। वे देव सात अर्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते है। उन देवों को सात हजार वर्ष के बाद आहार की अभिलाषा होती है। इन देवों में कितनेक देव ऐसे होते है जो

સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સૌધર્મ, ઇશાન કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સનત્કુમારકલ્પમા કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ સાત સાગરોપમની કહેલ છે માહેન્દ્ર કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત-સાગરોપમથી થોડી વધારે છે બ્રહ્મલોક કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ સાતસાગરોપમ કરતા થોડી વધારે છે જે દેવો (૧) સમ, (૨) સમપ્રભ, (૩) મહાપ્રભ, (૪) પ્રભાસ, (૫) ભાસ્વર, (૬) વિમલ, (૭) કાચનકૂટ અને (૮) સનત્કુમારાવત સક, એ આઠ વિમાનોમાં દેવોની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની હોય છે તે દેવો સાત અર્ધ મહિને આહાર તથા અંદર શ્વાસોચ્છ્વાસ છે તે દેવોને સાત હજાર વર્ષ આહારની અભિલાષા થાય છે તે દેવોમાથી

जीवा, य अद्ध सप्तमिमंवभवे। सत्स्यन्ति मोत्स्यन्ते यावत् मोक्ष्यन्ति, परि निर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति । सू २३॥

भवसिद्धिक होते हैं। वे सात भव करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, यावत् समस्त दुःखों का अन्त कर देंगे।

भावार्थ—यह पहिले कहा जा चुका है कि नरकों में वर्तमान नारकियों की उत्कृष्टस्थिति क्रमशः एक१, तीन३, सात७, दश१०, सत्रह १७, बाईस२२ और तेतीस सागरोपम प्रमाण है। तथा जघन्य स्थिति क्रमशः दसहजार वर्ष, एकसागर, तीनसागर, सातसागर, दशसागर, सत्रहसागर और बाईस सागर की है। इस तरह इस सूत्र द्वारा जो रत्नप्रभा नामकी प्रथमपृथिवी के कितनेक जीवों की सात पल्योपम की स्थिति कही हुई है, वह मध्यम स्थिति जाननी चाहिये। इसी तरह जहां "कितनेक देवों की या कितनेक नारकियों की स्थिति अमुक २ प्रमाण में है" ऐसा कथन आवे वहां यह कथन प्रायः मध्यम स्थिति की अपेक्षा ही कहा गया जानना चाहिये। इसी तरह सौधर्म आदि कल्पों में भी जानना चाहिये। यहां जघन्य स्थिति इस प्रकार से है-पहिले देवलोक में एक पल्योपम की, दूसरे में पल्योपम से कुछ अधिक की, तीसरे में दो सागरो पम की, चौथे में दो सागरोपम से कुछ अधिक की, पांचवें में सातसागरो

કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ સાત ભવ કરીને સિદ્ધ અવસ્થા પામશે ત્યાંથી છૂટને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે સૂત્રીત સભાષ્ય ભાવાર્થ સૂત્રો પ્રમાણે સમજી લેવુ

ભાવાર્થ—એ વાત પહેલાં કહેવાઈ ગઈ છે કે નરકોમાં વર્તમાન નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે એક એક, સાત, દશ, સત્તર, બાવીસ, અને તેત્રીસ સાગરોપમ પ્રમાણે છે તથા જઘન્ય સ્થિતિ અનુક્રમે દશ હજાર વર્ષ, એક સાગર ત્રણ સાગર, સાત સાગર સત્તર સાગર અને બાવીસ સાગરની છે આ રીતે આ સૂત્ર દ્વારા, રત્નપ્રભા નામની પ્રથમ પૃથ્વીમાં કેટલાક જીવોની સ્થિતિ જે સાત પલ્યોપમની કહેવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી એ જ પ્રમાણે જ્યાં " કેટલાક દેવોની કે કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ અમુક અમુક પ્રમાણમાં છે" એવુ કથન આવે ત્યાં તે કથન સામાન્ય રીતે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ સમજવુ એ જ પ્રમાણે સૌધર્મ આદિ દેવલોકમા પણ જાણવુ ત્યાં જઘન્ય સ્થિતિ આ પ્રમાણે છે-પહેલા દેવલોકમા એક પલ્યોપમની બીજામા પલ્યોપમથી કાંઈ વધારે, ત્રીજામા બે સાગરોપમની ચોથામા બે સાગરોપમથી કાંઈ વધારે,

पम की छठवें में दस सागरोपम की, सातवें में चौदह सागरोपम की आठवें में सत्रह १७ सागरोपम की, नववें में अठारह १८ सागरोपम की, ग्य रह और बारहवें में बीस सागरोपम की, प्रथम ग्रैवेयक में बाईस २२ सागरोपम की है। इसी तरह नीचे २ के ग्रैवेयक की उत्कृष्टस्थिति को ऊपर ऊपर के ग्रैवेयक की जघन्यस्थिति समझना चाहिये। इस क्रम से ३ ववें ग्रैवेयक की जघन्यस्थिति तीस ३० सागरोपर की होती है। चार अनुत्तरविमान की जघन्यस्थिति इकतीप ३१ सागरोपम की है। सर्वार्थसिद्धि में उत्कृष्ट और जघन्य स्थिति में अन्तर नहीं है। इस कथन से यह बात कही गई है कि पूर्व २ के देवलोकों की उत्कृष्ट स्थिति आगे २ के देवलोकों में जघन्य होती जाती है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की कही हुई है सो यही स्थिति चौथे नरक में जघन्य हो गई है। सौधर्म ईशान में सात पल्योपम की स्थिति मध्यमस्थिति की अपेक्षा कथित हुई है क्यों कि यहां पर उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और इशान की एक सागरोपम से कुछ अधिक कही हुई है और जघन्यस्थिति एक पल्योपम की और एक पल्योपम से कुछ अधिक की कही हुई है। ब्रह्मलोक नामक पांचवें कल्प में कितनेक देवों की जो सात सागरोपम से कुछ अधिक स्थिति प्रकट की गई है यह जघन्य-

---

પાચમામા સાત સાગરોપમની, છઠ્ઠામા દસ સાગરોપમની, સાતમા ચૌદ સાગરોપમની, આઠમામા સત્તર સાગરોપમની, નવમાં અને દસમામાં અઢાર, અઢાર સાગરોપમની, અગિયાર તથા બારમામા વીસ સાગરોપમની, પ્રથમ ગ્રવેયકમા બાવીસ સાગરોપમની છે એ રીતે નીચેના પ્રત્યેક ગ્રૈવેયકની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિને ઉપરના પ્રત્યેક ગ્રૈવેયકની જઘન્ય સ્થિતિ સમજવી. આ ક્રમ પ્રમાણે નવમા ગ્રવેયકની જઘન્ય સ્થિતિ ત્રીસ સાગરોપમની થાય છે ચાર અનુત્તર વિમાનની જઘન્ય સ્થિતિ એકત્રીસ સાગરોપમની છે સર્વાર્થ સિદ્ધિમા ઉત્કૃષ્ટ અને જઘન્ય સ્થિતિમા તફાવત નથી આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે આગળના દેવલોકની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પછીના દેવલોકની જઘન્ય સ્થિતિ થતી જાય છે. ત્રીજી નરકમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની કહેલ છે, તો તે સ્થિતિ ચોથી નરકમા જઘન્ય થાય છે. સૌધર્મ ઈશાન દેવલોકમા મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સાત પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવેલ કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને એક સાગરોપમથી થોડી વધારે અને જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની અને એક પલ્યોપમથી થોડા વધારે કાળની કહેલ છે બ્રહ્મલોક નામના પાચમા દેવલોકમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ જે સાત સાગરોપમથી થોડી વધારે દર્શાવી છે તે જઘન્ય સ્થિતિની અપેક્ષાએ

अथाष्टम समवायारभ्यते

मूलम्—अट्ठ मयट्ठाणा पण्णत्ता, त जहा—जाइमए, कुलमए, बलमए, रूवमए, तवमए, सुयमए, लाभमए, इस्सरियमए। अट्ठ पवयणमायाओ पण्णत्ता, त जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवणखेलजल्ल सिंघाणपरिट्ठावणियासमिई, मणगुत्ती, वयगुत्ती, कायगुत्ती। वाणमतराण देवाण चेइयरुक्खा अट्ठजोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण पण्णत्ते। कूडसामलीण गरुलावासे अट्ठ जोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण पण्णत्ते। जबूदीवस्स ण जगई अट्ठजोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण पण्णत्ता। अट्ठसामइए केवलिसमुग्घाए पण्णत्ते, त जहा—पढमे समए दड करेइ, बीए समए कवाड करेइ, तइए समए मथ करेइ, चउत्थे समए मथतराइ पूरेइ, पचमे समए मथतराइ पडिसाहरइ, छट्ठे समए मथ पडिसाहरइ, सत्तमे समए कवाड पडिसाहरइ, अट्ठमे समए दड पडिसाहरइ, तओ पच्छा सरीरत्थे भवइ। पासस्स ण अरहओ पुरिसादाणियस्स अट्ठ गणा अट्ठ गणहरा होत्था, त जहा—सुभे य

स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये, क्यों कि यहा पर उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपमकी और जघन्यस्थिति कुछ अधिक सात सागरोपम की होती है। जो देव सम सनत्कुमार आदि ८ विमानों में उत्पन्न होते हैं वे साढे तीन ३॥ मास के बाद श्वासोच्छ्वास लेते हैं और सात हजार वर्ष के बाद आहार। इनमें कितनेक जीव भवसिद्धिक होते हैं जो सात भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जाते हैं ॥सू० २३॥

સમકક્ષવાની છે, અહીંયા જે ત્યાં વસ્તુની સ્થિતિ દસ સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમથી થોડી વધારે હોય છે એ રીતે સમ સનત્કુમાર આદિ આઠ વિમાનોમાં ઉત્પન્ન થાય છે તેઓ ૩૫ (સાડા ત્રણ) મહિને શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે અને સાત હજાર વર્ષે આહાર ગ્રહણ કરે છે તેમાના કેટલાક જીવો ભવસિદ્ધિક હોય છે જેઓ સાત ભવ કર્યા પછી સિદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરે છે ॥સૂ. ૨૩॥

सुभघोसे य वसिट्ठे बंभयारि य। सोमे सिरिधरे चेव वीरभद्दे जसे इय ॥१॥ अट्ठ नक्खत्ता चंदेणं सद्धिं पमद्दं जोगं जोएंति, तं जहा--कत्तिआ१ रोहिणी२ पुणव्वसू३ महा४ चित्ता५ विसाहा६ अणुराहा७ जेट्ठा८ ॥ सू० २४ ॥

टीका—'अट्ठ मयट्ठाणा' इत्यादि। अष्ट 'मयट्ठाणा' मदस्थानानि=मदस्य अभिमानस्य स्थानानि मदस्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिमदः, कुलमदः, रूपमदः, तपोमदः, श्रुतमदः, लाभमदः, ऐश्वर्यमदः। अष्टसंख्यकाः 'पवयणमायाओ' प्रवचनमातरः=प्रवचनस्य द्वादशाङ्गस्य तदाधारस्य संघस्य वा जननहेतुत्वात् मातर इव जनकस्य इव प्रवचनमातरः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति, उच्चारप्रस्रवणखेलजल्लशिङ्घाणपरिष्ठापनासमितिः, मनोगुप्तिः, वचोगुप्तिः, कायगुप्तिश्चेति। प्रवचनरूपं द्वादशाङ्गं हि साक्षात्परंपरया वा एता आश्रित्यैव प्रवर्तते, अतएतासां तन्मातृत्वोपमा। यथा शिशुः मातरमपुञ्चन् न जातुकदाचिदात्मलाभं लभते, एवं संघोऽपि ऋते एताभ्यो न कदाचित् सघत्वं लभते, अतः संघमातृत्वमप्यासाम्। 'वाणमंतराणं' वानमन्तराणां व्यन्तराणामित्यर्थः, देवानां 'चेइयरुक्खा' चैत्यवृक्षाः अष्ट योजनानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः। देवानां तत्त-

---

अब सूत्रकार आठवें समवाय को कहते हैं—'अट्ठ मयट्ठाणा' इत्यादि।

टीकार्थ-आठ मदस्थान होते है, वे इस प्रकार हैं—जातिमद, कुलमद, बलमद, रूपमद, तपमद, श्रुतमद, लाभमद, और ऐश्वर्यमद। आठ प्रवचन माताएँ कही गई हैं वे इस प्रकार हैं-ईर्यासमिति१, भाषासमिति२, एषणासमिति३, आदानभांडमात्रनिक्षेपणासमिति४, उच्चारप्रस्रवण-खेलजल्ल शिङ्घाणपरिष्ठापनासमिति५, मनोगुप्ति६, वचनगुप्ति७ और कायगुप्ति८। व्यन्तर देवों के चैत्यवृक्ष आठ योजन के ऊँचे कहे गये है। देवों के उन उन नगरों

હવે સૂત્રકાર આઠમું સમવાયાગ કહે છે—'अट्ठमयट्ठाणा' इत्यादि

ટીકાર્થ-આઠ મદસ્થાન હોય છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળમદ (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) તપમદ, (૬) શ્રુતમદ (૭) લાભમદ, અને (૮) ઐશ્વર્યમદ આઠ પ્રવચનમાતાઓ આ પ્રમાણે છે—

(૧) ઇર્યાસમિતિ, (૨) ભાષાસમિતિ, (૩) એષણા સમિતિ, (૪) આદાન ભાંડમાત્રનિક્ષેપણા સમિતિ, (૫) ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ શિંઘાણ પરિઠાપના સમિતિ (૬) મનોગુપ્તિ [૭] વચનગુપ્તિ અને (૮) કાયગુપ્તિ વ્યન્તર દેવોનાં ચૈત્યવૃક્ષ આઠ યોજન ઉચા કહેલ છે દેવોનાં તે તે નગરોમા સુધર્મા આદિ સભાઓ

न्नगरेषु सुधर्मादिसभानामग्रतः मणिपीठिकोपरिस्थिता सपरिवारा सर्वरत्नमया राजध्वजादिसुशोभिता नो मधुररत्नमया इष्टा भवन्ति तेषामेवैत्यवृक्षसम्बन्धेन व्यपदिश्यन्ते। एतेषामेवान्तरीयस्य यथोक्तस्य वृक्षस्य सगाथाद्वयेन प्रोच्यते—'कलवो पिसायाण वडो जक्खाणचेइय। तुम्बरु भूयाण मए रक्खसाण तु कडभो ॥ १ ॥ असोगो किन्नराण च किंपुरिसाण य चंपओ। नागरुक्खो सुवण्णाण वप्पाण य तुंबरु ॥२॥ इति, कदम्बः (कदम्ब वृक्षः) पिशाचानां वटो यक्षाणां चैत्यम्। तुम्बरु भूतानां भवति राक्षसाणां तु काण्डकः ॥१॥ अशोकः किन्नराणां च किंपुरुषाणां च चम्पकः। नागवृक्षः सुवर्णानां वप्राणां तुम्बरुः ॥२॥ वटश्चैत्य=वृक्ष इत्यर्थः। सुवर्णानां=महारगदेवानामित्यर्थः। 'जंबूए सुदंसणा' जम्बूः खलु सुदर्शना उत्तरकुरुक्षेत्रे स्थितः पृथिवीपरिणाम सुदर्शनाभिधेया सम्बूवृक्ष इत्यर्थः। अष्टयोजनानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन भवति। 'कूडसामलीए गरुलावासे' कूटशाल्मली खलु गरुडावासः=वेणुदेवस्यावासः वेणुदेवस्यावास इत्यर्थः, अथवा

में सुधर्मा आदि सभाओं के आगे मणिपीठिका के ऊपर स्थित तथा छत्र, चामर, ध्वज आदि से सुशोभित जो मधुररत्नमय वृक्ष होते हैं उन्हीं का नाम चैत्यवृक्ष है। जिस देव जाति का जो चैत्यवृक्ष कहा है वह इन दो गाथाओं द्वारा कहा जाता है—'कलवो' 'असोगो' इत्यादि। 'पिशाचों का चैत्यवृक्ष होता है उसका नाम कदम्बवृक्ष है १। यक्षों का चैत्यवृक्ष वटवृक्ष है २। भूतों का चैत्यवृक्ष तुलसी है ३। राक्षसों का चैत्य वृक्ष काण्डक है ४ ॥१॥ किन्नरों का चैत्यवृक्ष अशोकवृक्ष है ५। किंपुरुषों का चैत्यवृक्ष चम्पकवृक्ष है ६। सुवर्णों का चैत्यवृक्ष नागवृक्ष है ७। और गन्धर्वों का चैत्यवृक्ष तुम्बरु है ८ ॥२॥ जंबूद्वीप की जगती आठ योजन की ऊँची कही गई है। वेणुदेव जातीय गरुड जातीय वेणुदेव के

આનાથી અધિપીઠિકાની ઉપર રહેલ તથા છત્ર ચામર અને ધ્વજા આદિથી સુશોભિત જે સર્વરત્નમય વૃક્ષો હોય છે તેમને ચૈત્યવૃક્ષ કહે છે કયી દેવજાતિનું કયું ચૈત્ય વૃક્ષ હોય છે તે બાબતે આચાર્યો દ્વારા બતાવાયું છે—'कलवो' असोगो' इत्यादि'

' પિશાચોના ચૈત્યવૃક્ષનું નામ કદમ્બવૃક્ષ છે ૧) યક્ષોના ચૈત્યવૃક્ષનું નામ વટવૃક્ષ છે (૨) ભૂતોનું ચૈત્યવૃક્ષ તુલસી છે (૩) રાક્ષસોનું ચૈત્ય વૃક્ષ કાંડક છે(૪) ॥૧॥ કિન્નરોનું ચૈત્યવૃક્ષ અશોકવૃક્ષ છે (૫) કિંપુરુષોનું ચૈત્યવૃક્ષ ચમ્પકવૃક્ષ છે ૬, સુવર્ણોનું ચૈત્યવૃક્ષ નાગવૃક્ષ છે (૭) અને ગંધર્વોનું ચૈત્યવૃક્ષ તુમ્બરુ છે (૮)

જંબૂદ્વીપની જગતી–(કોટ) આઠ યોજન ઊંચી બતાવી છે દેવકુરુક્ષેત્રમાં આવેલ ગરુડ જાતિના વેણુદેવના આવાસ આઠ યોજન ઊંચા રહેલ છે આઠ યોજનનો

तानि उद्ध्वंमुच्चत्वेन प्रज्ञप्तः । जम्बूद्वीपस्य खलु 'जगई' जगती प्राकार-कल्पापालीत्यर्थः, अष्ट योजनानि ऊद्ध्वंमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता । अष्ट सामयिकः केवलि समुद्घातः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—प्रथमे समये दण्डं करोति, द्वितीयसमये कपाटं करोति, तृतीये समये मन्थं करोति, चतुर्थे समये मन्थान्तराणि पूरयति, पञ्चमे समये मन्थान्तराणि प्रतिसहरति, षष्ठे समये मन्थं प्रतिसहरति सप्तमे समये कपाटं प्रति-सहरति, अष्टमे समये दण्ड प्रतिसंहरति । ततः पश्चात् शरीरस्थो भवति । पार्श्वस्य खलु अर्हतः 'पुरिसादाणिअस्स' पुरुषादानीयस्य=पुरुषाणां मध्ये आदानीयः =आदेयः श्रद्धेय इत्यर्थः, तस्य अष्टौ गणा गणधराश्चाभूवन्, तद्यथा--शुभश्च शुभघोषश्च वशिष्ठो ब्रह्मचारिकः । सोमः श्रीधरश्चैव वीरभद्रो यशस्वीति । ननु क्व-चित्पार्श्वस्याईतो दशगणधराः निर्दिष्टाः अत्राष्टौ, इति विरोधः इतिचेत्, शृणु,

आवास आठ योजन के ऊँचे कहे गये हैं। आठ समय का केवलि समु-द्घात कहा है, वह इस प्रकार से है—प्रथम समय में वे दण्ड करते हैं१, द्वितीय समय में कपाट करते हैं२, तीसरे समय में मंथान करते हैं३, चौथे समय में मन्थान के छिद्रों को पूरते हैं४, पंचमसमय में मंथान के छिद्रों को संकुचित करते हैं५, छठवें समय में मथान को प्रतिसंहरित करते हैं६, सातवे समय में कपाट को, और आठवे समय में दंड को संकोचते हैं ८। इसके बाद वे फिर स्वशरीरस्थ हो जाते हैं। समस्त पुरुषों में श्रद्धेय ऐसे अर्हंत पार्श्वप्रभु के आठ गण और गणधर हुए हैं। वे इस प्रकार है-शुभ१, शुभघोष२, वशिष्ठ३, ब्रह्मचारिक४, सोम५, श्रीधर६, वीरभद्र७, और यशस्वी८।

शंका—पार्श्वनाथ प्रभु के कहीं २ पर दस गणधर कहे गये हैं यहां आठ ही गणधर क्यों कहे गये हैं ?

કેવલિ સમુદ્ઘાત છે, તે આ પ્રમાણે છે —(૧) પહેલા સમયમા તેઓ દંડ કરે છે (૨)બીજા સમયમા કપાટ કરે છે (૩) ત્રીજા સમયમા મન્થાન કરે છે (૪) ચોથા સમયમા મન્થાનના છિદ્રો પૂરે છે. (૫) પાચમે સમયે મન્થાનના છિદ્રોને સંકુચિત કરે છે, (૬) છઠ્ઠા સમયે મથાનને પ્રતિસહરિત (એકત્ર) કરે છે (૭) સાતમા સમયમા કપાટને (૮) અને આઠમા સમયમાં દંડને સકોચે છે ત્યાર બાદ તેઓ ફરીથી સ્વશરીરસ્થ થઇ જાય છે સમસ્ત પુરૂષોમા શ્રેષ્ઠ એવા અર્હંત પાર્શ્વપ્રભુના આઠ ગણ અને આઠ ગણધર થયા છે. તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) શુભ, (૨) શુભઘોષ, (૩) (૩) વશિષ્ઠ, (૪) બ્રહ્મચારિક, (૫) સોમ, (૬) શ્રીધર, (૭) વીરભદ્ર અને (૮) યશસ્વી

શકા—કોઇ કોઇ સ્થાને પાર્શ્વનાથ પ્રભુના દસ ગણધર બતાવ્યા છે, તો અહી આઠ ગણધર શા કારણે કહેલ છે ?

पार्श्वस्यार्हतो द्वौ गणधरौ अल्पायुष्कौ, तयारत्रानपाऽष्टत्वाऽपपत्ति । अष्ट नक्षत्राणि चन्द्रेण सह प्रमर्दकं योगं योजयन्ति=कुर्वन्ति । एतैरष्टभिर्नक्षत्रैः सह यदा चन्द्रो भवति, तदा प्रमर्दयोगो जायते । तद्यथा—कृत्तिका १ रोहिणी २ पुनर्वसु ३ मघा ४ चित्रा ५ विशाखा ६ अनुराधा ७ ज्येष्ठाश्चेति ॥२४॥

समाधान—पार्श्वनाथ प्रभु के दो गणधर अल्पायुष्क थे, इसलिये उनकी यहां गणना नहीं की है। इस हिसाब से गणधर उनके आठ कहे गये हैं।

आठ नक्षत्र चंद्र के साथ प्रमर्दरूप योग को करते हैं, अर्थात् जब चन्द्रमा इन आठ नक्षत्रों के साथ होता है तब प्रमर्द नामका योग होता है। वे आठ नक्षत्र इस प्रकार हैं—कृत्तिका१, रोहिणी२, पुनर्वसु३, मघा४, चित्रा५, विशाखा६, अनुराधा७ और ज्येष्ठा ८।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने आठ समवाय प्रकट किये हैं। मतिज्ञान, प्रवचनमाता आदि ये सब अष्ट सख्योपेत समवायांग हैं। इन ईर्यासमिति आदि पांच समितियों का, तथा मनोगुप्ति आदि तीन गुप्तियों जो प्रवचन की माता कही गई है उसका तात्पर्य इस प्रकार है—जिस प्रकार बिना माता के शिशु का पालन-पोषण नहीं हो सकता है। उसी प्रकार पांच समिति और तीन गुप्ति के बिना द्वादशांग की प्रवृत्ति नहीं हो सकती है। इनके साक्षात् अथवा परम्परारूप सहारे से ही द्वादशांगरूप प्रव

સમાધાન—પાર્શ્વનાથ પ્રભુના બે ગણધરો કુમ અલ્પાયુષ્ક હતા તેમ તેમની અહીં ગણના નથી આ પ્રમાણે તેમના આઠ ગણધર કહ્યા છે

આઠ નક્ષત્રો ચન્દ્રની સાથે પ્રમર્દયોગ કરે છે, જ્યારે ચન્દ્રમા એ આઠ નક્ષત્રોની સાથે હોય છે ત્યારે પ્રમર્દ નામનો યોગ થાય છે તે આઠ નક્ષત્રોના નામ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કૃત્તિકા (૨) રોહિણી (૩) પુનર્વસુ, (૪) મઘા, (૫) ચિત્રા, વિશાખા, (૭) અનુરાધા અને (૮) જ્યેષ્ઠા.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારે આઠ પ્રકારના સમવાય પ્રગટ કર્યા છે મતિજ્ઞાન, પ્રવચન માતા વગેરે બધા આઠ સંખ્યાવાળા સમવાયાંગ છે જેમ ઈર્યાસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિઓને તથા મનોગુપ્તિ આદિ ત્રણ ગુપ્તિઓને પ્રવચનની માતા કહેવામાં આવેલ છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જેમ માતા વિના બાળકનું પાલન-પોષણ થતું નથી તેમ પ્રવચન રૂપ માતા વગર તેમના વિના પ્રવચન થઈ શકતું નથી. તેમના સાક્ષાત્ અથવા પરંપરારૂપ સહારાથી

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाण अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं अट्ठ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं अट्ठसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा अच्चि१ अच्चिमालि२ वइरोयणं३ पभंकरं४ चंदाभं५ सूराभं६ सुपइट्ठाभं७ अग्गिच्चाभं८ रिट्ठाभं९ अरुणाभं१० अरुणुत्तरवडिंसगं११ विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं अट्ठसागरो-

---

चनप्रवर्तित होता । इन्हें संघ की माता भी कही गई है और वह इसी अभिप्राय से कि विना इनके संघ कभी भी संघत्व को प्राप्त नहीं कर सकता है। ऊँचाई की अपेक्षा से चैत्यवृक्षों की उर्ध्वता आठ योजन की कही गई है। ये चैत्यवृक्ष सर्वरत्नों के बने हुए होते हैं। छत्र, चामर और ध्वजा आदि से अलङ्कृत होते है। देवों के उनर नगरों में ये सुधर्मा आदि सभाओं के आगे मणिपीठिका के उपर स्थित रहते हैं। जंबूद्वीप के भीतर जो जंबू नामका वृक्ष है उसका दूसरा नाम सुदर्शना है। यह वृक्ष उत्तरकुरु क्षेत्र में स्थित है। पृथिवीकाय है। वनस्पतिकाय नहीं। इसकी उँचाई आठ योजन की है। जगती, प्राकार-कोट के जैसी होती है। बाकी के पदों का भावार्थ स्पष्ट है ॥सू० २४॥

દ્વાદશાંગરૂપ પ્રવચન પ્રવર્તિત થાય છે તેમને સંઘની માતા પણ કહેલ છે, કારણ કે તેમના વિના સંઘ કદી પણ સંઘત્વ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી ચૈત્યવૃક્ષોની ઉંચાઈ આઠ યોજનની બતાવી છે તે ચૈત્યવૃક્ષો સર્વરત્નોના બનેલ હોય છે, અને છત્ર ચામર અને ધ્વજા વગેરેથી શણગારેલ હોય છે દેવોના નગરોમાં તે ચૈત્યવૃક્ષો સુધર્મા આદિ સભાઓ આગળ મણિપીઠિકાની ઉપર ઉભા રહે છે જંબૂદ્વીપની અંદર જે જંબૂ નામનું વૃક્ષ છે તેનું બીજું નામ સુદર્શના છે, તે વૃક્ષ ઉત્તરકુરુ ક્ષેત્રમાં આવેલું છે તે પૃથ્વીકાય છે વનસ્પતિકાય નથી તે આઠ યોજન ઉંચું છે. જગતી પ્રકાર –કોટના જેવી હોય છે બાકીના પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે ॥સૂ. ૨૪॥

चमाइ ठिई पण्णत्ता । ते ण देवा अट्ठण्ह अद्धमासाण आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसि ण देवाण अट्ठहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ, सतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे अट्ठहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति बुज्झिस्सति जाव अं करिस्सति ॥ २५ ॥

टीका— इमीसे ण' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्ति कयां नैरयिकाणामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । चतुर्थ्यां पृथिव्यामस्ति कयां नैरयिकाणामष्टसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानाम स्त्येकेषामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवा नामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवा नामष्टसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । ये देवा अर्चिषम्, अर्चिर्मालिनम्, वैरोचनम्, प्रभंकरम्, चन्द्राभम्, सूराभम्, सुप्रतिष्ठाभम्, आग्नेयाभम्, अष्टाभम्, अरुणाभ मम्, अरुणोत्तरावतंसक विमानम्=अर्चिरादिषु विमानमित्यर्थः, देवत्वे

टीकार्थ—'इमीसे ण' इत्यादि ।

इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति आठपल्यो पम की कही गई है। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति आठ सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है। सौधर्म और ईशानकल्प में कितनेक देवों की आठपल्योपम की स्थिति कही गई है। ब्रह्मलोककल्प में कितनेक देवों की स्थिति आठ सागरोपम की कही गई है। जो देव अर्चिष[१], अर्चिर्मालि[२], वैरोचन[३], प्रभंकर[४], चन्द्राभ[५] सूर्याभ[६], सुप्रतिष्ठाभ[७], आग्नेयाभ[८], अष्टाभ[९], अरुणाभ[१०], और अरुणोत्तरावतंसक[११] इन ग्यारह[११]

ટીકાર્થ—'इमीसे णं' इत्यादि !

આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહેલ છે ચોથી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની કહેલ છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પમાં કેટલાક દેવોની આઠ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેલ છે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની કહેલ છે જે દેવો (૧) અર્ચિષ, (૨) અર્ચિર્માલિ (૩) વૈરોચન (૪) પ્રભંકર (૫) ચન્દ્રાભ (૬)સૂર્યાભ (૭) સુપ્રતિષ્ઠાભ, (૮) અગ્નેયાભ, (૯)અષ્ટાભ, (૧૦) અરુણાભ (૧૧) અરુણોત્તરાવતંસક, એ અર્ચિ

नोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण अष्टसागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः अष्टानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां खलु देवानामष्टभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवाः येऽष्टभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते, यावत्ता मोक्ष्यन्ति परिनिर्वास्यन्ति, सर्वं दुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥२५॥सू॥

विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते है, वे उत्कृष्टरूप से आठ सागरोपम काल की स्थिति वाले कहे गये हैं। वे देव चार मास के बाद बाह्य और आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को आठ हजार वर्ष के बाद आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो आठ भवों को ग्रहण करने के बाद सिद्धगति को प्राप्त करेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, मुक्त हो जावेंगे, परिनिर्वृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अन्त कर देंगे।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने जो रत्नप्रभा पृथिवी के नारकियों की स्थिति आठ पल्योपम की कही है, वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा से जानना चाहिये, क्यों कि यहां पर उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की और जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति है। इसी तरह चौथी पृथिवी में जो यह आठ सागरोपम की स्थिति प्रकट की गई है वह भी मध्यमस्थिति को लक्ष्य में रख कर प्रकट की है, क्यों कि यहां पर उत्कृष्टस्थिति-दस सागरोपम की है और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है। इसी प्रकार असुरकुमार देवों की भी स्थिति जो आठ पल्योपम की कही गई

ચાર વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તેમને ઉત્કૃષ્ટ રીતે આઠ સાગરોપમ કાળની સ્થિતિવાળા કહેલ જે તે દેવો ચાર મહિને બાહ્ય અને આભ્યન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે તેમને આઠ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષા થાય છે તેઓમા કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે આઠ ભવ કર્યા બાદ સિદ્ધગતિ પ્રાપ્ત કરશે, બુદ્ધ થશે મુક્ત થશે, પરિનિર્વૃત થશે અને સમસ્ત દુ ખોનો અત કરી નાખશે

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર રત્નપ્રભા પૃથ્વીના નારકીઓની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી, કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની અને જઘન્યસ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે. એ જ પ્રમાણે ચોથી પૃથ્વીમા આઠ સાગરોપમની જે સ્થિતિ બતાવી છે તે પણ મધ્યમસ્થિતિને ધ્યાનમા લઇને પ્રગટ કરેલ છે, કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે. એ જ પ્રમાણે અસુરકુમાર દેવોની પણ સ્થિતિ જે આઠ પલ્યોપમની કહેવામા આવેલ છે તે પણ મધ્યમ

मूलम्—नव ६५चेरगुत्तीओ पण्णत्ताओ, त जहा—नो इत्थीप सुपडगससत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ१ नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ२ नो इत्थी ठाणाइ सेवित्ता भवइ३ नो इत्थीगं इदि याइ मणोहराइ मणोरमाइ आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ४ नो सद्दाणुवाई, नो रूवाणुवाई५, नो गधाणुवाई, नो रसाणुवाई, नो फासाणुवाई, नो सिलोगाणुवाई५, नो इत्थीणं पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइ समरइत्ता भवइ६, नो पणीयरसभोई७, नो पाणभोयणस्स अइमायाए आहारइत्ता८, नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवइ९॥ नव बभचेर अगुत्तीओ पण्णत्ता, त जहा—इत्थीपसुपडगससत्ताण सिज्जासणाण सेवणया जाव सायासुक्खपडिबद्धे यावि भवइ। नव बभचेरा पण्णत्ता, त जहा—सत्थपरिण्णा लोगविजओ सीओसणिज्ज सम्मत्त। आवति धुयविमोहा उवहाण सुइ महपरिण्णा ॥१॥ पासे णं अरहा पुरिसा

है वह भी मध्यम स्थिति जाननी चाहिये, क्यों कि असुरकुमार देवों में सागरोपम की और सागरोपम से कुछ अधिक की उत्कृष्ट स्थिति कही गई है। तथा जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है। सौधर्म और ईशान कल्प में उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः दो सागरोपम की और कुछ अधिक दो सागरोपम की है, और जघन्यस्थिति अनुक्रम से एक पल्योपम से कुछ अधिक की है, अतः यहां जो इन कल्पों में साढे पल्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। बाकी के पदों का भावार्थ स्पष्ट है ॥सू० २५॥

સ્થિતિ સમજવી જોઇએ કે અસુરકુમાર દેવોમાં સાગરોપમની અને સાગરોપમથી થોડી વધારે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલ છે તથા જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ અનુક્રમે એક પલ્યોપમની અને પલ્યોપમથી થોડા વધારે જાણવી છે, તેથી અહીં તે કલ્પોમાં જે સાડા પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી. બાકીના પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે ॥સૂ ૨૫॥

दाणीए नव रयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था, अभिजीनक्खत्ते साइरेगे नवमुहुत्ते चंदेणं सद्धिं जोगं जोएइ, अभिजियाइया नव नक्खत्ता चंदस्स उत्तरेणं जोगं जोयंति, तं जहा—अभिजीसवणो जाव भरणी ॥ सू० २६ ॥

टीका—'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि नव नवसंख्यकाबंभचेर गुत्तीओ' ब्रह्मचर्यगुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—'नो इत्थी पसुपंडगसंसत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीपशुपण्डकसमक्तानि शय्यासनानि सेविता भवति, स्त्रीभिः पशुभिर्नपुंसकैश्च सयुक्तानां शय्यासनानामनिषेवणं प्रथमा ब्रह्मचर्यगुप्तिः। 'नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ'नो स्त्रीणा कथा कथयिता भवति=स्त्री सम्बन्धिकथा कथनाभावरूपा द्वितीया। 'नो इत्थीठाणाइ सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीस्थानानि सेविता भवति=तिष्ठन्ति येषु तानि स्थानानि निषद्यादयः, स्त्रीणा स्थानानि=स्त्रीस्थानानि, यत्र निषद्यादिषु स्त्रिय उपविष्टाः, ततः उत्थितास्वापि तासु मुहूर्तं नोपविशेदिति तृतीया। नो इत्थीणं इंदियाइ मणोहराइ मणोरमाइं आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ' स्त्रीणा मनोहराणि=चित्ताकर्षकत्वात्, मनोरमाणि=सुन्दराकृतित्वात् इन्द्रियाणि=मुखनयननासिकादीनि आलोकयिता=सामान्यतयाऽवलो-

टीकार्थ—'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि।

ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियां कही गई है। वे इस प्रकार है—स्त्री, पशु और पडक—नपुसक, इन से सयुक्त शय्या आसन का सेवन नहीं करना,यह प्रथम ब्रह्मचर्य की गुप्ति है १। स्त्रियों की कथा नहीं करना यह द्वितीय गुप्ति है २। जिस निषद्या आदिकों के उपर स्त्रियां बैठी हों और फिर वे उन पर से उठ गई हों तो उन निषद्यादिकों पर एक मुहूर्त्त तक नहीं बैठना, यह ब्रह्मचर्य की तीसरी गुप्ति है ३। चित्ताकर्षक होने से मनोहर, तथा सुन्दराकृतिसपन्न होने से मनोरम ऐसे स्त्रियों के मुख, नयन एवं नासिका आदि इन्द्रियों के रागभाव से प्रेरित होकर सामान्य रूप से

सूत्रकार नवमुं समवायाग कहे छे—'नव बंभचेरगुत्तीओ" इत्यादि !

टीकार्थ-ब्रह्मचर्यनी नव गुप्तिओ छे ते आ प्रमाणे छे—स्त्री, पशु, अने पंडक—नपुंसक, तेमनी साथे शय्यासु सेवन न करवु ते ब्रह्मचर्यनी पहेली गुप्ति छे स्त्रीओनी कथा न करवी ते बीजी गुप्ति छे जे निषद्या (स्थान) आदिनी उपर स्त्रीओ बेठी होय अने पछी तेना परथी उठी गइ होय ते निषद्या आदि उपर एक मुहूर्त सधी न बेसवु ते ब्रह्मचर्यनी त्रीजी गुप्ति छे चित्ताकर्षक होवाने लीधे मनोहर, तथा सुंदर आकारना होवाने लीधे मनोरम एवा स्त्रीओना मुख, नयन, नासिका आदि अंगोने राग भावथी प्रेराईने सामान्य रीते तथा विशेष

मूलम्—नव बंभचेरगुत्तीओ पण्णत्ताओ, त जहा—नो इत्थीपसुपंडगससत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ१ नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ२ नो इत्थी ठाणाइ सेवित्ता भवइ३ नो इत्थीण इंदियाइ मणोहराइ मणोरमाइ आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ४ नो सद्दाणुवाई, नो रुवाणुवाई५, नो गंधाणुवाई, नो रसाणुवाई, नो फासाणुवाई, नो सिलोगाणुवाई५, नो इत्थीणं पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइ समरइत्ता भवइ६, नो पणीयरसभोई७, नो पाणभोयणस्स अइमायाए आहारइत्ता८, नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवइ९॥ नव बंभचेर अगुत्तीओ पण्णत्ता, त जहा—इत्थीपसुपंडगससत्ताण सिज्जासणाण सेवणया जाव सायासुक्खपडिबद्धे यावि भवइ। नव बंभचेराप्पण्णत्ता, त जहा—सत्थपरिण्णा लोगविजओ सीओसणिज्ज सम्मत्त। आवंति धुयविमोहा उवहाण सुह महपरिण्णा ॥१॥ पासे णं अरहा पुरिसा

है वह भी मध्यम स्थिति जाननी चाहिये, क्यों कि असुरकुमार देवों में सागरोपम की और सागरोपम से कुछ अधिक की उत्कृष्ट स्थिति कही गई है। तथा जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है। सौधर्म और ईशान कल्प में उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः दो सागरोपम की और कुछ अधिक दो सागरोपम की है, और जघन्यस्थिति अनुक्रम से एक पल्योपम से कुछ अधिक की है, अतः यहां जो इन कल्पों में आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। बाकी के पदों का आशय स्पष्ट है ॥सू० २५॥

સ્થિતિ સમજવી જોઇએ કે અસુરકુમાર દેવોમા સાગરોપમની અને સાગરોપમથી કાંઈક વધારે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલ છે તથા જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી કાંઈક વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ અનુક્રમે એક પલ્યોપમની અને પલ્યોપમથી કાંઈક વધારે હોવાની છે, તેથી અહીં તે કલ્પોમાં જે આઠ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી. બાકીના પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ જ છે ॥સૂ૦ ૨૫॥

दाणीए नव रयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था, अभिजीनक्खत्ते साइरेगे नवमुहुत्ते चंदेणं सद्धिं जोगं जोएइ, अभिजियाइया नव नक्खत्ता चंदस्स उत्तरेणं जोगं जोयंति, तं जहा--अभिजीसवणो जाव भरणी ॥ सू० २६ ॥

टीका--'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि नव नवसंख्यकावंभचेर गुत्तीओ' ब्रह्मचर्यगुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-'नो इत्थी पसुपंडगसंसत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीपशुपण्डकसमक्तानि शय्यासनानि सेविता भवति, स्त्रीभिः पशुभिर्नपुंसकैश्च सयुक्ताना शय्यासनानामनिषेवणं प्रथमा ब्रह्मचर्यगुप्तिः। 'नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ'नो स्त्रीणा कथा कथयिता भवति=स्त्री सम्बन्धिकथा कथनाभावरूपा द्वितीया। 'नो इत्थीठाणाइ सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीस्थानानि सेविता भवति=तिष्ठन्ति येषु तानि स्थानानि निषद्यादयः, स्त्रीणां स्थानानि= स्त्रीस्थानानि, यत्र निषद्यादिषु स्त्रिय उपविष्टाः, ततः उत्थितास्वापि तासु मुहूर्तं नोपविशेदिति तृतीया। नो इत्थीणं इंदियाइं मणोहराइ मणोरमाइं आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ' स्त्रीणा मनोहराणि=चित्ताकर्षकत्वात्, मनोरमाणि=सुन्दराकृतित्वात् इन्द्रियाणि=मुखनयननासिकादीनि आलोकयिता=सामान्यतयाऽवलो-

टीकार्थ--'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि।

ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियां कही गई हैं। वे इस प्रकार है-स्त्री, पशु और पडक-नपुसक, इन से सयुक्त शय्या आसन का सेवन नही करना,यह प्रथम ब्रह्मचर्य की गुप्ति है १। स्त्रियों की कथा नहीं करना यह द्वितीय गुप्ति है २। जिस निषद्या आदिकों के उपर स्त्रियां बैठी हों और फिर वे उन पर से उठ गई हों तो उन निषद्यादिकों पर एक मुहूर्त्त तक नहीं बैठना, यह ब्रह्मचर्य की तीसरी गुप्ति है ३। चित्ताकर्षक होने से मनोहर, तथा सुन्दराकृतिसंपन्न होने से मनोरम होने से स्त्रियों के मुख, नयन एवं नासिका आदि इन्द्रियों के रागभाव से प्रेरित होकर सामान्य रूप से

સૂત્રકાર નવમું સમવાયાંગ કહે છે--'नव बंभचेरगुत्तीओ" ઇત્યાદિ !

ટીકાર્થ--બ્રહ્મચર્યની નવ ગુપ્તિઓ છે તે આ પ્રમાણે છે-સ્ત્રી, પશુ, અને પડક-નપુંસક, તેમની સાથે શય્યાનુ સેવન ન કરવુ તે બ્રહ્મચર્યની પહેલી ગુપ્તિ છે સ્ત્રીઓની કથા ન કરવી તે બીજી ગુપ્તિ છે જે નિષદ્યા (સ્થાન) આદિની ઉપર સ્ત્રીઓ બેઠી હોય અને પછી તેના પરથી ઉઠી ગઇ હોય તે નિષદ્યા આદિ ઉપર એક મુહૂર્ત સુધી ન બેસવુ તે બ્રહ્મચર્યની ત્રીજી ગુપ્તિ છે ચિત્તાકર્ષક હોવાને લીધે મનોહર, તથા સુંદર આકારના હોવાને લીધે મનોરમ એવા સ્ત્રીઓના મુખ, નયન, નાસિકા આદિ અંગોને રાગ ભાવથી પ્રેરાઈને સામાન્ય રીતે તથા વિશેષ

कनकर्ता 'निज्झाइत्ता'-निर्ध्याता=एकाग्रचित्ततयाऽवलोकनकर्ता न भवति, स्त्री न्द्रियाणां सादरानवलोकनरूपा चतुर्थी । 'नो सद्दाणुवाई, नो रूवाणुवाई, नो गंधाणुवाई, नो रसाणुवाई, नो फासाणुवाई, नो सिलोगाणुवाई' नो शब्दानुपाती, नो रूपानुपाती, नो गन्धानुपाती, नो रसानुपाती, नो स्पर्शानुपाती, नो श्लोकानुपाती, शब्द= गन्धप्रकारकं कूजितादि शब्दमनुपतितुं=श्रोतुं शीलमस्येति शब्दानुपाती=विषय कारकशब्दश्रवणाभिलाषी, रूपं=स्त्रीणां सौन्दर्यम्, तदनुपतितुं=द्रष्टुं शीलमस्य रूपानुपाती=स्त्रीरूपदर्शनोत्सुकः, एवं गन्धानुपातीत्यादिष्वपि विशेषम् । श्लोकानुपाती=श्लोकः=स्त्रीणां सौन्दर्यादि गुणवर्णनम्, तमनुपतितुं=श्रोतुं शीलमस्येति श्लोकानुपाती=स्त्री सौन्दर्यादिगुणश्रवणाभिलाषी न भवतीत्यर्थः । इति पञ्चमी गुप्तिः । 'नो इत्थीणं पुव्वरयाइं पुव्वकीलियाइं समरइत्ता भवइ' नो स्त्रीणां पूर्वरतानि पूर्वक्रीडितानि स्मर्ता भवति=स्त्रीभिः सह या रतिः कृता या च क्रीडा विहिता, तस्मृतेरकरणं षष्ठी । 'नो पणीयरसभोई' नो प्रणीतरसभोजी=प्रणीतरसः=घृतादि स्नेहपदार्थोपचित भोजनं भोक्तुं शीलमस्येति प्रणीतरसभोजी=प्रतिदिनमस्नेह रसविकृतस्य भोजनस्य प्रतिदिनमनाचरणमित्यर्थः सप्तमी । 'नो पाणभोयणस्स

देखने का तथा विशेषरूप से देखने का परित्याग करना, यह चौथी गुप्ति है ४। स्त्रियों के विषयकारक-कामोद्दीपक शब्दों के सुनने का अभिलाषी नहीं होना, स्त्रियों के सौंदर्य को देखने का अभिलाषी नहीं होना, इसी तरह गंध आदिको सूंघने का, स्पर्श को छूने का, अभिलाषी नहीं होना श्लोकानुपाती नहीं होना,-स्त्रियों के सौंदर्य आदि गुणों के सुनने का अभिलाषी नहीं होना, यह पांचवी गुप्ति है । इसी तरह मुनि अवस्था धारण करने के पहिले या स्त्रियों के साथ रति की हो, जो क्रीडा की हो, उसका स्मरण नहीं करना यह छठवीं गुप्ति है ६। प्रतिदिन सरस भोजन नहीं करना क्यों कि ऐसा भोजन कामोद्दीपक

રીતે દેખવાનો પરિત્યાગ કરવો તે ચોથી ગુપ્તિ છે સ્ત્રીઓના કામોદ્દીપક શબ્દોને સાંભળવાની અભિલાષા ન કરવી સ્ત્રીઓનું સૌંદર્ય જોવાની અભિલાષા ન રાખવી એ જ પ્રમાણે ગંધ આદિ સુંઘવાની રસ ચાખવાની, સ્પર્શ કરવાની અભિલાષા વાળા ન થવું, શ્લોકાનુપાતી ન થવું —સ્ત્રીઓનાં સૌંદર્ય આદિ ગુણોની વાત સાંભળવાની અભિલાષા ન રાખવી તે પાંચમી ગુપ્તિ છે એ જ પ્રમાણે મુનિ અવસ્થા ધારણ કર્યા પહેલાં સ્ત્રીઓ સાથે જે રતિ સુખ ભોગવ્યાં હોય કે ક્રીડા કરી હોય તેનું સ્મરણ ન કરવું તે છઠ્ઠી ગુપ્તિ છે દી આદિ રસથી તરબોળ ભોજન કરવું ન જોઈએ કેમકે એવું ભોજન કામોદ્દીપક હોય છે તે સાતમી ગુપ્તિ છે અર્થાત્

अइमायाए आहारइत्ता'नो पानभोजनस्य अतिमात्रेण आहारयिता अधिकमात्रायां पानभोजनाकरणम् अष्टमी। 'नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवइ' नो सात सौख्यप्रतिबद्धश्चापि भवति=सातात्-सातवेदनीयादुदयप्राप्ताद्यत्सौख्यं तत्प्रतिबद्धश्चापि नो भवति-सुखानभिलाषिता नवमी गुप्तिः। नव संख्यका ब्रह्मचर्यगुप्तयःप्रज्ञप्ताः, तद्यथा - स्त्री पशुपण्डकसंसक्तानां शय्यासनानां 'सेवणया' सेवनेन यावत् सातसौख्यप्रतिबद्धश्चापि भवति। ब्रह्मचर्यगुप्तौ अकरणीयतया यदुक्तं तत्करणं ब्रह्मचर्यस्यागुप्तिः। नवसंख्यकानि ब्रह्मचर्याणि प्रज्ञप्तानि-ब्रह्मचर्यम्, ब्रह्म=तपः संयमानुष्ठानम् तस्य चर्यमासेवनम्= ब्रह्मचर्यम्, तत्प्रतिपादकानि=आचाराङ्गप्रथमश्रुतस्कंधप्रतिबद्धानि अध्ययनानि= ब्रह्मचर्याणि, तद्यथा-'सत्थपरिण्णा' शस्त्रपरिज्ञा=जीवोपमर्दनहेतोर्द्रव्यभाव-

---

होता है। यह सातवीं गुप्ति है७। अधिक मात्रा में पान भोजन नहीं करना, यह आठवीं गुप्ति है ८। तथा सातावेदनीय कर्म के उदय से जो सुख प्राप्त होता है उसमें प्रतिबद्ध नहीं होना, यह नौवीं गुप्ति है९। नौ ब्रह्मचर्य की अगुप्तियां कही हैं। वे इस प्रकार से हैं-स्त्री, पशु, पंडक से संसक्त-युक्त शय्या और आसन का सेवन करना, यावत् सातावेदनीयकर्म के उदय से प्राप्त सुख में प्रतिबद्ध होना। तात्पर्य यह है कि ब्रह्मचर्यगुप्ति में जो २ अकरणीय रूप से कहा गया है उसका करना यही ब्रह्मचर्य की अगुप्ती है। नौ प्रकार के ब्रह्मचर्य कहे गये है वे इस प्रकार हैं-तप और संयम रूप अनुष्ठान का नाम ब्रह्म में। इस ब्रह्म का चर्य-आसेवन करना इसका नाम ब्रह्मचर्य है। इस ब्रह्मचर्य के प्रतिपादक जो आचारांग के प्रथमश्रुतस्कंध में प्रतिबद्ध अध्ययन हैं वे ब्रह्मचर्य हैं। जैसे शस्त्रपरिज्ञा नामक अध्ययन-द्रव्यभाव के भेद से अनेकविध ऐसा जो

પ્રમાણમાં ભોજન ન લેવુ, તે આઠમી ગુપ્તિ છે, તથા સાતવેદનીય કર્મના ઉદયથી જે સુખ પ્રાપ્ત થાય છે તેમા જકડાવુ નહી, તે નવમી ગુપ્તિ છે બ્રહ્મચર્યની નવ અગુપ્તિયો બતાવી છે, તે આ પ્રમાણે છે—

સ્ત્રી, પશુ, પડક—નપુસકની સાથે શય્યાનું સેવન કરવુ," ત્યાથી શરૂ કરીને "સાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી પ્રાપ્ત સુખોમા પ્રતિબદ્ધ થવું જકડાવુ" સુધી આગળ પ્રમાણે સમજવુ એટલે કે બ્રહ્મચર્ય-ગુપ્તિમા જે કરવા લાયક નથી એમ બતાવ્યું છે, તે કાર્ય કરવુ એજ બ્રહ્મચર્યની અગુપ્તિ છે.

બ્રહ્મચર્ય નવ પ્રકારના કહેલ છે, તે આ પ્રમાણે છે—તપ અને સંયમ રૂપ અનુષ્ઠાનનું નામ બ્રહ્મ છે. બ્રહ્મનુ ચર્ય-સેવન કરવુ, બ્રહ્મચર્ય છે આ બ્રહ્મચર્યનુ પ્રતિપાદન કરનાર આચારાગના પહેલા શ્રુતસ્કંધમા જે પ્રતિબદ્ધ અધ્યયનો છે તે બ્રહ્મચર્ય છે. જેમ કે શસ્ત્રપરિજ્ઞા નામનું અધ્યયન-દ્રવ્યભાવના ભેદથી

मद्यादनेकविधस्य शस्त्रस्य परिज्ञा=ज्ञेयपरिज्ञया ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरण प्रत्याख्यान षड्जीवनिकायपरिरक्षणरूपं शस्त्रपरिज्ञेतिनामकं प्रथमाध्ययनम्। 'लोग विजयो' लोकविजयः=रागद्वेषलक्षणस्य भावलोकस्य विजयस्त्याग =लोकविजय, तत्प्रतिपादकं द्वितीयमध्ययनम्। 'सीओसणिज्ज' शीतोष्णीयम्=शीता अनुकूलाः परीषहाः, उष्णाः प्रतिकूलाः परीषहा, तानधिकृत्य कृतमध्ययन शीतोष्णीयं तृतीयम्। 'सम्मत्त' सम्यक्त्वम्=तत्त्वश्रद्धानलक्षणम्, तल्लिङ्गलक्षणेनासेव्यम् न तु परतीर्थिनामाडम्बर दृष्ट्वा दृष्टिविपर्यासो विधेय इति प्रतिपादकं चतुर्थम्। 'आवंति' आवन्ती=लोकसारस्यापरं नाम, लोकसारो रत्नत्रयम्, अज्ञानमोहादि

जीवोपमर्दन हेतुरूप शस्त्र है उसका ज्ञ परिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्याग करना इसका नाम 'शस्त्रपरिज्ञा' है अर्थात् यह अध्ययन षड्जीवनिकाय के परिरक्षण रूप है। और यह वहां का प्रथम अध्ययन है१। 'लोकविजय' यह दूसरा अध्ययन है, इसका अर्थ रागद्वेषरूप भावलोक का त्याग करना है। इस राग द्वेष रूप भावलोक के परित्याग करने का प्रतिपादन करने वाला यह द्वितीय अध्ययन कहा गया है २। 'शीतोष्णीय' नामका यह तृतीय अध्ययन है। इस अध्ययन द्वारा यह प्रतिपादित किया गया है कि शीत=अनुकूल और उष्ण=प्रतिकूल रूप परीषह कौन २ हैं। इन्हीं शीत और उष्ण परीषहों को लेकर इस अध्ययन का निर्माण किया गया है।३। 'सम्यक्त्व'=तत्त्वश्रद्धान रूप चतुर्थ अध्ययन है। इस में यह कहा गया है कि सम्यक्त्व को इसरूप से सेवन करना चाहिये-परतीर्थिकों के आडम्बर को देखकर दृष्टि विपर्यास नहीं करना चाहिये४। 'आवन्ती' यह लोकसार का दूसरा नाम है। रत्नत्रय

અનેક વિધ જીવો ને ઉપમર્દન હેતુરૂપ શસ્ત્ર છે તેનો જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યા ખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરવો તેનું નામ "શસ્ત્રપરિજ્ઞા" છે એટલે કે તે અધ્યયન છ જીવનિકાયના પરિરક્ષણ રૂપ છે અને તે તેમાંનું પહેલું અધ્યયન છે (૧) "लोक विजय" જે બીજું અધ્યયન છે તેનો અર્થ રાગ દ્વેષરૂપ ભાવલોકનો ત્યાગ કરવો થાય છે આ સ્વરૂપ રૂપ ભાવલોકનો પરિત્યાગ કરવાનું પ્રતિપાદન કરનાર આ બીજું અધ્યયન છે (૨) "शीतोष्णीय" જે નામનું ત્રીજું અધ્યયન છે આ અધ્યયનદ્વારા તે બાબતું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે શીત-અનુકૂલ અને ઉષ્ણ પ્રતિકૂલ પરીષહ કયા કયા છે જે જે શીત અને ઉષ્ણ પરીષહોને અનુલક્ષીને આ અધ્યયન રચેલું છે (૩) "सम्यक्त्व"-તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ જે ચોથું અધ્યયન છે તેમાં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણો વડે સેવન કરવું જોઇએ-પરતીર્થિકોના આડંબરને જોઇને દૃષ્ટિ વિપર્યાસ કરવો જોઇએ નહીં (૪) 'आवन्ती' તે લોકસાર

प[illegible]रपूर्वकं लोकसारभूत रत्नत्रयमासेव्यमिति प्रतिपादकमध्ययनं पञ्चमम्। 'धुय' धुत=पूर्व पश्चात्संगाना परित्यागः, तत्प्रतिपादक षष्ठम्। 'विमोहा' विमोहः= मो[illegible]वशसमुत्पन्नपु परीषहादिपु विमोहो भवेत्, तान् सम्यक् सहेनेति यत्राभिधीयते तद् विमोहनामकं सप्तममध्ययनम्। 'उवहाणसुयं' उपधानश्रुतम्=भगवता महा[illegible]रेण यदुपधानं=यदुग्रतपः समाचरितम् तत्प्रतिपादक श्रुतम् उपधानश्रुत नामा[illegible]मम्। 'महपरिण्णा' महापरिज्ञा=महती परिज्ञा=महापरिज्ञा अन्तक्रिया लक्षणा [illegible]म्यग्विधेयेति प्रतिपादक महापरिज्ञेतिनामक नवमम्। पार्श्वः खलु अर्हन

का नाम लोकसार है। अज्ञान, मोह आदि के परिहारपूर्वक लोक में सार भूत रत्नत्रय का अच्छी तरह से सेवन करना चाहिये, इस विषय को प्रतिपादन करने वाला यह आवन्ती' नामका पांचवां अध्ययन है ५। पूर्वसंग और पश्चात् संग का परित्याग करना इसका नाम 'धुत' है। इस बात का प्रतिपादन करने वाला यह 'धुत' नाम का छठवा अध्ययन है ६। मोह के वश समुत्पन्न हुए परीषह आदिकों को अच्छी तरह सहन करना चाहिये यह विषय 'विमोह' नामक सप्तम अध्ययन में प्रतिपादित किया गया है। अतः इस विषय का-प्रतिपादन करने वाला होने से इस अध्ययन का नाम 'विमोह' हुआ है। यह सातवा है ७। भगवान श्री महावीर स्वामीने जिस उपधान (उग्र) तप को समाचरित किया है उस तप का प्रतिपादक श्रुत उपधानश्रुत है। यह आठमा अध्ययन है ८।अन्तक्रियारूप महती परिज्ञा अच्छी तरह से धारण करना चाहिये, इस विषय को प्रतिपादन करने वाले अध्ययन का नाम महापरिज्ञा है। और यह नौवां अध्ययन है। इस प्रकार ये समस्त अध्ययन ब्रह्मचर्य के नाम

રત્ન બીજુ નામ છે. રત્નત્રયને લોકસાર કહે છે અજ્ઞાન મોહ આદિના પરિત્યાગ કરીને લોકમા સારભૂત રત્નત્રયનુ સારી રીતે સેવન કરવુ જોઇએ, એ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર તે "आवन्ती" નામનુ પાચમુ અધ્યયન છે (૫) પૂર્વસગ અને પશ્ચાત્ સગનો પરિત્યાગ કરવો તેનુ નામ 'धुत' છે તે વતનુ પ્રતિપાદન કરનાર 'धुत' નામનુ છઠું અધ્યયન છે (૫) મોહને કારણે ઉત્પન્ન થયેલ પરીષહોને સારી રીતે સહન કરવા જોઇએ, તે વિષયનુ "विमोह" નામના સાતમા અધ્યયનમા પ્રતિપાદન કરેલ છે, તેથી એ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર હોવાથી તે અધ્યયનનું નામ "विमोह" છે (૭) ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ઉપધાન (ઉગ્ર) તપ કર્યું હતુ તે તપનુ પ્રતિપાદન કરનાર સૂત્ર 'ઉપધાનશ્રત' છે, અને તે આઠમુ અધ્યયન છે (૮) અન્તક્રિયારૂપ મહતી પરિજ્ઞા સારી રીતે ધારણ કરવી જોઇએ, તે વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર અધ્યયનનુ નામ "महापरिज्ञा" છે અને તે નવમુ અધ્યયન છે આ

पुरुषादानीयस्य अर्हतः पार्श्वस्य उर्ध्वमुखकल्याणकाः नव अभवन्। अभिजित्-नक्षत्रं नव मुहूर्तान् चन्द्रेण सार्धं योगं युक्तवति=करोति। अभिजित्-आदीनि नव नक्षत्राणि दक्षिणद्वारिकाणि दक्षिणमार्गस्थितानि चन्द्रेण सार्धं योगं युक्तवन्ति=करोति। मातिरक्तं च खलु-द्विषष्टिभागीकृतस्य मुहूर्तस्य चतुस्त्रिंशद्भागान्, तथा मुहूर्तस्य द्विषष्टितमभागस्य सप्तषष्टितमभागेषु द्वाषष्टिभागरूपेषु। अभिजिदादीनि नवनक्षत्राणि चन्द्रेण उत्तरेण योगं योजयन्ति उत्तरस्यां दिशि स्थितानि अभिजिदादीनि नव नक्षत्राणि दक्षिणदिक्स्थितेन चन्द्रेण सार्धं संबन्धं कुर्वन्ति। अभिजिदादि-अभिजित्प्रभृतीनि धनिष्ठाशतभिषापूर्वभाद्रोत्तरभाद्रेवत्यश्विनीभरणीरूपाणि सू० २६॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ नव जोयणसए उड्ढं आवाहाए उवरिल्ले तारारूवे चारं चरइ। जंबूदीवे णं दीवे नव जोयणिया मच्छा पविसिंसु वा पविसंति वा पविसिस्संति वा, विजयस्स णं दारस्स एगमेगाए बाहाए नव नव भोमा पण्णत्ता। वाणमंतराणं देवाणं सभाओ सुहम्माओ नव जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। दंसणावरणिज्जस्स णं कम्मस्स नव उत्तरपगडीओ पण्णत्ता, तं जहा—निद्दा१ पयला२ निद्दा-निद्दा३ पयला

से प्रसिद्ध हैं अतः ये ब्रह्मचर्य के प्रकार हैं। पुरुषश्रेष्ठ श्री पार्श्वनाथ प्रभु नव रत्नि (हाथ) प्रमाण ऊंचे थे। अभिजित् नक्षत्र कुछ अधिक नौ मुहूर्त तक चन्द्र के साथ संबंध करता है। अभिजित् आदि नौ नक्षत्र चन्द्र का उत्तर के साथ संबंध करते हैं—अर्थात्—उत्तरदिशा में स्थित अभिजित आदि नौ नक्षत्र दक्षिणदिशा में स्थित चन्द्र के साथ संबंध करते हैं। अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी और भरणी, ये सब नक्षत्र अभिजित् के आदि पद से गृहीत हुए हैं॥सू० २६॥

રીતે તે બધા બ્રહ્મચર્યના પ્રકાર કહેવાયા તેમને બ્રહ્મચર્યના પ્રકાર કહેલ છે પુરુષશ્રેષ્ઠ શ્રી પાર્શ્વનાથ પ્રભુ નવરત્નિ પ્રમાણ ઉંચા હતા અભિજિત્ નક્ષત્રનો નવ મુહૂર્તથી થોડો વધારે સમય ચન્દ્રની સાથે યોગ થાય છે અભિજિત્ આદિ નવ નક્ષત્રો ચન્દ્રનો ઉત્તરની સાથે સંબંધ (યોગ) કરે છે, એટલે કે ઉત્તર દિશામાં રહેલ અભિજિત્ આદિ નવ નક્ષત્ર દક્ષિણ દિશામાં રહેલ ચન્દ્ર સાથે સંબંધ કરે છે અભિજિત્ અવણ ધનિષ્ઠા, શતભિષા પૂર્વાભાદ્રપદા, ઉત્તરાભાદ્રપદા, રેવતી, અશ્વિની અને ભરણી એ બધા નક્ષત્રો અભિજિત્ આદિ પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે॥સૂ. ૨૬॥

पयला४ थीणद्धी,५ चक्खुदंसणावरणे६ अचक्खुदंसणावरणे७ ओहिदंसणावरणे,८ केवलदंसणावरणे९ । इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । चउत्थीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं नव सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं नव सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । जे देवा पम्हं सुपम्हं पम्हावत्तं पम्हप्पभं पम्हकंतं पम्हवण्णं पम्हलेसं पम्हज्झयं पम्हसिंगं पम्हसिट्ठं पम्हकूडं पम्हुत्तरवडिंसगं सुज्जं सुसुज्जं सुज्जवित्तं सुज्जकंतं सुज्जवण्णं सुज्जलेसं सुज्जज्झयं सुज्जसिंगं सुज्जसिट्ठं सुज्जकूडं सुज्जुत्तरवडिंसगं रुइल्लं रुइल्लावत्तं रुइल्लप्पभं रुइल्लकंतं रुइल्लवण्णं रुइल्ललेसं रुइल्लज्झयं रुइल्लसिंगं रुइल्लसिट्ठं रुइल्लकूडं रुइल्लुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं नव सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा नवण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसिं णं देवाणं नवहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे नवहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥ सू० २७॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि । अस्याः खलु रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ' बहुसमरमणीयाद् भूमिभागात्-बहुसमोऽत्य-

टीकार्थ—'इमीसे णं' इत्यादि ।

इस नत्नप्रभा पृथिवी के अत्यंतसमरमणीय भूमिभाग से ऊचक

'इमीसे णं' इत्यादि ।

टीकार्थ—આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીના અત્યંત સમતલ રમણીય ભૂમિભાગથી ઉચક કરતા

नवसयोऽनुच्चत्वेन इति यावत्, अतएव रमणीय तस्मात् भूमिभागात्-न पर्वता पेक्षया नापि गजाधपेक्षया अपि तु रुचकापेक्षया नव योजनशतानि ऊर्ध्वम् 'आया हाए' आत्मायाम् आत्मन इत्यर्थः 'उवरिल्ले उपरितन तारारूवं 'तारारूप तारक जातीयं तारामण्डलमित्यर्थः, चारं=भ्रमण चरति करोति। रत्नप्रभपृथिव्या बहुसम भागरमणीयभूमिभागात् नवशतयोजनोपरिम्थितं तारामण्डलं परिभ्राम्यति इत्यर्थः। जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे नव योजनिका मत्स्याः लवणसमुद्रात् प्रविविक्षवो प्रविशन्ति वा प्रवेक्ष्यन्ति वा। यद्यपि लवणसमुद्रे पञ्चशतयोजनपरिमितावगाहना मत्स्या निव सन्ति तथापि जगतोऽस्वाभाविकत्वेन नवयोजनिका एव मत्स्या जम्बूद्वीपे

की अपेक्षा नौ सौ योजन ऊपर द्वीप में तारामण्डल भ्रमण करता है, अर्थात् मेरु के समतल भूभाग से सात सौ नब्बे योजनकी ऊँचाई पर ज्योतिश्चक्र के क्षेत्र का आरम्भ होता है, जो वहां से ऊँचाई में एक सौ दश योजन परिमाण है, और तिरछा असंख्यात द्वीप समुद्र परिमाण है। उसमें दस योजन की ऊँचाई पर अर्थात् उक्त समतल से आठ सौ योजन की ऊँचाई पर सूर्य के विमान हैं, वहां से अस्सी योजन की ऊँचाई पर अर्थात् समतल से आठ सौ अस्सी योजन की ऊंचाई पर चन्द्र के विमान हैं वहां से बीस योजन की ऊंचाई तक में अर्थात् समतल से नव सौ योजन की ऊंचाई तक में ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्ण तारे हैं। पांचसौ योजन परिमित अवगाहना वाले मत्स्य लवणसमुद्र में रहते हैं वे वहां से निकल कर जंबूद्वीप नामके इस द्वीप में प्रवेश करते हैं, प्रविश भी प्रवेश किया है और आगे भी प्रवेश करेंगे—तात्पर्य इसका यह है कि लवणसमुद्र में यद्यपि पांचसौ योजन परिमित अवगाहन वाले मत्स्य रहते हैं तो भी

નવસો યોજન ઉપર જ્યોતિશ્ચક્ર ભ્રમણ કરે છે એટલે કે મેરુના સમતલ ભૂભાગથી સાતસો નેવુ યોજનની ઉંચાઇએ જ્યોતિશ્ચક્રના ક્ષેત્રની શરૂઆત થાય છે, જે ત્યાંથી ઉંચાઇમાં એકસો દસ યોજન જેટલું છે અને તિરછા અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્ર પરિમાણ છે તેમાં દસ યોજનની ઉંચાઇ પર એટલે પૂર્વોક્ત સમતલથી આઠસો યોજનની ઉંચાઇએ સૂર્યનાં વિમાન છે ત્યાંથી એંસી (૮૦) યોજનની ઉંચાઇએ એટલે કે સમતલથી ૮૮૦ આઠસો એંસી યોજનની ઉંચાઇએ ચન્દ્રનાં વિમાન છે ત્યાંથી વીસ યોજનની ઉંચાઇ સુધીમાં એટલે કે સમતલથી ૯૦૦ નવસો યોજનની ઉંચાઇમાં બધાં નક્ષત્ર અને પ્રકીર્ણ તારાઓ છે નવ યોજન પ્રમાણ અવગાહના વાળા મત્સ્યો લવણસમુદ્રમાંથી નીકળીને જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં પ્રવેશ કરે છે, પહેલાં પણ પ્રવેશ કર્યો હતા અને ભવિષ્યમાં પણ પ્રવેશ કરશે તેનું તાત્પર્ય એવું છે કે લવણસમુદ્રમાં જો કે પાંચસો યોજન પ્રમાણ અવગાહનાવાળાં મત્સ્ય રહે છે તો પણ જગ

प्रवेशं कर्तुमर्हन्ति। विजयस्य खलु द्वारस्य=जम्बूद्वीपसम्बन्धिनः पूर्वदिग्व्यवस्थितस्य विजयद्वारस्य 'एगमेगाए' एकैकस्मिन् 'वाहाए' वाहौ पार्श्वभागे इत्यर्थः, नवनव संख्यकानि 'भोमा' भौमानि=भूमिसंबन्धीनि विशिष्टस्थानानि सन्ति। व्यन्तराणां देवानां सुधर्मासभा नव योजनानि उर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः। दर्शनावरणीयस्य खलु कर्मणो नव उत्तरप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-निद्रा, प्रचला, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, 'थीणद्धी' स्त्यानर्द्धिः, चक्षुर्दर्शनावरणम्, अचक्षुर्दर्शनावरणम्, अवधिदर्शनावरणम्, केवलदर्शनावरणम्। अस्यां खलु रत्नप्रभायांपृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। चतुर्थ्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां नव सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानाम् अस्त्येकेषां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मे-

---

जगती में जो रन्ध्र-छिद्र है सो उस के औचित्य से उनमें से नव योजन प्रमाण अवगाहना वाले ही मत्स्य जंबूद्वीप में प्रवेशकर सकते हैं इससे अधिक अवगाहना वाले नहीं। पूर्वदिशा में व्यवस्थित विजयद्वार के जंबूद्वीप संबंधी विजयद्वार के पार्श्वभाग में नव नव भौम हैं-भूमि संबंधी-विशिष्टस्थान अथवा नगर हैं। व्यन्तर देवों की अपेक्षा नव योजन की ऊंची है। दर्शनावरणीय कर्म की उत्तर प्रकृतियां नव हैं, वे इस प्रकार हैं-निद्रा१, प्रचला२, निद्रा-निद्रा३, प्रचला-प्रचला४, स्त्यानर्धि५, चक्षुदर्शनावरण६, अचक्षुदर्शनावरण७, अवधिदर्शनावरण८, और केवलदर्शनावरण९। इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति नव सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की

તીમાં (કોટમા) જે છિદ્રો છે તે એવા છે કે તેમાથી નવ યોજન પ્રમાણ અવગાહના વાળા જ મત્સ્યો જંબૂદ્વીપમાં પ્રવેશ કરી શકે છે, તેથી વધારે અવગાહનાવાળા પ્રવેશી શકતા નથી.

પૂર્વદિશામા આવેલ જંબૂદ્વીપના વિજયદ્વારના પાર્શ્વ ભાગમા નવ, નવ ભૌમ છે-ભૂમિનું વિશિષ્ટ સ્થાન અથવા નગર છે વ્યન્તર દેવોની સુધર્મા સભા ઊચાઈની અપેક્ષાએ નવ યોજનની છે દર્શનાવરણીય કર્મની ઉત્તર પ્રકૃતિયો નવ છે, તે આ પ્રમાણે છે-(૧)નિદ્રા, (૨) પ્રચલા, (૩) નિદ્રા-નિદ્રા (૪) પ્રચલા-પ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ (૬) ચક્ષુદર્શનાવરણ (૭) અચક્ષુદર્શનાવરણ, (૮) અવધિદર્શનાવરણ (૯) કેવલદર્શનાવરણ. આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ નવ પલ્યોપમની કહી છે એથી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ નવ સાગરોપમની કહેલ છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ નવ પલ્યોપમની કહી છે સૌધર્મ, ઇશાન

स्थानेषु कल्पेषु अस्त्यकर्पां देवानां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्म लोके कल्पे अस्त्यकर्पां देवानां नव सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ये देवा पद्मं१ सुपद्मं२ पद्मावर्त्त३ पद्मप्रभं४ पद्मकान्त५ पद्मवर्णं६ पद्मलेश्य७ पद्मध्वजं८ पद्मशृङ्गं९ पद्मसृष्टं१० पद्मकूटं११ पद्मोत्तरावतंसकं१२ सूर्यं१३ सुसूर्यं१४ सूर्यावर्त्तं१५ सूर्यप्रभं१६ सूर्यकान्त१७ सूर्यवर्णं१८ सूर्यलेश्य१९ सूर्यध्वज२० सूर्यशृङ्ग२१ सूर्यसृष्टं२२ सूर्यकूट२३ सूर्योत्तरावतंसकं२४ 'शङ्ख' रुचिरं२५ रुचिरावर्त्तं२६ रुचिरप्रभं२७ रुचिरकान्तं२८ रुचिरवर्णं२९ रुचिरलेश्य३० रुचिरध्वजं३१ रुचिरशृङ्ग३२ रुचिरसृष्ट३३ रुचिरकूट३४ रुचिरोत्तरावतंसकं३५ च विमानेषु पञ्चविंशत् विमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना, तेषां खलु देवानां नव सागरोप

नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की नव सागरोपम की स्थिति कही गई है। जो देव, पद्म १, सुपद्म २, पद्मावर्त ३, पद्मप्रभ ४, पद्मकान्त ५, पद्मवर्ण ६, पद्मलेश्य ७, पद्मध्वज ८, पद्मशृंग ९, पद्मसृष्ट १०, पद्मकूट ११, पद्मोत्तरावतंसक १२, सूर्य १३, सुसूर्य १४, सूर्यावर्त १५, सूर्यप्रभ १६, सूर्यकान्त १७, सूर्यवर्ण १८, सूर्यलेश्य १९, सूर्यध्वज २०, सूर्यशृंग २१, सूर्यसृष्ट २२ सूर्यकूट २३, सूर्योत्तरावतंसक २४, रुचिर २५, रुचिरावर्त २६, रुचिरप्रभ २७, रुचिरकान्त २८, रुचिरवर्ण २९, रुचिरलेश्य ३०, रुचिरध्वज ३१, रुचिरशृंग, ३२, रुचिरसृष्ट ३३, रुचिरकूट ३४, और रुचिरोत्तरावतंसक ३५, इन ३०, विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं

કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ નવ પલ્યોપમની કહેલ છે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની નવ સાગરોપમની સ્થિતિ કહેલ છે

જે દેવો (૧) પદ્મ (૨) સુપદ્મ, (૩) પદ્માવર્ત, (૪) પદ્મપ્રભ (૫) પદ્મકાન્ત, (૬) પદ્મવર્ણ (૭) પદ્મલેશ્ય, (૮) પદ્મધ્વજ, (૯) પદ્મશૃંગ, (૧૦) પદ્મસૃષ્ટ (૧૧) પદ્મકૂટ, (૧૨) પદ્મોત્તરાવતંસક (૧૩) સૂર્ય (૧૪) સુસૂર્ય, (૧૫) સૂર્યાવર્ત, (૧૬) સૂર્યપ્રભ, (૧૭) સૂર્યકાન્ત (૧૮) સૂર્યવર્ણ, (૧૯) સૂર્યલેશ્ય, (૨૦) સૂર્યધ્વજ, (૨૧) સૂર્યશૃંગ (૨૨) સૂર્યસૃષ્ટ (૨૩) સૂર્યકૂટ (૨૪) સૂર્યોત્તરાવતંસક, (૨૫) રુચિર, (૨૬) રુચિરાવર્ત, (૨૭) રુચિરપ્રભ, (૨૮) રુચિરકાન્ત, (૨૯) રુચિરવર્ણ (૩૦) રુચિરલેશ્ય (૩૧) રુચિરધ્વજ (૩૨) રુચિરશૃંગ, (૩૩) રુચિરસૃષ્ટ, (૩૪) રુચિરકૂટ અને (૩૫) રુચિરોત્તરાવતંસક, એ પાંત્રીસ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે,

मानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा नवानामर्द्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां नवभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये नवभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते मोक्ष्यन्ति परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू २७॥

उन देवों की स्थिति नव सागरोपम की कही गई है। वे देव साढे चार ४॥ मास के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। जिन देवों को नौ हजार वर्षों के बाद आहार सज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। वे नौ भव ग्रहण करने के बाद सिद्धपद प्राप्त करेंगे। यावत् समस्त दुःखों का अंत करेंगे॥

भावार्थ--सूत्रकार इस सूत्र द्वारा नव संख्योपेत वस्तुओं को गिनाते हुए कह रहे हैं कि रत्नप्रभापृथिवी के अत्यंत सम रमणीय भूमिभाग से नौ सौ योजन की उंचाई पर तारा मंडल है। लवणसमुद्र से जंबूद्वीप में जो कि उस द्वीप को घेरे हुए हैं और जिसका विस्तार उसकी अपेक्षा द्विगुणित है उसकी जगती के छेद से जो कि नौ योजन की अवगाहना वाले मत्स्य जिसमें से निकल सकें इतना ही बडा है इतनी ही अवगाहना वाले मत्स्य आते हैं, आये हैं और आवेंगे। जंबूद्वीप संबंधी विजय द्वार के पार्श्वभाग में नौ-नौ भौम हैं। व्यंतरदेवों की सुधर्मासभा की उँचाई नव योजन की है। दर्शनावरणीय कर्म की उत्तर

તે દેવોની નવ સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે તે દેવો સાડાચાર મહિને અંદર તથા બહાર શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે, અને તે દેવોને નવ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષા થાય છે તેમા કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે. તેઓ નવ ભવ કરીને સિદ્ધગતિ પામશે ત્યાથી સમસ્ત દુ:ખોનો અત કરશે સુધીનો અર્થ ગ્રહણ કરાયો છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા નવ સંખ્યાવાળી વસ્તુઓ ગણાવતાં કહે છે કે રત્નપ્રભા પૃથ્વીના અત્યંત સમરમણીય ભૂમિ ભાગથી નવ સો યોજનની ઉચાઈએ તારામંડળ છે લવણસમુદ્રમાંથી જંબુદ્વીપમા, કે જે તે દ્વીપને ઘેરીને રહેલો છે અને જેનો વિસ્તાર તેના કરતા બમણો છે, તેની જગતી (કોટ) ના છિદ્રમાથી નવ યોજનની લબાઈવાળાં મત્સ્ય આવે છે, આવતા હતા અને આવશે. તે છિદ્ર એવડું છે કે તેમાથી નવ યોજનની અવગાહનવાળા મત્સ્યો જ પ્રવેશી શકે છે, તેના કરતાં મોટા નહીં. જંબુદ્વીપના વિજયદ્વારમાં નવ નવ ભૌમ છે. વ્યન્તર દેવોની સુધર્માસભાની ઉંચાઇ નવ યોજનની છે દર્શનાવરણીય કર્મની ઉત્તર પ્રકૃતિયો નવ છે જે (કર્મના ઉદ-

प्रकृतियां नौ हैं। जिस कर्म के उदय से सुखपूर्वक जाग सके ऐसी निद्रा को निद्रा कहते हैं १। जिसके उदय से निद्रा से जागना अत्यंत दुष्कर हो वह निद्रा-निद्रा है २। जिस कर्म के उदय के बैठे २ या खड़े २ ही नींद आ जावे वह प्रचला है। ३। जिस कर्म के उदय से चलते २ ही नींद आजावे वह प्रचलाप्रचला है। ४। जिस कर्म के उदय से जागरित अवस्था में सोचे हुए कार्य को निद्रावस्था में करने का सामर्थ्य प्रकट हो जाय वह स्त्यानगृद्धि है। इस निद्रा में सहज बल से कहीं अनेकगुण अधिक बल प्रकट होता है ५। रत्नप्रभा पृथिवी में जो कितनेक नारकियों की स्थिति यहां नव पल्योपम की कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई है, क्यों कि इस पृथिवी में उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की और जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की है इसी तरह चौथी पृथिवी में जो नौ सागरोपम की स्थिति यहां प्रकट की गई है वह भी मध्यम स्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिये, क्यों कि यहां उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है। असुर कुमार देवों की भी नौ पल्योपमकी जो यहां स्थिति कही गई है वह भी मध्यमस्थिति की यहां अपेक्षा जाननी चाहिये, ब्रह्मलोक में जो नवसागरोपमकी स्थिति ही कही गई है वह भी मध्यस्थिति की अपेक्षा लेकर ही कही

પણ સુખપૂર્વક જાગી શકાય એવી નિદ્રાને 'નિદ્રા' કહે છે (૨) જે કર્મના ઉદયથી નિદ્રામાંથી જાગવું અતિશય દુષ્કર હોય છે તે નિદ્રાને 'નિદ્રા-નિદ્રા' કહે છે (૩) જે કર્મના ઉદયથી બેઠાં બેઠાં કે ઉભાં ઉભાં જ ઘાની આવ તે કર્મને 'પ્રચલા' કહે છે ૪) જે કર્મના ઉદયથી ચાલતાં ચાલતાં જ ઘેનમાં આવી જાય તે કર્મ પ્રકૃતિને 'પ્રચલા-પ્રચલા'' કહે છે (૫) જે કર્મના ઉદયથી જાગૃત અવસ્થામાં વિચારેલ કામ નિદ્રાવસ્થામાં કરવાનું સામર્થ્ય પ્રકટ થાય તે "स्त्यानगृद्धि" છે તે નિદ્રામાં સ્વાભાવિક બળ કરતાં અનેક ગણું બળ પ્રગટ થાય છે રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ જે નવ પલ્યોપમની કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવી છે કારણ કે આ પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે એ જ પ્રમાણે બીજી પૃથ્વીમાં જે નવ સાગરોપમની સ્થિતિ પ્રગટ કરવામાં આવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ છે એમ સમજવું, કારણ કે ત્યાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોની પણ કહી જે નવ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી-બ્રહ્મલોકમાં જે નવ સાગરોપમની સ્થિતિ કહી કહેવામાં આવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ

अथ दशमं समवायमाह—

मूलम्—दसविहे समणधम्मे पण्णत्ते, तं जहा—खंती१ मुत्ती२ अज्जवे३ मद्दवे४ लाघवे५ सच्चे६ संजमे७ तवे८ चियाए९ बंभचेर वासे१०। दस चित्तसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—धम्मचिंता वा से असमुप्पण्णपुव्वा समुप्पज्जिज्जा सव्व धम्मं जाणित्तए१ सुमिणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहातच्चं सुमिणं पासित्तए२ सण्णि नाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा पुव्वभवे सुमरित्तए३ देवदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा दिव्वं देवड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए४ ओहिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा ओहिणा लोगं जाणित्तए५ ओहिदंसणं वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा ओहिणा लोगं पासित्तए६ मणपज्जव नाणे वा से असमुपण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा जाव मणोगये भावे जाणित्तए७ केवलनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जित्ता केवलं लोगं जाणित्तए८ केवल दंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा केवलं लोयं पासित्तए९ केवलिमरणं वा मरिज्जा सव्वदुक्खपहीणाए१० मंदरे णं पव्वए मूले दसजोयणसहस्साइं विक्खंभेणं पण्णत्ते। अरिहा णं अरिट्ठनेमि दस धणुइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। कण्हे णं वासुदेव दस धणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। रामे णं बलदेवे दसधणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। दस नक्खत्ता नाण बुड्ढिकरा पण्णत्ता, तं जहा—

गई जाननी चाहिये, क्यों कि इस पांचमे ब्रह्मलोक कल्प में उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है ॥सू० २७॥

કહેલ સમજવી, કારણ કે આ પાચમા બ્રહ્મલોક કલ્પમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે. ॥સૂ ૨૭॥

मिगसिर अद्दा पुस्सो तिण्णि य पुव्वा य मूलमस्सेसा। हत्थो चित्तो य तहा दस हुंडिकराइ नाणस्स। अकम्मभूमियाण मणुयाण दस विहा रुक्खा उवभोगत्ताए उवत्थिया पण्णत्ता, तं जहा—मत्तंगया य भिंगा तुडिअंगा दीव जोइ चित्तंगा चित्तरसा मणिअंगा गेहागारा अनिगिणा य ॥ सू० २८ ॥

टीका—'दसविहे समणधम्मे' इत्यादि। दशविधः श्रमणधर्मः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—'खंती' क्षान्तिः=निन्दादिश्रवणेऽपि क्रोधत्यागः, 'मुत्ती' मुक्तिः=बाह्याभ्यन्तरवस्तुषु लोभपरित्यागः, 'अज्जवे' आर्जवम्=मायात्यागः। 'मद्दवे' मार्दवम्=मानपरित्यागः। 'लाघवे' लाघवम्=द्रव्यतोऽल्पोपधिता, भावतो गौरवत्यागः। 'सच्चे' सत्यम्=सत्यभाषित्वम्। 'संजमे' संयमः=प्राणातिपातादि विरमणम्। 'तवे' तपः तपति क्षपति अष्टप्रकारं कर्मेति तपः=तपस्या। 'चियाए' त्यागः, संभोगिअसंभोगिकस्स भक्तादीनां दानम्। 'बंभचेरवासे' ब्रह्मचर्यवासः=ब्रह्मचर्येणावस्थानम्।

अब सूत्रकार दशवें समवाय को कहते हैं—'दसविहे' इत्यादि।

टीकार्थ-दश प्रकार का श्रमणधर्म कहा गया है। वह दश प्रकारता इस प्रकार से है क्षान्ति—अपनी निन्दा आदि के सुनने पर भी क्रोध का त्याग करना १, मुक्ति बाह्य और आभ्यन्तर वस्तुओं पर से लोभ का परित्याग करना २, आर्जव—माया का त्याग करना ३, मार्दव—मान का त्याग करना ४, लाघव अल्प उपधि का रखना द्रव्य लाघव और गौरव का त्याग करना भावलाघव है ५। सत्य सत्यभाषण बोलना ६, संयम—प्राणातिपात आदि से विरत होना ७, तप—अष्ट प्रकार के कर्मों को जलाने वाली तपस्या करना ८, संभोगिमुनियों को भक्तपान आदि देना ९, ब्रह्म

હવે સૂત્રકાર દશમાં સમવાયનું કથન કરે છે—'दसविहे' इत्यादि।

ટીકાર્થ—દશ પ્રકારના શ્રમણધર્મ કહેવામાં આવ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે—

(૧) ક્ષાન્તિ પોતાની નિંદા આદિ સાંભળવા છતાં ક્રોધનો ત્યાગ કરવો-(૨) મુક્તિ—બહારની અને આંતરિક વસ્તુઓ પ્રત્યેના લોભનો ત્યાગ કરવો (૩) આર્જવ—માયાનો ત્યાગ કરવો (૪) માર્દવ—માનનો ત્યાગ કરવો (૫) લાઘવ—ઓછી ઉપધિ રાખવી, તે દ્રવ્ય લાઘવ છે અને ગૌરવનો ત્યાગ કરવો તે ભાવલાઘવ છે (૬) સત્ય—સત્ય બોલવું (૭) સંયમ—પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરત થવું (૮) તપ—આઠ પ્રકારના કર્મોને બાળી નાખનારી તપસ્યા કરવી (૯) ત્યાગ—સંભોગી મુનિઓને ભક્તપાન (આહારપાણી) દેવાં (૧૦) બ્રહ્મચર્યવાસ—બ્રહ્મચર્ય માં રહવું વિગેરે સમજવું

दशविधानि 'चित्तसमाहिट्ठाणा' चित्तसमाधिस्थानानि=चित्तस्य=मनसः समाधिः =प्रशान्तता, तस्य स्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'धम्मचिंता वा से असमुप्पण्णपुव्वा समुपज्जिज्जा सव्वं धम्मं विजाणित्तए' 'से' तस्य कल्याणभागिनः साधोः 'सव्वं' सर्वं=निरवशेषं धर्मं=जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा 'जाणित्तए' ज्ञ परिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयकर्मपरिहर्तुम् 'असमुप्पण्णपुव्वा' असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वं समुत्पन्ना=समुत्पन्नपूर्वा, न समुत्पन्नपूर्वा असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वस्मिन् अनादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पत्तौ हि अपार्द्धपुद्गलपरावर्तान्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्। 'धम्मचिंता' धर्मचिन्ता=धर्माः=जीवाजीवादि द्रव्याणामुत्पादादि स्वभावाः, तेषां चिन्ता अनुप्रेक्षा, अथवा

चर्यवास-ब्रह्मचर्य-धारण करना १०। चित्तसमाधिस्थान दस कहे गये हैं। वे इस प्रकार से हैं-कल्याण को प्राप्त हुए साधु को जो समस्त धर्म को जानने के लिये असमुत्पन्नपूर्व-(पहेले कभी नहीं उत्पन्न हुई वैसी) धर्मचिन्ता उत्पन्न होती है यह प्रथम चित्तसमाधिस्थान है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जीवादि द्रव्यों के स्वभाव को, अथवा आत्मस्वभावरूप उपयोग को, वा उत्पाद आदि रूप सत् को, अथवा सर्वज्ञ भाषित श्रुतादिरूप धर्म को ज्ञ परिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से परिहरणीय कर्म को छोडकर जो अनादिकाल से इस संसार में परिभ्रमण करते हुए अभीतक प्राप्ति नहीं हुई ऐसी धर्म चिंता को जो कि धर्मध्यान की कारणभूत होती है प्राप्त कर लेता है। इससे उसे अपार्द्धपुद्गल-परावर्तन काल के अन्त में अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। इस धर्मचिन्ता में मुनि इस प्रकार का भी विचार करता

દસ કહ્યા છે, તે આ પ્રમાણે છે—કલ્યાણને પામેલ સાધુને સમસ્ત ધર્મને જાણવાની જે असमुत्पन्नपूर्व-પહેલાં કદી પણ થઇ ન હોય એવી ધર્મચિન્તા ઉત્પન્ન થાય છે, તે પહેલું ચિત્ત સમાધિસ્થાન છે. એટલે કે આત્મકલ્યાણાભિલાષી સાધુ જીવાદી દ્રવ્યોના સ્વભાવને, અથવા આત્મ સ્વભાવરૂપ ઉપયોગને, કે ઉત્પાદ આદિ રૂપ સત્ને, અથવા સર્વજ્ઞ ભાષિત શ્રુતાદિ રૂપ ધર્મને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરવા લાયક કર્મનો ત્યાગ કરીને, અનાદિકાળથી આ સંસારમા પરિભ્રમણ કરતા હજી સુધીમાં કદી પણ પેદા ન થઇ હોય એવી ધર્મચિન્તા પ્રાપ્ત કરી લે છે, જે ધર્મચિન્તા ધર્મધ્યાનના કારણરૂપ હોય છે તેથી તેને अपार्द्धपुद्गल-પરાવર્તન કાળને અન્તે મોક્ષની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે. આ ધર્મચિન્તામાં મુનિ એવો પણ વિચાર કરે છે કે

मिगसिर अद्दा पुस्सो तिण्णि य पुव्वा य मूलमस्सेसा। हत्थो चित्तो य तहा दस धुव्विकत्ताइ णाणस्स। अकम्मभूमियाण मणुयाण दस विहा रुक्खा उवभोगत्ताए उवत्थिया पण्णत्ता, तं जहा—मत्तंगया य भिंगा तुडिअंगा दीवं जोइ चित्तंगा चित्तरसा मणिअंगा गेहागारा अणिगिणा य ॥ सू० २८ ॥

टीका—'दसविहे समणधम्मे' इत्यादि। दशविधः श्रमणधर्मः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-'खंती' क्षान्ति=निन्दादिश्रवणेऽपि क्रोधत्यागः, 'मुत्ती' मुक्तिः=बाह्याभ्यन्तरवस्तुषु लोभपरित्यागः, 'अज्जवे' आर्जवम्=मायात्यागः। 'मद्दवे' मार्दवम्=मानपरित्यागः। 'लाघवे' लाघवम्=द्रव्यतोऽल्पोपधिता, भावतो गौरवत्याग। 'सच्चे' सत्यम्=सत्यवादित्वम्। 'संजमे' संयमः=प्राणातिपातादिविरमणम्। 'तवे' तपः तपति दहति अष्टप्रकारकं कर्मेति तपः=तपस्या। 'चियाए' त्यागः, संभोगिसुनिभ्यो भक्तादीनां दानम्। 'बंभचेरवासे' ब्रह्मचर्यवासः=ब्रह्मचर्येणावस्थानम्।

अब सूत्रकार दशवें समवाय को कहते हैं—'दसविहे' इत्यादि।

टीकार्थ-दस प्रकार का श्रमणधर्म कहा गया है। वह दश प्रकारता इस प्रकार से है क्षान्ति-अपनी निन्दा आदि के सुनने पर भी क्रोध का त्याग करना १, मुक्ति बाह्य और आभ्यन्तर वस्तुओं पर से लोभ का परित्याग करना २, आर्जव-माया का त्याग करना ३, मार्दव-मान का त्याग करना ४, लाघव अल्प उपधि का रखना द्रव्य लाघव और गौरव का त्याग करना भावलाघव है ५। सत्य सत्यवचन बोलना ६, संयम-प्राणातिपात आदि से विरत होना ७, तप-आठ प्रकार के कर्मों को जलाने वाली तपस्या करना ८, संभोगिसुनियों को भक्तपान आदि देना ९, ब्रह्म

કયે સૂત્રકાર દશમાં સમવાયનું કથન કરે છે—'दसविहे' इत्यादि।

ટીકાર્થ—દશ પ્રકારના શ્રમણધર્મ કહ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે—

(૧) क्षान्ति પોતાની નિન્દા આદિ સાંભળવા છતાં ક્રોધનો ત્યાગ કરવો (૨) मुक्ति—બહારની અને આભ્યન્તર વસ્તુઓ પ્રત્યેના લોભનો ત્યાગ કરવો (૩) आर्जव—માયાનો ત્યાગ કરવો (૪) मार्दव—માનનો ત્યાગ કરવો (૫) लाघव—દ્રવ્યની ઉપધિ રાખવી, તે દ્રવ્ય લાઘવ છે અને ગૌરવનો ત્યાગ કરવો તે ભાવલાઘવ છે (૬) सत्य—સત્ય બોલવું (૭) संयम—પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરત રહેવું (૮) तप—આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરનારી તપસ્યા કરવી (૯) त्याग—સંભોગી મુનિઓને આહારપાણી (આહારપાણી) દેવાં (૧૦) ब्रह्मचर्यवास—બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરવું ચિત્તસમાધિસ્થાન

दशविधानि 'चित्तसमाहिट्ठाणा' चित्तसमाधिस्थानानि=चित्तस्य=मनसः समाधिः =प्रशान्तता, तस्य स्थानानि प्रकर्षाणि, तद्यथा-'धम्मचिंता वा से असमुप्पण्ण-पुव्वा समुपज्जिज्जा सव्वं धम्मं विजाणित्तए' 'से' तस्य कल्याणभागिनः साधोः 'सव्वं' सर्वं=निरवशेषं धर्मं=जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा 'जाणित्तए' ज्ञ परिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयकर्म-परिहर्तुम् 'असमुप्पण्णपुव्वा' असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वं समुत्पन्ना=समुत्पन्नपूर्वा, न समु-त्पन्नपूर्वा असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वस्मिन् अनादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पत्तौ हि अपार्द्धपुद्गलपरावर्तान्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्। 'धम्मचिंता' धर्मचिन्ता= धर्माः=जीवाजीवादि द्रव्याणामुत्पादादि स्वभावाः, तेषां चिन्ता अनुप्रेक्षा, अथवा

चर्यवास-ब्रह्मचर्य-धारण करना १०। चित्तसमाधिस्थान दस कहे गये हैं। वे इस प्रकार से हैं-कल्याण को प्राप्त हुए साधु को जो समस्त धर्म को जानने के लिये असमुत्पन्नपूर्व-(पहेले कभी नहीं उत्पन्न हुई वैसी) धर्म-चिन्ता उत्पन्न होती है यह प्रथम चित्तसमाधिस्थान है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जीवादि द्रव्यों के स्वभाव को, अथवा आत्मस्वभावरूप उपयोग को, या उत्पाद आदि रूप सत् को, अथवा सर्वज्ञ भाषित श्रुतादिरूप धर्म को ज्ञ परिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से परिहरणीय कर्म को छोडकर जो अनादिकाल से इस संसार में परिभ्रमण करते हुए अभीतक प्राप्ति नहीं हुई ऐसी धर्म चिंता को जो कि धर्मध्यान की कारणभूत होती है प्राप्त कर लेता है। इससे उसे अपार्द्धपुद्गल-परावर्तन काल के अन्त में अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। इस धर्मचिन्ता में मुनि इस प्रकार का भी विचार करता

દસ કહ્યા છે, તે આ પ્રમાણે છે—કલ્યાણને પામેલ સાધુને સમસ્ત ધર્મને જાણવાની જે असमुत्पन्नपूर्व-પહેલાં કદી પણ થઇ ન હોય એવી ધર્મચિન્તા ઉત્પન્ન થાય છે, તે પહેલુ ચિત્ત સમાધિસ્થાન છે. એટલે કે આત્મકલ્યાણાભિલાષી સાધુ જીવાદી દ્રવ્યોના સ્વભાવને, અથવા આત્મ સ્વભાવરૂપ ઉપયોગને, કે ઉત્પાદ આદિ રૂપ સત્ને, અથવા સર્વજ્ઞ ભાષિત શ્રુતાદિ રૂપ ધર્મને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરવા લાયક કર્મનો ત્યાગ કરીને, અનાદિકાળથી આ સંસારમા પરિભ્રમણ કરતાં હજી સુધીમાં કદી પણ પેદા ન થઇ હોય એવી ધર્મચિન્તા પ્રાપ્ત કરી લે છે. જે ધર્મ-ચિન્તા ધર્મધ્યાનના કારણરૂપ હોય છે. તેથી તેને अपार्द्धपुद्गल-પરાવર્તન કાળને અન્તે મોક્ષની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે. આ ધર્મચિન્તામાં મુનિ એવો પણ વિચાર કરે છે કે

धर्मस्य=श्रुतचारित्रात्मकस्य सर्वज्ञप्रणीतस्य धर्मस्य हरिहरादिकथितधर्मेभ्यः प्रधानत्वमित्यादि चिन्ता, 'समुप्पज्जित्था' समुत्पद्येत=धर्मध्यानकरणभूता धर्मचिन्ता समुत्पद्यते इति समुदितार्थः। इति प्रथमं चित्तसमाधिस्थानम्। 'सुमिणदंसणेत्ता से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जित्था अहातच्चं सुमिणं 'पासित्तए' 'अहातच्चं' यथा तथ्यं सत्यमनतिक्रम्य यथातथ्यं सर्वथाऽभ्यभिचरितं 'सुमिणं' स्वप्नं स्वप्नफलं 'पासित्तए' द्रष्टुं ज्ञातुमित्यर्थः, 'से' तस्य असमुत्पन्नपूर्वं 'सुमिणदंसणं' स्वप्नदर्शनं स्वप्नस्य=निद्रावस्थाविकल्पज्ञानस्य दर्शन=संवेदन, यथा भगवतो महावीरस्य समुत्पन्नं तथा, समुप्पज्जेत्था अयमेयारूवे सुक्किफले मम्पि साधुः तादृशं स्वप्नदर्शनं क्रमते इत्यर्थः। इति द्वितीयम्। 'सण्णिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जित्था पुव्वभवे सुमरित्तए' 'पुव्वभवे' पूर्वभवान्=पूर्वजन्मानि 'सुमरित्तए' स्मर्तुम् तस्य असमुत्पन्नपूर्वं 'सन्निनाणं' संज्ञिज्ञानम्=संज्ञानं संज्ञा=ज्ञानम्-साच हेतूपदेशाद् दृष्टिवाद-

---

है कि श्रुतचारित्रात्मक धर्म जो सर्वज्ञ प्रभु द्वारा स्थापित हुआ है अन्य द्वारा कथित धर्म से विशिष्ट है। इस प्रकार विचार करते रहने से चित्त की समाधी होती है, अतः यह प्रथम चित्त समाधिस्थान है १। इस प्रकार करते २ जब चित्त इन धर्मध्यान के कारणभूत विचारों से संस्कारित हो जाता है तब उसे यथातथ्यमभ्यभिचरित—इसी प्रकार के असत् उत्पन्नपूर्व स्वप्न भी आने लग जाते हैं और उस आत्मा को इन स्वप्नों के फल का भगवान् महावीर की तरह दर्शन संवेदन उत्पन्न होने लगता है तात्पर्य इसका यह है कि ऐसे मुनि को मुक्तिरूप फल की प्राप्ति अवश्य होती है जो ऐसे स्वप्न में भी ज्ञात होने लगती है। यह चित्तसमाधि का द्वितीयस्थान है २। इसी तरह उस चित्तसमाधि संपन्न साधु को अपने पूर्वभवों का भी ज्ञान जो इसे पहिले कभी नहीं हुआ

જે શ્રુતચારિત્રધર્મ સર્વજ્ઞ પ્રભુ દ્વારા સ્થાપિત છે તે બીજા કોઈ દ્વારા કથિત ધર્મ કરતાં વિશિષ્ટ છે આ પ્રમાણે વિચાર કર્યા કરવાથી ચિત્તની સમાધિ થાય છે, તેથી તે પહેલું ચિત્તસમાધિસ્થાન છે ૧ આમ કરતાં કરતાં જ્યારે તે ધર્મધ્યાનના કારણભૂત વિચારોથી સંસ્કારિત થઈ જાય છે ત્યારે તેને યથાતથ્ય—તથા અભ્યભિચરિત—પૂર્વે કદી પણ જોયાં ન હોય એવાં સ્વપ્નો આવવા લાગે છે અને તે આત્માને ભગવાન મહાવીરની જેમ તે સ્વપ્નોના ફળનું દર્શન સંવેદન ઉત્પન્ન થવા માંડે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એવા મુનિને મોક્ષરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે જે તેને સ્વપ્નોમાં પણ જણાવા લાગે છે આ ચિત્તસમાધિનું દ્વિતીય સ્થાન છે એ જ પ્રમાણે તે ચિત્ત સમાધિ યુક્ત મુનિને પોતાના પૂર્વભવોનું જ્ઞાન, કે જે એ પહેલાં કદી પણ હોતું

दीर्घकालिकोपदेशभेदात्त्रिधा। तत्र विकलेन्द्रियस्य हेतुवादसंज्ञा। सम्यग्दृष्टेः दृष्टिवादसंज्ञा, समनस्कसंज्ञिनः दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा भवति। इह संज्ञाशब्देन दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा गृह्यते, सा यस्यास्ति स संज्ञी समनस्कः, तस्य ज्ञानं संज्ञिज्ञानं=जातिस्मरणं समुत्पद्यते। जातिस्मरणेन स्वस्य उत्तमस्थानं संयमलक्षणं मोक्षलक्षणं च जानाति इति भावः। इति तृतीय। चित्तसमाधिस्थानम्। 'देव दंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुई दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए' 'दिव्वं देविड्ढिं' प्रधानपरिवाररूपा दिव्या देवर्द्धिम्, 'दिव्वं देवजुइ' विशिष्टशरीराभरणादिदीप्तिरूपा दिव्यां देवद्युति 'दिव्वं देवाणुभावं' उत्तमवैक्रियकरणादिप्रभावरूपं दिव्यं देवानुभावं द्रष्टु तस्य कल्याणभाजः

होता है हो जाता है। पूर्वभवों के ज्ञान का दूसरा नाम जातिस्मरण ज्ञान है। संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों को ही यह ज्ञान होता है। यहां संज्ञी शब्द का अर्थ दीर्घकालिक अपदेश संज्ञा जिसके हो उसका नाम संज्ञी है, ऐसा विवक्षित हुआ है, क्यों कि संज्ञा तीन प्रकार की होतीहै १, हेतुवाद संज्ञा २, दृष्टिवाद संज्ञा, और दीर्घकालिकोपदेश संज्ञा। इन में विकलेन्द्रियजीवों में जो संज्ञा होती है उसका नाम हेतुवादसंज्ञा है। सम्यग्दृष्टि के जो संज्ञा होती है उसका नाम दृष्टिवादसंज्ञा है। तथा समनस्क संज्ञीजीव के जो संज्ञा होती है उसका नाम दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा है। जातिस्मरणज्ञान इसी संज्ञावाले संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव के होता है। दीर्घकालिकोपदेश संज्ञावाले पंचेन्द्रिय समनस्कजीव जातिस्मरणज्ञान से अपना संयमरूप तथा मोक्षरूप उत्तमस्थान जानलेते हैं। यह तीसरा चित्तसमाधिस्थान है ३। प्रधान परिवाररूप दिव्य देवर्द्धि को तथा विशिष्ट शरीराभरणादि दीप्तिरूप दिव्य देवद्युति और उत्तम वैक्रिय

नथी. તે થવા લાગે છે પૂર્વભવોના જ્ઞાનનુ બીજુ નામ જાતિસ્મરણ જ્ઞાન છે. સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને જ આ જ્ઞાન થાય છે. દીર્ઘકાલિક ઉપદેશ સંજ્ઞા જેને હોય તેને અહીં સંજ્ઞી ગણવામા આવેલ છે, કારણ કે સંજ્ઞા ત્રણ પ્રકારની હોય છે. (૧ હેતુવાદ સંજ્ઞા, (૨) દૃષ્ટિવાદ સંજ્ઞા, અને (૩) દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞા વિકલેન્દ્રિય જીવોને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને હેતુવાદ સંજ્ઞા કહે છે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને દૃષ્ટિવાદ સંજ્ઞા કહે છે તથા સમનસ્ક સંજ્ઞી જીવને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞા કહે છે જાતિસ્મરણ જ્ઞાન એ જ સંજ્ઞાવાળા સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવને થાય છે દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞાવાળા પંચેન્દ્રિય સમનસ્ક જીવો જાતિસ્મરણ જ્ઞાનથી પોતાનુ સંયમરૂપ તથા મોક્ષરૂપ ઉત્તમસ્થાન જાણી લે છે. તે "ત્રીજુ ચિત્તસમાધિસ્થાન ગણાય છે પ્રધાન પરિવારરૂપ દિવ્ય દેવર્દ્ધિને તથા વિશિષ્ટ શરીરાભર-

मापोः असमुत्पन्नपूर्वं देवदर्शने समुत्पद्येत । देवा हि आत्मान दर्शयन्ति, दर्शनाच्च आगमार्थे श्रद्धादार्ढ्यं धर्मेऽतिशयो मानश्च सजायते ततश्चित्तसमाधिरिति देवदर्शनं चतुर्थं चित्तसमाधिस्थानम् । 'आहिणाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जित्ता आहिणा लोगं जाणित्तए' 'आहिणा' अवधिना नियत द्रव्यक्षेत्रकालभावरूपया मर्यादया 'लोगं जाणित्तए' लोकं ज्ञातुं लोकज्ञानापेक्षयेत्यर्थः, तस्य असमुत्पन्नपूर्वम् 'ओहिनाणं' अवधिज्ञानं समुत्पद्येत । विशिष्टज्ञानाद्धि चित्तसमाधिरुत्पद्यते । इति पञ्चमं समाधिस्थानम् । 'आहिदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जित्ता ओहिणा लोगं पासित्तए' अवधिना लोकं 'पासित्तए' द्रष्टुम् असमुत्पन्नपूर्वमवधिदर्शनं तस्य समुत्पद्येत । विशिष्टदर्शनादपि चित्तसमाधिर्भवति । इति षष्ठं, चित्तसमाधिस्थानम् ।

करणादि प्रभावरूप दिव्य देवानुभाव को देखने के लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को असमुत्पन्न देवदर्शन हो जाता है । ऐसे व्यक्तियों को देव खुद आकर दर्शन देते हैं । देवदर्शन से ऐसे महानुभावों की दृढश्रद्धा आगमोक्त अर्थों में हो जाती है । धर्म में अतिशय तथा अत्यन्त बहुमान हो जाता है । इससे चित्तसमाधि होती है । इस तरह देवदर्शन रूप यह चतुर्थ चित्तसमाधिस्थान है अब नियतद्रव्य क्षेत्र, काल और भावरूप अवधि-मर्यादा-को लेकर लोक को जानने के लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को पहिले उत्पन्न नहीं हुआ ऐसा अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है । विशिष्टज्ञान से चित्तसमाधि उत्पन्न होती है । यह पांचवां चित्तसमाधिस्थान है । विशिष्टदर्शन से भी चित्तसमाधि होती है यह बात सूत्रकार अब इस सूत्र द्वारा प्रकट करते हैं—द्रव्य क्षेत्रादिकी मर्यादा लेकर वह कल्याण प्राप्त साधु लोक को देखने के लिये असमुत्पन्नपूर्व अवधिदर्शन को

આદિ દીપ્તિરૂપ દિવ્ય દેવપ્રભાવ અને ઉત્તમ વૈક્રિય રૂપવિકુર્વણા પ્રભાવરૂપ દિવ્ય દેવાનુભાવને જોવાને માટે તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અસમુત્પન્ન પૂર્વ (પૂર્વે કદી પણ ન હોય એવું) દેવદર્શન થાય છે જેથી વ્યક્તિવિશેષ દેવ પોતે જ આવીને દર્શન આપે છે દેવદર્શનને લીધે આગમોક્ત અર્થોની તે મહાનુભાવોની શ્રદ્ધા દૃઢ બને છે ધર્મ પ્રત્યે અતિશય તથા અત્યંત માન થાય છે તેથી ચિત્તસમાધિ થાય છે આ રીતે દેવદર્શન રૂપ આ ચોથું સમાધિસ્થાન છે નિયત દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવ રૂપ અવધિ-મર્યાદા ની અપેક્ષાએ જોઈને અસમુત્પન્નપૂર્વ તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અપૂર્વ (પહેલાં ઉત્પન્ન ન થયું હોય એવું) અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે વિશિષ્ટ જ્ઞાનથી ચિત્તસમાધિ ઉત્પન્ન થાય છે આ પાંચમું ચિત્તસમાધિસ્થાન છે વિશિષ્ટ દર્શનથી પણ ચિત્તસમાધિ થાય છે એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા બતાવે છે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર આદિની મર્યાદાની અપેક્ષાએ તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુ લોકોને જોવાને માટેનું

'मणपज्जवनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा जाव मणोगए भावे जाणित्तए' 'जावमणोगए भावे' यावन्मनोगतान् भावान् ज्ञातुम्=अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रेषु संज्ञिनां पञ्चेन्द्रियाणां पर्याप्तकानां यावन्मनोगतान् भावान ज्ञातुम् तस्य असमुत्पन्नपूर्वं मनःपर्यवज्ञानं समुत्पद्येत । इति सप्तम् । 'केवलनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा केवलं लोगं जाणित्तए' केवलं=परिपूर्णं लोकं=लोक्यते दृश्यते केवलालोकेनेति लोकः=लोकालोकस्वरूपस्तम्, ज्ञातुं तस्य=साधोरसमुत्पन्नपूर्वं केवलं ज्ञानं समुत्पद्येत । केवलज्ञानस्य चित्तसमाधिभेदत्वाच्चित्तसमाधिस्थानता । इह च अमनस्कतया केवलिनश्चित्त चैतन्यमवसेयम् । इति अष्टमम् । 'केवलदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा केवल लोयं पासित्तए' केवलं लोकं द्रष्टुं तस्य पूर्वसमुत्पन्नं केवलदर्शनं समुत्पद्येत । केवलदर्शनं नवमं चित्तसमाधिस्थानम् । 'केवलिमरणं वा मरि सव्वदुक्खपहाणाय' सर्वदुःख

प्राप्त कर लेता है । यह छठवां चित्तसमाधिस्थान है ६। ढाईद्वीप समुद्रवर्ती पंचेन्द्रिय पर्याप्तक संज्ञी जीवों के यावत् मनोगत भावो को जाननेके लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को असमुत्पन्नपूर्व मनःप्रर्यवज्ञान उत्पन्न हो जाता है। यह सातवां चित्तसमाधिस्थान है ७। परिपूर्णलोक को जानने के लिये साधु के असमुत्पन्नपूर्व केवलज्ञान उत्पन्न हो जाता है। केवलज्ञान चित्तसमाधिका एक भेदरूप है–इसलिये इसे चित्तसमाधि का स्थान कहा गया है केवलि भगवान् यद्यपि अमनस्क होते हैं परन्तु फिर भी उनका चैतन्य ही चित्तरूप है । इसलिये चित्त समाधिता उनमें घटित हो जाती है। यह आठवां चित्तसमाधिस्थान है ८। परिपूर्ण लोक को देखने के लिये केवलि–भगवान के केवलदर्शन जो असमुत्पन्नपूर्व था वह उत्पन्न हो जाता हैं । यह नवमा चित्तसमाधि-

---

અસમુત્પન્ન પૂર્વ અવધિ દર્શન પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ છઠ્ઠું ચિત્તસમાધિ સ્થાન છે અઢી દ્વીપ સમુદ્રવર્તી પાંચેન્દ્રિય પ્રર્યાપ્ત સંજ્ઞી જીવોના મનોગત ભાવોને માટે તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અપૂર્વ મન પર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે આ સાતમુ ચિત્તસમાધિસ્થાન, છે પરિપૂર્ણ લોકોને જાણવાને માટે સાધુને અપૂર્વ કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે કેવળજ્ઞાન ચિત્તસમાધિના એક ભેદ રૂપ છે, તેથી તેને ચિત્તસમાધિનું સ્થાન દર્શાવ્યું છે જો કે કેવલિ ભગવાન અમનસ્ક હોય છે, છતાં પણ તેમનુ ચૈતન્ય જ ચિત્તરૂપ છે તેથી તેમનામાં ચિત્તસમાધિતા ઘટાવી શકાય છે આ આઠમું ચિત્તસમાધિસ્થાન છે પરિપૂર્ણલોકોને જોવાને માટે કેવલિ ભગવાનમા અપૂર્વ કેવલ દર્શન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ નવમુ ચિત્તસમાધિસ્થાન છે. સમસ્ત દુ ખોનો નાશ કરવા માટે કેવ-

महाणाय=सकलस्य स्वस्तिनाशप केवलिमरण 'मरित्ता' त्रिपत्त, केवलिमरणेन शरीरत्यागं कृत्वेत्यर्थः । इदं केवलिमरण सर्वोत्कृष्ट चित्तसमाधिस्थानम् । इति दशमं चित्तसमाधिस्थानम् । पा शब्दः सर्वत्र प्रकारान्तरद्योतकः । मन्दरः खलु पर्वतः मूले दशयोजनसहस्राणि 'विक्खंभेणं' विष्कम्भेण=विस्तारेण प्रज्ञप्तः । मन्दरपर्वतस्य मूलप्रदेशा दशसहस्रयोजनविस्तारवानित्यर्थः । अरिष्टनेमि देवपनुषि ऊर्ध्वमुच्चत्वेनासीत् । कृष्णः खलु वासुदेवो दश धनुषि ऊर्ध्वमुच्चत्वे नासीत् । राम खलु बलदेवो दशधनुषि ऊर्ध्वमुच्चत्वेनासीत् । दशनक्षत्राणि 'नाण वुड्ढिकरा' ज्ञानवृद्धिकराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'मिगसिर मुगशिर, 'अद्दा' आर्द्रा 'पुस्सो' पुष्यम् 'तिण्णि य पुव्वा' त्रीणि च पूर्वाणि=पूर्वे पूर्वाणि त्रीणि पूर्वफल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपदा नामधेयानि नक्षत्राणि, मूलम्, अस्सेसा, इस्त, तथा चित्रा च दशनक्षत्राणि 'नाणस्स वुड्ढिकराणि' ज्ञानस्य वृद्धिकराणि प्रज्ञप्तानि । 'अकम्मभूमियाण' अकर्मभूमिजानां भोगभूमिसमुत्पन्नानामित्यर्थः, मनुष्याणां दश विधा 'रुक्खा' वृक्षा 'उपभोगत्ताए' उपभोगतायै उपभोगसाधनसंपादनाय 'उवत्थिया' उपस्थिता उपनता भवन्ति इत्यर्थ । ते के ? इत्याह-'मत्तगया'

स्थान है १०। समस्त दुःखों को नाश करने के लिये केवलिमरण से शरीर का त्याग करना यह सर्वोत्कृष्ट चित्तसमाधिका दशवां स्थान है १०। सुमेरु पर्वत मूल में दश हजार योजन का विस्तारवाला कहा गया है। अरिष्टनेमि भगवान् ऊँचाई में दश धनुष ऊँचे थे। इसी तरह कृष्णवासुदेव भी ऊँचाई में दस धनुष ऊँचे थे। पलभद्र-राम भी ऊँचाई में दस धनुष ऊँचे थे। दस नक्षत्र ज्ञान की वृद्धि करनेवाले कहे गये है, वे ये हैं-मृगशिर, आर्द्रा, पुष्य, पूर्वाफल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, मूल, अश्लेषा हस्त तथा चित्रा । अकर्म भूमिज मनुष्यों के उपभोग साधन संपादन के लिये ये दस प्रकार के कल्पवृक्ष उपस्थित होते हैं, वे इस

ચિત્તસમાધિનું સ્થાન કરવું તે સર્વોત્કૃષ્ટ ચિત્તસમાધિનું દશમું સ્થાન છે" મેરુ પર્વત મૂળમાં દસ હજાર યોજનના વિસ્તાર વાળો કહેલ છે અરિષ્ટનેમિ ભગવંત પ્રભુ દસ ધનુષ પ્રમાણ ઊંચા હતા એ જ પ્રમાણે કૃષ્ણ વાસુદેવ પણ દસ ધનુષ પ્રમાણ ઊંચા હતા બલભદ્ર-બલરામજી પણ દસ ધનુષ ઊંચી દસ નક્ષત્રોને જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર કહેલ છે, તે નક્ષત્રોનાં નામ આ પ્રમાણે છે-મૃગશિર, આર્દ્રા, પુષ્ય, પૂર્વાફાલ્ગુની પૂર્વાષાઢા, પૂર્વાભાદ્રપદા, મૂલ, અશ્લેષા, હસ્ત અને ચિત્રા અકર્મ ભૂમિ જ મનુષ્યોના ઉપભોગનાં સાધનો પ્રાપ્ત કરવા માટે દસ પ્રકારના કલ્પવૃક્ષો આવેલાં હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-(૧) મત્તાંગક તે મદ્ય

मत्ताङ्गका-सुखपेय परमस्वादुरसदायकाः, 'भिंगा' भृङ्गा=रत्नकटोरक-सुवर्णस्थाल प्रभृति भाजनदायिनः, 'तुडिअंगा' त्रुटिताङ्गाः=मृदङ्गादिवाद्यदायिनः, 'दीव' दीपाः=प्रदीपवत्प्रकाशकारकाः, 'जोइ' ज्योतिषः=अग्निकार्यकारिणः, 'चित्तंगा' चित्राङ्गाः=विविधसुगन्धिपुष्पदायिनः, 'चित्तरसा' चित्ररसाः=मनोभिलषित मनोज्ञभोजनदायिनः, 'मणिअंगा' मण्यङ्गाः=हारार्धहाराद्याभरणदायिनः 'गेहागारा' गेहाकाराः=गेहस्यैवाकारो येषां ते गेहाकाराः, द्विचत्वारिंशद् भूमभवनाकारपरिणता इत्यर्थः, 'अणिगिणा' अनग्नकाः अनग्नत्वसंपादका वस्त्रदायिन इत्यर्थः ॥८॥

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता। इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थीए पुढवीए दस निरयावाससयसहस्साइं पण्णत्ता। चउणत्थीए पुढवीए अत्थेगइयाणं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं जहण्णेणं दस सागरोवमाइं ठिई

प्रकार-मत्ताङ्गक-ये सुखपेय परम स्वादुरस के देनेवाले होते हैं १, भृङ्ग ये रत्नकी कटोरियो को और सुवर्ण के थाल आदि भाजनों को देते है २, त्रुटितांग-ये मृदङ्ग आदि वाद्यों को देते है ३, दीप ये उज्जवल प्रदीप का प्रकाश प्रदाता होते हैं ४, ज्योतिष-ये अग्नि के कार्य को करते है ५, चित्राङ्ग-ये विविध सुगंध से भरे हुए पुष्पों को देते है ६, चित्ररस ये मनोनुकूल मनोज्ञ भोजन प्रदान करते हैं ७। मण्यङ्ग-ये हार, अर्धहार आदि आभरणों को देते है ८, गेहाकार-ये बयालीस ४२ खंड के मकानों को देते है ९, और अनग्नक जाति के कल्पवृक्ष सुन्दर कीमती वस्त्रों को देते हैं १०॥सू० २८॥

હાર, પરમ સ્વાદિષ્ટ રસ દેનારા હોય છે (૨)ભૃંગ તે રત્નોની કટોરીઓ તથા સુવર્ણના થાળ આદિ પાત્રો દે છે (૩)ત્રુટિતાંગ તે મૃદંગ આદિ વાદ્યો દે છે દીપ તે તેજસ્વી દીવાનો પ્રકાશ દેનારાં છે. (૫) જ્યોતિષ તે અગ્નિના જેવુ કાર્ય કરે છે (૬) ચિત્રાંગ તે વિવિધ સુગંધીથી ભરપૂર પુષ્પો છે (૭) ચિત્રરસ તે મનને અનુકૂળ મનોજ્ઞ ભોજન આપે છ (૮) મણ્યંગ તે હાર અર્ધહાર, આદિ આભૂષણો આપે છે. (૯)ગેહાકાર તે બેંતાલીસ ખંડવાળા મકાનો આપે છે. અને (૧૦) અનગ્નક જાતિના કલ્પવૃક્ષ સુંદરમાં સુંદર કીમતી વસ્ત્રો આપે છે ॥સૂ ૨૮॥

पण्णत्ता। असुरकुमाराण देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दसवास-सहस्साइ ठिई पण्णत्ता। असुरिंदवज्जाण भोमिज्जाण देवाण अत्थे गइयाण जहण्णेण दसवाससहस्साइ ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराण देवाण अत्थेगइयाण दस पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता। वायरवण स्सइकाइयाण उक्कोसेण दस वाससहस्साइ ठिई पण्णत्ता। वाणम न्तराण देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दस वाससहस्साइ ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण दस पलि ओवमाइ ठिई पण्णत्ता। बम्भलोए कप्पे देवाण उक्कोसेण दस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। जे देवा घोस सुघोस महाघोस नंदिघोस सुस्सर मणोरम रम्म रम्मग रमणिज्ज मंगलावत्त बम्भलोगवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसि ण देवाण उक्को सेण दस सागरोवमाइ ठिइ पण्णत्ता। ते ण देवा दसण्ह अद्धमासाण आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसि णं देवाणं दसहि वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ, संतेगइया भवसि द्धिया जीवा जे दसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति, परिनिव्वाहस्संति, सव्वदुक्खाणमंत करिस्संति ॥सू २९॥

टीका—'इमीसे ण' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां जघन्येन दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां दश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता।

टीकार्थ—'इमीसे' इत्यादि। इस रत्नप्रभा पृथिवी में किन्हीं नारकियों की दस हजार वर्ष की जघन्य स्थिति कही गई है। इस रत्नप्रभा पृथिवी में किन्हीं

ટીકાર્થ-इमीसे इत्यादि। આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની દસ હજાર વર્ષની જઘન્ય સ્થિતિ કહેલ છે આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની

चतुर्थ्यां पृथिव्या दश नरकावासशतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि । चतुर्थ्यां खलु पृथिव्या-मस्त्येकेषाम् उत्कर्षेण दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां जघन्येन दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुर-कुमाराणां देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दशवर्ष सहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असु-रेन्द्रवर्जाणां भौमेयानां=भवनपतीनां देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां दश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'बायरवणस्सइकाइएणं' बादरवनस्पतिकायानाम् बादरकर्मोदय-वशाच्चक्षुर्ग्राह्यतां गतानां वनस्पतिकायानामित्यर्थः, उत्कर्षेण दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ताः । 'वाणमन्तराणां' व्यन्तराणां देवानां मस्त्येकेषां देवानां जघन्येन दश सहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां दश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोके कल्पे देवानामुत्कर्षेण दश सागरोप-

---

नारकियों की स्थिति दस पल्योपम की कही गई है। चौथी पृथिवी में दस लाख नरकावास हैं। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की उत्कृ-ष्टस्थिति दस सागरोपम की कही गई है। पांचमी पृथिवी में कितनेक नारकियों की जघन्य स्थिति दस सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्षकी कही गई है। असुरेन्द्रो को छोडकर भवनपति कितनेक देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की होती है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवो की दस पल्योपम की स्थिति होती है। बादरवनस्पति कायिक जीवों की उत्कृष्ट स्थिति दस हजार वर्ष की होती है। वाणव्यन्तर देवों में कितनेक देवों की जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की होती है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति दस पल्योपम की होती है। ब्रह्मलोक कल्प में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की कही गई है। लान्तक

સ્થિતિ દસ પલ્યોપમની કહી છે ચોથી પૃથ્વીમા દસ લાખ નારકાવાસ છે ચોથી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે પાચમી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓના જઘન્ય સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે અસુરકુમારે દેવોમા કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહી છે અસુરેન્દ્રો સિવાયના કેટલાક ભવન-પતિ દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે. અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ દસ પલ્યોપની હોય છે બાદર વનસ્પતિ કાયિક જીવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે વાણ વ્યન્તર દેવોમા કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે સૌધર્મ ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની દસ પલ્યોપમની સ્થિતિ હોય છે બ્રહ્મલોક કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરો-

मानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। लान्तके कल्पे देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ये देवा घोषः १ सुघोषः २ महाघोषः ३ नन्दिघोषः ४ सुस्वरः ५ मनोरमः ६ रम्यः ७ रम्यकः ८ रमणीयः ९ मङ्गलावर्तः १० ब्रह्मलोकावतंसकः विमानम्=एतेषु एकादशविमानेषु देवतयोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण दश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः स्थाना महाप्राणानाम ते अनन्ति वा माणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां दशभिर्वर्षसहस्रैः आहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये दशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥२९॥

कल्पमें किन्हीं देवोंकी जघन्य स्थिति दस सागरोपमकी कही गई है। जो देव घोष १, सुघोष २, महाघोष, ३, नन्दिघोष ४, सुस्वर ५, मनोरम६, ६, रम्य ७, रम्यक ८, रमणीय ९ मङ्गलावर्त १०, और ब्रह्मलोकावतंसक ११, इन ग्यारह विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की कही गई है, वे देव श्वास आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास क्रिया पांच महिनों के अनन्तर करते हैं। इन देवों को दस हजार वर्ष व्यतीत होने पर आहार संज्ञा उत्पन्न होती है। इन देवों में किन्हीं ऐसे भी देव होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। ये दस भव करने के बाद सिद्धि गति को प्राप्त करेंगे, आत्मिक अनंतज्ञानादिक गुणों का भोग करने वाले होंगे, समस्त कर्मों से छूटने वाले होंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जावेंगे, और सब प्रकार के दुःखों का अन्त कर देंगे।

પદ્મનો કોઇ બે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહેલ છે જે દેવો (૧) ઘોષ (૨) સુઘોષ, (૩) મહાઘોષ, (૪) નન્દિઘોષ, (૫) સુસ્વર (૬) મનોરમ (૭) રમ્ય (૮) રમણીય (૯)મંગલાવર્ત અને (૧૧) બ્રહ્મલોકાવતંસક એ અગિયાર વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે તે દેવો શ્વાસ તથા આહાર આભ્યન્તર શ્વાસોચ્છ્વાસ દેવાની ક્રિયા પાંચ મહિને કરે છે, અને તે દેવોને દસ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષા થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક એવા દેવો પણ હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ દસ ભવ કર્યા પછી સિદ્ધિ ગતિ પામશે, આત્મિક અનંત જ્ઞાનોનો ઉપભોગ કરનાર થશે સમસ્ત કર્મોથી મુક્ત થશે, એવી રીતે કૃતકૃત્ય થશે, અને બધા પ્રકારનાં દુઃખોનો અન્ત કરશે

भावार्थ यह पहिले के सूत्रों मे भावार्थ द्वारा स्पष्ट किया जा चुका है कि जहा पर शास्त्र में जो स्थिति जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट–कही गई है यदि वह यहां नहीं कही जाती है तथा जो भी और स्थिति कही जाती है "वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कथित की गई है" ऐसा जानना चाहिये। प्रथम पृथिवी में जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है यह पहिले कई भावार्थों में सूचित किया जा चुका है–वही बात यहां सूत्रकार ने सूत्रद्वारा प्रदर्शित की है। अब यहां जो दस पल्योपम की स्थिति कितनेक नारकियों की प्रगट की गई है-वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा कथन है। क्यों कि यहां उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। चौथी भूमि में नारकियों के नरकावास दस लाख हैं। ये पहिली पृथिवी में तीस लाख है, दूसरी में पचीसलाख है, तीसरी में पंद्रहलाख हैं, चौथी में दस लाख हैं, पांचमी में तीन लाख, छठी में पांच कम एक लाख और सातमी भूमि में सिर्फ पाच ही नरकावास हैं। ये नरकावास सातों भूमियों की जितनी २ मोटाई कही गई है उसके ऊपर तथा नीचे का एक एक हजार योजन छोडक बाकी के मध्यभाग में होते है। इनका विशेष वर्णन अन्य शास्त्रों से जाना जा सकता है। चौथी पृथिवी में उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की कही

ભાવાર્થ—આગલા સૂત્રોમા ભાવાર્થ દ્વારા એ સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યું છે કે જ્યા જ્યા શાસ્ત્રમા જીવોની જે જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બતાવી છે–તે જો અહી બતાવવામા ન આવે તથા જે કોઈ બીજી સ્થિતિ બતાવવામા આવે છે "તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ છે" એમ સમજવુ પહેલી પૃથ્વીમા જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે, એ વાત આગળ કેટલાક ભાવાર્થોમા સૂચિત કરવામા આવી ગઇ છે–એ જ વાત અહીં સૂત્રકારે સૂત્રદ્વારા દર્શાવી છે હવે અહી કેટલાક નારકીઓની જે દસ પલ્યોપમની સ્થિતિ દર્શાવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામા આવી છે કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે ચોથી ભૂમિમા નારકીઓના દસ લાખ નરકાવાસ છે તે પહેલી પૃથ્વીમાં ત્રીસ લાખ છે, બીજી પૃથ્વીમા પચીશ લાખ છે, ત્રીજીમા પદર લાખ છે, ચોથીમા દસ લાખ છે, પાંચમીમાં ત્રણ લાખ છે, છઠ્ઠીમાં એક લાખમાં પાચ ઓછા છે, અને સાતમીમા ફકત પાંચ જ નરકાવાસ છે તે નરકાવાસ સાતે ભૂમિયોની જેટલી જેટલી જાડાઇ કહેવામાં આવી છે. તેના ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજન છોડીને બાકીના મધ્ય ભાગમા હોય છે તેનું અધિક વર્ણન અન્ય શાસ્ત્રોમાથી જાણી શકાય છે ચોથી પૃથ્વીમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે, એ સ્થિતિ પાચમી નરકમા

अथ एकादशस्य समवायमाह—

मूलम्- एक्कारस उवासगपडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—दंसणसावए१ कयव्वयकम्मे२ सामाइयकडे३ पोसहोववासनिरए४ दिया बंभयारी रत्तिं परिमाणकडे५ दिया वि राओ वि बंभयारी असिणाई वियडभोई मउलिकडे६ सचित्तपरिण्णाए७ आरंभपरिण्णाए८ पेसपरिण्णाए९ उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए१० समणभूए११ यावि भवइ समणाउसो। लोगण्णाओ इक्कारसहिं एक्कारेहिं जोयणेहिं भावाहाए जोइ

गई है, सो यही स्थिति पांचवें नरक में जघन्य स्थिति हो सकती है। असुरकुमार देवों की जघन्य स्थिति इतनी ही कही गई है। असुरेंद्रों को छोड़कर बाकी के नागकुमार आदि नौ प्रकार के देवों की जघन्य स्थिति दश हजार वर्ष की है। असुरकुमारों में कितनेक देवों की जो यहां दशपल्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति है। वनस्पतिकाय की यहां दस हजार वर्ष की उत्कृष्ट स्थिति कही है वह भवस्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिए, क्यों कि कायस्थिति अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी प्रमाण है। व्यन्तरदेवों की भी स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की है। सौधर्म ईशान कल्प में जो दस पल्योपम की स्थिति यहां कही गई है वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। ब्रह्मलोक कल्पमें देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की है। यही स्थिति लान्तककल्प में जघन्य हो जाती है ॥सू० २९॥

જઘન્ય સ્થિતિ કહી એમ જે અસુરકુમાર દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહી છે, તથા જે વનસ્પતિ નિકાયની જઘન્ય સ્થિતિ એટલી જ કહી છે એ બંને દ્વારા સિવાયના બાકીના નાગકુમાર આદિ નવ પ્રકારના દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની જ છે અસુરકુમારોમાં કેટલાક દેવોની દસ પલ્યોપમની જે સ્થિતિ કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિ છે વનસ્પતિકાયની કહી જે દસ હજાર વર્ષની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહી છે તે ભવસ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે એમ સમજવું તથા જે આ સ્થિતિ અનંત ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી પ્રમાણ છે વ્યન્તર દેવોની સ્થિતિ પણ દસ હજાર વર્ષની છે-સૌધર્મ ઈશાન કલ્પમાં કહી જે દસ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી બ્રહ્મલોક કલ્પમાં દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે-એજ સ્થિતિ લાન્તક કલ્પમાં જઘન્ય થઈ જાય છે ॥સૂ૦ ૨૯॥

संते पण्णत्ते। जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स एक्कारसेहिं एक्कवीसेहिं जोयणेहिं जोइसे चारं चरइ। समणस्स णं भगवओ महावीरस्स एक्कारस गणहरा होत्था, तं जहा-इंदभूई, अग्गिभूई, वायुभूई, विअत्ते, सोहम्मे, मंडिए, मोरियपुत्ते, अकंपिए, अयलभाए, मेअज्जे पभासे। मूले नक्खत्ते एक्कारसतारे पण्णत्ते। हेट्ठिम गेविज्जयाणं वाणं एक्कारसमुत्तरं गेविज्ज विमानसतं भवइत्तिमक्खायं। मंदरेणं पव्वए धरणितलाओ सिहरतले एक्कारसभागपरिहीणे उच्चत्तेणं पण्णत्ते॥सू.३०॥

टीका—'एक्कारस' इत्यादि। एकादश 'उवासग पडिमाओ' उपासन्ते=सेवन्ते श्रमणान्=साधून् इति उपासकाः=श्रावकाः, तेषां प्रतिमाः=अभिग्रहरूपा उपासकप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-'दंसणसावए' दर्शनश्रावकः, तत्र-दर्शनं=सम्यक्त्वं तत्प्रतिपन्नः श्रावको दर्शनश्रावकः। यद्यपीहैकादशविधत्वं प्रतिमानमुक्तम्, तथापि प्रतिमा प्रतिमावतोरभेदोपचारात्प्रतिमावत एव निर्दे-

---

अब सूत्रकार ग्यारवें समवाय का कथन करते है—'एगारस इत्यादि।

टीकार्थ-उपासकों की ग्यारह प्रतिमा होती हैं। साधुओंकी जो सेवा करते हैं उनका नाम उपासक है। प्रतिमा नाम अभिग्रहविशेष का है। इनमें अनेकविध अभिग्रह होते है, अतः प्रतिमाएँ अभिग्रहरूप ही जाननी चाहिये। वे इस प्रकार से है—दर्शनश्रावक—सम्यक्त्व को स्वीकार करने वाला श्रावक दर्शनश्रावक कहा गया है। यद्यपि यहां पर प्रतिमाओं में ग्यारह प्रकारता कथित हुई है फिर भी प्रतिमा और प्रतिमावालों में अभेदोपचार से प्रतिमावान् का निर्देश किया गया है। इस प्रतिमा का काल एक

હવે સૂત્રકાર અગિયારમું સમવાય કહે છે—'एगारस इत्यादि।

ટીકાર્થ-ઉપાસકોની અગિયાર પ્રતિમા હોય છે. સાધુઓની જે લોકો સેવા કરે છે તેમને ઉપાસક કહે છે પ્રતિમા એટલે પ્રતિજ્ઞા તેમાં અનેક પ્રકારના અભિગ્રહ હોય છે, તેથી તે પ્રતિમાઓને અભિગ્રહરૂપ જ સમજવી. તે પ્રતિમાઓ આ પ્રમાણે છે-દર્શન શ્રાવક-સમ્યક્ત્વ અંગીકાર કરનાર શ્રાવકને દર્શન શ્રાવક કહેવામા આવેલ છે. જો કે અહી પ્રતિમાના અગિયાર ભેદ બતાવ્યા છે, તો પણ પ્રતિમા અને પ્રતિમાવાળામા અભેદોપચારની દૃષ્ટિએ પ્રતિમાવાળાનો નિર્દેશ કરાયેલ છે. આ પ્રતિમાનો કાળ એક

पः कृतः । शङ्काकाङ्क्षादिदूषणरहितस्याणुव्रतादिविशुद्धस्य सम्यग्दर्शनस्य पञ्च मासावधि स्वीकरणं सा प्रतिमा पञ्चमी । 'कयव्वयकम्मे' कृतव्रतकर्मा=कृतं विहितं व्रतानाम्=अणुव्रतादीनां कर्म=अनुष्ठानं १ ज्ञानं २ ग्रहणं ३ प्रतिसेवनं ४ लक्षणं चतुर्विधं कर्म येन स कृतव्रतकर्मा, प्रतिपन्नाणुव्रतादिरित्यर्थः । तत्र श्रवणम्=आकर्णनम्, ज्ञानम्=श्रुतस्यावबोधः, ग्रहणम्=अवबुद्धस्य स्वीकरणम्, प्रतिसेवनम्=स्वीकृतस्य परिपालनम्, इति द्विमासावधिद्वितीया उपासक प्रतिमा । 'सामाइयकडे' सामायिककृत=कृतः=विहितं सामायिकं=सावद्ययोगपरिवर्जनं निरवद्ययोगसेवनस्य रूपं येन स सामायिककृतः, आदिसाम्यादित्वात् निष्ठान्तस्य परनिपातः । अप्रतिपन्नपौषधरूपः दर्शनव्रतोपेतस्य प्रतिदिनमुभयकालं मासत्रयं यावत् सामायिककरणरूपा

मास का है। इस प्रतिमा में सम्यक् दर्शन को शंका कांक्षा आदि दोष से रहित बनाया जाता है। इस प्रतिमाधारी के अणुव्रत नहीं होते हैं। यह पहिली प्रतिमा है। दूसरी प्रतिमा का नाम कृतव्रतकर्मा है— "इस प्रतिमा का काल दो मास का है, इस प्रतिमा को धारण करने वाला उपासक (श्रावक) अपने स्वीकृत अणुव्रतादिकों के श्रवण, ज्ञान, ग्रहण और प्रतिसेवन, इन चार प्रकार की क्रिया को करता है। अर्थात्—इस प्रतिमा में अणुव्रतादिकों का श्रवण करनारे, सुने हुए का बोध करनारे, जाने हुए का ग्रहण करनारे, ग्रहण किये हुए का पालन करनार होता है२। तीसरी प्रतिमा का नाम सामायिक कृत है, इस प्रतिमावाला श्रावक जो कि सम्यग्दर्शन२ और अणु व्रतादि से युक्त होता है, तथा पौषध धारण करने रूप नियम से रहित होता है, दोनों काल प्रतिदिन, तीनमास तक सावद्ययोग परिवर्जन रूप सामायिक करता है। सावद्ययोग का परित्याग

માસનો છે આ પ્રતિમામાં સમ્યગ્દર્શનને શંકા કાંક્ષા આદિ દોષોથી રહિત બનાવવામાં આવે છે તે પ્રતિમાધારીના અણુવ્રત હોતા નથી આ પહેલી પ્રતિમા છે (૧) બીજી પ્રતિમાનું નામ કૃતવ્રતકર્મા છે—તે પ્રતિમાનો સમય બે માસનો હોય છે તે પ્રતિમા ધારણ કરનાર ઉપાસક પોતાને અંગીકાર કરેલ અણુવ્રતાદિનું શ્રવણ, જ્ઞાન, ગ્રહણ અને પ્રતિસેવન એ ચાર પ્રકારની ક્રિયાઓ કરે છે એટલે કે આ પ્રતિમા ધારણ કરનાર અણુવ્રતાદિનું શ્રવણ કરે સાંભળેલાનો બોધ કરવો જાણેલું ગ્રહણ કરેલું ગ્રહણ કરેલું પાળવું, તે ચાર પ્રકારની ક્રિયા હોય છે (૨) ત્રીજી પ્રતિમાનું નામ સામાયિકકૃત છે આ પ્રતિમા ધારણ કરવા કરે સમ્યગ્દર્શન અને અણુવ્રતાદિથી યુક્ત હોય છે તથા પૌષધ ધારણ કરવા રૂપ નિયમથી રહિત હોય છે તથા બંને પક્ષમાં દરરોજ બે વખત સાવદ્યયોગ પરિવર્જનરૂપ સામાયિક કરે છે

तृतीया प्रतिमा। 'पोसहोववासनिरए' पोषधोपवासनिरतः पोषं=पुष्टिं श्रुतचारित्रलक्षणधर्मस्य धत्ते पोषधम् आहारत्यागादिकानुष्ठानम्, तेनोपवासः=अहोरात्रयावदवस्थानं पोषधोपवासः। अथवा–पोषधं–पर्वदिनमष्टम्यादि, तत्र उपवासः=आहारशरीरसत्काराब्रह्मचर्यसावद्यव्यापारपरिवर्जनपूर्वकं वसन पोषधोपवासः, तत्र–निरतः=आसक्तः पोषधोपवासनिरतः। इति चतुर्थी प्रतिमा। पूर्वोक्त प्रतिमात्रययुक्तेनाष्टमीचतुर्दश्यमावास्यापौर्णमासीष्वाहारपोषधादिचतुर्विधं पोषधं शनिषद्यमानेन चतुर्भिर्मासैश्चतुर्थी प्रतिमा समाराधनीया भवतीतिभावः। पञ्चभिर्मासैः समाराधनीयायां पञ्चमीप्रतिमायां 'दियावभयारी रत्ति परिमाणे कडे'

करना और निरवद्ययोग का सेवन करना इसी का नाम सामायिक है३। पोषधोपवास निरत यह चौथी प्रतिमा है। श्रुतचारित्ररूपधर्म की पुष्टि जिससे हो उसका नाम पोषध है। अर्थात्–आहार आदि का त्याग रूप जो अनुष्ठान है वही पोषध है। इसे त्यागपूर्वक जो उपवास–एक दिन रात तक रहना होता है उसका नाम पोषधोपवास है। अथवा–अष्टमी आदि जो पर्व के दिवस हैं उनका नाम पोषध है, इन दिनों में–उपवास में–आहार, शरीरसंस्कार, अब्रह्म और सावद्यव्यापार; इनका त्याग पूर्वक रहना पोषधोपवास है। इस प्रतिमा के पालने की अवधि चार मास की है। इस प्रतिमा के पालन करने में निरत उपासक को पूर्वोक्त प्रतिमात्रय के आचारों का आराधन करना आवश्यक है। अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या और पौर्णमासी ये पर्वदिन हैं४। पांचवीं प्रतिमा के पालन करने की अवधि पांच मास की है–इस प्रतिमा का पालक दिन में ब्रह्मचारी

સાવદ્યયોગનો પરિત્યાગ કરવો અને નિરવદ્યયોગનુ સેવન કરવુ તેનુ નામ સામાયિક છે. (૩) પોષધોપવાસનિરત એ ચોથી પ્રતિમા છે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની જેનાથી પુષ્ટિ થાય તેનુ નામ પોષધ છે એટલે કે આહાર આદિના ત્યાગરૂપ જે અનુષ્ઠાન છે એનુ નામ જ પોષધ છે આ ત્યાગ પૂર્વક એક દિવસ અને એક રાત જે ઉપવાસ કરવો પડે છે તેને પોષધોપવાસ કહે છે અથવા આઠમ આદિ જે પર્વના દિવસો છે તેમનુ નામ પોષધ છે. તે દિવસોમા–ઉપવાસમા–આહાર, શરીર સત્કાર, અબ્રહ્મ, અને સાવદ્યવ્યાપાર, એ બાબતોના ત્યાગપૂર્વક રહેવું તે પોષધોપવાસ કહેવાય છે. આ પ્રતિમા પાળવાનો સમય ચાર માસનો છે. આ પ્રતિમાની ઉપાસના કરનાર ઉપાસકે પૂર્વોકત ત્રણે પ્રતિમાનું આરાધન કરવુ આવશ્યક ગણાય છે આઠમ, ચાદશ, અમાવાસ્યા અને પૂર્ણિમા, એ પર્વદિનો છે (૪) પાચમી પ્રતિમાનુ પાલન કરવાનો સમય પાંચ માસનો છે આ પ્રતિમાનુ પાલન કરનાર દિવસે બ્રહ્મચારી રહે છે અને રાત્રે મૈથુન સેવનની

दिवा ब्रह्मचारी रात्रौ परिमाणकृत । षष्ठी प्रतिमायां 'दिआवि राओ वि बंभयारी' दिवापि रात्रावपि ब्रह्मचारी 'असिणाई' अस्नायी स्नानपरिवर्जितः, 'वियडभोई' विकटभोजी=विकटप्रकाशे भोक्तुं शीलमस्येति विकटभोजी=रात्रौ तु सर्वथा न भुङ्क्ते किन्तु दिवापि प्रकाशयुक्त एव प्रदेशे भोक्ता, 'मउलिकडे' मुकुलीकृतः=एक कक्ष वस्त्रधारी च भवेत् । इयं षष्ठी प्रतिमा षण्मासैः समाराधनीया 'सचित्त =परिण्णाए' सचित्त परिज्ञात =सचित्तद्रव्यज्ञानपूर्वककृततद्वस्तुपरित्यागः । पूर्वोक्त षट् प्रतिमाराधकस्य प्रासुकाहारयुक्तस्य सप्तमासान् यावद् सप्तमी प्रतिमा भवति । 'आरंभपरिण्णाए' आरम्भपरिज्ञातः=स्वयं षट्कायारम्भपरित्यागी । पूर्वोक्त सप्तप्रतिमाकारिणोऽष्टौ मासान् यावत् स्वकृतारम्भपरिवर्जनरूपाऽष्टमी प्रतिमा

और रात्रि में मैथुन सेवन की मर्यादा करने वाला होता है५। छठवीं प्रतिमा में दिन में और रात्रि में दोनों समय में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किया जाता है। स्नान करने का परित्याग हो जाता है। विकट अर्थात् प्रकाशयुक्त स्थान में भोजन करता होता है। रात्रि में तो भोजन करने का सर्वथा परित्याग हो ही जाता है। इस प्रतिमा धारक एककक्ष वस्त्र धारी (धोती की एक लांग खुली रखने वाला) होता है६। सातवीं प्रतिमा का नाम सचित्तपरिज्ञात है। इस प्रतिमा के धारण करने में सचित्त द्रव्य का ज्ञानपूर्वक सचित्त वस्तु का परित्याग हो जाता है। तात्पर्य यह है कि सातवीं प्रतिमा का आराधक—उपासक पहिले की छः प्रतिमाओं के आचार का पालन करता है और प्रासुक आहारका सेवन करता है। अप्रासुक आहार का नहीं७। आठवीं प्रतिमा का नाम आरम्भपरिज्ञात है। इसके आराधन करने का काल आठ मास तक का है। इसके पालक को स्वयं

અભેદ કરનાર હોય છે (५) છઠ્ઠી પ્રતિમા ધારણ કરનાર રાત્રે તથા દિવસે બન્ને સમય બ્રહ્મચર્ય' નામનું વ્રત પાલન કરે છે સ્નાન કરવાનો પરિત્યાગ કરે છે વિકટ પ્રકાશ યુક્ત સ્થાનમાં ભોજન કરે છે, રાત્ર તો ભોજન કરવાનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે છે આ પ્રતિમા ધારણ કરનાર એકકક્ષ વસ્ત્રધારી હોય છે (એટલે અર્ધા પાટલા ને ખુલ્લા રાખનાર) હોય છે (६) સાતમી પ્રતિમાનું નામ "सचित्तपरिज्ञातु" છે આ વ્રત ધારણ કરનારી સચિત્ત દ્રવ્યજ્ઞાન પૂર્વક સચિત્ત વસ્તુનો પરિત્યાગ કરેલ છે એટલે કે સાતમી પ્રતિમાનો આરાધક ઉપાસક આચરણની છ પ્રતિમાઓના આચારોનું પાલન કરે છે, અને પ્રાસુક આહારનું (જીવ રહિત આહારનું) સેવન કરે છે અપ્રાસુક આહારનું નહીં (७) આઠમી પ્રતિમાનું નામ આરમ્ભપરિજ્ઞાત છે તેની આરાધનાનો કાળ આઠ માસનો છે તેનો આરાધક અતે આરંભનો ત્યાગ કરે છે તે આરંભત્યાગી પૂર્વોક્ત

विज्ञेया। 'पेसपरिण्णाए' प्रेष्यपरिज्ञातः=अन्यद्वाराऽऽरम्भ परित्यागीत्यर्थः। पूर्वोक्तसकलप्रतिमानुष्ठानशीलस्य श्रावकस्य षट्कायारम्भं परैरप्यकारयतो नव मासावधि नवमी प्रतिमा भवति। 'उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए' उद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः, उद्दिष्टं स्वोद्देशेन कृतं भक्तं परिज्ञातं प्रत्याख्यातं येन स उद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः स्वनिमित्तसंगदिताहारपरित्यागी। पूर्वोक्त नव प्रतिमायुक्तस्याऽऽधाकर्माद्याहार परिहारिणः क्षुरमुण्डितशिरसः सशिखंस्य वा 'गृहे सम्बन्धेकेनापि पृष्टस्य परि-

आरंभ करने का त्याग हो जाता है। यह आरंभत्यागी पूर्वोक्त सात प्रतिमाओं के आहार का पालन करता हुआ ऐसा कोई स्वयं आरंभ नहीं करता है कि जिस में षट्काय के जीवों की विराधना हो८। नवमीं प्रतिमा का नाम प्रेष्यपरिज्ञात है, इसके पालन का समय नव मास तक का है। इसमें दूसरों से भी षट्काय के आरम्भ कराने का सर्वथा त्याग कर दिया जाता है। इस प्रतिमा का आराधक प्राणी पूर्वोक्त आठ प्रतिमाओं के आचार का पालन करता हुआ इस प्रतिमा का पालन करने वाला होता है९। दशवीं तिमा का नाम उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात है। इसमें अपने उद्देश्य से बनाये आहार का परिज्ञान होने पर परित्याग हो जाता है। इस प्रतिमा का आराधक जीव अपने लिये किसी से भी आहार नहीं बनवाता है। तथा यदि कोई अपने लिये आहार बना लेता है और उसे यह ज्ञात हो जाता है कि इसने मेरे निमित्त को लेकर आहार बनाया है तो वह इस प्रकार के आहार को अपने उपयोग में नहीं लेता है। उसका परित्याग कर देता है, क्यों कि इस प्रकार का आहार आधा-

સાત પ્રતિમાઓના આચારનું પાલન કરેલ છે. અને એવો કોઇ પણ આરંભ કરતો નથી કે જેમા છ કાયના જીવોની વિરાધના થાય (૮) નવમી પ્રતિમાનું નામ પ્રેષ્યપરિજ્ઞાત છે. તેના પાલનનો કાળ નવ માસનો છે તે પ્રતિમાના આરાધકે બીજા લોકો પાસે પણ છ કાયના જીવોની વિરાધના થાય એવો આરંભ કરાવવાનો પરિત્યાગ કરવો પડે છે. આ પ્રતિમાનું આરાધન કરનાર જીવ પૂર્વોકત આઠ પ્રતિમાઓના આચારનું પાલન કરતો કરતો આ પ્રતિમાનું પાલન કરનાર થાય છે (૯) દસમી પ્રતિમાનું નામ 'उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात' છે તે પાળનાર પોતાને નિમિત્તે આહાર બન્યો છે એવું જાણવા મળેથી તેનો પરિત્યાગ કરે છે--આ પ્રતિમાનો આરાધક જીવ પોતાને માટે કોઇની પણ પાસે આહાર બનાવરાવતો નથી તથા કોઈ તેના માટે આહાર બનાવે અને તે વાતની તેને ખબર પડે કે લોકો મારા નિમિત્તે આહાર બનાવ્યો છે, તો તે એવા આહારને પોતાના ઉપયોગમા લેતો નથી-તેનો પરિત્યાગ કરે છે, કારણ કે તે પ્રકારનો આહાર આધાકર્મ આદિ દોષોથી દૂષિત ગણાય છે તે

दिवा ब्रह्मचारी रात्रौ परिमाणकृत । षष्ठी प्रतिमार्या 'दिआवि राओ वि बंभचारी' दिवापि रात्रावपि ब्रह्मचारी 'असिणाई' अस्नायी स्नानपरिवर्जित', 'विअडभोई' विकटभोजी=विकटप्रकाशे भोक्तु शीलमस्यति विकटभोजी=रात्रौ तु सर्वथा न भुङ्क्ते किन्तु दिवापि प्रकाशयुक्त एव प्रदेशे भोक्ता, 'मउलिकडे' मुकुलीकृत=एक वस्त्र धारी च भवत् । इय षष्ठी प्रतिमा षण्मासैः समाराधनीया 'सचित्त =परिण्णाए' सचित्त परिज्ञात =सचित्तद्रव्यज्ञानपूर्वकसकलसचित्तवस्तुपरित्यागः । पूर्वोक्त षट् प्रतिमाराधकस्य प्रासुकाहारयुक्तस्य सप्तमासान यावत् सप्तमी प्रतिमा भवति । 'आरम्भपरिण्णाए' आरम्भपरिज्ञात =स्वय षट्कायारम्भपरित्यागी । पूर्वोक्त सप्तप्रतिमाकारिणोऽष्टौ मासान् यावत् स्वकृतारम्भपरिवर्जनरूपाऽष्टमी प्रतिमा

અને રાત્રિમાં મૈથુન સેવન કી મર્યાદા કરને વાલા હોતા હૈ૫। છઠ્ઠી પ્રતિમા મેં દિન મેં ઔર રાત્રિ મેં દોનોં સમય મેં બ્રહ્મચર્યવ્રત કા પાલન કિયા જાતા હૈ। સ્નાન કરને કા પરિત્યાગ હો જાતા હૈ। વિકટ અર્થાત્ પ્રકાશયુક્ત સ્થાન મેં ભોજન કરના હોતા હૈ। રાત્રિ મેં તો ભોજન કરને કા સર્વથા પરિત્યાગ હો હી જાતા હૈ। ઇસ પ્રતિમા ધારક એકવસ્ત્ર ધારી (ધોતી કી એક લાંગ ખુલી રખને વાલા) હોતા હૈ૬। સાતવીં પ્રતિમા કા નામ સચિત્તપરિજ્ઞાત હૈ। ઇસ પ્રતિમા કો ધારણ કરને મેં સચિત્ત દ્રવ્ય કા જ્ઞાનપૂર્વક સચિત્ત વસ્તુ કા પરિત્યાગ હો જાતા હૈ। તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સાતવીં પ્રતિમા કા આરાધક–ઉપાસક પહિલે કી છહ પ્રતિમાઓં કે આચાર કા પાલન કરતા હૈ ઔર પ્રાસુક આહારકા સેવન કરતા હૈ। અપ્રાસુક આહાર કા નહીં૭। આઠવીં પ્રતિમા કા નામ આરમ્ભપરિજ્ઞાત હૈ। ઇસકે આરાધન કરને કા કાલ આઠ માસ તક કા હૈ। ઇસકે પાલક કો સ્વયં

અને રાત્રિમાં મૈથુન સેવન કી મર્યાદા કરવાવાળા હોય છે (૫) છઠ્ઠી પ્રતિમા ધારણ કરનાર સાધુ દિવસે, તથા રાત્રે બન્ને સમય બ્રહ્મચર્ય પાલન કરે છે સ્નાન કરવાનો પરિત્યાગ કરે છે વિકટ પ્રકાશ યુક્ત સ્થાનમાં ભોજન કરે છે, તથા તો ભોજન કરવાનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે છે આ પ્રતિમા ધારણ કરનાર એકવસ્ત્રધારી હોય છે (જેને બાંધ્યા પર વસ્ત્ર ન બનાવે) હોય છે (૬) સાતમી પ્રતિમાનું નામ "सचित्तपरिज्ञात" છે આ વ્રત ધારણ કરવામાં સચિત્ત દ્રવ્યજ્ઞાન પૂર્વક સચિત્ત વસ્તુનો પરિત્યાગ કરાય છે એટલે કે સાતમી પ્રતિમાનો આરાધક ઉપાસક આચરણની છ પ્રતિમાઓના આચારોનું પાલન કરે છે, અને પ્રાસુક આહારનું (જીવ રહિત આહારનું) સેવન કરે છે અપ્રાસુક આહારનું નહીં (૭) આઠમી પ્રતિમાનું નામ આરમ્ભપરિજ્ઞાત છે તેની આરાધનાનો કાળ આઠ માસનો છે તેનો આરાધક સ્વતે આરંભનો ત્યાગ કરે છે તે આઠ સંખ્યાની પૂર્વોક્ત

लभवेशे सति 'श्रमणोपासकाय प्रतिमाप्रतिपन्नाय भिक्षां देहि' इति ब्रुवाणस्य 'कस्त्वमिति पृष्टस्य 'श्रमणोपासकोऽहं' मितिब्रुवाणस्य एकादशमासान् यावदेकादशी प्रतिमा भवति। 'लोगंताओ' लोकान्तात्=तिर्यग्लोकान्तात् 'एक्कारसएहिं एक्कारेहिं जोयणेहिं' एकादशशतैः एकादशभिर्योजनैः एकादशाधिकैकादशतयोजनैः कृत्वा 'अबाहाए' अबाधया अन्तरेण 'जोइसंते' ज्योतिषान्तः=ज्योतिश्चक्रान्तभागः प्रज्ञप्तः, अर्थात्-लोकान्तादेकादशाधिकैकादशशतयोजनदूरे ज्योतिश्चक्रं प्रारभ्यते। जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य 'एक्कारससएहिं एक्कवीसेहिं जोयणेहिं' एकादशशतैरेकविंशत्यायोजनैः एकविंशत्यधिकैकादशशतयोजनैः कृत्वा दूरेण 'जोइसं' ज्योतिषं ज्योतिश्चक्रं 'चारं' भ्रमणं 'चरइ' चरति=करोति। श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य एकादश गणधरा आसन्, तद्यथा-'इंदभूइ' इन्द्रभूतिः१,

तियों का यह पालन करता हुआ भिक्षा के निमित्त जब अपने कुलके घरमें जाता है तब वहां-"प्रतिमाप्रतिपन्न श्रमणोपासक के लिये भिक्षा दो" इस प्रकार कहता है। जब उससे कोई पूछता है कि तुम कौन हो तब उत्तर में यह कहता है कि मै श्रमणोपासक हूं। जब कोई वन्दना करने लगता है तो वह कहता है मैं श्रमणोपासक-श्रावक हू। इस प्रतिमा को आराधन करने का काल ग्यारहमास हैं। ग्यारह महीने तक इस प्रतिमा का पालन किया जाता है। लोकान्त से अर्थात् तिर्छालोक के अन्तसे ग्यारह सो ग्यारह (१११९) योजन दूर पर ज्योतिश्चक्र प्रारंभ होता है। जंबूद्वीप नामके द्वीप में ग्यारहसौ इकीस (११२१) योजन सुमेरु को छोडकर ज्योतिश्चक्र भ्रमण करता है। श्रमण भगवान् महावीर के ग्यारह गणधर थे। वे इस प्रकार से हैं-इंद्रभूति१, अग्निभूति२,

નિમિત્તે પોતાના કુટુંબીઓનાં ઘરે જાય છે ત્યારે તે આ પ્રમાણે બોલે છે "પ્રતિમા યુક્ત શ્રમણોપાસકને માટે ભિક્ષા આપો" જ્યારે તેને કોઇ પૂછે છે કે "તમે કોણ છો?" ત્યારે તે જવાબ આપે છે કે "હું શ્રમણોપાસક છું." ને તેમને કોઇ વંદણા કરવા લાગે છે તો તે કહે છે કે "હું શ્રમણોપાસક શ્રાવક છું" અગિયાર માસ સુધી આ પ્રતિમાનુ પાલન કરવામા આવે છે (૧૧)

લોકાન્તથી એટલે કે તિરકસ લોકના અન્તથી એક હજાર એક સો અગિયાર (૧૧૧૧) યોજનને અંતરે જ્યોતિશ્ચક્રનો પ્રારંભ થાય છે જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં અગિયાર સો એકવીસ (૧૧૨૧) યોજન પ્રમાણ સુમેરુને છોડીને જ્યોતિશ્ચક્ર ભ્રમણ કરે છે. શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના અગિયાર ગણધર હતા, તેમના નામ નીચે પ્રમાણે છે-

ज्ञातविषय जानामि अपरिज्ञातविषय न जानामी' ति ब्रुवाणस्य दशमासान् यावद्दशमी प्रतिमा भवति। 'समणभूए यावि भवइ समणाउसो' श्रमणभूतश्चापि भवति श्रमणायुष्मन्! हे श्रमण! हे आयुष्मन्जम्बूः! पूर्वोक्त दशविधप्रतिमाप्रतिपन्न श्रावकः श्रमणभूतः श्रमणसदृशश्चापि भवति। भूतशब्दः सदृशार्थक। अयं भाव—उपरिसमुद्दिष्ट सकलप्रतिमासमुपेत्य क्षुरमुण्डितशिरसो लुञ्चितशिरसो वा परिगृहीतसाधुवेषस्य ईर्यासमित्यादिक श्रमणधर्ममनुपालयतो भिक्षार्थं स्वकृ

कर्म आदि दोषों से दूषित माना गया है। यह अपने बालों को क्षुरा से बनवाता है और शक्ति हो तो केशालुंचन भी करवाता है। यदि शिखा रखना चाहे तो शिखा रख सकता है। घर के संबंध में यदि कोई इससे पूछता है तो यह जिस विषय को जानता है उस विषय में 'हाँ' कर देता है और जिस विषय को नहीं जानता है उस विषय में 'ना' कर देता है। इस प्रतिमा के पालन करने का काल दस महिने तक का है१०। ग्यारहवीं प्रतिमा का नाम श्रमणभूत है जम्बूस्वामी को समझाते हुए सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि हे श्रमण आयुष्मन्! जंबू! इन पूर्वोक्त दश विध प्रतिमाओं को पालन करता हुआ श्रावक ग्यारहवीं प्रतिमाका स्वीकार करनेपर श्रमण जैसा हो जाता है। यहां भूतशब्द सदृश अर्थ का वाचक है। इसका भाव इस प्रकार है—जब यह पूर्वोक्त इन समस्त प्रतिमाओं के पालन करने में निष्णात हो जाता है तब यह चाहे अपने केशों को क्षुरा से उस्तरवाय; या इनका स्वयं लुञ्चन करे साधु जैसा हो जाता है। इसकी वेषभूषा साधु जैसी होती है। ईर्यासमिति आदि पांच समि

અભ્યાસો પોતાના બાળ કપાવે છે અને તેની દીક્ષા અવસ્થા જો શિખા રાખી હશે તો તેને પ્રેમ પૂર્વક વિષયમાં પૂછે તો જે વિષયની તેને જાણ હોય તે વિષયનો જવાબ હા આપે છે અને જે બાબતની તેને જાણ ન હોય તેનો જવાબ ના માં આપે છે આ પ્રતિમાની આરાધનાનો કાળ દસ માસનો છે (૧૦) અગિયારમી પ્રતિમાનું નામ 'શ્રમણભૂત' છે જંબૂસ્વામીને સમજાવતા સુધર્મા સ્વામી કહે છે કે હે શ્રમણ આયુષ્યમન્! હે જંબૂ! આ પૂર્વોક્ત પ્રકારની પ્રતિમાઓનું પાલન કરનાર શ્રાવક શ્રમણ જેવો "થઈ જાય છે" અહીં ભૂત શબ્દનો અર્થ સમાન' થાય છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—જ્યારે તે પૂર્વોક્ત સઘળી પ્રતિમાઓનું પાલન કરવામાં નિષ્ણાત થઈ જાય છે ત્યારે સાધુ જેવો જ બની જાય છે—પછી ભલે તે વાળને અસ્ત્રા વડે મુંડાવતો હોય કે પોતે જ તેનો લોચ કરતો હોય પહેરવેશ સાધુ જેવો હોય છે ઇર્યાસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિઓનું પાલન કરતો હોવો તે બાબતે ભિક્ષાને

योजनसहस्रे एकादशभिरपहृते नवयोजन सहस्रं लभ्यते। तस्मिन् मन्दरस्य पृथ्वीसमतलस्य दशसहस्रयोजनप्रमाणविष्कम्भतो निष्कासितेऽवशिष्यते एकयोजनसहस्रम्। एतत् एकयोजनसहस्रं मन्दरशिखरस्य विष्कम्भो भवतीति ॥सू.३०॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं इक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं एक्कारस सागरोवमाई ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा बंभं सुबंभं बंभावत्तं बंभप्पभं बंभकंतं बंभवण्णं बंभलेसं बंभज्झयं बंभसिंगं बंभसिट्ठं बंभकूडं बंभुत्तरवडिसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा एक्कारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू.३१॥

भाग देने पर नव हजार लब्ध रहता है। उस नौ हजार लब्ध को, मन्दर पर्वत के पृथ्वी समतलस्थित दस हजार योजन विष्कम्भ में से घटाने पर एक हजार योजन अवशिष्ट रहता है। यह एक हजार योजन मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ समझना चाहिये ॥सू. ३०॥

નને, મન્દર પર્વતના પૃથ્વીસમતલ વિસ્તાર દસ હજાર યોજનમાથી બાદ કરતા એક હજાર યોજન બાકી રહે છે તો મન્દર પર્વતના શિખરનો વિષ્કંભ-વિસ્તાર એક હજાર યોજન સમજ ા. ॥સૂ ૩૦॥

'अग्गिभूई' अग्निभूतिः२, 'वायुभूई' वायुभूति, 'वियत्ते' व्यक्त ४, 'सोहम्मे' सुधर्मा, मंडिए' मण्डित ६, 'मोरियपुत्ते' मौर्यपुत्र, 'अकंपिए' अकम्पितः८, अचलभाए' अचलभ्राता९, 'मेअज्जे' मेतार्यः१०, 'पभास''प्रभासः११। मूलनक्षत्र मेकादशतारक मस्तम्। हेट्ठिम गेविज्जयाणं देवाणं' अधस्तनग्रैवेयकाणां देवानाम् एकादशोत्तर ग्रैवेयकविमानशतम्=एकादशाधिकैकशतग्रैवेयकविमानानि सन्ति 'विमाणसया' इत्याख्यातम्। मन्दरः खलु पर्वतः परणितलाओ सिहरतले' परणितलात् शिखरतलेऽपेक्षया शिखरप्रदेशे 'एक्कारसभागपरिहीणे' एकादशभागपरिहीणः एकादशभागन्यून उच्चत्वेन प्रज्ञप्तः। अथेदं बोध्यम्—मन्दरस्य पृथ्वीसमतले यावान् विष्कम्भस्तथो मन्दरोच्चतायाः एकादश भागमपकृत्य शिखरे तद्विष्कम्भो बोध्यः। अयं भावः—मन्दरपर्वतस्य पृथ्वीसमतले दशसहस्रयोजनपरिमितो विष्कम्भः, उच्चता च मन्दरस्य नवनवतिसहस्रयोजनपरिमिता। नवनवति

वायुभूति३, व्यक्तस्वामि४, सुधर्मास्वामि५, मण्डित६, मौर्यपुत्र७, अकम्पित८, अचलभ्राता९, मेतार्य१० और प्रभास ११। मूलनक्षत्र ग्यारह तारों वाला है। अधस्तन ग्रैवेयक निवासी देवों के एक सौ ग्यारह (१११) ग्रैवेयक विमान हैं। इस प्रकार प्रभुने कहा है। सुमेरु पर्वत का धरणितल की अपेक्षा शिखरप्रदेश में एकादशभाग न्यून है। यहाँ यह समझना चाहिये कि—मंदर पर्वत का पृथ्वी के समतल भाग में जितना विष्कम्भ (स्थूलता) है, उसमें से मन्दर पर्वत की उच्चता का ग्यारहवाँ भाग निकाल लेने पर जो अवशिष्ट रहता है वह मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ होता है। इसका खुलासा इस प्रकार है—पृथ्वी के समतल में मन्दर (मेरु)पर्वत का विष्कम्भ दस हजार योजन का है और मन्दर पर्वत की ऊँचाई निन्यानवे हजार योजन है। निन्यानवे हजार को ग्यारह का

---

(१) अग्निभूति, (२) अग्निभूति, (३) वायुभूति, (४) व्यक्त, (५) सुधर्मा, (६) मण्डित, (७) मौर्यपुत्र (८) अकम्पित (९) अचलभ्राता, (१०) मेतार्य अने (११) प्रभास मूल नक्षत्र अभिमान तारावाळु छे अधस्तन ग्रैवेयक निवासी देवोनां जेह सो अभियान (१११) ग्रैवेयक विमान छे जेम अमवाने कहु छे सुमेरु पर्वत विस्तारमां धरणितलनी अपेक्षाओ शिखर प्रदेशमां अभियान भाग न्यून (ओछो) छे जेटले ते मेरु पर्वतनी उपरीतना भागमां जेटलो पहोळाइ छे, तेमाथी मेरु पर्वतनी ऊंचाइनो अभियारमो भाग भाद करतां जे बाकी रहे ते मन्दरपर्वतना शिखरनो विष्कंभ छे तेनु स्पष्टीकरणु आ प्रमाणे छे—पृथ्वीना समतल पर मन्दर पर्वतनो विष्कंभ-विस्तार-दस हजार योजननो छे मन्दर पर्वतनी ऊंचाई नवाणु हजार योजन छे तेनो अभियारमो भाग नव हजार योजन थाय छे ते नव हजार योज

योजनसहस्रे एकादशभिरपहृते नवयोजन सहस्रं लभ्यते। तस्मिन् मन्दरस्य पृथ्वीसमतलस्य दशसहस्रयोजनप्रमाणविष्कम्भतो निष्कासितेऽवशिष्यते एकयोजनसहस्रम्। एतत् एकयोजनसहस्रं मन्दरशिखरस्य विष्कम्भो भवतीति॥सू.३०॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं इक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं एक्कारस सागरोवमाई ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा बंभं सुबंभं बंभावत्तं बंभप्पभं बंभकंतं बंभवण्णं बंभलेसं बंभज्झयं बंभसिंगं बंभसिट्ठं बंभकूडं बंभुत्तरवडिसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा एक्कारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति॥सू.३१॥

भाग देने पर नव हजार लब्ध रहता है। उस नौ हजार लब्ध को, मन्दर पर्वत के पृथ्वी समतलस्थित दस हजार योजन विष्कम्भ में से घटाने पर एक हजार योजन अवशिष्ट रहता है। यह एक हजार योजन मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ समझना चाहिये॥सू. ३०॥

નને, મન્દર પર્વતના પૃથ્વીસમતલ વિસ્તાર દસ હજાર યોજનમાથી બાદ કરતાં એક હજાર યોજન બાકી રહે છે તો મન્દર પર્વતના શિખરનો વિષ્કમ્ભ–વિસ્તાર એક હજાર યોજન સમજ ।. ॥સૂ ૩૦॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणामेकादश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणामेकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमारार्याणां देवानामस्त्येकेषामेकादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानामेकादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । लान्तके कल्पे अस्त्येकेषां देवानामेकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ये देवा ब्रह्मब्रह्मावतंसकब्रह्मप्रभब्रह्मकान्तं ब्रह्मवर्णं ब्रह्मलेश्यं ब्रह्मध्वजं ब्रह्मशृङ्गं ब्रह्मसृष्टं ब्रह्मकूटोत्तरावतंसकं विमानम्=एषु द्वादशविमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, तेषां खलु देवानाम् एकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः एकादशानामर्द्धमासानामानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां

टीकार्थ–'इमीसे णं' इत्यादि । इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों ग्यारह की पल्योपमकी स्थितिकही गई है । पंचमी भूमि में कितनेक नारकियों की ग्यारह सागरोपम की स्थिति कही गई है । असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह पल्योपम की कही गई है । सौधर्म और ईशान, इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह पल्योपम की होती है । लान्तककल्प में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह सागरोपम की कही गई है । जो देव, ब्रह्म१, ब्रह्मावर्त२, ब्रह्मप्रभ३, ब्रह्मकान्त४, ब्रह्मवर्ण५, ब्रह्मलेश्य६, ब्रह्मध्वज७, ब्रह्मशृंग८, ब्रह्मसृष्ट९, ब्रह्मकूट१०, और ब्रह्मोत्तरावतंसक११, इन बारह विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की स्थिति ग्यारह सागरोपम की होती है । वे देव ग्यारह अर्धमासों के अनन्तर बाह्य आभ्यन्तरिक

टीकार्थ –'इमीसे णं' इत्यादि । આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની અગિયાર પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે પાંચમી ભૂમિમાં કેટલાક નારકીઓની અગિયાર સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર પલ્યોપમની કહી છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર પલ્યોપમની હોય છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) બ્રહ્મ, (૨) બ્રહ્મવર્ત (૩) બ્રહ્મપ્રભ, (૪) બ્રહ્મકાન્ત, (૫) બ્રહ્મવર્ણ (૬) બ્રહ્મ લેશ્ય, (૭) બ્રહ્મધ્વજ (૮) બ્રહ્મશૃંગ, (૯) બ્રહ્મસૃષ્ટ (૧૦) બ્રહ્મકૂટ અને (૧૧) બ્રહ્મોત્તરાવતંસક, એ બાર વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની સ્થિતિ અગિયાર સાગરોપમની હોય છે તે દેવો સાડાપાંચ મહિને બાહ્ય તથા આભ્ય

खलु देवानामेकादशसहस्रवर्षान्ते आहारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये एकादशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू. ३१॥

अथ द्वादशं समवायमाह—

मूलम्—बारस भिक्खुपडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—मासिआ भिक्खुपडिमा, दोमासिआ भिक्खुपडिमा, तिमासिआ भिक्खुपडिमा, चउमासिया भिक्खुपडिमा, पंचमासिया भिक्खुपडिमा, छमासिया भिक्खुपडिमा, सत्तमासिया भिक्खुपडिमा, पढमा सत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा, दोच्चा सत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा, अहोराइया भिक्खुपडिमा, एगराइया भिक्खुपडिमा। दुवालसविहे संभोगे पण्णत्ते, तं जहा—उवहीसुयभत्तपाणे अंजलीपग्गहेत्ति य। दायणे य निकाये य अब्भुट्ठाणेइ यावरे ॥१॥ किइकम्मस्स य करणे, वेयावच्चकरणेइ य। समोसरणं संनिसिज्जा य कहाए य पवंधणे ॥२॥ दुवालसावत्ते किइकम्मे पण्णत्ते, तं जहा—दुओणंय जहाजोयं किइकम्मं वारसावयं। चउसिरं तिगुत्तं च दुपवेसं एगनिक्खम ॥१॥ विजया णं रायहाणी दुवालस जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ता। रामे णं वलदेवे

श्वासोच्छास ग्रहण क है। उन देवों को ग्यारह हजार वर्ष निकलने के अनन्तर ही आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक भवसिद्धिक जीव ग्यारह भव करने के बाद सिद्धिगति को पाने वाले होंगे, आत्मिक अनंत ज्ञानादिक गुणों के भोक्ता बनेंगे, समस्त कर्मों से छूट जावेंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जावेंगे, और सब दुःखों का अंत करदेंगे॥सू० ३१॥

न्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण કરે છે તે દેવોને અગિયાર હજાર વર્ષ બાદ આહાર સજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમા કેટલાક ભવસિદ્ધિક હોય છે, જે અગિયાર ભવ કર્યા પછી સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્મિક અનન્ત જ્ઞાનાદિક ગુણોના ભોક્તા થશે, સમસ્ત કર્મોથી છૂટી જશે, દરેક રીતે કૃતકૃત્ય થશે, અને સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત કરી નાખશે ॥સૂ ૩૧॥

दुवालसवासस्याइ सव्वाउय पालित्ता देवत्त गए। मंदरस्स णं पव्वयस्स चूलिया मूले दुवालस जोयणाइ विक्खम्भेण पण्णत्ता। जबू दीवस्स ण दीवस्स वेइया मूले दुवालस जोयणाइ विक्खम्भेण पण्णत्ता। सव्वजहण्णिया रई दुवालस मुहुत्तिया पण्णत्ता। एव दिवसो वि नायव्वो। सव्वट्ठ सिद्धस्स ण महाविमाणस्स उवरिल्लाओ थुभियग्गाओ दुवालस जोयणाइ उड्ढ उप्पइत्ता ईसिपब्भार नाम पुढवी पण्णत्ता। ईसिपब्भाराए ण पुढवीए दुवालसनामधेज्जा पण्णत्ता, त जहा—ईसित्ति वा ईसिपब्भाराइ वा तणूइवा तणूयत्तरित्ति वा सिद्धित्ति वा सिद्धालएत्ति वा मुत्तीति वा मुत्ताळेएति वा लवेत्ति वा लवग्गसत्तिलयाइ वा लोगपरिपूरणेति वा लोगग्गचूलियाइ वा॥सू ३२॥

टीका—'बारस' इत्यादि। द्वादश 'भिक्खुपडिमाओ' भिक्षुप्रतिमाः=भिक्षूणां साधूनां प्रतिमा अभिग्रहविशेषरूपा, भिक्षुप्रतिमा महात्माः, तद्यथा—मासिकी भिक्षुप्रतिमा=मासावधि भिक्षुप्रतिमा। तत्र प्रथमे मासे प्रतिदिनमन्नपानयोरेकैका दत्तिर्भिक्षुणा ग्राह्या। द्वितीया द्विमासिकी भिक्षुप्रतिमा। द्वितीयस्मिन्

अब सूत्रकार बारहवें समवाय को प्रकट करते हैं-'बारस' इत्यादि।

टीकार्थ-बारह भिक्षुप्रतिमाएँ होती हैं-जो इस प्रकार हैं-एक मास की प्रथम भिक्षुप्रतिमा, दो मासकी द्वितीय भिक्षुप्रतिमा, तीन मास की तीसरी भिक्षुप्रतिमा, चारमास की चौथी भिक्षुप्रतिमा होती है। एकमास तक की जो पहिली भिक्षुप्रतिमा है उसमें प्रथम मास में प्रतिदिन भिक्षु को अन्नपान की एक एक दत्ति ग्रहण करनी होती है। द्वितीय

હવે સૂત્રકાર બારમું સમવાય પ્રગટ કરે છે—'बारस इत्यादि'

ટીકાર્થ-બાર ભિક્ષુ પ્રતિમાઓ હોય છે જે આ પ્રમાણે છે—પ્રથમ ભિક્ષુપ્રતિમા એક માસની, બીજી ભિક્ષુપ્રતિમા બે માસની ત્રીજી ભિક્ષુપ્રતિમા ત્રણ માસની અને ચોથી ભિક્ષુપ્રતિમા ચાર માસની હોય છે એક માસની જે ભિક્ષુપ્રતિમા છે છે તેનું સેવન કરનાર ભિક્ષુ જે એક પ્રથમ મહીનો દરરોજ અન્નપાનની એક એક દત્તિ (ધારા એક વાર અવિચ્છિન્ન આવ રહે એક દત્તિ કહેવાય છે) લેવાની હોય છે બીજી

मासे भिक्षु द्वे दत्ती अन्नस्य द्वे पानस्य च गृह्णीयात्। तृतीयस्मिन् मासे त्रिमासिकी भिक्षुप्रतिमा तृतीया। चतुर्थे मासे चतुर्मासिकी भिक्षुप्रतिमा चतुर्थी। पञ्चमे मासे पञ्चमासिकी भिक्षुप्रतिमा पञ्चमी। षष्ठे मासे षाण्मासिकी भिक्षुप्रतिमा षष्ठी। सप्तमे मासे सप्तमासिकी भिक्षुप्रतिमा सप्तमी। आसु क्रमशः अन्नपानयोरेकैक दत्ति वृद्ध्या सप्तमे मासे सप्तदत्ती आहारस्य सप्तपानस्य च भिक्षु गृह्णीयादिति भावः। अनन्तरम् अष्टमे मासे प्रथम सप्तके प्रथमा–'सत्तराइंदिया' सप्तरात्रिन्दिवा–सप्तरात्रिन्दिवानि=अहोरात्राणि यस्यां सा सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षु

भिक्षु प्रतिमा में कि जो दो मास तक आराधित की जाती है अन्न की दो दत्ति और पान की दो दत्ति ली जाती हैं। तृतीयभिक्षुप्रतिमा में कि जिसकी आराधना का काल तीन मासका है अन्नपान की तीन-तीन दत्ति ली जाती है। इस तरह से पांचमास की भिक्षुप्रतिमा में, छह मासकी भिक्षुप्रतिमा में और सातमास की भिक्षुप्रतिमा में क्रमशः अन्न और पान की ५, ६, और सातमास तक ५, दत्तियां, ६ छह दत्तियां और सात दत्तियां ग्रहण की जाती हैं। इस तरह इन सात भिक्षु प्रतिमाओं में क्रमशः अन्नपान की एक१ से लेकर दत्तियां वर्धित होती हुई सात मास तक की अवधिवाली सातवीं भिक्षुप्रतिमा में सात सात अन्न-पान की दत्तियां ग्रहण की जाती हैं। इस के बाद आठवें महिने में प्रथम सप्तक (सप्ताह) में प्रथम भिक्षु प्रतिमा–अर्थात् आठवीं प्रतिमा-पाली जाती है। इसके आराधन करने का समय सात दिन रात का है। इस प्रतिमा का आराधक चतुर्थभक्त(चोविहार) की तपस्या करता है। गाँव से

ભિક્ષુપ્રતિમા કે જેનું આરાધન બે માસ સુધી કરવાનુ હોય છે, તેમાં અન્નની બે દત્તિ અને પન (પેય પદાર્થ) ની બે દત્તિ દરરોજ ગ્રહણ કરાય છે ત્રીજી ભિક્ષુ-પ્રતિમાનો આરાધન કાળ ત્રણ માસનો છે તેમાં દરરોજ અન્નપાનની ત્રણ ત્રણ દત્તિ લેવામા આવે છે એ જ પ્રમાણે ચર માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા, પાચ માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા, છ માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા અને સાત માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા અન્ન પાનની અનુક્રમે ચાર, પચ, છ અને સાત માસ સુધી, ચાર, પાચ છ અને સાત દત્તિયો ગ્રહણ કરવામાં આવે છે આ રીતે બે સાત ભિક્ષુપ્રતિમાઓમાં અનુક્રમે અન્નપાનની એકથી લઇને દત્તિયો વધતી વધતી સાત માસની અવધિવાળી સાતમી ભિક્ષુપ્રતિમામા અન્નપાનની સાત સાત દત્તિઓ ગ્રહણ કરાય છે ત્યાર બાદ આઠમા માસના પહેલા અઠવાડિયામાં પ્રથમ ભિક્ષુપ્રતિમા એટલે કે આઠમી પ્રતિમાનુ આરા-ધન કરાય છે તેની આરાધનાનો સમય સાત દિન-રાતનો છે તે પ્રતિમાનો આરા-ધક ચતુર્થભકતની (ચોવિહાર) તપસ્યા કરે છે, ગામની બહાર રહે છે, ઉત્તાન

प्रतिमा अष्टमी। अस्यां चतुर्थभक्तं तप, ग्रामाद् बहिरुपस्थाय्, उत्कटुकादिनाऽऽसनेन चैव सम्यगवेदयितव्यम्। द्वितीया सप्तरात्रिन्दिवा सप्तमी प्रतिमा नवमी। अस्या उत्कटुकादासनेनावस्थानमेतावदेव विशेष। तृतीया सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षुप्रतिमा दशमी, अस्यां वीरासनादिनाऽवस्थानम्। अहोरात्रिकी-एकाहोरात्रप्रमाणा भिक्षुप्रतिमा एकादशी एषा षष्ठभक्तेन समाप्यते। 'एगराइया' एकरात्रिकी=रात्रिप्रमाणा भिक्षुप्रतिमा द्वादशी। अस्यां चाष्टमभक्तपर्यन्तराधौ पलम्बलम्बेन सह

बाहिर रहता है। उत्कान आदि आसन से बैठता है। दूसरी प्रतिमा-अर्थात् नवमी भिक्षु प्रतिमा के आराधन करने का समय द्वितिय सप्ताह है। इसमें आराधक उत्कुटुक आदि आसन से बैठता है। बाकी सब विधि आठवीं प्रतिमा जैसी ही है। तीसरी भिक्षुप्रतिमा अर्थात् दसवीं प्रतिमा के आराधन करने का काल आठवें महीने का तृतीय सप्ताह है। इस प्रतिमा की आराधना सात दिन रात तक आठवें महीने के तीसरे सप्ताह में की जाती है। इसका आराधक वीरासन आदि आसन से बैठता है। इस तरह इकीस दिन रात में आठवीं नौवीं और दशवीं प्रतिमाओं का आराधन समाप्त हो जाता है। बाईसवें दिन में ग्यारहवीं भिक्षुप्रतिमा आराधित होती है। इसका काल एक दिन रात का है। उसकी आराधना में षष्ठभक्त की तपस्या की जाती है। बारहवीं प्रतिमा का काल एक दिन रात का है। इसमें अष्टमभक्त की अन्तिम रात्रि में (स्मशानमें जाकर एक पुद्गलपर दृष्टि रखता हुआ) दोनों हाथ लटका कर

આ આસને બેસે છે બીજી પ્રતિમા-બેઠકે કે નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમાની આરાધના નો કાળ આઠમા માસના બીજા સપ્તાહનો છે તેની આરાધના માટે બારા પણ ઉત્કુટુક (ઉકડા પગે બેસવું તે) આદિ આસને બેસે છે અને બાકીની બધી વિધિ આઠમી પ્રતિમા જેવી જ છે દશમી-ભિક્ષુપ્રતિમાનો આરાધન કાળ આઠમા માસનું ત્રીજું સપ્તાહ છે આઠમા માસના ત્રીજા સપ્તાહમાં આ પ્રતિમાની આરાધના સાત દિવસમાં સમાપ્ત છે તેનો આરાધક વીરાસન આદિ આસને બેસે છે આ રીતે એકવીસ દિવસમાં આઠમી, નવમી અને દશમી પ્રતિમાઓનું આરાધન સમાપ્ત થાય છે બાવીસમે દિવસે અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું આરાધન થાય છે તેનો આરાધન કાળ એક દિવસનો છે તેની આરાધનામાં છઠભક્તની (બે ઉપવાસ) તપસ્યા કરવામાં આવે છે બારમી પ્રતિમાનો આરાધન કાળ એક રાતનો છે તેમાં અષ્ટમભક્તની-ત્રણ ઉપવાસ (અઠમતું) કરવી રાત્રે ખાલી હાથ લટકતા રાખીને ઊભા રહેવું પડે છે,

पादेनेषदवनतकायेनाऽनिमेषनयनेन च भिक्षुणा स्थीयते। एतद्विषये विशेषजिज्ञासुभिर्दशाश्रुतस्कन्धस्य सप्तमेऽध्ययने मत्कृतमुनिहर्षिणी टीकाया द्रष्टव्यम्। 'दुवालसविहे' द्वादशविधः संभोगः, भोजनं भोगः, सम्यक् एकीभूय भोगः=सभोगः समानसामाचारिकसाधूनामेकमण्डल्यां भोजनादिव्यवहार इत्यर्थः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा-'उवहीसुयभत्तपाणे' उपधिश्रुतभक्तपानम्=उपधिश्च श्रुतं च भक्तपानं च उपधिश्रुतभक्तपानम् संभोगत्रयम्। तत्र उपधिः प्रथमः सभोगः। स च उपधिर्वस्त्रपात्रादिः, तमुत्पादनैषणादोषरहितं विशुद्धं सांभोगिकेन सह गृह्णन् सांभोगिकः साधुः शुद्धः, उत्पादनैषणादोषसहितं गृह्णन् साधुरशुद्धः। एतादृशदोषयुक्तमुपधिं वारत्रयं गृहीत्वा विहितप्रायश्चित्तः सभोगार्हः। चतुर्थे वारे सदोषमुपधिं

खडा रहना पडता है। दोनों पैर आपस में जुडे हुए रहते हैं। शरीर कुछ२ झुका सा रहता है। नेत्र अपलक रहते हैं।इस विषय में विशेष जिज्ञासुओं के लिये दशाश्रुतस्कंध के सप्तम अध्ययन में हमारे द्वारा रचित मुनिहर्षिणी नामक टीका देखनी चाहिये। बारह प्रकार का संभोग होता है। समान समाचारी वाले साधुओं का एक मंडली में जो आहारादिव्यवहार होता है उसका नाम संभोग है। सभोग के बारह प्रकार ये हैं।— उपधि-वस्त्र, पात्र आदि १, श्रुत२, भक्तपान३, अंजलिप्रग्रह४, दान५, निकाचन६, अभ्युत्थान७, कृतिकर्मकरण८, वैयावृत्यकरण९, समवसरण१०, संनिषद्या११, और कथाप्रबन्धन१२। १ उपधिसंभोग–उत्पादन एषणा दोष से रहित वस्त्र पात्र आदि विशुद्ध उपधि को सांभोगिक साधु के साथ ग्रहण करता हुआ सांभोगिक साधु शुद्ध होता है और उत्पादन एषणा दोष सेसहित उपधिको ग्रहण करता हुआ साधु अशुद्ध होता है। इस प्रकार दोष युक्त उपधि को तीन बार

બન્ને પગ એક બીજા સાથે જોડાયેલા રહે છે, શરીર થોડું ઝુકતુ રહે અને નેત્ર અપલક રહે છે આ વિષયમા વધુ જાણવાની ઇચ્છા વાળા જિજ્ઞાસુઓએ દશાશ્રુત સ્કંધની સાતમા અધ્યયનની અમે લખેલી મુનિહર્ષિણી નામની ટીકા જોઇ જવી.

બાર પ્રકારના સંભોગ હોય છે સમાન સમાચારી સાધુઓનો એક મંડળીમા જે આહારાદિ વ્યવહાર થાય છે તેનુ નામ સભોગ છે સભોગના બાર પ્રકાર છેતે આ પ્રમાણે છે-(૧) ઉપધિ–વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ (૨) શ્રુત, (૩) ભક્તપાન, (૪) અજલિપ્રગ્રહ, (૫) દાન, (૬) નિકાચ, (૭) અભ્યુત્થાન, (૮) કૃતકર્મકરણ, (૯) વૈયાવૃત્યકરણ, (૧૦) સમવસરણ, (૧૧) સનિષદ્યા અને (૧૨) કથા પ્રબન્ધન.

उपधिसंभोग—ઉત્પાદન એષણા દોષથી રહિત વસ્ત્ર પાત્ર આદિ વિશુદ્ધ ઉપધિને સાંભોગિક સાધુની સાથે ગ્રહણ કરતો સભોગિક સાધુ શુદ્ધ હોય છે, અને ઉત્પાદન એષણા દોષથી યુકત ઉપધિને ગ્રહણ કરતો અશુદ્ધ હોય છે આ પ્રમાણે

ग्रहण विधिनापधिसाऽपि विसम्भोग्य । तथा यदि सामोगिक साधु विस सामोगिकन पार्श्वस्थादिना सह स्थित्वा शुद्धमशुद्ध वापधि गृहीयात्, अनन्तरम न्यप्रेरणया प्रायश्चित्त कुर्यात्, स साधु वारत्रयपर्यन्त कुर्वन् समभोगार्हः । चतुर्थवार तु असम्भोग्य एव। एवमुपधे परिभ्रमं परिभोग च कुर्वन् साधु समोग्याऽसं भोग्यश्च भवति। इति पचम समवाय १। 'सुय' श्रुतम्—श्रुतसम्भोगो द्वितीय । अध्ययनार्थमागत समागच्छन्तमन्यसमागिक वा साधु सविधि वाचना पृच्छना कुर्वन शुद्ध । यदि अविधिना समागच्छेत्, पार्श्वस्थादिको वा भवेत्, तै वाचना

ग्रहण करके प्रायश्चित्त करने वाला साधु समोग के योग्य माना जाता है। परन्तु वही साधु यदि इस प्रकार की उपधि को चौथी बार ग्रहण कर लेता है और प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह समोग के योग्य नहीं होता है। तात्पर्य—यदि सामोगिक साधु विसामोगिक पार्श्वस्थ आदि साधु के साथ रहकर शुद्ध अथवा अशुद्ध उपधि को ले लेता है और इसके बाद किसी अन्य की प्रेरणा से वह प्रायश्चित्त लेता है इस तरह वह साधु तीन बार ऐसा करता है और तीन बार प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाता है तो वह समोगार्ह है। परन्तु यदि वह चौथी बार ऐसा करता है फिर प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह असमोग्य ही है। इस प्रकार उपधि के परिभ्रम और परिभोग को करता हुआ साधु समोग्य और असमोग्य होता है। श्रुतसमोग—अध्ययन के लिये आये हुए सामोगिक अथवा अन्य सामोगिक साधु से सविधि वाचना प्रच्छना करने वाला साधु शुद्ध है। अविधि से आये हुए साधु से अथवा पार्श्वस्थ साधु से वाचना प्रच्छना

દોષ યુક્ત ઉપધિને ત્રણ વાર ગ્રહણ કરીને પ્રાયશ્ચિત્ત કરનાર સાધુ સમોગને યોગ્ય ગણાય છે પણ જો એ જ સાધુ તે પ્રકારની ઉપધિ જો ચોથી વાર ગ્રહણ કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત પણ કરી લે તો પણ તે સમોગને યોગ્ય ગણાતો નથી તથા જો સામોગિક સાધુ વિસામોગિક પાર્શ્વસ્થ-શિથિલાચારી)-આદિ સાધુની સાથે રહીને શુદ્ધ અથવા અશુદ્ધ ઉપધિ ગ્રહણ કરે અને ત્યાર બાદ કોઈ બીજાની પ્રેરણાથી જો તે પ્રાયશ્ચિત્ત લઇ લે-આ પ્રમાણે ત્રણ વાર તે સાધુ જોડુ કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લઇને શુદ્ધ થાય તો તે સાધુ સમોગને પાત્ર ગણાય છે પણ જો તે ચોથી વાર પણ જોડુ કરે અને પછી તેનુ પ્રાયશ્ચિત્ત પણ લે તો તે અસંભોગ્ય જ ગણાય છે આ પ્રમાણે ઉપધિના ભ્રમણ અને પરિભોગ કરતો સાધુ અસંભોગ્ય હોય છે (૧)

(૨) શ્રુતસંભોગ—અધ્યયનને માટે આવેલ સાંભોગિક અથવા અન્ય સાંભોગી સાધુ સાથે વિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ શુદ્ધ છે અવિધિથી આવેલ

प्रच्छनादिकं कुर्वन साधुरशुद्धः । एवं त्रिवारत्रयमविधिना वाचनां पृच्छनां कुर्वन् साधुः प्रायश्चित्तविधिना संभोग्यः । चतुर्थवेलायां तथा कुर्वन विहितप्रायश्चित्तोऽपि असंभोग्य एव । इति द्वितीयः संभोगः २। 'भत्तपाणे' भक्तपानम् भक्तपानसंभोगः तृतीयः । एतद् विषये सर्वमुपधिवद्विज्ञेयम् । केवलं परिकर्मस्थाने दानं परिभोगस्थाने च आदानमिति वाच्यम् । इति तृतीयः संभोगः ।३। 'अंजलिपग्गहे त्ति य' अञ्जलिप्रग्रहणम् इति च, इति शब्दः स्वरूप प्रदर्शनार्थः, च ग्रहणं समुच्चयार्थः। अञ्जलिप्रग्रहणमिति चतुर्थः संभोगः । अञ्जलिग्रहणशब्देन वन्दनारूपोऽर्थोऽवसेयः । तथाहि–संभोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधुं वन्देत, साञ्जलिप्रणमेत, आलोचनासूत्रार्थनिमित्तं निषद्यां कुर्वीत, एवं कुर्वन साधुः संभोग्यः । परन्तु स

करने वाला साधु अशुद्ध है। इस तरह तीन वार अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करने से अशुद्ध बना हुआ प्रायश्चित्त विधि से संभोग्य हो जाता है। परन्तु यदि वही साधु चौथी वार भी ऐसा करता है तो प्रायश्चित्त लेने पर भी वह अशुद्ध माना जाता है और इस तरह वह असंभोग्य ही रहता है२। भक्तपान संभोग३–इसके विषय में उपधि की तरह ही सब विधि जाननी चाहिये। परन्तु यहां परिकर्म के स्थान में दान, और परिभोग के स्थान में आदान शब्द का प्रयोग करना चाहिये३। अंजलिप्रग्रह४–यह संभोग का चतुर्थ भेद है, यहां अंजलि शब्द वंदनारूप अर्थ को प्रकट करता है, साधु सांभोगिक अथवा अन्यसांभोगिक साधु मिलने पर उन्हें वंदना करता है, साञ्जलि नमस्कार करता है और आलोचना तथा सूत्रार्थ निमित्त निषद्या करता है, अर्थात् बैठता है, इस प्रकार करने वाला साधु संभोग्य माना जाता है, परन्तु यदि वह साधु पासत्थ आदि साधुओं

સાધુ સાથે અથવા પાર્શ્વસ્થ સાધુ સાથે વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ અશુદ્ધ છે આ રીતે ત્રણ વખત અવિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરવાથી અશુદ્ધ થયેલ સાધુ પ્રાયશ્ચિત્ત વિધિથી સંભોગ્ય થઇ જાય છે પણ એ જ સાધુ ચોથી વાર પણ એવું કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતા પણ તેને અશુદ્ધ માનવામાં આવે છે, અને આ રીતે તે અસંભોગ્ય જ રહે છે (૨)

(૩) भक्तपानसंभोग—તેમા ઉપધિ પ્રમાણે જ બધી વિધિ છે, પણ અહી પરિકર્મની જગ્યાએ દાન અને પરિભોગને સ્થાને આદાન શબ્દનો પ્રયોગ કરવો જોઇએ (૩)

(૪) अंजलिप्रग्रह—આ સંભોગનો ચોથો ભેદ છે અહી અંજલિ શબ્દનો અર્થ વંદના થાય છે સાધુ સાંભોગિક અથવા અન્ય સાંભોગિક સાધુ સાથે મુલાકાત થતા તેમને વંદના કરે છે, અંજલિબદ્ધ નમસ્કાર કરે છે, અને આલોચના તથા સૂત્રાર્થ નિમિત્ત નિષદ્યા કરે છે એટલે કે બેસે છે આ પ્રમાણે કરનાર સાધુને સંભોગ્ય માન-

ग्रहण विधिमापन्नोऽपि विसंभोग्य । तथा यदि सांभोगिकः साधु विसंभोगिकेन पार्श्वस्थादिना सह स्थित्वा शुद्धमशुद्धं वोपधिं गृह्णीयात्, अनन्तरमन्यप्रेरणया प्रायश्चित्तं कुर्यात्, स साधुः त्रिवारमपि कुर्वन् संभोगार्हः । चतुर्थवारं तु असंभोग्य एव । एवमुपधेः परिभोगं च कुर्वन् साधुः संभोग्योऽसंभोग्यश्च भवति । इति प्रथमः संभोगः १। 'सुय' श्रुतम्—श्रुतसंभोगो द्वितीयः । अध्ययनार्थमागतं सांभोगिकमन्यसांभोगिकं वा साधुं सविधिं वाचनां पृच्छनां कुर्वन् शुद्धः । यदि अविधिना समागच्छेत्, पार्श्वस्थादिको वा भवेत्, तं वाचना

ग्रहण करके प्रायश्चित्त करने वाला साधु संभोग के योग्य माना जाता है। परन्तु वही साधु यदि इस प्रकार की उपधि को चौथी बार ग्रहण कर लेता है और प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह संभोग के योग्य नहीं होता है। तात्पर्य—यदि सांभोगिक साधु विसांभोगिक पार्श्वस्थ आदि साधु के साथ रहकर शुद्ध अथवा अशुद्ध उपधि को ले लेता है और इसके बाद किसी अन्य की प्रेरणा से वह प्रायश्चित्त लेता है इस तरह वह साधु तीन बार ऐसा करता है और तीन बार प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाता है तो वह संभोगार्ह है। परन्तु यदि वह चौथी बार ऐसा करता है फिर प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह असंभोग्य ही है। इस प्रकार उपधि के परिभोग और परिभोग को करता हुआ साधु संभोग्य और असंभोग्य होता है। श्रुतसंभोग२—अध्ययन के लिये आये हुए सांभोगिक अथवा अन्य सांभोगिक साधु से सविधि वाचना पृच्छना करने वाला साधु शुद्ध है। अविधि से आये हुए साधु से अथवा पार्श्वस्थ साधु से वाचना पृच्छना

દોષ યુક્ત ઉપધિને ત્રણ વાર ગ્રહણ કરીને પ્રાયશ્ચિત્ત કરનાર સાધુ સંભોગને યોગ્ય છે પણ જો એ જ સાધુ તે પ્રકારની ઉપધિ ચોથી વાર ગ્રહણ કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત પણ કરી લે તો પણ તે સંભોગને યોગ્ય માનેલ નથી તથા જો સાંભોગિક સાધુ વિસાંભોગિક પાર્શ્વસ્થક-(શિથિલાચારી)-આદિ સાથે રહીને શુદ્ધ અથવા અશુદ્ધ ઉપધિ ગ્રહણ કરે અને ત્યાર બાદ કોઈ બીજાની પ્રેરણાથી જો તે પ્રાયશ્ચિત્ત લઈ લે—આ પ્રમાણે ત્રણ વાર તે સાધુ એવું કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લઈને શુદ્ધ થાય તે તે સાધુ સંભોગને પાત્ર ગણાય છે પણ જો તે ચોથી વાર પણ એવું કરે અને પછી તેનું પ્રાયશ્ચિત્ત પણ લે તો તે અવશ્ય જ અસંભોગ્ય છે આ પ્રમાણે ઉપધિના પરિભોગ અને પરિભોગ કરતો સાધુ અસંભોગ્ય હોય છે (૧)

૨) શ્રુતસંભોગ—અધ્યયનને માટે આવેલ સાંભોગિક અથવા અન્ય સાંભોગી સાધુ સાથે વિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ શુદ્ધ છે અવિધિથી આવેલ

प्रच्छनादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धः । एवं वारत्रयमविधिना वाचना पृच्छना कुर्वन् साधुः प्रायश्चित्तविधिना संभोग्यः । चतुर्थवेलायां तथा कुर्वन् विहितप्रायश्चित्तोऽपि असंभोग्य एव । इति द्वितीयः संभोगः २। 'भत्तपाणे' भक्तपानम् भक्तपानसंभोगः तृतीयः । एतद् विषये सर्वमुपधिवद्विज्ञेयम् । केवलं परिकर्मस्थाने दानं परिभोगस्थाने च आदानमिति वाच्यम् । इति तृतीयः संभोगः ।३। 'अंजलिपग्गहे त्ति य' अञ्जलिप्रग्रहणम् इति च, इति शब्दः स्वरूप प्रदर्शनार्थः, च ग्रहणं समुच्चयार्थः। अञ्जलिप्रग्रहणमिति चतुर्थः संभोगः । अञ्जलिग्रहणशब्देन वन्दनारूपोऽर्थोऽवसेयः । तथाहि—सभोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधुं वन्देत, साञ्जलिप्रणमेत, आलोचनासूत्रार्थनिमित्तं निषद्यां कुर्वीत, एवं कुर्वन साधुः संभोग्यः । परन्तु स

करने वाला साधु अशुद्ध है। इस तरह तीन बार अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करने से अशुद्ध बना हुआ प्रायश्चित्त विधि से संभोग्य हो जाता है। परन्तु यदि वही साधु चौथी बार भी ऐसा करता है तो प्रायश्चित्त लेने पर भी वह अशुद्ध माना जाता है और इस तरह वह असंभोग्य ही रहता है२। भक्तपान संभोग३—इसके विषय में उपधि की तरह ही सब विधि जाननी चाहिये। परन्तु यहां परिकर्म के स्थान में दान, और परिभोग के स्थान में आदान शब्द का प्रयोग करना चाहिये३। अंजलिप्रग्रह४—यह संभोग का चतुर्थ भेद है, यहां अंजलि शब्द वंदनारूप अर्थ को प्रकट करता है, साधु सांभोगिक अथवा अन्यसांभोगिक साधु मिलने पर उन्हें वंदना करता है, साञ्जलि नमस्कार करता है और आलोचना तथा सूत्रार्थ निमित्त निषद्या करता है, अर्थात् बैठता है, इस प्रकार करने वाला साधु संभोग्य माना जाता है, परन्तु यदि वह साधु पासत्थ आदि साधुओं

સાધુ સાથે અથવા પાર્શ્વસ્થ સાધુ સાથે વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ અશુદ્ધ છે આ રીતે ત્રણ વખત અવિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરવાથી અશુદ્ધ થયેલ સાધુ પ્રાયશ્ચિત્ત વિધિથી સંભોગ્ય થઇ જાય છે પણ એ જ સાધુ ચોથી વાર પણ એવું કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતા પણ તેને અશુદ્ધ માનવામા આવે છે, અને આ રીતે તે અસંભોગ્ય જ રહે છે (૨)

(૩) ભક્તપાનસંભોગ—તેમા ઉપધિ પ્રમાણે જ બધી વિધિ છે, પણ અહી પરિકર્મની જગ્યાએ દાન અને પરિભોગને સ્થાને આદાન શબ્દનો પ્રયોગ કરવો જોઇએ (૩)

(૪) અંજલિપ્રગ્રહ—આ સંભોગનો ચોથો ભેદ છે અહી અંજલિ શબ્દનો અર્થ વંદના થાય છે સાધુ સાંભોગિક અથવા અન્ય સાંભોગિક સાધુ સાથે મુલાકાત થતા તેમને વંદના કરે છે, અંજલિબદ્ધ નમસ્કાર કરે છે, અને આલોચના તથા સૂત્રાર્થ નિમિત્ત નિષદ્યા કરે છે એટલે કે બેસે છે આ પ્રમાણે કરનાર સાધુને સંભોગ્ય માન-

मापुर्यदि पार्श्वस्थादीना कृते एवमाचरेत्, तदा पूर्ववदेव संभोग्याऽसंभोग्यमिति भावः । इति चतुर्थसंभोग ४। 'दाणे य' दाने च ज्ञानसंभोग पञ्चमः। दान स्वशिष्यस्य अन्यस्मै समर्पणम्। सांभोगिक सांभोगिकायाऽन्यसांभोगिकाय वा शिष्यगणं प्रयच्छन् शुद्ध । परन्तु निष्कारणेन सांभोगिकाय वा विसंभोगिकाय वा पार्श्वस्थाय वा यदि शिष्यगणं प्रयच्छेत् तदा पूर्ववत् प्रायश्चित्तेन शोधयित्वा संभोग्य, चतुर्थवारमसंभोग्य । इति पञ्चम संभोगः५। 'निकाए य' निकाचस्य, निकाचो निमन्त्रणम्। तस्य धाग्योपध्याहारै शिष्यगणप्रदानेन स्वाध्यापन च

न साधु जैसा व्यवहार करता है तो वह अशुद्ध हो जाता है और प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाता है। इस तरह तीन बार करने पर प्रायश्चित्त विधि से उसकी शुद्धि हो जाती है। परन्तु चौथी बार इस प्रकार के व्यवहार से वह प्रायश्चित्त लेने पर भी शुद्ध नहीं हो सकता है। अतः वह असंभोग्य है४। ज्ञानसंभोग यह संभोग का पांचवा भेद है, दान का तात्पर्य यहां शिष्य का प्रदान करना है। सांभोगिक साधु सांभोगिक के लिये, अथवा अन्यसांभोगिक के लिये अपने शिष्य का देता है, स्थिति में वह शुद्ध है, परन्तु यदि वह निष्कारण सांभोगिक अथवा विसंभोगिक के लिये या किसी पार्श्वस्थ आदि के लिये अपने शिष्य को प्रदान करता है तो वह अशुद्ध है, इस प्रकार तीन बार करता हुआ भी वह प्रायश्चित्त से शुद्ध हो जाता है। परन्तु चौथी बार जब वह इस प्रकार करता है तब प्रायश्चित्त लेने पर भी वह शुद्ध नहीं हो सकता है। इसलिये वह असंभोग्य माना जाता है५। निकाचसंभोग—वाचना, उपधि, आहार, शिष्य प्रदान

વાર્યા અને છે પણ જો તે સાધુ પાસસ્થ શિથિલાચારી આદિ સાધુઓના આવે જે પ્રકારનો વ્યવહાર કરે તો તે અશુદ્ધ થઈ જાય છે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લેવાથી તે શુદ્ધ થાય છે આ પ્રમાણે ત્રણ વખત કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત વિધિથી તેની શુદ્ધિ થઈ જાય છે પણ જોથી વાર આ પ્રકારનો વ્યવહાર કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતાં પણ તેની શુદ્ધિ થઈ શકતી નથી તેથી જેવો સાધુ અસંભોગ્ય છે (૫) જ્ઞાનસંભોગ, તે પાંચમો ભેદ છે અહીં જ્ઞાન એટલે શિષ્યનું પ્રદાન જેવો અર્થ સમજવાનો છે સાંભોગિક સાધુ સાંભોગિકને માટે અથવા અન્ય સાંભોગિકને માટે પોતાનો શિષ્ય અર્પણ કરે છે, આ સ્થિતિમાં તે શુદ્ધ છે પણ જો તે નિષ્કારણ સાંભોગિક અથવા વિસંભોગિકને માટે કે કોઈ પાર્શ્વસ્થ આદિ ને માટે પોતાના શિષ્યો આપે છે તો તે અશુદ્ધ બનાવ છે આ પ્રમાણે ત્રણ વખત કરે તો સુધી તે પ્રાયશ્ચિત્તથી શુદ્ધ થઈ શકે છે પણ જો તે ચોથી વાર એવું કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતાં પણ તે શુદ્ધ થઈ શકતો નથી તેથી તે અસંભોગ્ય છે (૫) નિકાચ સંભોગ—વાચના, ઉપધિ આહાર શિષ્ય પ્રદાન અને

संभोगिकः संभोगिक निमन्त्रयन् शुद्धः । शेष पूर्ववदेव । निकाचसभोगः षष्ठः६। तथा 'अब्भुट्ठाणेइ यावरे' अभ्युत्थानमितिचापरः, अभ्युत्थानमासनत्यागरूपमित्यपरः षष्ठादन्यः संभोगः। तत्र–पार्श्वस्थादीना कृतेऽभ्युत्थानादिकं कुर्वन पूर्ववदेवासंभोग्यः । अभ्युत्थानपद किंकरता न्यासकरणा विभक्तीनामुपलक्षणम् । तत्र किंकरता–प्राघुर्णकग्लानादीन प्रति 'भवतो विश्रामाय कीदृशं प्रयत्नमहं

एवं स्वाध्याय इन से संभोगिक को आमंत्रण करता हुआ संभोगिक साधु शुद्ध कहा गया है। बाकी का इस संबंध में कथन पहिले के जैसा लगा लेना चाहिये। अर्थात् जब वह साधु पार्श्वस्थ आदि के लिये शय्या आदि से आमंत्रित करता है तब वह अशुद्ध माना जाता है। इस तीन बार की गई अशुद्धि का जब वह प्रायश्चित्त विधान से सशोधन कर शुद्ध हो जाता है तब वह संभोग्य बन जाता है। परन्तु तीन बार करने पर भी जब चतुर्थ बार भी वह ऐसी अशुद्धि कर लेता है तब वह प्रायश्चित्त से भी शुद्ध नहीं होता है। इस स्थिति में वह असंभोग्य ही होता है६। अभ्युत्थानसंभोग–यह संभोग का सातवां भेद है, अभ्युत्थान का तात्पर्य आसन के त्याग करने से है, अर्थात्–पार्श्वस्थ आदि के आने पर अपना त्याग कर खडे हो जाना उनकी विनय करना आदिये सब क्रियाएँ अभ्युत्था पद से ग्रहण की गई हैं। यहां अभ्युत्थान पद किंकरता, न्यासकरण और अविभक्ति, इनका उपलक्षक है। प्राघुर्णक ग्लान आदि अवस्थासंपन्न साधुओं के प्रति ऐसी प्रश्नात्मक उक्ति मन में करना कि "मैं आप के विश्राम

સ્વાધ્યાય, વડે સાંભોગિકને આમંત્રણ કરતો સાંભોગિક સાધુ શુદ્ધ કહેવાય છે આ વિષયમાં બાકીનું કથન આગળના કથનો પ્રમાણે સમજી લેવું —એટલે કે જ્યારે તે સાધુ પાર્શ્વસ્થ આદિને શય્યા આદિ વડે આમંત્રિત કરે છે ત્યારે તે અશુદ્ધ ગણાય આ પ્રમાણે ત્રણ વખત થયેલી અશુદ્ધિનું પ્રાયશ્ચિત્ત કરવાથી તે શુદ્ધ થઈ જાય છે અને સાંભોગ્ય બને છે. પણ જો ચોથી વાર પણ તે એ જ પ્રકારની અશુદ્ધિ કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત કરવા છતા પણ તે શુદ્ધ થઈ શકતો નથી આ સ્થિતિના તે અસાંભોગ્ય જ ગણાય છે (૭) અભ્યુત્થાનસંભોગ—તે સંભોગનો સાતમો ભેદ છે અભ્યુત્થાન એટલે આસનનો ત્યાગ કરવો એટલે કે પાર્શ્વસ્થ આદિનું આગમન થતા પોતાનું આસન છોડીને ઉભા થઈ જવું, તેમને માન આપવું, આદિ ક્રિયાઓ 'અભ્યુત્થાન' પદથી ગ્રહણ કરવામા આવી છે અહીં અભ્યુત્થાન' પદ કિંકરતા, ન્યાસકરણ અને અવિભક્તિ, એ ત્રણનો ઉપલક્ષક છે પ્રાઘૂર્ણ,ગ્લાન (મહેમાન, બિમાર) આદિ અવસ્થા સંપન્ન સાધુઓ પ્રત્યે મનમા એવી પ્રશ્નાત્મક ઉક્તિ કરવી કે ' હું આપના

कुर्याम्' इत्येवं मनसात्मिकाऽपि । 'पासकरणम् पार्श्वस्थादिधर्मोच्युतस्य पुन साधुधर्मे सम्थापनम् ।

अविभक्ति=अपृथग्भावः भेदाभावरूपत्वम्, पार्श्वस्थादीनां किंकरतादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धोऽसम्भोग्यश्च भवति । यथागम कुर्वस्तु शुद्धः समाग्भवेति । इति सप्तमः संभोगः३ तथा-'किइकम्मस्स य करणे' कृतिकर्मणश्च करणम्, कृतिर्वन्दनम्, तस्य करणम् । विधिना वन्दनं कुर्वन् शुद्ध संभोग्यश्च । अविधिना कुर्वस्तु पूर्ववदशुद्धासम्भोग्यः। यस्तु साधुर्व्याधिपरिगत स्वल्पशरीर उत्थानादिक्रियां कर्तुमसमर्थः, स सूत्रमेव अस्खलितादिगुणसमुपेतमुच्चारयति, पठनमात्रेण शिरोनमनादिकायक्लेशं

के लिये कैसा प्रयत्न करूँ" इसका नाम किंकरता है। पार्श्वस्थ आदि के धर्म से च्युत हुए साधु को पुन साधुधर्म में संस्थापित करना, इसका नाम न्यास करण है, और भेदभाव रहित होना इसका नाम अविभक्ति है। साधु पार्श्वस्थ आदिकों की किंकरता आदि जब करने लगता है-तब वह अशुद्ध होने के कारण असम्भोग्य हो जाता है। और आगम के अनुसार इन किंकरतादिकों को करता है तब वह शुद्ध होने से सम्भोग्य होता है७। कृतिकर्मसंभोग-यह सम्भोग का आठवा भेद है-विधिपूर्वक वन्दना करने वाला साधु शुद्ध और संभोग्य माना गया है, और अविधि पूर्वक कृतिकर्म करने वाला साधु पूर्व की तरह अशुद्ध और असंभोग्य कहा गया है। जो साधु वात व्याधि से पीडित होता हुआ स्वल्प शरीर हो जाता है तब वह उत्थान आदि क्रिया करने में असमर्थ बन जाता है। इस स्थिति में वह सूत्र को ही अस्खलित आदि गुण से समुपेत होकर उच्चारण करता है, तथा आवर्तन-शिरोनमन आदि आवश्यक क्रियाओं

વિધાનને માટે કેવો પ્રયત્ન કરું" તેનું નામ કિંકરતા છે પાર્શ્વસ્થ આદિ ધર્મથી રહિત બનેલ સાધુને ફરી સાધુધર્મમાં સ્થાપિત કરવો, તેનું નામ ન્યાસકરણ છે અને ભેદભાવ રહિત થવું, તેનું નામ અવિભક્તિ છે. જ્યારે કોઈ પણ પાર્શ્વસ્થ આદિ કરવા માંડે છે ત્યારે તે અશુદ્ધ થવાને કારણે અસંભોગ્ય થાય છે પણ જો આગમના અનુસાર તે કિંકરતા આદિ કરે છે તો તે શુદ્ધ હોવાથી સંભોગ્ય બને છે (૮) કૃતિકર્મ સંભોગ— તે સંભોગના આઠમો ભેદ છે વિધિપૂર્વક વંદના કરનાર સાધુ શુદ્ધ અને સંભોગ્ય બને છે પણ અવિધિપૂર્વક કૃતિકર્મ કરનાર સાધુ પહેલાં કહ્યું તેમ અશુદ્ધ અને અસંભોગ્ય બનાય છે જ્યારે સાધુ વાતના રોગથી પીડાવાને કારણે શારીરિક હલનચલન કરવાને અસમર્થ થાય છે, ત્યારે તે ઉત્થાન આદિ ક્રિયા કરવાને શક્તિમાન હોતો નથી. આ પ્રકારની સ્થિતિમાં જે સૂત્રનું જ અસ્ખલિત આદિ ગુણ પૂર્વક ઉચ્ચારણ કરે છે તથા શિરોનમન આદિ આવશ્યક

तत् करोति, तस्य साधोरेवं विधो वन्दनादिविधिरशठप्रवृत्तिरिति स संभोग्य एव। इत्यष्टमः संभोगः८। 'वेयावच्चकरणे इ य' वैयावृत्यकरणमिति, वैयावृत्यम्–आहारोपधिदानादिना प्रस्रवणादिमात्रकार्षणादिनाऽधिकरणोपशमनेन साहाय्यदानेन वा उपष्टम्भकरणम्। वैयावृत्यविषयेऽपि पूर्ववदेव संभोगासंभोगौ भवतः। इति नवमः९। 'समोसरणं' समवसरणम्=बहूना साधूनामेकत्रावस्थानम्। तद् द्विविधम्–निरवग्रहम् सावग्रहं च। क्षेत्रमाश्रित्य निरवग्रहम् साधूनामप्रतिबन्धविहारित्वात्। वसतिमाश्रित्य सावग्रहम्, वसतिस्थितसाधूनामवग्रहमादायैव

को जितना बनता है उतना करता है, इस तरह उस साधु की इस प्रकार की जो वंदनादिविधि है वह अशठ–कपटरहित प्रवृत्ति है, इसलिये वह साधु संभोग्य ही है८। वैयावृत्यकरण–यह संभोग का नववां भेद है–वैयावृत्य का तात्पर्य है योग्य साधनों को जुटाकर, अथवा अपने आप को काम में लगाकर सेवाशुश्रूषा करना। इसी बात को टीकाकार यों बताते हैं कि–आहार, उपधि आदि के देने से, प्रस्रवण आदि के परिष्ठापन के लिये मात्रकादि के देने से अधिकरण के उपशमन से अथवा और भी विषय में सहायता करने से गुर्वादिजनों को सहायक होना इसका नाम वैयावृत्य है। इस वैयावृत्य के विषय में भी पूर्व की तरह संभोग और असंभोग होते है९। समवसरण-अनेक साधुओं का एक जगह रहना। यह दो प्रकार का है–एक निरवग्रह और दूसरा सावग्रह। क्षेत्र को आश्रित करके निरवग्रह समवसरण होता है, क्यों कि साधु जनों का विहार प्रतिबंध से रहित होता है। वसति को आश्रित

ક્રિયાઓ બની શકે એટલા પ્રમાણમા કરે છે તે સાધુની આ પ્રકારની જે વદનાવિધિ છે તે કપટ રહિત હોવાને કારણે તે સાધુ સભોગ્ય જ ગણાય છે (૯) વૈયાવૃત્ય કરણ—આ સભોગનો નવમો ભેદ છે વૈયાવૃત્ય એટલે યોગ્ય સાધનો એકત્ર કરીને અથવા પોતાની જાતને જ કામમાં લગાડીને શુશ્રુષા કરવી એ જ વાતને ટીકાકાર આ પ્રમાણે સમજાવે છે–આહાર, ઉપધિ, આદિ દેવાથી, પ્રસ્રવણ મૂત્ર આદિનુ પરિષ્ઠાપન કરવાને માટે દેવાથી અધિકરણના ઉપશમનથી અથવા બીજી બાબતોમાં મદદ કરીને ગુરૂ આદિને સહાય કરવી તેનુ નામ વૈયાવૃત્ય છે, વૈયાવૃત્યની બાબતમાં પણ આગળ પ્રમાણે જ સભોગ અને અસભોગ થાય છે (૧૦) **સમવસરણ**–અનેક સાધુઓનુ એક જગ્યાએ રહેવુ તેને સમવસરણ કહે છે તે બે પ્રકારનુ છે. (૧) નિરવગ્રહ (૨) સાવગ્રહ નિરવગ્રહ સમવસરણ ક્ષેત્રને આધારે થાય છે, કારણ કે સાધુઓનો વિહાર પ્રતિબધ રહિત હોય છે સાવગ્રહ સમવસરણ વસતિને (વસવાટ)

कुर्वन्तु' इत्यत्र प्रयत्नास्मिकोक्तिः । न्यासकरणम् पार्श्वस्थादिधर्माच्च्युतस्य पुनः साधुधर्मे संस्थापनम् ।

अविसंवित्ति = अपृथग्भावः भेदभावरहितत्वम्, पार्श्वस्थादीनां किंकरणादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धोऽसंभोग्यश्च भवति । यथागमं कुर्वंस्तु शुद्धः संभोग्यश्चेति । इति संभोगः ७। तथा-'किइकम्मस्स य करणे' कृतिकर्मणश्च करणम्, कृतिकर्म= वन्दनं, तस्य करणं । विधिना वन्दनं कुर्वन् शुद्धः संभोग्यश्च । अविधिना कुर्वंस्तु पूर्ववदवासंभोग्यः। यस्तु साधुर्व्याधितत्वेन स्वल्पगात्र उत्थानादिक्रियां कर्तुमसमर्थः, स मृदुमेव शरीरं लिलादिगुणसमुपेतमुद्वारयति, एवमावर्तनं शिरोनमनादिरूपं कुर्वन्ति

के लिये कैसा प्रयत्न करें" इसका नाम किंकरता है। पार्श्वस्थ आदि के धर्म से च्युत हुए साधु को पुनः साधुधर्म में संस्थापित करना, इसका नाम न्यास करण है, और भेदभाव रहित होना इसका नाम अविसंवित्ति है। साधु पार्श्वस्थ आदिकों की किंकरता आदि जब करने लगता है-तब वह अशुद्ध होने के कारण असंभोग्य हो जाता है। और आगम के अनुसार इन किंकरतादिकों को करता है तब वह शुद्ध होने से संभोग्य होता है७। कृतिकर्मसंभोग-यह संभोग का आठवां भेद है-विधिपूर्वक वन्दना करने वाला साधु शुद्ध और संभोग्य माना गया है, और अविधि पूर्वक कृतिकर्म करने वाला साधु पूर्व की तरह अशुद्ध और असंभोग्य कहा गया है। जो साधु बात व्याधि से पीडित होता हुआ स्वल्प शरीर हो जाता है तब वह उत्थान आदि क्रिया करने में असमर्थ बन जाता है। इस स्थिति में वह मृदु को ही मस्तलित आदि गुण से समुपेत होकर उच्चारण करता है, तथा आवर्तन-शिरोनमन आदि आवश्यक क्रियाओं

વિશ્રામને માટે કેવો પ્રયત્ન કરે" તેનું નામ કિંકરતા છે પાર્શ્વસ્થ આદિ ધર્મથી ચ્યુત થયેલ સાધુને ફરી સાધુધર્મમાં સંસ્થાપિત કરવો, તેનું નામ ન્યાસકરણ છે અને ભેદભાવ રહિત થવું તેનું નામ અવિસંવિત્તિ છે. જ્યારે સાધુ પાર્શ્વસ્થ આદિ કરવા માંડે છે ત્યારે તે અશુદ્ધ થવાને કારણે અસંભોગ્ય થાય છે પણ જો આગમન અનુસાર તે કિંકરતા આદિ કરે છે તો તે શુદ્ધ હોવાથી સંભોગ્ય બને ૭ (૮) કૃતિકર્મ સંભોગ— આઠમો ભેદ છે વિધિપૂર્વક વંદના કરનાર સાધુ શુદ્ધ અને સંભોગ્ય બને પણ અવિધિપૂર્વક કૃતિકર્મ કરનાર સાધુ પૂર્વની જેમ અશુદ્ધ અને અસંભોગ્ય બને પણ જે સાધુ વાત વ્યાધિથી પીડાવાને કારણે શારીરિક કૃશતાવાળા થવાને કારણે ઊભા થવા વગેરે ક્રિયા કરવાને સક્ષમ ન હોતો નથી આ પ્રકારની સ્થિતિમાં જે મૃદુ જ અસ્ખલિત આદિ ગુણ પૂર્વક ઉચ્ચારણ કરે છે તથા શિરોનમન આદિ આવશ્યક

'दुओणए' द्व्यवनतम्, अवनतम्=शिरोनमनम् द्वे अवनते यस्मिंस्तद् द्व्यवनतम्, तत्रैकं यदा पूर्वमेव 'इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियए' इति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायाऽवनमनम् १। द्वितीयं-पुनर्यदा पूर्ववदवग्रहानुज्ञापनायैवावनमनं इति आवर्त्तद्वयम्। 'जहाजायं' यथाजातं यथा श्रमणो जातस्तथा-वन्दते, अर्थात् दीक्षाग्रहणसमये यथा-परिधृतचोलपट्टकमावरणसदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणप्रमार्जिको बद्धाञ्जलिपुटश्चासीत्. तामवस्थामाश्रित्य वन्दनम्-इति भावः, इति तृतीयः आवर्तः। 'किइकम्मंबारसावयं' कृतिकर्मद्वादशावर्त्तम्, द्वादशा आवर्ताः सूत्रोच्चारणमिश्राः कायव्यापारा यस्मिंस्तद् द्वादशावर्त्तं वन्दनकम्। तथाहि-'अहो कायं कायसंफासं' इत्यत्र 'अ' इत्युच्चार्याऽञ्जलिपुटं दक्षिणभागक्रमेण परि-

---

दो शिरोनमन वाला कृतिकर्म, इसमें एक शिरोनति तब की जाती है कि जब पहिले ही "इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए" ऐसा पाठ बोलकर अवग्रह की अनुज्ञा ली जाती है १। दूसरा तब किया जाता है जब पहिले की तरह पुनः अवग्रह की आज्ञा ली जाती है। इस प्रकार ये दो आवर्त्त हो जाते हैं २। तीसरा आवर्त्त यथाजात है यह उस समय किया जाता है जब दीक्षाग्रहण के समय में वह चोलपट्टक को धारण करता है सदोरकमुखवस्त्रिका को अपने मुह पर बाँधता है रजोहरण और प्रमार्जिका को लेता है, अपने गुरुदेव को दोनों हाथ जोडकर नमस्कार करता है। इसी का नाम यथाजात है यह तृतीय आवर्त्त है ३। द्वादश आवर्त्तवाला-कृत्तिकर्म चौथा आवर्त्त है। सूत्रोच्चारण से मिश्रित कायव्यापार का नाम आवर्त्त है। ये वंदन क्रिया में बारह इस प्रकार से होते हैं-"अहो कायं कायसंफास" इस पाठ को बोलकर

શિરોનમન વાળા કૃતિકર્મ છે તેમા પહેલા જ્યારે "इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए" એવો પાઠ બોલીને જ્યારે અવગ્રહની અનુજ્ઞા લેવામાં આવે છે ત્યારે પહેલો વખત શિરોનતિ (મસ્ત નમાવવાની ક્રિયા) થાય છે જ્યારે પહેલાની જેમ ફરીથી અવગ્રહની આજ્ઞા લેવાય છે ત્યારે બીજી વખત શિરોનતિ કરાય છે. આ પ્રમાણે તે બે આવર્ત્ત થાય છે (૨) ત્રીજુ આવર્ત્ત યથાજાત છે. તે એ સમયે કરવામાં આવે છે કે જ્યારે દીક્ષા લેતી વખતે તે ચોલપટ્ટક ધારણ કરે છે, સદોરકમુહપત્તિ પોતાના મોઢે બાંધે છે; રજોહરણ અને પ્રમાર્જિકા લે છે, પોતાના ગુરુદેવને બન્ને હાથ જોડીને નમસ્કાર કરે છે. તેનું નામ 'યથાજાત' છે. બાર આવર્ત્તવાળું કૃતિકર્મ ચોથુ આવર્ત્ત છે. સૂત્રોચ્ચારણથી મિશ્રિત કાય વ્યાપારને આવર્ત્ત કહે છે. વંદન ક્રિયામાં તે બાર આવર્ત્ત આ પ્રમાણે થાય છે-'अहो कायं काय संफासं'

समागमसाधु निवसनात्। समोग्रा समाग्यव्यवस्था पूर्ववद् विज्ञया। इति दशम संभोग १०। सनिषद्या=एकासनापवेशनम्, सा हि समोगासंभोगहेतु र्भवति। आसनापविष्टआचार्यस्तदासनोपविष्टसंभोगिकाचार्येण सह श्रुतपरिवर्तनादिकं कुर्वन् शुद्ध। असनोच्च-पार्श्वस्थादिभिः सह तथा कुर्वन्नशुद्ध पूर्ववत्सापविष्टेन शुध्यति। इत्येकादश समोग ११। तथा 'कडाए य पवत्तणं' कथायाश्च प्रवर्त्तनम्=व्याख्यानादिकरणम्। समोग्यासमोग्यव्यवस्थापूर्ववद्विज्ञेया। इति द्वादश संभोग १२। 'दुवालसावत्तं' द्वादशावर्त्तं कृतिकर्म=वन्दनं 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तम्, ते तथा

करके साधुवर्ग समवसरण होता है, क्यों कि उपाश्रयरूप वसति में पहिले से ठहरे हुए साधुओं का अवग्रह लेकर ही पीछे से आये हुए साधु ठहरते हैं। इसमें समोग्य और असमोग्य व्यवस्था पहीले की तरह घटित कर लेना चाहिये १०। सनिषद्या-यह संभोग का ग्यारहवाँ भेद है-इसमें एक आसन से साधु बैठा रहता है। यह सनिषद्या संभोग और असंभोग की हेतु होती है। आसन पर बैठे हुए आचार्य अपने आसन पर बैठ हुए अन्य संभोगिक आचार्य के साथ श्रुतपरिवर्तन आदि करते हुए शुद्ध माने गये हैं। तथा असनोच्च पार्श्वस्थ आदि के साथ एक आसन पर बैठकर श्रुतपरिवर्तन आदि करते हुए अशुद्ध माने गये हैं। इनमें समोग्य की व्यवस्था पहिले कहे गये प्रकार की तरह घटित कर लेनी चाहिये ११। इसी तरह से कथाप्रवर्त्त नामका जो बारहवाँ भेद संभोग का है उसमें भी संभोग्यासंभोग्य की व्यवस्था समझ लेनी चाहिये। कृतिकर्म-वन्दन-द्वादश आवर्तवाला होता है, वह इस प्रकार है-पहला

આપવાને આવે છે, ત્યારપછી જે વ્યવસ્થા કરે છે તે વસતિમાં પહેલેથી આવી રહેલા સાધુઓના અવગ્રહ, (રજા) લીધા પછી જ પછીથી આવેલા સાધુ ત્યાં રહે છે તેમાં સમોગ્ય તથા અસમોગ્ય વ્યવસ્થા આગળ પ્રમાણે જ સમજી લેવી સનિષદ્યા—આ એક જાતનો અતિશય યોગ હોય છે: તેમાં સાધુ જે આસને બેસી રહે છે તે સનિષદ્યા સંભોગ અને અસંભોગનું કારણ બને છે આસન ઉપર બેઠેલા આચાર્ય પોતાના આસને બેઠા બેઠા અન્ય સંભોગિક આચાર્યની સાથે શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરે તો તે શુદ્ધ ગણાય છે પણ અસનોચ્ચ પાર્શ્વસ્થ આદિ સાધુ જોડે આસને બેસીને શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરે તો તે અશુદ્ધ ગણાય છે તેમાં પણ સમોગ્ય અને અસમોગ્યની વ્યવસ્થા આગળ કહ્યા પ્રમાણે ઘટાવી લેવી (૧૨) જે જે પ્રમાણે કથાપ્રવર્ત્ત ના નામનો જે બારમો ભેદ છે, તેમાં પણ સમોગ્ય, અસંભોગ્યની વ્યવસ્થા આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી.

કૃતિકર્મ—વન્દન—બાર આવર્ત્તવાળું હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-પહેલા બે

'दुओणए' द्व्यवनतम्, अवनतम्=शिरोनमनम् द्वे अवनते यस्मिन्तद् द्व्यवनतम्, तत्रैकं यदा पूर्वमेव 'इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियए' इति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायाऽवनमनम् १। द्वितीयं-पुन र्यदा पूर्ववदवग्रहानुज्ञापनायैवावनमनं इति आवर्त्तद्वयम्। 'जहाजायं' यथाजातं यथा श्रमणो जातस्तथा-वन्दते, अर्थात् दीक्षाग्रहणसमये यथा-परिधृतचोलपट्टकमावरणसदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणप्रमार्जिको बद्धाञ्जलिपुटश्चासीत्. तामवस्थामाश्रित्य वन्दनम्-इति भावः, इति तृतीयः आवर्तः। 'किइकम्मंबारसावय' कृतिकर्मद्वादशावर्त्तम्, द्वादशा आ-वर्ताः सूत्रोच्चारणमिश्राः कायव्यापारा यस्मिंस्तद् द्वादशावर्त्तं वन्दनकम्। तथाहि-'अहो कायं कायसंफासं' इत्यत्र 'अ' इत्युच्चार्याऽञ्जलिपुटं दक्षिणभागक्रमेण परि-

---

दो शिरोनमन वाला कृतिकर्म, इसमें एक शिरोनति तब की जाती है कि जब पहिले ही "इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसी-हियाए" ऐसा पाठ बोलकर अवग्रह की अनुज्ञा ली जाती है १। दूसरा तब किया जाता है जब पहिले की तरह पुनः अवग्रह की आज्ञा ली जाती है। इस प्रकार ये दो आवर्त्त हो जाते हैं २। तीसरा आवर्त्त यथाजात है यह उस समय किया जाता है जब दीक्षाग्रहण के समय में वह चोलपट्टक को धारण करता है सदोरकमुखवस्त्रिका को अपने मुह पर बाँधता है रजोहरण और प्रमार्जिका को लेता है, अपने गुरुदेव को दोनों हाथ जोडकर नमस्कार करता है। इसी का नाम यथाजात है यह तृतीय आवर्त्त है ३। द्वादश आवर्त्तवाला-कृत्तिकर्म चौथा आवर्त्त है। सूत्रोच्चारण से मिश्रित कायव्यापार का नाम आवर्त्त है। ये वंदन क्रिया में बारह इस प्रकार से होते हैं-"अहो कायं कायसफास" इस पाठ को बोलकर

શિરોનમન વાળા કૃતિકર્મ છે. તેમા પહેલા જ્યારે "इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए" એવો પાઠ બોલીને જ્યારે અવગ્રહની અનુજ્ઞા લેવામા આવે છે ત્યારે પહેલો વખત શિરોનતિ (મસ્ત નમાવવાની ક્રિયા) થાય છે જ્યારે પહેલાની જેમ ફરીથી અવગ્રહની આજ્ઞા લેવાય છે ત્યારે બીજી વખત શિરો-નતિ કરાય છે. આ પ્રમાણે તે બે આવર્ત્ત થાય છે. (૨) ત્રીજુ આવર્ત્ત યથાજાત છે તે જે સમયે કરવામાં આવે છે કે જ્યારે દીક્ષા લેતી વખતે તે ચોલપટ્ટક ધારણ કરે છે, સદોરકમુહપત્તિ પોતાના મોઢે બાંધે છે; રજોહરણ અને પ્રમાર્જિકા લે છે, પોતાના ગુરુદેવને બન્ને હાથ જોડીને નમસ્કાર કરે છે તેનું નામ 'યથાજાત' છે. બાર આવર્ત્તવાળું કૃતિકર્મ ચોથુ આવર્ત્ત છે. સૂત્રોચ્ચારણથી મિશ્રિત કાય વ્યાપારને આવર્ત્ત કહે છે. વંદન ક્રિયામા તે બાર આવર્ત્ત આ પ્રમાણે થાય છે-'अहो कायं काय संफासं'

भ्राम्य वामभागमानीय शिरसा सयोज्य 'हो' इति वदेत् इत्थं प्रथमावर्तेन समाप्य 'का' 'यं' इत्युक्त्वा द्वितीयम्, 'काय' इत्युक्त्वा तृतीय चावर्तन पूर्ववत्कृत्वा 'स फास' इति वदन् शिरो नमयित्वा गुरुचरणौ स्पृशन्, भवति चैव 'खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताण—बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो?' इति वाक्येनापराध क्षमापणपूर्वक दैवसिक सुखशातादिक पृष्ट्वा। 'जत्ता भे' इत्युच्चार्य चतुर्थम्, 'जव णिज्ज' इत्युच्चार्य पचमम् 'च मे' इत्युच्चार्य षष्ठमावर्तनम्। अनयैव रीत्या द्वितीय क्षमाश्रमणदानेऽपि षडावर्तनानि इति द्वयम् मिलित्वा द्वादश आवर्तनानि

जब शिष्य अपने गुरु वृद्ध के चरणों का स्पर्श करता है तब इसमें तीन आवर्त हो जाते हैं, जैसे—"अहो" में से वह पहिले "अ" को बोलते समय अपने अजलिपुट को दक्षिणभाग से घुमाकर वाम भाग में लाता है, और फिर उसे शिर से सयुक्त कर "हो" शब्द का उच्चारण करता है। इसमें प्रथम आवर्त होकर समाप्त हो जाता है १। बाद में "काय" पद को "का" "यं" इस प्रकार विभक्तरूप से बोलकर द्वितीय आवर्त हो, और "काए" पद को इसप्रकार में बोलकर तृतीय आवर्त को पूर्ववत् करके "सफास" बोलता हुआ वह शिर को झुकाकर गुरु के चरणों को स्पर्श कराता है ३। बाद में प्रवेश होते ही 'खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताण बहुसु भेण भे दिवसो वइक्कंतो' इस वाक्य से अपराध क्षमापनपूर्वक दैवसिक सुख शातादिक पूछकर "जत्ता भे" ऐसा उच्चारण करके चतुर्थ आवर्त ४, "जवणिज्ज" बोलने में पंचम आवर्त ५, "च मे" बोलने में छट्ठा आवर्त हो जाता है६। इसी रीति से द्वितीय क्षमाश्रमण में भी छह आवर्तों

આ પદ બોલાને સિ ય પોતાના ગુરુદેવના અવયવોનો સ્પર્શ કરે છે ત્યારે તેમાં ત્રણ આવર્ત થાય છે જેમ કે "અહો" માંથી પહેલા 'અ' ને બોલતી વખતે પોતાના અંજલિપુટને જમણી તરફથી લઈને ડાબી તરફ કરે આવે છે, અને પછી તેને શિર સાથે સંયુક્ત કરીને 'હો' શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરે છે આમાં પહેલું આવર્ત સમાપ્ત થાય છે ત્યાર બાદ "કાયં" પદને "કા" "યં" એમ ભિન્ન રૂપે બોલીને દ્વિતીય આવર્ત ને અને 'કાય' પદને સમગ્ર રૂપે બોલીને પહેલાની જેમ કરીને "કાય" સફાસં" બોલતા તે ત્રીજા આવર્તને સમાપ્ત કરે છે અને શિર નમાવીને ગુરુના અવયવોનો સ્પર્શ કરે છે ત્યાર પછી ખમણિજ્જો મે કિલામો અપ્પકિલંતાણ બહુસુભેણ મે દિવસો વઇક્કંતો" આ વાક્યથી અપરાધ ક્ષમાપન પૂર્વક દિવસ સંબંધી સુખ શાતાદિક પૂછીને "જત્તાએ" એવું ઉચ્ચારણ કરીને બીજા આવર્ત "જવણિજ્જં" બોલીને ચોથા આવર્ત 'ચ મે' બોલીને છઠ્ઠો આવર્ત થાય છે એ રીતે બીજા ક્ષમાપક સમયે

भवन्ति, एति चतुर्थ आवर्तः। तथा 'चउसिरं' चतुः शिरः, प्रथममविष्टस्य शिष्यस्य क्षमापणकाले शिष्याचार्ययोः शिरोद्वयम्५,

पुनरपि निष्क्रम्य प्रविष्टस्य द्वयम्, इति चतुःशिरः। इति-आवर्तद्वयम्, इति पञ्चमः षष्ठ आवर्तः। तथा 'तिगुत्त' त्रिगुप्तं-तिसृभिर्गुप्तं त्रिगुप्तम् अत्र आवर्तत्रयमिति नवावर्ताः। 'दुपवेसं' द्विप्रवेशम्-द्वौ प्रवेशौ यस्मिंस्तत् द्विप्रवेशम्। तत्र अवग्रहमनुज्ञाप्य प्रविशतः प्रथमः प्रवेशः, निर्गत्य पुनः प्रविशतो द्वितीयः प्रवेशः इति प्रवेशरूपमावर्तद्वयम् संकलनया एकादशावर्ताः। 'एगनिक्खमणं' अवग्रहादावश्यक्या निर्गच्छत एक निष्क्रमणम्। द्वितीयवेलाया तु अवग्रहान्न निर्गच्छति, पादपतित एव सूत्रं समापयतीति। द्वादश आवर्ताः। अत्र द्वादशविधेष्वावर्तेषु अवश्यकरणीयतया पञ्चविंशतिर्विधयो भवन्ति, ते यथा-

---

हो जाते हैं१२। इस प्रकार कृतिकर्म बारह आवर्तोंवाला होता है। ये चार आवर्तोंहुए४। तथा चारशिर ये पांचवां और छठवां आवर्त्त है-प्रथम प्रविष्ट हुए शिष्य के क्षमापणकाल में शिष्य और आचार्य के दो शिर, बाद में पुनः निकल कर प्रविष्ट हुए शिष्य के क्षमापण काल में शिष्य और आचार्य के दो शिर, इस प्रकार ये चार शिर हैं। इनके दो आवर्त्त, ऐसे पांचवां और छठा आवर्त्त होता है ६। तथा तीनगुप्तियों के तीन आवर्त्त, इस तरह ये नव आवर्त्त हो जाते हैं ९। दो प्रवेश के दो आवर्त्त-अवग्रह को लेकर प्रवेश करना यह प्रथम प्रवेश, तथा निकलकर पुनः प्रवेश करना यह द्वितीय प्रवेश-ये प्रवेशरूप दो आवर्त्त हैं ११। तथा-अवग्रह से आवश्यकी करके निकलने वाले का एक यह बारहवां निष्क्रमणरूप आवर्त्त होता है१२। दूसरी वार अवग्रह से नहीं निकलता है किन्तु वहीं गुरुचरण में रहा हुआ ही क्षमाश्रमण का पूरा पाठ पढता है, इस प्रकार से कृतिकर्म-वन्दन-द्वादश आवर्त्तवाला कहा है। इन

પણ છ આવર્ત્ત થાય છે આ રીતે કૃતિકર્મ બાર આવર્ત્ત વાળુ હોય છે આ રીતે ચાર આવર્ત્ત થયા તથા ચારશિર એ પાચમુ અને છઠ્ઠુ આ વર્ત્ત છે, પહેલાં દાખલ થયેલ શિષ્યનાં ક્ષમાપણુકાળમા શિષ્ય અને આચાર્યના બે શિર, ત્યાર બાદ પુન નીકળીને પ્રવિષ્ટ થયેલ શિષ્યના ક્ષમાપણુકાળમા શિષ્ય અને આચાર્યના બે શિર છે એ પ્રમાણે ચાર શિર છે તેમના બે આવર્ત્ત એ રીતે પાચમું અને છઠ્ઠુ આવર્ત્ત થાય છે તથા ત્રણ ગુપ્તિયેાના ત્રણ આવર્ત્ત એ રીતે તે નવ આવર્ત્ત થઈ જાય છે બે પ્રવેશના બે આવર્ત્ત-અવગ્રહ લઈને પ્રવેશકરવેા તે પ્રથમ પ્રવેશ, તથા નીકળીને પુન પ્રવેશ કરવેા તે દ્વિતીય પ્રવેશ, એ પ્રવેશરૂપ બે આવર્ત્ત છે તથા અવગ્રહથી આવશ્યકી કરીને નીકળનારનેા એક, તે બારમેા નિષ્ક્રમરૂપ આવર્ત્ત થાય છે, બીજી વાર અવગ્રહથી નીકળતેા નથી પણ ત્યા ગુરુ ચરણમા રહીને જ ક્ષમા શ્રમણનેા પુરેા પાઠ બેાલે છે આ રીતે કૃતિકર્મ-વન્દન-બાર

द्वे अवनतीः२, एकं यथाजातम्३, द्वादशावर्ताः१२, चतुष्कृत्वः कृतिकर्म१५ चत्वारि शिरांसि१९, त्रिस्रो गुप्तयः२२, द्वौ प्रवेशौ२४, एकं निष्क्रमणम्२५, इति पञ्चविंशतिरावश्यकाधिकाराः। विजया खलु राजधानी द्वादशयोजनसहस्राणि 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भाभ्याम् आयामो दैर्घ्यम्, विष्कम्भो विस्तारः ताभ्याम्, मङ्क्षा। राम खलु बलदेवो द्वादशवर्षसहस्राणि सर्वायुष 'पालित्ता' पालयित्वा समाप्य पञ्चम ब्रह्मलोक देवत्वं गतः। मन्दरस्य खलु पर्वतस्य 'चूलिया' चूलिका= चूडा मूले द्वादश योजनानि विष्कम्भेण मङ्क्षा। जम्बूद्वीपस्य खलु द्वीपस्य वेदिका मूले द्वादशयोजनानि विष्कम्भेण मङ्क्षा। सर्वेषु वर्षेषु 'सव्वप्पडिणिया' सर्व-जघन्या न्यूनातिन्यूनेत्यर्थः, 'राई' रात्रि 'दुवालसमुहुत्तिया' द्वादशमुहूर्तिका द्वादशमुहूर्ता यस्यां सा, मङ्क्षा। एवं दिवसोऽपि सर्वजघन्यो द्वादशमुहूर्तकोऽवगन्तव्य। सर्वार्थसिद्धस्य खलु महाविमानस्य उपरितनात् स्तूपिकाग्राद् विमल

બારસ આવર્તો મને અવશ્ય કરવા યોગ્ય પચીસ ક્રિયાઓ હોય છે, તે આ પ્રમાણે છે—બે અવનતો૨, એક યથાજાત૩, બાર આવર્તો૧૨, ચાર વાર કૃતિકર્મ૧૬, ચાર શિર૧૯, ત્રણ ગુપ્તિઓ૨૨, બે પ્રવેશ૨૪, અને એક નિષ્ક્રમણ૨૫। આવશ્યક અધિકારો પચીસ છે। વિજયા નામની રાજધાની બાર હજાર યોજનની કહી છે। રામ નામના બલભદ્ર બાર હજાર વર્ષ આયુષ્ય પાળીને પાંચમાં દેવલોકમાં દેવ થયા છે. મંદર પર્વતની ચૂલિકા મૂળમાં વિષ્કંભની અપેક્ષાએ બાર યોજનની કહી છે આમાં વજ્રમાં ચોથી ટૂંકી ચૂલિકા બાર યોજન પ્રમાણે ચોથી ટૂંકી વિસ્તૃત પણ બાર યોજનનો હોય છે જંબુદ્વીપ નામક પ્રથમ દ્વીપની વેદિકા મૂલમાં વિષ્કંભની અપેક્ષાએ બાર યોજનની કહી છે। સમસ્ત વર્ષમાં સર્વથી અતિક્ષુદ્ર (નાની) રાત્રિ બાર મુહૂર્તવાળી હોય છે। એજ પ્રકારે બાર મુહૂર્તનો દિવસ સર્વથી નાનો કહ્યો છે। સર્વાર્થસિદ્ધ મહાવિમાન

र ग्रभागात् द्वादशयोजनानि ऊर्ध्वमुपरितनी ईषत्प्राग्भारनामधेया सिद्धशिलेति नाम्ना प्रसिद्धा पृथ्वी प्रज्ञप्ता। ईषत्प्राग्भाराया: खलु पृथिव्या द्वादशनामधेयानि प्रज्ञप्तानि। तद्यथा-'ईसित्ति वा' ईषदिति वा, वा शब्दो विकल्पार्थः, इति शब्दः स्वरूपनिर्देशार्थः, ईषदिति प्रथमं नाम। 'इसिपब्भाराइ वा' ईषत्प्राग्भारेति द्वितीयं नाम। 'तणूइ वा' तनुरिति तृतीयम्। 'तणुयतरित्ति वा' तनुकतरेति चतुर्थम्। 'सिद्धित्ति वा' सिद्धिरिति नामधेयं पञ्चमम्। 'सिद्धालएत्ति वा' सिद्धालयेति षष्ठम्। 'मुत्तित्ति वा' मुक्तिरिति सप्तम्। 'मुत्तालएत्ति वा' मुक्तालयेति नामधेयमष्टमम्। 'बंभेत्ति वा' ब्रह्मेति नवमम्, 'बंभवडिंसएति वा' ब्रह्मावतंसिकेति दशमम्। 'लोगपडिपुरणेत्ति वा' लोकप्रतिपूरणेति एकादशम्। 'लोगग्गचुलियाइ वा' लोकाग्रचूलिकेति द्वादशं नाम ॥३२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं बारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं बारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं बारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं बारसपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं बारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा माहिंदं महिंदज्झयं कंबु कंबुगीवं पुंखं सुपुंखं महापुंखं पुंडं सुपुडं महापुडं नरिंदं नरिंदकंतं नरिंदुत्तरवडिंसगं विमाणं

के-उपरितन शिखर के अग्रभाग से बारह योजन ऊपर ईषत्प्राग्भार नामक सिद्ध शिला है। इस ईषत्प्राग्भार पृथिवी के बारह नाम हैं। वे इस प्रकार है-ईषत्१, ईषत्प्राग्भार२, तनू३, तनुकतरा४, सिद्धि५, सिद्धालय६, मुक्ति७, मुक्तालय८, ब्रह्म९, ब्रह्मावतंसिका१०, लोकप्रतिपूरणा११, और लोकाग्रचूलिका १२॥ सू० ३२॥

ઇષત્પ્રાગ્ભાર નામની સિદ્ધશિલા છે. આ ઇષત્પ્રાગ્ભાર પૃથ્વીના બાર નામ છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) ઇષત્ (૨) ઇષત્પ્રાગ્ભાર. (૩) તનૂ (૪) તનુકતરા, (૫) સિદ્ધિ (૬) સિદ્ધાલય, (૭) મુક્તિ, (૮) મુક્તાલય, (૯) બ્રહ્મ, (૧૦) બ્રહ્માવતંસિકા, (૧૧) લોકપ્રતિપૂરણ અને (૧૨) લોકાગ્રચૂલિકા, ॥ સૂ. ૩૨॥

देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं बारससागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा बारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं बारसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे बारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्संति ॥सू ३३॥

टीका— इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामेकस्यां नैरयिकाणां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। पञ्चम्यां पृथिव्यामेकस्यां नैरयिकाणां द्वादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामेकस्यां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। लान्तके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां द्वादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ये देवा महद्धिः, महेन्द्रध्वजः कम्बुः, कम्बुग्रीवः, पुष्पः, सुपुष्पलः, महापुष्पलः, पुष्पः सुपुष्पः, महापुष्पः,

---

टीकार्थ—'इमीसे णं इत्यादि।

इस रत्नप्रभा पृथिवी में किसनेक नारकियों की बारह पल्योपम की स्थिति कही गई है। पांचवी में किसनेक नारकियों की बारह सागरोपम की स्थिति कही गई है। असुरकुमार देवों में किसनेक देवों की स्थिति बारह पल्योपम की कही गई है। सौधर्म ईशान कल्पों में किसनेक देवों की स्थिति बारह पल्योपम की कही गई है। लान्तक कल्प में किसनेक देवों की स्थिति बारह सागरोपम की कही गई है। जो देव महेन्द्रः, महेन्द्रध्वजः, कम्बुः, कम्बुग्रीवः, पुष्पः, सुपुष्पः, महापुष्पः, पुष्पः

ટીકાર્થ—'इमीसे णं' इत्यादि।

આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની બાર પલ્યોપમની સ્થિતિ છે પાંચમી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની બાર સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ બાર પલ્યોપમની કહી છે સૌધર્મ તથા ઈશાન કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ બાર પલ્યોપમની કહી છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ બાર સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) મહેન્દ્ર (૨) મહેન્દ્રધ્વજ (૩) કમ્બુ (૪) કમ્બુગ્રીવ, (૫) પુષ્પ (૬) સુપુષ્પ (૭) મહાપુષ્પ, (૮) પુષ્પ (૯)

नरेन्द्रं नरेन्द्रकान्त नरेन्द्रोत्तरावतंसकं च विमानम्=एतेषु त्रयोदशविमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना', तेषां खलु देवानां सोत्कर्षा द्वादशसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा द्वादशानामर्द्धमासानां=षण्णां मासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां द्वादशभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येकके भवसिद्धिका जीवा ये द्वादशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति ॥सू. ३३॥

त्रयोदश समवायामाह -

मूलम्--तेरस किरिया ठाणा पण्णत्ता, तं जहा--अट्ठादंडे, अणट्ठादंडे, हिंसादंडे, अकम्हादंडे, दिट्ठिविपरियासिदंडे, मुसावायवत्तिए, अदिन्नादाणवत्तिए, अज्झत्थिए मानवत्तिए, मित्तदोसवत्तिए, मायावत्तिए, लोभवत्तिवए, इरियावहिए नामं तेरसमे। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु तेरस विमाणपत्थडा पण्णत्ता। सोहम्मवडिंसगे णं विमाणे णं अद्धतेरसजोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते।

सुपुंड्र९, महापुंड्र१०, नरेंन्द्र११, नरेन्द्रकान्त१२, और नरेन्द्रोत्तरावतंसक १३, इन तेरह विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति बारह सागरोपम की कही गई है। वे देव बारह अर्द्धमासों के अर्थात् छ महीनों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास लेते हैं। उन देवों को बारह हजार वर्ष के अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इन में कितनेक जीव ऐसे होते है जो भवसिद्धिक होते है, और ये जीव बारह भव लेने के बाद सिद्धपद प्राप्त करने वाले होंगे, बुद्ध होंगे, सर्वथा कर्ममल से छूट जाने वाले होगे, परिनिर्वृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का नाश कर देंगे ॥सू० ३३॥

સુપુડ (૧૦) મહાપુડ, (૧૧) નરેન્દ્ર (૧૨) નરેન્દ્રકાન્ત અને (૧૩) નરેન્દ્રોત્તરાવતંસક એ તેર વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, ને દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બાર સાગરોપમની કહેલ છે તે દેવો છ મહિને બાહ્ય આભ્યન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ લે છે તે દેવોને બાર હુજાર વર્ષે આહાર લેવાની અભિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે તેમાના કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે દેવો બાર ભવ કરીને સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરશે બુદ્ધ થશે, સર્વથા કર્મમલથી મુકત થશે, પરિનિવૃત થઈ જશે અને સમસ્ત દુઃખોનો નાશ કરશે ॥સૂ ૩૩॥

एव ईसाणवज्जिंसगो वि । जलयरपंचिंदिय तिरिक्खजोणियाण अट्ठ तेरस जाइकुलकोडीजोणीपमुहसयसहस्साइ पण्णत्ताइ । पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पण्णत्ताणि । गब्भवक्कंतिय पंचिंदिय तिरिक्ख जोणियाण तेरस विहे पओगे पण्णत्ते । तं जहा—सच्चमणपओगे, मोसमणपओगे, सच्चामोसमणपओगे, असच्चामोसमणपओगे, सच्च वइपओगे, मोसवइपओगे, सच्चामोसवइपओगे, असच्चामोसवइप ओगे, ओरालिअसरीरकायपओगे ओरालियमीससरीरकायपओगे, वउव्वियसरीरकायपओगे, वेउव्वियमीससरीरकायपयोगे कम्मसरीर कायपओगे । सूरमंडलजोयणेण तेरसेहिं एगसट्ठिभागेहिं जोयणस्स ऊणं पण्णत्तं ॥ सू० ३४ ॥

टीका—'तेरस' इत्यादि । 'तेरस' त्रयोदश 'किरियाठाणा' क्रियास्थानानि प्रज्ञप्तानि । तत्र कर्मबन्धनहेतुरूपा प्रवृत्तिः, तस्या स्थानानि भेदाः। तद्यथा—'अट्ठादंडे' अर्थदण्डः=दण्डयते=त्रसस्थावरादिहिंसनं येन स दण्डः, दण्डः =अर्थेदण्ड—स्वशरीरस्वजनादि प्रयोजनाय हिंसाकरणम् । इदं प्रथमं क्रियास्थानम्। एवमेव 'अणट्ठादंडे' अनर्थदण्डः—प्रयोजनमन्तरेणैव त्रसस्थावरविनाशनं यत्तत्

अब सूत्रकार तेरहवें समवाय को प्रकट करते हैं—'तेरस' इत्यादि। टीकार्थ कर्मबन्धन में हेतुभूत प्रवृत्ति का नाम क्रिया है। इसके स्थान-भेद—तेरह हैं वे इस प्रकार हैं—अर्थदंड१, अनर्थदंड२, हिंसादंड३, अकस्मात दंड४, दृष्टिविपर्यासदंड५, मृषावाद प्रत्यय६, अदत्तादान प्रत्यय७, आध्यात्मिक८, मानप्रत्यय९, मित्रद्वेषप्रत्यय१०, मायाप्रत्यय११, लोभप्रत्यय१२, ऐर्या पथिक१३। स्वशरीर एवं स्वजनादि के निमित्त को लेकर जो हिंसात्मक क्रिया

હવે સૂત્રકાર તેરમું સમવાય બતાવે છે—'तेरस' इत्यादि !

ટીકાર્થ—કર્મબંધના કારણરૂપ પ્રવૃત્તિને ક્રિયા કહે છે તેના આ પ્રમાણે તેર ભેદ છે-(૧) અર્થદંડ (૨) અનર્થદંડ, (૩) હિંસાદંડ (૪) અકસ્માત દંડ (૫) દૃષ્ટિવિપર્યાસદંડ (૬) મૃષાવાદ પ્રત્યય, (૭) અદત્તાદાન પ્રત્યય, (૮) આધ્યાત્મિક (૯) માન પ્રત્યય (૧૦) મિત્રદ્વેષ પ્રત્યય (૧૧) માયા પ્રત્યય, (૧૨) લોભ પ્રત્યય અને (૧૩) ઐર્યાપથિક (૧) પોતાના શરીર નિમિત્ત અને સ્વજનાદિને નિમિત્તે જે હિંસાત્મક ક્રિયા

विधानेन सोऽनर्थदण्डो द्वितीय क्रियास्थानम् । तथा 'हिंसादंडे' हिंसादण्डः=हिंसामाश्रित्य यो दण्डो=हिंसन, अर्थात् 'अयं मामहिंसीत्, हिनस्ति, हिंसिष्यति वेति मनसि विधाय प्रतिपक्षिणो यो वधः स हिंसादण्डस्तृतीयं क्रियास्थानम्। तथा 'अकस्हादंडे' अकस्माद्दण्डः=अन्यवधाय प्रवृत्तस्य अन्यस्य हननम् । इति-चतुर्थं क्रियास्थानम् । तथा 'दट्ठिविपरियासियादंडे' दृष्टि विपर्यासिकादण्डः= विपर्यासो विपर्यासिका, दृष्टेर्विपर्यासिका मतिभ्रान्तता, तया निमित्तभूतया यो दण्डः=प्राणिवधः स दृष्टि विपर्यासिकादण्डः, मित्रादीनाममित्रादिबुद्ध्या हननमित्यर्थः। इति पञ्चमम् । तथा-'मुसावायवत्तिए' मृषावादप्रत्ययम्, मृषावादः =आत्मपरोभयार्थमसत्यवचनम्, स एव प्रत्ययः=कारणं यस्य तत् मृषावादप्रत्ययम् । षष्ठं क्रियास्थानम् । तथा 'आदिन्नादाणवत्तिए' अदत्तादानप्रत्ययम्, अदत्तादानं चौर्यं प्रत्ययः कारणं यस्य तत् । सप्तमं क्रियास्थानम् । तथा 'अज्झत्थिए' आध्यात्मिकम्=अध्यात्म=मनः, तत्र भवम् आध्यात्मिकम्, बाह्यनिमित्तमनपेक्ष्यैव

जाता है वह अर्थदंड है१। प्रयोजन की अपेक्षा बिना ही जो त्रस स्थावर आदि जीवों की हिंसा कर दी जाती है वह अनर्थदंड२। 'इसने मेरी हिंसा की थी, यह मेरी हिंसा करता है अथवा यह मेरी हिंसा करेगा' इस प्रकार का विचार कर प्रतिपक्षी का जो वध कर दिया जाता है वह हिंसादंड है३। अन्यजीव की हिंसा करने के लिये प्रवृत्त हुआ पुरुष अन्य प्राणी की हिंसा कर दे यह अकस्मात् दंड है४। मति की विपर्यासिता का निमित्त लेकर जो हिंसा हो जाती है वह दृष्टिविपर्यासिका दंड है। जैसे मित्र को अमित्र की बुद्धि से मार देना५। जिस का कारण मृषावाद हो वह मृषावाद-प्रत्यय है६। जिस का कारण अदत्तादान हो वह अदत्तादान प्रत्यय है७। बाह्यनिमित्त की अपेक्षा किये बिना ही जो शोक किया जाता है वह

આવે છે, તેને 'અર્થદંડ' કહે છે, ( ) કોઇ પણ જાતના પ્રયોજન વિના ત્રસ, સ્થાવર આદિ જીવોની જે હિંસા કરાય છે તેને 'અનર્થદંડ' કહે છે (૩) "આ વ્યક્તિએ મારી હિંસા કરી હતી, આ મની હિંસા કરે છે, અથવા આ મારી હિંસા કરશે" એવો વિચાર કરીને પ્રતિપક્ષી (વીરાધી) નો જે વધ કરાય છે તે "હિંસાદંડ" છે. (૪) એક જીવની હિંસા કરવાને તૈયાર થયેલ પુરુષ અન્ય જીવની હિંસા કરી નાખે છે. તેને 'અકસ્માત્ દંડ' કહે છે (૫) મતિની વિપર્યાસિતાને કારણે જે હિંસા થઈ જાય છે તેને 'દૃષ્ટિવિપર્યાસિકા દંડ' કહે છે જેમ કે મિત્રને અમિત્ર ગણીને મારવો (૬) હિંસાનું કારણ મૃષાવાદ હોય તે હિંસાને "મૃષાવાદપ્રત્યય" કહે છે (૭) જે હિંસાનુ કારણ અદત્તાદાન હોય છે તે હિંસાને "અદત્તાદાનપ્રત્યય" કહે છે [૮] બાહ્ય નિમિત્તની અપેક્ષા કર્યા વિના જ જે શોક આદિ કરાય છે તેને 'આધ્યાત્મિક'

शाक्षादिकरणमदृष्टं क्रियाप्यानम्। तथा-'मानवत्तिए' मानप्रत्यय मानादिमद निमित्त नवम क्रियास्थानम्। तथा मित्तदोसवत्तिए' मित्रद्वेषप्रत्ययम्=मित्रेषु द्वेष प्रत्ययो यस्य तत् हितचिन्तकानां मातापित्रादीनामल्पेऽप्यपराधे महादण्डकरण दशमं क्रियास्थानम्। मायाप्रत्ययम्-मायानिमित्तप्रत्ययकाद्दशम्। एव लोभप्रत्ययम्=लोभनिमित्तक द्वादश क्रियास्थानम्। तथा 'इरियावहिए' ऐर्यापथिकम्= इरापथ भवम् ऐर्यापथिकं, केवलयोगनिमित्त कर्मबन्ध, अर्थादुपशान्तमोहादीनां सातवेदनीयकर्मबन्धो नाम 'तेरसम' त्रयोदश क्रियास्थान मन्तव्यम्। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु त्रयोदश 'विमाणपत्थडा' विमानप्रस्तटा सन्ति।

'सोहम्मवडिंसगे ण विमाणे णं' सौधर्मावतंसक खलु विमान खलु 'ण' इव वाक्यालङ्कार, सौधर्मस्वर्गलोकोऽर्धचन्द्राकृतिक पूर्वपश्चिमत आयामयुक्त उत्तरदक्षिणतो विस्तृत। तस्य मध्यभागे त्रयोदशे प्रस्तट शक्रस्य निवासभूत विमानमस्ति, तद् विमानं सौधर्मदेवलोकस्य अवतसक=शिरोभूषणमिव वर्तते

आध्यात्मिक द्वेष आदि मद को निमित्त करके जो किया जाता है वह मानप्रत्यय है[१०]। हितकारी माता पिता आदि को अल्प भी अपराध होने पर बडा दण्ड देना यह मित्र द्वेषप्रत्यय है[११]। इसी तरह माया को निमित्त करके जो किया जाता है वह मायाप्रत्यय है[१२]। एव लोभ रूप निमित्त से किया जाने वाला लोभप्रत्यय है[१३]। केवल योग निमित्तक जो कर्मबंध होता है अर्थात उपशान्तमोह आदि गुणस्थानवर्ती जीवों के जो एक सातावेदनीय कर्म का बंध होता है वह ऐर्यापथिक क्रिया स्थान है[१४]।

सौधर्म तथा ईशान, इन दो कल्पों में तेरह विमान प्रस्तट कहे गये हैं। सौधर्म स्वर्गलोक अर्धचन्द्र के आकार जैसा है। पूर्वपश्चिम में लंबा और उत्तरदक्षिण में चौडा है। इस के मध्यभाग में तेरहवें प्रस्तट में इन्द्र का निवासभूत विमान है। यह विमान सौधर्म स्वर्गलोक का शिरो

---

(१०) अति आदिना भावे आत्मे जे द्वि-ता प्रत्यय छे ते मानप्रत्यय' कहेवाय छे (११) हितकारी माता पिता आदिने थोडो पण अपराध थता मोटी शिक्षा करवी ते मित्रद्वेषप्रत्यय' कहेवाय छे (१२) छेतर प्रकारे भावाने आत्मे जे प्रत्यय आवे छे तेने मायाप्रत्यय' कहे छे (१३) लोभने आत्मे जे प्रत्यय आव छे तेन 'लोभप्रत्यय' कहे छे (१४) केवल योग निमित्त जे कर्मबंध थाय छे अर्थात उपशान्तमोह आदि गुण स्थानवर्ती जीवोने जे एक सातावेदनीय कर्मनो बंध थाय छे तने ऐर्यापथिक 'क्रियास्थान' कहे छे

सौधर्म तथा ईशान बे कल्पोमां तेर विमान प्रस्तट कहेल छे पूर्व पश्चिम लांबु अने उत्तर दक्षिणमां पहोळु छे तेना मध्य भागमां तेरमां प्रस्तटमा (प्रतरमा) इन्द्रना निवासभूत विमान छे ते विमान सौधर्म देवलोकना

ऽतस्तद् विमानं सौधर्मावतंसकविमानमित्युच्यते, तद् विमानम् 'अद्धतेरस जोयण सयसहस्साइ' अर्धत्रयोदशयोजनशतसहस्राणि सार्धद्वादशलक्षयोजनानि आयाम-विष्कम्भाभ्यां प्रज्ञप्तम्। एवं सौधर्मावतंसक विमानवत् ईशानावतंसकविमानमपि विज्ञेयम्। जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम् 'जाइकुलकोडीजोणीपमुहसयसहस्साइ' जातिकुलकोटियोनिप्रमुखशतसहस्राणि=जातौ कुलकोटीना योनिप्रमुखानि उत्पत्तिस्थानप्रभवानि यानि शतसहस्राणि तानि 'अद्धतेरस' अर्धत्रयोदशसार्ध द्वादशलक्षाणि प्रज्ञप्तानि, 'पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पण्णत्ता' 'पाणाउस्स णं' प्राणायुषः खलु. यत्र प्राणिनामायुर्विधानं सभेदमभिधीयते, तत्प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम् तस्य खलु पूर्वस्य त्रयोदश 'वत्थू' वस्तूनि=अध्ययनवद्विभागविशेषाः प्रज्ञप्तानि। 'गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं' गर्भव्युत्क्रान्तिकपञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकानाम्=गर्भाद् व्युत्क्रान्तिरुत्पत्ति र्येषा ते, ते च पञ्चेन्द्रियतिर्यग्यो-निकाश्चेति, तेषाम्, 'तेरसविहे' त्रयोदशविधः 'पओगे' प्रयोगः=प्रयोजनं प्रयोगः - मनोवाक्कायव्यापार इत्यर्थः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा-'सच्चामणपयोगे' सत्यमनः प्रयोगः१, 'मोसमणपओगे' मृषामनः प्रयोगः२, सच्चा मोसमणपओगे' सत्यमृषामनः प्रयोगः३. 'असच्चा मोसमणपओगे' असत्यामृषामनः प्रयोगः४, इति चत्वारो मनसः प्रयोगाः।

भूषण जैसा है, इसलिये इसका नाम सौधर्मावतंसकविमान है। यह विमान लंबाई और चौडाई में अर्धत्रयोदश अर्थात् साढा बारह १२॥ लाख योजन का है। इसी तरह ईशानावतंसक विमान भी हैं। जलचर पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले जीवों की जाति में कुल कोटियों की योनियां अर्धत्र-योदश--सार्धद्वादश लक्ष अर्थात् साढा बारह १२॥ लाख कही गई हैं। प्राणायु नामक बारहवें पूर्व के, अध्ययन की तरह विभाग विशेष तेरह कहे गये है। गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंचों के प्रयोग–मन, वचन और काय के व्यापार तेरह प्रकार के कहे गये है। वे इस प्रकार है—सत्यमनः प्रयोग१, मृषामनः प्रयोग२, सत्य मृषामनः प्रयोग३, असत्यामृषामनः प्रयोग४,

શિરોભૂષણ જેવું છે, તેનુ નામ સૌધર્માવતંસક વિમાન છે તે વિમાન લંબાઈમા સાડા બાર (૧૨॥) લાખ યોજનનુ છે એ જ પ્રમાણે ઇશાનાવતંસક વિમાન પણ છે. જળચર પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ યોનિવાળા જીવોની જાતિમા કુલ કોટિયોની યોનિયો સાડા બાર લાખ કહેવામા આવેલ છે પ્રણાયું નામના બારમા પૂર્વના, અધ્યયનના જેવા વિભાગ તેર કહેલ છે ગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોના પ્રયોગ મન, વચન, અને કાયની પ્રવૃત્તિ તેર પ્રકારની કહેલ છે તે આ પ્રમાણે છે—(૧) સત્ય મન. પ્રયોગ (૨) મૃષા મન પ્રયોગ, (૩) સત્ય મૃષા મન. પ્રયોગ, (૪) અસત્યામૃષામન. પ્રયોગ

तथा 'सच्चसच्चपओगे' सत्यसत्य प्रयोग ५, 'मोसमोसपओगे' मृषामृष प्रयोग ६, 'सच्चामोसपओगे' सत्यमृषा प्रयोग ७, 'असच्चामोसपओगे' असत्यामृषा प्रयोग ८, इति चत्वारो वचन प्रयोगा । 'ओरालियसरीरकायपओगे' औदारिक शरीरकाय प्रयोग औदारिकमिश्रशरीरकाय प्रयोग, 'वेउव्वियसरीरकायपओगे' वैक्रियिकशरीरकाय प्रयोग, 'वेउव्वियमीसरीरकायपओगे' वैक्रियिकमिश्रशरीरकाय प्रयोग, 'कम्मसरीरकायपओगे' कार्मण काय प्रयोग इति पञ्च कायिका प्रयोगा । एतेषि प्रयोगा पञ्चदशसु परन्तु आहारकाहारकमिश्रौ प्रयोगौ संयमिनामेव भवत, न तु तिरश्चां प्रयोदशैव मनसा । 'तरसेहि एगसट्ठिभागेहिं' तृतीयषष्ठयोजनस्य=तृतीयषष्ठभागस्य=योजन त्रिभागद्वयस्य योजनम् 'यं' इति वाक्यालङ्कारे, 'तरसेहि एगसट्ठिभागेहिं' एकषष्टिभागविभक्तस्य योजनस्य' 'एगसट्ठिभागेहिं' एकषष्टिभागैः=एकषष्टिभागविभक्तस्य योजनस्य अर्थात्तेकषष्टिभागविभक्ते योजने 'तरसेहि' त्रयाद्रभिकम्=त्रयाद्रभागान्यू योजनस्याष्टचत्वारिंशद्भागप्रमाणमित्यर्थः, शेषम् सू ३५॥

मन के इस प्रकार ये चार प्रयोग ४। सत्यत्व प्रयोग ५, मृषात्व प्रयो सत्यमृषात्व प्रयोग ७, असत्यामृषात्व प्रयोग ८, वचन के इस प्रकार ये प्रयोग ८। औदारिक शरीर काय प्रयोग ९। औदारिकमिश्रशरीरकाय प्रयोग वैक्रियिक शरीरकाय प्रयोग ११, वैक्रियिकमिश्र शरीर काय प्रयोग १२, और का शरीरकाय प्रयोग हैं १३। इस प्रकार ये पांच शरीरके प्रयोग हैं यद्यपि ये पन्द्रह कार के कहे गये हैं परन्तु आहारक प्रयोग और आहारकमि योग, ये दो प्रयोग केवल संयमीजनों के ही होते हैं, तिर्यञ्चों के इसलिए उनकी अपेक्षा ये यहां तेरह ही कहे गये हैं। अतिस्थूलि के इस का योजन इकसठ (६१) विभागों में विभक्त करने पर

આ રીતે મનના ચાર પ્રયોગ છે (૫) સત્યત્વના પ્રયોગ, (૬) મૃષાત્વ પ્ર (૭) સત્ય મૃષા ત્વ પ્રયોગ (૮) અસત્યા મૃષા વચ પ્રયોગ. આ રીતે વચનના પ્રયોગ ૮ (૯) ઔદારિક કાય પ્રયોગ, (૧૦) ઔદારિક મિશ્ર શરીર કાય (૧૧) વૈક્રિયિક શરીર કાય પ્રયોગ (૧૨) વૈક્રિયિક મિશ્ર શરીર કાય પ્રયોગ, અને આહારક શરીર કાય પ્રયોગ આ પ્રકારના પાંચ શરીરના પ્રયોગ છે એ રે પ્રકારના પ્રયોગ કહેલ છે પણ આહારક પ્રયોગ અને આહારક મિશ્ર પ્રયોગ પ્રયોગ કાલ સંયમી જનોને જ થાય છે તિર્યંચોને નહીં, માટે તેર પ્રયોગ જણાવ્યા

આ ત્રિત વિમાનના વૃત્તનું યોજન કોસના આયોમો વિભાજિત કરવામાં

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा वज्जं सुवज्जं वज्जावत्तं वज्जकंतं वज्जवण्णं वज्जलेसं वज्जरूवं वज्जसिंगं वज्जसिट्ठं वज्जकूडं वज्जुत्तरवडिंसगं वइरं वइरावत्तं वइरप्पभं वइरकंतं वइरवण्णं वइरलेसं वइररूवं वइरसिंगं वइरसिट्ठं वइरकूडं वइरुत्तरवडिंसगं लोगं लोगावत्तं लोगप्पभं लोगकंतं लोगवण्णं लोगलेसं लोगरूवं लोगसिंगं लोगसिट्ठं लोगकूडं लोगुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा तेरसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं तेरसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे तेरसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू. ३५॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। पञ्चम्यां पृथिव्याम-

---

तेरह भागों से न्यून है। अर्थात् एकयोजन के इकसठ भागों में से अडतालीस (४८) भागप्रमाण है सू० ३४॥

તેના તેર ભાગ જેટલું ન્યૂન છે એટલે કે એક યોજનના એકસઠ ભાગોમાંથી અડતાલીશ (૪૮) ભાગ પ્રમાણ છે (સૂ ૩૪)

एकेषां नैरयिकाणां त्रयोदश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानयोः कल्पयोः अस्त्येकेषां देवानाम् त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां त्रयोदश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ये देवा वज्रं सुवज्रं वज्रावर्तं वज्रप्रभं वज्रकान्तं वज्रवर्णं वज्रलेश्यं वज्ररूपं वज्रशृङ्गं वज्रसृष्टं वज्रकूटं वज्रोत्तरावतंसकं वारं वारावर्तं वारप्रभं वारकान्तं वारवर्णं वारलेश्यं वारूपं वारशृङ्गं वारसृष्टं वारकूटं वारोत्तरावतंसकं लोकं लोकावर्तं लोकप्रभं लोककान्तं लोकवर्णं लोकलेश्यं लोकरूपं लोकशृङ्गं लोकसृष्टं लोककूटं लोकोत्तरावतंसकं च

'इमीसे णं' इत्यादि।

टीकार्थ–इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तेरह पल्योपम की कही गई है। पांचवी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तेरह सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति तेरह पल्योपम की कही गई है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति तेरह पल्योपम की कही गई है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की तेरह सागरोपम की स्थिति कही गई है। जो देव वज्र१ सुवज्र२, वज्रावर्त३, वज्रप्रभ४, वज्रकान्त५, वज्रवर्ण६, वज्रलेश्य७, वज्ररूप८, वज्रशृंग९, वज्रसृष्ट१०, वज्रकूट११, वज्रोत्तरावतंसक१२, वार१३, वरावर्त१४, वारप्रभ१५, वारकान्त१६, वारवर्ण१७, वारलेश्य१८, वारूप१९, वारशृंग२०, वारसृष्ट२१, वारकूट२२, वारोत्तरावतंसक२३, लोक२४, लोकावर्त २५, लोकप्रभ२६, लोककान्त२७, लोकवर्ण२८, लोकलेश्य२९, लोकरूप३०, लोकशृङ्ग३१, लोकसृष्ट३२, लोककूट३३, और लोकोत्तरावतंसक३४,

ટીકાર્થ–इमीसेणं इत्यादि।

આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ તેર પલ્યોપમની કહી છે પાંચમી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક દેવોની તેર પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે સૌધર્મ તથા ઈશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ તેર પલ્યોપમની કહી છે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) વજ્ર, (૨) સુવજ્ર (૩) વજ્રાવર્ત (૪) વજ્રપ્રભ (૫) વજ્રકાન્ત (૬) વજ્રવર્ણ (૭) વજ્રલેશ્ય (૮) વજ્રરૂપ (૯) વજ્રશૃંગ (૧૦) વજ્રસૃષ્ટ (૧૧) વજ્રકૂટ, (૧૨) વજ્રોત્તરાવતંસક (૧૩) વાર, (૧૪) વારાવર્ત (૧૫) વારપ્રભ (૧૬) વારકાન્ત, (૧૭) વારવર્ણ, (૧૮) વારલેશ્ય, (૧૯) વારરૂપ (૨૦) વારશૃંગ, (૨૧) વારસૃષ્ટ (૨૨) વારકૂટ (૨૩) વારોત્તરાવતંસક (૨૪) લોક, (૨૫) લોકાવર્ત (૨૬) લોકપ્રભ (૨૭) લોકકાન્ત, (૨૮) લોકવર્ણ (૨૯) લોકલેશ્ય (૩૦) લોકરૂપ (૩૧) લોકશૃંગ (૩૨) લોકસૃષ્ટ (૩૩) અને (૩૪)

विमानम्=एतेषु त्रयस्त्रिंशद् विमानेषु देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रयोदशसागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवास्त्रयोदशभिरर्द्धमासैरानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां त्रयोदशभिर्वर्षसहस्रराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येकके भवसिद्धिका जीवा ये त्रयोदशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥ सू. ३५ ॥

चतुर्दश समवायमाह—

मूलम्—चउद्दस भूयग्गामा पण्णत्ता, तं जहा—सुहुमा अपज्जत्तया सुहुमा पज्जत्तया बादरा अपज्जत्तया बादरा पज्जत्तया बेइंदिया अपज्जत्तया बेइंदिया पज्जत्तया तेंदिया अपज्जत्तया तेंदिया पज्जत्तया चउरिंदिया अपज्जत्तया चउरिंदिया पज्जत्तया पंचिंदिया असन्नि अपज्जत्तया पंचिंदिया असन्निपज्जत्तया पंचिंदिया सन्नि अपज्जत्तया पंचिंदिया सन्नि पज्जत्तया। चउद्दस पुव्वा पण्णत्ता, तं जहा—उप्पायपुव्वमग्गेणियं च तइयं च वीरियं पुव्वं। अत्थीनत्थिपवायं तत्तो नाणप्पवायं च ॥१॥ सच्चप्पवायपुव्वं तत्तो आयप्पवाय पुव्वं च। कम्मप्पवायपुव्वं

इन तेतिस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तेरह सागरोपम की कही गई है वे देव तेरह अर्द्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास लेते हैं। उन देवों को तेरह हजार वर्षों के अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो तेरह भव के बाद सिद्धपद को भोगने वाले होगें, बुद्ध होंगे, कर्ममल से सर्वथा रहित हो जावेंगे, परिनिवृत्त होजावेंगे और समस्त दुःखों को अन्त कर देंगे ॥सू० ३५॥

લોકોત્તરાવતંસક, એ તેત્રીસ વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે તે દેવો સાડા છ મહિને બાહ્ય અભ્યન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને તેર હજાર વર્ષ પછી આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોમા કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે તેર ભવ કર્યા પછી સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરશે, બુદ્ધ થશે, કર્મમળથી સર્વથા રહિત થઇ જશે, પરિનિવૃત્ત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત કરી નાખશે ॥સૂ ૩૫॥

पञ्चक्खाण भवे नवम ॥२॥ विज्जाअणुप्पवाय अवञ्झपाणाउ बारस पुव्व । तत्तो किरियविसाल पुव्व तह बिंदुसार च ॥३॥ अग्गणीअस्स ण पुव्वस्स चउद्दस वत्थूइ पण्णत्ता इ । समणस्स ण भगवओ महावीरस्स समणसाहस्सीओ उक्कोसिआ समणसपया होत्था । कम्मविसोहिमग्गण पडुच्च चउद्दस जीवट्ठाणा पण्णत्ता । त जहा--मिच्छदिट्ठी सासायणसम्मदिट्ठी सम्मामिच्छदिट्ठी अविरयसम्मदिट्ठी विरयाविरए पमत्तसजए अप्पमत्तसजए नियट्टि बायरे अनियट्टिबायरे सुहुमसपराए उवसामए वा खवए वा उवसतमोहे खीणमोहे सजोगी केवली अजोगी केवली । भरहेर वयाओ ण जीवाओ चउद्दस चउद्दस जोयणसहस्साइ चत्तारि य पगुत्तरे जोजणसए छच्च पगूणवीसे भागे जोयणस्स आयामेण पण्णत्ता । एगमेगस्स ण रण्णो चाउरतचक्कवट्टिस्स चउद्दस रयणा पण्णत्ता , तंजहा--इत्थीरयणे सेणावइरयणे गाहावइरयणे पुरोहियरयणे वड्ढइरयणे आसरयणे हत्थिरयणे असिरयणे दडरयणे चक्करयणे छत्तरयणे चम्मरयणे मणिरयणे कगिणीरयणे । जबूदीवे ण दीवे चउद्दस महानईओ पुव्वावरेण लवणसमुद्द समुप्पति त जहा--गगा सिंधूरोहिया रोहिअसा हरी हरिकता सीया सीओदा नरकंता नारिकासा सुवण्णकूला रुप्पकुला रत्ता रत्तवई ॥२६॥

टीका— 'चउद्दस' इत्यादि । चतुर्दश 'भूयग्गामा' भूतग्रामा =जीव समूहाः प्रज्ञप्ताः । तथा-'सुहुमा आउत्तया'=सूक्ष्माः=सूक्ष्मनामकर्मोदयवर्ति

अब चौदहसम्पदा विशिष्ट समवाय को सूत्रकार प्रकट करते हैं- 'चउद्दस' इत्यादि ।

टीकार्थ-चौदह जीवसमूह कहा है, वे इस प्रकार हैं-सूक्ष्म एकेन्द्रिय

इसे सूत्रकार दीसनी ने व्याख्याता समवायांग प्रकट करते हैं— 'चउद्दस' इत्यादि ।

टीकार्थ-नीचे प्रकारों में कहा हुआ है (१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त

त्वात् एकेन्द्रियाः पृथिव्यादयः, अपर्याप्तका=सूक्ष्मनामकर्मोदयवशादपरिपूर्ण-स्वकीय पर्याप्तयः इति प्रथमो भूतग्रामः। 'सुहुमा पज्जत्तया' सूक्ष्माः पर्याप्तयः= एकेन्द्रियाः पृथिव्यादय एव कर्मपरिसमाप्तिवशात्परिपूर्णस्वकीयपर्याप्तय इति द्वितीयो भूतग्रामः। तथा बादरा अपर्याप्तकाः बादरा पर्याप्तकाः। बादरनामकं कर्मोदयवशात्पृथिव्यादयः अपर्याप्तकपर्याप्तकभेदाद्विविधाः इति तृतीयचतुर्थौ भूतग्रामौ। तथा द्विन्द्रियाः अपर्याप्तकाः, द्विन्द्रियाः पर्याप्तकाः। इति पञ्चमषष्ठ-भूतग्रामौ। त्रीन्द्रियाः अपर्याप्तका त्रीन्द्रियाः—पर्याप्तकाः। इति सप्तमाष्टमौ भूत-ग्रामौ। चतुरिन्द्रिया अपर्याप्तकाःचतुरिन्द्रिया पर्याप्तकाः इति नवमदशमौ भूतग्रामौ। पञ्चेन्द्रिया असज्ञ्यपर्याप्तकाः, पञ्चेन्द्रियाः असज्ञि पर्याप्तकाः=मनःपर्याप्त्यपर्याप्ति रहितत्वेन द्विविधाः पञ्चेन्द्रियाः इति एकादशद्वादशौ भूतग्रामौ। पञ्चेन्द्रियाः सज्ञ्य-पर्याप्तकाः, पञ्चेन्द्रियाः संज्ञि पर्याप्तकाः=मनसः पर्याप्त्यपर्याप्तिभेदेन पञ्चेन्द्रिया द्विविधा इति त्रयोदशचतुर्दशौ भूतग्रामौ।

चतुर्दशपूर्वाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तान्येवाह—'उप्पायपुव्वे' त्यादिभिस्तिसृभि-र्गाथाभिः—तच्छायाश्चेत्थम्—

उत्पादपूर्वमग्रायणीय च तृतीय च वीर्य पूर्वम्।
अस्ति नास्ति प्रवादं ततो ज्ञानप्रवाद च ॥१॥
सत्यप्रवादपूर्वं तत आत्मप्रवादं च।
कर्मप्रवादपूर्वं प्रत्याख्यानं भवेन्नवमम् ॥२॥
विद्यानुप्रवादमवन्ध्यं प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम्
ततः क्रियाविशालं पूर्वं तथा विन्दुसारं च ॥३॥

अपर्याप्त१, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त२, बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त३, बादर-एकेन्द्रिय पर्याप्त४, दो, इंद्रिय अपर्याप्त५, दो इंद्रिय पर्याप्त६, तेन्द्रिय अप-र्याप्त७, तेन्द्रिय पर्याप्त८, चौ इन्द्रिय अपर्याप्त९, चौ इन्द्रिय पर्याप्त१०, पंचेन्द्रिय असंज्ञी अपर्याप्त११, पचेन्द्रिय असंज्ञी पर्याप्त१२, पचेन्द्रियसज्ञी अपर्याप्त१३, पचेन्द्रियसज्ञी पर्याप्त१४।

चौदह पूर्व कहे गये हैं—वे इस प्रकार हैं—सो तीन गाथाओं से कहे

---

(२) सूक्ष्म એકેન્દ્રિ પર્યાપ્ત, (૩) બાદર એકેન્દ્રિય અપર્યાપ્ત (૪) બાદર એકેન્દ્રિય પર્યાપ્ત, (૫) દ્વીન્દ્રિય અપર્યાપ્ત, (૬) દ્વીન્દ્રિયપર્યાપ્ત (૭) તેન્દ્રિય અપર્યાપ્ત, (૮) તેન્દ્રિય પર્યાપ્ત, (૯) ચૌઈન્દ્રિય અપર્યાપ્ત, (૧૦) ચૌઇન્દ્રિય પર્યાપ્ત, (૧૧) પંચેન્દ્રિય અસજ્ઞી અપર્યાપ્ત, (૧૨) પચેન્દ્રીય અસજ્ઞી પર્યાપ્ત, (૧૩) પચેન્દ્રિય સંજ્ઞી અપર્યાપ્ત (૧૪) પચેન્દ્રિય સજ્ઞી પર્યાપ્ત.

ચૌદ પૂર્વ દર્શાવ્યા છે તે ત્રણ ગાથાઓ દ્વારા આ પ્રમાણે બતાવ્યા છે

'उप्पायपुव्व' उत्पादपूर्वम्=उत्पादमधिकृत्य यत्र द्रव्यपर्याया प्रज्ञापिता तत् उत्पादपूर्वं नाम प्रथमं पूर्वम्। 'अग्गेणियं च=अग्रायणीयं च अग्र परिमाण तस्य अयन गमनम्, अग्रायण, तत्र हितम् अग्रायणीय पूर्वम्=सर्वद्रव्यादिपरिमाणपरिच्छेदकारी लाय, तत्र हि=सर्वेषाम्याणा सर्वपर्यायाणा सर्वजीवविशेषाणा च परिमाणमुपवर्ण्यते। इतिद्वितीयपूर्वम्। 'तइय च वीरियं पुव्वं' तृतीय च वीर्य पूर्वम्, विशेषण ईरयति प्रेरयति आत्मान तासु तासु क्रियास्विति वीर्यम् यत्र जीवादीना वीर्य प्राप्यते तद् वीर्यप्रवादं नाम तृतीय पूर्वम्। तथा 'अत्थीनत्थिपवाय' अस्तिनास्तिप्रवादम्, लोके यद् वस्तु यथा-अस्ति, यद् वस्तु यथा नास्ति, तस्य प्रवाद कथन यस्मिन तत् अस्तिनास्तिप्रवादं नाम चतुर्थं पूर्वम्। 'तत्तो' तत 'णाणप्पवादं च' ज्ञान प्रवाद च, ज्ञानस्य मत्यादेः प्रवादो यत्र तत् ज्ञानप्रवाद नाम पञ्चमम् ॥१॥ तथा 'सच्चप्पवायपुव्व' सत्यप्रवादपूर्वम्=सद्भ्यो जीवेभ्यो हित सत्य संयम। सत्यवचने वा, स यत्र समेद समतिपत्तमं प्राप्यतेऽभिधीयते तत्सत्यप्रवादम्,

---

नाते हैं 'उप्पायपुव्व०' इत्यादि।

टीकार्थ-उत्पादपूर्व-इस पूर्व में, मैं उत्पाद धर्म को लेकर द्रव्य और पर्यायों की प्ररूपणा की गई है। अग्रायणीयपूर्व-इस पूर्व में समस्त द्रव्यों का समस्त पर्यायों का और समस्त जीवों की विशेषताओं का वर्णन किया गया है। वीर्यप्रवादपूर्व उन २ क्रियाओं में जो आत्मा को विशेष रूप से प्रेरित करे उसका नाम वीर्य है इस व्युत्पत्ति के अनुसार इस पूर्व में जीवादिकों की शक्ति का वर्णन किया गया है। अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व-इस पूर्व में जो वस्तु जिस रूप में है और जो वस्तु जिस रूप में नहीं है उसका वर्णन किया गया है। ज्ञानप्रवादपूर्व-मति आदि ज्ञानों का इसमें वर्णन किया गया है। सत्यप्रवादपूर्व इसमें जीवों के हितकारक सत्यसंयम का

'उप्पायपुव्व' इत्यादि।

ટીકાર્થ-उत्पादपूर्व—આ પૂર્વમાં ઉત્પાદ ધર્મને અનુલક્ષીને દ્રવ્ય અને પર્યાયોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે (૨)—'अग्रायणीय पूर्व'—આ પૂર્વમાં સમસ્ત દ્રવ્યોનું સમસ્ત પર્યાયોનું અને સમસ્ત જીવોની વિશેષતાઓનું વર્ણન કરાયું છે (૩) वीर्यप्रवाद पूर्व—પ્રત્યેક ક્રિયામાં જે આત્માને વિશેષ રૂપે પ્રેરિત કરે તેનું નામ વીર્ય છે આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આ પૂર્વમાં જીવાદિની શક્તિનું વર્ણન કરાયું છે अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व—આ પૂર્વમાં જેની વસ્તુ જેમ સ્વરૂપે છે અને જેમા સ્વરૂપમાં નથી તેનું વર્ણન કરાયું છે (૫) ज्ञान प्रवाद पूर्व मतिज्ञान आदि ज्ञानોનું આ પૂર્વમાં વર્ણન કરાયું છે (૬) सत्यप्रवाद पूर्व—આ પૂર્વમાં જીવોના હિતકારી સત્ય સંય

तच्च पूर्वं च सत्यप्रवादपूर्वं नाम षष्ठं । ततः 'आयप्पवायपुव्वं च' आत्मप्रवादपूर्वं च=आत्मनो जीवस्य अनेकविधैर्नयैर्यत्र प्रवादोऽभिधानं तत्पूर्वम् आत्मप्रवादपूर्वं नाम सप्तमम् । तथा 'कम्मप्पवायपुव्वं' कर्मप्रवादपूर्वम्=ज्ञानावरणीयादिकर्मणो यत्र प्ररूपणं तत्कर्मप्रवादपूर्वं नामाष्टमम् । तथा-'पच्चक्खाणं भवे नवमं' प्रत्याख्यानस्य प्रकारो यत्र निरूप्यते तत्पूर्वं प्रत्याख्याननामकं नवमं भवेत् ॥२॥

'विज्जा अणुप्पवायं' विद्यानुप्रवादम्, यत्रानेकविधानां विद्यानामनुप्रवादो वर्णनं तद्दशमं पूर्वम् । 'अवझ' अवन्ध्यम्, अवन्ध्याना सफलानां सम्यग्ज्ञानादीनां वर्णनं यत्र तदवन्ध्यं नामैकादशं पूर्वम् । तथा 'पाणाउ बारसं पुव्वं' प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम्=यत्र प्राणा जीवास्तदायुपश्च विविधप्रकारेण वर्ण्यन्ते तत् प्राणायु नाम द्वादशं पूर्वम् ततः 'किरियविसालं' क्रियाविशालम्, क्रियाः कायिक्यादयो विशालाः सविस्तृता यत्र निरूप्यन्ते तत्क्रियाविशाल नाम पूर्वं त्रयोदशम् । 'तह' तथा 'बिन्दुसार च' बिन्दुसारपदं लोकबिन्दुसारपदम्, तेनायं निर्गलि

अथवा सत्यवचन का भेदों को और प्रतिपक्ष को लेकर वर्णन किया गया है६, आत्मप्रवादपूर्व-इसमें विविध नयों के अनुसार जीवद्रव्य का कथन किया गया है७। कर्मप्रवादपूर्व-इसमें ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के स्वरूप आदि का वर्णन किया गया है८। प्रत्याख्यानपूर्व-इसमें प्रत्याख्यान का प्रकार वर्णित किया गया है९। विद्यानुप्रवादपूर्व-इसमें अनेकविध विद्याओं का वर्णन किया गया है१०। अवंध्यपूर्व-इसमें सफल सम्यग्ज्ञान आदिकों का वर्णन किया गया है११। प्राणायुपूर्व-इसमें जीवों का और उनकी आयु का विविध प्रकार से वर्णन किया गया है। यह बारहवां पूर्व है १२। क्रियाविशाल-इस पूर्व में कायिकी आदि क्रियाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है १३। बिन्दुसार-इस पूर्व में यह कहा गया है कि जिस

મનુ અથવા સત્ય વચનનુ તેના ભેદો તથા તેની વિરોધી બાબતોને અનુલક્ષીને વર્ણન કરાયુ છે આત્મપ્રવાદ પૂર્વ—તેમા વિવિધ નયો અનુસાર જીવ દ્રવ્યનુ કથન કરાયુ છે (૮) કર્મપ્રવાદ પૂર્વ—તેમા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સ્વરૂપનુ વર્ણન કરેલ છે પ્રત્યાખ્યાનપૂર્વ—તેમા પ્રત્યાખ્યાનના પ્રકારોનું વર્ણન કર્યું છે (૧૦) વિદ્યાનુપ્રવાદ પૂર્વ—તેમા અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓનુ વર્ણન કરાયુ છે (૧૧) અવંધ્યપૂર્વ-તેમા સફળ સમ્યગ્ જ્ઞાન આદિનું વર્ણન કર્યું છે (૧૨) પ્રાણાયુપૂર્વ—તેમાં જીવો અને તેમનાં આયુષ્યનુ વિવિધ પ્રકારે વર્ણન કરાયુ છે (૧૩) ક્રિયાવિશાલ—આ પૂર્વમાં કાયિકી આદિ ક્રિયાઓનુ વિસ્તૃત વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે (૧૪) બિન્દુસાર—આ પૂર્વમા એ બતાવવામાં આવ્યુ છે કે જેમ અક્ષરોની ઉપર

तोऽयं यथा चिन्द्रासराणां शिरः स्थितेन सारः, तथैव लोकेषु सर्वोत्कृष्टत्वेन सारभूतो य स लोकबिन्दुसारः, तस्याभिधाने दश शतं बिन्दुसारनामकं चतुर्दशं पूर्वम् ॥३॥

अग्रायणीयस्य खलु पूर्वस्य चतुर्दशवस्तूनि प्रज्ञप्तानि । श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य चतुर्दश श्रमणसाहस्र्य =चतुर्दशसहस्रसंख्यका श्रमणा 'उक्कोसिया' उत्कृष्टया सान्तर्यया श्रमणसपदा 'होत्था' आसन् । 'कम्मविसोहिमग्गणं' कर्मविशोधिमार्गणाम=ज्ञानावरणादिकर्मविशुद्धिगवेषणां 'पडुच्च' प्रतीत्य समधि गम्य चतुर्दशजीवस्थानानि जीवभेदा प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'मिच्छदिट्ठी' मिथ्या दृष्टि =मिथ्यादृष्टि =मिथ्याविपरीता दृष्टिर्यस्यासौ मिथ्यादृष्टि रुदितमिथ्यात्वमो हनीयविशेष कुदेव कुगुरु कुधर्मेषु सुदेव सुगुरु सुधर्मबुद्धिरितिभावः । इह यथासम्भवम् । 'सासायण सम्मदिट्ठी' सासादनसम्यग् दृष्टि', आयम् औपशमिकसम्यक्त्वलाभसमयानन्तर

प्रकार आभरों के ऊपर रहने से बिन्दु सारभूत मानी जाती है उसी प्रकार लोकों में सर्वोत्कृष्ट होने से जो सारभूत है वही लोकबिन्दुसार है। इस लोकबिन्दुसार का वर्णन इस पूर्व में करने में आया है। यह चौदहवा पूर्व है १४। अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुएँ कही गई हैं। श्रमण भगवान् महावीर की उत्कृष्ट श्रमणसपदा चौदह हजार की थी। ज्ञानावरणीय आदि कर्मों की विशुद्धि की गवेषणा की अपेक्षा को लेकर के चौदह जीव स्थान कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं-मिथ्यादृष्टि-इस गुणस्थान में जीव की विपरीत दृष्टि-मान्यता होती है। इसलिये इसकी संज्ञा मिथ्यादृष्टि की जाती है। मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से जैसा जीव कुगुरु, कुदेव और कुधर्म में सुगुरु, सुदेव और सुधर्म का श्रद्धावाला बन जाता है सासादन सम्यग्दृष्टि-'आय सादयति इति-आसादनम्" औपशमिक सम्यक्त्व

પ્રકારે બિન્દુ સારભૂત મનાય છે તેમ લોકોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ હોવાને કારણે જે સારભૂત હોય તે જ લોક બિન્દુસાર છે તે લોક બિન્દુસારનું વર્ણન આ ચૌદમા પૂર્વમાં કરવામાં આવ્યું છે આગ્રાયણીય પૂર્વની ચૌદ વસ્તુઓ કહેલ છે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની ઉત્કૃષ્ટ શ્રમણ સંપદા ચૌદ હજારની હતી જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની વિશુદ્ધિના અન્વેષણની અપેક્ષાએ ચૌદ જીવસ્થાન કહેલ છે તે આ પ્રમાણે છે મિથ્યાદૃષ્ટિ-આ ગુણસ્થાનમાં જીવની વિપરીત દૃષ્ટિ-માન્યતા હોય છે તેથી તેને મિથ્યાદૃષ્ટિ કહે છે મિથ્યાત્વ મોહનીયના ઉદયથી જેવો જીવ કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મમાં સુગુરુ સુદેવ અને સુધર્મની શ્રદ્ધા વાળો બની જાય છે સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ-'आय सादयति इति आसादनम्' औपशमिक સમ્યક્ત્વના લાભ કાળ

मादयति अपनयतीति आसादनम् अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम्, सति ह्यस्मिन् परमानन्दरूपानन्तसुखफलदोऽपवर्गरूपतरुबीजभूतऔपशमिकसम्यक्त्वलाभो जघन्यतः समयमात्रेण उत्कर्षतः षड्भिरावलिकाभिरपगच्छति, तेनासादनेन सहवर्तते सासादनः, सम्यक् अविपरीता दृष्टिर्जिनप्रणीतवस्तुप्रतिपत्तिर्यस्यासौ सम्यग्दृष्टिः, सासादनश्चासौ सम्यग्दृष्टिश्च=सासादनसम्यग्दृष्टिः। अथवा सास्वादनसम्यग्दृष्टिः=आस्वादनेन सम्यक्त्वलक्षणरसास्वादनेन सह वर्तते सास्वादनः यथा क्षीरान्ने भुक्ते तत्रारुचिवशादुद्वमन् पुरुषो वमनकाले तद्रसमास्वादयति तथा मिथ्यात्वाभिमुखतया सम्यक्त्वाद् विगलितचित्तः सम्यक्त्वमुद्वमन्नपि अनासादि-

---

लाभरूप आय को जो दूर करदे, ऐसी अनंतानुबंधीकषाय के वेदन का नाम आसादन है। इस आसादन के होने पर परमानंदरूप अनंतसुख-फलदाता और अपवर्गरूप वृक्ष का बीज जो औपशमिक सम्यक्त्व है उसका लाभ जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से छह आवलिका प्रमाण कालतक रहता है, बाद में नहीं रहता। इस आसादन के साथ जो रहता है उसका नाम सासादन है। तथा जिन प्रणीत वस्तुतत्त्व की प्रतिपत्ति जिस जीव के अविपरीत-सम्यक् हो उसका नाम सम्यग्दृष्टि है। इस आसादन सहित जो सम्यग्दृष्टि है उसका नाम सासादन सम्यग्दृष्टि है। अथवा-"सासायणसम्मदिट्ठी" की छाया "सास्वादन सम्यग्दृष्टि" ऐसी भी होती है, इसका अर्थ-सम्यक्त्व रूप रस के आस्वाद से जो युक्त होता है उसका नाम सास्वादन है। जिस प्रकार खीर के खा लेने पर अरुचि के वश से उसे वमन करता हुआ व्यक्ति वमनकाल में उसके रस का आस्वादन करता है, उसी तरह मिथ्यात्व के सन्मुख हुआ भी मिथ्यात्वभूमि पर

(આવક) ને જે દૂર કરી નાખે, એવી અનંતાનુબંધી કષાય વેદનને **આસાદન** કહે છે આ આસાદન થતા પરમાનંદ રૂપ અનંત સુખ-ફલદાતા અને અપવર્ગ રૂપ વૃક્ષના બીજ જેવુ જે ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ છે તેનો લાભ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમય અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ છ આવલિકા પ્રમાણ કાળ સુધી રહે છે, પછી રહેતો નથી આ આસાદનની સાથે જે રહે છે તેનુ નામ **સાસાદન** છે તથા જિન પ્રરૂપિત વસ્તુ તત્વની સિદ્ધિ જે જીવને અવિપરીત—સમ્યક્ હોય તેનુ નામ સમ્યક્દૃષ્ટિ છે તે આસાદન સહિત જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય તેને સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહે છે અથવા—"**सासायण सम्मदिट्ठी**" ની છાયા "**सास्वादन सम्यग्दृष्टि**" એવી પણ થાય છે તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જેમ ખીર ખાધા પછી અરુચિને કારણે તેનું વમન કરતો માણસ વમનકાળમા તેના રસનુ આસ્વાદન કરે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યાત્વની

नोऽर्थः यथा बिन्दुरक्षराणां शिरः स्थानेन सारः, तथैव लोकेषु सर्वोत्कृष्टत्वेन सारभूतो यः स लोकबिन्दुसारः, तस्याभिधानं यत्र तद् बिन्दुसारनामकं चतुर्दशं पूर्वम् ॥३॥

अग्रायणीयस्य खलु पूर्वस्य चतुर्दशवस्तूनि प्रज्ञप्तानि । श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य चतुर्दश श्रमणसम्पदा=चतुर्दशमहत्तमसम्पदा श्रमणा 'उक्कोसिया' उत्कृष्टया सात्कर्षया श्रमणसम्पदा 'होत्था' आसन् । 'कम्मविसोहिमग्गणं' कर्मविशोधिमार्गणाम्=ज्ञानावरणादिकर्मविशुद्धिगवेषणां 'पडुच्च' प्रतीत्य समधिगम्य चतुर्दशजीवस्थानानि जीवभेदाः प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'मिच्छदिट्ठी' मिथ्यादृष्टिः=मिथ्यादृष्टि =मिथ्याविपरीता दृष्टिर्यस्यासौ मिथ्यादृष्टि र्विपरीतमिथ्यात्वमोहनीयविशेष कुदेवे कुगुरु कुधर्मेषु सुदेव सुगुरु सुधर्मबुद्धिरितिभावः । इदं प्रथमम् । 'सासायण सम्मदिट्ठी' सासादनसम्यग् दृष्टिः, आद्यम् औपशमिकसम्यक्त्वस्यानन्तर्ये

प्रकार अक्षरों के ऊपर रहने से बिन्दु सारभूत मानी जाती है उसी प्रकार लोकों में सर्वोत्कृष्ट होने से जो सारभूत है वही लोकबिन्दुसार है। इस लोकबिन्दुसार का वर्णन इस पूर्व में करने में आया है। यह चौदहवाँ पूर्व है १४। अग्रायणीयपूर्व की चौदह वस्तुएँ कही गई हैं। श्रमण भगवान महावीर की उत्कृष्ट श्रमणसम्पदा चौदह हजार की थी। ज्ञानावरणीय आदि कर्मों की विशुद्धि की गवेषणा की अपेक्षा को लेकर के चौदह जीव स्थान कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं-मिथ्यादृष्टि-इस गुणस्थान में जीव की विपरीत दृष्टि-मान्यता होती है। इसलिये इसकी संज्ञा मिथ्यादृष्टि की जाती है। मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से जीव कुगुरु, कुदेव और कुधर्म में सुगुरु, सुदेव और सुधर्म का श्रद्धावाला बन जाता है सासादन सम्यग्दृष्टि-'आप सादनम् इति-आसादनम्' औपशमिक सम्यक्त्व

રહેવાથી બિંદુ સારભૂત મનાય છે તેમ લોકોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ હોવાને કારણે જેઓ સારભૂત હોય તે જ લોક બિંદુસાર છે તે લોક બિંદુસારનું વર્ણન આ ચૌદમા પૂર્વમાં કરવામાં આવ્યું છે. અગ્રાયણીય પૂર્વની ચૌદ વસ્તુઓ કહેલ છે. આ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની ઉત્કૃષ્ટ શ્રમણ સંપદા ચૌદ હજારની હતી જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની વિશુદ્ધિની ગવેષણાની અપેક્ષાએ ચૌદ જીવસ્થાન કહેલ છે તે આ પ્રમાણે છે-મિથ્યાદૃષ્ટિ-આ ગુણસ્થાનમાં જીવની વિપરીત દૃષ્ટિ-માન્યતા હોય છે તેથી તેને મિથ્યાદૃષ્ટિ કહે છે મિથ્યાત્વ મોહનીયના ઉદયથી જીવને કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મમાં સુગુરુ સુદેવ અને સુધર્મની શ્રદ્ધા વાળો બની જાય છે સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ-'आप सादयति इति आसादनम्' औपशमिक सम्यक्त्व काल इव लाभ

सादयति अपनयतीति आसादनम् अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम्, सति ह्यस्मिन् परमानन्दरूपानन्तसुखफलदोऽपवर्गस्पतरुबीजभूतऔपशमिकसम्यक्त्वलाभो जघन्यतः समयमात्रेण उत्कर्षतः षण्णामावलिकाभिरपगच्छति, तेनासादनेन सह वर्तते सासादनः, सम्यक् अविपरीता दृष्टिर्जिनप्रणीतवस्तुप्रतिपत्तिर्यस्यासौ सम्यग्दृष्टिः, सासादनश्चासौ सम्यग्दृष्टिश्च=सासादनसम्यग्दृष्टिः । अथवा सास्वादनसम्यग्दृष्टिः=आस्वादनेन सम्यक्त्वलक्षणरसास्वादनेन सह वर्तते सास्वादनः यथा क्षीरान्ने भुक्ते तत्रारुचिवशादुद्वमन् पुरुषो वमनकाले तद्रसमास्वादयति तथा मिथ्यात्वाभिमुखतया सम्यक्त्वाद् विगलितचित्तः सम्यक्त्वमुद्वमन्नपि अनाभादि-

लाभरूप आय को जो दूर करदे, ऐसी अनंतानुबंधीकषाय के वेदन का नाम आसादन है। इस आसादन के होने पर परमानंदरूप अनंतसुख-फलदाता और अपवर्गरूप वृक्ष का बीज जो औपशमिक सम्यक्त्व है उसका लाभ जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से छह आवलिका प्रमाण काल-तक रहता है, बाद में नहीं रहता। इस आसादन के साथ जो रहता है उसका नाम सासादन है। तथा जिन प्रणीत वस्तुतत्त्व की प्रतिपत्ति जिस जीव के अविपरीत-सम्यक् हो उसका नाम सम्यग्दृष्टि है। इस आसादन सहित जो सम्यग्दृष्टि है उसका नाम सासादन सम्यग्दृष्टि है। अथवा-"सासायणसम्मदिट्ठी" की छाया "सास्वादन सम्यग्दृष्टि" ऐसी भी होती है, इसका अर्थ-सम्यक्त्व रूप रस के आस्वाद से जो युक्त होता है उसका नाम सास्वादन है। जिस प्रकार क्षीर के खा लेने पर अरुचि के वश से उसे वमन करता हुआ व्यक्ति वमनकाल में उसके रस का आस्वादन करता है, उसी तरह मिथ्यात्व के सन्मुख हुआ भी मिथ्यात्वभूमि पर

(આવક) ને જે દૂર કરી નાખે, એવી અનંતાનુબંધી કષાય વેદનને **આસાદન** કહે છે. આ આસાદન થતા પરમાનંદ રૂપ અનંત સુખ-ફલદાતા અને અપવર્ગરૂપ વૃક્ષના બીજ જેવુ જે ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ છે તેનો લાભ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમય અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ છ આવલિકા પ્રમાણ કાળ સુધી રહે છે, પછી રહેતો નથી. આ આસાદનની સાથે જે રહે છે તેનું નામ **સાસાદન** છે તથા જિન પ્રરૂપિત વસ્તુ તત્વની સિદ્ધિ જે જીવને અવિપરીત—સમ્યક્ હોય તેનુ નામ સમ્યક્દૃષ્ટિ છે તે આસાદન સહિત જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય તેને સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહે છે અથવા—**"सासायण सम्मदिट्ठी"** ની છાયા **"सास्वादन सम्यग्दृष्टि"** એવી પણ થાય છે તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જેમ ખીર ખાધા પછી અરુચિને કારણે તેનું વમન કરતો માણસ વમનકાળમા તેના રસનુ આસ્વાદન કરે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યાત્વની

मिथ्यात्वभूमिं पञ्चावलिकापर्यन्तं तद्रसमास्वादयति । तदुक्तम्-एकस्मिन्नुदिते मध्याष्टानन्तानुबन्धिनाम् । आद्यौपशमिकसम्यक्त्वरत्नमौलिः परिच्युतः ॥ सम्यादावलीषट्कं यावन्मिथ्यात्वमृच्छति । नासादयति त्रीरोऽपि तावत्सास्वादनो भवेत् ॥ इति, ७ चासौ सम्यग्दृष्टि सास्वादनसम्यग्दृष्टिरित्युच्यते द्वितीयम् । तथा 'सम्मामिच्छादिट्ठी' सम्यङ्मिथ्यादृष्टि=समीची च मिथ्या च दृष्टिर्यस्यासौ सम्यङ्मिथ्यादृष्टि, मिथ्यात्वपुद्गला एव ईषद् विशुद्धा सम्यङ्मिथ्यात्वव्यपदेशभाजो भवन्ति । यदुदयवशात् जिनप्रणीतं तत्त्वं न सम्यक् श्रद्धत्ते नापि निन्दति, मतिदौर्बल्यवशात्सम्यगसम्यगवेत्येकान्ततो निश्चयं न करोति, तद्विशिष्टा दृष्टिः सम्यङ्मिथ्यादृष्टिः । इति तृतीयम् । 'अविरयसम्मदिट्ठी' अविरतसम्य

जबतक नहीं पहुंचा है तबतक वह जीव आवलिपर्यन्त उसके रसका आस्वादन करता है। कहा भी है—

"अनंतानुबंधी क्रोधादिक के बीच में से किसी एक के उदय होने पर औपशमिक सम्यक्त्वरूपी पर्वत से च्युत हुआ और मिथ्यात्वभूमि की तरफ सन्मुख हुआ जीव जबतक मिथ्यात्व भूमि में नहीं पहुंचता है तबतक वह कम से कम एक समय तक और अधिक से अधिक छ आवली तक सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का स्वाद लेता है। ३ सम्यक्मिथ्यादृष्टि-मिश्रदृष्टि सम्यक्त्व और मिथ्यात्व दोनों से मिश्रित हो वह सम्यक्मिथ्यादृष्टि है। ईषद्विशुद्धमिथ्यात्व के पुद्गलों को ही सम्यक्मिथ्यात्व कहलाते हैं। इसके उदय से जीव जिन प्रणीततत्त्व का सम्यक्रूप से श्रद्धा ही करता है और न उसकी निंदा ही करता है। मतिदौर्बल्य के वह सम्यक् का एकान्तत

સમીપનો જીવ સમ્યક્ત્વથી વિચલિત થયેલો પણ તેનું વમન કરતાં પણ જ્યાં સુધી મિથ્યાત્વ ભૂમિ પર પહોંચેલો નથી ત્યાં સુધી છ આવલિકા સુધી તે તેનું આસ્વાદન કરે છે ૪૭ પણ ૩ કે "અનંતાનુબંધી ક્રોધાદિકમાંથી કોઈ એકના ઉદય થતા ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ રૂપી પર્વતથી ચલિત થયેલ અને મિથ્યાત્વભૂમિની તરફ વળેલ જીવ જ્યાં સુધી મિથ્યાત્વભૂમિમાં પહોંચેલો નથી ત્યાં સુધી તે ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ આવલિકા સુધી સમ્યક્ત્વનો સ્વાદ લે છે (૩) સમ્યક્ મિથ્યાદૃષ્ટિ—જેનો દૃષ્ટિ સમ્યક્ત્વ અને મિથ્યાત્વ એ બન્નેથી મિશ્રિત હોય તેને સમ્યક્ મિથ્યાદૃષ્ટિ કહે છે ઈષદ્વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વના (મિ. મિથ્યાત્વ અને કોઈ સમ્યક્ત્વ મિશ્રિત મિથ્યાત્વ પુદ્ગલ જ સમ્યક્ મિથ્યાત્વ કહેવાય છે તેના ઉદયથી જીવ જિન પ્રણીત તત્ત્વમાં સમ્યક્ રીતે શ્રદ્ધા પણ રાખતો નથી અને તેની નિંદા પણ કરતા નથી મતિદૌર્બલ્યને અધીન થઈને તે સમ્યક્ અને

ग्दृष्टिः=न विरत. सावद्यव्यापारेभ्यो यः सोऽविरतः, स चासौ सम्यग्दृष्टिश्च अविरतसम्यग्दृष्टिः, यः परममुनिप्रणीतां सावद्ययोगविरतिं सिद्धिप्रासादपर्यारो हणसोपानभूताम् जानन्नपि अप्रत्याख्यानकषायोदयविघ्नवशात् तां नाधिगच्छति, नापि तत्पालनाय प्रयतते इत्यसावविरतसम्यग्दृष्टिरुच्यते। यथा कश्चित्पुरुषः न्यायोपार्जितधनधान्यः प्रचुरभोगविलासमुखसौन्दर्य्यसमुपपन्नः सुकुलसमुत्पन्नोऽपि दुरन्तद्यूतादिव्यसनजनितापराधलब्धराजदण्डः संखण्डिताभिमानश्चण्डदण्डपाशिकै-

---

निश्चय नहीं कर सकता है। इस तरह की जिसकी दृष्टि होती है उसका नाम सम्यङ्मिथ्यादृष्टि है ३। अविरतसम्यक्दृष्टि जो सावद्य व्यापारों से विरत नहीं है परन्तु दृष्टि जिसकी सम्यग् है, ऐसा जीव चतुर्थगुणस्थानवर्ती कहा जाता है। यह जीव इस बात को जानता है कि परममुनि तीर्थंकर प्रभु द्वारा प्रणीत सावद्ययोगविरति, सिद्धिप्रासाद पर आरोहण करने के लिये सोपानपंक्ति जैसी है तो भी वह अप्रत्याख्यानकषाय के उदय से उसे प्राप्त नहीं कर पाता है, और न उसके पालन करने का प्रयत्न ही करता है, इसी लिये यह अविरत सम्यग्दृष्टि कहा गया है। जिस प्रकार न्यायोपार्जित धनधान्यादिसंपत्ति वाला कोई कुलिन सद्गृस्थ प्रचुरभोगविलासों को भोगता हुआ भी जब द्यूतादिव्यसनों में फँस कर राज्य का अपराधी बन जाता है तब वह राजदंड को भोगता है और इस स्थिति अपने गौरव की रक्षा करने में असमर्थ हो जाता है। दुष्टदंडपाशिकों द्वारा अपमानित और विडंम्बित होता हुआ वह कुत्सित कृत्य को अपने कुल की

અસમ્યક્ નો પૂરો નિશ્ચય કરી શકતો નથી આ પ્રકારની જેની દૃષ્ટિ હોય તે જીવને "सम्यग् मिथ्यादृष्टि" કહે છે (૩)

अविरतसम्यक्दृष्टि-જે જીવો સાવદ્ય વ્યાપારોથી વિરત થયા નથી પણ જેમની દૃષ્ટિ સમ્યગ્ છે એવા જીવોને 'चतुर्थ' गुणस्थानवर्ती' કહેવાય છે.તે જીવ એ વાતને જાણે છે કે પરમ મુનિ તીર્થંકર પ્રભુ દ્વારા પ્રણીત સાવદ્યયોગવિરતિ, સિદ્ધિ પ્રાસાદ પર આરોહણ કરવાને માટે નીસરણીના પગથિયાં સમાન છે, છતા પણ તે અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના ઉદયથી તેને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, અને તેનું પાલન કરવાનો પ્રયત્ન પણ કરતો નથી, તેથી તેને अविरत सम्यग्दृष्टि કહેલ છે. જે રીતે ન્યાયોપાર્જિત ધન ધાન્ય આદિ સંપત્તિવાળો કોઇ કુલીન સદ્ગૃહસ્થ અતિશય ભોગ વિલાસો ભોગવતા ભોગવતા જ્યારે જુગાર આદિ લતોમાં ફસાઇને રાજ્યનો અપરાધી બને છે ત્યારે તે રાજદંડ ભોગવે છે. અને એવી પરિસ્થિતિમા તે પોતાના ગૌરવનું રક્ષણ કરવાને અસમર્થ બની જાય છે. દુષ્ટ દંડપાશિકો દ્વારા અપમાનિત અને વિડંમ્બિત થતો એ કુત્સિત કૃત્યને પોતાના કુળની

विद्वस्यमान स्वकं कुत्सितं कर्म स्वप्रतिष्ठापत्तिकूलं मानन स्वकुलसुखसौन्दर्यं सपदमभिलषन्नपी दण्डपाशिकसकाशात् किमपि वक्तुं न शक्नोति, तथैवाऽयं जीवोऽविरतिं कुत्सितकर्मकल्पां मानन सुधाप्रमविरतिसुखसौन्दर्यमभिलषन्नपि दण्डपाशिकस्थानीयकषायाणां सकाशाद् प्रवोत्साहमपि कर्तुं न शक्नोतीत्यविरतसम्यग्दृष्टित्वमनुभवति इत्यर्थः । इति चतुर्थम् । 'विरयाविरए' विरताश्च विरताश्च = देशविरताः श्रावका इत्यर्थः । इति पञ्चमम् । 'पमत्तसंजए' प्रमत्तसंयत इति

प्रतिष्ठा के प्रतिकूल जानता है तो भी उनसे वह कुछ भी नहीं कह सकता है के प्रतिकूल जानता है तो भी कहते वह कुछ भी नहीं कह सकता है। वह यह अवश्य चाहता हुआ कुलका गौरव नष्ट न होने पावे, मेरे सुख भोग में कोई बाधा नहीं आवे, मेरी सम्पत्ति सुरक्षित रहे। इसी तरह अविरतसम्यग्दृष्टि जीव कुत्सितकर्म रूप जैसी अविरति को जानता है और सुधा (अमृत)के समान विरति रूप सुख सौन्दर्य का अभिलाषी होता हुआ दण्डपाशिक समान द्वितीयकषाय-अप्रत्याख्यानावरण-के वशसे व्रत धारण करने का उत्साह भी नहीं कर सकता है। इस प्रकार इस चतुर्थ गुणस्थान में रहने वाला जीव सम्यग्दृष्टि तो होता है पर विरति धारण नहीं करता है। इस लिये इसका नाम अविरत सम्यग्दृष्टि है। पंचमगुणस्थानका नाम विरताविरत-देशविरत है। इस गुणस्थान में रहा हुआ जीव श्रावक के बारह व्रतों का पालन करता है अर्थात् मन, वचन और काय से त्रसजीवहिंसा का तथा स्थूल झूठ आदि का अर्थात् एक देश से सावद्ययोग का त्याग कर देता है। छठवें गुणस्थान का नाम प्रमत्त

પ્રતિષ્ઠા વગેરે ના કારણે જાણે છે છતાં પણ તેમને તે કંઈ પણ કહી શકતો નથી. તે એમ ઇચ્છે છે કે મારા કુળના ગૌરવનો નાશ ન થાય, મારાં સુખભોગમાં કોઈ બાધા ન આવે અને મારી સંપત્તિ સુરક્ષિત રહે એ જ પ્રમાણે તે અવિરત સમ્યક દૃષ્ટિ જીવ દુષ્ટ કુત્સિત કર્મોના જેવી અવિરતિને જાણે છે અને અમૃત જેવી વિરતિજન્ય સુખસૌંદર્યનો અભિલાષી હોય છે છતાં પણ દંડપાશિક સમાન દ્વિતીય કષાય અપ્રત્યાખ્યાનાવરણને આધીન બનેલ વ્રત ધારણ કરવાનો ઉત્સાહ પણ કરી શકતો નથી આ રીતે તે ચતુર્થ ગુણ સ્થાનમાં રહેનાર જીવ સમ્યગ્દૃષ્ટિ તો હોય છે પણ વિરતિ ધારણ કરતો નથી તેથી તેને અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ કહેલ છે (૪) પાંચમા ગુણસ્થાનનું નામ વિરતાવિરત—દેશવિરત છે આ ગુણસ્થાનમાં રહેલ જીવ શ્રાવકનાં બાર વ્રતોનું પાલન કરે છે એટલે કે મન, વચન અને કાયથી ત્રસ જીવોની તથા સ્થૂલ જૂઠ આદિનો-એટલે કે એકદેશની અપેક્ષાએ સાવદ્યયોગનો

त्प्रमादयुक्तः सर्वविरत इति षष्ठम् । 'अप्पमत्तसंजए' अप्रमत्तसंयतः=सर्वप्रमादरहितः सर्वसंयत इत्यर्थ इति सप्तमम् । 'नियट्टिबायरे' निवृत्तिबादरः=निवृत्तिः समानकालं गुणस्थानमतिपन्नानां जीवानामध्यवसायभेदस्तत्प्रधानो बादरः बादरसंपरायो निवृत्तिबादरः प्रमादरहितो मुनिःक्षपकश्रेणीमुपशमश्रेणीं वा प्रतिपन्नः क्षीणदर्शनसप्तकः उपशान्तदर्शनसप्तको वा अपूर्वकरणापरनामकनिवृत्तिबादरजीव-

संयत है। इसमें रहा हुआ जीव किंचित प्रमाद से युक्त रहता है६। सातवें गुणस्थान का नाम अप्रमत्त संयत है, इसमें रहा हुआ जीव समस्त प्रमाद से रहित हो जाता है।७। निवृत्ति बादर आठवां गुणस्थान है, इस गुणस्थान में समानकाल में इस गुणस्थान को धारण करनेवाले नाना जीवों के अध्यवसायों में भेद रहता है८। इसलिये यह गुणस्थान भेद प्रधान जो बादरसंपराय है उस स्वरूप है। इसी का नाम निवृत्तिबादर है। इसका भाव यह है-प्रमाद रहित मुनि जब उपशम श्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी पर आरूढ होने लगता है तब वह यदि अनंतानुबंधी कषाय संबंधी क्रोधादि चार प्रकृतियों का और दर्शन मोहनीय संबंधी तीन प्रकृतियों का क्षय अथवा उपशम कर देता है तो वह क्षय करने से क्षपकश्रेणि और उपशम करने से उपशमश्रेणी मांडता है। इस का नाम निवृत्तिबादर गुणस्थान है। इसका दूसरा नाम अपूर्वकरण भी है। अपूर्व नाम नवीन का है, स्थितिघात, रसघात गुणश्रेणी, गुणसंक्रम, स्थितिबंध, ये पांच बातें जहां होती हैं इसी का नाम

ત્યાગ કરે છે (૫) છઠ્ઠા ગુણસ્થાનનુ નામ પ્રમત સંયત છે તેમા રહેલ જીવ થોડા પ્રમાણમા પ્રમાદ વાળો રહે છે. (૬) સાતમા ગુણસ્થાનનુ નામ અપ્રમતસંયત છે, તેમા રહેલ જીવ સમસ્ત પ્રમાદથી રહિત બની જાય છે (૭) 'निवृत्ति बादर' તે આઠમું ગુણસ્થાન છે, આ ગુણસ્થાનમા સમાન કાળે આ ગુણસ્થાનને ધારણ કરનાર વિવિધ જીવોના અધ્યવસાયોમા ભેદ રહે છે તેથી આ ગુણસ્થાન ભેદ પ્રધાન જે બાદરબાદરસંપરાય છે તે સ્વરૂપનુ છે તેનુ નામ નિવૃત્તિ બાદર છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-પ્રમાદ રહિત મુનિ જ્યારે ઉપશમશ્રેણી અથવા ક્ષપકશ્રેણી પર ચડવા લાગે છે. ત્યારે જો તે અનંતાનુબંધી કષાય સંબંધી ક્રોધાદિ ચાર પ્રકૃતિયોનો અને દર્શન મોહનીય સબધી ત્રણ પ્રકૃતિયોનો ક્ષય અથવા ઉપશમ કરી નાખે તો તે ક્ષય કરવાથી ક્ષપકશ્રેણી અને ઉપશમ કરવાથી ઉપશમ શ્રેણી માડે છે. એનું જ નામ નિવૃત્તિ બાદર ગુણસ્થાન છે. તેનુ બીજુ નામ **अपूर्व करण** છે અપૂર્વ એટલે નવીન. સ્થિતિઘાત, રસઘાત, ગુણશ્રેણી, ગુણસંક્રમ, અને સ્થિતિબધ, એ પાંચ બાબતો

स्थानमुच्यते । इति अष्टमं जीवस्थानम् । अणयट्ठिबायरे[1] अनिवृत्तिबादरः न विद्यते अन्योऽन्यमध्यवसायाध्यवसानस्य निवृत्तिर्यस्मिन्नासावनिवृत्तिः यस्य युगपन्नवमगुण स्थानसमाप्तस्य जीवसमूहस्य सोऽनिवृत्ति स चासौ बादरश्च अनिवृत्तिबादरः, एष च अप्रत्याख्यानादि द्वादशकषायाणां नवानां च नोकषायाणां शमनाय क्षपणाय च तत्परो भवतीत्यतोऽनिवृत्तिबादर उच्यते । इति नवमं जीवस्थानम् ।

अपूर्वकरण है। जिन कर्मों की स्थिति अधिक होती है उनको उस स्थिति को अपवर्तन करण द्वारा अल्पस्थिति वाला करना इसका नाम स्थिति घात है१। तीव्र रस को अपवर्तन द्वारा मंदित करना इसका नाम रसघात है२। काल की अपेक्षा ह्रस्वतर, और दलिक रचना की अपेक्षा प्रभूततर करना इसका नाम गुणश्रेणि है३। वेद्यमान शुभ प्रकृति में अवेद्यमान अशुभ प्रकृतियों के दलिकों को प्रतिसमय असंख्यात गुणी विशुद्धि लिये हुए निक्षिप्त करना इसका नाम गुणसंक्रम है४। कर्म की स्थिति का जघन्यरूप से बंध करना इसका नाम स्थितिबंध है५। इस गुणस्थान में मोहनीय कर्म का न उपशम होता है और न क्षय, इसी दृष्टि को लेकर इस का नाम अपूर्व करण पड़ा है। अनिवृत्ति बादर—यह नौवां गुण स्थान है—युगपत् इस गुणस्थान प्रतिपन्न नाना जीवों के परिणामों में परस्पर कोई भिन्नता नहीं होती है। यह गुणस्थान अप्रत्याख्यान आदि बारह कषायों को और नव नो कषायों को शमन और क्षपण करने में तत्पर हुए जीव को होता है६। दशवें गुणस्थान का नाम सूक्ष्म संपराय

---

[1] या ठाणे ५ तेने अपूर्व ३ थयु हतुं ते ४मीना स्थिति अधिक होय ते ने ते स्थितिनु अपवर्तन ३ नु द्वारा अल्पस्थिति युक्त ४रवु तेनु नाम स्थितिघात छे तीव्र रसने अ ४न द्वारा मंदित ४रवा तेनु नाम रसघात छे आगनी अपेक्षाए ह्रस्व ३ ४रे ६ ने दलिक २यनानी अपेक्षाओ प्रभूतर ४रवु तेनु नाम गुणश्रेणी छे अवेद्यमान शुभ प्रकृतिओमां अवेद्यमान अशुभ प्रकृतिओना दलिकोने प्रतिसमय असंख्यात गुणी विशुद्धि वडे निक्षिप्त ४रवा तेनु नाम गुणसंक्रम छे ४र्मनी स्थितिने जघन्य रूपे अंधे ४रवा तेनु नाम स्थितिबंध छे आ गुणस्थानमां मोहनीय ४र्मनो उपशम थतो नथी, के क्षय थतो नथी ते कारणे तेनु नाम अपूर्वकरण थयु छे (८) 'अनिवृत्तिबादर' ने नवमु गुणस्थान छे-युगपत् आ गुणस्थान प्रतिपन्न नाना जीवोना परिणामोमां परस्पर कोई भिन्नता होती नथी आ गुणस्थान अप्रत्याख्यान आदि बार ४षायोनु अने नव नोक४षायोनु अने शमन अने क्षपण ४रवाने तत्पर थयेल ४वने आ छे (९) ४यमां गुणस्थानन नाम 'सूक्ष्मसंपराय' छे तेमां

'सुहुम सपराए उवसामए वा खवए वा' सूक्ष्मसंपरायः=सूक्ष्मः संज्वलनलोभाभिधेयखण्डरूपः संपरायः कषायो यस्य सः, लोभानुवेदकइत्यर्थः, स च द्विविधः 'उवसमए' उपशमक उपशमश्रेणी संप्राप्तः, 'खवए' क्षपकः=क्षपकश्रेणीं संप्राप्त इति दशमं जीवस्थानम्। तथा 'उवसंतमोहे' उपशान्तमोहः, उपशान्तः सर्वथाऽनुदयावस्थो मोहो मोहनीयं कर्म यस्यासौ, उपशमवीतराग इत्यर्थः, अयं च उपशमश्रेणिसमाप्तावन्तर्मुहूर्त्तं भवति, पुनस्ततः प्रच्यवत्येव। इत्येकादशम्। 'खीणमोहे' क्षीणमोहः, क्षीणो विनष्टो मोहो यस्य सः, क्षयवीतराग इत्यर्थः,

---

है-यहां संज्वलन संबंधी लोभकषाय सूक्ष्मरूप में उदित रहती है। इसके दो भेद है-१ उपशमक और दूसरा क्षपक, उपशमश्रेणी पर आरोहण करने वाला जीव उपशमक और क्षपकश्रेणी पर आरोहण करने वाला जीव क्षपक कहा गया है१०। ग्यारहवें गुणस्थान का नाम उपशांतमोह है, जिस जीव का मोहनीय कर्म सर्वथा उपशांत हो जाता है उस जीव के यह गुणस्थान होता है। इसको उपशम वीतराग भी कहते हैं। यह उपशमश्रेणी का स्थान है। यहां पर आने पर जीव नियमतः नीचे के गुणस्थानों में पतित हो जाता है, क्यों कि यहां पर मोहनीय कर्म की अठाईस प्रकृतियां उपशमित ही रहती है, बाद में स्थिति समाप्त होने पर जब उनका उदय हो जाता है तब जीव वहां से नीचे गिर जाता है। इसके साथ जो वीतराग विशेषण लगा है उसका तात्पर्य यही है कि कषायों के उपशमित हो जाने से यह जीव उतने समय के लिये वीतराग बन जाता है। इस गुणस्थान का उत्कृष्ट समय एक अन्तर्मुहूर्त का है११। बारहवें गुणस्थान का नाम क्षीणमोह है। यहा पर मोह-

---

સ ज्वलन સબંધી લોભકષાય સૂક્ષ્મ રીતે ઉદિત રહે છે તેના બે ભેદ છે (૧) ઉપશમક અને (૨) ક્ષપક, ઉપશમશ્રેણી પર આરોહણ કરનાર જીવ ક્ષપક કહેવાય છે (૧૦) અગિયારમા ગુણસ્થાનનુ નામ **'उपशान्तमोह'** છે જે જીવના મોહનીય કર્મ તદ્દન ઉપશાંત થઇ જાય છે તે જીવને આ ગુણસ્થાન હોય છે તેને 'ઉપશમ વીતરાગ' પણ કહે છે આ ઉપશમશ્રેણીનુ સ્થાન છે અહી આવતા જીવ નિયમથી જ નીચેના ગુણસ્થાનોમા પડી જાય છે, કારણ કે આ સ્થાને મોહનીય કર્મના અઠ્ઠાવીસ પ્રકૃતિયો ઉપશમિત જ રહે છે, ત્યાર બાદ સ્થિતિ સમાપ્ત થતા જ્યારે તેનો ઉદય થાય છે ત્યારે જીવ ત્યાથી નીચે પડી જાય છે તેની સાથે જે 'વીતરાગ' વિશેષણ લગાડયું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે કષાયો ઉપશમિત થઇ જવાથી તે જીવ એટલા સમયને માટે વીતરાગ બની જાય છે આ ગુણસ્થાનનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ એક અન્તમુહૂર્તનો છે (૧૧) બારમાં ગુણસ્થાનનુ નામ **क्षीणमोह** છે. આ ગુણ

अयमप्यन्तर्मुहूर्तमेव । इति द्वादशम् । तथा 'सजोगी केवली' सयोगी केवली कायादियोगवान् घातिक्षयानीत्यर्थः । इति त्रयोदशं जीवस्थानम् । तथा अयोगीकेवली=निरुद्धमन वचनयोग काययोगः शैलेशीगतः ह्रस्वपञ्चाक्षरोच्चारणमात्रकाल यावत्स्थायीत्यर्थः । इति चतुर्दशं जीवस्थानम् । 'भरहेरवयाभो य' भरतैरवतयो रत्थ जीवा मत्स्यका चतुर्दश चतुर्दश योजनसहस्राणि चत्वारि च एकाक्षराणि योजनशतानि योजनस्य एकोनविंशतिभागपू षड्भागाश्च मानमस्य । अर्थात् भरतैरवतयो मत्स्यके जीवा १४४०१ योजनानि, एकोनविंशतिभागति भक्तस्य योजनस्य षड्भागाश्च विस्तारेण प्रज्ञप्ताः । भरतैरवते हि मानोपेत मस्य

नीय कर्म सर्वथा क्षीण हो जाता है। इसका दूसरा नाम क्षपकवीतराग भी है। इस गुणस्थान की प्राप्ति क्षपक को ही होती है। इसका भी उत्कृष्ट काल एक अन्तर्मुहूर्त का है १२। तेरहवें गुणस्थान का नाम सयोगि केवली है। मन, वचन और काय इन तीनों योगों से युक्त जीव यहां पर रहता है और घातिक कर्मों के सर्वथा क्षय होने से केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता है १३। चौदहवें गुणस्थान का नाम अयोगिकेवली है, इस गुणस्थान में आत्मा तब ही पहुंचता है कि जब वह तीनों योगों का निरोध कर देता है इसमें जीव की मेरुवत् अवस्था हो जाती है। पांच ह्रस्व अक्षरों के उच्चारण करने में जितना समय लगता है उतने समय तक ठीक इस गुणस्थान में ठहर कर बाद में मोक्ष में चला जाता है १४। भरत और ऐरवत इन क्षेत्रों की प्रत्येक की जीवा-प्रत्यञ्चा-(धनुषकी डोरी) विस्तार की अपेक्षा चौदह हजार चारसौ एक (१४४०१) योजन और एक योजन के उन्नीस (१९) भागों में से छह भाग ६/१९ प्रमाण अर्थात्-भरत और ऐरवत

રહેને મોહનીયકર્મ તદ્દન ક્ષીણ થઈ જાય છે તેનું બીજું નામ ક્ષપકવીતરાગ પણ છે આ ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ ક્ષપકને જ થાય છે તેનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ પણ અંતર્મુહૂર્તનો છે (૧૨) તેરમા ગુણસ્થાનનું નામ સયોગિકેવલી છે આ ગુણસ્થાને જીવ મન વચન, અને કાય આ ત્રણે યોગોથી યુક્ત રહે છે અને ઘાતિયા કર્મોનો સર્વથા ક્ષય થવાથી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લે છે (૧૩) ચૌદમા ગુણસ્થાનનું નામ 'અયોગિકેવલી' છે આ ગુણસ્થાને આત્મા ત્યારે જ પહોંચે છે કે જ્યારે તે ત્રણે યોગોનો નિરોધ કરી નાખે છે તેમા જીવની મેરૂની અવસ્થા (અચલાવસ્થાન અવસ્થા) થઇ જાય છે પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોનુ ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે છે જેટલા સમય સુધી જીવ આ ગુણસ્થાનમાં રહીને મોક્ષમાં ચાલ્યો જાય છે (૧૪)

ભરત અને ઐરવત, એ ક્ષેત્રે કેરીની જીવા-પ્રત્યંચા- (ધનુષની દોરી) વિસ્તારની અપેક્ષાએ ચૌદ હજાર ચારસો એક (૧૪૪૦૧) યોજન અને એક યોજનના

श्चस्य धनुषः समानाकृतिके। ततस्तयो र्जीवे भवतः। तत्र भरतस्य जीवा हिमवतः पर्वतस्य दक्षिणपार्श्वस्थाऽनन्तरप्रदेशश्रेणिरुच्यते। ऐरवतस्य जीवा तु शिखरिणः पर्वतस्य परपार्श्वस्थाऽनन्तरश्रेणिरुच्यते। 'एगमेगस्स' एकैकस्य खलु राज्ञः 'चाउरंतचक्कवट्टिस्स' चातुरन्तचक्रवर्तिनः चत्वारोऽन्ताः समुद्रत्रयहिमवल्लक्षणा यस्याः सा चातुरन्ताभूमिः, तस्याः स्वामी चातुरन्तः स चासौ चक्रवर्ती च तस्य, चतुर्दशरत्नानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा—स्त्रीरत्नम्१, सेनापतिरत्नम्२, गाथापतिरत्नम्, गाथापतिः=कोष्ठागारिकः, पुरोहितरत्नम्३, पुरोहितः—शान्ति-

---

ये दो क्षेत्र आरोपित प्रत्यंचा—डोरी वाले धनुष के जैसे आकार के है। इसलिये इनकी प्रत्येक की जीवा होती है। भरतक्षेत्र की जीवा हिमवन पर्वत के दक्षिण पार्श्वभाग में स्थित है। जो अनन्तर प्रदेशश्रेणि कही जाती है। इसी तरह ऐरवत क्षेत्र की जीवा है अन्तिम शिखरी पर्वत के दूसरे पार्श्वभाग में स्थित है और यह भी अनन्त प्रदेशश्रेणि के नाम से प्रख्यात है। एक एक चक्रवर्त्ती के यहां जो चातुरन्तभूमि अर्थात् तीनसमुद्र और चौथा हिमवान् इस प्रकार चार अन्तवाली भूमि के अधिपति होते हैं उनके चौदह चौदह रत्न होते हैं, वे इस प्रकारहैं—स्त्रीरत्न१, सेनापतिरत्न२, गथापति रत्न३, पुरोहितरत्न४, वर्द्धकि रत्न५, अश्वरत्न६, हस्तिरत्न७, असि रत्न८, दण्डरत्न९, चक्ररत्न१०, छत्ररत्न११, चर्मरत्न१२, मणिरत्न१३, और काकिणीरत्न१४।

कोष्ठागार (कोठार) की रक्षा करने वाले का नाम गाथापति है३। शांतिकर्म आदि के करने वाले का नाम पुरोहित है४। वर्द्धकि रत्न

ઓગણીસ ભાગોમાથી છ ભાગ (६/१९) પ્રમાણ છે. એટલે કે ભરત અને ઐરવત એ બન્ને ક્ષેત્રો આરોપિત પ્રત્યંચા—દોરી ચડાવેલા ધનુષ્યના આકારના છે તેથી તે પ્રત્યેકને જીવા હોય છે ભરતક્ષેત્રની જીવા હિમવંતપર્વતના દક્ષિણ પાર્શ્વભાગમા રહેલ છે જે અનન્તર પ્રદેશશ્રેણી કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે ઐરવત ક્ષેત્રની પણ જીવા છે, જે અન્તિમ શિખરી પર્વતના બીજા પાર્શ્વભાગમા સ્થિત છે અને તે પણ અનન્તર પ્રદેશ-શ્રેણીના નામથી વિખ્યાત છે દરેક ચક્રવર્ત્તી કે જે ચાતુરન્તભૂમી એટલે કે ત્રણ સમુદ્ર અને ચોથો હિમવાન એ ચાર અન્તવાળી ભૂમિના અધિપતિ હોય છે, તેમના ચૌદ રત્નો નીચે પ્રમાણે હોય છ—(१) સ્ત્રીરત્ન, (२) સેનાપતિરત્ન, (३) ગાથાપતિરત્ન, (४) પુરોહિતરત્ન, (५) વર્દ્ધકિરત્ન (६) અશ્વરત્ન, (७) હસ્તિરત્ન, (८) અસિરત્ન, (९) દંડરત્ન, (१०) ચક્રરત્ન, (११) છત્રરત્ન, (१२) ચર્મરત્ન (१३) મણિરત્ન અને (१४) કાકિણીરત્ન

કોષ્ઠાગાર (કોઠારનું રક્ષણ કરનારને ગાથાપતિ કહે છે ३. શાંતિકર્મ આદિ કરનારને પુરોહિત કહે છે४, જે રથાદિકનું નિર્માણ કરે છે તેને વર્દ્ધકિરત્ન કહે છે ५

कर्मादिकारक, पद्मरत्नम्५, पद्मवृद्धि-रथादिनिर्माणपटुता, अश्वरत्नम्६ हस्तिरत्नम्७, असिरत्नम्८, दण्डरत्नम्९, चक्ररत्नम्१०, छत्ररत्नम्११, चर्मरत्नम्१२, इदं चर्मरत्नं हि चक्रवर्तिहस्तस्पर्शमात्रेण द्वादशयोजनायामविस्तारं वर्द्धते, तथा प्रातरुप्तान्यादीनपराह्णकाले समुपभोगयोग्यान् सम्पादयति। नद्यादौ तरणे सेनापतिहस्तस्पर्शमात्रेण नौकारूपं च भवति। मणिरत्नम्१३, इदं हि चतुरङ्गुलायाम इषदूनाङ्गुलपृथुलं षट्कोणकं च भवति। शिरसि धृतेऽस्मिन् रोगशान्तिः देवादिकृतोपसर्गराहित्यमक्षयत्वं च भवति। काकिणीरत्नम्१४ =अष्टसुवर्णपरिमाण तिमिरनाशकमयोघनसस्थानं रत्नम्। जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे चतुर्दश महानद्य 'पूर्वापरेण' पूर्वापराभ्यां=पूर्वपश्चिमाभ्यां दिग्भ्यां भव

यह है जो रथादि का निर्माण करता है। चर्मरत्न का यह कार्य है कि चक्रवर्ती जब इसे अपने हाथ से स्पर्श करते हैं तब यह द्वादशयोजन तक लंबा चौड़ा हो जाता है। तथा यह प्रातः काल बोये हुए शाल्यादि धान्य को अपराह्णकाल में उपभोग योग्य कर देता है। जब नद्यादिकों को पार करने के लिये सेनापति के हाथ से जब स्पर्शित होता है तो यह नौकारूप बन जाता है१२। मणिरत्न चार अंगुल लंबा और दो अंगुल का मोटा होता है। इसके छह कोने होते हैं। इस मस्तक पर धारण करने पर रोगों की शांति हो जाती है। देवादिकृत उपसर्गों का अभाव हो जाता है। शस्त्रों द्वारा घात नहीं हो सकता है १३। काकिणीरत्न—आठसुवर्णों का जितना परिमाण होता है उतना ही परिमाण इस काकिणी रत्न का होता है। यह अधियार को नष्ट करता है। लोहे के घण जैसा इसका आकार होता है। जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में चौदह महानदी हैं। जो पूर्व और पश्चिमदिशा के लवणसमुद्र में मिली है। नदियों के

ચક્રરત્નનું કામ એ છે કે જ્યારે ચક્રવર્તી તેને પોતાના હાથનો સ્પર્શ કરે છે ત્યારે તે બાર યોજન લાંબુ પહોળુ થઈ જાય છે તથા તે સવારે વાવેલ ચોખા વિ ધાન્યને બપોર પહેલાં પાકીને તૈયાર થઈ જાય એવું કરી દે છે અને નદી આદિને પાર કરવી હોય ત્યારે સેનાપતિના હાથથી તેનો સ્પર્શ કરાય છે ત્યારે તે નૌકારૂપવાળી બની જાય છે ૧૨ મણિરત્ન ચાર અંગુલ લાંબુ અને બે અંગુલ જાડું હોય છે તેને છ ખૂણા હોય છે તેને માથા પર ધારણ કરવાથી રોગાદિકનું ઉપશમન થઈ જાય છે દેવાદિ કૃત ઉપસર્ગોનો અભાવ થઈ જાય છે અને શસ્ત્રો દ્વારા ઘાત થઈ શકતો નથી ૧૩ કાકિણીરત્ન—તે આઠ મહોરો જેવડા જાડુ હોય છે તે અધિકારનો નાશ કરે છે લોઢાના ઘણ જેવો તેનો આકાર હોય છે

જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ચૌદ મહા નદી છે, જે પૂર્વ અને પશ્ચિમ

णसमुद्दं आत्मान 'समर्पेति' समर्पयन्ति. तद्यथा—गङ्गा,—सिन्धुः, रोहिता, रोहितांशा, हरिः, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, नरकान्ता, नारिकान्ता सुवर्णकूला, रूप्यकूला, रक्ता. रक्तवती। इति चतुर्दश महानद्यः ॥सू. ३४॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं चउद्दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए णं पुढवीइ अत्थेगइयाणं नेरइयाणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं चउद्दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चउद्दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। महासुक्के कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं जहण्णेणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा सिरिकंतं सिरिमहियं सिरिसोमनसं लंतयं काविट्ठं महिंदकंतं महिंदुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते ण देवा चउद्दसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा निस्ससंति वा। तेसि णं देवाणं चउद्दसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउद्दसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू. ३५॥

हैं—गंगा१, सिन्धु२, रोहिता३, रोहितांशा४, हरि५, हरिकान्ता६, सीता७, सीतोदा८, नरकान्ता९, नारिकांता१०, सुवर्णकूला११, रूप्यकूला१२. रक्ता-१३ और रक्तवती १४। ॥सू० ३४॥

દિશામા લવણસમુદ્રને મળે છે તે નદીઓ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) ગંગા, (૨) સિંધુ, (૩) રોહિતા, (૪) રોહિતાશા. (૫) હરિ, (૬) હરિકાન્તા, (૭) સીતા, (૮) સીતોદા (૯) નરકાન્તા, [૧૦] નારિકાન્તા, (૧૧) સુવર્ણકૂલા, (૧૨) રુપ્યકૂલા, (૧૩) રક્તા, અને (૧૪) રક્તવતી ॥સૂ ૩૪॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां चतुर्दशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां चतुर्दशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां चतुर्दशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानयोः कल्पयोः अस्त्येकेषां देवानां चतुर्दशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सान्तके कल्पे देवानामस्त्येकेषां चतुर्दशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । महाशुक्रे कल्पे देवानामस्त्येकेषां जघन्यमानेन चतुर्दशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ये देवाः श्रीकान्तं१, श्रीमहितं२, श्रीसौमनसं३, सान्तकं४, कापिष्ठं५, महेन्द्रं६, महेन्द्रकान्तं७, महेन्द्रोत्तरावतंसकं८, ते विमानम्=एतेष्वष्टसु विमानेषु उत्पद्यमानत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चतुर्दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाश्चतुर्दशभिरर्द्धमासैः आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा

टीकार्थ—'इमीसे णं' इत्यादि । इस रत्नप्रभा पृथिवी में किन्हीं नारकियों की स्थिति चौदह पल्योपम की कही गई है। पंचमी पृथिवी में किन्हीं नारकियों की चौदह सागरोपम की स्थिति कही गई है। असुरकुमार देवों में किन्हीं देवों की चौदह पल्योपम की स्थिति कही गई है। सौधर्म ईशान इन दो कल्पों में किन्हीं देवों की स्थिति चौदह पल्योपम की कही गई है। सानत्कुमार कल्प में किन्हीं देवों की स्थिति चौदह सागरोपम की कही गई है। महाशुक्र कल्प में किन्हीं देवों की जघन्य स्थिति चौदह सागरोपम की कही गई है। जो देव श्रीकान्त१, श्री महित२, श्रीसौमनस३, सान्तक४, कापिष्ठ५, महेन्द्र६, महेन्द्रकान्त७, और महेन्द्रोत्तरावतंसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की स्थिति चौदह सागरोपम की कही गई है। वे देव चौदह अर्धमासों के अर्थात् सात महीनों के बाद आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। इन देवों को चौदह

ટીકાર્થ—इमीसेणं इत्यादि ! આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પલ્યોપમની કહી છે પાંચમી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની ચૌદ સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે અસુરકુમારોના દેવોમાં કેટલાક દેવોની ચૌદ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચૌદ પલ્યોપમની કહી છે સાનત્કુમાર કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચૌદ સાગરોપમની કહી છે મહાશુક્ર કલ્પમાં કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ ચૌદ સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) શ્રીકાન્ત (૨) શ્રી મહિત, (૩) શ્રી સૌમનસ, (૪) સાન્તક (૫) કાપિષ્ઠ (૬) મહેન્દ્ર (૭) મહેન્દ્રકાન્ત અને (૮) મહેન્દ્રોત્તરાવતંસક, એ આઠ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની સ્થિતિ ચૌદ સાગરોપમની કહી છે તે દેવો સાત મહિને સાત આભ્યન્તરિક

निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां चतुर्दशभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये चतुर्दशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति ॥सू. ३५॥

पञ्चदशं समवायाङ्गमाह—

मूलम्—पन्नरस परमोहम्मिया पण्णत्ता, तं जहा—अंबे अंबरिसे चेव सामे सबलेत्ति आवरे। रुद्दोवरुद्दकाले य महाकालेत्ति आवरे॥१॥ असिपत्ते धणु कुंभे वालुए वेयरणीति य खरस्सरे महाघोसे एए पन्नरसाहिया ॥२॥ णमी णं अरहा पन्नरस धणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था, धुवराहूणं बहुलपक्खस्स पडिवए पन्नरसभागं पन्नरसभागेणं चंदस्सलेसं आवरेत्ताणं चिट्ठइ, तं जहा—पढमाए पढमं भागं बीयाए दुभागं तइयाए तिभागं चउत्थीए चउभागं पंचमीए पंचभागं छठीए छभागं सत्तमीए सत्तभागं अट्ठमीए अट्ठभागं नवमीए नवभागं दसमीए दसभागं एक्कारसीए एक्कारसभागं बारसीए बारसभागं तेरसीए तेरसभागं चउद्दसीए चउद्दसभागं पन्नरसेसु पन्नरसभागं तं चेव सुक्कपक्खस्स य उवदंसेमाणे उवदंसेमाणे चिट्ठइ, तं जहा-पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसभागं। छ णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता पण्णत्ता, तं जहा—सतभिसय भरणि अद्दा असलेसा साई तहा जेट्ठा। एते छण्णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता ॥१॥ चेत्ता सोएसु णं मासेसु

हजार वर्ष के बाद आहार संज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। ये चौदह भवग्रहण करने के अनंतर सिद्धपद को भोगने वाले होंगे। बुद्ध होंगे। कर्ममल से सर्वथा मुक्त हो जावेंगे तथा समस्त दुःखों का नाश कर देंगे॥ ॥सू० ३५॥

શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે તે દેવોને ચૌદ હજાર વર્ષ પછી આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. તે દેવોમાના કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે. તેઓ ચૌદ ભવ ગ્રહણ કર્યા પછી સિદ્ધપદ પામશે બુદ્ધ થશે, કર્મમળથી સર્વથા મુક્ત થશે, તથા સમસ્ત દુઃખોનો સર્વથા નાશ કરશે ॥સૂ. ૩૫॥

पन्नरस मुहुत्तो दिवसो भवइ, एव चेत्ता सोएसु मासेसु पण्णरस रयणी पण्णत्ता । मणूसाण पण्णरसविहे पओगे पण्णत्ते, त जहा—सच्च-मणपओगे मोसमणपओगे सच्चमोसमणपओगे असच्चामोसम°पओगे सच्चवइपओगे मोसवइपओगे सच्चमोसवइपओगे असच्चामोसवइपओगे ओरालियसरीरकायपओगे ओरालियमीससरीरकायपओगे वेउव्विय-सरीरकायपओगे वेउव्वियमीससरीरकायपओगे आहारयससरीरकाय पओगे आहारयमीससरीरकायपओगे कम्मयसरीरकायप्पओगे ॥सू ६॥

टीका—'पन्नरस' इत्यादि । 'परमाहम्मिया' परमाधार्मिक°=परमाश्च तेऽधार्मिकाश्च परमाधार्मिकाः संक्लिष्टपरिणामवन्तोऽसुरविशेषाः प्रथमप्रारभ्य तिसृषु पृथिवीषु नारकदुर्दर्शनभीष्मा पञ्चदशप्रकारा महती तपसा=अम्बोऽम्बरिषी चैव श्याम शबल इति चापरः । रुद्रोपरुद्रकालाश्च महाकाल इति चापरः ॥१॥ असिपत्रो धनु कुम्भो वालु वैतरणीति च । खरस्वरो महाघोष एते पञ्चद शाम्ब्यादा ॥२॥ तत्र-अम्ब =अम्बनामा परमाधार्मिकः, यो हि नारकान् गग

अब सूत्रकार पन्द्रहवीं संख्याविशिष्ट समवाय को कहते हैं—'पन्नरस' इत्यादि।

शब्दार्थ—पन्द्रह परमाधार्मिक देव होते हैं। ये परमाधार्मिक देव सदा संक्लिष्टपरिणामों से युक्त रहते हैं। तथा प्रथम नरक से लेकर तीसरे नरक तक के नारकियों को ये परस्पर में लडाते रहते हैं। वे पन्द्रह ये हैं—अम्ब१ अम्बरीष२, श्याम३, शबल४, रुद्र५ उपरुद्र६, काल७, महाकाल८, असिपत्र९, धनु१० कुम्भ ११ वालु१२, वैतरणी१३, खरस्वर१४, और महाघोष१५ इनमें जो प्रथम अम्ब नाम का असुर है वह नारकियों का

હવે સૂત્રકાર પન્દરમી સંખ્યાવિશિષ્ટ સમવાયનું વર્ણન કરે છે—પન્નરસ ઇત્યાદિ !

શબ્દાર્થ—પન્દર પરમાધાર્મિક દેવો હોય છે તે પરમાધાર્મિક દેવો નરક ગતિમાં પરિણામો વાળા હોય છે તેઓ પહેલી નરકથી લઈને ત્રીજી નરક સુધીના નારકીઓને પરસ્પર લડાવ્યા કરે છે તે પન્દરનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) અમ્બ (૨) અમ્બરીષ (૩) શ્યામ, (૪) શબલ, (૫) રૂદ્ર (૬) ઉપરૂદ્ર (૭) કાળ (૮) મહાકાળ (૯) અસિપત્ર, (૧૦) ધનુ (૧૧) કુમ્ભ, (૧૨) વાલુ (૧૩ વૈતરણી, (૧૪) ખરસ્વર અને (૧૫) મહાઘોષ તેમનામાં પહેલો જે અમ્બ નામના અસુર છે તે નારકીઓને આમતેમ લઇ જઇને નીચે પછાડે

नतलं नीत्वाऽधस्ताद्विमुञ्चति, दत्त्वा च गलहस्तं गर्ते पातयति, अधोमुखमम्बरतले समुत्क्षिप्य पुनः पुनः पतन्तं शूलादिना विध्यति पापं संस्मार्य चानेकधा भूयः कदर्थयति ॥१॥ 'अम्बरीषी' नारकान् मुद्गरादिना कुट्टयित्वा क्रकचादिभिः खण्डशः कृत्वा भ्राष्ट्रादौ पचति, हताऽऽहततया मूर्च्छितांश्च तान् रम्भास्तम्भवच्चर्मणामेकैकं पुटमुत्पाटयोत्पाट्य कदर्थयति ॥२॥ 'श्यामः, कशाघातादिना शातयति, हस्तपादादीन् दुर्दशतया छिनत्ति, शूलमुन्यादिना विध्यति, उपरितोवज्रशिलोपरि पोथ (पात) यति, तथा रज्वादिना दृढं बध्वा लतादि-

---

गगननल में ले जाकर वहां से नीचे पटकता है और गला पकड कर फिर उन्हें खड्डे में डाल देता है। नारकी जीव ऊपर से नीचे मुख करके गिरने लगता है–तब वह उसे बीच ही में झेल कर शूलादि द्वारा छेद डालता है और पूर्वकृतपाप को याद दिलाकर उसे विविध प्रकार के कष्ट देता है १। दूसरा जो अम्बरीष नामका असुर है वह नारकियों को मुद्गर आदि से कूट कर एव करौंत आदि से खंड खंड कर उन्हें भाडमें पकाता है। इस तरह हताहत हो जाने के कारण मूर्च्छित हुआ उन नारकियों के चमडे के एकएक पुट को केले के स्तंभ समान फाड २ कर–उखाड २ कर वह उन्हें बहुत कष्ट देता है २। तीसरा जो श्याम नाम का परमाधार्मिक असुर कशाओं के आघात आदि से नारकियो को खूब पीटता है। उनके हस्त पाद आदि अवयवो को बुरी तरह से काट डालता है। शूली के अग्रभाग से उन्हे छेद देता है। ऊपर से उन्हें वज्रशिला के ऊपर पटक देता है तथा रस्सी आदि से उन्हें खूब मजबूत बाधकर लतादि

છે અને ગળુ પકડીને તેમને ખાડામા નાખી દે છે નારકી જીવ જ્યારે ઉપરથી ઊંધે માથે નીચે પડવા માડે છે ત્યારે તે તેને વચ્ચેથી જ પકડીને શૂલાદિ દ્વારા છેદી નાખે છે અને પૂર્વકૃત પાપોને યાદ કરાવીને તેને અનેક પ્રકારે કષ્ટ આપે છે. ।૧। બીજો જે 'अम्बरीष' નામનો અસુર છે તે નારકીઓને મગદળ આદિ વડે મારે છે અને કરવત આદિથી તેમના ટુકડે ટુકડા કરીને તેને ભઠ્ઠીમા પકાવે છે. આવી રીતે ટુકડે ટુકડા થવાને કારણ મૂર્ચ્છિત થયેલ નારકીઓની ચામડીના એક એક પુટને કેળના સ્તભની જેમ ફાડી ફાડીને તથા ઉપાડી ઉપાડીને તે તેમને ઘણુ જ કષ્ટ આપે છે (૨) ત્રીજો 'श्याम' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે તે ચાબુક વડે નારકીઓને ખૂબ મારે છે તેમના હાથ, પગ આદિ અંગોને ખરાબ રીતે કાપી નાખે છે શૂળની અણિથી તેને વીધી નાખે છે તેને ઉપરથી વજ્ર શિલા ઉપર પટકે છે તથા તેમને દોરડા આદિથી બાધીને લાત આદિના પ્રહારથી વધારેમા વધારે

मग्गरपुरस्सरं भीषणपातनं नयति, अस्य श्यामाङ्गत्वाच्छ्यामो नाम ॥३॥ शबलः-वर्णेन कर्बुरः अयमपरः परमाधार्मिकः, अयं हि मुद्गरादिना नारकेष्वामस्थि सर्पि पूर्णयति, अन्त्रस्रजादीन्निष्कासयति ॥४॥ रौद्रो रुद्रकर्मकरत्वाद्रौद्रोऽप्ययं नारकान् भ्रामयित्वा भ्रामयित्वा गगने सुदूरमुत्क्षिप्य निपतदस्ताऽसिकल्पसिलोमरा ग्निषु मोक्षयति ॥ उपरौद्र=रौद्रकल्पः, एष च करचरणादीनुपाङ्गानि भनक्ति ॥६॥ काल इव यो नारकान् नानाविधासु कुम्भीषु पचति। अयं च वर्णतोऽपि काल एव ॥७॥ महाकालः इति चापरः परमाधार्मिकः अयं पूर्वस्मिन् जन्मनि मांसा

के प्रहारों से अधिक से अधिक भयंकर कष्ट पहुँचाता है। इस असुर का शरीर काला होता है इसलिये इसका नाम श्याम है ३। चौथा शबल नामका परमाधार्मिक असुर वर्ण से कर्बुर होता है। यह मुद्गर आदि से नारकियों की अस्थि(हड्डि)मज्जियों को चूर २ कर देता है। उनकी आंतें और चमडा-चर्बी आदि का निकाल लेता है४। पांचवां रुद्र नामका परमाधार्मिक असुर जैसा इसका नाम है वैसा ही इस का काम है। यह नारकियों को घुमा २ कर आकाश में बहुत दूरतक उन्हें फेंकता है। जब वे नीचे गिरने लगते हैं तो उन्हें शक्ति, असि और तोमर आदि पर पीस ही में डाल देता है। इस तरह वे उनमें सिद्ध जाते हैं। छट्ठा उपरौद्र नामका जो परमाधार्मिक असुर है वह नारकियों के कर, चरण आदि अंग उपांगों को फाड देता है-चीर देता है६। सातवां काल नाम का परमाधार्मिक असुर नारकियों को नाना प्रकार की कुंभियों कुम्भों में पकाता है। यह असुर रूप रंग में काला होता है७। आठवां महाकाल नामका

પહોચાડે છે તે અસુરનુ શરીર કાળુ હોય છે, તેથી તેને 'શ્યામ' કહે છે (૩) બીજો 'શબલ' નામનો પરમાધામિક અસુર વર્ણે કબુર હોય છે તે મગદળ આદિથી નારકીઓનાં હાડકાંના ભૂકે ભૂકા કરી નાખે છે તેમનાં આંતરડાં તથા ચરબી આદિ બહાર કાઢી લે છે. (૪) પાંચમો રૂદ્ર નામનો પરમાધામિક અસુર છે જેનુ નામ અનુરૂપ છે તેનુ જ અનુરૂપ તેનુ કામ છે. તે નારકીઓને અકાશ પાતાળમાં ઘણે જ દૂર દૂર ફેંકે છે અને જ્યારે તેઓ નીચે પડતાં હોય છે ત્યારે તે તેમને શક્તિ તલવાર, તોમર આદિ અસ્ત્રોપર ઝીલી લે છે, આ રીતે પકવીને તેઓ તેમાં વીંધાઇ જાય છે (૫) છઠ્ઠો જે ઉપરૌદ્ર નામનો પરમાધામિક અસુર છે તે નારકીઓના હાથ પગ, આદિ અંગોને કાપી નાખે છે, (૬) સાતમો જે 'કાલ' નામનો પરમાધામિક અસુર છે તે નારકીઓને વિવિધ પ્રકારની કુંભિયો તથા કુંભિઓમાં પકાવે છે તે અસુર રૂપે તથા રંગે કાળો હોય છે

हारिणो नारकास्तदीयोत्कर्तित पृष्ठादिस्थं मांसं कदर्थनया भक्षयति, वर्णेन च महाश्यामत्वान्महाकाल उच्यते ॥८॥ असिपत्रः स देवो योऽसि (तरवारि)-तुल्यपत्राणां वनं विरचय्य तच्छायाभिलाषेण समागतान्नारकिणो विकृतवाता न्दोलनपूर्वकमसिपत्रपातनेन खण्डश-श्छिनत्ति 'असिपत्र' इत्यत्र अर्श आदित्वादच् ॥९॥ धनुः स यो धनुर्गो विनिर्मुक्तैरर्द्धचन्द्राकारैर्बाणैः कर्णौष्ठनासादीन् अवयवान् नारकिणा छिनत्ति ॥१०॥ कुम्भः विविधासु उष्ट्रकाकाराधासु कुम्भीषु नारकिणो मृश पचति हन्ति च ११ वालु र्भाष्ट्रस्थ तप्तवज्रवालुकासु नारकान् स तडत्कारं चणकादीनिव भर्जयति। वैतरणी=नरकस्थनदी, तदधिष्ठातृत्वेन तद् देवोऽपि गृहादारा

परमाधार्मिक असुर, पूर्वजन्म में जीवों ने मांस का भक्षण किया है उन नारकियों को उन्हीं के पृष्ठादि के मांस को काट २ कर खिलाता है। वर्ण में यह अत्यंत काला होता है इसलिये इसका नाम महाकाल है८. नववां असिपत्र नामक परमाधार्मिक असुर वे देव हैं जो असि के जैसे पत्रों का वन अपनी विक्रिया से रच कर उसकी छाया सेवन की अभिलाषा से आये हुये नारकियों के शरीर के विकृत वातान्दोलन (हवाचलाकर)पूर्वक असिपत्र के पात से खंड २ कर देता है९। दसवां धनुजाति का परमाधार्मिक वह असुर हैं जो धनुष से विनिर्मुक्त अर्धचंद्राकार बाणों से नारकियों के कान ओष्ठ आदि अवयवों को छेदता है१०। ग्यारहवां कुम्भ जाति का परमाधार्मिक असुर वह है जो उष्ट्राकारवाली कुम्भियों में नारकियों को बुरी तरह पकाता है और मारता भी है११। बारहवां वालु नामका परमाधार्मिक असुर भाड की संतप्त वज्र वालु का में नारकियों को भुंजते समय फड २ करते हुए चनों की तरह भुजता है१२। तेरहवां वैतरिणी

(७) આઠમો 'महाकाल' નામનો જે પરમાધાર્મિક અસુર છે તે પૂર્વજન્મમાં જે જીવોએ માંસ આદિનુ ભક્ષણ કર્યું હોય તે નારકીઓને તેમના જ પૃષ્ઠાદિ ભાગોનુ માંસ કાપી કાપીને ખવરાવે છે તે રંગે અતિશય કાળો હોવાથી તેનુ નામ મહાકાલ' છે (૮) નવમો 'असिपत्र' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે તે એવો છે કે જે પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી તલવાર જેવા પાન વાળા વન બનાવે છે, અને તેની છાયાનું સેવન કરવાની ઇચ્છાથી તેની નીચે આવેલ નારકીઓના શરીરના વિકૃત વાતાન્દોલન પૂર્વક [પવનનું તોફાન ઉત્પન્ન કરીને] અસિપત્રોને નીચે પાડીને ટુકડે ટુકડા કરી નાખે છે (૯). દસમો 'धनु' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર ધનુષ્યમાંથી છોડેલા અર્ધચંદ્રાકાર બાણોથી નારકીઓના હોઠ, કાન આદિ અવયવોનુ છેદન કરે છે (૧૦) અગિયારમો 'कुम्भ' જાતિનો પરમાધાર્મિક અસુર ઉષ્ટ્રાકારની કુંભિયોમા નારકીઓને ખરાબ રીતે પકાવે છે તથા મારે છે (૧૧) બારમો 'वालु' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર ભઠીમા ગરમ કરેલ વજ્રની રેતીમા નારકીઓને, શેકતી વખતે ફડ ફડ કરતા ચણાની માફક શેકે છે

णि सतानि उच्चत्वेन चमरराजस्य नगर्याः प्राकारप्रमाणं तत्पेक्षयाऽधिकमेवेति सार्धशतम्-तथा सौधर्मवैमानिकानाम्-प्रथमप्रासादः-पञ्च योजनानां शतानि तदन्ये चत्वारस्तत्परिवारभूताः सार्धद्वे शते प्रत्येकं च तेषां चतुर्णामपि अन्ये परिवारभूता इत्वारः सपादं शतम् एवमन्ये तत्परिवारभूताः सार्धाद्विषष्टिः। एवमन्ये सपादषष्टिम्, इह तु चमरचञ्चाराजधान्यां मूलप्रासादः सार्धे द्वे योजनशते। एवमेवार्धा ऽर्धहीनास्तत्परे सर्वेऽवसेयाः यावदन्तिमाः पञ्चदशयोजनानि पञ्च च भागा योज-

तथा सौधर्म देवों का मूल महल पांचसौ योजन का ऊँचा है तथा इस प्रासादके परिवार रूप चार और महल हैं सो इनकी ऊँचाई दो सौ पचास २५० योजन की है। तथा इन चार महलों में से प्रत्येक महल के आस पास दूसरे और चार चार इनके परिवाररूप महल हैं, उनकी ऊँचाई एकसौ पच्चीस १२५ योजन की है। इसी तरह इन चार २ महलों के परिवार भूत और भी चार २ महल हैं इनकी ऊँचाई साढे बासठ साढे बासठ ६२॥-६२॥ योजन की है। इसी तरह इन महलों के भी और चार चार परिवार महल हैं इनकी ऊँचाई प्रत्येक की सवा इकतीस सवा इकतीस ३१।-३१। योजन की है। परन्तु यहां चमरचंचा राजधानी में मूलमहल की ऊंचाई दो सौ पचास २५० योजन की है। और इस मूलप्रासाद के आस पास के और जितने महल-प्रासाद हैं उसकी ऊँचाई मूल महल की अपेक्षा आधी २ होती गई है। इस तरह अन्तिम महल की ऊंचाई पन्द्रह १५ योजन और एक योजन के अडिया पांच भाग अर्थात् आठ भागों में से पांच भाग है। इसी तरह बात को बाबनी

યોજન ઊંચો છે તે મહેલના પરિવાર રૂપ બીજા જે ચાર મહેલ છે તેમની ઊંચાઈ ૨૫૦-૨૫૦ અઢીસો અઢીસો યોજનની છે તે ચાર મહેલોમાંના પ્રત્યેક મહેલની આસપાસ તેમના પરિવાર રૂપ ચાર ચાર મહેલ છે તે દરેકની ઊંચાઈ ૧૨૫-૧૨૫ સવાસો સવાસો યોજનની છે વળી તે ચાર મહેલોમાંના પ્રત્યેકના પરિવાર રૂપ ચાર ચાર મહેલ છે તે દરેકની ઊંચાઈ ૬૨-૧/૨ બાસઠિયા બાસઠિયા યોજનની છે વળી તે ચાર મહેલોમાંના પ્રત્યેકના પરિવારરૂપ બીજા ચારચાર મહેલ છે તે દરેકની ઊંચાઈ ૩૧-૩૧। સવા બેત્રીસ સવા બેત્રીસ યોજનની છે અમરચંચા રાજધાનીમાં મહેલોનું માપ ઉપર કહેવામાં આવેલ બધા મહેલો કરતાં અધું છે એટલે કે અમરચંચા રાજધાનીના મુખ્ય મહેલની ઊંચાઈ ૨૫૦ બસો પચાસ યોજન છે અને તે મુખ્ય મહેલની આસપાસના બીજા જે નાના મોટા પ્રાસાદ (મહેલો) છે તે દરેકની ઊંચાઈ મુખ્ય પ્રાસાદ કરતાં અર્ધા અર્ધી થતી જાય છે આ રીતે છેલ્લા ચાર પ્રસાદોની ઊંચાઈ ૧૫૨-૫ યોજનની છે એજ વાત સૂત્રકારે નીચેના સૂત્ર દ્વારા પ્રગટ કરી છે-(चत्तारि परिवाडीओ

नस्याऽष्टसु भागेषु, उक्तञ्च–' चत्तारिपरिवाडीओ, पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ ' चतस्रः परिपाट्यः प्रासादावतंसकानामर्द्धार्द्धहीना इतिच्छाया। एतेषां च प्रासादादीनां चतस्रोऽपि परिपाट्यः त्रीणि शतानि एक चत्वारिंशदधिकानि भवन्ति। एतेभ्यः प्रासादादिभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे सुधर्मा सभा भवतीति तदेव दर्शयति 'सभासुहम्मा ' इति ईशानकोणे सुधर्मानाम्नी सभा भवति असुरेन्द्रस्य चमरराजस्येति इतिभगवत उत्तरम् ॥ सू–१ ॥

इति श्री–जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ २–८ ॥

न्तर में (चत्तारि परिवाडिओ पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ त्ति) इस पाठ द्वारा कहा गया है, अर्थात्–प्रासादावतंसकों की अर्धार्धहीन चार परिपाटी–पंक्तियां हैं। इन प्रासादावतंसकों की चारों भी परिपाटियों में कुल तीनसौ इगतालीस प्रासाद हैं। इन प्रासादों के ईशानकोने में असुरेन्द्र चमरराजकी (सभा सुहम्मा) सुधर्मा सभा है। इस प्रकार भगवान् ने गौतम को उत्तर दिया ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके आठवां उद्देशा समाप्त ॥२–८॥

पासायवडिंसगाण अद्धद्धहीणा ओत्ति) प्रासादावतंसकोनी—उत्तम प्रासादोनी अर्धार्ध हीन चार परिपाटी–पंक्तियो छे એટલે કે મુખ્ય પ્રાસાદનીઆસપાસ પહેલી ચાર પ્રાસાદની પંક્તિ છે જેના દરેક પ્રાસાદની ઊંચાઈ ૧૨૫સવાસો યોજનની છે. તે ચાર પ્રાસાદની આસપાસ ૬૨॥–૬૨॥ સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ યોજનની ઊંચાઇના ચાર ચાર પ્રાસાદોની બીજી પંક્તિ છે, વળી આ બીજી પંક્તિના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૩૧–૩૧ સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ યોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ત્રીજી પંક્તિ આવે છે. પછી આ ત્રીજી પંકતીના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૧૫½–૧૫½ યોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ચોથી પંક્તિ આવે છે તે પ્રાસાદાવતંસકોની ચારે પંક્તિયોમાં એકંદરે ૩૪૧ ત્રણુસો એકતાલીસ પ્રાસાદો છે (મુખ્ય ૧ × ૪ + ૧૬ + ૬૪ × ૨૫૬) એ પ્રાસાદોના ઈશાનકોણુમા અસુરેન્દ્ર ચમરરાજની (સભા સુહમ્મા) સુધર્મા સભા આવેલી છે. ભગવાને ગૌતમસ્વામીને ઉપર મુજબ જવાબ દીધો.॥સૂ ૧॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત " ભગવતીસૂત્ર " ની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨–૮ ॥

॥ अथ नवमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

नवमोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविचारः ॥ कस्य समयक्षेत्रमिति नाम मक्तीति प्रश्नः सार्धद्वीपद्वयम् द्वौ समुद्रौ च समयक्षेत्रमित्युत्तरम् इति उत्तरपदा जीवाभिगमसूत्रस्योद्धरणं चेति ॥

अष्टमोद्देशके चमरचंचानामकं क्षेत्रम् सुधर्मासभादिवर्णनयुक्तम् अथ चेमापि कारात् नवम उद्देशके समयक्षेत्रम् वर्ण्यते ' किमिदं भंते । ' इत्यादि ।

मूलम्—किमिदं भंते! समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ गोयमा! अड्ढा इज्जादीवा दोयसमुद्दा तसंठाणसंठिए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ तत्थ णं अय जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाण सव्व ब्भंतरे णय जीवाभिगमपत्तठयया नेयव्वा जाव अब्भिंतर पुक्खरद्ध जोइस चिहूण ॥ सू-१ ॥

छाया—किमिदं भदन्त! समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते! गौतम! अर्धतृतीयद्वीपा!

द्वितीयशतकस्य नवम उद्देशः प्रारभ्यते—

इस नवम उद्देशक का संक्षेप से विषय विवरण इस प्रकार से है—समयक्षेत्र यह किसका नाम है ऐसा प्रश्न, अढाई द्वीप और दो समुद्र यह समयक्षेत्र है ऐसा उत्तर, जीवाभिगमसूत्र का उद्धरण।

आठवें उद्देशक में चमरचंचा नामक राजधानी और सुधर्मा सभा आदि विषय कहा गया है सो क्षेत्र के अधिकार को लेकर इस नवम उद्देशक में समय क्षेत्र का वर्णन कहा जाता है (किमिदं भंते) इत्यादि

सूत्रार्थ—(किमिदं भंते! समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) हे भदन्त! स-

બીજા શતકના નવમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ—

બીજા શતકના નવમા ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન આ પ્રમાણે છે પ્રશ્ન-સમયક્ષેત્ર કોને કહે છે? ઉત્તર અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે આ વિષયમાં જીવાભિગમ સૂત્રનો ઉલ્લેખ

આઠમા ઉદ્દેશકમાં ચમરચંચા નામની રાજધાની સુધર્મા સભા વગેરેનું સુધર્મા સભા આદિ વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તો પણ આની અપેક્ષાએ આ નવમા ઉદ્દેશકમાં સમયક્ષેત્રનું વર્ણન કરવામાં આવે છે

(किमिदं भंते!)

સૂત્રાર્થ—(किमिदं भंते! समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ?) હે ભગવન્! કયા

नस्याऽष्टसु भागेषु, उक्तञ्च-' चत्तारिपरिवाडीओ, पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ ' चतस्रः परिपाट्यः प्रासादावतंसकानामर्द्धार्द्धहीना इतिच्छाया। एतेषां च प्रासादादीनां चतस्रोऽपि परिपाट्यः त्रीणि शतानि एक चत्वारिंशदधिकानि भवन्ति। एतेभ्यः प्रासादादिभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे सुधर्मा सभा भवतीति तदेव दर्शयति 'सभासुहम्मा ' इति ईशानकोणे सुधर्मानाम्नी सभा भवति असुरेन्द्रस्य चमरराजस्येति इतिभगवत उत्तरम् ॥ सू-१ ॥

इति श्री-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-८ ॥

न्तर में (चत्तारि परिवाडिओ पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ त्ति) इस पाठ द्वारा कहा गया है, अर्थात्-प्रासादावतंसकों की अर्धार्धहीन चार परिपाटी-पंक्तियां हैं। इन प्रासादावतंसकों की चारों भी परिपाटियों में कुल तीनसौ इगतालीस प्रासाद हैं। इन प्रासादों के ईशानकोंने में असुरेन्द्र चमरराजकी (सभा सुहम्मा) सुधर्मा सभा है। इस प्रकार भगवान् ने गौतम को उत्तर दिया ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके आठवां उद्देशा समाप्त ॥२-८॥

पासायवडिंसगाण अद्धद्धहीणा ओत्ति) प्रासादावतंसकोनी—उत्तम प्रासादोनी अधो र्ध हीन चार परिपाटी-पंक्तियो छे એટલે કે મુખ્ય પ્રાસાદનીઆસપાસ પહેલી ચાર પ્રાસાદની પંક્તિ છે જેના દરેક પ્રાસાદની ઊંચાઈ ૧૨૫સવાસો યોજનની છે. તે ચાર પ્રાસાદની આસપાસ ૬૨॥-૬૨॥ સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ યોજનની ઊંચાઇના ચાર ચાર પ્રાસાદોની બીજી પંક્તિ છે, વળી આ બીજી પંક્તિના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૩૧॥-૩૧॥ સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ યોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ત્રીજી પંક્તિ આવે છે. પછી આ ત્રીજી પંકતીના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૧૫½-૧૫½ યોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ચોથી પંક્તિ આવે છે તે પ્રાસાદાવતંસકોની ચારે પંક્તિયોમાં એકંદરે ૩૪૧ ત્રણસો એકતાલીસ પ્રાસાદો છે (મુખ્ય ૧×૪+૧૬+૬૪×૨૫૬) એ પ્રાસાદોના ઈશાનકોણમા અસુરેન્દ્ર ચમરરાજની (સભા સુહમ્મા) સુધર્મા સભા આવેલી છે. ભગવાને ગૌતમસ્વામીને ઉપર મુજબ જવાબ દીધો.॥સૂ ૧॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત " ભગવતીસૂત્ર " ની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૮ ॥

द्वाढ्नादीपा ' अर्धतृतीयौ द्वीपौ अर्धमधिक त्रिपत यस्य तादृशो यद्वा तृतीय-स्याऽर्धभागेन युक्तौ द्वौ द्वीपौ इति तथा अर्धतृतीयौ द्वीपौ इति कथ्यते ' दो य समुद्दा ' द्वौ च समुद्रौ ' एसण पयाए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ ' एतत् खलु पदाद् समयक्षेत्रमिति भोच्यते ' तत्थ ण ' तत्र खलु तत्र सार्द्धद्वीपद्वयसमुद्रस्य मध्ये ' अयं जंबू दीवेदीवे ' अय जंबूद्वीपनामको द्वीप ' सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भं तरे ' सर्वद्वीपसमुद्राणामभ्यन्तरे विद्यतीति शेषः, ' समयखेत्तेत्ति ' समयक्षेत्रमिति तत्र समयः कालः कालेनातीतानागतवर्तमानलक्षणेनोपलक्षितं यत् क्षेत्रं

प्रभु उनसे कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (अड्ढाइज्जा दीवा) अढाई द्वीप और (दो य समुद्दा) दो समुद्र (एस ण एयाए समय-खेत्तेत्ति पवुच्चइ) इतना यह समय क्षेत्र कहा गया है । इस प्रकार के कथन से जंबूद्वीप धातकीखंड और आधा पुष्कर वर द्वीप इतना क्षेत्र समयक्षेत्र है तथा इसमें जो लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र ये जो दो समुद्र हैं यह सब समयक्षेत्र कहा गया है । समय शब्द का अर्थ काल है और इस काल से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समयक्षेत्र है । इसे टीकाकार स्वयं आगे स्पष्ट कर रहे हैं (तत्थ णं) वहां अढाईद्वीप और दो समुद्र के बीच में (अयं जंबूदीवे दीवे) जो जंबूद्वीप नामका पहिला द्वीप है वह (सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे) समस्त द्वीप और समुद्रों के ठीक बीचों बीच है । समयक्षेत्र का तात्पर्य क्या है ? सो इसे टीकाकार स्पष्ट करते हैं—समय नाम काल का है इसके अतीत, अनागत, और वर्तमान ऐसे तीन भेद हैं इन

મહાવીર સ્વામી તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (अड्ढाइज्जा दीवा) અઢી દ્વીપ અને (दो य समुद्दा) બે સમુદ્રોને (एसण एयाए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) સમયક્ષેત્ર કહે છે એટલે કે જંબૂદ્વીપ, ધાતકીખંડ અને અર્ધો પુષ્કરદ્વીપ, એ અઢી દ્વીપને તથા લવણસમુદ્ર અને કાલોદધિ સમુદ્ર એ બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે સમય એટલે કાળ તે કાળથી ઉપલક્ષિત જે ક્ષેત્ર તેનું નામ સમયક્ષેત્ર છે સૂત્રકાર પોતે જ આગળ તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-(तत्थण) ત્યાં અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોની વચ્ચે (अयं जंबुदीवे दीवे) જે જંબૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ છે તે (सव्व दीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રની બરાબર વચ્ચે છે સમયક્ષેત્ર એટલે શું ? આકાર તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કરે છે-સમય એટલે કાળ. તેના ત્રણ ભેદ છે-ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્તમાનકાળ તે

द्वौ च समुद्रौ एतत् खलु एतावत् समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते तत्रायं जंबूद्वीपो द्वीपः सर्वद्वीपसमुद्राणां सर्वाभ्यन्तरे एव जीवाभिगमवक्तव्यता ज्ञातव्या यावदभ्यन्तरं पुष्करार्द्धम् ज्योतिषिकविहीनम् ॥ सू-१ ॥

टीका—' किमिदं भंते ! समयक्खेत्तेत्ति पवुच्चइ ' किमिदं भदन्त ! समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते ? हे भगवन् ! कस्य क्षेत्रस्य समयक्षेत्रमिति नाम भवतीति गौतमस्य प्रश्नः । भगवानाह-' गोयमा ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! 'अ-

---

मयक्षेत्र कौनसा क्षेत्र कहलाता है ? । (गोयमा !) हे गौतम ! (अड्ढाइज्जा दीवा दो य समुद्दा एसणं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) अढाई द्वीप और दो समुद्र इसे समयक्षेत्र कहा गया है । (तत्थ णं अयं जंबूदीवे दीवे, सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा जाव अब्भिंतरं पुक्खरद्ध जोइसविहूणं) इसमें जो जंबूद्वीप नामका द्वीप है वह समस्त द्वीप और समुद्रों के ठीक बीच में है । इस तरह यहां समस्त कथन जीवाभिगमसूत्र के कथन की तरह जानना चाहिये । वहां का यह कथन यहां कहां तक लेना चाहिये ? तो इसके लिये कहा गया है कि आभ्यन्तर पुष्करार्धतक का लेना चाहिये उसमें भी ज्योतिषिक संबंधी कथन छोड देना चाहिये उसको यहां नहीं लेना चाहिये ।

टीकार्थ—(किमिदं भंते ! समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) हे भदन्त ! (समयक्षेत्र) यह किसको कहा गया है ? अर्थात् समयक्षेत्र यह किस क्षेत्र का नाम है ऐसा यह प्रश्न गौतम का है, इसका उत्तर देते हुए

क्षेत्रने समयक्षेत्र कहे छे ! (गोयमा !) हे गौतम ! (अड्ढाइज्जादीवा दो य समुद्दा एस ण एवइए समयखेत्ते त्ति पवुच्चइ) अढी द्वीप अने बे समुद्रोने समयक्षेत्र कहे छे (तत्थण अय जबुदीवे, दीवे सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा जाव अब्भितरपुक्खरद्धजोइसविहूणं) तेमां जंबूद्वीप नामनो द्वीप छे ते समस्त द्वीप अने समुद्रोनी बराबर वच्चो वच्च छे आ प्रमाणे समस्त कथन जीवाभिगम सूत्रना कथन प्रमाणेज अहीं: ग्रहण करवानुं छे क्या सुधी ते कथन ग्रहण करवु ! तो सूत्रकार कहे छे के " अभ्यन्तर पुष्करार्ध पर्यन्त ते कथन ग्रहण करवु जोइओ. परतु तेमा ज्योतिषिकना विषयमा जे कथन आवे छे ते छोडी देवुं जोइओ-ते सिवायनु समस्त कथन ग्रहण करवु जोइओ

टीकार्थ—गौतम स्वामी महावीर प्रभुने पूछे छे-(किमिद भते ! समयखेत्ते त्ति पवुच्चइ) हे भदन्त ! क्या क्षेत्रने समयक्षेत्र कहे छे ! एटले के क्या क्षेत्रनुं नाम समयक्षेत्र छे !

द्धाइज्जादीवा' अर्धतृतीयौ द्वीपौ अर्धमधिकं द्वितीयं यस्य तादृशौ यदा तृतीयस्यार्धभागेन युक्तौ द्वौ द्वीपौ इति तदा अर्धतृतीयौ द्वीपौ इति कथ्यते 'दो य समुद्दा' द्वौ च समुद्रौ 'एसण एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ' एतत् खलु एतावत् समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते 'तत्थ णं' तत्र खलु तस्य सार्द्धद्वीपद्वयसमुद्रस्य मध्ये 'अत्थं जंबूदीवेदीवे' अथ जम्बूद्वीपनामको द्वीप 'सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे' सर्वद्वीपसर्वसमुद्राणामभ्यन्तर स्थितीति शेषः, 'समयखेत्तेत्ति' समयक्षेत्रमिति तत्र समयः कालः कालनातीताऽनागतवर्तमानक्षणेनोपलक्षितं यत् क्षेत्र

प्रभु उनसे कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम! (अड्ढाइज्जा दीवा) अढाई द्वीप और (दो य समुद्दा) दो समुद्र (एस ण एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) इतना यह समयक्षेत्र कहा गया है। इस प्रकार के कथन से जंबूद्वीप धातकीखंड और आधा पुष्करवर द्वीप इतना क्षेत्र समयक्षेत्र है तथा इसमें जो लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र ये जो दो समुद्र हैं यह सब समयक्षेत्र कहा गया है। समय शब्द का अर्थ काल है और इस काल से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समयक्षेत्र है। इसे टीकाकार स्वयं आगे स्पष्ट कर रहे हैं (तत्थ णं) यहां ढाईद्वीप और दो समुद्र के बीच में (अत्थ जंबूदीवे दीवे) जो जंबूद्वीप नामका पहिला द्वीप है वह (सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे) समस्त द्वीप और समुद्रों के ठीक बीचों बीच है। समयक्षेत्र का तात्पर्य क्या है? सो इसे टीकाकार स्पष्ट करते हैं—समय नाम काल का है इसके अतीत, अनागत, और वर्तमान जैसे तीन भेद हैं इन

મહાવીર સ્વામી તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(गोयमा!) હે ગૌતમ! (अड्ढाइज्जादीवा) અઢી દ્વીપ અને (दो य समुद्दा) બે સમુદ્રોને (एवइए एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) સમયક્ષેત્ર કહેલ છે એટલે કે જંબૂદ્વીપ, ધાતકીખંડ અને અર્ધો પુષ્કરદ્વીપ, એ અઢી દ્વીપને તથા લવણસમુદ્ર અને કાલોદધિ સમુદ્ર એ બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહેલ છે સમય એટલે કાળ તે કાળથી ઉપલક્ષિત જે ક્ષેત્ર તેનું નામ સમયક્ષેત્ર છે સૂત્રકાર પોતે જ આગળ તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-(तत्थ णं) ત્યાં અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોની વચ્ચે (अत्थ जंबूदीवे दीवे) જે જંબૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ છે તે (सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રની બરાબર વચ્ચે છે સમયક્ષેત્ર એટલે શું ટીકાકાર તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કરે છે-સમય એટલે કાળ. તેના ત્રણ ભેદ છે-ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્તમાનકાળ તે

यक्षेत्रम् कालश्च समयक्षणाहोरात्र-मासपक्ष-ऋतुअयन संवत्सरादिरूपो दिनकरगत्यभिव्यंग्यो मनुष्यक्षेत्रे एव भवति नान्यत्र-मनुष्यक्षेत्रादन्यत्र न सूर्यस्य सञ्चारो भवतीति अतो यावत्पर्यन्तं सूर्यस्य गतिस्तावदेव कालव्यवहारो जायते कालोपलक्षितत्वात् क्षेत्रं समयक्षेत्रमिति। 'एवं जीवाभिगम वत्तव्वया नेयव्वा' एवं जीवाभिगमवक्तव्यता नेतव्या (ज्ञातव्या) सर्वमत्र जीवाभिगममूत्रप्रतिपादित दिशैव ज्ञातव्यमिति जीवाभिगमवक्तव्यता चैवम् 'एगं जोयण सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं' इत्यादि एकं योजनशतसहस्रमायामविष्कंभेण इत्यादिकं सर्वमत्र विज्ञेयम्। कियत्पर्यन्तं जीवाभिगमवक्तव्यता ज्ञेया? तत्राह-"जाव अब्भितरं

तीन भेदो से युक्त जो क्षेत्र हैं—वे समयक्षेत्र शब्द से व्यवहृत हुए हैं। समय, क्षण, अहोरात्र, मास, पक्ष, ऋतु, अयन, संवत्सर आदि रूप जो काल है कि जो सूर्यकी गति से जाना जाता है वह मनुष्यक्षेत्र में ही है दूसरे क्षेत्रों में नहीं है, क्यों कि मनुष्य क्षेत्र से अन्यत्र क्षेत्रों में सूर्य गति नहीं करते हैं। इसलिये जहांतक सूर्य की गति है वहीं तक काल का व्यवहार होता है। इसलिये इस काल से उपलक्षित क्षेत्र समय क्षेत्र है, ऐसा जानना चाहिये। (एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा) इस तरह जीवाभिगम की वक्तव्यता कहनी चाहिये, अर्थात्-जीवाभिगम सूत्र में जिस प्रकार से यह विषय प्रतिपादन किया गया है उसी प्रकार से यहां पर यह विषय प्रतिपादित कर लेना चाहिये, जीवाभिगम कि वक्तव्यता इस प्रकार से है-(एगं जोयणसय सहस्सं आयामविक्खंभेणं) एकलाख योजन का आयाम और विष्कंभ है इत्यादि सब यहां जानना चाहिये, जीवाभिगमसूत्र की वक्तव्यता

ત્રણ ભેદોથી યુક્ત જે ક્ષેત્ર છે તે ક્ષેત્રને સમય ક્ષેત્ર કહે છે સમય, ક્ષણ, દિવસ-રાત્રિ, માસ, પક્ષ, ઋતુ, અયન, સંવત્સર આદિ રૂપ જે કાળ છે, તે સૂર્યની ગતિથી જાણી શકાય છે અને તેનુ અસ્તિત્વ મનુષ્યક્ષેત્રોમાં જ છે-અન્યક્ષેત્રોમા નથી, કારણ કે મનુષ્યક્ષેત્ર સિવાયના ક્ષેત્રોમા સૂર્ય ગતિ કરતો નથી. તેથી જ્યા સુધી સૂર્યની ગતિ છે ત્યા સુધી કાળનો વ્યવહાર થાય છે. તેથી જ તે કાળથી ઉપલક્ષિત ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે

(एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा) જીવાભિગમસૂત્રમા આ વિષયનુ જે વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે તે અહીં ગ્રહણ કરવુ જોઇએ જીવાભિગમ સૂત્રમા આ પ્રમાણે વર્ણન કર્યું છે-(एग जोयणसयसहस्स आयामविक्ख भेणं) એક લાખ યોજનની તેની લબાઇ અને પહોળાઇ છે " ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન અહી લેવું જોઇએ. આ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરવા માટે જીવાભિગમ સૂત્રમાથી કયા સુધી વર્ણન

लोकान्तयोः पूर्वापरभावो विद्यते न वेति प्रश्नाशय । भगवानाह-'रोहा लोयंते य अलोयंते णाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा' रोह ! लोकान्तश्चालोकान्तश्च यावदनानुपूर्वी एषा रोह!, लोकान्तालोकान्तयोर्नास्ति पूर्वापरभावोऽपि तु पूर्वापर क्रमरहितावेतौ अलोकान्त पूर्वं लोकान्तो वा पूर्वम् ? लोकान्त पूर्वमलोकान्तो वा पूर्वमिति क्रमो नाऽस्तीति भाव । पुन पृच्छति रोह -'पुव्विं भंते लोयंते पच्छा सत्तमे उवासतरे पुच्छा' पूर्वं भदन्त! लोकान्त पश्चात् सप्तममवकाशान्तरम् पृच्छा, हे भदन्त! किम् पूर्वं लोकान्त पश्चात्सप्तममवकाशान्तरमस्ति, अथवा पूर्वमवका शान्तरं पश्चाल्लोकान्तोऽस्तीति प्रश्नाशय । भगवानाह-' रोहे '-इत्यादि । 'रोहा' हे रोह ! 'लोयंते य सत्तमेउवासतरे य' लोकान्तश्च सप्तममवकाशान्तरं च 'पुव्विंपेते पच्छापेते' पूर्वमप्येते हे पश्चादप्येते हे 'दोवि एए' द्वावप्येतौ

बाद में अलोकान्त है, कि पहिले अलोकान्त है बाद में लोकान्त है ? अर्थात् लोकान्त और अलोकान्त में पूर्वापरभाव मौजूद है या नहीं ? इसका उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (रोह ! लोयंते य अलोयंते य जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा) हे रोह ! लोकान्त और अलोकान्त ये दोनों हैं यावत् इनमें आनुपूर्वी नहीं है । लोकान्त और अलोकान्त में पूर्वापरभाव नहीं है । पूर्वापरक्रम से ये दोनों रहित ही हैं । ऐसा नहीं कि पहिले लोकान्त है और बाद में अलोकान्त है, पहिले अलोकान्त है और बाद में लोकान्त है । रोह पुनः पूछते हैं कि-(पुव्विं भंते ! लोयंते पच्छा सत्तमे उवासतरे ? पुच्छा) हे भदन्त ! पहिले लोकान्त है और बाद में सातवां अवकाशान्तर है, कि पहिले सातवां अवकाशान्तर है और बाद में लोकान्त है ? भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि- (रोहा ! लोयंते य, सत्तमे उवासंतरे य, पुव्विं पेते पच्छा पेते) हे रोह !

अलोयते, पुव्विं अलोयते पच्छा लोयंते ?) હે ભગવન્ ! પહેલા લોકાન્ત છે અને પછી અલોકાન્ત છે કે પહેલા અલોકાન્ત છે અને પછી લોકાન્ત છે ? એટલે કે લોકાન્ત અને અલોકાન્તમા પૂર્વાપર ભાવ મૌજૂદ છે કે નહીં ? ઉત્તર— (रोह ! लोयंते य अलोयंते य जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा !) હે રોહ ! લોકાન્ત અને અલોકાન્ત બન્ને છે ત્યાંથી લઈને તેમનામા આનુપૂર્વી નથી ત્યાં સુધીનું તમામ કથન અહીં અહણ કરવું લોકાન્ત અને અલોકાન્તમા પૂર્વાપર ભાવ નથી. તે બન્ને પૂર્વાપરના ક્રમથી રહિત જ છે રોહ વગી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે-(पुव्विं भंते ! लोयंते पच्छा सत्तमे उवासतरे ? पुच्छा) હે ભગવન્ ! પહેલુ લોકાન્ત અને ત્યાર બાદ સાતમુ અવકાશાન્તર છે ? કે પહેલુ સાતમુ અવકાશાન્તર અને ત્યાર બાદ લોકાન્ત છે ?

ઉત્તર (रोहा ! लोयंते य सत्तमे उवासतरे य पुव्विं पेते पच्छा पेते) હે રોહ !

॥ अथ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

दशमोद्देशकस्य विषया इमे–कतिपयाः अस्तिकायाः ? धर्मास्तिकाये कतिपयाः वर्णाः, इत्यादि. ते च वर्णादिरहिताः अवस्थिताश्च इत्यादि प्रश्नोत्तरम् । धर्मास्तिकायस्य पञ्चभेदाः–द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुणभेदात् । जीवास्तिकाये वर्णादिरस्ति किमिति प्रश्नः ? तस्मिन् वर्णादिर्नास्ति इत्युत्तरम् । गतिगुणो धर्मास्तिकायः स्थितिगुणश्च अधर्मास्तिकायः, अवगाहनगुणः आकाशास्तिकायः, उपयोग गुणः जीवास्तिकायः, पूरणगलनस्वभावः–पुद्गलास्तिकायः, तस्मिन् कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः पञ्चवर्ण-पञ्चरस-द्विगन्धाष्टस्पर्शयुक्तः पुद्गलास्तिकायः इत्युत्तरम् । धर्मा-

---

दूसरे शतकके दशवां उद्देशक प्रारंभ–

(दसवें उद्देशक का विषय विवरण)

इस दशवें उद्देशक में विषय इस प्रकार से हैं–अस्तिकाय कितने हैं ? धर्मास्तिकायमें कितने वर्ण हैं ? इत्यादि । वे वर्णादि से रहित है और अवस्थित हैं इत्यादिरूप से प्रश्नोत्तर । धर्मास्तिकाय के द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव और गुण के भेद से पांच भेद हैं । जीवास्तिकाय में वर्णादिक हैं क्या ? ऐसा प्रश्न । उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर । गतिगुणवाला धर्मास्तिकाय है, स्थितिगुणवाला अधर्मास्तिकाय है, अवगाहनगुणवाला आकाशास्तिकाय है, उपयोगगुणवाला जीवास्तिकाय है, पूरण गलन स्वभाव वाला पुद्गलास्तिकाय है पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्णादिक होते हैं ? ऐसा प्रश्न । उसमें पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध

બીજા શતકના દશમો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ દસમાં ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વિષય વિવરણ નીચે પ્રમાણે છે–
પ્રશ્ન અસ્તિકાય કેટલાં છે ? ધર્માસ્તિકાયના કેટલા વર્ણ છે ?
ઉત્તર—તેઓ વર્ણાદિથી રહિત છે અને અવસ્થિત છે.દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ અને ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયના પાંચ ભેદ છે પ્રશ્ન– જીવાસ્તિકાયમાં વર્ણાદિક હોય છે કે નહીં ? ઉત્તર–તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી. ધર્માસ્તિકાય ગતિગુણવાળુ છે, અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિગુણવાળું છે આકાશાસ્તિકાય અવગાહન ગુણવાળુ છે, જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે અને પુદ્ગલાસ્તિકાય પૂરણ ગલન સ્વભાવવાળું છે. પ્રશ્ન–પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર– તેમા પાંચ વર્ણ, પાંચ રસ, બે ગંધ અને આઠ સ્પ-

पुष्करवरद्वीपार्द्धम्" यावत् अभ्यन्तरं पुष्करार्द्धद्वीपपर्यन्तम् ज्योतिषिक विहीनम् तथा जंबूद्वीपमनुष्यक्षेत्रवक्तव्यतायाम् जीवाभिगमसूत्रप्रमेयविषयायाम् ज्योतिष्कवक्तव्यताऽपि विद्यते किन्तु ग्रहणे ज्योतिष्कविहीनं यथा भवेत् तथा— जीवाभिगमवक्तव्यता ग्राह्या ज्योतिष्काधिकार परित्यक्ताऽन्यत् सर्वमत्र ग्राह्यम्, अत्र परिमाणमात्रस्यैवाधिकारादिति ॥ सू० १ ॥

इति श्री-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां भगवत्यां यचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-९ ॥

इस विषय को प्रतिपादन करने के लिये कहांतक की लेनी चाहिये तो इसके लिये कहा गया है कि (जाव अब्भिंतरं पुक्खरद्धं जोइसविहूणं) तात्पर्य इसका यह है कि-जीवाभिगम सूत्र में जंबूद्वीप मनुष्यक्षेत्र की वक्तव्यता में ज्योतिष्कदेवों की भी वक्तव्यता कहने में आई है सो वह वक्तव्यता यहां नहीं कहनी चाहिये, उसको छोड़कर ही यहां ग्रहण में जीवाभिगमसूत्र प्रतिपादित वक्तव्यता ग्रहण करनी चाहिये। अर्थात् देव संबंधी अधिकार को छोड़कर बाकी सब वहां का विषय यहां ग्रहण कर लेना चाहिये ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत "भगवतीसूत्र" की प्रिय दर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके नववां उद्देशा समाप्त ॥२-९॥

કરવુ જોઈએ ! તો સૂત્રકાર કહે છે કે (जाव अब्भिंतरं पुक्खरद्धं जोइसविहूणं) કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે જીવાભિગમસૂત્રમા જે જંબૂદ્વીપ મનુષ્યક્ષેત્રના વર્ણન સાથે જ્યોતિષ્ક દેવોનુ પણ વર્ણન કરવામાં આવેલુ છે જ્યોતિષ્ક દેવોનુ વર્ણન અહીં પરંતુ જોઈએ નહીં એ સિવાયનુ જીવાભિગમસૂત્રમાં આપેલુ સમસ્ત વર્ણન અહીં કરવુ જોઈએ. કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે જ્યોતિષ્ક દેવોના વિષયમાં જે અધિકાર આવે છે તે છોડી દઈને બાકીનો સમસ્ત વિષય અહીં ગ્રહણ કરવો જોઈએ ગણ્ય ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો નવમો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો.

॥ अथ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

दशमोद्देशकस्य विषया इमे–कतिपयाः अस्तिकायाः ? धर्मास्तिकाये कतिपयाः वर्णाः, इत्यादि. ते च वर्णादिरहिताः अवस्थिताश्च इत्यादि प्रश्नोत्तरम् । धर्मास्तिकायस्य पञ्चभेदाः–द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुणभेदात् । जीवास्तिकाये वर्णादिरस्ति किमिति प्रश्नः ? तस्मिन् वर्णादिर्नास्ति इत्युत्तरम् । गतिगुणो धर्मास्तिकायः स्थितिगुणश्च अधर्मास्तिकायः, अवगाहनगुणः आकाशास्तिकायः, उपयोग गुणः जीवास्तिकायः, पूरणगलनस्वभावः–पुद्गलास्तिकायः, तस्मिन् कियन्ति वर्णादीनिइति प्रश्नः पञ्चवर्ण-पञ्चरस-द्विगन्धाष्टस्पर्शयुक्तः पुद्गलास्तिकायः इत्युत्तरम् । धर्मा-

---

दूसरे शतकके दशवां उद्देशक प्रारंभ–

(दसवें उद्देशक का विषय विवरण)

इस दशवें उद्देशक में विषय इस प्रकार से हैं–अस्तिकाय कितने हैं ? धर्मास्तिकायमें कितने वर्ण हैं ? इत्यादि । वे वर्णादि से रहित है और अवस्थित हैं इत्यादिरूप से प्रश्नोत्तर । धर्मास्तिकाय के द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव और गुण के भेद से पांच भेद हैं । जीवास्तिकाय में वर्णादिक हैं क्या ? ऐसा प्रश्न । उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर । गतिगुणवाला धर्मास्तिकाय है, स्थितिगुणवाला अधर्मास्तिकाय है, अवगाहनगुणवाला आकाशास्तिकाय है, उपयोगगुणवाला जीवास्तिकाय है, पूरण गलन स्वभाव वाला पुद्गलास्तिकाय है पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्णादिक होते हैं ? ऐसा प्रश्न । उसमें पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध

બીજા શતકના દશમો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ દસમાં ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વિષય વિવરણ નીચે પ્રમાણે છે–

પ્રશ્ન અસ્તિકાય કેટલાં છે ? ધર્માસ્તિકાયના કેટલા વર્ણ છે ?

ઉત્તર—તેઓ વર્ણાદિથી રહિત છે અને અવસ્થિત છે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ અને ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયના પાંચ ભેદ છે. પ્રશ્ન– જીવાસ્તિકાયમાં વર્ણાદિક હોય છે કે નહીં ? ઉત્તર–તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી. ધર્માસ્તિકાય ગતિગુણવાળુ છે, અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિગુણવાળુ છે આકાશાસ્તિકાય અવગાહન ગુણવાળુ છે, જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે અને પુદ્ગલાસ્તિકાય પૂરણ ગલન સ્વભાવવાળુ છે પ્રશ્ન–પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર– તેમા પાંચ વર્ણ, પાંચ રસ, બે ગંધ અને આઠ સ્પ-

स्तिकायस्य एकः प्रदेशोऽनेकप्रदेशाः वा धर्मास्तिकाय इत्युच्यते इति प्रश्नः यावत् एकोऽपि प्रदेशोनून्यो भवेत् तावत् नास्ति तावत् धर्मास्तिकाय इत्युत्तरम्, यथा अखण्डो मोदक एव मोदक इति व्यपदिश्यते किन्तु अर्धो मोदको मोदकश्च इत्युच्यते। एवमेवात्रापि धर्मास्तिकायादौ विज्ञेयम्। आकाशस्य कतिभेदा इति प्रश्नः लोकाकाशाऽलोकाकाशभेदेन द्वौ भेदौ इत्युत्तरम्। लोकाकाशो जीवरूप-जीवदेशरूपः-जीवप्रदेशरूप अजीवरूप अजीवदेशरूपः अजीवप्रदेशरूपः, रूप्यजीवस्य चत्वारो भेदाः स्कन्ध-स्कन्धदेश-स्कन्धप्रदेश-परमाणुपुद्गल-लक्षणा, अरूपिणोऽजीवस्य पञ्चभेदा-धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकायस्य प्रदेशा २, अधर्मास्तिकायः ३, अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशा ४, अद्धासमय ५, अलोकाकाश स अजीवद्रव्यदेशा

और आठप्रदेशी होते हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अनेक प्रदेश धर्मास्तिकाय कहे जाते हैं क्या? ऐसा प्रश्न। जबतक एक भी प्रदेश कम है तबतक वह धर्मास्तिकाय नहीं है। जैसे अखंड मोदक ही मोदक कहलाता है और मोदक का आधा खंड मोदक खण्ड कहलाता है। इसीप्रकार यहां धर्मास्तिकाय आदि में भी जानना चाहिये। आकाश के कितने भेद होते हैं ऐसा प्रश्न। लोकाकाश और अलोकाकाश इस प्रकारसे आकाशके दो भेद होते हैं ऐसा उत्तर। लोकाकाश जीवरूप है, जीवदेशरूप है, जीवप्रदेशरूप है, अजीवरूप है अजीवदेशरूप है, अजीवप्रदेशरूप है, रूपी अजीवके स्कन्ध, स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु ये चार भेद होते हैं, अरूपी अजीवके पांच भेद होते हैं। जैसे-धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३, अधर्मास्तिका के प्रदेश ४, अद्धासमय ५। अलोकाकाश अजीवद्रव्यदेशरूप, अगुरुलघुरूप है, लोका-

શું હોય છે પ્રશ્ન-ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે કે અનેક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે? જવાબ-જ્યાં સુધિ એક પણ પ્રદેશ ઓછો હોય ત્યાં સુધી તેને ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં જેમ કે આખા લાડુને જ લાડુ કહેવાય છે અર્ધા લાડુને પણ લાડુનો અર્ધો ભાગ કહેવાય છે' એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય આદિની બાબતમાં પણ સમજવું પ્રશ્ન-આકાશના કેટલા ભેદ છે? ઉત્તર-આકાશના બે ભેદ છે- લોકાકાશ અને અલોકાકાશ. જીવરૂપ છે, જીવદેશરૂપ છે જીવપ્રદેશરૂપ છે છે અજીવરૂપ છે અજીવ દેશરૂપ છે, અજીવ પ્રદેશરૂપ છે રૂપી અજીવના ચાર ભેદ છે (૧) સ્કન્ધ (૨) સ્કન્ધદેશ, (૩) સ્કન્ધ પ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ રૂપ અજીવના નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ અને (૫) અદ્ધાસમય અલોકાકાશ અજીવ દ્રવ્ય

अगुरुलघुः। लोकाकाशे कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः तस्मिन् नास्ति वर्णादिकमित्युत्तरम्। धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणं स्पर्शना च तथा धर्मास्तिकायः कियान् विशालः इति प्रश्नः लोकपरिमित', इत्युत्तरम् ' एवं लोकाकाशास्तिकायेषु प्रश्नोत्तरम् ' अधोलोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति ? किञ्चिदधिकमेकभागम् इत्युत्तरम्। तिर्यग्लोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति ? असंख्येयभागमित्युत्तरम्। ऊर्ध्वलोकः कियन्तं भागं स्पृशति ? किञ्चिन्न्यूनमर्धं भागं स्पृशति। धर्मास्तिकायेन सार्द्धं रत्नप्रभायाः घनोदधेः अवकाशान्तरस्य च स्पर्शना। अनेन प्रकारेण सप्तपृथिवीनामपि स्पर्शना जम्बूद्वीपादयो द्वीपाः लवणसमुद्रादयः

काश में कितने वर्णादिक होते हैं ऐसा प्रश्न। उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय आदिकों का प्रमाण और स्पर्शना तथा धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ऐसा प्रश्न, लोकपरिमित है ऐसा उत्तर एवं लोकाकाश और अस्तिकायादिकों में भी प्रश्नोत्तर समझना। अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ?। यह प्रश्न। कुछ अधिक आधे भाग को स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? ऐसा प्रश्न। असंख्यात भाग का स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। उर्ध्वलोक कितने भाग का स्पर्श करता है ? ऐसा प्रश्न–कुछकम आधे भागका स्पर्श करता है, ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय के साथ रत्नप्रभा की, घनोदधि की, अवकाशान्तर की स्पर्शना इस प्रकार से सातों पृथिवियों की स्पर्शना कहना,

---

દેશરૂપ, અગુરુ લઘુરૂપ છે પ્રશ્ન–લોકાકાશમા કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી

પ્રશ્ન–ધર્માસ્તિકાય આદિકોનું પ્રમાણ કેટલુ હોય છે ? સ્પર્શના તથા વિશાળતા કેટલી હોય છે ? ઉત્તર–ધર્માસ્તિકાય લોકપરિમિત છે.

એજ પ્રમાણે લોકાકાશ અને અસ્તિકાયાદિકોના પણ પ્રશ્નોત્તરો સમજી લેવા

પ્રશ્ન ..અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અર્ધા કરતા થોડા વધારે ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે!

ઉત્તર—અસંખ્યાત ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે!

ઉત્તર—અર્ધાકરતા થોડા ઓછા ભાગને સ્પર્શે છે

ધર્માસ્તિકાયની સાથે રત્નપ્રભાની, ઘનોદધિની, અવકાશાન્તરની સ્પર્શના એજ પ્રમાણે સાતે પૃથિવીઓની સ્પર્શનાનુ કથન, જબૂદ્વીપાદિક દ્વીપોનુ,

स्तिकायस्य एकः प्रदेशोऽनेकप्रदेशाः या धर्मास्तिकाय इत्युच्यते इति प्रश्नः यावत् एकोऽपि प्रदेशोनून्यो भवेत् तावत् नास्ति तावत् धर्मास्तिकाय इत्युच्यते, यथा अखण्डो मोदक एव मोदक इति व्यपदिश्यते किन्तु अर्धो मोदको मोदकखण्ड इत्युच्यते। एवमेवाऽपि धर्मास्तिकायादौ ज्ञेयम्। आकाशस्य कतिभेदाः इति प्रश्नः लोकाकाशाऽलोकाकाशभेदेन द्वौ भेदौ इत्युत्तरम्। लोकाकाशो जीवरूपः-जीव देशरूपः-जीवप्रदेशरूपः अजीवरूपः अजीवदेशरूपः अजीवप्रदेशरूपः, रूप्यजीवस्य चतुर्भेदा स्कन्ध-स्कन्धदेश-स्कन्धप्रदेश-परमाणुपुद्गल-लक्षणाः, अरूप्यजीवस्य पञ्चभेदा-धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकायस्य प्रदेशा २, अधर्मास्तिकायः ३, अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशा ४, अद्धासमय ५, अलोकाकाशः स अजीवद्रव्यदेश

और आठस्पर्शी होते हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अनेक प्रदेश धर्मास्तिकाय कहे जाते हैं क्या? ऐसा प्रश्न। जबतक एक भी प्रदेश कम है तबतक वह धर्मास्तिकाय नहीं है। जैसे अखंड मोदक ही मोदक कहलाता है और मोदक का आधा खंड मोदक खण्ड कहलाता है। उसीप्रकार यहाँ धर्मास्तिकाय आदि में भी जानना चाहिये। आकाश के कितने भेद होते हैं ऐसा प्रश्न। लोकाकाश और अलोकाकाश इस प्रकारसे आकाशके दो भेद होते हैं ऐसा उत्तर। लोकाकाश जीवरूप है, जीवदेशरूप है, जीवप्रदेशरूप है, अजीवरूप है अजीव देशरूप है, अजीव प्रदेशरूप है, रूपी अजीवके स्कन्ध, स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु ये चार भेद होते हैं, अरूपी अजीवके पांच भेद होते हैं। जैसे-धर्मास्तिकाय। धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३, अधर्मास्तिका के प्रदेश ४, अद्धासमय ५। अलोकाकाश अजीवद्रव्यदेशरूप, अगुरुलघुरूप है, लोका-

શું હોય છે પ્રશ્ન-ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે કે અનેક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે? ઉત્તર—જ્યાં સુધિ એક પણ પ્રદેશ ઓછો હોય ત્યાં સુધી તેને ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં જેમ કે અખંડ લાડુને જ લાડુ કહેવાય છે અર્ધા લાડુને તો લાડુનો અર્ધો ટુકડો કહેવાય છે' એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય આદિની બાબતમા પણ સમજવું પ્રશ્ન-આકાશના કેટલા ભેદ છે? ઉત્તર-આકાશના બે ભેદ છે- લોકાકાશ અને અલોકાકાશ લોકરૂપ છે, લોકદેશરૂપ છે, લોકપ્રદેશરૂપ છે છે, અલોકરૂપ છે, અલોક દેશરૂપ છે, અલોક પ્રદેશરૂપ છે, રૂપી અજીવના ચાર ભેદ છે (૧) સ્કંધ (૨) સ્કન્ધદેશ, (૩) સ્કન્ધ પ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ અરૂપી અજીવના નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ,(૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ અને (૫) અદ્ધાસમય અજીવાકાશ અજીવ દ્રવ્ય

अगुरुलघुः। लोकाकाशे कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः तस्मिन् नास्ति वर्णादिकमित्युत्तरम्। धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणं स्पर्शना च तथा धर्मास्तिकायः कियान् विशालः इति प्रश्नः लोकपरिमितः, इत्युत्तरम् ' एवं लोकाकाशास्तिकायेषु प्रश्नोत्तरम् ' अधोलोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति ? किञ्चिदधिकमेकभागम् इत्युत्तरम्। तिर्यग्लोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति ? असंख्येयभागमित्युत्तरम्। ऊर्ध्वलोकः कियन्तं भागं स्पृशति ? किञ्चिन्न्यूनमर्धं भागं स्पृशति। धर्मास्तिकायेन सार्द्धं रत्नप्रभायाः घनोदधेः अवकाशान्तरस्य च स्पर्शना। अनेन प्रकारेण सप्तपृथिवीनामपि स्पर्शना जम्बूद्वीपादयो द्वीपाः लवणसमुद्रादयः

काश में कितने वर्णादिक होते हैं ऐसा प्रश्न। उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय आदिकों का प्रमाण और स्पर्शना तथा धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ऐसा प्रश्न, लोकपरिमित है ऐसा उत्तर एवं लोकाकाश और अस्तिकायादिकों में भी प्रश्नोत्तर समझना। अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ?। यह प्रश्न। कुछ अधिक आधे भाग को स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? ऐसा प्रश्न। असंख्यात भाग का स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। उर्ध्वलोक कितने भाग का स्पर्श करता है ? ऐसा प्रश्न-कुछकम आधे भागका स्पर्श करता है, ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय के साथ रत्नप्रभा की, घनोदधि की, अवकाशान्तर की स्पर्शना इस प्रकार से सातों पृथिवियों की स्पर्शना कहना,

---

દેશરૂપ, અગુરુ લઘુરૂપ છે પ્રશ્ન-લોકાકાશમાં કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી

પ્રશ્ન-ધર્માસ્તિકાય આદિકોનું પ્રમાણ કેટલુ હોય છે ? સ્પર્શના તથા વિશાળતા કેટલી હોય છે ? ઉત્તર-ધર્માસ્તિકાય લોકપરિમિત છે

એજ પ્રમાણે લોકાકાશ અને અસ્તિકાયાદિકોના પણ પ્રશ્નોત્તરો સમજી લેવા

પ્રશ્ન . અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અર્ધા કરતા થોડા વધારે ભાગને સ્પર્શે છે.

પ્રશ્ન—તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અસંખ્યાત ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અર્ધાકરતા થોડા ઓછા ભાગને સ્પર્શે છે.

ધર્માસ્તિકાયની સાથે રત્નપ્રભાની, ઘનોદધિની, અવકાશાન્તરની સ્પર્શના એજ પ્રમાણે સાતે પૃથિવીઓની સ્પર્શનાનુ કથન, જંબૂદ્વીપાદિક દ્વીપોનું,

सौधर्मकल्पः यावत् ईषत् प्राग्भारा पृथिवी तथैव अधर्मास्तिकायः, एवं लोकाकाशोऽपि विज्ञेयः ॥

नवमोद्देशके क्षेत्रनिरूपणं कृतम्, तत् क्षेत्रम् अस्तिकायरूपम् । अतोऽस्तिकाय-निरूपणाय तथा द्वारगाथोक्ताऽस्तिकाय निरूपणाय च दशमोद्देशक माह, तस्येदमादिमं सूत्रम् ' कइ णं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—कइ णं भंते अत्थिकाया पण्णत्ता गोयमा ! पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे गोयमा ! अवण्णे अगंधे, अरसे अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए अवट्ठिए लोग दव्वे, से समासओ पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा दव्वओ, खेत्तओ कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओणं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे खेत्तओणं लोगपमाणमेत्ते कालओ न कयाइ वि न आसि, न कयाइ वि नत्थि जावणिच्चे, भावओ, अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे गुणओ गमण गुणे, अहम्मत्थिकाए, वि एव चेव नवर गुणओ ठाण गुणे, आगासत्थिकाए वि एव चेव नवर खेत्तओ

जम्बूद्वीपादिक द्वीप, लवणसमुद्रादि समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एवं लोकाकाश के विषय में भी जानना चाहिये ।

नववे उद्देशक में क्षेत्र का निरूपण किया वह क्षेत्र अस्तिकायरूप है, इसलिये अस्तिकाय के निरूपण के लिये तथा द्वारगाथोक्त अस्तिकाय के

જમ્બૂદ્વીપાદિક દ્વીપ, લવણસમુદ્રાદિ સમુદ્ર, સૌધર્મકલ્પથી ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તનું, અને એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય અને લોકાકાશનું વર્ણન સમજવું

નવમાં ઉદ્દેશકમાં ક્ષેત્રનિરૂપણ કર્યું તે ક્ષેત્ર અસ્તિકાય રૂપ છે, તેથી અસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરવા માટે તથા દ્વારગાથામાં કહેલા અસ્તિ

णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते, अणंते चेव जाव. गुणओ अवगाहणागुणे जीवत्थिकाएणं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे गोयमा! जाव अरूवी, जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे से समासए पंचविहे पण्णत्ते,तं जहा दव्वओ जावगुणओ, दव्वओ णं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं, खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसी जाव णिच्चे, भावओ-पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, गुणओ उवओगगुणो. पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे? गोयमा! पंचवण्णे पंचरसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूपी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे, से समासओ पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-दव्वओ, खेत्तओ कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं, दव्वाइं, खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते, कालओ न कयाइ न आसी जाव णिच्चे भावओ वण्णमंते गंधमंते फासमंते गुणओ गहणगुणे ॥ सू० १ ॥

छाया—कति खलु भदन्त! अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः, गौतम! पञ्च अस्तिकाया प्रज्ञप्ताः तद्यथा धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायः आकाशास्तिकायो जीवास्तिकायः

निरूपण के लिये इस दशवें उद्देशक का प्रारंभ किया गया है इसका आदिम सूत्र यह है—(कइण भंते!) इत्यादि।

सूत्रार्थ-(भंते!) हे भदन्त! (कइणं अत्थिकाया पण्णत्ता) अस्तिकाय कितने कहे गये हैं? (गोयमा!) हे गौतम! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये हैं। (तंजहा) जैसे- (धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थि-

---

કાયનું નિરૂપણ કરવા માટે આ દસમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરાયો છે. તેનું પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે-(कइ ण भंते!) ઇત્યાદિ--

સૂત્રાર્થ—(भंते,) હે ભદન્ત! (कइण अत्थिकाया पण्णत्ता?) અસ્તિકાય કેટલા કહ્યા છે. (गोयमा) હે ગૌતમ! (पंचअत्थिकाया पण्णत्ता)અસ્તિકાય પાંચ કહ્યા છે (तंजहा) તે પાંચના નામ આ પ્રમાણે છે-(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय

सहस्रारः सौधर्मकल्पः यावत् ईषत् प्राग्भारा पृथिवी तथैव अधर्मास्तिकायः, एव लोकाकाशोऽपि विज्ञेयः ॥

नवमोद्देशके क्षेत्रनिरूपणं कृतम्, तत् क्षेत्रम् अस्तिकायरूपम् । अतोऽस्तिकाय-निरूपणाय तथा द्वारगाथोक्तास्तिकाय निरूपणाय च दशमोद्देशकं प्राह, तस्येद मादिमं सूत्रम् ' कइ ण भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—कइ णं भंते अत्थिकाया पण्णत्ता गोयमा ! पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे गोयमा ! अवण्णे अगंधे, अरसे अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए अवट्ठिए लोग दव्वे, से समासओ पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा दव्वओ, खेत्तओ कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओणं धम्मत्थिकाए एके दव्वे खेत्तओणं लोगपमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसि, न कया वि नत्थि जावणिच्चे, भावओ, अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे गुणओ गमणगुणे, अहम्मत्थिकाए, वि एव चेव नवर गुणओ ठाण गुणे, आगासत्थिकाए वि एव चेव नवर खेत्तओ

जम्बूद्वीपादिक द्वीप, लवणसमुद्रादि समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एवं लोकाकाश के विषय में भी जानना चाहिये ।

नवमें उद्देशक में क्षेत्र का निरूपण किया वह क्षेत्र अस्तिकायरूप है, इसलिये अस्तिकाय के निरूपण के लिये तथा द्वारगाथोक्त अस्तिकाय के

જમ્બૂદ્વિપાદિક દ્વીપ, લવણસમુદ્રાદિ સમુદ્ર, સૌધર્મકલ્પ યાવત્ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય અને લોકાકાશનું પણ સમજવું

નવમાં ઉદ્દેશકમાં ક્ષેત્રનું નિરૂપણ કર્યું તે ક્ષેત્ર અસ્તિકાય રૂપ છે, તેથી અસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરવા માટે તથા દ્વારગાથામાં કહેલા અસ્તિ

'सासया भावा' शाश्वतौ भावौ 'अणाणुपुव्वी एसा रोहा' अनानुपूर्व्येषा रोह! हे रोह! लोकान्तश्च सप्तममवकाशान्तरं च, पूर्वमपि पश्चादपि। एतयोर्नियताऽऽनुपूर्वी नास्ति किन्तु आनुपूर्वीरहिते एते द्वे, पूर्वपश्चाद्रूपः क्रमो न भवतीति। सप्तममवकाशान्तरमिति सप्तमपृथिव्या अधोवर्त्ति आकाशमिति। 'एवं लोयंते य सत्तमे य तणुवाए' एवं लोकान्तश्च सप्तमश्च तनुवातः। 'एवं घणवाए' एवं घनवातः, 'घणोदही' घनोदधिः 'सत्तमा पुढवी' सप्तमी पृथिवी 'एवं लोयंते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहिं ठाणेहिं' एवं लोकान्त एकैकेन संयोजयितव्य एभिः वक्ष्यमाणगाथोक्तैश्चतुर्विंशतिसंख्यकैः स्थानैः 'तं जहा' तद्यथा-तदेव गाथाद्वयेन दर्शयति-'उवास' इत्यादि। 'उवास' इति अवकाशः, अत्र पदैकदेशे पदसमुदायग्र-

---

लोकान्त और सातवां अवकाशान्तर ये दोनों हैं। इनमें पहिले अमुक है और बाद में अमुक है ऐसा पूर्व पश्चात् क्रम नहीं है। (दो वि एए सासया भावा) ये दोनों ही शाश्वतभाव हैं। (अणाणुपुव्वी एसा रोहा! हे रोह! लोकान्त, और सातवां अवकाशान्तर ये दोनों पहिले भी हैं और बाद में भी है। इनमें नियत आनुपूर्वी नहीं है। किन्तु ये दोनों आनुपूर्वी से रहित हैं अतः इनमें पूर्वपश्चात् रूप क्रम नहीं है। सप्तम पृथ्वी के नीचे रहा हुआ जो आकाश है उसका नाम सप्तम अवकाशान्तर है। (एवं लोयते य सत्तमे य तणुवाए, एवं घणवाए, घणोदही, सत्तमा पुढवी, एवं लोयंते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहि ठाणेहिं) इसी तरहसे लोकान्त और सातवां तनुवात, तथा इसी तरहसे घनवात घनोदधि और सातवीं पृथिवी, इस तरह इन "उवासवाय०" इत्यादि दो गाथाओं में कहे हुए चोईस २४ स्थानों में से प्रत्येक स्थान के लोकान्त को जोड़ना चाहिये। गाथामें कहे हुए २४ स्थान ये हैं- (उवास)

લોકાન્ત અને સાતમુ અવકાશાન્તર બન્ને છે. તેમાં પહેલું અમુક અને પછી અમુક છે એવો પૂર્વાપરનો ક્રમ હોતો નથી "दो वि एए सासए भावे" એ બન્ને શાશ્વત ભાવ છે "अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" હે રોહ! લોકાન્ત અને સાતમું અવકાશાન્તર એ બન્ને પહેલાં પણ છે અને પછી પણ છે. તે બન્ને આનુપૂર્વીથી રહિત છે તેથી તેમાં પૂર્વાપરના ક્રમનો અભાવ છે સાતમી પૃથ્વીની નીચે રહેલા આકાશને સાતમું અવકાશાન્તર કહે છે "एवं लोयंते य सत्तमे य तणुवाए, एवं घणवाए, घणोदही, सत्तमा पुढवी, एवं लोयते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहि ठाणेहिं" એજ પ્રમાણે લોકાન્ત અને સાતમુ તનુવાત, તથા એજ રીતે ઘનવાત ઘનોદધિ અને સાતમી પૃથ્વી, તથા એવી જ રીતે આ ગાથામા કહેલાં ૨૪ સ્થાનોમાંના પ્રત્યેક સ્થાનની સાથે લોકાન્તને જોડીને આલાપકો બનાવવા જોઈએ ગાથમાં દર્શાવેલાં ૨૪ સ્થાનો આ પ્રમાણે છે-"उवास"

पुद्गलास्तिकायः, धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः गौतम ! अवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः अरूपी अजीवः शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतो धर्मास्तिकायः एकं द्रव्यम् । क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्नास्ति, यावत् नित्यः भावतोऽवर्णः अ-

---

काए) धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, जीवास्तिकाय ४, पुद्गलास्तिकाय ५ । (धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने रस हैं, और कितने स्पर्श हैं ? (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे अफासे) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय में वर्ण नहीं है, गंध नहीं है, रस नहीं है और स्पर्श नहीं है (अरूपी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) यह द्रव्य अरूपी है अजीव है, शाश्वत है, अवस्थित है लोक द्रव्य है (से समासओ पंचविहे (तंजहा) जैसे- (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, काल की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, भाव की अपेक्षा धर्मास्तिकाय और गुणकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है । (खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय

---

(૧) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય (धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे !) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયમાં કેટલા પ્રકારના વર્ણ હોય છે, કેટલા પ્રકારનો ગંધ હોય છે, કેટલા પ્રકારના રસ હોય છે અને કેટલાક પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे अरसे अफासे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયમાં વર્ણ નથી, ગંધ નથી, રસ નથી, સ્પર્શ નથી (अरूपी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) તે દ્રવ્ય અરૂપી છે અજીવ છે શાશ્વત છે અવસ્થિત છે, લોક દ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમા પાંચ પ્રકાર છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે (खेत्तओ णं लोगप्पमाण

न्धोऽरसोऽस्पर्शः गुणतो गमनगुणः, अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव. नवर, गुणतः स्थानगुणः आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव, नवरम् – क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायो लोकालोकप्रमाणमात्रः अनन्तश्चैव यावत् गुणतोऽवगाहनागुणः । जीवास्तिकायः खलु भदन्त कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! अवर्णो

लोकप्रमाण है । (कालओ न कयाइ नासी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) कालकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय पूर्वकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा भी नहीं है, वर्तमान काल में किसी भी समय नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यत् काल में किसी भी समय में नहीं होगा, ऐसा भी नहीं है, क्यों कि यावत् वह नित्य है (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावकी अपेक्षा धर्मास्किायवर्ण रहित, गंधरहित, रसरहित और स्पर्शरहित है । (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा धर्मास्तिकाय गमनमें सहायक गुणवाला है। (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है (नवरं गुणओ ठाणगुणे) परन्तु अधर्मास्तिकाय गुण की अपेक्षा स्थिति गुण वाला है । (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है । (नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोया लोयप्पमाणमेत्ते) परन्तु आकाशास्तिाकाय क्षेत्र की अपेक्षा लोकालोकप्रमाण है । (अणंते चेव) अनन्त है । (जाव गुणओ अवगाहणागुणे) यावत् आकाशास्तिकाय गुण की अपेक्षा अवगाहन

णमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय लोक प्रमाणु छे (कालओ न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) कालनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय भूतकालमां कोई पणु समये न हतु ओवु पणु नथी, वर्तमान कालमा कोई समये नथी ओवुं पणु शकय नथी, अने भविष्यकालमां पणु कोइ पणु समये तेनुं अस्तित्व नहीं होय ओवुं पणु नथी, कारणु के ते नित्य छे, (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय वर्णरहित, गधरहित, रस रहित अने स्पर्श रहित छे (गुणओ गमणगुणे) गुणनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय गमन गुणु वाणु छे (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय पणु ओवु ज छे (नवर गुणओ ठाणगुणे) परतु अधर्मास्तिकाय गुणनी अपेक्षाओ स्थिति गुणु वाणु छे (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय पणु ओवुं ज छे (नवरं खेत्तओ णं अगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाओ आकाशास्तिकाय लोकालोकप्रमाणु छे, (अणंते चेव) अनत छे, (जाव गुणओ अवगाहणा गुणे) अने गुणनी अपेक्षाओ अवगाहन गुणवाणु छे.

पुद्गलास्तिकायः, धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः ? गौतम ! अवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः अरूपी अजीवः शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतो धर्मास्तिकाय एकं द्रव्यम् । क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्नास्ति, यावत् नित्यः मावतोऽवर्णः अग

काय) धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, जीवास्तिकाय ४, पुद्गलास्तिकाय ५ । (धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने रस हैं, और कितने स्पर्श हैं ? (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे अफासे) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय में वर्ण नहीं है, गंध नहीं है, रस नहीं है और स्पर्श नहीं है (अरूपी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) यह द्रव्य अरूपी है अजीव है, शाश्वत है, अवस्थित है लोक द्रव्य है (से समासओ पंचविहे (तंजहा) जैसे- (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, काल की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, भाव की अपेक्षा धर्मास्तिकाय और गुणकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है । (खेत्तओ ण लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय

---

(२) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય (धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे कइगंधे, कइरसे, कइफासे ?) હે હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયમાં કેટલા પ્રકારના વર્ણ હોય છે, કેટલા પ્રકારનો ગંધ હોય છે, કેટલા પ્રકારના રસ હોય છે અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे अफासे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયમાં વર્ણ નથી, ગંધ નથી, રસ નથી, સ્પર્શ નથી (अरूपी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) તે દ્રવ્ય અરૂપી છે અજીવ છે, શાશ્વત છે અવસ્થિત છે, લોક દ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે. (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (दव्वओ ण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે (खेत्तओ ण लोगप्पमाण

न्योऽरसोऽस्पर्शः गुणतो गमनगुणः, अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव. नवरं, गुणतः स्थानगुणः आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव, नवरम् – क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायो लोकालोकप्रमाणमात्रः अनन्तश्चैव यावत् गुणतोऽवगाहनागुणः। जीवास्तिकायः खलु भदन्त कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! अवर्णो

लोकप्रमाण है। (कालओ न कयाइ नासी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) कालकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय पूर्वकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा भी नहीं है, वर्तमान काल में किसी भी समय नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यत् काल में किसी भी समय में नहीं होगा, ऐसा भी नहीं है, क्यों कि यावत् वह नित्य है (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावकी अपेक्षा धर्मास्किायवर्ण रहित, गंधरहित, रसरहित और स्पर्शरहित है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा धर्मास्निकाय गमनमें सहायक गुणवाला है। (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है (नवरं गुणओ ठाणगुणे) परन्तु अधर्मास्तिकाय गुण की अपेक्षा स्थिति गुण वाला है। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है। (नवरं खेत्तओ ण आगासत्थिकाए लोया लोयप्पमाणमेत्ते) परन्तु आकाशास्तिाकाय क्षेत्र की अपेक्षा लोकालोकप्रमाण है। (अणंते चेव) अनन्त है। (जाव गुणओ अवगाहणागुणे) यावत् आकाशास्तिकाय गुण की अपेक्षा अवगाहन

णमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय लोक प्रमाणु छे (कालओ न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) कालनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय भूतकालमां कोई पणु समये न हतु ओवु पणु नथी, वर्तमान कालमा कोई समये नथी ओवुं पणु शकय नथी, अने भविष्यकालमा पणु कोइ पणु समये तेनुं अस्तित्व नहीं होय ओवु पणु नथी, कारणु के ते नित्य छे, (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय वर्णरहित, गधरहित, रस रहित अने स्पर्श रहित छे. (गुणओ गमणगुणे) गुणनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय गमन गुणु वाणु छे (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) अधर्मा स्तिकाय पणु ओवु ज छे (नवर गुणओ ठाणगुणे) परतु अधर्मास्तिकाय गुणनी अपेक्षाओ स्थिति गुणु वाणु छे (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय पणु ओवु ज छे (नवरं खेत्तओ णं अगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाओ आकाशास्तिकाय लोकालोकप्रमाणु छे, (अणंते चेव) अनत छे, (जाव गुणओ अवगाहणा गुणे) अने गुणनी अपेक्षाओ अवगाहन गुणवाणुं छे.

यावद्रूपी जीव शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् । स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतो यावत्-गुणतः, द्रव्यतः खलु जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीव द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्यः भावतः पुनरवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः गुणतउपयोगगुण, पुद्गलास्तिकायः खलुअनन्ता

गुणवाला है। (जीवत्थिकाए णं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! जीवास्तिकाय कितने वर्णवाला है, कितने गंध वाला है, कितने रसवाला है और कितने स्पर्श वाला है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (अवण्णे जाव अरूवी) जीवास्तिकाय वर्णरहित है यावत् वह अरूपीद्रव्य है (जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) जीव है शाश्वत है, अवस्थित है, लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है। (तंजहा) जैसे (दव्वओ जाव गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय (दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय अनन्त जीवद्रव्यरूप है। (खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा जीवास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है। (कालओ ण कयाइ न आसी, जाव निच्चे) कालकी अपेक्षा जीवास्तिकाय भूतकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है। (भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा जी-

(जीवत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइ रसे, कइ फासे) हे भदन्त ! જીવાસ્તિકાયને કેટલા વર્ણ, કેટલો ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલાસ્પર્શ હોય છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (अवण्णा जाव अरूवी) જીવાસ્તિકાય વર્ણરહિતથી લઈને અરૂપી પર્યન્તના ગુણોવાળુ હોય છે (जीवे, सासए, अवट्ठिए लोगदव्वे) જીવાસ્તિકાય ચૈતન્યવાળુ, શાશ્વત, અવસ્થિત, લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારનું છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—" दव्वओ जाव गुणओ " દ્રવ્યની અપેક્ષાથી લઈને ગુણની અપેક્ષા પર્યન્તના તેના પાંચ પ્રકાર છે " दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं " દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અનંત જીવદ્રવ્યરૂપ છે " खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते " ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોક પરિમિત છે, " कालओ ण कयाइ ण आसी, जाव निच्चे " કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમય ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય હોવા સુધીનું કથન જીવાસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું " भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे " ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શરહિત

कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! पञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

वास्तिकाय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। (गुणओ उवओगगुणे) गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाला है। (पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय कितने वर्णवाला है ? कितने गंधवाला है ? कितने रसवाला है ? कितने स्पर्शवाला है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पंचवण्णे पंचरसे दुगधे अट्ठफासे रूवी अजीवे, सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णवाला है, पांच रसवाला है, दो गंधवाला है आठ स्पर्शवाला है रूपी है अजीव है शाश्वत है अवस्थित है और लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह पुद्गलास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा गया है। (तं जहा) जैसे (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप

छे " गुणओ उवओगगुणे" गुणनी अपेक्षाओ जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाळु, छे.

" पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे कइ फासे ! " हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय केटला वर्णु वाळु छे, केटला गंधवाळुं छे ? केटला रस वाळु छे ? अने केटला स्पर्शवाळुं छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (पंचवण्णे, पंच रसे, दुगधे, अट्ठफासे, रूवे अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णुवाळुं पांच रसवाळुं, बे गधवाळुं, आठ स्पर्शवाळुं, रूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित, अने लोकद्रव्य छे (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) ते पुद्गलास्तिकायना सक्षिप्तमां पाच प्रकार छे (तंजहा) ते प्रकारो आ प्रमाणे छे-(दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (२) क्षेत्रनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (३) कालनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (४) भावनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, अने (५) गुणनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय. (दव्वओ ण पोगलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्यनी

यावद्रूपी जीवः शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् । स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतो यावत्-गुणतः, द्रव्यतः खलु जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीव द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्यः भावतः पुनरवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः गुणतश्चोपयोगगुणः, पुद्गलास्तिकाय खलुभदन्त!

गुणवाला है । (जीवत्थिकाए णं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! जीवास्तिकाय कितने वर्णवाला है, कितने गंध वाला है, कितने रसवाला है और कितने स्पर्श वाला है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (अवण्णे जाव अरूवी) जीवास्तिकाय वर्णरहित है यावत् वह अरूपीद्रव्य है (जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) जीव है शाश्वत है, अवस्थित है, लोकद्रव्य है । (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है । (तंजहा) जैसे (दव्वओ जाव गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय (दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय अनन्त जीवद्रव्यरूप है । (खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा जीवास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है । (कालओ ण कयाइ न आसी, जाव निच्चे) कालकी अपेक्षा जीवास्तिकाय भूतकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है । (भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा जी-

---

(जीवत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइ रसे, कइ फासे) हे भदन्त ! જીवास्तिકાયને કેટલા વર્ણ, કેટલો ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલાસ્પર્શ હોય છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (अवण्णा जाव अरूवी) જીવાસ્તિકાય વર્ણરહિતથી લઈને અરૂપી પર્યન્તના ગુણોવાળુ હોય છે (जीवे, सासए, अवट्ठिए लोगदव्वे) જીવાસ્તિકાય ચૈતન્યવાળુ, શાશ્વત, અવસ્થિત, લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે સંક્ષેપમાં પાંચ પ્રકારનું છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—" दव्वओ जाव गुणओ " દ્રવ્યની અપેક્ષાએથી લઈને ગુણની અપેક્ષા પર્યન્તના તેના પાંચ પ્રકાર છે " दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं " દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અનન્ત જીવદ્રવ્યરૂપ છે " खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते " ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોક પરિમિત છે, ' कालओ ण कयाइ न आसी, जाव निच्चे " કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમય ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું કથન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું " भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे " ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શરહિત

कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! पञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

वास्तिकाय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। (गुणओ उवओगगुणे) गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाला है। (पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय कितने वर्णवाला है ? कितने गंधवाला है ? कितने रसवाला है ? कितने स्पर्शवाला है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पंचवण्णे पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे रूवी अजीवे, सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णवाला है, पांच रसवाला है, दो गंधवाला है आठ स्पर्शवाला है रूपी है अजीव है शाश्वत है अवस्थित है और लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह पुद्गलास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा गया है। (तं जहा) जैसे (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप

छे " गुणओ उवओगगुणे" गुणनी अपेक्षाओ जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाळु, छे.
" पोग्गलत्थिकाए ण भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कई रसे कइ फासे ! " हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय केटला वर्णु वाळुं छे, केटला गंधवाळु छे ? केटला रस वाळु छे ? अने केटला स्पर्शवाळुं छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (पंचवण्णे, पंच रसे, दुगधे, अट्ठफासे, रूवे अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णुवाळु पांच रसवाळुं, बे गंधवाळुं, आठ स्पर्शवाळुं, रूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित, अने लोकद्रव्य छे (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) ते पुद्गलास्तिकायना संक्षिप्तमां पांच प्रकार छे. (तंजहा) ते प्रकारो आ प्रमाणे छे-(दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (२) क्षेत्रनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (३) कालनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (४) भावनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, अने (५) गुणनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय. (दव्वओ ण [illegible] अणंताइं दव्वाइं) द्रव्यनी

टीका—"कइ णं भंते अत्थिकाया पण्णत्ता" कति खलु हे भदन्त ! अस्तिकाया प्रज्ञप्ताः ? कथिताः अस्तिकायानां किं स्वरूपम् कीदृशी च संख्येति एतत् भगवानाह-"गोयमा" इत्यादि । "गोयमा" हे गौतम ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" पञ्च अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः अस्तिकायशब्दस्यार्थस्त्वयम् । अस्तिकाय इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थः कायशब्दस्य च राशिः=समुदायः तथा च

है। (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है। (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्श वाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगुण वाला है ॥ सू० १ ॥

टीकार्थ—(कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! अस्तिकाय कितने कहे गये हैं ? अर्थात्-अस्तिकायों का क्या स्वरूप है और उनकी संख्या कितनी है ऐसा इस प्रश्न का भाव है। भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये है। अस्तिकाय शब्द का अर्थ इस प्रकार से है-(अस्तिकाय) में दो शब्द हैं-एक (अस्ति) और दूसरा (काय) अस्ति शब्दका अर्थ प्रदेश है और काय शब्द का अर्थ राशि है, इस

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યાત્મક છે, (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (कालओ ण कयाइ आसी जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યારથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળો છે (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળો છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—"कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता" હે ભદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે ? પ્રશ્નનો આશય એ છે કે અસ્તિકાયોનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "गोयमा" હે ગૌતમ ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" અસ્તિકાય પાંચ કહ્યાં છે "अस्तिकाय" શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-अस्ति+काय=अस्तिकाय अस्ति એટલે પ્રદેશ અને काय એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમુદાય) તેને

कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! पञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

वास्तिकाय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। (गुणओ उवओगगुणे) गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाला है। (पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय कितने वर्णवाला है ? कितने गंधवाला है ? कितने रसवाला है ? कितने स्पर्शवाला है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पंचवण्णे पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे रूवी अजीवे, सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णवाला है, पांच रसवाला है, दो गंधवाला है आठ स्पर्शवाला है रूपी है अजीव है शाश्वत है अवस्थित है और लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह पुद्गलास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा गया है। (तं जहा) जैसे (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप

छे "गुणओ उवओगगुणे" गुणनी अपेक्षाओ जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाळु, छे.

"पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कई रसे कइ फासे !" हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय केटला वर्णु वाळु छे, केटला गंधवाळुं छे ? केटला रस वाळुं छे ? अने केटला स्पर्शवाळुं छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (पंचवण्णे, पंच रसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूवे अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णुवाळुं पांच रसवाळु, बे गंधवाळुं, आठ स्पर्शवाळुं, रूपी, अजीव, शाश्वत, अवस्थित, अने लोकद्रव्य छे (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) ते पुद्गलास्तिकायना संक्षिप्तमा पांच प्रकार छे (तंजहा) ते प्रकारो आ प्रमाणे छे-(दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (२) क्षेत्रनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (३) कालनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, (४) भावनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय, अने (५) गुणनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय. (दव्वओ ण [illegible] अणंताइं दव्वाइं) द्रव्यनी

णात्-अवकाशान्तराणीति। एवमग्रेऽपि विशेषम्। अवकाशान्तराणि-पृथिव्या अधोवर्त्याकाशानि सप्त १। 'वाय' इति-वाताः-तनुवाताः सप्त २। 'घण' इति घनाः-घनवाताः सप्त ३। 'उदहि' इति उदधय-घनोदधयः सप्त ४। अवकाशान्तरादीनां सप्तसु पृथिवीषु प्रत्येकस्मिन्नेकैकमवगाहते सप्त भवन्ति। 'पुढवी' इति पृथिव्याः=नारकपृथिव्य सप्त ५। 'दीवा य' इति द्वीपाश्च जम्बूद्वीपादयोऽसंख्येया ६। 'सागरा' इति सागराः=लवणसमुद्रादयोऽसंख्येयाः ७। 'वासा' इति वर्षाणि=भरतादिक्षेत्राणि सप्त ८। 'नेरइयाई' नैरयिकादयश्चतुर्विंशतिदण्डकाः ९। 'अत्थिय' इति अस्तिकाया-धर्मास्तिकायादिकाः पञ्च १०। 'समया' इति समयाः=कालविभागाः ११। 'कम्माई' इति कर्माणि ज्ञानावरणीयादीन्यष्ट १२। 'छेस्साओ' लेश्याः कृष्णादय षट् १३। गा ॥१॥ 'दिट्ठी' इति दृष्टयः-मिथ्यादृष्टयादिकास्तिस्रः १४। 'दंसण' इति दर्शनानि चक्षुरादीनि चत्वारि १५। 'नाणा' ज्ञानानि-मतिश्रुतादीनि पञ्च १६। 'सण्णा' इति संज्ञाः=

અવકાશ પદ સે યહાં પર્યેકવેશ મેં પદસમુદાય કે ગ્રહણ કરને કે નિયમ સે અવકાશાન્તર કહના ચાહિએ। આગે ભી ઇસી તરહ સે જાનના ચાહિયે। યે અવકાશાન્તર સાતોં પૃથિવિયોંમેંસે એક૨ પૃથિવીકે નીચે રહને કે કારણ સાત હોતે હૈં, ક્યોં કિ સાતોં પૃથિવિયોંમેં જો પરસ્પરમેં અન્તરાલ હૈ વહી અવકાશાન્તર હૈ। વાત-તનુવાત૩, ઘન-ઘનવાત૩, ઉદધિ-ઘનોદધિ૩, નારકપૃથિવીયાં ૭, જંબૂદ્વીપ આદિ અસંખ્યાતદ્વીપ, લવણસમુદ્ર આદિ અસંખ્યાત સમુદ્ર, ભરત આદિ સાત ક્ષેત્ર, નૈરયિક આદિ ચોબીસ દણ્ડક, ધર્માસ્તિકાયાદિક પાંચ, અસ્તિકાય, સમય-કાલવિભાગ, જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મ, કૃષ્ણાદિક છ લેશ્યાએં, મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિક તીન દૃષ્ટિયાં, ચક્ષુર્દર્શનાદિક ચાર દર્શન, મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ જ્ઞાન, આહારસંજ્ઞા આદિ

અવકાશ પદ દ્વારા અહીં અવકાશાન્તર સમજવું જોઈએ. તે અવકાશાન્તર સાત હોવાનું કારણ કે સાતે પૃથ્વીઓની નીચે અવકાશાન્તર હોય છે સાતે પૃથ્વીઓમાં પરસ્પરની (એકબીજાની) વચ્ચે જે અન્તરાલ છે તેને જ અવકાશાન્તર કહે છે વાત-તનુવાત ૭ ઘન-ઘનવાત, ઉદધિ-ઘનોદધિ ૭ નારક પૃથ્વીઓ ૭, જંબૂદ્વીપ વગેરે અસંખ્યાત દ્વીપ લવણ સમુદ્ર વગેરે અસંખ્યાત સમુદ્ર ભરત વગેરે ૭, ક્ષેત્ર નૈરયિક વગેરે ૨૪ દંડક ધર્માસ્તિકાય વગેરે ૫ અસ્તિકાય સમય-કાલવિભાગ, જ્ઞાનાવરણીય વગેરે ૮ કર્મ, કૃષ્ણાદિ ૬ લેશ્યાઓ, મિથ્યાદૃષ્ટિ વગેરે ત્રણ દૃષ્ટિયાં ચક્ષુદર્શન વગેરે ૪ દર્શન, મતિજ્ઞાન વગેરે પાંચ જ્ઞાન, આહારસંજ્ઞા વગેરે ૪ સંજ્ઞાઓ ઔદારિક વગેરે

अस्तीनाम् प्रदेशानाम् कायाः राशयः इति अस्तिकायाः अथवा अस्तीति तिङन्त प्रतिरूपको निपातः भूतभविष्यद्वर्त्तमानेति कालत्रयवाचकः ततः अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशराशयः ते अस्तिकायाः। एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि। "तं जहा" तद् यथा "धम्मत्थिकाए" धर्मास्तिकायः "अधम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकायः "आगासत्थिकाए" आकाशास्तिकायः "जीवत्थिकाए" जीवास्तिकायः "पोग्गलात्थिकाए" पुद्गलास्तिकायः–इति, बहुषु अस्तिकायेषु प्रथमतः

तरह से प्रदेशों की जो राशि–समुदाय है वह अस्तिकाय है। अथवा–अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है। इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है। इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं–तात्पर्य कहने का यही है कि काय–शरीर के समान जो द्रव्य बहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं। अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है। ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतः ये अस्तिकायकहे गये हैं। (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं–(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इस प्रकार इन पांच अस्ति

છે તેનુ નામ અસ્તિકાય છે અથવા "अस्ति" એ તિઙન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાચ અસ્તિકાય કહ્યાં છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાય– શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે. અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમા જ હોય છે, તેથી તે પાંચે ને અસ્તિકાય કહેવામાં આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે "तंजहा" તે પાચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે–" धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए " (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય

टीका—"कइ णं भंते अत्थिकाया पण्णत्ता" कति खलु हे भदन्त ! अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः ? कथिताः अस्तिकायानां किं स्वरूपम् कीयती च सङ्ख्येति प्रश्नः भगवानाह-"गोयमा" इत्यादि । "गोयमा" हे गौतम ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" पञ्च अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः अस्तिकायशब्दस्यायमर्थस्तत्त्वम् । अस्तिकाय इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थः कायशब्दस्य च राशिः=समुदायः तथा च

है । (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है । (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्शवाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगुण वाला है ॥ सू० १ ॥

टीकार्थ—(कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! अस्तिकाय कितने कहे गये हैं ? अर्थात्-अस्तिकायों का क्या स्वरूप है और उनकी संख्या कितनी है ऐसा इस प्रश्न का भाव है । भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये हैं । अस्तिकाय शब्द का अर्थ इस प्रकार से है-(अस्तिकाय) में दो शब्द हैं-एक (अस्ति) और दूसरा (काय) अस्ति शब्दका अर्थ प्रदेश है और काय शब्द का अर्थ राशि है, इस

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (कालओ ण कयाइ आसी जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે, ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી યુક્ત છે (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—"कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता" હે ભદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે ? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્તિકાયોનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે 'गोयमा" હે ગૌતમ ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" અસ્તિકાય પાંચ કહ્યાં છે "अस्तिकाय" શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-अस्ति + काय= अस्तिकाय. अस्ति એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમુદાય) હોય

अस्तीनाम् प्रदेशानाम् कायाः राशयः इति अस्तिकायाः अथवा अस्तीति तिङन्त प्रतिरूपको निपातः भूतभविष्यद्वर्त्तमानेति कालत्रयवाचकः ततः अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशराशयः ते अस्तिकायाः। एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि। "तं जहा" तद् यथा "धम्मत्थिकाए" धर्मास्तिकायः "अधम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकायः "आगासत्थिकाए" आकाशास्तिकायः "जीवत्थिकाए" जीवास्तिकायः "पोग्गलत्थिकाए" पुद्गलास्तिकायः—इति, बहुषु अस्तिकायेषु प्रथमतः

तरह से प्रदेशों की जो राशि—समुदाय है वह अस्तिकाय है। अथवा—अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है। इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है। इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं-तात्पर्य कहने का यही है कि काय—शरीर के समान जो द्रव्य बहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं। अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है। ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतः ये अस्तिकायकहे गये हैं। (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं—(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इस प्रकार इन पांच अस्ति-

છે તેનુ નામ અસ્તિકાય છે અથવા "અસ્તિ" એ તિઙન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તવર્તમાનકાળમા છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાચ અસ્તિકાય કહ્યા છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે કાય- શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમા જ હોય છે, તેથી તે પાચે ને અસ્તિકાય કહેવામા આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે "तंजहा" તે પાચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે—"धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए" (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય.

टीका—"कइ णं भंते अत्थिकाया पण्णत्ता" कति खलु हे भदन्त ! अस्ति कायाः प्रज्ञप्ताः ? कथिता. अस्तिकायानां किं स्वरूपम् कीदृशी च तत्संख्येति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । "गोयमा" हे गौतम ! 'पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" पञ्च अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः अस्तिकायशब्दोऽस्त्यर्थस्तथापि । अस्ति काय इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थे कायशब्दस्य च राशिरित्यनुयोगः तथा च

है। (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाइ न आसी आव णिच्चे) काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है। (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्श वाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगुण वाला है ॥ सू० १ ॥

टीकार्थ—(कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! अस्ति काय कितने कहे गये हैं ? अर्थात्-अस्तिकायों का क्या स्वरूप है और उनकी संख्या कितनी है ऐसा इस प्रश्न का भाव है। भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये है। अस्तिकाय शब्द का अर्थ इस प्रकार से है-(अस्तिकाय) में दो शब्द हैं-एक (अस्ति) और दूसरा (काय) अस्ति शब्दका अर्थ प्रदेश है और काय शब्द का अर्थ राशि है, इस

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (कालओ ण कयाइ आसी आव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી, એથી કરીને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી યુક્ત છે (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે ॥ સૂ ૧ ॥

ટીકાર્થ—"कइणं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता" હે ભદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે ? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્તિકાયોનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "गोयमा" હે ગૌતમ ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" અસ્તિકાય પાંચ કહ્યા છે. "અસ્તિકાય" શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—અસ્તિ + કાય=અસ્તિકાય અસ્તિ એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમૂહ) હોય

अस्तीनाम् प्रदेशानाम् काया राशयः इति अस्तिकायाः अथवा अस्तीति तिङन्त प्रतिरूपको निपातः भूतभविष्यद्वर्त्तमानेति कालत्रयवाचकः ततः अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये काया प्रदेशराशयः ते अस्तिकायाः। एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि। "तं जहा" तद् यथा "धम्मत्थिकाए" धर्मास्तिकायः "अधम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकायः "आगासत्थिकाए" आकाशास्तिकायः "जीवत्थिकाए" जीवास्तिकायः "पोग्गलत्थिकाए" पुद्गलास्तिकायः—इति, बहुषु अस्तिकायेषु प्रथमतः

तरह से प्रदेशों की जो राशि-समुदाय है वह अस्तिकाय है। अथवा-अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है। इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है। इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं-तात्पर्य कहने का यही है कि काय-शरीर के समान जो द्रव्य बहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं। अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है। ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतः ये अस्तिकायकहे गये हैं। (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं-(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इस प्रकार इन पांच अस्ति

છે તેનું નામ અસ્તિકાય છે. અથવા "અસ્તિ" એ તિઙન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાંચ અસ્તિકાય કહ્યાં છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાય- શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે. અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમાં જ હોય છે, તેથી તે પાંચે ને અસ્તિકાય કહેવામા આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે "तंजहा" તે પાંચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે-"धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए" (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય.

धर्मास्तिकायस्यैव निर्वचनं कृतम् तत्रायं हेतुः धर्मशब्दः सुखादिमङ्गलस्यार्थं प्रयोजनकत्वेन मङ्गलरूपोऽतः धर्मास्तिकायस्य प्रथमं निर्देशः तदनन्तरम् धर्मास्तिकायविरोधित्वात् अधर्मास्तिकायस्य कथनं कृतम् । तदनन्तरम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोराधारभूतत्वात् आकाशास्तिकायस्य कथनं कृतम् तत्साधर्म्यात्तदनन्तरत्वसाधर्म्यात् जीवास्तिकायस्य कथनम् ततो जीवोपष्टंभकत्वात् पुद्गलास्तिकायस्य कथनमिति "धम्मत्थिकाएणं भंते" धर्मास्तिकायः खलु भदन्त! "कइ वण्णे" कतिवर्णवान् "कइ गंधे" कति गन्धवान् "कइ रसे" कतिरस

कायों में से सूत्रकार ने जो सर्वप्रथम धर्मास्तिकाय का निरूपण किया है उसका कारण यह है-धर्मशब्द सुखादिमङ्गलरूप अर्थ का प्रयोजक होने से मंगलरूप माना जाता है अतः सूत्रकार ने प्रथम धर्मास्तिकाय का निर्देश किया है। धर्मास्तिकाय से विपरीत स्वभाव वाला होने के कारण धर्मास्तिकाय के बाद अधर्मास्तिकाय का पाठ रखा है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का आधार भूत क्षेत्र आकाश है-अतः आकाशास्तिकाय का कथन इन दोनों के बाद किया गया है। अमूर्तत्व और अनन्तत्व के साधर्म्य को लेकर आकाशास्तिकाय के बाद जीवास्तिकाय का कथन किया है। जीव का उपष्टंभक (उपकारक) होने से जीवास्तिकाय के बाद पुद्गलास्तिकाय का कथन किया गया है। (धम्मत्थिकाए भंते!) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय (कइवण्णे) कितने वर्णों वाला है? (कइ गंधे) कितने गंध वाला है?, (कइ रसे) कितने रसोंवाला है? (कइफासे) कितने स्पर्शों वाला है? तात्पर्य यह कि हे भदन्त! कहिये

આ પછી અસ્તિકાયોમાંથી સૂત્રકારે સૌથી પહેલા ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે-ધર્મ શબ્દ સુખાદિ મંગલરૂપ અર્થનો પ્રયોજક હોવાથી મંગલરૂપ મનાય છે ધર્માસ્તિકાય કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળું અધર્માસ્તિકાય છે તેથી ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે અધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનું આધારરૂપ ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી સૂત્રકારે તે બન્નેનું નિરૂપણ કર્યા પછી આકાશાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે અમૂર્તત્વના અને અનન્તત્વનાસમાન ગુણને લીધે આકાશાસ્તિકાય પછી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પુદ્ગલાસ્તિકાયદ્વારા ઉપકાર હોવાથી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પ્રશ્ન- धम्मत्थिकाए भंते!" હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયને "कइवण्णे" કેટલા વર્ણ હોય છે? "कइगंधे" કેટલી ગંધ છે? "कइरसे" કેટલા રસ હોય છે, "कइफासे" અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે?

वान् " कतिफासे " कतिस्पर्शवान् । हे भगवन् ! धर्मास्तिकाये कति वर्णगन्ध रसस्पर्शाः भवन्तीति कथयेति भावः । भगवानाह–' गोयमा ' इत्यादि. ' गोयमा' हे गौतम ! 'अवण्णे अगंधे अरसे अफासे अरूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे' अवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः–अरूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् । तत्र अवर्णः नीलपीतादिपञ्चवर्णरहितः, तथा अगन्धः = सुरभिदुरभिगन्धरहितः, अरसः–तिक्तादिरसरहितः, अस्पर्शः–कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्च धर्मास्तिकायः, " अरूवे " अरूपी–आकाररहितः " अजीवे " अजीवः–जीवरहितः " सासए " शाश्वतः–द्रव्यतो नित्यः " अवट्ठिए " अवस्थितःप्रदेशैः " लोगदव्वे " लोक द्रव्यम् । लोकस्य पञ्चाऽस्तिकायरूपस्यांशभूतं द्रव्यमिति लोकद्रव्यम् " से समासओ पंचविहे पन्नत्ते" स धर्मास्तिकायः समासतः संक्षेपतः, पञ्चविधः–पञ्चप्रका-

---

धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श होते हैं। प्रभु ने इस पर यों कहा–(गोयमा!) हे गौतम। (अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) धर्मास्तिकाय नील पीत आदि पांचों वर्णों से रहित है सुरभिदुरभिगंध से रहित है, तिक्तादि पांच प्रकार के रसों से रहित है कर्कश आदि आठ प्रकार के स्पर्श से रहित है। इसका कोई रूप नहीं है। यह अजीव–चैतन्य गुण से रहित है। द्रव्य की अपेक्षा यह (सासए) शाश्वत है। अर्थात् द्रव्य नित्य है। (अवट्ठिए) अपने प्रदेशों से यह सदा एकसा रहता है–अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं–सो ये प्रदेश इसके कमती बढती नहीं होते हैं। (लोगदव्वे) पंचास्तिकायरूप लोक का यह द्रव्य अंशभूत है इसलिये इसे लोक द्रव्य कहा गया है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह धर्मास्तिकाय संक्षपसे पांच प्रकार का कहा

ઉત્તર—(अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાય લાલ, પીળો, વાદળી આદિ પાચ રંગોથી રહિત હોય છે, તે સુગધ અને દુર્ગંધથી રહિત છે તે ખાટો, ખારો, કડવો આદિ પાચ રસથી રહિત છે, તે કઠોર આદિ આઠ પ્રકારના સ્પર્શથી રહિત છે. તે અરૂપી છે, તે અજીવ (ચૈતન્ય રહિત) છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તે શાશ્વત (નિત્ય) છે. (अवट्ठिए) ધર્માસ્તિકાયના અનેક પ્રદેશો હોય છે તેના તે પ્રદેશોમા વધારો ઘટાડો થતો નથી, માટે તેને અવસ્થિત કહ્યો છે (लोगदव्वे) પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનુ તે અશભૂત દ્રવ્ય છે તેથી તેને લોકદ્રવ્ય કહેલ છે. (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમા પાંચ પ્રકાર છે.

धर्मास्तिकायस्यैव निरूपणे कारणम् तस्यादौ हेतुः धर्मशब्दः सुखादिमङ्गलरूपार्थ प्रयोजनकत्वेन मङ्गलरूपोऽतः धर्मास्तिकायस्य प्रथमं निर्देशः तदनन्तरम् धर्मास्तिकायविरोधित्वात् अधर्मास्तिकायस्य कथनं कृतम्। तदनन्तरम् धर्माधर्मास्तिकाययोराधारभूतत्वात् आकाशास्तिकायस्य कथनं कृतम् ततश्चामूर्तत्वाऽनन्तत्वसाधर्म्यात् जीवास्तिकायस्य कथनम् ततो जीवोपष्टम्भकत्वात् पुद्गलास्तिकायस्य कथनमिति "धम्मत्थिकाएणं भंते" धर्मास्तिकायः खलु भदन्त! "कति वण्णे" कतिवर्णयान् "कति गंधे" कति गन्धवान् "कति रसे" कतिरस-

---

कायों में से सूत्रकार ने जो सर्वप्रथम धर्मास्तिकाय का निरूपण किया है उसका कारण यह है-धर्मशब्द सुखादिमङ्गलरूप अर्थ का प्रयोजक होने से मंगलरूप माना जाता है अतः सूत्रकार ने प्रथम धर्मास्तिकाय का निर्देश किया है। धर्मास्तिकाय से विपरीत स्वभाव वाला होने के कारण धर्मास्तिकाय के बाद अधर्मास्तिकाय का पाठ रखा है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का आधार भूत क्षेत्र आकाश है-अतः आकाशास्तिकाय का कथन उन दोनों के बाद किया गया है। अमूर्तत्व और अनन्तत्व के साधर्म्य को लेकर आकाशास्तिकाय के बाद जीवास्तिकाय का कथन किया है। जीव का उपष्टंभक (उपकारक) होने से जीवास्तिकाय के बाद पुद्गलास्तिकाय का कथन किया गया है। (धम्मत्थिकाए भंते!) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय (कइवण्णे) कितने वर्णों वाला है? (कइ गंधे) कितने गंध वाला है?, (कइ रसे) कितने रसोंवाला है? (कइफासे) कितने स्पर्शों वाला है? तात्पर्य यह कि हे भदन्त! कहिये

આ પાંચે અસ્તિકાયોમાંથી સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે-ધર્મ શબ્દ સુખાદિ મંગલરૂપ અર્થનો પ્રયોજક હોવાથી મંગલરૂપ મનાય છે ધર્માસ્તિકાય કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળુ અધર્માસ્તિકાય છે તેથી ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે અધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનું આધારરૂપ ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી સૂત્રકારે તે બન્નેનું નિરૂપણ કર્યા પછી આકાશાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે અમૂર્તત્વના અને અનન્તત્વનાસમાન ગુણને લીધે આકાશાસ્તિકાય પછી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પુદ્ગલાસ્તિકાયદ્વારા જીવનો ઉપકાર હોવાથી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પ્રશ્ન- धम्मत्थिकाए भंते! " હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયને " कइवण्णे " કેટલા વર્ણ હોય છે? " कइगंधे " કેટલી ગંધ છે? " कइरसे " કેટલા રસ હોય છે, " कइफासे " અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે?

वान् " कतिफासे " कतिस्पर्शवान् । हे भगवन् ! धर्मास्तिकाये कति वर्णगन्ध रसस्पर्शाः भवन्तीति कथयेति भावः । भगवानाह–' गोयमा ' इत्यादि. ' गोयमा' हे गौतम ! 'अवण्णे अगंधे अरसे अफासे अरूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे' अवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः–अरूपी अजीव. शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् । तत्र अवर्णः नीलपीतादिपञ्चवर्णरहितः, तथा अगन्धः = सुरभिदुरभिगन्धरहितः, अरसः–तिक्तादिरसरहितः, अस्पर्शः–कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्च धर्मास्तिकायः, "अरूवे" अरूपी–आकाररहितः " अजीवे " अजीवः–जीवरहितः " सासए " शाश्वतः–द्रव्यतो नित्यः " अवट्ठिए " अवस्थितःप्रदेशैः " लोगदव्वे " लोक द्रव्यम् । लोकस्य पञ्चाऽस्तिकायरूपस्यांशभूतं द्रव्यमिति लोकद्रव्यम् " से समासओ पंचविहे पन्नत्ते" स धर्मास्तिकायः समासतः संक्षेपतः, पञ्चविधः–पञ्चप्रका-

---

धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श होते हैं। प्रभु ने इस पर यों कहा–(गोयमा!) हे गौतम। (अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) धर्मास्तिकाय नील पीत आदि पांचों वर्णों से रहित है सुरभिदुरभिगंध से रहित है, तिक्तादि पांच प्रकार के रसों से रहित है कर्कश आदि आठ प्रकार के स्पर्श से रहित है। इसका कोई रूप नहीं है। यह अजीव–चैतन्य गुण से रहित है। द्रव्य की अपेक्षा यह (सासए) शाश्वत है। अर्थात् द्रव्य नित्य है। (अवट्ठिए) अपने प्रदेशों से यह सदा एकसा रहता है–अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं–सो ये प्रदेश इसके कमती बढती नहीं होते हैं। (लोगदव्वे) पंचास्तिकायरूप लोक का यह द्रव्य अंशभूत है इसलिये इसे लोक द्रव्य कहा गया है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह धर्मास्तिकाय संक्षपसे पांच प्रकार का कहा

उत्तर—(अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાય લાલ, પીળો, વાદળી આદિ પાચ રંગોથી રહિત હોય છે, તે સુગંધ અને દુર્ગંધથી રહિત છે તે ખાટો, ખારો, કડવો આદિ પાચ રસથી રહિત છે, તે કઠોર આદિ આઠ પ્રકારના સ્પર્શથી રહિત છે. તે અરૂપી છે, તે અજીવ (ચૈતન્ય રહિત) છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તે શાશ્વત (નિત્ય) છે (अवट्ठिए) ધર્માસ્તિકાયના અનેક પ્રદેશો હોય છે તેના તે પ્રદેશોમા વધારો ઘટાડો થતો નથી, માટે તેને અવસ્થિત કહ્યો છે (लोगदव्वे) પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનું તે અશભૂત દ્રવ્ય છે. તેથી તેને લોકદ્રવ્ય કહેલ છે. (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમા પાંચ પ્રકાર છે.

रूपः प्रज्ञप्तः कथितः "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः "दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे" द्रव्यतः खलु धर्मास्तिकायः एकं द्रव्यम् । अयञ्च धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्वनेकः 'खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते" 'क्षेत्रतः खलु लोकप्रमाणमात्रम् लोकप्रमाण मात्रं यस्य स तथा लोकपरिमितप्रदेशविस्तृत इत्यर्थः 'कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीत् "न कयाइ नत्थि" न कदाचिद् नास्ति, "आव णिच्चे" यावन्नित्यः, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णिअए सासए अक्खए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से है-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है-तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना बड़ा लोकाकाश है उतना ही बड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयाविन आसी, न कयाइ नत्थि, आव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (२) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (३) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (४) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય. (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યને અનુલક્ષીને જો ધર્માસ્તિકાયનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય રૂપ છે અનેક દ્રવ્યરૂપ નથી. (खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે એટલે કે તે લોકના બરાબર જ પ્રમાણ છે તેનું કારણ એ જ છે કે તે લોકાકાશમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે-લોકાકાશનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં આ દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ ન હોય. (कालओ न कयाविन आसी, न कयाइ नत्थि आव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમયે તે (ધર્માસ્તિકાય) ન હતુ એવુ બન્યુ નથી વર્તમાન કાળમાં કોઈ પણ સમયે તે નથી એવું બનતુ નથી અને ભવિષ્યકાળમાં કોઈ પણ સમયે તેનું

आहारादिकाश्चतस्रः १७। 'सरीरा य' शरीराणि च-औदारिकादीनि पञ्च १८। 'जोग' इति योगाः-मनोवाक्कायरूपास्त्रयः १९। 'उवओगे' इति-उपयोगौ द्वौ साकारानाकाररूपौ २०। 'दव्व' इति द्रव्याणि-धर्मास्तिकायादीनि षट् २१। 'पएसा' प्रदेशा अनन्ताः २२। 'पज्जव' इति पर्यवाः-अनन्ताः २३। 'अद्धा' इति-अद्धा-अतीताऽनागतसर्वाद्धाभेदात्त्रिविधा २४। एतानि चतुर्विंशतिस्थानानि 'किं पुव्वि लोयंते' किं पूर्वं लोकान्तः, इत्येवंरूपेण पदेन संयोजितव्यानीति। सूत्राभिलापप्रकारश्चैत्थम्-तत्र-अवकाशान्तरालापकः सूत्र एव कथितः। तनुवातालापको यथा-" पुव्वि भंते लोयंते पच्छा सत्तमे तणुवाए, पुव्वि सत्तमे तणुवाए, पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य तणुवाए य पुव्विंपेते पच्छापेते दोवि एए सासया

चार संज्ञाएँ, औदारिक आदि पांच शरीर, मनोयोग, वचनयोग, काययोग ये तीन योग, साकार उपयोग अनाकार उपयोग ये दो उपयोग धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आदिक छ द्रव्य, अनन्तप्रदेश अनंत पर्यायें और अतीत, अनागत, सर्वाद्धाकाल। इन चोईस स्थानकोंका "किं पुव्वि लोयंते" इस पद के साथ संयोजित करना चाहियो यहां सूत्राभिलाप इस प्रकार होगा इसमें अवकाशान्तरालापक तो सूत्रमें ही कह दिया गया है। तनुवातका अलापक जैसे-" पुव्वि भंते! लोयंते पच्छा सत्तमे तणुवाते, पुव्वि सत्तमे तणुवाते पच्छा लोयंते? रोह! लोयंते य तणुवाए य, पुव्वि पेते पच्छापेते दुवे सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!) हे भदन्त! पहिले लोकान्त है और बादमें सातवां तनुवात है कि पहिले सातवां तनुवात है और पश्चात् लोकान्त है! उत्तर-हे रोहा दोनों हैं लोकान्त है और सातवां तनुवात है। ये दोनों पहले भी हैं और पीछे भी हैं, क्यों कि

પાંચ શરીર, મનોયોગ, વચનયોગ, અને કાયયોગ એ ત્રણ યોગ સાકારઉપયોગ અને અનાકાર ઉપયોગ, એ બે ઉપયોગ, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય વગેરે છ દ્રવ્ય, અનન્ત પ્રદેશ, અનન્ત પર્યાયો અને અતીત અનાગત, સર્વાદ્ધાકાળ ઉપરોક્ત ૨૪ સ્થાનોનું " किं पुव्वि लोयंते " લોકાન્તની સાથે સંયોજન કરવું જોઈએ, અહીં આ પ્રકારનો સૂત્રાભિલાપ થશે-અવકાશાન્તરનો આલાપક તો સૂત્રમા જ કહી દીધેલ છે તનુવાતનો આલાપક આ પ્રમાણે બનશે "पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा सत्तमे तणुवाए पुव्विं सत्तमे तणुवाए पच्छा लोयंते?" रोहा! लोयंते य तणुवाए य पुव्वि पेते पच्छा पेते दुवे सासया भावो, अणाणुपुव्वी एसा रोहा! હે ભગવન્! પહેલા લોકાન્ત અને પછી સાતમો તનુવાત છે, કે પહેલાં સાતમો તનુવાત અને પછી લોકાન્ત છે? ઉત્તર હે રોહ, લોકાન્ત અને સાતમો તનુવાત બન્ને છે તે બન્ને પહેલા પણ છે અને પછી પણ છે કારણ કે તે

रूपः प्रश्नः कथित "से नूणं" तत् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रत कालतो भावतो गुणतः "दव्वओ ण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे" द्रव्यतः खलु धर्मास्तिकाय एक द्रव्यम्। भवति धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्वनेक "खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते" "क्षेत्रत खलु लोकप्रमाणमात्रम् लोकप्रमाण मात्रा यस्य स तथा लोकपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थः "कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीद् "न कयाइनत्थि" न कदाचित् नास्ति, "जाव णिच्चे" यावन्नित्य, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविंसु भवइ भविस्सइ धुव णियए सासए अक्खए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से है-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है-तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना बड़ा लोक है उतना ही बड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयाविन आसी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (२) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (३) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (४) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય. (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યને અનુલક્ષીને જો ધર્માસ્તિકાયનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય રૂપ છે અનેક દ્રવ્યરૂપ નથી. (खेत्तओ ण लोगप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે એટલે કે તે લોકના જેટલું જ મોટું છે તેવું કહેવું જો છે કે તે લોકાકાશમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે-લોકાકાશનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં આ દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ ન હોય. (कालओ न कयाविन आसी, न कयाइ नत्थि जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમયે તે (ધર્માસ્તિકાય) ન હતુ એવુ ન બન્યુ નથી, વર્તમાન કાળમાં કોઈ પણ સમયે તે નથી એવું બનતુ નથી અને ભવિષ્યકાળમાં કોઈ પણ સમયે તેવું

अव्वए अवट्ठिए" न कदाचित् न भविष्यति अभवत् भवति भविष्यति तत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति। तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे' भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽस्पर्शः तत्र भावतः अत एव ध्रुवः नियत शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोव्यवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति। 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे" भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः धर्मास्तिकायः वर्णगन्धरसस्पर्शरहितो भवतीति। "गुणओ गमणगुणे" गुणतः

ऐसा होगा जिस में धर्मास्तिकाय नही रहेगा, तीनों कालों में इस द्रव्य का सद्भाव माना गया है। क्यों कि यह द्रव्य यावत् नित्य है यहां यावत्पद से (न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, धुवे णिइए सासए अक्खए अधुए अवट्ठिए) इस पाठ को ग्रहण किया गया है। यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय अवस्थित है। और नित्य है। त्रिकालवर्ती यह अस्तिकाय है। (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा यह धर्मास्तिकायरूप द्रव्य वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। रूपादिक गुण पुद्गल में ही पाये जाते हैं। पुद्गल के सिवाय अन्य द्रव्यों में नहीं। अतः धर्मास्तिकाय में इन गुणों का निषेध किया गया है क्यों कि यह द्रव्य अरूपी माना गया है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा यह द्रव्य गमनगुणवाला माना गया है। जिस प्रकार जल मत्स्यादिक

અસ્તિત્વ નહીં હોય એવુ બનવાનું નથી એટલે કે ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ કારણ કે તે દ્રવ્ય નિત્ય પર્યન્તના વિશેષણોવાળું છે અહીં (યાવત્) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–(ન ભવિસ્સઇ, ભવિંસુ, ભવઇ, ભવિસ્સઇ, ધુવે णिइए सासए, अक्खए अव्वए) તે ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવસ્થિત છે અને નિત્ય છે ધર્માસ્તિકાયનો ત્રણે કાળમા સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય રૂપ દ્રવ્ય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે. રૂપાદિક પુદ્ગલમા જ જોવામા આવે છે–પુદ્ગલ સિવાયના અન્ય દ્રવ્યમાં રૂપાદિક ગુણો હોતા નથી તેથી ધર્માસ્તિકાયમા તે ગુણોનો અભાવ બતાવવામાં આવ્યો છે. એટલે જ ધર્માસ્તિકાયને અરૂપી માનવામા આવ્યું છે,

(गुणओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયને ગમન ગુણવાળું

रूपः प्रकाश्यते कथितः "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः "दव्वओ ण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे" द्रव्यतः खलु धर्मास्तिकायः एकं द्रव्यम्। अयञ्च धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्वनेकः 'खेत्तओ ण लोगप्पमाणमेत्ते" 'क्षेत्रतः खलु लोकप्रमाणमात्रम् लोकप्रमाण मात्रा यस्य स तथा लोकपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थः 'कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीद् "न कयाइनत्थि" न कदाचित् नास्ति, "जाव णिच्चे" यावन्नित्यः, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णिअए सासए अक्खए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से हैं-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है-तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना बड़ा लोक है उतना ही बड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयाविन आसी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय, (२) क्षेत्रनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय, (३) कालनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय (४) भावनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय. (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्यने अनुलक्षीने जो धर्मास्तिकायनो विचार करवामां आवे तो ते धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप छे अनेक द्रव्यरूप नथी. (खेत्तओ ण लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाओ विचार करवामां आवे तो ते धर्मास्तिकाय क्षेत्र प्रमाणे छे एटले के ते लोकना जेटलुं ज मोटु छे तेनुं कारण एवे छे के ते लोकाकाशमां सर्वत्र व्याप्त छे-लोकाकाशनो कोई पण प्रदेश एवो नथी के जेमां आ द्रव्यनुं अस्तित्व न होय. (कालओ न कयाविन आसी, न कयाइ नत्थि जाव णिच्चे) कालनी अपेक्षाओ भूतकालमां कोई पण समये ते (धर्मास्तिकाय) न होतु एवु बन्युं नथी, वर्तमान कालमां कोई पण समये ते नथी एवु बन्युं नथी अने भविष्यकालमां कोई पण समये तेम

अव्वए अवट्ठिए" न कदाचित् न भविष्यति अभवत् भवति भविष्यति तत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति। तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे' भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽस्पर्शः तत्र भावतः अत एव ध्रुव. नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालत. धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति। 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे" भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः धर्मास्तिकायः वर्णगन्धरसस्पर्शरहितो भवतीति। "गुणओ गमणगुणे" गुणतः

ऐसा होगा जिस में धर्मास्तिकाय नही रहेगा, तीनों कालों में इस द्रव्य का सद्भाव माना गया है। क्यों कि यह द्रव्य यावत् नित्य है यहां यावत्पद से (न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, धुवे णिइए सासए अक्खए अधुए अवट्ठिए) इस पाठ को ग्रहण किया गया है। यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय अवस्थित है। और नित्य है। त्रिकालवर्ती यह अस्तिकाय है। (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा यह धर्मास्तिकायरूप द्रव्य वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। रूपादिक गुण पुद्गल में ही पाये जाते हैं। पुद्गल के सिवाय अन्य द्रव्यों में नहीं। अतः धर्मास्तिकाय में इन गुणों का निषेध किया गया है क्यों कि यह द्रव्य अरूपी माना गया है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा यह द्रव्य गमनगुणवाला माना गया है। जिस प्रकार जल मत्स्यादिक

અસ્તિત્વ નહીં હોય એવું બનવાનુ નથી એટલે કે ત્રણે કાળમા તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ કારણ કે તે દ્રવ્ય નિત્ય પર્યન્તના વિશેષણોવાળુ છે અહી (યાવત્) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-(ન ભવિસ્સઇ, ભવિંસુ, ભવઇ, ભવિસ્સઇ, ધુવે णिइए सासए, अक्खर अव्वए) તે ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવસ્થિત છે અને નિત્ય છે ધર્માસ્તિકાયનો ત્રણે કાળમાં સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય રૂપ દ્રવ્ય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે રૂપાદિક પુદ્ગલમા જ જોવામા આવે છે-પુદ્ગલ સિવાયના અન્ય દ્રવ્યમાં રૂપાદિક ગુણો હોતા નથી તેથી ધર્માસ્તિકાયમા તે ગુણોનો અભાવ બતાવવામાં આવ્યો છે. એટલે જ ધર્માસ્તિકાયને અરૂપી માનવામા આવ્યું છે,

(गुणओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયને ગમન ગુણવાળું

गमनगुणो भवति । गति परिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टंभकत्वात् । मत्स्यादि जलचरजीवानां जलमिव यथा जलादि द्रव्य मत्स्यादीनां गतौ उपकारक मयो जकतया भवति तद्वत् धर्मास्तिकायोऽपि जीवपुद्गलानां गतिपरिणतानां गतौ उपष्टंभकतया साहाय्यं सम्पादयन् मयोजको भवतीति भावः एव-असोके धर्मा स्तिकायाभावात् अलोके जीवादीनां गमनं न भवति किन्तु लोकाकाशपर्यन्तमेव एतेषां गतिर्भवतीति । " अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव " अधर्मास्तिकायोऽपि एव मेव यत्र रूपेण धर्मास्तिकायस्य द्रव्यक्षेत्रादिभेदेन स्वरूपस्य कथन कृतम् तेनैव रूपेण अधर्मास्तिकायस्याऽपि सर्वं ज्ञातव्यम् तथाहि द्रव्यतः एकद्रव्यम् क्षेत्रतो लोकप्रमाणं कालतस्त्रिकालवर्ती, शाश्वतो नित्यः भावतोऽवर्णः अगन्धः, अरसः, अस्पर्शः, तत् किम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ सर्वथा समानौ, नतु न सम

जलचर जीवों को चलने में उदासीन कारण होता है उसी प्रकार गतिपरिणत जीवपुद्गलों को चलने में यह द्रव्य सहायक होता है । इसी कारण अलोकाकाश में जीवादिकों की गति नहीं होती है । क्यों कि वहां पर इस द्रव्य का अभाव है । लोकाकाश के अन्ततक ही इस द्रव्य का सद्भाव है अतः वहीं तक जीवादिक द्रव्यों का गमन होता है । (अहम्मत्थिकाएवि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है । द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के भेद द्वारा जिस तरह से धर्मास्तिकाय का स्वरूप कथन किया गया है उसी तरह से अधर्मास्तिकाय के विषय में भी समस्त कथन जानना चाहिये द्रव्य की अपेक्षा अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है, क्षेत्र की अपेक्षा यह लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा यह त्रि-कालवर्ती है, शाश्वत है, नित्य है, भावकी अपेक्षा यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन चार गुणों से रहित है ।

કહ્યું છે, જેવી રીતે મત્સ્યાદિક જલચર જીવોને ચાલવામાં જળ ઉદાસીનરૂપે સહાયરૂપ બને છે, જેમ પ્રમાણે ગતિપરિણત જીવાદિકોની ગતિ થતી નથી, ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે, લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેથી ત્યાં સુધી જ જીવાદિક દ્રવ્યોનું ગમન થઈ શકે છે (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય પણ એવું જ છે, દ્રવ્ય, કાલ, ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનું જેવું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે, એવું જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનું પણ સમજવું દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણે કાળમાં તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત અને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–' नवरं गुणओ ठाणगुणे ' इति " नवरं गुणओ ठाणगुणे " नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम् । " आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे ? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથનથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણત: સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(नवरं गुणओ ठाणगुणे) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળું છે પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિની બાબતમાં (થોભવામાં) સહા-

गमनगुणो भवति । गति परिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टंभकत्वात् । मत्स्यादि जलचरजीवानां जलमिव यथा जलादि द्रव्यं मत्स्यादीनां गतौ उपकारकं प्रयोजकत्वेन भवति तद्वत् धर्मास्तिकायोऽपि जीवपुद्गलानां गतिपरिणतानां गतौ उपष्टंभकत्वेन साहाय्यं सम्पादयन् प्रयोजको भवतीति अतएव-अलोके धर्मास्तिकायाभावात् अलोके जीवादीनां गमनं न भवति किन्तु लोकाकाशपर्यन्तमेव एतेषां गतिर्भवतीति । " अहमत्थिकाय वि एवं चेव " अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव अनेन रूपेण धर्मास्तिकायस्य द्रव्यक्षेत्रादिभेदेन स्वरूपस्य कथनं कृतम् तेनैव रूपेण अधर्मास्तिकायस्याऽपि सर्वं ज्ञातव्यम् तथाहि द्रव्यत एकद्रव्यम् क्षेत्रतो लोकप्रमाणं कालतस्त्रिकालवर्ती, शाश्वतो नित्यो भावतोऽवर्णं अगन्धा, अरसो, अस्पर्शो, यत् किम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ सर्वथा समानौ, वस्तु न एक-

---

जलचर जीवों को चलने में उदासीन कारण होता है उसी प्रकार गतिपरिणत जीवपुद्गलों को चलने में यह द्रव्य सहायक होता है । इसी कारण अलोकाकाश में जीवादिकों की गति नहीं होती है । क्यों कि वहां पर इस द्रव्य का अभाव है । लोकाकाश के अन्ततक ही इस द्रव्य का सद्भाव है अतः वहीं तक जीवादिक द्रव्यों का गमन होता है । (अहमत्थिकायोवि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है । द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के भेद द्वारा जिस तरह से धर्मास्तिकाय का स्वरूप कथन किया गया है उसी तरह से अधर्मास्तिकाय के विषय में भी समस्त कथन जानना चाहिये द्रव्य की अपेक्षा अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है, क्षेत्र की अपेक्षा यह लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा यह त्रिकालवर्ती है, शाश्वत है, नित्य है, भावकी अपेक्षा यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन चार गुणों से रहित है ।

હતુ છે, જેવી રીતે મત્સ્યાદિ જલચર જીવોને જલાદિક સહાયક અને ઉદાસીનરૂપે બને છે, એજ પ્રમાણે ગતિપરિણત જીવાદિકોની ગતિ થતી નથી, કારણ કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિ ૫) છે તેથી ત્યાં સુધી જ જીવાદિક દ્રવ્યોનુ ગમન થઈ શકે છે, (અહમ્મત્થિકાએ વિ એવ ચેવ) અધર્માસ્તિકાય પણ એવુ જ છે, દ્રવ્ય, કાલ, ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનુ જેવુ સ્વરૂપ બતાવ્યુ છે, એવુ જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનુ પણ સમજવુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણે કાળમાં તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત અને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–' नवरं गुणओ ठाणगुणे ' इति " नवरं गुणओ ठाणगुणे " नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम् । " आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे ? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથનથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણતઃ સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(नवरं गुणओ ठाणगुणे) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળુ છે. પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિ[illegible]તમાં (થોભવામાં) સહા-

गमनगुणो भवति । गति परिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टम्भकत्वात् । मत्स्यादि जलचरजीवानां जलमिव यथा जलादि द्रव्य मत्स्यादीनां गतौ उपकारक मयोजकतया भवति तद्वत् धर्मास्तिकायोऽपि जीवपुद्गलानां गतिपरिणतानां गतौ उपष्टम्भकतया साहाय्य सम्पादयन् प्रयोजको भवतीति अतएव-अलोके धर्मास्तिकायाभावात् अलोके जीवादीनां गमन न भवति किन्तु लोकाकाशपर्यन्तमेव एतेषां गतिर्भवतीति । " अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव " अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव येन रूपेण धर्मास्तिकायस्य द्रव्यक्षेत्रादिभेदेन स्वरूपस्य कथन कृतम् तेनैव रूपेण अधर्मास्तिकायस्याऽपि सर्वं ज्ञातव्यम् तथाहि द्रव्यत एकद्रव्यम् क्षेत्रतो लोकप्रमाणं कालतस्त्रिकालवर्ती, शाश्वतो नित्यः भावतोऽवर्णः अगन्धः, अरसः, अस्पर्शः, तत् किम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ सर्वथा समानौ, तदु न किन्तु

जलचर जीवों को चलने में उदासीन कारण होता है उसी प्रकार गतिपरिणत जीवपुद्गलों को चलने में यह द्रव्य सहायक होता है । इसी कारण अलोकाकाश में जीवादिकों की गति नहीं होती है । क्यों कि यहां पर इस द्रव्य का अभाव है । लोकाकाश के अन्ततक ही इस द्रव्य का सद्भाव है अतः वहीं तक जीवादिक द्रव्यों का गमन होता है । (अहम्मत्थिकाएवि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है । द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के भेद द्वारा जिस तरह से धर्मास्तिकाय का स्वरूप कथन किया गया है उसी तरह से अधर्मास्तिकाय के विषय में भी समस्त कथन जानना चाहिये द्रव्य की अपेक्षा अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है, क्षेत्र की अपेक्षा यह लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा यह त्रिकालवर्ती है, शाश्वत है, नित्य है, भावकी अपेक्षा यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन चार गुणों से रहित है ।

કહ્યું છે, જેવી રીતે મત્સ્યાદિક જલચર જીવોને જલાદિક ઉદાસીનરૂપે આલંબનભૂત બને છે, જેમ પ્રયોજે ગતિપરિણત જીવાદિકોની ગતિ થતી નથી, કારણ કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે, લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેથી ત્યા સુધી જ જીવાદિક ગમન કર્યા કરે છે (अहम्मत्थिकाए वि एव चव) અધર્માસ્તિકાય પણ એવુ જ છે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનુ જેવુ સ્વરૂપ અતાવ્યુ છે, એવુ જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનુ પણ સમજવુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ તો કાળમાં તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત અને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શ થી રહિત હોય છે

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–' नवरं गुणओ ठाणगुणे ' इति " नवरं गुणओ ठाणगुणे " नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम् । " आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे ? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથનથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણતઃ સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(नवरं गुणओ ठाणगुणे) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળુ છે પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિની બાબતમાં (થોભવામાં) સહા-

माया अणाणुपुव्वी एसा रोहा।" एवं घनवातमारभ्य पर्यवपर्यन्ता एकविंशति रालापका स्वबुद्ध्या संयोजनीया इति। अद्धाविषये तु अतीतानागताद्धाविषयौ द्वावालापकौ विहेयौ। तथाहि-"पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अतीतद्धा, पुव्विं अतीतद्धा पच्छा लोयंते?, रोहा! लोयंते य अतीतद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते-दोवि एए सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा। अनागताद्धा विषये यथा-"पुव्विं भंते लोयंते पच्छा अणागयद्धा, पुव्विं अणागयद्धा पच्छा लोयंते? रोहा लोयंते य

ये दोनों शाश्वत भाव हैं। इस लिए हे रोह! इन दोनों में पूर्वपश्चात् भावरूपक्रम नहीं बनता है। इसी प्रकार से घनवात से लेकर पर्यव पर्यन्त २१ आलापक अपनी बुद्धि से संयोजित कर लेना चाहिये। अद्धाविषय में अतीत अनागत अद्धा विषयक दो आलापक जानना चाहिये। वे इस प्रकार से हैं-" पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अतीताद्धा, पुव्विं अतीताद्धा पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य अतीताद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते दुवे सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा। हे भदन्त! पहिले लोकान्त है, और बाद में अतीताद्धा है कि पहिले अतीताद्धा है और बाद में लोकान्त है? हे रोह! लोकान्त और अतीताद्धा ये दोनों हैं और ये दोनों पहिले भी हैं और पश्चात् भी हैं, क्योंकि ये दोनों शाश्वत भाव हैं। इनमें पूर्व पश्चात्क्रम नहीं है। " पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अणागयद्धा? पुव्विं अणागयद्धा पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य अणागयद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते दुवे सासया भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा।" हे भदन्त! पहिले लोकान्त है और पीछे अनागताद्धा है कि पहिले अनागताद्धा है और पीछे लोकान्त है? हे रोह!

બન્ને શાશ્વતભાવ છે તેથી હે રોહ! તેમનામા પૂર્વ અને પછીના ભાવરૂપ આનુપૂર્વીનો અભાવ છે એજ પ્રમાણે ઘનવાતથી લઈને પર્યવ સુધીના ૨૧ આલાપક બનાવી લેવા. અતીત, અનાગત અને અદ્ધા વિષયક બે આલાપકો આ પ્રમાણે બનશે "पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अतीतद्धा पुव्विं अतीताद्धा पच्छा लोयंते? रोहा लोयंते य अतीताद्धा य पुव्विं येते पच्छा येते दुवे सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" હે ભગવન્! પહેલા લોકાન્ત અને પછી અતીતાદ્ધા છે, કે પહેલા અતીતાદ્ધા અને ત્યારબાદ લોકાન્ત છે? હે રોહ! લોકાન્ત અને અતીતાદ્ધા બન્ને પહેલાં પણ છે અને પછી પણ છે માટે હે તે બન્ને શાશ્વતભાવ છે તેથી તેમનામાં પૂર્વાપર ભાવ ક્રમ (આનુપૂર્વી) ક્રમ નથી. "पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अणागयद्धा? पुव्विं अणागयद्धा पच्छा लोयंते?' 'रोहा! लोयंते य अणागयद्धा य पुव्विं येते पच्छा येते दुवे सासया भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" હે ભગવન્! પહેલા લોકાન્ત અને પછી અનાગતાદ્ધા છે, કે પહેલા અનાગતાદ્ધા

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–' नवरं गुणओ ठाणगुणे ' इति " नवरं गुणओ ठाणगुणे " नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम् । " आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे ? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથનથી તો એવુ લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામા આવતી નથી, જે પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમા સંપૂર્ણત: સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(नवर गुणओ ठाणगुणे) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળુ છે. પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળુ છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતાં જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિ બાબતમાં (થોભવામાં) સહા-

पि एवं चेव " आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव । यथैव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोः स्वरूपं तथा आकाशास्तिकायोऽपि ज्ञातव्यः पूर्वापेक्षयाऽऽकाशास्तिकायस्य वैलक्षण्यं द्योतयितुमाह-' नवरं खेत्तओ ' इत्यादि " नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते " नवरं क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायो लोकालोकप्रमाणमात्रः, पूर्वापेक्षया आकाशास्तिकायस्याऽयं भेदः यत् धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायौ लोकप्रमाणौ एव भवतः क्षेत्रतः, आकाशास्तिकायस्तु क्षेत्रतो लोकालोकप्रमाणकः लोकमलोकमनुभयमपि व्याप्नोति आकाशास्तिकाय इति । ' अणते चेव जाव ' अनन्तश्चैव यावत् । अत्र यावत्पदेन शाश्वतोऽवस्थित

પહોંચાના છે એજી પ્રકાર એનો પણ કાર્ય ઠહરને મેં સહાયતા પ્રદાન કરના હૈ। યહી ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાયમેં ભેદ હૈ। એક ગતિમેં કારણ હોતા હૈ ઔર દૂસરા સ્થિતિમેં કારણ હોતા હૈ। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) આકાશાસ્તિકાય ભી ઐસા હી હૈ—અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાયકા જૈસા સ્વરૂપ હૈ, ઉસી પ્રકારસે આકાશાસ્તિકાયકા ભી જાનના ચાહિયે। પરંતુ ઇસમેં જો વિશેષતા હૈ—વહ ઇસ પ્રકારસે હૈ—(नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આકાશાસ્તિકાય લોક ઔર અલોકપ્રમાણ હૈ। ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાય યે દોનોં દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકપ્રમાણ હી કહે ગયે હૈં તબ કિ આકાશાસ્તિકાય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકાલોકપ્રમાણ હોતા હૈ ઐસા કહા ગયા હૈ। યહ આકાશાસ્તિકાય લોક ઔર અલોક દોનોં મેં વ્યાપ્ત હૈ। ધર્માસ્તિ-

---

થક અને છે પરિણામને જેમ સમયને પરિણામમાં સહાયન થાય છે તેમ આ દ્રવ્ય પણ લોક અને પુદ્ગલોને પરિણામમાં સહાયરૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગતિમાં સહાયક બને છે એજ રીતે અધર્મ દ્રવ્ય પરિણામમાં સહાયક બને છે એક ગતિમાં સહાયક બને છે બીજી સ્થિતિમાં સહાયક બને છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય વચ્ચે અપેક્ષા ભેદ થાય છે

(आगासत्थिकाए वि एवं चेव) આકાશાસ્તિકાયનું સ્વરૂપ પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય જેવું જ છે (नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયની કરતાં આકાશાસ્તિકાયની આ વિશેષતા છે તે આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રગટ કરી છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક પ્રમાણ છે પરંતુ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક પ્રમાણ છે એટલે કે

त्रिकालवर्त्ती नित्य इत्यादीनां ग्रहणं भवतीति। 'गुणओ अवगाहणगुणे' गुणतोऽवगाहनगुण आकाशास्तिकायः जीवपुद्गलादीनामवकाशदाने कारणम्। आकाशास्तिकायः बदरादीनां वंशपात्रवत् यथा-धर्मास्तिकायस्य कार्यं गतिः अधर्मास्तिकायस्य कार्यं स्थितिस्तथा आकाशास्तिकायस्य कार्यम् अवकाशदायकत्वमेवेति भावः। "जीवत्थिकाए णं भंते" जीवास्तिकायः खलु भदन्त! "कति वण्णे कति गंधे कति रसे कति फासे" कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरस कतिस्पर्शः हे भगवन्! जीवास्तिकाये कति वर्णगन्धरसस्पर्शाः सन्तीति गौतमस्य प्रश्नः

काय और अधर्मास्तिकाय ऐसे नहीं हैं। वे तो सिर्फ लोक को ही व्याप्त किये हुए हैं। (अणंते चेव जाव) यह आकाशास्तिकाय यावत् अनन्त है यहां यावत् शब्द से (शाश्वत, अवस्थित, त्रिकालवर्ती नित्य) इत्यादि पदों को ग्रहण किया गया है। (गुणओ अवगाहणागुणे) गुण की अपेक्षा आकाशास्तिकाय अवगाहनागुणवाला है जैसे टोकरी बदर आदि फलों को अपने में स्थान देती है उसी प्रकार से आकाश, जीव और पुद्गल आदि द्रव्यों को अपने में ठहरने में मदद होता है। जिस प्रकार धर्मास्तिकाय का कार्य गति में मदद करना है और अधर्मास्तिकाय को कार्य स्थिति में मदद करना है उसी प्रकार से आकाशास्तिकाय का कार्य अवकाशदान देना है। अब जीव का स्वरूप कहते हैं-(जीवत्थिकाए णं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) गौतम प्रभु से पूछ रहे हैं कि हे भदन्त! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने

આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક બન્નેમા વ્યાપેલુ છે, પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય તો ફક્ત લોકોમા જ વ્યાપેલુ છે (अणंते चेव जाव) આકાશાસ્તિકાય શાશ્વત, અવસ્થિત, ત્રિકાલવર્તી, નિત્ય અને અનંત છે,

(गुणओ अवगाहणा गुणे) ગુણની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય અવગાહના ગુણ વાળું છે. જેવી રીતે ટોપલી બોર આદિ ફળોને પોતાની અંદર રહેવાને માટે આધાર આપે છે, એજ પ્રમાણે આકાશ જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્યોને પોતાની અંદર રહેવાને સ્થાન આપવામા મદદ રૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગતિમા મદદ કરે છે અને અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિમાં મદદ કરે છે. એવી રીતે આકાશાસ્તિકાયનુ કાર્ય અવકાશદાન દેવાનું છે,

હવે સૂત્રકાર જીવસ્તિકાયનું સ્વરૂપ બતાવે છે-

પ્રશ્ન—(जीवत्थिकाए ण भते! कइ वण्णे, कइ गधे कइ रसे, कइ फासे!) ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે- ભદન્ત! જીવાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા ગધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે!

वि एवं चेव" आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव । यथैव धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायश्च स्वरूपेण तथा आकाशास्तिकायोऽपि ज्ञातव्यः पूर्वापेक्षयाऽऽकाशास्तिकायस्य वैलक्षण्यं द्योतयितुमाह-'नवरं खेत्तओ' इत्यादि "नवरं खेत्रतः आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते" नवरं क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायः लोकालोकप्रमाणमात्रः, पूर्वापेक्षया आकाशास्तिकायस्याऽयं भेदः यत् धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायौ लोकप्रमाणौ एव भवतः क्षेत्रतः, आकाशास्तिकायस्तु क्षेत्रतो लोकालोकप्रमाणकः लोकमलोकद्वयमपि व्याप्नोति आकाशास्तिकाय इति । 'अगंते चेव जाव' अनन्तश्चैव यावत् । अथ यावत्पदेन यावदोऽस्ति-

---

पडुच्चाना है उसी प्रकार इसका भी कार्य ठहरने में सहायता प्रदान करना है। यही धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायमें भेद है। एक गतिमें कारण होता है और दूसरा स्थितिमें कारण होता है। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है-अर्थात् धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायका जैसा स्वरूप है, उसी प्रकारसे आकाशास्तिकायका भी जानना चाहिये। परंतु इसमें जो विशेषता है-वह इस प्रकारसे है-(नवरं खेत्तओ आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रकी अपेक्षा आकाशास्तिकाय लोक और अलोकप्रमाण है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय ये दोनों द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा लोकप्रमाण ही कहे गये हैं तब कि आकाशास्तिकाय क्षेत्र की अपेक्षा लोकालोकप्रमाण होता है ऐसा कहा गया है। यह आकाशास्तिकाय लोक और अलोक दोनों में व्याप्त है। धर्मास्ति-

---

પક્ષ અને છે પક્ષિઓને જેમ આકાશમાં સહાયન આપ છે તેમ આ દ્રવ્ય પણ જીવો અને પુદ્ગલોને ગતિવામાં સહાયરૂપ આપ છે એવી રીતે ધર્માસ્તિકાયમાં સહાયક અને છે એજ રીતે અધર્મ દ્રવ્ય સ્થિતિમાં સહાયક અને છે એક ગતિમાં સહાયક અને છે બીજી સ્થિતિમાં સહાયક અને છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય વચ્ચે ઉપરોક્ત એક એજ છે

(आगासत्थिकाए वि एवं चेव) આકાશાસ્તિકાયનું સ્વરૂપ પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય જેવું જ છે (नवरं खेत्तओ य आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય કરતાં આકાશાસ્તિકાયમાં શી વિશેષતા છે તે આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રગટ કરી છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક પ્રમાણ છે પરંતુ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક પ્રમાણ છે એટલે કે

त्रिकालवर्त्ती नित्य इत्यादीनां ग्रहणं भवतीति। 'गुणओ अवगाहणगुणे' गुणतोऽवगाहनगुण आकाशास्तिकायः जीवपुद्गलादीनामवकाशदाने कारणम्। आकाशास्तिकायः बदरादीनां वंशपात्रवत् यथा-धर्मास्तिकायस्य कार्यं गतिः, अधर्मास्तिकायस्य कार्यं स्थितिस्तथा आकाशास्तिकायस्य कार्यम् अवकाशदायकत्वमेवेति भावः। "जीवत्थिकाए णं भंते" जीवास्तिकायः खलु भदन्त! "कति वण्णे कति गंधे कति रसे कति फासे" कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः हे भगवन्! जीवास्तिकाये कति वर्णगन्धरसस्पर्शाः सन्तीति गौतमस्य प्रश्नः

काय और अधर्मास्तिकाय ऐसे नहीं हैं। वे तो सिर्फ लोक को ही व्याप्त किये हुए हैं। (अणंते चेव जाव) यह आकाशास्तिकाय यावत् अनन्त है यहां यावत् शब्द से (शाश्वत, अवस्थित, त्रिकालवर्ती नित्य) इत्यादि पदों को ग्रहण किया गया है। (गुणओ अवगाहणागुणे) गुण की अपेक्षा आकाशास्तिकाय अवगाहनागुणवाला है जैसे टोकरी बदर आदि फलों को अपने में स्थान देती है उसी प्रकार से आकाश, जीव और पुद्गल आदि द्रव्यों को अपने में ठहरने में मदद होता है। जिस प्रकार धर्मास्तिकाय का कार्य गति में मदद करना है और अधर्मास्तिकाय का कार्य स्थिति में मदद करना है उसी प्रकार से आकाशास्तिकाय का कार्य अवकाशदान देना है। अब जीव का स्वरूप कहते हैं-(जीवत्थिकाए णं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) गौतम प्रभु से पूछ रहे हैं कि हे भदन्त! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने

આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક બન્નેમા વ્યાપેલું છે, પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય તો ફક્ત લોકોમા જ વ્યાપેલુ છે (अणंते चेव जाव) આકાશાસ્તિકાય શાશ્વત, અવસ્થિત, ત્રિકાલવર્તી, નિત્ય અને અનંત છે.

(गुणओ अवगाहणा गुणे) ગુણની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય અવગાહના ગુણ વાળુ છે. જેવી રીતે ટોપલી બોર આદિ ફળોને પોતાની અંદર રહેવાને માટે આધાર આપે છે, એજ પ્રમાણે આકાશ જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્યોને પોતાની અદર રહેવાને સ્થાન આપવામાં મદદ રૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગતિમાં મદદ કરે છે અને અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિમાં મદદ કરે છે. એવી રીતે આકાશાસ્તિકાયનુ કાર્ય અવકાશદાન દેવાનું છે,

હવે સૂત્રકાર જીવસ્તિકાયનું સ્વરૂપ બતાવે છે-

પ્રશ્ન—(जीवत्थिकाए ण भंते! कइ वण्णे, कई गंधे कई रसे, कइ फासे!) ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે- ભદન્ત! જીવાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે!

भगवानाह—'गोयमा' इत्यादिना "गोयमा" हे गौतम ! "अवण्णे-जाव अरूवी जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे" अवर्णो यावत् अरूपी जीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् । इह यावत्पदेन अगन्धोऽरसोऽस्पर्श इत्येषां ग्रहणम् "जीवे सासए" द्रव्यतो जीव-चेतनावान्-शाश्वत "अवट्ठिए" अवस्थितः पर्यायतः लोकस्य पञ्चास्तिकायात्मकस्यांशभूत द्रव्यमिति लोकद्रव्यम् । "से समासओ पंचविहे पण्णत्ते" स समासतः संक्षेपेण स इति जीवास्तिकायः पञ्चविधः पञ्च प्रकारक प्रज्ञप्तः कथितो जीव इति, पञ्चविधत्वमेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि, "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ जाव गुणओ" द्रव्यतो यावत् गुणतः अत्र यावत्पदेन क्षेत्रकालभावानां ग्रहणं भवति, तत्र खलु "दव्वओ णं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं" द्रव्यत खलु जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीवद्रव्याणि द्रव्या-

---

इस हैं और कितने रूपी हैं ? तब भगवान् गौतम से कहते हैं कि हे गौतम ! (अवण्णो जाव अरूवी जीवे सासए, लोगदव्वे) जीवास्तिकाय वर्ण रूप रस आदि पौद्गलिक गुणों से सर्वथा रहित है। यह अरूपी है, शाश्वत है, अवस्थित है, लोकद्रव्यरूप है। यहां यावत् पद से (अगंध, अरस और अस्पर्श) इनका ग्रहण किया गया है। द्रव्य की अपेक्षा जीव चेतनावाला है, शाश्वत है और अवस्थित है। पर्याय की अपेक्षा पंचास्तिकायरूप लोक का अंशभूत द्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह जीवास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है—(दव्वओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय यहां यावत् पदसे (क्षेत्र, काल और भाव) इन तीन का ग्रहण किया गया है। (तत्थ दव्वओणं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं)

મહાવીર પ્રભુ જવાબ આપે છે—(गोयमा ! अवण्णे जाव अरूवी जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) જીવાસ્તિકાય રૂપ, રસ, સ્પર્શ વગેરે પૌદ્ગલિક ગુણોથી બિલકુલ રહિત હોય છે તે અરૂપી છે શાશ્વત છે અવસ્થિત છે અને લોકદ્રવ્ય રૂપ છે અહીં (जाव) (यावत्) અગંધ, અરસ અને અસ્પર્શ એ ત્રિપદોનો સંગ્રહ થયો છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ ચેતનાવાળો, શાશ્વત અને અવસ્થિત છે પર્યાયની અપેક્ષાએ પંચાસ્તિકાયરૂપ લોકના અંશભૂત દ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે જીવાસ્તિકાયના સંક્ષેપમાં નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ છે—(दव्वओ जाव गुणओ) (१) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (२) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (३) કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (४) ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અને (५) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય (तत्थ दव्वओ णं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं)

पेक्षया जीवा अनन्ताः सन्तीत्यर्थः "खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते" क्षेत्रतो लोकप्रमाण मात्रः यावदेव लोकस्य प्रमाणं तावदेव जीवास्तिकायस्यापीत्यर्थः। "कालओ न कयाइ नासी जाव निच्चे" कालतो न कदाचित्-नासीत् यावत् नित्यः अत्र यावत्पदेन न कदाचित् नास्ति न कदाचित् न भविष्यति अपि तु आसीत् अस्ति भविष्यति ध्रुवः नियतः, शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येतेषां ग्रहणं भवति, कालापेक्षया नित्यः खलु जीवः त्रिकाले विद्यमानत्वात् पर्यायतोऽनित्यत्वेऽपि द्रव्यतः सदैवाऽवस्थानात्। "भावओ पुण अवण्णे अगंधे अरसे अफासे" भावतः

द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय अनन्त हैं। (खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा जीवास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र हैं—अर्थात् जितना लोक का प्रमाण है-उतना ही प्रमाण जीवास्तिकाय का है। "कालओ न कयावि नासी जाव निच्चे" कालकी अपेक्षा यह जीवास्तिकाय किसी समय नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है यहां यावत् पद 'न कदापि नास्ति, न कदापि न भविष्यति, अपि तु असीत् अस्ति, भविष्यति, ध्रुवः, नियतः, शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः, इन पदों का संग्राहक है। अर्थात्-पहिले कभी जीव नहीं था ये बात नहीं अपितु था ही, वर्तमान में नहीं है ये बात नहीं अपि तु है, भविष्यत्काल में जीव नहीं होगा ये बात नहीं किन्तु होगाही। त्रिकाल में जीव की सत्ता रहती है अतः वह काल की अपेक्षा नित्य है। यद्यपि पर्यायदृष्टि से जीव को अनित्य भी माना गया है-फिर भी द्रव्य की अपेक्षा से उस का अव-

અપેક્ષાએ અનંત છે. (खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોકપરિમિત છે એટલે કે જેટલું લોકનું પ્રમાણ છે એટલું જ પ્રમાણ જીવાસ્તિકાયનું છે (कालओ न कयाइ नासी जाव निच्चे) કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય કોઇ પણ સમયે ન હતું એવું નથી, તે તો નિત્ય છે. અહીં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-(न कदापि नास्ति, न कदापि न भविष्यति, अपितु आसीत्, अस्ति, भविष्यति, ध्रुव नियत शाश्वतो-ऽक्षयोऽव्यय योऽवस्थितिः) પહેલાં જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું બન્યું નથી- એટલે કે ભૂતકાળમા તે હતું વર્તમાનમાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું પણ બનતું નથી, એટલે કે વર્તમાનકાળમા પણ તેનુ અસ્તિત્વ છે જ ભવિષ્યમાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું પણ બનવાનુ નથી- ભવિષ્યમાં પણ તે હશે જ ત્રણે કાળમા જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ રહે છે, માટે જ કાળની અપેક્ષાએ તે નિત્ય છે. એ કે પર્યાયની અપેક્ષાએ જીવને અનિત્ય માનવામા આવેલ છે, પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તેનો સદ્ભાવ શાશ્વત રહેતો હોવાથી તેને નિત્ય માન-

जीवोऽवर्णः शुक्लनीलादि वर्णरहितः अगन्ध-सुरभिदुरभिगन्धरहितः अरसो मधुरादिरसवर्जितः अस्पर्शः कर्कशादयष्टविधस्पर्शरहितश्चेति । " गुणओ उवओगगुणे " गुणतः-उपयोगगुणः उपयोगश्चैतन्यम् तद् साकारानाकारभेदेन द्विविधम् तदेव चैतन्य गुण कार्यम् यस्य स उपयोगगुणः जीव यथा धर्मास्ति कायादीनां गत्यादिकं कार्यम् तथा जीवस्यापि चैतन्य कार्यं जीवस्य चैतन्यस्य वि कारणत्वम् भवतीति भाव । पञ्चास्तिकायान्तर्गतजीवास्तिकायान्त विविध

स्थान शाश्वत रहने के कारण यह नित्य भी माना गया है। " भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे " भाव की अपेक्षा जीवास्तिकाय में कोई भी वर्ण नहीं है, किसी भी प्रकार का गंध नहीं है, पांच प्रकार के रसों से यह सर्वथा रहित है। आठ प्रकार के स्पर्श में से कोई भी स्पर्श यहां पाया नहीं जाता है। " गुणओ उवओगगुणे " गुण की अपेक्षा यह उपयोग गुणवाला है। उपयोग नाम चैतन्य का है। शास्त्रों में ऐसा ही कहा है—(आत्मचैतन्यानुविधायीपरिणाम उपयोग) आत्मा का चैतन्यानुविधायी जो परिणाम है वह उपयोग है। यह उपयोग साकार और अनाकार के भेद से दो प्रकार का होता है। यह चैतन्यरूप उपयोग जिसका गुण-कार्य है वह उपयोग गुण है। यह उपयोग गुण जीव का है। जिस प्रकार से धर्मास्तिकायादि कों के कार्य गत्यादिक हैं उसी प्रकार से जीव का कार्य चैतन्य है। क्यों कि जीव में ही चैतन्यके प्रति कारणता है। इस प्रकार से पंचास्तिकाय के अन्तर्गत जीवास्तिकायान्त तक विवेचन करके अब सूत्रकार पुद्गलास्तिकाय

थामां आवे छे (भावओ पुण अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावनी अपेक्षाओ जीवास्तिकायमां कोई वर्ण नथी, ते प्रकारनी अंधमांनी कोई गंध नथी, पांच प्रकारना रसमांना कोई रस नथी अने आठ प्रकारना स्पर्शमांथी कोई पण स्पर्श नथी ते वर्ण, गंध, रस अने स्पर्शथी सर्वथा रहित छे (गुणओ उवओगगुणे) गुणनी अपेक्षाओ जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाळु छे. उपयोग कोटले चैतन्य शास्त्रोमा कहेलु छे के (आत्मचैतन्यानुविधायी परिणाम उपयोग) आत्मानु चैतन्यानुविधायी जे परिणाम होय छे तेनु नाम ज उपयोग छे ते उपयोगना साकार अने अनाकारभेदथी ते प्रकार पडे छे ते चैतन्य रूप उपयोग जेनो गुण (कार्य) छे, ते उपयोगगुण कहेवाय छे जेम जीवो आ उपयोगगुण होय छे तेम धर्मास्तिकायनु आपतु कार्य (गुण) अति छे,तेम जीवनो गुण-तेनु कार्य-चैतन्य छे आरण के जीवमां ज चैतन्यनो गुण होय छे

पुद्गलास्तिकायं निरूपयितुमाह—' पोग्गलत्थि ' इत्यादि, 'पोग्गलत्थिकाएणं भंते ' पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! " कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे " कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः अत्र वर्णादिपदं वर्णाश्रयपरकं तेन पुद्गलास्तिकायः कतिवर्णवान् कतिगन्धरसस्पर्शवांश्चेत्यर्थः भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि, " गोयमा " हे गौतम ! " पंच वण्णे " पञ्चवर्णः पञ्चवर्णवान् 'दुगंधे' द्विगन्धः द्विगन्धवान् " पंचरसे " पञ्चरसः पञ्चप्रकारकरसवान् " अट्ठफासे " अष्टस्पर्शवान् " रूवी " रूपी रूपवान् " अजीवे " अजीवः चेतनादि गुणरहितः

का निरूपण करने के लिये (पोग्गलत्थिकाएणं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइफासे) इस पाठ से कथनप्रारंभ करते हैं–हे भदन्त ! पुद्गलास्ति काय में कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श पाये जाते हैं ? यहां पर वर्णादिपदवर्णाश्रयपरक हैं–इससे पुद्गल कितने वर्णवाला है कितने गंध, रस और स्पर्शवाला है ऐसा इस पाठ का अर्थ करना चाहिये। उत्तर देते हुए भगवान् गौतम से कहते हैं कि–हे गौतम ! (पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, अट्ठफासे) पुद्गलास्तिकाय–पांच–वर्णवाला, दोगंधवाला, पांच रस वाला और आठ स्पर्शवाला है। ' रूवी ' इसी कारण वह रूपी कहा गया है। (अजीवे) जिसमें रूप रसादिक गुण पाये जाते हैं वह अजीव चेतना रहित होता है– इसलिये यह अजीव है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जो अजीव होगा वह नियमतः रूप रसादि वाला होगा क्यों कि इस प्रकार की मान्यता से धर्मास्तिकायादिकों में रूप रसादि–

આ રીતે પંચાસ્તિકાયોમાના જીવાસ્તિકાય સુધીના ચાર અસ્તિકાયોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરે છે

પ્રશ્ન–(पोग्गलत्थिकाएणं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા પ્રકારના ગંધ કેટલા રસ, અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે–(गोयमा) હે ગૌતમ ! (पंच वण्णे, दुगंधे, पंच रसे, अट्ठफासे) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાચ વર્ણવાળુ, બે ગંધવાળુ, પાચ રસવાળુ અને આઠ સ્પર્શવાળું હોય છે. (रूवी) તે કારણે તેને " રૂપી " કહેલુ છે. " अजीवे " જેમાં રૂપ, રસ આદિ ગુણ રહેલા હોય છે તે અજીવચેતના રહિત હોય છે. આનું તાત્પર્ય એવું નથી કે જે અજીવ હશે તેનિ[illegible] રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હશે કરણ

जीवोऽवर्णः शुक्लनीलादि वर्णरहितः अगन्धः-सुरभिदुरभिगन्धरहितः अतो मधुरादिरसवर्जितः अस्पर्शः कर्कशादिअष्टविधस्पर्शरहितश्चेति। "गुणदो उवओगगुणे" गुणतः-उपयोगगुणः उपयोगश्चैतन्यम् तद् साकारनाकारभेदेन द्विविधम् तदेव चैतन्य गुणः कार्यम् यस्य स उपयोगगुणः जीव यथा धर्मेति कायादीनां गत्यादिकं कार्यम् तथा जीवस्याऽपि चैतन्य कार्यं जीवस्य चैतन्यमपि कारणत्वम् भवतीति भाव। पञ्चास्तिकायान्तर्गतजीवास्तिकायान्तं विशेष

स्थान शाश्वत रहने के कारण वह नित्य भी माना गया है। "भावदो पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे" भाव की अपेक्षा जीवास्तिकाय में कोई भी वर्ण नहीं है, किसी भी प्रकार का गंध नहीं है, पांच प्रकार के रसों से वह सर्वथा रहित है। आठ प्रकार के स्पर्श में से कोई भी स्पर्श वहां पाया नहीं जाता है। "गुणदो उवओगगुणे" गुण की अपेक्षा वह उपयोग गुणवाला है। उपयोग नाम चैतन्य का है। शास्त्रों में ऐसा ही कहा है—(आत्मचैतन्यानुविधायीपरिणाम उपयोग) आत्मा का चैतन्यानुविधायी जो परिणाम है वह उपयोग है। यह उपयोग साकार और अनाकार के भेद से दो प्रकार का होता है। यह चैतन्यरूप उपयोग जिसका गुण-कार्य है वह उपयोग गुण है। यह उपयोग गुण जीव का है। जिस प्रकार से धर्मास्तिकायादि द्रव्यों के कार्य गत्यादिक हैं उसी प्रकार से जीव का कार्य चैतन्य है। क्यों कि जीव में ही चैतन्यके प्रति कारणता है। इस प्रकार से पंचास्तिकाय के अन्तर्गत जीवास्तिकायान्त तक विवेचन करके अब सूत्रकार पुद्गलास्तिकाय

ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયમાં કોઈ વર્ણ નથી, બે પ્રકારની ગંધમાંની કોઈ ગંધ નથી, પાંચ પ્રકારના રસમાના કોઈ રસ નથી અને આઠ પ્રકારના સ્પર્શમાંથી કોઈ પણ સ્પર્શ નથી તે પણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી સર્વથા રહિત છે (गुणदो उवओगगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે. ઉપયોગ એટલે ચૈતન્ય. શાસ્ત્રોમાં એવુ કહ્યું છે કે (आत्मचैतन्यानुविधायी परिणाम उपयोगः) આત્માનુ ચૈતન્યાનુવિધાયી જે પરિણામ હોય છે તેનુ નામ જ ઉપયોગ છે તે ઉપયોગના સાકાર અને અનાકાર એવા બે પ્રકાર પડે છે તે ચૈતન્યરૂપ ઉપયોગ જેનેા ગુણ (કાર્ય) છે, તે ઉપયોગગુણ કહેવાય છે આત્મા આ ઉપયોગગુણ હોય છે જેમ ધર્માસ્તિકાયનુ કાર્યનુ કાર્ય (ગુણ) ગતિ છે, તેમ આનેા ગુણ-આનુ કાર્ય-ચૈતન્ય છે કારણ કે આત્મા જ ચૈતન્યનેા ગુણ હોય છે

अणागयद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते–दोवि एए सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!' सर्वाद्धालापकं तु सूत्रकार एवाह–'पुव्विं भंते' इत्यादि। 'पुव्विं भंते लोयंते पच्छा सव्वद्धा' इति पदेन सर्वोऽपि सूत्रालापकः संग्राह्यस्तथाहि–" पुव्विं भंते लोयंते पच्छा सव्वद्धा, पुव्विं सव्वद्धा पच्छा लोयंते ? रोहा ! लोयंते य सव्वद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते दोवि एए सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा " इति। अथालोकविषये माह–'जहा लोयतेणं' इत्यादि। 'जहा लोयतेणं संजोइया सव्वे-ठाणा एते अलोयंतेणवि संजोएयव्वा सव्वे " यथा लोकान्तेन संयोजितानि सर्वाणि स्थानानि एतानि एवमलोकान्तेनापि योजयितव्यानि सर्वाणि, येन प्रका-

लोकान्त और अनागताद्धा ये दोनों हैं और ये दोनों पहिले भी हैं और पश्चात् भी हैं, क्योंकि ये शाश्वत भाव हैं इसलिये इनमें पूर्व पश्चात् भाव नहीं है । सर्वाद्धालापक तो सूत्रकारने स्वयं ही (पुव्विं भंते ! लोयंते पच्छा सव्वद्धा) इस सूत्र द्वारा कह दिया है। इसी तरह से और भी समस्त सूत्रालापक संयोजित कर लेना चाहिये । जैसे–हे भदन्त ! पहिले लोकान्त है और बाद में सर्वाद्धा है कि पहले सर्वाद्धा है और बाद में लोकान्त है ? हे रोह ! लोकान्त और सर्वाद्धा ये दोनों पहिले भी हैं और बाद में भी हैं। इनमें पूर्वापर क्रम नहीं है। क्योंकि ये दोनों शाश्वत भाव है। (जहा लोयंतेणं संजोइया सव्वे ठाणा एते अलोयंतेणवि संजोएयव्वा सव्वे) जिस तरह लोकान्त के साथ इन समस्त स्थानों को संयोजित किया गया है उसी तरह से इन समस्त स्थानों को अलोकान्त के साथ भी संयोजित कर लेना चाहिये।

तात्पर्य कहने का यह है कि जिस प्रकार से लोकान्त के साथ एक एक स्थानको जोड़कर सूत्रालापक किया है उसी तरह से अलोकान्त के

અને પછી લોકાન્ત છે? હે રોહ! લોકાન્ત અને અનગતાદ્ધા બંને છે. અને તે બંને પહેલા પણ છે અને પછી પણ છે કારણ કે તે બંને શાશ્વતભાવ છે. તે કારણે તેમાં પૂર્વાપર ભાવ (આનુપૂર્વી) નથી સર્વાદ્ધા આલાપક તો સૂત્રકારે પોતે જ સૂત્ર દ્વારા કહ્યો છે–(પુવ્વિંભંતે! લોયતે પચ્છા સવ્વદ્ધા) હે પૂજ્ય! પહેલાં લોકાન્ત છે અને ત્યારબાદ સર્વાદ્ધા છે, કે પહેલા સર્વાદ્ધા અને ત્યાર પછી લોકાન્ત છે? હે રોહ! લોકાન્ત અને સર્વાદ્ધા, એ બન્ને પહેલા પણ છે અને પછી પણ છે. તે બન્ને શાશ્વત ભાવ હોવાથી તેમનામા પૂર્વાપર ક્રમ નથી.

(जहा लोयतेण संजोइया सव्वे ठाणा एते अलोयतेण वि संजोएयव्वा सव्वे) જેવી રીતે લોકાન્તની સાથે ઉપર મુજબના તમામ સ્થાનોનું સંયોજન કરવામાં આવ્યુ છે. એવી જ રીતે અલોકાન્તની સાથે પણ તે બધા સ્થાનોનું સંયોજન

"सासए" शाश्वतः कालत्रयवर्ती, "अवट्ठिए" अवस्थितो द्रव्यतः 'लोगदव्वे' लोकद्रव्यम्, 'से समासओ पंचविहे पण्णत्ते" स पुद्गलास्तिकायः समासतः संक्षेपतः पञ्चविध मज्ञप्तः "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यत क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः द्रव्यक्षेत्रकालभावगुणैः पञ्च विधः पुद्गलास्तिकायो भवतीत्यर्थः 'दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं'

कों के होने का प्रसंग प्राप्त होगा, अतः यही मानना चाहिये कि रूप रसादिवाला पदार्थ नियमतः अजीव होता है, पर जो अजीव होगा वह इन वाला हो भी और न भी हो। इस तरह यहां रूपी और अजीवत्व की विषम व्याप्ति ही बनती है समव्याप्ति नहीं। यह पुद्गलास्तिकाय भी अन्य अस्तिकायों की तरह (सासए) शाश्वत है कालत्रयवर्ती है। (अवट्ठिए) अवस्थित है। (लोगदव्वे) लोकद्रव्यरूप है। पुद्गलास्तिकाय में जो नित्यपना एवं अवस्थितपना कहा गया है वह द्रव्य की अपेक्षा ही कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह पुद्गलास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है (तंजहा) वे उसके पांच प्रकार ये हैं (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय और गुण की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं

કે એ પ્રકારની માન્યતાથી તો ધર્માસ્તિકાય આદિમાં પણ રૂપ, રસાદિક હોવાનું માનવું પડે. તો આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે સમજવું રૂપ, રસાદિવાળા પદાર્થો નિયમથી જ અજીવ હોય છે પણ જે અજીવ હોય તે રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હોય પણ ખરે અને રૂપ, રસાદિથી રહિત પણ હોય આ રીતે અહીં રૂપી અને અજીવત્વની વિષમ વ્યાપ્તિ જ બને છે-સમવ્યાપ્તિ બનતી નથી.

તે પુદ્ગલાસ્તિકાય પણ અન્ય અસ્તિકાયોની જેમ જ (સાસએ) શાશ્વત છે-ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે, (અવટ્ઠિએ) તે અવસ્થિત છે અને (લોગદવ્વે) લોકદ્રવ્ય રૂપ છે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં જે નિત્યતા અને અવસ્થિત પણું કહ્યું છે તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું

(से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર પડે છે (तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય.

पुद्गलास्तिकायं निरूपयितुमाह—' पोग्गलत्थि ' इत्यादि, ' पोग्गलत्थिकाएणं भंते ' पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! " कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे " कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः अत्र वर्णादिपदं वर्णाश्रयपरकं तेन पुद्गलास्तिकायः कतिवर्णवान् कतिगन्धरसस्पर्शवांश्चेत्यर्थः भगवानाह–' गोयमा ' इत्यादि, " गोयमा " हे गौतम ! " पंच वण्णे " पञ्चवर्णः पञ्चवर्णवान् 'दुगंधे' द्विगन्धः द्विगन्धवान् " पंचरसे " पञ्चरसः पञ्चप्रकारकरसवान् " अट्ठफासे " अष्टस्पर्शवान् " रूवी " रूपी रूपवान् " अजीवे " अजीवः चेतनादि गुणरहितः

का निरूपण करने के लिये (पोग्गलत्थिकाएणं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइफासे) इस पाठ से कथनप्रारंभ करते हैं–हे भदन्त ! पुद्गलास्ति काय में कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श पाये जाते हैं ? यहां पर वर्णादिपदवर्णाश्रयपरक हैं–इससे पुद्गल कितने वर्णवाला है कितने गंध, रस और स्पर्शवाला है ऐसा इस पाठ का अर्थ करना चाहिये। उत्तर देते हुए भगवान् गौतम से कहते हैं कि–हे गौतम ! (पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, अट्ठफासे) पुद्गलास्तिकाय–पांच–वर्णवाला, दोगंधवाला, पांच रस वाला और आठ स्पर्शवाला है। ' रूवी ' इसी कारण वह रूपी कहा गया है। (अजीवे) जिसमें रूप रसादिक गुण पाये जाते हैं वह अजीव चेतना रहित होता है– इसलिये यह अजीव है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जो अजीव होगा वह नियमतः रूप रसादि वाला होगा क्यों कि इस प्रकार की मान्यता से धर्मास्तिकायादिकों में रूप रसादि–

આ રીતે પંચાસ્તિકાયોમાના જીવાસ્તિકાય સુધીના ચાર અસ્તિકાયોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરે છે

પ્રશ્ન–(पोग्गलत्थिकाएणं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા પ્રકારના ગંધ કેટલા રસ, અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે–(गोयमा) હે ગૌતમ ! (पंच वण्णे, दुगंधे, पंच रसे, अट्ठफासे) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાચ વર્ણવાળું, બે ગધવાળું, પાચ રસવાળુ અને આઠ સ્પર્શવાળુ હોય છે. (रूवी) તે કારણે તેને ' રૂપી " કહેલુ છે " अजीवे " જેમા રૂપ, રસ આદિ ગુણ રહેલા હોય છે તે અજીવચેતના રહિત હોય છે. આનું તાત્પર્ય એવું નથી કે જે અજીવ હશે તે નિયમથી જ રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હશે કરણ

"सासए" शाश्वतः कालत्रयवर्त्ती, "अवट्ठिए" अवस्थितो द्रव्यतः 'लोयदव्वे' लोकद्रव्यम्, 'से समासओ पंचविहे पण्णत्ते" स पुद्गलास्तिकायः समासतः संक्षेपतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यत क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः द्रव्यक्षेत्रकालभावगुणैः पञ्चविधः पुद्गलास्तिकायो भवतीत्यर्थः 'दव्वओ ण पोग्गलत्थिकाए अणंता दव्वा'

कों के होने का प्रसंग प्राप्त होगा, अतः यही मानना चाहिये कि रूप रसादिवाला पदार्थ निरपवाद अजीव होता है, पर जो अजीव होता है इन वाला हो भी और न भी हो। इस तरह यहां रूपी और अजीवत्व की विषम व्याप्ति ही बनती है समव्याप्ति नहीं। यह पुद्गलास्तिकाय भी अन्य अस्तिकायों की तरह (सासए) शाश्वत है कालत्रयवर्ती है। (अवट्ठिए) अवस्थित है। (लोयदव्वे) लोकद्रव्यरूप है। पुद्गलास्तिकाय में जो नित्यपना एवं अवस्थितपना कहा गया है वह द्रव्य की अपेक्षा ही कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह पुद्गलास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है (तंजहा) वे उसके पांच प्रकार ये हैं (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय और गुण की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं

કે એ પ્રકારની માન્યતાથી તો ધર્માસ્તિકાય આદિમાં પણ રૂપ, રસાદિક હોવાનું માનવું પડે. તો આ કથનનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે સમજવું રૂપ, રસાદિવાળા પદાર્થો નિયમથી જ અજીવ હોય છે પણ જે અજીવ હોય તે રૂપ, રસાદિવાળા હોય પણ ખરા અને રૂપ, રસાદિથી રહિત પણ હોય. આ રીતે અહીં રૂપી અને અજીવપણાની વિષમ વ્યાપ્તિ જ સંભવે છે-સમવ્યાપ્તિ સંભવતી નથી.

તે પુદ્ગલાસ્તિકાય પણ અન્ય અસ્તિકાયોના જેવું જ (સાસય) શાશ્વત છે-ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે, (અવટ્ઠિય) તે અવસ્થિત છે અને (લોયદવ્વે) લોકદ્રવ્ય રૂપ છે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં જે નિત્યતા અને અવસ્થિતપણું કહ્યું છે તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું.

(से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર પડે છે (तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) (१) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય (२) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (३) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (४) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને (५) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય.

द्रव्यतः खलु पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि द्रव्यतोऽनन्तद्रव्यरूपत्वं पुद्गलास्तिकायस्येत्यर्थः। "खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते" क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः "कालओ न कयावि नासी जाव णिच्चे" कालतो न कदाऽपि नासीत्-यावन्नित्यः अत्र यावत्पदेन न कदापि 'न भवइ' न कदापि 'न भविस्सइ' किन्तु पूर्वमप्यासीत् इदानीमपि वर्त्तते अनागतेऽपि भविष्यति शाश्वतोऽव्ययोऽवस्थित इत्यादीनां ग्रहणं भवति। "भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते" भावतो वर्णवान् गंधरसस्पर्शवान् भावतः वर्णवान् गन्धवान् रसवान् स्पर्शवान् इत्यर्थः। "गुणओ गहणगुणे"

पोग्गत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनन्तद्रव्यरूप है। (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है। (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है। यहां यावत् पद से (न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णिइए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए) इस पाठ का संग्रह किया गया है। अर्थात् पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में नहीं था यह बात नहीं, था ही, वर्तमानकाल में नहीं है यह बात नहीं, है ही भविष्यत् कालमें नहीं होगा यह बात नहीं, होगा ही। (क्यों कि यह ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है, अक्षय है, अव्यय है, अवस्थित है) और नित्य है (भावओ वण्णमंते गंधरसफास मंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंध रस और स्पर्शवाला है। (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहण गुण

(दव्वओ ण पोग्गत्थिकाए अणंताइ दव्वाइं) द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप छे (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्त) क्षेत्रनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय लोकप्रमाणु छे (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) कालनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकायनुं अस्तित्व कोइ पणु कालो न होय एवु बन्यु नथी, कारणु के ते नित्य छे. अहीं जाव (पर्यन्त) पदथी नीचेनो सूत्रपाठ ग्रहणु करवानो छे-(न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, धुवे, णिइए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) एटले के पुद्गलास्तिकाय भूतकाळमां न हतुं एवुं बन्युं नथी वर्तमानमां नथी एवुं पणु बनतुं नथी अने भविष्यमां नहीं होय एवुं पणु बनवानुं नथी त्रणे कालमां तेनुं अस्तित्व होय छे ज, कारणु के ते ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित अने नित्य छे (भावओ वण्णमंते गंध, रस, फसमंते) भावनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय वर्णु, गंध, रस अने स्पर्शवाणु छे, (गुणओ गहणगुणे) गुणनी अपेक्षाओ

गुणतो ग्रहणगुण-गुणस्य कार्यस्य इत्यर्थः तया च ग्रहणं परस्परेण सम्बन्धनं जीवेन वा औदारिकादिभिः शरीरं प्रकारैरिति ॥ सू० १ ॥

अवतरणम्—धर्मास्तिकायादीनां स्वरूपं निरूप्य तदेकदेशे धर्मास्तिकायत्वमस्ति न वेत्यादि प्ररूपयितुमाह—"एगे भंते" इत्यादि ।

मूलम्-एगे भंते! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे एव दोण्णि वि, तिण्णि वि, चत्तारि वि, पच छ सत्त अट्ठ णव दस संखेज्जा असंखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एगपएसूणे वि य ण भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, णो इणट्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । से णूण गोयमा ! खंडे चक्के सगले चक्के ? भगव सयले चक्के नो खंडे चक्के, एव छत्ते, चम्मे, दंडे, इसे, आउहे भोयए, से तेणट्ठेण गोयमा ! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से किं

वाला है। गुण शब्द का अर्थ कार्य और ग्रहण शब्द का अर्थ आपस में संबंध होना है। इसका तात्पर्य यह है कि औदारिक आदि पुद्गलों के साथ जीवका संबंध है, अथवा जीव औदारिक आदि अनेक प्रकार के पुद्गलों को ग्रहण करता है यही पुद्गल का ग्रहण होना गुण है ॥सू० १॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળુ છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને ગ્રહણનો અર્થ આપસમા સબંધ હોવો એવો થાય છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ પુદ્ગલોની સાથે જીવનો સબંધ છે અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકારનાં પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુદ્ગલાસ્તિકાયનો ગ્રહણ ગુણ કહે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

द्रव्यतः खलु पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि द्रव्यतोऽनन्तद्रव्यरूपत्वं पुद्गलास्तिकायस्येत्यर्थः। "खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते" क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः "कालओ न कयावि नासी जाव णिच्चे" कालतो न कदाऽपि नासीत्-यावन्नित्यः अत्र यावत्पदेन न कदापि 'न भवइ' न कदापि 'न भविस्सइ' किन्तु पूर्वमप्यासीत् इदानीमपि वर्त्तते अनागतेऽपि भविष्यति शाश्वतोऽव्ययोऽवस्थित इत्यादीनां ग्रहणं भवति। "भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते" भावतो वर्णवान् गंधरसस्पर्शवान् भावतः वर्णवान् गन्धवान् रसवान् स्पर्शवान् इत्यर्थः। "गुणओ गहणगुणे"

पोग्गत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनन्तद्रव्यरूप है। (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है। (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है। यहां यावत् पद से (न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णिइए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए) इस पाठ का संग्रह किया गया है। अर्थात् पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में नहीं था यह बात नहीं, था ही, वर्तमानकाल में नहीं है यह बात नहीं, है ही भविष्यत् कालमें नहीं होगा यह बात नहीं, होगा ही। (क्यों कि यह ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है, अक्षय है, अव्यय है, अवस्थित है) और नित्य है (भावओ वण्णमंते गंधरसफास मंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंध रस और स्पर्शवाला है। (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहण गुण

(दव्वओ णं पोग्गत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप छे (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय लोकप्रमाण छे (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) कालनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकायनुं अस्तित्व कोइ पण काळे न होय एवुं बन्युं नथी, कारण के ते नित्य छे. अहीं जाव (पर्यन्त) पदथी नीचेनो सूत्रपाठ ग्रहण करवानो छे-(न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, धुवे, णिइए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) एटले के पुद्गलास्तिकाय भूतकाळमा न हतुं एवु बन्युं नथी वर्तमानमा नथी एवु पण बनतुं नथी अने भविष्यमां नहीं होय एवुं पण बनवानुं नथी त्रणे कालमा तेनुं अस्तित्व होय छे ज, कारण के ते ध्रुव, नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित अने नित्य छे. (भावओ वण्णमंते गंध, रस, फासमंते) भावनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय वर्ण, गंध, रस अने स्पर्शवाळु छे, (गुणओ गहणगुणे) गुणनी अपेक्षाओ

गुणतो ग्रहणगुण -गुणत कार्यत इत्यर्थः तथा च ग्रहण परस्परेण समवायेन वा औदारिकादिभिः शरीर प्रकारैरिति ॥ सू० १ ॥

अवतरणम्—धर्मास्तिकायादीनां स्वरूपं निरूप्य सदेकदेशे धर्मास्तिकायत्व मस्ति न वेत्यादि मरूपयन्नाह—"एगे भंते" इत्यादि ।

मूलम्-एगे भते! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया ? गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे एव दोण्णि वि, तिण्णि वि, चत्तारि वि, पच छ सत्त अट्ठ णव दससखेज्जा असखेज्जा भते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया ? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एगपएसूणे वि य ण भते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, णो इणट्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भते! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । से णूण गोयमा ! खडे चक्के सगले चक्के ? भगव सयले चक्के नो खडे चक्के, एव छत्ते, चम्मे, दडे, इत्ते, आउहे भोयए, से तेणट्ठेण गोयमा ! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से किं

वाला है। गुण शब्द का अर्थ कार्य और ग्रहण शब्द का अर्थ आपस में संबध होना है। इसका तात्पर्य यह है कि औदारिक आदि पुद्गलों के साथ जीवका सबध है, अथवा जीव औदारिक आदि अनेक प्रकार के पुद्गलों को ग्रहण करता है यही पुद्गल का ग्रहण होना गुण है॥सू०१॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય અવગાહગુણવાળુ છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને ગ્રહણનો અર્થ આપસમા સબધ હોવો, એવો ભાવ છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ પુદ્ગલોની સાથે જીવનો સબધ છે, અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકારના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુદ્ગલાસ્તિકાયનો ગ્રહણ ગુણ કહે છે ॥ સૂ ૧ ॥

खाइणं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा, ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । एवं अधम्मत्थिकाए वि । आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि, पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव, नवरं तिण्हंपि-पएसा अणंता भाणियव्वा सेसं तं चेव ॥ सू० २ ॥

छाया–एको भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! नायमर्थः समर्थः एवं द्वावपि त्रयोऽपि चत्वारोऽपि पञ्चषट् सप्त अष्ट नव दश–संख्या-

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकार के अस्तिकायों का स्वरूप निरूपण करके अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि धर्मास्तिकाय के एकदेश में धर्मास्तिकायता है या नहीं— (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) इत्यादि। (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! धर्मास्तिकायके एकप्रदेशको (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा कहाजा सकता है क्या ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है ।(एवं दोण्णि वि तिण्णि वि, चत्तारि वि, पंच, छ,सत्त,अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा,) इसी तरह से धर्मास्तिकाय के दो प्रदेश भी, तीन प्रदेश भी, चार प्रदेश भी, पांच प्रदेश भी, छह प्रदेश भी, सात प्रदेश भी आठ प्रदेश भी, नौ प्रदेश भी, दश प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहे जा

ધર્માસ્તિકાય આદિ પાંચ પ્રકારના અસ્તિકાયોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે બતાવે છે કે- ધર્માસ્તિકાયના એક દેશમાં ધર્માસ્તિકાયના હોય છે કે નહીં—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–(एगे भते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिए त्ति वत्तव्व सिया) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને અનુલક્ષીને, (આ ધર્માસ્તિકાય છે,) એવુ કહી શકાય ખરૂ ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ અર્થ બરાબર નથી–એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહી. (एवं दोण्णि वि, तिण्णिवि चत्तारि वि, पच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના બે ત્રણ, ચાર, પાચ, છ સાત, આઠ, નવ, દસ વગેરે પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં. ધર્માસ્તિકાયના

गुणतो ग्रहणगुण'-गुणत कार्यत इत्यर्थ तथा च ग्रहण परस्परेण सम्बन्धो जीवेन वा औदारिकादिभिः शरीर प्रकारैरिति ॥ सू० १ ॥

अथतरगम्—धर्मास्तिकायादीनां स्वरूप निरूप्य तदेकदेशे धर्मास्तिकायस्य अस्ति न वेत्यादि प्ररूपयन्नाह—"एगे भंते" इत्यादि ।

मूलम्-एगे भंते! धम्मत्थिकायपयसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया ? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एव दोण्णि वि, तिण्णि वि, चत्तारि वि, पच छ सत्त अट्ठ णव दस सखेज्जा असखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एगपएसूणे वि य ण भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, णो इणट्ठे समट्ठे। से केणट्ठेणं भंते! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से णूण गोयमा! खडे चक्के सगले चक्के! भगव सयले चक्के नो खडे चक्के, एव छत्ते, चम्मे, दडे, दूसे, आउहे भोयए, से तेणट्ठेण गोयमा! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से किं

वाला है। गुण शब्द का अर्थ कार्य और ग्रहण शब्द का अर्थ आपस में संबध होना है। इसका तात्पर्य यह है कि औदारिक आदि पुद्गलों के साथ जीवका संबध है, अथवा जीव औदारिक आदि अनेक प्रकार के पुद्गलों को ग्रहण करता है यही पुद्गल का ग्रहण होना गुण है॥सू०१॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય અવયવયુક્તપણાથી છે, પ્રદેશનો અર્થ ભાગ અને અવયવનો અર્થ વ્યાપકપણા રૂપ જોવો જોઈએ આમ છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે જીવાદિ અથવા પુદ્ગલોની સાથે જીવનો સંબંધ છે અથવા જીવ જીવાદિ અનેક પ્રકારના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુદ્ગલાસ્તિકાયનો ગ્રહણ ગુણ કહે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

खाइणं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा, ते सठवे कासिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । एवं अधम्मत्थिकाए वि । आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि, पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव, नवरं तिण्हंपि-पएसा अणंता भाणियव्वा सेसं तं चेव ॥ सू० २ ॥

छाया–एको भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! नायमर्थः समर्थः एवं द्वावपि त्रयोऽपि चत्वारोऽपि पञ्चषट् सप्त अष्ट नव दश–संख्या-

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकार के अस्तिकायों का स्वरूप निरूपण करके अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि धर्मास्तिकाय के एकदेश में धर्मास्तिकायता है या नहीं— (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) इत्यादि। (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! धर्मास्तिकायके एकप्रदेशको (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा कहाजा सकता है क्या ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है ।(एवं दोण्णि वि तिण्णि वि, चत्तारि वि, पंच, छ,सत्त,अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा,) इसी तरह से धर्मास्तिकाय के दो प्रदेश भी, तीन प्रदेश भी, चार प्रदेश भी, पांच प्रदेश भी, छह प्रदेश भी, सात प्रदेश भी आठ प्रदेश भी, नौ प्रदेश भी, दश प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहे जा

ધર્માસ્તિકાય આદિ પાંચ પ્રકારના અસ્તિકાયોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે બતાવે છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક દેશમાં ધર્માસ્તિકાયના હોય છે કે નહીં—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिए त्ति वत्तव्व सिया) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને અનુલક્ષીને, (આ ધર્માસ્તિકાય છે,) એવું કહી શકાય ખરૂ ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ અર્થ બરાબર નથી–એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં. (एवं दोण्णि वि, तिण्णिवि चत्तारि वि, पच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના બે ત્રણ, ચાર, પાંચ, છ સાત, આઠ, નવ, દસ વગેરે પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં. ધર્માસ્તિકાયના

रेण लोकान्तेन सह एकैकस्य सपोजनेन कृत्वा सर्वाभिलापः कृतस्तथा अलोकेनापि सह सर्वेषां स्थानानां सयोजनं कर्तव्यमिति। 'पुव्वि भंते सत्तमे उवासंतरे पच्छा सत्तमे तणुवाए' पूर्वं भदन्त सप्तममवकाशान्तरं पश्चात् सप्तमस्तनुवातः एवं सप्तम उवासंतरे सव्वेहिं सत्तमे संजोएयव्वे जाव सव्वद्धाए' एवं सप्तमावकाशान्तरे सर्वैः सप्तमे संयोजयितव्ये यावत्सर्वाद्धया, एतच्च=अनुपदोक्तक्रमेण सप्तमावकाशान्तरं सर्वेषु स्थानेषु सप्तमे सप्तम्या सप्तमीविभक्त्या आलापकाः सर्वाद्धापर्यन्तमुक्तव्या, इति भावः। अथ सप्तमतनुवातपतनवाक्यमधिकृत्य 'पुव्वि भंते' इत्यादि 'पुव्वि भंते सत्तमे तणुवाए पच्छा सत्तमे घणवाए' पूर्वं भदन्त! सप्तमस्तनुवातः पश्चात्सप्तमो घनवातः इत्यादि। 'एवं पि तहेव नेयव्वं जाव सव्वद्धा एतदपि तथैव ज्ञातव्यं यावत्सर्वाद्धा, एतच्च तनुवातमधिकृत्य प्रश्नोत्तरं सर्वाद्धापर्यन्तं तथैव=पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति। 'एवं उवरिल्ले पक्केक्के सत्तमे संजोयणेणं जो जो हेट्ठिल्लो तं तं छड्डेयव्वं

सूत्र भी सप्तम स्थानोंके, जोड़कर, सूत्रालापक कहना चाहिये (पुव्विं भंते! सत्तमे उवासंतरे पच्छा सत्तमे तणुवाए?) हे भदन्त! पहिले सप्तम अवकाशान्तर है, और बाद में सप्तम तनुवात है? (एवं सत्तम उवासंतरं सव्वेहिं सत्तमं संजोएयव्वं जाव सव्वद्धाए) हे गौतम! पूर्वोक्तरूप से सप्तम अवकाशान्तर को, सप्तम तनुवात आदि स्थानों के साथ जोड़कर पूर्वोक्तरूप आलापक सर्वाद्धा तक करलेना चाहिये। (पुव्विं भंते! सत्तमे तणुवाए पच्छा सत्तमे घणवाए) हे भदन्त! पहिले सप्तम तनुवात है और पीछे सप्तम घनवात है? (एवं पि तहेव नेयव्वं जाव सव्वद्धा) हे गौतम! सर्वाद्धा तक इस विषयसंबंधी प्रश्नोत्तर, पहिले के जैसे ही जानना चाहिये। (एवं उवरिल्ले पक्केक्के संजोयणेणं जो जो हेट्ठिल्लो तं तं छड्डेयव्वं

ओ भेद-(पुव्विं भंते! सत्तमे उवासंतरे पच्छा सत्तमे तणुवाए?) હે ભગવન્! પહેલો સાતમુ અવકાશાન્તર છે અને પછી સાતમુ તનુવાત છે? હે ભગવન્! પહેલો તનુવાત છે અને પછી સાતમુ અવકાશાન્તર છે? (एवं सत्तम उवासंतरं सव्वेहिं सत्तमं संजोएयव्वं जाव सव्वद्धाए) હે ગૌતમ! પૂર્વે કહેલ છે એ રીતે સાતમાં અવકાશાન્તરને સાતમા તનુવાત વગેરે સ્થાનોની સાથે જોડીને સર્વાદ્ધા સુધીના પ્રશ્નોત્તર રૂપ આલાપકો કહેવા જોઇએ (पुव्विं भंते! सत्तमे तणुवाए पच्छा सत्तमे घणवाए?) હે ભગવન્! શું પહેલો સાતમુ તનુવાત છે અને પછી સાતમુ ઘનવાત છે? (एवं पि तहेव नेयव्वं जाव सव्वद्धा) એવી રીતે સર્વાદ્ધા પર્યન્તના વિષય સંબંધી પ્રશ્નોત્તરો પણ પહેલાના પ્રશ્નોત્તરો પ્રમાણે જ સમજવા. (एवं उवरिल्ले पक्केक्के संजोयणेणं जो जो हेट्ठिल्लो तं तं छड्डेयव्वं)

गौतम ! खण्डं चक्रं सकल चक्रम्? भगवन् !सकलं चक्रम् नो खण्डं चक्रम् एवं छत्रं चर्म दण्डः दूष्यम्–आयुधम्–मोदकम्–तत् तेन अर्थेन गौतम ! एवमुच्यते एको धर्मास्तिकायप्रदेशोन धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् तत् किं खाइ–पुनः खलु

वक्तव्य नहीं हो सकता है यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय ऐसा नहीं कहा जा सकता है ? (से णूणं गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं ! सगले चक्के, नो खडे चक्के एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूस, आउहे, मोयए से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मस्थितकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया–जाव एगपएसूणे वि य णं नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे गौतम ! हम तुमसे पूछते है कि चक्र का खंड पूरा चक्र कहलावेगा या पूरा चक्र संपूर्ण चक्र कहलावेगा ? तब गौतम ने कहा–हे भदन्त ! पूरा चक्र ही चक्र कहलावेगा, चक्र का खंड चक्र नहीं कहलावेगा, इसी तरह से छत्र, चर्म, दण्ड दूष्य, (वस्त्र,) शस्त्र, मोदक के विषय में भी जानना चाहिये। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता

એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, બે, ત્રણ આદિથી લઈને અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, અને એક પ્રદેશ ન્યૂન હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં ? (से णूण गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं सगले चक्के, नो खंडे चक्के) હે ગૌતમ ! ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય, કે આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય ! ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે,–હે ભદન્ત ! આખા ચક્રને જ ચક્ર કહી શકાય, ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય નહીં " મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (एव छत्ते, चम्मे, दडे दूसे, आउहे, मोयए से तेणट्रे ण गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे त्रि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वसिया) એજ પ્રમાણે છત્ર, ચર્મ, દંડ વસ્ત્ર, શસ્ત્ર મોદક આદિના વિષયમા પણ સમજવુ એટલે કે તેમના આખા ભાગને જ છત્ર, ચર્મ, આદિ કહી શકાય, તેમના ખડને છત્ર, ચર્મ, દંડ આદિ નામે ઓળખી શકાય નહીં હે ગૌતમ ! તે કારણે જ હુ એવુ કહું છુ કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. બે, ત્રણ, સંખ્યાત, અસંખ્યાત આદિ પ્રદે-

या असंख्याता। भदन्त! धर्मास्तिकायप्रदेशा धर्मास्तिकाय इतिवक्तव्यं स्यात् गौतम! नायमर्थः समर्थः एकप्रदेशोनोऽपि च खलु भदन्त! धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् नायमर्थः समर्थः तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इतिवक्तव्यं स्यात् यावत् एकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्ये स्यात् तत्केन

संकते हैं। तथा धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकते हैं। 'असंखेज्जा भंते धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' हे भदन्त! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से वक्तव्य हो सकते हैं? 'गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है-अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से वक्तव्य नहीं हो सकते हैं। 'एगपएसूणे वि य णं भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' हे भदन्त। एक प्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस पद से वक्तव्य हो सकता है? 'गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है। अर्थात्-एक प्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकाय इस पद द्वारा वक्तव्य नहीं हो सकता है। 'से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया' हे भदन्त! ऐसा आप किस कारण से कहते हो कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से

અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં (असंखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया?) હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશને અનુલક્ષીને (आ धर्मास्तिकाय छे, એવું કહી શકાય ખરું? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ! તે અર્થ પક્ષ યોગ્ય નથી-બેસતો છે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (एगपएसूणे वि य णं भंते! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया?) હે ભદન્ત! એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન (ઓછા) હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરું? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ! એ અર્થ પક્ષ યોગ્ય નથી, બેસતો છે એક પ્રદેશની પણ ન્યૂનતા હોય તો તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત! આપ આ કારણે એવું કહો છો કે ધર્માસ્તિકાયના

गौतम ! खण्डं चक्रं सकल चक्रम्? भगवन् !सकलं चक्रम् नो खण्डं चक्रम् एवं छत्रं चर्म दण्डः दूष्यम्-आयुधम्-मोदकम्-तत् तेन अर्थेन गौतम ! एवमुच्यते एको धर्मास्तिकायप्रदेशोन धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् तत् किं खाइ-पुनः खलु

वक्तव्य नहीं हो सकता है यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय ऐसा नहीं कहा जा सकता है ? (से णूणं गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं ! सगले चक्के, नो खडे चक्के एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूस, आउहे, मोयए से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया-जाव एगपएसूणे वि य णं नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया) हे गौतम ! हम तुमसे पूछते है कि चक्र का खंड पूरा चक्र कहलावेगा या पूरा चक्र संपूर्ण चक्र कहलावेगा ? तब गौतम ने कहा-हे भदन्त ! पूरा चक्र ही चक्र कहलावेगा, चक्र का खंड चक्र नहीं कहलावेगा, इसी तरह से छत्र, चर्म, दण्ड दूष्य, (वस्त्र,) शस्त्र, मोदक के विषय में भी जानना चाहिये। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता

એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, બે, ત્રણ આદિથી લઈને અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, અને એક પ્રદેશ ન્યૂન હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં ? (से णूण गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं सगले चक्के, नो खंडे चक्के) હે ગૌતમ ! ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય, કે આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય ! ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે,-હે ભદન્ત ! આખા ચક્રને જ ચક્ર કહી શકાય, ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય નહીં" મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (एव छत्ते, चम्मे, दडे दूसे, आउहे, मोयए से तेणट्ठे णं गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वसिया) એજ પ્રમાણે છત્ર, ચર્મ, દંડ વસ્ત્ર, શસ્ત્ર મોદક આદિના વિષયમાં પણ સમજવુ એટલે કે તેમના આખા ભાગને જ છત્ર, ચર્મ, આદિ કહી શકાય, તેમના ખંડને છત્ર, ચર્મ, દંડ આદિ નામે ઓળખી શકાય નહીં હે ગૌતમ ! તે કારણે જ હુ એવું કહું છું કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. બે, ત્રણ, સંખ્યાત, અસંખ્યાત આદિ પ્રદે-

भदन्त ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! असङ्ख्येया धर्मास्तिकायप्रदेशास्ते सर्वे कृत्स्नाः प्रतिपूर्णा निरवशेषा एकग्रहणगृहीता एषः खलु गौतम ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् एवमधर्मास्तिकायोऽपि । आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवरं त्रयाणामपि अनन्ता भणितव्याः । शेषं तदेव ॥ सू० २ ॥

है और इसी तरह से यावत एक प्रदेश न्यून धर्मास्तिकाय भी पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। (से किं खाइए णं भंते धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) तो हे भदन्त ! कहो धर्मास्तिकाय इस शब्द से क्या वक्तव्य होना चाहिये ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकायपएसा) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातप्रदेश हैं (ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा, एग गहणगहिया एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) वे सब कृत्स्न, प्रतिपूर्ण, निरवशेष और एक ग्रहण-शब्द से गृहीत होजावें ऐसे रूप में हो गये हो तब वे असंख्यात प्रदेश (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा वक्तव्य हो सकते हैं। (एवमहम्मत्थिकाए वि, आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव- नवरं तिण्णं वि पएसा अणंता भाणियव्वा-सेसं तं चेव) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय में भी, आकाशास्तिकाय में भी और जीवास्तिकाय में भी जानना चाहिये तथा पुद्गलास्तिकाय में भी

હોવાને પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવાતા નથી, કેમ જ પ્રદેશ ન્યૂન (ઓછા) હોવ જેવા ધર્માસ્તિકાયને પણ પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી.

(से किं खाइए णं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! તો પછી ધર્માસ્તિકાય શબ્દથી શું અર્થ થાય છે ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે,

(ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा निरवसेसा एगग्गहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે સઘળા પ્રદેશો કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રતિપૂર્ણ, નિરવશેષ અને (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દ વડે ગ્રહણ (ગ્રહણ કરવા યોગ્ય) બનતાં હોય, ત્યારે જ તે અસંખ્યાત પ્રદેશોને 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દથી બોલાવી શકાય છે (एवमहम्मत्थिकाए वि, आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव-नवरं तिण्णं वि पएसा अणंता भाणियव्वा-सेसं तं चेव) અધર્માસ્તિકાય આકાશાસ્તિકાય, અને જીવાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું એવું દેખાડ

टीका—"एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" एकोऽपि भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् हे भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य एकस्मिन् प्रदेशे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो विद्यते न वा विद्यते तत्तदा एकस्मिन्नपि अवयवे धर्मास्तिकायोऽयमिति व्यवहारः स्यात् तथा च तत् तदवयवेनैव धर्मास्तिकाय इति व्यवहारस्य सम्पादनात् प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायस्य नैरर्थक्यमेव प्रसज्येत प्रत्येकस्मिन्नवयवे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो न

इस प्रकार से जानना चाहिये। विशेषता केवल इतनी ही है कि जीवास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय इन के प्रदेश अनन्त कहना चाहिये। बाकी का अवशिष्ट कथनसब पूर्व जैसा नहीं हैं ॥सू २॥

टीकार्थ—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" हे भदन्त ! धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा वक्तव्य हो सकता है क्या ? पूछने का अभिप्राय ऐसा है कि-धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म मौजूद है या नहीं ? यदि प्रथम पक्ष अंगीकार किया जावे तो फिर इस स्थिती में प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय के मानने की आवश्यकता ही क्या रहती है क्यों कि धर्मास्तिकाय के एक भी प्रदेश में (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा व्यवहार होना तुम मान रहे हो अतः जब एक प्रदेश से ही धर्मास्तिकायरूप व्यवहार संपादित होजाता है-तो बात स्वतः ही साबित हो जाती है कि प्रदेशसमुदायात्मक धर्मास्तिकाय मानना निरर्थक ही है ?

એટલી જ વિશેષતા છે કે જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના પ્રદેશ અનેક છે એમ કહેવું જોઇએ. બાકીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય જેવું જ સમજવું ॥ સૂ ૨ ॥

ટીકાર્થ—" एगे भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया " હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂ ? પ્રશ્નનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયના બધા ધર્મો (ગુણો) મોજુદ હોય છે કે નહી !

જો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો હોય તો પ્રદેશસમુદાય રૂપ ધર્માસ્તિકાયનુ અસ્તિત્વ માનવાની આવશ્યકતા જ શી રહે કારણ કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને માટે "આ ધર્માસ્તિકાય છે" એવો ઉલ્લેખ કરવામાં આવી શકે તો એ વાત તો આપો આપ સાબિત થઇ જાય છે કે પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનવું નિરર્થક જ છે જો પ્રદેશ સમુદાયાત્મક

भदन्त ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् गौतम ! असंख्येया धर्मास्तिकायप्रदेशास्ते सर्वे कृत्स्नाः प्रतिपूर्णा निरवशेषा एकग्रहणगृहीताः एवः खलु गौतम ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् एवमधर्मास्तिकायोऽपि । आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवर अगुरुलघुपर्यवा अनन्ता भणितव्याः । शेष तदेव ॥ सू० २ ॥

है और इसी तरह से यावत् एक प्रदेश न्यून धर्मास्तिकाय भी पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है । (से किं खाइए णं भंते धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) तो हे भदन्त ! कहो धर्मास्तिकाय इस शब्द से क्या वक्तव्य होना चाहिये ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकायपएसा) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातप्रदेश हैं (ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा, एग गहणगहिया एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) वे सब कृत्स्न, प्रतिपूर्ण, निरवशेष और एक ग्रहण-शब्द से गृहीत होजावें ऐसे रूप में हो गये हों तब वे असंख्यात प्रदेश (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा वक्तव्य हो सकते हैं । (एवमहम्मत्थिकाए वि, आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव- नवरं तिण्णं वि पएसा अणता भाणियव्वा-सेसं तं चेव) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय में भी, आकाशास्तिकाय में भी और जीवास्तिकाय में भी जानना चाहिये तथा पुद्गलास्तिकाय में भी

પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવાતા નથી, એક જ પ્રદેશ ન્યૂન (ઓછો) હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને પણ પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી.

(से किं खाइए णं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! તો પછી ધર્માસ્તિકાય શબ્દથી શું અર્થ થાય છે ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकायपएसा) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે.

(ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा निरवसेसा एगग्गहणगहिया एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે સઘળા પ્રદેશો કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રતિપૂર્ણ, નિરવશેષ અને (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દ પદે ગ્રહણ (ગ્રહણ કરવા યોગ્ય) બનતા હોય ત્યારે જ તે અસંખ્યાત પ્રદેશોને 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દથી બોલાવી શકાય છે (एवमहम्मत्थिकाए वि, जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव-नवरं तिण्णि वि पएसा अणता भाणियव्वा-सेसं तं चेव) અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અને જીવાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું પણ તેમાં

टीका—"एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" एकोऽपि भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् हे भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य एकस्मिन् प्रदेशे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो विद्यते न वा विद्यते चेत्तदा एकस्मिन्नपि अवयवे धर्मास्तिकायोऽयमिति व्यवहारः स्यात् तथा च तत् तदवयवेनैव धर्मास्तिकाय इति व्यवहारस्य सम्पादनात् प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायस्य नैरर्थक्यमेव प्रसज्येत प्रत्येकस्मिन्नवयवे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो न

इस प्रकार से जानना चाहिये। विशेषता केवल इतनी ही है कि जीवास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय इन के प्रदेश अनन्त कहना चाहिये। बाकी का अवशिष्ट कथनसब पूर्व जैसा नहीं है ॥सू २॥

टीकार्थ—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" हे भदन्त ! धर्मास्तिकायका एक प्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा वक्तव्य हो सकता है क्या ? पूछने का अभिप्राय ऐसा है कि—धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म मौजूद है या नहीं ? यदि प्रथम पक्ष अंगीकार किया जावे तो फिर इस स्थिती में प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय के मानने की आवश्यकता ही क्या रहती है क्यों कि धर्मास्तिकाय के एक भी प्रदेश में (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा व्यवहार होना तुम मान रहे हो अतः जब एक प्रदेश से ही धर्मास्तिकायरूप व्यवहार संपादित होजाता है—तो बात स्वतः ही साबित हो जाती है कि प्रदेशसमुदायात્મક धर्मास्तिकाय मानना निरर्थक ही है ?

એટલી જ વિશેષતા છે કે જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના પ્રદેશ અનેક છે એમ કહેવું જોઇએ. બાકીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય જેવું જ સમજવું ॥ સૂ ૨ ॥

ટીકાર્થ—" एगे भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया " હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂ ? પ્રશ્નનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયના બધા ધર્મો (ગુણો) મોજુદ હોય છે કે નહી !

જો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો હોય તો પ્રદેશસમુદાય રૂપ ધર્માસ્તિકાયનુ અસ્તિત્વ માનવાની આવશ્યકતા જ શી રહે કારણ કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને માટે "આ ધર્માસ્તિકાય છે" એવો ઉલ્લેખ કરવામાં આવી શકે તો એ વાત તો આપો આપ સાબિત થઇ જાય છે કે પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનવું નિરર્થક જ છે જો પ્રદેશ સમુદાયાત્મક

निषेधे चेच्छा प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव भवतीति निषेधेन प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायेऽपि धर्मास्तिकायत्वधर्मस्य वृत्तिता न स्यात् यथा प्रत्येकसिकताकणेषु अनुपलभ्यमान तैल न सिकताकणसमुदायेऽपि भवति तद्वत् मन्तव्योऽयमिति सेयमुपमा यतः 'पाषारज्जुरिति न्यायः समापतदीति पण्डितैः मन्तव्यः । भगवान् आह-'गोयमा !' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः धर्मास्तिकायस्य पविभदेशे धर्मास्तिकायत्व धर्मो न भवतीत्यर्थः । यथा एकप्रदेशस्य धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा सर्वप्रदेशेऽपि स व्यवहारो न युक्त इत्यतिदेशेन दर्शयति—'एवं दोण्णि वि' एवं द्वौ

यदि प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकायकी सिद्धि मानने निमित्त द्वितीय पक्ष स्वीकार किया जावे और कहा जावे कि धर्मास्तिकायके प्रत्येक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म नहीं है तो फिर इस प्रकार के कथन में पूरे धर्मास्तिकाय का ही लोप प्राप्त होता है क्यों कि जो धर्म अवयव में नहीं है-वह अवयव के समुदाय में क्योंकर हो सकता है । इस लिये यह मानना ही पडेगा कि (प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव) प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म की वृत्ति नहीं होती जैसे प्रत्येक सिकताकणों में अनुपलभ्यमान तैल की उपलब्धि सिकता कणों के समुदाय में नहीं होती है । इस तरह यह पाषारज्जु प्राप्त होती है । ऐसा आशय प्रश्नकर्ताका है इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह

ધર્માસ્તિકાયને સિદ્ધ કરવાને માટે ઉપર કહ્યાપ્રમાણે બીજો મત સ્વીકારવામાં આવે અને એવામાં આવે કે ધર્માસ્તિકાયના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ધર્માસ્તિકાયત્વ રૂપ ધર્મ હોતો નથી, તો એ પ્રકારના કથનથી તો પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો જ લોપ થવાનો પ્રસંગ ઉભો થાય છે કારણ કે જે ધર્મ અવયવમાં અસ્તિત્વ ધરાવતો હોય તે અવયવના સમુદાયમાં કયાંથી રહી શકે ? તેથી એવું માનવું જ પડશે કે " प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव " પ્રદેશસમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાયમાં ધર્માસ્તિકાયત્વરૂપ ધર્મનો સદ્ભાવ હોતો નથી જેવી રીતે રેતીના પ્રત્યેક કણમાંથી તેલ મળવાનો સંભવ નથી હોતો તેવી જ રીતે રેતીના કણોના સમૂહમાંથી પણ તેલ મળવાનો સંભવ હોતો નથી એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના જે પ્રદેશમાં જે ધર્મ (ગુણ) નથી તે તેના પ્રદેશસમુદાયમાં

---

१ समयतः पाषारज्जुरित्यादा-अत्र-जैसे छोटी छोटी कंकड़ियों के समूह में अवस्थित पुरुष अगर इधर आता है तो भी आता में दबता है इधर आनेपर भी आतमें दबता है अतः मध्य में ही दुरती होती है। यह न्याय इतोऽप्याहतस्तती ए न्यायके समान है-इधर आप उधर मती बीचमें अड़ा मनु ष्य के समान है-अर्थात् दोनों तरफ मय कल्पित है ।

अपि ' तिण्णि वि चत्तारि वि ' त्रयोऽपि चत्वारोऽपि ' पंच छ सत्त अट्ठ नव दस संखेज्जा ' पञ्चपद् सप्ताष्ट नव दश संख्याताः अपीतिशेषः धर्मास्तिकायस्य प्रत्येकस्मिन् अवयवे धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा द्वित्रिचतुःपञ्चषट् सप्ताष्ट नव दश संख्येयाऽवयवेष्वपि धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो नैव युज्यते इत्यर्थः । ' असंखेज्जा भंते ! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' असंख्याताः भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशाः धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–हे भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य असंख्याता' प्रदेशा धर्मास्तिकायशब्देन व्यपदेष्टुं शक्याः किमित्यर्थः, भगवान आह–' गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे ' हे गौतम ! नायमर्थः समर्थः=हे गौतम ! एवं व्यपदेष्टुं नैव शक्यते इत्यर्थः ' एगपएसूणे वि य णं भंते !

अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के प्रतिप्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप व्यवहार नहीं होता है । इसी तरह से (दोण्णि वि, तिण्णि वि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशोंमें, तीन प्रदेशोंमें, चार प्रदेशोंमें, पांच प्रदेशोंमें, छह प्रदेशोंमें, सात प्रदेशोंमें, आठ प्रदेशोंमें नौ प्रदेशोंमें दश प्रदेशोंमें, संख्यात प्रदेशोंमें भी धर्मास्तिकायरूप व्यवहार नहीं होता है । (असंखेज्जा णं भंते ! धम्मत्थिकायपएसा) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकायरूप से वक्तव्य हो सकता हैं क्या ? अर्थात् वे धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य हो सकते हैं ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा) हे गौतम (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य नहीं

પણ હોતો નથી. હવે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીર સ્વામીએ જે જવાબ આપ્યો તેનું ટીકાકાર નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે

(गोयमा) હે ગૌતમ ! (णो इणट्ठे समट्ठे) તે અર્થ યોગ્ય નથી. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એજ પ્રમાણે (दोण्णि वि तिण्ण वि, चत्तारि वि, पंच छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) ધર્માસ્તિકાયના બે પ્રદેશને, ત્રણ પ્રદેશને, ચાર પ્રદેશને, પાંચ પ્રદેશને, છ પ્રદેશને, સાત પ્રદેશને, આઠ પ્રદેશને, નવ પ્રદેશોને દસ પ્રદેશને અને સંખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતાં નથી (असंखेज्जा णं भंते ! धम्मत्थिकायपएसा ? હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય અરૂ ? એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને માટે (धर्मास्तिकाय) શબ્દ વાપરી શકાય ખરો ? મહાવીર પ્રભુ તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે– (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (णो इणट्ठे समट्ठे) આ અર્થ પ્રભુ બરાબર નથી.

विषये चेत्यत्र प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव युक्तमिति निदर्शनेन प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायेऽपि धर्मास्तिकायत्वधर्मस्य वृत्तिर्न स्यात् यथा प्रत्येकसिकताकणेषु अनुपलभ्यमान तैलं न सिकताकणसमुदायेऽपि भवति तद्वद् एकदेशेऽपीति सेयमुभयतः 'पाशारज्जुरिति न्यायः समापततीति पक्षद्वयस्य प्रश्नाशयः। भगवान् आह—'गोयमा!' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः धर्मास्तिकायस्य प्रतिप्रदेशे धर्मास्तिकायत्व धर्मो न भवतीत्यर्थः। यथा एकप्रदेशस्य धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा सर्वप्रदेशेऽपि स व्यवहारो न युक्त इत्यतिदेशेन दर्शयति—'एवदोऽपि णं' एवं द्वौ

यदि प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकायकी सिद्धि मानने निमित्त तृतीय पक्ष स्वीकार किया जावे और कहा जावे कि धर्मास्तिकायके प्रत्येक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म नहीं है तो फिर इस प्रकार के कथन में पूरे धर्मास्तिकाय का ही लोप प्राप्त होता है क्यों कि जो धर्म अवयव में नहीं है-वह अवयव के समुदाय में क्योंकर हो सकता है। इस लिये यह मानना ही पडेगा कि (प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव) प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म की वृत्ति नहीं है। जैसे प्रत्येक सिकताकणों में अनुपलभ्यमान तैल की उपलब्धि सिकता कणों के समुदाय में नहीं होती है। इस तरह उभयतः पाशारज्जु प्राप्त होती है। ऐसा आशय प्रश्नकर्ताका है इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह

ધર્માસ્તિકાયને સિદ્ધ કરવાને માટે ઉપર બતાવેલો બીજો મત સ્વીકારવામાં આવે અને કહેવામાં આવે કે ધર્માસ્તિકાયના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ધર્માસ્તિકાયત્વ રૂપ ધર્મ હોતો નથી તો એ પ્રકારના કથનથી તો પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો જ લોપ થવાનો પ્રસંગ ઉભો થાય છે કારણ કે જે ધર્મ અવયવમાં અસ્તિત્વ ધરાવતો હોય તે અવયવના સમુદાયમાં કયાંથી સંભવી શકે? તેથી જેવું માનવું જ પડશે કે "प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव" પ્રદેશસમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાયમાં ધર્માસ્તિકાયત્વરૂપ ધર્મનો સદ્ભાવ હોતો નથી જેમ દરેક રેતીના પ્રત્યેક કણોમાંથી તેલ મળવાનો સંભવ નથી હોતો તેમ જ દરેક રેતીના કણોના સમૂહમાંથી પણ તેલ મળવાનો સંભવ હોતો નથી જેમ પ્રત્યેક ધર્માસ્તિકાયના જેક પ્રદેશમાં જે ધર્મ (ગુણ) નથી તે તેના પ્રદેશસમુદાયમાં

---

१ उभयतः पाशारज्जुरितिन्यायः—अर्थ-जैसे दोनों तरफ बांधा हुआ किसी व्यक्ति के मध्य में अवस्थित पुरुष जाएं मुडकर आता है तो भी बाधा में फसता है उधर जानेसे भी बाधामें फसता है अतः मध्य में ही खडा होता है। यह न्याय इतोव्याघ्रस्ततो तटी न्यायके समान है-इधर बाघ उधर नदी बीचमें खडा मनुष्य के समान है-अर्थात् दोनों तरफ भय उपस्थित है।

नेयव्वं" एवमुपरितनम् एकैकं संयोजयता यो योऽधस्तनस्तं तं छर्दयता ज्ञातव्यम्, एवं पूर्वोक्तक्रमेणोपरितनमेकैकं संयोजयन् अधस्तनं पूर्वोक्तमेकैकं च परित्यजन् पूर्ववदेव सर्वं ज्ञातव्यम्। कियत्पर्यन्तमित्याह—'जाव अतीयअणागयद्धा पच्छा सव्वद्धा' यावदतीतानागताद्धा पश्चात्सर्वाद्धा, यतोदधित आरभ्य अतीतानागताद्धापर्यन्तं, पश्चात् तदनन्तरं सर्वाद्धेति सर्वाद्धापर्यन्तं सर्वं प्रश्नोत्तरं स्वयमूहनीयमिति, कियद्यावधीत्याह—'जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा!' यावत् अनानुपूर्वी एषा रोह! यावत्पदेन उत्तरपक्षे 'पुव्विं पेते पच्छा पेते दोवि एए सासया भावा' इति संयोजनीयम्। हे रोह! पूर्वमप्येतौ पश्चादप्येतौ द्वावप्येतौ शाश्वतौ भावौ एषोऽ-

---

तेणं नेयव्वं) इस तरह ऊपर के अर्थात् आगे२ के एक एक पद को जोड़कर और जो जो नीचे के पद हैं अर्थात् पीछे२ के पद हैं उन्हें छोड़कर पहिले की तरह से ही सब प्रश्नोत्तर जानना चाहिये। कहां तक जानना चाहिये इस के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (जाव अतीताणागयद्धा सव्वद्धा) यावत् अतीत अनागत काल तक और पश्चात् सर्वाद्धा तक (जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा!) यावत् हे रोह! यहां किसी भी प्रकार का क्रम नहीं है। तात्पर्य कहने का यह है कि घनोदधि से लेकर अतीत अनागताद्धा तक, पश्चात् सर्वाद्धा तक सब प्रश्न और उत्तर अपने आप ही पहिले की तरह से बना कर समाधानयुक्त कर लेना चाहिये। "जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा" में जो यावत् पद रखा है उससे सूत्रकार इस बात की सूचना देते हैं कि उत्तरपक्ष में जो "पुव्विं पेते पच्छा पेते, दुवे सासया भावा" पहिले ऐसा कहा गया है सो

આ રીતે જ આગળ આવેલાં પ્રત્યેક પદને જોડીને અને પાછળ આવી ગયેલાં પદોને છોડીને પહેલા બતાવ્યા પ્રમાણે જ પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા જોઇએ. કયાં સુધી આ પ્રમાણે પ્રશ્નોત્તર બનાવવા? તો સૂત્રકાર કહે છે, કે (જાવ અતીતાણાગયદ્ધા સવ્વદ્ધા) અતીત અનાગત કાળ સુધી અને છેવટે સર્વાદ્ધા સુધી, આ પ્રમાણે કરવું (જાવ અણાણુપુવ્વી એસા રોહા!) હે રોહ! તે બધામા કોઇ પણ પ્રકારનો ક્રમ નથી, તે અનાનુપૂર્વી છે ત્યા સુધી પણ ઉપર મુજબ કહેવું તાત્પર્ય એ છે કે ઘનોદધિથી લઇને અતીત અનાગત અદ્ધા સુધી અને છેવટે સર્વાદ્ધા સુધી તમામ પ્રશ્નો અને ઉત્તરો પહેલા પ્રમાણે જ જાતે બનાવી લેવા જોઇએ (જાવ અણાણુપુવ્વી એસા રોહા!) એ વાકયના યાવત્ (પર્યન્ત) પદ વડે સૂત્રકાર એ સૂચન કરે છે કે ઉત્તરપક્ષમા જે "પુવ્વિં પેતે પચ્છા પેતે, દોવિ એએ સાસયા ભાવા" કહ્યુ છે (તે બને પહેલા પણ છે અને

धम्मत्थिकाए पम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एकप्रदेशोनोऽपि च खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–हे भदन्त ! यावत्पर्यन्तम् एकेनापि प्रदेशेन ऊनः=धर्मास्तिकायः तावत् किं धर्मास्तिकाय इति शब्देन व्यवहर्तुं शक्यते किमिति ? भगवानाह–' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः इति प्रतिज्ञामात्रेण कथितम् युक्तिस्तु न प्रतिपादिता इति तस्य युक्तिं ज्ञातुं गौतमः पुनः पृच्छति ' से केणट्ठेणं ' इत्यादिना ' से केणट्ठे णं भंते ! ' तत् केन अर्थेन हे भदन्त ! ' एवं वुच्चइ ' एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–' जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–हे भगवन् ! धर्मास्ति-

---

हैं। (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! एक प्रदेशन्यून धर्मास्तिकाय क्या(धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा कहा जा सकता है? इसके उत्तरमें प्रभुने कहा (गोयमा!) हे गौतम! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है। इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर इस विषय में युक्ति की जिज्ञासा वाले गौतम ने पूछा (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है, यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। अर्थात् धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश

તેનું કારણ એ છે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ?) ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે– હે ભદન્ત ! જેમાં એક પ્રદેશ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને માટે " ધર્માસ્તિકાય " એવો પ્રયોગ કરી શકાય ખરો ? ભગવાન જવાબ આપે છે–(गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ વાત બરાબર નથી–એક ન્યૂન પ્રદેશવાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ " ધર્માસ્તિકાય " કહી શકાય નહીં ભગવાનનો આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને તેનું કારણ જાણવાની જિજ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે–(से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ) હે ભદન્ત ! આપ આ પ્રકારે કેવું કહો-છો કે (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એક પ્રદેશની ન્યૂનતા હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં

अपि ' तिण्णि वि चत्तारि वि ' त्रयोऽपि चत्वारोऽपि ' पंच छ सत्त अट्ठ नव दस संखेज्जा ' पञ्चषट् सप्ताष्ट नव दश संख्याताः अपीतिशेषः धर्मास्तिकायस्य प्रत्येकस्मिन् अवयवे धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा द्वित्रिचतुःपञ्चषट् सप्ताष्ट नव दश संख्येयाऽवयवेष्वपि धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो नैव युज्यते इत्यर्थः। ' असंखेज्जा भंते ! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' असंख्याताः भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशाः धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्—हे भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य असंख्याता प्रदेशा धर्मास्तिकायशब्देन व्यपदेष्टुं शक्याः किमित्यर्थः, भगवान आह—' गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे ' हे गौतम ! नायमर्थः समर्थः—हे गौतम ! एवं व्यपदेष्टुं नैव शक्यते इत्यर्थः ' एगपएसूणे वि य णं भंते !

अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के प्रतिप्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप व्यवहार नहीं होता है। इसी तरह से (दोण्णि वि, तिण्णि वि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशोंमें, तीन प्रदेशोंमें, चार प्रदेशोंमें, पांच प्रदेशोंमें, छह प्रदेशोंमें, सात प्रदेशोंमें, आठ प्रदेशोंमें नौ प्रदेशोंमें दश प्रदेशोंमें, संख्यात प्रदेशोंमें भी धर्मास्तिकायरूप व्यवहार नहीं होता है। (असंखेज्जा णं भंते ! धम्मत्थिकायपएसा) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकायरूप से वक्तव्य हो सकता हैं क्या ? अर्थात् वे धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य हो सकते हैं ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा) हे गौतम (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य नहीं

પણ હોતો નથી. હવે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીર સ્વામીએ જે જવાબ આપ્યો તેનું ટીકાકાર નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે

(गोयमा) હે ગૌતમ ! (णो इणट्ठे समट्ठे) તે અર્થ યોગ્ય નથી એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એજ પ્રમાણે (दोण्णि वि तिण्ण वि, चत्तारि वि, पंच छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) ધર્માસ્તિકાયના બે પ્રદેશને, ત્રણ પ્રદેશને, ચાર પ્રદેશને, પાંચ પ્રદેશને, છ પ્રદેશને, સાત પ્રદેશને, આઠ પ્રદેશને, નવ પ્રદેશોને દસ પ્રદેશને અને સંખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતા નથી (असंखेज्जा णं भंते ! धम्मत्थिकायपएसा ? હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂં ? એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને માટે (ધર્માસ્તિકાય) શબ્દ વાપરી શકાય ખરો ? મહાવીર પ્રભુ તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (णो इणट्ठे समट्ठे) આ અર્થ પણ બરાબર નથી.

धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एकप्रदेशोनोऽपि च खलु एकः धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्-हे भदन्त ! यावत्पर्यन्तम् एकेनापि प्रदेशेन ऊनः=धर्मास्तिकाय तावत् किं धर्मास्तिकाय इति शब्देन व्यवहर्तुं शक्यः किमिति ? भगवानाह-' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः इति प्रतिज्ञामात्रेण कथितम् युक्तिस्तु न प्रतिपादिता इति तत्र युक्तिं ज्ञातुं गौतमः पुनः पृच्छति ' से केणट्ठेणं ' इत्यादिना ' से केणट्ठे णं भंते ! ' तत् केन अर्थेन हे भदन्त ! ' एवं वुच्चइ ' एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एकः धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्-' जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्-हे भगवन् ! धर्मास्ति-

---

है। (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! एक प्रदेशन्यून धर्मास्तिकाय क्या (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा कहा जा सकता है? इसके उत्तरमें प्रभुने कहा (गोयमा!) हे गौतम! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है। इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर इस विषय में युक्ति को जिज्ञासा वाले गौतम ने पूछा (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है, यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। अर्थात् धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश

તેનુ કારણ એ છે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય એવો શબ્દપ્રયોગ નહીં (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ?) ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે-' હે ભદન્ત ! એમાં એક પ્રદેશ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને માટે " ધર્માસ્તિકાય " એવો પ્રયોગ કરી શકાય નહીં ? આના ઉત્તરમાં આપે છે-(गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ વાત યથાર્થ નથી-એક ન્યૂન પ્રદેશવાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ " ધર્માસ્તિકાય " એવો શબ્દપ્રયોગ નહીં કરી શકાય એ પ્રકારનો આ પ્રભુનો ઉત્તર સાંભળીને તેનુ કારણ જાણવાની જિજ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે-(से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ हे ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) ધર્માસ્તિકાયનો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં એક પ્રદેશની ન્યૂનતા હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં

कायस्यैकस्मिन् प्रदेशे न्यूनेऽपि धर्मास्तिकाये धर्मास्तिकायशब्देन व्यवहारः कथम् भवति तत्र किं कारणमिति प्रश्नाशयः भगवानाह—' से णूणं गोयमा' इत्यादि । ' से णूणं गोयमा ! ' तन्नूनं गौतम ! ' खंडे चक्के सगले चक्के ' खण्डं चक्रम् सकलम् चक्रम्–हे गौतम ! चक्रस्य एको भागश्चक्रं भवति किंवा सकलं चक्रं चक्र भवतीति भगवतः गौतमम्प्रति कथनम् यथा खण्डं चक्रं चक्रं न भवति खण्डचक्रमित्येव तस्य व्यवहारात् किन्तु सकलमेव चक्रं चक्रं भवति एवं प्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यथा चक्रे तथेहापि ज्ञातव्यम् एष निश्चयनयाऽनुसारेण एकप्रदेशेनाप्यूने धर्मास्तिकाये

में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार नहीं हो सकता है और न एक प्रदेश से हीन धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार हो सकता है सो हे भदन्त ! इसमें क्या कारण है ? इस विषय में गौतम की जिज्ञासा के समाधान निमित्त प्रभु उनसे ही पूछते हुए कहते हैं (से णूणं गोयमा !) हे गौतम ! तुम यह तो कहो कि (खंडे चक्के, सगलेचक्के) चक्र का एक भाग चक्र कहलाता है कि समस्त चक्र चक्र कहलाता है । भदन्त ! चक्र का खंड चक्र नहीं कहलाता किन्तु समस्त चक्र चक्र कहलाता है, तो हे गौतम ! सोचो जिस प्रकार चक्र का खण्ड चक्र नहीं कहा जा सकता वह तो खण्ड चक्र इसरूप से ही व्यवहृत होता है किन्तु पूरा चक्र ही चक्र कहा जाता है– इसी प्रकार एक प्रदेश से भी न्यून धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकता है । वह तो खण्ड

અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–બે, ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિથી લઈને ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં આ રીતે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને તેમણે આપેલા ઉત્તરનું કારણ પૂછે છે આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સમજાવવા માટે પ્રભુ તેમને જ પ્રશ્ન કરે છે-(से णूणं गोयमा !) હે ગૌતમ ! (खंडे चक्के, सगले चक्के !) આખા ચક્રને ચક્ર કહેવાય કે તેના એક ભાગને ચક્ર કહેવાય ? ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે– હે ભદન્ત ! ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેતા નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે " મહાવીર પ્રભુ સમજાવે છે, " જેમ ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાય નહીં પણ ચક્રનો ભાગ જ કહેવાય છે, અને આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે એક પ્રદેશ પણ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. તેને તો ધર્માસ્તિકાયનો ભાગ જ કહેવાય છે. આ

धर्मास्तिकायव्यवहारस्य निषेधः कृतः व्यवहारनयाऽनुसारेण तु एकादिप्रदेशान् ऊनोऽपि पदार्थस्तेनैव रूपेण व्यपदिश्यते एव यथा कतिपयावयवरहितोऽपि पटः पट एव भवति, यथा वा छिन्नलाङ्गूलोऽपि शुना शुन एव कथ्यते, तदुक्तम् वैयाकरणैः ' एकदेशविकृतमनन्यवत् ' इति । भगवतः काकुमिश्रितमुत्तरं निशम्य कथयति गौतमः ' भगव सगले चक्के नो खंडे चक्के ' हे भगवन् ! सकलम् एकं यो खण्डं चक्रम् विकलावयवस्य न चक्रमिति संज्ञा भवति अपि तु सकलावयवस्यैव चक्रमिति संज्ञा भवतीति गौतम ! मुत्तादेशोत्तरं निर्णीयातिशयेनान्यथाऽपि इत्थमेवोत्तरं ददातीति भगवान्-'एवं खलु' इत्यादि, ' एवं खलु चम्मे दंडे दूसे आढे

धर्मास्तिकाय कहलायेगा, चक्रकी तरह ही यहां जानना चाहिये। ऐसा यह कथन निश्चयनय के मतानुसार है-निश्चयनय के मतव्यानुसार धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में पूरे धर्मास्तिकाय का व्यवहार होना निषिद्ध माना गया है। परन्तु हां-व्यवहार नयके मतव्यानुसार तो एक आदि प्रदेश से न्यून भी पदार्थ उसी रूप से कहा ही जाता है-जैसे कितनेक अवयवों से रहित भी पट पट ही व्यवहार में माना जाता है वह अपट नहीं माना जाता, अथवा जैसे छिन्न पूंछ वाला भी कुत्ता कुत्ता ही कहा जाता है वह गधा नहीं कहा जाता-वैयाकरणों ने भी इसी सिद्धान्त को माना है- वे कहते हैं (एकदेशविकृतमनन्यवत्) एकदेश में विकार होजाने पर भी पदार्थ दूसरा थोडे ही हो जाता है। जो वह पदार्थ है वही वह रहता है। इस प्रकार प्रभुका काकुमिश्रित उत्तर सुन कर गौतम ने जो कहा उससे सूत्रकार (भगवं सगले चक्के) इस पाठ

કથન નિશ્ચયનયના મત પ્રમાણે કહ્યું છે નિશ્ચયનયના અભિપ્રાય અનુસાર તે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો નિષેધ છે પરંતુ વ્યવહાર નયની માન્યતા પ્રમાણે તો એકાદિ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા પદાર્થને પણ તે પદાર્થ રૂપે જ લોકવ્યવહારમાં આવે છે જેમ કે કેટલાક અવયવોથી રહિત પટને પણ વ્યવહારમાં તો પટ જ માનવામાં આવે છે-અપટ માનવામાં આવતો નથી, પૂછડી કપાઈ ગયેલી હોય એવા કુત્તાને કુત્તો જ કહે છે-બીજા કોઈ પશુ નામે ઓળખાતા નથી. વ્યાકરણકારોએ પણ એજ સિદ્ધાંત માન્ય કર્યો છે તેઓ કહે છે (एकदेशविकृतमनन्यवत्) એક પ્રદેશમાં (અવયવો) વિકાર થઈ જવાથી પદાર્થ બીજો થોડો જ થઈ જાય છે? જે પદાર્થ જે રૂપ છે તે જ રહે છે

ભગવાનનો યુક્તિપૂર્વકનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ જે ઉત્તર આપ્યો તે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યો છે-(भगवं सगले चक्के

कायस्यैकस्मिन् प्रदेशे न्यूनेऽपि धर्मास्तिकाये धर्मास्तिकायशब्देन व्यवहारः कथन्न भवति तत्र किं कारणमिति प्रश्नाशयः भगवानाह—'से णूणं गोयमा' इत्यादि। 'से णूणं गोयमा!' तन्नूनं गौतम! 'खंडे चक्के सगले चक्के' खण्डं चक्रम् सकलम् चक्रम्–हे गौतम! चक्रस्य एका भागश्चक्रं भवति किंवा सकलं चक्रं चक्र भवतीति भगवतः गौतमम्प्रति कथनम् यथा खण्डं चक्रं चक्रं न भवति खण्डचक्रमित्येव तस्य व्यवहारात् किन्तु सकलमेव चक्रं चक्रं भवति एवं प्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यथा चक्रे तथे हापि ज्ञातव्यम् एप निश्चयनयाऽनुसारेण एकप्रदेशेनाप्यूने धर्मास्तिकाये

में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार नहीं हो सकता है और न एक प्रदेश से हीन धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार हो सकता है सो हे भदन्त! इसमें क्या कारण है? इस विषय में गौतम की जिज्ञासा के समाधान निमित्त प्रभु उनसे ही पूछते हुए कहते हैं (से णूणं गोयमा!) हे गौतम! तुम यह तो कहो कि (खंडे चक्के, सगलेचक्के) चक्र का एक भाग चक्र कहलाता है कि समस्त चक्र चक्र कहलाता है। भदन्त! चक्र का खंड चक्र नहीं कहलाता किन्तु समस्त चक्र चक्र कहलाता है, तो हे गौतम! सोचो जिस प्रकार चक्र का खण्ड चक्र नहीं कहा जा सकता वह तो खण्ड चक्र इसरूप से ही व्यवहृत होता है किन्तु पूरा चक्र ही चक्र कहा जाता है– इसी प्रकार एक प्रदेश से भी न्यून धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकता है। वह तो खण्ड

અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–બે, ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિથી લઈને ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહી આ રીતે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને તેમણે આપેલા ઉત્તરનું કારણ પૂછે છે આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સમજાવવા માટે પ્રભુ તેમને જ પ્રશ્ન કરે છે–(से णूणं गोयमा!) હે ગૌતમ! (खंडे चक्के, सगले चक्के!) આખા ચક્રને ચક્ર કહેવાય કે તેના એક ભાગને ચક્ર કહેવાય? ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે– હે ભદન્ત! ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેતા નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે" મહાવીર પ્રભુ સમજાવે છે, "જેમ ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાય નહી પણ ચક્રનો ભાગ જ કહેવાય છે, અને આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે એક પ્રદેશ પણ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. તેને તો ધર્માસ્તિકાયનો ભાગ જ કહેવાય છે. આ

धर्मास्तिकायप्यवहारस्य निषेधः कृतः व्यवहारनयाऽनुसारेण तु एकादिप्रदेशाद् ऊनोऽपि पदार्थस्तेनैव रूपेण व्यपदिश्यते एव यथा कतिपयावयवरहितोऽपि पटः पट एव भवति, यथा वा छिन्नलाङ्गूलोऽपि शुना श्वा एव कथ्यते, तदुक्तम् वैयाकरणैः ' एकदेशविकृतमनन्यवत् ' इति । भगवत काकुमिश्रितमुत्तरं निशम्य कथयति गौतमः ' भगवं सगडे चक्के नो संडे चक्के ' हे भगवन् ! सकलम् चक्रं नो खण्डं चक्रम् विकलावयवस्य न चक्रमिति संज्ञा भवति अपि तु सकलावयवस्यैव चक्रमिति संज्ञा भवतीति गौतम ! तुल्यादेशोत्तरं निर्णीयातिशयेनान्यथाऽपि इत्थमेवोत्तरं मदर्शयति भगवान्-'एवं खलु' इत्यादि, ' एव खलु चम्मे दले दूसे आवडे

धर्मास्तिकाय कहलावेगा, चक्रकी तरह ही यहां जानना चाहिये। ऐसा यह कथन निश्चयनय के मतानुसार है-निश्चयनय के मन्तव्यानुसार धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में पूरे धर्मास्तिकाय का व्यवहार होना निषिद्ध माना गया है। परन्तु हां-व्यवहार नयके मन्तव्यानुसार तो एक आदि प्रदेश से न्यून भी पदार्थ उसी रूप से कहा ही जाता है-जैसे कितनेक अवयवों से रहित भी पट पट ही व्यवहार में माना जाता है वह अपट नहीं माना जाता, अथवा जैसे छिन्न पूछ वाला भी कुत्ता कुत्ता ही कहा जाता है वह गधा नहीं कहा जाता-वैयाकरणों ने भी इसी सिद्धान्त को माना है- वे कहते हैं (एकदेशविकृतमनन्यवत्) एकदेश में विकार होजाने पर भी पदार्थ दूसरा थोडे ही हो जाता है। जो वह पदार्थ है वही वह रहता है। इस प्रकार प्रभुका काकुमिश्रित उत्तर सुन कर गौतम ने जो कहा उसे सूत्रकार (भगवं सगडे चक्के) इस पाठ

અવત નિશ્ચયનયના મત પ્રમાણે કહ્યું છે નિશ્ચયનયના અભિપ્રાય અનુસાર તે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો નિષેધ છે પરંતુ વ્યવહાર નયની માન્યતા પ્રમાણે તો એકાદિ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા પદાર્થને પણ તે પદાર્થ રૂપે જ બોલાવવામાં આવે છે જેમ કે કેટલાક અવયવોથી રહિત પટને પણ વ્યવહારમાં તો પટ જ માનવામાં આવે છે—અપટ માનવામાં આવતો નથી, પૂછડી કપાઈ ગયેલી હોય એવા કુતરાને કુતરો જ કહે છે- બીજા કોઈ પણ નામે બોલાવતા નથી. વ્યાકરણકારોએ પણ એજ સિદ્ધાંત માન્ય કર્યો છે તેઓ કહે છે (एकदेशविकृतमनन्यवत्) એક પ્રદેશમાં (આખામાં) વિકાર થઈ જવાથી પદાર્થ બીજો થોડો જ થઈ જાય છે ? જે પદાર્થ જે હોય છે તે જ રહે છે

ભગવાનનો મુદ્રિતપૂર્વકનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ જે ઉત્તર આપ્યો તે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યો છે-(भगवं सगडे चक्के

मोयए ' एवं छत्रं चर्म दण्डो दूष्यम् (वस्त्रम्) आयुधम् मोदकः एवं यथा एकावयवरहितं चक्रं चक्रं न भवति यथा वा छत्र-चर्मदण्ड वस्त्रास्त्रमोदकादिकम् एकावयवरहितम् छत्रादिशब्देन न व्यपदिश्यते तथैव एकप्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति नैव वक्तव्यम् स्यात् इति भावः। ' से तेणट्ठेणं गोयमा ! ' तत् तेनार्थेन गौतम ! ' एवमुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसेणो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्ति धर्मास्तिकायप्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् अनेन कारणेन, हे गौतम ! कथयामि एक-

द्वारा प्रकट किया है। अतः गौतम के ही मुख से (अवयव रहित चक्र ऐसी संज्ञा नहीं होती है किन्तु सकल अवयवों से युक्त चक्र में ही चक्र ऐसी संज्ञा होती है) इस प्रकारका निर्णय करा कर अन्यत्र भी इसी तरह से होता है इस बात को प्रभु उनसे प्रकट करते हैं-(एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए,) हे गौतम। जिस प्रकार एकावयव रहित चक्र पूराचक्र नहीं कहलाता अथवा जैसे-छत्र, चर्म, दण्ड, वस्त्र, शस्त्र, मोदक आदि पदार्थ एक अपने अवयव से रहित होने पर छत्रादि शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं होते-उसी तरह एकप्रदेश से भी उन धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं हो सकता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय रूप से वक्तव्य नहीं हो सकता है। अर्थात्- धर्मास्तिकाय के एकप्रदेश में धर्मास्तिकायता नहीं है। (जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्तिवत्त-

---

नो खण्डे चक्के) આ રીતે ગૌતમસ્વામીને મુખે જ, " ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાતું નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે એવો નિર્ણય કરાવીને બીજા પદાર્થોમા પણ એવુ જ બને છે તે દર્શાવવામાટે કહે છે-एवं छत्ते, चम्मे, दडे, दूसे, आउहे, मोयए) હે ગૌતમ જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત ચક્રને આખુ ચક્ર કહેવાતું નથી, જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત છત્ર, ચર્મ, દડ, વસ્ત્ર, શસ્ત્ર, મોદક આદિને છત્ર, ચર્મ આદિ નામે ઓળખાતા નથી એજ પ્રમાણે એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી. (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) ઇત્યાદિ હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યુ છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક

स्मिन् धर्मास्तिकायप्रदेशे धर्मास्तिकायत्वं नास्तीति भावः । 'जाव एग-पएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' यावत् एक प्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् । अत्र यावत्पदेन हि-त्रि-चतुः पञ्च षट्-सप्त-अष्ट-नव-दश-संख्येया-ऽसंख्यातानां धर्मास्तिकायप्रदेशानाम् ग्रहणं भवतीति । 'से किं खाइए णं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' अथ का किं पुनरत्र खलु भदन्त ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् पुनरर्थबोधकः 'खाइए' इति देशीयशब्दः पुनरर्थे, हे भदन्त ! यदि धर्मास्तिकायस्य एकस्मिन्प्रदेशे धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो वार्यते भवद्भिन्यूनेऽपि धर्मास्तिकाये धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो वार्यते तदा पुनः कुत्र धर्मास्तिकायोऽयमिति व्यवहारः क्रियते प्रदेशसङ्घातव्यतिरिक्तस्य धर्मास्तिकायस्याभावादिति प्रश्नकर्तुराशयः । भगवानाह 'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! "असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा" असंख्याता धर्मास्तिकायप्रदेशा "ते सव्वे" ते सर्वे

एक सिया) यावत् एक प्रदेश से कम भी धर्मास्तिकाय पूरा धर्मास्तिकाय नहीं माना जासकता है । यहां (यावत्) पद से (धर्मास्तिकाय के अनेक प्रदेशों का ग्रहण हुआ है । (से किं खाइए णं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार कहां किया जा सकता है । तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि-आप धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायरूप व्यवहार होनेका निषेध कर रहे हैं और एकप्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकायमें धर्मास्तिकायके व्यवहार होने का निषेध कर रहे हैं-तब यह तो कहिये कि धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार कहांपर हो सकेगा ? (खाइए) यह देशीय शब्द है और पुनः अर्थ का बोधक है । इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं-गोयमा) हे गौतम ! (असंखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा) धर्मास्तिकाय में

જ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં."

(से किं खाइए णं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) તો હે ભગવન્ ! તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ? કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે એ ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય ન કહી શકાય એક પણ પ્રદેશની ન્યૂનતા વાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ ધર્માસ્તિકાય ન કહી શકાય, તો એ તો કહો કે ધર્માસ્તિકાય શબ્દનો વ્યવહાર કયાં કહી શકાય ? કોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ?

આ સૂત્રમાં વપરાયેલો 'खाइए' શબ્દ દેશીય છે તેનો અર્થ 'पुनः' થાય છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા પ્રભુ કહે છે-

ोयए ' एव छत्रं चर्म दण्डो दूष्यम् (वस्त्रम्) आयुधम् मोदकः एवं यथा एका-
यवरहितं चक्रं चक्रं न भवति यथा वा छत्र-चर्मदण्ड वस्त्रास्त्रमोदकादिकम्
एकावयवरहितम् छत्रादिशब्देन न व्यपदिश्यते तथैव एकप्रदेशेनापि ऊनो धर्मा-
स्तिकायो धर्मास्तिकाय इति नैव वक्तव्यम् स्यात् इति भावः। ' से तेणट्ठेणं
ोयमा ! ' तत् तेनार्थेन गौतम ! ' एवमुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसेणो
म्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्ति धर्मास्तिकायप्रदेशो न धर्मा-
स्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् अनेन कारणेन, हे गौतम ! कथयामि एक-

द्वारा प्रकट किया है। अतः गौतम के ही मुख से (अवयव रहित चक्र ऐसी संज्ञा नहीं होती है किन्तु सकल अवयवों से युक्त चक्र में ही चक्र ऐसी संज्ञा होती है) इस प्रकारका निर्णय करा कर अन्यत्र भी इसी तरह से होता है इस बात को प्रभु उनसे प्रकट करते हैं-(एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए,) हे गौतम। जिस प्रकार एकावयव रहित चक्र पूराचक्र नहीं कहलाता अथवा जैसे-छत्र, चर्म, दण्ड, वस्त्र, शस्त्र, मोदक आदि पदार्थ एक अपने अवयव से रहित होने पर छत्रादि शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं होते-उसी तरह एकप्रदेश से भी उन धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं हो सकता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय रूप से वक्तव्य नहीं हो सकता है। अर्थात्- धर्मास्तिकाय के एकप्रदेश में धर्मास्तिकायता नहीं है। (जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्तिवत्त-

नो खण्डे चक्के) આ રીતે ગૌતમસ્વામીને મુખે જ, " ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાતું નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે એવો નિર્ણય કરાવીને બીજા પદાર્થોમાં પણ એવુ જ બને છે તે દર્શાવવામાટે કહે છે-एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए) હે ગૌતમ જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત ચક્રને આખુ ચક્ર કહેવાતું નથી, જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત છત્ર, ચર્મ, દંડ, વસ્ત્ર, શસ્ત્ર, મોદક આદિને છત્ર, ચર્મ આદિ નામે ઓળખાતા નથી એજ પ્રમાણે એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી. (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) ઇત્યાદિ હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવુ કહ્યુ છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક

नानुपूर्वी नाप पूर्वापरभावो विद्यते, इति भाव। एतानि च सूत्राणि शून्यवादज्ञानवादादिनिरासेन विचित्रानेकपाषाणसद्भावसूचकानि तेन शून्यतावस्तुरूपा, अपांवा-पारमार्थिका, इति शून्यवादिमतं निरस्तम्' एव ज्ञानमात्र मगत् अर्थस्तु स्वप्नोपम इति ज्ञानवादिमतमपि निरस्तम्। एव पृथिव्यादय ईश्वरादिविनिर्मिता इति जगत्क र्तृत्ववादिमतस्यापि निराकरणपरायणेतानि सूत्राणि, लोकालोकादय सर्वेपि पदार्था विचित्रा अनाद्यनंता न तु ईश्वरकालप्रकृत्यादिप्रनिता, तथा सति कदाचिदकृतेयुरिमे

વાદ સઘ ઘહાં પર ભી ઉત્તરપક્ષ મેં સગત કર લેના ચાહિયે। યે સઘ સૂત્ર શૂન્યવાદ કો જિસે કિ માધ્યમિક બૌદ્ધ માનતે હૈં, એવં જ્ઞાનવાદ કો કિ જિસે સૌત્રાન્તિક બૌદ્ધ માનતે હૈં ઇત્યાદિ અનેક વાદો કા નિરાકરણ કરતે હૈં ઔર વિવિધ અનેક પાષાર્યકે સદ્ભાવકો સૂચિત કરતે હૈં।

યે સૂત્ર યહ કહતે હૈં કિ વિવિધ પ્રકારકે પાષાર્ય હૈં ઔર વે સ્વતંત્ર હૈં। શૂન્યતા માનના વાસ્તવિક રૂપસે યુક્તિસંગત નહીં હૈ। બાહ્ય પદાર્થ પરમાર્થિક સત્ હૈં। જગત્ જ્ઞાનમાત્રરૂપ નહીં હૈ। ઔર ન બાહ્યપદાર્થ સ્વપ્નોપમપદાર્થતુલ્ય હૈં। ઇસી તરહસે યે સૂત્ર ઇસ બાતકા ભી નિરાકરણ કરતે હૈં કિ જો ઈશ્વરવાદી ઐસા કહતે હૈં કિ પૃથિવ્યાદિરૂપ જગતકો ઈશ્વરને બનાયા હૈ। ઔર ઇસ બાતકા સમર્થન કરતે હૈં કિ લોક અલોક આદિ જિતને ભી પદાર્થ હૈં વે સભી વિચિત્ર હૈં ઔર અનાદિ અનન્ત હૈં। ઈશ્વર, કાલ, પ્રકૃતિ આદિસે જનિત નહીં હૈં। યદિ ઇન્હેં ઐસા માના

હોવાથી તેમનામાં આનુપૂર્વી નથી.) તેનુ અહીં પણ ઉત્તર પક્ષમાં બધે સગે. અન કરવુ જોઈએ. આ બધા સૂત્રોથી બૌદ્ધાન્ત શૂન્યવાદ (કે જેને માધ્યમિક બૌદ્ધો માને છે) અને બૌદ્ધાન્ત જ્ઞાનવાદ (કે જેને સૌત્રાન્તિક બૌદ્ધો માને છે) વગેરે અનેક વાદોનું નિરાકરણ (ખડન) થઈ જાય છે અને અનેક સ્વતંત્ર બાહ્ય પદાર્થોના સદ્ભાવ સૂચિત થાય છે

તાત્પર્ય એ છે કે આ સૂત્રો વડે એ અભિપ્રાયમા આવેલ છે કે વિવિધ પ્રકારના બાહ્યાર્થો છે અને તે સ્વતંત્ર પણ છે શૂન્યતા માનવી તે વાસ્તવિક રીતે યુક્તિસંગત નથી. કારણ કે બાહ્ય પદાર્થો પારમાર્થિક સત્ છે જગત જ્ઞાનરૂપ જ નથી. અને બાહ્યપદાર્થો સ્વપ્ના જેવા પણ નથી. વળી આ સૂત્રો વડે ઈશ્વરવાદીઓ કહે છે કે આ પૃથ્વી વગેરે રૂપ જગત ઈશ્વરે બનાવ્યું છે એ વાતનું પણ અહીં ખડન થઈ જાય છે અહીં એ વાતનું પ્રતિપાદન કરાયું છે કે લોક અલોક વગેરે જેટલા પદાર્થો છે તે બધા પદાર્થો સ્વતંત્ર છે અને અનાદિ અનન્ત છે તે પદાર્થો ઈશ્વર, કાળ, પ્રકૃતિ વગેરેથી કદાચ બનેલા નથી.

असंख्यात प्रदेश हैं (ते सव्वे) वे सब (कसीणा) पूरे (पडिपुण्णा) प्रतिपूर्ण (निरवसेसा) निरवशेष (एगग्गहणगहिया) यह धर्मास्तिकाय है इस शब्द से ग्रहण करने के लायक हो जावे-तब (धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) उन सब का वह समूह (धर्मास्तिकाय) इस शब्द द्वारा वक्तव्य होता है। धर्मास्तिकाय प्रदेशों के इन विशेषणों की सार्थकता इस प्रकार से है-सर्व शब्द का अर्थ (समस्त) ऐसा होता है तथा (कसिणा-कृत्स्ना) इस शब्द का अर्थ भी समस्त होता है तथा और भी जो विशेषण हैं-वे भी इसी अर्थ के वाचक हैं-परन्तु जब इन शब्दों के अर्थ का बारीक रीतिसे विचार किया जाता है तब इस में इस प्रकार से भिन्नत आती है-जो थोडे बहुत भी पदार्थ होते हैं उन्हें भी व्यवहार में (सर्व) ऐसा कह दिया जाता है क्यों कि यह सर्व शब्द एक देशीय सर्वता का भी सूचक होता है अतः (असंख्यात वे सब प्रदेश धर्मास्तिकाय हैं) इस कथन से ऐसा भी अर्थबोध हो सकता है कि एक, दो तीन आदि अनेक सब अवयव धर्मास्तिकायके है, इसमें असंख्यात प्रदेशों के समुदाय रूप पदार्थ में धर्मास्तिकायता का अर्थ बोध नहीं होता।

હે ગૌતમ! (असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा) ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે. "ते सव्वे" તે બધા "कसिणा" પૂરે પૂરા, "पडिपूण्णा" પ્રતિપૂર્ણ રૂપે, "निरवसेसा" નિરવશેષરૂપે "एगग्गहण गहिया" આ ધર્માસ્તિકાય છે" એવા શબ્દ પ્રયોગથી ગ્રહણ કરવાને-યોગ્ય બની જાય ત્યારે 'धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया" તે સૌના તે સમૂહને માટે "ધર્માસ્તિકાય" શબ્દનો પ્રયોગ કરી શકાય છે ધર્માસ્તિકાય પ્રદેશોના ઉપરોક્ત વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવા માટે ટીકાકાર કહે છે કે-'सर्व' એટલે સમસ્ત એજ પ્રમાણે "कसिणा-कृत्स्ना" પદનો અર્થ પણ 'સમસ્ત' થાય છે, તથા એ સિવાયના વિશેષણો પણ એજ અર્થના વાચક છે. પણ જ્યારે તે શબ્દોના અર્થનો ઝીણવટથી વિચાર કરવામા આવે ત્યારે તેમની વચ્ચે નીચે પ્રમાણે તફાવત નજરે પડે છે-જે થોડા કે ઝાઝા પદાર્થો હોય છે તેમને પણ વ્યવહારમા 'सर्व' (સમસ્ત કહેવામા આવે છે, કારણ કે તે 'सर्व' શબ્દ એક દેશીય સર્વતાનો પણ દર્શક હોય છે તેથી "તે બધા, અસંખ્યાત પ્રદેશો ધર્માસ્તિકાય છે" એવું માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે વળી એ કથનથી એવો અર્થ-બોધ થાય છે કે એક, બે, ત્રણ આદિ અનેક અવયવ ધર્મા-

ते च सर्वे देशापेक्षयाऽपि भवन्ति, प्रकारकात्स्न्येऽपि सर्वशब्दस्य प्रवृत्तिदर्शनात् इत्यत आह 'कसिण' कृत्स्नाः समस्ता न तु तदेकदेशापेक्षया सर्वे इत्यर्थः। ते च प्रदेशाः स्वस्वभावरहिता अपि कदाचिद् भवन्ति, ते स्वस्वभावरहिता फलोपधायकत्वरूपकारणत्वाभावेऽपि स्वरूपयोग्यत्वेन तथा व्यवहर्तुम् अलमर्थे इत्यापेक्षयेनाह-"पडिपुण्णा" प्रतिपूर्णा स्वस्वरूपेणाऽविकलाः फलोपधायकाः

देशापेक्ष सब प्रदेशों में धर्मास्तिकायता का बोध होता है-अतः ऐसी मान्यता आगमके अनुकूल नहीं है-प्रतिकूल है-इसलिये सर्व शब्द का यहां ऐसा अर्थ नहीं लेना चाहिये किन्तु (कसिणे) कृत्स्न ऐसा अर्थ लेना चहिये क्यों कि सर्व शब्द की प्रकार और कृत्स्न इन अर्थों में प्रवृत्ति देखी गई है-कृत्स्न शब्द का अर्थ है पूरे पूरे सब एक भाग की अपेक्षा सब नहीं किन्तु सर्व प्रकार से पूरे पूरे सब। ऐसे प्रदेश स्वभावरहित भी कदाचित् हो सकते हैं अर्थात् सब पूरे पूरे प्रदेश हो भी और यदि वे अपने २ स्वभाव से भी रहित हों तो उनमें सर्व कृत्स्नता का बाध नहीं आता है और वे धर्मास्तिकायरूप से मानलिये जावेंगे, कारण फलोपधायकस्वरूप (कार्य को सिद्ध करनेवाला) कारण के अभाव में, स्वरूप योग्यता होने पर भी ऐसा व्यवहार बन सकता है सो इस बात को निषेध करने के लिये (पडिपुण्णा) यह विशेषण रखा है। यह विशेषण यह प्रगट करता है कि वे सर्वकृत्स्न प्रदेश ऐसे हों कि जो अपने स्वभाव

સ્તિકાયતાનો બોધ થવાને બદલે દેશ પેક્ષ સઘળા પ્રદેશોમા ધર્માસ્તિકાયતાનો બોધ થાય છે પણ એ પ્રકારની માન્યતા તો આગમોની વિરુદ્ધ રૂપ છે. તેથી 'સર્વ' શબ્દનો અહીં એવો અર્થ લેવો જોઈએ નહીં પણ "કસિણે" 'કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) અર્થ લેવો જોઈએ, 'કૃત્સ્ન' કહેવાથી પૂરે પૂરા-કેટલાક ભાગોની અપેક્ષાએ પૂરા નહીં પણ સર્વ પ્રકારે સંપૂર્ણ એવા પ્રદેશો બધા સ્વભાવ રહિત પણ હોઈ શકે છે-કહેવાનો કે સર્વ પૂરે પૂરા પ્રદેશ હોય પણ એ તમામ પોત પોતાના સ્વભાવથી પણ રહિત હોય તો તેમાં સર્વ 'કૃત્સ્ના' સંપૂર્ણતાનો બાધ (બાધિ) આવતો નથી, અને તેમને ધર્માસ્તિકાય રૂપે માનવા પડે, કારણ કે ફલોપધાયકત્વરૂપ કારણના અભાવે સ્વરૂપ યોગ્યતા હોવા છતા પણ એવો વ્યવહાર થઈ શકે છે. તો જે વસ્તુ નિરાકરણ કરવાને માટે "પરિપુણ્ણા" (પ્રતિપૂર્ણ) વિશેષણ રાખ્યું છે આ વિશેષણ એવું બતાવે છે કે તે સર્વકૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રદેશ એવા હોવા જોઈએ કે જે

ते च प्रदेशाः प्रदेशान्तरापेक्षया स्वस्वभावन्यूना अपि आत्मस्वरूपेणाऽविकला उच्यन्ते तत्राह-'निरवसेसा' निरवशेषाः प्रदेशान्तरतोऽपि स्वस्वभावेन न

से युक्त हों, उस समय में वहां स्वरूप योग्यता की आवश्यकता नहीं मानी गई है वह योग्यता उनमें आविर्भूत हो रही हो ऐसे ही हों, तभी जाकर उनमें धर्मास्तिकायरूप व्यवहार हो सकता है। यहां ऐसा नहीं माना गया है कि जिस प्रकार दंड अपने कार्य को नहीं कर रहा है और वह एक तरफ रखा हुआ है फिर भी वह दण्ड कहलाता है-ऐसा ही वे कृत्स्नप्रदेश अपने कार्यको जब नहीं करते हैं तब भी उनमें धर्मास्तिकाय का व्यवहार हो जावे। क्यों कि निश्चयनय की मान्यतानुसार अपनीक्रिया में प्रवृत द्रव्य ही उस २ अभिधेय का वाच्य होता है। कृत्स्नप्रदेशों की अपनीक्रियाके करने में प्रवृत्ति होना यही उनमें (प्रतिपूर्णता) है।

शंका—अपनी क्रिया के करने में प्रवृत्ति, अपने में वैसी योग्यता-स्वभाव न भी हो तो भी अन्य की सहायता से होती देखी जाती है इसी तरह इन धर्मास्तिकाय के प्रदेशों में अन्यप्रदेशों की सहायता से, अपनी क्रियाके करने के स्वभाव की विकलता होने पर भी तत्स्वभावता मान लेनेपर (प्रतिपूर्णता) मान ली जावे तो क्या बाधा है?

પોતાના સ્વભાવથી યુક્ત હોય, તે સમયે ત્યાં સ્વરૂપ યોગ્યતાની આવશ્યકતા માનવામાં આવી નથી-તે યોગ્યતાનો તો ત્યાં સદ્ભાવ જ માન્યો છે. ત્યારે જે તેમને માટે 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દ વાપરી શકાય છે-અહીં એવું માનવામાં આવ્યું નથી કે "લાકડી પોતાનું કાર્ય ન કરતી હોય-તે એક બાજુએ પડેલી હોય તો પણ તેને લાકડી જ કહી શકાય છે"-એજ પ્રમાણે તે કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રદેશ પોતાનું કાર્ય ન કરતા હોય ત્યારે પણ તેમને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે. કારણ કે નિશ્ચયનયની માન્યતા પ્રમાણે તો પોતાની ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત દ્રવ્ય જ તે તે અભિધેયનું વાચ્ય (બોધક) હોય છે. કૃત્સ્ન પ્રદેશોની પોતાની ક્રિયાઓ કરવામાં પ્રવૃત્તિ હોવી એજ એમાં રહેલી 'પ્રતિપૂર્ણતા' છે.

શંકા—પોતાની ક્રિયા કરવાની પ્રવૃત્તિ, પોતાની અંદર એવી યોગ્યતા ન હોય તોપણ અન્યની સહાયતાથી લેવામા આવે છે, એ રીતે તે ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશોમાં અન્ય પ્રદેશોની સહાયતાથી, પોતાની ક્રિયા કરવાના સ્વભાવની વિકલતા હોવા છતાં તે સ્વભાવનું અસ્તિત્વ માની લઈને 'પ્રતિપૂર્ણતા' માની લેવામાં આવે તો શો વાંધો છે?

ते च सर्वे देशापेक्षयाऽपि भवन्ति, प्रकारकात्स्न्येंऽपि सर्वशब्दस्य प्रवृत्तिदर्शनादित्यत्र आह ' कसिण ' कृत्स्नाः समस्ता न तु तदेकदेशापेक्षया सर्वे. इत्यर्थः। ते च प्रदेशाः स्वस्वभावरहिताऽपि कदाचिद् भवंति ते स्वस्वभावरहिता कथं पर्यायकत्वरूपकारणत्वाभावबन्तोऽपि स्वरूपयोग्यत्वेन तथा व्यवहृयन्ते इत्याशयेनाह-" पडिपुण्णा " प्रतिपूर्णाः स्वस्वरूपेणाऽविकलाः कथंचित्पर्यायकाः

देशापेक्ष सब प्रदेशों में धर्मास्तिकायता का बोध होता है-अतः ऐसी मान्यता आगमके अनुकूल नहीं है-प्रतिकूल है-इसलिये सर्व शब्द का यहां ऐसा अर्थ नहीं लेना चाहिये किन्तु (कसिणे) कृत्स्न ऐसा अर्थ लेना चाहिये क्यों कि सर्व शब्द की प्रकार और कृत्स्न इन अर्थों में प्रवृत्ति देखी गई है-कृत्स्न शब्द का अर्थ है पूरे पूरे सब एक भाग की अपेक्षा सब नहीं किन्तु सर्व प्रकार से पूरे पूरे सब। ऐसे प्रदेश स्वभावरहित भी कदाचित् हो सकते हैं अर्थात् सब पूरे पूरे प्रदेश हो भी और यदि वे अपने २ स्वभाव से भी रहित हों तो उनमें सर्व कृत्स्नता का बाध नहीं आता है और वे धर्मास्तिकायरूप से मानलिये जावेंगे, कारण फलोपधायकत्वरूप (कार्य को सिद्ध करनेवाला) कारण के अभाव में, स्वरूप योग्यता होने पर भी ऐसा व्यवहार बन सकता है सो इस बात को निषेध करने के लिये (पडिपुण्णा) यह विशेषण रखा है। यह विशेषण यह प्रगट करता है कि वे सर्वकृत्स्न प्रदेश, ऐसे हों कि जो अपने स्वभाव

સ્તિકાયતાનો બોધ થવાને બદલે દેશ પેક્ષ સઘળા પ્રદેશોમાં ધર્માસ્તિકાયતાનો બોધ થાય છે પણ એ પ્રકારની માન્યતા તો આગમોની વિરુદ્ધ જાય છે તેથી સર્વ ' શબ્દનો અહીં એવો અર્થ લેવો જોઇએ નહીં પણ ' કસિણે " ' કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) અર્થ લેવો જોઈએ, ' કૃત્સ્ન ' જોઇએ પૂરે પૂરા-કેટલાય ભાગોની અપેક્ષાએ પૂરા નહીં પણ સર્વ પ્રકારે સંપૂર્ણ એવા પ્રદેશો કદાચ સ્વભાવ રહિત પણ હોઇ શકે છે-જોઇએ કે સર્વ પૂરે પૂરા પ્રદેશ હોય પણ એ તબ્બે પોત પોતાના સ્વભાવથી પણ રહિત હોય તો તેમાં સર્વ 'કૃત્સ્ન' -સંપૂર્ણતાનો બાધ (નથી) આવતો નથી, અને તેમને ધર્માસ્તિકાય રૂપે માનવા પડે, કારણ કે ફલોપધાયકત્વરૂપ કારણના અભાવે સ્વરૂપ યોગ્યતા હોવા છતાં પણ જેવો વ્યવહાર થઇ શકે છે તો જે વાતનું નિષેધન કરવાને માટે " પડિપુણ્ણા " (પ્રતિપૂર્ણ) વિશેષણ રાખ્યું છે આ વિશેષણ એવું બતાવે છે કે તે સર્વકૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રદેશ એવા હોવા જોઇએ કે જે

द्रव्याणामपि "पएसा" प्रदेशा "अणंता भाणियव्वा" अनन्ता भणितव्य एतेषां त्रयाणामपि अनन्ताः प्रदेशाः ज्ञातव्या इत्यर्थः लोकाऽलोकापेक्षया आक शास्तिकायस्यानन्तत्वम्। जीवास्तिकायस्य सर्वजीवापेक्षयाऽनन्तत्वं ज्ञातव्य पुद्गलास्तिकायस्य तु स्वभावत एवानन्तत्वं ज्ञातव्यम् "सेसं तं चेव" शेषं तदे पूर्वोक्तमेव ज्ञातव्यम् धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकाययोरसंख्येयाः प्रदेशाः कथित आकाशास्तिकायादीनां त्रयाणां द्रव्याणां पुनरनन्ताः प्रदेशा वक्तव्याः अन प्रदेशिकत्वादेतेषामिति भावः॥ सू० २॥

उपयोगगुणवान् जीवास्तिकाय इति पूर्वप्रकरणे प्रदर्शितम् इदानीं जीव स्तिकायस्य देशभूत एको जीव उत्थानादिगुणवानिति दर्शयितुमाह-'जीवेणं' इत्यादि॥

मूलम्-जीवे णं भंते ? स उट्ठाणे, स कम्मे, स बले, स वीरिए, स पुरिसक्कारपरक्कमे, आयभावे णं जीवभावं, उवदंसे तीति वत्तव्वं सिया? हंता गोयमा ! जीवेणं स उट्ठाणे जा उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया, से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिय

भाणियव्वा) आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय इन तीन अस्तिकायरूप द्रव्यों के प्रदेश अनन्त हैं। लोक और अलोक की अपेक्षा से आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में अनन्तता है। जीवों में सर्वजीवों की अपेक्षा अनन्तता है तथा पुद्गलास्तिकाय में तो स्वभावतः ही अनन्तता है। (सेसं तं चेव) अवशिष्ट कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय इन दो द्रव्यों के असंख्यात प्रदेश कहे गये हैं आकाशास्तिकाय आदि तीन द्रव्यों के प्रदेश अनन्त कहे गये हैं। क्यों कि ये प्रत्येक अनन्तप्रदेशिक हैं॥ सू. २॥

अणंता भाणियव्वा" આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય એ ત્રણે અસ્તિકાયરૂપ દ્રવ્યોના પ્રદેશ અનન્ત છે, લોક અને અલોકની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશમા અનંતતા છે, જીવોમાં સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ અનંતતા છે તથા પુદ્ગલાસ્તિકાયમા તો સ્વભાવથી જ અનંતતા છે. 'सेसं तं चेव' બાકીનુ સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવુ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યે ના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહ્યા છે. આકાશાસ્તિકાય આદિ ત્રણ

न्यूना इत्यर्थः तथा 'एगगाहणगहिया" एकग्रहणगृहीता एकग्रहणेन एकशब्देन 'धर्मास्तिकाय' इत्येवंरूपेण गृहीता ये ते एकग्रहणगृहीताः एकशब्द वाच्या इत्यर्थः । "एस णं गोयमा" एष खलु गौतम ! "धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् । 'एव मधम्मत्थिकाए वि' एवम् अधर्मास्तिकायोऽपि यथा धर्मास्तिकायस्य सकलपदं कृतं तथा अधर्मास्तिकायोऽपि ज्ञातव्यः । "आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एव चेव" आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवरं केवलम् 'तिण्णि वि' त्रयाणाम् आकाशास्तिकाय-जीवास्तिकाय-पुद्गलास्तिकाय

समाधान—ऐसा नहीं है क्यों कि-(निरवसेसा) पद से यह समझाया गया है कि उन प्रदेशों में जो धर्मास्तिकायता है वह अन्यप्रदेशों की सहायता से नहीं है किन्तु स्वभाव से ही है। इस प्रकार वे सब प्रदेश अब धर्मास्तिकायरूप स्वभाव से युक्त हो जाते हैं तभी (एगगाह गगहिया) धर्मास्तिकाय इस एक शब्द के वाच्य होते हैं। अथवा ये सब पूरण आदि शब्द समान अर्थवाले हैं। (एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया) और तभी वे धर्मास्तिकाय कहे जा सकते हैं। (एवमधम्मत्थिकाए वि वत्तव्व) इसी प्रकारसे अधर्मास्तिकायके विषय में भी जानना चाहिये। (आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एव चेव) इसी तरह से आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय की वक्तव्यता भी जाननी चाहिये। (नवर) इनके विषय में जो विशेषता है वह इस प्रकार से है (तिण्हं वि पएसा अणता

સમાધાન—એવું નથી કારણ કે "निरवसेसा" પદથી એવું સમજાવવામાં આવ્યું છે કે પ્રદેશોમાં જે ધર્માસ્તિકાયતા છે તે અન્યપ્રદેશોની સહાયતાથી નથી, પણ સ્વસ્વભાવથી જ છે આ રીતે બધા પ્રદેશો જ્યારે ધર્માસ્તિકાયરૂપ સ્વભાવથી યુક્ત થઈ જાય છે ત્યારે "एगगाहणगहिया" (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દના વાચ્ય-કહેવાને યોગ્ય-બની જાય છે અથવા-તે કારણ કે બધા પદો સમાન અર્થના વાચક છે एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया" હે ગૌતમ ! ત્યારે જ તેમને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય છે "एवमधम्मत्थिकाए वि वत्तव्व" એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાયના વિષયમાં પણ જાણવું "आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एव चेव" આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એજ પ્રમાણે સમજવું "नवर" પણ તેમનામાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે- तिण्हं वि पएसा अणता

द्रव्याणामपि "पएसा" प्रदेशा "अणंता भाणियव्वा" अनन्ता भणितव्याः एतेषां त्रयाणामपि अनन्ताः प्रदेशाः ज्ञातव्या इत्यर्थः लोकाऽलोकापेक्षया आकाशास्तिकायस्यानन्तत्वम्। जीवास्तिकायस्य सर्वजीवापेक्षयाऽनन्तत्वं ज्ञातव्यम् पुद्गलास्तिकायस्य तु स्वभावत एवानन्तत्वं ज्ञातव्यम् "सेसं तं चेव" शेषं तदेव पूर्वोक्तमेव ज्ञातव्यम् धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकाययोरसंख्येयाः प्रदेशाः कथिताः आकाशास्तिकायादीनां त्रयाणां द्रव्याणां पुनरनन्ताः प्रदेशा वक्तव्याः अनन्त प्रदेशिकत्वादेतेषामिति भावः ॥ सू० २ ॥

उपयोगगुणवान् जीवास्तिकाय इति पूर्वप्रकरणे प्रदर्शितम् इदानीं जीवास्तिकायस्य देशभूत एको जीव उत्थानादिगुणवानिति दर्शयितुमाह-'जीवेणं' इत्यादि ॥

मूलम्-जीवे णं भंते ? स उट्ठाणे, स कम्मे, स बले, स वीरिए, स पुरिसक्कारपरक्कमे, आयभावे णं जीवभावं, उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया? हंता गोयमा ! जीवेणं स उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया, से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया,

---

भाणियव्वा) आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय इन तीनों अस्तिकायरूप द्रव्यों के प्रदेश अनन्त हैं। लोक और अलोक की अपेक्षा से आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में अनन्तता है। जीवों में सर्वजीवों की अपेक्षा अनन्तता है तथा पुद्गलास्तिकाय में तो स्वभावतः ही अनन्तता है। (सेसं तं चेव) अवशिष्ट कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय इन दो द्रव्यों के असंख्यात प्रदेश कहे गये हैं आकाशास्तिकाय आदि तीन द्रव्यों के प्रदेश अनन्त कहे गये हैं। क्यों कि ये प्रत्येक अनन्तप्रदेशिक हैं ॥ सू. २ ॥

अणंता भाणियव्वा" આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય એ ત્રણે અસ્તિકાયરૂપ દ્રવ્યોના પ્રદેશ અનન્ત છે, લોક અને અલોકની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશમા અનંતતા છે, જીવોમાં સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ અનંતતા છે તથા પુદ્ગલાસ્તિકાયમા તો સ્વભાવથી જ અનતતા છે. 'सेसं त चेव" બાકીનુ સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવુ. ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યે ના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહ્યા છે. આકાશાસ્તિકાય આદિ ત્રણ દ્રવ્યોના અનત પ્રદેશો કહ્યા છે, કારણ કે તે દરેક અનંત પ્રદેશિક છે ॥સ૦૨॥

गोयमा ! लद्धिवेण अणंताणं अभिणिबोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं केवलणाणपज्जवाणं, मइअण्णाणपज्जवाणं, सुयअण्णाणपज्जवाणं, विभंगणाणपज्जवाणं, चक्खुदंसण—पज्जवाणं, अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं, केवलदंसणपज्जवाणं, उवओगं गच्छइ उवओगलक्खणे णं जीवे से एएणट्ठेणं, एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया ॥ ३ ॥

छाया—जीवः खलु भदन्त ! सोत्थानः सकर्मा सबलः सवीर्यः स्वकीयपुरुषकारपराक्रमः आत्मभावेन जीवभावमुपदर्शयति, इति वक्तव्यम् स्यात् ? हन्त गौतम ! जीवः खलु सोत्थानः यावदुपदर्शयति इति वक्तव्यम् स्यात् तत् केनार्थेन

जीवास्तिकाय उपयोग गुण वाला है—यह पहिले प्रकट किया जा चुका है। अब यह प्रकट किया जाता है कि जीवास्तिकाय का देशभूत एक जीव उत्थान आदि गुणवाला होता है—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कारपरक्कमे) हे भदन्त ! उत्थानवाला, कर्मवाला, बलवाला, वीर्यवाला, और पुरुषकारपराक्रमवाला जीव (आयभावेणं) आत्मभावद्वारा (जीवभावं दंसेइति वत्तव्वं सिया) जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है क्या ? (हंता गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव

જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ દ્રવ્ય છે એ વાત પહેલાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે. હવે એ પ્રગટ કરવામાં આવે છે કે જીવાસ્તિકાયના દેશરૂપ એક જીવ ઉત્થાન આદિ ગુણવાળો હોય છે—" जीवेण भंते ! सउट्ठाणे " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—" जीवे ण भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कार परक्कमे " હે ભદન્ત ! ઉત્થાનવાળો, કર્મવાળો, બલવાળો વીર્યવાળો અને પુરૂષકાર પરાક્રમવાળો જીવ (आयभावेण) આત્મભાવ દ્વારા (जीवभावं दंसेइति वत्तव्वं सिया) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય કે

यावद् वक्तव्यं स्यात् ? गौतम ! जीवः खलु अनन्तानामाभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाणाम् । एवं श्रुतज्ञान पर्यवाणाम् अवधिज्ञान पर्यवाणाम् मनः पर्यवज्ञानपर्यवाणाम् केवलज्ञानपर्यवाणाम् , मत्यज्ञानपर्यवाणाम् , श्रुताज्ञानपर्यवाणाम् , विभंगज्ञानपर्यवाणाम् , चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अवधिदर्शनपर्यवाणाम् ,

---

उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) हां गौतम ! उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव आत्मभाव द्वारा जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (गोयमा) हे गौतम ! (जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) जीव अभिनिबोधिक ज्ञान की अनन्तपर्यायों के इसी तरह श्रुतज्ञान की अनन्त पर्यायों के, अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के, मनः पर्ययज्ञान की अनन्त पर्यायों के केवल ज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मइ अन्नाणपज्जवाणं, सुय अण्णाणपज्जवाणं, विभंग अन्नाणपज्जवाणं,) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायोंके, श्रुत अज्ञान की अनन्तपर्यायों के, विभंग अज्ञान की अनन्त पर्यायों के, (चक्खुदंसणपज्जवाणं,

---

ખરૂં ? (हंता गोयमा! जीवे णं स उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! હા, ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે. (से केणट्ठेण जाव वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવદ્વારા જીવભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! ((जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाण एवं सुयणाणपज्जवाण ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणा णपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) જીવ અભિનિબોધિક જ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, મનઃ પર્યયજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, કેવલજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (मइ अन्नाणपज्जवाण, सुय अण्णाणपज्जवाण, विभंगअन्नाणपज्जवाणं) મતિ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, વિભંગ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (चक्खुदंसणपज्जवाण, अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाण) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અવધિદર્શનની અનંત પર્યાયોના (केवलदंसणपज्जवाणं) અને કેવલદર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओग गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. (उवओग लक्खणे

गोयमा ! जीवेण अणंताणं अभिणिबोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं केवलणाणपज्जवाणं, मइअण्णाणपज्जवाणं, सुयअण्णाणपज्जवाणं, विभंगणाणपज्जवाणं, चक्खुदंसण—पज्जवाणं, अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं, केवलदंसणपज्जवाणं, उवओग गच्छइ उवओगलक्खणे णं जीवे से एएणट्ठेणं, एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया ॥ ६ ॥

छाया—जीव खलु भदन्त ! सोत्थानः सकर्मा सबलः सवीर्यः स पुरुषकारपराक्रमः आत्मभावेन जीवभावमुपदर्शयति, इति वक्तव्यम् स्यात् ? हन्त गौतम ! जीवः खलु सोत्थानः यावदुपदर्शयति इति वक्तव्यम् स्यात् तत् केनार्थेन

जीवास्तिकाय उपयोग गुण वाला है—यह पहिले प्रकट किया जा चुका है। अब यह प्रकट किया जाता है कि जीवास्तिकाय का देशभूत एक जीव उत्थान आदि गुणवाला होता है—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कारपरक्कमे) हे भदन्त ! उत्थानवाला, कर्मवाला, बलवाला, वीर्यवाला, और पुरुषकारपराक्रमवाला जीव (आयभावेणं) आत्मभावद्वारा (जीवभावं उवदंसेति इति वत्तव्वं सिया) जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा कहने योग्य हो सकता है क्या ? (हंता गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव

જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ દ્રવ્ય છે, એ વાત પહેલાં બતાવવામાં આવી છે હવે એ બતાવવામાં આવે છે કે જીવાસ્તિકાયના દેશરૂપ એક જીવ ઉત્થાન આદિ ગુણવાળો હોય છે—" जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे " इत्यादि

સૂત્રાર્થ—" जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कारपरक्कमे " હે ભદન્ત ! ઉત્થાનવાળો, કર્મવાળો, બળવાળો, વીર્યવાળો અને પુરૂષકાર પરાક્રમવાળો જીવ (आयभावेण) આત્મભાવ દ્વારા (जीवभावं उवदंसेति इति वत्तव्वं सिया) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય

लोकाद्याः कदाचिन्नैव वा, नत्वेवं, नियमत एतेषां सद्भावदर्शनादिति । 'सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ'–तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त इति यावत् विहरति, हे भगवन्! यत् देवानुप्रियेण प्रतिपादितं तद् एवमेव सर्वमेव तत् तथैव न तु विपरीतम् इत्युक्त्वा भगवन्तं वन्दते नमस्करोति वन्दित्वा नमस्कृत्य संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति स्वस्थाने समुपविशतीति ॥सू०४॥

॥ इति रोहप्रकरणम् ॥

जावे तो फिर ये लोकादिक कभी होंगे और कभी नहीं होंगे। परन्तु ऐसा तो नहीं है। क्यों कि नियम से इनका सद्भाव दिखाई देता है। (सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त! जैसा आप देवानुप्रियने प्रतिपादन किया है वह सब ऐसा ही है, हे भदन्त! वह सब ऐसा ही है विपरीत नहीं है। ऐसा कहकर वे रोह अनगार यावत् अपनी आत्मा को तप संयम से भावित कर विचरने लगे। यहां यावत् पद से "उन्होंने भगवान को वंदना की, उन्हें नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके तप और संयम से आत्मा को भावित करते हुए फिर वे" इस अर्थ का संग्रह हुआ है। "अपने स्थान पर बैठ गये" यह अर्थ "विहरति" पदका है। तात्पर्य कहने का यह है कि वे भगवदुक्त प्रवचन की मन, वचन, कायासे अनुमोदना करके अपने स्थानपर बैठगये॥सू०४॥

॥ रोहप्रकरण समाप्त ॥

જો આ પદાર્થોને ઈશ્વર વગેરેથી ઉત્પન્ન થયેલાં માનવામાં આવે તો આ લોક અલોક વગેરેનું અસ્તિત્વ કયારેક હશે અને કયારેક નહીં હોય, એ વાત પણ માનવી પડશે, પણ એવુ બનતું નથી કારણ કે નિયમથી જ તેમનો સદ્ભાવ જણાય છે (सेवं भंते! सेवभते त्ति जाव विहरइ) "હે ભગવન્! આપે જે પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પ્રમાણે જ છે હે ભગવન્! આપનું કથન સાચું જ છે." એવું કહીને ભગવાનને વંદણા નમસ્કાર કરીને રોહ અણુગાર તપ અને સંયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા પોતાને સ્થાને બેસી ગયા. "विहरति" એ પદનો અર્થ અહિ "પોતાને સ્થાને બેસી ગયા" એવો થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મન, વચન અને કાયાથી ભગવાને કહેલ પ્રવચનની અનુમોદના કરીને રોહ અણુગાર પોતાના સ્થાને બેસી ગયા. ॥ સૂ. ૪ ॥

રોહપ્રકરણ સમાપ્ત

केवलदर्शनपर्यवाणाम् उपयोगं गच्छति, उपयोगं गच्छन् खलु जीवः तदेतेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीवः स्वलु सोत्थानो यावत् वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—" जीवे णं भंते " जीवः खलु भदन्त " स उट्ठाणे " सोत्थानः उत्थाने चेष्टाविशेषः " स कम्मे " सकर्मा - क्रियाविशेषयुक्तः " स बले " सबलः-बलं शारीरसामर्थ्यम् " स वीरिए " सवीर्यः वीर्यं जीवभवम् " स पुरिसक्कार - परक्कमे " सपुरुषकारपराक्रमः - पुरुषकारोऽभिमानविशेषः पराक्रमः पुरुषकार एव निष्पादितविषयः " आयभावेण " आत्मभावेन-आत्मस्वरूपेणेत्यर्थः " जीवभावं " जीवभावं जीवत्वं वैकल्पिकमित्यर्थः ' उपदर्शयतीति वक्तव्य

अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणां, अवधिदर्शनपर्यवाणां,) चक्षुर्दर्शन की अनन्त पर्यायों के, अचक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवलदर्शनपर्यवाणं) और केवल दर्शन की अनन्त पर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को प्राप्त करता है । (उवओगलक्खणे जीवे से) उपयोगलक्षणवाला जीव है । (एएणट्ठेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि उत्थान आदि विशेषवाला जीव यावत् जीवभाव को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है ॥ सू. ३ ॥

टीकार्थ—(जीवे णं भंते !) हे भदन्त ! जीव (सउट्ठाणे सकम्मे) चेष्टा विशेषरूप उत्थान वाला होकर, ज्ञानावरणीय आदि कर्मवाला होकर (सबले) शारीरिक सामर्थ्यरूप बल विशिष्ट होकर (सवीरिए) जीवसंभवी बलसे युक्त होकर (सपुरिसक्कारपरक्कमे) अभिमानविशेष रूप पुरुषकार से और पराक्रम से युक्तहोकर (आयभावेणं) आत्मा-

---

जीवे से) એટલે ઉત્થાનાદિવાળો જીવ (एएणट्ठेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાન આદિ વિશેષવાળો જીવ યાવત્ જીવભાવરૂપ વૈકલ્પિક ભાવને બતાવે છે, એવું કથન કરી શકાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(जीवेणं भंते !) હે ભદન્ત ! જીવ (सउट्ठाणे सकम्मे) વિશિષ્ટ ચેષ્ટારૂપ ઉત્થાન વાળો, જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો (सबले) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ બલ વાળો, (सवीरिए) વીર્ય વાળો " सपुरिसक्कारपरक्कमे " અભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો થઈને (आयभावेण) આત્મ

यावद् वक्तव्यं स्यात् ? गौतम ! जीवः खलु अनन्तानामाभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाणाम् । एवं श्रुतज्ञान पर्यवाणाम् अवधिज्ञान पर्यवाणाम् मनः पर्यवज्ञानपर्यवाणाम् केवलज्ञानपर्यवाणाम् , मत्यज्ञानपर्यवाणाम् , श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् , विभंगज्ञानपर्यवाणाम् , चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अवधिदर्शनपर्यवाणाम् ,

---

उवदंसेतीति वक्तव्यं स्यिा) हां गौतम ! उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव आत्मभाव द्वारा जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (गोयमा) हे गौतम ! (जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) जीव अभिनिबोधिक ज्ञान की अनन्तपर्यायों के इसी तरह श्रुतज्ञान की अनन्त पर्यायों के, अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के, मनः पर्ययज्ञान की अनन्त पर्यायों के केवल ज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मइ अन्नाणपज्जवाणं, सुय अण्णाणपज्जवाणं, विभंग अन्नाणपज्जवाणं,) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायोंके, श्रुत अज्ञान की अनन्तपर्यायों के, विभंग अज्ञान की अनन्त पर्यायों के, (चक्खुदंसणपज्जवाणं,

---

ખરૂં ? (हंता गोयमा! जीवे णं स उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! હા, ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવદ્વારા જીવભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! ((जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाण एवं सुयणाणपज्जवाणं ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणा णपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) જીવ અભિનિબોધિક જ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, મનઃ પર્યયજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, કેવલજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (मइ अन्नाणपज्जवाण, सुय अण्णाणपज्जवाण, विभंगअन्नाणपज्जवाणं) મતિ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, વિભંગ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (चक्खुदंसणपज्जवाण, अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અવધિદર્શનની અનંત પર્યાયોના (केवलदंसणपज्जवाणं) અને કેવલદર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओग गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. (उवओग लक्खणे

केवलदर्शनपर्यवाणाम् उपयोगं गच्छति, उपयोगलक्षणः खलु जीवः तदेतेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीवः खलु सोत्थानः यावत् वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—"जीवे णं भंते" जीवः खलु भदन्त "स उट्ठाणे" सोत्थानः उत्थानं चेष्टाविशेषः "स कम्मे" सकर्मा – क्रियाविशेषयुक्तः "स बले" सबलः—कर्म शारीरसामर्थ्यम् "स वीरिए" सवीर्यः वीर्यं जीवबलम् "स पुरिसक्कार- परक्कमे" सपुरुषकारपराक्रमः – पुरुषकारोऽभिमानविशेषः पराक्रमः पुरुषकार एव निष्पादितविषयः "आयभावेणं" आत्मभावेन–आत्मस्वरूपेण स्वयं "जीवभावं" जीवत्वं चैतन्यमित्यर्थः "उवदंसइत्ति वत्तव्वं

अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणां, अवधिदर्शनपर्यवाणां,) चक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के, अचक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के और केवलदर्शन की अनन्त पर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को प्राप्त करता है। (उवओगलक्खणे जीवे से) उपयोगलक्षणवाला जीव है। (तट्ठेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि उत्थान आदि विशेषों वाला जीव यावत् जीवभाव को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है ॥ सू. ३ ॥

टीकार्थ—(जीवे णं भंते !) हे भदन्त ! जीव (सउट्ठाणे सकम्मे) चेष्टा विशेषरूप उत्थान वाला होकर, ज्ञानावरणीय आदि कर्मवाला होकर (सबले) शारीरिक सामर्थ्यरूप बल विशिष्ट होकर (सवीरिए) जीवप्रभवी बलसे युक्त होकर (सपुरिसक्कारपरक्कमे) अभिमानविशेष रूप पुरुषकार से और पराक्रम से युक्तहोकर (आयभावेण) आत्मा-

---

जीवे से) જીવ ઉત્થાનયુક્ત ચાલે છે (तट्ठेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાન આદિ વિશેષતાવાળો જીવ આભવભાવરૂપ પોતાને બતાવે છે, એવું કથન કરી શકાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

टीकार्थ—(जीवेणं भंते !) હે ભદન્ત ! જીવ (सउट्ठाणे सकम्मे) વિશિષ્ટ ચેષ્ટારૂપ ઉત્થાન વાળો જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો, (सबले) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ બલ વાળો, (सवीरिए) વીર્ય વાળો "सपुरिसक्कारपरक्कमे" એ નિમ્નાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો થઈને (आयभावेण) આત્મ

या ' उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात्। अत्र खलु ' स उट्ठाणे ' इत्यादीनि पञ्च शेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि. सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभात् यावत्संसारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात्। एतदेव जीवस्य सारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वम् मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव यादिति। ' आय भावेणं ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽत्मपरिणामविशेषेण ' जीवभावं ' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति-

पने परिणामों द्वारा (जीवभावं) चैतन्यरूप जीवभाव को (उवदंसेीति वत्तव्वं सिया) प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है क्या ? ये ो पूर्वोक्त पांच विशेषण जीव के कहे गये हैं वे सिद्ध जीव के व्यवछेदक हैं। क्यों कि सिद्ध जीवों के उत्थान आदि क्रिया का अभाव हता है। ये उत्थानादि क्रियाएँ जीव में जबतक उसके साथ संसार ा संबंध है तभीतक उसमें पाई जाती हैं। उत्थान आदि क्रियाविशिष्ट ोना यही जीव में संसारीपना है। उत्थान आदि क्रियाओं का तहां असद्भाव है वही मोक्ष है। मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ तहीं होती हैं। यदि वहां पर भी इनका सद्भाव मानने में आ-ाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा। अतःयही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं है। संसार में ही हैं। इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं। अतःऐसा यह संसारी जीव (आयभावेणं) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા-પરિણામો દ્વારા (जीवभाव) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (उवदंसेतीति वत्तव्व सिया) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરૂં ? ઉપર જીવના જે પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતા નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યાં સુધી જીવનો સંસાર સાથે સંબંધ હોય ત્યા સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં જોવા મળે છે. ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણુ છે જ્યાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવુ સ્થાન મોક્ષ છે મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. જો ત્યા પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે તો મોક્ષ એક પારિભાષિક શબ્દ જ બનાય તેથી એવું જ માનવુ યોગ્ય છે કે મોક્ષમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ નથી-સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર સાથેના સંબંધથી સસારી જીવોમાં તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ ક્રિયાઓથી યુક્ત સસારી જીવ (आयभावे णं) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (जीवभावं उवदंसेति) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

केवलदर्शनपर्यवाणाम् उपयोगं गच्छति, उपयोगलक्षणः खलु जीवः तदेतेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीवः खलु सोत्थानो यावत् वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—"जीवे णं भंते" जीव खलु भदन्त "स उट्ठाणे" सोत्थान उत्थाने चेष्टाविशेषः "स कम्मे" सकर्मा – क्रियादिशेषयुक्तः "स बले" सबलः–बलं शारीरसामर्थ्यम् "स वीरिए" सवीर्यं वीर्यं जीवबलम् "स पुरिसक्कार– परक्कमे" सपुरुषकारपराक्रम – पुरुषकारोऽभिमानविशेषः पराक्रमः पुरुषकार एव निष्पादितविषयः "आयभावेण" आत्मभावेन–आत्मस्वरूपेणेत्यर्थः "जीवभाव" जीवभाव जीवत्वं चैतन्यमित्यर्थ 'उपदंसतीति वक्तव्यं

अचक्षुदर्शनपर्यवाणां, ओहिदंसणपज्जवाणं,) चक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के, अचक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवलदंसणपज्जवाणं) और केवल दर्शन की अनन्त पर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को प्राप्त करता है । (उवओगलक्खणे जीवे से) उपयोगलक्षणवाला जीव है । (एएणट्ठेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभाव को दिखाता है ऐसा कहना चाहिये ॥ सू ३ ॥

टीकार्थ—(जीवे णं भंते !) हे भदन्त ! जीव (सउट्ठाणे सकम्मे) चेष्टा विशेषरूप उत्थान वाला होकर, ज्ञानावरणीय आदि कर्मवाला होकर (सबले) शारीरिक सामर्थ्यरूप बल विशिष्ट होकर (सवीरिए) जीवसत्तारूपी बलसे युक्त होकर (सपुरिसक्कारपरक्कमे) अभिमानविशेष रूप पुरुषकार से और पराक्रम से युक्तहोकर (आयभावेण) आत्मा-

---

जीवे से) આત્મ ઉત્પત્તિસ્વરૂપ થાય છે (एएणट्ठेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મસ્વરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કથન મેં કર્યું છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(जीवेणं भंते !) હે ભદન્ત ! જીવ (सउट्ठाणे सकम्मे) વિશિષ્ટ ચેષ્ટારૂપ ઉત્થાન વાળો, જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો (सबले) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ બળ વાળો, (सवीरिए) વીર્ય વાળો " सपुरिसक्कारपरक्कमे " અભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો બનીને (आयभावेण) આત્મ

सिया ' उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात्। अत्र खलु ' स उट्ठाणे ' इत्यादीनि पञ्च विशेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि. सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभावात् यावत्संसारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात्। एतदेव जीवस्य संसारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वम् मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव स्यादिति। ' आय भावेणं ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽत्मपरिणामविशेषेण ' जीवभावं ' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति—

अपने परिणामों द्वारा (जीवभावं) चैतन्यरूप जीवभाव को (उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है क्या ? ये जो पूर्वोक्त पांच विशेषण जीव के कहे गये हैं वे सिद्ध जीव के व्यवच्छेदक हैं। क्यों कि सिद्ध जीवों के उत्थान आदि क्रिया का अभाव रहता है। ये उत्थानादि क्रियाएँ जीव में जबतक उसके साथ ससार का संबंध है तभीतक उसमें पाई जाती हैं। उत्थान आदि क्रियाविशिष्ट होना यही जीव में संसारीपना है। उत्थान आदि क्रियाओं का जहां असद्भाव है वही मोक्ष है। मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं होती हैं। यदि वहां पर भी इनका सद्भाव मानने में आजाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा। अतःयही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं है। संसार में ही हैं। इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं। अतःऐसा यह संसारी जीव (आयभावेणं) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા—પરિણામો દ્વારા (जीवभावं) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરૂં ? ઉપર જીવના જે પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતાં નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યા સુધી જીવનો સંસાર સાથે સંબંધ હોય ત્યાં સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં જોવા મળે છે. ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવુ એજ જીવનું સંસારીપણુ છે જ્યા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવું સ્થાન મોક્ષ છે મોક્ષમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. જો ત્યા પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામા આવે તો મોક્ષ એક પારિભાષિક શબ્દ જ બનાય તેથી એવું જ માનવુ યોગ્ય છે કે મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ નથી—સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનુ અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર સાથેના સંબંધથી સંસારી જીવોમા તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (आयभावे णं) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (जीवभावं उवदंसेति) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

उपदर्शनं प्रकाशस्तथा च प्रकाशपति इति वक्तव्यं स्यात् विशिष्टाया उत्थानादि क्रियाया विशिष्टज्ञानपूर्वकत्वनियमात्। दृश्यते च ज्ञानतारतम्यात् क्रियातारतम्यमिति गौतमस्य प्रश्ने भगवानाह-'हंता' इत्यादि। "हंता गोयमा" हन्त गौतम! "जीवे णं भाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया" जीवः खलु भावं उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात् अत्र यावत्पदेन उत्थानादारभ्य जीवभावमित्यन्तं प्रश्नोक्तं सर्वमेव संग्राह्यम् उत्थानादिकं सर्वम् जीव आत्मभावेनोपदर्शयतीति भाव

द्वारा (जीवभावं उवदंसेति) चैतन्यरूप जीव भाव को प्रकाशित करता है-प्रकट करता है ऐसा (वत्तव्वं सिया) कहा जा सकता है क्या? तात्पर्य-इस प्रश्न का यही है कि विशिष्ट उत्थान आदि क्रियाएँ विशिष्ट ज्ञानपूर्वक ही होती हैं ऐसा नियम है। यह बात प्रत्यक्ष देखने में आती है कि जहाँ पर ज्ञान की तरतमता होती है वहाँ पर क्रियाओं में भी तरतमता पाई जाती है। अतः इन क्रियाओं आदिकी तरतमता से जीव अपने विशिष्ट चैतन्य का प्रकाशन करता है-यदि ऐसा माना जावे तो इसमें कोई बाधा तो नहीं है-ऐसा यह प्रश्न प्रभु से किया है। इसके उत्तर में प्रभु कहते हैं-(हंता गोयमा! जीवेणं जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) हाँ गौतम! उत्थानादि विशेषणों वाला जीव अपने परिणामों द्वारा चैतन्यरूप भाव को प्रकाशित करता है-ऐसा मानने में कोई बाधा नहीं है। यहाँ यावत्पद से उत्थान से लेकर जीवभावतक के सब पद ग्रहण किये गये हैं। जीव आत्मभाव द्वारा अपने भाव को-चैतन्य को

પ્રકટ કરે છે, એવું (वत्तव्वं सिया) કહી શકાય ખરું? કહેવે પ્રકારનું તાત્પર્ય પ્રગટ થયેલ છે—વિશિષ્ટ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પૂર્વક જ થાય છે એવો નિયમ છે એવું પ્રત્યક્ષ દેખાય છે કે જ્યાં જ્ઞાનની અધિકતા હોય છે ત્યાં ક્રિયાઓમાં પણ અધિકતા હોય છે તેથી તે ક્રિયાઓ આદિની તરતમતાથી (અધિકતાથી) જીવ પોતાના વિશિષ્ટ ચૈતન્યને પ્રકટ કરે છે-એવું જો માનવામાં આવે તો કોઈ પણ બાધા નથી આ પ્રકારનું તાત્પર્ય ગૌતમ છે કે નહીં, એવો ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો આશય છે તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ નીચે પ્રમાણે આપે છે-(हंता गोयमा! जीवेणं जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ! હા, ઉત્થાનાદિ વિશેષણોથી યુક્તજીવ પોતાના પરિણામો દ્વારા ચૈતન્યરૂપ ભાવને પ્રકટ કરે છે- એવું માનવામાં કોઈ પણ હરકત નથી અહીં (यावत्) (પર્યન્ત) પદથી ઉત્થાનથી લઈને જીવ ભાવ સુધીના પદો અહિંયા ગ્રહણ કરાયા છે જીવ આત્મભાવ દ્વારા પોતાના

सिया ' उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात्। अत्र खलु ' स उट्ठाणे ' इत्यादीनि पञ्च विशेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि. सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभावात् यावत्ससारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात्। एतदेव जीवस्य संसारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वम् मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव स्यादिति। ' आय भावेणं ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽत्मपरिणामविशेषेण ' जीवभावं ' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति-

अपने परिणामों द्वारा (जीवभावं) चैतन्यरूप जीवभाव को (उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है क्या ? ये जो पूर्वोक्त पांच विशेषण जीव के कहे गये हैं वे सिद्ध जीव के व्यवच्छेदक हैं। क्यों कि सिद्ध जीवों के उत्थान आदि क्रिया का अभाव रहता है। ये उत्थानादि क्रियाएँ जीव में जबतक उसके साथ संसार का संबंध है तभीतक उसमें पाई जाती हैं। उत्थान आदि क्रियाविशिष्ट होना यही जीव में संसारीपना है। उत्थान आदि क्रियाओं का जहां असद्भाव है वही मोक्ष है। मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं होती हैं। यदि वहां पर भी इनका सद्भाव मानने में आजाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा। अतःयही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं है। संसार में ही हैं। इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं। अतःऐसा यह संसारी जीव (आयभावेणं) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા-પરિણામો દ્વારા (जीवभाव) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (उवदंसेतीति वत्तव्व सिया) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરૂં ? ઉપર જીવના જે પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતાં નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યા સુધી જીવનો સંસાર સાથે સંબંધ હોય ત્યા સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમા જોવા મળે છે. ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણુ છે. જ્યાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવુ સ્થાન મોક્ષ છે. મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. જો ત્યા પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામા આવે તો મોક્ષ એક પારિભાષિક શબ્દ જ બનાય તેથી એવું જ માનવુ યોગ્ય છે કે મોક્ષમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ નથી-સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર સાથેના સબંધથી સંસારી જીવોમા તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (आयभावे णं) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (जीवभावं उवदंसेति) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

के अनुसार उन २ शक्तिके अंशों को जितने रूप में प्राप्त कर सकता है —प्राप्त करता है। मतिज्ञान में भी इसी तरह के शक्ति के अंश अनन्त होते हैं। छद्मस्थान जीवों की बुद्धिगम्य ये अंश नहीं हुआ करते हैं-इन्हें तो सर्वज्ञ ही साक्षात् जानता है। हां अनुमानादि द्वारा छद्मस्थ भी इन्हें परोक्षरूप से जान सकता है ये मतिज्ञान के अनंत अंशांश ही यहां पर्यायशब्द से गृहीत हुए हैं। ये सर्वज्ञ प्रज्ञागुण माने गये हैं। जीव जब उत्थान आदि क्रियाओं के करनेमें व्यापारित होता है तब वह इन क्रियाओं द्वारा अपने स्वरूपभूत उपयोग स्वरूप को प्रकट करता है यह उपयोगरूप इसका अनेक धाराओं में बहता रहता है कभी यह मतिज्ञान रूप में तो कभी यह श्रुतज्ञान रूप में कभी अवधिज्ञानरूप में तो कभी मनःपर्यय ज्ञानरूप में कभी केवलज्ञानरूप में तो कभी मतीअज्ञान आदि आदि अनेक रूप में संसारी जीव जब उत्थान, शयन आदि क्रियाओं में लगता है तब यह इन क्रियाओं के करते समय मतिज्ञान आदि की अनन्त पर्यायों में से किसी न किसी एक पर्याय को धारण किये हुए रहता है। इससे यह बात प्रकट होती है कि यह संसारी जीव क्रियाओं के करते समय अपने स्वरूप भूत उपयोग के अ

અનંત હોય છે પ્રત્યેક જીવ તે તે આવારક કર્મના ક્ષયોપશમ આદિ અનુસાર તે તે શક્તિના અંશને જેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરી શકાય તેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરે છે મતિજ્ઞાનમાં પણ તે પ્રકારની શક્તિના અંશ અનંત હોય છે જે અંશ છદ્મસ્થજીવોને માટે તો બુદ્ધિગમ્ય હોતા નથી-તેમને તો સર્વજ્ઞ જ સાક્ષાત્ જાણે છે હા, અનુમાન આદિ દ્વારા છદ્મસ્થ પણ તેમને પરોક્ષરૂપે જાણી શકે છે મતિજ્ઞાનનામે અનંત શક્તિ અંશોને જ અહીં (પર્યંત) પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે જે સર્વજ્ઞ પ્રજ્ઞાગુણ મનાયા છે. જીવ જ્યારે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓના કરવામાં પ્રવૃત્ત બનેલો હોય છે ત્યારે તે ક્રિયાઓ દ્વારા તે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગ સ્વરૂપને પ્રકટ કરે છે તેનું તે ઉપયોગરૂપ સ્વરૂપ અનેક ધારાઓમાં વહેતું રહે છે-કયારેક મતિજ્ઞાનરૂપે તો કયારેક શ્રુતજ્ઞાનરૂપે કયારેક અવધિજ્ઞાન રૂપે તો કયારેક મનઃપર્યય જ્ઞાન રૂપે, કયારેક કેવલજ્ઞાન રૂપે તો કયારેક મતિ અજ્ઞાન આદિ અનેક રૂપે તે વહેતું રહે છે જયારે જીવ કયારે ઉત્થાન શયન આદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે ક્રિયાઓ કરતી વખતે તે મતિજ્ઞાન આદિની અનંત પર્યાયોમાંથી કોઇને કોઇ એક પર્યાયને ધારણ કરતો રહે છે તેથી એ વાત પ્રકટ થાય છે કે તે સંસારીજીવ ક્રિયાઓ કરતી વખતે પોતાના સ્વરૂપભૂત [illegible] મતિજ્ઞાન આદિની અનંત પર્યાયોમાંથી

आत्मभावेन जीवभावमुपदर्शयतीत्यत्र कारणज्ञानाय भवतीति पुनर्गौतमः प्रश्नयति 'से केणट्ठेणं' इत्यादि-" से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया " तत्केनार्थेन यावत् वक्तव्यं स्यात् ! भगवानाह--' गोयमा ' इत्यादि. हे गौतम ! " जीवेणं " जीवः खलु 'अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं ' अनन्तानाम् आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाणाम् - मतिज्ञानपर्यवाणामित्यर्थः पर्यवाःसर्वज्ञप्रज्ञाकृता विभागाः परिच्छेदास्ते च परिच्छेदा अनन्ताः सन्ति-आभिनिबोधिकज्ञानस्य तस्मात्

दिखाता है ऐसा यह कथन कारणज्ञान के लिये प्रकट किया गया है। तात्पर्य यह-कि आत्मा अतीन्द्रिय पदार्थ है वह किसी भी इन्द्रिय से एवं क्षायोपशमिक ज्ञान से गम्य नहीं हो सकता है। अतःइन परिणामों का कर्त्ता जो आत्मा है उसका ज्ञान इन परिणामों द्वारा हो जाता है। इन परिणामों का जो कर्त्ता है वही उन परिणामों का कारण होता है। गौतमस्वामी पुनः प्रभुसे पूछते है (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि जीव आत्मभाव द्वारा जीवभावको प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं-(गोयमा !) हे गौतम ! (जीवेणं) जीव (अणंताणं) अनन्त (अभिणिबोहिय नाणपज्जवाणं) आभिनिबोधिकज्ञान-मतिज्ञान की पर्यायों के सर्वज्ञप्रतिज्ञाद्वारा किये गये विभागों के उपयोग को प्राप्त करता है। तात्पर्य यह है कि ज्ञान में शक्ति के अंश अनन्त हुआ करते हैं। प्रत्येक जीव तत्तत् आवारक कर्म के क्षयोपशम आदि

ચૈતન્યને બતાવે છે, એવું આ કથન કારણજ્ઞાન ને માટે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-આત્મા અતીન્દ્રિય પદાર્થ છે તેને કોઈ પણ ઇન્દ્રિયથી કે ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનથી ઓળખી શકાતો નથી તેથી તે પરિણામોનો કર્ત્તા જે આત્મા છે તેનું જ્ઞાન એ પરિણામો દ્વારા જ થાય છે. તે પરિણામોનો જે કર્ત્તા છે, તે જ તે પરિણામોનુ કારણ હોય છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુએ જે ઉત્તર આપ્યો તેનું કારણ જાણવાને માટે પ્રશ્ન કરે છે- (से केणट्ठणं जाव वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે "જીવ આત્મપરિણામોદ્વારા ચૈતન્યભાવ પ્રકટ કરે છે એમ કહેવામા કોઇ હરકત નથી? તેનો ઉત્તર મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે (गोयमा !) હે ગૌતમ (जीवेणं) જીવ (अणंताणं) અનંત (आभिणिबोहियनाणपज्जवाण) આભિનિબોધિક જ્ઞાન (મતિજ્ઞાન)ની પર્યાયોના સર્વજ્ઞપણાદ્વારા કરાયેલા વિભાગોના ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનમા શક્તિના અંશ

अथ लोकस्थितिवर्णनम्—

पूर्वं लोकान्तरिलोकपदार्थाना, निरूपणं कृतं, तत्सम्बन्धात्सम्प्रति लोकस्थितिं प्रकरणप्राप्ताम्—'अत्थि णं भंते चि,' इत्यादि ।

मूलम्—अत्थि णं भगवं गोयमे समणं जाव एवं वयासी—कइविहा णं भंते! लोयट्ठिई पन्नत्ता?, गोयमा! अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता, तं जहा—आगासपइट्ठिए वाए, वायपइट्ठिए उदही, उदहिपइट्ठिया पुढवी, पुढविपइट्ठिया तसा थावरा पाणा, अजीवा जीवपइट्ठिया, जीवा कम्मपइट्ठिया, अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ अट्ठविहा जाव जीवा कम्मसंगहिया?, गोयमा! से जहा नामए केइ पुरिसे वत्थिमाडोवेइ, वत्थिमाडोवेत्ता उप्पिं सितं बंधइ, बंधित्ता मज्झे गंठिं बंधइ, बंधित्ता उवरिल्लं गंठिं मुयइ, मुइत्ता उवरिल्लं देसं वामेइ, उवरिल्लं देसं वामेत्ता, उवरिल्लं देसं आउकायस्स पूरेइ, पूरित्ता उप्पिं सितं बंधइ, बंधित्ता मज्झिल्लगंठिं मुयइ, से णूणं गोयमा! आउकाए तस्स वाउकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ?, हंता चिट्ठइ, से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया। से जहा वा केइ पुरिसे वत्थिं आडोवेइ आडोवित्ता कडीए बंधइ, बंधित्ता अत्थाहमतारमपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा, से णूणं गोयमा! से पुरिसे तस्स आउकायस्स उवरिमतले चिट्ठइ?, हंता चिट्ठइ, एवं खलु अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता, जाव जीवा कम्मसंगहिया ॥ सू० ५ ॥

छाया—अस्ति इति भगवान् गौतम श्रमणं यावत् एवमवादीत्—कतिविधा भदन्त! लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता?, गौतम! अष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—आकाशप्रतिष्ठितो वातः, वातप्रतिष्ठितः उदधिः, उदधिप्रतिष्ठिता

आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवा अनन्ता इति भावः " एवं सुयणाणपज्जवाणं " एवं श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् अनन्तानामित्यस्य सर्वत्र सम्बन्धस्तेनाऽनन्तानां श्रुतज्ञानपर्यवाणामित्यर्थः एवमेवाऽवधिज्ञानादावपि योजनीयम् " ओहिणाणपज्जवाणं " अवधिज्ञानपर्यवाणामनन्तानाम् " मण पज्जवणाणपज्जवाणं " मनःपर्यवज्ञानपर्यवाणाम्-" केवलणाणपज्जवाणं " केवलज्ञानपर्यवाणाम् " मइ अन्नाणपज्जवाणं " मत्यज्ञानपर्यवाणाम् "सुअअण्णाण पज्जवाणं" श्रुताज्ञान पर्यवाणाम् " विभंगण्णाण पज्जवाणं ' विभंगज्ञानपर्यवाणाम्-' चक्खुदंसणपज्जवाणं ' चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम्, ' अचक्खुदंसणपज्जवाणं ' अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् ' ओहिदंसणपज्जवाणं ' अव-

---

शरूप मतिज्ञान आदि के अनन्त अंशों में से किसी एक अंश को प्रकट करता रहता है ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं है इसी तरह का विवेचन श्रुतज्ञान आदि के विषय में भी समझना चाहिये। (अनन्त) इस पद का संबंध यहां सब जगह कर लेना चाहिये। तथा च- (एवं सुयणाणपज्जवाणं) इसी प्रकार से वह ससारी जीव अनन्त श्रुतज्ञान की पर्यायों के उपयोग को- (ओहिनाणपज्जवाणं) अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) मनः पर्यवज्ञान की अनन्तपर्यायों के (केवलणाणपज्जवाणं) केवलज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मई अन्नाणपज्जवाणं) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायों के (सुय अण्णाणपज्जवाणं) श्रुताज्ञान की अनन्तपर्यायों के, (विभंगणाणपज्जवाणं) विभंगज्ञान की अनन्तपर्यायों के (चक्खुदंसणपज्जवाणं) चक्षुर्दर्शन की अनंतपर्यायों के (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) अचक्षुर्दर्शन की अनंतपर्यायों

કોઇ એક અંશને પ્રકટ કરતો રહે છે-એવું કહેવામાં કોઇપણ પ્રકારનો બાધ નથી. શ્રુતજ્ઞાન આદિના) વિષયમાં પણ એજ પ્રકારનું કથન સમજી લેવું "अनन्त" અનન્ત પદનો સંબંધ અહીં બધી જગ્યાએ કરી લેવો જોઇએ વળી (एवं सुयणाणपज्जवाणं) તે સંસારી જીવ અનંત શ્રુતજ્ઞાનની પર્યાયોનો ઉપયોગને, (ओहिनाणपज्जवाणं) અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને, (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) મનઃપર્યવજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને (केवलणाणपज्जवाणं) કેવળજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને, પ્રાપ્ત કરે છે, તથા જે (मइ अण्णाणपज्जवाणं) મતિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (सुयअण्णाणपज्जवाणं) શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (विभंगणाण पज्जवाणं) વિભંગજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (चक्खुदंसणपज्जवाणं) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના,

के अनुसार उन २ वाच्यिके अर्थों को जितने रूप में ग्राह्य कर सकता है -ग्रहण करता है। मतिज्ञान में भी इसी तरह के वाच्यि के अर्थ अनन्त होते हैं। छद्मस्थानं जीवों की बुद्धिगम्य ये अर्थ नहीं हुआ करते हैं-इन्हें तो सर्वज्ञ ही साक्षात् जानता है। हां अनुमानादि द्वारा छद्मस्थ भी इन्हें परोक्षरूप से जान सकता है ये मतिज्ञान के अनंत भाव्यांश ही यहां पर्यायशब्द से गृहीत हुए हैं। ये सर्वज्ञ प्रज्ञापूर्वक माने गये हैं। जीव जब उत्थान आदि क्रियाओं के करनेमें व्यापारित होता है तब वह इन क्रियाओं द्वारा अपने स्वरूपभूत उपयोग स्वरूप को प्रकट करता है यह उपयोगरूप उसका अनेक धाराओं में बहता रहता है कभी वह मतिज्ञान रूप में तो कभी वह श्रुतज्ञान रूप में कभी अवधिज्ञानरूप में तो कभी मनःपर्यय ज्ञानरूप में कभी केवलज्ञानरूप में तो कभी मतीअज्ञान आदि आदि अनेक रूप में संसारी जीव जब उत्थान, शयन आदि क्रियाओं में लगता है तब वह इन क्रियाओं के करते समय मतिज्ञान आदि की अनन्त पर्यायों में से किसी न किसी एक पर्याय को धारण किये हुए रहता है। इससे यह बात प्रकट होती है कि वह संसारी जीव क्रियाओं के करते समय अपने स्वरूप भूत उपयोग के अ

અનંત હોય છે પ્રત્યેક દ્રવ્ય તે તે વ્યાવહારિક કર્મના ક્ષયોપશમ આદિ અનુકૂળ તે તે શક્તિના અંશને જેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરી શકાય તેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરે છે મતિજ્ઞાનમાં પણ તે પ્રકારની શક્તિના અંશ અનંત હોય છે જે અંશ છદ્મસ્થજીવોને માટે તો બુદ્ધિગમ્ય હોતા નથી-તેમને તો સર્વજ્ઞ જ સાક્ષાત્ જાણે છે હાં અનુમાન આદિ દ્વારા છદ્મસ્થ પણ તેમને પરોક્ષરૂપે જાણી શકે છે મતિજ્ઞાનનાજે અનંત શક્તિ અંશોને જ અહીં (પર્યાય) પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે જે સર્વજ્ઞ પ્રજ્ઞાપૂર્વક મનાયા છે જીવ જ્યારે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં પ્રવૃત્ત બનેલો હોય છે, ત્યારે તે ક્રિયાઓ દ્વારા તે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગ સ્વરૂપને પ્રકટ કરે છે તેનું તે ઉપયોગરૂપ સ્વરૂપ અનેક ધારાઓમાં વહેતું રહેછે-ક્યારેક મતિજ્ઞાનરૂપે તો ક્યારેક શ્રુતજ્ઞાન રૂપે ક્યારેક અવધિજ્ઞાન રૂપે તો ક્યારેક મનઃપર્યય જ્ઞાન રૂપે, ક્યારેક કેવલજ્ઞાન રૂપે તો ક્યારેક મતિ અજ્ઞાન આદિ અનેક રૂપે તે વહેતું રહે છે જ્યારે જીવ જ્યારે ઉત્થાન, શયન આદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે ક્રિયાઓ કરતી વખતે તે મતિજ્ઞાન આદિની અનંત પર્યાયોમાંથી કોઇને કોઇ એક પર્યાયને ધારણ કરેલ રહે છે તેથી એ વાત પ્રકટ થાય છે કે તે સંસારીજીવ ક્રિયાઓ કરતી વખતે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગના અંશરૂપ મતિજ્ઞાન આદિના અનંત અંશોમાંથી

आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवा अनन्ता इति भावः " एवं सुयणाणपज्जवाणं " एवं श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् अनन्तानामित्यस्य सर्वत्र सम्बन्धस्तेनाऽनन्तानां श्रुतज्ञानपर्यवाणामित्यर्थः एवमेवाऽवधिज्ञानादावपि योजनीयम् " ओहिणाणपज्जवाणं " अवधिज्ञानपर्यवाणामनन्तानाम् " मण पज्जवणाणपज्जवाणं " मनःपर्यवज्ञानपर्यवाणाम्-" केवलणाणपज्जवाणं " केवलज्ञानपर्यवाणाम् " मइ अण्णाणपज्जवाणं " मत्यज्ञानपर्यवाणाम् "सुअअण्णाण पज्जवाणं" श्रुताज्ञान पर्यवाणाम् " विभंगणाण पज्जवाणं ' विभंगज्ञानपर्यवाणाम्-' चक्खुदंसणपज्जवाणं ' चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम्. ' अचक्खुदंसणपज्जवाणं ' अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् ' ओहिदंसणपज्जवाणं ' अव-

---

शरूप मतिज्ञान आदि के अनन्त अंशों में से किसी एक अंश को प्रकट करता रहता है ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं है इसी तरह का विवेचन श्रुतज्ञान आदि के विषय में भी समझना चाहिये। (अनन्त) इस पद का संबंध यहां सब जगह कर लेना चाहिये। तथा च-(एवं सुयणाणपज्जवाणं) इसी प्रकार से वह संसारी जीव अनन्त श्रुतज्ञान की पर्यायों के उपयोग को-(ओहिनाणपज्जवाणं) अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) मनः पर्यवज्ञान की अनन्तपर्यायों के (केवलणाणपज्जवाणं) केवलज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मई अण्णाणपज्जवाणं) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायों के (सुय अण्णाणपज्जवाणं) श्रुताज्ञान की अनन्तपर्यायों के, (विभंगणाणपज्जवाणं) विभंगज्ञान की अनन्तपर्यायों के (चक्खुदंसणपज्जवाणं) चक्षुर्दर्शन की अनंतपर्यायों के (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) अचक्षुर्दर्शन की अनंतपर्यायों

કોઇ એક અંશને પ્રકટ કરતો રહે છે-એવું કહેવામાં કોઇપણ પ્રકારનો બાધા નથી. શ્રુતજ્ઞાન આદિના વિષયમાં પણ એજ પ્રકારનું કથન સમજી લેવું "अनन्त" અનન્ત પદનો સંબંધ અહીં બધી જગ્યાએ કરી લેવો જોઇએ. વળી (एवं सुयणाणपज्जवाणं) તે સંસારી જીવ અનંત શ્રુતજ્ઞાનની પર્યાયોના ઉપયોગને, (ओहिनाणपज्जवाणं) અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) મનઃપર્યવજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને (केवलणाणपज्जवाणं) કેવળજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે, અને તેજ રીતે (मई अण्णाणपज्जवाणं) મતિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (सुयअण्णाणपज्जवाणं) શ્રુતઅજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (विभंगणाण पज्जवाणं) વિભંગજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (चक्खुदंसणपज्जवाणं) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના

विदर्शनपर्यवाणाम् ' केवलदंसणपज्जवाणं ' केवलदर्शनपर्यवाणम् ' उवओगं गच्छइ ' उपयोगं गच्छति, उपयोगलक्षणजीवभाव उत्पानादौ आत्मभावेन वर्त्तमान इति वक्तव्यम् । नन्नु यदि उत्पानादि आत्मपरिणामे वर्त्तमानो जीव आभिनिबोधिकज्ञानादिस्वरूपं प्राप्नोति तत् किमेतावतैव जीवभाव चैतन्य मुपदर्शयतीति पक्षस्य स्यादित्याकूतायाह-' उवओग ' इत्यादि ' उवओग

के (ओहिदंसणपज्जवाणं) अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवलदंसणपज्जवाणं) केवलदर्शन की अनन्तपर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को पाता है । इस कथन का भाव इस प्रकार से समझना चाहिये कि सिद्धान्त में उपयोग मूलतः दो प्रकार का कहा गया है १ दर्शनोपयोग और दूसरा ज्ञानोपयोग । (उपयोगो लक्षणम्) के अनुसार जीव का स्वरूप उपयोग है । चक्षुर्दर्शन, अचक्षुर्दर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन के भेदसे दर्शनोपयोग चार प्रकार का होता है, और मति ज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान, मन पर्यवज्ञान और केवलज्ञान के भेद से तथा मति अज्ञान, श्रुताज्ञान और विभंगज्ञान इनतीन अज्ञानों के भेद से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का होता है उपयोग जीव में ही पाया जाता है, अजीव में नहीं । अतः जब जीव उत्पान आदि क्रियाओं वाला होता है तब वह इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग वाला रहता है ।

शंका-केवल दर्शन और केवलज्ञान ये उपयोग तो अर्हत्केवली एवं

(ओहिदंसण पज्जवाण) અવધિ-દર્શનની અનંત પર્યાયોના અને (केवलदंसणपज्जवाण) કેવળ દર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओगं गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે આ કથનનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે સમજવો જોઇએ-સિદ્ધાંતમાં ઉપયોગના મુખ્ય બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દર્શનોપયોગ (૨) જ્ઞાનોપયોગ (उपयोगो लक्षणम्) અનુસાર જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ છે. ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન અવધિદર્શન અને કેવલ દર્શનના ભેદથી દર્શનોપયોગના ચાર પ્રકાર છે અને જ્ઞાનોપયોગના નીચે પ્રમાણે આઠ ભેદ છે-(૧) મતિજ્ઞાન, (૨)શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન (૫) કેવલ જ્ઞાન, (૬) મતિ અજ્ઞાન (૭) શ્રુત અજ્ઞાન, અને (૮) વિભંગજ્ઞાન ઉપયોગનું લક્ષણ કહ્યા જ છોય છે-અજીવમાં હોતુ નથી. તેથી જ્યારે જીવ ઉત્પાનાદિ ક્રિયાઓ વાળો હોય છે ત્યારે તે ઉપરોક્ત ઉપયોગોમાંથી કોઈ ને કોઈ ઉપયોગવાળો રહે છે

શંકા-કેવલદર્શન અને કેવલજ્ઞાન, એ બે ઉપયોગ તો અર્હંત કેવળી અને

लक्खणेणं जीवे से ' उपयोगलक्षणः खलु जीवः सः उपयोगो ज्ञानं तदेव लक्षणं स्वरूपं यस्य स उपयोगलक्षणः उपयोगस्वभाव एव – जीवः उपयुज्यते वस्तुपरिच्छेदम्प्रति व्यापार्य्यते जीवोऽनेनेति उपयोगः अत उपयोगस्वरूपं जीवभाव

सिद्ध परमात्मा में पाये जाते हैं पर वहां उत्थान आदि क्रियाएँ तो पाई नहीं जाती, फिर यह बात कैसे मानी जा सकती है कि उत्थनादि क्रियाओं में वर्तता जीव उपयोग को प्राप्त करता है।

समाधान—अर्हंत अवस्थामें तो उत्थानादि क्रियाएँ शरीर के सद्भाव से रहती ही हैं–इसमें तो कोई बाधा ही नहीं है। अब रही सिद्धपरमात्माकी बातको सिद्धोंमें ये क्रियाएँ नहीं पाई जाती हैं–क्यों कि वे अशरीरी हैं। परन्तु वहां इन दो उपयोगों के होने में बाधा ही कौनसी है। बाधा तो कब कही जा सकती कि जब ऐसा कहा गया होता कि उपयोगके रहने पर उत्थानादि क्रियाएँ होती हैं। यहां तो यह प्रकट किया गया है कि उत्थानादिक्रियाओं के सद्भाव में जीव इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग को प्राप्त करता है। शंका–उत्थान आदिरूप आत्मपरिणाम में वर्तमान जीव आभिनिबोधिक ज्ञानादिरूप उपयोग को प्राप्त करता है तो क्या वह इससे ही अपने चैतन्य को प्रकाशित करता है ऐसा कहा जा सकता है तो इस शंका का समाधान इस प्रकार से है (उवओगलक्ख-

---

સિદ્ધ પરમાત્માઓમાંજ હોય છે; પણ તેઓમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ તો હોતો નથી. તો પછી એ વાત કેવી રીતે માની શકાય કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ કરતો જીવ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે?

સમાધાન–અર્હંત અવસ્થામાં તો શરીરનો સદ્ભાવ હોવાથી ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ રહે છે જ– તેમાં તો કોઇ હરકત નથી. હવે રહી સિદ્ધ પરમાત્માઓની વાત. સિદ્ધ પરમાત્માઓ તો તે ક્રિયાઓ કરતા નથી, કારણ કે તેમને શરીર જ હોતા નથી. પણ તેમનામાં એ બે ઉપયોગોનુ અસ્તિત્વ હોવામાં શી હરકત છે? આ કથનમાં વાંધો તો ત્યારે જ નડે કે જ્યારે એવું કહેવામાં આવ્યું હોય કે ઉપયોગના સદ્ભાવમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ થાય છે અહીં તો એવુ કહેવામાં આવ્યું છે કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓના સદ્ભાવમા જીવ એ ઉપયોગોમાથી કોઇ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે

શંકા––ઉત્થાનાદિ રૂપ આત્મપરિણામમાં પ્રવૃત્ત જીવ આભિનિબોધિક જ્ઞાનાદિરૂપ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. તો શું તેની મદદથી જ તે પોતાના ચૈતન્યને પ્રકટ કરે છે?

विदर्शनपर्यवाणाम् ' केवलदंसणपज्जवाणं ' केवलदर्शनपर्यवाणम् ' उवओगं गच्छइ ' उपयोगं गच्छति, उपयोगलक्षणजीवभावः उत्थानादौ आत्मभावेन वर्त्तमान इति वक्तव्यम् । ननु यदि उत्थानादि आत्मपरिणामे वर्त्तमानो जीव आभिनिबोधिकज्ञानादिस्वरूपं प्राप्नोति तत् किमेतावतैव जीवमात्रं चैतन्य मुपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यादित्याशङ्क्याहमाह-' उपयोग ' इत्यादि ' उपयोग

के (ओहिदंसणपज्जवाणं) अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवलदंसणपज्जवाणं) केवलदर्शन की अनन्तपर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को पाता है । इस कथन का भाव इस प्रकार से समझना चाहिये कि सिद्धान्त में उपयोग मूलतः दो प्रकार का कहा गया है (दर्शनोपयोग और दूसरा ज्ञानोपयोग । (उपयोगो लक्षणम्) के अनुसार जीव का स्वरूप उपयोग है । चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन के भेदसे दर्शनोपयोग चार प्रकार का होता है, और मति ज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान, मनः पर्यवज्ञान और केवलज्ञान के भेद से तथा मति अज्ञान, श्रुताज्ञान और विभंगज्ञान इनतीन अज्ञानों के भेद से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का होता है उपयोग जीव में ही पाया जाता है; अजीव में नहीं । अतः जब जीव उत्थान आदि क्रियाओं वाला होता है तब वह इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग वाला रहता है ।

शंका-केवल दर्शन और केवलज्ञान ये उपयोग तो अर्हंतकेवली एवं

(ओहिदंसण पज्जवाण) અવધિ-દર્શનની અનંત પર્યાયોના અને (केवलदंसणपज्जवाण) કેવળ દર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओगं गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે આ કથનનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે સમજવો જોઇએ-સિદ્ધાંતમાં ઉપયોગના મુખ્ય બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દર્શનોપયોગ (૨) જ્ઞાનોપયોગ (उवओगो लक्षणम्) એનું લક્ષણ ઉપયોગ છે. ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન અવધિદર્શન અને કેવળ દર્શનના ભેદથી દર્શનોપયોગના ચાર પ્રકાર છે અને જ્ઞાનોપયોગના નીચે પ્રમાણે આઠ ભેદ છે-(૧) મતિજ્ઞાન, (૨)શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન (૫) કેવલ જ્ઞાન, (૬) મતિ અજ્ઞાન (૭) શ્રુત અજ્ઞાન, અને (૮) વિભંગજ્ઞાન ઉપયોગનું લક્ષણ હોવાથી જ જીવ છે-અજીવમાં હોતુ નથી. તેથી જ્યારે જીવ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ વાળો હોય છે ત્યારે તે ઉપયોગ ઉપયોગોમાંથી કોઈ ને કોઈ ઉપયોગવાળો રહે છે

શંકા-કેવલદર્શન અને કેવલજ્ઞાન, બે જે ઉપયોગ તો અર્હંત કેવલી અને

जे जीवपएसा, ते नियमा एगिंदियपएसा, जाव अणिंदियपएसा जे अजीवा ते दुविवहा पण्णत्ता। तं जहा रूवीय अरूवीय, जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता. तं जहा खंधा खंधदेसा खंधपएसा परमाणुपोग्गला. जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता. तं जहा-धम्मत्थिकाए. नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायपएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थिकायस्स-पएसा अद्धासमये। अलोगागासेणं भंते! किं जीवा पुच्छा तह चेव। गोयमा! नो जीवा जाव, नो अजीवप्पएसा, एगे अजीव प्पएसा एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलघुए अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणंतभागूणे ॥ सू० ४ ॥

छाया-कतिविधः खलु भदन्त! आकाशः प्रज्ञप्तः? गौतम! द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तः तद्यथा लोकाकाशश्चालोकाकाशश्च। लोकाकाशे खलु भदन्त! किं जीवाः

आकाशनिरूपण-

पूर्वप्रकरण में जीव का विचार किया गया है। जीव का आधार क्षेत्र आकाश है। अतः जीव का आधारभूत क्षेत्र होने के कारण अब सूत्रकार आकाश का निरूपण करते हैं-(कइविहेणं भंते! आगासे पण्णत्ते) इत्यादि।

सूत्रार्थ-(कइविहे णं भंते। आगासे पण्णत्ते?) हे भदन्त। आकाश कितने प्रकार का कहा गया है? (गोयमा!) हे गौतम! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) आकाश दो प्रकार का कहा गया है। (तंजहा) वे दो प्रकार

આકાશ નિરૂપણ

પૂર્વ પ્રકરણમા જીવનો વિચાર કર્યો જીવનું આધાર ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી જીવનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેના આધારરૂપ ક્ષેત્ર હોવાને કારણ સૂત્ર કાર હવે આકાશનુ નિરૂપણ કરે છે-(कइविहेणं भंते! आगासे पण्णत्ते) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(कइविहेण भंते! आगासे पण्णत्ते) હે ભદન્ત! આકાશ કેટલા પ્રકારનુ કહ્યુ છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) આકાશ બે પ્રકારના કહ્યાં છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(लोयागासे य अलोयागासे य) (१)

त्थानादि – आत्ममावेनोपदर्शयति 'स तेणट्ठेणं – एवं वुच्चइ गोयमा ' अनेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! ' जीवेणं सउट्ठाणे जाव–यवत्थ सिया ' जीवः खलु सोत्थानो यावत् वक्तव्यं स्यात् अत्र यावत्पदेन ' स कम्मे ' इत्यारभ्य ' जीवभावं उवदंसेति ' एतत्पर्यन्तस्य ग्रहण भवतीति भाव ॥ सू० १ ॥

अथाकाशनिरूपणम्—अनन्तरपूर्वं प्रकरणे जीवस्य विचारः कृतः स च जीव आकाशाधार इति जीवाऽऽकाशनिरूपणायाह–" कइ विहेणं " इत्यादि ।

मूलम्–कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते, गोयमा ! दुविहे आगासे पण्णत्ते–तं जहा लोयागासे य अलोयागासे य, लोयागासे णं भंते ! किं जीवा जीवदेसा, जीवप्पएसा अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा, गोयमा ! जीवावि, जीवदेसावि, जीवप्पएसावि, अजीवावि, अजीवदेसावि, अजीवप्पएसावि, जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा,

जे णं जीवे से णं उवओगलक्खणे) जीव का लक्षण उपयोग है-ज्ञान है क्यों कि इसके द्वारा ही वह वस्तुपरिच्छेद के प्रति व्यापृत किया जाता है-इस कारण वह उपयोग स्वरूप जीव भाव को उत्थान आदि आत्मभाव द्वारा प्रकट करता है। (तेणट्ठेणं एवं वुच्चइ जीवेणं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण ऐसा कहा है कि उत्थानक्रिया वाला जीव यावत् जीव भाव को प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है। यहां यावत् पद से (सकम्मे) यहां से लेकर (जीवभावं उवदंसेति) यहां तक का पाठ ग्रहण किया गया है ॥ सू० १ ॥

ઉપયોગલક્ષણ જે જીવે તે એણ્ણટ્ઠેણં) હેતુનું કથન કરેલ છે-જ્ઞાન છે-કારણ કે તેના દ્વારા જ તેને વસ્તુ પરિચ્છેદ તરફ પ્રવૃત્ત કરાય છે-તે કારણે જે ઉપયોગરૂપ સ્વભાવને ઉત્થાનાદિ આત્મભાવ દ્વારા પ્રગટ કરે છે (તેણટ્ઠેણં एवं वुच्चइ जीवेणं सउट्ठाण भाव वत्तव्व सिया) તે કારણે એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાવાળો હોય પોતાના પરિણામો દ્વારા હોવાપણા સ્વરૂપ પોતાનું ભાવ પ્રગટ કરે છે અહીં (યાવત્) (પદ થી) પહેલાં (સકમ્મે) થી લઈને (जीवभाव उवदंसेति) પર્યન્તનો સૂત્ર પાઠ અહિંયા ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે ॥સૂ. ૧॥

जे जीवपएसा, ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा जे अजीवा ते दुविवहा पण्णत्ता। तं जहा रूवीय अरूवीय, जे रूवी ते चउव्विहा पणत्ता. तं जहा खंधा खंधदेसा खंधपएसा परमाणुपोग्गला. जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता. तं जहा-धम्मत्थिकाए. नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायपएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थिकायस्स-पएसा अद्धासमये। अलोगागासेणं भंते! किं जीवा पुच्छा तह चेव। गोयमा! नो जीवा जाव, नो अजीवप्पएसा, एगे अजीव प्पएसा एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलघुए अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणंतभागूणे ॥ सू० ४ ॥

छाया-कतिविधः खलु भदन्त! आकाशः प्रज्ञप्तः? गौतम! द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तः तद्यथा लोकाकाशश्चालोकाकाशश्च। लोकाकाशे खलु भदन्त! किं जीवाः

आकाशनिरूपण-

पूर्वप्रकरण में जीव का विचार किया गया है। जीव का आधार क्षेत्र आकाश है। अतःजीव का आधारभूत क्षेत्र होने के कारण अब सूत्रकार आकाश का निरूपण करते हैं-(कइविहेणं भंते! आगासे पण्णत्ते) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(कइविहे णं भंते। आगासे पण्णत्ते?) हे भदन्त। आकाश कितने प्रकार का कहा गया है? (गोयमा!) हे गौतम! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) आकाश दो प्रकार का कहा गया है। (तंजहा) वे दो प्रकार

આકાશ નિરૂપણ

પૂર્વ પ્રકરણમા જીવનો વિચાર કર્યો જીવનું આધાર ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી જીવનુ નિરૂપણ કર્યા પછી તેના આધારરૂપ ક્ષેત્ર હોવાને કારણ સૂત્ર કાર હવે આકાશનુ નિરૂપણ કરે છે-(कइ विहेणं भंते! आगासे पण्णत्ते) ઈત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(कइविहेण भंते! आगासे पण्णत्त) હે ભદન્ત! આકાશ કેટલા પ્રકારનું કહ્યુ છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) આકાશ બે પ્રકારના કહ્યા છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(लोयागासे य अलोयागासे य) (१)

जीवदेशा जीवप्रदेशाः अजीवाः अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः? गौतम ! जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि अजीवा अपि अजीव देशा अपि अजीवप्रदेशा अपि ये जीवास्ते नियमात् एकेन्द्रियाः द्वीन्द्रिया त्रीन्द्रियश्चतुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रिया अनिन्द्रियाः ये जीवदेशास्तेनियमात् एकेन्द्रियदेशाः यावदनिन्द्रियदेशा ये जीव

अकाश के ये हैं-(लोयागासे य अलोयागासे य) एक लोकाकाश दूसरा अलोकाकाश। (लोयागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) हे भदन्त ! लोकाकाश में जीव हैं ? या जीव के देश हैं ? अथवा कि जीवके प्रदेश हैं ? अजीव हैं ? या अजीव के देश हैं ? अथवा कि अजीव के प्रदेश हैं ? (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पएसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पएसा वि,) उस लोकाकाश में जीव भी हैं, जीवके देश भी हैं और जीव के प्रदेश भी हैं। अजीव भी हैं, अजीवके देश भी हैं, तथा अजीव के प्रदेश भी हैं। (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिय, पंचिंदिया, अणिंदिया) जब ऐसा माना जाता है कि लोकाकाश में जीव हैं अर्थात् लोकाकाश में जीव रहते हैं-तो जो जीव उस लोकाकाश में रहते हैं-वे जीव नियम से कोईतो एकेन्द्रिय वाले होते हैं कोई दो इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई तीन इन्द्रिय वाले होते हैं, कई चार इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई पांच इन्द्रिय वाले होते हैं और कोई अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियों के होते हैं। (जे जीवदेसा ते नियमा ए

લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ. (लोयागासेणं भंते ! किं जीवा, जीव देसा, जीवप्पएसा अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) હે ભગવન્ ! લોકાકાશમાં શું જીવો છે ? કે જીવના દેશો છે ? કે જીવના પ્રદેશો છે ? કે અજીવ છે ? કે અજીવના દેશો છે ? કે અજીવના પ્રદેશો છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि, जीवदेस वि जीवप्पएसा वि, अजीवा वि अजीव देशादि अजीवप्पएसा वि) તે લોકાકાશમાં જીવો પણ છે, જીવના દેશ પણ છે, અને જીવના પ્રદેશ પણ છે, અજીવ પણ છે, અજીવના દેશ પણ છે અને અજીવના પ્રદેશ પણ છે (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) લોકાકાશમાં રહ્યા જે જીવો રહે છે તેમાના કોઈ જીવ નિયમથી જ એક ઇન્દ્રિયવાળા હોય છે, કોઈ બે ઇન્દ્રિયોવાળા હોયછે, કોઈ ત્રણ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે, કોઈ ચાર ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે કોઈ પાંચ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે અને કોઈ અનિન્દ્રિય ઇન્દ્રિયો વિનાના હોય છે (जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियमा) લોકાકા

पृथिवीप्रतिष्ठिताः त्रसाः स्थावराः प्राणाः४, अजीवाजीवप्रतिष्ठिताः५, जीवाः कर्मप्रतिष्ठिताः६, अजीवाः जीवसंगृहीताः७, जीवाः कर्मसंगृहीताः८। तत्केनार्थेन भदंत! एवमुच्यते। अष्टविधा यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः, गौतम! तद्यथा नामकः कश्चित् पुरुषो वस्तिमाटोपयति. वस्तिमाटोप्योपरि सितं बध्नाति, बद्ध्वा मध्ये खलु ग्रन्थि बध्नाति, बद्ध्वोपरितनां ग्रन्थिं मुञ्चति, मुक्त्वोपरितनं देशं वमयति उपरितनं देशं वमयित्वोपरितनं देशमप्कायेन पूरयति, पूरयित्वोपरि सितं बध्नाति, बद्ध्वा मध्यतनां ग्रन्थिं मुञ्चति, तन्नून गौतम! स अप्कायो वायुकायस्य उपरिमतले तिष्ठति?। हन्त तिष्ठति। तत्तेनार्थेन यावत् जीवाः कर्मसंगृहिताः।, तद्यथा वा कश्चित्पुरुषो वस्तिमाटोपयति,आटोप्य कट्यां बध्नाति,बद्ध्वाऽस्ताघाऽनारपौरुषेये उदकेऽवगाहेत, तद् नूनं गौतम! स पुरुषस्तस्याप्कायस्योपरिमतले तिष्ठति? हन्त तिष्ठति, एवं वाऽष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः ॥सू०५॥

टीका—'भंते त्ति' हे भदन्त इति संबोध्य 'भगवं गोयमे' भगवान् गौतमः 'समणं जाव' श्रमणं यावत्–अत्र यावच्छब्देन 'भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ वन्दित्ता नमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं

लोकस्थितिवर्णन—

पहिले लोकान्त आदि लोक के पदार्थों का निरूपण सूत्रकार ने किया। अब वे उन्हींके संबधसे लोकस्थिति की प्ररूपणा करनेके निमित्त सूत्र कहते हैं—"भंते त्ति" इत्यादि। (भंते! त्ति) हे भदंत! ऐसा संबोधन करके (भगवं गोयमे) भगवान् गौतमने (समणं जाव एवं वयासी) श्रमण भगवान् महावीरसे यावत् ऐसा कहा। यहां सूत्र में जो यह "जाव" पद आया है उससे सूत्रकार ने "भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे

લોકસ્થિતિવર્ણન

પહેલા લોકાન્ત વગેરે લોકના પદાર્થોનું નિરૂપણ કરીને સૂત્રકાર હવે તેમના સબંધથી લોકસ્થિતિની પ્રરૂપણા કરવાને માટે સૂત્ર કહે છે. "भंते त्ति" ઇત્યાદિ

(भंते त्ति) હે ભગવન્! એવું સંબોધન કરીને (भगवं गोयमे) ભગવાન્ ગૌતમે (समणं जाव एवं वयासी) મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યા સુધીનુ કથન ગ્રહણ કરવું અહી "यावत्" (પર્યન્ત) પદથી "भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे

जीवदेशाः जीवप्रदेशाः अजीवाः अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः? गौतम ! जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि अजीवा अपि अजीव देशा अपि अजीवप्रदेशा अपि ये जीवास्ते नियमात् एकेन्द्रियाः द्वीन्द्रिया त्रीन्द्रियपञ्चेन्द्रियाः पञ्चेन्द्रिया अनिन्द्रियाः ये जीवदेशास्तेनियमात् एकेन्द्रियदेशाः यावदनिन्द्रियदेशाः ये जीव-

---

आकाश के ये हैं-(लोयागासे य अलोयागासे य) एक लोकाकाश दूसरा अलोकाकाश। (लोयागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) हे भदन्त ! लोकाकाश में जीव हैं ? या जीव के देश हैं ? अथवा कि जीवके प्रदेश हैं ? अजीव हैं ? या अजीव के देश हैं ? अथवा कि अजीव के प्रदेश हैं ? (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पएसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पएसा वि,) उस लोकाकाश में जीव भी हैं, जीवके देश भी हैं और जीव के प्रदेश भी हैं। अजीव भी हैं, अजीवके देश भी हैं, तथा अजीव के प्रदेश भी हैं। (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिय, पंचिंदिया, अणिंदिया) अब ऐसा जाना जाता है कि लोकाकाश में जीव हैं अर्थात् लोकाकाश में जीव रहते हैं-तो जो जीव उस लोकाकाश में रहते हैं-वे जीव नियम से कोईतो एकइन्द्रिय वाले होते हैं, कोई दो इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई तीन इन्द्रिय वाले होते हैं, कई चार इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई पांच इन्द्रिय वाले होते हैं और कोई अनिन्द्रिय-बिना इन्द्रियों के होते हैं। (जे जीवदेसा ते नियमा ए

કાશના બે ભેદ છે (૧) અલોકાકાશ. (लोयागासेणं भंते ! किं जीवा, जीव देसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) હે ભદન્ત ! લોકાકાશમાં શું જીવો છે ? કે જીવના દેશો છે ? કે જીવના પ્રદેશો છે ? કે અજીવ છે ? કે અજીવના દેશો છે ? કે અજીવના પ્રદેશો છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि, जीवदेसा वि जीवप्पएसा वि, अजीवा वि अजीव देसादि अजीवप्पएसा वि) તે લોકાકાશમાં જીવો પણ છે, જીવના દેશ પણ છે, અને જીવના પ્રદેશ પણ છે, અજીવ પણ છે, અજીવના દેશ પણ છે અને અજીવના પ્રદેશ પણ છે (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) લોકાકાશમાં જે જીવો રહે છે તેમાંના કોઈ જીવ નિયમથી જ કોઈ એકેન્દ્રિયવાળા હોય છે, કોઈ બે ઇન્દ્રિયોવાળા હોયછે, કોઈ ત્રણ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે, કોઈ ચાર ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે કોઈ પાંચ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે અને કોઈ અનિન્દ્રિય ઇન્દ્રિયો વિનાના હોય છે (जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा) હોય છે

देशास्ते नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावदनिन्द्रियप्रदेशाः ये अजीवास्ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा रूपिणश्चारूपिणश्च ये रूपिणस्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा स्कन्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः येऽपि अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा धर्मास्तिकायो नो धर्मास्तिकायस्य देशः धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः अधर्मास्तिकायःनोऽधर्मास्तिकायस्य देशः अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः अद्धासमयः।

णिंदियदेसा) लोकाकाश में जो जीव के देश हैं वे नियम से एकेन्द्रिय जीव के देश हैं (जाव अणिंदिय देसा) यवत् इन्द्रिय विना के जीव के देश हैं। (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) लोकाकाश में जो अजीव हैं वे दो प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे-(रूवि य अरूवि य) एकरूपी अजीव और दूसरा अरूपी अजीव। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) जो रूपी अजीव हैं वे चार प्रकार के कहे गये हैं (तंजहा) जैसे-(खधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणुपुद्गल (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा-जो अरूपी अजीव हैं वे पांच प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमये) धर्मास्तिकाय है, धर्मास्तिकाय का देश नहीं हैं, धर्मास्तिकाय के प्रदेश हैं, अधर्मास्तिकाय है, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश नहीं है, अधर्मास्तिकाय

શમાં જીવના જે દેશ છે તે નિયમથી જ એકેન્દ્રિય જીવના દેશ છે, (જાવ અણિંદિય દેસા) અને દ્વીન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવ પર્યન્તના દેશ છે. (જે અજીવા તે દુવિહા પણ્ણત્તા) લોકાકાશમાં જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(રૂવી ય અરૂવી ય) (૧) રૂપી અજીવ (૨) અરૂપી અજીવ (જે રૂવી તે ચઉવ્વિહા પણ્ણત્તા) રૂપી અજીવના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (ખધા, ખંધદેસા, ખંધપએસા, પરમાણુપોગ્ગલા) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલ. (જે અરૂવી તે પંચવિહા પણ્ણત્તા) અરૂપી અજીવના પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (ધમ્મત્થિકાએ, નો ધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે ધમ્મત્થિકાયસ્સ પએસા, અધમ્મત્થિકાએ નો અધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે, અધમ્મત્થિકાયસ્સ પએસા, અદ્ધા સમયે) (૧) ધર્માસ્તિકાય છે ધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે (૩) અધર્માસ્તિકાય છે- અધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે અને (૫) અદ્ધા સમય છે

अलोकाकाशे खलु भदन्त ! किं जीवाः पृच्छा ? तथैव गौतम ! नो जीवा यावत् नो अजीवप्रदेशाः एष अजीवद्रव्यदेशः अगुरुलघुकः अनन्तैरगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः सर्वाकाशोऽनन्तभागोनः

टीका—'कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते' कतिविधः खलु भदन्त ! आकाशः प्रज्ञप्तः ? हे भदन्त ! आकाशस्य कियन्तो भेदाः सन्तीत्यर्थः अयञ्च प्रश्नः नैयायिकादिमतप्रसिद्धाकाशस्यैकत्वशङ्कानिराकरणपरक इति मानुपपन्नः प्रश्नः इति

के प्रदेश और अद्धासमय है, (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा, पुच्छा तहेव) हे भदन्त ! अलोकाकाश में क्या जीव हैं, इत्यादि रूप से पहिले की तरह ही यहां पर पृच्छा जाननी चाहिये। (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) अलोकाकाश में जीव नहीं हैं, यावत्-अजीव के प्रदेश भी नहीं हैं। (एगे अजीवदव्वदेसे) वह अलोकाकाश एक अजीव द्रव्य देश रूप है। (अगुरुलहुए अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणंतभागूणे) वह अगुरुलघु है और अनंत अगुरुलघु स्वभावधर्मों से संयुक्त है तथा अनन्त भाग से हीन सर्वाकाशरूप है क्यों कि अलोकाकाश की अपेक्षा से लोकाकाश अनन्तभागरूप है ॥ सू० ॥ ४ ॥

टीकार्थ—(कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते) गौतम स्वामी प्रभु महावीर से पूछ रहे हैं कि हे भदंत ! आकाश कितने प्रकार का प्रज्ञप्त कहा गया है ? अर्थात्- आकाश के कितने भेद हैं ? गौतम स्वामीने जो ऐसा प्रश्न किया है उसका कारण यह है कि नैयायिक आदि मत में

(अलोगागासेणं भंते ! किं जीवा पुच्छा तहेव) હે ભદન્ત ! અલોકાકાશમાં શું જીવો છે ? વગેરે પ્રશ્નો અહીંયા પહેલાંની જેમ પૂછવા જોઈએ. (વિસ્તારથી પૂછવા પ્રમાણે જ અહીં પૂછવા જોઈએ.) (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) અલોકાકાશમાં જીવો યાવત્ અજીવોના પ્રદેશો પણ નથી (एगे अजीवदव्वदेसे) તે અલોકાકાશ એક અજીવદ્રવ્ય દેશ રૂપ છે. (अगुरुलहुए अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासे अणंतभागूणे) તે અગુરુલઘુ સ્વભાવધર્મોથી યુક્ત છે, તથા અનન્ત ભાગ હીન સર્વાકાશરૂપ છે-કારણ કે અલોકાકાશની અપેક્ષાએ લોકાકાશ અનન્તમા ભાગરૂપ છે. (कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते) હે ભગવન્ ! આકાશના કેટલા પ્રકાર કહ્યા છે ? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનું કારણ એ છે કે નૈયાયિક આદિ

देशास्ते नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावदनिन्द्रियप्रदेशाः ये अजीवास्ते द्विविध प्रज्ञप्ताः तद्यथा रूपिणश्चारूपिणश्च ये रूपिणस्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा स्क न्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः येऽपि अरूपिणस्ते पञ्चविध प्रज्ञप्ताः तद्यथा धर्मास्तिकायो नो धर्मास्तिकायस्य देशः धर्मास्तिकायस्य प्रदेश अधर्मास्तिकायःनोऽधर्मास्तिकायस्य देशः अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः अद्धासमय

र्गिदियदेसा) लोकाकाश में जो जीव के देश हैं वे नियम से एकेन्द्रि जीव के देश हैं (जाव अणिंदिय देसा) यावत् इन्द्रिय विना के जीव के देश हैं। (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) लोकाकाश में जो अजीव वे दो प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे-(रूवि य अरूवि य) एकरूप अजीव और दूसरा अरूपी अजीव। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) जो रूपी अजीव हैं वे चार प्रकार के कहे गये हैं (तंजहा) जैसे-(खंधा खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणुपुद्गल (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा-जो अरूप अजीव हैं वे पांच प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमये) धर्मास्तिकाय है, धर्मास्तिकाय का देश नहीं हैं, धर्मास्तिकाय के प्रदेश हैं अधर्मास्तिकाय है, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश नहीं है, अधर्मास्तिका

શમાં જીવના જે દેશ છે તે નિયમથી જ એકેન્દ્રિય જીવના દેશ છે, (जाव अणिंदिय देसा) અને દ્વીન્દ્રિયથી લઇને અનિન્દ્રિય જીવ પર્યન્તના દેશ છે. (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) લોકાકાશમાં જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(रूवी य अरूवी य) (૧) રૂપી અજીવ (૨) અરૂપી અજીવ (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) રૂપી અજીવના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે (तंजहा) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલ. (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી અજીવના પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે. (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धा समये) (૧) ધર્માસ્તિકાય છે ધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે (૩) અધર્માસ્તિકાય છે- અધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે અને (૫) અદ્ધા સમય છે.

प्रश्नमकरोत् उत्तरितश्च भगवता द्विभेदेन अन्यथा लक्षणज्ञानाभावे-विभागस्या सम्य ग्भावात् लक्षणज्ञानानन्तरमेव सर्वत्र विभागस्य प्रश्नस्योत्थानादिति । तत्र लोका काशाऽलोकाकाशयोर्द्वयोरपीदं लक्षणम् धर्मास्तिकायादीनां द्रव्याणां वृत्तिर्यत्र भवति तत्क्षेत्रम् ते क्षेत्रद्रव्यैः सह विद्यमानो लोका एतद्विपरीतोऽलोकाकाश आकाश लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितोऽलोकाकाश इति ।

' लोयागासे णं भंते ! ' लोकाकाशे खलु भदन्त ! ' किं जीवा जीवदेसा जीवपदेसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपदेसा' किम् जीवाः जीवदेशाः जीवप्रदेशाः अजीवाः अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः ? हे भदन्त ! किं लोकाकाशे जीवादयः सन्ती

आकाश का लक्षण ज्ञात हैं । जहां कहीं पर भी विभाग का प्रश्न होता है वह उसके लक्षण ज्ञान के बाद ही होता है । आकाश लोकाकाश और अलोकाकाश इस तरह से दो भेद वाला कहा गया है सो जितने क्षेत्र में धर्मास्तिकायादिक द्रव्यों का अस्तित्व पाया जाता है उतने आकाश का नाम लोकाकाश है और उससे विपरीत अलोकाकाश । अलोकाकाश में केवल आकाश के सिवाय और कोई द्रव्यों का सद्भाव नहीं पाया जाता है । इसलिये (लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितोऽलोकाकाशः) इस कथन के अनुसार लोकरूप धर्मादिक द्रव्यों से उपलक्षित आकाश लोकाकाश और अलोकरूप धर्मादिक द्रव्यों के अभाव से उपलक्षित आकाश अलोकाकाश है– ऐसा निश्चित हो जाता है ।

(लोयागासे णं भंते !) हे भदन्त लोकाकाशमें (किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा) क्या जीव हैं, कि जीवदेश हैं, कि जीवप्रदेश हैं? यहां

સ્થાં તેના લક્ષણનું જ્ઞાન તો પહેલાં પ્રાપ્ત થયેલું હોવાથી આકાશના લોકાકાશ અને અલોકાકાશ, એવા બે ભેદ કહ્યા છે જેટલા ક્ષેત્રમાં ધર્માસ્તિકાયાદિક દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે એટલા ક્ષેત્રને-એટલા આકાશને-લોકાકાશ કહે છે, અને તેથી વિપરીત આકાશનું અલોકાકાશ છે આકાશકાશમાં આકાશ સિવાય કોઈપણ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ હોતો નથી. તેથી, જ (લોકોપલક્ષિતો લોકાકાશઃ અલોકોપલક્ષિતોઽલોકાકાશઃ) આ કથન અનુસાર લોક રૂપ ધર્માદિક દ્રવ્યોથી ઉપલક્ષિત આકાશને લોકાકાશ કહે છે અને અલોક રૂપ ધર્માદિક દ્રવ્યોના અભાવથી ઉપલક્ષિત આકાશને અલોકાકાશ કહે છે

પ્રશ્ન—(लोयागासे णं भंते) હે ભદન્ત ! લોકાકાશમાં (किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा) શું જીવો (જીવનું અસ્તિત્વ) છે ? જીવદેશો છે, કે જીવપ્રદેશો છે

भावः। भगवान् प्राह-' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' दुविहे आगासे पन्नत्ते ' द्विविधः आकाशः प्रज्ञप्तः ' तंजहा ' तद्यथा ' लोयागासेय-अलोयागासेय ' लोकाकाशश्चालोकाकाशश्च अवगाहनादानलक्षणम् आकाशत्व-मिति आकाशस्य सामान्यं लक्षणमित्याकारकं लक्षणं जानन् गौतमः षट्संख्यकं

आकाश को सर्वथा एक माना गया है अतः इस प्रकारकी मान्यता की निवृत्ति के निमित्त यह प्रश्न किया गया है। अतः ऐसा प्रश्न अनुचित नही माना जा सकता। प्रभु गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उनसे कहते हैं कि (गोयमा !) हे गौतम ! (दुविहे आगासे पन्नत्ते) आकाश दो भेद वाला कहा गया है। उसके वे दो भेद एक लोकाकाश और दूसरा अलोकाकाश ऐसे हैं यही बात (लोयागासे य अलोयागासे य) इस पाठ द्वारा प्रकट की गई है। अपने में जीवादिक द्रव्यों को स्थानदानदेना यही आकाश का सामान्य लक्षण है-सो इस सामान्य लक्षण को चित्त में रखकर गौतम ने प्रभु से छह प्रश्न इस प्रकार से किये और प्रभुने इन ६ छह प्रश्नोंका उत्तर आकाशके दो भेद समझा कर उन्हें उत्तर दिया, यदि गौतम को आकाश का सामान्य लक्षण ज्ञान न होता तो वे प्रभु से आकाश कितने प्रकार का है ऐसा प्रश्न न करते। परन्तु जब उन्हों ने ऐसा प्रश्न किया है तो इससे यही ज्ञात होता है कि उन्हें

મતાનુસાર આકાશને એક જ ગણવામા આવ્યું છે. તેથી એ માન્યતાનું નિવારણ-ખંડન-કરવાના હેતુથી આ પ્રશ્ન કરાયો છે. માટે તે પ્રશ્નને અનુચિત ગણી શકાય નહીં.

મહાવીર પ્રભુ તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે, (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (दुविहे आगासे पन्नत्ते) આકાશના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ-એજ વાત(लोयागासे य अलोयागासेय) પદો દ્વારા વ્યક્ત કરવામાં આવી છે

આકાશનું સામાન્ય લક્ષણ એ છે કે તે જીવાદિક દ્રવ્યોને પોતાની અંદર સ્થાન દાન આપે છે એ સામાન્ય લક્ષણને નજર સમક્ષ રાખી ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રકારના છ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે, અને મહાવીર પ્રભુએ આકાશના બે ભેદ સમજાવીને તે છ પ્રશ્નો ના ઉત્તર આપ્યા છે જો ગૌતમસ્વામીને આકાશના સામાન્ય લક્ષણનું જ્ઞાન ન હોત તો તેઓ પ્રભુને "આકાશ કેટલા પ્રકારનુ છે" એ પ્રશ્ન ન કરત પણ તેમણે એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે તેથી જાણી શકાય છે કે તેમને આકાશના લક્ષણનુ તો જ્ઞાન છે જ ન્યા વિભાગનો પ્રશ્ન ઉભો થતે હોય

सिद्ध एवेति यतो जीवाभीवादिदेशप्रदेशाना जीवाजीवै सहाभेदादिति जीवा दिग्रहणे सति तदीयप्रदेशादीनामुपादाने निरर्थकमेवामाति इति चेदुच्यते जीवा निरवयवा इति येषां मतं तन्मतनिराकरणायैव तथा कथनादिति गृहाण। भगवान् प्राह-' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जीवा वि जीवदेसावि जीवप्पएसावि ' जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि लोकाकाशे वर्तन्ते इति भावः। एवम् ' अजीवा वि अजीव देसावि अजीवपएसा वि ' अजीवा अपि अजीवदेशा अपि अजीवप्रदेशा अपि। ' जे जीवा ते नियमा एगिंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया अणिंदिया ' ये जीवास्तत्र लोका

सिद्ध हो जाती है कि वहा पर जीवदेश जीवप्रदेश अजीवदेश आदिकों का भी सद्भाव है, क्यों कि इनका उनके साथ अभेद है-तो फिर यहां पर सूत्र में स्वतन्त्र रूप से जीव अजीव के साथ जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीवदेश अजीवप्रदेश का ग्रहण क्यों किया गया है ?

समाधान-किसनेक वादी जन ऐसा मानते हैं कि जीव निरवयव हैं सो इस कथनसे उन्हें यह समझाया गया है कि जीव निरवयव नहीं है सावयव है। इसीलिए सूत्र में जीव देश आदि पदों का स्वतन्त्ररूप से पाठ कहा गया है। इस तरह (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि जीवदेसा वि जीवप्पएसा वि) लोकाकाश में समस्त जीव द्रव्य भी, जीवद्रव्य के देश भी, और उनके प्रदेश भी हैं। इसी तरह (अजीवा वि अजीवदेसा वि अजीवपएसा वि) अजीवद्रव्य भी, अजीवद्रव्य के देश भी और उनके प्रदेश भी हैं। (जे जीवा-ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउ

ત્યાં જીવપ્રદેશ, અજીવદેશ, અને અજીવ પ્રદેશ આદિનો પણ સદ્ભાવ છે, કારણ કે તેમનો તેમની સાથે અભેદ છે તો પછી સૂત્રકારે અહીં જીવ અને અજીવની સાથે જીવદેશ,પ્રદેશ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશને સ્વતંત્રરૂપે શા માટે ગ્રહણ કર્યા છે ?

સમાધાન-કેટલાક મતવાદીઓ એવું માને છે કે જીવ નિરવયવ છે તો આ કથન દ્વારા તેમને એ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે જીવ નિરવયવ નથી પણ સાવયવ (અવયવસહિત) છે તે માટેજ સૂત્રમા જીવદેશ આદિ પદોને સ્વતંત્ર રીતે ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पएसावि) લોકાકાશમાં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય પણ છે, જીવદ્રવ્યના દેશપણ છે અને જીવદ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (अजीवा वि अजीवदेसा वि अजीवपएसा वि) એજ પ્રમાણે તેમાં અજીવદ્રવ્ય પણ છે,અજીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અજીવ દ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (जे जीवा

ति प्रश्नः 'लोयागासे' इति सूत्रे षट्प्रश्नाः सन्ति गौतमस्य, तत्र लोकाकाशे जी
इति सम्पूर्णानि जीवद्रव्याणि वर्त्तन्ते किम्? 'जीवदेसा' इति उपयोगलक्षणजीव
स्य केवलिप्रज्ञाकृता द्वित्रादयो विभागा जीवदेशा इति कथ्यन्ते 'जीवप्पएसा' इ
जीवस्यैव प्रकृष्टा देशाः प्रदेशा इति कथ्यन्ते निर्विभागा भागा इत्यर्थः 'अजीवा
इति धर्मास्तिकायादयः तेषां च देशाः प्रदेशा एव पूर्वोक्ता एवेति। अथ लोकाका
जीवा अजीवाश्च विद्यन्ते इति कथिते सति जीवा जीव देशप्रदेशयोरपि सद्भाव

पर गौतमके ६छह प्रश्न है तीन प्रश्न जीव, जीवदेश और जीवप्रदेश संबंधी हैं और तीन प्रश्न अजीव, अजीवदेश और अजीव प्रदेश संबंधी है जीव से यहां समस्त जीव द्रव्य ग्रहण किये गये हैं। उपयोग लक्षण वाले जीव के केवलिप्रज्ञाकृत दो तीन अदि जो विभाग हैं वे जीव देश से ग्रहण किये गये हैं। तथा उसी जीव के प्रकृष्ट देश प्रदेश शब्द से कहे गये हैं। इन प्रदेशों का फिर विभाग नहीं होता है अतःनिर्विभाग जो भाग हैं वे प्रदेश होते हैं ऐसा जानना चाहिये। इस प्रश्न का तात्पर्य यह है कि लोकाकाशमें सम्पूर्ण जीव द्रव्य हैं, कि जीवके देश हैं अथवा जीव के प्रदेश हैं? इसी तरह से लोकाकाश में (अजीवा अजीवदेस अजीवपएसा) अजीव जो धर्मास्तिकायादिक द्रव्य हैं वे हैं कि उनके देश हैं या उनके प्रदेश हैं? शंका-जब यह बात निश्चित है कि लोकाकाश में जीव और अजीव ये दोनों द्रव्य हैं, तो इस कथन से यह बात भी

અહીં ગૌતમ સ્વામીએ ૭ પ્રશ્નો કર્યા છે તેમાંના ત્રણ જીવ, જીવદેશ અને જીવપ્રદેશ વિષે છે અને બીજા ત્રણ પ્રશ્નો અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવ-પ્રદેશ વિષે છે. 'જીવ' પદ દ્વારા અહીં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવના કેવલિ પ્રજ્ઞાકૃત બે, ત્રણ આદિ જે વિભાગ છે, તેમને "જીવદેશ" કહેવામા આવેલ છે. તથા એજ જીવના પ્રકૃષ્ટ દેશને માટે (જીવપ્રદેશ) શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. તે વિભાગો પાડી શકાતા નથી. તેથી જે અવિભાજ્ય ભાગો છે તેમને જ પ્રદેશ કહેવામાં આવે છે, એમ સમજવુ.

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનુ તાત્પર્ય એ છે કે-લોકાકાશમાં સંપૂર્ણ જીવદ્રવ્ય છે, કે જીવના દેશ છે, કે જીવના પ્રદેશ છે? એજ પ્રમાણે લોકાકાશમા (અજીવા, અજીવાદેસા, અજીવપએસા) અજીવ "ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્ય છે," કે તેમના પ્રદેશ છે?

શંકા—જો એ વાત ચોકકસ છે કે લોકાકાશમાં જીવ અને અજીવ, એ બન્ને દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે, તો તે કથનથી એ વાત પણ સિદ્ધ થાય છે કે

सिद्ध एवेति चतो जीवाभीवादिदेशप्रदेशानां नीवाजीवे सद्भावादिति जीवा दिमद्भूते सति सदीयमदेशादीनामुपादानं निरर्थकमेवेति इति चेदुच्यते जीवा निरवयवा इति पक्षं मत्वा तन्मतनिराकरणायैव तथा कथनादिति भावः। भगवान् प्राह-' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जीवा वि जीवदे सावि जीवपएसावि ' जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि लोकाकाशे पर्यन्ते इति भावः। एवम् ' अजीवा वि अजीव देसावि अजीवपएसा वि ' अ जीवा अपि अजीवदेशा अपि अजीवप्रदेशा अपि) ' जे जीवा ते नियमा एगिं दिया वेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया अणिंदिया ' ये जीवास्तत्र लोका

सिद्ध हो जाती है कि वहा पर जीवदेश जीवप्रदेश अजीवदेश आदिकों का भी सद्भाव है, क्यों कि उनका उनके साथ अभेद है-तो फिर यहां पर सूत्र में स्वतन्त्र रूप से जीव अजीव के साथ जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीवदेश अजीवप्रदेश का ग्रहण क्यों किया गया है ?

समाधान-कितनेक वादी जन ऐसा मानते हैं कि जीव निरवयव हैं सो इस कथनसे उन्हें यह समझाया गया है कि जीव निरवयव नहीं है सावयव है। इसीलिए सूत्र में जीव देश आदि पदों का स्वतन्त्ररूप से पाठ कहा गया है। इस तरह (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि जीवदेसा वि जीवप्प एसावि) लोकाकाश में समस्त जीव द्रव्य भी, जीवद्रव्य के देश भी, और उनके प्रदेश भी हैं इसी तरह (अजीवा वि अजीवपएसा वि अ जीवपएसा वि) अजीवद्रव्य भी, अजीवद्रव्य के देश भी और उनके प्रदेश भी हैं। (जे जीवा-ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउ

ત્યાં જીવપ્રદેશ, અજીવદેશ અને અજીવ પ્રદેશ આદિનો પણ સદ્ભાવ છે કારણ કે તેમનો તેમની સાથે અભેદ છે તો પછી સૂત્રકારે અહીં જીવ અને અજીવની સાથે જીવદેશ,પ્રદેશ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશને સ્વતંત્રપણે શા માટે ગ્રહણ કર્યા છે ?

સમાધાન-કેટલાક મતવાદીઓ એવું માને છે કે જીવ નિરવયવ છે તો આ કથન દ્વારા તેમને એ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે જીવ નિરવયવ નથી પણ સાવયવ (અવયવસહિત) છે તે માટેજ સૂત્રમાં જીવદેશ આદિ પદોને સ્વતંત્ર રીતે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि जीवदेसा वि, जीवपएसावि) લોકાકાશમાં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય પણ છે, જીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અને જીવદ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (अजीवा वि अजीवदेसा वि, अजीवपएसा वि) એજ પ્રમાણે તેમ અજીવદ્રવ્ય પણ છે,અજીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અજીવ દ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (जे जीवा

काशे विद्यन्ते ते नियमात् एकेन्द्रिया द्वीन्द्रियास्त्रीन्द्रियाः चतुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रियाः अनिन्द्रियाः, अनिन्द्रियाः-अपर्याप्ताः केवलिनः सिद्धाश्चेति । एतेनाद्यस्य प्रश्नत्रयस्योत्तरं दत्तम् । 'जे जीवदेसा ते नियमा एगेंदिय देसा जाव अणिंदियदेसा'

रिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) लोकाकाश में जो जीव द्रव्य हैं-वे एकेन्द्रिय भी हैं, दो इन्द्रिय भी हैं, ते इन्द्रिय भी हैं, चौ इन्द्रिय भी हैं, पांच इन्द्रिय वाले भी हैं। तथा-अनिन्द्रिय-अपर्याप्त केवली और सिद्ध भी हैं। अतिन्द्रियसे यहां जो अपर्याप्त आदि जीव ग्रहण किये गये हैं उस का कारण यह है कि इन जीवों के इन्द्रियां नहीं होती हैं। अपर्याप्त जीवोंके इन्द्रिय पर्याप्ति की पूर्णताके अभाव से तथा ६छह पर्याप्तियोंमें से किसी भी पर्याप्ति के न होने से कोई भी इन्द्रिय नहीं होती हैं। यद्यपि केवली के इन्द्रियां होती हैं परन्तु वे वहां कार्यकारी नहीं होती हैं। केवली का ज्ञान क्षायिक होता है अतः वह इन्द्रियातीत माना गया है। सिद्धों के शरीर न होने के कारण वे इन्द्रियों से सर्वथा रहित माने गये हैं। इन सब जीवों का निवास लोकाकाश में ही है। सिद्धों का निवास यद्यपि लोक के आग्रभाग में है, परन्तु वह अग्रभाग आखिर तो लोक में ही है। इस कथन से कि लोकाकाश में जीवद्रव्य, जीव देश और जीवप्रदेश रहते हैं, प्रभु ने गौतम के आदि के तीन

ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) લોકાકાશમાં રહેલુ જીવદ્રવ્ય નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પણ છે, બે ઇન્દ્રિય પણ છે, ત્રીન્દ્રિય પણ છે, ચતુરિન્દ્રિય પણ છે, પંચેન્દ્રિય પણ છે અને અનિન્દ્રિય-અપર્યાપ્ત, કેવલી અને સિદ્ધ-પણ હોય છે (અનિન્દ્રિય) પદ દ્વારા અહીં જે અપર્યાપ્ત આદિ જીવો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. તેનું કારણ એ છે કે તે જીવોને ઇન્દ્રિયો હોતી નથી. અપર્યાપ્ત જીવોને ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિની પૂર્ણતાને અભાવે તથા છ પર્યાપ્તિયોમાથી એક પર્યાપ્તિનો સદ્ભાવ ન હોવાથી કોઇ પણ ઇન્દ્રિય હોતી નથી એ કે કેવલીને ઇન્દ્રિયો હોય છે, પણ તે કાર્યકારી નથી. કેવલીનું જ્ઞાન ક્ષાયિક હોય છે તેથી તેને ઇન્દ્રિયાતીત માનવામાં આવ્યું છે. સિદ્ધ પરમાત્માઓને શરીર જ હોતું નથી તેમને ઇન્દ્રિયોથી તદ્દન રહિત માનવામા આવ્યા છે તે બધા જીવોનો નિવાસ લોકાકાશમા જ છે સિદ્ધોનો નિવાલ લોકના અગ્ર ભાગમા છે, પણ તે અગ્રભાગ પણ લોકમાં જ છે એમ કહેવામાં કોઇ વાધો નડતો નથી. " લોકાકાશમાં જીવદ્રવ્ય, જીવદેશ અને જીવપ્રદેશ રહે છે, " આ કથનથી ભગવાને ગૌતમ સ્વામીના પહેલા ત્રણ પ્રશ્નોના

पंजलिउडे पज्जुवासमाणे' इति संग्राह्यम् । 'वं एस्यमाणप्पकारेण 'वयासी' अवादीत् 'कइविहा णं भंते लोयट्ठिई पण्णत्ता' कतिविधा खलु भदंत ! लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता भगवानाह—'गोयमे'—त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता'

अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे" इस पाठ का संग्रह किया है। इसका अर्थ इसप्रकार से है—गौतमने जब भगवान् को हे भदन्त! इस पदसे संबोधित कर पूछा तो एकदम नहीं पूछा किन्तु उन्होंने पूछने के पहिले भगवान् महावीर को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके फिर वे उनके सन्मुख ऐसे बैठे कि जिससे वे न अधिक उनके पास प्रतीत होते थे और न अधिक दूर ही दिखलाई देते थे। उचित स्थान पर सन्मुख बैठने का कारण यह था कि वे भगवद्वचन को सुनने के अभिलाषी थे। वन्दना और नमस्कार करके भी जब वे अपने योग्य स्थानपर बैठने लगे तब पुनः उन्होंने प्रभुको वन्दना नमस्कार किया। सन्मुख बैठे हुए भी वे प्रभुको विनयपूर्वक दोनों हाथ जोड़कर पूछनेलगे। इस तरहकी क्रियासे वे प्रभुकी भक्तिमें लीन रहते आये हैं, यह बात सूत्रकारने प्रकट की है। गौतम ने प्रभु से क्या पूछा सो इसके लिये सूत्रकार कहते हैं—(कइविहा णं भंते! लोयट्ठिई पण्णत्ता) गौतम ने प्रभु से यह पूछा कि हे भदन्त! लोक की स्थिति कितने प्रकार की कही गई है? प्रभु ने गौतम के इस प्रश्नका उत्तर क्या दिया इसे सूत्रकार बताते हुए कहते हैं कि—(गोयमा! अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता) प्रभुने गौतमके द्वारा किए गए प्रश्नका

अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे" આ પાઠને અહીંયા ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—ગૌતમસ્વામીએ જ્યારે ભગવાન મહાવીરને 'હે ભગવન્!' એ પદથી સંબોધ્યા પછી એક દમ પ્રશ્નો પૂછ્યા નહીં પણ તેમણે પહેલા તો ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ તેમનાથી અતિ દૂર પણ નહીં અને અતિ નિકટ પણ નહીં એવા સ્થાને (ઉચિત સ્થાને) બેસીને પ્રશ્ન પૂછતા થકા ભગવાનને ફરીથી નમસ્કાર કરીને ભગવાનની સામે બન્ને હાથ જોડીને વિનયપૂર્વક પ્રભુ પાસના કરતા થકા પૂછવા લાગ્યા. આ સૂત્રો પરથી ગૌતમ સ્વામીની ભગવાન પ્રત્યેની ભક્તિ અને વિનય દર્શાવવામાં આવેલ છે હવે ગૌતમ સ્વામીએ પ્રભુને પૂછેલા પ્રશ્નો અને પ્રભુ પરથી તે પ્રશ્નોના જે ઉત્તરો આપવામાં આવ્યા તે સૂત્રકાર બતાવે છે

પ્રશ્ન—(कइविहाणं भंते! लोयट्ठिई पण्णत्ता) હે પ્રભો! લોકની સ્થિતિ કેટલા પ્રકારની કહી છે ઉત્તર—(गोयमा! अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता) હે ગૌતમ!

नाऽभेदस्य स्वाभाविकत्वात्, वृक्षशिंशपयोरिवेति भाव. अत्र यावत्पदेन द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय-पञ्चेन्द्रियप्रदेशानां ग्रहणं भवति तथा च य एव जीवमदेशा स.एव द्वीन्द्रियादिप्रदेशा अपीति भावः। अथान्त्यस्य प्रश्नत्रयस्य उत्तरमाह-' जे अजीवा ' इत्यादि ' जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता ' ये अजीवास्ते द्विविधाः

स्वाभाविक है। जैसे वृक्ष और शिंशपा-शिशममें व्याप्य व्यापक भाव होने से अभेदस्वाभाविक है। तात्पर्य-इस कथन का यह है कि जिस प्रकार वृक्ष व्यापक और शिंशपा व्याप्य माना जाता हे क्यों कि शिंशपा के विना भी वृक्षत्व का सद्भाव पाया जाता है परन्तु वृक्षत्व के विना शिंशपा का सद्भाव त्रिकाल में भी नहीं पाया जाता है अतः इन दोनों में व्याप्य व्यापक भाव होने से कथंचित् अभेद माना जाता है उसी प्रकार जीवदेश, जीवप्रदेश ये दोनों व्यापक हैं और एकेन्द्रियादि देश प्रदेश सब व्याप्य हैं। जहां जीवदेश, जीवप्रदेशत्वरूप व्यापक होगा वहां एकेन्द्रिय का ही देशत्व होगा यह नियम नहीं बन सकता अन्य-जीव का भी देशत्व हो सकता है। पर जहां एकेन्द्रियादि देशत्वादि होगा-वहां नियम से जीव देशत्वादि होगा। (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदिय पएसा जाव अणिंदियपएसा) यहां यावत् शब्द से, द्वीन्द्रिय प्रदेश, त्रीन्द्रियप्रदेश, चतुरिन्द्रियप्रदेश, पंचेन्द्रियप्रदेश और अनिन्द्रिय-प्रदेशों का ग्रहण किया गया हैं। अब प्रभु अन्त के तीन प्रश्नों का उत्तर देने के निमित्त गौतमसे कहते हैं-(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) जो

વૃક્ષને વ્યાપક અને સીસમને વ્યાપ્ય માનવામાં આવે છે, કારણ કે સીસમ વિના પણ વૃક્ષનું અસ્તિત્વ સંભવી શકે છે પણ વૃક્ષવિના સીસમનું અસ્તિત્વ કદી પણ સંભવી શકતું નથી. આ રીતે તે બન્ને વચ્ચે વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તેમની વચ્ચે અભેદ માનવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જીવદેશઅને જીવપ્રદેશ, એ બન્ને વ્યાપક છે અને એકેન્દ્રિયાદિ દેશ અને પ્રદેશ વ્યાપ્ય છે. જ્યાં જીવદેશ અને જીવપ્રદેશત્વ રૂપ વ્યાપક હશે ત્યાં એકેન્દ્રિયનું જ દેશત્વ હોઇ શકે છે, એવો નિયમ થઈ શકતો નથી-અન્ય જીવનું પણ દેશત્વ ત્યાં હોઇ શકે છે.પણ જ્યા એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વ હશે ત્યાં જીવદેશત્વાદિ પણ હશે, એવો નિયમ છે.(जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा) આ સૂત્રમાં (જ્ઞાવ) (પર્યન્ત) પદથી દ્વીન્દ્રિયપ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ પંચેન્દ્રિય પ્રદેશ અને અનિન્દ્રિય પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે. હવે પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીના છેલ્લા ત્રણ પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા કહે છે-(જે અજીવા તે દુવિહા પણ્ણત્તા)

ये जीवदेशास्ते नियमात् एकेन्द्रियदेशा यावत् अनिन्द्रियदेशाः, जीवदेश एकेन्द्रियदेशयोरभेदात् जीवैकेन्द्रिययोर्व्याप्यव्यापकभावादित्यर्थः । 'जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा' ये जीवप्रदेशाः ते नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावत् अनिन्द्रियप्रदेशाः ये जीवानाम् अबद्धाः देशाः ते जीवप्रदेशाः ते नियमात् एकेन्द्रियपदेशाः यावत् अनिन्द्रियप्रदेशाः जीवप्रदेश – एकेन्द्रियादिप्रदेशानामभिन्नत्वम् यदा जीव-एकेन्द्रिययोर्व्याप्यव्यापकभावस्तदा जीवप्रदेश — एकेन्द्रियप्रदेशयोरपि व्याप्यव्यापकभावे

प्रश्नों का उत्तर दिया है। (जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदिय देसा जाव अणिंदियदेसा) जो जीवदेश होते हैं वे ही नियम से एकेन्द्रियदेश होते हैं, यावत् अनिन्द्रियजीवों के देश होते हैं। जीवदेश और एकेन्द्रियदेश में अभेद है क्यों कि जीव और एकेन्द्रिय में व्याप्य व्यापकभाव है। यहां यावत् पद से द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय देशों का ग्रहण हुआ है। तथाच-जो ही जीव देश हैं वे ही दोइन्द्रिय आदि जीवों के भी देश हैं। इसी तरह-(जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा) जो जीव प्रदेश हैं वे ही नियम से एकेन्द्रियप्रदेश हैं यावत् अनिन्द्रियप्रदेश हैं। जो जीवों के अबद्ध देश हैं वे जीवप्रदेश हैं वे नियम से एकेन्द्रियप्रदेश यावत् अनिन्द्रिय प्रदेश हैं। जीवप्रदेशों में अभिन्नता है। अब जीव और एकेन्द्रिय में व्याप्य व्यापक भाव है तब जीव प्रदेश और एकेन्द्रिय प्रदेश में भी व्याप्य व्यापक भाव होने से अभेद

વ્યાપ્ય વ્યાપક છે (जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा जाव अणिंदियदेसा) જીવદેશો નિયમથી જ એકેન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવો પર્યન્તના દેશ હોય છે જીવદેશ અને એકેન્દ્રિયદેશમાં અભેદ છે કારણ કે જીવ અને એકેન્દ્રિયમાં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ છે અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદથી બે ઇન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય દેશો ગ્રહણ કરવા માં આવ્યા છે તથા જે જીવદેશો છે તેજ દ્વિન્દ્રિય આદિ જીવોના પણ દેશ છે એજ પ્રમાણે (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा) જે જીવપ્રદેશ છે તેઓ નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પ્રદેશોથી લઈને અનિન્દ્રિય પર્યન્તના પ્રદેશ છે જે જીવોના અબદ્ધ દેશ છે- અવિભાજ્ય વિભાગ છે-તેમને જીવપ્રદેશ કહે છે તેઓ નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પ્રદેશોથી લઈને અનિન્દ્રિય પર્યન્તના પ્રદેશ છે જીવપ્રદેશ અને એકેન્દ્રિયાદિ પ્રદેશોમાં અભેદ છે જેવી રીતે જીવ અને એકેન્દ્રિયમાં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ છે એવી જ રીતે જીવપ્રદેશ અને એકેન્દ્રિયપ્રદેશમાં પણ વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તે અભેદ સ્વરૂપ સિદ્ધ થાય છે - જેવી રીતે પુદ્ગલ અને જીવમાં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી અભેદ સ્વરૂપનો છે- એજ રીતે જીવ

नाऽभेदस्य स्वाभाविकत्वात्, वृक्षशिंशपयोरिवेति भावः अत्र यावत्पदेन द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय-पञ्चेन्द्रियप्रदेशानां ग्रहणं भवति तथा च य एव जीवप्रदेशा स्त एव द्वीन्द्रियादिप्रदेशा अपीति भावः। अथान्त्यस्य प्रश्नत्रयस्य उत्तरमाह-' जे अजीवा ' इत्यादि ' जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता ' ये अजीवास्ते द्विविधाः

स्वाभाविक है। जैसे वृक्ष और शिंशपा-शिंशममें व्याप्य व्यापक भाव होने से अभेदस्वाभाविक है। तात्पर्य-इस कथन का यह है कि जिस प्रकार वृक्ष व्यापक और शिंशपा व्याप्य माना जाता हे क्यों कि शिंशपा के विना भी वृक्षत्व का सद्भाव पाया जाता है परन्तु वृक्षत्व के विना शिंशपा का सद्भाव त्रिकाल में भी नहीं पाया जाता है अतः इन दोनों में व्याप्य व्यापक भाव होने से कथंचित् अभेद माना जाता है उसी प्रकार जीवदेश, जीवप्रदेश ये दोनों व्यापक हैं और एकेन्द्रियादि देश प्रदेश सब व्याप्य हैं। जहां जीवदेश, जीवप्रदेशत्वरूप व्यापक होगा वहां एकेन्द्रिय का ही देशत्व होगा यह नियम नहीं बन सकता अन्य-जीव का भी देशत्व हो सकता है। पर जहां एकेन्द्रियादि देशत्वादि होगा-वहां नियम से जीव देशत्वादि होगा। (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदिय पएसा जाव अणिंदियपएसा) यहां यावत् शब्द से, द्वीन्द्रिय प्रदेश, त्रीन्द्रियप्रदेश, चतुरिन्द्रियप्रदेश, पंचेन्द्रियप्रदेश और अनिन्द्रिय-प्रदेशों का ग्रहण किया गया हैं। अब प्रभु अन्त के तीन प्रश्नों का उत्तर देने के निमित्त गौतमसे कहते हैं-(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) जो

વૃક્ષને વ્યાપક અને સીસમને વ્યાપ્ય માનવામાં આવે છે, કારણ કે સીસમ વિના પણ વૃક્ષનું અસ્તિત્વ સંભવી શકે છે પણ વૃક્ષવિના સીસમનું અસ્તિત્વ કદી પણ સંભવી શકતું નથી. આ રીતે તે બન્ને વચ્ચે વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તેમની વચ્ચે અભેદ માનવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જીવદેશઅને જીવપ્રદેશ, એ બન્ને વ્યાપક છે અને એકેન્દ્રિયાદિ દેશ અને પ્રદેશ વ્યાપ્ય છે. જ્યાં જીવદેશ અને જીવપ્રદેશત્વ રૂપ વ્યાપક હશે ત્યાં એકેન્દ્રિયનું જ દેશત્વ હોઇ શકે છે, એવો નિયમ થઈ શકતો નથી-અન્ય જીવનું પણ દેશત્વ ત્યાં હોઇ શકે છે.પણ જ્યાં એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વ હશે ત્યાં જીવદેશત્વાદિ પણ હશે, એવો નિયમ છે (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा) આ સૂત્રમાં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી દ્વીન્દ્રિયપ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ પંચેન્દ્રિય પ્રદેશ અને અનિન્દ્રિય પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે. હવે પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીના છેલ્લા ત્રણ પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા કહે છે-(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता)

महत्ता 'तं जहा' तद् यथा 'रूवीय अरूवीय' रूपिणश्चारूपिणश्च रूपिणो मूर्ताः पुद्गलाः अरूपिणोऽमूर्ताः धर्मास्तिकायादयः, 'जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता' ये रूपिणः पुद्गलास्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा' तद् यथा 'खंधा खंधदेसा-खंधपएसा परमाणु पोग्गला' स्कन्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः तत्र स्कन्धाः परमाणुसमुदायात्मका अवयवि न इत्यर्थः स्कन्धदेशा यावन्तो विभागाः स्कन्धप्रदेशास्त्वेव निरंशा अवयवाः परमाणुपुद्गला अवयवा

अजीव हैं वे दो प्रकार के हैं-(तंजहा) जैसे-(रूवी य अरूवी य) एकरूपी अजीव और दूसरा अरूपी अजीव, रूपी शब्द का अर्थ-जिसमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श ये पाये जाते हैं ऐसा मूर्तिक पदार्थ और जिसमें ये चार गुण नहीं पाये जावे ऐसा अमूर्तिक पदार्थ अरूपी कहा गया है। मूल में अजीव के धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल ऐसे पांच भेद हैं। इनमें पुद्गलास्तिकाय को छोड़कर बाकी चार अस्तिकाय अरूपी हैं और पुद्गलास्तिकाय रूपी है। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) रूपी पुद्गलास्तिकाय चार प्रकार का कहा गया है (तंजहा) जैसे (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश और परमाणुपुद्गल, तथा परमाणु समुदायात्मक जो अवयवी है वह स्कंध है, स्कंध के दो तीन आदि अष्टप्रदेशसूता जो विभाग हैं वे स्कंधदेश हैं' स्कंधदेश के जो निरंश विभाग हैं वे स्कंधप्रदेश हैं। तथा

જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના છે (તંજહા) જેમ કે (રૂવીય અરૂવી ય) (૧) રૂપી અજીવ અને (૨) અરૂપી અજીવ જેમાં રૂપ, રસ, ગંધ સ્પર્શ હોય છે એવા મૂર્તિક પદાર્થને 'રૂપી' કહે છે, અને જેમાં એ ચાર ગુણ હોતા નથી એવાં અમૂર્તિક પદાર્થ ને "અરૂપી" કહે છે અજીવના મૂળ પાંચ ભેદ છે ૧, ધર્માસ્તિકાય, ૨, અધર્માસ્તિકાય, ૩ આકાશાસ્તિકાય ૪ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ૫, કાળ તેમાંના પુદ્ગલાસ્તિકાય સિવાયના ચાર અસ્તિકાય અરૂપી છે પણ પુદ્ગલાસ્તિકાય રૂપી છે (જે રૂવી તે ચઉવ્વિહા પન્નત્તા!) રૂપી પુદ્ગલાસ્તિકાયના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે (તંજહા, ખંધદેસા, ખંધપએસા પરમાણુપોગલા) (૧) સ્કંધ (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલપરમાણુના સમુદાયરૂપ જે અવયવી છે તેને સ્કંધ કહે છે સ્કંધના જે ચણ આદિઅષ્ટપ્રદેશરૂપ જે વિભાગો છે તેમને સ્કંધદેશ કહે છે સ્કંધદેશના જે નિરંશ (અવિભાજ્ય) વિભાગ છે તેમને સ્કંધપ્રદેશ કહે છે તથા અવયવ

चयविभागवर्जिताः परमाणवः एवेति, 'जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता' ये अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा-धम्मत्थिकाए' इत्यादि. 'तं जहा धम्मत्थिकाए' तद् यथा धर्मास्तिकायः। धर्मास्तिकायः नास्ति धर्मास्तिकायस्य देशरूपः १ धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः२ अधर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायोऽपि नास्ति अधर्मास्तिकायस्य देशरूपः ३ अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः४ अद्धा-कालस्तल्लक्षणः समयः-क्षणोऽद्धासमयः स चैक एव वर्त्तमानक्षणलक्षणः, अतीतानागतयोः सत्त्वाभावात्।

अवयव अवयवी भाव से वर्जित जो पुद्गल हैं वे परमाणुपुद्गल हैं। यह परमाणुपुद्गल वे ही लिये गये हैं जो स्कंध अवस्था को प्राप्त नहीं हुए हैं (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा जो अरूपी अजीव है वह पांच प्रकार का कहा गया है-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्सदेसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमए) धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २ अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४ और अद्धासमय ५ यहां पर धर्मास्तिकाय का देश और अधर्मास्तिकाय का देश नहीं माना गया है। ऐसे क्यों नहीं माना गया है सो इस विषय में स्पष्टीकरण इस प्रकार से है-जीव और पुद्गल अनेक हैं, इसलिये एक जीव जितने स्थान में समाता है अथवा एक पुद्गल जितने स्थान को रोकता है उतने स्थान में संकोच विस्तार गुण से युक्त होने के कारण अनेक जीव और पुद्गल समा सकते हैं। इस कारण जीव, जीव-

---

અને અવયવી ભાવથી રહિત જે પુદ્ગલ છે, તેને પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે અહીં પરમાણુ પુદ્ગલ તેમને જ કહ્યા છે કે જેઓએ સ્કંધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી નથી.

(जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી જીવનાં નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે (धम्मत्थिकाए,नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा) अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्स देसे,अधम्मत्थिकायस्स पएसा अद्धासमये) (१)धर्मास्तिकाय,(२) धर्मास्तिकायना प्रदेश (३)अधर्मास्तिकाय (४) अधर्मास्तिकाय प्रदेश अने(५) अद्धासमय (કાળ) અહીં ધર્માસ્તિકાયનો દેશ અને અધર્માસ્તિકાયનો દેશ ગ્રહણ કરવાનો નથી. અહીં ધર્માસ્તિકાયના અને અધર્માસ્તિકાયનાદેશને શા માટે અરૂપી અજીવના પ્રકાર ગણવામાં આવ્યા નથી તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-જીવ અને પુદ્ગલ અનેક છે તેથી એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં સમાય છે અથવા એક પુદ્ગલ જેટલી જગ્યા રોકે છે, એટલી જગ્યામા સંકોચ વિસ્તાર ગુણથી યુક્ત

पण्णत्ता 'तं जहा' तद् यथा 'रूवीय अरूवीय' रूपिणश्चारूपिणश्च रूपिणो मूर्ताः पुद्गलाः अरूपिणोऽमूर्ताः धर्मास्तिकायादयः, 'जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता' ये रूपिणः पुद्गलास्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा' तद् यथा 'खंधा खंधदेसा-खंधपएसा परमाणु पोग्गला' स्कन्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः तत्र स्कन्धाः परमाणुसङ्घातात्मका अवयवि न इत्यर्थः स्कन्धदेशा स्तदुपो विभागा स्कन्धप्रदेशास्तस्यैव निरंशा अवयवाः परमाणुपुद्गला अवयवा

अजीव हैं ये दो प्रकार के हैं-(तंजहा) जैसे-(रूवी य अरूवी य) एकरूपी अजीव और दूसरा अरूपी अजीव, रूपी शब्द का अर्थ-जिसमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श पाये जावे हैं ऐसा मूर्तिक पदार्थ और जिसमें ये चार गुण नहीं पाये जावे ऐसा अमूर्तिक पदार्थ अरूपी कहा गया है। मूल में अजीव के धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल ऐसे पांच भेद हैं। इनमें पुद्गलास्तिकाय को छोड़कर बाकी चार अस्तिकाय अरूपी हैं और पुद्गलास्तिकाय रूपी है। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) रूपी पुद्गलास्तिकाय चार प्रकार का कहा गया है (तंजहा) जैसे (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश और परमाणुपुद्गल, तथा परमाणु संघातात्मक जो अवयवी है वह स्कंध है, स्कंध के दो तीन आदि अष्टप्रदेशवाले जो विभाग हैं वे स्कंधदेश हैं' स्कंधदेश के जो निरंश विभाग हैं वे स्कंधप्रदेश हैं। तथा

જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના છે (તંજહા) જેમ કે (રૂવીય અરૂવી ય) (૧) રૂપી અજીવ અને (૨) અરૂપી અજીવ. જેમાં રૂપ રસ, ગંધ સ્પર્શ હોય છે એવા મૂર્તિક પદાર્થને 'રૂપી' કહે છે, અને જેમાં એ ચાર ગુણ હોતા નથી એવાં અમૂર્તિક પદાર્થ ને "અરૂપી" કહે છે અજીવના મૂળ પાંચ ભેદ છે ૧, ધર્માસ્તિકાય, ૨, અધર્માસ્તિકાય, ૩, આકાશાસ્તિકાય ૪ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ૫, કાળ તેમાંના પુદ્ગલાસ્તિકાય સિવાયના ચાર અસ્તિકાય અરૂપી છે પણ પુદ્ગલાસ્તિકાય રૂપી છે (જે રૂવી તે ચઉવ્વિહા પણત્તા!) રૂપી પુદ્ગલાસ્તિકાયના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે (ખંધા, ખંધદેસા, ખંધપએસા પરમાણુપોગ્ગલા) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલપરમાણુના સમુદાયરૂપ જે અવયવી છે તેને સ્કંધ કહે છે સ્કંધના જે ત્રણ આદિ અષ્ટપ્રદેશરૂપ જે વિભાગો છે તેમને સ્કંધદેશ કહે છે સ્કંધદેશના જે નિરંશ (અવિભાજ્ય) વિભાગ છે તેમને સ્કંધપ્રદેશ કહે છે તથા અવયવ

वयविभाववर्जिताः परमाणवः एवेति, ' जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता ' ये अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा-धम्मत्थिकाए' इत्यादि. 'तं जहा धम्मत्थिकाए' तद् यथा धर्मास्तिकायः। धर्मास्तिकायः नास्ति धर्मास्तिकायस्य देशरूपः१ धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः२ अधर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायोऽपि नास्ति अधर्मास्तिकायस्य देशरूपः ३ अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः४ अद्धा-कालस्तल्लक्षणः समयः-क्षणोऽद्धासमयः स चैक एव वर्त्तमानक्षणलक्षणः, अतीतानागतयोः सत्त्वाभावात् ॥

अवयव अवयवी भाव से वर्जित जो पुद्गल हैं वे परमाणुपुद्गल हैं. यहां परमाणुपुद्गल वे ही लिये गये हैं जो स्कंध अवस्था को प्राप्त नहीं हुए हैं। (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा जो अरूपी अजीव है वह पांच प्रकार का कहा गया है-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्सदेसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमए) धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २ अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४ और अद्धासमय ५ यहां पर धर्मास्तिकाय का देश और अधर्मास्तिकाय का देश नहीं माना गया है। ऐसे क्यों नहीं माना गया है सो इस विषय में स्पष्टीकरण इस प्रकार से है-जीव और पुद्गल अनेक हैं, इसलिये एक जीव जितने स्थान में समाता है अथवा एक पुद्गल जितने स्थान को रोकता है उतने स्थान में संकोच विस्तार गुण से युक्त होने के कारण अनेक जीव और पुद्गल समा सकते हैं। इस कारण जीव, जीव-

---

અને અવયવી ભાવથી રહિત જે પુદ્ગલ છે, તેને પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે અહીં પરમાણુ પુદ્ગલ તેમને જ કહ્યા છે કે જેઓએ સ્કંધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી નથી.

(जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી જીવનો નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે (धम्मत्थिकाए,नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा) अधर्मास्तिकाए, नो अधर्म्मत्थिकायस्स देसे,अधम्मत्थिकायस्स पएसा अद्धासमये) (१)धर्मास्तिकाय,(२) धर्मास्तिकायના પ્રદેશ (૩)અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ અને(૫) અદ્ધાસમય (કાળ) અહીં ધર્માસ્તિકાયનો દેશ અને અધર્માસ્તિકાયનો દેશ ગ્રહણ કરવાનો નથી. અહીં ધર્માસ્તિકાયના અને અધર્માસ્તિકાયનાદેશને શા માટે અરૂપી અજીવના પ્રકાર ગણવામા આવ્યા નથી તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-જીવ અને પુદ્ગલ અનેક છે તેથી એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં સમાય છે અથવા એક પુદ્ગલ જેટલી જગ્યા રોકે છે, એટલી જગ્યામા સંકોચ વિસ્તાર ગુણથી યુક્ત

अत्र जीवानां पुद्गलानाञ्चाऽनेकत्वादेकस्य जीवस्य वा एकस्य पुद्गलस्य वा स्थाने सैकोपादिकारणपक्षादनेके जीवाः पुद्गलाश्च जीवदेशाः पुद्गलदेशा जीव प्रदेशाः पुद्गलप्रदेशाश्च तथा कथिदन्यापेक्षया अत्रोक्ताश्चाऽजीवदेशाश्चाऽजीवप्रदेशाश्चेत्येवंरूपेण बहुवचनं सङ्गतमेव एकस्मिन्नप्यधिकरणे भेदवतो वस्तुधर्मस्य सद्भावाद् धर्मास्तिकायादौ तु द्वितयमेव पुनरुक्तं यतो यदा संपूर्णमेव वस्तु विवक्ष्यते तदा धर्मास्तिकायादि इत्युच्यते तस्य वस्तुनोऽवयवस्य विवक्षायां तु तत्प्रदेशा इति तेषां वस्त्वन्तरत्वाद् तदीयप्रदेशकल्पना तु न पुनरुक्ता तेषामनवस्तुरूपत्वाद् इति।

देश, जीवप्रदेश और पुद्गल, पुद्गलदेश एवं पुद्गलप्रदेश ऐसा कथन बन जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि पुद्गल और जीव के प्रदेशों में संकोच और विस्तार होने की प्रदीपवत् शक्ति ही स्वभाव है। अतः एक पुद्गल तथा एक जीव जितने स्थान में रहता है उतने ही स्थान में अनेक जीव और अनेकपुद्गल भी रह सकते हैं। इसलिये अनेक जीव और अनेक पुद्गल हो सकते हैं और इस कारण ऐसा बहुवचनवाला कथन सङ्गत बन जाता है कि अनेक जीव, अनेकपुद्गल, अनेक जीवदेश, अनेक पुद्गलदेश, अनेक जीवप्रदेश और अनेक पुद्गलप्रदेश। तथा अजीवद्रव्य की अपेक्षा से भी ऐसा बहुवचनवाला कथन सङ्गत बन जाता है अनेक अजीव, अनेक अजीवदेश, अनेक अजीवप्रदेश। क्यों कि एक ही अधिकरण (स्थान) में भेदवान् वस्तुत्रय का सद्भाव रह सकता है। धर्मास्तिकाय आदि में तो इस प्रकार से तीन भेद सम्भवित न होकर

હોવાને અપેક્ષે અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલનો સદ્ભાવ થઇ શકે છે તે કારણે જીવ, જીવદેશ, જીવપ્રદેશ અને પુદ્ગલ, પુદ્ગલ દેશ અને પુદ્ગલ પ્રદેશના વિષયમાં એવુ કથન થઇ શકે છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે પુદ્ગલ અને જીવના પ્રદેશમાં સંકોચ અને વિસ્તાર પામવાની શક્તિ (સ્વભાવ) છે તેથી એક પુદ્ગલ તથા એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં રહી શકે છે એટલા જ સ્થાનમાં અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ પણ રહી શકે છે તેથી અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ હોઈ શકે છે અને તે કારણે અનેક જીવ, અનેક પુદ્ગલ, અનેક જીવદેશ, અનેક પુદ્ગલદેશ, અનેક જીવપ્રદેશ અને અનેક પુદ્ગલપ્રદેશ એવુ બહુવચનવાળુ કથન સંગત બની જાય છે તથા રૂપી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ "અનેક અજીવ, અનેક અજીવદેશ, અનેક અજીવપ્રદેશ" એવુ બહુવચનવાળુ કથન સંગત બની જાય છે તેનું કારણ એ છે કે એકજ અધિકરણ (સ્થાન)માં ભેદવાળી ત્રણે વસ્તુનો સદ્ભાવ રહી શકે છે ધર્માસ્તિકાય આદિમાં તો આ પ્રકારના ત્રણ ભેદ સંભવિત નથી, પણ કેવળ

यद्यपि अनवस्थितरूपत्वं जीवादिदेशानामपि अस्ति तथापि तेषां जीवादिदेशानामेकस्मिन्नधिकरणे भेदेन सम्भवः प्ररूपणाकारणम् अत्र तु तन्नास्ति धर्मास्तिकायादेरेकत्वात् सङ्कोचादिधर्मत्वाभावाच्च अतएव धर्मास्तिकायादिदेशनिषेधार्थमाह–'नो धम्मत्थिकायस्सदेसे तथा नो अधम्मत्थिकायस्स देसे इति।' धर्मास्तिका-

---

जो पूर्वोक्तरूप से दो भेद ही संभवित होते हैं उसका कारण यह है कि जब धर्मास्तिकायादिरूप संपूर्ण ही वस्तु विवक्षित होती है तभी धर्मास्तिकाय आदि ऐसा कहा जाता है और जब धर्मास्तिकायादि के अंशमात्र की विवक्षा होती है, तब धर्मास्तिकायादि के प्रदेश ऐसा कहा जाता है कारण कि वे प्रदेश अवस्थित रूप वाले होते हैं। धर्मास्तिकायादिके देशों की कल्पना इसलिये युक्तियुक्त नहीं है, कि वे उनके देश अनवस्थित रूप वाले होते हैं। यद्यपि जीवादिद्रव्यों के देश भी अनवस्थितरूपवाले होते हैं, तथापि उन जीवादिदेशों का एक ही अधिकरण में भिन्न २ रूप से रहना संभव होता है इसलिये उनकी भिन्न २ रूप से प्ररूपणा की गई है। धर्मास्तिकायादिक में तो ऐसी बात है नहीं कारण कि वे एक द्रव्य है। भेद विना के हैं। दूसरे उनमें संकोच आदि होने रूप धर्म नहीं है। इसी कारण धर्मास्तिकायादिकों के देशों को निषेध करने के लिये (नो धम्मत्थिकायस्स देसे, नो अधम्मत्थिकायस्स देसे) ऐसा कहा है। धर्मास्तिकाय आदि के देशों के

કહ્યા મુજબના બે ભેદ જ સંભવિત છે. તેનું કારણ એ છે કે જ્યારે ધર્માસ્તિકાયાદિ રૂપ સંપૂર્ણ વસ્તુની વાત કરવામાં આવતી હોય ત્યારે જ તેને માટે ધર્માસ્તિકાય આદિ શબ્દનો પ્રયોગ થાય છે. પણ જ્યારે ધર્માસ્તિકાય આદિના અંશ માત્રની જ વાત થતી હોય, ત્યારે તેમને ધર્માસ્તિકાય આદિના પ્રદેશ કહેવામાં આવે છે, કારણ કે તે પ્રદેશો અવસ્થિત રૂપવાળા હોય છે. ધર્માસ્તિકાયદિકોના દેશોની કલ્પના સુસંગત લાગતી નથી, કારણ કે એમના તે દેશો અનવસ્તિરૂપવાળા હોય છે જો કે જીવાદિક દ્રવ્યોના દેશ પણ અનવસ્તિરૂપવાળા હોય છે, તો પણ તે જીવાદિ દેશોનું એક જ સ્થાને ભિન્ન ભિન્ન રૂપે રહેવાનું સંભવિત હોય છે, તેથી તેમની ભિન્ન ભિન્ન રૂપે પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યમા તો એવી વાત જ શક્ય નથી, કારણ કે એકદ્રવ્યરૂપ છે–ભેદ વિનાના છે. વળી તેમનામાં સંકુચન આદિ ધર્મ (સ્વભાવ) હોતા નથી તે કારણે જ ધર્માસ્તિકાય આદિકોમાં દેશોનો નિષેધ કરવા માટે નો धम्मत्थिकायस्स अधम्मत्थिकायस्स देसे) એવું કહે

अत्र जीवानां पुद्गलानाञ्चाऽनेकत्वादेकस्य जीवस्य वा एकस्य पुद्गलस्य वा स्थाने संकोचादिकारणवशादनेके जीवाः पुद्गलाश्च जीवदेशाः पुद्गलदेशा और प्रदेशाः पुद्गलप्रदेशाश्च तथा रूपिद्रव्यापेक्षया अजीवाश्चाऽजीवदेशाश्चाऽजीवप्रदेशाश्चेत्येवंरूपेण बहुवचन संगतमेव एकस्मिन्नप्यधिकरणे भेदवतो वस्तुत्वस्य सद्भावात् धर्मास्तिकायादौ तु द्वित्वमेव प्रोक्तम् यतो यदा सम्पूर्णमेव वस्तु विवक्ष्यते तदा धर्मास्तिकायादि इत्युच्यते तस्य वस्तुनोऽवयवस्य विवक्षायां तु तत्प्रदेश इति तेषां मध्यस्थितरूपत्वात् तदीयप्रदेशकल्पना तु न युक्ता तेषामनवस्थितरूपत्वात् इति।

देश, जीवप्रदेश और पुद्गल, पुद्गलदेश एवं पुद्गलप्रदेश ऐसा कथन बन जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि पुद्गल और जीव के प्रदेशों में संकोच और विस्तार होने की प्रदीपवत् शक्ति ही स्वभाव है। अतः एक पुद्गल तथा एक जीव जितने स्थान में रहता है उसने ही स्थान में अनेक जीव और अनेकपुद्गल भी रह सकते हैं। इसलिये अनेक जीव और अनेक पुद्गल हो सकते हैं और इस कारण ऐसा बहुवचनवाला कथन संगत बन जाता है कि अनेक जीव, अनेकपुद्गल, अनेक जीवदेश, अनेक पुद्गलदेश, अनेक जीवप्रदेश और अनेक पुद्गलप्रदेश। तथा रूपीद्रव्य की अपेक्षा से भी ऐसा बहुवचनवाला कथन संगत बन जाता है अनेक अजीव, अनेक अजीवदेश, अनेक अजीवप्रदेश। क्यों कि एक ही अधिकरण (स्थान) में भेदवान् वस्तुत्व का सद्भाव रह सकता है। धर्मास्तिकाय आदि में तो इस प्रकार से तीन भेद संभवित न होकर

હોવાને કારણે અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલનો સમાવેશ થઈ શકે છે તે કારણે જીવ, જીવદેશ, જીવપ્રદેશ અને પુદ્ગલ, પુદ્ગલ દેશ અને પુદ્ગલ પ્રદેશના વિષયમાં બહુ વચન થઈ શકે છે એવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પુદ્ગલ અને જીવના પ્રદેશમાં સંકોચ અને વિસ્તાર પામવાની શક્તિ (સ્વભાવ) છે તેથી એક પુદ્ગલ તથા એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં રહી શકે છે એટલા જ સ્થાનમાં અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ પણ રહી શકે છે તેથી અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ હોઈ શકે છે અને તે કારણે અનેક જીવ, અનેક પુદ્ગલ, અનેક જીવદેશ, અનેક પુદ્ગલદેશ, અનેક જીવપ્રદેશ અને અનેક પુદ્ગલપ્રદેશ એવું બહુવચનવાળું કથન સંગત બની જાય છે તથા રૂપી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ "અનેક અજીવ, અનેક અજીવદેશ, અનેક અજીવપ્રદેશ" એવું બહુવચનવાળું કથન સંગત બની જાય છે તેનું કારણ એ છે કે એકજ અધિકરણ (સ્થાન)માં ભેદવાળી ત્રણે વસ્તુનો સદ્ભાવ રહી શકે છે ધર્માસ્તિકાય આદિમાં તો આ પ્રકારના ત્રણ ભેદ સંભવિત નથી, પણ કેવળ

अष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा' तद्यथा–' आगासपइट्ठिए वाए ' आकाशप्रतिष्ठितो वातः–आकाशे प्रतिष्ठा स्थितिर्विद्यते यस्यासौ आकाशप्रतिष्ठित आकाशाधिकरणको वायुस्तनुवातघनवातरूपः, तस्यावकाशान्तरोपरिस्थितत्वात्। ननु यथा वायुराकाशे प्रतिष्ठितस्तथा आकाशस्यापि किंचिदधिष्ठानमस्ति न वा?, अस्ति चेत्तदा तदधिकरणं मूलकृता कुतो न दर्शितम्, नास्ति इति चेत् तदा

उत्तर इस प्रकारसे दिया कि हे गौतम! लोक की स्थिति आठ प्रकारकी कही गई है। (तं जहा) वह आठ प्रकार की स्थिति इस तरहसे है–(आगासपइट्ठिए वाए, वायपइट्ठिए उदही, उदहिपइट्ठिया पुढवी, पुढविपइट्ठिया तसा थावरा पाणा, अजीवा जीवपइट्ठिया, जीवा कम्मपइट्ठिया, अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया) आकाशप्रतिष्ठित वात (१), वातप्रतिष्ठित उदधि (२), उदधिप्रतिष्ठित पृथिवी(३), पृथिवीप्रतिष्ठित त्रस स्थावर प्राण–जीव(४), जीवप्रतिष्ठित अजीव(५), कर्मप्रतिष्ठित जीव(६), जीवसगृहीत अजीव (७), और कर्मसगृहीत जीव (८)। आकाश में जिसकी स्थिति है ऐसा तनुवातरूप और घनवातरूप जो वायु है वह आकाशप्रतिष्ठितवायु है। यह वायु अवकाशान्तर के ऊपर स्थित रहता है।

शका–जिस प्रकारसे वायु आकाशमें प्रतिष्ठित कहा गया है उसी प्रकार से आकाश को भी किसी और में प्रतिष्ठित बताना चाहिये। यदि इस पर कहा जाय कि आकाश का आधार और कोई नहीं है तो हम इस पर यों कह सकते हैं कि जिस प्रकार बिना आधार के वायुके

લોકની સ્થિતિ આઠ પ્રકારની કહી છે (तंजहा) તે આઠ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે– (आगासपइट्ठिए वाए, वायपइट्ठिए उदही, उदहीवइट्ठिया पुढवी, पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा, अजीवा जीवपइट्ठिया, जीवा कम्मपइट्ठिया, अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया) (१) આકાશપ્રતિષ્ઠિતવાયુ, (૨) વાયુપ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ, (૩) ઉદધિપ્રતિષ્ઠિતપૃથ્વી, (૪) પૃથ્વીપ્રતિષ્ઠિત ત્રસ સ્થાવર પ્રાણિઓ, (૫) જીવ પ્રતિષ્ઠિત અજીવ, (૬) કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવ, (૭) જીવસગૃહીત અજીવ અને (૮) કર્મસંગૃહીત જીવ

આકાશના આધારે જેની સ્થિતિ છે એવા જે તનુવાત અને ઘનવાત તેનુ નામ આકાશપ્રતિષ્ઠિત વાયુ છે. તે વાયુ અવકાશાન્તર ઉપર રહેલ છે.

શંકા—જેવી રીતે વાયુને આકાશના આધારે પ્રતિષ્ઠિત (રહેલો) કહ્યો છે, એજ પ્રમાણે આકાશને પણ કોઇ બીજા પદાર્થના આધારે પ્રતિષ્ઠિત બતાવવું જોઇએ. જો તેના જવાબમાં એમ કહેવામાં આવે કે આકાશનો કોઇ આધાર નથી. તો તેની સામે એ દલીલ કરી શકાય કે જેવી રીતે આધાર વગર

पस्य देशनिषेधे भगवत्प्ररूपणैव कारणमिति । 'धम्मत्थिकायस्स पएसा' धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः, तथा 'अधम्मत्थिकाए' अधर्मास्तिकायः 'नो अधम्मत्थिकायस्स देसे' नो अधर्मास्तिकायस्य देशः, 'अधम्मत्थिकायस्स पएसा' अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः 'अद्धासमए' अद्धासमय अद्धा कालस्तत्स्वरूपः समयः क्षण इति अद्धा, समय स च काल एक एव वर्तमानलक्षण अतीतानागतयोरसत्त्वात् एव प्रकारेण

निषेध में भगवान् की प्ररूपणा ही कारण है। इस तरह धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४ और अद्धासमय ५ अरूपीद्रव्य के ये पांच प्रकार वर्णित किये गये हैं। इनका वर्णन से ही लोकाकाश विषयक ६ छह प्रश्नों का उत्तर हो जाता है। अद्धासमय का तात्पर्य क्षण से है। और यह क्षण वर्तमान समय रूप होता है-और वर्तमान समय एक क्षणरूप होता है। अतीतकाल और अनागतकाल का असत्त्व होने से सद्भाव ही नहीं माना गया है। एक क्षण रूप वर्तमानकाल को ही अद्धासमयरूप माना गया है। दूसरी जगह अरूपी दश प्रकार के कहे हुए हैं—जैसे-आकाशास्तिकाय १ आकाशास्तिकायदेश २ आकाशास्तिकायप्रदेश ३ धर्मास्तिकाय ४ धर्मास्तिकायदेश ५ धर्मास्तिकायप्रदेश ६ अधर्मास्तिकाय ७ अधर्मास्तिकायदेश ८ अधर्मास्तिकायप्रदेश ९ अद्धासमय १०।

બાકી રહ્યું છે ધર્માસ્તિકાય આદિના દેશોના નિષેધમાં ભગવાનની પ્રરૂપણા જ કારણરૂપ છે આ રીતે (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્મસ્તિકાયના પ્રદેશો, (૩) અધર્માસ્તિકાય, (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૫) અદ્ધાસમય (વર્તમાન ક્ષણ) એ પ્રમાણે અરૂપી દ્રવ્યના પાંચ પ્રકાર વર્ણવ્યા છે તેમનું વર્ણન કરવાથી લોકાકાશ વિષેના છ પ્રશ્નોના ઉત્તર મળી જાય છે અદ્ધાસમય એટલે કાળ અને તે ક્ષણ વર્તમાન સમય રૂપ હોય છે-અને વર્તમાન સમય એક ક્ષણ રૂપ હોય છે ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળનું અસત્ત્વ (અભાવ-અનસ્તિત્વ) હોવાથી, તેમનો સદ્ભાવ જ માનવામાં-આવ્યો નથી. એક ક્ષણરૂપ વર્તમાન સમયને જ અદ્ધાસમય રૂપ માનેલો છે બીજા ગ્રન્થમાં અરૂપીને નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે—(૧) આકાશાસ્તિકાય, (૨) આકાશાસ્તિકાય દેશ, (૩) આકાશાસ્તિકાય પ્રદેશ, (૪) ધર્માસ્તિકાય, (૫) ધર્માસ્તિકાય દેશ, (૬) ધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ, (૭) અધર્માસ્તિકાય, (૮) અધર્માસ્તિકાયદેશ, (૯) અધર્માસ્તિકાયપ્રદેશ, અને (૧૦) અદ્ધા સમય (વર્તમાન કાળ)

लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्याप्युत्तरं कृतमिति । अन्यत्र तु अरूपिणो दश प्रकारा वर्णिताः यथा आकाशास्तिकायः, तदेशः तत्प्रदेशश्च एवं धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायौ तयोर्देशप्रदेशाः समयश्चेति मिलित्वा दश भवन्ति, इह तु सभेदस्याऽऽकाशस्याधिकरणरूप्यरूपितया विवक्षितत्वात् इति आकाशाधेयाः सप्तैव वक्तव्या भवन्ति न च ते सप्तापीह विवक्षिता अविवक्षाकारणस्य अग्रे वक्ष्यमाणत्वात्,

अथ लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्यापि उत्तर कृत्वा अलोकाकाशविषयकं प्रश्नं कुर्वन्नाह-'अलोगागासे' इत्यादि. 'अलोगागासे णं भंते' अलोकाकाशः खलु

शंका-जब इस प्रकार से अरूपी के दूसरी जगह १० भेद कहे गये हैं तो फिर यहां उसके पांच भेद कहने का कारण क्या है ?

उत्तर—यहां पर तीन भेद वाले आकाश को आधाररूप से विवक्षित किया गया है इस कारण उसके तीन भेद यहां गिने नहीं गये हैं। यहां तो जो आधेय हैं उनके ही भेदों का विचार किया गया है। अतः धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और अद्धासमयरूप काल इन आधेय रूप अरूपी तीनों का ही विचार करने में आया है इस विचार में पूर्वोक्त १० दस भेदों में से आकाशास्तिकाय के तीन ३ भेद निकाल देने पर बाकी सात ७ बचे रहते हैं। सो इनमें भी सात भेदों की यहां विवक्षा नहीं हुई है इसका कारण आगे प्रकट किया जायगा। जिन भेदों की विवक्षा की गई है उन्हें ही यहां प्रकट किया गया है।

अब अलोकाकाश के विषय में प्रश्न करते हुए गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं (अलोगागासे णं भंते! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाश में

શંકા—જો બીજી જગ્યાએ અરૂપીના દસ પ્રકાર કહ્યા છે તો અહીં શા માટે તેના પાંચ ભેદ કહ્યા છે ? ઉત્તર—અહીં ત્રણ ભેદવાળા આકાશને આધાર રૂપ ગણવામાં આવેલ છે, તેથી તેના ત્રણ ભેદને ગણતરીમાં લીધા નથી. અહીં તો જે આધેય છે તેમના ભેદોનો જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. તેથી ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય અને અદ્ધાસમય રૂપ કાળ એ આધેય રૂપઅરૂપી ત્રણેનો જ અહીં વિચાર કરવામા આવ્યા છે. આ રીતે ઉપર કહેલા ૧૦ દસ ભેદોમાથી આકાશાસ્તિકાયના ત્રણ ભેદને કાઢી નાખવાથી બાકી સાત ભેદ રહે છે. તે સાત ભેદને બદલે પાચ ભેદોનુ વર્ણન શા માટે કરવામા આવ્યુ છે તે આગળ બતાવવામા આવ્યુ છે. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને પણ ગણવામા આવ્યા નથી, બાકીના પાંચને જ અરૂપીના ભેદ તરીકે ગણાવ્યા છે

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને અલોકાકાશ ને વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે-(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) અલોકાકાશમા જીવ અને

मदन्त ! ' किं जीवा पुच्छा तह चेव तथा चैव यथा लोकाकाशे प्रश्न कृत तथा अलोकाकाशेऽपि प्रश्नो ज्ञातव्यस्तथादि ' अलोगागासे णं भंते किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा " एवं रूपेणालोकाकाशेऽपि पक्ष पूर्ववदेव प्रश्नः । एतेषा पञ्चानामपि निर्णयं कुर्वन्नेव भगवानाह— गोयमा' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' नो जीवा जाव नो अजीवपएसा ' नो जीवा यावत् नो अजीवप्रदेशाः हे गौतम ! योऽयमलोकाकाशः स जीवानां तदेशानां तत्प्रदेशानामजीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानां नास्ति आधार इत्यर्थः अत्र यावत्पदेन जीवदेशप्रदेशाजीवदेशतत्प्रदेशानां संग्रहो भवतीति । यदि अलोकाकाशो न जीवादीनामाधारभूतस्तदा किं स्वरूपस्तत्राह-'एगे' इत्यादि । 'एगे अजीवदव्वदेसे' एकोऽजीवद्रव्यदेशः अलोकाकाशस्य देशस्तं लोकाकाशद्रव्यस्य भाग-

भी जीव और अजीवादि को लेकर पहिले लोकाकाशो की तरह ६ छह प्रश्न कर लेना चाहिये-वे इस प्रकार से-(अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा,? हे भदन्त ! अलोकाकाश में जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश और अजीवप्रदेश है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवपएसा) अलोकाकाश में न जीव के देश है, न जीव के प्रदेश है, न अजीव है, न अजीव के देश है और न अजीव के प्रदेश भी है । यहां (यावत्) पद से जीवदेश तत् प्रदेश, अजीवदेश और तत् प्रदेश इनका संग्रह हुआ है । प्रश्न-यदि अलोकाकाश जीवादिक द्रव्यों का आधारभूत नहीं है तो फिर वह किं स्वरूप है-? इस का उत्तर-(एगे अजीवदव्वदेसे) वह अलोकाकाश एक अजीवद्रव्यदेशरूप है । यहां जो अलोकाकाश में अ

અજીવ આદિ છે કે નહીં અહીં પણ લોકાકાશને વિષે જે ૬ છ પ્રશ્નો આપ્યા છે તેજ અલોકાકાશ વિષે પૂછવા જોઇએ. તે પ્રશ્નો આ પ્રમાણે છે-(अलोगागासे णं भंते किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा ? હે ભદન્ત ! અલોકાકાશમાં જીવ, જીવદેશ, જીવ પ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અજીવપ્રદેશ હોય છે કે નહીં ? (गोयमा) હે ગૌતમ ! (नो जीवा जाव नो अजीवपएसा) ના અલોકાકાશમાં જીવદ્રવ્યો નથી, જીવદેશ નથી, જીવપ્રદેશ નથી અજીવદ્રવ્ય નથી અજીવદેશ નથી અજીવપ્રદેશ નથી અહીં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી જીવદેશ જીવપ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશ એ બધું ગ્રહણ કરાયું છે

પ્રશ્ન—જો અલોકાકાશ જીવાદિકદ્રવ્યોના આધારરૂપ ન હોય તો તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्याप्युत्तरं कृतमिति । अन्यत्र तु अरूपिणो दश प्रकारा वर्णिताः यथा आकाशास्तिकायः, तद्देशः तत्प्रदेशश्च एवं धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायौ तयोर्देशप्रदेशाः समयश्चेति मिलित्वा दश भवन्ति, इह तु सभेदस्याऽऽकाशस्याधिकरणरूप्यरूपितया विवक्षितत्वात् इति आकाशाधेयाः सप्तैव वक्तव्या भवन्ति न च ते सप्तापीह विवक्षिता अविवक्षाकारणस्य अग्रे वक्ष्यमाणत्वात्,

अथ लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्यापि उत्तर कृत्वा अलोकाकाशविषयकं प्रश्नं कुर्वन्नाह-'अलोगागासे' इत्यादि. 'अलोगागासे णं भंते' अलोकाकाशः खलु

शंका-जब इस प्रकार से अरूपी के दूसरी जगह १० भेद कहे गये हैं तो फिर यहां उसके पांच भेद कहने का कारण क्या है ?

उत्तर—यहां पर तीन भेद वाले आकाश को आधाररूप से विवक्षित किया गया है इस कारण उसके तीन भेद यहां गिने नहीं गये हैं। यहां तो जो आधेय हैं उनके ही भेदों का विचार किया गया है। अतः धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और अद्धासमयरूप काल इन आधेय रूप अरूपी तीनों का ही विचार करने में आया है इस विचार में पूर्वोक्त १० दस भेदों में से आकाशास्तिकाय के तीन ३ भेद निकाल देने पर बाकी सात ७ बचे रहते हैं। सो इनमें भी सात भेदों की यहां विवक्षा नहीं हुई है इसका कारण आगे प्रकट किया जायगा। जिन भेदों की विवक्षा की गई है उन्हें ही यहां प्रकट किया गया है।

अब अलोकाकाश के विषय में प्रश्न करते हुए गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाश में

શંકા—જો બીજી જગ્યાએ અરૂપીના દસ પ્રકાર કહ્યા છે તો અહીં શા માટે-તેના પાંચ ભેદ કહ્યા છે ? ઉત્તર—અહીં ત્રણ ભેદવાળા આકાશને આધાર રૂપ ગણવામા આવેલ છે, તેથી તેના ત્રણ ભેદને ગણતરીમા લીધા નથી. અહીં તો જે આધેય છે તેમના ભેદોનો જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. તેથી ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય અને અદ્ધાસમય રૂપ કાળ એ આધેય રૂપઅરૂપી ત્રણેનો જ અહી વિચાર કરવામા આવ્યો છે. આ રીતે ઉપર કહેલા ૧૦ દસ ભેદોમાથી આકાશાસ્તિકાયના ત્રણ ભેદોને કાઢી નાખવાથી બાકી સાત ભેદ રહે છે. તે સાત ભેદને બદલે પાચ ભેદોનું વર્ણન શા માટે કરવામા આવ્યુ છે તે આગળ બતાવવામા આવ્યુ છે. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને પણ ગણવામા આવ્યા નથી બાકીના પાચને જ અરૂપીના ભેદ તરીકે ગણાવ્યા છે

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને અલોકાકાશ ને વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે-(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) અલોકાકાશમાં જીવ અને

मदन्त ! ' किं जीवा पुच्छा तह चेव तथा चैव यथा लोकाकाशे प्रश्न कृतः तथा अलोकाकाशेऽपि प्रश्नो ज्ञातव्यस्तत्पादि ' अलोगागासे णं भंते किं जीवा जीव देसा जीवप्पएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवप्पएसा " एव रूपेणालोकाकाशविषय पूर्ववदेव प्रश्न । एतपां पण्णामपि निषेधं कुर्वन्नेव भगवानाह— गोयमा' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा ' नो जीवाः यावत् नो अजीवप्रदेशा हे गौतम ! योऽप्यलोकाकाश स जीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानामजीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानां नास्ति आधार इत्यर्थः अत्र यावत्पदेन जीवदेशप्रदेशाजीवदेशतत्प्रदेशानां सग्रहो भवतीति । यदि अलोकाकाशो न जीवादीनामाधारभूतस्तदा किं स्वरूपस्तत्राह-' एगे ' इत्यादि । ' एगे अजीव दव्वदेसे ' एकोऽजीवद्रव्यदेशः अलोकाकाशस्य देशतं लोकाकाशद्रव्यस्य भाग-

भी जीव और अजीवादि को लेकर पहिले लोकाकाशों की तरह ६ छह प्रश्न कर लेना चाहिये-वे इस प्रकार से-(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा, ? हे भदन्त ! अलोकाकाश में जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश और अजीवप्रदेश हे क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) अलोकाकाश में न जीव के देश है, न जीव के प्रदेश है, न अजीव है, न अजीव के देश है और न अजीव के प्रदेश भी है । यहां (यावत्) पद से जीवदेश तत् प्रदेश, अजीवदेश और तत् प्रदेश इनका संग्रह हुआ है । प्रश्न-यदि अलोकाकाश जीवादिक द्रव्यों का आधारभूत नहीं है तो फिर वह किं स्वरूप है-? समा धान-(एगे अजीवदव्वदेसे) वह अलोकाकाश एक अजीवद्रव्यदेशरूप है । यहाँ जो अलोकाकाश में अ-

અલોક આદિ છે કે નહીં અહીં પણ લોકાકાશને વિષે જે ૬ પ્રશ્નો આલાપ પૂછ્યા છે એજ અલોકાકાશ વિષે પૂછવા જોઇએ. તે પ્રશ્નો આ પ્રમાણે છે-(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा हे ભદન્ત ! અલોકાકાશમાં જીવ,જીવદેશ,જીવ પ્રદેશ, અજીવ,અજીવદેશ અજીવપ્રદેશ હોય છે કે નહીં ? (गोयमा) હે ગૌતમ ! (नो जीवा जाव नो अजीव पएसा) ના, અલોકાકાશમાં જીવદ્રવ્યો નથી, જીવદેશ નથી, જીવપ્રદેશ નથી અજીવદ્રવ્ય નથી અજીવદેશ નથી અહીં (जाव) (પદથી) પણ જીવદેશ જીવપ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશ એમનું ગ્રહણ કરાયું છે

પ્રશ્ન.—જો આલોકાકાશ જીવાદિકદ્રવ્યોનો આધારરૂપ ન હોય તો તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ।

रूपत्वात् कथितम् 'अगुरुलहुए' अगुरुलघुकः नो गुरुर्नवा लघुरलोकाकाश इत्यर्थः तथा 'अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते' अनन्तैरगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः अनन्तैः स्वपर्यायपरपर्यायैर्गुणैरगुरुलघुस्वभावैः संयुक्त इत्यर्थः 'सव्वागासे अणंतभागूणे'

जीवद्रव्य को देशत्व कहा गया है वह लोकालोकरूप अकाशद्रव्य का भागरूप होने से कहा गया है यह अलोकाकाश न गुरु है, न लघु है, अतःअगुरुलघुरूप है। (अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) अनत अगुरूलघुस्वभाववाले गुणों से यह युक्त है। अर्थात्- अगुरूलघु स्वभाववाले स्वपर्यायरूप एवं परपर्यायरूप गुणों से यह सहित है। तात्पर्य कहने का यह है कि परिणमन से शून्य कोई भी वस्तु नहीं है। आकाश-अलोकाकाश भी वस्तुरूप है अतः उसमें भी परिणमन होता है। और यह परिणमन न लघु होता है और न गुरु ही होता है। इस परिणमन का नाम ही स्वपर्याय परपर्याय है। परपर्याय का तात्पर्य पर के निमित्त से जो परिणमन होता है वह है। यद्यपि अलोकाकाश में आकाश के सिवाय और कोई द्रव्य नहीं है-पर फिर भी वहां जो परपर्यायरूप परिणमन होता रहता है वह लोकाकाश के संबंध को लेकर ही माना गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि आकाश एक अखंड समूचा द्रव्य है उसमें जितने भाग में धर्मादिक द्रव्य रहते हैं उतने भाग को लोका-

---

उत्तर—(एगे अजीवदव्वदेसे) તે અલોકાકાશ એક અજીવ દ્રવ્યદેશરૂપછે. અહીં જે અલોકાકાશમાં અજીવદ્રવ્યનું દેશત્વ કહેલું છે તે લોકાલોકરૂપ આકાશદ્રવ્યના ભાગરૂપ હોવાથી કહેલ છે. તે અલોકાકાશ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુરૂપ છે. (अणंते हिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) તે અનંત અગુરૂલઘુ સ્વભાવવાળા ગુણોથી યુક્ત છે. એટલે કે અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાયરૂપ અને પરપર્યાયરૂપ ગુણોથી તે યુક્ત છે કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે પરિણમન વિનાની કોઈપણ વસ્તુ હોતી નથી આકશ અને અલોકાકાશ પણ વસ્તુરૂપ છે. તેથી તેમનામાં પણ પરિણમન હોય છે તે પરિણમન લઘુ પણ હોતું નથી અને ગુરુ પણ હોતું નથી તે પરિણમનનું નામ જ સ્વપર્યાય પરપર્યાય છે પરને નિમિત્તે જે પરિણમન થાય છે તેને પરપર્યાય કહે છે એ કે અલોકાકાશમાં આકાશ સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય હોતું નથી, તો પણ ત્યાં જે પરપર્યાયરૂપ પરિણમન થતું રહે છે તે લોકાકાશના સંબંધને લીધેજ થાય છે એમ માનવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આકાશ એક અખંડ દ્રવ્ય છે--તેના જેટલા ભાગમા ધર્માદિક દ્રવ્ય રહે છે એટલા ભાગને લોકાકાશ કહે છે

सर्वाकाशेऽनन्तभागोने लोकाकाश, अलोकाकाशापेक्षया लोकाकाशस्यानन्त भागरूपत्वात् ॥ सू०४ ॥

॥ धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणस्पर्शनयोर्विचारः ।

अथ अनन्तरमकरणे उक्तान् धर्मास्तिकायादीन् प्रमाणतो निरूपयन्नाह ' धम्मत्थिकाएणं भंते ' इत्यादि ॥

मूलम्–धम्मत्थिकाएणं भंते? केमहालए पण्णत्ते गोयमा! लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं

काश कह दिया गया है और जितने में वे नहीं रहते उतने को अलोकाकाश कहा गया है। तो जिस प्रकार एक अखंड बांस के छोर को हिलाने पर पूरा बांस हिल जाया करता है उसी प्रकार लोकाकाश में जो परपदार्थों को लेकर परिणमन होता है–वह पूरे आकाशमात्र में होता है। नहीं तो फिर अलोकाकाश में कालद्रव्य तो है नहीं–वहां फिर स्वपर्याय परूप सहज परिणमन भी जो कि प्रत्येक द्रव्य २ में होता रहता है कैसे माना जायगा। परिणमनमात्र कालद्रव्य के निमित्त से होता है स्वतः नहीं होता। इस तरह अलोकाकाश स्वपरपर्यायरूप अनन्तगुणों से जो कि अगुरुलघुस्वभावयाले होते हैं युक्त है। (सव्वागासे अणंतभागूणे) यह अलोकाकाश सर्वाकाश में अनन्त भागन्यून है, क्यों कि अलोकाकाश की अपेक्षा लोकाकाश अनन्तभागरूप माना गया है अतः अलोकाकाश उतने भाग से न्यून कहा गया है सू०॥ ४ ॥

॥ आकाशनिरूपणं समाप्तं ॥

અને જેટલા આકાશમાં તે રહેતુ નથી તેટલા આકાશને અલોકાકાશ કહેલ છે. તો જેવી રીતે એક અખંડ વાંસના છેડાને હલાવવાથી આખો વાંસ હલ્યા કરે છે, બીજ પ્રમાણે પરપદાર્થોને લઈને જેટલાકાશમાં જે પરિણમન થાય છે તે અખંડ (પૂરે પૂરા) આકાશમાં થાય છે અલોકાકાશમાં કાલદ્રવ્ય તો છે જ નહીં–તો ત્યાં પ્રત્યેક દ્રવ્યે પોતા પોતાનું સ્વપર્યાયરૂપ સહજ (સ્વાભાવિક) પરિણમન કેવી રીતે ચાલતું થાય? દરેક પરિણમન કાલદ્રવ્યને કારણે થતુ હોય છે, સ્વતઃ (આપોઆપ) થતુ નથી. આ રીતે અલોકાકાશ અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયરૂપ અનંત ગુણોથી યુક્ત છે (સવ્વાગાસે અણંતભાગૂણે) તે અલોકાકાશ સર્વાકાશમાં અનંત ભાગ ન્યૂન છે કારણ કે અલોકાકાશ કરતાં લોકાકાશ અનંત ગણારૂપ જાણવામાં આવ્યું છે, તેથી અલોકાકાશ કરતાં જેટલા આકાશ પ્રમાણ ન્યૂન કહેલ છે

॥ આકાશ નિરૂપણ સમાપ્ત ॥

रूपत्वात् कथितम् 'अगुरुलहुए' अगुरुलघुकः नो गुरुर्नवा लघुरलोकाकाश इत्यर्थः तथा 'अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते' अनन्तैरगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः अनन्तैः स्वपर्यायपरपर्यायैर्गुणैरगुरुलघुस्वभावैः संयुक्त इत्यर्थः 'सव्वागासे अणंतभागूणे'

जीवद्रव्य को देशत्व कहा गया है वह लोकालोकरूप अकाशद्रव्य का भागरूप होने से कहा गया है यह अलोकाकाश न गुरु है, न लघु है, अतःअगुरुलघुरूप है। (अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) अनंत अगुरुलघुस्वभाववाले गुणों से यह युक्त है। अर्थात्- अगुरुलघु स्वभाववाले स्वपर्यायरूप एवं परपर्यायरूप गुणों से यह सहित है। तात्पर्य कहने का यह है कि परिणमन से शून्य कोई भी वस्तु नहीं है। आकाश-अलोकाकाश भी वस्तुरूप है अतः उसमें भी परिणमन होता है। और यह परिणमन न लघु होता है और न गुरु ही होता है। इस परिणमन का नाम ही स्वपर्याय परपर्याय है। परपर्याय का तात्पर्य पर के निमित्त से जो परिणमन होता है वह है। यद्यपि अलोकाकाश में आकाश के सिवाय और कोई द्रव्य नहीं है-पर फिर भी वहां जो परपर्यायरूप परिणमन होता रहता है वह लोकाकाश के संबंध को लेकर ही माना गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि आकाश एक अखंड समूचा द्रव्य है उसमें जितने भाग में धर्मादिक द्रव्य रहते हैं उतने भाग को लोका-

---

ઉત્તર—(एगे अजीवदव्वदेसे) તે અલોકાકાશ એક અજીવ દ્રવ્યદેશરૂપછે. અહી જે અલોકાકાશમાં અજીવદ્રવ્યનું દેશત્વ કહેલું છે તે લોકાલોકરૂપ આકાશદ્રવ્યના ભાગરૂપ હોવાથી કહેલ છે. તે અલોકાકાશ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, પણ અગુરૂલઘુરૂપ છે. (अणंते हिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) તે અનંત અગુરૂલઘુ સ્વભાવવાળા ગુણોથી યુક્ત છે. એટલે કે અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાયરૂપ અને પરપર્યાયરૂપ ગુણોથી તે યુક્ત છે. કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે પરિણમન વિનાની કોઈપણ વસ્તુ હોતી નથી આકશ અને અલોકાકાશ પણ વસ્તુરૂપ છે. તેથી તેમનામાં પણ પરિણમન હોય છે તે પરિણમન લઘુ પણ હોતું નથી અને ગુરુ પણ હોતું નથી તે પરિણમનનું નામ જ સ્વપર્યાય પરપર્યાય છે પરને નિમિત્તે જે પરિણમન થાય છે તેને પરપર્યાય કહે છે જો કે અલોકાકાશમાં આકાશ સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય હોતું નથી, તો પણ ત્યાં જે પરપર્યાયરૂપ પરિણમન થતું રહે છે તે લોકાકાશના સંબંધને લીધેજ થાય છે એમ માનવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આકાશ એક અખંડ દ્રવ્ય છે--તેના જેટલા ભાગમા ધર્માદિક દ્રવ્ય રહે છે એટલા ભાગને લોકાકાશ કહે છે

सूर्याकाशेऽनन्तभागोन अलोकाकाश, अलोकाकाशापेक्षया लोकाकाशस्यानन्त भागरूपत्वात् ॥ सू०४ ॥

॥ धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणस्पर्शनयोर्निरूपणम् ।

अथ अनन्तरसूत्रेण उक्तान् धर्मास्तिकायादीन् प्रमाणतो निरूपयन्नाह 'धम्मत्थिकाएणं भंते' इत्यादि ॥

मूलम्–धम्मत्थिकाएणं भंते? केमहालए पण्णत्ते गोयमा! लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं

काश कह दिया गया है और जितने में ये नहीं रहते उतने को अलोकाकाश कहा गया है। तो जिस प्रकार एक अखंड बांस के छोड को हिलाने पर पूरा बांस हिल जाया करता है उसी प्रकार लोकाकाश में जो परपदार्थों को लेकर परिणमन होता है–वह पूरे आकाशमात्र में होता है। नहीं तो फिर अलोकाकाश में कालद्रव्य तो है नहीं–वहां फिर स्वपर्याय रूप सहज परिणमन भी जो कि प्रत्येक क्षण २ में होता रहता है कैसे माना जायगा। परिणमनमात्र कालद्रव्य के निमित्त से होता है ऐसा नहीं होता। इस तरह अलोकाकाश स्वपरपर्यायरूप अनन्तगुणों से जो कि अगुरुलघुभावद्वारा होते हैं पूरा है। (सव्वागासे अणंतभागूणे) यह अलोकाकाश सर्वाकाश में अनन्त भागन्यून है, क्यों कि अलोकाकाश की अपेक्षा लोकाकाश अनन्तभागरूप माना गया है अतः अलोकाकाश उतने भाग से न्यून कहा गया है सू०॥ ४ ॥

॥ आकाशनिरूपण समाप्त ॥

અને જેટલા આકાશમાં તે રહેતુ નથી તેટલા આકાશને અલોકાકાશ કહેલ છે. તો જેવી રીતે એક અખંડ વાંસના છોડને હલાવવાથી આખો વાંસ હલ્યા કરે છે, એજ પ્રમાણે પરપદાર્થોને લઈને લોકાકાશમાં જે પરિણમન થાય છે તે અખંડ (પૂરે પૂરા) આકાશમાં થાય છે અલોકાકાશમાં કાલદ્રવ્ય તો છે જ નહીં–તો ત્યાં પ્રત્યેક ક્ષણે થતા સ્વપર્યાયરૂપ આદિ (સહજ) પરિણમન કેવી રીતે સમજી શકે ? એટલે પરિણમન કાલદ્રવ્યને કારણે થતુ હોય છે, સ્વત (આપે આપ) થતુ નથી. આ રીતે અલોકાકાશ અગુરુલઘુ સ્વપરપર્યાયો સ્વરૂપીય અને પરપર્યાયરૂપ અનંત ગુણોથી પુરા છે (સવ્વાગાસે અણંતભાગૂણે) તે અલોકાકાશ સર્વાકાશમાં અનંત ભાગ ન્યૂન છે, કારણ કે અલોકાકાશ કરતાં લોકાકાશ અનંત ભાગરૂપ માનવામાં આવ્યું છે, તેથી અલોકાકાશ તેને જેટલા ભાગ પ્રમાણ ન્યૂન કહેલ છે

॥ આકાશ નિરૂપણ સમાપ્ત ॥

चिट्ठइ एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंचविएक्काभिलावा अहो लोएण भंते धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति? गोयमा! सातिरेगं अद्धं फुसइ, तिरियलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! असंखेज्जइ भागं फुसइ उड्ढे लोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! देसूणं अद्धं फुसइ, इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जभागं फुसइ, असंखेज्जभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ? गोयमा! णो संखेज्जभागं फुसइ. असंखेज्जभागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे फुसइ,नो सव्वं फुसइ। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ?जहा रयणप्पभा तहा घणोदही घणवाय-तणुवाया वि। इमीसे णं भंते? रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ.असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ? गोयमा! संखेज्जइभागं फुसइ णो असंखेज्जइ भागं फुसइ. णो संखेज्जे णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ उवासंतराइं सव्वाइं. जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा, एवं सोहम्मे कप्पे जाव इसी पब्भारा पुढवी फुसइ ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसंति सेसा पडिसेहियव्वा. एवं अधम्मत्थिकाए एवं लोयागासे वि, गाहा-पुढवोदहीघणतणू, कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी संखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा ॥ सू० ५ ॥

॥ बितियं सयं समत्तं ॥

अनधिकरणस्य वापोर्यथा न संभवस्तथाऽनधिकरणस्याकाशस्यापि कुतः समवः ? इति चेदाह—वस्तुस्वभावस्य वैचित्र्येण अधिकरणमन्तरेणापि आकाशस्य प्रतिष्ठितत्व संभवात्, नहि एकस्य पदार्थस्य यादृश स्वरूप, सर्वस्यापि पदार्थस्य तादृशेव स्वरूप स्यादिति नियम । अन्यथा वस्तुवैचित्र्यमेव न स्यात् । यथा भवति किंचिद्वस्तु चक्षुषा ग्राह्य किंचिद्रसनया ग्राह्यम्, तच्च न कथंचिदपि भवति यत् रसो न कथं चक्षुर्ग्राह्य, रूपं वा कथं न रसनया गृह्यते, तत्कस्माद्धेतो ? वस्तुस्वभावस्य

होने की संभवना नहीं उसी प्रकारसे बिना आधारके आकाश का भी सद्भाव कैसे हो सकता है। यदि कहा जाय कि आकाशका भी अन्य अधिष्ठान आधार है तो फिर उसे यहां सूत्रकार ने क्यों नहीं दिखलाया? उसे अवश्य दिखाना चाहिये था।

उत्तर—यह तो वस्तुके स्वभाव की विचित्रता है जो आकाशरूप वस्तु बिना दूसरे आधार के भी प्रतिष्ठित रहती है। ऐसा तो कोई नियम नहीं है कि एक पदार्थका जैसा स्वभाव हो दूसरे पदार्थका भी वैसा ही स्वभाव होना चाहिये। यदि ऐसा ही होने लगे तो फिर वस्तुओं में जो वैचित्र्य पाया जाता है वह नहीं पाया जा सकेगा। यह वस्तु स्वभावकी ही तो विचित्रता है जैसे कोई वस्तु रसना इन्द्रियसे ग्राह्य होती है और कोई वस्तु चक्षुइन्द्रिय से ग्रहण करने में आती है। यदि ऐसा न होता तो फिर रस चक्षुइन्द्रिय से ग्राह्य हो जाता और रूप रसना इन्द्रिय से ग्राह्य हो जाता। जो नहीं होता है तो इसका कारण वस्तु स्वभाव की विचित्रता ही तो है। तो जिस प्रकारसे यहां पर वस्तुस्वभाव

વાયુનું અસ્તિત્વ સ્વતંત્રપણે રહેતું નથી, તેવી રીતે આધાર વિના આકાશનું અસ્તિત્વ પણ સંભવી શકતું નથી? તેના સમાધાનમાં કહે છે કે આકાશનો આધાર પણ કોઈ અન્ય પદાર્થ છે, તો સૂત્રકારે અહીં શા માટે તેનો ઉલ્લેખ કર્યો નથી? અથવા તો તેનો ઉલ્લેખ અવશ્ય થવો જોઈતો હતો

ઉત્તર—આકાશરૂપ વસ્તુ બીજા કોઈ પણ વસ્તુના આધાર વગર પણ રહી શકે છે, એતો વસ્તુના સ્વભાવની વિચિત્રતા દર્શાવે છે એવો કોઈ નિયમ નથી કે એક પદાર્થનો જેવો સ્વભાવ હોય તેવો જ સ્વભાવ બીજા પદાર્થનો પણ હોવો જોઈએ. જો એવું જ બનતું હોય તો જુદી જુદી વસ્તુઓમાં જે જુદી જુદી વિચિત્રતા જોવા મળે છે તે વિચિત્રતા સંભવત જ નહીં. વસ્તુ સ્વભાવની જ જે વિચિત્રતા છે કે કોઈ વસ્તુ રસના ઇન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે તો કોઈ વસ્તુ ચક્ષુઇન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે જો એવું બનતું ન હોત તો આસ્વાદીય રસને ચક્ષુઇન્દ્રિય વડે અવશ્ય કરી શકાત અને રૂપને રસના ઇન્દ્રિય વડે અવશ્ય ગ્રહણ પણ કરી શકાત પણ એવું બનતું નથી. તેનું કારણ વસ્તુસ્વભાવની વિચિત્રતા જ છે

चिट्ठइ एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंचविएक्काभिलावा अहो लोएण भंते धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति? गोयमा! सातिरेगं अद्धं फुसइ, तिरियलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! असंखेज्जइ भागं फुसइ उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! देसूणं अद्धं फुसइ, इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जभागं फुसइ, असंखेज्जभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ? गोयमा! णो संखेज्जभागं फुसइ. असंखेज्जभागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे फुसइ,नो सव्वं फुसइ। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ?जहा रयणप्पभा तहा घणोदही घणवाय-तणुवाया वि। इमीसे णं भंते? रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ.असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ? गोयमा! संखेज्जइभागं फुसइ णो असंखेज्जइ भागं फुसइ. णो संखेज्जे णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ उवासंतराइं सव्वाइं. जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा, एवं सोहम्मे कप्पे जाव इसी पब्भारा पुढवी फुसइ ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसंति सेसा पडिसेहियव्वा. एवं अधम्मत्थिकाए एवं लोयागासे वि, गाहा-पुढवोदहीघणतणू, कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी संखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा ॥ सू० ५ ॥

॥ बितियं सयं समत्तं ॥

छाया-धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कियन्महालयः प्रज्ञप्तः ? गौतम ! लोका लोकमात्रः लोकप्रमाणको लोकस्पृष्टो लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति एवमेव धर्मास्तिकायो ऽधर्मास्तिकायो लोकाकाशो जीवास्तिकायः पुद्गलास्तिकाय पञ्चाऽपि एकाभिलापाः अधोलोकः खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य किं देशं स्पृशति ? गौतम ! सातिरेकार्धं

धर्मास्तिकायादिक के प्रमाण का और स्पर्शना का विचार—

अनन्तर प्रकरण में कथित धर्मादिक द्रव्यों का कथन प्रमाण की अपेक्षा से अब सूत्रकार कहते हैं—(धम्मत्थिकाए णं भंते !) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय कितना बडा कहा गया है ? (गोयमा) हे गौतम ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) वह धर्मास्तिकाय लोकरूप है, लोकमात्र है, लोकप्रमाण है, लोक स्पृष्ट है और लोकको स्पर्श करके रहा हुआ है। (एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंच वि एक्काभिलावा) इसी तरह अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय के विषय में भी जानना चाहिये। इन पाँचों का एक ही जैसा अभिलाप है (अहो लोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति) हे भदन्त ! अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे

ધર્માસ્તિકાય આદિના પ્રમાણ અને સ્પર્શનાનું નિરૂપણ—

પૂર્વ પ્રકરણમાં જે ધર્માદિ દ્રવ્યોનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, તેમના પ્રમાણનું આ પ્રકરણમાં સૂત્રકારે નિરૂપણ કરેલું છે—(धम्मत्थिकाए णं भंते !) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते ?) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કેટલું મોટું કહેવામાં આવ્યું છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे, लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) તે ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે, લોકમાત્ર છે, લોકપ્રમાણ છે, લોકસ્પૃષ્ટ છે, અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે (एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंच वि एक्काभिलावा) લોક પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય, લોકાકાશ, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ પ્રકરણ (કથન) સમજવું જોઈએ કે જેથી વધુ કથન કરવું ન પડે અને સમજવું (अहेलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति ?) હે ભદન્ત ! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ

स्पृशति तिर्यग्लोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! असंख्येयभागं स्पृशति। ऊर्ध्वलोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति इयं खलु भदन्त! रत्नप्रभा पृथिवी धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति संख्येयान् भागान् स्पृशति असंख्येयान् भागान् स्पृशति सर्वं स्पृशति? गौतम! नो संख्येयभागं

भाग का स्पर्श करता है। (तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा! असंखेज्जइभाग फुसइ) हे गौतम! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है। (उड्ढे लोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोन धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा) हे गौतम! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के (देसूणं अद्धं फुसइ) कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है। (इमा णं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) हे भदन्त! यह जो रत्नप्रभा नामकी पृथिवी है वह धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करती है, कि असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है? अथवा उसके संख्यातभागों का स्पर्श करती है या असंख्यातभागों का स्पर्श करती है? अथवा कि समस्त पूरे का स्पर्श करती है? (गोयमा!) हे गौतम! (णो संखेज्जइभागं फुसइ

કરે છે.(तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે. (उड्ढेलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा) હે ગૌતમ! (देसूणं अद्धं फुसइ) ઉર્ધ્વલોક તેના અર્ધ કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (इमाणं भंते! रयणप्पभापुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, सखज्जे भागे फुसइ, असंखज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ?) હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ,

छाया-धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कियान्महालय प्रज्ञप्तः ? गौतम ! लोका लोकमात्रः लो कप्रमाणको लोकस्पृष्टो लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति एवमेव धर्मास्तिकायो लोकमात्रो लोकप्रमाणो लोकस्पृष्टो लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति एवमधर्मास्तिकायः लोकाकाशः जीवास्तिकायः पुद्गलास्तिकायः पञ्चापि एकाभिलापाः अधोलोकः खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य कियन्तं स्पृशति ? गौतम ! सातिरेकमर्धं

धर्मास्तिकायादिक के प्रमाण का और स्पर्शना का विचार—

अनन्तर प्रकरण में कथित धर्मादिक द्रव्यों का कथन प्रमाण की अपेक्षा से अब सूत्रकार कहते हैं—(धम्मत्थिकाए णं भंते !) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! केमहालए पण्णत्ते) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय कितना बड़ा कहा गया है ? (गोयमा) हे गौतम ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोकरूप है, लोकमात्र है, लोकप्रमाण है, लोक स्पृष्ट है और लोकको स्पर्श करके रहा हुआ है। (एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंच वि एकाभिलावा) इसी तरह अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय के विषय में भी जानना चाहिये। इन पाँचों का एक ही जैसा अभिलाप है (अहो लोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसंति) हे भदन्त ! अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे

ધર્માસ્તિકાય આદિના પ્રમાણ અને સ્પર્શનાનું નિરૂપણ—

પૂર્વ પ્રકરણમાં જે ધર્માદિક દ્રવ્યોની વાત કરવામાં આવી છે, તેમના પ્રમાણની અપેક્ષાએ આ સૂત્રકારે નિરૂપણ કર્યું છે—(धम्मत्थिकाए णं भंते !) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! केमहालए पण्णत्ते ?) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કેટલું મોટું કહેવાયું છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे, लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) તે ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે, લોકમાત્ર છે, લોકપ્રમાણ છે, લોકસ્પૃષ્ટ છે, અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે (एवं अहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंच वि एकाभिलावा) લોક પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય, લોકાકાશ, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ વક્તવ્ય (કથન) સમજવું જોઇએ કે પાંચેનું વર્ણન સરખું જ સમજવું (अहेलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसंति ?) હે ભદન્ત ! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતાં કંઇક અધિક ભાગને સ્પર્શ

स्पृशति तिर्यग्लोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! असंख्येयभागं स्पृशति। ऊर्ध्वलोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति इयं खलु भदन्त! रत्नप्रभा पृथिवी धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति संख्येयान् भागान् स्पृशति असंख्येयान् भागान् स्पृशति सर्वं स्पृशति? गौतम! नो संख्येयभागं

भाग का स्पर्श करता है। (तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा! असंखेज्जइभाग फुसइ) हे गौतम! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है। (उड्ढे लोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोन धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा) हे गौतम! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के (देसूणं अद्धं फुसइ) कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है। (इमा णं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) हे भदन्त! यह जो रत्नप्रभा नामकी पृथिवी है वह धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करती है, कि असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है? अथवा उसके संख्यातभागों का स्पर्श करती है या असंख्यातभागों का स्पर्श करती है? अथवा कि समस्त पूरे का स्पर्श करती है? (गोयमा!) हे गौतम! (णो संखेज्जइभागं फुसइ

કરે છે (तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે. (उड्ढेलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा) હે ગૌતમ! (देसूणं अद्धं फुसइ) ઉર્ધ્વલોક તેના અર્ધ કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (इमाणं भंते! रयणप्पभापुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखज्जे भागे फुसइ, असंखज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ?) હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ,

स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति नो संख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान् स्पृशति नो सर्वं स्पृशति एतस्या खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्याः घनोदधिः धर्मास्तिकायस्य पृच्छा किं संख्येयभागं स्पृशति ? यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिरपि घनवात तनुवातावपि । एतस्या खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्या अधः काशान्तरं धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति यावत् सर्वं स्पृशति ? गौतम !

असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे नो सव्वं फुसइ) यह रत्नप्रभानाम की पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागका स्पर्श नहीं करती है किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है। यह उसके संख्यातभागों असंख्यातभागों का भी स्पर्श नहीं करती है और न समस्त पूर्ण रूप में ही उसका यह स्पर्श करती है। (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही, धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है-क्या वह उसके संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है ? (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही-घणवाय तणुवाया वि) हे गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है उसी प्रकार से घनोदधि भी उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इसी तरह से घनवात और तनुवात भी उसके असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं। (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए अधासत्तर धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्ज

અસંખ્યેયમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે, પણ સંખ્યાત ભાગને તથા અસંખ્યાત ભાગને સર્વ ભાગને સ્પર્શ કરતી નથી. તે રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે ? શું તે તેના સંખ્યાતમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે ? (જહા રયણપ્પભા તહા ઘણોદહી-ઘણવાયતણુવાયા વિ) હે ગૌતમ ! જે પ્રમાણે રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે, એજ પ્રમાણે ઘનોદધિ પણ તેના અસંખ્યાતમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે એજ પ્રમાણે ઘનવાત અને તનુવાત પણ તેના અસંખ્યાતમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मत्थिकायस्स किं

संख्येयभागं स्पृशति नो असंख्येयभागं स्पृशति नो संख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान् नो सर्वं स्पृशति अवकाशान्तराणि सर्वाणि यथा रत्नप्रभायाः पृथिव्याः वक्तव्यता भणिता एवं यावदधः सप्तम्याः जंबूद्वीपादिका द्वीपाः लव-

---

इभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का अवकाशान्तर क्या धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है-या यावत् वह सब पूरे धर्मास्तिकाय का स्पर्श करता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! इस रत्नप्रभापृथिवी का अवकाशान्तर (संखेज्जइभागं फुसइ, णो असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे फुसइ, णो असंखेज्जे भागे णो सव्वं फुसइ) धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, किन्तु असंख्यातवें भाग का नहीं और न उसके संख्यातभागोंका स्पर्श करता है और न असंख्यातभागों का स्पर्श करता है तथा न वह पूरे धर्मास्तिकाय का स्पर्श करता है। (उवासंतराइं सव्वाइं) इसी तरह से अन्य अवकाशान्तरों के विषय में जानना चाहिये। (जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया, एवं जाव अहे सत्तमाए) रत्नप्रभापृथिवी के विषय में जैसी वक्तव्यता कही है उसी तरह की वक्तव्यता यावत् सप्तमपृथिवीतक समझनी चाहिये। (जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया

संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ ?) હે ભદન્ત ! આ રત્નપ્રભાપૃથ્વીનુ અવકાશાન્તર શુ ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, સંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે ! (गोयमा !) હે ગૌતમ ! આ રત્નપ્રભાપૃથ્વીનું અવકાશાન્તર (संखेज्जइ भागं फुसइ, णो असंखेज्जइ भागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे फुसइ, णो असंखेज्जे भागे, णो सव्व फुसइ) ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરતું નથી, તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરતું નથી, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરતું નથી અથવા તો પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો પણ સ્પર્શ કરતું નથી (उवासंतराइं सव्वाइं) એજ પ્રમાણે બીજા અવકાશાન્તરોના વિષયમા પણ સમજવુ (जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया, एवं जाव अहे सत्तमाए) રત્નપ્રભા પૃથ્વીના વિષયમાં અહીં જે કથન થયુ છે તે સાતમી પૃથ્વી સુધીની બધી પૃથ્વીઓને પણ લાગૂ પડે છે. (जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा) જંબૂદ્વીપ આદિ દ્વીપો લવણ સમુદ્ર

स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति नो संख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान् स्पृशति नो सर्वं स्पृशति एतस्याः खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्याः घनोदधिः धर्मास्तिकायस्य पृच्छा किं संख्येयभागं स्पृशति ? यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिरपि घनवातः तनुवातोऽपि । एतस्याः खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्या अधः कियदन्तरं धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति यावत् सर्वं स्पृशति ? गौतम !

असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे, नो सव्वं फुसइ) यह रत्नप्रभानाम की पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागका स्पर्श नहीं करती है किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है। वह उसके संख्यातभागों असंख्यातभागों का भी स्पर्श नहीं करती है और न समस्त पूरे रूप में ही उसका वह स्पर्श करती है। (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही, धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है—क्या वह उसके संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है ? (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही—घणवाय तणुवाया वि) हे गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है उसी प्रकार से घनोदधि भी उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इसी तरह से घनवात और तनुवात भी उसके असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं। (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्ज

असंखेज्जइ भागं फुसइ, णो संखेज्जे ना असंखेज्जे नो सव्व फुसइ) રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરતી નથી, પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગને જ સ્પર્શ કરે છે તે તેના સંખ્યાતમાં ભાગને કે અસંખ્યાત ભાગને પણ સ્પર્શ કરતી નથી, તે તેના સમસ્ત ભાગને પણ સ્પર્શ કરતી નથી (ઇમીસે ણ મંતે ! રયણપ્પભાએ પુઢવીએ ઘણોદહી ધમ્મત્થિકાયસ્સપુચ્છા કિં સંખેજ્જઇ ભાગ ફુસઇ) હે ભદન્ત ! તે રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે ? શું તે તેના સંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે ? (જહા રયણપ્પભા તહા ઘણોદહી-ઘણવાયતણુવાયા વિ) હે ગૌતમ ! જે પ્રમાણે રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે, એજ પ્રમાણે ઘનોદધિ પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે એજ પ્રમાણે ઘનવાત અને તનુવાત પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે (ઇમીસે ણં મંતે ! રયણપ્પભાએ પુઢવીએ ઉવાસંતરે ધમ્મત્થિકાયસ્સ કિં

टीका—' धम्मत्थिकाएणं भंते ' धर्मास्तिकायः खलु भदन्त! " केमहालए पण्णत्ते' कियान् महालयः प्रज्ञप्तः? कियान विशालः कथितः धर्मास्तिकायस्य कियद्विशालत्वम् इति प्रश्नः। भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम! ' लोए लोय मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ' लोको लोकमात्रः लोकप्रमाणः लोकस्पृष्टः लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति। तत्र लोको लोकम-

---

टीकार्थ- (धम्मत्थिकाए णं भंते !) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय (केमहालए पण्णत्ते) कितना बड़ा कहा गया है? अर्थात्- धर्मास्तिकाय कितना विशाल है? इस प्रकार के गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् उनको कहते हैं- (गोयमा !) हे गौतम! (लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ता णं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोक धर्मास्तिकाय को लोकरूप कहने का कारण यह है कि यह लोक प्रमित होने के कारण अथवा लोक इस द्वारा कहे जाने के कारण लोक शब्द से कहा गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि धर्मास्तिकाय जितना बडा लोक उतना ही बड़ा है क्यों किया वह उसमें व्यापक बना हुआ है। जिस प्रकार तिल में तैल व्यापक होकर रहता है उसी प्रकार से यह संपूर्ण लोकाकाश में रहता है। लोकाकाश का ऐसा कोई सा भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर यह द्रव्य न हो। इस कारण धर्मास्तिकाय को लोकप्रमित कहा गया है तथा जब लोकाकाश का विचार किया है तब वहां पर धर्मादिक द्रव्यों को (लोक) ऐसे नाम से कहा

ટીકાર્થ—" धम्मत्थिकाए णं भंते ! केमहालये पण्णत्ते " હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાય કેટલુ મોટું હોય છે-એટલે કે તે કેટલું વિશાળ છે? ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે " गोयमा ! " હે ગૌતમ! " लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयचेव फुसित्ताणं चिट्ठइ " આ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે " ધર્માસ્તિકાયને લોકરૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે લોકપ્રમિત (લોકપ્રમાણ) હોવાથી અથવા " લોક " દ્વારા ઓળખાતું હોવાને કારણે તેને (લોક) શબ્દ દ્વારા ઓળખવામાં આવે છે-લોક જેટલો મોટો છે એટલું જ મોટુ ધર્માસ્તિકાય છે કારણ કે તે સમસ્ત વ્યાપેલું છે જેવી રીતે તલમાં તેલ વ્યાપક બનીને રહે છે, એજ રીતે ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકાકાશમા રહે છે-લોકાકાશનો કોઇ પણ એવો પ્રદેશ નથી કે જ્યાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય તેથીજ ધર્માસ્તિકાયને લોકપ્રમિત (લોક પ્રમાણ કહ્યુ છે, તથા જ્યારે લોકાકાશનો વિચાર કરાયો છે ત્યારે ત્યાં પણ ધર્માદિક દ્રવ્યોને " લોક "

असङ्ख्यद्वीपसमुद्राः सर्वाभ्यन्तरः सर्व सौधर्मः कल्पो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी स्पृशति ते सर्वेऽपि असङ्ख्यतमभागं स्पृशन्ति शेषाः प्रतिषेद्धव्याः एवमधर्मास्तिकायः एवं लोकाकाशोऽपि ।

गाथा—पृथिव्युदधी घन तनुकल्पा ग्रैवेयकानुत्तरौ सिद्धिः ।
सङ्ख्येयभागम् अन्तरेषु शेषा असङ्ख्येयाः ॥

॥ द्वितीयशतके दशमोद्देशकः समाप्तः ॥

॥ द्वितीयं शतकं समाप्तम् ॥

सङ्ख्या) जम्बूद्वीप आदिक द्वीप, और लवणसमुद्र आदिक समुद्र (एवं सोहम्मे कप्पे, जाव इसीपब्भारा पुढवी) सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारापृथिवी, ये सब हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय के कितने भाग का (फुसइ) स्पर्श करते हैं तो इसका उत्तर यह है कि (ते सव्वेऽवि असंखेज्जइभागं फुसंति) ये सब धर्मास्तिकाय के असङ्ख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं । (सेसा पडिसेहियव्वा) अवशिष्ट भागों के स्पर्श करने का निषेध करना चाहिये । (एवं अहम्मत्थिकाए एवं लोगागासे वि) इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और लोकाकाश को भी जानना चाहिये । गाथा (पुढवोदही घणतणू कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी, । संखेज्जइभागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा) पृथिवी, उदधी, घनवात, तनुवात, कल्प, ग्रैवेयक, अनुत्तर, और सिद्धि इनके अवकाशान्तर धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं और बाकी सब पृथिवी घनोदधि वगैरह धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं ॥सू० ५॥

આદિ સમુદ્રો, (एवं सोहम्मे कप्पे जाव इसीपब्भारा पुढवी) સૌધર્મ કલ્પથી લઇને ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તના જે બધા પદાર્થો ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો (फुसइ) સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—(ते सव्वेऽवि असंखेज्जइभागं फुसंति) તે બધા, ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, (सेसा पडिसेहियव्वा) અસંખ્યાતમાં ભાગનો, કે અસંખ્યાતભાગોનો, કે અસંખ્યાત ભાગોનો, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતા નથી (एवं अहम्मत्थिकाए एवं लोगागासे वि) અધર્માસ્તિકાય અને લોકાકાશના વિષયમાં પણ એજ પ્રમાણે સમજવું

ગાથા—" पुढवोदहीघण-तणूकप्पागेवेज्जणुत्तरा सिद्धी, संखेज्जइभागे अंतरेसु सेसा असंखेज्जा " પૃથિવી, ઉદધિ, ઘનવાત, તનુવાત, કલ્પ ગ્રૈવેયક, અનુત્તર વિમાનો અને સિદ્ધિના અવકાશાન્તરો ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, અને બાકીના પૃથિવી, ઘનોદધિ વગેરે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ॥ સૂ. ૫ ॥

विचित्रत्वात्, तयेहापि वस्तुस्वभाववैचित्र्यमाश्रित्य निरधिष्ठानस्याप्याकाशस्यावस्थानसंभवेन आकाशाधिकरणस्य शास्त्रे विचारो न कृत इति भावः। 'वायपइट्ठिए उदही' वातप्रतिष्ठित उदधिः, तनुवातघनवातयोरुपरि घनोदधेः प्रतिष्ठितत्वात्, अर्थात् यथा वायोरधिकरणं गगनम् तथोदधेरधिकरणं वायुरेव। एवम् 'उदहिपइट्ठिया पुढवी' उदधिप्रतिष्ठिता पृथिवी, घनोदधेरुपरि रत्नप्रभादिपृथिवीनां स्थितत्वात्। मूले यदुक्तं 'उदहिपइट्ठिया पुढवी' इति, तद् बाहुल्यापेक्षया विज्ञेयम्, ईषत्प्राग्भारायाः पृथिव्या आकाशप्रतिष्ठितत्वात्। 'पुढवी पइट्ठिया तसा थावरा

में विचित्रता है उसी प्रकार से आकाशस्वभाव में भी विचित्रता है, जिसकी वजह से वह बिना अन्य आधार के भी प्रतिष्ठित रहता है। अतः जब आकाश बिना किसी अन्य आधार के प्रतिष्ठित है तो फिर अधिष्ठान से विहीन आकाश के अधिकरण (आधार) का विचार शास्त्र में करने की आवश्यकता ही क्या है? इसी कारण शास्त्र में आकाशाधिकरण का विचार नहीं किया गया है। वातप्रतिष्ठित उदधि कहने का तात्पर्य ऐसा है कि तनुवात और घनवात के ऊपर घनोदधि प्रतिष्ठित है। अर्थात् जैसे वायु का अधिकरण (आधार) गगन है उसी प्रकार उदधि का अधिकरण वायु ही है। "उदहि पइट्ठिया पुढवी" का तात्पर्य यह है कि घनोदधि के ऊपर रत्नप्रभा आदि पृथिवियां प्रतिष्ठित हैं अर्थात् स्थित हैं। मूल में जो "उदहिपइट्ठिया पुढवी" ऐसा कहा गया है सो वह बाहुल्य की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये। क्योंकि ईषत्प्राग्भार नाम की जो पृथिवी है वह आकाश में प्रतिष्ठित है।

તો તેવી જ રીતે અહીં વસ્તુસ્વભાવની વિચિત્રતા જાણી શકાય છે તેવી જ રીતે આકાશ દ્રવ્ય પણ પોતાના સ્વભાવની વિચિત્રતાને કારણે જ અન્ય દ્રવ્યના આધાર વગર પણ પ્રતિષ્ઠિત રહે છે આ રીતે આકાશ કોઇ પણ અન્ય પદાર્થના આધાર વિના જ રહેલુ હોવાથી અધિકરણ (આધાર) રહિત હોવાથી તેના અધિકરણનો વિચાર કરવાની આવશ્યકતા રહેતી નથી. તે કારણે જ શાસ્ત્રમા આકાશના અધિકરણનો વિચાર કરવામા આવ્યો નથી "વાત પ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ"નુ તાત્પર્ય એ છે કે તનુવાત અને ઘનવાતના આધારે ઘનોદધિ પ્રતિષ્ઠિત (રહેલ) છે એટલે કે જેવી રીતે વાયુનુ અધિકરણ (આધાર) ગગન છે એવી જ રીતે ઉદધિનો આધાર વાયુ છે "उदधिपइट्ठिया पुढवी" ઉદધિપ્રતિષ્ઠિત પૃથ્વીનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઘનોદધિના આધારે રત્નપ્રભા વગેરે પૃથ્વીઓ (નરકો) પ્રતિષ્ઠિત (રહેલી) છે મૂળમા જે "उदहिपइट्ठिया पुढवी" કહેલ છે તે બાહુલ્યની અપેક્ષાએ સમજવું કારણ કે ઈષત્પ્રાગ્ભારા નામની જે સિદ્ધશિલા

मितत्वात् लोकव्यपदेशाद्वा लोकशब्देनोच्यते-धर्मास्तिकाय इति, तदुक्तम् "पंचत्थिकायमइयं लोयं" (पञ्चास्तिकायमयो लोकः) लोकमात्रो लोकपरिमाणः लोकस्य यादृशं परिमाणं तादृक्परिमाणवान् इत्यर्थः स च किञ्चिन्न्यूनोऽपि व्यवहारतस्तथात्वादित्यत आह-लोकस्पृष्टः लोकव्यापित्वात् लोकप्रमाणः स चान्योन्यानुगमनेन रिक्त इत्येतद्व्यवच्छेदाह-लोकस्पृष्टः लोकेन लोकाकाशेन सकलस्वकीयप्रदेशैः स्पृष्ट इति लोकस्पृष्टः। तथा लोक चतुर्दशरज्वात्मक स्वीकृत

गया है इस कारण लोकप्रमित होने से एवं लोक शब्द द्वारा व्यवहृत होनेसे धर्मास्तिकाय को स्वयं लोकरूप कहा गया है। कहा भी है-(पंचत्थिकायमइयं लोयं) पंचास्तिकायमयो लोकः) यह लोक पांच अस्तिकाय मय है। अतः जब धर्मास्तिकाय स्वयं लोकरूप है तब यह (लोकमात्र) लोक का जैसा परिमाण है तादृश परिमाणवाला है यह कथन संगत हो जाता है। यदि कोई ऐसा यहां पर कहे कि यह धर्मास्तिकाय कुछ प्रमाण में कम भी हो तो भी व्यवहार में ऐसा दिया जाता है कि यह लोकमात्र है तो इस आशंका की निवृत्ति के लिये सूत्रकार ने (लोकप्रमाण) यह पद रखा है इससे उन्होंने यह प्रकट किया है कि यह थोडे से भी अंश में न्यून नहीं है-किन्तु संपूर्ण लोक में व्यापी है और इसी कारण लोकाकाश के जितने भी प्रदेश हैं उन सब प्रदेशों द्वारा यह स्पृष्ट है। तथा-धर्मास्तिकाय १४ चौदह राजूप्रमाण इस लोक को अपने प्रदेशों द्वारा स्पृष्ट करके रहा

નાખવી પડેલ છે તેથી જ તેને લોકપ્રમિત કહેલ છે વળી આ રીતે લોક પ્રમાણ હોવાને લીધે અને (લોક) શબ્દ દ્વારા લોકવ્યાપી હોવાથી ધર્માસ્તિકાય પોતાને જ લોકરૂપ કહેલ છે કહ્યું પણ છે કે "पंचत्थिकायमइयं लोयं" पञ्चास्तिकायमयो लोकः—આ લોક પાંચ અસ્તિકાયમય છે આ રીતે ધર્માસ્તિકાય સ્વયં (પોતે જ) લોકરૂપ છે-તેથી તે લોકમાત્ર (લોક પ્રમાણ)-લોકનું જેટલું પ્રમાણ છે જેટલા પ્રમાણ વાળો-છે એ કથન સુસંગત થાય છે આમાં કોઈ જોવી શંકા કરે કે ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણમાં લોકાકાશ જેવા તો પણ કદાચમાં તેનું કોઈ કારણ છે તે લોકમાત્ર (લોક પ્રમિત) છે, તો તે શંકાનું નિરાકરણ કરવા માટે સૂત્રકારે (લોક પ્રમાણ) પદ મૂકેલ છે 'લોક પ્રમાણ' પદનો ઉપયોગ કરીને સૂત્રકારે એ પ્રકટ કર્યું છે કે તે ભલે લોક જેવડો હોય પણ ન્યૂન નથી, પણ સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત છે, અને તે સઘળે લોકાકાશના જેટલા પ્રદેશો છે તે સઘળા પ્રદેશો દ્વારા તે સ્પૃષ્ટ છે, તથા ધર્માસ્તિકાય લોક જેટલા પ્રમાણ આ લોકને પોતાના સઘળા પ્રદેશો દ્વારા સ્પર્શીને રહેલ છે

टीका—' धम्मत्थिकाएणं भंते ' धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! " केमहालए पण्णत्ते' कियान् महालयः प्रज्ञप्तः? कियान विशालः कथितः धर्मास्तिकायस्य कियद्विशालत्वम् इति प्रश्नः । भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' लोए लोय मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ' लोको लोकमात्रः लोकप्रमाणः लोकस्पृष्टः लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति । तत्र लोको लोकम-

---

टीकार्थ- (धम्मत्थिकाए णं भंते !) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय (केमहालए पण्णत्ते) कितना बड़ा कहा गया है ? अर्थात्- धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ? इस प्रकार के गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् उनको कहते हैं- (गोयमा !) हे गौतम ! (लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ता णं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोक धर्मास्तिकाय को लोकरूप कहने का कारण यह है कि यह लोक प्रमित होने के कारण अथवा लोक इस द्वारा कहे जाने के कारण लोक शब्द से कहा गया है । तात्पर्य कहने का यह है कि धर्मास्तिकाय जितना बडा लोक उतना ही बड़ा है क्यों किया वह उसमें व्यापक बना हुआ है । जिस प्रकार तिल में तैल व्यापक होकर रहता है उसी प्रकार से यह संपूर्ण लोकाकाश में रहता है । लोकाकाश का ऐसा कोई सा भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर यह द्रव्य न हो । इस कारण धर्मास्तिकाय को लोकप्रमित कहा गया है तथा जब लोकाकाश का विचार किया है तब वहां पर धर्मादिक द्रव्यों को (लोक) ऐसे नाम से कहा

ટીકાર્થ—" धम्मत्थिकाए णं भंते ! केमहालये पण्णत्ते " હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કેટલુ મોટું હોય છે–એટલે કે તે કેટલું વિશાળ છે ? ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે " गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयचेव फुसित्ताणं चिट्ठइ " આ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે " ધર્માસ્તિકાયને લોકરૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે લોકપ્રમિત (લોકપ્રમાણ) હોવાથી અથવા " લોક " દ્વારા ઓળખાતું હોવાને કારણે તેને (લોક) શબ્દ દ્વારા ઓળખવામાં આવે છે–લોક જેટલો મોટો છે એટલુ જ મોટુ ધર્માસ્તિકાય છે કારણ કે તે સમસ્ત વ્યાપેલું છે જેવી રીતે તલમાં તેલ વ્યાપક બનીને રહે છે, એજ રીતે ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકાકાશમા રહે છે–લોકાકાશનો કોઇ પણ એવો પ્રદેશ નથી કે જ્યાં તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય તેથીજ ધર્માસ્તિકાયને લોકપ્રમિત (લોક પ્રમાણ કહ્યુ છે, તથા જ્યારે લોકાકાશનો વિચાર કરાયો છે ત્યારે ત્યા પણ ધર્માદિક દ્રવ્યોને " લોક "

धर्मास्तिकायस्यासंख्यातभागोलोकः स्पृष्टइति भावः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'सातिरेगं अद्धं फुसइ' सातिरेकमर्धं स्पृशति धर्मास्तिकायो हि लोकव्यापकः अधोलोकस्तु सातिरेकसप्तरज्जुप्रमाणः अतः सातिरेकमर्धभागमेवाधोलोको धर्मास्तिकायस्य स्पृशतीति । 'तिरियलोएणं भंते पुच्छा' तिर्यग्लोकः खलु भदन्त ! पृच्छा ? धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति तिर्यग्लोक इति प्रश्नः 'गोयमा असंखेज्जइभागं फुसइ' इत्युत्तरम् हे गौतम ! असंख्येयभागं धर्मास्तिकायस्य तिर्यग्लोकः स्पृशति असंख्यातयोजनप्रमाण धर्मास्तिकायः

हे भदन्त ! अधोलोक (धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ) धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम ! के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनको कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधेभाग को स्पर्श करता है -इसका तात्पर्य यह है कि-धर्मास्तिकाय तो लोकमात्र में व्यापक है,और अधोलोक जो है वह कुछ अधिक सातराजू प्रमाण वाला है । इस तरह १४चौदह राजूप्रमाण लोक में व्यापक हुए धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे भाग का ही वह स्पर्श करता है यह हिसाब ठीक बैठता है । (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम के प्रश्न को उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं-(गोयमा ! हे गौतम ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है-इसका

અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—" गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " सातिरेगं अद्धं फुसइ " અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય અર્ધા કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-ધર્માસ્તિકાય તો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક છે અધોલોક તો સાત રાજુપ્રમાણથી કાંઈક વધારે પ્રમાણવાળો છે તેથી એવા રાજુપ્રમાણ લોકમાં વ્યાપક (વ્યાપ્ત) ધર્માસ્તિકાય તેના અર્ધા કરતાં થોડા વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, એ હકીકત બેસતી આવે છે

પ્રશ્ન—" तिरियलोए णं भंते पुच्छा " હે ભદન્ત ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—" गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " असंखेज्जइभागं फुसइ " તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે

स्वप्रदेशैरितिष्ठतीति । ' एवमधम्मत्थिकाए ' एवमधर्मास्तिकायः यथा धर्मास्तिकायो लोकः लोकमात्रो लोकप्रमाणो लोकस्पृष्टो लोकं स्पृष्ट्वा तिष्ठति तथा अधर्मास्तिकायोऽपि लोकोलोकमात्रो लोकप्रमाणो लोकस्पृष्टो लोकं स्पृष्ट्वा तिष्ठतीति ज्ञातव्यः । " लोयागासे ' लोकाकाशः एवमेव लोकाकाशोऽपि ' जीवत्थिकाए ' जीवास्तिकायः ' पोग्गलत्थिकाए ' पुद्गलास्तिकायः ' पंच वि एक्काभिलावा ' पञ्चापि एकाभिलापाः धर्माऽधर्माकाश जीव पुद्गलास्तिकाया एते पञ्चापि समाना भिलापैरभिलप्याः इत्यर्थः । धर्मास्तिकायादीनां पञ्चानामपि प्रमाणस्पर्शनादिकं कथमिति स्पर्शनाधिकारादेवाधोलोकादीनां धर्मास्तिकायादिगतां स्पर्शनां दर्शयन्नाह–' अहोलोएणं भंते ' इत्यादि ' अहोलोएणं भंते ' अधोलोकः खलु भदन्त ! ' धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ' धर्मास्तिकायस्य कियन्तं स्पृशति ? कियन्तं भागं

हुआ है (एवमधम्मत्थिकाए) जिस प्रकार धर्मास्तिकाय लोकरूप, लोकमात्र, लोकप्रमाण, लोकस्पृष्ट है और लोकको स्पर्शकर रहा हुआ है उसी प्रकार अधर्मास्तिकाय भी लोकरूप, लोकमात्र, लोकप्रमाण, लोकस्पृष्ट है और लोक को स्पर्शकर रहा हुआ है ऐसा जानना चाहिये। (लोयागासे) इसी तरह से लोकाकाश (जीवत्थिकाए) जीवास्तिकाय (पोग्गलत्थिकाए) पुद्गलास्तिकाय के विषय में भी जानना चाहिये। क्यों कि इन (पंच वि एक्काभिलावा) पांचों का पाठ एक जैसाही है। इस तरह धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय की विशालता और स्पर्शना का कथन करके अब सूत्रकार स्पर्शना के अधिकार को लेकर ही धर्मास्तिकायादिगत अधोलोकादिकों की स्पर्शना के विषय में कथन करते हैं–(अहोलोए णं भंते

' एवमधम्मत्थिकाए " એમ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ, લોકસ્પૃષ્ટ છે અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય પણ લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ, લોકસ્પૃષ્ટ છે અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે, એમ સમજવું " लोयागासे " એજ પ્રમાણે લોકાકાશ, " जीवत्थिकाए " જીવાસ્તિકાય,અને "पोग्गलत्थिकाए" પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ સમજવું કારણ કે તે પાછેનું "पंच वि एक्काभिलावा" વક્તવ્ય એક સરખું જ છે આ રીતે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયની વિશાળતાનુ અને સ્પર્શનાનુ વર્ણન કરીને સૂત્રકાર સ્પર્શનાના અધિકારને લઈને ધર્માસ્તિકાયાદિગત અધોલોક દિઓની સ્પર્શનાના વિષયનું નિરૂપણ કરે છે–

પ્રશ્ન—" अहोलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ) હે ભદન્ત !

धर्मास्तिकायस्यापदेशान् स्पृशतीति भावः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'सातिरेगं अद्धं फुसइ' सातिरेकमर्धं स्पृशति धर्मास्ति कायो हि लोकव्यापकः अधोलोकस्तु सातिरेकसप्तरज्जुप्रमाणः अतः सातिरेक मर्धभागमेवाधोलोको धर्मास्तिकायस्य स्पृशतीति । 'तिरियलोएणं भंते पुच्छा' तिर्यग्लोकः खलु भदन्त ! पृच्छा ? धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति तिर्यग्लोक इति प्रश्नः 'गोयमा असंखेज्जइभागं फुसइ' इत्युत्तरम् हे गौतम ! असंख्येयभागं धर्मास्तिकायस्य तिर्यग्लोकः स्पृशति असंख्यातयोजनप्रमाण धर्मास्तिकाया

हे भदन्त ! अधोलोक (धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ) धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम ! के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनको कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधेभाग को स्पर्श करता है -इसका तात्पर्य यह है कि-धर्मास्तिकाय तो लोकमर में व्यापक है,और अधोलोक जो है वह कुछ अधिक सातरज्जु प्रमाण वाला है । इस तरह १४चौदह राजूप्रमाण लोक में व्यापक हुए धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे भाग का ही यह स्पर्श करता है यह हिसाब ठीक बैठता है । (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम के प्रश्न को उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं-(गोयमा ! हे गौतम ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है-इसका

અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—" गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " सातिरेगं अद्धं फुसइ " અધોલોક ધર્માસ્તિકાય અર્ધા કરતાં વધારે ભાગને સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-ધર્માસ્તિકાય તો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક છે અધોલોક તો સાત રજુપ્રમાણથી કંઈક વધારે પ્રમાણવાળો છે તેથી લોક રજુપ્રમાણ લોકમાં વ્યાપક (વ્યાપેલુ) ધર્માસ્તિકાય તેના અર્ધા કરતાં લોક વધારે ભાગને સ્પર્શ કરે છે, એ બરાબર લાગે છે

પ્રશ્ન—" तिरियलोए णं भंते पुच्छा " હે ભગવન્ ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિ કાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—" गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " असंखेज्जइभागं फुसइ " તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે

तिर्यग्लोकस्तु अष्टादशयोजनशतप्रमाणः-अतो धर्मास्तिकायस्यासंख्यातभागे विद्यमानत्वात्तस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशतीति भावः। "उड्ढलोएणं भंते पुच्छा" ऊर्ध्वलोकः-खलु भदन्त! पृच्छा हे भदन्त! ऊर्ध्वलोको धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशतीति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा देसूणं अद्धं फुसइ' गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति, देशोनसप्तरज्जुप्रमाणत्वात् ऊर्ध्वलोकस्येति सम्पूर्ण लोकश्चतुर्दशरज्जुप्रमाणकस्तदर्द्धम् सप्तरज्जुप्रमाणकः इति भावः 'इमाणं भंते' इयं खलु भदन्त! 'रयणप्पभा पुढवी' रत्नप्रभा पृथिवी. "धम्मत्थिकायस्स" धर्मा-

तात्पर्य यह है कि धर्मास्तिकाय असंख्यात स्वजन प्रमाणवाला है और तिर्यग्लोक जो है वह १८अठारह सौ योजन प्रमाण वाला है। अतः वह धर्म के असंख्यातवें भाग में वर्तमान होनेके कारण उसके असंख्यात वें भाग का ही स्पर्श करता है यह कथन ठीक है। (उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? इस गौतम के प्रश्न का समाधान करनेके निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम! (देसूणं अद्धं फुसइ) उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है-सो इसका कारण यह है कि उर्ध्वलोक का प्रमाण कुछ कम सात राजू का है। संमस्त लोक का प्रमाण १४ चौदह राजू का है सो १४ चौदह राजू प्रमाण वाले लोक में व्यापक रहे हुए धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का ऊर्ध्व लोक स्पर्श करता है। (इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी) हे भदन्त! जो यह रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी है सो वह (धम्मत्थिकायस्स

મુજબ છે-ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ વાળું છે, પણ તિર્યગ્લોક ૧૮૦૦ અઢાર સો યોજન પ્રમાણ છે તેથી તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ હોવાથી તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--"उड्ढलोए णं भंते! पुच्छा" હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર--"गोयमा!" હે ગૌતમ! "देसूणं अद्धं फुसइ" ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ કથનનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે, સમસ્ત લોક ૧૪ રાજુપ્રમાણ છે ઉર્ધ્વલોકનું પ્રમાણ સાત રાજુ કરતા આછુ છે તેથી ૧૪ રાજુપ્રમાણ લોકમાં ધર્માસ્તિકાય ઉર્ધ્વલોકના અર્ધા કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी" હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા નામની

स्तिकायस्य ' किं संखेज्जभागं फुसइ ' किं संख्येयभागं स्पृशति ? ' असंखेज्ज भागं फुसइ ' असंख्येयभागं स्पृशति ? 'संखेज्जे भागे फुसइ ' संख्यातान् भागान् स्पृशति ? 'असंखेज्जे भाग फुसइ ' असंख्येयान् भागान् स्पृशति ? 'सव्व फुसइ' सर्वं स्पृशति ? हे भदन्त ! येयं रत्नप्रभा पृथिवी सा किं धर्मास्तिकायस्य संख्येय भागं स्पृशति असंख्यय भाग स्पृशति अथवा संख्येयान् वा भागान् असंख्येयान् वा भागान् स्पृशति सर्व वा स्पृशतीति प्रश्न भगवानाह— गोयमा ' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! ' णो संखेज्जइ भागं फुसइ ' नो संख्येयभाग स्पृशति-धर्मास्तिकायस्य रत्नप्रभा किन्तु ' असंखेज्जइ भाग फुसइ ' असंख्येयभागं स्पृशति धर्मास्तिकायस्य लोकव्यापकत्वात् रत्नप्रभायाश्चाल्पदेशव्यापित्वादिति तथा ' णो संखेज्जे णो असंखेज्जो नो सव्वं फुसइ ' नो संख्यातान् भागान् नो

किं संखेज्जइभाग फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) धर्मास्तिकाय के संख्येय भाग का स्पर्श करती है ? या असंख्येयभाग का स्पर्श करती है ? अथवा-उसके संख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या असंख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय का वह स्पर्श करती है। इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ, असंखेज्जइ भाग फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे, णो सव्वं फुसइ) रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श नहीं करती है, किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है क्यों कि धर्मास्तिकाय सम्पूर्णलोक में व्याप्त है और रत्नप्रभा पृथिवी थोड़ीसी जगह में है। तथा यह रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के (णो संखेज्जे णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ) संख्यात

જે પહેલી પૃથ્વી (નરક) છે "धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइ भागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ असंखेज्जे भागे फुसइ सव्व फुसइ ?" તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તે સંપૂર્ણ ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—' गोयमा ! " " णो संखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ' રત્નપ્રભા નામની પહેલી પૃથ્વી ધર્માસ્તિ કાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરતી નથી, તેમજ અસંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરતા નથી, સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ પણ કરતી નથી, અસંખ્યાત ભાગોનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી, સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો

तिर्यग्लोकस्तु अष्टादशयोजनशतप्रमाणः-अतो धर्मास्तिकायस्यासंख्यातभागे विद्यमानत्वात्तस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशतीति भावः। "उड्ढलोएणं भंते पुच्छा" ऊर्ध्वलोकः-खलु भदन्त! पृच्छा हे भदन्त! ऊर्ध्वलोको धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशतीति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा देसूणं अद्धं फुसइ' गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति, देशोनसप्तरज्जुप्रमाणत्वात् ऊर्ध्वलोकस्येति सम्पूर्ण लोकश्चतुर्दशरज्जुप्रमाणकस्तदर्द्धम् सप्तरज्जुप्रमाणकः इति भावः 'इमाणं भंते' इयं खलु भदन्त! 'रयणप्पभा पुढवी' रत्नप्रभा पृथिवी. "धम्मत्थिकायस्स" धर्मा-

---

तात्पर्य यह है कि धर्मास्तिकाय असंख्यात स्वजन प्रमाणवाला है और तिर्यग्लोक जो है वह १८अठारह सौ योजन प्रमाण वाला है। अतः वह धर्म के असंख्यातवें भाग में वर्तमान होनेके कारण उसके असंख्यात वें भाग का ही स्पर्श करता है यह कथन ठीक है। (उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? इस गौतम के प्रश्न का समाधान करनेके निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम! (देसूणं अद्धं फुसइ) उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है-सो इसका कारण यह है कि उर्ध्वलोक का प्रमाण कुछ कम सात राजू का है। समस्त लोक का प्रमाण १४ चौदह राजू का है सो १४ चौदह राजू प्रमाण वाले लोक में व्यापक रहे हुए धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का ऊर्ध्व लोक स्पर्श करता है। (इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी) हे भदन्त! जो यह रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी है सो वह (धम्मत्थिकायस्स

મુજબ છે-ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ વાળું છે, પણ તિર્યગ્લોક ૧૮૦૦ અઢાર સો યોજન પ્રમાણ છે. તેથી તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ હોવાથી તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--"उड्ढलोए णं भंते! पुच्छा" હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર--"गोयमा!" હે ગૌતમ! "देसूणं अद्धं फुसइ" ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ કથનનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે, સમસ્ત લોક ૧૪ રાજુપ્રમાણ છે ઉર્ધ્વલોકનું પ્રમાણ સાત રાજુ કરતા આછુ છે તેથી ૧૪ રાજુપ્રમાણ લોકમાં ધર્માસ્તિકાય ઉર્ધ્વલોકના અર્ધા કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--इमाणं भंते! रयण पुढवी" હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા નામની

स्तिकायस्य ' किं संखेज्जभागं फुसइ ' किं संख्येयभागं स्पृशति ? ' असंखेज्जं भागं फुसइ ' असंख्येयभागं स्पृशति ? 'संखेज्जे भागे फुसइ ' संख्येयान् भागान् स्पृशति ? 'असंखेज्जे भागे फुसइ ' असंख्येयान् भागान् स्पृशति ? 'सव्वं फुसइ' सर्वं स्पृशति ? हे भदन्त ! येयं रत्नप्रभा पृथिवी सा किं धर्मास्तिकायस्य संख्येयं भागं स्पृशति असंख्येयं भागं स्पृशति संख्येयान् वा भागान् असंख्येयान् वा भागान् स्पृशति सर्वं वा स्पृशतीति भदन्त भगवानाह— गोयमा ' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! ' णो संखेज्जइ भागं फुसइ ' नो संख्येयभागं स्पृशति-धर्मास्तिकायस्य रत्नप्रभा किन्तु ' असंखेज्जइ भागं फुसइ ' असंख्येयभागं स्पृशति धर्मास्तिकायस्य लोकव्यापकत्वात् रत्नप्रभायाश्चाल्पदेशव्यापित्वादिति तथा ' णो संखेज्जे णो असंखेज्जे नो सव्वं फुसइ ' नो संख्येयान् भागान् नो

किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) धर्मास्तिकाय के संख्येय भाग का स्पर्श करती है ? या असंख्येयभाग का स्पर्श करती है ? अथवा-उसके संख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या असंख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय का वह स्पर्श करती है। इस गौतम के प्रश्न का उत्तर ऐसे रूप मे उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे, णो सव्वं फुसइ) रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श नहीं करती है, किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है क्यों कि धर्मास्तिकाय सम्पूर्णलोक में व्याप्त है और रत्नप्रभा पृथिवी थोड़ीसी जगह में है। तथा यह रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के (णो संखेज्जे णो असंखेज्जे नो सव्वं फुसइ) संख्यात

જે પહેલી પૃથ્વી (નં૧૪) છે "धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइ भागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ असंखेज्जे भागे फुसइ सव्वं फुसइ ?" તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તે સંપૂર્ણ ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—' गोयमा ! ' ' णो संखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ' રત્નપ્રભા નામની પહેલી પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરતી નથી, તેમજ અસંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરતા નથી, સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ પણ કરતી નથી, અસંખ્યાત ભાગોનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી, સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો

असंख्येयान् भागान् न वा सर्वं भागं स्पृशति. किन्तु असंख्येयमेव भागं स्पृशतीति। 'इमीसेणं भंते' अस्याः खलु भदन्त! 'रयणप्पभाए पुढवीए' रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'घनोदही' घनोदधिः 'धम्मत्थिकायस्स' धर्मास्तिकायस्य "किं संखेज्जभागं फुसइ" धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति सर्वं वा स्पृशतीति रत्नप्रभापृथिव्याः सम्बन्धी घनोदधिः धर्मास्तिकायवयवसंख्येयभागं स्पृशत्यादि प्रश्नः। भगवानाह—'जहा' इत्यादि—"जहा रयणप्पभा तहा-घणोदही" यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिः, यथा रत्नप्रभा धर्मास्तिकायस्या-संख्येय

भागों का और असंख्यात भागों का भी स्पर्श नहीं करती है-और न वह सम्पूर्णरूप में ही उसका स्पर्श करती है-इस तरह यहां असंख्यातवें भाग का स्पर्श करना यह द्वीतीयपक्ष ही अङ्गीका किया है-शेष चार पक्ष नहीं। (इमीसेणं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही) हे भदन्त! अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि इस रत्नप्रभासंबंधी जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जेइभागे फुसइ, असंखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं वा फुसइ) क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श करता हैं, या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, अथवा धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का स्पर्श करता है-या असंख्यातभागों का स्पर्श करता है-कि समस्तरूप से उसका स्पर्श करता है? इस विषय में गौतम का समाधान करने निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम। (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही) जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी

પણ સ્પર્શ કરતી નથી. પણ તે તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ જવાબનુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાય સ પૂર્ણ લોકમા વ્યાપ્ત છે પણ રત્નપ્રભા પૃથ્વી ઘણી થોડી જગ્યામા આવેલી છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપરોક્ત પાચ વિકલ્પોમાના બીજા વિકલ્પનો જ અહીં સ્વીકાર થયો છે.

પ્રશ્ન—"इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही" હે ભદન્ત! આ રત્નપ્રભા સબધી જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (किं संखेज्जइभाग फुसइ?) શુ તે તેનો સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે। (किं असंखेज्जइ भाग फुसइ) કે તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? "संखेज्जे भागे फुसइ? असंखेज्जे भागे फुसइ? सव्वं वा फुसइ" કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે?

पाणा' पृथिवीप्रतिष्ठिता त्रसाः स्थावरा प्राणा, सर्वेऽपि प्राणिनः पृथिव्यधिकरणका एव। जीवा पृथिवीप्रतिष्ठिता, इत्यपि कथनम् प्रायिकमेव, आकाशपर्वतविमानादावपि जीवनिवासस्य शास्त्रे प्रतिपादनात्। 'अजीवा जीवपइट्ठिया' अजीवा शरीरादिपुद्गलरूपाः जीवप्रतिष्ठिताः जीवा प्रतिष्ठा=अधिकरणं येषां ते जीवप्रतिष्ठिता शरीरादीनां जीवेषु स्थितत्वात्। 'जीवा कम्मपइट्ठिया' जीवा कर्मप्रतिष्ठिताः, अनुद्वर्त्तनापवर्त्तनाकर्मपुद्गलसङ्घातरूपेषु कर्मसु संसारिजीवानामाश्रितत्वात्, जीवा कर्माधीनस्थितिका इत्यर्थः। 'अजीवा जीवसंगहिया' अजीवा जीवसंगृहीता, मनोभाषादिषु पुद्गलानां जीवैः संगृहीतत्वात्।

"पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा" जो ऐसा कहा गया है सो इसका तात्पर्य यह है कि-जितने भी त्रस और स्थावर जीव हैं वे सब पृथिवी के अधिकरण (आधार) वाले हैं। "पृथिवीप्रतिष्ठितास्त्रसा स्थावराः प्राणाः" ऐसा जो कथन किया गया है सो यह भी प्रायिक ही है क्योंकि आकाश, पर्वत और विमान आदि में भी जीवों का निवास शास्त्र में प्रतिपादित किया गया है। "अजीवा जीवप्रतिष्ठिता" ऐसा जो कहा गया है सो इसका अभिप्राय ऐसा है कि शरीरादि पुद्गलरूप जो अजीव हैं वे जीव के आधाररूप हैं-जिनका अधिकरण जीव हैं, क्यों कि शरीरादिक पुद्गल जीवों में स्थित होते हैं। "जीवा कम्मपइट्ठिया" जीव कर्मप्रतिष्ठित हैं ऐसा जो कहा गया है, सो उसका अभिप्राय ऐसा है कि अनुद्वर्त्तनापवर्त्तना प्राप्त कर्म पुद्गल के समुदाय ऊपर संसारी जीव आश्रित रहते हैं, अर्थात् संसारी

પૃથ્વી છે તે અપેક્ષાના આધારે જ પ્રતિષ્ઠિત છે 'पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा', (પૃથ્વીપ્રતિષ્ઠિત ત્રસ સ્થાવર જીવો)નુ તાત્પર્ય એ છે કે જેટલા ત્રસ અને સ્થાવર જીવો છે તેનો આધાર પૃથ્વી છે 'पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा" એવુ જે કથન છે તે પણ ઘણે ભાગે છે એમ સમજવુ કારણ કે આકાશ, પર્વત અને વિમાન વગેરેના આધારે પણ જીવોના રહેઠાણો છે એવુ શાસ્ત્રોમા પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે (अजीवा जीवपइट्ठिया) (અજીવો જીવપ્રતિષ્ઠિત છે) તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે શરીરાદિ પુદ્ગલ રૂપ જે અજીવ છે તેમનુ અધિકરણ (આધાર) જીવ છે જેમનુ અધિકરણ (આધાર) જીવ છે તેમને જીવપ્રતિષ્ઠિત કહે છે કારણ કે શરીરાદિ પુદ્ગલો જીવને આધારે પ્રતિષ્ઠિત (સ્થિત) હોય છે "जीवा कम्मपइट्ठिया (કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવો) જીવો કર્મપ્રતિષ્ઠિત છે તેનો તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-ઉદ્વર્તના નહીં આવેલ કર્મપુદ્ગલોને આધારે સંસારી જીવો રહેલા છે એનો છે કે સંસારી જીવોની સ્થિતિ કર્માધીન હોય,

असंख्येयान् भागान् न वा सर्वं भागं स्पृशति, किन्तु असंख्येयमेव भागं स्पृशतीति । 'इमीसेणं भंते' अस्याः खलु भदन्त ! 'रयणप्पभाए पुढवीए' रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'घनोदही' घनोदधिः 'धम्मत्थिकायस्स' धर्मास्तिकायस्य "किं संखेज्जभागं फुसइ" धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति सर्वं वा स्पृशतीति रत्नप्रभापृथिव्याः सम्बन्धी घनोदधिः धर्मास्तिकायावयवसंख्येयभागं स्पृशत्यादि प्रश्नः । भगवानाह—'जहा' इत्यादि—"जहा रयणप्पभा तहा—घणोदही" यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिः, यथा रत्नप्रभा धर्मास्तिकायस्या—संख्येय

भागों का और असंख्यात भागों का भी स्पर्श नहीं करती है—और न वह सम्पूर्णरूप में ही उसका स्पर्श करती है—इस तरह यहां असंख्यातवें भाग का स्पर्श करना यह द्वीतीयपक्ष ही अङ्गीकृत किया है—शेष चार पक्ष नहीं। (इमीसेणं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही) हे भदन्त ! अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि इस रत्नप्रभासंबंधी जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जेइभागे फुसइ, असंखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं वा फुसइ) क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श करता हैं, या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, अथवा धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का स्पर्श करता है—या असंख्यातभागों का स्पर्श करता है—कि समस्तरूप से उसका स्पर्श करता है ? इस विषय में गौतम का समाधान करने निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम। (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही) जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी

પણ સ્પર્શ કરતી નથી. પણ તે તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ જવાબનુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે. ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકમાં વ્યાપ્ત છે પણ રત્નપ્રભા પૃથ્વી ઘણી થોડી જગ્યામા આવેલી છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપરોક્ત પાચ વિકલ્પોમાના બીજા વિકલ્પનો જ અહીં સ્વીકાર થયો છે.

પ્રશ્ન—"इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही" હે ભદન્ત ! આ રત્નપ્રભા સબંધી જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (किं संखेज्जइभाग फुसइ ?) શું તે તેનો સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ! (किं असंखेज्जइ भाग फुसइ) કે તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? "संखेज्जे भागे फुसइ ? असंखेज्जे भागे फुसइ ? सव्वं वा फुसइ" કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે ?

भागमेव स्पृशति तथा रत्नप्रभासम्बन्धी घनोदधिरपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येय भागमेव स्पृशतीति द्वितीयपक्षस्यानुमतिर्दत्ता भगवता शेषपक्षचतुष्टयस्यास्वीकार एवेति भावः। पुनः-'घणवाय तणुवाया वि' घनवाततनुवातावपि यथा घनोदधिः रत्नप्रभासम्बन्धी धर्मास्तिकायस्यासंख्येयभागमेव स्पृशति एवमेव घनवाततनुवातावपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशन्तीति। 'इमीसे णं भंते' अस्याः खलु भदन्त! 'रयणप्पभाए पुढवीए' रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'ओवासंतरे' अवकाशान्तरम् 'धम्मत्थिकायस्स' धर्मास्तिकायस्य 'किं संखेज्जइभागं फुसइ' किं संख्यातभागं स्पृशति 'असंखेज्जइभागं फुसइ' असंख्यातभागं स्पृशति। 'जाव सव्वं फुसइ' यावत्सर्वं स्पृशति इह यावत्पदेन 'संखेज्जे भागे असंखेज्जे भागे' इत्यनयोर्ग्रहणम्। रत्नप्रभासम्बन्धि अवकाशान्त

धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है उसी प्रकार से इस रत्नप्रभा संबंधी जो घनोदधी है वह भी धर्मास्तिकायके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इस प्रकार द्वितीय पक्ष ही यहां स्वीकार किया गया है शेष चार पक्ष नहीं। (एवं घणवायतणुवाया वि) इसी तरह से रत्नप्रभा संबंधी घनवात और तनुवात ये दो भी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भागका ही स्पर्श करता है।

अब गौतम प्रभु से यह पूछते हैं कि (इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए ओवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, जाव सव्वं फुसइ) हे भदन्त! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो अवकाशान्तर है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है या उसके असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है अथवा धर्मास्तिकाय के सकलभागों का स्पर्श

उत्तर—"गोयमा!" हे गौतम! "जहा रयणप्पभा वत्तव्वया भणिया" जेम रत्नप्रभा पृथ्वी धर्मास्तिकायना असंख्यातमां भागनो स्पर्श करे छे तेम प्रमाणे रत्नप्रभानो घनोदधि पण धर्मास्तिकायना असंख्यातमां भागनो स्पर्श करे छे आ रीते अहीं पण पांच विकल्पोमांना बीजा विकल्पनो स्वीकार करवामां आव्यो छे बाकीना भागनो स्वीकार कर्यो नथी। (एवं घणवायतणुवाया वि" तेम प्रमाणे रत्नप्रभाना घनवात अने तनुवात पण धर्मास्तिकायना असंख्यातमां भागनो स्पर्श करे छे

प्रश्न—"इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए ओवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ" हे भदन्त! आ रत्नप्रभा पृथ्वीनुं जे अवकाशान्तर छे ते धर्मास्तिकायना शुं असंख्यातमां भागनो

रम्, धर्मास्तिकायस्य कतमं भागं स्पृशतीति प्रश्नः। भगवानाह–'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'संखेज्जइभागं फुसइ' संख्येयभागं स्पृशति 'णो असंखेज्जइभागं फुसइ' नो असंख्येयभागं स्पृशति 'णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे णो सव्वं फुसइ' नो संख्येयभागान् नो असंख्येयभागान् नो वा सर्वं स्पृशति। 'उवासंतराइं सव्वाइं' अवकाशान्तराणि, पूर्वोक्तप्रकारेण सर्वाण्यपि अवकाशान्तराणि ज्ञातव्यानीति। "जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया' यथा रत्नप्रभायाः पृथिव्याः वक्तव्यता भणिता. 'एवं जाव अहे सत्तमाए' एवं यावत् अधः सप्तम्या वक्तव्यता भणितव्याः धर्मास्तिकायस्य

करता है या असंख्यातभाग स्पर्श करता है या कि सम्पूर्णरूप से उसका स्पर्श करता है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं (गोयमा!) हे गौतम! (संखेज्जइभागं फुसइ) रत्नप्रभापृथिवी का अवकाशान्तर धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है। असंख्यातवें भाग का, संख्यातभागों का असंख्यातभागों का स्पर्श नहीं करता है और न वह सम्पूर्ण से ही उसका स्पर्श करता है। (उवासंतराइं सव्वाइं) इस तरह से और भी जितने अवकाशान्तर हैं वे सब धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं ऐसा जानना चाहिये। (जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए) जिस प्रकार से धर्मास्तिकाय की स्पर्शना का यह पूर्वोक्त रूप से विचार रत्नप्रभा पृथिवी में किया गया है उसी प्रकार से शेष छह पृथिवीकाय में भी जानना चाहिये। तात्पर्य यह है कि रत्नप्रभा

સ્પર્શ કરે છે? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે? કે અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર–"गोयमा!" હે ગૌતમ! "संखेज्जइ भागं फुसइ" રત્નપ્રભા પૃથ્વીનુ અવકાશાન્તર ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યમા ભાગનો, કે સંખ્યાત ભાગોનો, કે અસંખ્યાત ભાગોનો, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતું નથી.

એજ પ્રમાણે "उवासंतराइं सव्वाइं" બીજાં પણ જેટલાં અવકાશાન્તરો છે, તેઓ બધાં ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો જ સ્પર્શ કરે છે, એવું સમજી લેવું.

"जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए" ધર્માસ્તિકાયની સ્પર્શનાનો પૂર્વોક્ત રીતે રત્નપ્રભા પૃથ્વીની બાબતમાં જે રીતે વિચાર કરવામા આવ્યો છે એજ રીતે બાકીની છ પૃથ્વીઓ સાથેની સ્પર્શના

स्वर्गनाचिपर्कों विचारो पथा रत्नप्रभायां कृतः तथैव अथा सप्तमपृथिवीपर्यन्ते तेनैव क्रमेण विचारः कर्तव्य इति यथा रत्नप्रभा पृथिवी तत् सम्बन्धि-घनोदधि घनवात-तनुवात-अवकाशान्तरमिति मिलिता पञ्च सूत्राणि तथैव शर्कराप्रभापृथिवी तत्सम्बन्धी घनोदधि घनवात-तनुवात-अवकाशान्तरमिति मिलिता अपि पञ्च सूत्राणि, एवं सर्वपृथिवीषु पञ्चपञ्चसूत्राणि वक्तव्यानि । सर्वसंख्यया पञ्च त्रिंशत् सूत्राणि भवन्ति । ' जंबूदीवाइया दीवा लवणसमुद्दाइया समुद्दा " जम्बूद्वीपादिका द्वीपाः लवणसमुद्रादिकाः समुद्राः पूर्वोक्तस्वरूपेण ज्ञातव्या जम्बूद्वीपा इयोऽपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येयभागमेव स्पृशन्तीति ' एवं सोहम्मेकप्पे जाव ईसीपब्भारा पुढवी पुरुस ' एवं सौधर्मः कल्पो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी

संबंधी घनोदधि, घनवात, तनुवात, अवकाशान्तर ये सब मिलकर जिस प्रकार पांच सूत्रों द्वारा विचारित हुए हैं, उसी प्रकार से शर्करा पृथिवी संबंध घनोदधि, घनवात, तनुवात और अवकाशान्तर तथा स्वयं शर्करा पृथिवी इनके विषय में भी इसी प्रकार के पांच सूत्र बना कर विचार कर लेना चाहिये। इसी प्रकार से वालुकाप्रभा आदि पांच पृथिवी विषय के भी पांच पांच सूत्र जानना चाहिये। इस प्रकार सब मिलकर ३५ पैंतीस सूत्र हो जाते हैं। (जंबूदीवाइया दीवा लवण समुद्दाइया समुद्दा)इसी प्रकार से जंबूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप और लवण समुद्र आदि असंख्यात समुद्र भी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं-अन्य चार का नहीं। (एवं सोहम्मे कप्पे जाव ईसीपब्भारा पुढवी पुरुस) इसी प्रकार से सौधर्म कल्प से लेकर ईषत्प्रा-

---

भावतमां पण क्रमथी हेवानुं तात्पर्य એ છે કે રત્નપ્રભાના ઘનોદધિ, ઘનવાત, તનુવાત અને અવકાશાન્તર, એ બધાનો જેવા રીતે પાંચ સૂત્રો દ્વારા વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એજ પ્રમાણે શર્કરા, વાલુકાપ્રભા વગેરે છ પૃથ્વી સંબંધ ઘનોદધિ, ઘનવાત, તનુવાત અને અવકાશાન્તરો તથા તે છએ પૃથ્વીને વિષે પણ ઉપર પ્રમાણે પાંચ, પાંચ સૂત્રો સમજી લેવા. આ રીતે બધાના મળીને ૩૫ પાંત્રીસ સૂત્રો બનશે.

"जंबूदीवाइया दीवा लवणसमुद्दाइया समुद्दा" એજ પ્રમાણે "જંબૂદ્વીપ આદિ અસંખ્યાત દ્વીપો અને લવણ સમુદ્ર આદિ અસંખ્યાત સમુદ્રો પણ ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, એ સંખ્યાતમાં ભાગનો, કે સંખ્યાત ભાગોનો કે અસંખ્યાત ભાગનો કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતા નથી. " एवं सोहम्मे कप्पे जाव ईसीपब्भारा पुढवीपुरुस " એજ પ્રમાણે સૌધર્મ કલ્પ આદિ કલ્પથી લઈને ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તના વિષે સમજવું જોઈએ કે

स्पृशति. 'ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसंति' ते सर्वेऽपि असंख्येयभागं स्पृशंति 'सेसा पडिसेहियव्वा' शेषाः प्रतिषेद्धव्याः जम्बूद्वीपादिकाः द्वीपाः सर्वे समुद्राः सौधर्मकल्पादयो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी-पर्यन्ताः-सर्वेऽपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशन्तीति न तु संख्येयभागम् संख्येयान् भागान् असंख्येयान् भागान् सर्वं वा स्पृशन्तीति भावः। 'एवं अहम्मत्थिकाए' एवमधर्मास्तिकायः धर्मास्तिकायवदेवाऽधर्मास्तिकायस्यापि स्पर्शनाविषये विचारः करणीयः 'एवं लोयागासेवि' एवं लोकाकाशेऽपि।

आलापश्चेत्थम् 'इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थिकाए सा किं संखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइ भागं फुसइ. संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ

ग्भारा नाम की पृथिवी तक जानना चाहिये-अर्थात् सौधर्म आदि समस्तकल्प, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर और ईषत्प्राग्भारा पृथिवी ये सब धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं (सेसा पडिसेहियव्वा) धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का, धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का, असंख्यातभागों का स्पर्श नहीं करते हैं और न धर्मास्तिकाय को ये सब पूर्णरूप से स्पर्श करते हैं। (एवं अहम्मत्थिकाए) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय के स्पर्श के विषय में भी विचार जानना चाहिये। (एवं लोगागासे वि) तथा लोकाकाश को स्पर्श करने के विषय में ऐसा ही विचार जानना चाहिये। अधर्मास्तिकाय के स्पर्श करने के विषय में रत्नप्रभा पृथिवी को लेकर आलाप इस प्रकार से है-(इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थिकाए सा किं संखेज्जइभागं फुसइ? असंखेज्जइभागं? फुसइ? संखे-

---

સૌધર્મ આદિતસમસ્ત કલ્પો (દેવલોકો), નવ ગ્રૈવેયકો, પાંચ અનુત્તર વિમાનો, અને ઈષત્પ્રાગભારા પૃથ્વી, એ બધા ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે "सेसा पडिसेहियव्वा" તેઓ સંખ્યાતમાં ભાગનો, કે સંખ્યાતભાગોનો, કે અસંખ્યાતભાગોનો કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતા નથી. આ રીતે બાકીના ચાર વિકલ્પો અહીં પણ લાગૂ પડતાં નથી "एव अहम्मत्थिकाए" અધર્માસ્તિકાયની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે જ વર્ણન સમજી લેવુ (एवं लोगागासे वि) લોકાકાશની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું. અધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી સાથેની સ્પર્શના વિષેનાં સૂત્રો નીચે પ્રમાણે છે-

"इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थिकाए सा किं संखेज्जइभागं फुसइ? असंखेज्जइभागं फुसइ? संखेज्जे भागे फुसइ, ? असंखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं फुसइ"

सव्व फुसइ गोयमा ! नो असंखेज्जइभाग फुसइ असंखेज्ज भाग फुसइ नो असंखेज्ज भाग फुसइ, नो असंखेज्जे भागे फुसइ नो सव्व फुसइ ' इत्यादिकथन सर्वथा आपका स्वयमभीष्ट नीया: इहापि पूर्ववदेव विचार कर्त्तव्य इति ।

संग्रह गाथा—पुढवोदही घणतणु कप्पा तेवेज्जगुत्तरासिद्धी । असंखेज्जइ भाग अहसेढिया ' पृथिव्युदधी घनतनूकल्पा ग्रैवेयका नुत्तरा सिद्धि रत्नप्रभाद्यम असंख्यातु श्रेणिका: असंख्यया: ॥ पृथिव्युदधिघनवात

ज्जे भागे फुसइ ? असंखेज्जे भागे फुसइ ? सव्व फुसइ ?—गोयमा ! नो असंखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइ भाग फुसइ, नो असंखेज्जे भागे फुसइ नो असंखेज्जेभागे फुसइ, नो सव्व फुसइ) इन सूत्रों का अर्थपाठ है—सिर्फ घर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय रखा कर इनका अर्थ करना चाहिये । इसी तरहसे घर्मास्तिकायके सूत्रपाठ की तरह अधर्मास्तिकाय की स्पर्शना के विषय में अलोक ऊर्ध्वलोक आदि सर्वधि विचार भी करलेना चाहिये और इस विषय में सूत्रपाठ घर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगाकर कहना चाहिये । यही बात (इहापि पूर्ववदेव विचार: करणीया:) इस कथन से प्रकट की गई है ।

संग्रह गाथा— का अर्थ इस प्रकार से है—रत्नप्रभा आदिक सातों पृथिविकाय, घनोदधि, घनवात और तनुवात ये तीनों १० कल्प, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर और ईषत्प्राग्भारा नामक सिद्धि स्थान ये सब घर्मा

"गोयमा ! नो रयणप्पभाए पुढवीए अहेलोगखेत्तनालीए नो तिरियलोए खेत्ताए" फुसइ ? ' मा अहेलोगखेत्तनालीए फुसइ का सर्व फुसइ ? " આ સૂત્રોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે આમાં ધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી આદિની સ્પર્શના વિષે જે સૂત્રો આપ્યાં છે, તે સૂત્રોમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે અધર્માસ્તિકાયના પદ મૂકીને ધર્માસ્તિકાયનાં સૂત્રો પ્રમાણે જ તેમનો અર્થ કરવો જોઈએ. જેમ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રપાઠ પ્રમાણે જ અધર્માસ્તિકાયની અપેક્ષાએ, ઉર્ધ્વલોક વગેરેની આદિની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ સૂત્રો કરેવા જોઈએ. બસ તે સૂત્રપાઠમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે ' અધર્માસ્તિકાય ' પદ મૂકવું જોઈએ. એજ વાત " इहापि पूर्ववदेव विचार करणीया: " આ કથન દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે

સંગ્રહગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વી, ઘનોદધિ, ઘનવાત અને તનુવાત, એ ત્રણે આઠ કલ્પ, નવ ગ્રૈવેયક, પાંચ અનુ

तनु वातकल्पग्रैवेयकानुत्तरसिद्धीनामवकाशान्तराणि सर्वाणि धर्मास्तिकायस्य संख्येयभागं स्पृशन्ति शेषाः सर्वेऽपि धर्मास्तिकायस्य असंख्येयमेव भागं स्पृशन्तीति गाथार्थः ॥ सू० १२ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-पालापक–पविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त–' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित–कोल्हापुरराज-गुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री–घासीलाल–व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतके दशमोद्देशकः समाप्तः ॥२–१०॥

स्तिकाय के असंख्यातवें भाग को ही स्पर्श करतें हैं तथा जो अवकाशान्तर हैं वे धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागको स्पर्श करतें हैं ॥सू०५॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके दशवां उद्देशा समाप्त ॥२–१०॥

ત્તર વિમાનો અને ઇષત્પ્રાગ્ભારા નામનું સિદ્ધિ સ્થાન, એ સાતે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે પણ જે અવકાશાન્તર છે તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે.

॥ બીજા શતકનો દશમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો દશમો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો. ॥ ૨–૧૦ ॥

—

सव्व फुसइ गोयमा ! नो संखेज्जइभागं फुसइ असंखेज्जइ भागं फुसइ नो संखेज्जे भागे फुसइ, नो असंखेज्जे भागे फुसइ नो सव्व फुसइ' इत्यादिरूपेण सर्वभाषणीया: रत्नप्रभेवोक्तनीया: इहापि पूर्ववदेव विचार: करणीय इति ।

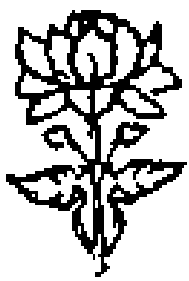
अथेति चेद् संग्रहगाथा—पुढवी-ही घणतणु कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी । संखेज्जइ भागं असंखेज्जा ' पृथिव्युदधी घनतनूकल्पा ग्रैवेयका नुत्तरौ सिद्धि रत्नप्रभादय असंख्येयभागादय: ॥ पृथिव्युदधिघनवात

ज्जे भागे फुसइ ? असंखेज्जे भागे फुसइ ? सव्व फुसइ ?–गोयमा ! नो संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ, नो संखेज्जे भागे फुसइ नो असंखेज्जे भागे फुसइ, नो सव्व फुसइ) इन सूत्रों का अर्थ स्पष्ट है–सिर्फ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय रखा करइनका अर्थ करना चाहिये । इसी तरहसे धर्मास्तिकायके सूत्रपाठ की तरह अधर्मास्तिकाय की स्पर्शना के विषय में अतिलोक एकलोक आदि संबंधि विचार भी करलेना चाहिये और इस विषय में सूत्रपाठ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय रखाकर कहना चाहिये । यही बात (इहापि पूर्ववदेव विचार: करणीय) इस कथन से प्रकट की गई है ।

संग्रह गाथा– का अर्थ इस प्रकार से है–रत्नप्रभा आदिक सातों पृथिविकाय, घनोदधि, घनवात और तनुवात ये तीनों १२ कल्प, ९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर और ईषत्प्राग्भारा नामक सिद्धि स्थान ये सब धर्मा

"गोयमा ! नो संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, नो संखेज्जे भागं" फुसइ ? ' नो असंखेज्जे भाग फुसइ नो सव्व फुसइ ? " આ સૂત્રોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે આગળ ધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી આદિની સ્પર્શના વિષે જે સૂત્રો આપ્યાં છે તે સૂત્રોમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે અધર્માસ્તિકાયના આ ભૂલીને ધર્માસ્તિકાયનાં સૂત્રો પ્રમાણે જ તેમનો અર્થ કરવો જોઈએ એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રપાઠ પ્રમાણે જ અધર્માસ્તિકાયની અવગાહ, સ્પર્શના વગેરેની આદિની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ સૂત્રો કહેવા જોઈએ પણ તે સૂત્રપાઠમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે ' અધર્માસ્તિકાય ' પદ મૂકવું જોઇએ. એજ વાત " इहापि पूर्ववदेव विचार: करणीय " આ કથન દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે

સંગ્રહગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે–રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વી, ઘનોદધિ, ઘનવાત અને તનુવાત. એ ત્રણે, બાર કલ્પ, ૯ ગ્રેવેયક, પાંચ અનુ



ननु 'अजीवा जीवपइट्ठिया अजीवा जीवसंगहिया' इत्यनयोर्वाक्ययोरर्थे को भेदः? न कोपि भेदः प्रतिभाति यथा मुनिसंयतयोः, इतिचेदत्रोच्यते-अजीवा जीवप्रतिष्ठिता, इत्यत्राऽजीवजीवयोराधाराधेयभावः कथितः, तथा अजीवा जीवसंगृहीता इति वाक्ये तु अजीवजीवयोः संग्राह्यसंग्राहकभावः प्रतिपादितः संग्रहकर्ता जीवः संग्राह्याश्चाजीवाः, इत्येतावानेव भेद उभयत्र, सावद्यकर्मणि मौनकरणान्मुनिः, षट्-

---

जीवों की स्थिति कर्माधीन होती है इस कारण वे कर्माधीन स्थितिवाले होने के कारण' जीव कर्मप्रतिष्ठित हैं ' ऐसा कहा गया है। "अजीवा जीवसंगहिया" ऐसा जो कहा है सो उसका भाव ऐसा है कि जीव मनो भाषा आदि रूप में पुद्गलों का ग्रहण करते रहते हैं।

शंका—"अजीवा जीवपइट्ठिया" इस वाक्य में और "अजीवा जीवसंगहिया" इन दोनों वाक्यों के अर्थ में क्या भेद है? मुझे तो कोई भी भेद मालूम नहीं पड़ता है। जैसे मुनि और संयत में फर्क नहीं है क्यों कि जो मुनि है, वही संयत है, जो संयत है, वही मुनि है।

समाधान—"अजीवा जीवप्रतिष्ठिताः" इस वाक्य में अजीव और जीव इनमें आधार आधेय भाव कहा गया है। और "अजीवा जीव संगृहीता" इस वाक्य में संग्राह्यसंग्राहक भाव कहा गया है। सग्रहकर्त्ता जीव और संग्राह्य अजीव हैं। इतना ही मात्र इन दोनोंमें भेद है। मुनि और संयत, इनमें भी समभिरूढनय की अपेक्षा भेद है और

છે. આ રીતે તેઓ કર્માધીન સ્થિતિવાળા હોવાથી તેમને કર્મપ્રતિષ્ઠિત કહ્યાં. "अजीवा जीवसगहिया' (અજીવો જીવસ ગૃહીત છે) એનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવો મનોવર્ગણાના પુદ્ગલોને મનરૂપે તથા ભાષા વગેરે વર્ગણાના પુદ્ગલોને ભાષા વગેરે રૂપે ગ્રહણ કરતા રહે છે તે કારણે અજીવો જીવ સંગૃહીત કહેલ છે

શંકા—"अजीवा जीवपइट्ठिया" અને "अजीवा जीवसगहिया" એ બન્ને વાકયોમા શો અર્થભેદ છે? જેવી રીતે મુનિ અને સંયત વચ્ચે કોઇ ભેદ નથી કારણ કે જે મુનિ છે તેજ સયત છે અને જે સંયત છે તેજ મુનિ છે, એજ પ્રમાણે ઉપરના વાકયોના અર્થમા પણ કોઇ ભેદ લાગતો નથી

સમાધાન—"अजीवा जीवप्रतिष्ठिताः" આ વાકયમાં અજીવ અને જીવનો આધાર આધેય ભાવ કહ્યો છે અને "अजीवा जीवसगृहीता" આ વાકયમા સગ્રાહ્ય અને સંગ્રાહક ભાવ કહ્યો છે સગ્રહકર્ત્તા જીવ છે અને સંગ્રાહ્ય અજીવ છે એટલો તે બન્ને વચ્ચે તફાવત છે. મુનિ અને સંયતમાં પણ સમભિરૂઢનયની અપેક્ષાએ ભેદ છે. તે ભેદ આ પ્રમાણે છે—પાપકર્મ.

रम्य 'अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया' इत्यन्त पदसंदर्भो यावत्पदेन ग्राह्यः, हे भदन्त ! एतत्सर्वं यदुच्यते देवानुप्रियेण तत्र किं कारणमिति भावः। भगवानाह-'गोयमा'-इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'से जहा णामए केइ पुरिसे' स यथा नामकः कश्चित् पुरुषः, 'वत्थिमाडोवेइ' वस्तिमाटोपयति, वस्ति=दृति माटोपयति वायुना भपूरयति 'वत्थिमाडोवेत्ता' वस्तिमाटोपयित्वा वस्तिं वायुना पूरयित्वा 'उप्पिं सिवं धयइ' उपरि सिवं बध्नाति, उपरि सिवेन बन्धनं बध्नाति 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'मज्झेणं' मध्ये खलु 'गंठिं वयइ' ग्रन्थिं बध्नाति, 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'उवरिल्लं गंठिं मुयइ' उपरितनं ग्रन्थिं मुञ्चति, 'मुइत्ता' मुक्त्वा, ग्रन्थिं विमोच्य 'उवरिल्लेणं देसेणं धमेइ' उपरितनं देशं धमयति-वस्तेरुपरितनं देशादापूर्य

"यावत्" शब्द से "अट्ठविहा लोयट्ठिई" से लेकर "अजीवा जीव संगहिया जीवा कम्मसंगहिया" तक का पाठ ग्रहण किया गया है। इसका भाव यही है, जो पहिले कह दिया गया है कि हे भदन्त ! यह सब जो आप कहते हैं उसका क्या कारण है ? तब प्रभु इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (से जहा णामए केइ पुरिसे) जैसे अमुक नामवाला कोई पुरुष (वत्थिमाडोवेइ) मस्तक को हवा से भर दे (वत्थिमाडोवेत्ता) और मस्तक को हवा से भर कर (उप्पिं सिवं धयइ) फिर वह उसका मुख बांध दे। (बंधित्ता मज्झेणं गंठिं बंधइ) बांध कर उस मस्तक के बीचमें वह फिर गांठ लगा दे। (बंधित्ता) बीच में गांठ लगा कर वह फिर (उवरिल्लं गंठिं मुयइ) ऊपर की अर्थात् मस्तक के मुख की गांठ को खोल दे। (मुइत्ता) गांठ खोलकर (उवरिल्लेणं देसेणं धमेइ) उस मस्तक के ऊपरी भाग से वायु को वह निकाल

આટલી "यावत्" પદ વડે "अट्ठविहा लोयट्ठिई" થી લઈને 'अजीवा जीवसंगहिया" 'जीवा कम्मसंगहिया" સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે તેનો ભાવાર્થ આગળ કહ્યા પ્રમાણેજ છે કે હે પ્રભો ! આપ લોકસ્થિતિના જે આઠ પ્રકાર બતાવો છો તેનું કારણ શું છે ? ઉત્તર—(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (से जहा णामए केइ पुरिसे) જેમકે કોઈ પુરુષ (वत्थिमाडोवेइ) મશકને હવા વડે ભરી દે (वत्थिमाडोवेत्ता) અને મશકને હવાથી ભરીને (उप्पिं सिवं धयइ) પછી તે મશકના મુખને બાંધી દે (बंधित्ता मज्झेणं गंठिं बंधइ) આ રીતે મશકના મુખને બાંધીને તેની વચ્ચે તે દોરીથી ગાઠ વાળી દે (बंधित्ता) વચ્ચે ગાઠ બાંધીને (उवरिल्लं गंठिं मुयइ) ઉપરની બાજુએ કે મશકના મુખની ગાંઠને પછી ખોલી નાખે (मुइत्ता) પછી ઉપરની બાજુએ જે (उवरिल्लेणं देसेणं धमेइ) તે

भगवत कथनम्। गौतमः प्राह-'एवं चिट्ठइ' इत्त तिष्ठति भदन्त!, इति गौतमस्य स्वीकरणम्। तथा च यथा वायुराधारो जलस्य बस्तिस्थले दृश्यत एवमेव तनुवातघनोदध्योरप्याधाराधेयभाव संभवन्येव, तत्र वायुरधिकरणमाधेयमप जलमिति। भगवानाह—' से तेणट्ठेण जाव जीवा कम्मसंगहिया ' तत्तेनार्थेन यावत् जीवा कर्मसंगृहीताः, तेन कारणेन दृतिस्थितवायुमलक्षणा तेन एवमुच्यते हे गौतम! 'जाव जीवा कम्मसंगहिया' यावत्-जीवा कर्मसंगृहीता, यावच्छब्देन आकाश प्रतिष्ठितो वायुरित्यारभ्य 'अजीवा जीवसंगहिया ' अजीवाः जीवसंगृहीताः, इत्यन्त पाठ संग्राह्यः, अथ घनोदध्युपरि पृथिवीति दृष्टान्तेन स्पष्टयति-' से जहा वा ' इत्यादि, 'से जहा वा केइ पुरिसे वत्थिं आदोवेइ' तद्यथा-वा कश्चित् पुरुषो वस्तिमाटोपयति, वायुना पूरयति अत्र 'वा' शब्दो दृष्टान्तान्तरद्योतक

है। इस बात को प्रकट करने के लिये यह 'उवरिमतल' पद कहा गया है। तथा—जैसे वायु आधार जल का बस्तिस्थल में दिखलाई देता है, इसी प्रकार से तनुवात और जल इन दोनों का भी आधार आधेयभाव सम्भवता है। यहां वायु अधिकरण है और जल आधेय है। (से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया) इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि यावत् जीव कर्मसंगृहीत हैं। यहां यावत् शब्द से आगासपइट्ठिए वाए" इस पाठ से लेकर "अजीवा जीवसंगहिया" यहां तक का पाठ ग्रहण किया गया है। "घनोदधि के ऊपर पृथिवी है" इस बात को अब सूत्रकार दृष्टान्त से स्पष्ट करते हैं। (से जहा वा केइ पुरिसे वत्थिं आडोवेइ) जैसे कोई पुरुष चमड़े की मसक में वायु भरकर फुलावे। यहां जो "वा" शब्द प्रयुक्त हुआ है वह दूसरे दृष्टान्त का द्योतक है।

'उवरिमतल" પદ મૂકેલુ છે એવી રીતે પાણીનો આધાર વાયુ બસ્તીમાં દેખાય છે એજ પ્રમાણે તનુવાત અને પાણી, એ બન્નેમા પણ આધાર આધેય ભાવ સંભવી શકે છે અહીં વાયુ આધાર છે અને પાણી આધેય છે (से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया!) હે ગૌતમ! તે કારણે મે એવુ કહ્યું છે કે અહીં 'જાવ જીવ કમ્મસંગૃહીત છે" આ સુધીનું કથન સમજવુ જોઇએ અહીં (जाव) यावत्" પદથી 'आगासपइट्ठिए वाए" થી શરૂ કરીને 'अजीवा जीवसंगहिया" સુધીનો પાઠ સમજવો ઘનોદધિની ઉપર પૃથ્વી છે" એ વાતને સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત વડે સમજાવે છે—(से जहा वा केइ पुरिसे वत्थिं आडोवेइ) જેમ કે કોઇ પુરુષ ચામડાની મશકમાં હવા ભરીને તેને ફુલાવે અહીં જે "वा" પદ પ્રયુક્ત છે તે બીજા દૃષ્ટાન્તનુ દ્યોતક છે (आडोवित्ता

निष्कासयतीत्यर्थः, 'उपरिल्लं देसं वामेत्ता' उपरितन देशं वमयित्वा, ऊर्ध्वदेशाद्वायुमपसार्य्य, 'उपरिल्लं देसं आउकायस्स पूरेइ' उपरितनं देशमप्कायेन पूरयति, ऊर्ध्वं देशं जलेन प्रपूरयतीत्यर्थः, 'पूरित्ता' पूरयित्वा 'उप्पिं सितं बंधइ' उपरि सितं=बन्धनं बध्नाति, 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'मज्झिल्लं गंठिं मुयइ' मध्यमां ग्रन्थिं मुञ्चति, 'से णूणं गोयमा' तन्नून हे गौतम! 'से आउकाए वाउकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ' स अप्कायो वायुकायस्योपरि उपरिमतले तिष्ठति किम्? अप्कायो जलम् वायुकायस्य वायोरुपरि यद्यप्युपरि व्यवहारतोपि संभवेत्तथापि सर्वोपरित्वबोधनायाह 'उवरिमतले' उपरिमतले सर्वोपरीत्यर्थः किं तिष्ठतीति

दे। इस तरह उस मशक में आधे भागमें तो वायु भरी रहती है और आधाभाग वायु से रहित होकर खाली हो जाता। (उवरिल्लं देसं वामेत्ता) इस प्रकार उर्ध्वदेश से वायु को हटाकर (उवरिल्लं देसं आउकायस्स पूरेइ) वह उस उर्ध्वदेश को जलसे भर दे। (पूरित्ता उप्पिं सितं बंधइ) भर कर फिर वह उसे बांध दे। (बंधित्ता) बांधकर (मज्झिल्लं गंठिं मुयइ) पहिले लगाई हुई बीच की गांठ को फिर वह खोल दे। (से णूणं गोयमा! से आउकाए वायुकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ) तो हे गौतम! वह भरा हुआ पानी उस पवन के ऊपर के भाग में रहता है क्या? ऐसा भगवान् ने गौतम से पूछा। तब गौतम ने कहा (हंता चिट्ठइ) हां भदन्त! रहता है। यहां (उवरिमतले) ऐसा जो कहा गया है उसका कारण यह है कि जल वायु के ऊपर रहता है यह बात व्यवहार से भी लोक में मानी जाती है तो भी वह जल सर्वोपरि

મશકની ઉપરના ભાગમાથી વાયુને બહાર કાઢી નાખે આ પ્રમાણે કરવાથી મશકના અર્ધા ભાગમા તો વાયુ ભરેલો રહેશે અને અર્ધો ભાગ વાયુરહિત ખાલી થઈ જશે (उवरिल्लं देसं वामेत्ता) પછી મશકના ઉપરના ભાગમાથી વાયુને કાઢી નાખીને (उवरिल्लं देसं आउकायस्स पूरेइ) તે ઉપરના ભાગને પાણીથી ભરી દે (पूरित्ता उप्पिं सितं बंधइ) પછી પાણી ભરીને ફરીથી તેનું ઉપરનું મુખ બાંધી દે (बंधित्ता) મુખને બાંધી દઈને (मज्झिल्लं गंठिं मुयइ) પહેલા બાંધેલી વચલા ભાગની ગાઠને પછી ખોલી નાખે (से णूणं गोयमा! से आउकाए वाउकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ?) તો હે ગૌતમ! તે ભરેલું પાણી વાયુના ઉપરના ભાગમા રહે છે અરે? ગૌતમે જવાબ આપ્યો (हंता चिट्ठइ) હા ભગવન્! રહે છે. અહીં (उवरिमतले) એવુ જે કહ્યુ છે તેનું કારણ એ છે કે પાણી વાયુની ઉપર રહે છે તે વાત વ્યવહારથી પણ લોકમા માનવામા આવે છે. તો પણ પાણી સર્વોપરી છે એ વાતને બતાવવાને માટે

लोकस्थितरेवात्राधिकारेण तदाभित्यैवदमाह-'अत्थि णं'-मित्यादि। अथवा 'अजीवा जीवपइट्ठिया' इत्यादे पदचतुष्टयस्य भावनार्थमिदमाह 'अत्थि णं' मित्यादि

मूलम्-अत्थि णं भंते जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा अन्नमन्नपुट्ठा अन्नमन्नमोगाढा अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा अन्नमन्न घडत्ताए चिट्ठंति ? हंता अत्थि । से केणट्ठेणं भंते जाव चिट्ठंति, गोयमा !, से जहा णामए हरए सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ, अहे णं केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा, से णूणं गोयमा ! सा णावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरेमाणी आपूरेमाणी पुण्णा, पुण्णप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठइ?, हंता चिट्ठइ। से तेणट्ठेणं, गोयमा! अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति ॥ सू० ६ ॥

छाया—अस्ति खलु भदन्त ! जीवाश्च पुद्गलाश्चान्योन्यबद्धा अन्योन्यस्पृष्टाः अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया तिष्ठन्ति?, हन्त अस्ति, तत्कथमार्थेन भदन्त यावत् तिष्ठन्ति, गौतम ! तद्यथा नाम कश्चिद् ह्रदः स्यात् पूर्णः पूर्णप्रमाणो व्यपलोटयन् विकसन् समभरघटतया तिष्ठति अथ कश्चित्पुरुषस्तस्मिन् ह्रदे एकां महतीं नावं शतास्रवां सछिद्रामवगाहयेत्, तत् नूनं गौतम ! सा नौस्तैः स्रवद्वारैरापूर्यमाणा आपूर्यमाणा पूर्णा पूर्णप्रमाणा व्यपलोटयन्ती विकसन्ती समभरघटतया तिष्ठति?, हन्त तिष्ठति, तत्तेनार्थेन गौतम ! अस्ति खलु जीवाश्च यावत् तिष्ठन्ति ॥सू०६॥

ठिया" यहां तक का पाठ संगृहीत किया गया है। "एवं वा" यहां "वा" शब्द दूसरे दृष्टान्त का सूचक है ऐसा जानना चाहिये ॥सू. ५॥

यहां लोकस्थितिका ही अधिकार चल रहा है। अतः उसी को लेकर सूत्रकार कहते हैं-अथवा 'अजीवा जीव पइट्ठिया" इत्यादि जो चार

'आगमपइट्ठिए वाए' આ ચરણ કરીને 'अजीवा जीवपइट्ठिया" સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે एवं वा" આ પદમાં 'वा" શબ્દ બીજા દૃષ્ટાંતનું સૂચક છે એમ સમજવું ॥ સૂ. ૫ ॥

અહીં લોકસ્થિતિનું જ પ્રકરણ ચાલી રહ્યું છે તેથી તેને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર કહે છે- 'अत्थि णं भंते' ઇત્યાદિ અથવા अजीवा जीवपइट्ठिया" ઇત્યાદિ

'आडोवित्ता कडीए बंधइ' आटोप्य कट्यां बद्ध्वाति 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'अत्थाह-मतारमपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा' अस्ताघाऽतारापौरुषेये उदके अवगाहेत, अस्ताघश्च अतारं चापौरुषेयं चेत्यस्ताघाऽतारापौरुषेयं तस्मिन्, मकारद्वयमत्र प्राकृतत्वात्। स्ताघं=प्रमाणं, न स्ताघम्-अस्ताघम्-अप्रमाणं प्रमाणरहितं-गम्भीरमित्यर्थः, अथवा 'अत्थाहं'-इति अस्ताधः अस्तम् अधः=अधस्तलं यस्येति तत् अस्ताधः, निरस्ताधस्तलम् अगाधमित्यर्थः, यत एवागाधमत एवातारं तरीतुमशक्यम्, पुरुषः प्रमाणं विद्यते यस्य तत् पौरुषेयम्, न पौरुषेयमित्यपौरुषेयम्, पुरुषप्रमाणाधिकरणमित्यर्थः। एतादृशे जले कश्चिदवगाहनं कुर्यात्, 'से णूणं गोयमा' तद् नूनं गौतम! 'से पुरिसे तस्स आउकायस्स उवरिमतले चिट्ठइ' स पुरुषस्तस्याप्कायस्योपरिमतले किं तिष्ठति?, गौतमः आह-'हंता चिट्ठइ' हन्त तिष्ठति, हे भदंत स पुरुषो जलस्योर्ध्वभागे एव तिष्ठतीति। भगवानाह-'एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता जाव जीवा कम्मसंगहिया' एवं वाऽष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः, यावत्पदेन-आकाशप्रतिष्ठितो वायुरित्यारभ्य 'अजीवा जीवसंगृहीताः' इत्यन्तः पाठोऽत्र संग्राह्यः। 'एवं वा' इत्यत्र 'वा' शब्दो दृष्टान्तान्तरसूचक इति बोध्यम्॥५॥

(आडोवित्ता कडीए बंधइ) फुलाकर फिर उसे अपने कटिप्रदेशमें बांध लेवे (बंधित्ता अत्थाह-मतार-मपोरसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा) बांध कर फिर वह अगाध ऐसे जल में कि जिस में तैरा नहीं जा सके और जो पुरुष प्रमाणसे भी अधिक हो प्रवेश करे तो (से णूणं गोयमा! से पुरिसे तस्स आउयस्स उवरिमतले चिट्ठइ) हे गौतम! वह पुरुष पानी के ऊपर ही रहेगा न? (हंता चिट्ठइ) हां, भदन्त! रहेगा। (एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता जाव जीवा कम्मसंगहिया) इसी तरह लोक की स्थिति आठ प्रकार की कही गई है। यावत् जीव कर्मसंगृहीत हैं। यहां यावत् शब्द से "आगासपइट्ठिए वाए" इस पाठ से लगा कर "अजीवा जीव संग-

કડીએ બંધઇ) આ રીતે ફુલાવીને તે તેને પોતાની કેડ સાથે બાંધી દે. (बंधित्ता अत्थाह-मतार-मपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा) આ રીતે ફુલાવેલી મશકને કેડે બાંધીને અગાધ, અને જેને તરી શકાય નહી એવા તથા માણસ ડૂબી જાય એવા ઊંડા પાણીમા પ્રવેશ કરે તો (से णूणं गोयमा! से पुरिसे तस्स आउयस्स उवरिमतले चिट्ठइ?) હે ગૌતમ! તે પુરુષ પાણીની ઉપર જ રહેશે કે નહી? (हता चिट्ठइ) હે ભદન્ત! તે માણસ પાણીની ઉપર જ રહેશે. (एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता जाव जीवा कम्मसगहिया) આ રીતે હે ગૌતમ! લોકની સ્થિતિ આઠ પ્રકારની કહી છે અહી પણ "જીવકર્મ સગૃહીત છે" ત્યા સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે. અહીં (जाव) "यावत्" પદ વડે

अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा, अन्योन्य=परस्परं स्नेहेन रागादिरूपेण प्रतिबद्धा=एकीभावं गता । उक्तञ्च—

"स्नेहाभ्यक्तशरीरस्य रेणुना श्लिष्यते यथा गात्रम् ।
रागद्वेषक्लिन्नस्य कर्मबन्धो भवत्येवम् " ॥ १ ॥ इति ।

स्पर्शनामात्र से परस्पर में स्पृष्ट थे इसी कारण थे दोनों पीछे आत्यन्तर रूप से आपस में सम्बद्ध हो गये हैं क्या ? "अन्नमन्नमोगाढा" का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार लोहे के गोले में अग्नि सब तरफ से प्रविष्ट हो जाती है उसी तरह से कर्मपरमाणु आत्मा के साथ और आत्मा कर्मपरमाणुओं के साथ लोलीभाव को प्राप्त हो जाता है क्या? लोलीभाव का तात्पर्य है एकमेक हो जाना। जैसे अयोगोलक (लोहेका गोला) और अयोगोलक (लोहे के गोले) में प्रविष्ट अग्नि परस्पर में एकमेक हो जाते हैं, उसी प्रकार क्या आत्मा और कर्मपरमाणु परस्पर में एकमेक हो जाते हैं क्या? । ये आपसमें स्नेहप्रतिबद्ध हैं क्या? यहां स्नेह से तात्पर्य रागादिरूप स्नेह (चिकनाहट) से है कहा भी है—"स्नेहाभ्यक्त०" इति

जिस व्यक्ति का शरीर तैल आदिसे चिकना होता है तो जैसे उसका शरीर चिपना होनेके कारण धूलि आदिसे, विशेषरूप से आश्लिष्ट हो जाता है, अर्थात् उस पर धूलि आदि के कण आकर चिपक जाते हैं उसी प्रकार जब आत्मा रागद्वेष आदिरूप स्नेह से चिकना बन जाता है तो उसके साथ भी कर्मों का बंध हो जाता है, अर्थात् कर्मपरमाणु

જ પરસ્પરમા ૬૬ ' હતા. તેઓ પાછળથી આહતર રૂપ વડે આપસમા (પરસ્પરમા) સમબદ્ધ થઈ ગયા છે ખરા ? ' अन्नमन्नमोगाढा " નુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે જેમ લોહના ગોળામા બધી બાજુએથી અગ્નિ પ્રવેશી જાય છે તેમ કર્મપરમાણુઓ આત્માની સાથે અને આત્મા કર્મપરમાણુઓની સાથે લોલીભૂત (એકમેક થયા પણ) થાય છે શું તેવી રીતે અયોગોલક (લોહાનેગોળો) અને અયોગોલક (લોહના ગોળામા પ્રવેશેલ અગ્નિ પરસ્પરમા એક મેક થઈ જાય છે તેમ પ્રમાણે શું આત્મા અને કર્મપરમાણુઓ પરસ્પરમાં એકમેક થઈ જાય છે ? શું તેઓ પણ પર સ્નેહ પ્રતિબદ્ધ છે ? અહી " સ્નેહ " નો અર્થ રાગદ્વેષરૂપ સ્નેહ (ચીકાશ) ગ્રહણ કરવો જોઈએ પણ છે " સ્નેહાભ્યક્ત० " ઇત્યાદિ

જ્યારે કોઈ વ્યક્તિના શરીર તેલ વગેરેથી ચીકણું બનું હોય ત્યારે તે વ્યક્તિના શરીર ઉપર ધૂળ વગેરેના કણકણ આવીને ચોંટી જાય છે એજ પ્રમાણે જ્યારે આત્મા રાગદ્વેષ રૂપ સ્નેહથી ચીકણો થઈ જાય છે ત્યારે તેની સાથે કર્મોનો તીવ્ર બંધ થાય છે બંધાયેલા જે આત્મપ્રદેશોની સાથે કર્મપરમાણુઓ

टीका-'अत्थि णं भंते' अस्ति खलु भदन्त ! "जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा" जीवाश्च पुद्गलाश्च अन्योन्यबद्धाः, जीवाः पुद्गलाश्च-कर्मशरीरादिपुद्गलाः परस्परं संबद्धाः, जीवाः पुद्गलानां, पुद्गलाश्च जीवानां संबद्धा इति भावः। कथंबद्धाः? इत्यत्र हेतुगर्भितविशेषणमाह 'अन्नमन्नपुट्ठा' अन्योन्यस्पृष्टाः यतः पूर्वं स्पर्शनामात्रेणान्योन्यं स्पृष्टा अत एवेत्यर्थः, यतः पूर्वं स्पृष्टाः स्पर्शनविषया जाताः, पश्चात् अन्योन्य बद्धाः=गाढतरसंबद्धा इति भाव। 'अन्नमन्नमोगाढा' अन्योन्यावगाढाः, अयोगोलकवत् परस्परेण लोलीभावं प्राप्ताः, 'अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा'

पद हैं उन पदों का विचार करने के निमित्त यह सूत्र कहते है-'अत्थि णं भंते! जीवा य पोग्गला य" इत्यादि।

(अत्थि णं भंते! जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा, अन्नमन्नपुट्ठा, अन्नमन्नमोगाढा, अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा, अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति?) हे भदन्त! जीव और पुद्गल क्या परस्पर बद्ध हैं? चेतना लक्षण वाला जो होता है उसका नाम जीव और रूप,रस, गंध और स्पर्श इन चार गुणों वाला जो होता है वह पुद्गल है। पुद्गल से यहां कर्मशरीरादि पुद्गल लिये गये हैं। पुद्गलों के साथ जीव और जीवों के साथ पुद्गलों का जो एक क्षेत्रावगाह संबंध है वही यहां पर परस्पर में बंध है और इस संबंध से युक्त होना इसका नाम बद्ध है। ये आपस में बद्ध हैं ऐसा प्रश्न जो किया गया है उसका कारण यह है कि-ये दोनों "अन्नमन्नपुट्ठा" हैं यह हेतुगर्भित विशेषण है। इसका तात्पर्य यह है कि ये दोनों पहिले

જે ચાર પદ છે તેમનો વિચાર કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે "अत्थि णं भंते" ઇત્યાદિ

(अत्थि णं भंते! जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा, अन्नमन्नपुट्ठा, अन्नमन्नमोगाढा, अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति?) હે ભગવન્! જીવો અને પુદ્ગલો શું પરસ્પર બંધાયેલાં છે?" ચેતના જેનું લક્ષણ છે તેને જીવ કહે છે તથા રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ એ ચાર ગુણો જેમા હોય છે તેનું નામ પુદ્ગલ છે "પુદ્ગલ" પદ વડે અહી કર્મશરીરાદિ પુદ્ગલો ગ્રહણ કરાયેલ છે પુદ્ગલોની સાથે જીવનો અને જીવની સાથે પુદ્ગલોનો જે એકક્ષેત્રાવગાહ (એક સ્થળમા રહેવાનો) સંબંધ છે એજ અહી પરસ્પરમાં બંધરૂપ છે, અને તે સંબંધથી યુક્ત હોવુ એવી સ્થિતિને "બદ્ધ" કહે છે "જીવ અને પુદ્ગલ પરસ્પર બદ્ધ છે?" એ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનુ કારણ એ છે કે તે બન્ને "अन्नमन्नपुट्ठा" (પરસ્પર બંધાયેલા) છે, એ હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-તેઓ બન્ને પહેલા માત્ર સ્પર્શનાથી

पूर्णप्रमाणः 'वोलट्टमाणे, व्यपकोटयन् , अतिशयजलबहुत्वेन छर्यमानजल इत्यर्थः। 'वोसट्टमाणे' त्ति विकसन् जलाधिक्यात् विकासमाप्नुवन् अतेन पर्द्यमान इत्यर्थः, 'समभरघडत्ताए'त्ति समभरघटतया, समो न विषमो घटैकदेशप्रनाधिक्यतस्तेन मतो जलसमूहो यस्मिन् स समभर स एवया भूत इति समभरः, समशब्द सर्वार्थकोऽपि विद्यते, समभरश्चासौ घटश्चेति समभरघटः समभरघट इवेति समभरघटस्तस्य भावः समभरघटत्ता, तया समभरघटत्वया सर्वथा संभृतघटाकारतया तिष्ठतीत्यर्थः। 'अहे ण केइ पुरिसे धंसि इरपंसि पगं महं नावं' अथ खलु कश्चित् पुरुषः तस्मिन् हृदे एकां महतीं नावं=नौकाम् , कीदृशीमित्याह-'सयासवं' सदाश्रवाम् , आ=ईषत् स्रवति=सरति जलं यैरभ्यस्ते आस्रवाः=सूक्ष्मरन्ध्राणि ये सन्तो=विद्यमाना यस्य सा सदास्रवा, ताम्। यद्वा-सदा=सर्वकाले आस्रवति जलं यस्याः सा सदास्रवा, ताम् , यद्वा-'सवासवाम्' इतिच्छायापक्षे सप्तसंख्यका आस्रवा यस्यां सा सप्तास्रवा, ताम्। तथा 'सयछिद्दं' सप्तच्छिद्राम् छिद्राणि सूक्ष्मरन्ध्राणि सप्तानि=सप्त संख्यकानि छिद्राणि सूक्ष्मरन्ध्राणि यस्यां सा सप्तछिद्रा, ताम् सूक्ष्मरन्ध्रवतीं

कुछ कम भी भरा होने पर व्यवहार में लोग कह दिया करते हैं कि यह पूरा भरा है-सो ऐसा भरा हुआ यहां नहीं समझना चाहिये किन्तु इस ह्रद में पानी अपने प्रमाण में जितना भरा जा सकता हो उतना पानी उसमें भरा हो, इसी बात को प्रकट करने के लिये यहां "पुण्णप्पमाणे" पद दिया गया है, अर्थात् यह ऐसा ह्रद-जलाशय हो जो खूब ऊपर तक लबालब भरा हो और इसी कारण जिसमें से जल छलक रहा हो अर्थात् लबालब भरे होने के कारण जिसमें से जल बाहर भी निकल जाता हो तथा जल की अधिकता से जो विकास को अर्थात् वृद्धि को प्राप्त हो रहा हो और देखने पर ऐसा मालूम देता हो कि मानो जल से लबालब भरा हुआ यह एक विशाल घड़ा ही रक्खा है। (अहे ण केइ पुरिसे तंसि इरपंसि पगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा) ऐसे इस ह्रद में कोई पुरुष एक बड़ी नौका कि जिसमें छोटे २ सैकड़ों छिद्र

અવહારમાં કોઈ એવું કહે છે કે તે ભરેલું છે અહીં એવા સરોવરની વાત નથી પણ જેટલું પાણી ભરાઈ શકે તેટલું ભરેલું છે એમ બતાવવાને માટે અહીં 'पुण्णप्पमाणे' પદ મૂકેલું છે) એટલે કે પાણીની અધિકતા હોવાથી તે સરોવર કોઈ કાંઠે છલોછલ ભરેલું હોવાથી જેમાંથી પાણી બહાર પણ વહેતું હોય તથા પાણીની અધિકતાથી જે વિકાસ પામી રહ્યું હોય અને પાણીથી છલોછલ ભરેલા વડા જેવું જે દેખાતું હોય (अहेण केइ पुरिसे तंसि इरपंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा) એવા સરોવરમાં કોઈ માણસ જેમ

अत एव 'अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति' अन्योन्यघटतया तिष्ठन्ति। अन्योन्यं परस्परं घटः समुदायो येषां ते अन्योन्यघटस्तस्य भावोऽन्योन्यघटता, तया अन्योन्यघटतया तिष्ठन्ति किमिति प्रश्नः। भगवानाह-'हंते'-इत्यादि। 'हंता अत्थि' हन्त अस्ति, हे गौतम! यथा त्वया प्रोक्तं तत्तथैवास्तीत्युत्तरम्। गौतमः प्राह-'से केणट्ठेणं भंते जाव चिट्ठंति' तत्केनार्थेन भदन्त! यावत् तिष्ठन्ति, यावच्छब्देन-'अन्नमन्नबद्धाः' इत्यारभ्य 'अन्नमन्नघडत्ताए' इत्यन्तः पदसंदर्भः संग्राह्यः। भगवानाह--'गोयमे'-इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'से जहा णामए हरदे सिया' तद् यथा नामको ह्रदः स्यात् 'पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ' पूर्णः पूर्णप्रमाणो व्यपलोटयन् विकसन समभरघटतया तिष्ठति, यथा ह्रदो जलेन पूर्णः स्यात् किञ्चिन्न्यूनत्वेपि व्यवहारतः पूर्णतया व्यवह्रियेत तत्राह-'पुण्णप्पमाणे' पूर्णप्रमाणः पूर्णं जलेन स्वकीय मानं यस्य स

चिपक जाते हैं। "अन्नमन्नघडत्ताए" का तात्पर्य है आपस में एक समुदायरूप में होकर रहना। प्रश्न कर्त्ताका यहां ऐसा अभिप्राय है कि कर्मपुद्गल और जीव जब आपस में बंधदशा को प्राप्त हो जाते हैं तब क्या ये दोनों एक समुदायरूप में आजाते हैं? इस प्रकार ये प्रश्न हैं। इन सब का उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (हंता अत्थि) हे। गौतम! हां ऐसा ही है। (से केणट्ठेणं भंते! जाव चिट्ठंति?) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यावत् वे इस प्रकार से रहते हैं? (गोयमा! से जहा नामए हरदे सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ) हे गौतम! जैसे कोई एक ह्रद हो और वह पानी से पूरा भरा हो। पूरा नहीं भरा होने पर भी अर्थात्

ચોટી જાય છે, "अन्नमन्नघडत्ताए" એટલે "પરસ્પર એક સમુદાય રૂપે રહેવુ" પ્રશ્ન કર્ત્તાનો આશય એવો છે કે જ્યારે કર્મપુદ્ગલો અને જીવના પ્રદેશો પરસ્પર બંધાય છે ત્યારે શુ તેઓ બન્ને એક સમુદાય રૂપે બની જાય છે? આ જાતના ગૌતમસ્વામીના પ્રશ્નોના ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે -(हंता अत्थि) હે ગૌતમ! એવું જ બને છે —

પ્રશ્ન—(से केणट्ठेणं भंते! जाव चिट्ठंति? હે ભગવન્! આ શા કારણે એવુ કહો છો કે "તેઓ આ રીતે રહે છે? ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો ઉત્તર-(गोयमा! से जहा नामए हरए सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ) હે ગૌતમ! જેવી રીતે કોઈ એક સરોવર હોય અને તે પાણીથી પૂરેપૂરૂ ભરેલુ હોય (પૂરેપૂરૂ ન ભરેલુ હોવા છતા પણ

पूर्णप्रमाणः 'वोसट्टमाणे, व्यपक्रोटयन् , अतिशयजलपत्वेन छर्यमाणजलः इत्यर्थः। 'वोसट्टमाणे' त्ति विकसन् जलाधिक्यात् विकासमाप्नुवन् अतेन वर्द्धमान इत्यर्थः, 'समभरघडत्ताए'त्ति समभरघटतया, समो न विषमो यो घटविशेषस्तस्य भावो यस्मिन् स समभरः सर्वथा भृत इति समभरः, समशब्दः सर्वार्थकोऽपि विद्यते, समभरश्चासौ घटश्चेति समभरघटः समभरघट इवेति समभरघटस्तस्य भावः समभरघटत्वं, तया समभरघटतया सर्वथा सम्पूर्णघटाकारतया तिष्ठतीत्यर्थः। 'अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं' अथ खलु कश्चित् पुरुषः तस्मिन् ह्रदे एकां महतीं नावं=नौकाम् , कीदृशीमित्याह-'सयासवं' शतास्रवाम् , आ=ईषत् स्रवति=सरति जलं यस्यां सा आस्रवा=सूक्ष्मरन्ध्राणि, ते सन्तो=विद्यमाना यस्यां सा सदास्रवा, ताम्। यद्वा-सदा=सर्वकाले आस्रवति जलं यस्याः सा सदास्रवा, ताम् , यद्वा-'शतास्रवाम्' इतिच्छायापक्षे शतसंख्यका आस्रवा यस्यां सा शतास्रवा, ताम्। तथा 'सयछिद्दं' शतच्छिद्राम् छिद्राणि दृष्टिगोचरन्ध्राणि शतानि=शत संख्यकानि छिद्राणि दृष्टिगोचरन्ध्राणि यस्यां सा शतछिद्रा, ताम् दृष्टिगोचरन्ध्रवतीं

कुछ कम भी भरा होने पर व्यवहार में लोग कह दिया करते हैं कि यह पूरा भरा है-सो ऐसा भरा हुआ यहां नहीं समझना चाहिये किन्तु उस ह्रद में पानी अपने प्रमाण में जितना भरा जा सकता हो उतना पानी उसमें भरा हो, इसी बात को प्रकट करने के लिये यहां "पुण्णप्पमाणे" पद दिया गया है, अर्थात् वह ऐसा ह्रद-जलाशय हो जो ब्रूप ऊपर तक लबालब भरा हो और इसी कारण जिसमें से जल छलक रहा हो अर्थात् लबालब भरे होने के कारण जिसमें से जल बाहर भी निकल जाता हो तथा जल की अधिकता से जो विकास को अर्थात् वृद्धि को प्राप्त हो रहा हो और देखने पर ऐसा मालूम देता हो कि मानो जल से लबालब भरा हुआ यह एक विशाल घड़ा ही रक्खा है। (अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा) ऐसे उस ह्रद में कोई पुरुष एक बड़ी नौका कि जिसमें छोटे २ सैकड़ों छिद्र

અવલારમાં સોડા જેવું બને છે કે તે બરેલું છે અડી જેવા સરોવરની વાત નથી. પણ કેટલુ પાણી ભરાઈ શકે તેટલુ ભરેલુ છે એમ બતાવવાને માટે અહીં "पुण्णप्पमाणे" પદ મૂકયું છે) જેમકે કે પાણીથી છલોછલ ભરેલુ તે સરોવર હોય અને છલોછલ ભરેલુ હોવાથી જેમાંથી પાણી બહાર પણ આવ્યું જતું હોય તથા પાણીની અધિકતાથી જે વિકાસ પામી રહ્યું હોય અને પાણીથી છલોછલ ભરેલા વચ્ચ જેવુ જે દેખાતું હોય (अहेण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा) જેવા પ્રકારના કોઇ માણસ જેમ

नौकाम्, आस्रवच्छिद्रयोः सूक्ष्मस्थूलरन्ध्रत्वेन वैलक्षण्यमिति न पुनरुक्ति। 'ओगाहेज्जा' अवगाहयेत् प्रवेशयेत्, 'से णूणं गोयमा' अथ नूनं हे गौतम! 'सा णावा' सा नौका 'तेहिं आसवदारेहिं' तैरास्रवद्वारैः 'आपूरेमाणी' 'आपूरेमाणी-आपूर्यमाणा आपूर्यमाणा पौनःपुन्येन भ्रियमाणा सती 'पुन्ना' पूर्णा जलेन 'पुण्णप्पमाणा' पूर्णप्रमाणा-स्वकीयप्रमाणेन भृता 'वोलट्टमाणा' व्यपलोटयन्ती-अतिशयजलवत्त्वेन छद्यमानजला, 'वोसट्टमाणा' विकसन्ती-जलाधिक्येन वा माना सती 'समभरघडत्ताए' समभरघटतया, हृदक्षिप्तसर्वथा भृतघटवत् हृदतलावस्थानतया, 'चिट्ठइ' तिष्ठति=हृदजले

हों और बडे २ भी सैकड़ों छिद्र हों उसको डाले। "सयासव्वं" जिनसे धीरे २ जल आवे वे आस्रव, अर्थात् सूक्ष्मछिद्र,-ये सूक्ष्मछिद्र जिस में विद्यमान हैं वह सदास्रवा है। अथवा-"सदा आस्रवति जलं यस्याः सा सदास्रवा"-सब समय में जिसमें जल आता रहता हो वह सदास्रवा है। अथवा शतास्रवा-शतसंख्यक हैं छेद जिस में ऐसी वह शतास्रवा नौका। यहां पर आस्रव और छिद्र में सूक्ष्म स्थूल छिद्रों की अपेक्षा भेद होने के कारण पुनरुक्ति दोष आने की संभावना नहीं है। (से णूणं गोयमा! सा णावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरमाणी आपूरमाणी पुन्ना पुन्नप्पमाणा, वोलट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठइ) तो हे गौतम! वह नौका उन आस्रवद्वारों-छेदों से आते हुए जल से भरती रहती है। भरते २ वह पूरी भर जाती है। पानी से छलकने लग जाती है। यहां तक कि पानी उसके ऊपर से भी निकलने लग जाता है। इस स्थिति में वह नौका जल की अधिक वृद्धि हो जाने के कारण हृदमें डाले हुए भरे

મોટી નાવને ઉતારે કે જેમા નાનાં મોટાં સેકડો છિદ્રો હોય "सयासव्व" તે છિદ્રો વડે ધીમે ધીમે પાણીનો પ્રવેશ થાય તેવાં આસ્રવો-સૂક્ષ્મ છિદ્રોવાળી નૌકાને "सदास्रवा" કહી છે અથવા-"सदा आस्रवति जलं यस्या सा सदास्रवा" હમેશાં જેમા પાણી આવ્યા કરતું હોય તેને સદાસ્રવા કહે છે, અથવા-"शतास्रवा" એટલે જેમા સેકડો છિદ્રો હોય એવી નૌકા અહીં આસ્રવ અને છિદ્રમા સૂક્ષ્મ અને સ્થૂળ છિદ્રોની અપેક્ષાએ ભિન્નતા હોવાને કારણે પુનરુક્તિ દોષનો સભવ રહેતો નથી (से णूण गोयमा! सा णावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरेमाणीर पुन्ना पुन्नप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठइ?) તો હે ગૌતમ! આવી નાવ તે આસ્રવદ્વારો વડે (છિદ્રોમાથી) પ્રવેશ પામતા પાણીથી ભરાતી રહેશે આવી રીતે ભરાતા ભરાતા તે પાણીથી પૂરેપૂરી ભરાઇ જશે અને પાણીથી છલકાવા માડશે વળી તે એટલે સુધી છલકાશે કે પાણી તેમાથી બહાર પણ નીકળવા માડશે. એવી સ્થિતિમા પાણીની વિશેષ વૃદ્ધિ થવાને

निमज्जति ?, इति भगवदाशयम्, गौतम आह-'हंता सिढ्ढइ' हन्त सिध्यति, हे भदन्त! यथा जलपूर्णा घटो ह्रदतले जलेन सह तिष्ठति तथा नौरपि जलपूर्णा ह्रदस्याधोदेशे तिष्ठतीति। भगवानाह-'से तेणट्ठेण गोयमा' तत्तेनार्थेन हे गौतम! 'अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति' अस्ति खलु जीवाश्च यावत्पदेन-पुद्गलाश्च अन्योन्यबद्धा अन्योन्यस्पृष्टा अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया इति संग्राह्य, तिष्ठन्तीति सम्बन्ध। यथा नौका ह्रदतले च परस्परावगाढपूर्वकं तिष्ठति तथैव जीवाः पुद्गलाश्चान्योन्यावगाढपूर्वकं तिष्ठन्तीति सूत्राशयः ॥सू०६॥

हुए घडे की तरह नीचे बैठ जाती है नहीं, अर्थात् डूब जाती है वा, (हंता सिढ्ढइ) हां भदन्त! जैसी वह नौका उस ह्रद में डूब जाती है। जैसे जल पूर्ण घट ह्रद तल में जल के साथ २ डूब जाता है उसी प्रकार वह नौका कि जिस में सैकडों छोटे बडे छिद्रों द्वारा जल आ आ कर एकदम भर गया है डूब जाती है। (से तेणट्ठेण गोयमा! अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति) इसी कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हूं जीव कि यावत् पहिले कहे हुए की तरह रहते हैं। यहां जो "यावत्" पद आया है उससे "पुद्गलाश्च, अन्योन्यबद्धा अन्योन्यस्पृष्टा अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया" इस पूर्वोक्त पाठ का संग्रह किया गया है। तात्पर्य इस सूत्र का ऐसा है कि जिस प्रकार नौका और ह्रद जल ये दोनों परस्पर में अवगाढपूर्वक रहते हैं उसी प्रकार से जीव और पुद्गल भी आपस में एक दूसरे में अवगाढपूर्वक रहते हैं ॥सू०६॥

કારણે તે નાવ બરેલા વહાણની જેમ સરોવરમાં ડૂબી જાય છે કે નહીં ? (हंता सिढ्ढइ) કે ભગવન્ જેવી નાવ સરોવરમાં અવશ્ય ડૂબી જાય છે જેવી રીતે પાણીથી ભરેલા ઘડો સરોવરની અંદર ડૂબી જાય છે તેવી રીતે સેંકડો નાનાં મોટા છિદ્રોવાળી છે નૌકા પણ ડૂબી જાય છે (से तेणट्ठेणं गोयमा! अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति) હે ગૌતમ! તેથી જ હું એમ કહું છું કે જીવો 'ઇત્યાદિ પહેલા પ્રમાણે રહે છે ત્યા સુધીનો પાઠ અહિયા કરવો જોઈએ (जाव) " यावत् " પદ વડે 'पुद्गलाश्च अन्योन्यबद्धा, अन्योन्यस्पृष्टा अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया' આ પૂર્વોક્ત પાઠ અહિયા કરવો છે આ સૂત્રનો ભાવ એવો છે કે જેવી રીતે નાવ અને સરોવરનું પાણી એ બન્ને અવગાઢ પૂર્વક રહે છે, એવી જ રીતે જીવ અને પુદ્ગલો પણ પરસ્પર અવગાઢ પૂર્વક રહે છે ॥ સૂ. ૬ ॥

लोकस्थितिविषये एवेदमाह—'अत्थि णं' इत्यादि।

मूलम्—अत्थि' णं भंते सया समियं सुहुमे सिणेहकाये पवडइ, हंता अत्थि। से भंते किं उड्ढे पवडइ अहे पवडइ, तिरियं पवडइ, गोयमा ! उड्ढे वि पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरिए वि पवडइ, जहा से वायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरंपि दीहकालं चिट्ठइ तहा णं से वि?, णो इणट्ठे समट्ठे, से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ। सेवं भंते सेवं भंते त्ति ॥ सू०७॥

॥ छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

छाया—अस्ति खलु भदंत ! सदा समितं सूक्ष्मः स्नेहकायः प्रपतति, हन्त अस्ति। तद् भदन्त ! किम् ऊर्ध्वं प्रपतति, अधः प्रपतति, तिर्यक् प्रपतति, गौतम ! ऊर्ध्वमपि प्रपतति, अधोऽपि प्रपतति, तिर्यगपि प्रपतति, यथा स बादरोऽप्कायोऽन्योन्यसमायुक्तश्चिरमपि दीर्घकालं तिष्ठति, तथा खलु सोऽपि?, नायमर्थः समर्थः तत् क्षिप्रमेव विध्वंसमागच्छति। तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू०७॥

॥ षष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥

टीका—'अत्थि णं भंते' अस्ति खलु भदन्त ! 'सया' सदा-सर्वकालम्, 'समियं' समित सपरिमाणं न तु बादराप्कायवदपरिमितम्, अथवा सदा सर्वऋतुषु समितमिति रात्रौ दिवसे च 'सुहुमे सिणेहकाये पवड़इ' सूक्ष्मः स्नेहकायः सूक्ष्मोऽप्कायविशेषः प्रपतति किमिति प्रश्नः। भगवानाह—'हंते'—त्यादि।

फिर लोक की स्थिति के विषय में ही सूत्रकार कहते हैं—'अत्थि णं भंते ! सया समियं' इत्यादि।

(अत्थि णं भंते) हे भदन्त ! (सया) सर्वकाल (समियं) परिमाण-सहित, बादर अप्कायकी तरह अपरिमित नहीं, अथवा-सदा-सर्व ऋतुओं में, समित-रात्रि और दिवस में, (सुहुमे सिणेहकाये पवडइ) सूक्ष्म-स्नेहकाय अप्कायविशेष-गिरता है क्या ? तात्पर्य पूछने का यह

લોકસ્થિતિના વિષયમા જ સૂત્રકાર કહે છે—" अत्थि णं भंते ! " ઇત્યાદિ

अत्थि णं भंते ! હે પ્રભો! (सया) સદા-સર્વકાળે (समियं) પરિમાણ (માપ) સહિત (બાદર અપ્કાયની જેમ અપરિમિત નહીં) અથવા-સદા તમામ ઋતુઓમા સમિત-રાત્રે અને દિવસે (सुहुमे सिणेहकाये पवडइ ?) સૂક્ષ્મ સ્નેહકાય-અપ્કાયવિશેષ પડ્યા જ કરે છે શુ ? તાત્પર્ય કે શુ હમેશા સૂક્ષ્મ અપ્કાય

'इन्त अत्थि इन्त अस्ति, सर्वस्मिन्नेव ऋतौ दिवसे रात्रौ च सूक्ष्मोऽप्कायः सर्वं कालं सम्पतत्यवतिसमुदितार्थः । 'से भंते किं उड्ढे पवडइ, अहे पवडइ, तिरिए पवडइ ?' तद् भदन्त ! किम् ऊर्ध्वं पतति, अध पतति, तिर्यक् पतति ? ऊर्ध्वे-वर्तुल वैताढ्यादौ, अध -अधोलोकग्रामेषु तिर्यक्-तिर्यग्लोके । भगवानाह-'गोयमे' -त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'उड्ढे पवडइ अहेवि पवडइ, तिरियंपि पवडइ' ऊर्ध्वमपि प्रपतति, अधोऽपि प्रपतति, तिरयगपि प्रपतति, ऊर्ध्वलोकेऽपि, अधोलोकेऽपि, तिर्यग्लोकेऽपि सर्वत्र सर्वदा सूक्ष्माप्कायः प्रपततीति भावः ।

ननु यदि रात्रौ दिवसे सर्वर्तुषु सर्वदैवाप्कायः प्रपतति तदा साधुभिः कस्मिन्नपि काले कुत्रापि कथमपि न गन्तव्यं सर्वकालेऽप्कायविराधनासंभवादिति

है कि सब समय सूक्ष्म जलकाय गिरता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(हंता अत्थि) हां गिरता है । अर्थात् सभी ऋतुओं में रात और दिनमें सूक्ष्म अप्काय सब समय में गिरता ही रहता है । (से भंते ! किं उड्ढे पवडइ, अहे पवडइ, तिरिय पवडइ ?) हे भदन्त ! यह सूक्ष्म जलकाय क्या ऊँचे गिरता है, या नीचे गिरता है, या कि तिरछा गिरता है ? अर्थात्-ऊँचे वर्तुल वैताढ्य आदि में, नीचे-अधोलोक ग्रामों में और तिरछे-तिर्यग्लोक में पड़ता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(गोयमा-उड्ढे वि पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरियं वि पवडइ) हे गौतम ! यह सूक्ष्म अप्काय ऊँचे-वर्तुल वैताढ्य आदि पर्वतों पर भी, नीचे-अधो लोकग्रामों में भी और तिरछे-तिर्यग्लोक में भी सदा गिरता है ।

शंका—यदि सूक्ष्म अप्काय रात्रि में दिन में, सर्व ऋतुओं में सदा ही गिरता रहता है तो फिर साधुजनोंको किसी भी समय में कहीं पर भी किसी भी तरह नहीं जाना चाहिये-क्यों कि ऐसा करने से सर्वत्र

પડે છે ? ઉત્તર—(हंता अत्थि) હા પડે છે ઓ-હે ભદન્ત ! ઋતુઓમાં (કરતીમ) સૂક્ષ્મ અપ્કાય હમેશા પડ્યા જ કરે છે (से भंते ! किं उड्ढं पवडइ, अहे पवडइ तिरिए पवडइ ?) હે ભગવન્ ! તે સૂક્ષ્મ અપ્કાય શું ઊંચે પડે છે કે નીચે પડે છે કે તિરછુ પડે છે ? ઓ-હે કે ઊંચે-વર્તુલ વૈતાઢ્ય પર્વત વગેરે ઉપર નીચે અધોલોકગ્રામ તિરછુ -તિર્યગ્લોકમાં પડે છે ? ઉત્તર—(गोयमा ! उड्ढं पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरियंपि पवडइ,) હે ગૌતમ ! તે સૂક્ષ્મ અપ્કાય ઊંચે -વર્તુલ વૈતાઢ્ય વગેરે પર્વતોમા પણ હમેશા પડે છે નીચે અધોલોકમા પણ હમેશા પડે છે અને તિરછુ -તિર્યગ્લોકમા પણ હમેશા પડે છે

શકા—જો સૂક્ષ્મ અપ્કાય રાતને દિવસ તમામ ઋતુઓમા હમેશા પડ્યું જ રહેતું હોય તો સાધુલોકોને કોઇ પણ સ્થળે કોઇ પણ રીતે કયારેય

भगवानाह-'णो इणट्ठे' इत्यादि। 'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः, तस्मिन्नाह 'से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ' तत् खलु क्षिप्रमेव विध्वंसमागच्छति स्वल्पसाक्षात्य 'सेवं भंते सेवं भंते त्ति' तदेव मदन्त! तथैवं मदन्त! हे भगवन् वेषानुरूपेण यत् कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति ॥सू०७॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालयतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य षष्ठोद्देशकः समाप्तः ॥१-६॥

उत्तर—(णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम! यह अर्थ-समर्थ-ठीक-नहीं है, क्यों कि (से णं) वह (खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ) पहले ही शीघ्र नष्ट हो जाता है। कारण यह है कि वह स्वल्प होता है। (सेवं भंते, सेवं भंते त्ति) हे भदन्त! जैसा आपने कहा है वह वैसा ही है। हे भदन्त! वह वैसा ही है। इस प्रकार कह कर वे गौतमस्वामी प्रभु की वंदना और उन्हें नमस्कार कर अपने स्थान पर बैठ गये ॥सू०७॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवती सूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके प्रथम शतकका छट्ठा उद्देशक समाप्त ॥१-६॥

જેનું બીજું નામ કાલ્પ છે (ણ ળે) તે સૂત્રમ અપેક્ષાએ છે। (खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ) એકદમ જલદીથી નાશ પામે છે કારણ કે તેનો સૂક્ષ્મ દોષ છે (सेवं भंते! सेवं भंते!) હે ભગવન્! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ બધુ છે હે પ્રભો! આપનું કહેવું બધુ જ છે આ પ્રમાણે કહીને વંદનાદી કરીને નમસ્કાર કરીને ગૌતમસ્વામી પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ-૭॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો છઠ્ઠો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ૧-૬॥

चेत्र-दिवसे सूर्यकिरणेन तस्याप्कायस्याकाशपतितस्य विनाशेन तत्काले साधुगमनस्याविरुद्धत्वात्, यदि परिष्ठापनकाद्यावश्यककारणमासाद्य रात्रिगमनमापतेत्तदा संवरणेनैव गन्तव्यमिति शास्त्रमर्यादा। गौतमः पृच्छति-'जहा से बायरआउकाए' यथा स बादराऽप्कायः 'अन्नमन्नसमाउत्ते' अन्योन्यसमायुक्तः-एको बादराप्कायोऽन्येन बादराप्कायेन सह मिलित सन् 'चिरंपि' चिरमपि=अनेकवर्षं यावत् तडागादिपूरणात्, 'दीहकालं' दीर्घकालम्=अनेकदिनं यावत् 'चिट्ठइ' तिष्ठति-'तहा णं' तथा खलु तेन प्रकारेण हे भदन्त! 'सेवि' सोऽपि सूक्ष्माप्कायोऽपि चिरमपि दीर्घकाल तिष्ठति किमिति प्रश्नः।

सब काल में अप्काय की विराधना होने का प्रसङ्ग प्राप्त होता है।

उत्तर—दिन में सूर्यकिरणों से आकाशपतित उस अप्काय का विनाश हो जाता है-अतः उस समय में साधुजनों का गमन अविरुद्ध है-बाधाकारी नहीं है। यदि परठवने आदि आवश्यक कारणों को लेकर रात्रि में गमन करना पडे तो शरीर को ढक कर ही चलना चाहिये, खुले शरीर होकर नहीं चलना चाहिये, ऐसी शास्त्र की मर्यादा है। अब गौतम पुनः पूछते हैं (जहा से बायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरंपि, दीहं कालं चिट्ठइ, तहा ण से वि हे भदन्त! जैसे एक बादर अप्काय दूसरे बादर अप्काय के साथ मिला हुआ होकर अनेक वर्षों तक यावत् तडाग आदिमें भर जानेसे अनेक दिनों अनेक मास अनेक वर्षों तक रहता है उसी तरहसे क्या यह सूक्ष्म अप्काय भी रहता है?

પણ જવુ જોઇએ નહીં કારણ કે તેઓના જવા આવવાથી બધે સ્થળે હમેશાં અપ્કાયના જીવોની વિરાધના થવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે

સમાધાન—દિવસે સૂર્યનાં કિરણોની ગરમી વડે આકાશમાંથી પડતાં તે અપ્કાયના જીવોનો સ્વાભાવિક રીતેજ વિનાશ થાય છે તેથી દિવસે સાધુઓના જવા આવવાથી અપ્કાય જીવોની વિરાધનાનો સંભવ રહેતો નથી પરંતુ રાત્રે અપ્કાયના જીવોની હિંસાથી બચવાને માટે ઝાડો, પેશાબ વગેરે અનિવાર્ય કારણોને લઇને રાત્રે સાધુ સાધ્વી તથા વ્રતધારી શ્રાવક શ્રાવિકાઓને જવા આવવાની જરૂર પડે તો શરીરને ઢાકીને જ જવું આવવુ જોઇએ ઉઘાડે શરીરે જઇ આવી શકાય નહી એવી શાસ્ત્રની આજ્ઞા છે વળી ગૌતમસ્વામી પૂછે છે (जहा से बायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरंपि, दीहं कालं चिट्ठइ, तहा णं से वि) હે ભગવન્! જેવી રીતે બાદર (સ્થૂળ) અપ્કાય (પાણી) બીજા બાદર અપ્કાયની સાથે મળીને તળાવ વગેરેમા દિવસોના દિવસો, મહિનાઓ અને વર્ષો સુધી રહે છે, એવી રીતે શું સૂક્ષ્મ અપ્કાય પણ રહે છે?

ઉત્તર-(णा इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ તે અર્થ બરાબર નથી એટલે કે

दादीनामाहारः, इत्युच्यते, गर्भगतस्य कः आहारः? इति प्रश्नः, मातृशोणितेन सार्धं मातृमसिताहारः, इत्युच्यते। गर्भगतस्य जीवस्य मूत्रपुरीषादिकं भवति नवेति प्रश्नः, नेत्युच्यते तत्र कारणप्रश्नः, आहारस्यानेकरूपेण परिणामो भवतीत्युच्यते। गर्भस्थो जीवः किं मुखेन कवलयति? नेत्युच्यते। तत्र कारणप्रश्नः, सर्वशरीरेणाहारं करोतीति कारणकथनम्। मातुरसहारिणी-पुत्रजीवरसहारिणी-नाडयोर्विचारः, सन्तानस्य मातुरङ्गानि कियन्ति भवन्तीति प्रश्नः, तीणीत्युच्यते, मातुः सकाशाच्छोणितमाहारयति कियत्कालं तिष्ठन्तीति प्रश्नः, यावज्जीवमित्युच्यते। गर्भे विद्यमानो जीवो नरके याति नवेति प्रश्नः, याति न सा यातीत्युच्यते। तत्र कारणकथनम्। गर्भस्थ

प्रभो शुक्रशोणित आदि का वह आहार करता है ऐसा उत्तर। गर्भ में रहे हुए जीव का आहार क्या होता है? ऐसा प्रश्न-माता के शोणित के साथ माता के द्वारा भक्षित पदार्थ उसका आहार होता है, ऐसा उत्तर। गर्भगत जीव के मूत्र पुरीष (विष्टा) आदि होते हैं या नहीं? ऐसा प्रश्न-नहीं होते, ऐसा उत्तर। इसका क्या कारण है ऐसा पूछना-और आहार का अनेक रूप से परिणाम होता है? ऐसा उत्तर देना। गर्भमें रहा हुआ जीव क्या मुखसे खाता है ऐसा प्रश्न-मुखसे नहीं खाता है ऐसा उत्तर। इसमें क्या कारण है? ऐसा प्रश्न, वह सर्व शरीर से आहार करता है ऐसा कारणकथनरूप उत्तर। मातृजीवरसहारिणी और पुत्रजीवरस-हारिणी नाडियों का विचार, संतान के माता के अंग कितने होते हैं? ऐसा प्रश्न, तीन होते हैं, ऐसा उत्तर, माता से प्राप्त हुए अंग कितने काल-तक रहते हैं? ऐसा प्रश्न, मरण पर्यन्त रहते हैं, ऐसा उत्तर, गर्भ में स्थितमात्र जीव नरकमें जाता है या नहीं? ऐसा प्रश्न, जाता भी है और

કરે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો જીવ કયો આહાર લે છે? એવો પ્રશ્ન અને માતાના શોણિતની સાથે માતા વડે ભક્ષાયેલ પદાર્થોનો આહાર લે છે એવો ઉત્તર ગર્ભમાં રહેલો જીવ મળ મૂત્ર કરે છે કે નહીં? એવો પ્રશ્ન અને તેનો નકારમાં ઉત્તર, તેનું શું કારણ છે? એવો પ્રશ્ન અને આહાર અનેક રીતે પરિણમે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો જીવ શું મુખ વડે ખાય છે? એવો પ્રશ્ન અને નથી ખાતો એવો ઉત્તર, તેનું કારણ શું? એવો પ્રશ્ન અને તે સમસ્ત શરીર વડે આહાર કરે છે એવો ઉત્તર માતૃજીવરસહારિણી અને પુત્રજીવરસહારિણી નાડિયોનો વિચાર, સંતાનમાં માતાનાં કેટલાં અંગ હોય છે? એવો પ્રશ્ન, અને ત્રણ હોય છે એવો ઉત્તર માતાથી પ્રાપ્ત થયેલાં અંગો કેટલા કાળ સુધી રહે છે? એવો પ્રશ્ન-મરણ પર્યન્ત રહે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો જીવ નરકમાં જાય છે કે નહીં? એવો પ્રશ્ન-

। अथ सप्तमोद्देशकः प्रारभ्यते ।

सप्तमोद्देशके संक्षेपतो विचारणीया इमे विषयास्तथाहि–नारकादिजीवानामुत्पत्तिविचारः, तत्र चतुर्विंशतिदण्डकाः, नारकादीनामाहारविचारः, पुनश्चतुर्विंशतिदण्डकाः, नैरयिकोद्वर्त्तनविचारस्तत्रोपपन्नोदवृत्तविग्रहगतिसमापन्नाऽविग्रहगतिसमापन्नादिकथने चतुर्विंशतिदण्डकाः देवानां च्यवनं गर्भविचारः, गर्भे समुत्पद्यमाना जीवा इन्द्रियवन्तो न वेति विचारः, द्रव्येन्द्रियभावेन्द्रिययोः कथनम् , गर्भादुत्पद्यमानस्य शरीरं भवति न वेति विचारः, औदारिकवैक्रियाहारकतैजसकार्मणशरीराणां विचारः, गर्भे उत्पद्यमानो जीवः प्रथमतः कमाहारं गृह्णातीति प्रश्नः, शुक्रशोणि-

सातवां उद्देशक प्रारंभ—

अब सातवां उद्देशक प्रारंभ होता है। इसमें जो विचारणीय विषय हैं वे संक्षेप से इस प्रकार हैं–नारक आदि जीवों की उत्पत्ति का विचार, उसमें चौवीस दडक, नारक आदि जीवोंका आहारविषयक विचार, पुनः चौवीस दण्डकों का विचार, नैरयिक जीवों के उद्वर्त्तन का विचार उपपन्न (उत्पन्न होना), उद्वृत्त (निकलना), विग्रहगतिसमापन्न, अविग्रहगतिसमापन्न आदि कथन में चौवीस दण्डक, देवच्यवन और गर्भविचार, गर्भ में उपजते जीव इन्द्रियों से युक्त होते हैं या नहीं होते हैं? ऐसा विचार, द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय का कथन, गर्भ से उपजते हुए जीव के शरीर होना है या नहीं होता है, ऐसा विचार, औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण, इन शरीरों का विचार, गर्भ में उपजता हुआ जीव पहिले किस आहार को ग्रहण करता है? ऐसा

સાતમા ઉદ્દેશકની શરૂઆત

હવે સાતમો ઉદ્દેશક શરૂ થાય છે તેમા જે વિષયોનું નિરૂપણ કરાયું છે તે વિષયોને સક્ષેપમાં બતાવવામા આવે છે–નારકાદિ જીવોની ઉત્પત્તિનો વિચાર, તેમા ૨૪ દડક, નારકાદિ જીવોના આહારનો વિચાર, ફરીથી ૨૪ દંડકોનો વિચાર, નારક જીવોના ઉદ્વર્ત્તનનો વિચાર, ઉત્પન્ન (ઉત્પન્ન થવુ) ઉદ્વર્તન (નીકળવુ) વિગ્રહગતિ સમાપન્ન, અવિગ્રહગતિ સમાપન્ન, વગેરેના કથનમા ૨૪ દડક, દેવચ્યવન અને ગર્ભ વિચાર, ગર્ભમા ઉપજતા જીવો ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત હોય છે કે નથી હોતા તેનો વિચાર, દ્રવ્યેન્દ્રિય અને ભવેન્દ્રિયનું વર્ણન, ગર્ભથી ઉપજતા જીવોને શરીર હોય છે કે નહી, તેનો વિચાર, ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ, અને કાર્મણ, એ શરીરોનો વિચાર, ઉત્પન્ન થતો જીવ પહેલા કયો આહાર લે છે? તેવો પ્રશ્ન, અને શુક્ર શોણિત વગેરેનો તે આહાર

नाशनिरूपणे कृते नाशविरोधिन उत्पादस्य स्मरणसम्भवात् प्रसङ्गतस्तावत् नाशोत्पाद काल उत्पादस्य निरूपणमायातीति उत्पाद निरूपणाय सप्तमोद्देशकस्यारम्भः क्रियते। अथवा लोकस्थितिरिति षष्ठं पदमिदं, तदपि अवस्थितिविषय एव कथञ्चन इति एककार्यकारित्वरूपसंगत्या षष्ठोद्देशकानन्तरसप्तमोद्देशकस्य निरूपणं क्रियते। अथवा 'नेरइए' इति संग्रहगाथापदं व्याख्येयम्, तस्य विशेषणमवसरप्राप्तमिति अवसरसंगत्या षष्ठोद्देशकानन्तरं नैरयिकविषयस्य सप्तमोद्देशकस्य निरूपणं क्रियते, सम्पदमादिमं सूत्रम्—'नेरइए णं भंते' इत्यादि।

मूलम्—नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं उववज्जइ, देसेणं सव्वं उववज्जइ, सव्वेणं देसं उववज्जइ,

---

धर्म है। इस कारण नाश के निरूपण करने से नाश के विरोधी उत्पाद का स्मरण हो आना सहज होने से प्रसङ्ग से नाशोत्पादकाल में उत्पाद का निरूपण आता है। इसलिये उत्पाद निरूपणके लिये सातवें उद्देशक का आरंभ किया गया है अथवा लोककी स्थिति छट्ठे उद्देशक में कही गई है, यहां पर भी लोकस्थिति के विषय में ही कहा जा रहा है। सो इस निमित्त को लेकर एककार्यकारित्वरूप संगति के ध्यान में सूत्रकार छट्ठे उद्देशक के बाद सातवें उद्देशक का निरूपण कर रहे हैं। अथवा-"नेरइए" इस संग्रह गाथा में जो नारकपद कहा गया है उसका विशेषण अब अवसरप्राप्त है सो अवसरप्राप्त होने के कारण छठवें उद्देशक के बाद नैरयिक विषयवाले सातवें उद्देशक का सूत्रकार निरूपण कर रहे हैं। उसका सर्वप्रथम सूत्र यह है-"नेरइए णं भंते" इत्यादि।

ઉત્પાદ અને નાશ બન્ને પરસ્પર વિરોધી ધર્મો છે તેથી વિનાશનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેનાથી વિપરીત જેવા ઉત્પાદનું સ્મરણ થઈ આવે છે તે કારણે વિનાશ પછી ઉત્પાદનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે હવે ઉત્પાદનું નિરૂપણ કરવાના આશયથી સાતમાં ઉદ્દેશાની શરૂઆત કરવામાં આવી છે અથવા-છઠ્ઠા ઉદ્દેશામાં લોકની સ્થિતિનું વર્ણન કર્યું છે તે મુજબ અહીં પણ લોકસ્થિતિના વિષયમાં જ કથન ચાલી રહ્યું છે તો તે નિમિત્તને કારણે જેમ એકકાર્યકારિત્વરૂપ સંગતિને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર છઠ્ઠા ઉદ્દેશાની સમાપ્તિ કરીને હવે સાતમો ઉદ્દેશો શરૂ કર્યો છે અથવા ' नेरइए " આ સંગ્રહ ગાથામાં જે " નારક " પદ કહ્યું છે, તેનું વિશેષણ કરવાનો અવસર હવે આવી ગયો છે એમ સમજીને સૂત્ર છઠ્ઠા ઉદ્દેશાની પછી નારકિ વિષયવાળા સાતમાં ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરે છે તેનું સૌથી પહેલું સૂત્ર " नेरइए णं भंते ! " ઇત્યાદિ છે

जीवस्य शत्रुणा सह संग्रामकरणम्। गर्भस्थो जीवः किं देवो भवेदिति प्रश्नः, भवेन्न वा भवेदित्युत्तरम्। गर्भस्थितस्य धार्मिकप्रवचनादिश्रवणविचारः, जीवस्य गर्भनिवासप्रकारविचारः, मातुः सुखात्सुखी दुःखाद्दुखी भवति किमिति प्रश्नः, भवतीत्युत्तरम्, गर्भान्निःसरणकालिकशुभाशुभविचारः, उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति॥

अथ षष्ठमुद्देशकं निरूप्य तदनन्तरं सप्तमोद्देशकं निरूपयति, षष्ठसप्तमयोरयं संबन्धस्तथाहि-षष्ठोद्देशकस्यान्ते स्नेहकायः क्षिप्रमेव विनश्यतीति कथितम्, इह तु तादृशविनाशविपर्यय उत्पादः प्रतिपाद्यते, तत्र नाशोत्पादयोः परस्परं विरोधेन

नहीं भी जाता है, ऐसा उत्तर, इसमें कारण कथन, गर्भ में रहा हुआ जीवका शत्रुके साथ संग्राम करना, गर्भमें रहा हुआ जीव क्या देव होता है? ऐसा प्रश्न, हो भी सकता नहीं भी हो सकता है ऐसा उत्तर, गर्भस्थ जीवके धार्मिक प्रवचन आदिके सुननेका विचार, जीवके गर्भ निवासके प्रकार का विचार, माता के सुख से सुखी और माता के दुःख से दुःखी होता है? क्या ऐसा प्रश्न,-होता है, ऐसा उत्तर, गर्भसे निकलते समय का शुभाशुभ विचार, उद्देशक की समाप्ति॥

छट्ठे उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार इसके बाद सातवें उद्देशक का निरूपण करते हैं। इन दोनों का संबंध इस प्रकार से है-छट्ठे उद्देशक के अन्त में जो ऐसा कहा गया है कि स्नेहकाय जो सूक्ष्म होता है वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है सो इस उद्देशक में उसके उस विनाश से विपरीत जो उत्पाद है उसका कथन किया गया है। क्यों कि नाश और उत्पाद (उत्पन्न होना) ये दोनों आपस में विरोधी

જાય છે પણ ખરો અને નથી પણ જતો એવો ઉત્તર, અને ગર્ભમાં રહેલા જીવનો શત્રુની સાથે સંગ્રામ, વગેરે કારણોનુ વર્ણન ગર્ભમાં રહેલા જીવ શુ દેવ થાય છે? એવો પ્રશ્ન થાય પણ ખરો અને ન પણ થાય એવો ઉત્તર ગર્ભમાં રહેલ જીવનો ધાર્મિક પ્રવચન વગેરે શ્રવણ કરવાનો વિચાર, જીવના ગર્ભનિવાસના પ્રકારનો વિચાર, ગર્ભમાનો જીવ માતાના સુખથી સુખી અને માતાના દુ ખથી દુ.ખી થાય છે કે નહી ? એવો પ્રશ્ન-થાય છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાંથી બહાર આવવાના સમયનો શુભાશુભ વિચાર, ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ

છઠ્ઠા ઉદ્દેશાનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર સાતમાં ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરે છે તે બન્ને ઉદ્દેશાઓ વચ્ચે આ પ્રમાણે સબંધ છે- છઠ્ઠા ઉદ્દેશાને અંતે એવુ કહ્યુ છે કે સૂક્ષ્મ સ્નેહકાય શીઘ્ર (જલ્દીથી) નાશ પામે છે જ્યારે આ ઉદ્દેશામા વિનાશથી વિપરીત ઉત્[illegible] કરવામા આવ્યું છે. નાશ અને

सूपपन्न, नो देशेन सर्वमुपपन्न नो सर्वेण देशमुपपन्ने, सर्वेण सर्वमुपपन्ने, एवं नैरयिकः एवं यावद्वैमानिकः। नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषूपपद्यमानः किं देशेन देशमाहरति, देशेन सर्वमाहरति, सर्वेण देशमाहरति, सर्वेण सर्वमाहरति, गौतम ! नो देशेन देशमाहरति, नो देशेन सर्वमाहरति, सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एवं यावद्वैमानिकः। नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानः किं देशेन देशमुद्वर्तते, यथोपपद्यमानस्तथैवोद्वर्तमानेऽपि दण्डको भणितव्यः नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानः किं देशेन देशमाहरति यथैव यावत् सर्वेण वा सर्वमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एवं यावद्वैमानिकः, नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकोपपन्नः किं देशेन देशमुपपन्नः, एषोऽपि तथैव, यावत् सर्वेण सर्वमुपपन्नः। यथोपपद्यमाने उद्वर्तमाने च चत्वारो दण्डका तथोपपन्नेनोद्वर्तनापि चत्वारः दण्डका भणितव्याः, सर्वेण सर्वमुपपन्नः, सर्वेण सर्वमुद्वृत्तः, सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एतेनाभिलापेन, उपपातेऽपि, उद्वर्तनेऽपि ज्ञातव्यम्, नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषूपपद्यमानः किम् अर्द्धेन अर्द्धमुपपद्यते, अर्द्धेन सर्वमुपपद्यते, सर्वेणार्द्धमुपपद्यते, सर्वेण सर्वमुपपद्यते, यथा मायिमिथ्यादृष्टिनैरयिकाम्तथाऽर्द्धेनाप्यष्ट दण्डकाः भणितव्याः, नवरं यत्र देशेन देशमुपपद्यते, तत्रार्द्धेनार्द्धमुपपद्यते इति भणितव्यम्, एतज्ज्ञानात्तम्, एते सर्वेऽपि पञ्चदश दण्डका भणितव्याः ॥ सू० १ ॥

टीका—ननु 'नेरइए णं भंते नेरइएसु उववज्जमाणे' इति मूलसूत्रवाक्यं न युक्तियुक्तं भवितुमर्हति यतो यो जीव इदानीं नरकेनास्पन्न स कथं नैरयिक इति कथयितुं शक्यते, नरके तत्समुत्पन्नस्यैव नैरयिक इति कथने युक्ति युक्तं भवेद् न

टीकार्थ—शंका-"नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे" यह जो मूलसूत्र वाक्य है वह युक्तियुक्त नहीं मालूम पडता है। क्योंकि जो जीव इस समय में नरक में उत्पन्न नहीं हुआ है। वह कैसे नैरयिक कहा जा सकता है। नरक में जन्म लेने के बाद ही जीव नारक कहलाता है, और यही बात युक्तियुक्त प्रतीत होती है। इस के पहिले नारक कहने की बात युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होती है।

ટીકાર્થ—શંકા-"नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे" નારકોમાં ઉત્પન્ન થનારો નારક હજુ આ જે ભૂતસૂત્ર વાક્ય છે તે યુક્તિ યુક્ત લાગતું નથી કારણ કે જે હજુ વર્તમાન કાળે નરકમાં ઉત્પન્ન થયો નથી તેને નૈરયિક (નારક) કેવી રીતે કહી શકાય ? નરકમાં જન્મ લીધા પછી જ તેને નારકીનો હોદ્દો કહી શકાય તે પહેલા તેને નારકીનો હોદ્દો કહેવો તે યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી.

सव्वेणं सव्वं उववज्जइ?, गोयमा ! नो देसेणं देसं उववज्जइ, नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं देसं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ, जहा नेरइए एवं जाव वेमाणिए। नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ, गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए। नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं उव्वट्टइ४? जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो, नेरइएणं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ४? तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए, नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देसं उववन्ने४, एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्वं उववण्णे। जहा उववज्जमाणे, उव्वट्टमाणे य चत्तारि दंडगा तहा उववन्नेणं उववट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा, सव्वेणं सव्वं उववण्णे, सव्वेणं सव्वं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एएणं अभिलावेणं उववन्ने वि, उव्वट्टणे वि नेयव्वं, नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ, जहा पढमिल्लेणं अट्ठदंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठदंडगा भाणियव्वा, नवरं जहिं देसेणं देसं उववज्जइ तहिं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, इति भाणियव्वं, एयं णाणत्तं, एए सव्वेवि सोलसदंडगा भाणियव्वा ॥सू०१॥

छाया—नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषु उपपद्यमानः किं देशेन देशमुपपद्यते, देशेन सर्वमुपपद्यते, सर्वेण देशमुपपद्यते, [illegible]मुपपद्यते, गौतम! नो देशेन देश-

नैरयिको भदन्त नैरयिकेषु उपपद्यमानः 'किं देसेणं देसं उववज्जइ' किं देशेन देशमुपपद्यते जीवः स्वस्यैकदेशेन एकेनावयवेन नारकस्यैकदेशमाश्रित्य उत्पद्यते, किम् 'देसेणं सव्वं उववज्जइ' देशेन सर्वमुपपद्यते, देशेन स्वावयवेन सर्वं सर्वमाश्रित्य सर्वात्मना नारकावयविनमवयवत्वेन, उत्पद्यते ? अथवा किम् 'सव्वेणं देसं उववज्जइ' सर्वेण देशमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मना वर्त्त देशतो नारकावयवतयोत्पद्यते, अथवा किम्-'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मना सर्वं सर्वतो नारकावयविनया समुत्पद्यते ? अयमाशयः-नरके उत्पद्यमानो जीवः किम् स्वस्यैकदेशेन, नारकस्यैकदेशतयोत्पद्यते १, अथवा स्वस्यैकदेशेन नारकस्य सर्वावयवतया-उत्पद्यते २, अथवा सर्वावयवेन नारकस्यैकदेशतया समुत्पद्यते ३, अथवा स्वस्य सर्वावयवेन नारकस्य सर्वावयविनया समुत्पद्यते ४ इति चत्वारो

अब गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि (नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे) हे भदन्त! नरकों में उपजनेवाला-अभी उत्पन्न नहीं हुआ है। आगे उत्पन्न होनेवाला है, ऐसा नारक जीव (किं देसेणं देसं उववज्जइ) क्या अपने एक देश से-एक अवयव से-नारक के एक देश को आश्रित करके उत्पन्न होता है? (देसेणं सव्वं उववज्जइ?) या एक देश से सब को आश्रित करके-पूर्ण नारकरूप अवयवीपने से उत्पन्न होता है? अथवा (सव्वेणं देसं उववज्जइ) अपने समस्त अवयवों से नारक के अवयवरूप से उत्पन्न होता है? अथवा-(सव्वेणं सव्वं उववज्जइ) समस्त अवयवों से नारक के समस्त अवयव रूप से उत्पन्न होता है?। इसका यह आशय है कि-नरक में उत्पद्यमान जीव क्या अपने एक देश से नारक के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है, अथवा अपने एकदेश से नारक के सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है, अथवा अपने सर्वावयव से नारक के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है, अथवा कि अपने सर्वावयव से नारक के सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है?। इस तरह से चार विकल्प गौतमस्वामी के हैं-इसका उत्तर देते

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (નેરઇએ ણં ભંતે! નેરઇએસુ ઉવવજ્જમાણે) નારકોમા ઉત્પન્ન થનારો નારક જીવ (કિં દેસેણં દેસં ઉવવજ્જઇ) શું પોતાના એકદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, (દેસેણં સવ્વં ઉવવજ્જઇ?) પોતાના એક દેશથી નારકના સર્વ દેશ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે? કે (સવ્વેણં દેસં ઉવવજ્જઇ?) પોતાના સમસ્ત અવયવોથી નારકના એક અવયવ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે? કે સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઇ?) કે પોતાના સમસ્ત અવયવોથી નારકના સમસ્ત અવયવરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે? અહિં ચાર વિકલ્પો ગૌતમસ્વામીએ પૂછ્યા.

तु तत्पूर्वकाले ? इत्याशङ्कायामाह-वर्तमानभविष्यत्कालयोरभेदमुपचर्य्य उत्पद्यमानो जीव उत्पन्न इति कथ्यते, तथा नरके उत्पद्यमानो जीवः नरक इति संज्ञयापि संगतो भवितुमर्हति नरकत्व प्रायोग्यायुप उदयप्राप्तत्वादिति। अपि च यदा जीवस्यान्यस्यायुष्यकर्मणो नोदयोऽपि तु नारकायुष्कस्यैवोदयस्तथा यदि स नारक इति शब्देन न व्यवहियते तदा केन नामविशेषेण तस्य संकेतः करणीयः स्यादिति हेतुनाऽपि नरके उत्पद्यमानो जीवो नैरयिकशब्देन व्यवहियते। न तत्र काऽपि क्षतिरिति। गौतमः पृच्छति-'नेरइए णं भंते नेरइएसु उववज्जमाणे'

उत्तर वर्तमानकाल और भविष्यत्काल इन दोनों कालोंमें यहां अभेद का उपचार किया गया है। सो इन अभेद उपचार को लेकर नरकमें उत्पन्न होने के सन्मुख हुए जीवको नारक कह दिया गया है। तथा नरकमें जो उत्पन्न होने जा रहा है ऐसा जीव नारक इस नामसे भी कहा जाय तो कोई विरोध नहीं आता है क्योंकि उस समय उस जीवके नरकप्रायोग्य आयु का उदय हो जाता है। गति, आनुपूर्वी और आयु, इनका उदय एक साथ होता है। तथा-जब नरक गति में उपजने के लिये सन्मुख हुए जीव के तिर्यञ्चायु मनुष्यायु और देवायु, इनमें से किसी भी आयु का उदय नहीं होता है, एक नरकायुष्क का ही उदय होता है तो ऐसी स्थिति में वह नारक शब्द से नहीं कहा जायगा तो और किस शब्द से कहा जायगा, अतः नरक में उत्पद्यमान जीवका नैरयिक शब्द से ही व्यवहार होगा। इसी कारण यहां पर भी उसका नारक शब्दसे व्यवहार किया गया है। इस प्रकार के व्यवहार में सैद्धान्तिक कोई भी आपत्ति नहीं आती है।

સમાધાન—અહીં વર્તમાનકાળ અને ભવિષ્યકાળ, એ બન્ને કાળમાં અભેદનો ઉપચાર (આરોપણ) કરવામાં આવેલ છે તે અભેદ ઉપચારની અપેક્ષાએ નરકમાં ઉત્પન્ન થવાને સન્મુખ થયેલા જીવને નારક કહેવામાં આવ્યો છે નરકમાં જે ઉત્પન્ન થવાનો છે એવા જીવને નારક કહેવામાં કોઈ વાંધો જણાતો નથી કારણ કે તે સમયે જીવના નરક પ્રાયોગ્ય (યોગ્ય) આયુષ્યનો ઉદય થઈ ગયો હોય છે ગતિ, આનુપૂર્વી અને આયુષ્યનો ઉદય એક સાથે જ થાય છે વળી નરકગતિમાં ઉપજવાને સન્મુખ થયેલા જીવના તિર્યંચાયુ, મનુષ્યાયુ અને દેવ આયુ, એ ત્રણેમાંથી એક પણ આયુનો ઉદય હોતો નથી ફક્ત નરકાયુનો જ ઉદય હોય છે તો એવી સ્થિતિમા તેને "નારક" ન કહી શકાય તો બીજુ શું કહી શકાય ? તેથી નારકમાં ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થવાને સન્મુખ થયેલા) જીવને માટે "નારક" શબ્દનો જ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. આમ કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારનો સૈદ્ધાન્તિક વાંધો નથી.

जायते, सम्पूर्णरूपेण दुग्धं सम्पूर्णदधिरूपतयैव परिणमते न तु दुग्धस्यैकदेशेन दध्न एकदेशो भवति, पटो वा तन्तुना पटाप्रतिबद्धपटप्रदेशः। यथा पटदेश सूत्रेण तन्तुना पटाप्रतिबद्धः पटदेशो न निष्पद्यते, तथैव पूर्वतिर्यगादिषु

क्यों कि कारणसे अर्थात् अपने एक अंशसे अपने कार्यके एक अंशरूपमें उत्पन्न नहीं होता, इसका अभिप्राय ऐसा है कि जो परिणामी कारण होता है उसके एक अवयव से कार्य के एक अवयव की उत्पत्ति स्वीकृत नहीं की गई है, क्यों कि जो परिणामी कारण होता है-अर्थात् उपादान कारण होता है-वह अपने सर्वरूप से ही कार्य के आकार में परिणम जाता है। ऐसा नहीं है कि उसके एकदेश से उसके कार्य का एकदेश निष्पन्न होता हो। जैसे दही का उपादान कारण दूध है जो वह उपादान कारणरूप दूध अपने समस्त अवयवों से ही संपूर्ण दधिरूप में परिणमता है। ऐसा नहीं है कि उस दूध के एकदेश से दही का एक देश निष्पन्न होता हो। तात्पर्य कहने का यह है कि जो उपादान कारण होता है वह नियम से अपने सम्पूर्णरूप से अपने कार्यरूप में बदल जाता है। उपादान की उपादानता केवल यही तो है कि जो वह अपने आप को समस्तरूप में कार्यरूप में परिणमा देता है। दही का उपादान कारण दूध अपने समस्त निजरूप को दहीरूप में बना देता है। जैसे-वस्त्र के एकदेशभूत तन्तुसे पटाप्रतिबद्ध पटप्रदेश उत्पन्न नहीं होता है। उसी तरह पूर्वतिर्यगादि-अवयवों में प्रतिबद्ध रहते हुए जीव के एकदेश से उत्तरावयवीरूप नारकका एकदेश निष्पन्न नहीं हो सकता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि आतानवितानतन्तुभूत तंतु ओंसे (ताना बाना किये हुए) बनते हुए वस्त्र के उपादान कारण वे तंतु होते हैं, और वह वस्त्र उनका कार्य होता है। अब यहांपर यह विचारना चाहिये कि उन तंतुओंसे जो वस्त्रका

આવેલ છે એમ કે દહીનું ઉપાદાન કારણ દૂધ છે તે ઉપાદાન કારણ રૂપ દૂધ પોતાના તમામ અંશોથી તમામ અંશો સહિત દહી રૂપે પરિણમે છે એવું નથી કેમકે દૂધના એકદેશથી દહીનો એકદેશ બને. ઉપાદાન કારણની બહેનપ એજ છે કે તે પોતાને સમસ્ત રૂપે જ કાર્ય રૂપે પરિણમાવે છે એમ વસ્ત્રના એકદેશરૂપ તંતુથી (તાંતણાથી) આખુ વસ્ત્ર તૈયાર થતું નથી એવી જ રીતે પૂર્વની તિર્યંચ વગેરે યોનિના જીવોના એકદેશ (અવયવ)થી નારકનો એકદેશ (અવયવ) નિષ્પન્ન થતો નથી. તાત્પર્ય એ છે કે તાણાવાણાવાળાથી બનતા વસ્ત્રના ઉપાદાન કારણરૂપ તંતુઓ છે અને વસ્ત્ર તેમનું કાર્ય છે હવે તંતુઓના એકદેશથી વસ્ત્રનું નિર્માણ થતું નથી, એટલું જ નહીં પણ તંતુઓના

विकल्पाः प्रश्नकर्तुरिति। भगवानाह—'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'नो देसेणं देसं उववज्जइ' नो देशेन देशमुपपद्यते, यतः-परिणामिकारणस्यैकेनावयवेन कार्यावयवस्योत्पत्तेरनभ्युपगम एव भवति, यत् परिणामि कारणं तत्सर्वरूपतयैव कार्याकारेण परिणमते न तु एकदेशतः कार्यस्य एकदेशो

हुए प्रभु कहते हैं-(गोयमा? नो देसेणं देसं उववज्जइ, नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं देसं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ) हे गौतम! उत्पद्यमान नारकजीव अपने एकदेश से न तो नारकजीव के एकदेश रूप से उत्पन्न होता है, न वह अपने एकदेश से नारक जीवके सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है और न वह अपने समस्त अवयवों से नारकजीव के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है किन्तु वह अपने समस्त अवयवों से नारक जीव के समस्त अवयवरूप से ही उत्पन्न होता है। इन चार प्रश्नों का भावार्थ ऐसा है कि कोई नया जीव जो नरकों में नारकजीव की पर्याय से उत्पन्न होने वाला होता है उसके विषय में गौतमस्वामी ने प्रभु से ऐसा पूछा है कि वह जीव अपने किसी एक अंश से उस पर्याय के एक अंश में उत्पन्न होता है, या उसके समस्त अंश में उत्पन्न होता है, या अपने समस्त अंश से उस पर्याय के एक अंश से उत्पन्न होता है या समस्त अंश में उत्पन्न होता है। इनमें पहिले के तीन प्रश्नों को अमान्य बताकर चौथे प्रश्न को स्वीकार करते हुए प्रभु ने गौतम को समझाया कि हे गौतम! जो नया जीव नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न होता है वह वहां अपने समस्त अंशों से उस विवक्षित पर्यायके समस्त अंशोंमें अर्थात् उसी पूर्ण अवयवीरूपमें उत्पन्न होता है।

ભગવાન કહે છે-(गोयमा! नो देसेण देसं उववज्जइ, नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेण देसं उववज्जइ, सव्वेण सव्वं उववज्जइ) હે ગૌતમ! નારકોમાં ઉત્પન્ન થતો જીવ પોતાના એકદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે ઉત્પન્ન થતો નથી, તથા પોતાના એકદેશથી નારકના સર્વદેશ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમજ પોતાના સર્વદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, પરંતુ તે પોતાના સર્વદેશથી નારકના સર્વદેશ રૂપે જ ઉત્પન્ન થાય છે

ઉપરના ચાર પ્રશ્નોમાથી ત્રણ પ્રશ્નોના જવાબ નકારમા અને ચોથા પ્રશ્નનો જવાબ હકારમા આપતા મહાવીર પ્રભુએ કહ્યુ કે હે ગૌતમ! જે નવો જીવ નરકગતિમા ઉત્પન્ન થાય છે તે પોતાના તમામ અશોથી નરકગતિમા તમામ અશો સાથે-પૂર્ણ અવયવી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે પરિણામી કારણ એક અશથી પોતાના કાર્યના એક અશ રૂપે ઉત્પન્ન થતું નથી તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પરિણામી કારણ એટલે કે ઉપાદાન કારણ હોય છે તેના એક અવયવથી કાર્યના એક અવયવની ઉત્પત્તિ સ્વીકારવામા આવી નથી પરંતુ તેના સર્વ અવયવોથી જ કાર્યના સર્વ અવયવોની ઉત્પત્તિ સ્વીકારવામા

नोपपद्यते सम्पूर्णपरिणामिकारणत्वात् समस्तघटकारणैर्घटैकदेशवत्, यथा मृत्पिण्डरूपपरिणामिकारणं न देशतया घटमुत्पादयति, तद्वत् प्रकृते सम्पूर्णो जीवोऽपि यदः नारकादिस्वरूपैकदेशं नोत्पादयितुं समर्थः परिणामिकारणस्य सर्वात्मनैव परिणामस्य कार्याकारेण दर्शनात् २। किन्तु 'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मपदेन सर्वम् सम्पूर्णोऽवयवी उत्पद्यते पूर्णकारणसमवायात् घटादिवत्, यथा घटसमवायिकारणभूता मृत्पिण्डा सर्वरूपेण सर्वात्मना सम्पूर्णघटरूपेण परिणमति तद्वत् प्रकृतेऽपि जीव सर्वावयवेन नारकादिसर्वावयवतया समुत्पद्यते इति, अस्यैव एष पक्षस्तीर्थकरस्याभिमत इति। 'अहा नेरइए

इसका भाव यह है कि यह उत्पद्यमान नारकजीव अपने पूर्ण अंशों से नारक पर्याय के एक अंशरूप में उत्पन्न नहीं होता है। जैसे समस्त घट के कारणों से घट का एकदेश उत्पन्न नहीं होता है, जिस प्रकार मृत्पिंडरूप परिणामिकारण घटका उत्पाद एकदेश से नहीं करता है। उसी प्रकार यहां पर भी सपूर्ण जीवावयव नारकादिरूप के एकदेश को उत्पन्न नहीं कर सकते हैं, क्यों कि जो परिणामी कारण होता है वह अपने समस्तरूप से ही अपने कार्य के आकार से देखा जाता है। "सव्वेणं सव्वं उववज्जइ" ऐसा जो कहा गया है—सो उसका तात्पर्य यह है कि उत्पद्यमान नारकजीव अपने समस्त अवयवों द्वारा संपूर्ण अवयवीरूप से उत्पन्न होता है, पूर्णकारणकलाप के मिलजाने से जैसे घट उत्पन्न हो जाता है। तात्पर्य यह है कि जैसे घट की समवायीकारण—उपादानकारण मृत्पिंडा सर्वरूप से संपूर्ण घटरूप में परिणम जाती है। उसी तरह यहां पर भी उत्पद्यमान नारकजीव अपने समस्त अवयवों द्वारा नारकजीवरूप पूर्ण पर्याय में बदल जाता है। ऐसा यह

આ પ્રમાણે છે—જેમ પદાર્થનાં સંપૂર્ણ કારણોથી ઘટનો એકદેશ તૈયાર થતો નથી. જેમ માટીરૂપ ઉપાદાન કારણ એક ભાગ રૂપે ઘટનું નિર્માણ કરતું નથી. જેમ પ્રમાણે ઉત્પન્ન પોતાના સંપૂર્ણ અવયવો નારકાદિ રૂપના એક દેશને ઉત્પન્ન કરી શકતા નથી. કારણ કે જે પરિણામી કારણ હોય છે તે પોતાના સમસ્ત રૂપથી જ કાર્યના રૂપે પરિણમતું જોવામા આવે છે 'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ" એ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારકજીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે જ સંપૂર્ણ અવયવી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે પૂર્ણકારણ કલાપ મળવાથી જ ઘટની ઉત્પત્તિ થાય છે—બનેલું છે કે ઘડાનું ઉપાદાન કારણ માટી છે તે માટી સમસ્તરૂપે સંપૂર્ણ ઘટના રૂપે જેમ પરિણમે છે તેમ ઉત્પન્ન થનાર નારક જીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે નારક જીવ રૂપ સમસ્ત પર્યાયમાં બદલાય છે આ પ્રમાણે [illegible] તીર્થંકર દેવે સ્વીકાર કર્યો [illegible] જાણવા

प्रतिबद्धेन जीवस्यैकदेशेनोत्तरावयविनारकदेशो न निर्वर्त्तयितुं शक्यते इति १। तथा-'नो देसेणं सव्वं उववज्जइ' नो देशेन सर्वमुपपद्यते, न देशेनावयवेन सर्वम् सर्वतयोत्पद्यते अपरिपूर्णकारणत्वात् तन्तुना पट इवेति२। तथा-'नो सव्वेणं देसं उववज्जइ' नो सर्वेण देशम् उपपद्यते, सर्वेण देशं देशतया अवयवतयापि

निर्माण होता है वह उन तंतुओं के एकदेश से नहीं होता है, और न वस्त्र का भी एकदेश उन के एकदेश से तैयार होता है। किन्तु समस्त तंतुओंसे ही समस्त वस्त्र का निर्माण किया जाता है। अवयवी का एकदेश पूर्ण अवयवी नहीं कहलाता। पट का ऐसा कोई सा भी भाग तंतुओं के एकदेश से तैयार नहीं होता है, जो पट से जुदा हो। उपादान कारण अपने कार्य के साथ जुड़ा हुआ होता है-अर्थात्-अपने आप को वह कार्यरूप में परिणमा देता है। तब उसका कोई सा भी ऐसा भाग नहीं होता है, जो अपने कार्य के एकदेश को उत्पन्न करे, किन्तु पूर्ण उपादान ही अपने पूर्ण कार्य को निष्पन्न करता है, अतः जब यह सिद्धान्त निश्चित है तो फिर यह कैसे माना जा सकता है कि उत्पद्यमान नारकजीव अपने एकदेश से ही नारकजीव की पर्याय के एकदेश में उत्पन्न होता है। तथा-"नो देसेणं सव्वं उववज्जइ" इस का भाव यह है। कि वह उत्पद्यमान नारकजीव अपने एकदेश से पूर्णनारकरूप पर्याय में उत्पन्न नहीं होता है जैसे एक तन्तु से पूरा पट उत्पन्न नहीं होता है। तथा-"नो सव्वेणं देसं उववज्जइ"

એકદેશથી વસ્ત્રના એકદેશનુ નિર્માણ થતું નથી માટે કહ્યુ છે કે-"नो देसेण देसं उवज्जइ" પરતુ બધા તતુઓ વડે જ સંપૂર્ણ વસ્ત્રનું નિર્માણ થાય છે. અવયવીના એકદેશને પૂર્ણ અવયવી કહેવાતો નથી. વસ્ત્રનો એવો કોઈ પણ ભાગ તતુઓના એકદેશથી-એક ભાગથી તૈયાર થતો નથી કે જે વસ્ત્રથી જુદો હોય. ઉપાદાન કારણ પોતાના કાર્ય સાથે જોડાયેલુ જ હોય છે-એટલે કે પોતાને જ તે કાર્યરૂપે પરિણમાવે છે તેથી તેનો કોઇપણ ભાગ એવો હોતો નથી કે જે પોતાના કાર્યના એકભાગને ઉત્પન્ન કરતો હોય, પણ પૂર્ણ ઉપાદાનજ તેના પૂર્ણ કાર્યનું નિર્માણ કરે છે. આ પ્રકારનો સિદ્ધાંત નિશ્ચિત હોવાથી ઉત્પદ્યમાન નારકજીવ પોતાના એકદેશથી નારક જીવની પર્યાયના એકદેશરૂપે ઉત્પન્ન થતો નથી તથા "नो देसेणं सव्व उववज्जइ" નો ભાવાર્થ એવો છે કે જેવી રીતે એક તંતુમાંથી પૂરૂ વસ્ત્ર તૈયાર થતું નથી એવી જ રીતે ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારક જીવ એકદેશથી પૂર્ણ નારક રૂપ પર્યાયમા ઉત્પન્ન થતો નથી. ત" -" तो सव्वेणं देसं उववज्जइ' નો ભાવાર્થ

एवं जाव वेमाणिए' यथा नैरयिक एव यावद्वैमानिक, उत्पत्तिविषये यथा नैरयिकविषये विचार कृतस्तद्वदसुरकुमारादारभ्य वैमानिकपर्यन्तत्रयोविंशति दण्डकविषयेपि विचारो विधेय इति। उत्पन्नानन्तरमाहारस्यावश्यकता मतस्तत आहारसूत्रमाह-' नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे ' नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषूपपद्यमानः, ' किं देसेणं देसं आहारेइ ' किं देशेन देशमाहरति, देशेनात्मप्रदेशेन देशम् अन्यतरस्य द्रव्यस्य मदेशमेकादिप्रदेशमेवाहरति आहारं करोति माहरणीयद्रव्यस्यैकदेशमेकादिप्रदेशमेव स्वात्मप्रदेशेन गृह्णाति किम्? इति प्रथमो भङ्गः १। किंवा 'देसेणं सव्वं आहारेइ' देशेन सर्वमाहरति, जीवः स्वस्यैकादिप्रदेशेनाहरणीयं द्रव्यस्य सर्वानेवाप्रदेशान् आहरति इति द्वितीयो भङ्गः २। किम् 'सव्वेणं देसं आहारेइ' सर्वेण देशमाहरति, जीवः स्वस्य सर्वात्मप्रदेशेनाहरणीयद्रव्यस्यैकदेशमाहरतीति तृतीयो भङ्गः ३। 'सव्वेणं सव्वं आहारेइ' सर्वेण सर्वमाहरति, जीवः सर्वात्मप्रदेशेन सर्वात्मना आहारणीयद्रव्यस्य सर्वानेवाप्रदेशान् आहरति किम्,

(जहा नेरइए, एवं जाव वेमाणिए) उत्पत्ति के विषय में जैसा यह विचार नैरयिक विषयमें किया गया है वैसा ही विचार असुरकुमारसे लेकर वैमानिक तक जो २३ तेईस दण्डक हैं उनमें भी करलेना चाहिये। उत्पत्ति के बाद आहारकी आवश्यकता होती है इसलिये सूत्रकार आहार संबंधी सूत्र कहते हैं-(नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) हे भदन्त ! नैरयिक पर्याय में उत्पद्यमान नैरयिक जीव क्या एकदेश से एकभाग को आश्रय कर आहार करता है ? या एकदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है ? या सर्वदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार करता है ? या सर्वदेश से सर्वदेश का

(जहा नेरइए, एवं जाव वेमाणिए) ઉત્પત્તિના વિષયમાં જેવું કથન નારકોના વિષયમાં કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અસુરકુમારોથી લઈને વૈમાનિકો સુધીના ૨૩ ત્રેવીસ વિષયમાં પણ સમજવું ઉત્પત્તિ બાદ પછી આહારની આવશ્યકતા રહે છે તેથી હવે સૂત્રકાર આહાર સંબંધી સૂત્રોનું કથન કરે છે-

(नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ?) હે ભદન્ત ! નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થનાર જીવ શું એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે ? અથવા એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત દેશોનો આહાર કરે છે ? અથવા સમસ્ત દેશથી તેના એકદેશનો આહાર કરે છે ? અથવા સમસ્ત દેશથી આહાર કરવાયોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત દેશોનો આહાર કરે છે ?

चौथा पक्ष ही तीर्थंकर प्रभु को मान्य है, शेष ३ तीन नहीं। इस सब कथन का सारांश ऐसा है कि यदि कोई जीव नारकपर्याय में उत्पन्न होनेवाला है तो वह वहां इस रूप से उत्पन्न नहीं होगा कि उसके एक प्रदेश को छोडकर बाकी के प्रदेश तो पूर्व पर्याय में प्रतिबद्ध रहे और अपने एक प्रदेश से वह नारक पर्याय के एकदेश से अथवा सर्वदेश से नरक में उत्पन्न हो जाय। इसी तरह वह इस रूप से भी वहां उत्पन्न नहीं होगा कि वह अपने समस्त प्रदेशों को यहां लेकर अर्थात् पूर्वपर्याय से मरकर नरक में नारक जीव की पर्याय के एक अंश से जन्म ले, सम्पूर्ण अंश से जन्म न ले, अर्थात् वह संपूर्ण अंश में नारक न बने किन्तु एक ही अंशमें नारक बनें। सिद्धान्त क्या है सो यही बात अंतिम चतुर्थ प्रश्न से प्रकट की गई है-कि पूर्वपर्याय को छोड़कर जो जीव नरकादि गतियों में तत्तत्पर्याय में उत्पन्न होता है वह उस पर्याय में अपने समस्त प्रदेशों से ही पूर्णरूप में उत्पन्न होता है, क्यों कि-वह विवक्षित पर्याय उस पूर्वपर्यायगत जीव का कार्य है, इसलिये वह उस पर्याय का उपादान कारण है। और यह बात अभी २ प्रकट ही कर दी गई है कि जो जिस पर्याय का उपादान कारण होता है वह सम्पूर्ण रूप से ही अपने को उस समस्त पर्यायरूप में ही परिणमा देता है, अतः यही सिद्ध हुआ कि उत्पद्यमान नारक नरकमें संपूर्ण रूप से ही उस समस्त विवक्षित पर्याय में उत्पन्न होता है।

ત્રણ પક્ષનો અસ્વીકાર કર્યો છે ઉપરના કથનનો સારાશ એ છે કે નારક પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થનારો કોઇ જીવ એવી રીતે ઉત્પન્ન નહીં થાય કે તેના એક પ્રદેશ (અવયવ) સિવાયના બાકીના પ્રદેશો તો પૂર્વ પર્યાયરૂપે જ પ્રતિબદ્ધ (બંધાયલા) રહે અને માત્ર એક પ્રદેશથી જ તે નારક પર્યાયના એક દેશ રૂપે કે સર્વદેશ રૂપે નારકમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય પરંતુ એવુ બનતું નથી એટલે કે પૂર્વપર્યાયમાથી મરીને નરકમા નારક જીવની પર્યાયના એક અંશે ઉત્પન્ન થાય એવું પણ બનતું નથી. ચોથા પ્રશ્નના જવાબમા કર્યો સિદ્ધાંત છે તે પૂર્વે બતાવ્યું છે કે પૂર્વ પર્યાયને છોડીને જે જીવ નરકાદિ ગતિયોમા ઉત્પન્ન થાય છે તે જીવ તે પર્યાયમા પોતાના સમસ્ત પ્રદેશોથી જ પૂર્ણરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે તે પૂર્વપર્યાયગત જીવનું કાર્ય છે તેથી તે જીવ તે પર્યાયનું ઉપાદાન કારણ છે અને એ વાતનું અમે આગળ પ્રતિપાદન કરી ગયા છીએ કે જે કાર્યનુ જે ઉપાદાન કારણ હોય છે તે ઉપાદાન કારણ સંપૂર્ણ રીતે જ કાર્ય રૂપે પરિણમે છે, આ રીતે ઉત્પદ્યમાન નારક જીવ નરકમા સંપૂર્ણ અવયવોથી જ સંપૂર્ણ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે.

पर्यों को ग्रहण करता है क्या ? अथवा-वह जीव अपने समस्त अवयवों से आहरणीय द्रव्य के एकदेश को ग्रहण करता है क्या ? अथवा-वह जीव समस्त अपने प्रदेशों में आहरणीय द्रव्य के समस्त प्रदेशों को ग्रहण करता है क्या ? इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभु जो गौतम स्वामी से कहते हैं कि हे गौतम ! प्रथम के जो दो प्रश्न हैं, वे असान्य हैं। अर्थात् वह जीव अपने एक देश से आहरणीय द्रव्य के एक देश को आहार करने के लिये ग्रहण नहीं करता है और न अपने एक ही देश से आहार करने योग्य द्रव्य के आहार करने के लिये समस्त अवयवों को ग्रहण करता है, किन्तु या तो वह अपने समस्त प्रदेशों से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश को आहार करने के निमित्त ग्रहण करता है या अपने समस्त अवयवों द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के समस्त अवयवों को आहार करने के लिये ग्रहण करता है। वह जीव जो अपने समस्त प्रदेशों-अवयवों द्वारा आहरणीय द्रव्य के एक देश को अर्थात् एक भाग को आहार करने के निमित्त ग्रहण करता है तो इसका आशय इस प्रकार से है कि वह जीव उत्पत्ति के बाद तुरत ही अपने समस्त प्रदेशों द्वारा आहरणीय द्रव्य के-आहार करने योग्य द्रव्य के-पुद्गलों को ग्रहण करता है। इनमें से वह कितनेक पुद्गलों का तो

અવયવોને ગ્રહણ કરે છે ? અથવા તે નારક જીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગ (દેશ)ને ગ્રહણ કરે છે ? કે તે જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો દ્વારા આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત પ્રદેશોને ગ્રહણ કરે છે ? આ ચાર પ્રશ્નોના જવાબમાં ભગવાને જણાવ્યું કે પ્રશ્નોના જવાબ નારકો આપ્યા છે એટલે કે તે નારક જીવ પોતાના એકદેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશને ગ્રહણ કરતો નથી, અને પોતાના એક જ દેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત પ્રદેશોને પણ તે આહાર માટે ગ્રહણ કરતો નથી. બીજા અને ચોથા પ્રશ્નોનો જવાબ દર્શાવ્યો છે એટલે કે તે નારક જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય પદાર્થના એકદેશને પણ ગ્રહણ કરે છે, અને પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત અવયવોને પણ આહાર કરવા માટે ગ્રહણ કરે છે તે નારક જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો (અવયવો) વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશ (ભાગ) ને આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે એનું જે કારણ અહીં આપ્યું છે તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે-તે નારક જીવ નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થયા પછી તરત જ પોતાના તમામ અવયવો વડે આહાર કરવા યોગ્ય પદાર્થના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે તેમાનાં

इति चतुर्थो भङ्गः ४ । भगवानाह—' गोयमे '-त्यादि, ' गोयमा ' हे गौतम ! नो देसेणं देसं आहारेइ ' नो देशेन देशमाहरति, जीवः स्वस्यैकदेशेन अवयवेनाहरणीयद्रव्यस्य देशमेकावयवं नाहरति १ । 'नो देसेणं सव्वं आहारेइ' नो देशेन सर्वमाहरति २ । एतौ द्वौ भङ्गौ निषिद्धौ । अथ-स्वीकृतभङ्गौ प्रदर्शयति-'सव्वेणं वा देसं आहारेइ ' सर्वेण वा देशमाहरति, जीवः स्वकीयसर्वावयवेनाहरणीयद्रव्यस्यैकदेशमाहरति, अयमाशयः-जीवः स्वकीय सर्वप्रदेशैराहरणीयद्रव्यस्यैकभागमाहरति, यतः उत्पत्त्यनन्तरं तत्काले एव जीवः स्वकीयसर्वप्रदेशैरा-

---

आश्रय कर आहार करता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्व अहारेइ) वह एकदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार नहीं करता है और न एकदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है । किन्तु सर्वदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार करता है तथा सर्वदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है । " देसेणं देसं आहारेइ " का तात्पर्य पूछने वाले का ऐसा है कि नैरयिकों में उत्पद्यमान नैरयिक जो आहार करता है, सो क्या वह अपने एक प्रदेश से खाने योग्य द्रव्य के एक प्रदेश का-एक अवयव का ही आहार करता है ? अर्थात् आहार करने के लिये आहार करने योग्य द्रव्य के एक देश रूप अवयव को ही अपने एक अवयव से ग्रहण करता है क्या ? अथवा वह जीव अपने ही एक अवयव से आहरणीय द्रव्य के समस्त अव-

---

ભગવાન કહે છે-(गोयमा) હે ગૌતમ ! (नो देसेणं देस आहारेइ, नो देसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ) તે એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરતો નથી, તે એકદેશથી સમસ્ત દેશનો આહાર કરતો નથી, પરંતુ સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે તથા સર્વદેશથી સમસ્ત દેશનો આહાર પણ કરે છે, હવે આ સૂત્રોનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે-" देसेणं देसं आहारेइ" આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નારક જીવ જે આહાર કરે છે તે શું પોતાના એક પ્રદેશથી આહારને યોગ્ય પદાર્થના એક પ્રદેશનો જ આહાર કરે છે ? એટલે કે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક દેશરૂપ અવયવને જ પોતાના એક અવયવ વડે આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે ? કે તે નારક જીવ પોતાના એક વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત

तत्पूरणाय सर्वतः प्रथमं पतितम् यत्पूर्णं तत् यथा तैलादेः सर्वांशेन भागान् स्वकीयसर्वभागेन गृह्णाति, तथा जीवोऽपि स्वकीयसर्वप्रदेशैराहरणीयद्रव्यपुद्गलस्य सर्वानेवावयवान् आहरति, अत एवोक्तम्-'सव्वेणं सव्व आहारेइ' एतावता आहारविषये चतुर्थभङ्गोऽपि स्वीकृत एव, ततश्च प्रथमद्वितीयपक्षौ निराकृत्य तृतीयचतुर्थपक्षौ स्वीकारकृताविति । अथोत्पादविपक्षभूतत्वात् वर्तमाननिर्देशसादृश्यात्तयोरुद्वर्तनासूत्रमाह-'नेरइए णं भंते' इत्यादि । 'नेरइए णं भंते' नैरयिकः खलु भदन्त ! 'नेरइयहिंतो उव्वट्टमाणे' नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानः, किं देसेणं देसं उव्वट्टइ' किं देशेन देशमुद्वर्तते, जीवः नरकादुद्वर्तमानः निस्सरन् किं स्वस्यैकदेशेन एकावयवेन देशम् उत्पत्तिस्थानस्यैकदेशमाश्रित्य, नारकावयवत्वेनो-

---

ફરવાને સર્વપ્રથમ ચાલ્યા થયા પહેલે પુઆ (પુડલા) વગેરેના સમસ્ત ભાગોને પોતાના સમસ્ત ભાગો વડે ગ્રહણ કરે છે તેવી રીતે જીવ પણ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્ય પુદ્ગલના સમસ્ત અવયવોને પોતાના આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે તેથીજ કહ્યું છે કે "सव्वेणं सव्व आहारेइ" તેમના આ કથન વડે આહારના વિષયમાં સૂત્રકારે ચોથા ભાંગાનો પણ સ્વીકાર કર્યો છે, એ વાત સ્પષ્ટ રીતે સમજી શકાય છે આ રીતે ચાર ભાંગાઓના પહેલા અને બીજા ભાંગાનો અસ્વીકાર કરીને ત્રીજા અને ચોથા ભાંગાનો સૂત્રકારે સ્વીકાર કર્યો છે હવે ઉત્પાદથી વિપરીત જેવી ઉદ્વર્તનાના વિષયનું સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે-' नेरइए णं भंते ! " હે ભગવન્! નારક રૂપ "नेरइयहिंतो उव्वट्टमाणे" નારકોમાંથી ઉદ્વર્તિત થતો પોતાને નીકળતી વખતે " किं देसेणं देसं उव्वट्टइ ? " શું પોતાના એકદેશથી-એક અવયવથી-ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને

हरणीयद्रव्यस्य पुद्गलानाहरति, तत्र कियन्तो भागा आह्रियमाणा भवन्ति, कियन्तश्चानाह्रियमाणा एव तिष्ठन्ति । यथाऽतितप्तकटाहे तैलघृतादिपूरिते पतितमपूपं, तैलादेः कियन्तो भागान आददाति अवशिष्टांश्च भागान् नाददाति, तथैव जीव आहरणीयद्रव्यस्य कियद्भागमाहरति कियद्भागांश्च परित्यजति, अत एवोक्तं सूत्रकृता सर्वेण देशमाहरतीति । एतावता तृतीयभङ्गस्याहारविषये स्वीकारः कृतः ३ । ' सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ ' सर्वेण वा सर्वमाहरति, जीवः स्वकीयसर्वभागैराहरणीयद्रव्यस्य सर्वानेव भागानाहरति, जीवः स्वोत्पत्ति समये एव सर्वात्मप्रदेशैः सर्वानेवाहारपुद्गलान् आहरति, प्रथमतो घृतादिपूरितातितप्तकटाहादिपतितप्राथमिकापूपवत्, यथा परिमितघृतप्रपूरिताति-

---

आहार करता है और कितनेक पुद्गलों को वैसे ही छोड़ देता है। जैसे-तैल अथवा घृत आदि से भरे हुए ऐसे अत्यंत संतप्त कडाई में प्रक्षिप्त पुआ (पुड़ला) घृतादिक के कितनेक भागों को ग्रहण कर लेता है और बाकी के भागों को छोड़ देता है-ग्रहण नहीं करता हैं। इसी तरह वह जीव आहरणीय द्रव्य के कितनेक भागों को आहार के काम में ले लेता है और कितनेक भागों को छोड़ देता है-आहार के काम में नहीं लेता है। इसीलिये सूत्रकार ने " सर्वेण देशमाहरति " ऐसा कहा है। इस कथन से " उन्होंने आहार के विषय में तृतीय भंग-विकल्प स्वीकार किया है " यह प्रमाणित होता है। " सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ " अथवा वह जीव समस्त अपने प्रदेशों द्वारा समस्त आहरणीय द्रव्य को आहार के निमित्त ग्रहण करता है सो इसका अभिप्राय ऐसा है कि जीव अपनी उत्पत्ति के समय में ही समस्त आत्मप्रदेशों से समस्त आहार पुद्गलों को ग्रहण करता है। जैसे- घृतादि से भरे हुए अत्यंत तप्त

કેટલાક પુદ્ગલોનો તો તે આહાર કરે છે પણ કેટલાક પુદ્ગલોને તે એમ ને એમ છોડી દે છે જેવી રીતે ઉકળતા ઘી તેલ વગેરેના તાવડામાં નાખેલ માલપૂવા ઘી તેલ વગેરેના અમુક ભાગોને જ ગ્રહણ કરે છે અને અમુક ભાગોને છોડી દે છે, અર્થાત્ ગ્રહણ કરતા નથી, એજ પ્રમાણે નારક જીવો પણ આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના કેટલાક ભાગોને આહારના કામમા લે છે અને કેટલાક ભાગોને આહારના કામમાં લેતો નથી-છોડી દે છે એજ કારણે સૂત્રકારે કહ્યુ છે કે "सव्वेणं वा देस आहारेइ " આ કથન વડે તેમણે આહારના વિષયમા ત્રીજા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે તે સિદ્ધ થાય છે सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ " અથવા તે જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય તમામ દ્રવ્યને આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે એ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જીવ પોતાની ઉત્પત્તિને સમયે તમામ આત્મપ્રદેશો વડે તમામ આહારના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે જેવી રીતે ઘી વગેરેથી

इति । अत्र उत्पत्ति सूत्रवच्चतुर्थमाह एवंरूप इति । अथाऽऽहारविषयं चिन्तयितुमाह—' नेरइए णं भंत ' नैरयिकः खलु भदन्त ! ' नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ ' नैरयिकेभ्य उद्वर्तमान किं देशेन देशमाहरति ?, एवमपि

वा सर्वेण देशमुद्वर्तते, अपि तु सर्वेण सर्वमुद्वर्तते " अर्थात् यह नारक, नारकरूप से गृहीत किये गये उस नारक के शरीर में के एकदेश से अपने एकदेश से नहीं निकलता है और न अपने एकदेश से वहां से सर्वदेश में उद्वर्तित होता है और न अपने सर्वदेश से उसके एकदेश से उद्वर्तित होता है किन्तु अपने सर्वदेश से ही वहा के सर्वदेश से उद्वर्तित-नरक से निकलता है । इस तरह यहां उत्पत्तिसूत्र की तरह ही चौथा विकल्प स्वीकार किया गया । अब सूत्रकार आहार के विषय में विचार करते हुए कहते हैं कि-(नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेण सव्व आहारेइ) हे भदन्त ! नारकों में से उद्वर्तमान नारकजीव क्या अपने एकदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार करता है ? या अपने एकदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का आहार करता है ? या अपने सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार करता है ? या अपने सर्वदेश से

वा सर्वेण देशमुद्वर्तते, अपि तु सर्वेण सर्वमुद्वर्तते " એટલે કે નારક રૂપ નારક રૂપે ગૃહીત નારક શરીરના એકદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશનો આશ્રય કરીને ઉદ્વર્તિત થતો નથી, વળી તે નારક રૂપ પોતાના એકદેશથી (અવયવથી) નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સર્વદેશનો આશ્રય કરીને નીકળતો નથી, તેમજ પોતાના તમામ દેશથી ત્યાંના એકદેશનો આશ્રય કરીને નીકળતો નથી. પણ તે નારક રૂપ પોતાના તમામ દેશથી ત્યાના તમામ દેશને વ્યાપ્તિ કરીને નીકળે છે આ રીતે ઉત્પત્તિ સૂત્રના જેમ ચોથા વિકલ્પનો સ્વીકાર કર્યો છે તેમ ઉદ્વર્તનાના પણ ચોથા વિકલ્પનો જ સ્વીકાર કર્યો છે

હવે સૂત્રકાર આહારના વિષયમા વિચાર કરતા કહે છે કે—

" नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेण सव्वं आहारेइ ? " હે ભગવન્ ! નરકમાંથી નિકળતો નારક રૂપ પોતાના એકદેશ (અવયવ) થી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના તમામ દેશથી આહાર

द्वर्तित उत्पत्तिस्थानस्यैकदेशमाश्रित्योद्वर्तितो भवति किम् ? इति प्रथमो भङ्गः । एवं शेषास्त्रयः प्रश्नाः पूर्ववदेवाध्येतव्याः, तथाहि किं देशेन सर्वमुद्वर्त्तते २, सर्वेण देशमुद्वर्त्तते ३, सर्वेण सर्वमुद्वर्त्तते ४ इति । भगवानाह—' जहे '-त्यादि । ' जहा उववज्जमाणे ' 'तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो' यथा उत्पद्यमाने तथैवोद्वर्तमानेऽपि दण्डको भणितव्यः, यथोत्पत्तिविषये दण्डकः कथितस्तथैव उद्वर्तनाविषयेऽपि दण्डको वर्णनीयस्तथाहि न देशेन देशमुद्वर्त्तते १, न वा देशेन सर्वमुद्वर्त्तते २ । न वा सर्वेण देशमुद्वर्त्तते ३ । अपि तु सर्वेण सर्वमुद्वर्त्तते४

देश से उद्वर्त्तना करता है–अर्थात् उस गृहीत नारक के शरीर के एक भाग से निकलता है ? बाकी के ३ प्रश्न और यहां पर उस विषय में पहले की तरह से ही लगा लेना चाहिये–जैसे–वह नैरयिक जीव अपने एकदेश से सर्वभाग का आश्रय करके उस गृहीत नारक के समस्त शरीर से उद्वर्त्तना करता है ? या अपने सर्वदेश से उस गृहीत नारक पर्याय के एकदेश से निकलता है ? या अपने सर्वदेश से उस गृहीत नारक पर्याय के सर्वदेश से निकलता है ? इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि हे गौतम ! (जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो) जैसा उत्पद्यमान में दण्डक कहा है वैसा ही यहां उद्वर्त्तमान में भी दण्डक कह लेना चाहिये–अर्थात् जिस प्रकार से उत्पत्तिविषय में दण्डक कहा गया है उसी प्रकार से उद्वर्त्तना के विषय में भी दण्डक का वर्णन कर लेना चाहिये । वह इस प्रकार से है–" न देशेन देशं उद्वर्तते न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते, न

ઉદ્વર્તના કરે છે ?-એટલે કે તે ગૃહીત નારક શરીરના એક ભાગથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ? એવો પ્રશ્ન છે. બાકીના ત્રણ પ્રશ્નો પહેલા બતાવ્યા પ્રમાણે જ સમજી લેવા જોઈએ–શું તે નારક જીવ પોતાના એકદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સમસ્ત દેશને આશ્રિત કરીને ઉદ્વર્તના કરે છે ? કે પોતાના સર્વદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનની એકદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ? કે પોતાના સર્વદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સર્વદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ?

આ પ્રશ્નોનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે—

હે ગૌતમ ! "जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो" જે પ્રમાણે ઉત્પત્તિના વિષયમા દંડક કહેલ છે એજ પ્રમાણે ઉદ્વર્તનાના દંડકોનું પણ વર્ણન કરવું. જેમ કે–" न [illegible] उद्वर्तते, न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते,

करणीय । अथोत्पन्नविषयं प्राह- नेरइए णं भंते नेरइएसु उववज्जइ ' नैरयिक खलु भदन्त ! नैरयिकेषु उपपन्न ' किं देसेणं देसं उववज्जेइ ' किं देशेन देशमुपपन्नः, हे भदन्त ! नैरयिकेषु जीव देशेनावयवेन देशमवयवत्व उपपन्नो भवति१, देशेनावयवेन सर्वं सर्वतया उपपन्नो भवति २, सर्वेण देशमुपपन्नो भवति ३, सर्वेण सर्वं वा उपपन्नो भवतीति४ । चत्वारो विकल्पा ज्ञातव्याः। भगवानाह-'एसो वि तहेव' इत्यादि । 'एसो वि तहेव' एषोऽपि उपपन्नो-तथैव, यथा उपपद्यमाना-इत्यस्मिन् सूत्रे चतुर्थो भङ्ग स्वीकृतस्तथेहापि चतुर्थो भङ्ग स्वीकरणीयः, तत्रेयान्—' जाव सव्वेणं सव्व उववज्जे ' यावत् सर्वेण सर्वं उपपन्न एषश्चतुर्थो भङ्गः स्वीकरणीयः।

के निमित्त सूत्र कहते हैं-(नेरइएणं भंते। नेरइएसु उववज्जेइ किं देसेणं देसं उववज्जेइ ?) हे भदन्त। नैरयिकों में उत्पन्न होता नारक जीव क्या अपने एक भाग से नारक के एक भाग में उत्पन्न हुआ माना जाता है ? अथवा अपने एक भाग से सर्वभाग में उत्पन्न हुआ माना जाता है ? अथवा अपने सर्वभाग से नारक के एक भाग में उत्पन्न हुआ माना जाता है? अथवा अपने सर्वभागों से सर्वभागों में उत्पन्न हुआ माना जाता है? भगवान इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि (एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्व उववज्जे) यह, उत्पन्न पक्ष भी उत्पद्यमान पक्ष की तरह ही जानना चाहिये-अर्थात् जिस प्रकार से उद्वर्तना सूत्र में चौथा भंग स्वीकार किया गया है उसी प्रकार से यहां पर भी " आपने समस्त अवयवों से यह नारक के समस्त अवयवों रूप से उत्पन्न हुआ माना जाता है " यह चौथा भंग ही स्वीकार किया गया है। यही बात " जाव

હવે ઉત્પન્ન વિષયનો પણ વિચાર કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે— "नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जेइ किं देसेणं देसं उववज्जेइ ?" હે ભગવન્! નારકીમાં ઉત્પન્ન થવાને લાયક શું પોતાના એક ભાગથી નરકના એક ભાગમાં ઉત્પન્ન થવાને ભનાય છે? કે પોતાના એક ભાગથી નરકના સર્વ ભાગમાં ઉત્પન્ન થવાને ભનાય છે? કે પોતાના સર્વ ભાગોથી નરકના એક ભાગમાં ઉત્પન્ન થવાને ભનાય છે? કે પોતાના સર્વભાગથી નરકના સર્વ ભાગોમાં ઉત્પન્ન થવાને ભનાય છે? તેનો ઉત્તર ભગવાન આ પ્રમાણે આપે છે "एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्व उववज्जे" ઉત્પન્ન પક્ષના વિષયમાં પણ ઉત્પદ્યમાન પ્રમાણે જ સમજવું જોઈએ કે જેવી રીતે ઉત્પદ્યમાન સૂત્રમાં ચોથા ભંગનો સ્વીકાર કર્યો છે એવી જ રીતે ઉત્પન્ન સૂત્રમાં પણ "તે પોતાના તમામ અવયવોથી નારકના તમામ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થવાને ભનાય છે" આ ચોથા ભંગ સ્વીકાર

प्रश्नप्रकरणे चत्वारो भंगा ज्ञातव्याः। भगवानाह—' तहेव '—त्यादि। ' तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ ' तथैव यावत् सर्वेण वा देशमाहरति सर्वेण वा सर्वमाहरति, अयं भावः—नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानो जीवो न देशेन देशमाहरति नवा देशेन सर्वमाहरति किन्तु सर्वेण देशमाहरति सर्वेण वा सर्वमाहरति, इति तृतीयचतुर्थभङ्गौ ग्राह्यौ। ' एवं जाव वेमाणिए ' एवं यावत् वैमानिकः, यथा नैरयिकजीवानां नरकेभ्य उद्वर्तनासमये आहारविषये विचारः कृतः तथैव यावदिति असुरकुमारादारभ्य वैमानिकपर्यन्तविषयेऽपि विचारः

आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का आहार करता है ? ऐसे ये चार प्रश्न हैं। इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम को समझाते हैं कि—(तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए) हे गौतम ! वह अपने एकदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार नहीं करता है, और न अपने एकदेश से वह आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का ही आहार करता है, किन्तु सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार करता और अपने सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का भी आहार करता है। इस तरह यहां पर तृतीय और चतुर्थ विकल्प स्वीकृत किये गये हैं। यावत् वैमानिक देवों में भी इसी तरह से जानना चाहिये। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार से नैरयिक जीवों के, नरकों से उद्वर्तना के समय में आहार के विषय में विचार किया गया है उसी तरह से असुरकुमार से लगाकर वैमानिक तक के देवों के विषय में भी ऐसा ही विचार कर लेना चाहिये। अब सूत्रकार उत्पन्न विषय में विचार

કરવા લાયક દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના તમામ અવયવોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો આહાર કરે છે? આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો છે.

ઉત્તર—" तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ एव जाव वेमाणिए હે હે ગૌતમ ! તે જીવ પોતાના એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરતો નથી, તેમજ એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત દેશનો પણ આહાર કરતો નથી, પણ સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે, અને સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો પણ આહાર કરે છે આ રીતે અહીં પણ ત્રીજા અને ચોથા ભાંગાને સ્વીકારવામા આવેલ છે વૈમાનિક દેવો સુધીના વિષયમા પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું તાત્પર્ય એ છે કે જે રીતે નારક જીવોના, નરકમાં ઉત્પત્તિ સમયમા આહારના વિષયમાં વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ ઉત્તરસૂત્ર સમજી લેવું. એવી જ રીતે અસુરકુમારોથી માંડીને વૈમાનિકો સુધીના દેવોના વિષયમા પણ વિચાર કરવો જોઇએ.

सर्वमाहरति, इत्येवरूपेण आहारविषयकोऽपि पूर्वोक्तैव परिपाटी ज्ञातव्या तथैव-'एएणं अभिलावेणं उववज्जंते वि उव्वट्टंते वि नेयव्वं' एतनाहारविषयकेनाभिलापेनोपपन्नेऽपि उद्वर्तनेऽपि ज्ञातव्यम्। यथोपपद्यमाने उद्वर्त्यमानेऽपि आहारविषयक आलापक कृतस्तथोपपन्ने उद्वर्तनेऽपि आहारालापक करणीय इति भाव।

उपपातसूत्रे तदालापकाधेत्थम्—

"नेरइए णं भंते नेरइएसु उववज्जित्तए किं देसेणं देसं उववज्जेज्जा, देसेणं सव्वं उववज्जेज्जा सव्वेणं देसं उववज्जेज्जा सव्वेणं सव्वं उववज्जेज्जा? गोयमा! नो देसेणं देसं उववज्जेज्जा नो देसेणं सव्वं उववज्जेज्जा, नो सव्वेणं देसं उववज्जेज्जा, सव्वेणं सव्वं उववज्जेज्जा।"

और अपने समस्त अवयवों से आहार करने योग्य द्रव्य का समस्त रूप में भी आहार करता है। इस रूप से पूर्वोक्त परिपाटी ही जाननी चाहिये। (एएणं अभिलावेणं उववज्जंते वि उव्वट्टंते वि नेयव्वं, इस आहार विषयक अभिलाप से उपपात में और उद्वर्तन में भी ऐसा ही जानना चाहिये-अर्थात्-जैसा उपपद्यमान और उद्वर्त्तमान में भी आहारविषयक अभिलाप किया गया है वैसा ही उपपात और उद्वर्तन में आहारविषयक अभिलाप कर लेना चाहिये। आहारसूत्र में आहार विषयक आलाप इस प्रकार से है-"नेरइएणं भंते! नेरइएसु उववज्जित्तए किं देसेणं देसं उववज्जेज्जा देसेणं सव्वं उववज्जेज्जा सव्वेणं देसं उववज्जेज्जा, सव्वेणं सव्वं उववज्जेज्जा? गोयमा! नो देसेणं देसं उववज्जेज्जा, नो देसेणं सव्वं उववज्जेज्जा, नो सव्वेणं देसं उववज्जेज्जा, सव्वेणं सव्वं उववज्जेज्जा" हे भदन्त! नारकों में उपपात नारक जीव क्या अपने एकदेश से इस पर्याय के एकदेश से

आहार કરે છે અને પોતાના તમામ પ્રદેશોથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ પ્રદેશોને પણ આહાર રૂપે ગ્રહણ કરે છે આ પ્રમાણે પૂર્વોક્ત પરિપાટી જ અહીં સમજવી. एएणं अभिलावेणं उववज्जंते, वि उव्वट्टंते वि नेयव्वं' આ આહાર વિષયક અભિલાપથી ઉપપાત અને ઉદ્વર્તનના વિષયમાં પણ એ જ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ કે જેવો ઉપપદ્યમાન અને ઉદ્વર્ત્યમાનમાં આહાર વિષયક અભિલાપ કરવામાં આવ્યો છે તેવો જ ઉપપાત અને ઉદ્વર્તનના વિષયમાં પણ આહાર વિષયક અભિલાપ કરી લેવો જોઈએ. આહાર સૂત્રમાં આહાર વિષયક આલાપ આ પ્રમાણે છે—

'नेरइएणं भंते! नेरइएसु उववज्जित्तए, किं देसेणं देसं उववज्जेज्जा देसेणं सव्वं उववज्जेज्जा सव्वेणं देसं उववज्जेज्जा सव्वेणं सव्वं उववज्जेज्जा?' गोयमा! नो देसेणं देसं उववज्जेज्जा नो देसेणं सव्वं उववज्जेज्जा नो सव्वेणं देसं उववज्जेज्जा सव्वेणं सव्वं उववज्जेज्जा' આ પ્રમાણે પૂર્વોક્ત આહારવિષયક આલાપ

'जहा उववज्जमाणे उव्वट्टमाणे चत्तारि दंडगा तहा उववन्नेणं उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा' यथा उपपद्यमाने उद्वर्तमाने च चत्वारो दण्डकाः, तथा उपपन्नेन उद्वृत्तेनापि चत्वारो दण्डकाः भणितव्याः, अयं भावः—यथा वर्त्तमानकालिकोत्पत्त्युद्वर्तनविषये चत्वारो दण्डका जाताः तथा भूतकालिकोपपत्त्युद्वर्तनविषयेपि चत्वारो दण्डकाः पठनीया एव, स्वीकृतभङ्गमाह—'सव्वेणं सव्वं उववन्ने सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे' सर्वेण सर्वमुपपन्नः सर्वेण सर्वमुद्वृत्तः, 'सव्वेणं वा देसं आहारेइ सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ' सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा

सव्वेणं सव्वं उववण्णे" इस सूत्र द्वारा प्रकट की गई है। (जहा उववज्जमाणे, उव्वट्टमाणे य चत्तारि दंडगा, तहा उववन्नेणं उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा) जिस प्रकार से वर्त्तमानकाल संबंधी उत्पत्ति और उद्वर्त्तन के विषय में चार दण्डक हुए हैं, उसी तरह से भूतकालिक उत्पत्ति और उद्वर्तन के विषय में भी चार ही दण्डक कहना चाहिये। अब सूत्रकार इन्हीं स्वीकृत भंगों की परिगणना करते हैं कि—सव्वेणं सव्वं उववन्ने, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) जो नया नारक जीव नारकों में उत्पन्न होता है वह वहां अपने समस्त अवयवों से ही उस पर्याय के समस्त अवयवों के रूप में उत्पन्न होता है। इसी तरह से वह जो वहां से उद्वर्तित (निकलना) होता है सो अपने समस्त अवयवों से उस पर्याय के समस्त अवयवों में से उद्वर्त्तित होता है। तथा जो वह वहां आहार करता है सो सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेशरूप में आहार करता है

કર્યો છે એજ વાત "जाव सव्वेणं सव्वं उववण्णे" સૂત્ર વડે દર્શાવી છે (जहा उववज्जमाणे, उववट्टमाणे य चत्तारि दंडगा, तहा उववन्नेणं, उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा" જે રીતે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનાના વિષયમા વર્તમાનકાળ સબધી ચાર દંડકો થયા છે, એવી જ રીતે ભૂતકાલિક ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનના વિષયમાં પણ ચાર દડક કહેવા જોઈએ હવે સૂત્રકાર એજ સ્વીકૃત ભાગાઓની ગણના કરે છે—"सव्वेणं सव्वं उववन्ने, सव्वेणं सव्व उव्वट्टे, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) જે નારક જીવ નારકોમા ઉત્પન્ન થાય છે તે ત્યા પોતાના તમામ અવયવોથી તે પર્યાયના તમામ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એજ પ્રમાણે નારક જીવનું ત્યાથી જે નીકળવાનું થાય છે તે પણ તેના તમામ અવયવોથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના તમામ દેશને આશ્રિત કરીને થાય છે. તથા તે ત્યા પોતાના તમામ પ્રદેશોવડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો

अथोत्पन्नस्याहारालापकमाह—

"नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जे किं देसेणं देसं आहारेइ देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ? । गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ" ।

अथोद्वृत्तस्याहारालापकमाह—

"नेरइए णं भंते ! नेरइयाहिंतो उव्वट्टे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ? गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ"

पर्याय के एक अंश से निकला है ऐसा माना जावेगा, या वह अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के समस्त अंशों से निकला है ऐसा माना जावेगा ? प्रभु इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि हे गौतम ! वह नारक जीव नरकों से जो निकलता है सो अपने एक देश से उस पर्याय के एकदेश से नहीं निकलता है, और न वह अपने एकदेश से उस पर्याय के सर्वदेश से निकलता है, और न अपने सर्वदेश से उस पर्याय के एक देश से निकलता है, किन्तु अपने समस्त देश से ही उस पर्याय सम्बन्धी समस्त अंशों से निकलता है ऐसा माना जावेगा ।

उत्पन्न का आहार सम्बन्धी आलापक इस प्रकार से है—

"नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ?" हे भदन्त ! नारकों में उत्पन्न हुआ नारक जीव क्या अपने एक भाग के द्वारा

દેશે નીકળેલો કહેવાશે, કે પોતાના તમામ દેશોથી તે પર્યાયના તમામ દેશરૂપે નીકળેલો કહેવાશે ? તેનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે–હે ગૌતમ ! તે નારક જીવ કે જે નરકોમાંથી નીકળે છે તે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે નીકળતો નથી તેમજ તે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના સર્વદેશ રૂપે પણ નીકળતો નથી, પણ તે પોતાના સર્વદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે પણ નીકળતો નથી પણ પોતાના તમામ દેશથી તે પર્યાયના તમામ દેશ રૂપે જ નીકળે છે

ઉત્પન્નનો આહાર વિષયક આલાપક આ પ્રમાણે છે

ટીકાર્થ–"नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववज्जे किं देसेणं देसं आहारेइ एसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ सव्वेणं सव्वं आहारेइ ?" હે ભગવન્! નરકમાં ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવ શું પોતાના એક આત્મપ્રદેશ વડે આહાર કરવા

अथोद्वर्त्तनालापकमाह—

" नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उव्वट्टेइ, देसेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ? गोयमा ! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे, नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे।"

उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? या अपने एकदेश से उस पर्याय के समस्त देश में उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? या अपने समस्त अंशो से उस पर्याय के एकदेश में उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? या अपने समस्त अंशो से उस पर्याय के समस्त अंशों में–भागों में उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? प्रभु इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि हे गौतम ! नारक जीवों में उत्पन्न हुआ नारक जीव वहां अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के समस्त अंशों में उत्पन्न हुआ ही माना जावेगा।

उद्वर्तनालापक इस प्रकार से है—

" नेरइएणं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उवट्टे, देसेणं, सव्वं उवट्टे, सव्वेणं देसं उवट्टे, सव्वेणं सव्वं उवट्टे ? गोयमा ! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे " हे भदन्त ! नारकों से उद्वृत्त–निकला हुआ जीव क्या वहां से वह अपने एक अंश से उस पर्याय के एक अंश से निकला है ऐसा माना जावेगा या वह अपने एक अंश से उस पर्याय के समस्त अंशों से निकला है ऐसा माना जावेगा, या वह अपने समस्त अंशों से उस

यना तमाम देशमा उत्पन्न थयेल मनाशे ? के पोताना तमाम देशथी ते पर्यायना એકદેશમા उत्पन्न थयेल मनाशे ? के पोताना तमाम देशोथी ते पर्यायना तमाम देशोमा उत्पन्न थयेल मनाशे ?

उत्तर—हे गौतम ! नारકोमा उत्पन्न थयेल नारક જીव पोताना तमाम देशोथी ते पर्यायना तमाम देशोमा જ उत्पन्न थयेलो मनाशे उद्वर्त्तना બાબતનो આલાવો आ प्रमाणे छे—

" नेरइए ण भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेण देसं उव्वट्टेइ, देसेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेण देसं, उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ? ' " गोयमा ! नो देसेण देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्व उव्वट्टे, नो सव्वेण देस उवव्वट्टे, सव्वेण सव्वं उव्वट्टे " हे भगवन् ! नारકोमाथी उद्वृत्त (नीકળेला) જીव शुं त्यांथी पोताना એકદેशथी ते पर्यायना એકદેश રૂपे नीકળेलो मनाशे, के पोताना એકદેशथी ते पर्यायना तमाम देश રૂपे नीકળेलो मनाशे, के पोताना तमाम देशोथी ते पर्यायना એક

नकालमाश्रित्य-उद्वर्त्यमानस्योद्वर्तनाविषयस्तृतीयसूत्रात्मकस्तृतीयो दण्डकः ३। उद्वर्त्यमानस्याहारविषयकश्चतुर्थसूत्रात्मकश्चतुर्थो दण्डकः ४। उद्वर्तनोत्पन्नस्य स्यादिति भूतकालमाश्रित्योत्पन्नस्योत्पत्तिविषयकः पञ्चमसूत्रात्मकः पञ्चमो दण्डकः ५। उत्पन्नः सन्नाहारं करोतीति भूतकालमाश्रित्योत्पन्नस्याहारविषयकः षष्ठसूत्रात्मकः षष्ठो दण्डकः ६। उत्पन्नमतिपक्षत्वादुद्वृत्तस्योद्वर्तनाविषयकः सप्तमसूत्रात्मकः सप्तमो दण्डकः ७। उद्वृत्तः सन्नाहारं करोतीत्युद्वृत्तस्याहारविषयकोऽष्टमसूत्रात्मकोऽष्टमो दण्डकः ८॥

अथ पूर्वोक्तैरष्टाभिरेव दण्डकैरेतन्नारकाण्यायुत्वादादिकनैरयिकविचारप्रकार—'नेरइए णं भंते' इत्यादि। 'नेरइए णं भंते' नैरयिकः खलु भदन्त! 'नेरइएसु

प्राय से वर्तमानकाल को आश्रित करके उद्वर्त्यमान नारक जीव की उद्वर्तना को विषय करने वाला तृतीय सूत्रात्मक तीसरा दण्डक ३, उद्वर्त्यमान नारक के आहार को विषय करने वाला चतुर्थ सूत्रात्मक चौथा दण्डक ४, उद्वर्तना उत्पन्न नारक जीव की होती है इस ख्याल से भूतकाल को आश्रित करके उत्पन्न नारक जीव की उत्पत्ति को विषय करने वाला पञ्चम सूत्रात्मक पाचवां दण्डक५, उत्पन्न हुआ नारक जीव आहार करता है इस ख्याल से भूतकाल को आश्रित करके उत्पन्न हुए नारक के आहारको विषय करनेवाला षष्ठसूत्रात्मक छट्ठा दण्डक६, उत्पन्नका प्रतिपक्ष उद्वृत्त और उद्वर्तना है इसलिये उद्वृत्त और उद्वर्तना विषयक सप्तम दण्डक कहा है। ७, उद्वृत्त होता हुआ नारक जीव आहार करता है इस ख्याल से उद्वृत्त का आहार विषयक अष्टमसूत्रात्मक ८ वां दण्डक है।

अब सूत्रकार इन्हीं पूर्वोक्त आठ दण्डकों द्वारा इस बात का विचार

થાય ઉદ્વર્તના છે તેથી વર્તમાનકાળની અપેક્ષાએ ઉદ્વર્ત્યમાન (નીકળતા) નારક જીવની ઉદ્વર્તના વિષેના ત્રીજા સૂત્ર રૂપે આપેલું ત્રીજુ દંડક, ઉદ્વર્ત્યમાન નારકના આહાર વિષેનું ચોથા સૂત્ર રૂપ ચોથુ દંડક ઉદ્વર્તના ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવની જ થાય છે તેથી ભૂતકાળને અનુલક્ષીને ઉત્પન્ન થનાર નારક થયેલ જીવની ઉત્પત્તિ વિષયક પાંચમા સૂત્રમા આપેલું પાંચમુ દંડક ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ આહાર કરે છે તેથી ભૂતકાળને અનુલક્ષીને ઉત્પન્ન થયેલ નારકના આહાર વિષેના છઠ્ઠા સૂત્રમાં બતાવેલુ છઠ્ઠું દંડક ઉત્પન્નથી ઉલટો શબ્દ ઉદ્વૃત્ત અને ઉદ્વર્તના છે તે કારણે ઉદ્વૃત્ત અને ઉદ્વર્તના વિષયક સાતમુ દંડક કહ્યું છે અને ઉદ્વૃત્ત થતો નારક જીવ આહાર કરે છે તેને અનુલક્ષીને ઉદ્વૃત્તના આહાર વિષેના આઠમા સૂત્ર રૂપે આપેલું આઠમુ દંડક આ રીતે આઠ દંડકોનો વિચાર કરવામા આવ્યો છે.

હવે સૂત્રકાર એજ પૂર્વોક્ત આઠ દંડકો વડે એ વાતનો વિચાર કરે છે

अयं भावः—वर्त्तमानकालमाश्रित्य उत्पद्यमानस्योत्पत्तिविषयक एकसूत्रात्मक एको दण्डकः १, उत्पद्यमानस्याहारावश्यकतांभवेदिति उत्पद्यमानस्याहारविषयको द्वितीयसूत्रात्मको द्वितीयो दण्डकः २। उत्पादप्रतिपक्षमुद्वर्त्तनमिति वर्तमा-

---

आहार करने योग्य द्रव्य के एक भाग का आहार करता है? या अपने एक भाग के द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वभाग का आहार करता है? या अपने सर्वभाग द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के एक-भाग का आहार करता है? या अपने सर्वभागों द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वभागों का आहार करता है? हे गौतम! नारकों में उत्पन्न हुआ नारक जीव न अपने एकदेशरूप भाग से आहार करने योग्य द्रव्य के एक भाग का आहार करता है और न अपने एकदेशरूप भाग से आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वभागों का ही आहार करता है किन्तु वह अपने सर्वदेशरूप भागों से, आहार करने योग्य द्रव्य के एक भाग का और सर्वभागों का भी आहार करता है।

इस कथन का यह भाव है—वर्तमानकाल को आश्रित करके उपजने वाले नारक जीव की उत्पत्ति को विषय करने वाला एक दण्डक१, वर्तमान में उत्पन्न हुए नारक जीव को आहार की आवश्यकता होती है इस ख्याल से उत्पद्यमान नारक के आहार को विषय करने वाला द्वितीय सूत्रात्मक दूसरा दण्डक२, उत्पादका प्रतिपक्षी उद्वर्तन होता है इस अभि-

---

યોગ્ય દ્રવ્યના એક દેશનો આહાર કરે છે? કે પોતાના એક આત્મપ્રદેશ વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ ભાગનો આહાર કરે છે? કે પોતાના તમામ આત્મપ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરે છે? કે પોતાના તમામ આત્મપ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ દેશોનો આહાર કરે છે?

ઉત્તર—હે ગૌતમ! નારકોમા ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ પોતાના એક દેશ રૂપ ભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરતો નથી. તેમજ તે પોતાના એકદેશ રૂપ ભાગ વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ ભાગનો પણ આહાર કરતો નથી, પણ તે પોતાના સર્વદેશ રૂપ ભાગો વડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરે છે અને સર્વભાગનો પણ આહાર કરે છે

આ કથનનો સારાશ આ પ્રમાણે છે—વર્તમાન કાળની અપેક્ષાએ ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારક જીવની ઉત્પત્તિ વિષેનુ એક દંડક, વર્તમાન કાળમા ઉત્પદ્યમાન નારક જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે. તેથી ઉત્પદ્યમાન નારકના આહાર વિષેના બીજા સૂત્ર રૂપે આપેલુ બીજુ દંડક, ઉત્પાદથી ઉલટો

कथनीयाः। नवरं विशेषस्त्वयम्-' जहिं देसेणं देसं उवयज्जइ, तहिं अद्धेणं अद्धं उवयज्जइत्ति भणितव्वं ' यत्र देशेन देशमुपपद्यते तत्र अर्द्धेन अर्द्धमुपपद्यते इति भणितव्यम्। अयं भावः-देशघटितार्धघटितद्वये एतदेव वैलक्षण्यं यत् यत्र किं देशेन 'देशमुपपद्यते' इत्यादि कथितम् तत्र स्थले इह 'किम् अर्द्धेनार्धमुपपद्यते' इत्यादि वक्तव्यमित्येतावाननयोरुभयोर्भेद इति ' एवं जाणसु ' एतज्ज्ञानीहि, एवम्=एतदेव अनुपदमुक्तमेव नानात्वम्=उभयोर्भेद इति। देशस्थाने अर्धं धरित्वा भेदो रचनीय इति भाव। ' एए सव्वे वि ' एते सर्वेऽपि ' सोलस दंडगा

कि जिस प्रकार से पहिले देश के साथ उत्पाद आदिकों के आठ दण्डक कहे गये हैं, उसी तरह से अर्द्ध के साथ भी उत्पाद आदिकों के आठ दण्डक कह लेना चाहिये। (नवरं) विशेषता यह है कि-(जहिं देसेणं देसं उवयज्जइ, तहिं अद्धेणं अद्धं उवयज्जइ, इति भाणियव्वं) जहां पर "क्या एकदेश से एकदेश को आश्रय करके उत्पन्न होता है?" ऐसा पाठ आता है वहां पर "क्या अर्धभाग से अर्धभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है" ऐसा पाठ लगा लेना चाहिये। तात्पर्य कहने का यह है कि देश संबंधी और अर्ध संबंधी ये जो दो पक्ष हैं उनमें इतना ही भेद है कि जहां पर "क्या देश से देश को आश्रित कर के उत्पन्न होता है" ऐसा कहा गया है, वहां पर इस स्थलमें "क्या आधे भाग से आधे भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है" ऐसा पाठ कहना चाहिये। (एवं जाणसु) यही इन दोनों में विशेषता है। अर्थात देश के स्थान में अर्ध पद जोड़ कर भेद कर लेना चाहिये। (एए सव्वे वि सोलस दंडगा

કહેલ છે પહેલાં જેવી રીતે દેશની અપેક્ષાએ ઉત્પાદ વગેરેનાં આઠ દંડકો કહેવામાં આવ્યા છે, એવી જ રીતે અર્ધની અપેક્ષાએ પણ ઉત્પાદ વગેરેનાં આઠ દંડકો કહેવા જોઈએ "नवरं" પણ તેમાં જે વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે "जहिं देसेणं देसं उवयज्जइ, तहिं अद्धेणं अद्धं उवयज्जइ, इति भाणियव्वं" અર્થાત "એકદેશથી એકદેશનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?" એવું કથન આવે છે ત્યાં "શું અર્ધભાગથી અર્ધભાગનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?" એવું કથન કરવું જોઈએ. તાત્પર્ય એ છે કે દેશ સંબંધી અને અર્ધ સંબંધી જે બે પક્ષો છે તેમાં એટલો જ ભેદ છે કે જ્યાં દેશથી દેશનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?" એવું કહ્યું છે ત્યાં શું અર્ધભાગથી અર્ધભાગનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?' એટલો ફેરફાર કરવો જોઈએ 'एवं जाणसु" એ બન્નેમાં જે વિશેષતા છે એટલે કે 'દેશ" ની જગ્યાએ 'અર્ધ" પદનો પ્રયોગ કરીને સૂત્ર બનાવવું જોઈએ "एए सव्वे वि सोलस दंडगा

उववज्जमाणे ' नैरयिकेषूपपद्यमानः ' किं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ' किम् अर्द्धेनार्द्धम् उपपद्यते, ' अद्धेणं सव्वं उववज्जइ' अर्द्धेन सर्वमुपपद्यते ' सव्वेणं अद्धं उववज्जइ' सर्वेणार्द्धमुपपद्यते, ' सव्वेणं सव्वं उववज्जइ ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, हे भगवन् नरके उत्पद्यमानो नारकः किमर्द्धेन भागेनार्धभागमाश्रित्योत्पद्यते किं वा अर्द्धभागेन सर्वमाश्रित्योत्पद्यते, अथवा सर्वभागेनार्द्धभागमाश्रित्योत्पद्यते अथवा सर्वभागेन सर्वभागमाश्रित्योत्पद्यते इति प्रश्नः । भगवानाह–'जहापढमिल्लेण'मित्यादि। ' जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठ दंडगा भावियव्वा ' यथा प्राथमिकेन देशरूपेणाष्ट दण्डकास्तथाऽर्द्धेनापि अष्टौ दण्डका भणितव्या', यथा पूर्वं देशेन सहोत्पादादीनामष्ट दण्डका उक्तास्तथाऽर्द्धेनापि सहोत्पादादीनामष्टदण्डकाः

करते हैं कि नैरयिकों में उपजता हुआ नारक जीव क्या अपने अर्ध-भाग से उत्पन्न होता है अथवा अपने सर्वभाग से उत्पन्न होता है–(नेरइए णं भंते !) हे भदन्त ! नारक जीव (नेरइएसु उववज्जमाणे) जो कि नैरयिकों में उपजनेवाला है (किं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, अद्धेणं सव्वं उववज्जइ) वह क्या अपने आधे भाग से आधे भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? या अपने आधे भाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? (सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ) या अपने सर्वभागसे उत्पत्तिस्थानके आधे भागको आश्रित करके उत्पन्न होता है ? या अपने सर्वभाग से सर्वभागको आश्रित करके उत्पन्न होता है ? (जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठ दंडगा भाणियव्वा) जैसे देशरूप प्रथम के साथ आठ दण्डक कहे गये हैं उसी तरह से अर्ध के साथ भी आठ दण्डक कहना चाहिये। तात्पर्य यह है

કે નૈરયિકોમા ઉપજતો નારક જીવ શુ પોતાના અર્ધભાગથી ઉત્પન્ન થાય છે, કે પોતાના સર્વ ભાગથી ઉત્પન્ન થાય છે ?

ટીકાર્થ—" नेरइए ण भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे" હે ભગવન્ ! નારક જીવોમાં ઉપજનારો નારક જીવ "किं अद्धेण अद्धं उववज्जइ अद्धेण सव्वं उववज्जइ ?" શું પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પોતાના અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? (सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेण सव्वं उववज्जइ ? " કે પોતાના સર્વભાગોથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? " जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठ दंडगा भाणियव्वा " હે ગૌતમ ! જેવી રીતે દેશરૂપ પ્રથમની સાથે આઠ દંડકો કહેવામા આવ્યા છે એજ પ્રમાણે અર્ધની સાથે પણ આઠ દંડકો કહેવા જોઇએ.

किं अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ? गोयमा ! नो अद्धेणं अद्धं आहारेइ, नो अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ? । नेरइए णं भंते ! नेरइयत्तिं

भागको आश्रित करके उत्पन्न होता है। नरकमें उत्पन्न हुए नारक जीवको आहारकी आवश्यकता होती है अतः गौतमस्वामी प्रभुसे इस विषयमें प्रश्न करते हुए पूछते हैं कि-(नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) हे भदन्त ! नारकियों में उत्पन्न हुआ नारकजीव क्या अपने आधे भागसे आधे भागको आश्रितकर आहार करता है ? या अपने आधे भागसे सर्वभागको आश्रितकर आहार करता है ? या अपने सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित कर आहार करता है ? (गोयमा ! नो अद्धेणं अद्धं आहारेइ, नो अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) हे गौतम ! वह न अपने आधे भाग से आहरणीय द्रव्य के आधे भाग को आश्रितकर आहार करता है, न अपने आधे भाग से आहरणीय द्रव्य के सर्व भागों को आश्रितकर आहार करता है किन्तु अपने सर्वदेश से आहरणीय द्रव्य के आधे भाग को आश्रित करके आहार करता है और अपने सर्वदेश से आहरणीय द्रव्य के सर्वदेश को भी आश्रित करके आहार करता है। (नेरइए णं

જ ઉત્પન્ન થાય છે નરકમા ઉત્પન્ન થયેલા નારક જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે—તેથી ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને આહાર સબંધી પ્રશ્ન પૂછે છે- "नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ सव्वेणं अद्धं आहारेइ सव्वेणं सव्वं आहारेइ ?" હે ભગવન્ ! નારકોમાં ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ શું પોતાના અર્ધાભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધા ભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના અર્ધાભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધાભાગનો આહાર કરેછે ? કે પોતાના સર્વભાગોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગોનો આહાર કરે છે ?

ઉત્તર- "गोयमा ! नो अद्धेणं अद्धं आहारेइ, नो अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ सव्वेणं सव्वं आहारेइ" હે ગૌતમ ! તે નારક જીવ પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરતો નથી, તેમજ તે પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો પણ આહાર કરતો નથી. પણ તે પોતાના સર્વદેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે તથા પોતાના સર્વદેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર પણ કરે છે

भाणियव्वा ' सोडश दण्डका भणितव्याः, देशघटितोत्पादे चत्वारो दण्डकास्तथा देशघटिते आहारे चत्वारो दण्डकाः, संकलनया अष्टौ दण्डकाः, एवमर्द्धघटितोत्पादे चत्वारो दण्डकास्तथार्द्धघटिते आहारेऽपि चत्वारो दण्डकाः, इति अर्द्धघटितेऽष्टौ दण्डकाः, सर्वसंकलनया षोडश दण्डकाः भवन्तीति परमार्थः। अर्द्धसर्वयोरष्ट दण्डकाश्चेत्थम्-अत्र प्रथमदण्डकप्रश्नसूत्रं मूले एव कथितम्, उत्तरसूत्रं त्वेवम्-

"नो अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, नो अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ १। नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे

भाणियव्वा) इस तरह ये सब मिल कर सोलह दंडक हो जाते हैं। तात्पर्य यह कि-जैसे देश संबंधी उत्पाद में चार दण्डक और देश संबंधी आहारमें चार दण्डक इस प्रकार ये ८ आठदण्डक होते हैं उसी प्रकारसे अर्द्ध संबंधी उत्पादमें चार दण्डक और अर्द्ध संबंधी आहारमें चार दण्डक होते हैं। इस तरह देश संबधी ८ आठ दण्डक और अर्द्ध संबधी ८ आठदण्डक मिलकर सोलह दण्डक हो जाते हैं। अर्द्ध के और सर्व के आठ दण्डक इस प्रकार से हैं-इन में जो प्रथम दण्डक प्रश्नसूत्र है वह तो मूल में ही कह दिया गया है परन्तु जो उत्तर सूत्र है वह इस प्रकार से है-"नो अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, नो अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ" हे गौतम! नैरयिकों में उत्पन्न होने वाला नारकजीव अपने आधे भाग से आधे भाग को आश्रित करके उत्पन्न नहीं होता है, और न वह अपने सर्व भाग से आधे भाग को आश्रित करके ही उत्पन्न होता है, किन्तु अपने सर्व भाग से ही सर्व-

भाणियव्वा" આ રીતે તે બન્ને મળીને કુલ ૧૬ દંડક થાય છે એટલે કે જેમ ઉત્પાદમા દેશસબંધી ચાર દંડક અને આહારમાં દેશ સબંધી ચાર દંડક થાય છે તેમ ઉત્પાદમાં અર્ધસબંધી ચાર દંડક અને આહારમા અર્ધસબંધી ચાર દંડક આ રીતે દેશ સબંધી ૮ દંડક અને અર્ધસંબંધી ૮ દંડક મળીને કુલ ૧૬ દંડક થાય છે, અર્દ્ધના અને સર્વના આઠ દંડક નીચે પ્રમાણે છે તેમાનું પ્રથમ દંડક પ્રશ્નસૂત્ર તો મૂળસૂત્રમાં જ કહી દીધુ છે પણ જે ઉત્તરસૂત્ર છે તે આ પ્રમાણે છે-"નો અદ્ધેણં અદ્ધ ઉવવજ્જઇ, નો અદ્ધેણં સવ્વં ઉવવજ્જઇ, નો સવ્વેણ અદ્ધ ઉવવજ્જઇ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઇ" હે ગૌતમ નૈરયિકોમાં ઉત્પન્ન થનારો નારક જીવ પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થતો નથી વળી તે પોતાના અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમજ તે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થતો નથી પણ તે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને

सव्व आहारेइ ?, गोयमा ! नो अदेसेणं अदं आहारेइ, नो अदेसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं वा अदं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्व आहारेइ ४ । इत्यादि । एवं वर्तमानकालिकचतुर्दण्डकवद् भूतकालिके उपपत्तौत्पत्तिविषये १, उपपन्नाहारविषये २,

भदन्त ! नैरयिकों में से उत्पन्न हुआ नारकजीव क्या अपने आधेभाग से आहरणीय द्रव्यके आधेभाग को आश्रित कर आहार करता है ? या अपने आधे भागसे आहार करनेयोग्य द्रव्यके सर्वभागको आश्रित कर आहार करता है ? या अपने सर्वभाग से आहरणीय द्रव्य के एकभाग को आश्रित कर आहार करता है ? या अपने सर्वभाग से आहरणीय द्रव्य के सर्वभाग को आश्रित कर आहार करता है ? (गोयमा ! नो अदेसेण अदं आहारेइ, नो अदेसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं वा अदं आहारेइ, सव्वेण वा सव्वं आहारेइ) हे गौतम ! वह न अपने आधेभाग से आहरणीय द्रव्य के आधेभाग को आश्रित कर उसका आहार करता है और न अपने आधेभाग से आहरणीय द्रव्य के समस्त भाग को आश्रित कर उसका आहार करता है । किन्तु अपने समस्त भाग से आहरणीय द्रव्य के आधेभाग को आश्रित कर आहार करता है और अपने समस्त भागों से आहरणीय द्रव्य के समस्त भागों को भी आश्रित कर उनका आहार करता है, इस तरह से ये वर्तमान काल को लेकर चार दंडक कहे इसी तरह से भूतकाल को लेकर भी चार दंडक उपपन्न की उपपत्ति, उपपन्न के आहार उच्छ्वास के उद्वर्तन और उद्वृत्त के

વત્ ! નરકભાવી ઉત્પત્તિત થતો નારક જીવ શું પોતાના અર્ધભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના અર્ધભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના સર્વભાગરૂપ પ્રદેશોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર કરે છે ?

ઉત્તર— "गोयमा ! नो अदेसेणं अदं आहारेइ नो अदेसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेण वा अदं आहारेइ सव्वेणं वा सव्व आहारेइ" હે ગૌતમ ! તે પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરતો નથી તેમજ તે પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વ ભાગનો પણ આહાર કરતો નથી. પણ પોતાના સર્વભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે તથા પોતાના સર્વ ભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો પણ આહાર કરે છે આ રીતે વર્તમાનકાળની અપેક્ષાએ ચાર દંડક કહેવામાં આવ્યા છે એજ પ્રમાણે ભૂતકાળની અપેક્ષાએ પણ ઉપપન્નની ઉત્પત્તિ, ઉપપન્નનો આહાર

उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ ? गोयमा ! नो अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, नो अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, नो सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं वा सव्वं उव्वट्टइ ३। नेरइएणं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं

भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ ?) हे भदन्त ! नैरयिकोंसे वर्तमानकालमें उद्वृत्त (निकलाहुवा)हुआ नारकजीव क्याअपने आधे भागसे आधे भागको आश्रित करके उद्वत्त होता है ? या अपने आधे भागसे सर्वभागको आश्रित करके उद्वत्त होता है ? या सर्वभागसे आधे भागको आश्रित करके उद्वत्त होता है ? या अपने सर्वभागसे सर्वभागको आश्रित करके उद्वत्त होता है ? (गोयमा ! नो अद्धेण अद्धं उव्वट्टइ, नो अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, नो सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ) हे गौतम ! न वह अपने आधे भागसे आधे भागको आश्रितकर उद्वत्त होता है, न अपने आधेभागसे सर्वभागको आश्रितकर उद्वृत्त होता है, और न अपने सर्वभागसे आधेभागको ही आश्रितकर उद्वर्तित होता है किन्तु अपने सर्वभागसे ही सर्वभाग को आश्रित कर उद्वर्तित होता है। (नेरइएणं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ?) हे

प्रश्न—"नेरइएणं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेण अद्धं उव्वट्टइ, अद्धेण सव्वं उव्वट्टइ, सव्वेण अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेण सव्व उव्वट्टइ ?" हे भगवान् ! नैरयिकोमाथी वर्तमानकाळे उद्वृत्त थयेलो नारक जीव शु पोताना अर्धभागथी अर्धभागने आश्रित करीने उद्वृत्त थाय छे ? के पोताना अर्धभागथी सर्वभागने आश्रित करीने उद्वृत्त थाय छे ? के पोताना सर्वभागथी अर्धभागने आश्रित करीने उद्वृत्त थाय छे ? के पोताना सर्वभागथी सर्वभागने आश्रित करीने उद्वृत्त थाय छे ?

उत्तर—" गोयमा ! नो अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, नो अद्धेणं सव्व उव्वट्टइ, नो सव्वेण अद्धं उव्वट्टइ सव्वेण सव्व उव्वट्टइ " हे गौतम ! ते पोताना अर्धभागथी अर्धभागने आश्रित करीने पण उद्वृत्त थतो नथी तेमज अर्धभागथी सर्वभागने आश्रित करीने उद्वृत्त थतो नथी, तथा सर्वभागथी अर्धभागने आश्रित करीने पण उद्वृत्त थतो नथी पण सर्वभागथी सर्वभागने आश्रित करीने ज उद्वृत्त थाय छे

प्रश्न—"नेरइएणं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्ध आहारेइ, अद्धेण सव्व आहारेइ, सव्वेण अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्व आहारेइ ? हे भग-

णं भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा, गोयमा! विग्गहगइसमावन्नगा वि अविग्गहगइसमावन्नगा वि, नेरइयाणं भंते! किं विग्गहगइसमावन्नया, अविग्गहगइसमावन्नया, गोयमा! सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगइसमावन्नगा १ अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा य, विग्गहगइसमावन्नए य२, अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा य, विग्गहगइसमावन्नगा य ३, एवं जीव एगिंदियवज्जो तियभंगो॥२॥

छाया—जीवो भदन्त! किं विग्रहगतिसमापन्नकः अविग्रहगतिसमापन्नकः गौतम! स्याद् विग्रहगतिसमापन्नकः स्याद्विग्रहगतिसमापन्नकः एवं यावत् वैमानिकः। जीवा भदन्त! किं विग्रहगतिसमापन्नकाः अविग्रहगतिसमापन्नकाः गौतम! विग्रहगतिसमापन्नका अपि अविग्रहगतिसमापन्नका अपि। नैरयिकाः भदन्त! किं विग्रहगतिसमापन्नका अविग्रहगतिसमापन्नका? गौतम! सर्वेऽपि तावत् भवेयुरविग्रहगतिसमापन्नका १, अथवा अविग्रहगतिसमापन्नका विग्रहगतिसमापन्नकाश्च २, अथवा अविग्रहगतिसमापन्नकाश्च विग्रहगतिसमापन्नकाश्च ३। एवं जीवैकेन्द्रियवर्जकस्त्रिभङ्गः॥ सू०२॥

टीका—'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त! 'किं विग्गहगइसमावन्नए' किं विग्रहगतिसमापन्नकः, 'अविग्गहगइसमावन्नए' अविग्रहगतिसमापन्नकः।

विग्रहगति वेषक्तव्यता

पहिले उत्पत्ति और उद्वर्तना जो कही गई है, सो ये प्रायः गति पूर्विका होती (गतिको लेकर हो) है अतः अब सूत्रकार गतिसूत्रों को कहते हैं—'जीवेणं भंते!" इत्यादि।

टीकार्थ—(जीवेणं भंते! किं विग्गहगइसमावन्नए, अविग्गहगइसमावन्नए) हे भदन्त! जीव क्या विग्रहगतिसमापन्नक (विग्रहगतिवाला) है कि

વિગ્રહગતિ અને વેદવક્તવ્યતા

પહેલાં જે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનનું નિરૂપણ કર્યું તે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તન સામાન્ય રીતે ગતિપૂર્વક હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર ગતિસૂત્રોનું કથન કરે છે-'जीवेणं भंते" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-(जीवेणं भंते! किं विग्गहगइसमावन्नए, अविग्गहगइसमावन्नए!) હે ભગવન્! જીવ શું વિગ્રહગતિ વાળો હોય છે કે અવિગ્રહગતિ વાળો હોય છે?

उद्वृत्तोद्वर्त्तनविषये ३, उद्वृत्ताहारविषये ४ चेति चत्वार आलापकाः पठनीयाः, वर्त्तमानकालिकवदेवात्रापि-आहारविषयेऽन्तिमौ द्वौ भङ्गौ स्वीकृततया पठनीयौ। इति परमार्थः। ननु देशस्यार्द्धस्य च को विशेषः, नहि देशार्धयोः किंचिद्वैलक्षण्यमनुभूयते, य एव देशस्तदेवार्धम् ?, इति चेदाह-देश-एकद्वित्रिभागादिरनेकप्रकारकः, अर्द्धं तु एकप्रकारकमेव, अतो देशार्द्धयो वैलक्षण्यान्नात्र पौनरुक्त्यम् ॥सू० १॥

विग्रहगतिदेवक्तव्यवनप्रकरणम्—

पूर्वमुत्पत्तिरुद्वर्त्तना च कथिता, सा च प्रायो गतिपूर्विका भवतीति गतिसूत्राणि प्राह—" जीवेणं भंते " इत्यादि।

मूलम्—जीवे णं भंते! किं विग्गहगइसमावण्णए, अविग्गहगइसमावण्णए, गोयमा ! सिय विग्गहगइसमावन्नगे, सिय अविग्गहगइसमावन्नगे, एवं जाव वेमाणिए। जीवा

आहार के विषयमें भी लगा लेना चाहिये। वर्तमान कालकी तरह यहां पर भी आहारके विषयमें अंतिम दो भंग ही स्वीकृत माने गये हैं।

शंका—देश और अर्द्ध में क्या अन्तर है ? हमें तो इन दोनों में कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता है, क्यों कि जो देश है वही अर्ध है।

उत्तर—एक, दो, तीन भाग आदि रूप से देश अनेक प्रकार का होता है, और अर्द्ध जो होता है वह एक प्रकार का ही होता है अतः देश और अर्द्ध में भिन्नता होने के कारण यहां इन दोनों के कथन में पुनरुक्ति दोष नहीं आता है॥ सू. १॥

ઉદ્વૃત્તનું ઉદ્વર્તન અને ઉદ્વૃત્તના આહારના વિષયમા પણ ચાર ચ્ચ્ક કહેવા જોઇએ વર્તમાનકાળની જેમ જ અહીં પણ આહારના વિષયમાં છેલ્લા બે ભાંગાનો જ સ્વીકાર થયેલો છે એ ઉત્તર સૂત્રોમા બતાવવુ જોઇએ

શંકા—દેશ અને અર્ધમાં શો ભેદ છે ? અમને તો તે બનેમા કોઇ તફાવત લાગતો નથી કારણ કે જે દેશ છે તેજ અર્ધ છે અને જે અર્ધ છે તેજ દેશ છે

ઉત્તર—તમારી વાત બરાબર નથી કારણ કે એક, બે, ત્રણ, વગેરે ભાગ રૂપે દેશ અનેક પ્રકારનો હોય છે પણ અર્ધભાગ તો એક જ પ્રકારનો હોય છે આ રીતે દેશ અને અર્ધમાં ભિન્નતા હોવાથી અહીં તે બનેના કથન જુદા જુદા કહેલ છે ॥ સૂ ૧ ॥

स्थित इत्येवार्थः, अविग्रहगतीत्यत्र विग्रहगतेरभावमात्रस्याभणात्। यदि अविग्रहगतिसमापन्नक इत्यत्र ऋजुगतिक इत्येवार्थ तच्चेत्तदा नारकादिपदेषु सर्व देवाविग्रहगतिकानां यद् बहुत्वं कथयिष्यति तत्सर्वं बाधितं भवेदिति, एकादीनामपि तेषु नारकादिपदेषूत्पादभणनात्। भगवानाह—'गोयमे' त्यादि।

स्थित ऐसा ही होता है, क्यों कि "अविग्रहगति" यहां पर विग्रहगति का अभाव मात्र ही लिया गया है। यदि "अविग्रहगतिसमापन्नक" का अर्थ ऋजुगतिवाला ऐसा ही लिया जावे और स्थित अर्थ न लिया जावे तो नारक आदि पदों में जो सर्वदा ही अविग्रहगति वालों की बहुता कही जाने वाली है वह सर्वथा ही बाधित हो जावेगी, क्यों कि उन नरकादि पदों में अविग्रहगतिसमापन्नक एक आदि जीवों का भी उत्पाद सुना जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि अविग्रहगति समापन्नकका अर्थ केवल "ऋजुगतिवाला जीव" ऐसा ही माना जावेगा तो इसका अर्थ ऐसा होगा कि नारकों में ऋजुगतिवाले जीव बहुत होते हैं अर्थात् एक दो आदि जीव नहीं होते, सो इस तरह से वहां एक दो आदि अविग्रहगतिवाले जीवोंका उत्पन्न होना बनेगा नहीं, परन्तु ऐसी बात तो है नहीं, क्योंकि शास्त्रोंमें वहां एक दो आदि अविग्रहगतिवाले जीवोंका भी उत्पाद होना कहा गया है। इस लिये अविग्रहगतिसमापन्नक का अर्थ सीधी गतिवाला तथा स्थित-गति विना का-ऐसा अर्थ लेना चाहिये।

આવ છે માટજ કે "अविग्रहगति" માં विग्रहगतिનો અભાવ જ લીધો છે જો 'અવિગ્રહગતિવાળા" નો અર્થ "ઋજુગતિવાળો" જ લેવામા આવે અને "સ્થિત અર્થ" લેવામા ન આવે તો નારક વગેરેમાં જેમણા અવિગ્રહ ગતિવાળા જીવોની જે બહુલતા કહેવાની છે તેમાં મોટી મુશ્કેલી ઉભી થશે. કારણ કે તે નારકાદિ પદોમાં અવિગ્રહગતિવાળા એક વગેરે જીવોનો ઉત્પાદ પણ થાય છે એવું સાંભળ્યું છે તાત્પર્ય એ છે કે જો અવિગ્રહગતિવાળાનો અર્થ માત્ર ઋજુગતિવાળા જ લેવામાં આવે તો એવું માનવું પડશે કે નારકોમાં ઋજુગતિવાળા જીવો પણ હોય છે-હોઈશે કે ત્યાં એક, બે વગેરે અવિગ્રહગતિ વાળા જીવો હોતા નથી એ રીતે તો ત્યા એક કે વિગેરે અવિગ્રહગતિવાળા જીવોની ઉત્પત્તિ જ સંભવી શકે નહીં પણ શાસ્ત્રોમાં તો ત્યાં એક, બે, વગેરે અવિગ્રહગતિવાળા જીવોનો પણ ઉત્પાદ બતાવ્યુ છે તેથી અવિગ્રહ-ગતિવાળાનો અર્થ "સીધીગતિવાળો તથા સ્થિત-ગતિવાળો" એવો લેવાજો

विग्रहगतिसमापन्नक इत्यत्र विग्रहो वक्रता तत्प्रधाना गति विग्रहगतिः, तां समापन्नः=प्राप्त इति विग्रहगतिसमापन्नः । तद्भिन्नः अविग्रहगतिसमापन्नः, स तु ऋजुगतिकः, अथवा स्थितो वा भवेत् विग्रहगतिनिषेधमात्राश्रयणात् । तथा च यदा विग्रहगत्या गच्छन् जीवो विग्रहगतिसमापन्नक इति । विग्रहगत्यभाववांश्च जीव ३ । अविग्रहगतिसमापन्नकः, अभावस्याधिकरणस्वरूपत्वमितिनये विग्रहगत्यभाववान् ऋजुगतिको जीव इत्यर्थः । अथवा अविग्रहगतिसमापन्नक इत्यस्य

अविग्रहगतिसमापन्नक है? विग्रह नाम वक्रता-तेढे का है। यह वक्रता तेढापन जिस गतिमें प्रधान होती है उस गति का नाम विग्रहगति है। इस गतिको जो जीव प्राप्त होता है वह विग्रहगतिसमापन्नक कहलाता है। जिस गतिमें तेढापन नहीं होता है वह अविग्रह गति है। ऐसी गति ऋजुगति होती है। इस ऋजुगतिको जो प्राप्त होता है वह अविग्रहगतिसमापन्नक कहलाता है। अथवा 'अविग्रहगति' में विग्रहगति मात्रके निषेध के आश्रयण से अविग्रहगति का अर्थ स्थित है। इस तरह अविग्रहगति समापन्नक का तात्पर्य स्थित ऐसा होता है। अतः विग्रहगतिसे परभव में जाता हुआ जीव विग्रहगतिसमापन्नक और विग्रहगति के अभाववाला जीव अविग्रहगतिसमापन्नक है। अभाव अधिकरण स्वरूपवाला होता है ऐसा एक नय है सो इस नय की मान्यतानुसार "विग्रहगति के अभाववाला जीव अर्थात् ऋजुगतिवाला जीव" ऐसा अविग्रहगतिसमापन्नकका अर्थ हो जाता है। अथवा अविग्रहगतिसमापन्नक इसका अर्थ

વિગ્રહ એટલે વળાક તે વળાંકી જે ગતિમા મુખ્ય હોય છે તે ગતિને વિગ્રહ ગતિ કહે છે તે ગતિને પ્રાપ્ત કરનાર જીવને વિગ્રહગતિવાળો કહેવામાં આવે છે જે ગતિમા વળાક હોતા નથી તે ગતિને અવિગ્રહગતિ કહે છે એવી ગતિને ઋજુગતિ કહે છે તે ઋજુગતિ વાળા જીવને અવિગ્રહગતિવાળો જીવ કહે છે અથવા "અવિગ્રહગતિ" મા વિગ્રહગતિમાત્રના નિષેધને કારણે અવિગ્રહગતિનો અર્થ "સ્થિત" પણ થાય છે

આ રીતે અવિગ્રહગતિ વાળા જીવોનો ભાવાર્થ "સ્થિત" પણ થાય છે તેથી વિગ્રહગતિથી પરભવમાં જતા જીવને વિગ્રહગતિવાળો અને જેમનામાં વિગ્રહ ગતિનો અભાવ છે એવા જીવોને અવિગ્રહગતિવાળા કહેવામા આવે છે તેમજ અભાવ, અધિકરણ સ્વરૂપવાળો હોય છે, એવો એક નય છે તે નયની માન્યતા અનુસાર "વિગ્રહગતિના અભાવવાળો જીવ એટલે કે ઋજુગતિવાળો જીવ" અવિગ્રહગતિવાળો ગણાય છે અથવા અવિગ્રહગતિવાળો એનો અર્થ સ્થિત જ

अथानेक जीवविषये आह-'जीवा णं भंते इत्यादि, 'जीवा णं भंते' जीवा खलु भदन्त ! किं विग्गहगइसमावन्नगा' किं विग्रहगतिसमापन्नकाः, "अविग्गहगइसमावन्नगा' अविग्रहगतिसमापन्नकाः, इमे परिदृश्यमाना अनेकप्रकारका जीवाः किं विग्रहगतिसमापन्नका अविग्रहगतिसमापन्नका वा भवन्तीति प्रश्नः । भगवानाह-'गोयमे'-त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'विग्गहगइसमावन्नगा वि' विग्रहगतिसमापन्नका अपि 'अविग्गहगइसमावन्नगा वि' अविग्रहगतिसमापन्नका अपि उभयविधा अपि भवन्ति, जीवानामानन्त्यादुभयेषामपि बहूनां सद्भावात् । सम्प्रति नैरयिकविषयमाह-' नेरइया णं भंते' इत्यादि । 'नेरइया णं भंते' नैरयिकाः खलु भदन्त ! किं विग्गहगइसमावन्नगा, अविग्गहगइसमावन्नगा' किं विग्रहगतिसमापन्नका अविग्रहगतिसमापन्नकाः, नारकजीवानां किं विग्रहगतिमत्त्वमविग्रहग

अब सूत्रकार इसी विषय को नाना जीवों की अपेक्षा लेकर प्रकट करनेके निमित्त प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं कि—(जीवा णं भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा) हे भदन्त ! जीव क्या विग्रहगतिसमापन्नक हैं कि अविग्रहगतिसमापन्नक हैं ? अर्थात् ये अनेक प्रकार के दिखलाई पड़ने वाले जो जीव हैं वे विग्रहगतिवाले होते हैं या अविग्रहगतिवाले होते हैं ? (गोयमा ! विग्गहगइसमावन्नगा वि, अविग्गहगइसमावन्नगा वि) हे गौतम ! ये विग्रहगतिसमापन्नक भी होते हैं और अविग्रहगतिसमापन्नक भी होते हैं। क्यों कि जीव राशि अनन्त है, अतः इनमें दोनों गतिवाले अनेक जीवों का सद्भाव रहता है। (नेरइया णं भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा, अविग्गहगइसमावन्नगा ?) हे भदन्त ! नारक जीव क्या विग्रहगति समापन्नक

હવે સૂત્રકાર એજ વિષયનુ અનેક જીવોની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કરવા માટે પ્રશ્નોત્તર પૂર્વક સૂત્રો કહે છે—

(जीवा णं भंत ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा ?) હે ભગવન્ ! જીવો શું વિગ્રહગતિવાળા હોય છે કે અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે ? એટલે કે સંસારમા જે અનેક પ્રકારના જીવો નજરે પડે છે તેઓ શું વિગ્રહગતિવાળા હોય છે કે અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે ?

ઉત્તર—(गोयमा ! विग्गहगइसमावन्नगा वि, अविग्गहगइसमावन्नगा वि) હે ગૌતમ ! તેઓ વિગ્રહગતિવાળા પણ હોય છે અને અવિગ્રહગતિવાળા પણ હોય છે કારણ કે જીવરાશિ અનંત હોવાથી તેમા બંને ગતિવાળા જીવોનો સદ્ભાવ રહે છે

પ્રશ્ન— नेरइया णं भंत ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा ? હે ભગવન્ ! શું નારક જીવો વિગ્રહગતિવાળા હોય છે, કે અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે ?

'गोयमा' हे गौतम ! 'सिय विग्गहगइसमावन्नगे' स्यात् विग्रहगतिसमापन्नकः, 'सिय अविग्गहगइसमावन्नगे' स्यात् अविग्रहगतिसमापन्नकः योऽयं जीवः कदाचिद् ऋजुगतिमान् स्थितो वा भवति, नायं नियमो यत् सर्वथा विग्रहगतिमानेव अथवा सर्वथा अविग्रहगतिमानेवेति किन्तु कश्चिद्विग्रहगतिमान् कश्चिदविग्रह—गतिमान्, इति। 'एवं जाव वेमाणिए' एवं यावद्वैमानिकः, एवम् यथा जीव सामान्यविषये कदाचिद्विग्रहगतिमत्त्वं कदाचित् अविग्रहगतिमत्त्वं भगवता प्रदर्शितं तथैव नैरयिकादारभ्य वैमानिकपर्यन्तमुभयमपि बोध्यमिति भावः।

"जीव क्या विग्रहगतिसमापन्नक है या अविग्रहगतिसमापन्नक" है? इस प्रश्नका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि-(गोयमा! सिय विग्गहगइसमावन्नगे सिय अविग्गहगइसमावन्नगे, एवं जाव वेमाणिए) हे गौतम! कोई जीव विग्रहगतिसमापन्नक भी होता है और कोई जीव अविग्रहगति समापन्नक भी होता है। इस तरह यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये। तात्पर्य यह-कि जो यह जीव कदाचित् वक्रगतिवाला होता है, कदाचित् ऋजुगतिवाला अथवा स्थित विना गतिका होता है—ऐसा नियम नहीं है कि जीव सर्वथा विग्रहगतिवाला ही हो, अथवा—सर्वथा अविग्रहगति वाला ही हो, किन्तु कोई जीव विग्रहगतिवाला होता है और कोई अविग्रहगतिवाला होता है। इस तरह सूत्रकार ने जैसे सामान्य जोव के विषय में कदाचित् विग्रहगतिमत्त्व और कदाचित् अविग्रहगतिमत्त्व दिखाया है वैसा ही नैरयिकसे लेकर वैमानिक देवों तकमें कदाचित् विग्रहगतिमत्त्व और कदाचित् अविग्रहगतिमत्त्व जानना चाहिये।

ગૌતમે પૂછેલો પ્રશ્ન-"શું જીવ વિગ્રહગતિવાળો છે કે અવિગ્રહગતિવાળો છે?"

ઉત્તર—(गोयमा! सिय विग्गहगइसमावन्नगे सिय अविग्गहगइसमावन्नगे एवं जाव वेमाणिए) હે ગૌતમ! કોઈ જીવ વિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે અને કોઈ જીવ અવિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે આ પ્રમાણેનું કથન નારકીથી માંડીને વૈમાનિક દેવો સુધી સમજવુ તાત્પર્ય એ છે કે સંસારી જીવ કયારેક વક્રગતિવાળો હોય છે, અને કયારેક ઋજુગતિવાળો પણ હોય છે અથવા વિના ગતિવાળો (સ્થિત) પણ હોય છે એવો નિયમ નથી કે સંસારી જીવ હમેશા વિગ્રહગતિવાળો જ હોય અથવા સર્વથા અવિગ્રહગતિવાળો જ હોય પરન્તુ કોઈ જીવ વિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે અને કોઇ જીવ અવિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે આ રીતે સૂત્રકારે જેમ સામાન્ય જીવના વિષયમાં કયારેક વિગ્રહગતિ પણ અને કયારેક અવિગ્રહગતિપણું પ્રકટ કર્યું છે એજ પ્રમાણે નારકોથી લઇને વૈમાનિકો સુધીના જીવોમા પણ કયારેક વિગ્રહગતિ [illegible] કયારેક અવિગ્રહગતિપણુ સમજવું

विध्वप्येतद्विकल्पत्रय संपीजनीयमित्याशयेनाह—' एव ' मित्यादि, ' एव जीव एगिंदियवज्जो तियभंगो ' एवं जीवैकेन्द्रियवर्जितस्त्रिभङ्ग , एव नारकवत् जीवै केन्द्रियवर्जे इति सामान्यजीवविषयैकेन्द्रियविषयालापकवर्जित त्रिभङ्गो ज्ञेयः, सामान्यजीवसूत्रे एकेन्द्रियसूत्रे चैते पूर्वोक्तास्त्रयो भङ्गा न कर्तव्या , शेषेषु नैर यिकभावभिन्नैकोनविंशतिदण्डकेषु सर्वो भङ्गा विज्ञेया इति भाव ॥ सू० २॥

अथ गत्यधिकारात् च्यवनसूत्रमाह—' देवे णं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—देवे णं भंते! महिड्ढिए महज्जुइए महब्बले महा जसे महासोक्खे महाणुभावे अविउक्कंतिय चय चयमाणे किंचिकाल हिरिवत्तिय दुगुंछावत्तिय परिसहवत्तिय आहार नो आहारेइ, अहेण आहारेइ आहारिज्जमाणे आहारिए परिणामिज्जमाणे परिणामिए, पहीणे य आउए भवइ, जत्थ उववज्जइ त आउय पडिसवेदेइ, त जहा तिरिक्खजोणियाउय वा, मणुस्साउय वा, हता गोयमा देवेणं महड्ढिए जाव मणुस्साउय वा॥३॥

जीव विग्रहगतिसमापन्नक होते हैं। यह तीसरा भङ्ग है ३। असुर आदि को में भी ये तीन विकल्प जोड़ लेना चाहिये, इस आशय से सूत्रकार कहते हैं कि—(एवं जीव एगिंदियवज्जो तियभंगो) इसी तरह से ये तीन भंग सर्वत्र जानना चाहिये, परन्तु सामान्यजीवसूत्र में और एकेन्द्रियजीव सूत्र में ये तीन भंग नहीं करना चाहिये। बाकी तेईस दण्डकों में ये तीनों भंग नारक जीवों की तरह से ही जानना चाहिये॥ सू २॥

હોય છે બધા નારકે જીવો વિગ્રહગતિવાળા હોય છે આ ત્રીજો ભાંગો થયો. અસુરકુમાર વગેરેમાં પણ આ ત્રણે ભાંગા કરવા જોઈએ. તે બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (एवं जीव एगिंदियवज्जो तियभंगो) આ રીતે તે ત્રણે ભાંગા બધી જગ્યાએ સમજવા જોઈએ પરંતુ સામાન્યજીવસૂત્રમાં અને એકેન્દ્રિય જીવસૂત્રમાં આ ત્રણ ભાંગા હોવા નહીં બાકીના ૧૯ દંડકોમાં નારકો જીવોની જેમ જ તે ત્રણ ભાંગા સમજવા ॥સૂ. ૨॥

तिमत्त्वं वा भवतीति प्रश्नाशयः। भगवानाह-'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगइसमावन्नगा' सर्वेऽपि तावद् भवेयुरविग्रहगतिसमापन्नकाः, सर्वेऽपि नारका अविग्रहगतिमन्त एव भवन्ति, नारकजीवानामल्पत्वाद् विग्रहगतिमतां च कदाचिदसंभवात्, संभवेऽपि एकद्व्यादीनामेव संभवाद् विग्रहगतिमतिषेधवतां च सदैव बहूनां संभवात् इति प्रथमो भङ्गः १। 'अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा विग्गहगइसमावन्नगे य' अथवा अविग्रहगतिसमापन्नकाः विग्रहगतिसमापन्नकश्च, अनेके अविग्रहगतिमन्तो भवन्ति एको विग्रहगतिमान् भवतीति द्वितीयो भङ्गः २। 'अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा य विग्गहगइसमावन्नगा य' अथवा अविग्रहगतिसमापन्नकाश्च विग्रहगतिसमापन्नकाश्च, अनेके अविग्रहगतिमन्तः अनेके विग्रहगतिमन्तश्च भवन्तीति तृतीयो भङ्गः ३। असुरा-

---

होते हैं कि अविग्रहगतिसमापन्नक होते हैं। (सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगइसमावन्नगा) हे गौतम! जितने भी नारक जीव हैं वे सब अविग्रहगतिसमापन्नक ही होते हैं, क्यों कि नारक जीव अल्प होते हैं। अतः विग्रहगतिवाले जीवों की उन में प्रायः असंभवता ही होती है। यदि ऐसे जीवों की उनमें संभवता भी हो तो वे एक दो आदि ही संभवते हैं। तथा जिनकी विग्रहगति नहीं होती है ऐसे अनेक जीवों की वहां सदा ही संभवता रहती है। इस प्रकार यह प्रथम भंग है १। (अहवा-अविग्गहगइसमावन्नगा विग्गहगइसमावन्नगे य) अथवा वहां कितनेक नारक जीव अविग्रहगतिसमापन्नक होते हैं और कोई एक नारक जीव विग्रहगतिसमापन्नक होता है। ऐसा यह दूसरा भङ्ग है२। (अहवा-अविग्गहगइसमावन्नगा य विग्गहगइसमावन्नगा य) अथवा-वहां अनेक नारक जीव अविग्रहगतिसमापन्नक होते हैं और अनेक नारक

उत्तर—"सव्वे वि ताव होज्ज अविग्गहगइसमावन्नगा" हे गौतम! જેટલા નારક જીવો છે તેઓ અવિગ્રહગતિ વાળા જ હોય છે કારણ કે નારક જીવો અલ્પ હોય છે તેથી વિગ્રહગતિવાળા જીવોની તેમનામા સામાન્ય રીતે અસંભવતા જ હોય છે જો તેમનામા એવા જીવોની સંભાવના હોય તો પણ તેમનામા એવા જીવો એક, બે વગેરે જ સંભવે છે ત્યારે વિગ્રહગતિ વિનાના એનેક જીવોની ત્યા હમેશા સંભાવના જ રહે છે આ પ્રકારનો આ પહેલો ભાગો છે (अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा विग्गहगइसमावन्नगे य) અથવા ત્યા ઘણા નારક જીવો અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે અને કોઇ એક નારક જીવ વિગ્રહગતિ વાળો હોય છે આ ત્રીજો ભાગો છે (अहवा-अविग्गहगइसमावन्नगाय विग्गहगइसमावन्नगा य) અથવા ઘણા નારક જીવો અવિગ્રહગતિવાળા

तथिषेधाद्भ्युत्क्रान्तिकं तद् यथा स्यात्तथा 'चयमाणे' च्यवमानः, जीवन्नेव मरण मापद्यमान इत्यर्थः, किम् 'किंचिकाल' किञ्चित्कालम्, कियन्तमपि कालम् 'आहारं नो आहारेइ' इत्यग्रेतनेन सम्बन्धः कृतः कियत्कालं नाहरति तत्राह-'हिरिवत्तिय' ह्रीप्रत्ययम्, लज्जानिमित्त नाहारयतीति देवो हि च्यवनसमये उत्पत्तिस्थान पश्यति दृष्ट्वा च देवभवविलक्षण पुरुषोपभुज्यमानस्त्रीगर्भाशयरूपम् ' तत्राह स्वकीयं सर्वसुखदं स्थानं परित्यज्य यास्यामी 'ति कृत्वा नाहरति, तथा 'दुगुंछावत्तिय' जुगुप्सामत्ययं, कुत्सानिमित्त शुक्रशोणितादेरुत्पत्तिकारणस्य जुगुप्साकारणत्वात्, 'परिसहवत्तिय' परिषहप्रत्ययम्, इह प्रकरणात् परिषहशब्देनारति

न्त्य બળવાળા હો (अभिउक्कंतियं चयं चयमाणे) અને મરવાને સન્મુખ હો રહ્યા હો-અમી જ્યાં થી ચ્યુત નહીં હુમા હો જીવતે જી જ જે મરવાની તૈયારી કર રહ્યા હો- એવા જ દેવ (किंचि काल आहारं नो आहारेइ) કુછ કાલતક આહાર નહીં લેતા હૈ। કુછ કાલતક ઉસકે આહાર નહીં લેને મેં કારણ યહ હૈ કિ યહ (हिरिवत्तियं) લજ્જિત હોતા હૈ-અર્થાત્ દેવ ચ્યવનસમય મેં અપને પ્રાપ્ત હોનેવાલે ઉત્પત્તિસ્થાન કો દેખતા હૈ સો દેવભવસે વિલક્ષણ અપને ઉત્પત્તિસ્થાનકો કિ જો પુરુષદ્વારા ભોગી જાતી સ્ત્રીકે ગર્ભાશયરૂપ હોતા હૈ દેખકર ઉસે યહ વિચાર આતા હૈ કિ મૈં ઉસ સ્થાન મેં અપને ઇસ સર્વસુખદ સ્થાન કો છોડકર આઉંગા, ઇસ વિચાર સે વહ લજ્જાયુક્ત બનકર ખાતા નહીં હૈ (दुगुंछावत्तियं) નહીં ખાને મેં દૂસરા કારણ ઉસે ઘૃણા આતી હૈ, ક્યોં કિ વહ યહ જાનતા હૈ કિ મેરી ઉત્પત્તિ કા કારણ શુક્રશોણિત આદિ હૈ, ઐસા જાનકર ઉસે ઘૃણા ગ્લાનિ આતી હૈ। (परिसहवत्तियं) યહાં પ્રકરણવશ પરીષહ શબ્દ સે

વાની ક્રિયા વગેરેમા અવિલમ્બ બતાવાયો હોય, "अभिउक्कंतियं चयं चयमाणे" અને જે મૃત્યુની નજીક પહોંચી ગયો હોય એ કે હજી ત્યાંથી ચ્યવન (મરણ) થયુ નથી પણ જે મરણની તૈયારીમા હોય છે " किंचिकालं आहारं नो आहारेइ" તે દેવ કેટલોક સમય આહાર લેતો નથી "हिरिवत्तियं" તે લજ્જિત થાય છે કારણકે દેવ પોતાના ચ્યવન સમયે પોતાનું ભાવિ ઉત્પત્તિસ્થાન પોતાના જ્ઞાનથી જુવે છે તે ઉત્પત્તિસ્થાન બીજા ભોગાયેલરૂપ હોય છે ચ્યવનકાળે દેવના મનમા એવો વિચાર આવે છે કે આ સુખના સ્થાનને છોડીને મારે જવા દુઃખદ સ્થાનમા જવુ પડ્યું ! આ વિચાર આવવાથી લજ્જાયુક્ત બનીને તે ખાતો નથી "दुगुंछावत्तिय" નહીં ખાવાનું બીજુ કારણ તેના મનમાં ઉત્પન્ન થતી ઘૃણા પણ છે કારણકે પોતાની ઉત્પત્તિનું કારણ શુક્ર શોણિત વગેરે છે, એ જાણીને તેને ઘૃણા થાય છે "परिसहवत्तियं" અહીં "પરીષહ" પદ વડે

छाया—देवो भदन्त ! महर्द्धिको महाद्युतिको महाबलो महायशा महा सौख्यो महानुभावोऽव्युत्क्रान्तिकम् चयं च्यवमानः किञ्चित्कालं हीमत्ययम् जुगु प्साप्रत्ययं परिषहप्रत्ययमाहारं नो आहरति, अथ खलु आहरति आहियमाणमाहृत परिणम्यमानं परिणतं प्रहीणं चायुष्कं भवति, यत्रोपपद्यते तदायुष्कं प्रतिसंवेद यति, तत् तिर्यग्योन्यायुष्कं वा मनुष्यायुष्कं वा ? हंत गौतम! देवो महर्द्धिको याव मनुष्यायुष्कं वा ॥ सू० ३ ॥

टीका—' देवेणं भंते ' देवः खलु भदन्त ' महिड्ढिए ' महर्द्धिकः विमान परिवाराद्यपेक्षया देवानां महर्द्धिकत्वं विज्ञेयम् । ' महज्जुइए ' महाद्युतिकः महती शरीराभरणाद्यपेक्षयाऽतिशायिनी द्युतिर्विद्यते यस्य स महाद्युतिकः । ' महाबले महाबलः शरीरप्राणापेक्षया, ' महाजसे ' महायशाः, महद्धर्द्धादिसंपन्नत्वेन अति शयितख्यातिमान्, ' महासोक्खे ' महासौख्यः, महदत्यधिकं सौख्यं यस्य स महासौख्यः विशिष्टसुखसंपन्न इत्यर्थः, ' महानुभावे ' महानुभावः, विशिष्टवैक्रियादि करणाचिन्त्यसामर्थ्यः, ' अविउक्कंतियं ' अव्युत्क्रान्तिकम् , व्युत्क्रान्तिः-मरणं

अब सूत्रकार गति के अधिकार होने से च्यवनसूत्र कहते हैं— ' देवेणं भंते ! ' इत्यादि ।

टीकार्थ–(देवेणं भंते !)हे भदन्त ! ऐसा देव (महिड्ढिए) जो महर्द्धिक हो विमान, परिवार आदिकी अपेक्षा से मोटी ऋद्धिवाला हो, (महज्जुइए) महाद्युतिक हो शरीर आभरण आदि की अपेक्षा से जिसकी द्युति बहुत अधिक हो, (महब्बले) महाबल हो–शारीरिक अपेक्षासे विशिष्ट बलशाली हो (महाजसे) महायशावाले हो महाऋद्धि आदिसे संपन्न होनेके कारण विशिष्टख्यातिवाला हो (महासोक्खे) विशिष्ट सुख संपन्न हो(महानुभावे) विशिष्ट रीति से अनेक प्रकार के रूप करने वगैरह की क्रिया में अचि

ગતિનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર દેવતાના ચ્યવનસૂત્રો કહે છે ' देवेणं भंते ! महिड्ढिए " ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ–(देवेणं भंते !) હે ભગવન્ ! જે દેવ (महिड्ढिए) મહર્દ્ધિક હોય એટલે કે (વિમાન પરિવાર વગેરેની અપેક્ષાએ મહાઋદ્ધિવાળો હોય) (महज्जुइए) મહાદ્યુતિવાળો હોય (શરીર આભૂષણો વગેરેની અપેક્ષાએ જેની દ્યુતિ–કાંતિ ઘણીજ વધારે હોય) (महाबले) ઘણો બળવાન હોય–શારીરિક શક્તિની અપેક્ષાએ વિશિષ્ટ બળયુક્ત હોય (महाजसे) ઘણો યશસ્વી હોય, મહાઋદ્ધિ વગેરેથી યુક્ત હોવાને કારણે જેની ખ્યાતિ ઘણીજ હોય, "महासोक्खे" વિશિષ્ટ સુખ-સંપન્ન હોય, "महानुभावे" મહાનુભાવ હોય એટલે કે અનેક પ્રકારના રૂપ કર-

निष्ठाकालयोरभेदादाहारकालस्याल्पता कथिता-स्वल्पमाहार एवाहारीत्यर्थः । परिणामिज्जमाणे परिणामिए' परिणम्यमान परिणतम्, 'पहीणे य आउए भवइ' प्रहीणं चायुष्क भवति, देवायुष्क च तदा क्षिप्तं भवति, 'जत्थ उववज्जइ' यत्रो पपद्यते, देवशरीर परित्यजन यादृशयोनिविशेषे समुत्पत्स्यमानत्वम्, 'तं आउय पडिसंवेदेइ' तदायुष्क-अनिर्दिष्टायुष्कं प्रतिसंवेदयति तत्स्थलस्यायुष्क कर्मणोऽनुभव करोतीत्यर्थः, अथ गन्तव्यस्थानायुष्कस्य निर्देशं करोति-'से णट्ठा' तथया-'तिरिक्खजोणियाउए वा' तिर्यग्योनिकायुष्क वा 'मणुस्साउए वा' मनुष्यायुष्क वा, तिर्यगादियोनौ देवानां समुत्पत्तिर्भवति न तु कदाचिदपि देवश्च्युता देवलोके नरके वा गच्छन्तीति देवनारकयोः प्रतिषेधो कृतो भवति इति

अर्थात् प्रारंभकाल और निष्ठाकाल अर्थात् समाप्तिकाल इन दोनों में यहां अभेद का उपचार किया गया है। इससे आहार में अल्पता कही गई है, अतः इससे यह ज्ञात होता है कि वह स्वल्पमात्रा में आहार लेता है। (पहीणे य आउए भवइ) इस तरह उसका आयुष्क-देवायुष्क समाप्त हो जाता है। (जत्थ उववज्जइ तं आउयं पडिसंवेदेइ) तो देव शरीर को छोड़कर आगे जिस योनिविशेष में इसे उत्पन्न होना है वहां के आयुष्क का यह अनुभव करता है सो हे भदन्त! वह किस का आयुष्य जानना चाहिये-(तिरिक्खजोणियाउए वा, मणुस्साउए वा) तिर्यग्योनिक का? कि मनुष्य का यहां जो ऐसा प्रश्न आयुष्य संवेद को लेकर किया गया है उसका कारण यह है कि देवों की उत्पत्ति मरने के बाद या तो मनुष्यगति में होती है या तिर्यंचगति में होती है, अन्य गतियों में नहीं, क्यों कि देव च्युत होकर देवलोक में अथवा नरक में

કાળ કહ્યો છે કે પ્રારંભિકાળ કે બન્નેમાં અહીં અભેદનો ઉપચાર કરાયો છે. તેના વડે આહારમાં અલ્પતા કહેવામાં આવી છે તેથી એ વાત બરાબર થાય છે કે તે સ્વલ્પપ્રમાણમાં-થોડા પ્રમાણમાં જ આહાર ગ્રહણ કરે છે

(पहीणे य आउए भवइ) ત્યારબાદ છેવટે તેનું આયુષ્ય (દેવાયુષ્ય) સમાપ્ત થઈ જાય છે (जत्थ उववज्जइ तं आउय पडिसंवेदेइ) તે પછી દેવનું શરીર છોડીને જે યોનિવિશેષમાં તેને ઉત્પન્ન થવાનું હોય છે તે યોનિવિશેષના આયુષ્યનો તે અનુભવ કરે છે તો હે ભગવન્! તે કોનું આયુષ્ય સમજવું? (तिरिक्खजोणियाउए वा, मणुस्साउए वा) તિર્યગ્યોનિનું કે મનુષ્યયોનિનું તે આયુષ્ય સમજવું? અહીં આયુષ્યના વિષયમાં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે કે દેવતા મરીને બીજો કે બચીને મનુષ્યગતિમાં અથવા તિર્યંચગતિમાં

परिषहो ग्राह्यस्तेनारतिपरिषहनिमित्तमाहारं न गृह्णाति, लोकेपि दृश्यते अरतिप्रत्ययात् आहारग्रहणाभाव इति, 'आहारं नो आहारेइ' आहारं नो आहरति, मनसा तथाविध-पुद्गलोपादानरूपं देवसम्बन्धिकं दिव्यमाहारं न करोतीति, अहेणं आहारेइ' अथ खलु आहरति, लज्जादिक्षणानन्तरमाहारमाहरति क्षुधावेदनीयस्य कर्मणश्चिरकालं सोढु-मशक्यत्वात् 'आहरिज्जमाणे आहारिए' आहियमाणमाहृतम्, अनेन क्रियाकाल

अरतिपरीषह ग्रहण करना चाहिए इससे यह ध्वनित होता है कि उसे इन समस्त कारणों को लेकर चित्त में चैन नहीं पड़ती है-वह जैसे लोक में लोग चैन न होने के कारण कुछ समय आहार ग्रहण नहीं करते हैं अगर करते हैं तो अल्प करते हैं, वैसे ही चित्त में चैन के अभाव से - अर्थात् बेचैन होने से आहार ग्रहण नहीं करता है। देवों के मानसिक आहार होता है कवलाहार तो होता नहीं है अतः वह देव मन से तथाविध पुद्गलोपादानरूप देवसंबंधी दिव्य आहार नहीं लेता है। अर्थात् मानसिक आहार नहीं करता है! (अहेणं आहारेइ) क्षुधावेदनीय कर्म को चिरकालतक सहने में असमर्थ होने के कारण लज्जा वगैरह हो चुकने के बाद वह आहार करता है-मन से तथाविध पुद्गलों का ग्रहण करता है-(आहारिज्जमाणे आहारिए परिणामिज्जमाणे परिणामिए) सो लिया जाता वह आहार लिया जा चुका, तथा परिणाम को प्राप्त हो रहा वह आहार परिणम गया ऐसा कहा जाता है क्यों कि क्रियाकाल

"अरतिपरीषह" अर्थात् अहेणु करवो उपरोक्त कारणोने लीधे तेने चेन पडतुं नथी तेनुं मन उद्विग्न रहे छे आ लोकमां पणु मन उद्विग्न होय छे त्यारे लोको आहार अहणु करता नथी अने अहणु करे तो घणो ज ओछो आहार अहणु करे छे, एज प्रमाणे देवो पणु मननी उद्विग्नताने लीधे आहार लेता नथी देवो मानसिक इच्छा मात्रथी ज शेम आहार ले छे, कवलाहार लेतां नथी एटले अही एम समजवु के ते देव मनथी तथाविध पुद्गलोपादन रूप देव संबंधी दिव्य आहार लेतो नथी एटले के मानसिक आहार पणु अहणु करतो नथी (अहे ण आहारेइ) अथवा क्षुधावेदनीय कर्मने लाणा समय सुधी सहन करवाने असमर्थ होवाथी ते लज्जा वगेरे उत्पन्न थया पछी पणु अल्प आहार अहणु करे छे-मनथी तथाविध पुद्गलोने बहुज थोडा प्रमाणुमां अहणु करे छे. (आहारिज्जमाणे आहारिए परिणामिज्जमाणे परिणामिए) तो लेवातो ते आहार लेवाई चुकेलो तथा परिणमनने प्राप्त थतो ते आहार परिणमी गयो, एवु कही शकाय छे कारणुके क्रियाकाळ एटले के प्रारंभकाळ अने निष्ठा

केणट्ठेणं? गोयमा! ओरालिय वेउव्विय आहारयाइं पडुच्च असरीरी वक्कमेइ, तेया कम्माइं पडुच्च ससरीरी वक्कमइ से तेणट्ठेण गोयमा०! जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे तप्पढमयाए किं आहारं आहारेइ, गोयमा! माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभय संसिट्ठं कलुस किब्बिसं तप्पढमयाए आहारं आहारेइ। जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे किं आहारं आहारेइ, गोयमा! जं से मायाणाणपिहाओ रस विगईओ आहारं आहारेइ, तदेकदेसेणं ओयं आहारेइ। जीवस्स णं भंते! गब्भगयस्स समाणस्स अत्थेय उच्चारेइ वा, पासवणेइ वा, खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा वतेइ वा पित्तेइ वा? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते!० गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे जं आहारेइ तं चिणाइ तं सोइंदियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए अट्ठि अट्ठिमिंज केस मंसु रोम नहत्ताए, से तेणट्ठेणं०। जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए, गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे से केणट्ठेणं, गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ सव्वओ परिणामेइ सव्वओ उस्ससइ सव्वओ निस्ससइ अभिक्खणं आहारेइ, अभिक्खणं परिणामेइ, अभिक्खणं उस्ससइ, अभिक्खणं निस्ससइ, आहच्च आहारेइ, आहच्च परिणामेइ, आहच्च उस्ससइ, आहच्च नीससइ। माउ जीवरसहरणी पुत्तजीवरसहरणी, माउजीवपडिबद्धा पुत्त जीवफुडा तम्हा आहारेइ, तम्हा परिणामेइ, अवरा विय णं

किं सत्यमिति प्रश्नः। भगवानाह—'हंता' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हंत हे गौतम! हंतेति स्वीकारे 'देवेणं महिड्ढिए जाव मणुस्साउयं वा' देवः खलु महर्द्धिको यावत् मनुष्यायुष्कं वा, अत्र यावत्पदेन प्रश्नोक्तः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः। महर्द्धिकत्वादिगुणविशिष्टो देवः परिभोगेन देवलोके स्वकीयायुष्कं कर्म परिसमाप्य देवलोकान्निर्गच्छन् प्राप्स्यमानतिर्यग्योनिकाद्यायुषः प्रतिसंवेदनं करोतीति भावः॥ सू० ३॥

गर्भशास्त्रम्—

उत्पत्त्यधिकाराद् गर्भसूत्रमाह—'जीवे णं' इत्यादि।

मूलम्—जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ, गोयमा! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ, से केणट्ठेणं भंते! गोयमा! दव्विंदियाइं पडुच्च अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ, से तेणट्ठेणं०। जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ, गोयमा! सिय सरीरी वक्कमइ, सिय असरीरी वक्कमइ, से

जन्म कभी भी नहीं लेता है ऐसा सिद्धान्त है। अतः यहां ऐसा प्रश्न देव नारक संबंधी आयुष्य को निषिद्ध कर किया गया है। (हंता गोयमा! देवेणं महिड्ढिए जाव मणुस्साउयं वा), हॉ गौतम! महर्द्धिकत्वादिगुण विशिष्ट देव अपनी आयु की परिसमाप्ति होने पर वहां से च्यव कर—अर्थात् देवलोक से निकलकर, तिर्यग्योनिक आदि जीवों की आयु का अनुभव करता है! यहां यावत् पद से प्रश्नसूत्रोक्त सब पाठ ग्रहण कर लेना चाहिये॥ सू० २॥

જ ઉત્પન્ન થાય છે દેવલોકમાથી ચ્યવીને દેવ દેવલોકમાં કે નરકગતિમાં કદિ પણ ઉત્પન્ન થતા નથી, એવો સિદ્ધાંત છે તેથી અહીં પ્રશ્નમા દેવાયુ અને નરકાયુનો ઉલ્લેખ થયો નથી

ઉત્તર—(हंता गोयमा! देवेणं महिड्ढिए जाव मणुस्साउयं वा) હે ગૌતમ! મહર્દ્ધિકપણુ વગેરે ગુણસપન્ન દેવ પોતાનું આયુષ્ય પૂરૂ થતાં ત્યાથી ચ્યવીને—દેવલોકમાંથી નીકળીને—તિર્યંગ્યોનિક જીવોના અથવા મનુષ્યગતિના જીવોના આયુષ્યનો અનુભવ કરે છે અહી "जाव" (यावत्) પદથી પ્રશ્નસૂત્રોક્ત તમામ પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ॥ સૂ ૩॥

सर्वेत आहरति सर्वेत परिणामयति सर्वेत उच्छ्वसति सर्वतो नि श्वसति अभीक्ष्ण माहरत्यभीक्ष्ण परिणामयत्यभीक्ष्णमुच्छ्वसत्यभीक्ष्ण निःश्वसति, आहत्याहरति आहृत्य परिणामयति आहृत्योच्छ्वसति आहृत्य नि श्वसति, मातृजीवरसहरणी पुत्र जीवरसहरणी मातृजीवप्रतिबद्धा पुत्रजीवस्पृष्टा तस्मादाहरति तस्मात्परिणामयति, अपरापि च पुत्रजीव प्रतिबद्धामातृजीवस्पृष्टा तस्मात्पिबतीति तस्मादुपचिनोति तेनाहारेण यावत् नो मनुष्येण कावलिकमाहारमाहर्तुम्, कति खलु भदन्त ! मातृ ङ्गानि मङ्गानि ? गौतम ! तिण्णि मातृङ्गानि मङ्गानि तद्यथा-मांस शोणित मस्तुलुङ्गम्। कति खलु भदन्त ! पितृङ्गानि मङ्गानि, गौतम ! तीण्णि पितृङ्गानि मङ्गानि तद्यथा-अस्थि, अस्थिमज्जा, केशश्मश्रुरोमनखा, अम्बापेत्तिकं खलु भदंत ! शरीरं किय त्कालं संतिष्ठते, गौतम ! यावन्तं कालं तस्य भवधारणीयं शरीरमव्यापन्नं भवति, एतावन्तं कालं संतिष्ठते, अथ खलु समये समये ऽपकृष्यमाणं ऽपकृष्यमाणं चरमकालसमये व्युच्छिन्नं भवति ॥ सू० ४ ॥

टीका—'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त ! 'गब्भं वक्कममाणे' गर्भं व्युत्क्रामन्, गर्भे समुत्पद्यमान इत्यर्थः, 'किं सइंदिए वक्कमइ अणिंदिए वक्कमइ' किं सेन्द्रियो व्युत्क्रामति अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, सेन्द्रियः=इन्द्रियविशिष्टः, अनिन्द्रियः=इन्द्रियरहितः, गर्भावस्थायां जीवस्येन्द्रियाणि भवन्ति न वेति प्रश्नाशयः।

गर्भप्रकरण

उत्पत्ति का अधिकार होने से ही सूत्रकार अब गर्भसूत्र को कहते हैं—'जीवे णं भंते !' इत्यादि।

टीकार्थ—(जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ) हे भदन्त ! गर्भमें उत्पन्न होते समय जीव क्या इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है ? कि विना इन्द्रिय के उत्पन्न होता है ? तात्पर्य इस प्रश्न का यह है के गर्भावस्था में जीव की इन्द्रियां होती हैं कि नहीं

ગર્ભપ્રકરણ—

ઉત્પત્તિનો અધિકાર આવતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર અબ સૂત્રનું કથન કરે છે—'जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे" इत्यादि।

ટીકાર્થ—"जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ ?" હે ભગવન્ ! ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે શું જીવ ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે ? કે ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે ? આ પ્રશ્નનો આશય એવો છે કે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઇન્દ્રિયો હોય છે કે નથી હોતી ?

पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाइ, तम्हा उवचिणाइ, से तेणट्ठेणं जाव नो पभूसुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए। कइ णं भंते माइयंगा पन्नत्ता, गोयमा ! तओ माइयंगा पन्नत्ता, तं जहा—मंसे, सोणिए, मत्थुलुंगे। कइ णं भंते ! पिइयंगा पन्नत्ता, गोयमा! तओ पिइयंगा पन्नत्ता, तं जहा—अट्ठी, अट्ठिमिंजा, केसमंसुरोमनहे। अम्मापिइए णं भंते ! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? गोयमा ! जावइयं से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवइ एवइयं कालं संचिट्ठइ, अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे वोक्कसिज्जमाणे चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ ॥ सू०४ ॥

छाया—जीवो भदंत ! गर्भं व्युत्क्रामन् किं सेन्द्रियो व्युत्क्रामति अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, गौतम ! स्यात्सेन्द्रियो व्युत्क्रामति स्यात् अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, तत्केनार्थेन? गौतम! द्रव्येन्द्रियाणि प्रतीत्यानिन्द्रियो व्युत्क्रामति भावेन्द्रियाणि प्रतीत्य सेन्द्रियो व्युत्क्रामति, तत्तेनार्थेन०। जीवो भदन्त ! गर्भं व्युत्क्रामन् किं सशरीरी व्युत्क्रामति, अशरीरी व्युत्क्रामति?, गौतम ! स्यात् सशरीरी व्युत्क्रामति, स्यादशरीरी व्युत्क्रामति, तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, गौतम ! औदारिकवैक्रियाहारकाणि प्रतीत्याशरीरी व्युत्क्रामति, तैजसकार्मणे प्रतीत्य सशरीरी व्युत्क्रामति तत्तेनार्थेन गौतम०। जीवो भदन्त ! गर्भं व्युत्क्रामन् तत्प्रथमतया कमाहारमाहरयति? गौतम ! मात्रोजः पितृशुक्रम् तद् तदुभयसंश्लिष्टं कलुषं किल्विषं तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहरति। जीवो भदन्त ! गर्भगतः सन् कमाहारमाहरति?। गौतम ! यत्तस्य माता नानाविधा रसविकृतीराहारमाहरति, तदेकदेशेन ओज आहरति, जीवस्य खलु भदन्त ! गर्भगतस्य सतोऽस्ति उच्चार इति वा प्रस्रवणमिति वा खेल इति वा शिंघानकमिति वा वान्तमिति वा पित्तमिति वा?, नायमर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन० गौतम ! जीवो गर्भगतः सन् यदाहरति तच्चिनोति तत् श्रोत्रेन्द्रियतया यावत् स्पर्शेन्द्रियतया अस्थ्यस्थिमज्जाकेशश्मश्रुरोमनखतया, तत्तेनार्थेन० जीवो भदन्त ! गर्भगतः सन् प्रभुर्मुखेन कावलिकमाहारमाहर्तुम् ?, गौतम ! नायमर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन ? गौतम ! जीवो गर्भगतः सन्

सेन्द्रियो भूत्कामति, भावेन्द्रियाणि उपयोगात्मकानि, तानि तु जीवस्य सर्वदा एवावस्थायेव भवन्ति उपयोगस्य जीवेन सह तादात्म्यादिति तदभिप्रायेण गर्भेऽपि

इन्द्रियों सहित उत्पन्न होता है। इस कारण मैं ऐसा कहता हूँ कि जीव गर्भ में किसी अपेक्षा से-इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से इन्द्रिय विना भी उत्पन्न होता है। निवृत्ति और उपकरण के भेद से द्रव्येन्द्रिय दो प्रकार की होती हैं। द्रव्येन्द्रिय की रचना जीव के पर्याप्तावस्था में होती है, अपर्याप्तावस्था में नहीं। अतः गर्भ में उत्पन्न होने वाला जीव जबतक विग्रह गति में रहता है तबतक उसके इन्द्रियपर्याप्ति न होनेके कारण वह अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियका-रहता है तथा गर्भ में उपजते समय भी वह जीव उसी समय इन्द्रियवाला नहीं होता है, क्यों कि जबतक इन्द्रियों की रचना उसकी पूर्ण नहीं हो जाती तबतक उसकी इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण हुई नहीं कहलाती है, अतः इन्द्रियपर्याप्ति की पूर्णता होने पर ही द्रव्येन्द्रियों की पूर्णता होती है। गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव के इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है, इस अपेक्षा से वह विना इन्द्रिय का उत्पन्न होता है ऐसा कहा गया है, क्यों कि उस समय उसके द्रव्येन्द्रिय का अभाव है। लब्धि और उपयोग, ये भाव इन्द्रियां हैं, इनकी अपेक्षा से जीव गर्भ में इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है ऐसा कहा है, क्यों कि भावेन्द्रियां जीव के सर्वकाल में रहती हैं।

ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે અને ભાવેન્દ્રિયની અપેક્ષાએ જીવ ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે તે કારણે હું એવું કહું છું કે ગર્ભમાં જીવ કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય સહિત ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય રહિત ઉત્પન્ન થાય છે નિવૃત્તિ અને ઉપકરણ ઇન્દ્રિયના ભેદથી દ્રવ્યેન્દ્રિયો બે પ્રકારની હોય છે દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના જીવની પર્યાપ્તાવસ્થામાં થાય છે, અપર્યાપ્તાવસ્થામાં થતી નથી તેથી ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થનારો જીવ જ્યાંસુધી વાંકો વળેલો રહે છે ત્યાંસુધી તેને ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ ન હોવાને કારણે તે અનિન્દ્રિય-ઇન્દ્રિયો વિનાનો રહે છે વળી ગર્ભમાં ઉપજતી વખતેજ તે જીવ ઇન્દ્રિયોવાળો હોતો નથી. કારણકે જ્યાંસુધી તેની ઇન્દ્રિયોની રચના થતી નથી ત્યાંસુધી તેની ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ થઈ શકતી નથી તેથી ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિની પૂર્ણતા થાય ત્યારે જ દ્રવ્યેન્દ્રિયોની પૂર્ણતા થાય છે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ હોતી નથી, એ રીતે વિચાર કરતાં ' તે ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે' એવું કહું છે, કારણકે તે સમયે તેનામાં દ્રવ્યેન્દ્રિયનો અભાવ હોય છે લબ્ધિ અને ઉપયોગ જે બે ભાવઇન્દ્રિયો છે તેમની અપેક્ષાએ એવું કહેવાયું છે કે જીવ ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે કારણકે ભાવેન્દ્રિયો જીવમાં સદાકાળ રહે છે.

भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सिय सइंदिए वक्कमइ सिय अणिंदिए वक्कमइ' स्यात् सेन्द्रियो व्युत्क्रामति स्यादनिन्द्रियो व्युत्क्रामति उभावपि पक्षौ भवतः कदाचित् इन्द्रियविशिष्टोपि गर्भे समुत्पन्नो भवति जीवः कदाचिदिन्द्रियराहित्येनाप्युत्पद्यते गर्भे जीवः। 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन हे भदन्त! तत्केन कारणेन एवमुच्यते, यदिन्द्रियविशिष्टोप्युत्पद्यते इन्द्रियरहितोप्युत्पद्यते? इति भावः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'दव्विंदियाइं' द्रव्येन्द्रियाणि निर्वृत्त्युपकरणलक्षणानि 'पडुच्च' प्रतीत्य-द्रव्येन्द्रियापेक्षयेत्यर्थः 'अणिंदिए वक्कमइ' अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति समुत्पद्यते, द्रव्येन्द्रियाणि इन्द्रियपर्याप्तौ सत्यामेव भविष्यन्तीत्यतो गर्भे समागच्छन् अनिन्द्रिय एव जीव उत्पद्यते तदानीं द्रव्येन्द्रियस्याभावात् 'भाविंदियाइं' भावेन्द्रियाणि लब्ध्युपयोगलक्षणानि 'पडुच्च' प्रतीत्य आसाद्येत्यर्थः, 'सइंदिए वक्कमइ'

होती हैं? इस का उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (गोयमा! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ) हे गौतम! जीव इन्द्रिय सहित भी उत्पन्न होता है और इन्द्रिय विना का भी होता है। इस तरह दोनों पक्ष मान्य हुए हैं। किसी अपेक्षा से इन्द्रियविशिष्ट भी उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से इन्द्रिय विना का भी उत्पन्न होता है। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि इन्द्रिय सहित भी जीव गर्भ में उत्पन्न होता है और इन्द्रिय विना का भी जीव गर्भ में उत्पन्न होता है (गोयमा! दव्विंदियाइं पडुच्च, अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ से तेणट्ठेणं०) हे गौतम! द्रव्येन्द्रियों के अपेक्षा करके जीव गर्भ में विना इन्द्रियों का उत्पन्न होता है और भावइन्द्रियों की अपेक्षा करके जीव गर्भ में

ઉત્તર—"गोयमा! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ" હે ગૌતમ! જીવ ગર્ભમા ઇન્દ્રિય સહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઇન્દ્રિય વિના પણ ઉત્પન્ન થાય છે આ રીતે બન્ને પક્ષનો સ્વીકાર કર્યો છે

પ્રશ્ન—"से केणट्ठेण ઇત્યાદિ" હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જીવ ગર્ભમા ઇન્દ્રિયસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઇન્દ્રિય વિના પણ ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર—"गोयमा! दव्विंदियाइं पडुच्च, अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ से तेणट्ठेण" હે ગૌતમ! દ્રવ્યેન્દ્રિયોની અપેક્ષાએ જીવ

वा भवति ? नन्नु सशरीरिणश्च शरीरकारणस्य मातृपितृशोणितादेरभावात् कथं सशरीरत्वं संभवति ? अशरीरिणश्च शरीराभावे रूपमुत्पद्यते ? नहि अशरीरस्य जीवस्य खपुष्पस्येवोत्पत्तिर्दृष्टा समवति वा, तथा सति मुक्तस्यापि पुनरुत्पत्तिप्रसक्तिः स्यादिति चेदाह—अपेक्षाभेदात् शरीराशरीरसमवादिरूपाभ्यपेक्षयोत्तरयति भगवान् —' गोयमा ' इत्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' सिय ससरीरी चयइ ' स्यात् सशरीरी च्यवते, ' सिय असरीरी चयइ ' स्यात् अशरीरी च्यवतेऽपि, गौतमः पृच्छति—' से केणट्ठेणं ' तत् केनार्थेन,—केन कारणेन एवमुच्यते ? । भगवानाह—' गोयमा ! ' हे गौतम ! ' ओरालिय-वेउव्विय-आहारयाइं पडुच्च '

उत्पन्न होता है—तो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्यों कि उस समय शरीर के कारणभूत मातापिता संबंधी शुक्रशोणित आदि का अभाव रहता है। यदि कहा जाये कि अशरीरी उत्पन्न होता है, तो ऐसा कहना भी ठीक नहीं बनता, कारण कि बिना शरीर के सिद्धों की तरह जीव की उत्पत्ति ही नहीं हो सकती है ? सो ऐसी आशंका ठीक नहीं, कारण—अपेक्षाभेद से शरीरसहितपना और शरीररहितपना माना गया है और इसी आशय से भगवान् ने इसका उत्तर यों दिया है—(गोयमा ! सिय ससरीरी चयइ, सिय असरीरी चयइ)हे गौतम! जीव गर्भ में किसी अपेक्षा से सशरीरी भी उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से बिना शरीर के भी उत्पन्न होता है। (से केणट्ठेणं*) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि जीव गर्भ में शरीररहित भी उत्पन्न होता है और शरीररहित भी उत्पन्न होता है ?

---

* એ પ્રમાણે કેવા કારણથી આપ એમ કહો છો કે જીવ ગર્ભમાં શરીરરહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને શરીરરહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે ? તે સમયે શરીરના કારણભૂત માતાપિતાના શુક્ર શોણિત વગેરેનો અભાવ હોય છે એ પ્રમાણે કહેવામાં આવે કે તેવો અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે—તો તે પણ યોગ્ય લાગતું નથી કારણ કે શરીર વિના સિદ્ધોની જેમ જીવની ઉત્પત્તિ જ થતી નથી. ઉત્પન્ન થવાની અપેક્ષાએ કોઈ જીવ શરીરસહિત અને કોઈ જીવ શરીરરહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રમાણે અપેક્ષાભેદથી શરીરયુક્તપણું અને શરીરરહિતપણું માનવામાં આવેલ છે. અને એ જ આશયથી ભગવાને એવો ઉત્તર આપ્યો છે—(गोयमा ! सिय सरीरी चयइ सिय असरीरी चयइ) હે ગૌતમ ! કોઈ અપેક્ષાએ જીવ ગર્ભમાં શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ તે અશરીરી (શરીરરહિત) પણ ઉત્પન્ન થાય છે

जीवः सेन्द्रिय एव उत्पद्यते इति भावार्थः। ' से तेणट्ठेणं० ' तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते कदाचित् सेन्द्रिय उत्पद्यते कदाचिदनिन्द्रिय उत्पद्यते, द्रव्येन्द्रियापेक्षया अनिन्द्रियः भावेन्द्रियापेक्षया तु सेन्द्रियः गर्भगतस्य जीवस्येन्द्रियवैशिष्ट्यावैशिष्ट्यं प्रतिपाद्य शरीरवैशिष्ट्यं प्रतिपादयितुमाह—'जीवे ण भंते ' इत्यादि, ' जीवे णं भंते ' जीवः खलु भदन्त ! ' गब्भं वक्कममाणे ' गर्भं व्युत्क्रामन् गर्भे उत्पद्यमानः किं ससरीरी वक्कमइ असरीरीवक्कमइ ' किं सशरीरी व्युत्क्रामति, अशरीरी व्युत्क्रामति, गर्भे समुत्पद्यमानो जीवः किं शरीरविशिष्टो भवति शरीररहितो

उपयोग भावेन्द्रियों में है, अतः उपयोगात्मक भावेन्द्रियों के जीव की सर्वावस्थाओं में ही होने के कारण जीव किसी भी समय किसी भी अवस्था में इन्द्रियों से रहित नहीं होता है। जीव का और उपयोग का तादात्म्य संबंध कहा गया है, अतः इस अभिप्राय से गर्भ में भी जीव इन्द्रियसहित भी उत्पन्न होता है। (से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि जीव किसी अपेक्षा इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा इन्द्रियरहित उत्पन्न होता है।

इस तरह गर्भगत जीव के इन्द्रियसहितपना और इन्द्रियरहितपना प्रतिपादन करके अब सूत्रकार उसके शरीरसहितता और शरीररहितता का प्रतिपादन करने के लिये प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं (जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ ?) हे भदन्त गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव शरीरसहित उत्पन्न होता है, कि विना शरीर के उत्पन्न होता है ? यदि कहा जावे कि शरीरसहित

ઉપયોગ એ ભાવેન્દ્રિય છે તેથી ઉપયોગાત્મક ભાવેન્દ્રિયોનુ અસ્તિત્વ જીવની સર્વ અવસ્થાઓમાં હોવાને કારણે જીવ કોઈપણ સમયે કોઈપણ અવસ્થામાં ભાવ ઇન્દ્રિયોથી રહિત હોતો નથી. જીવનો તથા ઉપયોગનો તાદાત્મ્ય સંબંધ કહ્યો છે, તેથી આ રીતે ગર્ભમા પણ જીવ ઇન્દ્રિય સહિત જ ઉત્પન્ન થાય છે એમ કહી શકાય. "से तेणट्ठेणं इत्यादि" હે ગૌતમ ! તે કારણે હુ એવુ કહું છું કે કોઈ અપેક્ષાએ ગર્ભમાનો જીવ ઇન્દ્રિય સહિત ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય રહિત ઉત્પન્ન થાય છે

આ રીતે ગર્ભગત જીવની ઇન્દ્રિયયુક્તતા અને ઇન્દ્રિયરહિતતાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર તેના શરીરની યુક્તતા અને શરીરરહિતતાનુ પ્રતિપાદન કરવા માટે પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક સૂત્ર કહે છે—(जीवे ण भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ ?) હે ભગવન્ ! ગર્ભમા ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવ શરીરસહિત ઉત્પન્ન થાય છે કે શરીરરહિત ઉત્પન્ન થાય છે ?

सर्वदेव आत्मात् गर्भोत्पत्तिसमयेऽपि जीव शरीरमानेवेति तावन्नरोरद्वयापेक्षया सशरीरी समुत्पद्यते इति कथ्यते, एतच्चौदारिकवैक्रियाहारक-शरीरत्रयापेक्षया अशरीरीति कथ्यते उत्पत्तौ पूर्वमेतावच्छरीरत्रयसम्बन्धस्यासम्भवादिति ।

पूर्वं शरीरेन्द्रियविषयक वर्णनं कृत्वा साम्प्रत शरीरेन्द्रियवत्त्वे आहारस्यावश्यकता भवेदित्याहारसूत्रमाह-'जीवे णं भंते' इत्यादि । 'जीवे णं भंते' जीव खलु भदन्त! 'गब्भं वक्कममाणे' गर्भं व्युत्क्रामन् गर्भं समुत्पद्यमान इत्यर्थः, 'तप्पढमयाए' उत्पद्यमानतया 'किं आहार माहारेइ' कमाहारमाहरति 'तप्पढमयाए' किं, तत्प्रथमतया गर्भागमनस्य प्रथमतेति तत्प्रथमता, तया प्रथमतया गर्भं उत्पद्यमान एवेत्यर्थः, कमाहारमाहरति-गर्भे उत्पत्त्यनन्तरं कीदृशमाहारं प्रथमत आहरतीति प्रश्नार्थः । भगवानाह-'गोयमे' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम! 'माउओयं' मातृसम्बन्धि ओजः-

---

औदारिक, वैक्रियिक, और आहारक इन तीन शरीरों की अपेक्षा कथन की जाती है-तब गर्भ में उत्पन्न होते समय इन तीन शरीरों में से जीव के कोई भी शरीर नहीं होता है इस तरह गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव के इनमें से कोई भी शरीर न होने के कारण "वह अशरीरी गर्भ में उत्पन्न होता है" यह कथन भी बन जाता है ।

पहिले सूत्रकार ने इन्द्रिय और शरीर का वर्णन सूत्रों द्वारा कर ही दिया है। अब वे आहार का वर्णन करने के निमित्त आहारसूत्र का कथन करते हैं क्यों कि इन्द्रिय और शरीर से युक्तता होने पर जीव को आहार की आवश्यकता होती है (जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे तप्पढमयाए किं आहारं आहारेइ) हे भदन्त ! जीव जब गर्भ में उत्पन्न होता है तब वह सर्वप्रथम क्या खाता है ? अर्थात् कैसा आहार लेता है ? (गोयमा ! माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभयसंसिट्ठं कलुसं,

---

વિચારતા "જીવ ગર્ભમાં શરીરસહિત ઉત્પન્ન થાય છે" એ કથન અયોગ્ય છે તથા ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઔદારિક, વૈક્રિયિક, અને આહારક એ શરીરમાનું કોઇ પણ શરીર હોતું નથી એ દૃષ્ટિએ વિચાર કરતાં "જીવ ગર્ભમાં અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે" એ કથન પણ યોગ્ય છે "

પહેલા સૂત્રકાર ઇન્દ્રિય અને શરીરનું વર્ણન સૂત્રો વડે કરી ચુક્યા છે હવે આહારનું વર્ણન કરવાને માટે તેઓ આહાર સૂત્રનું કથન કરે છે કારણ કે ઇન્દ્રિયો અને શરીરથી યુક્ત જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે-(जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे तप्पढमयाए किं आहारं आहारेइ ?) હે ભગવન્ ! જ્યારે જીવ ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થાય છે, ત્યારે તે સૌથી પહેલાં શું ખાય છે ? એટલે કે કેવો આહાર લે છે ?

औदारिकवैक्रियाहारकाणि शरीरत्रितयानि प्रतीत्य=समाश्रित्य 'असरीरी वक्कमइ' अशरीरी व्युत्क्रामति, औदारिकादिशरीरत्रितयापेक्षया औदारिकादिशरीरत्रयं विहाय जीवो गर्भे समुत्पद्यमान अशरीरी समुत्पद्यते इति, 'तेयाकम्माइं-पडुच्च' तैजसकार्मणे शरीरे प्रतीत्य=समाश्रित्य 'ससरीरी वक्कमइ' सशरीरी व्युत्क्रमति, तैजसकार्मणशरीरद्वयापेक्षया जीवः सशरीरी समुत्पद्यते इति भावः। 'से तेणट्ठेणं गोयमा०' तत्तेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते, स्यात् कदाचित् अशरीरी कदाचित्सशरीरी गर्भं व्युत्क्रामति, अयमाशयः तैजसकार्मणशरीरद्वयसंबन्धस्य

(गोयमा! ओरालिय-वेउव्विय-आहारयाइं पडुच्च असरीरी वक्कमइ) हे गौतम! जीव को जो "अशरीरी उत्पन्न होता है" ऐसा कहा है उसका कारण यह है कि-उस समय उस के औदारिक वैक्रिय और आहारक इन तीन शरीरोंमें से एक भी शरीर नहीं होता है। इस अपेक्षा विना शरीरके ही जीव उत्पन्न होता है। (तेया-कम्माइं पडुच्च ससरीरी वक्कमइ) तैजस और कार्मण इन दो शरीरों की अपेक्षा जब की जाती है तब वह शरीरसहित ही गर्भमें उत्पन्न होता है, ऐसा कहा जाता है। (से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हू कि जीव गर्भ में शरीररहित और शरीरसहित भी उत्पन्न होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि-"सर्वस्य" सूत्र के अनुसार तैजस और कार्मण ये दो शरीर समस्त संसारी जीवों के होते हैं, इसलिये गर्भ में उत्पत्ति होने के समय में भी इनका सद्भाव रहता है अतः इस अपेक्षा से जीव गर्भ में शरीरसहित भी उत्पन्न होता है-ऐसा कथन बन जाता है। तथा

પ્રશ્ન—से केणट्ठेणं० ઇત્યાદિ હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જીવ ગર્ભમાં શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને શરીર રહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર—(गोयमा! ओरालिय, वेउव्विय, आहारयाइं, पडुच्च असरीरी वक्कमइ) હે ગૌતમ! 'જીવ અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે,' એવું જે કહ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે, તે સમયે તેને ઔદારિક વૈક્રિય અને આહારક, એ ત્રણ શરીરમાનુ એક પણ શરીર હોતું નથી એ દૃષ્ટિબિન્દુથી ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવ અશરીરી જ હોય છે, (तेयाकम्माइं पडुच्च ससरीरी वक्कमइ) તથા તૈજસ અને કાર્મણ, એ બે શરિરની અપેક્ષાએ એમ કહી 'શકાય કે જીવ શરીરસહિત જ ગર્ભમા ઉત્પન્ન થાય છે से तेणट्ठेणं० ઇત્યાદિ હે ગૌતમ! તે કારણે હુ એવું કહુ છુ કે જીવ ગર્ભમા શરીરરહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે તાત્પર્ય એ છે કે-"सर्वस्य" એ સૂત્રાનુસાર તૈજસ અને કાર્મણ એ બે શરીરો તમામ સંસારી જીવોને હોય છે તેથી ગર્ભમા જીવની ઉત્પત્તિ થતી વખતે પણ તેમનો સદ્ભાવ હોય છે, એ દૃષ્ટિએ

पिङ्गलीनामेकदेश इति प्रकाशः तेन निष्पन्न ओजः-सारमाहरति-एवमादीति भावः। 'जीवस्स णं भंते' जीवस्य खलु भदन्त! 'गब्भगयस्स समाणस्स' गर्भगतस्य सतः 'अत्थि-उच्चारे इ वा' अस्ति उच्चार इति वा, उच्चारः-पुरीषम् 'पासवणे इ वा' प्रस्रवणमिति वा, प्रस्रवणं-मूत्रम् 'खेले इ वा' खेल इति वा, खेलः-श्लेष्मा, 'सिंघाणे इ वा' सिंघानक मिति वा, सिंघानकं-नासिकामलम्, 'वंते इ वा' वान्तमिति वा, वान्त-वमनम्, 'पित्ते इ वा' पित्तमिति वा, हे भदन्त! गर्भगतस्य जीवस्य मूत्रपुरीषवमनपित्तश्लेष्मादिकं भवति किमिति भगवानाह—'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः, यत् गर्भगतस्य नोच्चारादिकं भवतीति भावः। गौतमः पृच्छति-'से केणट्ठेणं' तत् केनार्थेन हे भदन्त! केन कारणेन एवमुच्यते यद् गर्भगतस्य जीवस्योच्चारादिकं न भवतीति। भगवानाह-'गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे' जीवः खलु

करता है। (जीवस्स णं भंते! गब्भगयस्स समाणस्स अत्थि उच्चारेइ वा पासवणेइ वा, खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा, वंतेइ वा, पित्तेइ वा?) हे भदन्त! गर्भ में स्थित जीव के मल होता है क्या? मूत्र होता है क्या? कफ होता है क्या? नाक का मैल होता है क्या? वमन होता है क्या? पित्त होता है क्या? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है। अर्थात् गर्भगत जीव के उच्चार (बड़ी नीत) मल होना, पासवण (लघुनीत) मल मूत्र आदि का होना यह सब नहीं होता है (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त) आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि गर्भगत जीव के मलमूत्र आदि नहीं होते हैं (गोयमा!

જે આહાર કરે છે તે આહારના એકદેશથી કોઈક જે આહારમાં આવેલ તે પરિણતિવિશેષના એક અંશ વડે તૈયાર થયેલ જે ઓજ (સાર) છે, તેનો તે આહાર કરે છે (जीवस्स णं भंते! गब्भगयस्स समाणस्स अत्थि उच्चारेइ वा पासवणेइ वा, खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा, वंतेइ वा, पित्तेइ वा?) હે ભગવન્! ગર્ભમાં રહેલા જીવને શું ઝાડો થાય છે? પેશાબ થાય છે? કફ થાય છે? નાકનો મેલ હોય છે? ઉલટી થાય છે? પિત્ત થાય છે? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ! તે અર્થ બરાબર નથી-કહેવાનો કે ગર્ભમાં રહેલ જીવને ઉચ્ચાર (ઝાડો) પાસવણ (પેશાબ) વગેરે કંઈ પણ થતું નથી (से केणट्ठेणं० ઇત્યાદિ હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ગર્ભગત જીવને ઝાડો પેશાબ વગેરે કંઈ પણ થતાં નથી? (गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे

आर्तवम् शोणितमित्यर्थः, 'पिउसुक्कं' पितृशुक्रं, पितृवीर्यमाहरतीति सम्बन्धः। 'तं' इति आहारम्, कीदृशमित्याह—'तदुभयसंसिट्ठं' 'तदुभयसंश्लिष्टं, तदुभयेन-मात्रोज.पितृशुक्ररूपेण संश्लिष्टं=संमिलितम्, अत एव कलुषम्=अतिघृणितम् आहारम् 'किव्विसं' किल्विषम्=अपवित्रम्, एतादृशम् आहारं 'तप्पढमयाए' तत्प्रमतया सर्वतः प्रथमम् 'आहारेइ' आहरति, गर्भे उत्पद्यमानस्य आहारं निरूप्य सम्प्रति गर्भगतः सन् जीवः कीदृशमाहारमाहरतीति निरूपयति—'जीवे णं भंते' इत्यादि। 'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'किं आहारं आहारेइ' कमाहारमाहरति, भगवानाह—'गोयमे'—त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जं से माया' यास्तस्य माता, या इति यद्रूपाः, 'णाणा विहाओ' नानाविधा—अनेकप्रकारकाः, 'रसविगईओ' रसविकृतीः—रसरूपाविकृतीः दुग्धदध्यादिरूपाः 'आहारं आहारेइ' आहारमाहरति, आहारतया गृह्णाति, 'तदेगदेसेणं ओयं आहारेइ' तदेकदेशेन ओज आहरति, तदेकदेशेन तासां

किव्विसं तप्पढमयाए आहारं आहारेइ) हे गौतम! जीव जब माता के गर्भ में उत्पन्न होता है—तब वह सर्व से प्रथम माता का ओज—आर्तव-अर्थात् शोणित और पिता का शुक्र इन दोनों से मिश्रित जो आहार होता है उसे ग्रहण करत है। यह आहार अतिघृणित होता है। तथा अपवित्र होता है, क्यों कि यह माता के शोणित और पिता के वीर्य से मिश्रितरूप होता है। (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे किं आहारं आहारेइ) हे भदन्त! जीव जब तक माता के गर्भ में रहता है तबतक वह क्या आहार करता है? (गोयमा! जं से माया णाणाविहाओ रसविगईओ आहारं आहारेइ, तदेगदेसेणं ओयं आहारेइ) हे गौतम! जो उसकी माता दूध, दहीं आदिरूप नाना प्रकार की विकृतियों का आहार करती है उस आहार के एकदेश से अर्थात् उपभुक्त उन रस विकृतियों के एकांश से निष्पन्न जो ओज है—सार है—उसका वह आहार ग्रहण

उत्तर—(गोयमा! माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभयसंसिट्ठं कलुसं, किव्विसं तप्पढमयाए आहार आहारेइ) हे गौतम! જ્યારે જીવ માતાના ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે માતાનું ઓજ (આર્તવ, શોણિત) અને પિતાનુ શુક્ર, એ બન્નેથી મિશ્રિત જે આહાર હોય છે તે ખાય છે માતાના શોણિત અને પિતાના શુક્રથી મિશ્રિત હોવાને કારણે તે આહાર ઘૃણિત (ભેલો) અને અપવિત્ર હોય છે. (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे किं आहार आहारेइ?) હે ભગવન્! જીવ માતાના ગર્ભમાં રહે ત્યા સુધી કયો કયો આહાર લે છે? (गोयमा! जं से माया णाणाविहाओ रसविगईओ आहार आहारेइ, तदेगदेसेणं ओय आहारेइ) હે ગૌતમ! તેની માતા દૂધ, દહીં વગેરે રૂપ વિવિધ પ્રકારની વિકૃતિયો વાળો

हारमाहर्तुम्, हे भदन्त ! गर्भस्थो जीव मुखेनाहारमाहर्तुं समर्थो भवेदिति प्रश्नः भगवानाह—'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो इणट्ठे समट्ठे' नायमर्थः समर्थः, गर्भगतो जीवो मुखेन कावलिकमाहारं नाहरतीति। तत्कारणं पृच्छति—'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन, केन कारणेन हे भदन्त! एवमुच्यते यत् गर्भगतो जीवो कावलिकमाहारमाहर्तुं न समर्थ इति। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'जीवेणं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ' जीवः खलु गर्भगतः सन् सर्वतः सर्वात्मना आहरति, 'सव्वओ परिणामेइ' सर्वतः सर्वात्मना परिणमयति 'सव्वओ उस्ससइ' सर्वतः सर्वात्मना उच्छ्वसति, श्वासं गृह्णाति, 'सव्वओ निस्ससइ' सर्वतो निःश्वसति, सर्वात्मना श्वासं मुञ्चति, 'अभिक्खणं आहारेइ' अभीक्ष्णमाहरति पुनः पुनराहरतीत्यर्थः, 'अभिक्खणं परिणामेइ'

आहरित्तए) हे भदन्त ! गर्भगत जीव क्या मुख से कवलरूप निवाला आहार करने में समर्थ है ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। अर्थात् गर्भगत जीव मुख से कावलिक आहार लेने में समर्थ नहीं है। (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हो कि गर्भगत जीव कावलिक रूप आहार लेने में समर्थ नहीं है ? (गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ) हे गौतम ! गर्भ में रहा हुआ जीव सर्वात्मना खाता है (सव्वओ परिणामेइ) खाए हुए को सर्वात्मना परिणमाता है। (सव्वओ निस्ससइ) सर्वात्मना वह श्वास लेता है (सव्वओ निस्ससइ) सर्वात्मना वह निःश्वास लेता है, अर्थात् सर्वात्मना वह श्वास को छोड़ता है। (अभिक्खणं आहारेइ) बार २ वह आहार लेता है। (अभिक्खणं परिणामेइ)

આહાર આહરિત્તએ ?) હે ભગવન્ ! શું ગર્ભમાં રહેલો જીવ મુખથી કવલાહાર (કોળીયા વડે ખાવું તે) આહાર કરવાને સમર્થ હોય છે ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! તે અર્થ સમર્થ નથી, કેમકે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવ મુખથી કવલાહાર લેવાને સમર્થ હોતો નથી. (से केणट्ठेणं) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ગર્ભમાં રહેલો જીવ કવલ આહાર આહાર કરવાને સમર્થ હોતો નથી ? (गोयमा ! जीवेणं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ) હે ગૌતમ ! ગર્ભમાં રહેલો જીવ સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે આહાર છે (सव्वओ परिणामेइ) આહાર કર્યા આહારને સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે પરિણમાવે છે (सव्वओ उस्ससइ) સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે તે શ્વાસ લે છે (सव्वओ निस्ससइ) અને સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે નિઃશ્વાસ છોડે છે (अभिक्खणं आहारेइ) તે વારંવાર આહાર

गर्भगतः सन् 'जं आहारेइ तं चिणाइ' यदाहरति तत् चिनोति, 'तं सोइंदियत्ताए' तत् श्रोत्रेन्द्रियतया 'जाव फासिंदियत्ताए' यावत् स्पर्शनेन्द्रियतया, यावत् पदेन-चक्षुरसनघ्राणेन्द्रियाणां-परिग्रहो भवति, 'अट्ठि अट्ठिमिंजकेसमंसुरोमनहत्ताए' अस्थ्यस्थिमज्जाकेशश्मश्रुरोमनखतया, तत्र-'अट्ठिमिंज'-त्ति अस्थिमज्जा तया-अस्थिगतधातुविशेषतया 'केस' त्ति, केशतया 'मंसु' त्ति श्मश्रुतया 'रोम'त्ति, रोमतया 'नह'त्ति नखतया च चिनोतीति सम्बन्धः, चिनोति परिणमयतीति भावः। 'से तेणट्ठेणं०' तत् तेनार्थेन हे गौतम! एवमुच्यते यद् गर्भगतस्य जीवस्य उच्चारादिकं न भवति, आहियमाणाहारस्य यदि कोप्यशोऽवशिष्टो भवेत्तदा तन्निःसरणात्मकमलादीनां संभावना भवेन्नत्वेवम् आहियमाणाहारस्य श्रोत्रेन्द्रियादि रूपेण परिणतत्वात्। 'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहरित्तए' प्रभुर्मुखेन कावलिकमा-

जीवेणं गब्भगए समाणे जं आहारेइ, तं चिणाइ) हे गौतम! गर्भस्थित जीव जो आहार करता है वह उसका चय करता है। (तं सोइंदियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए, अट्ठि, अट्ठिमिंज,-केस,-मंसु-रोम,-नहत्ताए परिणामेइ से तेणट्ठेणं) उसे वह श्रोत्रेन्द्रिय रूप से यावत् स्पर्शन इन्द्रियरूप से, अस्थि-हड्डीरूप से, अस्थिमज्जा-अस्थिगत धातुविशेषरूप से केशरूप से, श्मश्रुरूप से, रोमरूप से, नखरूप से, परिणमाता है। इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि गर्भगत जीव उच्चार आदिक नहीं करता है। आहियमाण आहार का यदि कोई अंश बाकी बचा रहे तो उसे निकालने रूप मलादिकों की संभावना हो सकती है, परन्तु ऐसा तो होता नहीं है, क्यों कि आहियमाण आहार श्रोत्रेन्द्रियादिरूप से परिणत होता रहता है। (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे पभू मुहेणं कावलियं आहारं

जं आहारेइ, त चिणाइ) હે ગૌતમ! ગર્ભમા રહેલ જીવ જે આહાર કરે છે, તેનો તે ચય કરે છે (त सोइ दियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए अट्ठि, अट्ठिमिंज, केस, मसु, रोम, नहत्ताए से तेणट्ठेणं०) તેને તે ગર્ભનો જીવ શ્રોતેન્દ્રિયથી લઇને સ્પર્શેન્દ્રિય રૂપે, અસ્થિ (હાડકા) રૂપે, અસ્થિમજ્જારૂપે, કેશરૂપે, શ્મશ્રુ (દાઢી) રૂપે, રોમરૂપે, અને નખરૂપે પરિણુમાવે છે તે કારણે, હે ગૌતમ! મે એવુ કહ્યુ છે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવ મળ, મૂત્રાદિ કરતો નથી આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ આહારનો કોઇ ભાગ જો ચય પામ્યા વિનાનો બાકી રહે તો તેને બહાર કાઢવા માટે બાડા, પેશાબ વગેરે જરૂરીયાત રહે છે પણ ગર્ભમાં રહેલ જીવની બાબતમાં એવું બનતુ નથી કારણ કે આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ બોરાક શ્રોત્રેન્દ્રિય આદિ રૂપે પરિણુમતો રહે છે. (जीवे ण भंते! गब्भगए समाणे पभूमुहेण कावलियं

'पुत्रजीवरसहरणी' पुत्रजीवरसहरणी, एते द्वे नाड्यौ स्तः, तयोर्मध्ये आद्या या मातृजीवरसहरणी सा, 'माउजीवपडिबद्धा पुत्तजीवफुडा' मातृजीवप्रतिबद्धा पुत्रजीवस्पृष्टा, इयं रसहरणिका नाडी मातृजीवप्रतिबद्धा-मातृजीवेन सह सबद्धा, तथा सह नाडी पुत्रजीवस्पृष्टा इति पुत्रजीव स्पर्शिका भवति, इह प्रतिबद्धता च गाढसंबन्ध, मातृजीवस्यांशरूपत्वाच्चस्या, स्पृष्टता च सबन्धमात्रम्, यतो न सा पुत्रजीवस्यांशरूपा, मातृजीवप्रतिबद्धा केवलं पुत्रजीव स्पृशत्येवेति 'तम्हा आहारेइ' तस्मादाहरति यस्मात् एवं तस्मात् कारणात् मातृजीवप्रतिबद्धया रसहरण्या नाड्या पुत्रजीवेन सह स्पर्शनाद् गर्भगतो जीव आहरति=आहारं

को हरण करने वाली नाडी नाभिनाल होता है। क्योंकि माता द्वारा उपभुक्त आहार का रस गर्भगत जीव को इसी के द्वारा मिलता रहता है इसलिये "रसो हियते-आदीयते यया सा रसहरणी" ऐसी रसहरणी शब्द की व्युत्पत्ति टीकाकार ने की है। (पुत्तजीवरसहरणी) पुत्रजीवरसहरणी-यह भी एक नाड़ी होती है। इस तरह ये दो नाडियां हैं। इनके बीचमें जो आदि की नाडी मातृजीवरसहरणी है वह (माउजीवपडिबद्धा) मातृजीव के साथ सबद्ध रहती है, और पुत्र जीव के साथ स्पृष्ट होती है। प्रतिबद्धता शब्द का तात्पर्य गाढसंबंध से है, क्योंकि यह प्रतिबद्धता मातृजीव के अंशरूप होती है। और स्पृष्टता का तात्पर्य सामान्य संबंध से है, क्योंकि यह स्पृष्टता पुत्र जीव के अंशरूप नहीं होती है। मातृजीव प्रतिबद्धा नाडी केवल पुत्र जीवका स्पर्श ही करती है। (तम्हा आहारेइ) इसलिये वह आहार करता है। तात्पर्य यह है कि मातृजीवप्रतिबद्ध रसहरणी नाडी पुत्र जीव

નાડી-નાભિનાલ-માતા વડે ઉપહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ આહારનો રસ ગર્ભગત જીવ તે નાભિનાલ વડે મેળવતો રહે છે તેથી 'रसो हियते-आदीयते यया सा रसहरणी" એવી રસહરણી શબ્દની વ્યુત્પત્તિ ટીકાકારે કરી છે (पुत्तजीवरसहरणी) પુત્રજીવરસહરણી-તે પણ એક નાડી હોય છે તેમાની પહેલી માતૃજીવરસહરણી નાડી (माउजीवपडिबद्धा) માતાના જીવ સાથે બધાયેલી રહે છે અને પુત્રના જીવ સાથે પણ સ્પૃષ્ટ હોય છે પ્રતિબદ્ધપણું જોરદાર સબંધ કારણ કે તે પ્રતિબદ્ધપણું માતૃજીવના અંશરૂપ હોય છે સ્પૃષ્ટતા જોરદાર સામાન્ય સબંધ કારણ કે તે સ્પૃષ્ટતા પુત્રજીવના અંશ રૂપ હોતી નથી. માતાના જીવ સાથે બંધાયેલી નાડી માત્ર પુત્રના જીવનો સ્પર્શ જ કરે છે (तम्हा आहारेइ) તેથી તે આહાર કરે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે માતૃજીવપ્રતિબદ્ધરસહરણી નાડી પુત્ર જીવની સાથે સ્પર્શ કરે છે, તે કારણે

अभीक्ष्णं=पौनःपुन्येन परिणमयति,'अभिक्खणं उस्ससइ' अभीक्ष्णमुच्छ्वसति'अभिक्खणं निस्ससइ ' अभीक्ष्णं निःश्वसति, कदाचित् ' आहच्च आहारेइ ' आहत्याहरति-विरम्य विरम्य आहरति, 'आहच्च परिणामेइ' आहत्य परिणमयति, 'आहच्च उस्ससइ ' आहत्योच्छ्वसति, आहच्च निस्ससइ ' आहत्य निःश्वसति, कदाचिदाहारादिकं करोति गर्भगतो जीवः कदाचिदाहारादिकं न करोति, एतादृशस्वभावत्वात्तस्य , गर्भगतो जीवः कथं सर्वत आहारं करोतीत्याह-' माउजीवे '-त्यादि । ' माउजीवरसहरणी ' मातृजीवरसहरणी, रसो ह्रियते आदीयते यया सा रसहरणी नाभिनालमित्यर्थः, मातृजीवस्य रसहरणीति मातृजीवरसहरणी, तथा

बार २ वह लिये हुए आहार को बार २ परिणमाता है। (अभिक्खणं-उस्ससइ) बार २ वह श्वास लेता है। (अभिक्खणं निस्ससइ) बार २ वह श्वास छोड़ता रहता है। (आहच्च आहारेइ) कदाचित् वह ठहर ठहर कर आहार करता है। (आहच्च परिणामेइ) कदाचित् वह ठहर २ कर उस कृत आहार को परिणमाता है। (आहच्च उरससइ) कदाचित् ठहर २ कर वह श्वास लेता है (आहच्च निस्ससइ) कदाचित् वह ठहर २ कर निःश्वास लेता है। तात्पर्य इस कथन का यह है कि गर्भगत जीव कदाचित् आहार आदि करता भी है और कदाचित् आहार आदि नहीं भी करता है, क्यों कि उसका ऐसा ही स्वभाव होता है। गर्भगत जीव सर्वात्मना कैसे आहार करता है? इसके समाधान निमित्त भगवान् कहते हैं कि (माउजीवरसहरणी) मातृजीव रस हरिणी-यहां मातृ जीव रसहरिणी शब्द का अर्थ-मातृ जीव के रस

લે છે (अभिक्खणं परिणामेइ) અને વારવાર ગ્રહણ કરેલા આહારને વારવાર પરિણમાવે છે (अभिक्खणं उस्ससइ) વારવાર તે શ્વાસ લે છે, (अभिक्खणं निस्ससइ) વારવાર તે શ્વાસ છોડે છે (आहच्च आहारेइ) કયારેક તે થોભી થોભીને પણ આહારને લે છે. (आहच्च परिणामेइ) કયારેક થોભી થોભીને તે આહારને તે પરિણમાવે છે (आहच्च उरससइ) અને કયારેક થોભી થોભીને તે શ્વાસ લે છે (आहच्च निस्ससइ) અને કયારેક થોભી થોભીને તે નિઃશ્વાસ છોડે છે-આ કથનનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-ગર્ભમાં રહેલો જીવ કયારેક આહાર વગેરે ગ્રહણ કરે છે અને કયારેક આહારાદિ ગ્રહણ નથી પણ કરતો કારણ કે તેનો એવો સ્વભાવ હોય છે ગર્ભમા રહેલ જીવ સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે કેવી રીતે આહાર લે છે તે સમજાવવા માટે ભગવાન કહે છે કે-(माउजीवरस रसहरणी) માતૃજીવરસહરિણી-એટલે કે માતૃજીવના રસનુ હરણ કરનારી

'से तेणट्ठेणं' तत्तेनार्थेन, तेन कारणेन 'जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहरित्तए' यावत् नो प्रभुः मुखेन कावलिकमाहारमाहर्तुम्, अत्र यावत्पदेन-'हे गौतम ! एवमुच्यते जीवः खलु गर्भगत सन्' इति संग्राह्यः। पूर्वोक्त कारणेन गर्भगतो जीवो मुखेन कावलिकमाहारं कर्तुं न समर्थ इति।

गर्भाधिकारादेव गर्भगत जीवस्याङ्गविषये प्राह—'कइ णं भंते' इत्यादि। 'कइ णं भंते' कति खलु भदन्त ! 'माइअंगा पन्नत्ता' मातृकाङ्गानि प्रज्ञप्तानि, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'तओ माइअंगा पन्नत्ता' त्रीणि मातृकाङ्गानि प्रज्ञप्तानि 'तं जहा' तद्यथा-'मंसं सोणिअं मत्थुलुंगे' मांसं शोणितं मस्तुलुङ्गम्-मस्तुलुङ्गः=मस्तिष्कं मस्तकान्तःस्थितस्निग्धपदार्थविशेषः 'भेआ' इति प्रसिद्धम्, 'कइ णं भंते पिइअंगा पन्नत्ता' कति खलु भदन्त ! पितृकाङ्गानि प्रज्ञप्तानि, भगवानाह—'गोयमे' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! तओ पिइअंगा पन्नत्ता' त्रीणि पितृकाङ्गानि प्रज्ञप्तानि 'तं जहा' तद्यथा—'अट्ठि अट्ठि

पुत्र की नाभि में और माता के हृदय में नाड़ी संबंधित है। इसी नाड़ी से गर्भगत जीव कुल्यासे खेतमें पानी पहुंचने के स्थानरूप नाली से केदार (क्यारा) की तरह पुष्ट होता रहता है ॥१॥

(से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि (जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहरित्तए) गर्भगत जीव मुख से कवलरूप आहारको लेने के लिये समर्थ नहीं है।

गर्भ का अधिकार होने से ही सूत्रकार अब गर्भगत जीव के अंग के विषय में प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं—(कइ णं भंते ! माइअंगा पन्नत्ता) हे भदन्त ! माता के अंग कितने कहे गये हैं ? (गोयमा ! तओ माइअंगा पन्नत्ता,त जहा मंसे, सोणिए, मत्थुलुंगे) हे गौतम ! माता के अंग

(से तेणट्ठेणं०) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए) ગર્ભમાં રહેલ જીવ મુખ વડે કવલ આહાર લેવાને સમર્થ હોતો નથી.

ગર્ભનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર ગર્ભમાં રહેલ જીવનાં અંગોના વિષયમાં પ્રશ્નોત્તર પૂર્વક સૂત્રો કહે છે (कइ णं भंते ! माइअंगा पन्नत्ता) હે ભગવન્ ! ગર્ભમાં રહેલ જીવમાં માતાના અંગો કેટલા હોય છે ? (गोयमा ! तओ माइअंगा पन्नत्ता-त जहा-मंसे सोणिए, मत्थुलुंगे) હે ગૌતમ ! માતાનાં ત્રણ અંગ તેને હોય છે-(૧) માંસ, (૨) શોણિત, (રુધિર) અને (૩) મસ્તક (कइ णं भंते ! पिइअंगा पन्नत्ता ?) હે ભગવન્ તે જીવને પિતાના કેટલાં અંગો હોય છે ? (गोयमा ! तओ पिइअंगा पन्नत्ता) હે ગૌતમ ! તે જીવને

करोति 'तम्हा परिणामेइ' तस्मात् परिणमयति, तस्मादेव कारणात्तद् आहृतमाहारं परिणमयति। 'अवराविय णं' अपरापि च स्पर्शिका खलु अपरा=अन्या या 'पुत्तजीवरसहरणी' पुत्रजीवरसहरणी सा 'पुत्तजीवपडिबद्धा' पुत्रजीवप्रतिबद्धा, पुत्रजीवेन सह संबद्धा सैव, 'माउजीवफुडा' मातृजीवस्पृष्टा, मातृजीवस्य केवलं स्पर्शं कुर्वती, यस्मादेवम् 'तम्हा' तस्मात् कारणात् गर्भगतो जीवः 'चिणाइ' चिनोति, पुष्णाति सामान्येन शरीरादिकं पुष्टं करोति, एवम् 'तम्हा उवचिणाइ' तस्मादुपचिनोति, तस्मादेवकारणात् विशेषतया पुष्णाति=पुष्टं करोति शरीरादिकं गर्भगतो जीव इति। उक्तं च—

"पुत्रस्य नाभौ मातुश्च, हृदि नाडी निबध्यते।
यथासौ पुष्टिमाप्नोति, केदार इव कुल्यया" ॥१॥

के साथ स्पर्श करती है, इस कारण गर्भगत जीव उस मातृजीवप्रति बद्ध नाडी द्वारा आहार लेता है। (तम्हा परिणामेइ) इसी कारण वह आहृत आहार को परिणमाता है। (अवरा वि य ण पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाइ तम्हा उवचिणाइ) तथा दूसरी नाडी जो पुत्र जीवरस हरिणी है वह पुत्र जीवके साथ संबद्ध है और मातृजीव को स्पर्श करती है। इसकारण गर्भगत जीव सामान्यरूप से अपने शरीर आदि को पुष्ट करता रहता है। विशेषरूप से पुष्ट करता रहता है। कहा भी है—

"पुत्रस्य नाभौ मातुश्च हृदि नाड़ी निबध्यते।
यथासौ पुष्टिमाप्नोति केदार इव कुल्यया ॥१॥"

ગર્ભમાં રહેલ જીવ માતૃજીવપ્રતિબદ્ધ નાડી વડે આહાર લે છે (तम्हा परिणामेइ) તેથી આહાર કરેલ આહારને પરિણમાવે છે (अवरा वि य ण पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा-तम्हा चिणाइ, तम्हा उवचिणाइ) તથા બીજી પુત્ર જીવરસહરિણી નામની નાડી પુત્ર જીવની સાથે બંધાયલી છે અને માતાના જીવનો માત્ર સ્પર્શ જ કરે છે તે કારણે ગર્ભમા રહેલ જીવ સામાન્ય રૂપે તથા વિશેષરૂપે પોતાના શરીર વગેરેની પુષ્ટિ કરતો રહે છે,

કહ્યું પણ છે કે—

"पुत्रस्य नाभौ मातुश्च, हृदि नाडी निबध्यते।
यथासौ पुष्टिमाप्नोति, केदार इव कुल्यया ॥१॥"

પુત્રની નાભિમાં અને માતાના હૃદયમાં નાડી સંબંધિત છે જેવી રીતે કયારાથી—ખેતરમા પાની પહોચાડવાની નીક વડે ખેતરને પોષણ મળ્યા કરે છે, એવી રીતે તે નાડી વડે ગર્ભમા રહેલ જીવને પોષણ મળ્યા કરે છે ॥૧॥

वन्ने ' अव्यापन्नम्, व्यापन्नम् विनष्टम् तन्निषेधात् अव्यापन्नम् अविनष्टमित्यर्थः, भवति=तिष्ठति, ' एत्तियं कालं सचिट्ठइ ' एतावन्तं कालं संतिष्ठते ' अहे णं ' अथ खलु-शरीरमाप्यनन्तरम् ' समए समए ' समये समये-प्रतिक्षणमित्यर्थः, वोक्कसिज्जमाणे वोक्कसिज्जमाणे ' व्यपकृष्यमाण व्यपकृष्यमाण-अधिसमयं हीयमानं सत् ' चरमकालसमयंसि ' चरमकालसमये-मरणसमय ' वोच्छिन्ने भवइ ' व्युच्छिन्नं भवति-नष्टं भवतीति ॥ सू० ४ ॥

गर्भस्थैवाधिकारात् गर्भगतजीवस्य गत्यन्तरगमनं भवतीत्याह- जीवे णं भंते ! इ०

मूलम्—जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा, गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सन्नीपंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए, वीरियलद्धीए, वेउव्वियलद्धीए, पराणीयं आगयं सोच्चा निसम्म पएसे निच्छुभइ, निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता चाउरंगिणिं सेणं

सचिट्ठइ) हे गौतम ! जितने कालतक उसका भवधारणीय शरीर विनष्ट नहीं होता है उतने कालतक ठहरता है। (अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे २ चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ) फिर समय पर छीजता हुआ वह अन्तसमय में नष्ट हो जाता है। तात्पर्य इस प्रश्नोत्तरका ऐसा है कि गर्भगत जीवके शरीरमें माता पिताके प्राप्त अंग तब तक रहते हैं कि जबतक उसका भवधारणीय शरीर—जन्मसे लेकर मरण पर्यन्त रहनेवाला शरीर—रहता है। जैसे२ वह भवधारणीय शरीर समय २ में हीन होता जाता है वैसे २ वे अंग भी हीन होते जाते हैं, और भवधारणीय उस शरीरके नष्ट होते ही वे अंग भी नष्ट हो जाते हैं॥सू० ४॥

જીવ શરીર નામ પામતુ નથી ત્યાં સુધી તે શરીર રહે છે (अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे२ चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ) ત્યાર બાદ પ્રત્યેક સમયે ક્ષીણ થતુ (क्षीण थतु) તે શરીર અંત સમયે નાશ પામે છે આ પ્રશ્નો ચરોતુ તાત્પર્ય એ છે કે જ્યાં સુધી ભવધારણીય શરીર—જે મરણ પર્યન્ત રહેનારૂ શરીર—રહે છે ત્યા સુધી ગર્ભમાં રહેલ જીવ પ્રાપ્ત કરેલાં માતાપિતાનાં અંગો તેનેરહે છે જેમ જેમ તે ભવધારણીય શરીર સમયે સમયે ક્ષીણ થતુ જાય છે તેમ તેમ તે અંગો પણ ક્ષીણ થતાં જાય છે અને તે ભવધારણીય શરીર નાશ પામતાં જ તે અંગો પણ નષ્ટ થઈ જાય છે ॥સૂ૦૪॥

मिंजा ' केसमंसरोमनहे ' अस्थि अस्थिमज्जाकेशश्मश्रुरोमनखाः, गर्भस्थितजीवस्य शरीरे मांसशोणितमस्तुलुङ्गानि मातुःसकाशादागतानि तथा अस्थ्यस्थिमज्जा केशश्मश्रुरोमनखाः पितुः सकाशादागतानि भवन्तीति भावः । गर्भगतस्य जीवस्य मातृपित्रवयवप्राप्तशरीरं-कियत्कालपर्यन्तं तिष्ठतीत्यावेदयितुमाह—'अम्मापिइए' इत्यादि । ' अम्मापिइए णं भंते सरीरए ' अम्बापैतृकं खलु भदन्त ! शरीरकं ' केवइयं-कालं संचिट्ठइ ' कियत्कालं संतिष्ठते, हे भदन्त !, भगवानाह-'गोयमे' त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जावइयं से कालं ' यावन्तं कालं तस्य ' भवधारणिज्जे सरीरए ' भवधारणीयं शरीरम् ' अव्वावन्ने भवइ ' अव्यापन्नं भवति, भवधारणीयं=भवधारणप्रयोजन मनुष्यादि भवोपग्राहकमित्यर्थः, 'अव्वा-

---

तीन कहे गये हैं-वे इस प्रकार से है-१ मांस, २ शोणित (रुधिर) और तीसरा मस्तक के भीतरस्थित स्निग्ध पदार्थविशेष जिसे " भेजा " कहते हैं। (कइ णं भंते ! पिइअंगा पन्नत्ता) हे भदन्त ! पिताके अंग कितने कहे गये है ? (गोयमा ! तओ पिइअंगा पन्नत्ता) हे भदन्त ! पिताके अंग तीन कहे गये हैं। (तं जहा) वे इस प्रकार से हैं (अट्ठिमिंज्जा केसमंसुरोमनहे) हाड, अस्थिमज्जा केश-श्मश्रु-रोम और नख। तात्पर्य यह है कि-गर्भस्थित जीव के शरीर में मांस, शोणित और भेजा ये तीन माता से प्राप्त होते हैं और हाड १, अस्थिमज्जा २, केश, श्मश्रु, रोम और नख ३, ये पिता से प्राप्त होते हैं। गर्भगत जीव का माता पिता के अवयवों से प्राप्त शरीर कितने कालतक रहता है ? इस बात को अब सूत्रकार प्रश्नोत्तरपूर्वक कहते हैं—(अम्मापिइए णं भंते ! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठइ ?) हे भदन्त ! माता पिता के अवयवों से प्राप्त गर्भस्थित जीव का शरीर कितने कालतक ठहरता है ? (गोयमा ! जावइयं से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवइ एवतियं कालं

પિતાના ત્રણ અંગ હોય છે-(तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે-(अट्ठि-अट्ठिमिंजा,-केसमंसरोमनहे) હાડકા, અસ્થિમજ્જા, કેશ-શ્મશ્રુરોમ અને નખ કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે ગર્ભમા રહેલ જીવના શરીરમા માસ, રુધિર અને મગજ માતા તરફથી પ્રાપ્ત થાય છે અને (૧) હાડકા, (૨) અસ્થિમજ્જા અને (૩) કેશ, શ્મશ્રુ રોમ અને નખ પિતા તરફથી પ્રાપ્ત થાય છે. માતા પિતાના અવયવોથી પ્રાપ્ત એવુ ગર્ભમાં રહેલ જીવનું શરીર કયા સુધી રહે છે-એ વાતને સૂત્રકાર પ્રશ્નોત્તર વડે બતાવે છે-(अम्मापिइए ण भते ! सरीरए केवइय काल सचिट्ठइ ?) હે ભગવન્! માતા પિતાના અવયવોથી પ્રાપ્ત થયેલુ ગર્ભમા રહેલ જીવનુ શરીર કેટલા સમય સુધી ટકે છે ? (गोयमा ! जावइय से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवइ एवइयं कालं संचिट्ठइ) હે ગૌતમ ! જ્યા સુધી તેનું ભવધાર-

जागरइ सुहियाए सुहिए भवइ, दुहियाए दुहिए भवइ, इंता गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ, अहे णं पसवणकालसमयंसि सीसेणं वा पाएहिं वा आगच्छइ, सम आगच्छइ तिरिय आगच्छइ विणिहाय आवज्जइ वत्तव्वं सिया णं से कम्मा बद्धा पुट्ठा निहत्ता कडा पट्ठविया अभिनिविट्ठा अभिसमन्नागया उदिन्ना नो उवसंता भवंति, तओ भवइ दुरूवे दुवन्ने दुरसे दुफासे अणिट्ठे अकंते अप्पिए असुभे अमणुन्ने अमणामे हीणस्सरे दीणस्सरे अणिट्ठस्सरे अकंतस्सरे अप्पियस्सरे असुभस्सरे अमणुस्सरे अमणामस्सरे अणाएज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ वत्तव्वं सिया णं से कम्मा नो बद्धा पसत्थं णेयव्वं जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ, सेवं भंते सेवं भंते त्ति ॥ सू० ५ ॥

॥ पढम समये सत्तमो उद्देसो सम्मत्तो ॥ १–७ ॥

छाया—जीवः खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् नैरयिकेषूपपद्येत ? गौतम ! कश्चित् उपपद्येत कश्चिन्नोपपद्येत तत् केनार्थेन, गौतम ! संज्ञी पञ्चेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तको वीर्यलब्ध्या वैक्रियलब्ध्या परानीकमागतं श्रुत्वा निशम्य प्रदेशान् निसृजति निसृज्य वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्ति समवहत्य चतुरङ्गिणीं सेनां विकुर्वति चतुरङ्गिणीं सेनां विकुर्व्य चतुरङ्गिण्या सेनया परानीकेन सार्धं सङ्ग्रामं संग्रामयते सजीवोऽर्थकामको राज्यकामको भोगकामकः कामकामकः, अर्थपिपासितो राज्यपिपासितो भोगपिपासितः कामपिपासितः, अर्थकाङ्क्षितो राज्यकाङ्क्षितः भोगकाङ्क्षितः कामकाङ्क्षितः, अर्थपिपासितो राज्यपिपासितो भोगपिपासितः कामपिपासितः तच्चित्तस्तन्मनास्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्तदध्यवसानस्तदर्थोपयुक्तस्तदर्पितकरणस्तद्भावनाभावितः एतस्मिन्नन्तरे कालं कुर्यात् नैरयिकेषूपपद्यते, तत्तेनार्थेन गौतम ! यावदस्त्येककश्चिदुपपद्येत अस्त्येककश्चिन्नोपपद्येत, जीव एवं खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् देवलोकेषूपपद्येत, गौतम !

णं विउव्वइ चाउरंगिणिं सेणं विउवित्ता चाउरंगिणीए सेणाए पराणीए णं सद्धिं संगामं संगामेइ, से णं जीवे अत्थकामए रज्जकामए भोगकामए कामकामए, अत्थकंखिए रज्जकंखिए भोगकंखिए, कामकंखिए, अत्थिपिवासिए रज्जपिवासिए भोगपिवासिए कामपिवासिए, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणभाविए, एएसिं णं अंतरंसि कालं करेज्ज नेरइएसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं गोयमा जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा, जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा, गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं, गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तिहिं पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म तओ भवइ संवेगजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते, से णं जीवे धम्मकामए पुन्नकामए सग्गकामए मोक्खकामए धम्मकंखिए पुन्नकंखिए सग्गकंखिए मोक्खकंखिए धम्मपिवासिए पुन्नपिवासिए सग्गपिवासिए मोक्खपिवासिए तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसित्तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणाभाविए एएसि णं अंतरंसि कालं करेज्ज देवलोगेसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं गोयमा० ! । जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे उत्ताणे वा पासिल्लए वा अक्खुज्जए वा अच्छेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा निसीएज्ज वा तुयट्टेज्ज वा माउए सुवभाणीए सुवइ जागरमाणीए

'उववज्जेज्जा' उपपद्येत 'अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा' अस्त्येकको नोपपद्येत, कश्चिन्नरके उत्पद्यते कश्चिन्नोत्पद्यते, गौतम!-आह-'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन कारणेन हे भदन्त एवमुच्यते-भगवानाह-'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'से णं सन्नी पंचिंदिए' स खलु संज्ञी पंचेन्द्रियः 'सव्वाहिं पज्जत्तीहिं' सर्वाभिः पर्याप्तिभिः 'पज्जत्तए' पर्याप्तकः, सामिसानिरानादि जीवः कश्चिद्गर्भं गतः सन् नरकगमनयोग्यं कर्मबध्नातीति समवति, एतदेव सूचयितु संज्ञिरवादि विशेषणानि दत्तानि तत्र 'वीरियलद्धीए' वीर्यलब्ध्या 'वेउव्वियलद्धीए' वैक्रिय लब्ध्या च समाप्तयतीत्यौत्तमेन सह संबन्धः, अथवा 'वीरियलद्धिए वेउव्वियलद्धिए' इति वीर्यलब्धिको वैक्रियलब्धिकश्च सन् 'पराणीयं ग' परानीक सत्कं शत्रु सैन्यम् 'आगयं सोच्चा' आगतं श्रुत्वा 'निसम्म' निशम्य हृदयवार्यं 'पएसे निच्छुभइ' प्रदेशान् निक्षिपति आत्मप्रदेशान् गर्भदेशान्निष्काशयति, निच्छु

अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) हे गौतम! कोई एक गर्भगत जीव मरकर नरकों में उत्पन्न होता है। और कोइ एक गर्भगत जीव मरकर नरकों में उत्पन्न नहीं भी होता है। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कोई एक गर्भगत जीव मरकर नरक में उत्पन्न होता है और कोइ एक गर्भगत जीव मरकर नरक में उत्पन्न नहीं होता है? (गोयमा! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए) हे गौतम! वह संज्ञी पंचेन्द्रिय और सर्व पर्याप्तियों से पूर्ण-पर्याप्तक हुआ गर्भगत जीव (वीरियलद्धीए, वेउव्वियलद्धीए) वीर्यलब्धिद्वारा, वैक्रियलब्धिद्वारा, (पराणीयं आगयं सोच्चा) शत्रु की सेना को आई हुई सुनकर (निसम्म) उसे हृदय में धारण कर (पएसे निच्छुभइ) अपने आत्मप्रदेशों को गर्भदेश

કોઇક જીવ મરીને નરકોમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને નરકોમાં ઉત્પન્ન થતો નથી પણ થતો (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને નરકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને નરકોમાં ઉત્પન્ન થતો નથી? (गोयमा! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए) હે ગૌતમ! તે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય અને સર્વપર્યાપ્તિઓથી પૂર્ણ-પર્યાપ્ત અવસ્થામાં રહેલો ગર્ભમાં રહેલ (वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए पराणीयं आगयं सोच्चा निसम्म पएसे निच्छुभइ) વીર્યલબ્ધિ વડે અને વૈક્રિયલબ્ધિ વડે શત્રુની સેનાનું આગમન સાંભળીને, તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને, પોતાના આત્મપ્રદેશોને ગર્ભદેશ

अस्त्येकऽकउपपद्येत अस्त्येकको नोपपद्येत तत्–केनार्थेन, गौतम ! ससंज्ञी पंचेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तकस्तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वाऽन्तिके एकमपि आर्यम् धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य ततो भवति संवेगजातश्रद्धस्तीव्रधर्मानुरागरक्तः सजीवो धर्मकामकः पुण्यकामकः स्वर्गकामको मोक्षकामकः, धर्मकांक्षितः पुण्यकांक्षितः स्वर्गकांक्षितो मोक्षकांक्षितः, धर्मपिपासितः पुण्यपिपासितः स्वर्गपिपासितः मोक्षपिपासितः तच्चित्तस्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्तत्तीव्राध्यवसानस्तदर्थोपयुक्तस्तदर्पितकरणस्तद्भावनाभावित एतस्मिन्नन्तरे कालं कुर्यात्, देवलोकेषूपपद्येत तत्तेनार्थेन गौतम०। जीवः खलु भदन्त! गर्भगतः सन् उत्तानको वा पार्श्वीयो वा आम्रकुब्जको वा आसीद्वा तिष्ठेद्वा निषीदेद्वा, त्वग्वर्तयेद्वा मातरि स्वपत्यां स्वपिति, जाग्रत्यां जागर्ति, सुखितायां सुखितो भवति, दुःखितायां दुःखितो भवति, हंत गौतम ! जीवो गर्भगतः सन् यावत् दुःखितायां दुःखितो भवति, अथ खलु प्रसवन् कालसमये शीर्षेण वा पादाभ्यां वा आगच्छति सम्यगागच्छति तिर्यगागच्छति विनिघातमापद्यते वर्णवध्यानि च तस्य कर्माणि बद्धानि स्पृष्टानि निधत्तानि कृतानि प्रस्थापितानि अभिनिविष्टानि अभिसमन्वागतानि उदीर्णानि नो उपशान्तानि भवन्ति ततो भवति दुरूपो दुर्वर्णः दूरसः दुःस्पर्शः अनिष्टः अकान्तः अप्रियः अशुभः अमनोज्ञः अमनोमः हीनस्वरः दीनस्वरः अनिष्टस्वरः अकान्तस्वरः अप्रियस्वरः अशुभस्वरः अमनोज्ञस्वरः अमनोमस्वरः अनादेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति, वर्णवध्यानि च तस्य कर्माणि नो बद्धानि० प्रशस्तं ज्ञातव्यम् यावदादेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति तदेवं भदंत तदेवं भदंत इति ॥ सू० ५ ॥

टीका—' जीवे णं भंते ' जीवः खलु भदन्त ! ' गब्भगए समाणे ' गर्भगतः सन् ' नेरइएसु ' नैरयिकेषु ' उववज्जेज्जा ' उपपद्येत किम् ? हे भदन्त ! गर्भगतो जीवो मृत्वा किं नरकेषु उत्पत्तिं प्राप्नुयादिति प्रश्नाशयः, भगवानाह— ' गोयमे ' त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' अत्थेगइए ' अस्त्येकऽकः कश्चिदित्यर्थः

गर्भ का ही अधिकार होने से सूत्रकार अब गर्भगत जीव का गत्यन्तर गमन सूत्र का कथन करते हैं–' जीवेणं भंते ! " इत्यादि ।

टीकार्थ–(जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा) हे भदन्त ! गर्भ में जीव क्या मरकर नरकों में उत्पन्न होता है ? (गोयमा !

ગર્ભનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી સૂત્રકાર હવે ગર્ભમા રહેલ જીવના બીજી ગતિમા જવા બાબત સૂત્રનુ કથન કરે છે–" जीवे णं भंते ! ઇત્યાદિ ટીકાર્થ–(जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा) હે ભદન્ત ! ગર્ભમાં રહેલ જીવ શુ મરીને નરકોમા ઉત્પન્ન થાય છે ? (गोयमा ! अत्थेगइए उवव-

गर्भस्थजीवो वैक्रियलब्धिप्रयोगेण चतुरङ्गिणीं सेनां विकुर्व्य तया सेनया सह संग्रामं करोति तादृशो जीवः 'अत्थकामए' अर्थकामकः—अर्थे द्रव्ये कामो वाञ्छा मात्र मस्य स अर्थ कामकः, अर्थमुद्दिश्य संग्रामं संपादयतीत्येवं रूपेण सर्वत्र योजनीयमिति, 'रज्जकामए' राज्यकामकः, राज्यग्रहणेच्छावानित्यर्थः 'भोगकामए' भोगकामकः, भोगाः=गन्धरसस्पर्शाः तेषु कामः=वाञ्छा यस्य स तथा। 'कामकामए' कामकामकः, कामौ=शब्दरूपौ तयोर्वाञ्छा यस्य स तथा, 'अत्थकंखिए' अर्थकांक्षितः, अर्थे कांक्षा=गृद्धिः संजाता यस्य स अर्थकांक्षितः, 'रज्जकंखिए' राज्यकांक्षितः,

---

वैक्रियसमुद्घात करता है। उससे वह चतुरंगी सेना को बना लेता है और उससे शत्रुसेना के साथ संग्राम करता है। ऐसा गर्भगत जीव नरक गमन योग्य कर्म का बंध करता है ऐसा संभव होता है। यहां सूत्र में जो "वीरियलद्धीए, वेउव्वियलद्धीए" ऐसा तृतीयाविभक्त्यन्त पाठ रखा गया है सो उसके स्थान पर प्रथमाविभक्त्यन्त भी यह पाठ रखा जा सकता है, तब उसका ऐसा अर्थ होगा कि गर्भगत जो जीव है वह वीर्यलब्धिवाला और वैक्रियलब्धिवाला होकर संग्राम करता है। (से णं जीवे) ऐसा वह जीव-गर्भस्थ जीव-जो वैक्रियलब्धिद्वारा प्राप्त अपनी सेना द्वारा शत्रु सेना के साथ (अत्थकामए, रज्जकामए, भोग कामए, कामकामए) द्रव्य में वाञ्छावाला बनकर, राज्यग्रहण करने की इच्छावाला बनकर, भोग-गन्ध, रस, स्पर्श इनमें वाञ्छावाला बनकर, काम-शब्द और रूप की वांछा वाला बनकर, (अत्थकंखिए) अर्थ में गृद्धि वाला बनकर, (रज्जकंखिए) राज्य में गृद्धि वाला बनकर, (काम-

---

પ્રદેશોને ગર્ભપ્રદેશમાથી બહાર કાઢે છે અને વૈક્રિય સમુદ્ઘાત કરે છે પછી તે ચતુરગી સેના બનાવી લે છે અને તેની મારફત શત્રુ સેના સાથે યુદ્ધ કરે છે એવો ગર્ભમા રહેલ જીવ નરકમા જવા યોગ્ય કર્મનો બંધ બાંધે તે સભવિત છે અહીં સૂત્રમા વીરિયલદ્ધીએ વેઉવ્વિયલદ્ધીએ" એવા જે ત્રીજા વિભક્તિનો પાઠ મૂક્યો છે તેમની જગ્યાએ પહેલી વિભક્તિનો પાઠ પણ મૂકી શકાય છે ત્યારે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે ગર્ભમા રહેલ જે જીવ છે તે વીર્ય લબ્ધિવાળો અને વૈક્રિયલબ્ધિવાળો થઈને સગ્રામ કરે છે (से णं जीवे) એવો તે ગર્ભમા રહેલ જીવ વૈક્રિયલબ્ધિ વડે બનાવેલી પોતાની સેના વડે શત્રુની સેના સાથે (अत्थकामए रज्जकामए भोगकामए कामकामए) ધનની વાસનાવાળો થઈને, રાજ્ય મેળવવાની ઈચ્છાવાળો થઈને ભોગ 'ગધ રસ સ્પર્શ' ભોગ વવાની વાસનાયુક્ત બનીને, કામ-શબ્દ અને રૂપની વાસનાથી યુક્ત બનીને

मित्ता ' निक्षिप्य ' वेउव्वियसमुग्घाए णं समोहणइ ' वैक्रियसमुद्घातेन खलु समवहन्ति समवहतो भवति तथाविध पुद्गलग्रहणार्थं वैक्रियसमुद्घातं करोति ' समोहणित्ता ' समवहत्य ' चाउरंगिणिं सेणं विउव्वइ ' चतुरङ्गिणीं सेनां विकुर्वति वैक्रियसमुद्घातेन गजाश्वरथपदातिरूपां चतुरङ्गिणीं सेनामुत्पादयतीत्यर्थः, ' चाउरंगिणिं से णं विउव्वित्ता ' चातुरङ्गिणीं सेनां विकुर्व्य तादृशीं सेनां वैक्रियलब्ध्या समुत्पाद्य ' चउरंगिणीए सेणाए ' तया चतुरंगिण्या सेनया ' पराणीएणं ' परानीकेन शत्रुसैन्येन ' सद्धिं ' सार्द्धम् ' संगामं ' संग्रामं युद्धमित्यर्थः, ' संगामेइ ' संग्रामयति संग्रामं करोतीत्यर्थः । ' से णं जीवे ' स खलु जीवः य. खलु

से बाहर निकालता है । (निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ) बाहर निकालकर वैक्रिय समुद्घात द्वारा समवहत होता है अर्थात् तथाविध पुद्गलों को ग्रहण करने के लिये वैक्रियसमुद्घात करता है । (समोहणित्ता चाउरंगिणिं सेन्नं विउव्वइ) वैक्रियसमुद्घात करके फिर वह चतुरंगी सेना को-गज, अश्व, रथ, और पदातिरूप चार अंगवाली सेना को उत्पन्न करता है । (चाउरंगिणिं सेन्नं विउव्वित्ता) चतुरंगी सेना को उत्पन्न करके (चाउरंगिणीए सेणाए पराणीए णं सद्धिं संगामं संगामेइ) उस अपनी चतुरंगी सेना से शत्रु की सेना के साथ संग्राम-युद्ध करता है । यहां ऐसा कहा गया है कि वह गर्भगत जीव स्वाभिमानी कोई राजा आदि का जीव हो और वह संज्ञी हो, पांचोंइन्द्रिय वाला हो । समस्त पर्याप्तियां जिसकी पूर्ण हो चुकी हों ऐसा हो । वह जब शत्रु की सेना को आई हुई सुनता है तब वह वीर्यलब्धि द्वारा या वैक्रियलब्धि-द्वारा अपने आत्मप्रदेशों को गर्भदेश से बाहर निकालता है, और

માથી બહાર કાઢે છે (निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएण समोहण्णइ) બહાર કાઢીને વૈક્રિય સમુદ્ઘાત વડે તથાવિધ પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરવાને માટે વૈક્રિય સમુદ્ઘાત કરે છે (समोहणित्ता चाउरंगिणिं सेन्नं विउव्वइ) વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરીને તે ચતુરંગી સેનાને-ગજ, અશ્વ, રથ અને પાયદળ, એ ચાર પ્રકારની સેનાને-ઉત્પન્ન કરે છે (चाउरंगिणिं सेन्न विउव्वित्ता) ચતુરંગી સેનાને ઉત્પન્ન કરીને (चाउरंगिणीए सेणाए पराणीएण सद्धिं संगाम संगामेइ) પોતાની તે ચતુરંગી સેનાથી શત્રુની સેના સાથે સંગ્રામ કરે છે અહીં એવુ કહ્યુ છે કે તે ગર્ભમા રહેલ જીવ સ્વાભિમાની કોઈ રાજા વગેરેનો જીવ હોય અને તે સંજ્ઞી હોય, પાચે ઈન્દ્રિયો વાળો હોય, જેની સમસ્તપર્યાપ્તિઓ પૂર્ણ થઈ ચુકી હોય, આ જાતનાં તેના લક્ષણો બતાવ્યા છે એવો ગર્ભમા જીવ ત્યારે શત્રુની સેનાનુ આગમન થયેલું સાભળે છે ત્યારે વીર્યલબ્ધિ વડે અથવા વૈક્રિયલબ્ધિ વડે પોતાના આત્મ-

नुमोदितकृतकारितानुमोदितकरणानि येन स तदर्पितकरण इति। 'तब्भावणाभाविए' तद्भावनाभावितः, अर्थादिभावनया भावितो यः स तद्भावनाभावितः, 'एवंसि णं अंतरंसि' एतस्मिन् खलु अन्तरे, एतस्मिन् संग्रामादिकरणसमये 'काल करेज्जा' कालं कुर्यात्, स्त्रियस्तदा 'नेरइएसु' उववज्जइ' नैरयिकेषूपपद्यते, यदा खलु अर्थादिकामकः संग्रामादिकं गर्भस्थ एव संपादयंस्तस्मिन्नेवावसरे मरणं प्राप्नुयात् तदा स जीव नरकेषूत्पद्यते अन्यस्तु नोत्पद्यते इति, 'से तेणट्ठेणं गोयमा' तत्तेनार्थेन हे गौतम! 'जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा' यावत् अस्त्येक उत्पद्येत 'अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा' अस्त्येकको नोत्पद्येत, यावत्पदेन-'एवं खुच्चइ जीवे णं गब्भगए समाणे नेरइएसु' इति संग्राह्यम्। अनेन कारणेन हे गौतम! कथयामि यत् कश्चित् कारणविशेषमाश्रित्य नरके उत्पद्यते कश्चित् नोत्पद्यते इति भावः।

निमित्त समस्त इन्द्रियों को अथवा कृत कारित एवं अनुमोदना को समावेशित कर (तब्भावणाभाविए) अर्थादिक की भावना से भावित बनकर युद्ध करता है-यदि (एवंसि णं अंतरंसि) इसी संग्राम आदि करने के समय में वह (कालं करेज्जा) मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तो (नेरइएसु उववज्जइ) नारकों में वह उत्पन्न होता है। तात्पर्य इसका यही है कि गर्भस्थ जीव अर्थादिक की कामनावाला बनकर संग्राम आदि करता है और उसी स्थिति में यदि वह मर जाता है तो वह गर्भस्थ जीव नरकों में उत्पन्न होता है। अन्य गर्भस्थ जीव नहीं। (से तेणट्ठेणं० गोयमा!) इस कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हूं (जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) कि यावत् कोई एक गर्भस्थ जीव कारणविशेष को लेकर नरक में उत्पन्न होता है और कोई एक जीव नरकमें उत्पन्न नहीं होता है।

સમસ્ત ઇન્દ્રિયોને અથવા કૃત કારિત અને અનુમોદનાને સમાવેશિત કરીને (तब्भावणाभाविए) અર્થાદિકની ભાવનાથી ભાવિત બનીને યુદ્ધ કરે છે અને (एवंसि णं अंतरंसि) આ રીતે યુદ્ધ વગેરે કરતી વખતે જો તે ગર્ભમાં રહેલ જીવ (कालं करेज्जा) પરમુ પામે તો (नेरइएसु उववज्जइ) નારકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવ અર્થાદિકની કામનાવાળો બનીને સંગ્રામ વગેરે કરે છે અને જો એ સ્થિતિમાં તે મરણ પામે છે તો તે ગર્ભમાં રહેલ જીવ નરકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અન્ય પ્રકારના ગર્ભમાં રહેલા જીવો નારકોમાં ઉત્પન્ન થતા નથી. (से तेणट्ठेणं गोयमा!) હે ગૌતમ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) કોઈ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ ઉપરોક્ત કારણે નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ એક જીવ નરકમાં ઉત્પન્ન થતો નથી.

' भोगकंखिए ' भोगकांक्षितः ' कामकंखिए ' कामकांक्षितः ' अत्थपिवासिए ' अर्थपिपासितः पिपासा इव पिपासा प्राप्तेष्वर्थेऽतृप्तिरूपा संजाता यस्य स तथा, ' रज्जपिवासिए ' राज्यपिपासितः, प्राप्तेपि राज्ये तृप्त्यभाववानित्यर्थः, ' भोगपिवासिए ' भोगपिपासितः ' कामपिवासिए ' कामपिपासितः, ' तच्चित्ते ' तच्चित्तः, तस्मिन् अर्थादौ चित्तं यस्य स तच्चित्तः, ' तम्मणे ' तन्मनाः, तस्मिन् अर्थादौ मनो विद्यते यस्य स तन्मनाः, ' तल्लेसे ' तल्लेश्यः, लेश्यानाम् आत्मपरिणामविशेषः तादृशलेश्यावानित्यर्थः, ' तदज्झवसिए ' तदध्यवसितः, इहाध्यवसाय इति अध्यवसितं, तत्र तच्चित्तादि भावयुक्तस्य सततस्तेष्वर्थराज्यभोगकामेष्वेवाध्यवसितं परिभोगक्रियासंपादनविषयकं यस्य स तदध्यवसितः, तद्विषयकोत्साहवानित्यर्थः, ' तत्तिव्वज्झवसाणे ' तत्तीव्राध्यवसानः, तस्मिन्नेवार्थराज्यादौ तीव्रमारंभकालादारभ्य प्रकृष्टमध्यवसानं प्रयत्नविशेषो यस्य स तीव्राध्यवसानः, ' तदट्ठोवउत्ते ' तदर्थोपयुक्तः तदर्थम् अर्थराज्यभोगादिनिमित्तमुपयुक्तोऽवहित इति तदर्थोपयुक्तः, ' तदप्पियकरणे ' तदर्पितकरणः तस्मिन्नेवार्थराज्यादौ अर्पितानि विनिहितानि समावेशितानि करणानि=इन्द्रियाणि, अथवा कृतकारिता-

---

कंखिए) काम में गृद्धिवाला बनकर (अत्थपिवासिए) अर्थ के होने पर भी अतृप्तिरूप अभिलाषावाला बनकर (रज्जपिवासिए) प्राप्त राज्य में भी अतृप्तिरूप अभिलाषावाला बनकर (भोगपिवासिए) भोगमें पिपासित बनकर (कामपिवासिए) काम में पिपासित बनकर (तच्चित्ते) अर्थादिक में एकचित्तवाला होकर (तम्मणे) अर्थादिक में एक अन्तःकरण वाला होकर (तल्लेसे) उसीरूप आत्म परिणामवाला होकर (तदज्झवसिए) तद्विषयक अध्यवसायवाला होकर (तत्तिव्वज्झवसाणे) आरंभ काल से ही तद्विषयक प्रयत्नविशेषवाला होकर (तदट्ठोवउत्ते) उसी अर्थ राज्य, भोगादि के निमित्त उपयुक्त बन कर (तदप्पियकरणे) उन्हीं की प्राप्ति

(अत्थकखिये) અર્થની લાલસા વાળો બનીને, (अत्थपिवासिए) અર્થ હોવા છતા પણ તેનાથી અતૃપ્ત રહીને તેની અભિલાષા વાળો બનીને, (रज्जपिवासिए) પ્રાપ્ત રાજ્યથી અતૃપ્ત રહીને રાજ્ય મેળવવાની અભિલાષા વાળો બનીને (भोगपिवासिए) ભોગની ઇચ્છાવાળો બનીને, (कामपिवासिए) કામની ઇચ્છાથી યુક્ત બનીને (तच्चित्ते) અર્થાદિકમા એક ચિત્ત થઇને (तम्मणे) અર્થાદિકમા એક અત કરણવાળો થઇને-તલ્લીન થઈને (तल्लेसे) તે પ્રકારના આત્મપરિણામ વાળો થઈને (तदज्झवसिए) તે વિષયક પ્રવૃત્તિવાળો થઈને (तत्तिव्वज्झवसाणे) આરભ કાળથી જ તે વિષે વિશિષ્ટ પ્રયત્ન વાળો થઇને (तदट्ठोवउत्ते) અર્થ, રાજ્ય, ભોગાદિને માટે ઉપયુક્ત બનીને (तदप्पियकरणे) તેમની પ્રાપ્તિને માટે

कृत्स्न भावतः समितिगुप्त्याराधकस्य ' समणस्स वा ' श्रमणस्य वा-द्वादशविधतपोनुष्ठातृरूपस्य श्रमणस्य साधोः, ' माहणस्स वा ' माहनस्य वा, वा-अथवा स्वयंस्थूल प्राणातिपातादिभ्यो निवृत्य सन् ' माहन माहन ' एवं रूपेण परानुपदिशति यः स माहनः=दशविरतिरूपस्य ' अंतिए ' अन्तिके समीपे ' एगमवि ' एकमपि ' आरियं धम्मियं ' आर्यम्=जिनप्रणीतं धार्मिकम्=श्रुतचारित्ररूपं धर्मसम्पादकम् अतएव ' सुवयणं ' सुवचनम्-प्राणातिपातादिविरतिरूपं निरवद्यं ' सोच्चा ' श्रुत्वा ' निसम्म ' निशम्य-हृदि अवधार्य, ' तओ भवइ ' ततो भवति, तदनन्तरमेव श्रवणाऽवधारणानन्तरमेव जायते, 'संवेगजायसड्ढे' संवेगजातश्रद्धः, संवेगो वैराग्यं तेन जाता समुत्पन्ना श्रद्धा तत्त्वश्रद्धानं यस्य स संवेगजातश्रद्धः, तिव्वधम्माणु-

---

सीहिं पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म) हे गौतम ! यह गर्भगत जीव यदि कोई धार्मिक जीव है और यह संज्ञी, पर्याप्तेन्द्रिय पर्याप्तक है तो ऐसी स्थिति में यह जीव तथारूप-द्रव्यलिङ्ग-सदोरकमुखवस्त्रिकादिरूप साधु का वेष धारण किये हुए भावतः-समिति गुप्ति आदि के आराधक, ऐसे श्रमण, बारह प्रकार के तपों को तपने वाले साधु के, अथवा माहण-स्थूल प्राणातिपात आदि पाप क्रियाओं से निवृत्त होकर जो दूसरों को ऐसा ही उपदेश देता है कि जीवों को "मा हन मा हन" "मत मारो मत मारो" ऐसे देशविरति को धारण किये हुए पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक रूप माहण के पास एक भी आर्य जिनप्रणीत-धार्मिक-श्रुतचारित्ररूप धर्मके सम्पादक-सुवचन को-प्राणातिपातादिविरतिरूप निरवद्य-वचन को सुन करके और उसे हृदय में अवधारण करके (तओ) उसी समय (संवेगजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते भवइ) संवेग से-वैराग्य

तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म) હે ગૌતમ ! તે ગર્ભમાં રહેલો જીવ જો ધાર્મિક હોય, અને સંજ્ઞી હોય અને પંચેન્દ્રિય સહિત અને પર્યાપ્તક હોય તો તે દ્રવ્યથી દોરા સહિત મુખપર મુહપત્તી વગેરે ઉપકરણો સહિત સાધુ વેષ ધારણ કરેલા અને ભાવથી સમિતિ, ગુપ્તિ વગેરેના આરાધક તથા બાર પ્રકારના તપ કરનારા શ્રમણરૂપ તેમજ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપ ક્રિયાઓથી નિવૃત્ત થઈને બીજાને પણ ' મા હન મા હન ' ' હણો નહીં હણો નહીં ' એવો ઉપદેશ દેનારા દેશવિરતિને ધારણ કરનારા પાંચમા ગુણસ્થાનવર્તી શ્રાવકરૂપ માહણ પાસે એક પણ આર્ય જિન પ્રણીત—ધાર્મિક—શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના સંપાદક—સુવચનો—પ્રાણાતિપાતાદિ વિરતિરૂપ નિરવદ્ય વચનોને સાંભળીને અને તેને પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરીને (તઓ) ત્યારે બાદ (संवेगजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते भवइ) સંવેગથી (વૈરાગ્યથી)

पूर्वं गर्भगतस्य जीवस्य नरकगमनकरणं प्रतिपाद्य सम्प्रति देवलोकगमनकरणं प्रदर्शयन्नाह—' जीवे णं भंते ' इत्यादि ।

' जीवे णं भंते ' जीवः खलु भदन्त ! ' गब्भगए समाणे ' गर्भगतः सन् देवलोगेसु उववज्जेज्जा ' देवलोकेषूपपद्येत किम् ? । भगवानाह—' गोयमे '—त्यादि, ' गोयमा ' हे गौतम ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा ' अस्त्येककः कश्चित् उपपद्येत ' अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा ' अस्त्येककः कश्चित् नोपपद्येत ' से केणट्ठे णं ' तत्केनार्थेन हे भदन्त ! केन कारणेनैवमुच्यते यत् कश्चिद्देवलोकं गच्छति कश्चिन्नो गच्छतीति भावः । भगवानाह—' गोयमे ' त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' से णं सन्नी पंचिंदिए ' स खलु संज्ञी पञ्चेन्द्रियः, ' सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए ' सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तकः सर्वं पर्याप्तिभिर्युक्त सन्नित्यर्थः, ' तहारूवस्स ' तथारूपस्य, तथाविधस्य द्रव्यतः सदोरकमुखवस्त्रिकादि साधुवेषधार-

---

इस तरह गर्भगत जीव के नरक गमन में कारण प्रतिपादित कर अब सूत्रकार देवलोक में उसके गमन के कारण का प्रतिपादन करने निमित्त प्रश्नोत्तररूप सूत्र का कथन करते हैं—(जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा) हे भदंत ! गर्भस्थ जीव क्या देवलोकों में उत्पन्न हो जाता है ? (अत्थेगइए उववज्जेज्जा) हे गौतम ! गर्भ में रहा हुआ कोई एक जीव मरके देवलोक में उत्पन्न होता है और कोई एक गर्भगत जीव मरकर देवलोक में उत्पन्न नहीं भी होता है । (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कोई एक गर्भस्थ जीव मरके देवलोक में उत्पन्न नहीं होता है ? (गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्ज-

---

આ રીતે ગર્ભમા રહેલ જીવના નરકગમનનાં કારણોનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર તેના દેવલોક ગમનનાં કારણોનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે પ્રશ્નોત્તર રૂપ સૂત્રોનુ કથન કરે છે– (जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा ?) હે ભગવન્ ! શુ ગર્ભમા રહેલ જીવ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે ? (अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) હે ગૌતમ ! ગર્ભમા રહેલો કોઇ એક જીવ મરીને દેવલોકમા ઉત્પન્ન થાય છે, અને કોઈ એક ગર્ભમા રહેલ જીવ મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન નથી પણ થતો (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને દેવલોકમા જાય છે અને કોઈ એક ગર્ભમા રહેલ જીવ મરીને દેવલોકમા જતો નથી

ઉત્તર—(गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए

'तम्मणे' तन्मनाः तस्मिन् धर्मादावेव मनो यस्य स तथा, 'तल्लेस्से' तल्लेश्यः, लेश्या आत्मपरिणामविशेष —तथा च तस्मिन्नेव धर्मादौ लेश्या आत्मपरिणामविशेषरूपा विषते यस्य स तथा 'तदज्झवसिए' तदध्यवसितः, धर्मादिविषयकाध्यवसायवान् 'तत्तिव्वज्झवसाणे' तत्तीव्राध्यवसानः, तस्मिन्नेव तीव्राध्यवसाययुक्तः, 'तदट्ठोवउत्ते' तदर्थोपयुक्तः, तदर्थं धर्मादिनिमित्तमुपयुक्त उपयोगवान् 'तदप्पियकरणे' तदर्पितकरणः, तस्मिन् धर्मादावेव अर्पितानि करणानि=इन्द्रियाणि अथवा करणानि=कृतकारितानुमोदितरूपाणि वा यस्य स तथा, 'तब्भावणाभाविए' तद् भावना भावितः, तस्मिन् धर्मादावेव भावना वासना तया भावितो यः स, तथा, 'एयंसि णं अंतरंसि एतस्मिन् खलु अंतरे—एतस्मिन् समये 'कालं करेज्जा' कालं कुर्यात् म्रियेत तदा स जीवः 'देवलोगेसु' देवलोकेषु 'उववज्जइ' उपपद्येत, देवो भवेदित्यर्थः, 'से तेणट्ठेणं गोयमा०' तेनार्थेन हे

धर्मादिक में ही एक चित्त वाला बनकर (तम्मणे) धर्मादिक में ही एक अन्तःकरण वाला बनकर (तल्लेसे) धर्मादिकरूप आत्मपरिणाम वाला बनकर (तदज्झवसिए) धर्मादिविषयक अध्यवसायवाला बनकर (तत्तिव्वज्झवसाणे) धर्मादिविषयक तीव्र अध्यवसायवाला बनकर (तदट्ठोवउत्ते) धर्मादिक निमित्त ही उपयोगवाला बनकर (तदप्पियकरणे) धर्मादिक में ही अपनी इन्द्रियों को, अथवा कृत कारित अनुमोदना को समर्पित करनेवाला बनकर (तब्भावणाभाविए) धर्मादिक की ही भावना से भावित बनकर (एयंसि अंतरंसि) उस समय यदि (कालं करेज्जा) कालधर्म को प्राप्त होता है-गर्भ में ही मर जाता है-तब ऐसा वह जीव (देवलोगेसु) देवलोक में (उववज्जइ) उत्पन्न होता है, अर्थात् देव होता है (से तेणट्ठेणं गोयमा!) इस कारण हे

ચિત્ત કરીને, (तम्मणा) ધર્મ વગેરેમાં જ પોતાનું મન કરીને, (तल्लेसे) ધર્માદિક રૂપ આત્મપરિણામ વાળો બનીને (तदज्झवसिए) ધર્માદિક પ્રવૃત્તિમય બનીને, (तत्तिव्वज्झवसाणे) ધર્માદિવિષયક તીવ્ર અધ્યવસાય વાળો બનીને, (तदट्ठोवउत्ते) ધર્માદિક નિમિત્તે જ ઉપયોગવાળો બનીને, (तदप्पियकरणे) ધર્માદિકમાં જ પોતાની ઇન્દ્રિયોને અથવા કૃત, કારિત અનુમોદનાને સમર્પિત કરનારો બનીને (तब्भावणाभाविए) ધર્માદિકની ભાવનાથી ભાવિત બનીને (एयंसि अंतरंसि) તે સમયે જો તે મનુષ્ય (काल करेज्जा) કાળધર્મ પામે અર્થાત્ જો મૃત્યુ પામે—તો તે ગર્ભમાં રહેલો જીવ (देवलोगेसु उववज्जइ) દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે એટલે કે દેવ થાય છે (से तेणट्ठेणं*

रागरत्ते ' तीव्रधर्मानुरागरक्तः, तीव्रोऽतिशयितो यो धर्मविषयको अनुरागो धर्म बहुमानरूपस्तेन रक्त इव रक्तो यः स तीव्रधर्मानुरागरक्तः, ' से णं जीवे ' स खलु जीवः ' धम्मकामए ' धर्मकामकः-श्रुतचारित्ररूपधर्मवाञ्छायुक्त, ' पुन्नकामए' पुण्यकामकः, पुण्य-शुभकर्म तस्य कामो=वाञ्छा विद्यते यस्य स पुण्यकामकः, ' सग्गकामए ' स्वर्गकामकः, स्वर्गवाञ्छावान् ' मोक्खकामए ' मोक्षकामकः मोक्षवाञ्छायुक्तः ' धम्मकंखिए ' धर्मकांक्षितः, ' पुन्नकंखिए ' पुण्यकांक्षितः, ' सग्गकंखिए ' स्वर्गकांक्षितः ' मोक्खकंखिए ' मोक्षकांक्षितः ' धम्मपिवासिए ' धर्मपिपासितः, धर्मे पिपासा इव पिपासा अतृप्तिर्विद्यते यस्य स तथा, 'पुन्नपिवासिए ' पुण्यपिपासितः, ' सग्गपिवासिए ' स्वर्गपिपासितः ' मोक्खपिवासिए ' मोक्षपिपासितः, ' तच्चित्ते ' 'तच्चित्तः तस्मिन् एव धर्माढौ चित्तं यस्य स तथा,

---

से श्रुतचारित्ररूप धर्ममें श्रद्धावाला बन जाता है, अथवा-वैराग्य से जिसे तत्वश्रद्धारूप रुचि उत्पन्न हो जाती है, जो तीव्र धर्मानुरागसे-अतिशय धर्मविषयक बहुमानरूप अनुराग से-रंग जाता है (से णं जीवे) ऐसा वह पूर्वोक्त विशेषणोंवाला गर्भगत जीव (धम्मकामए, पुन्नकामए, सग्गकामए) श्रुतचारित्ररूप धर्म की वांछासे युक्त बनकर, शुभकर्मरूप पुण्य की वांछासे युक्त बनकर, स्वर्ग की वांछासे युक्त बनकर, (मोक्खकामए) मोक्षकी वांछासे युक्त बनकर (धम्मकंखिए) धर्मकी कांक्षासे युक्त बनकर, (पुण्णकंखिए) पुण्य की कांक्षायुक्त बनकर (सग्गकखिए) स्वर्ग की कांक्षासेयुक्त बनकर (मोक्खकंखिए) मोक्षकी कांक्षासे युक्त बनकर, (धम्मपिवासिए) धर्म की पिपासा वाला बनकर (पुण्णपिवासिए) पुण्य की पिपासा वाला बनकर (सग्गपिवासिए) स्वर्ग की पिपासावाला बनकर (मोक्खपिवासिए) मोक्ष की पिपासा वाला बनकर (तच्चित्ते)

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમા શ્રદ્ધાવાળો બની જાય છે અથવા વૈરાગ્યને લીધે જેને સાચા તત્ત્વમા શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ હોય છે, અને જે તીવ્ર ધર્માનુરાગથી રંગાયેલ હોય છે (से णं जीवे) એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળો તે ગર્ભમા રહેલ જીવ (धम्मकामए, पुन्नकामए, सग्गकामए) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની અભિલાષા વાળો બનીને, શુભકર્મરૂપ પુણ્યની વાછા વાળો બનીને, સ્વર્ગની અભિલાષા વાળો બનીને, (मोक्खकामए) મોક્ષની કામના વાળો બનીને, (धम्मकंखिए) ધર્મની ઇચ્છાવાળો બનીને, (पुण्णकखिए) પુણ્યની ઇચ્છા વાળો બનીને (सग्गकंखिए) સ્વર્ગની ઇચ્છાવાળો બનીને (मोक्खकंखिए) મોક્ષની ઇચ્છાવાળો બનીને (धम्मपिवासिए) ધર્મની પિપાસાવાળો બનીને, (पुण्णपिवासिए) પુણ્યની પિપાસા વાળો બનીને, (सग्गपिवासिए) સ્વર્ગની પિપાસાવાળો બનીને (मोक्खपिवासिए) મોક્ષની પિપાસાવાળો બનીને, (तच्चित्ते) ધર્મ વગેરેમાં એક

गर्भ पुत्र जीवोपि जागर्ति-किम् 'सुहियाए सुहिए भवइ' सुखितायां सुखितो भवति किम्? 'दुहियाए दुहिए भवइ' दुःखितायां दुःखितो भवति किमिति प्रश्नः। भगवानाह-'हंता गोयमा' इत्यादि। 'जीवे णं गब्भगए समाणे' जीवः खलु गर्भगतः सन् 'जाव दुहियाए दुहिए भवइ' यावत् दुःखितायां दुःखितो भवति, गर्भगतस्य जीवस्य सर्वाऽपि क्रिया मातृवदुत्तानस्थितेव भवेदिति भावः। 'अहे णं' अथ खलु नवमासपर्यन्तं गर्भे वासानन्तरम् 'पसवगकालसमयंसि' प्रसवकालसमये-प्रसूतिसमये 'सीसेण वा पाएहिं वा आगच्छति' यदा शीर्षेण वा पादाभ्यां वा आगच्छति यदा 'सम्म आगच्छइ' सम्यगागच्छति=सम्यक्=सुखेन आगच्छति। यदा-'तिरियमागच्छइ' तिर्यगागच्छति, तद

क्या वह भी सो जाता है? (जागरमाणीए जागरइ) तथा माता के जग जाने पर क्या वह भी जग जाता है? (सुहियाए सुहिए भवइ दुहियाए दुहिए भवइ) अथवा जब माता सुखी होती है तब वह क्या सुखी होता है? जब माता दुःखी होती है तब वह गर्भगत जीव क्या दुःखी होता है? (हंता गोयमा! गब्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ) हां गौतम! गर्भगत जीव यावत् माताके दुःखित होनेपर दुःखी होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि गर्भगत जीव की समस्त क्रियाएँ माता की क्रिया अनुसार ही होती हैं। (अहे णं पसवगकालसमयंसि) जीव जब नौ माह तक गर्भ में रह चुकता है तब उसके बाद प्रसूति समय में (सीसेण वा पाएहिं वा) वह जीव यदि मस्तक से अथवा दोनों पैरों से (आगच्छइ) बाहर निकलता है तो (सम्म आगच्छइ)) अच्छी तरह से-बिना किसी कष्ट के-बाहर निकल आता है। यदि वह (तिरि

આપ છે? (जागरमाणीए जागरइ) શું માતા જાગે ત્યારે તે પણ જાગી જાય છે? (सुहियाए सुहिए भवइ दुहियाए दुहिए भवइ) શું માતા દુઃખી થાય ત્યારે ગર્ભમાં રહેલો જીવ દુઃખી થાય છે? અને માતા સુખી થાય ત્યારે શું તે સુખી થાય છે?

ઉત્તર—(हंता गोयमा!) હા, ગૌતમ! (जीवे णं गब्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ) ગર્ભમાં રહેલો જીવ મુખપૂર્વક રહીને રહે છે અહીંથી જઈને માતાના દુઃખે દુઃખી અને સુખીની બધી ક્રિયાઓથી યુક્ત રહે છે તાત્પર્ય' એ છે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવની બધી ક્રિયાઓ માતાની ક્રિયા પ્રમાણે જ થાય છે (अहे णं पसवगकालसमयंसि) આમ સવાનવ માસ સુધી ગર્ભમાં રહે છે-ત્યાર પછી પ્રસૂતિના સમયે सीसेण वा पाएहिं वा જો તે જીવ મસ્તકથી અથવા બન્ને પગથી (आगच्छइ) બહાર નીકળે છે તો (सम्म आगच्छइ) કોઈ પણ જાતની મુશ્કેલી વિના બહાર નીકળે છે પણ જો (तिरियमागच्छइ) તિરછો "આડો"

गौतम ! अनेन कारणेन एवमुच्यते यदेकः कश्चिद् धर्मी जीवो गर्भे मृत्वा देवलोकं गच्छति, एकः कश्चित् धर्मादिरहितो गर्भे मृत्वा देवलोकं न गच्छतीति भावः

गर्भाधिकारादेवेदमपरं गर्भसूत्रमाह-' जीवे णं भंते ' इत्यादि ।

' जीवे णं भंते ' जीवः खलु भदन्त ! ' गब्भगए समाणे ' गर्भगतः सन् ' उत्ताणएवा ' उत्तानको वा, गर्भे वसन् जीवः किम् उत्तानक ऊर्ध्वमुखः, तथा- ' पासिल्लए वा ' पार्श्वितो वा-पार्श्वभागेन स्थितो वा ' अंबखुज्जए वा ' आम्रकुब्जको वा, आम्रफलवत् कुब्जो वा ' अच्छेज्ज वा ' आसीत वा सामान्यतः । ' चिट्ठेज्ज वा ' तिष्ठेद्वा ऊर्ध्वस्थानेन ' निसीएज्ज वा ' निषीदेद्वा पर्यङ्काद्यासनेन ' तुयट्टेज्ज वा ' त्वग्वर्तयेद्वा, पार्श्वं परिवर्तयेद्वा, ' माउए सुवमाणीए सुवइ ' मातरि स्वपत्यां स्वपिति. यदा माता निद्राति तदा तद्गर्भगतो जीवोपि निद्राति किम् जागरमाणीए जागरइ ' जागर्त्यां जागर्ति, यदा माता जागर्ति तदा तदीयगर्भ-

---

गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि गर्भमें रहा हुआ कोई एक जीव मर कर देवलोक में जाता है, कोई एक धर्मादि से रहित बना हुआ गर्भस्थित जीव मरकर देवलोक में नहीं जाता है ।

गर्भ का अधिकार होने से ही सूत्रकार अब यह दूसरा गर्भसूत्र कहते हैं (जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा) हे भदन्त ! गर्भ में स्थित जीव क्या चत्ता-ऊँचा मुख किया हुआ स्थितहोता है ? पार्श्वभागसे स्थित होता है ? (अंबखुज्जए वा) क्या वह आमके जैसा कुब्ज होता है ? (अच्छेज्ज वा) सामन्यआसनसे बैठता है (चिट्ठेज्ज वा) खड़ा होता है ? (निसीएज्ज वा) अथवा कि-पर्यङ्क आदि आसनसे बैठता है ? (तुयट्टेज्ज वा) या करवट बदलता है ? (माउए सुवमाणीए सुवइ) अथवा-माताके सो जाने पर

गोयमा !) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવુ કહું છું કે ગર્ભમા રહેલો કોઇ એક જીવ મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને ધર્માદિથી રહિત એવો કોઈ એક જીવ મરીને દેવલોકમા જતો નથી

ગર્ભનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી સૂત્રકાર આ બીજુ ગર્ભ સૂત્ર કહે છે-

(जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा) હે ભગવન્! ગર્ભમા રહેલો જીવ શુ મુખ ઊચુ કરીને રહે છે ? શુ તે પાર્શ્વભાગથી સ્થિત હોય છે ? (अंबखुज्जए वा) શુ તે આમના સમાન કુબ્જ (કુબડો) હોય છે ? (अच्छेज्जवा) શુ તે સામાન્ય આસને બેસે છે ? (चिट्ठेज्जवा) ઉભો થાય છે ? (निसीएज्ज वा) અથવા પર્યંક વગેરે આસને બેસે છે ? (तुयट्टेज्ज वा) કે પડખુ ફેરવે છે ? (माउए सुवमाणीए सुवइ) અથવા-માતા સૂવે ત્યારે તે પણસૂઈ

तेन व्यवस्थापितानि, 'अभिनिविट्ठाइं' अभिनिविष्टानि, अभि=तीव्रानुभावतया निविष्टानि स्थापितानीत्यर्थः, 'अभिसमन्नागयाइं (अभिसमन्वागतानि तदपाभिमुखीभूतानि ततश्च 'उदिण्णाइं उदीर्णानि, कर्मस्थितिपरिपाकेन उदयावलिकाप्राप्तानि, किन्तु 'नो उवसंताइं भवंति' नो उपशान्तानि भवन्ति 'तओ भवइ' ततो भवति, यदि कर्मणोपशान्तम् किन्तु फलोदयाय फलदानाय व्यवस्थितं स्याद् तदा गर्भनिर्गतो जीव कीदृशो भवतीत्याह-'दुरूवे' दुरूपः, दुरूपो भवति-विकृताकृतिमान् भवति, 'दुवन्ने' दुर्वर्णः, कुत्सितवर्णवान् भवति, 'दुग्गंधे' दुर्गन्धः, कुत्सितगंधवानित्यर्थः, 'दुरसे' दुरसः, कुत्सितरस इत्यर्थः, 'दुफासे' दुःस्पर्शः, कर्कश कठोरादिशुभस्पर्शवानित्यर्थः, 'अणिट्ठे' अनिष्टः, अवाञ्छनीयः, 'अकंते' अकान्तः, अनभिलषणीयः, 'अप्पिए' अप्रियः, सर्वोपकारकः, 'असुभे' अशुभः, अकल्याणकरः, 'अमणुन्ने' अमनोज्ञः, अरितकारकः, 'अमणामे' अमनोमः, सकलजनमतिकूलः, 'हीणस्सरे' हीनस्वरः, 'दीणस्सरे' दीनस्वरः, 'अणिट्ठस्सरे' अनिष्टस्वरः 'अकंतस्सरे' अकान्तस्वरः, 'अप्पियस्सरे' अप्रियस्वरः 'असुभस्सरे' अशुभस्वरः, 'अमणुन्नस्सरे' अमनोज्ञस्वरः, अमणामस्सरे'

हुए हैं, (तओ भवइ, दुरूवे, दुवन्ने, दुरसे, दुफासे, अणिट्ठे, अकंते, अप्पिए, असुभे, अमणुन्ने, अमणामे, हीणस्सरे, दीणस्सरे, अणिट्ठस्सरे, अकंतस्सरे, अप्पियस्सरे, असुभस्सरे, अमणुण्णस्सरे अमणामस्सरे, अण एज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ) तो वह जीव ऐसा मनुष्य होता है, कि जो कदरूप होता है, खोटे वर्णवाला होता है, खोटे रस वाला होता है, खोटे स्पर्शवाला होता है, अनिष्ट होता है, अकान्त होता है, अप्रिय होता है, अशुभ होता है, अमनोज्ञ होता है, अमनोम होता है, हीनस्वरवाला होता है, दीनस्वरवाला होता है, अनिष्टस्वरवाला होता है, अकान्त स्वर वाला होता है, अशुभ स्वरवाला होता है, अमनोज्ञ स्वरवाला होता है,

---

आयरेइ" (तओ भवइ, दुरूवे, दुवन्ने दुरसे दुफासे, अणिट्ठे अकंते, अप्पिए, असुभे, अमणुन्ने, अमणामे हीणस्सरे, दीणस्सरे, अणिट्ठस्सरे, अकंतस्सरे, अप्पियस्सरे, असुभस्सरे अमणुण्णस्सरे अमणामस्सरे अणाएज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ) તે કદરૂપો હોય છે અશુભ વર્ણવાળો હોય છે, અશુભ રસવાળો હોય છે અશુભ સ્પર્શવાળો હોય છે અનિષ્ટ હોય છે અકાન્ત હોય છે, અપ્રિય હોય છે અશુભ હોય છે અમનોજ્ઞ હોય છે અમનોમ હોય છે, હીન સ્વરવાળો હોય છે દીનસ્વરવાળો હોય છે અનિષ્ટ સ્વરવાળો હોય છે, અકાન્ત સ્વરવાળો હોય છે, અપ્રિયસ્વરવાળો હોય છે, અશુભસ્વરવાળો હોય છે, અમનોજ્ઞ

तया निस्सरति तदा 'विणिघायमावज्जइ' विनिघातमापद्येत, म्रियेतेत्यर्थः, यदा गर्भस्तिरश्चीनो भूत्वा मातुरुदरान्निर्गन्तुं प्रवर्तते तदा स तन्माता च प्रायो मरणमापद्येत, तिर्यग्रूपेण निःसरणस्यासंभवात्। गर्भनिर्गतस्य जीवस्य यत् स्यात्तदाह—'वन्नवज्झाणि' वर्णवध्यानि च वर्णः श्लाघारूपः स वध्यो हन्तव्यो येषां तानि वर्णवध्यानि निन्दनीयानीत्यर्थः, अथवा 'वर्णवाह्यानि' इतिच्छाया, तत्र—वर्णाद् बाह्यानि अशुभानीत्यर्थः। 'से' तस्य गर्भविनिर्गतस्य जन्तोः 'कम्माइं' कर्माणि 'बद्धाइं' बद्धानि सामान्यतः, तानि तु दूरतोऽपि भवन्तीत्याह—'पुट्ठाइं' स्पृष्टानि संलग्नतया गाढतरबन्धनतः, अथवा बद्धानि, कुतः? स्पृष्टानि—पूर्वं स्वव्यापारेणैव स्पर्शविषयीकृतानी अभूवन् अतएव बद्धानीति भावः, 'निहत्ताइं' निधत्तानि, उद्वर्तनाऽपवर्तनकरणवर्जितशेषकरणायोग्यत्वेन व्यवस्थापितानि, 'कडाइं' कृतानि, निकाचितानि सर्वकरणायोग्यत्वेन व्यवस्थापितानि, 'पट्ठवियाइं' प्रस्थापितानि, मनुष्यगतिपञ्चेन्द्रियजातित्रसादिनामकर्मादिना सहोदय-

---

यमागच्छइ) तिरछा होकर बाहर निकलता है तब तो (विणिघायमावज्जइ) मरजाता है। तात्पर्य यह हैं कि जब गर्भ तिरछा होकर माता के गर्भाशय से बाहर निकलने लगता है, तब वह माता और गर्भ प्रायः दोनों ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं। क्यों कि गर्भ तिरछा होकर माता के पेट से योनि द्वारा निकल नहीं सकता है। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि गर्भ से निर्गत जीव कैसा क्या होता है—(वन्नवज्झाणि य से कम्माइं बद्धाइं, पुट्ठाइं, निहत्ताइं, कडाइं, पट्ठवियाइं, अभिनिविट्ठाइं, अभिसमन्नागयाइं, उदिन्नाइं नो उवसंताइं भवंति) गर्भ से निर्गत हुए उस जीव के जो अशुभ कर्म बद्ध हैं, स्पृष्ट हैं, निधत्त हैं, कृत हैं, प्रस्थापित हैं, अभिनिविष्ट हैं, अभिसमन्वागत हैं, उदयप्राप्त हैं, उपशान्त नहीं

થઇને બહાર આવે તો (विणिघायमावज्जइ) તે મરણ પામે છે તાત્પર્ય એ છે કે જો ગર્ભ તિરછો "આડો" થઇને માતાના ગર્ભાશયમાથી બહાર નીકળે તો ઘણે ભાગે માતા અને ગર્ભ બન્ને મરણ પામે છે કારણ કે ગર્ભ તિરછો થઇને માતાના ગર્ભાશયમાથી બહાર નીકળી શકતો નથી

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે ગર્ભમાથી બહાર આવેલો જીવ કેવો હોય છે?

(वण्णवज्झाणि य से कम्माइं, बद्धाइं, पुट्ठाइ, निधत्ताइं, कडाइ, पट्ठवियाइं, अभिनिविट्ठ इं, अभिसमन्नागयाइ, उदिन्नाइ. नो उवसताइ भवंति) ગર્ભમાથી બહાર નીકળેલો તે જીવ કે જેને અશુભ કર્મ બદ્ધ છે, સ્પૃષ્ટ છે, નિધત્ત છે, કૃત છે, પ્રસ્થાપિત છે, અભિનિવિષ્ટ છે, અભિસમન્વાગત છે, ઉદય પ્રાપ્ત છે અને જેનાં કર્મ ઉપશાન્ત થયેલ નથી "આ બધાં પદોનો અર્થ આગળ સમજાવવામાં

आदिज्जवयणे पडायाए आविभवइ ' यावत् आदेयवचनः प्रत्यायतश्चापि भवति, यदि तस्यात्मनः कर्म नो बद्धं भवेत्तदा रूपादारभ्य स्वरपर्यन्तं सर्वमुत्तमप्रकारकमेव भवेत् समुन्नतश्च स जीव आदेयवचनः सन् मनुष्यत्वे समुत्पन्नो भवतीति, ' सेवं भंते सेवं भंते ' त्ति तदेव भदन्त तदेव भदन्त इति, हे भदन्त ! गर्भविषय येन प्रकारेण यदुक्तं देवानुप्रियेण । कथितं तत् एवमेव सर्वं सत्यमेव इत्युक्त्वा भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा च संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू०५ ॥

"पुट्ठाई" यह पद हेतुपरक पद है-आत्मा में कर्म बद्ध क्यों हुए तो इसका उत्तर यह (पुट्ठाई) पद देता है-वह बताता है कि आत्माने पहिले इन्हें अपने ही योगादिरूप व्यापार से स्पर्श का विषयभूत बनाया पश्चात् वे आत्माके साथ चिपक गये। 'निधत्त' इस पदके विषयमें विशेष विवरण मेरे बनाये हुए "मोक्षपद" में लिखा जा चुका है-जिसका तात्पर्य यह है कि निधत्त जो कर्म होते हैं उनमें उद्वर्तना और अपवर्तना इन दो करणों के सिवाय दूसरे और करण कुछ भी नहीं कर सकते हैं। तथा जीव के साथ जो कर्म बद्ध हैं उनका कर्ता और कोई दूसरा जीव नहीं है किन्तु वही स्वयं आत्मा है कि जिसके साथ वे बद्ध हैं, यह बात "कडाइ" पद प्रकट करता है। इससे यह बात सिद्धान्त की पुष्ट और स्पष्ट हो जाती है कि कर्मों को अपने साथ बद्ध करने में अधिकारी स्वयं आत्मा ही है। निकाचित वे कर्म होते हैं कि जिनमें कोई भी करण कुछ भी नहीं कर सकता है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस

હેતુપરક પદ છે એટલે કે આત્માની સાથે કર્મ શા માટે બદ્ધ થયા તેનો ઉત્તર આ "पुट्ठाई" પદ આપે છે તે એ વાત બતાવે છે કે આત્માએ પહેલા પોતાના જ યોગ વગેરે વ્યાપારથી તેમને સ્પૃષ્ટ કર્યા અને તેથી તે કર્મો આત્માની સાથે ચોંટાયા 'निधत्त" પદના વિષયમા વિશેષ વર્ણન મેરા દ્વારા બનાવેલા "મોક્ષપદ" માં લખવામા આવ્યુ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે નિધત્ત કર્મોમા, ઉદ્વર્તના અને અપવર્તના એ બે સિવાયના કરણ કોઇ પણ કરી શકતાં નથી, તથા તેમની સાથે જે કર્મ બદ્ધ હોય છે તેનો કર્તા બીજો કોઇ પણ જીવ હોતો નથી પણ સ્વયં આત્મા પોતે જ છે એજ વાત "कडाइ" પદ પ્રકટ કરે છે આથી સિદ્ધાન્તની એ વાતને સમર્થન મળે છે કે કર્મોને પોતાની સાથે બદ્ધ કરવામાં આત્મા પોતે જ અપરાધી હોય છે એ કર્મ ઉપર કોઇ પણ ઇશ્વરની કોઇ પણ પ્રેરણા થતી નથી તે કારણે નિકાચિત" કર્મ કહે છે.

अमनोमस्वरः, 'अणाएज्जवयणे' अनादेयवचनः, अग्राह्यवचनः, एतादृशः सन् 'पच्चयाए यावि भवइ' प्रत्यायातश्चापि भवति, मनुष्यभवमागच्छतीति, यस्य जीवस्य 'वण्णवज्झाणियसे कम्माइं नो बद्धाइं' वर्णबद्ध्यानि च तस्य कर्माणि नो बद्धानि 'पसत्थं णेयव्वं' प्रशस्तं ज्ञातव्यम्, अत्र पूर्वपाठो व्यत्ययेन=प्रशस्तरूपेन ग्राह्य इत्यर्थः, यदि तस्य जीवस्य कर्माणि अशुभरूपेण नो बद्धानि भवेयुस्तदा सर्वं रूपादिकं प्रशस्तमेव भवतीति ज्ञातव्यानीतिभावः। कियत्पर्यन्तमित्याह-'जाव

अमनोमस्वरवाला होता है, अनादेयवचनवाला होता है। सूत्रकारने यहां यह कहा है कि यदि गर्भस्थ जीव भाग्यवशात् सुरक्षित रीति से गर्भ से बाहर निकल भी आता है परन्तु यदि उसके पूर्वोपार्जित कर्म निंदनीय या अशुभ आदि रूप हैं और अभीतक वे उपशांत दशा में नहीं आ पाये हैं-उदय दशा में ही चल रहे हैं तो वह उनके उदय के कारण खोटे रूप आदि वाला बन जाया करता है। सूत्र में जो "वन्नवज्झाणि" पद आया है उसका अर्थ "निंदनीय या अशुभ" ऐसा है, कारण कि-वर्ण शब्दका अर्थ श्लाघारूप वर्ण जिनका नष्ट हो चुका है, अर्थात् जो निंदनीय हैं वे कर्म। अथवा जो कर्म अशुभ हैं वे "वण्णवज्झ" है यहां इस पद की संस्कृत छाया "वर्णबाह्य" ऐसी होगी, क्योंकि जो अशुभ कर्म होते हैं वे वर्ण से-प्रशंसा से बाह्य-बहिर्भूत हुआ करते हैं। (बद्ध) का तात्पर्य यहां सामान्यरूप से बांधे गये ऐसे कर्मों से है (पुट्ठाइं) पद से यह बात स्पष्ट होती है कि जो गाढ बंधन से पुष्ट किये हैं ऐसे वे कर्म। अथवा

સ્વરવાળો હોય છે, અમનોમસ્વરવાળો હોય છે, અને અનાદેય વચનવળો હોય છે. સૂત્રકાર અહીં એ બતાવે છે કે ગર્ભનો જીવ જો ભાગ્યવશાત્ સુરક્ષિત રીતે ગર્ભમાથી બહાર નીકળે તો પણ તેના પૂર્વોપાર્જિત કર્મ જો નિંદનીય અથવા અશુભ હોય અને જ્યા સુધી તેના તે કર્મો ઉપશાન્ત દશામાં આવ્યા ન હોય ઉદય દશામાં જ હોય તો તે કર્મોના ઉદયને કારણે તે જીવ ખરાબ રૂપ વગેરે વાળો જન્મે છે. સૂત્રમાં આપેલા "वन्नवज्झाणि" પદનો અર્થ અહિં "નિંદનીય કે અશુભ" એવો થાય છે કારણ કે "वर्ण" શબ્દનો અર્થ "શ્લાઘા" પણ થાય છે તે શ્લાઘારૂપ વર્ણ જેનો નષ્ટ થઇ ગયો છે એટલે કે જે નિંદનીય છે એવા કર્મ અથવા જે કર્મ અશુભ હોય છે તેમને "वण्णवज्झ" કહે છે અહીં તેની સંસ્કૃત છાયા "वर्णबाह्य" એવી થાય છે. કારણ કે જે અશુભ કર્મો હોય છે ને વર્ણથી (પ્રશંસાથી) બાહ્ય (રહિત) હોય છે. "बद्ध" એટલે સામાન્ય રૂપે બાંધેલા કર્મો "पुट्ठाइं" પદનો અર્થ ગાઢ બંધનથી પુષ્ટ કરાયેલા કર્મ એવો સમજવો અથવા "पुट्ठाइं" એ પદ

यदि (वण्णावज्जाणि से कम्माइं नो बद्धाइं पसत्थं णेयव्वं जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ) उस गर्भगत जीव के अशुभ अथवा निंदनीय कर्म बद्ध न हों तो सब रूपादिक उसके प्रशस्त ही होते हैं, ऐसा जानना चाहिये, यह प्रशस्तता कहांतक जाननी चाहिये तो इसके लिये सूत्रकार ने कहा कि—" जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ " कि यदि जीव के अशुभ कर्म बद्ध नहीं अपितु शुभ कर्म बद्ध हैं तो रूप से लेकर स्वर पर्यंत सब उसके प्रशस्त ही होते हैं। वह अपनी उन्नति करता हुआ लोक में आदेयवचन वाला बन जाता है। ऐसा वह मनुष्य होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि अशुभ कर्म बद्ध आदि वाले पूर्वजीव की अपेक्षा इस शुभ कर्म बद्धादिवाले जीव की सब बातें प्रशस्त ही प्रशस्त होती हैं। (सेव भंतेर! त्ति) हे भदन्त ! गर्भ के विषय में जिस प्रकार से आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब ऐसा ही है ऐसा ही है अर्थात् सत्य ही है सत्य ही है—ऐसा कह कर उन गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर बैठ गये ॥सू०५॥

॥ प्रथम शतकमें यह सप्तम उद्देश समाप्त हुआ १-७॥

હો તો પણ અશુભ રૂપ વગેરે વાળો આય છે પણ જો (वण्णावज्जाणि से कम्माइं नो बद्धाइं पसत्थं णेयव्वं जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ) તે અશુભથી નિકાચેલા હોવે અશુભ અથવા નિંદનીય કર્મ બાંધ્યા ન હોય તો તેના રૂપ વગેરે પ્રશસ્ત (સારા) જ હોય છે એમ જાણવુ તે પ્રશસ્ત પણ કયાં સુધી સમજવુ તે બતાવવાને માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે " जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ " જેટલે કે જો જે જીવને અશુભ કર્મોનો બંધ આપેક્ષા ન હોય પણ શુભકર્મો જ બાંધ્યા હોય તો તેના રૂપથી લઇને સ્વર સુધીના બધા જ સારાં હોય છે તે પોતાની પ્રગતિ સાધતો સાધતો હોયમા આદેયવચન વાળો બની જાય છે (તેનાં વચનને બધાં લોકો માન્ય કરે છે,) તાત્પર્ય એ છે કે અશુભ કર્મ બદ્ધ જીવની અપેક્ષાએ શુભ કર્મબદ્ધ જીવના રૂપ વગેરે બધાં પ્રશસ્ત જ હોય છે (सेव भंते ! सेव भंते !) હે ભગવન્! આપે જેના વિષયમાં જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે હે ભગવન્! આપની વાત તદ્દન સાચી છે આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વંદના કરી, નમસ્કાર કર્યા. વંદના નમસ્કાર કરીને, સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતાં તેઓ પોતાને સ્થાને બેસી ગયા. ॥ સૂ-૫ ॥

आदि वगैरह नामकर्म के साथ उदयरूप से व्यवस्थापित किये गये ऐसे जो कर्म हैं वे व्यवस्थापित कर्म हैं। जिन कर्मों का अनुभाव तीव्ररूप से स्थापित हुआ है वे कर्म अभिनिविष्ट हैं। "अभिसमन्नागयाइं" का तात्पर्य है कि जो कर्म उदय के सन्मुख हो रहे हैं। और इसी कारण जो "उदिन्नाइं" उदयावलिका में प्राप्त हो रहे हैं तो जीव ऐसे कर्मों के प्रभाव से कैसा होता है? इसका उत्तर सूत्रकार ने "दुरूवे" इत्यादि पदों द्वारा दिया है। दुरूप शब्द का अर्थ विकृत (खराब) आकारवाला होता है। ऐसा जीव विकृत आकारवाला होता है। "दुवन्ने" कुत्सित वर्णवाला होता है। "दुग्गंधे" दुर्गंध आदि वाला होता है। "अणिट्ठे" पद यह कहता है कि उसे कोई चाहता नहीं है। (अकंते) वह अनभिलषणीय होता है "अप्पिए" अप्रिय-सब का अपकार करने वाला होता है। "असुभे" अकल्याणकर होता है। अमनोज्ञ-अहितकारक होता है। अमनोम-सकलजनों के प्रतिकूल रहा करता है। तथा हीनादि स्वर वाला होता है। उसका वचन कोई नहीं मानता है ऐसा वह अनादेय वचन वाला होता है। "पच्चायाए यावि भवइ" यह पद प्रकट करता है कि ऐसा जीव यदि मनुष्य होता है तो वह ऐसा होता है। तथा

મનુષ્યગતિ, પંચેન્દ્રિય જાતિ, ત્રસ વગેરે નામ કર્મની પ્રકૃતિઓ સાથે ઉદયરૂપે વ્યવસ્થાપિત એવા જે કર્મ છે તેને "વ્યવસ્થાપિત કર્મ" કહે છે. જે કર્મોનો અનુભવ તીવ્ર રૂપે સ્થાપિત થયો હોય છે તે કર્મોને "અભિનિવિષ્ટ" કહે છે "અભિસમન્નાગયાઇ" એટલે કે જે કર્મો ઉદયની સન્મુખ આવી રહ્યાં હોય અને તે કારણે જે "ઉદિન્નાઇં" ઉદયાવલિકામાં આવી રહ્યાં હોય છે એવાં કર્મ. એવા કર્મોના પ્રભાવથી જીવ કેવા સ્વરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એ સૂત્રકારે 'દુરૂવે" ઇત્યાદિ પદો વડે બતાવ્યુ છે "દુરૂવે" એટલે વિકૃત (ખરાબ દેખાવ વાળો, "દુગંધે" એટલે દુર્ગન્ધ વાળો, "અણિટ્ઠે" (અનિષ્ટ) એ પદ એ અર્થ બતાવે છે કે તેને કોઈ ચાહતુ નથી 'અકંતે" એ પદ એમ સૂચવે છે કે તે અકાન્ત-અનભિલષણીય-હોય છે "અપ્પિએ" અપ્રિય સૌનો અપકાર કરનારો હોય છે "અસુભે" અકલ્યાણકારી, "અમનોજ્ઞ" અહિતકારક, "અમનોમ' બધા લોકોને પ્રતિકૂળ રહેનારો હોય છે વળી તે ગર્ભમાથી નિકળેલો જીવ હીન વિગેરે સ્વર વાળો હોય છે તેનાં વચનને કોઈ માનતુ નથી, માટે તેને અનાદેય વચન વાળો કહ્યો છે "પચ્ચાયાએ યાવિ ભવઇ" આ પદો વડે એ બતાવ્યું છે કે એવો જીવ જો મનુષ્ય ગતિમાં જન્મ

सप्तममुद्देशकं निरूप्य, तदनु अष्टमं निरूपयति, तदनयो सप्तमाष्टमोद्देशकयोः परस्परमयं सम्बन्धः, सप्तमोद्देशके जीवानां गर्भवास मतिपादितः, गर्भवासश्च जीवानां सत्यायुष्के एव भवति, इत्यायुषो निरूपणायायमष्टमोद्देशकः तथा प्रथम शतकप्रथमोद्देशकस्यादौ सप्तदशगाथासु-'बाल'इति पदमुक्तं तद्विबालस्य निरूपणाय चाष्टमोद्देशकः आरभ्यते, तस्य आरभ्यमाणस्याष्टमोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम्-'रायगिहे' इत्यादि ।

मूलम्—रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी-एगंत बालेणं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ तिरिक्खाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ ? णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ, मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ, देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालेणं

का कथन, वीर्यविचार लब्धिवीर्य तथा करणवीर्य का विचार, चौवीस दण्डक, उद्देशक की परिसमाप्ति-

सप्तम उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार आठवें उद्देशक का निरूपण करते हैं। इन दोनों सातवें और आठवें उद्देशकों का आपस में इस प्रकार से संबंध है-सप्तम उद्देशक में जीवों का गर्भवास प्रतिपादित किया गया है-सो यह गर्भवास जीवों का आयुकर्म के होने पर ही होता है। इस आयु कर्मके निमित्तका तथा प्रथम शतकके प्रथम-उद्देशक की आदि में सप्तदश गाथा में "बाल" ऐसा जो कहा गया है सो उस बाल के निरूपण करने के निमित्त यह आठवां उद्देशक प्रारंभ किया गया है उसका सर्व प्रथम सूत्र (रायगिहे समोसरणं जाव) इत्यादि है।

આત્મા ઉદ્દેશનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર આઠમાં ઉદ્દેશનું નિરૂપણ કરે છે તે બન્ને ઉદ્દેશાઓ વચ્ચે પરસ્પરનો આ પ્રમાણે છે-આત્મા ઉદ્દેશકમાં જીવોના ગર્ભવાસનું પ્રતિપાદન કરાયું છે-જીવોનો ગર્ભવાસ આયુષ્ય કર્મના સદ્ભાવથી જ થાય છે તેથી આયુષ્યકર્મનું નિરૂપણ કરવાના આશયથી તથા પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશની શરૂઆતમાં આવતી સત્તરગાથામાં જે "बाल" પદ આવે છે તે બાલનું નિરૂપણ કરવાને માટે આ આઠમા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કર્યો છે તેનું સૌથી પહેલું સૂત્ર 'रायगिहे समोसरणं जाव' ઇત્યાદિ છે

॥ अथ अष्टमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

अस्मिन् उद्देशके संक्षेपतो विचारणीया विषया इमे सन्ति एकान्तबालस्य एकान्तपण्डितस्य च स्वरूपादिकथनम्, अंतक्रियायाः कल्पोपपत्तिकाक्रियायाश्च स्वरूपविचारः, बालपण्डितस्य स्वरूपादिनिर्णयः, देवगतेः कारणप्रतिपादनम्। मृगघातकादिपुरुषाणां स्वरूपादि संकीर्त्तनम्, क्रिया–कायिकीआधिकरणिकी–प्राद्वेषिकी–पारितापनिकी–प्राणातिपातिक्यादीनां स्वरूपादिविचारः, तृणदाहकपुरुषस्य स्वरूपादिकथनम्, धनुर्धारिपुरुषविचारः, मृगवैरपुरुषवैरादीनां कथनम्, षण्मासानां मध्ये तदुपरि वा मरणे क्रियाविचारः पुरुषघातकपुरुषस्य विचारः, समानयोर्द्वयोः पुरुषयोः स्वरूपकथनपूर्वकं जयपराजययोः कारणकथनम्, वीर्यविचारः, लब्धिवीर्यस्य तथा करणवीर्यस्य विचारः, चतुर्विंशतिर्दण्डकाः उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति।

प्रथमशतक अष्टम उद्देशक

इस अष्टम उद्देशक में विचारणीय विषयों की सूची संक्षेप से इस प्रकार से है–एकान्त बालक तथा एकान्तपण्डित का स्वरूप आदि का कथन अन्तक्रिया का और कल्पोपपत्तिका क्रिया का स्वरूप विचार, बालपण्डित के स्वरूप आदि का निर्णय, देवगति के कारणों का प्रतिपादन, मृगघातक आदि पुरुषों के स्वरूप आदि का कथन, क्रिया–कायिकी, अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपाति की आदिकों के स्वरूप आदि का विचार, तृणदाहक पुरुष के स्वरूप आदि का विचार, धनुर्धारी पुरुष का कथन, मृगवैर, पुरुषवैर आदि का कथन, छहमास के भीतर व उसके बाद मरने में क्रिया का विचार, पुरुषघातक पुरुष का विचार समान दो पुरुषों के स्वरूपकथनपूर्वक जय पराजय के कारण

પહેલા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક

પહેલાં તો આ આઠમાં ઉદ્દેશમાં કયા કયા વિષયનો વિચાર કર્યો છે તે સંક્ષેપમાં બતાવવામાં આવે છે–એકાન્ત તથા બાલક એકાન્ત પંડિતના સ્વરૂપનું કથન, અન્તક્રિયાનો અને કલ્પોપપત્તિકા ક્રિયાના સ્વરૂપનો વિચાર, બાલ પંડિતના સ્વરૂપ વગેરેનો નિર્ણય, દેવગતિના કારણોનુ પ્રતિપાદન, મૃગઘાતક વગેરે પુરુષોના સ્વરૂપ વગેરેનું કથન, ક્રિયા–કાયિકી, આધિકરણિકી, પ્રદ્વેષિકી, પારિતાપનિકી, પ્રાણાતિપાતિકા વગેરેના સ્વરૂપ આદિનો વિચાર, તૃણદાહક પુરૂષના સ્વરૂપ વગેરેનો વિચાર, ધનુર્ધારી પુરૂષનું કથન, મૃગવૈર પુરૂષવૈર વગેરેનુ કથન, છ માસની અંદર અને છ માસ પછી મરવામાં ક્રિયાનો વિચાર, પુરૂષઘાતક પુરૂષનો વિચાર, સમાન બે પુરૂષોના સ્વરૂપ કથન પૂર્વક જય પરાજયના કારણોનો વિચાર, વીર્ય વિચાર, લબ્ધિવીર્ય તથા કરણ વીર્યનો વિચાર, ચોવીસ દંડક, ઉદ્દેશની સમાપ્તિ

वन्दित्वा नमस्थित्वा नात्यासन्ने नातिदूरे शुश्रूषमाण नमस्यन् अभिमुखे विनयेन प्राञ्जलिपुटः " इति संग्रह, ' एव वयासी ' एवमवादीत्-वक्ष्यमाणप्रकारेणा-कथयत्-किमवादीदित्याह—' एगतबाले ' इत्यादि ।

' एगतबाले ण भंते ' एकान्तबालः खलु भदन्त !, एकान्तबालः-मिथ्या-दृष्टिरविरतो वा ' मणुस्से ' मनुष्यः ' किं णेरइयाउय पकरेइ ' किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, एकेऽन्तबाल इत्यत्र एकान्तेति पद मिश्रदृष्टिजीव व्यावर्तयति । ' मणुस्साउयं पकरेइ ' मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, ' देवाउय पकरेइ ' देवायुष्कं प्रक रोति ? ' णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ ' नैरयिकायुष्क कृत्वा नैरयिकेषु

बाद गौतम ने प्रभु को वन्दना और नमस्कार किया। बाद में वे अपने उचित स्थान पर धर्म सुनने की अभिलाषा से प्रभु के सन्मुख नमस्कार कर दोनों हाथ जोड़ कर बैठ गये। और इस प्रकारसे पूछने लगे (एगतबालेणं भंते मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ ?) हे भदन्त एकान्तबाल क्या नरकायुष्क का बंध करता है ? (तिरिक्खाउय पकरेइ ?) तिर्यञ्चायु का बंध करता है ? (मनुस्साउय पकरेइ) मनुष्यायु का बंध करता है ? (देवाउय पकरेइ) देवायु का बंध करता है ? यहाँ एकान्त शब्द का अर्थ मिथ्या दृष्टि अथवा अविरत-विरति विना का जीव है। बाल पद के साथ जो एकान्त विशेषण पद का प्रयोग किया है उससे यह बात सूचित होती है कि जो जीव मिश्रदृष्टि वाला है वह एकान्त बाल नहीं है। अब इस मिश्र दृष्टि वाले की व्यावृत्ति के निमित्त बाला पद के साथ एकान्त शब्द विशेषणरूप से प्रयुक्त किया गया है। (णेरइया

નમસ્કાર કર્યા ત્યારે બાદ ગૌતમ સ્વામી પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર કરીને, ધર્મ તત્વનુ શ્રવણ કરવાની અભિલાષાથી બન્ને હાથ જોડીને શિર નમાવીને પ્રભુની સન્મુખ બેસી ગયા અને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછયો-(एगतबालेणं भंते ' मणुस्से किं णेरइयाउय पकरेइ ?) હે ભગવન્ ? એકાન્ત બાલ જીવ, શું નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ? કે (तिरिक्खाउय पकरेइ ?) તિર્યંચના આયુનો બંધ બાંધે છે ? (मणुस्साउयं पकरेइ) કે મનુષ્યના આયુનો બંધ બાંધે છે ? (देवाउयं पकरेइ) કે દેવતાના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ? અહીં એકાન્તબાલનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ અથવા અવિરતિ (વિરતિ વિનાનો) જીવ સમજવો. બાલ શબ્દ સાથે એકાન્ત વિશેષણનો પ્રયોગ કરવાનું કારણ એ છે કે જે જીવ મિશ્રદૃષ્ટિવાળો હોય છે તેને એકાન્તબાલ કહી શકાતો નથી. તેથી મિશ્રદૃષ્ટિવાળાનો સમાવેશ ન કરવા માટે એકાન્ત વિશેષણ બાલ પદની સાથે મૂકવામાં આવ્યું છે (णेरइयाउयं किच्चा, णेरइएसु उववज्जइ) તે એકાન્તબાલ

मणुस्से णेरइयाउयंपि पकरेइ, तिरियाउयंपि पकरेइ, मणुस्साउयंपि पकरेइ, देवाउयंपि पकरेइ, णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, तिरियाउयंपि किच्चा तिरिएसु उववज्जइ, मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ, देवाउयंपि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ ॥ सू० १ ॥

छाया—राजगृहे समवसरणम्, यावदेवमवादीत्, एकान्तबालो भदन्त! मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, तिर्यगायुष्कं प्रकरोति मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, देवायुष्कं प्रकरोति? नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते, मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते, गौतम! एकान्तबालः खलु मनुष्यो नैरयिकायुष्कमपि प्रकरोति तिर्यगायुष्कमपि प्रकरोति मनुष्यायुष्कमपि प्रकरोति देवायुष्कमपि प्रकरोति, नैरयिकायुष्कमपि कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, तिर्यगायुष्कमपि कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते मनुष्यायुष्कमपि कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते देवायुष्कमपि कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते ॥ सू० १ ॥

टीका—'रायगिहे समोसरणं' राजगृहे समवसरणम्—राजगृहे नगरे भगवतः समागमनम् 'जाव' यावत्पदेन—तच्छ्रुत्वा परिषदो नगरान्निर्गमनम्, भगवतो धर्मकथा श्रवणानन्तरं परिषदः प्रतिगमनं, तदनु भगवान् गौतमो भगवन्त

"रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी" इत्यादि।

टीकार्थ—(रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी) राजगृह नगरमें भगवान्का समवसरण—शुभागमन—हुवा यावत् इस प्रकारसे बोले "यहां यावत् पद से इस प्रकार से प्रकरण की सगति करनी चाहिये—"भगवान् के शुभागमन को सुनकर वहां का जनसमूह नगर से निकला, भगवान्के पास जाकर वदना नमस्कार कर प्रभुके मुखसे उसने धर्मकथा श्रवण की, धर्मकथा सुनकर वह नगर में पीछे वापस आ गया। इसके

"रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासि" इत्यादि।

ટીકાર્થ—"रायगिहे समोसरण जाव एवं वयासि" રાજગૃહ નગરમા ભગવાનનું સમવસરણ-શુભાગમન-થયુ. ત્યાથી શરૂ કરીને "આ પ્રમાણે બોલ્યાં" સુધીનો પાઠ અહી લેવો જોઈએ અહી "यावत्" (પર્યન્ત) પદ વડે આ પ્રમાણે પાઠ ગ્રહણ કરવો-ભગવાનના શુભાગમનના સમાચાર સાંભળીને ત્યાંનો માનવસમૂહ નગરમાથી નીકળીને ભગવાન પાસે ગયો ભગવાનની પાસે જઈને વંદણા નમસ્કાર કરીને ધર્મકથાનું શ્રવણ-કર્યું. ધર્મકથા સાંભળીને લોકો

छाया—एव खलु चतुर्भिः स्थानैर्जीवा नैरयिकतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, नैरयिकतायै कर्म प्रकृत्य नैरयिकेषु उपपद्यन्ते, तद्यथा-महारम्भतया१, महापरिग्रहतया २, पञ्चेन्द्रियवधेन ३, कुणपाहारेण ४ इति ।

' तिरिक्खाउयपि पकरेइ' तिर्यगायुष्कमपि प्रकरोति, मायिकत्वादिनिमित्तमपि कारणेनोपस्तिर्यगायुष्कं बध्नाति, उक्तञ्च—" तिरिक्खजोणिएसु माइल्लयाए णियडिल्लयाए१, अलियवयणेण२, उक्कंचणयाए ३, वंचणयाए " इति ।

छाया—तिर्यग्योनिकेषु मायाचित्तया निकृतिमत्तया१, असत्कवचनेन २, उत्कञ्चनतया ३, वञ्चनतया ४ इति । ' मणुस्साउयंपि पकरेइ ' मनुष्यायुष्कमपि

(णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) नरकायुष्क का भी बध कर वह नैरयिकों में उत्पन्न होता है । (तिरिक्खाउयंपि किच्चा तिरिएसु उववज्जइ) तिर्यंचायुष्क भी बंध कर वह तिर्यंचों में उत्पन्न होता है। (मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ देवाउयंपि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ) मनुष्यायु का भी बध कर वह मनुष्यों में उत्पन्न होता है। देवायु का भी बध कर वह देवलोक में उत्पन्न होता है। एकान्त बाल जो मनुष्य होता है—अर्थात् जो मनुष्य मिथ्यादृष्टि अथवा विरति विना का होता है--वह महारम्भ आदि रूप चार कारणों को लेकर नरकायुष्क का बध करता है—औपपातिक सूत्र में कहा है कि " एव खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति णेरइयत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइएसु उववज्जंति-तं जहा-महारंभयाए १ महापरिग्गहयाए २ पंचिंदियवहेणं ३, कुणिमाहारेणं ४" जीव इन चार स्थानों द्वारा नैरयिक गति में जाने के लिये कर्मबंध करते हैं-

---

किच्चा तिरिएसु उववज्जइ) तिर्यंचायुष्यनो બંધ બાંધીને તિર્યંચ યોનીમા પણ ઉત્પન્ન થાય છે (मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ देवाउय पि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ) મનુષ્યના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને મનુષ્યોમા પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને દેવના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમા પણ ઉત્પન્ન થાય છે એકાન્તબાલ એટલે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ અથવા વિરતિ વિનાનો-મનુષ્ય મહારભ વગેરે ચાર કારણોને લીધે નરકના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ઔપપાતિક સૂત્રમા કહ્યું છે કે-(एव खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं-पकरेंति णेरइयत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइएसु उववज्जंति-तं जहा-(१) महारंभयाए (२) परिग्गहयाए (३) पंचिंदिय वहणं (४) कुणिमाहारेण) આ ચાર કારણોને લીધે જીવ નરકગતિમા જવા યોગ્ય કર્મનો બંધ બાંધે છે-(१) महारंभ

उपपद्यते, 'तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ' तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षु उपपद्यते, 'मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ' मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, 'देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ' देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते। किमितिप्रश्नः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'एकांतबालेणं—मणुस्से णेरइयाउयंपि पकरेइ' एकान्तबालः खलु मनुष्यो नैरयिकायुष्कमपि प्रकरोति, हे गौतम! एकान्तबालो मिथ्यादृष्टिरविरतो वा जीवो महारंभादिभिश्चतुर्भिः कारणैरुपार्जयति नैरयिकायुष्कमपीति।

उक्तं चौपपातिकसूत्रे—'एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति, नेरइयत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइएसु उववज्जंति त जहा—महारंभयाए १, महापरिग्गहयाए २, पंचिंदियवहेणं ३, कुणिमाहारेणं ४।' इति।

उयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) वह एकान्त बाल नरकायु का बंध कर क्या नैरयिकों में उत्पन्न होता है? (तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु-उववज्जइ) तिर्यञ्चायु का बंधकर क्या तिर्यञ्चों में उत्पन्न होता है? (मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) मनुष्यायु का बंधकर क्या मनुष्यों में उत्पन्न होता है? (देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ) देवायु का बंधकर क्या देवलोक में उत्पन्न होता है? ये सब प्रश्न हैं-इनका उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (गोयमा! एगंतबालेणं मणुस्से णेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिया उयं पि पकरेइ, मणुस्सा उयं पि पकरेइ, देवाउयं पि पकरेइ) हे गौतम! एकान्त बाल जो मनुष्य होता है वह नरकायुष्क का भी बंध करता है, तिर्यंचायुष्क का भी बंध करता है, मनुष्यायुष्क का भी बंध करता है, देवायुष्क का भी बंध करता है।

નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને શું નરયિકોમા ઉત્પન્ન થાય છે? (तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ) તિર્યંચના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને શુ તિર્યંચોમાં ઉત્પન્ન થાય છે? (मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) મનુષ્યના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને શુ મનુષ્યોમાં ઉત્પન્ન થાય છે? કે (देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ?) દેવતાના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકોમા ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર—(गोयमा! एगंतबाले णं मणुस्से णेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरियाउयं पि पकरेइ, मणुस्साउयं पि पकरेइ, देवाउयं पि पकरेइ) હે ગૌતમ! એકાન્ત બાલ મનુષ્ય નરકાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે તિર્યંચાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે-(णेरइयाउयं पि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) તે એકાન્તબાલ મનુષ્ય નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને નૈરયિકોમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે, (तिरियाउयं पि-

नैरयिकेषूपपद्यते, तादृशायुष्ककर्म बध्वा कृत्वा तत्कर्मप्रेरितो नरकेषु समुत्पद्यते इति भावः । ' तिरिक्खाउयंपि किच्चा तिरिएसु उववज्जइ ' तिर्यगायुष्कमपि कृत्वा तिर्यक्षु उपपद्यते, ' मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ ' मनुष्यायुष्कमपि कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, ' देवाउयंपि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ ' देवायुष्कमपि कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते, यादृश यादृश कर्मबन्धनं स्वयमेव करोत्येकान्तबालो जीवः स तथानुकूलनारकादारभ्य देवलोकपर्यन्तं गच्छति, कर्मणामेतादृशस्वभावादिति भावः, एकान्तबालत्वे सर्वेषां समानेऽपि तत्कारणविशेषवशादेव नानाविधमायुर्बध्नन्त्यत एव बालत्वे समानेऽप्यविरतसम्यग्दृष्टिर्मनुष्यो देवायुष्कमेव बध्नाति, न तु शेषाणि नारकाद्यायुष्काणीति ॥ सू० १ ॥

एकान्तबालमनुष्यत्वेन एकान्तपण्डितसूत्रमाह—' एगंतपंडिए ' इत्यादि ।

मूलम्—एगंतपंडिए णं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ? गोयमा !

वह उस कर्म से प्रेरित होकर उसी गति में जाकर उत्पन्न हो जाता है। यही बात सूत्रकार ने (णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) इत्यादि सूत्रों द्वारा प्रकट की है। कर्मों का ऐसा ही स्वभाव है कि एकान्तबाल जीव जैसे २ कर्म को बंधा करता है वह उसके अनुकूल ही नारक से लेकर देवलोक पर्यन्त जाता है। यद्यपि जितने भी एकान्तबाल जीव हैं उन सब में एकान्त बालपना समान होता है-फिर भी आयु बंधके कारणों की विशेषता को लेकर नाना प्रकार की आयु का बंध बालजीव करते हैं। इस तरह बालपना समान होने पर भी अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्य देवायु का ही बंध करता है। शेष नरकादिक तीन आयुओं का नहीं ॥ सू-१ ॥

કે અવિરત આયુષ્યનો બંધ પણ છે—તે કયા બંધને કારણે-તે અહિંયા બતાવ્યું છે એજ વાત સૂત્રકારે (णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) વગેરે સૂત્રો વડે બતાવી છે એકાન્ત બાલ જીવો જેવા જેવા કર્મોનો બંધ બાંધે છે, તેવા તેવા કર્મોને અનુરૂપ નારકગતિથી લઈને દેવગતિ સુધી ઉત્પન્ન થાય છે એ કે તમામ એકાન્તબાલ જીવોમાં એકાન્ત બાલ પણું સરખું જ હોય છે, છતાં પણ આયુષ્ય બંધના કારણોની વિશેષતાને લીધે તે એકાન્તબાલ જીવો વિવિધ અવિરત આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ રીતે બાલપણાની (અજ્ઞાન પણાની) સમાનતા હોવા છતાં પણ અવિરતિ સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય દેવાયુષ્યનો જ બંધ બાંધે છે-નારકાદિ શેષ ત્રણ આયુષ્યોનો બંધ બાંધતો નથી ॥ ૧ ॥

प्रकरोति, प्रकृतिभद्रतादिभिश्चतुर्भिः कारणैर्जीवोपि मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, उक्तञ्च—

" मणुस्सेसु पगइभद्दयाए १, पगइविणीययाए २, साणुक्कोसयाए ३, अमच्छरियाए ४ " इति ।

छाया—मनुष्येषु प्रकृतिभद्रतया १, प्रकृतिविनीततया, २, सानुक्रोशतया ३, अमत्सरितया ४ । इति । ' देवाउयंपि पकरेइ ' देवायुष्कमपि प्रकरोति, सरागसंयमादिभिश्चतुर्भिः कारणैर्जीवो देवायुष्कं प्रकरोति, उक्तञ्च—

" देवेसु–सरागसंजमेणं १, संजमासंजमेणं २, अकामणिज्जराए ३, बालतवोकम्मेणं ४ " इति ।

छाया–देवेषु–सरागसंयमेन१, संयमासंयमेन२, अकामनिर्जरया३, बालतपःकर्मणा ४। इति । ' णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ ' नैरयिकायुष्कमपि कृत्वा

कर्मबंध कर वे नैरयिकों में उत्पन्न हो जाते हैं। वे चार स्थान इस प्रकार से हैं–महा आरंभ करना, महा परिग्रह रखना, पंचेन्द्रिय जीवो का वध करना, कुणिमाहार (मांसाहार) करना। इसी तरह जीव मायाचार आदि चार कारणोंके सेवन करनेसे तिर्यंच की आयुका बंध करता है–वे चार कारण इस प्रकार से हैं—१ मायाचार, निकृति, २ अलीक वचन, ३ उत्कंचन(लांच),४ वंचन। प्रकृतिभद्रता आदि चार कारणों को लेकर जीव मनुष्य आयु का बंध करता है–वे चार कारण ये हैं–प्रकृति से भद्र होना १, स्वभावतः विनीत होना २, दयालु होना ३, मत्सर भाव नहीं रखना ४ सरागसंयम आदि चार कारणों के सेवन करने से जीव देवायु का बंध करता है–वे चार कारण इस प्रकार से हैं–सरागसयम का पालन करना १, अकामनिर्जरा करना २, बाल तप करना ३ संयमासंयम का पालन करना ४। इस तरह जीव जिस आयुका बंध करता है

વાથી (૨) મહા પરિગ્રહ રાખવાથી, (૩) પંચેન્દ્રિય જીવોનો વધ કરવાથી અને (૪) કુણિમાહાર (માંસાહાર) કરવાથી જીવ તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ બાંધેછે. તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે–(૧) માયાચાર નિકૃતિ, (૨) અલીક વચન, (૩) ઉત્કંચન અને (૪) વંચન. પ્રકૃતિભદ્રિકતા વગેરે ચાર કારણોના સેવનથી જીવ મનુષ્યના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે— (૧) સરલ પ્રકૃતિવાળા હોવું, (૨) વિનીત સ્વભાવના હોવુ, (૩) દયાળુ હોવું અને (૪) મત્સર ભાવ ન રાખવો સરાગસંયમ વગેરે ચાર કારણોના સેવનથી જીવ દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધે છે તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે– (૧) સરાગસંયમનું પાલન કરવું, (૨) અકામ નિર્જરા કરવી, (૩) બાલ તપ કરવું અને (૪) સંયમાસંયમનું (શ્રાવકધર્મનું) પાલન કરવુ. આ રીતે જીવ

इ गती पञ्चायेते तद्यथा अन्तक्रिया चैव कल्पोपपत्तिका चैव, तत्रैतार्थेन गौतम ! यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, बालपण्डितः खलु भदन्त ! मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? गौतम ! नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, तत्केनार्थेन यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? गौतम ! बालपण्डितः खलु मनुष्यस्तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वा अन्तिके एकमपि आर्यधार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य देशं मूलगुणप्रत्याख्यानं देशं नो प्रत्याख्याति, देशं मूलगुणप्रत्याख्यानं देशं नो प्रत्याख्याति, तत्तेनार्थेन देशोपरमत्वेन प्रत्याख्यानेन नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते तत्तेनार्थेन यावद्देवेषूपपद्यते ॥ सू० २ ॥

टीका—'एगंतपंडिए णं भंते' एकान्तपण्डितः खलु भदन्त ! एकान्तपण्डित साधु 'मणुस्से' मनुष्यः, 'एकान्तपण्डिते' ति कथनेनैव मनुष्यत्वापत्तौ पुनः 'मणुस्से' इति कथने किमर्थं कृतम् ? यतो मनुष्यमन्तरेण एकान्तपण्डितत्वं न भवितुमर्हति ? अत्रोच्यते-मनुष्यति विशेषणं स्वरूपमात्रपरिचाय

एकान्त बालपने का प्रतिपक्षी जो एकान्तपण्डितपना है उस संबंधी सूत्र को अब सूत्रकार कहते हैं-'एगंतपंडिए णं भंते ! मणुस्से' इत्यादि।

टीकार्थ-(एगंतपंडिए णं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ ? जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ) हे भदन्त ! जो मनुष्य एकान्त पण्डित है-वह क्या नैरयिक की आयु का बंध करता है ? तथा-यावत् वह देवायु का बंध करके देवलोक में उत्पन्न होता है ? ऐसा यह प्रश्न है ? यदि कोई यहां ऐसी शंका करे कि एकान्तपण्डितपना तो मनुष्य के सिवाय और कहीं संभवित है नहीं-फिर सूत्रकार ने जो (मणुस्से) यह पद रखा है यह क्यों रखा ? क्यों कि (एगंत पंडिए) इस पदसे ही

એકાન્ત બાલપણાનો પ્રતિપક્ષી એકાન્ત પંડિત પણ છે હવે સૂત્રકાર એકાન્ત પંડિત વિષે સૂત્રો કહે છે—' एगंत पंडिए णं भंते ! मणुस्से ' इत्यादि।

ટીકાર્થ:—(एगंत पंडिए णं भंते ! मणुस्से किं नेरइयाउयं पकरेइ ? जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ?) "હે ભગવન્ ! શું એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય નરકાયુષ્યનો બંધ કરે છે ? ત્યાંથી મરીને પહેલાંના સૂત્રો પ્રમાણેજ ' શું તે દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે ? ' આ પ્રશ્નોત્તર કથન સંબંધી કોઈ શંકા કરે કે એકાન્ત પંડિતપણું તો મનુષ્ય સિવાયની યોનીમાં સંભવી શકતું જ નથી તો સૂત્રકારે સૂત્રમાં (मणुस्से) (મનુષ્ય) પદ આ માટે મૂકયું છે ? કારણ કે (एगंतपंडिए) આથી જ મનુષ્ય શબ્દ સમજી શકાય છે તો તે

एगंतपंडिएणं मणूसे आउयं सिय पकरेइ सिय णो पगरेइ, जइ पगरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ, णो तिरियाउयं पकरेइ, णो मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ, णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ, णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ, देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ। से केणट्ठेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंतपंडियस्स केवलमेव दोगईओ पण्णायंति, तं जहा—अंतकिरिया चेव कप्पोववइया चेव, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ, बालपंडिए णं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! णो णेरइयाउयं पकरेइ जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ। से केणट्ठेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! बालपंडिए णं मणुस्से तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा णिसम्म देसं उवरमति, देसं णो उवरमइ, देसं पच्चक्खाइ, देसं णो पच्चक्खाइ, से तेणट्ठेणं देसोवरमदेसपच्चक्खाणे णं णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ, से तेणट्ठेणं जाव देवेसु उववज्जइ ॥ सू० २॥

छाया—एकान्तपण्डितः खलु भदन्त ! मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते ? गौतम ! एकान्तपण्डितो मनुष्यः स्यादायुष्कं प्रकरोति स्यान्नो प्रकरोति, यदि प्रकरोति नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति नो तिर्यगायुष्कं प्रकरोति नो मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, देवायुष्कं प्रकरोति, नो नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, नो तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते नो मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते। तत्केनार्थेन यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? गौतम ! एकान्तपण्डितस्य मनुष्यस्य केवलमेव

–'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'एगंत पंडिए णं मणुस्से' एकान्त पण्डितः खलु मनुष्यः 'सिय पकरेइ सिय णो पकरेइ' स्यात् प्रकरोति स्यात् नो प्रकरोति, एकान्तपण्डितः कदाचिदायुष्यं बध्नाति कदाचिन्नो बध्नाति, सम्य क्त्वसप्तके क्षपिते न बध्नात्यपि अन्यथा तु बध्नात्येवेत्याशयेन कथितं स्यात् प्रकरोति स्यान्न प्रकरोतीति । 'जइ पकरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ' यदि प्रकरोति तदा न नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, 'णो तिरियाउयं पकरेइ' नो तिर्यगायुष्कं प्रकरोति 'णो मणुस्साउयं पकरेइ' नो मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, अपि तु 'देवाउयं पकरेइ' देवायुष्कं प्रकरोति, एकान्तपण्डितो यदायुष्कं कर्मोपार्जयति तदा देवसम्बन्धिकर्मोपार्जयति नान्यदिति भावः । अथ पुनः प्रकारान्तरेण तमेव दर्शयति–'णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ' नो नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, 'णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ' नो तिर्यगायुष्कं

एगं मणुस्से आउयं सिय पकरेइ, सिय णो पकरेइ) गौतम ! जो एकान्त पण्डित मनुष्य है वह किसी अपेक्षा आयु का बंध करता भी है और किसी अपेक्षा आयु का बंध नहीं भी करता है । (जइ पकरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ, णो तिरियाउयं पकरेइ, णो मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ) यदि वह आयु का बंध करता है तो नैरयिक आयु का बंध नहीं करता, तिर्यंचायु का बंध नहीं करता, मनुष्यायु का बंध नहीं करता, सिर्फ एक देवायु का बंध करता है । (णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, णो तिरियाउयं किच्चा, तिरिएसु उववज्जइ, णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) नैरयिक आयु का बंध कर वह नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होता है, तिर्यंचायु का बंध कर वह तिर्यंचों

(गोयमा ! एगंत पंडिए णं मणुस्से आउयं सिय पकरेइ सिय णो पकरेइ) હે ગૌતમ ! જે એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય હોય છે તે કોઈ અપેક્ષાએ આયુષ્યનો બંધ બાંધે પણ છે અને કોઈ પણ અપેક્ષાએ આયુષ્યનો બંધ નથી પણ બાંધતા (जइ पकरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ णो तिरियाउयं पकरेइ णो मणुस्साउयं पकरेइ देवाउयं पकरेइ) જો તે આયુષ્યનો બંધ બાંધે તો પણ નૈરયિક આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી, તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ પણ બાંધતો નથી મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધતો નથી. પરંતુ દેવાયુષ્યનો જ બંધ બાંધે છે (णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને તે નારકગતિમાં ઉત્પન્ન થતા નથી.

कम्, शुक्लं दधि प्रमेयो घट इत्यादौ यथा शुक्लत्वं प्रमेयत्वं परिचायकं तथैव मकृतेपि। 'किं णेरइयाउयं पकरेइ' किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति-बध्नाति किम्? 'जाव देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते किम्? अत्र यावत्पदेन-"तिरिक्खाउयं पकरेइ? मणुस्साउयं पकरेइ? देवाउयं पकरेइ? नेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जइ? तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ? मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ?" इति संग्राह्यम्। अस्यार्थस्तु एकान्तबालसूत्रप्रश्नव्याख्यायां विलोकनीयः। भगवानाह

मनुष्यका ग्रहण हो जाता है। सो इसका समाधान ऐसा है कि (मनुष्य) यह पद जो विशेषरूप से रखा गया हैं सो वह व्यावर्तक विशेषणरूप से नहीं रखा हैं किन्तु स्वरूप विशेषरूप से रखा गया है-जैसे शुक्लं दधि, प्रमेयो घटः इत्यादि प्रयोगों में देखा जाता है। अतः शुक्लत्व और प्रमेयत्व ये स्वरूप के परिचायक जैसे विशेषण हैं उसी प्रकार से यहां पर भी (मणुस्से) यह भी स्वरूप का परिचायक विशेषण है। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (तिरिक्खाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ, णेरइयाउयं, किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिक्खेसु उववज्जइ? मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) यह सब पूर्वोक्त पाठ संगृहित हुआ हैं। इस पाठ का अर्थ एकान्तबाल सूत्र की यहां पहिले सूत्र में प्रश्नव्याख्या में कर दिया गया है। सो वहां देख लेना चाहिये। इस तरह से जो गौतमस्वामी ने प्रश्न किया है उसका उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं कि-(गोयमा! एगंतपंडि-

શકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય-"મનુષ્ય" પદને જે વિશેષણરૂપે મૂકવામાં આવ્યુ છે તે વ્યાવર્તક વિશેષણરૂપે મૂકયુ નથી પણ સ્વરૂપ વિશેષણરૂપે મૂક્યું છે-એવુ જ (शुक्लं दधि) (प्रमेयो घटः) વગેરે પ્રયોગોમાં જોવા મળે છે જેવી રીતે શુકલત્વ અને પ્રમેયત્વ, એ બન્ને સ્વરૂપનો પરિચય આપનારા વિશેષણો છે, એવી જ રીતે (मणुस्से) મનુષ્યપદ પણ સ્વરૂપનો પરિચય આપનારૂ વિશેષણ છે અહીં આવેલાં (जाव) (यावत् પર્યન્ત) પદથી નીચેના પાઠને ગ્રહણ કરવો જોઇએ (तिरिक्खाउयं पकरेइ, मणुस्साउय पकरेइ देवाउय पकरेइ, णेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिक्खेसु उववज्जइ? मणुस्साउय किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ?) આ પાઠનો અર્થ એકાન્તબાલ સૂત્રના પહેલા સૂત્રની પ્રશ્નવ્યાખ્યામાં આપવામાં આવ્યો છે, ત્યાથી વાચી લેવો. આ પ્રકારના જે પ્રશ્નો ગૌતમ સ્વામીએ પૂછ્યા છે તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે-

तीर्थकरैः प्रज्ञाप्येते, एतादृशगतिद्वयस्यैवाश्रयणं आश्रित्यादिति। अन्तक्रियानिर्वाणम्, कल्पोपपत्तिका=कल्पेषु अनुत्तर विमानान्तदेवलोकेषु उपपत्तिः कल्पोपपत्तिः, सैव कल्पोपपत्तिका, अत्र कल्पशब्दः सामान्ये नैव वैमानिक देवावासस्य सूचकः।

देवायु का बध कर वह देवलोक में उत्पन्न होता है। यहां पर "केवलमेव दो गईओ पण्णायंति" जो ऐसा कहा है सो इसका तात्पर्य यह है कि जितने भी एकान्तपण्डित मनुष्य हैं उन सब का ही अन्तक्रिया और कल्पोपपत्तिका ये दो ही गति होती हैं अन्य गति नहीं होती है! ऐसा तीर्थंकर प्रभु का कहना है। अन्तक्रिया शब्द का अर्थ निर्वाण है और कल्पोपपत्तिका का अर्थ सौधर्म देवलोक से लेकर अनुत्तर विमानतक देवलोक में उत्पन्न होना है तथा एकान्तपण्डित मनुष्य आयु का बध करता भी है और नहीं भी करता है ऐसा जो कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ ये अनंतानुबंधी चार एवं मिथ्यात्व मोहनीय, मिश्रमोहनीय, सम्यक्त्व मोहनीय, ये तीन इस प्रकार सात प्रकृतियां जिसके क्षय हो गये है तो वह किसी भी आयु का बध नहीं करता है। और यदि ये सम्यक्त्व सप्तक इसके नष्ट नहीं हुए तो वह आयु का बंध करता है। कल्पोपपत्तिका में जो कल्प शब्द है वह सामान्यरूप से ही वैमानिक देवावास का सूचक है।

કંઈ પણ કે આપત્ તે દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે. અહીં "केवलमेव दो गईओ पण्णायंति" એવું જે કહ્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય બે ગતિમાં જ જાય છે (૧) અન્તક્રિયા અને (૨) કલ્પોપપત્તિકા અન્ય ગતિમાં જતો નથી, એવું તીર્થંકર પ્રભુએ કહ્યું છે. અન્તક્રિયા એટલે નિર્વાણ 'મોક્ષ' અને કલ્પોપપત્તિક એટલે સૌધર્મ કલ્પથી લઈને અનુત્તર વિમાન સુધીના દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થવું "એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય આયુષ્યનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો" એ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-અનન્તાનુબંધી ક્રોધ માન, માયા અને લોભ એ ચાર અને મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય, અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય, એ ત્રણ મળીને કુલ સાત પ્રકૃતિઓનો જેણે સર્વથા ક્ષય કર્યો હોય તે કોઈ પણ આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી પણ જો તે સાતે પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કર્યો ન હોય તો તે એકાન્ત પંડિત આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે કલ્પોપપત્તિકામાંનો કલ્પ શબ્દ સામાન્ય રીતે વૈમાનિક દેવ આવાસનો સૂચક છે

कृत्वा तिर्यक्षु उपपद्यते 'णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु-उववज्जइ' नो मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषु उपपद्यते, किन्तु 'देवाउयं-किच्चा देवेसु उववज्जइ' देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, नैरयिकाद्यायुष्कं नोपार्जयति, न वा तादृशमायुष्कमुपार्ज्य नरकादिषु कदाचिदप्युत्पद्यते किन्तु देवायुष्कं समुपार्ज्य तदायुर्बलादेवलोके एव समुत्पद्यते इति समुदितार्थ इति। 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन 'जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, केन कारणेन स नारकादिकमायुरनुपार्ज्य नरकादिषु नोत्पद्यते देवायुष्कमुपार्ज्य देवलोके एवोत्पद्यत इति? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'एगंतपंडियस्स णं' एकान्तपण्डितस्य खलु 'मणूसस्स' मनुष्यस्य 'केवलमेव केवलमेव 'दोगईओ' द्वे गती 'पण्णायंति' प्रज्ञाप्येते नान्या इति। ते एवं दर्शयति—'तं जहा' तद्यथा 'अंतकिरिया चेव कप्पोववत्तिया चेव' अन्तक्रिया चैव कल्पोपपत्तिका चैव। केवलशब्दः साकल्यार्थे अतः सर्वेषामेवैकान्तपंडितानां द्वे एव गती

में उत्पन्न नहीं होता है, मनुष्य आयु का बंध कर वह मनुष्यों में उत्पन्न नहीं होता है। किन्तु देवायु का ही बंध कर वह देवों में उत्पन्न होता है। (से केणट्ठेणं जाव देवाउय किच्चा देवेसु उववज्जइ) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि एकान्तपण्डित मनुष्य यावत् देवायु का बंध कर देवों में उत्पन्न होता है? (गोयमा! एगतपंडियस्स णं मणुसस्स केवलमेव दो गईओ पण्णायंति) हे गौतम! जो एकान्तपण्डित मनुष्य होता है उसकी दो गतियां कही गई हैं (तं जहा) वे इस प्रकार से हैं। (अंतकिरियाचेव कप्पोववत्तिया चेव) एक अन्तक्रिया और दूसरी कल्पोपपत्तिका (से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) इस कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हूँ कि यावत्

તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ બાંધીને તે તિર્યંચ યોનિમા ઉત્પન્ન થતા નથી, મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ બાંધીને તે મનુષ્યગતિમા ઉત્પન્ન થતા નથી, પણ દેવાયુષ્યનો જ બંધ બાંધીને તે દેવોમા જ ઉત્પન્ન થાય છે. (से केणट्ठेण जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ?) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે એકાન્ત બાલપંડિત મનુષ્યો "નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને નરકોમા ઉત્પન્ન થતા નથી" ત્યાંથી લઈને "દેવાયુષ્યના બંધ બાંધીને દેવગતિમા ઉત્પન્ન થાય છે?" ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો (गोयमा! एगंत पंडियस्स णं मणुसस्स केवलमेव दो गईओ पण्णायंति) હે ગૌતમ! એકાન્ત પંડિત મનુષ્યોની બે ગતિઓ જ કહી છે, (तंजहा) તે ગતિઓ આ પ્રમાણે છે-(अंतकिरिया चेव कप्पोववत्तिया चेव) (૧) અંતક્રિયા અને (૨) કલ્પોપપત્તિકા (से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) હે ગૌતમ! તે કારણે હું એવું

पूरयति, बालपण्डितः नरयिकादिसबन्धि आयुष्यकर्म नोपार्जयति, न वा तादृश कर्मबलेन नैरयिकाद्यारभ्य मनुष्यपर्यन्तगतौ समुत्पद्यते किन्तु देवायुष्कं सहपार्श्वे तादृशकर्मबलादेवलोके एव समुत्पद्यते इति भावः । पुनः प्रभयति-'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन 'जाव देवाउय-किच्चा देवेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? बालपंडितो न नैरयिकायुर्बध्नाति, न च नैरयिकायुर्बध्वा नारकादिषूत्पद्यते किन्तु देवायुरेव बद्ध्वा देवलोकेषूत्पद्यते, तत्र किं कारणमिति प्रश्नाशय । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'बालपंडिए णं मणुस्से' बालपंडित खलु मनुष्य बालपंडितो नाम भावकः, 'तहारूवस्स'

मनुष्य नरकायु का बध नहीं करता है और यावत् यह देवायु का बध कर देवलोक में उत्पन्न होता है । तात्पर्य कहने का यह है कि जो बाल-पंडित मनुष्य होता है वह नैरयिक संबंधी आयुष्क कर्मका उपार्जन नहीं करता है, और न वह ऐसे कर्म के बल से नैरयिक से लेकर मनुष्य पर्यन्त गति में उत्पन्न होता है, किन्तु देवायुष्क का उपार्जन कर वह तादृश कर्म के प्रभाव से देवलोकों में ही उत्पन्न होता है । (से केणट्ठेण जाव-देवाउय किच्चा देवेसु उववज्जइ ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यह बालपण्डित मनुष्य यावत् देवायुष्क का उपार्जन कर देवलोकों में उत्पन्न होता है अर्थात्-यह बालपंडित मनुष्य न नैरयिक आदि की आयु बांधता है और न नैरयिक आदि की आयु बांध कर यह नारकादिकों में उत्पन्न होता है किन्तु देवायु ही बांध कर यह देवलोकों में उत्पन्न होता है इसमें क्या कारण है ? (गोयमा ! बालपंडिए णं मणुस्से) हे गौतम ! जो बालपंडित मनुष्य होता है वह

म हे गौतम ! ते बालपंडित मनुष्य नारकायुनो बंध बांधतो नथी " त्यारी बाद ' देवायुनो बंध बांधीने देवलोकमा उत्पन्न थाय छे ' त्या सुधीनो भाग ग्रहण करवो तात्पर्य ओ छे के ते बालपंडित मनुष्य नारकी संबंधी आयुष्य कर्मनु उपार्जन करतो नथी, अने ते तिर्यंचायुष्यनो अने मनुष्या-युष्यनो बंध पण बांधतो नथी. अने जेवा कर्मनो बंध न बांधवाने कारणे ते नारक गतिमां, तिर्यंच गतिमां तेमज मनुष्य गतिमां उत्पन्न थतो नथी पण देवायुष्यनो बंध बांधीने देवलोकमा ज उत्पन्न थाय छे

प्रश्न—(से केणट्ठेण जाव देवाउय किच्चा देवेसु उववज्जइ ? हे भगवन् ! आप आ कारणे एवुं कहो छो के ते बालपंडित मनुष्य नारक, तिर्यंच अने मनुष्य आयुष्यनो बंध बांधीने नारकगतिमां, तिर्यंच गतिमां के मनुष्यगतिमां उत्पन्न थतो नथी पण देवायुष्यनो बंध बांधीने देवलोकमां ज उत्पन्न थाय छे ?

तथारूपस्य ' समणस्स वा ' श्रमणस्य वा तपस्विनः ' माहणस्स वा ' माहनस्य वा-माहन माहन इत्येवं वदनशीलस्य निवृत्तसर्वसावद्यव्यापारस्य साधोः, यद्वा-माहनस्येति श्रावकस्य वा ' अंतिए ' अन्तिके समीपे 'एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा ' एकमपि आर्यं धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा ' णिसम्म ' निशम्य हृदि अवधार्य ' देसं उवरमइ ' देशमुपरमति, धार्मिकप्रवचनश्रवणोत्तरकाल देशादुपरतो भवतीत्यर्थः, 'देसं णो उवरमइ' देशं नोपरमति, देशान्नोपरतो भवति, 'देसं पच्चक्खाइ' देशं प्रत्याख्याति, देशादुपरमानन्तरं देशम्-एकदेशं स्थूलं प्राणातिपातादिकं प्रत्याख्याति त्यजति 'देसं णो पच्चक्खाइ ' देशं नो प्रत्याख्याति, आंशिकं प्रत्याख्यानं करोति आंशिकं प्रत्याख्यानं न करोति, ' से तेणट्ठेणं ' तत्ते-

---

(अर्थात् श्रावक) (तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए) तथा रूप श्रवण तथा माहन-मत मारो, मत मारो इस प्रकार का उपदेश देने वाले सर्वसावद्यव्यापारनिवृत्तशाली साधु के अथवा माहन श्रावक-के पास से (एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा) एक भी आर्य धार्मिक सुवचन सुन करके और (णिसम्म) उसे हृदय में अवधारण करके (देसं उवरमइ) कितनिक प्रवृत्तियों से दूर हो जाता है, और (देसं णो उवरमइ) कितनी प्रवृत्तियों से दूर नहीं होता है। (देस पच्चक्खाइ, देसं णो पच्चाक्खाइ) उपरम होने के बाद वह एकदेश से प्राणातिपात आदिका-अर्थात् स्थूलप्राणातिपात आदिका त्याग कर देता है और एकदेश से प्राणातिपात आदि का त्याग नहीं

उत्तरः—(गोयमा ! बालपडिए णं मणुस्से) हे गौतम ! જે બાલપંડિત (શ્રાવક) મનુષ્ય હોય છે તે (तहारुवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए) તે પ્રકારના શ્રમણ પાસેથી તથા " मा हन " " હણો નહી, હણો નહી " એવો ઉપદેશ દેનારા સર્વસાવદ્ય વ્યાપારથી રહિત એવા સાધુ પાસેથી અથવા માહન-શ્રાવકની પાસેથી (एगमपि आरिय धम्मियं सुवयणं सोच्चा) એક પણ આર્ય ધાર્મિક સુવચનનું શ્રવણ કરીને અને (णिसम्म) તેને હૃદયમા ધારણ કરીને (देसं उवरमइ) કેટલીક પાપકારી પ્રવૃત્તિયોથી દૂર રહે છે અને (देसं णो-उवरमइ) કેટલીક પાપકારી પ્રવૃત્તિયોથી દૂર રહેતો નથી (देस पच्चक्खाइ,-देस णो पच्चक्खाइ) તે એક દેશથી (અમુક અંશે) પ્રાણાતિપાત (હિંસા) વગેરેનો સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વગેરેનો ત્યાગ કરે છે અને અમુક અંશે પ્રાણાતિપાત વગેરેનો ત્યાગ કરતો નથી. એટલે કે પ્રાણાતિપાત વગેરેનો અમુક દૃષ્ટિએ આંશિક ત્યાગ કરે છે અને અમુક પ્રકારે આંશિકરૂપે તેનો ત્યાગ નથી પણ

नार्थेन 'देसोवरम इसपच्चक्खाणेण' देशोपरमदेशप्रत्याख्यानेन 'णो णेरइयाउयं पकरेइ' नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, 'जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, 'से तेणट्ठेणं जाव देवेसु उववज्जइ' तत्तेनार्थेन देवेषूपपद्यते, एवेन देशोपरमदेशप्रत्याख्यानेन बालपण्डितो नारकायुष्कं न बध्नाति किन्तु देवायुषो बन्धनं कृत्वा देवलोकेषु समुत्पन्नो भवतीति ॥सू० २॥

॥ इत्येकान्तपण्डितबालपण्डितयोर्विचारः ॥

अथ मृगघातकपुरुषादिविचारः—

जन्मग्रहणे आयुष्यकर्म कारणम्, आयुषो बन्धे च क्रिया कारणमिति क्रियाधिपतिकां पञ्चसूत्रीमाह—'पुरिसे णं भंते' इत्यादि ।

करता है। अर्थात् वह प्राणातिपात आदिका किसीरूप में आंशिकरूप में त्याग कर देता है और किसीरूप से आंशिकरूप में उनका त्याग नहीं करता है। इस तरह वह देशविरत श्रावक बन जाता है। (से तेणट्ठेणं देसोवरमदेसपच्चक्खाणेणं णो णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं जाव देवेसु उववज्जइ) इसलिये हे गौतम! देशोपरम और देशप्रत्याख्यान से युक्त होने के कारण वह बाल पण्डित मनुष्य नैरयिक आयुका बंध नहीं करता है। यावत् वह देवायु का बंध कर देवों में उत्पन्न होता है। इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि वह बालपण्डित मनुष्य यावत् देवलोकोंमें उत्पन्न होता है ॥ सू० २॥

॥इस प्रकारसे एकान्त पण्डित और बालपंडित का विचार समाप्त हुआ॥

अथ मृगघातक पुरुषादिकों का विचार—

जन्म के होने में आयु कर्म कारण है और आयुकर्म के बांधने में

કરતો અર્થાત્ રીતે તે દેશવિરત-શ્રાવક કહેવાય છે (से तेणट्ठेणं देसोवरम-देसपच्चक्खाणे णं णो णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) હે ગૌતમ! દેશોપરમ અને દેશ પ્રત્યાખ્યાનથી યુક્ત હોવાને કારણે તે બાલ પંડિત મનુષ્ય નરયિક, તિર્યંચ અને મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ બાંધીને નારક, તિર્યંચ અને મનુષ્ય ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી પણ દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે તે બાલપંડિત મનુષ્ય દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ. ૨ ॥

॥ એકાન્ત પંડિત અને બાલપંડિતનું વક્તવ્ય સમાપ્ત ॥

મૃગઘાતક પુરુષાદિકોનું વક્તવ્ય

જન્મ લેવામાં કારણરૂપ આયુષ્ય કર્મ છે અને આયુષ્ય કર્મ બાંધવામાં

मूलम्–पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा दहंसि वा उदगंसि दवियंसि वा वलयंसि वा नूमंसि वा गहणंसि वा गहणविदुग्गंसि वा पव्वयंसि वा पव्वयविदुग्गंसि वा वणंसि वा वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता, एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूडपासं उद्दाइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए पन्नत्ते, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपासं उद्दाइ, तावं च णं से पुरिसे सिय ति किरिए, सिय चउ किरिए, सिय पंच किरिए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ति किरिए सिय चउ किरिए सिय पंच किरिए, गोयमा ! जे भविए उद्दवयणयाए णो वंधणयाए, णो मारणयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए, तिहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि वंधणयाए वि णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि वंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए–अहिगरणियाए पाउसियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए ॥ सू० ३ ॥

क्रिया कारण है। इस विचार से अब सूत्रकार क्रिया प्रतिपादिका पंचसूत्री का कथन करते हैं—'पुरिसे णं भंते!' इत्यादि।

ક્રિયા કારણભૂત હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર ક્રિયા પ્રતિપાદક પાંચ સૂત્રોનું કથન કરે છે–"पुरिसे णं भंते!" ઇત્યાદિ

छाया—पुरुषः खलु भदन्त ! कच्छे वा ह्रदे वा उदके वा द्रवके वा वलये वा नूमे वा गहने वा गहनविदुर्गे वा पर्वते वा पर्वतविदुर्गे वा वने वा वनविदुर्गे वा मृगवृत्तिको मृगसङ्कल्पो मृगप्रणिधानो मृगवधाय गन्ता एत्य मृगा इति कृत्वा अन्यतरस्य मृगस्य वधाय कूटपाशमुद्दालति, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः प्रज्ञप्तः ? गौतम ! यावच्च खलु स पुरुष कच्छे वा यावत् कूटपाशमुद्दालति, तावच्च खलु स पुरुषः स्यात् त्रिक्रिय स्यात् चतुष्क्रियः, स्यात् पंचक्रियः ? तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रिय स्यात् पंचक्रियः गौतम ! यो भव्य उदकवधतया, नो बन्धनतया, नो मारणतया तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या आधिकरणिक्या प्राद्वेषिक्या तीव्रमि क्रियाभिः स्पृष्टः यो भव्यः उदकवधतयापि, बन्धनतयापि नो मारणतया तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या आधिकरणिक्या प्राद्वेषिक्या पारितापनिक्या तीव्रमि क्रियाभि स्पृष्टः, यो भव्य उदकवधतयापि बन्धनतयापि मारणतयापि तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या आधिकरणिक्या प्राद्वेषिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः तत्केनार्थेन यावत् पंचक्रियः ॥ सू० ६ ॥

टीका—' पुरिसे णं भंते ' पुरुषः खलु भदन्त ! ' कच्छंसि वा ' कच्छे वा—कच्छे नदीजलपरिक्षेप्तिवृक्षादियुक्तजलदेशविशेषे, ' दहंसि वा ' ह्रदे वा—अगाधजलप्रदेशे 'उदगंसि वा' उदके वा, सामान्ये जलाशय 'दवियंसि वा' द्रवके वा तृणादि द्रव्य सद्भावे ' वलयंसि वा ' वलये वा, दृष्टान्तत्वादिहाप्यटवि

टीकार्थ—(भंते !) हे भदन्त ! जो निश्चयसे (मिय विक्खिप) मृगोंसे अपनी जीविका चलानेवाला (मिय सकप्पे) मृगों को मारने के लिये कुत्सित संकल्पवाला, (मियपणिहाणे) मृगों की शिकार करने में तल्लीन चित्तवाला ऐसा (पुरिसे) कोई पुरुष (मियवहाए) मृगों को मारने के लिये (कच्छंसि वा) कच्छ में—नदी के जल से घिरे हुए झाडीवाले स्थान में (दहंसि वा) अथवा द्रह—अगाध जलवाले स्थान में (उदगंसि वा) या सामान्य जलाशय रूप तलाब वगैरे स्थान पर (दवियंसि वा)

ટીકાર્થ—(भंते ! जं मियविक्खिप) હે ભગવન્ મૃગો વડે જેઓ હે પશુ ખોની હત્યા કરીને જ પોતાનો નિર્વાહ કરનારો, (मिय सकप्पे) મૃગોને મારવાનો જેમનો સંકલ્પ કર્યો છે એવા (मियपणिहाणे) મૃગોનો શિકાર કરવામાં જ તલ્લીન ચિત્ત વાળો (पुरिसे) કોઈ કોઈ પુરુષ (मियवहाए) મૃગોની હત્યા કરવાને માટે (कच्छंसि वा) કચ્છમાં નદીથી ઘેરાયેલા ઝાડીવાળા સ્થાનમાં (दहंसि वा) અથવા દ્રહમાં—અગાધ જળવાળા સ્થાનમાં, (उदगंसि वा) અથવા સામાન્ય જળાશય રૂપ તળાવ વગેરે સ્થાન પર, (दवियंसि वा) અથવા ઘાસ

मूलम्–पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा दहंसि वा उदगंसि दवियंसि वा बलयंसि वा नूमंसि वा गहणंसि वा गहणविदुग्गंसि वा पव्वयंसि वा पव्वयविदुग्गंसि वा वणंसि वा वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता, एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूडपासं उद्दाइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए पन्नत्ते, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपासं उद्दाइ, तावं च णं से पुरिसे सिय ति किरिए, सिय चउ किरिए, सिय पंच किरिए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ति किरिए सिय चउ किरिए सिय पंच किरिए, गोयमा ! जे भविए उद्दवयणयाए णो बंधणयाए, णो मारणयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए, तिहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए–अहिगरणियाए पाउसियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए ॥ सू० ३ ॥

क्रिया कारण है। इस विचार से अब सूत्रकार क्रिया प्रतिपादिका पंचसूत्री का कथन करते हैं—'पुरिसे णं भंते !' इत्यादि।

ક્રિયા કારણભૂત હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર ક્રિયા પ્રતિપાદક પાંચ સૂત્રોનું કથન કરે છે–"पुरिसे णं भंते !" ઇત્યાદિ

ऽपास उद्दाइ ' कूटपाशमुद्दालयति, कूटं=मृगग्रहणकारणं गर्तादिकम्, पाशश्च वागुरा इति कूटपाशम्, उद्दालयति मृगबधाय रचयति, 'तओ णं भंते' ततः खलु भदन्त! ' से पुरिसे ' स पुरुषः ' कइकिरिए ' कतिक्रियः, कतिसङ्ख्यकक्रियावान् भवतीति भावः । उत्तरयति भगवान्–' गोयमे ' त्यादि । 'गोयमा !' हे गौतम! ' जावं च णं से पुरिसे ' यावत् च स खलु पुरुषः ' कच्छंसि वा ' कक्षे वा ' जाव कूडपासं उद्दाइ ' यावत् कूटपाशमुद्दालयति, ' तावं च णं से पुरिसे सिय तिकिरिए ' तावत् च स खलु पुरुष स्याद् त्रिक्रिय 'सियचउकिरिए ' स्याद् चतुष्क्रियः, ' सियपंचकिरिए ' स्यात्पञ्चक्रियः, यावत्कालम् स पुरुषः कूटपाशादिकं रचयति तावत् स पुरुषः, कदाचित् त्रिक्रियावान् कदाचित् चतुष्क्रियावान् कदाचित् पंचक्रियावान् स्यादिति भावः । पुनः प्रश्नयति गौतमः ' से केणट्ठेणं ' मित्यादि, ' से केणट्ठेणं भंते ' तत् केनार्थेन भदन्त ! ' एवं वुच्चइ ' एवमुच्यते

करके किसी मृग को मारने के लिये खड्डा बना कर उस पर जाल तान दिया (तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए पण्णत्ते ?) तो हे भदन्त! ऐसा वह पुरुष कितनी क्रियावाला कहलावेगा ? मृग को पकड़ने के लिये कूट और बांधने के लिये जाल होता है ? (गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपासं उद्दाइ तावं च णं से पुरिसे सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए) हे गौतम ! जब तक वह कक्ष में यावत् कूट–मृगादिकों को पकड़ने के लिये गर्त आदि को और जाल आदिको रचता है तबतक वह पुरुष कदाचित् तीन क्रिया-वाला, कदाचित् चार क्रियावाला, और कदाचित् पांचक्रियावाला कहला वेगा । (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ, सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सियपंचकिरिए ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि

નિશ્ચય કરીને કોઇ મૃગને મારવાને માટે ખાડો બનાવીને તેની ઉપર જાળ પાથરી દીધી (तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए पण्णत्ते ?) તો હે ભગવન્! એવા પુરુષને કેટલી ક્રિયા વાળો કહી શકાય. (મૃગને પકડવાને માટે કૂટ અને બાંધવાને માટે જાળ હોય છે) (गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपासं उद्दाइ तावं च णं से पुरिसे सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए) હે ગૌતમ ! જ્યા સુધી તે પુરુષ કચ્છમાં (નદીની આસપાસ આવેલા ઝાડી વાળા સ્થાનમા) (ત્યાંથી લઇને) ' મૃગાદિકોને પકડવાને માટે ખાડો બનાવી તેના પર જાળ બગેરે રચે છે ' (ત્યાં સુધીનો પાઠ અહિયા કરવો) ત્યાં સુધી તે પુરુષ કદાચિત્ ત્રણ ક્રિયાવાળો, કદાચિત્ ચાર ક્રિયાવાળો અને કદાચિત્ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ, सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए ?) હે ભગવન્ આપ શા કારણે

लगतियुक्तप्रदेशे इत्यर्थः, ' नूमंति वा ' नूमे वा, नूमे-अन्धकारयुक्ते कन्दरादावित्यर्थः । ' गहणंसि वा ' गहने वा, तृणगुल्मलताद्यक्षादिसमुदाये ' गहणविदुग्गंसि वा ' गहनविदुर्गे वा, पर्वतान्येकदेशावस्थितवृक्षवल्ल्यादिसमुदाये ' पव्वयंसि वा ' पर्वते वा ' पव्वयविदुग्गंसि वा ' पर्वतविदुर्गे वा, पर्वतसमुदाये इत्यर्थः, ' वणंसि वा ' वने वा, एकजातीय वृक्षसमुदायो वनम्, तस्मिन् । ' वणविदुग्गंसि वा ' वनविदुर्गे वा, अनेकप्रकारकवृक्षसमुदाये, ' मियवित्तिए ' मृगवृत्तिकः, मृगैर्वन्यपशुविशेषैर्वृत्तिर्जीविका यस्य स मृगवृत्तिकः, । मृगपालकोपि मृगवृत्तिः स्यादित्यतआह—' मियसंकप्पे ' मृगसंकल्पः, मृगमारणाय कृतः संकल्पो निश्चयो येन स मृगसंकल्पः, मृगमारणसंकल्पवानित्यर्थः, चलचित्ततयापि मृगवधाध्यवसायो भवेदित्यत आह—' मियपणिहाणे ' मृगप्रणिधान, मृगवधाय कृतंप्रणिधानं चित्तैकाग्र्यं येन स मृगप्रणिधानः, मृगवधैकचित्तः, ' मियवहाए गंता ' मृगवधाय गन्ता=गमनशीलः ' एते मिय त्ति काउं ' एते मृगाः इति कृत्वा ' अण्णयरस्स ' अन्यतरस्य ' मियस्स ' मृगस्य ' वहाए ' वधाय-मारणाय 'कू

अथवा-घास आदि समुदाय से व्याप्त प्रदेश में (वलयंसि वा) गोलाकार नदी के जल से कुटिल गति वाले स्थान में (नूमंसि वा) अथवा अंधकार युक्त कन्दरादिरूप प्रदेश में (गहणंसि वा) अथवा तृणगुल्म, लता, वृक्ष आदिकों से युक्त स्थान में (गहणंविदुग्गंसि वा) अथवा पर्वतादि के एक देश में स्थित ऐसे वृक्षलतादि समुदायवाले स्थान में (पव्वयंसिवा) अथवा किसी पर्वत के ऊपर (पव्वयविदुग्गंसि वा) अथवा अनेक पर्वतो पर (वणंसिवा)अथवा एक जाती के वृक्षों के समुदाय वाले स्थान में (वणविदुग्गंसि वा) अथवा अनेक जातीके वृक्षों के समुदायाकीर्ण स्थान में (गंता) गया-वहां जाकर उसने (एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूडफासं उद्दाइ) ये ही मृग हैं ऐसा ख्याल करके-निश्चय

વગેરેથી આચ્છાદિત પ્રદેશમા, (वलयंसि) ગોળાકાર નદીના જળથી કુટિલ સ્થાનમા (नूमंसि वा) અથવા અધકાર વાળી ગુફાઓના સ્થાનમાં (गहणं सि वा) અથવા તૃણ, ગુલ્મ, લતા, વૃક્ષ વગેરેથી યુક્ત સ્થાનમાં, (गहण विदुग्गंसि वा) અથવા પર્વતાદિના એક ભાગમાં આવેલ લતા અને વૃક્ષોના સમુદાય વાળા સ્થાનમા (पव्वयंसि वा) અથવા પર્વત ઉપર (पव्वयविदुग्गंसि वा) અથવા અનેક પર્વતો ઉપર, (वणंसिवा) અથવા એક જ જાતના વૃક્ષોના સમુદાય વાળા સ્થાનમા, (वणविदुग्गसि वा) અથવા અનેક જાતના વૃક્ષોના સમુદાયથી આચ્છાદિત સ્થાનમા (गंता) ગયેા. ત્યાં જઈને તેણે (एते मियत्तिकाउं अण्णयरस्स सियस्स वहाए कूटफास[illegible]) આ મૃગો જ છે એવો

श्रामणादिरूपपीडनाय भवतीति किन्तु नो बंधणयाए ' नो बन्धनाय ' णो मारणयाए ' नो मारणाय, यावत्पर्यन्तं स पुरुषः कूटपाशादिकं रचयति मृगपीडनादिरूपं किन्तु नो बध्नाति मृगं नो वा मारयति मृगमिति भावः । ' तावं च णं से पुरिसे ' तावच्च खलु स पुरुष 'काइयाए' कायिक्या, गमनादिकायचेष्टा रूपयाक्रियया, ' अहिगरणियाए ' आधिकरणिक्या, अधिकरणेन कूटपाशादिरू

है । इस क्रिया से वह युक्त बना हुआ है, अतः वह अधिकरणिकी क्रिया से स्पृष्ट कहा गया है । मृगों के प्रति जो उसके हृदय में दुष्ट भाव जगा है वह प्रद्वेष है-इस प्रद्वेष को लेकर जो क्रिया वह कर रहा है वह प्राद्वेषिकी क्रिया है । इस क्रिया वाला वह मारणक्रिया में द्वेष अवश्य होने के कारण हुआ है अतः वह प्राद्वेषिकी क्रिया से स्पृष्ट कहा गया है । जो पुरुष केवल मृगों को मारने के लिये कूटपाश आदि की रचना कर रहा है अभी उनको न बांध रहा है और न मार रहा है-तब तक वह कायिकी आधिकरणिकी और प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओं से युक्त होता है । इसीलीये यहां वह कदाचित् तीन क्रियाओं से युक्त होता है ऐसा कहा गया है । (जे भविए उद्दवणयाए वि, बंधणयाए वि णो मारणयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए, परितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे) तथा जबतक वह वधक पुरुष जाल को रखे हुए है मृग की खोज में इधर उधर फिर रहा है, तथा मृग को बांध रहा है मार नहीं रहा है तबतक वह वधक पुरुष

તે ક્રિયાથી યુક્ત હોવાને કારણે તેને અધિકરણિકી ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ કહેવામાં આવ્યો છે મૃગો પ્રત્યે તેના હૃદયમાં જે દુષ્ટભાવ ઉત્પન્ન થયો છે તે પ્રદ્વેષરૂપ ભાવ છે તે પ્રદ્વેષને લીધે તે જે ક્રિયા કરી રહ્યો છે તેને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે મારવાની ક્રિયામાં દ્વેષ અવશ્ય રહેલો હોય છે તે કારણે તેનો પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ કહેવામાં આવ્યો છે જે પુરુષ મૃગોને મારવાને માટે કૂટપાશાદિની રચના કરી રહ્યો હોય પરંતુ જ્યાં સુધી તે મૃગોને બાંધતો ન હોય અથવા મારતો ન હોય ત્યાં સુધી તે કાયિકી, આધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી જ યુક્ત હોય છે તેથી આવી જેમ કહ્યું છે કે તે પુરુષ કદાચિત્ ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે (जे भविए उद्दवणयाए वि, बंधणयाए वि, णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए परितापनिक्रियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे) તથા જ્યાં સુધી તે પુરુષ જાળને બિછાવીને મૃગની શોધમાં આમ તેમ ફરતો હોય, તથા મૃગને બાંધતો હોય પણ મારતો ન હોય ત્યાં સુધી તે કાયિકી આદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત બનતો

'सिय तिकिरिए सिय चतुकिरिए सिय पंचकिरिए' स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रिय इति ? उत्तरयति भगवान्–' गोयमे'त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'जे भविए' यो भव्यः, भवतीति भव्यो वधकः, अत्र भव्यशब्देन वधको जीवो गृह्यते, यावन्तं कालं स मृगवधकः 'उद्दवणाए' उद्रवणतायै=उद्रवणाय=इतस्ततो

वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियावाला, कदाचित् चारक्रियावाला, कदाचित् पांच क्रियावाला कहलावेगा (गोयमा ! जे भविए उद्दवणयाए णो बंधणयाए णो मारणाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए तिहिं किरियाहिं पुट्ठे) हे गौतम ! जब तक वह वधक पुरुष इधर उधर चलने फिरने आदि रूप क्रिया में प्रवृत्त हो रहा है मृग को बांधने और मारने में प्रवृत्त नहीं हो रहा है तथा वह पुरुष मृग को पीडा देने के उद्देश से जबतक कूट पाशादिक की रचना कर रहा है, किन्तु वह अभी उसे पकड़ नहीं रहा है और न मार ही रहा है, तब-तक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी और प्राद्वेषिकी इन तीन क्रिया-ओं से स्पृष्ट हो रहा है। तात्पर्य कहने का यह है कि उस वधिक पुरुष में मृगको मारनेके निमित्त जो आने जाने आदि रूप शरीरकी चेष्टा हो रही है वह शारीरिक क्रिया है। इस क्रियावाला होनेके कारण वह उस क्रिया से उस समय स्पृष्ट हो रहा है। तथा कूट पाशरूप हिंसा के अधिकरण के निमित्त जो क्रिया हो रही है वह आधिकरणिकी क्रिया

એવુ કહેા છે કે તે પુરુષ કયારેક ત્રણ ક્રિયાવાળેા, કયારેક ચાર ક્રિયાવાળેા અને પાંચ કયારેક ક્રિયાવાળેા હેાય છે ? (गोयमा ! जे भविए उद्दवणयाए णो बंधणयाए णो मारणाए ताव च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए तिहिं किरियाहिं पुट्ठे) હે ગૌતમ ! જ્યાં સુધી તે હિંસક પુરુષ આમ તેમ ફરવા ફરવાની ક્રિયા કરી રહ્યો છે, પણ મૃગને બાધવા તથા મારવાને માટે પ્રવૃત્ત થયેા નથી તથા તે પુરુષ મૃગને મારવાને માટે જ્યા સુધી કૂટ પાશાદિકની રચના કરી રહ્યો છે, પણ તેને જ્યાં સુધી પકડતેા નથી કે મારતેા નથી, ત્યાં સુધી તે પુરુષ કાયિકી, અધિકરણિકી, અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ હેાય છે (કરતેા હેાય છે) કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે તે શિકારી, મૃગને મારવાને માટે જે અવર જવર રૂપ શારીરિક ક્રિયાઓ કરતેા હેાય છે તેને કાયિકી ક્રિયા કહે છે. આ ક્રિયાવાળેા હેાવાને કારણે તે વખતે તે આ ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ થતેા હેાય છે. તથા કૂટ પાશાદિ રૂપ હિંસાના અધિકરણને (સાધનેાને) નિમિત્તે જે ક્રિયા થતી હેાય છે તે ક્રિયાનુ નામ અધિકરણિકી

प्राद्वेषिक्या ' जाव पाणाइवाय किरियाए ' यावत्—यावत्पदेन पारितापनिक्या, तथा प्राणातिपातिक्या, आभिः ' पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे ' पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्टो भवति, अयमाशयः—उद्रावणमात्रे कृते कायिकी आधिकरणिकी प्राद्वेषिकीति क्रियात्रयपुक्तो भवति, बन्धने कृते परितापो जायते इति पूर्वोक्तक्रियात्रयं तथा चतुर्थी परितापनक्रियापि आपतेत इति चतुष्क्रियायुक्तो भवति, मारणे सति प्राणातिपातो जायते इति पूर्वोक्त चतुष्क्रियासहिता पंचमी प्राणातिपातक्रियेति पंचक्रियो भवतीति । ' से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए ' तत्तेनार्थेन यावत् पंचक्रिय हे गौतम ! उक्तकारणैः कपरि पदर्शित युक्तिभि उद्रावणादिक कुर्वन् पुरुष कदाचित् क्रियात्रयादिना स्पृष्टः सन् त्रिक्रियचतुष्क्रियः पञ्चक्रियो वा भवतीति ॥२॥

प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी और प्राणातिपात क्रिया इन पांच क्रियाओं से स्पर्शा क्रिया गया है—अर्थात् इन पांच क्रियाओं वाला कहलाता है। आशय यह है—कि उद्रावणमात्र (मच्छ। ग्रोहना, जाल बिछाना आदि) करने पर यह पुरुष कायिकी, अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओं से युक्त होता है। मृग को बांध लेने पर "परिताप उसे होता है" इसलिये वह पुरुष चारक्रियाओं से युक्त होता है। मृग के मारने पर प्राणातिपात होता है इसलिये वह पुरुष पूर्वोक्त चारक्रियावाला होता है। इस कारण हे गौतम! उक्त कारणोंको लेकर ऊपर प्रदर्शित युक्तियों के अनुसार उद्रावण (उपद्रव) आदि को करने वाला पुरुष कदाचित् तीन आदि क्रियाओं से स्पृष्ट होकर तीनक्रियावाला चारक्रियावाला पांच-क्रियावाला होता है।

અને પ્રાણાતિપાત, એ પાંચ ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ-બેઠલે કે એ પાંચ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે ઉદ્રાવણમાત્ર (બાંધ બોધવો, જાલ બિછાવવી વગેરે) કરે ત્યાં સુધી તે પુરુષ કાયિકી અધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે જ્યારે તે પુરુષ મૃગને બાંધે છે ત્યારે તેને પરિતાપ (દુઃખ) થતું હોય છે તેથી ત્યારે તેને પારિતાપનિકી ક્રિયા પણ કરે છે તેથી બાર ક્રિયાઓથી યુક્ત થાય છે મૃગને મારવાથી પ્રાણાતિપાત થાય છે તેથી તે ઉપરોક્ત બાર ક્રિયા ઉપરાંત પાંચમી પ્રાણાતિપાત ક્રિયાથી યુક્ત બનવાથી પાંચ ક્રિયાવાળો થાય છે હે ગૌતમ! ઉપરોક્ત કારણોને લીધે કંઈ પણ કરવું કહ્યું છે તે પુરુષ કદાચિત્ ત્રણ ક્રિયાવાળો, કદાચિત્ ચાર ક્રિયાવાળો અને કદાચિત્ પાંચ ક્રિયાવાળો, હોય છે

पेण निर्वृत्ता या क्रिया सा आधिकरणिकी तया 'पाउसियाए' प्राद्वेषिक्या, प्रद्वेषेण निर्वृत्ता या क्रिया सा प्राद्वेषिकी तया मारणक्रियायां द्वेषस्यावश्यंभावात्, 'तिहिं किरियाहिं पुट्ठे' आभिः तिसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यो हि पुरुषः केवलम् मृगाणामुद्रवणाय कूटपाशादिकं विरचयति नो बन्धनाय न वा मारणाय स कायिक्याधिकरणिकी-प्राद्वेषिकीति क्रियात्रययुक्तो भवतीति कदाचित् त्रिक्रिय इति कथ्यते, 'जे भविए' यो भव्यः=वधकः 'उद्दवणयाए वि वंधणयाए वि नो मारणयाए' उद्रवणतायै अपि बन्धनतायै अपि क्रियां करोति किन्तु नो मारणतायै 'तावं च णं से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुषः 'काइयाए' कायिक्या, गमनादिरूपया क्रियया, 'अहिगरणियाए आधिकरणिक्या=कूटपाशाद्यधिकरण संपादितया, 'पाउसियाए' प्राद्वेषिक्या, प्रद्वेषनिष्पादितया 'पारितावणियाए' पारितापनिक्या, दुःखोत्पादनरूपया परितापप्रयोजना या क्रिया सा पारितापनिकी, सा च क्रिया मृगबन्धने कृते सति भवति, तया क्रियया 'चउहिं किरियाहिं पुट्ठे' चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, आभिः क्रियाभिः स्पृष्टो युक्तः सन् चतुष्क्रियः स पुरुषो भवतीति कदाचेच्चतुष्क्रिय इति कथ्यते। 'जे भविए' यो भव्यः-वधकः 'उद्दवणयाए वि' उद्रवणतायै अपि 'बंधणयाए वि' बन्धनतायै अपि 'मारणयाए वि' मारणतायै अपि कूटपाशादिकं रचयति, 'तावं च ण से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुषः, कायिक्या 'अहिगरणियाए' आधिकरणाक्या, 'पाउसियाए'

चार क्रियाओं से युक्त हो रहा है ऐसा मानना चाहिये। वे चार क्रियाएँ इस प्रकार से हैं—पूर्वोक्त तीन और चौथी पारितापनिकी। यह पारितापनिकी क्रिया मृग के बंधन करने पर होती है। सो उसने मृग को बांध ही लीया है। (जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे-से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए) तथा वह वधक पुरुष जबतक उस जाल को रखे-हुए है, मृगों को बांधता है, मृगों को मारता है तबतक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी,

છે તે-પૂર્વોક્ત ત્રણ ક્રિયાઓ અને ચોથી પરિતાપનિકી ક્રિયા જ્યારે તે પુરુષ મૃગને કૂટપાશાદિમાં બાંધે છે ત્યારે પરિતાપનિકી ક્રિયા થતી હોય છે (जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए, जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं जाव पचकिरिए) તથા તે પુરુષ જ્યારે જાળને બિછાવીને મૃગોને બાંધીને જ્યારે મૃગોને મારે છે ત્યારે કાયિકી, આધિકરણિકી, પ્રાદ્વેષિકી, પારિતાપનિકી

टीका— पुरिसे णं भंते ' पुरुष खलु भदन्त ! ' कच्छंसि वा ' कच्छे वा ' जाव वणविदुग्गंसि वा ' यावद्वनविदुर्गे वा 'तणाइं ' तृणानि 'उस्सविय उस्सविय' उत्सृप्य-पुनः पुनरेकीकृत्येत्यर्थः, कच्छादारभ्य वनविदुर्गपर्यन्तस्थले तृणानां पुनः पुनरेकत्रीकरणेत्यर्थः, 'अगणिकायं णिसिरइ' अग्निकायं निसृजति 'ताव च णं भंते से पुरिसे कतिकिरिए ' तावच्च खलु भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः, स खलु कच्छवनविदुर्गादन्यतमदेशे तृणान्येकत्रीकृत्य तत्र तृणराशौ अग्निं प्रक्षिपति तदानीं मज्वलनकर्तुः पुरुषस्य कीदृश्यः कियत्यश्च क्रिया भवन्तीति भावः । भगवानाह- ' गोयमे ' इत्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' सिय तिकिरिए ' स्यात् त्रिक्रियः, 'सिय चउकिरिए' स्यात्-चतुष्क्रियः, ' सिय पंचकिरिए' स्यात् पञ्चक्रियः, कच्छादिकरणकर्तृपुरुषराशौ अग्निप्रज्वलनकर्तापुरुषः कदाचित् क्रियात्रयेण कदाचित् क्रियाचतुष्केण कदाचित् क्रियापञ्चकेन कायिक्यादारभ्य प्राणातिपातपर्यन्तेन पुरुषो भवन् त्रिक्रियश्चतुष्क्रियः पञ्चक्रियो वा भवेदिति भावः, गौतमः पृच्छति

इन्हीं क्रियाओं के विषय में पुनः सूत्रकार कहते हैं—' पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा ' इत्यादि ।

टीकार्थ-(पुरिसे णं भंते) हे भदन्त ! कोई पुरुष (कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा) कच्छमें यावत् वन विदुर्गमें अनेक अग्निके भूसवाले वन में (तणाइं उस्सविय उस्सविय) तृणों को बार २ इकट्ठा करके-अर्थात् तृणों को समेट २ कर एकत्रित करके (अगणिकायं णिसिरइ) आग लगाता है (ताव च णं से भंते ! पुरिसे कति किरिए) तो वह पुरुष कितनी क्रियावाला कहलावेगा ? (गोयमा ! सियतिकिरिए, सिय चउकिरिए सिय पंच किरिए) हे गौतम ! वह पुरुष किसी अपेक्षा तीन

એ ક્રિયાઓના વિષયમાં સૂત્રકાર વિશેષ કથન કરે છે— पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा " इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—(पुरिसेणं भंते !) હે ભગવન્ કોઇ માણસ (कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा) કચ્છમાં (નદીની વચ્ચે આવેલા ઝાડીવાળા પ્રદેશમાં) " यावत् " પદથી અનેક જાતિના વૃક્ષોવાળા વનમાં (અહીં यावत् પદથી ત્રીજા સૂત્રમાં આવેલા તમામ સ્થાનો ગ્રહણ કરવા) (तणाइं उस्सविय उस्सविय) ઘાસને વારંવાર એકઠું કરીને એટલે કે ઘાસને વારંવાર લઈ આવીને એકઠું કરે અને (अगणिकायं णिसिरइ) અને તેને આગ લગાવે તો " ताव च णं स भंते ! पुरिसे कतिकिरिए ?) હે ભગવન્ ! તે પુરુષને કેટલી ક્રિયાઓ લાગે ? (गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए) હે ગૌતમ ! કદાચિત્ તે ત્રણ ક્રિયાવાળો, કદાચિત્ ચાર ક્રિયાવાળો અને કદાચિત્ પાંચ ક્રિયા

पुनः क्रियाविषये एव माह—' पुरिसे णं भंते ' इत्यादि—

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा तणाइं ऊसविय ऊसविय अगणिकायं णिसिरइ, तावं च णं से भंते पुरिसे कतिकिरिए गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चतुकिरिए सिय पंचकिरिए, से केणट्ठेणं? गोयमा ! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं उस्सवणयाए णिसिरणयाए वि णो दहणयाए चउहिं, जे भविए उस्सवणयाए वि णिसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं गोयमा ! ॥ सू० ४ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कच्छे वा यावत् वनविदुर्गे वा तृणान्युत्सर्प्योत्सर्प्याग्निकायं निसृजति तावच्च खलु भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः, गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रियः, तत्केनार्थेन ? गौतम ! यो भव्य उच्छ्रयणतायै तिसृभिः उच्छ्रयणतायै अपि निसर्जनतायै अपि नो दहनतायै चतसृभिः यो भव्य उच्छ्रयणतायै अपि निसर्जनतायै अपि दहनतायै अपि तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या यावत् पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्टः तत्तेनार्थेन गौतम ! ॥सू०४॥

भावार्थः—यहां पर वधक पुरुष कितनी २ क्रियाओं से युक्त किस २ स्थिति में होता है इसका विचार किया गया है। इसमें यह समझाया गया है कि जबतक वह वधक पुरुष सिर्फ जाल को धारण करता है—परन्तु मृगका बंधन और उसका मारण नहीं करता है—तबतक वह तीन क्रियाओं वाला माना गया है। और जब वह मृगका बंधन कर लेता है ऐसी स्थिति में वह चारक्रियाओं वाला माना जाता है। तथा जब वह मृग को मार देता है—तब वह पांचक्रियाओं वाला हो जाताहै ॥सू०३॥

ભાવાર્થ–અહીં એ વિચાર કરવામા આવ્યો છે કે શિકારી પુરુષ કેવી કેવી સ્થિતિમા કેટલી કેટલી ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે જ્યા સુધી તે પુરુષ કેવળ જાળ પાથરતો હોય–પણ મૃગને બાધતો ન હોય અને મારતો ન હોય–ત્યાં સુધી તેને ત્રણ ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે. અને જ્યારે તે મૃગને બાંધે છે. ત્યારે તે ચાર ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે અને જ્યારે તે મૃગને મારી નાખે છે ત્યારે તે પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે ॥ સૂ ૩ ॥

प्रतिपतति न तु मञ्चात्प्रपतति तावत्पर्यन्तं स पुरुषः कायिकयादिपरितापनपर्यन्ताभिः पञ्चसु क्रियाभिर्युक्तो भवतीत्यर्थः । 'जे अविय उस्सप्पणयाए वि, वट्टणयाए वि' यो भव्य उत्सर्पणतायै अपि निसर्जनतायै अपि क्रियां करोति, 'ताव च ण-स पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे' तावच्च खलु स पुरुषो यावत् कायिकयादिभिः पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यावत्पर्यन्तम् तृणादिकं संचिनोति तत्र चाग्निं निःक्षिपति प्रज्वालयति च तावत् स पुरुषः कायिकयादिभिः पञ्चभि क्रियाभिः युक्तो भवतीति भावः । 'से तेणट्ठेणं गोयमा०' तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एतेन कारणेन एवमुच्यते यत् तृणराशौ अग्निं प्रक्षिप्य प्रज्वालयति तदा स पुरुषः पंचभिः क्रियाभिर्युक्तो भवतीति भावः ॥ सू० ४ ॥

गौतमः पुनः पृच्छति—' पुरिसे णं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव गहणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता एते मियत्ति काउ अण्णयरस्स मियस्स वहाए उसुं निसिरइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइकिरिए ? गोयमा ! सिय ति

तब तक वह चार क्रियावाला कहा जायेगा । तथा जब वह तृणों को एकट्ठा करता है, उनमें आग डालता है और उन्हें जलाता है—तब तक वह पांच क्रियाओंवाला कहा जायेगा । सारांश इस कथनका यह है कि वह पुरुष जब तक तृणादिकों को एकत्रित करता है तब तक तीन क्रियाओं से और उनमें अग्निका प्रक्षेप करता है तब तक चार क्रियाओं से और उन्हें जब जलाने लग जाता है तब वह पांच क्रियाओं से युक्त माना जायेगा । इस लिये हे गौतम ! मैंने इस कारण से ऐसा कहा है कि वह पुरुष किसी अपेक्षा तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षा चार क्रिया ओंवाला और किसी अपेक्षा पांच क्रियाओंवाला माना जायेगा ॥सू० ४॥

છે પણ જ્યાં સુધી તેમાં આગ મૂકીને તેને સળગાવે છે ત્યારે પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે તે પુરુષ જ્યાં સુધી તૃણાદિકને એકત્ર કરેલો હોય ત્યાં સુધી તે ત્રણ ક્રિયાવાળો બનાય છે અને તેમાં અગ્નિ મૂકે ત્યારે ચાર ક્રિયાવાળો બનાય છે અને જ્યારે આગથી તેને સળગાવવા લાગી જાય છે ત્યારે પાંચ ક્રિયા વાળો કહેવાય છે હે ગૌતમ ! તે કારણ મે એવું કહ્યું છે કે તે પુરુષ કોઈ અપેક્ષાએ ત્રણ ક્રિયાવાળો, કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયા વાળો અને કોઈ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાયો ॥ સૂ. ૪ ॥

–'से केणट्ठेण' मित्यादि। 'से केणट्ठेणं' तत् केनार्थेन तत् केन कारणे–नैवमुच्यते स्यात्रिक्रिय इत्यादि। भगवानाह–'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'जे भविए' यो भव्यः-वधकः 'उस्सवणयाए' उत्सर्पणतायै तृणपुञ्जरूपं व्यापारं करोति तदा 'तिहिं' तिसृभिः क्रियाभिः उत्सर्पण दग्धुं व्यापारविशेषस्तथा च यो वधको दहनाय व्यापारमात्रं करोति स तिसृभिः कायिकी आधिकरणिकी प्राद्वेषिकीति क्रिया-त्रयेण युक्तो भवति, 'उस्सवणयाए वि' उत्सर्पणतायै अपि 'णिसिरणयाएवि' निसर्जनतायै अपि यदा तृणपुञ्जं रचयति किन्तु 'णो दहनयाए' नो दहनतायै, दहनाय नैव तदा 'चउहिं किरियाहिं' चतसृभिः क्रियाभिर्युक्तो भवतीति भावः। तथा च यावत्पर्यन्त स पुरुषस्तृणादिकं संचिनोति तत्र चाग्निं

क्रियावाला, किसी अपेक्षा चार क्रियावाला और किसी अपेक्षा पांच क्रिया वाला कहलावेगा। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि वह पुरुष तीन क्रियावाला और किसी अपेक्षा चार और किसी अपेक्षा से पांच क्रियावाला कहलावेगा (गोयमा! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं उस्सवणयाए णिसिरणयाए वि णो दहणयाए चउहिं, जे भविए उस्सवणयाए वि, णिसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं गोयमा !०) जो वह पुरुष तृणराशिको, जलाने के लिये एकत्रित करनेका जब तक केवल व्यापार करता है—अर्थात् जलानेके लिये तृणोंको इधर उधरसे बटोर २ कर एकत्रित करता है-तब तक वह कायिकी, आधिकरणिकी प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओंवाला कहा जावेगा। और जब तक वह पुरुष इकट्ठा कर २ उस तृणराशिमें अग्नि डालता है-अभी उसे जलाया नहीं है

વાળો કહેવાશે (से केणट्ठेण०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઇ અપેક્ષાએ તે ત્રણ ક્રિયાવાળો, કોઇ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો અને કોઇ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે? (गोयमा! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं, उस्सवणयाए वि णो दहणयाए चउहिं, जे भविए उस्सवणयाए वि, णिसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइए जाव पचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेण गोयमा!०) હે ગૌતમ! જ્યા સુધી તે પુરુષ તૃણરાશિને સળગાવવાને માટે એકત્રિત કરવાની જ પ્રવૃત્તિ કરતો હોય છે-જ્યા સુધી તે ઘાસને જુદી જુદી જગ્યાએથી લાવીને સળગાવવા માટે ભેગુ કરતો હોય છે. ત્યા સુધી તે કાયિકી, આધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી, એ ત્રણ ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે અને જ્યારે તે પુરુષ તે તૃણરાશિમા અગ્નિ મૂકે છે-પણ હજી તેને સળગાવતો નથી ત્યારે તે ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય

मृगबन्धनगहनदुर्गाच्छादनपरिपिण्डनानां प्रत्ययम्। एवमपरापि यावत्करणात् ज्ञातव्यम्। 'मियलिच्छिए' मृगलुब्धिकः, मृगैर्लुब्धिका=लोभिका विद्यते यस्य स मृगलुब्धिकः, 'मियसंकप्पे' मृगसंकल्पः, मृगेषु संकल्पो वधनिमित्तो विद्यते यस्य स मृगसंकल्पः, 'मियपणिहाणे' मृगप्रणिधानः, मृगवधाय कृतचित्तः, 'मिय वहाए गया' मृगवधाय गता=गमनशीलः 'एवं मिय त्ति काउं' एते मृगा इति कृत्वा, मृगवधबुद्धिमेव कृत्वाऽभिदृश्य प्राप्य तत्र च मृगान् दृष्ट्वा एतावन्मात्रं वधायाहं प्रागच्छामि अतोऽनेकान्यपरापि अत्र च भाण्डात्र मिलित्वा इति मनसा निश्चित्य, 'मण्णयरस्स' अन्यतरस्य, अनेकमृगसमूहापेक्षया वधाय यस्य कस्यचित् 'मियस्स वहाए' मृगस्य वधाय 'उसुं' इषुम्-बाणम्' णिसिरइ' निसृजति, मृगं लक्ष्यीकृत्य क्षिपति, 'तओ णं भंते!' ततः खलु भदन्त! 'तस्स पुरिसस्स' तस्य पुरुषस्य 'कइकिरिए' कतिक्रियः, एतादृशबाणफलकमृगाणां यं यादृशः क्रियाभ्यः क्रियाः स्पृशन्तीति भावः। भगवानाह —'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सिय तिकिरिए' स्यात् त्रिक्रियः

पक्षिबन्धनगहनदुर्गाच्छादनपरिपिण्डनानां प्रत्ययम्) मृगों को मारने के लिये कच्छ में यावत् अनेक झाड़ियोंवाले दुर्गादि वनमें गया यहां जा कर (एवं मियलिच्छिए) वेही मृग हैं इन्हें ही मारने के लिये मैं यहां आया हूं-इन्हें ही खोज रहा था व मुझे आज ये मिल गये हैं। ऐसा मन में निश्चय करके-विचार करके (अण्णयरस्स मियस्स वहाए) यह मृगों के समूह में वर्तमान किसी एक मृग को मारने के लिये (उसुं निसिरइ) अपना बाण छोड़ता है, अर्थात् किसी एक मृगको लक्ष्य कर उस पर अपना बाण चलाता है। (तओ णं भंते! से पुरिसे कइ किरिए?) तो हे भदन्त! ऐसा पुरुष मृग पर बाण प्रक्षेप के बाद कितनी क्रियाओं से युक्त माना जाता है? (गोयमा!

પક્ષિબંધન ગહન દુર્ગાચ્છાદન પરિપિંડનાનાં પ્રત્યયમ્) વગેરે અનેક ઝાડીવાળા વૃક્ષોથી વનમાં ગયો (અહીં "યાવત્" પદથી ત્રીજા સૂત્રમાં બતાવેલા બધાં પદોનો અહણ કરવા) ત્યાં જઈને (મિયલિચ્છિએ) આ મૃગો જ છે તેમને મારવા માટે આવ્યો છું-તેમની જ શોધમાં હતો અને સદ્ભાગ્યે તેમની પ્રાપ્તિ થઈ છે, એવા મનમાં વિચાર કરીને (अण्णयरस्स मियस्स वहाए) મૃગોના સમૂહમાંના કોઈ એક મૃગને મારવાને માટે (उसुं निसिरइ) પોતાનું બાણ છોડે છે-કોઈ એક મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર છોડે છે (तओ णं भंते! से पुरिसे कइ किरिए?) તો હે ભગવન્! તે પુરુષને કેટલી ક્રિયાઓ લાગે છે? (गोयमा! सिय तिकिरिए, सिय चाउकिरिए सिय

किरिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं, जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसणयाए वि णो मारणयाए चउहिं, जे भविए णिसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं गोयमा ! सिय तिकिरिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए ॥ सू० ५ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कच्छे वा यावद्वनविदुर्गे वा मृगवृत्तिको मृगसंकल्पो मृगप्रणिधानो मृगवधाय गंता "एते मृगा" इति कृत्वाऽन्यतरस्य मृगस्य वधायेषुं निसृजति, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः? गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रियः तत्तेनार्थेन गौतम ! यो भव्यो निसर्जनतायै अपि नो मारणतायै अपि तिसृभिः, यो भव्यो निसर्जनतायै अपि विध्वंसनतायै अपि नो मारणतायै चतसृभिः, यो भव्यो निसर्जनतायै अपि विध्वंसनतायै अपि तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, तत्तेनार्थेन गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्याच्चतुष्क्रियः स्यात्पंचक्रियः ॥५॥

टीका—'पुरिसे णं भंते' पुरुषः खलु भदन्त ! 'कच्छंसि वा' कच्छे वा 'जाव वणविदुग्गंसि वा' यावत् वनविदुर्गे वा, यावत् पदेन-हृदौदकद्रवकवलय-

---

गौतम पुन प्रश्न करते हुए प्रभु से पूछते हैं-'पुरिसे णं भंते ! इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (पुरिसे णं) पुरुष खलु (मियवित्तिए) मृगों से अपनी आजीविका चलानेवाला (मियसंकप्पे) मृगों की शिकार करनेवाला (मियपणिहाणे) मृगों की शिकार करने में एकचित्तवाला ऐसा (पुरिसे) कोई पुरुष (मियवहाए कच्छंसि वा जाव

ગૌતમ સ્વામી ક્રિયાના વિષયમાં મહાવીર પ્રભુને હજી પણ વધારે પ્રશ્નો પૂછે છે-" पुरिसे णं भंते ! इत्यादि

ટીકાર્થ—હે ભગવન્! (पुरिसेणं मियवत्तिए) મૃગોને મારીને પોતાનો નિર્વાહ ચલાવનાર (मियसंकप्पे) મૃગોનો શિકાર કરવાના સંકલ્પવાળો (मियपणिहाणे) મૃગોનો શિકાર કરવાએક ચિત્તવાળો (पुरिसे) કોઇ એક પુરુષ (मियवहाए कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा गंता) મૃગોને મારવાને માટે

भविए णिसिरणयाए वि ' यो भव्यः यदा निसर्जनतायै अपि ' विद्धंसणयाए वि ' विध्वंसनतायै अपि ' नो मारणयाए ' नो मारणतायै बाणं धनुषि संयोजयति तदा ' चउहिं ' चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टो भवति । स पुरुषो मृगमुद्दिश्य यावत् तूष्णीन्त बाणं निक्षेपणाय विध्वंसनाय धनुषि सधयेत् परन्तु न मृगमारणाय तावत् स्पर्यन्तं स पुरुषः कायिकयाधिकरणिकी प्राद्वेषिकी पारितापनिकीति चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टो भवतीति भाव, 'जे भविए णिसिरणयाए ' यो भव्यो निसर्जनतायै अपि, 'विद्धंसणयाए वि' विध्वंसनतायै अपि 'मारणयाए वि' मारणतायै अपि बाणं धनुषि संधयति 'ताव य णं से पुरिसे' तावत्-यावत्तु स पुरुषः 'काइयाए जाव पाणाइवायाए किरियाए ' कायिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया ' पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे ' पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यावत्संधयन्तम् स पुरुषो मृगमुद्दिश्य बाणं मोक्षणाय धनुषि संधयेत् प्रेषणाय तथा मारणाय संधये यावत् स पुरुषः कायिकी स्यादारभ्य

की प्राद्वेषिकी ये तीन क्रियाएँ पट्ट की जाती हैं। (जे भविए णिसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि णो मारणयाए चउहिं) तथा जब तक वह पुरुष मृगको उद्देश करके अपने बाणको चलानेके लिये और मृग को घायल करनेके लिये बाण को धनुष पर चढाता है मारनेके लिये नहीं तब तक वह पुरुष चार क्रियाओं से युक्त माना जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि उसने बाण छोड दिया और उस बाण ने मृग को लगकर घायल कर दिया जान से नहीं मारा-ऐसी स्थिति में वह पुरुष चार क्रियाओं का बंधकर्ता माना गया है। (जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसणयाए वि, मारणयाए वि ताव य णं पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सिय तिकिरिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए) तथा जब तक वह पुरुष मृगको लक्ष्य कर बाण को छोड़नेके लिये, धनुष पर चढाता है, मृग को वेधने

ક્રિયાઓ બાકી રહેવાય છે (जे भविए णिसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि णो मारणयाए चउहिं) પરંતુ જ્યારે તે પુરુષ મૃગને લક્ષ્ય કરીને, મૃગને ઘાયલ કરવાને માટે તીર છોડે છે ત્યારે તે ચાર ક્રિયાઓનો કર્તા છે (તીર છોડતી વખતે મૃગને ઘાયલ કરવાનો જ આશય છે મારવાનો આશય નથી) તાત્પર્ય એ છે કે તેણે તીર છોડયું અને તે તીર વાગવાથી મૃગ ઘાયલ થયું જનથી મરી ગયું નહીં—એવી સ્થિતિમાં તે પુરુષને ચાર ક્રિયાઓનો કર્તા માનવામાં આવે છે (जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसणयाए वि, मारणयाए वि, ताव य णं पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवायाए किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे ! से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए) तथा તે પુરુષ મૃગને લક્ષ્ય

एतादृश पुरुषेण कदाचित् तिस्रः क्रिया बद्धा भवन्ति इत्यर्थः 'सियचउकिरिय' स्यात् चतुष्क्रियः कदाचित् चतस्रः क्रिया संपादिता भवेयुरित्यर्थः, 'सियपच किरिए' स्यात् पंचक्रियः कदाचित् कायिक्याद्यारभ्य प्राणातिपातान्तपंचक्रियावान् भवति 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन तत्र किं कारणम् येन तिस्रः, चतस्रः पंचापि क्रियास्तादृशपुरुषस्य बद्धा भवन्तीति। भगवानाह—'गोयमे' त्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'जे भविए निसरणयाए' यो भव्यः-वधकः निसर्जनतायै 'नो विद्धंसणयाएवि' नो विध्वंसनतायै अपि 'नो मारणयाए वि' नो मारणतायै अपि स 'तिहिं' तिसृभिः, यावत्पर्यन्तं बाणं मृगमुद्दिश्य प्रक्षेपणाय धनुषि संयोजयति परन्तु मृगं न वेधयति न वा मारयति, तावत्पर्यन्तं बाणं प्रक्षेप्तुमुद्यतस्य पुरुषस्य कायिकी आधिकरणिकी प्राद्वेषिकी, इति तिस्र एव क्रिया बद्धा भवन्तीत्यर्थः, 'जे

सिय ति किरिए, सिय चउकिरिए, सियपंचकिरिए) हे गौतम! ऐसा वह पुरुष किसी अपेक्षा से तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षा से चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओंवाला माना जाता है। (से केणट्ठेणं?) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह किसी अपेक्षासे तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षासे चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओंवाला माना जाता है? (जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं) हे गौतम! जो वह पुरुष जब तक सिर्फ बाण को फेंकनेके लिये क्रिया करता है मृग को घायल करनेकी तथा मृग को मारने की क्रिया नहीं करता है तब तक वह तीन क्रियाओं से युक्त होता है—अर्थात्—जब तक वह मृग को लक्ष्य कर छोड़ने के लिये बाण को धनुष के ऊपर चढाता है मृगको उस समय वह वेधता नहीं है और न मारता ही है—ऐसे बाण को चलाने में उद्यत हुए पुरुषद्वारा तब तक कायिकी, आधिकरणि

પંચકિરિએ) હે ગૌતમ! કોઈ અપેક્ષાએ તેને ત્રણ ક્રિયા વાળો, કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો અને કોઈ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહે છે (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઇ અપેક્ષાએ તેને ત્રણ ક્રિયાવાળો કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો અને કોઈ અપેક્ષાએ તેને પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે? (जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं) હે ગૌતમ! જ્યા સુધી તે પુરુષ મૃગને લક્ષ્ય કરીને બાણને ફેંકવાને માટે ધનુષ પર ચઢાવે છે-પણ જ્યા સુધી મૃગને વીંધતો નથી તેમજ મારતો નથી ત્યા સુધી તે પુરુષ કાયિકી, અધિકરણિકી અને પ્રદ્વેષિકી, એ ત્રણ

पुनः प्रभुमाह गौतम —' पुरिसे ण ' इत्यादि ।

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाए आयतकण्णायतं उसुं आयामेत्ता चिट्ठेज्जा अण्णे य अप्पयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा, असिणा सीसं छिंदेज्जा, से य उसू ताए चेव पुव्वायामणयाए एतं मियं विंधेज्जा, से णं भंते पुरिसे किं मियवेरेणं पुट्ठे, पुरिसवेरेणं पुट्ठे ? गोयमा ! जे मियं मारेइ सिय मियवेरेणं पुट्ठे जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे. से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे ? से णूणं गोयमा ! कज्जमाणे कडे, संधिज्जमाणे संधिते, णिव्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिए, निसरिज्जमाणे णिसिट्ठेत्ति वत्तव्वं सिया हंता भगवं कज्जमाणे कडे, जाव णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जे मियं मारेइ, से मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे, अतो छण्हं मासाणं मरइ काइयाए, जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, छहिं छण्हं मासाणं मरइ काइयाए, जाव पारियावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे ॥ सू० ६ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कक्षे वा यावदन्यतरस्य मृगस्य वधाय आयतकर्णायतम् इषुमायम्य तिष्ठेदन्यतरश्च पुरुषो मार्गतः पश्चादागत्य स्वकपाणिना असिना शीर्षं छिन्द्यात् , स चेषुस्तया चैव पूर्वायमनतया तं मृगं विध्यत्, स भदन्त ! पुरुषः किं मृगवैरेण स्पृष्टः पुरुषवैरेण स्पृष्टः गौतम ! यो मृगं मारयति स मृगवैरेण स्पृष्टः, यः पुरुषं मारयति स पुरुषवैरेण स्पृष्टः, तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते यावत् स पुरुषवैरेण स्पृष्टः ? तत् नूनं गौतम ! क्रियमाणं कृतम् संधीयमानं संहितम् निर्वर्त्यमानं निर्वर्तितम् निसृज्यमानं निसृष्टम् इति वक्तव्यं स्यात् , हंत भगवन् ! क्रियमाणं कृतं यावन्निसृष्टमिति वक्तव्यं स्यात् तत्तेनार्थेन गौतम ! यो मृगं मारयति स मृगवैरेण स्पृष्टः य पुरुषं मारयति स

प्राणातिपातपर्यन्ताभिः पंचभिः क्रियाभिर्युक्तो भवति, 'से तेणट्ठेणं गोयमा !' तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते 'सियतिकिरिए' स्यात् त्रिक्रियः, 'सियचउकिरिए' स्यात्—चतुष्क्रिय. 'सियपंचकिरिए' स्यात् पंचक्रियो भवतीति। अय भावः—वधकपुरुषो यदा निक्षेपणाय वाणं धनुषि संयोजनव्यापारं करोति,तदा तस्य आद्यास्तिस्रः क्रियाः १। निक्षेपणाय, विध्वंसनाय वाण संयोजयति तदा तस्य आद्याश्चतस्रः, २ निक्षेपणाय विध्वंसनाय मारणाय च वाणं संयोजयति तदा तस्य पञ्चापि क्रिया भवन्तीति ॥ सू० ५ ॥

के लिये तथा उसे मारने के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब तक वह पुरुष कायिकी क्रिया से लेकर प्राणातिपात पर्यन्त पांच क्रियाओं से युक्त माना जाता है। इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि वह पुरुष किसी अपेक्षा तीन क्रियाओं से युक्त, किसी अपेक्षा चार क्रियाओं से युक्त और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओं से युक्त माना जाता है। इसका भाव इस प्रकार से हैं—वधक पुरुष जब छोड़ने के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब उसके आदिकी तीन क्रियाएँ होती हैं, तथा जब वह निक्षेपण के लिये और विध्वंसन के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब उसके आदिकी चार क्रियाएँ होती हैं। तथा जब वह निक्षेपण के लिये, विध्वंसन के लिये एवं मारण के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब उसके पांचों ही क्रियाएँ होती हैं ॥ सू० ५ ॥

કરીને તીર ચડાવી ને મૃગને વીધી નાખીને જ્યારે મારી નાખે છે ત્યારે તે કાયિકી ક્રિયાથી લઈને પ્રાણાતિપાત સુધીની પાંચે ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે તે કારણે, હે ગૌતમ ! મે એવુ કહ્યુ છે કે કોઈ અપેક્ષાએ તે પુરુષ ત્રણ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય છે અને કોઇ અપેક્ષાએ પાચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે શિકારી જ્યા સુધી તીરને ધનુષ પર ચડાવે છે ત્યા સુધી ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત કહેવાય છે તે ત્રણ ક્રિયાઓ કાયિકી, અધિકરણિકી, અને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાઓ છે. પણ જ્યારે તે ધનુષ પર તીર ચડાવીને મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર વડે વીધી નાખે છે ત્યારે ઉપરોક્ત ત્રણ ક્રિયાઓ ઉપરાત પારિતાપનિકી ક્રિયા પણ કરે છે. અને જ્યારે તે તીર ચડાવીને મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર છોડે છે, વીધે છે, અને મૃગને મારી નાખે છે ત્યારે ઉપરોક્ત ચાર ક્રિયાઓ ઉપરાત પાચમી પ્રાણાતિપાત ક્રિયા પણ કરે છે. તેથી ત્યારે તે પાચ ક્રિયાઓવાળો કહેવાય છે સૂ ૫

न्याकृष्टबाण पुरुषस्यान्य कश्चित् पुरुष पृष्ठदेशादागत्य स्वकीयखड्गेन मस्तक मपहरेदिति भाव, 'सेय डम्' स चेषु मृगवधापानुसन्धीयमानः पूर्वपुरुष-संबन्धी बाणः 'ताए चेव पुव्वागामणयाए' तया चैव पूर्वायामनतया पूर्वाकर्षण-तया 'तं मिय विंधेज्जा' तं मृगं विध्यन् यद्यपि पूर्वपुरुषेणैवायान् प्रयत्न कृतस्तं तादृशमेवमृग यदि स इषुर्मारयेत् तदा 'से ण भंते' स खलु भदन्त! मृगवधकः 'पुरिसे' पुरुष 'किं मियवेरेण-पुट्ठे' किं मृगवैरेण स्पृष्ट वा 'पुरिसवेरेण पुट्ठे' पुरुषवैरेण स्पृष्ट, किम्? बाणेन मृगस्य मरण जातमसिना च मृगवधकपुरुषस्य, तत्र मृगवधनिरतपापेन धनुर्धारिपुरुषस्य स्पर्शो भवेत् खड्गधारिपुरुषस्य वेति!

अपने हाथकी तलवार से उसका शिर काट देवे अर्थात्-जबसे उसके शिरको अलग कर देवे। ऐसी स्थिति में (से य उसु) मृगके वधके लिये धनुष पर आरोपित हुआ यह बाण (ताए चेव पुव्वागामणयाए) पहिले से ही आकर्षित होने के कारण उछल कर (तं मिय विंधेज्जा) उस मृग को वेध देवे-अर्थात् जिस मृगको मारने के लिए वह पहिला व्यक्ति उस बाण को धनुष पर आरोपित कर और उसे कर्णान्त तक खेंच कर खड़ा हुआ था उसी मृग को धनुष से छूट कर वह बाण मार डाले तो (से ण भंते! पुरिसे किं मियवेरेणं पुट्ठे पुरिसवेरेण पुट्ठे?) वह तलवार से उस मृगघातक के शिर का छेदन करने वाला मनुष्य मृग के वैर से-पाप से-स्पृष्ट होगा कि पुरुष के वैर से-पाप से स्पृष्ट होगा? अर्थात् उस समय बाण से मृग का मरण हुआ और तलवार से पुरुष का मरण हुआ-तो ऐसी स्थिति में उस धनुर्धारी व्यक्ति को मृग के मरने का पाप लगेगा या उस पुरुषघातक को मृग के

એંચીને તીર ચડાવીને ઉભેલા તે પુરુષની પાછળથી આવીને કોઇ પુરુષ પોતાની તલવારથી તેનુ માથુ કાપી નાખે પણ જો પરિસ્થિતિમાં (से य उसु) મૃગને મારવાને માટે ધનુષ પર ચડાવેલું તે બાણ (ताए चेव पुव्वागामणयाए) પહેલેથી જ આકર્ષિત થઇને ઉછળીને (तं मिय विंधेज्जा) તે મૃગને વીંધી નાખે તો (से णं भंते! पुरिसे किं मियवेरेण पुट्ठे पुरिसवेरेण पुट्ठे?) તો હે ભગવન્! તે મૃગઘાતકનુ માથુ તલવારથી કાપી નાખનાર માણસને તે મૃગ હત્યાનું પાપ લાગશે કે તીર ચડાવીને મૃગને વીંધવાને માટે તૈયાર થયેલા પુરુષને તે મૃગહત્યાનુ પાપ લાગશે? તાત્પર્ય એ છે કે મૃગને મારવાને તૈયાર થયેલા પુરુષને તેનુ પાપ લાગશે કે તે પુરુષને તલવારથી મારી નાખનારને મૃગહત્યાનું પાપ લાગશે?

पुरुषवैरेण स्पृष्टः अन्त. षण्णां मासानां म्रियते कायिक्या यावत्पञ्चा भिः क्रियाभिः स्पृष्टः, बहिः षण्णां मासानां म्रियते कायिक्या यावत् पारितापनिक्या चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः ॥ सू० ६ ॥

टीका-'पुरिसे णं भंते' पुरुषः खलु भदन्त ! 'कच्छंसि' कच्छे वा 'जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाय' यावत् अन्यतरस्य मृगस्य वधाय 'आयत कण्णायतं' आयतकर्णायतम् कर्णं यावत् आयतः कर्णपर्यन्तमाकृष्ट इति कर्णायतः, आयतं-प्रयत्नयुक्तं यथा भवतीत्यायतकर्णायत तम् आयतकर्णायतम् प्रयत्नपूर्वककर्ण-पर्यन्तमाकृष्टं 'उसुं' इषुम्-बाणम् 'आयामेत्ता' आयम्य=आकृष्य 'चिट्ठेज्जा' तिष्ठेत्, मृगवधाय प्रयत्नपूर्वकं बाणं सन्धाय तिष्ठेत् कोऽपि वधकपुरुषः, तस्मिन् समये 'अण्णयरे' अन्यतरश्च कोऽपि 'पुरिसे' पुरुष 'मग्गओ' मार्गतः पृष्ठदेशादित्यर्थः, 'आगम्म' आगम्य 'सयपाणिणा' स्वकपाणिना-स्वकीयहस्तेन 'असिना' असिना-खड्गेन 'सीसं छिंदेज्जा' शीर्षं छिन्द्यात्, मृगवधाय कर्णा-

---

गौतमस्वामी भगवान से पुनः प्रश्न करते हुए पूछते हैं—

'पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स' इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! पूर्वोक्त विशेषणों वाला कोई एक (पुरिसे) पुरुष (कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाए) कच्छ में यावत् किसी एक मृग मारने निमित्त (आयतकण्णायतं) प्रयत्न-पूर्वक कान तक लंबे किये गये (उसुं) बाण को (आयामेत्ता) खेंच कर (चिट्ठेज्जा) खडा हो जावे। (अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा असिणा सीसं छिंदेज्जा) इस तरह मृगको मारने के लिये प्रयत्नपूर्वक बाण को तान कर खड़े हुए मनुष्य के पीछेसे आकर

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને વળી પૂછે છે કે-(पुरिसे णं भंते! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स) ઇત્યાદિ,

ટીકાર્થ—(भंते!) હે ભગવન્! પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળો કોઇ એક (पुरिसे) પુરુષ (कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाए) કચ્છમાં-નદી વચ્ચે આવેલા ઝાડીવાળ સ્થાનમા (થી લઇને "મૃગને મારવાને નિમિત્તે" સુધીનો ત્રીજા સૂત્રમા આવેલો પાઠ અહીં "यावत्" પદથી ગ્રહણ કરવો) જાય અને મૃગને મારવાને નિમિત્તે (आयत कण्णायतं) પ્રયત્નપૂર્વક કાન સુધી ખેચેલી ધનુષની પણછ પર (उसु) બાણને (आयामेत्ता) ખેચીને (चिट्ठेज्जा) ઉભો થઈ જાય, (अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा असिणा सीसं छिंदेज्जा) આ રીતે મૃગને મારવાને માટે પ્રયત્નપૂર્વક ધનુષની પણછ

गौतमः-'से केणट्ठेणं' इत्यादि। 'स केनार्थेन भदन्त!' अरकेनार्थेन भदन्त! 'एवमुच्चइ जाव स पुरिसवेरेण पुट्ठे' एवमुच्यते यावत् स पुरुषवैरेण स्पृष्टः, यो मृगं मारयति स मृगवधजनितपापेन लिप्यते यश्च पुरुषं मारयति स पुरुषवध जनितपापेन लिप्यते तत्र किं कारणमिति गौतमस्य प्रश्नः, भगवानाह-'से णूणं गोयमा' इत्यादि, 'से णूणं गोयमा' सत्यमेतत् हे गौतम! 'कज्जमाणकडे' क्रियमाणं कृतम्, 'संचिज्जमाणे संचिए' सञ्चीयमानं सञ्चितम् 'णिव्वत्तिज्जमाणे णिव्वत्तिए' निर्वर्त्यमानं निर्वर्तितम्, 'णिसरिज्जमाणे णिसिट्ठे' निसृज्यमानं निसृष्टम् 'त्ति वत्तव्वं सिया' इति वक्तव्यं स्यात्? इति भगवदुक्तिं स्वीकुर्वन् गौतमः कथयति-'हंता' इत्यादि, 'हंता भगवं' हन्त भगवन्, हन्तेत्यामन्त्रण स्वीकारप्राये, 'कज्जमाणे कडे' क्रियमाणं कृतम् 'जाव' यावत् 'णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया' निसृष्टमिति वक्तव्यं स्यात्, हे भगवन् यत् कार्यं क्रियमाणं तदपि कृतम्, तथा यत् निसृज्यमानं तदपि निसृष्टमिति वक्तुं शक्यते एवेति भावः। अथ

वेरेण पुट्ठे" आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि जो मृग को मारता है वह मृग वधजन्य पाप से लिप्त होता है और जो पुरुष को मारता है वह पुरुष वधजन्य पापसे लिप्त होता है। इस गौतमके कूर्म प्रश्नका उत्तर देते भगवान उनसे कहते हैं-(गोयमा! कज्जमाणे कडे, संचिज्जमाणे संचिये, णिव्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिते, निसरिज्जमाणे णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) हे गौतम! जो किया जा रहा है वह किया जा चुका जो आढ़ा जा रहा है वह पूढ़ चुका, जो हो रहा है वह हो चुका, जो बनाया जा रहा है वह बन चुका ऐसा कहा जाता है न? (हंता भगवं! कज्जमाणे कडं जाव णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) हां भगवन्! जो किया जा रहा है वह किया जा चुका यावत् जो बनाया जा रहा है वह बन चुका ऐसा

ઇરને તેનુ પાપ લાગવુ જોઇએ નહીં, તે માટે જ ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને ઉપરોક્ત પ્રશ્ન પૂછ્યો છે અને મહાવીર સ્વામીએ તેનો જે જવાબ આપ્યો તે સૂત્રકાર બતાવે છે-

ઉત્તર—(गोयमा! कज्जमाणे कडे संचिज्जमाणे संचिये णिव्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिते निसरिज्जमाणे णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ! જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે કરાયુ જે એકઠું આવી રહ્યું છે તે એકઠું થયું જે બની રહ્યું છે તે બની ચૂક્યુ જે બનવામા આવી રહ્યું છે તે બની ચૂક્યુ એવુ કહી શકાય છે ને? (हंता। भगवं! कज्जमाणे कडं जाव णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) હા ભગવાન! એવું કહી શકાય છે કે જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે કરાયુ યાવત્ જે બનાવવામાં આવી રહ્યું છે તે બની ચૂક્યુ આ વિષયનું સ્પષ્ટીકરણ

भगवानाह—'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'जे मिय मारेइ' यो मृगं मारयति 'से मियवेरेण पुट्ठे' स मृगवैरेण स्पृष्टः, इह—वैरमिति वैरहेतुत्वाद् वधः पापं वा तेन वधेन वधजनितपापेन वेत्यर्थः। मृगघातकस्यैव मृगवधजनितं पाप भवतीति भावः। 'जे पुरिसं मारेइ' यः पुरुषं मारयति 'से' सः 'पुरिसवेरेणं पुट्ठे' पुरुषवैरेण पुरुषवधजनितपापेन स्पृष्टः लिप्तो भवतीति। ननु म्रियमाण-पुरुषस्य धनुः सकाशाद् योऽयं बाणस्योपनिपातः स न धनुर्धरपुरुषहेतुकः, अपि तु शिरश्छेदनकर्तुः पुरुषस्य प्रयत्नेन जात इति स एव शिरश्छेदनकर्ता पुरुषो मृगवधजनितपापेन स्पृष्टो भवितुमर्हति न तु धनुर्धरः, तर्हि कथमत्र मृगमारकः मृगवैरेण स्पृष्टः, पुरुषमारकः पुरुषवैरेण स्पृष्टः, इति कथितम्? इत्याशयेन प्रश्नयति

मरने का पाप लगेगा? ऐसा यह प्रश्न है-(गोयमा! जे मियं मारेइ, सिय मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) हे गौतम! जो पुरुष मृग को मारता है वह मृग के वधजन्य पाप से स्पृष्ट है और जो, पुरुष पुरुष को मारता है वह पुरुषवधजन्य पाप से स्पृष्ट है। (से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यावत् वह पुरुषवैर से-अर्थात् पुरुष वधजन्य पाप से स्पृष्ट है? शंकाकार का यहां ऐसा अभिप्राय है कि म्रियमाण पुरुष के धनुष से जो बाण छूटा वह उस धनुर्धर पुरुष हेतुक नहीं है, किन्तु शिर छेदन करने वाले उस पुरुष के प्रयत्न से वह छूटा है इसलिये वह शिरछेदन करने वाला पुरुष ही मृगवधजनितपाप से स्पृष्ट होना चाहिये धनुर्धर नहीं। तो फिर कैसे आप यह कहते हो कि मृगमारक मृगके वैर से-मृगवधजन्य पाप से स्पृष्ट है और पुरुष मारक पुरुष वैर से-पुरुषवधजन्य पाप से-स्पृष्ट है। इसी आशय से गौतम ने भगवान से यह पूछा कि "से केणट्ठेण भंते! एवं वुच्चइ जाव से पुरिस

उत्तर—(गोयमा! जे मियं मारेइ, सिय मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ, से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) હે ગૌતમ! જે પુરુષ મૃગને મારે છે તેને મૃગહત્યાનું પાપ લાગે છે, અને જે પુરુષ પુરુષની હત્યા કરે છે તેને નરહત્યાનુ પાપ લાગે છે.

પ્રશ્ન-(से केणट्ठेण भंते! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे?) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે મૃગને મારનારને મૃગહત્યાનુ પાપ લાગે છે અને પુરુષને મારનારને પુરુષહત્યાનુ પાપ લાગે છે? અહીં શકાકારની શકા એવા પ્રકારની છે કે મરનાર પુરુષના ધનુષમાથી જે તીર છૂટયુ તે મરનારના પ્રયત્નથી છૂટયુ નથી પણ તલવારથી તેનુ માથુ છેદનારના પ્રયત્નથી છૂટયુ છે. તો માથુ છેદનાર પુરુષને જ મૃગહત્યાનુ પાપ લાગવુ જોઇએ, પણ તે ધનુ-

इति मृगवधजनितपापलेपस्तु धनुर्धरपुरुषस्यैव भवति न तु शिरश्छेदनकर्तृ-द्वितीयस्य पृष्ठतः समागतस्येति । ' से तेणट्ठेणं गोयमा ' तच्चेनार्थेन गौतम ! ' जे मियं मारेइ ' योमृगं मारयति ' से मिय वेरेणं पुट्ठे ' स मृगवैरेण स्पृष्टः यो हि मृगस्य मारकः स एव मृगवधजनितपापेन लिप्तो भवतीति भावः, ' जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवरेणं पुट्ठे ' यः पुरुषं मारयति स पुरुषवैरेण स्पृष्टः पुरुषस्य व्यापादयिता पुरुषवधजनितपापेन लिप्तो भवतीति । अयं भावः-हिंसापा हि आत्मपरिणाम एव कारणं भवतीत्यतो मृगवधकस्य मृगमारणात्मकात्मपरि णामसद्भावात्, पुरुषवधकस्य च पुरुषमारणात्मकात्मपरिणामसद्भावात् तत्तज्जन्यं पापं तस्य तस्यैव लगति इति ।

मान कर वह बाण उस धनुर्धर ने ही फेंका है ऐसा मानना चाहिए। इस लिये बाद के निक्षेप से जो हरण की मृत्यु हुई है उसका पाप उस धनुर्धारी को ही लगेगा-शिरश्छेदन कर्त्ता दूसरे पुरुष के जो कि उसके पीछे से आया है नहीं लगेगा। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! जे मियं मारेइ, से मियवेरेणं पुट्ठे जे पुरिसं मारेइ, से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है जो मृग को मारता है वह मृग के वध जन्य पाप से लिप्त होता है और जो पुरुष को मारता है वह पुरुष वध जन्य पाप से लिप्त होता है। इसका तात्पर्य यह है कि हिंसा में आत्मा के परिणाम ही कारण होते हैं। इस लिये जो मृग का वधक है उसके मृग को मारनेरूप परिणाम के सद्भाव से, और पुरुष का वधकर्ता है उसके पुरुष के मारनेरूप परिणाम के सद्भाव से तत्तत् जन्य पाप उसे

પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે આ પ્રમાણે કલ્પીલ્ત હોવાથી તે ધનુર્ધરે જ તે તીર છોડયુ હતું એમ માનવુ જોઈએ તેથી તીર ફેંકવાથી તીર વાગવાથી જે મૃગનુ મરણ થયુ છે તે મૃગહત્યાનું પાપ તે ધનુર્ધારીને જ લાગશે, ધનુર્ધારીનું તલવારથી શિર છેદનાર પુરુષને તે પાપ લાગશે નહી (से तेणट्ठेणं गोयमा ! जे मियं मारेइ से मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ, से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે જે પુરુષ મૃગને મારે છે તે પુરુષને મૃગહિંસાનુ પાપ લાગે છે અને જે પુરુષની હત્યા કરે છે તેને પુરુષહત્યાનું પાપ લાગે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે હિંસામાં આત્માનાં પરિણામો જ કારણરૂપ હોય છે તેથી મૃગની હિંસા કરનારને મૃગને મારવારૂપ પરિણામના સદ્ભાવથી મૃગહત્યાનું પાપ લાગે છે અને પુરુષની હત્યા કરનારને પુરુષની હત્યા કરવારૂપ પરિણામના સદ્ભાવથી પુરુષ હત્યાનું પાપ લાગે છે બસ

माशयः यत् क्रियमाणं तत् कृतमिति व्यवह्रियते यथा 'चलमाणे चलिए' इत्यादि प्रथमशतके प्रथमोद्देशके नवमसूत्रे विवेचितमिति तत एव सर्वमनुसन्धेयम्। तथा सन्धीयमानं प्रत्यंचायां समारोप्यमाणं बाणम्, अथवा समारोप्यमाण-मत्यंचं धनुः संहितं कृतसंधानमिति कथ्यते तथा निर्वर्त्यमानमतिशयेन वर्तुलीक्रियमाणं मत्यंचाकर्षणेन निर्वर्त्तितं वृत्तीकृतं गोलाकारं कृतं भवति, तथा निसृज्यमानम् प्रक्षिप्यमाणं बाणं निसृष्टं प्रक्षिप्तमिति कथ्यते, यदा च निसृज्यमानमपि बाणं निसृष्टमिति भूतकालिकतया प्रयोगो भवति तदा निसृज्यमानतायाः धनुर्धरेणैव कृतत्वात् तेन धनुर्धरेणैव वधकेन बाणो निक्षिप्तो भवति शरनिक्षेपाच्च तेनैव शरेण मृगो मारित

कहा जाता है। इस विषय का खुलासारूप में प्रथम शतक के पहले उद्देश में "चलमाणे चलिए" इस नौवें सूत्र में विवेचन किया जा चुका है इसलिये यह वहां से समझ लेना चाहिये। प्रकृत में इसे यों समझा जा सकता है-जो बाण प्रत्यंचा के ऊपर वर्तमान में चढ़ा हुआ है वह सन्धीयमान है अथवा-समारोप्यमाण प्रत्यंचावाला जो धनुष है वह संधीयमान है। सो यह संधित है-चढ़ाया जा चुका है-इस प्रकारका कथन भूतकाल को लेकर प्रयोगमें लाया जाता है। इसी तरह निर्वर्त्यमान-वर्तमान में प्रत्यंचा के खेंचने से अतिशय गोल किया जा रहा जो धनुष है वह गोल किया जा चुका है, तथा निसृत्यमान-फेंकने के सन्मुख हुआ बाण फेंक दिया गया है ऐसा भूतकाल संबंधी प्रयोग हो जाता है। अतः जब यह बात है तो जिस समय बाण को फेंकने की तैयारी उस धनुर्धर ने की थी-वह उसके द्वारा उस समय फेंक ही दिया गया ऐसा

પ્રથમ શતકના પહેલા ઉદ્દેશામાં "चलणमाणे चलिए" નામના નવમા સૂત્રમાં અપાઈ ગયેલ છે તો ત્યાંથી તેને સમજી લેવુ અહીં તેને આ પ્રમાણે સમજાવી શકાય-જે બાણને વર્તમાન કાળે પ્રત્યંચાની ઉપર ચડાવવામાં આવ્યુ છે તે સન્ધીયમાન છે અથવા સમારોપ્યમાન પ્રત્યંચાવાળુ જે ધનુષ છે તે સન્ધીયમાન છે તેનું સંધાન કરવામાં આવ્યું છે-તેને ચડાવવામાં આવ્યુ છે-એ પ્રકારનું કથન ભૂતકાળની અપેક્ષાએ કરી શકાય છે. એ જ પ્રમાણે નિર્વર્ત્યમાનવર્તમાન સમયે પ્રત્યંચાને ખેંચવાથી અતિશય ગોળાકાર કરાયેલુ જે ધનુષ છે-તે ગોળ કરાયું એવો ભૂતકાલિક પ્રયોગ કરી શકાય છે તથા નિસૃત્યમાન-ફેંકવામા આવી રહેલુ બાણ ફેંકવામા આવી ગયુ એવો ભૂતકાલિક પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે, વસ્તુ સ્થિતિ આ પ્રમાણે હોવાથી તે ધનુર્ધરે બાણને જે સમયે ફેંકવાની તૈયારી કરી હતી તે સમયે જ તે ધનુર્ધર વડે બાણ ફેંકાયું એવો ભૂતકાલિક

'यावि छण्हं मासाणं मरइ' यदि षण्णां मासानां म्रियते 'काइयाए-जाव पारियावणियाए' कायिक्या यावत् पारितापनिक्या 'चउहिं-किरियाहिं' चतसृभिः क्रियाभिः 'पुट्ठे' स्पृष्टो भवति। षण्मासानन्तरं मरणं तु कारणान्तरमाश्रयमिति कृत्वा षण्मासादनन्तरं प्राणातिपातक्रिया न भवतीति ज्ञेयम्, एतच्च व्यवहारनयापेक्षया प्राणातिपातक्रियाव्यपदेशमात्रोपदर्शनार्थमेव कथितमिति, निश्चयनयेन तु यदा कदाचित्-प्राणादिहतक मरणं भवति तत्काले एव प्राणातिपातक्रिया भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

पुनरप्याह—'पुरिसे णं भंते' इत्यादि।

मूलम्—पुरिसे णं भंते! पुरिसं सत्तीए समविधसेज्जा सयपाणिणा वा, से असिणा सीसं छिंदेज्जा, तओ णं भंते! से पुरिसे कइ किरिए? गोयमा जाव च णं से पुरिसे तं पुरिसं

इन पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। तथा यदि वह छह महीने के भीतर २ नहीं मरता है बाद में मरता है-तो वह मरण अन्य कारणक हुआ है ऐसा होने से छह मास के बाद प्राणातिपात क्रिया नहीं होती है ऐसा जानना चाहिये। यह कथन व्यवहारनय की अपेक्षा से प्राणातिपात क्रिया के व्यपदेश मात्र को दिखानेके लिये ही किया गया है। नहीं तो निश्चयनय के मन्तव्यानुसार तो जब कभी भी बाणादि हतक मरण होता है उस काल में ही प्राणातिपात क्रिया होती है-चाहे वह मरण छह माहमें हो चाहे छह माह के बाद भी हो यदि वह बाणहेतुक है तो वहां अवश्य २ ही प्राणातिपात क्रिया है ॥ सू० ६ ॥

પનિકી અને પ્રાણાતિપાત, એ પાંચે ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ થાય છે પણ જો છ મહીનાની અંદર તે મરણ પામે નહીં પણ ત્યાર બાદ તે મરણ પામે તો તે મરણ કોઈ બીજા કારણે થયું છે એમ માની શકાય અને તે પ્રમાણે જ્યારે તે પુરુષને પ્રાણાતિપાત ક્રિયાનો બંધ પડ્યા વગર નહીં-પણ છ મહીનાની બાદ ક્રિયાઓથી તે પુરુષ મુક્ત થાય છે આ કથન વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ પ્રાણાતિપાત ક્રિયાના વ્યપદેશ માત્રને બતાવવા માટે જ કરવામાં આવ્યું છે નિશ્ચય નયના મંતવ્ય પ્રમાણે તો જ્યારે બાણાદિને કારણે કોઈ પણ મરણ થાય ત્યારે તે કાળે જ પ્રાણાતિપાતની ક્રિયા થતી હોય છે-પછી તે મરણ છએ છ માસની અંદર થાય કે છ માસ પછી થાય જો તે મરણ બાણાદિને કારણે થયું હોય તો ત્યાં અવશ્ય પ્રાણાતિપાત ક્રિયા થઈ જાય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

अस्मिन् प्रकरणे क्रियायाः निवेचनं कृतम् ताश्च क्रिया अनन्तरकथितमृगादिवधे यावत्यो यत्र कालविभागे भवंति तावतीः क्रियास्तत्र दर्शयन्नाह-' अंतो छण्हं ' इत्यादि, अंतो छण्हं मासाणं मरइ ' अन्तः षण्णां मासानां म्रियते, ' काइयाए ' कायिक्या ' जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे ' यावत् पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, बाणप्रक्षेपानन्तरं यदि षण्मासाभ्यन्तरे मृगस्य मरणं भवेत्तत्र तादृश प्रहारस्यैव कारणतेति तादृशमरणजनितपापेन स वधकः कायिक्याधिकरणिक प्राद्वेषिकी परितापनिकी प्राणातिपातक्रियारूप पंचक्रियाभिः स्पृष्टो भवतीति भावः।

को ही होता है। (अंतो छण्हं मासाणं मरइ काइयाए जाव पंचहि किरियाहिं पुट्ठे, बाहिं छण्हं मासाणं मरइ, काइयाए जाव पारियावणियाए किरियाहिं पुट्ठे) वह मरनेवाला व्यक्ति यदि छह मास के भीतर२ मर जाता है तो उसे मारनेवाली व्यक्ति कायिकी आदि पांच क्रियाओं से युक्त होता है और मरनेवाला व्यक्ति यदि छह मास के बाद मरता है तो उसे मारनेवाला व्यक्ति कायिकी क्रियासे लेकर पारितापनिकी क्रिया तक की चार क्रियाओं से युक्त होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि इस प्रकरण में क्रिया का विवेचन किया गया है। वे क्रियाएँ अनन्तर कथित मृगादि वध में जितनी जिस काल विभाग में होती हैं उतनी क्रियाओं को " अंतो छण्हं " इत्यादि सूत्रद्वारा दिखलाया गया है। इसमें यह कहा गया है कि बाण प्रक्षेप के बाद यदि छह मासके भीतर २ मृगका मरण हो जाता है तो उसके उस मरण में उस प्रकार के प्रहारमें ही कारणता है। अतः तादृश मरणजनित पाप से वह वधक कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपातक्रिया

શાસ્ત્રમા એમ પણ કહ્યુ છે કે (अंतो छण्ह मासाण मरइ काइयाए जाव पचहिं किरियाहिं पुट्ठे बाहि छण्ह मासाणं मरइ काइयाए जाव पारियावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे) જે મારનાર બાનાર વ્યક્તિ છ માસની અદર મરી જાય તો મારનાર વ્યક્તિ કાયિકીથી માડીને પ્રાણાતિપાત સુધીની પાચે ક્રિયાઓવાળો કહેવાય છે, પણ જે મારનાર વ્યક્તિ છ માસ વીતી ગયા પછી મરે તો મારનાર વ્યક્તિ કાયિકી ક્રિયાથી માડીને પરિતાપનિકી પર્યન્તની ચાર ક્રિયા વાળો કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે આ પ્રકરણમા ક્રિયાનુ વિવેચન કર્યુ છે. તે ક્રિયાઓ પૂર્વકથિત મૃગાદિવધ'ા જેટલી જે કાળ વિભાગમા થાય છે તેટલી ક્રિયાઓને " अतो छण्ह " ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે બતાવવામા આવી છે તેમાં એ બતાવ્યુ છે કે બાણ છોડ્યા પછી છમાસની અદર તે મૃગનુ મરણ થાય તો તેના મરણનુ કારણ તે પ્રહારને જ ગણી શકાય છે તો તે પ્રકારના મરણના પાપથી તે હત્યા કરનારો પુરુષ કાયિકી, આધિકરણિકી પ્રાદ્વેષિકી, અને પરિતા-

पुरिसे ' स पुरुषः ' तं पुरिसं ' तं पुरुषम् ' सत्तीए ' शक्त्या शक्तिविशेषेण ' समभिधंसेइ ' समभिध्वंसयते इत्यादित्यर्थः, ' सयपाणिणा वा ' स्वकपाणिना वा स्वहस्तेन ' से ' तस्य ' असिणा ' असिना ' सीसं छिंदइ ' शीर्षं छिनत्ति, ' तावं च णं ' तावत् च खलु ' से पुरिसे ' स पुरुषः, ' काइयाए ' कायिक्या, शरीर-व्यापाररूपया क्रियया, ' अहिगरणियाए ' आधिकरणिक्या, शक्तिरूपाधि-क्रियया ' जाव पाणाइवायकिरियाए ' यावत् प्राणातिपातक्रियया, यावत् पदेन प्राद्वेषिकी पारितापनिक्यो ग्राह्याः, ' पंचहिं किरियाहिं '-पंचभिः क्रियाभिः, ' पुट्ठे ' स्पृष्टो भवति, ' आसण्णवधएण य ' आसन्नवधकेन च, आसन्नः समीपे विद्यमानो वधो विनाशो यस्मात् वैराद् तत् तनासन्नवधकेन भवति च वैराद् वधकल्प वधस्तमेव वध्यमाश्रित्य अन्यस्माद्वा तमेव जन्मनि जन्मान्तरे वा ।

से पाणिणा वा से असिणा सीसं छिंदति तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे) हे गौतम ! जबतक वह पुरुष उस दूसरे पुरुष को शक्ति से-शस्त्रविशेष से मारता है, अथवा-अपने हाथों तलवार से उसका मस्तक काटता है तबतक वह पुरुष कायिकी,-शरीरव्यापाररूप कायिकी क्रिया से शक्ति व्यापाररूप अधिकरणिकी क्रिया से यावत् प्राणातिपातक्रिया से इन पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है । यहां यावत् शब्द से प्राद्वेषिकी क्रिया और पारितापनिकी क्रिया इन दोनों क्रियाओं का ग्रहण हुआ है । (आसण्ण वधएण य अणवकंखणवत्तीए णं पुरिसवेरेणं पुट्ठे) तथा वह पुरुष आसन्न समीप में विद्यमान है वधविनाश जिससे ऐसे आसन्न वध वाले तथा दूसरे के प्राणों की अथवा अपने अभाव की जिसमें बिल-कुल अपेक्षा नहीं है ऐसे पुरुषवैर से स्पृष्ट होता है । तात्पर्य कहने का

तावं च णं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिधंसेइति से पाणिणा वा से असिणा सीसं छिंदति तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे) હે ગૌતમ ! જ્યાં સુધી તે પુરુષ બીજા પુરુષને શક્તિ વડે એટલે પ્રહારના હથિયારથી-મારે છે અથવા પોતાના હાથમાં તલવાર લઈને તેનું મસ્તક કાપી નાખે છે ત્યારે તે કાયિકી શરીરની પ્રવૃત્તિરૂપ ક્રિયાથી, શક્તિ તલવાર આદિ અધિકરણોના ઉપયોગ કરવાથી અધિકરણિકી ક્રિયાથી, પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાથી પારિતાપનિકી ક્રિયાથી અને પ્રાણાતિપાત ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ થાય છે (आसण्ण वधएण य अणवकंखणवत्तीए णं पुरिसवेरेणं पुट्ठे) તથા તે પુરુષ આસન્ન-જેનો વધ સમીપમાં જ વિદ્યમાન છે-એવા આસન્ન-વધવાળા તથા તે મારવાને તે વખતે અન્યના પ્રાણોનું અથવા પોતાના અભાવનું જેમાં બિલકુલ ભાન રહેતું નથી એવા પુરુષ વૈરથી સ્પૃષ્ટ થાય છે એટલે

सत्तीए समभिधंसेति, से पाणिणा वा, से असिणा सीसं छिंदति तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, आसण्णवधएण य अणवकंखण वित्तिए णं पुरिसवेरेणं पुट्ठे ॥ सू०७ ॥

छाया-पुरुषो भदन्त ! पुरुषशक्त्या समभिध्वंसते स्वकपाणिना वा स असिना शीर्षं छिन्द्यात्, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रिय ? गौतम ! यावत् च खलु स पुरुषस्तं पुरुषं शक्त्या समभिध्वंसते, स्वकपाणिना वा तस्य असिना शीर्षं छिनत्ति तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या-आधिकरणिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः आसन्नवधकेन चानवकांक्षणवृत्तिकेन पुरुषवैरेण स्पृष्टः ॥ सू० ७ ॥

टीका—' पुरिसे णं भंते ' पुरुष. खलु भदन्त ! ' पुरिसं ' पुरुषं ' सत्तीए ' शक्त्या शास्त्रविशेषेण ' समविधंसेज्जा ' समभिध्वंसते हन्यादित्यर्थः, ' सयपाणिणा वा ' स्वकपाणिना वा स्वकीयहस्तेनेत्यर्थ., ' असिणा ' ' सोऽसिना ' खड्गेन ' सीसं छिंदेज्जा ' शीर्षं छिन्द्यात् विनिपातयेत्, ' तओ णं भंते ' ततः खलु भदन्त ! तत' शीर्षच्छेदानन्तरम् खलु 'से पुरिसे कइकिरिए' स पुरुषः कतिक्रियः, स पुरुषः खड्गेन शिरश्छेनकर्ता पुरुष' कतिक्रियावान् भवति, भगवानाह—' गोयमा' इत्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जावं च णं' यावत् च खलु ' से

' पुरिसे णं भंते ! पुरिसं सत्तीए ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (पुरिसे) कोई एक पुरुष (पुरिसं सत्तीए समभिधंसेज्जा) दूसरे किसी पुरुष को हथियार विशेष से मारे (वा) अथवा (सयपाणिणा) अपने हाथ से (से) वह (असिणा) तलवार लेकर (सीसं छिंदेज्जा) उसका शिर काट लेवे (तया णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए) तो हे भदन्त ! वह पुरुष कितनी क्रियाओं वाला है ? (गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिधंसेति

" पुरिसे णं भंते ! पुरिसे सत्तीए " इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते !) हे भगवन् ! (पुरिसे) કોઇ એક પુરુષ (पुरिसं सत्तीए समभिधंसेज्जा) કોઇ બીજા પુરુષને હથિયાર વિશેષથી મારે (वा) અથવા (सयपाणिणा) પોતાના હાથમાં (से) તે (असिणा) તલવાર લઇને (सीसं छिंदेज्जा) તેનું માથું કાપી નાખે, (तया णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए) તો હે ભગવન્ ! તે પુરુષ કેટલી ક્રિયાવાળો કહેવાય ? (गोयमा !

अनवकाशतया पृष्टिदेशेन 'पुरिसवेरेण पुट्ठे' पुरुषवैरेण स्पृष्टः, एतादृशेन पुरुषवैरेण अवश्यं विशिष्टेनकर्मणा पुरुषः स्पृष्टो भवतीति भावः ॥ सू० ७ ॥

क्रियाधिकार एव इदमाह—'दो भंते' इत्यादि ।

मूलम्—दो भंते! पुरिसा सरिसया सरिसत्तया सरिसभंडमत्तोवगरणा अण्णमण्णेण सद्धिं संगामं संगामेंइ तत्थ णं एगे पुरिसे पराजिणाइ, एगे पुरिसे पराइज्जइ, से कहमेयं भंते! एवं, गोयमा! सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ, से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ, गोयमा! जस्स णं वीरिए वज्झाइ कम्माइ णं बद्धाइ णो पुट्ठाइ जाव णो अभिसमण्णागयाइ णो उदिण्णाइ नो उवसंताइ भवंति, से णं पराजिणइ, जस्स णं वीरिए वज्झाइ कम्माइ बद्धाइ, जाव उदिण्णाइ णो उवसंताइ भवंति, से णं पुरिसे पराइज्जइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ ॥ सू० ८ ॥

छाया—द्वौ भदन्त! पुरुषौ सदृशौ सदृशत्वचौ सदृशभाण्डमात्रोपकरणौ अन्योन्येन सार्द्धं संग्रामं संग्रामयतः तत्रैकः पुरुषः पराजीयते, अपरः पराजीयते, तत्कथमेतद् भदन्त! एवम्? गौतम! सवीर्यः पराजयते, अवीर्यः पराजीयते, तत्केनार्थेन यावत् पराजीयते? गौतम! यस्य वीर्यवध्यानि कर्माणि

है तब उससे जो वैर पड़ता है उसमें दूसरेके प्राणोंकी जरा भी परवाह नहीं रहती है अथवा इससे हमारा क्या अनिष्ट होगा इसका भी कुछ खयाल बिलकुल नहीं रहता है ऐसे पुरुष वैर से, वह शक्ति से-इन्द्रियादिविशेष से दूसरे के शिरका छेदन करने वाला मनुष्य स्पृष्ट होता है ॥ सू-७ ॥

કે જ્યારે કોઈ વ્યક્તિ કોઈની હત્યા કરે છે અને તેની સામે જો વેર બંધાય છે ત્યારે તેને બન્નેના મરણ પર્યંત વેર બંધાયેલું રહે છે, અથવા તેનાથી પોતાનું શું અનિષ્ટ થશે તેનો પણ ખ્યાલ તેને રહેતો નથી અર્થાત્ એક બીજાથી બન્નેનું શિર કાપવાને જેવા પ્રકારનું પુરુષવેર બંધાયું હોય ॥સૂ૦૭

तदुक्तं—" वहमरणअब्भक्खाण दाण परधणविलोवणाईणं ।
सव्व जहन्नो उदयो दसगुणिओ एक्कसिकयाणं ॥ " इति ॥

छाया—वधमरणाभ्याख्यानदानपरधनविलोपनादीनाम् , सर्वजघन्यउदयो दश गुणित एकश· कृतानामिति । आसन्नवधकेन चेत्यत्र च शब्दः समुच्चयार्थकः, 'अणवकंखणवत्तिए णं' अनवकांक्षणवृत्तिकेन खलु अनवकांक्षणा परकीयप्राण निरपेक्षा, स्वगतापायपरिहारापेक्षा वा, तया वृत्तिर्वर्त्तनं यत्र वैरे तत् तथा तेन

यह है जो पुरुष जिसका घात करता है वह पुरुष उसके द्वारा या किसी दूसरे के द्वारा उसी भव में या दूसरे भव में मारा जाता है क्यों कि वैर से वधक का वध होता है । इसलिये उसी वध्य को लेकर उसका वध हो या अन्य किसी दूसरे प्राणी को लेकर उसका वध हो चाहे वह वध उसी भव में या अन्य जन्म में हो । कहा भी है—

" वह मरणअब्भक्खाणदाण-परधण विलोवणाईणं ।
सव्वजहन्नो उदयो दस गुणिओ एक्कसिकयाणं " इति ॥

वध करना मारना, अभ्याख्यान, चुगली करना, चोरी करना, इन सब एकवार किये अपकृत्यों का सर्वजघन्य उदय दसगुणा होता है । " आसन्नवधकेन च " यहां पर जो " च " शब्द का प्रयोग किया गया है वह समुच्चय अर्थ में किया गया है । दूसरे के प्राणों की परवाह नहीं करना अथवा अपने अपाय की दरकार नहीं रखना इसका नाम अनवकांक्षणा है । तात्पर्य इसका यह है कि जब कोई किसी का घातकरता

વાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પુરુષ જેનો ઘાત કરે છે તેના વડે અથવા બીજા કોઈની મારફત એજ ભવમા કે અન્ય ભવમા માર્યો જાય છે, કારણ કે વેર ને લીધે મારનારનો વધ થાય છે. તે કારણે તે વધ્ય (જેનો વધ કર્યો છે તે) વડે તેનો વધ થાય અથવા અન્ય કોઇ જીવ વડે તેનો વધ થાય, તે વધ એજ ભવમા પણ થાય અને અન્ય ભવમા પણ થાય. કહ્યું પણ છે....

" वह मरण अब्भक्खाण दाण परधण विलोवणाईणं ।
सव्वजहन्नो उदयो दस गुणिओ एक्कसिकयाणं " इति ।

વધ કરવાનો, મારવાનો, અભ્યાખ્યાનનો. નિંદા કરવાનો અને ચોરી કરવાનો આ બધા અપકૃત્યોનો સર્વજઘન્ય ઉદય દસગણો હોય છે. " आसन्न वधकेन च " એ પદમા જે (च) એ શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે સમુચ્ચયાર્થે કરાયો છે બીજા જીવોના પ્રાણોની દરકાર ન કરવી અથવા પોતાના અપાયની દરકાર ન કરવી તેનુ નામ " अनवकाक्षणा " છે. તેનો ભાવાર્થ એ છે

समानत्वेऽपि कथमेकस्य जयः, अपरस्य च पराजयो भवति ? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सवीरिए पराजिणाइ' सवीर्यः परानयते अपरं पराजितं करोति 'अवीरिए पराइज्जइ' अवीर्यः पराभूयते, वीर्यरहितः पराजितो भवति । पुनः प्रश्नयति-'से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ' तत्केनार्थेन यावत् पराभूयते ? हे भदन्त ! तत् किं कारणं येनैकस्य जयः अपरस्य च पराजय इति भावः । भगवानाह—'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं णो बद्धाइं' यस्य खलु वीर्यवध्यानि वीर्यवध्यं=शत्रुवधनीयं यस्य तानि=शत्रुवधनीयानि कर्माणि नो बद्धानि 'णो पुट्ठाइं' नो स्पृष्टानि जाव णो अभिसमण्णागयाइं' यावत् नो अभिसमन्वागतानि, यावत्

कहनेका भाव ऐसा है कि जब दोनों एकसी स्थिति आदि वाले हैं समान बल आदि वाले हैं तो फिर ऐसा क्यों होता है कि एक की जीत होती है और दूसरे की हार होती है ? (गोयमा ! एवं सवीरिए पराजिणाइ अवीरिए पराइज्जइ) हे गौतम ! यह बात इस प्रकार से है-कि जो वीर्यसहित होता है वह दूसरे को पराजित कर देता है और जो वीर्य रहित होता है वह पराजित हो जाता है । (से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हो कि जो वीर्यवाला होता है वह जीतता है और जो वीर्यविनाका होता है वह हारता है ? तात्पर्य यह है कि एक की जीत होती है और दूसरे की हार होती है इसमें क्या कारण है ? (गोयमा ! जस्स णं वीरियवज्झाइं, कम्माइं णो बद्धाइं

મેળવે છે અને બીજો પુરુષ પરાજય પામે છે (से केणट्ठेणं भंते !) તો હે ભગવન્ ! એવું આ આપવું કહો છો ? પ્રશ્ન કરનારનો આશય એ છે કે બન્ને સમાન બળ વાળા સમાન ઉંમર વાળા, સમાન સાધન સામગ્રીવાળા હોવા છતાં એવું કેમ બને છે કે એકની જીત અને બીજાની હાર થાય છે ? (गोयमा ! एवं सवीरिए पराजिणाइ, अवीरिए पराइज्जइ) હે ગૌતમ ! તેનું કારણ એ છે કે જે વીર્યયુક્ત હોય છે તે બીજાને હરાવી દે છે અને જે વીર્યરહિત હોય છે તે પરાજય પામે છે (से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ) હે ભગવન્ ! આપ આ કારણે એવું કહો છો કે વીર્યવાળાનો જય થાય છે અને વીર્યરહિત વ્યક્તિની હાર થાય છે ? તાત્પર્ય એ છે કે એકનો જય અને બીજાનો પરાજય થવાનું કારણ શું છે ? એ પ્રશ્ન છે તેનો ઉત્તર નીચે પ્રમાણે છે

ઉત્તર—(गोयमा ! जस्स वीरियवज्झाइं, कम्माइं णो बद्धाइं णो पुट्ठाइं

नो बद्धानि नो स्पृष्टानि यावत् नो अभिसमन्वागतानि, नो उदीर्णानि उपशान्तानि भवंति स पराजयते यस्य खलु वीरवध्यानि कर्माणि बद्धानि यावत् उदीर्णानि नोपशान्तानि भवंति स पुरुषः पराजीयते तत् तेनार्थेन गौतम! एव मुच्यते स वीर्यः पराजयते अवीर्यः पराजीयते॥ ८ ॥

टीका—'दो भंते पुरिसा' द्वौ भदन्त! पुरुषौ 'सरिसया' सदृशौ, कौशलप्रमाणादिना तुल्यौ, 'सरिसत्तया' सदृशत्वचौ, सदृशाकृती, 'सरिसव्वया' सदृशवयस्कौ समानयौवनाद्यवस्थौ, 'सरिसभंडमत्तोवगरणा' सदृशभांडामत्रोपकरणौ, तत्र-भाण्डम् हिरण्यसुवर्णादिकम्, अमत्र-कांस्यभाजनादिपात्रम् अथवा भाण्ड-मात्रा गणिमादिद्रव्यरूपः परिच्छेदः, उपकरणानि अनेकविधवस्त्रशस्त्रादीनि। ततः सदृशानि=तुल्यानि भाण्डमात्रोपकरणानि ययोस्तौ सदृशभाण्डामत्रोपकरणौ, एतावता द्वयोः पुरुषयोः समानविभूतिकत्वं कथितम्, 'अण्णमण्णेणं' अन्योन्येन परस्परेण 'सद्धिं' सार्धम् 'संगामं' संग्रामं-युद्धम्, 'संगामेन्ति' संग्रामयेते-परस्परं युद्धं कुरुत इत्यर्थः, 'तत्थणं-एगे पुरिसे पराजिणइ' तत्र खलु एकः पुरुषः पराजयते अपरं पराजितं करोति, 'एगे पुरिसे पराइज्जइ' एकः पुरुषः पराजीयते, परास्तो भवति, एकः पुरुषो विजेता भवति अपरश्च पराजितो भवतीति भावः। 'से केणमेयं भंते एवम्' तत् कथमेतद् भदन्त! एवम्, बलादिना

क्रिया के अधिकार में ही यह सूत्र भी सूत्रकार ने कहा है—
'दो भंते! पुरिसा सरसिया' इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त! (सरिसया) एक सरीखे (सरिसव्वया) एकसी उम्र वाले (सरिसत्तया) एकसी चमडी वाले (सरिस भंडमत्तोवगरणा) समान भांडमत्र उपकरणवाले अर्थात् समानसामग्री वाले ऐसे (दो पुरिसा) कोई दो पुरुष (अण्णमण्णेणं सद्धिं) आपस में एक दूसरे के साथ (संगामं संगामेइ) लड़ाई करने में रत होते हैं तो (तत्थ) उनमें (एगे पुरिसे) एक पुरुष (पराजिणइ) जीतता है (एगे पुरिसे पराजिज्जइ) और एक दूसरा पुरुष हार जाता है (से

ક્રિયાના અધિકારને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રનું પણ કથન કરે છે– "से भंते! पुरिसा सरिसया" इत्यादि.

टीकार्थ—(भंते) હે ભગવન્! (सरिसया) એક સરખા (सरिसव्वया) એક સરખી ઉમરના, (सरिसत्तया) એક સરખી ચામડીવાળા (सरिसभंडमत्तोवगरणा) એક સરખા ભાંડમત્ર ઉપકરણવાળા એટલે કે સમાન સાધન સામગ્રી વાળા (दो पुरिसा) બે પુરુષો (अण्णमण्णेणं सद्धिं) આપસ આપસમા–એક બીજાની સાથે (संगाम संगामेइ) સંગ્રામ બેસે છે (तत्थ एगे पुरिसे पराजिणइ एगे पुरिसे पराइज्जइ) ત્યારબાદ તે બેમાનો એક પુરુષ વિજય

सर्वं भाव—तस्य पुरुषस्य प्रथमं हु वीर्यवध्नानि कर्माणि पूर्वबद्धानीव न भवेयुः यदि बद्धानि भवेयुः—तथापि स्पृष्टानि न भवेयु यदि स्पृष्टानि भवेयुः तथापि निधत्तानि न भवेयु, यदि निधत्तानि भवेयुस्तथापि निकाचितानि न भवेयुः, यदि निकाचितानि भवेयुस्तथापि अभिसमन्वागतानि न भवेयु यदि अभिसमन्वागतानि भवेयुस्तथापि उदीर्णानि न भवेयुः, तर्हि—किम्, उपशान्तानि भवेयु स्तस्य पुरुषस्य विजयो भवति, तद्विपक्षस्य पराजयो भवतीति। 'से तेणट्ठेणं गोयमा' तत्तेनार्थेन गौतम ! 'एवं—वुच्चइ' एवमुच्यते—'सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ' सवीर्यः पराजयते, अवीर्यः पराजीयते, इति ॥ सू० ८ ॥

॥ इति पुद्गलानकादिपुरुषप्रकरणम् ॥

—वीर्यरहित होने के कारण दूसरेके द्वारा पराजित होता है तात्पर्य यह है कि जिस पुरुष के पहिलेतो वीर्यवध्न कर्म पूर्व बद्ध हीन हों, यदि हों भीतो वे उससे स्पृष्ट न हों यदि स्पृष्ट भी हों तो वे निधत्त न हों, यदि निधत्त भी हों तो वे निकाचित न हों, यदि निकाचित हों तो वे उसके अभिसमन्वागत न हों, यदि अभिसमन्वागत (नहीं प्राप्त किया है) हों तो भी वे उसके उदीर्ण न हों किन्तु उपशान्त हो ऐसी दशा में उस पुरुष की विजय होती है और ऐसी स्थितिसे विपरीत स्थितिवाले की हार होती है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इस कारण से हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि (सवीरिए पराजिणाइ, अवीरिए पराइज्जइ) जो वीर्य सहित होता है वह अपने समान बलवाले, समान चमडीवाले, समान सामग्रीवाले और उपकरणवाले दूसरे व्यक्तिको जीत लेता है और दूसरा वीर्यरहित व्यक्ति उससे हार जाता है। "सरिसमइअसोवगरणा"

શાન્ત નથી. (से पुरिसे पराइज्जइ) તે પુરુષ વીર્યરહિત હોવાને કારણે બીજા દ્વારા પરાજિત થાય છે કહેવાનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જે પુરુષે વીર્યવધ્ન (વીર્યરહિત) કર્મો પહેલાં તો બધ્યા જ ન હોય, કદાચ બધ્યા હોય તો તેના વડે સ્પૃષ્ટ થયો ન હોય, જો સ્પૃષ્ટ હોય તો નિધત્ત ન હોય કદાચ નિધત્ત પણ હોય અને નિકાચિત ન હોય કદાચ નિકાચિત હોય પણ અભિસમન્વાગત ન હોય કદાચ અભિસમન્વાગત (પ્રાપ્ત નહીં કરેલા) હોય તો ઉદીર્ણ ન હોય કિન્તુ ઉપશાન્ત હોય એવી દશામાં તે પુરુષનો વિજય થાય છે અને તેથી વિપરીત સ્થિતિવાળાનો પરાજય થાય છે (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છે કે सवीरिए पराजिणाइ अवीरिए पराइज्जइ" વીર્યયુક્ત પુરુષ, બળવાન શરીરવાળા સમાન ચામડીવાળા સમાન સામગ્રી અને ઉપકરણોવાળા વીર્યરહિત પુરુષને હરાવી શકે છે, અને વીર્યરહિત વ્યક્તિ તેની

देन-'नो निधत्तानि, नो निकाचितानि' अनयोः संग्रहः, 'णो उदिण्णाइं' नो उदीर्णानि, किन्तु 'उवसंताइं भवंति' उपशान्तानि कार्यकरणासमर्थानि भवंति, 'से णं' स खलु वीर्यवान् पुरुषः 'पराजिणइ' पराजयते अपरं पराजितं करोति, एतादृशः पुरुषो युद्ध जेता भवतीत्यर्थः, 'जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं बद्धाइं जाव उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवति' यस्य पुरुषविशेषस्य खलु वीर्यवध्यानि कर्माणि बद्धानि स्पृष्टानि निधत्तानि निकाचितानि अभिसमन्वागतानि उदीर्णानि उदयावलिकायां प्रविष्टानि किन्तु उपशान्तानि नो भवंति, 'से णं पुरिसे पराइज्जइ' स खलु वीर्यरहितः पुरुषः पराजीयते अपरेण पराजितो भवति।

णो पुट्ठाइं जाव णो अभिसमण्णागयाइं णो उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवंति, से ण पराजिणइ) जिस जीवने वीर्यवध्य-वीर्यरहित अर्थात् शत्रुदमनीय कर्मों को तद्रूप में नहीं बांधा है, नहीं स्पर्श किया है, यावत् नहीं प्राप्त किया है, उसके वे कर्म उदीर्ण नहीं हैं, किन्तु उपशांत हैं कार्य करने में असमर्थ हैं ऐसा पुरुष युद्धमें दूसरे को जीतता है यहां यावत् शब्द से निधत्त और निकाचित इन दों पदों का संग्रह हुआ है। इस से वीर्यवध्य कर्म उसके न निधत्त हैं और न निकाचित हैं ऐसा अर्थबोध होना है। (जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं बद्धाइं जाव उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवति) तथा जिस पुरुषके वीर्यवध्य कर्मबद्ध होते हैं-अर्थात् जिस पुरुष ने वीर्यरहित कर्मों को बांधा है, उन्हे स्पर्श किया है, वे उसके निधत्त है, निकाचित हैं, अभिसमन्वागत हैं, उदयावलिका में प्रविष्ट हैं किन्तु उपशान्त नहीं हैं (से पुरिसे पराइज्जइ) ऐसा वह पुरुष

जाव णो अभिसमण्णागयाइ णो उदिण्णाइ णो उवसंताइ भवति से ण पराजिणइ) હે ગૌતમ! જે જીવે વીર્યવધ્ય-વીર્યરહિત એટલે કે શત્રુથી નાશ થનારા કર્મો બાંધ્યા નથી, સ્પર્શ્યા નથી, યાવત્ પ્રાપ્ત કર્યા નથી તેના તે કર્મ ઉદીર્ણ નથી, પણ ઉપશાન્ત છે-કાર્ય કરવાને અસમર્થ છે-એવો પુરુષ યુદ્ધમા બીજા પુરુષને જીતે છે અહી "यावत्" પદ વડે નિધત્ત અને નિકાચિત, એ બે પદોનો પણ સમાવેશ થયો છે તેમ સમજવુ તેથી એવો અર્થબોધ થાય છે કે તેના વીર્યવધ્ય કર્મ નિધત્ત પણ નથી અને નિકાચિત પણ નથી (जस्सणं वीरियवज्झाइ कम्माइ बद्धाइ जाव उदिण्णाइ णो उवसताइ भवंति) તથા જે પુરુષે વીર્યવધ્ય કર્મો બાંધ્યા હોય છે-એટલેકે જે પુરુષે વીર્યરહિત કર્મો બાંધ્યા છે, સ્પર્શ્યા છે, નિધત્ત અને નિકાચિત પણ કર્યા છે, અને જેના તે કર્મો અભિસમન્વાગત છે અને ઉદયાવલિકામા પ્રવેશી ચુક્યા છે પણ ઉ-

णेरइयाण भंते ! किं सवीरिया अवीरिया, गोयमा ! णेरइया लद्धिवीरिएण सवीरिया, करणवीरिएण सवीरियावि अवीरियावि । से केणट्ठेण ? गोयमा ! जेसिं ण णेरइयाणं अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे, तेण णेरइया लद्धिवीरिएण वि सवीरिया करणवीरिएण वि सवीरिया । जे सि ण णेरइयाण णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे तेण णेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया से तेण ट्ठेणं० । जहा णेरइया, एव जाव पचिदिय तिरिक्ख जोणिया मणूसा जहा ओहिया जीवा, णवर सिद्धवज्जा भाणियव्वा । वाणमतरजोइसवेमाणिया जहा णेरइया । सेव भंते सेव भंते, त्ति जाव विहरइ ॥ सू० ९ ॥

॥ पढमसए अट्ठमो उद्देसो ॥ १-८॥

छाया—जीवाः खलु भदन्त ! किं सवीर्या अवीर्या ? गौतम ! सवीर्या अपि अवीर्या अपि । तत्केनार्थेन ? । गौतम ! जीवा द्विविधा प्रज्ञप्ताः तद्यथा—संसारसमापन्नकाश्च असंसारसमापन्नकाश्च । तत्र ये तेऽसंसारसमापन्नकास्ते सिद्धाः, सिद्धा अवीर्याः । तत्र खलु ये ते संसारसमापन्नकास्ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा शैलेशीप्रतिपन्नकाश्च, अशैलेशीप्रतिपन्नकाश्च । तत्र ये ते शैलेशीप्रतिपन्नकास्ते लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येणाप्यवीर्याः । तत्र ये तेऽशैलेशीप्रतिपन्नकास्ते लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि, तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते—जीवाः सवीर्या अपि अवीर्या अपि । नैरयिकाः खलु भदन्त ! किं सवीर्या अवीर्याः ? गौतम ! नैरयिका लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि । तत्केनार्थेन भदन्त ? । गौतम ! यस्य खलु नैरयिकस्य अस्ति उत्थानम् कर्म बलम् वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमः, स नैरयिको लब्धिवीर्येणापि सवीर्यः, करणवीर्येणापि सवीर्यः येषां खलु नैरयिकाणां नास्ति उत्थानम् यावत्पराक्रमः ते खलु नैरयिका लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येणावीर्याः तत्तेना-

अथ वीर्यविचारः—

पूर्वं 'सवीरिए अवीरिए' इत्यादि वर्णितम्, तत्प्रस्तावादेव वीर्यसूत्रमाह—'जीवा णं भंते' इत्यादि।

मूलम्—जीवा णं भंते! किं सवीरिया अवीरिया? गोयमा! सवीरियावि अवीरियावि, से केणट्ठेणं गोयमा! जीवा दुविहा पन्नत्ता, तं जहा—संसारसमावण्णगा य असंसारसमावण्णगा य, तत्थणं जे ते असंसारसमावण्णगा तेणं सिद्धा, सिद्धा णं अवीरिया, तत्थणं जे ते संसारसमावण्णगा ते दुविहा पन्नत्ता तं जहा—सेलेसि पडिवण्णगा य, असेलेसिपडिवण्णगा य तत्थ णं जे ते सेलेसि पडिवण्णगा ते णं लद्धिवीरिए णं सवीरिया, करणवीरिए णं अविरिया, तत्थ णं जे ते असेलेसी पडिवण्णया तेणं लद्धिवीरिए णं सवीरिया करणवीरिएणं सवीरिया वि, अविरियावि से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जीवा सवीरियावि अवीरियावि।

में भांडमत्र उपकरण ये जो दो शब्द आये है उनमें हिरण्य सुवर्ण आदि को भांडसे और कांसे आदि के वर्तनों को अमत्र शब्द से कहा गया है। अथवा—भांडमात्रा गणिमादि द्रव्यरूप जो परिच्छेद है वह भांडमात्रा है। तथा अनेकविध जो वस्त्र शस्त्र आदि हैं वे उपकरण हैं। इससे उन दोनों को समान सामग्रीवाला कहा है॥ सू० ८॥

॥ इस प्रकार यह मृगघातक आदि पुरुष प्रकरण समाप्त हुआ॥

भारइत परान्य पामे छे "सरिसभंडमत्तोवगरणा" એ પદમા જે "ભાડા-મત્ર ઉપકરણ" પદમા ભાડ અને અમત્ર, એ બે શબ્દોનો પ્રયોગ થયો છે. તેમા હિરણ્ય, સુવર્ણ વગેરેના ઉપકરણોને 'ભાડ' કહે છે અને કાસા વગેરેના વાસણો અથવા ઉપકરણોને "અમત્ર" કહે છે અથવા—"ભાડમાત્રા"—ગણિ-માદિ દ્રવ્યરૂપ જે પરિગ્રહ છે તેને ભાડમાત્રા કહે છે, તથા વિવિધ પ્રકારના જે વસ્ત્ર, શસ્ત્ર વગેરે હોય છે તેને ઉપકરણ કહે છે તેથી તે બન્નેને સમાન સામગ્રીવાળા કહેવામા આવ્યા છે॥ સૂ—૮॥

॥ મૃગઘાતક આદિ પુરુષ પ્રકરણ સમાપ્ત ॥

असंसारसमापन्नकाश्च, ' तत्थ णं जे असंसारसमावण्णगा ' तत्र खलु ये असंसारसमापन्नकाः, ' ते णं सिद्धा ' ते खलु सिद्धाः, ' सिद्धाणं अवीरिया ' सिद्धाः खलु अवीर्याः, करणवीर्यस्याभावेन सिद्धा अवीर्या इति कथ्यन्ते, ' तत्थ णं जे ते संसारसमावण्णगा ' तत्र खलु ये ते संसारसमापन्नकाः संसारिणः ' ते दुविहा पन्नत्ता ' ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, ' तं जहा तद्यथा-' सेलेसीपडिवण्णगा य ' शैलेशीप्रतिपन्नकाश्च अशैलेशीप्रतिपन्नकाश्च, शीलस्येशः शीलेश सर्वसंवरणरूप चारित्रवान् तस्येयमवस्था शैलेशी अथवा शैलानां पर्वतानामीश इति शैलेशो मेरुस्तस्येव पार्श्वस्था सा शैलेशी स्थिरतासाधर्म्यात्, स्थिरता च सर्वथा योगनिरोधेन अ इ उ ऋ लृ इति पंचह्रस्वाक्षरोच्चार कालप्रमाणा, तां प्रतिपन्ना ये ते शैलेशीप्रति

कहे गये हैं। वे इस प्रकार से हैं-एक संसारसमापन्नक और दूसरे असंसारसमापन्नक (तत्थ णं जे असंसार समावण्णगा ते णं सिद्धा) इनमें जो असंसारसमापन्नक हैं वे सिद्ध हैं। (सिद्धाणं अवीरिया) ये सिद्ध करणवीर्यके अभाव से वीर्य विनाके हैं ऐसे कहे गये हैं। (तत्थ णं जे ते संसारसमावण्णगा ते दुविहा पन्नत्ता) तथा जो संसारसमापन्नक जीव हैं वे दो प्रकारके कहे गये हैं। (तं जहा) वे दो प्रकार ये हैं- (सेलेसी पडिवण्णगा य असेलेसी पडिवण्णगा य) एक शैलेशीप्रतिपन्नक और दूसरे अशैलेशी प्रतिपन्नक। जो शीलके ईश होते हैं वह शैलेश कहे गये हैं-अर्थात् सर्वसंवरणरूप चारित्रवाले ही शैलेश होते हैं। इन शैलेशों की जो अवस्था है वह शैलेशी है। अथवा पर्वतों का ईश जो सुमेरु पर्वत है उस पर्वत के जैसी अवस्था का नाम शैलेशी है। उसकी स्थिरता के सामर्थ्य से यह शैलेशी अवस्था कही गई है। यह स्थिरता

જીવ બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) સંસાર સમાપન્નક અને (૨) અસંસાર સમાપન્નક (तत्थणं जे असंसारसमावण्णगा ते णं सिद्धा) તેમાં જે અસંસાર સમાપન્નક જીવો છે તેમને સિદ્ધ કહે છે (सिद्धाणं अवीरिया) તે સિદ્ધોને કરણવીર્યને અભાવે વીર્યરહિત કહ્યા છે (तत्थणं जे ते संसारसमावण्णगा ते दुविहा पन्नत्ता) તથા જે સંસાર સમાપન્નક જીવો છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે, (तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે-(सेलेसी पडिवण्णगा य) (શૈલેશી-પ્રતિપન્નક અને (૨) અશૈલેશી પ્રતિપન્નક અર્થાત્ સર્વસંવરરૂપ ચારિત્રવાળા જીવોને જ શૈલેશ કહે છે તે શૈલેશોની જે અવસ્થા તેનું નામ શૈલેશી છે

અથવા--પર્વતોનો ઈશ જે સુમેરુ પર્વત છે, તે સુમેરુના જેવી અવસ્થાને શૈલેશી અવસ્થા કહે છે સ્થિરતાની અપેક્ષાએ સમાનતા હોવાથી જેવી અવસ્થાને

र्येन० यथा नैरयिकाः एवं यावत् पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः। मनुष्या यथा औधिका जीवाः, नवरं सिद्धवर्जा भणितव्याः वानव्यंतरज्योतिष्कवैमानिका यथा नैरयिकाः, तदेवं भदंत! तदेवं भदंत! इति यावद्विहरति ॥ सू० ९ ॥

॥ प्रथमशतकेऽष्टमोद्देशः ॥ १-८ ॥

टीका—'जीवा णं भंते' जीवाः खलु भदन्त! 'किं सवीरिया अवीरिया' किं सवीर्याः अवीर्याः? जीवा किं वीर्यवन्तो भवन्ति नवेति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'सवीरियावि-अवीरियावि' सवीर्या अपि अवीर्या अपि। 'से केणट्ठेणं०' तत्केनार्थेन, हे भदन्त! केन कारणेनैव मुच्यते जीवाः सवीर्या अपि अवीर्या अपीति। भगवानाह—'गोयमे'त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जीवा दुविहापण्णत्ता' जीवाः द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, 'तं जहा'-तद्यथा-'संसारसमापन्नगा य असंसारसमावण्णगा य' संसारसमापन्नकाश्च,

वीर्यविचार-

पहिले "सवीरिए अवीरिए" इत्यादि रूपवर्णन किया जा चुका है सो उसी प्रस्ताव को लेकर अब सूत्रकार वीर्यसूत्र का कथन करते हैं-

'जीवा णं भंते! किं सवीरिया अवीरिया' इत्यादि।

टीकार्थ(भंते) हे भदन्त! (जीवा णं) जीव (किं सवीरिया अवीरिया) क्या वीर्य सहित होते हैं कि विना वीर्य के होते हैं? (गोयमा! सविरीया वि अवीरिया वि) हे गौतम! जीव वीर्यवाले भी होते हैं और विना वीर्य के भी होते हैं। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि जीव वीर्यवाले भी होते हैं और विना वीर्य के भी होते हैं (गोयमा! जीवा दुविहा पण्णत्ता-तं जहा-संसार समावण्णगा य असंसारसमावण्णगा य) हे गौतम! जीव दो प्रकारके

વીર્ય વિચાર-

પહેલા "सवीरिए अवीरिए" ઇત્યાદિરૂપ વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે તો એ જ પ્રસ્તાવને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર હવે વીર્યસૂત્રનુ કથન કરે છે-

"जीवाणं भंते! किं सवीरिया" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(भंते!) હે ભગવન્! (जीवाण किं सवीरिया अवीरिया) શુ જીવો વીર્યસહિત હોય છે, કે વીર્યરહિત હોય છે? (गोयमा! सवीरिया वि अवीरिया वि) હે ગૌતમ! જીવો વીર્યસહિત પણ હોય છે, અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (से केणट्ठेण०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે જીવ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (गोयमा! जीवा दुविहा पण्णत्ता तं जहा संसारसमावण्णगा य असंसार समावण्णग य) હે ગૌતમ!

कथ्यन्ते । ' तत्थ णं जे ते असेलेसी पडिवण्णगा ' तत्र खलु ये ते अशैलेशी प्रतिपन्नकाः, ' तेण लद्धिवीरिएणं सवीरिया ' ते खलु लब्धिवीर्येण सवीर्याः, ' करण वीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि ' करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि । तत्र सवीर्या उत्थानादिक्रियावन्त अवीर्यास्तु उत्थानादिक्रियारहिता । ते पर्याप्तादि काले अवगन्तव्या इति । ' से तेणट्ठेणं गोयमा ' तत्तेनार्थेन गौतम ! ' एवं वुच्चइ ' एवमुच्यते–' सवीरिया वि–अवीरिया वि ' सवीर्या अपि अवीर्या अपि, वीर्यं – जीवप्रभवं बलम्, तत् लब्धिवीर्यकरणवीर्यभेदाद् द्विविधम्, तत्र लब्धिवीर्यम् आत्मपरिणामस्य सत्ताविशेषरूपमेव, करणवीर्यं तु कार्यकरणक्षमत्वात्मक

कहे गये हैं । (तत्थ णं जे ते असेलेसी पडिवण्णगा ते णं लद्धिवीरिएणं सवीरिया वि करणवीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि) तथा जो अशैलेशीप्रतिपन्नक जीव हैं वे लब्धिवीर्य की अपेक्षा से सवीर्य होते हैं। और करणवीर्य की अपेक्षा से वीर्यसहित भी होते हैं और बिना वीर्यके भी होते हैं । उत्थान आदि क्रियावाले जो हैं वे सवीर्य हैं और उत्थान आदि क्रियाओं से जो रहित होता है- वे बिना वीर्य के जीव-अपर्याप्त आदि समय में होते हैं । (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सवीरिया वि अवीरिया वि) इसी कारण से हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि जो अशैलेशी प्रतिपन्नक जीव हैं वे वीर्य सहित भी होते हैं और बिना वीर्य के भी होते हैं । जीव से जो बल उत्पन्न होता है उसका नाम वीर्य है । यह वीर्य लब्धिवीर्य और करण-वीर्य के भेद से दो प्रकार का होता है । इनमें जो लब्धिवीर्य होता है वह तो आत्मपरिणाम की विशेष सत्तारूप ही होता है । तथा जो करणवीर्य

નથી, તેથી તે અપેક્ષાએ તેમને અવીર્ય-વીર્યરહિત-કહ્યા છે (तत्थ णं जे ते असेलेसी-पडिवण्णगा ते णं लद्धिवीरिएणं सवीरिया करणवीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि) તથા જે અશૈલેશી પ્રતિપન્નક જીવો છે તેઓ લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય છે પણ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે ઉત્થાન વગેરે ક્રિયાવાળા જેઓ હોય છે તેઓ સવીર્ય હોય છે અને જેઓ ઉત્થાનાદિ ક્રિયારહિત હોય છે તેઓ અવીર્ય હોય છે અપર્યાપ્ત વગેરે સમયમાં જીવ અવીર્ય હોય છે (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सवीरिया वि अवीरिया वि) હે ગૌતમ ! મેં આપણે એ જેવું કહ્યું છે કે અશૈલેશી પ્રતિપન્નક જીવ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે જીવમાં જે બળ ઉત્પન્ન થાય છે તેને વીર્ય કહે છે તે વીર્યના બે પ્રકાર છે–(૧) લબ્ધિવીર્ય અને (૨) કરણવીર્ય તેમાં જે લબ્ધિવીર્ય છે તે તો

पन्नकाः, तद्भिन्ना अशैलेशीप्रतिपन्नकाः, 'तत्थणं जे ते सेलेसीपडिवन्नया' तत्र खलु ये ते शैलेशी प्रतिपन्नकाः 'तेणं लद्धिवीरियेणं सवीरिया' ते खलु लब्धिवीर्येण सवीर्याः, वीर्यान्तरायक्षयक्षयोपशमतो या वीर्यस्य लब्धिः सा एव तद्धेतुत्वात् वीर्यं-लब्धिवीर्यं तेन लब्धिवीर्येण सवीर्याः। एतेषां क्षायिकमेव लब्धिवीर्यम्। 'करण-वीरिएण अवीरिया' करणवीर्येणावीर्याः लब्धिवीर्यकार्यभूता क्रिया करणम् तद्रूपं वीर्यमिति करणवीर्यम्। शैलेशीप्रतिपन्नकास्तदभावादवीर्याः

शीलेश में सर्वथा योगों के निरोध हो जाने पर आती है और इसका काल -अ-इ-उ-ऋ-ऌ-ए-पांच ह्रस्वाक्षरों के उच्चारणकाल के बराबर है। इस शैलेशी अवस्था को जो प्राप्त हो चुके हैं वे शैलेशीप्रतिपन्नक हैं। और इनसे भिन्न जो जीव हैं वे अशैलेशीप्रतिपन्नक हैं। (तत्थ णं जे ते सेलेसी;पडिवन्नया) इनमें जो शैलेशीप्रतिपन्नक हैं (ते णं लद्धिवीरियेणं सवीरिया) वे लब्धिवीर्य से सवीर्य हैं। वीर्यान्तराय कर्म के क्षय, क्षयोपशम से जो वीर्य की लब्धि होती है वह लब्धि ही तद्धेतु होने के कारण अर्थात् वीर्य की प्राप्ति में कारण होने से वीर्यरूप है-अर्थात् लब्धिवीर्यरूप है। इस लब्धिवीर्य से वे सवीर्य होते हैं। इनमें क्षायिक भावरूप ही लब्धिवीर्य कारण है (करणवीरिएणं अवीरिया) करणवीर्य से वे अवीर्य हैं। लब्धिवीर्य की कार्यभूत जो क्रिया है उसका नाम करण है। इस करणरूप जो वीर्य वह करणवीर्य-यह करणवीर्य शैलेशीप्रतिपन्नक जीवों में होता नहीं है इसलिये उसकी अपेक्षा से वे अवीर्य-वीर्य विना के-

શૈલેશી કહી છે યોગોનો સર્વથા નિરોધ થવાથી તે અવસ્થા શીલેશને જ પ્રાપ્ત થાય છે, અને તેનો કાળ અ-ઇ-ઉ-ઋ-ઌ-એ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણકાળ જેટલો જ હોયછે એવી શૈલેશી અવસ્થા જેમણે પ્રાપ્ત કરી હોય છે તેમને શૈલેશી પ્રતિપન્નક કહે છે અને તે ચૌદમે ગુણ સ્થાને જ હોય છે અને તેમનાથી ભિન્ન ગુણસ્થાનવાળા જીવોને અશૈલેશી પ્રતિપન્નક કહે છે (તત્થણ જે તે સેલેસી-પડિવન્નયા) તેમના જે શૈલેશીપ્રતિપન્નક જીવો છે તેઓ (તેણ લદ્ધિવીરિયેણ સવીરિયા) લબ્ધિવીર્યને કારણે સવીર્ય છે વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી જે જે વીર્ય-લબ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે, તે લબ્ધિ જ વીર્યપ્રાપ્તિમા કારણભૂત હોવાથી વીર્યરૂપ છે-એટલે કે લબ્ધિ વીર્યરૂપ છે. આ લબ્ધિવીર્યથી જ તેઓ વીર્ય-યુકત કહેવાય છે ક્ષાયિકભાવરૂપ લબ્ધિવીર્ય જ તેમા કારણભૂત છે (કરણ વીરિએણ અવીરિયા) પરતુ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ અવીર્ય-વીર્યરહિત-છે લબ્ધિવીર્યની કાર્યભૂત જે ક્રિયા છે તેનું નામ કરણ છે તે કરણરૂપ જે વીર્ય તેનુ નામ કરણવીર્ય છે તે કરણવીર્ય શૈલેશી પ્રતિપન્નક જીવોમા હોતું

वीर्येण सवीर्याः वीर्यसहिताः 'करणवीरियेण' करणवीर्येण 'सवीरिया वि' सवीर्या अपि 'अवीरियावि' अपि-अवीर्या अपि। पुनः प्रश्नयति-'से केणट्ठेणं०' तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते यत् नारकजीवाःसवीर्या अपि अवीर्या अपि, भगवानाह 'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जेसिं णं नेरइयाणं अत्थि' येषां खलु नैरयिकाणाम् अस्ति 'उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे' उत्थानं कर्म बलं वीर्यं पुरुषकार पराक्रमः, तत्र उत्थानम्-चेष्टाविशेषः, कर्म = भ्रमणादिक्रिया, बलम्-शरीरसामर्थ्यम्, वीर्यम्=आत्मप्रभव बलम्, पुरुषकार-अभिमानविशेषः, पराक्रम-निष्पादितस्वविषयः पुरुषकार एव। 'सेणं नेरइया' ते खलु नैरयिकाः

हे गौतम! नारकजीव लब्धिवीर्य की अपेक्षा लेकर तो वीर्य सहित के होते हैं और करणवीर्य की अपेक्षा लेकर वीर्यसहित भी होते हैं और वीर्यरहित भी होते हैं (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि नारक जीव लब्धिवीर्य की अपेक्षा से तो वीर्य-सहित होते हैं और करणवीर्य की अपेक्षा से वे वीर्यसहित भी होते हैं और वीर्यरहित भी होते हैं (गोयमा! जेसिं णं नेरइयाणं अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे ते णं नेरइया लद्धिवीरिएणं वि सवीरिया, करणवीरिएणं वि सवीरिया) हे गौतम! जिन नारकों के उत्थान कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकारपराक्रम है वे नारकलब्धिवीर्य की अपेक्षा से भी वीर्यवाले हैं और करणवीर्य की अपेक्षा से भी वीर्यवाले हैं। चेष्टा विशेष का नाम उत्थान है। भ्रमणादि क्रिया का नाम कर्म है। शारीरिक सामर्थ्य का नाम बल है। आत्मोत्थबल का नाम वीर्य है। अभिमान

નારક જીવો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત હોય છે, અને કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે નારક જીવો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત હોય છે, અને કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે? (गोयमा! जेसिं णं नेरइयाणं अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे ते णं नेरइया लद्धिवीरिएणं वि सवीरिया करणवीरिएणं वि सवीरिया) હે ગૌતમ! જે નારકોને ઉત્થાન કર્મ, બળ, વીર્ય અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે, તે નારકો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ પણ વીર્યવાળા છે અને કરણવીર્યની અપેક્ષાએ પણ વીર્યવાળા છે ચેષ્ટાવિશેષને ઉત્થાન કહે છે ભ્રમણાદિ ક્રિયાને કર્મ કહે છે શારીરિક સામર્થ્યને બળ કહે છે આત્મોત્થબળને વીર્ય કહે છે અભિમાન વિશેષને પુરુષકાર કહે છે

रूपमेव, लब्धिवीर्यं तु प्रायः सर्वेषामेव संसारिजीवानां भवति, करणवीर्यं सर्वेषां जीवानां भवेदेवेति न नियमः किन्तु भवेन्नवा भवेदिति ।

जीवसामान्यस्य वीर्यं भवति नवेति विचार्य्य जीवविशेषे तद्विचारणायाह–'नेरइयाणं भंते' इत्यादि । 'नेरइयाणं भंते' नैरयिकाः खलु जीवाः हे भदन्त ! 'किं सवीरिया अवीरिया' किं सवीर्या अवीर्या, नारकाः खलु जीवाः हे भदन्त ! वीर्यवन्तो भवन्ति अवीर्यवन्तो वा भवन्ति । भगवानाह–'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'नेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया' नैरयिकाः लब्धि-

---

होता है वह कार्य करने में समर्थ आत्मबलरूप होता हैं। लब्धिवीर्य समस्त ही संसारी जीवों के होता है। परन्तु जो करणवीर्य है वह सर्व जीवों के होता ही है ऐसा नियम नहीं है। क्यों कि अपर्याप्तकालमें वह सर्व जीवों के नहीं होता–अतः वह होता भी और नहीं भी होता है। वीर्य एक प्रकारका आत्मबल है। लब्धिवीर्य एक जात के आत्मबलकी सत्तारूप होता है। करणवीर्य कोई भी प्रकारकी क्रिया करते हुए आत्मबलरूप होता है। वीर्य जीव सामान्य के होता भी है और नहीं भी होता है ऐसा विचार करके अब सूत्रकार उस वीर्य का जीव विशेष के साथ विचार करने के निमित्त प्रश्नोत्तररूप सूत्रों का कथन करते हैं– (नेरइयाणं भंते ! किं सविरिया ? अवीरिया ?) हे भदन्त ! नारक जीव क्या वीर्यसहित होते हैं कि विना वीर्य के होते है ? (गोयमा ! नेरइया लद्धिवीरिए णं सवीरिया करणवीरिए णं सवीरिया वि अवीरिया वि)

આત્મબળની સત્તા વિશેષરૂપ હોય છે તથા જે કરણવીર્ય છે તે કાર્ય કરવાને સમર્થ એવા આત્મબળરૂપ હોય છે તમામ સંસારી જીવોમાં લબ્ધિવીર્ય હોય છે. પણ કરણવીર્ય તમામ સંસારી જીવોમા હોય છે જ એવો નિયમ નથી કારણ કે અપર્યાપ્ત અવસ્થામા તે સર્વ જીવોમા હોતુ નથી-તેથી તે હોય પણ છે અને નથી પણ હોતું એવુ કહ્યુ છે વીર્ય એક પ્રકારનું આત્મબળ છે લબ્ધિવીર્ય એક જાતના આત્મબળની સત્તારૂપ હોય છે. કર્ણવીર્ય કોઈ પ્રકારની ક્રિયા કરતા આત્મબળરૂપ હોય છે સામાન્ય જીવો વીર્યયુકત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે, એ બાબતનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે વીર્યનો વિચાર જીવ વિશેષને અનુલક્ષીને કરવા માટે પ્રશ્નોત્તરરૂપ સૂત્રોનું કથન કરે છે (नेरइयाण भते ! किं सवीरिया ? अवीरिया ?) હે ભગવન્ શુ નારક જીવો વીર્યયુક્ત હોય છે કે વીર્ય વિનાના હોય છે? (गोयमा ! नेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएण सवीरिया वि अवीरिया वि) હે ગૌતમ !

भावबन्त एव भवन्तीति भावः। 'से तेणट्ठेणं०' तत्तेनार्थेन, अनेन कारणेन हे गौतम! नारकजीवाः लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येण तु सवीर्या अपि अवीर्या अपीति भावः। नारकजीवानाम् वीर्यवत्त्व प्रतिपाद्य क्षेपचयोविंशतिदण्डकजीवानां तत्प्रतिपादयितुमाह—'जहा' इत्यादि, 'जहा नेरइया एव जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया' यथा नैरयिका एव यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, येन रूपेण नारकविषये वीर्यस्य सद्भावादिक चिन्तितम् एव तेनैव प्रकारेण यावत् पञ्चेन्द्रिय

वीर्य से सवीर्य हैं, परन्तु करणवीर्य से रहित होने के कारण वीर्यवाले नहीं हैं। यह कथन अपर्याप्त अवस्था की अपेक्षा से किया गया जानना चाहिये। क्यों कि अपर्याप्तावस्था में किसी भी जीव के उत्थानादि क्रियाएँ नहीं होती है। अतः अपर्याप्तावस्था में उत्थानादि क्रिया रहित नारकजीव लब्धिवीर्यवाले होते हुए भी करणवीर्य की अपेक्षा वीर्याभावविशिष्ट ही होते हैं। (से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम! नारक जीव लब्धिवीर्य की अपेक्षा से सवीर्य होने पर भी करणवीर्य की अपेक्षा से तो वे सवीर्य भी होते हैं और वीर्य से रहित भी होते हैं-ऐसा मैंने कहा है। इस तरह नारक जीवों में वीर्यवत्ता का प्रतिपादन करके अब सूत्रकार शेष २३ दण्डकों में इस बात को प्रतिपादन करने के निमित्त कहते हैं कि-(जहा नेरइया एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुया जहा ओहिया जीवा णवर सिद्धवज्जा भाणियव्वा, वाणमंतर-जोतिस-वेमाणिया जहा णेरइया) जिस रूप से नारकविषय में वीर्य के सद्भाव असद्भाव का विचार किया गया है, उसी प्रकार से

લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય છે, પરંતુ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ અવીર્ય છે આ કથન અપર્યાપ્ત અવસ્થાની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું કારણ કે કોઈ પણ જીવને અપર્યાપ્ત અવસ્થામાં ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. તેથી અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયારહિત નારક જીવો લબ્ધિવીર્યવાળા હોવા છતાં કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યરહિત જ હોય છે (से तेणट्ठेणं०) હે ગૌતમ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે નારક જીવો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય હોવા છતાં પણ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય પણ હોય છે અને અવીર્ય પણ હોય છે આ રીતે નારક જીવોમાં વીર્યવત્તાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર બાકીના ૨૩ દંડકોમાં તેનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે કહે છે કે (जहा नेरइया एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुया जहा ओहिया जीवा णवर सिद्धवज्जा भाणियव्वा वाणमंतर-जोतिस-वेमाणिया जहा णेरइया) જેવી રીતે નારકોના વિષયમાં વીર્યના સદ્ભાવ અને અસદ્ભાવનો વિચાર કરવામાં

'लद्धिवीरिएण वि सवीरिया करणवीरिएण वि सवीरिया' लब्धिवीर्येणापि-सवीर्याः करणवीर्येणापि सवीर्याः 'जेसिं णं नेरइया णं' येषां खलु नैरयिकाणाम् 'णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे' नास्ति उत्थानं यावत् पराक्रमः, उत्थानबलवीर्य-पुरुषकारपराक्रमाः येषां न संतीत्यर्थः, 'तेणं नेरइया' ते खलु नैरयिकाः 'लद्धिवीरिएणं सवीरिया' लब्धिवीर्येण सवीर्याः 'करणवीरिएणं अवीरिया' करणवीर्येण अवीर्याः, अपर्याप्तावस्थापेक्षया, उत्थानादिरहिता नारकजीवास्तु लब्धिवीर्येण वीर्यवन्तो भवन्तोऽपि-करणवीर्येण तु अपर्याप्तावस्थामाश्रित्य वीर्या-

---

विशेष का नाम पुरुषकार। निष्पादित स्वविषयवाले का नाम ही पराक्रम है। तात्पर्य इसका यह है कि लब्धिवीर्य आत्मबल की सत्तारूप होता है। सो नारक जीवों में आत्मबल की सत्ता है ही अतः इस आत्मबल की सत्तारूप लब्धिवीर्य उनमें होने से वे इसलब्धिवीर्य की अपेक्षा भी सवीर्य कहलाते हैं। तथा करणवीर्य कोई भी प्रकार की क्रिया करनेवाले आत्मबलरूप होता है सो जिन नारक जीवों का उत्थानादि क्रिया करने में लगा हुआ वह आत्मबल है वे उस करण वीर्य से भी युक्त हैं। और जिनका आत्मबल उत्थानादि क्रिया रहित है वे उस वीर्य से रहित हैं। अतः वे उस वीर्य की अपेक्षा अवीर्य वाले हैं। यही बात सूत्रकार ने (जेसिं णं नेरइयाणं णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे, ते णं णेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया) इस सूत्र-द्वारा प्रदर्शित की है। इसमें उन्होंने यह दर्शाया है कि जिन नारक जीवों का बल उत्थान यावत् पराक्रम करनेरूप क्रिया में नहीं लगा हुआ है-अर्थात् जिनके उत्थानादि क्रियाएँ नहीं हैं वे नारक जीव यद्यपि लब्धि-

---

અને નિષ્પાદિત સ્વવિષયવાળા પુરુષકારનુ નામ જ પરાક્રમ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે લબ્ધિવીર્ય આત્મબળની સત્તારૂપ હોય છે નારકજીવોમાં આત્મબળની સત્તા છે જ તે આત્મબળની સત્તારૂપ લબ્ધિવીર્યનો તેમનામા સદ્ભાવ હોવાથી લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ સવીર્ય કહેવાય છે-તથા કરણવીર્ય કોઇ પણ પ્રકારની ક્રિયા કરનાર આત્મબળ રૂપ હોય છે, તો જે નારકો ઉત્થાન વગેરે ક્રિયા કરવામાં લાગેલા આત્મબળવાળા હોય છે તેઓ તે કરણવીર્યથી સહિત હોય છે અને જેમનું આત્મબળ ઉત્થાનાદિ ક્રિયા રહિત હોય છે તે નારકો કરણવીર્યથી રહિત હોય છે તેથી તે વીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ અવીર્ય કહેવાય છે એજ વાત સૂત્રકારે (जेसिण नेरइयाण णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे, तेण णेरइया लद्धिवीरिएण सवीरिया, करणवीरिएण अवीरिया) આ સૂત્ર મારફત બતાવી છે જે નારક જીવોને ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી તે નારક

यावद्विहरति, हे भदन्त ! जीवानां सामान्यरूपेण विशेषरूपेण च वीर्यविषये यद् भणितं तद् एवमेव-सर्वथैव सत्यमिति-कथयित्वा भगवन्तं नमस्कृत्य वन्दित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयमानो विहरति ॥ सू० ९ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ १-८ ॥

वीर्यचेष्टा आदिका विचार कर लेना चाहिये। (सेवं भंते सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जीवों के वीर्य के विषय में जैसा सामान्यरूप से और विशेषरूप से विचार किया है प्ररूपणा की है-वह सब ऐसा ही है-वैसा ही है अर्थात्-सर्वथा ही सत्य है-ऐसा कह कर वे गौतम स्वामी भगवान् को नमस्कार करके उनकी वंदना करके संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए वहां से अपने स्थान पर आकर बैठ गये।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी
महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या
के प्रथम शतकका आठवां उद्देशक समाप्त ॥ १-८ ॥

(सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भगवन् ! आपे देवानुप्रिये जीवोना वीर्यना विषयमां सामान्यरूपे अने विशेष रूपे जेवी प्ररूपणा करी छे, ते प्रमाणे ज ते सघळुं दृष्टिगत छे जे बात तमने सत्य छे ते प्रमाणे कहीने गौतम स्वामीओ महावीर प्रभुने वंदन नमस्कार कर्या. अने वंदन नमस्कार करीने संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता थकां पोतानी स्थाने जवा बिराजमान थया. जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रनी प्रमेयचन्द्रिकाव्याख्याना पहेला शतकनो आठमो उद्देशक समाप्त ॥ १-८ ॥

तिर्यग्योनिकविषयेऽपि चिन्तनीयम्। यावत्पदेन-द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियाणां ग्रहणम्। 'मणूसा जहा ओहिया जीवा' मनुष्या यथा ओधिका जीवाः, समुच्चयजीवाः, यथा जीव सामान्ये वीर्यवत्त्वादि विचारस्तथा मनुष्यदण्डकेऽपि वीर्यवत्त्वादिविचारः करणीय इति। 'णवरं सिद्धवज्जा भाणियव्वा' नवरं सिद्ध वर्जाः भणितव्याः, औधिकजीवेषु सिद्धानामन्तर्भावो भवति किन्तु मनुष्येषु ते सिद्धा न सन्ति, अतो मनुष्यदण्डके वीर्यविषयकविचारे सिद्धालापको न भणितव्य इति। 'वाणमंतरजोइसवेमाणिया जहा णेरइया' वानव्यन्तरज्योतिषिक वैमानिका यथा-नैरयिकाः, यथा नैरयिकदण्डके वीर्यविचारः कृतस्तथैव वानव्यन्तरादारभ्य वैमानिकपर्यन्तजीवदण्डकेऽपि वीर्यवत्त्वादिविचारः करणीय एवेति। 'सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ' तदेवं भदन्त! तदेवं भदन्त! इति-

---

यावत् पंचेन्द्रियतिर्यंच जीवों के विषय में भी विचार कर लेना चाहिये। यहां "यावत्" उस पद से द्विन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों का ग्रहण किया गया है। मनुष्यदण्डक में भी वीर्यवत्ता आदि का विचार जैसा जीव सामान्य में किया गया है वैसा ही कर लेना चाहिये। परन्तु यहां पर विशेषता इतनी ही है कि यहां पर सिद्धों को छोड़ देना चाहिये। तात्पर्य यह है कि सामान्य जीवों में सिद्धों का अन्तर्भाव हो जाता है, किन्तु मनुष्यों में वे सिद्ध नहीं आते हैं। इसलिये मनुष्यदंडक में वीर्य विषयक विचार करने पर सिद्धालापक नहीं कहना चाहिये। तथा जिस प्रकार से नैरयिक जीवों में वीर्य का विचार किया गया है उसी तरह से वानव्यन्तर से लेकर वैमानिक पर्यन्त जीवदण्डक में भी

આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ સુધીના જીવોનો વિચાર કરવો જોઇએ. અહીં "यावत्" પદ વડે દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને ગ્રહણ કરવા જોઇએ મનુષ્યનાદંડકમા પણ વીર્યવત્તા વિગેરેનો વિચાર જીવ સામાન્યમા કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવો પણ એટલી વિશેષતા છે કે અહીં સિદ્ધ ભગવતોનો સમાવેશ કરવો નહી કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે સામાન્ય જીવોમા સિદ્ધભગવતોનો સમાવેશ થઈ જાય છે, પરન્તુ મનુષ્યોમા સિદ્ધભગવતોનો સમાવેશ કરવો નહી, ને કારણે મનુષ્ય દંડકમા વીર્યવિષયક વિચાર કરતી વખતે સિદ્ધભગવતોની સાથે આલાપકો કહેવા નહીં જેવી રીતે નારક જીવોના વિષયમા વીર્યનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એવી જ રીતે વાણવ્યંતર દેવોથી લઈને વૈમાનિકદેવો સુધીના જીવદંડકમા પણ વીર્યવત્તા વગેરેનો વિચાર કરવો જોઇએ

प्राणातिपातादिकरणेन । एवं प्राणातिपातायभावेन संसारं व्यतिव्रजन्ति । एवं गुरुत्व-लघुत्व-आकुलीकरणपरीतत्व-दीर्घत्व-ह्रस्वत्वपर्यटनव्यतिव्रजनेषु गुरुत्वाकुलीकरणदीर्घत्वपर्यटनरूपाणि चत्वारि अप्रशस्तानि संसारकारणत्वात् लघुत्वपरीतत्व ह्रस्वत्वव्यतिव्रजनानि चत्वारि प्रशस्तानि मोक्षकारणत्वादित्येवंरूपेण प्रशस्ताप्रशस्तयोर्विचार । एवं सप्तमभवकाशान्तर गुरु, लघु, गुरुलघु, अगुरुलघुकं वेति चतुर्भङ्गेन प्रश्नः । नो गुरुकं न वा लघुकं नो गुरुलघुक किन्तु चतुर्थभङ्गेन ' अगुरुलघुक ' मित्याकारकेण । किं सप्तमस्वनुवातो गुरुको वा लघुको वा गुरुलघुको वेति अगुरुलघुकेन चतुर्थभङ्गेन वक्तव्यतविषये प्रश्न । सप्तमस्वनुवातो

सीमित (कम) कर लेता है, इसी तरह से इन प्राणातिपात आदिकों के सेवन से यह अपने संसार को दीर्घ कर लेता है और इनके त्याग से यह संसार अल्प बना लेता है । प्राणातिपात आदि के करने से जीव संसार में बारबार परिभ्रमण करता है । तथा प्राणातिपात आदि के अभाव से जीव संसार से पार हो जाता है । इस प्रकार गुरुत्व, लघुत्व, आकुली करण (संसार को बढाना) परितत्व (संसार को अल्प करना) दीर्घत्व, ह्रस्वत्व, पर्यटन और व्यतिव्रजन इनमें गुरुत्व, आकुलीकरण, (संसार को बढना) दीर्घत्व पर्यटन ये चार संसार के कारण होने से अप्रशस्त हैं । तथा लघुत्व, परीतत्व, ह्रस्वत्व, और व्यतिव्रजन ये चार मोक्षकारण होने से प्रशस्त हैं । इस रूप से प्रशस्त और अप्रशस्त इन दोनों का विचार किया गया है । सातवीं अवकाशान्तर गुरु है, कि लघु है कि गुरु लघु है अथवा अगुरुलघुक है इस प्रकार चार भङ्गों को लेकर प्रश्न किया गया है । तथा न वह गुरु है, न

તિપાત વગેરે પાપોના સેવનથી સંસારમાં રહેવાનો કાળ વધારે છે અને તેમના ત્યાગથી સંસારમાં રહેવાનો કાળ ઘટાડે છે પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવને વારંવાર સંસારમાં પરિભ્રમણ કરવું પડે છે પણ તેમના ત્યાગથી જીવ સંસાર સાગર તરી જાય છે આ રીતે ગુરુત્વ, લઘુત્વ આકુલીકરણ (સંસાર વધારવો) પરીતત્વ (સંસાર ઘટાડવો) દીર્ઘત્વ, હ્રસ્વત્વ, પર્યટન અને વ્યતિવ્રજન, તેમના ગુરુત્વ, આકુલીકરણ (સંસાર વધારવો) દીર્ઘત્વ અને પર્યટન, એ ચાર સંસારના કારણરૂપ હોવાથી અપ્રશસ્ત છે તથા લઘુત્વ, પરીતત્વ, હ્રસ્વત્વ અને વ્યતિવ્રજન, એ ચાર મોક્ષના કારણરૂપ હોવાથી પ્રશસ્ત છે આ રીતે પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્ત, એ બન્નેનો વિચાર કર્યો છે પ્રશ્ન—સાતમું અવકાશાન્તર ગુરુ છે લઘુ છે ગુરુલઘુ છે કે અગુરુલઘુ છે ? આ પ્રકારનો ચાર ભાંગાઓને અનુલક્ષીને—પ્રશ્ન પૂછ્યો છે તે લઘુ નથી, ગુરુ નથી, ગુરુ

अथ नवमोद्देशकः--

तदिह नवमोद्देशके संक्षेपतो विचारणीया इमे विषयाः, तथाहि-जीवानां गुरुत्वं केन कारणेन भवतीति गुरुत्वविषये प्रश्नः। प्राणातिपात-मृषावादादत्तादान-मैथुनपरिग्रहक्रोधमानमायालोभ-रागद्वेषकलहाभ्याख्यान-पैशुन्यपरपरिवाद-रतिअरति-मायामृषामिथ्यादर्शनशल्यकारणैर्जीवानां गुरुत्वं कर्मभारेण भवतीत्युत्तरम्। एवं जीवानां लघुत्वं केन कारणेन भवतीति प्रश्नः। प्राणातिपाताद्यारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यविरमणेन पापभारापगमात् लघुत्वं जीवानां भवतीत्युत्तरम्। प्राणातिपातादिकरणेन जीवाः संसारं वर्द्धयन्ति तथा प्राणातिपातादिविरमणेन जीवाः संसारं परीतीकुर्वन्ति एवं दीर्घीकुर्वन्ति ह्रस्वीकुर्वन्ति। संसारमनुपरिवर्तन्ते

नवम प्रदेशक प्रारंभ—

इस नौवें उद्देशक में जो विषय विचार ने में आये हैं वे इस प्रकार है-जीवों में गुरुता किस कारण से होती है इस प्रकार से गुरुत्व के विषय में प्रश्न हुआ है और इस का उत्तर-प्राणातिपात, मृषावाद अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवादअरनि, रनि, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन शल्य, इन कारणोंको लेकर बंधते हुए कर्मके भारसे जीवोंमें गुरुता होती है ऐसा कहा गया है। जीवों में लघुता किस कारण से होती है ? ऐसा प्रश्न-उत्तर-प्राणातिपात आदि से लेकर मिथ्यादर्शन शल्य तक अठारह प्रकार के पाप स्थानों का विरमण (त्याग) करने से उनमें लघुता आ जाती है। प्राणातिपात आदि के करने से जीव संसार को बढ़ाता है, तथा प्राणातिपात आदि के विरमण से-त्याग से जीव संसार को

નવમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ ઉદ્દેશકમાં જે વિષયોનું નિરૂપણ કર્યું છે તેનો અહિં સક્ષેપમાં વિચાર કરવામા આવે છે-જીવોમા કયા કારણોને લીધે ગુરુતા હોય છે ? એ પ્રશ્ન અને તેનો આ પ્રમાણે ઉત્તર-પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન મૈથુન, પરિગ્રહ, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યાખ્યાન, પૈશુન્ય, પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ, માયા, મૃષા અને મિથ્યાદર્શનશલ્ય એ કારણોને લીધે બધાતા કર્મના ભારથી જીવોમા ગુરુતા હોય છે. જીવોમાં કયા કારણોને લીધે લઘુતા હોય છે ? એવો પ્રશ્ન-ઉત્તર-પ્રાણાતિપાતથી લઇને મિથ્યાદર્શન સુધીના ૧૮ પ્રકારના પાપસ્થાનોનો ત્યાગ કરવાથી જીવોમા લઘુતા આવે છે પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવ સસાર વધારે છે, અને પ્રાણાતિપાત વગેરે ના વિરમણથી જીવ સસારને સીમિત કરે છે-ઘટાડે છે. આ રીતે જીવ પ્રાણા

लघुत्वं अगुरुलघुत्वमिति प्रश्नः । वैक्रियतैजसशरीरापेक्षया नो गुरुत्वं न वा लघुत्वम् किन्तु गुरुलघुत्वम्-न वा अगुरुलघुत्वम् । जीवं कार्मणशरीरं चाश्रित्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुलघुकाः किन्तु अगुरुलघुका इत्युत्तरम् । पुद्गलास्तिकायः किं गुरुकः किं वा लघुकः किं वा गुरुलघुकः अगुरुलघुको वेति पुद्गलास्तिकायानां गुरुत्वलघुत्वविषयकः प्रश्नः । नो गुरुको न वा लघुकः किन्तु गुरुलघुकोपि पुद्गलास्तिकायः । अगुरुलघुकोऽपि पुद्गलास्तिकाय इत्युत्तरम् । केन कारणेन न गुरुत्वं न लघुत्वं किन्तु गुरुलघुत्वमपि अगुरुलघुत्वमपीति भवति । गुरु

भी होते हैं और अगुरुलघु भी होते हैं ऐसा उत्तर दिया गया है । किस कारण से नारकजीवों में न गुरुता होती है अथवा न लघुता होती है किन्तु गुरुलघुता और अगुरुलघुता होती है ऐसा प्रश्न किया गया है । और इसका उत्तर-वैक्रिय शरीर, तैजसशरीर की, अपेक्षा से उनमें न गुरुता होती है, न लघुता होती है और न अगुरुलघुता होती है किन्तु गुरुलघुता होती है । तथा जीव और कार्मण शरीर को आश्रित करके वे न गुरु होते हैं, न लघु होते हैं, न गुरुलघु होते हैं किन्तु अगुरुलघुक होते हैं ऐसा उत्तर दिया गया है । पुद्गलास्तिकाय गुरु होता है, अथवा क्या लघु होता है ? अथवा क्या गुरुलघु दोनों प्रकार का होता है या अगुरुलघु दोनों प्रकार का नहीं-होता है ? ऐसा प्रश्न किया गया है । इसका उत्तर-न वह गुरु होता है, न वह लघु होता है किन्तु वह गुरु लघु भी होता है और अगुरुलघु भी होता है । किस कारण से वह गुरु नहीं होता है, लघु नहीं होता है किन्तु गुरुलघु भी होता है और अगु

લઘુ હોય છે પ્રશ્ન-નારકોમાં શું કારણે ગુરુતા અથવા લઘુતા હોતી નથી, પણ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા હોય છે ?

ઉત્તર—વૈક્રિય શરીર અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં ગુરુતા હોતી નથી, લઘુતા હોતી નથી અને અગુરુલઘુતા પણ હોતી નથી પરન્તુ ગુરુલઘુતા જ હોય છે તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ ગુરુ હોતા નથી, લઘુ હોતા નથી, ગુરુલઘુ પણ હોતા નથી, પરન્તુ અગુરુલઘુ જ હોય છે પુદ્ગલાસ્તિકાય શું ગુરુ હોય છે લઘુ હોય છે, ગુરુલઘુ હોય છે કે અગુરુલઘુ હોય છે ? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે

ઉત્તર—પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતુ નથી, લઘુ હોતુ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ હોય છે

પ્રશ્ન—શા કારણે પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતુ નથી, લઘુ હોતુ નથી, પણ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ હોય છે ?

न गुरुको न वा लघुकः किन्तु गुरुलघुको न वा अगुरुलघुक इत्येवं रूपेण तृतीय भंगेनोत्तरम् एवं सप्तमावकाशान्तरवत् घनवातसप्तमघनोदधिसप्तमपृथिवीद्वीप-सागरवर्षाण्यपि विज्ञेयानि इत्यतिदेशेन घनवातादिषु गुरुत्वलघुत्वादिविचारः। नैरयिकाः किं गुरवो वा लघवो वा गुरुलघवो वेति नारके गुरुत्वलघुत्वादि विषयः प्रश्नः। नैरयिकाः न गुरवः न वा लघवः किन्तु गुरुलघुका अपि अगुरु-लघुका अपीत्युत्तरम्। केन कारणेन नारकाणां न गुरुत्वं न लघुत्वं किन्तु गुरु-

---

वह लघु है न वह गुरुलघु है किन्तु अगुरुलघुक है इस तरह से चौथे भंग को लेकर उत्तर दिया गया हैं। क्या सातवां तनुवात गुरुक है? अथवा लघुक है? अथवा गुरुलघुक है? इस प्रकार भङ्गचतुष्टय को लेकर तनुवात के विषय में प्रश्न किया गया हैं तथा सप्तम तनुवात न गुरुक हैं, न लघुक है, न अगुरूलघुक है किन्तु गुरुलघुक है इस तरह तीसरे भंग को लेकर उत्तर दिया गया है। सप्तम अवकाशान्तर की तरह घनवात, सप्तम घनोदधि, सप्तम पृथिवी, द्वीप, सागर वर्ष क्षेत्र ये भी जानना चाहिये इस तरह अतिदेश से घनवात आदिकों में गुरुत्व लघुत्व आदि का विचार किया गया है। नैरयिक जीव क्या गुरु होते हैं? अथवा लघु होते हैं अथवा गुरुलघु दोनों प्रकार के होते हैं अथवा अगुरुलघु होते हैं? इस तरह से नारक के विषय में गुरुलघुत्व आदि विषयक प्रश्न हुआ है। नैरयिक जीव न गुरु होते हैं, न लघु होते हैं, किन्तु गुरुलघु

લઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુ છે, એ પ્રકારનો ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કરતો ઉત્તર આપ્યો છે પ્રશ્ન–શું સાતમુ તનુવાત ગુરુ છે? કે લઘુ છે? અથવા ગુરુલઘુ છે? અથવા અગુરુલઘુ છે? આ પ્રમાણે ચાર ભાંગાની અપેક્ષાએ તનુ વાતના વિષયમાં પણ પ્રશ્ન પૂછ્યા છે

ઉત્તર—સાતમુ તનુવાત ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે આ રીતે ત્રીજા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે. સાતમા અવ-કાશાન્તર પ્રમાણે જ ઘનવાત, સાતમું ઘનોદધિ, સાતમી પૃથ્વી, દ્વીપ, સાગર અને વર્ષક્ષેત્રના વિષયમા પણ સમજવુ, આ રીતે અતિદેશથી ઘનવાત વગેરે મા ગુરુત્વ, લઘુત્વ વગેરેનો વિચાર કરવામા આવ્યો છે નૈરયિક જીવ શું ગુરુ હોય છે? અથવા લઘુ હોય છે? અથવા ગુરુલઘુ હોય છે? અથવા અગુરુ લઘુ હોય છે? આ રીતે નારકોના વિષયમાં પણ ગુરુતત્વ લઘુત્વ વગેરે, વિષ-યક પ્રશ્નો પૂછ્યા છે અને તેને આ પ્રમાણે ઉત્તર આપ્યો છે–નારક જીવો ગુરુ હોતા નથી, લઘુ પણ હોતા નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુ-

न वा लघुका न वा अगुरुलघुका किन्तु गुरुलघुकेति तृतीयभङ्गेनोच्चरन् । तथा भावलेश्यां प्रतीत्य चतुर्थपदेनागुरुलघुकरूपेण समाधानम्, एवमतिदेशेन नीलकापोततेजःपद्मशुक्ललेश्यास्वपि गुरुत्वलघुत्वादिकथनम् । दृष्टिदर्शनज्ञानाज्ञानसंज्ञासु चतुर्थपदेन गुरुत्वलघुत्वादीनां स्वीकारः । दृष्टयादयो न गुरुका न वा लघुका अपि तु अगुरुलघुका इति । अथ तत्रानि चत्वारि शरीराणि औदारिकवैक्रियाहारकतैजसानि तृतीयपदेन गुरुलघुकरूपेण नेतव्यानीति शरीरगुरुलघुत्वमीमांसा । कार्मणशरीरे चतुर्थपदेन अगुरुलघुकेन स्वीकारः, मनोयोग वाग्योगौ

गया है कि द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से वह न गुरुक होती है, न लघुक होती है, और न अगुरुलघुक होती है किन्तु वह गुरुलघुक होती है। तथा भावलेश्या की अपेक्षा से वह अगुरुलघुक होती है। इसी प्रकार अतिदेश से नील, कापोत, तेजः, पद्म और शुक्ल इन लेश्याओं में भी गुरुत्व लघुत्व आदि का कथन कर लेना चाहिये। दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान और संज्ञा इनमें चतुर्थ भंग को लेकर अगुरुलघुत्व को स्वीकृत किया गया है। दृष्टयादिक न गुरुक हैं, न लघुक हैं, और न गुरुलघुक भी हैं किन्तु अगुरुलघुक हैं। औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजस ये चार शरीर न गुरुक है, न लघुक हैं और न अगुरुलघुक हैं किन्तु तृतीयभंग जो गुरुलघुक है उस स्वरूप हैं। इस तरह चार शरीर संबंधी गुरुलघुत्व का विचार हुआ है। कार्मण शरीर जो कि पांचवां शरीर है उसमें अगुरुलघुत्व माना गया है। मनोयोग और वचनयोग इन

ઉત્તર- દ્રવ્ય લેશ્યાની અપેક્ષાએ તે ગુરુ હોતી નથી, લઘુ પણ હોતી નથી, અગુરુલઘુ પણ હોતી નથી પરન્તુ તે ગુરુલઘુ જ હોય છે તથા ભાવ લેશ્યાની અપેક્ષાએ તે અગુરુલઘુ જ હોય છે એજ પ્રમાણે અતિદેશથી નીલ, કાપોત, તેજ, પદ્મ, અને શુકલ લેશ્યાઓમા પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરેનુ કથન કરવુ જોઈએ. દૃષ્ટિ દર્શન, જ્ઞાન અજ્ઞાન, અને સંજ્ઞામાં ચોથા ભાંગાની અપેક્ષાએ અગુરુલઘુત્વનો સ્વીકાર કરાયો છે દૃષ્ટિ વગેરે ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, ગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ અગુરુલઘુ જ છે એમ અભ્યાસમાં આવ્યુ છે ઔદારિક વૈક્રિય આહારક અને તૈજસ, એ ચાર શરીર ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ જ છે આ રીતે ત્યા ત્રીજા ભાંગાનો જ સ્વીકાર કર્યો છે પાચમાં પ્રકારના કાર્મણ શરીરમાં અગુરુલઘુત્વ છે આ રીતે કાર્મણ શરીરના વિષયમાં ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે મનયોગ તથા વચનયોગને અગુરુલઘુ માનવામા આવેલ છે મનયોગ

लघुकद्रव्यापेक्षया नो गुरुत्वं नो लघुत्वं न वा अगुरुलघुत्वं किन्तु गुरुलघुकत्वमिति तृतीयभंगेन समाधानम्। अगुरुलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको न वा गुरुलघुकः किन्तु अगुरुलघुक इति चतुर्थभंगेनोत्तरम्। एवं समयेषु कर्मसु च गुरुत्वादिविषयप्रश्नः। अगुरुलघुकमिति चतुर्थभङ्गेन समाधानम्। एवं कृष्णलेश्या गुरुका लघुका अगुरुलघुका वेति कृष्णलेश्या विषयकः प्रश्नः नो गुरुका नो लघुका किन्तु गुरुलघुका अपि अगुरुलघुका अपि इति समाधानम्। कथमेकैव कृष्णलेश्या गुरुलघुकापि अगुरुलघुकापीति प्रश्नः। द्रव्यलेश्या पेक्षया नो गुरुका

रुलघु भी होता है ऐसा प्रश्न किया गया है–और इसका उत्तर–गुरुलघु द्रव्यों की अपेक्षा से उसमें गुरुता नहीं है, न लघुता है, और न अगुरुलघुता है किन्तु गुरुलघुता है इस तृतीय भंग से दिया गया में। अगुरुलघुक द्रव्यों की अपेक्षा लेकर के वह पुद्गलास्तिकाय न गुरु हैं, न लघु है, और न गुरुलघु दोनों प्रकार का है किन्तु वह अगुरुलघु है इस प्रकार से चौथे भंग को लेकर उत्तर दिया गया है। इस प्रकार से समयों में और कर्मों में गुरुत्वादिविषयक प्रश्न हुआ है। और उसका समाधान चतुर्थभंग को लेकर किया गया है। इसी तरह से कृष्णलेश्या क्यागुरु है अथवा लघु है अथवा गुरुलघु है अथवा अगुरुलघु है ऐसा प्रश्न कृष्णलेश्या के विषय में किया गया है। वह न गुरु है, न लघु है, किन्तु वह गुरुलघु भी है और अगुरु लघु भी है ऐसा इस प्रश्न का समाधान दिया गया है। फिर प्रश्न किया गया कि एक ही कृष्णलेश्या गुरुलघु भी और अगुरुलघु भी कैसे होती है–तो इसका समाधान यों किया

ઉત્તર—ગુરુલઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તેમાં ગુરુતા પણ નથી, લઘુતા પણ નથી, અગુરુલઘુતા પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુતા જ છે. આ રીતે ત્રીજા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો છે અગુરુલઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં ગુરુતા નથી, લઘુતા પણ નથી, ગુરુલઘુતા પણ નથી, પરન્તુ અગુરુલઘુતા જ છે. આ રીતે અહીં ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે. એજ પ્રમાણે સમયોમાં અને કર્મોમાં ગુરુત્વાદિ વિષયક પ્રશ્નો પૂછ્યાછે અને ચોથા ભાગાની અપેક્ષાએ તે પ્રશ્નોનું સમાધાન થયું છે. એ જ પ્રમાણે કૃષ્ણલેશ્યાના વિષયમા પણ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે કે-"શું કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ છે, અથવા લઘુ છે, અથવા ગુરુ લઘુ ને અથવા અગુરુલઘુ છે?

ઉત્તર—તે ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે.

પ્રશ્ન—કૃષ્ણલેશ્યા કેવી રીતે ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે?

पश्चात्तेनैव कालं कुर्वन् सिद्ध्यति बुध्यते मुच्यते परिनिर्वाति सर्वदुःखानामन्तं करोतीति सिद्धान्तमरूपणेन निर्ग्रन्थविषये विचारः। एको जीव एकस्मिन् समये आयुष्कद्वयं करोतीति परतीर्थिकाः कथयन्ति तत् सत्यमसत्यं वेति प्रश्नः। परतीर्थिकानां मतमसत्यम् तत् नैको जीव एकसमये आयुष्कद्वयं करोति, किन्तु एको जीव एकदा एकमेवायुष्कं करोतीति सर्वज्ञमत-प्रतिपादनम्। कालास्यवेषिकपुत्रानगारस्थविरयोः प्रश्नोत्तरम्। सामायिकादेः

गया है। तथा पहिले पशुत मोह वाला भी पश्चात् उस मोह का त्याग कर संवृत हुआ श्रमण मरकर क्या सिद्ध होता है? बुद्ध होता है? समस्त दुःखों से छूट जाता है? बिलकुल शांत हो जाता है, सर्वदुःखों का यह अन्त कर देता है? ऐसे प्रश्नका भी उत्तर हां के ही रूपमें दिया गया है। इस तरह सिद्धान्तकी मरूपणा करते हुए सूत्रकारने निर्ग्रन्थके विषयमें विचार प्रस्तुत किया है। एक जीव एकसमयमें दो आयुका बंध करता है ऐसा अन्य मत वाले कहते हैं—सो उनका यह मत सत्य है कि असत्य है ऐसा प्रश्न किया गया है और इसके समाधान में ऐसा कहा गया है कि परतीर्थिकों का यह मन्तव्य असत्य है। क्यों कि एक जीव एक समय में एक ही आयुकर्म का बंध करता है दो का नहीं। ऐसा ही सर्वज्ञ का शासन है। इस तरह के इस कथन से सर्वज्ञ प्रभु का इस विषय में क्या मत है यह प्रतिपादित किया गया है। कालास्यवेषिक पुत्र अनगार और स्थविर इन दोनों के प्रश्नोत्तर का कथन

પ્રશ્ન—પહેલાં બહુ જ મોહવાળો જીવ પાછળથી મોહનો ત્યાગ કરીને સંવૃત બનેલો શ્રમણ શું મરીને સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરે છે? બુદ્ધ થાય છે? બધા દુઃખોથી મુક્ત થાય છે? બિલકુલ ઉપશાન્ત બની જાય છે? અને શું તે તમામ દુઃખોનો અન્ત લાવી દે છે? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર પણ હોકારમાં જ આપ્યો છે

આ રીતે સિદ્ધાંતની પ્રરૂપણા કરતાં સૂત્રકારે નિર્ગ્રન્થના વિષયમાં પણ વિચારની રજુઆત કરી છે અન્ય મતવાળા જીવ કહે છે કે જીવ એક જીવ એક સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે, તો તેમનું તે કથન સત્ય છે કે અસત્ય છે?

ઉત્તર—પરતીર્થિકોનું તે કથન અસત્ય છે, કારણ કે જીવ એક જીવ એક સમયે બેજ જ આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે એનો નહીં. એવો સર્વજ્ઞ પ્રભુનો સિદ્ધાંત છે આ પ્રકારના કથનથી સર્વજ્ઞ પ્રભુનો આ વિષયમાં જે મત છે તેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કાલાસ્યવેષિક પુત્ર-અણગાર અને સ્થવિર મુનિવરો બે જનોના પ્રશ્નોત્તરોનું કથન થયું છે સામાયિક વગેરેનું કેવું સ્વરૂપ છે? અને તેને

चतुर्थपदेन नेतव्यौ। काययोगस्तृतीयपदेन विज्ञेयः। साकारानाकारोपयोगौ चतुर्थपदेन ज्ञातव्यौ। सर्वद्रव्य सर्वप्रदेश सर्वपर्यवाः पुद्गलास्तिकायवत् तृतीयपदेन स्वीकरणीयाः। अतीतानागतसर्वाद्धा चतुर्थपदेन विज्ञातव्या। लघुत्वाल्पेच्छत्वाऽमूर्च्छत्वाऽनासक्तत्वाऽप्रतिबद्धत्वं श्रमणानां किं प्रशस्तमिति प्रश्नः। लघुत्वादिकं सर्वं श्रमणानां प्रशस्तमित्युत्तरम्। अक्रोधत्वममानत्वममायत्वमलोभत्वं श्रमणानां प्रशस्तं किमिति प्रश्नः। अक्रोधत्वादिकं सर्वमेव प्रशस्तमित्युत्तरम्। कांक्षादोषरहितः श्रमणोऽन्तकरो भवति नवेति प्रश्नः। बहुमोहोऽपि पूर्वं विहृत्य अथ

दोनों को अगुरुलघुक माना गया है। काययोग को गुरुलघुक माना गया है। साकार उपयोग अनाकार उपयोग इन दोनों को अगुरुलघुक माना गया है। सर्व द्रव्य, सर्वप्रदेश, समस्त पर्यायें पुद्गलास्तिकाय की तरह गुरुलघुकपद से युक्त माने गये हैं। अतीतकाल, अनागतकाल, और सर्वाद्धा ये सब चतुर्थपद से अर्थात्-अगुरुलघुक से युक्त स्वीकार किये गये हैं। लघुत्व, अल्पेच्छत्व, अमूर्च्छत्व, अनासक्तत्व, अप्रतिबद्धत्व ये सब श्रमणजनों को क्या प्रशस्त हैं ऐसा प्रश्न हुआ है। और इसका उत्तर-ये सब लघुत्वादिक श्रमणजनों को प्रशस्त हैं ऐसा दिया गया है। अक्रोधत्व, अमानत्व, अमायत्व, अलोभत्व, ये सब श्रमणजनों को प्रशस्त हैं क्या? ऐसा प्रश्न इसका उत्तर-ये सब अक्रोधत्वादिक श्रमण जनों को प्रशस्त है ऐसा उत्तर इस प्रश्न का दिया गया है। कांक्षा दोषरहित श्रमण क्या अन्तकर (दुःख के अत करने वाले) होता है या नहीं होता है? ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर हां में दिया

ગને ગુરુલઘુ માનેલ છે સાકાર ઉપયોગ અને નિરાકાર ઉપયોગને અગુરુલઘુ માનવામાં આવેલ છે સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ અને સર્વપર્યાયોને પુદ્ગલાસ્તિકાય પ્રમાણે જ ગુરુલઘુ માનવામા આવેલ છે અતીતકાળ (ભૂતકાળ) અનાગતકાળ (ભવિષ્યકાળ) અને સર્વાદ્ધા (વર્તમાનકાળ) એ ત્રણે ને અગુરુલઘુ જ કહ્યા છે

પ્રશ્ન--શું લઘુત્વ, અલ્પેચ્છત્વ, અમૂર્ચ્છત્વ, અનાસક્તત્વ અને અપ્રતિબદ્ધત્વ શ્રમણોને (સાધુઓને) માટે પ્રશસ્ત ગણાય છે?

ઉત્તર—હા, લઘુત્વ વગેરે તમામ ગુણો શ્રમણોને માટે પ્રશસ્ત છે.

પ્રશ્ન—અક્રોધત્વ, અમાનત્વ, અલોભત્વ, એ સઘળા ગુણો શું શ્રમણો માટે પ્રશસ્ત ગણાય છે?

ઉત્તર—હા, અક્રોધત્વ વગેરે તમામ ગુણો શ્રમણો માટે પ્રશસ્ત છે.

પ્રશ્ન—કાક્ષા દોષરહિત શ્રમણ શુ અન્તકર (દુ ખનો અન્ત કરનારો) હોય છે કે નથી હોતો? તે પ્રશ્નનો ઉત્તર હકારમા આપ્યો છે.

तुल्या विषमा वेति प्रश्नः, सर्वेषामप्यप्रत्याख्यानक्रियेत्युत्तरम् । तत्र किं कारणमिति प्रश्नः, इच्छानिवृत्त्यभावरूपाया अविरतेः सर्वेषु समानत्वात् तुल्येन सा अप्रत्याख्यानक्रियेत्युत्तरम्, आधाकर्मिकाहारं भुञ्जानस्य श्रमणस्य कर्मबन्धो भवति नवेति प्रश्नः । भवतीत्युत्तरम् । तत्कारणप्रदर्शने च । प्रासुकाहारं भुञ्जानः श्रमणः कर्मबन्धनं करोति नवेति प्रश्नः । नैवेत्युत्तरम् । तत्र कारणप्रदर्शनम् । अस्थिरादि विषयोत्तरम् । उद्देशकपरिसमाप्तिः । इति नवमोद्देशकस्य निर्देशः ॥

अष्टमोद्देशकं निरूप्य नवमोद्देशकं निरूपयति, तदनयोरेवं संबन्धः, अष्टमोद्देशकस्यान्ते वीर्यस्य विचारः कृतः, वीर्येण खलु जीवा गुरुत्वादिकमासादयन्तीति

है कि विषम होती है ? प्रश्न-उत्तर-इन सब की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है । इसमें क्या कारण है ? प्रश्न, उत्तर-सब में इच्छा निवृत्ति की अभावरूप अविरति समान ही है इस कारण वह अप्रत्याख्यानक्रिया भी सब की समान ही है । आधाकर्मिक आहार को अपने उपयोग में लाने वाले श्रमण के कर्मबंध होता है कि नहीं होता है ? प्रश्न, उत्तर-हां होता है । इस कारण का दिखाना । प्रासुक आहार को करने वाला श्रमण कर्मबंध करता है ? कि नहीं करता ? प्रश्न, उत्तर -नहीं करता है । इसमें क्या कारण है-यह समझाना । अस्थिर आदि के विषय में प्रश्न और उत्तर । उद्देशक की संक्षिप्तविषय समाप्ति ।

अब सूत्रकार अष्टम उद्देशक का निरूपण करके नवमें उद्देशक का निरूपण करते हैं । इन दोनों का आपस में इस प्रकार से संबंध है-

---

પ્રશ્ન—એવી રીતે દુષ્ટ અને શ્રાવક, એ બેની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે કે જુદી જુદી હોય છે ?

ઉત્તર—એ બેની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ હોય છે

પ્રશ્ન—તેનું કારણ શું છે ? ઉત્તર—તે બેમાં ઇચ્છાનિવૃત્તિના અભાવરૂપ અવિરતિ સમાન જ હોય છે તેથી તે બેની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા પણ સમાનજ હોય છે પ્રશ્ન-આધાકર્મિક આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લેનારો શ્રમણ કર્મબંધ બાંધે છે કે નથી બાંધતો ?

ઉત્તર—હા કર્મબંધ બાંધે છે તેના કારણનું પ્રદર્શન

પ્રશ્ન—પ્રાસુક આહાર લેનાર શ્રમણ કર્મબંધ બાંધે છે કે નથી બાંધતો ?

ઉત્તર—તે કર્મબંધ બાંધતો નથી, તેના કારણનું પ્રદર્શન અસ્થિર વગેરે બાબતોમાં પ્રશ્ન અને ઉત્તર ઉદ્દેશકના સંક્ષિપ્ત વિષય નિરૂપણની સમાપ્તિ

આઠમાં ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર નવમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે આઠમા અને નવમા ઉદ્દેશકનો પરસ્પર સંબંધ આ પ્રમાણે છે-

किं स्वरूपं किं च प्रयोजनमिति प्रश्नः। आत्मस्वरूपमेव सामायिकमात्मैव-सामायिकस्यार्थ इत्युत्तरम्। यदि भवन्मते आत्मैव सामायिकादेरर्थस्तदा किमर्थं क्रोधादीनां गर्हणमिति प्रश्नः, संयमार्थं क्रोधादीनां गर्हणमित्युत्तरम्। गर्हासंयमो ऽगर्हा वेति प्रश्नः। गर्हा संयमो नो अगर्हासंयम इत्युत्तरम्। एवं रूपेण भगवन्मुखात्सामायिकादीनां स्वरूपादिकं ज्ञात्वा संबुद्धः, कालास्यवेषिकपुत्रश्चतुर्महाव्रतिकं धर्मं परित्यज्य सप्रतिक्रमणं पंचमहाव्रतिकं धर्मं स्वीकृत्य विहरन् कालेन सिद्धः सर्वदुःखप्रहीणो जात इति। श्रेष्ठिदरिद्रकृपणराज्ञामप्रत्याख्यानक्रिया

किया है। सामायिक आदि का क्या स्वरूप है और उसका क्या प्रयोजन है–ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर "सामायिक है और आत्माही सामायिक का अर्थ है" इस रूप से दिया गया है। यदि आप के मत में सामायिक आदि का अर्थ आत्मा है तो फिर क्रोधादिकों की गर्हा किस लिये की गई है? ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर "संयम के निर्वाह के लिये क्रोधादिकों की गर्हा की गई है" ऐसा दिया गया है। गर्हा संयम है कि अगर्हा संयम? प्रश्न, उत्तर--गर्हा संयम है, अगर्हा संयम नहीं है। इस तरह से भगवान् के मुख से सामायिक आदिकों का स्वरूपादिक जानकर संबुद्ध हुए कालस्य वेषिक पुत्रने चार महाव्रतरूप धर्म को छोड़कर प्रतिक्रमण सहित पांच महाव्रतसंपन्न धर्म को स्वीकार कर विचरने लगे। अन्त में सर्वदुःखों रहित हो गये–अर्थात् मोक्ष में जाकर विराजमान हो गये। श्रेष्ठी,दरिद्र, कृपण और राजा इन सबकी अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती

શું પ્રયોજન છે? એવો પ્રશ્ન. ઉત્તર–"આત્મા જ સામાયિક છે અને આત્માજ સામાયિકનો અર્થ છે" જો અપના મતાનુસાર સામાયિક વગેરેનો અર્થ આત્મા છે, તો ક્રોધાદિકોની ગર્હા (નિંદા) શા માટે કરવામાં આવી છે? એવો પ્રશ્ન કર્યો છે અને તેનો એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે "સયમના નિર્વાહને માટે ક્રોધાદિકની ગર્હા કરવામાં આવી છે." પ્રશ્ન–ગર્હા સંયમ છે કે અગર્હા સયમ છે?

ઉત્તર—ગર્હા સયમ છે, અગર્હા સંયમ નથી આ પ્રમાણે ભગવાનને મુખેથી સામાયિક વગેરેનુ સ્વરૂપ સમજીને બોધ પામેલ કાલસ્યવેષિકપુત્ર અણગાર ચાર મહાવ્રતરૂપ ધર્મને છોડીને પ્રતિક્રમણ સહિત પાચ મહાવ્રતયુક્ત ધર્મનો સ્વીકાર કરીને વિચરવા લાગ્યા, અને અન્તે તેઓ સર્વ દુ:ખોથી રહિત થઈ ગયા, એટલે કે મોક્ષે સિધાવ્યા.

छाया-कथं खलु भदन्त ! जीवा गुरुकत्वं शीघ्रमागच्छन्ति, प्राणातिपातेन मृषावादेन अदत्तादानेन मैथुनेन परिग्रहेण क्रोधमानमायालोभप्रेमद्वेषकलहाभ्याख्यानपैशून्यपरपरिवादारतिरति मायामृषामिथ्यादर्शनशल्येन, एवं खलु गौतम ! जीवा गुरुकत्वं शीघ्रमागच्छन्ति । कथं खलु भदन्त ! जीवा लघुकत्वं शीघ्रमागच्छन्ति, गौतम ! प्राणातिपातविरमणेन यावन्मिथ्यादर्शनशल्यविरमणेन, एवं खलु गौतम ! जीवा लघुकत्वं शीघ्रमागच्छन्ति । एवं संसारमाकुलीकुर्वन्ति, एवं परीतीकुर्वन्ति, एवं दीर्घीकुर्वन्ति । एवं ह्रस्वीकुर्वन्ति । एवमनुपर्यटन्ति । एवं व्यतिव्रजन्ति । प्रशस्तानि चत्वारि, अप्रशस्तानि चत्वारि ॥ सू० १ ॥

टीका-' कहण्णं भंते ' कथं खलु भदन्त ! ' जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति ' जीवा गुरुत्वं शीघ्रमागच्छन्ति, हे भदन्त ! हे भगवन् ! जीवाः केन प्रकारेण गुरुत्वं प्राप्नुवन्तीत्यर्थः । 'हव्व' इति देशीयशब्दो वाक्यालङ्कारे शीघ्रार्थे वा । एवं सर्वत्र विशेषम् । गुरुत्वम् ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मोपचयस्वरूपम् तद् गुरुकमिव गुरुकम् अधोगति गमनकारणत्वात् । जीवस्य गुरुत्वकरणे किं कारणमिति पृच्छति । उत्तरयति भगवान् -' गोयमे ' त्यादि । ' गोयमा ! ' हे गौतम ! ' पाणाइवाएणं ' प्राणातिपातेन, प्राणिनां=जीवानामतिपातो वधः इति प्राणातिपातस्तेन गुरुकत्वमासादयन्तीति १ । तथा ' मुसावाएणं ' मृषावादेन, सतोऽपलापोऽसतश्च प्ररूपणं मृषावादस्तेन २ । ' अदिण्णादाणेणं ' अदत्तादानेन, अदत्त=देवगुरुजनैरननुज्ञात, तस्य आदानं=ग्रहणम् =अदत्तादान, तेन ३ । 'मेहुणेणं ' मैथुनेन, मिथुनस्य=स्त्रीपुंसरूपस्य कर्म मैथुनं =कुशीलसेवन, तेन ४ । 'परिग्गहेणं ' परिग्रहेण-परिग्रहः=स्वस्वामिभावेन मूर्छा तेन धर्मोपकरणव्यतिरिक्तवस्तुग्रहणरूपेण ५ । 'कोहमाणमायालोभपेज्जदोसकल-

---

टीकार्थ—(भंते !) हे भदन्त ! (जीवा) जीव (गुरुयत्तं) गुरुत्व को (कहण्णं) किस तरह से (हव्वं आगच्छंति) पाते हैं ? " हव्व " यह देशीशब्द है और वाक्यालंकार में प्रयुक्त हुआ है । इसी तरह से सर्वत्र जानना चाहिये । (गोयमा) हे गौतम ! (पाणाइवाएणं मुसावाएणं अदिण्णादाणेणं, मेहुणेणं, परिग्गहेणं) प्राणातिपात से, अदत्तादान से, मैथुन से परिग्रह से, (कोहमाणमायालोभपेज्ज दोसकल

ટીકાર્થ—ભંતે ! હે ભગવન્ ! (જીવા) જીવો (गुरुयत्तं) ગુરુત્વને (कहण्णं) કેવી રીતે (हव्वं आगच्छंति) પામે છે ? " हव्व " દેશી શબ્દ છે અને તે વાક્યાલંકારમાં વપરાયો છે. આ પ્રમાણે જ સર્વત્ર સમજવું જોઈએ. (गोयमा) હે ગૌતમ ! (पाणाइवाएणं मुसावाएणं अदिण्णादाणेणं मेहुणेणं परिग्गहेणं) તે જીવો પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન પરિગ્રહ, (कोहमाणमायालोभेण

वीर्यकार्यस्य गुरुत्वादेः प्रसङ्गेन गुरुत्वादीनां निरूपणार्थं नवमोद्देशकः प्रारभ्यते। तथा प्रथमशतकस्य प्रथमोद्देशकस्यादौ संग्रहगाथायां 'गुरुए' इत्युक्तमिति गुरुत्वादेः प्रतिपादनाय नवमोद्देशकः प्रारभ्यते, तत्रेदमादिमसूत्रम्-'कहणं' इत्यादि'

मूलम्-कहणं भंते ! जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति गोयमा ! पाणाइवाएणं मुसावाएणं अदिण्णादाणेणं मेहुणेणं परिग्गहेणं, कोहमाणमायालोभपेज्जदोसकलहअभक्खाणपेसुन्नपरपरिवाय-अरइरइ-मायामोस-मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति, कहणं भंते ! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति, गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेणं जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं, एवं खलु गोयमा! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति, एवं संसारं आउली करेंति, एवं परित्तीकरेंति, एवं दीहीं करेंति, एवं हस्सी करेंति, एवं अणुपरियट्टंति, एवं वीइ वयंति, पसत्था चत्तारि, अप्पसत्था चत्तारि॥सू०१॥

अष्टम उद्देशक के अंत में वीर्य का विचार किया गया है, सो उस वीर्य से जीव गुरुत्व आदि को प्राप्त करते हैं। इस लिये वीर्य के कार्यभूत गुरुत्व आदि के प्रसङ्ग से गुरुत्वादि के निरूपण के निमित्त सूत्रकार ने इस नवमें उद्देशक का प्रारंभ किया है। तथा प्रथम शतक के प्रथम उद्देशक की आदि में संग्रह गाथा में "गुरुए" ऐसा कहा गया है सो उस गुरुत्वादिक के प्रतिपादन के निमित्त नवमें उद्देशक का उन्हों ने प्रारंभ किया है। इस उद्देशक का सर्वप्रथम सूत्र "कहणं" इत्यादि है 'कह णं भंते ! जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति' इत्यादि।

આઠમા ઉદ્દેશકને અન્તે વીર્યનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તે વીર્યથી જીવ ગુરુત્વ વગેરે પ્રાપ્તિ કરે છે. તેથી વીર્યના કાર્યભૂત ગુરુત્વ વગેરેનું નિરૂપણ કરવાનો અવસર પ્રાપ્ત થવાથી સૂત્રકાર આ નવમાં ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે તથા પ્રથમ શતકના પ્રથમ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમા સંગ્રહગાથામા "गुरुए" પદ આવે છે. તેથી ગુરુત્વાદિકનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે નવમા ઉદ્દેશકની શરૂઆત કરી છે આ ઉદ્દેશકનુ સૌથી પહેલું સૂત્ર "कहण" ઇત્યાદિ છે.

"कहणं भंते। जीवा गुरुयत्त हव्वमागच्छंति" ઇત्यादि।

अल्पेन, तत्र क्रोधः=कृत्याकृत्यविवेकको मूलतोऽक्षमारूप आत्मपरिणामः ६। मानो गर्वः ७। माया=शाठ्यम् ८। लोभः=गृध्नुता ९। प्रेम=प्रीतिरागशक्तिर्वा काम-भोगादिषु १०। द्वेषः=अप्रीतिः ११। कलहः=विरोधः १२। अभ्याख्यानम्=असद्दोषारोपणम् १३ पैशुन्यं=परोक्षे कर्णान्तिकादौ विद्यमानस्याविद्यमानस्य वा दोषस्योद्घाटनम् १४। परपरिवादः = प्रभूतजनसमक्षं परदोषप्रकाशनम् १५।

प्ररूपण रूप असत्यभाषण से-देव, गुरु, राजा, गाथापति, साधर्मी आदि अननुज्ञात के आदानरूप अदत्तादान से, मैथुन से-स्त्रीपुरुष के सम्भोग कर्मरूप कुशील सेवन से, परिग्रह से-धर्मोपकरण व्यतिरिक्त वस्तुओं के ग्रहण करने से अर्थात् धर्मोपकरण के सिवाय परपदार्थों में स्व स्वामिभाव मानकर उनमें मूर्च्छा रखने से, जीव गुरुत्व भाव को प्राप्त कर लेता है इसी तरह क्रोधादिक जो आत्मा के विकारी भाव हैं उनसे भी जीव गुरुत्व को पा लेते हैं। आत्मा में कृत्याकृत्य के विवेक को जड़मूल से उखाड़ देने वाला जो अक्षमारूप परिणाम होता है उसका नाम क्रोध है। गर्व का नाम मान है। माया नाम कपटका है। ग्रध्नुता का नाम लोभ है इसे भाषा में लालच कहते हैं। कामभोग आदिमें आसक्तिका होना इसका नाम प्रेम है अथवा प्रीतिका नाम प्रेम है। अप्रीतिका होना इसका नाम द्वेष है। विरोध का नाम कलह है। असद्दोषोंका आरोपण करना इसका नाम अभ्याख्यान है। परोक्षमें, किसीके विद्यमान अथवा नहीं विद्यमान दोषोंका एकान्तमें प्रकट करना इसका नाम पैशुन्य है। अनेक जनोंके समक्ष दूसरोंके दोषोंको प्रकाशित करना इस का नाम परपरिवाद

(૫) પ્રાણાતિપાતથી-જીવોની વિરાધના કરવાથી (૨) મૃષાવાદથી-અસત્ય (૩) અદત્તાદાનથી દેવ, ગુરુ, રાજા, ગાથાપતિ, તેમજ સાધર્મી વગેરે માલિક ન આપેલી વસ્તુ ગ્રહણ કરવાથી, ચોરી કરવાથી (૪) મૈથુન-અબ્રહ્મચર્ય-કુશીલ સેવનથી (૫) પરિગ્રહથી-ધર્મોપકરણ સિવાયની વસ્તુઓને ગ્રહણ કરવાથી તેમજ તેના મારીકીપણું રાખીને આસક્તિ રાખવાથી (૬) ક્રોધથી આત્મામાં આવા નહિવાના વિવેકને જડમૂળથી ઉખેડી નાખનાર ક્ષમારૂપ જે પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તેનાથી (૭) માનથી-ગર્વથી (૮) માયાથી-કપટથી, (૯) લોભથી -લાલચથી, આશા-તૃષ્ણાથી (૧૦) રાગથી-પૌદ્ગલિક વસ્તુઓમાં આસક્તિ રાખવાથી. (૧૧) દ્વેષથી-અપ્રીતિ-વૈરભાવ (૧૨) કલહથી-વિરોધ રાખવાથી, કજીયા કરવાથી, (૧૩) અભ્યાખ્યાનથી—કોઇના ઉપર ખોટા આળ આપવાથી (૧૪) પૈશુ-ન્યથી—ચાડી ચુગલીથી (૧૫) પરપરિવાદથી બીજા બીજાની નિંદા કરવાથી,

अब्भक्खाणपेसुन्न परपरिवायअरइरइमायामोसमिच्छादंसणसल्लेणं ' क्रोधमानमायालोभप्रेमद्वेषकलहाभ्याख्यानपैशुन्यपरपरिवादारतिरतिमायामृषामिथ्यादर्शन –

कलहअभक्खाणपेसुन्नपरपरिवायअरइरइमायामोसमिच्छादंसणसल्लेणं) क्रोध, मान, माया, लोभ, (राग) प्रेम, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरति, रति, मायामृषा और मिथ्यादर्शनशल्यसे गुरुत्वको पा लेते हैं। तात्पर्य कहने का यह है–जिस प्रकार कोई बनादी गई भारी वस्तु स्वभावतः नीचे की ओर जाती है उसी प्रकार उर्ध्वगमन स्वभाववाली यह आत्मारूप वस्तु भी जब पौद्गलिक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध- कर्मों के बंध से भारी बना दी जाती है–तब वह भी उर्ध्वगमन स्वभाव से विपरीत अधोगमन करने वाली बन जाती है। आत्मा का संसारदशा में भ्रमण करते रहना यही उसमें गुरुत्व है। और यह गुरुत्व उसमें ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों के उपचय स्वरूप है। क्यों कि इनके बंध से ही आत्मा में यह गुरुत्व आया है। आत्मा पौद्गलिक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का बंध या उपचय किन २ कारणों से किया करता हैं यही बात सूत्रकार ने यहां प्रकट की है। इसमें उन्हों ने यह कहा है कि यह आत्मा प्राणातिपात से–जीवों की विराधना से, ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का उपचय रूप जो गुरुत्व है उसे प्राप्त करता है। तथा मृषावाद से–सत् के अपलाप और असत् के

पेज्जदोसकलह, अभक्खाण, पेसुन्नपरपरिवायअरइरइमायामोसमिच्छादसणसल्लेणं) क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरति, रति मायामृषा अने मिथ्यादर्शनशल्यना सेवनथी गुरुत्व प्राप्त करे छे (એટલે કે ભારે કર્મી બને છે) તાત્પર્ય એ છે કે–જેવી રીતે ભારે વસ્તુ સ્વાભાવિક રીતે જ નીચે જાય છે, એ જ પ્રમાણે ઉર્ધ્વગમનના સ્વભાવવાળા આ આત્મા પણ જ્યારે પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મોના ભારથી ભારે બને છે ત્યારે તે ઉર્ધ્વગમન કરવાને બદલે અધોગમન કરે છે. આત્માને સંસારમા જે ભ્રમણ કરવું છે તે તેના ગુરુત્વને કારણે જ છે તે ગુરુત્વ જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મના ઉપચય સ્વરૂપ છે, કારણ કે તેમનો બંધ બાધવાને કારણે જ આત્મામા ગુરુત્વ આવે છે. આત્મા પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોનો બંધ અથવા ઉપચયકયા કયા કારણે કરે છે, એજ વાત સૂત્રકારે અહી પ્રકટ કરી છે તે એ છે કે આ આત્મા પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢાર પાપસ્થાનોનુ સેવન કરવાથી જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મોના ઉપચય રૂપ ગુરુત્વને પ્રાપ્ત કરે છે.

ण भंते ' कथ खलु भदन्त ! ' जीवा लघुत्वं हव्वं आगच्छंति ' जीवा लघुत्व हव्वमागच्छन्ति, लघुत्वम्-केन कारणेन जीवानां लघुत्वं भवतीति प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्-'गोयमा' त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' पाणाइवायवेरमणेणं' प्राणातिपातविरमणेन, 'जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं ' यावत् मिथ्यादर्शनशल्यविरमणेन यावत्पदेन-मृषावादादारभ्य मायामृषापर्यन्तस्य ग्रहणं भवति, तथा च प्राणातिपातादारभ्य पापमिथ्यादर्शनशल्यात्मकदोषाणां विरमणे सति जीवा लघुत्वमागच्छन्ति । ' एव खलु गोयमा ' एवं खलु हे गौतम ! ' जीवा लहुयत्तं हव्वं आगच्छंति ' जीवा लघुत्वं हव्वमागच्छन्ति, ' एव ससारं आउट्टी करेंति ' एवं संसारमाकुञ्चीकुर्वन्ति, एवम्=अनेन पूर्वोक्ताभिलापप्रकारेण संसारम् आकुञ्चीकुर्वन्ति कर्मणा मधुरीकुर्वन्ति, एव आउट्टी करेंतीत्यत्र एवं खलु

जीव कैसे भारीपन के अभाव रूप लघुत्व का-हलकापन को पाते हैं ? (गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेण जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं) हे गौतम ! प्राणातिपात से दूर होने से-अर्थात्-प्राणातिपात के विरमण-त्याग से यावत् मिथ्यादर्शन शल्य के विरमण—त्याग से जीव लघुत्व पाता है । यहां "यावत्" पद से मृषावाद से लेकर मायामृषा तक का पूर्वोक्त पाठ ग्रहण किया गया है । तथा प्राणातिपात से लगाकर मिथ्यादर्शन शल्य तक के पापों के त्याग होने पर जीव लघुता को प्राप्त कर लिया करते हैं ऐसा अर्थ बोध होता है । यही बात प्रभु ने (एवं खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वं आगच्छंति) इस सूत्र पाठ द्वारा गौतम ! के प्रति व्यक्त की है । (एवं संसारं आउट्टी करेंति) इस पूर्वोक्त अभिलाप प्रकार से प्राणातिपात आदिकों के सेवन करने से जीव संसार को घटाते हैं-प्रचुर करते हैं ३। यहां जो " एवं" यह शब्द

ગુરુત્વના અભાવરૂપ લઘુત્વ હલકાપણું કેવી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે ?

ઉત્તર—(गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेण जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं) હે ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીના અઢારે પાપસ્થાનોના ત્યાગથી જીવ લઘુતા પ્રાપ્ત કરે છે અહીં " यावत् " પદ વડે મૃષાવાદથી લઈને માયામૃષા પર્યન્તનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાણાતિપાતથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીના પાપોનો ત્યાગ કરવાથી જીવ લઘુતા હલકાપણું પ્રાપ્ત કરે છે એ જ વાત પ્રભુએ एव खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वं आगच्छंति" સૂત્રપાઠ વડે ગૌતમને સમજાવી છે (एवं संसारं आउट्टी करेंति) પૂર્વોક્ત અભિલાપપ્રકાર પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવ સંસારને ઘટાડે છે અહીં જે "एव" પદ મૂકયું છે તે પૂર્વોક્ત અભિલાપનું સૂચક છે તે અભિલાપ આ પ્રમાણે

रत्यरतिः, तत्र रतिः=विषयेष्वनुरागः, अरतिः=धर्मेऽनभिरुचिः, रतिसहिता अरतिः -रत्यरतिः १६ । मायामृषा=मायासहितो मृषावादः १७। मिथ्यादर्शनशल्यम्= मिथ्यादर्शनं=मिथ्यात्वम्, तदेव शल्यमिव विविधव्यथाजनकत्वात् मिथ्यादर्शन-शल्यम्=कुदेवकुगुरुकुधर्मेषु सुदेवादिबुद्धिः १८। इत्यष्टादशपापानि तैः। 'एवं खलु गोयमा' एवं पूर्वोक्तप्राणातिपातादारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यपर्यन्तैरष्टा-दशभिः पापैः खलु इति निश्चयेन हे गौतम! 'जीवा' जीवाः 'गुरुयत्तं' गुरु-त्वम्, आगच्छंति=प्राप्नुवन्तीति। पुनः प्रश्नयति-'कहणं भंते' इत्यादि! 'कह

है। विषयों में अनुराग रखना इसका नाम रति, धर्म में अभिरुचि का नहीं होना इसका नाम अरति है। मायासहित झूठ बोलने का नाम मायामृषा है। मिथ्यात्वका नाम मिथ्यादर्शन है। इसे जो शल्य कहा गया है सो इसका कारण यह है कि जिस प्रकार शल्य अनेक प्रकारकी व्यथाओं (दुःखों) को शरीर में लग जाने पर उत्पन्न करता है उसी प्रकार से मिथ्यादर्शन भी जीव को साथ में लग जाने पर विविध प्रकार की यातनाओ को चारों गतियों में देता रहता है। इसके प्रभाव से जीव कुदेव, कुगुरु और कुधर्म में सुदेव, सुगुरु और सुधर्म की मान्यता वाला बन जाया करता है। ये सब पूर्वोक्त १८ पाप हैं। इनके द्वारा ही जीव ज्ञानावरणीय आदि आठ प्रकार के कर्मों का संचय करने पर गुरुत्व आता है १। यही बात (एवं खलु गोयमा! जीवा गुरुयत्तं हव्वं आगच्छंति) इस सूत्र पाठ ने गौतम को समझाई है।

(कह णं भंते! जीवा लहुत्तं हव्वं आगच्छति) हे भदन्त!

(૧૬) રતિથી વિષયોમા અનુરાગ રાખવાથી, અરતિથી-ધર્મમાં અભિરૂચિ ન રાખવાથી, (૧૭) માયા મૃષાથી માયાસહિત જૂઠું બોલવાથી અને (૧૮) મિથ્યાદર્શનશલ્યથી-મિથ્યાત્વને મિથ્યાદર્શન કહે છે. મિથ્યાદર્શનને શલ્ય કહેવાનુ કારણ એ છે કે જેમ કાટો (શલ્ય) વાગવાથી શરીરમા અનેક પ્રકા-રની પીડા થાય છે એ જ પ્રમાણે મિથ્યાદર્શન શલ્ય જીવને ચારે ગતિઓમાં ભ્રમણ કરાવીને અનેક પ્રકારની પીડા પહોચાડે છે. તેના પ્રભાવથી જીવ કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મને સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મ માનતો થાય છે ઉપરોકત ૧૮ પાપોના સેવનથી જીવ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોનો સંચય કરીને ગુરુત્વ પ્રાપ્ત કરે છે એ જ વાત (एवं खलु गोयमा! जीवा गुरुयत्त हव्वं आगच्छंति) આ સૂત્ર પાઠથી ગૌતમને સમજાવવામા આવી છે

પ્રશ્ન—(कहणं भंते! जीवा लहुत्तं हव्वं आगच्छंति?) હે ભગવન્!

च मनुष्यकालावस्थितिकं संसारं कुर्वन्ति, 'एवं इस्सीकरेंति' एवं ह्रस्वीकुर्वन्ति, संसारस्याल्पकालावस्थायित्वं कुर्वन्ति, 'एवं अणुपरियट्टंति' एवमनुपर्यटन्ति, पौनःपुन्येन भ्रमन्ति संसारे। 'एवं वीइवयंति' एवं व्यतिव्रजन्ति, व्यतिक्रामन्ति संसारं समुल्लङ्घयन्तीति। अथोपसंहरन्नाह-'पसत्थाचत्तारि' प्रशस्तानि चत्वारि, गुरुत्वलघुत्वादिषु मध्येषु मध्ये चत्वारि-चतुः संख्यकानि लघुत्वपरीत्व-ह्रस्वत्व-व्यतिव्रजनानि प्रशस्तानि=प्रशंसनीयानि मोक्षकारणत्वात् 'अप्पसत्थाचत्तारि' अप्रशस्तानि चत्वारि, गुरुत्वाकुलत्व-दीर्घत्वपर्यटनानि अप्रशस्तानि, तेषां संसारकारणत्वात्। यद्यप्येतानि सर्वाणि संसारसम्बद्धान्येव तथापि चत्वारि

संसार को इतनी बड़ी भारी लंबी स्थितिवाला वे इन्हीं प्राणातिपात आदि १८ अठारह पापों के सेवन करने से ही बनाते हैं। (एवं हस्सीकरेंति) तथा प्राणातिपात आदि १८ अठारह पाप स्थानों से निवृत्त होने से वे संसार को अल्पकालावस्थायी बना लेते हैं। (एवं अणुपरियट्टंति) इसी कारण से-अर्थात् उन्हों ने अपने संसार को बहुत अधिक लंबी स्थितिवाला बना लिया है-इसी निमित्त से-वे संसार में बार २ भ्रमण करते हैं। (एवं वीइवयंति) प्राणातिपात आदि १८ अठारह पापस्थानोंसे निवृत्त होने से जीव संसार को उल्लंघ जाते हैं-अर्थात् संसार से पार हो जाते हैं। (पसत्था चत्तारि, अप्पसत्था चत्तारि) अब पूर्वोक्त विषय का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे गौतम! गुरुत्व लघुत्व आदि आठ में से लघुत्व, परीतत्व, ह्रस्वत्व और व्यतिव्रजन ये चार मोक्ष के कारण होने से प्रशंसनीय हैं। तथा गुरुत्व, आकुलीत्व दीर्घत्व और पर्यटन ये चार संसार

છે કે પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢાર પાપોનું સેવન કરવાથી જ જીવનો સંસાર ખૂબ જ દીર્ઘ સ્થિતિવાળો બને છે (एवं हस्सीकरेंति) તથા પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢાર પાપોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવ પોતાના સંસારને અલ્પકાલસ્થાયી-ટૂંકા કાળનો બનાવે છે (एवं अणुपरियट्टंति) એ જ કારણે એટલે કે સંસારને વધુ જ લાંબી સ્થિતિ વાળો બનાવી દીધો હોવાને કારણે જીવો વારંવાર સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે (एवं वीइवयंति) પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢાર પાપસ્થાનોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવો સંસારને ઓળંગી જાય છે, એટલે કે સંસારસાગરને તરી જાય છે (पसत्था चत्तारि अपसत्था चत्तारि) હવે પૂર્વોક્ત વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ગૌતમ! ગુરુત્વ, લઘુત્વ વગેરે આઠમાંથી લઘુત્વ પરીતત્વ, હ્રસ્વત્વ અને વ્યતિવ્રજન, એ ચાર મોક્ષના કારણરૂપ હોવાથી પ્રશસ્ત છે તથા ગુરુત્વ આકુલત્વ (સંસાર વધારવો) દીર્ઘત્વ અને પર્યટન, એ

पूर्वोक्ताभिलापसंसूचकः सचाभिलाप एवं भवति-' कहणं भंते ! जीवा संसार-आउली करेंति, गोयमा ! पाणाइवाएणं जावमिच्छादंसणसल्लेणं ' कथं खलु भदन्त ? जीवाः संसारम् आकुलीकुर्वन्ति, गौतम ! प्राणातिपातेन यावन्मिथ्या-दर्शनशल्येन इत्यादि । एवमुत्तरत्रापि परीतीकरणादिपदेष्वपि अभिलापप्रकारो ज्ञातव्यः । ' एवं परित्ती करेंति ' एवं परीतीकुर्वन्ति=संसारमल्पीकुर्वन्ति, ' एवं दीही करेंति ' एवं दीर्घीकुर्वन्ति, संसारस्य दैर्घ्यं प्रचुरतरकालावस्थायित्वं तथा

है वह पूर्वोक्त अभिलाप का संसूचक है । वह अभिलाप इस प्रकार से होता है-" कहणं भंते ! जीवा संसारं आउली करेंति" हे भदन्त ! जीव संसार को किस कारण से बढ़ाते हैं ? " गोयमा ! पाणाइवाइएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं " हे गौतम ! जीव ससार को प्राणातिपात आदि कारणों के सेवन से लगाकर मिथ्यादर्शन शल्यतक के कारणों के सेवन से बढ़ाते हैं । इसी तरह से परीतीकरणादिक जो आगे के पद हैं उनमें भी अभिलाप प्रकार जानना चाहिये । (एवं परित्ती करेंति) तथा-प्राणातिपात आदि संसार वर्धक कारणों से निवृत्त होने से जीव संसार को अल्प कर देते हैं । (एवं दीही करेंति) और प्राणातिपात आदिकों के सेवन करने से जीव संसार को दीर्घ-लंबा कर देते हैं । यहां दीर्घ करने का अभिप्राय यह है कि प्राणातिपात आदिकों के सेवनकर्त्ता संसार में प्रचुरकालतक भ्रमण करते रहते हैं । अतः ऐसे जीवों की अपेक्षा उनका संसार उनके साथ बहुत बड़े लंबे समय तक रहता है । अर्थात् वह संसार उनका बहुत बड़ी भारी स्थितिवाला बन जाता है । अपने

બને છે-" कहण भंते ! जीवा ससारं आउली करेंति " હે ભગવન્ ! શા કારણે જીવ સંસાર વધારે છે ? ' गोयमा ! पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेण " હે ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીનાં પાપોનું સેવન કરવાથી જીવ સંસારનો વધારો કરે છે એ જ પ્રમાણે પરીતીકરણ (સીમિત-કરણ) વગેરે જે પદો આગળ આવે છે તેમના વિષયમા પણ અભિલાપ કરવો (एवं परित्ती करेंति) પ્રાણાતિપાત વગેરે સંસારવર્ધક કારણોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવ સંસારને અલ્પ (સીમિત) કરી નાખે છે. (एव दीही करेंति) અને પ્રાણાતિપાત વગેરેનુ સેવન કરવાથી જીવ સંસારને વધારે છે સંસારને વધારવો એટલે સંસારમા લાબા કાળ સુધી ભ્રમણ કરવું તે. પ્રાણાતિપાત વગેરે ૧૮ પાપોનુ સેવન કરનાર જીવ બહુજ દીર્ઘ કાળસુધી સંસારમા રહે છે. એટલે કે તેનો સંસાર ખૂબજ લાબી સ્થિતિવાળો બની જાય છે. સારાશ એ

पण्ण भंते ! किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुयलहुए ? गोयमा ! णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए वि, अगुरुयलहुए वि । से केणट्ठेणं? गोयमा ! गुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए णो अगुरुयलहुए । अगुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरुयलहुए । समयाकम्माणि य चउत्थपएणं । कण्हे लेस्सा णं भंते ! किं गुरुया जाव अगुरुयलहुया? गोयमा ! णो गुरुया णो लहुया गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि । से केणट्ठेण ? । गोयमा ! दव्वलेसं पडुच्च तइयपएणं । भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं । एवं जाव सुक्कलेस्सा । दिट्ठी दंसणणाणऽण्णाण सन्नाओ चउत्थपएणं णेयव्वाओ । हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णायव्वा तइएणं पएणं । कम्मया चउत्थएणं पएणं । मण जोगो वइजोगो चउत्थएणं पएणं । कायजोगो तइएणं पएण । सागारोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं । सव्वद्धा सव्वपएसा सव्वपज्जवा जहा पोग्गलत्थिकाओ । तीयद्धा अणागयद्धा सव्वद्धा चउत्थएण पएण ॥सू०२॥

छाया—सप्तम खलु भदन्त ! अवकाशान्तरं किं गुरुकं किं लघुकं गुरुकलघुकम् अगुरुकलघुकम् ? गौतम ! नो गुरुकं नो लघुकं नो गुरुकलघुकम् अगुरुकलघुकम् । सप्तमः खलु भदन्त ! तनुवातः किं गुरुको लघुको गुरुकलघुको अगुरुकलघुकः ? गौतम ! नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुको नो अगुरुकलघुकः । एवं सप्तमो घनवातः । सप्तमो घनोदधिः । सप्तमी पृथिवी । अवकाशान्तराणि सर्वाणि यथा सप्तममवकाशान्तरं । शेषा यथा तनुवातः, एवं गुरुकलघुकं " अवकाशान्तरघनोदधिः पृथिवीद्वीपाश्च सागराः वर्षाणि " नारकिका खलु भदन्त ! किं गुरुका यावदगुरुकलघुका ? । गौतम ! नो गुरुका नो लघुकाः गुरुकलघुका

आद्यानि संसारपोषकतया अप्रस्तानीति, अनादेयानि । इतराणि तु मोक्षकारणत्वेन प्रशस्तानीति समुपादेयानीति ॥ सू० १ ॥

गुरुत्वलघुत्वयोरधिकारादेवेदमपि सूत्रमाह—' सत्तमे णं ' इत्यादि ।

मूलम्–सत्तमेणं भंते ! उवासंतरे किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरु य लहुए ? गोयमा ! णो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरुयलहुए, सत्तमेणं भंते ! तणुवाए किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुयलहुए गोयमा ! णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए णो अगुरुयलहुए, एवं सत्तमे घणवाए सत्तमे घणोदही सत्तमापुढवी,उवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासंतरे, सेसा जहा तणुवाए, ' एवं गुरुलहुए, ओवाय--घणउदहि-पुढवी-दीवा य सायरा वासा ' । णेरइयाणं भंते! किं गुरुया जाव अगुरुयलहुया? गोयमा! णो गुरुया णो लहुया गुरुलहुया वि, अगुरुयलहुया वि, से केणट्ठेणं ? गोयमा ! विउव्वियतेयाइं पडुच्च णो गुरुया णो लहुया गुरुयलहुया णो अगुरुयलहुया । जीवं च कम्मणं च पडुच्च णो गुरुया णो लहुया णो गुरुयलहुया अगुरुयलहुया से तेणट्ठेणं । एवं जाव वेमाणिया, णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं । धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएणं । पोग्गलत्थिका-

---

के कारण होने से अप्रशस्त हैं । यद्यपि ये सब संसारसंबद्ध ही हैं, तो भी आदि के चार संसार के पोषक होने के कारण अप्रशस्त–अनादेय हैं । बाकी के चार मोक्ष के कारण होनेसे प्रशस्त–उपादेय हैं ॥ सू० १ ॥

ચાર સંસારનાં કારણરૂપ હોવાથી અપ્રશસ્ત છે જો કે એ બધા કારણો સંસાર-સબદ્ધ છે, તો પણ શરૂઆતના ચાર સંસારના પોષક હોવાથી અપ્રશસ્ત હોય છે અને બાકીના ચાર મોક્ષ અપાવનાર હોવાથી પ્રશસ્ત ઉપાદેય છે સૂ૦ ૧

"निच्छयओ गुव्वगुरु सव्वलहू वा न विज्जए दव्व ।
ववहारओ उजुव्वइ, बायरखंधेसु नऽण्णेसु ॥ १ ॥
अगुरुलहू चउफासा अरूवि दव्वा य होंति नायव्वा ।
सेसाओ अट्ठफासा, गुरुलहुपानिच्छयणयस्स" ॥ २ ॥

छाया—निश्चयतः सर्वं गुरु सर्वं लघु वा नविद्यते द्रव्यम् ।
व्यवहारतस्तु गुर्वते बादरस्कन्धेषु नान्यषु ॥ १ ॥
अगुरुलघव चतुस्पर्शा अरूपि द्रव्याणि च भवन्ति ज्ञातव्यानि ।
शेषास्तु अष्टस्पर्शा गुरुकलघुका निश्चयनयस्य" ॥ २ ॥ इति ।

निश्चयतः=निश्चयनयानुसारेण किमपि द्रव्यम् सर्वतः गुरु सर्वतो लघु वा न भवति, परन्तु व्यवहारतः व्यवहारनयानुसारेण बादरस्कन्धेषु बादरस्कन्धविषये सर्वतः गुरुत्वं सर्वतो लघुत्वं वा युज्यते=भवति, नान्यषु, अन्यषु बादरस्कन्धभिन्नेषु सूक्ष्मेषु सर्वतो गुरुत्वं सर्वापेक्षया लघुत्वं वा न भवति । इति प्रथम गाथार्थः । चतुःस्पर्शा सूक्ष्मपरिणामवन्ति यानि द्रव्याणि चतुःस्पर्शकर्मवर्गणोक्तानि, रूपीणि तथाऽरूपिद्रव्याणि च तानि सर्वाण्यपि अगुरुलघूनि भवन्ति इति ज्ञातव्यानि शेषास्तु यद्वर्गणोक्तानि यानि द्रव्याणि अष्टस्पर्शवन्ति, बादराणि तानि सर्वाण्यपि गुरुलघुकानि भवन्ति, निश्चयनयस्य=निश्चयनयस्य मते शेषम् ।

करनी चाहिये–निश्चय नय की अपेक्षा लेकर जब गुरु लघु का विचार किया जाता है तो कोई भी द्रव्य ऐसा नहीं है जो सब से भारी हो और सबसे हलका हो । परन्तु जब व्यवहारनय की अपेक्षा लेकर गुरु लघु का विचार किया जाता है तब–जो बादर स्कंध हैं उनमें सब से भारीपना और सब से हलकापना रहता है । अन्यों में नहीं । जो द्रव्य चार स्पर्शवाले होते हैं तथा अरूपी–रूप-रस गंध और स्पर्श इनसे रहित होते हैं वे सब अगुरु लघु होते हैं । तथा बाकी के आठ स्पर्श-वाले द्रव्य गुरुलघु हैं, ऐसा निश्चय नय का मन्तव्य है । तात्पर्य इस

પ્રત્યક્ષે કશો જોઈએ તો નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ ગુરુત્વ અને લઘુત્વનો વિચાર કરવામાં આવે તો કોઈ પણ દ્રવ્ય જોવું નથી કે જે બીજી બધી જ કરતાં ભારે હોય કે બીજી હલકું હોય પણ વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ ગુરુ લઘુનો વિચાર કરવામાં આવે તો જે બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધ છે તેમાં બીજી બધાંથી ગુરુત્વ (ભારેપણું) અને બીજી કોઈ લઘુત્વ (હલકાપણું) રહે છે બીજામાં રહેતું નથી. જે દ્રવ્યો ચાર સ્પર્શવાળા હોય છે તથા અરૂપી (રૂપ, રસ ગંધ અને સ્પર્શથી રહિત) હોય છે તે બધા દ્રવ્યો અગુરુલઘુ હોય છે અને બાકીના આઠ સ્પર્શવાળા દ્રવ્યો ગુરુલઘુ છે, એવું નિશ્ચયનયનું મંતવ્ય છે, આ બન્ને

अपि अगुरुकलघुका अपि । तत्केनार्थेन ? । गौतम ! वैक्रियतैजसे प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुकाः गुरुकलघुका नो अगुरुकलघुका । जीवं च कार्मणं च प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुकलघुकाः अगुरुकलघुका, तत् तेनार्थेन? एवं यावद्वैमानिकाः, नानात्वं ज्ञातव्यं शरीरैः । धर्मास्तिकायो यावत् जीवास्तिकायश्चतुर्थपदेन । पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! किं गुरुको लघुको गुरुकलघुकः अगुरुकलघुकः ? । गौतम ! नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुकोऽपि अगुरुलघुकोऽपि । तत् केनार्थेन ? गौतम ! गुरुकलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुको नो अगुरुकलघुकः । अगुरुकलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको नो लघुको नो गुरुकलघुकः अगुरुलघुकः । समयाः कर्माणि च चतुर्थपदेन । कृष्णलेश्या खलु भदन्त ! किं गुरुका यावदगुरुलघुका ? गौतम ! नो गुरुका नो लघुका गुरुलघुका अपि अगुरुलघुका अपि । तत्केनार्थेन ? गौतम ! द्रव्यलेश्यां प्रतीत्य तृतीयपदेन। भावलेश्यां प्रतीत्य चतुर्थपदेन एवं यावत् शुक्ललेश्या दृष्टिदर्शन ज्ञानाज्ञानसंज्ञाश्चतुर्थपदेन नेतव्याः । अधस्तनानि चत्वारि शरीराणि ज्ञातव्यानि तृतीय पदेन । कार्मणं चतुर्थकेन पदेन । मनोयोगो वचोयोगश्चतुर्थेन पदेन । काययोगस्तृतीयपदेन । साकारोपयोगोऽनाकारोपयोगश्चतुर्थकेन पदेन । सर्वद्रव्याणि-सर्वप्रदेशाः सर्वपर्यवाः यथा पुद्गलास्तिकायाः । अतीताद्धा, अनागताद्धा सर्वाद्धा चतुर्थकेन पदेन ॥ सू० २ ॥

टीका—'सत्तमे णं भंते' सप्तमं खलु भदन्त ! 'उवासंतरे' अवकाशान्तरं 'किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुलहुए' किं गुरुकं लघुकं गुरुलघुकम्-अगुरुलघुकम्, अत्र च गुरुलघुव्यवस्था एवं करणीया—

गुरुत्व लघुत्व के अधिकार से ही सूत्रकार अब इस "सत्तमे णं भंते !" सूत्र का भी कथन करते हैं—'सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे किं गुरुए' इत्यादि० ।

टीकार्थ—(भंते !) हे भदन्त ! (सत्तमे णं उवासंतरे किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) सातवां जो अवकाशान्तर है वह क्या भारी है, अथवा हलका है? या भारी हलका दोनों रूप है? या न भारी है, न हलका है इसरूप है ? यहां गुरु लघु की व्यवस्था इस प्रकार से

ગુરુત્વ અને લઘુત્વની અપેક્ષાએ જ હવે સૂત્રકાર "सत्तमेणं भंते !" ઇત્યાદિ સૂત્રોનુ કથન કરે છે-"सत्तमे णं भंते ! उवासतरे किं गुरुए" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(भंते !) હે ભગવન્ ! (सत्तमेण उवासतरे किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए ?) સાતમુ અવકાશાન્તર શું ભારે છે ? અથવા શું હલકું છે ? અથવા ભારે તથા હલકુ એ બન્નેરૂપ છે ? અગુરુલઘુ છે (ભારે પણ નહીં અને હલકું પણ નહીં એવુ) છે ? અહીં ગુરુલઘુનો વિચાર આ

उत्तरयति भगवान्-'गोयमा' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो गुरुए' नो गुरुकः सप्तमसपकाशान्तरम् 'णो लहुए' नो लघुकम् 'णो गुरुयलहुए' नो गुरुकलघुकम् 'अगुरुयलहुए' अगुरुकलघुकम्, 'सत्तम णं भंते' सप्तम खलु भदन्त ! 'तणुवाए' तनुवातः 'किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए-अगुरुयलहुए' किं गुरुकः लघुः गुरुकलघुकोऽगुरुकलघुक ? सप्तमे तनुवाते गुरुत्वं लघुत्वं गुरुकलघुत्वमगुरुकलघुत्वं वेति प्रश्नः । उत्तरयति भगवान्-'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! णो गुरुए' नो गुरुकः 'णो लहुए' नो लघुकः, किन्तु 'गुरुयलहुए' गुरुकलघुकः 'णो अगुरुयलहुए' नो अगुरुकलघुकः, हे गौतम ! यावत्सप्तमस्तनुवातः स नो गुरुः नो लघुः किन्तु गुरुकलघुको न वा अगुरुकलघुक इत्येवं ज्ञातव्य इति । एवमेव सप्तमो घनवातादयोऽपि ज्ञातव्या इत्यतिदेशेनाह—'एव सत्तम पणवाए' इत्यादि । 'एव सत्तमे पणवाए' एवं सप्तमो घनवातः, यथा सप्तमस्तनुवातो न गुरुर्न वा लघुः किन्तु गुरुकलघुको न अगुरुकलघुकश्च सप्तमो घनवातोऽपि न गुरुर्न वा लघुरपि तु गुरुकलघुको न अगुरुकलघुक इति भाव ।

गौतमस्वामीकृत पूर्वप्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(गोयमा ! नो गुरुए, णो लहुए, णो गरुयलहुए, अगरुयलहुए) हे गौतम ! सातवाँ जो अवकाशान्तर है वह न गुरुक है, न लघुक है, न गुरुलघुक है । (सत्तमे णं भंते ! तणुवाए किं गुरुए, लहुए, गरुयलहुए, अगुरुयलहुए) हे भदन्त ! सातवाँ जो तनुवात है वह क्या गुरु है, लघु है, गुरुकलघु है या अगुरुकलघु है ? (गोयमा ! णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए, णो अगुरुयलहुए) हे गौतम ! सातवाँ जो तनुवात है वह न गुरु है, न लघु है और न अगुरुकलघु है किन्तु गुरुकलघु है । (एव सत्तमे घणवाए, सत्तमे घणदही, सत्तमा पुढवी, उवासंतराइ सव्वाइ अहा सत्तमे उवासंतर) जैसे सातवाँ तनुवात न गुरु है न लघु है और न अगुरुकलघु

હવે ગૌતમસ્વામીએ પૂછેલા પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ જે જવાબ આપે છે તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—(गोयमा ! नो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) હે ગૌતમ ! સાતમું અવકાશાન્તર ગુરુ નથી, લઘુ નથી, ગુરુલઘુ નથી પણ અગુરુલઘુ છે (सत्तमे णं भंते ! तणुवाए किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) હે ભગવન્ ! સાતમું તનુવાત લઘુ છે ગુરુ છે ? ગુરુલઘુ છે કે અગુરુલઘુ છે ? (गोयमा ! णो गुरुए णो लहुए, गुरुयलहुए णो अगुरुयलहुए) હે ગૌતમ ! સાતમું તનુવાત ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે (एव सत्तमे घणवाए सत्तमे घणदही, सत्तमा पुढवी उवासंतराइ सव्वाइं अहा सत्तमे उवासंतर) એવી રીતે સાતમું તનુવાત ગુરુ નથી, લઘુ નથી, અગુરુલઘુ નથી પણ ગુરુલઘુ છે એજ પ્રમાણે

यानि द्रव्याणि गुरुलघुकानि तानि रूपीणि भवंति, यानि अगुरुलघुकानि तानि रूपीणि अपि भवेयुः रूपरहितान्यपि भवेयुः। व्यवहारनयमतानुसारेण तु द्रव्याणि लघूनि गुरुणि गुरुलघूनि अगुरुलघूनि वा भवंति, यथा लोष्टो गुरुरधो गमनात् धूमो लघुरूर्ध्वगमनात् गुरुलघुर्वायुस्तिर्यग्गमनात्, आकाशोऽगुरुलघुस्तथास्वभावादिति ॥ २ ॥

दोनों गाथाओं का इस प्रकार से है कि निश्चयनय के अनुसार कोई भी द्रव्य न सर्वतः गुरु है और न सर्वतः लघु है। परन्तु व्यवहार नय के अनुसार बादर स्कन्धों में ही यह सर्वतः गुरुत्व और लघुत्व रहता है। अन्य जो बादरस्कन्धों से भिन्न सूक्ष्म स्कंध हैं उनमें सर्वापेक्षया न गुरुत्व होता है और न सर्वापेक्षया लघुत्व होता है। सूक्ष्मपरिणमनवाले जितने द्रव्य चार प्रकार के स्पर्श से युक्त हैं तथा जो रूपी और अरूपी द्रव्य हैं वे सब भी गुरुलघु होते हैं। इनसे भिन्न जो आठ स्पर्शवाले बादर द्रव्य हैं वे सब भी गुरुलघु होते हैं। जितने द्रव्य गुरुलघुक होते हैं वे सब रूपी होते हैं। जो अगुरुलघुक हैं वे रूपी भी होते हैं और अरूपी भी होते हैं। यह निश्चय नय का मत है। व्यवहारनय के मत अनुसार से तो द्रव्य लघु होते हैं, गुरु होते हैं गुरुलघु होते हैं और अगुरुलघु होते हैं। नीचे गमन करने से लोष्ट गुरु होता है, उर्ध्वगमन करने से धूम लघु होता है तीरछीगमन करने से वायु गुरुलघु होती है तथा आकाश का तथा स्वभाव होने से वह अगुरुलघु होता है।

ગાથાઓનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-નિશ્ચયનયાનુસાર કોઇ પણ દ્રવ્ય સર્વથા ગુરુ પણ નથી અને સર્વથા લઘુ પણ નથી પરન્તુ વ્યવહારનયાનુસાર બાદર-સ્કંધોમા જ સર્વથા ગુરુત્વ અને લઘુત્વ રહે છે બાદર (સ્થૂલ) સ્કંધોથી જૂદા એવા જે સૂક્ષ્મ સ્કંધો છે તેમા સર્વથા ગુરુત્વપણુ પણ નથી અને સર્વથા લઘુત્વપણુ પણ નથી સૂક્ષ્મ પરિણમનવાળા જેટલા દ્રવ્યો ચાર પ્રકારના સ્પર્શથી યુક્ત છે અને જે રૂપી અને અરૂપી દ્રવ્યો છે તે બધા પણ અગુરુલઘુ હોય છે, તે દ્રવ્યોથી ભિન્ન આઠ પ્રકારના સ્પર્શવાળા જે બાદર દ્રવ્યો છે તે બધાં પણ ગુરુલઘુ હોય છે જેટલા દ્રવ્યો ગુરુલઘુ હોય છે, તે બધાં રૂપી હોય છે અને જે દ્રવ્યો અગુરુલઘુ હોય છે, તે રૂપી પણ હોય છે અને અરૂપી પણ હોય છે, આ નિશ્ચયનયનો મત છે, વ્યવહારનયની માન્યતા પ્રમાણે તો દ્રવ્ય, લઘુ હોય છે, ગુરુ હોય છે, ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ પણ હોય છે. જેમકે અધોગમન કરવાથી પત્થર ગુરુ હોય છે, ઉર્ધ્વગમન કરવાથી ધુમાડો લઘુ હોય છે, તિરછુ ગમન કરવાથી વાયુ ગુરુલઘુ હોય છે, અને આકાશનો તે પ્રકારનો સ્વભાવ હોવાથી આકાશ અગુરુલઘુ હોય છે.

वर्षधरविषये गुरुलघुतया ज्ञातव्यमिति, एतानि-चावकाशान्तराणि सूत्राणि स्वयं गाथानुसारेणावगन्तव्यानि तथाहि—

' ओवास-वाय-घण-उदही पुढवि दीवा य सागरावासा ।
नेरइयाई अत्थिय समया कम्माइ लेस्साओ ॥ १ ॥
दिट्ठी दंसण नाणे सन्ना सरीर य जोग उवओगे ।
दव्व पएसा पज्जव तीया आगामि सव्वद्धा ' इति ॥२॥

छाया—अवकाशो वात घनोदधिः पृथिवी द्वीपाश्च सागरा वर्षाश्च ।
नैरयिकादयोऽस्तिकाय समया कर्माणि लेश्याः ॥ १ ॥
दृष्टिर्दर्शन ज्ञान संज्ञा शरीराणि च योगोपयोगौ ।
द्रव्यप्रदेशा पर्यवाः अतीता आगामिनी सर्वाद्धा ॥२॥

' णेरइयाण भंते ' नैरयिकाः खलु भदन्त ! ' किं गुरुया जाव अगुरुलहुया ' किं गुरुका यावद् अगुरुलघुकाः ? हे भदन्त ! नैरयिका गुरुका वा लघुका वा

घनोदधिवात, पृथिवी, द्वीप, सागर और वर्ष-क्षेत्र इनके विषय में भी जानना चाहिये अर्थात् ये सब गुरुलघुरूप तृतीय पद वाले कहे गये हैं। जितने भी ये अवकाशान्तर सूत्र हैं वे इन संग्रह गाथाओं के अनुसार हैं-ये संग्रह गाथाएँ इस प्रकार से हैं-

" ओवास वाय-घण-उदही पुढवी, दीवा य सागरा वासा ।
नेरइयाई अत्थि य समया कम्माइ लेस्साओ ॥ १ ॥
दिट्ठी दंसण नाणे सन्ना सरीरा य जोग उवओगे ।
दव्वपएसा पज्जव तीया आगामि सव्वद्धा ॥ "

(णेरइया णं भंते ! किं गुरुया जाव अगुरु य लहुया ?) हे भदन्त ! नैरयिक जीव क्या गुरु हैं ? यावत् अगुरुलघुक हैं ? यहां यावत् पद से

અવકાશ ઘનોદધિવાત, પૃથિવી દ્વીપ સાગર અને વર્ષક્ષેત્રોના વિષયમાં પણ ગુરુલઘુ કરવું જોઇએ, કેમકે એ બધાને ગુરુલઘુ કહેલા છે એમ સમજવું જોઇએ અવકાશાન્તર સૂત્રો છે તે આ ગાથાઓ અનુસાર છે તે સંગ્રહ ગાથાઓ નીચે મુજબ છે—

' ओवास वाय-घण उदही पुढवी, दीवा य सागरावासा ।
नेरइयाई अत्थि य समया कम्माइं लेस्साओ ॥ १ ॥
दिट्ठी दंसण नाणे सन्ना सरीरा य जोग उवओगे ।
दव्वपएसा पज्जव तीया आगामि सव्वद्धा ॥ २ ॥ "

(णेरइयाणं भंते ! किं गुरुया जाव अगुरुलहुया ?) હે ભદન્ત ! નારક જીવો ગુરુ હોય છે ? લઘુ હોય છે ? અથવા ગુરુલઘુ હોય છે ? અગુરુલઘુ

एवमेव 'सत्तमे घनोदही' सप्तमो घनोदधिः, सप्तमो घनोदधिरपि घनवातवद् व्याख्येयः, 'सत्तमा पुढवी' सप्तमी पृथिवीः, सप्तमी पृथिव्यपि घनवातवदेव व्याख्येया। 'उवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासंतरे' अवकाशान्तराणि सर्वाणि यथा सप्तममवकाशान्तरम्, सर्वेषामवकाशान्तराणां वक्तव्यता सप्तमावकाशान्तरवद् अगुरुलघुकरूपा विज्ञेया। 'सेसा जहा तणुवाए' शेषाः द्वीपादयो यथा तनुवातः, कथम्? 'एवं गुरुलहुए' एवं गुरुकलघुकः, यथा तनुवातः गुरुकलघुकरूपेण तृतीयपदेन कथितस्तथा द्वीपाः, सागराः, वर्षाण्यपि गुरुकलघुकरूपेण तृतीयपदेन व्याख्येयानि। संग्रहगाथार्द्धमाह—

'ओवास वाय-घण-उदही-पुढवी-दीवा य सागरा-वासा"।

छाया—अवकाशः वातो घनोदधिः पृथिवी द्वीपाश्च सागरा वर्षाणि।

तनुवातविषये यथा कथितं तथैव अवकाशवातघनोदधिपृथिवीद्वीपसागर

है किन्तु गुरुलघु है उसी प्रकार से सातमा घनवात भी न गुरु है, न लघु है, और न अगुरुलघु है, किन्तु गुरुलघु है। इसी तरह से सातमा घनोदधि भी घनवात की तरह है। सातमी पृथिवी भी घनवात की तरह ही है। तथा समस्त अवकाशान्तर संबंधी वक्तव्यता सप्तम अवकाशान्तर की तरह ही जाननी चाहिये। (सेसा जहा तणुवाए) शेष द्वीपादिक तनुवात की तरह गुरुलघु तृतीय पद से कहे गये हैं। यही बात (एवं गुरुयलहुए) इस पाठ द्वारा कही गई है। अर्थात् जितने भी द्वीप हैं। सागर हैं, और वर्ष हैं वे सब गुरुलघुरूप तृतीयपद से व्याख्यात हुए हैं। इस विषय में गाथार्द्ध इस प्रकार से है-"ओवास-वाय-घण उदही-पुढवी-दीवा य सागरा वासा" तनुवात के विषय में जैसा कहा गया है-उसी प्रकार से अवकाश वात घनोदधि-अर्थात्

સાતમુ ઘનવાત પણ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, અગુરુલઘુ નથી પણ ગુરુલઘુ છે. એ જ પ્રમાણે સાતમા ઘનોદધિ અને સાતમી પૃથ્વી વિષેનુ વક્તવ્ય પણ ઘનવાત પ્રમાણે જ સમજવું તથા તમામ અવકાશાન્તર સંબંધી વક્તવ્ય સાતમા અવકાશાન્તર પ્રમાણે જ સમજવું (सेसा जहा तणुवाए) બાકીના દ્વીપાદિકનુ વક્તવ્ય તનુવાત પ્રમાણે સમજવું, એટલે કે તેમને ગુરુલઘુ કહ્યા છે એમ સમજવું, એ જ વાત (एव गुरुयलहुए) સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામાં આવી છે એટલે કે બધા દ્વીપોને સાગરોને અને વર્ષોને ગુરુલઘુરૂપ ત્રીજા પદથી વર્ણવ્યા છે-એટલે કે તેઓ ગુરુલઘુ છે આ વિષયમા આ પ્રમાણે ગાથાર્દ્ધ છે-"ओवास, वाय, घणउदही-पुढवी, दीवाय सागरावासा" તનુવાતની બાબતમાં જે કથન થયુ છે તે કથન

वैक्रियवर्गणाश्च गुरुलघुका एव भवन्ति, तत्सम्बन्धात् कारणे गुरुलघुत्वात्कार्येऽपि गुरुलघुत्व एव भवति इति । तदुक्तम्—

' ओरालिय वेउव्विय आहारग तेय गुरुलहू दव्वा ' । इति ।

छाया—औदारिकवैक्रियाहारकतैजसानि गुरुलघुकानि द्रव्याणि ॥ " इति ।

औदारिकं वैक्रियकम् आहारकं तथा तैजसमित्यष्टसंपदं गुरुलघुद्रव्यमेवेति । 'जीवं च कम्मणं च पडुच्च णो गुरुया णो लहुया णो गुरुयलहुया अगुरुयलहुया' जीवं च कार्मणं च प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुकलघुकाः अगुरुकलघुकाः नारका जीवापेक्षया । कार्मणशरीरापेक्षया च अगुरुकलघुका एव जीवस्यारूपिद्रव्यत्वेनागुरुलघुस्वभावत्वात्, कार्मणशरीरस्य च कर्मवर्गणारूपत्वात्, कर्मवर्गणानां चागुरुलघुत्वादिति । तथोक्तम्—

वैक्रिय वर्गणाएँ गुरुलघुक ही होती हैं। इसलिये जब कारण गुरुलघुक हैं तो इनके कार्य भी गुरुलघुक ही होंगे। इसी अभिप्राय से नारक जीव " गुरुलघुक भी हैं " ऐसा कहा है। तदुक्तम्—

" ओरालिय वेउव्विय आहारग तेय गुरुलहू दव्वा "

औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस ये गुरुलघुक द्रव्य हैं। (जीवं च कम्मं च पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, णो गुरुयलहुया, अगुरुयलहुया) कार्मण शरीर की अपेक्षा नारक जीव न गुरु हैं, न लघु हैं और न गुरुलघु ही हैं किन्तु अगुरुलघु ही हैं। क्यों कि जीव अरूपी द्रव्य है इसलिये उसका स्वभाव अगुरुलघुरूप है। तथा जो कार्मण शरीर है वह कर्मवर्गणारूप है। और जो कर्मवर्गणाएँ हैं वे अगुरुलघुरूप होती हैं। तथा पोक्तम्—

અને વૈક્રિય વર્ગણાઓ ગુરુલઘુક હોય છે તેથી જો કારણ ગુરુલઘુ છે તો તેમના કાર્ય પણ ગુરુલઘુ જ હોય છે એટલા માટે નારક જીવો " ગુરુલઘુ પણ હોય છે " એમ કહેલ છે કહ્યું પણ છે કે—

" ओरालिय वेउव्विय आहारग तेय गुरुलहू दव्वा "

ઔદારિક વૈક્રિય, આહારક અને તૈજસ એ આઠ ગુરુલઘુ દ્રવ્યો છે. (जीवं च कम्मं च पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, णो गुरुयलहुया, अगुरुय लहुया) કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવ ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી ગુરુ લઘુ પણ નથી પરન્તુ અગુરુલઘુ જ કારણ કે જીવ અરૂપી દ્રવ્ય છે, તેથી તેનો સ્વભાવ અગુરુલઘુરૂપ છે તથા જે કાર્મણ શરીર છે તે કર્મવર્ગણારૂપ છે અને કર્મવર્ગણાઓ અગુરુલઘુરૂપ હોય છે કહ્યું પણ છે કે—

गुरुलघुका वा अगुरुलघुका वेति प्रश्नः। उत्तरयति भगवान्—'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'नो गुरुया' नो गुरुकाः 'नो लहुया' नो लघुकाः किन्तु 'गुरुलहुया वि' गुरुलघुका अपि 'अगुरुलहुया वि' अगुरुलघुका अपि, हे गौतम! नारका नो गुरुका न वा लघुकाः अपि तु गुरुलघुकास्तथा अगुरुलघुकाश्च-भवन्तीति 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन? उत्तरयति भगवान्-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'वेउव्विय तेयाइं पडुच्च' वैक्रियतैजसे शरीरे प्रतीत्य=अधिकृत्य 'णो गुरुया णो लहुया गुरुय लहुया' नो गुरुका नो लघुका गुरुकलघुका नो अगुरुलघुकाः, नारका वैक्रियतैजसशरीरे प्रतीत्य गुरुकलघुका एव यतो वैक्रियतैजसशरीरे वैक्रियतैजसवर्गणानिष्पादिते, वैक्रिय

"लघु और गुरुलघु" इन पदों का ग्रहण किया गया है। इस तरह से हे भदन्त! नैरयिक जीव क्या गुरु हैं? लघु हैं? या गुरु लघु रूप हैं अथवा अगुरुलघुरूप हैं? यह प्रश्न बन जाता है। (गोयमा!) हे गौतम! नारक जीव (नो गुरुया, नो लहुया) न गुरु हैं, न लघु हैं किन्तु (गुरुयलहुया वि अगुरुलहुया वि) गुरुलघु भी हैं और अगुरुलघु भी हैं। (से केणट्ठेणं?) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि नारक जीव न लघु हैं न गुरु हैं किन्तु गुरुलघु भी हैं और अगुरुलघु भी हैं? (गोयमा! वेउव्विय-तेयाइं पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया) हे गौतम! वैक्रियशरीर तैजस शरीर इन दो शरीरों की अपेक्षा करके नारक जीव न गुरु हैं, न लघु हैं किन्तु गुरुलघु हैं। अगुरुलघु नहीं है। तात्पर्य यह है कि नारक जीवों के तैजसशरीर कार्मणशरीर तथा वैक्रियशरीर ये ३ तीन शरीर होते हैं। सो तैजस एवं वैक्रिय शरीर तैजस और वैक्रिय वर्गणाओं से निष्पादित होते है। और ये तैजस

હોય છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! નારક જીવો (नो गुरुया, नो लहुया) ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, પરન્તુ (गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि) ગુરુલઘુ પણ હોય છે અને અગુરુલઘુ પણ હોય છે? (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા માટે એવુ કહો છો કે નારકજીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે? (गोयमा! वेउव्विय-तेयाइ पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया) હે ગૌતમ! વૈક્રિય અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ છે તાત્પર્ય એ છે કે નારક જીવોને તૈજસ કાર્મણ શરીર અને વૈક્રિય શરીર એ ત્રણ શરીર હોય છે. તૈજસ અને વૈક્રિય શરીરનુ નિર્માણ તૈજસ અને વૈક્રિય વર્ગણાઓથી થાય છે અને તે તૈજસ

पहितेपि ते गुरुत्वादयो न भवन्तीति भावः। 'से तेणट्ठेण' तत् तेनार्थेन गौतम ! एवं उच्यते यत् नारका न गुरुका न वा लघुकाः किन्तु गुरुकलघुका नो अगुरुलघुका इति, 'एव जाव वेमाणिया' एवं यावद्वैमानिका, असुरकुमारा दारभ्य वैमानिकदेवपर्यन्ता नारकदण्डकवदेव प्रत्येका योजनीय इति, 'णवरं णाणियव्वं सरीरेहिं' नानात्वं ज्ञातव्यं शरीरैः, वैमानिकादिषु गुरुत्वलघुत्वादि विचारे न सर्वथा साधर्म्यमपेक्ष्य किन्तु वैधर्म्यमपि विद्यते तद्देतुत्वेन शरीरान्येव ज्ञातव्यानि, यस्य यानि शरीराणि तस्य तानि शरीराणि ज्ञात्वा असुरकुमारादीनि सूत्राणि पठितव्यानीति भावः। तथादि असुरादिदेवास्तु नारकवदेव नारकसत्का

है। और यदि उपादि में गुरुत्व लघुत्व नहीं हों तो ताहश उपाधि से उपहितद्रव्य में भी गुरुत्व लघुत्व नहीं होते हैं। (से तेणट्ठेण) इस कारण से हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि नारक न गुरु हैं और न लघु हैं किन्तु गुरुलघुक भी हैं और अगुरुलघुक भी हैं। (एव जाव वेमाणिया) इसी प्रकार से असुरकुमार से लेकर वैमानिक देवपर्यन्त नारकदण्डक की तरह ही समझना चाहिये। (णवरं णाणियव्वं सरीरेहिं) परन्तु जो विशेषता है वह शरीरों को लेकर है। तात्पर्य यह है कि वैमानिक देवादिकों में जब गुरुत्व लघुत्व आदिका विचार किया जाता है तब उनमें सर्वथा समानता ही नहीं आती है किन्तु भिन्नता भी आती है और यह भिन्नता उनमें शरीर द्वार से आती है ऐसा जानना चाहिये अतः जिस के जो २ शरीर हैं उसके उन २ शरीरों को समझ कर असुरकुमार आदि सूत्र पढना चाहिये। जैसे-असुर

ન હોય તો તે પ્રકારની ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમા પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ હોતું નથી, (से तेणट्ठेण) હે ગૌતમ! તે કારણે મે એવુ કહ્યુ છે કે નારક જીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, પરતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે, (एवं जाव वेमाणिया) નારકના કહ્યા પ્રમાણે જ અસુરકુમારથી લઈને વૈમાનિકો સુધીની ગુરુતા, લઘુતા વગેરેના વિષયમાં સમજવુ. (णवरं णाणियव्वं सरीरेहिं) પણ જે વિશેષતા છે તે શરીરની અપેક્ષાએ છે, તાત્પર્ય એ છે કે વૈમાનિક દેવ વગેરેમા જ્યારે ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરેનો વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તેમનામા બધી રીતે સરખાઇ હોતી નથી, ભિન્નતા પણ હોય છે, તે ભિન્નતા શરીરની અપેક્ષાએ રહેલી હોય છે તેથી જેના જેવા જેવા શરીર હોય છે તેના તેવા તેવા શરીરોને સમજીને અસુરકુમાર વગેરે સૂત્રોનુ કથન કરવું જોઇએ, જેમકે-અસુરકુમાર વગેરે દેવો તો નારકો જેવા જ છે, તેથી વૈક્રિય

"कम्मण मण भासाइं एयाइ अगुरुलहुयाइं" कार्मण-मनो-भाषाः इमा सर्वा अपि वर्गणा अगुरुलघुका एव भवन्तीति। वैक्रियतैजसशरीरापेक्षया नारका गुरुलघुका भवंति, प्रयोजकयोः शरीरयोः वैक्रियतैजसयोर्गुरुलघुत्वेन तदवच्छिन्ने नारकेपि तयोर्गुरुत्वलघुत्वयोः संभवात्, जीवकार्मणापेक्षया च नारका अगुरुलघुका एव यतो जीवस्यारूपित्वं विद्यते कार्मणशरीरस्यापि अरूपित्वम्, अतः अगुरुलघुत्वमेव। एतदुक्तं भवति स्वस्वभावतस्तु जीवो न गुरु र्न वा लघुः किन्तु कर्मोपाधिवशात् तथा तथा-प्रतिभासते, यदि उपाधौ गुरुत्वं लघुत्वं भवेत्तदा तदुपहिते तस्मिन्नपि तद् भवति, यद्युपाधौ गुरुत्वादिकं न भवेत्तदा तादृशोपाध्यु-

"कम्मण मणभासाइं एयाइं अगुरुलहुयाइं।"

कार्माणवर्गणा मनोवर्गणा और भाषावर्गणा ये सब वर्गणाएँ अगुरुलघुक ही होती हैं अतः वैक्रिय और तैजस इन दो शरीरों की अपेक्षा से नारक जीव गुरुलघुक होते हैं। क्यों कि प्रयोजक वैक्रिय तैजस शरीर में गुरुता और लघुता होने से, तदवच्छिन्न-इन दो शरीरों से युक्त-नारकजीव में भी गुरुत्व और लघुत्व संभवता है। तथा-जीव और कार्माणशरीर की अपेक्षा से नारकजीव अगुरुलघुक ही होते है, क्यों कि जीव अरूपी होता है और कार्माणशरीर भी अरूपी होता है। इसलिये नारकजीव में अगुरुलघुत्व आता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जीव स्वभाव से न गुरु है और न लघु है किन्तु कर्मोपाधि के वश से वह उस उस रूपसे प्रतिभासित होता है। यदि उपाधिमें गुरुता है तो इस उपाधिसे उपहित द्रव्यमें भी गुरुता आ जाती है और यदि उपाधि में लघुता है तो उपाधि से उपहित (युक्त) द्रव्य में भी लघुता आ जाती

"कम्मण मणभासाइं एयाइं अगुरुलहुयाइं"

કાર્મણવર્ગણા મનોવર્ગણા અને ભાષાવર્ગણા, એ બધી વર્ગણાઓ અગુરુલઘુ જ હોય છે તેથી વૈક્રિય અને તૈજસ, એ બે શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવો ગુરુલઘુ હોય છે, કારણ કે પ્રયોજક વૈક્રિય અને તૈજસ શરીરમાં ગુરુતા અને લઘુતા હોવાથી, તે બે શરીરોથી યુક્ત નારક જીવોમા પણ ગુરુત્વ અને લઘુત્વ સંભવી શકે છે તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ નારક અગુરુલઘુજ હોય છે, કારણ કે જીવ અરૂપી હોય છે, તે કારણે નારક જીવોમા અગુરુત્વ લઘુત્વ પણ હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ સ્વભાવથી ગુરુ પણ નથી અને લઘુ પણ નથી, કર્મોપાધિને કારણે તે ગુરુ અથવા લઘુરૂપે પ્રતિભાસિત થાય છે જો ઉપાધિમા ગુરુતા હોય તો તે ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમા પણ ગુરુતા આવી જાય છે, જો ઉપાધિમા લઘુતા હોય તો તે ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમા પણ લઘુતા આવી જાય છે, અને જો ઉપાધિમા ગુરુત્વ વગેરે

कार्मणापेक्षया चागुरुलघुका' । मनुष्यास्तु औदारिक-वैक्रिय-तैजसाहारकशरीराणि प्रतीत्य गुरुलघव', जीवकार्मणापेक्षया चागुरुलघवो भवंतीति । ' धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए ' धर्मास्तिकाय यावत् जीवास्तिकायः, इह यावत्पदेन अधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायपर्यन्तग्रहणं कर्तव्यम्, ' चउत्थपएणं ' चतुर्थपदेन धर्मास्तिकायादारभ्य जीवास्तिकायपर्यन्तानां चतुर्थपदेन ' अगुरुलहुए ' इत्यनेन वक्तव्या शेषाणां निषेध एव कर्तव्य, धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायजीवास्तिकाया यावन्मात्रं प्रमाणमाश्रयी वक्तव्य इति, नामरूपित्वेनागुरुलघुत्वस्यैव समत्वात् इति । ' पोग्गत्थिकाएणं भंते ' पुद्गलास्तिकाय खलु भदन्त!

आहारक शरीर नहीं होता। अतः औदारिक, वैक्रिय और तैजस इन तीन शरीरों की अपेक्षा से इनमें गुरुलघुता और जीव तथा कार्मण शरीर की अपेक्षा से इनमें अगुरुलघुता आती है ऐसा जानना चाहिये। मनुष्य में पांचों ही शरीर हो सकते हैं-अतः इनमें औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजसशरीर की अपेक्षा से गुरुलघुता और जीव एवं कार्मणशरीरकी अपेक्षामें अगुरुलघुता आती है ऐसा जानना चाहिये। इस तरह असुरकुमार से लेकर यावत् वैमानिक देवपर्यन्त शरीरों को लेकर गुरुलघुता तथा अगुरुलघुता प्रकट की गई है। (धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएणं) धर्मास्तिकाय यावत् जीवास्तिकाय चौथे पद से उपलक्षित जानना चाहिये। तात्पर्य इसका यह है कि धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल और जीवास्तिकाय इनमें आदि के गुरु, लघु और गुरुलघु ये तीन भंग नहीं है केवल अगुरुलघु जो

આહારક શરીર હોતું નથી. તેથી ઔદારિક, તૈજસ અને વૈક્રિય એ ત્રણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં ગુરુલઘુતા હોય છે અને જીવ તથા કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં અગુરુલઘુતા હોય છે, એમ સમજવું મનુષ્યોમાં પાંચે શરીર હોઈ શકે છે તેથી ઔદારિક તૈજસ, વૈક્રિય અને આહારક શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં ગુરુલઘુતા હોય છે અને જીવ તથા કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ મનુષ્યોમાં અગુરુલઘુતા હોય છે એમ સમજવું આ રીતે અસુરકુમારોથી લઈને વૈમાનિક દેવો સુધીના શરીરોની અપેક્ષાએ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે (धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएणं) ધર્માસ્તિકાયથી લઈને જીવાસ્તિકાય સુધીનું ચોથું પદ ગ્રહણ કરવું જોઈએ કે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય આકાશાસ્તિકાય કાળ અને જીવાસ્તિકાયમાં ગુરુલઘુતાના ત્રણ ભાંગા નથી પણ એકજ ભાંગો હોય છે. એટલે કે તેઓ ગુરુ નથી લઘુ નથી, ગુરુલઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુ છે એમ કહ્યું છે તે બધા પ્રદેશો અરૂપી છે

वैक्रियतैजसशरीरापेक्षया गुरुलघुकाः, जीवकार्मणापेक्षया चागुरुलघुका ज्ञातव्याः। पृथिव्यादिजीवास्तु पृथिव्यप्तेजोवनस्पतिजीवास्तु औदारिकतैजसशरीरे प्रतीत्य गुरुलघवो ज्ञातव्यास्तादृशशरीरयोर्गुरुलघुत्वेन तद्विशिष्टजीवस्यापि तथात्वसंभवात्, जीवं कार्मणं च शरीरं प्रतीत्यागुरुलघवः, एतयोरूपित्वेनागुरुलघुत्वात्, वायुकायास्तु औदारिक-वैक्रियतैजसशरीराणि प्रतीत्य गुरुलघवः जीवकार्मणापेक्षया अगुरुलघवः एवं पञ्चेन्द्रियतिर्यंचोपि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनयो वायुकायवद् औदारिक-वैक्रिय-तैजसशरीराण्याश्रित्य गुरुलघुकाः। एवं जीव

आदि देव तो नारक की तरह ही है-अतः वैक्रिय तैजस शरीर की अपेक्षा से ये गुरुलघुक होते हैं तथा जीव और कार्मण शरीर की अपेक्षा से ये अगुरुलघुक होते हैं ऐसा जानना चाहिये। तथा-पृथिवीजीव, अप्जीव, तेजोजीव, वनस्पतिजीव ये सब औदारिक तैजस शरीर की अपेक्षा गुरुलघु होते हैं क्यों कि ये दोनों शरीर गुरुलघु हैं, इसलिये इन दोनों शरीरों से युक्त होने के कारण इन जीवों में भी तथा रूपता का संभव होता है। तथा-जीव और कार्मण शरीर को लेकर इनमें अगुरुलघुता आती है। क्यों कि ये दोनों अरूपी हैं। वायुकायिक जो जीव हैं इनमें-औदारिक शरीर, वैक्रियशरीर और तैजस की अपेक्षा गुरुलघुता आती है और जीव तथा कार्मणशरीर की अपेक्षा इनमें अगुरुलघुता आती है। इसी तरह से पंचेन्द्रिय जो तिर्यंच जीव हैं उनमें भी वायुकाय की तरह गुरुलघुता और अगुरुलघुता आती है। क्यों कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों में औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण ये चार होता है।

અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ ગુરુલઘુ હોય છે, તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ અગુરુલઘુ હોય છે, એમ સમજવું. તથા-પૃથિવીકાયના જીવો, અપ્કાયના જીવો, તેજસ્કાયના જીવો અને વનસ્પતિકાયના જીવો, એ બધા જીવો ઔદારિક અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ ગુરુલઘુ હોય છે, કારણ કે તે બન્ને શરીર ગુરુલઘુ છે તેથી તે બે શરીરોથી યુક્ત હોવાને કારણે તે જીવોમા પણ ગુરુલઘુપણુ સમ્ભવી શકે છે તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા અગુરુલઘુપણુ હોય છે, કારણ કે તે બન્ને અરૂપી છે વાયુકાયિક જીવોમા ઔદારિક શરીર, વૈક્રિય શરીર અને તૈજસશરીરની અપેક્ષા ગુરુલઘુતા હોય છે, પણ જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા અગુરુલઘુતા હોય છે એ જ પ્રમાણે જે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ જીવો છે તેમનામા પણ વાયુકાયની જેમ જ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા હોય છે, કારણ કે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોને ઔદારિક, વૈક્રિય અને તૈજસ અને કાર્મણ શરીર હોય છે-

दव्वेहिं पडुच्च ' गुरुकलघुकद्रव्याणि औदारिकादीनि चत्वारि शरीराणि भवतीत्य
=भाषित्व ' णो गुरुए ' नो गुरुकः, ' णो लहुए ' नो लघुक, पुद्गलास्तिकायः
औदारिकादिशरीरापेक्षया न गुरु र्न वा लघुरिति भावः, किन्तु ' गुरुलहुए '
गुरुकेघुकः ' णो अगुरुयलहुए ' नो अगुरुकलघुकः, ' अगुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च '
अगुरुकलघुकद्रव्याणि भवीत्य, अगुरुकलघु द्रव्याणि=कार्मणद्रव्याणि, तानि भाषित्व
' णो गुरुए णो लहुए णो गुरुय लहुए ' नो गुरुकः नो लघुको नो गुरुकेघु
कोऽपि तु ' अगुरुयलहुए ' अगुरुकलघुकः पुद्गलास्तिकाय इति । ' समया कम्माणि
य चउरत्थेण ' समया कर्माणि च चतुर्थपदेन, समया=कालविभागा अमूर्ता,
कर्माणि=कार्मणवर्गणाद्रव्याणि एषामगुरुकलघुत्वम्, ' फरसेहिं सा य भवे ' इत्य-

---

दव्वाइं पडुच्च णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए, णो अगुरुयलहुए) गुरुकलघु द्रव्यों की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय न गुरु है न लघु है न अगुरुकलघु है किन्तु गुरुकलघु है । यहां गुरुकलघुक द्रव्य से औदारिक आदि चार शरीर लिये गये हैं । इन चार शरीर की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय न गुरु है, न लघु है, न अगुरुकलघुरूप है किन्तु यह गुरुकलघुरूप है । (अगुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए, णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरुलहुए) अगुरुकलघु द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय न गुरु है न लघु है, और न गुरुलघु है किन्तु अगुरुकलघुरूप है । यहां अगुरुकलघुद्रव्य से कार्मणद्रव्य लिये गये हैं । क्योंकि कार्मणद्रव्य अगुरुकलघुरूप होता है यह बात अभी प्रकट की जा चुकी है । अतः कार्मण द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय अगुरुकलघुरूप प्रकट किया है । (समया कम्माणि य चउरत्थेण) समय-कालविभाग, और कार्मण वर्गणारूप कर्म ये सब अगुरु-

---

उत्तर—(गुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए णो लहुए, गुरुयलहुए, णो अगुरुयलहुए) गुरु लघु द्रव्योनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय गुरु पण नथी लघु पण नथी, अगुरुलघु पण नथी, परन्तु गुरुलघु छे, अहीं गुरुलघु द्रव्यथी औदारिक वगेरे चार शरीर लेवामा आव्या छे ते चार शरीरनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय गुरु पण नथी, लघु पण नथी, अगुरुलघु पण नथी, परंतु गुरुलघुरूप ज छे (अगुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए) अगुरुलघु द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकाय गुरु पण नथी, लघु पण नथी, गुरुलघु पण नथी परंतु अगुरुलघु छे अहीं अगुरुलघु द्रव्यथी कार्मणद्रव्य लेवामा आवेल छे माटे ते कार्मणद्रव्य अगुरुलघुरूप होय छे, ए बात थोडा समयमां ज प्रकट करवा मां आवी छे तेथी समय द्रव्यनी अपेक्षाओ पुद्गलास्तिकायने अगुरुलघुरूप बताव्यु छे (समया कम्माणि य चउरत्थेण) समय-कालविभाग, अने कार्मणवर्गणारूप कर्म छे

'किं गुरुए' किं गुरुकः, 'लहुए' लघुकः 'गुरुयलहुए' गुरुकलघुकः 'अगुरुलहुए' अगुरुलघुकः ? उत्तरयति भगवान्-'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'णो गुरुए' नो गुरुकः 'णो लहुए' नो लघुकः, 'गुरुलहुए वि' गुरुलघुकोपि। 'अगुरुलहुए वि' अगुरुलघुकोऽपि हे गौतम! पुद्गलास्तिकायो न गुरु र्न वा लघुः किन्तु गुरुलघुरपि अगुरुलघुरपि भवति, तथा च प्रथमद्वितीय भंगौ न ग्रहीतव्यौ किन्तु तृतीयचतुर्थयोरेव ग्रहणं कर्तव्यम्। पुद्गलास्तिकायविषये उत्तरं निश्चनयानुसारेण ज्ञातव्यम्, एतन्मते कोपि पदार्थः एकान्ततो न गुरु र्न वा लघु र्भवतीति। 'से केणट्ठेणं भंते' तत्केनार्थेन हे भदन्त! केन कारणेन एवमुच्यते, पुद्गलास्तिकायो न गुरु र्न वा लघु किन्तु गुरुलघुकोऽगुरुलघुकश्चेति, उत्तरयति भगवान्-'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'गुरुयलहुय-

चौथा भंग है वही है। क्यों कि ये सब अरूपी द्रव्य हैं। (पोग्गत्थिकाए णं भंते! किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) हे भदन्त! पुद्गलास्तिकाय क्या गुरु है, अथवा लघु है? या गुरुलघु हैं? कि अगुरुलघु है? (गोयमा! णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए वि, अगुरुलहुए वि) हे गौतम! पुद्गलास्तिकाय न गुरु है, न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। इस तरह यहां प्रथम भंग और द्वितीय भंग ग्रहण नहीं करना चाहिये, किन्तु तृतीय और चतुर्थ भंग ही यहां ग्रहण करना चाहिये। पुद्गलास्तिकाय में उत्तर निश्चयनय के अनुसार ही जानना चाहिये-निश्चयनय की मान्यतानुसार कोई भी पदार्थ एकान्ततः न गुरु है और न एकान्ततः लघु ही है। (से केणट्ठेणं भंते!) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि पुद्गलास्तिकाय न गुरु है और न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। (गुरुयलहुय-

(पोग्गत्थिकाए णं भंते! किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए अगुरुयलहुए?) હે ભગવન્! પૌદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ છે? લઘુ છે? અથવા ગુરુલઘુ છે? કે અગુરુલઘુ છે? (गोयमा णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुये वि, अगुरुलहुए वि) હે ગૌતમ! પૌદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પણ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે આ રીતે અહી પહેલા અને બીજા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો નથી પણ ત્રીજા અને ચોથા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો છે પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં જે ઉત્તર આપ્યો છે તે નિશ્ચયનયના મતાનુસાર સમજવો. નિશ્ચયનયની માન્યતાનુસાર કોઈ પણ પદાર્થ એકાન્તપણે ગુરુ પણ નથી અને એકાન્તપણે લઘુ પણ નથી (से केणट्ठेणं भंते!०) હે ભગવન્! આપ શા માટે એવુ કહો છો કે પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ નથી, લઘુ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે.

वर्णो औदारिकं च गुरुलघु इति कृत्वा कृष्णलेश्या गुरुलघुका वाच्या । 'भाव लेस्सं पडुच्च' भावलेश्यां प्रतीत्य 'चउत्थपएणं' चतुर्थपदेन, कृष्णलेश्या ज्ञातव्या, भावलेश्या जीवपरिणतिरूपा, जीवपरिणतिश्चामूर्ता, इत्यतो भावापेक्षया कृष्णलेश्या अगुरुलघुरेव भवतीति भावः । 'एव जाव सुक्कलेस्सा' एव यावत् शुक्ललेश्या ज्ञातव्या, 'दिट्ठी' दृष्टि 'दसण' दर्शनम् 'नाण' ज्ञानम् 'अन्नाण' अज्ञानम् सन्ना' संज्ञाः 'चउत्थ पएण णेयव्वाओ' चतुर्थपदेन अगुरुलघुपदेन नेतव्या ज्ञातव्या, 'हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णेयव्वा तईएण पएण' अधस्तनानि चत्वारि शरीराणि ज्ञातव्यानि तृतीयेन पदेन, अधस्तानि औदारिक-वैक्रियकार्मण-तैजस शरीराणि, तृतीयपदेन गुरुलघुकेन ज्ञातव्यानि, औदारिकादिचतु शरीराणाम् गुरुलघुवर्गणास्वरूपत्वात्, कम्मणं च चउत्थेणं पएणं ' कार्मणं च चतुर्थेन पदेन

आदि शरीरों का जो काला रंग है वह द्रव्यतः कृष्णलेश्या है। औदारिक आदि शरीर गुरुलघु होते हैं, अतः कृष्णलेश्या गुरुलघु होती है। जीवों की परिणतिरूप भावलेश्या होती है। अतः भावलेश्या की अपेक्षा से विचार करने पर वह कृष्णलेश्या अगुरुलघुरूप होती है। क्यों कि जीव की परिणति अमूर्त है। (एव जाव सुक्कलेस्सा) इस तरह से यावत् शुक्ललेश्या तक जानना चाहिये। (दिट्ठीदंसण-णाणअण्णाण सन्नाओ चउत्थपएणं णेयव्वाओ) तथा-दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान और संज्ञा ये सब चतुर्थपद से अगुरुलघुरूप जानना चाहिये। (हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णेयव्वा तईएणं पएणं) नीचे के चार शरीर औदारिक, वैक्रिय, कार्मण और तैजस-तृतीयपद से गुरुलघुरूप जानना चाहिये। क्यों कि ये चार शरीर गुरुलघु वर्गणारूप होते हैं। (कम्मणं च चउत्थेणं पएणं)

કાળો રંગ હોય છે તે દ્રવ્યથી કૃષ્ણલેશ્યા છે ઔદારિક વગેરે શરીર ગુરુલઘુ હોય છે, તેથી કૃષ્ણલેશ્યા પણ ગુરુલઘુ હોય છે જીવોની પરિણતિરૂપ ભાવ લેશ્યા હોય છે તેથી ભાવલેશ્યાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે કૃષ્ણલેશ્યા અગુરુલઘુ રૂપ હોય છે કારણ કે જીવની પરિણતિ અમૂર્ત છે (एव जाव सुक्कलेस्सा) એ જ પ્રમાણે શુકલલેશ્યા સુધીની લેશ્યાઓ વિષે પણ સમજવું (दिट्ठी-दंसण-नाणअण्णाणसन्नाओ चउत्थपएणं णेयव्वाओ) તથા— દૃષ્ટિ, દર્શન જ્ઞાન, અજ્ઞાન અને સંજ્ઞા, એ બધામાં કહેવા પદને અર્થ કરવું જોઈએ કે તેમને અગુરુલઘુ સમજવા. (हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णेयव्वा तईएणं पएणं) નીચેના ચાર શરીરને ઔદારિક વૈક્રિય, આહારક તૈજસ શરીરોને ત્રીજા પદથી ગુરુલઘુરૂપ સમજવા કારણ કે તે ચારે શરીર ગુરુલઘુવર્ગણા રૂપ હોય છે (कम्मणं च चउत्थेणं पएणं) કાર્મણ શરીરને અગુરુલઘુરૂપ

लेश्या खलु भदन्त ! 'किं गुरुया' किं गुरुकाः 'जाव अगुरुयलहुया' यावत् अगुरुलघुकाः, यावत्पदेन लघुकाः गुरुलघुका वेत्यस्य भंगद्वयस्य ग्रहणं कर्तव्यम् इति प्रश्नः। उत्तरयति भगवान्-'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो गुरुया' नो गुरुकाः 'णो लहुया' नो लघुकाः किन्तु 'गुरुयलहुया वि' गुरुकलघुका अपि तथा 'अगुरुलहुया वि' अगुरुलघुका अपि। 'से केणट्ठेण' तत्केनार्थेन एवमुच्यते ? उत्तरयति भगवान्-'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'दव्वलेस्सं-पडुच्च' द्रव्यलेश्यां प्रतीत्य 'तइयपएणं' तृतीयपदेन द्रव्यलेश्या-माश्रित्य कृष्णलेश्या तृतीयपदेन गुरुलघुरूपेण वाच्या। द्रव्यलेश्या पेक्षया कृष्णलेश्या गुरुलघुका भवति। द्रव्यतः कृष्णलेश्या औदारिकादिशरीर-

---

लघुरूप है। (कण्हलेस्साणं भंते ! किं गुरुया, जाव अगुरुयलहुया ?) हे भदन्त ! कृष्णलेश्या क्या गुरु है, अथवा लघु है, या गुरुलघु है कि अगुरुलघु है ? (गोयमा ! णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि) हे गौतम ! कृष्णलेश्या न गुरु है, न लघु है, किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कृष्णलेश्या न गुरु है, न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। (गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएणं, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं) हे गौतम ! द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से कृष्णलेश्या गुरुलघुक है और भावलेश्या की अपेक्षा से वह चतुर्थपदरूप जो अगुरुलघुक है उस स्वरूप है। कृष्णलेश्याएँ द्रव्य और भाव की अपेक्षा से दो प्रकार की होती हैं। इनमें द्रव्य की अपेक्षा कृष्णलेश्या औदारिक आदि शरीरों के वर्णरूप होती है। अर्थात्-औदारिक

(कण्हलेस्साण भंते ! किं गुरुया, जाव अगुरुयलहुया ?) હે ભગવન્ ! કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ છે, લઘુ છે, ગુરુલઘુ છે, કે અગુરુલઘુ છે ? (गोयमा ! णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ નથી, લઘુ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્ ? આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે ? (गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएणं, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યલેશ્યાની અપેક્ષાએ કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલઘુ છે અને ભાવલેશ્યાની અપેક્ષાએ તે અગુરુલઘુ છે અહીં ત્રીજા પદથી ગુરુલઘુ અને ચોથા પદથી અગુરુલઘુ ગ્રહણ કર્યું છે કૃષ્ણ વગેરે લેશ્યાઓ દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાએ બે પ્રકારની હોય છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કૃષ્ણલેશ્યા ઔદારિક વગેરે શરીરોના વર્ણરૂપ હોય છે, એટલે કે ઔદારિક વગેરે શરીરોનો જે

वामेव निर्विभागा अंशा । सर्वपर्यवा वर्णोपयोगादयो द्रव्यधर्मा एते सर्वे पुद्गलास्तिकाय वद् व्यपदेश्याः गुरुत्वलघुत्वेनागुरुलघुत्वेन चेरपर्यं यत्र सूक्ष्माणि अमूर्तानि च द्रव्याणि अगुरुलघूनि, इतराणि बादराणि मूर्त्तानि च गुरुलघूनि भवेयुः पर्यवास्तु तत्तद्द्रव्य संबन्धित्वेन तत्तत्स्वभावा इति । 'तीयद्धा' अतीताद्धा अतीतकाल इत्यर्थः, 'अणागयद्धा अनागताद्धा, अनागतकाल इत्यर्थः, 'सव्वद्धा' सर्वाद्धा सर्वकाल इति यावत् , चउत्थेणं पएणं ' चतुर्थेन पदेन अगुरुलघुकेन अतीतानागतसर्वकालाश्रयेण पदेन ज्ञातव्या अगुरुलघुकाः ज्ञातव्याः स्वभावत एव कालस्य गुरुत्वलघुत्वागुरुलघुत्वानामभावादित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

अथ निर्ग्रन्थ प्रकरणम् ।

इतः पूर्वप्रकरणे गुरुत्वलघुत्वयो र्विचारः कृत इति गुरुत्वलघुत्वयो र्धर्मास्तिकायादिपदार्थविशेषे एव इदं सूत्रमाह—' से णूणं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—से णूणं भंते लाघवियं अपिच्छा अमुच्छा अगेही अपडिबद्धया समणाणं णिग्गंथाणं पसत्थं । हंता गोयमा !

द्रव्य हैं । इसके जो निर्विभाग अंश हैं वे प्रदेश है, वर्ण उपयोग आदि जो हैं वे द्रव्य के धर्म हैं । जो सूक्ष्म और अमूर्तद्रव्य हैं वे अगुरुलघु हैं और जो बादर एवं मूर्तद्रव्य हैं वे गुरुलघु हैं । प्रदेश और पर्याय ये दोनों भिन्न २ द्रव्यों के साथ रहने के कारण—तत्तद्द्रव्य संबंधी होने से तत्तत्स्वभावरूप जानना चाहिये । (तीयद्धा अणागयद्धा, सव्वद्धा चउत्थेणं पएणं) अतीतकाल, अनागतकाल और सर्वाद्धा ये सब—चतुर्थ पद से कहना चाहिये । क्यों कि काल में स्वभावतः ही गुरुत्व, लघुत्व और गुरुलघुत्व इनका अभाव रहता है ॥ सू-२ ॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય જેવા જ સમજવા દ્રવ્ય શબ્દથી ધર્માસ્તિકાય વગેરેને બતાવ્યા છે, તેમના જે અવિભાજ્ય અંશ છે પ્રદેશ છે અને વર્ણ, ઉપયોગ વગેરે દ્રવ્યના ધર્મો છે જે સૂક્ષ્મ અને અમૂર્ત દ્રવ્ય છે તે અગુરુલઘુ હોય છે, અને જે બાદર (સ્થૂળ) અને મૂર્તદ્રવ્ય છે તે ગુરુલઘુ હોય છે પ્રદેશ અને પર્યાય જે બને જુદા જુદા દ્રવ્યોની સાથે રહેવાને કારણે-તે તે દ્રવ્ય સંબંધી હોવાને કારણે તે તે સ્વભાવરૂપ સમજવા (તીયદ્ધા અણાગયદ્ધા, સવ્વદ્ધા ચઉત્થેણં પએણં) અતીતકાળ (ભૂતકાળ) અનાગતકાળ (ભવિષ્યકાળ) અને સર્વાદ્ધા (વર્તમાનકાળ) એ બધાને ગુરુલઘુ કહેવા જોઇએ, કારણ કે કાળમાં સ્વભાવથી જ ગુરુત્વ, લઘુત્વ અને ગુરુલઘુત્વનો અભાવ રહે છે ॥ સૂ-૨ ॥

कार्मणशरीरस्यागुरुलघुद्रव्यात्मकत्वात् चतुर्थपदेनागुरुलघुकेनैव संग्रहसंभवात्, 'मणजोगो वयजोगो चउत्थएणं पएणं' मनोयोगो वचोयोगश्चतुर्थकेन पदेन, मनोयोगवचोयोगौ चतुर्थपदेन वक्तव्यौ तद्द्रव्याणामगुरुलघुत्वादिति, 'कायजोगो तइएणं पएणं' काययोगस्तृतीयेन पदेन, काययोगः कार्मणवर्जितस्तृतीयपदेन गुरुलघुकेन ज्ञातव्यस्तद्द्रव्याणां गुरुलघुत्वादिति 'सागारोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं' साकारोपयोगः अनाकारोपयोगश्चतुर्थपदेन इमौ द्वावपि उपयोगौ चतुर्थपदेनागुरुलघुकेन ज्ञातव्यौ, उपयोगा अरूपित्वेन अगुरुलघवो भवंति इति भावः। 'सव्वदव्वा सव्वपएसा सव्वपज्जवा जहा पोग्गलात्थिकाओ' सर्वद्रव्याणि सर्वप्रदेशाः सर्वपर्यवाः यथा पुद्गलास्तिकायः, तत्र सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि सर्वप्रदेशास्ते-

---

कार्मणशरीर चतुर्थपद से अगुरुलघुरूप जानना चाहिये। क्यों कि वह अगुरुलघुद्रव्यात्मक होता है। (मणजोगो वइजोगो चउत्थएणं पएणं) मनयोग, वचनयोग ये दोनों चतुर्थपद जो अगुरुलघुपद है उससे कहना चाहिये। क्यों कि इनके द्रव्य अगुरुलघु होते है। काय जोगो तइएणं पएणं) काययोग तृतीयपद जो गुरुलघु पद है उससे कहना चाहिये। यहां कार्मण काययोग छोड़ देना अर्थात् वह गुरुलघुक पद से नहीं कहना चाहिये। बाकी के ६ काययोग तृतीय पद से कहना चाहिये। क्यों कि इनके द्रव्य गुरुलघु होते हैं। (सागरोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं) साकारोपयोग–ज्ञान, अनाकारोपयोग–दर्शन ये दोनों चतुर्थपद से — अगुरुलघुपद से कहना चाहिये। क्यों कि उपयोग अमूर्त्त होते हैं। इस कारण वे अगुरुलघु होते हैं। (सव्वदव्वा, सव्वपएसा, सव्वपज्जवा, जहा पोग्गलात्थिकायो) सर्वद्रव्य, सर्वप्रदेश, सर्वपर्यायें, पुद्गलास्तिकाय की तरह जानना चाहिये। धर्मास्तिकायादिक

સમજવુ, અહી ચોથા પદથી "અગુરુલઘુ" ગ્રહણ કરાયુ છે, કારણ કે કાર્મણ શરીર અગુરુલઘુ દ્રવ્યાત્મક હોય છે (મણજોગો વઇજોગો ચ ચઉત્થેણં પણ) મનોયોગ અને વચનયોગ, એ બન્નેને અગુરુલઘુ હોય છે. (કાયજોગો તઇએણ પણં) કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવો જોઇએ, અહી કાર્મણ કાયયોગને ગ્રહણ કરવાનો નથી એટલે કે કાર્મણ કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવો જોઇએ નહી બાકીના છ કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવા જોઇએ, કારણ કે તેમના દ્રવ્ય ગુરુલઘુ હોય છે (સાગરોવઓગો અણાગારોવઓગો ચઉત્થપએણં) સાકારોપયોગ–જ્ઞાન, અનાકારોપયોગ–દર્શન, એ બન્નેને અગુરુલઘુ કહેવા જોઇએ, કારણ કે ઉપયોગ અમૂર્ત્ત હોય છે, તેથી તેઓ અગુરુલઘુ હોય છે (સવ્વદવ્વા, સવ્વપએસા, સવ્વપજ્જવા, જહા પોગલાત્થિકાયો) સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ, અને સર્વપર્યાયોને

सावो लाघवं लाघवमेव लाघविकम् अल्पोपधित्वं 'अपिच्छा' अल्पेच्छा, अल्पा इच्छा अभिलाषा आहारादिषु इत्यल्पेच्छा, 'अमुच्छा' अमूर्छा, उपध्यादिरक्षणादि विषयकमूर्च्छारहितत्वम्, 'अगेही' अगृद्धिः, आहारादिषु परिभोगकाले आसक्तिरहितत्वम्। 'अपडिबद्धया' अप्रतिबद्धता=सांसारिक वस्तुजातादिषु स्नेहाभावः, एतत् लाघविकाल्पेच्छाऽमूर्च्छाऽगृद्ध्यप्रतिबद्धतेति पञ्चकम् 'समणाणं' श्रमणानाम् 'निग्गंथाणं' निर्ग्रन्थानाम् 'पसत्थं' प्रशस्तम्, सुन्दरम् कल्याणकरं भवति किम्? इति प्रश्नः। भगवानाह—'हंता गोयमे' त्यादि। 'हंता गोयमा' इत्यत्र हे गौतम! 'लाघविए जाव पसत्थं' लाघविकं यावत् प्रशस्तम्, यावत्पदेन —'अल्पेच्छाऽमूर्च्छाऽगृद्ध्यप्रतिबद्धता श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम्' इति सङ्ग्राह्यम्! हे गौतम! श्रमणानां निर्ग्रन्थानां लाघविकादिकं सर्वं प्रशस्तमेव, एतदेव श्रमणानां

अगिद्धि अपडिबद्धया, समणाणं निग्गंथाणं पसत्थं) लाघविक-अल्प उपधि रखने रूप लघुता, तथा अपिच्छा—आहार आदिकों में अल्पइच्छा, अमुच्छा—उपधि आदि के रक्षण करने रूप मूर्च्छासे रहितपना, अगेही आहार आदिके उपभोग कालमें अगृद्धिपन, और अप्रतिबद्धता—बांधव आदिकों के ऊपर स्नेह का अभाव होना सो ये लाघविक, अपेच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धि और अप्रतिबद्धता पांच बातें श्रमण निर्ग्रन्थों का कल्याण करनेवाली होती हैं क्या? (हंता गोयमा लाघविए जाव पसत्थं) हां गौतम! ये लाघव आदि पांच बातें श्रमण निर्ग्रन्थों का कल्याण करनेवाली होती हैं। यहां यावत् शब्द से "अल्पेच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धि और अप्रतिबद्धता" इनका ग्रहण हुआ है। हे गौतम! श्रमण निर्ग्रन्थों का कल्याण करनेवाली ये लाघवादिक पांच बातें हैं। यही श्रमणों की

अगेही अपडिबद्धया समणाणं निग्गंथाणं पसत्थं?) લાઘવિક-અલ્પ ઉપધિ રાખવા રૂપ લઘુતા, અપિચ્છા-અલ્પેચ્છા, અમૂર્છા અગૃદ્ધિ અને અપ્રતિબદ્ધતા, એ પાંચે બાબતો શું શ્રમણનિર્ગ્રન્થોને માટે પ્રશસ્ત (કલ્યાણકારી) હોય છે? એ પાંચે પદોના અર્થ નીચે મુજબ છે લાઘવિક એટલે અલ્પ ઉપધિ રાખવા રૂપ લઘુતા અપિચ્છા એટલે આહાર વગેરેની અલ્પ ઇચ્છા અમૂર્છા એટલે ઉપધિ વગેરેની રક્ષા કરવાની આસક્તિ ન હોવી તે અગૃદ્ધિ એટલે આહાર વગેરેમાં લાલસાનો અભાવ, અપ્રતિબદ્ધતા એટલે સ્વજનોમાંના પ્રત્યે સ્નેહ (મોહ) નો અભાવ (हंता गोयमा! लाघविए जाव पसत्थं) હે ગૌતમ! લાઘવ વગેરે પાંચ બાતો શ્રમણનિર્ગ્રન્થો માટે પ્રશસ્ત-કલ્યાણકારી હોય છે यावत् પદથી 'अल्पेच्छा अमूर्च्छा, अगृद्धि અને અપ્રતિબદ્ધતા' ગ્રહણ કરાયા છે હે ગૌતમ! શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોનું કલ્યાણ કરનારી તે લાઘવાદિક પાંચ બાતો છે એમાં જ શ્રમણોની પ્રશસ્તતા

लाघवियं जाव पसत्थं। से णूणं भंते ! अकोहत्तं अमायत्तं अलोभत्तं समणाणं णिग्गंथाणं पसत्थं । हंता गोयमा ! अकोहत्तं अमाणत्तं जाव पसत्थं । से णूणं भंते ! कंखपओसेणं खीणे समणे णिग्गंथे अंतकरे भवइ, अंतिमसरीरिए वा बहुमोहे वि य णं पुव्विं वि हरित्ता अहपच्छा संवुडे कालं करेइ, तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ सव्व दुक्खाणं अंतंकरेइ, हंता गोयमा ! कंखपओसे खीणे जाव अंतं करेइ ॥ सू० ३ ॥

छाया–तद् नूनं भदन्त ! लाघविकम् अल्पेच्छा अमूर्च्छा अगृद्धिरप्रतिबद्धता श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम् प्रशस्तम्? हन्त गौतम ! लाघविकं यावत् प्रशस्तम्। तद् नूनं भदन्त ! अक्रोधत्वममानत्वममायत्वमलोभत्वं श्रमणानां निर्ग्रन्थानां प्रशस्तम् ? हन्त गौतम ! अक्रोधत्वममानत्वं यावत् प्रशस्तम् । तद् नूनं भदन्त ! काँक्षामदोषे क्षीणे श्रमणो निर्ग्रन्थोऽन्तकारो भवति, अंतिमशरीरको वा भवति, बहुमोहश्चापि पूर्वं विहत्य, अथ पश्चात् संवृतः कालं करोति ततः पश्चात् सिद्धयति बुद्ध्यते मुच्यते परिनिर्वाति सर्वदुःखानामन्तं करोति?, हन्त गौतम ! कांक्षाप्रदोषे क्षीणे यावदन्तं करोतीति ॥ सू० ३ ॥

टीका—' से णूण भंते ! ' तद् नूनं भदन्त ! 'लाघवियं' लाघविकम् लघो-

---

निर्ग्रन्थप्रकरण–

इससे पूर्वप्रकरण में गुरुत्व और लघुत्व इनका विचार किया गया है। अतः उन्हीं का प्रकरण चलता है इस कारण उसी विषय में सूत्रकार " से णूणं भंते ! " इत्यादि सूत्र कह रहे हैं—

टीकार्थ– (भंते) हे भदन्त ! (से णूणं लाघवियं अपिच्छा, अमुच्छा

નિર્ગ્રન્થ પ્રકરણ

આ પહેલાંના પ્રકરણમા ગુરુત્વ અને લઘુત્વનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એમનું જ પ્રકરણ ચાલતું હોવાથી એજ વિષયમા સૂત્રકાર " से णूणं भंते ! " ઇત્યાદિ સૂત્રો કહે છે—

' से णूण भंते ! लाघवियं अप्पिच्छा " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(भंते !) હે ભગવન્! (से णूण लाघविय अप्पिच्छा, अमुच्छा,

मध्यस्तम्, साधूनामेतत्सर्वमकोपरागादिकं मङ्गलं तत्कोपादागमेव । 'से णूणं भंते' तत् नूनं भदन्त ! 'कंखपओसे णं' काङ्क्षाप्रदोषः खलु 'खीणे' क्षीणे, विनष्टे सति, 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः, 'अंतकर भवइ' अन्तकरो भवति किम् ? काङ्क्षाप्रदोषः काङ्क्षा = परदर्शनग्रहणाकाङ्क्षा, परदर्शनविषयाऽन्यदृष्टिः, तया यदुष्टो दोषः सैव काङ्क्षाप्रदोषः । 'अत्थेगइए तेणेव' अस्त्येकतरस्तेनैव भवेन किम् ? अथवा 'अत्थेगइए दोच्चेणं' अस्त्येकतरो द्वितीयेन भूत्वा 'तच्चेणं तच्चेणं' तृतीयेन तृतीयेन 'अदक्खा' अथ पश्चात् 'संपुडेकालं करेइ' सम्पूर्णः कालं

कहने का यह है कि श्रमणों में श्रमणपना तब ही आता है कि जब उनमें क्रोधादिकषायों का अभाव हो । अतः जिस प्रकार से काङ्क्षादिकरूप प्रवृत्तियां श्रमणजनों के लिये हितावह हैं उसी प्रकार से इन काङ्क्षादिकों की द्योतक निखिल क्रोधादिकों की अभावरूप प्रवृत्तियां भी उनके लिये हितकारक हैं । अतः ये सब उपादेय हैं ।

(से णूणं भंते !) हे भदन्त ! (कंखपओसे) काङ्क्षाप्रदोष (क्षीण) नष्ट हो जाने पर (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (अंतकर भवइ) क्या अन्तकर होता है ? पर दर्शन विषयक आग्रहरूप बाञ्छा का नाम काङ्क्षा है । अथवा—परदर्शन विषयक आत्मविकल्प बुद्धि का नाम काङ्क्षा है । यह एक बड़ा भारी दोष है । अतः इस बाञ्छा को प्रदुष्ट दोषरूप मान कर उसे " काङ्क्षाप्रदोष " इस समासान्त पद द्वारा प्रकट किया गया है । (अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ) अथवा क्या वह अन्तिमशरीर वाला होता है ? (अत्थेगइए दोच्चेणं तच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ, अदक्खा संपुडे कालं करेइ, सव्वो पच्छा सिज्झइ, बुज्झइ, मुच्चइ, जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करइ ?)

ચૂર્ણા ગાળી શ્રમણપણા ત્યારે જ આવે છે કે જ્યારે ક્રોધાદિ કષા યોનો અભાવ હોય તેથી કાંક્ષાદિ રૂપ પ્રવૃત્તિઓ જેવી રીતે શ્રમણોને માટે હિતકર છે, એ જ પ્રમાણે ક્રોધાદિકો ના અભાવરૂપ પ્રવૃત્તિઓ પણ તેમને માટે હિતકારક છે અને તેથી તે બધી પ્રવૃત્તિઓ ઉપાદેય છે

(से णूणं भंते !) ૫. ભગવન્ ! (कंखपओसे खीणे समणे निग्गंथे अंतकरे भवइ ? કાંક્ષાપ્રદોષ નાશ પામે ત્યારે શું શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સંસારનો અંત લાવનાર બને છે ? બીજા શબ્દો માં કહીએ તો પરદર્શન વિષયક આગ્રહ રૂપ બાંછા (અભિલાષા) ને નામ કાંક્ષા છે અથવા બીજા દર્શન વિષયક આત્મિક વિકલ્પ ને નામ કાંક્ષા છે. તે બધા મોટો દોષ સ્વરૂપ છે તે કાંક્ષાને પ્રદુષ્ટ દોષરૂપ માનીને તેને માટે ' કાંક્ષાપ્રદોષ ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે (अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झइ) શું તે બધા અન્તિમ શરીરી હોય છે ? (अत्थेगइए दोच्चेणं तच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झइ, अदक्खा

श्रमणत्वम्, तच्च क्रोधाद्यभावमन्तरेण न संभवति अतः क्रोधाद्यभावस्य प्राशस्त्य सूचनार्थमाह—' से णूणं भंते ' इत्यादि। ' से णूणं भंते ' तद् नूनं भदन्त! ' अकोहत्तं ' अक्रोधत्वम् क्रोधराहित्यम् ' अमाणत्तं ' अमानत्व मानरहितत्वं, ' अमायत्तं ' अमायत्वं, मायाविवर्जितत्वम्, 'अलोभत्तं ' अलोभत्वम्, लोभरहितत्वम्। एतत्सर्वं ' समणाणं ' श्रमणानाम् ' णिग्गंथाणं ' निर्ग्रन्थानाम् ' पसत्थं ' प्रशस्तं किम् ' भगवानाह—' हंता गोयमे ' त्यादि। ' हंता गोयमा ' हन्त हे गौतम! ' अकोहत्तं-अमाणत्तं जाव पसत्थं ' अक्रोधत्वममानत्वं यावत्

श्रमणता है। तात्पर्य कहने का यह है कि निर्ग्रन्थश्रमणजनों में ही ये पूर्वोक्त बातें देखने में आती हैं अन्यत्र नहीं। उनमें ये सब बाते इस लिये कहने में आती है कि वे इनका मन, वचन, काया से पालन करते हैं, इनके पालन करने का उनका उद्देश्य यही है कि ये सब बातें उनके लिये हितकर हैं। अतः प्रभु गौतम को समझाते है कि हे गौतम! श्रमण निर्ग्रन्थों की ये लाघवादिक सब ही प्रवृत्तियां प्रशस्त ही होती है। श्रमणों की श्रमणता इसी में समाई हुई है। साथ २ में यह श्रमणता और किन २ बातों से सम्बन्ध रखती है-सो भी प्रभु गौतम को समझाने के लिये उनके प्रश्न करने पर प्रकट करते हैं-(से णूणं भंते! अकोहत्तं, अमाणत्तं अमायत्तं अलोभत्तं समणाणं णिग्गथाणं पसत्थं) हे भदन्त! क्रोध करने से रहित होना, मान करने से रहित होना माया करने से रहित होना, लोभ करने से रहित होना सो ये सब प्रवृत्तियां निर्ग्रन्थ श्रमण जनों के लिये हितकर होती हैं। तात्पर्य

છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે નિર્ગ્રંથ શ્રમણોમાં જ એ પૂર્વોક્ત પાંચ બાબતો જોવામાં આવે છે બીજે જોવામાં આવતી નથી. શ્રમણ નિર્ગ્રંથોમાં જ એ પાંચે વાતોના દર્શન થાય છે કારણ કે તેઓ મન, વચન, અને કાયાથી તેમનું પાલન કરે છે. તેઓનો તેમનું પાલન કરવા પાછળનો ઉદ્દેશ એ છે કે એ પાંચે વાત તેમને માટે હિતકારી છે. તેથી જ મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે તેમની લાઘવાદિક સઘળી પ્રવૃત્તિયો પ્રશસ્ત જ હોય છે શ્રમણોની શ્રમણુતા એમાં જ રહેલી છે એ શ્રમણુપણું બીજી કઇ કઇ વાતો સાથે સબંધ રાખે છે, તે વાત ગૌતમને સમજાવવા માટે, તેમના પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે સમજાવે છે-(से णूण भंते! अकोहत्तं, अमाणत्तं, अमायत्तं, अलोभत्त, समणाण णिग्गंथाण पसत्थं?) હે ભગવન્! અક્રોધ (ક્રોધનો અભાવ) અમાન (માનનો અભાવ) અમાયા (માયાથી રહિત હોવું) અને અલોભ (લોભનો અભાવ) એ બધા ગુણો શું શ્રમણ નિર્ગ્રંથોને માટે હિતકર હોય છે? તાત્પર્ય એ છે કે શ્રમ-

अथान्यमतविषये प्रश्नोत्तरम्—

इदं पूर्वं कांक्षाप्रदोषः कथितः, स च कांक्षाप्रदोषो महान् दोषः। तस्य कांक्षाप्रदोषस्य दोषत्वं दर्शनान्तरस्य विपरीततया समञ्जसीति दर्शनान्तरस्य विपरीतरूपत्वं दर्शयन्नाह-' अण्ण उत्थिया ' इत्यादि।

मूलम्—अण्णउत्थिया णं भंते ! एवं आइक्खंति एवं भासंति एवं पण्णवेंति एवं परूवेंति, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयेणं दो आउयाइं पकरेइ, तं जहा-इहभवियाउयं च परभवियाउयं च। जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ, तं समयं परभवियाउयं पकरेइ, जं समयं परभवियाउयं पकरेइ, तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ, इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयेणं दो आउयाइं पकरेइ, तं जहा-इहभवियाउयं च परभवियाउयं च से कहमेयं भंते! एवं ? गोयमा ! जं णं ते अण्ण उत्थिया एवं आइक्खंति जाव परभवियाउयं च, जे ते एवं आहंसु मिच्छा ते एवं आहंसु अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयेणं एगं आउयं पकरेइ, तं जहा इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ, णो तं समयं परभवियाउयं पकरेइ, जं समयं परभवियाउयं पकरेइ णो तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ इहभवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए णो इहभवियाउयं पकरेइ एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयेणं एगं आउयं

करोति, संवृतः=संवरं प्राप्तः सन् कालं करोति म्रियते, 'तओ पच्छा' ततः पश्चात् 'सिज्झइ' सिद्धयति, सिद्धिपं प्राप्नोति ? 'बुज्झइ' बुद्धयते, बोधं केवलज्ञानमाप्नोति, 'मुच्चइ' मुच्यते, ज्ञानावरणीयादि कर्मकात् निवृत्तो भवति, 'जाव अंतंकरेइ' यावदन्तं करोति यावत्पदेन 'परिनिव्वाइ सव्वदुक्खाण' इति संग्रहः। परिनिर्वाति=कर्म संतापराहित्येन शीतली भवति, सर्वदुःखानां=शारीर-मानसिकदुःखानाम् अन्तं करोति किम् ? भगवानाह—'हंते' त्यादि। 'हता गोयमा' हन्त हे गौतम ! 'कंखपओसे खीणे' कांक्षाप्रदोषे क्षीणे सति 'जाव अंतं करेइ' यावदन्तं करोति, यस्य कांक्षा प्रदोषो विनष्टो जात स सिद्धो बुद्धः मुक्तः परिनिर्वान्तः सर्वदुःखान्तकरश्च भवतीति भावः ॥ सू० ३ ॥

॥ इति निर्ग्रन्थप्रकरणम् ॥

अथवा-पहिले वह बहुत मोहवाला होकर विहार करे और बाद में संवर से युक्त होकर मर जावे, तो क्या वह सिद्ध होता है, बुद्ध होता है ? मुक्त होता है ? यावत् समस्त दुःखों का अंत करता है ? सिद्धि-पद को प्राप्त होना इसका नाम सिद्ध होना है। केवल ज्ञान को प्राप्त करना इसका नाम बुद्ध होना है। संसार सागर से निवृत्त होना इसका नाम मुक्त होना है। शारीरिक, मानसिक दुःखों का अन्त करना इसका नाम सर्व दुःखान्तकर है। यहां यावत् पदसे "परिनिव्वाइ" इस पद का संग्रह हुआ है। कर्म संताप से रहित होकर शीतली भूत होना इसका अर्थ है। (हंता गोयमा ! कंखपओसे खीणे जाव अंतं करेइ) हां गौतम ! कांक्षा प्रदोष नष्ट होने पर-श्रमण निर्ग्रन्थ सिद्ध होता है, बुद्ध होता है मुक्त होता है, परिनिर्वात होता है और सर्व दुःखों का अन्त करनेवाला होता है ॥ सू-३ ॥

संवुडे कालं करेइ, तओ पच्छा सिज्झइ, बुज्झइ, मुच्चइ, जाव सव्वदुक्खाण अंतं करेइ?) अथवा-पहेला તે શ્રમણ ઘણા જ મોહયુક્ત થઈને વિચરતા હોય, પણ ત્યાર બાદ સંવૃત થઈને (સંવર યુક્ત થઈને) મરણ પામે તો શું તે સિદ્ધ થાય છે, બુદ્ધ થાય છે, મુક્ત થાય છે ? પરિનિર્વૃત થાય છે ? અને તમામ દુઃખોનો અંત કરે છે ? સિદ્ધિપદ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત કરવું એટલે સિદ્ધ થવું. કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું એટલે બુદ્ધ થવું સંસાર સાગરને તરી જવો એટલે મુક્ત થવું. કર્મસંતાપથી રહિત થઈને શીતલીભૂત થવુ એટલે પરિનિર્વૃત થવુ. અને શારીરિક તથા માનસિક દુઃખોનો નાશ કરવો એટલે સર્વ દુઃખાન્તકર થવુ

(हता गोयमा ! कंखपओसे खीणे जाव अंत करेइ) હા ગૌતમ ! કાંક્ષાપ્રદોષનો નાશ થવાથી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સિદ્ધપદ પામે છે, બુદ્ધ બને છે, મુક્ત થાય છે, પરિનિર્વૃત થાય છે અને તમામ દુઃખોનો અંત કરનાર બને છે. ॥સૂ૦ ૩॥

अथान्यमतविषये प्रश्नोत्तरम्—

इत' पूर्वं कांक्षाप्रदोषः कथितः, स च कांक्षाप्रदोषो महान् दोषः। तस्य कांक्षाप्रदोषस्य दोषत्वं दर्शनान्तरस्य विपरीततया समवतीति दर्शनान्तरस्य विपरीतरूपता दर्शयन्नाह-' अण्ण उत्थिया ' इत्यादि।

मूलम्—अण्णउत्थिया णं भंते ! एवं आइक्खंति एवं भासंति एवं पण्णवेंति एवं परूवेंति, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयणं दो आउयाइं पकरेइ, तं जहा—इहभवियाउयं च परभवियाउयं च। जं समयं इहभवियाउयं पगरेइ, तं समयं परभवियाउयं पकरेइ, जं समयं परभवियाउयं पकरेइ, तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ, इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयणं दो आउयाइं पकरेइ, तं जहा—इहभवियाउयं च परभवियाउयं च से कहमेयं भंते! एवं ? गोयमा ! जं णं ते अण्ण उत्थिया एवं आइक्खंति जाव परभवियाउयं च, जे ते एवं आहंसु मिच्छा ते एवं आहंसु अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयणं एगं आउयं पकरेइ, तं जहा इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ, णो तं समयं परभवियाउयं पकरेइ, जं समयं परभवियाउयं पकरेइ णो तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ इहभवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए णो इहभवियाउयं पकरेइ एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयणं एगं आउयं

पकरेइ, तं जहा-इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा, सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, एवं भाषंते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयंति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति, तद्यथा — इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च य समयं इहभविकायुष्कं प्रकरोति, तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति त समयम् इहभविकायुष्क प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया परभविकायुष्कं प्रकरोति परभविकायुष्कस्य प्रकरणतयेहभविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तत् कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? । गौतम ! यत् ते अन्ययूथिका एवमाख्याति यावत् परभविकायुष्कं च, ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुन गौतम ! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि एवं खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा । य समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति नो तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, नो तं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो परभविकायुष्कं प्रकरोति, परभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो इह भविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति, तद्यथा—इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति ॥ सू०४ ॥

टीका—' अण्णउत्थिया णं भंते ! ' अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! ' एवं आइक्खंति ' एवं—वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति सामान्यरूपेण कथयन्ति, ' एवं भासंति ' एव भाषन्ते विशेषरूपेण कथयन्ति, ' एवं पण्णवेंति ' एवं प्रज्ञा-

अन्यमतविषय में प्रश्नोत्तर—

इससे पहिले कांक्षाप्रदोष कहा जा चुका है और यह कहा गया है कि यह एक महान् दोष है। इस कांक्षा प्रदोष (पर दर्शन की वांछा) में दोषरूपता दर्शनान्तर की विपरीतता से ही संभवती है-अतः दर्श-

અન્યમત વિષયમાં પ્રશ્નોત્તર

આ પહેલા કાંક્ષાપ્રદોષનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યુ અને તેને મહાન દોષરૂપ બતાવવામા આવ્યો આ કાક્ષાપ્રદોષ (પરદર્શનની વાછા) મા બીજા દર્શનની વિપરીતતાને લીધે જ દોષપણુ સભવે છે. તેથી બીજા દર્શનોમાં

पयन्ति, उपपत्तिद्वारेण 'एवं परूवेंति' एवं प्ररूपयन्ति, प्ररूपणां कुर्वन्ति भेद कथनत, किमित्याह-एव खलु एगे जीवे' एष खलु एको जीवः 'एगेण समयेण' एकेन समयेन 'दो आउयाइं' द्वे आयुषी, आयुर्द्वय 'पकरेइ' प्रकरोति =बध्नाति, जीवो नाम स्वपर्यायै समूहरूपः स च पर्यायसमुदायात्मको जीवो यदा एकमायुःपर्याय करोति तदाऽन्यमपि पर्याय करोत्येव स्वपर्यायत्वाविशेषात् ज्ञानसम्यक्त्वादिपर्यायवत् स्वपर्यायस्य कर्ता जीव एवेति स्वीकर्तव्यमेव अन्यथा

नान्तर में विपरीतरूपता दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—
'अण्ण उत्थिया णं भंते।' इत्यादि।

टीकार्थ—(अण्णउत्थियाणं भंते!) हे भदन्त! अन्ययूथिकजन-दूसरे तीर्थिकजन (एव आइक्खंति) इस प्रकार से सामान्यरूप से कहते हैं (एव भासंति) इस प्रकार से विशेषरूप से कहते हैं। (एव पण्णवेंति) (युक्तियों द्वारा इस प्रकार से समझाते हैं (भेदों के कथनपूर्वक वे इस प्रकार से प्ररूपणा करते हैं-(एव खलु) कि-(एगे जीवे एगेणं समएणं) एक जीव एक समय में (दो आउयाइं) दो आयुओं का (पकरेइ) बंध करता है। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि-जीव जो है वह अपनी पर्यायों का एक समूहरूप है। अत वह पर्यायसमूहरूप जीव जिस समय एक आयुरूप पर्याय को करता है, उसी समय वह दूसरी भी आयुरूप पर्याय को करता ही है। क्यों कि स्वपर्यायत्व की उसमें अविशेषता है। ज्ञान सम्यक्त्व आदि स्वपर्याय की तरह। तात्पर्य कहने

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ— अण्ण उत्थिया णं भंते!' इत्यादि

(अण्ण उत्थिया णं भंते!) હે ભગવન્! अन्य यूथिकजन-अन्य તીર્થિક અન્ય મતને માનનારા લોકો (एव आइक्खंति) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે, (एव भासंति) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે, (एव पण्णवेंति) યુક્તિઓ વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (एव परूवेंति) જેદોના કથન પૂર્વક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે-(एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા એવી છે કે-જીવ પોતાની પર્યાયોના એક સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજા આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વપર્યાયની જેમ તેનામા સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે.

पकरेइ, तं जहा-इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा, सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, एवं भाषंते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयंति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति, तद्यथा — इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च य समयं इहभविकायुष्कं प्रकरोति, तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति त समयम् इहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया परभविकायुष्कं प्रकरोति परभविकायुष्कस्य प्रकरणतयेहभविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तत् कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? । गौतम ! यत् ते अन्ययूथिका एवमाख्याति यावत् परभविकायुष्कं च, ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुन गौतम ! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि एवं खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा । य समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति नो तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, नो तं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो परभविकायुष्कं प्रकरोति, परभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो इह भविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति, तद्यथा—इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति ॥ सू०४ ॥

टीका—' अण्णउत्थिया णं भंते ! ' अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! ' एवं आइक्खंति ' एवं—वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति सामान्यरूपेण कथयन्ति, ' एवं भासंति ' एव भाषन्ते विशेषरूपेण कथयन्ति, ' एवं पण्णवेति ' एवं प्रज्ञा-

अन्यमतविषय में प्रश्नोत्तर—

इससे पहिले कांक्षाप्रदोष कहा जा चुका है और यह कहा गया है कि यह एक महान् दोष है। इस कांक्षा प्रदोष (पर दर्शन की वांछा) में दोषरूपता दर्शनान्तर की विपरीतता से ही संभवती है—अतः दर्शी-

અન્યમત વિષયમા પ્રશ્નોત્તર

આ પહેલા કાક્ષાપ્રદોષનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યુ અને તેને મહાન દોષરૂપ બતાવવામા આવ્યો. આ કાક્ષાપ્રદોષ (પરદર્શનની વાછા) મા બીજા દર્શનની વિપરીતતાને લીધે જ દોષપણુ સભવે છે. તેથી બીજા દર્શનોમાં

पयन्ति, उपपत्तिद्वारेण 'एवं पण्णवेंति' एव प्रज्ञापयन्ति, प्ररूपणां कुर्वन्ति भेद कथनत्व, किमित्याह-एव खलु एगे जीवे 'एव खलु एको जीवः 'एगेण समएण' एकेन समयेन 'दो आउयाइं' द्वे आयुषी, आयुर्द्वय 'पकरेइ' प्रकरोति =बध्नाति, जीवो नाम स्वपर्याय समूहरूप स च पर्यायसमुदायात्मको जीवो यदा एकमायुःपर्याय करोति तदाऽन्यमपि पर्याय करोत्येव स्वपर्यायत्वाविशेषाद् ज्ञानसम्यक्त्वादिपर्यायवत् स्वपर्यायस्य कर्ता जीव एवेति स्वीकर्तव्यमेव अन्यथा

नान्तर में विपरीतरूपता दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—
'अण्ण उत्थिया णं भंते!' इत्यादि।

टीकार्थ—(अण्णउत्थियाण भंते!) हे भदन्त! अन्ययूथिकजन-दूसरे तीर्थिकजन (एवं आइक्खंति) इस प्रकार से सामान्यरूप से कहते हैं (एव भासंति) इस प्रकार से विशेषरूप से कहते हैं। (एवं पण्णवेंति) (युक्तियों द्वारा इस प्रकार से समझाते हैं (भेदों के कथनपूर्वक वे इस प्रकार से प्ररूपणा करते हैं-(एव खलु) कि-(एगे जीवे एगेणं समएणं) एक जीव एक समय में (दो आउयाइं) दो आयुओं का (पकरेइ) बंध करता है। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि-जीव जो है वह अपनी पर्यायों का एक समूहरूप है। अत वह पर्यायसमूहरूप जीव जिस समय एक आयुरूप पर्याय को करता है, उसी समय वह दूसरी भी आयुरूप पर्याय को करता ही है। क्यों कि स्वपर्यायत्व की उसमें अविशेषता है। ज्ञान सम्यक्त्व आदि स्वपर्याय की तरह। तात्पर्य कहने

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ—'अण्ण उत्थिया णं भंते!' ઇત્યાદિ

(अण्ण उत्थिया णं भंते!) હે ભગવન્! અન્ય યૂથિકજન—અન્ય તીર્થિકો અન્ય મતને માનનારા લોકો (एव आइक्खंति) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે (एव भासंति) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે (एव पण्णवेंति) યુક્તિઓ વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (एव परूवेंति) ભેદોના કથન પૂર્વક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે-(एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) કોઇ પણ કોઇ જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા જોવી છે કે-જીવ પોતાની પર્યાયોના જોડ સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે કોઇ આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજા આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વ પર્યાયની જેમ તેનામા સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે

सिद्धत्वादिपर्यायाणामुत्पादाभाव एव स्यादिति भावः। 'त जहा' तद्यथा–'इह भवियाउयं च परभवियाउयं च' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तदेव स्पष्टयति—'जं समयं' इत्यादि। 'जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमा-

का यह है कि जिस तरह जीव आयुरूप पर्याय को करते समय ज्ञान सम्यक्त्व आदि अपनी पर्यायों करता है उस एक ही समय में उनके करने में कोई बाधा नहीं आती है क्यों कि वे उसकी पर्यायें हैं इसी प्रकार से एक ही जीव एक ही समय में दो आयुकर्मों का बंध करता है। इसमें भी कोई बाधा नहीं आती है। कारण–जैसे एक आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है उसी प्रकारसे उसी समयमें दूसरी आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है। इस कथनसे यह बात समझमें आ जाती है कि जीव ही अपनी पर्यायों का कर्त्ता है। यदि जीव अपनी पर्यायों का कर्त्ता न माना जावे तो फिर सिद्धत्व आदि पर्यायों का कभी उत्पाद ही नहीं हो सकने के कारण उनका अभाव ही हो जावेगा। इस दो आयुओं को एक समय में करने की बात को अब और विशेषरूप से स्फुट करने के लिये उन्हीं की तरफ से सूत्रकार कहते है कि–(तं जहा) उनके मन्तव्यानुसार एक ही समयमें एक ही जीव इन दो आयुओंको इस प्रकार से करता है (इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इसभव सम्बन्धी आयुको और दूसरी परभव सम्बन्धी आयुको। (जं समयं इहभवियाउयं

તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે જે સમયે જીવ; આયુષ્યરૂપ પર્યાયને કરતી વખતે જ્ઞાન સમ્યકત્વ વગેરે પોતાની પર્યાયોને પણ કરે છે–તો એ એક જ સમયે તે બધી પર્યાયો કરવામા જેમ વાધો નડતો નથી, કારણ કે તે તેની પર્યાયો છે, એજ પ્રમાણે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે એમ કરવામાં કોઈ મુશ્કેલી નડતી નથી કારણ કે એક આયુષ્ય કર્મ કરવું એ જેમ તેની પર્યાય છે, એજ પ્રમાણે એજ સમયે બીજુ આયુષ્યકર્મ કરવું એ પણ તેની પર્યાય જ છે આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જીવ પોતે જ પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા છે. જો જીવને પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા માનવામા ન આવે તો સિદ્ધત્વ વગેરે પર્યાયોની કયારેય પણ ઉત્પત્તિ ન થઇ શકવાને કારણે તેનો અભાવ જ માનવો પડે હવે બે આયુષ્યો એક જ સમયે કરવાના વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (तं जहा) અન્ય ધર્મીઓના કથનાનુસાર એક જ સમયે એક જ જીવ બે આયુષ્યનો બધ આ રીતે કરે છે–(इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) એક આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો અને બીજો પરભવ સંબધી આયુષ્યનો બંધ (जं समयं इहभविया यं

पयन्ति, उपपत्तिद्वारेण ' एव परूवेंति ' एव प्ररूपयन्ति, प्ररूपणा कुर्वन्ति भेद कथनतः, किमित्याह-एव खलु एगे जीवे ' एवं खलु एको जीवः ' एगेण समयेण ' एकेन समयेन ' दो आउयाइं ' द्वे आयुषी, आयुर्द्वय ' पकरेइ ' प्रकरोति बध्नाति, जीवो नाम स्वपर्यायसमूहरूपः स च पर्यायसमुदायात्मको जीवो यदा एकमायुःपर्यायं करोति तदाऽन्यमपि पर्याय करोत्येव स्वपर्यायत्वाविशेषात् ज्ञानसम्यक्त्वादिपर्यायवत् स्वपर्यायस्य कर्ता जीव एवेति स्वीकर्तव्यमेव अन्यथा

नान्तर में विपरीतरूपता दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—
' अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(अण्णउत्थियाणं भंते!) हे भदन्त! अन्ययूथिकजन-दूसरे तीर्थिकजन (एव आइक्खंति) इस प्रकार से सामान्यरूप से कहते हैं (एव भासंति) इस प्रकार से विशेषरूप से कहते हैं। (एव पण्णवेंति) (युक्तियों द्वारा इस प्रकार से समझाते हैं (भेदों के कथनपूर्वक वे इस प्रकार से प्ररूपणा करते हैं-(एवं खलु) कि-(एगे जीवे एगेणं समएणं) एक जीव एक समय में (दो आउयाइं) दो आयुओं का (पकरेइ) बंध करता है। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि-जीव जो है वह अपनी पर्यायों का एक समूहरूप है। अतः वह पर्यायसमूहरूप जीव जिस समय एक आयुरूप पर्याय को करता है, उसी समय वह दूसरी भी आयुरूप पर्याय को करता ही है। क्यों कि स्वपर्यायत्व की उसमें अविशेषता है। ज्ञान सम्यक्त्व आदि स्वपर्याय की तरह। तात्पर्य कहने

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ— अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' ઇત્યાદિ

(अण्ण उत्थिया णं भंते !) હે ભગવન્! अन्य यूथिकजन-अन्य તીર્થિક અન્ય મતને માનનારા લોકો (एव आइक्खंति) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે (एव भासंति) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે, (एव पण्णवेंति) યુક્તિઓ વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (एव परूवेंति) જોડાના કથન પૂર્વક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે-(एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમાં પરપ્રતીર્થિકોની માન્યતા એવી છે કે-જીવ પોતાની પર્યાયોના એક સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજા આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વ પર્યાયની જેમ તેનામાં સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે

सिद्धत्वादिपर्यायाणामुत्पादाभाव एव स्यादिति भावः। 'त जहा' तद्यथा–'इह भवियाउयं च परभवियाउयं च' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तदेव स्पष्टयति—'जं समयं' इत्यादि। 'जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमा-

का यह है कि जिस तरह जीव आयुरूप पर्याय को करते समय ज्ञान सम्यक्त्व आदि अपनी पर्यायों करता है उस एक ही समय में उनके करने में कोई बाधा नहीं आती है क्यों कि वे उसकी पर्यायें हैं इसी प्रकार से एक ही जीव एक ही समय में दो आयुकर्मों का बंध करता है। इसमें भी कोई बाधा नहीं आती है। कारण–जैसे एक आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है उसी प्रकारसे उसी समयमें दूसरी आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है। इस कथनसे यह बात समझमें आ जाती है कि जीव ही अपनी पर्यायों का कर्त्ता है। यदि जीव अपनी पर्यायों का कर्त्ता न माना जावे तो फिर सिद्धत्व आदि पर्यायों का कभी उत्पाद ही नहीं हो सकने के कारण उनका अभाव ही हो जावेगा। इस दो आयुओं को एक समय में करने की बात को अब और विशेषरूप से स्फुट करने के लिये उन्हीं की तरफ से सूत्रकार कहते है कि–(तं जहा) उनके मन्तव्यानुसार एक ही समयमें एक ही जीव इन दो आयुओंको इस प्रकार से करता है (इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इसभव सम्बन्धी आयुको और दूसरी परभव सम्बन्धी आयुको। (जं समयं इहभवियाउयं

તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે જે સમયે જીવ, આયુષ્યરૂપ પર્યાયને કરતી વખતે જ્ઞાન સમ્યકત્વ વગેરે પોતાની પર્યાયોને પણ કરે છે–તો એ એક જ સમયે તે બધી પર્યાયો કરવામા જેમ વાધો નડતો નથી, કારણ કે તે તેની પર્યાયો છે, એજ પ્રમાણે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે એમ કરવામાં કોઈ મુશ્કેલી નડતી નથી. કારણ કે એક આયુષ્ય કર્મ કરવું એ જેમ તેની પર્યાય છે, એજ પ્રમાણે એજ સમયે બીજુ આયુષ્યકર્મ કરવું એ પણ તેની પર્યાય જ છે. આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જીવ પોતે જ પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા છે. જો જીવને પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા માનવામા ન આવે તો સિદ્ધત્વ વગેરે પર્યાયોની કયારેય પણ ઉત્પત્તિ ન થઇ શકવાને કારણે તેનો અભાવ જ માનવો પડે હવે બે આયુષ્યો એક જ સમયે કરવાના વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (तं जहा) અન્ય ધર્મીઓના કથનાનુસાર એક જ સમયે એક જ જીવ બે આયુષ્યનો બંધ આ રીતે કરે છે–(इहभवियाउयं च परभवियाउय च) એક આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો અને બીજો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ (जं समयं इहभविया यं

क्षिप्य यस्मिन् समय इत्यर्थः इहभविकायुष्कं प्रकरोति-बध्नाति, 'तं समयं परभवियाउयं पकरेइ' च समयमाक्षिप्य तस्मिन् समये इत्यर्थः परभविकायुष्कं प्रकरोति, तथा 'च समयं परभवियाउयं पकरेइ' च समयमाक्षिप्य परभविकायुष्कं प्रकरोति 'च समयं इह भवियाउयं पकरेइ' च समयम् इहभविकायुष्कं प्रकरोति, इह भवो वर्तमानभवो यस्मिन् आयुषि वर्त्तते फलरूपेण तत् इहभविकायुष्कं, एवं परभवः आगामिभवो यस्मिन् आयुषि फलरूपेण वर्त्तते तत् परभवायुष्कम्। आभ्यां सूत्राभ्यां इहभवायुष्करणसमये परभवायुःकरणं नियमितम्, एवं परभवायुष्करणसमये इहभवायुःकरणं च नियमितम् एवं सूत्रद्वयेन एकसमयस्य

पकरेइ, तं समयं परभवियाउयं पकरेइ च समयं परभवियाउयं पकरेइ, तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ) जिस समय जीव इस भव सम्बन्धी आयु का बंध करता है उसी समय में वह परभव सम्बन्धी आयु का बंध करता है। और जिस समय में वह इस भव सम्बन्धी आयु का बंध करता है। उसी समय में वह परभव सम्बन्धी आयुका बंध करता है। जिस आयु के फल स्वरूप यह चालू भव है वह आयु इहभविक आयु है और आगामी भव जिस आयु के होने पर फलरूप से वर्तता है वह परभवायु है। इन दो सूत्रों द्वारा यह नियमित किया गया कि इह भव आयु के करने के समय में परभव की आयु का करना नियमित है और परभवीय आयु के करने के समय इहभवीय आयु का करना नियमित है। इस तरह इन दो सूत्रोंद्वारा दो आयु एक ही समय में किया जाता है इस प्रकार से कहकर अब यह प्रकट किया जाता है

पगरेइ, तं समय परभवियाउय पगरेइ च समय परभवियाउय पगरेइ, च समयं इहभवियाउय पगरेइ) જે સમયે જીવ આ ભવ સબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે તે જ સમયે પરભવ સબંધી આયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે જે સમયે તે પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે જેજ સમયે આ ભવ સબંધી આયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે જે આયુષ્યના ફળસ્વરૂપ આ ચાલુ ભવ છે, તે ઇહભવિક આયુષ્ય કહેવાય છે અને આગામી (હવે પછીનો) ભવ જે આયુ ષ્યના ફળસ્વરૂપે વર્તવાનો છે તે પરભવાયુ છે આ બન્ને સૂત્રો વડે એ નિયમ બતાવવામા આવ્યો છે કે આ ભવના આયુષ્યને કરવાના સમયમા પરભવાયુષ્ય કરવાનું નિયમિત છે, અને પરભવના આયુષ્ય ને કરવાને સમયમાં ઇહભવીય આયુષ્ય કરવાનું નિયમિત છે આ રીતે આ બન્ને સૂત્રો વડે બે આયુષ્ય જે જ સમયે કરવામા આવે છે એવુ જણાવીને હવે એ વાત પણ કરવામાં

र्यतां द्वयोरायुषोः कथयित्वा द्वयोरायुषोरेककियाकार्यतामाह—' इहभवियाउयस्से ' त्यादि, ' इह भवियाउयस्स पकरणयाए ' इहभवायुषः प्रकरणतया करणेन 'परभवियाउयं पकरेइ ' परभवायुष्कं प्रकरोति, ' परभवियाउयस्स पकरणयाए ' परभवायुष्कस्य प्रकरणतया करणेन ' इहभवियाउयं पकरेइ ' इहभवि-कायुष्कं प्रकरोति, परभवसंबन्ध्यायुष· करणसमये एव एतद्भवसंबन्ध्यायुषो बन्धनं करोति । प्रकरणार्थं निगमयन्नाह—' एव खलु एगे जीवे ' एवं खलु एको जीवः ' एगेणं समएणं ' एकेन समयेन ' दो आउयाइ पकरेइ ' द्वे आयुषी प्रकरोति, ' तं जहा ' तद्यथा—' इहभवियाउयं च परभवियाउय च ' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, 'से कहमेयं भंते एवं ' तत्कथमेतत् किमेतत् भदन्त! एवम्= एवं रूपेणास्ति तत्कथनं किं सत्यमिति प्रश्न । हे भदन्त! एकसमये आयुषो-द्वयस्य करणं किं संभवतीति गौतमस्य प्रश्नः। भगवानाह—' गोयमे ' त्यादि।

कि ये दोनों आयु एक ही क्रिया से की जाती हैं-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) जीव इह सम्बन्धी आयु को कर के परभव सम्बन्धी आयु को करता है। और परभव संबंधी आयु के करने से इहभव संबंधी आयु को करता है। (इवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) इस तरह से एक जीव एक ही समय में दो आयुओं का बंध करता है। (तं जहा-इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इस भव सम्बन्धी आयु का दूसरी परभव सम्बन्धी आयु का। (से कहमेयं भंते! एवं) सो हे भदन्त! ऐसा यह कथन क्या उन लोगों का सत्य है? अर्थात्-एक समय में दो आयु का बध करना क्या संभवता है? ऐसा

છે કે એ બન્ને આયુ એક જ ક્રિયાથી કરાય છે-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે. અને પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) આ રીતે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ કરે છે (तं जहा--इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) તે બે આયુષ્ય આ પ્રમાણે છે-(૧) આ ભવસંબંધી આયુષ્ય અને (૨) પરભવ સંબંધી આયુષ્ય (से कहमेयं भंते! एव) તો હે ભગવન્! શું એ લોકોની ઉપરની માન્યતા સાચી છે? એટલે કે એક સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધવાનું સંભવી શકે? એવો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે.

'गोयमा' हे गौतम। 'ज णं ते अन्नउत्थिया' यत् खलु अन्ययूथिका 'एवं आइक्खंति जाव परूवेंति एवखलु एगे जीवे एगसमएणं दो आउयाइं पकरेति इहभविकाउयं च परभविकाउयं च' एवमाख्यान्ति यावत् परूपयन्ति एवखलु एको जीव एकसमये द्वे आयुषी प्रकरोति इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च इत्यादीनां सङ्ग्रहः। 'जे ते एवं आहंसु मिच्छा ते एवं आहंसु' ये ते एवमुक्तवन्तो मिथ्या ते एवमुक्तवन्तः, परमतस्य मिथ्यात्वं कथम्-एकेनाध्यवसायेन परस्परविरुद्धयोरायुषोर्बन्धासम्भवात्, यदप्युक्तं परतीर्थिकैः पर्यायान्तरकरणे पर्यायान्तरं करोति स्वपर्यायत्वात्, तत्र सम्यक् सिद्धस्वपर्याय

यह गौतम का प्रश्न है—(गोयमा! ज णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव परूवेंति एवखलु एगे जीवे एगसमएणं दो आउयाइं पकरेति इहभविकाउयं च परभविकाउयं च) हे गौतम! जो ये अन्ययूथिक जन ऐसा कहते हैं कि एक जीव एक ही समय में दो आयु का बंध करता है-एक इस भव सम्बन्धी आयु का और दूसरी परभवसम्बन्धी आयु का, सो (जे ते एवं आहंसु मिच्छा ते एवं आहंसु) जो उन्हों ने ऐसा कहा है वह उन्हों ने मिथ्या कहा है। "आइक्खंति जाव परूवेंति च" यहां जो "यावत्" पद आया है वह पूर्व में कथित "भाषन्ते, प्रज्ञापयन्ति, प्ररूपयन्ति, एको जीव एक समये द्वे आयुषी प्रकरोति, इह भविकायुष्कं च" इत्यादि पाठ का संग्राहक है।

"उन्हों ने जो ऐसा कहा है सो मिथ्या कहा है" अब यही बात स्पष्ट की जाती है-एक ही अध्यवसाय से परस्पर विरुद्ध दो आयु का होना असंभव है। तथा ऐसा जो अभी २ इन्हों ने कहा है कि अपनी पर्याय होने के कारण जीव सम्यक्त्व और ज्ञान की तरह एक पर्याय के करने में दूसरी पर्याय को करता है सो ऐसा कहना भी उनका ठीक

(गोयमा! ज णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव परूवेंति एवखलु एगे जीवे एगसमएणं दो आउयाइं पकरेति इहभविकाउयं च परभविकाउयं च) हे गौतम! अन्य तीर्थिक लोग जो ऐसे कहते हैं (१) आ भव सम्बन्धी आयुष्यनो अने(२) परभव सम्बन्धी आयुष्यनो-बेभ बे आयुष्यनो बंध पण छे (जे ते एवं आहंसु मिच्छा ते एवं आहंसु) तेमनुं लोग जे कहेवुं छे ते मिथ्या छे, सत्य नथी "आइक्खंति जाव परूवेंति च" अही जे "यावत्" पद छे तेनाथी पूर्वोक्त भाषन्ते, प्रज्ञापयन्ति, प्ररूपयन्ति, एको जीव एक समये द्वे आयुषी प्रकरोति इह भविकायुष्कं च" इत्यादि पाठनो संग्रह थयो छे

'अन्य तीर्थिकोओ जे कहयुं छे ते मिथ्या छे' आम बाबतुं प्रतिपादन करवामां आवे छे-बेभ जे अध्यवसायथी परस्पर विरुद्ध बेबे आयुष्योनो बंध थवो असंभवित छे वळी पोतानी पर्याय होवाने लीधे जीव सम्यक्त्व अने ज्ञाननी माफक बेभ पर्याय करवामां बीजा पर्याय करे छे" लोग

र्यंतां द्वयोरायुषोः कथयित्वा द्वयोरायुषोरेककियाकार्यतामाह—' इहभवियाउयस्से ' त्यादि, ' इह भवियाउयस्स पकरणयाए ' इहभवायुषः प्रकरणतया करणेन 'परभवियाउयं पकरेइ ' परभवायुष्कं प्रकरोति, ' परभवियाउयस्स पकरणयाए ' परभवायुष्कस्य प्रकरणतया करणेन ' इहभवियाउयं पकरेइ ' इहभविकायुष्कं प्रकरोति, परभवसंबन्ध्यायुष करणसमये एव एतद्भवसंबन्ध्यायुषो वन्धनं करोति। प्रकरणार्थं निगमयन्नाह—' एव खलु एगे जीवे ' एवं खलु एको जीवः ' एगेणं समएणं ' एकेन समयेन ' दो आउयाइ पकरेइ ' द्वे आयुषी प्रकरोति, ' तं जहा ' तद्यथा—' इहभवियाउयं च परभवियाउय च ' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, 'से कहमेयं भंते एवं ' तत्कथमेतत् किमेतत् भदन्त! एवम्= एवं रूपेणास्ति तत्कथनं किं सत्यमिति प्रश्नः। हे भदन्त! एकसमये आयुषोद्वयस्य करणं किं संभवतीति गौतमस्य प्रश्नः। भगवानाह—' गोयमे ' त्यादि।

कि ये दोनों आयु एक ही क्रिया से की जाती हैं-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) जीव इह सम्बन्धी आयु को कर के परभव सम्बन्धी आयु को करता है। और परभव संबंधी आयु के करने से इहभव संबंधी आयु को करता है। (इवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) इस तरह से एक जीव एक ही समय में दो आयुओं का बंध करता है। (तं जहा-इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इस भव सम्बन्धी आयु का दूसरी परभव सम्बन्धी आयु का। (से कहमेयं भंते! एवं) सो हे भदन्त! ऐसा यह कथन क्या उन लोगों का सत्य है? अर्थात्-एक समय में दो आयु का बध करना क्या संभवता है? ऐसा

છે કે એ બન્ને આયુ એક જ ક્રિયાથી કરાય છે-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે અને પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે (एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउइयाइं पकरेइ) આ રીતે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ કરે છે (तं जहा--इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) તે બે આયુષ્ય આ પ્રમાણે છે-(૧) આ ભવસંબંધી આયુષ્ય અને (૨) પરભવ સંબંધી આયુષ્ય. (से कहमेयं भंते! एव) તો હે ભગવન્! શું એ લોકોની ઉપરની માન્યતા સાચી છે? એટલે કે એક સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધવાનું સંભવી શકે? એવો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે.

प्रकरोत्यपेति भावः । अन्ययूथिकमतरूप मिथ्यात्वमुक्त्वा स्वकीयमतं दर्शयन्नाह-'अहं पुण' इत्यादि । 'अहं पुण गोयमा एवं आइक्खामि जाव परूवेमि' अहं पुनः गौतम! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि इह यावत्पदेन-'एवं भासेमि एवं पण्णवेमि' इत्यनयो संग्रहः, तत्र-आख्यामि=कथयामि सामान्येन, भाषे=अधिकं विशेषरूपेण, प्रज्ञापयामि=हेतुदृष्टान्तेन प्ररूपयामि=भेदकथनेन । तदेवाह—'एवं खलु एगे जीवे एगेण समएणं एगं आउयं पकरेइ' एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकं आयुष्कं प्रकरोति 'तं जहा' तद्यथा 'इहभविआउयं वा परभविआउयं वा'

ही जीव परभव सम्बन्धी आयु का बंध कर लेता है तो फिर इन संक्लेशों के करने का और सपमादिक अनुष्ठानों के सेवन करने का प्रयोजन ही निरर्थक हो जाता है। सो ऐसा जो दूसरों ने कहा है सो उनका यह "आयुर्बंधश्च कालादन्यत्र ज्ञातव्यम्" कथन आयु के बंध काल के सिवाय के समय का अर्थात् अपर्याप्त अवस्था की अपेक्षा से जानना चाहिये। नहीं तो फिर यह कथन अन्यतीर्थिकजनों का असत्य नहीं ठहराया जा सकता जो वे ऐसा कहते हैं कि जीव आयु के बंधकाल में इस भव सम्बन्धी आयु का वेदन करता है अर्थात् भोगता है और परभव सम्बन्धी आयु का बंध करता है। कारण कि जैनसिद्धान्त की भी यही मान्यता है। इसी तरह अन्यतीर्थिकजनों के मत को असमीचीन कहकर अपना इस विषय में क्या मन्तव्य है सो दिखाने के लिये सूत्रकार कहते हैं—

(अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि) हे गौतम! मैं भी इस विषय में ऐसा ही कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि

બંધ બાંધી લેતો હોય તો તેને પછી અટકાવવાનુ અને સંયમાદિની આરાધના કરવાનુ પ્રયોજન જ રહેતુ નથી "आयुर्बंधश्च कालादन्यत्र ज्ञातव्यम्" આયુ ના બન્ધ મતવાદીઓનુ કથન છે તે આયુષ્યના બંધકાળ સિવાયના સમયની એટલે કે અપર્યાપ્ત અવસ્થાની અપેક્ષાએ સમજવુ નહીં તો અન્ય તીર્થિકોનું " જીવ આયુષ્યના બંધ કાળે આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનુ વેદન કરે છે-ભોગવે છે અને પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ કથન અસત્ય કહી શકાશે નહીં કારણ કે જૈનસિદ્ધાન્તની પણ એ જ માન્યતા છે આ રીતે અન્ય તીર્થિકોના મતને મિથ્યા-અસમીક્ષાપૂર્ણ-કહીને આ વિષયમા પોતાનુ શું મન્તવ્ય છે તે બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि) હે ગૌતમ! હું આ વિષયમા એવુ જ યાવત્ પ્રરૂપણા કરૂ છુ કે (एगे जीवे एगेणं

करणे संसारित्वपर्यायस्य तत्राकरणात् इति, अन्ये तु एव कथयन्ति-" इहभवायुर्यदा प्रकरोति वेदयते तदा परभवायुः प्रकरोति बध्नाति, इहभवायुष उपभोगेन परभवसंबन्धि आयुर्बध्नातीत्यर्थः, तन्मतं मिथ्या, यतो जातमात्रो जीव इह भवायुर्वेदयते तस्मिन्नेव समये यदि परभवसंबन्ध्यायुषो बन्धनं कृत तदा दानशीलतपोभावानामाचरणं संयमाद्याचरणं च निरर्थकं प्रसज्येत " एतत् आयुर्बन्धकालादन्यत्र ज्ञातव्यमन्यथा — आयुषोबन्धकाले इहभवायुर्वेदयते परभवायुस्तु

नहीं है-कारण कि आत्मा जब सिद्धत्व पर्याय को करता है तब वह उस समय संसारित्व पर्याय को नहीं करता है। दूसरे तो ऐसा कहते हैं-" इस भव सम्बन्धी आयु को जब जीव " प्रकरोति " वेदता है। तब वह परभव सम्बन्धी आयु का बंध करता है-इसका तात्पर्य यह है कि इस भव सम्बन्धी आयु के उपभोग से जीव परभव सम्बन्धी को बांधता है-सो ऐसा भी अन्यतीर्थिकों का कथन ठीक नहीं है। क्यों कि जातमात्र (जन्मते ही) जीव इस भव सम्बन्धी आयु का वेदन करने लगता है सो यदि वह उसी समय में परभव सम्बन्धी आयु का उसने बंध कर लिया है ऐसा मान लिया जावे तो दान, शील, तप और भाव इनका आचरण करना तथा संयम आदि अनुष्ठानों का आचरण करना ये सब निरर्थक हो जावेंगे। तात्पर्य कहने का यह है कि जो जीव उत्पन्न होने के बाद समर्थ होने पर दानादिक सत्कृत्यों का और संयमादिक अनुष्ठानों का आचरण इसलिये तो करता कि उसे आगे चलकर उसी भव में परभव सम्बन्धी शुभायु का बंध हो जावे। परन्तु यदि उत्पन्न होते

તેમનુ જે કથન છે તે પણ યોગ્ય નથી-કારણ કે આત્મા, જ્યારે સિદ્ધત્વ પર્યાય પ્રાપ્ત કરે છે ત્યારે તે એજ સમયે સંસારિત્વ પર્યાય ધારણ કરતો નથી વળી કેટલાક અન્ય તીર્થિકોની માન્યતા એવી છે કે-" જ્યારે જ્યારે જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનુ વેદન કરે છે ત્યારે ત્યારે તે પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે " આ માન્યતા પણ બરાબર બંધબેસતી નથી કારણ કે જન્મ થતાજ જીવ, આ ભવના આયુષ્યનુ વેદન કરવા માંડે છે, જો આત્મા એજ સમયે પરભવના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે એવું માનવામા આવે તો દાન, શીલ, તપ અને ભાવનાનુ આચરણ તથા સંયમાદિનુ સેવન કરવુ વગેરે નિરર્થક જ થશે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ઉત્પન્ન થયા પછી જ્યારે તેમનામાં યોગ્ય સામર્થ્ય આવે છે ત્યારે તે દાનાદિ સત્કૃત્યો અને સંયમ વગેરે અનુષ્ઠાનોનું આચરણ કરે છે અને તે એટલા માટે જ કરે છે કે આગળ જતા એજ ભવમા પરભવ સંબંધી શુભ આયુષ્યનો બંધ બંધાય જો જન્મ થતા જ જીવ, પરભવના આયુષ્યનો

विकायुष्कस्य अकरणतया ' णो इहभविआउयं पकरेइ ' नो इहभविकायुष्कं प्रकरोति, ' एव खलु एगे जीवे एगेण समयेण एग आउय पकरेइ ' एव खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति, ' त जहा ' तद्यथा—' इहभविआउयं वा परभविआउयं वा ' इह भविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा, एकेन जीवेनैकदा एकमेवायुर्बध्यते, एतत्सूत्रसदर्भ वा परभवसंबन्धि वा, न तु आयुर्द्वयमेकदा बध्नातीति । ' सेवं भंते सेव भंते ' तदेव भदन्त ! तदेव भदन्त ! आयुष्ककर्मणः एतादृशविषये यदेवानुप्रियेण कथित तत् तथैव सर्वथैव सत्यमिति, ' त्ति भगवं गोयमे

परभविआउय पकरेइ) जीव इह भव सम्बन्धी आयुष्क को नहीं कर लेता है । (एव खलु एगे जीवे एगेण समएण एग आउय पकरेइ) इस तरह एक जीव एक समय में एक ही आयुकर्म को करता है (त जहा-इहभविआउयं वा परभविआउयं वा) या तो वह इह भव का आयुष्य करता है अथवा परभव का आयुष्य करता है । इस सब कथन का सार यही है कि एक जीव एक समय में एक ही आयु को बांधता है—या तो वह इस भव सम्बन्धी आयु को बांधता है या वह परभव सम्बन्धी आयु को बांधता है। एक साथ वह दो आयु का बंध नहीं करता । (सेव भंते । सेवं भंते । त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जो आयुकर्म के सम्बन्ध के विषय में कहा है वह वैसा ही है—अर्थात्—" सर्वथा ही सत्य है सर्वथा ही सत्य ही है " ऐसा कहकर भगवान् गौतम प्रभु को वन्दना

આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધતો નથી (परभविआउयस्स पकरणयाए) અને પરભવ સબંધી આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધી લેવાથી (णो इहभविआउय पकरेइ) આ ભવસબંધી આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધી હોતો નથી (एव खलु एगे जीवे एगेण समएण एगं आउय पकरेइ) આ રીતે કોઇ પણ કોઇ જ સમયે કોઇજ આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે (त जहा-इहभविआउय वा परभविआउय वा) તે કોઇ રીતે કે આ તો આ ભવના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે અને કાંતો તે પર ભવના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ તમામ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે પણ કોઇ સમયે કોઇ જ આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે-કાં તો આ ભવસબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે અને કાંતો પરભવ સબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે. પરંતુ કોઇ સાથે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી (सेव भंते ! सेव भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ) " ભગવન્ ! આપે આયુષ્યકર્મના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે સર્વથા સત્ય જ છે-એમાં શંકાને સ્થાન જ નથી. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વંદના નમસ્કાર કર્યા

इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा 'जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति 'णो तं समयं परभवियाउय पकरेइ' नो तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति। 'जं समयं परभवियाउय पकरेइ णो तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति न तं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति, यदा जीव एतद्भवसंबन्धि आयुष्ककर्म करोति तदा न परभवसंबन्धि आयुष्कं करोति, तथा यदा परभवसबन्धि आयुष्कं करोति। तदा न एतद्भवसंबन्धि आयुष्कर्म करोतीति भावः। यदि एकस्मिन्नेव समये द्वयोरपि बन्धनं भवेत्तदा संयमाद्याचरण निरर्थकं भवेदिति भावः। 'इह भवियाउयस्स पकरणयाए' इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया, करणेनेत्यर्थः, 'णो परभवियाउयं पकरेइ' नो परभविकायुष्कं प्रकरोति, 'परभवियाउयस्स पकरणयाए' परभ-

(एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पकरेइ, तं जहा-इह भवियाउयं वा परभवियाउयं वा) एक जीव एक समय में एक आयु को करता है -वह इस प्रकार से-वा तो वह इस भवसंबंधी आयुष्य को करे या पर भव सम्बन्धी आयुष्य को करे। एक समय में दो आयुओं को नहीं करता है। (जं समयं इह भविया उयं पकरेइ) जिस समय में इस भव सम्बन्धी आयुको वह करता है (णो तं समयं परभवियाउयं पकरेइ) उस समय में वह परभवसम्बन्धी आयु को नहीं करता है। यदि एक समय में दो आयु कर्म का बंध हो तो संयमादिक का आचरण करना निरर्थक हो जावेगा। तथा-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ) इस भव सम्बन्धी आयु के कर लेने से जीव परभव सम्बन्धी आयु कर्म को नहीं कर लेता है। (परभवियाउयस्स पकरणयाए) तथा परभव सम्बन्धी आयुष्क के कर लेने से (णो इह

समएण एग आउय पकरेइ, तं जहा—इह भवियाउय वा परभवियाउय वा) એક જીવ એક સમયે એક જ આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે-આ ભવસંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે અથવા તો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે-પરંતુ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી (जं समय इह भवियाउयं पकरेइ) જે સમયે જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધતો હોય છે, (णो तं समय परभवियाउय पकरेइ) તે સમયે તે પરભવસંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી બે એક જ સમયે બે આયુષ્યકર્મોનો બંધ થતો હોય તો સંયમ વગેરેનુ આચરણ કરવુ નકામુ થઈ પડશે તેમજ (इह भवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ) આ ભવ સંબંધી આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધી લેવાથી (णो परभवियाउय पकरेइ) જીવ, પરભવસંબંધી

थेरा सजमं न जाणंति, थेरा सजमस्स अट्ठं न जाणंति, थेरा सवरं न जाणंति, थेरा सवरस्स अट्ठं न जाणंति, थेरा विवेगं न जाणंति, थेरा विवेगस्स अट्ठं न जाणंति, थेरा विउस्सग्गं न जाणंति, थेरा विउस्सग्गस्स अट्ठं न जाणंति। तएणं ते थेरा भगवतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी—जाणामो णं अज्जा सामाइयं, जाणामो णं अज्जो सामाइयस्स अट्ठं जाव जाणामो णं अज्जो विउस्सग्गस्स अट्ठं। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एवं वयासी, जइणं अज्जा तुब्भे जाणह सामाइयं, जाणह सामाइयस्स अट्ठं, जाव जाणह विउस्सग्गस्स अट्ठं किं मे अज्जो सामाइयं, किं मे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे, जाव किं मे विउस्सग्गस्स अट्ठे? तएणं थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी आयाणे अज्जो सामाइयं, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे, जाव विउस्सग्गस्स अट्ठे। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी—जइ भे अज्जो आया सामाइयं, आया सामाइयस्स अट्ठे, एवं जाव आया विउस्सग्गस्स अट्ठे, अवहट्टु कोहमाणमायालोभं किं अट्ठं अज्जो गरहह। कालासवेसियपुत्ता! सजमट्ठयाए। से भंते! किं गरहा सजमे, अगरहा सजमे?। कालासवेसियपुत्ता गरहा सजमे णो अगरहा सजमे, गरहा णं अणेगविहं सत्तरसविहं दोसं पविणेइ, सत्तरसविहं परिण्णं परिजाणाइ, एवं खु णे आया सजमे उवहिए भवइ, एवं खु णे आया सजमे उवट्ठिए भवइ।

जाव विहरइ' इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति, भगवन्तं वन्दित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयमानो विहरतिस्मेति भावः ॥ सू० ४ ॥

॥ इत्यन्ययूथिकमते प्रश्नोत्तरनिरूपणप्रकरणम् ॥

आर्यकालास्यवेषिपुत्रानगारप्रकरणम्—

अन्ययूथिकप्रस्तावादेवेदं सूत्रमाह—'तेणं कालेणं' इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे कालासवेसियपुत्ते णामं अणगारे जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता थेरे भगवंते एवं वयासी—थेरा सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति, थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति, थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति,

---

नमस्कार कर वहां से संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर आ गये। यहां उत्तरसूत्र में जो "अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि" यावत् पद आया है उससे "एवं भासेमि एवं पन्नवेमि" इन दो क्रियापदों का संग्रह किया गया है। सामान्यरूप से कथन करना इसका नाम आख्या है। विशेषरूप से कथन करना इसका नाम भाषण है। हेतु दृष्टान्त देकर अपने अभिमत विषय का समर्थन करना इसका नाम प्रज्ञापना है। भेदों के कथन से जो विषय निरूपित किया जाता है उसका नाम प्ररूपणा है ॥ सू-४ ॥

इस प्रकार से अन्ययूथिकमत में प्रश्नोत्तरनिरूपण करने वाला प्रकरण समाप्त हुआ ॥

વંદણા નમસ્કાર કરીને સયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા પોતાને સ્થાને ગયા અહીં ઉત્તર સૂત્રમા જે "अह पुण गोयमा! एव आइक्खामि जाव परूवेमि" 'जाव' (यावत्) પ૬ આવ્યુ છે તેની મારફત "एवं भासेमि, एवं पन्नवेमि" એ બે ક્રિયાપદોનો સમાવેશ કરાયો છે વિશેષરૂપે કથન કરવું તેનુ નામ "ભાષણ" છે હેતુ દૃષ્ટાન્ત વડે પોતાના મતનું પ્રતિપાદન કરવું તેનુ નામ "પ્રજ્ઞાપના" છે ભેદોના કથન વડે વિષયનું જે નિરૂપણ કરવામા આવે છે તેને "પ્રરૂપણા" કહે છે" ॥ સૂ૦૪ ॥

॥ અન્યતીર્થિક મત વિષયક પ્રશ્નોત્તર સમાપ્ત ॥

भूमिसेज्जा, फलहसेज्जा, कट्ठसेज्जा, केसलोओ बभचेरवासो परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धो, उच्चावया, गामकंटगा, बावीस परिसहोवसग्गा अहियासिज्जंति, त अट्ठ आराहेइ आराहित्ता, चरमेहिं उस्सासनीसासेहिं सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ सू० ५ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वापत्यस्य कालास्यवेषिकपुत्रो नामानगारो यत्रैव स्थविरा भगवन्तस्तत्रोपागच्छति, उपागत्य स्थविरान् भगवत एवमादीत्, स्थविरा सामायिकं न जानन्ति, स्थविराः सामायिकस्यार्थं न

आर्यकालास्यवेषिपुत्र अनगार प्रकरण-

अन्यतीर्थिकों के प्रस्ताव से ही सूत्रकार ने इस " तेणं कालेणं तेणं समएण इत्यादि ।

सूत्रार्थ--(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (पासावच्चिज्जे) पार्श्वनाथ के वंश में उत्पन्न हुए (कालासवेसियपुत्ते) कालास्य वेषिक पुत्र (णामं अणगारे) नाम के अनगार (जेणेव थेरा भगवंतो) जिस तरफ स्थविर भगवंत थे तेणेव उवागच्छइ) उस तरफ गये (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के (थेरे भगवंते एवं वयासी) उन्होंने स्थविर भगवंतों से ऐसा कहा-(थेरा! सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरों! आप

આર્યકાલાસ્યવેષિપુત્ર અણગાર પ્રકરણ—

અન્યતીર્થિકો (અન્યતીર્થિકો) ના પ્રસ્તાવ વડે જ સૂત્રકારે " तेणं कालेणं तेणं समएणं " ઇત્યાદિ સૂત્રનું કથન કર્યું છે-

' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (पासावच्चिज्जे) પાર્શ્વનાથના વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ (कालासवेसियपुत्ते) કાલાસ્ય વેષિકપુત્ર (णामं अणगारे) નામના અણગાર (जेणेव थेरा भगवंतो) જે તરફ સ્થવિર ભગવન્તો વિરાજતા હતા (तेणेव उवागच्छइ) તે તરફ ગયા. "ઉપ ગચ્છિને (उवागच्छित्ता एवं वयासी) તેમણે સ્થવિર ભગવન્તો ને આ પ્રમાણે કહ્યું-(थेरा! सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइस्स अट्ठं न

एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे संबुद्धे थेरे भगवंते वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी एएसि णं भंते! पयाणं पुव्विं अन्नाणयाए, असवणयाए, अबोहियाए अणभिगमेणं, अदिट्ठाणं असुयाणं अस्सुयाणं अविन्नायाणं अव्वोगडाणं अवोच्छिन्नाणं अणिज्जुढाणं अणुवधारियाणं एयमट्ठं नो सद्दहिए, णो पत्तइए, णो रोइए, इयाणिं भंते! एतेसिं पयाणं जाणणयाए, सवणयाए बोहीए, अभिगमेणं दिट्ठाणं सुयाणं सुयाणं विन्नायाणं वोगडाणं वोच्छिन्नाणं णिज्जुढाणं उवधारियाणं एयमट्ठं सद्दहामि, पत्तियामि, रोएमि, एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह। तएणं ते थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी–सद्दहाहि अज्जो पत्तियाहि अज्जो, रोएहि अज्जो से जहेयं अम्हे वदामो। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे, मुंडभावे, अण्हाणयं अदंतधुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं

आर्य ! सामायिकं जानीम आर्य ! सामायिकस्यार्थं यावत् जानीम आर्य ! व्युत्सर्गं स्यार्थम् । ततः स कालास्यवेषिपुत्रोऽनगारस्तान् स्थविरान् भगवत एवमवादीत् यथार्याः! यूयं जानीथ सामायिकं, जानीथ सामायिकस्यार्थं, यावत् जानीथ व्युत्सर्गं स्यार्थं, किं भवतामार्याः! सामायिकम्'को भवतामार्याः! सामायिकस्यार्थं को भक्ता

कालासवेसिपुत्तं अणगारं एवं वयासी) तब उन स्थविर भगवन्तों ने कालास्यवेषिपुत्र अनगारसे इस प्रकार कहा (जाणामो णं अज्जो सामाइयं, जाणामो णं अज्जो सामाइयस्स अट्ठं) हे आर्य ! हम लोग सामायिक को जानते हैं । हे आर्य हम लोग सामायिक के अर्थ को जानते हैं (जाव जाणामो णं अज्जो विउसग्गस्स अट्ठं) यावत् हे आर्य ! हम लोग व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हैं । (तएणं से कालासवेसिपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एवं वयासी) तब उन कालास्यवेषिपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवंतों से इस प्रकार कहा—(जइणं अज्जो तुब्भे जाणह सामाइयं, जाणह सामाइयस्स अट्ठं, जाव जाणह विउसग्गस्स अट्ठं) यदि हे आर्यो ! तुम लोग सामायिक को जानते हो, सामायिक के अर्थ को जानते हो, यावत् व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हो, तो (किं मे अज्जो सामाइए) आप के मत में आर्यो ! सामायिक यह क्या वस्तु है ? (किं मे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे) हे आर्यो ! आप के मत में सामायिक का

ત્યારે તે સ્થવિર ભગવંતોએ કાલાસ્યવેષિપુત્ર અણગારને આ પ્રમાણે કહ્યું—

(जाणामो णं अज्जो सामाइयं, जाणामो णं अज्जो सामाइयस्स अट्ठं) હે આર્ય ! અમે સામાયિક જાણીએ છીએ, હે આર્ય ! અમે સામાયિકનો અર્થ પણ જાણીએ છીએ (जाव जाणामो णं अज्जो विउसग्गस्स अट्ठं) યાવત્ હે આર્ય ! અમે વ્યુત્સર્ગનો અર્થ પણ જાણીએ છીએ. (तएणं से कालासवेसिपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एवं वयासी) ત્યારે તે કાલાસ્યવેષિપુત્ર અણગાર તે સ્થવિર ભગવન્તોને આ પ્રમાણે કહ્યું-(जइणं अज्जो तुब्भे जाणह सामाइयं जाणह सामाइयस्स अट्ठं जाव जाणह विउसग्गस्स अट्ठं) હે આર્યો ! જો તમે સામાયિકને જાણતા હો અને સામાયિકના અર્થને જાણતા હો, " યાવત્ ' વ્યુત્સર્ગના અર્થને પણ સમજતા હો (અહીં " યાવત્ ' પદથી પ્રત્યાખ્યાન, સંયમ વિવેક અને વ્યુત્સર્ગને જાણતા હો અને તેમના અર્થ સમજતા હો એટલો પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો) તો (किं मे अज्जो सामाइए) હે આર્યો ! આપના મતાનુસાર સામાયિક શું છે ? (किं मे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे) હે આર્યો ! આપના મત પ્રમાણે સામાયિકનો શો અર્થ છે ? (जाव किं

जानंति, स्थविराः प्रत्याख्यानं न जानन्ति, स्थविराः प्रत्याख्यानस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः संयमं न जानन्ति, स्थविराः संयमस्यार्थं न जानन्ति स्थविराः संवरं न जानन्ति, स्थविराः संवरस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः विवेक न जानन्ति, स्थविराः विवेकस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः व्युत्सर्गं न जानन्ति, स्थविराः व्युत्सर्गस्यार्थं न जानन्ति, ततस्ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेषिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः जानीम

लोग सामायिक नहीं जानते हैं, सामायिक के अर्थ को नहीं जानते हैं (थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग प्रत्यख्यान को नहीं जानते हैं (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरों! आप लोग प्रत्याख्यान के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरा संजमं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग संयम को नहीं जानते हैं। (थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग सयम के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरा संवरं न जानंति) हे स्थविरो! आप लोग संवर को नहीं जानते हैं। (थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग संवर के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरा विवेगं न जाणंति, थेरा विवेगस्स अट्ठ न जाणति) हे स्थविरो! आप लोग विवेक को नहीं जानते हैं और हे स्थविरो! आप लोग विवेक के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरो विउसग्गं न जानंति, थेरा विउसगस्स अट्ठं न जानंति) हे स्थविरो! आप लोग व्युत्सर्ग को नहीं जानते हैं। हे स्थविरो! आप लोग व्युत्सर्ग के अर्थ को नहीं जानते हैं। (तएणं ते थेरा भगवंतो

जाणति) હે સ્થવિરો! તમે સામાયિક જાણતા નથી અને સામાયિકનો અર્થ પણ જાણતા નથી (थेरा पच्चक्खाण न जाणंति) હે સ્થવિરો! તમે પ્રત્યાખ્યાનને જાણતા નથી, (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठ न जाणति) અને હે સ્થવિરો! તમે પ્રત્યાખાનનો અર્થ પણ જાણતા નથી, (थेरा सजम न जाणंति) હે સ્થવિરો! તમે સંજમને જાણતા નથી, (थेरा सजमस्स अठ न जाणंति) અને હે સ્થવિરો! તમે સજમનો અર્થ પણ જાણતા નથી, (थेरा सवर न जाणति) હે સ્થવિરો! તમે સવરને જાણતા નથી, (थेरा संवरस्स अ न जाणति) અને હે સ્થવિરો! તમે સવરનો અર્થ પણ સમજતા નથી, (थेरो विवेग न जाणति, थेरा विवेगस्स अट्ठ न जाणंति) હે સ્થવિરો! તમે વિવેકને જાણતા નથી, અને હે સ્થવિરો! તમે વિવેકનો અર્થ પણ જાણતા નથી. (थेरा विउसग्ग न जाणति, थेरा विउसगस्स अट्ठं न जाणति) હે સ્થવિરો! તમે વ્યુત્સર્ગને જાણતા નથી, અને હે સ્થવિરો! તમે વ્યુત્સર્ગનો અર્થ પણ જાણતા નથી (तएण ते थेरा भगवतो कालासवेसिपुत्त अणगार एव वयासी)

किं गरहा संयम अगरहा संयमः ? । कालास्यवेषिकपुत्र ! गर्हा संयमो नो अगर्हा संयमः, गर्हापि च खलु सर्वं दोषं मिथिनपति, सर्वं बाल्यता परिज्ञाय, एव खलु स्माकमात्मा संयमे उपस्थितो भवति, एव खलु स्माकमात्मा संयमे उपस्थितो भवति । अथ खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगार स्थविरान् भगवतो

इन क्रोधादिकों की निंदा करते हो ? तब उन स्थविर भगवन्तों ने कालास्यवेषिपुत्र से कहा कि (कालासवेसियपुत्ता) हे कालास्यवेषिकपुत्र ! (स जमट्ठाए) हम लोग जो क्रोधादिकों की निंदा करते हैं वह संयम के लिये करते हैं । (से भंते ! किं गरहा सजमे अगरहा सजमे ?) तब कालास्यवेषिकपुत्र ने उन स्थविर भगवन्तों से पूछा कि हे भदन्तो ! गर्हा (निंदा) संयम है ? कि अगर्हा संयम है ? (कालासवेसिय पुत्ता ! गरहा सजमे, णो अगरहा सजमे) स्थविर भगवन्तों ने तब कहा कि कालास्यवेषिकपुत्र ! गर्हा संयम है, अगर्हा संयम नहीं है । (गरहा वि य णं सव्व दोस पविणेइ) अपि च गर्हा समस्त दोषों को बिलकुल दूर कर देती है, (सव्वं बालियं परिण्णाए) समस्त बाल्य-अज्ञान को इस परिज्ञा से जानकर । अर्थात् गर्हा द्वारा आत्मा इस परिज्ञा से समस्त अज्ञान जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से दोषों का नाश कर देती है । (एव खलु मे आया संजमे उवट्ठिए भवइ) इस तरह से हम लोगों की आत्मा संयम में स्थापित हो जाती है । (एव खलु मे आया सजमे उवट्ठिए भवइ) इस तरह से हम लोगों की आत्मा संयम में उपस्थित हो जाती है । (एवं

ગર્હા (નિંદા) કરો છો ? ત્યારે તે સ્થવિર ભગવંતોએ કાલાસ્યવેષિક પુત્રને કહ્યું- (कालासवेसियपुत्ता !) હે કાલાસ્યવેષિક પુત્ર ! (सजमट्ठाए) અમે જે નિંદ વગેરેની પૃચ્છા કરીએ છીએ તે સંયમને માટે જ કરીએ છીએ (से भंते ! किं गरहा सजमे अगरहा सजमे ?) ત્યારે કાલાસ્યવેષિકપુત્રે તેમને પૂછ્યું- હે પૂજ્યો ! ગર્હા (ગુરુસાક્ષી એ આત્મનિંદા) સંયમ છે ? કે અગર્હા સંયમ છે ? (कालासवेसियपुत्ता ! गरहा सजमे णो अगरहा सजमे) હે કાલાસ્યવેષિક પુત્ર ! ગર્હા સંયમ છે અગર્હા સંયમ નથી. (गरहा वि य णं सव्व दोसं पविणेइ) અને ગર્હા તમામ દોષો સારી રીતે દૂર કરનારી છે (सव्वं बालियं परिण्णाए) તમામ બાલ્યને (અજ્ઞાનને) જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને-એટલે કે ગર્હા એટલે કે ગુરુસાક્ષી એ સ્વ નિંદા કરીને આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી અજ્ઞાનને જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા વડે દોષોનો નાશ કરે છે (एव खलु मे आया सजमे उवट्ठिए भवइ) આ રીતે અમારો આત્મા સંયમમાં સ્થાપિત થઈ જાય છે (एव खलु मे आया सजमे उवट्ठिए भवइ) આ રીતે અમારો આત્મા સંયમમાં ઉપસ્થિત

मार्याः!व्युत्सर्गः,को भवतामार्या! व्युत्सर्गस्यार्थः। ततस्ते स्थविरा भगवंतः कालास्यवेषिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः, आत्मा-अस्माकमार्य! सामायिकम्, आत्मा अस्माकमार्य ! सामायिकस्यार्थः, यावद् व्युत्सर्गस्यार्थः । ततः स कालास्यवेषिकपुत्रोनगारः स्थविरान् भगवत एवमवादीत्, यदि भवतामार्याः ! आत्मा सामायिकम्, आत्मा सामायिकस्यार्थ एवं यावत् आत्मा व्युत्सर्गस्यार्थः, अपहृत्य क्रोधमानमायालोभान् किमर्थमार्याः गर्हत। कालास्यवेषिकपुत्र ! संयमार्थतया । तद् भदंत !

क्या अर्थ है ? (जाव किं भे विउसग्गस्स अट्ठे) यावत् व्युत्सर्ग का क्या अर्थ है ? (तएणं थेरा भगवन्तो कालासवेसिकपुत्त अणगारं एवं वयासी) इसके बाद उन स्थविर भगवंतों ने कालास्यवेषिपुत्र अनगार से इस प्रकार से कहा । (आयाणे अज्जो ! समाइए, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे जाव विउसग्गस्स अट्ठे) हे आर्य ! हमारा आत्मा सामायिक है । हे आर्य ! हमारा आत्मा सामायिक का अर्थ है ! (जाव विउसग्गस्स अट्ठे) यावत् व्युत्सर्ग का अर्थ है (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवन्ते एवं वयासी) तब उन कालास्यवेषिक पुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवन्तो से ऐसा कहा-(जइ भे अज्जो आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे) हे आर्यो ! यदि आप लोगो की आत्मा सामायिक है, आत्मा सामायिक का अर्थ है (एवं जाव आया विउसग्गस्स अट्ठे) इसी तरह से यावत् आत्मा व्युत्सर्ग का अर्थ है, तो (कोहमाणमायालोभे) क्रोध, मान, माया और लोभ इनको (अवहट्टु छोड़कर (किं अट्ठ) किसलिये (अज्जो) हे आर्यो ! तुम लोग (गरहह)

भे विउसग्गस्स अट्ठे) यावत व्युत्सर्गनो शो अर्थ छे ? (अहीं पणु "यावत्" पदथी पूर्वोक्त सूत्रपाठ ग्रहणु करवो) (तएण थेरा भगवतो कालासवेसियपुत्त अणगारं एव वयासी) त्यारे ते स्थविर भगवन्तोओ कालास्यवेषिपुत्रने आ प्रमाणे कहु-(अयाणे अज्जो ! सामाइए, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे जाव विउग्गस्स अट्ठे) हे आर्य ! अमारो आत्मा ओज सामायिक छे, अने हे आर्य ! अमारो आत्मा ओज सामायिकनो अर्थ छे, " यावत् " व्युत्सर्गनो अर्थ छे (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे भगवते एव वयासी) त्यारे ते कालास्यवेषिकपुत्र अणुगारे ते स्थविर भगवन्तोने आ प्रमाणे कहु-(जइ भे अज्जो आया सामाइयस्स अट्ठे एव जाव आया विउसग्गस्स अट्ठे) हे आर्यो ! जो आपनो आत्मा सामायिक होय अने आपनो आत्मा सामायिकनो अर्थ होय, " यावत् " आपनो आत्मा व्युत्सर्गनो अर्थ होय तो (कोहमाण माया लोभे) क्रोध, मान, माया अने लोभनो (अवहट्टु) त्याग करीने वळी (किं अट्ठं) शा माटे (अज्जो) हे आर्यो ! (गरहह) तमे तेमनी (क्रोधादिकोनी)

व्युच्छिन्नानां निर्यूढानामवधारितानामवमर्थं श्रद्दधामि, प्रत्येमि, रोचे, एवमेतत् तत् यथैतत् यूयं वदत । ततस्ते स्थविरा भगवन्त कालास्यवेषिकपुत्रमनगारमेव मवादिषुः, श्रद्धेहि आर्य ! रोचस्व आर्य ! एवं यथैतद् वयं वदामः । ततः कालास

को (नो सद्दहिए) श्रद्धा से युक्त नहीं किया (णो पत्तइए) प्रतीति (विश्वास) से युक्त नहीं किया (णो रोइए) रुचि से युक्त नहीं किया (इयाणिं भंते) इस समय हे भदन्त ! (जाणणयाए) इन पदों का ज्ञान हो जाने के कारण (सवणयाए) श्रवण हो जाने के कारण (बोहीए बोध हो जाने के कारण (अभिगमेण) अभिगम हो जाने के कारण (दिट्ठाणं) देखे गये (सुयाणं) सुने गये (सुयाणं) स्मरण किये गये (विण्णायाणं) विज्ञात किये गये (वोगडाणं) व्याकृत किये गये (वोच्छिन्नाणं) व्युच्छिन्न किये गये (णिज्जूढाणं) निर्यूढ किये गये (अवधारियाणं) अवधारित किये गये (एतेसिं पयाणं) इन पदों के (एयमट्ठं) इस अर्थ की (सद्दहामि) मैं श्रद्धा करता हूं (पत्तियामि) प्रतीति करता हूं (रोएमि) रुचि करता हूं (एवमेयं) यह ऐसा ही है जैसा कि आप कहते हैं । (तएणं) इसके बाद (ते थेरा भगवन्तो) उन स्थविर भगवन्तों ने (कालासवेसियपुत्तं अणगारं) कालास्यवेषिक पुत्र अनगार से (एवं वयासी) ऐसा कहा (सद्दहाहि अज्जो पत्तियाहि अज्जो, रोएहि अज्जो) हे आर्य ! श्रद्धा करो, हे आर्य प्रतीति करो, हे आर्य रुचि करो (से जहेयं

શ્રદ્ધિત કર્યો ન હતો, (णो पत्तइए) આ અર્થમાં પહેલાં મને વિશ્વાસ ન હતો, (णो रोइए) રુચિ ન હતી (इयाणिं भंते !) હે પૂજ્યો ! હવે(जाणणयाए) આ પદોનું જ્ઞાન થવાને કારણે (सवणयाए) શ્રવણ થવાને કારણે (बोहिए) બોધ થવાને કારણે (अभिगमेण) અભિગમ (સમજણ) થવાને કારણે, (दिट्ठाणं, सुयाणं, विन्नायाणं, वोगडाणं वोच्छिन्नाणं, णिज्जूढाणं, अवधारियाणं एतेसिं पयाणं एयमट्ठं सद्दहामि पत्तियामि रोएमि एवमेयं) તે પદોનાં આ અર્થને જોઈને, જાણીને, સ્મરણ કરીને, વિજ્ઞાત કરીને, વ્યાકૃત (પ્રગટ) થવાથી, વ્યુચ્છિન્ન થવાથી, નિર્યૂઢ થવાથી અને અવધારિત કરવાથી તે અર્થમાં હવે મને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ છે તે અર્થની મને પ્રતીતિ થઈ છે, તે અર્થ પ્રત્યે મને રુચિ પેદા થઈ છે, આપના કહેવા પ્રમાણે જ એ તમામ અર્થ યથાર્થ છે (तएणं) ત્યાર બાદ (ते थेरा भगवंतो) તે સ્થવિર ભગવંતોએ (कालासवेसियपुत्तं अणगारं) કાલાસ્યવેષિક પુત્ર અણગારને (एवं वयासी) આ પ્રમાણે કહ્યું-(सद्दहाहि अज्जो पत्तियाहि अज्जो, रोएहि अज्जो, से

वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत्, एतेषां भदन्त पदानां पूर्वमज्ञानतया अश्रवणतया अबोधितया अनभिगमेनादृष्टानामश्रुतानामस्मृतानामविज्ञातानामव्याकृतानामव्युच्छिन्नानामनिर्यूढानामनवधारितानामेषोऽर्थो नो श्रद्धितो नो प्रतीतः (प्रत्ययितः) नो रुचित इदानीं भदन्त ! एतेषां पदानां ज्ञानतया श्रवणतया-बोधितयाऽभिगमनेन दृष्टानां श्रुतानां स्मृतानां विज्ञातानां व्याकृतानां

खु णे आया संजमे उवट्ठिए भवइ) इस तरह हम लोगों की आत्मा संयम में उपस्थित हो जाती है। (एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते) ऐसा सुनकर वे कालस्यवेषिक पुत्र (अणगारे) अनगार (संबुद्धे) संबुद्ध हो गये। (थेरे भगवन्ते वंदइ, णमसइ) उन्हों ने स्थविर भगवन्तों को वन्दना की। उन्हें नमस्कार किया। (वन्दित्ता णमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके फिर वे उन से (एवं वयासी) इस प्रकार बोले (भंते !) हे भदन्तो) (पुव्विं) पहिले मैं ने (अन्नाणयाए) अज्ञानता के कारण (असवणयाए) अश्रवणता के कारण (अबोहियाए) अबोधिता के कारण (अनभिगमेणं) अनभिगम (नहीं जानने) के कारण (अदिट्ठाणं) नहीं देखे गये (अस्सुयाणं) नहीं सुने गये (अस्सुयाणं) नहीं स्मृत किये गये (अविन्नायाणं) नहीं विज्ञात किये गये (अव्वोगडाणं) नहीं व्याकृत (प्रगट) किये गये (अवोच्छिन्नाणं) नहीं व्युच्छिन्न किये गये (अणिज्जूढाणं) नहीं निर्यूढ किये गये (अणुवधरियाणं) नहीं अवधारित किये गये (एएसिं णं पयाणं) इन पदों के (एयमट्ठं) इस अर्थ

થઇ જાય છે (एव खु णे आया संजमे उवट्ठिए भवइ) આ રીતે અમારો આત્મા સંયમમા ઉપસ્થિત થઇ જાય છે (एत्थ ण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे संबुद्धे) તેમના એ પ્રકારના વચનો સાભળીને કાલાસ્યવેષિક પુત્ર અણગાર બોધ પામ્યા (थेरे भगवते वदइ, णमंसइ) ત્યાર બાદ તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને વદણા કરી અને નમસ્કાર કર્યા (वदित्ता णमंसित्ता) વદન નમસ્કાર કરીને (एव वयासी) તેમણે તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(भते !) હે પૂજ્યો ! (पुव्विं) પહેલા (अन्नाणयाए) અજ્ઞાનતાને કારણે, (असवणयाए) અશ્રવણતાને કારણે, (अबोहियाए) અબોધિતાને કારણે, (अनभिगमेण) અણસમજને કારણે, (अदिट्ठाण) નહી દેખેલા, (अस्सुयाण) નહીં સાભળેલા, (अस्सुयाण) નહી સ્મૃત કરેલા, (अविन्नायाण) નહી વિજ્ઞાત કરાયેલા, (अव्वोगडाण) નહીં પ્રકટ કરાયેલા, (अवोच्छिन्नाण) નહીં વ્યુચ્છિન્ન કરાયેલા (अणिज्जूढाण) નહીં નિર્યૂઢ કરાયેલા, (अणुवधारियाण) નહીં અવધારિત કરાયેલા (एएसिं ण पयाण) એવા આ પદોનો (एयमट्ठ) આ અર્થ (नो सद्दहिए) મેં શ્રદ્ધા

धर्ममुपसंपद्य खलु विहरति । तत्र खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारो बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयिष्यति, पालयित्वा यस्यार्थं क्रियते "नग्नभावो मुण्डभावोऽस्नानकमदन्तधावनकम् छत्रकमनुपानकं भूमिशय्या फलकशय्या काष्ठशय्या

वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया (वन्दित्ता नमंसित्ता) वन्दना करके, नमस्कार करके, (चाउज्जामाओ धम्माओ) चार महाव्रत वाले धर्म को छोड़कर (सपडिक्कमणं) प्रतिक्रमण सहित (पंच महव्वइयं) पांच महाव्रत वाले (धम्मं) धर्म को (उवसंपज्जित्ताणं) प्राप्त कर (विहरइ) विचरने लगे (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) इसके बाद इन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (बहूनि वासाणि) बहुत वर्षों तक (सामण्ण परियागं पाउणइ) श्रामण्यपर्याय का पालन किया । (पाउणित्ता) पालन करके (जस्सट्ठाए) जिस अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के निमित्त (नग्गभावे कीरइ) इन्होंने नग्नपना लिया (मुण्डभावे) मुण्डपना लिया (अण्हाणयं) स्नान नहीं करना ऐसा नियम लिया (अदंतपुवणयं) दन्तधावन-दांतोंन नहीं की (अच्छत्तयं) छत्र नहीं रखा (अणोवाहणयं) पगरखे नहीं पहरे (भूमिसेज्जा) भूमि पर शयन किया (फलहसेज्जा) फलक पर शयन किया (कट्ठसेज्जा) काष्ठ पर शयन किया (केसलोओ) केशों का लुंचन किया (बंभचेर वासो) ब्रह्मचर्य में वास किया (परघरप्पवेसो)

કર્યા (वन्दित्ता, नमंसित्ता) વંદના નમસ્કાર કરીને (चाउज्जामाओ धम्माओ) ચાર મહાવ્રતવાળા ધર્મને છોડીને (सपडिक्कमणं) પ્રતિક્રમણ સહિત (पंच महव्वइयं) પાંચ મહાવ્રતવાળા (धम्मं) ધર્મને (उवसंपज्जित्ताणं) અંગીકાર કરીને (विहरइ) વિચરવા લાગ્યા (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) ત્યાર બાદ તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અનગારે (बहूनि वासाणि) ઘણા વર્ષો સુધી (सामण्ण परियागं पाउणइ) શ્રમણ્ય પર્યાયનું પાલન કર્યું (पालयित्ता) શ્રમણ્ય પર્યાયનું પાલન કરીને (जस्सट्ठाए) જેમણે પોતાના આત્માર્થસાધનની સિદ્ધિ માટે (नग्गभावे कीरइ) નગ્નતા આદિનું કરી-વસ્ત્રોનો પરિત્યાગ કર્યો (मुण्डभावे) માથે મુંડન કર્યો-કેશલુંચન કર્યું (अण्हायय) સ્નાન નહીં કરવાનો નિયમ કર્યો, (अदंतवणयं) દાંત ધોવાનું બંધ કર્યું (अच्छत्तय) છત્ર રાખવું બંધ કર્યું, (अणोवाहणय) પગમાં જોડા પહેરવા બંધ કર્યા, (भूमिसेज्जा) ભૂમિ પર શયન કરવા માંડયું (फलहसेज्जा) ફલક પર શયન કરવા માંડયું (कट्ठसेज्जा) કાષ્ઠ પર શયન કરવા માંડયું (केसलोओ) વાળનો લોચ કરવા માંડયો (बंभचेरवासो) બ્રહ્મચર્ય પાળવા માંડયું, (परघरप्पवेसो) બિજાને ઘરમાં

स्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदंत! युष्माकमन्तिके चातुर्यामाद् धर्मात् पंचमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवानुप्रिय! मा प्रतिबन्धं कुरु। ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा चातुर्यामाद् धर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं

अम्हे वदह) उस पर जैसा कि हम कहते हैं। (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) इसके बाद कालास्यवेषिक पुत्र अनगार ने (थेरे भगवंते वंदइ, नमंसइ) उन स्थविर भगवन्तों की वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्होंने उनसे ऐसा कहा (भंते! तुब्भं अंतिए) हे स्थविर भदन्तों! आप लोगों के पास मैं (चाउज्जामाओ धम्माओ) चार महाव्रत वाले धर्म को छोड़कर (सप्पडिक्कमणं पंचमहव्वयं धम्मं) प्रतिक्रमणसहित पांचमहाव्रत वाले धर्म को (उवसम्पज्जित्ता णं विहरित्तए इच्छामि) प्राप्त कर विचरना चाहता हूं। तब स्थविर भगवन्तों ने उनसे कहा-(अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह) आप को जैसे सुख हो हे देवानुप्रिय! आप वैसा करें। विलम्ब न करें। (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) इसके बाद उन कालास्यवेषिक पुत्र अनगार ने (थेरे भगवंते वन्दइ, नमंसइ) स्थविर भगवन्तों को

जहेयं अम्हें वदह) હે આર્ય! અમે તે વિષે જે કહીએ છીએ તેમા શ્રદ્ધા રાખો, હે આર્ય! તેની પ્રતીતિ કરો, હે આર્ય! તેમાં રુચિ રાખો. (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) ત્યાર બ દ તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે (थेरे भगवंते वंदइ नमसइ) તે સ્થવિર ભગવન્તોને વદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા. (वंदित्ता नमसित्ता) વદણા નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે ફરીથી તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(भते तुब्भ अंतिए) હે સ્થવિર ભગવન્તો! આપની સમક્ષ જ હુ (चाउज्जामाओ धम्माओ) ચાર મહાવ્રતવાળા ધર્મને છોડીને (सप्पडिक्कमणं पचमहव्वय धम्म) પ્રતિક્રમણ સહિતના પાચ મહાવ્રતવાળા ધર્મનો (उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए इच्छामि) સ્વીકાર કરીને વિચરવા ભાગું છું. ત્યારે સ્થવિર ભગવન્તોએ કહ્યુ-(अहासुह देवाणुप्पिया! मा पडिबंध करेह) હે દેવાનુપ્રિય! આપને જે રીતે સુખ થાય એ પ્રમાણે કરો-પરતુ વિલમ્બ કરશો નહી. (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) ત્યારે તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે (थेरे भगवंते वदइ, नमंसइ) સ્થવિર ભગવાનોને વંદણા કરી, નમ-

एव प्रदेशे स्थविरा भगवन्त आसन् तेनैव तस्मिन्नेव प्रदेशे उपागच्छति, 'उवागच्छित्ता थेरे भगवंत एवं वयासी' उपागम्य स्थविरान् भगवत एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत् 'थेरा सामाइयं न जाणंति' हे स्थविरा ! भवन्तः सामायिकं न जानन्ति, तत्सूक्ष्मगुरुतरार्थतया दुर्विज्ञेयत्वात् 'थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविरा ! भवन्तः सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनं न जानन्ति, तत्प्रयोजनज्ञानस्य अतिदुष्करत्वात् 'थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति हे स्थविरा ! भवन्त प्रत्याख्यानं न जानन्ति, त्यागधर्मस्य दुर्विज्ञेयत्वात्, थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविरा ! भवन्त प्रत्याख्यानस्य अर्थं प्रयोजनं न जानन्ति, तस्य अतिदुष्क

थेपो मुख अनगार थे। वे जिस प्रदेश में स्थविर भगवन्त विराजमान थे वहां गये। भगवान महावीर के पद्मुधुन जो शिष्य थे। उनका नाम स्थविर हैं। उनके समीप जाकर उन्हों ने उस स्थविर भगवन्तों से ऐसा -आगे जो विषय कहा जाने वाला है उस रूप से-कहा, वह विषय इस प्रकार से है-(थेरा सामाइयं न जाणंति) हे स्थविरो। आप सामायिक को नहीं जानते हैं। क्योंकि वह अत्यन्त सूक्ष्म गुरु अर्थ वाला है। इस कारण वह दुर्विज्ञेय है-उसका समझना-जानना-बहुत कठिनाईयों से भरपूर है। (थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो। आप लोग सामायिक के अर्थ को नहीं जानते हैं। यहां अर्थ का तात्पर्य प्रयोजन का ज्ञान होना अतिदुष्कर है। (थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति) हे स्थविरो ! आप प्रत्याख्यान को नहीं जानते हैं। क्यों कि प्रत्याख्यान त्यागधर्मरूप होता है। और त्यागधर्म का समझना दुर्विज्ञेय है। (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो ! आप प्रत्याख्यान का क्या

ભગવત વિરાજમાન હતા ત્યાં ગયા. ભગવાન મહાવીર। જે શિષ્યો બહુશ્રુત હતા તેમને સ્થવિર કહેતા હતા સ્થવિરોપીપુત્ર અણગારે તેમની પાસે જઈને તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું— थेरा सामाइयं न जाणंति" હે સ્થવિરો ! આપ સામાયિકને જાણતા નથી કારણ કે તેનો અર્થ અત્યંત સૂક્ષ્મ અને ગહન છે દુર્વિજ્ઞેય છે એટલે કે તેને સમજવામાં ઘણા અતિશય મુશ્કેલ છે 'थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति' હે સ્થવિરો ! તમે સામાયિકનો અર્થ પણ જાણતા નથી અહીં અર્થ એટલે પ્રયોજન સમજવું કારણ કે સામાયિકનું પ્રયોજન સમજવું અતિ દુષ્કર છે थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति' હે સ્થવિરો ! તમે પ્રત્યાખ્યાનને સમજતા નથી કારણ કે પ્રત્યાખ્યાન ત્યાગધર્મ રૂપ હોય છે અને ત્યાગધર્મને સમજવો પણ અતિ મુશ્કેલ છે थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति" હે સ્થવિરો ! તમે પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન પણ સમજતા નથી.

केशलोचः ब्रह्मचर्यवासः परगृहप्रवेश लब्धापलब्धि., उच्चावचा ग्रामकण्टका द्वाविंशतिः परिसहोपसर्गा अधिसह्यन्ते तमर्थमाराधयति आराध्य चरमैरुच्छ्वास निःश्वासैः सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिर्वृतः सर्वदुःखप्रहीणः ॥ सू० ५ ॥

टीका–'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन् काले तस्मिन् समये खलु 'पासावच्चिज्जे कालासवेसियपुत्ते णामं अणगारे' पार्श्वापत्यातः–पार्श्वसन्तानीयः कालास्यवेषिपुत्रो नाम अनगारः 'जेणेव थेरा भगवतो तेणेव उवागच्छइ' येनैव यस्मिन्

भिक्षा के लिये परघर में प्रवेश किया (लद्धावलद्धी) भिक्षा मिले या न मिले दोनों अवस्थाओं में समताभाव रखा, (उच्चावया) अनुकूल प्रतिकूल ऐसे (गामकंटगा) तथा इन्द्रियों के कण्टकरूप (बावीसं परिसहोवसग्गा) ऐसे २२ परीषहों को और उपसर्गों को (अहियासिज्जंति) सदा (तं अट्ठं आहारेइ) उस अर्थ की उन्हों ने अच्छी तरह से आराधना की। (आराहित्ता) और आराधना करके वे (चरमेहिं उस्सास नीसासेहिं) अन्तिम उच्छ्वासनिःश्वास में (सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत और समस्त दुःखों से रहित हो गये।

टीकार्थ—(तेणं काले तेणं समएणं) उस काल में अर्थात् चतुर्थकाल में, उस समय में–अर्थात्–जब कि श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे तब। (पासावच्चिज्जे) पार्श्वापत्यीय–पार्श्वनाथ के शिष्यों में के एक शिष्य जिनका नाम (कालासवेसियपुत्ते अणगारे) कालास्य-

પ્રવેશ કરવા માડયો–ગોચરી માટે ઘરે ઘરે ફરવા માડયુ (लद्धावलद्धी) ભિક્ષા મળે કે ન મળે, એ બન્ને અવસ્થામા સમતાભાવ રાખવા માડયો, (उच्चावचा) અનુકૂળ તથા પ્રતિકૂળ એવાં (गामकंटगा) તથા ઈન્દ્રિયોને માટે કંટકરૂપ (बावीस परिसहोवसग्गा) એવા બાવીસ પરીષહો અને ઉપસર્ગોને (अहियासिज्जंति) સહન કર્યા (तं अट्ठं आहारेइ) તે અર્થની (મોક્ષમાર્ગની) તેમણે સારી રીતે આરાધના કરી (आराहित्ता) આરાધના કરીને તેઓ (चरमेहिं उस्सासनीसासेहिं) અન્તિમ ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસમા (सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત અને પરિનિર્વૃત થઈને તમામ દુઃખોથી રહિત થઈ ગયા અર્થાત્ મોક્ષ પદની પ્રાપ્તિ કરી

ટીકાર્થ—" तेणं काले तेणं समएणं " તે કાળે એટલે કે ચોથા આરામાં, તે સમયે–એટલે કે જ્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિરાજમાન હતા ત્યારે " पासावच्चिज्जे " પાર્શ્વનાથના શિષ્યોમાના એક શિષ્ય કે જેમનું નામ " कालासवेसियपुत्त अणगारे". કાલાવસ્યવેષીપુત્ર અણગાર હતું, તેઓ જ્યા સ્થવિર

हे स्थविराः ! भवन्तो व्युत्सर्गं न जानन्ति, तस्य दुष्करत्वात्, 'थेरा विउस्सग्गस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः ! भवन्तो व्युत्सर्गस्य अर्थं न जानन्ति, तत्स्वरूपस्य दुर्बोध्यत्वात्, 'तएणं ते थेरा भगवंतो-कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी' ततस्ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेषिकपुत्रं अनगारम् एवं-वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादिषुः 'जाणामो णं अज्जो ! सामाइयं' हे आर्य ! वयं जानीमः खलु सामायिकम्, 'जाणामो णं अज्जो ! सामाइयस्स अट्ठं' हे आर्य ! जानीमः खलु एवं सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनम्, 'एवं-जाणामो णं अज्जो विउस्सग्गस्स अट्ठं'

स्थविरो ! आप विवेक के प्रयोजन को नहीं जानते हैं क्यों कि वह प्रयोजन अत्यन्त सूक्ष्म है। (थेरा विउस्सग्गं न जाणंति) हे स्थविरो ! आप व्युत्सर्ग को नहीं जानते हैं क्यों कि उसका करना बड़ा कठिन है। (थेरा विउस्सग्गस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो ! आप व्युत्सर्ग के अर्थ को नहीं जानते हैं क्यों कि उसका स्वरूप दुर्बोध्य है। कालास्यवेषिपुत्र अनगार की इस बात को सुनकर इन स्थविर भगवन्तों ने कालास्यवेषिपुत्र अनगार से ऐसा कहा-हे आर्य ! हम सामायिक को जानते हैं सामायिक के प्रयोजन को जानते हैं। हे आर्य ! हम प्रत्याख्यान को जानते हैं, प्रत्याख्यान के अर्थ को जानते हैं। हे आर्य ! हम संयम को जानते हैं, संयम के अर्थ को अर्थात् प्रयोजन को जानते हैं। हे आर्य ! हम संवर को जानते हैं, संवर के प्रयोजन को जानते हैं। हे आर्य ! हम विवेक को जानते हैं, विवेक के अर्थ को जानते हैं। हम व्युत्सर्ग को

જાણતા નથી, કારણ કે તે પ્રયોજન અત્યંત સૂક્ષ્મ છે " थेरा विउस्सग्गं न जाणंति " હે સ્થવિરો ! તમે વ્યુત્સર્ગને જાણતા નથી કારણ કે તે કરવાનું કામ બહુ કઠિન છે " थेरा विउस्सग्गस्स अट्ठं न जाणंति " હે સ્થવિરો ! તમે વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન પણ જાણતા નથી કારણ કે તેનું સ્વરૂપ સમજવું કાર્ય બહુ દુષ્કર છે કાલાસ્યવેષીપુત્ર અણગારની તે વાત સાંભળીને તે સ્થવિર ભગવંતોએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યું— હે આર્ય ! અમે સામાયિકને સમજીએ છીએ અને સામાયિકના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ હે આર્ય ! અમે પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન પણ સમજીએ છીએ. હે આર્ય ! અમે સંયમને જાણીએ છીએ અને સંયમના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ હે આર્ય ! અમે સંવરને જાણીએ છીએ અને સંવરના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ, હે આર્ય ! અમે વિવેકને જાણીએ છીએ અને વિવેકના અર્થને પણ જાણીએ છીએ. તથા હે આર્ય ! અમે વ્યુત્સર્ગને જાણીએ છીએ અને વ્યુત્સર્ગના અર્થને પણ જાણીએ છીએ, સ્થવિર ભગવંતોનું એ પ્રકારનું કથન સાંભળીને કાલાસ્યવેષિપુત્ર

त्वात्, 'थेरा संजमं न जाणंति' हे स्थविराः भवन्तः संयमं न जानन्ति, तस्यात्यन्तदुष्करत्वात्, 'थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तः संयमस्य अर्थं न जानन्ति, तस्य दुर्विज्ञेयत्वात् 'थेरा संवरं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तः संवरं न जानन्ति, तदाराधनस्य दुःसाध्यत्वात्, 'थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तः संवरस्य अर्थं न जानन्ति, तदाराधनविधेः दुर्ज्ञेयत्वात्, 'थेरा विवेगं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तो विवेकं न जानन्ति, तत्स्वरूपस्य दुर्विज्ञेयत्वात्, 'थेरा विवेगस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तो विवेकस्य अर्थं न जानन्ति, तस्यात्यन्तसूक्ष्मत्वात्, 'थेरा विउसग्गं न जाणंति'

प्रयोजन है इस बात को भी नहीं जानते हैं। क्योंकि प्रत्याख्यान का प्रयोजन अत्यंत गूढ है। (थेरा संजमं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संयम को भी नहीं जानते हैं। क्यों कि वह संयम अत्यन्त दुष्कर है। (थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संयम का क्या प्रयोजन है-इसे भी नहीं जानते हैं क्यों कि संयम का प्रयोजन बड़ी मुश्किल से समझ में आवे ऐसा है। (थेरा संवरं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संवर को नहीं जानते हैं क्यों कि संयम की आराधना अत्यन्त दुःसाध्य है-सब इसकी आराधना कर सकें-ऐसी नहीं है। (थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संवर के अर्थ को नहीं जानते हैं क्यों कि उसके आराधना की विधि दुर्विज्ञेय है। (थेरा विवेगं न जाणंति) हे स्थविरो! आप विवेक को नहीं जानते हैं क्यो कि विवेक का स्वरूप दुर्विज्ञेय है। (थेरा विवेगस्स अट्ठं न जाणंति) हे

કારણ કે પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન અત્યંત ગૂઢ-ગહન છે "थेरा संजमं न जाणंति" હે સ્થવિરો! તમે સંયમને પણ સમજતા નથી, કારણ કે સંયમ પાળવાનું કાર્ય અતિ દુષ્કર છે "थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति" હે સ્થવિરો! સંયમનું શું પ્રયોજન છે તે પણ તમે જાણતા નથી, કારણ કે સંયમનું પ્રયોજન સમજવાનું કાર્ય અત્યંત મુશ્કેલ છે "थेरा संवरं न जाणंति" હે સ્થવિરો! તમે સંવરને જાણતા નથી કારણ કે સંવરની આરાધના કરવાનું કાર્ય અતિ દુષ્કર છે બધા લોકો તેની આરાધના કરી શકતા નથી "थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति" હે સ્થવિરો! તમે સંવરનું શું પ્રયોજન છે તે પણ જાણતા નથી, કારણ કે તેના આરાધનની વિધિ દુર્વિજ્ઞેય છે "थेरा विवेगं न जाणंति" હે સ્થવિરો! તમે વિવેકને સમજતા નથી, કારણ કે તેનું સ્વરૂપ દુર્વિજ્ઞેય છે "थेरा विवेगस्स अट्ठं न जाणंति" હે સ્થવિરો! તમે વિવેકનું પ્રયોજન પણ

भवतां मते संयम, किं भवतां मते संयमस्य अर्थः, किं भवतां मते संवरः ? किं भवतां मते संवरस्य अर्थः ? किं भवतां मते विवेकः किं भवतां मते विवेकस्य अर्थः प्रयोजनम्, को भवतां मते व्युत्सर्गः ? इति संग्राह्यम्, 'तएणं थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी' ततः खलु ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेषिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः 'आया णे अज्जो सामाइए' हे आर्य! आत्मा नः अस्माकं मते सामायिकं समभावरूपं वर्तते, 'आया णे अज्जो! सामाइयस्स अट्ठे' हे आर्य! आत्मा एव नः अस्माकं मते सामायिकस्य समभावरूपस्य अर्थः नूतनकर्मोपादानपूर्वकृतकर्मनिर्जरारूपं प्रयोजनं वर्तते 'आया-विठस्स

से पहले पूर्वोक्त पाठ का संग्रह किया गया है—जो इस प्रकार से है—आप के मत में प्रत्याख्यान क्या है? प्रत्याख्यान का प्रयोजन क्या है? आपके मत में संयम क्या है? संयम का प्रयोजन क्या है? आपके मत में संवर क्या है? संवर का प्रयोजन क्या है? आप के मत में विवेक क्या है? विवेक का प्रयोजन क्या है? आपके मत में व्युत्सर्ग क्या है? कालास्य वेषिकपुत्र अनगार की इस बात को सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने उनसे ऐसा कहा कि 'आया णे अज्जो सामाइए, आया णे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे' हे आर्य! हम लोगों के मत में सामायिक वस्तु समभावरूप आत्मा है। और हे आर्य! आत्मा ही समभावरूप सामायिक का अर्थ है। आत्मा जब समभावरूप सामायिक में वर्तती है—तब उसके नवीन कर्मों का बंध नहीं होता है और पुराने संचित कृत कर्मों की निर्जरा होती रहती। यही सामायिकका अर्थ—प्रयोजन है। इसी लिहाजसे

પછી પૂર્વોક્ત નીચે પ્રમાણેનો પાઠ સંગ્રહ કરાયો છે-આપના મત અનુસાર પ્રત્યાખ્યાન શું અને પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન શું છે? આપની માન્યતા પ્રમાણ સંયમ શું છે? અને સંયમનું પ્રયોજન શું છે? આપની માન્યતા પ્રમાણ વિવેક શું છે અને વિવેકનું પ્રયોજન શું છે? આપના મત પ્રમાણે વ્યુત્સર્ગ શું છે?) કાલાસ્યવેષીપુત્ર અણગારના આ પ્રશ્નોનો તે સ્થવિર ભગવંતોએ જેવો ઉત્તર આપ્યો છે 'आया णे अज्जो सामाइए आया णे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे' હે આર્ય! અમારા મત પ્રમાણે સામાયિક વસ્તુ સમભાવરૂપ આત્મા છે, અને હે આર્ય! આત્મા જ સમભાવરૂપ સામાયિકનો અર્થ છે જ્યારે આત્મા સમભાવરૂપ સામાયિકમાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે નવા કર્મનો બંધ બાંધતો નથી અને પહેલાના સંચિત કરેલા કર્મોની નિર્જરા કરે છે એ જ સામાયિકનું પ્રયોજન છે એ જ પ્રમાણે અમારા મત પ્રમાણે આત્મા જ પ્રત્યા

यावत् हे आर्य! जानीमः खलु वयं प्रत्याख्यानम्, जानीम प्रत्याख्यानस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयम् संयमं, जानीमः संयमस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयं संवरम्, जानीमः खलु संवरस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयं विवेकम्, जानीमः खलु विवेकस्यार्थम् प्रयोजनम्, जानीमः खलु व्युत्सर्गं, जानीमो वयम् व्युत्सर्गस्य अर्थम् प्रयोजनम्, 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एवं वयासी' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः तान् स्थविरान् भगवतः एवं-वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-'जइणं अज्जो! तुब्भे जाणह समाइयं हे आर्याः! यदि खलु यूयं जानीथ सामायिकम् 'जाणह सामाइयस्स अट्ठं' अथ च जानीथ यूय सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनम्, 'जाव जाणह-विउस्सग्गस्स अट्ठं' यावत्-जानीथ यूयं व्युत्सर्गस्य अर्थम् प्रयोजनम्, यावत्करणात्-उपर्युक्त प्रत्याख्यानादिव्युत्सर्गान्तं संग्राह्यम्, तदा 'के भे अज्जो! सामाइए?' हे आर्याः! किंः भवतां मते सामायिकं वस्तु वर्तते? 'के भे अज्जो! सामाइयस्स अट्ठे?' हे आर्याः! कः भवतां मते सामायिकस्य अर्थः प्रयोजनम्? 'जाव-के भे विउस्सग्गस्स अट्ठे?' यावत्-को भवतां मते व्युत्सर्गस्य अर्थ. प्रयोजनम्? यावत्करणात्-किं भवतां मते प्रत्याख्यानम्? को भवतां मते प्रत्याख्यानस्य अर्थ? कः

जानते हैं, व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हैं। इस प्रकार से स्थविर भगवन्तोंके कथनको सुनकर कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (ते थेरे भगवन्ते एवं वयासी) उन स्थविर भगवन्तो से ऐसा पूछा-हे आर्यो! यदि आप लोग सामायिक को जानते हैं, सामायिक के प्रयोजन को जानते हैं, (यावत् व्युत्सर्ग के अर्थ-प्रयोजन को जानते हैं, यहां यावत् पद से उपर्युक्त प्रत्याख्यान से लेकर व्युत्सर्ग तक का पाठ ग्रहण किया गया है) तो हे स्थविरो! मैं आपलोगों से पूछता हूं कि सामायिक आपके मत में क्या वस्तु है। और हे आर्यो! सामायिक का प्रयोजन आप के मत में क्या है? यावत आप के मत में व्युत्सर्ग का अर्थ क्या है? (यहां यावत् शब्द

अणगारे "ते थेरे भगवंते एवं वयासी" તે સ્થવિર ભગવંતોને પૂછ્યું કે "હે આર્યો! જો તમે સામાયિકને જાણતા હો, સામાયિકનું પ્રયોજન સમજતા હો, (યાવત્) વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન સમજતા હો (અહીં "યાવત્" પદથી પ્રત્યાખ્યાનથી લઈને વ્યુત્સર્ગ સુધીનો ઉપર્યુક્ત પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે) તો હે આર્યો! હું આપને પૂછું છું કે આપની માન્યતા પ્રમાણે સામાયિક શું છે? અને હે આર્યો! આપની માન્યતાનુસાર સામાયિકનું શું પ્રયોજન છે? "યાવત્" આપના મત પ્રમાણે વ્યુત્સર્ગ [illegible] અર્થ છે? (અહીં "યાવત્"

मते संवरः इन्द्रिय-नो इन्द्रिय-मनुष्यवरोपरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते संवरस्य इन्द्रिय-नो इन्द्रिय प्रवृत्यवरोधरूपस्य अर्थः, नूतनकर्मबन्धनिरोधरूपं अनास्रवरूपं वा प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते विवेको विशिष्टबोध-

---

हुआ और इस संयम का प्रयोजन पृथिव्यादिक जीवों की रक्षा करना अथवा पापों से विरक्त रहना यह हुआ। अतः ऐसा यह प्रयोजन आत्मा से भिन्न नहीं है क्यों कि आत्मा स्वयं ही संयमरूप है। इसलिये आत्मा ही संयम का प्रयोजनरूप प्रकट किया गया है। यह संयम का प्रयोजन १७ प्रकार का कहा गया है। आत्मा ही हमारे मत में संवर है। संवर का तात्पर्य इन्द्रियों और मन की प्रवृत्तियों को रोकना है। आत्मा जब संयमवाला बन जाता है तब स्वतः स्वभाव ही उसकी इन्द्रियों की एवं मन की शुभाशुभरूप प्रवृत्तियां बंद हो जाती है। अतः यह संवर रूप गुण आत्मा का ही है। और किसी का नहीं है। इसलिये गुणगुणी में अभेद विवक्षा मानकर यहां आत्मा को ही संवररूप कहा गया है। इस संवर का प्रयोजन भी यही है कि वह आत्मा में होने वाली शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध कर देता है। अतः शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध होनारूप प्रयोजन आत्मा में ही रहता है अतः आधाराधेय भाव में कथंचित् अभेद मानकर आत्मा को ही संवर का फलरूप प्रकट किया गया है। संवररूप आत्मा नूतन कर्मबंध से रहित हो जाता है-अर्थात् नवीन

સંયમરૂપ બની જાય છે અને તે સંયમનું પ્રયોજન પૃથ્વીકાય વગેરે ૬ પ્રકારના જીવોની રક્ષા કરવી અને પાપોથી વિરક્ત રહેવું એ બની જાય તેથી આવા પ્રકારનું પ્રયોજન આત્માથી જુદું નથી કારણ કે આત્મા પોતે સંયમરૂપ છે. તેથી આત્માને સંયમના પ્રયોજનરૂપ દર્શાવ્યો છે સંયમનું પ્રયોજન ૧૭ સત્તર પ્રકારનું કહ્યું છે. આત્મા જ અમારી માન્યતા પ્રમાણે સંવર છે ઇન્દ્રિયો અને મનની પ્રવૃત્તિ ઓને રોકવી તેનું નામ સંવર છે આથી આત્મા સંયમથી યુક્ત બને છે ત્યારે આપોઆપ ઇન્દ્રિયો અને મનની અશુભ પ્રવૃત્તિઓ બંધ પડી જાય છે તેથી સંવર એ આત્માનો જ ગુણ છે બીજા કોઇનો નથી તેથી ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ અહીં આત્માને સંવરરૂપ કહ્યો છે આત્માની અંદર આવતી આસ્રવની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવારૂપ પ્રયોજન તે સંવર છે તેથી તેથી આસ્રવની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવારૂપ પ્રયોજન આત્મામાં જ રહેલું હોય છે તેથી આપણા આદિય આત્મા અભેદપણું માનીને આત્માને જ સંવરના રૂપરૂપ કહ્યા છે સંવરરૂપ આત્મા નવા કર્મબંધથી રહિત થઈ જાય છે

गस्स अट्ठे' यावत् आत्मा एव अस्माकं मते प्रत्याख्याने पौरुष्यादिनियमनरूपं वर्तते, आत्मा एव अस्माक मते प्रत्याख्यानस्य पौरुष्यादि नियमनरूपस्य अर्थः कर्मागमनमार्गात्मकाऽऽश्रवद्वारनिरोधरूपं प्रयोजन वर्तते, आत्मा एव अस्माक मते संयमः पृथिवीकायप्रभृतिसंरक्षणरूपः, पापोपरमरूपो वा वर्तते आत्मा एव अस्माकं मते संयमस्य पृथिव्यादि संरक्षणरूपस्य, पापोपरमरूपस्य वा अर्थः पृथिवीकायाद्यारम्भविरतिरूपम् सप्तदशविधम् प्रयोजन वर्तते, आत्मा एव अस्माकं

હમારે મત મેં આત્મા હી પ્રત્યાખ્યાન-પૌરુષી આદિ કે નિયમન રૂપ હૈ। ઔર આત્મા હી હમારે મત મેં પૌરુષી આદિ કે નિયમનરૂપ પ્રત્યાખ્યાન કા પ્રયોજન હૈ। અર્થાત્ ઇસ પ્રત્યાખ્યાન કા પ્રયોજન યહી હૈ કિ ઇસકે પ્રભાવ સે આત્મા મેં કર્મો કે આગમન કા માર્ગરૂપ જો આશ્રવદ્વાર હૈ ઉસકા નિરોધ હો જાતા હૈ। હમારે મતમેં આત્મા હી સંયમ હૈ। પૃથિવી કાય આદિ જીવોં કી રક્ષા કરને રૂપ, અથવા પાપોપરમરૂપ સંયમ હોતા હૈ। જબ સંયમ પૃથિવીકાય આદિ જીવોં કી રક્ષા કરનેરૂપ અથવા પાપોં સે ઉપરમરૂપ માના ગયા હૈ-તો ઇસ ક્રિયા કા કર્તા એક આત્મા હી હોતા હૈ-અતઃ ક્રિયા ઔર ક્રિયાવાન્ અભેદ વિવિક્ષા કે વશ સે આત્મા હી સંયમરૂપ માન લિયા ગયા હૈ। તથા આત્મા હી સંયમ કા પ્રયોજન હૈ। ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ આત્મા કા નિજ સ્વભાવ પૃથિવ્યાદિ જીવોં કી વિરાધના કરનેરૂપ અથવા પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેરૂપ નહી હૈ-અર્થાત્ સંયમરૂપ હૈ। અતઃ જબ આત્મા કા નિજ સ્વભાવ હી ઐસા હૈ તો ઉસકા તાત્પર્ય હી યહ હુઆ કિ આત્મા સ્વયં હી સંયમ રૂપ

જ્યાન પોરસી વગેરેના નિયમનરૂપ છે અને અમારા મત અનુસાર આત્મા જ પોરસી વગેરેના નિયમનરૂપ પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન છે એટલે કે તે પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન એ છે કે તેના પ્રભાવથી આત્માની સાથે કર્મોના આગમનરૂપ જે આશ્રવદ્વારો છે તે બંધ થઈ જાય છે. અમારા મત પ્રમાણે આત્માજ સંયમ છે, પૃથ્વીકાય, અપ્કાય વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અથવા પાપથી દૂર રહેવા રૂપ સંયમ હોય છે અને સંયમને પૃથ્વીકાય વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ, અથવા પાપોથી વિરામ પામવારૂપ માનવામા આવે તો તે ક્રિયાનો કર્ત્તા આત્મા જ ગણાય છે તે કારણે ક્રિયા અને ક્રિયાવાન (કર્ત્તા) આ અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ સંયમરૂપ માન્યો છે તથા આત્મા જ સંયમનુ પ્રયોજન છે એટલે કે આત્માનો સ્વભાવ પૃથ્વીકાય વગેરે છ કાયના જીવોની વિરાધના કરવાનો અથવા પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાનો નથી એટલે કે આત્મા સંયમરૂપ છે. આ રીતે આત્માનો પોતાનો સ્વભાવ જ સંવરરૂપ છે તેથી આત્મા પોતે જ

मते संवर इन्द्रिय-नो इन्द्रिय-प्रवृत्युपरोधरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते संवरस्य इन्द्रिय-नो इन्द्रिय प्रवृत्युपरोधरूपस्य अर्थः, नूतनकर्मबन्धनिरोधरूपं अनाश्रवसंवररूपं वा प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते विवेक्षते विशिष्टबोध

हुआ और इस संयम का प्रयोजन पृथिव्यादिक जीवों की रक्षा करना अथवा पापों से विरक्त रहना यह हुआ। अतः ऐसा यह प्रयोजन आत्मा से जुदा नहीं है क्यों कि आत्मा स्वयं ही संयमरूप है। इसलिये आत्मा ही संयम का प्रयोजनरूप प्रकट किया गया है। यह संयम का प्रयोजन १७ प्रकार का कहा गया है। आत्मा ही हमारे मत में संवर है। संवर का तात्पर्य इन्द्रियों और मन की प्रवृत्तियों को रोकना है। आत्मा जब संयमवाला बन जाता है तब स्वतः स्वभाव ही उसकी इन्द्रियों की एवं मन की शुभाशुभरूप प्रवृत्तियां बंद हो जाती हैं। अतः यह संवर रूप गुण आत्मा का ही है। और किसी का नहीं है। इसलिये गुणगुणी में अभेद विवक्षा मानकर यहां आत्मा को ही संवररूप कहा गया है। इस संवर का प्रयोजन भी यही है कि वह आत्मा में होने वाली शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध कर देता है। अतः शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध होनारूप प्रयोजन आत्मा में ही रहता है अतः आधाराधेय भाव में कथंचित् अभेद मानकर आत्मा को ही संवर का फलरूप प्रकट किया गया है। संवरयुक्त आत्मा नूतन कर्मबंध से रहित हो जाता है-अर्थात् नवीन

સંયમરૂપ નથી કહ્યું અને તે સંયમનું પ્રયોજન પૃથ્વીકાય વગેરે ૧૭ પ્રકારના જીવોની રક્ષા કરવી અને પાપોથી વિરક્ત રહેવું એ જણાવ્યું તેથી આવું પ્રકારનું પ્રયોજન આત્માથી જુદું નથી કારણ કે આત્મા પોતે સંયમરૂપ છે તેથી આત્માને સંયમના પ્રયોજનરૂપ કહેલ છે. આપેલ છે સંયમનું પ્રયોજન ૧૭ સત્તર પ્રકારનું કહ્યું છે આત્મા જ આપણી માન્યતા પ્રમાણે સંવર છે ઇન્દ્રિયો અને મનની પ્રવૃત્તિઓને રોકવી તેનું નામ સંવર છે જ્યારે આત્મા સંયમથી યુક્ત બને છે ત્યારે આપોઆપ ઇન્દ્રિયો અને મનની અશુભ પ્રવૃત્તિઓ બંધ પડી જાય છે તેથી સંવર એ આત્માનો જ ગુણ છે બીજા કોઈનો નથી તેથી ગુણ અને ગુણીમાં અભેદ ભાવ રાખી અહીં આત્માને સંવરરૂપ કહેલ છે આત્માની અંદર આવતી આશ્રવની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવું પ્રયોજન તે સંવર છે તેથી તેથી આશ્રવની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવારૂપ પ્રયોજન આત્મામાં રહેલું હોય છે તેથી આધાર આધેય ભાવમાં કથંચિત્ અભેદ માનીને આત્માને જ સંવરના ફલરૂપ કહ્યો છે સંવરરૂપ આત્મા નવા કર્મબંધથી રહિત થઈ જાય છે

रूपो वर्तते, तस्य ज्ञानमयस्वरूपत्वात्, आत्मा एव अस्माकं मते विवेकस्य विशिष्ट बोधरूपस्य अर्थः त्याज्यवस्तुत्यागादिरूपं प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते व्युत्सर्गः कायममत्वत्यागरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते व्युत्सर्गस्य कायममत्वत्यागरूपस्य अर्थः अनभिष्वङ्गतालक्षणं प्रयोजनम् वर्तते, तथाहि समभावरूपं सामायिकमुच्यते, समभावश्च समता, रागद्वेषवियुक्तो यः सर्वभूत-प्राण

कर्मों का आस्रव उसके नहीं होता है। यही शुभाशुभ प्रवृत्तियो का निरोध है। और यही संवर का प्रयोजन है। विवेक विशिष्ट ज्ञान होता है। सो हमारे मत में आत्मा ही विवेकरूप है सो इस कथन का सारांश यह है कि आत्मा स्वयं विशिष्ट ज्ञानरूप है। क्यों कि आत्मा का स्वरूप ही ज्ञानमय है। इस ज्ञान का प्रयोजन केवल इतना ही है कि वह हेय वस्तु का बोध कराकर उसे हेय समझाता है और उपादेय वस्तु का बोध कराकर उसे उपादेय बताता है। अतः ऐसा जो यह विवेक का प्रयोजन है वह आत्मारूप वस्तु ही है। क्यों कि जब आत्मा ही विवेकरूप है तो इस विवेक का प्रयोजन भी आत्मा रूप ही होता है। इस कथन में फलरूप प्रयोजन को विवेक से अभिन्न मानकर उस विवेकरूप आत्माको विवेक का प्रयोजनरूप माना गया है। शरीर से ममत्व का त्याग करना इसका नाम व्युत्सर्ग है। सो आत्मा ही कायशरीर ममत्व त्यागरूप व्युत्सर्ग का अर्थ है अर्थात् अनभिष्वङ्गता (विषयों में आसक्ति नहीं रखना) रूप प्रयोजनरूप है। टीकाकार इसी सब विषय को "तथाहि" कह

એટલે કે તેમા નવા કર્મોનો આશ્રવ થતો નથી એનું નામ જ શુભાશુભપ્રવૃત્તિયોનો નિરોધ છે, અને એ જ સંવરનુ પ્રયોજન છે, જ્ઞાન વિવેકયુક્ત હોય છે. અમારા મત પ્રમાણે આત્મા જ વિવેકરૂપ છે એટલે કે આત્મા પોતે જ વિશિષ્ટ જ્ઞાનરૂપ છે, કારણ કે આત્માનું સ્વરૂપ જ જ્ઞાનમય છે તે જ્ઞાનનું પ્રયોજન એટલુ જ છે કે તેની મારફત હેય અને ઉપાદેય વસ્તુનો બોધ થાય છે અને તે જ્ઞાનવડે આત્માને હેય અને ઉપાદેયની સમજણ પડે છે વિવેકનું જે પ્રયોજન છે તે આત્મારૂપ જ છે, કારણ કે જો આત્મા જ વિવેકરૂપ હોય તો વિવેકનું પ્રયોજન પણ આત્મારૂપ જ હોય છે આ કથનવડે ફલરૂપ પ્રયોજનને વિવેકથી અભિન્ન માનીને વિવેકરૂપ આત્માને વિવેકના પ્રયોજનરૂપ માન્યો છે. શરીર ઉપરથી મમત્વનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ વ્યુત્સર્ગ છે, આત્મા જ કાયાના મમત્વના ત્યાગરૂપ વ્યુત્સર્ગનો અર્થ છે-એટલે કે વિષયોમા આસક્તિ ન રાખવી એવો પ્રયોજનરૂપ છે ટીકાકાર આ સમસ્ત વિષયને "तथाहि" પદ કહીને સ્પષ્ટ

-जीव-सत्त्वान् आत्मवत्तयति स समः तस्य समभावो भवति, धर्मधर्मिणोरभेदात् भावप्रधाननिर्देशाद् वा समस्य समत्वमर्थः, तथा च रागद्वेषरहितस्य समस्य समतारूपस्य प्रतिक्षणविलक्षणापूर्वापूर्वकर्मनिर्जराहेतुरूपायाः विशुद्धेः आयो लाभः, समाय, स एव सामायिकम्, अथवा समानां ज्ञानदर्शनचारित्राणाम्-आय समाय प्रवर्द्धमानशारदशुक्लपक्षद्वितीयादिचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षण-

---

कर स्पष्ट करते हैं। समभावरूप सामायिक कहा गया है। समभाव का अर्थ है समता। रागद्वेष से रहित होकर जो समस्त प्राणियों को सम सत्त्वभूतों को, समस्त जीवों को, समस्त सत्त्वों को, अपने समान देखता है-जानता है-वह सम है और इस सम का जो भाव होता है वह सम भाव है धर्म और धर्मी के अभेद से अथवा भावप्रधान निर्देश से सम का अर्थ समत्व है। तथा च-रागद्वेष से रहित ऐसे समतारूप सम को जो प्रतिक्षण विलक्षण विशुद्धि का लाभ होता है कि जो विशुद्धि अपूर्व कर्मनिर्जरा की हेतुभूत होती है उसका नाम समाय है। यह समाय ही सामायिक है। तात्पर्य इसका यह है कि समाय से सामायिक बना है और सम+आय से समाय बना है। इसमें सम शब्द का अर्थ रागद्वेष से रहित जो आत्मप्राणी है वह है, और आय का अर्थ लाभ है। इस प्राणी के लिये प्रतिक्षण विलक्षण ऐसी विशुद्धि का लाभ होता रहता है कि जिस विशुद्धि के बल पर उस आत्मा के अपूर्व अपूर्व-जो पहिले कभी नहीं हुई वैसी-कर्म निर्जरा की हेतुभूत होती रहती है। अथवा

કરે છે સામાયિકને સમભાવરૂપ કહેલ છે સમભાવ એટલે સમતા રાગદ્વેષથી રહિત બનીને તમામ પ્રાણીઓને, તમામ ભૂતોને, તમામ જીવોને, અને તમામ સત્ત્વોને પોતાની માફક ગણવા તેનું નામ સમભાવ છે ધર્મ અને ધર્મીના અભેદથી અથવા ભાવપ્રધાન નિર્દેશથી સમનો અર્થ સમત્વ છે તથા—રાગ દ્વેષથી રહિત એવા સમતારૂપ (સમભાવયુક્ત વ્યક્તિને) પ્રતિક્ષણ જે વિલક્ષણ વિશુદ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે અને જે વિશુદ્ધિ અપૂર્વ કર્મનિર્જરાનો હેતુરૂપ બને છે તે વિશુદ્ધિનું નામ જ "સમાય" છે તે સમાય જ સામાયિક છે તાત્પર્ય એ છે કે સમ+આય=સમાય અને સમાયમાંથી જ સામાયિક' શબ્દ બન્યો છે રાગદ્વેષથી રહિત જે આત્મા રૂપ છે તેનું નામ 'સમ' છે અને આય એટલે લાભ (પ્રાપ્તિ) એટલે પ્રતિક્ષણ જે વિલક્ષણ વિશુદ્ધિની પ્રાપ્તિ થતી રહે છે કે જે વિશુદ્ધિના પ્રભાવથી આત્મા અપૂર્વ - પૂર્વ કાળે ન અનુભવી હોય એવી-કર્મનિર્જરા કરે છે અથવા સમ શબ્દનો અર્થ જ્ઞા

ज्ञानादिलाभः, स एव प्रयोजनमस्येति सामायिकम्, एवञ्च समतामतिपन्नो हि ज्ञानादिसम्पन्नो हि आत्मा प्रतिक्षणमपूर्वैः ज्ञानदर्शनचारित्रपर्यायैः भवाटवीभ्रमणजन्यसक्लेशविनाशकैः अनुपमसुखहेतुभूतैः तिरस्कृतचिन्तामणिकल्पद्रुमकामधेनुसदृशैः संयुज्यते, अथवा समो रागादिरहितस्य आयो गमनं प्रवृत्तिः समाय. समाय एव वा, समये भवं वा. समायेन निर्वृत्तं वा, समायस्यां शो वा, समायो वा प्रयोजनमस्येति सामायिकम्, । उक्तञ्च—

सम शब्द का अर्थ ज्ञान, दर्शन, चारित्र है और आय का अर्थ लाभ है। जैसे-शरत्काल में निर्मल चन्द्र की कलाएँ शुक्लपक्ष की द्वितीयादि तिथियों में बढती जाती है उसी प्रकार से प्रतिक्षण में विलक्षण ज्ञानादिक का जो आत्मा को लाभ होता रहता है उसका नाम समाय है। यह समाय ही जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है। इस तरह समता प्रतिपन्न और ज्ञानादिक से संपन्न आत्मा, प्रतिक्षण अपूर्व ऐसे ज्ञान, दर्शन और चारित्ररूप पर्यायों द्वारा कि जो इसके भवाटवी में भ्रमण करने के संक्लेश के नाशक हैं, अनुपम सुख के हेतुभूत हैं, और चिन्तामणि, कल्पवृक्ष एवं कामधेनु से भी जो बहुत बढकर हैं युक्त होता रहता है उसका नाम सामायिक है। अथवा-रागादि से रहित होना इसका नाम सम है इस सम की जो आय -प्रवृत्ति है वह समाय है। यह समाय ही सामायिक है, अथवा समाय में जो हो वह सामायिक है, अथवा समायसे निर्वृत्त-निष्पन्न हो वह सामायिक है, अथवा सामाय का जो अंश है वह सामायिक है, अथवा समाय जिसका

દર્શન અને ચારિત્ર થાય છે અને આયનો અર્થ લાભ થાય છે જેમ શરદ-ઋતુમાં ચન્દ્રની કળા શુકલ પક્ષ બીજથી શરૂ થઈને દરરોજ વધતી જ જાય છે તેમ પ્રતિક્ષણ આત્માને જે વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિકની પ્રાપ્તિ થતી રહે છે તેનું નામ જ સમાય છે. આ સમાય જ જેનુ પ્રયોજન છે તે સામાયિક કહેવાય છે આ રીતે સમતાયુક્ત અને જ્ઞાનાદિથી યુક્ત આત્મા, પ્રતિક્ષણ સમ્યગ્ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ પર્યાયોથી યુક્ત થતો રહે છે કે જેથી ભવાટવીમા ભ્રમણ કરવા રૂપ દુખનો નાશ થાય છે, જે અનુપમ સુખને અપાવનારી છે, અને જે ચિન્તામણિ, કલ્પવૃક્ષ અને કામધેનુથી પણ અધિક ગણાય છે. એનું નામ જ સામાયિક છે અથવા—રાગાદિથી રહિત થવું એનુ નામ "સમ" છે. તે સમની જે આય (પ્રવૃત્તિ) છે તેનુ નામ 'સમાય" છે તે સમાય જ સામાયિક છે, અથવા સમાયમાં જે હોય તેને સામાયિક કહે છે, અથવા સમાયથી જે નિષ્પન્ન થાય છે તેનું નામ સામાયિક છે, અથવા સમાયનો જે અંશ

"रागद्दोसविरहिओ, समो त्ति अयण अइत्थि गमण ति।
समगमणमिति समाओ, स एव सामाइयं नाम ॥ १ ॥
अहवा समो समाए, निव्वत्त तेण सम्मय वावि।
व तप्पओयणं वा, तेण वा सामाइय नेयं" ति ॥ २॥

छाया—रागद्वेषविरहितः, समोऽस्ति अयन मवृत्तिः गमनमिति।
समागमनमिति समाय, स एव सामायिक नाम ॥ १ ॥
अथवा समः समाय निर्वृत्त तेन सम्मत वापि।
यत् तत्प्रयोजन वा, तेन वा सामायिकं ज्ञेयम् ॥ २ ॥ इति

अथवा समानि ज्ञानादीनि तेषु तेषां अयनम्-गमनम् आयः समाय, स एव सामायिकम् इति।

अथवा—"अहवा सामाइ सम्मत्त-नाण चरणाइ।
तेसु तेहिं वा अयनं अओ समाओ स एव सामाइयं नाम ॥१॥

छाया—अथवा समानि सम्यक्त्वज्ञानाचरणानि।
तेषु तैर्वा अयनम् अय समायः स एव सामायिकं नाम ॥१॥

अथवा समस्य रागादिरहितस्य आयो गुणानां लाभः, समानां वा ज्ञानादीनामायः समायः, स एव सामायिकम्।

प्रयोजन है वह समायिक है। कहा भी है—

सामायिक शब्द की जो व्युत्पत्ति कही गई है। अथवा-सम-ज्ञान आदिकों में, अथवा ज्ञान आदिकों का। जो प्रवृत्ति है वह समाय है। यह समाय ही सामायिक है। सो ही कहा है—

अथवा-रागादिरहित आत्मा रूप सम को जो गुणों का लाभ होता है वह समाय है, अथवा-सम-ज्ञानादिकों का जो आय-लाभ है वह समाय है। यह समाय ही सामायिक है।

છે તેનું નામ સામાયિક છે અથવા જેનું પ્રયોજન સમાય' છે તે સામાયિક છે.

આ ગાથાઓવડે સામાયિક શબ્દની જે વ્યુત્પત્તિ બતાવવામાં આવી છે તે પૂર્વે અર્થ સહિત પહેલાં કરવામાં આવી ગઇ છે અથવા-સમ-જ્ઞાન વગેરેમાં અથવા જ્ઞાનાદિકોવડે જે પ્રવૃત્તિ થાય છે તેનું નામ સમાય છે તે સમાય જ સામાયિક છે

અથવા—રાગાદિથી રહિત આત્મારૂપ સમને જે ગુણોનો લાભ (પ્રાપ્તિ) થાય છે તેનું નામ સમાય છે અથવા જ્ઞાનાદિકની જે આય (લાભ) તેને સમાય કહે છે તે સમાય જ સામાયિક છે

उक्तञ्च—अहवा समस्स आओ, गुणाणलाभोत्ति जो समाओ सो ।
अहवा समणमाओ, णेओ समाइयं णाम ॥ १ ॥ इति ।

छाया—अथवा-समस्य आयो गुणानां लाभः इति यः समायः सः ।
अथवा समानमायो नेयः सामायिकं नाम ॥ १ ॥ इति

अथवा-साम्नि मैत्र्यां साम्ना वा अयः तस्य वा आयः सामायः, स एव सामायिकम् । उक्तञ्च—

" अहवा सामं मेत्ती, तत्थ अओ तेणेव त्ति समाओ ।
अहवा समस्साओ लाभो, सामाइय नाम ॥ १ ॥इति ।

छाया—अथवा सामं मैत्री, तत्र आयः तेन वेति सामायः ।
अथवा सामस्यायो लाभः, सामायिकं नाम ॥ १ ॥

तच्च सामायिकं मूलगुणानामाधारभूत सावद्ययोगविरतिरूपम्, आत्मनश्च ज्ञानदर्शनचारित्ररूपरत्नत्रयवत्त्वस्यैव वास्तविकात्मत्वस्वरूपतया रागद्वेषरहितस्य निरावरणस्य तस्यात्मनः कृतकर्मनिर्जराहेतुभूतविशुद्धिमत्त्वेन ज्ञानदर्शनचारित्रवत्त्वेन च स्वरूपोपपत्तेः वस्तुस्थित्या आत्मैव सामायिकमिति सिद्धम् । उक्तञ्च—

अथवा-सम शब्द का अर्थ मैत्री है, सो इस मैत्री में अथवा इस मैत्री के द्वारा जो अय-गमन प्रवृत्ति है-वह समाय है, अथवा-साम का जो आय-लाभ है वह समाय है यह सामायिक है । कहा भी है—

यह सामायिक मूलगुणों का आधारभूत कहा गया है । और इसमें समस्त सावद्ययोगका परित्याग होनेसे यह सावद्ययोगविरतिरूप होता है । ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप रत्नत्रयसे युक्त जो आत्मा हैं वही वास्तविकरूप में आत्मत्वस्वरूप वाली है । अतः रागद्वेष से रहित एवं निरावरण उस आत्मा को, अपने द्वारा कृतकर्मों की निर्जरा की हेतुभूत जो विशुद्धि है उस विशुद्धि के युक्त हो जाने के कारण और ज्ञान, दर्शन

અથવા-સમ શબ્દનો અર્થ મૈત્રી છે, તેથી તે મૈત્રીમા અથવા તે મૈત્રી વડે જે અય-ગમન-પ્રવૃત્તિ થાય છે, તેનુ નામ સમાય છે અથવા સમનો જે લાભ થાય છે તેને જ સમાય કહે છે. એ સમાય જ સામાયિક છે.

તે સામાયિકને મૂળ ગુણોના આધારરૂપ કહેલ છે, અને તેમા તમામ સાવદ્યયોગોનો પરિત્યાગ થતો હોવાથી તેને સાવદ્યયોગ વિરતિરૂપ પણ કહેલ છે. જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ રત્નત્રયથી યુક્ત જે આત્મા છે, એ જ આત્મા વાસ્તવિક રીતે આત્મત્વ સ્વરૂપવાળો હોય છે તેથી રાગદ્વેષથી રહિત અને આવરણોથી રહિત એવા તે આત્માને, પોતાની મારફત થતી કૃતકર્મોની નિર્જરા કરવાના હેતુરૂપ જે વિશુદ્ધિ છે તે વિશુદ્ધિથી યુક્ત થઈ જવાને કા[illegible] જ્ઞાન, દર્શન ચારિત્રથી યુક્ત થઈ જવ[illegible]. પોતાના સ્વરૂપની પ્રા[illegible]

'जीवा गुणपडिवन्ना, नयस्स दव्वट्ठियस्स सामाइयं" इति ।

छाया—जीवो गुण प्रतिपन्नो नयस्य द्रव्यार्थिकस्य सामायिकम् ॥

एतावता द्रव्यार्थिकनयानुसारेण तथाविधविशुद्धज्ञानदर्शनचारित्रकलादि रूपनिजगुणप्रतिपन्न आत्मैव सामायिकमिति फलितम्, तथा नूतनकर्मानुपादानकपूर्वकर्मनिर्जरणरूप सामायिकस्य प्रयोजनमपि आत्मैव, नवकर्मानुपादानकपूर्वकर्मनिर्जरादीनाम् आत्मगुणतया गुणगुणिनोरभेदात् सद्गुणानामात्माऽनतिरिक्तत्वात् 'नीलो घट' इत्यादौ नीलगुणस्य घटेन गुणिना सह अभेददर्शनात्, एवं

तथा चारित्रसे युक्त हो जानेके कारण अपने स्वरूप की प्राप्ति हो जाती है। इससे वस्तुगत्या आत्मा ही सामायिक है यह बात सिद्ध हो जाती है। सो ही कहा है—

"जीवो गुणपडिवन्नो, नयस्स दव्वट्ठियस्स समाइयं"

गुणप्रतिपन्न आत्मा ही द्रव्यार्थिक नय के अनुसार सामायिक है अर्थात्—द्रव्यार्थिक नय के मन्तव्यानुसार आत्मा जब तथाविध विशुद्ध जो ज्ञान, दर्शन और चारित्ररूप निज गुणों को प्राप्त कर लेता है तब वह ऐसा आत्मा ही सामायिक है यह फलित हो जाता है। तथा—नवीन कर्मों का ग्रहण नहीं करना और पूर्वकृत सञ्चित कर्मों की निर्जरा होना यह जो सामायिक का प्रयोजन है वह भी आत्मा ही है। क्यों कि नवीन कर्मों का ग्रहण नहीं होना और पूर्वकृत सञ्चित कर्मों की निर्जरा होते रहना आदि जो बातें हैं वे सब आत्माके गुण हैं—अतः गुण और गुणी में अभेद विवक्षावश सामायिक के प्रयोजन को आत्मारूप कह दिया गया है। गुणगुणी में अभेद विवक्षा इसलिये कथंचित् करली

બનાને પામેલો, પોતાના સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે તેથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે આત્મા જ સામાયિક છે આનું પ્રમાણ છે કે—

'जीवा गुणपडिवन्नो, नयस्स दव्वट्ठियस्स सामाइयं"

દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ ગુણવિશિષ્ટ આત્મા જ સામાયિક છે કેમકે દ્રવ્યાર્થિક નયની માન્યતાનુસાર જે આત્મા વિશુદ્ધ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર રૂપ નિજગુણોને પ્રાપ્ત કરે છે એ આત્મા જ સામાયિક છે એ વાત સિદ્ધ થાય છે તથા નવા કર્મોને ગ્રહણ ન કરવા અને પૂર્વકૃત સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરવી, એવું જે સામાયિકનું પ્રયોજન છે તે પણ આત્મા જ છે કારણ કે નવાં કર્મો ગ્રહણ ન કરવા અને સંચિત પૂર્વકૃત કર્મોની નિર્જરા કરવી એ આત્માના જ ગુણો છે તેથી ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ પણ સામાયિકના પ્રયોજનને આત્મારૂપ કહેલ છે ગુણ અને ગુણીમાં કથંચિત્ અભેદ માનવાનું કારણ એ છે કે આત્માના નિજ ગુણો આત્માથી ભિન્ન કોઈ નથી જેમ

पौरुषीप्रभृतिनियमरूपस्य सावद्ययोगनिवृत्तिरूपस्य श्रावकनवमव्रतरूपस्य पाप-त्यागप्रतिज्ञारूपस्य वा प्रत्याख्यानस्य आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव प्रत्याख्यानं तथा कर्मागमनमार्गाऽऽश्रवनिरोधरूपस्य प्रत्याख्यानप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव प्रत्याख्यानप्रयोजनमपि, एवं सप्तदशविधस्य पृथिवीकायिक-प्रभृतिसंरक्षणरूपस्य पापोपरमरूपस्य संयमस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संयमः, तथा प्राणातिपात--मृषावाद—अदत्तादानमैथुनादिविरतिरूपस्य पञ्चास्रवसंवरण-मूलगुणादिकरणलक्षणानास्रवत्वरूपस्य च सयमप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव संयमप्रयोजनम् , तथा संक्रियते कर्मकारणं प्राणातिपातादि निरुध्यते येन

जाती है कि आत्मा के निज गुण आत्मा से भिन्न नहीं होते हैं। जैसे "नीलो घटः" यहां पर नीलगुण का घटरूप गुणी के साथ अभेद किसी अपेक्षा माना जाता है। इसी तरह से पौरुषी आदि नियमरूप, अथवा सावद्य योगनिवृत्तिरूप, अथवा-श्रावक के नवमव्रतरूप, अथवा-पाप त्याग रूप जो प्रत्याख्यान है वह आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा के धर्मरूप होने के कारण धर्म और धर्मी में यहां पर भी अभेद मानकर आत्मा को ही प्रत्याख्यानरूप कह दिया गया है। तथा नवीन कर्मों का आगमन होना इसका नाम आस्रव है-इस आस्रव के निरोध होने रूप जो प्रयोजन प्रत्याख्यान का है वह भी आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा ही प्रत्याख्यान का प्रयोजन भी है। इसी तरह से १७ (सतरह) प्रकार का जो संयम है कि जो पृथिवीकायिक वगैरह जीवों के संरक्षणरूप और पापों के उपरम निवृत्तिरूप होता है वह भी आत्मा का ही धर्म है। अतः आत्मा ही संयम है। तथा-प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन

કે "नीलो घट" मा नील गुणनी साथे घट (घडा) રૂપ गुणी साथे કોઈ अपेक्षाએ अभेद भाव मानी લેવામાં આવે છે. એ જ પ્રમાણે પોરસી વગેરે नियमરૂપ, अथवा सावद्ययोग-निवृत्तिરૂપ, अथवा श्रावकना नवमा व्रतરૂપ, अथवा पापत्यागરૂપ જે प्रत्याख्यान छे, ते आत्माना धर्मરૂપ छे. तेथी प्रत्याख्या-नने पण आत्माना धर्मરૂપ गणीने धर्म अने धर्मीमा अही पण अभेद માનીને આત્માને प्रत्याख्यानરૂપ કહેવામા આવ્યો છે-तथा नवा કર્મોના आग-मन (आस्रव) नो निरोध કરવાનુ પ્રયોજનરૂપ જે प्रत्याख्यान छे ते पण આત્માના धर्मરૂપ छे ते કારણે આત્મા प्रत्याख्यानનુ प्रयोजन પણ छे એજ પ્રમાણે पृथ्वीकायिक વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અને પાપથી નિવૃત્ત થવારૂપ જે ૧૭ પ્રકારના સયમ છે તે પણ આત્માના જ धर्मરૂપ छे तेथी आत्मा જ સંયમ છે, तथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन વગેરેની વિરતિ

परिणामेन स संवरः, यस्य च जीवद्रव्यात्मनस्तत्कर्मग्रहणानामिन्द्रियादिच्छिद्राणां समित्यादिना निरोधनरूपस्य निर्जरविषयस्यापि आस्रवनिरोधस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संवरः, एष नूतनकर्मबन्धनिरोधरूपस्य च संवरफलस्यापि आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव संवरफलम्, एष विशिष्टनिरोधरूपस्य च विशेषस्य ज्ञान

सेवन आदि की विरतिरूप, पांच आस्रवों का संवरणरूप तथा मूलगुण आदि के धारण करने रूप जो प्रयोजन संयम का है, सो यह प्रयोजन भी आत्मा का ही धर्म है। इस कारण आत्मा ही संयम का प्रयोजन रूप कहा गया है। कर्म के कारण जो प्राणातिपात आदि हैं वे आत्मा के जिस परिणाम से रोक दिये जाते हैं-ऐसा यह आत्मा का परिणाम संवर है। यह संवर "आस्रवनिरोध संवर" इसके अनुसार आस्रव का निरोध होने रूप होता है। जिस प्रकार नौका में छिद्रों द्वारा जल आता है उसी प्रकार आत्मरूपी नौका में भी प्राणातिपात आदि क्रियाओं द्वारा एवं इन्द्रिय आदि छिद्रों द्वारा कर्मरूपी जल आता है। चतुर नाविक चलानेवाला जिस प्रकार जल आने में कारणरूप छिद्रों को बंद कर देता है और जल का आना रोक देता है उसी प्रकार आत्मा भी कर्मरूपी जल के आने के कारणों को समिति गुप्ति आदि द्वारा बंद कर देता है अतः कर्मरूपी जल का आना रुक जाता है। यही संवर है। यह आस्रव निरोधरूप संवर २० (बीस) प्रकार का कहा गया है। यह संवर आत्मा का निज धर्म है। अतः आत्मा ही संवर है। इसी तरह से नूतन कर्म बंध का निरोध

રૂપ, તથા પાંચ આસ્રવોના સંવરણરૂપ, તથા મૂળ ગુણોને ધારણ કરવારૂપ જે સંયમનું પ્રયોજન છે એ પ્રયોજન પણ આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્માને જ સંયમના પ્રયોજનરૂપ કહ્યો છે કર્મનાં કારણરૂપ પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપસ્થાનો છે તેમને આત્માના જે પરિણામવડે રોકવામાં આવે છે તે પરિણામને પણ સંવર કહે છે, તે સંવર આસ્રવોના નિરોધરૂપ હોય છે 'आस्रव निरोधः संवरः' જેવી રીતે નાવમાં છિદ્રોવડે જળ પ્રવેશ કરે છે એવી જ રીતે આત્મારૂપી નાવમાં પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપ ક્રિયાઓવડે અને ઇન્દ્રિયો વગેરે છિદ્રોવડે કર્મરૂપી જળ પ્રવેશ કરે છે, પરંતુ જેવી રીતે ચતુર નાવિક નાવના છિદ્રોને બંધ કરીને તેમાં થતા જળના પ્રવેશને અટકાવે છે એજ પ્રમાણે આત્મા પણ કર્મરૂપી જળના આગમનનાં કારણોને આસ્રવોને પાંચ સમિતિ, ત્રણ ગુપ્તિ વગેરે ધારણ કરી દે છે તે કારણે કર્મરૂપી જળનું આગમન અટકી જાય છે, એનું નામ જ સંવર છે તે આસ્રવ નિરોધરૂપ સંવર ૨૦વીસ પ્રકારનો તથા પંચમહાવ્રત પ્રકારનો કહ્યો છે તે સંવર આત્માનો નિજધર્મ છે. તેથી આત્મા જ સંવર છે આ પ્રમાણે નવા કર્મોનો નિરોધકરવારૂપ જે

पौरुषीप्रभृतिनियमरूपस्य सावद्ययोगनिवृत्तिरूपस्य श्रावकनवमव्रतरूपस्य पाप-त्यागप्रतिज्ञारूपस्य वा प्रत्याख्यानस्य आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव प्रत्याख्यानं तथा कर्मागमनमार्गाऽऽश्रवनिरोधरूपस्य प्रत्याख्यानप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव प्रत्याख्यानप्रयोजनमपि, एवं सप्तदशविधस्य पृथिवीकायिक-प्रभृतिसंरक्षणरूपस्य पापोपरमरूपस्य संयमस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संयमः, तथा प्राणातिपात--मृषावाद—अदत्तादानमैथुनादिविरतिरूपस्य पञ्चास्रवसंवरण-मूलगुणादिकरणलक्षणानाम्रवत्वरूपस्य च संयमप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव संयमप्रयोजनम् , तथा संव्रियते कर्मकारणं प्राणातिपातादि निरुध्यते येन

जाती है कि आत्मा के निज गुण आत्मा से भिन्न नहीं होते हैं। जैसे "नीलो घटः" यहां पर नीलगुण का घटरूप गुणी के साथ अभेद किसी अपेक्षा माना जाता है। इसी तरह से पौरुषी आदि नियमरूप, अथवा सावद्य योगनिवृत्तिरूप, अथवा–श्रावक के नवमव्रतरूप, अथवा–पाप त्याग रूप जो प्रत्याख्यान है वह आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा के धर्मरूप होने के कारण धर्म और धर्मों में यहां पर भी अभेद मानकर आत्मा को ही प्रत्याख्यानरूप कह दिया गया है। तथा नवीन कर्मों का आगमन होना इसका नाम आस्रव है–इस आस्रव के निरोध होने रूप जो प्रयोजन प्रत्याख्यान का है वह भी आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा ही प्रत्याख्यान का प्रयोजन भी है। इसी तरह से १७ (सतरह) प्रकार का जो संयम है कि जो पृथिवीकायिक वगैरह जीवों के संरक्षणरूप और पापों के उपरम निवृत्तिरूप होता है वह भी आत्मा का ही धर्म है। अतः आत्मा ही संयम है। तथा–प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन

કે "नीलो घट" મા નીલ ગુણની સાથે ઘટ (ઘડા) રૂપ ગુણી સાથે કોઈ અપેક્ષાએ અભેદ ભાવ માની લેવામા આવે છે. એ જ પ્રમાણે પોરસી વગેરે નિયમરૂપ, અથવા સાવદ્યયોગ-નિવૃત્તિરૂપ, અથવા શ્રાવકના નવમા વ્રતરૂપ, અથવા પાપત્યાગરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે, તે આત્માના ધર્મરૂપ છે તેથી પ્રત્યાખ્યા-નને પણ આત્માના ધર્મરૂપ ગણીને ધર્મ અને ધર્મીમા અહીં પણ અભેદ માનીને આત્માને પ્રત્યાખ્યાનરૂપ કહેવામા આવ્યો છે–તથા નવા કર્મોના આગ મન (આસ્રવ) નો નિરોધ કરવાનુ પ્રયોજનરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે તે પણ આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્મા પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન પણ છે એજ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયિક વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અને પાપથી નિવૃત્ત થવારૂપ જે ૧૭ પ્રકારના સંયમ છે તે પણ આત્માના જ ધર્મરૂપ છે તેથી આત્મા જ સંયમ છે, તથા પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન વગેરેની વિરતિ

बाधकाभावात् भगवद्भिः स्थविरैः तथा प्रतिपादितं, ततः कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगार पुनः स्थविरान् पृच्छति-' तए णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी-अह भे अज्जो आया सामाइए आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव आया विउस्सग्गस्स अट्ठे' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रः अनगारः स्थविरान् भगवतः एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-हे आर्याः! यदि भवतां मते आत्मा एव सामायिकं यावत्, आत्मा एव च सामायिकस्य अर्थः प्रयोजनं पर्यन्तं वर्तते, एवं तथैव यावत्-प्रत्याख्यानात्मिव्युत्सर्गोऽपि आत्मैव व्युत्सर्गरूपः अर्थः प्रयोजनं वर्तते, ' अथह्रु कोह-माण-माया-लोभे किं अहं अज्जो! गरहह? ' हे आर्याः! तर्हि क्रोध-मान-माया-लोभान् अपहृत्य-परित्यज्य रागद्वेषकामक्रोधादिरहितो भूत्वापि किमर्थं कथं खलु यावत् ' णिंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि'

इत्यादिरूप से व्यवहार होने के कारण आत्माही सामायिक है, आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है। इस तरह से व्युत्सर्ग प्रयोजन तक आत्मा को तदात्मरूप मानने में कोई बाधक नहीं है। इस कारण भगवंतों ने ऐसा प्रतिपादित किया है। स्थविर भगवंतों द्वारा इस प्रकार का प्रतिपादन सुनकर " से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी " उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवंतों से इस प्रकार से पूछा-" जइ मे अज्जो! आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव आया विउस्सग्गस्स अट्ठे " कि हे आर्यों! यदि आप के मत में आत्मा ही सामायिक है और आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है-तथा इसी तरह से आत्मा ही यावत् व्युत्सर्ग का प्रयोजन है तो फिर आप लोग क्रोध, मान, माया, लोभ इनका परित्याग कर अर्थात् राग द्वेष, काम क्रोध आदि से रहित होकर भी " तिविध कथं खलु " 'णिंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि' क्यों इन वचनों द्वारा अवद्यपाप

જ સામાયિક છે, આત્મા જ સામાયિકનું પ્રયોજન છે આ રીતે વ્યુત્સર્ગ પ્રયોજન સુધીની વ્યાખ્યાઓમાં આત્માને તે તે રૂપે માનવામાં કોઈ પણ જાતનો બાધ આવતો નથી તે કારણે જ સ્થવિર ભગવંતોએ તેમનું પ્રતિપાદન કર્યું છે સ્થવિર ભગવંતોદ્વારા સામાયિક વગેરેનું તે પ્રકારનું પ્રતિપાદન સાંભળીને " से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी " તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અનગારે તે સ્થવિર ભગવંતોને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-' जइ मे अज्जो! आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव आया विउस्सग्गस्स अट्ठे " હે આર્યો! જો આપના મત પ્રમાણે આત્મા જ સામાયિક હોય, આત્મા જ સામાયિકનું પ્રયોજન હોય (યાવત્) આત્મા જ વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન હોય તો આપ લોકો ક્રોધ, માન, માયા અને લોભનો પરિત્યાગ કરીને જો રાગ, દ્વેષ કામ, ક્રોધ વગેરે રહિત બનીને પણ " त्रिविधं कथं खलु " णिंदामि, गरिहामि,

मयात्मगुणतया गुणगुणिनोरभेदात् आत्मैव विवेकः, त्याज्यवस्तुत्यागादिरूपस्य च विवेकप्रयोजनस्य त्यागिरूपात्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव विवेकप्रयोजनम्, तथा कायादिममत्वराहित्यस्य व्युत्सर्गस्य आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव व्युत्सर्गः। अनभिष्वङ्गतालक्षणस्य च व्युत्सर्गप्रयोजनस्य आत्मधर्मतया आत्मैव व्युत्सर्गप्रयोजनम्, तथा च आत्मा त्यागी, विवेकी, निर्ममः, इत्यादि व्यवहारात् आत्मन एव सामायिकादिव्युत्सर्गप्रयोजनान्तस्वरूपस्वीकारे

होने रूप जो फल इस संवर का है वह भी आत्मा का धर्म और धर्मी के अभेद होने से आत्मा को ही संवर का फलरूप मान लिया गया है। इसी तरह से विशिष्ट बोधरूप जो विवेक है वह भी ज्ञानमय आत्मा का गुण है। इसी कारण गुणगुणी में अभेद विवक्षावश आत्मा ही विवेक है ऐसा मान लिया गया है। त्यागकरने योग्य वस्तु का त्याग करना, तथा ग्रहण करने योग्य वस्तु को ग्रहण करना इत्यादि रूप जो प्रयोजन विवेक का है वह त्यागिरूप आत्मा का धर्म है। इस कारण धर्म और धर्मी की अभेद विवक्षा से आत्मा ही विवेक का प्रयोजन है ऐसा कहा है। शरीरादिक से ममत्व भाव का परित्याग करना इसका नाम व्युत्सर्ग है। यह व्युत्सर्ग भी आत्मा का ही धर्म हैं। अतः यहां पर भी धर्म और धर्मी में अभेद मानकर आत्मा ही व्युत्सर्ग है ऐसा कहा गया है। विषयादिकों में त्यागनारूप जो प्रयोजन व्युत्सर्ग का है वह भी आत्मा का ही एक धर्म है। इस कारण उसका व्युत्सर्ग का प्रयोजन रूप कहा गया है। तथा च-आत्मा त्यागी है, विवेकी निर्मम है

સંવરનુ પ્રયોજન છે તે પણ આત્માનો જ ધર્મ છે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ સંવરના ફળરૂપ માનવામા આવ્યો છે એ જ પ્રમાણે વિશિષ્ટ બોધરૂપ જે વિવેક છે તે પણ જ્ઞાનમય આત્માનો ગુણ છે તે કારણે ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ વિવેક માનવામા આવ્યો છે છોડવાલાયક વસ્તુનો ત્યાગ કરવાનુ અને ગ્રહણ કરવા લાયક વસ્તુને ગ્રહણ કરવાનું જે વિવેકનુ પ્રયોજન છે તે ત્યાગીરૂપ આત્માનો ધર્મ છે. તે કારણે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ વિવેકના પ્રયોજનરૂપ માનવામા આવ્યો છે શરીર વગેરેના મમત્વનો પરિત્યાગ કરવો તેનુ નામ વ્યુત્સર્ગ છે તે વ્યુત્સર્ગ પણ આત્માનો જ ધર્મ છે, તેથી અહી પણ ધર્મ અને ધર્મીમા અભેદની અપેક્ષાએ આત્મા જ વ્યુત્સર્ગ છે એમ કહેવામા આવ્યું છે વિષય વગેરેમાં અનાસક્તિરૂપ જે વ્યુત્સર્ગનુ પ્રયોજન છે તે પણ આત્માનો જ એક ધર્મ છે. તેથી આત્માને જ વ્યુત્સર્ગના પ્રયોજનરૂપ કહ્યો છે તથા-આત્મા ત્યાગી છે, વિવેકી છે, નિર્મમત્વી છે, ઇત્યાદિરૂપે વ્યવહાર થવાને કારણે આત્મા

यानुमोदनस्य निरसनसम्भवात्, कालास्यवेषिपुत्र पृच्छति—'स भदन्त! किं गरहा संजमे? अगरहा संजमे?' हे भदन्त! तत् किं गर्हा निन्दा संयमः अगर्हा अनिन्दा वा संयमः?, स्थविरा उत्तरयन्ति—'कालासवेसियपुत्त! गरहा संजमे णो अगरहा संजमे' हे कालास्यवेषिकपुत्र! गर्हा संयम, ना अगर्हा संयम, गर्हाया संयमजनकत्वेऽपि कारणे कार्योपचारात् लक्षणया 'गर्हा संयमः' इत्युक्तम्, अथ न केवलं गर्हा अवद्यानुमतेर्व्यवच्छेदनद्वारा कर्मानुपादानहेतुत्वात्,

---

विच्छेद हो जाताहै। तात्पर्य यह है कि जबतक अवद्य गर्हित नहीं होता है तबतक अवद्यसम्बन्धी अनुमतिका विच्छेद नहीं होता है, और जब उसका गर्हण हो जाता है तब गर्हणद्वारा गर्हित कार्यकी अनुमोदना करने का निरसन हो जाता है। तब कालास्यवेषिकपुत्र ने स्थविर भगवन्तों से पूछा कि भदन्त! (किं गरिहा संजमे, अगरिहा संजमे) यह तो कहीये कि गर्हा निन्दा संयम है कि अगर्हा अनिन्दा संयम है? तब स्थविर भगवन्तों ने उन्हें समझाया कि (कालासवेसियपुत्त! गरिहा संजमे णो अगरिहा संजमे) हे कालास्यवेषिकपुत्र! गर्हा संयम है और अगर्हा असंयम है। गर्हा को जो संयमरूप से कहा गया है वह कारण में कार्य का उपचार है। तात्पर्य कहने का यह है कि गर्हा से संयम होता है अतः गर्हा संयम का जनक होने से संयम का कारण है। सो जो यहां गर्हारूप कारण को संयमरूप कहा गया है वह कारण में कार्य का उपचार करके लक्षणावृत्ति से कहा गया है। (गर्हा

સંયમની પ્રાપ્ત અવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે જ્યાં સુધી અવદ્યની ગર્હા કરી નથી ત્યા સુધી અવદ્યની અનુમતિનો વિચ્છેદ થતો નથી, અને જ્યારે તેની ગર્હા થઈ જાય ત્યારે પૃથ્વાદકે ગર્હિત કાર્યની અનુમોદના કરવાનુ નિરસન (નિરાકરણ) થઈ જાય છે ત્યારે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગાર સ્થવિર ભગવંતોને પૂછ્યુ—કે ભગવન્તો! કિં गरिहा संजमे, अगरिहा संजमे' શું ગર્હા (નિંદા) સંયમ છે કે અગર્હા (અનિંદા) સંયમ છે!' ત્યારે તે સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને સમજાવ્યુ કે कालासवेसियपुत्त! गरहा संजमे णो अगरहा संजमे" હે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર! ગર્હા સંયમ છે અને અગર્હા અસંયમ છે ગર્હાને સંયમ સ્વરૂપ જે કહી છે તેનુ કારણ કારણમા કાર્યનો ઉપચાર છે તાત્પર્ય એ છે કે ગર્હા સંયમની ઉત્પાદક હોવાથી ગર્હાને સંયમના કારણરૂપ માની છે, અહીં જે ગર્હારૂપ કારણને સંયમરૂપ કહેવામા આવેલ છે તે કારણમા કાર્યનો ઉપચાર કરીને લક્ષણાવૃત્તિથી કહેલ છે "गरहा संजमे' ગર્હા સંયમ છે, તે

निन्दामि, गर्हे, आत्मान व्युत्सृजामि, इत्यादि वचनद्वारा यूयम् अवद्यं गर्हध्वे यो हि जीवो भव्यस्तथाविधसामायिकवान् त्यक्तरागद्वेषक्रोधादिश्च स्यात् स न कथमपि किमपि निन्दितुमुद्यतो भवेत्, निन्दायाःरागद्वेषादिजन्यत्वात्, सामायिकादिमतो जीवस्य द्वेषादिविरहात्, स्थविराः उत्तरयन्ति-'कालासवेसियपुत्त ! संजमट्ठयाए' हे कालास्यवेषिकपुत्र ! संयमार्थतया अवद्यं वयं गर्हामहे, अवद्ये गर्हिते सति संयमो भवति, अवद्यानुमतेर्व्युच्छेदनसंभवात्, गर्हणद्वारा गर्हितका-

की निंदा गर्हा आदि करते हो। क्यों कि जो जीव भव्य होता है और तथाविध सामायिक वाला होता है वह राग, द्वेष, क्रोधादि से पहिले से ही रहित हो जाता है। अतः वह जीव किसी भी तरह से किसी की भी निंदा करने के लिये उद्यत नहीं होता है। क्यों कि निंदा जो होती है वह रागद्वेष आदि से जन्य होती है। तथा सामायिक आदि से जन्य होती है। तथा सामायिक आदि से युक्त जीव के द्वेष आदि का विरह रहा करता है। इस प्रकार से कालास्यवेषिक पुत्र अनगार के प्रश्न को सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने उन्हें समझाया कि हे कालावेषिकपुत्र अनगार जो रागद्वेष आदि से रहित बने हुए भी हम लोग जो " णिंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि " इन वचनों का प्रयोग करते हैं-उसका करण संयम का निमित्त है अतः " संजमट्ठाए " हम लोग संयम के निमित्त " अवद्यं गर्हामहे " अवद्य (पाप) की गर्हा करते हैं। क्यों कि अवद्यके गर्हित (गुरुसमक्ष प्रकाशित) हो जाने पर संयम होनेका कारण यह है कि अवद्य सम्बन्धी अनुमतिका होता है। संयम

अप्पाणं वोसिरामि " शा माटे आ वचनोवडे पापनी निंदा, गर्हा वगेरे करे छो ! कारणु के जीवो भव्य होय छे अने सामायिकवाळा होय छे तेओ तो पहेलेथी ज राग, द्वेष अने क्रोधादिथी रहित थनी जाय छे तेथी एवा जीवो कोई पणु रीते कोइनी पणु निंदा करता नथी कारणु के निंदा करवानुं कारणु रागद्वेष वगेरे होय छे सामायिक वगेरेथी युक्त जीवमा तो रागद्वेष वगेरेनो अभाव होवो जोईओ कालास्यवेषीपुत्र अणुगारनो आ प्रकारनो प्रश्न साभळीने स्थविर भगवंतोओ समजाव्युं के हे कालास्यवेषीपुत्र अणुगार ! रागद्वेष वगेरेथी रहित होवा छता पणु अमे " णिंदामि, गरिहामि अप्पाण वोसिरामि " वगेरे वचनोनो जे प्रयोग करीये छीओ ते संयमना रक्षणु माटे ज करीये छीओ. " संजमट्ठाए " अमे संयमना लाभने माटे ज " अवद्यं गर्हामहे " अवद्य (पाप)नी गर्हा करीओ छीओ, कारणु के अवद्य (पाप)नी घृणा थाय त्यारे ज संयमनी प्राप्ति थाय छे, अवद्य (पाप) संबंधी अनुमतिनो विच्छेद थाय त्यारे ज

इति पूर्वेण अन्वयः, ' एवं खु णे आया संजमे उवहिते भवइ ' एव खलु तदा सति गर्हान्तरम् नः अस्माकम् आत्मा संयम उपहितो भवति, संयमोपघातवान् भवति संयमरूपफलोत्पादने सन्निहितो भवतीत्यर्थः, आत्मरूप संयमो वा उपहितः प्राप्तो भवति, ' एव खु णे आया संजमे उवचिए भवइ ' एव खलु अवद्यवस्तु गर्हा नन्तरं नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपचितः परिपुष्टो भवति, आत्मरूपो वा संयमः उपचितो भवति, 'एव खु णे आया संजमे उवट्ठिए भवइ ' एव खलु नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपस्थितो भवति, अत्यन्तस्थिरतयाऽवस्थायी भवति दृढो भवति इत्याशय, ' एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे सबुद्धे थेरे भगवंते वदइ णमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' अत्र खलु स कालास्यवेषिक पुत्रोऽनगारः सबुद्ध सम्यक् प्रबोधवान्, भगवत स्थविरान् वन्दते, नमस्यति,

---

देती है। (एव खु णे आया संजमे उवहिते भवइ) इस प्रकार होनेपर गर्हा के बाद हमारा आत्मा संयम में उपघातवाला हो जाता है-अर्थात् संयमरूप फल के उत्पादन में सन्निहित हो जाता है। अथवा-आत्मारूप संयम उपहित-प्राप्त हो जाता है। (एव खु णे आया संजमे उवचिए भवइ) अवद्य (पाप) वस्तु की गर्हा के बाद नः-अस्माकं-हमारा, आया-आत्मा, संयम में उपस्थित हो जाता है-अर्थात् अत्यंतस्थिररूप से उसमें स्थायी-दृढ हो जाता है। इस प्रकार इस विषय में " से कालासवेसियपुत्ते अणगारे)वे कालास्यवेषिकपुत्र अनगार (सबुद्धे) बोधपाये अज्ञान से रहित बने गये अर्थात् सबुद्ध हो गये-तत्त्वविषयक ज्ञान से संपन्न हो गये। (थेरे भगवंते वदइ णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता एवं वयासी) सबुद्ध होने के बाद फिर उन्हों ने उन स्थविर भगवंतों की वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार कर फिर वे

संजमे उवहिते भवइ " આમ અનવદ્યથી ગર્હા કર્યા પછી અમારો આત્મા સંયમમાં સ્થિરતાવાળો બની જાય છે-એટલે કે સંયમરૂપ ફળના ઉત્પાદનમાં સન્નિહિત થઈ જાય છે અથવા આત્મારૂપ સંયમ ઉપહિત (પ્રાપ્ત) થઈ જાય છે " एव खु णे आया संजमे उवचिए भवइ " અવદ્ય (પાપ) ની ગર્હા કર્યા પછી અમારો આત્મા સંયમમાં ઉપસ્થિત થઈ જાય છે એટલે કે અતિશય દૃઢરૂપે તેમાં સ્થિર થઈ જાય છે આ પ્રકારનાં સ્થવિર ભગવંતોનાં વચનો સાંભળીને ' से कालासवेसियपुत्ते अणगारे તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગાર " सबुद्धे " સબુદ્ધ થઈ ગયા-અજ્ઞાનથી રહિત બની ગયા-તે તે વિષયોના જ્ઞાનથી યુક્ત બની ગયા ' थेरे भगवंते वदइ णमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' સબુદ્ધ થયા પછી તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમ

संयमजनिकैव भवति, अपि तु रागद्वेषादिकमपि क्षपयतीत्याह—'गरहा वि य णं सव्वं दोसं पविणेइ' गर्हैव च सर्वं दोषं रागद्वेषादिकं पूर्वोपार्जितं पापं वा प्रविणयति विनाशयति, रागद्वेषादिविनाशनप्रकारमाह—'सव्वं बालियं परिण्णाए' सा हि अवद्यवस्तुनो गर्हा सर्वां बालतां बाल्यं मिथ्यात्वं परिज्ञाय, ज्ञ परिज्ञया ज्ञात्वा, प्रत्याख्यानपरिज्ञया च प्रत्याख्याय रागद्वेषादिकं प्रविणयति

संयमः) गर्हा संयम है इस प्रकार से कहने का तात्पर्य यह है कि गर्हा अवद्यकी अनुमति का व्यवच्छेद करा देती है–अतः पहिले जो अवद्यानुमतिके अव्यवच्छेदनद्वारा कर्मों का आत्मामें उपादान (ग्रहण) होता था अब वह गर्हा करनेसे उसके व्यवच्छेदन हो जानेसे उसद्वारा होता नहीं है, इसलिये उसद्वारा होनेवाले कर्मके अनुपादन (अग्रहण)में हेतुभूत होने से वह गर्हा संयम है यह बात स्पष्ट हो जाती है। यह गर्हा केवल संयम की ही जनक है सो बात नहीं है, किन्तु यह राग द्वेष आदि को भी आत्मा से दूर करती है–यही बात सूत्रकार ने (गरिहा वि य णं सव्वं दोसं पविणेइ) इस सूत्र द्वारा प्रकट की है। उन्हों ने इसमें कहा है कि गर्हा समस्त दोषों को–रागद्वेषादिकों को अथवा पूर्वोपार्जित पाप को–नष्ट कर देती है। यह गर्हा रागद्वेषादिकों को किस प्रकारसे नष्ट करती है–इसी बातको अब सूत्रकार कहते हैं कि (सव्वं बालियं परिण्णाए)वह अवद्य (पाप) वस्तुकी गर्हा समस्त मिथ्यात्वको ज्ञपरिज्ञासे जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञासे उसका प्रत्याख्यानकर रागद्वेष आदिकोंको नष्ट कर

પ્રકારના કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે ગર્હા અવદ્યની અનુમતિનો વિનાશ કરાવી નાખે છે તેથી પહેલા જે પાપમા અનુમતિના અવિનાશવડે આત્મામા કર્મોનું ઉપાદાન થતુ હતુ, તે ઉપાદાન હવે ગર્હાવડે પાપની અનુમતિનો વિનાશ થવાથી થતું નથી તેથી તેની મારફત કર્મના અનુપાદાન થવાના હેતુભૂત હોવાથી તે ગર્હા સયમરૂપ છે એ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે, તે ગર્હા માત્ર સંયમની જ જનક છે એટલુ જ નહીં પણ તે રાગદ્વેષ વગેરેને પણ આત્માથી દૂર કરે છે, એ જ વાત સૂત્રકારે—" गरहा वियण सव्व दोष पविणेइ " આ સૂત્રપાઠવડે સૂત્રકારે કહ્યુ છે કે ગર્હા તમામ દોષોને – રાગદ્વેષ વગેરેને તથા પૂર્વોપાર્જિત પાપોને નષ્ટ કરી નાખે છે તે ગર્હાવડે રાગદ્વેષ વગેરેનો કેવી રીતે નાશ થાય છે તે હવે સૂત્રકાર બતાવે છે-' सव्व बालिय परिण्णाए " તે અવદ્ય (પાપ) ગર્હા, સમસ્ત મિથ્યાત્વને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરીને રાગદ્વેષ વગેરેનો નાશ કરી નાખે છે. " एव खु णे आया

णाणं' अछद्धानाम् साक्षाद् स्वयमनुपलब्धानाम्, अश्रुतानाम् अन्यद्वारेणाऽनाकर्णितानाम् अचक्षुर्गोचरीकृतानाम् इत्यर्थः, अस्पृष्टानाम् दर्शनाऽऽकर्षणतोऽभावेन मनु मनसा-असंस्कारामावात् अननुध्यातानाम् विशिष्टबोधाऽविषयीकृतानाम् अस्माभिः विशेषरूपेण गुरुभिरनारोपितानाम् मनोचरत्वेन अगृहीतानाम् अन्वेषितानाम्-विषादाद् अव्यावर्तितानाम्, अनिपुणानाम् सुष्ठ्वबोधाय मतः प्रभोः कृपया अत्यन्तसङ्क्षेपेण गुरुभिः अनुद्भूतानाम्, अत एव अस्माभिः मनु पधारितानाम् न निश्चयविषयीकृतानामित्यर्थः, 'एयमट्ठं णो सद्दहिए, णो पत्तिए, णो रोएए' एतदर्थं मयि पतिपादितार्थं नो श्रद्दित न श्रद्धामाचेन गृहीत, नो प्रीत, नैव प्रीतिविषयीकृत, अथवा प्रीतित, हेतुभि न प्रत्ययित निश्च-

---

पणाण) विशेष से मैंने इन्हें व्यावर्तित किया नहीं अर्थात् इनका कभी निश्चय किया नहीं, (अणिज्जूहाण) बड़े २ शास्त्रों से हमारे प्रमादपना गुरुजनों ने इन्हें (विषयजन अच्छी तरह से समझ सकें) इस अभिप्राय से उद्धार के संक्षेपरूप में उद्भूत किया नहीं, अतः (अणुवधारियाणं) मैं अभीतक इन्हें अपने निश्चयज्ञान का विषयभूत नहीं बना सका। (एयमट्ठं णो सद्दहिए) अतः इन पदों का जो अर्थ आपने प्रतिपादित किया है इनका यह अर्थ मैंने इसके पहिले कभी भी अपनी श्रद्धा का विषयभूत नहीं बनाया। क्यों कि मुझे (इन पदों का यही अर्थ है) पहिले ऐसी धारणारूप श्रद्धा ही नहीं थी। श्रद्धा नहीं होने के कारण इन पदों का यह अर्थ मेरी प्रीति का भी विषयभूत नहीं हो सका-अथवा हेतुओं द्वारा निर्णीत पर मैंने उसे अपने विश्वास में नहीं

' अव्वोगिज्झाणं ' મે કારી પદ તે પદોનો નિશ્ચય કર્યો ન હતો, ' અણિજ્જૂહાણં ' અમારા પ્રમાદને કારણે ગુરુજનોએ તે પદોનો અર્થ ' વિષયો સારી રીતે સમજી શકે ત આશયથી મોટા મોટા ગ્રંથોમાંથી સંક્ષિપ્તરૂપે અમને સમજાવ્યો ન હતો તથી અણુવધારિયાણં ' હું હજી સુધી તે પદોના અર્થને મારા નિશ્ચય જ્ઞાનના વિષયભૂત બનાવી શક્યો ન હતો. ' એયમટ્ઠં ણો સદ્દહિએ ' આપે આ પદોના જે અર્થ આજે મારી સમક્ષ પ્રતિપાદન કર્યો તે અર્થને આ પહેલા કોઈ પણ (મારે આ પદોના વિષય પ બનાવી શક્યો ન હતો કારણ કે આ પદોનો આ પ્રકારનો અર્થ થાય ' એવી મારામાં શ્રદ્ધા જ મે પદોના કોઈ પણ કાળે ન હતી શ્રદ્ધા ન થવાને કારણે આપે આ પદોનો આ અર્થ મારા જ્ઞાનના વિષયભૂત પણ બનાવી શક્યો ન હતો અથવા

वन्दित्वा एवं वक्ष्यमाण-प्रकारेण अवादीत्-' एएसि णं भंते ! पयाणं पुव्विं अन्नाणयाए, असवणयाए, अबोहियाए अणभिगमेणं ' हे भगवन् ! एतेषां खलु पदानां शब्दानाम् पूर्वं प्रथमम् अज्ञानतया अज्ञानो निर्ज्ञानिस्तस्य भावः अज्ञानता तया स्वरूपतोऽनुपलम्भात् ज्ञानाभावेन, अश्रवणतया श्रवणाभावेन, अबोधितया अबोधिः महावीरजिनधर्मानवाप्तिः तया औत्पत्तिक्यादिबुद्ध्यभावेन वा प्रबोधाभावेन, अनभिगमाभावेन विस्तरबोधाभावेन हेतुना ' अदिट्ठाणं, असुयाणं, अस्सुयाणं, अविन्नायाणं, अव्वोगडाणं, अवोच्छिण्णाणं, अणिज्जूढाणं उवधारि-

---

उनसे इस प्रकार कहने लगे-" भंते !" हे भगवन् ! (एएसि णं पयाणं) इन पदों की मैंने (पुव्विं) पहिले कभी (अन्नाणयाए) अज्ञानता होने के कारण इन पदों के स्वरूप को नहीं जान सकने के कारण, (असवणयाए) नहीं सुनने के कारण (अबोहियाए) महावीर जिन के धर्म की अनवाप्तिरूप अबोधि होने के कारण अथवा औत्पत्ति की आदि बुद्धि के अभाव से प्रबोधाभाव होने के कारण, (अणभिगमेणं) तथा विस्तृत बोधाभाव होने के कारण (अदिट्ठाणं) साक्षात् स्वयं देखा नहीं, (असुयाणं) दूसरों के मुख से मैंने कभी सुना नहीं, (अस्सुयाणं) दर्शन और नहीं सुनने के कारण अनुभव जन्य संस्कार के अभाव से मैंने इन्हें कभी स्मरण किया नहीं, (अविन्नायाणं) विशिष्ट बोध का इन्हें विषय बनाया (अव्वोगडाणं) गुरुजनों को नहीं पूछने से प्रश्नोत्तर पूर्वक इनका विशेषरूप से स्पष्टी करण किया नहीं, (अव्वोच्छि-

---

સ્કાર કરીને તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને કહ્યું-" ભંતે ! હે ભગવંતો ! " ए ए सि ण पयाण " આ પદોનો આ પ્રકારનો અર્થ " पुव्विं " પહેલાં કદિ પણ " अन्नाणयाए " અજ્ઞાનને કારણે (આ પદોનું સ્વરૂપ નહીં સમજી શકવાથી) " असवणयाए " નહીં સાંભળવાથી (આ પ્રકારનો અર્થ પહેલાં કોઈની પાસે નહીં સાંભળવાથી) " अबोहियाए " મહાવીર પ્રભુના ધર્મની અપ્રાપ્તિરૂપ અબોધિ હોવાને કારણે અથવા ઔત્પાત્તિકી આદિ બુદ્ધિનો અભાવ હોવાથી, પ્રબોધનો અભાવ હોવાને કારણે, " अणभिगमेणं " તથા વિસ્તૃત બોધના અભાવને કારણે " अदिट्ठाणं " પ્રત્યક્ષરૂપે જોયો ન હતો, " असुयाण " અન્યને મુખે કદી સાંભળ્યો ન હતો, " अस्सुयाण " દર્શન અને શ્રવણના અભાવે અનુભવજન્ય સંસ્કાર ન હોવાથી મે તેનું કદી પણ સ્મરણ કર્યું ન હતું, "अविन्नायाणं " વિશિષ્ટ બોધનો વિષય તેમને બનાવ્યાં ન હતા, " अव्वोगडाणं " સદ્ગુરુઓને પૂછીને પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક કદી પણ તેમનું વિશિષ્ટ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું ન હતું,

नाम् विशिष्टबोधविषयीकृतानाम्, तम कारणमाह—व्याकृतानां विशेषतया सूरि सद्दशैः भवद्भिः व्याख्यातानाम्, व्युच्छिन्नानां विषयात् आत्मभिन्नात् शरीरादेः व्यवच्छेदितानाम्, निर्यूढानां सुखावबोधाय अतिसंक्षेपेण सारूपतया कथनाय णालयैः भवद्भिः गुरुसदृशैः महत आर्हत्प्रवचनात् उद्धृत्य प्रतिपादितानाम्, अत एव मया अस्माभिः यां रुचयारितानाम् सम्यक्तया अवधारितानाम् निश्चितरूपेण गृहीतानामित्यर्थः, सामायिकादिपदानाम् 'एयमट्ठं सद्दहामि, पत्तियामि रोएमि' एतमर्थं भवद्भिः आत्मस्वरूपतया प्रतिपादितमर्थम् अहया भद्रया गृहामि

वजह से मैंने इन्हें अपने स्मरणज्ञान का चार २ विषय बनाया है, अतएव मेरे विशिष्ट बोध के विषयभूत बन चुके हैं। कारण कि-गुरुसदृश आप भगवंतों ने विशेषरूप से इनका स्पष्टीकरण जो किया है। आत्मा से भिन्न जो शरीरादिक पदार्थ हैं उन से उनका किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है, किन्तु आत्मा से ही इनका यथार्थरूप से संबंध है ऐसा आपने इनके विषय में कहा जो है, इनका बोध शिष्यजनों को अनायास ही हो जावे, इस अभिप्राय से, करुणावरुणालय कृपासागर-आप गुरुतुल्य भगवंतों ने सारूप में विशाल अर्हत्प्रवचन से इनको उद्धृत कर सम्बहाया जो है इसी कारण से मैंने इन्हें बहुत ही अच्छी तरह से अपने अंतःकरण में इन्हें निश्चितरूप से धारण कर लिया है अर्थात् स्वीकृत कर लिया है। ऐसे इन सामायिक आदि पदों के (एयमट्ठं) इस अर्थ को कि जो अभी आपने आत्मरूप से प्रतिपादित किया है मैं (सद्दहामि) अपनी श्रद्धा का विषय बनाता हूं-अर्थात्-आपके द्वारा प्रति

તેમનો અર્થ આપી રીતે અવધૃત કર્યો છે, આપની પાસે તેનું અવધૃત કર્યા પછી અનુક્રમવડે સ્વાધ્યાયને કારણે મેં વારંવાર તેમને મારાં સ્મરણજ્ઞાનનો વિષય બનાવેલ છે, તેથી તેમનું વિશિષ્ટ જ્ઞાન (બોધ) મને મળી ચુકયું છે, અર્થાત્ કે ગુરુ સમાન આપ ભગવંતોએ વિશિષ્ટરૂપે તેનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે કે આત્માથી ભિન્ન એવા જે શરીરાદિક પદાર્થો છે તેમની સાથે તેમનો કોઈ પણ પ્રકારનો સંબંધ નથી, પણ આત્માની સાથે જ તેમનો યથાર્થરૂપે સંબંધ છે એવું આપે તેમના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે કારણે તથા શિષ્યોને તેનો અનાયાસે બોધ થાય તે હેતુથી કૃપાસાગર આપ ગુરુતુલ્ય ભગવંતોએ વિશાલ અર્હત્પ્રવચનનો સાર ગ્રહણ કરીને અભ્યાસ કરવા શિષ્યોને સમજાવ્યો છે તે કારણે મેં તેને મારા અંતઃકરણમાં બહુજ સારી રીતે નિશ્ચિતરૂપે ધારણ કરેલ છે એટલે કે સ્વીકારરૂપે સ્થાન દીધું છે એવા આ સામાયિક વગેરે પદોનો "एयमट्ठं" આ અર્થ કે જેને આપે હમણાં જ આત્મારૂપે પ્રતિપાદિત કર્યો છે, તેને હું 'सद्दहामि" મારી શ્રદ્ધાનો વિષય બનાવું છું એટલે કે આપની

सितः, न वा रुचितः रुचिविषयीकृतः किन्तु 'एयाणिं भंते ! एतेसिं पयाणं जाणणयाए, सवणयाए, बोहिए अभिगमेणं' हे भगवन् ! इदानीम् अधुना भवद्भिः सामायिकादिपदार्थानां वास्तविकतया प्रतिपादनकाले एतेषां सामायिकादिव्युत्सरणार्थान्तानां पदानां वास्तविकार्थस्य ज्ञानतया निश्चिततया स्वरूपत उपलम्भात्, श्रवणतया श्रावणप्रत्यक्षेण, बोधितया जिनधर्मावाप्तितया, अभिगमेन विशिष्टबोधेन, 'दिट्ठाणं, सुयाणं-सुयाणं, विन्नायाणं, वोगडाणं, वोच्छिन्नाणं, णिज्जूहाणं, उवधारियाणं' दृष्टानां साक्षात् स्वयमुपलब्धानाम्, श्रुतानां भवद्भ्यः सम्यगाकर्णितानां सम्यक्तया श्रवणविषयीकृतानामित्यर्थः, स्मृतानां भवद्भ्यः आकर्णितत्वेन तनुभवजन्यसंस्कारादनुध्यातानाम्, अतएव विज्ञाता-

---

लिया, (णो रोइए) और न उसे मैंने अपनी रूचि का विषय ही बनाया। किन्तु (एयाणिं भंते) अब हे भदन्त ! (एतेसिं पयाणं जाणणयाए, सवणयाए, बोहिए, अभिगमेणं) आपने जो इन सामायिक आदि पदों के अर्थ का वास्तविक रूप से प्रतिपादन किया है सो इस अवसर में मुझे इन पदों के सामायिक से लेकर व्युत्सर्ग के अर्थ तक के पदों के -अर्थ का अच्छी तरह से ज्ञान हो गया है-निश्चितरूप से इनके स्वरूप की उपलब्धि हो गई है इस कारण से, तथा इन्हें मैंने अपने श्रवण करनेके विषयभूत बनाया है, इस कारण से, जिनधर्म महावीर के शासन में पञ्चमहाव्रतरूपधर्म की अवाप्तिरूप बोधि की मुझे प्राप्ति हो चुकी है इस कारण से, तथा मुझ में अब विशिष्ट बोध जग गया है इस कारण से, (दिट्ठाणं) इन पदों को मैंने साक्षात् स्वय उपलब्ध कर लिया है, इन्हें आप भगवंतों के मुखारविन्द से अच्छी तरह मैंने सुन लिया है, आप से सुन चुकने के बाद अनुभवजन्य संस्कार की

હેતુઓ વડે નિર્ણીત કરીને મે તેમાં વિશ્વાસ મૂક્યો નહીં, "णो रोइए" અને મે તેને મારી રૂચિના વિષયરૂપ પણ બનાવ્યો નહીં પરંતુ "एयाणिं भंते ! હે ભગવન્તો ! "एतेसिं पयाण जाणयाए, सवणयाए, बोहिए, अभिगमेण" આપે જે સામાયિક વગેરે પદોના અર્થોનું વાસ્તવિકરૂપે પ્રતિપાદન કર્યું છે, તેને લીધે હવે મને આ પદોના – સામાયિકથી લઈને વ્યુત્સર્ગના અર્થ પર્યન્તના પદોના અર્થનું સારી રીતે જ્ઞાન થયુ છે-નિશ્ચિંત રીતે તેના સ્વરૂપની મને સમજણ પડી છે તે કારણે, તથા મેં તે વિષયનું પ્રત્યક્ષ શ્રવણ કર્યું હોવાને કારણે, મહાવીરના શાસનમાં જૈનધર્મના પાંચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મની અવાપ્તિરૂપ બોધિની પ્રાપ્તિ મને થઈ જવાને કારણે, તથા હવે વિશિષ્ટ બોધની ભારામાં જાગૃતિ થઈ જવાને કારણે, "दिट्ठाणं" આ પદોને મેં પ્રત્યક્ષ જોયાં છે (તેમના વાસ્તવિક અર્થનાં દર્શન કર્યાં છે) અને આપનાં મુખેથી મેં

मस्येदि विश्वसिहि विश्वासं कुरु हे आर्य ! रोचस्व रुचिं कुरु, यथा एतत् सामायिकादि वस्तु यथ यदाम आत्मपरतया प्रतिपादयामः, तत् तथैव वर्तते इति स्वया प्रतिपद्यस्व्यम् , 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' ततः-खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-' इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ' इच्छामि खलु भदन्त ! भवतामन्तिके समीपे चतुर्यामात् धर्मात् चतुः प्रकारकमहाव्रतधर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य विहर्तुं स्थातुम् इच्छामि इति पूर्वेणान्वयः ततः स्थविरा प्रोचुः-' अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं ' हे देवानुप्रिय !

अन्यथा नहीं है इस प्रकार से तुम समझो और उस पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि रक्खो। इसके बाद (से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (थेरे भगवन्ते वंदइ नमसइ) स्थविर भगवन्तों को वन्दना की नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हों ने उनसे अपना हार्दिक जो अभिप्राय था उसे प्रकट किया-उसमें उन्हों ने कहा कि-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भगवन् ! मैं आपके पास दीक्षा लेकर रहना चाहता हूं। मैं अभीतक जो चातुर्यामरूप महाव्रत धर्म का पालन करता आया हूं, अतः मैं आपके पास प्रतिक्रमण सहित पंचमहाव्रतरूप धर्म को स्वीकार करना चाहता हूं। उनका इस प्रकार हार्दिक अभिप्राय सुनकर स्थविर भगवन्तों ने उनसे कहा-(अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय

તેમનો બીજો કોઈ પણ અર્થ નથી-એવી તમે શ્રદ્ધા, પ્રતીતિ અને રુચિ રાખો ત્યાર બાદ ' से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ' તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે " थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ " સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે પોતાની જે હાર્દિક ઇચ્છા હતી તે તેમની આગળ પ્રકટ કરી—' इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए ' હે ભગવન્તો ! હું આપની પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરીને રહેવા માગું છું અત્યાર સુધી હું આ મહાવ્રતરૂપ ધર્મનું પાલન કરતો હતો, હવે હું આપની પાસે પ્રતિક્રમણસહિત પાંચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મનો સ્વીકાર કરવા ઇચ્છું છું તેમની આ પ્રકારની હાર્દિક ઇચ્છા જાણીને સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને કહ્યું કે " अहा सुहं देवाणुप्पिया !

प्रत्येमि विश्वसिमि, रोचे, रुचिविषयतया अभिलषामि, 'एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह' एवमेतत्, अथ यथा एतद्वस्तु यूयं वदथ, यूयं भवन्तः यथा आत्मपरतया एतद् वस्तु सामायिकादि पदार्थान् वदथ प्रतिपादयन्ति एवमेव तथैव एतत् सामायिकादि वस्तु विद्यते इत्याशयः। 'तएणं ते थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्त अणगारं एवं वयासी' ततः तदनन्तरं ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेषिकपुत्रम् अनगारं एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादिषुः प्रोचुः 'सद्दहाहि अज्जो! पत्तयाहि अज्जो! रोएहि अज्जो! से जहेयं अम्हे वदामो' हे आर्य! श्रद्धेहि, आत्मपरतया प्रतिपादितेषु सामायिकादिपदार्थेषु श्रद्धां कुरु हे आर्य!

पादित सामायिकादि पदों के आत्मरूप अर्थ पर पूर्णविश्वास करता हूं (पत्तियामि) उसे अपनी प्रीति या प्रतीति का स्थान बनाता हूं (रोएमि) और अपनी रुचि का उसे निवासस्थान बनाता हूं। (एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह) हे भगवन्! आप जिस प्रकार से आत्मार्थपरक सामायिक आदि पदों का कथन किया है वास्तव में उनका यही अर्थ है। इस प्रकार से कालास्यवेषिकपुत्र अनगार के हार्दिक वचनों को सुनकर उन स्थविर भगवंतों ने उनसे कहा कि आर्य! जैसा हम कहते हैं (सद्दहाहि) उस पर तुम पूर्णरूप से विश्वास करो (पत्तयाहि अज्जो) उसे अच्छी तरह से हे आर्य! तुम अपनी प्रतीतिकोटि में उतारो (रोएहि अज्जो) उस पर बहुत ही गहराई के साथ सोच विचार कर अपनी रुचि जमाओ तात्पर्य कहने का यह है कि जिस प्रकार से इन सामायिक आदि पदों का अर्थ हमने आत्मरूप अर्थ में प्रतिपादित किया है वह वैसा ही है-

---

મારફત પ્રતિપાદિત સામાયિક વગેરે પદોના આત્મરૂપ અર્થ પર હું મારી સંપૂર્ણ શ્રદ્ધા વ્યક્ત કરું છું 'पत्तियामि" હું એની પ્રતીતિ કરું છું, "रोएमि" અને તેમા મારી રુચિ જાહેર કરું છું. " एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह" હે ભગવન્તો! આપે જે રીતે આત્માર્થસૂચક આ સામાયિક વગેરે પદોનું પ્રતિપાદન કર્યું છે એ પ્રતિપાદન જ એ પદોનો વાસ્તવિક અર્થ બતાવનારું છે. આપ્રકારના કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારના હાર્દિક વચનો સાંભળીને તે સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને કહ્યું કે હે આર્ય! અમે જે કહ્યું તેમાં "सद्दहाहि" આપ સંપૂર્ણ રીતે શ્રદ્ધા રાખો " पत्तयाहि अज्जो" હે આર્ય! આપ તેની સારી રીતે પ્રતીતિ કરો " रोएहि अज्जो " તે વિષે ઊંડો વિચાર કરીને તેમાં રુચિ જમાવો. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અમે જે પ્રકારે સામાયિક વગેરે પદોના અર્થનું આત્મરૂપ અર્થમા પ્રતિપાદન કર્યું છે, તે અર્થ જ સાચો છે.

मत्येहि विश्वसिहि विश्वासं कुरु हे आर्य ! रोचस्व रुचिं कुरु, यथा एतत् सामायिकादि वस्तु यथ वदाम आत्मपरतया प्रतिपादयाम, तत् तथैव वर्तते इति त्वया प्रतिपद्यस्वम्, 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी' ततः-खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-'इच्छामि णं भंते ! तुब्भे अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए' इच्छामि खलु भगवन्! भवतामन्तिके समीपे चतुर्यामात् धर्मात् चतुः प्रकारकमहाव्रतधर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसम्पद्य स्वीकृत्य विहर्तुं स्थातुम् इच्छामि इति पूर्वेणान्वयः। ततः स्थविरा ऊचुः-'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं' हे देवानुप्रिय!

अन्यथा नहीं है इस प्रकार से तुम समझो और उस पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि रक्खो। इसके बाद (से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) वह कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (थेरे भगवन्ते वंदइ नमंसइ) स्थविर भगवन्तों को वन्दना की नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हों ने उनसे अपना हार्दिक जो अभिप्राय था उसे प्रकट किया-इसमें उन्हों ने कहा कि-(इच्छामि णं भंते! तुब्भ अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भगवन्! मैं आपके पास दीक्षा लेकर रहना चाहता हूं। मैं अभीतक जो चातुर्यामरूप महाव्रत धर्म का पालन करता आया हूं, अब मैं आपके पास प्रतिक्रमण सहित पञ्चमहाव्रतरूप धर्म को स्वीकार करना चाहता हूं। उनका इस प्रकार हार्दिक अभिप्राय सुनकर स्थविर भगवन्तों ने उनसे कहा-(अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करह) हे देवानुप्रिय

તેમનો પાછો કોઈ પણ અર્થ નથી-એવી તમે શ્રદ્ધા, પ્રતીતિ અને રુચિ રાખો ત્યાર બાદ "से कालासवेसियपुत्ते अणगारे" તે કાલાસ્યવેષિપુત્ર અનગારે "थेरे भगवन्ते वंदइ नमंसइ" સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે પોતાની જે હાર્દિક ઇચ્છા હતી તે તેમની આગળ પ્રગટ કરી—'इच्छामि णं भंते! तुब्भ अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए' હે ભગવન્તો! હું આપની સમક્ષ દીક્ષા લઈને રહેવા ઇચ્છું છું અત્યાર સુધી હું આ મહાવ્રતરૂપ ધર્મનું પાલન કરતો હતો હવે હું આપની પાસે મહાવ્રતરૂપ ધર્મનો સ્વીકાર કરવા ઇચ્છું છું તેમની આ પ્રમાણેની હાર્દિક ઇચ્છા જાણીને સ્થવિર ભગવન્તોએ તેમને કહ્યું કે "अहासुहं देवाणुप्पिया!

यथा सुखं यथेच्छं समाचर, मा प्रतिबन्धं, विलम्बं मा कुरु इत्याशयः, 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतः वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा चतुर्यामाद् धर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य खलु विहरति तिष्ठति 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणइ' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं साधुपर्यायं प्राप्नोति पालयति 'पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे, मुंडभावे, अण्हाणयं, अदंतधुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं' प्राप्य पालयित्वा यस्य प्रयोजनस्य मुक्तिरूपस्य अर्थं प्राप्त्यर्थं सिद्ध्यर्थमित्याशयः क्रियते विधीयते नग्नभावः नग्नत्वम्, मुण्डभावः मुण्डत्वं क्रियते इत्यस्य सर्वत्रैवाग्रे सम्बन्धो बोध्यः, अस्नानकम् स्नानवर्जनम्, अदन्तधूपनकम् दन्तधावनवर्जनम्, अच्छत्रकम् छत्रधारणवर्जनम्, अनुपानत्कत्वम् पादयोरुपानद्वर्जनम्, 'भूमिसेज्जा फलहसेज्जा, कट्ठसेज्जा, केसलोओ, बंभचेरवासो, परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धी,

---

जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। परन्तु आत्मकल्याण में विलम्ब हो ऐसा मत करो। स्थविर भगवतों से इस प्रकार जानकर उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगारने उन स्थविर भगवंतों को वन्दना की, नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर के चातुर्याम धर्म का परित्याग कर प्रतिक्रमण सहित पंच महाव्रतवाले धर्म स्वीकार कर लिया। इसके बाद उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने अनेक वर्षों तक श्रामण्यपर्याय का पालन किया। उन्होंने जिस मुक्तिरूप प्रयोजन की सिद्धि के लिये अर्थात् मुक्तिरूप प्रयोजन की प्राप्ति लिये-नग्नभाव, मुंडभाव, स्नानवर्जन, दन्तधावनवर्जन, छत्रधारणवर्जन, पग में मोजा, जूता आदि पहिरने का

मा पडिबंधं करेह" હે દેવાનુપ્રિય! આપને જેનાથી સુખ ઉપજે તે કરો. પણ આત્મકલ્યાણમા વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં" સ્થવિર ભગવતોના એ વચનો સાંભળીને તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે તેમને વદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા. વદણા નમસ્કાર કરીને ચાતુર્યામ ધર્મનો પરિત્યાગ કરીને પ્રતિક્રમણ સહિત પાંચ મહાવ્રતવાળા ધર્મનો સ્વીકાર કર્યો. ત્યારબાદ તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે અનેક વર્ષો સુધી શ્રમણપર્યાયનું પાલન કર્યું તેમણે મુક્તિરૂપ પ્રયોજનની સિદ્ધિને માટે એટલે કે મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવાને માટે નગ્નભાવ, મુંડભાવ, સ્નાન ત્યાગ, દંતધાવનનો ત્યાગ, છત્ર ધારણનો ત્યાગ, પગમાં મોજા, જોડાં પહેર-

उच्चावया, गामकण्टगा, बावीस परिसहोवसग्गा अहियासिज्जंति' भूमिसेज्जा, फलकसेज्जा, कट्ठसेज्जा, केसलोचः, केशलुञ्चनम्, बम्भचेरवासो, ब्रह्मचर्यवासः, ब्रह्मचर्यव्रतपालनपूर्वकनिवासः, परदत्तभोइत्ता भिक्खं आवकुलहत्तरगमणम्, लद्धापलद्धिः क्वचित् स्वयोग्यभिक्षोपलब्धिः क्वचिच्च स्वयोग्यभिक्षानुपलब्धिश्च, उच्चावचा निम्नोन्नताः ग्रामकण्टका अनुकूलाः प्रतिकूलाश्च इन्द्रियाणां कण्टकसदृशा द्वाविंशतिः परिषहोपसर्गा अधिसह्यन्ते सहनविषयीक्रियन्ते, 'तं अट्ठं आराहेइ, आराहित्ता चरमेहिं उस्सास-नीसासेहिं सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे' तं मोक्षरूपं मर्थम् आराधयति, साधयति, आराध्य संसाध्य चरमै उच्छ्वासनिःश्वासै सिद्धः, बुद्धः, मुक्तः, परिनिर्वृतः सर्वदुःखप्रहीणः क्षीणसर्वदुःखः सम्पन्नः इत्यन्वयः ॥ सू० ५ ॥

॥ इति मार्यकालास्यवेषिपुत्रानगारप्रकरणम् ॥

अप्रत्याख्यानादिप्रकरणम्—

कालास्यवेषिपुत्रोऽनगारः प्रत्याख्यानक्रियया सिद्ध इति मत्वाप्रत्याख्यानक्रियाविषयं पृच्छन् अप्रत्याख्यानक्रियेति तां निरूपयितुमिदं सूत्रमाह—'भंते' इत्यादि।

सूत्रम्—भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—से णूणं भंते! सेट्ठिस्स य तणुयस्स य किवणस्स य खत्तियस्स य एए सव्वे चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ, हंता गोयमा! सेट्ठिय

अर्जन, भूमि आदि पर सोना, केशों का लुंचन करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना, विशुद्ध भिक्षा लेना, लाभालाभ में संतोष करना परिषह और उपसर्गों को जीतना—इस अर्थ को उन्हों ने अच्छी तरह से सिद्ध कर लिया और वे चरम उच्छ्वास नि श्वासों द्वारा सिद्ध हो गये, बुद्ध हो गये, मुक्त हो गये, परिनिर्वृत हो गये और सर्व दुःखोंसे प्रहीण हो गये॥सू०५॥

॥ इस प्रकार यह कालास्यवेसिकपुत्र अनगार प्रकरण समाप्त हुआ॥

પાનો ત્યાગ, ભૂમિપર શયન, કેશલુંચન, બ્રહ્મચર્ય પાલન, વિશુદ્ધ ભિક્ષાની પ્રાપ્તિ, લાભાલાભમાં સંતોષ, પરીષહો અને ઉપસર્ગો પર વિજય વગેરે કાર્ય કર્યું અને તેમણે તે અર્થની સિદ્ધિ કરી લીધી કે અંતિમ ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસે સિદ્ધ થઈ ગયા બુદ્ધ થયા, મુક્ત થયા પરિનિર્વૃત થયા અને તમામ દુઃખોનો અંત કરનારા બની ગયા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

॥ કાલાસ્યવેસિકપુત્ર અનગાર પ્રકરણ સમાપ્ત ॥

स्स य जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते! गोयमा ! अविरइ पडुच्चसे तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सेट्ठियस्स य. तणुयस्स य. जाव कज्जइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—भदंत इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वंदित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, तद् नूनं भदन्त ! श्रेष्ठिकस्य च तनुकस्य च कृपणस्य च क्षत्रियस्य च सममेवाप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते ? हंत गौतम !

अप्रत्याख्यान आदि प्रकरण—

कालास्यवेषिकपुत्र अनगार प्रत्याख्याम क्रिया से सिद्ध हुए यह बात अभी प्रकट की गई है सो इस प्रत्याख्यान क्रिया से विपरीत अप्रत्याख्यान क्रिया है। इस अप्रत्याख्यान क्रिया को निरूपण करने के लिये अब सूत्रकार सूत्र कहते हैं—" भंते त्ति भगवं गोयमे " इत्यादि।

सूत्रार्थ—(भंते ति भगवं गोयमे !) हे भदन्त ! ऐसा कह कर भगवान गौतम ने (समणं भगवं) श्रमण भगवान (महावीरं) महावीर को (वन्दइ) वन्दना की (नमंसइ) नमस्कार किया (वन्दित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्हों ने उनसे इस प्रकार पूछा–(से णूणं भंते ! सेट्ठिअस्स य तणुयस्स य खत्तियस्स तं समंचेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ) हे भदन्त ! श्रेष्ठी, की दरिद्री की, कृपण की और क्षत्रिय राजा की अप्रत्याख्यान क्रिया क्या एकसी

અપ્રત્યાખ્યાન આદિ પ્રકરણ

કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગાર પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાથી સિદ્ધપદ પામ્યાં એ વાત તો હમણાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે. ને પ્રત્યાખ્યાનની વિપરીત અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા છે, તે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાનું નિરૂપણ કરવાને માટે હવે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે—" भंते ! त्ति भगवं गोयमे ! " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(भंते त्ति भगवं गोयमे !) હે ભગવન્ ! એવું કહીને ભગવાન ગૌતમે (समण भगवं) શ્રમણ ભગવાન (महावीरं) મહાવીરને (वंदइ) વંદણા કરી (नमंसइ) નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (एव वयासी) તેમણે ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (से णूणं भंते ! सेट्ठियस्स य तणुयस्स य किवणस्स य खत्तियस्स य सम चेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ) હે ભગવન્ ! શ્રેષ્ઠિની, દરિદ્રીની, કૃપણની અને ક્ષત્રિય–રાજાની અપ્ર-

श्रेष्ठिकस्य च यावत् अप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते, तत्केनार्थेन भदन्त ! गौतम ! अविरतिं प्रतीत्य, तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते श्रेष्ठिकस्य च तनुकस्य च यावत् क्रियते इति ॥ सू० ६ ॥

टीका—'अत्थेवि' अदन्त इति हे भदन्त ! इत्येव रूपेण भगवन्तमामन्त्र्येति भावः, 'भगवं गोयमे' भगवान् गौतमः 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरं 'वंदइ नमंसइ' वन्दते नमस्यति 'वंदित्ता नमंसित्ता' वन्दित्वा नमस्थित्वा 'एवं वयासी' एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् उक्तवान्। शिष्यः पृच्छति—'से णूणं भंते' तत् नूनं भदन्त ! सेट्ठिपस्स य 'श्रेष्ठिकस्य

होती है ? (हंता गोयमा सेट्ठिपस्स जाव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ) हां गौतम ! श्रेष्ठी से लेकर राजा तक की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती है। (से केणट्ठेणं भंते !) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि श्रेष्ठी से लेकर राजा तक की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती है ? (गोयमा ! अविरइं पडुच्च) हे गौतम ! मैं जो ऐसा कहता हूं वह अविरति भाव को लेकर कहता हूं (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सेट्ठिपस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ) कि एक सेठ की यावत् राजा की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती।

टीकार्थ-(भंते त्ति) हे भदन्त ! इस रूप से भगवान आमंत्रण करके (भगवं गोयमे) भगवान गौतम ने (समणं भगवं महावीरं) श्रमण भगवान महावीर को (वंदइ नमंसइ) वन्दना की और नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्हों ने इस से ऐसा प्रश्न पूछा (से णूणं भंते ?) हे भदन्त ! (सेट्ठिपस्स) जिसका अस्तित्व

त्याख्यान क्रिया शु એકસરખી હોય છે? (हंता गोयमा ! सेट्ठिपस्स जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ) હા ગૌતમ ! શ્રેષ્ઠીથી લઈને રાજા સુધીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે (से केणट्ठेणं भंते ?) હે ભગવન્ ! આપ આ કારણે એવું કહો છો કે શ્રેષ્ઠીથી લઈને રાજા સુધીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એક સરખી હોય છે? (गोयमा ! अविरइं पडुच्च) હે ગૌતમ ! હું અવિરતિ ભાવની અપેક્ષાએ એવું કહું છું (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सेट्ठिपस्स तणुयस्स य जाव कज्जइ) એથી (હે) શ્રી લઈને રાજા સુધીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે

टीकार्थ- भंते त्ति " હે ભગવન્ ! આ રીતે સંબોધીને, " भगवं गोयमे " ભગવાન ગૌતમે " समणं भगवं महावीरं " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને " वंदइ नमंसइ " વંદણા કરી અને નમસ્કાર કર્યા " वंदित्ता नमंसित्ता " વંદણા નમસ્કાર કરીને ' एवं वयासी " આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો-" से णूणं भंते ! "

च, श्रीदेवताकृपाकटाक्षप्रत्यक्षलक्ष्यमाणद्रविणलक्षलक्षणविलक्षणहिरण्यपट्टसमलंकृतमूर्धनगरप्रधानव्यवहर्तुः, 'तणुयस्स य' तनुकस्य च, दरिद्रपूर्वोपार्जितपापकर्मकस्य माप्तदारिद्र्यसंपन्नस्य 'किवणस्स य' कृपणस्य च सति विभवेपि सत्कर्मादौ दानादिरहितस्य 'खत्तियस्स य' क्षत्रियस्य राज्ञश्च 'समं चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ' सममेवाप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते भवतीत्यर्थः किं समैव सदृश्येवाऽप्रत्याख्यानक्रिया सर्वेषां भवतीति प्रश्नः। भगवानाह—'हंते'-त्यादि। 'हंता गोयमा' हंत गौतम! 'सेट्ठियस्स य जाव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ' श्रेष्ठिकस्य च यावद् अप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते, अत्र यावत्पदेन तनुककृपणक्षत्रियपदानां संग्रहः, श्रेष्ठिरुदरिद्रकृपणराज्ञां सर्वेषां तुल्यैवाप्रत्याख्यानक्रिया भवतीति

लक्ष्मीदेवीके कृपाकटाक्षसे प्रत्यक्षलक्ष्यमाण लक्षद्रविणराशी (धन का ढेर) से निर्मित सुवर्ण के मुकुट से अलंकृत हो रहा है ऐसा जो नगर का प्रधान व्यवहारी-नगर सेठ, उनकी तथा (तणुयस्स) तनुक-पूर्वोपार्जित पापकर्म के कारण लक्ष्मी रहित जो दरिद्र व्यक्ति है उसकी, (किवणस्स) विभव के होने पर जो अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग दान धर्मादि में नहीं करता है ऐसा जो कृपण व्यक्ति है उसकी तथा (खत्तियस्स) क्षत्रिय-राजा जो है उसकी (समं चेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ) अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है क्या? समान ही होती है क्या? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् कहते है कि-(हंता) हां (गोयमा) गौतम! (सेट्ठियस्स य जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ) श्रेष्ठी की यावत् अप्रत्याख्यान क्रिया समान ही होती है। यहां यावत् पद के (तनुक, कृपण, क्षत्रिय) इन पदों का संग्रह किया गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि श्रेष्ठी दरिद्र कृपण, और राजा इन सब की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है। सबकी क्रिया समान ही होती है इस बात

હે ભગવન્! "सेट्ठियस्स" જેનુ મસ્તક લક્ષ્મીદેવીની કૃપાદૃષ્ટિથી પ્રત્યક્ષ લક્ષ્યમાન-લક્ષદ્રવિણરાશીથી રચિત સુવર્ણ મુગટથી શોભી રહ્યુ છે એવા નગરના મુખ્ય વ્યાપારી-નગરશેઠની તથા "तणुयस्स" તનુકની-પૂર્વના પાપકર્મને કારણે જે લક્ષ્મીથી રહિત દરિદ્ર સ્થિતિમા મૂકાયેલ છે તેની "किवणस्स" કંજૂસની (ધન હોવા છતાં પણ જે વ્યક્તિ તેનો દાનધર્માદિમાં સદુપયોગ કરતો નથી તેની) તથા "खत्तियस्स" क्षत्रियની (રાજાની) "समं चेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ" અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા શુ એકસરખી હોય છે! ભગવાન્ મહાવીર સ્વામી તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-"हंता गोयमा!" હા, ગૌતમ! "सेट्ठियस्स य जाव अप्पच्चक्खाणकिरिया कज्जइ" શ્રેષ્ઠીની, દરિદ્રની, કંજુસની

पात्र । सर्वेषां समैव क्रिया भवतीति श्रुत्वा पृच्छति गौतम 'से केणट्ठेणं भंते' तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, सर्वेषां समैवेति, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'अविरइं पडुच्च' अविरतिं प्रतीत्य अविरतिमाश्रित्य, 'से तेणट्ठेणं गोयमा एवं वुच्चइ' तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते-'सेट्ठिस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ' श्रेष्ठिनश्च तनुकस्य च यावत् क्रियते हे गौतम ! अविरत्यपेक्षया एष कथ्यते यत् सर्वेषामेव श्रेष्ठिकादीनां तुल्या अप्रत्याख्यान-क्रिया भवतीति ॥ सू० ६ ॥

अविरतिश्च सर्वेषां समैवात सर्वेषां श्रेष्ठिकादीनामप्रत्याख्यानक्रिया तुल्ये-त्यादिना अप्रत्याख्यानक्रिया प्ररूपितेत्यप्रत्याख्यानक्रियाप्रस्तावादिद सूत्रकार-'आहाकम्म' इत्यादि ।

मूलम्-आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे णिग्गंथे किं बंधइ किं पकरेइ किं चिणाइ किं उवचिणाइ? गोयमा! आहाकम्मं

को सुनकर गौतम ने भगवान से पूछा कि (से केणट्ठेणं भंते !) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि सब की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं कि (गोयमा अविरइं पडुच्च ' हे गौतम ! अविरति को आश्रित करके (से तेणट्ठेणं गोयमा ' एवं वुच्चइ) मैं गौतम कहता हूं कि (सेट्ठिस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ) सेठ की, तनुक की यावत् अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है। तात्पर्य चाहे सेठ हो चाहे दरिद्री हो चाहे कृपण हो चाहे राजा हो कोई भी हो यदि इनके अविरति हुआ है तो इन सबकी अप्रत्याख्यान क्रिया समान ही है। इसमें कोई भेद ही नहीं है।

અને ક્ષત્રિયની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ હોય છે ત્યારે ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે કે "से केणट्ठेणं भंते !" હે ભગવન્ ! આપ આ કારણે એવું કહો છો કે તે બધાની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે ?

ઉત્તર—" गोयमा ! अविरइं पडुच्च " હે ગૌતમ ! અવિરતિની અપેક્ષાએ " से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ " હું એવું કહું છું કે " सेट्ठिस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ " શ્રેષ્ઠીની, દરિદ્રની, કૃપણની અને ક્ષત્રિયની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે ભલે શ્રેષ્ઠિ હોય, ભલે કૃપણ હોય કે ભલે રાજા હોય પણ જો તેઓ અવિરતિ હોય તો તે બધાની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા સરખી જ હોય છે તેમની તે ક્રિયામાં કોઈ પણ પ્રકારનો ભેદ હોતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ, जाव अणुपरियट्टइ, से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ, गोयमा ! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ, आयाए धम्मं अइक्कममाणे पुढविकाइयं णावकंखइ, जाव तसकायं णावकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारं आहारेइ, ते वि जीवे णावकंखइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ, फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ, गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ ? गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ धणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ, जहा संवुडेणं, नवरं—आउयं च णं कम्मं सियबंधइ सिय नो बंधइ, सेसं तहेव जाव वीइवयइ, से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ, गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविक्काइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ ते वि जीवे अवकंखइ, से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ ॥ सू० ७ ॥

छाया—आधाकर्म खलु भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः किं बध्नाति किं प्रकरोति किं चिनोति किम् उपचिनोति? गौतम! आधाकर्म खलु भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः शिथिलबन्धनबद्धाः दृढबन्धनबद्धाः प्रकरोति, यावत् व्यनुपर्यटति, तत्केनार्थेन यावद्व्यनुपर्यटति? गौतम! आधाकर्म खलु भुञ्जान

अविरति सबकी समान ही होती है अतः समस्त श्रेष्ठी आदिकों की अप्रत्याख्यान क्रिया भी तुल्य ही होती है इत्यादि कथन द्वारा अप्रत्याख्यान क्रिया का निरूपण किया। सो अब इसी अप्रत्याख्यान क्रिया के प्रस्ताव को लेकर सूत्रकार (आहाकम्मं णं) इस सूत्र का कथन करते हैं—'आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(आहाकम्मं णं भुंजमाणे) हे भदन्त! आधाकर्म दोष से दूषित आहार को भोगने वाला (समणे णिग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (किं बंधइ) क्या बांधता है? (किं पकरेइ) क्या करता है? (किं चिणाइ) किस का चय करता है? (किं उवचिणाइ) किसका उपचय करता है? भगवान कहते हैं—(गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ) हे गौतम! आधाकर्म दोष से दूषित आहार को भोगने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को कि जिन्हें पहिले उसने शिथिलबन्धन से बांधी थीं, उन्हीं सात कर्मप्रकृतियों को मजबूत बन्धन से बंधी हुई बना लेता है। (जाव अणुपरि

બીની અવિરતિ (અવત) પ્રમાણ દોષ છે તે કારણે બધે શ્રી વગેરે સૌ શ્રેષ્ઠીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા પ્રમાણ જ દોષ છે, ઇત્યાદિ કથનદ્વારે સૂત્રકારે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાનુ નિરૂપણ કર્યું. હવે એ જ પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના પ્રસ્તાવને આધાર લઈને સૂત્રકાર સૂત્રનુ કથન કરે છે—'आहाकम्मं भुंजमाणे समणे'॰

પ્રશ્ન—(आहाकम्मं णं भुंजमाणे णिग्गंथे) હે ભગવન્! આધાકર્મી આહારને ભોગવનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ (किं बंधइ) શુ બાંધે છે? (किं पकरेइ) શુ કરે છે? (किं चिणाइ) શેનો ચય કરે છે? (किं उवचिणाइ) અને શેનો ઉપચય કરે છે?

ઉત્તર—(गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे णिग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ) હે ગૌતમ! આધાકર્મી આહારને ભોગવનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુષ્યકર્મ સિવાયની આઠ કર્મ પ્રકૃતિમાં કે જે પહેલા શિથિલ બંધનથી બંધી હતી તે મજબૂત બંધનથી કરે. (जाव अणुपरियट्टइ) (यावत्) તે સંસારમા પરિભ્રમણ કરે છે.

णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ, जाव अणुपरियट्टइ, से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ, गोयमा ! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ, आयाए धम्मं अइक्कममाणे पुढविकाइयं णावकंखइ, जाव तसकायं णावकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारं आहारेइ, ते वि जीवे णावकंखइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ, फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ, गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ ? गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ धणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ, जहा संवुडेणं, नवरं—आउयं च णं कम्मं सियबंधइ सिय नो बंधइ, सेसं तहेव जाव वीइवयइ, से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ, गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविक्काइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ ते वि जीवे अवकंखइ, से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ ॥ सू० ७ ॥

श्रमणो निर्ग्रन्थ किं बध्नाति यावदुपचिणोति, गौतम ! प्रासुकेषणीय मुञ्जन श्रमणो निर्ग्रन्थ आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः दृढबन्धनबद्धा शिथिलबन्धनबद्धा करोति, यथा संवृतः खलु अनगारः आयुष्कं च कर्मस्यात् बध्नाति स्याद्नो बध्नाति शेषं तथैव यावद् व्यतिव्रजति, तत्केनार्थेन यावत् व्यतिव्रजति, गौतम! प्रासु

एषणीय आहार को भोगने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को गाढबन्धन से बांधता है और यावत् संसार में बारबार घूमता रहता है। (फासुएसणिज्जं णं भंते। भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ, जाव उवचिणाइ) हे भदंत ! प्रासुक एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ क्या बांधता है यावत् वह किसका उपचय करता है ? (गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ घणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ करेइ) हे गौतम ! प्रासुक एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ आयु को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को जिन्हें उसने पहिले गाढ बंधन से बद्ध किया था अब शिथिलबंधन वाली कर देता है (जहा संवुडेणं) यह संवृत अनगार की तरह होता है। (नवर) विशेषता यह है कि यह (आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ) आयुकर्म का कभी बंध करता है और कभी बंध नहीं भी करता है। (सेसं तहेव जाव वीइवयइ) अर्थावशेष

પ્રકૃતિઓને ગાઢબંધ અબધ બાંધે છે અને (યાવત્) તે સંસારમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરે છે (फासुएसणिज्जं णं भंते ! भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ) હે ભગવન્! પ્રાસુક એષણીય (સૂઝતા) આહારનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ શું બાંધે છે? (યાવત્) કોનો ઉપચય કરે છે? (યાવત્ પદથી અહીં "શું કરે છે અને કોનો વધ કરે છે?" આ પ્રશ્નો ગ્રહણ કરાયા છે)

(गोयमा फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ घणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ करेइ) હે ગૌતમ! પ્રાસુક એષણીય આહારનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ, આયુષ્ય કર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓને પહેલાં તેણે સાઢ બંધનથી બાંધી હતી તેમને શિથિલ બંધનવાળી કરી નાખે છે (जहा संवुडेण) તે સંવૃત અણગારના જેવો હોય છે (नवर) પરંતુ તેનામાં એ વિશેષતા હોય છે કે (आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) તે આયુષ્યકર્મનો બંધ કદાચિત્ બાંધે અને કદાચિત્ નથી બાંધતો (सेसं तहेव जाव वीइवयइ) "તે સિવાયનું બધું

श्रमणो निर्ग्रन्थ आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनो धर्ममतिक्रामन् पृथिवीकायिकं नावकांक्षति, येषामपि च जीवानां शरीराणि आहारमाहरति, तानपि जीवान् नावकांक्षति,तत्तेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते आधाकर्म खलु भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीर्यावत् अनुपर्यटति। प्रासुकैषणीयं खलु भदन्त! भुञ्जानः

यट्टइ) यावत् वह संसार में बारंबार घूमता रहता है। (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ) हे भदन्त ! इसका क्या कारण है-जो वह यावत् संसारमें बारंबार भ्रमण करतारहता है ? (गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ) हे गौतम ! आधाकर्मदोष से दूषित आहार को भोगने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ अपनी आत्मा के धर्म का उल्लंघन करता है (आयाए धम्मं) अपनी आत्मा के धर्म को (अइक्कममाणे) उल्लंघन करता हुआ वह श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढवीकाइयं णावकंखइ) पृथिवीकायिक जीवों की दया नहीं पालता है। (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की दया नहीं पालते हैं। (जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारं आहारेइ) तथा जिन जीवों के शरीरों को वह खाता है(ते वि जीवे नावकंखइ) उन जीवोंकी भी वह दरकार (दया) नहीं करता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि (आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ) आधाकर्म दोष से

પ્રશ્ન--(से केणट्ठेणं जावअणुपरियट्टइ) હે ભગવન્! શા કારણે તે સંસારમા પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે?

ઉત્તર--(गोयमा ! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ) હે ગૌતમ ! આધાકર્મી આહારને ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના આત્મધર્મનું ઉલ્લંઘન કરે છે. (आयाए धम्मं) પોતાના આત્મધર્મનું (अइक्कममाणे) ઉલ્લંઘન કરતો તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ (पुढवीकाइयं णावकंखइ) પૃથ્વીકાયિક જીવોની દયા પાળતો નથી (जाव तसकाय णावकंखइ) યાવત્ તે ત્રસકાય પર્યંતના જીવોની દયા પણ પાળતો નથી (जे सिं पि य णं जीवाण सरीराइं आहारं आहारेइ) તથા તે જે જીવોના શરીરને ખાય છે (ते वि जीवे नावकंखइ) તે જીવોની પણ તે દરકાર કરતો નથી (से तेणट्ठेण गोयमा ! एव वुच्चइ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવુ કહું છું કે (आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउय वज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ) આધાકર્મી આહાર લેનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મ-

टीका—' आहाकम्मं ण भुंजमाणे ' आधाकर्म खलु भुञ्जान, आधाय साधुं मनसि निधाय कर्म = षट्कायोपमर्दपूर्वकमाहारादिनिष्पादनम् यत् आधाकर्म, आधया=साधुप्रणिधानेन यत् क्रियते-सचेतनं वस्तु अचेतनं, क्रियते अचेतन वा वस्तु पच्यते, धीयते वा उपाश्रयादिकं, श्रूयते वा वस्त्रादिकं तत् आधाकर्म, साधवमाहारादिकं ' भुंजमाणे ' भुञ्जान:=साधवाहारादेरुपभोगं कुर्वाण ' समणे निग्गंथे ' श्रमणो निर्ग्रन्थ ' किं बंधइ ' किं बध्नाति कीदृशं कर्म बध्नाति प्रकृति बन्धापेक्षया स्पृष्टावस्थापेक्षया वा, ' किं पकरेइ ' किं प्रकरोति स्थितिबन्धापेक्षया बद्धावस्थापेक्षया वा, ' किं चिणाइ ' किं चिनोति अनुभागबन्धापेक्षया, निधत्ता

टीकार्थ—(आहाकम्मं णं भुंजमाणे) साधु को अपने मन में रख कर षट्काय के जीवों के उपमर्दनपूर्वक जो आहार आदि का निष्पादन होता है वह आधाकर्म है। (आधाय कर्म इति आधाकर्म) इस प्रकार की इसकी व्युत्पत्ति है, साधुओं को मन में रखकर उनके आहार के लिये षट्कायिक जीवों का उपमर्दन करना अथवा-आधया कर्म इति आधाकर्म साधु को निमित्त करके सचेतन वस्तु को अचेतन करना, अचेतन वस्तु को पकाना, उपाश्रयादिक बनवाना, वस्त्र वगैरह धुनवाना यह सब आधाकर्म आहार आदि का उपभोग करने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (किं बंधइ) प्रकृति बंध की अपेक्षा से अथवा स्पृष्टावस्था की अपेक्षा से कैसे कर्म का बंध करता है ? (किं पकरेइ) स्थितिबंध की अपेक्षा से अथवा बद्धावस्था की अपेक्षा से क्या करता है ? (किंचिणाइ) अनुभागबंध की अपेक्षा से अथवा निधत्तकरण की

ટીકાર્થ—" आहाकम्मं ण भुंजमाणे " સાધુને નિમિત્તે છ કાયના જીવોના વિનાશપૂર્વક જે આહાર વગેરે તૈયાર કરાય છે તે આહારને આધા કર્મ દોષથી દૂષિત જણવામાં આવે છે " आधाय कर्म इति आधाकर्म " આ પ્રમાણે તેની વ્યુત્પત્તિ થાય છે-સાધુઓને નિમિત્તે છ કાયના જીવોની વિરાધના કરીને તૈયાર કરેલા આહારને માટે આ શબ્દ પ્રયોજાય છે, અથવા-" आधया कर्म इति आधाकर्म " સાધુને નિમિત્તે સચેત વસ્તુને અચેત કરવી, અચેત વસ્તુને રાંધવી, ઉપાશ્રયાદિક, બનાવરાવવા, વસ્ત્રાદિ ધોવરાવવા, એ બધાને " આધા કર્મ " કહે છે આવા આધાકર્મ દોષથી દૂષિત આહારનો ઉપભોગ કરનાર " समणे निग्गंथे " શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " किं बंधइ " પ્રકૃતિ બંધની અપેક્ષાએ અથવા સ્પૃષ્ટાવસ્થાની અપેક્ષાએ કેવા કર્મનો બંધ બાંધે છે ? " किं पकरेइ " સ્થિતિબંધની અપેક્ષાએ અથવા બદ્ધાવસ્થાની અપેક્ષાએ શું કરે છે ? " किं चिणाइ " અનુભાગબંધની

कैषणीयं भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थ आत्मनो धर्मं नातिक्रामति, आत्मनो धर्ममनतिक्रामन् पृथिवीकायिकमवकांक्षति यावत् त्रसकायमवकांक्षति, येषामपि च जीवानां शरीराण्याहरति तानपि जीवानवकांक्षति, तत्तेनार्थेन यावद् व्यतिव्रजति ॥ ७ ॥

उसी प्रकार जानना चाहिये, यावत् वह संसार को उल्लंघन कर देता है। (से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ) हे भदन्त ! इसका क्या कारण है जो वह यावत् संसार को उल्लंघन कर देता है ! (गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ) हे गौतम ! प्रासुक एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ अपनी आत्मा के धर्म का उल्लंघन नहीं करता है। (आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविकाइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ) आत्मा के धर्म का उल्लंघन नहीं करता हुआ वह श्रमण निर्ग्रन्थ पृथिवीकायिक जीवों पर दया करता है यावत् वह त्रसकायिक जीवों पर दया रखता है। (जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ, ते वि जीवे अवकंखइ से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) तथा जिन जीवों के शरीर का वह आहार करता है उन जीवों की भी वह दया रखता-पालता है। (से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) इस कारण हे गौतम ! वह श्रमण निर्ग्रन्थ संसार को उल्लंघन कर देता है।

કરે છે" ત્યા સુધીનુ બાકીનું વર્ણન એ પ્રમાણે જ (સવૃત અણગારની જેમ જ સમજવુ

(से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ) હે ભગવન્! તેનુ શું કારણ છે કે (યાવત્) તે સંસારને પાર કરે છે? (गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो आइक्कमइ) હે ગૌતમ! પ્રાસુક એષણીય આહારનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના આત્માના ધર્મનું ઉલ્લંઘન કરતો નથી (आयाए धम्म अणइक्कममाणे पुढविकाइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ) આત્માના ધર્મનુ ઉલ્લંઘન ન કરતો તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પૃથ્વીકાયથી લઈને ત્રસકાય સુધીના જીવોની દયા પાળે છે (जेसिं पि य ण जीवाणं सरीराइं आहारेइ, ते वि जीवे अवकखइ-से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) તથા જે જીવોના શરીરનો તે આહાર કરે છે, તે જીવોની પણ તે દયા પાળે છે હે ગૌતમ! તે કારણે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સંસારને તરી જાય છે.

दीहकालठिइयाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं ' इत्यस्य ग्रहणम्। छाया— ह्रस्वकालस्थितिकाः दीर्घकालस्थितिकाः प्रकरोति मन्दानुभावास्तीव्रानुभावा प्रकरोति अल्पप्रदेशाग्रा बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति आयुष्कं च कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति असातावेदनीयं च कर्म भूयो भूय उपचिनोति अनादिकं चानवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारम्। एतस्य व्याख्यानम्

करता है। यहां यावत् पद से (हस्सकालठिइयाओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ, मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ, अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ, अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं) इस पाठ का संग्रह किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि ह्रस्वकाल की स्थितिवाली कर्म प्रकृतियों को यह दीर्घकाल की स्थितिवाली बना देता है। मन्द अनुभाववाली कर्म प्रकृतियों को यह तीव्र अनुभावयाली कर देता है। अल्पप्रदेशाग्रवाली कर्मप्रकृतियों को यह बहुप्रदेशाग्रवाली बना देता है। यह आयुकर्म का बंध करता है और नहीं भी करता है। असातावेदनीय कर्म का यह बार २ उपचय करता है। तथा अनादि अनन्त तथा दीर्घमार्गवाले चतुर्गति रूप संसार कान्तार में बार २ भ्रमण करता रहता है। इन सब पदों की व्याख्या (सप्तम प्रकरण में प्रथम

પ્રકરણે નીચેનો સૂત્રપાઠ અહિંયા કરાયો છે—" हस्सकालठिइयाओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं " આ પાઠનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—હ્રસ્વકાળની સ્થિતિવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે મંદ અનુભાગવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે તીવ્ર અનુભાગવાળી બનાવે છે અલ્પપ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને તે બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે-તે આયુષ્યકર્મનો બંધ કદિ કરે છે અને નથી પણ બાંધતો તે વારંવાર અસાતાવેદનીય કર્મનો ઉપચય કરે છે, તથા અનાદિ અનંત અને દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સંસારરૂપી વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે આ બધાં પદોની વ્યાખ્યા " सप्तमप्रकरणेऽस्मिन् ' (પ્રથમ પ્રકરણમાં

वस्थापेक्षया वा 'किं उवचिणाइ' किम् उपचिनोति प्रदेशबन्धापेक्षया निकाचनापेक्षया वेति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'आहाकम्मं णं भुंजमाणे' आधाकर्म खलु भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ' आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः 'सिढिलबंधणबद्धाओ' शिथिलबन्धनबद्धाः, 'धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ' दृढ़ बन्धनबद्धाः प्रकरोति, आधाकर्मिकाहारादिपरिसेवनेनायुष्कवर्जिताः सप्त कर्मप्रकृतयो याः शिथिलबन्धनबद्धा आसन् ता दृढबन्धनबद्धाः प्रकरोतीति, 'जाव अणुपरियट्टइ' यावत् अनुपर्यटति – परिभ्रमति, यावत्पदेन– हस्सकालठिइयाओ

अपेक्षा से किसका चय करता है। (किं उवचिणाइ) प्रदेशबंध की अपेक्षा अथवा निकाचना की अपेक्षा से किसका उपचय करता ? ये प्रश्न हैं। इनका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि (गोयमा !) हे गौतम ! (आहाकम्मं णं भुंजमाणे) आधाकर्म दोष से दूषित आहार आदि उपभोग करता हुआ (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आउकम्मवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ) आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतिओं को कि जो इसके पहिले (सिढिल बंधणबद्धाओ) शिथिलबंधन से बद्ध हुई थीं (धणियबधणबद्धाओ) दृढबंधन से बद्ध बना लेता है। तात्पर्य कहने का यह है कि आधाकर्मिक आहार आदि के परिसेवन करने से सेवनकर्त्ता श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म के सिवाय सातकर्म प्रकृतियों को जो शिथिलबंधनवाली थीं दृढबंधन से बद्ध करता है। (जाव अणुपरियट्टइ) यावत् वह संसार में जन्ममरण द्वारा परिभ्रमण

અપેક્ષાએ અથવા નિધત્તકરણની અપેક્ષાએ શેનો ચય કરે છે ? "किं उवचिणाइ" પ્રદેશબંધની અપેક્ષાએ અથવા નિકાચની અપેક્ષાએ શેનો ઉપચય કરે છે ? આ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે એ પ્રશ્નોના ભગવાન મહાવીર આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે.

"गोयमा ! હે ગૌતમ ! "आहाकम्म णं भुंजमाणे" આધાકર્મ દોષથી દૂષિત આહારાદિનો ઉપભોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "आउकम्मवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ" આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓ કે જેમને તેણે પહેલાં "सिढिलबंधणबद्धाओ" શિથિલ બંધનથી બાંધી હતી "धणियबंधणबद्धाओ" તેમને તે દૃઢ બંધનથી બાંધેલી કરે છે તાત્પર્ય એ છે કે આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની જે સાત કર્મપ્રકૃતિઓ પહેલાં શિથિલ બંધવાળી હતી તેમને દૃઢ બંધનવાળી કરે છે "जाव अणुपरियट्टइ" (यावत्) તે સંસારમાં જન્મમરણ સહિત વારંવાર પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે અહીં "जाव" (यावत्=પર્યંત)

दीर्घकालस्थितिकाः पकरोति मन्दानुभावाः तीव्रानुभावाः पकरोति अल्पप्रदेशाग्राः बहुप्रदेशाग्राः पकरोति आयुषं च कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति भूयो भूयः उपचिनोति अनादिकं चानवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारम्। एतस्य व्याख्यानम्

करता है। यहां यावत् पद से (ह्रस्वकालट्ठिइयाओ दीहकालट्ठिइयाओ पकरेइ, मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ, अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ, अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं) इस पाठ का संग्रह किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि ह्रस्वकाल की स्थितिवाली कर्म प्रकृतियों को यह दीर्घकाल की स्थितिवाली बना देता है। मन्द अनुभागवाली कर्मप्रकृतियों को यह तीव्र अनुभागवाली कर देता है। अल्पप्रदेशाग्रवाली कर्मप्रकृतियों को यह बहुप्रदेशाग्रवाली बना देता है। यह आयुकर्म का बंध करता है और नहीं भी करता है। असातावेदनीय कर्म का यह बार २ उपचय करता है। तथा अनादि अनन्त तथा दीर्घमार्गवाले चतुर्गति रूप संसार कान्तार में बार २ भ्रमण करता रहता है। इन सब पदों की व्याख्या (संपूर्णान्त प्रकरण में प्रथम

પદવડે નીચેનો સૂત્રપાઠ અહીં ગ્રહણ કરેલ છે—" ह्रस्वकालट्ठिइयाओ दीहकालट्ठिइयाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ, असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं " આ પાઠનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—હ્રસ્વકાળની સ્થિતિવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે દીર્ઘકાલની સ્થિતિવાળી બનાવે છે મંદ અનુભાગવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે તીવ્ર અનુભાગવાળી બનાવે છે અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને તે બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે તે આયુષ્યકર્મનો બંધ કોઈ પણ કરે અને કોઈ પણ કરે નહીં પરંતુ અસાતાવેદનીય કર્મનો ઉપચય કરે છે, તથા અનાદિ અનંત અને દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સંસારરૂપી વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે આ રીતે પદોની વ્યાખ્યા " संपूर्णान्तप्रकरणम् " (અહીં સુધીનો

संवृतानगारप्रकरणे अष्टाविंशतितमे सूत्रे कृतं तत एव द्रष्टव्यम् । 'से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ' तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति ? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'आहाकम्मं णं भुजमाणे' आधाकर्म खलु भुजानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं अइक्कमइ' आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनः धर्म=चारित्रधर्मं श्रुतधर्मम् अतिक्रामति उल्लंघयति परित्यजतीति भावः, 'आयाए धम्मं अइक्कममाणे' आत्मनो धर्ममतिक्रामन् स्वकीयचारित्रात्मकधर्मं परित्यजन् 'पुढविकाइयं' पृथिवीकायिक 'णावकंखइ' नावकांक्षति नानुकम्पते, 'जाव तसकायं णावकंखइ' यावत् त्रसकायं नावकांक्षति, यावत्पदेन—अप्तेजोवायुवनस्पतिकायानां ग्रहणम् । आधाकर्मिकमाहारादिकं भुञ्जानः

शतक प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में की जा चुका है सो वहां से जान लेना चाहिये । (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ) हे भदन्त ! यह किस कारण से पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार कान्तार में बार २ घूमता रहता है, तो इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि—(आहाकम्मं ण भुंजमाणे आधाकर्मिक आहार आदि का सेवन करता हुआ वह (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं अइक्कमइ) अपने धर्म का उल्लंघन करता है । अर्थात् श्रुत चारित्ररूप जो आत्मा का धर्म है उसका वह परित्याग कर देता है । (आयाए धम्मं अइक्कममाणे) अपने चारित्रात्मक धर्म का उल्लंघन करने वाला-परित्याग कर देने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं) पृथिवीकायिक जीव की (णावकंखइ) अनुकंपा नहीं करता है । (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की रक्षा नहीं करता है । यहां यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और

પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૨૮મા સૂત્રમા) કરી છે તે ત્યાંથી વાચી લેવી. " से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ " હે ભગવન્! તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શા કારણે પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા સંસાર વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ?

ઉત્તર—आहाकम्मं णं भुजमाणे " આધાકર્મિક આહારાદિનું સેવન કરનાર " समणे निग्गथे " શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " आयाए धम्म अइक्कमइ " આત્માના ધર્મનુ ઉલ્લઘન કરે છે, એટલે કે શ્રુતચારિત્રરૂપ જે આત્માનો ધર્મ છે તેનું આવી સ્થિતિમા તે પાલન કરી શકતો નથી " आयाए धम्मं अइक्कममाणे " તથા પોતાના ચારિત્રાત્મક ધર્મનું ઉલ્લંઘન (પરિત્યાગ) કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " पुढविकाइयं " પૃથ્વીકાયિક જીવોની " णावकंखइ " અનુકંપા કરતો નથી-દયા પાળતો નથી. " जाव तसकायं णावकखइ " તથા ત્રસકાય સુધીના જીવોની પણ તે રક્ષા કરતો નથી. અહીં " यावत् " પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય,

श्रमणो निर्ग्रन्थः समस्तपृथिवीकायादारभ्य समस्तत्रसकायपर्यन्तं षट्कायं नाव-
गति=नापेक्षते नानुकम्पते च हन्तुमिच्छतीत्यर्थः । 'जेसिं पि य णं जीवाणं'
येषामपि च खलु जीवानाम् 'सरीराइं' शरीराणि, यानि आहारतया निष्पादि-
तानि तानि 'आहारं आहारेइ' आहारमाहरति, आहारतया गृह्णाति 'तेसि पि णं जीवे
नावकंखइ' तानपि जीवान् नावकाङ्क्षति, अवकाङ्क्षणम् अपेक्षा अनुकम्पा वा तान्
जीवान् नापेक्षते नानुकंपते च आधाकर्मिकाहारभोजी 'अह ! एएणं एएणमट्ठेणं
पुढविक्कायादिपट्कायजीवा उपमर्दिताः' इत्येष दया न कुरुते, 'से तेणट्ठेणं-
गोयमा एवं वुच्चइ' तच्चैनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते—'आहाकम्मं णं भुंजमाणे'
आधाकर्म खलु भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आउयवज्जाओ

वनस्पतिकाय का ग्रहण हुआ है । आधाकर्मिक आहार आदि का उप-
योग करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ समस्त पृथिवीकाय से लेकर समस्त
त्रसकाय तक जो षट्काय के जीव हैं उन जीवों की अनुकंपा नहीं करता
है, अर्थात् उन्हें मारना चाहता है । (जेसिं पि य णं जीवाणं) जिन जीवों
के (सरीराइं) शरीर आहार रूप से निष्पादित हुए हैं उन्हें यह आधा
कर्मिक आहारादि करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (आहारं आहारेइ) आहा
रूप से ग्रहण कर लेता है । (तेवि जीवे नावकंखइ) उन पर भी यह
दया नहीं करता है । अर्थात् उनके मन में ऐसा दया भाव नहीं जगता
है कि अहह ! इन गृहस्थों ने मेरे लिये पृथिव्यादिक षट्काय जीव विराधे
हैं-उपमर्दित किये हैं । (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इसलिये हे
गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि (आहाकम्मं णं भुंजमाणे) आधाकर्म
आहारादि का उपयोग करने वाला (समणे निग्गंथे, श्रमण निर्ग्रन्थ

વાયુકાય અને વનસ્પતિકાયને અહીંયા ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે આધાકર્મિક આહાર
વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પૃથ્વીકાયથી લઈને ત્રસકાય સુધીના
જે છ કાયના જીવો છે તેમની અનુકંપા કરતો નથી, એટલે કે તેમનું રક્ષણ
કરતો નથી પણ વિરાધના કરે છે "जे सिं पि य ण जीवाण" જે જીવોનાં
"सरीराइ" શરીરનું આહારરૂપે નિર્માણ થયું છે તેનું તે આધાકર્મિક આહાર
કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના આહારરૂપે ગ્રહણ કરે છે 'ते वि जीवे नाव
कंखइ" જે જીવો પર પણ તે દયા કરતો નથી એટલે કે તેના મનમાં જેવો
દયાભાવ જાગ્રત થતો નથી કે અરેરે ! આ ગૃહસ્થોએ મારે નિમિત્તે આ પૃથ્વી
કાય છ કાયના જીવોની વિરાધના કરી છે "से तेणट्ठेण गोयमा ! एवं वुच्चइ"
હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે "आहाकम्मं णं भुंजमाणे" આધાકર્મ
દોષથી દૂષિત આહારનો ઉપયોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "आउय

संवृतानगारप्रकरणे अष्टाविंशतितमे सूत्रे कृतं तत एव द्रष्टव्यम् । 'से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ' तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति ? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'आहाकम्मं णं भुजमाणे' आधाकर्म खलु भुजानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं अइक्कमइ' आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनः धर्म=चारित्रधर्मं श्रुतधर्मम् अतिक्रामति उल्लंघयति परित्यजतीति भावः, 'आयाए धम्मं अइक्कममाणे' आत्मनो धर्ममतिक्रामन् स्वकीयचारित्रात्मकधर्मं परित्यजन् 'पुढविकाइयं' पृथिवीकायिक 'णावकंखइ' नावकांक्षति नानुकम्पते, 'जाव तसकायं णावकंखइ' यावत् त्रसकायं नावकांक्षति, यावत्पदेन-अप्तेजोवायुवनस्पतिकायानां ग्रहणम् । आधाकर्मिकमाहारादिकं भुञ्जानः

शतक प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में की जा चुका है सो वहां से जान लेना चाहिये । (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ) हे भदन्त ! यह किस कारण से पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार कान्तार में बार २ घूमता रहता है, तो इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(आहाकम्मं ण भुजमाणे आधाकर्मिक आहार आदि का सेवन करता हुआ वह (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं अइक्कमइ) अपने धर्म का उल्लंघन करता है । अर्थात् श्रुत चारित्ररूप जो आत्मा का धर्म है उसका वह परित्याग कर देता है । (आयाए धम्मं अइक्कममाणे) अपने चारित्रात्मक धर्म का उल्लंघन करने वाला-परित्याग कर देने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं) पृथिवीकायिक जीव की (णावकंखइ) अनुकंपा नही करता है । (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की रक्षा नहीं करता है । यहां यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और

પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૨૮માં સૂત્રમાં) કરી છે તે ત્યાથી વાંચી લેવી " से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ " હે ભગવન્! તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શા કારણે પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા સંસાર વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ?

ઉત્તર—आहाकम्मं णं भुजमाणे " આધાકર્મિક આહારાદિનું સેવન કરનાર " समणे निग्गंथे " શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " आयाए धम्मं अइक्कमइ " આત્માના ધર્મનુ ઉલ્લઘન કરે છે, એટલે કે શ્રુતચારિત્રરૂપ જે આત્માનો ધર્મ છે તેનું આવી સ્થિતિમા તે પાલન કરી શકતો નથી " आयाए धम्मं अइक्कममाणे " તથા પોતાના ચારિત્રાત્મક ધર્મનું ઉલ્લંઘન (પરિત્યાગ) કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " पुढविकाइयं " પૃથ્વીકાયિક જીવોની " णावकंखइ " અનુકંપા કરતો નથી-દયા પાળતો નથી. " जाव तसकायं णावकंखइ " તથા ત્રસકાય સુધીના જીવોની પણ તે રક્ષા કરતો નથી. અહીં " यावत् " પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય,

खलु भदन्त ! तत्र प्रासुकम्-अचित्तम्, एषणीयम्=आधाकर्मादिसकलदोषरहितम् 'भुंजमाणे' भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'किं बंधइ' किं बध्नाति 'जाव उवचिणाइ' यावदुपचिनोति? अत्रत्वेन-'किं करोति किं चिनोति' इत्यस्य संग्रहः । प्रासुकैषणीयमाहारादिकं भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः किं कथं बध्नाति किं करोति किं चिनोति किम् उपचिनोति वेति भावः, भगवानाह— 'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे' प्रासुकैषणीयं खलु भुञ्जानः दोषरहिताहारादिकं भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ' आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः

और एषणीय शब्द का अर्थ आधाकर्म आदि समस्त दोषों से रहित-निर्दोष-ऐसे आहार आदि को (भुंजमाणे) अपने उपयोग में लाने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रंथ (किं बंधइ जाव उवचिणाइ) कैसी-कितनी कर्मप्रकृतियों का बंध करता है यावत् वह कैसी कर्मप्रकृतियों का उपचय करता है । यहां यावत् पद से (किं करोति, किं चिनोति) इन दो का संग्रह किया गया है । गौतमस्वामी का प्रश्न ऐसा है कि प्रासुक एषणीय आहारादि का उपभोग करने वाला श्रमण निर्ग्रंथ कितनी कर्मप्रकृतियों को बांधता है, उन्हें कैसी करता है किसका उनमें चय करता है, किसका उनमें उपचय करता है ? इसका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (फासुएसणिज्जं भुंजमाणे) प्रासुक एषणीय आहार आदि का उपयोग करने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रंथ (आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ)

બીજો અર્થ અને એષણીય એટલે આધાકર્મ વગેરે તમામ દોષોથી રહિત નિર્દોષ-એવા આહારનો ' भुंजमाणे ' ઉપયોગ કરનાર " समणे निग्गंथे " શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " किं बंधइ जाव उवचिणाइ " કેવી (કેટલી) કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધે છે ? યાવત્ તે કર્મપ્રકૃતિઓનો ઉપચય કરે છે ? અહીં " યાવત્ " પદથી " किं करोति, किं चिनोति " એ બે પ્રશ્નો ગ્રહણ કરાયા છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપરના પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાસુક એષણીય આહારાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કેટલી કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ કરે છે ? તેમને કેવી રીતે કરે છે ? તેમાંથી કોનો ચય કરે છે ? અને કોનો ઉપચય કરે છે ? તેનો ભગવાન મહાવીરસ્વામી આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે—

' गोयमा ! ' હે ગૌતમ ! ' फासुएसणिज्जं भुंजमाणे " પ્રાસુક એષણીય આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર " समणे निग्गंथे " શ્રમણ નિર્ગ્રંથ, ' आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ " આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્ર

सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ' आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीर्यावदनुपर्यटति अत्र यावत्पदेन-' ह्रस्वकालस्थितीः दीर्घकालस्थितीः प्रकरोति, मन्दानुभावास्तीव्रानुभावाः प्रकरोति, अल्पप्रदेशाग्रा बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति, आयुष्कं च खलु कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति अशातावेदनीयं च खलु कर्म भूयो भूय उपचिनोति, अनादिकं च खलु अनवनताग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारम् ' इत्यस्य संग्रहः ? अनुपर्यटति=परिभ्रमति ।

आधाकर्मविपक्षश्च प्रासुकैषणीयमित्याधाकर्मसूत्रानन्तरं प्रासुकैषणीयसूत्रमाह- ' फासुएसणिज्जं णं भंते ' इत्यादि । फासुएसणिज्जं णं भंते ' प्रासुकैषणीयं

(आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ) आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को दृढतर बंधवाली करके बांधता है। यावत् वह संसारकान्तार-(अटवी) में बार २ जन्म मरण द्वारा परिभ्रमण करता रहता है। यहां पर " यावत् " पद से (ह्रस्वकालस्थितीः दीर्घकालस्थितीः प्रकरोति, मन्दानुभावास्तीव्रानुभावाः प्रकरोति, अल्पप्रदेशाग्रा बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति, आयुष्कं च खलु कर्म स्यात् बध्नाति, स्यात् नो बध्नाति, अशाता वेदनीयं च खलु कर्म भूयो भूय उपचिनोति, अनादिकं च खलु अनवनताग्रं, दीर्घाध्वं, चातुरन्त संसारकान्तारम् इस पाठ का संग्रह किया गया है। (अणुपरियट्टइ) का अर्थ " बार २ परिभ्रमण करता है " ऐसा है। आधाकर्म का विपक्ष प्रासुक एषणीय होता है इसलिये सूत्रकार ने आधाकर्मसूत्र के बाद यह प्रासुक एषणीय सूत्र कहा है-(फासु एसणिज्जं णं भंते !) प्रासुक शब्द का अर्थ अचित्त

वज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ " આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મ પ્રકૃતિયોને દૃઢતર બંધવાળી બનાવે છે, (यावत्) તે સંસારકાતાર (અટવી) મા વારવાર જન્મ-મરણવડે પરિભ્રમણ કરે છે અહીં " यावत् " પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-" તે હ્રસ્વકાળની સ્થિતિવાળી પ્રકૃતિયોને દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, મદ અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તીવ્ર અનુભાગવાળી કરે છે, અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે, તે આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો, તે અશાતા વેદનીયનો વારવાર ઉપચય કરે છે અને અનાદિ, અનન્ત, દીર્ઘ માર્ગ વાળી, ચાર ગતિરૂપ સંસાર અટવીમા વારવાર ભટકયા કરે છે. "अणुपरियट्टइ" એટલે વારવાર પરિભ્રમણ કરે છે. આધા કર્મથી વિપરીત અર્થવાળો શબ્દ પ્રાસુક એષણીય છે તેથી " આધાકર્મ " સૂત્રનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર " પ્રાસુક એષણીય " સૂત્રનું નિરૂપણ કરે છે-" फासु एसणिज्ज णं भंते ! પ્રાસુક

एकभवबन्धनव्यतिरिक्ते सर्वस्मिन् संवृतानगारवदेव बोद्धव्ये संसारव्यतिक्रमनपर्यन्त मिति भावः। 'से केणट्ठेण जाव वीइवयइ' तत्केनार्थेन यावद् व्यतिव्रजति ? संसारकान्तारं समुल्लङ्घयति ? भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'फासुएसणिज्जं' प्रासुकैषणीयम् अचित्तं निर्दोषाहारादिकम् 'भुंजमाणे' भुञ्जान स्तदुपाहारादिकमाहरन् 'समणे णिग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं' आत्मन धर्मम्=चारित्रधर्मम् 'अइक्कमइ' नो अतिक्रामति नोल्लङ्घयति 'आयाए धम्मं अणइक्कममाणे' आत्मनो धर्ममनतिक्रामन् 'पुढविकाइयं अवक्कमति' पृथिवीकायिकमवक्रामति अवक्रामणमपसर्पणमनुकूपन च तथा चापेक्षतेऽनुकूपते सेत्यर्थः, 'जाव तसकायं अवक्कमइ' यावत् त्रसकायमवक्रामति

सब कथन, आयुष्क कर्मबंध के सिवाय संवृत अनगार की तरह से ही जानना चाहिये। यह कथन कहां तक उसकी तरह जानना चाहिये तो इसके लिये सूत्रकारने (वीइवयइ) ऐसा कहा है—जिसका तात्पर्य है कि इसके संबंध का और अवशिष्ट कथन (संसार को पार कर देना है) इस निर्दिष्ट पद तक ही जानना चाहिये। (से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ) हे भदंत आप ऐसा कथन किस आशय से करते हैं कि वह संसाररूप कान्तार को उल्लंघन कर देता है। तो इसका उत्तर—देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि—(गोयमा) हे गौतम ! (फासुएसणिज्जं) अचित्त निर्दोष आहार आदि को (भुंजमाणे) अपने उपयोग में लाने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं) आत्मा के धर्म का—चारित्ररूप धर्म का—(नो अइक्कमइ) उल्लंघन नहीं करता है। आयाए धम्मं अणइक्कममाणे) आत्मा के चारित्ररूप धर्म का उल्लंघन नहीं करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं अवक्कमति) पृथिवीकायिक

'સંસારને પાર કરી જાય છે" ત્યાં સુધીનું તમામ કથન સંવૃત અણગારના કથન પ્રમાણે જ સમજવું 'वीइवयइ" એટલે સંસારને પાર કરી જાય છે

'से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ ?" હે ભદંત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે તે સંસારરૂપી કાંતારને ઓળંગી જાય છે ? તેનો જવાબ આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે ' गोयमा ! હે ગૌતમ ! " फासुएसणिज्जं " કલ્પનીય નિર્દોષ આહાર વગેરેનો ' भुंजमाणे " ઉપયોગ કરનાર " समणे निग्गंथे " શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ " आयाए धम्मं " આત્માના ધર્મનું-ચારિત્રરૂપ ધર્મનું " नो अइक्कमइ" ઉલ્લંઘન કરતો નથી. ' आयाए धम्मं अणइक्कममाणे " આત્માના ધર્મનું-ચારિત્રરૂપ ધર્મનું-ઉલ્લંઘન ન કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ "पुढविकाइयं अवक्कमति " પૃથ્વીકાયની અનુકંપા (દયા) કરે છે " जाव तसकायं अव

अष्टौ हि कर्मप्रकृतयस्तासु आयुःप्रयोजककर्मप्रकृतिं विहाय इतराः सप्त कर्मप्रकृतीः याः ' धणियबंधणबद्धाओ' दृढबन्धनबद्धाः पूर्वमासन् ताः सिढिण बंधणबद्धाओ पकरेइ' शिथिलबन्धनबद्धाः प्रकरोति, पूर्वं याः कर्मप्रकृतयो दृढतर बन्धनबद्धाआसन् ताःशिथिलबन्धनबद्धाः प्रकरोति, 'जहा संवुडेणं ' यथा संवृतः खलु, यथा संवृतोऽनगारः अत्रैव शतके प्रथमोद्देशके एकविंशतितमे सूत्रे संवृतानगार वक्तव्यता प्रोक्ता तथाऽस्यापि वक्तव्यता विज्ञेया। 'नवरं' नवरं वैलक्षण्यं तस्माद् आयुष्कविषयेऽस्तिः —तत्र आयुष्कं कर्म कदाचिद् नो बध्नातीत्यस्ति 'आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ' आयुष्कं च खलु कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति कदाचिदायुष्कं कर्म बध्नाति कदाचिन्नो बध्नाति, यदि बध्नाति तदा शुभं देवाद्यायुष्कं बध्नातीति भाव, ' सेसं तहेव जाव वीइवयइ ' शेषं तथैव यावत् व्यतिव्रजति, शेषम् आयु-

---

आयुकर्म को छोड़कर सातकर्मप्रकृतियों को कि जो उसके पहिले गाढ-बंधन से बंधी थीं अब शिथिलबंधन वाली बना देता है। इस विषय में संवृत अनगार की जैसी वक्तव्यता जो प्रथम शतक के प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में कही गई है वहां से जानना चाहिये। यही बात सूत्रकार ने (जहा संवुडेणं) इस सूत्र द्वारा समझाई है (नवरं) परन्तु आयुष्क के बंध के विषय में उसकी अपेक्षा जो विलक्षणता है यहां वह (आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है। इसमें यह समझाया गया है कि वह कभी आयु का बंध करता भी है और कभी नहीं भी करता है। यदि वह आयु का बंध करता है तो शुभ देवादि आयुष्क का ही बंध करता है। अन्य अशुभ आयु का नहीं। (सेसं तहेव जाव वीइवयइ) बाकी का और

તિર્યો કે જેમને પહેલા તેણે ગાઢ બંધનોથી બાંધી હતી તેમને હવે શિથિલ બંધનવાળી બનાવે છે આ વિષયમા પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના ૨૮ માં સૂત્રમા સંવૃત અણગાર વિષે જે વર્ણન કર્યું છે તે પ્રાસુક એષણીય આહારાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથને લાગુ પડે છે, એ જ વાત સૂત્રકારે " जहा संवुडेण " સૂત્રવડે સમજાવી છે. " नवर " પરંતુ આયુષ્યબંધની અપેક્ષાએ તેનામા જે વિશિષ્ટતા છે તે " आउयं च णं कम्म सिय बंधइ, सिय नो बंधइ " આ સૂત્રપાઠ વડે પ્રકટ કરી છે, તેમાં બતાવ્યું છે કે આયુષ્યકર્મનો બંધ તે કયારેક બાંધે છે અને કયારેક નથી પણ બાંધતો, જો તે આયુષ્યનો બંધ બાંધે તો દેવાદિ શુભ આયુષ્યનો જ બંધ બાંધે છે. અન્ય અશુભ આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી. " सेसं तहेव जाव वीइवयइ " બાકીનુ

निर्ग्रन्थ आहारादि करनेवाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयु कर्म को छोड़कर सात कर्मप्रकृतियों का बंध करता है और प्रासुक निर्दोष आहार करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतियों का बंध नहीं करता है। आधाकर्मिक आहार करता श्रमण निर्ग्रन्थ जिन कर्मप्रकृतियों का बंध करता है वह उनके प्रकृति बंध में, स्थितिबंध में, अनुभागबंध में और प्रदेशबंध में विशेष महत्ता, दृढ़ता और मजबूताई आदि बढ़ने लगते है। और शुद्ध निर्दोष आहारादि का उपयोग करने वाले श्रमण निर्ग्रन्थ के आगे के लिये आयुकर्म को छोड़कर शेष ७ कर्म प्रकृतियों का बंध नहीं होता है। तथा जो कर्मप्रकृतियां पूर्व बद्ध हैं उनके प्रकृतिबंध में अनुभागबन्ध में और प्रदेशबन्ध में हीनता, अल्पता अदृढता आदि आने लगती है। इस तरह से इन दोनों श्रमण निर्ग्रन्थों के विषय में जो चार प्रश्न किये गये हैं उनका उत्तर प्रथम प्रश्न आधाकर्मिक आहार को भोगने वाले की अपेक्षा को इस सूत्र द्वारा इस प्रकार दिया गया जानना चाहिये। (किं बन्धइ) इस प्रश्न का उत्तर यह है कि वह आयुकर्म को छोड़कर ७ कर्म प्रकृतियों का बन्ध करता है। (किं पकरेइ) प्रश्न का उत्तर यह है कि वह अल्पकालस्थितिवाला

સૂત્રનું તાત્પર્ય એ છે કે આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યક સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિનો બંધ બાંધે છે પરન્તુ પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર વગેરેનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધતો નથી. આધાકર્મિક આહારાદિ કરનાર શ્રમણનિર્ગ્રંથ જે કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધ્યો હોય છે તે કર્મપ્રકૃતિઓને તે દીર્ઘ સ્થિતિવાળી તીવ્રતર અનુભાગવાળી અને બહુતર પ્રદેશવાળી બનાવે છે, પરન્તુ પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર આદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પહેલાં જે કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધેલો હોય છે તેમને તે અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી મંદતર અનુભાગવાળી અને અલ્પતર પ્રદેશવાળી બનાવે છે

આ રીતે બે પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના વિષયમાં જે ચાર પ્રશ્નો કર્યા છે તેના ઉત્તરો આપ્યા છે સૂત્રની શરૂઆતમા આધાકર્મિક આહારાદિ ભોગવનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથને અનુલક્ષીને ચાર પ્રશ્નો પૂછ્યા છે, અને તેમના ઉત્તરો આપ્યા છે—" किं बंधइ " આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે મળ્યો છે આયુષ્ય કર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધે છે " किं पकरेइ " આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે મળ્યો છે- અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને

अनुवर्त्तते यावत्पदेन-अप्तेजोवायुवनस्पतीनां ग्रहणं कर्तव्यम्। 'जेसिंपि य णं जीवाणं सरीराइं आहारइ' येषामपि च खलु जीवानां शरीराणि आहरति 'तेवि जीवे अवकंखइ' तानपि जीवानवकांक्षति, तेषु जीवेष्वपि दयाबुद्धिं करोतीत्यर्थः। 'से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ' तत्तेनार्थेन यावत् व्यतिव्रजति, एतेन कारणेनोच्यते हे गौतम! प्रासुकैषणीयमाहारादिकं भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः आयुष्कर्मवर्जिताः सप्त कर्मप्रकृती र्नोबध्नाति न प्रकरोति न चिनोति नवोपचिनोति दृढतरबद्धा अपि कर्मप्रकृतीः शिथिलयति यावत् संसारकान्तारं व्यतिक्रामति उल्लंघयति चेतिभावः॥ सू० ७॥

की अपेक्षा करता है-उनपर अनुकंपा रखता है। (जाव तसकायं अवकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की अनुकंपा रखता है। यहां यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय का ग्रहण किया गया है। (जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहाराइं) अपि च-वह श्रमण निर्ग्रन्थ जिन जीवों के शरीरों का आहार करता है (ते वि जीवे अवकंखइ) उन जीवों पर भी वह दया बुद्धि करता है। इसलिये हे गौतम! (से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) इस आशय से मैंने ऐसा कहा है कि प्रासुक निर्दोष आहारादि को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ आयुष्ककर्म को छोड़कर आने के लिये सातकर्मप्रकृतियों को नहीं बांधता है, तथा जो पहिले बंध चुकी हैं जिनकी लंबेकाल की स्थिति पड़ी है और तीव्र अनुभाग जिनमें पड़ा है, उन्हें अल्पकालस्थितिवाली बनाता है और मन्द अनुभागवाली बनाता है। तथा बहुप्रदेशाग्रवाली प्रकृतियों को वह अल्पप्रदेशाग्रवाली बनाता है। इस तरह वह यावत् संसार अटवी से पार हो जाता है। तात्पर्य इस सूत्र का यह है कि आधाक-

---

कंखइ" यावत् छे त्रसકાય સુધીના જીવોની અનુકંપા રાખે છે. અહીં "यावत्" પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય વાયુકાય અને વનસ્પતિકાયને ગ્રહણ કરવામા આવેલછે. "जेसिं पि य णं जीवाण सरीराइ आहाराइं' तथा-તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જે જીવોનાં શરીરોનો આહાર કરે છે "ते वि जीवे अवकखइ" તે જીવો પણ દયાભાવ રાખે છે હે ગૌતમ! "से तेणट्ठेण जाव वीइवयइ" તે કારણે મે એવું કહ્યું છે કે પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધતો નથી અને જે કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ પહેલા બાંધેલો હોય છે, જેમની દીર્ઘકાલની સ્થિતિ હોય છે, જેમનો તીવ્ર અનુભાગ હોય છે, એવી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી અને મંદ અનુભાગવાળી બનાવે છે અને બહુપ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પપ્રદેશવાળી બનાવે છે આ રીતે તે સંસારકાંતારને ઓળંગી જાય છે. આ

असासय सासए पंडिए पंडियत्त असासय, हंता गोयमा ! अथिरे पलोट्टइ जाव पंडियत्त असासय, सेव भंते ! सेव भंते ! त्ति जाव विहरइ ॥ सू० ८ ॥

छाया—तद् नूनं भदन्त ! अस्थिरं प्रलोटपटि नो स्थिरं प्रलोटपटि, अस्थिरो भज्यते नो स्थिरो भज्यते, शाश्वतो बालक बालकत्वम् अशाश्वतम् शाश्वतः पण्डितः पण्डितत्वमशाश्वतम् ? हन्त गौतम ! अस्थिरं प्रलोटपटि, यावत् पण्डितत्वमशाश्वतम् तदेव भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥ सू० ८ ॥

से पार होना प्रकट किया गया है। सो "उनका यह संसार से पार होना कर्म के अस्थिर होने के कारण इसके नाश-परिवर्तन होने पर ही अवलम्बित है" इस ख्याल से सूत्रकार अस्थिर के विषय में सूत्र कहते हैं-' से णूणं भंते ! अथिरे पलोट्टइ ' इत्यादि।

सूत्रार्थ-(भंते) हे भदन्त ! (अथिरे पलोट्टइ) जो अस्थिर पदार्थ होता है, वह पलटता रहता है (नो थिरे पलोट्टइ) स्थिर पदार्थ नहीं पलटता है। (अथिरे भज्जइ) जो अस्थिर होता है वह टूट जाता है (नो थिरे भज्जइ) स्थिर पदार्थ नहीं टूटता है (सासए बालए बालित्तं-असासयं) बालक शाश्वत है बालकपना अशाश्वत है। (सासए पंडिए पंडित्तं असासयं) पण्डित शाश्वत है, पण्डितपना अशाश्वत है। (हंता गोयमा ! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडियत्तं असासयं) हां गौतम ! अस्थिर पदार्थ पलटता रहता है यावत् पण्डितपना अशाश्वत है। (सेवं भंते !

અવ છે, એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેમનું સંસારને તરી જવાનું કાર્ય કર્મોના અસ્થિર થવાના કારણે જેવું છે કર્મોનો નાશ-પરિવર્તન થવાથી જ સંભવી શકે છે તેનો ખ્યાલ રાખીને સૂત્રકાર અસ્થિરના વિષયમાં સૂત્ર કહે છે

" से णूणं भंते ! अथिरे पलोट्टइ " इत्यादि.

સૂત્રાર્થ—(भंते !) હે ભગવન્ ! (अथिरे पलोट्टइ) જે પદાર્થ અસ્થિર હોય છે તે શું પલટતો (પરિવર્તન પામતો) રહે છે ? (नो थिरे पलोट्टइ) શું સ્થિર પદાર્થ પલટતો નથી ? (अथिरे भज्जइ) જે પદાર્થ અસ્થિર હોય છે તે શું ભાંગી જાય છે ? (नो थिरे भज्जइ) શું સ્થિર પદાર્થ ભાંગતો નથી ? (सासए बालए बालित्तं असासयं) શું બાલક શાશ્વત છે અને બાલકપણું અશાશ્વત છે ? (सासए पंडिए पंडित्तं असासयं) શું પંડિત શાશ્વત છે ? અને પંડિતપણું અશાશ્વત છે ? (हंता गोयमा ! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडियत्तं असासयं) હા, ગૌતમ ! અસ્થિર પદાર્થ પલટતો રહે છે, (यावत्) પંડિત

इदानन्तरसूत्रे संसारव्यतिव्रजनं प्राणानुकम्पावतां श्रमणानामुक्तम् तच्च व्यतिव्रजनं कर्मणोऽस्थिरतया प्रलोटने (परिवर्त्तने) सत्येव संभवति, इत्यतोऽस्थिरे सूत्रमाह—' से णूणं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्–से णूणं भंते ! अथिरे पलोट्टइ नो थिरे पलोट्टइ, अथिरे भज्जइ नो थिरे भज्जइ, सासए बालए बालियत्तं

प्रकृतियों को दीर्घकालस्थितिवाली बना देता है, मन्दानुभाववाली प्रकृतियों को तीव्रानुभाववाली बना देता है और अल्पप्रदेशाग्रवाली प्रकृतियों को बहुप्रदेशाग्रहवाली बना देता है। तथा जो शुद्ध निर्दोश आहार करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ है वह आयु कर्म का बन्ध करता भी है और नहीं भी करता है। तथा बांधी हुई सात कर्म की प्रकृतियों को कि जिन्हें पहिले उसने गाढबन्धन से बाँधा है शिथिलबन्धववाली करने लगता है। दीर्घ–लंबे काल की स्थितिवाली प्रकृतियों को वह ह्रस्वकाल की स्थितिवाली बनाना प्रारंभ कर देता है। तथा तीव्र अनुभागवाली प्रकृतियों को मंद अनुभागवाली और बहुप्रदेशाग्रवाली प्रकृतियों की अल्पप्रदेशाग्रवाली बनाना शुरू कर देता है। इसके सिवाय का और अवशिष्ट कथन संवृत अनगार के प्रकरण में जैसा कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये। तथा आधाकर्मिक आहारादि करने वाले का कथन असंवृत अनगार की तरह जानना चाहिये ॥ सू० ७ ॥

यहां अनन्तरसूत्र में जीवों की अनुकंपा वाले श्रमणजनों का संसार

દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, મદ અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયેાને તીવ્ર અનુભાગવાળી બનાવે છે, અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયેા બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે તથા પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિ ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મનેા બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતેા, તથા પહેલાં તેણે જે કર્મપ્રકૃતિયેાનેા ગાઢ બંધ બાંધ્યેા હતેા તે કર્મપ્રકૃતિયેાને શિથિલ બંધવાળી બનાવે છે, દીર્ઘ કાળસ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિયેાને તે હ્રસ્વની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, તીવ્ર અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયેાને તે મદ અનુભાગવાળી બનાવે છે, અને બહુ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયેાને તે અલ્પ પ્રદેશવાળી બનાવે છે આ સિવાયનું તમામ વક્તવ્ય સંવૃત અણગારના પ્રકરણમા બતાવ્યા પ્રમાણે જ સમજવું, આધાકર્મિક આહાર વગેરે કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથનુ વક્તવ્ય અસંવૃત અણગાર પ્રમાણે સમજવુ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આગળના સૂત્રમા જીવેાની અનુકંપાવાળા શ્રમણ નિર્ગ્રંથેા સંસારને તરી

वर्तनं न भवति यथा शिलादिकम्, इहाप्यात्मविचारे स्थिरो जीवः कर्मक्षये जातेऽपि स्वरूपवस्तस्य जीवस्यावस्थितत्वादेव नासौ जीवः कदाचिदपि प्रक्षोटयति अजीवतया न परिवर्तयते चेतनालक्षणो हि जीवः स कदाचिदपि न परिवर्तते मोक्षावस्थायामपि चेतनात्मकस्वभावस्यानपायात्, तथा 'अस्थिरं भज्जइ' अस्थिरं भज्यते=भज्यते, यथा-तृणादिकमस्थिरस्वभावकं सत् भज्यते, इह आत्मप्रकरणे अस्थिरं कर्म तत् भज्यते=व्यपैति विनाशमुपगच्छतीति 'नो थिरे भज्जइ' नो स्थिरो भज्यते स्थिरमभङ्गुरस्वभावकं लोहशलाकादिकं न भज्यते। इहात्मविचारप्रस्तावे स्थिरो

आदि पदार्थ अपने निज स्वरूप से कभी नहीं बदलते हैं। यहां आत्मा को लेकर विचार चल रहा है। उसमें स्थिर पदार्थ जीव है। क्यों कि कर्मों का क्षय हो जाने पर भी जीव अपने निजस्वरूप से अवस्थित ही रहता है। ऐसा तो होता नहीं है कि जीव अजीवरूप से परिवर्तित हो जावे। मोक्षावस्था में भी उसके चेतनात्मक स्वभाव का अपाय (नाश) नहीं होता है। तथा (अत्थिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार तृणादिक अस्थिर स्वभाव वाले होते हैं इसी कारण वे टूट जाते हैं। इसी तरह यहां आत्मप्रकरण में अस्थिर स्वभाववाले जीवात्मा के साथ लगे हुए कर्म हैं अतः वे भी टूट जाते हैं अर्थात् जीवात्मा से छूट जाते हैं-विनष्ट हो जाते हैं-उससे दूर हो जाते हैं। (नो थिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका अभिप्राय यह है कि जो स्थिर स्वभाववाली वस्तु होती है वह कभी भग्न नहीं होती है-सर्वथा नष्ट नहीं होती है-जैसे लोह शलाका आदि। यहां आत्मा

વર્તન થતુ નથી, જેમકે શિલા વગેરે પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને કદી પણ બદલતા નથી, અહીં આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવ્યો છે તેમાં સ્થિર પદાર્થ જીવ છે કારણ કે કર્મોનો ક્ષય થવા છતા પણ જીવ પોતાના નિજ સ્વરૂપમા જ સ્થિર રહે છે, એવુ કયારે ય પણ બનતુ નથી કે જીવ અજીવરૂપે પરિવર્તન પામતો હોય મોક્ષાવસ્થામા પણ તેના ચેતનારૂપ સ્વભાવનો અપાય (નાશ) થતો નથી તથા "અસ્થિરે ભજ્જઇ" એવુ જે કહ્યુ તેનો આશય એ છે કે અસ્થિર સ્વભાવવાળા તૃણાદિક પદાર્થો જેવી રીતે તૂટી જાય છે, એવી રીતે જીવાત્માની સાથે લાગેલા અસ્થિર સ્વભાવવાળાં કર્મો પણ તૂટી જાય છે-એટલે કે જીવાત્માથી અલગ થઈ જાય છે-નાશ પામી જાય છે "નો થિરે ભજ્જઇ" એટલે કે સ્થિર સ્વભાવવાળી વસ્તુઓ કદી પણ ભાંગતી નથી-સર્વથા નાશ પામતી નથી. જેમકે લોહશલાકા વગેરે સ્થિર સ્વભાવવાળાં પદાર્થોનો કદી પણ સર્વથા નાશ થતો નથી. અહીં આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર

टीका—'से णूणं भंते' तद् नूनं भदन्त! 'अथिरे पलोट्टइ' अस्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरः स्थिरतारहितः यः सर्वदा न तिष्ठति स अस्थिर इति कथ्यते, अस्थिरः लोष्टादिपदार्थः प्रलोटयति परिवर्तते पूर्वावस्थां परित्यज्यावस्थान्तरं प्राप्नोतीत्यर्थः, इहाध्यात्मविचारे अस्थिरं कर्म, तस्य कर्मणः जीवप्रदेशेभ्यः प्रतिसमयं चलनेनास्थिरत्वात् प्रलोटयति = बधोदयनिर्जरणादिपरिणामैः परिवर्तने। 'नो थिरे पलोट्टइ' नो स्थिरः प्रलोटयति, स्थिर पदार्थस्य स्वरूप परि-

---

सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) जैसा आप कहते हैं वह इसी तरह से है हे भदन्त! इसी तरह से है। ऐसा कहकर यावत् वे गौतम अपने उचित स्थान पर आकर बैठ गये।

टीकार्थ—(से णूणं भंते! हे भदन्त! जो (अथिरे) स्थिरता से रहित होता है-अर्थात् जो सर्वदा एकसी स्थिति में नही रहता है वह अस्थिर कहलाता है ऐसा अस्थिर लोष्ट (मिट्टी का ढेला) आदि पदार्थ (पलोट्टइ) बदलता है-पूर्वावस्था का त्याग कर अवस्थान्तर को प्राप्त करता है क्या? यहां आत्मा के विचार में अस्थिर पदार्थ कर्म है। उस कर्म का जीवप्रदेशों से प्रतिसमय जो चलना-विछुडना होता है वही उसकी अस्थिरता है। इसी कारण वह बदलता रहता है ऐसा कहा है तात्पर्य यह है कि वह बंध, उदय निर्जरण आदि परिणामों से अक्रान्त होता रहता है यही उसका बदलना है। (नो थिरे पलोट्टइ) जो पदार्थ स्थिर होता है उसके स्वरूप का परिवर्तन नहीं होता है। जैसे शिला

પણું અશાશ્વત છે. (सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) હે ભગવન્! આપના કહેવા પ્રમાણે જ બધું'ય છે. હે ભગવન્! એ પ્રમાણે જ છે. એવું કહીને (यावत्) ગૌતમસ્વામી પોતાને સ્થાને ગયા

ટીકાર્થ-"से णूणं भंते" હે ભગવન્! જે "अथिरे" અસ્થિર હોય છે એટલે કે જે પદાર્થ, હમેશા એકસરખી સ્થિતિમાં રહેતો નથી તે પદાર્થને અસ્થિર કહે છે એવા લોષ્ટ (માટીનું ઢેકું) વગેરે પદાર્થો "पलोट्टइ" શું બદલાતા પરિવર્તન પામતા રહે છે? પહેલાની અવસ્થાને છોડીને બીજી અવસ્થાને પામતાં રહે છે? અહીં આત્માની અપેક્ષાએ અસ્થિર પદાર્થ કર્મ છે. તે કર્મો પ્રત્યેક સમયે જીવ પ્રદેશોમાંથી જૂદા પડતાં રહે છે એને જ કર્મની અસ્થિરતા કહે છે. એટલા માટે જ કર્મ બદલતું રહે છે એવું કહ્યું છે. તાત્પર્ય એ છે કે કર્મો, બંધ, ઉદય, નિર્જરા વગેરે પરિણામોથી અક્રાન્ત થતું રહે છે, તેને જ કર્મનું પરિવર્તન કહે છે. "नो थिरे पलोट्टइ" સ્થિર પદાર્થના સ્વરૂપમાં પરિ-

वर्तनं न भवति यथा शिलादिकम्, इहात्मविचारे स्थिरो जीवः कर्मक्षये जातेऽपि स्वरूपवस्तस्य जीवस्वभावस्थितत्वादेव नाशो जीव कदाचिदपि प्रक्षोटयति अजीवतया न परिवर्तयते चेतनात्मको हि जीवः स कदाचिदपि न परिवर्तते मोक्षावस्थायामपि चेतनात्मकस्वभावस्यानपायात्, तथा 'अत्थिरं भज्जइ' अस्थिरं भज्यते=त्रुट्यति, यथा-तृणादिकमस्थिरस्वभावकं सद् भज्यते, इह आत्मप्रकरणे अस्थिरं कर्म सद् भज्यते=त्रुट्यति विनाशमुपगच्छतीति 'नो थिरे भज्जइ' नो स्थिरो भज्यते स्थिरस्वभावकं लोष्टशलाकादिकं न भज्यते । इहात्मविचारप्रस्तावे स्थिरो

आदि पदार्थ अपने निज स्वरूप से कभी नहीं पदलते हैं। यहां आत्मा को लेकर विचार चल रहा है। उसमें स्थिर पदार्थ जीव है। क्यों कि कर्मों का क्षय हो जाने पर भी जीव अपने निजस्वरूप से अवस्थित ही रहता है। ऐसा तो होता नहीं है कि जीव अजीवरूप से परिवर्तित हो जावे। मोक्षावस्था में भी उसके चेतनात्मक स्वभाव का अपाय (नाश) नहीं होता है। तथा (अत्थिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार तृणादिक अस्थिर स्वभाव वाले होते हैं इसी कारण वे टूट जाते हैं। इसी तरह यहां आत्मप्रकरण में अस्थिर स्वभाववाले जीवात्मा के साथ लगे हुए कर्म हैं अतः वे भी टूट जाते हैं अर्थात् जीवात्मा से छूट जाते हैं-विनष्ट हो जाते हैं-उससे दूर हो जाते हैं। (नो थिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका अभिप्राय यह है कि जो स्थिर स्वभाववाली वस्तु होती है वह कभी भग्न नहीं होती है-तथा नष्ट नहीं होती है-जैसे लोह शलाका आदि। यहां आत्मा

વર્તન થતુ નથી, જેમકે શિલા વગેરે પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને કદી પણ બદલતા નથી, અહીં આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવ્યો છે તેમાં સ્થિર પદાર્થ જીવ છે કારણ કે કર્મોનો ક્ષય થવા છતાં પણ જીવ પોતાના નિજ સ્વરૂપમા જ સ્થિર રહે છે એવુ કદાચે પણ બનતુ નથી કે જીવ અજીવરૂપે પરિવર્તન પામતો હોય મોક્ષાવસ્થામાં પણ તેના ચેતનારૂપ સ્વભાવનો અપલપ (નાશ) થતો નથી. તથા અત્થિરે ભજ્જઇ " એવુ જે કહ્યું તેનો આશય એ છે કે અસ્થિર સ્વભાવવાળા તૃણાદિક પદાર્થો જેવી રીતે તૂટી જાય છે, એવી રીતે જીવાત્માની સાથે લાગેલા અસ્થિર સ્વભાવવાળાં કર્મો પણ તૂટી જાય છે-એટલે કે જીવાત્માથી અલગ થઈ જાય છે-નાશ પામી જાય છે 'नो थिरे भज्जइ " એટલે કે સ્થિર સ્વભાવવાળી વસ્તુઓ કદી પણ ભાંગતી નથી-નાશ પામતી નથી. જેમકે લોહશલાકા વગેરે સ્થિર સ્વભાવવાળાં પદાર્થો કદી પણ નાશ થતા નથી. અહીં આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર

जीवः स च न भज्यते शाश्वतत्वात् चेतनालक्षणो जीवः कदापि न नश्यतीति भावः। नरामरत्वादिपर्यायत एव विनाशस्य कथं चित्स्याद्वादिभिः स्वीकृतेऽपि द्रव्यरूपेण जीवस्य सर्वथा नित्यत्वमेव, अन्यथा मोक्षार्थं कोऽपि न यतेतेति। अथ शाश्वताशाश्वतविषये सूत्रमाह—'सासए' इत्यादि। 'सासए बालए' शाश्वतो बालकः, बालकः व्यवहारनयेन शिशुर्निश्चयनयतोऽसंयतो जीव स द्रव्यरूपेण

के विचार के प्रस्ताव में स्थिर जीव है और वह शाश्वत होने से कभी भी द्रव्य से नष्ट नहीं होता है। जीव का लक्षण चेतना है। ऐसा त्रिकाल में कोई सा भी समय न आया है, न आवेगा, और न आता है जब कि जीव इस अपने लक्षण से रहित हुआ हो--होगा या है। हां जो कुछ भी इस में परिवर्तन होता रहता है वह पर्याय दृष्टि से होता रहता है। स्याद्वादसिद्धान्त का यह एक अटल नियम है कि द्रव्यार्थिकनय से किसी भी वस्तु में कोई भी जात का परिवर्तन नहीं होता है जो कुछ परिवर्तन होता है-वह सब पर्याय की अपेक्षा से ही होता है। इसी कारण यहां प्रत्येक पदार्थ को परिणामि माना गया है। अपरिणामी नित्य नहीं। इसलिये जीव नर, अमर(देव) आदि पर्यायकी अपेक्षा से विनाशी होने पर भी द्रव्यकी अपेक्षासे वह शाश्वत ही है। जो यह सिद्धान्त न माना जावे तो फिर मोक्षके लिये कौन प्रयत्न करेगा। अर्थात् कोई भी नहीं करेगा। अब सूत्रकार शाश्वत अशाश्वत के विषय में सूत्र कहते हैं-(सासए बालए) बालक शाश्वत है-व्यवहार नय से बालक शब्द का अर्थ शिशु और निश्चयनय से

કરવામાં આવે તો તે (જીવ) શાશ્વત હોવાથી કદી પણ નાશ પામતો નથી જીવનું લક્ષણ ચેતના છે, ત્રણે કાળમા એવો સમય આવ્યો નથી, આવતો નથી અને આવશે પણ નહીં કે જ્યારે જીવ ચેતના લક્ષણથી રહિત હોય. તેમા જે કાઈ પરિવર્તન થતુ રહે છે. તે પર્યાયની દૃષ્ટિએ થતુ રહે છે સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તનો એક અટલ નિયમ છે કે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ કોઇ પણ વસ્તુમા કોઈ પણ પ્રકારનું પરિવર્તન થતુ નથી, જે કાઈ પરિવર્તન થાય છે તે પર્યાયની અપેક્ષાએ જ થાય છે. તે જ કારણે અહી પ્રત્યેક પદાર્થને પરિણામી નિત્ય માનવામા આવેલ છે અપરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ નથી, તેથી નર, દેવ વગેરે પર્યાયોની અપેક્ષાએ જીવ વિનાશી હોવા છતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો તે શાશ્વત જ છે જો આ સિદ્ધાન્તને માનવામાં ન આવે તો મોક્ષને માટે પ્રયત્ન કોણ કરે? કોઇપણ મોક્ષને માટે પ્રયત્ન જ ન કરે, હવે સૂત્રકાર શાશ્વત અને અશાશ્વતના વિષયમા સૂત્રોનુ કથન કરેછે-"सासए बालए" બાલક શાશ્વત છે, વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ બાલક શબ્દનો અર્થ શિશુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ

शाश्वतो नित्य एव, 'बालियत्त असासय' बालकत्वमशाश्वतम् तत्र बालकत्वम् व्यवहारनयतः शिशुत्वम्, निश्चयनयतस्तु असंयतत्वम्, तदशाश्वत पर्यायरूपतया। 'सासए पंडिए' शाश्वत पण्डितः 'पंडियत्त असासय' पण्डितत्वमशाश्वतम्, पण्डितो व्यवहारेण शास्त्रज्ञो जीव निश्चयनयेन तु संयतो जीवः, पण्डितत्वं व्यवहारतः शास्त्रज्ञत्वम्, निश्चयतः संयतत्वं तदशाश्वत पर्यायरूपत्वात्। भगवा नाह—'हंता' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'अथिरे पलोट्टइ' अस्थिरः प्रलोटयति 'जाव पंडियत्त असासय' यावत् पण्डितत्वमशाश्वतम्, यावत्पदेन-नो स्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरो मन्यते नो स्थिरो मन्यते, शाश्वतो बालकः,

---

બાલક શબ્દનો અર્થ અસંયત જીવ થાય છે તે અસંયતરૂપ બાલક જીવ દ્રવ્ય રૂપે શાશ્વત (નિત્ય) જ અને તેમાં રહેલું બાલકપણું-અસંયતપણું નિશ્ચય નયથી અને વ્યવહારનયથી પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે "सासए पंडिए पंडियत्त असासयं" પંડિત શાશ્વત છે અને પંડિતપણું અશાશ્વત છે વ્યવહારનયથી પંડિત શબ્દનો અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞ થાય છે, અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ સંયત જીવને પંડિત કહે છે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પંડિતપણાનો અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞપણું થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ તેનો અર્થ સંયતપણું થાય છે

તે સંયતપણું પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે તે બધા પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે-"हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ जाव पंडियत्तं असासयं" હા, ગૌતમ! અસ્થિર પદાર્થો પરિવર્તન પામતા રહે છે, (यावत्) પંડિતપણું અશાશ્વત છે यावत् " પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ

जीवः स च न भव्यते शाश्वतत्वात् चेतनालक्षणो जीवः कदापि न नश्यतीति भावः। नरामरत्वादिपर्यायत एव विनाशस्य कथं चित्स्याद्वादिभिः स्वीकृतेऽपि द्रव्यरूपेण जीवस्य सर्वथा नित्यत्वमेव, अन्यथा मोक्षार्थं कोऽपि न यतेतेति। अथ शाश्वताशाश्वतविषये सूत्रमाह—'सासए' इत्यादि। 'सासए बालए' शाश्वतो बालकः, बालकः व्यवहारनयेन शिशुर्निश्चयनयतोऽसंयतो जीव स द्रव्यरूपेण

के विचार के प्रस्ताव में स्थिर जीव है और वह शाश्वत होने से कभी भी द्रव्य से नष्ट नहीं होता है। जीव का लक्षण चेतना है। ऐसा त्रिकाल में कोई सा भी समय न आया है. न आवेगा, और न आता है जब कि जीव इस अपने लक्षण से रहित हुआ हो--होगा या है। हां जो कुछ भी इस में परिवर्तन होता रहता है वह पर्याय दृष्टि से होता रहता है। स्याद्वादसिद्धान्त का यह एक अटल नियम है कि द्रव्यार्थिकनय से किसी भी वस्तु में कोई भी जात का परिवर्तन नहीं होता है जो कुछ परिवर्तन होता है-वह सब पर्याय की अपेक्षा से ही होता है। इसी कारण यहां प्रत्येक पदार्थ को परिणामि माना गया है। अपरिणामी नित्य नहीं। इसलिये जीव नर, अमर(देव) आदि पर्यायकी अपेक्षा से विनाशी होने पर भी द्रव्यकी अपेक्षासे वह शाश्वत ही है। जो यह सिद्धान्त न माना जावे तो फिर मोक्षके लिये कौन प्रयत्न करेगा। अर्थात् कोई भी नहीं करेगा। अब सूत्रकार शाश्वत अशाश्वत के विषय में सूत्र कहते हैं-(सासए बालए) बालक शाश्वत है-व्यवहार नय से बालक शब्द का अर्थ शिशु और निश्चयनय से

કરવામાં આવે તો તે (જીવ) શાશ્વત હોવાથી કદી પણ નાશ પામતો નથી જીવનું લક્ષણ ચેતના છે, ત્રણે કાળમા એવો સમય આવ્યો નથી, આવતો નથી અને આવશે પણ નહીં કે જ્યારે જીવ ચેતના લક્ષણથી રહિત હોય. તેમા જે કાઈ પરિવર્તન થતું રહે છે. તે પર્યાયની દૃષ્ટિએ થતુ રહે છે સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તનો એક અટલ નિયમ છે કે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ કોઇ પણ વસ્તુમાં કોઈ પણ પ્રકારનું પરિવર્તન થતુ નથી, જે કાઈ પરિવર્તન થાય છે તે પર્યાયની અપેક્ષાએ જ થાય છે. તે જ કારણે અહી પ્રત્યેક પદાર્થને પરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ છે અપરિણામી નિત્ય માનવામા આવેલ નથી, તેથી નર, દેવ વગેરે પર્યાયોની અપેક્ષાએ જીવ વિનાશી હોવા છતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો તે શાશ્વત જ છે. જો આ સિદ્ધાન્તને માનવામાં ન આવે તો મોક્ષને માટે પ્રયત્ન કોણ કરે? કોઈપણ મોક્ષને માટે પ્રયત્ન જ ન કરે, હવે સૂત્રકાર શાશ્વત અને અશાશ્વતના વિષયમા સૂત્રોનું કથન કરેછે-"सासए बालए" બાલક શાશ્વત છે, વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ બાલક શબ્દનો અર્થ શિશુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ

शाश्वतो नित्य एव, 'बालियत्त असासय' बालकत्वमशाश्वतम् तत्र बालकत्वम् व्यवहारनयतः शिशुत्वम्, निश्चयमपतस्तु असंयतत्वम्, तदशाश्वत पर्यायरूपतया। 'सासए पंडिए' शाश्वत पण्डितः 'पंडियत्त असासय' पण्डितत्वमशाश्वतम्, पण्डितो व्यवहारेण शास्त्रज्ञो जीव निश्चयनयेन तु संयतो जीवः, पण्डितत्वं व्यवहारतः शास्त्रज्ञत्वम्, निश्चयतः संयतत्वं तदशाश्वत पर्यायरूपत्वात्। भगवा नाह—'हंता' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'अथिरे पलोट्टइ' अस्थिरः प्रलोटयति 'जाव पंडियत्त असासय' यावत् पंडितत्वमशाश्वतम्, यावत्पदेन-नो स्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरो भज्यते नो स्थिरो भज्यते, शाश्वतो बालकः,

---

बालक शब्द का अर्थ यहां असंयत जीव होता है। यह असंयतरूप बालक जीव द्रव्यरूप से शाश्वत-नित्य ही है और तद्गत बालकरूप-असं यतत्व निश्चयनय से और व्यवहारनय से बालकत्व शिशुत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है। (सासए पंडिए पंडियत्त असासय) पण्डित शाश्वत है और पण्डितत्व अशाश्वत है। व्यवहारनय से पण्डित शब्द का अर्थ शास्त्र का ज्ञाता जो जीव है वह है और निश्चयनय की अपेक्षा से जो जीव संयत है वह है। व्यवहार नय की अपेक्षा से पण्डितत्व का अर्थ शास्त्रज्ञत्व होता है और निश्चयनय की अपेक्षा से संयतत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है। इस संयत का उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि-(हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडियत्त असासय) हां गौतम! अस्थिर पदार्थ पलटता है, यावत् पण्डितत्व अशाश्वत है। यहां यावत्पद से (नो स्थिरः पलोटयति, अस्थिरो

બાલક શબ્દનો અર્થ અસંયત જીવ થાય છે તે અસંયતરૂપ બાલક જીવ દ્રવ્યરૂપે શાશ્વત (નિત્ય) જ અને તેમાં રહેલું બાલકપણું-અસંયતપણું નિશ્ચયનયથી અને વ્યવહારનયથી પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે 'सासए पंडिए पंडियत्त असासय' પંડિત શાશ્વત છે અને પંડિતપણું અશાશ્વત છે વ્યવહારનયથી પંડિત શબ્દનો અર્થ શાસ્ત્રવેત્તા થાય છે, અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ સંયત જીવને પંડિત કહે છે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પંડિતપણાનો અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞપણું થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ તેનો અર્થ સંયતપણું થાય છે

તે સંયતપણું પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે તે બધા પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે-'हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ जाव पंडियत्त असासय" હા, ગૌતમ! અસ્થિર પદાર્થો પરિવર્તન પામતા રહે છે, (यावत्) પંડિતપણું અશાશ્વત છે "जाव" પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ

बालकत्वमशाश्वतम्। शाश्वतः पण्डितः, इत्यस्य ग्रहणम्। व्याख्यान तु प्रश्नसूत्रवदेव भवता करणीयम्, सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! हे भदन्त! यत् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सर्वथाऽबाधितत्वात्, 'त्ति जाव विहरइ' इति यावद् विहरति, इत्येवंरूपेण कथयित्वा गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ८ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥१-९॥

भज्यते, शाश्वतो बालकः, बालकत्वं अशाश्वतम्, शाश्वतः पण्डितः) इस पाठका संग्रह हुआ है। इन पदों का व्याख्यान तो प्रश्नसूत्रकी तरह ही जानना चाहिये। (सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त ! वह ऐसा ही है अर्थात् सर्वथा सत्य ही है-क्यों कि आप्त वाक्य जो होते हैं, वे सर्वथा अबाधित ही होते हैं। ऐसा कह कर गौतमस्वामी ने श्रमण भगवान महावीर प्रभु को वन्दना की, नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर वे सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर बैठ गये ॥ सू० ८ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका नौवां उद्देशक समाप्त ॥१-९॥

॥ प्रथम शतक में नौवां उद्देशक समाप्त ॥

કરાયેા છે-" સ્થિર પદાર્થો પલટાતા નથી, અસ્થિર પદાર્થો ભાંગી જાય છે, સ્થિર પદાર્થો ભાગતા નથી, બાલક શાશ્વત છે, બાલકપણું અશાશ્વત છે, પંડિત શાશ્વત છે" આ પદોનેા અર્થ પ્રશ્નસૂત્રના અર્થ પ્રમાણે જ સમજવેા.

"सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ" હે ભગવન્! આપ દેવાનુપ્રિયે જે કહ્યું તે સત્ય જ છે, હે ભગવન્! તે વાત તદ્દન સાચી જ છે, કારણ કે આપ્ત વાકયમાં શકાને સ્થાન જ હેાતું નથી. એવુ કહીને ગૌતમસ્વામીએ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામીને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને સયમ અને તપથી પેાતાના આત્માને ભાવિત કરતા તેઓ પેાતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનેા નવમેા ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૯॥

अथ दशमोद्देशक –

दशमोद्देशकस्य संक्षेपतो विचारणीया इमे विषया–अन्यतीर्थिकानां वक्तव्यता, तत्र यत् चलमानं न तत् चलितमित्यादिकथनम्। तथा द्वयो परमाण्वोः परस्परं संमेलनं न भवति, परमाणोरतिसूक्ष्मरूपा द्वयोः परमाण्वोः स्नेहकायस्याभावात्, किन्तु त्रयः परमाणवः चत्वारः पंच वा संमिलिता भवंति, त्र्यादिषु मिलितेषु स्नेहकायस्य संभवात्। ते त्रयः परमाणवो भिद्यमानाः सार्द्धैकरूपेण सार्धैककर्षेणावतिष्ठन्ते, त्रिधा विभागकरणे एकैकस्यावस्थानं भवति। एवं चत्वारो द्विधा चतुर्धा वा भिद्यन्ते। द्विधा विभजने द्वौ द्वौ, चतुर्धा विभागकरणे एकैको

दशम उद्देशक प्रारंभ—

इस दशम उद्देशे में जो विषय वर्णित हुए हैं उनका वर्णन संक्षेप में इस प्रकार से है—

अन्यतीर्थिकजनों की वक्तव्यता। इसमें जो चलमान है वह चलित नहीं होता है इत्यादि कथन दो परमाणुओं का परस्पर में संमेलन नहीं होता है। क्यों कि परमाणु को अतिसूक्ष्म होने के कारण दो परमाणुओं में स्नेहकाय का अभाव रहता है। किन्तु तीन परमाणु, चार परमाणु अथवा पांच परमाणु इनका परस्पर में संमेलन होता है। क्यों कि त्र्यादि परमाणुओं में संमिलित होने पर स्नेहकाय उद्भव हो जाता है। वे तीन परमाणु भिद्यमान होते हुए १।।–१।। भाग में हो जाते हैं। तीन रूप में विभाग करने पर एक एक का अवस्थान रहता है इसी तरह चार पर

દશમો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

દશમા ઉદ્દેશામાં જે વિષયનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેનું દિગ્દર્શન કરવામાં આવે છે—

અન્ય તીર્થિકોનું વક્તવ્ય તેમાં ચલમાન છે તે ચલિત થતું નથી એવું કથન બે પરમાણુઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થતો નથી, કારણ કે પરમાણુઓ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી બે પરમાણુઓમાં સ્નેહકાયનો અભાવ રહે છે પણ ત્રણ ચાર પાંચ વગેરે પરમાણુઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થાય છે કારણ કે ત્રણ ત્યાર વગેરે પરમાણુઓનો જ્યારે સંયોગ થાય છે ત્યારે તેમનામાં સ્નેહકાયનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે તે ત્રણ પરમાણુઓ ભેદાતાં ૧।।–૧।। ભાગમાં પહોંચી જાય છે ત્રણ પરમાણુઓના ત્રણ ભાગ કરવાથી એક એક પરમાણુ રહે છે એ જ

बालकत्वमशाश्वतम्। शाश्वतः पण्डितः, इत्यस्य ग्रहणम्। व्याख्यान तु प्रश्नसूत्रवदेव भवता करणीयम्, सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! हे भदन्त! यत् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सर्वथाऽबाधितत्वात्, 'त्ति जाव विहरइ' इति यावद् विहरति, इत्येवंरूपेण कथयित्वा गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ८ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य नवमोदेशकः समाप्तः ॥१-९॥

भज्यते, शाश्वतो बालकः, बालकत्वं अशाश्वतम्, शाश्वतः पण्डितः) इस पाठका संग्रह हुआ है। इन पदों का व्याख्यान तो प्रश्नसूत्रकी तरह ही जानना चाहिये। (सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त ! वह ऐसा ही है अर्थात् सर्वथा सत्य ही है-क्यों कि आप्त वाक्य जो होते हैं, वे सर्वथा अबाधित ही होते हैं। ऐसा कह कर गौतमस्वामी ने श्रमण भगवान महावीर प्रभु को वन्दना की, नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर बैठ गये ॥ सू० ८ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका नौवां उद्देशक समाप्त ॥१-९॥

॥ प्रथम शतक में नौवां उद्देशक समाप्त ॥

કરાયેા છે-" સ્થિર પદાર્થો પલટાતા નથી, અસ્થિર પદાર્થો ભાંગી જાય છે, સ્થિર પદાર્થો ભાગતા નથી, બાલક શાશ્વત છે, બાલકપણું અશાશ્વત છે, પંડિત શાશ્વત છે" આ પદોનેા અર્થ પ્રશ્નસૂત્રના અર્થ પ્રમાણે જ સમજવેા.

"सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ" હે ભગવન્ ! આપ દેવાનુપ્રિયે જે કહ્યું તે સત્ય જ છે, હે ભગવન્ ! તે વાત તદ્દન સાચી જ છે, કારણ કે આપ્ત વાકયમાં શંકાને સ્થાન જ હેાતું નથી. એવું કહીને ગૌતમસ્વામીએ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામીને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને સંયમ અને તપથી પેાતાના આત્માને ભાવિત કરતા તેએા પેાતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનેા નવમેા ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૯॥

तथादि-चलत् चलितमित्यादि कथनम्। द्वयो परमाण्वोरपि परस्परं संघातो भवति। एकैकस्मिन्नपि स्नेहसद्भावात्, व्यादीनां संघातस्य तैरपि स्वीकृतत्वात्। द्वयोर्द्विधाकरणे एक एकोभवति। त्रयाणां परमाणूनां संघातो भवति, द्विधाकरणे एकत एकः, एकतो द्विप्रदेशिकः स्कन्धः, न तु सार्धैकः सार्धको भवति, विधाकरणे त्रयो भवन्ति। एवं चतुर्णां द्विधाकरणे एकत एकः, एकतश्च त्रिप्रदेशिकः स्कन्धो भवति न तु द्वौ द्वौ। पञ्चपरमाणूनां स्कन्धो न दुःख (कर्म) तया परिणमते। कर्म च अशाश्वत, न तु शाश्वतम्।

मत है। महावीर प्रभु का वक्तव्य। अन्यमत में असत्यता का प्रतिपादन। चलमाण सह चलित इत्यादि कथन। दो परमाणुओं का भी परस्पर में संघात होता है क्यों कि एक परमाणु में भी स्नेह का सद्भाव रहता है। त्र्यणुक आदि के संघात को उन्हों ने भी स्वीकार किया है। दो के दो टुकड़े करने पर एक एक होता है। तीन परमाणुओं का संघात होता है। उसके दो भाग करने पर १॥-१॥ ऐसे दो भाग नहीं होते हैं, किन्तु एक तरफ एक का एक और दूसरा द्विप्रदेशिक स्कन्ध। तीन टुकड़े करने पर तीन होते हैं। इसी तरह चार के दो टुकड़े पर एक का एक और दूसरा तीन प्रदेश वाला स्कन्ध एक दो दो ऐसे दो टुकड़े चार के नहीं होते हैं। पांच परमाणुओं का स्कंध दुःख स्वकर्म रूप से नहीं परिणमता है। कर्म अशाश्वत होता है, शाश्वत नहीं होता है।

વિષયમા મહાવીર પ્રભુનુ વક્તવ્ય. અન્ય મતમા રહેલ અસત્યપણાનુ પ્રતિપાદન એ ચલમાન છે તે ચલિત થઇ ઇત્યાદિ કથન બે પરમાણુઓનો પણ પરસ્પરમા સંયોગ થઇ શકે છે કારણ કે એક એક પરમાણુમા પણ સ્નેહસદ્ભાવનો શદ્ભાવ રહે છે ત્રણ વગેરે અણુઓના સંયોગનો તેમણે પણ સ્વીકાર કર્યો છે સંયોગ પામેલા બે અણુઓના બે ટુકડા કરવાથી એક એક અણુ બને છે સંયોગ પામેલા ત્રણ પરમાણુઓના બે વિભાગ કરવાથી ૧॥-૧॥ ના બે ભાગ થતા નથી પણ એક વિભાગ એક પરમાણુવાળો બને છે પણ તેના ત્રણ ટુકડા કરવાથી એક એક પરમાણુવાળા ત્રણ વિભાગ થાય છે એ જ પ્રમાણે સંયોગ પામેલા ચાર પરમાણુના બે ટુકડા કરવાથી બે બે પ્રદેશવાળા સ્કન્ધો થતા નથી પણ એક સ્કન્ધ એક પ્રદેશવાળો અને બીજો સ્કન્ધ ત્રણ પ્રદેશવાળો થાય છે પાચ પરમાણુઓ સ્કન્ધ દુઃખ-કર્મરૂપે પરિણમતો નથી. કર્મ અશાશ્વત હોય છે, શાશ્વત હોતુ નથી.

भूत्वा चत्वारो भवन्ति । परमाणवो मिलिताः सन्तो दुःखतया परिणता भवंति, दुःखं कर्म तत् शाश्वतमुपचीयतेऽपचीयते च । उच्चारणात् प्रागेव भाषा भाषा न तु भाष्यमाणा भाषा, भाषणात् परतो वा भाषा भाषा, सा भाषा अभाषमाणस्य भाषा भवति न तु भाषमाणस्य । उत्पत्तेः पूर्वं क्रिया दुःखा न तु क्रियमाणा क्रिया दुःखा क्रियासमयव्यतिक्रमे कृता क्रिया दुःखरूपा, सा क्रिया अकुर्वतो दुःखा न तु कुर्वतो दुःखा । अकृत्यं दुःखमस्पृश्यं दुःखम् अक्रियमाणकृत दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वाः वेदनां वेदयन्ति न तु कृत्वा कृत्वा वेदयंतीति परतीर्थिकानां मतम् । सम्प्रति महावीरवक्तव्यम् । अन्यमतस्यासत्यत्वप्रतिपादनं,

---

माणुओं का विभाग करने पर या तो उनके दो दो के दो भाग होते हैं या एक एक का विभाग करने पर चार भाग होते हैं । परमाणु मिलित अवस्था में दुःखरूप से परिणत होते हैं । दुःख जो है वह कर्म है । वह शाश्वत है । उसमें चय और अपचय होते हैं । उच्चारण के पहिले ही भाषा भाषा है । बोली जाती भाषा भाषा नहीं है । अथवा—भाषण करने के बाद भाषा भाषा है । वह भाषा अभाषमाण की भाषा होती है, बोलते हुए की भाषा भाषा नहीं होती है । उत्पत्ति के पहिले क्रिया दुःखरूप है, की जाती क्रिया दुःखरूप नहीं है । क्रियासमय के व्यतिक्रम होने पर की गई क्रिया दुःखरूप है। वह क्रिया नहीं करने वाले को दुःखरूप है- करने वालेको दुःखरूप नहीं है । अकृत्य दुःख है । अस्पृश्य दुःख है । अक्रियमाण, कृत दुःख है । नहीं करके नहीं करके प्राण, भूत, जीव और सत्त्व वेदना भोगते हैं । कर करके वेदना नहीं भोगते हैं ऐसा परतीर्थिक जनों का

પ્રમાણે ચાર પરમાણુઓનો વિભાગ કરવામા આવે તો તેમના બે બેના વિભાગ થાય છે અથવા તો એક એકના ચાર ભાગ થાય છે. પરમાણુ મિલિત અવસ્થામા દુ ખરૂપે પરિણમે છે. દુઃખ જે છે તે કર્મ છે. તે શાશ્વત છે. તેમાં ચય અને અપચય થાય છે

ઉચ્ચારણના પહેલાંની ભાષા જ ભાષા છે બોલાતી ભાષા, ભાષા નથી. અથવા ભાષણ કર્યા પછીની ભાષા, ભાષા છે તે ભાષા અભાષકની ભાષા હોય છે, બોલનારની ભાષા, ભાષા હોતી નથી. ઉત્પત્તિના પહેલા ક્રિયા દુ.ખરૂપ છે, કરાતી ક્રિયા દુઃખરૂપ હોતી નથી ક્રિયાસમયનો વ્યતિક્રમ થતાં કરાયેલી ક્રિયા દુ ખરૂપ છે તે ક્રિયા કરનારને દુ.ખરૂપ છે, નહીં કરનારને દુ ખરૂપ નથી અકૃત્ય દુઃખ છે અસ્પૃશ્ય દુ ખ છે. અક્રિયમાણ, કૃત દુઃખ છે કર્મ નહીં કરવાથી પ્રાણ. ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે. કર્મ કરીને વેદના ભોગવતા નથી એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા છે. તે

अकषायोदयसमत्वात्, सम्यग्मिथ्यादृष्टौ च कषायोदयसमत्वात्, अतो जीव एकसमये द्वे क्रिये कर्तुं न शक्नोतीति समवसातव्यम्। नरके कियान् विरहकालः ? इति पृच्छा। द्वादश मुहूर्ता इत्युत्तरम्। अत्र प्रज्ञापनायाः षष्ठं व्युत्क्रान्तिपदमवलोक्यम्। 'सेवं भंते' इत्यादि गौतमस्यानुमोदनम्। उद्देशकसमाप्तिः, प्रथमशतकसमाप्तिश्चेति॥ १॥

नवमोद्देशकं निरूप्य तदनु दशमोद्देशको निरूप्यते, तत्र नवमोद्देशकस्यान्ते अस्थिरं च कर्म इति वर्णितम्, कर्मादिविषये च परतीर्थिका विरुद्धं प्रतिपद्यन्ते इति तेषां निराकरणाय तथा प्रथमशतकस्यादौ (द्वारे) गाथायां 'चलणाओ' इति दशमद्वारतया पठितस्य तत्त्वविपादनाय च दशमोद्देशकः प्रारभ्यते, तस्येदमादिम सूत्रम्—'अत्थि णं भंते' इत्यादि।

समय में दो क्रिया करने के लिये समर्थ नहीं हो सकता ऐसा ज्ञानियों का मत है। नरक में विरहकाल कितना है ऐसा प्रश्न—उत्तर बारह मुहूर्त का है ऐसा उत्तर। यहां प्रज्ञापना का छठवां व्युत्क्रान्ति पद जानना चाहिये। 'सेवं भंते' इत्यादिरूप से गौतम! का अनुमोदन, उद्देशक की समाप्ति और प्रथम शतक की भी समाप्ति

नववें उद्देशक का निरूपण करके इसके बाद सूत्रकार अब दशम उद्देशक का निरूपण करते हैं—नववें उद्देशक के अन्त में "कर्म अस्थिर होता है" ऐसा वर्णन किया गया है। कर्मादि के विषय में परतीर्थिक जन विरुद्ध ही प्ररूपणा करते हैं, अतः उनके अभिप्राय का निराकरण करने के लिये तथा-प्रथम-शतक की आदि में द्वार गाथा में "चलणाओ" ऐसा जो दशम द्वाररूप से कहा गया है उसके प्रतिपादन के लिये इस दशम उद्देशक का प्रारंभ हुआ है। 'अत्थि णं भंते' इत्यादि

કરવા જોગ ત્યારે જ થાય છે તેથી એક જ સમયે બન્ને ક્રિયા કરવાને સમર્થ હોતો નથી એવો જ્ઞાનીનો મત છે નરકમાં વિરહકાળ કેટલો છે? એ પ્રશ્ન. ઉત્તર—૧૨ મુહૂર્તનો છે અહીં પ્રજ્ઞાપનાનું છઠ્ઠું વ્યુત્ક્રાન્તિપદ જાણવું જોઈએ. "સેવં ભંતે" ઇત્યાદિ પ્રભવરે ગૌતમનું અનુમોદન, ઉદ્દેશાની સમાપ્તિ. અને પહેલા શતકની પણ સમાપ્તિ.

નવમા ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર દશમા ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરે છે નવમા ઉદ્દેશાને અંતે "કર્મ અસ્થિર હોય છે" એવું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે કર્માદિના વિષયમાં પરતીર્થિકો એવી વિરુદ્ધ પ્રરૂપણા કરે છે, તેથી તેમના મતનું ખંડન કરવાને માટે તથા પહેલા શતકની શરૂઆતની દ્વાર ગાથામાં "चलणाओ" એવું જે દશમા દ્વારરૂપે કહેવું છે તેનું પ્રતિપાદન કરવાના અભિપ્રાયથી આ દશમા ઉદ્દેશાની શરૂઆત કરવામાં આવી છે

भाषणात् पूर्वं न भाषा, भाष्यमाणा भाषा भवति, भाषणात् परतोऽपि न भाषा भवति। भाषमाणस्य भाषा भवति न तु अभाषमाणस्य। भाषावत् क्रियापि बोध्या। कृत्यं दुःखं, स्पृश्यं दुःखं, क्रियमाणकृतं दुःखं, कर्म कृत्वा कृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वाः वेदनां वेदयन्ति, न तु अकृत्यम्, अस्पृश्यम् अक्रियमाणकृतं दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वा वेदनां वेदयन्ती त्यतोऽसत्यमन्यतीर्थिकानां मतमिति। पुनरन्यतीर्थिकमतम्--तथाहि--एको जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये-- ऐर्यापथिकी साम्परायिकी च युगपत् करोति तदसत्यम्, तयोः परस्परविरुद्धस्वभावत्वात्। यत ऐर्यापथिकी

भाषण से पहिले भाषा भाषा नहीं होती है। जो बोली जा रही है वही भाषा होती है। भाषण के बाद भी भाषा भाषा नहीं होती है। बोलते हुए की भाषा भाषा होती है। नहीं बोलते हुए की भाषा भाषा नहीं होती है। भाषा की तरह क्रिया भी जाननी चाहिये। कृत्य दुःख है। स्पृश्य दुःख है। क्रियमाण कृत दुःख है। कर्म कर कर के प्राण, भूत, जीव, सत्त्व वेदना भोगते हैं। अकृत्य, अस्पृश्य, अक्रियमाणकृत दुःख नहीं है। कर्म नहीं करके प्राण, भूत, जीव, सत्त्व वेदना भोगते हैं। इसलिये अन्यतीर्थिकों का मत असत्य है। तथा-अन्यतीर्थिकों का ऐसा और भी मत है कि एक जीव एक समय में ईर्यापथिकी और साम्परायिकी ऐसी दो क्रियाएँ एक साथ करता है। सो यह भी असत्य है-क्यों कि ये दोनों क्रियाएँ परस्पर में विरुद्ध स्वभाव वाली हैं-कारण कि ऐर्यापथिकी जो क्रिया होती है वह कषाय के उदय के अभाव में होती है और जो साम्परायिकी क्रिया है वह कषाय के उदय में होती है। इसलिये जीव एक

ભાષણની પહેલાની ભાષા ભાષા હોતી નથી જે બોલવામા આવે છે એજ ભાષા હોય છે ભાષણ પછીની ભાષા પણ ભાષા નથી. બોલનારની ભાષાજ ભાષા કહેવાય છે નહીં બોલનારની ભાષા, ભાષા કહેવાતી નથી ભાષાની જેમ જ ક્રિયા વિષે પણ સમજવુ; કૃત્ય દુ ખ છે સ્પૃશ્ય દુ:ખ છે. ક્રિયમાણ કૃત દુ.ખ છે કર્મ કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ. સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે. અકૃત્ય, અસ્પૃશ્ય, અક્રિયમાણ કૃત દુ.ખ નથી, કર્મ નહીં કરી કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વેદના ભોગવતા નથી. આ કારણે અન્ય તીર્થિકોનો મત અસત્ય છે, તથા-અન્ય તીર્થિકોની બીજી એક એવી માન્યતા છે કે એક જીવ એક જ સમયે ઇર્યાપથિકી સામ્પરાયિકી એ બે ક્રિયાઓ એક સાથે કરે છે તેમની તે માન્યતા પણ અસત્ય છે. કારણ કે તે બે ક્રિયાઓ પરસ્પર વિરોધી સ્વભાવવાળી છે. ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કષાયના ઉદયનો અભાવ હોય ત્યારે જ થાય છે. પરંતુ સામ્પરાયિકી ક્રિયા તો કષાયનો

समय वीइक्कत च ण कडा किरिया दुक्खा, सा-किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा, अकरणओण सा दुक्खा, नोखलु सा करणओ दुक्खा, सेव वत्तव्व सिया। अकिच्च दुक्ख अफुस दुक्ख, अकज्जमाणकड दुक्ख, अकट्ठु अकट्ठु पाणभूय जीवसत्तावेयण वेदेंति, इति वत्तव्व सिया, से कहमेय भंते एव० ॥ सू० १ ॥

छाया-अन्यतीर्थिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति यावदेव मरूपयंति, एवं खलु चलमानमचलितम् यावत् निर्जीर्णमानिर्जीर्णम्, द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकत्वं न संहन्येते, कस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकत्वं न संहन्येते, द्वयो परमाणुपुद्गलयोनास्ति स्नेहकायः तस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकत्वं न संहन्यते, त्रयः परमाणुपुद्गला एकत्व संहन्यन्ते, कस्मात् त्रय परमाणुपुद्गला एकत्व संहन्यन्ते,

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (अन्न उत्थिया णं) अन्यतीर्थिकजन (एव आइक्खंति) इस प्रकार से कहते हैं (जाव एव परूवेंति) यावत् इस प्रकार से प्ररूपित करते हैं कि (चलमाणे अचलिए) जो चल रहा है वह चलित नहीं कहाता है (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे) यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है वह निर्जीर्ण नहीं कहाता। (दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति) दो परमाणु पुद्गल एक स्कंध रूप में नहीं परिणमते हैं। (दोण्ह परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए (दो परमाणु पुद्गलों के स्नेहकाय नहीं होताहै। (तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) इसलिये दो परमाणुपुद्गल एक स्कंधरूप में नहीं परिणमते हैं। (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) तीन पर

अन्न वत्थिया णं भंते ! एव आइक्खंति " इत्यादि

सूत्रार्थ—(भंते !) हे भगवन् ! (अन्नउत्थिया णं) अन्य तीर्थिको (एव आइक्खंति) अम प्रमाणे કहे छे (जाव एव परूवेंति) (यावत्) આ प्रमाणे प्ररूपणा કरे छे કे (चलमाणे अचलिए) જે याली रहुं छे तेने चलित (यालीं ગયुं) કही शકाय नहीं (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे) (यावत्) જेनी निर्जरा થઈ रही छे तेने निर्जीर्ण કरी शકाय नहीं (दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) બे परमाणु पुद्गलो એક स्કंધरूपे परिणमता नथी, (दोण्ह परमाणु पोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए) બे परमाणु पुद्गलोमां स्नेहકायनो अभाव होय छे (तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) तेथी બे परमाणु पुद्गलो એક स्કंधरूपे परिणमता नथी (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति)

मूलम्–अन्न उत्थिया णं भंते ! एवं आइक्खंति जाव एवं परूवेंति, एवं खलु चलमाणे अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिन्ने दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति, तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणु पोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं जाव चत्तारि० पंच परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति, दुक्खे वि य णं से सासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य। पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमय विइक्कंतं च णं भासिया भासा, जा सा पुव्वं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासा समय विइक्कंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा, अभासओ णं सा भासा, नो खलु सा भासओ भासा। पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा, पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणा अदुक्खा, किरिया

संहन्यते संहत्य दुःखतया क्रियते, दुःखपदि च खलु सदा सञ्चितं पचीयते बाऽपचीयते च। पूर्वं भाषा भाषा, भाष्यमाणा भाषा अभाषा, भाषा समयव्यतिक्रान्ता च खलु भाषिता भाषा, या सा पूर्वं भाषा भाषा, भाष्यमाणा भाषा अभाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्ता च खलु भाषिता भाषा, सा किं भाषमाणस्य भाषा, अभाषमाणस्य? अभाषमाणस्य खलु सा भाषा नो खलु सा भाष

इसी तरह से यावत् चार परमाणु पुद्गलों के विषय में जानना चाहिये। (पंच परमाणुपोग्गला एगओ साहण्णंति) पांच परमाणु पुद्गल स्कन्ध रूप से परिणम जाते हैं। (साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जति) और स्कन्धरूप में परिणम करके वे दुःखरूप-कर्मरूप हो जाते हैं। (दुक्खे णं भंते सासए समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) दुःखरूप वह कर्म सर्वदा शाश्वत रहता है। और अच्छी तरह से वह उपचय और अपचय को प्राप्त करता रहता है। (पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा) बोलने के पहिले भाषा भाषा है। बोलते समय भाषा अभाषा है। (भासासमयवितिक्कंतं च णं भासिया भासा) भाषा के समय को उल्लंघन करने वाली बोली गई ऐसी भाषा भाषा है। (जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमयवितिक्कंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ भासा अभासओ भासा) यदि वह बोलने के पहिले की भाषा भाषा है, बोलते समय की भाषा अभाषा है, और बोलने के समय को उल्लंघन करने वाली ऐसी बोली गई भाषा

(आयत्) ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પણ સમજવું (पंच परमाणुपोग्गला एगओ साहण्णंति) પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમે છે (साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जति) અને સ્કંધરૂપે પરિણમીને તેઓ દુઃખરૂપ-કર્મરૂપ બને છે (दुक्खे णं भंते सासए समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) દુઃખરૂપ તે કર્મ સદા શાશ્વત રહે છે, અને તે સારી રીતે ઉપચય અને અપચય પામ્યા કરે છે (पुव्विं भासा भासा भासिज्जमाणी भासा अभासा) બોલ્યા પહેલાં ભાષા; ભાષા છે બોલતી વખતે ભાષા અભાષા છે (भासासमयवितिक्कंतं च णं भासिया भासा) ભાષાના સમયનું ઉલ્લંઘન કરનારી બોલવામાં આવેલી ભાષા; ભાષા છે (जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमयवितिक्कंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ भासा अभासओ भासा) જે બોલ્યા પહેલા ભાષા, ભાષા હોય, બોલતી વખતની ભાષા અભાષા હોય અને બોલવાના સમયનું ઉલ્લંઘન કરનારી એવી

त्रयाणां परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, ते भिद्यमाना द्विधा अपि त्रिधा अपि क्रियते, द्विधा क्रियमाणा एकतो द्व्यर्धः परमाणुपुद्गलो भवति, एकतोपि द्व्यर्धः परमाणुपुद्गलो भवति, त्रिधा क्रियमाणाः त्रयः परमाणुपुद्गला भवंति, एवं चत्वारः, पञ्च परमाणुपुद्गलाः एकतः

माणु पुद्गल एक स्कन्धरूप में परिणमते हैं। (कम्हा) किस कारण से (तिण्णिपरमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) तीन परमाणु पुद्गल एक स्कन्ध में परिणमते हैं (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) तो इसका उत्तर यह है कि उन तीन परमाणु पुद्गलों में स्नेहकाय होता है। (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) इसलिये तीन परमाणु पुद्गल स्कन्ध रूप में परिणम जाते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति) यदि इन तीन परमाणुओं के भाग किये जावे तो उनके दो भाग भी हो सकते हैं और तीन भाग भी हो सकते हैं। (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ) जब इनके दो भाग किये जावें तो वे देढ १॥ -१॥ देढ के दो होते हैं-अर्थात् १॥ परमाणु का एक भाग और १॥ परमाणु का दूसरा भाग। (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) यदि उन परमाणु पुद्गलों के जो तीन भाग किये जावें तो तीन परमाणु पुद्गल अलग २ होकर तीन भाग बन जावेंगे। (एवं जाव चत्तारि०)

ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમે છે (कम्हा) કયા કારણથી (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધ રૂપે પરિણમે છે? (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોમા સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોવાથી (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો સ્કંધરૂપે પરિણમે છે. (ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति) જો તે સ્કંધના વિભાગ કરવામાં આવે તો તેના બે વિભાગ પણ થઇ શકે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ થઇ શકે છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ) જ્યારે તેના બે ભાગ કરવામા આવે છે ત્યારે ત્યારે १॥-१॥ ના બે ભાગ થાય છે. એટલે કે १॥ પરમાણુનો એક ભાગ અને १॥ પરમાણુનો બીજો ભાગ થાય છે. (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणु पोग्गला भवंति) જો તેના ત્રણ ભાગ કરવામા આવે તો ત્રણે પરમાણુ પુદ્ગલો જુદા પડીને એક એક પરમાણુનો પ્રત્યેક ભાગ બને છે, (एवं जाव चत्तारि०) એજ પ્રમાણે

तदेव वक्तव्यं स्यात् । अकृत्यं दुःखम्, अकृत्यं दुःखम्, अक्रियमाणकृतं दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वा वेदनां वेदयन्ति इति वक्तव्यं स्यात्, तत्कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? ॥ सू० १ ॥

टीका-'अन्न उत्थिया णं भंते' अन्यपूथिका खलु भदन्त ! 'एवमाइक्खंति' एवमाख्यान्ति-एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण कथयन्ति, 'जाव एवं परूवेंति' यावत् एवं प्ररूपयन्ति यावत्पदेन-'भासंति पन्नवेंति' इत्यस्य ग्रहणम्, किं कथयन्ति तदाह-'एवं खलु चलमाणे अचलिए' एवं खलु चलद् अचलितम्, 'जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे' यावत्-निर्जीर्यमाणम् निर्जीर्णम्, 'चलमाणे अचलिए

रूप से दुःख-दुःखहेतु है। (अकिच्चं दुक्खं अफुसं दुक्खं, अकज्जमाणकडं दुक्खं, अकट्टु अकट्टु पाणभूयजीवसत्ता वेयणं वेदेंति) अकृत्य दुःख है। अस्पृष्ट दुःख है। अक्रियमाण कृत दुःख है। उसको नहीं करके, नहीं करके प्राण, भूत, जीव और सत्त्व वेदना को भोगते हैं, ऐसा वक्तव्य है। (से कहमेयं भंते !) सो हे भदन्त ! यह किस तरह से है ?

भावार्थ—(अन्न उत्थिया) अन्य यूथिक अन्यमत वाले (भंते) हे भदन्त ! (एवमाइक्खंति) इस प्रकार से कहते हैं। यहां जो यावत् शब्द आया है उससे (भासंति पन्नवेंति) इन दो का ग्रहण हुआ है। क्या कहते हैं सो सूत्रकार कहते हैं-(एवं खलु चलमाणे अचलिए) जो चल रहा है वह अचलित है (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे) यावत् जो निर्जीर्यमाण हो रहा है वह अनिर्जीर्ण है।

आपणे दुःखहेतु नथी एवं अज्ञातपणे दुःखहेतु छे (अकिच्चं दुक्खं, अफुसं दुक्खं अकज्जमाणकडं दुक्खं अकट्टु अकट्टु पाणभूयजीवसत्ता वेयणं वेदेंति) अकृत्य दुःख छे। अस्पृष्ट दुःख छे। अक्रियमाण कृत दुःख छे, तेथी करी नहीं करीने भूत प्राण भने सत्व जीवो वेदनाने छे एवुं अन्य तीर्थिकोनुं कथन छे (से कहमेयं भंते !) तो हे भदन्त ! ते केवी रीते समजवुं तेमज तमारुं ते विषयमां शुं कथन छे ?

टीका— अन्यतीर्थिको अन्य अन्यवादीओ "भंते" हे भदन्त ! इत्यादिकथनथी आ प्रमाणे कहे छे अहीं ४ शब्द पण छे तथी आ पण समजवुं जोईए अन्यतीर्थिको आम कहे छे के भगवन् चलमान अचलित छे (अनिर्जीर्ण छे) जेम जेम चलमान अचलित छे तेम तेम यावत् निर्जीर्यमाण अनिर्जीर्ण छे (अनिर्जीर्ण छे) आम ते अन्यतीर्थिको कहे छे के

माणस्य भासा। पूर्वं क्रिया दुःखा, क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियासमयव्यतिक्रान्ता च खलु कृता क्रिया दुःखा। या सा पूर्वं क्रिया दुःखा, क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियासमयव्यतिक्रान्ता च खलु कृता क्रिया दुःखा, सा किं करणतो दुःखा अकरणतो दुःखा, अकरणतः खलु सा दुःखा, नो खलु सा करणतो दुःखा,

---

भाषाहै तो वह भाषा किस की है क्या बोलते हुए की वह भाषा है? या नहीं बोलते हुए की वह भाषाहै? (अभासओ णं सा भासा, नो खलु सा भासओभासा) अभाषमान नहीं बोलते हुएकी वह भाषा है बोलते हुएकी वह भाषा नहीं है।(पुव्वि किरिया दुक्खा,कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) पहिले क्रिया दुःख है-दुःख हेतु है। की जाती क्रिया दुःख-दुःख हेतु-नहीं है। (किरिया समयवइक्कंत णं कडा किरिया दुक्खा) तथा पहिले की गई क्रिया दुःख-दुःखहेतु है। (पुव्वि किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा किरियासमयवीइक्कंत च णं कडा किरिया दुक्खा सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) पहिले क्रिया दुःख है, की जाती क्रिया दुःख नहीं है। और की गई क्रिया दुःख है तो वह क्रिया करण से दुःख है कि नहीं करण से दुःख है (नो खलु सा करणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया) वह करण से दुःख नहीं है ऐसा कहना चाहिये। अर्थात्-अक-

---

બોલાયેલી ભાષા; ભાષા હોય તો તે ભાષા કોની છે-શું બોલતાની તે ભાષા છે કે નહીં બોલતાની તે ભાષા છે? (अभासओ णं सा भासा, नो खलु सा भासओ भासा) અભાષમાનની-નહીં બોલનારની-તે ભાષા છે, પરંતુ ભાષમાનની -બોલતાની તે ભાષા નથી (पुव्वि किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) કર્યા પહેલાં ક્રિયા દુ:ખ-દુ:ખહેતુ છે, જે ક્રિયા કરવામા આવી રહી હોય છે તે દુ:ખ-દુ:ખહેતુ નથી. (किरिया समयवइक्कंत ण कडा किरिया दुक्खा) તથા પહેલાં કરાયેલી ક્રિયા દુ:ખ-દુ:ખહેતુ છે (पुव्वि किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरिया समयवीइक्कंत च णं कडा किरिया दुक्खा सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) કર્યા પહેલાંની ક્રિયા દુ:ખહેતુ હોય, કરાતી ક્રિયા દુ:ખહેતુ ન હોય અને કરાયેલી ક્રિયા દુ:ખહેતુ હોય, તો તે ક્રિયા કરણકાલમાં કરનાર વ્યક્તિના દુ:ખની હેતુભૂત હોય છે કે નહીં કરનારના દુ:ખની હેતુભૂત હોય છે? (नो खलु सा करणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया) તે કરનારને દુ:ખની હેતુભૂત થતી નથી-પણ અક્રિયમાણ હોય ત્યારે કરવાને સમયે ન કરાતી ક્રિયા નહીં કરનારને દુ:ખની હેતુભૂત થાય છે. (તે

४, छिज्जमाणे अच्छिण्णे ५, भिज्जमाणे अभिण्णे ६, दज्झमाणे अदड्ढे ७, निज्जरिज्जमाणे अमडे ८, एवं खलु उदीरेमाणमनुदीरियम् १, वेदेमाणमवेदियम् २, पहीयमाणमपहीणम् ३, छिद्यमानमच्छिन्नम् ४, भिद्यमानमभिन्नम् ५, दह्यमानमदग्धम् ६, म्रियमाणममृतम् ७ " इति । एतत् सर्वेषु अन्यतीर्थिकाः वर्तमानसमये भूतकालिककार्यस्यासंभवात् वर्तमानभूतत्वपोरेकसमयतया निर्देशं न मन्यन्ते, यत् निर्जीर्यमाणं कर्म अनिर्जीर्णमिति ते मन्यन्ते, वर्तमानसमये भूतकालिककार्यस्याकरणात्, वर्तमानत्वभूतत्वपोरेकत्वेन व्यपदेशस्यायुक्तत्वादिति, निर्जीर्यमाणमनिर्जीर्णमिति कथयन्ति । पुनश्च कथयन्ति-' दो परमाणु पोग्गला ' द्वौ पर-

---

पहिज्जमाणे अपहीणे४, छिज्जमाणे अच्छिण्णे५, भिज्जमाणे अभिण्णे६, डज्झमाणे अदड्ढे ७, निज्जरिज्जमाणे अमडे ८,) इस पाठ का संग्रह किया गया है । इसका तात्पर्य यह है कि अन्यतीर्थिक जन जैसा चलत् कर्म को चलित नहीं मानते हैं, उसी प्रकार से वे उदीर्यमाण कर्म को उदीर्ण वेद्यमान कर्म को वेदित, प्रहीयमाण कर्म को प्रहीण, छिद्यमान कर्म को छिन्न, भिद्यमान कर्म को भिन्न दह्यमान कर्म को दग्ध और म्रियमाण को मृत, निर्जीर्यमाण कर्म को निर्जीर्ण नहीं मानते हैं । क्यों कि इन सब में वर्तमान काल और भूतकाल का निर्देश हुआ है । सो वर्तमान समय में भूतकालिक कार्य की असंभवता के कारण वर्तमान काल और भूतकाल इन दोनों का एक समयावच्छेदेन निर्देश होना असंगत है । अतः वे ऐसा निर्देश नहीं मानते हैं । वे तो (चलमाणे अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे) ऐसा ही मानते हैं ।

पहिज्जमाणे अपहीणे ४ छिज्जमाणे अच्छिण्णे ५ भिज्जमाणे अभिण्णे ६ दज्झमाणे अदड्ढे ७ निज्जरिज्जमाणे अमडे ८" આ પાઠનો સંગ્રહ કરાયો છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે અન્યતીર્થિકો જેમ ચલિત કર્મને અચલિત માનતા નથી, એ જ પ્રમાણે ઉદીર્યમાણ કર્મને ઉદીર્ણ માનતા નથી, વેદ્યમાન કર્મને વેદિત માનતા નથી પ્રહીયમાણ કર્મને પ્રહીણ માનતા નથી, છિદ્યમાન કર્મને છિન્ન માનતા નથી ભિદ્યમાન કર્મને ભિન્ન માનતા નથી, દહ્યમાન કર્મને દગ્ધ માનતા નથી ત્રિયમાણ કર્મને મૃત માનતા નથી અને નિર્જીર્યમાણ કર્મને નિર્જીર્ણ માનતા નથી, કારણ કે એ બધામાં વર્તમાન અને ભૂતકાળનો નિર્દેશ થયો છે વર્તમાન સમયમાં ભૂતકાલિક કાર્યની અસંભવતાને કારણે વર્તમાનકાળ અને ભૂતકાળ એ બન્નેનો એક સમયાવચ્છેદન નિર્દેશ થયો અસંગત હોય છે, તેથી તેઓ એવા નિર્દેશને માનતા નથી. તેઓ તો " चलमाणे अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे " એવું જ માને છે તથા

त्ति ' चलद् अचलितम् , चलत् कर्म चलितमिति न संभवति, चलता कर्मणा चलितकार्यस्यानिष्पादनात्, तथा चलदिति वर्तमाननिर्देशः चलितमिति भूतनिर्देशः, शतृप्रत्ययक्तप्रत्ययोर्वर्तमानभूतकालबोधकत्वात्, तथा च वर्तमानस्य भूततया व्यवहारो न संभवति, अतश्चलत्कर्म चलितमिति न मन्यन्ते परतीर्थिकाः १ 'जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे' यावत् निर्जीर्यमाणमनिर्जीर्णम्। अत्र यावत्पदेन "उदीरिज्जमाणे अणुदीरिए २, वेइज्जमाणेअवेइए ३, पहिज्जमाणे अपहीणे

तात्पर्य इस कथन का इस प्रकार से है-कि जो क अभी आत्मा से चल रहा है चल चुका नहीं है उसको चल चुका मानना यह बात संभवित नहीं होती है। क्यों कि वर्तमान में चलता हुआ कर्म चल चुके कर्म के कार्य को निष्पादन करने में असमर्थ माना गया है। तथा (कर्म आत्मा से) (चलत्) चल रहा है यह निर्देश वर्तमान काल संबंधी है। और (चलितम्) कर्म आत्मा से चल चुका यह निर्देश भूतकाल संबंधी है। (चलत्) में चल् धातु से वर्तमान काल को लेकर (शतृ) प्रत्यय हुआ है। और (चलितम्) में भूतकाल को लेकर (क्त) प्रत्यय हुआ है। और इस तरह (शतृ) और (क्त) ये दो प्रत्यय क्रमशः वर्तमान और भूतकाल के जब निर्देशक हैं-बोधक हैं तब वर्तमान का भूतकाल रूप से व्यवहार कैसे संभवित हो सकता है। अर्थात् नहीं हो सकता। इसलिये अन्यतीर्थिकजन (चलत् कर्म चलितम्) ऐसा नहीं मानते हैं। (जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे) यावत् निर्जीर्यमाणं अनिर्जीर्णम्) यहां यावत् पद से (उदीरिज्जमाणे अनुदीरिए२, वेइज्जमाणे अवेइए३,

જે કર્મ વર્તમાનકાળે આત્મામાથી ચાલી રહ્યુ છે તેને ચાલી ચૂકયુ કહી શકાય નહીં, કારણ કે વર્તમાનમા ચાલી રહેલા કર્મને ચાલી ચૂકેલા કર્મના કાર્યનું નિષ્પાદન કરવાને અસમર્થ માનવામાં આવે છે, તથા "चलत्" ચાલી રહ્યુ છે" વર્તમાનકાળનો નિર્દેશ કરે છે. અને "चलितम्" "ચાલી ચૂકયુ છે" તેની મારફત ભૂતકાળનો નિર્દેશ થાય છે "चलत्" માં "चल" ધાતુને વર્તમાનકાળનો "शतृ" પ્રત્યય લાગ્યો છે. અને "चलितम्" મા ભૂતકાળનો "क्त" પ્રત્યય લાગ્યો છે. આ રીતે "शतृ" અને "क्त" પ્રત્યયો અનુક્રમે વર્તમાન અને ભૂતકાળના નિર્દેશક હોવાથી વર્તમાનનો ભૂતકાળરૂપે વ્યવહાર સંભવી શકે જ નહી તેથી અન્ય તીર્થિકો "चलत् कर्म चलितम्" એવું માનતા નથી "जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे" (यावत्) જેની નિર્જરા થઇ રહી છે તે અનિર્જીર્ણ છે-તેની નિર્જરા થઇ ચૂકી એવું કહી શકાય નહીં અહીં "यावत्" પદથી "उदीरिज्जमाणे अनुदीरिए २, वेइज्जमाणे अवेइए ३,

साहणति' तस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकत्वं न सदन्येते, यस्मात् द्वयोः परमाण्वोः स्नेहकायो नास्ति तस्मात् कारणात् द्वयो परमाण्वोः परस्परं समेलनं न भवति, तथा-' तिण्णि परमाणुपोग्गला ' अपि परमाणुपुद्गलाः ' एगत्तओ साहणंति ' एकत्वतः सदन्यते ' कम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगत्तओ साहणंति ' कस्मात् अयः परमाणुपुद्गलाः एकत्वं सदन्यते ? ' तिण्हं परमाणु पोग्गलाणं ' त्रयाणां परमाणुपुद्गलानाम् ' अत्थि सिणेहकाए ' अस्ति स्नेहकायः-स्नेहपर्यायराशिः, 'तम्हा

परमाणुपोग्गला एगत्तओ न साहणंति) બે પરમાણુ પુદ્ગલ આપસ માં મિલકર એક સ્કન્ધરૂપપર્યાય કો ઉત્પન્ન નહીં કર સકતે હૈં । (સ્નિગ્ધ-રૂક્ષત્વાદ્ બન્ધઃ) ઐસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈ । સ્નિગ્ધ સ્નિગ્ધ કા, સ્નિગ્ધ રૂક્ષ કા ઔર રૂક્ષ રૂક્ષ કા આપસ મેં બન્ધ હો જાતા હૈ । અતઃ બન્ધ હોને કે લિયે સ્નિગ્ધ રૂક્ષ ગુણ સાપેક્ષ હોતા હૈ । યહ દો પરમાણુ સૂક્ષ્મ હૈં-અતઃ ઉનમેં સ્નેહ-ચિકાશ નહીં રહતા હૈ । ઇસ કારણ ઉન કા પરસ્પર સમેલન નહીં હોતા હૈ । તથા-(તિણ્હિ પરમાણુપોગ્ગલા એગત્તઓ સાહણંતિ) તીન પરમાણુ પુદ્ગલ આપસ મેં મિલકર એક ત્રિપ્રદેશિક રૂપ સ્કન્ધ પર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતે હૈં । ક્યોં કિ જબ યે આપસ મેં મિલતે હૈં તબ ઇનમેં સ્થૂલતા આ જાતી હૈ । ઇસકા કારણ ઉનમેં સ્નેહકાય આ જાને સે ઉનકા પરસ્પર મેં સંમેલન હો જાતા હૈ । યહી બાત સૂત્રકાર ને (કમ્હા તિણ્હિ પરમાણુ પોગ્ગલા એગત્તઓ સાહણંતિ) ઇસ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રશ્ન રૂપ સે ઉત્થાપિત કર (અત્થિ સિણેહકાએ તમ્હા તિણ્હિ પરમાણુપોગ્ગલા

પર્યાય થઈ શકતી નથી તે કારણે "दो परमाणु पोग्गला एगत्तओ न साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર મળી જઈને એક સ્કન્ધરૂપ પર્યાયને ઉત્પન્ન કરી શકતાં નથી. "स्निग्धरूक्षत्वाद् बन्धः" એવું સિદ્ધાન્તનું વચન છે સ્નિગ્ધ સાથે સ્નિગ્ધનો, સ્નિગ્ધ રૂક્ષનો અને રૂક્ષ રૂક્ષનો પરસ્પરમાં બંધ થઈ જાય છે તેથી બંધ થવાને માટે સ્નિગ્ધ રૂક્ષ ગુણ સાપેક્ષ હોય છે, અહીં બે પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોય છે, તેથી તેમનામાં સ્નેહ-ચિકાશ રહેતી નથી. તે કારણે તેમનો પરસ્પર માં સંયોગ થતો નથી. તથા "तिण्हि परमाणुपोग्गला एगत्तओ साहणंति" ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલો પરસ્પરમાં મળીને એક ત્રિપ્રદેશિક સ્કન્ધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે, કારણ કે જ્યારે તેઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થાય છે ત્યારે તેમનામાં સ્થૂલતા આવી જાય છે, તે કારણે તેમનામાં સ્નેહકાય આવી જવાથી તેમનો પરસ્પરમાં સંયોગ થઈ જાય છે એજ વાત સૂત્રકારે "कम्हा तिण्हि परमाणु पोग्गला एगत्तओ साहणंति" આ સૂત્રપાઠ વડે પ્રશ્નરૂપે રજુ કરીને "अत्थि

माणुपुद्गलौ 'एगयओ न साहणंति' एकतो न संहन्येते, एकत एकत्वेनैकस्कंधस्वरूपेण न संहन्येते न संहतौ संमिलितौ स्याताम्, द्वयोः परमाण्वोः परस्परं संमेलनं कुतो न भवतीति कथयति-'कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति' कस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतो न संहन्येते, एकस्कन्धतया न परिणमेते। परस्परासंमेलने कारणमाह-'दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं' द्वयोः परमाणुपुद्गलयोः 'नत्थि सिणेहकाये' नास्ति स्नेहकायः' द्वयोः परमाण्वोः सूक्ष्मत्वात्तत्र स्नेहकाय-स्नेहपर्यायराशिर्नास्ति, 'तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न

तथा-और भी इनकी क्या२ मान्यताएँ हैं सो सूत्रकार इन्हें (दो परमाणु पोग्गला) इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट कर रहे हैं-(दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) दो परमाणु पुद्गल एकस्कन्धरूप में नहीं परिणमते हैं। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि दो परमाणु मिलकर द्वयणुक स्कंध को नहीं बना सकते हैं। क्यों कि वह अत्यन्त सूक्ष्म होते हे। इसलिये उनमें स्नेह गुण जो बंध होने में अर्थात् स्कन्ध रूप होने में कारण होता है नहीं होता हैं। यही बात सूत्रकार ने (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) इस सूत्र द्वारा शंकारूप में उत्थापित कर (दोण्हं परमाणु पोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए) इस उत्तर सूत्र द्वारा स्पष्ट की है। दो परमाणुपुद्गल एक स्कन्ध को बनाने के लिये संहत-संमिलित किस कारण से नहीं होते हैं? तो इसका उत्तर उनकी ओर से ऐसा दिया गया है कि वे दो परमाणु सूक्ष्म होते हैं-अतः सूक्ष्म होने के कारण स्नेहपर्याय राशि उनमें नहीं होती है। इस कारण (दो

તેમની બીજી માન્યતાઓ કયી કયી છે તે સૂત્રકાર "दो परमाणु पोग्गला" ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે પ્રકટ કરે છે—"दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમતા નથી. તે બાબતમાં તેમની માન્યતા એવી છે કે બે પરમાણુ મળીને બે અણુવાળો (દ્વયણુક) સ્કંધ બનાવી શકતા નથી કારણ કે તેઓ અત્યંત સૂક્ષ્મ હોય છે. તેથી સ્કંધરૂપે પરિણમવા માટે કારણરૂપ સ્નેહગુણનો તેમનામા સદ્ભાવ હોતો નથી. એ જ વાત સૂત્રકારે "कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति" આ સૂત્રવડે શંકારૂપે ઉપસ્થિત કરીને "दोण्ह परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए" આ સૂત્રવડે પ્રતિપક્ષીઓ તરફથી તેનો ઉત્તર આપ્યો છે. બે પરમાણુ પુદ્ગલો શા કારણે સંયોગ પામીને એક સ્કંધરૂપ બનતાં નથી? તેનો આ પ્રમાણે પ્રતિપક્ષીઓએ ઉત્તર આપ્યો છે-બે પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોય છે સૂક્ષ્મ હોવાને લીધે તેમનામાં સ્નેહ-

माणु पोग्गला भवंति' त्रिधाक्रियमाणा अपि परमाणुपुद्गला भवन्ति यदि तर्हि परमाणुपुद्गलानां भागत्रयं कुर्यात् तदा एकैकः परमाणुपुद्गलो भवतीति भावः। 'एवं जाव चत्तारि०' एवं यावत् चत्वार ०, एवम्=अनेन प्रकारेण यावत् चत्वारः परमाणुपुद्गला भवन्ति। अत्र यावत्पदेन-यथा त्रयाणां पुद्गलानामालापकस्तथा चतुःसंख्यकपुद्गलानामप्यालापकः कार्यः, तथाहि—'चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। कम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति? चउण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। ते भिज्जमाणा दुहावि चउहावि कज्जंति। दुहा कज्जमाणा एगयओ

तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) यदि उन संहत हुए तीन परमाणु पुद्गलों के तीन विभाग किये जावें तो एक एक परमाणु पुद्गल के रूप में उनके ३ विभाग हो जाते हैं। (जाव चत्तारि) इसी प्रकार से यावत् चार परमाणु पुद्गल होते हैं। यहां यावत् पद से (यथा त्रयाणां परमाणुपुद्गलानां आलापकस्तथा चतुःसंख्यकपुद्गलानाम् आलापकः कार्यः) यह समझाया गया है कि जिस तरह से तीन पुद्गल परमाणुओं का यह आलापक कहा गया है उसी प्रकार से चार पुद्गल परमाणुओं का भी आलापक कर लेना चाहिये—वह इस प्रकार से—(चत्तारि परमाणु पोग्गला एगयओ साहण्णंति? कम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति? चउण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति-ते भिज्जमाणा दुहावि चउहा वि कज्जंति, दुहा कज्जं

'આપ છે ' तिहा वि कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति " એ તે સંહત (એકબીજાને ચોંટેલા) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોના ત્રણ વિભાગ કરવામાં આવે તો એક એક પરમાણુ પુદ્ગલરૂપના તેમના ત્રણ વિભાગ થાય છે "एवं जाव चत्तारि " એમ પ્રમાણે (यावत्) આ પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પણ સમજવું અહીં ' यावत् " પદથી ' यथा त्रयाणां परमाणुपुद्गलानां आलापकस्तथा चतुःसंख्यक पुद्गलानाम् आलापकः कार्यः " એવું સમજાવવામાં આવ્યું છે કે જેવી રીતે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોના આલાપકો કહેવામાં આવ્યા છે એવી જ રીતે ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોના આલાપકો પણ બનાવી લેવા જોઈએ, તે આલાપક આ પ્રમાણે બનશે—' चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। कम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति? चउण्हं परमाणु पोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति। ते भिज्जमाणा दुहावि चउहा वि कज्जंति दुहा कज्जमाणा एगयओ

तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति' तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, त्र्यादिपरमाणूनां स्थूलत्वात् स्नेहकायो भवति ततश्च स्नेहकायसाहाय्यात् त्र्यादिपरमाणवो मिलित्वा स्कन्धाकारेण परिणता भवन्तीति भावः। 'ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति' ते भिद्यमानाः द्विधाऽपि त्रिधाऽपि क्रियंते, यदि ते संहतास्त्रयः परमाणुपुद्गला भिद्यमानाः सन्तः द्वित्रिविभागेन विभक्ताः क्रियन्ते तदा 'दुहा कज्जमाणा' द्विधा क्रियमाणाः, 'एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ एगयओ वि दिव परमाणु पोग्गले भवइ' एकतो द्वयर्धः परमाणुपुद्गलो भवति एकतोऽपि द्वयर्धः परमाणुपुद्गलो भवति, यदि त्रिपरमाणुपुद्गलानां संयुक्तानां द्वौ भागौ क्रियेते तदा द्विधा कृतयो र्द्वयोरपि भागयोर्द्वयर्धं द्वयर्धः अर्धाधिकैकत्वसंख्यावान् परमाणुपुद्गलो भवतीत्यर्थः, 'तिहाकज्जमाणा तिण्णि पर-

---

एगयओ साहण्णंति) इस सूत्रपाठ से स्पष्ट की है। तीन परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर जो स्कन्धरूपपर्याय में परिणत हो जाते हैं उसका कारण उनमें स्नेहकाय है। तात्पर्य कहने का यह है कि तीन आदि परमाणुओं में स्थूलता होने के कारण उनमें स्नेहकाय होता है, इसलिये स्नेहकाय की सहायता से वे त्र्यादिक परमाणु मिलकर स्कन्धाकार में परिणत हो जाते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति) संहत स्कंधरूप में परिणत हुए-वे तीन परमाणु पुद्गल जब विभक्त किये जाते हैं तो उनके दो टुकड़े भी हो सकते हैं, और तीन टुकडे भी हो सकते हैं। (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणु पोग्गमें भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ) जब संयुक्त इनके दो टुकडे-विभाग करते हैं तो एक तरफ १॥ और दूसरी तरफ भी १॥ पुद्गल परमाणु हो जाता है। (तिहा कज्जमाण

स्निग्धेहकाए तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहण्णंति" આ સૂત્રપાઠ વડે તેનો ઉત્તર આપ્યો છે ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલો પરસ્પરમાં મળી જઈને જે સ્કંધ પર્યાયમાં પરિણમે છે તેનું કારણ એ છે કે તેમનામા સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ત્રણ પરમાણુઓમાં સ્થૂલતા હોવાને લીધે તેમનામાં સ્નેહકાય હોય છે, તે સ્નેહકાયની સહાયતાથી તે ત્રણ ચાર વગેરે પરમાણુઓ મળી જઈને સ્કંધરૂપે પરિણમે છે, "ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति" સ્કંધરૂપે પરિણમેલાં તે ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલોને જ્યારે જુદા કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમના બે ભાગ પણ થઈ શકે છે અને ત્રણ ભાગ પણ થઈ શકે છે, "दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणु पोग्गले भवइ" જ્યારે તે સંયુક્ત પરમાણુઓના બે વિભાગ કરવામા આવે છે ત્યારે १॥-१॥ પરમાણુ પુદ્ગલના બે વિભાગ

सदन्तीति भावः, अथ दुःखदायकत्वाद् दुःखं कर्म कार्ये कारणोपचारात् 'दुक्खे वि य णं से' दुःखमपि च खलु तत्, 'सासए' शाश्वतम् 'सया समिए' सदा समितं, सदैव सपरिमाणं वा, 'उवचिज्जइ य' उपचीयते च 'अवचिज्जइ य' अपचीयते च, उपचीयते वृद्धिम् प्राप्नोति, अपचीयते, ह्रासं प्राप्नोति, पंच परमाणवो मिलित्वा कर्मरूपेण परिणमंति, तत्कर्म प्रवाहरूपेण नित्यं सत् सर्वदैव चयापचयौ प्राप्नोतीत्यर्थः।

साए कम्मंति) ऐसा कहा है सो इसका तात्पर्य ऐसा है कि वे पांच पुद्गलपरमाणु एकट्ठे होकर कर्मरूप में परिणत हो जाते हैं। यहां जो दुःख को कर्मरूप कहा गया है सो कार्य में कारण के उपचार से कहा गया है। क्यों कि कर्म दुःख का दाता होने से दुःख का कारण होता है। और दुःख उसका कार्य होता है। अतः कार्य रूप दुःख में कर्मरूप कारण का उपचार करके उसे यहां स्वयं कर्मरूप कह दिया है। (दुक्खे वि य णं से सासए) यह दुःखरूप कर्म शाश्वत है। (सया समिए) सदा समित परिमाणसहित है। (उवचिज्जइ अवचिज्जइ) उपचय और अपचय उसमें सर्वदा होता रहता है। तात्पर्य कहने का यह है कि पांच परमाणु मिलकर कर्मरूप से परिणम जाते हैं। यह कर्म प्रवाहरूप से नित्य होता हुआ भी सर्वदा ही चय और अपचय को प्राप्त होता रहता है। चय का अर्थ वृद्धि और अपचय का अर्थ ह्रास है। (सया समिए) पद यह प्रकट करता है कि कर्म में जो चय और अपचय होता है वह प्रमाण माप सहित होता है। इसके लिये गुणहानी का प्रकरण देखना चाहिये।

અહીં જે ' दुक्खत्ताए कम्मंति ' એવું કહેવામાં આવ્યું તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ એકત્ર થઈને કર્મરૂપે પરિણમે છે અહીં જે દુઃખને કર્મરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે તે કાર્યમાં કારણના ઉપચારની અપેક્ષાએ કહેલ છે, કારણ કે કર્મ; દુઃખ દેનાર હોવાથી દુઃખનું કારણ કહ્યું છે અને દુઃખ તેનું કાર્ય કહ્યું છે તેથી કાર્યરૂપ દુઃખમાં કર્મરૂપ કારણના ઉપચારની અપેક્ષાએ તેને અહીં સ્વયં કર્મરૂપ કહેલ છે "दुक्खे वि य णं से सासए" તે દુઃખરૂપ કર્મ શાશ્વત છે "सया समिए" સદા સમિત (પરિમાણ સહિત) છે ' उवचिज्जइ अवचिज्जइ ' તેમા સર્વદા ઉપચય અને અપચય થયા કરે છે એવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પાંચ પરમાણુ મળી જઈને કર્મરૂપે પરિણમે છે તે કર્મ પ્રવાહરૂપે નિત્ય હોવા છતા પણ સર્વદા ચય અને અપચય પામ્યા કરે છે ચય એટલે વૃદ્ધિ અને અપચય એટલે હ્રાસ. (હાનિ) "सया समिए" પદ એ બતાવે છે કે કર્મમા જે ચય અને અપચય થાય છે તે પ્રમાણયુક્ત (માપ) થાય છે તેના વિષયમા ગુણહાનીનું પ્રકરણ જોઈ લેવું

दो परमाणु पोग्गला भवंति, एगयओ वि दो परमाणुपोग्गला भवंति। चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणु पोग्गला भवंति' इति। तथा 'पंच परमाणुपोग्गला' पञ्च परमाणुपुद्गलाः, 'एगयओ साहणिता' एकतः संहत्य-मिलित्वा 'दुक्खत्ताए कज्जति' दुःखतया क्रियन्ते, पञ्च पुद्गलसंहत्य दुःखतया कर्मतया क्रियन्ते

माणा एगयओ दो परमाणु पोग्गला भवंति एगयओ वि दो परमाणुपोग्गला भवंति। चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणु पोग्गला भवंति) इस आलापक का भाव यह है-कि चार पुद्गल परमाणु आपस में मिलकर एक स्कन्ध रूप पर्याय में परिणत हो जाते हैं। इनके स्कन्धरूप पर्याय से परिणत होने में कारण स्नेहकाय है। क्यों कि जब ये आपस में संमिलित होते हैं तब इनमें स्थूलता आ जाती है। संहतावस्थापन्न हुए इनके यदि विभाग किये जावें तो इनके दो तथा चार भाग होते हैं एक भाग दो दो पुद्गल परमाणुओं का होता है और जब चार भाग इनके किये जाते हैं तो इसमें एक परमाणु का एक २ भाग होता है इस तरह चार भाग हो जाते हैं। तथा-पंच परमाणुपोग्गला) पांच परमाणु पुद्गल जब आपस में मिलकर एक स्कन्ध रूप पर्याय से परिणत होते हैं तब उनकी वह स्कन्धरूप पर्याय दुःखरूप में परिणत हो जाती है। यही बात सूत्रकार ने (एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति) इस सूत्र पाठ द्वारा समझाई है। यहां जो (दुक्खं-

---

दो परमाणुपोग्गला भवंति, एगयओ वि दो परमाणु पोग्गला भवति। चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणुपोग्गला भवति" આ આલાપકોનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે ચાર પરમાણુપુદ્ગલો પરસ્પરમા સયોગ પામીને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયમા પરિણમે છે તેમ બનવાનું કારણ એ છે કે તેમનામાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે. કારણ કે જ્યારે તેઓ પરસ્પરમાં સયોગ પામે છે ત્યારે તેમનામા સ્થૂલતા આવી જાય છે. આ રીતે સયોગ પામેલાં તે પરમાણુપુદ્ગલોના જો વિભાગ કરવામા આવે તો બે વિભાગ કરવામા આવે તો બે વિભાગ પણ થઈ શકે છે અને ચાર વિભાગ પણ થઇ શકે છે.

જો તેના બે વિભાગ કરવામાં આવે તો પ્રત્યેક વિભાગ બે બે પરમાણુ પુદ્ગલોનો બને છે, અને જો ચાર વિભાગ કરવામા આવે તો પ્રત્યેક ભાગ એક એક પરમાણુ પુદ્ગલનો બને છે તથા "पंच परमाणुपोग्गला" જ્યારે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયમાં પરિણમે છે ત્યારે તેની તે સ્કંધરૂપ પર્યાય દુઃખરૂપે પરિણમે છે. એજ વાત સૂત્રકારે "एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति" આ સૂત્રપાઠ વડે સમજાવી છે.

स्पर्यः, 'भासिया' भाषिता 'भासा' सा भाषा भवति। 'सा किं भासओ भासा अभासओ भासा' सा किं भाषमाणस्य भाषा अभाषमाणस्य भाषा, इत्येवं पृच्छति-'अभासओ णं सा भासा' अभाषमाणस्य खलु सा भाषा भवति, भाषणात्पूर्वं पश्चाच्च तथाविधबोधाभावात्, किन्तु 'नो खलु सा भासओ भासा' नो खलु सा भाषमाणस्य भाषा, भाष्यमाणावस्थायामेव वर्तमानत्वाविशुद्धसंस्पर्शेन भाषात्वासंभवात्

पदार्थ विषयक ज्ञान होता है-अतः वह भाषा जो कि बोली जा चुकी है भाषा है। (जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमयवीइक्कंत च णं भासिया भासा भासा) यदि बोलने के पहिले भाषा भाषा है, वर्तमान में बोली जाती भाषा भाषा नहीं है-और बोलने में आ चुकी भाषा भाषा है तो यहां ऐसा प्रश्न होता है कि (सा किं भासओ भासा अभासओ भासा) वह भाषा बोलते हुए व्यक्तिकी है कि नहीं बोलते हुए व्यक्ति की है। उत्तर-(अभासओ णं सा भासा) वह नहीं बोलते हुए की भाषा है। तात्पर्य यह है कि भाषण से पहिले और भाषण के बाद अर्थ का बोध होने के कारण वह नहीं बोलते की भाषा है। (नो खलु सा भासओ भासा) बोलते हुए व्यक्ति की वह भाषा नहीं है। क्यों कि जो भाषा बोली जा रही है-उसमें भाषात्व स्वीकार नहीं किया गया है। इसका कारण यह है कि उससे श्रोता को अर्थ बोध नहीं होता है। मुख से पूर्णरूप से भाषा के निकल चुकने पर

च आलंबनादने पक्षमां सत्यपी हानि आप छे-ते आरंभे के आपा बोलाई चुकी छे तेने आपा कहेवाय छे आ सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासा समयवीइक्कंत च ण भासिया भासा भासा" ओ बोलवा पहेलानी आपाने आपा कहेवाती होय, तत्काळमां बोलाती आपाने आपा कहेवाती न होय, अने बोलवामा आवी चूकेली आपाने आपा कहेवामां आवती होय तो अेवो प्रश्न उद्भवे छे के "सा किं भासओ भासा अभासओ भासा" ते बोलनार व्यक्तिनी आपा छे के नहीं बोलनार व्यक्तिनी आपा छे? उत्तर-(अभासओ ण सा भासा) ते नहीं बोलनारनी आपा छे कहेवानुं तात्पर्य अे छे के आपवाना पहेला अने आपवानी पछी अर्थनो बोध थवाने आरंभे ते नहीं बोलनारनी आपा छे "नो खलु सा भासओ भासा" बोलनार व्यक्तिनी ते आपा नथी. आरण के जे आपा बोलवामां आवी रही छे तेमां आपापणानो स्वीकार करवामा आव्यो नथी. तेनुं आरण अे छे के तेनी भाषाथी श्रोताने अर्थनो बोध थतो नथी. मुखमांथी पूर्णपणे

अब भाषाविषयं प्राह–' पुव्विं ' इत्यादि । ' पुव्विं भासा भासा ' पूर्वं भाषा भाषा, पूर्वं–भाषणात् प्राक्काले भाषा=भाषा स्यात् वक्ष्यमाम भाषायाः कारणात् ' भासिज्जमाणी भासा अभासा' भाष्यमाणा भाषा अभाषा, उच्यमाना भाषा भाषा न भवति, वर्तमानसमयस्यातिसूक्ष्मतया व्यवहारानुपयोगित्वात् । ' भासा समयवीइक्कंतं च णं ' भाषासमयव्यतिक्रान्तं च खलु, भाषासमये व्यतिक्रान्ते सतीत्यर्थः, ' भासिया' भाषिता, निःसृता सती भाषा भवति, श्रोतुःपुरुषस्य पदार्थविषयकज्ञानोत्पादकत्वात् । पुनः प्रश्नयति–' जा सा ' इत्यादि । ' जा सा पुव्विं भासा ' या सा पूर्वं भाषा, या पूर्वं भाषणात् पूर्वं सा भाषा भवति, किन्तु ' भासिज्जमाणी भासा अभासा ' भाष्यमाणा भाषा अभाषा भाष्यमाणा=भाषितुं प्रवर्त्यमाना भाषा ण वर्त्तमानकाले या भाषा सा अभाषा=भाषा न भवति, तथा 'भासासमयवीइक्कंतं च णं ' भाषासमय व्यतिक्रान्ते भाषणसमयानन्तरमि-

अब सूत्रकार भाषा के विषय में सूत्र कहते हैं–(पुव्विं भासा भासा) भाषण करने का जो प्राक्काल है वह पूर्व शब्द का अर्थ है–अर्थात् बोलने से पहिले भाषा भाषा हैं–तात्पर्य इसका यह है कि बोलने से पहिले जो शब्द के अणुओं की थोकड़ी (पुंजरूप) होती है, वह भाषा कहलाती है। क्यों कि वह वक्ष्यमाण भाषा की कारण होती है। (भासिज्जमाणी भासा अभासा) तथा जो भाषा बोलने में आ रही है वह भाषा भाषा नहीं कहलाती है। क्यों कि वर्तमान समय अतिसूक्ष्म होता है इस कारण वह व्यवहार में अनुपयोगी होता है। (भासासमय वीइक्कंतं च णं भासिया भासा) बोलने के समय को व्यतिक्रान्त हो जाने पर–अर्थात् बोल चुकने पर भाषा भाषा है–तात्पर्य कहने का यह हैं कि जब भाषा मुख से निकल चुकती है तभी सुनने वाले पुरुष को

હવે સૂત્રકાર ભાષાના વિષયમાં સૂત્ર કહે છે–"पुव्विं भासा भासा" ભાષણ કર્યા પહેલાંના સમયને માટે અહીં "पूर्व" શબ્દ વપરાયો છે એટલે કે બોલ્યા પહેલાની ભાષાને જ ભાષા કહે છે–તાત્પર્ય એ છે કે બોલ્યા પહેલા જે શબ્દના અણુઓની થોકડી (પૂંજરૂપે) થાય છે તેને ભાષા કહે છે. કારણ કે તે વક્ષ્યમાણ ભાષાની કારણરૂપ હોય છે " भासिज्जमाणी भासा अभासा " તથા જે ભાષા બોલવામા આવી રહી હોય છે તે ભાષાને ભાષા કહી શકાય નહીં, કારણ કે વર્તમાન સમય અતિસૂક્ષ્મ હોય છે, તે કારણે તે વ્યવહારમાં અનુપયોગી હોય છે " भासा समयवीइक्कंतं च ण भासिया भासा " બોલવાનો સમય પસાર થઈ ગયા પછી, એટલે કે બોલી ચૂકયા પછીની ભાષા, ભાષા છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે ભાષા મુખમાથી નીકળી ચૂકે છે ત્યારે

दुक्खा ' या सा पूर्वं क्रिया दुःखा भवति, ' कज्जमाणी किरिया अदुक्खा ' क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियमाणा या क्रिया सा न दुःखप्रयोजिका, ' किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा ' क्रियासमयव्यतिक्रान्तं च खलु कृता क्रिया दुःखा, क्रियमाणसमयव्यतिक्रमे सति कृता निष्पादिता क्रिया दुःखप्रयोजिका भवति, अथवा पूर्वकाले क्रिया दुःखजनिका अनभ्यासात्, क्रियमाणा क्रिया न दुःखप्रयोजिका अभ्यासात्, किन्तु कृता क्रिया दुःखदा यतः क्रियाकरणानन्तरं पश्चात्तापादिर्भवति परिश्रमादिर्वा जायतेऽतः सा क्रिया दुःखेति या दुःखहेतुर्भवति-' सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा ' सा किं करणतो दुःखा अकरणतो दुःखा? करणतः-करणमाश्रित्य करणकाले कर्तुरित्यर्थः सा क्रिया दुःखा अथवा किम् अकरणमाश्रित्याकर्तुरित्यर्थः, सा क्रिया दुःखेति प्रश्नः, उत्तरयति-

---

किरिया दुक्खा) यदि करने के पहिले क्रिया दुःखहेतु होती है, (कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) तथा वर्तमान में की जा रही क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है, (किरियासमयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा) तथा जो क्रिया अपने काल को उल्लंघन कर चुकी वह क्रिया दुःखहेतु होती है। अथवा-अनभ्यास होने के कारण पूर्वकाल में क्रिया दुःख जनक होती है, और अभ्यास हो जाने से वर्तमान काल में वही क्रिया दुःख प्रयोजक नहीं होती है। किन्तु कृत क्रिया दुःखदा होती है क्यों कि क्रिया करने के अनन्तर पश्चात्ताप आदि होता है अथवा परिश्रम आदि होता है। इसलिये वह क्रिया दुःख की हेतुभूत हो जाती है। सो (सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) वह क्रिया जो दुःख की हेतु होती है सो करणकाल में करते हुए व्यक्ति को दुःख की हेतुभूत होती है या नहीं करने वाले को दुःख की हेतुभूत होती है। इस प्रकार का

दुक्खा " એ કર્યા પહેલાની ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, " कज्जमाणी किरिया अदुक्खा " અને વર્તમાનમાં કરાતી ક્રિયા દુઃખહેતુ ન હોય, " किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा दुक्खा " તથા જે ક્રિયાનો કાળ પસાર થઈ ગયો છે એવી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય છે (અભ્યાસ ન હોવાને કારણે પૂર્વ કાળમાં ક્રિયા દુઃખજનક હોય છે, અને અભ્યાસ થઈ ગયા પછી વર્તમાન કાળમાં તેજ ક્રિયા દુઃખ પ્રયોજક થતી નથી પરન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃખદાયી હોય છે કારણ કે ક્રિયા કર્યા બાદ પશ્ચાત્તાપ વગેરે થાય છે અથવા પરિશ્રમ વગેરે થાય છે તે કારણે તે ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ બની જાય છે) " सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा " કરવાકાળમાં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખના હેતુરૂપ હોય છે કે નહીં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખનો હેતુરૂપ હોય છે ?

अथ क्रियाविषये निरूपयति--' पुव्विं ' इत्यादि । 'पुव्विं किरिया दुक्खा ' पूर्वं क्रिया दुःखा, क्रिया कायिकी सा पूर्वं करणात्पूर्वं यावन्न क्रियते तावदित्यर्थः, दुःखा=दुःखहेतुर्भवति । ' कज्जमाणा किरिया अदुक्खा क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियमाणा करणसमये=वर्त्तमानसमये क्रिया अदुःखा=दुःखहेतुर्न भवति। तथा ' किरिया समयवीइक्कंतं च णं ' क्रियासमयव्यतिक्रान्ते सति क्रियायाः करणसमयानन्तरमित्यर्थः, ' कडा किरिया ' कृता सती क्रिया 'दुक्खा' दुःखा-दुःखहेतुर्भवति । क्रिया हि करणात्पूर्वं पश्चाच्च दुःखहेतुर्भवति किन्तु वर्तमानसमये क्रिया दुःखहेतुर्न भवतीति भावः । शिष्य पृच्छति-' जा सा पुव्विं किरिया

ही श्रोता को अर्थ का बोध होता है। इसलिये बोली जा रही भाषा को भाषा नहीं माना गया है ।

अब सूत्रकार क्रिया के विषय में निरूपण करते हैं-(पुव्विं किरिया दुक्खा) यहां क्रिया कायिकी ली गई है अतः करने से पहिले-अर्थात् जब तक वह क्रिया करने में नहीं आ रही है तबतक वह क्रिया दुःख-दुःख-हेतु होती है । (कज्जमाणा किरिया अदुक्खा) जो क्रिया की जा रही है वह दुःख-दुःख की हेतुरूप नहीं होती है । तथा (किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा) क्रिया के करने का समय जब व्यतिक्रान्त हो जाता है तब-अर्थात् क्रिया करने के समय के अनन्तर की जा चुकी क्रिया दुःख-दुःखहेतु होती है। तात्पर्य कहने का यह है क्रिया करने से पहिले और करने के पश्चात् दुःखहेतु होती है, किन्तु वर्तमान समय में वह क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है । शिष्य पूछता है-(जा सा पुव्विं

-ભાષા નીકળી ચૂકયા પછી જ શ્રોતાને અર્થનો બોધ થાય છે. તેથી જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી છે તેને ભાષા ગણતા નથી.

હવે સૂત્રકાર ક્રિયાના વિષયમા નિરૂપણ કરે છે—

" पुव्विं किरिया दुक्खा " અહી ક્રિયા પદ વડે કાયિકી ક્રિયા લેવામાં આવી છે. જ્યાં સુધી ક્રિયા કરવામા આવી રહી નથી ત્યાં સુધી તે ક્રિયા દુઃખ-દુ ખહેતુ હોય છે " कज्जमाणा किरिया अदुक्खा " જે ક્રિયા કરવામા આવી રહી છે તે દુઃખ-દુઃખની હેતુરૂપ હોતી નથી. તથા " किरिया समय वीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा " ક્રિયા કરવાનો સમય જ્યારે પસાર થઈ જાય છે ત્યારે એટલે કે ક્રિયા કરવાના સમય પછી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુ ખ-દુ ખહેતુ હોય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે-કે ક્રિયા કર્યા પહેલાં અને કર્યા પછી દુઃખહેતુરૂપ હોય છે પણ વર્તમાન સમયમાં જે ક્રિયા કરવામા આવે છે તે દુઃખહેતુ હોતી નથી. શિષ્ય પૂછે છે-" जा सा पुव्विं किरिया

दुक्खा ' या सा पूर्व क्रिया दुःखा भवति, ' कज्जमाणी किरिया अदुक्खा ' क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियमाणा या क्रिया सा न दुःखप्रयोजिका, ' किरिया समयपरिक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा ' क्रियासमयव्यतिक्रान्तं च खलु कृता क्रिया दुःखा, क्रियमाणसमयव्यतिक्रमे सति कृता निष्पादिता क्रिया दुःखप्रयोजिका भवति, अथवा पूर्वकाले क्रिया दुःखजनिका अनभ्यासात्, क्रियमाणा क्रिया न दुःखप्रयोजिका अभ्यासात्, किन्तु कृता क्रिया दुःखदा यतः क्रियाकरणानन्तरं पश्चात्तापादिर्भवति परिश्रमादिर्वा जायतेऽतः सा क्रिया दुःखेति या दुःखहेतुर्भवति-' सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा ' सा किं करणतो दुःखा अकरणतो दुःखा करणतः=करणमाश्रित्य करणकाले कर्तरि इत्यर्थः सा क्रिया दुःखा अथवा किम् अकरणमाश्रित्याकर्तरि इत्यर्थः, सा क्रिया दुःखेति भवतः, उत्तरयति-

---

किरिया दुक्खा) यदि करने के पहिले क्रिया दुःखहेतु होती है, (कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) तथा वर्तमान में की जा रही क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है, (किरियासमयविइक्कंतं च कडा किरिया दुक्खा) तथा जो क्रिया अपने काल को उल्लंघन कर चुकी वह क्रिया दुःखहेतु होती है। अथवा-अनभ्यास होने के कारण पूर्वकाल में क्रिया दुःख जनक होती है, और अभ्यास हो जाने से वर्तमान काल में वही क्रिया दुःख प्रयोजक नहीं होती है। किन्तु कृत क्रिया दुःखदा होती है क्यों कि क्रिया करने के अनन्तर पश्चात्ताप आदि होता है अथवा परिश्रम आदि होता है। इसलिये वह क्रिया दुःख की हेतुभूत हो जाती है। सो (सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) वह क्रिया जो दुःख की हेतु होती है सो करणकाल में करते हुए व्यक्ति को दुःख की हेतुभूत होती है या नहीं करने वाले को दुःख की हेतुभूत होती है। इस प्रकार का

दुक्खा " એ કર્યા પહેલાંની ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, " कज्जमाणी किरिया अदुक्खा " અને વર્તમાનમાં કરાતી ક્રિયા દુઃખહેતુ ન હોય, " किरिया समय विइक्कंतं च कडा दुक्खा " તથા જે ક્રિયાનો કાલ પસાર થઈ ગયો છે એવી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય તો (અભ્યાસ ન હોવાને કારણે પૂર્વ કાળમાં ક્રિયા દુઃખજનક હોય છે, અને અભ્યાસ થઈ જવા પછી વર્તમાન કાળમાં તેજ ક્રિયા દુઃખ પ્રયોજક બની નથી પરન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃખદાયી હોય છે કારણ કે ક્રિયા કર્યા બાદ પશ્ચાત્તાપ વગેરે થાય છે, અથવા પરિશ્રમ વગેરે થાય છે તે કારણે તે ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ બની જાય છે) " सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा " કરવાકાળમાં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખના હેતુરૂપ હોય છે કે નહીં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખની હેતુરૂપ હોય છે ?

'अकरणओ णं सा दुक्खा नो खलु सा करणओ दुक्खा' अकरणतः खलु सा दुःखा नो खलु करणतो दुःखा, अकरणमाश्रित्य अकुर्वते इत्यर्थः दुःखजनिका क्रिया भवति, अक्रियमाणत्वे दुःखतया तस्याः स्वीकारात्। न तु करणमाश्रित्य कुर्वत इत्यर्थः, दुःखजनिका क्रिया भवति अभ्यासात् 'सेवं वत्तव्वं सिया' तदेवं वक्तव्यं स्यात्, तदेव पूर्वोक्तं वस्तु अक्रियमाणत्वे दुःखरूपत्वं क्रियाया न तु कुर्वत इत्येवं रूपं वस्तु वक्तव्यं स्यादिति भावः।

अथान्यतीर्थिकानामेव मतान्तरमाह—'अकिच्चं' इत्यादि। 'अकिच्चं दुक्खं' अकृत्यं दुःखम्, अनागतकालापेक्षया जीवैरनिर्वर्तनीयम्, दुःखम्=असात-

---

यह प्रश्न है। इसका उत्तर-(अकरणओ णं सा दुक्खा नो खलु सा करणओ दुक्खा) नहीं करते हुए को वह दुःख की हेतुभूत होती है-करते हुए को वह दुःख की हेतुभूत नहीं होती है। क्यों कि जबतक वह क्रिया की नहीं जा रही हैं तभीतक वह दुःख जनक है ऐसा स्वीकार किया गया है। करने के समय की जा रही वह क्रिया करते हुए व्यक्ति को अभ्यास होने के कारण दुःखजनक नही होती है। (सेवं वत्तव्वं सिया) अक्रियमाणत्व होने पर-अर्थात् करने के समय में नहीं की जा रही क्रिया नहीं करने वाले को दुःख की हेतु होती है, और करते हुए को वह दुःख रूप नहीं होती है ऐसा कहा जा सकता है।

अन्यतीर्थिकजनों की और भी मान्यताएँ हैं-जो इस प्रकार से हैं (अकिच्च दुक्खं) दुःख अकृत्य-क्रिया के विना-होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि दुःख-असातरूप-सुखाभावरूप जो प्रतिकूल वेद-

---

ઉત્તર-"अकरणओ णं सा दुक्खा नो खलु सा करणओ दुक्खा" નહીં કરનારને તે દુઃખના હેતુરૂપ થાય છે, કરનારને દુઃખની હેતુરૂપ થતી નથી, કારણ કે જ્યા સુધી તે ક્રિયા કરવામાં આવતી નથી ત્યાં સુધી તે દુઃખજનક છે એ માન્યતા સ્વીકારવામાં આવેલ છે કરવાને સમયે કરવામાં આવતી ક્રિયા કરનાર વ્યક્તિને અભ્યાસ હોવાને કારણે દુઃખજનક થતી નથી "सेव वत्तव्वं सिया" અક્રિયમાણત્વ હોય ત્યારે-એટલે કે કરવાને સમયે નહી કરાતી ક્રિયા નહી કરનારને તે દુઃખરૂપ થતી નથી એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ પ્રમાણે અન્યતીર્થિકોની માન્યતા છે. આ ઉપરાંત બીજી પણ કેટલીક માન્યતાઓ તેમની આ પ્રમાણે છે

"अकिच्चं दुक्खं" દુઃખ અકૃત્ય-ક્રિયા વિના-હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે દુઃખ, ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ જીવો વડે અનિષ્પાદ્ય હોય છે. અહી દુઃખ એટલે અસાતારૂપ-સુખાભાવરૂપ-પ્રતિકૂલ વેદનીય દુઃખ ગ્રહણ

रूप मतिकूल्येनानीषमित्यर्थः, अकरिष्यमाणं दुःखं भवतीति भावः। अथवा दुःखं दुःखकारणं कर्म, 'अकुसं दुक्खं' अस्पृश्यं दुःखम्, तथा यत् एवंरूपमेव एवा स्वरूपम् अवधनीयम् 'अकज्जमाणकडं' अक्रियमाणकृतम्, तथा क्रियमाणं वर्तमानकाले, कृतं चातीतकाले, सन्निपत्य अक्रियमाणकृतम्, 'दुक्खं' दुःखं भवति। 'अकट्टु अकट्टु' अकृत्वा अकृत्वा, कालत्रयेऽपि कर्मणो बन्धनिषेधाद् अकृत्वाऽकृत्वा अकरणादेवेत्यर्थः, दुःखम्=कर्म 'पाणभूयजीवसत्ता' प्राणभूत जीवसत्त्वा, 'वेयणं वेदेंति' वेदनां वेदयन्ति, दुःखमनुभवन्ति, 'इति वत्तव्वं

नीय दुःख है यह अनागत काल की अपेक्षा से जीवों द्वारा अनिवर्तनीय अनिष्पाद्य-नहीं उपजे ऐसा होता है। कोई भी जीव ऐसा नहीं चाहता है कि मुझे दुःख उपजे-परन्तु वह तो उपजता ही है-अतः यह दुःख स्वभावतः है और इसी कारण यह अकृत्य है। अथवा दुःख से यहां दुःख का कारण जो कर्म है वह दुःख है ऐसा समझना चाहिये। (अकुसं दुक्खं) दुःख अस्पृश्य है। अर्थात् जब दुःख अकृत्य है इसीलिये यह अस्पृश्य अवधनीय-नहीं बंधे ऐसा है। (अकज्जमाणकडं) वर्तमान काल में जो किया जा रहा है वह क्रियमाण है तथा भूतकाल में जो किया जा चुका है वह कृत है। (दुःख न क्रियमाण है और न कृत है अतः यह अक्रियमाणकृत है। तीनकाल में भी जीव के कर्म का बंध नहीं होता है। अतः दुःख का-कर्म को-बांधे करके भी (पाणभूयजीवसत्ता) प्राण, भूत, जीव, सत्त्व ये सब (वेयणं वेदेंति) वेदना को भोगते रहते हैं। यह सब कथन स्याद्वादियों का है-वे ऐसा कहते हैं कि जो भी सुख दुःखादिक प्राणभूतादिकों द्वारा भोगने में आते रहते हैं वे

કરવું આપણા હાથની વાત નથી કે અને દુઃખ ઉપજે પરન્તુ તેને દુઃખ તો ઉપજે છે જ તેથી તે દુઃખ સ્વભાવથી જ ઉપજે છે, અને તે કારણે જ તે અકૃત્ય છે અથવા-અહીં "દુઃખ" પદ વડે 'દુઃખના કારણ રૂપ "કર્મ" ને જ દુઃખ રૂપમાં ગ્રહણ કરેલ છે. "अकुसं दुक्खं" દુઃખ અસ્પૃશ્ય છે એટલે કે દુઃખ અકૃત્ય હોવાથી અસ્પૃશ્ય-અબંધનીય છે. 'अकज्जमाणकडं' વર્તમાનકાળમાં જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે ક્રિયમાણ છે તથા ભૂતકાળમાં જે કરવામાં આવી ચુકયું છે તે કૃત છે. દુઃખ ક્રિયમાણ પણ નથી અને કૃત પણ નથી તેથી તે અક્રિયમાણ કૃત છે. ત્રણે કાળમાં દુઃખને કર્મનો બંધ આપવો પડતો નથી કર્મ નહીં બાંધ્યા છતાં પણ 'पाण भूत जीव सत्त्व ये ४ भूत दुःख अनुभवे' વેદના ભોગવતા રહે છે આ કથન સ્યાદ્વાદીઓનું છે તેઓ કહે છે કે જે જે સુખ દુઃખ વગેરે પ્રાણ ભૂત જીવ સત્ત્વોને ભોગવવા પડે છે તે તમામ કર્મોનું

सिया ' इति वक्तव्यं स्यात्, इति एतत् पूर्वोक्तम्-वक्तव्य स्यात्, यदेतत् लोके सुखदुःखादिकं भवति न तत् केनापि कारणेन भवति, अपि तु स्वाभाविकमेवेदं सर्वम्, तथाचोक्तम्—

" अतर्कितोपस्थितमेव सर्वं, चित्रं जनानां सुखदुःखजातम्।
काकस्य तालेन यथाभिघातो न बुद्धिपूर्वोऽत्र वृथाभिमानः॥१॥

यथा कण्टकस्य तैक्ष्ण्यं शुकादीनां हरितत्वं मयूराणां विचित्रता न नियत कारणजनिता किन्तु स्वभावादेव। यथा वा पतंगादीनां गगने उड्डयनं मत्स्यानां

उनके कर्मों के फलस्वरूप नहीं है क्यों कि किसी भी प्राणी आदि द्वारा कर्मो का बंध किया ही नहीं जाता है-अतः सब जो कुछ होता रहता है वह सब स्वभाव से ही होता रहता है। यही बात (इति वक्तव्यं सिया) इस पाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है। लोक में जो कुछ भी सुख दुःखादिक होते रहते हैं वे किसी अन्यकारणक नही होते हैं किन्तु स्वभाविक ही होते हैं इस विषय को प्रकट करने वाला यह (अतर्कितोपस्थित इत्यादि पद्य है। इसके द्वारा यह समझाया गया है कि नाना प्रकार के जो सुख दुःख जीवों को विना विचारे अर्थात् अबुद्धिपूर्वक भोगने में आते हैं, वे निष्कारणक ही हैं, सकारणक नहीं। जैसे कांटों में तीक्ष्णता शुक (तोता) आदिकोंमें हरापन, मयूरोंमें विचित्रता, यह सब नियत कारणसे जनित नहीं है-किंतु स्वभावसे ही है-और जैसे पतंग आदिकों का आकाश में उडना, मछलियों का जल में संचरण करना किसी कारण से निष्पादित नहीं होता है किन्तु स्वभाव से ही यह उनमें पाया

ફળરૂપ હોતા નથી કારણ કે કોઇ પણ પ્રાણી, ભૂત વગેરે મારફત કર્મોનો બંધ બધાતો જ નથી તેથી જે કઈ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થયા કરે છે. એ વાત " इति वक्तव्य सिया " આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામા આવી છે. લોકમા જે કોઇ સુખ દુ ખ વગેરે ભોગવવા પડે છે તે બીજાં કોઇ કારણોને લીધે ભોગવવા પડતા નથી પણ સ્વાભાવિક જ હોય છે આ વાતને સમજાવવાને માટે " अतर्कितोपस्थित " ઇત્યાદિ પદ્યો છે તેમની મારફત એ વાત સમજાવવામા આવી છે કે જીવોને અનેક પ્રકારના જે સુખ દુ ખ અબુદ્ધિપૂર્વક (વિના વિચાર્યે) ભોગવવા પડતાં હોય છે તે નિષ્કારણજ હોય છે, સકારણ હોતા નથી એટલે કે તેની પાછળ કોઈ કારણ હોતુ નથી પણ તે સ્વભાવિકજ હોય છે જેવી રીતે કાટામા તીક્ષ્ણતા, પોપટમાં લીલાશ, મોરમા વિચિત્રતા, એ બધાંનું કોઇ ચોક્કસ કારણ નથી-પરન્તુ સ્વભાવથી જ તે હોય છે, એવી જ રીતે સુખ-

चले सचरण न केनापि कारणेन निष्पादित किन्तु स्वभावादेव जायते, इत्येव सुखदुःखादयोऽपि भावा न कारणविशेषमासाद्य भवन्ति किन्तु स्वभावत एव प्रवर्तन्ते । उक्तञ्च—

"स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो अमी ।
यथा स्वभावतो लोके, हंसादीनां हि शुक्लता ॥ १ ॥

इत्येव स्वभाववादिमतमिति ।

तदेतत्परतीर्थिकानां मतं किं सम्यगित्याक्षेपेण गौतमः पृच्छति-'से कहमेयं' इत्यादि । 'से कहमेयं भंते एवं' तत् कथमेतत् भदन्त एवम्-तत्=अन्यतीर्थिकोक्तं मतं कथं=किम् एतत्=पूर्वोक्तं हे भदन्त ! एवम्=येन प्रकारेण तैरुक्तं तेनैव प्रकारेणास्ति किम् तेषां पूर्वोक्तं मतं किं सत्यम् ? इति प्रश्नः ॥ सू० १ ॥

जाता है इसी तरह से सुख दुःखादिक भाव भी कारण विशेष को लेकर नहीं होते हैं किन्तु स्वभाव से ही होते रहते हैं । तथा चोक्तम्—

"स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो अमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥"

इस प्रकार से यह स्वभाव वादियों का मत है

इस पर गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं कि (से कहमेयं भंते एवं) हे भदन्त ! स्वभाव वादि अन्यियों ने जो यह पूर्वोक्त रूप से अपना मन्तव्य प्रकट किया है सो यह क्या मन्तव्य उनका उसी प्रकार से है-अर्थात् सत्य है क्या ? यह गौतम स्वामी का प्रश्न है ॥ सू-१ ॥

દુઃખાદિ ભાવ પણ કોઇ કારણને લીધે ઉત્પન્ન થતા નથી પણ સ્વભાવથી જ ઉત્પન્ન થઈ રહે છે વળી જેવી રીતે પતંગ વગેરેનુ અકારણ ઉડવુ, અને આકાશમાં પક્ષીનુ સ્વભાવથી કોઈ પણ કારણને લીધે થતુ નથી પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે એવી જ રીતે સુખદુઃખાદિ ભાવ પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે કહ્યું પણ છે—

'स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो अमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥"

ઉપર મુજબનો સ્વભાવવાદિઓનો મત છે

તે વિષયમા ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પુછે છે કે-" से कहमेयं भंते एवं " હે ભગવન્! સ્વભાવવાદી વગેરેનુ પૂર્વોક્ત જે મન્તવ્ય છે તે શુ સાચુ છે ? ॥ સૂ-૧ ॥

सिया ' इति वक्तव्यं स्यात्, इति एतत् पूर्वोक्तम्-वक्तव्य स्यात्, यदेतत् लोके सुखदुःखादिकं भवति न तत् केनापि कारणेन भवति, अपि तु स्वाभाविकमेवेदं सर्वम्, तथाचोक्तम्—

" अतर्कितोपस्थितमेव सर्वं, चित्रं जनानां सुखदुःखजातम्।
काकस्य तालेन यथाभिघातो न बुद्धिपूर्वोऽत्र वृथाभिमानः॥१॥

यथा कण्टकस्य तैक्ष्ण्यं शुकादीनां हरितत्वं मयूराणां विचित्रता न नियत कारणजनिता किन्तु स्वभावादेव। यथा वा पतंगादीनां गगने उड्डयनं मत्स्यानां

उनके कर्मों के फलस्वरूप नहीं है क्यों कि किसी भी प्राणी आदि द्वारा कर्मों का बंध किया ही नहीं जाता है-अतः सब जो कुछ होता रहता है वह सब स्वभाव से ही होता रहता है। यही बात (इति वक्तव्वं सिया) इस पाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है। लोक में जो कुछ भी सुख दुःखादिक होते रहते हैं वे किसी अन्यकारणक नही होते हैं किन्तु स्वभाविक ही होते हैं इस विषय को प्रकट करने वाला यह (अतर्कितोपस्थित इत्यादि पद्य है। इसके द्वारा यह समझाया गया है कि नाना प्रकार के जो सुख दुःख जीवों को विना विचारे अर्थात् अबुद्धिपूर्वक भोगने में आते हैं, वे निष्कारणक ही हैं, सकारणक नहीं। जैसे कांटों में तीक्ष्णता शुक (तोता) आदिकोंमें हरापन, मयूरोंमें विचित्रता, यह सब नियत कारणसे जनित नहीं है-किंतु स्वभावसे ही है-और जैसे पतंग आदिकों का आकाश में उडना, मछलियों का जल में संचरण करना किसी कारण से निष्पादित नहीं होता है किन्तु स्वभाव से ही यह उनमें पाया

ફળરૂપ હોતા નથી. કારણ કે કોઇ પણ પ્રાણી, ભૂત વગેરે મારફત કર્મોનો બંધ બધાતો જ નથી તેથી જે કઈ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થયા કરે છે. એ વાત " इति वक्तव्व सिया " આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામા આવી છે. લોકમા જે કોઇ સુખ દુ ખ વગેરે ભોગવવા પડે છે તે બીજા કોઇ કારણોને લીધે ભોગવવા પડતા નથી પણ સ્વાભાવિક જ હોય છે આ વાતને સમજાવવાને માટે " अतर्कितोपस्थित " ઇત્યાદિ પદ્યો છે તેમની મારફત એ વાત સમજાવવામા આવી છે કે જીવોને અનેક પ્રકારના જે સુખ દુ ખ અબુદ્ધિપૂર્વક (વિના વિચાર્યે) ભોગવવા પડતાં હોય છે તે નિષ્કારણજ હોય છે, સકારણ હોતા નથી એટલે કે તેની પાછળ કોઈ કારણ હોતુ નથી પણ તે સ્વભાવિકજ હોય છે જેવી રીતે કાટામા તીક્ષ્ણતા, પોપટમા લીલાશ, મોરમા વિચિત્રતા, એ બધાંનુ કોઇ ચોક્કસ કારણ નથી-પરન્તુ સ્વભાવથી જ તે હોય છે, એવી જ રીતે સુખ-

बले सचरणं न केनापि कारणेन निष्पादितं किन्तु स्वभावादेव जायते, इत्येव सुखदुःखादयोऽपि भावा न कारणविशेषमासाद्य भवन्ति किन्तु स्वभावत एव प्रवर्तन्ते । उक्तञ्च—

" स्वभावेन प्रवर्तन्ते ते सुखदुःखादयो ह्यमी ।
यथा स्वभावतो लोके, हंसादीनां हि शुक्लता ॥ १ ॥

इत्येव स्वभाववादिनामिति ।

सम्प्रतिक्रियावादिकानां मतं किं सम्पगित्याक्षेपेण गौतमः पृच्छति-'से कहमेयं' इत्यादि । ' से कहमेयं भंते एवं ' तत् कथमेतत् भदन्त एवम्-तत्=अन्यतीर्थिकोक्तं मतं कथम्=किम् एतत्=पूर्वोक्तं हे भदन्त ! एवम्=येन प्रकारेण तैरुक्तं तेनैव प्रकारेणास्ति किम् तेषां पूर्वोक्तं मतं किं सत्यम् ? इति प्रश्नः ॥ सू० १ ॥

जाता है इसी तरह से सुख दुःखादिक भाव भी कारण विशेष को लेकर नहीं होते हैं किन्तु स्वभाव से ही होते रहते हैं । तथा चोक्तम्—

' स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो ह्यमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ "

इस प्रकार से यह स्वभाववादियों का मत है

इस पर गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं कि (से कहमेयं भंते एवं) हे भदन्त ! स्वभाववादि आदियों ने जो यह पूर्वोक्त रूप से अपना मन्तव्य प्रकट किया है सो यह क्या मन्तव्य उनका उसी प्रकार से है-अर्थात् सत्य है क्या ? यह गौतम स्वामी का प्रश्न है ॥ सू-१ ॥

દુઃખાદિ ભાવ પણ કોઇ કારણને લીધે ઉપજતા નથી પણ સ્વભાવથી જ ઉપજ્યા કરે છે વળી જેવી રીતે પ્રત્યક્ષ જોવામાં આવનાર હંસમાં ઉજ્જવલ, અને ભાજ્ય વિષયોમાં પાણીનું સ્વાદપણું કોઈ ખાસ કારણોને લીધે થતું નથી પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે, એજ રીતે સુખદુઃખાદિ ભાવ પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે કહ્યું પણ છે—

" स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो ह्यमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ "

ઉપર મુજબનો સ્વભાવવાદિઓનો મત છે

તે વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે-" से कहमेयं भंते एवं ' હે ભગવન્ ! સ્વભાવવાદી વગેરેનું પૂર્વોક્ત જે મન્તવ્ય છે તે શું સાચું છે ? ॥ સૂ-૧ ॥

अथ भगवान् अन्यतीर्थिकमतं निराकुर्वन् स्वमतं प्ररूपयन्नाह-'गोयमा' इत्यादि।

मूलम्-गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४ जाव वेयणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु, मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि एवं खलु चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, दो परमाणुपोग्गला, एगयओ साहणंति, कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणु पोग्गलाएगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ, तिण्णि परमाणुपोग्गला एयगओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाये, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं चत्तारि, पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति, खंधेवि य णं से असासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य। पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा, जा सा पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा,

भासासमयवीइक्कंत च ण भासिया भासा अभासा, सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा ? भासओणं भासा, नो खलु सा अभासओ भासा । पुट्विं किरिया अदुक्खा, जहा भासा तहा भाणियव्वा, किरिया वि जाव करणओ ण सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणओ दुक्खा सेव वत्तव्वसिया, किच्चा दुक्खं फुसं दुक्खं, कज्जमाणकडदुक्खं, कट्टु कट्टु पाणभूय जीव सत्ता वेयणं वेयंति इति वत्तव्वं सिया० ॥ सू० २ ॥

छाया—गौतम! यत् खलु तेऽन्यपूथिका एवमाख्यान्ति० यावद्वेदनां वेदयन्ति इति वक्तव्यं स्यात्, ये ते एवमाहुर्मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुनर्गौतम! एवमाख्यामि० एवं खलु चलमानं चलितम् यावत् निर्जीर्यमाणं निर्जीर्णम्। द्वौ परमाणुपुद्गलौ

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् गौतम! स्वामी से कहते हैं। इसमें वे अन्यतीर्थिकजनों के मतका निरसन करते हुए अपने मत की प्ररूपणा करते हैं—(गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया), इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(गोयमा !) हे गौतम ! (जं णं ते अन्न उत्थिया) जो वे अन्यपूथिक (एवं आइक्खंति ४) ऐसा कहते हैं (जाव वेयणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया) यावत् जीव वेदना को भोगते हैं यह स्वाभाविक है। सो (जे ते एवमाहंसु) जो उन्हों ने ऐसा कहा है। (मिच्छा ते एवमाहंसु) वह तो उन्हों ने मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि) पर हे गौतम ! मैं तो ऐसा कहता हूं (एवं खलु

આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને શું કહે છે તે આ સૂત્રમાં બતાવ્યું છે આ સૂત્ર વડે મહાવીર પ્રભુ અન્ય મતવાદીઓના મતનું ખંડન કરીને પોતાના મતની પ્રરૂપણા કરે છે—' गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया " ઇ૦

સૂત્રાર્થ—(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जं णं ते अन्नउत्थिया) તે અન્ય તીર્થિકો (एवं आइक्खंति) જે એવું કહે છે કે (जाव वेयणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया) (यावत्) " જીવ વેદનાને ભોગવે જ છે તે સ્વાભાવિક છે " ત્યાં સુધીનું તેમનું (जं ते एवमाहंसु) જે મંતવ્ય કથન છે—જે માન્યતા છે (मिच्छा ते एवमाहंसु) તે મિથ્યા છે—તેઓ જે કહે છે તે સત્ય નથી (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि) હે ગૌતમ ! હું તો એવું કહું છું કે (एवं खलु चलमाणं

अथ भगवान् अन्यतीर्थिकमतं निराकुर्वन् स्वमतं प्ररूपयन्नाह-'गोयमा' इत्यादि।

मूलम्-गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४ जाव वेयणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु, मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि एवं खलु चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, दो परमाणुपोग्गला, एगयओ साहणंति, कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणु पोग्गलाएगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ, तिण्णि परमाणुपोग्गला एयगओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाये, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं चत्तारि, पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति, खंधेवि य णं से असासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य। पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा, जा सा पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा,

परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकत्र सहन्यन्ते, ते भिद्यमाना द्विधा अपि त्रिधा अपि क्रियन्ते, द्विधा क्रियमाणा एकत्र परमाणु पुद्गलः एकतो द्विप्रदेशिकः स्कन्धो भवति, त्रिधा क्रियमाणा त्रय परमाणुपुद्गला भवन्ति, एवं यावत् चत्वार ०, पञ्च परमाणुपुद्गला एकत्र सहन्यन्त, एकत्र

परमाणु पोग्गला एगयओ साहण्णंति) किस कारण से तीन परमाणुपुद्गल एक स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं ? (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) तीन परमाणु पुद्गलों में स्नेहकाय है। (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति) इसलिये ये तीन परमाणुपुद्गल मिलकर एक स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहावि तिहा वि कज्जंति) जब इन तीन पुद्गल परमाणु के विभाग किये जाते हैं तो उनके दो भी भाग हो जाते हैं और तीन भी भाग हो जाते हैं (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ) इनके दो भाग इस प्रकार से होते हैं—एक भाग १ परमाणुपुद्गल का हो जाता है और दूसरा भाग दो प्रदेशी स्कन्धरूप रहता है। (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) जब इनके तीन टुकडे किये जाते हैं तो ये परमाणु पुद्गल १-१-१ इस तरह से तीन भाग में विभक्त हो जाते हैं। (एवं चत्तारि) इसी तरह से चार पुद्गलपरमाणुओं के विषय में भी जानना चाहिये। (पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति)

(कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ?) આ પ્રશ્નનો ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો દ્વિપ્રદેશિક સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોમાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति) તે કારણે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર મળીને એક સ્કંધપર્યાયરૂપે પરિણમે છે (ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति) જ્યારે તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમના બે વિભાગ પણ પડે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ પડે છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ) તેમના બે ભાગ આ પ્રમાણે બને છે એક ભાગ પરમાણુ પુદ્ગલનો બને છે બીજો ભાગ બે પ્રદેશી સ્કંધરૂપ બને છે (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) જ્યારે તેમના ત્રણ વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે પ્રત્યેક વિભાગ ૧, ૧ પરમાણુ પુદ્ગલનો બને છે (एवं चत्तारि) આજ પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પણ જાણવું જોઈએ (पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति) પાંચ

एकतः संहन्येन्ते, कस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतः संहन्येते, द्वयोः परमाणुपुद्गलयोरस्ति स्नेरकायः, तस्माद् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतः संहन्येते, तौ भिद्यमानौ द्विधा क्रियेते, एकतः परमाणु पुद्गल एकतः परमाणुपुद्गलो भवति, त्रयः परमाणु पुद्गलाः एकतः संहन्ते, कस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, त्रयाणां

चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे) कि जो चल रहा है वह चल चुका है यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है उसकी निर्जरा हो चुकी है। (दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) दो परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) किस कारण से दो परमाणुपुद्गल आपस में मिलकर स्कन्धपर्याय करते हैं ? इसका उत्तर यह है कि-(दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) दो परमाणु पुद्गलों में स्नेहकाय है। (तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) इस कारण वे दो परमाणु पुद्गल स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति) यदि किये जावें तो इनके दो भाग हो जाते हैं। (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणु पोग्गले भवइ) एक भाग एक परमाणु का और दूसरा भाग भी एक परमाणु का हो जाता है। (तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) तीन परमाणु पुद्गल आपसमें मिलकर स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (कम्हा तिण्णि

चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे) જે ચાલી રહ્યું છે તે ચાલી ચૂક્યું છે (यावत्) જેની નિર્જરા થઈ રહી છે તે કર્મ નિર્જીર્ણ થઈ ચૂકયુ છે (दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સંયોગ પામીને એક સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ?) શા કારણે બે પરમાણુપુદ્ગલ મળીને એક સ્કંધપર્યાયરૂપે પરિણમે છે ? ઉત્તર- (दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) તે બે પરમાણુ પુદ્ગલોમાં પણ સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે તમ્હા दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) તે કારણે તે બે પરમાણુપુદ્ગલો પણ સ્કન્ધપર્યાયરૂપે પરિણમે છે (ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति) જો તેમના વિભાગ કરવામાં આવે તો બે વિભાગ થાય છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ) તેમનો એક ભાગ પરમાણુનો અને બીજો ભાગ પણ એક પરમાણુનો થાય છે (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સંયોગ પામીને સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે

अभाषमाणस्य भाषा । पूर्वं क्रिया अदुःखा यथा भाषा तथा भणितव्या, क्रिया अपि यावत्-कुर्वतः खलु सा दुःखा, नो खलु सा अकुर्वतो दुःखा, तदेवं वक्तव्यं स्यात् । कृत्य दुःखं स्पृष्टम् दुःखं क्रियमाणकृतं दुःखं, कृत्वा कृत्वा प्राणभूतजीव सत्त्वा वेदनां वेदयन्तीति वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० २ ॥

भाषा नहीं है, और बोलने में आरही जो भाषा है वही भाषा है। तथा बोली जा चुकी जो भाषा है वह भी भाषा नहीं है अभाषा है तो वह बोलते हुए की भाषा है कि नहीं बोलते हुए की भाषा है ? (भासओ णं सा भासा) वह बोलते हुए की भाषा है। (नो खलु सा अभासओ भासा) नहीं बोलते हुए की भाषा नहीं है। (पुव्विं किरिया अदुक्खा, जहा भासा, तहा भाणियव्वा) करने से पहिले की क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है। जैसे भाषा वैसे ही इसे समझना चाहिये। (किरिया वि जाव करणओ णं सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणओ दुक्खा सेव वत्तव्वं सिया) क्रिया भी यावत् करते हुए को दुःख की हेतुभूत होती है। नहीं करते हुए को वह दुःख की हेतुभूत नहीं होती है। ऐसा कहा जा सकता है। (किच्च दुक्खं फुसं दुक्खं, कज्जमाणकडं दुक्खं, कट्टु कट्टु पाण भूय जीवसत्ता वेयणं वेएंति इति वत्तव्वं सिया०) दुःख क्रियाजन्य होता है। दुःख स्पृष्ट होता है। दुःख क्रियमाण कृत होता है। प्राणी, भूत, जीव और सत्त्व उसे करके वेदना भोगते रहते हैं। ऐसा कहा जाता है। सू २

ભાષા બોલાતી હોય, તથા બોલવામાં આવી ચૂકેલી ભાષાને અભાષા કહેવામાં આવતી હોય તો તે બોલનારની ભાષા છે કે નહીં બોલનારની ભાષા છે (भासओणं सा भासा) તે બોલનારની ભાષા છે (नो खलु सा अभासओ भासा) નહીં બોલનારની ભાષા નથી. (पुव्विं किरिया अदुक्खा, जहा भासा, तहा भाणियव्वा) કર્યા પહેલાની ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ હોતી નથી ભાષાની જેમ જ ક્રિયાના વિષયમાં પણ સમજવું (किरिया वि जाव करणओ णं सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणओ दुक्खा सेवं वत्तव्वं सिया) ક્રિયા પણ (यावत्) કરનારને જ દુઃખની હેતુભૂત હોય છે નહીં કરનારને તે દુઃખની હેતુભૂત થતી નથી, એમજ કહેવું જોઇએ. (किच्चं दुक्खं,) કૃત્ય દુઃખ, कज्जमाणकडं दुक्खं, कट्टु कट्टु पाणभूयजीवसत्ता वेयणं वेएंति इतिवत्तव्वं सिया०) દુઃખ ક્રિયાજન્યહોય છે દુઃખ સ્પૃષ્ટહોય છે દુઃખ ક્રિયમાણકૃત હોય છે પ્રાણી, ભૂત જીવ અને સત્વ; ક્રિયા કરીનેજ વેદના ભોગવ્યા કરે છે એમજ કહેવું જોઈએ. સૂ-૨

संहत्य स्कन्धतया क्रियन्ते, स्कन्धोपि च स अशाश्वतः सदा समितमुपचीयते च अपचीयते च। पूर्वं भाषा अभाषा, भाष्यमाणा भाषा भाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्तं च खलु भाषिता भाषा अभाषा. या सा पूर्वं भाषा अभाषा भाष्यमाणा भाषा भाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्तं च खलु भाषिता भाषा अभाषा, सा किं भाषमाणस्य भाषा, अभाषमाणस्य भाषा, भाषमाणस्य खलु भाषा नो खलु सा

णंति) पांच परमाणुपुद्गल आपस में मिलकर स्कन्धरूप पर्याय को उत्पन्न करतें हैं। (एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति) अर्थात् पांच परमाणु पुद्गल आपस में चिपक जाते हैं और इस तरह से वे एक स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (खंधे वि य णं से असासए) यह स्कन्धपर्याय शाश्वत नहीं है-अशाश्वत है। (सया समियं उवचिज्जइ य) सर्वदा यह पर्याय प्रमाण रूप में उपचय और अपचय को प्राप्त करती रहती है। (पुव्विं भासा अभासा) बोलने के पहिले की भाषा भाषा नहीं है अभाषा है। (भासिज्जमाणी भासा भासा) बोलने में आ रही भाषा भाषा है। (भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा) भाषा के समय को उल्लंघन करने वाली भाषा-अर्थात् बोली जा चुकी भाषा भाषा नहीं है-अभाषा है। ये पूर्वोक्त मन्तव्य अन्य मत वालों का है उनसे पूछा जाता है कि-(सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा) यदि वह बोलने से पहिले की भाषा अभाषा है-

---

પરમાણુ પુદ્ગલોપણ પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયરૂપે પરિણમે છે. (एगयओ साहणित्ता खधत्ताए कज्जति) એટલે કે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો પણ પરસ્પરની સાથે લેગા મળી જાય છે અને એ રીતે તેઓ એક સ્કંધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે (खंधे वि य ण से असासए) આ સ્કંધ પર્યાય શાશ્વત નથી પણ અશાશ્વત છે (सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) તે પર્યાય સદા પરિમાણુ રૂપે છે અને ઉપચય તથા અપચય રૂપે બન્યા કરે છે

(पुव्विं भासा अभासा) બોલ્યા પહેલાની ભાષા,ભાષા નથી પણ અભાષા છે. (भासिज्जमाणी भासा भासा भासा समय वीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा) ભાષાનો સમય ઓળંગી ગયેલી ભાષા એટલે કે બોલવામા આવી ચૂકેલી ભાષા, ભાષા નથી, ભાષા છે ઉપર્યુકત મહાવીર પ્રભુનો અભિપ્રાય જાણીને તેમને પૂછવામા આવ્યું છે કે (सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा) જો બોલ્યા પહેલાંની ભાષા અભાષા હોય, અને જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી છે તેનેજ ભાષા

एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण हे गौतम ! आख्यामि, एवं भाषे, एवं प्रज्ञापयामि एवं प्ररूपयामि । किमाख्यामि ? इत्याह—'एवं खलु' इत्यादि । 'एवं खलु चलमाणे चलिए जाव निज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे' एवं खलु चलत् चलितम् यावत् निर्जीर्यमाणं-निर्जीर्णमिति, अत्र यावत्पदेन-" उदीर्यमाणमुदीरितम्, वेद्यमानं वेदितम्, प्रहीयमाणं प्रहीणम्, छिद्यमानं छिन्नम्, भिद्यमानं भिन्नम्, दह्यमानं दग्धम्, म्रियमाणं मृतम्" इति संग्राह्यम् । मिथ्यात्वं च परतीर्थिकमतस्य यदि चलत् वस्तु प्रथमसमये एव चलितमिति न भवेत्तदा द्वितीयादिसमयेषि तद्वस्तु अचलदेव इति कदापि तत् न चलेत्, अन्तिमसमये च चलितमिति व्यवहारो दृश्यतेऽतः प्रथमसमयादारभ्यैव चलितं उच्यते इति मन्तव्यमेव, " यावत्कालं स्थिरं चैन ङ्क पथात् नाद्यापि प्रतीति" न्यायात्प्रथमसमयादारभ्यैव

आख्यामि, प्रज्ञापयामि, प्ररूपयामि) परन्तु हे गौतम ! मैं तो ऐसा कहता हूं यावत् प्ररूपित करता हूं कि-जो चल रहा है वह चल चुका-यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है वह निर्जीर्ण हो चुका । यहां यावत् पद से (उदीर्यमाणमुदीरितम्-वेद्यमान वेदितम्, प्रहीयमानं प्रहीणं छिद्यमानं छिन्न, भिद्यमानं भिन्न दह्यमान, दग्धं, म्रियमाणं मृतम्) इस पाठ का संग्रह किया गया है । परतीर्थिकों का मत मिथ्या किस प्रकार से है-सो स्पष्ट किया जाता है-यदि चलती हुई वस्तु प्रथम समय में चल चुकी न मानी जावे तो उसे द्वितीय आदि समयों में भी अचल ही मानना होगा । इस तरह वह कभी भी नहीं चल सकेगी । अन्तिम समय में जो (चल चुकी) ऐसा व्यवहार देखा जाता है उससे यही बात प्रतीति में आती है कि वह वस्तु प्रथम समय से लेकर ही अंतिम समय तक चलित हुई है ।

एव आइक्खामि, भासेमि, पन्नवेमि, परूवेमि " हे गौतम ! हुं तो એવું કહું (यावत्) પ્રરૂપણા કરું છું કે જે ચાલી રહ્યું છે તે ચાલી ચૂકયું (यावत्) જેની નિર્જરા થઈ રહી છે તે નિર્જીર્ણ થઈ ચૂકયું, અહીં 'यावत्' પદથી ' उदीर्यमाणमुदीरितम् वेद्यमान वेदितम् प्रहीयमाणं प्रहीणं छिद्यमान छिन्नम्, भिद्यमान भिन्न, दह्यमान दग्ध म्रियमाण मृतम् " આ પાઠનો સંગ્રહ કરાયો છે પરતીર્થિકોનો મત કેવી રીતે મિથ્યા છે તે હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે જો ચાલતી વસ્તુને પ્રથમ સમયે ચાલી ચૂકેલી માનવામાં ન આવે તો તેને બીજા સમયોમાં પણ અચલ જ માનવી પડશે. આ રીતે તો તે કદી પણ ચલિત થશે જ નહીં પરન્તુ અન્તિમ સમયે " ચલિત થઈ ચૂકી ' એવો જે વ્યવહાર થતો જોવામાં આવે છે તેથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે તે વસ્તુ પ્રથમ સમયથી શરૂ કરીને અન્તિમ સમય સુધી ચલિત થતી રહે છે " यावत्

टीका—'गोयमा' हे गौतम! 'जं णं अन्न उत्थिया एवं आइक्खंति' यत् अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति एवं भाषन्ते एवं प्रज्ञापयन्ति एवं प्ररूपयन्ति, 'जाव' यावत्, अत्र यावत्पदेन-तन्मतप्रतिपादकः पूर्वोक्तः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः। कियत्पर्यन्तमित्याह—'वेयणं वेदेंतीति वत्तव्वं सिया' वेदनां वेदयन्तीति वक्तव्यम् स्यात्, प्राणभूतजीवसत्त्वाः स्वभावेनैव वेदनां वेदयन्तीति। 'जे ते एव माहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु' ये ते एवमाहुर्मिथ्या ते एवमाहुः 'अह पुण गोयमा एवं आइक्खामि भासेमि पन्नवेमि परूवेमि' अहं पुन गौतम! एवमाख्यामि

टीकार्थ—(गोयमा!) हे गौतम! (जं णं अन्न उत्थिया) जो अन्यतीर्थिकजन (एवं आइक्खंति) ऐसा सामान्यरूप से कथन करते हैं (एवं भासंते) ऐसा विशेषरूप से कथन करते हैं (एवं प्रज्ञापयन्ति) इस तरह प्रज्ञापना करते हैं (एवं प्ररूपयन्ति) ऐसी प्ररूपणा करते हैं। यहां (यावत्) शब्द से स्वभाववादियों के मत को प्रतिपादन करनेवाला पूर्वोक्त समस्त भी पाठ गृहित किया गया है। वह यहां कहां तक गृहीत किया गया है इसको प्रकट करने के लिये (वेयणं वेदेंति) यह पद दिया गया है। अर्थात् स्वभाव वादियों ने जो प्रथम सूत्र में अपना पूर्ण मत प्रकट कर दिया है। (वेयणं वेदेंति) तक-वह सब पाठ यहां यावत् शब्द से पकड़ा गया है इसके द्वारा जो उन्हों ने यह कहा है कि प्राण, भूत, जीव, और सत्त्व ये सब स्वभाव से ही वेदना को भोगते रहते हैं (जे ते एवं आहंसु) जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एवमाहंसु) वह मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि

ટીકાર્થ-"गोयमा!" હે ગૌતમ! "जं णं अन्नउत्थिया" અન્યતીર્થિકો અન્ય મતવાદીઓ "एवं आइक्खंति" એવું જે સામાન્ય રૂપે કથન કરે છે "एवं भासंते" એવું જે વિશેષરૂપે કથન કરે છે, "एवं प्रज्ञापयन्ति" એવી જે પ્રજ્ઞાપના કરે છે, (एवं परूपयन्ति) એવી જે પ્રરૂપણા કરે છે, (અહીં यावत् પદથી સ્વભાવવાદીઓના મતનુપ્રતિપાદન કરનાર પૂર્વોક્ત તમામ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે) તે પાઠ કયા સુધીનો ગ્રહણ કરવાનો છે તે બતાવવાને "वेयणं वेदेंति" સુધી તે પાઠ ગ્રહણ કરવો એમ સૂત્રકારે કહ્યું છે, એટલે કે પહેલા સૂત્રમાં સ્વભાવવાદીઓ એ પોતાનો પૂર્ણ મત પ્રકટ કર્યો છે અહીં "यावत्" પદ વડે એમ કહ્યું છે. (वेयणं वेदेंति) સુધીના તે પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરવો તેમાં તેમણે બતાવ્યુ છે કે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, અને સત્ત્વ, એ સૌ સ્વભાવથી જ વેદના ભોગવતા રહે છે "जे ते एव आहंसु" તેમણે એવું જે કહ્યું છે તે "मिच्छा ते एवमाहंसु" મિથ્યા કહ્યું છે. તેમનુ તે કથન સાચું નથી. "अहं पुण गोयमा!

अथ यदि एकस्मिन् परमाणौ स्नेहो न भवेत्तदा परमाणुसमुदायेपि स्नेहः कथमपि न समवेत्, एकस्मिन् सिकताकणे तैल्यमनुपलभ्यमानं तत्समुदाये कदाचिदपि नोपलभ्यते ? किन्तु यदा एकस्मिन्-तिले स्नेह उपलभ्यते तदैव तिलसमुदायेऽपि तैल्य समुपलभ्यते, तथैव यदि एकस्मिन् परमाणौ सघातकारणस्नेहो न भवेत्तदा परमाणुसमुदायादपि सघातात्मकस्कन्धस्योत्पत्ति कदाचिदपि न भवेदित्याशये नोत्तरयति भगवान्-'दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति' हौ परमाणुपुद्गलौ

कारण उनमें स्नेह का अभाव रहता है सो इसका उत्तर सूत्रकार ने (दो परमाणुपोग्गला) इत्यादि सूत्र द्वारा दिया है-इसमें यह कहा गया है- कि यदि एक परमाणु में स्नेह गुण न हो तो फिर वह स्नेहगुण परमाणु समूह में कैसे हो सकता है । अर्थात् नहीं हो सकता है । एक सिकता (रेती) के कण में हम देखते हैं कि तैल का अंश जब उपलब्ध ही नहीं है-तो वह उसके समुदाय में भी कभी उपलब्ध नहीं हो सकता है । एक तिल में स्नेहगुण की उपलब्धि होती है-इसी कारण तिलसमुदाय में भी स्नेहगुण की उपलब्धि हो जाती है। तो जब इस प्रकार का सिद्धान्त है तो इसी प्रकार से एक परमाणु में यदि सघात का कारण स्नेहगुण न हो तो विचारो वह परमाणु समुदाय में भी कैसे उपलब्ध हो सकेगा । नहीं हो सकेगा । अतः जो परमाणु समुदाय से संघातात्मक स्कन्ध की उत्पत्ति होती है वह कदाचित् भी नहीं हो सकेगी। इस आशय को लेकर भगवान गौतम से कहते हैं कि (दो परमाणु

એક સ્કન્ધ અવસ્થા રૂપે પરિણમતા નથી કારણ કે તેઓ અતિ સૂક્ષ્મ હોય છે- તે કારણે તેમનામાં સ્નેહ (ચીકાશ) નો અભાવ હોય છે) તેમની તે માન્યતાનું ખંડન કરવાને માટે સૂત્રકારે " दो परमाणुपोग्गला " ઇત્યાદિ સૂત્રનું કથન કર્યું છે તેમાં આ પ્રમાણે કહ્યું છે-જો એક પરમાણુમાં સ્નેહગુણ વિદ્યમાન ન હોય તો તે સ્નેહગુણ પરમાણુ સમૂહમાં કેવી રીતે સંભવી શકે ? જેવી રીતે એક રેતીના કણમાંથી જો તેલનો અંશ નીકળી શકતો નથી તો તેમના સમુદાયમાંથી પણ તેની પ્રાપ્તિ થતી નથી, પરંતુ જો એક તલના દાણામાં સ્નેહ ગુણ રહેલ હોય છે તો તેના સમુદાયમાં પણ સ્નેહગુણ રહેલો હોય છે આ પ્રકારનો સિદ્ધાંત છે હવે તો જો પરમાણુમાં સ્નેહગુણનો અભાવ હોય તો અનેક પરમેલા પરમાણુ સમુદાયમાં પણ સ્નેહગુણ કેવી રીતે સંભવી શકે ? કદી પણ સંભવી શકે નહીં જો એમ બનતું હોય તો પરમાણુ સમુદાયના મિલનથી સ્કંધની જે ઉત્પત્તિ થાય છે તે કદી પણ થઈ શકે નહીં આ કારણે ભગવાન મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે " दो परमाणुपोग्गला

चलितत्वव्यपदेशः, अन्यथा अन्त्यसमयपि चलितत्वं न भवेदिति सर्वापि क्रिया निरर्थिकैव भवेदिति, अतएव वर्तमानस्यापि विवक्षावलादतीतत्वं न विरुद्धम्। एतत् सर्वं पूर्वमेव 'चलमाणे चलिए' इति सूत्रे प्रतिपादितमिति विस्तरभयान्नेह पुनः प्रतन्यते।

यत्पूर्वं परतीर्थिकैः कथितं द्वौ परमाणुपुद्गलौ न संहन्येते अतिसूक्ष्मतया तत्र स्नेहाभावादित्यादि तस्येदमुत्तरम्—'दो परमाणुपोग्गला' इत्यादि, अयमा-

(तावत्कालं स्थिरं चैनं कः पश्चात् नाशयिष्यति) इस न्याय के अनुसार ऐसा ही मानना चाहिये। कि प्रथम समय से लगाकर ही वस्तु में (चलित) ऐसा व्यपदेश होने लग जाता है। यदि तब से वस्तु में जो ऐसा व्यपदेश न हो तो फिर अन्तिम समय में भी (चलित) ऐसा व्यपदेश उस वस्तु में नहीं हो सकता है। इस व्यपदेश के अभाव में जितनी भी क्रियाएँ हैं वे सब निरर्थक ही हो जावेगी। इसलिये वर्तमान की भी विवक्षा के वश से वस्तु में अतीतता विरुद्ध नहीं पड़ती है। वस्तु जिस वर्तमान क्षण में चलन क्रिया विशिष्ट है उसकी अपेक्षा वह वस्तु चलमाण है और वही वस्तु अपने व्यतीत पूर्वक्षणों की अपेक्षा (चलित) है। ऐसा व्यपदेश होने में भला बाधा कौनसी आ सकती है। यह सब विषय विशेषरूप से (चलमाणे चलिए) इस सूत्र में प्रतिपादित ही किया जा चुका है। अब और अधिक विस्तार भय से इसे पुनः नहिं प्रतिप्रादित करते हैं। जो परतीर्थिकों ने ऐसा कहा है कि दो परमाणु (परस्पर में मिलते नहीं हैं क्यो कि वे अति सूक्ष्म होते हैं–इस

त्काल स्थिरं चैन क पश्चात् नाशयिष्यति" આ ન્યાયાનુસાર એમ જ માનવું જોઈએ કે પ્રથમ સમયથી લઈને જ વસ્તુમા (ચલિત) એવો વ્યવહાર થવા માડે છે જો પ્રથમથી જ એવો વ્યવહાર થઈ શકતો ન હોય તો અન્તિમ સમયે પણ પ્રદેશ (વ્યવહાર) ને માનવામાં ન આવે તો જેટલી ક્રિયાઓ છે તે બધી નિરર્થક જ બની જશે. માટે વર્તમાનની વિવક્ષાની અપેક્ષાએ પણ વસ્તુમાં અતીતતા (ભૂતકાલીનતા) વિરૂદ્ધ પડતી નથી. જે વર્તમાન ક્ષણે વસ્તુ ચલન ક્રિયાવાળી છે, તે ક્ષણની અપેક્ષાએ તે વસ્તુ ચલમાણ છે અને વ્યતીત થઇ ગયેલી પૂર્વક્ષણોની અપેક્ષાએ એજ વસ્તુ ચલિત છે તે પ્રકારનો વ્યવહાર કરવામા કોઇ જાતની મુશ્કેલી છે જ નહી આ આખાય વિષયનુ "चलमाणे चलिए" સૂત્રમા વિસ્તાર પૂર્વક પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે. તેથી અધિક વિસ્તાર થવાના ભયથી તેનુ ફરીથી અહી પ્રતિપાદન કર્યું નથી. પરતીર્થિકોની જે એવી માન્યતા છે કે (બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે મળીને

स्नेहकायो विद्यते एव, यतः सार्धपुद्गलस्य सद्भावेन पूर्वपक्षिभिरेव स्वीकारात्, यतस्तैरेवोक्तं ' तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे एगयओ दिवड्ढ " इति एतावता सार्धपुद्गलस्य सद्भावाभ्युपगमेन एकैकस्यापि स्नेहोऽभ्युपगत एवेति कथं स्नेहाभावेन परमाणुद्वित्र्योः सघातामाव स्यात् अपि तु द्वयोरपि परमाण्वोः सघात स्यादेवेति भावः। यच्चोक्तम् एकत सार्धस्तदप्ययुक्त एकस्य परमाणोर्सो

कारण आपस में चिपक जाते हैं। तीन परमाणुओं का ही, चार परमाणुओं का ही संघात होता है सो यह बात नहीं है। दो परमाणुओं में स्नेहकाय मौजूद है यह बात पूर्वपक्षी के इस कथन से भी ज्ञात होती है जो उसने ऐसा कहा है कि (तीन पुद्गल परमाणु आपस में चिपक जाते हैं और जब उनका विभाग किया जाता है तो उनके १॥ डेढ १॥ डेढ परमाणुओं के दो विभाग और १-१ परमाणु के १ विभाग बन जाते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि दो परमाणुओं में स्नेहगुण-चिकाश न होता तो तीन पुद्गल परमाणुओं के जब १॥-१॥ के दो टुकड़े जो उन्हों ने बनाने की बात कही है वह कैसे बन सकती है। अतः उनकी इस मान्यता से यह बात अच्छी तरह पढ़ जाता है-प्रमाणित-हो जाता है कि उन्होंने स्वयं दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण माना है। नहीं तो १॥-१॥ के तीन पुद्गल परमाणुजन्य सघात के दो हिस्से नहीं बन सकते हैं। इसी कथन से यह कथन भी साबित हो जाता है कि जब १॥ पुद्गल परमाणुओं का आपस में चिपक जाना तुमने स्वीकार किया है तो

બીજા સાથે ચોટી જાય છે ત્રણ પરમાણુનો કે ચાર પરમાણુનો જ સંઘાત થાય છે એવું નથી. બે પરમાણુ સ્નેહકાય મોજૂદ હોય છે એ વાતનું તો અન્ય તીર્થિકોના આ કથન પરથી પણ સમર્થન થાય છે-કે ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુ એક બીજા સાથે ચોટી જાય છે અને જ્યારે તેમના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ અથવા ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ થાય છે' કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો બે પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ (ચીકાશ) ન હોય તો ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુઓ વચ્ચે થયેલા સંબંધના ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ અને ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ કેવી રીતે બની શકે? તેથી તેમની જે માન્યતા છે પણ આ વાત સિદ્ધ થાય છે કે બે પરમાણુમાં સ્નેહગુણ હોય છે, નહીં તો ત્રણ પરમાણુના સંબંધથી ઉત્પન્ન થયેલ સંબંધમાંથી ૧॥-૧॥ ના બે વિભાગ બની શકત નહીં. બીજા કથન પરથી એ વાત પણ સાબિત થઈ જાય છે કે જો બે પુદ્ગલ પરમાણુઓનું એક બીજા સાથે

एकतः संहन्येते, एकतः एकस्वरूपतया परमाणुद्वयस्य सहननं (संमीलनं) भवत्येव संहननकारणस्नेहस्य तत्रापि सद्भावादिति, अत्र कारणं पृच्छति–'कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति' कस्मात् कारणात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतः संहन्येते? उत्तरमाह—'दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए' द्वयोः परमाणुपुद्गलयोरस्ति स्नेहकायः, 'तम्हा–दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति' तस्मात् कारणात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकत संहन्येते, यस्मात् कारणात् एकस्मिन्नपि परमाणौ संघातकारणं स्नेहकायो विद्यते तस्मात् कारणात् द्वयोरपि परमाणुपुद्गलयोः संहननं भवत्येव न तु त्रयाणामेव चतुर्णामेव संघात इति भावः, द्वयोः परमाण्वोः

पोग्गला एगयओ साहणंति) दो परमाणु पुद्गल एकरूप से मिल जाते हैं। एक रूप से मिलना ही स्कन्ध की उत्पत्ति है। यह उन दोनों का संमेलन विना संघात के कारणभूत स्नेहगुण के नहीं हो सकता है। इसलिये यह मानना चाहिये कि उन दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण अवश्य २ है और यह स्नेहगुण उन परमाणुओं के समेलन से वहां पर प्रकट हो गया सो बात नहीं है। यह तो वहां एक २ परमाणु में स्वतंत्र रूप से पहिले से ही मौजूद है। यहां शिष्य कारण को पूछता हुआ प्रभु से प्रश्न करता है कि (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) हे भदन्त! इसमें क्या कारण है जो दो पुद्गल परमाणु आपस में मिलकर स्कन्द पर्याय को उत्पन्न करते हैं। प्रभु इसका उत्तर देते हुए शिष्य से कहते हैं कि–(दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) उन दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहकाय है (तम्हा) इसलिये (दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) दो परमाणु पुद्गल चिकाश होने के

एगयओ साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો એકરૂપે મળી જાય છે એક રૂપે મળવુ તેનું નામ જ સ્કન્ધની ઉત્પત્તિ છે તે બન્નેનો સ ઘાત, (સ યોગ) સ ઘાતના કારણરૂપ સ્નેહગુણના સદ્ભાવ વિના સંભવી શકતો નથી તેથી એમ માનવું જોઇએ કે તે બે પુદ્ગલ પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ અવશ્ય હોય છે અને તે સ્નેહગુણ તે પરમાણુઓના સંયોગથી ત્યાં પ્રકટ થઇ ગયો એવું પણ નથી. તે ગુણ પ્રત્યેક પરમાણુમા પહેલેથી જ મોજૂદ હતો "कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति" શા કારણે બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સયોગ પામીને સ્કધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે? આ પ્રકારના ગૌતમના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા પ્રભુ કહે છે "दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए" તે બે પરમાણુમા સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે "तम्हा" તેથી "दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો ચીકાશ હોવાને કારણે એક

स्नेहकायो विद्यते एव, यत सार्धपुद्गलस्य सद्भावेन पूर्वपक्षिभिरेव स्वीकारात्, यतस्तैरेवोक्त ' तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते विभज्जमाणा दुहावि विहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगपएसो दिवड्ढे एगपएसो दिवड्ढ " इति एतावता सार्धपुद्गलस्य सद्भावाभ्युपगमेन एकैकस्यापि स्नेहोभ्युपगत एवेति कथं स्नेहाभावेन परमाणुद्विकयोः संघातासाव स्यात् अपि तु द्वयोरपि परमाण्वोः सघात स्यादवेति भावः। यच्चोक्तम् एकत सार्धस्तदप्ययुक्त एकस्य परमाणोरर्धो

कारण आपस में चिपक जाते हैं। तीन परमाणुओं का ही, चार परमाणुओं का ही सघात होता है सो यह बात नहीं है। दो परमाणुओं में स्नेहकाय मौजूद है यह बात पूर्वपक्षी के इस कथन से भी ज्ञात होती है जो उसने ऐसा कहा है कि (तीन पुद्गल परमाणु आपस में चिपक जाते हैं और जब उनका विभाग किया जाता है तो उनके १॥ देश १॥ देश परमाणुओं के दो विभाग और १-१ परमाणु के ३ विभाग बन जाते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि दो परमाणुओं में स्नेहगुण-चिकनाहट न होता तो तीन पुद्गल परमाणुओं के जब १॥-१॥ के दो टुकड़े जो उन्हों ने बनाने की बात कही है वह कैसे बन सकती है। अतः उनकी इस मान्यता से यह बात अच्छी तरह पक्की जाता है-प्रमाणित-हो जाता है कि उन्होंने स्वयं दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण माना है। नहीं तो १॥-१॥ के तीन पुद्गल परमाणुजन्य सघात के दो हिस्से नहीं बन सकते हैं। इसी कथन से यह कथन भी साबित हो जाता है कि जब १॥ पुद्गल परमाणुओं का आपस में चिपक जाना तुमने स्वीकार किया है तो

બીજા સાથે ચોટી જાય છે તથા પરમાણુનો કે ચાર પરમાણુનો જ સંઘાત થાય છે એવું નથી. બે પરમાણુ સ્નેહકાય મૌજૂદ હોય છે એ વાતનું તો અન્ય તીર્થિકોના પણ કથન પરથી પણ સમર્થન થાય છે-કે ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુ એક બીજા સાથે ચોટી જાય છે અને જ્યારે તેમના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ અથવા ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ થાય છે' કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો બે પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ (ચીકાશ) ન હોય તો ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુઓ વચ્ચે સંબન્ધના ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ અને ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ કેવી રીતે બની શકે? તેથી તેમની એ માન્યતા પરથી પણ આ વાત સિદ્ધ થાય છે કે બે પરમાણુમાં સ્નેહગુણ હોય છે નહીં તો ત્રણ પરમાણુના સંઘાતથી ઉત્પન્ન થયેલ સંઘાતથી ૧॥-૧॥ ના બે વિભાગ બની શકત નહીં એજ કથન પરથી એ વાત પણ સાબિત થઈ જાય છે કે જો ૧॥ દેશ પુદ્ગલ પરમાણુઓનું એક બીજા સાથે

करणे परमाणुत्वाभावप्रसङ्गः स्यात् अत एकस्य परमाणोर्न भागौ भागा वा भवन्ति किन्तु परमाणुद्वयस्यैव भागः संभवतीत्याशयेनाह—'ते भिज्जमाणा' इत्यादि। 'ते भिज्जमाणा दुहा कज्जति' तौ भिद्यमानौ द्विधा क्रियेते, द्वौ परमाणुपुद्गलौ संहत्य स्कन्धतया परिणतौ, तयोर्यदि द्वौ भागौ क्रियेते, तदा 'दुहा

यह बात अर्थात् आपन्न है कि एक पुद्गल परमाणु में भी स्नेहगुण है। अतः जब यह बात प्रमाण से प्रतीत कोटि में आ रही है कि एक परमाणु में भी स्नेहगुण है, तो फिर ऐसा कथन कैसे युक्ति युक्त माना जा सकता है कि दो परमाणुओं में स्नेहगुण न हो सकने के कारण उनकी आपस में चिपकना नहीं होता है। अर्थात् उनका संघात नहीं बनना है। अतः यह मानना चाहिये कि दो परमाणुओं का भी संघात होता ही है। तथा अभी जो ऐसा कहा है कि तीन परमाणु जन्य संघात के जब हिस्से किये जाते हैं तो उसके १।।-१।। परमाणु के दो हिस्से भी बन जाते हैं सो ऐसा कहना ठीक नहीं जचता है-कारण जब परमाणु का अर्धीकरण किया जावेगा तो उसमें परमाणुता के अभाव होने का प्रसग आ जावेगा। परमाणु का तात्पर्य तो यही है कि जिसका फिर हिस्सा-भाग न हो। अतः एक परमाणु में न दो भाग होते हैं और न अनेक भाग ही होते हैं। भाग परमाणुद्वय के ही संभवते हैं। इसी आशय को लेकर सूत्रकार कह रहे हैं कि (ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति)

ચોટી જવાનુ તમે સ્વીકારતા હો તો એ વાત પણ તમારે સ્વીકારવી જ પડશે કે એક પુદ્ગલ પરમાણુમાં પણ સ્નેહગુણ હોય છે, આ પ્રમાણે જ્યારે એક પરમાણુ પુદ્ગલમાં પણ સ્નેહગુણ હોવાનું પ્રમાણ મળે છે ત્યારે એ વાત કેવી રીતે સગત માની શકાય કે બે પરમાણુ પુદ્ગલોમાં સ્નેહગુણનો અભાવ હોવાથી તેમનો સ ઘાત-સંયોગ થતો નથી? ઉપરોક્ત પ્રમાણને આધારે તો એમ જ માનવું પડશે કે બે પરમાણુ પુદ્ગલોનો સંઘાત (સંયોગ) પણ થઈ શકે છે વળી અન્ય તીર્થિકો એવુ જે કહે છે કે ત્રણ પરમાણુના સંઘાતથી બનેલ સ્કન્ધના ૧।।-૧।। પરમાણુના બે વિભાગ પડે છે, તે વાત પણ સાચી નથી. કારણ કે બે પરમાણુનું અર્ધિકરણ કરવામા આવે તો તેમાં પરમાણુ પણાના અભાવનો પ્રસ ગ પ્રાપ્ત થશે. કારણ કે પરમાણુનું વિભાજન થઈ શકતું નથી. એટલે કે એક પરમાણુના બે ભાગ પણ થતા નથી અને અનેક ભાગ પણ થતા નથી પરમાણુ દ્વયના જ ભાગ સ ભવી શકે છે તે કારણે જ સૂત્રકાર કહે છે કે "ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति" સંયોગ પામેલા બે પરમાણુ

कज्जमाणा एगपओ परमाणुपोग्गले एगपओ परमाणुपोग्गले भवइ' इति क्रियमाणौ एकतः परमाणुपुद्गल एकत परमाणुपुद्गलो भवति। यत्र द्वयोः परमाण्वोः सघाव स्नेहकार्यबलादभूयत्र पुनर्द्विधाभाग एकैक परमाणुर्भवति, न हु सार्धता कदाचिदपि सभवति, सघातेति परमाणुरूपमेव न स्यादिति। द्वयो

जब वे दो परमाणु विभक्त हो जाते हैं तो एक १ परमाणु के दो भाग हो जाते हैं-तात्पर्य यह है कि जब दो परमाणु सघातरूप में परिणत हो जाते हैं और जब वह संघात विभक्त होता है। तो उस सघात के १-१ परमाणुरूप में दो हिस्से हो जाते हैं यही बात (दुहा कज्जमाणा एग पओ परमाणुपोग्गले भवइ) इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है। इस कथन से सूत्रकार ने यह बात स्पष्ट की है कि जब दो परमाणु स्नेहकार्य के कारण आपस में मिलकर एक संघातरूप स्कन्ध को बनाते हैं और उसे विभक्त किया जाता है तो उसके १-१ परमाणु रूप में दो भाग हो जाते हैं तो इस अवस्था में पहिले प्रतिपक्षी ने जो ऐसा कहा है कि तीन पुद्गल परमाणु से जब जब स्कन्ध तैयार होता है और जब उसके हिस्से किये जाते हैं तो १।।-१।। परमाणु के दो भी विभाग हो जाते हैं तो उनका इस कथन के अनुसार ऐसा कथन अयुक्त है। क्यों कि परमाणु में आधापन बनती नहीं है। यह सार्धता तो जब बनती कि एक परमाणु के दो भाग होते। परन्तु एक परमाणु के भाग हो नहीं होते। कारण-भाग मानने पर परमाणु में परमाणुत्व का ही विघात होता है।

જ્યારે બ્યા બાબ છે ત્યારે બેઠ, બેઠ પરમાણુ બાબા બે વિભાગ બાબ છે બેજ બાત સૂત્રકારે 'दुहा कज्जमाणा एगपओ परमाणुपोग्गले भवइ" આ સૂત્રપાઠ વડે પ્રકટ કરી છે આ કથન વડે સૂત્રકારે બે વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે સ્નેહકાર્યને કારણે બેઠ બીજા આવે સચોગ પામીને બેઠ સ્કધરૂપે પરિણમેલ બે પરમાણુપુદ્ગલોનુ જ્યારે વિભાજન કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંના બેઠ બેઠ પરમાણુના બે ભાગ પડી જાય છે આ બાબતમા વિપક્ષીબોનું જે મત બ્યા બાબત બતાવ્યુ છે કે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોથી અનેક સ્કન્ધનુ જ્યારે વિભાજન કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧।।-૧।। પરમાણુના બે વિભાગ પડી જાય છે તેમનુ બા કથન વિચારવામા આવે તો અયુક્ત લાગે છે કારણ કે પરમાણુમાં અર્ધાપણુ સભવતુ નથી જો બેઠ પરમાણુના બે ભાગ થઈ શકતા હોત તો જ અર્ધાપણુ સભવી શકત પરતુ બેઠ પરમાણુના બે ભાગ થતા જ નથી જો પરમાણુના બે અથવા અનેક ભાગ માનવામાં આવે તો પરમાણુમાં પર-

परमाण्वोः स्नेहकायसद्भावात् संघातं तद्विभागं च प्रदर्श्य त्रयाणां परमाणूनां संघातं तद्विभागं च वक्तुकाम आह-' तिण्णि ' इत्यादि । 'तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ' त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, त्रयाणां परमाणूनामेकैकश परस्परं विलक्षणः सयोगो जायते येन स्कन्धस्य समुत्पत्तिर्भवतीति भावः । कथं त्रयो मिलिता भवन्ति तत्राह-' कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ' कस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, केन कारणेन त्रयाणां संमेलनं भवतीति-प्रश्नः । उत्तरयति—' तिण्हं परमाणुपोग्गलाण अत्थि सिणेहकाए ' त्रयाणां-परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः, ' तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ-साहणंति ' तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, यस्मात् त्रिषु परमाणुषु विद्यते स्नेहकायः संघातकारणम् तस्मात् कारणात् त्रयाणां परमाणूनां परस्पर संमेलनं भवत्येवेति भावः । ' ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि

इस तरह दो परमाणुओं के स्नेहकाय के सद्भाव से हुए संघात को और उसके विभाग को दिखाकर अब सूत्रकार तीन परमाणुओं के संघात को और उसके विभाग को दिखाने के लिये सूत्र कहते हैं कि-(तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति,) तीन परमाणुओं में के हरएक परमाणु का आपस में विलक्षण संयोग होता है कि जिससे स्कन्ध की उत्पत्ति होती है । ये तीन परमाणु पुद्गल किस कारण से आपस में मिलते हैं-तो इसका उत्तर (तिण्णं परमाणुपोग्गलाण अत्थिसिणेहकाए) तीन परमाणुपुद्गलोंमें संघात का कारण स्नेहकाय होता है (तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) इस कारण वे तीन परमाणु पुद्गल एक स्कन्धरूप में मिल जाते हैं । (ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जं-

---

માણુત્વપણાનો જ નાશ થાય છે આ રીતે સ્નેહકાયના સદ્ભાવે બે પરમાણુઓના સયોગનુ અને તેમના વિભાગોનુ પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર ત્રણ પરમાણુઓના સઘાતનુ અને તેમના વિભાગનુ નિરૂપણ કરવા માટે કહે છે કે " तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति " ત્રણ પરમાણુઓમાંના પ્રત્યેક પરમાણુનો પરસ્પરમા વિલક્ષણ સયોગ થવાથી તેઓ એક સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોનુ શા કારણે સયોજન થાય છે તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે-" तिण्ण परमाणुपोग्गलाण अत्थि सिणेहकाए " ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોના સયોગનુ કારણ સ્નેહકાય છે. " तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति " તે કારણે તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કધરૂપે પરિણમે છે " ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जति " જો તે ત્રણ પર-

कज्जमाणा' ते त्रिधामाना द्विधाऽपि त्रिधाऽपि क्रियन्ते, सदेव स्कन्धतया यदा परिणताः परमाणव विश्लिष्यन्ते तदा ते भागद्वये भागत्रये वाऽवतिष्ठन्ते इत्यर्थः, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ' द्विधा क्रियमाणा एकतः परमाणुपुद्गलः एकतो द्विप्रदेशिकः स्कन्धो भवति, यदा त्रयाणां परमाणूनां स्कन्धतयाऽवस्थितानां विभागो भवति, तदा एकस्मिन् प्रदेशे एकः परमाणुरवस्थितो भवति परस्मिन् प्रदेशे च द्विप्रदेशिकः स्कन्धस्तिष्ठति न तु सार्धं सार्धतया परमाणवोऽवस्थिता भवन्तीति भावः। 'तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति' त्रिधा-क्रियमाणास्त्रयः परमाणु पुद्गला भवन्ति, यदि तेषां विभागो भवेत् तदा त्रय परमाणव एकैकविभिन्ना एवावतिष्ठेरन्नित्यर्थः। 'एवं जाव चउण्हि' एव यावत् चतुः, चतुः संख्यकपरमाणुपुद्गलस्कन्धता चान्य

ति) જ્યારે આ ત્રણ પરમાણુ જન્ય સ્કન્ધ વિભક્ત અવસ્થાવાળા કરી જાય છે તો એના ભાગ બે તરફ થી પણ હોય છે અને ત્રણ તરફ થી પણ હોય છે-તાત્પર્ય એ છે કે સ્કન્ધરૂપથી પરિણત થયેલ જે પરમાણુ આપસમાં વિભાગ ને પ્રાપ્ત હોય છે ત્યારે એ ભાગદ્વયમાં યા ભાગત્રયમાં અવસ્થિત રહે છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणु पोग्गले, एगयओ दुपएसिए परमाणु पोग्गले) ભાગદ્વય માં અવસ્થિત રહેવા પર એક ભાગ માં એક પરમાણુ રહે છે અને બીજા ભાગ માં દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ રહે છે ૧॥-૨॥ પરમાણુ ના બે ભાગ નહીં હોય છે। અને જ્યારે ભાગત્રય માં એ પરમાણુસ્થિત રહે છે ત્યારે એક ૨ ભાગ માં એક ૨ પરમાણુ સ્થિત રહે છે। તાત્પર્ય એ છે કે યદિ એ સ્કન્ધ ના ત્રણ ભાગ કરવામાં આવે તો એક ૨ ભાગ માં એક ૨ પરમાણુ ભિન્ન ૨ રૂપ માં રહે છે। (एवं जाव चउण्हि) એજ પ્રકારે ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોની બનેલ પણ સ્કન્ધ

આપણે જન્ય સ્કન્ધનું વિભાજન કરવામાં આવે તો તેમના બાબ બે રીતે પણ પડે છે અને ત્રણ રીતે પણ પડે છે એટલે કે તેમના બે વિભાગ પણ પડે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ પડે છે "दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए परमाणुपोग्गले" જ્યારે તેમના બે વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે એક વિભાગ એક પરમાણુ વાળો અને છે અને બીજો વિભાગ દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધરૂપ બને છે પરંતુ ૧॥-૨॥ પરમાણુના બે ભાગ બનતા નથી અને જ્યારે તેનું ત્રણ ભાગમાં વિભાજન કરવામાં આવે છે ત્યારે પ્રત્યેક ભાગ એક પરમાણુનો બને છે તાત્પર્ય એ છે કે જો તે સ્કન્ધના ત્રણ ભાગ કરવામાં આવે તો દરેક ભાગમાં એક એક પરમાણુ ભિન્ન રૂપે રહે છે 'एवं जाव चउण्हि' એજ પ્રમાણે ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોની બનેલમાં પણ સમજવું

यूथिकालापकव्याख्यायां द्रष्टव्या । चतुर्णां परमाणूनाम् स्नेहकायवलात् संयोगे स्कन्धाकारो भवति, द्विधा विभागे कृते सति एकत्रैकः परमाणुरवस्थितो भवति, अपरभागे त्रिप्रदेशिकः स्कन्धस्तिष्ठति । 'पंचपरमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति' पंच परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते 'एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति' एकतः संहत्य स्कंधतया क्रियन्ते भवन्तीत्यर्थः, पञ्च परमाणुपुद्गला एकैकशः-परस्परं संमिलिता भवन्ति मिलित्वा च स्कन्धाकारेण-परिणता भवन्तीत्यर्थः । स्कन्धविषये उत्तरयति-'खंधे वि य णं से असासए' स्कन्धोऽपि च खलु सः अशाश्वतः स च स्कन्धो नैकान्ततो नित्य अपि तु अनित्यः, उत्पत्ति विनाशस्य

अन्ययूथिकालाप की लिखी जा चुकी व्याख्या में लिखी जा चुकी है। अतः वहां से इसे देख लेना चाहिये। चार परमाणुओं का स्नेहकाय के बल से संयोग होने पर स्कन्धाकार होता है। इसका जब विभाग करते हैं तो वे दो प्रकार से होते हैं एक प्रकार के विभाग में केवल एक परमाणु अवस्थित रहता है-और दूसरे प्रकार के विभाग में त्रिप्रदेशी स्कन्ध रहता है। (पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) पांच परमाणु पुद्गलों का स्नेहकाय के बल से संयोग होने पर स्कन्धाकार होता है। (एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति) यही बात इस पाठ द्वारा प्रकट की गई है। तात्पर्य कहने का यह है कि पांच परमाणु पुद्गल एक २ कर आपस में मिल जाते हैं और मिलकर वे स्कन्धाकार से परिणत हो जाते हैं। (खंधे वि य णं से असासए) परमाणुओं के आपस में मिलने से जो स्कन्ध उत्पन्न होता है वह परमाणुओं की तरह एकान्त नित्य

તેનુ વર્ણન અન્યયૂથિકાલાપની વ્યાખ્યામાં આપવામા આવ્યુ છે તો ત્યાથી સમજી લેવું, ચાર પરમાણુઓના સ્નેહકાયને કારણે સઘાત થવાથી તેઓ એક સ્કધ રૂપે પરિણમે છે જ્યારે તેમના વિભાગ કરવામા આવે છે ત્યારે બે રીતે વિભાગ થાય છે, એક પ્રકારના વિભાગમા ફક્ત એક જ પરમાણુ હોય છે અને બીજા પ્રકારના વિભાગમાં ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધ હોય છે. " पच परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति " પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલોનો સ્નેહકાયને કારણે સયોગ થઇને તેઓ એક સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. એજ વાત " एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जति " આ સૂત્રપાઠ વડે દર્શાવવામા આવેલ છે તાત્પર્ય એ છે કે પાચ પરમાણુ પુદ્ગલો એક બીજા સાથે મળી જઇને સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. " खंधे वि य णं से असासए " પરમાણુઓ એક બીજા સાથે મળી જઇને જે સ્કન્ધ બને છે તે સ્કન્ધ પરમાણુઓની જેમ નિત્ય હોતો નથી પણ અનિ-

मत्यपत्त प्रमानुभूयमानत्वात्। 'सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य' सदा समितमुपचीयते चापचीयते च, सदा=सर्वस्मिन् काले, समित=नियमितं=ध्रुवं भवनिमित्तत्वादस्य स एकरूपश्चापचयौ प्राप्नोतीत्यर्थः।

यच्चान्यतीर्थिकैरुक्तम्—पञ्च परमाणुपुद्गलाः संहताः कर्मतया भवन्ति, तदपि न युक्तम्, कर्मणोऽनन्तपरमाणुस्कन्धरूपतया पञ्चाणुस्कन्ध

नहीं होता है, किन्तु अशाश्वत-अनित्य होता है-सदा रहने वाला नहीं होता है। क्यों कि उसमें उत्पत्ति और विनाश होता ये दो धर्म प्रत्यक्ष से ही अनुभूयमान होती हैं। (सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) वह स्कन्धरूप पर्याय सर्वदा ही-सब समय में ही-नियम से अनित्य होने के कारण चय और अपचय को प्राप्त करती रहती है।

जो अन्यतीर्थिकजनों ने ऐसा कहा है कि (पञ्च परमाणुपुद्गला संहताः कर्मतया भवन्ति) पांच परमाणुपुद्गल संहत होकर-परस्पर में मिलकर-कर्मरूप से परिणत हो जाते हैं सो उनका ऐसा कहना भी युक्त नहीं है। क्यों कि कर्मरूप जो पर्याय है वह अनंत पुद्गल परमाणुओं के समेलन से निष्पन्न होती है। अतः वह अनंत स्कन्ध रूप होती है। पांच परमाणुओं के संमेलन से जो पर्यायरूप स्कन्ध उत्पन्न होता है वह तो केवल स्कन्ध रूप ही होता है। तथा जीव के स्वभाव को आवरण करने वाला कर्म होता है-अर्थात् कर्म का यह स्वभाव है कि वह आत्मा के ज्ञानादिक गुणों का आवरण करे। ज्ञानादिक गुणों का आवरण करना यही जीव का आवरण करना है। क्यों कि गुणी

त्व (अशाश्वत) होय छे शाश्वत ते नेनी उत्पत्ति अने विनाश प्रत्यक्ष अनुभवी शकाय छे, "सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य" ते स्कन्ध पर्याय सर्वदा-अमुक समये-नियमथी ज अनित्य होवाने कारणे चय अने अपचय पामता रहे छे

अन्य तीर्थिकोनु "पञ्च परमाणु पुद्गला संहताः कर्मतया भवन्ति" पांच परमाणु पुद्गलोनु संयोजन थईने तेओ कर्मरूपे परिणमे छे" आ कथन पण योग्य नथी. कारण के कर्मरूप पर्यायनी उत्पत्ति अनंत परमाणु पुद्गलोना संयोग थीज थाय छे तेथी ते अनंत स्कंधरूप होय छे पांच परमाणुना संयोगथी जे पर्यायरूप स्कंध उत्पन्न थाय छे ते तो केवल स्कंधरूप ज होय छे कर्म जीवना स्वभावने ढांके छे एटलेके आनो जेवो स्वभाव होय छे के ते आत्माना ज्ञानादिक गुणोने ढांकी दे छे एटले ज्ञानादिक गुणोनु आवरण

च स्कन्धमात्ररूपत्वात्, तथा कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते तत् कथं पञ्च-परमाणुस्कन्धमात्ररूप सत् असंख्यातप्रदेशात्मकं जीवमावृणुयादिति। तथा कर्मणो यत् शाश्वतत्वमुक्तं तदपि न संगतम्, तथासति कर्मणः शाश्वतत्वे क्षयोपशमादीना मभावात् ज्ञानादीनामुत्पत्तिरेव न स्यात् ज्ञानादीनां सर्वानुभवसिद्धहानिवृद्धचोर-भावप्रसंगात्, दृश्यते च ज्ञानादीनां हानिर्वृद्धिश्च। तथा यच्चोक्तम्-कर्म सदा चीयतेऽपचीयते चेति तदप्येकान्तनित्यत्वे न संभवति एकान्तनित्यस्य चयो-

---

और गुण में अभेद विवक्षावश भेद नहीं होता है। यही बात दिखाने के लिये टीकाकार ने (कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते) यह कहा है है। अतः जब कर्म का स्वभाव जीव को (आवरण करने का ही है-तब यह विचार ने जैसी बात है कि असंख्यात प्रदेशवाले जीव का पांच प्रदेश वाला कर्म कैसे आवरण कर सकता है। तथा कर्म की जो शाश्वत कहा गया है वह भी संगत नहीं है। क्यों कि कर्म यदि शाश्वत मान लिया जावे तो उसकी जो क्षयोपशम आदि अवस्थाएँ होती हैं वे नहीं हो सकेंगी उनका अभाव मानना पड़ेगा। इनके अभाव में ज्ञानादिकों की उत्पत्ति होने का अभाव आवेगा। क्यों कि कर्म के क्षयोपशम आदि से ही तो ज्ञानादिकों की उत्पत्ति होती है। तथा ज्ञानादिकों में जो हानि और वृद्धि कर्म के क्षयोपशम से जन्य होती है वह भी नहीं हो सकेगी इनके भी अभाव होने का प्रसंग प्राप्त होगा। परन्तु ऐसा तो है नहीं क्यों कि ज्ञानादिकों को हानि और वृद्धि लोक में स्पष्टरूप से देखने में

કરવું એટલે જીવનું આવરણ કરવું કારણ કે ગુણી અને ગુણમાં અભેદની અપેક્ષાએ ભેદ મનાતો નથી. એજ વાત બતાવવાને માટે સૂત્રકારે કહેયું છે કે " कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते " આ રીતે જ્યારે કર્મનો સ્વભાવ જ જીવને આવરણ કરવાનો છે ત્યારે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા જીવનું પાંચ પ્રદેશ વાળુ કર્મ કેવી રીતે આવરણ બની શકે ! તથા કર્મને જે શાશ્વત કહે છે, તે પણ સંગત નથી- જો કર્મને શાંશ્વત માનવામાં આવે તો તેની જે ક્ષયોપ શમ વગેરે અવસ્થાઓ હોય છે તે હોઈ શકે નહીં તેમનો અભાવજ માનવો પડે અને તેનો જો અભાવ હોય તો જ્ઞાનાદિકની ઉત્પત્તિનો પણ અભાવ જ માનવો પડશે, કારણ કે કર્મના ક્ષયોપશમ વગેરેથીજ જ્ઞાનાદિ પ્રકટ થય છે. તથા જ્ઞાનાદિકમાં જે હાનિ અને વૃદ્ધિ કર્મના ક્ષયોપશમથી થયા કરે છે તે પણ થઇ શકે નહીં તેમનો પણ અભાવ માનવો પડે પરતુ એવુ તો બનતુ નથી જ્ઞાનાદિકની હાનિ અને વૃદ્ધિ લોકમા સ્પષ્ટરૂપે જોવામાં આવે છે,

पक्षपाताद् नहि गगनस्यैकान्तनित्यस्य कदाचिदपि चयापचयौ भवत इति न कर्मण एकान्तशाश्वतत्वम्, अपि तु अशाश्वतत्वमेव, तथा सत्येव चयापचयादीनां संभव इति। पूर्वं कथितमन्यतीर्थिकैः 'पुव्विं भासा भासा भासिज्जमाणी भासा अभासा' इत्यादि, तत्खण्डयितुमुपक्रमते-'पुव्विं भासा अभासा' इत्यादि, 'पुव्विं भासा अभासा' पूर्वं भाषा अभाषा, पूर्वं-भाषणाद् प्राक्काले या भाषा सा न भाषा, अभाषेत्यत्र नञ् शब्दोऽभावार्थकः, तथा भाषणात् प्राक्काले भाषात्व तस्य नास्ति, भाषणात्पूर्वं भाषोत्पत्तेरप्यभावात्। एतावता भाषणात् प्राक्का

आती है। तथा-ऐसा जो कहा है कि कर्म सदा चय और अपचय को प्राप्त होता रहता है-सो यह बात कर्म की एकान्त शाश्वतता में बनती ही नहीं है। क्यों कि जो पदार्थ एकान्ततः नित्य होता है उसमें चय और अपचय नहीं होते हैं। जैसे आकाश एकान्ततः नित्य है-सो उसमें चय और अपचय कभी भी नहीं होता है। इस तरह विचार करने पर कर्म में एकान्ततः शाश्वतता नहीं बनती है। किन्तु उसमें अशाश्वतता ही आती है। क्यों कि कर्म को इस प्रकार से मानने पर ही उसमें चय और अपचय होना सुसंगत होते हैं। तथा जो अन्यतीर्थिकों ने ऐसा कहा है कि (पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी अभासा) इत्यादि-भाषण से पहिले जो भाषा है वह भाषा है बोलते समय की यह भाषा भाषा नहीं है इस बात को अब निराकरण किया जाता है-(पुव्विं भासा अभासा) इत्यादि, भाषण से पहिले भाषा में भाषापन नहीं होता है

તથા જેવું જે કહ્યું છે કે "કર્મ સદા ચય અને અપચય પામ્યા કરે છે," એ વાત તો કર્મની એકાન્તતઃ શાશ્વત દશામાં બની શકતી જ નથી, કારણ કે જે પદાર્થ એકાન્તતઃ નિત્ય હોય છે તેમાં ચય અપચય થતા નથી જેમ કે આકાશ એકાન્તતઃ નિત્ય છે તો તેમાં ચય અને અપચય કદી પણ થતાં નથી આ રીતે વિચાર કરવામાં આવે તો કર્મમાં એકાન્ત શાશ્વતતા સંભવતી નથી, પણ તેમાં અશાશ્વતતા જ સંભવે છે આ રીત કર્મમા અશાશ્વતતા માનવામાં આવે તો જ તેમાં ચય અને અપચય થવાનુ સંભવી શકે છે હવે અન્યતીર્થિકોનુ આપણા સ્વસિદ્ધાંતમાં જે મંતવ્ય છે તેનુ ખંડન કરવામાં આવે છે 'पुव्विं भासा भासा भासिज्जमाणी अभासा" તેઓ કહે છે કે આપણુના પહેલાની જે ભાષા છે તેને જ ભાષા કહેવાય છે બોલવામા આવતી ભાષા, ભાષા નથી તો તેમના મતનુ 'पुव्विं भासा अभासा' ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે ખંડન કરવામાં આવ્યુ છે કે ભાષણની પહેલા ભાષામાં ભાષાપણુ હોતુ

लिक्यामेव भाषायां यत् भाषात्वं व्यवस्थापितं परैस्तन्निराकृतम्, । ननु यदि उच्चारणात् प्राक् भाषा न भवति तदा कदा भाषा भवति तत्राह–' भासिज्जमाणी ' इत्यादि, ' भासिज्जमाणी भासा भासा ' भाष्यमाणा भाषा भाषा, उच्चारणसमये या वर्तमानकालिकी भाषा सैव भाषेति भावः । भासा समयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा ' भाषासमयव्यतिक्रान्ते च खलु भाषिता भाषा अभाषा, उच्चारणानन्तरकाले भाषितापि न भाषा भवति । यत्तैः कथितं वर्तमान

क्यों कि भाषण से पहिले भाषोत्पत्ति का भाषामें अभाव रहता है। अतः वह अभाषा है। अभाषा में जो नञ् शब्द है वह अभावार्थक है। इससे यह बात प्रकट की गई कि बोलने से पहिले भाषा में भाषापन नहीं होता है। एतावता भाषण से पहिले समय में जो अन्यतीर्थिक जनों ने भाषा में भाषापन व्यवस्थापित किया है वह निराकृत हो जाता है। यदि यहां पर कोई ऐसी आशंका करे कि उच्चारण से पहिले यदि भाषा भाषा नहीं होती है तो भाषा कब होती है? इसके समाधान निमित्त सूत्रकार कहते हैं कि (भासिज्जमाणी भासा भासा) उच्चारण समय में जो वर्तमान कालिकी भाषा है वही भाषा है। इसी तरह से (भासा समयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा) भाषा का समय व्यतिक्रान्त हो जाने पर भाषिता–बोलीगई–भाषा अभाषा है–भाषा नहीं है। तात्पर्य इसका यह है कि उच्चारण करने के अनन्तर काल में बोली गई भी भाषा भाषा नहीं होती है। तथा जो अन्यतीर्थियों

નથી- કારણ કે ભાષણ પહેલાં ભાષામા ભાષોત્પત્તિનોજ અભાવ રહે છે તેથી તે અભાષા છે- અભાષામાં જે નઞ્ શબ્દ છે તે અભાવાર્થક છે. તેની મારફત એ વાત દર્શાવવામા આવી છે કે બોલ્યા પહેલાંની ભાષામા ભાષા પણ હોતુ નથી. તેથી ભાષણથી પહેલાના સમયની ભાષામાં અન્ય તીર્થિકોએ જે ભાષાપણુ બતાવ્યું છે તેનું નિરાકરણ થઈ જાય છે કદાચ અહીં કોઈને એવી શંકા થાય કે ઉચ્ચારણ પહેલાની ભાષાને જો ભાષા ન કહેવાય! તો ભાષા કોને કહેવાય? તે શંકાના સમાધાન માટે સૂત્રકાર કહે છે કે " भासिज्जमाणी भासा; भासा " ઉચ્ચારણ સમયે જે વર્તમાન કાળની ઉચ્ચારાતી ભાષા છે તેને જ ભાષા કહે છે એજ પ્રમાણે " भासासमयवीइक्कं तं च णं भासिया भासा अभासा " ભાષાનો સમય વ્યતીત થઈ ગયા પછી બોલવામા આવેલી ભાષા પણ અભાષા છે. ભાષા નથી તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઉચ્ચારણ કર્યા પછીના કાળે બોલાયેલી ભાષા પણ ભાષા કહેવાતી નથી. પ્રતિક્ષી એવું જે કથન કરે છે કે વર્તમાન

समयस्यातिसूक्ष्मतया व्यवहारानुपयोगित्वेन वर्तमानकालिकी न भाषेति, तदसत्, वर्तमानसमयस्यैव विद्यमानतया व्यवहारसमयोजकत्वात्, अतीतानागतसमयस्य तयोरसत्त्वेन व्यवहारानुपयोगित्वादिति। यत्तैः कथितम् 'अभासओ भासा' इत्यादि, तत्प्रत्युत्तरं ददद्भिः-'सा किं भासओ भासा अभासओ भासा' सा किं भाषमाणस्य भाषा अभाषमाणस्य भाषा,-भाषमाणस्य वर्तमानकालिकोच्चारणकर्तुरेव भाषा भाषा भवति अनुच्चारयितुर्वा भाषेति प्रश्नः, तदुत्तरम्-'भासओ णं भासा नो खलु सा अभासओ भासा' भाषमाणस्य वर्तमानकालिकभाषणकर्तुरेव भाषा, नो खलु सा अभाषमाणस्य भाषा, उच्चारणात् प्राङ् न भाषा, उच्चारणानन्तरं च सा न भाषा किन्तु उच्चारणसमये उच्चारयितुरेव या भाषा सैव भाषा भवति, अतीतानागतकालिकी अनुच्चारयितृपुरुषपर्यवस्थिनी भाषा न भाषा

ने ऐसा कहा है कि वर्तमान काल अतिसूक्ष्म होने से व्यवहार में अनुपयोगी होता है अर्थात् व्यवहार का अंग नहीं होता है इस कारण वर्तमानकाल संबंधी भाषा भाषा नहीं होती है—सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है—क्यों कि वर्तमान जो समय होता है वही विद्यमान होने के कारण व्यवहार का प्रयोजक होता है। अतीत अनागत जो समय हैं वे तो असत्स्वरूप होते हैं—इस कारण वे व्यवहार में अनुपयोगी हुआ करते हैं। तथा अन्यतीर्थिकोंने जो पहिले ऐसा कहा है कि (अभासओ भासा) नहीं बोलते हुए की भाषा भाषा है—सो इसका उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं कि-(भासओ णं भासा, नो खलु सा अभासओ भासा) वर्तमानकाल में जो पुरुष उच्चारण कर रहा है उसी पुरुष की भाषा भाषा होती है, उच्चारण के पहिले और उच्चारण के बाद में भाषा

કાળ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી વ્યવહારમાં અનુપયોગી હોય છે એટલે કે વ્યવહારનું અંગ બનતો નથી, તે કારણે વર્તમાન કાળની, ભાષા ભાષા નથી તેમનું તે કથન પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે વર્તમાન સમય જ વિદ્યમાન હોવાથી વ્યવહારનો પ્રયોજક હોય છે જ્યારે ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળનો સમય તો અસત્ રૂપ હોય છે તે કારણે તેઓ વ્યવહારમાં અનુપયોગી રહ્યા કરે છે તથા પ્રતિપક્ષીએ પહેલાં એવું જે કહ્યું છે કે "અભાસઓ ભાસા" નહીં બોલનારની ભાષા ભાષા કહેવાય છે તો તેમની તે માન્યતાનું ખંડન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે 'ભાસઓ ણ ભાસા ન ખલુ સા અભાસઓ ભાસા" વર્તમાનકાળે જે પુરુષ ઉચ્ચારણ કરી રહ્યો હોય છે એજ પુરુષની ભાષાને ભાષા કહેવાય છે, ઉચ્ચારણ પહેલાની કે ઉચ્ચારણ પછીની ભાષાને ભાષા કહેવાતી નથી. ભૂતકાળ

भवतीति सूत्राशयः। यदप्युक्तं 'भाषासमयव्यतिक्रान्ते' इत्यादि, तदपि न युक्तं भाष्यमाणभाषाया अभावे 'भासा समय वीइक्कंतं च णं' इत्यस्याभिलापस्याभावप्रसंगात् यश्च प्रतिपाद्यस्याभिधेये प्रत्ययोत्पादकत्वादिति हेतुः सोऽप्यहेतुरनैकान्तिक एव, प्रतिपाद्यपुरुषनिष्ठविषयज्ञानोत्पादकत्वस्य करादिचेष्टानां विद्यमानत्वेपि करादिचेष्टायां भाषात्वस्यासिद्धेरिति। यदपि कथितम्-'अभाषकस्य भाषा भाषा' तदपि न संगतम्, एवं सति सिद्धजीवस्याचेतनस्य वा भाषाप्राप्तिप्रसंगादिति।

भाषा नहीं है। अतीत और अनागत काल में अनुच्चारयिता पुरुष संबंधी भाषा भाषा नहीं होती है। तथा जो उसने ऐसा कहा है कि भाषा समय के व्यतीत हो जाने पर बोली गई भी भाषा भाषा नहीं होती है-सो ऐसा कहना भी अयुक्त है-क्यों कि जब अन्यतीर्थियों ने भाष्यमाण भाषा को भाषारूप से ही अंगीकार नहीं किया है तो (भासासमयवीइक्कंतं च णं) इस अभिलाप के ही अभाव का प्रसंग आता है। अर्थात् ऐसा अभिलाप नहीं बोला जा सकता है। क्यों कि वर्तमानकालिकी भाषा भाषारूप से जब स्वीकार ही नहीं की गई है तो भूतकाल संबंधी भाषा भाषारूप से कैसे मानी जा सकती है। अतः इस सूत्र का अभिलाप ही नहीं हो सकता है। तथा जो भूतकाल की भाषा-पूर्णरूप से बोली गई भाषा-प्रतिपाद्य-सुनने वाले के लिये अभिधेय-वाच्यपदार्थ में-प्रत्ययोत्पादक होती है-अर्थात् पूर्णरूप बोली गई भाषा के सुनने से सुनने वाले व्यक्ति को तद्वाच्यार्थ का बोध हो जाता है-

---

અને ભવિષ્યકાળમા પુરુષે નહી ઉચ્ચારેલી ભાષાને ભાષા કહેતા નથી વળી પ્રતિપક્ષીએ એવુ જે કહ્યુ છે કે ભાષાનો સમય વ્યતીત થયા પછી બોલાયેલી ભાષાને ભાષા કહેવાય તે કથન પણ બરાબર નથી કારણ કે પ્રતિક્ષીએ જ્યારે ભાષ્યમાણ (બોલતી) ભાષાને ભાષારૂપે સ્વીકારી જ નથી ત્યારે "भासा समयवीइक्कंत च ण" તો આ અભિલાપના અભાવનો જ પ્રસગ આવે છે. એટલે કે આ પ્રકારનો અભિલાપજ બોલી શકાય નહી. કારણકે વર્તમાન કાળની ભાષાને જે ભાષારૂપે સ્વીકારી નથી તો ભૂતકાળની ભાષારૂપે કેવી રીતે સ્વીકારી શકાય! તેથી આ સૂત્રનો અભિલાપ જ થઈ શકે નહી. તથા ભૂતકાળની ભાષા પૂર્ણરૂપે બોલાયેલીભાષા પ્રતિપાદ્ય-શ્રોતાને માટે-અભિધેય-વાચ્યપદાર્થ માં પ્રત્યયોત્પાદક થાય છે, એટલે કે પૂર્ણરૂપે બોલાયેલી ભાષા સાંભળવાથી સાંભળનાર વ્યક્તિને તેનો વાચ્યાર્થ સંમજાય છે-તેથી બોધ કરાવનાર હોવાથી ભૂતકાળની ભાષાને ભાષા કહેવી તે પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે તેમાં જે પ્રત્ય-

-- एवं क्रियापि वर्तमानकाले एव पुरस्कृत्योत्पादयेनाह-' पुव्विं किरिया' इत्यादि, 'पुव्विं किरिया अदुक्खा' पूर्वं क्रिया अदुःखा, पूर्वकालिकी या क्रिया सा न दुःखकारणमिति 'जहा भासा तहा भाणियव्वा' यथा भाषा तथा भणितव्या,

अतः बोध कराने वाले होने से यह सूत्रकाल संबंधी भाषा भाषा है सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है-क्यों कि इसमें जो प्रत्यक्षोत्पादकत्व हेतु दिया गया है वह अपने साध्य के अभाव में भी रहता है अतः अनैकान्तिक है। साध्य के अभाव में भी रहने वाला हेतु अनैकान्तिक माना जाता है वह इस प्रकार से-क्यों कि सुनने वाले को-प्रतिपाद्य-जो विषय संबंधी ज्ञान कराया जाता है उसके प्रति हेतुता तो करादि चेष्टाओं में भी आती है। क्यों कि प्रतिपाद्य पुरुष उनकी चेष्टाओं द्वारा वाच्यार्थ का बोध कर लिया करता है। अतः (समय व्यतिक्रान्ते सति भाषिता भाषा भाषा प्रत्यक्षोत्पादकत्वात्) यह हेतु करादि चेष्टाओं में भी चला गया होने से वहां भाषात्व के अभाव में अनैकान्तिक हो जाता है। तथा जो ऐसा कहा गया है कि अभाषा की भाषा भाषा है सो यह कहना भी संगत नहीं है। कारण कि इस प्रकार की मान्यता में सिद्ध जीव और अचेतन पदार्थ में भाषा की प्राप्ति होने का प्रसंग आता है। इसी तरह क्रिया भी वर्तमान काल में ही पुरस्कृत है-इसी आशय से सूत्रकार ने (पुव्विं किरिया अदुक्खा) ऐसा कहा है कि पूर्वकाल में की गई क्रिया दुःख की हेतु नहीं होती है। (जहा

બોધોત્પાદકત્વ હેતુ અપવાદમાં આવેલ છે તે તેના સાધ્યના અભાવમાં પણ રહે છે અનૈકાન્તિક છે સાધ્યના અભાવમાં પણ રહેનાર હેતુને અનૈકાન્તિક હેતુ માનવામાં આવે છે તે આ પ્રમાણે-પ્રતિપાદનને-વિષય (વસ્તુ) સંબંધી જે જ્ઞાન અપાય છે તેના પ્રત્યેની હેતુતા તો કર વગેરેની ચેષ્ટાઓમાં પણ આવે છે કારણ કે પ્રતિપાદ્ય પુરુષ (સાંભળનાર) તેમની ચેષ્ટાઓ વડે પણ વાચ્યાર્થને સમજી શકે છે તેથી "समयव्यतिक्रान्ते सति भाषिता भाषा भाषा प्रत्यक्षोत्पादकत्वात्" તે હેતુ વગેરેની ચેષ્ટાઓમાં પણ ચાલ્યો ગયો હોવાથી ત્યાં ભાષાત્વના અભાવે અનૈકાન્તિક હેતુ થઈ જાય છે તથા અભાષાની ભાષાને ભાષા કહેવી તે પણ સંગત નથી કારણ કે જો આ જાતની માન્યતાને સ્વીકારવામાં આવે તો સિદ્ધ જીવો અને અચેતન પદાર્થમાં પણ ભાષાની પ્રાપ્તિ થવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે એજ રીતે ક્રિયા પણ વર્તમાનના સમયમાં પુરસ્કૃત છે એ આશયથી સૂત્રકારે કહ્યું છે કે-"पुव्विं किरिया अदुक्खा" પૂર્વકાલે કરવામાં આવેલ ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ બનતી નથી, "जहा

यथा भाषाया वर्तमानकाले एव भाषात्वं तथा वर्तमानकालिकक्रियाया एव सुख दुःखादिजनकत्वं न तु पूर्वकालिकीपरकालिक्योः दुःखादिजनकत्वमिति भावः। "किरियावि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा" क्रियापि यावत् करणतः सा दुःखा नो खलु अकरणतो दुःखा, करणतः कुर्वत एव क्रिया दुःखस्य कारणं भवति, तथैव दर्शनात्, न तु अकरणात् क्रिया दुःखकारणं भवति, प्रतीतिबाधितत्वात्, दृश्यते हि लोके करणसमये एव क्रियाया दुःखोत्पादकत्वं सुखोत्पादकत्वं वा, पूर्वकाले परकाले च क्रियाया एवाभावात्, अभावस्य च कार्याजनकत्वात्, अन्यथा अभावस्य सदा सर्वत्र विद्यमानत्वेन सर्वकार्यस्य सर्वत्र सद्भावप्रसङ्गात्, यदि अभावस्यापि उत्पादकत्वं भवेत्तदा घटार्थी पुरुषो

भासा तहा भाणियव्वा) जैसे वर्तमान काल संबंधी ही भाषा भाषारूप होती है उसी प्रकार से वर्तमानकाल संबंधी ही क्रिया सुख दुःखादि का कारण होती है। पूर्वकाल सम्बन्धी या परकाल सम्बन्धी क्रिया सुख दुःख आदि का कारण नहीं होती है। (किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा) क्रिया अपने करने वाले को ही दुःख देने वाली होती है-नहीं करने वाले को नहीं। क्यों कि लोक में ऐसा ही देखा जाता हैं। नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक नहीं होती है। यदि ऐसी बात मानी जावे कि नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक होती है तो यह बात प्रतीति से बाधित है। लोक में ऐसा ही देखा जाता है कि क्रिया करने के समय में ही सुख दुःख की जनिका होती है। जब पूर्वकाल में अथवा परकाल में क्रिया का ही अभाव हो चुका है तो वह सुख दुःखादि की जनक कैसे हो सकती है। अभाव

भासा तथा भाणियव्वा" એવી રીતે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષારૂપ હોય છે એજ રીતે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખ દુઃખ વગેરેના કારણરૂપ હોય છે. પૂર્વકાળની કે પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખાદિના કારણરૂપ હોતી નથી "किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा" ક્રિયા કરનારને જ દુઃખદેનારી હોય છે, નહીં કરનારને દુઃખદાયક હોતી નથી કારણ કે લોકમાં એવું પ્રત્યક્ષ જોવામા આવે છે જો એ વાત માની લેવામાં આવે કે નહીં કરનારને માટે ક્રિયા દુઃખની જનક છે, તો તે વાતની પ્રતીતિ થઈ શકતી નથી લોકમા એવું સ્પષ્ટ જોવામા આવે છે કે ક્રિયા, કરવાને સમયે જ સુખ દુઃખની જનક હોય છે જો પૂર્વકાળે અથવા પરકાળે ક્રિયાનો જ અભાવ થઇ ચૂક્યો હોય તો તે સુખદુઃખાદિની જનક કેવી રીતે બની શકે ? અભાવ કોઇ

द्रव्यादीनामुपादानं न कुर्यात्, न वा मोक्षार्थी तपःसंयमार्थं यत्नं कुर्यात्, अतः पूर्वकालिकी पश्चात्कालिकी च न क्रिया न सुखदुःखादिजनिका, अपि तु वर्तमानकालिकी तथा क्रियमाणैव क्रिया तु सुखादिकारणमिति। 'सेयं वक्तव्यं सिया' तदेव वक्तव्यं स्यात्, तदेव करणत एव क्रिया तु सुखजनिका न तु अकरणतो क्रिया दुःखजनिका इत्येव रूपमेव वक्तव्यं स्यात् वक्तुं शक्नुयादिति भावः।

अथ दुःखविषये आह—'किच्चं' इत्यादि।

'किच्च दुक्खं' कृत्यं दुःखम्', वर्तमानकालापेक्षया 'क्रियाद्वारेण सम्पाद्यमानमेव दुःखं भवति न तु अकृत्यं क्रियामन्तरेण दुःखं स्वभावत एव भवति, 'फुसं दुक्खं

किसी भी कार्य का जनक नहीं होना है। यदि अभाव में कार्यजनकता मानी जावे तो अभाव तो सदा सर्वत्र विद्यमान रहता ही है फिर क्या सब जगह सब कार्यों की उत्पत्ति होती रहनी चाहिये। फिर क्यों जैनों ने कहा है कि घटादिपदार्थों की उत्पत्ति करने के निमित्त द्रव्यादि कारणों को ग्रहण करने की। और क्या आवश्यकता है मोक्षार्थी के लिये संयमादि के प्रयत्न करने की। इसलिये यही मानना चाहिये कि पूर्वकालिकी तथा परकालिकी क्रिया सुख दुःख आदि की जनिका नहीं होती है, केवल वर्तमानकाल सम्बन्धी क्रियमाण क्रिया ही सुख दुःखादिक की जनक होती है। (सेयं वक्तव्यं सिया) इस तरह ऐसा कहा जा सकता है कि क्रिया अपने करने वाले को ही दुःख जनक होती है नहीं करने वाले को नहीं।

यहां क्रिया के सम्बन्ध को लेकर जो ऐसा कहा गया है कि क्रिया वर्तमान कालिकी ही करने वाले को सुखदुःख आदि की जनक होती है

પણ કાર્યનો જનક બની શકતો નથી, જો અભાવમાં પણ જનકતા માની લેવામાં આવે તો અભાવ તો સર્વત્ર સદા મોજૂદ હોય છે તો પછી સઘળી જગ્યાએ સઘળા કાર્યની ઉત્પત્તિ થવા લાગી જોઇએ! પછી તો ઘટ વગેરેના નિર્માણને માટે, ઉક્ત વગેરે કારણોનો ઉપયોગ કરવાની આવશ્યકતા શી છે? મોક્ષને માટે સંયમ વગેરેની પણ શી આવશ્યકતા રહે! તેથી જો વાત માનવી જ પડશે કે પૂર્વકાળની તથા પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખ વગેરેની જનક હોતી નથી કેવળ વર્તમાન કાળે કરાતી ક્રિયા જ સુખદુઃખ વગેરેની જનક બને છે 'सेयं वक्तव्यं सिया' આ રીતે જોવું નહીં થાય કે ક્રિયા કરનારને જ ક્રિયા દુઃખ જનક થાય છે નહીં કરનારને દુઃખજનક થતી નથી,

'અહીં ક્રિયાના વિષયમાં જોવું' જે કહેવામાં આવ્યું છે કે વર્તમાનમાં કરી જ ક્રિયા, કરનાર 'આત્મા' સુખદુઃખ વગેરેની જનક થાય છે-સ્વીકૃત

यथा भाषाया वर्तमानकाले एव भाषात्वं तथा वर्तमानकालिकक्रियाया एव सुख दुःखादिजनकत्वं न तु पूर्वकालिकीपरकालिक्योः दुःखादिजनकत्वमिति भावः। 'किरियावि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा' क्रियापि यावत् करणतः सा दुःखा नो खलु अकरणतो दुःखा, करणतः कुर्वत एव क्रिया दुःखस्य कारणं भवति, तथैव दर्शनात्, न तु अकरणात् क्रिया दुःखकारणं भवति, प्रतीतिबाधितत्वात्, दृश्यते हि लोके करणसमये एव क्रियाया दुःखोत्पादकत्वं सुखोत्पादकत्वं वा, पूर्वकाले परकाले च क्रियाया एवाभावात्, अभावस्य च कार्याजनकत्वात्, अन्यथा अभावस्य सदा सर्वत्र विद्यमानत्वेन सर्वकार्यस्य सर्वत्र सद्भावप्रसङ्गात्, यदि अभावस्यापि उत्पादकत्वं भवेत्तदा घटार्थी पुरुषो

भासा तहा भाणियव्वा) जैसे वर्तमान काल संबंधी ही भाषा भाषारूप होती है उसी प्रकार से वर्तमानकाल संबंधी ही क्रिया सुख दुःखादि का कारण होती है। पूर्वकाल सम्बन्धी या परकाल सम्बन्धी क्रिया सुख दुःख आदि का कारण नहीं होती है। (किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा) क्रिया अपने करने वाले को ही दुःख देने वाली होती है-नहीं करने वाले को नहीं। क्यों कि लोक में ऐसा ही देखा जाता हैं। नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक नहीं होती है। यदि ऐसी बात मानी जावे कि नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक होती है तो यह बात प्रतीति से बाधित है। लोक में ऐसा ही देखा जाता है कि क्रिया करने के समय में ही सुख दुःख की जनिका होती है। जब पूर्वकाल में अथवा परकाल में क्रिया का ही अभाव हो चुका है तो वह सुख दुःखादि की जनक कैसे हो सकती है। अभाव

ભાસા તથા ભાણિયવ્વા " જેવી રીતે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષારૂપ હોય છે એજ રીતે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખ દુઃખ વગેરેના કારણરૂપ હોય છે. પૂર્વકાળની કે પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખાદિના કારણરૂપ હોતી નથી " किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा " ક્રિયા કરનારને જ દુઃખદેનારી હોય છે, નહીં કરનારને દુઃખદાયક હોતી નથી કારણ કે લોકમાં એવું પ્રત્યક્ષ જોવામા આવે છે જો એ વાત માની લેવામાં આવે કે નહીં કરનારને માટે ક્રિયા દુઃખની જનક છે, તો તે વાતની પ્રતીતિ થઈ શકતી નથી લોકમા એવુ સ્પષ્ટ જોવામા આવે છે કે ક્રિયા, કરવાને સમયે જ સુખ દુઃખની જનક હોય છે જો પૂર્વકાળે અથવા પરકાળે ક્રિયાનો જ અભાવ થઇ ચૂકયો હોય તો તે સુખદુઃખાદિની જનક કેવી રીતે બની શકે ? અભાવ કોઇ

दुःखादिक भोगने पडते हों-सो बात भी नहीं है। क्रिया फल तो वैसे बाद में ही प्राय मिलता है। अतः यह बात कैसे मानी जा सकती है कि वर्तमानकालिकी क्रिया ही अपना सुखदुःखादिरूप फल देती है भूत भविष्यत् कालीन क्रिया नहीं (समाधान-सिद्धान्त की यह मान्यता है कि कर्म अपनी अबाधास्थिति के बाद ही फल देता है। शुभाशुभ कर्म का बंध मन, वचन और काय इनकी शुभ और अशुभ प्रवृत्ति पर अवलम्बित होता है। काय सम्बन्धी क्रिया जीवों के द्वारा जैसी की जावेगी उसी के अनुसार कर्म का बंध होगा। बंध के बाद उस कर्म का उदय उसी समय आ जावे यह नियम नहीं है। अबाधाकाल व्यतीत होने पर कर्म का उदय में आवेगा ही, अतः जिस जीव ने भूतकाल में हिंसा आदि क्रिया की है-उस जीव का उस क्रिया के करते समय जैसा आत्म परिणाम रहा उसीके अनुसार उसे कर्म का बंध हुआ और उसने अपने उदय में आने पर सुखदुःखादिरूप फल दिया। सो यह कर्म की उदय में आने रूप जो क्रिया है। उससे ही जीव को सुखदुःखादिरूप फल मिला है। कर्म का उदय में आना यही वर्तमानकालिकी क्रिया है। इस कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवने पहिले भूतकाल में हिंसा क्रिया की है-सो जीव के अब उस हिंसा जन्य कर्म का उदय आवेगा

અનુભવને વર્તમાન સમયે જ તેનું ફળ ભોગવવું પડે છે એવુ પણ નિયમ આવતુ નથી. સામાન્ય રીતે ક્રિયાનું ફળ તેને ભવિષ્યમા જ મળે છે તેથી એ વાત કેવી રીતે માની શકાય કે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખદુઃખાદિ રૂપ ફળ દે છે, ભૂત અને ભવિષ્યકાળની ક્રિયા નહીં.

સમાધાન—સિદ્ધાંતની એ માન્યતા છે કે પ્રત્યેક કર્મ પોતાની અબાધા સ્થિતિ પછી જ ફળ આપે છે શુભાશુભ કર્મનો બંધ મન, વચન અને કાયાની શુભ અને અશુભ પ્રવૃત્તિ પર આધાર રાખે છે કાય સબંધી ક્રિયા જીવો દ્વારા જેવી કરાશે તે પ્રમાણે કર્મનો બંધ બંધાશે, બંધ બંધાયા પછી તે કર્મ જોજ સમયે ઉદયમા આવે છે એવો નિયમ નથી. અબાધાકાળ વ્યતીત થયા પછી કર્મ ઉદયમા આવશે જ તેથી જે જીવે ભૂતકાળમાં હિંસા વગેરે ક્રિયા કરી છે તે જીવનુ તે ક્રિયા કરતી વખતે જેવુ આત્મ પરિણામ રહ્યુ તે પ્રમાણે તેને કર્મનો બંધ પડ્યો અને તેણે ઉદયમાં આવતા શુભ દુઃખાદિ રૂપ ફળ દીધુ આ રીતે કર્મની ઉદયમાં આવવા રૂપ જે ક્રિયા છે તેનાથી જ જીવને સુખદુઃખાદિ રૂપ ફળ મળે છે કર્મનું ઉદયમા આવવુ એજ વર્તમાનકાળની ક્રિયા છે આ કથન પરથી એ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે કે જીવે

भूत, भविष्यत्काल की क्रिया सुखदुःखादिक की जनक नहीं होती है और न वह अपने करने वाले को ही सुखदुःखादिक की जनक होती है सो इस पर कोई तटस्थ शिष्य ऐसी शंका कर सकता है कि ६ दिन पहिले अथवा इसके भी पहिले अनर्थ करने वाले व्यक्ति को अनर्थरूप की गई वह क्रिया दुःख जनक नहीं होनी चाहिये, परन्तु व्यवहार में हम देखते हैं कि पूर्व में की गई वह क्रिया वर्तमान में दुःख जनक होती है। जब किसी मनुष्य पर हत्यारूप क्रिया करने का अभियोग प्रमाणित हो जाता है तो वह वर्षों पहिले की हत्यारूप क्रिया वर्तमानकाल में उसे फांसी आदि के रूप में दुःखजनक प्रकट देखने में आती है। इसी तरह आवेश में आकर किसी की हत्या करने पर उतारू हुए पुरुष को तलवार लेकर मारने के लिये जाते समय जब सरकारी आदमी पकड़ लेता है तो उसे उसी सजा का पात्र होना पड़ता है जिसका पात्र हत्या करने वाले को होना पड़ता है। इससे यह साबित होता है कि वर्तमान में हत्यारूप क्रिया नहीं करने पर भी आगे होने वाली उस क्रिया ने उस करने के भाव वाले व्यक्ति को अभी ही अपना फल दे दिया। तथा जिस पुरुष ने वर्तमान में किसी की हत्या की है उसे उसी समय उसे फल

ભવિષ્યતકાળની ક્રિયા સુખદુ ખ વગેરેની જનક થતી નથી અને તે કરનારને જ સુખદુ:ખ વગેરેની જનક થતી નથી–તો તે વિષે કોઇ તટસ્થ શિષ્ય એવી શકા કરી શકે કે છ દિવસ પહેલાં અથવા તેનો કરતા પણ આગળ અનર્થ કરનાર મનુષ્યને અનર્થરૂપે કરાયેલી તે ક્રિયા દુ:ખ જનક થવી જોઇએ નહીં. પરંતુ વ્યવહારમા તો એવુ જોવા મળે છે કે પૂર્વે કરવામાં આવેલી તે ક્રિયા વર્તમાન સમયે દુ:ખ જનક થાય છે જ્યારે કોઈ માણુસ પર હત્યારૂપ ક્રિયા કરવાનો આરોપ સાબિત થાય છે ત્યારે વર્ષો પહેલા તેણે કરેલી હત્યાના ફળરૂપે તેને ફાંસી વગેરે દુ:ખજનક ફળ ભોગવવા પડે છે, એજ પ્રમાણે આવેશમાં આવી જઈને કોઈની હત્યા કરવા માટે હાથમાં તલવાર લઇને ધસી જતા માણુસને કોઇ પોલિસ પકડી લે તો તેને એજ સજા ભોગવવી પડે છે કે જે હત્યા કરનાર ભોગવે છે આ દૃષ્ટાંતો વડે એ સિદ્ધ થાય છે કે વર્તમાન સમયે હત્યારૂપ ક્રિયા નહીં કરવા છતાં પણ ભવિષ્યમા થનારી તે ક્રિયાએ તે ક્રિયા કરવાની ઇચ્છાવાળી વ્યક્તિને વર્તમાન સમયે જ તેનું ફળ દઈ દીધું, તથા જે મનુષ્યે વર્તમાન સમયે કોઇની હત્યા કરી હોય છે તે

'वेयण वेदेति' वेदनां वेदयन्ति जीवा क्रियमाणकृत दुःख कृत्वा पुनः पुनः दुःखमनुभवन्तीति, 'इति वत्तव्व सिया' इति एव पूर्वोक्तरूपेण वक्तव्य स्यात् वक्तुं शक्यमनुपपादिति। अयमर्थ सूत्राशयः-पूर्वपक्षावसरे यदन्यतीर्थिकैः कथितं तत् सर्वं मिथ्यैव, तथाहि यदि चलदेव प्रथमसमये चलित न भवेत् तदा द्वितीयादि समयेऽपि तदचलितमेवेति न कदापि चलेदिति, अत एव वर्तमानस्यापि विवक्षयाऽतीतत्वं न विरुद्धमिति यदुक्त चलमाणे चलिए इति प्रथमसमयकस्य प्रथमादेशकस्य दशमसूत्रे एव प्रतिपादितमिति नात्र पुनः प्रतन्यते, यदुक्त चलितकार्याकरणादचलितमेवेति तदयुक्तम्, यतः यति

णकृत नहीं है। (कट्टु कट्टु) इस क्रियमाण कृत दुःख को कर करके प्राण, भूत, जीव और सत्त्व वेदना को भोगते हैं। तात्पर्य यह है कि जीव क्रियमाणकृत दुःख को बार २ करके पुनः पुन दुःख का अनुभव करते रहते हैं। (इति वत्तव्वं सिया) ऐसा वचन शक्य है। यहां इस प्रकार से इन सूत्रों का आशय है कि पूर्वपक्ष के अवसर पर जो अन्य तीर्थिकों ने कहा है, वह सब मिथ्या ही है—जैसे-वर्तमान में चलायमान कर्म यदि प्रथम समय में चलित न माना जावे तो द्वितीयादि समयों में भी वह अचलित ही रहेगा। अतः फिर वह कभी चलेगा ही नहीं। इसलिये वर्तमान में भी विवक्षा से अतीतता विरुद्ध नहीं होती है। यह विषय-(चलमाणे चलिए) इस सूत्र में ही पहिले कह दिया गया है अब यहां दुबारा उसे कहना पिष्ट पेषण हो जाने के कारण ठीक नहीं है। तथा जो पहिले ऐसा कहा गया है कि चलायमान कर्म चलित

આ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને વારવાર કરીને, કરી કરીને દુઃખનો અનુભવ કર્યા કરે છે "इति वत्तव्व सिया" એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ સૂત્રનો આશય આ પ્રમાણે છે-પૂર્વપક્ષ રૂપ અન્યતીર્થિકોએ જે કંઈ છે તે બધુ મિથ્યા જ છે જેમ કે-વર્તમાનકાળે ચલાયમાન કર્મને જો પ્રથમ સમયે ચલિત માનવામાં ન આવે તો બીજા ત્રીજે સમયે પણ તેને અચલિત જ માનવુ પડે. તેથી તે કદી પણ ચલિત થાય જ નહીં. તેથી વર્તમાનમાં પણ વિવક્ષાથી અતીતતા વિરુદ્ધ હોતી નથી. આ વિષયનું 'चलमाणे चलिए" સૂત્રમાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કરેલ છે તેથી અહીં તેનું ફરીથી પિષ્ટપેષણ કરવુ યોગ્ય નથી. તથા પહેલાં જેનું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે ચલાયમાન કર્મ ચલિતનું કાર્ય સંપાદન કરવાને અક્ષમ હોય છે, તેથી ચલાયમાનને ચલિત

स्पृश्यं दुःखम्, स्पर्शनात् वेदना देव दुःखम् न तु अवेदनात् ' कज्जमाणकडं-दुक्खं ' क्रियमाण कृतं दुःखं न तु अक्रियमाणकृतम्, ' कट्टु कट्टु ' कृत्वा कृत्वा, क्रियमाण कृतं दुःखं कृत्वा कृत्वा, ' पाणभूयजीयसत्ता ' प्राणभूतजीवसत्त्वाः,

---

कभी उसको उसका फल मिलेगा। जब भी उसका उसे फल मिलता है तभी वह उसका वर्तमानकाल है। इसके पहिले का काल भूतकाल है। इसी तरह से भविष्य में जीव के द्वारा होने वाली क्रिया के विषय में भी जानना चाहिये। अतः इस अपेक्षा भूतकाल की और भविष्यत्काल की क्रियाको निरर्थक कहागया है और वर्तमान कालकी क्रियाको सार्थक।

अब सूत्रकार दुःख के विषय में कहते हैं-(किच्चं दुक्खं) वर्तमान काल की अपेक्षा से क्रिया द्वारा संपाद्यमान ही दुःख होता है। क्रिया के विना स्वभावतः दुःख नहीं होता है। अर्थात् वर्तमानकाल में जो क्रिया की जाती है उस क्रिया से ही दुःख होता है। अतः दुःख क्रिया जन्य होता है। यह बात सिद्ध होती है! फिर स्वभाववादी ने जो (दुःख स्वभाविक ही होता है) ऐसा कहा है-सो संगत नहीं है। यह सुखरूप है कि दुःखरूप है-यह निर्णय अन्तरात्मा में विना वेदन के नहीं होता है अतः (फुसं दुक्खम्) दुःख वेदन से ही ज्ञात होता है। विना वेदन किये नहीं। (कज्जमाणकडं दुक्खं) दुःख क्रियमाण कृत है-अक्रियमा-

---

પહેલા-ભૂતકાળમા-હિંસા રૂપ ક્રિયા કરી હોય તો જ્યારે તે હિંસા જન્ય કર્મ ઉદયમા આવશે ત્યારે જ જીવને તેનુ ફળ ભોગવવું પડશે, જ્યારે તેનું ફળ તેને મળે છે તે સમયને તેનો વર્તમાનકાળ કહે છે તેના પહેલાનો સમય ભૂતકાળ ગણાય છે એજ પ્રમાણે ભવિષ્યમાં જીવની મારફત થનારી ક્રિયાના વિષયમા સમજવુ, તેથી આ દૃષ્ટિબિંદુથી વિચાર કરીને ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળની ક્રિયાને નિરર્થક બતાવી છે અને વર્તમાનકાળની ક્રિયાને સાર્થક કહી છે

હવે સૂત્રકાર દુઃખના વિષયમાં કહે છે-" किच्चं दुक्खं " વર્તમાનકાળની અપેક્ષાએ ક્રિયા વડે સંપાદ્યમાન જ દુઃખ હોય છે ક્રિયા વિના સ્વભાવથી દુઃખ હોતું નથી એટલે કે વર્તમાનકાળમા જે ક્રિયા કરવામા આવે છે તે ક્રિયાથી જ દુઃખ ઉદ્ભવે છે તેથી દુઃખ ક્રિયાજન્ય ગણાય છે, તે વાત સિદ્ધ થાય છે સ્વભાવવાદીઓનું એવુ કથન છે કે "દુઃખ સ્વાભાવિક જ હોય છે" તેમનુ તે કથન સંગત નથી કોઈ વસ્તુ સુખરૂપ છે કે દુઃખરૂપ છે તેનો નિર્ણય અન્તરાત્મામા વેદન કર્યા વિના થતો નથી તેથી ' फुसं दुक्खम् " દુઃખ વેદનથી જ જાણી શકાય છે, વેદન, વગર જાણી શકાતું નથી " कज्जमाणकडं दुक्खं " દુઃખ ક્રિયમાણ કૃત છે, અક્રિયમાણ કૃત નથી " कट्टु कट्टु "

'वेपर्य वेदेंति' वेदनां वेदयन्ति जीवाः क्षिप्रमाणकृतं दुःखं कृत्वा पुनः पुनः दुःखमनुभवन्तीति, 'इति वक्तव्यं सिया' इति एवं पूर्वोक्तरूपेण वक्तव्यं स्यात् वक्तुं शक्यमुपादिति। अत्रायं समाधयः-पूर्वपक्षावसरे यदन्यतीर्थिकैः कथितं तत् सर्वं मिथ्यैव, तथाहि यदि चलदेव प्रथमसमये चलितं न भवेत् तदा द्वितीयादि समयेपि तदचलितमेवेति न कदापि चलेदिति, अत एव वर्तमानस्यापि विवक्षयाऽतीतत्वं न विरुद्धमिति एतच्च चलमाणे चलिए इति प्रथमशतकस्य प्रथमोद्देशकस्य दशमसूत्रे एव प्रतिपादितमिति नात्र पुनः प्रतन्यते, यदुक्तं चलितकार्याकरणादचलितमेवेति तदयुक्तम्, यतः मतिं

णकृत नहीं है। (कट्टु कट्टु) इस क्षिप्रमाण कृत दुःख को कर करके प्राण, भूत, जीव और सत्व वेदना को भोगते हैं। तात्पर्य यह है कि जीव क्षिप्रमाणकृत दुःख को बार २ करके पुनः पुनः दुःख का अनुभव करते रहते हैं। (इति वक्तव्यं सिया) ऐसा कहना शक्य है। यहां इस प्रकार से इन सूत्रों का आशय है कि पूर्वपक्ष के अवसर पर जो अन्य तीर्थिकों ने कहा है, वह सब मिथ्या ही है-जैसे-वर्तमान में चलायमान कर्म यदि प्रथम समय में चलित न माना जावे तो द्वितीयादि समयों में भी वह अचलित ही रहेगा। अतः फिर वह कभी चलेगा ही नहीं। इसलिये वर्तमान में भी विवक्षा से अतीतता विरुद्ध नहीं होती है। यह विषय-(चलमाणे चलिए) इस सूत्र में ही पहिले कह दिया गया है अब यहां दुबारा उसे कहना पिष्ट पेषण हो जाने के कारण ठीक नहीं है। तथा जो पहिले ऐसा कहा गया है कि चलायमान कर्म चलित

આ ક્ષિપ્રમાણ કૃત દુઃખને કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્વ વેદના ભોગવે છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ક્ષિપ્રમાણ કૃત દુઃખને વારવાર કરીને, કરી કરીને દુઃખનો અનુભવ કર્યા કરે છે "इति वक्तव्यं सिया" એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ સૂત્રનો આશય આ પ્રમાણે છે-પૂર્વપક્ષ રૂપ અન્યતીર્થિકોએ જે કહ્યું છે તે બધુ મિથ્યા જ છે જેમ કે-વર્તમાનકાળે ચલાયમાન કર્મને જો પ્રથમ સમયે ચલિત માનવામાં ન આવે તો બીજા ત્રીજા સમયે પણ તેને અચલિત જ માનવું પડે. તેથી તે કદી પણ ચલિત થાય જ નહીં. તેથી વર્તમાનમાં પણ વિવક્ષાથી અતીતતા વિરુદ્ધ હોતી નથી. આ વિષયનું "चलमाणे चलिए" સૂત્રમાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કરેલું છે તેથી અહીં તેનું દુરીથી પિષ્ટપેષણ કરવું યોગ્ય નથી તથા પહેલાં જેવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે ચલાયમાન કર્મ અચલિતનું કાર્ય સંપાદન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી ચલાયમાનને ચલિત

क्षणमुत्पद्यमानेषु स्थासकोशादिवस्तुषु अन्त्यक्षणभावि वस्तु आद्यक्षणे स्वकार्यं न करोत्येव, असत्त्वात्, अतो यत् अन्त्यसमयचलितं कार्यं विवक्षितं परतीर्थिकैः तद् आद्यसमयचलितं यदि न करोति तदा अत्र को दोषः कारणानां स्वस्वकार्यकरणस्वभावत्वादिति। यदप्युक्तं-द्वौ परमाणू न संहन्येते सूक्ष्मतया स्नेहाभावात्

के कार्य संपादन करने में असमर्थ होता है इसलिये चलायमान को चलित नहीं माना जा सकता सो ऐसा कहना भी युक्ति युक्त नहीं है, कारण कि प्रतिक्षण में उत्पद्यमान जो स्थासकोशकुशूल आदि घट की पूर्व अनस्थाएँ है उन अवस्थाओं के पूर्णरूप से समाप्त हो जाने पर घट पर्याय की पूर्ण प्रादुर्भूति अपने अन्तक्षण में होती है, यह एक निश्चित बात है। अब उन अवस्थाओं के उत्पन्न हो जाने पर अन्तक्षण में उत्पन्न होने वाला वह घट यदि अपने कार्य को नहीं करता है। तो यह कोई आक्षेपार्ह जैसी बात ही नहीं है। क्यों कि वह उस समय असत् है-पूर्णरूप से अप्रादुर्भूत है। कार्य तो वह तब करेगा कि जब वह पूर्णरूप से प्रादुर्भूत हो जावेगा। इसी तरह से प्रथम समय का चलित कर्म अपने अन्त समय के चलित कार्य को नहीं करता है तो इसमें क्या दोष है। यह तो कारणों का स्वभाव है कि वे अपने २ कार्य को करें। तात्पर्य कहने का यह हैं कि जिस प्रकार समयवर्ती घट अपने अन्तक्षणवर्ती कार्य को नहीं करता है फिर भी वह घट ही कहलाता है-अघट नहीं उसी प्रकार प्रथम क्षणवर्ती चलित कर्म अपने अन्तक्षणवर्ती चलित कार्य को नहीं करने पर अचलित नहीं कहा जा सकता है चलित

માની શકાય નહીં, તો તે કથન પણ યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી, કારણકે પ્રતિક્ષણે ઉત્પાદ્યમાન સ્થાસકોશકુશૂલ વગેરે ઘટની જે પૂર્વ અવસ્થાઓ છે તે અવસ્થાની પૂર્ણ રૂપે સમાપ્તિ થાય ત્યારે જ ઘટપર્યાયની પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ (નિર્માણ) તેની અન્તક્ષણે થાય છે એ એક નિશ્ચિત વાત છે તે અવસ્થાઓ ઉત્પન્ન થાય ત્યારે અન્તક્ષણે ઉત્પન્ન થનારો ઘટ જો પ્રારંભકાળે પોતાનું કાર્ય ન કરે તો તે કોઈ આક્ષેપને પાત્ર વાત નથી. કારણ કે તે સમયે તે અસત્ છે-પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થયું નથી કાર્ય તો તે ત્યારે જ કરશે કે જ્યારે પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થશે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ સમયનુ ચલિત કર્મ પોતાના અન્ત સમયનુ ચલિત કાર્ય ન કરે તો તેમાં શો દોષ છે ? એ તો કારણોનો સ્વભાવ છે કે તેઓ પોત પોતાનું કાર્ય કર્યા કરે તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે પ્રથમ સમયવર્તી ઘટ પોતાનું અન્ત સમયવર્તી કાર્ય કરતો નથી છતાં પણ તેને ઘટ જ કહેવાય છે અઘટ કહેવાતો નથી, એજ પ્રમાણે પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ પોતાનું

तदयुक्तम्, एकस्यापि परमाणो स्नेहसमवायात् सार्धपुद्गलस्य सद्भावत्वेनैव तथैव स्वीकृतत्वाच्च, यतः कथितं "तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति दो

ही कहा जावेगा। अतः चलाप्यमान कर्म को प्रथम क्षण की अपेक्षा चलितमान कर यदि उसमें अन्तक्षणवर्ती चलित के कार्य संपादन की क्षमता प्रथम समय में नहीं है, तो कोई आक्षेप जैसी बात नहीं है। यह तो ठीक ही है कि प्रथमक्षणवर्ती यह चलाप्यमानरूप चलित पूर्णरूप से चलित होने के कारण उस समय चलित के अन्त्यक्षणवर्ती कार्य को नहीं ही करेगा। क्यों कि भिन्न २ कार्यों का होना कारणों की भिन्न २ अवस्थाओं पर अवलम्बित है।

तथा—जो ऐसा कहा है कि दो परमाणु सूक्ष्म होने के कारण स्नेहगुण के अभाव में परस्पर मिलते नहीं हैं सो यह कथन इसलिये ठीक नहीं है कि एक परमाणु में भी स्नेह गुण का सद्भाव माना ही गया है। यह बात जैनसिद्धान्त ही मानता है सो बात नहीं है, क्यों कि परतीर्थिकों ने भी जहां २ परमाणुओं के मिलने पर फिर उनके विभाग होने की बात कही है वहां उन्हों ने ऐसा भी कहा है कि १॥—१॥ परमाणु के, १ तीन परमाणु जन्य स्कन्ध के दो विभाग ही होते हैं। अतः अब १

અન્તક્ષણવર્તી ચલિત કાર્ય ન કરવા છતાં અચલિત કહેવાતું નથી, ચલિત જ કહેવાય છે તેથી ચલાપ્યમાન કર્મને પ્રથમ ક્ષણની અપેક્ષાએ ચલિત માનીને જો તેમાં અન્ત ક્ષણવર્તી ચલિતના સંપાદનની સક્ષમતા પ્રથમ સમયે ન હોય તેમાં કોઈ આક્ષેપ જેવું નથી, એ તો બરાબર જ છે કે પ્રથમ ક્ષણવર્તી તે ચલાપ્યમાનરૂપ ચલિત પૂર્ણરૂપે ચલિત ન હોવાથી તે સમયે ચલિતનું અન્ત્ય ક્ષણવર્તી કાર્ય નહીં કરે કારણ કે જુદાં જુદાં કાર્યોનું થવું તે કારણોની ભિન્ન ભિન્ન અવસ્થાઓ પર આધાર રાખે છે

તથા-એવું જે અન્યમતિઓનું કહેવું ' બે પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમનામાં સ્નેહગુણ નો અભાવ હોય છે તેથી તેઓ સ્નેહ બીજા સાથે સંયોજન પામતા નથી ' આ કથન પણ બરાબર નથી એક પરમાણુમાં પણ સ્નેહગુણનો સદ્ભાવ માનવામાં આવેલ છે આ વાત જૈનસિદ્ધાંત જ માને છે અન્ય નથી કારણ કે પરતીર્થિકો પણ કહે છે કે સંયોજન પામેલ ત્રણ પરમાણુઓના કોઈપણ વિભાજન કરવાથી ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ થાય છે. આ રીતે

क्षणमुत्पद्यमानेषु स्थासकोशादिवस्तुषु अन्त्यक्षणभावि वस्तु आद्यक्षणे स्वकार्यं न करोत्येव, असत्त्वात्, अतो यत् अन्त्यसमयचलितं कार्यं विवक्षितं परतीर्थिकैः तद् आद्यसमयचलितं यदि न करोति तदा अत्र को दोषः कारणानां स्वस्वकार्यकरणस्वभावत्वादिति। यदप्युक्तं-द्वौ परमाणू न संहन्येते सूक्ष्मतया स्नेहाभावात्

के कार्य संपादन करने में असमर्थ होता है इसलिये चलायमान को चलित नहीं माना जा सकता सो ऐसा कहना भी युक्ति युक्त नहीं है, कारण कि प्रतिक्षण में उत्पद्यमान जो स्थासकोशकुशूल आदि घट की पूर्व अनस्थाएँ है उन अवस्थाओं के पूर्णरूप से समाप्त हो जाने पर घट पर्याय की पूर्ण प्रादुर्भूति अपने अन्तक्षण में होती है, यह एक निश्चित बात है। अब उन अवस्थाओं के उत्पन्न हो जाने पर अन्तक्षण में उत्पन्न होने वाला वह घट यदि अपने कार्य को नहीं करता है। तो यह कोई आक्षेपार्ह जैसी बात ही नहीं है। क्यों कि वह उस समय असत् है-पूर्णरूप से अप्रादुर्भूत है। कार्य तो वह तब करेगा कि जब वह पूर्णरूप से प्रादुर्भूत हो जावेगा। इसी तरह से प्रथम समय का चलित कर्म अपने अन्त समय के चलित कार्य को नहीं करता है तो इसमें क्या दोष है। यह तो कारणों का स्वभाव है कि वे अपने २ कार्य को करें। तात्पर्य कहने का यह हैं कि जिस प्रकार समयवर्ती घट अपने अन्तक्षणवर्ती कार्य को नहीं करता है फिर भी वह घट ही कहलाता है-अघट नहीं उसी प्रकार प्रथम क्षणवर्ती चलित कर्म अपने अन्तक्षणवर्ती चलित कार्य को नही करने पर अचलित नहीं कहा जा सकता है चलित

માની શકાય નહીં, તો તે કથન પણ યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી, કારણકે પ્રતિક્ષણે ઉત્પાદ્યમાન સ્થાસકોશકુશૂલ વગેરે ઘટની જે પૂર્વ અવસ્થાઓ છે તે અવસ્થાની પૂર્ણ રૂપે સમાપ્તિ થાય ત્યારે જ ઘટપર્યાયની પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ (નિર્માણ) તેની અન્તક્ષણે થાય છે એ એક નિશ્ચિત વાત છે તે અવસ્થાઓ ઉત્પન્ન થાય ત્યારે અન્તક્ષણે ઉત્પન્ન થનારો ઘટ જો પ્રારંભકાળે પોતાનું કાર્ય ન કરે તો તે કોઈ આક્ષેપને પાત્ર વાત નથી કારણ કે તે સમયે તે અસત્ છે-પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થયું નથી કાર્ય તો તે ત્યારે જ કરશે કે જ્યારે પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થશે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ સમયનુ ચલિત કર્મ પોતાના અન્ત સમયનું ચલિત કાર્ય ન કરે તો તેમાં શો દોષ છે ? એ તો કારણોનો સ્વભાવ છે કે તેઓ પોત પોતાનું કાર્ય કર્યા કરે. તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે પ્રથમ સમયવર્તી ઘટ પોતાનુ અન્ત સમયવર્તી કાર્ય કરતો નથી છતા પણ તેને ઘટ જ કહેવાય છે અઘટ કહેવાતો નથી, એજ પ્રમાણે પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ પોતાનું

'पञ्च परमाणु पुद्गला संहता कर्मतया भवति' तदपि न सम्यक्, कर्मणोऽनन्त परमाणुस्वरूपतयाऽनन्तस्कन्धरूपत्वात्, पञ्चाणुकस्य च स्कन्धमात्रत्वात्, तथा कर्म जीवानामावरणाद्यभावमिष्यते तत्कर्म पंचपरमाणु स्कन्धमात्रत्वं सत् असंख्य प्रदेशात्मकं जीवमाद्यणुपादिति। तथा यदुक्तं कर्मणश्चाष्टत्वं तदप्युक्तमेव कर्मण

अर्थावरण होता ही नहीं है। क्यों कि परमाणु नाम उसी का है कि फिर जिसका दूसरा विभाग न हो यदि परमाणु का भी विभाग होता है तो वह परमाणु नहीं कहावेगा-किन्तु वह तो स्कन्ध ही कहा जावेगा।

तथा-जो ऐसा कहा है कि-(पञ्च परमाणु पुद्गला संहता कर्मतया भवति) सो यह कहना इसलिये संगत नहीं है कि पांच परमाणुओं के सम्मेलन से जो कर्मरूप स्कन्ध होगा-वह केवल पांच ही प्रदेशवाला होगा अनन्तप्रदेशवाला तो होगा नहीं। फिर वह असंख्यात प्रदेशी जीव का दो आवरण कैसे कर सकेगा ? तात्पर्य कहने का यह है कि जीव का आवरण करना यह स्वभाव कर्मों का होता है। और ये कर्म अनंत परमाणुओं द्वारा निष्पन्न हुए होते हैं। अतः ये एक स्कन्ध रूप न होकर अनन्त स्कन्धरूप होते हैं। तभी जाकर ये असंख्यात प्रदेशवाले जीव को आवरण करते हैं। इसलिये ऐसा कहना कि पांच परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर कर्मरूप से परिणत होते हैं संगत नहीं माना जा सकता है। तथा-(कर्मणश्चाष्टत्वं ही है) यह कथन इसलिये संगत नहीं

થયેલા નથી. કારણ કે પરમાણુ જેવી નાનામાનની વસ્તુ છે કે તેના વિભાગ પડી શકે જ નહીં. જો પરમાણુના પણ વિભાગ થતા હોય તો વિભાજ્ય વસ્તુને પરમાણુ કહેવાને બદલે કણ જ કહેવાયો

तथा-, पञ्च परमाणुपुद्गलाः संहताः कर्मतया भवति" परंतीविधिनु आ કથન પણ સંગત થતું નથી. કારણ કે પાંચ પરમાણુઓના સંયોજનથી કર્મરૂપ સ્કંધ બનશે તે તો પાંચ જ પ્રદેશવાળો બનશે- અનંત પ્રદેશવાળો નહીં બને તો તે અસંખ્યાતપ્રદેશી જીવનું આવરણ કેવી રીતે કરી શકે ? તાત્પર્ય એ છે કે જીવનું આવરણ કરવાનો સ્વભાવ કર્મોમાં હોય છે અને તે કર્મનું અનંત પરમાણુઓ વડે નિર્માણ થયું હોય છે. તેથી તેઓ એક સ્કંધરૂપ હોતા નથી પણ અનંત સ્કંધરૂપ હોય છે, ત્યારે જ તેઓ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળા જીવનું આવરણ કરી શકે છે તેથી "પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ એક બીજા સાથે સંયોજન પામીને કર્મરૂપે પરિણમે છે" એ કથન સુસંગત નથી. तथा-" કર્મ આઠવાળું જ છે" એ કથન પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે એકાન્ત

भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जति दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढेति" अनेन हि सार्धपुद्गलस्य सहतत्वाभ्युपगमेन तस्य स्नेहः स्वीकृत एव, इति कथं द्वयोः परमाण्वोः स्नेहाभावेन संघाताभाव इति। यदप्युक्तम्-एकतः सार्धः एकत सार्ध इति तदपि न युक्तम् परमाणोरर्धीकरणे परमाणुत्वाभावप्रसङ्गात्। तथा यदुक्तं

और और आधा परमाणु उनकी मान्यतानुसार आपस में मिल जाते हैं तो यह बात उनकी ही मान्यता से सिद्ध हो जाती है कि १ परमाणु में स्नेहगुण है। नहीं तो विना स्नेहगुण के उनका मिलना किसी तरह भी नहीं हो सकता। अतः जब (तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढत्ति) इस कथन से सार्ध पुद्गल परमाणु का आपस में चिपकना स्वीकार किया गया है तो फिर दो परमाणु पुद्गलों का आपस में स्नेह के अभाव से संघातरूप से अवस्थान नहीं होता है ऐसा कथन कैसे समीचिन हो सकता है। यह तो कहना ऐसा हुआ कि जैसे कोई अपनी माता को कहे कि मेरी माता वंध्या है।

तथा-जो १।।देढ१।।देढ परमाणु पुद्गल की प्रतिपक्षी ने यह बात कही है-सो जैनसिद्धान्त उसकी उस बात को नहीं मानता है। यह तो हमने उसकी बात को लेकर परमाणु स्नेह गुण की सिद्धि के लिये इसकी मान्यता प्रकट की है। जैन सिद्धान्त की मान्यतानुसार तो परमाणु का

તેમની માન્યતા પ્રમાણે એક અને અર્ધો પરમાણુ એક બીજા સાથે મળી જાય છે, તો તેમની માન્યતા પરજ એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે એક પરમાણુમા પણ સ્નેહગુણ હોય છે. જો સ્નેહગુણ ન હોત તો તેમનો સંયોગ કોઇ પણ રીતે થાત નહીં "तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहा वि कज्जति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढत्ति" આ કથન પ્રમાણે સાર્ધ પરમાણુઓનુ એક બીજા સાથે સંયોજન પામવાનુ સ્વીકારવામાં આવ્યુ છે. તો પછી બે પરમાણુ પુદ્ગલોનુ સ્નેહકાયને અભાવે સંયોજન થતું નથી એ કથન કેવી રીતે સાચુ ગણી શકાય? આ તો પોતાની માતાને વંધ્યા કહેવા જેવું લાગે છે!

વિપક્ષીએ ૧।।-૧।। પરમાણુપુદ્ગલની જે વાત કહી છે તેનો જૈનસિદ્ધાંત સ્વીકાર કરતો નથી. અહીં તો તેમની માન્યતાનો આધાર લઈને પરમાણુમાં રહેલ સ્નેહ ગુણ (ચીકાશ) સિદ્ધ કરવા માટે તેમની માન્યતા પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. જૈન સિદ્ધાતની માન્યતા તો એવી છે કે પરમાણુના વિભાગ પડી

कर्म सदा चीयतेऽपचीयते च इति सदप्येकान्तशाश्वतत्वे नोपपद्यते इति।

विवेक पदार्थ हैं और मत्यादिक पदार्थ अनात्मिक हैं। अतः हेयोपादेय का कथन जिस आत्मा में जितने अंश में प्रकट है वह आत्मा उतने ही अंश में ज्ञानावरणीय आदि के क्षयोपशम से विशिष्ट है और जितने अंश में हेयोपादेय का विवेक नहीं है वह उतने ही अंश में ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से युक्त है। इस कथन से यही निष्कर्ष निकलता है कि ज्ञानावरणीय आदि कर्म का जिस आत्मा में जितना २ क्षयोपशम आदि है वह आत्मा उतने २ ज्ञान के उत्कर्ष से युक्त है और जिस आत्मा में जितना २ ज्ञानावरणीय कर्म का उदय चल रहा है वह आत्मा उतने २ ज्ञान की मंदता से युक्त है। अतः यदि कर्म को शाश्वत ही माना जावे तो फिर ज्ञान की हीनता और ज्ञान की उत्कर्षता जो ज्ञानावरणीय कर्म क्षयोपशमाधीन देखने में आ रही है वह नहीं आनी चाहिये। परन्तु वह आती तो है—अतः इससे यही ज्ञात होता है कि कर्म एकान्ततः शाश्वत नहीं है। तथा-(कर्म सदा उपचित अपचित होता रहता है) ऐसा कथन संगत इसलिये नहीं माना जा सकता कि कर्म को प्रतिपक्षी ने एकान्ततः शाश्वत स्वीकार किया है। एकान्त शाश्वत पदार्थ में उप चय और अपचय होना घटता नहीं है। यदि वह उदयरूप अवस्था वाला

હેય અને ઉપાદેયનો વિવેક જે જેટલા પ્રમાણમાં રહેલો હોય છે તેટલા પ્રમાણમાં તે આત્મા જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મના ક્ષયોપશમથી યુક્ત હોય છે અને જેટલા પ્રમાણમાં તે હેયોપાદેયના વિવેકથી રહિત હોય છે જેટલા જ પ્રમાણમાં તે જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોના ઉદયથી યુક્ત હોય છે આ કથનનો સાર એ છે કે જે આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મનો જેટલા પ્રમાણમાં ક્ષયોપશમ વગેરે થયેલ હોય છે તે આત્મા તેટલા જ્ઞાનના ઉત્કર્ષ (વૃદ્ધિ) વાળો બને છે અને જે આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મનો જેટલો ઉદય થયેલ હોય છે તેટલે તે આત્મા જ્ઞાનની મંદતા વાળો હોય છે તેથી જો કર્મને શાશ્વત (નિત્ય) માનવામાં આવે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમને કારણે જ્ઞાનમાં જે હીનતા અને વૃદ્ધિ થાય છે તે થઈ જ નહીં પરંતુ જ્ઞાનમાં હીનતા અને વૃદ્ધિ થતી હોય છે તેથી એ વાત સમજી શકાય છે કે કર્મ એકાન્ત થી શાશ્વત નથી તથા " કર્મનો સદા ઉપચય અને અપચય થતો રહે છે " કથનને પણ સાચું માની શકાય નહીં કારણ કે અન્ય તીર્થિકોએ કર્મને એકાન્તતઃ શાશ્વત માનેલું છે શાશ્વત પદાર્થોમાં ઉપચય અને અપચય ઘટતો નથી. જો તેને ઉપચય અને અપચયથી યુક્ત માનવામાં આવે

शाश्वतत्वे क्षयोपशमाद्यभावेन ज्ञानादीनां हानिप्रसङ्गात्, ज्ञानोत्कर्षस्य चाभाव प्रसगात् दृश्येते च ज्ञानादीनां मद्यघृतादिभक्षणेन हानिवृद्धी इति। तथा यदुक्तं

बैठता है कि एकान्त नित्यता में विक्रिया का अभाव होने से किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है। कर्म यदि एकान्तरूप से शाश्वत माना जावेगा-तो फिर उसकी जो क्षयोपशम आदि रूप नाना अवस्थाएँ होती हैं वे कैसे हो सकेगी? इनके नहीं होने पर ज्ञानादिक गुणों में हानि और उत्कर्ष के अभाव का प्रसंग प्राप्त होगा। ज्ञानादिक गुणों में हानि और उत्कर्ष ये लोक में देखा ही जाता है। जब कोई व्यक्ति मद्यादिक का सेवन करता है तो उसके ज्ञानादिगुण में हानि होती हुई देखी जाती है और घृतादिक के सेवन करने वाले व्यक्ति में ज्ञानादिन गुणों का उत्कर्ष होता हुआ प्रतीत होता है। यहां ऐसी आशंका नहीं करना चाहिये कि मद्यादिक के सेवन से ज्ञान की हीनता और घृतादिक के सेवन से ज्ञान प्रकर्षता जब देखी जाती है तो फिर इसमें ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के क्षयोपशमादिक की क्या आवश्यकता है? क्यों कि मद्यादिक जैसे अभक्ष अपवित्र पदार्थों का सेवन वही व्यक्ति करेगा कि जिसके हेयोपादेय का विवेक नहीं होगा-वह इनका भक्षण न करता हुआ भक्ष्य पवित्र पदार्थों का ही सेवन करेगा। घृतादिक पदार्थ सा-

---

નિત્યતામાં ક્રિયાનો અભાવના હોવાથી કોઈ પણ પ્રકારનું પરિવર્તન થતું નથી. કર્મને જો એકાન્ત- શાશ્વત માનવામા આવે તો તેની ક્ષયોપશમ આદિરૂપ જે વિવિધ અવસ્થાઓ હોય છે તે કેવી રીતે સંભવી શકે? અને તેના અભાવે તો જ્ઞાનાદિક ગુણોમાં હાનિ અને વૃદ્ધિનો પણ અભાવ માનવાનો પ્રસંગ ઉત્પન્ન થશે જ્ઞાનાદિક ગુણોમા હાનિ અને વૃદ્ધિ થતી તો પ્રત્યક્ષ જણાય છે મદિરાનું સેવન કરનાર વ્યક્તિના જ્ઞાનાદિક ગુણોની હાનિ થતી જોવામા આવે છે અને ઘી વગેરે સેવન કરનારના જ્ઞાનાદિક ગુણોની વૃદ્ધિ થતી દેખાય છે અહી એવી શકા અસ્થાને છે કે મદિરાના વગેરે સેવનથી જ્ઞાનની હાનિ અને ઘી વગેરેના સેવનથી જ્ઞાનની વૃદ્ધિ થતી જણાતી હોય તો પછી જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોના ક્ષયોપશમની શી આવશ્યકતા છે? કારણ કે મદિરા વગેરે અભક્ષ્ય પદાર્થોનુ સેવન જે વ્યક્તિ કરશે કે જેને હેય અને ઉપાદેયનો વિવેક નથી. જેને હેય અને ઉપાદેયનુ ભાન હશે તે તો તેમનુ સેવન નહી કરે પરતુ ભક્ષ્ય, પવિત્ર પદાર્થોનુ જ સેવન કરશે. ઘૃતાદિક પદાર્થો સાત્વિક ગણાય છે અને મદ્યાદિક પદાર્થો અશુદ્ધ ગણાય છે. તેથી જે આત્માની અ

मानसमयस्यैषारिक्षावेन व्यवहारोपयोगित्वात्, अतीतानागतयोश्च विनष्टानुत्पन्न तयोऽसत्त्वेन व्यवहारानङ्गत्वात्, यदप्युक्तं भाषासमयव्यतिक्रान्तेत्यादि तदपि न सम्यक् भाष्यमाणभाषाया अभावे भाषासमये व्यतिक्रान्ते इत्यस्याभिलापस्यासंभवात्, यदपि प्रतिपाद्यस्याभिधेये प्रत्यपोत्पादकत्वादिति हेतूक्तः सोऽप्यनैकान्तिकः, करादिचेष्टानामभिधेयप्रतिपादकत्वेऽपि भाषात्वस्यासिद्धेः, तथा यदुक्तम्-अभाषकस्य भाषा इति तदपि न युक्तं, यतः एवं सति सिद्धस्यापेक्षनस्य

वन समय विनष्ट एवं अनुत्पन्न के कारण मौजूदा हालत में नहीं होते हैं इसलिये ये व्यवहार के अंग भी नहीं होते हैं। तथा (भाषा समय व्यतिक्रान्त होने पर भाषा भाषा है अभाषा नहीं है) ऐसाजो कहा है सो भी ठीक नहीं है कारण कि जब भाष्यमाण भाषा को भाषारूप से ही स्वीकार नहीं किया गया है अर्थात् भाष्यमाण भाषा का ही जब अभाव कहा गया है तो फिर (भाषासमयव्यतिक्रान्ते) ऐसा अभिलाप ही नहीं बन सकता है। क्यों कि भाषा हो तो उसका समय व्यतिक्रान्त हो-वह तो है नहीं-फिर समय व्यतिक्रान्त किसका? अतः ऐसा अभिलाप नहीं बन सकता है। तथा जो समय व्यतिक्रान्त भाषारूप से प्रतिपादित करने के लिये (प्रतिपाद्यस्य अभिधेये प्रत्यपोत्पादकत्वात्) ऐसा हेतु कहा है वह अनैकान्तिक है। क्यों कि करादि चेष्टाओं में भी अभिधेय प्रतिपादकता पर उसमें भाषात्व नहीं है। तथा जो ऐसा कहा है कि अभाषक की भाषा है-सो यह भी ठीक नहीं है

હોવાને કારણે મોજૂદ હોતા નથી, તેથી તે બંને કાળ વ્યવહારના અંગરૂપ પણ હોતા નથી. તથા ' ભાષાનો સમય વ્યતીત થયા પછીની ભાષા, ભાષા છે અભાષા નથી " આ કથન પણ યોગ્ય નથી કારણ કે જો ભાષ્યમાણ (બોલાતી) ભાષાને જ ભાષા રૂપે સ્વીકારવામાં ન આવતી હોય તો " ભાષા સમયવ્યતિક્રાન્તે " ઇત્યાદિ અભિલાપ બની શકે જ નહીં જો ભાષા હોય તો તેનો સમય વ્યતીત થવાનો પ્રશ્ન જ આવે-પણ ભાષાનો જ અભાવ હોય તો તેનો સમય વ્યતીત થવાની વાત જ ક્યાંથી ઉદ્ભવે ? તેથી આ પ્રકારનો અભિલાપ જ બની શકે નહીં તથા સમય વ્યતીત થઇ ગયા પછીની ભાષાને પ્રતિપાદિત કરવા માટે "प्रतिपाद्यस्य अभिधेये प्रत्यपोत्पादकत्वात्" આવો જે હેતુ બતાવ્યો છે તે પણ અનૈકાન્તિક છે કારણ કે કર વગેરેના હાવ ભાવોમાં પણ અભિધેય પ્રતિપાદનતા છે પણ તેમાં ભાષાત્વ નથી તથા " અભાષકની ભાષા ભાષા છે " આ કથન પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે

यदप्युक्तं भाषणात् पूर्वं भाषा भाषणहेतुत्वात् तदयुक्तमेव, यतो भाषणात्पूर्वं भाषोत्पत्तेरभावाद् भाषात्वेन न व्यवहारः स्यात् लोकविरुद्धत्वात्। यदुक्तं भाष्यमाणा अभाषा, वर्तमानसमयस्याव्यावहारिकत्वात् तदपि न सम्यक्, वर्त-

---

माना जावे तो फिर उसमें एकान्ततः शाश्वतता नहीं माननी चाहिये। क्यों कि इस मान्यता के अनुसार वह परिणामी नित्य मानना पड़ेगा। परन्तु ऐसा उसे प्रतिपक्षी ने माना नहीं है। अतः एकान्त शाश्वत कर्म में उपचय अपचय नहीं घट सकने के कारण यह कथन भी उनका ठीक नहीं बैठता है।

तथा जो ऐसा कहा है कि भाषा की हेतु होने से भाषण के पहिले की भाषा भाषारूप है सो यह कथन भी संगत नहीं है, कारण कि भाषा की उत्पत्ति तो भाषण करने से ही होती है। भाषण के पहिले तो भाषा है ही नहीं। और न भाषण के पहिले कोई (यह भाषा हैं) ऐसा व्यवहार ही करता है। तथा-ऐसा कथन लोक विरुद्ध भी है। तथा-जो ऐसा कहा गया है कि (भाष्यमाण भाषा नहीं है अभाषा है कारण कि वर्तमान समय व्यवहार का अग नहीं होता है-वह व्यवहारिक है) सो यह कथन भी ठीक नहीं है। कारण कि वर्तमान समय ही अस्तित्व विशिष्ट होने से व्यवहारोपयोगी होता है। अतीतसमय और अना-

---

तो तेमनाभा निश्चे शाश्वतता मानवी जोईअे नही, कारण के आ मान्यता प्रमाणे तेने परिणामी नित्य मानवु पडशे परतु विपक्षीअे तेने अेवु मानेल नथी. तेथी नक्कीरूपे शाश्वत कर्ममा उपचय अने अपचयनी सभवितता न होवाने लीधे तेमनु ते कथन पण बराबर नथी

तथा—विपक्षीओनुं "भाषाना हेतुरूप होवाथी बोल्या पहेलांनी भाषा भाषारूप छे" अे कथन पण संगत लागतुं नथी, कारण भाषानी उत्पत्ति तो उच्चारण करवाथी ज थाय छे उच्चारण कर्या पहेलां तो भाषानु अस्तित्व ज नथी, अने भाषण (उच्चारण) कर्या पहेलां "आ भाषा छे" अेम कहेवातु पण नथी तेमज आ प्रकारनुं कथन लोकविरुद्ध पण छे. तथा-"भाष्यमाण भाषा, (वर्तमान समये उच्चारवामा आवती) भाषा नथी; अभाषा छे कारण के वर्तमान समय व्यवहारनु अग होतो नथी" आ कथन पण साचु नथी, कारण के वर्तमान समय ज अस्तित्व वाळो होवाथी व्यहारमां उपयोगी छे भूतकाळ अने भविष्यकाळ तो विनाशी अने अनुत्पन्न

नुष्ठानम्, तथा यदुक्तम्-अकृत्वं दुःखमित्यादि स्वभाववादिमतमाश्रित्य तदपि नोपपद्यते, यतो यदि कण्टकतैक्ष्ण्यादिवत् सर्वं वस्तु अकारणादेव स्यात् तदाऽनेक प्रकारकैहिकपारलौकिककर्मणामप्रमाणमसंगः स्वीकृतं चान्यतीर्थिकैरपि किंचित् पारलौकिककर्मानुष्ठानम्, एतत्सर्वं कथनं परतीर्थिकानामज्ञानविजृम्भितमिति। अन्यपूथिकानां विभङ्गज्ञाने चत्वारो भङ्गा भवन्ति, ते चैवम्-सद्भूते असद्भूतम्, यथा-सद्भूते-परमाणौ, असद्भूतम्-सर्वादिकम् १। असद्भूते सद्भूतम्, यथा असद्भूते-कषायकालुष्ये-सद्भूतं चैतन्यम् २। सद्भूते सद्भूतम्, यथा-सद्भूते परमाणौ, सद्भूत-निष्प्रदेशत्वम् ३। असद्भूते असद्भूतम्, यथा-असद्भूते-

---

सुख दुःखरूप होने लगे तो अनेक प्रकार के जो ऐहिक और पारलौकिक अनुष्ठान वगैरह किये जाते हैं वे सब ही व्यर्थ हो जावेंगे। सो ऐसा तो है नहीं क्यों कि पद्मच्छायादिकों ने भी कर्मानुष्ठान आदि माने हैं। तथा स्वभाववादी के मत को आश्रित कर जो (अकृत्यं दुःखं) इत्यादि कहा गया है वह भी ठीक नहीं है। क्यों कि यदि कण्टक आदिकों की तीक्ष्णता की तरह समस्त वस्तुएँ बिना करने से ही हो जावें तो फिर अनेक प्रकार के ऐहिक पारलौकिक फलों का अभाव मानना पड़ेगा। परन्तु ऐसा तो है नहीं-क्यों कि अन्यतीर्थिक जनों ने भी कुछ पारलौकिक कर्मादिकों का अनुष्ठान करना स्वीकार ही किया है। इसलिये समझना चाहिये कि अन्यतीर्थिक जनों ने जो यह सब कहा है वह उनके अज्ञान का ही कथन है। अन्यपूथिकों के विभङ्गज्ञान में चार भंग होते हैं-वे इस प्रकार से सद्भूत में असद्भूत (१) असद्भूत में सद्भूत (२) सद्भूत में सद्भूत (३) असद्भूत में असद्भूत

કરવામા આવે છે તે વ્યર્થ જ બને? એવુ તો બનતુ નથી. નિયતિવાદીઓ પણ અનુષ્ઠાનોમા માને છે "अकृत्यम् दुःखम्" આ પ્રકારની સ્વભાવવાદીઓની માન્યતા પણ સાચી નથી. કારણ કે કાંટા વગેરેમા રહેલી તીક્ષ્ણતાની જેમ તમામ વસ્તુઓ વિના કર્યે બનીજતી હોય તો અનેક પ્રકારના ઐહિક અને પારલૌકિક કર્મોનો અભાવ જ માનવો પડશે પરતુ એવું બનતુ નથી અન્ય મતવાદી ઓએ પણ કેટલાક પારલૌકિક કર્માદિકોના અનુષ્ઠાન કરવાનું સ્વીકારેલું છે તેથી એમ જ માનવુ પડશે કે અન્ય મતવાદિઓએ જે કંઇ છે તે તેમના અજ્ઞાનને કારણે કહ્યુ છે અન્ય યૂથિકો (अन्य तीर्थिको)ના વિભગજ્ઞાનમાં ચાર ભાગા (વિકલ્પ) થાય છે, તે ચાર ભાગા આ પ્રમાણે થાય છે- (૧) સદ્ભૂતમાં અસદ્ભૂત, (૨) અસદ્ભૂતમાં સદ્ભૂત (૩) સદ્ભૂતમાં સદ્ભૂત

वा भाषाप्राप्तिप्रसङ्ग इति, एवं क्रियापि वर्तमानकाले एव युक्ता तस्या एव वर्तमानत्वात्, यच्चाभ्यासानभ्यासादिकं कारणं कथितं तदपि न युक्तम्। अनभ्यासादावपि यतः काचित् सुखादिरूपैव, तथा।

यदुक्तम्–अकरणतः क्रिया दुःखा इति तदपि न भवति। प्रतीति बाधितमेव यतः काले एव क्रिया दुःखा सुखा वा दृश्यते न पुनः पूर्वं पश्चाद्वा पूर्वपश्चात्काले क्रियाया एवासद्भावादिति।

'अकिच्चं दुक्खं' इत्यादि। यदृच्छावादिमताश्रयणेन यत् कथितं तत्सर्वमसत्यमेव, यतो यदि अकरणादेव कर्म दुःखं सुखं वा भवेत्तदाऽनेकप्रकारकैहिकपारलौकिकानुष्ठानादीनां वैयर्थ्यमेव प्रसज्येत, स्वीकृतं च यदृच्छावादिभिरपि कर्माद्य-

---

क्यों कि ऐसा मानने पर सिद्ध और अचेतन के भी भषा की प्राप्ति होने का प्रसंग प्राप्त होगा। इसी तरह से क्रिया भी वर्तमान काल में ही युक्त है–क्यों कि वर्तमान काल सद्रूप है। तथा–जो अभ्यास अनभ्यास आदि को कारण कहा गया है सो भी ठीक नहीं है क्यों कि अभ्यास आदि के नहीं होने पर भी कोई क्रिया सुखरूप ही लगती है। तथा जो ऐसा कहा है कि नहीं करने से क्रिया दुःखरूप लगती है सो ऐसा कथन भी प्रतीति से बाधित ही है कारण कि करते समय ही क्रिया सुखरूप अथवा दुःखरूप प्रतीत होती है। पहिले बाद में नहीं। क्यों कि क्रिया पूर्व पश्चात् काल में अभाव युक्त रहती है। अर्थात् पूर्व पश्चात् काल में उस क्रिया का अभाव हो जाता है।

तथा–यदृच्छावादिमत को लेकर जो ऐसा कहा गया है कि (अकिच्चं दुक्खं)इत्यादि–सो सब वह असत्य ही है। क्यों कि विना किये ही कर्म

એવું માનવામા આવે તો સિદ્ધ અને અચેતનમા પણ ભાષાની પ્રાપ્તિ થવાનો પ્રસગ ઉદ્ભવશે. એજ પ્રમાણે ક્રિયા પણ વર્તમાન કાળમાં જ યુકત છે– કારણ કે વર્તમાન કાળ જ સદ્રૂપ છે– અસ્તિત્વવાળો છે. તથા અભ્યાસ અનભ્યાસ વગેરે કારણ કહેવામા આવેલ છે તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે અભ્યાસ વગેરે નહી હોવા છતાં પણ કોઇ ક્રિયા સુખરૂપ જ લાગે છે. તથા એવું જે કહ્યુ છે કે નહીં કરવાથી ક્રિયા દુ ખરૂપ લાગે છે, તે કથનની પણ પ્રતીતિ થતી નથી. કારણ કે કરતી વખતે જ ક્રિયા સુખરૂપ કે દુ.ખરૂપ લાગે છે –પહેલા કે પછી નહી– કારણ કે તે ક્રિયાનો પૂર્વકાળે અને પછીના કાળે અભાવ જ રહે છે તથા યદૃચ્છાવાદીઓ (નિયતિવાદીઓ)નું " अकिच्च दुक्खं " ઇત્યાદિ કથન પણ અસત્ય જ છે, કારણ કે કર્યા વિના જ જો કર્મ સુખ દુખ રૂપ થવા માંડે તો અનેક પ્રકારનાં જે ઐહિક અને પારલૌકિક અનુષ્ઠાનો

॥ परतीर्थिकानां क्रियाविषये प्रश्नोत्तराणि ॥

पुनरपि अन्ययूथिकान्तरमत प्रदर्शयितुमाह—' अन्न उत्थियाणं भंते ' इत्यादि।

मूलम्—अन्न उत्थिया णं भंते! एवं आइक्खंति, जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेंति, तं जहा—इरियावहियं च, संपराइयं च। जं समयं इरियावहियं पकरेइ, तं समयं संपराइयं पकरेइ, जं समयं संपराइयं पकरेइ, तं समयं इरियावहियं पकरेइ, इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं पकरेइ, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयेणं दो किरियाओ पकरेंति, तं जहा इरियावहियं च संपराइयं च। से कहमेयं भंते एवं? गोयमा! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति, तं चेव जाव जे ते एवं आहंसु, मिच्छा ते एवं आहंसु, अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि, एवं खलु एगे जीवे एगं समयं एक्कं किरियं पकरेइ, तंसमयवत्तव्वयाए णेयव्वं जाव इरियावहियं वा संपराइयं वा ॥ सू० ३ ॥

छाया—अन्ययूथिका खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, यावत् एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे क्रिये प्रकुरुतः, तद्यथा ऐर्यापथिकीं च साम्परायिकीं च।

परतीर्थिकों के क्रियाविषय में प्रश्नोत्तर—

' अन्न उत्थियाणं भंते ! एवं आइक्खंति ' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदंत ! (अन्नउत्थिया णं एवं आइक्खंति) अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं कि (जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं

પરતીર્થિકોના ક્રિયા વિષે પ્રશ્નોત્તર—

" अन्न उत्थियाणं भंते! एवं आइक्खंति' इत्यादि

सूत्रार्थ—(भंते!) હે ભગવન્! (अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति) અન્ય તીર્થિકો એવું કહે છે કે (जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो

व्यापकात्मनि, असद्भूतं कर्तृत्वम् ४। एवमन्ययूथिकमतमज्ञानविलसितं ज्ञात्वा भगवद्वचने श्रद्धा कार्येति ॥ सू-२ ॥

---

(४) इन्हें इस प्रकार से समझना चाहिये-सद्भूत परमाणु में असद्भूत आधे परमाणु का चिपकना-मानना यह प्रथमभंग है। व्यापक आत्मा में सद्भूत चैतन्य है ऐसा मानना द्वितीय भंग है। आत्मा को व्यापक मानना यह असद्भूत है। क्यों कि आत्मा अपने२ प्राप्त शरीरके बराबर माना गया है-व्यापक नहीं। सद्भूत परमाणु में निष्प्रदेशत्व मानना यह सद्भूत सद्भूत नाम का तीसरा भग है। व्यापक आत्मा में असद्भूत कर्तृत्व मानना यह चौथा भंग है। इसी तरह से अन्यतीर्थिक जनों का मत अज्ञानविलसित है ऐसा जानकर भगवान के वचन में श्रद्धा करनी चाहिये।

यहां जो प्राण, भूत, जीव, सत्व ऐसा पाठ आया है-सो दो इन्द्रियवाले, तीन इन्द्रियवाले, चार इन्द्रियवाले, जीव प्राण शब्द से, वृक्ष एकेन्द्रिय जीव भूत शब्द से, पांच इन्द्रिय वाले जीव जीव शब्द से और बाकी के पृथिवीकाय अप् तेजो कायिक जीव सत्त्व शब्द से लिये गये हैं ऐसा जानना चाहिये ॥ सू-२ ॥

અને (૪) અસદ્ભૂતમાં અસદ્ભૂત તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે- સદ્ભૂત પરમાણુમા અસદ્ભૂત—અર્ધા પરમાણુનુ ચોટી જવુ-એ માન્યતા ધરાવવી આ પહેલો ભાગો છે વ્યાપક આત્મામાં સદ્ભૂત ચૈતન્ય છે એમ માનવું તે બીજો ભાંગો છે આત્માને વ્યાપક માનવો તે અસદ્ભૂત છે કારણ કે આત્મા પોત પોતાના પ્રાપ્ત શરીરની બરાબર મનાય છે- વ્યાપક મનાતો નથી- સદ્ભૂત પરમાણુમા નિષ્પ્રદેશત્વ માનવું તે સદ્ભૂતમા સદ્ભૂત નામનો ત્રીજો ભાગો છે વ્યાપક આત્મામાં અસદ્ભૂત કર્તૃત્વ માનવું તે ચોથા ભાંગો છે. આ રીતે અન્યતીર્થિકોનો મત અજ્ઞાનમૂલક છે, એમ જાણીને ભગવાનનાં વચનોમા શ્રદ્ધા રાખવી.

અહીં જે પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ શબ્દનો પ્રયોગ કરાયો છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે સમજવો. બે ઇન્દ્રિયવાળા, ત્રણ ઇન્દ્રિયવાળા અને ચાર ઇન્દ્રિયવાળા જીવો, પ્રાણ શબ્દથી ગ્રહણ કરાયાં છે. વનસ્પતિન જીવો; ભૂત શબ્દથી, પચેન્દ્રિય જીવો; જીવ શબ્દથી અને બાકીના પૃથ્વીકાય અપ્કાય તેજકાય અને વાયુકાયના જીવો સત્વ શબ્દથી ગૃહણ કરાયા છે એમ સમજવું. ॥સૂ. ૨॥

एवमाख्यातिं जाव यावत् च ते एवमाहु मिथ्या ते एवमाहु अहं पुनर्गौतम ! एवमाख्यामि एवं खलु एको जीव एकसमये एका क्रियां प्रकरोति, स्वसमयवक्तव्यतया नेतव्यम् यावद् ऐर्यापथिकीं वा साम्परायिकीं वा ॥ सू० ॥ २ ॥

टीका-'अण्ण उत्थियाणं भंते' अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! 'एवं आइक्खंति' एवमाख्यान्ति 'जाव' यावत्पदेन-'एवं भासंति एवं पण्णवेंति एवं परूवेंति, एवं खलु

एवं) तो क्या हे भदन्त ! यह कथन इसी प्रकार से है ? (गोयमा) हे गौतम ! (जं णं ते अण्णउत्थिया) जो वे अन्ययूथिक (एवं आइक्खंति) ऐसा कहते हैं (तं चेव जाव जे ते एवं आहंसु) यावत् जो उन्होंने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एवं आहंसु) वह उन्होंने मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि) मैं तो हे गौतम ! ऐसा कहता हूं कि (एवं खलु-एगे जीवे एगसमएणं एगं किरियं पकरेइ) एक जीव एक समय में एक क्रिया करता है। (सयसमयवत्तव्वयाए णेयव्वं जाव इरियावहियं वा सांपरायियं वा) यह पात स्वसमय वक्तव्यता से जाननी यावत् एक जीव एक समयमें ऐर्यापथिकी अथवा साम्परायिकी क्रिया करता है।

टीकार्थ—(अण्ण उत्थिया णं भंते) हे भदन्त ! अन्ययूथिक ऐसा कहते हैं। यहां जो (जाव) पद आया है इससे (एवं आपाखंति, एवं पण्णवेंति, एवं परूवेंति) इन क्रियापदों का संग्रह किया गया है।

एवं) તો હે ભદન્ત ! તેમનું તે કથન આવું છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जं णं ते अण्णउत्थिया एवं आइक्खंति) તે અન્ય તાર્થિકો જેવું જે કહે છે, (तं चेव जाव जे ते एवं आहंसु) (यावत्) તેમણે જેવું જે કહ્યું છે (मिच्छा ते एवं आहंसु, તે તેમણે મિથ્યા કહ્યું છે તે આવું નથી (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि) હે ગૌતમ ! હું એવું કહું છું (एवं खलु-एगे जीवे एगसमएणं एगं किरियं पकरेइ) એક જીવ એક સમયે એક ક્રિયા કરે છે (सयसमयवत्तव्वयाए णेयव्वं जाव इरियावहियं वा सांपरायियं वा) તે પણ સ્વસમય વક્તવ્યતાથી (આ સિદ્ધાંતથી) જાણવી જોઈએ કે એક જીવ એક સમયે ઐર્યાપથિકી અથવા સાંપરાયિકી એ બે માંથી એક જ ક્રિયા કરે છે

ટીકાર્થ—' अण्णउत्थियाणं भंते ! ' હે ભગવન્ અન્ય મતવાદીઓ આ પ્રમાણે કહે છે (અહીં जाव (यावत्पदेन) આ પદ વડે एवं भासंति, एवं पण्णवेंति एवं परूवेंति) આ ક્રિયાપદોને અહણ કરવામાં આવ્યા છે) તેઓ

यस्मिन् समये ऐर्यापथिकीं प्रकरोति तस्मिन् समये सांपरायिकीं प्रकरोति, यस्मिन् समये सांपरायिकीं प्रकरोति तस्मिन् समये ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, ऐर्यापथिक्याः प्रकरणतया साम्परायिकीं प्रकरोति. साम्परायिक्याः प्रकरणतया ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, एव खलु एको जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये प्रकरोति, तद्यथा-ऐर्यापथिकीं च सांपरायिकीं च, तत् कथमेतत् भदन्त ! एवम् ? गौतम ! यत्खलु अन्यतीर्थिका

दो किरियाओ पकरेंति) यावत् एक जीव एक समय में दो क्रियाओं को करता है। (तं जहा) वे दो क्रियाएँ इस प्रकार से हैं (ईरियावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिकी दूसरी सांपरायिकी सो जीव इन दो क्रियाओ को करता है। (जं समयं इरियावहियं पकरेइ) जिस समय में ऐर्यापथिकी क्रिया करता है। (तं समयं संपराइयं पकरेइ) उस समय में सांपरायिकी क्रिया करता हैं (जं समयं सांपराइयं पकरेइ) जिस समय में सांपरायिकी क्रिया करता है (तं समयं इरियावहियं पकरेइ) उस समय में ऐर्यापथिकी क्रिया करता है (इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ, संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं पकरेइ) ऐर्यापथिकी क्रिया करने से सांपरायिकी क्रिया करता है, सांपरायिकी क्रिया करने से ऐर्यापथिकी क्रिया करता है। (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेइ) इस तरह एक जीव एक समय में दो क्रियाओं को करता है। (तं जहा इरियावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिकी क्रिया और दूसरी सांपरायिकी क्रिया को। (से कहमेयं भंते !

किरियाओ पकरेति) એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે. (तं जहा) તે બે ક્રિયાઓ આ પ્રમાણે છે- ईरियावहियं च सपराइयं च) (૧) ઐર્યાપથિકી અને (૨) સાંપરાયિકી, જીવ આ બને ક્રિયાઓ કરે છે, (ज समय इरियावहियं पकरेइ) જ્યારે જીવ ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો હોય છે ત્યારે त समयं संपराइयं पकरेइ) સાંપરાયિકી ક્રિયા પણ કરતો હોય છે. (ज समयं संपराइयं पकरेइ त समयं इरियावहियं पकरेइ) જે સમયે જીવ સાપરાયિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા પણ કરતો હોય છે, (इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ, सपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं पकरेइ) ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરવાથી સાપરાયિકી ક્રિયા કરે છે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરવાથી ઐર્યાપથિકીક્રિયા કરે છે (एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेइ) આ રીતે એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે-(त जहा इरियावहियं च सपराइयं च) એક ઐર્યાપથિકી ક્રિયા અને બીજી સાપરાયિકી ક્રિયા. (से कहमेयं भंते !

समय ऐर्यापथिकीं प्रकरोति-सम्पादयति 'त समयं सपराइय पकरइ' तस्मिन् समय सांपरायिकीं प्रकरोति, तस्मिन्नेव समये सांपरायिकीं क्रियामपि सम्पादयति। 'जं समयं संपराइय पकरइ' यस्मिन् समये सांपरायिकीं प्रकरोति, 'तं समयं ईरियावहिय पकरेइ' तस्मिन् समय ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, तथा 'इरियावहियाए-पकरणयाए संपराइय पकरेइ' ऐर्यापथिक्या प्रकरणतया सांपरायिकीं प्रकरोति 'संपराइयाए पकरणयाए इरियावहिय पकरेइ' सांपरायिक्या प्रकरणतया ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, 'एव खलु एगे जीवे एगेण समएण दो किरियाओ पकरेति' एव खलु एको जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये प्रकरोति, 'तं जहा' तद्यथा-'इरियावहियं च सपराइय च' ऐर्यापथिकीं च सांपरायिकीं च 'से कहमेय भंते एवं' तत् कथमेतद् भदन्त! एवम्? हे भदन्त! यच्चे कथयन्ति तत्सर्वं

समय में (इरियावहिय) ऐर्यापथिकी क्रिया को करता है (तं समय) उसी समय में (सपराइय) यह सांपरायिकी क्रिया को भी (पकरेइ) करता है। तथा (ज समय सपराइय पकरेइ) जिस समय में जीव सांपरायिकी क्रिया करता है (त समय ईरियावहियं पकरइ) उस समय वह ऐर्यापथिकी क्रिया को करता है। (इरियावहियाए पकरणयाए सांपराइय पकरेइ) ऐर्यापथिकी क्रिया कर लेने से जीव (सपराइय पकरेइ) सांपरायिकी क्रिया करता है। (सपराइयाए पकरणयाए ईरियावहियं पकरेइ) सांपरायिकी क्रिया कर लेने से ऐर्यापथिकी क्रिया करता है। (एव खलु एगे जीवे एगेण समएण दो किरियाओ पकरेंति) इस तरह एक जीव एक समय में दो क्रियाओं को करता है। (त जहा) जैसे (इरियावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिक को और सांपरायिकी को।

वहियं" ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરે છે 'त समयं' એજ સમયે 'सपराइय पकरेइ" તે સાંપરાયિકી ક્રિયા પણ કરે છે તથા "ज समयं संपराइय पकरेइ" જે સમયે જીવ સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે 'त समय ईरियावहियं पकरेइ" તે સમયે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા પણ કરે છે "इरियावहियाए पकरणयाए संपराइय पकरेइ" ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરી લેવાથી જીવ "संपराइय पकरेइ" સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે અને 'संपराइयाए पकरणयाए ईरियावहियं पकरेइ" સાંપરાયિકી ક્રિયા કરી લેવાથી ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરે છે "एव खलु एगे जीवे एगेण समएण दो किरियाओ पकरेंति આ રીતે એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે-"तं जहा" તે બે ક્રિયાઓ આ પ્રમાણે "ईरियावहियं च संपराइय च"

यन्ति, किमाख्यान्तीत्याह–' एवं खलु ' इत्यादि । ' एवं खलु एगे जीवे ' एवं खलु एको जीवः, ' एगेणं समएणं ' एकस्मिन् समये ' दो किरियाओ पकरेंति ' द्वे क्रिये प्रकरोति । के ते द्वे क्रिये ? तत्राह–' तं जहा ' त्यादि । ' त जहा ' तद्यथा–' इरियावहियं च संपराइयं च ' ऐर्यापथिकीं च साम्परायिकीं च । तत्र ईर्या नाम गमनम् तद्विषयः पन्थाः मार्ग इति ईर्यापथः तत्र भवा ऐर्यापथिकी, केवलकाययोगकारणकः कर्मबन्ध इत्यर्थः, ताम् । संपरैति=भ्रमति जीवो भवे= संसारे यैस्ते संपरायाः कषायास्तत्कारणिका या क्रिया सा सांपरायिकी क्रिया, कषायकारणकः कर्मबन्ध इत्यर्थः ताम् । ' जं समयं इरियावहियं पकरेइ ' यस्मिन्

वे क्या कहते हैं–इसको सूत्रकार ने (एवं खलु एगे जीवे) इत्यादि सूत्र पाठ द्वारा प्रकट किया है एक जीव (एगेणं समएणं) एक समय में (दो किरियाओ पकरेंति) दो क्रियाएँ करता है! वे दो क्रियाएँ कौन सी हैं–इसे (तंजहा) द्वारा प्रकट करने के निमित्त कहते हैं कि वे इस प्रकार से हैं—(इरियावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिक और दूसरी सांपरायिक, ईर्या नाम गमन का है। इस गमन का विषयभूत जो मार्ग है वह ईर्यापथ है। इसमें जो क्रिया हो वह ऐर्यापथिकी क्रिया है। अर्थात् गमनागमन करते समय केवल काययोग कारणक जो कर्मबंध होता है वह ऐर्यापथिकी क्रिया है। जिनके कारण जीव संसार में परिभ्रमण करता रहता है वह संपराय है– संपराय नाम कषाय का है। इस कषाय को लेकर जो क्रिया होती है, वह सांपरायिक क्रिया है। अर्थात् कषायकारणक जो कर्मबंध होता है वह सांपरायिकी क्रिया है। जीव (जं समयं) जिस

શું કહે છે તે સૂત્રકારે " एव खलु एगे जीवे " ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ વડે બતાવ્યું છે એક જીવ (एगेणं समएणं) એક સમયે ' दो किरियाओ पकरेंति " બે ક્રિયાઓ કરે છે. તે બે ક્રિયાઓ (त जहा) આ પ્રમાણે છે–" ईरियावहियं च संपराइयं च " એક ઇર્યાપથિકી ક્રિયા અને બીજી સાંપરાયિકી ક્રિયા ઇર્યા એટલે ગમન. તે ગમનને માટેનો જે માર્ગ હોય છે તેને ઇર્યાપથ કહે છે. તેમાં જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે, એટલે કે ગમનાગમન કરતી વખતે કાયયોગને કારણે જે કર્મબંધ થાય છે તેને ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે, સપરાય એટલે કષાય. જેના કારણે જીવ સંસારમા પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે તેનુ નામ સંપરાય (કષાય) છે તે કષાયને લીધે જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને સાંપરાયિકી ક્રિયા કહે છે, એટલે કે કષાયને કારણે જે કર્મબંધ થાય છે તેને સાપરાયિકી ક્રિયા કહે છે " ज समयं " જે સમયે જીવ " ईरिया

स्वसमयवक्तव्यतया नेतव्यम्, स्वसमयवक्तव्यता-चेत्थम्—"इरियावहियं वा संपराइयं वा। जं समयं इरियावहियं पकरेइ तं समयं संपराइयं न पकरेइ, जं समयं संपराइयं पकरेइ तं समयं इरियावहियं न पकरेइ। इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं न पकरेइ, संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं न पकरेइ। एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं किरियं पकरेइ, तं जहा"-इति, 'इरियावहियं वा संपराइयं वा' इत्यनेन सह संयोजनीयम्। सिद्धान्तश्चात्र पूर्वोक्तमतस्यैवं प्रतिपादनीयम् ऐर्यापथिकी क्रिया तु अकषायोदयपक्षजा, ऐर्यापथिकी क्रिया केवलकाययोगकारणेन जायते कायपदेशाश्च न कषायरूपोऽपि तु कषायमिश्रोऽतः ऐर्यापथिकी

समय में (एक्कं) एक (किरियं) क्रिया को (पकरेइ) करता है। (सेसमयं वत्तव्वयाए णेयव्वं) यह पाठ स्वसमयवक्तव्यता से जानना चाहिये। यह स्वसमयवक्तव्यता इस प्रकार से है (इरियावहियं वा सांपराइयं वा जं समयं इरियावहियं पकरेइ, तं समयं संपराइयं न पकरेइ) इत्यादि-जीव एक समय में एक ही क्रिया करता है। या तो वह ऐर्यापथिक क्रिया करता है, या सांपरायिक क्रिया करता है। जिस समय में वह ऐर्यापथिक क्रिया करता है उस समय में वह सांपरायिक क्रिया नहीं करता है। जिस समय में सांपरायिक क्रिया करता है उस समय में वह ऐर्यापथिक क्रिया नहीं करता है। ऐर्यापथिक क्रिया कर लेने से सांपरायिक क्रिया वह नहीं करता है और सांपरायिक क्रिया कर लेने से वह ऐर्यापथिक क्रिया नहीं करता है। इस तरह एक जीव एक समय में एक क्रिया करता है। या तो वह ऐर्यापथिक क्रिया करता है अथवा सांपरायिक क्रिया करता है।

હવે "एगं समएणं" એ સમયે 'एक किरिय पकरेइ" એક ક્રિયા જ કરે છે "सेसमयवत्तव्वयाए णेयव्व" તે વાત स्वसमय (સ્વ સિદ્ધાંત) ના પક્ષ પને ધ્યાનમાં લઈને કહેવામાં આવી છે તે स्वसमयની वक्तव्यता આ પ્રમાણે છે "इरियावहियं वा सांपराइयं वा जं समयं इरियावहियं पकरेइ, तं समयं संपराइयं न पकरेइ" ઇત્યાદિ જીવ એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે આ તો તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરે જ અથવા તો સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે જે સમયે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે તે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો નથી જે સમયે તે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતા હોય છે તે સમયે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો નથી ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરી લેવાથી તે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો નથી અને સાંપરાયિકી ક્રિયા કરી લેવાથી જીવ ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો નથી આ રીતે એક જીવ એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે-

वास्ति किम्?। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति' ४ यत् खलु ते अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति, एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति एवं प्ररूपयन्ति। 'तं चेव जाव' तदेव पूर्वोक्तमेव यावत्, अत्र यावच्छब्देन-"एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेति, तं जहा-इरियावहियं च संपराइयं च' इत्यादि-पूर्वोक्तमन्यतीर्थिकमतं सर्वं संग्राह्यम्। 'जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु' ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, 'अहं पुण गोयमा' अहं पुनर्गौतम, 'एवं आइक्खामि' ४ एवमाख्यामि, एवं प्रज्ञापयामि। एवं खलु एको जीवः 'एगं समएणं' एकस्मिन् समये 'एक्कं किरियं पकरेइ' 'एकां क्रियां प्रकरोति, 'स समयवत्तव्वयाए णेयव्वं'

(से कहमेयं भंते! एवं वुच्चइ) तो हे भदन्त! जैसा वे कहते हैं क्या वह वैसा ही है?

इसका उत्तर भगवान देते हुए कहते है-(गोयमा) हे गौतम! (जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४) जो वे अन्ययूथिक ऐसा कहते हैं, ऐसा भाषण करते हैं, ऐसा प्रज्ञापना करते हैं (तं चेव जाव) यहां यावत् शब्द से अन्यतीर्थिक समत पूर्वोक्त (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं) इत्यादि यह पाठ ग्रहण किया गया है-कि एक जीव एक समय में दो क्रियाएँ करता है इत्यादि, (जे ते एवमाहंसु) सो जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एवमाहंसु) वह उन्हों ने झूठा कहा है। (अहं पुण गोयमा) हे गौतम! मैं तो (एवं आइक्खामि) ऐसा कहता हूं, ऐसा भाषण करता हूं, ऐसी प्रज्ञापना करता हूं, ऐसी प्ररूपणा करता हूं, कि (एवं खलु एगे जीवे) एक जीव (एगेणं समएणं) एक

એક ઈર્યાપથિકી અને બીજી સાપરાયિકી "से कहमेयं भंते! एवं वुच्चइ?" તો હે ભગવન્! તેઓ એમ કેવી રીતે કહે છે?-શું તેમની માન્યતા સાચી છે?

તેનો જવાબ આપતા ભગવાન કહે છે કે "गोयमा!" હે ગૌતમ! "जं णं ते अन्नउत्थिया एव आइक्खंति ४" તે અન્ય તીર્થિકો એવુ જે કહે છે, એવુ જે ભાષણ કરેછે, એવી જે પ્રજ્ઞાપના કરેછે, એવી જે પ્રરૂપણા કરે છે, 'तं चेव जाव" અહીં "यावत्" પદથી અન્ય મતવાદીઓનો "એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે" ઇત્યાદિ તમામ પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે, "जे ते एवमाहंसु" અને એવુ જે તેમણે કહ્યુ છે "मिच्छा ते एवमाहंसु" તે તેમણે જૂઠું કહ્યું છે-તેમની તે માન્યતા ભૂલ ભરેલી છે. "अहं पुण गोयमा!" હે ગૌતમ! હું તો "एव आइक्खामि" એવું કહુ છુ, એવુ ભાષણ કરૂં છું, એવી પ્રજ્ઞાપના કરૂં છું અને એવી પ્રરૂપણા કરૂ છુ કે "एवं खलु एगे जीवे" એક

परतीर्थिकमतस्य मिथ्यात्वमवतीति बोध्यम्। विरुद्धयो पदार्थयोरेकपुरुषणैकदा समुत्पादयितुमशक्यत्वात्। नहि गच्छन् निलदृष्टः स्थितो भवति, तद्वदिहापि कषाय जनितक्रियायाः अकषायजनितक्रियायाः परस्पर विरुद्धत्वादेकपुरुषेण एकसमये क्रियारूप स्यानुष्ठातुमशक्यत्वेन मिथ्या तन्मतमिति संक्षेपः ॥ सू० ३ ॥

उपपातविरहविचारः—

अनन्तरमुपकरणे क्रियाया निरूपणं कृतम्, क्रियावतां चोत्पादो भवति इति क्रियानिरूपणे सति क्रियामूलकस्योत्पादः स्मृतो भवति, तत्पादस्मरणे सति तद्विरहोत्पादविरहस्य स्मरणं जातमिति तदेवाह—'निरयगई' इत्यादि।

मूलम्—निरयगई णं भंते ! केवइयं कालं विरहिया उववाएणं पण्णत्ता ? गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं बारसमुहुत्ता, एवं वक्कंतीपयं भाणियव्वं निरवसेसं, सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

॥ पढमसमये दसमो उद्देसो समत्तो ॥ १—१० ॥

कारण किसी तरह संभवित नहीं होता है। अतः इस प्रकार की मान्यतावाला परतीर्थिकों का मत मिथ्या है। ऐसा जानना चाहिये। क्यों कि एक ही काल में परस्पर विरुद्ध दो पदार्थों का एक पुरुष द्वारा संपादन होना अशक्य है। (जाना हुआ देवदत्त खड़ा है) जैसे किसी के इस कथन को कोई सत्य नहीं मान सकता है वैसा ही यह कथन है। इसे सत्य कैसे माना जा सकता है अर्थात् जैसे ज्ञानरूप क्रिया और स्थित होने रूप क्रिया एक ही काल में एक पुरुष में परस्पर में विरुद्ध होने के कारण संभवती नहीं है, उसी प्रकार से कषाय जनित और अकषाय जनित इन दो क्रियाओं को परस्पर विरुद्ध होने के कारण ये दो क्रियाएँ एक ही काल में एक ही पुरुष द्वारा अनुष्ठातुं-करतुं-(करने योग्य) नहीं हो सकती हैं। अतः इस प्रकार की क्रिया युग्म की एकसमय करने की मान्यतावाला निह्नव मिथ्या है ऐसा जानना चाहिये ॥सू ३॥

મિથ્યા છે અર્થાત્ કોઇપણ સમયે પરસ્પરથી વિરુદ્ધ જેવી બે ક્રિયાઓનું બે પુરુષ વડે સંપાદન એકી સમકાળે છે જેમ કે જઈ રહેલો દેવદત્ત ઉભો છે” એ કથન કોઇને પણ સત્ય નહીં લાગે, અર્થાત્ જવાની ક્રિયા અને ઉભા રહેવાની ક્રિયા પરસ્પર વિરુદ્ધ ક્રિયાઓ છે તો તે બને ક્રિયા બે જ પુરુષ વડે બે જ સમયે સમજી શકાતી નથી બેજ પ્રમાણે કષાયજનિત અને કષાય રહિત જે બે ક્રિયાઓ (સાંપરાયિકી અને ઐર્યાપથિકી) પરસ્પર વિરુદ્ધ હોવાને કારણે બેજ જીવ વડે બેજ સમયે સમજી શકાતી નથી. તેથી તે બે ક્રિયાઓ બે જ સાથે થાય છે, એવી માન્યતા મિથ્યા સમજવી. ॥ સૂ-૩ ॥

क्रियाऽकषायदोषप्रभवा भवति, सांपरायिकी क्रिया तु कषायदोषोद्भवा संसारे परिभ्रमणकारणं कषायाः ते एव संपरायपदवाच्यास्तैः संपरायैः कषायापरनामकैर्जायमाना क्रिया सांपरायिकीति कथ्यते इति एकस्याः कषायप्रभवत्वमेकस्यास्तु अकषायप्रभवत्वमितिद्वयोः क्रिययोः परस्परं विरोधात् कथमेकपुरुषेण एककाले तयो र्द्वयोः क्रिययोः करणं संभवतीति विरोधान्नैकदा द्वयोः संपादनं स्यादित्येवं रूपेण-

---

इस मत में मिथ्यात्व का प्रतिपादन इस प्रकार से करना चाहिये--ऐर्यापथिकी जो क्रिया होती है वह अकषायोद्भाव (विना कषय) होती है, तथा यह क्रिया केवल काययोगरूप कारण से उत्पन्न होती है। काययोगरूप जो कारण है वह कषायरूप होता नहीं है, किन्तु वह तो कषाय से भिन्न होता है। इसलिये ऐर्यापथिकी जो क्रिया है वह अकषायोद्भव (उत्पन्न) होती है। परन्तु जो सांपरायिक क्रिया है वह कषायरूप दोष से उद्भव (उत्पन्न) होती है। कषायें संसार में परिभ्रमण का कारण है। कषायों का नाम भी संपराय है। इन संपरायरूप कषायों से जो क्रिया उत्पन्न होती है, उस क्रिया का नाम सांपरायिक क्रिया है। इस तरह से जब यह बात है कि एक क्रिया कषाय से उत्पन्न होती है और एक क्रिया कषाय से उत्पन्न नहीं होती है, तो परस्पर में विरुद्ध हुई इन दो क्रियाओं का करना एक ही काल में एक पुरुष के लिये कैसे संभव हो सकता है। नहीं हो सकता है। अतः एक काल में इन दो क्रियाओं का एक पुरुष द्वारा संपादन होना मानना परस्पर में विरोध होने के

અન્ય તીર્થિકોના આ મિથ્યા મતનુ નિરસન આ રીતે કરી શકાય. ઐર્યાપથિકી ક્રિયા માત્ર કાયયોગ ને કારણે જ ઉત્પન્ન થાય છે, તે કષાયને કારણે ઉત્પન્ન થતી નથી, કાયયોગ રૂપ જે કારણો છે તે કષાયરૂપ હેતુ નથી, પણ તે તો કષાયથી ભિન્નજ હોય છે તેથી ઐર્યાપથિકી ક્રિયા અકષાયોદ્ભવ (વિના કષાયે ઉત્પન્ન થનાર) હોય છે પણ સાપરાયિકી ક્રિયા કષાયરૂપ દોષથી ઉદ્ભવતી હોય છે કષાયો સંસારમા પરિભ્રમણના કારણરૂપ છે કષાયોનુ નામજ સાપરાય છે, એ સાપરાયરૂપ કષાયોથી જે ક્રિયા ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રિયાને સાપરાયિકી ક્રિયા કહે છે, આ રીતે એક ક્રિયા કષાયથી ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજી ક્રિયા કષાયથી ઉત્પન્ન થતી નથી, આ પ્રકારની એક બીજાથી વિરૂદ્ધ ક્રિયાઓ એકજસમયે એક પુરુષ મારફત કેવી રીતે કરી શકાય ? કહેવાનો હેતુ એ છે કે એકજ સમયે એક જીવવડે તે બને ક્રિયાઓનું સંપાદન થવું કોઇપણ રીતે સંભવિત નથી, તેથી તે બંને ક્રિયાઓ એક જીવ એકજ સમયે કરે છે" એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા

टीका—'निरयगईणं भंते' निरयगतिः खलु भदन्त ! 'केवइयं कालं विरहिया उववाएणं' कियन्तं कालं विरहिता उपपातेन 'पण्णत्ता' प्रज्ञप्ता ? भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'जहण्णेणं एक्कं समयं' जघन्येन एकं समयम् 'उक्कोसेणं बारसमुहुत्ता' उत्कर्षेण द्वादश मुहूर्तान्, हे गौतम ! जघन्येनैकसमयपर्यन्तमुत्कर्षतो द्वादश मुहूर्तान् उपपातरहिततया नरकगतिः कथितेति भावः । 'एवं चक्कवीसएवि भाणियव्वं निरवसेसं' एवं व्युत्क्रान्तिपदं भणितव्यम् निरवशेषम् व्युत्क्रान्तिर्जीवानामुत्पादः तत्प्रतिपादकमिति व्युत्क्रान्तिपदम् सत् प्रज्ञापनासूत्रस्य षष्ठम् । तत्सर्वं प्रज्ञापनासूत्रे विलोकनीयम् । 'सेवं भंते सेवं भंते' तदेतद् भदन्त ! तदेतद् भदन्त ! हे भदन्त ! यद्यदनुभिषेकतः तत्सर्वं सत्यमेवेति ॥ सू० ४ ॥

षष्ठमङ्गतस्त्वम् दशम उद्देशः समाप्तः ॥ १-१० ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां षष्ठम् शतकं समाप्तम् ॥ १ ॥

भदन्त ! इसी प्रकार से है हे भदन्त ! इस प्रकार कहकर यावत् गौतम स्वामी तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

टीकार्थ—टीका का अर्थ सूत्रार्थ के अनुसार ही है। नरकगति यदि उपपात से विरहित रहे तो कम से कम १ समय तक रहे और अधिक से अधिक १२ बार मुहूर्त तक रहे। इससे आगे वह उपपात से विरहित नहीं रह सकती। जीवों के उत्पाद का नाम व्युत्क्रान्ति है। इस अभिप्राय को लेकर जो प्रकरण है वह व्युत्क्रान्तिपद है। यह व्युत्क्रान्तिकपद प्रज्ञापना-सूत्र का छठवाँ पद है। यह सब प्रज्ञापना सूत्र में देख लेना चाहिये ४

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका दशवाँ उद्देशक समाप्त ॥१-१०॥

દીપકનો અર્થ સૂત્રાર્થ પ્રમાણે જ છે નારકગતિ ઓછામાં ઓછા એક સમય અને વધારેમાં વધારે ૧૨ મુહૂર્ત સુધી ઉપપાતથી વિરહિત રહે છે તેથી વધારે સમય તે ઉપપાતથી વિરહિત રહેતી નથી. જીવોના ઉત્પાદને વ્યુત્ક્રાન્તિ કહે છે આ વિષે વ્યુત્ક્રાન્તિપદ" નામનું પ્રકરણ છે તે વ્યુત્ક્રાન્તિપદ પ્રજ્ઞાપના સૂત્રનું છઠ્ઠું પદ છે તેની વિશેષ માહિતી પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાંથી જોઈ લેવી ॥ સૂ. ૪॥

પ્રમેયચન્દ્રિકા જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો દસમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૧૦॥

छाया—निरयगतिः खलु भदन्त ! कियन्तं कालं विरहिता उपपातेन प्रज्ञप्ता? गौतम ! जघन्येन एकं समयम् उत्कृष्टेन द्वादशमुहूर्त्तान् एवं व्युत्क्रांतिपदं भणितव्यं निरवशेषं, तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥ सू० ४ ॥

॥ प्रथमशतके दशम उद्देशः समाप्तः ॥ १–१० ॥

उपपातविरह—

अनन्तर प्रकरण में क्रिया का निरूपण किया है। जो क्रिया वाले होते हैं उनका उत्पाद होता है। इस तरह क्रिया के निरूपण होने पर क्रिया मूलक उत्पाद का स्मरण हो आता है और उत्पाद के स्मरण होने पर इसका विपक्ष भूत जो उत्पाद विरह है उसका स्मरण हो जाता है सो अब सूत्रकार इसी उत्पाद विरह का कथन करते हैं–' निरयगईणं भंते ! केवइयं कालं' इत्यादि

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (निरयगईण) निरयगति-कितने कालतक (उववाएणं) उपपात से (विरहिया पण्णत्ता) विरहित कही गई है ? (गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं) हे गौतम ! जघन्य से एक समयतक और (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट से (बारस मुहुत्ता) बारह मुहूर्त्त तक निरयगति उपपात से विरहित कही गई है। (एवं वक्कंतीपयं भाणियव्वं निरवसेसं) इसी तरह समस्त व्युत्क्रान्तिक पद कहना चाहिये (सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) इसी यह प्रकार से है हे

उपपात विरह

આગળના પ્રકરણમાં ક્રિયાનું નિરૂપણ કરવામા આવ્યું છે. જેઓ ક્રિયાવાળા હોય છે તેમનો ઉપપાત (જન્મ) હોય છે આ રીતે ક્રિયાનું નિરૂપણ કરતી વખતે ક્રિયામૂલક ઉપપાતનું સ્મરણ થઈ આવે છે અને ઉપપાત'નુ સ્મરણ થતા તેના પ્રતિપક્ષી ઉપપાત, વિરહનુ સ્મરણ થઈ આવે છે. તેથી હવે સૂત્રકાર ઉપાપત વિરહનુ નિરૂપણ કરે છે

" निरयगईणं भंते ! केवइयं कालं " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–(भंते !) હે ભગવન્ ! (निरयगईण केवइयं कालं) નરકગતિ કેટલા કાળ સુધી (उववाएण विरहिया पण्णत्ता ?) ઉપપાત વિરહિત કહી છે (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जहण्णेण एक्क समय) ઓછામાં ઓછી એક સમય અને (उक्कोसेण बारसमुहुत्ता) વધારેમાં વધારે બાર મુહૂર્ત સુધી નરકગતિને ઉપાપતથી વિરહિત કહેલ છે (एव वक्कती पयं भाणियव्व निरवसेसं) આ રીતે આખું વ્યુત્ક્રિન્તક પદ કહેવું (सेवं भंते ! सेव भंते ! त्ति जाव विहरइ) હે ભગવાન્ આપનુ કહેવું સાચુ છે હે ભગવાન્ આપના કહેવા પ્રમાણે જ બધુ બરાબર છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવાનને વંદણા નમસ્કાર કરીને ગૌતમ સ્વામી સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા પોતાને સ્થાને બેસી ગયા.

एवोत्पद्यन्ते इति विचारः ! वायुजीवानां मरणं कथं भवतीति प्रश्नः । आघातादिरूपम् । वायुजीवानां शरीराशरीरयोः प्रतिपादनम् , वायुजीवानां चत्वारि शरीराणि भवन्तीति कथनम् । सकर्मकमृतादिअनगारस्य स्वरूपविचारः । प्राणभूत जीवसत्त्वविज्ञपेदस्यानां स्वरूपकथनम् । अकर्मकमृतादिअनगारस्य विचारः । सिद्ध बुद्धमुक्तपारगत परम्परागतत्वादीनां स्वरूपपरिकीर्तनम् । आर्यस्कन्दकस्य चरितम् । पिङ्गलकनिर्ग्रन्थवैशालिकश्रावकस्य स्कन्दकं प्रति प्रश्नाः । तत्र लोकः सान्तोऽनन्तो नित्य सान्तोऽनन्तो वा, सिद्धिः सान्तोऽनन्ता वा, सिद्धः सान्तोऽनन्तो वा केन मरणेन म्रियमाणस्य जीवस्य संसारहृद्धिहानी भवति । स्कन्दकस्य संशयोत्पत्त्या मौनावलम्बनम् । श्रीमहावीरस्वागमनं श्रुत्वा तत्पार्श्वे स्कन्दकस्य गमन प्रश्न करणं, भगवत उत्तरकथनं चेति । स्कन्दकस्याऽच्युतकल्पे उत्पत्तिः, महाविदेहे

કાયિક માં જ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ઐસા વિચાર। વાયુકાયિકજીવોં કા મરણ કૈસે હોતા હૈ ? યહ પ્રશ્ન,આઘાત સે હોતા હૈ ઐસા ઉત્તર। વાયુકાયિક જીવોં કે શરીર ઔર અશરીર કા પ્રતિપાદન વાયુ જીવોં કે ચાર શરીર હોતે હૈં ઐસા કથન, સકર્મક મૃતાદિ અનગાર કે સ્વરૂપ કા વિચાર, પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ, ઐસા ઇનકે સ્વરૂપ કા કથન અકર્મક મૃતાદિ અનગાર કા વિચાર, સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પારગત, પરંપરાગત આદિ કે સ્વરૂપ કા કથન, આર્ય શ્રી સ્કંદ કા ચરિત્ર પિંગલક નિર્ગ્રન્થ ઔર વૈશાલિક શ્રાવક ઇનકા સ્કંદ કે પ્રતિ પ્રશ્ન, ઇસમેં-લોક સાન્ત હૈ કિ અનન્ત હૈ ? કિસ મરણ સે મરતે હુએ જીવ કે સંસાર કી હાનિ ઔર વૃદ્ધિ હોતી હૈ। સ્કંદ કા સંશય કી ઉત્પત્તિ સે મૌનાવલમ્બન, શ્રી મહાવીર સ્વામી કા આગમન સુનકર ઉનકે પાસ સ્કંદ કા જાના ઔર ઉનસે પ્રશ્ન કરના, ભગવાન કા ઉત્તર દેના, સ્કંદ કી અચ્યુત કલ્પ મેં

એ વિષેનો વિચાર વાયુકાય જીવોનું મરણ કેવી રીતે થાય છે? આઘાતથી તેમનું મરણ થાય છે વાયુકાયિક જીવોનાં શરીર અને અશરીરનું પ્રતિપાદન વાયુકાય જીવોને ચાર શરીર હોય છે એવું કથન સકર્મક મૃતાદી અણગારના સ્વરૂપનું કથન પ્રાણ ભૂત, જીવ સત્વ, વિજ્ઞ અને વેત્તાના સ્વરૂપનું કથન, સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પારગત પરંપરાગત વગેરેના સ્વરૂપનું કથન આર્ય શ્રી સ્કંદનું ચરિત્ર વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથના સ્કંદને પ્રશ્નો લોક સાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનંત છે? કયા મરણથી મરતો જીવ સંસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરતો જીવ સંસાર ઘટાડે છે? સ્કંદકના મનમાં સંશય થવાથી તે મૌન રહે છે શ્રી મહાવીરસ્વામીના આગમનના ખબર સાંભળીને સ્કંદ તેમની પાસે ગમન સ્કંદના મહાવીર પ્રભુને પ્રશ્નો અને પ્રભુના ઉત્તરો, સ્કં

॥ अथ द्वितीयं शतकं प्रारभ्यते–

द्वितीयशतके संक्षेपतो विचारणीयाः विषयाः " ऊसास खंदएवि " इत्यादि गाथोक्ता दशोद्देशकाः संति, तत्र प्रथमोद्देशके इमे विषयास्तथाहि–

पृथिव्यादयेकेन्द्रियजीवानां श्वासादयो भवंति नवेति प्रश्नः । भवन्तीति-उत्तरम् । ते पृथिव्यादयः श्वासादौ किं गृह्णन्तीति प्रश्नः, वायुसम्बन्धि परमाणुं गृह्णन्तीत्युत्तरम्, तत्र परमाणौ रूपरसगन्धस्पर्शा भवन्तीति प्रतिपादनम् । प्रज्ञापना-सूत्रस्योद्धरणम् । संक्षेपेण नैरयिकाणां विवरणम् । षट्स्वपि दिक्षु श्वासोच्छ्वास वर्गणाया आकर्षण भवतीति निरूपणम् । वायवीयजीवानां श्वासादयो भवंति नवेति प्रश्नः । भवन्तीत्युत्तरम् । वायवीयजीवा वायुकायान्निर्गत्य पुनर्वायुकायिके

द्वितीयशतक का प्रथम उद्देशक प्रारंभ–

इस द्वितीयशतक में " उसास खंदए वि " इत्यादि गाथा द्वारा कहे हुए दश उद्देशक हैं । इनमें से प्रथमशतक में ये विषय हैं–जैसे–पृथिवी आदिक एकेन्द्रिय जीवों के श्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं ? हां होते हैं । वे पृथिव्यादिक जीव श्वास आदि में क्या लेते हैं ? ऐसा प्रश्न–वे वायुसंबंधी परमाणु को ग्रहण करते हैं ऐसा उत्तर । परमाणु में रूप, रस, गंध और स्पर्श होते हैं–ऐसा प्रतिपादन । प्रज्ञापना सूत्र का उद्धरण । संक्षेप से नैरयिकों का विवरण । छहों भी दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास वर्गणा का आकर्षण होता है ऐसा निरूपण । वायुकायिक जीवों के श्वास आदि होते है कि नहीं होतें हैं ? ऐसा प्रश्न, हां होते है ऐसा उत्तर । वायुकायिक जीव वायुकाय से निकलकर पुनः वायु

પહેલા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ બીજા શતકમા " ઊસાસ ખદએ વિ " ઇત્યાદિ ગાથા વડે કહેલા દસ ઉદ્દેશક છે તેમાના પહેલા ઉદ્દેશકમાં-નીચેના વિષયોનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યું છે પૃથિવીકાય વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વાસ વગેરે લે છે કે નહી ? હા, લે છે તેઓ શ્વાસ વગેરેમાં શુ લે છે ? તેઓ વાયુના પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે તે પરમાણુઓમા રૂપ, રસ, ગધ અને સ્પર્શ હોય છે એવું પ્રતિપાદન, અને પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાથી તેનુ પ્રમાણ સક્ષિપ્તમાં નારકોનું વર્ણન છએ દિશાઓમા શ્વાસોચ્છ્વાસ વર્ગણાનુ આકર્ષણ થાય છે એવુ નિરૂપણ વાયુકયિક જીવો શ્વાસ વગેરે લે છે કે નથી લેતા ? હા, લે છે. વાયુકાયિક જીવો વાયુકાયમાંથી નીકળીને વાયુકાયિકોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે

स्कन्दकोपि च१ 'ससुग्घाय' समुद्घाता २ 'पुढविंदिय' पृथिवीन्द्रियाणि,३ पृथिवी इन्द्रियाणि च४ 'अन्न उत्थिया' अन्ययूथिका५ 'भासा य' भाषा च६ 'देवा य' देवाश्च७ 'चमरचचा' चमरचञ्चा८ 'समयखित्तकाए' समया क्षेत्रम्९ अस्तिकायाः, १० एते अस्मिन् द्वितीयशतके दशोद्देशकाः सन्ति तेषु चोद्देशकेषु निम्ननिर्दिष्ट विषयाणामधिकारा सन्ति, तत्र प्रथमोद्देशके श्वासोच्छ्वासविषयक स्कन्दनामका नगारविषयकश्च विचारः१। द्वितीयोद्देशके समुद्घातविषयक विवेचनम्२, तृतीयो देशके पृथिवीसंबन्धे विचारः३, चतुर्थोद्देशके इन्द्रियविषयको विचारः४, पञ्चमो देशकेऽन्यतीर्थिकानामाधिकार ५, षष्ठोद्देशके भाषाविषये विचारः६, सप्तमे देवाधिकारः७, अष्टमोद्देशके चमरचञ्चारानधानीविषयको विचारः८, नवमोद्देशके समय क्षेत्रयोः स्वरूपविषये विचारः९, दशमोद्देशके अस्तिकायविषयको विचारः। इति१०

शतक में ये दश उद्देशक हैं-उच्छ्वास, स्कन्दक१, समुद्घात२ पृथिवी३ इन्द्रियां ४, अन्ययूथिक ५, भाषा ६, देव७, चमरचञ्चा८, समयक्षेत्र ९ अस्तिकाय१० इन उद्देशकों में निम्न लिखित विषयों के अधिकार हैं-प्रथम उद्देशकमें श्वासोच्छ्वास संबंधी और स्कन्द अनगार संबंधी विचार है। द्वितीय उद्देशक में समुद्घातविषयक विवेचन है। तृतीय उद्देशक में पृथिवी के संबंध में विचार किया गया है। चतुर्थ उद्देशक में इन्द्रिय विषयक विचार हुआ है। पञ्चम उद्देशक में अन्यतीर्थिकों का अधिकार है। छठवें उद्देशक में भाषाविषयक विचार हुआ है। सप्तम उद्देशक में देवों का अधिकार है। आठवें उद्देशक में चमरचंचा नाम की राजधानी का विचार किया गया है। नवम उद्देशक में समयक्षेत्र के स्वरूप का विचार किया गया है। दशवें उद्देशक में अस्तिकाय का विचार किया गया है।

પ્રમાણે દશ ઉદ્દેશાઓ છે (૧) ઉચ્છ્વાસ, સ્કંદક, (૨) સમુદ્ઘાત (૩) પૃથિવી, (૪) ઇન્દ્રિયો, (૫) અન્યયૂથિક, (૬) ભાષા, (૭) દેવ, (૮) ચમરચંચા, (૯) સમયક્ષેત્ર અને (૧૦) અસ્તિકાય. તે ઉદ્દેશકોમા નીચે પ્રમાણેના વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે-પહેલા ઉદ્દેશકમાં શ્વાસોચ્છ્વાસ વિષે અને સ્કંદકઅણગાર વિષે, બીજા ઉદ્દેશકમા સમુદ્ઘાત વિષે, ત્રીજામાં પૃથ્વીના વિષયમાં, ચોથા ઉદ્દેશકમા ઇન્દ્રિયોના વિષયમા, પાંચમા ઉદ્દેશકમાં અન્ય તીર્થિકોના વિષયમા છઠ્ઠા ઉદ્દેશકમા ભાષાના વિષયમા સાતમા ઉદ્દેશકમા દેવો વિષે આઠમાં ઉદ્દેશકમાં ચમરચંચા નામની રાજધાનીના વિષે નવમાં ઉદ્દેશકમાં સમય ક્ષેત્રના સ્વરૂપ વિષે અને દસમાં ઉદ્દેશકમા અસ્તિકાયના વિષયનું વિવેચન કરવામાં આવ્યુ છે

मोक्षगमनं चेति प्रतिपादनमिति ॥

प्रथमं शतकं प्रोच्य पञ्चमाङ्गस्य यत्नतः ।
द्वितीयं शतकं तस्य विवृणोमि यथामति ॥१॥

अथ द्वीतीयशतकस्योद्देशकसंग्रहाय गाथामाह—'ऊसास' इत्यादि ।

गाहा—ऊसास खंदए वि य समुग्घाय पुढविंदिय अन्नउत्थि भासा य।
देवा य चमरचंचा, समय खित्तऽत्थिकाय बीयसए ॥ १ ॥

छाया—उच्छ्वासः स्कन्दकोपि च समुद्घाताः पृथिवी–
इन्द्रियाणि अन्ययूथिका भाषा च ।
देवाश्च चमरचञ्चा समयक्षेत्रं अस्तिकाया द्वितीयशते ॥१॥

टीका—'बीयसए' द्वितीयशतके 'ऊसास' उच्छ्वासः 'खंदए वि'

उत्पत्ति होना और महाविदेह से मोक्षगमन, इसका प्रतिपादन ।

प्रथमं शतकं प्रोच्य पञ्चमाङ्गस्य यत्नतः ।
द्वितीयशतकं तस्य विवृणोमि यथामति ॥ १ ॥

इस पंचम अङ्ग के प्रथम शतक का प्रयत्न पूर्वक प्रतिपादन करके अब मैं उसके द्वितीय शतक का अपनी बुद्धि के अनुसार विवरण करता हूं ।

द्वितीयशतक के उद्देशकोंके संग्रहके लिये सूत्रकार ने यह (ऊसास) इत्यादि गाथा कही है ।

ऊसास खंदए वि य समुग्घाय पुढविंदिय अन्नउत्थि भासा य ।
देवा य चमर चंचा समयखित्तऽत्थिकाय बीयसए ॥ १ ॥

इस गाथा का अर्थ इस प्रकार से है–" बीयसए " इस द्वितीय

કની અચ્યુત દેવલોકમાં ઉત્પત્તિ અને મહાવિદેહમાથી મોક્ષગમન, તેનું પ્રતિપાદન.

प्रथमं शतकं प्रोच्य पञ्चमाङ्गस्य यत्नत ।
द्वितीयशतक तस्य विवृणोमि यथामति ॥ १ ॥

પાંચમા અંગના પ્રથમ શતકનુ શાન્તિપૂર્વક વિવેચન કરી ને હવે હુ તેના બીજા શતકનું મારી બુદ્ધિ પ્રમાણે વિવરણ કરૂ છું.

બીજા શતકના ઉદ્દેશકોના સંગ્રહને માટે સૂત્રકારે "ઊસાસ" વગેરે ગાથાઓ કહી છે.

ઊસાસખંદએ વિ ય સમુગ્ઘાય પુઢવિંદિય અન્નઉત્થિ ભાસા ય ।
દેવા ય ચમરચંચા સમયખિત્તઽત્થિકાય બીયસએ ॥ ૧ ॥

આ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે "બીયસએ" આ બીજા શતકમાં આ

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत्, वर्णकः स्वामी समवसृतः पर्षन्निर्गता, धर्मः कथितः, परिषत् प्रतिगता, तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठोऽन्तेवासी यावत् पर्युपासीन एवमवादीत्, ये इमे भदन्त ! द्वीन्द्रियाः, त्रीन्द्रियाः, चतुरिन्द्रियाः, पञ्चेन्द्रिया

उन्हीं जीवों के उच्छ्वास आदि का प्रतिपादन किया गया है-अतः इस सम्बन्ध को लेकर यह द्वितीय शतक का यह प्रथम उद्देशक कहा गया है। उसका यह (तेणं कालेणं इत्यादि प्रथम सूत्र है—' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे णाम नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था (वण्णओ) वर्णक। (सामी समोसढे) स्वामी-श्री महावीर प्रभु-वहां पधारे (परिसा णिग्गया) उनकी देशना सुनने के लिये सभा निकली (धम्मो कहिओ) प्रभुने धर्मोपदेश दिया (परिसा पडिगया) धर्म सुन कर सभा पीछे गई। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (जेट्ठे अंतेवासी) ज्येष्ठ अन्तेवासी-शिष्य (जाव पज्जुवासमाणे) यावत् पर्युपासना करते हुए (एवं वयासी) इस प्रकार बोले-(जे इमे भंते ! बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा) हे भदन्त ! जो ये एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय

આ ઉદ્દેશકમાં બેઇન્દ્રિયોનાં ઉચ્છ્વાસ વગેરેનું પ્રતિપાદન કરાયું છે આ બીજા શતકના ઉદ્દેશકોનો આ પ્રકારનો સંબંધ આગળના ઉદ્દેશકો સાથે છે તેનું પ્રથમ સૂત્ર "तेणं कालेणं" ઇત્યાદિ છે

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे णामं नयरे होत्था) રાજગૃહ નામનું નગર હતું (वण्णओ) તેનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી અંપાનપદીની માફક છે (सामी समोसढे) તે નગરમાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (परिसा णिग्गया) તેમની દેશના સાંભળવાને માટે પરિષદ નીકળી (धम्मो कहिओ) પ્રભુએ ધર્મોપદેશ આપ્યો (परिसा पडिगया) તે સાંભળીને પરિષદ પાછી ગઈ (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (जेट्ठे अंतेवासी) મોટા અન્તેવાસી શિષ્ય (जाव पज्जुवासमाणे) (यावत्) પર્યુપાસના કરીને (एवं वयासी) આમપ્રમાણે બોલ્યા.

(जे इमे भंते ! बेइंदिया तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा एएसि णं आयं वा

प्रथमशतकस्य वर्णनं जातम्, तदनन्तरं द्वितीयशतकस्य प्रारंभो भवति, तत्रापि प्रारिप्सितद्वितीयशतके प्रथमोद्देशकस्य वर्णनं क्रियते, तस्य चायमभिसंबंधः—प्रथमशतकस्यान्तिमोद्देशकस्यान्ते जीवानामुत्पादविरहः प्रतिपादितः, इह तु तेषामेव जीवानामुच्छ्वासादिवर्णनमस्तीत्येवं संबन्धकस्यास्य द्वितीयशतकप्रथमोद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—' तेणं कालेणं ' इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णामं नयरे होत्था वण्णओ, सामी समोसढे, परिसा णिग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—जे इमे भंते! वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया जीवा, एएसिं णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा निस्सासं वा जाणामो पासामो, जे इमे पुढवीकाइया, जाव वणप्फइ काइया एगिंदिया जीवा, एएसिं णं आणामं वा पाणामं वा उसासं वा नीसासं वा न जाणामो, न पासामो, एए णं भंते! जीवा आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा, नीससंति वा, हंता गोयमा! एए णं जीवा, आणमंति वा, पाणमंति वा उस्ससंति वा णीससंति वा ॥सू०१॥

प्रथमतशतक का वर्णन हो चुका—अब द्वितीय शतक प्रारंभ होता है। इसमें द्वितीयशतक से प्रथम उद्देशक का वर्णन किया जाता है—इसका संबंध इस प्रकार से है—प्रथम शतक के अन्तिम उद्देशक के अन्त में जीवों का उत्पाद विरह प्रतिपादित हुआ है और इस जगह

પહેલા શતકનુ વિવરણ પૂરું થયું હવે બીજા શતકનું વિવેચન શરૂ થાય છે. તેમાં બીજા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકનુ વર્ણન કરવામા આવે છે તેનો આગળના ઉદ્દેશક સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે પહેલા શતકના છેલ્લા ઉદ્દેશકના અન્તિમ ભાગમા જીવોના ઉપપાત વિરહનું પ્રતિપાદન કર્યું છે ...

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत्, वर्णकः स्वामी समवसृतः पर्षन्निर्गता, धर्मः कथितः, परिषत् प्रतिगता, तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठोऽन्तेवासी यावत् पर्युपासीन एवमवादीत्, ये इमे भदंत ! द्वीन्द्रियाः, त्रीन्द्रियाः, चतुरिन्द्रियाः, पञ्चेन्द्रिया

उन्हीं जीवों के उच्छ्वास आदि का प्रतिपादन किया गया है-अतः इस सम्बन्ध को लेकर यह द्वितीय शतक का यह प्रथम उद्देशक कहा गया है। उसका यह (तेणं कालेणं इत्यादि प्रथम सूत्र है—' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे णामं नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था (वण्णओ) वर्णकः (सामी समोसढे) स्वामी-श्री महावीर प्रभु-वहां पधारे (परिसा णिग्गया) उसकी देशना सुनने के लिये सभा निकली (धम्मो कहिओ) प्रभुने धर्मोपदेश दिया (परिसा पडिगया) उसे सुन कर सभा पीछे गई। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (जेट्ठे अंतेवासी) ज्येष्ठ अन्तेवासी-शिष्य (जाव पज्जुवासमाणे) यावत् पर्युपासना करते हुए (एवं वयासी) इस प्रकार बोले-(जे इमे भंते ! बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा) हे भदन्त ! जो ये एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय

આ ઉદ્દેશકમાં જીવોના ઉચ્છ્વાસ વગેરેનું પ્રતિપાદન કરાયું છે આ બીજા શતકના ઉદ્દેશકોનો આ પ્રકારનો સમ્બંધ આગળના ઉદ્દેશકો સાથે છે તેનું પ્રથમ સૂત્ર "तेणं कालेणं" ઇત્યાદિ છે

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे णामं नयरे होत्था) રાજગૃહ નામનું નગર હતું (वण्णओ) તેનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી ચમ્પાનગરીની માફક છે (सामी समोसढे) તે નગરમાં ભગવાન મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (परिसा णिग्गया) તેમની દેશના સાંભળવાને માટે પરિષદ નીકળી (धम्मो कहिओ) પ્રભુએ ધર્મોપદેશ આપ્યો (परिसा पडिगया) તે સાંભળીને પરિષદ પાછી ગઈ (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (जेट्ठे अंतेवासी) મોટા અન્તેવાસી શિષ્ય (जाव पज्जुवासमाणे) (पावत्) પર્યુપાસના કરીને (एवं वयासी) આમ બોલ્યા.

(जे इमे भंते ! बेइंदिया तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा एएसि णं आणमं वा

जीवाः, एतेषां खलु आनामं वा प्राणामं वा, उच्छ्वासं वा निश्वासं वा जानीमः पश्यामः । ये इमे पृथिवीकायिकाः यावद् वनस्पतिकायिका एकेन्द्रियजीवाः, एतेषां खलु आनामं वा प्राणामं वा उच्छ्वासं वा निश्वासं वा न जानीमः न न पश्यामः, एतेऽपि खलु भदंत ! जीवा आनंति वा प्राणंति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, हंत गौतम ! एते खलु जीवाः आनंति वा प्राणंति वा, उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा ॥ सू० १ ॥

जीव हैं सो (एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा जाणामो, पासामो) इनके भीतरी बहिरी उच्छ्वास निःश्वासको तो हम जानते हैं और देखते हैं (जे इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया एगिंदिया जीवा) परन्तु जो ये पृथिवीकायिकसे ले कर वनस्पतिकायिक तकके एकेन्द्रिय जीव हैं सो (एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा न जाणामो न पासामो) इनके भीतरी बाहिरी श्वास और उच्छ्वास को न हम जानते हैं और न हम देखते हैं। (एएणं भंते ! जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा, नीससंति वा) तो हे भदन्त ! ये जीव क्या भीतर बाहर के श्वाव और उच्छ वास को लेते हैं ? (हंता गोयमा !) हां गौतम ! (एएवि णं जीवा आणमंति वा

पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा जाणामो, पासामो) હે ભગવન્! દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય જીવો જે શ્વાસ અંદર ગ્રહણ કરે છે. અને જે ઉચ્છ્વાસ બહાર કાઢે છે તે તો અમે જાણીયે છીએ અને જોઈએ છીએ પણ (जे इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया एगिंदिया जीवा) પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના જે એકેન્દ્રિય જીવો તેમના (एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं न जाणामो न पासामो) બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ અને ઉચ્છ્વાસ વિષે અમે કંઈ પણ જાણતા નથી કે તેને જોતા પણ નથી (एएणं भंते जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ?) તો હે ભગવન્! તે જીવો શું શ્વાસ ગ્રહણ કરે છે અને ઉચ્છ્વાસ બહાર કાઢે છે! (हंता गोयमा !) હા, ગૌતમ! (एएवि णं जीवा आणमंति वा पाणमंति वा,

टीका—'तेणं कालेणं' तस्मिन् काले-अवसर्पिणीचतुर्थारके 'तेणं समएणं' तस्मिन् समये-श्रेणिकशासनकाले 'रायगिहे णाम नयरे होत्था' राजगृहं नाम नगरमासीत्, 'वण्णओ' वर्णकः 'सामी समोसढे' स्वामी समवसृतः, भगवान् समागतः। 'परिसा निग्गया' पर्षन्निर्गता 'धम्मो कहिओ' धर्मः कथितः, 'परिसा पडिगया' परिषत् प्रतिगता, 'तेणं कालेणं' तस्मिन् काले, सभा विसर्जनान्तकाले 'तेणं समएणं' तस्मिन् समये उच्छ्वासनिःश्वासादिमोक्षणसमये

पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा) वे भी जीव भीतर में श्वास ग्रहण करते हैं भीतर में श्वास छोड़ते हैं बहिर में श्वास ग्रहण करते और बहिर में नि श्वास छोड़ते हैं।

टीकार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) काल से यहां अवसर्पिणी चौथा काल लिया गया है और समय से श्रेणिक राजा के शासन समय लिया गया है। अतः अवसर्पिणी के चौथे आरे में और श्रेणिक राजा के शासन समय में (रायगिहे णामं नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था (वण्णओ सामी समोसढे) इस नगर का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान है यह बात यहां (वण्णओ) पद से सूत्रकार ने प्रगट की है। उस नगर में स्वामी—श्रमण भगवान महावीर प्रभु—पधारे। (परिसा निग्गया) सभा प्रभु का धर्मोपदेश सुनने के लिये नगर से निकली (धम्मो कहिओ) प्रभुने धर्म का उपदेश दिया। (परिसा पडिगया) धर्मोपदेश सुनकर सभा विसर्जित हो गई। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) पद से यहां सभा विसर्जन के अनन्तर

ઉસસંતિ વા નીસસંતિ વા) તે જીવો પણ અંદર શ્વાસ લે છે અંદર શ્વાસ છોડે છે બહારથી શ્વાસ અંદર લે છે અને નિઃશ્વાસને બહાર કાઢે છે

ટીકાર્થ—"તેણં કાલેણં તેણં સમએણં" કાલ પદથી અહીં અવસર્પિણીનો ચોથો આરો લેવામાં આવ્યો છે અને 'સમય' પદથી શ્રેણિક રાજાનો શાસન સમય લેવામાં આવ્યો છે એ રીતે અવસર્પિણીના ચોથા આરામાં શ્રેણિક રાજાના શાસન સમયે 'रायगिहे णामं नयरे होत्था" રાજગૃહ નામનું નગર હતું "वण्णओ सामी समोसढे" તે નગરનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી ચંપા નગરી જેવું સમજવું એ વાત "वण्णओ" પદથી સૂત્રકારે બતાવી છે તે નગરમાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ પધાર્યા. 'परिसा निग्गया" નગરમાંથી લોકોની પરિષદ પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવા માટે પ્રભુ પાસે આવી. 'धम्मो कहिओ' પ્રભુએ તેમને ધર્મોપદેશ દીધો. 'परिसा पडिगया" ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિષદ ત્યાંથી પાછી ફરી. "तेणं कालेणं तेणं समएणं"

'समणस्स भगवओ महावीरस्स' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य 'जेट्ठे अंतेवासी' ज्येष्ठोऽन्तेवासी अग्निभूतिः गौतमः 'जाव पज्जुवासमाणे' यावत् पर्युपासीनः यावत्पदेन—प्रथमशतकप्रथमोद्देशकीयसप्तमाष्टमसूत्रस्थ 'जायसड्ढे' इत्यारभ्य 'पंजलिउडे' इत्यन्त सर्वं संग्राह्यम्, वन्दननमस्कारादिक कृत्वा भगवन्तं सेवमानः 'एवं वयासी' एवमवादीत् 'एव' वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत् पृष्टवान् 'जे इमे भंते' ये इमे भदन्त ! 'बेइंदिया' द्वीन्द्रियाः 'तेइंदिया' त्रीन्द्रियाः 'चउरिंदिया' चतुरिन्द्रियाः 'पंचिंदिया' पञ्चेन्द्रियाः 'जीवा' जीवाः प्राणिनः सन्ति 'एएसि णं' एतेषां खलु 'आणामं वा पाणामं वा' अनाम् वा आभ्यन्तरिकम्, प्राणामं वा बाह्यम् 'उस्सासं वा निस्सासं वा' उच्छ्वासं वा निश्वासं

काल में और उच्छ्वास निःश्वास आदि के प्रश्नोद्भाव के समय में ऐसा अर्थ लिया गया है। (समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी) इन पदों का अर्थ स्पष्ट है। (जेट्ठे अन्तेवासी) पद से ज्येष्ठ-प्रधान-शिष्य गौतम स्वामी लिये गये हैं। (जाव पज्जुवासमाणे) में जो यह (यावत्) शब्द आया है। उससे (प्रथमशतक के प्रथम उद्देशक में जो सातवां आठवां सूत्र है, उनमें जो (जायसड्ढे) यहां से लगाकर (पंजलिउडे) तक का पाठ है वह पाठ यहां ग्रहण किया गया है ऐसा जानना चाहिये। वन्दना नमस्कार आदि करके गौतम ने प्रभु की सेवा करते हुए (एवं वयासी) इस प्रकार से पूछा-(जे इमे भंते! हे भदन्त! जो ये (बेइंदिया) दो इन्द्रियवाले जीव (तेइंदिया) तीन इन्द्रियवाले जीव (चउरिंदिया) चार इन्द्रियवाले जीव (पंचिंदिया) पांच इन्द्रिय वाले (जीवा) जीव-प्राणी हैं (एएसि णं) सो इनका (आणामं) भीतर का (वा)

આ પદો વડે અહીં " સભા વિસર્જન થયા પછીનો કાળ અને ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસ વગેરેના પ્રશ્નો પૂછવા નો સમય" લેવામા આવ્યો છે " समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी " એટલે કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીના જ્યેષ્ઠ શિષ્ય ગૌતમ સ્વામી. " जाव पज्जुवासमाणे " મા જે ' जाव " (यावत्) પદ છે તેના વડે પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના સાતમા અને આઠમા સૂત્રમાનો" " जायसड्ढे " પદથી શરૂ કરીને " पजलि उडे " સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે તેમ સમજવુ. વદણા નમસ્કાર વગેરે કરીને પ્રભુને ગૌતમ સ્વામીએ વિનયપૂર્વક ' एव वयासी " આ પ્રમાણે પૂછયુ " " जे इमे भंते ! હે ભગવન્! આ જે " बेइंदिया " બે ઇન્દ્રિયોવાળા " तेइंदिया " ત્રણ ઇન્દ્રિયોવાળા, " चउरिंदिया " ચાર ઇન્દ્રિયોવાળા અને ' पंचिंदिया " પાચ ઇન્દ્રિયોવાળા ' जीवा " જીવો છે. " एएसि ण " તેમનો " आणामं " અ

वा 'जाणामो पासामो' जानीमः पश्यामः परन्तु 'जे इमे पुढविकाइया' ये इमे पृथिवीकायिकाः 'जाव वणप्फइ काइया एगिंदिया जीवा' यावत् वनस्पतिकायिका एकेन्द्रियजीवाः, अत्र यावत्पदेन अप्तेजोवायुकायिकाना ग्रहणम् । 'एएसि णं आणामं वा पाणामं वा' एतेषां खलु जीवानाम् आनामं वा प्राणामं वा 'ऊसासं वा नीसासं वा' उच्छ्वासं वा निःश्वासं वा, न जाणामो न पासामो' न जानीमो न पश्यामः, द्वीन्द्रियादीनां जीवानां सबाह्याभ्यन्तरमुच्छ्वास निःश्वासादिकं जानामि पश्यामि स्वानुभवात् । परन्तु पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्तै केन्द्रियजीवानां सबाह्याभ्यन्तरं श्वासनिःश्वासादिकं न जानामि न पश्यामीति

और (पाणामं वा) बाहर का जो (उस्सासं वा) उच्छ्वास, और (नीसासं वा) निःश्वास है (जाणामो पासामो) उसे तो हम जानते हैं और देखते हैं । परन्तु (जे इमे पुढवीकाइया) जो ये पृथिवीकायिक (जाव वणप्फइ काइया एगिंदिया जीवा) यावत् वनस्पति कायिक एकेन्द्रिय जीव हैं—यहां यावत् शब्द से (अप्कायिक जीव, तेज कायिक, वायुकायिक) इन एकेन्द्रिय जीवों का ग्रहण हुआ है—(एएसि णं आणामं वा पाणामं वा) सो इनके भीतर के और बाहर के (उस्सासं नीसासं वा न जाणामो न पासामो) उच्छ्वास को, निःश्वास को न हम जानते हैं और न हम देखते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि मैं अपने अनुभव से द्वीन्द्रियादिक जीवों के बाह्य आभ्यन्तर उच्छ्वास निःश्वास आदि को जानता हूं और देखता हूं । परन्तु जो पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय से लेकर वनस्पतिकायिक एकेन्द्रिय पर्यन्त जीव हैं, उनके बाह्य आभ्यन्तर श्वास निःश्वास आदिकों को मैं न जानता हूं और न देखता ही हूं ।

રનો વા' અને 'पाणामं वा' બહારનો જે 'उस्सासं वा नीसासं वा" ઉચ્છ્વાસ અને નિઃશ્વાસ છે ' जाणामो पासामो' તેને તો અમે જાણીએ છીએ અને જોઈ શકીએ છીએ પણ ' जे इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया एगिंदिया जीवा' પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિ પર્યંત સુધીના જે એકેન્દ્રિય જીવો છે (અહીં" यावत्" પદથી અપ્કાય તેજસ્કાય અને વાયુકાયના જીવોનું ગ્રહણ કરવા જોઈએ) 'एएसि णं आणामं वा पाणामं वा" તેમના બાહ્ય આભ્યંતર ' उस्सासं वा नीसासं वा न जाणामो न पासामो" ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસને અમે જાણતા નથી અને અમે જોતા નથી. તાત્પર્ય એ છે કે દ્વીન્દ્રિય સુધીના જીવોના બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસોચ્છ્વાસને અનુભવથી જાણી શકાય છે અને દેખી શકાય છે પણ પૃથ્વીકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોથી શરૂ કરીને વનસ્પતિ કાયિક સુધીના એકેન્દ્રિય જીવોના બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસોચ્છ્વાસ અનુભવથી જાણી શકાતા નથી અને દેખી

भाव, 'एएणं भंते जीवा' एते खलु भदन्त ! जीवाः पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ताः किम् 'आणमंति वा पाणमंति वा' आनमंति वा प्राणमंति वा 'उस्ससंति वा नीससंति वा' उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एकेन्द्रियजीवानाम् श्वासोच्छ्वासादिकं भवति नवेति प्रश्नः, संशयकारणं तु अदृश्यमानत्वम्, एकेन्द्रियजीवानां प्रत्यक्षत उच्छ्वासादिकं न दृश्यते, जीवत्वं च तेष्वप्यस्ति, अतो गौतमस्य प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्—'हंता गोयमा' इत्यादि, 'हंता गोयमा' हन्त गौतम ! 'एए वि णं जीवा' एतेपि खलु जीवाः, पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ता जीवा अपि 'आनमंति वा पाणमंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा 'उस्ससंति वा नीससंति

(एएणं भंते ! तो हे भदन्त ! ये जीव पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिकतक के एकेन्द्रिय जीव (किं आणमंति वा पाणमंति वा) क्या भीतर में श्वास ग्रहण करते हैं ? बाहर में श्वास छोड़ते है ? (उस्ससंति वा नीससंति वा) बाहर में निःश्वास को ग्रहण करते हैं ? बाहर में निःश्वास को छोड़ते हैं ? तात्पर्य प्रश्न का यह है कि एकेन्द्रिय जीवों के श्वास निःश्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं ? संशय का कारण यह है-कि एकेन्द्रिय जीवों का उच्छ्वास आदि प्रत्यक्ष से दिखता नहीं है ? परन्तु उनमें भी चैतन्य तो है। इस लिये गौतमने ऐसा प्रश्न किया। इसका उत्तर देते हुए भगवान उनसे कहते हैं कि हंता, गोयमा ! हां गौतम ! (एए वि णं जीवा" ये पृथिवी कायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के समस्त एकेन्द्रिय जीव भी (आनमंति वा पाणमंतिवा) भीतर बाहर में श्वास ले ते हैं (उस्ससंति वा नीससंतिवा)

પણ શકાતો નથી "एएणं भंते ! जीवा" તો હે ભગવન્ તે પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો "किं आणमंति वा पाणमंति वा ?" શું શ્વાસ અંદર લે છે અને બહાર છોડે છે? "उस्ससंति वा नीससति वा ?" શું બહારથી શ્વાસમા હવા લઇ તેને નિ:શ્વાસ રૂપે બહાર કાઢે છે? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં ? આ જાતની શંકાનુ કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસ પ્રત્યક્ષ જોઇ શકાતો નથી, પણ તેમનામા ચૈતન્ય તો હોય છે અને તેથી આ જાતનીશંકા સ્વાભાવિક રીતે ઉત્પન્ન થાય છે. ભગવાન તેનો આ પ્રમાણે જવાણ આપે છે "हंता गोयमा ! હા, ગૌતમ! "एए वि ण जीवा" તે બધા એકેન્દ્રિય જીવો પણ "आनमंति वा प्राणम ति वा" બાહ્યાભ્યતર શ્વાસ લે છે અને "उस्ससंति वा नीससति वा" બાહ્યાભ્યતર નિ:શ્વાસ છોડે છે જેવી રીતે ચૈતન્યયુકત

वा ' उच्छ्वसन्ति वा निश्वसन्ति वा, हे गौतम ! एतेपि पृथिव्यादारभ्य वनस्पतिकायान्ता एकेन्द्रिय जीवा अपि आभ्यन्तर बाह्य वा उच्छ्वास निश्वास कुर्वन्ति, यथा खलु जीवा श्वास-निश्वासौ गृह्णीमस्तथैव जीवात्वाविशेषात् इमेऽपि एकेन्द्रिया जीवा उच्छ्वासनिःश्वासौ गृह्णन्त्येवेति भावः ॥ सू० १ ॥

भीतर बाहर में निःश्वास छोडते हैं। जैसे जीवत्व की अविशेषता से युक्त हुए हम लोग श्वास निःश्वास लेते हैं और छोडते हैं उसी तरह से जीवत्व की अविशेषता से युक्त ये एकेन्द्रिय जीव भी श्वासोच्छ्वास लेते हैं और छोडते हैं। ये पृथिवीकायिक आदि एकेन्द्रिय जीव हैं ऐसा आगम का वचन है। परन्तु इनके श्वास निश्वास आदि होते हैं कि नहीं ऐसी जो शंका हुई है उसका कारण यह है कि जिस प्रकार मनुष्य आदि में श्वास निःश्वास प्रत्यक्ष से देखने में आते हैं उस प्रकार से ये एकेन्द्रिय जीवों में देखने में नहीं आते हैं। अतः इस प्रकार की शंका होना स्वाभाविक है। यदि इस पर यों कहा जावे कि जब यह आगमप्रमाण से निश्चित है कि पृथिवी आदि जीव हैं तो यह बात तो माननी ही चाहिये कि इनमें श्वासोच्छ्वास हैं ही फिर शंका करने की क्या जरूरत है? सो इसका समाधान यह है कि जीव होने पर भी कितनेक जीवों का शरीर मेदक आदि जीवों का शरीर बहुत समय तक बिना श्वासादि के भी देखा जाता है। अतः पृथ्वी आदिजीव क्या उस तरह के हैं या मनुष्य आदि की तरह श्वासोच्छ्वास से युक्त हैं? ऐसी शंका है

મનુષ્યો શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા કરે છે તેવી જ રીતે ચૈતન્યયુક્ત એકેન્દ્રિય જીવો પણ શ્વાસ લેવાની અને નિઃશ્વાસ કાઢવાની ક્રિયા કરે છે આગમોમાં શાસ્ત્રોમાં પૃથિવીકાયિક વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો કહેવામાં આવેલ છે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં, એવી જે શંકા ઉદ્ભવી છે તેનું કારણ એ છે કે મનુષ્ય વગેરે જીવોમાં જેવી રીતે શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાય છે તેવી રીતે એકેન્દ્રિય જીવોમાં તે ક્રિયા પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાતી નથી. તેથી તે પ્રકારની શંકા અસ્થાને નથી જો આ બાબતમાં એવી દલીલ કરવામાં આવે કે આગમોમાં તેમને જીવ પ્રતિપાદિત કર્યા છે તો તે વાત માનવી જ જોઈએ કે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે તેમાંથી શંકાને માટે અવકાશ જ નથી. તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય કેટલાક જીવો (દેહો વગેરે) લાંબા સમય સુધી શ્વાસ લેતા નથી. તો શું પૃથિવીકાય વગેરે જીવો તે પ્રકારના છે? કે મનુષ્ય વગેરેની જેમ શ્વાસોચ્છ્વાસથી યુક્ત છે? એ પ્રકારની શંકા થાય છે

भाव', 'एएणं भंते जीवा' एते खलु भदन्त ! जीवाः पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ताः किम् 'आणमंति वा पाणमंति वा' आनमंति वा प्राणमति वा 'उस्ससंति वा नीससंति वा' उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एकेन्द्रियजीवानाम् श्वासोच्छ्वासादिकं भवति नवेति प्रश्नः, संशयकारणं तु अदृश्यमानत्वम्, एकेन्द्रियजीवानां प्रत्यक्षत उच्छ्वासादिकं न दृश्यते, जीवत्वं च तेष्वप्यस्ति, अतो गौतमस्य प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्—'हंता गोयमा' इत्यादि, 'हंता गोयमा' हन्त गौतम ! 'एए वि णं जीवा' एतेपि खलु जीवाः, पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ता जीवा अपि 'आनमंति वा पाणमंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा 'उस्ससंति वा नीससंति

(एएणं भंते ! तो हे भदन्त ! ये जीव पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिकतक के एकेन्द्रिय जीव (किं आणमंति वा पाणमंति वा) क्या भीतर में श्वास ग्रहण करते हैं ? बाहर में श्वास छोड़ते है ? (उस्ससंति वा नीससंति वा) बाहर में निःश्वास को ग्रहण करते हैं ? बाहर में निःश्वास को छोड़ते हैं ? तात्पर्य प्रश्न का यह है कि एकेन्द्रिय जीवों के श्वास निःश्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं ? संशय का कारण यह है-कि एकेन्द्रिय जीवों का उच्छ्वास आदि प्रत्यक्ष से दिखता नहीं है ? परन्तु उनमें भी चैतन्य तो है। इस लिये गौतमने ऐसा प्रश्न किया। इसका उत्तर देते हुए भगवान उनसे कहते हैं कि हंता, गोयमा ! हां गौतम ! (एए वि णं जीवा" ये पृथिवी कायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के समस्त एकेन्द्रिय जीव भी (आनमंति वा पाणमंतिवा) भीतर बाहर में श्वास ले ते हैं (उस्ससंति वा नीससंतिवा)

પણ શકાતો નથી "एएणं भंते ! जीवा" તો હે ભગવન્ તે પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો "किं आणमंति वा पाणमंति वा ?" શું શ્વાસ અંદર લે છે અને બહાર છોડે છે? "उस्ससंति वा नीससति वा ?" શું બહારથી શ્વાસમા હવા લઇ તેને નિઃશ્વાસ રૂપે બહાર કાઢે છે? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહી ? આ જાતની શકાનુ કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસ પ્રત્યક્ષ જોઇ શકાતો નથી, પણ તેમનામા ચૈતન્ય તો હોય છે અને તેથી આ જાતનીશકા સ્વાભાવિક રીતે ઉત્પન્ન થાય છે ભગવાન તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે "हंता गोयमा ! હા, ગૌતમ ! "एए वि ण जीवा" તે બધા એકેન્દ્રિય જીવો પણ "आनमंति वा पाणमंति वा" બાહ્યાભ્યંતર શ્વાસ લે છે અને "उस्ससंति वा नीससंति वा" બાહ્યાભ્યંતર નિઃશ્વાસ છોડે છે જેવી રીતે ચૈતન્યયુક્ત

छाया—किं खलु भदन्त ! एते जीवा आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा, नि श्वसन्ति वा, गौतम ! द्रव्यतोऽनन्तप्रदेशिकानि द्रव्यानि, क्षेत्रतोऽसंख्येय प्रदेशावगाढानि कालतोऽन्यतरस्थितिकानि, भावतो वर्णवन्ति, गन्धवन्ति, रसवन्ति स्पर्शवन्ति आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा, निश्वसन्ति वा, तानि भावतो वर्णवन्ति

उच्छ्वास निःश्वास का अधिकार होने से ही जीवादिक समुच्चय दण्डक और चौबीस दण्डकरूप २५ पदों में उच्छ्वास नि श्वास के स्वरूप को निर्णय करने के लिये गौतम स्वामी प्रश्न करते हुए कहते हैं कि 'किं णं भंते ! एए जीवा आणमंति वा पाणमंति वा' इत्यादि ।

(किं णं भंते ! एए जीवा) हे भदन्त ! ये जीव किस प्रकार के द्रव्यों को (आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा निस्ससंति वा) भीतर के बाहर के श्वासरूप में लेते हैं और किस प्रकार के द्रव्यों को भीतर बाहर के नि श्वासरूप में छोड़ते हैं ? (गोयमा !) हे गौतम ! (दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा से अनंतप्रदेशी द्रव्यों को, (खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं) क्षेत्र की अपेक्षा असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ हुए द्रव्यों को (कालओ अन्नयरट्ठिईयाइं) काल की अपेक्षा किसी भी प्रकार की स्थिति वाले द्रव्यों को (भावओ वण्णमंताइं, गंधमंताइं, रसमंताइं, फासमंताइं) भाव की अपेक्षा वर्णवाले, गंधवाले, रसवाले, स्पर्शवाले द्रव्यों को (आणमंति वा पाणमंति वा)

ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસનો અધિકાર હોવાથી જીવાદિક સમુચ્ચય દંડક અને ચોવીસ દંડકરૂપ પચ્ચીસ પદોમા ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસનો નિર્ણય કરવાને માટે ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન પૂછે છે કે—

"किं णं भंते ! एए जीवा आणमंति वा पाणमंति वा" इत्यादि

મૂલાર્થ- किं णं भंते ! एए जीवा) હે ભગવન્ ! તે જીવો કયા પ્રકારના દ્રવ્યોને (आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा ?) બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે અને કયા પ્રકારના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિઃશ્વાસ રૂપે છોડે છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (दव्वओणं अणंतपएसियाइं दव्वाइं) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશી દ્રવ્યોને (खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ થયેલા દ્રવ્યોને (कालओ अन्नयरट्ठिईयाइं) કાળની અપેક્ષાએ કોઈ પણ અમુક સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને (भावओ वण्णमंताइं गंधमंताइं रसमंताइं फासमंताइं) ભાવની અપેક્ષાએ વર્ણ ગંધ રસ અને સ્પર્શ વાળા દ્રવ્યોને (आणमंति वा पाणमंति वा) તેઓ બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે

उच्छ्वासनिःश्वासयोरधिकारादेव जीवादिषु पंचविंशतिपदेषु उच्छ्वासनिःश्वासयोः स्वरूपं निर्णेतु प्रश्नयन्नाह–' किं ण भंते ' इत्यादि ।

मूलम्–किं णं भंते ! एए जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा, गोयमा ! दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं, खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं, कालओ अन्नयरठिइयाइं, भावओ वण्णमंताइं, गंधमंताइं, रसमंताइं, फासमंताइं, आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा, जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा, ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा। आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउपंचदिसिं । किं णं भंते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा, तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा । जीवा एगिंदिया वाघाया य णिव्वाघाया य भाणियव्वा, सेसा नियमा छद्दिसिं ॥सू०२॥

तथा बहुत समय तक भी श्वासोच्छ्वास नहीं लेने वाले जीव किसी न किसी समय तो श्वासोच्छ्वास लेते ही है यह नजर से दिखता है परन्तु इनका श्वासोच्छ्वास तो कभी देखने में आता ही नहीं है । अतः उन जीवों में श्वासोच्छ्वास है कि नहीं ऐसा शंका का समाधान इस सूत्र द्वारा किया गया है और कहा गया है कि इनमें श्वासोच्छ्वास आदि हैं ॥सू० १॥

તથા ઘણા લાંબા સમય સુધી શ્વાસોચ્છ્વાસ નહીં લેનારા જીવો પણ કોઈક સમયે તો શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતા જોવામા આવે છે પણ એકેન્દ્રિય જીવો તો શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતા કદી પણ જોવામા આવતા નથી તેથી તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે કે નથી કરતા ? એવી શંકા અનુચિત નથી તે શંકાના સમાધાનમાં આ સૂત્ર વડે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે લે છે–એમ કહેવામા આવ્યું છે.॥સૂ-૧॥

ऊससंति वा निस्ससंति वा जीवा एकेन्द्रिया व्याघातं निर्व्याघातांश्च भवेत् तस्या शेषा नियमात् षड्दिशिम् ॥ सू० २ ॥

टीका—'किं णं भंते' किं खलु भदन्त' अत्र किं शब्दस्य सामान्यनिर्देशत्वात् कानि=किं विधानी द्रव्याणीत्यर्थः, 'एए जीवा' एते जीवा, एकेन्द्रियाः

हे गौतम! इस विषय में पहिले की तरह से ही जानना चाहिये यावत् वे छह दिशाओं में से अंदर बाहर के श्वास नि श्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं। (जीवा एगिंदिया वाघायं निव्वाघायं च भाणियव्वा सेसा नियमा छद्दिसिं) जीव और एकेन्द्रिय के संबंध में ऐसा कहना कि यदि कोई व्याघात प्रतिबंधक नहीं है तो वे समस्त दिशाओं में से श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं और यदि प्रतिबंधक है तो वे छह दिशाओं में से श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं और यदि प्रतिबंधक है तो वे छह दिशाओं के श्वास निःश्वास के अणुओं ग्रहण नहीं कर सकने के कारण कोई समय तीन दिशाओं में से' कोई समय चार दिशाओं में से, कोई समय पांच दिशाओं में से श्वास नि श्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं। बाकी समस्त जीव छहों दिशाओं में से श्वास नि श्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं।

टीकार्थ—(किं णं भंते) यहां (किं) यह शब्द सामान्य का निर्देशक है। इसलिये इसका अर्थ यहां (किस प्रकार के द्रव्यों को) ऐसा होता है। (एए जीवा) पृथिवी से लेकर वनस्पति तक के एकेन्द्रिय

वा पाणमंति वा, ऊससंति वा, नीससंति वा) हे गौतम! आ विषयमां पण आगळ मुजब ज समजवुं छ दिशाओमाथी तेओ बाह्याभ्यन्तर श्वास निःश्वासना पुद्गलोने ग्रहण करे छे" त्या सुधीनु कथन आगळ मुजब ज समजवुं (जीवा एगिंदिया वाघायं निव्वाघायं भाणियव्वा सेसा नियमा छद्दिसिं) सामान्य जीवो अने एकेन्द्रिय जीवो विषे बीजु बधेनु तेओ विषे कहेवु जोईओ के जो कोई व्याघात नडतो नथी होय तो तेओ बधी दिशाओमाथी श्वास नि श्वासना पुद्गलोने ग्रहण करे छे पण जो व्याघात नडतो होय तो छओ दिशाओमांथी श्वास नि श्वासना पुद्गलोने ग्रहण करी शकता नथी पण कोई वखत त्रण दिशाओमांथी तो कोई वखत चार दिशाओमांथी अने कोई वखत पांच दिशाओमांथी श्वास निःश्वासना पुद्गलोने ग्रहण करेछे बाकीना तमाम जीवो छओ दिशाओमांथी श्वास निःश्वासना पुद्गलोने ग्रहण करे छे

टीकार्थ— किं णं भंते अहीं किं" पद सामान्य वस्तु निर्देशक छे तेथी अहीं तेनो अर्थ' कोवाळना द्रव्योने जेवो थाय छे "एए जीवा" पृथि

आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, तानि किम् एकवर्णान्यानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, आहारगमो ज्ञातव्यः यावत् त्रिचतुः पंचदिशम् । किं खलु भदंत ! नैरयिका आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, तदेव यावत् नियमात् षड्दिशं आनन्ति वा प्राणन्ति वा

भीतर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं (उस्ससंति वा नीससंति वा) तथा इसी प्रकार के द्रव्यों को भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़ते हैं। (जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) हे भदन्त ! वे जीव भाव की अपेक्षा जिन वर्णवाले द्रव्यों को भीतर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं तथा भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़ते हैं (ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा) वे द्रव्य क्या एक वर्णवाले होते हैं ? (आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउपंचदिसिं) हे गौतम ! यहां आहार गम लेना चाहिये-और वह यावत् तीन चार पांच दिशा तरफ के श्वास और निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं इस तरह से लगाना चाहिये। (किं णं भंते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) हे भदन्त नैरयिक जीव किस प्रकार के द्रव्यों को अन्दर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं अर्थात् ग्रहण करते हैं ? और किस प्रकार के द्रव्यों को अन्दर बाहर के निःश्वास में छोड़ते हैं। (तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा)

લે છે (उस्ससति वा नीससंति वा) અને એવાજ દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિઃશ્વાસ રૂપે છોડે છે (जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससति वा) હે ભગવન્! તે જીવો ભાવની અપેક્ષાએ જે વર્ણવાળા દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે લે છે તથા બાહ્યાભ્યન્તર નિઃશ્વાસ રૂપ છોડે છે, (ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा તે દ્રવ્યો શું એક વર્ણવાળા હોય છે ! (आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउ पंचदिसिं) હે ગૌતમ! અહીં આહારગમ ગ્રહણ કરવો જોઇએ અને જીવો ત્રણ ચાર અને પાંચ દિશાઓમાંથી શ્વાસ અને નિઃશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ, (किं णं भंते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) હે ભગવન્! નારક જીવો કઇ જાતના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે લે છે અને કયા પ્રકારના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિઃશ્વાસ રૂપ છોડે છે! (तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति

'गंधमंताइं' गन्धवन्ति, सुरभ्यादिगन्धयुक्तानि, 'रसमंताइं' रसवन्ति, तिक्तादि रसयुक्तानि 'फासमंताइं' स्पर्शवन्ति, कर्कशकठोरादिस्पर्शयुक्तानि द्रव्याणि, 'आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा, भदन्तपति 'णं' इत्यादि। 'जाइं भावओ वण्णमंताइं' यानि द्रव्याणि भावतो वर्णवन्ति=वर्णयुक्तानि 'आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति नीससंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा नि श्वसन्ति वा, 'ताइं किं एगवण्णाइं' तानि किम् एकवर्णानि-एकवर्णयुक्तानि 'आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा नि श्वसन्ति वा, यानि भावतो वर्णयुक्तानि द्रव्याणि पृथिव्या

आदि वर्ण युक्त, (गंधमंताइं) सुरभि आदि गंधयुक्त, (रसमंताइं) तिक्त आदि रस युक्त, (फासमंताइं) कर्कश कठोर आदि स्पर्श युक्त द्रव्यों को (आणमंति वा, पाणमंति वा, ऊससंति वा, निस्ससंति वा) आभ्यन्तर में श्वासरूप से ग्रहण करते हैं, बाहर में श्वासरूप से ग्रहण करते हैं भीतर में निःश्वासरूप छोड़ते हैं, बाहर में निःश्वासरूप से छोड़ते हैं। (जाइं भावओ वण्णमंताइं) भाव की अपेक्षा वर्णवाले जिन द्रव्यों को ये जीव (आणमंति वा, पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा) भीतर बाहर के श्वासरूप में ग्रहण करते हैं और भीतर बाहर में निःश्वासरूप में छोड़ते हैं (ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा) तो वे द्रव्य एक वर्णवाले भीतर बाहर के श्वासरूप में ग्रहण किये जाते हैं, भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़े जाते हैं क्या? यह प्रश्न है और इस का आशय यह है कि ये पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीव भाव की अपेक्षा वर्णयुक्त जिन

"कम्मगंताइं" કર્કશાદિ વર્ણવાળા, "गंधमंताइं" સુરભિ વગેરે ગંધવાળા, "रसमंताइं" તિક્ત (તીખા) વગેરે રસવાળા, "फासमंताइं" કઠોર વગેરે સ્પર્શવાળા દ્રવ્યોને "आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा, नीससंति वा" આભ્યન્તર શ્વાસરૂપે લે છે બહાર શ્વાસરૂપે લે છે અંદર નિઃશ્વાસરૂપે છોડે છે, બહાર નિઃશ્વાસરૂપે છોડે છે, હે ભગવન્ 'जाइं भावओ वण्णमंताइं" ભાવની અપેક્ષાએ વર્ણવાળાં જે દ્રવ્યોને તે જીવો 'आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा" नीससंति वा ઇત્યાદિ આભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે અને આભ્યન્તર નિઃશ્વાસ રૂપે છોડે છે 'ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा, पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा' તે દ્રવ્યો શું એક વર્ણ વાળા હોય છે? તાત્પર્ય એ છે કે પૃથ્વીકાય વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો ભાવની અપે

पृथिव्याद्यारभ्य वनस्पतिपर्यन्ताः, 'आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा निस्ससंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एते एकेन्द्रियजीवा आनप्राणादितया कानि द्रव्याणि गृह्णन्तीति भावः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं' द्रव्यतः खलु अनंतप्रदेशिकानि द्रव्याणि आनन्ति वा प्राणन्ति वा इत्यग्रेतनेन सम्बन्धः। 'खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइ' क्षेत्रतोऽसंख्यातप्रदेशावगाढानि द्रव्याणीति भावः। अत्र प्रदेशशब्देन आकाशप्रदेशा गृह्यन्ते। 'कालओ अन्नयरठिइयाइं' कालतोऽन्यतरस्थितिकानि, एकद्व्यादिसमयस्थितिकेष्वन्यतरस्थितिकानि, 'भावओ वण्णमंताइं' भावतो वर्णयन्ति, कृष्णादिवर्णयुक्तानि,

---

जीव (आणमंति वा, पाणमंति वा, उस्ससंति, वा निस्ससंति वा) भीतर बाहर के श्वास में और निःश्वास में ग्रहण करते हैं। तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि ये एकेन्द्रिय जीव आन प्राण आदि–श्वासोच्छ्वास आदि रूप से किस प्रकार के द्रव्यों को ग्रहण करते हैं? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि–(गोयमा) हे गौतम! (दव्वाओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं वे एकेन्द्रिय जीव द्रव्य की अपेक्षा से अनंत प्रदेशवाले द्रव्यों को श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं, (खेत्तओ) क्षेत्र की अपेक्षा से (असंखेज्जपएसोगाढाइं) आकाश के असंख्येय प्रदेश में रहे हुए द्रव्यो को ग्रहण करते हैं। यहां प्रदेश शब्द से आकाश के प्रदेश लिये गये हैं। (कालओ) काल की अपेक्षा से (अन्नयरठिइयाइं एक दो आदि समय रूप स्थिति में से किसी एक स्थिति वाले द्रव्यों को ग्रहण करते हैं। (भावओ) भाव की अपेक्षा से (वण्णमंताइं) कृष्ण

પૃથ્વીકાયથી લઇને વનસ્પતિ સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો "आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा, निस्ससंति वा" બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસમા ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે। પ્રશ્નનો ભાંવાર્થ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વાસોચ્છ્વાસમા કઈ જાતના દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે! ભગવાન મહાવીર સ્વામી તેનો આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે "गोयमा!" હે ગૌતમ! "दव्वओणं अणंतपएसियाइं दव्वाइं" એકેન્દ્રિય જીવો દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશવાળા દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે, "खेत्तओ" ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ "असंखेज्जपएसोगाढाइं" આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા રહેલા દ્રવ્યને ગ્રહણ કરે છે અહીં 'પ્રદેશ' શબ્દ વડે આકાશના પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે "कालओ" કાળની અપેક્ષાએ 'अन्नयरठिइयाइं" એક, બે વગેરે સમયરૂપ સ્થિતિવાળા દ્રવ્યોમાંથી કોઇ પણ એક સ્થિતિવાળા દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે "भावओ" ભાવની અપેક્ષાએ

वण्णओ कालाइं ताइं किं एकगुणकालाइं जाव अनंतगुणकालाइंपि ' इत्यादि, एकवर्णानि द्विवर्णानि त्रिवर्णानि यावत्पञ्चवर्णान्यपि, यानि वर्णतः कालानि तानि किमेकगुणकालानि यावदनंतगुणकालान्यपि, एकवर्णानि द्विवर्णानि त्रिवर्णानि यावत् पंचवर्णान्यपि द्रव्याणि आनमाणतया गृह्णन्तीत्यर्थः, यानि द्रव्याणि वर्णतः कालानि तानि किमेकगुणकालानि यावदनंतगुणकालान्यपि, एकगुणकालानीत्यादि द्रव्यानन्तगुणकालानि द्रव्याणि आनमाणतया गृह्णन्तीत्यर्थः एव गन्धरसादिष्वपि ज्ञातव्यम् । पृथिव्यादिजीवानामानप्राणादि भवतीत्युपगम्य नारकविषये प्रश्नयति— ते ' इत्यादि, ' किं णं भंते ' कानि खलु द्रव्याणि भदन्त ! ' णेरइया आणमंति वा, पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ' आनन्ति वा प्राण-

---

दुवण्णाइं, तिवण्णाइं जाव पंचवण्णाइं पि, जाइं वण्णओ कालाइं ताइं किं एकगुणकालाइं जाव अणंतगुणकालाइं पि) इत्यादि, अर्थात् भाव की अपेक्षा से जिस द्रव्यों को ये जीव श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं वे एक ही वर्णवाले नहीं होते हैं, किन्तु एक वर्ण वाले भी होते हैं, दो वर्ण वाले भी होते हैं, तीन वर्ण वाले भी होते हैं, चार वर्ण वाले भी होते हैं और पांच वर्ण वाले भी होते हैं। तथा जो द्रव्य वर्ण से काले उन जीवों द्वारा श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण किये जाते हैं वे द्रव्य एक गुण काले भी होते हैं, दो गुण काले भी होते हैं, तीन गुण काले भी होते हैं यावत् अनंतगुण काले भी होते हैं। इसी तरह से गंध रस आदि में भी जानना चाहिये। इस तरह के कथन से पृथिव्यादि जीवों में आन प्राणादि होते हैं ऐसा जानकर अब नारक के विषय में गौतम स्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि (किं णं भंते ! णेरइया आण-

---

वण्णओ कालाइं ताइं किं एकगुणकालाइं जाव अणंतगुणकालाइं पि "

આપની અપેક્ષાએ તે જીવો જે દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે તે દ્રવ્યો એક જ વર્ણવાળાં હોતાં નથી, પણ બે વર્ણવાળા પણ હોય છે, ત્રણ વર્ણવાળા પણ હોય છે, ચાર વર્ણવાળાં પણ હોય છે અને પાંચ વર્ણવાળાં પણ હોય છે તથા જે કાળા વર્ણના દ્રવ્યો તે જીવો વડે શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરાય છે તે દ્રવ્યો એક ગુણ, બે ગુણ ત્રણ ગુણ અને અનંતગુણ (પર્યંત) કાળાં પણ હોય છે એજ પ્રમાણે ગંધ, રસ વગેરેના વિષયમાં પણ સમજવું આ રીતે પૃથ્વીકાય વગેરે જીવોમાં શ્વાસોચ્છ્વાસના વિષયમાં કહ્યું હવે નારક જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસના વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે- ' किं णं भंते ! णेरइया आणमंति वा पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा ' હે ભગવન્

दिभिरानमाणादितया उपादीयन्ते तानि द्रव्याणि किम् एकवर्णयुक्तानि द्व्यादि-पञ्चवर्णयुक्तानि वेति प्रश्नाशयः । भगवानाह—' आहारगमो ' इत्यादि, ' आहारगमो णेयव्वो जाव तिचउ पंचदिसिं ' आहारगमो ज्ञातव्यो यावत् त्रिचतुः पंचदिशमिति, षट्सु दिक्षु त्रिचतुःपंचदिगवस्थितद्रव्याणि आनमाणतया गृह्णन्तीति, आहारगम इति प्रज्ञापनासूत्रस्याष्टविंशतितमाहारपदोक्तो गमः=आलापक इहाध्येतव्यः । विशेषश्चात्रायम्—तत्राहारविषयको गमः, अत्र तु आनमाणादिगमो वाच्यः, स चेत्थम्—' एगवन्नाइं, दुवन्नाइं, तिवन्नाइं—जाव पंचवन्नाइं पि जाइं

द्रव्यों को श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं और छोड़ते हैं तो क्या ये द्रव्य एक ही वर्णयुक्त होते हैं ? अथवा दो तीन आदि पांच वर्णयुक्त होते हैं ? प्रभु इसका उत्तर देते हुए गौतम से कहते हैं कि (आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउ पंचदिसिं) हे गौतम ! यहां आहारगम जानना चाहिये और वह तीन, चार, पांच दिशातक के द्रव्यों के ग्रहण करने का जानना चाहिये, अर्थात् छह दिशाओं में से तीन, चार,, पांच दिशाओं में अवस्थित द्रव्यों को ये जीव श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं ।और छोड़ते हैं इस उत्तर सूत्र का तात्पर्य यह है कि आहार प्रज्ञापना सूत्र के २८ अट्ठाईसवें आहार पद में कहा हुआ आलापक है वह यहां कहना चाहिये । परन्तु उसमें और इसमें भेद इतना ही है कि वहां आहार के संबंध को लेकर सूत्र कहे गये हैं और यहां वे ही सूत्र श्वासोच्छ्वास के संबंध को लेकर कहे जावेंगे जैसे—(एगवन्नाइं,

---

ક્ષાએ વર્ણયુકત જે દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસમાં ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે તે દ્રવ્યો શું એક જ વર્ણવાળા હોય છે અથવા બે, ત્રણ, પાંચ વગેરે વર્ણવાળા હોય છે? તે પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે " आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउ पंचदिसिं હે ગૌતમ ! અહીં આહારગમના વિષયમાં કહેલ આલાપક ગ્રહણ કરવો જોઇએ અને ત્રણ, ચાર, અને પાંચ દિશાના દ્રવ્યોને તેઓ ગ્રહણ કરે છે એમ સમજવુ એટલે કે છ દિશાઓમાંની ત્રણ, ચાર કે પાચ દિશાઓમા રહેલા દ્રવ્યોને તે જીવો શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે. અને છોડે છે. આ ઉત્તરસૂત્રનુ એવુ તાત્પર્ય છે કે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ૨૮માં આહાર પદમાં કહેલો આહારગમ નામનો જે આલાપક છે તે અહીં કહેવો જોઇએ. પણ તે આલાપક અને આ આલાપકમાં એટલો જ તફાવત છે કે ત્યાં આહાર વિષે જે સૂત્રો કહેલા છે એજ સૂત્રો અહી શ્વાસોચ્છ્વાસ વિષે કહેવા જોઇએ જેમ કે " एगवन्नाइं, दुवन्नाइ तिवन्नाइ, जाव पंचवन्नाइं पि, जाइं

शेषा नियमात् षड्दिशम्, जीवा एकेन्द्रियाश्च व्याघातवन्तो भणितव्याः, इह व्याघातनिर्व्याघाताधिकारोऽन्यत्रापि करणीयः, तदभिलापस्य सूत्रे तथैव दर्शनात्, तत्र जीवा निर्व्याघातसव्याघाताः सूत्रे एव दर्शिताः, यदि व्याघातोऽलोकात्मको न भवेत् तदा जीवाः नियमतः षड्भ्यो दिग्भ्य आश्वासादिकं गृह्णन्ति, यदि व्याघातो भवेत्तदा कदाचित् दिक्त्रयेभ्यः कदाचित् दिक्चतुष्टयेभ्यः कदाचित् पञ्चदिग्भ्य आश्वासादिकं गृह्णन्ति इति। एकेन्द्रियजीवास्त्वेवम्-'पुढवीकाइया णं भंते कइदिसिं आणमंति पाणमंति ऊससंति नीससंति' पृथिवीकायिका खलु भदंत ! कतिदिक्षम् आनन्ति प्राणन्ति उच्छ्वसन्ति निःश्वसन्ति?, 'गोयमा निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं चउदिसिं पंचदिसिं' गौतम ! निर्व्याघातेन षड्दिशम् व्याघातं प्रतीत्य स्यात् त्रिदिशम् स्यात् चतुर्दिशम् स्यात् पञ्चदिशम्, इत्यादि,

---

इन में व्याघात विना के और व्याघातवाले जीव सूत्र में ही दिखला दिये गये हैं। यदि अलोकात्मक अलोक रूप व्याघात नहीं होता है तो जीव नियम से छह दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करते हैं और यदि अलोक रूप व्याघात होता है तो वे कदाचित तीन दिशाओं में से, कदाचित चार दिशाओं में से, कदाचित पांच दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करते हैं।

तथा—जो एकेन्द्रिय जीव हैं उनके विषय में इस प्रकार से जानना चाहिये—(पुढवीकाइया णं भंते ! कइदिसिं आणमंति पाणमंति ऊससंति नीससंति ? गोयमा ! निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं चउदिसिं सिय पंचदिसिं) हे भदंत ! पृथिवीकायिक जीव कितनी दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं ? हे गौतम ! यदि व्याघात न होवे तो वे नियम

તેમાંથી કયાં જીવો વ્યાઘાતવાળાં છે અને કયાં જીવો વ્યાઘાત વિનાના છે તે સૂત્રમાં જ બતાવ્યું છે જો અલોકાત્મક અલોક રૂપ વ્યાઘાત નહીં હોય તો જીવો છએ દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે એવો નિયમ છે પણ જો અલોક રૂપ વ્યાઘાત થતો હોય તો તેઓ કયારેક ત્રણ દિશાઓમાંથી કયારેક ચાર દિશાઓમાંથી અને કયારેક પાંચ દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે તથા એકેન્દ્રિય જીવોના વિષે આ પ્રમાણે સમજવું "पुढवीकाइयाणं भंते ! कइदिसिं आणमंति पाणमंति ऊससंति नीससंति ? गोयमा ! निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं चउदिसिं सिय पंचदिसिं " હે ભગવન્ ! પૃથિવીકાયના જીવો કેટલી દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે ? હે ગૌતમ ! જો વ્યાઘાત થતો

न्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, नारकजीवाः कानि द्रव्याणि आनप्राणादितया गृह्णन्तीति प्रश्नाशयः । भगवानाह 'तं चेव' इत्यादि । 'तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा' हे गौतम ! तदेव यथा पृथिव्याद्येकेन्द्रियजीवविषये कथितं तथा नैरयिका अपि 'दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं' इत्याद्यालापकः संग्राह्यः । कियत्पर्यन्तमित्याह—यावत् नियमात् षड्दिशम्, यावत् नियमात् षड्दिशमाश्रित्यानप्राणादिकं गृह्णन्त्येवेति भावः । 'जीवा एगिंदिया वाघायनिव्वाघायाय भाणियव्वा' जीवा एकेन्द्रिया व्याघातानिर्व्याघाताश्च भणितव्याः, 'सेसा नियमा छद्दिसिं'

मंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा, नीससंति वा) हे भदन्त नारकजीव किस प्रकारके द्रव्योंको श्वासोच्छ्वासरूपमें ग्रहण करतेहैं और छोड़तेहैं?

उत्तर—(तं चेव जाव छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) हे गौतम ! जिस प्रकार से पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीव के विषय में मैंने कहा है उसी तरह से नैरयिक जीवों के विषय मेंभी जानना चाहिये । अर्थात् नैरयिक जीव भी (दव्वाओ) द्रव्य की अपेक्षा से (अणंतपएसियाइं दव्वाइं) अनंत प्रदेशवाले द्रव्यों को श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते है और छोड़ते हैं इत्यादि आलापक यहां लगा लेना चाहिये । यह आलापक कहां तक लेना चाहिये ? तो इसके समाधान निमित्त कहा गया है कि (जाव छद्दिसिं) अर्थात् नारक छह दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के द्रव्यों को ग्रहण करते हैं जीवा एगेंदिया वाघाय निव्वाघाया य भाणिव्वा " सामान्य जीव और एकेन्द्रिय जीव व्याघात और अव्याघातवाले कहना चाहिये

નારકજીવ કઈ જાતના દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે ?

ઉત્તર–त चेव जाव छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा" હે ગૌતમ ! પૃથિવી વગેરે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસના વિષયમાં કહ્યા પ્રમાણે જ નારકોના વિષયમાં પણ સમજવું એટલે કે નારકીના જીવો પણ " दव्वओ अणतपएसियाइ दव्वाइं " દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશવાળા દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસમા ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે, ઇત્યાદિ આલાપક અહીં કહેવા જોઇએ ક્યાં સુધી તે આલાપક કહેવા જોઈએ ? તો તેના સમાધાન માટે કહ્યુ છે કે " जाव छद्दिसिं " નારક જીવો છ દિશામાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસમાં ગ્રહણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે " ત્યા સુધી તે આલાપક કહેવો. " जीवा एगेदिया वाघाय निव्वाघाय भाणियव्वा " સામાન્ય જીવો અને એકેન્દ્રિય જીવો વ્યાઘાત વાળા અને વ્યાઘાતવિનાના કહેવા જોઇએ

नारकादिपञ्चसंज्ञीनाः पञ्चेन्द्रियमानन्ति, तेषां हि प्रसनाड्यभ्यन्तर्वर्तित्वात् पञ्चेन्द्रियमानपाणादिपुद्गलग्रहो भवत्येवेति भावः ॥ सू० २ ॥

वायुजीवप्रकरणम्—

पूर्वमेकेन्द्रियादिजीवानामानपाणादिकं वर्णितम्, तेषां वायुरूपत्वात् किं वायुकायिकजीवानामपि पानुरेवानपाणादित्वेन भवितुमर्हति ? अथवा पृथिवीकायादीनामिव तत्किमोऽन्यः कश्चित् पदार्थ ? इति प्रश्नयन्नाह-'वाउकाए' इत्यादि ।

मूलम्-वाउकाए णं भंते ! वाउकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा ऊससइ वा नीससइ वा । हंता गोयमा ! वाउकाए णं जाव नीससइ वा, वाउकाए णं भंते ! वाउकाए चेव अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता, उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो पच्चायाइ, से भंते किं पुट्ठे उद्दाइ अपुट्ठे उद्दाइ, गोयमा पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ । से भंते किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ, गोयमा ! सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ, सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ, गोयमा ! वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरया पण्णत्ता, तं जहा-ओरालिए वेउव्विए तेयए कम्मए । ओरालिय वेउव्वियाइ

परमाणुओं को ग्रहण करने में अलोक द्वारा उन्हें अवश्यन पड़ती है। "सेसा नियमा छद्दिसिं' एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर नारक आदि त्रस जीव छहों दिशाओं में से नियम से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण करते हैं क्यों कि ये त्रस नाड़ी के भीतर रहते हैं इस कारण इन्हें छहों दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गल परमाणु मिल जाते हैं ॥ सू०२ ॥

'सेसा नियमा छद्दिसिं' એકેન્દ્રિયજીવો સિવાયના નારકી વગેરે ત્રસ જીવો છએ દિશાઓથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે એવો નિયમ છે, કારણ કે ત્રસ જીવો ત્રસ નાડીની અંદર જ રહે છે તેથી છએ દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસ યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓ મેળવી શકે છે.

यदि व्याघातो न भवेत्तदा नियमतः षड्दिगवस्थितपुद्गलान् आनप्राणादितया गृह्णन्ति। व्याघातं प्रतीत्य तु कदाचित् त्रिदिशम्, दिक्त्रयेषु व्याघाते सति अवशिष्टदिक्त्रये स्थितान् पुद्गलान् आनप्राणादितया गृह्णन्ति। एवं यत्र यत्र व्याघातो भवेत्तं तं परित्यज्यावशिष्टस्थाने स्थितान् पुद्गलान् आनप्राणादितया गृह्णन्ति। एवमप्कायिकादिवनस्पतिपर्यन्तेषु बोध्यम्, तत्र निर्व्याघातेन षड्दिशम्, व्याघातं प्रतीत्य स्यात् त्रिदिशम् स्याच्चतुर्दिशम् स्यात् पंचदिशमानन्ति४ तेषां लोकान्तवृत्तौ अलोकेन व्यादिदिक्षु उच्छ्वासादिपुद्गलानां व्याघातसंभवादिति।'सेसा नियमा छद्दिसिं' शेषा. नियमात् षड्दिशम्, शेषाः एकेन्द्रियवर्जाः

से छह दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं और यदि व्याघात हो तो तीन दिशाओं में व्याघात होने पर वे कदाचित् अवशिष्ट तीन दिशाओं में से, श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं। छह दिशाओं में से नहीं। इस तरह जिस २ दिशा रूप स्थान में व्याघात होगा उस उस दिशा रूप स्थान को छोड़कर अवशिष्ट स्थान में स्थित पुद्गलों को श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार से अप्काय से लेकर वनस्पतिकाय तक के एकेन्द्रिय जीवों में भी जानना चाहिये। यदि इनमें व्याघात नहीं है तो ये छह दिशाओं में से और जो व्याघात है तो कदाचित् तीन दिशाओं में से, कदाचित् चार दिशाओ में से, कदाचित् पांच दिशाओं में से ये श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण करते हैं। क्यों कि ये पृथिवीकायिक आदि जीव लोक के अन्त में भी रहते हैं, इसलिये तीन आदि दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के पुद्गल-

---

ન હોય તો નિયતથી જ છએ દિશાઓમાંથી તેઓ શ્વાસો ઉછ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, પણ જો અકોકરૂપ વ્યાઘાત નડતો હોય તો જે જે દિશાઓમા વ્યાઘાત નડતો હોય તો તે દિશાઓ સિવાયની બાકીની દિશાઓ માથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે આ રીતે કયારેક ત્રણ દિશામાંથી, કયારેક ચાર દિશામાથી અને કયારેક પાચ દિશામાંથી શ્વાસે ચ્છ્વાસ ને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે, આ પ્રમાણે જ અપ્કાયથી લઇ વનસ્પતિ કાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવોના વિષયમા પણ સમજવુ. જો વ્યાઘાત નડતો ન હોય તો છએ દિશાઓમાંથી અને જો વ્યાઘાત નડતો હોયતો કયારેક ત્રણ દિશામાંથી, કયારેક ચાર દિશામાથી અને કયારેક પાચ દિશામાંથી તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે તે પૃથિકાય વગેરેના જીવો લોકના અન્તમા પણ રહે છે, તેથી ત્રણ વગેરે દિશાઓમાથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરવામા તેમને અડચણ પડે છે.

मत्थायाति ? । हंत गौतम । यावत् मत्थायाति, स भदन्त ! किं स्पृष्टः अपद्यति अस्पृष्टः अपद्यति, गौतम ! स्पृष्ट अपद्यति नो अस्पृष्ट अपद्यति । स भदन्त ! किं सशरीरी निष्क्रामति अशरीरी निष्क्रामति, गौतम ! स्यात् सशरीरी निष्क्रामति स्यात् अशरीरी निष्क्रामति । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते स्यात् सशरीरी

इत्ता) मर मर कर के पीछे क्या (तत्थेव) वहीं पर (भुज्जो भुज्जो) बार २ (पच्चायाइ) उत्पन्न होता है ? (हंता गोयमा) हां, गौतम ! (जाव पच्चायाइ) वायुकायिक जीव अनेक लाखों बार मर मर कर फिर वहीं पर उत्पन्न होता है । (से भंते ! किं पुट्ठे उद्दाइ) हे भदन्त ! क्या वह वायुकायिक जीव स्वकायशस्त्र परकायशस्त्र और उभयकाय शस्त्र का आघात पहुँचने पर मरता है कि (अपुट्ठे उद्दाइ) बिना आघात के मरता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ) वह स्वकायादि शस्त्र का आघात पहुँचने पर मरता है, बिना आघात के नहीं मरता है । (से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) हे भदन्त ! वह वायुकायिक जीव जब मर मर कर दूसरी गति में जाता है तो क्या शरीर सहित जाता है कि शरीर रहित होकर जाता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) वह शरीर सहित भी जाता है और शरीर रहित होकर भी जाता है । (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्ख

છતો હણાયો વગત વાયુકાયિકોમાંથી મરીને વાયુકાયોની પર્યાયમાં જ ફરીથી વાર વાર ઉત્પન્ન થાય છે ! (હંતા ! गोयमा !) હા, ગૌતમ ! (जाव पच्चायाइ) વાયુકાયિક જીવો હણાયેલા મરીને ફરીથી વાયુકાયોની પર્યાયમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે (से भंते ! किं पुट्ठे उद्दाइ अपुट्ठे उद्दाइ ?) હે ભગવન્ ! તે વાયુકાયિક જીવો સ્વકાય શસ્ત્ર, પરકાય શસ્ત્ર અને ઉભયકાય શસ્ત્રનો આઘાત પહોંચવાથી મરે છે કે વિના આઘાતે મરે છે (गोयमा ! पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ) તે સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રોનો આઘાત પહોંચવાથી મરે છે, આઘાત પહોંચ્યા વિના મરતા નથી (से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) હે ભગવન્ ! વાયુકાયિક જીવો હણાઈ મરીને અન્ય ગતિમાં જાય છે ત્યારે શરીર સહિત જાય છે કે શરીર રહિત જાય છે ! (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) તે શરીર સહિત પણ જાય છે અને શરીર રહિત પણ જાય છે (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ

विप्पजहाय तेय कम्मसएहिं निक्खमइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ, सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ ॥ सू० ३ ॥

छाया—वायुकायो भदन्त! वायुकायानेव आनति वा प्राणति वा उच्छ्वसति वा निःश्वसति वा, हन्त गौतम! वायुकायो यावत् निःश्वसति वा। वायुकायः खलु भदन्त! वायुकाये एवानेकशतसहस्रकृत्वोऽपदुत्यापदुत्य तत्रैव भूयो भूयः

वायु जीव प्रकरण—

पहिले एकेन्द्रिय जीवों के आनप्राण आदि का वर्णन किया गया है। एकेन्द्रिय जीवों के वायुकायिक जीव भी हैं तो क्या इन जीवो का वायु ही आनप्राणादिरूप है या पृथिवीकायिक आदि जीवों की तरह कोई दूसरा ही पदार्थ इनका आनप्राणादिरूप है? इस प्रकार का प्रश्न करते हुए गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि—'वाउकाए णं भंते! इ०

सूत्रार्थ—(वाउकाए णं भंते!) हे भदन्त! वायुकायिक जीव (वायुकाए चेव) वायुकायों को ही (आणमइ वा पाणमइ वा ऊससइ वा नीससइ वा) क्या श्वासोच्छ्वासरूप में ग्रहण करते हैं? (हंता गोयमा!) हां गौतम! (वाउकाएणं जाव नीससइ वा) वायुकायिक जीव वायुकायों को ही श्वासोच्छ्वासरूप में ग्रहण करते हैं। (वाउकाएणं भंते!) हे भदन्त! वायुकायिक जीव (वाउकाए चेव) वायुकायिक में (अणेगसयसहस्स खुत्तो) अनेक लाखवार (उद्दाइत्ता उद्दा-

આગળના પ્રકરણમા એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છવાસનુ વર્ણન કરવામાં આવ્યુ વાયુકાય જીવોની ગણતરી પણ એકેન્દ્રિય જીવોમા જ થાય છે તો તે જીવોનો વાયુ જ શું શ્વાસ નિશ્વાસ રૂપ હોય છે કે પૃથિવીકાય વગેરે જીવોની જેમ કોઇ અન્ય પદાર્થ તેમના શ્વાસ નિશ્વાસમા ગ્રહણ થાય છે? તે જાણવા માટે ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે

"वाउकाए णं भंते!" ઇત્યાદિ।

સૂત્રાર્થ—(वाउकाए णं भंते! वायुकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा, ऊससइ वा नीससइ वा?) હે ભગવન્ વાયુકાયના જીવો શુ વાયુકાયોને જ શ્વાસોચ્છવાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે? (हंता गोयमा!) હા, ગૌતમ! (वाउकाए ण जाव नीससइ वा) વાયુકાયિક જીવો વાયુકાયોને જ શ્વાસોચ્છવાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે (वाउकाए ण भंते! वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता भुज्जो भुज्जो पच्चायाइ) હે ભગવન્? શું વાયુકાયિક

वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा, वायुकायिक जीवः किं वायुकायिकानेव सजातीयानेव श्वासादिरूपेण गृह्णन्ति किमित्यर्थः, भगवान् 'हंत' इत्यादि 'हंता गोयमा' हन्त गौतम ! 'वाउकाए णं जाव नीससइ वा' वायुकायः खलु यावत् निःश्वसति वा वायुकायिको जीवो वायुकायिकानेव आनमाणादिरूपेण गृह्णातीत्यर्थः। ननु आनप्राणादेरपि वायुरूपत्वात्तस्याप्यन्येनानप्राणादिना भवितुमर्हति, तस्यान्येन, पुनरन्यस्याप्यन्यनेत्येवमनवस्थादोष आपतेत्?

वायुकायिकों को ही क्या श्वासादिरूपसे ग्रहण करते हैं ? यह प्रश्न है। इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतमस्वामी से कहते हैं (हंता गोयमा!) हां गौतम ! (वाउकाए णं जाव नीससइ वा) वायुकायिक जीव वायुकायों को श्वासोच्छ्वासादि रूप से ग्रहण करते हैं।

शंका—जब आनप्राणादि वायुरूप होता है तो इस वायु को भी अन्यवायु की आवश्यकता पड़ेगी इस अन्यवायु को भी तीसरे वायु की आवश्यकता पड़ेगी, इस तरह से अनवस्था दोष की प्रसक्ति यहां होगी। शंकाकार का अभिप्राय ऐसा है कि—पृथिवी आदिक जीव स्वयं पृथिवी आदिरूप होते हैं और उनका जो श्वासोच्छ्वास होता है वह वायुरूप होता है। परन्तु वायु में ऐसा नहीं है क्यों कि वायु स्वयं वायु रूप है और इसका श्वासोच्छ्वास भी वायुरूप ही है अतः जब वायुकायिक जीव को जीने के लिये अन्य वायुकाय की आवश्यकता होती है, तो इस अन्य वायु को भी अन्यवायुकाय की आवश्यकता होगी। इस तरह मानने पर श्वासोच्छ्वासरूप वायुका कहीं पर भी अन्त नहीं

પોતાના સજાતીય વાયુકાયિકોને જ શ્વાસાદિ રૂપે ગ્રહણ કરે છે ? આ પ્રકારના ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે "हंता गोयमा' હા ગૌતમ ! ' वाउकाए णं जाव नीससइ वा " વાયુકાયિક જીવો સજાતીય વાયુકાયોને જ શ્વાસાદિ રૂપે ગ્રહણ કરે છે

શંકા—જો શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે વાયુરૂપ હોય છે તો તે વાયુને પણ બીજા વાયુની આવશ્યકતા પડશે, અને બીજા વાયુને પણ ત્રીજા વાયુની જરૂર પડશે, આ રીતે તો અહીં અનવસ્થા દોષનો પ્રસંગ ઉભો થશે શંકાકારની શંકા એવા પ્રકારની છે કે પૃથિવી વગેરે જીવો પોતે પૃથિવી વગેરે રૂપ હોય છે, અને તેમનો જે શ્વાસોચ્છ્વાસ હોય છે તે વાયુ રૂપ હોય છે પણ વાયુકાયિકોમાં એવું નથી વાયુકાયિકો સ્વયં વાયુ રૂપ હોય છે અને તેમનો શ્વાસોચ્છ્વાસ પણ વાયુ રૂપ જ હોય છે આ રીતે જો વાયુકાયિક જીવોને જીવવા માટે અન્ય વાયુની જરૂર પડે તો બીજા વાયુકાયોને પણ વાયુની આવશ્યકતા રહેતી હોવી

निष्क्रामति स्यादशरीरीनिष्क्रामति ? गौतम ! । वायुकायस्य चत्वारि शरीराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा औदारिकं वैक्रियं तैजसं कार्मणम्। औदारिकवैक्रिये विमुच्य तैजसकार्मणाभ्यां निष्क्रामति, तत् तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते स्यात् सशरीरी निष्क्रामति, स्यादशरीरी निष्क्रामति ॥ सू० ३ ॥

टीका—' वायुकाए णं भंते ' वायुकायः खलु भदन्त ! ' वाउकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा ' वायुकायानेव आनति वा प्राणति-

---

मइ ?) हे भदन्त ! यह किस कारण से कहा जाता है कि वायुकायिक जीव शरीरसहित भी जाता हैं शरीर रहित भी जाता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पण्णत्ता) वायुकायिक जीव के चार शरीर कहे गये हैं (तं जहा) वे इस प्रकार से (ओरालिए, वेउव्विए, तेयए, कम्मए) औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण (ओरालिय वेउव्वियाइं विप्पजहा य तेयकम्मएहिं निक्खमइ) औदारिक वैक्रिय इन दो शरीरों को छोड़कर तथा तैजस और कार्मण इन दो शरीरों को साथ लेकर वह दूसरी गति में जाता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा है कि शरीर सहित भी जाता है और शरीर रहित भी जाता है।

टीकार्थ–(वायुकाए णं भंते !) हे भदन्त! वायुकायिक जीव (वायुकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा) अपने सजातीय

सिय असरीरी निक्खमइ) हे भगवन्! शा કારણે આપ એવુ કહેા છેા કે તેઓ શરીર સહિત પણ જાય છે અને શરીર રહિત થઇને પણ જાય છે! (गोयमा !) હે ગૌતમ! (वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरया पण्णत्ता) વાયુકાયિક જીવેાનાં ચાર શરીર કહ્યા છે (तंजहा) તે આ પ્રકારે છે (ओरालिए, वेउव्विए, तेयए, कम्मए) ઔદારિક, અને વૈક્રિય, તૈજસ અને કાર્મણ, ओरालियवेउव्वियाइ विप्पजहाय तेयकम्मएहिं निक्खमइ) ઔદારિક વૈક્રિય, એ બે શરીરેાને છેાડી તથા તૈજસ અને કાર્મણએ બે શરીરેાને સાથે લઇને તે બીજી ગતિમા જાય છે (से तेणट्ठे ण गोयमा ! एव वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) હે ગૌતમ! તે કારણે એવુ કહેવામા આવ્યું છે કે તેઓ શરીર સહિત પણ અન્ય ગતિમા જાય છે અને શરીર રહિત પણ જાય છે.

ટીકાર્થ—" वायुकाए ण भंते ! " હે ભગવન્? વાયુકાયિક જીવેા " वायुकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा "

संसारी नहीं हैं, मुक्त जीव हैं अतः यहां श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता नहीं हैं। सिद्ध अवस्था कर्मों के बिलकुल अभाव होने से ही प्राप्त होती है। नाम कर्म का एक भेद पर्याप्ति नामकर्म है। इसके उदय में जीव पर्याप्तक होता है। सिद्धों के नाम कर्म का अभाव हो जाने से इस कर्म का भी अभाव हो जाता है। अतः वे पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों अवस्थाओं से रहित हो जाते हैं। सिर्फ इनमें तो एक शुद्ध चेतना ही रहती है। शंका-यदि संसारी जीवों को ही श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता होती है तो फिर जो विग्रह गति में जीव रहते हैं उन्हें तो इसकी आवश्यकता नहीं कही गई है। वे भी तो संसारी ही जीव हैं। विग्रहगति में रहने वाले जीवों के अर्थात् अपर्याप्तकजीवों के दस प्राणों में से सात प्राण कहे गये हैं। मनबल, वचनबल और श्वासोच्छ्वास ये तीन प्राण अपर्याप्तावस्था में जीवों के नहीं होते हैं ऐसा कहा है तो जिस प्रकार विग्रहगति समापन्न जीव श्वासोच्छ्वास के अभाव में अजीव नहीं होते उसी प्रकार वायुकायिकादि जीव भी जिनकी श्वासोच्छ्वास क्रिया देखने जानने में नहीं आती है श्वासोच्छ्वास के अभाव में भी जीव रहेंगे इनमें (वायुकाय में) श्वासोच्छ्वास मानने की क्या

અહીંયે છે સિદ્ધ જીવો સંસારી નથી પણ મુક્ત છે વળી શરીરોથી રહિત છે તેથી તેમને શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતા રહેતી નથી. કર્મોનો બિલકુલ અભાવ હોવ ત્યારે જ સિદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ થાય છે નામ કર્મનો એક ભેદ પર્યાપ્તિ નામ કર્મ છે તેનો ઉદય થાય ત્યારે જ જીવ પર્યાપ્તક કહેવાય છે સિદ્ધોને નામ કર્મનો જ અભાવ હોવાથી પર્યાપ્તિ નામ કર્મનો પણ અભાવ જ હોય છે તેથી તેઓ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત અવસ્થાઓથી રહિત થઈ જાય છે, તેમનામાં તો એકલી શુદ્ધ ચેતના જ રહે છે શંકા-જો સંસારી જીવોને જ શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતા રહેતી હોય તો વિગ્રહગતિમાં રહેલા જીવોને આવશ્યકતા કહી નથી. તેઓ પણ સંસારી જીવો જ છે વિગ્રહગતિમાં રહેલા જીવોને જોઈએ કે અપર્યાપ્તક જીવોમાં દસ પ્રાણોમાંથી સાત પ્રાણોનું અસ્તિત્વ કહ્યું છે મનબલ, વચનબલ અને શ્વાસોચ્છ્વાસ એ ત્રણે પ્રાણો અપર્યાપ્તાવસ્થામાં જીવોને હોતા નથી એવું કહેલ છે તો જે રીતે વિગ્રહગતિ સમાપન્ન જીવ શ્વાસોચ્છ્વાસને અભાવે અજીવ કહેવાતો નથી એજ પ્રમાણે જેમની શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા જોવામાં આવતી નથી એવા વાયુકાયિકાદિ જીવોને શ્વાસોચ્છ્વાસના અભાવે પણ જીવો જ કહેવાય છે છતાં પણ તેમનામાં (વાયુકાયિકોમાં) શ્વાસોચ્છ્વાસનો સદ્ભાવ માનવાની આવશ્યકતા શી છે?

नैवं वाच्यम् ! अचेतनत्वात्तस्येति। आनप्राणादिग्रहणं च सचेतनानामेव भवति नत्वचेतनानाम्, आनप्राणादिवायुस्त्वचेतन इति नानावस्थादोषः। यद्वा-योऽय-

आवेगा। यदि कहीं पर इसका मान भी लिया जावेगा तो फिर ऐसा ही क्यों न मान लिया जावे कि प्रथम वायुकायिक जीवों को श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता नहीं होती है।

समाधान—ऐसा कहना उचित नहीं है कारण कि जो जीव होता है उसे ही जीने के लिये श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता होती है। अचित्त को नहीं। वायुकायिक जीव है, अतः उसे ही श्वास निःश्वास की आवश्यकता है। श्वासोच्छ्वासरूप वायु को नहीं, क्यों कि वह अचित्त है। इसलिये यहां अनवस्था दोष का संभव ही नहीं है।

यहां प्रसंग वश फिर कहते हैं-शंका-जीव को ही यदि श्वासोच्छ्वासकी आवश्यकता होती है तो जो सिद्ध जीव हैं उन्हें भी इसकी आवश्यकता होनी चाहिये-नहीं तो श्वासोच्छ्वास वायु की तरह उन्हें निर्जीव ही मानना पड़ेगा ? सो ऐसी आशंका भी ठीक नहीं है-क्यों कि यहां जो कथन चल रहा है वह संसारी जीवों की अपेक्षा लेकर चल रहा है। पृथिवी आदिक जीव संसारी जीव है। जितने भी संसारी होते हैं उनके यथा संभव छह पर्याप्तियां तक होती हैं। सिद्ध जीव

આ પ્રમાણે માનવામા આવે તો શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુનો કયાંયે પણ અન્તજ નહીં આવે જો તેનો કોઇપણ સ્થાને અન્ત માની લેવામા આવે તો એમ શા માટે માનવુ કે પ્રથમ વાયુકાયિક જીવોને શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતાજ હોતી નથી.

સમાધાન—આ પ્રમાણેનું કથન યોગ્ય નથી, કારણ કે કોઇ પણ જીવને જીવવા માટે શ્વાસોચ્છ્વાસની જરૂર પડે જ છે નિર્જીવને પડતી નથી. વાયુકાયિકો પણ જીવ જ હોય છે તેથી તેમને શ્વાસ અને નિઃશ્વાસની આવશ્યકતા પડે છે પરતુ શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુને તેની આવશ્યકતા રહેતી નથી કારણ કે તે તો અચિત્ત જીવ રહિત હોય છે તેથી અહીં અનવસ્થા દોષની સભાવના રહેતી નથી.

શકા—જો જીવને જ શ્વાસોચ્છ્વાસની જરૂર પડતી હોય તો જે સિદ્ધ પદ ને પામેલા જીવો છે તેમને પણ તેની આવશ્યકતા હોવી જ જોઇએ નહીં તો શ્વાસોચ્છ્વાસના વાયુની જેમ તેમને પણ નિર્જીવજ માનવા પડશે ?

સમાધાન—આ જાતની શકા અસ્થાને છે, કારણ કે અહીં જે વાત ચાલી રહી છે તે સસારી જીવોની અપેક્ષાએ ચાલી રહી છે પૃથિવી, પાણી વગેરે જીવો સંસારી ગણાય છે. જે સંસારી જીવો હોય છે તેમને ૪ થી ૬ પર્યાપ્તિઓ

'वाउकाएणं भंते' वायुकायः खलु भदन्त ! 'वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो पच्चायाइ ?' वायुकाय खलु भदन्त ! वायुकाय एव अनेकशतसहस्रकृत्वोऽपद्रुत्यापद्रुत्य तत्रैव भूयो भूयः प्रत्यायाति ? हे भदन्त ! वायुकाय वायुकाये एव अनेकशतसहस्रकृत्व=अनेक लक्षवारान् अपद्रुत्यापद्रुत्य=मृत्वा मृत्वा तत्रैव=यत्र काये मृतस्तत्रैवकाये भूयोभूयः =वारं वार पुनः पुनरित्यर्थः प्रत्यायाति=आगच्छति न गच्छतीति किमिति प्रश्नः। अथ च प्रश्नो वायुकायाधिकारात् वायुकायमधिकृत्य कृतः । परन्तु पृथिव्यप्तेजोवनस्पतिद्वीन्द्रियादिष्वपि मृत्वा मृत्वा पृथिवीकायिकादावुत्पत्तिर्भवत्येव, सर्वेषामेषां पृथिवीकायिकादीनां कायस्थितेरसंख्यातत्वात्तथा, वनस्पतिमाश्रित्यानन्तत्वात्तथा च सूत्रे पठितत्वात्, उक्तञ्च—

"असंखोसप्पिणी उस्सप्पिणीओ एगिंदियाण उ चउण्हं ।
ता चेव उ अणंता वणस्सईए उ बोद्धव्वा ॥ १ ॥

छाया—असंख्येयावसर्पिण्युत्सर्पिण्य एकेन्द्रियाणां चतुर्णाम् ।
ताश्चैव तु अनंता वनस्पतेस्तु बोद्धव्या इति ॥

नि काल की अपेक्षा नहीं है। अतः अनवस्था दोष नहीं आता है।

(वाउकाएणं भंते !) हे भदन्त ! वायुकाय (वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो २ पच्चायाइ ?) वायुकाय में ही अनेक लाख बार मर मर कर के क्या वहीं पर बार २ जन्म ग्रहण करता है ? ऐसा यह प्रश्न है। यह प्रश्न वायुकाय का अधिकार होने से वायुकाय को लेकर किया गया है। नहीं तो यह प्रश्न पृथिवीकायिक आदिकोंमें भी लागू पड़ता है। क्यों कि पृथिवीकायिक आदिकोंको मर मर करके पृथिवीकायिक आदिकोंमें उत्पत्ति होती ही है। इन सब पृथिवीकायिक आदि कों की कायस्थिति असंख्यातकाल से तथा वनस्पति की अपेक्षा अनंतकाल की कही है। कहा भी है—

નથી અહીં અનવસ્થા દોષનો પ્રસંગ રહેતો નથી.

"वाउकाए णं भंते !" હે ભગવન્! વાયુકાયિકો 'वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो २ पच्चायाइ ?" વાયુકાયમાં જ લાખો વખત મરીને ત્યાં જ શું વારંવાર જ જન્મ લે છે ? વાયુકાયનું પ્રકરણ હોવાથી વાયુકાયિકોના વિષયમાં જ આ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે નહિતર તો આ પ્રશ્ન પૃથિવીકાયિક વગેરે ને પણ લાગુ પાડી શકાય છે કારણ કે પૃથિવીકાયિક વગેરે જીવોની પણ મરી મરીને પૃથિવીકાયિક વગેરેમાં જ ઉત્પત્તિ થાય છે તે તમામ પૃથિવીકાયિકની કાયસ્થિતિ અસંખ્યાત રૂપે તથા વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનંત રૂપે પ્રતિપાદિત કરવામાં આવી છે કહ્યું પણ છે

मानप्राणादिवायुः स वायुत्वेऽपि वायुसंभाव्यौदारिकवैक्रियशरीररूपो न, आनप्राणसञ्ज्ञितानां तदीयपुद्गलानामौदारिकवैक्रियशरीरपुद्गलेभ्योऽनन्तगुणप्रदेशवत्त्वेन सूक्ष्मतया वायुशरीरव्यपदेश्यस्यासद्भावात्, तथा सति नोक्तदोष इति।

आवश्यकता है ? सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं–कारण कि अपर्याप्तावस्था जीव की तीन समयतक ही रहती है बाद में वह पर्याप्तक हो जाता है। समय काल का सब से छोटा में छोटा–सूक्ष्म से सूक्ष्म अंश है। व्यवहार में भी साधारण से साधारण प्राणी अपनी श्वासोच्छ्वास क्रिया को कुछ समयतक साध लेते हैं–एतावता वे निर्जीव तो हो नहीं जाते। यहां तो यह कहा जा रहा है कि श्वासोच्छ्वास क्रिया यदि पर्याप्तक जीव है तो उसके अवश्य २ है। इसके विना वह पर्याप्तक जीव नहीं माना जा सकता।

अथवा—जो यह श्वासोच्छ्वासरूप वायु है। वह वायुरूप होने पर भी वायु कायिक जीव के संभाव्य जो औदारिक वैक्रिय शरीर हैं उन रूप नहीं है। क्यों कि आनप्राण नाम के जो वायु के पुद्गल हैं वे औदारिक वैक्रिय शरीर के पुद्गलो की अपेक्षा अनंतगुणप्रदेशवाले होने के कारण सूक्ष्म हैं इसलिये उनमें चैतन्य वाले वायु के शरीर का व्यपदेश नहीं हो सकता है। इस तरह अनवस्था दोष यहां नहीं आता है। तात्पर्य कहनेका यह है कि श्वास निःश्वासरूप वायु अचेतन है–इसलिये उसे श्वास

સમાધાન–આવી શંકા પણ ઉચિત નથી કારણ કે જીવની અપર્યાપ્તાવસ્થા પણ ત્રણ સમય પર્યંત જ રહે છે ત્યાર બાદ તે પર્યાપ્તક અવસ્થા જ બની જાય છે કાળના સૂક્ષ્મમા સૂક્ષ્મ અંશને સમય કહે છે વ્યવહારમા પણ એવુ જોવામા આવે છે કે સામાન્યમાં સામાન્ય પ્રાણી પણ પોતાની શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયાને કેટલાક સમય સુધી રૂંધી શકે છે– તેથી કરીને તેઓ નિર્જીવ બની જતા નથી અહીં તો એમ કહેવામાં આવ્યુ છે કે પર્યાપ્તક અવસ્થાવાળા શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયાનો અવશ્ય સદ્ભાવ હોય છે તેનો અભાવ હોય તો તે જીવને પર્યાપ્તક જ માની શકાય નહી

અથવા– આ જે શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુ છે તે વાયુરૂપ હોવા છત પણ વાયુકાયિક જીવના જે ઔદારિક, વૈક્રિય શરીરો હોય છે તે રૂપે તો હોતો નથી કારણ કે આન પ્રાણ નામના વાયુના જે પુદ્ગલો છે તેઓ ઔદારિક વૈક્રિય શરીરના પુદ્ગલો કરતા અનેક ગણા પ્રદેશવાળા હોવાને કારણે સૂક્ષ્મ હોય છે તેથી તેમા ચૈતન્યવાળા વાયુના શરીરનો સમાવેશ થઇ શકતો નથી આ રીતે અહી અનવસ્થા દોષ લાગતો નથી કહેવાનો આશય એ છે કે શ્વાસ નિ શ્વાસ રૂપ વાયુ અચેતન હોય છે તેથી તેને શ્વાસ નિશ્વાસની જરૂર પડતી

एष किमपद्रवति—स्पृशति ? भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा !' हे गौतम ! 'पुट्ठे उद्दाइ' स्पृष्ट—अपद्रवति, 'नो पुट्ठे उद्दाइ' नो अस्पृष्ट अप द्रवति । सप्रतीपविभागीय शस्त्रसंपर्कापेक्षेण म्रियत इति कथने सोपक्रमायुष्कापेक्षम्, निरुपक्रमायुष्के तु अन्यथापि मरणसम्भवात् 'से भंते किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ ?' स भदन्त ! किं सशरीरी निष्क्रामति अशरीरी निष्क्रामति ? हे भदन्त ! यदा स वायुकायिको जीवो मृत्वा गत्यन्तरं गच्छति तदा किं शरीर सहितो याति अथवा शरीररहितो यातीति प्रश्नाशयः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ' स्यात् सशरीरी निष्क्रामति स्यादशरीरी निष्क्रामति, हे गौतम ! स वायुकायो यदा कदाचित् शरीरविशिष्टो गत्यन्तरं गच्छति कदाचिद् शरीररहितो गच्छति । 'से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ' तत् केनार्थेन हे भदन्त !

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए गौतम से कहते हैं कि—(गोयमा ! पुट्ठे उद्दाइ, नो अपुट्ठे उद्दाइ) हे गौतम ! वायुकायिक जीव स्वकायादि शस्त्र से आहत होने पर ही मरता है किन्तु अनाहत नहीं । वायुकायिक जीव स्वकाय परकाय तदुभय कायरूप शस्त्र के संपर्क से आघातित होकर ही मरता है । यह जो कथन है वह सोपक्रम की अपेक्षा से है । निरुपक्रम की अपेक्षा से तो अन्य प्रकार से भी उसका मरण संभव होता है । (से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) हे भदन्त ! जब वह वायुकायिक जीव मर कर दूसरी गति में जाता है तो क्या वह शरीर सहित जाता है कि शरीररहित ? भगवान कहते हैं—(सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) किसी अपेक्षा

ઉત્તર— गोयमा ! पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ" હે ગૌતમ ! વાયુકાયિક જીવ સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રોના આઘાત પામવાથી જ મરે છે આઘાત પામ્યા વિના મરતા નથી." વાયુકાયિક જીવ સ્વકાય પરકાય અથવા બન્ને પ્રકારના શસ્ત્રોના સંપર્કથી આઘાત પામીને જ મરે છે' આ કથન સોપક્રમઆયુષ્યની અપેક્ષાએ કહ્યું છે પરંતુ નિરુપક્રમ આયુષ્યની અપેક્ષાએ તો અન્ય પ્રકારે પણ તેનું મરણ સંભવે છે

પ્રશ્ન— ' से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ ?" હે ભગવન્ ते वायुકાયિક જીવ જ્યારે મરીને બીજી ગતિમાં જાય છે ત્યારે શું તે શરીર સહિત જાય છે કે શરીર રહિત જાય છે ?

ઉત્તર—सिय ससरीरी निक्खमइ " सिय असरीरी निक्खमइ ' હે ગૌતમ કોઈ અપેક્ષાએ તે શરીરને સાથે પણ લઈ જાય છે, અને કોઈ અપેક્ષાએ તે

भगवानाह—'हंत' इत्यादि, 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'जाव-पच्चायाइ' यावत् प्रत्यायाति, अत्र यावत्पदेन—"वाउकाए वाउकाए चेव-अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो" इति संग्रहः। पुनः प्रश्नयति गौतमः—'से भंते किं पुट्ठे उद्दाइ' स भदन्त किं स्पृष्ट अपद्रवति, स्पृष्टः=स्वकायशस्त्रेण, परकायशस्त्रेण तदुभयशस्त्रेण वा हतोऽपद्रवति-म्रियते, अथवा 'अपुट्ठे उद्दाइ' अस्पृष्टः अपद्रवति स्वकाय शस्त्रादिना अस्पृष्टः अहत

"असंखोसप्पिणीओ एगिंदियाण उ चउण्हं।
ता चेव अणंता वणस्सईए उ बोद्धव्वा॥"

अर्थात्-चार एकेन्द्रिय जीवों की कायस्थिति असंख्यात अवसर्पिणी उत्सर्पिणीकाल प्रमाण होती है। तथा वनस्पति कायिक जीवों की काय-स्थिति अनंत अवसर्पिणी उत्सर्पिणीकालरूप होती है। इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् गौतम से कहते हैं कि (हंता गोयमा! जाव पच्चायाइ) हां गौतम! यावत् वह जन्म लेता है। यहां (यावत्) पद से (वाउकाए वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो २ इस पाठ का संग्रह किया गया है।

(से भंते! किं पुट्ठे उद्दाइ) हे भदन्त! वह कायिक जीव क्या स्पृष्ट अपने शरीररूपशस्त्र से, परकायरूप शस्त्र से अथवा तदुभयकाय-रूप शस्त्र से हत होकर मरता है? कि (अपुट्ठे उद्दाइ) स्वका-यादि शस्त्र से आहत हुआ (लगकर) ही मरता है? भगवान

ભાવાર્થ–પૃથ્વી, પાણી અગ્નિ અને વાયુકાયના જીવોની કાયસ્થિતિ અસંખ્યાત અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણી કાળ પ્રમાણ હોય છે તથા વનસ્પતિકાયના જીવોની કાયસ્થિતિ અનંત અવસર્પિણી કાળ પ્રમાણે હોય છે

ગૌતમ સ્વામીના તે પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે. "हंता गोयमा! जाव पच्चायाइ" હા, ગૌતમ! વાયુકાયના જીવો લાખો વખત મરીને વાયુકાયમાં જ ફરી ફરીને જન્મ લે છે અહીં (यावत्,) પદથી "वाउकाए वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो२" પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે

પ્રશ્ન–"से भंते! किं पुट्ठे उद्दाइ" હે ભગવન્ તે વાયુકાયિક જીવો શું પોતાના શરીર રૂપ શસ્ત્રથી, પરકાય રૂપ શસ્ત્રથી અથવા બન્ને કાય રૂપ શસ્ત્રથી હણાઈને મરે છે! કે 'अपुट्ठे उद्दाइ" સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રથી આઘાત પામીને મરે છે?

तीति कथ्यते । 'से तेणट्ठेणं गोयमा' तत् तेनार्थेन गौतम ! 'एवं वुच्चइ' एवमुच्यते 'सिय ससरीरी' स्यात् सशरीरी 'सिय असरीरी' स्यात् अशरीरी 'निक्खमइ' निष्क्रामति ॥ सू० २ ॥

अथ मृताद्यनगारप्रकरणम्—

वायुकायिकजीवस्य भूयो भूयोऽपि वायुकाये एवोत्पत्तिर्भवतीति पूर्वं वर्णितम् । अथ कस्यचिन्मृतादेरपि संसारचक्रापेक्षया पुनः पुनस्तत्रैवोत्पत्तिः स्यादिति दर्शयितुमाह—'मडाई णं भंते' इत्यादि ।

मूलम्—मडाई णं भंते! नियंठे नो निरुद्धभवे नो निरुद्धभवपवंचे णो पहीणसंसारवेयणिज्जे, णो वोच्छिन्नसंसारे णो वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे, नो निट्ठियट्ठे, नो निट्ठियट्ठकरणिज्जे, पुनरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ? हंता गोयमा! मडाई णं नियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ ॥सू०४॥

(से तेणट्ठेणं गोयमा एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि वायुकायिक जीव किसी अपेक्षा तैजस और कार्मण इन दो शरीरों की अपेक्षा शरीर सहित और किसी अपेक्षा-औदारिक वैक्रिय इन दो की अपेक्षा शरीर रहित जाता है ॥ सू-२ ॥

मृताद्यनगार प्रकरण—

वायुकायिक जीव की पुनः पुनः भी वायुकाय में ही उत्पत्ति होती है ऐसा पहिले वर्णन किया जा चुका है। अब यह कहा जाता है कि किसी किसी मुनि को भी संसारभ्रमण की अपेक्षा से फिर फिर वहीं

मइ सिय असरीरी निक्खमइ" हे गौतम। आरीते वायुकायिक जीवो तैजस अने કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ શરીર સહિત અન્ય ગતિમાં જાય છે અને ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરની અપેક્ષાએ શરીર રહિત થઇને અન્ય ગતિમા જાય છે ॥સૂ. ૩॥

મૃતાદી અણગારનુ પ્રકરણ

વાયુકાયિક જીવો ફરી ફરીને વાયુકાયિકોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે એવું અગાઉના પ્રકરણમાં કહેવામા આવ્યુ છે હવે આ પ્રકરણમાં એ બતાવવામાં આવે છે કે કોઈ કોઈ મુનિ પણ સંસારભ્રમણની અપેક્ષાએ ફરી ફરીને ત્યાંજ

एवमुच्यते-'सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ' स्यात् सशरीरी निष्क्रामति स्यात् अशरीरी निष्क्रामति। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पन्नत्ता' वायुकायस्य खलु चत्वारि शरीराणि प्रज्ञप्तानि, 'तं जहा' तद्यथा 'ओरालिए' औदारिकम् 'वेउव्विए' वैक्रियम् 'तेयए' तैजसम्। 'कम्मए' कार्मणम्। 'ओरालिय वेउव्वियाइं विप्पजहा य' औदारिकवैक्रिये शरीरे विप्रहाय च, औदारिकवैक्रियशरीरद्वयं परित्यज्येत्यर्थः, 'तेययकम्मएहिं निक्खमइ' तैजसकार्मणाभ्यां निष्क्रामति, औदारिकवैक्रियशरीरद्वयं परित्यज्य गच्छति अतः शरीररहितो निष्क्रामतीति कथ्यते, तैजसकार्मणरूपशरीरद्वयेन सहितो यातीत्यतः सशरीरी निष्क्राम-

---

वह शरीर को साथ भी ले जाता है। (से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह वायुकायिक जीव शरीर सहित भी परगति में जाता है और शरीररहित होकर भी जाता है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम स्वामी से कहते हैं-(गोयमा! वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पन्नत्ता) हे गौतम! वायुकायिक जीव के चार शरीर कहे गये हैं जो इस प्रकार से हैं-(ओरालिए) औदारिक, (वेउव्विए) वैक्रिय, (तेयए) तैजस (कम्मए) और कार्मण सो वह जीव (ओरालिय वेउव्वियाइं विप्पजहाय) औदारिक वैक्रिय शरीर को छोड़कर ही अन्यगति में जाता है। साथ में उस समय उसके (तेयय कम्मएहिं निक्खमइ) तैजस और कार्मण शरीर रहते हैं। क्यों कि ये दोनों ही शरीर (अप्रतिघाते) के अनुसार प्रतिघात से रहित होते हैं।

શરીરને સાથે નથી પણ લઈ જતા

પ્રશ્ન-"से केणट्ठेण भंते! एव वुच्चइ" હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે વાયુકાયિક જીવો શરીર સહિત પણ પરગતિમા જાય છે અને શરીર રહિત પણ પરગતિમા જાય છે?

ઉત્તર-"गोयमा! वाउकायस्स णं चत्तारिसरीरा पन्नत्ता" હે ગૌતમ! વાયુકાયિક જીવોમાં ચાર શરીર કહ્યા છે જે આ પ્રમાણે છે
'ओरालिए" ઔદારિક, "वेउव्विए" વૈક્રિય, "तेयए" તૈજસ, અને "कम्मए" કાર્મણ વાયુકાયિક જીવો "ओरालियवेउव्वियाइ विप्पजहाय" ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરને છોડીને જ અન્યગતિમા જાય છે પરતુ "तेयय कम्मएहिं निक्खमइ" તૈજસ અને કાર્મણ શરીર, અન્ય ગતિમા છે. કારણ કે તે બન્ને શરીર પ્રત્યાઘાતથી રહિત હોય છે. "से तेणट्ठेण गोयमा! एव उच्चइ सिय ससरीरी निक्ख-

टीका—' सडाई णं भंते ' मृतादी खलु भदन्त ! मृतम्-अचित्तं वस्तु अशीति मृताशी, प्रासुकभोजीत्यर्थः, उपलक्षणत्वात् एषणीयादीत्यपि ज्ञातव्यम्, ' निग्गंथे ' निर्ग्रन्थः, 'नो निरुद्धभवे ' नो निरुद्धभवः, नैव निरुद्धः भव एतेन जन्म येन स तथा अनिरुद्धभव चरमभवमप्राप्त इत्यर्थः । एतादृशश्च भवति

टीकार्थ—(सडाई ण भंते) अचित्त वस्तु का नाम मृत है । इस मृतरूप अचित्त वस्तु को जो अपने आहार के उपयोग में लाता है—वह (मृताशी) कहलाता है । इसका अर्थ जो प्रासुक भोजी है ऐसा वह मृताशी तथा उपलक्षण से एषणीय वस्तु का जो आहार करता है ऐसा वह (एषणीयादी) भी (निग्गंथे) निर्ग्रन्थ अनगार तिर्यञ्च मनुष्यादि-गतिरूप संसार को फिर भी प्राप्त करता है । सो वह किस स्थिति में रहकर संसार को पुनः प्राप्त करता है तो इसको स्पष्ट करने के लिये सूत्रकार कहते हैं (नो निरुद्धभवे) इत्यादि यहां ये जितने भी मृताशी श्रमण निर्ग्रन्थ के विशेषण हैं—उन विशेषणों से विशिष्ट यदि वह श्रमण निर्ग्रन्थ है तो उसके संसार का अंत नहीं होता है अर्थात् वह संसार में ही परिभ्रमण करता रहता है । अब उन्हीं विशेषणों को कहते हैं—(नो निरुद्धभवे) वह मृताशी श्रमण निर्ग्रन्थ यदि अनिरुद्धभववाला है—चर भवयवाला नहीं है अर्थात् अद्यतन जन्म जिसने अपना निरुद्ध नहीं किया है तो वह नियमतः पुनः मरकर संसार में ही जन्म धारण करेगा।

સૂત્રાર્થ—" सडाई णं भंते! અચિત્ત વસ્તુનેમૃત કહે છે તે મૃતરૂપ અચિત્ત વસ્તુનો આહાર લેનારને મૃતાશી કહે છે. જેટલે કે પ્રાસુક ભોજી તથા ઉપલક્ષણથી એષણીય વસ્તુનો આહાર કરનાર તે ' एषणीयाशी सिद्ध छे " निर्ग्रंथ अनगार पण शु तिर्यंच मनुष्यादि वगेरे अतिरूप संसारने ही ईने प्राप्त કરે છે? જેટલે કે કઇ પરિસ્થિતિમા તે નિર્ગ્રંથ સંસારને ફરી ફરીને પ્રાપ્ત કરે છે તે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રો વડે સ્પષ્ટ કરે છે " नो निरुद्ध भवे " ઇત્યાદિ જે જે મૃતાશી શ્રમણ નિર્ગ્રંથના વિશેષણો આ સૂત્રમાં બતાવ્યાં છે, તે વિશેષણોથી યુક્ત શ્રમણ નિર્ગ્રંથના સંસારનો અંત આવતો નથી કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તે વિશેષણો વાળો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહારનો ઉપયોગ કરવા છતાં પણ સંસારમા પરિભ્રમણ કરે છે હવે તે વિશેષણોનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે ' नो निरुद्धभवे ' તે મૃતાશી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જો અનિરુદ્ધ ભવ વાળો હોય અર્થાત્ ભવ વાળો ન હોય એટલે કે જેણે પોતાના આગામી ભવનો અંત કર્યો નહોય તે અવશ્ય મરણ પામીને આ સંસારમા

छाया—मृतादी खलु भदत ! निर्ग्रन्थो नो निरुद्धभवो नो निरुद्धभवप्रपंचो नो प्रहीणसंसारो नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयो नो व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीयो नो निष्ठितार्थः नो निष्ठितार्थकरणीयः पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति ? हन्त गौतम ! मृतादी निर्ग्रन्थो यावत् पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति ॥

पर उत्पत्ति हो सकती है सो दिखलाते हैं-'मडाई णं भंते ! नियंठे' इ०

सूत्रार्थ-(मडाई णं भंते) हे भदन्त ! प्रासुक भोजी (नियंठे) निर्ग्रन्थ, कि जिसने (नो निरुद्धभवे) अपने भव का निरोध नहीं किया है, (णो पहीणसंसारे) जिसका संसार क्षीण नहीं हुआ है (णो पहीणसंसारवेयणिज्जे) जिसका संसार वेदनीय नष्ट नहीं हुआ है (नो वोच्छिन्न संसारे) जिसका संसार व्युच्छिन्न नहीं हुआ है (णो वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे) जिसका संसार वेदनीय व्युच्छिन्न नहीं हुआ है (णो निट्ठियट्ठे) जो कृतार्थ नहीं हुआ है (णो निट्ठियट्ठकरणिज्जे) जिसका काम समाप्त हुए कार्य की तरह पूर्ण नहीं हुआ है वह क्या (पुनरवि) फिर से भी (इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) इस तिर्यञ्च मनुष्यादि गतिरूप संसार को प्राप्त करता है ? (हंता गोयमा) हे गौतम ! (मडाई णं नियंठे जाव पुनरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) पूर्वोक्त विशेषणों वाला मृतादी निर्ग्रन्थ अनगार तिर्यञ्च मनुष्यादि गतिरूप संसार को वारंवार प्राप्त करता है ।

ત્યાજ ઉત્પન્ન થાય છે "मडाई णं भंते ! नियंठे" ઇત્યાદિ"

સૂત્રાર્થ—(मडाईण भंते ! હે ભગવન્ ! પ્રાસુક આહાર લેનાર (नियंठे) નિર્ગ્રન્થ, કે જેણે (नो निरुद्धभवे) પોતાના ભવનો નિરોધ કર્યો નથી. (नो-निरुद्धभवपवंचे) સંસારના પ્રપંચનો નિરોધ કર્યો નથી, (णो पहीणसंसारे) જેનો સંસાર ક્ષીણ થયો નથી, (णो पहीणसंसारवेयणिज्जे) જેના સંસાર વેદનીયનો નાશ થયો નથી, (णो वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे) જેના સંસારનુ છેદન થયુ નથી (णो निट्ठियट्ठे) જે કૃતાર્થ થયા નથી, णो निट्ठियट्ठ करणिज्जे જેનુ કાર્ય સમાપ્ત થયેલા કાર્યની જેમ પૂરૂ થયેલ નથી, એટલે કે જે કૃતકૃત્ય થયા નથી શુ (पुनरवि) ફરીથી પણ (इत्थंत्थं हव्वं आगच्छइ) આ તિર્યંચ, મનુષ્ય વગેરે ગતિરૂપ સંસારને પ્રાપ્ત કરે છે ? (हंता गोयमा !) હા, ગૌતમ ! (मडाई ण नियंठे जाव पुनरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળો પ્રાસુક આહાર લેનાર નિર્ગ્રંથ અણગાર તિર્યંચ, મનુષ્ય ગતિરૂપ સંસારને વારંવાર પ્રાપ્ત કરે છે.

अपक्षीणसंसारवेदकर्मा इत्यर्थः, अथ च सकृत् चतुर्गतिगमनतोपि स्यादित्यत आह—'नो वोच्छिन्नसंसारे' नो व्यवच्छिन्नसंसार, अनुच्छित्तचतुर्गतिगमना नुबन्ध इत्यर्थः, अत एव 'नो वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे' नो व्युच्छिन्नसंसार वेदनीय व्यवच्छिन्न=व्यपगतम् अनुबन्धव्यवच्छेदेन चतुर्गतिगमनवेद्यकर्म यस्य स तथा, यो न तथा स नो व्युच्छिन्नसंसारवेदनीय, अतएव 'नो निट्ठियट्ठे' नो निष्ठितार्थः निष्ठितः निष्पादितः अर्थः=मोक्षरूपः प्रयोजनयेन स निष्ठितार्थः यो न तथा स अनिष्ठितप्रयोजनक इत्यर्थः, अतएव—'नो निट्ठियट्ठकरणिज्जे' नो निष्ठितार्थकरणीयः नो नैव निष्ठितार्थानां संपादितप्रयोजनानामिव करणीयानि कृत्यानि यस्य स नो निष्ठितार्थकरणीयः यस्मात्प्रथमेवंविधोऽत एव 'पुणरवि' पुनरपि, 'इत्थत्थं' अत्रत्वम्—अत्र=संसारे तिर्यङ्नरामरत्वा

हुए पहिली ही है आपत्तिरूप नहीं है। इसी कारण (नो वोच्छिण्णसंसारवेयणिज्जे) जिसका संसार वेदनीय कर्म प्रहीण नहीं हुआ है। ऐसा संसार वेद्यकर्मा साधु एक २ बार चारों गति में जाने से भी हो सकता है अतः इसकी निवृत्ति के लिये (नो वोच्छिण्णसंसारे) ऐसा पद दिया है इससे यह प्रकट किया गया है कि चारों गतियों में अनेक बार परिभ्रमण जिसे करना अभी अवशिष्ट है-अब नहीं हुआ है। इसी कारण (नो वोच्छिण्णसंसारवेयणिज्जे) जिसका चारों गतियों में अनेक बार भ्रमण कराने में कारणभूत कर्म अभी टूटा नहीं है इसी कारण (नो निट्ठियट्ठे) मोक्षरूप प्रयोजन जिसका अभीतक पूरा नहीं हो पाया है, और इसी लिये (नो निट्ठियट्ठकरणिज्जे) जो (नो निट्ठितार्थकरणीयः) बना हुआ है अर्थात्-जिसके कार्य पूर्ण रूप कार्यों की तरह पूरे नहीं हुए हैं ऐसा वह मृगापुत्री निर्ग्रन्थ अनगार इस तरह की परिस्थिति वाला बना हुआ है तो क्या (पुणरवि) फिर से वह इस अनादि संसार में (इत्थत्थं) नारकादि गतिरूप भव को प्राप्त करता

હિણી નથી બનેલ આ કથન સાધુ પડે છે બીજા કારણે નો વોચ્છિણસંસાર વેયણિજ્જે" જેનો સંસાર વેદનીય કર્મ ક્ષીણ થયા નથી જે અમણ નિર્ગ્રંથને ફરવું કથન સાધુ પડે છે સંસાર વૈચક્ય પામેલ સાધુ ગતિમાં એક બે ચાર પણ બની શકતો હોય છે તો તેનું નિરાકરણ કરવા માટે 'નો વોચ્છિણ સંસારે' વિશેષણ મૂકયું છે એટલે કે જેને ચારે ગતિમાં અનેક વાર પરિભ્રમણ કરવાનું હજી બાકી છે અને તે કારણે નો વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે" જેના ચારે ગતિમાં ભ્રમણ કરાવનાર કર્મોનો હજી ક્ષય થયો નથી, અને બીજા કારણે નો નિટ્ઠિયટ્ઠ જેનું મોક્ષરૂપ પ્રયોજન હજી પૂર્ણ પણ થઈ શકયું નથી, અને તેથી જે 'નો નિટ્ઠિયટ્ઠ કરણિજ્જે' પ્રતિષ્ઠિત અર્થની પોકની પ્રાપ્તિ કરી શકયો નથી એટલે કે જે કૃતાર્થ થયો નથી જેવા મૃગાપુત્રી નિર્ગ્રંથ અનગાર શું પુણરવિ' એવી રીતે આ અનાદિ સંસારમાં 'इत्थत्थं' નારકાદિ

प्राप्तव्यमोक्षोपि संभवेदित्यत आह–' नो निरुद्धभवपवंचे ' नो निरुद्धभवप्रपञ्चः अनिरुद्धभवविस्तार इत्यर्थः । एतादृशश्च देवमनुष्यभवप्रपंचापेक्षयापि संभवेत्तत्राह– ' णो पहीणसंसारे ' नो प्रक्षीणसंसारः, अक्षीणचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, यतश्चाप्रक्षीणचतुर्गतिगमनोऽतएव ' नो पहीणसंसारवेयणिज्जे ' नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयः

संसार से छूटेगा नहीं । यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि जिस मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ ने अपने अग्रेतन जन्म का निरोध नहीं किया है वह दो भव के बाद भी मुक्ति प्राप्त करने वाला हो सकता है–तो फिर उसे संसार में जन्म लेने वाला कैसे माना जा सकता है ? तो इस आशंका के व्यवच्छेद के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (नो निरुद्धभवपवंचे) यहां दो भव से मोक्ष जाने वाला विवक्षित नहीं है । यहां तो वही मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ विवक्षित है कि जिसे दो भव के बाद भी और अनेक भव करना बाकी है । क्यों कि अभीतक उसने अपना भवप्रपञ्च भव-विस्तार–निरुद्ध नहीं किया है । मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ अनगार अनिरुद्ध भवप्रपंच वाला देवमनुष्य भवों की अपेक्षा से भी हो सकता है–सो ऐसा वह यहां विवक्षित नहीं हुआ है किन्तु (नो पहीणसंसारे) जिसका चतुर्गतिरूप संसार में परिभ्रमण करना प्रहीण नहीं हुआ है, ऐसा ही मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ संसार में पुनः २ जन्म मरण करता है । इसके कहने का तात्पर्य यह है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ होकर भी

ફરી જન્મ ધારણ કરે છે, તે સંસારને તરશે નહિ અહી જે એવી શકા સેવવામાં આવે કે જે મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો નથી. તે બે ભવ કરીને પણ મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તો તેને કેવી રીતે સંસારમાં જન્મ લેનારો માની શકાય! તે શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે "નો નિરુદ્ધભવપવંચે" જેણે ભવપ્રપંચનો ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો નથી એવો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ વારવાર સંસારમા જન્મ ધારણ કરે છે અહીં બે ભવ કરીને મોક્ષ જનારનુ વર્ણન કર્યુ નથી અહી તો એવા મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથનો ઉલ્લેખ કર્યો છે કે જેને બે ભવ કર્યા પછી પણ અનેક ભવ કરવાના બાકી છે મૃતાદી અણગાર દેવ અને મનુષ્યભવની અપેક્ષાએ પણ અનિરુદ્ધ ભવ વિસ્તાર વાળા હોઈ શકે છે પણ અહીં એવા શ્રમણ નિર્ગ્રંથ ની વાત કરવામા આવી નથી પણ અહી તો "નો પહીણસંસારે" જેનું ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણ કરવાનુ પ્રહીણ (ક્ષીણ) થયું નથી એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સંસારમા વારવાર ભ્રમણ કરે છે એમ કહેવામા આવ્યુ છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ હોવા છતા દ્રવ્યલિંગી છે ભાવ-

संसारचक्रमध्यगतो मुनिर्जीव प्राणभूतादिनामपदकेन कालभेदेन, पुनः पुनश्च वक्तव्य स्यात् इति विचिन्त्य प्रभुरुवाच—'से णं भंते' इत्यादि।

मूलम्—से णं भंते! किंति वत्तव्वं सिया गोयमा! पाणेत्ति वत्तव्वं सिया, भूएत्ति वत्तव्वं सिया, जीवेत्ति वत्तव्वं सिया, सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया, वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, पाणे, भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू, वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ से णं पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, गोयमा! जम्हा आणमइ वा पाणमइ उस्ससइ वा णीससइ वा तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया जम्हा जीवइ जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया, जम्हा सत्ते सुहासुहेहिं कम्मेहिं तम्हा सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, जम्हा तित्तकडुकसाय अंबिलमहुरे रसे जाणइ तम्हा विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया जम्हा वेदेति य सुहदुक्खं तम्हा वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेणं गोयमा! पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदेत्ति वत्तव्वं सिया॥ सू० ५॥

है। तात्पर्य यह है कि अनिरुद्ध भवादि विशेषण वाला निर्ग्रंथ पुनः २ चतुर्गतिरूप में जन्म मरण करता रहता है॥ सू-४॥

संसारचक्र के मध्य में रहा हुआ मुनि का जीव प्राण भूतादि इन नाम से भिन्न २ समय में कि एक ही समय में वक्तव्य हो सकता है

આપ કહે છે કે અનિરુદ્ધ ભવાદિ વિશેષણોવાળો પુનઃ નિર્ગ્રંથ વારંવાર અનુ નિરુપ સંસારમાં જ ભ્રમણ કરે છે॥ સૂ૦૪॥

સંસાર ચક્રની મધ્યમાં રહેલા મુનિના જીવને પ્રભુ શું કારણે જુદા જુદા સમયે કે એક જ સમયે શું વક્તવ્ય છે? આ

रकगतिरूपम्, 'हव्वं' इति वाक्यालङ्कारे शीघ्रं वा 'आगच्छइ' आगच्छति प्राप्नोति किमिति प्रश्नः। भगवानाह-'हंत' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त हे गौतम! 'हन्त' इति स्वीकारे। 'मडाई णं नियंठे' मृतादी खलु निर्ग्रन्थः 'जाव पुणरवि' यावत् पुनरपि, इह यावत्पदेन-'नो निरुद्धभवः-नो निरुद्धभवप्रपञ्चः नो प्रक्षीणसंसारः नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयः नो व्यवच्छिन्नसंसारः नो व्यवच्छिन्न संसारवेदनीय नो निष्ठितार्थः नो निष्ठितार्थकरणीयः' एतेषां सर्वेषां संग्रहः कर्तव्य., 'इत्थत्थं' अत्रस्थम् नरामरनारकतिर्यग्गतिगमनलक्षणम्, 'पुणरवि' पुनरपि भूयोऽपि हव्वम् 'आगच्छइ' आगच्छति प्राप्नोतीत्यर्थः, अनिरुद्धभवादि-विशेषणयुक्तो निर्ग्रन्थः पुनः पुनरपि चतुर्गतिसंसारमागच्छतीति भावः ॥सू०४॥

है। इस प्रकार से यह प्रश्न गौतम ने प्रभु से किया। इस प्रश्न का निष्कर्षार्थ यही है कि अचित्त अथवा एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाने वाला भी श्रमण निर्ग्रन्थ यदि वह पूर्वोक्त विशेषणों वाला है तो क्या संसार में ही जन्म मरण के दुःखों को भोगने वाला बनेगा या उनसे उसका छुटकारा हो जावेगा? इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतम से कहते हैं कि (हंता गोयमा) हां गौतम! (हंत) पद यहां स्वीकार अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। (मडाई णं नियंठे) मृतादी निर्ग्रंथ (जाव) यावत् जो निरुद्धभव नहीं है, निरुद्धभवप्रपंच वाला नहीं है, प्रहीण संसार नहीं है, प्रहीण संसार वेदनीय नहीं है, व्युच्छिन्न संसार नहीं है, व्युच्छिन्न संसार वेदनीय नहीं है, निष्ठितार्थ नहीं है, निष्ठितार्थ करणीय नहीं है इसलिये वह (पुणरवि) फिर भी बारंबार (इत्थत्थं) नरकादि गतिरूप संसार को (हव्व आगच्छइ) प्राप्त करता

ગતિરૂપ ભવને પ્રાપ્ત કરે છે? ગૌતમસ્વામીના આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એવો છે કે અચિત્ત અથવા એષણીય આહારનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત હોય તો તે સંસારમાં વારંવાર જન્મ લઈને જન્મમરણના દુઃખો ભોગવશે કે તેનો સંસારમાંથી છુટકારો થઈ જશે? ગૌતમ સ્વામીના એ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "हंता गोयमा!" હા, ગૌતમ! અહીં "हंता" પદ સ્વીકારના અર્થમાં વપરાયું છે "मडाई णं नियंठे" મૃતાદી નિર્ગ્રંથ કે જે નિરુદ્ધભવ વાળો નથી, નિરુદ્ધભવ પ્રપંચ વાળો નથી, પ્રહીણ સંસારવાળો નથી, પ્રહીણ સંસાર વેદનીય કર્મ વાળો નથી, સંસાર નો અંત વાળો નથી, વ્યંત કરેલા સંસાર વેદનીય કર્મ વાળો નથી, જે કૃતાર્થ થયેલ નથી, જે કૃત કૃત્ય થયેલ નથી જેનું કાર્ય સમાપ્ત થયેલા કાર્યની જેમ પૂરું થયેલ નથી તે "पुणरवि" ફરીવી પણ વારંવાર "इत्थत्थं" નરકાદિ ગતિરૂપ સંસારને 'हव्व आगच्छइ'

णिति वा उस्ससति वा निःस्ससति वा तस्मात् प्राण इति वक्तव्य स्यात्। यस्माद् भूतो भवति भविष्यति च तस्मात् भूत इति वक्तव्य स्यात्, यस्माद् च जीवत्व जीवति जीवत्वम् आयुष्क च कर्म उपजीवति तस्मात् जीव इति वक्तव्यं स्यात् यस्मात् सत्ता भूताऽभैः कर्मभिः तस्मात् सत्त्व इति वक्तव्य स्यात्, यस्माद् तिक्तकटुकषायाम्लमधुरान् रसान् जानाति तस्मात् विज्ञ इति वक्तव्य स्यात्,

से कहा जा सकता है ? (गोयमा ! जम्हा आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा तम्हा पाणेत्ति वत्तव्व सिया) हे गौतम ! जिस कारण से यह जीव आभ्यन्तर श्वास को लेता है, आभ्यन्तर श्वास को छोड़ता है, बाह्य श्वास को ग्रहण करता है और बाह्य श्वास को छोड़ता है इस कारण यह (प्राण) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा भूए, भवइ, भविस्सइ य तम्हा भूए त्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण यह हुआ है, होता है, होगा, इस कारण यह (भूत) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा जीवे जीवइ जीवत्त आउयं च कम्मं उवजीवइ तम्हा जीवेत्ति वत्तव्व सिया) जिस कारण से यह भूतकाल में जीव के धर्म को प्राप्त हुआ वर्तमान में जीता है, जीवत्व और आयुष्क कर्म का यह अनुभव करता है और भविष्यत् में भी जीवेगा इस कारण यह (जीव) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा सत्ते सुभासुभेहिं कम्मेहिं तम्हा सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण यह शुभ और अशुभ कर्मों के द्वारा बद्ध हुआ है इस कारण यह (सत्त्व) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा तित्तकडु कसाय अंबिलमहुरे

(गोयमा ! जम्हा आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा तम्हा पाणेत्ति वत्तव्व सिया) હે ગૌતમ ! જે કારણે તે જીવ આભ્યન્તર શ્વાસ અને નિઃશ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે તે કારણે તેને "પ્રાણ" શબ્દથી બોલાવી શકાય છે (જમ્હા ભૂએ, ભવઇ ભવિસ્સઇ ય તમ્હા ભૂએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) જે કારણે તેની ઉત્પત્તિ થઈ હતી, થાય છે અને થશે તે કારણે તેને "ભૂત" શબ્દથી બોલાવી શકાય છે (જમ્હા જીવે જીવઇ જીવત્ત આઉયં ચ કમ્મં ઉવજીવઇ તમ્હા જીવેત્તિ વત્તવ્વં સિયા) જે કારણે તેણે ભૂતકાળમાં જીવના ધર્મને પ્રાપ્ત કર્યા હતા વર્તમાનમાં જીવે છે જીવત્વ આયુષ્ય કર્મનો તે અનુભવ કરે છે, અને ભવિષ્યમાં પણ જીવશે, તે કારણે તેને માટે "જીવ" શબ્દ વાપરી શકાય છે (જમ્હા સત્તે સુભાસુભેહિં કમ્મેહિં તમ્હા સત્તે ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) જે કારણે તે શુભ અને અશુભ કર્મો વડે બદ્ધ છે તે કારણે "સત્ત્વ" શબ્દથી બોલાવી શકાય છે (જમ્હા તિત્ત કડુ કસાય અંબિલમહુરે રસે

छाया—तत् खलु भदन्त ! किमिति वक्तव्यं स्यात्, गौतम ! प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, भूत इति वक्तव्यं स्यात्, जीव इति वक्तव्यं स्यात्, सत्त्व इति वक्तव्यं स्यात्, विज्ञ इति वक्तव्यं स्यात्, वेद इति वक्तव्यं स्यात्, प्राणो भूतो जीवः सत्त्वो विज्ञो वेद इति वक्तव्यं स्यात्, तत्केनार्थेन भदन्त ! स खलु प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, यावत् वेद इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! यस्मात् आनिति

क्या ? इस प्रश्न को पूछने की इच्छा से गौतमस्वामी प्रभुसे प्रश्न करते हैं-' से णं भंते ' इत्यादि ।

सूत्रार्थ-(से णं भंते ! किं ति वत्तव्वं सिया) हे भदंत ! वह निर्ग्रन्थ मुनि जीव किस शब्द से वक्तव्य हो सकता है ? (गोयमा ! पाणे त्ति वत्तव्वं सिया) वह निर्ग्रन्थ मुनि जीव " प्राण" इस शब्द से कहा जा सकता है। (भूएत्ति वत्तव्वं सिया) "भूत" इस शब्द से कहा जा सकता है। (सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) "सत्व" इस शब्दसे कहा जा सकता है। (विण्हु त्ति वतव्वं) "विज्ञ" इस शब्द से कहा जा सकता है वेयोत्ति वत्तव्व सिया) "वेद" इस शब्द से कहा जा सकता है (पाणे, भूए जीवे, सत्ते विण्णू वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) प्राण, भूत, जीव, सत्त्व विज्ञ, और वेद इन सब शब्दों से वह कहा जा सकता है। (से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ) हे भदंत ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि (से णं पाणेत्ति वतव्वं सिया जाव वेयो त्ति वत्तव्वं सिया) वह मुनि जीव (प्राण) इस शब्द से कहा जा सकता है यावत् (वेद) इस शब्द

પ્રશ્નનો ઉત્તર જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને " से णं भंते " ઇત્યાદિ પદથી પૂછે છે

સૂત્રાર્થ-(सेणं भंते किं ति वत्तव्व सिया) હે ભગવન્ તે નિર્ગ્રંથ મુનિના જીવને કયા શબ્દથી વર્ણવી શકાય છે ! (गोयमा ! पाणेत्ति वत्तव्व सिया) તે નિર્ગ્રંથ મુનિ જીવને ' પ્રાણ" સંજ્ઞાથી વર્ણવી શકાય છે, (भूए त्ति वत्तव्वं सिया) "ભૂત" શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે, (सत्ते त्ति वत्तव्व सिया) ' સત્વ" શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે (विण्णु त्ति वत्तव्वं सिया) "વિજ્ઞ" શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે, (वेयोत्ति वत्तव्व सिया) " વેદ " શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે (पाणे भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू वेदेत्ति वत्तव्वं सिया " તેને પ્રાણ, ભૂત જીવ, સત્વ, વિજ્ઞ અને વેદ, એ બધા શબ્દોથી ઓળખી શકાય છે (से केणट्ठेण भंते ! एव वुच्चइ) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે (से ण पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जाव वेयो त्ति वत्तव्वं सिया) તે મુનિને 'પ્રાણ" ભૂત, જીવ, સત્વ વગેરેથી ઓળખી શકાય છે,

स्यात्, यदा तु भवनादि धर्मवत्त्वस्य विवक्षा क्रियते तदा भूत इत्यन्वर्थनाम संभवेन भूत इति व्यवहारस्य संभवात्। 'जीवेत्ति वत्तव्वं सिया' जीव इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु उपयोगादिमत्त्वधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा जीव इति व्यवहारस्याप्यदुष्टत्वात्, 'सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया' सत्त्व इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु शुभाशुभपुण्यपापरूपधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा सत्त्व इति नामतोपि व्यवहारस्य कर्तृत्वयत्वादिति, 'विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया' विष्णु इति वक्तव्यं स्यात्, कटुकषायादि रसास्वादनकर्तृत्वरूपधर्मविवक्षायां विष्णु इति व्यवहारस्य समर्थनादिति। 'वेदेत्ति वत्तव्वं सिया' वेद इति वक्तव्यं स्यात्, सुखदुःखादिमत्त्वानुभवकर्तृत्वात्मकधर्मविवक्षायां वेद इति व्यवहारस्य संपादनसमर्थनादिति। 'पाणे भूए जीवे सत्ते विण्ण

संभव भवन (होना) आदि धर्मसे युक्तताकी विवक्षा करनेमें आती है उस समय उसमें (भूत) इस अन्वर्थ सार्थक नाम की संभवता से (भूत) ऐसा व्यवहार हो सकता है। (जीवेत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय उपयोग आदि धर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (जीव) ऐसा व्यवहार भी हो सकता है। इसमें कोई दोष की बात नहीं है। (सत्तेत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय शुभ अशुभ कर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय (सत्त्व) इस नाम से उसका व्यवहार किया जा सकता है। (विण्णु त्ति वत्तव्व सिया) जिस समय कटुक, (कषाय) कषाय आदि रसोंके आस्वादनकर्तृत्वरूप धर्मकी विवक्षा कीजाती है उस समय (विष्णु) इस शब्दसे भी यह कहा जा सकता है। (वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस समय सुख दुःख आदिको अनुभव करने रूप धर्म की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (वेद) इस शब्दे

જ્યારે થવું વગેરે ધર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે "ભૂત" નામ અર્થ યુક્ત (થયેલ) હોવે છે માટે તે સમયે "ભૂત" શબ્દનો ઉપયોગ કરી શકાય છે ' जीवेत्ति वत्तव्व सिया" તેને 'જીવ" પણ કહી શકાય છે જ્યારે ઉપયોગ આદિ ધર્મથી યુક્ત વિ ક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે 'જીવ' શબ્દનો પણ ઉપયોગ કરી શકાય છે "सत्तेत्ति वत्तव्व सिया' તેને 'સત્ત્વ' પણ કહેવાય છે જ્યારે શુભ અશુભ કર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરાની હોય ત્યારે "સત્ત્વ' નામથી પણ તેને બોલખી શકાય છે " विण्णु त्ति वत्तव्वं सिया ' જ્યારે કડવો, આદો મધુર વગેરે રસોના આસ્વાદન કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે 'વિષ્ણ" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે " वेदेत्ति वत्तव्व सिया " જ્યારે સુખદુઃખ વગેરેના અનુભવ કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી

यस्मात् वेदयति च सुखदुःखं तस्मात् वेदयिता इति वक्तव्यं स्यात् तत्तेनार्थेन प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, यावत् वेदयिता इति वक्तव्यं स्यादिति ॥ सू० ५ ॥

टीका—'से णं भंते' तत् खलु भदन्त! 'किंति वत्तव्वं सिया' किमिति वक्तव्यं स्यात्, तत्र स निर्ग्रन्थो जीवः किमिति वक्तव्यं स्यात्? भगवानाह —'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'पाणेति वत्तव्वं सिया' प्राण इति वक्तव्य स्यात्, तत्र यदा उच्छ्वासादिमत्त्वस्य विवक्षा क्रियते तदा निर्ग्रन्थजीवं प्रति प्राण इत्येवरूपो व्यपदेशः कर्तुं शक्यते एव, प्राणनक्रियादिमत्त्वेन प्राणेत्यन्वर्थनामसंभवात्। 'भूएत्ति वत्तव्वं सिया' भूत इति वक्तव्यं

रसे जाणइ, तम्हा विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण यह तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल, मधुर रसों को जानता है इस कारण (विज्ञ) इस शब्द द्वारा यह कहा जा सकता है। (जम्हा वेदनीय सुहदुक्खं तम्हा वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण सुख दुःख का वेदन करता है इस कारण यह (वेद) इस शब्द से कहा जा सकता है।

टीकार्थ—(से णं भंते!) हे भदन्त! वह मुनि जीव (किं त्ति वत्तव्वं सिया) (किमिति) किस शब्द से कहा जा सकता है? भगवान इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! वह (पाणेत्ति वत्तव्वं सिया) प्राण इस रूप से कहा जा सकता है। जिस समय उच्छ्वास आदि से युक्तता की विवक्षा की जाती है तब उस समय-निर्ग्रन्थ जीव के प्रति (प्राण) इस रूप से व्यपदेश किया जा सकता है। क्यो कि प्राणन क्रिया आदि वाला वह है-इससे (प्राण) ऐसा अन्वर्थ नाम उसका हो जाता है। (भूए त्ति वत्तव्वं सिया) जिस

जाणइ, तम्हा विण्णू त्ति वत्तव्व सिया) જે કારણે તે તીખો, કડવો, તુરો ખાટો, અને મીઠો રસ જાણે છે તે કારણે તેને 'વિજ્ઞ' કહેવામા આવે છે (जम्हा वेदनीय सुहदुक्ख तम्हा वेदे त्ति वत्तव्व सिया) જે કારણે સુખ દુઃખ વેદન કરે છે. તે કારણે તેને "વેદ" કહેવામા આવે છે

टीकार्थ-"से ण भते!" હે ભગવન્! તે મુનિજીવને (किं त्ति वत्तव्वं सिया) કયા શબ્દથી ઓળખાવી શકાય છે

"गोयमा!" હે ગૌતમ! "पाणेत्ति वत्तव्व सिया" તેને "પ્રાણુ" કહી શકાય છે જ્યારે શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે યુક્ત પણાની વાત કહેવામાં આવતી હોય ત્યારે નિર્ગ્રંથજીવને માટે "પ્રાણુ" શબ્દનો પ્રયોગ કરી શકાય છે કારણ કે તે પ્રાણનક્રિયા વગેરે યુક્ત હોવાને કારણે "પ્રાણુ" નામ તેને માટે અર્થયુક્ત જણાય છે. "भूएत्ति वत्तव्व सिया" તેને "ભૂત" પણ કહી શકાય છે

स्यात्, यदा तु भवनादि पर्यायस्य विवक्षा क्रियते तदा भूत इत्यन्वर्थनाम सेमं येन भूत इति व्यवहारस्य संभवात्। 'जीवेत्ति वक्तव्यं सिया' जीव इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु उपयोगादिमत्त्वधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा जीव इति व्यवहारस्या प्यदुष्टत्वात्, 'सत्तेत्ति वक्तव्यं सिया' सत्त्व इति वक्तव्य स्यात्, यदा तु शुभा शुभयुक्तत्वरूपधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा सत्त्व इति नामतोपि व्यवहारस्य कर्तृ त्वरूपत्वादिति, 'विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया' विष्ण इति वक्तव्यं स्यात्, कटुकषायादि रसास्वादनकर्तृत्वरूपधर्मविवक्षायां विष्ण इति व्यवहारस्य समर्थादिति। 'वेदेत्ति वत्तव्वं सिया' वेद इति वक्तव्यं स्यात्, सुखदुःखादिमत्त्वानुभवकर्तृत्वात्मकधर्मविवक्षायां वेद इति व्यवहारस्य संपादनसंभवादिति। 'पाणे भूए जीवे सत्ते विण्ण

समय भवन (होना) आदि धर्मसे युक्तताकी विवक्षा करनेमें आती है उस समय उसमें (भूत) इस अन्वर्थ सार्थक नाम की संभवता से (भूत) ऐसा व्यवहार हो सकता है। (जीवेत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय उपयोग आदि धर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (जीव) ऐसा व्यवहार भी हो सकता है। इसमें कोई दोष की बात नहीं है। (सत्तेत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय शुभ अशुभ कर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय (सत्त्व) इस नाम से उसका व्यवहार किया जा सकता है। (विण्णुत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय कटुक, (कषाय) कषाय आदि रसोंके आस्वादनकर्तृत्वरूप धर्मकी विवक्षा कीजाती है उस समय (विष्ण) इस शब्दसे भी वह कहा जा सकता है। (वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस समय सुख दुःख आदिको अनुभव करने रूप धर्म की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (वेद) इस शब्द

જ્યારે વસ્તુ વગેરે ધર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે "ભૂત" નામ અર્થ યુક્ત (સાર્થક) હોવાથી તે સમયે "ભૂત" શબ્દનો ઉપયોગ કરી શકાય છે 'जीवेत्ति वत्तव्व सिया" તેને 'જીવ" પણ કહી શકાય છે જ્યારે ઉપયોગ આદિ ધર્મથી યુક્ત વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે "જીવ" શબ્દનો પણ ઉપયોગ કરી શકાય છે 'सत्तेत्ति वत्तव्व सिया' તેને "સત્ત્વ' પણ કહેવાય છે જ્યારે શુભ અશુભ કર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરાતી હોય ત્યારે "સત્ત્વ" નામથી પણ તેને ઓળખી શકાય છે 'विण्णुत्ति वत्तव्व सिया" જ્યારે કડવો, આદિ અમુક વસ્તુના આસ્વાદન કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે विण्ण" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે "वेदेत्ति वत्तव्व सिया" જ્યારે સુખદુઃખ વગેરેના અનુભવ કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી

वेदेत्ति वत्तव्वंसिया' प्राणो भूतो जीवः सत्त्वो विज्ञो वेद इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु उच्छ्वासादि धर्मैर्युगपदेव विवक्षा क्रियते तदाऽसौ निर्ग्रन्थो जीवः प्राण इति जीव इति सत्त्व इति विज्ञ इति वेद इति शब्दैरेव पदैर्व्यवहर्तुं शक्यते एवेति भावः, निगमनवाक्यमिदम्। निर्ग्रन्थो जीवः प्राणादिपदेन व्यवह्रियते तत्र किं कारणमित्याशयेन पृच्छति-'से केणट्ठेणं' इत्यादि, 'से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ से णं' तत् केनार्थेन हे भदन्त! एवमुच्यते स खलु=निर्ग्रन्थो जीवः 'पाणेत्ति वत्तव्वं सिया' प्राण इति वक्तव्यं स्यात् 'जाव वेदेत्ति वत्तव्वं सिया' यावत् वेद इति वक्तव्यं स्यात्, निर्ग्रन्थजीवस्य प्राणादि शब्दव्यवहारे किं कारणमिति प्रश्नः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जम्हा आणमइ वा' यस्मात् कारणात् निर्ग्रन्थजीव आनिति-आननक्रियां करोति

द्वारा भी व्यवहार हो सकता है। (पाणे, भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू, वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) और जिस समय उच्छ्वास आदि धर्मों से युक्तता की युगपत (एकसाथ) विवक्षा की जाती है उस समय वह निर्ग्रन्थ जीव प्राण, भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ, और वेद, इन सब ही शब्दों द्वारा कहा जा सकता है। यह निर्गमन (समाप्ति) वाक्य हैं। इसमें क्या कारण है-इसी आशय से प्रेरित होकर गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं-(से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ से ण पाणेत्ति वत्तव्वं सिया, जाव वेयोत्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! यह आप किस कारण से कहते हैं कि वह मुनि जीव प्राण इस शब्द से कहा जा सकता है यावद् वह (वेद) इस शब्द से कहा जा सकता है? तात्पर्य यह कि निर्ग्रन्थ जीव प्राणादि शब्दों द्वारा कहने में क्या कारण है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा!) हे गौतम! (जम्हा) जिस कारण (आणमइ) निर्ग्रन्थ

હોય ત્યારે તેને માટે "વેદ" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે "पाणे, भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू वेदेत्ति वत्तव्व सिया" અને જ્યારે શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે ધર્મોથી યુક્ત પણાની એક સાથે વિવક્ષા કરાતી હોય છે ત્યારે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જીવને માટે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ અને વેદ એ છએ શબ્દોનો પ્રયોગ થઇ શકે છે આ નિર્ગમન (સમાપ્તિ) વાકય છે તેનુ કારણ જાણવાના આશયથી ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે "से केणट्ठेणं भंते! एव वुच्चइ से ण पाणेत्ति वत्तव्व सिया, जाव वेयोत्ति वत्तव्व सिया?" હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ, અને વેદ કહી શકાય છે? તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે 'गोयमा!" હે ગૌતમ! "जम्हा" જે કારણે "आणमइ वा पाण

आभ्यन्तरश्वासं गृह्णाति, 'पाणमइ वा' मुञ्चति वा, प्राणनक्रियां करोति, आभ्यन्तरं श्वासं मुञ्चति 'ऊससइ वा' उच्छ्वसिति वा, बाह्यं श्वासं गृह्णाति, 'नीससइ वा' निःश्वसिति वा, बाह्यं श्वासं त्यजति, 'तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, यस्मात् कारणात् आननप्राणनो श्वास-निश्वासक्रियां सदा करोति तस्मात् कारणात् अयं निर्ग्रन्थ जीवः प्राण इत्याख्यया आख्यापयते तत् आत्मधर्मादायैव तथा व्यवहार इति भावः। 'जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य' यस्मात् भूतो भवति भविष्यति च 'तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया' तस्माद् भूत इति वक्तव्यं स्यात्, पूर्वकालेऽभूत् वर्तमानकाले पतस्यात्पत्तिरस्ति शरीरसद्भावात्, अनागतकालेऽपुत्पन्नो भविष्यति तस्मादुत्पत्तिमत्त्वधर्मादापि भूत इति व्यपदेशः क्रियत इति भावः। 'जम्हा जीवे' यस्मात् कारणात् अजीवत्-अतीत काले जीवधर्मं प्राप्तोऽभूत् जीवस्यानादिकालिकत्वात्, 'जीवइ' जीवति प्राणान् धारयति वर्तमानकाले जीवत्व धर्मवानस्ति 'जीवत्त आउय च कम्म उवजीवइ'

जीव आभ्यन्तर श्वास को ग्रहण करता है (पाणमइ) आभ्यन्तर श्वास को छोड़ता है (उस्ससइ) बाह्यश्वास को ग्रहण करता है, (नीससइ) बाह्यश्वास को छोड़ता है (तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह (प्राण) शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण से भूतकाल में शरीर के संबंध से उत्पन्न हुआ वर्तमान काल में यह उत्पन्न होता है और अनागत भविष्यत् काल में भी यह उत्पन्न होगा इस कारण से उत्पत्तिमत्त्व धर्म को लेकर (भूत) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा जीवे) अनादि कालिक होने के कारण अतीत कालमें जिस कारण से इसने जीव के धर्म को प्राप्त किया है, तथा वर्तमानकाल में भी (जीवइ) यह प्राणों को धारण कर रहा है—जीवत्वरूप धर्मवाला बना हुआ है—(जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ

मइ वा" અમથ નિર્ગ્રંથ જીવ આભ્યન્તર શ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે ' ऊससइ वा नीससइ वा ' બાહ્ય શ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે, 'तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया ' તે કારણે તેને માટે 'પ્રાણ' શબ્દ કહેવામાં આવે છે "जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया" જે કારણે ભૂતકાળમાં તેનું શરીર ઉત્પન્ન થયું વર્તમાન કાળે ઉત્પન્ન થાય છે અને ભવિષ્ય કાળે પણ તે ઉત્પન્ન થશે તે કારણે ઉત્પત્તિરૂપ ધર્મની અપેક્ષાએ તેને "ભૂત" પણ કહી શકાય છે ' जम्हा जीवे ' અનાદિ કાળને કારણે ભૂતકાળમાં તેણે જે કારણે જીવના ધર્મોને પ્રાપ્ત કર્યા હતા, વર્તમાન કાળે પણ તે "जीवइ" જીવના ધર્મ ધારણ કરે છે— जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ" તથા જીવપણાના

जीवत्वमायुष्कं च कर्म उपजीवति, जीवत्वम्=उपयोगलक्षणम् पूर्ववद्धम् आयुष्कं च देहावस्थानकारणम् कर्म उपजीवति-अनुभवति, 'तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् जीव इति वक्तव्यं स्यात्, अतएव कारणात् स निर्ग्रन्थः जीवशब्देन व्यपदेश्यः स्यादिति भावः। 'जम्हा सत्ते-सुहासुहेहिं कम्मेहिं' यस्मात् सक्तः= आसक्तः शुभाशुभेषु कर्मसु, यस्मात् कारणात् शुभाशुभेषु कर्मसु व्यापृतः 'तम्हा सत्तेति वत्तव्वं सिया' तस्मात् सत्त्व इति वक्तव्यं स्यात् 'जम्हा तित्तकडुकसायंऽबिल महुरे रसे जाणइ' यस्मात् तिक्त कटु कषायाम्लमधुरान् रसान् जानाति, एतेषां रसानामास्वादं करोति, 'तम्हा विन्नुत्ति वत्तव्वंसिया' तस्माद्विज्ञ इति वक्तव्यं स्यात्, तिक्तादि पंचविधरसास्वादकर्तृत्वेन निर्ग्रन्थजीवस्य विज्ञत्वमपि भवतीति भावः। 'जम्हा वेदेत्ति य सुहदुक्खं' यस्मात् वेदयति च सुखदुःखम्, यस्मात् कारणात् सुखदुःखमनुभवति 'तम्हा वेदोत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् वेद इति

वह) तथा उपयोग लक्षणरूप जीवत्व का और जो वर्तमान देह में इसके अवस्थान का कारण बना हुआ है उस पूर्वबद्ध आयुष्क कर्म का अनुभव कर रहा है (तम्हा जीवे त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह (जीव) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा सत्ते सुहासुहकम्मेहिं) जिस कारण से यह शुभ और अशुभ कर्मों में आसक्त होता रहता है (तम्हा सत्तेति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह सत्त्व शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा तित्तकडुकसायऽबिलमहुरे रसे जाणइ) जिस कारण यह तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल, मधुर रसों को जानता है-अर्थात् यह इन रसोंका आस्वादन करता है (तम्हा विण्णु त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह (विज्ञ) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा वेदेत्ति सुहदुक्खं) जिस कारण से यह सुख दुःख का वेदन करता है-अनुभव करता है (तम्हा वेदोत्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह वेद इस शब्द से कहा

લક્ષણ રૂપ જીવત્વનો તથા જે વર્તમાન દેહમાં જીવને રહેવાનું કારણ બનેલ છે તે પૂર્વબદ્ધ આયુષ્ક કર્મનો અનુભવ કરી રહ્યો છે "तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया" તે કારણે તેને "જીવ" પણ કહી શકાય છે "जम्हा सत्ते सुहासुहकम्मेहिं" જે કારણે તે શુભાશુભ કર્મોમા આસક્ત રહે છે. "तम्हा सत्ते त्ति वत्तव्व सिया" તે કારણે તેને "सत्व" પણ કહેવામા આવે છે "जम्हा ति कडु कसायंऽबिलमहुरे रसे जाणइ" જે કારણે તે તીખો, કડવો, તુરો, ખાટો અને મીઠા રસ જાણે છે એટલે કે તેનુ આસ્વાદન કરે છે "तम्हा विण्णु त्ति वत्तव्व-सिया" તે કારણે તેને "વિજ્ઞ" કહી શકાયછે "जम्हा वेदेत्ति सुहदुक्खं" જે કારણે તે સુખ અને દુ ખનુ વેદન કરે છે तम्हा वेदोत्ति वत्तव्व सिया" તે

वक्तव्य स्यात्, सुखदुःखयोरनुभवकर्तृत्वेन निर्ग्रन्थजीवस्य वेदत्वमपि भवतीति भावः। 'से तेणट्ठेणं' तत् तेनार्थेन, एमि कारणेन हे गौतम! 'पाणेत्ति वत्तव्वं सिया' प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, 'जाव वेदोत्ति वत्तव्व सिया' यावद् वेद इति वक्तव्य स्यात्, अर्थात् हे गौतम! प्राणधारणोपयोगवत्त्वोत्पत्त्यादिमत्त्वयुक्तानि कर्मानुभवनकर्मसंसक्तत्वादिधर्मोपेतत्वात् निर्ग्रन्थजीव प्राणादिवेदपर्यन्तपदैर्व्यपदिश्यते एवेति भावः। अत्र यावत्पदेन भूतजीवसत्त्वविज्ञाना ग्रहणं भवतीति ॥सू५॥

पूर्वं प्रासुकाहारभोजिनोऽनिरुद्धभवपञ्चादिविशेषणयुक्तस्य साधोरपि सतो रत्नप्रभे पुनः पुनरपि आगमनं भवतीति प्रतिपादितम्, अधुना प्रासुकाहारभोजिनो निरुद्धभवपञ्चादिविशेषणविशिष्टस्य साधोः पुनः का गतिर्भवतीति प्रतिपादनार्थमाह-'मडाई णं भंते' इत्यादि।

मूलम्—मडाई णं भंते! नियठे निरुद्धभवे, निरुद्धभवपवंचे, जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे, णो पुणरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ? हंता गोयमा! मडाई णं णियठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्व आगच्छइ, से णं भंते किं वत्तव्व सिया? गोयमा! सिद्धेत्ति वत्तव्व सिया बुद्धेत्ति वत्तव्व सिया, मुत्तेत्ति वत्तव्व सिया, पारगएत्ति वत्तव्व सिया, परंपरगएत्ति वत्तव्व सिया, सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे अंतकडे सव्वदुक्खपहीणेत्ति वत्तव्व सिया, सेव भंते सेव भंते त्ति भगव गोयमे समण भगव महावीर वदइ नमसइ, वदित्ता नमसित्ता, संजमेणं तवसा अप्पाण भावेमाणे विहरइ ॥ सू० ६ ॥

जा सकता है। (से तेणट्ठेणं पाणे त्ति वत्तव्वं सिया) इसलिये हे गौतम! इन कारणोंको लेकर (पाणे त्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदोत्ति वत्तव्वं सिया) निर्ग्रन्थ जीव प्राणसे लेकर वेदपर्यन्तके शब्दोंद्वारा कहा जा सकता है॥सू ५॥

૬૨મો તેને "વેદ પ્રભુ સુધી શબ્દ છે "से तेणट्ठेणं पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदोत्ति वत्तव्वं सिया" હે ગૌતમ! તે કારણે નિર્ગ્રંથ જીવને પ્રાણથી લઈને વેદ સુધીના શબ્દો વડે બોલાવવાનો શબ્દ છે ॥ સૂ ૫॥

छाया—मृतादी खलु भदन्त ! निर्ग्रन्थो निरुद्धभवो निरुद्धभवप्रपञ्चो यावत् निष्ठितार्थकरणीयो नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति, हन्त गौतम ! मृतादी निर्ग्रन्थो यावत् नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति । स खलु भदन्त ! किं वक्तव्यं

अभी पहिले ऐसा प्रतिपादन किया जा चुका है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक भोजी तो है, परन्तु यदि वह अनिरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाले है तो उसका भी चतुर्गतिरूप संसार सागर में ही बार २ भ्रमण होता रहता है । अब सूत्रकार यह कहतें हैं कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक आहार भोजी है और साथ में निरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाला भी है तो उसकी क्या गति होती है सो कहते हैं 'मडाई णं भंते' इ.

सूत्रार्थ–(भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाई णं नियंठे) हे भदन्त ! जिसने अपना अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अपने भवप्रपंच को रोक दिया है यावत् जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है ऐसा वह मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ क्या (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ) फिर से भी मनुष्य आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है ? (हंता गोयमा) हां गौतम ! (मडाई णं णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) निरुद्धभव आदि विशेषण वाला मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ यावत् फिर से भी मनुष्य

આગળ એવું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યું છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરનાર છે, પણ અનિરુદ્ધ ભવપ્રચંચ આદિ વિશેષણો વાળો હોય છે તેને પણ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા વારવાર ભ્રમણ કરવું પડે છે. હવે એ બતાવામાં આવે છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહારનો ઉપયોગ કરતો હોય અને નિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ વગેરે વિશેષણો વાળો હોય તેની કેવી ગતિ થાય છે !

"मडाई ण भंते ! "

સૂત્રાર્થ– (भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाईणं नियंठे) હેભગવન્ ! જેણે પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કરી નાખ્યો છે, પોતાના ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો છે, યાવત્ જેનુ કાર્ય સંપૂર્ણ થયેલા કાર્યની જેમ પૂર્ણ થઇ ગયેલુ છે (એટલે એવો કે જે કૃતકૃત્ય થઇ ગયેલ છે) એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શુ (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ ?) ફરીથી મનુષ્ય વગેરે ચાર ગતિ વાળા સંસારને પ્રાપ્ત કરતો નથી ? (हंता गोयमा !) હા ગૌતમ ! (मडाई ण णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्व नो आगच्छइ) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણો વાળો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મનુષ્ય વગેરે ચતુર્ગતિરૂપ

स्यात्, गौतम सिद्ध इति वक्तव्य स्यात् बुद्ध इति वक्तव्य स्यात् मुक्त इति वक्तव्यं स्यात्, पारगत इति वक्तव्य स्यात्, परंपरागत इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्धा बुद्धा मुक्त परिनिर्वृत अन्तकृत सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्यं स्यात्, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतम श्रमणं भगवन्त महावीर वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति ॥सू०६॥

आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है। (से णं भंते ! किं वत्तव्वं सिया ? हे भदन्त ! आत्मकल्याण करने वाला वह श्रमणनिर्ग्रन्थ अनगार किस नाम से कहा जा सकता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) पूर्वोक्त विशेषण वाला वह श्रमण निर्ग्रन्थ अनगार (सिद्ध) इस नाम से कहा जा सकता है। (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) बुद्ध इस नाम से कहा जा सकता है। (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) (मुक्त) इस नाम से कहा जा सकता है। (पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) (पारगत) इस नाम से कहा जा सकता है। (परंपरगए त्ति वत्तव्वं सिया) (परंपरागत) इस नाम से कहा जा सकता है। (सिद्धे बुद्धे मुत्ते, परिनिव्वुडे अंतकडे, सव्वदुक्खप्पहीणे त्ति वत्तव्वं सिया) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत, सर्वदुःखप्रहीण इस तरह इन शब्दों द्वारा वह कहा जा सकता है। (सेवं भंते ! सेवं भंते ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) हे भदन्त ! आपने जो कहा है वह वैसा

સ્વરૂપમાં કરી જન્મ લેતો નથી. (से णं भंते ! किं वत्तव्वं सिया ?) હે ભગવન્ આત્મકલ્યાણ કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થને કયા કયા નામે બોલાવી શકાય ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થને "સિદ્ધ" નામથી કહી શકાય છે, (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) "બુદ્ધ" પણ કહી શકાય છે, (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) "મુક્ત" પણ કહી શકાય છે, (पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) "પારગત" પણ કહી શકાય છે (परंपरगए त्ति वत्तव्वं सिया) "પરંપરાગત" પણ કહી શકાય છે (सिद्धे बुद्धे, मुत्ते परिनिव्वुडे अंतकडे सव्वदुक्खप्पहीणेत्ति वत्तव्वं सिया) સિદ્ધ બુદ્ધ, મુક્ત પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત અને સર્વદુઃખપ્રહીણ પણ કહી શકાય છે (सेवं भंते ! सेवं भंते ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) હે ભગવન્ ! આપે જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે હે ભગવન્ ! આપની વાત સત્ય છે આમ કહીને ભગવન્

छाया—मृतादी खलु भदन्त ! निर्ग्रन्थो निरुद्धभवो निरुद्धभवप्रपञ्चो यावत् निष्ठितार्थकरणीयो नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति, हन्त गौतम ! मृतादी निर्ग्रन्थो यावत् नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति । स खलु भदन्त ! किं वक्तव्यं

अभी पहिले ऐसा प्रतिपादन किया जा चुका है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक भोजी तो है, परन्तु यदि वह अनिरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाले है तो उसका भी चतुर्गतिरूप संसार सागर में ही बार २ भ्रमण होता रहता है । अब सूत्रकार यह कहते हैं कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक आहार भोजी है और साथ में निरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाला भी है तो उसकी क्या गति होती है सो कहते हैं 'मडाई णं भंते' इ.

सूत्रार्थ–(भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाई णं नियंठे) हे भदन्त ! जिसने अपना अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अपने भवप्रपंच को रोक दिया है यावत् जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है ऐसा वह मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ क्या (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ) फिर से भी मनुष्य आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है ? (हंता गोयमा) हां गौतम ! (मडाई णं णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) निरुद्धभव आदि विशेषण वाला मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ यावत् फिर से भी मनुष्य

આગળ એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરનાર છે, પણ અનિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણો વાળો હોય છે તેને પણ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા વારવાર ભ્રમણ કરવું પડે છે. હવે એ બતાવામા આવે છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહારનો ઉપયોગ કરતો હોય અને નિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ વગેરે વિશેષણો વાળો હોય તેની કેવી ગતિ થાય છે !

"मडाई णं भंते ! "

સૂત્રાર્થ– (भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाईणं नियंठे) હેભગવન્ ! જેણે પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કરી નાખ્યો છે, પોતાના ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો છે, યાવત્ જેનુ કાર્ય સંપૂર્ણ થયેલા કાર્યની જેમ પૂર્ણ થઇ ગયેલુ છે (એટલે એવો કે જે કૃતકૃત્ય થઇ ગયેલ છે) એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શું (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ ?) ફરીથી મનુષ્ય વગેરે ચાર ગતિ વાળા સંસારને પ્રાપ્ત કરતો નથી ? (हंता गोयमा !) હા ગૌતમ ! (मडाई णं णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણો વાળો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મનુષ્ય વગેરે ચતુર્ગતિરૂપ

स्यात्, गौतम सिद्ध इति वक्तव्यं स्यात् बुद्ध इति वक्तव्यं स्यात् मुक्त इति वक्तव्यं स्यात्, पारगत इति वक्तव्यं स्यात्, परंपरागत इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्धः बुद्धः मुक्तः परिनिर्वृतः अन्तकृत सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्य स्यात्, तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति भगवान् गौतम श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति ॥सू०६॥

आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है। (से णं भंते ! किं वत्तव्वं सिया ? हे भदन्त ! आत्मकल्याण करने वाला यह श्रमणनिर्ग्रन्थ अनगार किस नाम से कहा जा सकता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) पूर्वोक्त विशेषण वाला यह श्रमण निर्ग्रन्थ अनगार (सिद्ध) इस नाम से कहा जा सकता है। (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) बुद्ध इस नाम से कहा जा सकता है। (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) (मुक्त) इस नाम से कहा जा सकता है। (पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) (पारगत) इस नाम से कहा जा सकता है। (परंपरागए त्ति वत्तव्वं सिया) (परंपरागत) इस नाम से कहा जा सकता है। (सिद्धे बुद्धे मुत्ते, परिनिव्वुडे अंतकडे, सव्वदुक्खपहीणे त्ति वत्तव्व सिया) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत, सर्वदुःखप्रहीण इस तरह इन शब्दों द्वारा यह कहा जा सकता है। (सेवं भंते ! सेवं भंते ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) हे भदन्त ! आपने जो कहा है वह ऐसा

અસારમાં ફરી જન્મ લેતો નથી. (से णं भंते ! किं वत्तव्वं सिया ?) હે ભગવન્ આત્મકલ્યાણ કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને કયાં કયાં નામે બોલાવી શકાય ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને "સિદ્ધ" નામથી કહી શકાય છે, (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) "બુદ્ધ" પણ કહી શકાય છે, (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) " મુક્ત " પણ કહી શકાય છે, (पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) " પારગત " પણ કહી શકાય છે (परंपरागए त्ति वत्तव्व सिया) "પરંપરાગત" પણ કહી શકાય છે,(सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, अंतकडे, सव्वदुक्खपहीणेत्ति वत्तव्व सिया) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત અને સર્વ દુઃખ પ્રહીણ, પણ કહી શકાય છે (सेवं भंते ! सेवं भंते ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) હે ભગવન્ ! આપે જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે હે ભગવન્ ! આપની વાત સાચી છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવન્

टीका—'मडाई णं भंते' मृतादी खलु भदन्त ! 'नियंठे' निर्ग्रन्थः 'निरुद्धभवे' निरुद्धभवः निरुद्धः भव. अग्रेतनं जन्म येन स निरुद्धभवः चरमभवप्राप्त इत्यर्थः, 'निरुद्धभवपवंचे' निरुद्धभवप्रपञ्चः अप्राप्तभवविस्तार इत्यर्थः, 'जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे' यावत् निष्ठितार्थकरणीयः यावत्पदेन-'पहीणसंसारे, पहीणसंसारवेयणिज्जे, वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे, निट्ठियट्ठे' एतेषां विशेषणानाम् ग्रहणं कर्तव्यम्, तत्र 'पहीणसंसारे' प्रहीणसंसारः दूरीकृतचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, 'पहीणसंसारवेयणिज्जे' प्रहीणसंसारवेदनीयः, प्रहीणसंसारवेद्यकर्मा, 'वोच्छिन्नसंसारे' व्यवच्छिन्नसंसारः, त्रुटितचतुर्गतिगमनानुबन्धः, अतएव-'वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे' व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीयः, व्यवच्छिन्नम् अनुबन्ध

ही है अर्थात् सत्य है इस प्रकार कह कर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन किया, नमस्कार किया। वंदन नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥ सू-६ ॥

टीकार्थ—(मडाई णं भंते नियंठे) हे भदन्त ! मृतादी निर्ग्रन्थ कि जिसने अपना (निरुद्धभवे) अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अर्थात् जो चरमभव को प्राप्त हुआ है (निरुद्धभवपवंचे) जिसे अब भव का विस्तार प्राप्त करना बाकी नहीं रहा है (जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे) यावत् निष्ठितार्थ करणीय (पहीणसंसारे) जिसने चतुर्गति में भ्रमण करने रूप अपने संसार को दूर कर दिया है' (पहीणसंसार वेयणिज्जे) संसारवेद्यकर्म जिसका नष्ट हो चुका है (वोच्छिन्न संसारे) जिसका चतुर्गति गमनानुबंध टूट चुका है अतएव (वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे)

ગૌતમે ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિચારવા લાગ્યા, એટલે કે પોતાને સ્થાને ગયા. ॥ સૂ ૬ ॥

ટીકાર્થ-"मडाई ण भंते ! नियंठे" હે ભગવન્ ? મૃતાદી નિર્ગ્રંથ અચિત્ત વસ્તુનો આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કે જેણે (निरुद्धभवे) પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો છે એટલે કે જે ચરમભવને પામેલા છે, (निरुद्धभवपवंचे) જેને ભવનો વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરવાનુ બાકી રહેલ નથી, (पहीणसंसारे) જેણે ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાનું દૂર કરી નાખ્યું છે (पहीणसंसारवेयणिज्जे) જેના સંસારવેદ્ય કર્મ નષ્ટ થઇ ચૂક્યાં છે, (वोच्छिन्नसंसारे) ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ગમન કરાવનાર કર્મનો બંધ જેને તૂટી ગયો છે, [illegible] જેના સંસાર વેદનીય કર્મનો સર્વથા

व्यवच्छेदेन विनाशित चतुर्गतिगमनरूप कर्म येन स व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीय इति, 'निट्ठियट्ठे' निष्ठितार्थ =सपादितप्रयोजन 'निट्ठियट्ठकरणिज्जे' निष्ठितार्थकरणीय, निष्ठितः=सम्यक् अर्थः=प्रयोजनं यस्य सः, एतादृशः करणीयः=कर्तव्यो यस्य स तथा कृतकृत्य इत्यर्थः, एतादृशः स क्षुल्लकादी अनगारः 'णो पुणरवि' नो पुनरपि 'इत्थत्थं' अस्यस्य-सर्व=तिर्यङ्नरामरनारकरूपचतुर्गतिभ्रमणरूपसर्गं संसारं 'हव्वं' इति शीघ्रयाहङ्कारे 'आगच्छइ' आगच्छति, न संसारे समायातीत्यर्थः, हे भदन्त ! येन संसारस्य निरोधः कृतः संसारप्रपञ्चोऽपि दूरीकृतः तथा व्यवच्छिन्नसंसारविनिशेषणयुतः संपादितप्रयोजनादिः क्षुल्लिः स किं पुनः पुनर्न संसारचक्रमागच्छतीति भावः । भगवतोक्तं-'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'पन्नत्तए णं निग्गंथे' क्षुल्लादी खलु निर्ग्रन्थः, 'जाव नो पुणरवि' यावत् नो पुनरपि 'इत्थत्थं' अस्यस्य=तिर्यङ्नरामरनारकगतिगमनरूपसर्गं संसारम् 'हव्वं आगच्छइ' हव्यं आगच्छति, न पुनः संसारमागच्छतीत्यर्थः

संसार वेदनीयकर्म जिसका व्यवच्छिन्न हो गया है, अर्थात् अनुबंध के व्यवच्छेद से जिसने चतुर्गतिगमन वेद्य कर्म नष्ट कर दिया है (निट्ठियट्ठे) जिसने अपना कार्य सिद्ध कर लिया है (निट्ठियट्ठकरणिज्जे) तथा-जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है-अर्थात् जो कृतकृत्य हो चुका है ऐसा वह क्षुल्लादी अनगार (इत्थत्थं) अस्यस्वरूप को-अर्थात् चतुर्गतिभ्रमण रूप संसार को क्या (णो पुणरवि आगच्छइ) फिर से नहीं प्राप्त करता है ? अर्थात् ऐसा श्रमण अनगार फिर से संसारमें जन्ममरण नहीं करता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं-(गोयमा) हे गौतम ! (पन्नत्तए णं निग्गंथे) क्षुल्लादी निर्ग्रन्थ (जाव नो पुणरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) यावत् फिर के वह चतुर्गति भ्रमणरूप संसार में नहीं आता है । अर्थात् सिद्ध हो

નાશ થઈ ગયો છે એટલે કે અનુબંધના છેદનને લીધે જેણે ચારગતિરૂપ સંસા રમાં ભ્રમણ કરાવનાર વેદ્ય કર્મોનો નાશ કરી નાખ્યો છે (निट्ठियट्ठे) જેણે પોતાનું કાર્ય સિદ્ધ કરી લીધું છે, (निट्ठियट्ठकरणिज्जे) તથા જે કૃતકૃત્ય થઈ ગયેલ છે અર્થાત્ તે ક્ષુલ્લકાદી અનગાર (इत्थत्थं) ચતુર્ગતિ ભ્રમણરૂપ સંસારને શું (णो पुणरवि आगच्छइ) ફરીથી પ્રાપ્ત કરતો નથી ? એટલે કે જેવો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શું સંસારમાં ફરીથી જન્મ મરણ પામતો નથી, તેનો ઉત્તર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે 'गोयमा' હે ગૌતમ ! 'पन्नत्तए णं निग्गंथे' જેવો ક્ષુલ્લકાદી નિર્ગ્રંથ (जाव नो पुणरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) ફરીથી આ ચાર ગતિવાળા સંસા રમાં જન્મ લેતો નથી. એટલે કે તે સિદ્ધપદ પામે છે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને

टीका—'मडाई णं भंते' मृतादी खलु भदन्त ! 'नियंठे' निर्ग्रन्थः 'निरुद्धभवे' निरुद्धभवः निरुद्धः भवः अग्रेतनं जन्म येन स निरुद्धभवः चरमभवप्राप्त इत्यर्थः, 'निरुद्धभवपवंचे' निरुद्धभवप्रपञ्चः अप्राप्तभवविस्तार इत्यर्थः, 'जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे' यावत् निष्ठितार्थकरणीयः यावत्पदेन—'पहीणसंसारे, पहीणसंसारवेयणिज्जे, वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे, निट्ठियट्ठे' एतेषां विशेषणानाम् ग्रहणं कर्तव्यम्, तत्र 'पहीणसंसारे' प्रहीणसंसारः दूरीकृतचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, 'पहीणसंसारवेयणिज्जे' प्रहीणसंसारवेदनीयः, प्रहीणसंसारवेद्यकर्मा, 'वोच्छिन्नसंसारे' व्यवच्छिन्नसंसारः, त्रुटितचतुर्गतिगमनानुबन्धः, अतएव—'वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे' व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीयः, व्यवच्छिन्नम् अनुबन्ध

ही है अर्थात् सत्य है इस प्रकार कह कर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन किया, नमस्कार किया। वंदन नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥ सू-६ ॥

टीकार्थ—(मडाई णं भंते नियंठे) हे भदन्त ! मृतादी निर्ग्रन्थ कि जिसने अपना (निरुद्धभवे) अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अर्थात् जो चरमभव को प्राप्त हुआ है (निरुद्धभवपवंचे) जिसे अब भव का विस्तार प्राप्त करना बाकी नहीं रहा है (जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे) यावत् निष्ठितार्थ करणीय (पहीणसंसारे) जिसने चतुर्गति में भ्रमण करने रूप अपने संसार को दूर कर दिया है' (पहीणसंसार वेयणिज्जे) संसारवेद्यकर्म जिसका नष्ट हो चुका है (वोच्छिन्न संसारे) जिसका चतुर्गति गमनानुबध टूट चुका है अतएव (वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे)

ગૌતમે ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા વિચારવા લાગ્યા, એટલે કે પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકાર્થ–"मडाई ण भंते! नियंठे" હે ભગવન્! મૃતાદી નિર્ગ્રંથ અચિત્ત વસ્તુનો આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કે જેણે (निरुद्धभवे) પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો છે એટલે કે જે ચરમભવને પામેલા છે, (निरुद्धभवपवंचे) જેને ભવનો વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરવાનુ બાકી રહેલ નથી, (पहीणसंसारे) જેણે ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાનું દૂર કરી નાખ્યું છે. (पहीणसंसारवेयणिज्जे) જેના સંસારવેદ કર્મ નષ્ટ થઇ ચૂક્યાં છે, (वोच्छिन्नसंसारे) ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ગમન કરાવનાર કર્મનો બંધ જેને તૂટી ગયો છે, "वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे" જેના સંસાર વેદનીય કર્મનો સર્વથા

गत इति वक्तव्य स्यात्, संसारपारगामित्वात् यद्यपि एतावतो मुनिर्नेदानीं संसारसागरस्य पारगतः किन्तु कालान्तरे पारं गमिष्यमाणत्वात् भाविनि भूतव उपचारात् पारगत इति कथ्यते, 'परंपरागएत्ति वत्तव्व सिया' परंपरागत इति वक्तव्य स्यात्, परंपरया मिथ्यात्वादिगुणस्थानकानां मनुष्यादिगतीनां वा पारं पर्येण गतः=प्राप्त इति परंपरागतः अथवा परंपरया मुक्तपुरुषाणां या परंपरा तया परंपरया गतः कर्मजालं व्यतिक्रान्त इति। परंपरागत इति अथ निगमयन्नाह-'सिद्धे' इत्यादि। 'सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे अंतकडे सव्वदुक्खप्पहीणेत्ति वत्तव्वं सिया' सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिर्वृतः, अंतकृतः सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्यं

के कारण यह (पारगत) इस शब्द से कहा जाता है। यद्यपि ऐसा मुनि अभी संसार सागर के पारगत नहीं हुआ है आगे वह उसके पार को प्राप्त करने वाला बनेगा-परन्तु अभी जो उसे (पारगत) इस शब्द से व्यवहार का विषयभूत कह दिया गया है सो उसको होने वाली अवस्था को यहां हो चुकी अवस्था मानकर (पारगत) कहा गया है। (परंपरागएत्ति वत्तव्वं सिया) परंपरागत इस शब्द से जो उसे वक्तव्य कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि उसने जो संसाररूप समुद्र की पार को प्राप्त किया, वह मिथ्यात्व आदि गुणस्थानों की अथवा मनुष्य आदि गतियों की परंपरा से प्राप्त किया है। अथवा मुक्त पुरुषों की जो परम्परा कर्म जाल से दूर होने की है उसी परंपरा के अनुसार यह भी कर्म जाल से दूर हुआ है अतः यह (परंपरागत) इस शब्द से भी व्यवहार का विषय बन सकता है। अब कथित अर्थ को निगमन करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि-(सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, अंतकडे,

---

સરી ગયા હોય છે તેથી તેમને માટે "પારગત" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે એવે કે તે મુનિ હજી સંસાર સાગરને તરી ગયા નથી, છતાં પણ તેમને માટે "પારગત" શબ્દનો જે પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે આગળ પ્રાપ્ત થનારી સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી લેવું માનીને કરવામાં આવેલ છે (परंपरागएत्ति वत्तव्व सिया) તેમને 'પરંપરાગત' કહેવાનું કારણ એ છે કે તેમણે જે સંસારરૂપી સમુદ્રને પાર કરીને મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરી છે તે મિથ્યાત્વ વગેરે ગુણસ્થાનોની અથવા મનુષ્ય વગેરે ગતિની પરંપરાથી પ્રાપ્ત કરેલ છે અથવા કર્મજાલથી દૂર રહેનારી મુક્ત પુરુષોની જે પરંપરા છે તે પરંપરાને અનુસરીને જ તેઓ કર્મજાલથી દૂર રહ્યા છે તેથી તેમને "માટે પરંપરાગત" શબ્દનો પણ પ્રયોગ કરી શકાય છે હવે ઉક્ત અર્થની સમાપ્તિ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, अंतकडे, सव्वदुक्ख

अत्र यावत्पदेन निरुद्धसंसारे निरुद्धसंसारपपंचे वोच्छिन्नसंसारे इत्यादि प्रश्नप्रकरणोक्तसर्वविशेषणानां संग्रहः करणीयः, हे गौतम! पूर्वकथितनिरुद्धसंसारादि विशेषणविशिष्टो मृतादी निर्ग्रन्थः न पुनः संसारं प्राप्नोतीति भावः। एतादृशो निर्ग्रन्थजीवः केन केन शब्देन व्यवहरणीय इत्याशयेनाह-'से णं भंते' इत्यादि। 'से णं भंते' स खलु भदन्त! 'किं वत्तव्वं सिया' किं वक्तव्यं स्यात्, केन शब्देन व्यवहरणीय इत्यर्थः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया' सिद्ध इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्ध इति शब्देन व्यवहरणीयः कृतसकलकार्यत्वात्। 'बुद्धेत्ति वत्तव्व सिया' बुद्ध इति वक्तव्यं स्यात्, विमलकेवलालोकेन सकललोकालोकयोर्दर्शकत्वात्, 'मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया' मुक्त इति वक्तव्यं स्यात्, नष्टसकलकर्मत्वात् 'पारगएत्ति वत्तव्वं सिया' पार-

---

जाता है। ऐसा श्रमण निर्ग्रन्थ जीव किस किस शब्द के द्वारा व्यवहारणीय होता है? ऐसा पूछने के अभिप्राय से अब गौतम स्वामी प्रभु महावीर से प्रश्न करते हैं-(से णं भंते! किं वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! वह पूर्वोक्त विशेषण वाला श्रमण निर्ग्रन्थ किन २ नामों से कहा जाता है? तब प्रभु कहते हैं-(गोयमा) हे गौतम! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) वह (सिद्ध) इस शब्दसे व्यवहार करनेके योग्य बन जाता है-क्यों कि वह अपने सकल कार्यों को कर चुका है। (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) विमल केवलरूप अलोक से वह सकल लोक और अलोक का साक्षात् ज्ञाता द्रष्टा हो जाने के कारण (बुद्ध) इस शब्द से व्यवहार करने योग्य हो जाता है। (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) ज्ञानावरण आदि आठों कर्मनष्ट हो जाने के कारण वह (मुक्त) इस शब्द से कहने योग्य हो जाता है। (पारगएत्ति वत्तव्वं सिया) संसार से पारगामी बन जाने

કયા કયાં નામે ઓળખવામાં આવે છે તે જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (से णं भंते! किं वत्तव्वं सिया) હે ભગવન્! પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને કયાં કયા નામે ઓળખવામાં આવે છે! ઉત્તર- (गोयमा!) હે ગૌતમ! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) તેમને માટે સિદ્ધ પદનો પ્રયોગ કરી શકાય છે કારણ કે તેમણે તેમનાં તમામ કાર્યો સિદ્ધ કરી લીધાં હોય છે (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) વિમળ કેવળજ્ઞાન વડે તેઓ સમસ્ત લોક અને અલોકના જ્ઞાતા અને દ્રષ્ટા બની જાય છે તેથી તેમને "બુદ્ધ" પણ કહી શકાય છે (मुत्तेत्ति वत्तव्व सिया) જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોનો ક્ષય થઇ જવાને કારણે તેમને "મુક્ત" પણ કહી શકાય છે. "पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) તેમણે સંસારને પાર કર્યો હોય છે- સંસાર સાગરને તેઓ

अथ श्रीस्कन्दकप्रकरणम्—

पूर्वं संयतजीवविषये संसारस्य वृद्धिहानिश्चेति द्वयं सिद्धत्वेन कथितम्, साम्प्रतं तु तेषां तद्विपरीतानां चारित्रिणां प्रतिपादनार्थं स्कन्दकप्रकरणमाह— 'तेणं कालेणं' इत्यादि।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे रायगिहाओ नयराओ गुणसीलाओ चेइआओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहिया जाणवयविहारं विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं कयंगला नाम नगरी होत्था वण्णओ तीसे णं कयंगलाए नगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए छत्तपलासए णाम चेइए होत्था वण्णओ, तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं परिसा निग्गया। तीसे णं कयंगलाए नगरीए अदूरसामंते सावत्थी नाम नयरी होत्था वण्णओ, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णाम कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ, रिउव्वेय जजुव्वेय सामवेय, अहव्वणवेयाण, इतिहास पंचमाण निघंटु छट्ठाण, चउण्ह वेयाण संगोवंगाण सरहस्साणं, सारए वारए, धारए, पारए, सडंगवी सट्ठितंतविसारए संखाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे निरुत्ते जोइसामयणे अन्नेसु य बहूसु बंभण्णएसु परिव्वायएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए णाम नियंठे वेसालिय सावए परिवसइ, तएणं से पिंगलए णाम नियंठे वेसालिय सावए अन्नया कयाइ जेणेव खंदए कच्चायणस्स

स्यात्, निरुद्धसंसारादिविशेषण युक्तो निर्ग्रन्थजीवः सिद्धः बुद्धः मुक्तः परिनिर्वृतोऽन्तकृतसर्वदुःखप्रक्षीण इत्यादिशब्दैर्व्यवहर्तुं योग्यो भवतीति भावः। इदानीं प्रकरणमुपसंहरन्नाह—' सेवं भंते ' इत्यादि। ' सेवं भंते सेवं भंते ' तदेवं भदन्त ! हे भगवन् यद् देवानुप्रियेण मृतादिनिर्ग्रन्थविषये कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सत्यत्वात्, ' त्ति ' इति एवंरूपेण ' भगवं गोयमे ' भगवान् गौतमः ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ' वंदइ नमंसइ ' वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा ' संजमेण तवसा ' संयमेन तपसा 'अप्पाणं' आत्मानं 'भावे माणे' भावयन् 'विहरइ' विहरतीति भावः॥६॥

सव्वदुक्खपहीणे त्ति वत्तव्वं सिया) निरुद्ध संसार आदि विशेषणवाला वह निर्ग्रन्थ जीव सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत, सर्वदुःखप्रहीण इत्यादि शब्दों द्वारा व्यवहार करने के योग्य हो जाता है। अब प्रकरण के अर्थ का उपसंहार करते हुए गौतम स्वामी कहते हैं (सेवं भंते ! सेवं भंते !) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जो भूत-पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय से लेकर निर्ग्रन्थ श्रमण तक के विषय में कहा है वह सब ऐसा ही है-सर्वथा सत्य ही है। ऐसा कह कर (भगवं गोयमे) भगवान गौतम ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर की वंदना की उन्हें नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर वे (संजमेणं तवसा) संयम और तप से (अप्पाणं भावेमाणे) अपनी आत्मा को भावित करते हुए (विहरइ) विचरने लगे अर्थात् अपने आसन पर विराजमान हो गये॥ सू०६॥

पहीणेत्ति वत्तव्वं सिया) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણવાળો તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જીવ, સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત અને સર્વ દુઃખ પહીણ વગેરે શબ્દો નો પ્રયોગ પણ તેમને માટે કરી શકાય છે હવે પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરવાના આશયથી ગૌતમ સ્વામી કહે છે (सेव भते सेवं भंते!) હે ભગવન્! આપ દેવાનુપ્રિયે પૃથિવ્યાદિક એકેન્દ્રિયથી લઈને શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સુધીના જીવોના વિષયમા જે કહ્યુ તે યથાર્થ જ છે તે સર્વથા સત્ય જ છે એ પ્રમાણે કહીને (भगवं गोयमे) ભગવન ગૌતમે (समणं भगव महावीरं वंदइ नमसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને (संजमेणं तवसा) સંયમ અને તપથી (अप्पाणं भावेमाणे) પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા (विहरइ) વિચારવા લાગ્યા. એટલે પોતાને આસને જઈને બેસી ગયા. સૂ ૬

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो राजगृहात् नगरात् गुणशिलकात् चैत्यात् प्रतिनिष्क्रामति प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहारं विहरति, तस्मिन् काले तस्मिन् समये कृतंगला नाम नगरी आसीत्, वर्णकः तस्याः खलु कृतंगलायाः नगर्याः बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत् वर्णकः ततः श्रमणो भगवान् महावीर, उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः पारस्त-

---

सिद्धत्व-संसार का सर्वथा क्षय-ये सब कहा है अब इन्हीं विषयों को तथा भिन्न विषयों को प्रतिपादन करने के निमित्त स्कंदक मुनि के चरित्र को सूत्रकार कहते हैं-' तेणं कालेणं ' इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर (रायगिहाओ नयराओ) राजगृह नगर के (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिल चैत्य से (पडिनिक्खमइ) निकले । (पडिनिक्खमित्ता) निकल कर (बहिया) बाहर के (जणवयविहारं विहरइ) देशों में उन्हों ने विहार किया । (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (कयंगला नामं नगरी होत्था) कृतंगला नाम की नगरी थी (वण्णओ) यहां इसका वर्णन चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) उस कृतंगला नगरी के (बहिया) बाहर (उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए) उत्तरपूर्वदिशा के कोने में-ईशानकोने में (छत्तपलासए नाम चेइए होत्था) छत्रपलाशक नामका चैत्य था (वण्णओ)

સિદ્ધત્વ- સંસારનો સર્વથા ક્ષય- એ વિષયોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે હવે એજ વિષયોનું તથા તેમનાથી ભિન્ન વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકાર સ્કંદકમુનિનું ચરિત્ર કહે છે

" तेणं कालेणं " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર (रायगिहाओ नयराओ) રાજગૃહ નગરના (गुणसिलाओ चेइयाओ) ગુણશિલ ચૈત્યમાંથી (उवाणमाओ) પડિનિ ક્કમઇ) નીકળ્યા (पडिनिक्खमित्ता) નીકળીને (बहिया) બહારના (जणवयविहारं विहरइ) પ્રદેશોમાં તેઓ વિચરવા લાગ્યા (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (कयंगला नामं नयरी होत्था) કૃતંગલા નામની નગરી હતી. (वण्णओ) વર્ણન ચંપાનગરી પ્રમાણે જ સમજવું (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) તે કૃતંગલા નગરીની (बहिया) બહાર (उत्तर पुरत्थिमे दिसिभाए) ઈશાન ખુણામાં (छत्तपलासए नाम चेइए होत्था) છત્ર પલાશક નામનું ચૈત્ય ઉદ્યાન હતુ (वण्णओ) તેનું વર્ણન પૂર્ણભદ્રના

गोत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खंदगं कच्चायणस्स-गोत्तं इणमक्खेवं पुच्छइ मागहा किं स अंते लोए अणंते-लोए स अंते जीवे, अणंते जीवे, स अंता सिद्धी, अणंता सिद्धी, स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आयक्खाहि वुच्चमाणे एवं । तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो संचाएइ पिंगलयस्स नियंठस्स वेसालियसावयस्स किंचि वि पामोक्खं अक्खाइउं तुसिणीए संचिट्ठइ । तएणं से पिंगलए नियंठे वेसालीसावए खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे मागहा किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि वुच्चमाणे एवं । तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं वेसालियसावएणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो संचाएइ पिंगलस्स णियंठस्स वेसालिय सावयस्स किंचिवि पमोक्खं अक्खाइउं तुसणीए संचिट्ठइ ॥ सू० ७ ॥

आर्य श्री स्कन्दक प्रकरण

पहिले प्रकरण में संयत जीव को लेकर संसार की वृद्धि, हानि तथा

આર્ય શ્રી સ્કન્દકનું પ્રકરણ

આગળના પ્રકરણમાં સંયત જીવની અપેક્ષાએ સંસારની વૃદ્ધિ, હાનિ તથા

पारिव्राजकेषु नयेषु सुपरिनिष्ठितषष्ठितन्त्रकाञ्चनवष्टि, तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकः परिवसति, तत पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकोऽन्यदा कदाचित् यत्रैव स्कन्दक कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपाग

निरूवे जोइसामयणे अन्नेसु बहुसु बंभण्णएसु परिव्वायएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) यह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद इन चार वेदों का जानने वाला था। साथ में इतिहास पुराणों का भी वह ज्ञाता था। निघंटु को भी वह जानता था। केवल इतिहास निघंटु सहित ही वह चारों वेदों का ज्ञाता था सो बात नहीं है किन्तु अङ्गो पाङ्ग सहित एव रहस्य युक्त चारों वेदों का वह विशेषरूप से ज्ञाता था स्मारक था धारक था पारक था, एतावता ऐसा ज्ञात होता था कि मानों चारों ही वेद इसे कण्ठस्थ हैं। इस तरह यह वेदसंबंधी सम्पूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण था। वेदों के छहों अगों का वेत्ता था। षष्टि तंत्र में विशारद था। गणित शास्त्र में पण्डित था। शिक्षा शास्त्र में, आचार शास्त्र में, व्याकरण शास्त्र में छंदः शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में, ज्योतिष शास्त्र में तथा और भी अनेक ब्राह्मण शास्त्रों में एव परिव्राजक संबंधी नीति में बहुत अधिक चतुर था। (तत्थ ण सावत्थीए नयरीए पिंगलए नियंठे वेसालियसावए परिवसइ) उसी श्रावस्ती नगरी में वैशालिक के श्रावक एक पिंगलक नामक निर्ग्रन्थ रहते थे। (तएणं से पिंगलए णामं नियंठे वेसालिय सावए)

आगले छठे, निरूवे जोइसामयणे अन्नेसु बहुसु बंभण्णएसु परिव्वायएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) તે ઋગ્વેદ, સામવેદ, અને યજુર્વેદ અને અથર્વવેદ એ ચારે વેદોનો જાણકાર હતો. સાથે સાથે ઈતિહાસ પુરાણોનો પણ તે જાણકાર હતો. તે નિઘંટુનો પણ જાણકાર હતો. ઈતિહાસ નિઘંટુ સહિત ચારે વેદોનો તે જાણકાર હતો એટલું જ નહીં પણ તે અંગ ઉપાંગ સહિત અને રહસ્ય સહિત ચારે વેદોનો વિશિષ્ટરૂપે જ્ઞાતા હતો, સ્મારક હતો, ધારક હતો, અને પારક હતો. તેથી એવું લાગતુ કે તેણે જાણે કે ચારે વેદોને કંઠસ્થ કરી લીધા છે આ રીતે વેદોના વિષયમાં તે સંપૂર્ણ જ્ઞાન ધરાવતો હતો, વેદોનાં છએ અંગોનો તે વેત્તા (જાણ) હતો. તે ષષ્ટિ તંત્રનો પણ નિષ્ણાત હતો અંકિત શાસ્ત્ર શિક્ષણ શાસ્ત્ર, આચાર શાસ્ત્ર વ્યાકરણ શાસ્ત્ર, છંદ શાસ્ત્ર, વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્ર જ્યોતિષ શાસ્ત્ર તથા બીજા પણ અનેક બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોનો તે વિચારક હતો પરિવ્રાજક સંબંધ નીતિમાં તે બધો જ ચતુર હતો (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए नियंठे वेसालिय सावए) હવે એજ શ્રાવસ્તી નગરીમા વૈશાલિક શ્રાવક, પિંગલક નામનો એક નિર્ગ્રંથ રહેતો હતો, (तएणं से पिंगलए णामं नियंठे वेसालिय सावए)

मवसरणं पर्षद् निर्गच्छति। तस्याः खलु कृतंगलायाः नगर्याः अदूरसामन्ते श्रावस्ती नाम नगरी अभवत्, वर्णकः तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यांतेवासी स्कन्दको नाम कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेदाथर्वणवेदानामितिहासपंचमानां निघण्टुषष्ठानां चतुर्णां वेदानां सांगोपांगानां सरहस्यानां स्मारको वारकः धारकः पारकः षडंगवित् षष्टितंत्रविशारदः संख्यानः शिक्षाकल्पे व्याकरणे छन्दसि निरुक्ते ज्यौतिषायने अन्येषु ब्राह्मण्यकेषु

वर्णक इसका वर्णन औपपातिकसूत्रमें पूर्णभद्र चैत्यके वर्णन समान यहां समझना चाहिये। (तएणं समणं भगव महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं परिसा निग्गया) इसके बाद केवलज्ञान केवलदर्शनके धारी श्रमण भगवान् महावीर वहां पधारे यावत् समवसरण हुआ, सभा निकली (तीसे णं कयंगलाए णयरीए अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी होत्था) उस कृतंगला नगरीके अदूरसामन्त न अति निकट और न अतिदूर किन्तु पासमें ही श्रावस्ती नामकी नगरी थी (वण्णओ) वर्णक वर्णन चम्पा नगरी जैसा समझना (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ) उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल नाम के परिव्राजक का शिष्य स्कंदक नाम का एक परिव्राजक कि जिसका गोत्र कात्यायन था रहता था। (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाणं इतिहासपंचमाणं निघंटु छट्ठाणं चउण्हं वेयाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं सारए, वारए, धारए, पारए, सडंगवी, संट्ठितंतविसारए संखाणे सिक्खाकप्पे, वागरणे छंदे,

---

ચૈત્ય પ્રમાણે જ સમજવુ (तएणं समणं भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरण परिसा निग्गया) વિહાર કરતા કરતાં કેવળજ્ઞાન અને કેવળ દર્શન યુક્ત શ્રમણ ભગવાન મહાવીર તે છત્રપલાશક ચૈત્યમા (ઉદ્યાનમાં) પધાર્યા. (यावत्) સમવસરણ રચાયું, તેમનો ઉપદેશ સાભળવા માટે પરિષદ નીકળી વગેરે સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો (तीसे ण कयगलाए णयरीए अदूरसामंते) તે કૃતગલા નગરીથી બહુ દૂર પણ નહીં અને નજીક પણ નહી એવે સ્થાને (सावत्थी नाम नयरी होत्था) શ્રાવસ્તી નામની નગરી હતી (वण्णओ) તેનું વર્ણન પણ ચપાનગરી જેવુ જ સમજવુ. (तत्थ ण सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णाम कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ) તે શ્રાવસ્તી નગરીમાં ગર્દભાલ નામના પરિવ્રાજકનો શિષ્ય સ્કંદક નામનો પરિવ્રાજક રહેતો હતો તે કાત્યાયન ગોત્રનો હતો (रिउव्वेय, जजुवेय, सामवेय, अहव्वणवेयाण इतिहासपंचमाण निघटु छट्ठाण चउण्ह वेयाण संगोवंगाण सरहस्साण सारए, वारए, धारए, पारए, सडंगवी, संट्ठितंतविसारए, संखाणे सिक्खाकप्पे,

गोत्र पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकश्रावकेणेममाक्षेपं पृष्टः सन् शङ्कितः कांक्षितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुषसमापन्नो न शक्नोति पिंगलकाय निर्ग्रन्थाय वैशालिकश्रावकाय किंचिदपि प्रमोक्षमाख्यातुम् तूष्णीकः संतिष्ठते । ततः स पिंगलको निर्ग्रन्थः वैशालिकश्रावकः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रं द्विरपि त्रिरपि इममाक्षेपमपृच्छत्-मागध ! लोको यावत् केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते

से खंदए कच्चायणसगोत्ते) कात्यायन गोत्र वाला वह स्कन्दक वैशालिय सावएणं) भगवान महावीरके वचन सुननेमें रसिक बने हुए (पिंगलएण निग्गंठेणं) पिंगलक निर्ग्रन्थ के द्वारा (इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) जब इस प्रकार के प्रश्नों का विषयभूत बनाया गया तब (संकिए कंखिए विति गिच्छिए, भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने) शंकायुक्त हो गया कांक्षा युक्त हो गया, विचिकित्सायुक्त हो गया। और (वेसालियसावयस्स पिंगलस्स निग्गंठस्स पमोक्खं किंचिवि आइक्खाइउं णो संचाएइ) वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ के प्रश्नों का कुछ भी उत्तर देने के लिये समर्थ नहिं होसका। (तुसिणीए संचिट्ठइ) केवल चुप ही रहा। (तएणं से वेसालियसावए पिंगलए निग्गंठे कच्चायणसगोत्ते खंदयं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे) चुपचाप रहा देखकर वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ ने कात्यायन गोत्री उस स्कन्दक से दुबारा भी तिबारा भी इन्हीं प्रश्नों को पूछा (मागहा किं स अन्ते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) हे मागध! लोक अन्त

(तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते वेसालियसावएणं पिंगलएणं निग्गंठेणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) જ્યારે ભગવાન મહાવીરના વચનોમાં રહેલા શ્રાવકપણે પિંગલક નિર્ગ્રન્થરૂપે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકને આ પ્રકારના પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા ત્યારે (संकिए कंखिए विति गिच्छिए, भेदसमावन्ने, कलुससमावन्ने) તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક શંકાયુક્ત કાંક્ષાયુક્ત, અને વિચિકિત્સાયુક્ત થઈ ગયા અને તેઓ ભેદ તથા કલુષભાવને પામ્યા. (वेसालियसावयस्स पिंगलस्स निग्गंठस्स पमोक्खं किंचि वि आइक्खाइउं णो संचाएइ) તેઓ મહાવીરના શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રન્થના પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપી શકયા નહીં (तुसिणीए संचिट्ठइ) તેથી તેઓ ચુપ જ રહ્યા (तएणं से वेसालियसावए पिंगलए निग्गंठे कच्चायणसगोत्ते खंदयं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे) તેમને ચુપચાપ રહેલા જોઈને વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રન્થે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દકને બીજી વાર પણ એજ પ્રશ્નો પૂછયા અને ત્રીજી વાર પણ એજ પ્રશ્નો પૂછયાં કે (मागहा! किं स अन्ते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा)

च्छति, उपागत्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमिममाक्षेपमप्राक्षीत्–मागध ! किं सान्तो लोकः, अनंतो लोकः सान्तो जीवः अनंतो जीवः सान्ता सिद्धिः अनंता सिद्धिः, सान्तः सिद्धः, अनंतः सिद्धः केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवः वर्द्धते वा हीयते वा, एतावत् तावदाख्याहि उच्यमाने एवम् , ततः स स्कन्दकः कात्यायन-

---

वेसालिए सावए) वैशालिक श्रावक विशाला भगवान की माता का नाम था, उनका पुत्र होने से भगवान महावीर वैशालिक कहलाये। वैशालिक भगवान महावीर, उनका श्रावक अर्थात भगवान महावीर के वचन सुनने में रसिक वे पिंगलक निर्ग्रन्थ (अन्नया कयाइं) किसी एक दिन (जेणेव कच्चायणस्सगोत्ते खंदए तेणेव उवागच्छइ) जहां कात्यायन गोत्री स्कन्दक था वहां गये। उवागच्छित्ता वहां जाकर कच्चायणस्सगोत्तं खंदगं) उन्हींने उस कात्यायन गोत्रवाले स्कन्दक से (इणमक्खेवं पुच्छइ) इस प्रश्नको पूछा (मागहा ! किं स अंते लोए अणंते लोए) हे मागध ! लोक सान्त है कि अनंत है ? (स अंते जीवे अणंते जीवे) जीवसान्त है कि अनन्त है ? (सअन्ता सिद्धी अणंता सिद्धी) सिद्धि अन्त सहित है कि अन्त रहित है ? (केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) अथवा किस मरणसे मरा हुआ जीव बढता है और घटता है ? (एवं वुच्चमाणे एतावं ताव आयक्खा हि) इस प्रकार से मेरे द्वारा प्रश्न के विषयभूत बनाये गये तुम इन मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो (तएणं

ભગવાનની માતાનુ નામ વિશાલા હતું. વિશાલાના પુત્ર હોવાથી તેમને માટે અહીં વૈશાલિક શબ્દનો પ્રયોગ થયો છે "વૈશાલિક શ્રાવક" એટલે ભગવાન મહાવીરનાં વચનોમાં શ્રદ્ધા રાખનાર તે પિંગલક નિર્ગ્રંથ (अन्नया कयाइं) એક દિવસ (जणेव कच्चायणस्सगोत्ते खंदए तेणेव उवागच्छइ) જ્યા કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદક પરિવ્રાજક વિરાજતા હતા ત્યા ગયા (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને (कच्चायणस्स गोत्त खंदगं इणमक्खेवं पुच्छइ) તેમણે તો કાત્યયન ગોત્રીય સ્કન્દકને આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા (मागहा ! किं स अंते लोए अणंते लोए) હે માગધ! લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंते जीवे अणंते जीवे) જીવ અન્ત યુક્ત છે કે અન્ત સહિત છે (स अंता सिद्धि, अणंता सिद्धि) સિદ્ધિ અંત સહિત છે કે અત રહિત છે. (केण वा मरणे णं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) કયા મરણથી મરતા જીવનો સસાર વધે છે, અને કયા કયા મરણથી મરતાં જીવનો સસાર ઘટે છે (एव वुच्चमाणे एतावं ताव आयक्खाहि) મેં આપને જે આ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે તેનો તમે જવાબ આપો.

नगरात् ' गुणसिलाओ चेइयाओ ' गुणशिलकात् चैत्यात्=उद्यानात् ' पडिनिक्खमइ ' प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति । ' पडिनिक्खमित्ता ' प्रतिनिष्क्रम्य ' बहिया जणवयविहारं विहरइ ' बहिः जनपदविहारं विहरति ।

' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' तस्मिन्काले तस्मिन् समये ' कयंगला नामं नयरी होत्था ' कृतंगला नाम नगरी आसीत्, वण्णओ ' वर्णकः वर्णनप्रकारः औपपातिकसूत्रोक्तचंपानगरीवर्णनवत् विज्ञेयः । ' तीसे णं कयंगलाए ' नयरीए बहिया ' तस्याः कृतंगलायाः नगर्याः बहिः बाह्यप्रदेशे ' उत्तरपुरत्थिमे उत्तर पूर्वदिग्भागे-ईशानकोणे ' दिसिभाए ' दिग्भागे-ईशानकोणे ' छत्तपलासए नामं चेइए होत्था ' छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत् । ' वण्णओ ' वर्णकः-वर्णनप्रकारः, इहापि औपपातिकसूत्रोक्तपूर्णभद्रचैत्यवर्णनवत् विज्ञेयः । ' तएणं समणे भगवं महावीरे छप्पण्णाणदंसणधरे जाव समोसरणं '

राओ) राजगृह नगर से (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्य उद्यान से (पडिनिक्खमइ) निकले । (पडिनिक्खमित्ता) निकल कर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे बाहरके देशमें विहार करने लगे । (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (कयंगला नामं नयरी होत्था) कयंगला नाम की एक नगरी थी । (वण्णओ) इसका वर्णन प्रकार औपपातिकसूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान जानना चाहिये । (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थिमे दिसिभाए छत्तपलासए नामं चेइए होत्था) उस कयंगला नगरी के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्विभाग में-ईशानकोण में-छत्रपलाशक नाम का चैत्य था । (वण्णओ) इस का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित पूर्णभद्र चैत्य की तरह जानना चाहिये । (तएणं समणे भगवं महावीरे छप्पण्णाणदंसणधरे जाव समोसरणं) इस विषय का प्रथम सूत्रके में

नगरना (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्यथी (उद्यानथी) (पडिनिक्खमइ) नीकळ्या (पडिनिक्खमित्ता) नीकळीने (बहिया जणवयविहारं विहरइ) तेओ बहारना प्रदेशमां विहार करवा लाग्या (तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काळे अने ते समये (कयंगला नामं नयरी होत्था) कृतंगला नामनी नगरी हती. (वण्णओ) औपपातिक सूत्रमां चंपानगरीना जेवु ज तेनुं वर्णन समजवु (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए छत्तपलासए नामं चेइए होत्था) ते कृतंगला नगरीनी बहार ईशान कोणमां छत्रपलाश नामनु चैत्य (उद्यान) हतु (वण्णओ) औपपातिक सूत्रमां चंपा चैत्य पूर्णभद्र चैत्यना (उद्यान) जेवु ज तेनुं वर्णन समजवु (तएणं समणे भगवं महावीरे छप्पण्णाणदंसणधरे जाव समोसरणं) विषयनुं प्रथम सूत्रक

वा हीयते वा, एतावत्तावदाख्याहि उच्यमाने एवम्। ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकश्रावकेण द्विरपि त्रिरपि इममाक्षेपं पृष्टः सन् शंकितः कांक्षितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुषसमापन्नो न शक्नोति पिंगलकस्य निर्ग्रन्थस्य वैशालिकश्रावकस्य किंचिदपि प्रमोक्षम् आख्यातुं तूष्णीकः संतिष्ठते ॥ सू० ७ ॥

टीका—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः, 'रायगिहाओ नयराओ' राजगृहात्

सहित है कि विना अन्तका है यावत् जीव किस मरण से मर कर अपने को बढाता है या घटाता है (एवं वुच्चमाणे एतावं ताव आयक्खाहि) इस प्रकार से मेरे द्वारा पूछे गये तुम मेरे इन प्रश्नों का उत्तर दो। तएणं से कच्चायणस्स गोत्ते खदए वेसालियसावएणं पिंगलेणं नियंठेणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए संकिए, कंखिए वितिगिच्छए, भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने, णो वेसालियसावयस्स पिंगलस्स णियंठस्स किंचिवि पामोक्खं अक्खाइउ णो संचाएइ तुसणीए संचिट्ठइ) इस प्रकार कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक वैशालिक पिंगलक निर्ग्रन्थ के द्वारा दो बार भी तीन बार भी पूछे जाने पर उत्तर देने के लिये समर्थ नहीं हो सका परन्तु शंकित कांक्षित विचिकित्सायुक्त ही बना रहा और भेद को समापन्न होता हुआ कलुषभाव को प्राप्त हो गया। तथा चुपचाप ही रहा।

टीकार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर (रायगिहाओ नय-

---

હે માગધ! લોક અન્ત સહિત છે કે અતરહિત છે ત્યાથી શરૂ કરીને કયા મરણથી મરીને જીવ સસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરીને સંસાર ઘટાડે છે, ત્યાં સુધીના પ્રશ્નો પૂછ્યા (एव वुच्चमाणे एताव ताव आयक्खाहि) હે સ્કન્દક! મારા આ પ્રશ્નોના તમે ઉત્તર આપો (तएणं से कच्चायणस्स गोत्ते खदए वेसालियसावएण पिंगलेण नियंठेणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए, कंखिए वितिगिच्छिए, भेदसमावन्ने, णो वेसालियसावयस्स पिंगलस्स णियठस्स किंचि वि पामोक्ख अक्खाइउं णो संचाएइ तुसणीए संचिट्ठइ) આ રીતે વૈશાલિક શ્રાવક નિર્ગ્રંથ બે બે વાર અને ત્રણ વાર પૂછવા છતાં પણ કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદક તેમના પ્રશ્નોના ઉત્તર આપી શકયો નહીં પણ શકિત, કાક્ષિત, વિચિકિત્સાયુક્ત જ બની ગયાં, અને ભેદસમાપન્ન થઈને કલુષભાવ યુક્ત થયા તથા ચુપચાપજ બેસી રહ્યા

(टीकार्थ—तेण कालेणं तेण समएणं) તે કાળે અને તે સમયે समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર (रायगिहाओ नयराओ) રાજગૃહ

नगरात् 'गुणसिलाओ चेइयाओ' गुणशिलकात् चैत्यात्=उद्यानात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति। 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य 'बहिया जणवयविहारं विहरइ' बहिः जनपदविहारं विहरति।

'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन्काले तस्मिन् समये 'कयंगला नामनयरी होत्था' कृतङ्गला नाम नगरी आसीत्, 'वण्णओ' वर्णकः वर्णनप्रकारः औपपातिकसूत्रोक्तचंपानगरीवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तीसे णं कयंगलाए' नयरीए 'बहिया' तस्याः कृतंगलापा नगर्याः बहिः आग्नेयदेशे 'उत्तरपुरत्थिमे' उत्तर पूर्वदिग्भोरन्तराले 'दिसिभाए' दिग्भागे-ईशानकोणे 'छत्तपलासए नामं चेइए होत्था' छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत्। 'वण्णओ' वर्णक-वर्णनप्रकारः, इहापि औपपातिकसूत्रोक्तपूर्णभद्रचैत्यवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं'

राओ) राजगृह नगर से (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्य उद्यान से (पडिनिक्खमइ) निकले। (पडिनिक्खमित्ता) निकल कर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे बाहरके देशमें विहार करने लगे। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (कयंगला नामं नयरी होत्था) कयंगला नाम की एक नगरी थी। (वण्णओ) इसका वर्णन प्रकार औपपातिकसूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिभाए छत्तपलासए नामं चेइए होत्था) उस कयंगला नगरी के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्विभाग में-ईशानकोण में-छत्रपलाशक नाम का चैत्य था। (वण्णओ) इस का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित पूर्णभद्र चैत्य की तरह जानना चाहिये। (तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं) इस विषय का प्रथम शतक में

नगरथी (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्यभांथी (उद्यानथी) (पडिनिक्खमइ) नीकळ्या (पडिनिक्खमित्ता) त्यांथी नीकळीने (बहिया जणवयविहारं विहरइ) तेओ जहारना प्रदेशमां विहार करवा लाग्या (तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काळे अने ते समये (कयंगला नामं नयरी होत्था) कृतंगला नामनी नगरी हती (वण्णओ) औपपातिक सूत्रमां वर्णवेली चंपा नगरीना लेखु ज तेनु वर्णन समजवु (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिभाए छत्तपलासए नामं चेइए होत्था) ते कृतंगला नगरीनी जहार ईशान कोणमां छत्रपलाशक नामनु चैत्य (उद्यान) हतु (वण्णओ) औपपातिक सूत्रमां वर्णवेला पूर्णभद्र चैत्यना (उद्यान) लेखु ज तेनु वर्णन समजवु (तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं) आ विषयनु प्रथम शतकमां

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीर उत्पन्नज्ञानदर्शनधरो यावत् समवसरणम्, एतद्वर्णनं प्रथमशतके प्रथमोद्देशकस्य पञ्चममूत्रे विलोकनीयम्। 'परिसा निग्गच्छइ' परिषद् निर्गच्छति, 'तीसे णं' तस्याः खलु 'कयंगलाए नयरीए' कृतंगलाया नगर्याः, 'अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी होत्था' अदूरसामन्ते नात्यासन्ने नातिदूरे श्रावस्ती नाम नगरी आसीत् 'वण्णओ' वर्णकः-वर्णनप्रकारः चम्पावद् विज्ञेयः। 'तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यान्तेवासी=शिष्यः स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, संप्रति तस्य विद्वत्तां वर्णयन्नाह—'रिउव्वेय' इत्यादि। 'रिउव्वेय-जजुव्वेय-सामवेय-अहव्वण वेयाणं' ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदाथर्वणवेदानाम्, तत्र-ऋग्वेदः=ऋचा प्रधानो

प्रथमउद्देशक के पांचवें सूत्र में देखना चाहिये। (परिसा निग्गच्छइ) सभा निकली (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) उस कयंगला नगरी के (अदूरसामंते) न अतिदूर पर और न अति निकट में (सावत्थी नामं नयरी होत्था) श्रावस्ती नाम की नगरी थी। (वण्णओ) इस नगरी का वर्णन चंपा नगरी के वर्णन के जैसा जानना चाहिये। (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अन्तेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ) उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल का शिष्य कात्यायनगोत्र वाला स्कन्दक नाम का एक परिव्राजक रहता था। यह परिव्राजक कैसा क्या विद्वान् था-सूत्रकार अब इसका वर्णन करते हैं-वह परिव्राजक (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाणं ऋचा प्रधानवाले वेद का-ऋग्वेद का, मंत्रप्रधानवाले वेद का-यजुर्वेद

શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના પાંચમા સૂત્રમાથી વાચી લેવુ વિહાર કરતાં કરતાં કેવળજ્ઞાન અને કેવળ દર્શનથી યુક્ત શ્રમણ ભગવાન મહાવીર તે ચૈત્યમાં (ઉદ્યાનમા) પધર્યા તેમનો ઉપદેશ સાંભળવા પરિષદ નીકળી ઇત્યાદિ વર્ણન અહીં સમજી લેવું (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) તે કૃતંગલા નગરીથી (अदूरसामंते) અતિશય દૂર પણ નહીં અને અતિશય નજીક પણ નહી એવા સ્થળે, (सावत्थी नामं नयरी होत्था) શ્રાવસ્તી નામની નગરી હતી (वण्णओ) તેનુ વર્ણન પણ ચંપાનગરીના વર્ણન પ્રમાણે જ સમજવું (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्सगोत्ते परिव्वायए परिवसइ) તે શ્રાવસ્તી નગરીમાં ગર્દભાલનો શિષ્ય, કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક નામનો પરિવ્રાજક રહેતો હતો.

હવે સૂત્રકાર સ્કન્દકની વિદ્વતાની વાત કરે છે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाण) ઋચા પ્રધાન ઋગ્વેદનો, મંત્ર પ્રધાન યજુ-

वेदः, यजुर्वेदः=यज्ञप्रधानो वेदः, सामवेदः=गानप्रधानो वेदः, अथर्वणवेदः=क्रिया प्रधानो वेदः, तेषाम्, चतुर्णामित्यर्थः-'इतिहासपंचमाणं' इतिहासपंचमानाम्, इतिहासो=महाभारतादिः स पञ्चमो यषां ते इतिहासपञ्चमाः, तेषाम्, 'निघंटु छट्ठाणं' निघण्टुषष्ठानाम्, निघण्टुः वैदिकशब्दानां कोशः, स षष्ठो विद्यते येषां ते निघण्टुषष्ठाः, तेषाम्, एतावतां 'चउण्ह वेयाण' चतुर्णां वेदानाम्, कथम्भूतानां वेदानाम्? तत्राह-'संगोवंगाण' साङ्गोपाङ्गानाम्, तत्राङ्गानि षट् शिक्षाकल्प-व्याकरण-ज्यौतिषच्छन्दो-निरुक्तरूपाणि, उपाङ्गानि = धर्मशास्त्र-न्यायपुराणमीमांसा शास्त्ररूपाणि, तैः सहितानाम्, 'सरहस्साणं' सरहस्यानाम्, रहस्यम्=गूढाभिप्रायम् पुष्कलानाम् चतुर्णामपि वेदानाम् 'सारए' स्मारक:-विस्मृतस्य स्मरणकारकत्वात्, 'धारए' धारक -अशुद्धपाठोच्चारणादि निराकरणात्, 'पारए' पारक -अधीतवेदानां धारणात्, एतावता अधीताः। सर्वेऽपि वेदाः स्कन्दकस्य कण्ठस्था एव सन्ति इति ध्वन्यते 'पारए' पारगः,

---

थी, गानप्रधानवाले वेद का-सामवेद का, क्रियाप्रधानवाले वेद का-अथर्वण वेद का, इन चार वेदों का ज्ञाता था (इतिहासपंचमाणं) पांचवें इतिहास का वेत्ता था (निघंटु छट्ठाणं) छठवें निघंटु-वैदिक शब्दकोश का वेत्ता था। इस प्रकार षट् (संगोवंगाण सरहस्साणं) शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्यौतिष, छन्द, निरुक्तरूप छह अङ्गवाले तथा अङ्गों के अर्थ का विस्तार रूप उपांगों वाले (सरहस्साणं) तथा गूढ अभिप्रायवाले (चउण्ह वेयाणं) इन चारों ही वेदों का (सारए) स्मारक था-अर्थात् भूले हुए को स्मरण कराने वाला था। (धारए) अशुद्ध पाठ आदि के उच्चारण करने से दूसरों को रोकने वाला होने से धारक था। (पारए) अधीतवेदों का धारण करने वाला होने से पारक था, एतावता इस पद से यह ध्वनित होता है कि समस्त ही वेद स्कन्दक परिव्राजक के कण्ठ

વેદોનો, ગીત પ્રધાન સામવેદનો અને ક્રિયા પ્રધાન અથર્વવેદનો જ્ઞાતા હતો આ રીતે તે ચારે વેદોનો અભ્યાસ હતો (इतिहासपंचमाणं) પાંચમો ઇતિહાસ અને (निघंटुछट्ठाणं) નિઘંટુ-વૈદિક શબ્દકોશ પણ તે ભણેલો હતો આ રીતે તે (संगोवंगाण सरहस्साणं) શિક્ષા, કલ્પ, વ્યાકરણ, છંદ, જ્યોતિષ, અને નિરુક્તિ રૂપ છ અંગવાળા, તથા અંગોના અર્થના વિસ્તાર રૂપ ઉપાંગો વાળા (सरहस्साणं) તથા ગૂઢ રહસ્યવાળા (चउण्ह वेयाणं) તે ચારે વેદોનો (सारए) સ્મારક હતો એટલે કે ભૂલી ગયેલાને તેનું સ્મરણ કરાવનાર હતો (धारए) અશુદ્ધ પાઠ વગેરેનું ઉચ્ચારણ કરતાં અન્ય જનોને વારનાર (રોકનાર) હતો (पारए) ભણેલા વેદોને ધારણ કરનાર હોવાથી તેનો પારક હતો આ પદનો એવો અર્થ નીકળી શકાય છે કે બધા વેદો સ્કન્દક પરિવ્રાજકને કંઠે છે એવું જ

पारगामी अखिलवेदार्थ विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'सडंगवी' षडंगवित्, षण्णामपि वेदाङ्गानां वक्ष्यमाणानां विशेषरूपेण ज्ञानवानित्यर्थः, 'सट्ठितंतविसारए' षष्ठीतंत्रविशारदः, षष्ठीतंत्र-कापिलं दर्शनम् तत्र विशारदः तद्विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'संखाणे' संख्यानः संख्यानं संख्याप्रधानक गणितशास्त्रम्, तत्र पंडित इति। अङ्गनामानि दर्शयति-'सिक्खा' इत्यादि। 'सिक्खाकप्पे' शिक्षाकल्पे शिक्षा च कल्पश्चेत्यनयो समाहारे शिक्षाकल्पं, तस्मिन्, तत्र शिक्षा-शिक्ष्यते वेदार्थोऽनयेति शिक्षा, अक्षरस्वरूपनिरूपकं शास्त्रमित्यर्थः, कल्पः-वेदविहिताचारनिरूपकं शास्त्रम्, तस्मिन्, 'वागरणे' व्याकरणे, शब्दशास्त्रे 'छंदे' छन्दसि पद्यलक्षणशास्त्रे, 'निरुत्ते' निरुक्ते, शब्दानां व्युत्पत्तिनिरूपणपरकशास्त्रे, 'जोइसामयणे' ज्योतिषामयने, ज्योति शास्त्रे, पुनरपि 'अन्नेसु य बहूसु बम्हण्णएसु' अन्येषु च बहुषु ब्राह्मण्यकेषु, ब्राह्मणसंबन्धिषु अन्येष्वपि च बहुषु शास्त्रेषु मनुस्मृ-

---

स्थ ही थे। (पारए) समस्त वेदार्थ विषयक ज्ञान से यह युक्त था। (सडंगवी) वेद के जो छह अङ्ग होते हैं उनका यह विशेषरूप से ज्ञाता था। (सट्ठितंतविसारए) कापिल दर्शन-सांख्यदर्शन में वह विशारद था। सांख्यदर्शन के सिद्धान्त से भी यह विशेषरूप से परिचित था। (संखाणे) संख्यान शब्द का अर्थ संख्याप्रधान गणितशास्त्र है-इसमें वह पण्डित था। (सिक्खाकप्पे) वेद का अर्थ जिसके द्वारा सीखा जाता है वह शिक्षा है, तथा वेदविहित आचार का निरूपक जो शास्त्र है वह कल्प है। शिक्षा और कल्प इन दोनों में तथा (वागरणे) व्याकरण-शब्द शास्त्र में (छंदे) छंदः शास्त्र में (निरुत्ते) शब्दों की व्युत्पत्ति निरूपण परक शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में (जोइसामयणे) ज्योतिषशास्त्र में, तथा (अन्नेसु बहूसु बम्हण्णएसु) और भी दूसरे अनेक ब्राह्मणसम्बन्धी मनुस्मृति-याज्ञवल्क्यादि स्मृति आदि शास्त्रों में, अथवा

કરી લીધા હતા "पारए" વેદ વિષયક જ્ઞાનમાં તે પારંગત હતો (सडंगवी) વેદના છએ અંગનો તે વિશેષ રૂપે જ્ઞાતા હતો. (सट्ठितंतविसारए) કપિલદર્શન-સાખ્ય દર્શનનો તે વિશારદ હતો (सखाणे) સંખ્યા પ્રધાન ગણિતશાસ્ત્રનો પણ તે નિષ્ણાત હતો (सिक्खा कप्पे) જેના વડે વેદોનો અર્થ શીખવામાં આવે છે તે "शिक्षाशास्त्र" અને વેદકથિત આચારનુ નિરૂપક જે કલ્પ શાસ્ત્ર છે તેમા પણ તે વિશારદ હતો (वागरणे) વ્યાકરણ શાસ્ત્રમા, (छदे) છંદ શાસ્ત્રમા, (निरुते) વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્રમા, (जोइसामयणे) જ્યોતિષ શાસ્ત્રમા તથા (अन्नेसु बहूसु बम्हण्णएसु) બીજા પણ અનેક બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોમાં (मनुस्मृति,) યાજ્ઞવલ્કયાદિ સ્મૃતિ, આરણ્યક વગેરે બ્રાહ્મણ

विषु याज्ञवल्क्यादिस्मृतिषु अथवा ब्राह्मणशास्त्राणि आरण्यादिकानि उपनिषदादीनि तेषु, पुन –' परिव्वायएसु नयेसु ' पारिव्राजकेषु नयेषु 'सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था ' सुपरिनिष्ठितश्चाप्यासीत्, तत्र ' परिव्वाएसु ' पारिव्राजकेषु–परिव्राजकसम्बन्धिषु ' नएसु ' नयेषु सन्यासप्रतिपादकानेकतन्त्रेषु ' सुपरिनिट्ठिए ' सुपरिनिष्ठितः–निपुणः तद्विषयसमीचीनज्ञानवानासीदिति ।

' तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए णाम नियंठे वेसालियसावए परिवसइ ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकः परिवसति, विशालाया अपत्यमिति वैशालिकः, भगवान् महावीरः वैशालिकस्य श्रावक इति वैशालिकश्रावकः शृणोतीति जिनवाक्यं यः स श्रावकः तथा च वैशालिकस्य महावीरस्य वचनं शृणोति कर्णाभ्यामिति यः स वैशालिकश्रावकः महावीर

आरण्यक आदि ब्राह्मण शास्त्रों में, तथा–(परिव्वायएसु नयेसु) परिव्राजक सम्बन्धी शास्त्रों में भी (सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) वह बहुत अधिक चतुर था, अर्थात् तद्विषयक ज्ञान से युक्त था ।

(तत्थ णं सावत्थीए नयरीए) उसी श्रावस्ती नगरी में (पिंगलए णामं नियंठे) पिंगल नाम का एक निर्ग्रन्थ रहता था। यह निर्ग्रन्थ(वेसालियसावए) वैशालिक का श्रावक था–अर्थात् वैशालिक महावीर प्रभुका–श्रावक–उपदेश श्रोता था। विशाला भगवान् महावीर प्रभुकी माताका नाम था। विशालाका जो अपत्य वह वैशालिक अर्थात् भगवान् महावीर प्रभु इनका श्रावक था अर्थात् (शृणोति जिनवाक्यं यः सः श्रावकः) इस व्युत्पत्ति के अनुसार वह भगवान् महावीर प्रभु के उपदेश का पान करने वाला था। तात्पर्य कहने का यह था।

શાસ્ત્રોમાં તથા (परिव्वायएसु नयेसु) પરિવ્રાજક સંબંધી શાસ્ત્રોમાં પણ (सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) તે ઘણો જ નિષ્ણાત હતો.

(तत्थ णं सावत्थीए नयरीए) હવે એ શ્રાવસ્તી નગરીમાં (पिंगलए णामं नियंठे) પિંગલક નામનો એક નિર્ગ્રંથ રહેતો હતો. તે નિર્ગ્રંથ (वेसालियसावए) વૈશાલિકના શ્રાવક હતા એટલે કે ભગવાન મહાવીરપ્રભુના શ્રાવક–ઉપદેશ શ્રવણ કરનાર હતા વિશાલા, મહાવીર સ્વામીની માતાનું નામ હતું તેથી વિશાલાના પુત્ર હોવાથી તેઓ વૈશાલિક કહેવાતા પિંગલક નિર્ગ્રંથ ભગવાન મહાવીરના ઉપાસક હતા તેમને મહાવીર પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવો ગમતો હતો તેથી તેમને વૈશાલિક શ્રાવક કહેવામાં આવેલ છે શ્રાવક શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે शृणोति जिनवाक्यं

पारगामी अखिलवेदार्थ विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'सडंगवी' षडंगवित्, षण्णामपि वेदाङ्गानां वक्ष्यमाणानां विशेषरूपेण ज्ञानवानित्यर्थः, 'सट्ठितंतविसारए' षष्टीतंत्रविशारदः, षष्टीतंत्र-कापिलं दर्शनम् तत्र विशारदः तद्विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'संखाणे' संख्यानः संख्यानं संख्याप्रधानकं गणितशास्त्रम्, तत्र पंडित इति। अङ्गनामानि दर्शयति-'सिक्खा' इत्यादि। 'सिक्खाकप्पे' शिक्षाकल्पे शिक्षा च कल्पश्चेत्यनयो. समाहारे शिक्षाकल्पं, तस्मिन्, तत्र शिक्षा-शिक्ष्यते वेदार्थोऽनयेति शिक्षा, अक्षरस्वरूपनिरूपकं शास्त्रमित्यर्थः, कल्पः-वेदविहिताचारनिरूपकं शास्त्रम्, तस्मिन्, 'वागरणे' व्याकरणे, शब्दशास्त्रे 'छंदे' छन्दसि पद्यलक्षणशास्त्रे, 'निरुत्ते' निरुक्ते, शब्दानां व्युत्पत्तिनिरूपणपरकशास्त्रे, 'जोइसामयणे' ज्योतिषामयने, ज्योति शास्त्रे, पुनरपि 'अन्नेसु य बहूसु बम्हण्णएसु' अन्येषु च बहुषु ब्राह्मण्यकेषु, ब्राह्मणसंबन्धिषु अन्येष्वपि च बहुषु शास्त्रेषु मनुस्मृ-

---

स्थ ही थे। (पारए) समस्त वेदार्थ विषयक ज्ञान से यह युक्त था। (सडंगवी) वेद के जो छह अङ्ग होते हैं उनका यह विशेषरूप से ज्ञाता था। (सट्ठितंतविसारए) कापिल दर्शन-सांख्यदर्शन में वह विशारद था। सांख्यदर्शन के सिद्धान्त से भी यह विशेषरूप से परिचित था। (संखाणे) संख्यान शब्द का अर्थ संख्याप्रधान गणितशास्त्र है-इसमें वह पण्डित था। (सिक्खाकप्पे) वेद का अर्थ जिसके द्वारा सीखा जाता है वह शिक्षा है, तथा वेदविहित आचार का निरूपक जो शास्त्र है वह कल्प है। शिक्षा और कल्प इन दोनों में तथा (वागरणे) व्याकरण-शब्द शास्त्र में (छंदे) छंदः शास्त्र में (निरुत्ते) शब्दों की व्युत्पत्ति निरूपण परक शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में (जोइसामयणे) ज्योतिषशास्त्र में, तथा (अन्नेसु बहूसु बम्हण्णएसु) और भी दूसरे अनेक ब्राह्मणसम्बन्धी मनुस्मृति-याज्ञवल्क्यादि स्मृति आदि शास्त्रों में, अथवा

કરી લીધા હતા "पारए" વેદ વિષયક જ્ઞાનમાં તે પારંગત હતો (सडंगवी) વેદના છએ અંગનો તે વિશેષ રૂપે જ્ઞાતા હતો (सट्ठितंतविसारए) કપિલદર્શન-સાંખ્ય દર્શનનો તે વિશારદ હતો (सखाणे) સંખ્યા પ્રધાન ગણિતશાસ્ત્રનો પણ તે નિષ્ણાત હતો (सिक्खा कप्पे) જેના વડે વેદોનો અર્થ શીખવામા આવે છે તે "શિક્ષાશાસ્ત્ર" અને વેદકથિત આચારનું નિરૂપક જે કલ્પ શાસ્ત્ર છે તેમા પણ તે વિશારદ હતો (वागरणे) વ્યાકરણ શાસ્ત્રમા, (छदे) છદ શાસ્ત્રમા, (निरुते) વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્રમા, (जोइसामयणे) જ્યોતિષ શાસ્ત્રમા તથા (अन्नेसु बहूसु बम्हण्णएसु) બીજા પણ અનેક બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોમા (मनुस्मृति,) याज्ञवल्क्य स्मृति, आरण्यक વગેરે બ્રાહ્મણ

पित् सर्वथा विनाशो भवति अथवा अनतः प्रवाहरूपेण सर्वदा स्थितिमत्त्वेन अनंत ? ॥ १ ॥ 'स अंते जीवे अणंते जीवे' सान्तः किम् अंतसहितः जीवः अथवा अनंतः-अंतरहितः जीव ? ॥ २ ॥ 'स अंता सिद्धी अणंता सिद्धी' सान्ता-अन्तसहिता सिद्धिः-सिद्धिक्षेत्रम्, अनन्ता-अन्तरहिता सिद्धिः ? ॥३॥ 'स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे' सान्तः किम् अंतसहित सिद्धः अथवा अनंतः अंतरहितः सिद्धः ? ॥४॥ 'केण वा मरणेणं-मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते वा हीयते वा, संसारस्य वर्द्धनात् जीवो वर्द्धते संसारस्य हान्या वा हीयते जीवः कीदृशं मरण माप्य जीवः संसारे परिभ्रमति कीदृशं च मरणं माप्य संसारं क्षपयतीति पञ्च प्रश्नाः ॥ ५ ॥ 'एव खुच्चमाणे'

प्रवाहरूप से सर्वदा स्थिति वाला होने से विनाश रहित है ? तथा स अन्ते जीवे अणंते जीवे" जीव अन्त सहित है अथवा अनन्त है अन्त रहित है ? स अन्ता सिद्धी अणंता सिद्धी " सिद्धीक्षेत्र अन्त सहित है या अन्त रहित है ?" स अन्ते सिद्धे अणंते सिद्धे सिद्ध अन्त सहित हैं कि अन्त रहित हैं ? केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा " जीव किस मरणसे मरता हुआ अपने संसार के वर्धन से बढता है और अपने संसार की हानि से घटता है तात्पर्य कहने का यह है कि जीव में न ह्रास होता है और न वृद्धि होती है, परन्तु संसार के वर्धन से जीव का बंधन और संसार के ह्रास से जीव की हानि मानली जाती है। इसी आशय से यह हानि वृद्धि विषयक प्रश्न किया गया है तात्पर्य इस प्रश्न का यही है कि कैसे मरण को प्राप्तकर जीव संसार में घूमता रहता है और कैसे मरण को प्राप्त कर जीव अपने संसार को नष्ट कर देता है ? इस प्रकार से ये पांच प्रश्न हैं। एव खुच्च

હોવાને લીધે નાશ થાય છે કે નથી થતો તથા (स अंते जीवे अणंते जीवे) જીવ અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंता सिद्धि अणंता सिद्धि ?) સિદ્ધિ-સિદ્ધિ અન્તસહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंते सिद्धे अणंते सिद्ध) સિદ્ધ અન્તસહિત છે ? કે અન્તરહિત છે ? (केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) જીવ કયા મરણથી પોતાના સંસારના વધારાથી વધે છે અને કયા મરણથી પોતાના સંસારની હાનિથી ઘટે છે કહેવાનુ પ્રયોજન એ છે કે જીવમા તો વૃદ્ધિ પણ થતી નથી અને હાનિ હ્રાસ પણ થતી નથી. પરતુ સંસારના બધનથી જીવની વૃદ્ધિ જોને સંસારની હાનિથી જીવની હાનિ માની લેવામા આવી છે તેથી આ પ્રશ્નોનો આ પ્રમાણે આશય સમજવો જોઇએ કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ સંસારમાં વાર વાર પરિભ્રમણ કરે છે અને કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ પોતાના સંસારમાં પરિભ્રમણની સ્થિતિનો

वंचनामृतपानरसिकः इति, यत्र श्रावस्त्यामनेकप्रकारकवेदवेदाङ्गादिविषयक-समस्तज्ञानवान् स्कन्दोऽभूत्तत्रैव श्रावस्त्या तत्समये जिनमतानुयायी कश्चित् पिंगलकनामको निर्ग्रन्थ आसीदिति समुदितार्थः। 'तएणं से पिंगलए णामं नियंठे-वेसालिय सावए अन्नया कयाइं जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ' ततः खलु स पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकः अन्यदा कदाचित्=अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्समये यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति, 'उवागच्छित्ता खंदगं काच्चायणस्सगोत्तं इणमक्खेवं पुच्छे' उपागत्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रं इममाक्षेपम् प्रश्नम् अप्राक्षीत्। किं पृष्टवानित्यत आह— 'मागहा' इत्यादि। 'मागहा' हे मागध? मगधो मगधदेशस्तत्र भवो मागधः तत्संबोधने हे मागध!-हे मगधदेशोद्भव स्कन्दक! 'किं स अंते लोए अणते लोए' किं सान्तः लोकः अनंतः लोक, हे स्कन्दक! किमयं लोकः सांतः एतस्य कदा-

---

जिस श्रावस्ती नगरी में वेद, वेदाङ्ग आदि के समस्त विषयों के ज्ञान से परिशीलित मतिवाला ऐसा विशेष निष्णात स्कन्दक नाम का परिव्राजक रहता था उसी समय में उस श्रावस्ती नगरी में पिंगलक नाम का एक निर्ग्रन्थ-बाह्याभ्यंतर परिग्रह से वर्जित जैन-धर्मानुयायी निर्ग्रन्थ भी रहता था। (तएणं से पिंगलए णामं नियंठे वेसालिय सावए अन्नया कयाइं जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ) एक दिन की बात है कि वैशालिय श्रावक वह पिंगलक अनगार जहां कात्यायनगोत्री स्कन्दक परिव्राजन रहता था वहां गया (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उसने (इणमक्खेवं) उनको इस प्रकार पूछा हे स्कन्दक! "किं स अन्ते लोए अणंते लोए" कहो यह लोक सान्त है-अन्त सहित है-इसका कभी सर्वथा नाश होता है? अथवा अनंत है?

ये સે શ્રાવક જિનેન્દ્ર ભગવાનનો ઉપદેશ શ્રવણ કરનારને શ્રાવક કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્રાવસ્તી નગરીમા તે સમયે વેદ, વેદાંગ વગેરે વિષયોનું જ્ઞાન ધરાવનાર સ્કંદક નામનો એક પરિવ્રાજક રહેતો હતો, એજ નગરમાં તે સમયે પિંગલક નામનો એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પણ રહેતો હતો બાહ્યાભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત જૈન ધર્માનુયાયી મુનિને શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કહે છે (तए णं से पिंगलए-णामं नियंठे वेसालियसावए अन्नया कयाइं जेणेव खदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) એક દિવસ તે વૈશાલિક શ્રાવક (મહાવીરના ઉપાસક) પિંગલક અણગાર જ્યા કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજક રહેતો હતો ત્યાં ગયા (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને તેમણે તેને (इणमक्खेव) આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછયા (मागहा) હે માગધ! મગધ દેશમા જન્મેલા હે સ્કન્દક (किं स अते लोए अणते लोए) આ લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે. એટલે કે આ

चित् सर्वथा विनाशो भवति अथवा अनन्त पवाहरूपेण सर्वदा स्थितिमत्त्वेन अनन्त ? ॥ १ ॥ 'स अंते जीवे अणंते जीवे' सान्त किम् अन्तसहित जीवः अथवा अनन्तः-अन्तरहित जीवः ? ॥ २ ॥ 'स अंता सिद्धी अणंता सिद्धी' सान्ता-अन्तसहिता सिद्धि-सिद्धिक्षेत्रम्, अनन्ता-अन्तरहिता सिद्धि ? ॥३॥ 'स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे' सान्तः किम् अन्तसहितः सिद्ध अथवा अनन्तः अन्तरहितः सिद्ध ? ॥४॥ 'केण वा मरणेण-मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते वा हीयते वा, संसारस्य वर्द्धनात् जीवो वर्द्धते संसारस्य हान्या वा हीयते जीव कीदृशं मरण प्राप्य जीव संसार परिभ्रमति कीदृशं च मरण प्राप्य संसारं लघयतीति पञ्च प्रश्ना ॥ ५ ॥ 'एव खुच्चमाणे'

प्रवाहरूप से सर्वदा स्थिति वाला होने से विनाश रहित है ? तथा स अन्ते जीवे अणते जीवे" जीव अन्त सहित है अथवा अनन्त है अन्त रहित है ? स अन्ता सिद्धी अणता सिद्धी " सिद्धीक्षेत्र अन्त सहित है वा अन्त रहित है ?" स अन्ते सिद्धे अणंते सिद्धे सिद्ध अन्त सहित हैं कि अन्त रहित हैं ? केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा " जीव किस मरणसे मरता हुआ अपने संसार के वर्धन से बढता है और अपने संसार की हानि से घटता है तात्पर्य कहने का यह है कि जीव में न ह्रास होता है और न बढती होती है, परन्तु संसार के वर्धन से जीव का वर्धन और संसार के ह्रास से जीव की हानि मानली जाती है। इसी आशय से यह हानि वृद्धि विषयक प्रश्न किया गया है तात्पर्य इस प्रश्न का यही है कि कैसे मरण को प्राप्तकर जीव संसार में घूमता रहता है और कैसे मरण को प्राप्त कर जीव अपने संसार को नष्ट कर देता है ? इस प्रकार से ये पांच प्रश्न हैं। एव खुच्च

બેઠનો કદી નાશ થાય છે કે નથી થતો તથા (स अंते जीवे अणते जीवे) જીવ અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंता सिद्धि अणता सिद्धि ?) સિદ્ધિ-સિદ્ધિ ક્ષેત્ર અન્તસહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंते सिद्धे अणंते सिद्ध) સિદ્ધ અન્તસહિત છે ? કે અન્તરહિત છે ? (केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) જીવ કયા મરણથી પોતાના સંસારના વધારાથી વધે છે અને કયા મરણથી પોતાના સંસારની હાનિથી ઘટે છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે જીવમાં તો વૃદ્ધિ પણ થતી નથી અને હાનિ હ્રાસ પણ થતી નથી. પરંતુ સંસારના વધવાથી જીવની વૃદ્ધિ એને સંસારની હાનિથી જીવની હાનિ માની લેવામાં આવી છે તેથી આ પ્રશ્નોનો આ પ્રભાવે આશય કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ સંસારમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરે છે અને કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ પોતાના સંસારમાં પરિભ્રમણની સ્થિતિનો

एवमुच्यमानः, एवम्=अनेन प्रकारेण उच्यमानः=पृच्छ्यमानः सन् त्वम् 'एतावं ताव आइक्खाहि' एतावत्तावदाख्याहि, ये ये प्रश्नाः मया पृष्टास्तेषामुत्तरं तावत् प्रथमं देहि ततः पुनरहमन्यं प्रश्नं करिष्यामीति हृदयम्।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः, ततस्तदनन्तरं पिंगलकस्य प्रश्नश्रवणानन्तरम्, 'पिंगलएणं णियंठेणं' पिङ्गलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालियसावएणं' वैशालिकश्रावकेण 'इणमक्खेवं' इमम् आक्षेपं प्रश्नमित्यर्थः, 'पुच्छिए समाणे' पृष्टः सन् 'संकिए' शंकितः, शंका संजाताऽस्येति शंकितः, किमेतस्य पिङ्गलकनिर्ग्रंथप्रश्नस्येदमुत्तरमिद वा उत्तरमित्याकारया शंकया संजातशंकितः 'कंखिए' कांक्षितः, काङ्क्षा संजाताऽस्येति काङ्क्षितः, एतस्य प्रश्नस्येदमुत्तरं न सम्यक्, इदमपि न सम्यक् अतः

माणे "इस प्रकार से जब वैशालिक श्रावक ने पूछा और कहा कि तुम "एतावं ताव अक्खाहि" इन मेरे प्रश्नों का पहिले उत्तर दो तब पीछे मैं और प्रश्न पूछुंगा। "तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" इस प्रकार से कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक परिव्राजक "पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे" जो कि वैशालिकश्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा इन प्रश्नों के पूछे जाने पर वह 'संकिए' शंकित हो गया उसके चित में यह विचार बार२ उठने लगा कि पिंगलक निर्ग्रन्थ ने जो ये प्रश्न पूछे हैं सो उनका उत्तर यह है कि इस तरह से उसका मन डावाडोल होने लगा वह यह निश्चय नहीं कर सका कि इन प्रश्नों का उत्तर निश्चय रूप से क्या है? "कंखिए" कांक्षायुक्त हो गया

નાશ કરી નાખે છે? આ પ્રકારના પાંચ પ્રશ્નો છે (एवं वुच्चमाणे) જ્યારે વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલકે આ પ્રમાણે પૂછયુ અને કહ્યુ કે (एतावं तावअक्खाहि) મારા આ પ્રશ્નોના તમે પહેલા જવાબ આપો પછી હું બીજા પ્રશ્નો પણ પૂછીશ (तए ण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते) જ્યારે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને (पिंगलए ण नियट्ठेण वेसालियसावएण इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથ વડે આ પ્રશ્નો પૂછવામા આવ્યા ત્યારે (संकिए) તેના મનમાં શંકા ઉદ્ભવી કે પિંગલક મુનિએ જે પ્રશ્નો પૂછયા છે તેનો અમુક રીતે જવાબ આપી શકાય કે બીજી કોઇ રીતે જવાબ આપી શકાય? તેના મનની સ્થિતિ ડામાડોળ થઈ ગઈ આથી તે પ્રશ્નોનો કયો જવાબ આપવો તેને નિર્ણય તે કરી શકયા નહીં (कंखिए) તેઓ કાંક્ષાયુક્ત થઈ

किमयोत्तर भविष्यतीत्याकाङ्क्षावानिस्पर्थं । 'विइगिच्छिए' विचिकित्सितः, विचिकित्सा संजाताऽस्येति विचिकित्सितः, अस्मिन्नुत्तरे दत्तेऽस्य निर्ग्रन्थस्य श्रद्धा भविष्यति न वेत्याकारकविचिकित्सायुक्त, 'भेदसमापन्ने' भेदसमापन्नः भेदं प्रतिमाह किं कर्तव्यता क्याकुण्यत्वसक्षण समापन्नः प्राप्त इति भेदसमापन्नः 'कलुस समावन्ने' कलुषसमापन्नः, नाह किमपि ज्ञानाभीत्यपर्यरूपेण स्वविषये काङ्क्ष्य दौर्मनस्यं प्राप्त इति कलुषसमापन्नः सन् 'णो संचाएइ' न शक्नोति, न समर्थो भवति उत्तरमारूयातुमित्यग्रेण सम्बन्ध । कस्मै ? इत्याह-'पिंगलयस्स' इत्यादि । 'पिंगलयस्स नियंठस्स-वेसालियसावयस्स' पिङ्गलकाय निर्ग्रन्थाय

इन प्रश्नों का यदि इस प्रकार से उत्तर देता हूं तो वह भी ठीक नहीं है और यदि इस प्रकारसे उत्तर देता हूं तो वह भी ठीक नहीं है अतः इस प्रश्नों का असली उत्तर क्या होना चाहिये इस प्रकार की आकांक्षा उसके चित्त में जग गई। "विइगिच्छिए विचिकित्सासे युक्त हो गया इस पिंगलक निर्ग्रन्थ को इन प्रश्नों का यदि मैं यह उत्तर देता हूं तो इस पर उसकी श्रद्धा होगी कि नहीं होगी इस प्रकार की विचिकित्सा उसको उत्पन्न हो गई। "भेदसमापन्ने वह भेद समापन्न हो गया अर्थात् अब मैं क्या करूं इस प्रकारसे वह कुछ भी निर्णय नहीं कर सका उसकी बुद्धि किंकर्तव्यता से विमूढ बन गई। "कलुससमापन्ने मैं अब इस विषय में कुछ नहीं जान रहा हूं, इस तरह से अब वह कुछ भी निर्णय नहीं कर सका तब वह अपने आपमें हीनभावना लिप्सित मन में उसके कलुषता आगई। अतः एव वह (वेसालिय सावयस्स पिंगल

અથવા તેમને મનમાં એવું થયું કે આ રીતે તે પ્રશ્નોના જવાબ આપું તો પણ ઠીક નહીં લાગે અને તે સિવાયની કોઈ બીજી રીતે પણ યોગ્ય જવાબ આપી શકાય તેમ નથી તે પ્રશ્નોના આવો ચાલો ઉત્તર કયા હશે તે જાણવાની આકાંક્ષા તેમના મનમાં જન્મી. (विइगिच्छिए) તેમનું મન વિચિકિત્સાથી યુક્ત થઇગયું કે આ પિંગલક નિર્ગ્રંથને આ પ્રકારનો ઉત્તર આપીશ તો તેને તેમાં શ્રદ્ધા રહેશે કે નહીં એવા પ્રકારની આશંકા તેમના મનમાં ઉત્પન્ન થઇ (भेदसमापन्ने) તેમની મતિ મૂંઝાઈ ગઈ તે પ્રશ્નોનો શો જવાબ આપવો તેની સમજણ ન પડવાથી તેઓ વિમાસણમાં પડી ગયા (कलुससमापन्ने) ત્યારે તે પ્રશ્નોનો નિર્ણય તેઓ કરી શકયા નહીં ત્યારે તેઓ પોતાના મનમાં હીનભાવ અનુભવવા લાગ્યા તેમના મનમાં કલુષતા આવી ગઈ તેથી તેઓ (वेसालियसावयस्स पिंगलयस्स णियंठस्स किंचि वि पमोक्खणं अक्खाइ ण सो

एवमुच्यमानः, एवम्=अनेन प्रकारेण उच्यमानः=पृच्छ्यमानः सन् त्वम् 'एतावं ताव आइक्खाहि' एतावत्तावदाख्याहि, ये ये प्रश्नाः मया पृष्टास्तेषामुत्तर तावत् प्रथमं देहि ततः पुनरहमन्यं प्रश्नं करिष्यामीति हृदयम्।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः, ततस्तदनन्तर पिंगलकस्य प्रश्नश्रवणानन्तरम्, 'पिंगलएणं णियंठेणं' पिङ्गलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालियसावएणं' वैशालिकश्रावकेण 'इणमक्खेवं' इमम् आक्षेपं प्रश्नमित्यर्थः, 'पुच्छिए समाणे' पृष्टः सन् 'संकिए' शंकितः, शंका संजाताऽस्येति शंकितः, किमेतस्य पिङ्गलकनिर्ग्रंथप्रश्नस्येदमुत्तरमिद वा उत्तरमित्याकारया शंकया सजातशंकितः 'कंखिए' कांक्षितः, काङ्क्षा संजाताऽस्येति काङ्क्षितः, एतस्य प्रश्नस्येदमुत्तरं न सम्यक्, इदमपि न सम्यक् अतः

माणे "इस प्रकार से जब वैशालिक श्रावक ने पूछा और कहा कि तुम "एतावं ताव अक्खाहि" इन मेरे प्रश्नों का पहिले उत्तर दो तब पीछे मैं और प्रश्न पूछुंगा। "तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" इस प्रकार से कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक परिव्राजक "पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे" जो कि वैशालिकश्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा इन प्रश्नों के पूछे जाने पर वह 'संकिए' शंकित हो गया उसके चित में यह विचार बार२ उठने लगा कि पिंगलक निर्ग्रन्थ ने जो ये प्रश्न पूछे हैं सो उनका उत्तर यह है कि इस तरह से उसका मन डावाडोल होने लगा वह यह निश्चय नहीं कर सका कि इन प्रश्नों का उत्तर निश्चय रूप से क्या है? "कंखिए" कांक्षायुक्त हो गया

નાશ કરી નાખે છે આ પ્રકારના પાંચ પ્રશ્નો છે (एवं वुच्चमाणे) જ્યારે વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલકે આ પ્રમાણે પૂછયુ અને કહ્યુ કે (एतावं तावअक्खाहि) મારા આ પ્રશ્નોના તમે પહેલાં જવાબ આપો પછી હું બીજા પ્રશ્નો પણ પૂછીશ (तए णं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते) જ્યારે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને (पिंगलए णं नियट्ठेण वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથ વડે આ પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા ત્યારે (संकिए) તેના મનમાં શંકા ઉદ્ભવી કે પિંગલક મુનિએ જે પ્રશ્નો પૂછયા છે તેનો અમુક રીતે જવાબ આપી શકાય કે બીજી કોઇ રીતે જવાબ આપી શકાય? તેના મનની સ્થિતિ ડામાડોળ થઈ ગઈ આથી તે પ્રશ્નોનો કયો જવાબ આપવો તેને નિર્ણય તે કરી શકયા નહીં (कंखिए) તેઓ કાંક્ષાયુક્ત થઈ

मरणेन म्रियमाणो जीव वर्धते वा हीयते वा? इत्येवमनुचर देवि मया पूर्वोक्त प्रकारेण पृच्छ्यमानस्त्वमिति भावः। 'तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते' खलु स स्कन्दक कात्यायनगोत्र 'पिंगलएणं नियंठेणं वेसालिएणं सावएणं' पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकश्रावकेण 'दोच्चंपि तच्चंपि' द्वितीयवारमपि तृतीयवारमपि 'इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे' इममाक्षेपं पृष्ट सन् 'संकिए' शंकितः 'कंखिए' कांक्षित 'वितिगिच्छिए' 'विदुगिच्छिसितः 'भेदसमावन्ने' भेद समापन्न 'कलुससमावन्ने' कलुषसमापन्न 'णो संचाएइ' नो शक्नोति 'पिंगलगस्स णियंठस्स वेसालियसावगस्स' पिङ्गलकाय निर्ग्रन्थाय वैशालिकश्राव काय 'किंचिवि' किंचिदपि 'पमोक्खं' प्रमोक्षम्-उत्तरम्, 'अक्खाइउं' आख्या तुम् 'पुन पिंगलकेन पृष्टोपि स्कन्दकः पिंगलकस्य उत्तर दातु न समर्थोऽभूदिति भावः, अतएव-'तुसिणीए संचिट्ठइ' तूष्णीकः सन्तिष्ठते उत्तरमजानन् न किंचि दप्युक्तवानित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

तपः किम्? इत्याह—'तएणं' इत्यादि।

मूलम्—तएणं सावत्थीए नयरीए सिंघाडग जाव पहेसु महया जणसद्देइ वा जणवूहेइ वा जाव परिसा निग्गच्छइ तएणं तस्स खंदयस्स कच्चायणसगोत्तस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म इमे एयारूवे अज्झत्थिए

किस मरण से मरकर जीव बढता है और घटता है तुम पहिले मेरे इन प्रश्नों का उत्तर दो? इस तरह पूर्वोक्त रूप से प्रश्नों का दुहरा कर तिहरा कर निर्ग्रन्थ पिंगलक के द्वारा कूत प्रश्नों का उत्तर देने के लिये पूर्ण अपने वह कात्यायन गोत्री स्कन्दक परिव्राजक शंकित कांक्षित आदि अवस्था वाला बनकर प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ ही रहा और इसके फल स्वरूप वह केवल चुप चाप ही रहा ॥ सू० ७॥

અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે ત્યાંથી શરૂ કરીને કેવા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ વધે છે અને કેવા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ ઘટાડે છે ત્યા સુધીના બધા પ્રશ્નોના તમે ઉત્તર આપો બીજી વાર તથા ત્રીજી વાર એ પ્રશ્નોના જવાબ આપવાનું કહ્યું ત્યારે પિંગલક નિર્ગ્રંથ વડે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજકને કહેવામાં આવ્યુ ત્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક શકિત, કાંક્ષિત, વગેરે સ્થિતિવાળા બની જવાને કારણે તે પ્રશ્નોના ઉત્તર આપી શકવાને અસમર્થ બન્યા તેને પરિણામે પ્રશ્નોના ઉત્તર નહીં આપતાં મૌન જ રહેવાનું તેમને ચોગ્ય લાગ્યુ તેથી તેઓ ચુપ ચાપ બેસી જ રહ્યા ॥ સૂ. ૭ ॥

वैशालिकश्रावकाय चतुर्थ्यर्थे षष्ठी 'किंचि वि पमोक्खं अक्खाइउं' किञ्चिदपि प्रमोक्षम् =उत्तरम् आख्यातुम्=कथयितुम् । अतएव 'तुसिणीए' तूष्णीकः मौनमासादितः सन् 'संचिट्ठइ' संतिष्ठते ।

'तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालियसावए' ततः खलु स पिंगलको निर्ग्रन्थः वैशालिकश्रावकः, खंदयं' कच्चायणस्स गोत्तं 'स्कन्दकं कात्यायनगोत्रम् 'दोच्चंपि' द्विरपि -द्वितीयवारमपि 'तच्चपि' त्रिरपि=तृतीयवारमपि 'इणमक्खेव' इममाक्षेपम्=प्रश्नं 'पुच्छे' अप्राक्षीत्-'मागहा' हे मागध !=हे स्कन्दक ! 'किं स अंते लोए' किं सांतो लोकः 'जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि' यावत् केन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा एतावत्तावदाख्याहि, इह यावत् करणात् जीवसिद्धिसिद्धानां ग्रहणं भवति। 'वुच्चमाणे एवम्' उच्यमानः कथ्यमानः एवम्-एतद्रूपेण पूर्वोक्तप्रकारेणेति । किं सान्तः लोकः, अनन्तः लोकः? सान्तः जीवः अनन्तो जीवः?,सान्ता सिद्धिः अनन्ता सिद्धिः ? सान्तः सिद्धः अनन्तः सिद्धः ?, तथा केन

यस्स नियंठस्स किंचिवि पमोक्खं अक्खाइउं णो संचाएइ" वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ के इन प्रश्नों का थोडा सा भी उत्तर देने के लिये समर्थ नहीं हो सका। केवल वह तुसिणीए संचिट्ठइ चुपचाप ही रहा

" तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालिय सावए " जब निर्ग्रन्थ वैशालिक श्रावक ने उसे चुप चाप ही बैठा हुआ देखा तब कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं " उन्हों ने उस कात्यायन गोत्री स्कन्दक परिव्राजक से " दोच्चंपि दुवारा भी और तच्चंपि तिवारा भी इणमक्खेवं इन्हीं प्रश्नोंको पुच्छे " पूछा कहा " मागहा" हे मागध हे स्कन्दक किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि " लोक अन्त सहित " है कि अन्त विना का है यावत् इसी प्रकार जीव सिद्धि और सिद्ध अन्त सहित है कि अन्त रहित? तथा

संचाइए) वैशालिक श्रावक (महावीरना उपासक) पिंगलक निर्ग्रंथना એ प्रश्नोना બિલકુલ જવાબ આપી શક્યા નહી અને તેથી તેઓ (तुसिणीए संचिट्ठइ) चुपचाप બેસી જ રહ્યા

(तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालिए सावए) જ્યારે તે મહાવીરના उपासक पिंगलक निर्ग्रंथे तेमने चुपचाप બેઠેલા જોયા ત્યારે તેમણે (कच्चायणस्स गोत्तं खदयं) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक परिव्राजकने (दोच्चंपि) બીજી અને (तच्चपि) त्रीजी वभत पणु (इणमक्खेव) એજ પ્રશ્નો (पूच्छे) पूछ्यां કે (मागहा!) હે मागध! (હે स्कन्दक) (किं स अते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि) લોક

छाया—तत खलु श्रावस्त्यां नगर्यां शृंगाटक० यावत् पथेषु महाजनशब्दः इति वा जनव्यूह इति वा यावत् पर्षद् निर्गच्छति। ततः खलु तस्य स्कन्दकस्य कात्यायनगोत्रस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य अयमेतद्रूप आध्यात्मिकः चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः समुदपद्यत। एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतंगलायां नगर्यां बहिः छत्रपलाशके चैत्ये संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति, तद् गच्छामि खलु श्रमणं भगवन्तं महावीरं

(सिंघाडग जाव पहेसु) जो शृङ्गाटक-त्रिकोणमार्ग जहां तीन मार्ग मिलते हों जहां चार मार्ग मिलते हों ऐसे अनेकप्रकारके मार्गों में (महया जण संमद्दे वा जण वूहेइ वा) लोगोंकी बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई और लोक भगवानके पधारने की बातें करने लगे (जाव परिसा निग्गच्छइ) यावत् सभा निकली (तएणं) इसके पश्चात् (कच्चायणसगोत्तस्स तस्स खंदयस्स) कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक के मन में (बहुजणस्स अन्तिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म) अनेक मनुष्यों के पास से इस अर्थ को भगवान् महावीर के आगमन रूप समाचार को सुन करके और उसे अपने हृदय में निश्चित करके (इमे) यह (एयारूवे) इसरूप (अज्झत्थिए) आध्यात्मिक (चिंतिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित (पत्थिए) प्रार्थित (मणोगए) मनोगत (संकप्पे) संकल्प (समुप्पज्जित्था) उत्पन्न हुआ। कि (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए) श्रमण भगवान महावीर कृतंगला नगरी के बहिया (छत्तपलासए) चेइए) जो छत्रपलाशक नाम का चैत्य है उस में (संजमेणं तवसा

(सिंघाडग जाव पहेसु) શૃંગાટકમાં- જ્યાં ત્રણ માર્ગો ભળતા હોય, ચાર માર્ગો ભળતાં હોય, એવી રીતે અનેક પ્રકારના માર્ગોમાં (महया जणसंमद्दे वा जणवूहेइ वा) લોકોનો મોટો સમુદાય એકઠો થઈ ગયો અને લોકો ભગવાનના આગમનની વાતો કરવા લાગ્યા (जाव परिसा निग्गच्छइ) લોકોની પરિષદ પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવાને નીકળી ઇત્યાદિ તમામ સૂત્રપાઠ અહીં સમજી લેવો (तएणं) ત્યાર બાદ (कच्चायणसगोत्तस्स तस्स खंदयस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म) અનેક માણસો પાસેથી ભગવાન મહાવીરના આગમનના સમાચાર સાંભળીને અને તેને પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરીને તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજકના મનમાં (इमे) આ (एयारूवे) પ્રકારનો (अज्झत्थिए) આધ્યાત્મિક, (चिंतिए) ચિન્તિત, (कप्पिए) કલ્પિત, (पत्थिए) પ્રાર્થિત (मणोगए) મનોગત (संकप्पे) સંકલ્પ (समुप्पज्जित्था) ઉત્પન્ન થયો- કે (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए

चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगए संकप्प समुप्पज्जित्थो एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि। सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता, इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता जेणेव परिव्वायगावसहे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तिदंडं च कंचणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च छण्णालयं च अंकुसयं च पवित्तयं च गणेत्तियं च छत्तयं च उवाहणओ य पाउयाओ य धाउरत्ताओ य गेण्हइ गेण्हित्ता परिव्वायगावसहाओ पडिनिक्खमइ परिनिक्खमित्ता तिदंडं कुंडिय-कंचणिय-करोडिय-भिसिय-केसरिय—छण्णालय-अंकुसय पवित्तय-गणेत्तिय-हत्थगए छत्तोवाणहसंजुत्ते धाउरत्तवत्थपरिहिए सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० ८ ॥

" तएणं सावत्थीए " इत्यादि ।

सूत्रार्थ-(तएणं) इसके बाद (सावत्थीए नयरीए) उस श्रावस्तीनगरी में

" तए ण सावत्थीए " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(तएण) त्यार पाछ (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरीमां

छाया—ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां शृंगाटक० यावत् पथेषु महाजनसंमर्द इति वा जनव्यूह इति वा यावत् पर्षद् निर्गच्छति। ततः खलु तस्य स्कन्दकस्य कात्यायनगोत्रस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य अयमेतद्रूप आध्यात्मिकः चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः समुदपद्यत। एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतंगलायां नगर्याः बहिः छत्रपलाशके चैत्ये संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति, तद् गच्छामि खलु श्रमणं भगवन्तं महावीरं

(सिंघाडग जाव पहेसु) जो शृङ्गाटक-त्रिकोणमार्ग जहां तीन मार्ग मिलते हों जहां चार मार्ग मिलते हों ऐसे अनेकप्रकारके मार्गों में (महया जण संमद्देइ वा जण वूहेइ वा) लोगोंकी बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई और लोक भगवानके पधारने की बातें करने लगे (जाव परिसा निग्गच्छइ) यावत् सभा निकली (तएणं) इसके पश्चात् (कच्चायणसस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स) कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक के मन में (बहुजणस्स अन्तिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म) अनेक मनुष्यों के पास से इस अर्थ को भगवान् महावीर के आगमन रूप समाचार को सुन करके और उसे अपने हृदय में निश्चित करके (इमे) यह (एयारूवे) इसरूप (अज्झत्थिए) आध्यात्मिक (चिंतिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित (पत्थिए) प्रार्थित (मणोगए) मनोगत (संकप्पे) संकल्प (समुप्पज्जित्था) उत्पन्न हुआ। कि (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए) श्रमण भगवान महावीर कृतंगला नगरी के बहिया (छत्तपलासए) जो छत्रपलाशक नाम का चैत्य है उस में (संजमेणं तवसा

(सिंघाडग जाव पहेसु) શૃંગાટકોમાં- જ્યાં ત્રણ માર્ગો ભળતા હોય, ચાર માર્ગો ભળતા હોય, એવી રીતે અનેક પ્રકારના માર્ગોમાં (महया जणसंमद्देइ वा जणवूहेइ वा) લોકોનો મોટો સમુદાય એકઠો થઈ ગયો અને લોકો ભગવાનના આગમનની વાતો કરવા લાગ્યા (जाव परिसा निग्गच्छइ) લોકોની પરિષદ્ પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવાને નીકળી ઇત્યાદિ તમામ સૂત્રપાઠ અહીં સમજવો જોઇએ (तएणं) ત્યાર બાદ (कच्चायणसस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स बहुजणस्स अन्तिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म) અનેક માણસો પાસેથી ભગવાન મહાવીરના આગમનના સમાચાર સાંભળીને અને તેને પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરીને તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજકના મનમાં (इमे) આ (एयारूवे) પ્રકારનો (अज्झत्थिए) આધ્યાત્મિક (चिंतिए) ચિન્તિત (कप्पिए) કલ્પિત, (पत्थिए) પ્રાર્થિત, (मणोगए) મનોગત (संकप्पे) સંકલ્પ (समुप्पज्जित्था) ઉત્પન્ન થયો- કે (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए

वन्दे नमस्यामि श्रेयः खलु मम श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दित्वा नमस्थित्वा सत्कृत्य संमान्य कल्याणं मंगलं दैवतं चैत्यं पर्युपास्य इमान् च खलु एतद्रूपान् अर्थान् हेतून् प्रश्नान् करणानि व्याकरणानि प्रष्टुमिति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य यत्रैव परिव्राजकावसथः तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त्रिदण्डं च कुण्डिकां च कांच-

---

अप्पाणं भावे माणे विहरइ) संयम और तप से अपनी आत्माको भावित करते हुए विराजते हैं (तं गच्छामि णं भगवं महावीर वंदामि नमंसामि इसलिये में उनके पास जाऊँ और उन्हें वंदना करूँ और नमस्कार करूँ (सेयं खलु में) इसी में मेरा कल्याण हैं कि मै (समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता) श्रमण भगवान महावीर को वंदना नमस्का करके (सक्कारित्ता) उनका सत्कार करके (सम्माणित्ता) उनका सन्मान करके तथा (कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता) कल्याणस्वरूप मंग लस्वरूप, धर्मदेव स्वरूप चैत्य ज्ञान स्वरूप उनकी पर्युपासना करके (इमाइं च णं एयारूवाइं हेऊइं पसिणाई अट्ठाइं) इन इनरूप अर्थों को हेतुओं को, प्रश्नोंको (कारणाइं वागरणाइं) कारणोंको व्याकरणोंका (पुच्छित्तए) पूछुं। (त्तिकट्टु) ऐसा मनमें विचार करके (एवं संपेहेइ) ऐसा उसने विचार किया (संपेहित्ता) ऐसा विचार करके फिर वह (जेणेव परिव्वायगावसहे) जहां परिव्राजकों का मठ था (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर गया। (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के (तिदंडं च कुंडियं कंचणियं च

संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे माणे विहरइ) श्रमण भगवान महावीर, कृतंगला नगरीनी बहार छत्रपलाशक नामनु जे चैत्य (उद्यान) छे तेमा संयम अने तपथी पोताना आत्माने भावित करता बिराजे छे (त गच्छामि ण समण-भगव महावीर वंदामि, नमसामि) तेमनी पासे हु जउं अने तेमने वदन नमस्कार करुं (सेय खलु मे) एभां ज मारु श्रेय छे (समण भगवं-महावीरं व दित्ता नम सित्ता) श्रमण भगवान महावीरने वंदन नमस्कार करीने (सकारित्ता सम्माणित्ता) तेमनो सत्कार तथा सन्मान करीने तथा (कल्लाण-मंगल देवयं चेइय पज्जुवासित्ता) कल्याण स्वरूप, मगळस्वरूप, धर्मदेव स्वरूप, चैत्य (ज्ञान) स्वरूप, महावीर प्रभुनी पर्युपासना करीने (इमाइं च णं एया-रूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइ) आ प्रकारना अर्थो, हेतुओ, प्रश्नो (कारणाइं वागरणाइं) कारणो, अने व्याकरणो, विषे (पुच्छित्तए) तेमने पूछु (त्ति क) आ प्रमाणे मनमा विचार कर्यो, (एवं सपेहेइ) ए प्रमाणे सकल्प कर्यो (संपेहित्ता) एवो विचार करीने (जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ) ज्या परिव्राजको रहेता हता तेमठमा तेओ गया. (उवागच्छित्ता) त्या जईने

सिकां च करोटिकां च केसरिकां च पण्णालकं च अङ्कुशं च पवित्रकं च गणेत्रिकां च छत्रकं च उपानहौ च पादुके च धातुरक्ताश्च गृह्णाति, गृहीत्वा परिव्राजकावसथात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य त्रिदण्ड-कुण्डिका-कांचनिका-करोटिका वृषिका- केसरिका-पण्णालकाङ्कुशक-पवित्रक-गणेत्रिका-हस्तगतः छत्रोपानत् संयुक्तो धातुरक्तवस्त्रपरिहित आवस्त्या नगर्या मध्य मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य

सिसियं च करोडियं च केसरियं च) उसने वहां से त्रिदण्ड कुण्डी, रुद्राक्ष माला, करोटिका वृषिका आसन, केशरिका (छण्णालयं च) षण् नालक त्रिकाष्ठिका, (अंकुसयं च) अंकुशक-वृक्षों के ऊपरसे पत्तों आदि को एकत्रित कर ने के निमित्त अंकुश के जैसा एक प्रकारका (पवित्तियं च) पवित्रक अंगुलीयक (गणेत्तियं च) गणेत्रिका (छत्तयं च छत्तक (उवाहणाओय) पगरखे (पाउयाओय) काष्टकी खडाऊँ (धाउरत्ताओ) और गैरिक आदि धातुओंसे रक्त वस्त्रिकाको लिया (गेण्हइ) गेण्हिता और लेकर (परिव्वायगावसहाओ) परिव्राजकावसथ मठसे (पडिनिक्खमइ) बहार निकला (पडिनिक्खमित्ता) बाहर निकल कर (तिदंडं छिय कुंडियं कंचणियं करोडियं भिसियं केसरियं-छण्णालयं-अंकुसयं-पवित्तयं गणेत्तियं हत्थगए) त्रिदण्ड कुण्डिका कांचनिका करोटिका केशरिका, षण्नालका, अंकुशक, पवित्रक, गणेत्रिक, इन सब को हाथ में रखकर (छत्तोवाहणसजुत्ते) छत्र को लानकर और उपानह पगरखे पहन

(तिदंड च कुंडियं च कंचणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च) તેમણે ત્યાંથી ત્રિદંડ, કમંડળ, રુદ્રાક્ષની માળા, કરોટિકા (માટીનું પાત્ર વિશેષ) વૃષિકા-આસન કેશરિકા (મોટું સાદ કપડા માટેનો રૂમાલ) (छण्णालयं च) ષડ્નાલક-ત્રિકાષ્ઠિકા (अंकुसयं च) અંકુશક વૃક્ષો પરથી પાંદડાઓને ખેંચવા કરવા માટેનું અંકુશના આકારનું સાધન, (पवित्तियं च) પવિત્રક અંગૂઠી (गणेत्तियं च) ગણેત્રિકા, (छत्तयं च) છત્ર (उवाहणाओ च) પગરખા (पाउयाओ च) પાદુકાઓ ધાતુરક્તો) અને ગેરિક વગેરે ધાતુઓ વડે રંગેલા વસ્ત્રો (गेण्हइ) લીધા (गेण्हित्ता) તે બધી વસ્તુઓ લઈને (परिव्वायगावसहाओ) પરિવ્રાજકોના મઠમાંથી (पडिनिक्खमइ) તેઓ બહાર નીકળ્યા, (पडिनिक्खमित्ता) બહાર નીકળીને (तिदंडं कुंडियं कंचणियं, करोडियं, भिसियं केसरियं छण्णालयं अंकुसयं पवित्तयं, गणेत्तियं हत्थगए) ત્રિદંડ, કમંડળ, રુદ્રાક્ષની માળા કરોટિકા વૃષિકા, કેશરિકા ત્રિકાષ્ઠિકા, અંકુશક અંગૂઠી અને ગણેત્રિકાને હાથમાં પકડીને (छत्तोवाहणसजुत्ते) છત્રી લઈને અને પગ

यत्रैव कृतगला नगरी यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम् यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीर-स्तत्रैव प्राधारयत् गमनाय ॥ सू० ८ ॥

टीका—' तएणं सावत्थीए नयरीए ' ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां ' सिंघाडगजाव पहेसु' शृङ्गाटक यावत् पथेषु, इह यावत्पदेन—त्रिचतुष्क चत्वरमहापथानां संग्रहः करणीयः । तथा च—त्रिकोणमार्गे, मार्गत्रयसंमिलनस्थाने, चतुर्मार्गसंमि-

कर (धाउरत्त परिहिए) तथा गैरिक धातुसे रंगे हुए वस्त्रोंको पहिनकर वह स्कन्दक (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी के (मज्झं मज्झेणं) ठीक बीच के मार्ग से (निगच्छइ) निकला (निगच्छित्ता) निकल कर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) और जहां वह छत्र पलाशक नाम का चैत्य था (जेणेव समणे भगवं महावीरे) तथा उसमें जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस तरफ जानेको रवाना हुआ ।

टीकार्थ—(तएणं सावत्थीए नयरीए) जब स्कन्दक परिव्राजक से वैशालिक श्रावक निर्ग्रन्थ पिंगलक ने पांच प्रश्न पूछे और कई बार दुहराने पर भी जब स्कन्दक को उनके उत्तर देने में सर्वथा मौनावलम्बन करना पड़ा—उस समय स्वयं स्कन्दक की आत्मा में इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर पानेके लिये जिज्ञासु भाव हुआ । ठीक इसी समय उस श्रावस्ती नगरी में श्रमण भगवान् महावीर का पदार्पण हुआ । लोगोंके मुख से स्कन्दक ने प्रभु का आगमन सुनकर अपने अहोभाग्य की सराहना की

રખા પહેરીને (धाउर परिहिए) ગૈરિક ધાતુથી રંગેલાં વસ્ત્રો પહેરીને તે સ્કંદક (सावत्थीए नयरीए मज्झमज्झेण निगच्छइ) શ્રાવસ્તી નગરીના મધ્યના માર્ગેથી નીકળ્યા (निगच्छित्ता) ત્યાથી નીકળીને (जेणेव कयगला नयरी, जेणेव छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) જ્યા કૃતગલા નગરી હતી,અને જ્યા છત્રપલાશક નામનુ ચૈત્ય હતુ તેની ત્યમા (ઉદ્યાનમા) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા, તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા.

ટીકાર્થ– (तए ण सावत्थीए नयरीए) જ્યારે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને વૈશાલિક શ્રાવક મહાવીરના ઉપાસક પિંગલક નિર્ગ્રંથે પાચ પ્રશ્નો પૂછ્યા અને તે પ્રશ્નો ત્રણ વખત પૂછવા છતા પણ તેઓ તેનો ઉત્તર આપી શકયા નહી ત્યારે તે પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાની જિજ્ઞાસા તેમના સ્કન્દકના મનમા જાગી અને તે સમયે યોગ પણ એવો બન્યો કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું એજ સમયે શ્રાવસ્તી નગરીમા શુભાગમન થયુ લોકોને મુખેથી પ્રભુના આગમનના સમાચાર સાભળીને સ્કન્દકે પોતાના સૌભાગ્યની પ્રશંસા કરી અને તે

कलस्थाने, अनेकमार्गसम्मिलनस्थाने राजमार्गे सामान्यमार्गे च 'महया जणसंमद्देइ वा' महाजनसमर्द इति वा-जनानामत्यन्तसघर्षः 'भीड' इति भाषाप्रसिद्धा, 'जणवूहेइ वा' जनव्यूह इति वा-वृन्दरूपेण जनसमूहः, इत्यादि 'जाव परिसा निग्गच्छइ' यावत् परिषन्निर्गच्छति । विशेषव्याख्यानं तु-औपपातिकसूत्रस्य पूर्वार्धेऽष्टत्रिंशत्तमसूत्रे मत्कृतचन्द्रिकाख्यायां टीकायामवलोकनीयम् ।

'तएणं' ततः खलु तदनन्तरं परिषदो निर्गमनानन्तरम्, खलु इति वाक्यालङ्कारे, 'तस्स खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स' तस्य स्कन्दकस्य कात्यायन

और इन प्रश्नों के यथार्थ उत्तर पाने की अभीलाषा से वह उनके समीप पहुँचा इसी बात को सूत्रकार कहते हैं कि पांच प्रश्नों को सुनकर जब स्कन्दक इंगित काक्षित आदि विशेषण संपन्न मनवाला तब ठीक इसी अवसर पर श्रावस्ती नगरी के शृङ्गाटक आदि अनेक मार्गों पर अर्थात् सिंघाडा के आकार के मार्ग में त्रिकोण मार्ग में-तीन रास्तों से संमिलित स्थानमें, चार मार्ग वाले स्थान में अनेक मार्गों से संमिलित स्थान में, राजमार्ग में और सामान्य मार्ग में, "महया जणसंमद्देइ" मनुष्यों की बहुत बड़ी भारी भीड़ अथवा "जणवूहेइवा" जनव्यूह-प्रभु के आगमन की आपस में बातें करने वाले जनसमूह 'जाव' यावत्-परिषत्-सभा निकली। इस विषय का विशेष वर्णन औपपातिक सूत्र के पूर्वार्ध में अडतीसवें सूत्र को मेरे द्वारा विरचित चन्द्रिकापर्षिणी टीकामें देख लेना चाहिये। (तएणं) सभाके निकलने के बाद "कच्चायणसस्स गोत्त

પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાની ઇચ્છાથી તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક અત્યન્ત મહાપીલની પાસે ગયા છે આ પ્રસંગનું આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે

પિંગલક નિર્ગ્રન્થના પાંચ પ્રશ્નોથી ચકિત કલ્પિત વગેરે મનોભાવથી યુક્ત બનેલા તે સ્કન્દકને મહાવીર પ્રભુના આગમનના સમાચાર કેવી રીતે મળ્યા તે સૂત્રકાર બતાવે છે

'सिंघाडग जाव पहेसु' શ્રાવસ્તી નગરીના શૃંગાટક ત્રિકોણના આકારના વગેરે અનેક માર્ગો પર બહુ માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને, ચાર માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને અનેક માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને, રાજ માર્ગ પર અને સામાન્ય માર્ગ પર 'महाजन सद्द इ' માણસોની ઠઠ જામી હતી, અને 'जणवूहेइ वा" તે જન સમૂહ જાણવા મહાવીરના આગમનની વાત કરી રહ્યો હતો 'जाव' પદથી અહીં પરિષદ નીકળી જાણવાને અર્થપિંડિકા રૂપિ ૬ ત્રિંશદ્ધ પદ ગ્રહણ કરવો આ વિષયનું વિશેષ વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વાર્ધનું ૩૮ માં સૂત્રની મારા વડે લખાયેલી ચન્દ્રિકા ટીકામાંથી જોઈ લેવું 'खंदयं च' પરિષદ નિકળ્યા બાદ પછી 'कच्चायणस्स' તિષ્ય પદમાં

यत्रैव कृतंगला नगरी यत्रैव छत्रपलाशक चैत्यम् यत्रैव श्रमणो भगवान महावीरस्तत्रैव प्रादुरभवत् गमनाय ॥ सू० ८ ॥

टीका—' तएणं सावत्थीए नयरीए ' ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां ' सिंघाडगजाव पहेसु' शृङ्गाटक यावत् पथेषु, इह यावत्पदेन–त्रिचतुष्क चत्वरमहापथानां संग्रहः करणीयः । तथा च—त्रिकोणमार्गे, मार्गत्रयसंमिलनस्थाने, चतुर्मार्गसंमि-

कर (धाउरत्त परिहिए) तथा गैरिक धातुसे रंगे हुए वस्त्रोंको पहिनकर वह स्कन्दक (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी के (मज्झं मज्झेणं) ठीक बीच के मार्ग से (निगच्छइ) निकला (निगच्छित्ता) निकल कर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) और जहां वह छत्र पलाशक नाम का चैत्य था (जेणेव समणे भगवं महावीरे) तथा उसमें जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस तरफ जानेको रवाना हुआ ।

टीकार्थ—(तएणं सावत्थीए नयरीए) जब स्कन्दक परिव्राजक से वैशालिक श्रावक निर्ग्रन्थ पिंगलक ने पांच प्रश्न पूछे और कई बार दुहराने पर भी जब स्कन्दक को उनके उत्तर देने में सर्वथा मौनावलम्बन करना पड़ा–उस समय स्वयं स्कन्दक की आत्मा में इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर पानेके लिये जिज्ञासु भाव हुआ । ठीक इसी समय उस श्रावस्ती नगरी में श्रमण भगवान् महावीर का पदार्पण हुआ । लोगोंके मुख से स्कन्दक ने प्रभु का आगमन सुनकर अपने अहोभाग्य की सराहना की

રખાં પહેરીને (धाउरत्त परिहिए) ગૈરિક ધાતુથી રંગેલા વસ્ત્રો પહેરીને તે સ્કંદક (सावत्थीए नयरीए मज्झमज्झेण निगच्छइ) શ્રાવસ્તી નગરીના મધ્યના માર્ગેથી નીકળ્યા (निगच्छित्ता) ત્યાંથી નીકળીને (जेणेव कयंगला नयरी, जेणेव छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) જ્યાં કૃતંગલા નગરી હતી,અને જ્યાં છત્રપલાશક નામનું ચૈત્ય હતું તેથી ત્યાંના (ઉદ્યાનમાં) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા, તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા.

ટીકાર્થ– (तए णं सावत्थीए नयरीए) જ્યારે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને વૈશાલિક શ્રાવક મહાવીરના ઉપાસક પિંગલક નિર્ગ્રંથે પાંચ પ્રશ્નો પૂછ્યા અને તે પ્રશ્નો ઘણુ વખત પૂછવા છતા પણ તેઓ તેનો ઉત્તર આપી શકયા નહી ત્યારે તે પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાની જિજ્ઞાસા તેમના સ્કન્દકના મનમાં જાગી અને તે સમયે યોગ પણ એવો બન્યો કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું એજ સમયે શ્રાવસ્તી નગરીમા શુભાગમન થયુ લોકોને મુખેથી પ્રભુના આગમનના સમાચાર સાભળીને સ્કન્દકે પોતના સૌભાગ્યની પ્રશંસા કરી અને તે

एव विचार इष्टरूपेण मनसि स्वीकृत पुष्पित इव ४, 'मणोगए सकप्पे' मनो गतः सकल्प =मनसि दृढरूपेण निश्चयः 'इत्थयेव भगवान् मया मष्टव्या' इत्येव रूपो विचारः फलित इव ५ 'समुप्पज्जित्था' समुदपद्यत=समुत्पन्नः। तदेवाह- 'एवं खलु समणे' इत्यादि, 'एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए सजमेणं तवसा अप्पाण भावेमाणे विहरइ' एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतगलायाः नगर्या बहि छत्रपलाशके चैत्ये सयमेन तपसा आत्मान भावयन् विहरति, 'त गच्छामि णं' तत्-तस्मात्कार

રૂપમા તે સકલ્પ પરિણત થયેલ હોવાથી પલ્લવિત થયો હોય તેમ કલ્પિત હતો "पत्तीए" અભિલાષા રૂપ હતો એટલે તે વિચારને મનમાં દૃઢરૂપે સ્વીકારેલો હતો તેથી પુષ્પપુટ હતાની જેમ પ્રમિત હતો તથા તે સકલ્પ હજી સુધી કોઇની પાસે પણ પ્રકટ કરેલો ન હતો તે કારણે તે મનોગત હતો પછી તેમણે મનમા એવો દૃઢ નિશ્ચય કર્યો કે ભગવાનની પાસે જઇને આ પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર પૂછીશ જેમ ફલને ફળ આવે છે તેમ તે પ્રશ્નોના ઉત્તર જાણવારૂપ ફલની પ્રાપ્તિ માટે તેઓ આતુર થયા હતા

ઇત્યાદિ પરિવ્રાજકના મનમાં આ પ્રમાણે વિચાર થયો- 'एव खलु समणे भगवं महावीरे कयगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाण विहरइ' અર્થાત્ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કૃતગલા નગરીની બહાર આવેલા છત્રપલાશક ઉદ્યાનમા તપ અને સયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિરાજમાન છે તો ચલું મારા સાભાગ્યે આ સુદર અવસર પ્રાપ્ત

गोत्रस्य 'बहुजणस्स अंतिए' बहुजनस्यान्तिके 'एयमट्ठं' एतमर्थं=भगवदागमन तन्महिमारूपं 'सोच्चा' श्रुत्वा 'निसम्म' निशम्य=हृद्यवधार्य 'इमे एयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगएसंकप्पे समुपज्जित्था' अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः समुदपद्यत, तत्र-'इमेयारूवे' अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणप्रकारकः 'अज्झत्थिए' आध्यात्मिकः=आत्मगतो विचारः अङ्कुर इव १, तदनु 'चिंतिए' चिन्तितः-'किं सान्तो लोकः, अनन्तो लोकः ?' इत्यादि प्रश्नोत्तररूपो विचारः द्विपत्रित इव २, 'कप्पिए' कल्पितः= स एव व्यवस्थायुक्तः 'इममेवं लोकादीनां सान्तानन्तत्वज्ञानरूपं विषयं प्रक्ष्यामी'-ति कार्याकारेण परिणतो विचारः पल्लवित इव ३। 'पत्थिए' प्रार्थितः=स

स्स तस्स खंदयस्स" उस कात्यान गोत्रवाले स्कन्दक परिव्राजकके मनमें (इमे एयारूवे) यह इस प्रकार का (संकप्पे) संकल्प विचार उत्पन्न हुआ। यह संकल्प कब हुआ तो उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा) जब उसने अनेक जनों के पास से यह भगवान महावीर के आगमन रूप अथवा उनकी महिमारूप अर्थको समाचार को सुना और हृदयमें उसे धारण कर लिया सुनने और हृदय में धारण कर ने के बाद ऐसा संकल्प विचार (समुप्पज्जित्था) उत्पन्न हुआ। वह संकल्प कैसा था इसी बात को इन वक्ष्यमाण विशेषणों से विशेषित करते हुए सूत्रकार कहते हैं (अज्झत्थिए) वह संकल्प अङ्कुर की तरह आत्मगत विचाररूप होने से आध्यात्मिक था "चिंतिए" (किं सान्तो लोकः अनंतो लोकः) इत्यादि प्रश्नोत्तररूप होने के कारण द्विपत्रित की तरह चिन्तित था। (कप्पिए) कल्पित था मै प्रभु से लोक अलोकादिकों के सान्त अनन्त होने की बात को पूछूंगा इस

सोच्चा" ज्यारे तेणे घणा लोकोने मुखेथी भगवान महावीरना आगमनना समाचार साभळ्या अने ज्यारे तेने हृदयमा धारण कर्या त्यारे "कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स" कात्यायन गोत्रीय ते स्कन्दकना मनमा आ प्रकारनो संकल्प "समुप्पज्जित्था" उत्पन्न थयो ते संकल्प केवा प्रकारनो हतो ते सूत्रकारे नीचेना विशेषणो द्वारा बताव्युं छे "अज्झत्थिए" एटले के अंकुश नी माफक आत्मगत विचाररूप होवाथी ते संकल्प आध्यात्मिक हतो चिंतिए" एटले के लोक अन्तसहित छे के रहित छे इत्यादि प्रश्नोत्तर रूप होवाने कारणे द्विपत्रनी जेम (अंकुरमाथी जे बे कुमळी पांदडीओ फूटे छे तेने द्विपत्र कहे छे) चिन्तित हतो "कप्पिए" कल्पित हतो. एटलेके हुं भगवानने लोक अन्तसहित छे के अन्त रहित छे ए वात पूछीश इत्यादि कल्पना रूप विचा-

गम्यत्वात् हेतवो लोकस्य सांतत्वानन्तत्वादय एव तान् 'पसिणाइं' प्रश्नान् प्रश्न विषयत्वात् प्रश्ना एते एव लोकसांतत्वानन्तत्वादयस्तान् 'कारणाइं' कारणानि, उपपत्तिमात्र कारणात्, उपपत्ति विषयत्वादेवान्येव लोकसान्तत्वानन्तत्वादीनि कारणानि 'वागरणाइं' व्याकरणानि-व्याक्रियमाणत्वात्-निर्णीयमानत्वात् व्याकरणानि लोकसांतत्वा नन्तत्वादीनि 'पुच्छित्तए' प्रष्टुम्, प्रष्टुं मेव इति पूर्वे मान्वयः, 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा, इति मनसि विचिन्त्य, 'एवं संपेहेइ' एवं संप्रेक्षते, एवं-पयोक्तप्रकार भगवद्वन्दनादिकरणं संप्रेक्षते=पर्यालोचयति, 'संपेहित्ता' संप्रेक्ष्य पर्यालोच्य 'जेणेव परिव्वायगावसहे' यत्रैव परि

सान्तता अनन्तता रूप हेतुओं को (पसिणाइं) प्रश्नों के विषय भूत होने के कारण लोकादिकों की इन सान्तता अनन्तता रूप प्रश्नों को (कारणाइं) उपपत्तिके विषय भूत होनेसे इन लोककी सान्तता अनन्तता रूप कारणों को, (वागरणाइं) एवं व्याक्रियमाण होनेसे लोककी सान्तता अनन्ततारूप निर्णय करनेयोग्य व्याकरणों को (पुच्छित्तए) पूछ लूं (सेयं खलु मे) मेरा कल्याण है। यह बात निश्चित है। (त्ति कट्टु एवं संपेहेइ) इस कारणको लेकर उसने भगवानको वंदना आदि करनेका विचार किया 'संपेहित्ता' विचारकरके फिर वह (जेणेव परिव्वायगावसहे) जहां परिव्राजकों का मठ था (तेणेव उवागच्छइ) वहां गया (उवागच्छित्ता) वहां आकर के वहांसे उसने (तिदंडं) त्रिदण्ड को परिव्राजकों के दण्ड विशेष को कुंडियं कमण्डलु को 'कंचणियं' रुद्राक्ष मालाको (करोडियं च) मिट्टीके भाजन विशेष को (मिसियं च) आसन विशेष को (केसरियं च) वस्त्रादिक को

રૂપ હેતુઓ "पसिणाइं" પ્રશ્નોને વિષયભૂત હોવાને કારણે લોક વગેરેની સાન્તતા અથવા અનન્ત રૂપ તે પ્રશ્નો "कारणाइं" ઉત્પત્તિના વિષય રૂપ હોવાથી તે લોક વગેરેની સાન્તતા અથવા અનન્તતા રૂપ કારણો "वागरणाइं" અને વ્યાક્રિયમાણ હોવાથી લોકની સાન્તતા રૂપ વ્યાકરણો તાત્પર્ય એ છે કે તે પાંચે પ્રશ્નોના ઉત્તર ભગવાન મહાવીર સ્વામી પાસેથી જ આવે એમ જાણી એવો વિચાર સાન્તતા અનન્તતા મનમાં ઉદ્ભવ્યો "त्ति कट्टु एवं संपेहेइ" આ કારણે તેણે ભગવાન મહાવીરને વંદન વગેરે કરવાનો સંકલ્પ કર્યો. "संपेहित्ता" એવો સંકલ્પ કરીને તેઓ "जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ" જ્યાં પરિવ્રાજકોનો મઠ હતો ત્યાં જઈ "उवागच्छित्ता" ત્યાં જઈને તેમણે ત્યાંથી "तिदंडं" ત્રિદંડ પરિવ્રાજકોને (પાળવું કરવાનો ખાસ પ્રકારનો દંડ) "कुंडियं" કમંડળ "कंचणियं" રુદ્રાક્ષની માળા "करोडियं च" માટીનું પાત્ર "मिसियं च" આસન, "केसरियं च" શિલ્પ વગેરેને સાફ કરવા માટેનો કપડાનો

णाइ गच्छामि खलु ' समणं भगवं वन्दामि नमसामि ' श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दे नमस्यामि ' सेयं खलु मे ' श्रेयः खलु मे, ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्त महावीरम् ' वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता ' वन्दित्वा नमस्थित्वा सत्कृत्य सम्मान्य ' कल्लाणं मगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता ' कल्याणं= कल्याणस्वरूपं, मंगलस्वरूपम्, दैवतम्=धर्मदेवस्वरूपं, चैत्यं-ज्ञानस्वरूप भगवन्तम् पर्युपास्य ' इमाइ च णं एयारूवाइ ' इमान खलु एतद्रूपान् इमान् = मम मनसि स्थितान् एतद्रूपान्=लोकादीनां सान्तत्वानन्तत्वरूपान् अर्थान् भावान् लोकादिसान्तत्वानंतत्वादीन् ' हेऊइ ' हेतून् — अन्वयव्यतिरेकस्वरूपहेतु

गच्छामि णं " इसलिये मैं अब वहींपर जाऊँ, वहां जाकर मैं पहले " समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि " श्रमण भगवान महावीर को वंदन करूँ-उन्हें नमस्कार करूँ। "समणं भगवं महवीरं वंदित्ता नमंसित्ता " श्रमण भगवान महावीर को वंदन नमस्कार करके " सक्कारित्ता सम्माणित्ता " उनका सत्कार करके सन्मान करके तथा "कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासिता" कल्याण स्वरूप, मंगल स्वरूप, धर्मदेव स्वरूप, चैत्य-ज्ञानस्वरूप श्री भगवान महावीर प्रभुकी पर्युपासना करके (इमाइं च णं एयारूवाइं) उनसे इन इस प्रकार के अर्थात् मेरे मन में स्थित लोक आदिकों की सान्त अनन्तरूप (अट्ठाइं) अर्थों को (हेऊयाइं) अन्वय व्यतिरेक रूप हेतु से गम्य होने के कारण। लोकादिकों की इन

થયો છે " त गच्छामि " તો હું તેમની પાસે જઉ ત્યા જઇને પહેલા તો હું " समण भगवं महावीरं वदामि नमसामि " શ્રમણ ભગવાન વહાવીરને વંદન નમસ્કાર કરૂ " समण भगवं महावीर वदित्ता नमसित्ता " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કરીને, सक्कारित्ता सम्माणित्ता " તેમનો સત્કાર કરીને તથા સન્માન કરીને, તથા " कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता " કલ્યાણ સ્વરૂપ મંગળ સ્વરૂપ ધન્ય સ્વરૂપ ચૈત્ય જ્ઞાન સ્વરૂપ શ્રી મહાવીર પ્રભુની પર્યુપાસના (સેવા) કરીને " इमाइं च णं एयारूवाइं " તેમને આ પ્રકારના એટલે કે લોકની સાન્તતા અનન્તતા વગેરે રૂપ " अट्ठाइं " અર્થો, " हेऊयाइ " હેતુઓ, " पासिणाइ " પ્રશ્નો, " कारणाइ " કારણો " वागरणाइ " અને વ્યાકરણો વગેરે " पुच्छित्तए " પૂછવુ " सेयं खलु मे " એમાં જ મારૂ શ્રેય છે એ વાતમા કોઈ શકાને સ્થાન નથી, હવે " अट्ठाइं " વગેરેના અર્થ સમજાવવામા આવે છે " अट्ठाइ " લોકની અન્ત સહિતતા કે અન્ત રહિતતા વગેરે રૂપ સામાન્ય અર્થ " हेऊयाइं " અન્વય, વ્યતિરેક રૂપ હેતુઓથી સમજી શકાય તેમ હોવાથી [illegible] લોકાદિકોની સાન્તતા કે અનન્તતા

परिव्राजकावसथात् परिव्राजकाश्रमात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति निस्सरति, 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य निस्सृत्य 'तिदंड-कुंडिय-छत्तोवाहणय-पोत्ति-केसरिय-छन्नालय-अंकुसय-पवित्तय-गणेत्तिय-हत्थगए' त्रिदण्ड-कुण्डिका-छत्रोपानत्-पोत्रिका-केशरिका-षण्नालकाङ्कुशक-पवित्रकगणेत्रिकाहस्तगत त्रिदण्डकादीनि वस्तूनि हस्ते गतानि स्थितानि यस्य स तथा पूरित सर्वोपकरण इत्यर्थः, 'छत्तोवाहणसजुत्ते' छत्रोपानत्संयुक्त 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' धातुरक्तवस्त्रपरिहितः, परिहितधातुरक्तवस्त्रो धातुना गैरिकेण रक्तं वस्त्रं परिधापितवानित्यर्थः, स्कन्दकः 'सावत्थीए नयरीए' श्रावस्त्यां नगर्यां 'मज्झं मज्झेणं' मध्येन मध्यभागेन 'निग्गच्छइ' निर्गच्छति 'निग्गच्छित्ता' निर्गत्य 'जेणेव कयंगला नयरी' यत्र कृतंगला नगरी, 'जेणेव छत्तपलासए चेइए' यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम्-उद्यानम् 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते 'तेणेव' तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' प्रधारितवान् गमनाय, भगवतः समीपे गन्तुं मनसि कृतवानित्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

इतश्च भगवत्समीपे यज्जातं तदाह—'गोयमा' इत्यादि ।

छाते को तानकर और पगरखोंको पैरों में पहिन कर (धाउरत्तवत्थपरिहिए) एवं धातुरक्त वस्त्रों को शरीर पर धारण कर वह स्कन्दक परिव्राजक (सावत्थीए) नयरीए श्रावस्ती नगरीके (मज्झं मज्झेणं) बीचों बीचके रास्ते से होकर (निग्गच्छइ) निकला और (निग्गच्छित्ता) निकलकर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) उसमें जिस तरफ छत्र पलाशक चैत्य था उसमें भी (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर उसने चलनेका निश्चय किया अर्थात् भगवान्के पास जाने के लिये वह प्रस्थित हुआ ॥ सू० ८ ॥

ભગવે કોપીને અને પગમા જોડા પહેરીને 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' અને ધાતુરક્તથી રંગેલા વસ્ત્રોને (અથવા વસ્ત્રોને) શરીર પર ધારણ કરીને સ્કન્દક પરિવ્રાજક सावत्थीए नयरीए શ્રાવસ્તી નગરીના 'मज्झं मज्झेणं' મધ્યના ભાગે થઈને "निग्गच्छइ" નીકળ્યો. निग्गच्छित्ता" આવી નીકળીને जेणेव कयंगला नयरी" જ્યાં કૃતંગલા નગરી હતી "जेणेव छत्तपलासए चेइए" તે નગરીની બહાર છત્ર પલાશક નામનુ ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતુ जेणेव समणे भगवं महावीरे" જેને તે ચૈત્યમાં જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજતા હતા "तेणेव पहारेत्थ गमणाए" તે તરફ જવાનો તેમણે નિશ્ચય કર્યો એટલે કે તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા. ॥ સૂ. ૮ ॥

व्राजकावसथः, परिव्राजकानां मठ, 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता' उपागत्य 'तिदंडं च' त्रिदण्डं च, परिव्राजकानां दण्डविशेषः, तं 'कुंडियं च' कुण्डिकां च, कुण्डिका-कमण्डलुः, ताम्, 'कंचणियं च' कांचनिकां च, कांचनिका रुद्राक्षमाला, ताम्, 'करोडियं च' करोटिकां च, करोटिका मृत्तिकाभाजनविशेषः ताम्, 'भिसियं च' भृषिकां च, भृषिका नाम आसनविशेषः, 'केसरियं च' केशरिकां च, केशरिका नाम मुखादिप्रमार्जनार्थं वस्त्रखण्डम्, ताम्, 'छण्णालयं च' षण्नालकं च, षण्नालकं त्रिकाष्ठिका तत्, 'अंकुसयं च' अङ्कुशकं च, अङ्कुशकं तरुपल्लवग्रहणार्थमंकुशाकृतिकोपकरणविशेषः, तम्, 'पवित्तयं च' पवित्रकं च, अङ्गुलीयकम् 'गणेत्तियं च' गणेत्रिकां च, गणेत्रिका कलचिकोपकरणविशेषः, ताम्, 'छत्तयं च' छत्रकं च 'उवाहणाओ य' उपानहौ च 'पाउयाओ य' पादुके च काष्ठपादुके 'धाउरत्ताओ य' धातुरक्ताश्च शाटिकाः 'गेण्हइ' गृह्णाति 'गेण्हित्ता' गृहीत्वा 'परिव्वायावसहाओ'

साफ करने के लिये वस्त्रखण्ड को छण्णालयं च त्रिकाष्टिका को, (अंकुसयं च) वृक्षोंके पत्तोंको गिरानेके लिये अंकुशकी आकृतिवाले उपकरण विशेष को, (पवित्तयं च) अंगूठी को (गणेत्तियंच) एकजात के कलाई के उपकरणको, (छत्तयं च) छातेको (उवाहणाओ) पगरखोंको (पाउयाओ) पादुकाओं को, (धाउरत्ताओ य) गैरिक आदि धातु ओं से रंगे हुए पहिरने के कपडोंको (गेण्हइ) लिया। (गेण्हित्ता) लेकर फिर वह परिव्वायावसहाओ) परिव्राजकोके मठ से (पडिनिक्खमइ) बाहर निकला। (पडिनिक्खमित्ता) बाहर निकल कर (तिदंडकुंडिय कंचणिय करोडिय भिसिय केसरिय छण्णालय अकुसय पवित्तय गणेत्तिय हत्थगए) उसने त्रिदंड को कांचनिका को, करोटिकाको वृषिका को केशरिका को, षण्नालक को, अंकुशको, पवित्रिक को गणेत्रिक को हाथ में लेकर तथा

કકડો, "छण्णालय च" ત्रिકાષ્ઠિકા, "अकुसयं च" વૃક્ષોના પાદડા નીચે પાડવા માટેનુ અંકુશના આકારનુ સાધન, 'पवित्तयं च" અગૂઠી, "गणेत्तिय च" ગણેત્રિકા કાડે પહેરવાનુ ઉપકરણ, "छत्तयं च" છત્ર, "उवाहणओ" પગરખા, "पाउयाओ" પાદુકાઓ, "धाउरत्ताओ य" ગૈરિક વગેરે ધાતુઓથી રંગેલા વસ્ત્રો વગેરે વસ્તુઓ "गेण्हइ" લીધી "गेण्हित्ता" તે વસ્તુઓ લઈને परिव्वायावसहाओ पडिनिक्खमइ" તેઓ પરિવ્રાજકોના મઠમાથી બહાર નીકળ્યા "पडिनिक्खमित्ता" તે મઠમાથી બહાર નીકળીને તેમણે "तिदंड कुडिय कचणिय करोडिय भिसिय केसरिय छण्णालय, अकुसय पवित्तय गणेत्तिय हत्थगए" ત્રિદડ, કમડળ, રુદ્રાક્ષની માળા, કરોટિકા, વૃષિકા, કેશરીકા પછુનાલક ત્રિકાષ્ઠિકા અકુશ, પવિત્રિક (અગૂઠી) અને ગણેત્રિકને હાથમા ગ્રહણ કર્યા તથા છત્ર

परिव्राजकात् परिव्राजकाश्रमात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति निस्सरति, 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य निर्गत्य 'तिदंड-कुंडिय-छत्तोवाहण-रुद्दक्ख-माला-कडच्छुय-अंकुसय-पवित्तय-गणेत्तिय-हत्थगए तिदंड कुण्डिका-छत्रोपानह-रुद्राक्ष-माला-करोटिका-वृषिका-केसरिका-पवित्रक-गणेत्रिका-हस्तगत त्रिदण्डकादीनि वस्तूनि हस्त गतानि स्थितानि यस्य स तथा गृहीत सर्वोपकरण इत्यर्थः, 'छत्तोवाहणसंजुत्ते' छत्रोपानद्संयुक्त 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' धातुरक्तवस्त्रपरिहितः, परिहितधातुरक्तवस्त्र धातुना गैरिकेण रक्त वस्त्र परिधापेत्यर्थः, स्कन्दक 'सावत्थीए नयरीए' श्रावस्त्याः नगर्याः 'मज्झं मज्झेणं' मध्य मध्येन 'निग्गच्छइ' निर्गच्छति 'निग्गच्छित्ता' निर्गत्य 'जेणेव कयंगला नयरी' यत्रैव कृतंगला नगरी, 'जेणेव छत्तपलासए चेइए' यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम्-उद्यानम् 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरो विराजते 'तेणेव' तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' प्रधारितवान् गमनाय, भगवतो पार्श्वे गन्तु प्रस्थित इत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

इतश्च भगवत्समीपे यज्जातं तदाह—'गोयमा' इत्यादि ।

छाते को तानकर और पगरखोंको पैरों में पहिन कर (धाउरत्तवत्थपरिहिए) पुनः धातुरक्त वस्त्रों को शरीर पर धारण कर वह स्कन्दक परिव्राजक (सावत्थीए) नयरीए श्रावस्ती नगरीके (मज्झं मज्झेणं) बीचों बीचके रास्ते से होकर (निग्गच्छइ) निकला और (निग्गच्छित्ता) निकलकर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) उसमें जिस तरफ छत्र पलाशक चैत्य था उसमें भी (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर उसने चलनेका निश्चय किया अर्थात् भगवानके पास जाने के लिये वह प्रस्थित हुआ ॥ सू० ८ ॥

આવે ઓઢીને અને પગમાં જોડા પહેરીને 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' અને ધાતુરક્તથી રંગેલાં વસ્ત્રોને (અથવા વસ્ત્રોને) શરીર પર ધારણ કરીને સ્કન્દક પરિવ્રાજક 'सावत्थीए नयरीए' શ્રાવસ્તી નગરીના 'मज्झं मज्झेणं' મધ્યના ભાગે થઈને 'निग्गच्छइ' નીકળ્યો 'निग्गच्छित्ता' ત્યાંથી નીકળીને 'जेणेव कयंगला नयरी' જ્યાં કૃતંગલા નગરી હતી 'जेणेव छत्तपलासए चेइए' તે નગરીની બહાર છત્ર પલાશક નામનું ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' જ્યાં તે ચૈત્યમાં જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા, 'तेणेव पहारेत्थ गमणाय' તે તરફ જવાનો તેમણે નિશ્ચય કર્યો જોઈએ કે તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા ॥ સૂ ૮ ॥



मूलम्–गोयमा ! इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी-दच्छसि णं गोयमा ! पुव्वसंगइयं । कं णं भंते ! खंदयं नाम । से काहे वा, कहं वा केवच्चिरेण वा । एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम नयरी होत्था, वण्णओ, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए नामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ; तं चेव जेणेव ममं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, से णं अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ अज्जेव णं दच्छसि गोयमा ! भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वदइ नमंसइ; वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए । हंता पभू ! जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए ॥सू० ९॥

छाया–गौतम ! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतममेवमवादीत्–द्रक्ष्यसि गौतम ! पूर्वं सांगतिकम् । कं खलु भदन्त ! स्कन्दकं नाम । स कुत्र वा

अब इस तरफ भगवान के समीप जो हुआ उसका वर्णन सूत्रकार करते हैं— (गोयमा) इत्यादि ।

सूत्रार्थ— (गोयमाइ) हे गौतम इस प्रकार से संबोधित करके (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (भगवं गोयमं) भगवान गौतम से (एवं वयासी) इस प्रकार कहा (गोयमा) हे गौतम ! (पुव्वसंगइयं णं दच्छसि) तुम अपने पूर्व के संबंधी को आज देखोगे । (भंते कं णं) हे भदन्त ! किस पूर्वके सम्बन्धीको? तब प्रभुने कहा (खंदयं नाम)

હવે આ તરફ ભગવાનની પાસે શું બન્યુ તેનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે.
સૂત્રાર્થ—(गोयमाइ) હે ગૌતમ ! આ પ્રમાણે સંબોધન કરીને (समणे भगव महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (भगव गोयमं एव वयासी) ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (पुव्वसंगइय ण दच्छसि) તુ આજે તારા ભૂતકાળના સબધીને જોઇશ (भते ! क णं) હે ભગવન્ ! કયા મારા પૂર્વ સબધીને હુ જોઇશ ? પ્રભુએ કહ્યુ–(खद नाम) સ્કન્દકને તું

कथं वा किंप्रत्यिरेण वा ? । एवं खलु गौतम । तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रावस्ती नाम नगरी आसीत् वर्णकः । तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यान्ते वासी स्कन्दको नाम कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, तत्रैव यावत् यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव आधारयत् गमनाय स खलु अदूरागतो बहुसमाम अध्वपतिपन्नो ऽन्तरापथि वर्तते अत्रैव द्रक्ष्यसि गौतम ! । भदंत ! इति भगवान् गौतमः श्रमणं

स्कन्दकको (से काहे वा, कहं वा केवच्चिरेण वा) हे प्रभो ! मैं उसे कहांपर किस तरह से और कितने समय के बाद देखूंगा ? (एवं खलु गोयमा) तब प्रभु ने कहा है गौतम ! (तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम नयरी होत्था) उस काल में और उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी। (वण्णओ) वर्णक (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए) उस श्रावस्ती नगरी में (गद्दभालस्स अंतेवासी) गर्दभालका शिष्य (खंदए नाम) स्कन्दक नामका कि जिसका (कच्चायणस्स गोत्ते) गोत्र कात्यायन है (परिव्वायए परिवसइ) परिव्राजक रहता है (तंचेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस विषय का समस्त वर्णन पहिले कहा जैसा ही जानना चाहिये, यावत् वह स्कन्दक परिव्राजक जहां मैं हूं उस तरफ आनेके लिये प्रस्थित हुआ है। (से णं अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरावहे वट्टइ) अब वह जिस स्थान पर अपन सब हैं वहांसे रवाना वह बहुत दूर नहीं है-बहुत नजदीक आ चुका है-बीच रास्ते में ही है (गोयमा) हे गौतम ! (अज्जेव णं तुम्भे

જોઇએ (से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा) હે પ્રભો ! હું તેને કયાં, કેવી રીતે અને કેટલા સમય પછી જોઇશ ? (एवं खलु गोयमा !) ત્યારે પ્રભુએ કહ્યું હે ગૌતમ ! (तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम नयरी होत्था) તે કાળે અને તે સમયે શ્રાવસ્તી નામની નગરી હતી. (वण्णओ) તેનું વર્ણન ઔપપાતિકસૂત્રી પ્રમાણે સમજવું (तत्थणं सावत्थीए नयरीए) તે શ્રાવસ્તી નગરીમાં (गद्दभालस्स अंतेवासी कच्चायणसगोत्ते) ગર્દભાલનો શિષ્ય કાત્યાયન ગોત્રી (खंदए नाम परिव्वायए परिवसइ) સ્કંદક નામનો પરિવ્રાજક રહે છે (तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए) આ વિષયનું સમસ્ત વર્ણન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવું તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક મારી પાસે આવવા માટે રવાના થઈ ચૂક્યો છે (से णं अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरावहे वट्टइ) હવે તે આ સ્થાનથી બહુ દૂર નથી પણ જ નજીક આવી ગયો છે-રસ્તાની વચ્ચે જ છે (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (अज्जेव णं तुब्भे

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, प्रभुः खलु भदन्त ! स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा खलु अगारादनगारितां प्रव्रजितुम् ? हंत प्रभुः यावच्च श्रमणो भगवान् महावीरो भगवंतं गौतममेतमर्थं परिकथयति तावच्च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं देशं हव्यमागतः ॥

टीका—'गोयमा इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी' गौतम! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम् एवम्—वक्ष्यमाणप्रकारेण अवा-

---

सि) तुम उसे अभी ही देखोगे। (भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीर वंदइ) हे भगवंत इस प्रकार से संबोधित करके भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की (नमंसइ) उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कर कर के (एवं वयासी) फिर उन्होंने ऐसा कहा—(पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए) हे भदन्त! क्या वह कात्यायनगोत्रवाला स्कंदक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर अगारावस्था से अनगारावस्था धारण करने के लिये शक्तिशाली है ? (हंता पभू) हां गौतम वह समर्थ—शक्तिशाली है (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए) जब श्रमण भगवान महावीर गौतम स्वामी से इस बात को कह रहे थे कि इतने ही में कात्यायनगोत्रवाला वह स्कन्दक उस स्थान पर शीघ्र आ पहूँचा ॥

टीकार्थ—„ गोयमाइ " हे गौतम! इस प्रकार संबोधित करके

તું હમણા જ તેને જોઇશ (भंते त्ति भगवं गोयमे समण भगवं महावीर वंदइ नमंसइ) હે ભગવન્! એવું સંબોધન કરીને ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા (वदिता नमंसित्ता एव वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું—(पहूण भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्रियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?) હે ભગવન્! શું તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક આપ દેવાનુપ્રિયની પાસે દીક્ષા ગ્રહણ કરીને, અગારાવસ્થાનો ત્યાગ કરી અણગારાવસ્થા ધારણ કરવાને સમર્થ છે ? (हंता पभू) હા, ગૌતમ! તે સમર્થ છે. (जाव च ण समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ,तावं च ण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्व आगए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને આ વાત કરતા હતા ત્યારે જ કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજક ત્યાં આવી પહોંચ્યો.

दीत्-कथितवान्, यस्मिन् समय स स्कन्दक सर्वामेव सामाग्रीमादाय कृतंगला नगरीतः प्रस्थान कृतवान तस्मिन्नेव समये भगवान् महावीरो गौतमं हे गौतम इति सबोध्य प्रोवाचेति सम्बुदितार्थ । किमुवाचेत्याह—'दक्खसि' इत्यादि। 'दक्खसि णं गोयमा' द्रक्ष्यसि खलु गौतम ! 'पुव्वसंगइयं' पूर्वसंगतिकम्-गृहस्थावस्थापरिचितं पूर्वभवमित्रं वा कमपि पुरुषम् । अतर्कितमाकस्मिकं भगव द्वाक्य श्रुत्वा आश्चर्ययुक्तो गौतमो भगवन्तं पृच्छति—'कं णं भंते' कं खलु भदन्त !, हे भदन्त ! कं पूर्वपरिचितं द्रक्ष्यामीत्यर्थः, भगवान् कथयति-'खंदए-णाम' स्कन्दक नाम, स्कन्दकं द्रक्ष्यसीत्यर्थः । पुनर्गौतमः पृच्छति-'से काहे वा

"समणे भगवं महावीरे" श्रमण भगवान महावीर ने "भगवं गोयमं" भगवान गौतम से (एवं वयासी) ऐसा कहा जिस समय में वह स्कन्दक समस्त सामग्री को साथ में लेकर कृतंगला नगरी से प्रस्थित हुआ था उसी समय में भगवान महावीर ने गौतम से हे गौतम। ऐसा संबोधित करके कहा क्या कहा? इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (दक्खसि णं गोयमा) हे गौतम! तुम देखोगे (पुव्वसंग इयं) गृहस्थावस्था में परिचित हुए अथवा पूर्वभव के मित्र, किसी पुरुष को अतर्कित एवं आकस्मिक भगवान के वचन सुनकर आश्चर्य से चकित हुए गौतम ने भगवान से पूछा 'कं णं भंते! हे भदन्त! मैं किस पूर्व परिचित को देखूंगा तब भगवान ने उनसे कहा (खंदए नाम) स्कन्दक को

टीकार्थ—"गोयमा!" हे गौतम! એવું સબોધન કરીને "समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે "भगवं गोयमं" ભગવાન ગૌતમને "एवं वयासी" આ પ્રમાણે કહ્યું—

(જ્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક પોતાની બધી સામગ્રીઓને સાથે લઈને કૃતંગલા નગરીમાંથી ભગવાન મહાવીર પાસે આવવા માટે ઉપડ્યો ત્યારે) ભગવાન મહાવીરે ગૌતમને 'હે ગૌતમ!' એવું સબોધન કરીને શું કહ્યું તે સૂત્રકાર બતાવે છે—'दक्खसि णं गोयमा! पुव्वसंगइयं" હે ગૌતમ! તું તારા કોઈ પૂર્વપરિચિત સબંધીને જોઈશ—ગૃહસ્થાવસ્થામાં જેની સાથે પરિચય કે મિત્રતા થઈ હોય એવી વ્યક્તિને જોઈશ આ પ્રકારના અતર્કિત અને આકસ્મિક વચનો મહાવીરસ્વામીને મુખેથી સાંભળીને આશ્ચર્યચકિત થયેલા ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યું— कं णं भंते હે ભગવાન્! કયા પૂર્વ પરિચિતને જોઈશ ત્યારે ભગવાને કહ્યું કે 'खंदए नाम' સ્કંદને જોઈશ ત્યારે કરીથી પ્રભુને ગૌતમસ્વામીએ

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत्, प्रभुः खलु भदन्त ! स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा खलु अगारादनगारितां प्रव्रजितुम् ? हंत प्रभुः यावच्च श्रमणो भगवान् महावीरो भगवंतं गौतममेतमर्थं परिकथयति तावच्च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं देशं हव्यमागतः ॥

टीका—'गोयमा इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी' गौतम! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम् एवम्—वक्ष्यमाणप्रकारेण अवा-

---

सि) तुम उसे अभी ही देखोगे। (भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीर वंदइ) हे भगवंत इस प्रकार से संबोधित करके भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की (नमंसइ) उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कर कर के (एवं वयासी) फिर उन्होंने ऐसा कहा—(पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए) हे भदन्त! क्या वह कात्यायनगोत्रवाला स्कंदक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर अगारावस्था से अनगारावस्था धारण करने के लिये शक्तिशाली है ? (हंता पभू) हां गौतम वह समर्थ—शक्तिशाली है (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए) जब श्रमण भगवान महावीर गौतम स्वामी से इस बात को कह रहे थे कि इतने ही में कात्यायनगोत्रवाला वह स्कन्दक उस स्थान पर शीघ्र आ पहूँचा ॥

टीकार्थ—„ गोयमाइ " हे गौतम! इस प्रकार संबोधित करके

तुं હમણા જ તેને જોઇશ (भंते त्ति भगवं गोयमे समण भगवं महावीर वंदइ नमंसइ) હે ભગવન્! એવું સંબોધન કરીને ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા (वदिता नमसित्ता एव वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું—(पहूण भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?) હે ભગવન્! શું તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક આપ દેવાનુપ્રિયની પાસે દીક્ષા ગ્રહણ કરીને, અગારાવસ્થાનો ત્યાગ કરી અણગારાવસ્થા ધારણ કરવાને સમર્થ છે ? (हंता पभू) હા, ગૌતમ! તે સમર્થ છે (जाव च ण समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ,तावं च ण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्व आगए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને આ વાત કરતા હતા ત્યારે જ કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજક ત્યા આવી પહોંચ્યો.

दीत्-कथितवान्, यस्मिन् समये स स्कन्दकः सर्वमेव सामग्रीमादाय कृतंगलां नगरीतः प्रस्थानं कृतवान् तस्मिन्नेव समये भगवान् महावीरो गौतम हे गौतम इति संबोध्य प्रोवाचेति समुदितार्थः । किमुवाचेत्याह—'दच्छसि' इत्यादि। 'दच्छसि णं गोयमा' द्रक्ष्यसि खलु गौतम ! 'पुव्वसंगइयं' पूर्वसंगतिकम्-गृहस्थावस्थापरिचितं पूर्वभवमित्रं वा कमपि पुरुषम् । अतर्कितमाकस्मिकं भगवद्वाक्यं श्रुत्वा आश्चर्ययुक्तो गौतमो भगवन्तं पृच्छति—'कं णं भंते' कं खलु भदन्त !, हे भदन्त ! कं पूर्वपरिचितं द्रक्ष्यामीत्यर्थः, भगवान् कथयति-'खंदयं-णाम' स्कन्दकं नाम, स्कन्दकं द्रक्ष्यसीत्यर्थः । पुनर्गौतमः पृच्छति-'से णं भंते' स

"समणे भगवं महावीरे" श्रमण भगवान महावीर ने "भगवं गोयमं" भगवान गौतम से (एवं वयासी) ऐसा कहा जिस समय में वह स्कन्दक समस्त सामग्री को साथ में लेकर कृतंगला नगरी से प्रस्थित हुआ था उसी समय में भगवान महावीर ने गौतम से हे गौतम! ऐसा संबोधित करके कहा क्या कहा? इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (दच्छसि णं गोयमा) हे गौतम! तुम देखोगे (पुव्वसंगइयं) गृहस्थावस्था में परिचित हुए अथवा पूर्वभव के मित्र, किसी पुरुष को अतर्कित एवं आकस्मिक भगवान के वचन सुनकर आश्चर्य से चकित हुए गौतम ने भगवान से पूछा 'कं णं भंते! हे भदन्त! मैं किस पूर्व परिचित को देखूंगा तब भगवान ने उनसे कहा (खंदय नाम) स्कन्दक को

टीकार्थ—"गोयमाइ" हे गौतम! એવું સંબોધન કરીને "समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે "भगवं गोयमं" ભગવાન ગૌતમને "एवं वयासी" આ પ્રમાણે કહ્યું—

(જ્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક પોતાની બધી સામગ્રીઓને સાથે લઈને કૃતંગલા નગરીમાંથી ભગવાન મહાવીર પાસે જવા માટે રવાના થયો) ભગવાન મહાવીરે ગૌતમને 'હે ગૌતમ!' એવું સંબોધન કરીને શું કહ્યું તે સૂત્રકાર બતાવે છે—"दच्छसि णं गोयमा! पुव्वसंगइयं હે ગૌતમ! તું તારા કોઈ પૂર્વપરિચિત વ્યક્તિને જોઈશ—ગૃહસ્થાવસ્થામાં જેની સાથે પરિચય કે મિત્રતા થઈ હોય એવી વ્યક્તિને જોઈશ. આ પ્રકારના અતર્કિત અને આકસ્મિક વચનો મહાવીરસ્વામીને મુખેથી સાંભળીને આશ્ચર્યચકિત થયેલા ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને પૂછયું— 'कं णं भंते' હે ભગવાન્! હું કયા પૂર્વ પરિચિતને જોઈશ ત્યારે ભગવાને કહ્યું કે "खंदय नाम" ને જોશો ત્યારે ફરીથી પ્રભુને ગૌતમસ્વામીએ

कहं वा केवच्चिरेण वा ' अथ कुत्र वा कथं वा कियच्चिरेण वा ' से ' अथ तं ' काहे ' इति वा कुत्र स्थाने द्रक्ष्यामि ' कहं वा ' इति कथं वा, केन वा प्रकारेण साक्षाद्दर्शनतः श्रवणतो वा, द्रक्ष्यामि ? 'केवच्चिरेण वा' इति, कियच्चिरेण वा कियता कालेन द्रक्ष्यामि ? भगवानाह—' एवं खलु गोयमा' एवं खलु हे गौतम ! ' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' तस्मिन् काले तस्मिन् समये, आवयोर्वार्त्तालापसमये सावत्थीनाम नयरी ' श्रावस्ती नाम नगरी ' होत्था ' अस्ति, अत्र ' होत्था ' इत्यस्य ' अस्ती–त्यर्थो भवति । ' वण्णओ '–वर्णकः, चंपावत् वर्णको विज्ञेयः, चम्पानगरीसदृशी अस्तीत्यर्थः । ' तत्थ णं सावत्थीए नयरीए ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्याम् ' गद्दभालस्स ' गर्दभालस्य, गर्दभालनामकपरिव्राजकस्य ' अंतेवासी ' अन्तेवासी शिष्यः ' खंदए नाम ' स्कन्दको नाम ' कच्चायनस्स गोत्ते ' कात्यायनगोत्रः ' परिव्वायए ' परिव्राजकः ' परिवसइ ' परिवसति ' त चेव '

देखोगे तब प्रभु से गौतमने पुनः पूछा (से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा हे भदन्त ! मैं उसे काहे कहां पर देखूगा कैसे देखूंगा अपनी आंखों से देखूगा या उसे अपने कानों से सुनूगा? तथा कितने काल के बाद उसे देखूंगा? तबभगवान ने कहा (एवं खलु गोयमा !) हे गौतम ! सुनो बात इस प्रकार से है "तेणं कालेणं तेणं समएणं" उस काल में और उस समयमें "सावत्थी नाम नयरी होत्था" श्रवस्ती नामकी प्रसिद्ध नगरी है । यहां पर "होत्था" इस क्रिया पद का अर्थ "अस्ति" है–ऐसा होता है । 'वण्णओ' इस नगरी का वर्णक चंपानगरी के वर्णन की तरह जानना चाहीये । तात्पर्य यह की यह नगरी चंपा नगरी के जैसी है । " तत्थ णं सावत्थीए नयरीए " उस श्रावस्ती नगरी में " गद्दभालस्स " गर्दभाल नाम के परिव्राजक का " अंतेवासी " शिष्य " खंदए नाम" स्कन्दक नामका

કહ્યું કે " से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा " હે ભગવાન ! હું તેને કયા જોઇશ ? કેવી રીતે જોઇશ ? મારી આંખોથી જોઈશ–અથવા તો મારા કાને સાભળીશ ? હું તેને કેટલા સમય પછી જોઇશ ? ત્યારે ભગવાને કહ્યું "एव ' खलु गोयमा !" હે ગૌતમ ! સાભળ વાત આ પ્રમાણે છે–" तेणं कालेण तेण समएणं " તે કાળે અને તે સમયે " सावत्थी नाम नयरी होत्था શ્રાવસ્તી નામે નગરી હતી. (અહીં ભૂતકાળનો પ્રયોગ થયો હોવા છતા વર્તમાનકાળ અર્થમા કરવાનો છે–એટલે કે આ કાળે અને આ સમયે શ્રાવસ્તી નામની નગરી છે " वण्णओ " તેનુ વર્ણન ચંપાનગરીના વર્ણન પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે શ્રાવસ્તી નગરી ચપાનગરીના જેવી છે, "तत्थणं सावत्थीए नयरीए " તે શ્રાવસ્તી નગરીમા " गद्दभालस्स " ગર્દભાલ નામના પરિવ્રાજકનો " अतेवासी " શિષ્ય " खंदए नाम परिव्वायए कच्चायणस्स गोत्ते परिवसइ "

तदेव-पूर्वोक्तमेव स्कन्दकवर्णनं सर्वमत्र वाच्यम् 'जाव' यावत्, अत्र यावत्पदेन-'रिउव्वेय जजुव्वेय०' इत्यारभ्य 'जेणेव उत्तरपओसए चेइए' इत्यन्तः सर्वोऽपि पाठोऽत्र संग्राह्यः। 'जेणेव मम अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए' यमेव ममान्तिकं तमेव मां धारयद् गमनाय, मम समीपे-समागन्तुं तापसाश्रमात् प्रस्थानं कृतवान्। 'से णं अदूरागए बहुसपक्खे अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ' स खलु अदूरागतो बहुसंप्राप्तोऽध्वप्रतिपन्नोऽन्तरापथि वर्तते, स स्कन्दकः खलु 'अदूरागए' अदूरे आगतः समीपं प्राप्त इत्यर्थः, अदूरत्वं चावधिस्थानापेक्षयापि स्यात्, अथवा दूरतरमार्गापेक्षया क्रियोशादिकमपि अदूरं स्यात् इत्यत आह-'बहुसपक्खे'

"परिव्वायए" परिव्राजक जो कि "कच्चायणसगोत्ते" कात्यायन गोत्र का है "परिवसइ" रहता है। "स चेव" यहां पर स्कन्दक संबंधी पूर्वोक्त समस्त वर्णन करलेना चाहिये। "जाव" पद यहां यह समझाता है कि रिउव्वेय, जजुव्वेय, यहां से लेकर "जेणेव उत्तरपओसए चेइए" यहां तकका समस्त पाठ यहां ग्रहण कर लेना चाहिये। "जेणेव मम अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए" इस तरह वह परिव्राजक यहां से अर्थात् तापसाश्रम से मेरे पास आने के लिये प्रस्थित हो चुका है। (से णं अदूरागए बहुसपक्खे अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ) इन पदोंके विषय में खुलासा अर्थ इस प्रकार से है कि वह स्कन्दक परिव्राजक "अदूरे आगतः" समीप में आ चुका है। यह अदूरता अवधिस्थान की अपेक्षा से भी हो सकती है अथवा दूरतर मार्ग की अपेक्षा से दो कोश आदि भी अदूर हो सकते हैं-तो इस के लिये कहा है कि

કાત્યાયન ગોત્રનો એક કચ્છ નામનો પરિવ્રાજક રહે છે તે કાત્યાયન ગોત્રનો છે અને તેનું નામ સ્કન્દક છે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક છે "स चेव" અહીં સ્કન્દક પરિવ્રાજકનું વર્ણન સૂત્ર ૬ પ્રમાણે જ કરવું છે તેમ સમજવું "जाव" પદ એ બતાવે છે કે 'रिउव्वेय जजुव्वेय' થી શરૂ કરીને "जेणेव उत्तरपओसए चेइए" સુધીનો સમસ્ત સૂત્રપાઠ અહીં ગ્રહણ કરવો.

"जेणेव मम अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए" આ રીતે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક તેના આશ્રમથી મારી પાસે આવવા માટે ઉપડી ચુક્યો છે 'से णं अदूरागए बहुसपक्खे अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ" આ પદોનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે-" अदूरे आगतः " તે નજીકમાં જ આવી પહોંચ્યો છે તે અદૂરત્વ અવધિસ્થાનની અપેક્ષાએ પણ સમજી શકે છે અથવા દૂરના માર્ગની અપેક્ષાએ બે ત્રણ ગાઉનું અંતર પણ સમજી શકે છે તો તેનું નિરાકરણ

बहुसंपत्तः, अत्यन्तसमीपमार्गसमागतः, बहुसंप्राप्तता च विश्रामादिकारणतः आरामादिगतोपि संभवति, अत उच्यते ' अद्धाणपडिवन्ने ' अध्वमतिपन्नः, अध्वानं प्रतिपन्नः मार्गं चलन्नित्यर्थः 'अंतरापहे वट्टइ ' अंतरापथि वर्तते, अत्यन्त समीपे वर्त्तते, अतस्त्वं 'अज्जेव णं दच्छसि गोयमा ' अद्यैव खलु द्रक्ष्यसि गौतम ! हे गौतम ! यः खलु तव पूर्वपरिचितः स्कन्दकस्तं त्वमद्यैव=अधुनैव स्वल्पेनैव कालेन तव दृष्टिपथे समागमिष्यतीति भावः ' भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ ' भदंत ! इति सम्बोध्य भगवान गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, ' वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' वंदित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्–पृष्टवान्–' पहूणं भंते ' प्रभुः=समर्थः खलु भदंत!

(बहु संपत्ते) कि वह अत्यन्त समीप के मार्ग में आचुका है। यह बहु संप्राप्तता विश्राम आदि कारण की वजह से बगीचा आदि में भी गये हुए में हो सकती है सो इसके लिये कहा गया है कि (अद्धाणपडिवन्ने) वह अभी मार्ग मे ही चल रहा है। विश्रामादि के निमित्त बगीचा आदि में नहीं गया है। अत. वह " अंतरापहे वट्टइ " बीच रास्ते में ही है। बिल कुल समीप आचुका है। इसलिये तुम उसे (अज्जेव णं दच्छसि) अभी ही देखोगे। तात्पर्य यह है कि हे गौतम ! तुम अपने पूर्वपरिचित स्कन्दक को अभी ही बहुत थोडे ही समय के बाद दृष्टिपथ में आया हुआ देख लोगे। (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) हे भदन्त ! ऐसा कह कर भगवान महावीर को वंदना की और उन्हे नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे ऐसा पूछा (भंते ! खंदए कच्चाय-

---

કરવા માટે કહ્યું છે કે " बहुसपत्ते " તે અત્યન્ત નજીકને માર્ગે આવી ગયો છે, અહીં એમ માનવાને કારણ ન રહે કે તે કોઇ નજીકના ઉદ્યાન વગેરેમાં વિશ્રામ લઇ રહ્યો છે, તે બતાવવા માટેકહ્યું કે "अद्धाण पडिवन्ने" તે હજી રસ્તા પર આવી રહેલ છે-વિશ્રામ વગેરે માટે કોઇ બાગ વગેરેમાં ગયેલ નથી અને તેથી તે "अतरापहे वट्टइ" રસ્તામાજ છે કહેવાનુ પ્રયોજન એ છે કે તે સ્કન્દક નિરતર પથ કાપીને આ જગ્યાની સમીપે આવી પૂકયો છે તેથી હે ગૌતમ ! તું તેને " अज्जेव ण दच्छसि " હમણા જ જોઇ શકીશ એટલે કે હે ગૌતમ ! તું તારા પૂર્વપરિચિત સ્કદકને થોડી જ વારમા પ્રત્યક્ષ નિહાળીશ " भते त्ति भगव गच्चमे समणं भगवं महावीर वदइ नमंसइ " હે ભગવન્ ! એવું સબોધન કરીને ભગવાન્ ગૌતમે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદન કરી, નમસ્કાર કર્યા "वदित्ता

'खलु कच्चायणस्स गोत्तेणं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता' स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुण्डो भूत्वा 'अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए' आगारादनगारितां प्रव्रजितुं, अनगारिता साधुता ग्रहीतुं पार्श्वम् अथवा निर्भक्ति विरतिमात्रं अनगारितया प्रव्रजितुं, प्रव्रज्यां प्रतिपत्तुं किम् समर्थः ? भगवान् प्रोऽयं स्कन्दको मत्समीपमागच्छति तस्य किं तादृश योग्यता शक्तिर्वा विद्यते यद् एतं परित्यज्य मत्समीपे दीक्षितो भविष्यति ? इति गौतमस्य जिज्ञासा प्रादुरभूत् । भगवानाह—' हंता ' इत्यादि । ' हंताभू ' हन्त भूतः, हे गौतम ! स स्कन्दको मत्समीपे चारित्रग्रहणे समर्थोऽस्तीति । ' जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ ' यावच्च खलु श्रमणो भगवान् महावीरो भगवते गौतमाय एतमर्थं परिकथयति, ' ताव च णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते तं देसं हव्व आगए' तावत् च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं

णस्स गोत्तेणं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए पहुणं) हे भदंत ! कात्यायन गोत्रवाला यह स्कन्दक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर तथा गृहस्थावस्था से अनगारावस्था को धारण करने के लिये क्या समर्थ है ? हे भगवन् ! जो यह स्कन्दक आप के समीप आ रहा है उसमें क्या ऐसी योग्यता है कि यह घर को छोड़ कर आप के पास में दीक्षित हो जावे ? इस प्रकार से गौतम को जानने की इच्छा प्रकट हुई-तब प्रभु ने इसका उन्हें उत्तर दिया (हंता पभू हे गौतम ! यह स्कन्दक मेरे पास चारित्र के ग्रहण करने में समर्थ है। (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ) जब श्रमण भगवान महावीर गौतम से इस बात को कह रहे थे कि

અમલિપ્પા એ પ્રમાણે પદના નમસ્કાર કરીને તેમણે તેમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું ' भंते ! खलु कच्चायणसगोत्तेणं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए पहुणं " હે ભગવન્ ! કાત્યાયન ગોત્રી આ સ્કંદક પરિવ્રાજક આપ દેવાનુપ્રિયની પાસે મુંડિત થઈને (દીક્ષા અંગીકાર કરીને) ગૃહસ્થ અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અનગારાવસ્થા ધારણ કરવાને માટે શક્તિમાન છે ? હે ભગવાન ! આપની સમક્ષ જે સ્કંદક આવી રહ્યો છે તેનામાં એ યોગ્યતા છે ખરી ? કે જેથી આપની પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરવાની યોગ્યતા છે ખરી ? ગૌતમની એ પ્રકારની જિજ્ઞાસા જાણીને ભગવાન મહાવીરે આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો—" हंता पभू " હે ગૌતમ ! તે સ્કંદક મારી પાસે દીક્ષા લેવાને સમર્થ છે " जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ ' ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે કહી રહ્યા હતા ' जावं च णं " એ

बहुसंपत्तः, अत्यन्तसमीपमार्गसमागतः, बहुसंप्राप्तता च विश्रामादिकारणतः आरामादिगतोपि संभवति, अत उच्यते ' अद्धाणपडिवन्ने ' अध्वप्रतिपन्नः, अध्वानं प्रतिपन्नः मार्गं चलन्नित्यर्थः 'अंतरापहे वट्टइ ' अन्तरापथि वर्तते, अत्यन्त समीपे वर्त्तते, अतस्त्वं 'अज्जेव णं दच्छसि गोयमा ' अद्यैव खलु द्रक्ष्यसि गौतम ! हे गौतम ! यः खलु तव पूर्वपरिचितः स्कन्दकस्तं त्वमद्यैव=अधुनैव स्वल्पेनैव कालेन तव दृष्टिपथे समागमिष्यतीति भावः ' भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ ' भदंत ! इति सम्बोध्य भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, ' वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' वंदित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्-पृष्टवान्-' पहूणं भंते ' प्रभुः=समर्थः खलु भदंत!

(बहु संपत्ते) कि वह अत्यन्त समीप के मार्ग में आचुका है। यह बहु संप्राप्तता विश्राम आदि कारण की वजह से बगीचा आदि में भी गये हुए में हो सकती है सो इसके लिये कहा गया है कि (अद्धाणपडिवन्ने) वह अभी मार्ग मे ही चल रहा है। विश्रामादि के निमित्त बगीचा आदि में नहीं गया है। अतः वह " अंतरापहे वट्टइ " बीच रास्ते में ही है। बिल कुल समीप आचुका है। इसलिये तुम उसे (अज्जेव णं दच्छसि) अभी ही देखोगे। तात्पर्य यह है कि हे गौतम ! तुम अपने पूर्वपरिचित स्कन्दक को अभी ही बहुत थोडे ही समय के बाद दृष्टिपथ में आया हुआ देख लोगे। (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) हे भदन्त ! ऐसा कह कर भगवान महावीर को वंदना की और उन्हे नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे ऐसा पूछा (भंते ! खंदए कच्चाय-

---

કરવા માટે કહ્યુ છે કે " बहुसंपत्ते " તે અત્યન્ત નજીકને માર્ગે આવી ગયેા છે, અહીં એમ માનવાને કારણ ન રહે કે તે કોઇ નજીકના ઉદ્યાન વગેરેમાં વિશ્રામ લઇ રહ્યો છે, તે બતાવવા માટેકહ્યુ કે "अद्धाण पडिवन्ने" તે હજી રસ્તા પર ચાલી રહેલ છે-વિશ્રામ વગેરે માટે કોઇ બાગ વગેરેમાં ગયેલ નથી અને તેથી તે "अंतरापहे वट्टइ" રસ્તામાજ છે કહેવાનુ પ્રયેાજન એ છે કે તે સ્કન્દક નિરંતર પથ કાપીને આ જગ્યાની સમીપે આવી ચૂકયો છે તેથી હે ગૌતમ ! તું તેને " अज्जेव ण दच्छसि " હમણા જ જોઇ શકીશ એટલે કે હે ગૌતમ ! તું તારા પૂર્વપરિચિત સ્કંદકને થેાડી જ વારમા પ્રત્યક્ષ નિહાળીશ " भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीर वंदइ नमंसइ " હે ભગવન્ ! એવુ સંબોધન કરીને ભગવાન્ ગૌતમે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता

से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगव गोयमे एव वयासी-से के से णं गोयमा! तहारूवे णाणी वा-तवस्सी वा, जेण तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्व अक्खाए जओण तुम जाणसि। तएण से भगव गोयमे खदएण कच्चायणस्स गोत्त एव वयासी-एव खलु खदया! मम धम्मायरिय धम्मोवएसए समणे भगव महावीरे उप्पन्ननाणदस णधरे अरहा जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयविआणए सव्वण्णू सव्वदरिसी जे ण मम एस अट्ठे तव ताव रहस्स कडे हव्व अक्खाए जओण अह जाणामि खदया॥ तएणं से खदए कच्चायणस्सगोत्ते भगव गोयम एव वयासी गच्छामो णं गोयमाइ समधम्मायरिय धम्मोवदेसय समण भगव महावीर वदामो नमसामो जाव पज्जुवासामो। अहासुह देवाणुप्पिया मा पडिवध करेह, तएण से भगव गोयमे खदएण कच्चायणस्स गोत्तेण सद्धिं जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए॥ सू०१०॥

छाया—तत खलु भगवान् गौतमः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रं अदूरागत ज्ञात्वा क्षिप्रमेव अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय क्षिप्रमेव प्रत्युपगच्छति, प्रत्युपगत्य

इस के बाद क्या हुआ-सो सूत्रकार कहते हैं-'तएणं भगवं गोयमे' इत्यादि।

सूत्रार्थ-(तएणं) तब (भगवं गोयमे) भगवान् गौतम (कच्चायणस्स गोत्तं खदएं) कात्यायन गोत्रवाले उस स्कन्दकको (अदूरागतं जाणित्ता) पास में आया हुआ जानकर (खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ) शीघ्र

ત્યારબાદ શું બન્યું તે સૂત્રકાર કહે છે 'तएणं भगवं गोयमे' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(तएणं) ત્યારપછી (भगवं गोयमे) ભગવાન ગૌતમ (कच्चायणस्स गोत्तं खदएं) કાત્યાયન ગોત્રવાળા તે સ્કન્દકને (अदूरागतं जाणित्ता) નજીકમાં આવી પહોંચેલા જાણીને (खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ) પોતાને આસનેથી

देशं शीघ्रमागतः, योऽसौ स्कन्दको भगवत्समीपमागच्छति स किमत्र प्रव्रजितो भविष्यतीति गौतमो भगवन्तं पृच्छति–भगवांश्च स स्कन्दको दीक्षां ग्रहीष्यतीत्युत्तरं ददाति तावत्येव काले स स्कन्दक आगच्छन् दृष्ट इति भावः ॥सू० ९॥

ततः किमित्याह—' तएणं ' इत्यादि ।

मूलम्–तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता खिप्पामेव पच्चुवगच्छइ पच्चुवगच्छित्ता जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी खंदया! सागयं, खंदया ! सुसागयं, खंदया ! अणुरागयं, खंदया! सागयमणुरागयं, खंदया ! से णूणं तुसं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालिय सावयेणं इणमक्खेवं पुच्छिए–मागहा ! किं स अंते लोगे ? अणंते लोगे ? तं चेव जेणेव इहं तेणेव हव्व मागए से णूणं खंदया अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि ! तएणं

(तावंच णं) इतने में ही (से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते) कात्यायन गोत्र वाला वह स्कन्दक तं देसं हव्वं आगच्छइ) उस स्थान पर शीघ्र आ पहुँचा । तात्पर्य यह है कि जो स्कन्दक आपके पास आरहा है वह क्या यहां प्रव्रजित हो जावेगा इस प्रकार गौतम भगवान से जिस समयमें पूछ रहे थे और भगवान जब ऐसा कह रहे थे कि हां दीक्षित हो जावेगा ठीक उसी समय में आता हुआ स्कन्दक दीखलाई दिया ॥सू०९॥

સમયે જ "से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" કાત્યાયન ગોત્રવાળો તે સ્કન્દક " तं देसं हव्वं आगच्छइ " એ સ્થાને શીઘ્ર આવી પહોંચ્યો તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે ગૌતમસ્વામી ભગવાન મહાવીરને સ્કન્દક પરિવ્રાજકમા દીક્ષા લેવાનુ સામર્થ્ય છે કે નહીં એવુ પૂછી રહ્યા હતા અને જ્યારે મહાવીર પ્રભુ ગૌતમને એવો જવાબ આપી રહ્યા હતા કે ' હા, તેનામા દીક્ષા લેવાનુ સામર્થ્ય રહેલુ છે " બરાબર એજ વખત સ્કન્દકે ભગવાન બિરાજતા હતા તે સ્થાનમાં પ્રવેશ કર્યો ॥ સૂ.૯॥

नता खोए, तदेव एतमेव तमेव इच्छमागत तन्नून स्कन्दक! अयमर्थः समर्थः ? हन्त अस्ति। तत खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवन्त गौतममेवमवादीत् तद् एष का खलु गौतम! तथा रूपो ज्ञानी वा तपस्वी वा येन खलु तव एषोऽर्थो मम यावद् रहस्यकृतः इच्छमाख्यातः यतः खलु त्व जानासि ?। तद स भगवान् गौतमः स्कन्दक कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्—एवं खलु स्कन्दक! मम

का है ? (तचेव जेणेव इह तेणेव इच्छमागए) इत्यादि प्रश्न पूछे गये, उनके उत्तर न जानने के कारण तुम शंकित आदि अवस्थावाले बनकर यहां जल्दी से जल्दी आये हो। (से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे) कहो स्कन्दक! यह बात सत्य है न ? (हंता अत्थि) हां गौतम! यह बात सत्य है। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) इस के बाद कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक परिव्राजक ने गौतम से ऐसा कहा—(से के णेणं गोयमा!) हे गौतम! यह ऐसा कौन (तारूवे) तथारूप (णाणी) ज्ञानी अथवा (तवस्सी) तपस्वी पुरुष है (जे ण तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्व अक्खाए) जिसने मेरे इस रहस्यकृत—गुप्त—अर्थ को तुमसे बिलकुल ठीकरूप से उसी समय जानकर कहदिया है। (जओ ण तुमं जाणासि) जिससे तुम इस बात को जान सके हो। (तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी) इस प्रकार से स्कन्दक के कहने के बाद भगवान् गौतम ने कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहा—(एवं खलु

तेणेव इच्छमागए) इत्यादि जे प्रश्नो तमने पूछ्या हता तेनो जवाब नहीं आपवाने कारणे तमे शंकित बनेरे मनोभावथी मुक्त बनीने अही अने तेटली वेलाथकी आ पा छो (से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे?) हे स्कंदक! ए बात साची छे ने? (हंता अत्थि) हा, गौतम! ए बात खरेखर साची छे (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) त्यारे आ कात्यायन गोत्रवाळा ते स्कंदक अणगार गौतमने आ प्रमाणे पूछ्युं (से के णं गोयमा! तहारूवे णाणी तवस्सी) हे गौतम! आपना जेवा ज्ञानी अथवा तपस्वी पुरुष कोण छे के (जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) जेणे मारा गुप्त अर्थने (विषयने) अत्यारे ने अत्यारे ज आपने तमारी अमल जे ती आपी स्पष्टता पूर्वक मारा दीधो छे के (जओ णं तुम जाणासि) जेथी तमे ते जाणने मारा मनोगत विषयने समजी गयेला छो? (तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी) त्यारे अणगार गौतमे कात्यायन गोत्री ते स्कंदक अणगार प्रत्ये आ प्रमाणे कहुं (एवं खलु खंदया!)

यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्–हे स्कन्दक ! स्वागतं स्कन्दक ! सुस्वागतं, स्कन्दक ! अन्वागतं, स्कन्दक ! स्वागतमन्वागतं, तद् नून त्वं स्कन्दक ! श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलकेन निर्ग्रंथेन वैशालिकश्रावकेणेदमाक्षेपं पृष्टः–मागध ! किं सांतो लोकोऽ-

---

ही शीघ्र अपने आसन से ऊठे हैं और (अब्भुट्ठित्ता) और ऊठकर (खिप्पामेव) शीघ्र ही (पच्चुवगच्छइ) उसके सामने जाते है। (पच्चुवगच्छित्ता) सामने जाकर फिर वे (जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां कात्यायन गोत्रवाला वह स्कन्दक था वहां पर गये। (उवागच्छित्ता कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं एवं वयासी) वहां आकर के उन्हों ने कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक से ऐसा कहा (खंदया-सागयं) हे स्कन्दक तुम्हारा स्वागत है (खंदया सुसागयं) हे स्कन्दक तुम्हारा सुस्वागत है। (खंदया अणुरागयं) हे स्कन्दक ! तुम्हारा अन्वागत है (खंदया सागयमणुरागयं) हे स्कन्दक ? तुम्हारा स्वागत अन्वागत है। (खंदया) हे स्कन्दक! (से णूणं तुमं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए तुम से श्रावस्ती नगरी में वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ ने इन प्रश्नों को इस प्रकार पूछा कि (मागहा) मागध ! (किं स अंते लोए अणंते लोए ?) लोक अन्त सहित है अथवा अन्त विना

તુરત જ ઉઠયા (अब्भुट्ठित्ता) ઉઠીને (खिप्पामेव) તુરત જ (पच्चुवगच्छइ) તેની સામે ગયા (पच्चुवगच्छित्ता जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજક હતો ત્યા સુધી તેઓ ગયા (उवागच्छित्ता कच्चायणस्स गोतं खंदयं एवं वयासी) ત્યાં જઈને તેમણે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યુ (खंदया सागयं) હે સ્કન્દક તમારું સ્વાગત હો (खंदया सुसागयं) હે સ્કન્દક તમારૂ સુસ્વાગત હો (खंदया ! अणुरागयं) હે સ્કન્દક તમારૂ આગમન અન્વાગત હો તમારૂ અહીં આગમન થવાનું ઉચિત જ થયુ છે તેથી જરૂર કલ્યાણ થાઓ (खंदया सागयं अणुरागयं) હે સ્કન્દક તમારૂ સ્વાગત અને અન્વાગત હો (खंदया !) હે સ્કન્દક (से णूणं तुमं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएण नियंठेण वेसालिय सावएणं इणमक्खेवं-पुच्छिए) તમને શ્રાવસ્તી નગરીમા વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથે આ પ્રકારના પ્રશ્નો પૂછ્યા હતા કે (मागहा) હે માગધ (कि सअंते लोए, अणंते लोए ?) લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે. (तं चेव जेणेव इहं

नती लोकः, तदेव यत्रैवेह सत्रैव इव्यमागतः तन्नून स्कन्दक ! अयमर्थः समर्थः ? हन्त अस्ति ! तत्तः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवन्तं गौतममेवमवादीत् तद् एष कः खलु गौतम ! तथा रूपो ज्ञानी वा तपस्वी वा येन खलु तव एषोऽर्थो मम तावद् रहस्यकृतः इव्यमाख्यात यत खलु त्वं जानासि ? । ततः स भगवान् गौतमः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्-एवं खलु स्कन्दक ! मम

का है ? (तत्थेव जेणेव इहं तेणेव इव्वमागए) इत्यादि प्रश्न पूछे गये, उनके उत्तर न जानने के कारण तुम शंकित आदि अवस्थावाले बनकर यहां जल्दी से जल्दी आये हो। (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे) कहो स्कंदक ! यह बात सत्य है न ? (हंता अत्थि) हां गौतम ! यह बात सत्य है। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) इस के बाद कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक परिव्राजक ने गौतम से ऐसा कहा-(से के सेणं गोयमा !) हे गौतम ! वह ऐसा कौन (तहारूवे) तथारूप (णाणी) ज्ञानी अथवा (तवस्सी) तपस्वी पुरुष है (जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे इव्वं अक्खाए) जिसने मेरे इस रहस्यकृत-गुप्त-अर्थ को तुमसे बिलकुल स्पष्टरूप से उसी समय जानकर कहदिया है ? (जओ ण तुमं जाणासि) जिससे तुम इस बात को जान सके हो ? (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणसगोत्तेणं एवं वुत्ते समाणे) इस प्रकार से स्कन्दक के कहने के बाद भगवान् गौतम ने कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहा-(एवं खलु

तेणेव इव्वमागए) ઇત્યાદિ જે પ્રશ્નો તમને પૂછ્યા હતા તેનો જવાબ નહીં આવડવાને કારણે તમે શંકિત વગેરે મનોભાવથી યુક્ત બનીને અહીં બને તેટલી ઉતાવળથી આવ્યા છો (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे ?) હે સ્કન્દક ! કહો તે વાત સાચી છેને ? (हंता अत्थि) હા, ગૌતમ ! એ વાત બિલ્કુલ સાચી છે (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) ત્યાર બાદ કાત્યાયન ગોત્રવાળા તે સ્કન્દકે ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (से के णं गोयमा ! तहारूवे णाणी तवस्सी) હે ગૌતમ ! આટલો બધો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી પુરુષ કોણ છે કે (जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे इव्वं अक्खाए) જેણે આ ગુપ્ત અર્થને (વિચારોને) અત્યારે ને અત્યારે જ આપીને તમારી સમક્ષ જેમની એવી સ્પષ્ટતા પૂર્વક મારા કહેલ છે કે(जओ णं तुमं जाणासि) જેથી તમે તે વાતને આમ મનોભાવ વિચારને જાણી શકયા છો ? (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणसगोत्तेणं एवं वुत्ते समाणे) ત્યારે ભગવાન ગૌતમે કાત્યાયન ગોત્રી તે સ્કંદકને આ પ્રમાણે કહ્યું (एवं खलु खंदया !) હે

धर्माचार्यो धर्मोपदेशकः श्रमणो भगवान् महावीर उत्पन्न ज्ञानदर्शनधरः अर्हन् जिनः केवली अतीतमत्युत्पन्नानागत विज्ञायकः सर्वदर्शी येन मम एषोऽर्थस्तव तावत् रहस्यकृतः हव्यमाख्यातः यतोऽहं जानामि स्कन्दक ! ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवन्तं गौतममेवमवादीत्–गच्छामः खलु गौतम ! तव धर्माचार्यं धर्मोपदेशकं श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दामहे नमस्यामो यावत् पर्युपास्महे।

खंदया) स्कन्दक! सुनो बात इस प्रकार से है–(मम धम्मायरिए धम्मो वएसए समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी) मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर हैं। वे उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारी हैं अरिहंत हैं। जिन हैं। केवली हैं। अतीत वर्तमान और अनागत इन सब विषयोंको वे हस्तामलकवत् जानते हैं। सर्वदर्शि हैं (जेणं मम एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) उन्हों ने ही तुम्हारा रहस्यकृत मनोगतरूप अर्थ मुझ से यथावत् कहा है(जयाणं अहं जाणामि खंदया) इसीसे मैं हे स्कन्दक! इस तुम्हारे रहस्यकृत अर्थ को जानता हूं। (तएणं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) गौतम के द्वारा इस बात को सुनने के बाद कात्यायन गोत्री स्कन्दक ने उन भगवान गौतम से ऐसा कहा (गच्छामो णं गोयमा ! तव धम्मायरियं धम्मो वएसयं समणं भगवं महावीरं वदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो) हे गौतम ? चलो आपके धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर

સ્કંદક ! સાભળો, વાત આ પ્રમાણે છે (मम धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाण दसणधरे अरहो जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी) મારા ધર્માચાર્ય અને ધર્મોપદેશક શ્રમણ ભગવાન મહાવીર છે. તેઓ ઉત્પન્ન કેવલજ્ઞાનદર્શનના ધારક છે, અરિહંત છે, જિન છે, કેવલી છે. તેઓ ભૂત વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળના વિષયોને હસ્તામલકની જેમ (હાથમા રહેલા આમળાની જેમ) જાણી શકે છે, અને સર્વદર્શી છે (जेणं मम एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) તેમણે જ તમારા આ ગૂઢ, મનોગત અર્થ (વિચારો પ્રશ્નો) મને યથાર્થ રૂપે કહ્યા છે (जयाण अहं जाणामि खंदया) હે સ્કન્દક ! તેથી જ હું તમારા તે ગુપ્ત પ્રશ્નો જાણું છું. (तएण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमे एव वयासी) ગૌતમની પાસેથી તે વાત જાણીને કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદકે ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું (गच्छामो ण गोयमा ! तव धम्मायरिय समण भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो) હે ગૌતમ ! ચાલો. તમારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, શ્રમણ ભગવાન

यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु । ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकेन कात्यायनगोत्रेण सार्धं यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैव प्रादुरभूदभवत्॥१०॥

टीका—' तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ ' ततः खलु भगवान् गौतम स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमदूरागतं समीपमागतं ज्ञात्वा क्षिप्रमेवाभ्युत्तिष्ठति यद्यपि भगवान् गौतम सयतं स्कन्दकमासयतस्ततश्चासंयताय सयतस्याभ्युत्थानादिकं न युक्तमिति न वक्तव्यम्, गौतमस्यागमव्यवहारित्वादिति । ' अब्भुट्ठित्ता खिप्पामेव पच्चुग्गच्छइ ' अभ्यु-

---

को वदन करें, नमस्कार करे यावत् उनकी पर्युपासना करें। (अहासुहं देवाणुप्पिया) तब गौतम ने कहा हे देवानुप्रिय आप को जैसे सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) विलम्ब मत करो। (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणस्सगोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार कहने के बाद वे भगवान गौतम कात्यायन गोत्री स्कन्दक के साथ जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे-उसी ओर चल दिये।

टीकार्थ—" तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ " इस सूत्र पाठ का अर्थ सूत्रार्थ में ही लिख दिया गया है। विशेष यहां पर कोई ऐसी आशंका कर सकता है कि भगवान गौतम तो संयत थे और वह स्कन्दक परिव्राजक असंयत था। अतः असंयत के लिये इस तरह से संयत को अभ्युत्थान आदि करना उचित नहीं है। इसमें सम्यग्दर्शन में अतिचार आता है

મહાવીરને આપ્યો વંદન કરીને નમસ્કાર કરીને અને યાવત્ તેમની પર્યુપાસના કરીને. (अहासुहं देवाणुप्पिया) ત્યારે ગૌતમે જવાબ આપ્યો કે દેવાનુપ્રિય! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો (मा पडिबंधं करेह) પરંતુ વિલંબ ન કરો (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणस्स गोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) ત્યાર બાદ ભગવાન ગૌતમકાત્યાયન ગોત્રવાળા સ્કંદકને સાથે લઈને જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા તે તરફ જવા લાગ્યા.

ટીકાર્થ- तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ આ સૂત્રપાઠનો અર્થ સૂત્રાર્થમાં જ બતાવી દીધો છે અહીં કોઈને કદાચ એવી શંકા થાય કે ગૌતમસ્વામી તો સંયત હતા અને સ્કંદક પરિવ્રાજક તો અસંયત હતો તો આ રીતે અસંયતનું સન્માન કરવાને ઊભા થઈને સામે જવું પડે તે વાત ઉચિત લાગતી નથી એમ કરવાથી સમ્યક્ત્વમાં અતિચાર (મિથ્યાત્વનો દોષ) લાગે છે પણ અહીં તે પ્રકારની

स्थाय क्षिप्रमेव प्रत्युपगच्छति, 'पच्चुवगच्छित्ता' प्रत्युपगत्य 'जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायनस्स गोत्तं एवं वयासी' उपागम्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् 'हे खंदया' हे स्कन्दक ! आगम्यताम्, भगवत्समीपे समागमनस्य कल्याणहेतुत्वात्, 'सागयं खंदया' स्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! तवागमनमत्रसुशोभनम्, भगवत्संपर्कस्य कल्याणकारकत्वादिति 'सुसागयं

सो इस प्रकार की आशंका यहां ठीक नहीं है। कारण कि गौतम ने जो ऐसा किया वह आगम व्यवहारी होने के कारण से किया तात्पर्य कहने का यह है कि भगवान के मुख से गौतम को यह ज्ञात हो ही चुका था कि स्कन्दक अगार से अनगार अवस्थावाला बन जावेगा-अतः स्वयं रागवाले होने के कारण उसकी उस स्थिति के प्रति पक्षपात हो जाने से, तथा महावीर प्रभु के ज्ञानातिशय को प्रकट करने के निमित्त प्रभु द्वारा प्रतिपादित बात को स्कन्दक से कह कर उनके प्रति उसका बहुमान हो इस अभिप्राय से गौतम का स्कन्दक के सामने जाना दोषावह नहीं है। इसलिये (अब्भुट्ठित्ता) गौतम उठकर (पच्चुवगच्छइ) स्कन्दक के समक्ष गये। (पच्चुवगच्छित्ता) स्कन्दक के समक्ष जाकर फिर वे (जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां पर कात्यायन गोत्री स्कन्दक थे वहां गये। (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उन्हों ने खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) उन कात्यायन गोत्री स्कन्दक से ऐसा कहा (खंदया) हे स्कन्दक आओ (सागयं) तुम्हारा स्वाग है कारण

આશકા અસ્થાને છે કારણ કે ગૌતમસ્વામીએ એવુ જે કર્યું તે આગમવ્યવહારી હોવાને કારણે કર્યું છે કહેવાનો ભવાર્થ એ છે કે ગૌતમસ્વામીએ ભગવાન મહાવીરને મુખે એ વાત સાભળી હતી કે સ્કન્દક આગાર અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અણુગાર અવસ્થા અંગીકાર કરશે તેથી તેમના પ્રત્યે પ્રેમ ઉત્પન્ન થવાથી અને તેની તે અવસ્થા તરફ પ્રમોદ ઉદ્ભવવાથી તથા મહાવીર પ્રભુના જ્ઞાનાતિશયને પ્રકટ કરવાના ઉદ્દેશથી, પ્રભુ વડે સ્કન્દકના વિષે જે ગુપ્ત વાત પોતાની પાસે પ્રકટ કરવામા આવી હતી તે વાત સ્કન્દકને કહીને પ્રભુ પ્રત્યે તેનામાં માનની લાગણી જાગૃત કરવા માટે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની સામે જાય તેમાં દોષ જેવું કંઇ લાગતુ નથી તેથી "अब्भुट्ठित्ता" ઉઠીને "पच्चुवगच्छइ" ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની પાસે ગયા, "पच्चुवगच्छित्ता" સ્કંદકની પાસે જઈને તેમણે "खदयं कच्चायणस्सगोत्तं एव वयासी" કાત્યાયન ગોત્રના તે સ્કન્દક ને આ પ્રમાણે કહ્યુ "खदया" હે સ્કન્દક પધારો "सागय" તમારૂં સ્વાગત હો

सेदया ' सुस्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! अतिशयेन शोभनमागमनं तव मम निर्णयहेतुकत्वात् । ' अणुरागय सेदया ' अन्वागत स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! अनु रूपं ते आगमनम् कल्याणस्य चिरकाल भावित्वात्, सानुरागं सेदया ' स्वागतान्वागत स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! शोभनत्वानुरूपत्वयुक्तं तवागमनं, अतश्च शिवसुखप्रापकत्वात् । ' से पूर्ण तुम सेदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएण नामं निर्यंठेणं वेसालियसावएण इणमक्खेवं पुच्छिए ' तन्नूनं त्वं स्कन्दक श्रावस्त्यां

कि भगवान के पासमें तुम्हारा आना तुम्हारे कल्याणका कारण हुआ है इसलिये तुम बहुत अच्छे आये । (सुसागयं खंदया) हे स्कन्दक ! तुम्हारा यह आगमन बहुत ही अधिक बधाई के योग्य बना है क्यों कि यहां आने से तुम्हारे प्रश्नों का निर्णय हो जायगा अतः प्रश्नों के निर्णय का हेतु होने से तुम्हारा यह आगमन बहुत अधिक शोभास्पद हुआ है (अणुरागय खंदया) हे स्कन्दक ! यह तुम्हारा आगमन उचित हुआ है क्यों कि यहां आने से तुम्हारा कल्याण बहुत जल्दी हो जायेगा । (सागय मणुरागय खंदया) हे स्कन्दक ! यह तुम्हारा आगमन शोभनत्व और अनुरूपत्व इन दोनों से युक्त है । क्यों कि यह तुम्हें शिवसुख का प्रापक है । अब गौतम (स्कन्दक के प्रति जो पिंगलक निर्ग्रन्थक ने प्रश्न किये हैं और यह उनके उत्तर देने में सर्वथा असमर्थ रहा है (इस विषयका उनसे वर्णन करते हैं (से पूर्ण खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नामं निर्यंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए) हे स्कन्दक !

કારણ કે ભગવાન મહાવીરની પાસેનુ તમારૂ આગમન તમારે માટે કલ્યાણકારી જ નીવડશે તમે અહીં પધાર્યા તે પણ ઘણું સારૂ કર્યું " सुसागय खंदया " હે સ્કન્દક ! તમારૂ અહીં જે આગમન થયું છે તે પણ જ ખુશ થવા જેવુ બન્યુ છે કારણ કે તમે અહીં આવ્યા તેથી તમારા પ્રશ્નોના યથાર્થ જવાબ તમને મળશે. પ્રશ્નોનો નિર્ણય કરવાના હેતુ રૂપ હોવાથી તમારૂ આગમન શોભાસ્પદ બન્યુ છે " अणुरागय खंदया " હે સ્કન્દક ! તમે અહીં આવ્યા તે ઠીક જ બન્યુ છે કારણ કે અહીં આવવાથી તમારૂ કલ્યાણ થવું જ જોઇએ એવું છે " सागयमणुरागय खंदया ! " હે સ્કન્દક ! તમારૂ આગમન શોભન રૂપ અને અનુરૂપ (ઉચિત) જ છે કારણ કે તે આગમન તમોને શાશ્વત સુખ અપાવનાર નીવડવાનું છે હવે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકને પિંગલક નિર્ગ્રંથે પૂછેલા પ્રશ્નો અને તેમના જવાબો આપવાની તેમની અસમર્થતા ના વિષયમા આ પ્રમાણે કહે છે तं नूनं तुम खंदया ! सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नामं निर्यंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए ' હે સ્કન્દક ! શ્રાવસ્તી નગરીમાં

स्थाय क्षिप्रमेव प्रत्युपगच्छति, 'पच्चुवगच्छित्ता' प्रत्युपगत्य 'जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायनस्स गोत्तं एवं वयासी' उपागम्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् 'हे खंदया' हे स्कन्दक ! आगम्यताम्, भगवत्समीपे समागमनस्य कल्याणहेतुत्वात्, 'सागयं खंदया' स्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! तवागमनमत्रसुशोभनम्, भगवत्संपर्कस्य कल्याणकारकत्वादिति 'सुसागयं

सो इस प्रकार की आशंका यहां ठीक नहीं है। कारण कि गौतम ने जो ऐसा किया वह आगम व्यवहारी होने के कारण से किया तात्पर्य कहने का यह है कि भगवान के मुख से गौतम को यह ज्ञात हो ही चुका था कि स्कन्दक अगार से अनगार अवस्थावाला बन जावेगा-अतः स्वयं राग-वाले होने के कारण उसकी उस स्थिति के प्रति पक्षपात हो जाने से, तथा महावीर प्रभु के ज्ञानातिशय को प्रकट करने के निमित्त प्रभु द्वारा प्रतिपादित बात को स्कन्दक से कह कर उनके प्रति उसका बहुमान हो इस अभिप्राय से गौतम का स्कन्दक के सामने जाना दोषावह नहीं है। इसलिये (अब्भुट्ठित्ता) गौतम उठकर (पच्चुवगच्छइ) स्कन्दक के समक्ष गये। (पच्चुवगच्छित्ता) स्कन्दक के समक्ष जाकर फिर वे (जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां पर कात्यायन गोत्री स्कन्दक थे वहां गये। (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उन्हों ने खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) उन कात्यायन गोत्री स्कन्दक से ऐसा कहा (खंदया) हे स्कन्दक आओ (सागयं) तुम्हारा स्वाग है कारण

આશંકા અસ્થાને છે કારણ કે ગૌતમસ્વામીએ એવું જે કર્યું તે આગમવ્યવહારી હોવાને કારણે કર્યું છે કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે ગૌતમસ્વામીએ ભગવાન મહાવીરને મુખે એ વાત સાંભળી હતી કે સ્કન્દક આગાર અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અણગાર અવસ્થા અંગીકાર કરશે. તેથી તેમના પ્રત્યે પ્રેમ ઉત્પન્ન થવાથી અને તેની તે અવસ્થા તરફ પ્રમોદ ઉદ્ભવવાથી તથા મહાવીર પ્રભુના જ્ઞાનાતિશયને પ્રકટ કરવાના ઉદ્દેશથી, પ્રભુ વડે સ્કંદકના વિષે જે ગુપ્ત વાત પોતાની પાસે પ્રકટ કરવામા આવી હતી તે વાત સ્કન્દકને કહીને પ્રભુ પ્રત્યે તેનામાં માનની લાગણી જાગૃત કરવા માટે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની સામે જાય તેમાં દોષ જેવું કઇ લાગતુ નથી તેથી "अब्भुट्ठित्ता" ઉઠીને "पच्चुवगच्छइ" ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની પાસે ગયા, "पच्चुवगच्छित्ता" સ્કંદકની પાસે જઈને તેમણે "खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एव वयासी" કાત્યાયન ગોત્રના તે સ્કન્દક ને આ પ્રમાણે કહ્યુ "खंदया" હે સ્કન્દક પધારો "सागय" તમારૂં સ્વાગત હો

अर्थ समर्थः किं यन्मया कथ्यते स अर्थ समर्थ युक्त किम्? एव गौतम एव नानन्तरं स्कन्दक कथयति-'इंता अत्थि' त्ति 'इंता अस्ति' इंत अस्ति इत्येवं स्वीकारे, यत्त्वया कथित तत्सर्वं सत्यमिति भाव । 'तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते भगवं गोयम एवं वयासी'-तत खलु स स्कन्दक कात्यायनसगोत्रो भग वन्तं गौतममेवमवादीत्-कथितवान्-' से के से णं गोयमा ' हे गौतम । स क एषः ' तहारूवे णाणी वा तवस्सी वा ' तथारूपो ज्ञानी वा तपस्वी वा अस्ति ' से णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्व मक्खाए' येन तुभ्यमेषोऽर्थो मम तावत् रहस्य कृत शीघ्रमाख्यातः, रहस्ये एकान्ते कृत इति रहस्य कृतः प्रच्छन्न सपादितो हृदये प्रवाघधारितत्वात्, 'जओ णं तुमं जाणासि ' यतः खलु त्वं

कहो स्कन्दक ! जो मैं कह रहा हूं वह युक्त है न ? इस प्रकार गौतम के कहने पर स्कन्दक ने उनसे कहा-" इंता अत्थि " हां युक्त है। अर्थात् जैसा आप कह रहे हैं वह सर्वथा सत्य है-हां ऐसी ही बात है। " इंता ,, यह शब्द स्वीकार अर्थ में आया है। अतः जो तुम कहते हो वह सब सत्य है। गौतम द्वारा इस प्रकारकी परोक्षार्थ की बात सुनकर स्कन्दक के हृदय में बड़ा आश्चर्य हुआ और वह तुरत बोले कि (से के से णं गोयमा तहारूवे णाणी वा) हे गौतम ! वह कौन ऐसा तथारूप ज्ञानी) (वा) अथवा (तवस्सी) तपस्वी है (जेणं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) जिसने तुमसे इस मेरे गुप्त अर्थको शीघ्र कह दीया है। (रहस्य कृत रहस्ये कृतः) इति रहस्य कृत गुप्त प्रच्छन्न संपादित कर्यो कि अभीतक यह अर्थ हृदय में धारित होता है। बाहर प्रकाशित नहीं किया गया है। (जओ णं तुमं जाणासि) कि जिससे

આવ્યો છે કે નહીં ? ત્યારે સ્કન્દકે તેમને કહ્યું, ' इंता अत्थि ' હે ગૌતમ ! તમારી વાત તદ્દન સાચી છે ' इंता " પદ અહિં સ્વીકારના અર્થમાં વપરાયું છે તેથી એ વાત નક્કી થાય છે કે ગૌતમની વાત સાચી છે તેમ સ્કન્દક સ્વીકારે છે આ રીતે ગૌતમ વડે પોતાની ગુપ્તવાત વાતવાતમાં સ્કન્દકના અભિપ્રાયનો પણ ન પહોંચે તેવો ખોલી ઉઠયા " से के से णं गोयमा ! तहारूवे णाणी वा तवस्सी) ગૌતમ ! એવો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કોણ છે કે " जं णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्व मक्खाए ' જેમણે તમારી પાસે મારા આ ગુપ્ત અર્થ (પ્રશ્નો) ને આટલી બધી ઝડપથી પ્રગટ કર્યો છે ? रहस्य कृत इति रहस्य कृतः (ગુપ્ત જેટલે કે છુપા) સ્કન્દકે પોતાના વિચારો કોઇની પાસે પ્રગટ કર્યા ન હતા. હતા તે વિચારો ને તેમણે મનમાં જ ગોપવેલા હતા, સ્કન્દકના પ્રશ્નોના આધારે

नगर्यां पिंगलकेन नाम निर्ग्रंथकेन वैशालिकश्रावकेणेगमाक्षेपं पृष्टः, किं पृष्ट्वा नित्याह-'मागहा' इत्यादि। 'मागहा' हे मागध! स्कन्दक! 'किं स अंते लोए अणंते लोए' किं सान्तः लोकः, अनंतो वा लोकः, 'तं चेव' तदेव =पिङ्गलकनिर्ग्रन्थस्कन्दकविषयकः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः। तथाहि-किम्-सान्तः जीवः अनन्तः जीवः ?, सान्ता सिद्धिः ?, अनन्ता सिद्धिः सान्तः सिद्धः, अनन्तः सिद्धः? केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते वा हीयते वा?' इत्यादि। 'जेणेव इहं' यत्रैव इह यत्रेदं भगवतो महावीरस्य समवसरणम् 'तेणेव' तत्रैव 'हव्वमागए' शीघ्रमागत इति। 'से णूणं खंदया' तद् नूनं स्कन्दक 'अट्ठे समट्ठे'

श्रावस्ती नगरी में पिंगल निर्ग्रन्थ ने जो कि भगवान महावीर प्रभु का भक्त है-उनके वचनोंपर ही जिसके हृदयमें अगाधश्रद्धा है-तुमसे इस प्रकार के प्रश्न पूछे हैं न, कि "मागहा" हे मागध स्कन्दक! "किं स अन्ते लोए अणंते लोए" लोक सान्त है अथवा लोक अनन्त है? "तं चेव" यह पद यह प्रकट करता है कि पिंगलक निर्ग्रन्थ और स्कन्दक के विषय का समस्त ही पाठ यहां ग्रहण कर लेना चाहिये-जो इस प्रकार से है- क्या जीव सान्त है अथवा जीव अनन्त है? सिद्धि सान्त है अथवा सिद्धि अनन्त है? सिद्ध सान्त है अथव सिद्ध अनन्त है, किस मरण से मर कर जीव बढता है तथा घटता है? इत्यादि। "जेणेव इहं" जहां भगवान महावीर का यह समवसरण है "तेणेव" वहीं पर "हव्वं आगए" तुम आये हो। 'से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे"

રહેતા મહાવીરના અનુયાયી પિંગલક નિર્ગ્રંથે તમને આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા હતા "मागहा!" હે માગધ! (મગધ દેશ નિવાસી હે સ્કંદક!) "किं स अंते लोए अणंते लोए?" લોક સાન્ત (અન્ત સહિત-અન્તવાળો) છે કે અનન્ત (અન્તરહિત-અન્ત વગરનો) છે! "तं चेव" આ પદવડે એમ બતલાવામા આવ્યું છે કે પિંગલક નિર્ગ્રન્થવડે સ્કન્દકને પૂછાયેલા સઘળા પ્રશ્નો અહી ગ્રહણ કરવા જોઇએ જે પાઠ આ પ્રમાણે છે શુ જીવ અન્તસહિત છે કે અન્તરહિત છે? સિદ્ધિ સાન્ત છે કે સિદ્ધિ અનન્ત છે? સિદ્ધ સાન્ત છે? કે સિદ્ધ અનન્ત છે? કયા મરણેથી મરવાથી જીવ સંસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરવાથી જીવ સંસાર ઘટાડે છે? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર વિષે તમારા મનમા શંકા, કંખા વગેરે ઉદ્ભવવાથી તેના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાને માટે "जेणेव इह" જ્યાં ભગવાન મહાવીર સ્વામીનુ સમવસરણ છે "तेणेव" ત્યા આગળજ 'हव्वं आगए" તમે આવ્યા છો "से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे" હે સ્કન્દક! કહો મારી વાત

केवल ज्ञानवान् अतएव 'तीय पच्चुप्पन्नमणागयविषाणए' अतीत प्रत्युत्पन्नानागतविज्ञायक अतीता नागतवर्तमानपदार्थविषयपरिज्ञातेत्यर्थः, केवल विज्ञान वानपि एतादृशः समवेक्षणाह 'सव्वण्णू' सर्वज्ञ त्रैकालिकसर्वपदार्थविषयक ज्ञानवत्त्वात् 'सव्वदरिसी' सर्वदर्शी सकलपदार्थानां करतलगतमुक्ताफलवत्साक्षा दर्शकत्वात्। 'जे णं मम एस अट्ठे तव तावं रहस्सकडे इव्व मक्खाए' येन मम

"तीयपच्चुप्पन्नमणागयविषाणए" भूत, वर्तमान और भविष्यत् काल की सब बातों को जानते हैं। एकदेश की अपेक्षा से त्रिकाल ज्ञानवान भी ऐसा हो सकता है अतः वे ऐसे नहीं हैं किन्तु "सव्वण्णू" सर्वज्ञ हैं—त्रैकालिक सर्व पदार्थों को जाननेवाले ज्ञान से युक्त हैं। तथा "सव्वदरिसी" सकलपदार्थों के करतलगत मुक्ताफल की तरह साक्षात् दर्शक होने से वे सर्वदर्शी हैं। "जेणं मम एस अट्ठे तव रहस्सकडे इव्व मक्खाए" ऐसे भगवान ने मुझ से आपका यह रहस्यकृत अर्थ स्पष्ट शीघ्र कहा है, अर्थात् जिस समय पिंगलक निर्ग्रन्थने तुमसे प्रश्न किये और तुमने अपने मन में जो ऐसा विचार किया वह सब उसी समय उनके ज्ञान में दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह स्पष्ट झलक गया है यह बात (इव्व) यह पद बतलाता है। अतः इसीसे हे स्कन्दक मैं इसे जान सकाहूं। तात्पर्य यह कि हे स्कन्दक। मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक अर्हन् जिन केवली भगवान् महावीर हैं वे सद्भूतज्ञ केवल ज्ञान आदि से

षविषाणए" ભૂત વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળની બધી વાતો જાણે છે (વિશ જ્ઞાની પણ એક દૃષ્ટિએ તો એવા જ હોય છે પણ અહીં ત્રિકાળજ્ઞાનની વાત નથી એ બતાવવા માટે "सव्वण्णू" तथा "सव्वदरिसी" વિશેષણોનો પ્રયોગ કર્યો છે "सव्वण्णू" તેઓ સર્વજ્ઞ છે ત્રિકાળ સઘળી તમામ રૂપી અને અરૂપી પદાર્થોનું યથાર્થ જ્ઞાન ધરાવે છે તથા "सव्वदरिसी" સર્વદર્શી છે હાથમાં રહેલા મુક્તા ફળની જેમ તમામ પદાર્થોને જોઈ શકતા હોવાથી તેઓ સર્વદર્શી છે "जेणं मम एस अट्ठे तवतावं रहस्सकडे इव्व अक्खाए" એવા તે ભગવાને આપના તે રહસ્યકૃત (ગુપ્ત) વિચારો મારી પાસે તુરત જ પ્રકટ કર્યા છે એટલે કે પિંગલક નિર્ગ્રંથે તમને જ્યારે પ્રશ્નો કર્યા, અને તમે તમારા મનમાં જે વિચાર કર્યો તે જ્યારે જ દર્પણમાં જેમ પ્રતિબિંબ દેખાય તેમ તેમના જ્ઞાનમાં સ્પષ્ટ રીતે દેખાયા એજ વાત 'इव्व' પદ બતાવે છે હે સ્કન્દક! તેમની પાસેથી હું તે બધી વાતો જાણ્યો છું તાત્પર્ય એ છે કે હે સ્કન્દક! આપ ધર્માચાર્ય, ધર્મોપદેશક, અર્હત, જિન, કેવલી ભગવાન મહાવીર છે તેઓ

जानासि, हे गौतम कास्ति एतादृशो ज्ञानी तपस्वी वा यो हि मम हृदयान्तर्निहितमप्यर्थं ज्ञात्वा तुभ्यं प्रकाशितवान् येन त्वमपि ममान्तर्विचारितं सम्यगवगत्य मां कथयसीति भावः। 'तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी' ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् 'एवं खलु खंदया' एवं खलु हे स्कन्दक? 'मम धम्मायरिए' मम धर्माचार्यः, 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः 'उप्पन्ननाणदंसणधरे' उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः 'अरहा' अर्हन् केवलज्ञानकेवलदर्शनार्हत्वात्, 'जिणे' जिनः रागादीनां जेतृत्वात् 'केवली' केवली असहाय ज्ञानवत्वात्, यतो यं

तुम जानते हो। तात्पर्य कहने का यह है कि गौतम से स्कन्दक कह रहा है कि हे गौतम! ऐसा ज्ञानी अथवा तपस्वी कौन है कि जिसने मेरे हृदयस्थित अर्थ को भी जान कर तुम से प्रकाशित किया है कि जिससे तुम भी मेरे अन्तर्विचारित अर्थको अच्छी तरह जानकर मुझ से कह रहे हो। स्कन्दक की इस प्रकार से बात को सुन कर गौतम ने उस कात्यायन गोत्री स्कन्दक से कहा सुनो स्कन्दक मैं तुम्हें बताता हूं यहां (मम धम्मायरिए) मेरे धर्माचार्य (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर विराजमान हैं वे (उप्पन्ननाणदंसणधरे) उत्पन्न हुए ज्ञान और दर्शन के धारी हैं (अरहा) अर्हन हैं अर्थात् उसन्न केवल ज्ञान और केवल दर्शक केधारी वे इस लिये हैं कि वें उनके योग्य हैं (जिणे) उनके योग्य वे इस लिये हैं कि उन्होंने अपनी आत्मा से राग द्वेष आदिकों जीत लिया है। रागद्वेष आदि उन्होंने जीत लिये हैं इस कारण वे „ केवली„ असहाय ज्ञानवाले होने से केवली है-केवलज्ञान शाली हैं' इसी लिये

આ પ્રમાણે છે હે ગૌતમ! એવો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કોણ છે કે જેણે મારા મનોગત વિચારોને જાણીને તમારી પાંસે પ્રકટ કર્યા છે. જેથી તમે પણ મારા મનોગત વિચારોને બરાબર જાણી ગયા છો? સ્કન્દકનો આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ તેને કહ્યુ, હે સ્કન્દક! "मम धम्मायरिए" મારા ધર્માચાર્ય, 'समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીર અહીં બિરાજમાન છે. "उप्पन्ननाणदंसणधरे" તેઓ ઉત્પન્ન થયેલા કેવલજ્ઞાન અને દર્શનના ધારક છે (अरहा) તેઓ અર્હંત છે એટલે કે- તેઓ ઉત્પન્ન કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શનના ધારક એ માટે છે કે તેઓ તેને માટે યોગ્ય છે "जिणे" તેઓ જિન છે કારણ કે તેમણે રાગદ્વેષ વગેરેને જીતી લીધા છે. "केवली" તેઓ કેવળી છે કેવળજ્ઞાની છે તેથી તેઓ तीय पच्चुप्पन्नमणाग-

मानसिक्या पर्युपासनया इति संप्राप्तम् । गौतमेन कथितम्-' अहासुहं देवाणुप्पिया ' यथासुखं देवानुप्रिय ! हे स्कन्दक ! यथा भवद्भिः रोचते । 'मा पडिबंधं करेह' मा प्रतिबन्धं कुरुत एतद्वर्षे विलंबं मा कुरुत, 'तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणसगोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ' ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकेन कात्यायनगोत्रेण सार्द्धं यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः तत्रैव प्राधारयत् गमनाय गन्तुं प्रवृत्त ॥ सू० १० ॥

मूलम्-तेण कालेण तेण समएण समणे भगवं महावीरे विपट्ठभोई यावि होत्था । तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स विपट्ठभोइस्स सरीरयं ओरालं सिंगारं कल्लाणं सिवं धन्नं मंगल्लं सस्सिरीयं अणलंकियविभूसियं, लक्खणवंजण गुणोववेयं सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ। तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ

का समझ हुआ है अर्थात् तीन प्रकार की कायिक वाचिक मानसिक पर्युपासना से। स्कन्दक का ऐसा हार्दिक अभिप्राय जानकर गौतम ने उनसे कहा (अहासुहं देवाणुप्पिया) जैसा आपको रुचे वैसा करो (मा पडिबंधं करेह) परन्तु अच्छे काम में ढील करना उचित नहीं है। (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणसगोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार जब गौतम कह चुके तब वे भगवान गौतम स्वयं कात्यायन गोत्र वाले स्कन्दक के साथ जहां श्रमणभगवान महावीर विराजमान थे उस तरफ प्रस्थित हुए ॥सू० १०॥

સૂત્ર પાઠ અઘરૂ કરવાનું છે એટલે કે મન, વચન અને કાયાથી આપણે જ્ઞાન મહાવીરની પર્યુપાસના (સેવા) કરીએ એવો સ્કન્દકનો આશય પ્રગટ થયો છે સ્કન્દકની એવી હાર્દિક ઈચ્છા જાણીને ગૌતમે તેમને કહ્યું "अहासुहं देवाणुप्पिया હે દેવાનુપ્રિય ! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો. " मा पडिबंधं करेह આવા કામમા વિલંબ કરવો નહીં 'तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायण गोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ' આ પ્રમાણે કહીને ભગવાન ગૌતમ પોતે જ કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકને સાથે લઈને જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર જ્યાં વિરાજતા હતા ત્યાં જવા ઉપડયા ॥સૂ. ૧૦॥

एषोऽर्थस्तव तावत् रहस्यकृतः शीघ्रमाख्यातः, 'जओ णं अहं जाणामि खंदया' यतः खलु अहं जानामि स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! अस्तिमे धर्माचार्यो धर्मोपदेशकोऽर्हन् जिनः केवली भगवान् महावीरः समुत्पन्नकेवलज्ञानादिमान् यस्तवान्तःकरणविचारितमप्यर्थं जानाति तेन मह्यमेषोऽर्थः कथितस्तस्मात्कारणादहं जानामीति भावः ।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवंतं गौतममेवमवादीत् । 'गच्छामो णं गोयमा' गच्छामः खलु हे गौतम ! 'तव धम्मायरियं धम्मोवदेसगं' धर्माचार्यं धर्मोपदेशकम् 'समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो श्रमणं भगवन्तं महावीरं वदामो नमस्यामो यावत्पर्युपास्यामः, यावत्पदेन-तिविहाए काइयाए वाइयाए माणसियाए – पज्जुवासणाए' त्रिविधया कायिक्या वाचिक्या

युक्त हैं। वे तुम्हारे मन में विचारी हुई बात को भी जानते हैं। उन्होंने मुझ से यह सब कहा है इस कारण मैं इस अर्थ को जान गया हूं। (तएणं) गौतम की इस प्रकार की बात को सुनने के बाद में (से खंदए) उस स्कन्दक ने जो कि (कच्चायणस्स गोत्ते) कात्यायन गोत्री थे (भगवं गोयमं एव वयासी) भगवान गौतम से इस प्रकार कहा-(गच्छामो णं गोयमा) हे गौतम ? चलो चले (तव धम्मायरियं धम्मोवए सय समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो) (तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर के पास उन्हें वंदना करें नमस्कार करें यावत् उनकी पर्युपासना करें। यहां (यावत्) पदसे (तिविहाए काइयाए, माणसियाए पज्जुवासणाए) इस पाठ

કેવળ જ્ઞાન અને કેવળદર્શનથી યુક્ત છે. તેઓ તમારા મનની વાત પણ જાણી શકે છે, તેમણે મને એ બધી વાત કહી છે તેથી જ હું તમારા મનોગત પ્રશ્નો જાણી શક્યો છું. "तएण" ગૌતમની તે પ્રકારની વાત સાંભળીને "से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકે "भगवं गोयमं एव वयासी" ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું "गच्छामो ण गोयमा !" હે ગૌતમ ચાલો. "तव्व धम्मायरिय धम्मोवएसय समण भगव महावीरं वदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो" તમારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે આપણે જઈએ અને તેમને વંદન નમસ્કાર કરિએ અને ત્રણ પ્રકારે (કાયિક, વાચિક અને માનસિક) એ ત્રણ પ્રકારે તેમની પર્યુપાસના કરિએ અહીં જાવ (યાવત્) પદથી "तिविहाए-काइयाए, वाइयाए, माणसियाए पज्जुवासणाए" આ

कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्याख्यतोभिनः शरीरकम् उदारं यावत्तीवातीवोपशोभमानं पश्यति दृष्ट्वा हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परम-सौमनस्थितः हर्षवशविसर्पद् हृदयो यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपाग-च्छति उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिः-कृत्वः आदक्षिणं प्रदक्षिणं करोति यावत्पर्युपास्ते । स्कन्दक ! इति श्रमणो भगवान् महावीर स्कन्दकं कात्यायन गोत्रमेवमवादीत् ॥ सू-११ ॥

लक्षणों से, व्यञ्जनों से एवं गुणों से युक्त था। उस समय उनका वह शरीर अपनी शोभा से बहुत अधिकशोभित हो रहा था। (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्तस्स समणस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने व्यक्त तमोजी श्रमण भगवान महावीर के उस उदार आदि विशेषणों से युक्त शरीर को ज्यों ही देखा। तो "पासित्ता" देखकर हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए वह बहुत हर्षित हुआ, बहुत संतुष्ट हुआ और अत्यन्त आनंदयुक्त मन वाला हुआ। (पीइमणे परमसोमणस्सिए, हरिस वसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) तथा उसके मन में बहुत गहरा उनके प्रति प्रेम जग उठा। उसका मन अत्यन्त सुन्दर बन गया। हर्ष के वश से उसका हृदय उछलने लगा। इस तरह की स्थिति वाला बना हुआ वह जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पहुँचा। (उवागच्छित्ता समण भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण

વ્યંજનોની અને ગુણોથી યુક્ત હતું શ્રમણભગવાનનું શરીર ઉદારતી શોભાથી અતિ શય શોભાયમાન હતુ હતું (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्तस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ) ત્યાર બાદ કાત્યાયન ગોત્રના તે સ્કન્દકે વ્યાપૂત તોજી શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું ઉદાર યાવત્ અતીવ શોભાયમાન શરીર જોયું (पासित्ता) તે શરીર જોઇને (हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिए) તેના મનમાં બહો હર્ષ થયો, તેને સંતોષ થયો અને તેના આનંદનો પાર ન રહ્યો (पीइमणे परमसोमणस्सिए) हरिसवसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) તેના મનમા તેમના પ્રત્યે બહો જ ઉંડાટ પ્રેમ જાગ્યો. તેનું મન બહું જ સુંદર બની ગયુ આનંદથી તેનું હૃદય નાચી ઉઠયુ આ રીતે અત્યંત હર્ષ થયો તે શ્રમણભગવાન મહાવીર જ્યાં વિરાજમાન હતા ત્યાં પહોંચ્યા (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ) ત્યા જઇને તેમણે

महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ पासित्ता हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगवं महावीरं तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ । खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी ॥ सू० ११ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो व्यावृत्त-भोजी चाप्यासीत् । ततः खलु श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः शरीरकमुदारम् शृङ्गारम् शिवं धन्यं मांगल्यं सश्रीकम् अनलंकृतभूषितं लक्षण व्यञ्जनगुणोपपेतं श्रियाऽतीवातीवोपशोभमानं तिष्ठति । ततः खलु स स्कन्दकः

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणे भगवं महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था) श्रमण भगवान महावीर व्यावृत्तभोजी प्रासुक निर्दोष आहार करनेवाले थे ।(तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ट भोइस्स सरीरयंत ओरालं सिंगारं कल्लाणं सिव धन्नं मंगलं सस्सिरीयं अणलंकियविभूसियं लक्खणवंजणगुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणं चिट्ठइ) व्यावृतभोजी उन श्रमण भगवंत महावीरका शरीर उदार, शृङ्गार से युक्त किया जैसा, कल्याण रूप,शिव रूप, धन्य, मंगलरूप, अलंकारोंके विना भी शोभित, समस्त

" तेण कालेण " इत्यादि

सूत्रार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) તે કાળે અને તે સમયે (समणे भगवं महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર, વ્યાવૃત્ત ભોજી હતા—એષણીય આહાર-વિશુદ્ધ આહાર-કરનાર હતા (तएण समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओरालं सिंगार कल्लाण सिव धन्न मंगलं सस्सिरीयं अणलंकियभूसियं लक्खणवजणगुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) વ્યાવૃત્ત ભોજી તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનુ શરીર ઉદાર આભૂષણ વગેરે શૃંગારથી રહિત હોવા છતા પણ શૃંગારથી યુક્ત હોય તેવુ, કલ્યાણ સ્વરૂપ, શિવરૂપ, મંગળરૂપ, અતિશય સુંદર, સમસ્ત લક્ષણોથી,

स्यात् शृङ्गारमिव शृंगारम् अतिशयितशोभासम्पन्नमित्यर्थः आभरणादि शृङ्गारं विनैव भगवतः शरीरं स्वाभाविकशोभासम्पन्नमेव मन्तव्यमिति भावः। 'कल्लाणं' कल्याणम् कल्याणस्वरूपम् 'सिवं' शिवम् शिवमनुपद्रवं निरुपद्रवरूपम्, 'धन्नं' धन्यम् धर्मांशयुक्तम् 'मंगल्लं' मंगल्यम् मंगलस्वरूपम् 'सस्सिरीयं' सश्रीकम् लोकोत्तरशोभायुक्तम् 'अणलंकियविभूसियं' अनलङ्कृतविभूषितम् शृङ्गारादिभिः अलंक्रियते यत्तादृशैर्विभूष्यते प्रकृते चोभयोर्निषेधाद् अनलंकृतविभूषितम्, यद्वा-अनलङ्कृतेऽलङ्कारवर्जितेऽपि विभूषितं=विभूषासम्पन्नम् अतिशयसुन्दर-

---

शरीर ओराल उदार प्रधान था। सिंगारं' अलंकार आदि से कृत जो शोभा उस शोभा के संपर्क से शृंगार की तरह वह शरीर शृंगार वाला जैसा था। अर्थात शृंगार से युक्त होने पर जो शोभा होती है वैसी शोभा भगवान् के शरीर की थी। तात्पर्य यह कि आभरण आदि शृंगार के बिना भगवान का शरीर स्वाभाविक शोभा से संपन्न था। क्यों कि भगवान का शरीर स्वभावतः जन्म से ही शोभा संपन्न होता है। (कल्लाणं) भगवान का वह शरीर कल्याण स्वरूप था। कारण कि भगवान स्वयं कल्याणस्वरूप होते हैं। 'सिवं' भगवान का वह शरीर उपद्रव रहित होने के कारण निरुपद्रव स्वरूप था। (धन्नं) प्रशंसा युक्त होने के कारण भगवान् का शरीर धन्यरूप था। (मंगलं) शिवसुखदाता होने से अथवा पापों का नाशक होने से भगवान का शरीर मंगलरूप था। (सस्सिरीयं) अलौकिक शोभा से संपन्न होने के कारण भगवान का शरीर लोकोत्तर (अपार्थिव) शोभावाला था। (अणलंकियविभूसियं) शरीर की शोभा अलंकारों से विशेष हो जाती है परन्तु भगवान के

શરીર 'ओराल (ઉદાર સૌથી સુંદર) હતુ 'सिंगार" શૃંગારથી સુંદર શરીર જેવુ સુંદર લાગે છે તેવુ સુંદર ભગવાનનુ શરીર લાગતુ હતુ જેટલે ભગવાનનુ શરીર કોટલુ બધુ શોભાયમાન હતુ કે આભૂષણો વગેરે શૃંગાર વિના પણ તે અતિશય સુંદર હતુ 'कल्लाणं" ભગવાન પોતે જ કલ્યાણ સ્વરૂપ હોય છે તેથી તેમનુ શરીર કલ્યાણ સ્વરૂપ હતુ "सिवं" ભગવાન પ્રાણીઓની રક્ષા કરનાર હતા તેથી તેમનુ શરીર કષ્ટ રહિત માટે નિરુપદ્રવ રૂપ હતુ 'धन्नं "પ્રશસ્ત હોવાને લીધે તે શરીર ધન્યરૂપ હતુ "मंगलं" શિવસુખદાતા હોવાથી અથવા પાપોનુ નાશકર્તા હોવાથી ભગવાનનુ શરીર મંગલરૂપ હતુ "सस्सिरीयं" અલૌકિક શોભાયુક્ત હોવાથી ભગવાનનુ શરીર લોકોત્તર (અપાર્થિવ) શોભા વાળુ હતુ 'अणलंकियविभूसियं" શરીરની શોભા અલંકારોથી થાય છે પણ ભગવાનના શરીરની શોભા

टीका—' तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था ' तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो व्यावृत्तभोजी चाप्यभवत् ' वियट्टभोई ' व्यावृत्तभोजी—व्यावृत्तम्—अनेषणीयान्निवृत्तम् एषणीयम् आहारं भुङ्क्ते यः स व्यावृत्तभोजी=विशुद्धाहारकारक इत्यर्थः । ' तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्य वियट्टभोइस्स ' ततः खलु श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिन विशुद्धाहारिणः ' सरीरयं ओरलं' शरीरकमुदारम् , उदारं प्रधानमित्यर्थः ' सिंगारं ' शृङ्गारम् शृङ्गारोऽलंकारादिकृता शोभा तत् सम्व-

पयाहिण करेइ) वहां जाकर उसने श्रमण भगवान महावीर की तीन वार प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार किया (जावपज्जुवासइ)यावत् पर्युपासना की । (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एव वयासी) हे स्कन्दक ! ऐसा कहकर श्रमण भगवान् महावीर ने कात्यायन गोत्रीय उन स्कन्दक से ऐसा कहा ॥

टीकार्थ—'तेणं कालेणं इत्यादि । 'तेणं कालेणं तेणं समएणं ' उस कालमें और उस समय में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर 'वियट्टभोई यावि होत्था' व्यावृत्त भोजी थे। व्यावृत्त भुङ्क्तेइति व्यावृत्त भोजी' इस व्युत्पत्ति के अनुसार अनेषणीय से निवृत्त जो भोजन है अर्थात् एषणीय निर्दोष जो आहार है वह व्यावृत्त भोजन है। इस व्यावृत्त भोजनको करने वाला व्यावृत्त भोजी है अर्थात् विशुद्ध आहार लेने वाला व्यावृत्त भोजी है। (तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स) विशुद्धाहार करने वाले उन श्रमण भगवान महावीर का " सरीरयं "

ભગવાન મહાવીરને ત્રણ વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા, (जाव-पज्जुवासइ) અને યાવત્ પર્યુપાસના કરી (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं-कच्चायणस्सगोत्त एव वयासी) હે સ્કન્દક ! એવું સંબોધન કરીને શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કાત્યાનગોત્રી તે સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યું

ટીકાર્થ—" तेणं कालेण तेण समएण " તે કાળે અને તે સમયે " समणे भगवं महावीरे " શ્રમણ ભગવાન મહાવીર " वियट्टभोईयावि होत्था " વ્યાવૃત્તભોજી હતા વ્યાવૃત્તભોજીની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે " व्यावृत्तं भुङ्क्ते इति व्यावृत्तभोजी " એષણીય (એષણા સમિતિ યુક્ત) આહારને વ્યાવૃત્ત આહાર કહેવાય છે તે વ્યાવૃત્ત યાને નિર્દોષ આહારનું ગ્રહણ કરનારને વ્યાવૃત્તભોજી કહે છે એટલે કે પ્રાસુક (વિશુદ્ધ) આહાર લેનારને વ્યાવૃત્તભોજી કહે છે " तएण भगवओ महावीरस्स वियट्ट भोइस्स " વિશુદ્ધ આહાર કરનાર તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું " सरीरय "

स्यात् शृंगारमिव शृंगारम् अतिशयितशोभासम्पन्नमित्यर्थः आभरणादि शृङ्गारं विनैव भगवतः शरीरं स्वाभाविकशोभासम्पन्नमेव भवतीति भावः। 'कल्लाणं' कल्याणम् कल्याणस्वरूपम् 'सिवं' शिवम् शिवमनुपद्रवं निरुपद्रवस्वरूपम्। 'धन्नं' धन्यम् प्रशंसायुक्तम् 'मंगल्लं' मांगल्यम् मंगलस्वरूपम् 'सस्सिरीयं' सश्रीकम् लोकोत्तरशोभायुक्तम् 'अणलंकियविभूसियं' अनलंकृतविभूषितम् मुकुटादिभिः अलंकृतये वस्त्रादिभिर्विभूष्यते प्रकृते शोभयोर्निषेधात् अनलंकृतविभूषितम्। यद्वा-अनलंकृते=अलङ्कारधर्मितेऽपि विभूषिव=विभूषासम्बन्धम् अतिशयसुन्दर-

શરીર બોરાલ ઉદાર પ્રધાન થા। સિંગાર' અલકાર આદિ સે કૃત જો શોભા ઉસ શોભા કે સંબંધ સે શૃંગાર કી તરહ વહ શરીર શૃંગાર વાલા જૈસા થા। અર્થાત શૃંગાર સે યુક્ત હોને પર જો શોભા હોતી હૈ વૈસી શોભા ભગવાન્ કે શરીર કી થી। તાત્પર્ય યહ કિ આભરણ આદિ શૃંગાર કે વિના ભગવાન કા શરીર સ્વાભાવિક શોભા સે સપન્ન થા। ક્યોં કિ ભગવાન કા શરીર સ્વભાવતા પ્રારંભ સે હી શોભા સપન્ન હોતા હૈ। (કલ્લાણં) ભગવાન કા વહ શરીર કલ્યાણ સ્વરૂપ થા। કારણ કિ ભગવાન સ્વયં કલ્યાણસ્વરૂપ હોતે હૈં। 'સિવં' ભગવાન કા વહ શરીર ઉપદ્રવ રહિત હોને કે કારણ નિરુપદ્રવ સ્વરૂપ થા। (ધન્ન) પ્રશંસા યુક્ત હોને કે કારણ ભગવાન્ કા શરીર ધન્યરૂપ થા। (મગલ્લ) શિવસુખદાતા હોને સે અથવા પાપોં કા નાશક હોને સે ભગવાન કા શરીર મંગલરૂપ થા। (સસ્સિરીયં) અલૌકિક શોભા સે સંપન્ન હોને કે કારણ ભગવાન કા શરીર લોકોત્તર (અપાર્થિવ) શોભાવાલા થા। (અણલંકિયવિભૂસિયં) શરીર કી શોભા અલંકારોં સે વિશેષ હો જાતી હૈ પરન્તુ ભગવાન કે

શરીર 'બોરાલ' (ઉદાર શ્રેષ્ઠ સુંદર) હતુ 'સિંગાર' શૃંગારથી યુક્ત શરીર જેવુ સુંદર લાગે છે તેવુ સુંદર ભગવાનનુ શરીર લાગતુ હતુ એટલે ભગવાનનુ શરીર બેટકુ બધુ શોભાયમાન હતુ કે આભૂષણો વગેરે શૃંગાર વિના પણ તે અતિશય સુંદર હતુ "કલ્લાણં" ભગવાન પોતે જ કલ્યાણ સ્વરૂપ હોય છે તેથી તેમનુ શરીર કલ્યાણ સ્વરૂપ હતુ "સિવં" ભગવાન બધાના ઉપદ્રવોની રક્ષા કરનાર હતા તેથી તેમનુ શરીર દરેક જીવન માટે નિરુપદ્રવ રૂપ હતુ 'ધન્ન "પ્રશસ્ત હોવાને લીધે તે શરીર ધન્યરૂપ હતુ "મંગલ્લ' શિવસુખદાતા હોવાથી અથવા પાપોનુ નાશક હોવાથી ભગવાનનુ શરીર મંગલરૂપ હતુ 'સસ્સિરીય "અલૌકિક શોભાયુક્ત હોવાથી ભગવાનનુ શરીર લોકોત્તર (અપાર્થિવ) શોભા યુક્ત હતુ 'અણલંકિયવિભૂસિય" શરીરની શોભા અલંકારોથી વધે છે પણ ભગવાનના શરીરની શોભા

मित्यर्थः। 'लक्खणवंजणगुणोववेयं' लक्षणव्यंजनगुणोपपेतम् तत्र लक्षणानि सामुद्रिकशास्त्रोक्तरक्तहस्तपादतलादिरूपाणि, व्यञ्जनानि तिलमषकादीनि, गुणाः-औदार्यगाम्भीर्यादयः, तैरुपपेतं युक्तं यत् तत् तथा। 'सिरीए अईव-अईव उवसोभेमाणे' श्रिया=शोभया अतीवातीवोपशोभमानं 'चिट्ठइ' तिष्ठति वर्त्तते। 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः, 'सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ' शरीरम् उदारम् यावत् अतीवातीवोपशोभमानं पश्यति, इह यावत् पदेन शृंगार-कल्याण-शिवधन्यमंगल्य-सश्रीकानलंकृतविभूषितलक्षणव्यञ्जनगुणोपपेतत्वादीनां

शरीर की जो शोभा थी वह विना अलंकारों से ही अधिक थी अतः वह अनलंकृत विभूषित था, अथवा अनलंकृत होने पर भी विभूषित संपन्न था अर्थात् अतिशय सुन्दर था। (लक्खणवंजणगुणोववेयं) सामुद्रिक शास्त्रोक्त रक्त हाथ, पादतल आदिरूप लक्षणों से, तिल मषा आदिरूप व्यञ्जनों से, एवं औदर्य गांभीर्य आदि गुणों से युक्त भगवान का शरीर था। (सिरिए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठई) इस कारण भगवान का शरीर शोभासे अतीव-अत्यंत-शोभित हो रहा था। (तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने वियट्टभोजी श्रमण भगवान महावीर के (सरीरयं) शरीर को (ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासई) उदार यावत् अत्यंत शोभासंपन्न देखा। इस तरह स्कन्दक ने उदार, शृंगाररूप, कल्याणरूप, शिवरूप,

---

તો અલંકારો ધારણ કર્યા વિનાપણ અતિશય સુંદર લાગતી હતી. "लक्खण वंजणगुणोववेय" સામુદ્રિક લક્ષણોથી (હાથ પગ આદિનાં શાસ્ત્રોક્ત શુભ લક્ષણોથી (તલ મષા વગેરે રૂપ શુભ વ્યંજનો તથા ઔદાર્ય અને ગાંભીર્ય વગેરે ગુણોથી યુક્ત ભગવાનનું શરીર હતું सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ તેકારણે ભગવાનનુ શરીર અતિશય શોભાયમાન લાગતું હતું. तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ट भोइस्स કાત્યાયન ગોત્રના સ્કન્દકે વિશુદ્ધ આહાર લેનાર શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના "ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासई" ઉદાર વગેરે પૂર્વોક્ત અત્યંત સુંદર શરીરના દર્શન કર્યા કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે સ્કન્દકે ભગવાન મહાવીરના ઉદાર, શૃંગાર રૂપ, કલ્યાણ રૂપ, શિવસ્વરૂપ, ધન્ય રૂપ, મંગલ રૂપ,

सर्वैर्या प्रहण भवति । तथा च शृंगार कलशाप शिवै कन्य मगल्य सश्रीकमनलंकृत विभूषित लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेत धियाऽतीवोपशोभमान भगवत शरीर पश्यतीति भावः । 'पासित्ता' दृष्ट्वा 'हट्ठतुट्ठचित्तमाणदिए' हृष्टतुष्टचित्तमानन्दितः, हृष्टतुष्टम् अतिशयेन तुष्टम् अथवा हृष्टम् विस्मितम् तुष्टं च तोषवत् चित्तम् मनो यस्य स तथा, तत् हृष्टतुष्टचित्त यथा भवति तथा आनन्दित —आनन्दयुक्त । तथा 'णदिए' नन्दित सुखसौम्यादिभावैः सपृद्धतरतामुपगत, 'पीइमणे' 'प्रीतिमनाः प्रीतिः=प्रेम मनसि यस्य स प्रीतमना इति प्रीतमनाः, प्रीतमानन्दातिशयेन मनो यस्य प्रीतमनाः भगवत शरीरसंबन्धिनं गुणादिकं दृष्ट्वाऽतिशयेन मुदित । तथा 'परमसोमणस्सिए' परम सौमनस्थितः परम सौमनस्य सजातं यस्य स परमसौमनस्थितः, अथवा परम सौमनस्यं सुमनस्कतातिशये यस्य स परमसौमनस्थितः उत्कृष्टसौम्यभावयुक्त, 'हरिसवसविसप्पमाणहियए' हर्षवशविसर्पद्

धन्यरूप, मंगलरूप, सश्रीक, अनलकृतविभूषित, लक्षण एवं गुणों से युक्त भगवान के शरीर को देखा । (पासित्ता) देख करके (हट्ठतुट्ठचित्तमाणदिए) यह हृष्टतुष्ट—अत्यन्त तुष्ट—सतुष्टचित्तवाला, अथवा हृष्ट—विस्मित एव तुष्ट—तोष युक्त चित्तवाला हुआ । और विशेषरूप से आनन्द वाला हुआ । (णदिए) सुख सौन्दर्य आदि भावों द्वारा यह बहुत अधिक प्रसन्न हुआ । (पीइमणे) उसका मन अत्यन्त आनद के कारण भगवान की ओर बहुत अधिक प्रीतियुक्त बन गया । अर्थात् भगवान के शरीर अथवा गुणादिक को देखकर वह अत्यन्त हर्षित हो गया । (परम सोमणस्सिए) उसका मन अपने आप में बिलकुल निश्चिन्त हो जाने के कारण अपनी चचलता का परित्याग कर भगवान की तरफ ही लग गया। इसीसे वह सौम्यभाव से युक्त हो गया ।

અશોક, અનલકૃતવિભૂષિત (બિના અલકારો પણ અલકારોથી શોભાયમાન હોય તેવુ) તથા શુભ લક્ષણો વ્યજનો અને ગુણોથી યુક્ત શરીરને જોયુ 'पासित्ता" ભગવાનનુ સૌદર્ય યુક્ત શરીર જોઇને પ્રસન્નતા 'हट्ठ तुट्ठ चित्तमाणंदिए" થયો હર્ષ થયો, અતિશય સતોષ થયો અને તેના આનદનો પાર ન રહ્યો (અથવા હર્ષ જોવાથી વિસ્મિત અને તુષ્ટ જોવાથી સતુષ્ટ ચિત્તવાળો "नदिए" ભગવાનની મુખાકૃતિ, સૌદર્ય વગેરે જોઇને તે વધુ જ આનદિત થયો "पीइमणे" તેને ભગવાન મહાવીર પ્રત્યે અત્યત પ્રીતિ જાગી જોવાથી કે ભગવાનનુ શારીરિક સૌદર્ય તથા ગુણ વગેરે જોઇને તે વધુ જ ખુશી થયો परम सोमणस्सिए તેનુ મન અસ્વસ્થતાનો પરિત્યાગ કરીને ભગવાનની તરફ જ લીન થઈ ગયુ તેથી તે સૌમ્યભાવથી યુક્ત બની ગયા તેને તે વખતે

हृदयः, हर्षवशेन प्रमोदातिरेकेण विसर्पद्=विस्तारं गच्छद् हृदयं=मनो यस्य स हर्षवशविसर्पद् हृदयः अपूर्व हर्षोल्लसितहृदयः सन् ' जेणेव समणे भगवं महावीरे ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते ' तेणेव उवागच्छइ ' तत्रैव उपागच्छति ' उवागच्छित्ता ' उपागत्य ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ' तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ ' त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति त्रिकृत्वः त्रिवारम् ' आयाहिणं ' आदक्षिणतः दक्षिणक्रमेण प्रदक्षिणां करोति ' जाव पज्जुवासइ ' यावत् पर्युपास्ते अत्र यावत् पदेन वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा त्रिविधया मनोवाक्कायरूपया पर्युपासनया इति संग्राह्यम् । ' खंदयाइ ' हे स्कन्दक ! इति ' समणे भगवं महावीरे ' श्रमणो भगवान महावीरः ' खंदय-कच्चायणसगोत्तं एवं वयासी ' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् ॥सू०११॥

उसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं रही । ' हरिसवसविसप्पमाणहियए) प्रमोद के अतिरेक से वह उस समय इतना अधिक आनन्द मग्न हो गया कि उसका हृदय उछलने लगा । इस तरह वह अपूर्व हर्ष के उत्कर्ष से उल्लसित होता हुआ (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पहुँचा (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के उसने (समणं भगव महावीरं) श्रमण भगवान महावीर की (तिक्खुत्तो) तीन वार (आयाहिण पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके मन वचन कायरूप तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा । फिर (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! ऐसा कह कर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहने लगे ॥सू०११॥

કોઈ પણ પ્રકારની ચીન્તા રહી નહીં ' हरिसवसविसप्पमाणहियए " તેના હૃદયમા એટલો બધો આનંદ થયો કે આનદથી તેનું હૃદય નાચી ઉઠયું. આ રીતે મનમા અતિશય આનદ અને ઉલ્લાસ સાથે (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યા શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા ત્યાં તે પહોંચી ગયો. (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને તેણે " समणं भगव महावीरं) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (तिक्खुत्तो) ત્રણ વાર आयाहिण पयाहिण करेइ जाव पज्जुवासइ) પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વદનનમસ્કાર કરીને યાવત્ મન વચન અને કાયરૂપ ત્રણે પ્રકારે પર્યુપાસના (સેવા) કરી ત્યાર બાદ (खंदयाइ) હે સ્કન્દક ! એવુ સબોધન કરીને (समणे भगवं महावीरे)શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (खंदय कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी " કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજકને આપ્રમાણે કહ્યુ ॥ સૂ-૧૧ ॥

सूत्र—से णूणं तुम खंदया ! सावत्थीए नयरीए पिंग लए णं नियंठेणं वेसालिय सावएणं इणं अक्खेव पुच्छिए-मागहा ! किं स अंते लोए अणंते लोए एव त चेव जाव जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्व आगए, से णूण खंदया ! अयमट्ठे समट्ठे ? । हंता अत्थि । जे वि य से खंदया अय मेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए कप्पिए मणोगए स कप्पे समुप्पज्जित्था—किं स अंते लोए अणंते लोए०तस्स वि य ण अय अट्ठे एव खलु मए खंदया चउव्विहे लोए पन्नत्ते त जहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ । दव्वओ ण एगे लोए स अंते१, खेत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ जोयण कोडाकोडीओ आयामविक्खंभेण, असंखेज्जाओ जोयण कोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ताओ । अत्थिपुण स अंते२, कालओ णं लोए ण कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ भविंसुय भवई य भविस्सइ य धुवे णियए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे नत्थि पुण से अंते ३ । भावओ ण लोए अणंता वण्णपज्जवा, अणता गंध पज्जवा, अणता रसपज्जवा, अणता फासपज्जवा, अणता सठाण पज्जवा, अणता गरुयलहुयपज्जवा, अगुरुयलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते ४, से त खंदगा दव्वओ लोए स अंते खेत्तओ लोए स अंते कालओ लोए अणंते भावओ लोए अणंते ?॥ १ ॥ जे वि य ते खंदया जाव स अंते जीवे

हृदयः, हर्षवशेन प्रमोदातिरेकेण विसर्पद्=विस्तारं गच्छद् हृदयं=मनो यस्य स हर्षवशविसर्पद् हृदय. अपूर्वं हर्षोल्लसितहृदयः सन् ' जेणेव समणे भगवं महावीरे ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते ' तेणेव उवागच्छइ ' तत्रैव उपागच्छति ' उवागच्छित्ता ' उपागत्य ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ' तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ ' त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति त्रिकृत्वः त्रिवारम् ' आयाहिणं ' आदक्षिणतः दक्षिणक्रमेण प्रदक्षिणां करोति ' जाव पज्जुवासइ ' यावत् पर्युपास्ते अत्र यावत् पदेन वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा त्रिविधया मनोवाक्कायरूपया पर्युपासनया इति संग्राह्यम् । ' खंदयाइ ' हे स्कन्दक ! इति ' समणे भगवं महावीरे ' श्रमणो भगवान् महावीरः ' खंदयं-कच्चायणसगोत्त एव वयासी ' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् ॥सू०११॥

उसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नही रही। ' हरिसवसविसप्पमाणहियए) प्रमोद के अतिरेक से वह उस समय इतना अधिक आनन्द मग्न हो गया कि उसका हृदय उछलने लगा। इस तरह वह अपूर्व हर्ष के उत्कर्ष से उल्लसित होता हुआ (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पहुँचा (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के उसने (समणं भगव महावीरं) श्रमण भगवान महावीर की (तिक्खुत्तो) तीन बार (आयाहिण पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके मन वचन कायरूप तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा। फिर (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! ऐसा कह कर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहने लगे ॥सू०११॥

કોઈ પણ પ્રકારની ચીન્તા રહી નહીં ' हरिसवसविसप्पमाणहियए " તેના હૃદયમાં એટલો બધો આનદ થયો કે આનદથી તેનુ હૃદય નાચી ઉઠયું. આ રીતે મનમા અતિશય આનદ અને ઉલ્લાસ સાથે (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યા શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા ત્યાં તે પહોચી ગયો (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને તેણે " समणं भगव महावीरं) શ્રમણ ભગવ'ન મહાવીરની (तिक्खुत्तो) ત્રણ વાર आयाहिण पयाहिण करेइ जाव पज्जुवासइ) પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વદનમસ્કાર કરીને યાવત્ મન વચન અને કાયરૂપ ત્રણે પ્રકારે પર્યુપાસના (સેવા) કરી ત્યાર બાદ (खंदयाइ) હે સ્કન્દક ! એવુ સબોધન કરીને (समणे भगवं महावीरे)श्रमण ભગવાન મહાવીરે (खंदय कवायणस्सगोत्तं एवं वयासी " કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજકને આપ્રમાણે કહ્યુ ॥ સૂ-૧૧ ॥

पएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते। कालओ णं सिद्धे सादिए अपज्जवसिए नत्थि पुण से अंते। भावओ णं सिद्धे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दंसण पज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते। से त्तं दव्वओ णं सिद्धे स अंते, खेत्तओ णं सिद्धे स अंते कालओ णं सिद्ध अणंते, भावओ णं सिद्धे अणंते ॥ ४ ॥ जे वि य ते खंदया इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य णं अयमट्ठे एव खलु खंदया! मए दुविहे मरणे पन्नत्ते, त जहा—बालमरणे य पंडियमरणे य। से किं बालमरणे बालमरणे दुवालसविहे पन्नत्ते, त जहा—वलयमरणे १, वसट्टमरणे २, अंतो सल्लमरणे३, तब्भवमरणे ४, गिरिपडणे ५, तरुपडणे६, जलप्पवेसे७, जलणप्पवेसे८, विसभक्खणे९, सत्थोवाडण१०, वेहाणसे ११, ,गिद्धपिट्ठे १२। इच्चेतेण खंदया दुवालसविहे णं बालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाण संजोएइ तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाण संजोएइ अणाइय च ण अणवदग्गं दीहमद्ध चाउरंतसंसार कंतार अणुपरियट्टइ, से त्त बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ से त्त बालमरण। से किं त पंडियमरण पंडियमरणे दुविहे पन्नत्ते, त जहा—पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य। से किं त पाओवगमणे पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते त जहा—नीहा

अणंते जीवे तस्स वि य णं अयं अट्ठे—एवं खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे स अंते ?, खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे अत्थि पुण से अंते २, कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जीवे निच्चे नत्थि पुण से अंते ३, भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दंसण पज्जवा, अणंता चारित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते४, से त्तं दव्वओ जीवे स अंते। खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते ॥२॥ जे वि य ते खंदया पुच्छा जाव किं स अंता सिद्धि अणंता सिद्धी तस्स वि य णं अयमट्ठे—मए खंदया एवं खलु चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता तं जहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ एगासिद्धी स अंता, खेत्तओ णं सिद्धी पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणा पन्नजोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ता, अत्थि पुण से अंते कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी जाव णिच्चा भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा, तत्थ दव्वओ सिद्धी स अंता, खेत्तओ सिद्धी स अंता, कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणंता ॥३॥ जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे तं चेव जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते। खेत्तओ णं सिद्धे असंखेज्ज-

पएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते। कालओ णं सिद्धे सादिए अपज्जवसिए नत्थि पुण से अंते। भावओ णं सिद्धे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दंसण पज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते। से त्त दव्वओ णं सिद्धे स अंते, खेत्तओ णं सिद्धे स अंते कालओ णं सिद्ध अणंते, भावओ णं सिद्धे अणंते ॥ ३॥ जे वि य ते खंदया इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य ण अयमट्ठे एव खलु खंदया! मए दुविहे मरणे पन्नत्ते, त जहा—बालमरणे य पंडियमरणे य। से किं बालमरणे बालमरणे दुवालसविहे पन्नत्ते, त जहा—वलयमरणे १, वसट्टमरणे २, अंतो सल्लमरणे ३, तब्भवमरणे ४, गिरिपडणे ५, तरुपडणे ६, जलप्पवेसे ७, जलणप्पवेसे ८, विसभक्खणे ९, सत्थोवाडणे १०, वेहाणसे ११, गिद्धपिट्ठे १२। इच्चेतेण खंदया दुवालसविहे णं बालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाण सजोएइ जाव अणाइयं च ण अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसार कंतारं अणुपरियट्टइ, से त्त बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ से त्त बालमरण। से किं त पंडियमरणे पंडियमरणे दुविहे पन्नत्ते, त जहा—पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य। से किं त पाओवगमणे पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते त जहा—नीहा

रिमे य अनिहारिमे य, नियमा अप्पडिकम्मे से त्तं पाओव-गमणमरणे। से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ? भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पन्नत्ते तं जहा--नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमा सप्पडिक्कमे से त्तं भत्तपच्चक्खाणे। इच्चेत्तेणं खंदया दुवि-हेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गह-णेहिं अप्पाणं विसंजोएइ जाव वीइवयइ से त्तं पंडियमरणेण मरमाणे जीवे हायइ से त्तं पंडियमरणे। इच्चेएणं खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा ॥सू०१२॥

छाया—तद् नूनं ते स्कन्दक ! श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलकेन निर्ग्रंथेन वैशालिकश्रावकेण अयमाक्षेपः पृष्टः–मागध ! किं सांतो लोकोऽनन्तो कः । एवं

'से णूणं तुमं खंदया!' इत्यादि।

सूत्रार्थ–(से णूणं तुमं खंदया !) हे स्कन्दक ! तुम (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी में (नियंठेणं पिंगलएणं) निर्ग्रन्थ पिंगलक ने (वेसालिय सावएणं) जो कि वैशालिक–भगवान् महावीर का–श्रावक है अर्थात् भगवान महावीर के उपदेशामृत पान करने में रसिक है (इणं अक्खेव पुच्छिए) इस प्रश्न को पूछा है–(मागहा) हे मागध-मागधदे-देशोद्भव हे स्कन्दक ! (किं स अंते लोए अणते लोए) लोक क्या सान्त है अथवा अनन्त है इत्यादि ? (एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वंमागए) इस प्रकार पूछे जाने पर उसके प्रश्नो से

"से णूणं तुमं खंदया" इत्यादि ।

सूत्रार्थ--(से णूणं तुमं खंदया !) હે સ્કન્દક ! (सावत्थीए नयरीए नियं णं पिंगलएण वेसालियसावएण) શ્રાવસ્તી નગરીમાં વૈશાલિક શ્રાવકભગવાન મહાવીરના ઉપાસક–પિંગલક નિર્ગ્રન્થે તમને (इणं अक्खेवं पुच्छिए) આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે–(मागहा) હે માગધ ! "મગધદેશમાં જન્મેલા હે સ્કન્દક!" (किं स अन्ते लोए अणते लोए ?) લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નો તેમણે પૂછ્યા હતા. (एवं त चेव जाव जेणेव मम अतिए तेणेव हव्वमागए) તે પ્રશ્નો સાભળીને તમારા મનમાં

सवेग यावत् यत्रैव ममांतिक तत्रैव इहमागतः । तत् नून स्कन्दक ! अयमर्थः समर्थः । हन्त अस्ति योऽपि च ते स्कन्दक ! अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितः प्रार्थितो कल्पितो मनोगतः सकल्पः समुदपद्यत किं सान्तो लोकोऽनंतो लोक (इत्यादि) तस्यापि चायमर्थः-एवं खलु मया स्कन्दक ! चतुर्विधो लोकः प्रज्ञप्तः तद्यथा-द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतः । द्रव्यत खलु एको लोकः सांतः, क्षेत्रतः खलु लोकोऽसंख्याताः योजनकोटिकोटयआयामविष्कम्भण असंख्येपा योजनकोटिकोटय परिक्षेपेण प्रज्ञप्ता, अस्ति पुनस्तत्रान्त ॥ २ ॥ काम्बो

शंकित आदि हृदयवाले बनकर तुम यहाँ मेरे पास आये हो । (से णूण खदया ! अयमट्ठे समट्ठे) सो कहो स्कन्दक यह सत्य बात है न ! (हंता अत्थि) तब स्कन्दक ने कहा हां सत्य बात है ।

(जे वि य ते खदया ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, पत्थिए, कप्पिए, मणोगए सकप्पे समुप्पज्जित्था) तथा-हे स्कन्दक ! जो तुझे यह इसरूप आध्यात्मिक, चिन्तित, प्रार्थित, कल्पित, मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ है कि (किं स अन्ते लोए अणते लोए० तस्स वि य णं अयमट्ठे) लोक अन्तसहित है कि अन्त विना का है इत्यादि। सो इनका यह अर्थ है-(एवं खलु मए खदया ! चउव्विहे लोए पन्नत्ते) हे स्कन्दक ! मैंने लोक चार प्रकार का प्रज्ञप्त किया है, (तंजहा) वह इस प्रकार से है-(दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ) द्रव्य की अपेक्षा से, क्षेत्र की अपेक्षा से, काल की अपेक्षा और भाव की अपेक्षा से । (दव्वओ णं एगे लोए स अंते खेत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ जोयण कोडाकोडे

શકા કાંક્ષા વગેરે ઉત્પન્ન થવાથી તમે તેના ઉત્તર મેળવવા માટે મારી પાસે આવ્યા છો (से णूण खदया ! अयमट्ठे समट्ठे) હે સ્કન્દક ! કહો તે વાત સાચી છે ? (हंता अत्थि) સ્કન્દકે જવાબ આપ્યો " હા, આપની વાત સાચી છે (जे वि य ते खदया ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए कप्पिए मणो गए, सकप्पे समुप्पज्जित्था) तथा હે સ્કન્દક ! તમને આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક ચિન્તિત પ્રાર્થિત કલ્પિત મનોગત સકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે (किं स अंते लोए अणंते लोए० तस्स वि य णं अयमट्ठे) કે લોક અન્તસહિત છે કે અન્ત રહિત છે ? ઇત્યાદિ તો તે પ્રશ્નોનો આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે—(एवं खलु मए खदया ! चउव्विहे लोए पन्नत्ते) હે સ્કન્દક ! મે ચાર પ્રકારના લોક કહ્યા છે—(तं जहा) તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે દ્રવ્યથી ક્ષેત્રથી, કાલથી, ભાવથી) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોકની અપેક્ષાએ, (૩) કાળની અપેક્ષાએ અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ (दव्वओ णं एगे लोए स अंते तत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ जोयण कोडाकोडीओ आयामविक्खभेण, असंखेज्जाओ जोयण

लोको न कदाचित् नासीत् न कदाचिन्नमनति, कदाचिन्न भविष्यति अभूत च भवति च भविष्यति च, ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितो नित्यः, नास्ति पुनस्तस्यान्तः ॥ ३ ॥ भावतो लोकः अनंता वर्णपर्यवाः, अनताः गंधपर्यवाः,

---

डीओ आयाम विक्खंभेणं, असंखेज्जाओ जोयणको डाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ताओ) द्रव्य की अपेक्षा से लोक एक हैऔर वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से लंबाई चौडाई को लेकर वह लोक असंख्यात कोडाकोडी योजन तक लंबा चौडा है और परिक्षेप परिधि की अपेक्षा से वह क्षेत्र लोक असंख्यात कोडा कोडी योजन की परिधि वाला कहा गया है। (अत्थि पुण स अंते) इस तरह से उसका अंत है। (काल ओ ण लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ न भविस्सइ) तथा काल की अपेक्षा से वह भूतकाल में कभी नही था ऐसा नही वर्तमान में वह नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यकाल में वह कभी कोइ दिन नहीं होगा ऐसा भी नहीं है। (भविंसु य भवइ य, भविस्सइ) किन्तु वह लोक भूतकाल में था, वर्तमान में वह है और भविष्यत् काल में वह रहेगा। (धुवे, णियए, सासए अक्खए, अव्वए अवट्ठिए,णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) इस तरह यह काल से लोक ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है। अक्षय है, अव्यय है, नित्य है, इसलिये इसका अंत नहीं है। (भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा, अणंता

कोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ताओ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક એક છે અને તે અંત સહિત છે. ક્ષેત્રની દૃષ્ટિએ તો લોક લંબાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત કોડા કોડી યોજન લાંબો પહોળો છે. અને પરિધિની અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાત યોજન કોડાકોડી પરિધિવાળો છે (अत्थि पुण स अंते) અને વળી તે અન્ત સહિત છે (कालओ ण लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भविस्सइ) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમાં કોઈ પણ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય, વર્તમાનકાળમાં પણ કોઈ એવો સમય જોવામા આવતો નથી કે જ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય, અને ભવિષ્યમા પણ તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય એવો સમય આવશે નહી (भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य) પરંતુ તે લોકનુ અસ્તિત્વ ભૂતકાળમા હતું વર્તમાનકાળે છે અને ભવિષ્યમા પણ રહેવાનું છે. (धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) આ રીતે કાળની અપેક્ષાએ વિચારવામા આવે તો લોક ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવ્યય છે અને નિત્ય છે. તેથી તેનો અંત નથી. (भावओ णं

अनंता रसपर्यवाः अनन्ताः स्पर्शपर्यवाः, अनंता संस्थानपर्यवा, अनंता गुरुकलघुकपर्यवा, अनंता अगुरुलघुकपर्यवा नास्ति पुनरंतस्यान्त ॥ ४ ॥ तदेतत् स्कन्दक ! द्रव्यतो लोकः सांत क्षेत्रतो लोक सांत कालतो लोकोऽनंत, भावतो लोकोऽनंत ॥ १ ॥ यो पि च स स्कन्दक ! यावत् सांतो जीवः अनंतो वेति तस्यापि चायमर्थः - एवं खलु यावत् द्रव्यतः खलु एको जीव सांत । क्षेत्रतो

गंधपज्जवा, अणंता रस पज्जवा अणंता फासपज्जवा अणंता संठाण-पज्जवा, अणंता गरुयलहुयपज्जवा, अगरुया, अगुरुयलहुयपज्जवा नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा से लोक अनन्त वर्ण पर्यायरूप है, अनन्त गंध पर्याय रूप, अनन्त रस पर्याय रूप, अनन्त स्पर्श पर्याय रूप, अनन्त संस्थान पर्यायरूप, अनन्त गुरु लघु पर्याय रूप, तथा अनन्त अगुरु लघु पर्याय रूप है । भाव से लोक का अन्त नहीं है । इस तरह से (से तं खंदगा ! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते) हे स्कन्दक ! द्रव्य की अपेक्षा लोक अन्त सहित है, क्षेत्र की अपेक्षा लोक सान्त-अन्त सहित है । पर लोक की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है, भाव की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है १ ।

(जे वि य से खंदगा ! जाव संअंते जीवे, अणंते जीवे, तस्स विय णं अयं अट्ठे) तथा हे स्कन्दक ! जो तुम्हें यावत् जीव के विषय में विकल्प उत्पन्न हुआ था कि जीव अन्त सहित है कि अन्त रहित है उसका भी इस तरह से समाधान है कि (एवं खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे स

लोए अणंता दव्वपज्जवा अणंता गंध पज्जवा अणंता रसपज्जवा, अणंता फास पज्जवा, अणंता गरुयलहुय पज्जवा अणंता अगुरुलहुय पज्जवा, तहि पुण से अंते) અને ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણ પર્યાયરૂપ છે અનંત ગંધ પર્યાયરૂપ છે અનંત રસપર્યાયરૂપ છે અનંત સ્પર્શપર્યાયરૂપ છે અનંત સંસ્થાનપર્યાયરૂપ છે અનંત ગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અનંત અગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અનંતરહિત છે આ રીતે (से त खंदगा ! दव्वओ लोए स अंते कालओ लोए अणंते भावओ लोए अणंते) હે સ્કન્દક ! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાંત (અન્તસહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્તસહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનંત (અંત રહિત) છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અંત રહિત છે,

(जे वि य से खंदगा ! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे तस्सवि य णं अयं अट्ठे) હે સ્કન્દક ! તમને જીવના વિષયમાં ' જીવ અંત સહિત છે કે અંત રહિત છે ? ' એવી જે શંકા ઉદ્ભવી છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-

लोओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि, न कयाइ न भविस्सइ. अभूत च भवति च भविष्यति च, धुवो लोओ नियओ सासओ अक्खओ अव्वओ अवट्ठिओ निच्चो, नास्ति पुनस्तस्यान्तः ॥ सू० ॥ भावतो लोकः अनन्ता वर्णपर्यवाः, अनन्ताः गंधपर्यवाः,

---

डीओ आयामविक्खंभेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ता) द्रव्य की अपेक्षा से लोक एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से लम्बाई चौडाई को लेकर वह लोक असंख्यात कोडाकोडी योजन तक लम्बा चौडा है और परिक्षेप परिधि की अपेक्षा से वह लोक असंख्यात कोडा कोडी योजन की परिधि वाला कहा गया है। (अत्थि पुण से अंते) इस तरह से उसका अंत है। (काल ओ ण लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ न भविस्सइ) तथा काल की अपेक्षा से वह भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं वर्तमान में वह नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यकाल में वह कभी कोइ दिन नहीं होगा ऐसा भी नहीं है। (भविंसु य भवइ य, भविस्सइ) किन्तु वह लोक भूतकाल में था, वर्तमान में वह है और भविष्यत्काल में वह रहेगा। (धुवे, णियए, सासए अक्खए, अव्वए अवट्ठिए, णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) इस तरह यह काल से लोक ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है। अक्षय है, अव्यय है, नित्य है, इसलिये इसका अंत नहीं है। (भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा, अणंता

कोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ताओ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક એક છે અને તે અંત સહિત છે ક્ષેત્રની દૃષ્ટિએ તો લોક લંબાઇ અને પહોળાઇની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત કોડા કોડી યોજન લાંબો પહોળો છે અને પરિધિની અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાત યોજન કોડાકોડી પરિધિવાળો છે (अत्थि पुण से अंते) અને વળી તે અન્ત સહિત છે (कालओ ण लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भविस्सइ) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમાં કોઈ પણ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, વર્તમાનકાળમાં પણ કોઈ એવો સમય જોવામાં આવતો નથી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, અને ભવિષ્યમાં પણ તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવો સમય આવશે નહીં (भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य) પરંતુ તે લોકનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં હતું વર્તમાનકાળે છે અને ભવિષ્યમાં પણ રહેવાનું છે. (धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) આ રીતે કાળની અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો લોક ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવ્યય છે અને નિત્ય છે. તેથી તેનો અંત નથી. (भावओ णं

अनंता रसपर्यवाः अनन्ता स्पर्शपर्यवा, अनंता संस्थानपर्यवा, अनंता गुरुकलघुकपर्यवा, अनंता अगुरुलघुकपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यान्त ॥ ४ ॥ तदेतद् एवम् स्कन्दक ! द्रव्यतो लोकः सांतः क्षेत्रतो लोकः सांतः कालतो लोकोऽनंतः, भावतो लोकोऽनंतः ॥ १ ॥ यो पि च स स्कन्दक ! यावत् सांतो जीवः अनंतो जीवः तस्यापि चायमर्थः-एवं खलु यावत् द्रव्यतः खलु एकः जीवः सांतः । क्षेत्रतो

गंधपज्जवा, अणंता रस पज्जवा अणंता फास पज्जवा अणंता संठाण-पज्जवा, अणंता गरुयलहुयपज्जवा, अणंता, अगुरुलहुयपज्जवा नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा से लोक अनंत वर्ण पर्यायरूप है, अनंत गंध पर्याय रूप, अनंत रस पर्याय रूप, अनंत स्पर्श पर्याय रूप, अनंत संस्थान पर्यायरूप, अनंत गुरु लघु पर्याय रूप, तथा अनंत अगुरु लघु पर्याय रूप है । भाव से लोक का अंत नहीं है । इस तरह से (से तेणट्ठेणं खंदया ! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते) हे स्कन्दक द्रव्य की अपेक्षा लोक अंत सहित है, क्षेत्र की अपेक्षा लोक सान्त-अन्त सहित है । पर लोक की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है, भाव की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है १ ।

(जे वि य से खंदया ! जाव सअंते जीवे, अणंते जीवे, तस्स वि य णं अयं अट्ठे) तथा हे स्कन्दक ! जो तुम्हें यावत् जीव के विषय में विकल्प उत्पन्न हुआ था कि जीव अन्त सहित है कि अन्त रहित है इसका भी इस तरह से समाधान है कि (एवं खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे स

लोए अणंता वण्णपज्जवा अणंता गंध पज्जवा अणंता रसपज्जवा, अणंता फास पज्जवा, अणंता गरुयलहुय पज्जवा अणंता अगुरुलहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते) અને ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાયરૂપ છે અનંત ગંધ પર્યાયરૂપ છે અનંત રસ પર્યાયરૂપ છે અનંત સ્પર્શ પર્યાયરૂપ છે અનંત સંસ્થાનપર્યાયરૂપ છે અનંત ગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અનંત અગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અન્તરહિત છે આ રીતે (से तेणट्ठेणं खंदया ! दव्वओ लोए स अंते कालओ लोए अणंते भावओ लोए अणंते) હે સ્કન્દક ! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાંત (અન્તસહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્તસહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનંત (અંત રહિત) છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અંત રહિત છે

(जे वि य से खंदया ! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे तस्सवि य णं अयं अट्ठे) હે સ્કન્દક ! તમને જીવના વિષયમાં જીવ અંત સહિત છે કે અંત રહિત છે ? એવો [illegible] તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-

जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः असंख्येयप्रदेशावगाढः, अस्ति पुनस्तस्यान्तः। कालतो जीवो न कदाचित् नासीत् नित्यो नास्ति पुनरतस्यान्तः। भावतो जीवोऽनंता ज्ञानपर्यवा, अनंता दर्शनपर्यवाः, अनंता चारित्रपर्यवा, अनंता अगुरुलघुपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यान्तः। तदेतद् द्रव्यतो जीवः सांतः क्षेत्रतो जीवः सांतः कालतो

अंते खेत्तओ णं जीवे असंखेज्ज पएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) यावत् द्रव्य की अपेक्षा से जीव एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से जीव असंख्यात प्रदेशी है तथा असंख्यत प्रदेशो में वह अवगाढ है। अतः वह अन्त सहित है। (कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अंते) काल की अपेक्षा जीव भूतकाल में कभीं कोई समय नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है—वह अन्त सहित नहीं है। (भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा अणंता दंसणपज्जवा, अणंता चरित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा जीव अनन्त ज्ञानपर्यायरूप है, अनन्त दर्शनपर्याय रूप है, अनन्त चारित्रपर्याय रूप है, अनंत अगुरु लघु पर्यायरूप है। इस अपेक्षा वह अन्त सहित नहीं है। (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते कालओ जीवे

(एवं खलु जाव दव्वओ ण एगे जीवे स अते, खेत्तओ ण जीवे असंखेज्ज पएसिए, असखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) द्रव्यनी अपेक्षाओ જીव એક છે અને તે અન્તરહિત (સાન્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી છે અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ છે. તેથી તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ અન્તસહિત છે (कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अते) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો ભૂતકાળમા કોઈ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે જીવનુ અસ્તિત્વ ન હોય ત્યાથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે તે અતરહિત છે ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો. " આગળ લોકને કાળની અપેક્ષાએ અતરહિત પ્રતિપાદિત કરવા માટે જે સૂત્રપાઠ આપ્યો છે તે અહી ગ્રહણ કરવો " भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंतादसणपज्जवा, अणता चास्तिपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अते) ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાનપર્યાયરૂપ છે, અનત દર્શનપર્યાયરૂપ છે, અનત ચારિત્રપર્યાયરૂપ છે, અનત અગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે. અને તેથી ભાવની અપેક્ષાએ તે અતસહિત નથી પણ અતરહિત જ છે (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अते, कालओ जीवे अणते,

जीवोऽनंत भावओ जीवोऽनंतो ॥ २ ॥ जा पि य ते खंदया ! पुच्छा जाव किं सांता सिद्धिरनंता सिद्धि तस्सापि णायमर्थ -मया स्कन्दक ! एष खलु चतुर्विधा सिद्धि प्रज्ञप्ता, तद्यथा-द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतः द्रव्यतः खलु एका सिद्धि सान्ता । क्षेत्रतः सिद्धि पंचचत्वारिंशद् योजनशतसहस्राणि आयामविष्कम्भेण, एका योजनकोटि द्विचत्वारिंशत् च योजनशतसहस्राणि द्वे च एकोनपंचाशत् योजनशते किंचिद्विशेषाधिके परिक्षेपेण प्रज्ञप्ता अस्ति पुनस्तस्या अन्तः।

अणंत, भावओ जीवे अणंते) इस तरह द्रव्य से जीव सान्त-अन्त सहित है, क्षेत्र से जीव सान्त-अन्त सहित है। परन्तु काल से जीव अनन्त-अन्तरहित है, भाव से जीव अनन्त-अन्त रहित है।

(जे वि य ते खंदया ! पुच्छा जाव किं सा अंता सिद्धि, अणंता सिद्धी तस्स वि य णं अयं अट्ठे) हे स्कन्दक! तुम्हें जो सिद्धि के विषय में विकल्प उठा है-कि सिद्धि सान्त-अन्त सहित है-कि अनन्त है उसका समाधान इस प्रकार से है-(मए खंदया एव खलु चउव्विहा-सिद्धी पण्णत्ता) हे स्कन्दक! मैंने सिद्धि चार प्रकार की कही है (तंजहा) जैसे (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ) द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से। (दव्वओ एगा सिद्धी स अंता) द्रव्य से सिद्धि एक है और वह अन्त सहित है। (खेत्तओ णं सिद्धी पणयालीस जोयण-सयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं, एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणापण्ण-

भावओ जीवे अणंते) આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ જીવ અનંત છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ જીવ અનંત ' અંત રહિત " છે (२) (जे वि य ते खंदया ! पुच्छा जाव किं सा अंता सिद्धि, अणंता सिद्धी तस्स वि य णं अयं अट्ठे के स्कन्दक! सिद्धिना विषयमा तमने जेवी शंका उद्भवी छे के सिद्धि सान्त छे के अनंत छे तेनु समाधान आ प्रमाणे छे (मए खंदया ! एव खलु चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता) हे स्कन्दक! मे सिद्धि चार प्रकारनी कही छे " तंजहा " ते प्रकारो आ प्रमाणे छे (दव्वओ, खत्तओ, कालओ भावओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाओ (२) क्षेत्रनी अपेक्षाओ (३) कालनी अपेक्षाओ अने (४) भावनी अपेक्षाओ (दव्वओ एगा सिद्धी स अंता) द्रव्यनी अपेक्षाओ सिद्धि एक छे अने ते अन्त सहित छे (खेत्तओ णं सिद्धी पण्ण पालीस जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणापण्णजोयणसए किंचि

जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः असंख्येयप्रदेशावगाढः, अस्ति पुनस्तस्यान्तः। कालतो जीवो न कदाचित् नासीत् नित्यो नास्ति पुनस्तस्यान्तः। भावतो जीवोऽनता ज्ञानपर्यवा, अनंता दर्शनपर्यवाः, अनंता चारित्रपर्यवा, अनंता अगुरुलघुपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यान्तः। तदेतद् द्रव्यतो जीवः सांतः क्षेत्रतो जीवः सांतः कालतो

अंते खेत्तओ णं जीवे असंखेज्ज पएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) यावत् द्रव्य की अपेक्षा से जीव एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से जीव असंख्यात प्रदेशी है तथा असंख्यत प्रदेशो में वह अवगाढ है। अतः वह अन्त सहित है। (कालओ ण जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अंते) काल की अपेक्षा जीव भूतकाल में कभी कोई समय नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है—वह अन्त सहित नहीं है। (भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा अणंता दंसणपज्जवा, अणंता चरित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा जीव अनन्त ज्ञानपर्यायरूप है, अनन्त दर्शनपर्याय रूप है, अनन्त चारित्रपर्याय रूप है, अनत अगुरु लघु पर्यायरूप है। इस अपेक्षा वह अन्त सहित नहीं है। (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते कालओ जीवे

(एव खलु जाव दव्वओ ण एगे जीवे स अते, खेत्तओ ण जीवे असंखेज्ज पएसिए, असखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) द्रव्यनी अपेक्षाओ जीव એક છે અને તે અન્તસહિત (સાન્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી છે અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ છે તેથી તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ અન્તસહિત છે (कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अते) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો ભૂતકાળમા કોઈ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે જીવનુ અસ્તિત્વ ન હોય ત્યાથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે તે અતરહિત છે ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો " આગળ લોકને કાળની અપેક્ષાએ અતરહિત પ્રતિપાદિત કરવા માટે જે સૂત્રપાઠ આપ્યો છે તે અહી ગ્રહણ કરવો " भावओ णं जीवे अणता णाणपज्जवा, अणंतादसणपज्जवा, अणता चास्तिपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अते) ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાનપર્યાયરૂપ છે, અનત દર્શનપર્યાયરૂપ છે, અનત ચારિત્રપર્યાયરૂપ છે, અનત અગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે. અને તેથી ભાવની અપેક્ષાએ તે અતસહિત નથી પણ અતરહિત જ છે (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अते, कालओ जीवे अणते,

असंखेपपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) तथा- हे स्कन्दक ! जो तुम्हें ऐसा विकल्प उठा है कि सिद्ध सान्त-अन्त सहित है कि अनन्त है, उसका समाधान इस प्रकार से है यहां सब पहिले जैसा कहना चाहिये-यावत् द्रव्य से सिद्ध एक है, वह अन्त सहित है, क्षेत्र से सिद्ध असंख्यात प्रदेश वाले हैं और असंख्यात प्रदेशों में उनका अवगाह है। इस अपेक्षा से भी वे अन्त सहित हैं। (कालओ णं सिद्धे साइए अपज्जवसिए नत्थिपुण से अंते) काल से सिद्ध होते सो सादि हैं पर वे फिर अवसान रहित हो जाते हैं। इस तरह वे अन्त रहित हैं। (भावओ णं सिद्धे अणंताणाणपज्जवा, अणंता दंसणपज्जवा, अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा, नत्थिपुण से अंते) भाव से सिद्ध अनंत ज्ञान पर्यायरूप हैं, अनन्त दर्शन पर्यायरूप हैं। उनका अन्त नहीं है ४।

(जे वि य ते खंदया ! इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था-केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य णं अणंतत्त)

असंखेपएसोगाढे अत्थि पुण से अंते) तथा હે સ્કન્દક તમને સિદ્ધ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનન્ત (અન્ત રહિત) એવી જે શંકા છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-અહીં આપ આગમ પ્રમાણે જ સમજવાનું છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધ એક છે તે અન્ત સહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા છે અને અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢી છે એ રીતે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ તેઓ અન્ત સહિત છે (कालओ ण सिद्धे साइए नत्थि पुण से अंते) કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાદિ (આદિ યુક્ત) હોય છે પણ ત્યાર બાદ તેઓ અવસાન રહિત થઈ જાય છે આ રીતે તેઓ અન્ત રહિત છે તાત્પર્ય એ છે કે સાદિ અનન્ત છે (भावओ णं सिद्धे अणंताणाणपज्जवा, अणंता दंसणपज्जवा, अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते) અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અનન્ત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ છે અનન્ત દર્શન પર્યાય રૂપ છે અનન્ત અગુરુલઘુ પર્યાય રૂપ છે તથા તેમનો અન્ત હોતો નથી

(जे वि य ते खंदया ! इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य णं अणंतत्त) હે સ્કન્દક!

कालतः खलु सिद्धिर्न कदाचिन्नासीत् यावत् नित्या। भावतश्च यथा लोकस्य तथा भणितव्या तत्र द्रव्यतः सिद्धिः सांता, क्षेत्रतः सिद्धि सांता, कालतः सिद्धिरनता, भावतः सिद्धिरनन्ता ॥३॥ योऽपि च ते स्कन्दक ! यावत् किमनन्तः सिद्धः तदेव यावत् द्रव्यतः खलु एकः सिद्धः सांत, क्षेत्रतः सिद्धोऽसंख्येयप्रदेशिको-

---

जोयणसय किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ता) क्षेत्र से सिद्धि की लंबाई और चौडाई ४५ पैंतालीस लाख योजन की है। और इसकी परिधि एक करोड ४२ बयालीस लाख तीस हजार दो सो गुनचास ४९ योजन से भी कुछ अधिक है (अत्थि पुण से अंते) इस अपेक्षा वह सिद्धि अन्त सहित है। (कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी जाव णिच्चा) काल से सिद्धि भूतकाल में कभी नहीं हुई ऐसी बात नहीं है, यावत् वह नित्य है (भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा) भाव से सिद्धि लोक की तरह जाननी चाहिये। इस तरह (दव्वओ सिद्धि स अंता, खेत्तओ सिद्धी स अंता कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणंता) द्रव्य से सिद्धि अन्त सहित है, क्षेत्र से भी सिद्धि अन्त सहित है। पर काल से सिद्धि अन्त रहित है-अनन्त है और भाव से भी सिद्धि अन्त रहित है-अनन्त है ३।

(जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे-तं चेव जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते, खेत्तओ णं सिद्धे असंखेज्जपएसिए, असंखेज्जपए-

---

विसेसाहिए परिक्खेवेण पण्णत्ता) क्षेत्रनी अपेक्षाओ सिद्धिनी लंबाई अने पहोळाई ४५ लाख योजननी छे, अने तेनी परिधि (परि मिति) एक करोड बेतालीस लाख त्रीस हजार सो ओगणपचास योजनाथी कांईक वधारे छे (अत्थि पुण से अंते) आ दृष्टिओ विचारवामां आवे तो सिद्धि अंत रहित छे (कालओ ण सिद्धी न कयाइ न आसी जाव णिच्चा) "कालनी अपेक्षाओ भूतकालमां कदी पण सिद्धि नु अस्तित्व न होय एवु बन्यु नथी" त्यांथी शरू करीने ते नित्य छे" त्यां सुधीनो पाठ ग्रहण करवो (भावओ जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा) भावनी अपेक्षाओ सिद्धिना विषयमां लोकनी जेम ज समजवु. आ रीते (दव्वओ सिद्धि सअंता, खेत्तओ सिद्धी सअंता, कालओ सिद्धी-अणंता, भावओ सिद्धी अणंता) द्रव्यनी अपेक्षाओ सिद्धि अंत सहित छे क्षेत्रनी अपेक्षाओ पण सिद्धि अंत सहित छे अने भावनी अपेक्षाओ पण सिद्धि अंत रहित छे (जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे तं चेव-जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे सअंते, खेत्तओणं सिद्धे असंखेज्जपएसिए, असंखे

जीवोऽनन्तैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, तिर्यग्मनुष्यदेव भवग्रहणैरात्मानं संयोजयति अनादिकं च खलु अनवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारमनुपर्यटति, तदेतद् बालमरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते, तदेवत् बालमरणम्। अथ किं तद्

शरीर के भीतर शस्त्रादिक के प्रवेश होनेपर मरना, तद्भवमरण ४-जिस भव में है उस भव से पर्यायान्तरित होकर फिर उसी भव में जन्मलेना, गिरिपतन २-पहाड से गिरकर मरना, तरुपतन ३-वृक्ष से गिर कर मरना, ७ जलप्रवेश ८-जल में डूब कर मरना, ज्वलनप्रवेश -अग्नि में प्रवेश करके मरना ९ विषभक्षण १०-विष खाकर मरना, शस्त्रोपपात ११-शस्त्र की चोट खाकर मरना, वैहायस ११-वृक्ष आदि की डाल आदि पर कपडा आदि की फांस बना उसमें अपना गला फँसा कर मरना, गृध्रस्पृष्ट १२-गृध्र आदि जानवरों के द्वारा अपने को खुवा कर मरना (इच्चेते णं खंदया ! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) इस प्रकार इन बारह प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव अपने आपको अनन्त नैरयिक भवों से युक्त करता है। (तिरियमणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ (तिर्यञ्च, मनुष्य और देवों के भव -ग्रहणों से अपने आपको युक्त करता है। (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं अणुपरियट्टइ) अनादि, अनन्त, दीर्घकालवाले, चारगतिरूप संसारकान्तार में बारबार भटकता

थतु भरण (४) तद्भवभरण-જે પર્યાયમાં રહેલા હોય તે પર્યાયને છોડીને બીજી કોઈ પર્યાયમાં જ ઉપજવુ પડે તેનુ મરણ (૫) ગિરિપતન-પહાડ પરથી પડી જવાથી થતુ મરણ (૬) તરુપતન-વૃક્ષપરથી પડી જવાથી થતુ મરણ (૭) જલપ્રવેશ-પાણીમા ડુબી જવાથી થતુ મરણ (૮) જ્વલન મરણ-આગથી બળીને થતુ મરણ (૯) વિષભક્ષણથી મરણ-ઝેર ખાવાથી થતુ મરણ (૧૦) શસ્ત્રોપપાત-શસ્ત્રનો ઘા વાગવાથી થતુ મરણ (૧૧) વૈહાયસમરણ ઝાડ ઉપર ઓઢણિ થતુ મરણ અને (૧૨) ગૃધ્રસ્પૃષ્ટ મરણ-ગીધ વગેરે પક્ષીઓ કે જનવરોદ્વારા ફાડી ખવાથી થતુ મરણ (इच्चेते णं खंदया ! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) આ રીતે બાર પ્રકારના બાલ મરણથી મરતો હવ પોતાને અનત નારક ભવોથી યુક્ત કરે છે (तिरिय मनुष्य देव भवग्गणेहिं अप्पाणं संजोएइ) તિર્યચ, મનુષ્ય અને દેવના ભવ ગ્રહણથી પોતાને યુક્ત કરે છે (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं अणुपरियट्टइ) તેમજ અનાદિ અનત દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સંસાર કાંતારમાં (સંસાર રૂપી વનમાં) વારવાર

एवं खलु स्कन्दक ! मया द्विविधं मरणं प्रज्ञप्तम् तद्यथा–बालमरणं च पंडितमरणं च । अथ किं तद् बालमरणम् ? बालमरणं द्वादशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–वलयमरणं १, वशार्तमरणम्, अंत शल्यमरणम् ३, तद्भवमरणं ४, गिरिपतनम् ५, तरुपतनम् ६, जलप्रवेश ७, ज्वलनप्रवेशः ८, विषभक्षणम् ९, शस्त्रावपाटनम् १०, वैहायसं ११, गृध्रस्पृष्टम् १२ । इत्येतेन स्कन्दक ! द्वादशविधेन बालमरणेन म्रियमाणो-

---

णं अयमट्ठे) तथा–हे स्कन्दक ! जो तुम्हे यह इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिन्तित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ है कि जीव किस मरण से मरकर अपने संसार की वृद्धि से बढता है और किस मरणसे मर कर वह अपने संसार को हानि से घटता है-सो उसका भी यह समाधान है की–(एवं खलु खंदया) हे स्कन्दक ! (मए दुविहे मरणे पन्नत्ते) मैने मरण दो प्रकार का कहा है–(तंजहा) वे उसके दो प्रकार ये हैं–(बालमरणे य पंडियमरणे य) १ बालमरण और दूसरा पण्डितमरण । (से किं तं बालमरणे) बाल मरणक्या है ? उत्तर (बालमरणे दुवालसविहे पन्नत्ते) बालमरण बारह प्रकार का कहा गया है । (तजहा) जैसे–(वलयमरणे, वसट्टमरणे, अंतोसल्लमरणे, तब्भमरणे, गिरिपडणे, तरुपडणे, जलप्पवेसे, जलणप्पवेसे, विसभक्खणे, सत्थोवाडणे, वेहाणसे, गिद्धपिट्ठे) वलयमरण १–तडफ तडफ कर मरना, वशार्तमरण २–पराधीनता पूर्वक झुर २ कर मरना, अन्तःशल्यमरण ३

તમારા મનમાં આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત (યાવત્) મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે કયા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ પોતાનો સંસાર વધારે છે. અને કયા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે ?–તેનું પણ આ પ્રમાણે સમાધાન છે–(एवं खलु खंदया) હે સ્કન્દક ! (मए दुविहे मरणे पन्नत्ते) મે બે પ્રકારના મરણ કહ્યાં છે, (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે–(बालमरणे य पंडियमरणे य) (૧) બાલમરણ અને (૨) પંડિત મરણ (से किं तं बालमरणे ?) બાલમરણ એટલે શું ? ઉત્તર–(बालमरणे दुवालसविहे पन्नत्ते) બાલમરણ બાર પ્રકારનાં કહ્યા છે–(त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (वलयमरणे, वसट्टमरणे, अतोसल्लमरणे, तब्भवमरणे, गिरिपडणे, तरुपडणे, जलप्पवेसे, जलणप्पवेसे, विसभक्खणे, सत्थोवाहणे, वेहाणसे, गिद्धपिट्ठे) (૧) વલયમરણ–તરફડી તરફડીને થતુ મરણ (૨) વશાર્ત્તમરણ—પરાધીનતા પૂર્વક થતુ મરણ, (૩) અન્ત શલ્ય મરણ શરીરમાં શસ્ત્રાદિ પેસી જવાથી

जीवोऽनन्तैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, विर्यग्मनुष्यदेव भवग्रहणैरात्मानं संयोजयति अनादिकं च खलु अनवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारमनुपर्यटति, तदेतद् बालमरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते, तदेवत् बालमरणम् । अथ किं तद्

शरीर के भीतर शस्त्रादिक के प्रवेश होनपर मरना, तद्भवमरण १-जिस भव में है उस भव से पर्यायान्तरित होकर फिर उसी भव में जन्म लेना, गिरिपतन २-पहाड से गिरकर मरना, तरुपतन ३-वृक्ष से गिर कर मरना, ४ जलप्रवेश ५-जल में डूब कर मरना, ज्वलनप्रवेश ६-अग्नि में प्रवेश करके मरना ७ विषभक्षण ८-विष खाकर मरना, शस्त्रोपपाटन ९-शस्त्र की चोट खाकर मरना, वैहायस १०-वृक्ष आदि की डाल आदि पर कपडा आदि की फांस बना उसमें अपना गला फँसा कर मरना, गृध्रस्पृष्ट ११-गृध्र आदि जानवरों के द्वारा अपने को खुवा कर मरना (इच्चेए णेगे पवया ! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) इस प्रकार इन बारह प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव अपने आपको अनन्त नैरयिक भवों से युक्त करता है । (तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ (तिर्यञ्च, मनुष्य और देवों के भव -ग्रहणों से अपने आपको युक्त करता है । (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं अणुपरियट्टइ) अनादि, अनन्त, दीर्घकालिक, चारगतिरूप संसारकान्तार में बारबार भटकता

थतु मरण (४ तद्भवमरण—જે પર્યાયમાં રહેલા હોય તે પર્યાયને છોડીને ફરીથી એજ પર્યાયમાં જ અવતરણ કરવું પડે તેવું મરણ (५) गिरिपतन-પર્વત પરથી પડી જવાથી થતુ મરણ (६) तरुपतन-વૃક્ષપરથી પડી જવાથી થતુ મરણ (७) जलप्रवेश-પાણીમા ડુબી જવાથી થતુ મરણ (८) જ્વલન મરણ—અગ્નિથી બળીને થતુ મરણ (९) વિષભક્ષણથી મરણ-ઝેર ખાવાથી થતુ મરણ (१०) शस्त्रोपपात—શસ્ત્રનો ઘા વાગવાથી થતુ મરણ (११) વૈહાયસપણે ફાંસો ખાઈને થતુ મરણ અને (१२) गृध्रस्पृष्ट मरण—ગીધ વગેરે પક્ષીઓ કે જનવરોદ્વારા ફાડી ખવાથી થતુ મરણ (इच्चेए णेग जाव । दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) આ રીતે બાર પ્રકારના બાલ મરણથી મરતો હુઓ પોતાને અનંત નરક ભવોથી યુક્ત કરે છે (तिरिय मनुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના ભવ ગ્રહણથી પોતાને યુક્ત કરે છે (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ) તેમજ અનાદિ અનંત, દીર્ઘ આત્મકાલ, ચાર ને સંસાર કાંતારમાં (સંસાર રૂપી વનમાં) વારવાર

पंडितमरणम् ? पंडितमरणं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा—पादपोपगमनं च भक्तप्रत्याख्यानं च । अथ किं तत्पादपोपगमनम् ? पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्मः तदेतत्पादपोपगमम् । अथ किं तत् भक्तप्रत्याख्यानम् ? भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—निर्हारिम च अनिर्हारिमं च नियमात् स प्रतिकर्म, तदेतद् भक्तप्रत्याख्यानम् । इत्येतेन स्कन्दक !

रहता है । (सेत्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) इस तरह बालमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार के बढ जाने के कारण बढता है (से त्तं बालमरणे) यह बालमरण है—अर्थात्—यह बालमरण का स्वरूप है । (से किं तं पंडियमरणे) वह पण्डित मरण क्या है ? (पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते) पण्डित मरण दो प्रकार का कहा है (तंजहा—पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) वह इस तरह से पादपोपगमन और भक्त प्रत्याख्यान (से किं तं पाओवगमणे) पादपोपगमन किसे कहते हैं ? (पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते) पादपोपगमन दो प्रकारका होता है—(तंजहा) जैसे (नीहारिमे य अनिहारिमे य) निर्हारिम और अनिर्हारिम) नियमा अप्पडिकम्मे) नियम से ये दानों पादपोपगमन के प्रकार प्रतिकर्म (सेवाशूषा) से रहित होते हैं । (से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?) भक्त प्रत्याख्यान का क्या स्वरूप है (भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते) भक्त प्रत्याख्यान दो प्रकार का कहा गया है (तजहा) जैसे—(नीहारिमे य अनीहारिमे य) नीर्हारिम और अनिर्हारिम (नियमा सप्पडिकम्मे) भक्त प्रत्याख्यान के ये दोनों प्रकार प्रतिकर्म सहित होते हैं । (से त्तं

પરિભ્રમણ કરે છે. (से त्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) આ રીતે બાલ મરણથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધવાથી વધે છે. એટલે કે બાલમરણથી મરતા જીવને સંસારમા વાર વાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે. (सेत्त बालमरणे) બાલમરણનું ઉપર કહ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે

(से किं तं पंडियमरणे) પંડિત મરણનું કેવુ સ્વરૂપ છે ! ઉત્તર—(पंडियमरणे-दुविहे पण्णतं) પંડિત મરણના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન (से किं तं पाओवगमणे) પાદપોપગમન એટલે શુ ? (पाओवगमणे दुविहे पण्णते) પાદપોપગમન મરણના બે પ્રકાર છે. (त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (नीहारिमे य अनिहारिमे य) (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ. (नियमा अप्पडिकम्मे) નિયમથી ૪ પાદપોપગમનના આ

द्विविधेन पण्डितमरणेन म्रियमाणो जीवोऽनन्तैर्नैरयिक भवग्रहणैरात्मान विसयोजयति, यावच्चतुरन्तसंसारकान्तारं तदेवतं पण्डितमरणम्। इत्येतेन स्कन्दक! द्विविधेन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा ॥ ६ ॥ सू० १२ ॥

मत्तपच्चक्खाणे) इस प्रकार यह भक्तप्रत्याख्यान का स्वरूप है। (इच्चेएणं खंदया! दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ, जाव वीईवयइ) इस प्रकार हे स्कन्दक! इन दोनों प्रकार के पण्डित मरण से मरा हुआ जीव अनन्त नारक आदिजीवों के भव ग्रहणों से अपने आपको मुक्त कर लेता है, यावत् वह संसाररूप कान्तार को पार कर देता है। (से तं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे हायइ, से त्तं पंडियमरणे) इस पण्डितमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार की हानि होने के कारण घटता है। इस प्रकार से यह पण्डितमरण का स्वरूप है। (इच्चेएणं खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) इस तरह हे स्कन्दक! इन दो प्रकार के मरणों से मरण करता हुआ जीव अपने संसार के बढ़ जाने से बढ़ता है और अपने संसार के घट जाने से घटता है ॥

અન્ને પ્રકારના પ્રતિભંધી સહિત હોય છે (से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?) ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાનનું કેવું સ્વરૂપ છે? ઉત્તર (भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते) ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાનના બે પ્રકાર કહ્યા છે (तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે (नीहारिमे य अनीहारिमे य) (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ. (नियमा सपडिकम्मे) ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના આ બે પ્રકાર પણ પ્રતિકર્મ થી સહિત હોય છે (से त्तं भत्तपच्चक्खाणे) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ હોય છે, (इच्चेएणं खंदया! दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइय भवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ, जाव वीईवयइ) હે સ્કન્દક! એ બન્ને પ્રકારના પંડિત મરણથી મરતો જીવ અનંત નારક, મનુષ્ય તિર્યંચ અને દેવ ભવરૂપ-પણથી પોતાની જાતને મુક્ત કરતો નથી અને અનાદિ અનંત દીર્ઘમાર્ગવાળા આ ચતુરંત સંસારકાંતારને તે ઓળંગી જાય છે (से त्तं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे हायइ से त्तं पंडियमरणे) આ રીતે પંડિતમરણથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે પંડિત મરણનું આ જાતનું સ્વરૂપ છે. (इच्चेएणं खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) હે સ્કન્દક! આ રીતે બે પ્રકારના મરણોથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધી જવાથી વધે છે અને પોતાનો સંસાર ઘટી જવાથી ઘટે છે એટલે કે પંડિત મરણથી મરનાર જીવનો સંસાર ઘટે છે પણ બાલ મરણથી મરનાર જીવનો સંસાર વધે છે

पंडितमरणम् ? पंडितमरणं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा–पादपोपगमनं च भक्तप्रत्याख्यानं च । अथ किं तत्पादपोपगमनम् ? पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्मः तदेतत्पादपोपगमम् । अथ किं तत् भक्तप्रत्याख्यानम् ? भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा–निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् स प्रतिकर्म, तदेतद् भक्तप्रत्याख्यानम् । इत्येतेन स्कन्दक !

रहता है । (सेत्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) इस तरह बालमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार के बढ जाने के कारण बढता है (सेत्तं बालमरणे) यह बालमरण है–अर्थात्–यह बालमरण का स्वरूप है । (से किं तं पंडियमरणे) वह पण्डित मरण क्या है ? (पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते) पण्डित मरण दो प्रकार का कहा है (तंजहा–पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) वह इस तरह से पादपोपगमन और भक्त प्रत्याख्यान (से किं तं पाओवगमणे) पादपोपगमन किसे कहते हैं ? (पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते) पादपोपगमन दो प्रकारका होता है–(तंजहा) जैसे (नीहारिमे य अनिहारिमे य) निर्हारिम और अनिर्हारिम) नियमा अप्पडिकम्मे) नियम से ये दानों पादपोपगमन के प्रकार प्रतिकर्म (सेवाशूषा) से रहित होते हैं । (से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?) भक्त प्रत्याख्यान का क्या स्वरूप है (भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते) भक्त प्रत्याख्यान दो प्रकार का कहा गया है (तजहा) जैसे–(नीहारिमे य अनीहारिमे य) नीर्हारिम और अनिर्हारिम (नियमा सप्पडिक्कमे) भक्त प्रत्याख्यान के ये दोनों प्रकार प्रतिकर्म सहित होते हैं । (से त्तं

પરિભ્રમણ કરે છે. (से त्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) આ રીતે બાલ મરણથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધવાથી વધે છે. એટલે કે બાલમરણથી મરતા જીવને સંસારમા વાર વાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે. (सेत्त बालमरणे) બાલમરણનું ઉપર કહ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે .

(से किं त पंडियमरणे) પંડિત મરણનુ કેવુ સ્વરૂપ છે ! ઉત્તર–(पंडियमरणे-दुविहे पण्णत) પંડિત મરણના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન (से किं त पाओवगमणे) પાદપોપગમન એટલે શુ ? (पाओवगमणे दुविहे पण्णते) પાદપોપગમન મરણના બે પ્રકાર છે (त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (नीहारिमे य अनिहारिमे य) (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ. (नियमा अप्पडिकम्मे) નિયમથી જ પાદપોપગમનના આ

वि य ते खंदया' दो पि च ते स्कन्दक! 'अयमेयारूवे' अयम् एतद्रूप 'अज्झत्थिए-चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगए सकप्पे समुप्पज्जित्था' आध्यात्मिक, चिन्तित कल्पित प्रार्थितो मनोगत संकल्पः समुदपद्यत- किं स अंते लोए अणंते लोए' किं सान्त लोकः अनंतः लोकः, हे स्कन्दक! पिङ्गलकस्य पुरुषस्य तव मनसि एतद्विधो विचार समुत्पन्न यदय लोक सांत अनंतो वेति 'तस्स वि य णं अयं अट्ठे' तस्यापि च खलु अयमर्थः 'एव खलु मए खंदया चउव्विहे लोए पण्णत्ते' एव खलु मया स्कन्दक! चतुर्विधो लोकः प्रज्ञप्तः, 'तं जहा' तद्यथा -'दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ' द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतश्च, तत्र

यथार्थ समाधान निमित्त मैं आपके पास आया हूं। स्कन्दक की इस बात को सुनकर प्रभुने कहा कि "खंदया!" हे स्कन्दक सुनो "ते" तुम्हे "जे वि" जो भी पिंगलक निर्ग्रन्थ के पूछने पर अयमेयारूवे यह इस प्रकार का "अज्झत्थिए" आध्यात्मिक, 'चिंतिए' चिन्तित, 'पत्थिए' प्रार्थित, 'कप्पिए' कल्पित 'मनोगए' मनोगत 'सकप्प' संकल्प 'समुप्पज्जित्था' उत्पन्न हुआ है कि "किं स अंते लोए अणंते लोए' लोक क्या अन्त सहित है कि अन्तरहित है? सो "तस्स वि य णं अयं अट्ठे पण्णत्ते" इसका विचार सैद्धान्तिक दृष्टि से इस प्रकार किया गया है, सुनो-"खंदया" हे स्कन्दक! 'मए चउव्विहे लोए पण्णत्ते" मैंने लोक की चार प्रकार से प्ररूपणा की है-'तं जहा" जो इस प्रकार से है-"दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ" द्रव्य से, क्षेत्र

પ્રભો! આપની વાત આવી છે અને તેનો યથાર્થ ઉત્તર આપવાને માટે હું આપની પાસે આવ્યો છું સ્કન્દકની તે વાત સાંભળીને મહાવીર પ્રભુએ તેને કહ્યું- "ખંદયા!" હે સ્કન્દક! 'ते' તમને "जे वि" પિંગલક નિર્ગ્રંથે જે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે તેને લીધે 'अयमेयारूवे" આ પ્રકારનો "अज्झत्थिए" આધ્યાત્મિક, 'चिंतिए' ચિન્તિત, "पत्थिए" પ્રાર્થિત "कप्पिए" કલ્પિત 'मणोगए" મનોગત "सकप्पे" સંકલ્પ समुप्पज्जित्था" ઉત્પન્ન થયો છે કે 'किं स अंते लोए अणंते लोए?" લોક અન્તસહિત છે કે અન્તરહિત છે? તો "तस्स वि य णं अयमट्ठे पण्णत्ते' તેનો આ રીતે અર્થ કરવામાં આવ્યો છે-"खंदया!" હે સ્કન્દક! ' मए चउव्विहे लोए पण्णत्ते" મેં લોકની ચાર પ્રકારે પ્રરૂપણા કરી છે (तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે ' दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ" (૧) દ્રવ્યની (૨) ક્ષેત્રની, (૩) કાલની અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ મેં લોકની ચાર પ્રકારે લોકની પ્રરૂપણા કરી છે " दव्वओ णं एगे

टीका-'से णूणं तुमं खंदया' तद् नूनं त्वं स्कन्दक ! 'सावत्थीय-नयरीए' श्रावस्त्यां नगर्याम् 'पिंगलए णं नियंठेणं' पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालिय सावयेणं' वैशालिक श्रावकेण 'इणं अक्खेवं पुच्छिए' इममाक्षेपं पृष्टः-तदेवाह-'मागहा' हे मागध ! हे स्कन्दक ! किं स अंते लोए अणंते लोए' किं सान्तः लोकः अनंतः लोकः ? 'एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वं-आगए' एवं तदेव यावत् यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव शीघ्रमागतः इह यावत्पदेन-पूर्वोक्तं सर्वं वर्णन संग्राह्यम् । 'से णूणं खंदया' तद् नूनं स्कन्दक ! 'अयमट्ठे समट्ठे' अयमर्थः समर्थः ? । इदं सर्वं सत्यं किम् ? स्कन्दकमाह-'हंता अत्थि' हन्त अस्ति हे भदन्त ! देवानुप्रियेण कथित तत्सर्वं सत्यमेव । भगवानाह-'जे

टीकार्थ—'से णूणं तुमं खंदया' हे स्कन्दक! तुम 'सावत्थीए नयरीए" श्रावस्ती नगरी में 'वेसालियसावएणं' वैशालिक श्रावक है अर्थात् जिन प्रवचन के सुनने में रसिक ऐसे "पिंगलएणं नियठेणं" पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा 'इणं अक्खेवं पुच्छीए' इस आक्षेप-प्रश्नको पूछे गये हो कि-"मागहा" हे मगध देशोत्पन्न स्कन्दक ! 'किं सअंते लोए अणंते लोए' लोक सान्त-अन्तसहित है कि अनन्त-अन्तरहित है ? 'एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए हव्वमागए' इसी प्रकार जीव सिद्धि सिद्ध और मरण के विषय में पूछे जाने पर तुम शङ्कित काङ्क्षित आदि हो गये, 'से णूणं खंदया! अयमट्ठे समट्ठे' हे स्कन्दक ! कहो यह बात सत्य है न ? 'हंता अत्थि' हां प्रभो सत्य है। और उन्हीं के

ટીકાર્થ—"से णूणं तुमं खंदया" હે સ્કન્દક ! તમને "सावत्थीए नयरीए" શ્રાવસ્તી નગરીમા "वेसालिय सावयेणं" મારા અનુયાયી (ભગવાનની માતાનું નામ વિશાલા હતુ) વિશાલાનો પુત્ર વૈશાલિક કહેવાય. અહી મહાવીર સ્વામી માટે વૈશાલિ શબ્દ વાપર્યો છે અને પિંગલક તેમનો અનુયાયી હોવાથી તેને માટે वैशालिक श्रावक विशेषण वापर्युं छे) "पिंगलएण नियठेण" पिंगलक निर्ग्रंथे "इणं अक्खेवं पुच्छिए" આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે કે "मागहा" હે માગધ! (मगध देशोत्पन्न स्कन्दक!) "किं स अंते लोए अणंते लोए" લોક સાન્ત (અંતસહિત) છે કે અનન્ત-અન્ત રહિત છે ? "एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए हव्वमागए" એજ પ્રમાણે જીવ, સિદ્ધિ, સિદ્ધ, અને મરણના વિષયમા તમને પ્રશ્નો પૂછવામા આવ્યા ત્યારે તમારા મનમા શંકા, કાંક્ષા વગેરે ઉત્પન્ન થયા "से णूण खंदया! अयमट्ठे समट्ठे" હે સ્કન્દક ! કહો, મારી વાત સાચી છે ? "हंता अत्थि" હા

न्तश्च यद्य क्षेत्रलोकः स चासंख्येयकोटाकोटी योजनपर्यन्तो दैर्घ्यविस्ताराभ्यामित्यर्थः । असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ता' असंख्येया योजनकोट्यो कोट्य परिक्षेपेण प्रज्ञप्ता, तथा तस्य क्षेत्रलोकस्य परिधिसंख्य योजनकोटीकोटि परिमितः कथित 'अत्थि पुण से अंते' अस्ति पुनस्तस्यान्तः द्रव्यलोकस्य यथोक्तलक्षणकस्यान्तो विद्यते। स चान्तवानित्यर्थः । 'कालओ ण न कयाइ न आसी न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ' कालतः खलु लोको न कदाचित् नासीत् न कदाचित् न भवति न कदाचित् न भविष्यति, यदि

है । तथा इसकी जो परिधि कही गई है वह असंख्यात कोडा कोडी योजनों की कही गई है। इस तरह चार प्रकार के लोकों में से जो द्रव्य से लोक एक है और सान्त है। क्षेत्र से लोक असंख्यात कोडा कोडी योजन तक लंबाई चौडाई वाला है, तथा इसकी परिधि-घिराव भी असंख्यात कोटाकोटी योजन की है इसलिये 'अत्थि पुण से अंते' इस प्रकार लोक द्रव्य से और क्षेत्र से सान्त-अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा लोकका वह स्थान लिया गया है जो असंख्यात कोडाकोडी योजन तक लंबा चौडा है। क्यों कि इसी में जीवादिक द्रव्य रहते हैं परिधि भी इस की इतनी ही है। अतः इतना सब कुछ होने पर भी वह समर्यादित क्षेत्रवाला होने के कारण सान्त-अन्तसहित कहा गया है। "कालओ णं लोए न कयाइ न आसी न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ" काल से लोक-भूतकाल में कभी किसी समय नहीं था ऐसा नहीं, वर्तमान में वह कभी किसी समय नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यत्काल में वह कभी किसी समय नहीं होगा ऐसा भी नहीं

અસંખ્યાત કોડા, કોડી યોજનની કહી છે આ રીતે વિચાર કરતાં તે વાત સિદ્ધ થાય છે કે દ્રવ્યની તથા ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્ત સહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોકને અસંખ્યાત કોડા કોડી યોજન લાંબો તથા પહોળો કહ્યો છે અને તેમાં જ જીવાદિક દ્રવ્ય રહે છે તેનો પરિધિ (ઘેરાવો) પણ એટલો જ છે આ પ્રમાણે હોવા છતાં પણ તે મર્યાદા સહિત હોવાથી તેને સાન્ત (અન્ત યુક્ત) કહ્યો છે "कालओ णं लोए न कयाइ न आसी न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ" કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમાં કોઈ એવો સમય નહોતો કે જ્યારે લોક અસ્તિત્વ ન હોય એમ માની શકાય પણ કોઈ એવો સમય હોતો નથી કે જ્યારે લોકનું અસ્તિત્વ ન હોય અને તેમ પણ કોઈ એવો સમય નહીં હોય કે જ્યારે લોકનું અસ્તિત્વ

द्रव्यतो लोकं दर्शयति-' दव्वओ णं एगे लोए स अंते ' द्रव्यतः खलु एको लोकः सान्तः लोकस्य पंचास्तिकायरूपैकद्रव्यत्वात् असौ लोकः सान्तः लोकान्ते विरामात् ' खेत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ-जोयणकोड़ाकोडीओ आयामविक्खंभेणं ' क्षेत्रतः खलु लोकः असंख्यातायोजनकोटाकोटच आयामविष्कंभेण, तत्रायामो दैर्घ्यम् विष्कंभो विस्तारः, चतुर्विधलोकेषु यो द्रव्यलोकः स एकोऽ-

---

से, काल से और भाव से, उनमें " दव्वओ णं एगे लोगे स अंते " द्रव्य से लोक एक है और वह अन्त सहित है। इसका तात्पर्य यह है कि जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल के भेद से द्रव्य छह प्रकार का कहा गया है। इनमें कालद्रव्य को छोड़कर बाकी के पांच द्रव्य बहु प्रदेशी होने के कारण अस्तिकाय कहे गये हैं। जितने आकाश में इन द्रव्योंका सद्भाव है वह लोक है। इसके बाद अलोक है। लोक पंचास्तिकायरूप एकद्रव्य है। अतःपंचास्तिकायरूप एक द्रव्यत्व की विवक्षा से लोक एक है ऐसा कहा गया है। तथा यह सान्त है-अन्त सहित है, इसका तात्पर्य यह है कि पंचास्तिकायरूप एक द्रव्यना लोकान्त तक है आगे नहीं है। क्यों कि आगे आकाशद्रव्यके सिवाय और काईद्रव्य नहीं है इस अपेक्षा लोकान्तमें इस पंचास्तिकायरूप लोकका विराम होनेके कारण वह लोक सान्त-अन्त सहितहै १। क्षेत्र की अपेक्षा लोक को आयाम -विष्कम्भ-लंबाईचौडाई असंख्यात कोडा कोडी योजनों की कही गई

लोए स अंते " द्रव्यनी दृष्टिએ વિચાર કરવામાં અવે તો લોક એક છે અને તે અંતસહિત છે. કહેવાનું પ્રયોજન એવું છે કે જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, અને કાળ, એ છ ભેદની અપેક્ષાએ દ્રવ્યના છ પ્રકાર કહ્યા છે તેમાંથી કાળદ્રવ્ય સિવાયના પાંચદ્રવ્યો બહુ પ્રદેશી હોવાને કરણે તેમને અસ્તિકાય કહેવામા આવેલ છે જેટલા આકાશમાં તેદ્રવ્યોનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેટલા ભાગને લોક કહે છે બાકી માત્ર આકાશદ્રવ્યજ છે તેને અલોક કહેવામા આવેલો છે. લોક પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્ય છે તેથી પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યત્વની દૃષ્ટિએ લોક એક છે, એમ કહ્યુ છે. તથા તે સાન્ત (અન્તસહિત) છે તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યપણુ લોકાન્ત સુધીજ છે-તેનાથી આગળ નથી, કારણ કે આગળ આકાશ દ્રવ્ય સિવાય બીજું કોઈપણ દ્રવ્ય નથી આ રીતે લોક ને અન્તે આ પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનો વિરામ હોવાથી તે લોક સાન્ત (અન્ત સહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોકની લંબાઇ તથા પહોળાઇ અસંખ્યાત કોડા, કોડી, યોજનની કહી છે. તથા તેની પરિધિ (ઘેરાવો) પણ

बहुतरप्रदेशापेक्षयापि स्यादत आह-' अक्खए ' अक्षयः तत्प्रदेशानाम् व्ययरहितत्वात् । तत्प्रदेशानामव्ययत्वं च द्रव्यरूपेणापि संभवतीत्यत आह—' अवट्ठिए ' अवस्थितः पर्यायाणामनन्तत्वेन अवस्थितत्वात् । एतावता किमुक्तं भवति ? तदाह -' णिच्चे ' नित्य आदयन्तरहित सर्वदैकरूपेण स्थितिमान् कालतो लोक इति ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यान्त यतः कालतोऽयं लोकः पूर्वमप्यासीद् इदानीं वर्तते भविष्यति चानागतकालेऽपि तथा ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽव-

પેસા નહીં હૈ કિન્તુ "अक्खए" અક્ષય હૈ-અવિનાશી હૈ-કિસી ભી કાલમેં ઇસકા ક્ષય નહીં હૈ । બહુતર પ્રદેશોં કી અપેક્ષા સે ભી પદાર્થ અક્ષય માના જા સકતા હૈ-સો ઐસા યહ લોક નહીં હૈ, કિન્તુ અવ્યય હૈ ઇસકે સમસ્ત પ્રદેશ વ્યય સે રહિત હૈ । ઇસ મેં ઘટતી બઢતી નહીં હોતી હૈ । ઉસકે પ્રદેશોં મેં અવ્યયતા દ્રવ્યરૂપ સે ભી સંભવતી હૈ સો ઇસ રૂપ સે હી અવ્યયતા લોક મેં નહીં હૈ કિન્તુ લોક કી જો અનન્તપર્યાયે હૈં વે સદાકાલ ઉસમેં અનન્તરૂપ સે અવસ્થિત રહતી હૈં અતઃ ઇસ રૂપ સે-પર્યાયકી અવસ્થિતિ કી અપેક્ષા સે લોક " अवट्ठिए " અવસ્થિત હૈ । ઇસસે યહ સારાંશ નિકલા કિ કાલ સે લોક " णिच्चे " નિત્ય હૈ સર્વદા એકસી સ્થિતિ વાલા હૈ " नत्थि पुण से अंते " અતઃ ઇસ અપેક્ષા યહ લોક અન્ત સહિત હૈ-અનન્ત હૈ । ક્યોં કિ કાલ કી અપેક્ષા યહ લોક પહિલે મૂતકાલ મેં ભી થા, ઇસ સમય ભી હૈ ઔર આગે ભવિષ્યકાલ મેં ભી રહેગા, તથા યહ લોક ધ્રુવ હૈ, નિત્ય હૈ, શાશ્વત હૈ, અક્ષય

ભાની અપેક્ષાએ છે પણ લોકની ભાબતમાં એવું નથી તે તો " अक्खए " અક્ષય (અવિનાશી) છે કોઈ પણ કાળે તેનો ક્ષય થતો નથી. બહુતર (ઘણા) પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ પદાર્થને અક્ષય ભાની શકાય છે, પણ આ લોક એવો નથી પણ આ લોક તો અવ્યય છે એટલે કે તેના તમામ પ્રદેશો વ્યય રહિત હોય છે તેમાં વધારો કે ઘટાડો થતો નથી તેના પ્રદેશોમાં પણ દ્રવ્યરૂપે અવ્યય પણ સંભવી શકે છે પણ લોકમાં તે પ્રકારનું અવ્યય પણ નથી પણ લોકની જે અનંત પર્યાયો છે તે સદાકાળ તેમાં અનંત રૂપે અવસ્થિત મોજુદ રહે છે તેથી પર્યાયની અવસ્થિતિની અપેક્ષાએ લોક " अवट्ठिए " અવસ્થિત છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાળની અપેક્ષાએ લોક " णिच्चे " નિત્ય છે, હમેશાં લોક સરખી સ્થિતિ વાળો છે " नत्थि पुण से अंते " કાળની અપેક્ષાએ લોક અન્ત (અંત સહિત) નથી પણ અનંત (અંત રહિત) છે કારણ કે કાળની અપેક્ષાએ આ લોક ભૂત કાળમાં હતો, વર્તમાન કાળે પણ છે અને ભવિષ્ય કાળે પણ રહેશે, તથા આ લોક ધ્રુવ છે શાશ્વત છે, નિત્ય છે, અક્ષય છે,

तु आसीदेव भवत्येव भविष्यति च नवं द्वयस्य अस्तित्वरूपमकृतार्थबोधकत्व नियमात् तथा च सर्वथैवासीत् भवति भविष्यति चेत्यर्थ, एतदर्थमेव विधिमुखेन स्पष्टयति–' भविंसु य भवित्सइ य' अभूत् चायंलोकः पूर्वमपि, भवति चेदानीम्, भविष्यति चानागतकालेपि, यतः पूर्वमपि लोक आसीदिनानोमपि वर्ततेऽनागत कालेऽपि स्थास्यति अत एव 'धुवे ध्रुवः अचलत्वात्, स चानियतरूपोपि कदाचित् स्यात् अत आह—' णियए ' नियत एकस्वरूपत्वात् नियतरूपः कादाचित्कोपि पदार्थः स्यादत आह–' सासए ' शाश्वतः प्रतिक्षणं सद्भावात् स च नियतकालापेक्षयापि स्यादत आह–' अक्खए ' अक्षय क्षयरहितः अविनाशित्वात् अक्षयश्च

है किन्तु भूतकाल में लोक था वर्तमानमें वह है, और भविष्यत् में वह रहेगा। तीनों कालो में लोक का अस्तित्व है। यह लोक था है और रहेगा। इसी बात को सूत्रकार विधिमुख से प्रतिपादन करते हुए कहते हैं कि–' भविंसु भवइ, भविस्सइ ' यह लोक कालकी अपेक्षा पहिले था इस समय है और भविष्यत् काल में रहेगा। इसलिये यह लोक–'धुवे' अचलहोने के कारण ध्रुवहै। ध्रुव होकर भी वह कदाचित् अनियतरूपवाला भी हो सकता है तो इस आशंका की निवृत्ति के लिए सूत्रकार कहते है कि वह ऐसा नहीं है किन्तु–" णियए " वह लोक एकस्वरूपवाला होने के कारण नियत है। नियतरूपवाला भी कोई एक पदार्थ कादाचित्कभी हो सकता है सो ऐसा वह लोक नहीं है कि नियत स्वरूपवाला होकर भी कादाचित्कता उसमें हो–वह तो " सासए " शाश्वत है–प्रतिक्षण में उसका सद्भाव रहता है। प्रतिक्षण में पदार्थ का सद्भाव नियतकालकी अपेक्षासे भी माना जा सकता है अतः वह लोक

ન હોય પણ ભૂતકાળમાં લોકનુ અસ્તિત્વ હતુ, વર્તમાન કાળે છે અને ભવિષ્યમા પણ રહેશે જ ત્રણે કાળોમાં લોકનુ અસ્તિત્વ હોય છે. એટલે કે લોક હતો, લોક છે અને લોક હશે એજ વાતનુ સૂત્રકાર હવે હકાર વાચક વાક્યો વડે પ્રતિપાદન કરે છે " भविंसु, भवइ, भविस्सइ " કાળની અપેક્ષાએ લોકના અસ્તિત્વનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે પહેલાં હતો, હાલમાં છે, અને ભવિષ્યમાં પણ રહેશે તેથી આ લોક " धुवे " અચલ હોવાને કારણે ધ્રુવ છે ધ્રુવ હોવા છતા પણ તે કદાચ અનિયત સ્વરૂપ વાળો સંભવી શકે છે તે આશંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકારે તેને " णियए " નિયત કહેલ છે લોક એક સ્વરૂપ વાળો હોવાથી નિયત છે " सासए " તે શાશ્વત છે સદા તેનું અસ્તિત્વ રહે છે કોઇ પણ ક્ષણ એવી નથી હોતી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય પ્રતિક્ષણે પદાર્થનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) નિયત કાળની અપેક્ષાએ પણ

बहुतरप्रदेशापेक्षयापि स्यादत आह-' अव्वए ' अव्ययः तावत्प्रदेशानाम् व्ययराहित्यात् । तत्प्रदेशानामव्ययत्वं च द्रव्यरूपेणापि समर्थनीयमत आह—' अवट्ठिए ' अवस्थितः पर्यायाणामनन्ततया अवस्थितत्वात् । एतावता किमुक्तं भवति ? तथा -' णिच्चे ' नित्यः आदन्तरहित सर्वदैकरूपेण स्थितिमान् कालतो लोक इति ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यान्तः यतः कालतोऽपि लोकः पूर्वमप्यासीत् इदानीं वर्तते भविष्यति चानागतकालेऽपि तथा ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव-

ऐसा नहीं है किन्तु "अक्खए" अक्षय है-अविनाशी है-किसी भी कालमें इसका क्षय नहीं है। बहुतर प्रदेशों की अपेक्षा से भी पदार्थ अक्षय माना जा सकता है-सो ऐसा यह लोक नहीं है, किन्तु अव्यय है इसके समस्त प्रदेश व्यय से रहित है। इस में घटती बढती नहीं होती है। उसके प्रदेशों में अव्ययता द्रव्यरूप से भी संभवती है सो इस रूप से ही अव्ययता लोक में नहीं है किन्तु लोक की जो अनन्तपर्याये हैं वे सदाकाल उसमें अनन्तरूप से अवस्थित रहती हैं अतः इस रूप से-पर्यायकी अवस्थिति की अपेक्षा से लोक "अवट्ठिए" अवस्थित है। इससे यह सारांश निकला कि काल से लोक "णिच्चे" नित्य है सर्वदा एक सी स्थिति वाला है "नत्थि पुण से अंते" अतः इस अपेक्षा यह लोक अन्त सहित है-अनन्त है। क्यों कि काल की अपेक्षा यह लोक पहिले भूतकाल में भी था, इस समय भी है और आगे भविष्यकाल में भी रहेगा, तथा यह लोक ध्रुव है, नित्य है, शाश्वत है, अक्षय

भानी शकाय छे पण लोकनी बाबतमां એવું નથી. તે તો "अक्खए" અક્ષય (અવિનાશી) છે કોઈ પણ કાળે તેનો ક્ષય થતો નથી બહુતર (ઘણા) પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ પદાર્થને અક્ષય માની શકાય છે, પણ આ લોક એવો નથી પણ આ લોક તો અવ્યય છે એટલે કે તેના તમામ પ્રદેશો વ્યય રહિત હોય છે તેમાં વધારો કે ઘટાડો થતો નથી તેના પ્રદેશોમાં પણ દ્રવ્યરૂપે અવ્યયપણું સમજી શકે છે પણ લોકમાં તે પ્રકારનું અવ્યયપણું નથી પણ લોકની જે અનંત પર્યાયો છે તે સદા કાળ તેમાં અનંત રૂપે અવસ્થિત જોવામાં આવે છે તેથી પર્યાયની અવસ્થિતિની અપેક્ષાએ લોક "अवट्ठिए" અવસ્થિત છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાળની અપેક્ષાએ લોક "णिच्चे" નિત્ય છે, હંમેશાં એક સરખી સ્થિતિ વાળો છે "नत्थि पुण से अंते" કાળની અપેક્ષાએ લોક અન્ત (અંત સહિત) નથી પણ અનંત (અંત રહિત) છે કારણ કે કાળની અપેક્ષાએ આ લોક ભૂત કાળમાં હતો વર્તમાન કાળે પણ છે અને ભવિષ્ય કાળે પણ રહેશે, તથા આ લોક ધ્રુવ છે, શાશ્વત છે, નિત્ય છે, અક્ષય છે,

स्थितो नित्यश्च तस्मादेव कारणादस्य लोकस्य कालतोऽतो विनाशो नैव भवतीत्यर्थः। ' भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा ' भावतः खलु लोकः अनंता वर्णपर्यवाः वर्णविशेषाः एकगुणकालत्वादयः, भावतो लोकः अनंतवर्णपर्यवरूप इति, तथा ' अणंता गंधपज्जवा ' अनन्ता गन्धपर्यवाः, ' अनता रसपज्जवा ' अनन्ता रसपर्यवाः ' अनंताफासपज्जवा ' अनन्ता स्पर्शपर्यवाः, अनन्तगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपो भावतो लोक इति तथा ' अणंता संठाणपज्जवा ' अनंताः संस्थानपर्यवाः, अनन्तसंस्थानरूपो लोको भावत इति, तथा ' अणंता गुरुयलहुयपज्जवा ' अनता गुरुलघुकपर्यवाः अनंतगुरुलघुपर्यवरूपो लोकः बादरस्कधेषु तत्सद्भावात् 'अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा ' अनंता अगुरुकलघुकपर्यवाः-अनन्तागुरुलघुपर्यायरूपो

है, अव्यय है, अवस्थित है और नित्य है इसी कारण इस लोक का काल की अपेक्षा कभी भी विनाश नहीं होता है। " भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा " भाव से लोक-अनंत वर्णपर्यायरूप है- एक गुणकालत्वआदि वर्ण विशेष है अर्थात् वर्णपर्याय हैं ऐसी एक गुण कालत्व आदि पर्याय से लेकर अनंत वर्ण पर्यायरूप यह लोक भाव की अपेक्षा से है। तथा "अणंतागंधपज्जवा, अणंता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा " इसी तरह से भाव की अपेक्षा यह लोक अनन्त गंधपर्यायरूप अनंत रस पर्यायरूप और अनन्त स्पर्शपर्यायरूप है। " अणंता संठाणपज्जवा " भाव की अपेक्षा यह लोक संस्थान की अनंत पर्यायों रूप है " अणंता गुरुयलहुयपज्जवा " गुरु लघु गुणों की अनंत पर्याय रूप है। गुरु लघु गुण बादरस्कंधों में रहता है। " अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा " तथा भावकी अपेक्षा से यह लोक अगुरु लघुगुण की अनंत

અવ્યય છે અવસ્થિત છે આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો કાળની અપેક્ષાએ આ લોકનો કદી પણ નાશ થતો નથી અવુ સિદ્ધ થાય છે.

"भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा " ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ છે એક ગુણ કાળત્વ વગેરે વર્ણ વિશેષ છે એટલે કે વર્ણપર્યાય છે ભાવની અપેક્ષાએ એક ગુણ કાળત્વ વગેરે પર્યાયોથી લઈને અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ આ લોક છે તથા " अणंता गंधपज्जवा अणंता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा " એજ પ્રમાણે ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક અનંત રસપર્યાય રૂપ અનત ગધપર્યાયરૂપ અને અનત સ્પર્શ પર્યાય રૂપ છે " अणंता संठाणपज्जवा, अणता गुरुयलहुय पज्जवा, अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક સંસ્થાનની અનેક પર્યાયો રૂપ છે, ગુરુ લઘુ ગુણોની

पर्यायरूप है। यह अगुरुलघु गुण परमाणुओंमें, सूक्ष्मस्कंधों में और अमूर्त द्रव्यों में पाया जाता है। तात्पर्य इस का यह है कि भाव में द्रव्य गत रूप, रस, गंध, स्पर्श, संस्थान आदि लिये जाते हैं। अतः जहां कहीं पर भी भावको लेकर विचार किया जाता है वहां इन्हीं रूप रसादिकों को लेकर ही विचार किया गया है, ऐसा जानना चाहिये। रूप गुण एक ही पर्यायवाला नहीं होता है-किन्तु जिस प्रकार द्रव्य में अनंत पर्यायें होती हैं उसी प्रकार गुणों में भी अनंतपर्यायें हुआ करती हैं। गुणों में जो हीनाधिकता होती है वही गुणपर्याय हैं। व्यंजनपर्याय द्रव्य में होती है और अर्थपर्याय गुण में होती है। इसी अर्थपर्याय को लेकर षट्स्थानपतित हानि वृद्धि होती रहती है। आगमग्रन्थों में इस विषय को बहुत ही अच्छी तरहसे स्पष्टरूप में समझाया गया है। गुण पर्याय का नाम दूसरे शब्दों में गुणांश कहा गया है। अतः भावसे लोक रूप, रस, गंध, स्पर्श की अनंत पर्यायरूप होता है। इसी तरह से वह संस्थान जो द्रव्यगत होता है वह भी एक २ प्रकार में अनन्त पर्याय वाला होता है अतः भाव से लोक संस्थान की अपेक्षा अनन्त है। अगुरुलघु गुण अमूर्तद्रव्यों में परमाणुओं में एवं सूक्ष्मस्कंधों में पाया

અનંત પર્યાયો રૂપ છે અને અગુરુ લઘુ ગુણની અનંત પર્યાયો રૂપ પણ છે ગુરુ લઘુ ગુણ બાદર (સ્થૂલ) સ્કંધોમાં રહે છે અને અગુરુ લઘુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મ સ્કંધોમાં, અને અમૂર્ત દ્રવ્યોમાં રહેલો હોય છે એવું તાત્પર્ય એ છે કે ભાવમાં દ્રવ્યમાં રહેલાં રૂપ, રસ ઇત્યાદિ, સંસ્થાન વગેરેનો સમાવેશ થાય છે તેથી જ્યારે ભાવની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તે રૂપ રસ વગેરેની દૃષ્ટિએજ વિચાર કરવામાં આવે છે એમ સમજવું રૂપ રસ વગેરે ગુણો એકજ પર્યાયવાળા હોતા નથી, પણ જેમ દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાય હોય છે તેમ ગુણોમાં પણ અનંત પર્યાયો હોય છે ગુણોમાં જે વૃદ્ધિ અથવા તો હાનિ થાય છે તેનેજ ગુણપર્યાય કહે છે વ્યંજન પર્યાય દ્રવ્યમાં હોય છે અને અર્થ પર્યાય ગુણમાં હોય છે એજ અર્થ પર્યાયની અપેક્ષાએ પર, (છ) સ્થાન પતિત હાનિ વૃદ્ધિ થતી રહે છે આગમ ગ્રંથોમાં આ વિષયને બહુ સારી રીતે સ્પષ્ટતા પૂર્વક સમજાવામાં આવ્યો છે ગુણ પર્યાયનું બીજું નામ ગુણાંશ કહેલું છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ હોય રૂપ રસ ગંધ સ્પર્શ વગેરે અનંત પર્યાય રૂપ હોય છે એજ પ્રમાણે દ્રવ્યગત સંસ્થાન પણ પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાયવાળું હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લેવાએ તો સંસ્થાનની દૃષ્ટિએ પણ હોય અનંત છે અગુરુલઘુ ગુણ અમૂર્ત (અરૂપી) દ્રવ્યોમાં, પરમાણુઓમાં અને સૂક્ષ્મ

स्थितो नित्यश्च तस्मादेव कारणादस्य लोकस्य कालतोऽतो विनाशो नैव भवतीत्यर्थः। 'भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा' भावतः खलु लोकः अनंता वर्णपर्यवाः वर्णविशेषाः एकगुणकालत्वादयः, भावतो लोकः अनंतवर्णपर्यवरूप इति, तथा 'अणंता गंधपज्जवा' अनन्ता गन्धपर्यवाः, 'अनंता रसपज्जवा' अनन्ता रसपर्यवाः 'अनंताफासपज्जवा' अनन्ताः स्पर्शपर्यवाः, अनन्तगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपो भावतो लोक इति तथा 'अणंता संठाणपज्जवा' अनंताः संस्थानपर्यवाः, अनन्तसंस्थानरूपो लोको भावत इति, तथा 'अणंता गुरुयलहुयपज्जवा' अनंता गुरुलघुकपर्यवाः अनंतगुरुलघुपर्यवरूपो लोकः बादरस्कंधेषु तत्सद्भावात् 'अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा' अनंता अगुरुकलघुकपर्यवाः-अनन्ताऽगुरुकलघुपर्यायरूपो

है, अव्यय है, अवस्थित है और नित्य है इसी कारण इस लोक का काल की अपेक्षा कभी भी विनाश नहीं होता है। "भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा" भाव से लोक-अनंत वर्णपर्यायरूप है- एक गुणकालत्वआदि वर्ण विशेष है अर्थात् वर्णपर्याय हैं ऐसी एक गुण कालत्व आदि पर्याय से लेकर अनंत वर्ण पर्यायरूप यह लोक भाव की अपेक्षा से है। तथा "अणंतागंधपज्जवा, अणंता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा" इसी तरह से भाव की अपेक्षा यह लोक अनन्त गंधपर्यायरूप अनंत रस पर्यायरूप और अनन्त स्पर्शपर्यायरूप है। "अणंता संठाणपज्जवा" भाव की अपेक्षा यह लोक संस्थान की अनंत पर्यायों रूप है "अणंता गुरुयलहुयपज्जवा" गुरु लघु गुणों की अनंत पर्याय रूप है। गुरु लघु गुण बादरस्कंधों में रहता है। "अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" तथा भावको अपेक्षा से यह लोक अगुरु लघुगुण की अनंत

અવ્યય છે અવસ્થિત છે આ દૃષ્ટિએ વિચારવામા આવે તો કાળની અપેક્ષાએ આ લોકોનો કદી પણ નાશ થતો નથી એવું સિદ્ધ થાય છે.

"भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ છે એક ગુણ કાળત્વ વગેરે વર્ણ વિશેષ છે. એટલે કે વર્ણપર્યાય છે ભાવની અપેક્ષાએ એક ગુણ કાળત્વ વગેરે પર્યાયોથી લઈને અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ આ લોક છે તથા "अणंता गंधपज्जवा अणता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा" એજ પ્રમાણે ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક અનંત રસપર્યાય રૂપ અનત ગધપર્યાયરૂપ અને અનત સ્પર્શ પર્યાય રૂપ છે. "अणंता संठाणपज्जवा, अणता गुरुयलहुय पज्जवा, अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક સંસ્થાનની અનેક પર્યાયો રૂપ છે, ગુરુ લઘુ ગુણોની

पर्यायरूप है। यह अगुरुलघु गुण परमाणुओंमें, सूक्ष्मस्कंधों में और अमूर्त द्रव्यों में पाया जाता है। तात्पर्य इस का यह है कि भाव में द्रव्य गत रूप, रस, गंध, स्पर्श, संस्थान आदि लिए जाते है। अतः जहां कहीं पर भी भावको लेकर विचार किया जाता है वहां इन्हीं रूप रसादिकों को लेकर ही विचार किया गया है, ऐसा जानना चाहिये। रूप गुण एक ही पर्यायवाला नहीं होता है-किन्तु जिस प्रकार द्रव्य में अनंत पर्यायें होती हैं उसी प्रकार गुणों में भी अनंतपर्यायें हुआ करती हैं। गुणों में जो हीनाधिकता होती है वही गुणपर्याय है। व्यंजनपर्याय द्रव्य में होती है और अर्थपर्याय गुण में होती है। इसी अर्थ पर्याय को लेकर षट्स्थानपतित हानि वृद्धि होती रहती है। आगमग्रन्थों में इस विषय को बहुत ही अच्छी तरहसे स्पष्टरूप में समझाया गया है। गुण पर्याय का नाम दूसरे शब्दों में गुणांश कहा गया है। अतःभावसे लोक रूप रस, गंध, स्पर्श की अनंत पर्यायरूप होता है। इसी तरह से षट्संस्थान जो द्रव्यगत होता है वह भी एक २ प्रकार में अनन्त पर्याय वाला होता है अतःभाव से लोक संस्थान की अपेक्षा अनन्त है। अगुरुलघु गुण अमूर्तद्रव्यों में परमाणुओं में एवं सूक्ष्मस्कंधों में पाया

અનંત પર્યાયો રૂપ છે અને અગુરુ લઘુ ગુણની અનંત પર્યાયો રૂપ પણ છે અરુ લઘુ ગુણ બાદર (સ્થૂલ) સ્કંધોમાં રહે છે અને અગુરુ લઘુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મ સ્કંધોમાં, અને અમૂર્ત દ્રવ્યોમાં રહેલો હોય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ભાવમાં દ્રવ્યના રહેલાં રૂપ, રસ ગંધ, સ્પર્શ, સંસ્થાન વગેરેનો સમાવેશ થાય છે તેથી જ્યારે ભાવની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તે રૂપ, રસ વગેરેની દૃષ્ટિએજ વિચાર કરવામાં આવે છે, એમ સમજવું રૂપ રસ વગેરે ગુણો એકજ પર્યાયવાળા હોતા નથી, પણ એમ દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાય હોય છે તેમ ગુણોમાં પણ અનંત પર્યાયો હોય છે ગુણોમાં જે વૃદ્ધિ અથવા તો હાનિ થાય છે તેનેજ ગુણ પર્યાય કહે છે વ્યંજન પર્યાય દ્રવ્યમાં હોય છે અને અર્થ પર્યાય ગુણમાં હોય છે એજ અર્થ પર્યાયની અપેક્ષાએ પર, (૭) સ્થાન પતિત હાનિ વૃદ્ધિ થતી રહે છે આગમ ગ્રંથોમાં આ વિષયને બહુ સારી રીતે સ્પષ્ટતા પૂર્વક સમજવામાં આવ્યો છે ગુણ પર્યાયનું બીજું નામ ગુણાંશ કહેલું છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોક રૂપ રસ ગંધ સ્પર્શ વગેરે અનંત પર્યાય રૂપ હોય છે એજ પ્રમાણે દ્રવ્યગત સંસ્થાન પણ પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાયવાળુ હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને તો સંસ્થાનની દૃષ્ટિએ પણ તો અનંત છે અગુરુલઘુ ગુણ અમૂર્ત (અરૂપી) દ્રવ્યોમાં, પરમાણુઓમાં અને સૂક્ષ્મ

लोक', परमाणुपु सूक्ष्मस्कन्धेषु अमूर्तेषु च तत्सद्भावात् 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनरतस्यान्तः, भावापेक्षया लोकस्यान्तो नास्तीत्यर्थः। उपसंहरन्नाह— 'से त्तं' इत्यादि। 'से त्तं खंदया दव्वओ लोए स अते खेत्तओ लोए स अंते कालओ लोए अणते भावओ लोए अणते' तदेतत् स्कन्दक! द्रव्यतो लोकः सांतः क्षेत्रतो लोकः सांतः कालतो लोकोऽनंतो भावतो लोकोऽनंतः। हे स्कन्दक पूर्वोक्तयुक्तिभिः प्रतिपादितचतुर्विधलोकेषु द्रव्यक्षेत्राभ्यामन्तवत्त्वं लोकस्य, कालभावाभ्यां चानंतत्वमेव पुनर्लोकस्येति भावः। इति प्रथमप्रश्नस्योत्तरम्। १।

लोकविषयकप्रश्नस्योत्तर दत्त्वा जीवविषयकप्रश्नस्योत्तरमाह— जे वि' इत्यादि

जाता हैं। यह अगुरुलघुगुण भी अनन्त पर्याय वाला होता है। इसी तरह गुरुलघुगुण बादर स्कंधोंमें पाया जाता है, इस अपेक्षा गुरुलघुगुण भी अनन्त पर्यायवाला होता है। इस तरह भावसे लोक का कभी भी अंत नहीं होता है। अतः वह भाव से लोक अनन्त कहा गया है। यही बात "नत्थि पुण से अंते" इस सूत्र पाठ द्वारा व्यक्त की गई है। अब इस विषय का उपसंहार करते हुए भगवान् स्कन्दक से कहते हैं कि 'से त्तं खंदया! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए सअंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते' हे स्कन्दक! इस तरह विचार करने पर द्रव्य से लोक सान्त-अन्तसहित है, क्षेत्र से लोक सान्त-अन्त सहित है, काल से लोक अनन्त है और भाव से लोक अनन्त है। इस प्रकार से यह प्रथम प्रश्न का उत्तर है।

लोकविषयक प्रथमप्रश्न का उत्तर देकर अब श्रमण भगवान् महा-

સ્કંધોમા હોય છે તે અગુરુલઘુગુણ પણ અનન્ત પર્યાયો વાળો હોય છે. ગુરુલઘુગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમા હોય છે ગુરુલઘુગુણ પણ અનન્ત પર્યાયો વાળો હોય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોકનો કદી પણ નાશ થતો નથી તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને અનન્ત (અન્ત રહિત) કહ્યો છે. એજ વાત "नत्थि पुण से अंते" આ સૂત્રપાઠ વડે વ્યક્ત કરવામા આવી છે હવે આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકને કહે છે કે-"से त्तं खंदया! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते" હે સ્કન્દક! આ રીતે વિચાર કરતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્તયુક્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ લોક સાન્ત છે. પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનન્ત (અંતરહિત) છે, અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અનંત છે. આ પ્રકારનો તમારા પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર છે.

લોક વિષેના પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપીને હવે શ્રમણ ભગવાન મહા-

जे वि य ते खंदया जाव स अंते जीवे अणंते जीवे य वि च ते खन्दक! यावत् सान्तो जीवोऽनन्तो जीवः यावत्पदेन-तव मनसि अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तित कल्पितः प्रार्थितः मनोगत संकल्पः समुदपद्यत किम् इत्यस्य संग्रहः। 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' तस्यापि च खलु अयमर्थः जीवविषयक प्रश्नस्येदमुत्तरम् 'एवं खलु जाव-अत्र यावत्पदेन 'मया स्कन्दक! चतुर्विधो जीवः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावतः' इति। संग्रहः, 'दव्वओ ण एगे जीवे स अंते' द्रव्यतः खलु एको जीवः सांतः द्रव्यापेक्षया एक जीवमाश्रित्य सान्तो जीव इति।

वीर जीवविषयक द्वितीयप्रश्न का उत्तर स्कन्दक को देते हुए कहते हैं-" जे वि य ते खंदया! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे" हे स्कन्दक! जो तुम्हारे चित्त में यह विकल्प उठा जीव सान्त-अन्त सहित है! या अनन्त-अन्त रहित है! 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' सो उसका भी यह अर्थ-उत्तर है, अर्थात्-हे स्कन्दक! जो तुम्हें ऐसा मन में संकल्प हुआ है कि क्या जीव सान्त अन्त सहित है या अनन्त -अन्त रहित है! सो इसका उत्तर इस प्रकार है-' एवं खलु जाव ' इस प्रकार हे स्कन्दक! मैंने जीव चार प्रकार का प्ररूपित किया है वह इस प्रकार से-एक द्रव्य की अपेक्षा दूसरा क्षेत्रकी अपेक्षा से तीसरा काल की अपेक्षा से और चौथा भाव की अपेक्षा से। " दव्वओ णं एगे जीवे स अंते" द्रव्य की अपक्षासे एक जीव सान्त-अन्त सहित है। तात्पर्य कहने का यह कि यहां द्रव्य की अपेक्षा से एक जीव को लेकर जीव सान्त है ऐसा कहा गया है। क्यों कि एक के बाद दो जब आते हैं तो एक संख्या सान्त-अन्त सहित हो जाती है। वैसे सिद्धान्त में

વીર સ્કન્દકે પૂછેલા જીવ વિષેના બીજા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે „ જે વિ ય તે ખંદયા! જાવ સ અંતે જીવે અણંતે જીવે" હે સ્કન્દક! તમારા મનમાં જીવના વિષયમાં આ પ્રકારની શંકા ઉદ્ભવેલ છે કે 'જીવ અંત સહિત છે કે અનંત સહિત?" " તસ્સ વિ ય ણ અયમટ્ઠે " તો તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે-" एवं खलु जाव ' હે સ્કંદક! મેં જીવના ચાર પ્રકાર પ્રરૂપ્યા છે (જે યથા) તે આ પ્રમાણે છે (૧) દ્રવ્ય (૨) ક્ષેત્ર (૩) કાળ અને (૪) ભાવ આ ચારની અપેક્ષાએ જીવની સાન્તતા અને અનંતતાનો વિચાર કરવો જોઇએ " दव्वओ ण एगे जीवे स अंते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવ સાન્ત અંત સહિત-છે એમેનું તાત્પર્ય એ છે કે અહીં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તથા એક જીવની અપેક્ષાએ જીવને સાન્ત (અંત સહિત) કહેલ છે કારણ કે

लोक', परमाणुपु सूक्ष्मस्कन्धेषु अमूर्तेषु च तत्सद्भावात् 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनरतस्यान्तः, भावापेक्षया लोकस्यान्तो नास्तीत्यर्थः। उपसंहरन्नाह— 'से त्तं' इत्यादि। 'से त्तं खंदया दव्वओ लोए स अंते खेत्तओ लोए स अंते कालओ लोए अणंते भावओ लोए अणंते' तदेतत् स्कन्दक! द्रव्यतो लोकः सांतः क्षेत्रतो लोकः सांतः कालतो लोकोऽनंतो भावतो लोकोऽनंतः। हे स्कन्दक पूर्वोक्तयुक्तिभिः प्रतिपादितचतुर्विधलोकेषु द्रव्यक्षेत्राभ्यामन्तवत्त्वं लोकस्य, कालभावाभ्यां चानंतत्वमेव पुनर्लोकस्येति भावः। इति प्रथमप्रश्नस्योत्तरम्। १।

लोकविषयकप्रश्नस्योत्तर दत्त्वा जीवविषयकप्रश्नस्योत्तरमाह— जे वि' इत्यादि

जाता हैं। यह अगुरुलघुगुण भी अनन्त पर्याय वाला होता है। इसी तरह गुरुलघुगुण बादर स्कंधोंमें पाया जाता है, इस अपेक्षा गुरुलघुगुण भी अनन्त पर्यायवाला होता है। इस तरह भावसे लोक का कभी भी अंत नहीं होता है। अतः वह भाव से लोक अनन्त कहा गया है। यही बात "नत्थि पुण से अंते" इस सूत्र पाठ द्वारा व्यक्त की गई है। अब इस विषय का उपसंहार करते हुए भगवान् स्कन्दक से कहते हैं कि 'से त्तं खंदया! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए सअंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते' हे स्कन्दक! इस तरह विचार करने पर द्रव्य से लोक सान्त-अन्तसहित है, क्षेत्र से लोक सान्त-अन्त सहित है, काल से लोक अनन्त है और भाव से लोक अनन्त है। इस प्रकार से यह प्रथम प्रश्न का उत्तर है।

लोकविषयक प्रथमप्रश्न का उत्तर देकर अब श्रमण भगवान् महा-

સ્કંધોમા હોય છે તે અગુરુલઘુગુણ પણ અનત પર્યાયો વાળો હોય છે. ગુરુલઘુગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમા હોય છે ગુરુલઘુગુણ પણ અનત પર્યાયો વાળો હોય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોકનો કદી પણ નાશ થતો નથી તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને અનત (અત રહિત) કહ્યો છે. એજ વાત "नत्थि पुण से अंते" આ સૂત્રપાઠ વડે વ્યક્ત કરવામા આવી છે હવે આ વિષયનો ઉપસ હાર કરતા ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકને કહે છે કે–"से त्त खंदया! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते" હે સ્કન્દક! આ રીતે વિચાર કરતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અતયુક્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ લોક સાન્ત છે. પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનત (અતરહિત) છે, અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અનંત છે. આ પ્રકારનો તમારા પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર છે.

લોક વિષેના પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપીને હવે શ્રમણ ભગવાન મહા-

जे वि य ते खंदया जाव स अंते जीवे अणंते जीवे वे वि च ते खन्दक ! यावत् सान्तो जीवोऽनन्तो जीवः यावत्पदेन-तत्र मनसि अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तित कल्पित प्रार्थितः मनोगतः सङ्कल्प समुदपद्यत किम् इत्यस्य सङ्ग्रह । 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' तस्यापि च खलु अयमर्थः जीवविषयक प्रश्नस्यैवमुत्तरम् 'एवं खलु यावत्-अत्र यावत्पदेन 'मया स्कन्दक ! चतुर्विधो जीव प्रज्ञप्तः, तद्यथा-द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावत ' इति । सङ्ग्रह, 'दव्वओ णं एगे जीवे स अंते' द्रव्यतो खलु एको जीवः सांत द्रव्यापेक्षया एक जीवमाश्रित्य सान्तो जीव इति ।

और जीवविषयक द्वितीयप्रश्न का उत्तर स्कन्दक को देते हुए कहते हैं-" जे वि य ते खंदया ! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे " हे स्कन्दक ! जो तुम्हारे चित्त में यह विकल्प उठा जीव सान्त-अन्त सहित है ! या अनन्त-अन्त रहित है ! 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' सो उसका भी यह अर्थ-उत्तर है, अर्थात्-हे स्कन्दक ! जो तुम्हें ऐसा मन में संकल्प हुआ है कि क्या जीव सान्त अन्त सहित है या अनन्त -अन्त रहित है ! सो उसका उत्तर इस प्रकार है-' एवं खलु जाव ' इस प्रकार हे स्कन्दक ! मैंने जीव चार प्रकार का प्ररूपित किया है वह इस प्रकार से-एक द्रव्य की अपेक्षा दूसरा क्षेत्रकी अपेक्षा से तीसरा काल की अपेक्षा से और चौथा भाव की अपेक्षा से । " दव्वओ णं एगे जीवे स अंते" द्रव्य की अपक्षासे एक जीव सान्त-अन्त सहित है । तात्पर्य कहने का यह कि यहां द्रव्य की अपेक्षा से एक जीव को लेकर जीव सान्त है ऐसा कहा गया है । क्यों कि एक के बाद दो जब आते हैं तो एक संख्या सान्त-अन्त सहित हो जाती है । वैसे सिद्धान्त में

બીજા સ્કન્દકે પૂછેલા બીજા વિષેના બીજા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે .. " जे वि य ते खंदया ! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे " હે સ્કંદક ! તમારા મનમાં આ પ્રકારનો જીવ વિષયમાં આ પ્રશ્ન ઉદ્ભવેલ છે કે 'જીવ અંત સહિત છે કે અનંત સહિત ?" " तस्स वि य णं अयमट्ठे " તો તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે-" एवं खलु जाव ' હે સ્કંદક ! મે જીવના ચાર પ્રકાર પ્રરૂપ્યા છે (તે કહ્યા) તે આ પ્રમાણે છે (૧) દ્રવ્ય (૨) ક્ષેત્ર (૩) કાળ અને (૪) ભાવ આ ચારેની અપેક્ષાએ જીવની સાન્તતા અને અનંતતાનો વિચાર કરવો જોઇએ. " दव्वओ णं एगे जीवे स अंते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જોઇ જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત-છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે અહીં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તથા જોઇ જીવની અપેક્ષાએ જીવને સાન્ત (અન્ત સહિત) કહેલ છે કારણ કે

'खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए' क्षेत्रतः खलु जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः, क्षेत्रापेक्षया असंख्येयप्रदेशवान् एको जीव इत्यर्थः, तथा 'असंखेज्जपएसोगाढे' 'असंख्येयप्रदेशावगाढः लोकाकाशस्य असंख्येयप्रदेशेषु अवगाहनावानित्यर्थः, 'अत्थिपुण से अंते' अस्ति पुनः 'से' तस्यान्तः जीवः-द्रव्यत एक जीवा

जीव राशि अक्षय अनन्त मानी गई है सो उस अपेक्षा यह विचार नहीं है। यह विचार तो एक जीव की अपेक्षा से किया जा रहा है। क्यों कि एक जीव स्वतंत्र द्रव्य है। अतःद्रव्य की अपेक्षा एक जीव को लेकर सान्त कहा है। (खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए) क्षेत्रकी अपेक्षा से जब जीव सान्तत्व अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब भी जीव सान्त ही फलित होता है। जीव असंख्यात प्रदेशवाला है- अर्थात् एक जीव के असंख्यात प्रदेश होते हैं अतः वह लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहनावाला है। यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि लब्ध्यपर्याप्तक निगोदिया जीव कि जो असंख्यात प्रदेशी ही होता है उस की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है। अतः वह कैसे लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला हो सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि " एक जीव लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला होता है "

એક પછી જ્યારે એનો વિચાર કરવામા આવે છે ત્યારે એક સંખ્યા સાન્ત (અન્ત સહિત) બની જાય છે. આમ તો સિદ્ધાંતોમાં જીવ રાશિને અક્ષય, અનંત માનવામાં આવેલ છે. પરંતું અહી એ રીતે વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. અહીં તો એક જીવની અપેક્ષાએ જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે એક જીવ સ્વતંત્ર દ્રવ્ય છે તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવને સાન્ત (અંત યુક્ત) કહેલ છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે એવું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળો છે એટલે કે એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશ હોય છે તેથી તે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે અહીં કદાચ એવી આશંકા સેવવામાં આવે કે લબ્ધ પર્યાપ્તક નિગોદિયો જીવ, કે જે અસંખ્યાત પ્રદેશી હોય છે, તેની જઘન્ય (ઓછામા ઓછી) અવગાહના અંગુલના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ જ હોય છે તો તે કેવી રીતે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો હોઇ શકે ? તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે એક જીવ લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશો-।

ऐसा जो कहा गया है वह सामान्य जीव की अपेक्षा को लेकर कहा है। तात्पर्य कहने का यह है की आत्मा का परिमाण आकाश की तरह न व्यापक माना गया है और न परमाणु की तरह अणुरूप माना गया है किन्तु जिस जीव को जो शरीर प्राप्त होता है आत्मा उसी प्रमाण पन जाता है। इस प्रमाण में प्रदेश संख्या की न हानि होती है और न वृद्धि होती है वह तो सब जीवों की बराबर ही रहती है। परन्तु अवगाहना में लंबाई चौडाई आदि में अन्तर आ जाता है। अतः सिद्धान्तकारोंने ऐसा कहा है कि एक जीव का आधार क्षेत्र लोकाकाश के असंख्यातवें भाग से लेकर सम्पूर्ण लोकाकाश तक हो सकता है। लोकाकाश के प्रदेशों का परिमाण असंख्यात है-और असंख्यात के भी असंख्यात भेद कहे गये हैं। अतः लोकाकाश के ऐसे असंख्यात भागों की कल्पना की जासकती है जो अंगुलासंख्येयभागपरिमाण हों। इतना छोटा एक भाग भी असंख्यात प्रदेशात्मक ही होता है। उस एक भाग में कोई एक जीव रह सकता है उसने २ दो भागों में भी रह सकता है। इसी तरह एक २ भाग बढते २ आखिरकार सर्व लोकमें भी एक जीव रह सकता है। कहने का अभिप्राय ये है कि एक जीव द्रव्य

અવગાહના વાળો હોય છે" આ કથન સામાન્ય જીવને અનુલક્ષીને કરેલું છે એવાનો આશય એ છે કે આત્માનું પરિમાણ આકાશની જેમ અપ પણ માનવામાં આવ્યું નથી, અને પરમાણુની જેમ અણુ રૂપ પણ માનવામાં આવ્યું નથી. પણ જે જીવને તેના કર્મ અનુસાર જે શરીરની પ્રાપ્તિ થાય છે તે પ્રમાણ આત્મા વાની જાય છે જેમકે કે મધ્યમ પરિમાણ માનવામાં આવે છે તે પ્રમાણમાં પ્રદેશોની સંખ્યા ન્યૂન અધિક થતી નથી- તે તો કાયમ જીવોમાં બરાબર જ રહે છે પણ અવગાહના (તે આઈ પહોળાઈ વગેરે માં ફેર પડે છે તેથી સિદ્ધાન્તકારોએ એવું કહ્યું છે કે એક જીવનું આધાર ક્ષેત્ર લોકાકાશના અસંખ્યાતમાં ભાગથી લઈને સંપૂર્ણ લોકાકાશ સુધીનું હોઈ શકે છે લોકાકાશના પ્રદેશોનું પરિમાણ અસંખ્યાત છે અને તે અસંખ્યાતના પણ અસંખ્યાત ભેદ કહેલા છે તેથી લોકાકાશના એવા અસંખ્યાત ભાગોની કલ્પના કરી શકાય છે કે જે અંગુલના અસંખ્યેય ભાગ પ્રમાણ હોય એવડો નાનો એક ભાગ પણ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હોય છે તેવા એક ભાગમાં પણ કોઈ એક જીવ રહી શકે છે, એમને એવા બે ભાગોમાં પણ એક જીવ રહી શકે છે આ રીતે એક એક ભાગ વધતાં વધતાં છેવટે સર્વલોકમાં પણ એક જીવ રહી શકે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એક જીવ દ્રવ્યનું લોકમાં કોઈ આધાર ક્ષેત્ર

'खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए' क्षेत्रतः खलु जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः, क्षेत्रापेक्षया असंख्येयप्रदेशवान् एको जीव इत्यर्थः, तथा 'असंखेज्जपएसोगाढे' 'असंख्येयप्रदेशावगाढः लोकाकाशस्य असंख्येयप्रदेशेषु अवगाहनावानित्यर्थः, 'अत्थिपुण से अंते' अस्ति पुनः 'से' तस्यान्तः जीवः-द्रव्यत एक जीवा

जीव राशि अक्षय अनन्त मानी गई है सो उस अपेक्षा यह विचार नहीं है। यह विचार तो एक जीव की अपेक्षा से किया जा रहा है। क्यों कि एक जीव स्वतन्त्र द्रव्य है। अतःद्रव्य की अपेक्षा एक जीव को लेकर सान्त कहा है। (खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए) क्षेत्रकी अपेक्षा से जब जीव सान्तत्व अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब भी जीव सान्त ही फलित होता है। जीव असंख्यात प्रदेशवाला है-अर्थात् एक जीव के असख्यात प्रदेश होते हैं अतः वह लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहनावाला है। यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि लब्धपर्याप्तक निगोदिया जीव कि जो असंख्यात प्रदेशी ही होता है उस की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है। अतः वह कैसे लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला हो सकता है? तो इसका उत्तर यह है कि "एक जीव लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला होता है"

એક પછી જ્યારે એનો વિચાર કરવામા આવે છે ત્યારે એક સખ્યા સાન્ત (અન્ત સહિત) બની જાય છે. આમ તો સિદ્ધાતોમા જીવ રાશિને અક્ષય, અનંત માનવામાં આવેલ છે પરંતું અહી એ રીતે વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. અહીં તો એક જીવની અપેક્ષાએ જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે એક જીવ સ્વતત્ર દ્રવ્ય છે તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવને સાન્ત (અંત યુક્ત) કહેલ છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે એવું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળો છે એટલે કે એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશ હોય છે તેથી તે લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે અહીં કદાચ એવી આશકા સેવવામાં આવે કે લબ્ધ પર્યાપ્તક નિગોદિયો જીવ, કે જે અસખ્યાત પ્રદેશી હોય છે, તેની જઘન્ય (ઓછામા ઓછી) અવગાહના અગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ જ હોય છે તો તે કેવી રીતે લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના વાળો હોઇ શકે? તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે એક જીવ લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશો-૧

त्वेन, भविष्यत्त्वेन, अतएव ध्रुवो नित्यश्च शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितश्च इत्यन्तं सम्राह्यम् । यतो ध्रुवादिस्वभावकोऽत एव 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनस्तस्य जीवस्यान्तः । 'भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा' भावतः खलु जीव अनन्ता ज्ञानपर्यवा=ज्ञानपर्यायाः केवलिबुद्धिकल्पिताऽविभागपरिच्छेदाः भावतो जीवोऽनन्तज्ञानपर्यायात्मको भवतीति भावः । " अणंता दंसणपज्जवा ' अनन्ता दर्शन

ऐसा कोई सा भी काल नहीं है कि जिसमें इसका सद्भाव न रहा हो-भूतकाल में जीव नहीं था, ऐसा नहीं कहा जा सकता वर्तमानकालमें जीव नहीं है ऐसा भी नहीं कहा जा सकता और भविष्यत् काल में जीव नहीं होगा-ऐसा भी नहीं माना जा सकता । इसलिये ऐसा ही मानना चाहिये कि भूतकाल में जीव था वर्तमान में भी इसका सद्भाव है, और भविष्यत्काल में भी इसका अस्तित्व रहेगा । क्यों कि यह जीव ध्रुव आदि स्वभाववाला है । अत एव ' नत्थि पुण से अंते " इसलिये काल की अपेक्षा से जीवका अन्त नहीं है । " भावओ णं जीवे अणंताणाण पज्जवा " भावकी अपेक्षा जब जीव की सत्तता और अनन्तता का विचार किया जाताहै तो उस समय यह जीव अनंत सिद्ध होता है क्यों कि जीव द्रव्य अनंत ज्ञान पर्यायरूप है । ज्ञान की पर्यायें केवली की बुद्धि से ही कल्पित की जा सकती हैं वे ज्ञानपर्यायें अविभाग परिच्छेद रूप होती हैं अत भाव की अपेक्षा जीव अनंत ज्ञान पर्यायरूप है, " अणंता दंसण पज्जवा " अनंत दर्शनगुणपर्यायरूप

કોઇ પણ કાળ નથી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય-ભૂતકાળમાં જીવ ન હતો એવું કહી શકાય તેમ નથી, વર્તમાન કાળમા જીવ નથી એવું પણ કહી શકાતું નથી, અને ભવિષ્ય કાળમાં જીવ નહીં હોય એવું પણ માની શકાતું નથી તેથી એમજ માનવું પડ્યું કે ભૂતકાળમા જીવ હતો, વર્તમાનમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ દરેક ત્રણે કાળમાં જીવનું અસ્તિત્વ હોય છે કારણ કે જીવ ધ્રુવ, શાશ્વત, નિત્ય વગેરે સ્વભાવવાળો છે (नत्थि पुण से अंते) તેથી સિદ્ધ થાય છે કે કાળની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત અવ સહિત-છે " भावओ णं अणंता णाणपज्जवा ' ભાવની અપેક્ષાએ જીવની અનંત સહિતતા કે અનવસ્થિતતા નો વિચાર કરવામાં આવે તો જીવને અનન્ત અનવસ્થિત સાબિત કરી શકાય છે કારણ કે જીવદ્રવ્ય અનંત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ છે જ્ઞાનની પર્યાયોની કલ્પના કેવળી અર્થાત્ કેવલ જ્ઞાની જ કરી શકે છે તે જ્ઞાન પર્યાયો અવિભાગ પરિચ્છેદ રૂપ હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ જીવને અનંત જ્ઞાન પર્યાય કહ્યો છે अणंता दंसणपज्जवा " જીવદ્રવ્ય અનંત દર્શન ગુણ પર્યાય રૂપ છે

पेक्षया सान्तः । क्षेत्रतोऽपि एकजीवापेक्षया सान्तः । कालओ णं जीवे न कयाइ नासी जाव निच्चे ' कालतः खलु जीवः कदाचित् नासीत् यावत् नित्यः, इह यावत्करणात्-न कदाचिन्न भवति न कदाचिन्न भविष्यति अपि तु आसीदेव भव-

---

का छोटे से छोटा कम से कम आधार क्षेत्र अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होता है जो असंख्यात प्रदेशी लोकाकाश का एक असंख्यातवां भागरूप होता है। तथा अधिक से अधिक सम्पूर्ण लोकाकाश भी एक जीवद्रव्य का आधार क्षेत्र होता है। इस कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि लब्धपर्याप्तक निगोदिया जीव की जघन्य अवगाहना के अनुसार जितना उसका आधार क्षेत्र होगा-वह भी असंख्यातप्रदेशात्मक ही होगा। परन्तु वह असंख्यात प्रदेशी लोकाकाश का असंख्यातवां भागरूप ही कहलायेगा। इस तरह जीव लोक के असंख्यातप्रदेशों में अवगाहनावाला है यह कथन निर्दोष है। " अत्थि पुण से अंते " क्षेत्र की अपेक्षा जीव अन्तसहित है। इस तरह द्रव्य की अपेक्षा से एक जीवद्रव्य सान्त है और क्षेत्र की अपेक्षा से भी एक जीवद्रव्य सान्त है। " कालओ णं जीवे न कयाइ नासी जाव निच्चे " काल की अपेक्षा से जब जीव द्रव्य की सान्तता और अनंतता का विचार किया जाता है तो वह अनंत सिद्ध होता है। क्यों कि तीनों कालों में से

અંગુલના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ હોય છે અને તે આધાર ક્ષેત્ર અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશના એક અસંખ્યાતમાં ભાગ રૂપ પણ હોય છે. તથા એક જીવ દ્રવ્યનું વધારેમાં વધારે આધારક્ષેત્ર સંપૂર્ણ લોકાકાશ પણ હોય છે. આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે લબ્ધ પર્યાપ્તક નિગોદિયા જીવની જઘન્ય (ઓછામા ઓછી) અવગાહના પ્રમાણે જ જે તેનું આધારક્ષેત્ર હશે તે પણ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હશે પરંતુ તે અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશના અસંખ્યાતમા ભાગ રૂપ જ કહેવાશે આ રીતે જીવ લોકના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે, એ કથનમા કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ જણાતો નથી. अत्थि पुण से अंते ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત (અન્ત યુક્ત) છે આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવદ્રવ્ય સાન્ત (અન્ત સહિત છે, અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ એક જીવદ્રવ્ય અન્ત યુક્ત છે

" कालओ ण जीवे न कयाइ नासी जाव निच्चे " કાળની અપેક્ષાએ જીવની સાન્તતા અનંતતાનો જ્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જીવ અનંત (અંત રહિત) છે એવુ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે ત્રણે કાળમાથી એવો

सकत्वात् । इति द्वितीय प्रश्नस्योत्तरम् ॥ २ ॥ 'जे वि य ते खंदया पुच्छ' यो पि च स स्कन्दक ! पृच्छा, पृच्छापदेन पिंगलस्य सिद्धिविषयक सर्वोपि प्रश्नो ग्राह्य, क्षिप्तस्पर्शन्तमित्याह—'जाव' इत्यादि । 'जाव' यावत्-शब्देन 'अयमेतद्रूप आध्यात्मिकादिविचार समुदपद्य' इति संग्राह्य, 'किं सअंता सिद्धी अणंता सिद्धी' किं सान्ता सिद्धिरनन्तासिद्धि 'तस्स वि य ण अयमट्ठे' तस्यापि च खल्वयमर्थः 'एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहा सिद्धि पण्णत्ता' एवं खलु मया स्कन्दक ! चतुर्विधा सिद्धि प्रज्ञप्ता, 'तं जहा' तद्यथा 'दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावत 'दव्वओ णं एगा सिद्धी सअंता' द्रव्यतः खलु एका सिद्धि सान्ता एकत्वेन सान्तत्वात् 'खेत्तओ णं सिद्धो पण

भी अवस्था में अन्त नहीं आ सकता है, अतः जब जीव भाव की अपेक्षा अनन्त ज्ञान दर्शन आदि पर्यायरूप है-तो इसका अर्थ यही होता है कि भाव की अपेक्षा जीव अनन्त है। इस प्रकार यह द्वितीय प्रश्न का उत्तर है।

'जे वि य से खंदया पुच्छा' हे स्कन्दक ! तेरा तीसरा प्रश्न यह है कि सिद्धि सान्त है कि अनन्त ? इसका अर्थ इस प्रकार से है-'एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता' हे स्कन्दक ! मैंने सिद्धि चार प्रकार की कही है-'तं जहा' जो इस प्रकार से है-'दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ' द्रव्य से, क्षेत्र से, कालसे और भाव से ! 'दव्वओ ण एगा सिद्धी स अंता' द्रव्य से एक सिद्धि है। और वह एक होने के कारण ही सान्त-अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा सिद्धि

છે—તેમનો કોઈ પણ અવસ્થામા અન્ત સભવતો નથી તેથી જો ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાન દર્શન વગેરે પર્યાયરૂપ હોય તો તેનો અર્થ એ જ થાય છે કે ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત અત રહિત છે આ રીતે બીજા પ્રશ્નનુ સમાધાન કરવામા આવ્યુ છે

"जे वि य से खंदया पुच्छा' હે સ્કન્દક ! તમારો ત્રીજો પ્રશ્ન આ પ્રમાણે છે— સિદ્ધિ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનત (અતરહિત) છે ?"—તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે-'एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता' હે સ્કન્દક ! મે સિદ્ધિ ચાર પ્રકારની કહી છે (तं जहा) તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે છે— दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ' (૧) દ્રવ્યની (૨) ક્ષેત્રની, (૩) કાળની અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની અતસહિતતા અને અતરહિતતાનો વિચાર કરવો જોઇએ. "दव्वओ ण एगा सिद्धी स अंता દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ એક છે અને તે એક હોવાને કારણે જ અત સહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની જેમ પહેલાની પેઠે જ

पर्यवाः दर्शन पर्याया इत्यर्थः भावतोऽनंतदर्शनपर्यायात्मकत्वं जीवस्येति। 'अणंता चारित्तपज्जवा' अनंता श्चारित्रपर्यायाः, 'अणंता अगुरुलहुयपज्जवा' अनंता अगुरुलघुपर्यवाः औदारिकशरीराणि प्रतीत्यानंतागुरुलघुपर्यायाः कार्मणादि द्रव्याणि जीवस्वरूपं चाश्रित्यानंता अगुरुलघुपर्याया इति, 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनस्तस्यांतः भावतो जीवस्यांतो नास्ति अनंतज्ञानदर्शनादि पर्यायात्मकत्वादितिभावः। 'से त्तं दव्वओ जीवे स अंते' तदेतत् द्रव्यतो जीवः सान्तः, 'खेत्तओ जीवे स अंते' क्षेत्रतो जीवः सान्तः, 'कालओ जीवे अणते' कालतो जीवोऽनंत, 'भावओ जीवे अणंते' भावतो जीवोऽनन्तः अनंतज्ञानदर्शनपर्याया-

---

है, क्यों कि दर्शन गुण की भी पर्यायें अनंत होती हैं। "अणंता चरित्त पज्जवा" अनन्त चारित्रपर्याय रूप है क्यों कि चारित्र गुणकी भी अनंत पर्यायें होती हैं। "अणंता अगुरु य लहुय पज्जवा" अनंत अगुरुलघु पर्यायरूप है। औदारिक शरीर को लेकर अनंत गुरुलघुपर्याय-रूप है तथा कार्मण शरीर, और जीव के स्वरूप को आश्रित करके अनंत अगुरु लघु पर्यायरूप है। "नत्थि पुण से अंते" इस तरह भाव की अपेक्षा से जीव अनन्त-अन्तरहित है। "से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते भावओ जीवे अणंते" इस सब कथनका अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि द्रव्यसे एक जीव सान्त है, क्षेत्र से भी वह सान्त है। पर काल और भाव की अपेक्षा से वह अनन्त है-सान्त नहीं है। तात्पर्य कहने का यह है कि जीव के ज्ञान, दर्शन और चारित्रपर्याय अनंत रूप है-इनका किसी

કારણ કે દર્શન ગુણની પણ અનંત પર્યાયો હોય છે "अणंता चरित्तपज्जवा" જીવ અનંત ચારિત્ર પર્યાય રૂપ છે, કારણ કે ચારિત્ર ગુણની પણ અનંત પર્યાય હોય છે 'अणंता अगुरुलहुय पज्जवा" જીવ અનંત અગુરુ લઘુ પર્યાયરૂપ છે ઔદારિક શરીરની અપેક્ષાએ અનંત ગુરુ લઘુ પર્યાય રૂપ છે તથા કાર્મણ શરીર અને જીવના સ્વરૂપની અપેક્ષાએ અનંત અગુરુ લઘુ પર્યાય રૂપ છે. "नत्थि पुण से अंते" આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનંત રહિત છે,

હવે જીવની સાન્તતા અને અનંતતા વિષેના સમસ્ત કથનનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે "से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते भावओ जीवे अणंते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવ સાન્ત અનંતયુક્ત છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ તે સાન્ત છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનંત 'અંતરહિત' છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે જીવની જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રપર્યાય અનંતરૂપ

नैं कदाचिन्नासीत्, 'जाव णिच्चा' यावन्नित्या अत्र यावत्पदेन 'न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य, धुवा, णिइया, सासया, अक्खया, अव्वया, अवट्ठिया' इति संग्राह्यम्। कालतः पूर्वमप्यासीत् सिद्धिरिदानीं विद्यते भविष्यति चानागतकालेपि अतो ध्रुवाद्यारभ्य नित्येति भावः। 'भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा' भावतश्च यथा लोकस्य तथा भणितव्या, भावतश्च सिद्धेरेकरूपता लोकवदेव ज्ञातव्येति भावः। तथा च-भावतः सिद्धिरनन्तवर्णगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपा, अनन्तसंस्थानपर्यायानन्तगुरु-लघुपर्यायानन्तागुरुपर्यायरूपा, नास्ति तस्या अन्त इति। 'दव्वओ सिद्धी स अंता' तत्र द्रव्यतः सिद्धिः सांता 'खेत्तओ सिद्धी स अंता' क्षेत्रतः सिद्धिः

रूप ही सिद्ध होता है। क्यों कि भूतकाल में कभी भी कोई दिन ऐसा नहीं हुआ कि जब सिद्धिका सद्भाव न रहा हो। 'जाव न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य, धुवा, णिइया, सासया, अक्खया अव्वया, अवट्ठिया णिच्चा' काल से सिद्धि पहिले भी थी अब भी है, और आगे भी रहेगी। इस कारण यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय है अवस्थित है और नित्य है। 'भावओ जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा' भाव की अपेक्षा से सिद्धि विषय एकरूपता भाव से लोक की एकरूपता के समान जाननी चाहिये। इस तरह भाव से सिद्धि अनन्तवर्ण, गंध, रस स्पर्श पर्यायरूप है, अनन्तसंस्थान पर्यायरूप है। अनन्त गुरुलघुपर्यायरूप अनंत अगुरुलघु पर्यायरूप है। इसका कभी अन्त नहीं आता है। इस तरह 'दव्वओ सिद्धी स अंता खेत्तओ सिद्धी स अंता' द्रव्य और क्षेत्रसे सिद्धि सान्त है तथा

સાબિત થાય છે કારણ કે ભૂતકાળમાં એવો કોઈ પણ સમય ન હતો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય 'जाव न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ भविंसु य भवइ य, भविस्सइ य धुवा णिइया सासया अक्खया अव्वया अवट्ठिया णिच्चा" કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં સિદ્ધિનું અસ્તિત્વ હતું વર્તમાન કાળમાં પણ છે અને ભવિષ્યમાં પણ રહેશે. કારણ કે તે ધ્રુવ નિયત શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે "भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा' ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની અનંતતા જે રીતે સાબિત કરવામાં આવી છે એજ રીતે સિદ્ધિની પણ અનંતતાનું પ્રતિપાદન કરી લેવું જોઈએ આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનંત વર્ણ, ગંધ રસ સ્પર્શ અને સંસ્થાન પર્યાયરૂપ છે તે અનંત ગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે અનંત અગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તેનો કદી અંત નથી આ રીતે 'दव्वओ सिद्धी स अंता, खेत्तओ सिद्धी स अंता" દ્રવ્યની અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અન્તવાળા

यालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्कंभेणं' क्षेत्रतः खलु सिद्धिः पचचत्वारिंश-शतसहस्राणि आयामविष्कंभेण, तत्रायामो दैर्घ्यम् विष्कंभो विस्तारस्तथा च दैर्घ्य-विस्तारा२यां क्षेत्रतः सिद्धिः पंचचत्वारिंशद्योजनशतसहस्रपरिमिता। अथ परि-धिमाह-' एगा जोयणकोड़ी बायालिसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयण-सहस्साइं दोण्णि य अउणा पन्नजोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं ' एका योजनकोटि द्विचत्वारिंशत् च योजनशतसहस्राणि त्रिंशत् च योजन सहस्राणि द्वे च एकोनपंचाशद्योजनशते किंचित् विशेषाधिके परिक्षेपेण। यद्यपि इह सिद्धिः परमार्थतः सकलकर्मक्षयरूपा सिद्धाधारा आकाशप्रदेशरूपा वा। तथापि सिद्धा-नामाधारभूता आकाशप्रत्यासन्नत्वेन ईषत् प्राग्भारा पृथिव्येवेह सिद्धिशब्देन मोक्तेति। ' अत्थि पुण से अंते ' अस्ति पुनस्तस्या अतः। द्रव्यक्षेत्राभ्यां सिद्धिं विविच्य कालतस्तामाह-' कालओ ण सिद्धी न कयाइ न आसी ' कालतः सिद्धि

पैंतालीस ४५ लाख योजन लंबी चौडी है' इसकी परिधि एक करोड बयालीस लाख तीस हजार दो सौ गुनचास योजन से कुछ अधिक है, यदि सिद्धि का विचार वास्तविक दृष्टि से किया जावे तो वह सकल कर्म क्षयरूप ही है, अथवा सिद्ध जितने आकाश रूप स्थान में बसते हैं वह सिद्धि है। परन्तु फिर भी सिद्धि शब्दसे यहां ईषत्प्राग्भारा-सिद्ध-शिला-पृथिवी ही ली गई है। क्यों कि वह सिद्धों के आधारभूत आकाशरूप स्थान के पास आई हुई है। 'अत्थिपुण से अंते ' इस तरह उसका अन्त है। अतः द्रव्यसिद्धि और क्षेत्रसिद्धि ये दोनों अन्त सहित हैं। 'कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी ' कालसे जब सिद्धिके सान्तत्व और अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब उसका अनन्त-

---

ન પ્રમાણ છે તેની પરિધિ (ઘેરાવો) એક કરોડ બેતાળીશ લાખ ત્રીસ હજાર બસો ઓગણપચાશ (१४२३०२४९) યોજનથી પણ થોડી વધારે છે. જો વાસ્તવિક દૃષ્ટિએ સિદ્ધિનો વિચાર કરવામા આવે તો તે સકળ કર્મના ક્ષયરૂપ જ છે, અથવા જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનમા સિદ્ધ ભગવંતો વસે છે તે સ્થાનને સિદ્ધિ કહે છે પણ અહી " સિદ્ધિ " પદ વડે ઈષત્પ્રાગ્ભારા-સિદ્ધ શિલા-પૃથ્વી જ ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે, કારણ કે તે સિદ્ધોના આધારભૂત આકાશરૂપ સ્થાનની પાસે આવેલી છે " अत्थि पुण से अंते " તેથી તે અંત-વાળી (સાન્ત) છે આ રીતે દ્રવ્યથીસિદ્ધિ અને ક્ષેત્રથીસિદ્ધિ અન્ત યુક્ત છે. " कालओ ण सिद्धी न कयाइ न आसी " કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની સાન્તતા અને અનંતતાનો વિચાર કરવામા આવે તો તેની અનંતતા જ

'खेत्तओ ण सिद्धे असंखेज्जपएसिए' क्षेत्रतः खलु सिद्धोऽसंख्येयप्रदेशात् भवति। तथा-' असंखेज्जपएसोगाढे ' असंख्येयप्रदेशावगाढः असंख्येषु गगनप्रदेशेषु अवगाहना विद्यते यस्य स असंख्येयप्रदेशावगाढः। ' अत्थि पुण से अंते ' अस्ति पुनस्तस्यान्तः क्षेत्रतः खलु भवेत् सिद्धो भवतीत्यर्थः। ' कालओ ण सिद्धे साइए अपज्जवसिए ' कालतः खलु सिद्धः सादिकः अपर्यवसितः, सादिकः एकमाश्रित्य आदिमान् अपर्यवसितः। अशेषकर्मक्षयरूपादि सिद्धिः, सा च ज्ञान दर्शन चारित्रादिरूपकारणेनोत्पद्यते इति सिद्धि विशिष्टमीवस्यापि सादित्व मवत्यवतिभाव, ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यांत कालापेक्षया सिद्ध

सिद्ध की अपेक्षा सिद्ध सान्त है 'खेत्तओ ण सिद्धे असंखेज्ज पएसिए' क्षेत्र से सिद्ध असंख्यात प्रदेशवाला है तथा ' असंखेज्जपएसोगाढे ' आकाश के असंख्यातप्रदेशों में वह अवगाहनावाला है। आकाश के असंख्यात प्रदेशों में जिसकी अवगाहना होती है वह असंख्यातप्रदेशावगाढ कहलाता है ' अत्थि पुण से अंते ' क्षेत्र की अपेक्षा सिद्ध सान्त अन्तसहित है। ' कालओ णं सिद्धे साइए अपज्जवसिए ' काल से सिद्ध सादिक-आदिसहित और अपर्यवसित अनन्त सहित है। एक को आश्रित कर के सादिक है तथा अनेक सिद्धों को आश्रित कर के वह अपर्यवसित-अनन्त है। समस्त कर्मों के क्षयरूप सिद्धि होती है। यह सिद्धि ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र आदिरूप कारणों की पूर्णता से उत्पन्न होती है। अतः इस सिद्धि से विशिष्ट जो जीव है वह भी एक की अपेक्षा सादि है ऐसा माना जाता है ' नत्थि पुण से अंते ' इस

એક સિદ્ધની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો સિદ્ધ સાન્ત છે " खेत्तओ ण सिद्धे असंखेज्जपएसिए " ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા છે તથા " असंखेज्जपएसोगाढे " તે આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના વાળા છે જેની અવગાહના આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં હોય છે તેને અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢ કહેવામાં આવે છે अत्थि पुण से अंते ' તેથી ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાન્ત-અન્ત સહિત છે कालओ ण सिद्धे साइए अपज्जवसिए કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાદિ અનંત છે એટલે કે આદિ સહિત છે અને અંત રહિત છે એક સિદ્ધની અપેક્ષાએ સિદ્ધનો કાળ આદિ સહિત છે તથા અનેક સિદ્ધોની અપેક્ષાએ સિદ્ધ ના કાળો અપર્યવસિત અનાદિ અનંત છે સિદ્ધિ સંપૂર્ણ કર્મોના ક્ષયરૂપ દોષ છે તે સિદ્ધિની ઉત્પત્તિ જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર વગેરે રૂપ કારણની પૂર્ણતાથી થાય છે તેથી તે સિદ્ધિથી યુક્ત જે જીવ છે તે સિદ્ધ કરે થાય છે સિદ્ધ જીવની અપેક્ષાએ આદિ (આદિનો અન્ત) અને અન્ત સહિત છે પરંતુ બધા જીવોની અપેક્ષાએ અનાદિ અનંત છે

सांता ' कालओ सिद्धि अणता ' कालतः सिद्धिरनता, ' भावओ सिद्धी अणता ' भावतः सिद्धिरनंता हे स्कन्दक तव मनसि योयं संकल्पोऽभूत् किमियं सिद्धिः सांता अनंता वेति तस्य संक्षेपत इदमुत्तरम् द्रव्यक्षेत्राभ्यां सिद्धिः सांता कालभावाभ्यां चानंता। इति तृतीयप्रश्नोत्योत्तरम् ॥ ३ ॥ ' जे वि य ते खंदया ' योपि च ते स्कन्दक ! ' जाव ' यावत्-यावत्पदेन-' ते मनसि एतादृश आध्यात्मिकादिविचारः समुदपद्यत किं सांतः सिद्ध. ' इति संग्राह्यम् । ' किं अणंते सिद्धे ' किं अनन्तः सिद्धः : तं चेव ' तदेव लोकवक्तव्यतावदेवात्रापि वाच्यम् कियत्पर्यन्तमित्याह-' जाव ' यावत्-यावत्पदेन द्रव्यक्षेत्रकालभावतः सिद्धश्चतुर्विधो मया प्रज्ञप्तस्तत्र-' दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते ' द्रव्यतः खलु एक. सिद्ध सांतः,

'कालओ सिद्धा अणता, भावओ सिद्धी अणता' कालसे सिद्धि अनन्त है और भावसे भी वह सिद्धि अनंत है। हे स्कन्दक ! तुम्हारे मनमें जो यह संकल्प हुआ है कि सिद्धि सान्त-अन्त सहित या अनन्त अन्त रहित है उसका संक्षेप से यह उत्तर है कि द्रव्य और क्षेत्र की अपेक्षा सिद्धि सान्त अन्त सहित है और काल और भाव की अपेक्षा सिद्धि-अनन्त-अन्त रहित है। इस प्रकार यह तृतीय प्रश्न का उत्तर है।

'जे वि य ते खंदया ! जाव किं अणंते सिद्धे ' इस तरह हे स्कन्दक ! जो तुम्हारे मन में उत्पन्न हुआ है कि सिद्ध सान्त-अंत सहित हैं कि सिद्ध अनन्त-अन्त रहित हैं सो इस विषय में सुनो हे स्कन्दक ! द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से मैंने सिद्ध चार प्रकार के प्ररूपित किये हैं-इनमें ' दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते, द्रव्य से एक सिद्ध सान्त-अन्त सहित हैं। अर्थात्-एक

(सान्त) छे पण "कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धो अणता" કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનત છે હે સ્કન્દક ! તમારા ત્રીજા પ્રશ્નોના સક્ષેપમા આ પ્રમાણે ઉત્તર છે.-દ્રવ્ય અને કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ સાન્ત છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનંત (અન્તરહિત) છે આ રીતે ત્રીજા પ્રશ્નનુ સમાધાન કરવામા આવ્યુ છે.

"जे वि य ते खदया ! जाव किं अणते सिद्धे" હે સ્કન્દક ! તમારા મનમા એવી શકા કાક્ષા વગેરે ઉદ્ભવેલ છે કે "સિદ્ધ" સાન્ત (અન્ત યુક્ત) છે કે અનત (અત રહિત) છે ?" તો તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે-હે સ્કન્દક ! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ, કાળની અપેક્ષાએ અને ભાવની અપેક્ષાએ એમ ચાર પ્રકારે મે સિદ્ધની પ્રરૂપણા કરી છે "दव्वओ ण एगे सिद्धे स अंते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક સિદ્ધ સાન્ત અન્ત સહિત છે. એટલે કે

'कालओ ण सिद्धे अणंते' कालतः खलु सिद्धोऽनन्तः 'भावओ णं सिद्धे अणंते' भावतः खलु सिद्धोऽनन्तः, द्रव्यक्षेत्रापेक्षया सिद्धस्यान्तत्वं कालभावापेक्षया चानन्तत्वम् भावतो ज्ञानदर्शनागुरुलघुपर्यायस्वरूपेण पर्यन्तस्याभावादिति तस्मात् हे स्कन्दक लोकादि पदार्थाः द्रव्यक्षेत्राभ्यां सांताः परं कालभावाभ्यां त्वनन्ता एव भवन्तीति। इति चतुर्थप्रश्नस्योत्तरम् ॥ ४ ॥

लोकादारभ्य सिद्धपर्यन्तवस्तुषु सान्तत्वानन्तत्वविषयकसंशयस्य निराकरणं कृत्वा साम्प्रतं मरणविषयकप्रश्नं स्पष्टयति–'जे वि य' इत्यादि। 'जे वि य ते खंदया' योऽपि च स हे स्कन्दक! 'इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था अथमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितो यावत् समुदपद्यत, इह यावत्करणात् 'क

हार करते हैं (से ण दव्वओ णं सिद्धे स अंते, खेत्तओ णं सिद्धे स अंते) सान्तद्रव्य से सिद्ध अन्तसहित है तथा क्षेत्र से भी सिद्ध अन्तसहित है परन्तु (कालओ णं सिद्धे अणंते भावओ णं सिद्धे अणंते) काल से सिद्ध अन्तरहित है और भाव से भी सिद्ध अन्तरहित है। इसलिये हे स्कन्दक! लोकादि पदार्थ द्रव्य और क्षेत्र की अपेक्षा से सांत हैं और काल एवं भाव की अपेक्षा से वे अनंत हैं। इस प्रकार का यह चतुर्थप्रश्न का उत्तर है।

इस तरह लोक से लेकर सिद्धतक की वस्तुओं में सान्तता अनन्तता विषयक संदेह का निवारण करके अब भगवान् मरण विषयक प्रश्न का स्पष्टीकरण करते हैं–'जे वि य ते खंदया इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था" हे स्कन्दक! जो तुम्हें यह इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिन्तित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ है, कि

'से ण दव्वओ ण सिद्धे ण अंते, खेत्तओ ण सिद्ध स अंते" द्रव्य अने क्षेत्रनी अपेक्षाओ सिद्ध अंत सहित छे पण 'कालओ ण सिद्धे अणंते, भाव ओण सिद्धे अणते' काल अने भावनी अपेक्षाओ सिद्ध अंतसहित छे આ પ્રમાણે બીજા પ્રશ્નનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવ્યું છે, હે સ્કન્દક! લોક વગેરે પદાર્થો દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સાન્ત (અંત સહિત) છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ અનંત (અંત રહિત) છે

આ રીતે લોકથી માંડ કરીને સિદ્ધ સુધીની સાન્તતા અને અનંતતાની બાબતનો પ્રશ્નોનું સમાધાન કરીને હવે ભગવાન મરણ વિષયના પ્રશ્નનું સમાધાન કરે છે

"जे वि य ते खंदया! इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था" હે સ્કન્દક! તમને આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત, (યાવત્) મનોગત

स्यांतो न भवति सदैवविद्यमानत्वात् । ' भावओ णं सिद्धे अणंता णाणपज्जवा ' भावतः खलु सिद्धः-अनता ज्ञानपर्यायाः ज्ञानपर्यायाणामनंतत्वेन ज्ञानस्य च जीवस्वरूपतया ज्ञानात्मकभावेन सिद्ध जीवोप्यनंतो भवतीत्यर्थः, 'अणता दंसणपज्जवा' अनंतादर्शनपर्यवाः यथा ज्ञानपर्याया अनंतास्तथा दर्शनपर्याया अनंतःस्तथा दर्शनपर्याया अपीति, 'अणंता अगुरुलहुपज्जवा' अनंता अगुरुलघुपर्यायाः, अनंता अगुरुलघुपर्यायाः जीवस्वरूपमाश्रित्यागुरुलघुत्वपर्यायत्वं बोध्यमिति । 'नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यांतः तस्य सिद्धस्य भावतः कदाचिदपि अन्तो न भवति सदैव विद्यमानत्वादिति भावः । ' से णं दव्वओ णं सिद्धे स अंते ' तदेतत् द्रव्यतः खलु सिद्धः सांतः ' खेत्तओ णं सिद्धे स अंते ' क्षेत्रतः खलु सिद्धः सांतः,

---

सिद्ध जीव का काल की अपेक्षा से अंत नही होता है क्यों कि वह सदा विद्यमान रहता है । 'भावओ णं सिद्धे अणंता णाणपज्जवा ' भाव से सिद्ध अनन्तज्ञानपर्यायरूप हैं । तात्पर्य यह है कि-ज्ञान की पर्यायें अनन्त होती हैं-और ज्ञान जीव का निजस्वरूप है इसलिये ज्ञानरूप होने के कारण सिद्ध जीव भी अन्त रहित है-अनन्तहैं. (अणंता दंसण पज्जवा) जिस प्रकार से ज्ञान की पर्यायें अनन्त है । उसी तरह से दर्शन को भी पर्यायें अनन्त हैं । अणंता अगुरुलहुयपज्जवा ' अगुरुलघु गुण की पर्यायें भी अनन्त हैं-जीव के स्वरूप का आश्रित कर यहां अगुरुलघुपर्यायता जाननी चाहिये । इसलिये (नत्थिपुण से अंते) सिद्ध जीव का कभी भी भाव की अपेक्षा से अन्त नहीं होता हैं । क्यों कि इस अपेक्षा वह सदा विद्यमान माना गया है । इस कथन का अब उपसं-

---

" नत्थि पुण से अते " પણ તે સિદ્ધ જીવનો અત હોતો નથી કારણ કે તેનુ અસ્તિત્વ સદા કાળ રહે છે માટે અનંત છે (અત રહિત) છે "भावओ णं सिद्धे अणता णाणपज्जवा " ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ હોય છે-તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનની પર્યાયો અનંત હોય છે-અને જ્ઞાન જીવનું નિજસ્વરૂપ છે તેથી જ્ઞાન રૂપ હોવાને કારણે સિદ્ધ જીવ પણ અનત (અત. રહિત) હોય છે अणता दंसणपज्जवा " જેમ જ્ઞાનની પર્યાયો અનંત હોય છે તેમ સિદ્ધને દર્શનની પર્યાયો પણ અનત હોય છે " अणंता अगुरुलहुयपज्जवा " અને અગુરુ લઘુ ગુણની પર્યાયો પણ અનત હોય છે- જીવના સ્વરૂપને અનુલક્ષીને અહીં અગુરુ લઘુ પર્યાયો સમજવી તેથી " नत्थि पुण से अते " ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધજીવનો કદી પણ અત હોતો નથી તે અન્તરહિત હોય છે. હવે આ કથનનો ઉપસહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે

भगवानाह—'बालमरणे' इत्यादि, 'बालमरणे दुवालसविहे पण्णत्ते' बालमरणं द्वादशविधं प्रज्ञप्तम्। 'तं जहा' तद्यथा-'वलयमरणे' वलन्मरणम्, वलन्तः बुभुक्षापिपासादि परिगतत्वेन वलत्कलायमानस्य यद् मरणं तद्वलन्मरणम् अथवा संयमात् पतितो जीवस्य यन्मरणं तद् वलन्मरणमिति १। 'वसट्टमरणे' वशार्तमरणम्, वशेनेन्द्रियपराधीनतया आर्तस्य पीडितस्य प्रदीप्तप्रदीपकालिते चक्षुषः पतङ्गस्येव यन्मरणं तद्वशार्तमरणम् विषयाधीनतया पीडितमरणमिति यावत् २। 'अंतोसल्लमरणे' अन्तः शल्यमरणम् अन्तः शरीरमध्ये प्रविष्टस्य मायादिरूप शल्यस्यानुद्धरणेन यन्मरणम् तदन्तः शल्यमरणम् ३। तथा 'तब्भवमरणे' तद्भव

मरणे दुवालसविहे पण्णत्ते' हे स्कन्दक! बालमरण १२ प्रकार का होता है। 'तंजहा' उस के वे प्रकार ये हैं- 'वलयमरणे' वलन्मरण। जब पङ्गुल अधिक भूख प्यास आदि से जीव तडफडाने लगता है तब वह तडफडाता हुआ मरण को प्राप्त हो जाता है-इस मरण का नाम वलय मरण -वलन्मरण है। अथवा-संयम से भ्रष्ट हुए जीव का जो मरण है वह वलयमरण है १। 'वसट्टमरण-वशार्तमरणे-प्रदीप्त दीपक के प्रकाश से आकृष्ट हुए नेत्रवाले पतंगिये की तरह इन्द्रियों की आधीनता से दुःखित हुए जीव का जो मरण होता है वह वशार्तमरण है २। 'अंतोसल्लमरणे' अन्तः शल्य मरण-शरीर के भीतर प्रविष्ट मायादिशल्य के अनुद्धरण से जो मरण होता है वह अन्तःशल्यमरण है ३। 'तब्भवमरणे' तद्भवमरण-मनुष्यादि पर्याय में रहते हुए जीव का

मरणे दुवालसविहे पण्णत्ते" हे स्कन्दक! बालमरणनां बार प्रकारे કહ્યાં છે (तं जहा) તે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે

१ "वलयमरण" बालमरण (वलन्मरण) જ્યારે વધુ જ ભૂખ, તરસ વગેરેથી તરફડીને જીવ મરણ પામે છે ત્યારે તે મરણને વલયમરણ કહે છે અથવા સંયમથી ભ્રષ્ટ થયેલા આત્મસત્તા મરણને પણ વલયમરણ કહે છે

२ "वसट्टमरण" वशार्तमरण-પ્રજ્વલિત દીવાની જ્યોતિને જોઈને જેમ પતંગિયા મરે છે તેવી રીતે ઈન્દ્રિયોના ગુલામ બનીને દુઃખિત થયેલા જીવન જે મરણ થાય છે તેને "वशार्तमरण" કહે છે

३ "अंतोसल्लमरण" अन्तः शल्य मरण આત્મામા પ્રવેશેલ માયા વગેરે શલ્યો ન નીકળવાને કારણે જે મરણ થાય છે-જેનાથી કે માયા વગેરે શલ્યોનો પરિત્યાગ કર્યા વિના જે મરણ થાય છે તેને અન્ત શલ્ય મરણ કહે છે

४ "तब्भवमरणे" तद्भव मरण- મનુષ્ય વગેરે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયેલ જીવનું

लिपतः प्रार्थितो मनोगत संकल्पः ' इत्यादीनां ग्रहणं कर्तव्यम् । यत्-' केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा ' केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा, कीदृशं हि मरण जीवस्य संसारं वर्द्धयति कीदृशं च मरणं संसारं ह्रासयतीति प्रश्नः । ' तस्स वि य णं अयमट्ठे ' तस्यापि च खलु अयमर्थः ' एवं खलु खंदया ' एवं खलु स्कन्दक ! ' मए दुविहे मरणे पन्नत्ते ' मया द्विविध मरणं प्रज्ञप्तम् , ' तं जहा ' तद्यथा ' बालमरणे य पंडियमरणे य ' बालमरणं च पण्डितमरणं च । मरणस्य बालपंडितभेदद्वयं श्रुत्वा किमिदं बाल मरणमिति बालमरणविषयकजिज्ञासावानाह-' से किं तं ' इत्यादि । ' से किं तं बालमरणे ' अथ किं तद् बालमरणम् ? हे भगवन् यदिदं देवानुप्रियेण बाल-पांडित्यभेदेन मरणस्य द्वैविद्धयं प्रदर्शितं तत्र किमिदं बालमरण नामेति प्रश्नः

" जीवे " जीव ' केण वा मरणेणं मरमाणे वड्ढइ वा हायइ वा ' किस मरण से मरकर बढता है और किस मरण से मरकर घटता है। तात्पर्य इसका यह है कि कैसा मरण जीव के संसार का वर्धक होता है और कैसा मरण जीव के संसार का ह्रास करने वाला होता है । ' तस्स वि य णं अयमट्ठे ' सो इस प्रश्नका भी यह उत्तर है " एवं खलु खंदया ! मए दुविहे मरणे पण्णत्ते ' कि हे स्कन्दक मैंने मरण दो प्रकार का कहा है । ' तंजहा ' जो इस प्रकार से है-'बाल मरणे य पंडिय मरणे य ' एक बाल मरण और दूसरा पंण्डित मरण । स्कन्दक ने जब मरण के ये दो प्रकार सुनें-तब उसे बालमरण का क्या स्वरूप है ऐसी जिज्ञासा हुई अतः उसने प्रभु से पूछा कि ' से किं तं बालमरणे ' हे भगवान् ! आप देवानुप्रिय ने बालमरण और पंडित मरण के भेद से मरण दो प्रकार का कहा है-सो इनमें बालमरण क्या है ? इस प्रकार स्कन्दन की बालमरण की जिज्ञासा जानकर प्रभुने उसे कहा कि ' बाल

સકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે " जीवे केण वा मरणेण मरमाणे वड्ढइ वा हायइ वा " કેવા પ્રકારના મરણે મરવાથી જીવ પોતાનો સંસાર વધારે છે, અને કેવા પ્રકારના મરણે મરવાથી જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે ? " तस्स वि य ण अयमट्ठे " તો તમારા તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે ' एवं खलु खंदया ! मए दुविहे मरणे पण्णत्ते " હે સ્કન્દક ! મેં બે પ્રકારના મરણ કહ્યા છે (त जहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-" बालमरणे य पंडियमरणे य " (૧) બાલમરણ અને (૨) પંડિતમરણ ત્યારે સ્કન્દકે મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યું કે " से किं त बालमरणे ? " હે ભગવન્ ? બાલમરણનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ? આ પ્રમાણે સ્કન્દકની જિજ્ઞાસા જાણીને પ્રભુ તેને કહે કે " बाल-

तरुपतनम् वृक्षाग्रात् पतनो यन्मरणं तत् तरुपतनमरणम् ६ । तथा 'जलप्पवेसे' जलप्रवेशः, जले प्रविश्य यन्मरणं तज्जलप्रवेशमरणमिति ७ । तथा 'जलणप्पवेसे' ज्वलनप्रवेशः ज्वलने=अग्नौ प्रविश्य यन्मरणं तज्ज्वलनप्रवेशमरणम् ८ । तथा 'विसभक्खणे' विषभक्षणम्, विषं पीत्वा यन्मरणं तद्विषभक्षणमरणम् ९ । तथा 'सत्थोवाडणे' शस्त्रावपाटनम् शस्त्रेण कर्त्तरादिना अवपाटनं विदारणं यस्मिन् मरणे तत् शस्त्रावपाटनमरणम् १० । 'वेहायसे' वैहायसम्, विहायसि आकाशे भवम् वृक्षादि आत्मानुबन्धनेन यत् मरणं तत् वैहायसमरणम् ११ । 'गिद्धपट्ठे' गृध्रस्पृष्टम् गृध्रैः मांसभक्षकैः पक्षिविशेषैः, अथवा गृध्रै मांसलुब्धकै शृगालादिभिः स्पृष्टस्य=विदारितस्य अथवा करिकरभरासभादिशरीरान्तर्गतत्वेन यन्मरणं

गिर कर मरना यह तरुपतन मरण है ६ । 'जलप्पवेसे' जल में डूब कर जो मरण होता है वह जलप्रवेश मरण है ७ । 'जलणप्पवेसे' अग्नि में कूद कर जल जाना यह ज्वलन प्रवेश मरण है ८ । 'विसभक्खणे' विषभक्षण-विष पान कर मरना यह विषभक्षण मरण है ९ । 'सत्थोवाडणे' तलवार आदि शस्त्रों से अपने शरीर को विदारण कर मरना यह शस्त्रावपाटन मरण है १० । 'वेहायसे' वृक्ष आदि की शाखा पर फांसी लटका कर जो मरण होता है वह वैहायसमरण है ११ । गिद्धपट्ठे' मांस खाने वाले पक्षिविशेषों के द्वारा विदारित किये जाने पर जो मरण होता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है । अथवा-हाथी, ऊँट आदि के पैरों के नीचे आ जाने पर अर्थात् उनके पांव के नीचे दब जाने पर जो मरण हो जाता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है । अथवा-मांस लुब्धक

થાય છે તેને વૃક્ષ પતન મરણ કહે છે ૬ "जलप्पवेसे" પાણીમાં કૂદી જવાથી જે મરણ થાય છે તેને જલ પ્રવેશ મરણ કહે છે ૭ 'जलणप्पवेसे" અગ્નિમાં કૂદી પડી ને બળી મરવાથી જે મરણ થાય છે તેને જ્વલન પ્રવેશ મરણ કહે છે 'विसभक्खणे'-વિષ ખાવાથી જે મરણ થાય છે તેને વિષ ભક્ષણ મરણ કહે છે ૧૦ सत्थोवाडणे" તલવાર વગેરે શસ્ત્રોના ઘાથી જે મરણ થાય છે તેને શસ્ત્રાવપાટન મરણ કહે છે ૧૧ वेहायसे ' ઝાડે દોરડું બાંધી ને જે મરણ ઉપજાવવામાં આવે છે તેને વૈહાયસ મરણ કહે છે ૧૨ "गिद्धपिट्ठे" ગીધ વગેરે માંસાહારી પક્ષીઓ વડે કાપી ખવાવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા- હાથી, ઊંટ વગેરે પ્રાણી ઓના પગ તળે અકસ્માત આવવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે, અથવા માંસાહારી શિયાળ વગેરે જનાવરો વડે ભક્ષિત થવાને કારણે

वमरणम्, तस्मैभवाय मनुष्यादेः सतो मनुष्यादावेव बद्धायुष्कस्य यन्मरणं तत् तद्भवमरणम् मनुष्यदेहं परित्यज्य पुनरपि मनुष्ये एव प्रादुर्भावः एव तिर्यग् शरीरं परित्यज्य पुनस्तत्रैव जन्मग्रहणमिति, इदं च तद्भवमरणं मनुष्यतिरश्चोरेव संभवति न तु देवनारकयोः देवोदेवशरीरं परित्यज्य नैव देवेषु समुत्पद्यते न वा नारको नरकं परित्यज्य पुनर्नरके एव समुत्पद्यते इति ४। 'गिरिपडणे' गिरिपतनम्, पर्वताग्रात् पतित्वा मरणं गिरिपतनमिति ५। तथा 'तरुपडणे'

उसी पर्याय का आयु बंध कर जो मरण होता है वह तद्भव मरण है ४। तात्पर्य कहने का यह है कि जीव जिस पर्याय में है-उस पर्याय को छोड़कर पुनः उसी पर्याय में जन्म धारण करना यह तद्भव मरण है जैसे कोई मनुष्य मनुष्यपर्याय को छोडकर पुनः मनुष्यपर्याय में जन्म करता है तो यह उसका तद्भव मरण है-(तस्मै भवाय मरणं) तद्भवमरणं ऐसी इसकी व्युत्पत्ति है इसी तरह तिर्यक् शरीर का परित्याग कर कोई तिर्यञ्च जीव पुनः उसी पर्याय में जन्म धारण करता है तो यह उसका तद्भव मरण है। यह तद्भव मरण मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति के जीवों में ही संभवता है। देव और नारकगति के जीवों में नहीं, क्यों कि यह सैद्धान्तिक नियम है कि देव मर कर देव नहीं होता और नारक मर कर नारक नहीं होता है। तथा 'गिरिपडणे' गिरिपतन-पर्वत के ऊपर से गिरकर के मरना-यह गिरिपतन मरण है ५। 'तरुपडणे' वृक्ष से

બીજે ભવે તેજ પર્યાયનો આયુષ્ય બંધ બાંધીને જે મરણ થાય છે તે મરણ ને તદ્ભવ મરણ કહે છે એટલે કે જે પર્યાયમાં જીવ જન્મ પામ્યો હોય તે પર્યાયમાંથી મરીને ફરીથી પાછો તેજ પર્યાયમા ઉત્પન્ન થતો હોય તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે. જેમ કે કોઈ જીવ મનુષ્ય પર્યાયને છોડીને ફરીથી પાછો મનુષ્ય પર્યાયમાં જ જન્મ ધારણ કરે તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહેછે તદ્ભવ મરણની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે- "तस्मै भवाय मरणं" એજ પ્રમાણે કોઇ જીવ તિર્યંચ યોનિમા જન્મ ધારણ કરીને ત્યાથી મરીને ફરીથી તિર્યંચ યોનિમા જન્મ ધારણ કરે તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે. તે તદ્ભવ મરણ મનુષ્ય ગતિના જીવોમા જ સભવે છે-દેવ અને નારક ગતિના જીવોમા તે મરણ સભવતું નથી, કારણ કે સિદ્ધાતોમા, એવું કહ્યુ છે કે દેવ મરીને દેવ થતો નથી અને નારક જીવ મરીને નારક ભવમા જન્મ લેતો નથી.

૫ "गिरिपडणे" ગિરિપતન- પર્વત પરથી નીચે પડવાથી થતા મરણને ગિરિપતન મરણ કહે છે. ૬ "तरुपडणे" વૃક્ષ પરથી પડી જવાથી જે મરણ

तरुपतनम् वृक्षमात् पततो यन्मरणं तत् तरुपतनमरणम् ६ । तथा 'जलप्पवेसे' जलप्रवेशः, जले प्रविश्य यन्मरणं तज्जलप्रवेशमरणमिति ७ । तथा 'जलणप्पवेसे' ज्वलनप्रवेशश्च ज्वलते=अग्नौ प्रविश्य यन्मरणम् तज्ज्वलनप्रवेशमरणम् ८ । तथा 'विसभक्खणे' विषभक्षणम्, विषं पीत्वा यन्मरणं तद्विषभक्षणमरणम् ९ । तथा 'सत्थोवाडणे' शस्त्रावपाटनम् शस्त्रेण करपत्रादिना आत्मनः विदारणं यस्मिन् मरणे तत् शस्त्रावपाटनमरणम् १० । 'वेहाणस' वैहायसम्, विहायसि आकाशे भवम् वृक्षादि शाखाबन्धनेन यत् मरणं तत् वैहायसमरणम् ११ । 'गिद्धपट्ठे' गृद्धस्पृष्टम् गृध्रैरामांसभक्षकैः पक्षिविशेषैः, अथवा गृध्रैः मांसलुब्धकैः कृताभ्रादिभिः स्पृष्टस्य=विदारितस्य अथवा करिकरभरासभादिशरीरात् तदवयवेन यन्मरणं

गिर कर मरना यह तरुपतन मरण है ६ । 'जलप्पवेसे' जल में कूद कर जो मरण होता है वह जलप्रवेश मरण है ७ । 'जलणप्पवेसे' अग्नि में कूद कर जल जाना यह ज्वलन प्रवेश मरण है ८ । 'विसभक्खणे' विषभक्षण-विष पान कर मरना यह विषभक्षण मरण है ९ । 'सत्थोवाडणे' तलवार आदि शस्त्रों से अपने शरीर को विदारण कर मरना यह शस्त्रावपाटन मरण है १० । 'वेहायसे' वृक्ष आदि की शाखा पर फांसी लगा कर जो मरण होता है वह वैहायसमरण है ११ । 'गिद्धपट्ठे' मांस खाने वाले पक्षिविशेषों के द्वारा विदारित किये जाने पर जो मरण होता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है । अथवा-हाथी, ऊंट आदि के पैरों के नीचे आ जाने पर अर्थात् उनके पाद के नीचे दब जाने पर जो मरण हो जाता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है । अथवा-मांस लुब्धक

થાય છે તેને વૃક્ષ પતન મરણ કહે છે ૭ "जलप्पवेसे" પાણીમાં કૂદીને અથવા જે મરણ થાય છે તેને જળ પ્રવેશ મરણ કહે છે ૮ "जलणप्पवेसे" અગ્નિમાં કૂદી પડી ને બળી મરવાથી જે મરણ થાય છે તેને જ્વલન પ્રવેશ મરણ કહે છે "विसभक्खणे"-વિષ ખાવાથી જે મરણ થાય છે તેને વિષ ભક્ષણ મરણ કહે છે ૧૦ 'सत्थोवाडणे" તલવાર વગેરે શસ્ત્રોના ઘાથી જે મરણ થાય છે તેને શસ્ત્રાવપાટન મરણ કહે છે ૧૧ "वेहायसे" ઝાડે ફાંસો ખાઈને જે મરણ ઉપસ્થિત થાય છે તેને વૈહાયસ મરણ કહે છે ૧૨ "गिद्धपिट्ठे" ગીધ વગેરે માંસાહારી પક્ષીઓ વડે ફાડી ખવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા- હાથી, ઊંટ, વગેરે પ્રાણીઓના પગ તળે ચગદાઈ જવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધ સ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે, અથવા માંસાહારી શિકારી વગેરે જનવરો વડે ક્ષત વિક્ષત થવાને લીધે

तत् गृध्रस्पृष्टं वा अथवा गृध्रैर्भक्षितपृष्ठस्य यन्मरणं तद् गृध्रस्पृष्टमरणमिति १२। 'इच्चेतेणं खंदया दुवालसविहेणं वालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ' इत्येतेन स्कन्दक द्वादशविधेन वालमरणेन म्रियजीवोऽनंतैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, द्वादशविधवालमरणेन म्रियमाणस्य जीवस्यानन्तनारकभवप्राप्तिर्भवतीति भावः। 'तिरियमणुयदेव० अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ' तिर्यग्मनुष्य-

---

शृगाल अदि जानवरों द्वारा भक्षित किये जाने पर जो मरण होता है वह गृद्ध स्पृष्ट मरण है। अथवा गिद्धपक्षियों द्वारा पृष्टभाग खा जाने पर जो मरण होता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है। 'करिकरभरासभादि शरीरान्तर्गतत्वेन' इस पद का यह अर्थ होता है कि हाथी के भव में ऊँट के भव में अथवा रासभ-गधा आदि के भव में वर्तमान जीव का गृद्धपक्षियों के द्वारा शरीर विदारित किये जाने पर जो मरण हो जाता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है १२। 'इच्चेतेणं खंदया! दुवालसविहेणं वालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ' हे स्कन्दक! इन बारह प्रकार के बालमरणो से मरता हुआ जीव अनन्त नारक जीवों के भवग्रहणों से अपने को युक्त करता है अर्थात् बारह प्रकार के बालमरण से मरते हुए जीव को अनन्त नारक भवों की प्राप्ति होती है यही उसके संसार बढ जाने से उसकी वृद्धि है। 'तिरियमणुय देव० अणाइयं णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ' इसी तरह से इन बारह प्रकार के बालमरणों से

જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા ગીધ વગેરે પક્ષીઓ વડે પૃષ્ટ ભાગનુ ભક્ષણ થઇ જવાને કારણે જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે "करिकरभरासभादि शरीरान्तर्गतत्वेन' આ પદોનો આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે- હાથીના ભવમા, ઊંટના ભવમા, અથવા ગધેડા વગેરેના ભવમા વિદ્યમાન જીવના શરીરને ગીધો વડે ફાડી ખાવામા આવ્યુ હોય તો તેમના તે મરણને પણ ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે

" इच्चेतेण खंदया! दुवालसविहेण वालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ" હે સ્કન્દક! આ બાર પ્રકારના બાલમરણોથી મરતો જીવ પોતાની જાતને અનત નારક જીવોના ભવગ્રહણથી યુક્ત કરે છે એટલે કે એવા જીવોને અનત નારક ભવોની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ રીતે તેનો સ સાર વધી જવાથી તે જીવની વૃદ્ધિ થાય છે એમ કહેવામા આવ્યું છે ' तिरिय-मणुय-देव-अणाइय ण अणवदग्ग दीहमद्धं चाउरत-ससारकंतार अणुपरियट्टइ " આ પ્રમાણે બાર પ્રકારના બાલ મરણથી મરતો જીવ

देव भवग्रहणैरात्मान संयोजयति आत्मादिकं च खलु अनवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्त संसारकान्तारमनुपर्यटति, 'से च मरमाणे वड्ढइ' तदेतत् म्रियमाणो वर्द्धते अनेन प्रकारेण म्रियमाणो जीवो वर्द्धते संसार दीर्घीकरोतीत्यर्थः, 'से तं बालमरणे' तदेतद् बालमरणम्, बालमरणं निरूप्य पण्डितमरणं निरूपयितुमाह—'से किं त पंडियमरणे' इत्यादि। अथ किं तत् पण्डितमरणम्, भगवानाह—'पंडियमरणे' इत्यादि। 'पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते' पण्डितमरणं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तत्त्वातत्त्वविवेकविकलस्य जीवस्य यन्मरण तद्बालमरणम्, तथा तत्त्वातत्त्वविवेक

मरा जीव अनन्त तिर्यंच संबंधी अनंत मनुष्य संबंधी और अनंत देव संबंधी भवों में जन्म मरण करता रहता है इस तरह यह अनादि अनंत दीर्घ मार्गवाले चतुर्गतिरूप संसार में ही बार २ जन्म मरण के चक्कर में पड़कर अपने लिये संसार बढाता रहता है। 'से तं मरमाणे वड्ढइ' इस प्रकार से संसार का जो बढ़ना है वह जीव का बढ़ना है। कहने का तात्पर्य यही है कि बालमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार को दीर्घ करता है। 'से तं बालमरणे' इस प्रकार से यह बालमरण के विषयमें स्पष्टीकरण है। 'से किं तं पंडियमरणे' हे भदन्त! पण्डित मरण क्या है? 'पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते' पण्डित मरण दो प्रकार का कहा गया है तत्त्व और अतत्त्व के विवेक से विकल बने हुए प्राणी का जो मरण होता है वह तो बाल मरण कहलाता है—और तत्त्व एवं अतत्त्व के विवेक से युक्त हुए प्राणी का जो मरण होता है वह पंडित मरण कहलाता है। यह पादपोपगमन और भक्तप्रत्याख्यान के भेद से

તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના અનંત ભવોમા જન્મ મરણ કરતો રહે છે, એટલે કે તે અનાદિ અનંત અને દીર્ઘ માર્ગવાળા ચાર ગતિ રૂપ સંસાર કાંતારમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરે છે આ રીતે તે જીવનો સંસાર વધતો રહે છે "से त मरमाणे वड्ढइ" આ રીતે સંસારના વધવાને જીવનું વધવું કહેવામાં આવ્યું છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આ પ્રકારનાં બાલમરણથી મરતો જીવ પોતાના સંસારની વૃદ્ધિ કરે છે "से तं बालमरणे" આ પ્રમાણે બાલ મરણનું વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે

પ્રશ્ન- से किं त पंडियमरणे પંડિત મરણ કોટલે શુ?

ઉત્તર- पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते 'પંડિત મરણ બે પ્રકારનાં કહ્યા છે તત્ત્વ અને અતત્ત્વના વિવેકથી રહિત જીવનું જે મરણ હોય છે તેને બાલમરણ કહે છે, અને તત્ત્વ અને અતત્ત્વના વિવેકથી યુક્ત જીવનું જે મરણ હોય છે

वतोमरणं तत् पंडितमरणं तच्च पंडितमरणं द्विविधम् द्विविधप्रकारकं प्रज्ञप्तम्, 'तं जहा' तद्यथा 'पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य' पादपोपगमनं च भक्त प्रत्याख्यानं चेति। 'से किं तं पाओवगमणे' अथ किं तत् पादपोपगमनम्? भगवानाह-'पाओवगमणे' इत्यादि। 'पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते' पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् 'तं जहा' तद्यथा-'नीहारिमे य अनीहारिमेय नियमा अप्पडिकम्मे' निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्म पादपो वृक्षस्तस्येवोपगमनं निष्क्रियतयाऽवस्थानम् इति पादपोपगनम्, यथा छिन्नमूलो वृक्षःसमे विषमे वा स्थाने पतितः सन् तथारूपेणैवावतिष्ठते तथैव समे विषमे वाऽवस्थितः सन् यावज्जीवमवस्थितो भवेद् यत्र मरणे तत् पादपोपगमनमरणमित्यर्थः। इह पादपोपगमननामकं मरणं चतुर्विधाहारपरित्यागेन भवतीति, तात्पादपोपगमननामकं मरणं द्विविधम् निर्हा-

---

दो प्रकार का होता है। पादपोपगमन के निर्हारिम और अनिर्हारिम ऐसे दो भेद किये गये हैं इन दोनों भेदों में प्रतिकर्म नहीं होता है। इस कथन का स्पष्ट अर्थ इस प्रकार से जानना चाहिये-पादप नाम वृक्ष का है सो इस मरण में मुनि कटे हुए वृक्ष की तरह केवल निष्क्रिय रूप से ही रहता है। जिस प्रकार छिन्न मूल वाला वृक्ष जिस किसी स्थान में चाहे वह सम हो अथवा विषम हो जिसरूप में गिरता है उसी रूप में वहीं पड़ा रहता है उसी प्रकार से सम अथवा विषम स्थान में रहता हुआ मुनि यावज्जीव निष्क्रियरूप स्थिति में जिस मरण में रहता है वह पादपोपगमन पण्डित मरण है। यह पादपोपगमन नामका मरण चारों प्रकार के आहार परित्याग कर देने से होता है। इसमें वैयावृत्य कराना

તેને પંડિત મરણ કહે છે. પંડિત મરણના આ પ્રમાણે બે પ્રકાર છે- (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્તપ્રત્યાખ્યાન પાદપોપગમન મરણના બે ભેદ છે- (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે બન્ને ભેદોમાં પ્રતિકર્મ થતુ નથી તે કથનનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે મુજબ છે પાદપ એટલે વૃક્ષ પાદપોપગમન મરણમાં મુનિ તૂટી પડેલા વૃક્ષની જેમ જે નિષ્ક્રિય રૂપે રહે છે જેવી રીતે જડમૂળમાથીઉખડી પડેલું વૃક્ષ જે સ્થાને પડયુ હોય તે સ્થાને એક જ સ્થિતિમાં પડયું રહે છે-સ્થાન સમ હોય કે વિષમ હોય છતાં પડતી વખતે જે સ્થિતિમા વૃક્ષ પડયું હોય એજ સ્થિતિમા પડયું રહે છે એજ પ્રમાણે સમ અથવા વિષમ સ્થાનમા રહેલો મુનિ જે મરણમાં જીવનો અન્ત આવે ત્યા સુધી નિષ્ક્રિય દશામાજ પડયો રહે છે તે મરણને પાદપોપગમન પંડિતમરણ કહે છે આ પાદપોપગમન મરણ ચારે પ્રકારના આહારના પરિત્યાગથી થાય છે, તેમા સેવા કરવામાં આવતી નથી કારણ કે તે નિયમથી

रिमम् अनिर्हारिमं च नियमतः वसतिकर्मरहितं वैयावृत्यरहितमित्यर्थः । तत्र निर्हारेण ग्रामादेर्बहिर्निष्कासनेन निर्हृतं यन्मरणं तत् निर्हारिमं, य उपाश्रये त्रिपतस्य तन्मरणं भवति, यः साधुरुपाश्रयादौ शरीरं त्यजति तस्य मृतस्य शरी साधुभि श्रावकादिभिर्वा बहिर्निष्कासने तत् निर्हारिममरणम्। य अरण्यादौ त्रिपत तस्य मरणमनिर्हारिममरणम्। इदं च द्विविधमपि मरणं साधुकृतवैयावृत्यरहितं भवतीति । 'से णं पाओवगमणे' तदेतत्पादपोपगमनम्। अथ भक्तप्रत्याख्यान मरणस्य स्वरूपं दर्शयितुमाह-'से किं तं' इत्यादि 'से किं त भत्तपच्चक्खाणे

नहीं होता है। क्यों कि यह नियम से वैयावृत्य से रहित होता है इसके जो निर्हारिम और अनिर्हारिम ऐसे जो दो भेद कहे गये हैं सो उनमें से निर्हारिम का तात्पर्य यह है कि जो मरण निर्हार से होता है वह निर्हारिम मरण है अर्थात् जो साधु उपाश्रय में मरता है और फिर उसका मृतक शरीर साधुओं द्वारा या श्रावकों द्वारा जो बाहर निकाला जाता है तो वह निर्हारिम पादपोपगमनमरण है। निर्हार शब्द का अर्थ बाहर काढना है पूर्वोक्त साधुका शव बाहर काढ़ा जाता है-इसलिये उसका ऐसा मरण निर्हारिम कहा जाता है। तथा जो साधु अपने शरीर को अटवी में ही छोड़ता है उसका शव बाहर काढने में नहीं आता है-अतः ऐसा मरण अनिर्हारिम मरण है। दोनों भी प्रकार का यह मरण साधुओं द्वारा किये गये वैयावृत्य से रहित होता है। 'से णं पाओवगमणे' इस प्रकार यह पादपोपगमन का कथन है। 'से किं त भत्तपच्चक्खाणे' भक्तप्रत्याख्यान का

જે વૈયાવચ્ચ રહિત હોય છે તેના નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમ એવા જે બે ભેદ કહ્યા છે તે ભેદનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે– જે મરણ નિર્હારથી થાય છે તેને નિર્હારિમ મરણ કહે છે ' નિર્હાર' એટલે બહાર કાઢવું તે જે સાધુ ઉપાશ્રય વગેરેમા મરણ પામે છે અને પછી તેના મૃતશરીરને સાધુઓ વડે બહાર કાઢવામાં આવે છે, તે સાધુના મરણને નિર્હારિમ પાદપોપગમન મરણ કહે છે આ રીતે મરણ પામતા સાધુના શબને બહાર કાઢવામાં આવેછે તેથી તેના મરણને નિર્હારિમ કહે છે પણ જે સાધુ પ્રયત્ન થી જ ઉપાશ્રય વગેરે છોડી ને વનમાં પહાડ ઉપર જઈને પાદપોપગમન મરણથી વનમાં કે પહાડ ઉપર મરણ પામે છે તેના શબને બહાર કાઢવાની જરૂર રહેતી નથી. એ પ્રકારના મરણને " અનિર્હારિમ મરણ " કહે છે આ અનેપ્રકારનાં મરણ સાધુઓ દ્વારા કરવામાં આવતી સેવાથી રહિત હોય છે " से णं पाओवगमणे " પાદપોપગમન મરણનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે

अथ किं तद् भक्तप्रत्याख्यानम् भगवानाह-' भत्तपच्चक्खाणे दुविहे' पन्नत्ते भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् ' तं जहा ' तद्यथा-' नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमासप्पडिकमे ' निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् सप्रतिकर्म ' से त्तं भत्तपच्चक्खाणे ' तदेतत् भक्तप्रत्याख्यानम् ' इच्चेतेणं खंदया ' इत्येतेन स्कन्दक ' दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे ' द्विविधेन पंडितमरणेन म्रियमाणो जीवः ' अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ ' अनन्तै नैरयिकभवग्रहणैः आत्मानं विसंयोजयति=पृथक्करोति नरकेषु नैव गच्छतीति भावः। ' जाव ' यावत्-यावत्पदेन ' तिरियमणुयदेवभवग्गणेहिं अप्पाणं विसजोएइ,

स्वरूप क्या है? सो इसका स्वरूप प्रकट किया जाता है-भक्तप्रत्याख्यान भी दो प्रकार का कहा गया है-एक निर्हारिम और दूसरा अनिर्हारिम, यह भक्तप्रत्याख्यान मरण पादपोपगमन मरण की तरह प्रतिकर्मसे रहित नहीं होता है किन्तु 'नियमा सप्पडिकमे, यह नियमसे प्रतिकर्म से सहित होता है। 'से त्तं भत्तपच्चक्खाणे' इस तरहसे यह भक्तप्रत्याख्यानका स्वरूप है। ' इच्चेतेणं खंदया! दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' इस प्रकार से हे स्कन्दक! जो जीव भक्त प्रत्याख्यान और पादपोपगमन इन दो प्रकारके मरणोंसे युक्त होकर मरता है अर्थात् इन दो प्रकारके मरणको स्वीकार कर अपने शरीर का त्याग करता हैं, वह जीव अनन्त नैरइक भवसंबंधी भवग्रहण से अपने आपको रहित बना लेता है, अर्थात् -मर कर ऐसा साधुजीव नरकों में जन्म नहीं लेता है ।' तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ ' फिर वह अनन्त तिर्यंच भव

પ્રશ્ન-"से किं तं भत्तपच्चक्खाणे" ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણનું કેવું સ્વરૂપ છે?

ઉત્તર—ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનાં પણ બે પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ પાદપોપગમન મરણની જેમ પ્રતિકર્મથી રહિત હોતુ નથી. પરંતુ " नियमा सप्पडिकमे " તે નિયમથી પ્રતિકર્મથી યુક્ત જ હોય છે " से त्तं भत्तपच्चक्खाणे " આ પ્રકારનું ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનું સ્વરૂપ છે.

" इच्चेतेण खंदया! दुविहेणं मरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गणेहिं अप्पाणं विसजोएइ " હે સ્કન્દક! જે જીવ આ બે પ્રકારના પંડિત મરણથી પોતાના શરીરનો પરિત્યાગ કરે છે તે અનંત નારક ભવોથી પોતાની જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તે પ્રકારનો સાધુ મરણ પામીને નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. " तिरियमणुयदेवभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ "

अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं ' इति संग्रहः, ' वीईवयइ ' व्यतिव्रजति, अयं भावः—अनन्तैस्तिर्यक्पञ्चमनुजदेवभवग्रहणैरात्मानं विसंयोजयति= पृथक्करोति नरकतिर्यगादिभवान् न प्राप्नोति इत्यर्थः, तर्हि किं करोतीत्याह-भानादिकं च खलु अनवदाग्रम्—अनन्तं संसारकान्तारं=संसाराटवीं व्यतिव्रजति=उल्लङ्घयति—न पुनः संसारं प्राप्नोतीति भावः । 'से चं मरमाणे हायइ' इत्येतन्निदर्शनमाह म्रियमाणो हीयते पण्डितमरणेन म्रियमाणो जीवः संसारं सङ्कुचयतीति भावः ।

संबंधी, अनंत मनुष्य संबंधी, अनंत देवसंबंधी भवों से अपने को दूर करता है। इस तरह यह 'अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं' अनादि अनंतरूप इस संसार अटवी को कि जिसका मार्ग बहुत बड़ा लंबा है और जो चतुर्गतिरूप है 'वीईवयइ' बिलकुल पार कर देता है, अर्थात् मोक्षपद को प्राप्त कर लेता है। 'से चं मरमाणे हायइ' इस तरह से मरने वाला जीव घटता है—अर्थात्—अपने संसार का अंत कर देता है—यही जीव का घटना है। तात्पर्य कहने का यह है कि संसार दशा में जीव का पड़ा रहना बिना कर्म के संबंध के होता नहीं है अतः कर्म के सम्बन्ध का होना मानो यही जीव का वजनदार बनना है और जो चीज वजनदार होती है वह नहीं वजन दार वस्तु की अपेक्षा बड़ी ही मानी जाती है—इसलिये संसार से पार होने वाले जीव की अपेक्षा जो संसार में ही पड़ा हुआ है वैसा

વળી તે અનંત તિર્યંચ ભવોથી, અનન્ત મનુષ્ય ભવોથી અને અનન્ત દેવ ભવોથી પણ પોતાની જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તેને તિર્યંચ મનુષ્ય અને દેવોમાં પણ જન્મ લેવા પડતા નથી. આ રીતે તે "अणाइयं च णं अणव दग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं" અનાદિ, અનંત, દીર્ઘમાર્ગવાળા અને ચારગતિવાળા સંસારરૂપી વનને 'वीईवयइ' બિલકુલ પાર કરે છે, એટલે કે મોક્ષપદને પ્રાપ્ત કરે છે "से चं मरमाणे हायइ" આ પ્રમાણે મરતાં જીવ સંસારને વટાવવાથી ઘટે છે એટલે કે પંડિત મરણથી મરવુ પામનાર જીવનો સંસાર ઘટે છે સંસારમા પરિભ્રમણ કરવાનો અન્ત આવી જાય છે એટલેજ તાત્પર્ય કહેવું છે કે કર્મને કારણે જ જીવને સંસારમા ભ્રમણ કરવું પડે છે. કર્મના સબંધ વિના જીવને સંસારમાં રહેવુ પડતું નથી. કર્મના સબંધથી જીવ ભારેકર્મી બને છે જેથી રીતે વજનદાર વસ્તુ પાણીમા ડૂબેલી રહે છે તેમ કર્મના સબંધથી ભારેકર્મી બનેલા જીવને સંસારસાગરમાં ડૂબેલા રહેવુ પડે છે વજનદાર ચીજને હલકી ચીજ કરતાં ભારે માનવામાં આવે છે—તે કારણે સંસારને પાર પામનારા જીવ કરતાં સંસારમાં પોતા

अथ किं तद् भक्तप्रत्याख्यानम् भगवानाह-' भत्तपच्चक्खाणे दुविहे' पन्नत्ते भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् ' तं जहा ' तद्यथा-' नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमासप्पडिकमे ' निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् सप्रतिकर्म ' से त्तं भत्तपच्चक्खाणे ' तदेतत् भक्तप्रत्याख्यानम् ' इच्चेतेणं खंदया ' इत्येतेन स्कन्दक ' दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे ' द्विविधेन पंडितमरणेन म्रियमाणो जीवः ' अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ ' अनन्तै नैरयिकभवग्रहणैः आत्मानं विसंयोजयति=पृथक्करोति नरकेषु नैव गच्छतीति भावः। ' जाव ' यावत्-यावत्पदेन ' तिरियमणुयदेवभवग्गणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ,

---

स्वरूप क्या है? सो इसका स्वरूप प्रकट किया जाता है-भक्तप्रत्याख्यान भी दो प्रकार का कहा गया है-एक निर्हारिम और दूसरा अनिर्हारिम, यह भक्तप्रत्याख्यान मरण पादपोपगमन मरण की तरह प्रतिकर्मसे रहित नहीं होता है किन्तु 'नियमा सप्पडिक्कमे, यह नियमसे प्रतिकर्म से सहित होता है। 'से त्तं भत्तपच्चक्खाणे' इस तरहसे यह भक्तप्रत्याख्यानका स्वरूप है। ' इच्चेतेणं खंदया! दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' इस प्रकार से हे स्कन्दक! जो जीव भक्त प्रत्याख्यान और पादपोपगमन इन दो प्रकारके मरणोंसे युक्त होकर मरता है अर्थात् इन दो प्रकारके मरणको स्वीकार कर अपने शरीर का त्याग करता हैं, वह जीव अनन्त नैरइक भवसंबंधी भवग्रहण से अपने आपको रहित बना लेता है, अर्थात् -मर कर ऐसा साधुजीव नरकों में जन्म नहीं लेता है ।' तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ ' फिर वह अनन्त तिर्यंच भव

પ્રશ્ન-"से किं तं भत्तपच्चक्खाणे" ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણનું કેવું સ્વરૂપ છે?

ઉત્તર—ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનાં પણ બે પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ પાદપોપગમન મરણની જેમ પ્રતિકર્મથી રહિત હોતુ નથી પરૂ " नियमा सप्पडिक्कमे " તે નિયમથી પ્રતિકર્મથી યુક્ત જ હોય છે " से त्तं भत्तपच्चक्खाणे " આ પ્રકારનુ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનું સ્વરૂપ છે.

" इच्चेतेण खंदया! दुविहेणं मरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गणेहिं अप्पाण विसंजोएइ " હે સ્કન્દક! જે જીવ આ બે પ્રકારના પંડિત મરણથી પોતાના શરીરનો પરિત્યાગ કરે છે તે અનત નારક ભવોથી પોતાની જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તે પ્રકારનો સાધુ મરણ પામીને નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. " तिरियमणुयदेवभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ "

मूलम्–"पत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबन्धं करेह, तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालियाए परिसाए धम्मं परिकहेइ धम्मकहाओ भाणियव्वा तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं रोयमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! इच्छियमेयं भंते! पडिच्छियमेयं भंते! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते! से जहेयं तुब्भे वयइत्ति कट्टु समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ अवक्कमित्ता तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओ य एगंते एडेइ एडित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ

कान्तार को पार कर लेता है। यही जीव का धर्म्म है, इस प्रकार से भगवान ने स्कन्दक के प्रश्नों का उत्तर दिया ॥ सू० १२ ॥

એનું નામ જ છાનું "અપના હાથના સપનાનું" બનવું છે આ પ્રમાણે સ્કન્દક પરિવ્રાજકના પાંચ પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા ॥ સૂ. ૧૨ ॥

'से त्तं पंडियमरणे' तदेतत् पंडितमरणम् 'इच्चेएण खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' इत्येतेन हे स्कन्दक! द्विविधेन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा, एतयो द्विविधमरणयोर्मध्ये बालमरणेन म्रियमाणो जीवः अनन्तैर्नारकादिभवग्रहणैरनादिकमनन्तं दीर्घमार्गं संसारकान्तारं भ्रमति, पण्डितमरणेन च म्रियमाणो जीवः संसारकान्तारं समुल्लङ्घयतीति भावः। अनेन प्रकारेण स्कन्दक प्रश्नानां भगवानुत्तरं दत्तवानिति ॥ सू० १२ ॥

जीव कर्म बंध के कारण वजनदार होने से बढ़ा हुआ है और जो कर्म बंध से रहित हो गया है वह विना वजन के होने के कारण उसकी अपेक्षा हल्का है इस प्रकार हृद्य धारण कर सूत्रकार ने जीव का संसार का बढ़ना है और जीव का संसार का अत होना घटना है ऐसा कहा है संसार कैसे बढ़ता है और कैसे वह घटता है यह सब विषय ही इस सूत्र द्वारा प्रकट किया गया है। 'से त्तं पंडित मरणे' इस प्रकार से यह पंडित मरण का स्वरूप है। इस कथन का उपसंहार करते हुए प्रभु अत में स्कन्दक से कहते हैं कि-'इच्चेएण खंदया! दुविहे णं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' हे स्कन्दक! इन दो प्रकार के मरणों में से बालमरण से मरता हुआ जीव अनंत नारक आदि के भवग्रहणों से अनादि अनंत दीर्घ मार्ग वाले इस संसार कांतार में भ्रमण करता रहता है यही जीव का वढना है और पण्डित मरण से मरता हुआ जीव इस पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार

જીવને કર્મબંધને કારણે ભારે કર્મી માનવામાં આવે છે, પણ કર્મબંધથી રહિત થયેલા જીવને વજન વિનાનો હોવાથી હળુકર્મી માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારે સૂત્રકારે જીવના સંસારની વૃદ્ધિને જીવની વૃદ્ધિ કહી છે અને જીવના સંસારની હાનિને જીવનો ઘટાડો કહ્યો છે જીવના સંસારની વૃદ્ધિ કેવી રીતે થાય છે અને ઘટાડો કેવી રીતે થાય છે, તે આ સૂત્રમા સૂત્રકારે સમજાવ્યું છે. "से त्तं पंडियमरणे" પંડિતમરણનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ કથનનો ઉપસંહાર કરતા મહાવીર પ્રભુ સ્કન્દકને કહે છે કે- "इच्चेएण खंदया! दुविहेणं मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा" હે સ્કન્દક! તે બે પ્રકારનાં મરણોમાથી બાલમરણથી મરતો જીવ અનાદિ, અનત, દીર્ઘ માર્ગવાળા આ સંસારરૂપી વનમાં અનંત વાર નરક વગેરે ચારે ગતિમા ભ્રમણ કરે છે. એનું નામ જ જીવનું (અથવા જીવના સંસારનુ) વધવું છે. પણ પંડિતમરણથી મરતો જીવ પૂર્વોકત વિશેષણોવાળા સંસારરૂપી વનને ઓળંગી જાય છે.

मूलम्–"एए ण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते सवुद्धे समणं भगवं महावीरं वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबन्धं करेह, तएणं समणे भगवं महावीरे खदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ धम्मकहाओ भाणियव्वा तएणं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ करित्ता वदइ नमसइ वदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं रोएमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! इच्छियमेयं भंते! पडिच्छियमेयं भंते! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते! से जहेयं तुब्भे वयइत्ति कट्टु समणं भगवं महावीरं वदइ नमंसइ, वदित्ता नमंसित्ता, उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ अवक्कमित्ता तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओ य एगंते एडेइ एडित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ

कान्तार को पार कर देता है। यही जीव का धर्म्म है, इस प्रकार से भगवान ने स्कन्दक के प्रश्नों का उत्तर दिया ॥ ० १२ ॥

એનું નામ જ કહ્યું "अथवा कृतना खलु" વગેરે હે આર્ય પ્રમાણે અમારાને આપના પરિવ્રાજકના પાંચે પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા ॥ સૂ. ૧૨ ॥

उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ-करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी, आलित्तेणं भंते! लोए पलित्तेणं भंते! लोए आलित्त-पलित्तेणं भंते! लोए जराए मरणेण य से जहाणामए केइ गाहावई आगारंसि, ज्झियायमाणंसि, जे से तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहायआयाए एगंतमंतं अवक्कमइ-एस-नित्थारिए समाणे पच्छापुराय हियाए सुहाए खेमाए-निस्सेय साए अणुगामियत्ताए भविस्सइ एवामेव देवाणुप्पिया मज्झवि आया एगे भंडे इट्ठे कंते पिए अणुण्णे मणामे थेज्जे वेस्सा-सिए समए अणुमए बहुमए भंडकरंडगसमाणे माणं सीयं माणं उण्हं माणं खुहा माणं पिवासा माणं चोरा माणं वाला माणं दंसा माणं मसया माणं वाइय पित्तियसेंभिय सन्ति-वाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गाफुसंतु त्तिकट्टु एस मे नित्थारिए समाणे परलोयस्स हियाए सुहाए खेमाए नीस्सेयसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया सयमेव पव्वाविउं सयमेव मुंडाविउं सयमेव सेहाविउं सयमेव सिक्खाविउं सयमेव आयारगोयरं विणय वेणइय चरणकरणजाया मायावत्तियं धम्ममाइक्खिउं। तएणं समणे भगवं महावीरं खंदयं कच्चा-यणस्सगोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ एवं देवाणुप्पिया गंतव्वं एवं चिट्ठियव्वं एवं निसीइयव्वं एवं तुयट्टियव्वं एवं भुंजियव्वं एवं भासियव्वं एवं उट्ठाए

उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेणं सजमियव्वं अस्सिं च ण अट्ठे णो किं चि विप माइयव्व। तएणं से खदए कच्चायणस्स गोत्तेसमणस्स भगवओ महावीरस्स इम एया-रुवधम्मिय उवएस सम्म सपडिवज्जइ तमाणाए तह गच्छइ तह चिट्ठइ तह निसीयइ तह तुयट्टइ तह भुजइ तह भासइ तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेणं सजमेइ अस्सिं च ण अट्ठे णो पमायइ तएण से खदए कच्चा यणस्स गोत्ते अणगारे जाए इरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाणभडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चारपा सवणखेलजल्लसिंघाणपारिट्ठावणियासमिए मणसमिए, वयसमिए, कायसमिए, मणगुत्ते, वयगुत्ते, कायगुत्ते, गुत्ते, गुत्तिदिए, गुत्तबभयारी, चाई, लज्जु धन्ने, खतिखमे, जिइ दिए, सोहिए, अणियाणे, अणुस्सुए, अवहिल्लेसे सुसाम मण्णरए दते इणमेव णिग्गथ पावयणं पुरओ काउ विहरइ ॥१६॥

छाया—अत्र खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः संबुद्धः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वंदते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमादीत् इच्छामि खलु भदंत,

---

' एत्थ णं से खंदए ' इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(एत्थ णं से खदए कच्चायणस्सगोत्ते संबुद्धे) इस विषय में अर्थात् अपने किये हुए प्रश्नों का यथार्थ उत्तर पालने पर वे कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक संबुद्ध होगये—बोध प्राप्त होगये, अतः उन्होंने (समणं भगवं महावीर वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना की,

---

" एत्थ णं से खदए " इत्यादि

सूत्रार्थ—(एत्थ ण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते संबुद्ध) પોતે પૂછેલા પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર મળવાથી કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક સંબુદ્ધ થયા, તેમને બોધની પ્રાપ્તિ થઈ તેથી તેમણે (समण भगवं महावीरं वदइ नमसइ) શ્રમણ

तयान्तिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु । तत्र खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे धर्मं परिकथयति । धर्मकथा भणितव्या ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्ट तुष्ट यावत् हृदय उत्थानेनोत्तिष्ठति उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं

उन्हें नमस्कार किया । (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) हे भदंत ! मैं आप से केवलि प्रज्ञप्त धर्म सुनने की इच्छा करता हूं (अहासुहं देवाणुप्पिया-मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा अच्छा लगे वैसा करो इस शुभ कार्य में ढील मत करो । (तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) इसके बाद श्रमण भगवान महावीर ने कात्यायन-गोत्रीय स्कन्दक को और उपस्थित उस बहुत बड़ी भारी सभा को धर्म का उपदेश दिया । (धम्मकहा भाणियव्वा) यही धर्मकथा कहनी चाहिये । इस धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के पूर्वार्ध में छप्पनवें सूत्र में देख लेना चाहिये । (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ श्रमण भगवान महावीर

ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા. (वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भ अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्म निसामित्ताए) હે ભગવાન ! હું આપની પાસેથી કેવલિપ્રરૂપિત ધર્મનું શ્રવણ કરવાની ઇચ્છા રાખું છું (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंध करेह) હે દેવાનુપ્રિય ! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો પરંતુ શુભ કાર્યમા ઢીલ કરશો નહીં (तएण समणे भगव महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને તથા ત્યાં ઉપસ્થિત ઘણી જ મોટી પરિષદને ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો. (धम्मकहा भाणियव्वा) અહીં ધર્મકથા કહેવી જોઇએ તે ધર્મકથાનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વા-ર્ધના છપ્પનમાં સૂત્રમાંથી વાચી લેવું (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુને મુખેથી ધર્મકથા સાંભળીને તથા

त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति, कृत्वा वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वैवमवादीत्-श्रद्दे खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थ मत्रचनम् प्रत्येमि खलु भदंत ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् रोचयामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थ मवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत ! नैर्ग्रन्थ मत्रचनम्, एवमेतद् भदंत ! तथ्यमेतद् भदंत ! अवितथमेतद् भदंत !

प्रभु के मुख से धर्मकथा सुनकर उसे हृदयमें अवधारण कर के कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक बहुत हर्षित हुए, बहुत तुष्ट हुए यावत् विकसित हृदयवाले, हुए और अपनी उत्थान शक्ति से उठे (उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता) उठकर उन्हों ने श्रमण भगवान महावीर को विधि पूर्वक वंदना की नमस्कार किया वंदना नमस्कार कर के (एवं वयासी) प्रभु से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते णिग्गंथं पावयणं) हे भदंत मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा करता हू हे भदन्त! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में प्रतीति-प्रीति-रुचता हूं (रोएमिणं भंते! णिग्गंथं पावयणं) हे भदंत! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में रुचि रखता हू अर्थात् यह निर्ग्रन्थ प्रवचन मुझे रुचता है। (अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हू! (एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते) हे भदन्त! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी तरहसे है। हे भदन्त! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी रीतिसे है। हे भदन्त!

તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને બહુ જ હર્ષ થયો, બહુ જ સંતોષ થયો, (યાવત્) તેનું મન આનંદથી નાચી ઊઠ્યું અને તે પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઊભા થયા (ઉટ્ઠિત્તા સમણં ભગવં મહાવીરં તિક્ખુત્તો આયાહિણપયાહિણં કરેઇ કરિત્તા વંદઇ નમંસઇ વંદિત્તા નમંસિત્તા) ઊઠીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર કરીને (એવં વયાસી) તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું -(સદ્દહામિ ણં ભંતે! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્! હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમાં શ્રદ્ધા રાખું છું, હે ભગવાન! હું આ નિર્ગ્રંથપ્રવચન પ્રત્યે પ્રીતિ ધરાવું છું (रोएमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવાન! મને આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન રુચે છે (अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્! હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનનો સ્વીકાર કરું છું एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! હે ભગવન્! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સાચું છે હે ભગવન્! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન યથાર્થ છે, હે ભગવન્! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન

तवान्तिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु । तत्र खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे धर्मं परिकथयति । धर्मकथा भणितव्या ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्ट तुष्ट यावत् हृदय उत्थानेनोत्तिष्ठति उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं

उन्हें नमस्कार किया । (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) हे भदंत ! मैं आप से केवलि प्रज्ञप्त धर्म सुनने की इच्छा करता हूं (अहासुहं देवाणुप्पिया-मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा अच्छा लगे वैसा करो इस शुभ कार्य में ढील मत करो । (तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) इसके बाद श्रमण भगवान महावीर ने कात्यायन-गोत्रीय स्कन्दक को और उपस्थित उस बहुत बड़ी भारी सभा को धर्म का उपदेश दिया । (धम्मकहा भाणियव्वा) यही धर्मकथा कहनी चाहिये । इस धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के पूर्वार्ध में छप्पनवें सूत्र में देख लेना चाहिये । (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ श्रमण भगवान महावीर

ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्म निसामित्ताए) હે ભગવાન ! હું આપની પાસેથી કેવલિપ્રરૂપિત ધર્મનું શ્રવણ કરવાની ઇચ્છા રાખું છું (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंध करेह) હે દેવાનુપ્રિય ! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો પરંતુ શુભ કાર્યમા ઢીલ કરશો નહી. (तएणं समणे भगव महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને તથા ત્યા ઉપસ્થિત ઘણી જ મોટી પરિષદને ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો. (धम्मकहा भाणियव्वा) અહી ધર્મકથા કહેવી જોઇએ તે ધર્મકથાનુ વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વા-ર્ધના છપ્પનમા સૂત્રમાથી વાંચી લેવુ (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુને મુખેથી ધર્મકથા સાભળીને તથા

विकृत्वा आदक्षिणप्रदक्षिणं करोति, कृत्वा वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वैवमवादीत्-श्रद्धे खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् प्रत्येमि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् रोचयामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, एवमेतत् भदन्त ! तथ्यमेतत् भदन्त ! अवितथमेतत् भदन्त !

प्रभु के मुख से धर्मकथा सुनकर उसे हृदयमें अवधारण कर के कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक बहुत हर्षित हुए, बहुत तुष्ट हुए यावत् विकसित हृदयवाले, हुए और अपनी उत्थान शक्ति से उठे (उट्ठित्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता) उठकर उन्हों ने श्रमण भगवान महावीर को विधि पूर्वक वदना की नमस्कार किया वदना नमस्कार कर के (एवं वयासी) प्रभु से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते णिग्गंथ पावयण) हे भदंत मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा करता हू हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में प्रतीति-प्रीति-रखता हूं (रोएमिणं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदंत ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में रुचि रखता हू अर्थात् यह निर्ग्रन्थ प्रवचन मुझे रुचता है ! (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हू ! (एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी तरहसे है। हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी रीतिसे है। हे भदन्त !

તેને હૃદયમા ધારણ કરીને કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને બહો જ હર્ષ થયો, બહો જ સંતોષ થયો (યાવત્) તેનુ મન આનદથી નાચી ઉઠયું, અને તે પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઉભા થયા (उट्ठित्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता) ઉઠીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વદન નમસ્કાર કર્યા. વદન નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું -(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્ ! હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા શ્રદ્ધા રાખુ છુ હે ભગવાન ! હું આ નિર્ગ્રંથપ્રવચન પ્રત્યે પ્રીતિ ધરાવુ છુ (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવાન ! મને આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન રુચે છે (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્ હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનનો સ્વીકાર કરૂ છુ 'एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते' હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સત્ય છે હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન યથાર્થ છે, હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અવિતથ (સત્ય)

तद् भदंत) असदिग्धमेतद् भदंत ! ईप्सितमेतद् भदंत ! प्रतीप्सितमेतद् भदंत ! ईप्सितप्रतीप्सितमेतद् भदंत ! तद् यथैतद् यूयं वदथ, इति कृत्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा उत्तरपौरस्त्यं दिग् विभागमवक्रामति अवक्रम्य त्रिदंडं च कुण्डिकां च यावत् धातुरक्तांश्चैकान्ते एडयति एडयित्वा यत्रैव

यह निर्ग्रन्थ प्रवचन अवितथ-सत्य है। (असंदिद्धमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सर्वथा असंदिग्ध है। (इच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित-वांछनीय है। (पडिच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त यह निर्ग्रन्थ प्रवचन प्रतीप्सित-अत्यन्त वांछनीय है! (इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !) हे भदंत ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित प्रतीप्सित-एकांतवांछनीय है। (से जहेयं तुब्भं वयह त्ति) यह निर्ग्रन्थ प्रवचन जैसा आपने कहा है वह वैसा ही है! इस प्रकार (कट्टु) कह कर स्कन्दक ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर वे (उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ) उत्तर पौरस्त्य दिग्विभाग में उत्तर पूर्वदिशा के कोने में-अर्थात् ईशानकोण में गये (अवक्कमित्ता तिदंडंच, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ) वहां जाकर उन्हों ने अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को यावत् गैरिक आदि धातु से रँगे हुए वस्त्रों को एकान्त में-रख दिया। (एडित्ता) उन्हे एकान्त में

છે. તેમાં કોઇ શકાને સ્થાન જ નથી 'असदिद्धमेयं भंते! હે ભગવાન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ સ્પષ્ટ છે "इच्छियमेयं भंते !" હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે, ' पडिच्छियमेयं भंते ' હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અત્યંત ઇચ્છવા યોગ્ય છે 'इच्छियपडिच्छियमेय भंते ! હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇપ્સિત પ્રતીપ્સિત ઇચ્છિત તથા વિશેષ ઇચ્છિત છે. (से जहेय तुब्भ वयइत्ति) આપના કહેવા પ્રમાણે જ તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન છે. આ પ્રમાણે (कट्टु) કહીને સ્કંદકે (समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યો (वदित्ता नमंसित्ता) વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ (उत्तरपुरत्थिम दिसिभागं अवक्कमइ) ઉત્તર અને પૂર્વદિશા વચ્ચેના ખૂણામાં-ઇશાન ખૂણામા-ગયા. (अवक्कमित्ता तिदंड च, कुडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगते एडेइ) ત્યા જઇને તેમણે તેમના ત્રિદંડ, કમંડળ અને આગળ જણાવેલી ભગવા વસ્ત્રો વગેરેની બધી વસ્તુઓ એકાંતમાં મૂકી

श्रमणं भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति कृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत् आदीप्तं खलु भदन्त ! लोकः, प्रदीप्तः खलु भदन्त ! लोकः, आदीप्तप्रदीप्तं खलु भदन्त ! लोकः, जरया मरणेन च । तद् यथा नाम कश्चिद् गृहपतिर्गारेऽग्न्यादीप्यमाने यत् तत्र भाण्डं भवति अल्पभारमूल्यप्रत्यवतारं तद् गृहीत्वा आत्मना

रखकर (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) फिर वे जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता समणं भगवंत महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) वहां जाकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को विधिपूर्वक वंदन नमस्कार किया । (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्हों ने श्रमण, भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा—(आलित्तेणं भंते ! लोए पलित्तेणं भंते ! लोए, आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए) हे भदन्त ! जरा और मरण से यह लोक जला हुआ है । हे भदन्त यह लोक उन दोनों से बहुत अधिक जला हुआ है । हे भदन्त ! यह लोक जरा और मरण से चारों तरफ से आदीप्त प्रदीप्त-ज्वलित-प्रज्वलित हो रहा है, यहां दृष्टान्त कहते हैं (से जहाणामए केइ गाहावई आगारंसि झियायमाणंसि) जैसे कोई गृहस्थ अपने मकान के जलने पर अर्थात् मकान में आग लगने पर (जे तत्थ अप्पभारे मोल्लगुरुए भंडे भवइ) जो

દીધી. (वंदित्ता) તે વસ્તુઓને લેકરમાં મૂકીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) તેઓ જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી બીરાજતા હતા ત્યાં ગયા (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) ત્યાં જઈને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદન નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું (आलित्तेणं भंते ! लोए, पलित्तेणं भंते ! लोए, आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए) હે ભગવાન ! આ લોક જરા અને મરણથી બળી રહ્યો છે-સળગી રહ્યો છે હે ભગવાન્ ! આ લોક તે બન્નેથી પ્રજ્વલિત થઈ રહ્યો છે એટલે કે અત્યંત બળી રહ્યો છે હે ભગવન્ ! આ લોક બીજાથી જરા મરણથી આદીપ્ત પ્રદીપ્ત (જ્વલિત પ્રજ્વલિત થઈ રહ્યો છે અહીં લોક દૃષ્ટાંત આપે છે—(से जहाणामए केइ गाहावई आगारंसि झियायमाणंसि) જેવી રીતે કોઈ ગૃહસ્થના મકાનમાં આગ લાગે ત્યારે તે (जे तत्थ अप्पभारे मोल्लगुरुए भंडे भवइ) જે ગૃહપતિ

तद् भदंत) असदिग्धमेतद् भदंत ! ईप्सितमेतद् भदंत ! प्रतीप्सितमेतद् भदंत ! ईप्सितप्रतीप्सितमेतद् भदंत ! तद् यथैतद् यूयं वदथ, इति कृत्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा उत्तरपौरस्त्यं दिग् विभागमवक्रामति अवक्रम्य त्रिदंडं च कुण्डिकां च यावत् धातुरक्तांश्चैकान्ते एडयति एडयित्वा यत्रैव

यह निर्ग्रन्थ प्रवचन अवितथ-सत्य है। (असंदिद्धमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सर्वथा असंदिग्ध है। (इच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित-वांछनीय है। (पडिच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त यह निर्ग्रन्थ प्रवचन प्रतीप्सित-अत्यन्त वांछनीय है। (इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !) हे भदंत ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित प्रतीप्सित-एकांतवांछनीय है। (से जहेयं तुब्भं वयह त्ति) यह निर्ग्रन्थ प्रवचन जैसा आपने कहा है वह वैसा ही है। इस प्रकार (कट्टु) कह कर स्कन्दक ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर वे (उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ) उत्तर पौरस्त्य दिग्विभाग में उत्तर पूर्वदिशा के कोने में-अर्थात् ईशानकोण में गये (अवक्कमित्ता तिदंडंच, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ) वहां जाकर उन्हों ने अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को यावत् गैरिक आदि धातु से रँगे हुए वस्त्रों को एकान्त में-रख दिया। (एडित्ता) उन्हे एकान्त में

છે. તેમા કોઇ શબ્દને સ્થાન જ નથી 'असदिद्धमेयं भते ! હે ભગવાન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ સ્પષ્ટ છે "इच्छियमेयं भंते !" હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે, 'पडिच्छियमेयं भंते' હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અત્યંત ઇચ્છવા યોગ્ય છે 'इच्छियपडिच्छियमेय भंते ! હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇપ્સિત પ્રતીપ્સિત ઇચ્છિત તથા વિશેષ ઇચ્છિત છે. (से जहेय तुब्भ वयहत्ति) આપના કહેવા પ્રમાણે જ તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન છે. આ પ્રમાણે (कट्टु) કહીને સ્કંદકે (समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા (वदित्ता नमसित्ता) વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ (उत्तरपुरत्थिम दिसिभागं अवक्कमइ) ઉત્તર અને પૂર્વદિશા વચ્ચેના ખૂણામા-ઇશાન ખૂણામા-ગયા. (अवक्कमित्ता तिदड च, कुडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगते एडेइ) ત્યા જઇને તેમણે તેમના ત્રિદંડ, કમંડળ અને આગળ જણાવેલી ભગવા વસ્ત્રો સુધીની બધી વસ્તુઓ એકાંતમાં મૂકી

मात व्याला मार्यं मक्षका मात वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसान्निपातिका विविधा रोगा तंका परिषहोपसर्गा स्पृशन्तु इति कृत्वा एष मे निस्तारितः सन् परलोकस्य हिताय सुखाय क्षेमाय निःश्रेयसाय आनुगामिकतायै भविष्यति, तदिच्छामि खलु देवानुप्रिय स्वयमेव प्रव्राजयितुम् स्वयमेव मुण्डयितुम् स्वयमेव संयितु स्वयमेव शिक्षयितुम्

है। (माणं सीयं, माणं उण्हं, माणं खुहा, माणं पिवासा, माण चोरा, माण वाला, माण दंसा, माणं मसया, माणं वाइय पित्तियसें भिय सन्निपाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गा फुसंतु) इसलिये इसे शीतजन्यबाधा उष्णजन्य बाधा क्षुधा जन्यबाधा, प्यास जन्यबाधा न हो चोर इसे दुःखित न करे व्याल-सर्प इसे कष्ट न पहुँचावे दंशमशक इसे न काटे वात संबंधी, पित्तसंबंधी, श्लेष्म संबंधी सन्निपात संबंधी अनेक प्रकार के रोग और आतंक इसे पीडित न करे, तथा परीषह एवं उपसर्ग इस के पास तक न आवे (त्ति कट्टु) इस प्रकार विचार करके मैं (एस निस्थरिए समाणे) इसे यदि इन पूर्वोक्त विघ्नों से बचाकर जरामरणादि से जलते हुए इस संसाररूप गृह से निकाल दूं तो यह मुझे (परलोयस्स हिताए) परलोक में हितकारक (सुहाए) सुखकारक (खेमाए) क्षेमकारक, (नीसेयसाए) कल्याण कारक, तथा (आणुगामियत्ताए) परम्परा के लिये भी कल्याणकारक (भविस्सइ) होगा (तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया) इसलिये हे देवानुप्रिय! मैं चाहता हूं

सीय, माण उण्ह माणे खुहा, माण पिवासा, माण चोर, माण वाला, माण दंसा, माण मसया, माण वाइयपित्तियसे भिय—सन्निवाइय-विविहा रोगायका परीसहोवसग्गा फुसंतु) तेथी तेने ठंडी, गरमी, भूख, तरस चोरे दुःखी न करे सर्प तेने डश न पडे तेवो आटे डांस तथा मच्छर तेने डरे नहीं तो आटे, वात, पित्त, कफ अने सन्निपातना रोगो अने आतंक तेने पीडा करे नहीं तो आटे, तथा परीषह अने उपसर्ग तेनी पासे आवी पण न शके तो आटे (त्ति कट्टु एस निस्थरिए समाणे) आम मनमां जोरदार विचार आव्यो छे के तेने पूर्वोक्त विघ्नोमाथी बचावीने जन्म, जरा अने मरण रूपी दुःखना अग्निमां बळता संसाररूपी घरमाथी बहार काढी लउं तो ते मारे माटे (परलोयस्स हिताए) परलोकमां हितकारक (सुहाए) सुखकारक, (खेमाए) क्षेमकारक, (निस्सेयसाए) कल्याण कारक निवडशे अने (आणुगामियत्ताए) परंपरा पण कल्याण कारक (भविस्सइ) थशे (त इच्छामि ण देवाणुप्पिया! सयमेव पव्वावित्त) तो हे देवानुप्रिय! आप पोते ज मने दीक्षा आपो जेथी

एकान्तमंतमवक्कमति एतन्मे निस्तारितं सप्तश्रात् पुराच हिताय सुखाय क्षेमाय निःश्रेयसायानुगामिकतायै भविष्यति, एवमेव, देवानुप्रिय ! ममाप्यात्मा एकं भाण्डमिष्टकान्तप्रियो मनोज्ञो मनोऽमः स्थैर्यः, वैश्वासिकः, संमतोऽनुमतो बहुमतो भाण्डकरण्डकसमानः मा खलु तं शीतं मातमुष्णं मातं क्षुधा मातं पिपासा मातं चौराः

सामान वजन में हल्का और कीमत में अधिक होता है (तं गहाय आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ) उसे लेकर स्वयं एकान्त स्थान में चला जाता है कारण कि वह इस प्रकार से सामान के बसाने के निमित्त विचार करता है-कि (एस मे नित्थरिए समाणे पच्छापुराए हियाए सुहाए खेमाए निस्सेयसाए, आणुगामियत्ताए भविस्सइ) जो मैं इस जलते हुए घरमेंसे अल्प वजनवाली कीमती वस्तु को निकाल लूंगा तो वह मेरे लिये आगे पीछे हितकारक होगी, सुखकारक होगी क्षेम कारक होगी अभ्युदय (भाग्योदय) के निमित्त होगी और भाविवंश परंपरा के उपभोग के निमित्त होगी इसलिये वह ऐसे विचार से ऐसे सामान को जैसे भी बनता है-निकाल लेता है (एवामेव देवाणुप्पिया ! मज्झ वि आया एगे भंडे इट्ठे, कंते, पिए मणुण्णे, मणामे, थेज्जे, वेस्सासिए संमए अणुमए, बहुमए, भंडकरंडगसमाणे) इसी तरह से हे देवानुप्रिय ! मेरा भी आत्मा एक भांड है, वह मुझे इष्ट है, कांत है, प्रिय है, मनोज्ञ है, मनोम है, स्थिर .रूप है, वैश्वासिक है संमत है, अनुमत है, बहुमत है और आभूषणों से भरे हुए करंडिये के समान

पगतमंत अवक्कमइ) પોતાના ઘરમાથી ઓછા વજનનો પણ કીમતિ સામાન લઇને કોઇ સુરક્ષિત-સ્થાનમા ચાલ્યો જાય છે. કારણ કે તેના મનમા વિચાર આવે છે કે (एस मे नित्थरिए समाणे पच्छापुराए हियाए सुहाए खेमाए निस्सेयसाए, आणुगामियत्ताए भविस्सइ) જો આ સળગતા ઘરમાથી હુ ઓછા વજનવાળી પણ ભારે કીમતી વસ્તુ બહાર કાઢીશ, તો તે વસ્તુઓ, ભવિષ્યમા ભારે માટે હિતકારક, સુખકારક. ક્ષેમકારક, અને અભ્યુદય (ભાગ્યોદય) કારક થઇ પડશે. તથા મારી ભાવી પેઢી માટે તે ઉપયોગી થઈ પડશે આ જાતનો વિચાર કરીને તે બનતો પ્રયત્ન કરીને કીમતી વસ્તુઓને બળતા ઘરમાંથી બહાર કાઢી લે છે (एवमेव देवाणुप्पिया ! मज्झ वि आया एगे भंडे इट्ठे, कंते, पिए, मणुण्णे, मणामे, थेज्जे, वेसासिए, संमए, अणुमए, बहुमए, भंडकरंडगसमाणे) એજ પ્રમાણે હે ભગવન મારો આત્મા પણ એક એવી વસ્તુ છે કે જે મને ઇષ્ટ (ગમતી વસ્તુ) છે. કાંત છે. પ્રિય છે, મનોજ્ઞ છે, મનોમ છે, સ્થિરરૂપ છે વિશ્વાસ યુક્ત છે, સમત છે, અનુમત છે, બહુમત છે, અને આભૂષણોથી ભરપૂર કરંડિયા સમાન છે. (मा णं-

व्यम्, एव त्वग् वर्त्तितव्यम्, एवं भोक्तव्यम्, एव भाषितव्यम्, एवमुत्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु संयमेन संयमितव्यम्, अस्मिन्नर्थे नो किंचिदपि प्रमादयितव्यम्, तत एतेन स स्कन्दक: कात्यायन गोत्र: श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य धर्मैकदेशरूप धार्मिकमुपदेशं सम्यक् संप्रतिपद्यते। तदाज्ञया तथा गच्छति, तथा

से बैठना चाहिये-(एवं चिट्ठियव्व) इस प्रकार से ठहरना चाहिये (एवं निसिइयव्वं) इस प्रकार से बैठना चाहिये (एव तुयट्टियव्वं) इस तरह से करवट बदलना चाहिये। (एव भुंजियव्व) इस प्रकार से आहार करना चाहिये (एवं भासियव्व) इस प्रकार से बोलना चाहिये (एवं उट्ठाए उट्ठाय) अपनी आत्मशक्ति से उठकर-प्रमाद निद्रा का परित्याग कर के एव समझकर (पाणेहिं) प्राणियों में, (भूएहिं) भूतों में (जीवेहिं) जीवों में (सत्तेहिं) सत्त्वों में (सजमेण संजमियव्व) संयम से प्रवृत्ति करनी चाहिये (अस्सिच्च ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस विषय में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्म संपडिवज्जइ) इसके बाद कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने श्रमणभगवान महावीर का यह इस प्रकार का धार्मिक उपदेश अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया (तमाणाए) श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा के अनुसार अब वे स्कन्दक मुनि

चिट्ठियव्व) આ પ્રમાણે ઉભા રહેવુ જોઈએ, (एव निसीइयव्व) આ રીતે બેસવુ જોઇએ, (एव तुयट्टियव्व) આ રીતે પડખુ ફેરવવુ જોઇએ, (एव भुंजियव्व) આ રીતે આહાર કરવો જોઈએ, (एव भासियव्व) આ પ્રમાણે બોલવુ જોઇએ (एवं उट्ठाए उट्ठाय) આવી રીતે પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને-પ્રમાદ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરીને સમજી વિચારીને (पाणेहिं) પ્રાણીઓ પ્રત્યે, (भूएहिं) ભૂતો પ્રત્યે, (जीवेहिं) જીવો પ્રત્યે અને (सत्तेहिं) સત્વો પ્રત્યે (सजमेणं सजमियव्व) સયમપૂર્વક વર્તવુ જોઇએ તમારી કોઈ પ્રવૃત્તિથી તેમની હાનિ ન કરવી, તેમની હિંસા ન થાય એવી ધ્યાનમા રાખવુ જોઇએ (अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्व) આ બાબતમા જરા પણ પ્રમાદ કરવો નહીં. (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्म संपडिवज्जइ) ત્યારે તે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનો તે પ્રકારનો ધર્મોપદેશ સારી રીતે સ્વીકૃત કર્યો. (तमाणाए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા પ્રમાણે હવે તે સ્કંદક મુનિ

स्वयमेवाचारगोचरं विनयवैनयिकचरणकरणयात्रामात्राप्रत्ययं धर्ममाख्यातुम्। ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कंदकं कात्यायनगोत्रं स्वयमेव प्रव्राजयति यावत् धर्ममाख्याति एवं देवानुप्रिय ! गंतव्यम्, एवं स्थातव्यम्, एवं निषत्त-

---

कि आप (सयमेव) स्वयं ही (पव्वाविउं) मुझे दीक्षा प्रदान करें। (सयमेव मुंडाविउं) आप स्वयं ही अपने हाथ से मुझे मुंडित करें (सयमेव सेहाविउं) आप स्वयं ही मुझे प्रतिलेखनादि क्रिया सिखावें, (सयमेव सिक्खाविउं) आप स्वयं ही मुझे सूत्र और उनका अर्थ पढावें, तथा (सयमेव आयारगोयर विणयवेणइय चरणकरणजाया मायावत्तियं धम्ममाइक्खिउं) आप स्वयं ही मेरे लिये आचार ज्ञानादि पांच आचार और गोचर-भिक्षाचर्या का उपदेश करें तथा विनयवाले और विनयजन्य फल वाले चरण-व्रतादिचरणसत्तरी, और करण-पिण्डविशुद्धयादि करण सत्तरी, यात्रा-संयमयात्रावाले और मात्रा-आहारादि की मात्रा वाले ऐसे धर्म का उपदेश देवें। (तएणं समणे भगव महावीरे) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने (खंदयं कच्चायणसगोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ) कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक को अपने हाथ से ही दीक्षित किया यावत् अपने आप ही उन्हें धर्म का उपदेश दिया-इसमें उन्होंने उन्हें समझाया कि (एवं देवाणुप्पिया ! गंतव्वं) हे देवानुप्रिय ! इस प्रकार

મારી ઇચ્છા છે (सयमेव मुंडाविउं) આપ જાતે જ આપના હાથથી મને મુંડિત કરો-દીક્ષા પ્રદાન કરો, (सयमेव सेहाविउं) આપ જાતે જ મને પ્રતિલેખના વગેરે ધર્મ ક્રિયાઓ શિખવો, (सयमेव सिक्खाविउ) આપ પોતે જ મને સૂત્રો અને તેમના અર્થ ભણાવો, તથા (सयमेव आयारगोयरं विणयवेणइय चरणकरण जायामाया वत्तियं धम्ममाइक्खिउ) આપ પોતે જ મને આચાર (જ્ઞાનાદિ પાંચ આચાર) અને ગોચર (ભિક્ષાચર્યા) તથા વિનયવાળા અને વિનય થી પ્રાપ્ત થતાં ફળવાળાં ચરણ-વ્રતાદિ (ચરણસિત્તરી,) અને કરણ (પિંડવિશુદ્ધિ), વગેરે કરણ (સિત્તરી) અને યાત્રા (સંયમ યાત્રા) અને માત્રા (આહારાદિકની માત્રા) વાળા ધર્મનો ઉપદેશ આપો (तएण समणे भगव महावीरे) ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ) કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકને પોતાને હાથે જ દીક્ષા આપી અને (સ્કંદકે ઉપરોક્ત જેવી, ઇચ્છા દર્શાવી હતી તે પ્રકારનો) ધર્મોપદેશ આપ્યો તે ઉપદેશ વડે ભગવાન મહાવીરે તેને સમજાવ્યું કે (एवं देवाणुप्पिया ! गंतव्वं) હે દેવાનુપ્રિય ! આ પ્રમાણે ચાલવું જોઈએ. (एवं-

व्यम्, एव त्वग् वर्तितव्यम्, एवं भोक्तव्यम्, एवं भाषितव्यम्, एवमुत्थाया त्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु संयमेन संयमितव्यम्, अस्मिंश्चार्थे किंचिदपि प्रमादयितव्यम्, तत् खलु स स्कन्दक: कात्यायन गोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य मैतदूपं धार्मिकमुपदेशं सम्यक् प्रतिपद्यते। तदाज्ञया तथा गच्छति, तथा

से चलना चाहिये-(एवं चिट्ठियव्वं) इस प्रकार से ठहरना चाहिये (एवं निसिइयव्वं) इस प्रकार से बैठना चाहिये (एवं तुयट्टियव्वं) इस तरह से करवट बदलना चाहिये। (एवं भुंजियव्वं) इस प्रकार से आहार करना चाहिये (एवं भासियव्वं) इस प्रकार से बोलना चाहिये (एवं उट्ठाए उट्ठाय) आपनी आत्मशक्ति से उठकर-प्रमाद निद्रा का परित्याग कर जोर समझकर (पाणेसु) प्राणियों में, (भूएसु) भूतों में (जीवेसु) जीवों में (सत्तेसु) सत्वों में (संजमेणं संजमियव्वं) संयम से प्रवृत्ति करनी चाहिये (अस्सिंच णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस विषय में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं पडिवज्जइ) इसके बाद कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने श्रमणभगवान महावीर का यह इस प्रकार का धार्मिक उपदेश अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया (तमाणाए) श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा के अनुसार अब ये स्कन्दक मुनि

चिट्ठियव्वं) આ પ્રમાણે ઉભા રહેવું જોઈએ, (एवं निसीइयव्वं) આ રીતે બેસવું જોઈએ (एवं तुयट्टियव्वं) આ રીતે પડખું ફેરવવું જોઈએ, (एवं भुंजियव्वं) આ રીતે આહાર કરવો જોઈએ, (एवं भासियव्वं) આ પ્રમાણે બોલવું જોઈએ, (एवं उट्ठाए उट्ठाय) આવી રીતે પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને-પ્રમાદ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરીને સમજી વિચારીને (पाणेसु) પ્રાણીઓ પ્રત્યે, (भूएसु) ભૂતો પ્રત્યે (जीवेसु) જીવો પ્રત્યે અને (सत्तेसु) સત્વો પ્રત્યે (संजमेणं संजमियव्वं) સંયમપૂર્વક વર્તવું જોઈએ તમારી કોઈ પ્રવૃત્તિથી તેમની લાગણી ન દુભાય તેમની હિંસા ન થાય એવો ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ (अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) આ બાબતમાં જરા પણ પ્રમાદ કરવો નહીં. તપણ તે કંદક કચ્ચાયણસગોત્તો સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं पडिवज्जइ) ત્યારે તે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનો તે પ્રકારનો ધર્મોપદેશ આવી રીતે અહણ કર્યો. (तमाणाए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા પ્રમાણે હવે તે સ્કંદક મુનિ

तिष्ठति तथा निषीदति तथा त्वग् वर्त्तयति तथा भुंक्ते, तथा भाषते तथोत्थायोत्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु, सत्त्वेषु, संयमेन संयमयति, अस्मिंश्च खलु अर्थे न प्रमाद्यति। ततः खलु स स्कंदकः कात्यायनगोत्रोऽनगारो जातः ईर्यासमितो भाषासमित एषणासमितः आदानभाण्डामत्रनिक्षेपणासमितः उच्चारप्रस्रवणखेल-

(तह गच्छइ, तह चिट्ठइ, तह निसीयइ, तह तुयट्टइ, तह भुंजइ, तह भासइ, तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं संजमेणं संजमइ) उस प्रकार से चलने लग गये, उस प्रकार से ठहरने लग गये उस प्रकार से बैठने लग गये, उस प्रकार से करवट बदलने लग गये, उस प्रकार से आहार करने लग गये, उस प्रकार से बोलने लग गये, और उस प्रकार से प्रमाद निद्रा का परित्याग पूर्वक सोच समझ कर प्राणियों में, भूतों में, जीवों में, सत्वों में, संयम से प्रवृत्ति करने लग गये। (अस्सि च णं अट्ठे णो पमायइ) इस विषय में उन्हों ने थोडा सा भी प्रमाद नहीं किया। (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते अणगारे जाए) इस तरह वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो गये। (ईरियासमिए, भासासमिए, एसणासमिए, आयाणभंडमत्त निक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) इस अवस्था में उन्हों ने ईर्यासमिति, भाषासमिति एषणा समिति, आदानभांडमात्र निक्षेपणासमिति, उच्चार-प्रस्रवण-खेल-

(तह गच्छइ) તે પ્રમાણે ચાલવા લાગ્યા, (तह चिट्ठइ) તે પ્રમાણે ઉઠવા લાગ્યા, (तह निसीयइ) તે પ્રમાણે બેસવા લાગ્યા, (तह तुयट्टइ, तह भुजइ, तह भासइ) તે પ્રમાણે પડખું ફેરવવા લાગ્યા, તે પ્રમાણે આહાર કરવા લાગ્યા તે પ્રમાણે બોલવા લાગ્યા, (तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं संजमेण संजमइ) અને તે પ્રમાણે પ્રમાદ રહિત બનીને સમજી વિચારીને ભૂતો પ્રત્યે, પ્રાણીઓ પ્રત્યે, જીવો પ્રત્યે અને સત્ત્વો પ્રત્યે સંયમ પૂર્વકનુ વર્તન રાખવા લાગ્યા એટલે કે એ જીવોને દુઃખ ન થાય એ રીતે યતનાપૂર્વક સંયમી જીવન જીવવા લાગ્યા (अस्सि च णं अट्ठे णो पमायइ) આ બાબતમાં તેઓ બિલકુલ પ્રમાદ કરતા નહી, (तएण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते अणगारे जाए) આ રીતે કાત્યાયન ગોત્રી તે સ્કંદક અણગાર બની ગયા (ईरिया समिए, भासासमिए एसणासमिए, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए, उच्चारपासवण खेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) તેઓ (૧) ઈર્યાસમિતિ (૨) ભાષાસમિતિ (૩) એષણા સમિતિ (૪) આદાન ભાંડ-માત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ

विंघाणजल्लपरिष्ठापनिका समिता मनस्समिता वचःसमिता कायसमिता मनो गुप्तो वचोगुप्त कायगुप्तो गुप्तो गुप्तेन्द्रियो गुप्तः ब्रह्मचारी त्यागी ऋजुयान् ऋजुः धन्य क्षांति क्षमोमित्तेन्द्रिय शोधिकाऽनिदानोऽनुत्सुकोऽपरिलेखः सुधा मण्यरतो दान्त, इदमेव नैर्ग्रन्थ प्रवचन पुरत कृत्वा विहरति ॥ सू० १२ ॥

जल्ल शिंघानक परिष्ठापनिकासमिति, इन पांच समितियों का अच्छी तरह से पालन करने लगे, इसलिये वे (मनसमिए, वयसमिए, कायसमिए, मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते) वे मन की क्रिया में सावधान होने से मनः समित, वचन की क्रिया में सावधान होने से वच समित, काय की क्रिया में सावधान होने से कायसमित, तथा मन को वश में करने से मनोगुप्ति से युक्त, वचन को वश में करने से वचनगुप्ति से युक्त और काय को वश में करने से कायगुप्ति से युक्त हो गये, (गुत्ते गुत्तिंदिए, गुत्तबंभयारी, चाई, लज्जू धन्ने, खंतिखमे, जिइंदिए, सोहिए, अणियाणे अप्पुस्सुए, अबहिल्लेसे सुसामण्णरए दंते इणमेव निग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ) तथा जीवों की रक्षा करने वाला होने से गुप्त अपनी पांचों ही इन्द्रियों को अपने वश में करने से गुप्तेन्द्रिय, नव बाडसहित ब्रह्मचर्यके पालने से गुप्त ब्रह्मचारी हो गये। चाई-सच्चे त्यागी बन गये। लज्जू-सरल प्रकृति से संपन्न हो गये। धन्ने-उन्हों ने अपने जीवन को धन्य बना लिया। खंतिखमे-वे क्षांति

(५) જલ્લ-મેલ-પરસેવા શિંઘાનક પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિનું બરાબર પાલન કરવા લાગ્યા (मनसमिए वयसमिए, कायसमिए मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते) તેઓ મનની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી મન સમિતિ થઈ ગયા, વચનની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી વચન સમિત થઈ ગયા અને કાયાની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી કાય સમિતિ થઈ ગયા મન વચન અને કાયા પર કાબૂ રાખવાને કારણે તેઓ મનોગુપ્તિ વચન ગુપ્તિ અને કાય ગુપ્તિથી યુક્ત બની ગયા. (गुत्ते, गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी चाई, लज्जू धन्ने, खंतिखमे, जिइंदिए, सोहिए, अणियाणे अप्पुस्सुए, अबहिल्लेसे सुसामण्णरए दंते इणमेव निग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ) તથા તેઓ જીવોની રક્ષા કરનારા હોવાથી ગુપ્ત પોતાની પાંચે ઇન્દ્રિયોને કાબૂમાં રાખતા હોવાથી ગુપ્તેન્દ્રિય અને નવ વાડ સહિત બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરતા હોવાથી ગુપ્તબ્રહ્મચારી બન્યા. તેઓ "चाई"-સાચા ત્યાગી બન્યા (लज्जू) સરળ સ્વભાવના બન્યા તેમણે તેમના જીવનને धन्य બનાવ્યું खंतिखमे' તેઓ ક્ષમા અને

टीका—" एत्थ णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते " अत्र खलु स स्कंदकः कात्यायन गोत्रः " संबुद्धे " संबुद्धः सम्यग् रूपेण बोधं प्राप्तः लोकजीवसिद्धि-सिद्धमरणविषयकोत्तरं भगवतः सकाशात् संप्राप्य यथार्थविषयकज्ञानवान् भवति ततः संजातबोधो भगवति समुत्पन्नश्रद्धो भूत्वा " समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ " श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति " वंदित्ता नमंसित्ता एवं

क्षम, जितेन्द्रिय, शोधित-आत्मशुद्धि वाले और अनियाणे-निदान बंध से विहीन बन गये। अप्पुस्सुए- उत्कंठाभाव उनके भीतर बिलकुल नहीं रहा। अवहिल्लेसे-असंयम संबंधी मनोवृत्ति से बहिर्भूत हो गये सुसामण्णरए-श्रमणधर्म में तीन योगों से युक्त बन गये। दंते-क्रोधादि कषायों पर उन्हों ने विजय प्राप्त कर लिया। इस प्रकार निर्दोष निर्ग्रन्थ अनगार बनकर वे स्कन्दक मुनि इस जिनोक्त नैर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे करके विचरने लगे॥ सू-१३ ॥

टीकार्थ—" एत्थ णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते " लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध एवं मरण इन पदार्थों की सान्तता अनंतता के विषय में वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक भगवान से यथार्थ उत्तर प्राप्त कर जब अच्छी तरह से बोध को प्राप्त हो गये-यथार्थ विषयक ज्ञान संपन्न बन गये-तब भगवान के ऊपर उन्हें सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो गई। इस तरह सच्ची श्रद्धा से युक्त बन कर उन्होंने " समणं भगवं महावीरं वंदइ "

शान्तिथी युक्त जितेन्द्रिय " शोधित " आत्म शुद्धि वाळा, "अने अनियाणु" नियाणुथी रहित अन्या " अप्पुस्सुए " तेओ कुतूहलवृत्ति थी रहित अन्या. " अवहिल्लेसे तेओ असंयमी वृत्तिथी तद्दन रहित थया. " सुसामण्णरए " मन, वचन अने कायना योगथी तेओ श्रमणु धर्ममा लीन थया, " दंते " तेमणे क्रोधादि कषायो पर विजय मेळवी लीधो, आ रीते निर्दोष निर्ग्रंथ-अणुगार अनीने, स्कंदक मुनि जिनेश्वर भगवाने कहेल निर्ग्रन्थ प्रवचननुं पालन करता करता विहरवा लाग्या

टीकार्थ—' एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते " लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध, अने मरणुनी सान्तता (अन्त युक्तता) अने अनंततानाविषयमां कात्यायन गोत्री स्कंदक भगवान महावीर वडे यथार्थ उत्तर मळवाथी भगवान महावीर उपर तेमने साची श्रद्धा उत्पन्न थइ, अने तेओ ते विषयना यथार्थ ज्ञानी अन्या आ रीते भगवान महावीरमां तेमने श्रद्धा उत्पन्न थवाथी तेमणे " समण भगव महावीर वंदइ " श्रमणु भगवान महावीरने वंदन करी

वयासी " वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत् वन्दनादि करणानन्तरमेवमुक्तवान्, किमुक्तवान् तदाह—" इच्छामि णं भंते " इत्यादि "इच्छामि णं भंते" इच्छामि खलु भदंत ! " तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " युष्माकमन्तिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् " तुब्भं " युष्माकम् " अंतिए " अन्तिके-समीपे इत्यर्थः " केवलिपन्नत्तं " केवलिप्रज्ञप्तं केवलिना समुत्पन्नकेवलज्ञानवता पुरुषेण प्रज्ञप्तम् प्रकाशितम् " धम्मं " धर्मम् " निसामित्तए " निशमयितुम् श्रोतुम्—हे भगवन् ! अहं भवन्मुखात् केवलिप्रलिपादिष्टं धर्मं श्रोतुमिच्छामि इति भावः । भगवानाह—" अहासुहं देवाणुप्पिया " यथा सुखं देवानुप्रिय ! हे देवानुप्रिय ! यथा रोचते तथा कुरु किन्तु " मा पडिबन्धं करेह " मा प्रतिबन्धं कुरु विलम्बं मा कुरु " तएणं समणे भगवं महावीरे " ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स " स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय " तीसे य महा

श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की उन्हें नमस्कार किया। "वंदित्ता नमंसित्ता" वंदना नमस्कार करके उन्होंने प्रभु से " एवं वयासी " इस प्रकार कहा-" इच्छामि ण भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " हे भदन्त ! मैं आपसे-अर्थात् आप के मुख से केवलि-प्रज्ञप्त-समुत्पन्न केवलज्ञानवाली भगवान द्वारा प्ररूपित प्रकाशित-धर्म श्रुतचारित्ररूप धर्म-सुनना चाहता हूं। इस प्रकार केवलिप्रज्ञप्त धर्म सुनने की स्कन्दक की तीव्र जिज्ञासा जानकर भगवान ने उससे कहा-"अहासुहं देवाणुप्पिया !" हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें रुचे-वैसा करो परन्तु 'मा पडिबंधं करेह' विलम्ब मत करो। 'तएणं समणे भगवं महावीरे' इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने 'खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक के लिये-तथा (तीसे य महइ महालयाए)

નમસ્કાર કર્યા" "वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी" વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે પ્રભુને આ પ્રમાણે વિનતિ કરી. "इच्छामि ण भंते ! तुब्भेहिं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए" હે ભગવન્ હું આપને મુખેથી કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ સાંભળવા માગું છું આ પ્રકારની કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ સાંભળવાની તેમની જિજ્ઞાસા જોઈને ભગવાન મહાવીરે તેમને કહ્યું- "अहासुहं देवाणुप्पिया !" હે દેવાનુપ્રિય ! તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો "मा पडिबंधं करेह" પરંતુ કામમાં વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં- "तएणं समणे भगवं महावीरे" ત્યારે આદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે "खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स" કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક તથા "तीसे य महइ महालयाए" તથા

टीका—" एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते " अत्र खलु स स्कंदकः कात्यायन गोत्रः " संबुद्धे " संबुद्धः सम्यग् रूपेण बोधं प्राप्तः लोकजीवसिद्धि-सिद्धमरणविषयकोत्तरं भगवतः सकाशात् संप्राप्य यथार्थविषयकज्ञानवान् भवति ततः संजातबोधो भगवति समुत्पन्नश्रद्धो भूत्वा " समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ " श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति " वंदित्ता नमंसित्ता एव

क्षम, जितेन्द्रिय, शोधित-आत्मशुद्धि वाले और अनियाणे-निदान बंध से विहीन बन गये। अप्पुस्सुए- उत्कंठाभाव उनके भीतर बिलकुल नहीं रहा। अवहिल्लेसे-असंयम संबंधी मनोवृत्ति से बहिर्भूत हो गये सुसामण्णरए-श्रमणधर्म में तीन योगों से युक्त बन गये। दंते-क्रोधादि कषायों पर उन्हों ने विजय प्राप्त कर लिया। इस प्रकार निर्दोष निर्ग्रन्थ अनगार बनकर वे स्कन्दक मुनि इस जिनोक्त नैर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे करके विचरने लगे॥ सू-१३ ॥

टीकार्थ—" एत्थ णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते " लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध एवं मरण इन पदार्थों की सान्तता अनंतता के विषय में वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक भगवान से यथार्थ उत्तर प्राप्त कर जब अच्छी तरह से बोध को प्राप्त हो गये-यथार्थ विषयक ज्ञान संपन्न बन गये-तब भगवान के ऊपर उन्हें सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो गई। इस तरह सच्ची श्रद्धा से युक्त बन कर उन्होंने " समणं भगवं महावीरं वंदइ "

શાન્તિથી યુક્ત જિતેન્દ્રિય " शोधित " આત્મ શુદ્ધિ વાળા, "अने अनियाणु" નિયાણુથી રહિત બન્યા " अप्पुस्सुए " તેઓ કુતૂહલવૃત્તિ થી રહિત બન્યા. " अवहिल्लेसे તેઓ અસંયમી વૃત્તિથી તદ્દન રહિત થયા " सुसामण्णरए " મન, વચન અને કાયના યોગથી તેઓ શ્રમણ ધર્મમા લીન થયા, " दंते " તેમણે ક્રોધાદિ કષાયો પર વિજય મેળવી લીધો, આ રીતે નિર્દોષ નિર્ગ્રંથ-અણગાર બનીને, સ્કંદક મુનિ જિનેશ્વર ભગવાને કહેલ વિગ્રંન્થ પ્રવચનનું પાલન કરતા કરતા વિહરવા લાગ્યા.

ટીકાર્થ—' एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते " લોક, જીવ, સિદ્ધિ, સિદ્ધ, અને મરણની સાન્તતા (અન્ત યુક્તતા) અને અનંતતાના વિષયમાં કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક ભગવાન મહાવીર વડે યથાર્થ ઉત્તર મળવાથી ભગવાન મહાવીર ઉપર તેમને સાચી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ, અને તેઓ તે વિષયના યથાર્થ જ્ઞાની બન્યા આ રીતે ભગવાન મહાવીરમા તેમને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાથી તેમણે " समण भगव महावीर वंदइ " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી

वयासी " वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत् वन्दनादि कृत्वानन्तरमेवमवादीत्, किमुक्तवान् तदाह—" इच्छामि णं भंते " इत्यादि "इच्छामि णं भंते" इच्छामि खलु भदन्त ! " तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " युष्माकमन्तिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् " तुब्भं " युष्माकम् " अंतिए " अन्तिके-समीपे इत्यर्थः " केवलिपन्नत्तं " केवलिप्रज्ञप्तं केवलिना समुत्पन्नकेवलज्ञानवता पुरुषेण प्रज्ञप्तम् प्रकाशितम् " धम्मं " धर्मम् " निसामित्तए " निशमयितुम् श्रोतुम्—हे भगवन् ! अहं भवन्मुखात् केवलिप्रतिपादितं धर्मं श्रोतुमिच्छामि इति भावः। भगवानाह—" अहासुहं देवाणुप्पिया " यथा सुखं देवानुप्रिय ! हे देवानुप्रिय ! से रोचते तथा कुरु किन्तु " मा पडिबन्धं करेह " मा प्रतिबन्धं कुरु विलम्बं मा कुरु " तएणं समणे भगवं महावीरे " ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स " स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय " तीसेय महा

श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की उन्हें नमस्कार किया। "वंदित्ता नमंसित्ता" वंदना नमस्कार करके उन्होंने प्रभु से " एवं वयासी " इस प्रकार कहा-" इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " हे भदन्त ! मैं आपसे-अर्थात् आप के मुख से केवलि प्रज्ञप्त-समुत्पन्न केवलज्ञानशाली भगवान द्वारा प्ररूपित प्रकाशित-धर्म श्रुतचारित्ररूप धर्म-सुनना चाहता हूं। इस प्रकार केवलिप्रज्ञप्त धर्म सुनने की स्कन्दक की तीव्र जिज्ञासा जानकर भगवान ने उससे कहा-"अहासुहं देवाणुप्पिया।" हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें रुचे-वैसा करो परन्तु 'मा पडिबन्धं करेह' विलम्ब मत करो। 'तएणं समणे भगवं महावीरे' इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने 'खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक के लिये-तथा (तीसे य महइ महालयाए)

નમસ્કાર કર્યા " वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે પ્રભુને આ પ્રમાણે વિનતિ કરી. " इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " હે ભગવન્ ! હું આપને મુખેથી કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ સાંભળવા માટે ઇચ્છું છું આ પ્રકારની કેવલિ પ્રરૂપિત ધર્મ સાંભળવાની તેમની જિજ્ઞાસા જોઈને ભગવાન મહાવીરે તેમને કહ્યું- ' अहासुहं देवाणुप्पिया ! " હે દેવાનુપ્રિય ! તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો. ' मा पडिबंधं करेह " શુભ કામમાં વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં- तएणं समणे भगवं महावीरे ' ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે " खंदयस्स कच्चायणसस्स गोत्तस्स ' કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક તથા " तीसे य महइ महालयाए " ત્યાં

महालयाए परिसाए " तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे " धम्मं परिकहेइ " धर्मं परिकथयति " धम्मकहा भाणिअव्वा " धर्मकथा भणितव्या " अत्थि लोए अत्थि अलोए " इत्यादि रूपा धर्मकथा औपपातिकसूत्रस्य पूर्वार्धे षट्पञ्चाशत्तमे सूत्रे विलोकनीया, "तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायन गोत्रः " समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं " श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके धर्मं " सोच्चा " श्रुत्वा " णिसम्म " निशम्य हृदि अवधार्य " हट्ठ तुट्ठ जाव हियए" अत्र यावत्पदेन " चित्तमाणंदिए पीइमणे परमसो-

---

उस आई हुई बडी भारी परिषद को (धम्मं परि कहेइ) चारित्र रूप धर्म का उपदेश दिया। (धम्मकहा भाणियव्वा) धर्मकथा कहनी चाहिये-(अत्थि लोए अत्थि अलोए) इत्यादिरूप धर्मकथा औपपातिक के पूर्वार्ध में छप्पनवेंसूत्र के अंदर है, सो वहां से देख लेनी चाहिये। (तएण से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ तुट्ठ जाव हियए) स्कन्दक परिव्राजक ने श्रमण भगवान महावीर के मुख से जब धर्मकथा सावधान होकर सुनी तो सुनकर और उसे हृदय में अवधारण कर उसका चित्त बहुत हर्षित हुए, अतितुष्ट हुए, हृष्ट तुष्ट का तात्पर्य अतितुष्ट है। अथवा -हृष्ट शब्द का अर्थ हर्षित और तुष्ट शब्द का अर्थ-धर्मकथा के श्रवण से प्राप्त संतोषवाला ऐसा है चित्त जिसका-वह हृष्ट तुष्ट चित्त है। इसी लिये आनंद को प्राप्त हुए-मानसिक उल्लासवाले हुए (पीइमणे) मन में तृप्ति से युक्त हुए अर्थात् भगवान् की अमृत जैसी

લેગી થયેલી ઘણી જ મોટી સભાને " धम्म परिकहेइ " શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મનો ઉપદેશ દીધો. " धम्मकहा भाणियव्वा " અહીં ધર્મ કથા કહેવી જોઈએ તે ધર્મકથા કઈ? " अत्थि लोए अत्थि अलोए " ઈત્યાદિ રૂપ ધર્મકથા ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વાર્ધમા છપ્પનમા સૂત્રથી જિજ્ઞાસુઓએ તે ધર્મકથા વાચી લેવી. " तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए " કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદક પરિવ્રાજકે જ્યારે તે ધર્મકથા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને મુખેથી એકચિત્તે સાભળી અને હૃદયમા અવધારણ કરી ત્યારે તેમને ઘણો હર્ષ થયો, અને તેમને ઘણો સતોષ થયો (હૃષ્ટ તુષ્ટ એટલે અતિશય તુષ્ટ અથવા હૃષ્ટ એટલે હર્ષિત અને તુષ્ટ એટલે ધર્મકથા સાંભળીને સંતોષ પામેલ) તેમના ઉલ્લાસનો પાર ન રહ્યો, " पीइमणे " ભગવાનની અમૃત જેવી વાણી સાભળીને તેમનુ મન પ્રસન્ન થયુ, તેમનુ મન " परमसो-

मणस्सिए हरिसवसविसप्पमाण " इति समद " हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए " हृष्टतुष्ट चित्तानन्दितः-हृष्टतुष्टम्=अतितुष्टम्, पट्ठा हर्षः=हर्षितम्, तुष्टम्=धर्मकथा श्रवणेन प्राप्तसन्तोषम्, तादृश चित्त यस्य स हृष्टतुष्टचित्तः, अतएव आनन्दित= आनन्दं प्राप्तः समजातमानसोल्लास इत्यर्थः "पीइमणे" प्रीतिमना -प्रीतिः=हर्षि मैनसि यस्य स प्रीतिमनाः अश्रुतोपमधर्मश्रवणेन तृप्यमानमनाः अतएव " परम सोमणस्सिए " परमसौमनस्थित -परमम्=उत्कृष्टश्च तत् सौमनस्यं=मनसश्चिन्ता चेति परमसौमनस्यं, तत्स्प सजात परमसौमस्थितः परमानुरागपूर्णमनस्कः। " हरिसवसविसप्पमाणहियए " हर्षवशविसर्पद् हृदय हर्षवशेन विसर्पत्=परितः उच्छ्वसत् हृदयं यस्य तथा श्रमणदुक्तधर्मश्रवणादमन्दानन्दतरङ्गसमुच्छ्वासितचित्त इत्यर्थः " उट्ठाए उट्ठेइ " उत्थया उत्थानक्रियया उत्तिष्ठति, " उट्ठित्ता " उत्थाय " समणं भगवं महावीरं " श्रमणं भगवन्तं महावीरम्। तिक्खुत्तो त्रिकृत्व त्रिवार मित्यर्थः " आयाहिणपयाहिणं करेइ " आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति " करित्ता " ' वंदइ नमंसइ ' वन्दते नमस्यति ' वंदित्ता नमंसित्ता " वन्दित्वा नमस्थित्वा ' " एव वयासी " एवम्=वक्ष्यमाण वचनम्-अवादीत् उक्तवान् " सद्दहामि णं

वाणी के सुनने से तृप्त मन वाले हुए इसी से (परमसोमणस्सिए) जिनका चित्त परम प्रसन्नता से भर गया है-अर्थात् परम अनुराग से पूर्ण मन वाले ऐसे वे स्कन्दक परिव्राजक उस समय अपार हर्ष के मारे प्रफुल्लित हुए उनका हृदय (हरिसवसविसप्पमाणहियए) भगवान द्वारा कथित धर्म के श्रवण से होने वाले हर्षोल्लास के उत्कर्ष से फूल गया। वह उसी समय (उट्ठाए उट्ठेइ) अपनी उत्थानशक्ति से उठे ' उट्ठित्ता ' और उठकर (समणं भगवं महावीरं) उन्हीं श्रमण भगवान महावीर को (तिक्खुत्तो) तीन बार (आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) आदक्षिणप्रदक्षिणापूर्वक वन्दना नमस्कार करते हैं (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासि) फिर इस प्र

मणस्सिए " પ્રસન્નતાથી અત્યંત હર્ષ- ઉલ્લાસ છે એટલે જ જેથી પૂર્ણ મનવાળા સ્કન્દક પરિવ્રાજકનું હૃદય " हरिसवसविसप्पमाणहियए ' ભગવાનનો ધર્મોપદેશ સાંભળીને હર્ષોલ્લાસથી નાચી ઉઠયું

એજ સમયે ' उट्ठाए उट्ठेइ ' તેઓ પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઊભા " उट्ठित्ता " અને ઊઠીને समणं भगवं महावीरं ' તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને " तिक्खुत्तो " ત્રણ વાર ' आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ " આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા " करित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું

भंते " श्रद्धे इदं यथार्थमेवास्तीति विश्वसिमि० खलु भदंत ! " णिग्गंथं पावयणं" निर्ग्रंथं प्रवचनम् निर्ग्रंथसंबन्धिशास्त्रे मे श्रद्धा समुत्पन्ना यस्य शास्त्रस्यानुगामी भवत्सदृशः केवली तत् शास्त्रमवश्यमेवोपादेयमित्याकारिका मे श्रद्धा समुत्पन्नाऽतोहं श्रद्धे प्रवचनमितिभावः। " पत्तियामि णं भंते निग्गंथं पावयणं " प्रत्येमि खलु भदन्त! निर्ग्रंथं प्रवचनम्, लोकादि स्वरूपमित्थमेवेति प्रीतिं प्रत्ययं विश्वासं वा करोमि " रोएमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " रोचे खलु भदंत ! नैर्ग्रंथं प्रवचनम् रोचे पीयूषधारावत् वांछामि निर्ग्रंथप्रवचनम् " अब्भुट्ठेमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत ! नैर्ग्रंथं प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि। अङ्गीक-

---

भगवान महावीर से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही यथार्थ है-इस कारण मैं इस पर श्रद्धा करता हूं। श्रद्धा करने का कारण यह है कि आप जैसे केवली इसकी प्ररूपणा करने वाले हैं अतः यह अवश्य ही उपादेय है, इस प्रकार की श्रद्धा मुझे उत्पन्न हो गइ है अतः मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन के ऊपर अटूट श्रद्धा वाला बन गया हूं। (पत्तियामि णं भंते ! निर्ग्रन्थं पावयणं) हे भदन्त ! लोकादिक का स्वरूप जैसा आपने प्रतिपादित किया है वह ऐसा ही है इस प्रकार मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर प्रीति-प्रत्यय -विश्वास करता हूं। (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) जिस प्रकार अमृत हरएक प्राणी की रुचि का एकान्ततःविषयभूत बनता है उसी प्रकार से हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रतिपादित प्रवचन भी मेरी रुचि का विषयभूत बन गया है। (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) इसलिये हे भदन्त ! मैं आज से इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को अंगीकार करता हूं, (एवमेयं भंते !) हे भदन्त ! आपने जो उपदेश दिया है वह ऐसा ही

" सद्दहामि ण भते ! णिग्गंथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન જ યથાર્થ છે, તે કારણે મને તેમાં શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ છે. શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપ જેવા કેવલી ભગવાન તેની પ્રરૂપણા કરનાર છો તેથી તે અવશ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે એવી શ્રદ્ધા મારા મનમા ઉત્પન્નથઇ છે તેથી આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા હું અતૂટ શ્રદ્ધા યુક્ત બની ગયો છું. " पत्तियामि ण भते ! निग्गिंथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! લોક વગેરેનું સ્વરૂપ આપે પ્રતિપાદિત કર્યા પ્રમાણે જ છે એવી પ્રતીતિ મને થઇ ગઇ છે તેથી નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પર મારી પ્રીતિ-વિશ્વાસ વ્યક્ત કરૂ છું " रोएमि णं भंते ! णिग्गंथ-पावयण " જેમ અમૃત દરેક જીવને રુચિ કારક થઈ પડે છે તેમ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન શ્રવણ કરવાની મારી રુચિ પણ વધતી જ જાય છે " अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथ पावयणं " તેથી હે ભગવાન્ ! આજથી હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-

रोमीत्यर्थः "एकमेयं भंते" एवमेतद् भदन्त ! हे भगवन् ! यद् भवानुपदिशति तद् एवमेवास्ति "तहमेयं भंते" तथैतद् भदन्त ! हे भगवन् ! भवता यदुपदिष्टं तथैव । "अवितहमेयं भंते" अवितथमेतद् भदन्त ! हे भगवन् ! भवदुक्तमेतत् सर्वं सत्यमेव । "असंदिद्धमेयं भंते" असंदिग्धमेतद् भदन्त ! हे भगवन् ! एतत् सन्देहरहितं—देशशंका सर्वशङ्का वर्जितम् । "इच्छियमेयं भंते" इष्टमेतद् भदन्त ! = हे भगवन् ! एतद् भवद्वचनं सत्यं मया वाञ्छितमेव पडिच्छियमेयं भंते" प्रतीष्टमेतद् भदन्त ! = हे भगवन् ! पुनः पुनरिष्टमेतद् भवद्वचनम् 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते' इष्टप्रतीष्टमेतद् भदन्त= हे भगवन् ! एतद् भगवत्त्व वचनम् इष्टप्रतीष्टोभयरूपं वर्तते 'से जहेयं तुब्भे वदह' तद् यथैतद् यूयं वदथ = तदेतत् यथा भवन्त कथयन्ति तथैव 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा=कथयित्वा 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमणं

है। (तहमेयं भंते) हे भदन्त ! जैसा आपने प्रतिपादित किया है वह अक्षर शः बिलकुल वैसा ही है। (अवितहमेयं भंते !) हे भदन्त ! आपके द्वारा कहा हुआ यह सब सत्य ही है। (असंदिद्धमेयं भंते !) हे भदन्त ! इस आपके प्रवचन में न देशशंका का स्थान है और न सर्वशंका का ही स्थान यह सर्व प्रकार से शंका रहित है 'इच्छियमेयं भंते !' हे भदन्त ! ये आपके वचन मेरे लिये वाञ्छित ही है। 'पडिच्छियमेयं भंते' हे भदन्त आपके ये वचन पुनः पुनः इष्ट है। 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !' हे भदन्त ! ये आपके वचन इष्ट हैं प्रतीष्ट दोनों रूप हैं। 'से जहेयं तुब्भे वदह' आपने जैसा कहा है वह सर्वप्रकार से

આપને અભીષ્ટ છે કે "एकमेयं भंते !" હે ભગવાન્ આપે જે તત્ત્વોનો ઉપદેશ આપ્યો છે તે યથાર્થ જ છે, तहमेयं भंते ! આપે જે તત્ત્વોનું પ્રતિપાદન કર્યું છે, તે અક્ષરે અક્ષર સત્ય છે-તેમાં કોઈ પણ પ્રકારની શંકાને સ્થાન નથી 'अवितहमेयं भंते !" હે ભગવન્ ! આપે જે કહ્યું છે તે સત્ય જ છે 'असंदिद्धमेयं भंते !" હે ભગવન્ ! આપની વાત સંદેહ રહિત છે તેમાં શંકાને માટે બિલકુલ અવકાશ જ નથી તે સર્વ પ્રકારે શંકા રહિત જ છે "इच्छियमेयं भंते !' હે ભગવન્ ! આપનાં વચન ઈચ્છિત જ છે—આપનાં વચન મારાજ્ઞાનની અભિલાષા અને આપ્ત છે 'पडिच्छियमेयं भंते !" હે ભગવન્ આપનાં વચનો અતિશય ઈષ્ટ છે 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !" હે ભગવન્ ! આપનાં વચન ઇષ્ટ અને પ્રતીષ્ટ છે 'से जहेयं तुब्भे वदह" આપે જે કહ્યું તે સર્વ પ્રકારે યથાર્થ જ છે, "इति कट्टु" આ પ્રમાણે કહીને

भंते " श्रद्धे इदं यथार्थमेवास्तीति विश्वसिमि० खलु भदंत ! " णिग्गंथं पावयणं" निर्ग्रंथं प्रवचनम् निर्ग्रंथसंबन्धिशास्त्रे मे श्रद्धा समुत्पन्ना यस्य शास्त्रस्यानुगामी भवत्सदृशः केवली तत् शास्त्रमवश्यमेवोपादेयमित्याकारिका मे श्रद्धा समुत्पन्नाऽतोहं श्रद्दे प्रवचनमितिभावः । " पत्तियामि णं भंते निग्गंथं पावयणं " प्रत्येमि खलु भदन्त ! निर्ग्रंथं प्रवचनम् , लोकादि स्वरूपमित्थमेवेति प्रीतिं प्रत्ययं विश्वासं वा करोमि " रोएमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " रोचे खलु भदंत ! नैर्ग्रंथं प्रवचनम् रोचे पीयूषधारावत् वांछामि निर्ग्रंथप्रवचनम् " अब्भुट्टेमि णं भंते णिग्गंथं पावयण " अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत ! नैर्ग्रंथं प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि । अङ्गीक-

---

भगवान महावीर से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही यथार्थ है-इस कारण मैं इस पर श्रद्धा करता हूं। श्रद्धा करने का कारण यह है कि आप जैसे केवली इसकी प्ररूपणा करने वाले हैं अतः यह अवश्य ही उपादेय है, इस प्रकार की श्रद्धा मुझे उत्पन्न हो गई है अतः मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन के ऊपर अटूट श्रद्धा वाला बन गया हूं। (पत्तियामि णं भंते ! निर्ग्रन्थं पावयणं) हे भदन्त ! लोकादिक का स्वरूप जैसा आपने प्रतिपादित किया है वह ऐसा ही है इस प्रकार मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर प्रीति-प्रत्यय -विश्वास करता हूं। (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) जिस प्रकार अमृत हरएक प्राणी की रुचि का एकान्ततः विषयभूत बनता है उसी प्रकार से हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रतिपादित प्रवचन भी मेरी रुचि का विषयभूत बन गया है। (अब्भुट्टेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) इसलिये हे भदन्त ! मैं आज से इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को अंगीकार करता हूं, (एवमेयं भंते !) हे भदन्त ! आपने जो उपदेश दिया है वह ऐसा ही

" सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન જ યથાર્થ છે, તે કારણે મને તેમા શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ છે. શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપ જેવા કેવલી ભગવાન તેની પ્રરૂપણા કરનાર છો તેથી તે અવશ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે એવી શ્રદ્ધા મારા મનમા ઉત્પન્નથઇ છે તેથી આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા હું અતૂટ શ્રદ્ધા યુક્ત બની ગયો છું " पत्तियामि णं भंते ! निग्गिथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! લોક વગેરેનુ સ્વરૂપ આપે પ્રતિપાદિત કર્યા પ્રમાણે જ છે એવી પ્રતીતિ મને થઇ ગઇ છે તેથી નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પર મારી પ્રીતિ-વિશ્વાસ વ્યક્ત કરૂ છું " रोएमि णं भंते ! णिग्गंथ-पावयण " જેમ અમૃત દરેક જીવને રુચિ કારક થઈ પડે છે તેમ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન શ્રવણ કરવાની મારી રુચિ પણ વધતી જ જાય છે " अब्भुट्टेमि णं भंते ! णिग्गंथ पावयणं " તેથી હે ભગવાન્ ! આજથી હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-

श्रमणो भगवान् महावीरः ' तेणेव उवागच्छइ ' तत्रैवोपागच्छति ' उवागच्छित्ता ' उपागम्य ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ' तिक्खुत्तो ' त्रिकृत्व ' आयाहिणं पयाहिणं करेइ ' आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति ' करित्ता ' कृत्वा ' वंदइ नमंसइ ' वन्दते नमस्यति ' वंदित्ता नमंसित्ता ' वन्दित्वा नमस्थित्वा ' एवं वयासी ' एवमवादीत् ' आलित्ते णं भंते लोए ' आदीप्त खलु भदन्त ! लोकः आदीप्तः-आसमन्तात्-दीप्त ज्वलित लोको जीवलोकः हे भगवन्! परिदृश्यमानो जीवलोकः सर्वत प्रदीप्त इवाभातीत्यर्थः, ' आलित्तपलित्ते णं भंते लोए ' भा

विराजमान थे ' तेणेव उवागच्छइ ' वहां पर आपे ' उवागच्छित्ता ' वहां आकर उन्हों ने ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमण भगवान महावीर को ' तिक्खुत्तो ' तीन बार ' आयाहिणं पयाहिणं ' आदक्षिण प्रदक्षिणा (करेइ) की (करित्ता) तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके ' वंदइ नमंसइ ' फिर उन्हों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके फिर वह भगवान महावीर से इस प्रकार कहने लगा- (आलित्तेणं भंते लोए) हे भदन्त ! यह जीवलोक चारों तरफ से जल रहा है अर्थात् जितना भी यह जीवलोक दिखलाई पड़ रहा है वह सब ओर से प्रदीप्त की तरह मालुम होता है (पलित्तेणं भंते ! लोए) हे भदन्त ! यह जीवलोक सामान्य रूप से ही जल रहा हो सो बात नहीं है किन्तु यह तो बहुत ही अधिक विशेष रूप से प्रज्वलित जैसा हो रहा है (आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए) हे भदन्त ! जहां पर भी देखो

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિરાજમાન હતા " तेणेव उवागच्छइ " त्यां આવ્યા " उवागच्छित्ता " त्यां आवीने तेमणे ' समणं भगवं महावीरं " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની ' तिक्खुत्तो " त्रण वार ' आयाहिणं पयाहिणं " આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા ' करेइ " કરી (करित्ता) त्रण वार आदक्षिण प्रदक्षिणा કરીને (वंदइ नमंसइ) तेमणे भगवान महावीरने वंदन કરી નમસ્કાર કર્યા ' वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' वंदन नमस्कार કરીને तेमणे श्रमण भगवान महावीरने आ प्रमाणे કહ્યું " आलित्तेणं भंते लोए हे भगवन्! આ લોક ચારે તરફથી બળી રહ્યો છે એટલે કે આ આખોય દેખાતો લોક જાણે સળગી રહ્યો છે ' पलित्तेणं भंते ! लोए " હે ભગવન્! આ લોક સામાન્ય રૂપે જ બળી રહ્યો છે એવું નથી પણ તે તો ઘણાજ અધિક પ્રમાણમાં પ્રજ્વલિત લોક જેવું લાગે છે आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए "

भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा "उत्तरपुरत्थिमं दिसिभायं अवक्कमइ" उत्तरपौरस्त्यं दिग्भागम् अवक्रामति "उत्तरपुरत्थिमं" उत्तरपौरस्त्यम् उत्तरपूर्वयोरन्तरालं "दिसिभायं" दिग्भागम् ईशानकोणम् "अवक्कमइ" अवक्रामति गच्छति "अवक्कमित्ता" अवक्रम्य स स्कन्दक ईशानकोणे गत्वेत्यर्थः, "तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओय एगंते एडेइ" त्रिदण्डं च कुण्डिकां च यावत् धातुरक्ताश्चैकान्ते एडयति, त्रिदण्डादिकं संन्यासि सम्बन्धिसर्वमुपकरणं धातुरक्ताः शाटिकाश्च एकान्ते एडयति =मुञ्चति, तापसस्य यानि चिन्हानि आसन् तानि सर्वाण्येव स्कन्दकः परित्यजति "एडित्ता" एडयित्वा परित्यज्य, सदोरकमुखवस्त्रिका-रजोहरण-चोलपट्टक "चद्दरादि" रूपं मुनिवेषं धृत्वा च "जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव

वैसा ही है 'इतिकट्टु' इस प्रकार कहकर उन स्कन्दक ने 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की, उन्हें नमस्कार किया। 'वंदित्ता नमंसित्ता' वंदना नमस्कार कर चुकने बाद फिर वह 'उत्तरपुरत्थिमं दिसि भायं अवक्कमइ' उत्तर और पूर्व दिशा के अंतरालवर्ती दिशा में-अर्थात् ईशानकोण में गये। 'अवक्कमित्ता' वहां जाकर उन्हों ने 'तिदंडं च, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ' अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को, यावत् गैरिक आदि धातु से रंगे वस्त्रों को एकान्त में रख दिया। तात्पर्य कहने का यह है कि स्कन्दक ने अपने तापस संबंधी जितने भी चिह्न थे और उपकरणथे उन सबका परित्याग कर दिया। 'एडित्ता' उन्हें एकान्तस्थान में रखकर "सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरण, चौलपट्टक, चद्दर आदिरूप मुनिवेष को धारण कर 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' जहां श्रमण भगवान महावीर

સ્કન્દકે "समणं भगव महावीर वंदइ नमसइ" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા. "वंदित्ता नमंसित्ता" વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ "उत्तरपुरत्थिमं दिसिभाय अवक्कमइ" ઉત્તર અને પૂર્વ દિશાની વચ્ચેના ખૂણામા (ઈશાન ખૂણામા) ગયા (अवक्कामित्ता) ત્યાં જઈને તેમણે "तिदड च, कुडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ" તેમના ત્રિદંડ, કમંડલ ગૈરિક વગેરે ધાતુથી રંગેલા વસ્ત્રો (ભગવાં કપડાં) વગેરે વસ્તુઓ એકાન્તમાં મૂકી દીધી કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે સ્કન્દકે પરિવ્રાજક તરીકેના જે જે ચિહ્નો હતાં તેનો પરિત્યાગ કર્યો "एडित्ता" તે બધી વસ્તુઓને એકાન્ત સ્થાનમાં મૂકીને દોરા સહિત મુખવસ્ત્રિકા (મુહપત્તી,) રજોહરણ, ચોલપટ્ટક, પછેડી, વગેરે મુનિવેષ ધારણ કરીને "जेणेव समणे भगवं महावीरे" જ્યાં

तथा हे भगवन् ! यदि अहं विधार्य्यं पश्यामि तदाऽयं जीवलोको जरामरणाग्न्या दह्यते तस्य संरक्षणे भवत्सदृशवीर एव वीर इति कृत्वा भवता शरणागतोऽहमतो मां सदुपदेशद्वारा संसारकान्तारादुद्धरेति भावार्थः ! एतदेव दृष्टान्तेन स्पष्टयति–'से जहाणामए केइ गाहावई' तद्यथा नाम कश्चित् गाथापतिः कश्चिद् गृहस्वामी 'अगारंसि' अगारे गृहे 'झियायमाणंसि' ध्मायमाने दह्यमाने सत्यग्नौ सति 'जे से तत्थ भंडे भवइ' यत् तत् तत्र भाण्डम् उपकरणं भवति स्थित भवतीत्यर्थः । कीदृशमित्याह 'अप्पभारे' अल्पभारम् अल्पो भारो यस्य तत् अल्पभा

करने के लिये जैसे किसी हाथ में पानी लिये हुए रक्षक वीर की आवश्यकता होती है उसी तरह हे भगवन् यह तो निश्चित रूप से दिख लाई ही पड़ रहा है कि यह समस्त जीवलोक रातदिन इस जरा मरण रूप अग्नि से भस्मसात् सा हो रहा है, अतः इसकी रक्षा करने के लिये मैं देख रहा हूं कि हे नाथ ! आपके सिवाय और कोई वीर नहीं है आप ही एक ऐसे वीर हैं–जो इस जरा मरण से बचा सकते हैं–इस लिये मैं इस अग्नि से बचने के लिये आपके चरणों की शरण में आया हुआ हूं–आप मेरी सदुपदेश प्रदान द्वारा इस संसार कान्तार से रक्षा करें । इसी बात को स्कन्दक दृष्टान्त द्वारा पुष्ट करता है–(से जहाणामए केई गाहावई) जैसे कोई गाथापति–धनिक गृहस्थ हो, (अगारंसि झियायमाणंसि) और उसके घर में आग लग जावे तो वह उस स्थिति में (जे से तत्थ भंडे भवई) जो उस मकान में उपकरण होता है– कैसा उपकरण–कि (अप्पभारे मोरलगुरुए) जिसका भार तो हो

आवे हाथमां पाणी लईने अग्निने बुझावनार કોઈ વીર પુરુષની જરૂર પડે છે તેવી જ રીતે જરામરણ રૂપ અગ્નિથી અવિશ્રાંતપણે સળગી રહેલા જગની રક્ષા માટે આપના સિવાય કોઈ પણ બીજો વીર નથી કે જે સમર્થ હોય આપના જેવા વીર છો કે જે જરામરણ રૂપ અગ્નિથી અમારું રક્ષણ કરવાને સમર્થ છો. તેથી હે નાથ ! જરા અને મરણરૂપ અગ્નિથી બચવાને માટે હું આપને શરણે આવ્યો છું આપ આપના સદુપદેશ રૂપ વચનામૃતનું પાન કરાવીને આ સંસાર રૂપી વનમાંથી મને પાર ઉતારો. એજ વાતની પુષ્ટિ માટે સ્કન્દક બોધ દૃષ્ટાંત આપે છે–(से जहाणामए केई गाहावई) જેમ કે કોઈ એક ગાથાપતિ ધનિક (गृहस्थ) છે (अगारंसि झियायमाणंसि) તેના ઘરમાં આગ લાગે છે તો (जे से तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोरलगुरुए) તેના ઘરમાં જે ઉપકરણો વગેરમાં હલકાં પણ મૂલ્યવાન હોય છે તે ઉપકર

दीप्तप्रदीप्तः खलु भदंत ! लोकः, हे भदंत ! सर्वप्रकारेणायं लोकः ज्वलति चेतिभावः। केन कारणेनेत्याह–' जराए ' इत्यादि ' जराए मरणेण य ' जरया मरणेन च जरा वार्द्धक्यम् मरणं प्राणपरित्याग रूपम् एतद्रूपेण वन्हिना जरामरणयो रतिशयकष्टकारकत्वाद् वह्निसादृश्यं कथितम्, यथा वह्निना गृहादिर्दह्यते तथा जरामरणाभ्यां जीवलोकोऽहर्निशमतिशयेन ज्वलतीवेतिभावः तथा यथा वह्निप्रदीप्तगृहस्य त्राणाय वीरस्य कस्यचिद् रक्षकस्य जलादिहस्तस्यावश्यकता भवति

इस जीवलोक में ऐसा कोइ सा भी स्थान नहीं बचा है कि जहां यह आदीप्त न हो रहा हो। इसे जलाने वाले ये हैं—

(जराए मरणेण य) जरा और मरण। बुढापे का नाम जरा और पर्याय से पर्यायान्तरित होना इसका नाम मरण–अर्थात्- भुज्यमान आयु के समाप्त होने पर प्राणत्यागरूप अवस्था होती है वह मरण है। जरा और मरण ये दोनों एक प्रकार की अग्नि हैं। अग्नि से जले हुए व्यक्ति को मारणान्तिक कष्ट होता है–उसी प्रकार से जरा और मरण से घिरे हुए प्राणी को महादुःख होता है। इसी अतिशय कष्ट कारकता रूप सादृश्य को लेकर जरा मरण को अग्नि की उपमा से उपमित किया गया है। जिस प्रकार अग्नि के संबंध से गृहादिक जल जाते हैं, उसी प्रकार जरा और मरण इन दोनों से यह जीवलोक रात दिन अतिशयरूप से जलता सा रहता है। वह्नि से जलते हुए घर की रक्षा

હે ભગવન્! આ જીવલોકમા એવુ કોઈ પણ સ્થાન નથી કે જે આદીપ્ત થઇ રહ્યુ ન હોય. તેને સળગાવનાર આ વસ્તુઓ છે– "जराए मरणेण य" તેનુ કારણ જરા અને મરણ છે વૃદ્ધાવસ્થાને જરા કહે છે. અને એક પર્યાયમાંથી બીજી પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થવુ તેનુ નામ મરણ છે એટલે કે જે ગતિમાં જન્મ થયો હોય તે ગતિનુ આયુષ્ય પૂરૂં થતા પ્રાણત્યાગ રૂપ જે અવસ્થા આવે છે તેને મરણ કહે છે. જરા અને મરણ એ બને પ્રદીપ્ત અગ્નિસમાન છે જેવી રીતે અગ્નિથી બળી ગયેલી વ્યક્તિને અત્યંત કષ્ટ થાય છે એવીજ રીતે જરા અને મરણ પણ જીવોને મહાદુઃખ રૂપ થઇ પડે છે. આ રીતે અગ્નિ જેવી રીતે અતિશય કષ્ટ કારક છે તેવી જ રીતે જરા, મરણ પણ અતિશય કષ્ટ કારક છે બન્નેમા કષ્ટકારકતાની સમાનતા હોવાથી જરામરણને પ્રદીપ્ત અગ્નિની ઉપમા આપવામા આવી છે જેવી રીતે અગ્નિથી ઘર વગેરે બળી જાય છે, એજ રીતે જરા અને મરણથી આ જીવલોક રાત દિવસ અતિશય રૂપે બળતો રહે છે જેવી રીતે અગ્નિથી સળગતા ઘરનું રક્ષણ કરવાને

मज्वलद्गृहात् निष्काशितं सत् 'पच्छापुराए' पश्चात् पुरा च तत्र पश्चात्-आगामिनि काले पुरा च=पूर्वमिदानीमेव "हियाए" हिताय=उपकाराय "सुहाए" सुखाय सुखोत्पादनाय 'खेमाए' क्षेमाय कल्याणाय 'निस्सेयसाए' निःश्रेयसाय=अभ्युदयाय 'आणुगामियत्ताए' आनुगामिकतायै भाविवंशपरम्परोपयोगाय 'भविस्सइ' भविष्यति एवं विचार्य गृहपतिः मज्वलद्गृहात् स्वल्पभारं बहुमूल्यं मणिगणादिवस्तुजातमादाय सुरक्षितस्थाने गत्वा निवसतीति भावः। दृष्टान्तं प्रदर्श्य दार्ष्टान्तिकमाह 'एवामेव' इत्यादि 'एवामेव देवाणुप्पिया' एवमेव देवानुप्रियाः हे देवानुप्रिय! भगवन्! यथा तस्य गृहपतेस्तादृशमल्पभारं बहुमूल्यकं वस्तु रक्षितं सत् हिताद्यर्थं भविष्यतीति विचारो भवति, विचार्य तद्

हुए घर से निकाली गई यह अल्पभारवाली कीमती वस्तु (पच्छापुराए) आगामी काल में और इस समय में "हियाए" यह उपकारक हो रही है, इसी तरह से (सुहाए) सुख के लिये, (खेमाए) कल्याण के लिये (निस्सेयसाए) अभ्युदय के लिये (आणुगामियत्ताए) भावी वंश परम्परा के उपभोग के लिये (भविस्सइ) होगी इस प्रकार विचार कर वह गृहस्थ जलते हुए अपने घर से स्वल्पभारवाली कीमती वस्तु-रत्न मणिकणादि को-लेकर के सुरक्षित स्थान में आकर रहने लगता है। इस प्रकार दृष्टान्त प्रदर्शित कर इस का समन्वय अब यह दार्ष्टान्त के साथ करते हुए कहते हैं कि-(एवामेव) इसी तरह से (देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय! भगवन्-जिस प्रकारे से उस गृहपति का यह अल्पभारवाली कीमती वस्तु रक्षित होती हुई हितादिक के साधन के लिये है (ऐसा विचार होता है और ऐसा विचार कर ही वह उसके

ओछा વજનની પણ બારે મૂલ્યની વસ્તુઓ (पच्छापुराए) હવે પછીના સમયમા અને (हियाए) હિતકારક, (सुहाए) સુખકારક, (खेमाए) કલ્યાણ કારક, (निस्सेयसाए) અને અભ્યોદય કારક બનશે, (आणुगामियत्ताए) અને ભાવી વંશ પરંપરાને માટે પણ ઉપયોગી (भविस्सइ) થઈ પડશે. આ રીતે વિચાર કરીને, તે ગૃહસ્થ પોતાના સળગતા મકાનમાથી બહુ ઓછા વજનની પણ કીમતી વસ્તુઓ (રત્ન, મણિ વગેરે) લઈને સુરક્ષિત સ્થાનમાં જઈને રહે છે આ પ્રમાણે દૃષ્ટાંત આપીને હવે સૂત્રકાર પોતાની સરખામણી પણ તે ગૃહસ્થની સાથે કરતાં કહે છે કે (एवामेव) એજ પ્રમાણે (देवाणुप्पिया) હે દેવાનુપ્રિય મારી પાસે પણ આત્મા રૂપી રત્ન મોજુદ છે એવી રીતે પેલા ગૃહસ્થે જોયેલ વિચાર કર્યો કે ઓછા ભાર વાળી પણ કીમતી વસ્તુને જો સળગતા મકાનમાંથી બહાર લાવી શકાય તો તે પોતાને માટે ઉપયોગી,

रम्-यस्मिन् वस्तुनि भारातिशयो न भवेदपितु उत्थापने यत् सरलं लघु भवति तत् तथा 'मोल्लगुरुए' मूल्यगुरुकम् यस्य वस्तुनो मूल्यमधिकं भवति तत् मणिरत्नादिकम् 'त गहाय' तद् गृहीत्वा, 'आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ' आत्मना एकान्तमन्तमवक्रामति, तद् तादृशमल्पभारं बहुमूल्यकं च वस्तु गृहीत्वा आत्मना स्वयमेव एकान्तं जनरहितम् अन्तं=भूभागम् अवक्रामति=गच्छति गृहे दह्यमाने सति गृहपतिर्गृहे यदधिकमूल्यकमल्पभारं च वस्तु भवति तत्स्वयमेव गृहीत्वा सुरक्षितस्थानं गच्छतीत्यर्थः किंविचार्य एकान्तस्थानं गच्छतीत्याह 'एस मे' इत्यादि 'एस मे नित्थारिए समाणे, एतन्मे निस्तारितं सत्-एतत् अल्पभारकमतिमूल्यकमिदमेव वस्तु

हल्का और कीमत हो बहुत बड़ी ऐसे मणिरत्नादिरूप उपकरण को लेकर (आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ) अपने आप किसी एकान्त निरुपद्रव स्थान में जाता है मकान में आग लगने पर वजनदार भी कीमती वस्तु का उठाना (उठाने में कठिनता पड़ ने के कारण) नहीं हो सकता है। इसलिये बुद्धिमान् गृहस्थ यही करता है कि जो अल्पभार वाली सारभूत कीमती वस्तु होती है उसको जितनी जल्दी बनता है उठा लेता है क्यों कि इसी में कुशलता और आनंद है देर करने पर तो फिर उठाना ही बड़ा कठिन होता है और उठाने वाले का भी वह नाश कारक हो जाता है। वह गृहस्थ अल्प वजनवाली सारभूत वस्तु रत्नादि को उठाकर जो एकान्त निरुपद्रव स्थान में जाता है उसका कारण यह हैं कि वह विचारता है कि-"एस मे नित्थारिए समाणे" जलते

બીજાને (મણિ રત્નાદિ રૂપ વજનમાં હલકા પણ ભારે મૂલ્યવાળાં) લઈ ને (आयाए एगतमत अवक्कमइ) તે કોઇ સુરક્ષિત સ્થાને ચાલ્યો જાય છે મકાનને આગ લાગે ત્યારે વજનદાર, કીમતી વસ્તુઓને બહાર કાઢવામાં ઘણી મુશ્કેલી પડે છે તેથી ડાહ્યો માણસ વજનદાર કીમતી વસ્તુઓને બહાર કાઢવાને બદલે વજનમા હલકી પણ ઘણી મૂલ્યવાન હોય એવી વસ્તુઓને જ બની શકે તેટલી ઝડપથી ઉપાડી ને બળતા ઘરમાથી બહાર નીકળી જાય છે. કારણ કે તેમા જ તેનુ શ્રેય રહેલુ છે જો આમ કરવામાં તે મોડુ કરે તો તે મૂલ્યવાન વસ્તુઓને બચાવવાનું પણ મુશ્કેલ થઈ પડે છે, અને કયારેક તો તે વસ્તુ બહાર કાઢવા જનારને પોતાના પ્રાણ પણ ગુમાવવા પડે છે તેથી બુદ્ધિમાન માણસ, હલકા વજનની, સારભૂત, અને મૂલ્યવાન રત્નાદિક વસ્તુઓ ને જ તદ્દન સુરક્ષિત સ્થાને લઇ જાય છે. કારણ કે તે એવો વિચાર કરે છે કે (एस मे नित्थारिए समाणे) બળતા ઘરમાથી બહાર કાઢવામા આવતી આ

स्यात्, 'बहुमए बहुमत'-सर्वैरपि माननीयत्वात् 'भंडकरंडगसमाणे' भाण्डकरण्डक समान भाण्डकरण्डकम् आभरणभाजन तत्समानस्तद्रूप आदेयश्चादिति। भाण्डसादृश्यमात्मनि कथितम्, भाण्डानाञ्चानित्यत्व प्रत्यक्षसिद्धमिति वस्तुत्व त्वादात्माप्यनित्यो भविष्यति तत्रश्च कस्य मोक्ष स्यादिति शंकां निराकर्तुमात्मना नित्यत्वप्रतिपादनायाह 'माण सियं' इत्यादि 'माण सिय' मान शीतम्=मया मान शीत मा स्पृशतु=मा बाधतु-एवमग्रेऽपि स्पृश् धातोरर्थयोगं सम्बन्धः करणीय 'माण उण्हं' मातम्-उष्णम् 'माणं खुहा' मात क्षुधा 'माण पिवासा'

होने से अनुमत है। (बहुमए) समस्त आत्मवादी सिद्धान्तकारों द्वारा स्वीकृत किया गया होने से बहुमत है। (भंडकरंडक समाणे) आभरणों से भरा हुए करडक समान आदेय होने से यह भाण्ड करण्डक के जैसा है।

यहां कोई ऐसी आशंका कर सकता है कि आत्मा में जो भाण्ड सादृश्यता कही गई है वह ठीक नहीं है, क्यों कि इस प्रकार के कथन से तो अनित्यता सिद्ध होती है, कारण-आत्मा नित्य वस्तु माना गया है और भण्ड अनित्य भाण्ड की अनित्यता प्रत्यक्ष दृष्ट होने से दृष्टान्त ठीक नहीं बैठता है। अतः यदि आत्मा में भण्डसादृश्य प्रकट किया जाता है तो आत्मा भी अनित्य हो जायगा फिर मोक्ष किसको प्राप्त होगा सो ऐसी आशंका की निवृत्ति के लिये आत्मा में नित्यत्व का प्रतिपादन करने के निमित्त कहा जाता है कि-(माण सीयं) मेरी इस आत्मा को शीत पीडा न करे, (माणं उण्हं) उष्ण पीडा न करो, (माण खुहा) क्षुधा पीडा न करे, (माण पिवासा) प्यास पीडा न कर

પણ માન્ય હોવાથી અનુમત છે) (बहुमए) તમામ આત્મવાદી સિદ્ધાન્તકારો વડે સ્વીકૃત કરાયેલ હોવાથી અનુમત છે (भंडकरंडगसमाणे) આભરણોથી (પરિપૂર્ણ) ભરેલા કરંડિયા સમાન અથવા ઇચ્છનીય વસ્તુઓ ભરેલી હોવાથી છે

અહીં કોઇ એવી શંકા કરે કે આત્માને આ (ભાણ્ડ) ભાંડે જે સમાનતા તે મેળ નથી ઉપજતા કથનમાં દોષ પ્રસંગ છે કારણ કે આત્માને નિત્ય માનવામાં આવેલ છે અને આ (ભાણ્ડ) ની અનિત્યતા તો પ્રત્યક્ષ અનુભવી શકાય છે માટે આ ઉપમા આભરણ રૂપવાની નથી આ રીતે જો આત્મામાં આ ભાંડની જેમ અનિત્યતામાં આવે તો આત્માને પણ અનિત્ય માનવો પડે. તો પછી મોક્ષ કોને થશે ? આ શંકાનું નિવારણ કરવા માટે આત્મામાં નિત્યપણું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહે છે (माण सीयं) મારા આ આત્માને ઠંડી ન પહોંચાડે (माणं उण्हं) તેને ગરમી કષ્ટ ન પહોંચાડે (माणं खुहा) તેને ભુખ કષ્ટ ન પડે,

क्षणाय प्रयतते तथा ममापि एकं रत्नं विद्यते यत् प्रदीप्तगृहाद्रक्षणयोग्यमिवविद्यते इति भावः मज्झवि आया एगे भंडे इट्ठे' ममापि आत्मा एकं भांडम्=भाण्डरूप एक आत्मा इष्टः वाञ्छितार्थपूरकत्वात्, 'कंते !' कान्तः कमनीयः हितप्रापकत्वात् 'पिए' प्रियः-सुखोत्पादकत्वात् 'मणुण्णे' मनोज्ञः शुभगतिदायकत्वात् "मणामे" मनोऽमः अक्षय सुखदायकत्वात् 'थेज्जे' स्थैर्यम् स्थिरस्वरूपः, अविनाशित्वात् 'वेस्सासिए' वैश्वासिकः मोक्ष प्राप्तौ विश्वासपात्रत्वात् 'संमए' संमतः तत्कृतकार्याणां संमतत्वात् 'अणुमए' अनुमतः=अनु पश्चात् मतः=अनुमतः विपरीतकरणादनन्तरमपि माननीय-

---

सरक्षण के लिये प्रयत्न करता है, उसी प्रकार मेरे पास भी एक रत्न मौजूद है जो प्रदिप्त-जलते हुए घर से रक्षा करने योग्य वस्तु की तरह रक्षा करने योग्य है-यही बात वह प्रदर्शित करते हुए कहते हैं--(मज्झ वि आया एगे भंडे) कि हे भदन्त ! मेरा आत्मा भी एक भाण्ड कीमती वस्तु है। (इट्ठे) वह मुझे वांछित-मनोरथरूप-अर्थ का पूरक होने से इष्टरूप है। (कंते) हितकी प्राप्ति कराने वाला होने से-कान्त है। (पिए) अव्याबाध सुख का उत्पादक होने से प्रिय है। (मणुण्णे) शुभ-गति का दाता होने से मनोज्ञ है। (मणामे) अक्षय सुखका दाता होने से मनोम है। (थेज्जे) अविनाशी होने से स्थिररूप है। (वेस्सासिए) मोक्ष की प्राप्ति में विश्वास पात्र होने से वैश्वासिक है। (संमए) तत्कृत कार्यों को संमत होने से संमत है। (अणुमए) विपरीत आचरण करने पर भी माननीय होने से-अनुकूल प्रवृत्ति नहीं करने पर भी मान्य

તથા કલ્યાણકારી થઇ પડશે, એવી જ રીતે મારી પાસે પણ એક રત્ન મોજૂદ છે કે જેની પણ બળતા ઘરમાંથી રક્ષા કરવા લાયક વસ્તુની જેમ-રક્ષા કરવાની જરૂર છે. એજ વાત આ રીતે પ્રગટ કરવામા આવી છે- (मज्झ वि आया-एगे भंडे) હે ભગવાન્ મારો આત્મા પણ એક અતિશય કીમતી વસ્તુ છે તે એક ભાંડ (પાત્ર) ના સમાન છે (इट्ठे) તે મારે માટે વાછિત-અર્થનો પૂરક હોવાથી ઇષ્ટ રૂપ છે, (कंते) તે હિતની પ્રાપ્તિ કરનાર હોવાથી કાન્ત છે, (पिए) તે અવ્યાબાધ સુખ દેનાર હોવાથી મને પ્રિય છે, (मणुण्णे) તે શુભગતિ અપાવનાર હોવાથી મનોજ્ઞ છે, (मणामे) અક્ષય સુખનો દાતા હોવાથી મનોમ છે, (थेज्जे) અવિનાશી હોવાથી સ્થિરરૂપ છે, (वेस्सासिए) મોક્ષની પ્રાપ્તિ માટે વિશ્વાસ પાત્ર હોવાથી વૈશ્વાસિક છે (समए) તેની મારફત કરાયેલાં કાર્યો સાથે સમત હોવાથી સમત છે, (अणुमए) (વિપરીત આચરણ કરવા છતા પણ માનનીય હોવાથી-અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ ન કરવા છતા

स्यात्, 'बहुमए बहुमत –सर्वैरपि माननीयत्वात् 'भंडकरंडगसमाणे' भाण्डकरण्डक समानः भाण्डकरण्डकम् आभरणभाजन तत्सामानमनुपम्य आदेयत्वादिति। भाण्डसादृश्यमात्मनि कथितम्, भाण्डानामनित्यत्वं प्रत्यक्षसिद्धमिति वस्तुस्य स्यादात्माप्यनित्यो भविष्यति ततश्च कस्य मोक्ष स्यादिति शंकां निराकर्तुमात्मनो नित्यत्वप्रतिपादनायाह 'माणं सियं' इत्यादि 'माणं सियं' मान शीतम्=मा मामात्मानं शीतं वा स्पृशतु=मा बाधतु-एवमग्रेऽपि स्पृश् धातोर्यथायोगं सम्बन्धः करणीयः 'माण उण्हं' मामम्-उष्णम् 'माणं खुहा' मात क्षुधा 'माण पिवासा'

होने से अनुमत है। (बहुमए) समस्त आत्मवादी सिद्धान्तकारों द्वारा स्वीकृत किया गया होने से बहुमत है। (भंडकरंडक समाणे) आभरणों से भरे हुए करंडक समान आदेय होने से यह भाण्ड करण्डक के जैसा है।

यहां कोई ऐसी आशंका कर सकता है कि आत्मा में जो भाण्ड सादृश्यता कही गई है वह ठीक नहीं है, क्यों कि इस प्रकार के कथन से तो अनित्यता सिद्ध होती है, कारण–आत्मा नित्य वस्तु माना गया है और भण्ड अनित्य, भाण्ड की अनित्यता प्रत्यक्ष दृष्ट होने से दृष्टान्त ठीक नहीं बैठता है। अतः यदि आत्मा में भण्डसादृश्य प्रकट किया जाता है तो आत्मा भी अनित्य हो जावेगा फिर मोक्ष किसको प्राप्त होगा सो ऐसी आशंका की निवृत्ति के लिये आत्मा में नित्यत्व का प्रतिपादन करने के निमित्त कहा जाता है कि–(माणं सीयं) मेरी इस आत्मा को शीत पीडा न करे, (माण उण्हं) उष्ण पीडा न करे, (माण खुहा) क्षुधा पीडा न करे, (माणं पिवासा) प्यास पीडा न करे

પણ માન્ય હોવાથી અનુમત છે) (बहुमए) તમામ આત્મવાદી સિદ્ધાંતકારો વડે સ્વીકૃત કરાયેલ હોવાથી બહુમત છે (भंडकरंडकसमाणे) આભરણો (ઘરેણા) થી ભરેલા કરંડિયા સમાન અથવા કીમતી વસ્તુથી ભરેલી પેટી જેવો છે

અહીં કોઇ એવી શંકા કરે કે આત્માને ભાંડ (વાસણ) સાથે સરખાવવો તે યોગ્ય નથી, ઉપરોક્ત કથનમાં દોષ જણાય છે કારણ કે આત્માને નિત્ય માનવામાં આવેલ છે, જ્યારે ભાંડ (વાસણ) ની અનિત્યતા તો પ્રત્યક્ષ અનુભવી શકાય છે માટે આ ઉપમા બરાબર જણાતી નથી. આ રીતે જો આત્માને ભાંડ-પાત્રની સાથે સરખાવવામાં આવે તો આત્માને પણ અનિત્ય માનવો પડશે. તો પછી મોક્ષની પ્રાપ્તિ કોને થશે ? આ બાબતની શંકાનું નિવારણ કરવા માટે આત્મામાં નિત્યપણાનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહ્યું છે કે (माणं सीयं) મારા આ આત્માને ઠંડી કષ્ટ ન પહોંચાડે (माण उण्हं) તેને ગરમી કષ્ટ ન પહોંચાડે, (माणं खुहा) તને ક્ષુધા પરેશાન કરી ન મૂકે

मातं पिपासा ' माणं चोरा ' मातं चौराः ' माणं वाला ' मातं व्यालाः, श्वापद-भुजंगादयः ' माणं दंसा ' मातं दंशाः दंशो नाम क्षुद्रजन्तुविशेषो बृहदाकारो मशकवत् रक्तपानकर्त्ता। 'माणं मसया' मातं मशकाः 'माणं' मातम् 'वाइय पित्तिय सेंभिय सन्निवाइय' अत्र प्रथमा बहुवचनलोपो बोध्यः तेन वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसांनिपातिकाः इति, वातिकाश्च पैत्तिकाश्च श्लैष्मिकाश्च सांनिपातिकाश्चेति तथा, अत्र वातिकाः=वातविकारजनिताः, पैत्तिकाः पित्तविकारजनिताः, श्लैष्मिकाः= श्लेष्मा कफः, तज्जनिताः कफविकारजनिताः, सांनिपातिकाः=संनिपातः= वातपित्तकफविकाररूपस्त्रिदोषः, तज्जनिता त्रिदोषजनिताः 'विविहा' विविधाः= नानाप्रकाराः ' रोगायंका ' रोगातङ्काः तत्र रोगाः=चिरघातिनो ज्वरादयः, आतङ्काः=सद्योघातिनो हृदयशूलादयः, तथा ' परिसहोवसग्गा ' परिषहोपसर्गाः-परिषहाः द्वाविंशतिभेदभिन्नाः उपसर्गा देवादिकृताः-अथवा परिषहा एव उपसर्गाः विघ्नकारका इति परिषहोपसर्गाः 'फुसंतु ' स्पृशन्तु अत्र 'मा' इतिपदमनुवर्त्तनीयं

(माणं चोरा) चोर पीडा न करें, (माणं वाला) श्वापद भुजग आदि पीडा न करें, 'माण दंसा' दंश (डांस) पीडा न करें, 'माणं मसया' मशक-मच्छर पीडा न करें ' माणं वाइय पित्तिय सेंभिय सन्निवाइय ' वात विकार जनित रोग, पित्त विकारजनित रोग और वातपित्तकफ इन तीनों के एक साथ विकार से त्रिदोष से उत्पन्न रोग इत्यादि 'विविहारोगायंका' अनेक प्रकार के चिरकाल में घातकरने वाले ज्वरादिक रोग और शीघ्रता से घात करने वाले हृदयशूल आदि आतंक इसे पीडा न करें 'परीसहोवसग्गा' बाईस प्रकार के परीषह और देवादिकृत उपद्रवरूप उपसर्ग अथवा-विघ्नकारक होने से परीषहरूप उपसर्ग 'माणं फुसंतु' इसे पीडा न करें, ये शीतादिक मेरी आत्मा को पीडा न

(माण पिवासा) તેને તૃષા સહન કરવી ન પડે, (माण चोरा) તેને ચોરો વડે પીડા સહન કરવી ન પડે, (माणं वाला) તેને શ્વાપદ, સર્પ વગેરે પીડા ન પહોંચાડે, (माण दंसा) તેને ડાંસ પીડા ન પહોંચાડે, (माण मसया) મચ્છરો તેને પીડા ન પહોંચાડે, (माण वाइय पित्तिय सेंभिय सन्निवाइय) તેને વાત, પિત્ત કે કફના વિકારથી ઉત્પન્ન થતા રોગો તથા વાત, પિત્ત અને કફ એ ત્રણનો એક સાથે વિકાર થવાથી થતા સન્નિપાત વગેરે રોગ સહન કરવા ન પડે, (विविहा रोगायंका) લાંબે સમયે પ્રાણ હરનારા અનેક પ્રકારના તાવ વગેરે રોગ તથા ટૂંકા સમયમાં જ પ્રાણ હરનારા હૃદયશૂલ વગેરે તેને સહન કરવા ન પડે, (परीसहोसवग्गा) બાવીસ પ્રકારના પરીષહ અને દેવા મનુષ્ય વગેરે કૃત ઉપદ્રવ રૂપ ઉપસર્ગ અથવા વિઘ્ન કારક હોવાથી પરીષહરૂપ ઉપસર્ગ- (माणं फुसंतु) તેને પીડા ન પહોંચાડે- કંડી વગેરેના કષ્ટો મારા

तेन मा स्पृशन्तु' इत्यन्वयः, एते शीतादय ममात्मानं मा पीडयन्तु, इतिभावः। 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा-इति सम्यग् विचार्याऽयमात्मा मया सुष्ठुतया रक्षित इतिभाव । स किमर्थं रक्षित इत्यत आह 'एस मे' इत्यादि 'एस मे निस्सारिए समाणे' एष मे निस्तारितः सन् एष मे मम आत्मा निस्तारित सन् जरामरणादि पद्धिना ज्वलतः संसारवह्नेः निष्कासित सन् 'परलोयस्स' परलोकस्य 'हियाए' हिताय 'सुहाए' सुखाय 'खेमाए' क्षेमाय 'निस्सेयसाए' निःश्रेयसाय 'आणुगामियत्ताए' आनुगामिकतायै 'भविस्सइ' भविष्यति 'त इच्छामि णं देवाणुप्पिया' तदिच्छामि खलु देवानुप्रियः, तस्मात् कारणात् हे देवानुप्रिय ! भगवन् ! इच्छाम्यहं 'सयमेव पव्वाविउं' स्वयमेव प्रव्राजयितुम् स्वयमेव भगवतो हस्तेनैव मव्राजयितुं प्रव्रज्यां ग्राहयितुम्, सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहर

पहुँचावें-'त्ति कट्टु' ऐसा अच्छी तरह से विचार करके मैंने यह आत्मा अच्छी तरह से रक्षित किया है। यह किस प्रयोजन के लिये मैंने रक्षित किया है ? इसे वह स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि-'एस मे निस्सारिए समाणे' जरा और मरण आदि रूप अग्नि से जलते हुए इस संसाररूप गृह से निकाला गया यह आत्मा मुझे 'परलोयस्स' परलोक में 'हियाए' हितके लिये 'सुहाए' सुख के लिये, 'खेमाए' कल्याण के लिये 'निस्सेयसाए' अभ्युदय के लिये और 'आणुगामियत्ताए' अनुगमिकता के लिये अर्थात् परभव में सुख के लिये 'भविस्सइ' होगा 'त इच्छामि णं देवाणुप्पिया' इसलिये हे देवानुप्रिय ! भगवन् ! मैं चाहता हूं अर्थात् मैं प्रार्थना करता हूं कि-(सयमेव पव्वाविउं) मैं आपके हाथ से ही दीक्षित होऊं-आप स्वयं ही मुझे सदोरकमुखवस्त्रिका,

આત્માને પીડા ન પહોંચાડે- (तिकट्टु) એમ સમજીને મે આ આત્માનું બધી સારી રીતે રક્ષણ કર્યું છે આ માટે તેનું રક્ષણ કર્યું છે ? તો તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવાને માટે કહે છે કે (एस मे निस्सारिए समाणे) જરા મરણ વગેરે રૂપ અગ્નિથી બળતા આ સંસાર રૂપી ઘરમાંથી બહાર કાઢવામાં આવેલો આ આત્મા (परलोयस्स) પરલોકમાં (हियाए) મારા હિતને માટે, (सुहाए) સુખને માટે, (खेमाए) કલ્યાણને માટે (निस्सेयसाए) અભ્યુદયને માટે અને (आणुगामियत्ताए) આનુગામિતાને માટે-એટલે કે પરભવમાં સુખને માટે (भविस्सइ) ઉપયોગી થઈ પડશે (त इच्छामि णं देवाणुप्पिया) તેથી હે દેવાનુપ્રિય ! મારી એવી ઇચ્છા છે કે હું આપને વિનતિ કરૂં છું કે (सयमेव पव्वाविउं) આપ પોતે જ મને દીક્ષા આપો આપ આપે જ મને દોરા સહિત મુહપત્તિ રજોહરણ વગેરે રૂપ મુનિવેષ

रणादि मुनिवेषदाने ' सयमेव मुंडाविउ ' स्वयमेव मुण्डयितुम् केशलुंचनेन ' सयमेव सेहाविउं ' स्वयमेव सेधयितुम्, प्रत्युपेक्षणादि क्रियाकलापग्राहणेन ' सयमेव सिक्खाविउं ' स्वमेय शिक्षयितुम्, ग्रहणासेवना शिक्षाग्रहणेन ' सयमेव ' स्वयमेव=स्वात्मनैव ' आयारगोयरं ' आचारगोचरम्, तत्र आचारः= श्रुतज्ञानादि विषयकमनुष्ठानं कालाध्ययनादिः गोचरो भिक्षाटनम्–तथाचाचारगोचरयोः समाहारद्वन्द्वः तथाचाचारगोचरं स्वयमेवाख्यापयितुमिच्छामीति क्रियया सम्बन्धः। तथा ' विणयवेणइयचरणकरणजायामायावत्तीयं ' विनय वैनयिकचरणकरणयात्रामात्राप्रत्ययिकम् तत्र विनयो गुरुशुश्रूषारूपः, वैनायिकं विनयजनितं तत्फलं कर्मक्षयादिकम् कीदृशेन विनयेन शीघ्रं कर्मक्षयो भवतीत्यादिरूपम्, चरणं व्रतादि, करणं पिण्डविशुद्ध्यादि, यात्रा=संयमयात्रा मात्रा=संयमनिर्वाहार्थमेवाहारमात्रा, अत्र विनयादीनां द्वन्द्वः ततश्च विनयादीनां

रजोहरण आदिरूप मुनिवेष प्रदान करें ' सयमेव मुंडाविउं ' आप स्वयं ही मुझे मुण्डित करें–अर्थात्–आपसे ही मैं केशों का लुंचन कराउं, ' सयमेव सेहाविउं , आप से ही प्रतिलेखन आदि क्रियाकलाप को ग्रहण करूँ ' सयमेव सिक्खाविउं ' ग्रहणशिक्षा और आसेवनाशिक्षा आप स्वयं ही मुझे सिखावे। तथा ' सयमेव आयारगोयरं ' श्रुतज्ञानादि संबधी अनुष्ठान–कालाध्ययन आदि आचार को तथा भिक्षाट नरूप गोचर को इन्हें आप स्वयं मुझे समझावें ऐसा मैं चाहता हूं। तथा—'विणयवेणइयचरणकरणजायामायवत्तियं धम्ममाइक्खिउं ' विनय–गुरुशुश्रूषारूप विनय, वैनयिक – कर्मक्षयादि रूप विनयजन्य फल, व्रत वगैरह चरण, पिण्ड विशुद्धि आदि करण, संयम संबंधी यात्रा–सयमयात्रा, तथा संयम के निर्वाह निमित्त ही जो ग्रहण करना वह मात्रा–आहार मात्रा, इन सब विनयादि विषय का जिसमें समा-

ધારણ કરાવો (सयमेव मुंडाविउ) આપ પોતે જ મને મુડિત કરો મારા કેશનો લોચ કરો (सयमेव सेहाविउ) આપ પ્રતિલેખના વગેરે ક્રિયા ઓ શીખવાડો (सयमेव सिक्खाविउ) આપ પોતેજ મને ગ્રહણશિક્ષા તથા આસેવના શિક્ષા પ્રદાન કરો તથા (सयमेव आयारगोयरं શ્રુતજ્ઞાનાદિ સબંધી અનુષ્ઠાન– કાલાધ્યયન વગેરે આચાર, તથા ભિક્ષાટન રૂપ ગોચરી વગેરે આપની પાસે જ હું શીખવા માગુ છુ તથા विणयवेणइयचरणकरणजायामायावत्तिय धम्ममाइक्खिउं) વિનય– ગુરુ શુશ્રૂષા રૂપ વિનય, વૈનયિક–કર્મક્ષયાદિ રૂપ વિનયજન્ય ફળ, વ્રત વગેરે ચરણ, પિંડવિશુદ્ધિ વગેરે કરણ, સંયમના નિર્વાહને માટે જ ગ્રહણ કરવાના આહારની માત્ર વગેરે વિષયનો જેમાં

इत्यादिपर्यन्तं यत्रासौ विनयवैनयिकचरणकरणयात्रामात्रावृत्तिकः, तम् एतादृशम् धर्म्मम् ' आइक्खित्तए ' आख्यापयितुम् भवत्सकाशादेव विज्ञातुमिच्छामीति भावः। स्कन्दकस्य प्रव्रज्याविषयकमुत्साहं तद्ग्रहणसामर्थ्यं च केवलालोकेन विलोक्य भगवान् स्वयमेव स्कन्दकं प्रव्राजयतीत्याशयनाह-' तएणं समणे ' इत्यादि। ' तएणं ' ततः खलु ततस्तदनन्तरम् स्कन्दकस्य प्रार्थनानन्तरम् 'समणे भगवं महावीरे ' श्रमणो भगवान् महावीरः ' सयमेव कच्चायणसगोत्तं ' स्वयमेव स्कन्दकं कात्यायनगोत्रम् ' सयमेव पव्वावेइ ' स्वयमेव प्रव्राजयति ' जाव-धम्ममाइक्खइ, यावत् धर्ममाख्याति' इह यावत्पदेन 'मुंडावित्ता' इत्यारभ्य 'मायाबत्तिए' इत्यन्तं सर्वमपि पदं बोध्यम्। धर्माख्यानप्रकारमेव दर्शयति ' एवं देवाणुप्पिया, गंतव्वं ' एवं देवानुप्रिय। गन्तव्यम्, एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण युग-

वेश हो ऐसे धर्म का आप स्वयं मुझे उपदेश करें ऐसा मैं चाहता हूं।" इस तरह प्रभु से जब स्कन्दक का प्रव्रज्या ग्रहण करने का उत्साह और प्रव्रज्या वहन करने का सामर्थ्य अपने केवलज्ञानरूप आलोक (प्रकाश) से देखलिया तब उन्हों ने उनको स्वयं अपने हाथों से दीक्षा दी"। अब सूत्रकार इसी बात को स्पष्ट करने के लिये कहते हैं कि (तएणं) स्कन्दक की प्रार्थना के बाद (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने ' सयमेव कच्चायणसगोत्तं' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक को (सयमेव पव्वावेइ) स्वयं अपने हाथ से ही दीक्षा प्रदान की। (जाव धम्ममाइक्खइ) यावत् उनको मुनिधर्मका उपदेश दिया। प्रभु ने मुनिधर्म उसे किस रूप से समझाया? यही बात अब सूत्रकार प्रकट करते हैं- (एवं देवाणुप्पिया गंतव्वं) हे देवानुप्रिय! स्कन्दक! इस प्रकार से चलना चाहिये,

સમાવેશ થતો હોય એવા ધર્મનો આપ પોતે જ મને ઉપદેશ આપો એવી મારી ઇચ્છા છે આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે સ્કન્દકનો પ્રવ્રજ્યા દીક્ષા ગ્રહણ કરવાનો ઉત્સાહ જોયો અને તેનું પાલન કરવાનું તેમનું સામર્થ્ય પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી જાણી લીધું, ત્યારે ભગવાને પોતેજ તેને દીક્ષા આપી હવે એજ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (તએણં) સ્કન્દકની ઉપરોક્ત વિનતિ સાંભળીને (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (કચ્ચાયણસગોત્તં) કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકને (સયમેવ પવ્વાવેઇ) પોતાના હાથે જ દીક્ષા આપી (જાવ ધમ્મમાઇક્ખઇ) અને ઉપરોક્ત જે પ્રકારની ઇચ્છા તેમણે પ્રકટ કરી હતી તે રીતે મુનિધર્મ તેમને સમજાવ્યો, હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે ભગવાન મહાવીરે સ્કન્દકને મુનિધર્મ કેવી રીતે સમજાવ્યો

(एवं देवाणुप्पिया गंतव्वं) હે દેવાનુપ્રિય, સ્કન્દક આ પ્રમાણે ચાલવું

मात्र भून्यस्तदृष्टिरूपया ईर्यासमित्या, हे देवानुप्रिय ! त्वया गन्तव्यम्=गमनं कर्तव्यम् 'एवं चिट्ठियव्वं' एवं स्थातव्यम् जनानां गमनागमनवर्जिते स्थाने संयमात्मप्रवचन-विराधनापरिहारपूर्वकमूर्ध्वस्थाने स्थातव्यम् 'एवं निसीइयव्व' एव निषत्तव्यम्-भूमिभागं प्रमार्ज्य उपवेष्टव्यम् 'एवं तुयट्टियव्वं' एवं

प्रभु ने स्कन्दक अनगार को समझाया-कि हे देवानुप्रिय ! इस मुनि धर्म को निर्दोष रूप से पालन करने के लिये तुम्हें चाहिये कि तुम युग मात्र भूमि को आगे देखते हुए चलो । इससे यह लाभ होता है कि अपनी असावधानी से जीव की विराधना नहीं होवे । इस तरह से चल ने की प्रवृत्ति करने वाला साधु ईर्यासमिति का आराधक कहलाता है । मुनिधर्म को निर्दोष रूप से निर्वाह करने के लिये इस समिति का पालन आवश्यक है । इसमें पर के प्राणों की रक्षा करने के साथ २ अपने अहिंसारूप महाव्रत का रक्षण अच्छी तरह से होता है । (एवं चिट्ठियव्वं) तथा हे देवानुप्रिय ! जिस जगह अनेक लोगों का गमनागमन हो ऐसी जगह में, संयम में बाधा न हो, अपनी निज की कोई बाधा न होय, तथा प्रवचन में कोई बाधा न आवे, इस तरह खड़ा रहना पर चाहिये । (एवं निसीइयव्वं) तथा मुनि का यह भी कर्तव्य है कि जहां वह बैठना चाहते हैं तो पहिले वह उस को अपने प्रमार्जिका से प्रमा-

---

જોઇએ તાત્પર્ય એ છે કે મુનિએ, મુનિધર્મનું પાલન કરવાને માટે જે માર્ગે ચાલવાનું હોય તે માર્ગે બરાબર સામે નજર નાખીને ચાલવું જોઇએ આ પ્રમાણે સાવધાની રાખવાથી જીવની હિંસા થતી નથી આ પ્રમાણે ચાલનાર સાધુ ઇર્યાસમિતિનું પાલન કરનાર ગણાય છે. મુનિધર્મનું નિર્દોષપણે પાલન કરવા માટે ઇર્યાસમિતિનુ પાલન કરવુ આવશ્યક ગણાય છે એમ કરવાથી અન્ય જીવોના પ્રાણોનુ રક્ષણ થાય છે એટલુ જ નહી પણ અહિંસારૂપ મહાવ્રતનું પણ સારી રીતે પાલન થાય છે

(एव चिट्ठियव्वं) હે દેવાનુપ્રિય ! જે જગ્યાએ ઘણા માણસોની અવર જવર થતી હોય એવી જગ્યામાં, સંયમના પાલનમાં કોઇ મુશ્કેલી ન પડે, તથા પોતાના તરફથી અન્ય જીવોને કોઇ જાતની મુશ્કેલી ન પડે, એ રીતે ઉભા રહેવું જોઇએ.

(एव निसीइयव्वं) મુનિની એ ફરજ છે કે જ્યાં તે બેસવા માગતા હોય તે જગ્યાને પેહેલાં રજોહરણથી સાફ કરવી જોઇએ, ત્યારપછી ત્યા બેસવું

स्वरजोहरणेन प्रमार्जनपूर्वकमेव पार्श्वपरिवर्तनं कर्तव्यम्। 'एवं भुंजियव्वं' एवं भोक्तव्यम् अङ्गारधूमादिदोषवर्जितमाहारादि भोक्तव्यमिति भावः 'एवं भासियव्वं' एवं भाषितव्यम्-सावद्यभाषा परिवर्जनेन भाषासमित्या वक्तव्यम्। 'एवं उट्ठाए उट्ठाय' एवमुत्थयोत्थाय एवम्=प्रमादनिद्रानिराकरणेन उत्थया आत्मशक्त्या उत्थाय 'पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं' प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु एकेन्द्रियादारभ्य पञ्चेन्द्रियपर्यन्तेषु तत्र प्राणाः=द्वि वि चतुरिन्द्रियास्तेषु तथा भूताः=वनस्पतयस्तेषु, जीवा पञ्चेन्द्रियास्तेषु सत्त्वा =पृथिव्यप्तेजो वायुषु 'संजमेणं' संयमेन=उपक्षमेन संजमियव्वं' संयन्तव्यम्=यतितव्यम् यथा

जित करके पश्चात् वहां बैठे। (एवं तुयट्टियव्वं) सोते समय उसे इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि यदि वह करवट बदलता है तो उसे पहिले उस स्थान को और अपने पार्श्वभाग को प्रमार्जिका आदि से प्रमार्जित कर लेना चाहिये, तब जाकर वह करवट बदले। (एवं भुंजियव्वं) इस प्रकार से भोजन करना चाहिये अर्थात् आहार संबंधी दोषों को टालकर एवं अंगार धूम वगैरह दोषों को दूर कर मुनि को शुद्ध आहार करना चाहिये। (एवं भासियव्वं) बोलते समय भाषा समिति के अनुसार ही बोलना चाहिये। साधु को सावद्यभाषा का परिहार सदा करना चाहिये-हित, मित, वचन ही बोलना चाहिये। (एवं उट्ठाए उट्ठाय) अपनी आत्मशक्ति से उठकर-अर्थात् प्रमाद निद्रा का त्याग पूर्वक सावधान होकर-विवेक युक्त होकर (पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं) श्रमण निर्ग्रन्थ का कर्तव्य है कि वह प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों की यतना से सदा रक्षा करता रहे। यही बात (संजमेणं संजमियव्वं) सूत्रपाठ

જોઈએ, (एवं तुयट्टियव्वं) પડખું બદલતી વખતે પણ મુનિએ સાવધાની રાખવી જોઈએ-સૂતી વખતે પડખું બદલવાની જરૂર પડે ત્યારે મુનિએ જે બાજુ પડખું બદલવું હોય તે બાજુને રજોહરણથી સાફ કરીને પડખું ફેરવવું જોઈએ, (एवं भुंजियव्वं) આ પ્રમાણે ભોજન કરવું જોઈએ મુનિએ નિર્દોષ આહાર કરવો જોઈએ-આહાર સંબંધી દોષો રાખીને આહાર લેવો જોઈએ (एवं भासियव्वं) બોલતી વખતે ભાષા સમિતિનું પાલન કરવું જોઈએ. સાધુએ સાવદ્ય (દોષ યુક્ત) ભાષાનો સદા પરિત્યાગ કરવો જોઈએ હિત, મિત વચનો જ બોલવા જોઈએ

(एवं उट्ठाए उट्ठाय) પોતાની આત્મ શક્તિથી ઊઠીને-જોડાઈ કે પ્રમાદ તથા નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને, સાવધેતી પૂર્વક-વિવેકયુક્ત બનીને (पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं) મુનિએ પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વોની યતના પૂર્વક રક્ષા કરવી જોઈએ. એજ વાત (संजमेण संजमियव्वं) આ સૂત્ર પાઠ

माणादिनां विराधना न भवेत्तथा कर्त्तव्यमित्यर्थः। 'अस्सिंच ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं' अस्मिंश्च खलु अर्थे प्राणादि रक्षणरूपे प्रयोजने न किञ्चिदपि प्रमादयितव्यम् हे स्कन्दक! योऽर्थः चारित्रपालनरूपो धर्मः प्रतिपादितस्तस्मिन्नर्थे त्वया कथमपि प्रमादो न विधेय इति, 'तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्ययनगोत्रः 'समणस्स भगवओ, महावीरस्स' श्रम-

द्वारा समझाई गई है। द्वीन्द्रियजीव, और चौइन्द्रियजीव ये प्राण शब्द से, वनस्पतिकायिक जीव भूतशब्द से, पंचेन्द्रिय जीव जीवशब्द से और पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक ये एकेन्द्रिय जीव सत्त्वशब्द से ग्रहण किये हैं तात्पर्य कहने का यह है कि संयमी साधु को अपनी हरएक प्रकार की प्रवृत्ति ऐसी करनी चाहिये कि जिससे किसी भी जीवका विराधना न हो।

(अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस प्राणादि रक्षण रूप प्रयोजन-संयम में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। प्रभु स्कन्दक अनगार को समझाते हुए उनसे कह रहे हैं कि हे स्कन्दक! जो चारित्र पालनरूप अर्थधर्म-तुम्हें मैंने पालन निमित्त प्रतिपादित किया है उस अर्थ में-कर्तव्य में कथमपि प्रमाद का सेवन नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते) इस प्रकार जब श्रमण भगवान महावीर प्रभुने उनको अनगार धर्म का स्वरूप समझाया-तब उन कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं

વડે સમજાવવામા આવી છે (પ્રાણ) પદથી દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે (ભૂત) પદથી વનસ્પતિકાયના જીવો ગ્રહણ કરાયા છે (જીવ) પદથી પચેન્દ્રિય જીવો અને (સત્વ) પદથી પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય અને વાયુકાયના જીવો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સયમી સાધુની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ એવી હોવી જોઇએ કે જેનાથી જીવોની વિરાધના ન થાય.

(अस्सिं च ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) આ પ્રાણ વગેરેના રક્ષણ રૂપ પ્રયોજનમા (સંયમમા) બિલકુલ પ્રમાદ કરવો જોઇએ નહીં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દક અણગારને સમજાવે છે કે હે સ્કન્દક! જે શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનું પાલન કરવાનો મેં તમને ઉપદેશ આપ્યો છે, તેના પાલનમાં તમારે બિલકુલ પ્રમાદ સેવવો નહીં (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते! આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકને અણગાર-ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવ્યું ત્યારે તેમણે (समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूव)

गस्य भगवतो महावीरस्य 'इम एयारूव' इममेतद्रूपम् 'धम्मिय' धार्मिकम् धर्मप्रधानं चारित्रपालनरूपम् 'उवएस' उपदेशं 'सम्म पडिवज्जइ' सम्यक् संपतिपद्यते, सयम स्वीकरोतीत्यर्थः। अथासौ स्कन्दकः ततः किंकरोतीत्याह-'तमाणाए' इत्यादि। 'तमाणाए' तदाज्ञया=भगवदाज्ञया 'तह गच्छइ' तथा गच्छति तथा = ईर्यासमित्या गच्छति = गमनागमनं करोति, 'तह चिट्ठइ' तथा तिष्ठति, सयमात्मप्रवचनविराधनापरिहारेण तिष्ठति 'तह निसीयई' तथा निषीदति भूमिप्रमार्जनपूर्वकमुपविशति 'तह तुयट्टइ' तथा त्वग्वर्तनपरि-

---

एयारूव) श्रमण भगवान महावीर के इस प्रकार के (धम्मियं) धार्मिक -धर्मप्रधान-चरित्र पालनरूप (उवएसं) उपदेश को (सम्म पडिवज्जइ) अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया अर्थात् संयम को धारण कर लिया।

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि संयम को अंगीकार करने के बाद स्कन्दक ने क्या किया—(तमाणाए तह गच्छइ) अब वे स्कन्दक अनगार प्रभु की आज्ञा के अनुसार (तह गच्छइ) ईर्यासमिति से गमनागमन करने लगे। (तह चिट्ठइ) संयम में अपने में तथा प्रवचन में जिस तरह विराधना न हो इस प्रकार से वे खडे रहने लगे। (तह निसीयई) प्रभु ने बैठने के लिये जैसा उन्हें समझाया था उस माफिक अब वे बैठने लगे-अर्थात् बैठने की भूमिका पहिले प्रमार्जन कर लेते बाद में वहां बैठते (तह तुयट्टइ) त्वग्वर्तन-करवट के बदलने के समय में साधु को क्या करके करवट बदलना चाहिये इस विषय में जैसा प्रभु ने स्कन्दक को उपदेश दिया था वे उस मार्ग के अनुसार यतनापूर्वक अपना पार्श्वपरिवर्तन-करवट बदलना करने लगे अर्थात्

શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના તે પ્રકારના (धम्मियं) ધાર્મિક-ચરિત્ર પાલનરૂપ (उवएसं) ઉપદેશને (सम्म पडिवज्जइ) બરાબર સારી રીતે સ્વીકારી લીધો એટલે કે સંયમ ધારણ કર્યો અને નિર્ગ્રંથ ધર્મનું પરોક્ષ રીતે પાલન કરવા માંડ્યું

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે સંયમ અંગીકાર કર્યા પછી સ્કન્દક અણગારે શું કર્યું? (तमाणाए तह गच्छइ) હવે તે સ્કન્દક પ્રભુની આજ્ઞાનુસાર ઈર્યાસમિતિનું પાલન કરીને અવર જવર કરવા લાગ્યા. (तह चिट्ठइ) સંયમમાં તથા પ્રવચનમાં વિરાધના ન થાય તે રીતે ઉભા રહેવા લાગ્યા (तह निसीयई) બેસવાની બાબતે કેવી રીતે બેસવું, એ બાબતમાં પ્રભુએ જે આજ્ઞા આપી હતી તે પ્રમાણે હવે પ્રમાર્જના કરીને (ધરેહરણથી બેસવાની જગ્યા સાફ કરીને) બેસવા લાગ્યા. (तह तुयट्टइ) પ્રભુની આજ્ઞાનુસાર યતનાપૂર્વક પડખું ફેરવવા લાગ્યા જોઈએ કે પડખું ફેરવતા પહેલાં તે જગ્યાનું તથા તે

प्राणादिनां विराधना न भवेत्तथा कर्त्तव्यमित्यर्थः। 'अस्सिंच ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं' अस्मिंश्च खलु अर्थे प्राणादि रक्षणरूपे प्रयोजने न किञ्चिदपि प्रमादयितव्यम् हे स्कन्दक! योऽर्थः चारित्रपालनरूपो धर्मः प्रतिपादितस्तस्मिन्नर्थे त्वया कथमपि प्रमादो न विधेय इति, 'तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्ययनगोत्रः 'समणस्स भगवओ, महावीरस्स' श्रम-

द्वारा समझाई गई है। द्वीन्द्रियजीव, और चौइन्द्रियजीव ये प्राण शब्द से, वनस्पतिकायिक जीव भूतशब्द से, पंचेन्द्रिय जीव जीवशब्द से और पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक ये एकेन्द्रिय जीव सत्त्वशब्द से ग्रहण किये हैं तात्पर्य कहने का यह है कि संयमी साधु को अपनी हरएक प्रकार की प्रवृत्ति ऐसी करनी चाहिये कि जिससे किसी भी जीवका विराधना न हो।

(अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस प्राणादि रक्षण रूप प्रयोजन-संयम में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। प्रभु स्कन्दक अनगार को समझाते हुए उनसे कह रहे हैं कि हे स्कन्दक! जो चारित्र पालनरूप अर्थधर्म-तुम्हें मैंने पालन निमित्त प्रतिपादित किया है उस अर्थ में-कर्तव्य में कथमपि प्रमाद का सेवन नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते) इस प्रकार जब श्रमण भगवान महावीर प्रभुने उनको अनगार धर्म का स्वरूप समझाया-तब उन कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं

વડે સમજાવવામાં આવી છે (પ્રાણ) પદથી દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે (ભૂત) પદથી વનસ્પતિકાયના જીવો ગ્રહણ કરાયા છે (જીવ) પદથી પંચેન્દ્રિય જીવો અને (સત્વ) પદથી પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય અને વાયુકાયના જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સયમી સાધુની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ એવી હોવી જોઇએ કે જેનાથી જીવોની વિરાધના ન થાય

(अस्सिं च ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्व) આ પ્રાણ વગેરેના રક્ષણ રૂપ પ્રયોજનમા (સયમમાં) બિલકુલ પ્રમાદ કરવો જોઇએ નહીં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દક અણગારને સમજાવે છે કે હે સ્કન્દક! જે શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનું પાલન કરવાનો મે તમને ઉપદેશ આપ્યો છે, તેના પાલનમાં તમારે બિલકુલ પ્રમાદ સેવવો નહીં (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते! આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકને અણગાર-ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવ્યું ત્યારે તેમણે (समणस्स भगवओ महावीरस्स इम एयारूव)

कीरओ जाव इत्याह=' इरिया समिए ' ईर्या समितः=ईर्यासमीर्या, ईर्या-रागद्वेष राहित्येन यतनया गमनम् = प्रखरकरसहस्रकरनिकरप्रकाशितासु दिक्षासु पदार्थवीक्षणक्षमे चक्षुर्द्वये मनुष्यरथचक्रतुरगखुरक्षुण्णतुषारादौ प्रासुकमार्गे तदेकतानमनसो मुनेः युगान्तरनिखातचरणरूप सङ्कुचितनिजपूर्वापरगात्रस्य पुरतोभूत्य स्तद्युगमात्रदृष्ट्या चेष्टनम्, तया समितः=सम्यक्प्रकारेण युक्तः, ईर्यासमितिमानि

तरह से कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो गये। अर्थात् भगवान् का उपदेश सुनकर वे भगवत्प्रतिपादित धर्मका आचरण करते हुए द्रव्य और भाव से अनगार हो गये। वे कैसे अनगार हुए ? इसके लिये कहते हैं कि (ईरियासमिए) राग और द्वेष से रहित होकर यतना पूर्वक गमन करना इसका नाम ईर्या है। अर्थात्-जब सूर्यकी प्रखर किरणों से मार्ग अच्छी तरह से प्रकाशित हो चुका हो सब दिशाओं में प्रकाश फैल गया हो-आंखों से किसी भी प्रकार की देखनेमें बाधा न हो, दोनों आंखों से पदार्थका निरीक्षण अच्छी तरह से हो सके ऐसे आयुक्त हो तथा तुषार आदि से युक्त मार्ग मनुष्यों के संचार से, रथचक्र के संचार से, तुरग आदि के खुरों से क्षुण्ण-शस्त्र परिणत अर्थात् अचित्त हो चुका हो ऐसे प्रासुक मार्ग पर चलने में उपयोग सहित होते हुए मुनिका जो धीर २ आगे२ की गुसरा प्रमाण भूमि देख कर शरीरको इधर उधर हिलाये डुलाये बिना गमन है इसका नाम

બન્યા એટલે કે ભગવાનનો ઉપદેશ સાંભળીને તેમણે પ્રરૂપિત ધર્મનું આચરણ કરતા કરતા દ્રવ્યે અને ભાવે અણગાર થઈ ગયા. તેઓ કેવા અણગાર થઈ ગયા ? તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(ईरियासमिए) તેઓ ઇર્યાસમિતિ યુક્ત અર્થાત્ રાગ દ્વેષથી રહિત બનીને યતના પૂર્વક ગમન કરતા, તેનું નામ (ઇર્યા) છે એટલે કે જ્યારે સૂર્યના તેજસ્વી કિરણોથી માર્ગ સારી રીતે પ્રકાશિત થઈ ગયો હોય, બધે દિશાઓમાં પ્રકાશ ફેલાયો હોય કોઈ પણ વસ્તુને આંખો વડે જોવામાં કોઈ પણ પ્રકારની મુશ્કેલી ન હોય ન હોય, બન્ને આંખોથી વસ્તુનું બરાબર નિરીક્ષણ કરી શકાતું હોય, તથા ધુમ્મસ વગેરેથી રહિત જોયો માર્ગ છે કે મનુષ્યોના અવર જવરથી, રથ ચક્રના સંચારથી, અને અશ્વ વગેરે પ્રાણીઓના પગની ખરીથી ખોદાયો (અચિત્ત) થઈ ચુક્યો હોય એવા પ્રાસુક (દોષ રહિત) માર્ગ પર ગાડાની ધૂંસરી પ્રમાણ ભૂમિને જોઈને, ધીમે ધીમે શરીરને આમ તેમ ફેરવ્યા વિના મુનિનું જે ગમન થાય છે તેને ઇર્યા કહે છે તે ઇર્યાથી જે સમિત(યુક્ત)

प्रमार्जनपूर्वकं पार्श्वपरिवर्त्तनं करोति 'तह भुंजइ' तथा भुङ्क्ते=अङ्गारधूमादिदोष वर्जनेनाहारादि करोति। 'तह भासइ' तथा भाषते सावद्यपरिवर्जनेन भाषा समित्या वदति, 'तह उट्ठाए उट्ठाय' तथोत्थायोत्थाय=तथा=निद्राप्रमादवर्जनेन उत्थया उत्थाय आत्मशक्त्या पूर्णरूपेण सावधानीभूयेत्यर्थः 'पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं' प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्वेषु=प्राणादिषु 'संजमेणं' संयमेन = रक्षणरूपेण 'संजमेइ' संयमयति=यतते जीवरक्षायां यतनावान् भवति-इत्यर्थः 'अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ' अस्मिंश्च खलु अर्थे संयमपालनरूपे नो प्रमाद्यति =प्रमादं न करोतीति। 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः 'अणगारे जाए' अनगारो जातः भगवत उपदेशं श्रुत्वा भगवत्प्रतिपादित श्रुतचारित्रादि धर्ममाचरन् द्रव्यतो भावतश्चानगारोऽभवदिति भावः॥

करवट बदल ने पहिले वे उस करवट और स्थान का प्रमार्जन कर लेते-तब कहीं वे करवट बदलते-(तह भुंजइ) अङ्गारदोष और धूमादिदोष से वर्जित वे आहार आदि कर ने लगे।' तह भासइ' सावद्य -वचन का परिहार करके अब वे भाषा समिति के अनुसार बोल ने लगे 'तह उट्ठाए उट्ठाय' तथा अपनी आत्मशक्ति से उठ कर प्रमाद निद्राका त्याग करके सोच समझ कर अर्थात् पूर्णरूप से सावधान होकर-'पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं, प्राणों में, भूतों में, जीवों में और सत्वों में 'संजमेणं' उनके रक्षण रूप संयम से प्रवृत्ति करने लगे अर्थात्-जीवों की रक्षा करने में वे यतनावान् बन गये। 'अस्सिं च णं अट्ठेणो पमायइ' इस अर्थमें-संयम पालन रूप जिन कर्तव्य में-वे थोडा सा भी प्रमाद नहीं करते। 'तएणं से खंदए-कच्चायणस्स गोत्ते' इस

પડખાનુ પ્રમાર્જન (પૂજી લેવાની ક્રિયા) કરતા હતા (तह भुंजइ) ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર નિર્દોષ-પ્રાસુક-આહાર ગ્રહણ કરવા લાગ્યા એટલે કે અંગાર દોષ અને ધૂમાદિ દોષથી રહિત આહાર ગ્રહણ કરવા લાગ્યા (तह भासइ) સાવદ્ય વચનનો ત્યાગ કરીને નિર્વદ્ય (દોષ રહિત) વચન બોલવા લાગ્યા -ભાષાસમિતિનુ પાલન કરવા લાગ્યા (तह उट्ठाए उट्ठाय) તથા પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને-પ્રમાદ નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને, સાવધાની પૂર્વક (पाणेहिं, भूएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं, संजमेण) પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્વોની રક્ષા થાય એવી રીતે વર્તવા લાગ્યા એટલે કે તેઓ યતના પૂર્વક જીવોની રક્ષા કરવા લાગ્યા. अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ) આ અર્થમા (સયમનુ પાલન કરવા રૂપ પોતાના કર્તવ્યમા) તેઓ બિલકુલ પ્રમાદ કરતા નહી (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते) આ રીતે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક સાચા અર્થમા અણગાર

कीरशो जात इत्याह=' इरिया समिए ' ईर्या समित =ईर्णमीर्या ईर्या-रागद्वेष राहित्येन यतनया गमनम् = प्रखरतरसहस्रकरकरनिकरप्रकाशितासु दिक्षासु पदार्थदर्शनसमे चक्षुर्द्वये मनुष्यरथचक्रतुरगखुरक्षुण्णतुषारादौ मासुकमार्गे सदेकतानमनसो मुने श्वनैर्विन्यस्तचरणस्य सङ्कुचितनिजपूर्वापरगात्रस्य पुरतोन्यस्त स्वयुगमात्रदृष्टया चेष्टनम्, तया समित =सम्यक्प्रकारेण युक्त, ईर्यासमितिमानि-

---

तरह से कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो गये। अर्थात् भगवान् का उपदेश सुनकर वे भगवत्प्रतिपादित धर्मका आचरण करते हुए द्रव्य और भाव से अनगार हो गये। वे कैसे अनगार हुए ? इसके लिये कहते हैं कि (ईरियासमिए) राग और द्वेष से रहित होकर यतना पूर्वक गमन करना इसका नाम ईर्या है। अर्थात्-जब सूर्यकी प्रखर किरणों से मार्ग अच्छी तरह से प्रकाशित हो चुका हो सब दिशाओं में प्रकाश फैल गया हो-आंखों से किसी भी प्रकार की देखनेमें बाधा न हो, दोनों आंखों से पदार्थका निरीक्षण अच्छी तरह से हो सके ऐसे आसुकी हो तथा तुषार आदि से युक्त मार्ग मनुष्यों के संचार से, रथचक्र के संचार से, तुरग आदि के खुरों से क्षुण्ण-शस्त्र परिणत अर्थात् अचित्त हो चुका हो ऐसे प्रासुक मार्ग पर चलने में उपयोग सहित होते हुए मुनिका जो धीरे २ आगे २ की जुसरा प्रमाण भूमि देख कर शरीरको इधर उधर हिलाये डुलाये विना गमन है इसका नाम

બન્યા એટલે કે ભગવાનનો ઉપદેશ સાંભળીને તેમણે પ્રરૂપેલ ધર્મનું આચરણ કરતાં કરતાં દ્રવ્યે અને ભાવે અણગાર થઈ ગયા. તેઓ કેવા અણગાર થઈ ગયા ? તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(ईरियासमिए) તેઓ ઇર્યાસમિતિ યુક્ત બન્યા રાગ દ્વેષથી રહિત બનીને યતના પૂર્વક ગમન કરવું, તેનું નામ (ઇર્યા) છે એટલે કે જ્યારે સૂર્યના તેજસ્વી કિરણોથી માર્ગ સારી રીતે પ્રકાશિત થઇ ગયો હોય, ચારે દિશાઓમાં પ્રકાશ ફેલાયેલ હોય કોઇ પણ વસ્તુને આંખો વડે જોવામા કોઇ પણ પ્રકારની મુશ્કેલી નડતી ન હોય, બન્ને આંખોથી વસ્તુનું બરાબર નિરીક્ષણ કરી શકાતુ હોય, તથા ગાડા વગેરેથી રહિત એવો માર્ગ છે કે મનુષ્યોના અવર જવરથી, રથ ચક્રના સંચારથી, અને અશ્વ વગેરે પ્રાણીઓના પગની ખરીથી કોઇએ (અચિત્ત) થઇ ચુકેલો હોય, એવા પ્રાસુક (દોષ રહિત) માર્ગ પર ગાડાની પૂસરી પ્રમાણ ભૂમિને જોઇને, ધીમે ધીમે શરીરને બરાબર તેમ હલાવ્યા વિના મુનિનું જે ગમન થાય છે તેને ઇર્યા કહે છે તે ઇર્યાથી જે સમિત(યુક્ત)

स्यर्थः १ । ' भासासमिए-भाषासमितः-भाषणं भाषा = कार्कश्यादिरहितहितमितस्फीतमृदुभाषणरूपा, तया समितः = युक्तः २ । भाषासमितिमानित्यर्थः ' एसणासमिए ' एषणा समितः-एषणा - नवकोटिविशुद्धभिक्षाग्रहणरूपा, सा च गवेषणा ग्रहणैषणा-परिभोगैषणादिभेदेन त्रिविधा भवति तया समितः=सम्यगुपयोगयुक्तः, एषणा समितिमान् इत्यर्थः । ' आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए ' आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणा समितः, तत्र-आदानेन=ग्रहणेन सह भाण्डमात्रायाः=उपकरणसमूहरूपायाः यद्वा भाण्डस्य पात्रस्य, मात्रस्य=वस्त्रादिरूपोपकरणस्य, यद्वा भाण्डमात्रयोः-इतिच्छाया पक्षे भाण्डस्य या निक्षेपणा=

ईर्या है। इस ईर्या से जो समित हैं- अच्छी तरह से युक्त हैं-वे ईर्या समित हैं। अर्थात् ईर्यासमिति वाले हैं। इस प्रकार की ईर्या समिति वाले वे स्कन्दक अनगार हो गये। भासासमिए' कर्कशता आदि से रहित हित, मित, मृदु भाषण करना इस का नाम भाषा समिति है। इस भाषा समिति से जो युक्त होते हैं वे भाषासमित कहलाते हैं। स्कन्दक अनगार इस भाषा समिति से युक्त बन गये। एसणासमिए' नवकोटि से विशुद्ध भिक्षा का ग्रहण करना इसका नाम एषणा है। यह एषणा- गवेषणा, ग्रहणैषणा और परिभोगैषणा आदि के भेद से तीन प्रकार की है। इस एषणा से जो युक्त होते हैं अर्थात् जो इस में अच्छी तरह से उपयोग रखते हैं वे एषणा समित हैं। वे स्कन्दक मुनि इस एषणा समिति से युक्त बन गये। ' आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए' उपकरण समूह रूप भांड मात्रा के ग्रहण करने में और उठाने में अथवा भांड पात्र, एवं मात्र-वस्त्रादि रूप उपकरणों के धरने में, उठाने

હોય છે, તેને ઇર્યાસમિત અથવા ઇર્યાસમિત વાળો કહે છે. તે સ્કન્દક અણગાર તે પ્રકારની ઇર્યાસમિતિ વાળા થઇ ગયા. (भासासमिए) કર્કશ પણું વગેરે રહિત, હિત, મિત, મૃદુ વાણી બોલનારને ભાષાસમિતિથી યુક્ત કહેવામા આવે છે. સ્કન્દક અણગાર ભાષાસમિતિથી પણ યુક્ત બન્યા(एसणासमिए) વિશુદ્ધ ભિક્ષાને " એષણા " કહે છે. તે એષણાના આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે- (१) ગવેષણા, (२) ગ્રહણૈષણા, અને (३) પરિભોગૈષણા. આ એષણાથી જે યુક્ત હોય છે એટલે કે તેનુ જે બરાબર પાલન કરે છે તેને એષણા સમિત કહે છે. સ્કન્દક અણગાર એષણા સમિતિથી યુક્ત બની ગયા—(आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए) ભાંડ એટલે પાત્ર અને માત્ર એટલે વસ્ત્રાદિ રૂપ ઉપકરણો પાત્ર અને વસ્ત્રાદિ રૂપ ઉપકરણોને મૂકતી વખતે

न्यासः, तस्यां भाण्डोपकरणानां ग्रहणे स्थापने चेत्यर्थः समित=यतनावान् सुप्रतिलेखित सुप्रमार्जितादि क्रमेण प्रवर्तक इत्यर्थः । ' उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए ' उच्चारप्रस्रवणखेलजल्लसिङ्घाणपरिष्ठापनिका समित ' तत्र-उच्चारः=पुरीषं, प्रस्रवण=मूत्र, खेल श्लेष्मा, जल्ल=देहमल, सिङ्घाणं=नासिकामलम्, एतेषां परिष्ठापनिका=व्युत्सर्जनं तत्र समित=यतनावान्

में जो यतना पूर्वक प्रवृत्ति की जाती है अर्थात् जिस स्थानपर-उन्हें धरना हो सो पहिले उस स्थान की प्रमार्जना कर लेनी और जो उपकरण उठाना हो उसकी उठानेसे पहिले प्रतिलेखना प्रमार्जना करलेनी इसका नाम आदान भांडमात्रनिक्षेपणसमिति है। इस समिति से जो युक्त होते हैं वे आदानभांडमात्रनिक्षेपणा समिति वाले कहलाते हैं। स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये। अर्थात् जब वे धर्मोपकरणोंको धरसे उठाते थे तब उसकी वे पहिले अच्छी तरह प्रतिलेखना कर लेते और अच्छी तरह से उसकी प्रमार्जना कर लेते-तब कहीं वे उसे धरते और उठाते थे। उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया-समिए, उच्चार नाम पक्की नीत का है, प्रस्रवण नाम-लघुनीत का है, खेल नाम खकार-श्लेष्माका है, जल्ल नाम शरीर के मैल का है, सिङ्घा ण नाम नाक के मैलका है। इन सब की परिष्ठापनिका क्रिया में अर्थात् इनके परठने में यतनाकरना इसका नाम उच्चारप्रस्रवण खेल जल्ल

તથા લેતી વખતે યતના પૂર્વક જે પ્રવૃત્તિ કરવામાં આવે છે-એટલે કે તેમને જે સ્થાને મૂકવા હોય તે સ્થાનને પહેલા રજોહરણથી પુંજવાની અને જે ઉપકરણને ઉઠાવવાનુ હોય તેને ઉઠાવતા પહેલાં તેની પ્રમાર્જના કરવાની ક્રિયાને આદાનભાંડમાત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ કહે છે તે સમિતિથી જે યુક્ત હોય છે તેને આદાનભાંડમાત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ કહે છે સ્કન્દક અણગાર આદાનભાંડમાત્ર નિક્ષેપણા સમિતિથી યુક્ત બન્યા તાત્પર્ય એ છે કે સ્કન્દક મુનિ જ્યારે પણ ધર્મોપકરણને મૂકતાં કે ઉપાડતાં પહેલાં તેની સારી રીતે પ્રતિલેખના અને પ્રમાર્જના કરી લેતા હતા (उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) (उच्चार) એટલે મળ, લઘુનીત (પ્રસ્રવણ) એટલે મૂત્ર (પેશાબ,) (खेल) કફ, (जल्ल) એટલે શરીરનો મેલ, (सिंघाण) એટલે નાકમાંથી નીકળતો ચીકણો પદાર્થ (બળખ,) એ બધી વસ્તુઓ પરઠવાની ક્રિયા યતનાપૂર્વક કરવી તેનું નામ ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ સિંઘાણ-પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ છે તે સમિતિથી યુક્ત મુનિને ઉચ્ચારપ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ સિંઘાણ પરિષ્ઠાપનિકા સમિત કહે છે. સ્કન્દક

'मणसमिए' मनःसमितः-मनः=अन्तःकरणं, तत्र समितः निरवद्यमनःप्रवृत्तिमान् कुशलमनोयोगवानित्यर्थः। 'वयसमिए' वचः समितः=वचसि अनृत कटुत्वसावद्यादि दोषरहितवचने समितः=उपयोगवान्, हितमितप्रियसत्यवचो योगवानित्यर्थः 'कायसमिए' कायसमितः काय=शरीर, तत्र समितः प्राण्युपघातादिदोषपरिहारपूर्वकमाकुञ्चनप्रसारणादि क्रियाकारकः। 'मणगुत्ते' मनोगुप्तः, मनसा=मनोव्यापारेण गुप्तः रक्षितः संयमितमनोव्यापारः मनोजन्या

शिंघाणपरिष्ठापनिका समिति है। इस समिति से जो युक्त होते हैं वे उच्चार प्रस्रवण खेल जल्ल सिंघाणपरिष्ठाननिकासमितिवाले कहलाते हैं। ये स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये। 'मणसमिए' वे मनः समित वाले हो गये मन नाम अन्तः करण का है। इस अन्तः-करण में वे समित यतना शाली हो गये अर्थात् निरवद्यमनः प्रवृत्ति से युक्त हो गये-अकुशल मनोयोगको त्याग कर वे कुशल मनोयोग वाले बन गये। 'वय समिए' वचन में समित हो गये, अर्थात् असत्य, कटुक, सावद्य आदि दोषों से रहित ऐसे वचन में उपयोग वाले हो गये, हित, मित, प्रिय ऐसे सत्यवचन रूप योग से युक्त हो गये। 'कायसमिए' काय नाम शरीर का है, इसमें समित हो गये, अर्थात् जीवों का उपघात अपघात होने रूप दोष का परित्याग करते हुए वे स्कन्दक अनगार अपने शरीर की आकुंचन, प्रसारण आदि क्रिया करने लगे (मणगुत्ते) संयमित मनोव्यापारवाले हो गये, अर्थात् अपने मन को उन्हों ने वश में कर लिया। मनोयोग से जो कर्मरूप कचरा आता था उसका

અણગાર તે સમિતિથી પણ યુક્ત બની ગયા. (मणसमिए) ત્યાર બાદ તેઓ મનઃસમિત બની ગયા. એટલે કે નિરવદ્ય (દોષ રહિત) મનની પ્રવૃત્તિવાળા બની ગયા-અશુભ મનોયોગનો પરિત્યાગ કરીને તેઓ શુભમનોયોગવાળા બની ગયા. (वयसमिए) તેઓ વચન સમિત બની ગયા. એટલે કે અસત્ય, કર્કશ સાવદ્ય (દોષ યુક્ત) વગેરે દોષોથી રહિત વચનો બોલવા લાગ્યા. હિત, મિત, અને પ્રિય સત્યવચન રૂપ યોગથી યુક્ત બની ગયા (कायसमिए) કાય એટલે શરીર, તેઓ કાયસમિત બની ગયા એટલે કે પોતાના શરીરની ક્રિયાઓ અથવા પોતાના અંગોના હલનચલન એવી રીતે કરવા લાગ્યા કે જેથી કોઈ પણ વિરાધના ન થાય તેનું ધ્યાન રાખતા થઈ ગયા (मणगुत्ते) તેમણે પોતાના મનને પૂરે પૂરું વશ કરી લીધું તેઓ મનના સંયમથી યુક્ત થઈ ગયા મનોયોગથી જે કર્મ રૂપ રજનો પ્રવેશ થતો હતો તેનો

गन्तुकर्मकचयरिरोधका, अकुशलमनोयोगनिरोधको वा । यद्वा मनोगुप्तम् मनो गुप्तिमान् तत्र मनोगुप्तिस्त्रिधा, तथा-आर्तरौद्रध्यानानुबन्धिकल्पनाजाल-वियोगाकरणा प्रथमा १, शास्त्रानुगामिनी परलोकसाधिनी धर्मध्यानानुबन्धिनी माध्यस्थ्यपरिणामरूपा द्वितीया २, कुशलाकुशलमनोवृत्तिनिरोधेन चिरम्यस्तयोग-सम्पादितावस्था विशेषजन्या-आत्मस्वरूपरमणरूपा तृतीया ३ ।

उक्तञ्च—" विमुक्तकल्पनाजालं, समत्वे सुप्रतिष्ठितम् ।
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञैर्मनोगुप्तिरुदाहृता ॥ १ ॥ " इति ॥

उन्होंने निरोध कर दिया । अथवा-अकुशल मनोयोग को अकुशल मानसिक व्यापार को उन्होंने रोक दिया। अर्थात्—वे मनोगुप्ति से युक्त हो गये। मनोगुप्ति तीन प्रकार की होती है—जैसे आर्त रौद्र ध्यान संबंधी कल्पनाजाल का त्याग करना यह प्रथम मनोगुप्ति है । शास्त्र मार्ग का अनुसरण करने वाली एवं परलोक को सुधारने वाली तथा धर्मध्यान के अनुबंधवाली वैसी जो माध्यस्थ्य परिणति रूप वृत्ति (मध्यस्थ भाव वाली वृत्ति) होती है वह दूसरी मनोगुप्ति है । कुशल एवं अकुशल मनोवृत्तिके निरोध पूर्वक चिराभ्यस्त योग द्वारा संपादित अवस्थाविशेषसे जनित होती है ऐसी आत्मस्वरूप में रमणरूप तीसरी मनोगुप्ति है ।

कहा भी है—" विमुक्तकल्पनाजालं, समत्वे सुप्रतिष्ठितम् ।
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञैर्मनोगुप्तिरुदाहृता " ॥ १ ॥

मनोगुप्ति इस तरह से तीन प्रकार की कही गई है—एक मनोगुप्ति यह कि जिसमें कल्पनाओं का सर्वथा अभाव रहे—किसी भी प्रकार की

તેમણે નિરોધ કરી લીધો એટલે કે અકુશલ મનોયોગને (માનસિક પ્રવૃત્તિને) તેમણે રોકી લીધો એ રીતે તેઓ મનોગુપ્તિથી યુક્ત બની ગયા મનોગુપ્તિના આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે- આર્ત્ત રૌદ્રધ્યાન વાળી તમામ કલ્પનાઓનો ત્યાગ કરવો તે પહેલી મનોગુપ્તિ છે શાસ્ત્રમાર્ગ અનુસરનારી અને પરલોકને સુધારનારી તથા ધર્મધ્યાનના અનુબંધવાળી, એવી જે માધ્યસ્થ ભાવવાળી વૃત્તિ હોય તેને બીજી મનોગુપ્તિ કહે છે કુશલ અને અકુશલ મનોવૃત્તિના નિરોધ પૂર્વક, લાંબા અભ્યાસથી અને યોગ વડે પ્રાપ્ત કરેલી અવસ્થા વિશેષથી આત્મ સ્વરૂપમાં જેમ રમણતા થાય છે તે મનોગુપ્તિ છે, કહ્યું પણ છે કે—

(विमुक्तकल्पनाजालं समत्वे सुप्रतिष्ठितम्)
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञो मनोगुप्तिरुदाहृता) ॥ १ ॥

મનોગુપ્તિ આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારની કહી છે એટલે મનોગુપ્તિ એવી છે કે જેમાં કલ્પનાઓનો લેશ પણ અભાવ રહે છે કોઈ પણ પ્રકારની કલ્પના મનમાં

'मणसमिए' मनःसमितः-मनः=अन्तःकरणं, तत्र समितः निरवद्यमनःप्रवृत्तिमान् कुशलमनोयोगवानित्यर्थः। 'वयसमिए' वचः समितः=वचसि अनृत कटुत्वसावद्यादि दोषरहितवचने समितः=उपयोगवान्, हितमितप्रियसत्यवचो योगवानित्यर्थः 'कायसमिए' कायसमितः कायः= शरीर, तत्र समितः प्राण्युपघातादिदोषपरिहारपूर्वकमाकुञ्चनप्रसारणादि क्रियाकारकः। 'मणगुत्ते' मनोगुप्तः, मनसा=मनोव्यापारेण गुप्तः रक्षितः संयमितमनोव्यापारः मनोजन्या

शिंघाणपरिष्ठापनिका समिति है। इस समिति से जो युक्त होते हैं वे उच्चार प्रस्रवण खेल जल्ल सिंघाणपरिष्ठाननिकासमितिवाले कहलाते हैं। ये स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये। 'मणसमिए' वे मनः समित वाले हो गये मन नाम अन्तः करण का है। इस अन्तः-करण में वे समित यतना शाली हो गये अर्थात् निरवद्यमनः प्रवृत्ति से युक्त हो गये-अकुशल मनोयोगको त्याग कर वे कुशल मनोयोग वाले बन गये। 'वय समिए' वचन में समित हो गये, अर्थात् असत्य, कटुक, सावद्य आदि दोषों से रहित ऐसे वचन में उपयोग वाले हो गये, हित, मित, प्रिय ऐसे सत्यवचन रूप योग से युक्त हो गये। 'कायसमिए' काय नाम शरीर का है, इसमें समित हो गये, अर्थात् जीवों का उपघात अपघात होने रूप दोष का परित्याग करते हुए वे स्कन्दक अनगार अपने शरीर की आकुचन, प्रसारण आदि क्रिया करने लगे (मणगुत्ते) संयमित मनोव्यापारवाले हो गये, अर्थात् अपने मन को उन्हों ने वश में कर लिया। मनोयोग से जो कर्मरूप कचरा आता था उसका

અણગાર તે સમિતિથી પણ યુક્ત બની ગયા (मणसमिए) ત્યાર બાદ તેઓ મનઃસમિત બની ગયા એટલે કે નિરવદ્ય (દોષ રહિત) મનની પ્રવૃત્તિવાળા બની ગયા-અશુભ મનોયોગનો પરિત્યાગ કરીને તેઓ શુભમનોયોગવાળા બની ગયા (वयसमिए) તેઓ વચન સમિત બની ગયા. એટલે કે અસત્ય, કર્કશ સાવદ્ય (દોષ યુકત) વગેરે દોષોથી રહિત વચનો બોલવા લાગ્યા. હિત, મિત, અને પ્રિય સત્યવચન રૂપ યોગથી યુક્ત બની ગયા (कायसमिए) કાય એટલે શરીર, તેઓ કાયસમિત બની ગયા. એટલે કે પોતાના શરીરની ક્રિયાઓ અથવા પોતાના અંગોના હલનચલન એવી રીતે કરવા લાગ્યા કે જેથી કોઇ પણ વિરાધના ન થાય તેનુ ધ્યાન રાખતા થઇ ગયા (मणगुत्ते) તેમણે પોતાના મનને પૂરે પૂરું વશ કરી લીધું તેઓ મનના સંયમથી યુકત થઇ ગયા મનોયોગથી જે કર્મ રૂપ રજનો પ્રવેશ થતો હતો તેનો

द्वितीया-गुरुमापृच्छ्य शरीरसत्कारकप्रतिलेखनप्रमार्जनादि समयोचितक्रिया समूहसम्पादनपूर्वक शयनासनादि विधेयम्, ततो गुरुनिर्देशेन शयनासननिक्षेपादानादिषु स्वतन्त्र चेष्टात्यागेन नियतकायचेष्टारूपा।

उक्तञ्च—" उपसर्गसमङ्गेऽपि कायोत्सर्गानुपोषुनेः।
स्थिरीभाव शरीरस्य, कायगुप्तिर्निगद्यते ॥ १ ॥
शयनासननिक्षेपाऽऽदानसक्रमणेषु च।
स्थानेषु चेष्टा नियमः, कायगुप्तिस्तु साऽपरा " ॥२। इति।

करता है। द्वितीय प्रकार में-गुरुकी आज्ञा के अनुसार शारीरिक क्रियाओं का करना होता है। अपनी इच्छा के अनुसार कायिकी क्रिया को स्वतन्त्र प्रवृत्ति साधु नहीं करता है। जैसे शास्त्र की यह आज्ञा है कि साधु जप शयन आसन आदि कार्य करे तो उसे पूछकर ही यह कार्य, अपने शरीर की और संस्तारक की प्रतिलेखना प्रमार्जना आदि करते हुए (तत्समयोचितक्रियासमूहसम्पादन) पूर्वक ही करना चाहीये। इस तरह वह इस द्वितीय प्रकार में गुरु के आदेश से ही शयन, आसन, निक्षेप, आदान आदि क्रियाओं में प्रवृत्ति करता है और अपनी वह स्वतन्त्र चेष्टा का त्याग करता है। इस प्रकार से यह नियत कायचेष्टा रूप द्वितीय प्रकार कायगुप्ति का जानना चाहिये। कहा भी है

" उपसर्गसमङ्गेऽपी, कायोत्सर्गानुपो मुनेः।
स्थिरीभाव शरीरस्य, कायगुप्तिर्निगद्यते ॥ १ ॥

બીજો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે–તેમાં સિદ્ધાંત પ્રમાણે આજ્ઞાનુસાર શારીરિક ક્રિયાઓ કરવાની રોય છે પોતાની ઇચ્છા મુજબ કાયકી ક્રિયાની સ્વતંત્ર પ્રવૃત્તિ મુનિ કરતા નથી. જેમ કે જ્યારે સાધુ ગોચરી માટે નીકળે શયન વગેરે ક્રિયા કરે ત્યારે તેણે ગુરુની આજ્ઞા લેવી પડે છે, એવી શાસ્ત્રાજ્ઞા છે. અને કોઈપણ ઉપકરણ ગ્રહણ કરવી વખતે અથવા કોઇ જગ્યાએ મેલવી વખતે તે જગ્યાનુ અને ઉપકરણનુ પડેલાનુ (પ્રતિલેખના) તથા પ્રમાર્જન કરવું પડે છે આ રીતે બીજા પ્રકારની કાયગુપ્તિના પાલન માટે સાધુ પોતાના ગુરુની કે વરિષ્ઠ મુનિની આજ્ઞાનુસાર શયન, આસન નિક્ષેપ, આદાન વગેરે ક્રિયાઓ કરે છે અને પોતાની સ્વતંત્ર પ્રવૃત્તિઓનો પરિત્યાગ કરે છે આ રીતે કાયગુપ્તિનો બીજો પ્રકાર નિયમ મર્યાદાની કાયાની પ્રવૃત્તિનો સમજવો. કહ્યું પણ છે—

उपसर्गसमङ्गेऽपि, कायोत्सर्गानुपो मुनेः।
स्थिरीभाव शरीरस्य, कायगुप्तिर्निगद्यते ॥ १ ॥

एतादृशमनोगुप्तिमानित्यर्थः 'वयगुत्ते' वचोगुप्तः, निरुद्धवाक् प्रसरः वचोगुप्तिमानित्यर्थः 'कायगुत्ते' कायगुप्तः, कायेन=कायक्रियया गमनागमनप्रचलनस्पन्दादिरूपया गुप्तः=रक्षितः कायक्रियया उपयोगवान्। कायगुप्तिमानित्यर्थः, कायगुप्तिर्द्विधा-चेष्टानिवृत्तिरूपा १, यथागमं चेष्टानियमनलक्षणा २ चेति तत्र। तत्र प्रथमा कायोत्सर्गादिना परीषहसहनपूर्वककायनिश्चलताकरणरूपा

कल्पना मन में न उठे १, द्वितीय मनोगुप्ति वह कि जिसमें मन माध्यस्थ्यपरिणति में बना रहे २ तीसरी वह कि जिसमें मन आत्मारूपी बगीचे में रमण करने वाला बन जाय, अर्थात् आत्मस्वरूप के चिन्तन में लीन हो जाय ३। 'वयगुत्ते' अपनी वाणी का प्रसार रोक देने के कारण वे वचोगुप्तवचनगुप्ति से युक्त-तथा 'कायगुत्ते' कायसंबंधी गमन आगमन, प्रचलन, स्पन्दन, आदिरूप क्रिया से रक्षित होने के कारण अर्थात् कायिकी क्रिया में उपयोग वाले होने के कारण कायगुप्ति से युक्त हो गये। कायगुप्ति दो प्रकारकी होती है-एक प्रकार कायगुप्ति का वह है दूसरा की जिसमें कायसंबंधी चेष्टा की निवृत्ति कर दी जाती है। और प्रकार कायगुप्ति का वह है कि जिसमें आगम के अनुसार क्रिया चेष्टा का नियमन किया जाता है। प्रथम प्रकार में साधु कायोत्सर्ग करते समय परीषह और उपसर्ग आजाने पर भी अपने शरीर में निश्चलता रखता है। उस समय वह कायसंबंधी किसी भी प्रकार की क्रिया नहीं

ઉદ્ભવતીજ નથી. જેમાં મન મધ્યસ્થવૃત્તિવાળુ બની જાય છે એવી બીજા પ્રકારની મનોગુપ્તિ છે ત્રીજી મનોગુપ્તિ એવા પ્રકારની છે કે જેમા મન, આત્મારૂપી બગીચામાં રમણ કર્યા કરે છે અટલે કે આત્મસ્વરૂપના ચિન્તનમાંજ લીન થઇ જાય છે.

(वयगुत्ते) પોતાની વાણીના સયમને કારણે તેઓ વચનગુપ્ત (વચનગુપ્તિથી યુકત) બની ગયા તથા (कायगुत्ते) કાયા સબધી અવર જવર, પ્રચલન, સ્પન્દન વગેરે રૂપ ક્રિયાથી રક્ષિત હોવાને કારણે એટલે કે કાયિકી ક્રિયા યતનાપૂર્વક કરતા હોવાથી-તેઓ કાયગુપ્તિથી યુકત બની ગયા કાયગુપ્તિ બે પ્રકારની હોય છે-તેનો એક પ્રકાર એવો છે કે જેમા કાયાની ચેષ્ટા (પ્રવૃત્તિ) નો નિષેધ કરવામા આવે છે, અને બીજો પ્રકાર એવો છે કે જેમાં આગમ અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિયમ કરવામા આવે છે. એટલે કે મુનિ કાયોત્સર્ગ (काउसग्ग) કરતી વખતે પરીષહ અને ઉપસર્ગ આવી પડવા છતાં પણ પોતાના શરીરને નિશ્ચલ રાખે છે તે વખત તેઓ કાયાથી કોઇ પણ પ્રકારની ક્રિયા કરતા નથી. આ કાયગુપ્તિનો પહેલો પ્રકાર થયો, કાયગુપ્તિનો

रज्जुः=रज्जुरिव रज्जुः सरलत्वात्, पक्षान्यपदाररहित इत्यर्थः यद्वा 'ऋजु' इति छेदमाश्रित्य, लज्जेति संयमः, तद्वान्। 'धण्णे' धन्यः=पुण्यवानहम्। 'खंतिखमे' क्षान्तिक्षमः=क्षान्त्या=स्वयया क्षमते सत्यसमर्थोऽपि सन्निक्षमः स्वाभाविकक्षमाशील इत्यर्थः, यद्यपि प्राक् 'गुप्तेन्द्रियः' इत्युक्तं तदपि इन्द्रियविकारगोपनमात्रेणापि स्यादत आह-'जिइंदिए' जितेन्द्रियः=इन्द्रियजन्यविकारामावात्=वशीकृतेन्द्रियः। 'सोहिए' शोधितः=शुद्धिसम्पन्नः निरतिचारः

गये। अथवा-लज्जा नाम संयम का है, उससे युक्त अर्थात् संयमवान् हो गये। 'धन्ने' धर्मरूप धन को उन्हों ने पा लिया। 'खंतिखमे' का तात्पर्य है-स्वयं शक्तिसंपन्न होते हुए भी सहनशील बनना। इसप्रकार वे स्कन्दक अनगार स्वयं में विशिष्ट शक्तिशाली होते हुए भी आये दुःखों को शांति पूर्वक सहन करते थे-इसलिये। (क्षान्त्या क्षमते इति क्षांतिक्षम) इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो व्यक्ति असमर्थ होनेके कारण दूसरों के अपराधोंको क्षमा कर देता है वह क्षांतिक्षम नहीं है। जो पहिले (गुप्तेन्द्रिय) ऐसा विशेषण स्कन्दक अनगार का कहा है-सो यह गुप्तेन्द्रियता इन्द्रियों के विकारों को छुपाने मात्र से भी हो सकती है-अतः कोई ऐसा यहां न समझले इसके लिये (जिइंदिए) यह पद प्रयुक्त किया गया है। यह पद यह प्रकट करता है कि इन्द्रिय जन्य विकार के अभाव से उनमें वशीकृतेन्द्रियता थी अर्थात् इन्द्रियों को वश

બાંધી વહનારો નિષ્કુલ પરિત્યાગ કરી દીધો અથવા સંયમને લજ્જા કહે છે તેનો સંયમી બની ગયા એવો અર્થ પણ થઈ શકે છે "ધન્ને" તેમણે ધર્મરૂપ ધન પ્રાપ્ત કરી લીધુ, (खंतिखमे) શક્તિ શાળી હોવા છતાં પણ ક્ષમાશીલ બન્યા પોતે શક્તિસંપન્ન હોવા છતા પણ સહનશીલ બનવુ, તેનુ નામ ક્ષાંતિક્ષમ છે સ્કન્દક અણગાર પોતે વિશિષ્ટ શક્તિ શાળી હોવા છતા પણ બાધી પડતા દુઃખો અને ઉપસર્ગોને શાંતિ પૂર્વક સહન કરતા હતા. તેથી તેમને ક્ષાંતિક્ષમ કહ્યા છે (क्षान्त्या क्षमते इति क्षांतिक्षम) આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે નિર્બળતાને કારણે બીજા લોકોના અપરાધોને માફ કરનાર વ્યક્તિને ક્ષાંતિક્ષમ કહી શકાય નહીં આગળ સ્કન્દકને 'ગુપ્તેન્દ્રિય' કહેવામા આવ્યા છે ઈન્દ્રિયોના વિકારોને છુપાવવાથી પણ ગુપ્તેન્દ્રિય પણ કહી શકે છે પણ સ્કન્દકના ગુપ્તેન્દ્રિયપણાના વિષયમા કોઈ આશંકા કોઈને પણ ન થાય તે માટે તેમને (जिइंदिए) જિતેન્દ્રિય કહ્યા છે આ પદ એ બતાવે છે કે ઈન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થતા વિકારોના અભાવને કારણે તેમનામાં ઈન્દ્રિયોને વશ

अतएव 'गुत्ते' गुप्तः पूर्वोक्तमनोगुप्त्यादि युक्तः, गुत्तिदिए' गुप्तेन्द्रियः गुप्तानि=स्वस्वविषयान्निवृत्तानि इन्द्रियाणि यस्य स तथा 'गुत्तबंभयारी' गुप्तब्रह्म चारी-गुप्तः=रक्षितः ब्रह्मणः=कुशलानुष्ठानस्य चारः=चरणं यावज्जीवनं मैथुन-विरमणलक्षणः, स यस्यास्तीति तथा 'चाई' त्यागी=सम्यक्त्यागवान् 'लज्जू'

शयनासननिक्षेपादानसंक्रमणेषु च ।
स्थानेषु चेष्टा नियमःकायगुप्तिस्तु साऽपरा ॥ २ ॥"

तात्पर्य इसका यही है कि कायोत्सर्ग करते समय मुनि को यदि किसी भी प्रकार के उपसर्ग का प्रसङ्ग आजाता है तो वह उस समय जो अपने शरीर में अनिश्चलता न करात, हुआ-अर्थात् समाधि से विचलित न होता हुआ-स्थिरता कारण करता है एक तो वह कायगुप्ति है, और दूसरी कायगुप्ति वह है, कि जिसमें शयन, आसन, निक्षेप आदि क्रियाओं में शरीर की चेष्टा का संयमन किया जाना है इस प्रकार वे स्कन्दक अनगार पूर्वोक्त इन मनोगुप्ति आदी से संपन्न बन कर (गुत्ते) गुप्त बन गये। (गुत्तिदिए) उन्हों ने अपनी प्रत्येक इन्द्रिय को अपने ग्राह्य विषय से निवृत्त कर लिया। (गुत्तबंभयारी यावज्जीव वे मैथुन के परित्याग करदेनेसे गुप्त ब्रह्मचारी बन गये। (चाई) सर्वथा निःसंग-असंग हो गये। वक्रतापूर्वक व्यवहार करने का उन्हो ने बिलकुल परित्याग कर दिया, इसलिये 'लज्जू' रस्सी की तरह सरल हो

शयनासननिक्षेपादानसंक्रमणेषु च ।
स्थानेषु चेष्टा नियमः कायगुप्तिस्तु साऽपरा ॥ २ ॥

ભાવાર્થ-કાયોત્સર્ગ કરતી વખતે કોઇપણ પ્રકારના ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ જે મુનિ પોતાના શરીરને સ્થિર રાખે કાઉસગ્ગમાં સ્થિરતા રાખે, તો તે પહેલા પ્રકારની કાયગુપ્તિથી યુકત ગણાય છે બીજા પ્રકારની કાયગુપ્તિ એ છે કે જેમાં શયન, આસન નિક્ષેપ વગેરે ક્રિયાઓમા શરીરની પ્રવૃત્તિઓ નિયમન કરવામાં આવે છે-પ્રતિલેખના, પ્રમાર્જના, ગુરુઆજ્ઞા વગેરે રૂપ નિયમન કરવામા આવે છે સ્કન્દક અણગાર પણ પૂર્વોકત મનોગુપ્તિ વગેરેથી યુકત થવાથી (गुत्ते) ગુપ્તિઓથી યુકત બની ગયા. (गुत्तिदिए) તેઓ ગુપ્તેન્દ્રિય બની ગયા એટલે કે તેમણે પોતાની બધી ઇન્દ્રિઓને પોત પોતાના વિષયોથી નિવૃત્ત કરી દીધી (गुत्तबंभयारी) જીવન પર્યન્ત અબ્રહ્મનો પરિત્યાગ કરવાથી તેઓ ગુપ્તબ્રહ્મચારી બની ગયા (चाई) બિલકુલ નિઃસંગ-અસંગ થઇ ગયા, (लज्जू) દોરીના જેવા સરળ થઈ ગયા એટલે કે તેમણે જીવન

तन्निदानम्, तत् अविद्यमान पस्य स तथा-ऐहिक पारलौकिक सुखलालसारहित इत्यर्थ । 'अपुस्सुए' अल्पौत्सुक्य उत्सुकतारहित । 'अवहिल्लेसे' अवहिर्लेश्य अविद्यमानाबहि लेश्या=मनोवृत्तिर्यस्यासौ तथा असयममनोवृत्तिरहित इत्यर्थ 'सुसामण्णरए' सुष्ठुश्रमण्य -सु=सुष्ठुतया श्रामण्य=श्रमणधर्मे रत =तत्पर -शुद्धसाधुधर्मपालक इत्यर्थ । 'दंत' दान्त क्रोधादिदमनात्, पक्षा 'इयन्त इतिच्छायापक्षे इयो:=रागद्वेषयो अन्त -विनाश यस्य स तथा रागद्वेषविजेता

वाले कुठार से उस कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को काट देता है। ऐसा यह निदान होता है। इस निदान से-इस लोक संबंधी और परलोकसंबंधी सुख की लालसा से ये रहित थे (अपुस्सुए) इनके चित्त में किसी पदार्थ आदि के सेवन करने की या उसके अवलोकन करने की किंचित्मात्र किसी तरह से भी उत्कंठा नहीं रही थी। (अवहिल्लेसे) और इनकी मनोवृत्ति संयम आदि अनुष्ठान के परिपालन करने में इतनी एकाग्र बनगई थी कि वह एक क्षण भी इससे बाहिर नहीं जाती थी अर्थात् असंयमभावकी तरह इनकी चित्तवृत्ति स्वप्न में नहीं जाती थी। 'सुसामण्णरए' ये अच्छी तरह से शुद्ध साधुधर्म के पालन करने में जी जान से तत्पर रहते थे। (दंते) क्रोधादिकषाय का इन्होंने एकान्ततः दमन कर दिया था। अथवा-(दंते) पद की छाया इयन्त भी होती है। इस पक्ष में (उन्होंने राग द्वेष इन दोनों का अन्त-विनाश-कर दिया

અને ઉંદર વગેરે પશુઓની પ્રાપ્તિરૂપ પરલોકના સુખની અભિલાષારૂપ તીક્ષ્ણ ધારવાળી નિયાણા રૂપી કુહાડીથી છેદી નાખવામાં આવે છે તાત્પર્ય એ છે કે નિયાણું કરવાથી મોક્ષપ્રાપ્તિ દૂર રહેવાય છે અને જીવને સંસારમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે આવા પ્રકારના નિયાણાથી રહિત હતા તેઓ આલોક અને પરલોકના સુખની લાલસાથી રહિત હતા (अपुस्सुए) કોઈપણ પદાર્થનું સેવન કરવાની કે અવલોકન કરવાની કંઈ પણ તેઓ રહિત હતા अवहिल्लेसे સંયમ વગેરે અનુષ્ઠાનના પરિપાલનમાં અત્યંત લીન બની જવાથી એક ક્ષણમાત્ર પણ તેમની ચિત્તવૃત્તિ અસંયમ ભાવ તરફ જતી ન હતા એટલે કે તેમની મનોવૃત્તિ અસંયમ ભાવ તરફ સ્વપ્નમાં પણ જતી ન હતી 'सुसामण्णरए' તેઓ શુદ્ધ સાધુ ધર્મનું પાલન કરવામાં સદા તત્પર રહેતા હતા. તાત્પર્ય કે પોતાના પ્રાણની પણ પરવા કર્યા વગર તેઓ સાધુધર્મનું ઉંડાણ પૂર્વક પાલન કરતા હતા.

एत क्रोधादि કષાયને તેમણે બિલકુલ દબાવી દીધા હતા અથવા- (दंत) પદની છાયા (इयन्त) પણ થાય છે તેથી એ અર્થ પણ બતાવી શકાય-કે તેમણે રાગદ્વેષ ના તેનો અન્ત નાશ કરી નાખ્યો હતો આ રીતે સાધુના તમામ

त्वात्, यद्वा 'शोभितः' इतिच्छायापक्षे शोभासम्पन्नः त्यागवैराग्यवत्त्वात्, 'अनियाणे' 'अनिदानः-नि=नितरां दीयते=छिद्यते-आत्मभूमिजात-सम्यक्त्वाङ्कुरित-विविध विमलभावनासलिल संवर्द्धित-ध्यानक्रियापल्लविताऽखण्ड तपः संयमाद्यनुष्ठानपुष्पित-मोक्षफल सुशोभिक कुशलकल्पवृक्षो येन=ऐहिक चक्रवर्त्यादि पारलौकिक देवद्धर्यादि पदप्राप्तिजन्यविषयसुखाभिलाषरूपनिशितधारकुठारेण

में रखने वाले थे। (सोहिए) पद यह प्रकट करता है कि स्कन्दक अनगार अपने महाव्रतों में निर्दोष थे, अतिचारों से रहित थे। अथवा-शोभित थे। अर्थात् त्याग और वैराग्यशाली होने से शोभासम्पन्न थे। (अणियाणे) महाव्रतों की आराधना करते हुए भी उन्हें इसलोक संबंधी या परलोक संबंधी किसी भी प्रकार के सुखों को चाहना नहीं थी। अर्थात् ये निदान बंध रहित थे। (नितरां दीयते छिद्यते) (इति निदानम्) इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह निदान, आत्मा रूप भूमि में उत्पन्न हुए कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को कि सम्यक्त्वरूप अङ्कुर वाला होता है, तथा अनेक प्रकार की निर्मल भावना रूप जल से सिंचित होकर जो आत्मारूप भूमि में वृद्धिंगत होता है, ध्यान रूप क्रिया ही जिसके पल्लव होते हैं, अखण्ड तप एवं संयम आदि रूप अनुष्ठानही जिसके जीवन में सुन्दर २ विकासित पुष्प होते हैं, और मोक्ष रूप फल से जो अच्छी तरह से शोभित होता है वह इसलोक संबंधी चक्रवर्ती आदि पद की प्राप्ति जन्य तथा परलोक संबंधी देवआदि पद की प्राप्ति जन्य विषयसुख की अभिलाषारूप निशित-तीक्ष्णधार

રાખવાનું સામર્થ્ય હતુ. (સોહિए) સ્કન્દક અણગાર મહાવ્રતોમાં નિર્દોષ હતા એટલે કે અતિચારોથી રહિત મહાવ્રતોનું પાલન કરનાર હતા. અથવા ત્યાગ અને વૈરાગ્યના ગુણોથી સુશોભિત હતા. (अणियाणे) મહાવ્રતોની આરાધના કરવા છતાં પણ તેઓ આલોક કે પરલોકના સુખની ઇચ્છા વગરના હતા. એટલે કે તેઓ નિયાણાથી રહિત હતા (नितरां दीयते छिद्यते इति निदानम्) નિદાનની આ પ્રમાણે વ્યુત્પત્તિ થાય છે એટલેકે-આત્મારૂપી ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થયેલ કુશલ કર્મ રૂપ કલ્પવૃક્ષ કે જે સમ્યકત્વ રૂપ અંકુર વાળું હોય છે, તથા જે અનેક પ્રકારની નિર્મળ ભાવનાઓ રૂપી જળ વડે સિંચિત થઈને આત્મારૂપી ભૂમિમા વૃદ્ધિ પામતું હોય છે તથા ધ્યાનરૂપી ક્રિયા જ જેનાં પાંદડાં છે તથા અખંડ તપ અને સંયમ રૂપ અનુષ્ઠાનો જ જેના સુંદર પુષ્પો હોય છે, અને મોક્ષ રૂપી ફળથી જે અત્યંત શોભાયમાન હોય છે, તેવા કુશલ કર્મરૂપ કલ્પવૃક્ષને, ચક્રવર્તિ વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિ રૂપ આલોકના સુખ

वस्तिदानम्, तत् भवितव्यमान यस्य स तथा-पैहिक पारलौकिक सुखलाभस्पृहारहित इत्यर्थः । 'अप्पुस्सुए' अल्पौत्सुक्य उत्कण्ठावर्जित । 'अवहिल्लेस' अवहिर्लेश्या अविषयगामिनीवहि लेश्या=मनोवृत्तिर्यस्यासौ तथा असंयममनोवृत्तिरहित इत्यर्थः । 'सुसामण्णरए' सुधामण्यरत -सु=सुष्ठुतया श्रामण्य=श्रमणधर्म रत=तत्पर -शुद्धसाधुधर्मपालक इत्यर्थः । 'दंत' दान्त क्रोधादिदमनात्, यद्वा 'इयन्त' इतिच्छायापक्षे इयोः=रागद्वेषयो अन्त -विनाशो यस्य स तथा रागद्वेषविजेता

वाले कुठार से उस कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को काट देता है। ऐसा यह निदान होता है। इस निदान से-इस लोक संबंधी और परलोकसंबंधी सुख की लालसा से ये रहित थे (अप्पुस्सुए) इनके चित्त में किसी पदार्थ आदि के सेवन करने की या उसके अवलोकन करने की विशेषरूप किसी तरह से भी उत्कंठा नहीं रही थी। (अवहिल्लेसे) और इनकी मनोवृत्ति संयम आदि अनुष्ठान के परिपालन करने में इतनी एकाग्र बनगई थी कि वह एक क्षण भी उससे बाहिर नहीं जाती थी अर्थात् असंयमभावकी तरह इनकी चित्तवृत्ति स्थिर में नहीं जाती थी। 'सुसामण्णरए' ये अच्छी तरह से शुद्ध साधुधर्म के पालन करने में जी जान से तत्पर रहते थे। (दंते) क्रोधादिकषाय का इन्होंने एकान्ततः दमन कर दिया था। अर्थात्-(दंते) पद की छाया इयन्त भी होती है। इस पक्ष में (इन्होंने राग द्वेष इन दोनों का अन्त-विनाश-कर दिया

અને ઉંદર વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિરૂપ પરલોકના સુખની અભિલાષારૂપ તીક્ષ્ણ ધારવાળી નિષાદ રૂપી કુહાડીથી ઊંધી નાખવામાં આવે છે તાત્પર્ય એ છે કે નિયાણ કરવાથી મોક્ષપ્રાપ્તિ દૂર રહેવાય છે અને જીવને સંસારમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે એવા અનુસાર આ પ્રકારના નિયાણાથી રહિત હતા તેઓ આલોક અને પરલોકના સુખની લાલસાથી રહિત હતા (अप्पुस्सुए) કોઈપણ પદાર્થનું સેવન કરવાની કે અવલોકન કરવાની ઉત્કંઠાથી તેઓ રહિત હતા "अवहिल्लेसे" સંયમ વગેરે અનુષ્ઠાનના પરિપાલનમાં અત્યંત લીન બની જવાથી જેઓ ક્યારેય પણ તેમની ચિત્તવૃત્તિ અસંયમ ભાવ તરફ વળતી ન હતી એટલે કે તેમની મનોવૃત્તિ અસંયમ ભાવ તરફ સ્વપ્નમાં પણ જતી ન હતી "सुसामण्णरए" તેઓ શુદ્ધ સાધુ ધર્મનું પાલન કરવામાં સદા તત્પર રહેતા હતા. તાત્પર્ય કે પોતાના પ્રાણની પણ પરવા કર્યા વગર તેઓ સાધુધર્મનું ઉત્તમ રીતે પાલન કરતા હતા "दंत" ક્રોધાદિ કષાયને તેમણે બિલકુલ હમણાં દીધા હતા અથવા- (दंत) પદની છાયા (इयन्त) પણ થાય છે તેથી એ અર્થ પણ બનાવી શકાય-કે તેમણે રાગદ્વેષ જે તેનો અન્ત નાશ કર્યો હતો આ રીતે સાધુના તમામ

इत्यर्थः, स एतादृशः सन् स्कन्दकः 'इणमेव' इदमेव=जिनोक्तमेव 'निग्गथं पावयणं' नैर्ग्रंथं प्रवचन 'पुरओ काउं' पुरतः कृत्वा=अग्रे कृत्वा मार्गानभिज्ञो मार्गज्ञजनमिव पुरतः कृत्वा प्रधानीकृत्य 'विहरइ' विहरति तिष्ठतीति ॥ सू० १३ ॥

स्कन्दकस्य दीक्षाग्रहणानन्तरं भगवतो जिनपदविहरणं स्कन्दकस्य तपश्चरणादिकञ्च दर्शयन्नाह 'तएणं समणे' इत्यादि ।

मूलम्—तएणं समणे भगवं महावीरे कयंगलाओ नयरीओ छत्तपलासयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारुवाणं थेराणं अंतिए सामाइय माइयाइं अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए अहासुहं देवाणुप्पिया मा परिबंधं करेह तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उपसंपज्जित्ताणं विहरइ । तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खु

था। ऐसा अर्थ होता है। इस प्रकार की स्थिति सम्पन्न बने हुए वे स्कन्दक अनगार (इणमेव) इस जिनोक्त ही 'णिग्गथं पावयणं) नैर्ग्रन्थ प्रवचन को 'पुरओ काउं' मार्ग को नहीं जानने वाले को आगे कर के चलता है उसी प्रकार ये स्कन्दक अनगार (विहरइ) भगवान के साथ निर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे कर के विचरने लगे ॥ सू० १३ ॥

ગુણોથી યુકત બનેલા હોવાથી સ્કન્દક અણગાર "इणमेव" જિનોકત "णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउ विहरइ" (જેવી રીતે માર્ગથી અજાણ વ્યકિત માર્ગ જાણનારને આગળ રાખીને તેની પાછળ જાય છે તેવી રીતે નિર્ગ્રંથ પ્રવચનને આગળ કરીને (નિર્ગ્રંથ પ્રવચનને) અનુસરીને ભગવાનની સાથે વિચરવા લાગ્યા. ॥ સૂ. ૧૩ ॥

पडिम अहासुत्त अहाकप्प अहामग्गं अहातच्च अहासम्म काएण फासेइ पालेइ सोहेइ तीरेइ पुरेइ किट्टेइ अणुपालेइ आणाए आराहेइ। सम्म काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समण भगव महावीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी इच्छामि णं भते। तुब्भे हिं अब्भणुन्नाए समाणे दोमासिय भिक्खुपडिम उवसपज्जित्ताण विहरित्तए। अहासुह देवाणुप्पिया! मा पडिबध करेह त चेव। एव ते मासिय चउम्मासिय। पचमासिय। छम्मासिए। सत्तमासिय। पढम सत्तराइदिय दोच्च सत्तराइदिय। तच्च सत्तराइदिय। अहोराइदिय। एगराइय। तएण से खदए अणगारे एगराइय भिक्खुपडिम अहासुत्त जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगव महावीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी-इच्छामि णं भते! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे गुणरयण सवच्छर तवोकम्म उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, अहासुह देवाणुप्पिया! मा पडिबध करेह। तएण से खदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेण अब्भणुन्नाए समाणे गुणरयणसवच्छर तवोकम्म उवसपज्जित्ताण विहरइ। त जहा-पढमं मास चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्ति वीरासणेण अवाउडेणए। एव दोच्च मास छट्ठ छट्ठेण अणिक्खित्तेणं दिया ठाणुक्कुडुए

सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य। एवं तच्चं मासं अट्ठमं अट्ठमेणं। चउत्थं मासं दसमं दसमेणं। पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं। छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं। सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं। अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं। नवमं मासं वीसइमं वीसइमेणं। दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं। एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेणं। बारसमं मासं छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं तेरसमं मासं अट्ठावीसइमेणं अट्ठावीसइमेणं। चउद्दसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं। पण्णरसमं मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेणं सोलसं मासं चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं। अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडिए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेणं, तएणं से खंदए अणगारे गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं, अहाकप्पं जाव आराहेत्ता, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवो कम्मेहिं अप्पाणं भावे माणे विहरइ। तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं, पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं मंगल्लेणं, सस्सिरिएणं, उदग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं, उदारेणं, महाणुभागेणं, तवोकम्मेणं सुक्के, लुक्खे, निम्मंसे, अट्ठिचम्मावणद्धे किडिकिडियाभूए, किसे धमणिसंतए जाए यावि होत्था। जीवं जीवेण गच्छइ। जीवं

जोवेण चिट्ठइ। भास भासित्ता विगिलाइ, भास भासमाणे गिलाइ, भास भासिस्सामीति गिलाइ। से जहानामए कट्ठ सगडियाइवा पत्तसगडियाइवा, तिलसगडियाइवा मुद्गसगडियाइवा, एरण्डकट्ठसगडियाइवा, इंगालसगडियाइवा० उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससद्द गच्छइ, ससद्द चिट्ठइ एवामेव खदए वि अणगारे ससद्द गच्छइ, ससद्द चिट्ठइ, उवचिए तवेणं अवचिए मससोणिएणं हुयासणे विव भासरासिपडिच्छण्णे तवेणं, तेएणं, तवतेयसिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ॥१४॥

छाया—ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतङ्गलातो नगरीतः छत्रपलाशचैत्यात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहारं विहरति। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य तथारूपाणां स्थविराणां

स्कन्दक की दीक्षा हो जाने के बाद भगवान बाहर जनपद में विहार किया और स्कन्दक ने तपश्चरण आदि कार्य किये, इन बात को प्रदर्शित करने के लिये सूत्रकार कहते हैं–'तएणं समणे भगवं महावीरे' इत्यादि

सूत्रार्थ–(तएणं समणे भगवं महावीरे) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर (कयंगलाओ नयरीओ) कृतंगला नगरी से (छत्तपलासयाओ चेइयाओ) छत्रपलाशक चैत्य से (पडिनिक्खमइ) निकले (पडिनिक्खमित्ता) निकलकर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे जनपद में विहार

સ્કન્દકની દીક્ષા થઈ ગયા પછી ભગવાન મહાવીર દેશ વિદેશમાં વિહાર કરવા લાગ્યા અને સ્કન્દકે તપસ્યા કરવા માંડી એ વાત સૂત્રકાર નીચેના સૂત્ર પદ બતાવે છે–त एणं समणे भगवं महावीरे इत्यादि

સૂત્રાર્થ–(तएणं समणे भगवं महावीरे) ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (कयंगलाओ नयरीओ) કૃતંગલા નગરીના (छत्तपलासयाओ चेइयाओ) છત્રપલાશક નામના ચૈત્યમાંથી (उद्यान भांथी) (पडिनिक्खमइ) બહાર નીકળ્યા (વિહાર કર્યો) (पडिनिक्खमित्ता) બહાર નીકળીને (बहिया जणवयविहारं विहरइ) તેઓ જનપદમાં વિહાર કરવા લાગ્યા (तएणं से खंदए अणगारे)

मन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते अधीत्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत् इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं

करने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके पश्चात् वे स्कन्दक अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) तथारूप स्थविरों के पास (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों का अध्ययन करने लगे। (अहिज्जित्ता) अध्ययन कर के फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता) आ करके (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ) उनने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके वे उनसे इस प्रकार कहने लगे (इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं मासिक भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके-विचरूं। (अहासुहं देवाणुप्पिया) भगवान महावीरने तब उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) विलम्ब मत करो।

ત્યારે સ્કન્દક અણગારે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) તથા પ્રકારના સ્થવિરોની પાસે (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) સામાયિક વગેરે અગિયાર અંગોનુ અધ્યયન કર્યું (अहिज्जित्ता) અધ્યયન કરીને (जेणेव समण भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યા શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા ત્યાં ગયા. (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને (समण भगवं महावीरं वदइ नमंसइ) તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદન નમસ્કાર કર્યાં (वदित्ता नमंसित्ता एव वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું (इच्छामि णं भते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसपज्जित्ता ण विहरित्तए) હે ભગવન્ ! જો આપની આજ્ઞા હોય તો મહિનાની ભિક્ષુપ્રતિમા અગીકાર કરીને વિચરવાની મારી ઈચ્છા છે (अहासुहं देवाणुप्पिया) ત્યારે મહાવીર ભગવાને તેમને કહ્યું તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ

इव । ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारो मासिकीं भिक्षुप्रतिमां यथा सूत्रं यथाकल्पं यथामार्गं यथा तथ्यं यथा सम्यक् कायेन स्पर्शयति पालयति, शोधयति तीरयति पूरयति कीर्तयति अनुपालयति, आज्ञया आराधयति, सम्यक् कायेन स्पर्शयित्वा यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं

(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी से आज्ञा लेकर मासिक भिक्षुप्रतिमा को धारण किया। (तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं अहाकप्पं, अहामग्गं, अहातच्चं, अहासम्मं काएण फासेइ) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने उस मासिक भिक्षुप्रतिमा का सूत्र के अनुसार, कल्प के अनुसार, मार्ग के अनुसार, सत्यता पूर्वक बहुत ही अच्छी तरह काय से स्पर्श-आचरण किया (पालेइ) उसका पालन किया (सोहेइ) उसे शोधित किया (तीरेइ, पूरेइ किट्टेइ, अणुपालेइ, आणाए आराहेइ) उसे समाप्त किया, उसे पूर्ण किया, उसका कीर्तन किया, अनुपालन किया और आज्ञा के अनुसार उसे आराधित किया। (सम्मं काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) अच्छी तरह काय से स्पर्श-आचरण कर यावत् उसे आराधित कर फिर वे जहां श्रमण

કરો (मा पडिबंधं करेह) પરંતુ વિલમ્બ કરશો નહીં (तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ) ત્યારબાદ સ્કન્દક અણગારે જ્યાં સુધી મહાવીરની આજ્ઞા લઈને માસિક ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરી અને પ્રભુને વંદન નમસ્કાર કરીને વિચરવા લાગ્યા (तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं, अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं, अहासम्मं काएण फासेइ) ત્યારબાદ તે સ્કંદક અણગારે માસિક ભિક્ષુપ્રતિમાનું સૂત્રાનુસાર, કલ્પાનુસાર, માર્ગાનુસાર અને સત્યતાપૂર્વક બરાબર જેવી જ રીતે કાયાથી આચરણ કર્યું, "पालेइ" તેનું પાલન કર્યું (सोहेइ) શોધન કર્યું, (तीरेइ पूरेइ किट्टेइ अणुपालेइ आणाए आराहेइ) તેને સમાપ્ત કર્યું તેને પૂર્ણ કર્યું, તેનું કીર્તન કર્યું તેનું અનુપાલન કર્યું અને આજ્ઞાનુસાર તેની આરાધના કરી. (सम्मं काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) ત્યાર બાદ માસિક ભિક્ષુપ્રતિમાનું કાયાથી સારી રીતે આચરણ કરીને યાવત્ ઉપરોક્ત આરાધના સુધીની વિધિ પૂરી કરીને

मन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते अधीत्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत् इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं

करने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके पश्चात् वे स्कन्दक अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) तथारूप स्थविरों के पास (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों का अध्ययन करने लगे। (अहिज्जित्ता) अध्ययन कर के फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता) आ करके (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ) उनने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके वे उनसे इस प्रकार कहने लगे (इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं मासिक भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके-विचरूं। (अहासुहं देवाणुप्पिया) भगवान महावीरने तब उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) विलम्ब मत करो।

ત્યારે સ્કન્દક અણગારે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (तहारूवाण थेराण अंतिए) તથા પ્રકારના સ્થવિરોની પાસે (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) સામાયિક વગેરે અગિયાર અંગોનું અધ્યયન કર્યું (अहिज्जित्ता) અધ્યયન કરીને (जेणेव समण भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા ત્યાં ગયા. (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને (समण भगवं महावीरं वदइ नमंसइ) તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યાં (वदित्ता नमंसित्ता एव वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું (इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासिय भिक्खुपडिमं उवसपज्जित्ता ण विहरित्तए) હે ભગવન્! જો આપની આજ્ઞા હોય તો મહિનાની ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરીને વિચરવાની મારી ઈચ્છા છે (अहासुहं देवाणुप्पिया) ત્યારે મહાવીર ભગવાને તેમને કહ્યું. તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ

राभि दिवा, दोच्चा सत्तराभि दिवा, अहोराभि दिवा, एकराभिकीम्। तत्थ खलु से खन्दए अणगारे एकारसिकीं भिक्षुपतिमां यथासूत्रं यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान महावीरस्तत्रोपागच्छति उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदंत, युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् गुणरत्न संवत्सरं तपः कर्मोपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवा

(दोच्चं सत्तराइं दिवं) दूसरी अर्थात् नौवीं सात दिनरात की (तच्चं सत्तराइंदिवं) तीसरी अर्थात्-दसवीं सात रात दिन की (अहोराइंदिवं) चौथी अर्थात् ग्यारहवीं एक अहोरात्रकी (एगराइयं) पांचवी अर्थात् बारहवीं एक रात की, इस प्रकार इन बारह भिक्षुप्रतिमाओंका उन स्कन्दक अनगार ने आराधन किया। (तत्थं से खंदए अणगारे) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार (एगराइयं भिक्खुपडिमं आहासुत्तं जाव आराहेत्ता) एक रातवाली बारहवीं भिक्षुप्रतिमा की यथासूत्र यावत् आराधना करके (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्होंने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना की नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) ऐसा कहा (इच्छामि णं भंते !) तुब्भेहिं-अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भगवन्! मैं आप

પહેલી-બેસડે છે અઠમી સાત રાત્રિદિવસની, ' दोच्चं सत्तराइं दिवं ' બીજી બેસડે છે નવમી સાત દિવસ રાતની तच्चं सत्तराइं दिवं ' ત્રીજી બેસડે છે દસમી સાત રાત્રિ દિવસની ' अहोराइं दिवं ' ચોથી-બેસડે છે અગિયારમી બેસડે દિવસ રાત્રિની, ' एगराइयं " પાંચમી બેસડે છે બારમી બેસડે રાત્રિની, આ પ્રમાણે આઈ ભિક્ષુ પ્રતિમાનું આરાધન કર્યું ' तत्थं से खंदए अणगारे एगराइयं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता ' ત્યાર બાદ બેસડે રાત્રિની બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું સૂત્રાનુસાર આરાધન કરીને એ રીતે અણગાર ' जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ ' જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજમાન હતા ત્યાં આવ્યા उवागच्छित्ता ત્યાં આવીને તેમણે ' समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા ' वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयणं संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) હે ભગવન્! હું આપ

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमादीत्, इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरनुज्ञातः सन् द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु तदेव, एवं त्रैमासिकीं, चातुर्मासिकीं, पंचमासिकीं, षण्मासिकीं, सप्तमासिकीम् , प्रथमां सप्तरात्रिदिवां, द्वितीयां सप्त

भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता) वहां आ कर के (समणं भगवं महावीर जाव नमंसित्ता एवं वयासी) उन्हों ने श्रमण भगवान महावीर को यावत् नमस्कार करके उनसे इस प्रकार कहा—(इच्छामि णं भंते ! तुब्भे हिं अब्भणुण्णाए समाणे दो मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा को धारण करने की इच्छा करता हूं । (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसे सुख हो वैसा करो विलम्ब मत करो । (तं चेव एवं ते मासियं) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा को भगवान से आज्ञा प्राप्त कर इत्यादि समस्त कथन यहां पहिली भिक्षुप्रतिमा के विषय में जैसा कहा गया है वैसा अक्षरशः समझ लेना चाहिये । इसी तरह से त्रिमासिक (चउम्मासियं) चतुर्मासिक (पंचमासियं) पंचमासिक (छम्मासियं) छहमासिक (सत्तमासियं) सप्तमासिक तथा (पढमं सत्तराइं दिय) प्रथम अर्थात् आठवीं सात रात्रि दिवस की

તેઓ જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા- (उवागच्छित्ता) ત્યાં આવીને " समण भगवं महावीरं जाव नमंसित्ता एवं वयासी " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિ પૂર્વક વંદન નમસ્કાર કરીને આ પ્રમાણે કહ્યુ-" इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे दो मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए " હે ભગવન્ ! જો આપની આજ્ઞા હોય તો હું દ્વિમાસિક (બે માસની) ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરવાની ઇચ્છા રાખુ છુ. " अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह " હે દેવાનુપ્રિય ! તમને સુખ ઉપજે તેમ કરો પરતુ આવા શુભ કાર્યમાં વિલંબ કરશો નહીં. " तं चेव एवं तेमासियं " ત્યાર બાદ ભગવાનની આજ્ઞા લઈને સ્કન્દક અણગારે દ્વિમાસિક ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરી. માસિક ભિક્ષુ પ્રતિમાના પાલનમાં જે વર્ણન ઉપર કરવામાં આવ્યું છે તેવું વર્ણન દ્વિમાસિક ભિક્ષુ પ્રતિમાના પાલનમાં પણ અક્ષરશઃ સમજી લેવું એજ રીતે સ્કન્દક અણગારે ત્રિમાસિક " चउम्मासियं " ચાર માસિક, पंचमासियं પાંચ માસિક " छम्मासियं " છમાસિક " सत्तमासियं " સાત માસિક, તથા " पढम सत्तराइं दियं "

रात्रिं दिवां, तृतीयां सप्तरात्रिं दिवां, अहोरात्रिं दिवां, एकरात्रिकीम्। तत खलु स स्कन्दकोऽनगार एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमां यथासूत्रं यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान महावीरस्तत्रोपागच्छति उपागत्य श्रमण भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदत, युष्माभिरभ्यनुज्ञात सन् गुणरत्न सवत्सर तप कर्मसंपद विहर्तुम्। यथासुखं देवा

(दोच्चं सत्तराइंदिय) दूसरी अर्थात् नौवीं सात दिनरात की (तच्चं सत्तराइंदियं) तीसरी अर्थात्-इसवीं सात रात दिन की (अहोराइंदियं) चौथी अर्थात् ग्यारहवीं एक अहोरात्रकी (एगराइय) पांचवी अर्थात् बारहवीं एक रात की, इस प्रकार इन बारह भिक्षुप्रतिमाओंका उन स्कन्दक अनगार ने आराधन किया। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार (एगराइय भिक्खुपडिम आहासुत्त जाव आराहेत्ता) एक रातवाली बारहवी भिक्षुप्रतिमा की यथासूत्र यावत् आराधना करके (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्होंने (समण भगव महावीरं वदइ नमसइ) श्रमण भगवान महावीर को वदना की नमस्कार किया (वदित्ता नमसित्ता) वदना नमस्कार करके (एव वयासी) ऐसा कहा (इच्छामि णं भंते !) तुब्भेहि-अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता ण विहरित्तए) हे भगवान्! मैं आप

પહેલી-બીજે જે આઠમી સાત રાત્રિદિવસની ' दोच्च सत्तराइं दिवं " બીજી બીજે જે નવમી સાત દિવસ રાતની, तच्च सत्तराइं दिवं ' ત્રીજી બીજે જે દસમી સાત રાત્રિ દિવસની ' अहोराइं दिवं " ચોથી-બીજે જે અગિયારમી બીજ દિવસ રાત્રિની ' एगराइयं ' પાંચમી બીજે જે બારમી બીજ રાત્રિની, આ પ્રમાણે બારે ભિક્ષુ પ્રતિમાનુ આરાધન કર્યું ' तएणं से खदए अणगारे एगराइयं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता " ત્યાર બાદ બીજ રાત્રિની બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ સૂત્રાનુસાર આરાધન કરીને સ્કન્દક અણગાર " जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ " જ્યા શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા उवागच्छित्ता ' ત્યા આવીને તેમણે " समणं भगव महावीरं वंदइ नमसइ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદન નમસ્કાર કર્યા वंदित्ता नमंसित्ता एव वयासी વદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું-(इच्छामि ण भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता ण विहरित्तए) હે ભગવાન્! હે આપ

नुप्रिय मा प्रतिबन्धं कुरु, ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणेन भगवता महावीरेण अभ्यनुज्ञातः सन् गुणरत्नसंवत्सर तप.कर्मोपसंपद्य विहरति तद्यथा प्रथमं मासं चतुर्थचतुर्थेनानिक्षिप्तेन तप० कर्मणा दिया स्थानोत्कुटुकः सूर्याभिमुखः आतापनभूमौ आतापयन्, रात्रि वीरासनेनाप्रावृतश्च । एवं द्वितीयं मासं ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! मैं चाहता हूं कि आप से आज्ञा प्राप्त कर मैं गुण रत्न सवत्सर नामक तप धारण करूँ। प्रभुने कहा (अहासुहं देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! तुम्हे जैसा सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) इस शुभकार्य में विलम्ब मत करो। (तएणं से खंदए अनगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयणं संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) इस प्रकार से श्रमण भगवान महावीर प्रभु की आज्ञा प्राप्त कर उन स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नामक तप धारण किया। (तंजहा) इस तप की विधि इस प्रकार से है-(पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे, आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) पहिले मास में निरन्तर व्यवधान रहित एकान्तर उपवास करे तथा दिवस में उकडा आसन से बैठे और सूर्यकी तरफ मुंह करके आतापना भूमि में आतापना लेवे। तथा रात्रि

આજ્ઞા આપો તો હવે ગુણરત્ન સવત્સર નામનુ તપ કરવાની મારી ઇચ્છા છે ભગવાને કહ્યુ-(अहासुहं देवाणुप्पिया) હે દેવાનુપ્રિય! આપને સુખ ઉપજે તેમ કરો (मा पडिबंधं करेह) પરંતુ શુભકાર્યમા વિલમ્બ કરવો નહીં (तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समणे-गुणरयणं संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) આ રીતે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા લઈને સ્કન્દક અણગારે ગુણરત્ન સવત્સર તપની આરાધના કરવા માંડી (तं जहा) તે તપની વિધિ આ પ્રમાણે છે-(पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे, आयावणभूमीए आयावेमाणे रात्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) પહેલા મહિનામાં નિરંતર (એક પણ દિવસ છોડયા સિવાય) એકાન્તર ઉપવાસ કરવા દિવસે ઉભડક આસને બેસીને, સૂર્યની તરફ મુખરાખીને તડકાવાળી જમીનમા આતાપના લેવી તાપ સહન કરવો અને રાત્રે વસ્ત્ર ઓઢયા વિના વીરાસને બેસવુ. (एवं दोच्चं मासं छट्ठ छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं दिया ठाणुक्कुडए सूराभिमुहे

पष्ठपष्ठेनानिक्षिप्तेन दिवा स्थानोत्कुटुकः सूर्याभिमुख आतापनभूमौ आतापयन् रात्रि वीरासनेना प्रावृतम । एवं तृतीय मासमष्टमाष्टमेन । चतुर्थं मासं दशम दशमेन । पचम मास द्वादशद्वादशेन । षष्ठ मास चतुर्दशचतुर्दशेन । सप्तमं

में वस्त्र ओढे विना वीरासन करे । (एवं दोच्च मास छट्ठ छट्ठेणं अनिक्खित्तेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेइ रत्तिं वीरासणेणं अपाउडेणं य) इसी प्रकार से दूसरे महीने में निरन्तर दो दो उपवास-बेले बेले पारणा करें । दिन में उकडासन करे सूर्य के सामने आतापन भूमि में आतापना लेवे । एवं रात्रि में वस्त्र ओढे विना वीरासन करें । (एव सत्तमं मासं) अट्ठम अट्ठमेण, चउत्थ मास दसम दसमेण, पचम मासं बारसमं-बार समेण, छट्ठ मास चउद्दसम-चउद्दसमेण, सत्तमं मास सोलसमं-सोल समेण) इसी तरह से तीसरा महिना भी व्यतीत करना चाहिये अर्थात् जैसे प्रथममास और द्वितीयमास के दिन और रात्रि में रहने की विधि कही गई है उसी प्रकार की विधिपूर्वक इस मास में रहना चाहिये परन्तु इस तीसरे मास में निरन्तर अट्ठम की तीन उपवास करने की तपस्या करे। चतुर्थमास में और सर्वविधि पहिले की तरह से जाननी चाहिये परन्तु उपवास चार चार करें। पांचवे मासमें और सब विधी पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास पांच पांच करें। छठवें महिना में भी और सब विधि पहिले जैसी ही जाननी चाहीये परन्तु उपवास छट्-छट् करें। सातवें महिना में भी दिन रातको सब विधि पहिले जैसी ही है

आयावणभूमीए आयावेइ रत्तिं वीरासणेणं अपाउडेणं य) બીજા પ્રમાણે બીજા મહિનામા નિરતર છઠ્ઠને પારણે છઠ્ઠ કરે દિવસે ઉકડાસને સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને તડકે બેઠે અને રાત્રે ઓઢયા વિના વીરાસન કરે (एव सत्तमं मास अट्ठमेण चउत्थ मास दसम दसमेण, पचम मास बारसम बारसमेण, छट्ठ मास चउद्दसम चउद्दसमेण, सत्तम मास सोलसम-सोलसमेण) ત્રીજા મહિનામાં નિરતર અઠ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને) પારણે અઠ્ઠમ કરવા જોઈએ. અને બાકીની તમામ વિધિ પહેલા અને બીજા માસની વિધિ પ્રમાણે જ સમજવી બીજા મહિનામા નિરતર ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ અને બાકીની વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ સમજવી પાચમે મહિને પાંચ ઉપવાસને પારણે પાચ ઉપવાસ કરવા અને બાકીની સઘળી વિધિ આગલા પ્રમાણે જ સમજવી છઠ્ઠે મહિને ૭ ઉપવાસને પારણે ૭ ઉપવાસ કરવા અને બાકીની તમામ વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ સમજવી સાતમે મહિને સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા, દિવસ અને રાત્રે કરવાની બીજી વિધિ

मासं षोडशषोडशेन। अष्टमं मासमष्टादशाष्टादशेन। नवमं मास विंशतितम विंशतितमेन। दशमं मासं द्वाविंशतितमद्वाविंशतितमेन। एकादशं मासं चतुर्विंशतितमचतुर्विंशतितममेन। द्वादशं मासं षड्विंशतितमषड्विंशतितमेन। त्रयोदश मासम् अष्टाविंशतितमाष्टाविंशतितमेन। चतुर्दशतम मास त्रिंशत्तमत्रिंशत्त-

---

परन्तु उपवास सात-सात करे। (अट्ठमं मास अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं) आठवें मास में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-परन्तु यहां उपवास आठ-आठ करे। (नवमं मासं वीसइमं वीसइमेण) नौमे महिने में भी विधि और सब पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास इस में नौ-नौ करे। (दसमं मासं बावीसइमं-बावीसइमेणं) दशवें महिने की विधि भी और सब पहिले जैसी ही है-परन्तु उपवास इसमें दस दस करे। (एकारसमं मांसं चउवीसइमं-चउवीसइमेणं) ग्यारहवें महिने में भी और सब विधि पूर्वोक्त रूप से ही है-परन्तु उपवास इसमें ग्यारह-ग्यारह करे। (बारसमं मासं छव्वीइसमं-छव्वीसइमेणं) बारहवें महिने में भी दिन रात की जैसी विधि पहिले कही गई है-वैसी ही है परन्तु उपवास यहाँ बारह-बारह करे। (तेरसम मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेणं) तेरहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-परन्तु यहां उपवास तेरह-तेरह करे। (चउद्दसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं) चौदहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-

---

આગળ મુજબજ સમજવી (अट्ठम मास अट्ठारसमं अट्ठारसमेण) આઠમે મહિને આઠ ઉપવાસને પારણે આઠ ઉપવાસ કરવા બાકીની વિધિ આગળ મુજબ સમજવી (नवमं मासं वीसइमं वीसइमेण) નવમે મહિને નવ ઉપવાસને પારણે નવ ઉપવાસ કરવા. બાકીની વિધિ આગળ મુજબ જ કરવી (दसमं मास बावीसइम-बावीसइमेणं) દસમે મહિને દસ ઉપવાસને પારણે દસ ઉપવાસ કરવા બાકીની વિધિ આગળ મુજબ જ સમજવી (एक्कारसमं मास चउवीसइम चउवीसइमेण) અગિયારમે મહિને અગિયાર ઉપવાસને પારણે અગયાર ઉપવાસ કરવા બાકીની બધી વિધિ આગળ મુજબ સમજવી, (बारसम मासं छव्वीसइम छव्वीसइमेण) બારમે મહિને બાર ઉપવાસને પારણે બાર ઉપવાસ કરવા બાકીની બધી વિધિ આગળ પ્રમાણે જ કરવી (तेरसम मासं अट्ठावीसइमं-अट्ठावीसमेण) તેરમે માસે તેર ઉપવાસને પારણે તેર ઉપવાસ કરવા. બાકીની બધી વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ કરવી (चउद्दसमं मास तीउइमं तीसइमेणं) ચૌદમે મહિને ચૌદ ઉપવાસને પારણે ચૌદ ઉપવાસ કરવા બાકીની તમામ વિધિ પહેલા માસ મુજબજ સમજવી

मेन । पंचदश मासं द्वात्रिंशदमहात्रिंशदमेन । षोडश मास चतुस्त्रिंशदमचतुस्त्रिंशदमेनानिक्षिप्तेन तपः कर्मणा दिवास्थानोत्कुटुक सूर्याभिमुख आतापनभूमौ आतापयन् रात्रि वीरासनेनाप्रावृतः । ततः खलु स स्कंदकोऽनगारो गुणरत्नसंवत्सरं तपः कर्म यथासूत्रं यथाकल्पं यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्त

परन्तु उपवास चौदह चौदह करे । (पण्णरसम मास चत्तीसइमचत्तीसइमेणं) पन्द्रहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास यहां पन्द्रह पन्द्रह करे । (सोलस मासं चोत्तीसइमं-चोत्तीसइमेणं) सोलहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है, परन्तु इसमें सोलह सोलह उपवास करें । (अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडिए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेणं) तीसरे चौथे पांचवें आदि मास से लेकर सोलहवें महिना तक दिन और रात्रि सम्बन्धी कर्तव्य विधि प्रथम मास तथा द्वितीय मास में कथित विधि जैसी ही है-इसी बात को इस सूत्र पाठ द्वारा प्रदर्शित किया है । अर्थात् तीसरे चौथे आदि महिने से लेकर सोलहवें महिने तक दिवस में उत्कुटुक आसन से बैठे सूर्य की तरफ दृष्टि रख कर आतापना लेवे तथा रात्रि में वस्त्र ओढे बिना वीरासन से रहे । (तएणं से खंदए अणगारे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं, अहाकप्पं, जाव आराहेत्ता) इस प्रकार

(पण्णरसम मास चत्तीसइम चत्तीसइमेण) પંદરમે મહિને પંદર ઉપવાસ ને પારણે પંદર ઉપવાસ કરવા બાકીની વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી. (सोलस मास चोत्तीसइम—चोत्तीसइमेण) સોળમે મહિને સોળ ઉપવાસને પારણે સોળ ઉપવાસ કરવા બાકીની વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ કરવી (अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडिए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेणं) ત્રીજાથી લઈને સોળમા માસ સુધી દિવસ અને રાત્રિ સંબંધ કૃત્ય વિધિ પહેલા અને બીજા માસની જે વિધિ બતાવી છે તે પ્રમાણેજ છે એજ વાત સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવી છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે ત્રીજા મહિનાથી સોળમા મહિના સુધી દિવસે સૂર્યની સામે મુખ રાખીને ઉભડક આસને તડકામાં બેસીને તડકો સહન કરવો અને રાત્રે વસ્ત્ર ઓઢયા વિના વીરાસને બેસી ને ઠંડી સહન કરવી (तएणं से खंदए अणगारे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं अहाकप्पं जाव आराहेत्ता) આ રીતે સ્કન્દક અણગારે ગુણરત્ન સંવત્સર નામના તપની સૂત્રાનુસાર,

त्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा बहुभिश्चतुर्थषष्ठाष्टमदशमद्वादशैर्मासार्धमासक्षपणैर्विचित्रैस्तपःकर्मभिरात्मानं भावयन् विहरति। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारस्तेनोदारेण विपुलेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मांगल्येन सश्रीकेण, उदग्रेण,

---

स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नाम का तप की यथासूत्र यथाकल्प यावत् आराधना करके फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर आये। (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वहां आकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की और नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वदना नमस्कार कर (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम दसम दुवालसेहि मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहि तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ठ अट्ठम दशम तथा द्वादशम रूप तपस्या से एवं मासखमण तथा अर्धमास खमण रूप विचित्र तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य-

---

કલ્પાનુસાર (यावत्) આરાધના કરી (अहो) (यावत्) પદ વડે પહેલી ભિક્ષુ પ્રતિમામા આવતો તમામ પાઠ આરાધના કરી ત્યા સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવાનો છે આરાધના કરીને તેઓ (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા (उवागच्छित्ता समणं भगव महावीर वदइ नमंसइ) ત્યા આવીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનેજ વદન નમસ્કાર કર્યા "वदित्ता नमसित्ता" વદન નમસ્કાર કરીને "बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठम-दसम-दुवालसेहिं, मासद्धमासखमणेहिं विचि-तेहिं-तवोकम्मेहिं अप्पाण भावेमाणे विहरइ) અનેક ઉપવાસ, છટ્ઠ, અઠમ, દશમ (ચાર ઉપવાસ,) અને દ્વાદશમ (પાચ ઉપવાસ) રૂપ તપસ્યાથી અને માસ ખમણ તથા અર્ધમાસ ખમણ વગેરે વિવિધ પ્રકારની તપસ્યાઓથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિચરવા લાગ્યા (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं, पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं, उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) ત્યાર બાદ તે ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત, પ્રગૃહીત, કલ્યાણરૂપ, શિવરૂપ ધન્યરૂપ, મગલરૂપ,

दृढेन, उत्तरेण उदारेण महानुभावेन तप कर्मणा शुष्को रूक्षो निर्मांसः अस्थि चर्मावनद्ध किटिकिटिकाभूतः कृशः धमनिसन्ततो जातश्चापि अभूत्। जीवं जीवेन गच्छति, जीवं जीवेन तिष्ठति, भाषां भाषित्वाऽपि ग्लायति भाषां भाषमाणो ग्लायति भाषां भाषिष्ये इति ग्लायति। एवं यथा भावकाष्ठकटिका इति वा।

રૂપ, મંગલ રૂપ, શોભાયુક્ત, ઉદગ્ર ઉદાત્ત ઉજ્જ્વલ, ઉત્તમ, ઉદાર, મહાપ્રભાવશાલી તપઃકર્મ થી તપસ્યા થી (સુકકે, લુકકે, નિમ્મંસે, અટ્ઠિચમ્માવણદ્ધે કિકિકિડિયાભૂએ, કિસે, ધમણિસંતએ જાએ યાવિ હોત્થા) સુકાઈ ગયે બિલ્કુલ રૂક્ષે હો ગયે સર્વથા માંસ રહિત બન ગયે સિર્ફ ઉનકી હડ્ડિયાં ચમડી સે મઢી રહ ગઈ અર્થાત્ ઢકી રહ ગઈ ચલતે સમય ઉનકી હડ્ડિયાં આપસ મેં ખટખટાકર કિટ કિટ શબ્દ કર બજને લગતી ઇતને વે કૃશ હો ગયે। ધમનિયોં કા સમુદાય ઉનકે ઉસ કૃશ શરીર મેં ઇકદમ દિખલાઈ પડને લગા । (जीव जीवेण गच्छइ) વે કેવલ અપને આત્મબલ સે હી ચલતે। શરીર બલ સે નહીં। (जीवं जीवेण चिट्ठइ) આત્મબલ સે હી વે બૈઠતેશરીરબલ સે નહીં। (भासं भासित्ता किलिस्सइ) બોલકર થકજાતે। (भासं भासमाणे गिलाइ भासं भासिस्सामि ति गिलाइ) બોલતે બોલતે ભી થક જાતે। તુઝે બોલના હોગા–ઐસા વિચાર આને પર ભી વે થક જાતે। તથા (से जहानामए कट्ठसगडियाइ वा, पत्तसगडियाइ वा, तिलसगडियाइ वा, एरण्डकट्ठसगडियाइ वा)

ઓજસ્વી, તેજસ્વી દીપ્ત, તેજસ્વલ, ઉત્તમ, ઉદાર અને મહાપ્રભાવશાળી તપ શ્રીકર્મ અણુચારૂં (સુકકે, લુકકે, નિમ્મંસે અટ્ઠિચમ્માવણદ્ધે કિકિકિડિયા ભૂએ. કિસે, ધમણિસંતએ જાએ યાવિ હોત્થા) શરીર સુકાઈ ગયુ હતા યાવ અભૂ (વધુ સુકકે થઈ ગયું) તેમનુ શરીર સર્વથા માંસ રહિત બની ગયુ હતુ હાડકા ઢકા હોતા અને ચામડી જ રહી. ચાલતી વખતે તેમના શરીરના હાડકા એક બીજા સાથે ખડાઇને (કટ કટ) અવાજ કરતા હોવા તેઓનું શરીર પહેલ જ કૃશ થઈ ગયુ હતુ તેમના તે કૃશ શરીરની નસો પણ દેખવા લાગી (जीवं जीवेण गच्छइ) તેઓ પોતાના આત્મબળથી જ ચાલતા હતા, શરીર બળથી નહીં (जीव जीवेण चिट्ठइ) તેઓ પોતાના આત્મબળથી જ બેસતા હતા (भासं भासित्ता किलिस्सइ) ભાષા બોલીને પણ થાકી જતા (भासं भासमाणे गिलाइ भासं भासिस्सामि ति गिलाइ) ભાષા બોલતા બોલતાં પણ થાકી જતા મારે બોલવું પડશે–એવો વિચાર આવવાથી પણ તેઓ થાકી જતા તથા (से जहानामए कट्ठसगडियाइ वा, पत्तसगडियाइ वा, तिलसगडियाइ वा, एरण्डसगडियाइ वा) જેમ કોઈ ગાડામાં પાંદડા તથા તલની સિંગોથી

त्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा बहुभिश्चतुर्थषष्ठाष्टमदशमद्वादशैर्मासार्धमासक्षपणैर्विचित्रैस्तपःकर्मभिरात्मानं भावयन् विहरति। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारस्तेनोदारेण विपुलेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मांगल्येन सश्रीकेण, उदग्रेण,

---

स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नाम का तप की यथासूत्र यथाकल्प यावत् आराधना करके फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर आये। (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वहां आकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की और नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वदना नमस्कार कर (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम दसम दुवालसेहि मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहि तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ठ अट्ठम दशम तथा द्वादशम रूप तपस्या से एवं मासखमण तथा अर्धमास खमण रूप विचित्र तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलणं पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, दउत्तेणं, उत्तमेणं उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य-

---

કલ્પાનુસાર (यावत्) આરાધના કરી (अहीं) (यावत्) પદ વડે પહેલી ભિક્ષુ પ્રતિમામા આવતો તમામ પાઠ આરાધના કરી ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવાનો છે. આરાધના કરીને તેઓ (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) ત્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા (उवागच्छित्ता समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) ત્યાં આવીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદન નમસ્કાર કર્યા "वदित्ता नमसित्ता" વદન નમસ્કાર કરીને "बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठम-दसम-दुवालसेहिं, मासद्धमासखमणेहिं विचि-त्तेहिं-तवोकम्मेहिं अप्पाण भावेमाणे विहरइ) અનેક ઉપવાસ, છટ્ટ, અઠમ, દશમ (ચાર ઉપવાસ,) અને દ્વાદશમ (પાચ ઉપવાસ) રૂપ તપસ્યાથી અને માસ ખમણ તથા અર્ધમાસ ખમણ વગેરે વિવિધ પ્રકારની તપસ્યાઓથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિચરવા લાગ્યા (तएण से खदए अणगारे तेण उरालेण, विउलेण, पयत्तेण, पग्गहिएण, कल्लाणेण, सिवेण, धन्नेण, मगल्लेण, सस्सिरीएण, उदग्गेण, उदत्तेण, उत्तमेण, उदारेण, महाणुभावेण तवोकम्मेण) ત્યાર બાદ તે ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત, પ્રગૃહીત, કલ્યાણરૂપ, શિવરૂપ ધન્યરૂપ, મગલરૂપ,

टीका—'तएणं समणे भगवं महावीरे' ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः "कयंगलाओ" कृतंगलातः नगरीतः "छत्तपलासयाओ चेइयाओ" छत्रपलाशकात् चैत्यात् छत्रपलाशकनामकोद्यानात् "पडिनिक्खमइ" प्रतिनिष्क्रामति "पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ" प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहारं विहरति। "तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "तदनन्तर भगवतो महावीरस्य विहरणानन्तरम् स्कन्दकनामानगारः "समणस्स भगवओ महावीरस्स" श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य "तहारूवाणं थेराणं अंतिए" तथारूपाणां स्थविराणामंतिके समीपे "सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ"

जन्य प्रभाव से उनका आत्मबल विशेषरूप से बढ़ा हुआ था। अतः वे भस्म से ढकी हुई अग्नि की तरह से प्रकाशित थे। (तवेणं तेएणं तवतेयसिरिए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) इस सूत्रपाठ द्वारा यही बात प्रकट की गई है। अर्थात् वे तप से तेज से और तप तथा तेज की शोभा से बहुत बहुत शोभित थे॥ सू० १४॥

टीकार्थ—(तएणं समणे भगवं महावीरे) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर (कयंगलाओ नयरीओ) कृतंगला नगरी से (छत्तपलासयाओ चेइयाओ) छत्रपलाशक चैत्य-उद्यान से (पडिनिक्खमई) निकले। (पडिनिक्खमित्ता) निकलकर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) बाहर वे जनपद में विहार करने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे) भगवान् महावीर के विहार के अनन्तर वे स्कन्दक अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए)

પણ તપના પ્રભાવથી તેમનું આત્મબળ વધારે પ્રદીપ્ત થયું હતું તેથી તેઓ રાખની નીચે દબાયેલા અગ્નિ જેવા દેદીપ્યમાન હતા (तवेण तेएण तवतेयसिरिए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) આ સૂત્ર પાઠ વડે ઉપરોક્ત વાત જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે જેનાથી કે તેઓ તપથી અને તેજથી તથા તપના તેજથી અતિશય શોભાયમાન લાગતા હતા॥ સૂ. ૧૪॥

ટીકાર્થ—' तएणं समणे भगवं महावीरे " ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ' कयंगलाओ नयरीओ " કૃતંગલા નગરીના ' छत्तपलासयाओ चेइयाओ છત્રપલાશક ચૈત્યમાંથી (બગીચા) માંથી (पडिनिक्खमइ) વિહાર કર્યો. पडिनिक्खमित्ता ત્યાંથી વિહાર કરીને बहिया जणवयविहारं विहरइ ' બહારના પ્રદેશોમાં વિચરવા લાગ્યા ' तएणं से खंदए अणगारे ત્યાર બાદ સ્કન્દક અણગાર " तहारूवाणं थेराणं अंतिए ' તથા પ્રકારના સ્થવિરોની પાસે

पत्रशकटिका इति वा तिलशकटिका इति वा भांडकशकटिका इति वा, एरंडकाष्ठशकटिका इति वा, अंगारशकटिका इति वा, उष्णे दत्ता शुष्का सती सशब्दं गच्छति, सशब्दं तिष्ठति। एवमेव स्कंदकोऽपि अनगारः सशब्दं गच्छति सशब्दं तिष्ठति उपचितस्तपसा, अपचितो मांसशोणितेन हुताशन इव भस्मराशिप्रतिच्छन्नस्तपसा तेजसा तपस्तेजः श्रिया अतीवोपशोभमानस्तिष्ठति॥

जैसे कोई लकडियों से भरी हुई गाड़ी हो, पत्तों से भरी हुई गाड़ी हो, तिलों की फलियों से भरी हुई गाड़ी हो, एरंड के काष्ठों से भरी हुई गाड़ी हो, (भंडगसगडियाइ वा) बर्तनों से भरी हुई गाडी हो। (इंगालसगडियाइ वा) अथवा अंगारा-कोयलों से भरी हुई कोई गाडी हो (उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ)। और जब वह धूप में खूब सूक जाती है-तब वह खड़ खड़ शब्द करती हुई चलती है, ठहरने पर भी उसमें से खड़ खड़ शब्द निकलता है (एवामेव) इसी तरह से (खंदए वि अणगारे ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ) स्कन्दक अनगार भी जब चलते तब उनके शरीर में से हड्डियों का ढेर अवशिष्ट मात्र रह जाने के कारण उनके परस्पर के संघर्षण से खड़ खड़ शब्द निकलता। (उवचिए तवेण अवचिए मंससोणिएणं हुयासणेविव भासरासिपडिच्छण्णे) इस तरह वे यद्यपि शरीर से कृशता की पराकाष्ठा को पहुँच चुके थे-अर्थात् मांस और शोणित से वे बिलकुल विहीन बन चुके थे पर फिर भी वे तप से उपचित थे। अर्थात् तपस्या

એરંડીના સાઠાથી, (भंडगसगडियाइ वा) વાસણોથી, (इंगालसगडियाइ वा) અથવા કોલસાથી ભરેલુ કોઇ ગાડુ હોય (उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ) અને જ્યારે ઉપરોક્ત વસ્તુઓ ઘણાજ તાપમે લીધે ઘણીજ શુષ્ક થઇ જાય છે તેવી વસ્તુ ઓથી ભરેલુ ગાડુ ચાલતી વખતે (खट, खट) અવાજ કરતુ ચાલે છે, અને જ્યારે તે ગાડુ ઉભું રહે છે ત્યારે પણ (खट, खट અવાજ થાય છે (एवामेव) એજ પ્રમાણે (खंदए वि अणगारे ससद्दं गच्छइ, ससद्दं चिट्ठइ) જ્યારે સ્કન્દક અણગાર ચાલતા ત્યારે તેમનાં હાડકા એક બીજા સાથે ઘસાવાથી તેમાથી (खट, खट) એવો અવાજ થતો હતો તેમનું શરીર હાડકાના માળખા જેવુ બની જવાને કારણે એવું બનતું હતું (उवचिए तवेण अवचिए मंससोणिएणं हुयासणेविव भासरासिपडिच्छण्णे) આ રીતે જો કે તેમનું શરીર કૃશતાની પરાકાષ્ઠાએ પહોચી ગયું હતું-એટલે કે માંસ અને શોણિત (લોહી) થી બિલકુલ વિહીન થાની ગયું હતું-તો

यदि स्कन्दस्य प्रव्रज्याग्रहणात् पूर्वकाल एव एकादशाङ्गानि आसन्, तर्हि अत्र स्कन्दकस्य वर्णने कथमुक्तम्, तदा स्कन्दकस्यानगारस्येवाभवत्वादिति चेदुच्यते-मूलादर्शस्य भगवतस्तावन्ति नव वाचनाः सन्ति तत्र सर्ववाचनासु स्कन्दकचरितात् पूर्वकाले ये स्कन्दकचरितभिन्नेषु अन्येषु चरितेषु तत्रत्यैरेव भगवद्भिः स्कन्दकचरितोत्पत्तेः प्रागेव भगवतः सुधर्मस्वामिनः जम्बूनामानं स्वकीयशिष्यमधिकृत्य वस्तुतत्त्वप्रतिपादनायामस्यां स्कन्दकचरितप्ररूपणा कृतेति न कोऽपि विरोध इति ।

अथ स्कन्दकः किमुक्तवानित्याह-'इच्छामि णं भंते' इत्यादि । 'इच्छामि णं भंते' इच्छामि खलु भदन्त ! 'तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे' युष्माभिरभ्यनु

चतीसूत्र में जो उनका चरित्र कहने में आया है वह संगत नहीं बैठता है, क्यों कि पहले बने हुए ग्यारह अंगों में जब यह चरित्र कहा गया है तो उस समय में स्कन्दक अनगार थे ही नहीं। क्यों कि वे तो अनगारावस्थापन्न हुए हैं। अतः यह बात परस्पर विरोधग्रस्त बन जाती है सो इस का समाधान इस प्रकार से है-भगवान महावीर के तीर्थ में नौ वाचनाएँ थीं। उन सब वाचनाओं में एक एक चरित्र से पहिले जो स्कन्दक चरित्र-अभिधेय का अर्थ या वह दूसरे चरित्र द्वारा प्रज्ञापित किया गया था। स्कन्दकचरित्र का उत्पत्ति के अनन्तर भगवान सुधर्मा स्वामी ने अपने शिष्य जंबूस्वामी को लेकर इस प्रस्तुत वाचना में स्कन्दक के चरित्र की प्ररूपणा की है। इस तरह से इसमें विरोध आने जैसी कोई बात नहीं है।

भगवान से स्कन्दक ने क्या कहा ? सो कहते हैं—(इच्छामि णं भंते) तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासिय भिक्खुपडिमं उवसंप-

---

तेमनु जे ओवन चरित्र वर्णव्युं छे ते सुसंगत लागतु नथी अरवु के पहेला अनेकों अंगिधार अंगोनी रचना थयने तो स्कन्दक अणगार होता ज नथी-तेथी आवुं तो त्यारपछीज बन्या होय तेथी आ बाबतमा विरोधाभास छे तो ते शंकानु आ प्रमाणे समाधान करी शकाय छे-भगवान महावीरना शासनमा नव वाचनाओ हती ते बधी वाचनाओमा एक एक चरित्रना पहेला जे स्कन्दकचरित्र अभिधेय अर्थ होतु ते बीजा चरित्र वडे प्रगट करवामां आव्यु होतु स्कन्दकचरित्रनी उत्पत्ति बाद भगवान सुधर्मास्वामीओ पोताना शिष्य जंबूस्वामीने संबोधीने आ प्रस्तुत वाचनामा स्कन्द चरित्रनी प्ररूपणा करी छे आ रीते तेमा विरोधाभास जेवु कंइ रहेतु नथी. एम हवे भगवानने शु कह्युं ? सूत्रकार ते बतावे छे- इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासिय भिक्खुपडिमं उवसंप-

सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते "अहिज्जित्ता" अधीत्य "जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः। "तेणेव उवागच्छइ" तत्रैवोपागच्छति "उवागच्छित्ता" उपागत्य "समणं भगवं महावीरं" श्रमणं भगवन्तं महावीरम् "वंदइ नमसइ" वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा "एवं वयासी" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्=उक्तवान् अत्रैकादशाङ्गविषये कश्चिदेवं शङ्कते-ननु अनेन स्कन्दकचरितात् पूर्वकाले एव एकादशाङ्गानां निष्पत्तिः पर्यवस्यति, पञ्चमाङ्ग श्री भगवतीसूत्रस्यान्तर्भूतमिदं स्कन्दकचरितमुपलभ्यते ततः कथं न विरोधो भवति।

तथारूप स्थवीरों के समीप (सामाइय माइयाइं एक्कारसअंगाइं) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों को (अहिज्जइ) पढने लगे। (अहिज्जित्ता) पढ़कर (जेणेव समणे भगवं महावीरे) वे जहां श्रमण भगवान महावीर थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर आये। (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) वहां आकर के उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की-नमस्कार किया और (वदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-

यहां एकादशाङ्ग के विषय में कोई ऐसी आशंका करता है-(स्कन्दक अनगार ने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया) सो इस कथन से तो यही बात साबित होती है कि ग्यारह अंग स्कन्दक अनगार के पहिले ही बन चुके थे, यदि यह बात न होती तो फिर वे उन्हें पढ़ते कैसे? तथा जब यह बात निश्चित हो जाती है-तो फिर इस पंचम अंग भग-

"सामाइयमाइयाइ एक्कारसअंगाइं" સામાયિક આદિ અગિયાર અંગોનો "अहिज्जइ" અભ્યાસ કરવા લાગ્યા. "अहिज्जित्ता" તેનો અભ્યાસ કરીને "जेणेव समणे भगव महावीरे" જ્યા શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા "तेणेव उवागच्छइ" ત્યા આવ્યા. (उवागच्छित्ता) ત્યાં આવીને "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા "वदित्ता नमंसित्ता एव वयासी" અને વંદન નમસ્કાર કરીને આપ્રમાણે કહ્યુ

શકા-અહીં કોઈને આ પ્રકારની શકા ઉદ્ભવે કે" સ્કન્દક અણગારે અગિયાર અંગોનો અભ્યાસ કર્યો." આ કથન મુજબ તો એમ જ માનવુ પડે કે અગિયાર અંગની રચના સ્કન્દક અણગારની પહેલા જ થઈ ગઇ હશે. જો એવુ ન બન્યુ હોત તો તેમણે કેવી રીતે તે અંગોનો અભ્યાસ કર્યો હોત? જો એ વાત સિદ્ધ થાય તો આ પાચમા અંગરૂપ ભગવતીસૂત્રમા

मासिकी भिक्षुप्रतिमा गच्छान्निर्गत्य स्वीक्रियते। अस्यामेकमासपर्यन्तं प्रतिदिनमेकादत्तिभोजनस्य, एकैव च पानकस्य गृह्यते।

उक्तञ्च—"गच्छा विणिक्कमित्ता, पडिवज्जइ मासियं महापडिमं।
दत्तेग भोयणस्स, पाणस्स वि एगजा मासं" ॥ १ ॥

छाया—गच्छादिनिष्क्रम्य प्रतिपद्यते मासिकीं महाप्रतिमाम्।
दत्तिमेकां भोजनस्य, पानस्यापि एकां यावन्मासम् ॥ इत्यादि।

अस्याः स्वरूपं सविस्तरं दशाश्रुतस्कन्धसूत्रे सप्तमाध्ययने तृतीयसूत्रा दारभ्य द्वाविंशतितमसूत्रपर्यन्तं विलोकनीयम्। व्याख्यापि तत्रैव मत्कृतायां सुनिहर्षिणीटीकायामवलोकनीया इति।

एक मास में पूर्ण होती है। इसमें भिक्षु अभिग्रहविशेषों का पालन करता है—यह गच्छ से बाहर रहकर आराधित की जाती है। इसमें एक मास तक प्रतिदिन एक दत्ति आहार की ली जाती है और एक दत्ति पानी की ली जाती है। कहा भी है—

"गच्छा वि णिक्कमित्ता, पडिवज्जइ मासियं महापडिमं।
दत्तेगभोयणस्स य, पाणस्स वि एग जामास" ॥ १ ॥

इस गाथा द्वारा यही बात समझाई गई है इसका विस्तार सहित स्वरूप दशाश्रुत स्कंधसूत्र में सप्तम अध्ययन में तृतीय सूत्र से लेकर बाईसवें सूत्र तक लिखा गया है सो वहां से जान लेना चाहिये। इन सूत्रों की व्याख्या सो वहीं सुनिहर्षिणी नाम टीका में देख लेना चाहिये। कोई यहां पर इस प्रकार की शंका करता है कि स्कन्दक अनगार तो ग्यारह अंग के ही पाठी-पारक थे और प्रतिमाओं की भी आराधना इन्हों ने की है सो ऐसा जो कहा गया है वह समझ में नहीं

અમુક પ્રકારના અભિગ્રહનું પાલન કરે છે-તેની આરાધના ગચ્છની બહાર રહીને કરાય છે તેની આરાધના કરનાર એક માસ સુધી દરરોજ એક દત્તિ આહારની અને દત્તિ પાણીની લે છે દત્તિ એટલે પાત્રમાં જેટલું એકવારમાં આવે તેટલા આહાર એક દત્તિ કહેવાય છે. કહ્યું પણ છે

"गच्छा वि णिक्कमित्ता, पडिवज्जइ मासियं महापडिमं॥
दत्तेग भोयणस्स य, पाणस्स वि एग जा मास ॥ १ ॥

આ ગાથા વડે ઉપરોક્ત વાત જ સમજાવવામાં આવી છે દશાશ્રુતસ્કંધ સૂત્રના સાતમા અધ્યયનના ત્રીજા સૂત્રથી લઈને બાવીસમા સૂત્ર સુધીમાં તેનું સ્વરૂપ વિસ્તારથી સમજાવ્યું છે તો જિજ્ઞાસુઓએ ત્યાંથી વાંચી લેવું તે સૂત્રોની વ્યાખ્યા પણ તેમાંજ આપેલી મુનિહર્ષિણી નામની ટીકામાંથી વાંચી લેવી

ज्ञातः सन् " मासियं भिक्खुपडिमं " मासिकीं भिक्षुप्रतिमाम् ' उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए " उपसंपद्य खलु विहर्तुम् । हे भगवन् यदि देवानुप्रियाणामाज्ञा भवेत्तदाहं मासिकीं भिक्षुप्रतिमां स्वीकर्तुं मिच्छामीति भावः, भगवान् कथयति ' अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह " यथासुखं देवानुप्रिय ! यथा ते रोचते तथा कुरु किन्तु मा प्रतिबन्धं कुरु=विलम्बं मा कुरु इति भावः । ' तएणं से खंदए अणगारे " ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "समणेणं भगवया महावीरेण" श्रमणेन भगवता महावीरेण " अब्भणुन्नाए समाणे " अभ्यनुज्ञातः प्राप्ताज्ञः सन् " हट्ठे जाव नमंसित्ता " हृष्टो यावत् नमस्यित्वा, अत्र यावत्पदेन तुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यितः हर्षवशविसर्पितहृदयः श्रमणं भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा ' इत्यस्य ग्रहणं कर्त्तव्यम् । एतादृशः स्कन्दको भगवन्तं नमस्कृत्य " मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ " मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य खलु विहरति, ' मासियं ' इति एकमाससंपाद्याम् 'भिक्खु पडिमं ' भिक्षुप्रतिमाम् — समाराधनीयमभिग्रहविशेषं स्वीकृत्य तिष्ठति, इय ज्जित्ताणं विहरित्तए) हे भदन्त ! यदि आप देवानुप्रिय ! आज्ञा प्रदान

करें तो मैं मासिक भिक्षुप्रतिमा की आराधना करना चाहता हूं । तब प्रभु ने कहा (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) जैसा विचार किया है वैसा सुखपूर्वक करो परन्तु शुभ काम में विलम्ब मत करो। (तएणं से खंदए अणगारे) तब उन स्कन्दक अनगार ने (समणेणं भगवया महावीरेणं) श्रमण भगवान महावीर से (अब्भणुन्नाए समाणे) आज्ञा प्राप्तकर (हट्ठे जाव नमंसित्ता) हृष्ट यावत् तुष्ट आनन्दित चित्त होकर नमस्कार कर (मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) मासिक भिक्षु प्रतिमा धारण करली । यह प्रथम भिक्षुप्रतिमा

પ્રતિમાની આરાધના કરવાની મારી ઇચ્છા છે ત્યારે ભગવાન મહાવીરે તેમને જવાબ આપ્યો– " अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह " તમારી ઇચ્છા પ્રમાણે સુખેથી કરો પરંતુ શુભ કાર્યમાં વિલંબ કરશો નહીં " तएणं से खंदए अणगारे " ત્યારે તે સ્કન્દક અણગારને " अब्भणुन्नाए समाणे " " समणेणं भगवया महावीरेणं " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા મળવાથી " हट्ठे जाव नमंसित्ता " ઘણો હર્ષ તથા સંતોષ પામ્યા મને તેઓએ ભગવાન મહાવીર ને વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર કરીને " मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ " તેમણે માસિય ભિક્ષુપ્રતિમાની આરાધના કરવા માટે આ પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા એક માસમાં પૂર્ણ થાય છે તેની આરાધના કરનાર ભિક્ષુ

वीर तीर्थंकरोपदेशेन वस्तुतत्त्वात् कोऽपि दोषः सर्वज्ञा हि द्रव्य-क्षेत्र-कालभावं ज्ञात्वैव यत्किञ्चित् कथयन्ति इति ।

" तएणं से खंदए अणगारे " ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः " मासियं भिक्खुपडिमं " मासिकीं भिक्षुप्रतिमाम् " अहासुत्तं " यथासूत्रम्=सूत्रनिर्दिष्ट-विध्यनुसारम् । ' अहाकप्पं ' यथा कल्पम्=कल्पः=स्थविरादिकल्पमनतिक्रम्य-कल्पानुसारमित्यर्थः । ' अहामग्गं ' यथामार्गम्=ज्ञानदर्शनचारित्ररूपमोक्षमार्गं नतिक्रमेण, क्षयोपशममावानतिक्रमेण वा । ' अहातच्चं ' यथा तत्त्वम्=तत्त्वानतिक्रमेण यद्वा ' यथा तथ्यम् ' इतिच्छायापक्षे सत्यानुसारम् ' अहा सम्मं ' यथा साम्य = समभावमनतिक्रम्य — सुष्ठुप्रकारेण कर्मनिर्जरणभावनयेत्यर्थः ' काएण ' कायेन=शरीरेण न पुनरभिलाषमात्रेण 'फासेइ' स्पृशति=समुचितकाले सविधिग्रहणात् ' पालेइ ' पालयति = पारंपारमुपयोगेन तस्यां तत्परत्वात् ।

इस लिये इस कथन में कोई विरोध नहीं है । क्यों कि सर्वज्ञ भगवान जो कुछ कहते हैं वह द्रव्य क्षेत्र कालभाव को देखकर ही कहते हैं । (तएणं से खंदए अणगारे) मासिकी प्रथम भिक्षु प्रतिमा धारण कर लेने के बाद उन स्कन्दक अनगार ने उस (मासियं भिक्खुपडिमं) मासिक भिक्षु प्रतिमा को (अहासुत्तं) सूत्रकथित विधि के अनुसार (अहाकप्पं) स्थविरादि कल्प के अनुसार (अहामग्गं) सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र रूप मोक्षमार्ग के अनुसार अथवा यथातथ्य=सत्य के अनुसार, (अहासम्मं) समभाव के अनुसार अथवा कर्म निर्जरा की भावना के अनुसार, (काएण) अपने शरीर से किन्तु अभिलाषा मात्र से नहीं (फासेइ) स्पर्श किया अर्थात्-समुचित काल में विधि सहित उसे ग्रहण किया । अतः (पालेइ) पारंपार

મહાવીર પ્રભુની આજ્ઞા લઈને ભિક્ષુપ્રતિમાનું આરાધન કરવું હતું તેથી તે કથનમાં કોઈ દોષ રહેતો નથી. કારણ કે સર્વજ્ઞ ભગવાન જે કંઈ કહે છે તે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવને જોઈને જ કહે છે

" तएणं से खंदए अणगारे " ત્યાર બાદ સ્કન્દક અણગારે " मासियं भिक्खुपडिमं " માસિક ભિક્ષુપ્રતિમાનું ' अहासुत्तं ' સૂત્રમાં જણાવેલી વિધિ પ્રમાણે, अहामग्गं " સમ્યક્ દર્શન સમ્યક્ જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર રૂપ મોક્ષમાર્ગાનુસાર અથવા પોતાના ક્ષયોપશમ ભાવાનુસાર ' अहा तच्चं " તત્ત્વ અનુસાર અથવા સત્યને અનુસરીને, " अहासम्मं ' સમભાવ અનુસાર અથવા કર્મનિર્જરાની ભાવના અનુસાર, ' काएण પોતાના શરીરથી નહીં કે માત્ર અભિલાષાથી જ-" फासेइ સ્પર્શ કર્યો-જોઈએ તે કાળે ભાવ શુદ્ધિ વિધિ સહિત તેની આરાધના કરી पालेइ પછીના પૂરક આરાધના કરવાને

अथायमेकादशांगधारीकथितः, प्रतिमाश्च विशिष्य श्रुतवानेव करोति तदुक्तम्-

" गच्छे च्चिय निम्माओ, जा पुव्वा दस भवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइय वत्थू होइ जहण्णो सुयाहिगमो ॥ १ ॥ "

छाया—गच्छे एव कुशलः निर्मातो यावत् पूर्वाणि दश भवंत्यसंपूर्णानि ।
नियमस्य तृतीय वस्तु भवति जघन्य श्रुताधिगमः ॥ १ ॥ इति ॥

इत्यादि शास्त्रादेवमवगतं भवति यत् यो हि उत्कृष्टेन किञ्चिदून दश पूर्वधरः, जघन्येन नवमपूर्वस्य तृतीय वस्तु पाठको भवेत् स एव भिक्षुप्रतिमां कर्तुं शक्नुयात् स्कन्दकस्तु न पूर्वधारी तत्कथमेतस्यैतादृश तपो विशेषेऽधिकारः कथितः इति चेदुच्यते-प्रकृतश्रुतनियमः पुरुषान्तरविषयः । स्कन्दकस्य तु सर्वविन्महा-

आता कारण कि प्रतिमाओं की आराधना तो जो विशिष्ट श्रुतज्ञान वाला होता है वही कर सकता है ऐसा ही सिद्धान्त में कहा गया है को—

" गच्छे च्चिय निम्माओ, जा पुव्वा दस भवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइय वत्थू, होइ जहण्णो सुयाहिगमो " ॥ १ ॥

जो गच्छ में कुशल और उत्कृष्ट से कुछ कम दश पूर्वका धारी हो तथा जघन्य से नौवें पूर्वकी तृतीय वस्तु का ज्ञाता हो, वही भिक्षु प्रतिमाओं की आराधना कर सकता है स्कन्दक अनगार तो पूर्व के धारी थे नहीं तो फिर इनका इस प्रकार के तपोविशेष में अधिकार कैसे कहा ? । उत्तर—शास्त्र में जो ऐसा कहा गया है सो ऐसा यह नियम दूसरे पुरुषों के लिये हैं-स्कन्दक अनगार के लिये यह नियम लागू नहीं पडता है क्यों कि वे जो भिक्षु प्रतिमा पालन करने में प्रवृत्त हुए सो साक्षात् सर्वज्ञ भगवान महावीर तीर्थंकर के उपदेश से ही हुए हैं।

શંકા—ભિક્ષુ પ્રતિમાઓનું આરાધન તો વિશિષ્ટ શ્રુતજ્ઞાન વાળા જ કરી શકે છે એવુ સિદ્ધાંતમાં કહ્યુ છે જેમ કે—

" गच्छे च्चिय निम्माओ, जा पुव्वा दसभवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइय वत्थू, होइ जहण्णो सुयाहिगमो " ॥ १ ॥

ભિક્ષુપ્રતિમાની આરાધના એજ મુનિ કરી શકે છે કે જે ગચ્છમા કુશલ હોય, જે વધારેમા વધારે દસ પૂર્વથી કઈક ઓછા જ્ઞાનનો ધારી હોય અને ઓછામા ઓછો નવમાં પૂર્વની ત્રીજી વસ્તુનો (વત્થુનો) જ્ઞાતા હોય. જ્યારે સ્કન્દક અણગાર તો પૂર્વના ધારક ન હતા તેઓ તો અગિયાર અંગના જ પાઠી (ધારક) હતા તો આ પ્રકારના વિશિષ્ટ તપની આરાધના કરવાનો અધિકાર તેમને કેવી રીતે હોઈ શકે ?

ઉત્તર—શાસ્ત્રનો એ નિયમ બીજી વ્યક્તિઓને માટે છે પણ સ્કન્દક અણગારને તે નિયમ લાગુ પાડી શકાય નહીં, કારણ કે તેમણે સાક્ષાત્ સર્વજ્ઞ

"अणुपालेइ" अनुपालयति-प्रतिमाकालमारभ्य तदनुमोदनात्। किमुक्तं भवति? "आणाए आराहेइ" आज्ञया=आचार्यादाज्ञानुसारेण आराधयति। "सम्मं कारणं फासित्ता" सम्यक् कायेन स्पृष्ट्वा "जाव आराहेत्ता" यावत्=आराध्य, अत्र यावत्पदेन-"पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता पूरित्ता किट्टित्ता अणुपालित्ता आणाए" इति छाया—पालयित्वा शोधयित्वा (शोभयित्वा तीरयित्वा पूरयित्वा कीर्तयित्वा अनुपालयित्वा आज्ञया) इति संग्रहः।

स्कन्दकोऽनगारो मासिकीं भिक्षुप्रतिमां सविधिं समाराध्य "जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः "तेणेव उवागच्छइ" तत्रैव

प्रतिमा में अच्छी तरह से आराधित हुआ है अतः में प्रतिमा को अच्छी तरह से पालित कर चुका हूं इस प्रकार से उसका कीर्तन करते। (अणुपालेइ) प्रतिमा की समाप्ति होने पर भी वे उसकी अनुमोदना किया करते। इस तरह उन स्कन्दक अनगारने उस पहिली भिक्षु प्रतिमा का (आणाए आराहेइ) प्रभुकी आज्ञा के अनुसार आराधन किया। (सम्मं कारणं फासित्ता) इस प्रकार वे स्कन्दक अनगार प्रथम भिक्षु प्रतिमा का अपने शरीर से स्पर्श करके (जाव आराहेत्ता) यावत् उसका सविधि आराधन करके यावत्पदसे "पालित्ता, सोहित्ता, तीरित्ता, पूरित्ता, किट्टित्ता अणुपालित्ता आणाए" इस पाठ का यहां संग्रह किया गया है-इन पदों का अर्थ-पालन करके, शोधित या शोभित करके, तीरित करके, पूरित करके, कीर्तित करके, अनुपालीत करके, आज्ञा से आराधित करके (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर आए।

હતો અને મે આ ભિક્ષુપ્રતિમાનુ તે અભિપ્રાયનુ સારી રીતે પાલન કર્યુ છે તે પ્રકારે ભિક્ષુપ્રતિમાનુ બરાબર પાલન કર્યુ છે એ પ્રમાણે તેનુ કીર્તન કર્યુ અણુપાલેઇ ભિક્ષુપ્રતિમાની સમાપ્તિ થયા પછી પણ તેઓ તેની અનુમોદના કર્યા કરતા આ પ્રમાણે એ રીતે અનુસારે પહેલી ભિક્ષુ પ્રતિમાનુ આણાએ આરાહેઇ પ્રભુની આજ્ઞા અનુસાર આરાધન કર્યુ 'સમ્મં કાએણ ફાસિત્તા આ રીતે પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ પોતાની કાયાથી બરાબર આરાધન કરીને જાવ આરાહેત્તા તેનુ પાલન કરીને તેને શોભિત અથવા શોભિત કરીને તીરિત કરીને પૂરિત કરીને, કીર્તિત કરીને, અનુપાલિત કરીને અને અનુક્રમની આજ્ઞાનુસાર આરાધન કરીને "જાવ સમણે ભગવ મહાવીરે અર્થાત્ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા, 'તેણેવ

'सोहेइ' शोधयति-अतिचारपङ्कप्रक्षालनात्, यद्वा 'शोभयति' इति-छायायां पारणदिने गुर्वादिदत्तावशिष्टभोजनात्। 'तीरेइ' तीरयति-पूर्णेऽपि तदवधौ स्वल्पकालावस्थानात् 'पूरेइ' पूरयति-पूर्णेऽपि तदवधौ तत्कृतपरिमाणपूरणात्। 'किट्टेइ' कीर्तयति-पारणादिने "अयमयं चाभिग्रहविशेषः कृत आसीत्, अस्यां प्रतिमायां स चासादित एव, अधुना पारितप्रतिमोऽहम्, इति गुरुसमक्षं कीर्तनात्।

उपयोग पूर्वक उसमें तत्पर रहने के कारण उन्हो ने उसका अच्छी तरह से पालन किया। (सोहेइ) इसमें किसी भी प्रकार से अतिचार रूप पङ्क मैल न लग जाय इस बात का सदा ध्यान रखने के कारण अथवा लगे हुए अतिचाररूप पङ्क (कीचड) के प्रक्षालन करने के कारण उन्हों ने उसे शोधित किया। अथवा (सोहेइ) की छाया (शोभयति) ऐसी भी हो सकती है सो इस पक्ष में इसका अर्थ ऐसा होता है कि पारणा के दिन गुरु आदि द्वारा दिये गये अवशिष्ट भोजन करने से उसको उन्होंने शोभायुक्त किया। 'तीरेइ' उसकी अवधि समाप्त हो जाने पर भी वे उसे थोडे समय तक और भी पालन करते रहते इस कारण मानों वे उसे उन्होंने तीरयुक्त किया अर्थात् समाप्त किया। 'पूरेइ' उसकी अवधि समाप्त हो जाने पर भी उस संबंधी कार्यों के परिमाण की वे पूर्ति करते रहते इस कारण उन्हों उसे पूरा किया। 'किट्टेइ' जब पारणा करने का दिन आता तब वे गुरु के समक्ष जाकर ऐसा कहते कि मैंने ऐसा अभिग्रह लिया था-और वह मेरा अभिग्रह इस

કારણે તેમણે સારી રીતે તેનું પાલન કર્યું. "सोहेइ" તેમા કોઇ પણ પ્રકારના અતિચાર (દોષ) રૂપ મેલ લાગી ન જાય તેની કાળજી રાખવાને કારણે અથવા જે અતિચારરૂપ મેલ લાગ્યો હોય તેને સાફ કરવાને કારણે તેમણે તેને શોધિત કર્યું-શુદ્ધ કર્યું અથવા-"सोहेइ"ની છાયા "शोभयति" પણ થઇ શકે છે તો એ દૃષ્ટિએ તેના અર્થનો વિચાર કરવામા આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ ઘટાવી શકાય કે પારણાને દિવસે ગુરુ વગેરે મારફત અપાયેલું વધેલુ ભોજન કરવાથી તેમણે તપસ્યાની શોભામા અભિવૃદ્ધિ કરી. "तीरेइ" તપની સમયમર્યાદા પૂરી થયા પછી પણ થોડા સમય સુધી તેમણે તેનું પાલન કર્યા કર્યું. તે કારણે જાણે કે તેઓ તેને તરી ગયા એટલે તેમણે ભિક્ષુપ્રતિમાને સમાપ્ત કરી. (पूरेइ) તપની અવધિ પૂર્ણ થઇ જવા છતા પણ તપસ્યા સંબધી કાર્યોના પરિમાણની તેઓ પૂર્તિ કરતા રહ્યા, તે કારણે તેમણે તે પૂરી કરી, (किट्टेइ) જ્યારે પારણાનો દિવસ આવ્યો ત્યારે તેમણે ગુરુની પાસે જઇને એવું કહ્યું કે મે આ પ્રકારનો અભિગ્રહ લીધો

विशेषस्त्वेतावानेव-अत्र द्वैमासिक्यां भिक्षुप्रतिमायां द्वे दत्ती भोजनस्य द्वे प पतिदिनं मानद्वयपर्यन्तं ग्रहीतव्ये भवतः ।

शेषं सर्वं मासिकी भिक्षुप्रतिमावदेव विज्ञेयमिति 'एवं' एवम्-अनेनैव क्र "तेमासिय, चाउमासियं, पंचमासिय, छम्मासियं, सत्तमासियं,' त्रैमासि चातुर्मासिकीं एकमासिकीं, पाण्मासिकीं, सप्तमासिकीं, भिक्षुप्रतिमा स्त्री इह तथा विशेषतः पदसिद्धि समाप्तावयवति। विशेषः केवलमयम् पद्-त्रैमासि भोजनपानयोस्तिस्रस्तिस्रो दत्तयः, चातुर्मासिक्यां चतस्रः २, पञ्च मासिक्यां प पाण्मासिक्यां षट् २, सप्तमासिक्यां सप्तसप्तदत्तयो ग्रहीतव्या भवन्ति

और पान-पानी की एक-एक दत्ति होती है-यहां ये दो दत्ति होती अर्थात् आहार की दो दत्तियां और पानी की दो दत्तियां दो महिने प्रतिदिन ली जाती हैं। बाकी का और सब कथन प्रथम भिक्षुप्रतिमा तरह से ही जानना चाहिये। इसी प्रकार से (त्र मासिय, चाउमासी पंचमासिय, छम्मासिय, सत्तमासिय) तीनमासवाली तीसरी भि प्रतिमा, चारमासवाली चौथी भिक्षुप्रतिमा, पांचमासवाली पांचवीं भि प्रतिमा छहमासवाली छठी भिक्षुप्रतिमा, सातमासवाली सातवीं भिक्षु प्रतिमा के विषय में भी जानना चाहिये। विशेषता केवल इनमें इतनी ही है कि सातमासवाली भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की तीन तीन दत्तियां होती हैं, चारमासवाली चौथी भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की चार-चार दत्तियां होती हैं। पांचमास की अवधि वाली पांचमी भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की पांच-पांच दत्तियां होती हैं। छहमासवाली छठी भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की छ छह दत्तियां होती हैं। सातमासवाली सातवीं भिक्षुप्रतिमा में आहार

અને પાણીના એક એક દાત મહણ કરવામાં આવે છે બીજી ભિક્ષુપ્રતિમામા આહાર અને પાણીની બે બે દાત મહણ કરવામાં આવે છે આહારની બે દત્તિયો બે માસ સુધી દરરોજ લેવામા આવે છે પાણીનું સમસ્ત કથન પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા પ્રમાણે જ સમજવુ એ જ પ્રમાણે "तेमासिय, चाउमासिय, पंचमासिय, छम्मासिय, सत्तमासियं' ત્રૈમાસિક ચતુર્માસિક, પચમાસિક છમા સિક અને સપ્તમાસિક પ્રતિમાઓના વિષયમા પણ સમજવુ તેમા વિશેષતા આ પ્રમાણે છે-ત્રમાસિક ભિક્ષુપ્રતિમામા આહાર અને પાણીની ત્રણ ત્રણ દત્તિયો લેવાય છે ચતુર્માસિક ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની ચાર ચાર દત્તિયો લેવાય છે પાચ પાચ માસની પચમી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની પાંચ પાચ દત્તિયો લેવાય છે ૬ માસની અવધિવાળી છઠ્ઠી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની ૬ ૬ દત્તિયો લેવાય છે સાત માસની

वोपागच्छति " उवागच्छित्ता " उपागत्य " समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता " श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा " एवं वयासी " एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्—' इच्छामि णं भंते " इच्छामि खलु हे भदन्त ! " तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे " युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् " दोमासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता विहरित्तए " द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य खलु विहर्तुम् भवदाज्ञया द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमा स्वीकर्तुमिच्छामीति भावः, ततो भगवान्–अवादीत् "अहासुहं देवाणुप्पिया " यथासुखं देवानुप्रिय ! " मा पडिबंधं करेह " मा प्रतिबन्ध कुरु शुभकार्ये विलम्बो न करणीय इति भावः " तं चेव " तदेव–मासिकी भिक्षुप्रतिमावदेव–सर्वोऽविपाठोऽध्येतव्यः ।

(उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्हों ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदन किया उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर उन्हों ने प्रभु से (एवं वयासी) इस प्रकार कहा–(इच्छामि णं भंते !) हे भदन्त ! मैं चाहता हूं कि (तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे) मैं आप से आज्ञा प्राप्त कर (दो मासीयं भिक्खुपडिमं उपसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) दो मास की अवधिवाली भिक्षुप्रतिमा का पालन करूँ। तब भगवान ने उनसे कहा–(अहासुहं देवाणु प्पिया मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय! तुम्हें जैसा रुचे वैसा करो–शुभकार्य में विलम्ब मत करो। (तचेव) इस द्वितीय भिक्षुप्रतिमा के संबंध में भी प्रथम भिक्षु प्रतिमा की तरह समस्त पाठ लगा लेना चाहिये। यहां पर जो विशेषता है वह इस प्रकार से है–कि जिस प्रकार से प्रथम भिक्षु प्रतिमा में अन्न–आहार

उवागच्छइ " त्यां गया. ' उवागच्छित्ता " त्यां જઈને તેમણે " समण भगव महावीर वदइ नमंसइ " श्रमण भगवान महावीरने वंदन नमस्कार કર્યા " वंदित्ता नमंसित्ता " वंदन नमस्कार કરીને તેમણે તેમને " एव वयासी " આ પ્રમાણે કહ્યું–" इच्छामि णं भते ! " હે ભગવન્! મારી એવી ઈચ્છા છે કે " तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे " આપનીઓ આજ્ઞા હોય તો ' दो मासियं-भिक्खुपडिम उवसपज्जित्ताण विहरित्तए " બે માસની અવધિવાળી ભિક્ષુપ્રતિમ ની આરાધના કરૂં ત્યારે ભગવાને સ્કન્દક અણગારને કહ્યું–' अहासुहं देवणुप्पिया मा पडिबध करेह " હે દેવાનુપ્રિય ! તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો શુભ કાર્યોમા વિલબ કરવો નહીં. " त चेव " આ બીજી ભિક્ષુપ્રતિમાના વિષયમા પણ તમામ સૂત્ર પાઠ પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા પ્રમાણે જ સમજી લેવો. પણ તેમાં આ પ્રમાણે વિશેષતા છે–પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમામા દરરોજ આહાર

भिक्षुप्रतिमाराधकः खलु भवति, विधिपूरकं समाराध्य आज्ञया आराधको भवति इति। तत्राष्टम्यां भिक्षुप्रतिमायां चतुर्विधाहारपरित्यागपूर्वकमेकान्तरोपवाससेवनम्, ग्रामाद्बहिः कायोत्सर्गकरणम्, उत्तानक-पार्श्वक-नैषधिकेति त्रिषु आसनेषु एकस्यासनस्य स्वीकरणम्। तत्र यदि शयीत तदा उत्तान एकपार्श्वो वा शयीत। यदि आसीत तदा नैषधिकेनासनेन आसीत। निषद्या नाम नैषधिकम्। निषद्यानाम-उपवेशनप्रकारः सा पञ्चविधा-समपादपुता-१, गोनिषद्या-२, हस्तिशुण्डिका ३, पर्यङ्का-४, अर्धपर्यङ्का५, चेति। तत्र यत्र सर्वा

होती है, तथा उसीप भिक्षु प्रतिमा को अर्थात् दशवीं भिक्षु प्रतिमा को कि जो सात दिनरात में आराधित होती है उन स्कन्दक अनगार ने सविधि आराधित कर ली (आज्ञया आराधको भवति) आज्ञा से इनका आराधन करने वाले बन गये। इन प्रथमा, द्वितीया और तृतीया प्रतिमाओं के बीच में जो प्रथमा-आठवीं-भिक्षुप्रतिमा है-उसमें चतुर्विध आहार का परित्याग करते हुए एकान्तरोपवास करना चाहिये। गांव से बाहर कायोत्सर्ग करना चाहिये। उत्तानक, पार्श्विक, एवं नैषधिक इन तीन आसनों में से किसी एक आसन को स्वीकार करना चाहिये। यदि सोवे तो उस समय उत्तानक या एक पार्श्व होकर सोवे यदि बैठे तो उस समय नैषधिक आसन से बैठे। (निषद्या) बैठने का एक प्रकार होता है उससे होने वाला नैषधिक कहलाता है। निषद्या पांच प्रकार की कही गई है-१ समपादपुता, २ गोनिषद्यिका ३ हस्तिशुण्डिका, ४ पर्यङ्का और ५ अर्धपर्यङ्का। जिस आसन में दोनों पैर और पृष्ठ-बैठक भूमि का स्पर्श

અને ત્રીજી પ્રતિમા જેટલે કે આઠમી ભિક્ષુ પ્રતિમા કે જેની આરાધના પણ સાત દિનરાત કરવી પડે છે તેનુ પણ સ્કન્દક અણગારે વિધિ પૂર્વક "आज्ञया आराधको भवति" આજ્ઞાનુસાર પ્રમાણે આરાધન કર્યું આ ત્રણ પ્રતિમાઓમાની પહેલી (આઠમી ભિક્ષુપ્રતિમા) નું આરાધન કરનારે ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરીને એકાન્તર ઉપવાસ કરવા જોઈએ. ગામની બહાર કાયોત્સર્ગ કરવો જોઈએ ઉત્તાનક પાર્શ્વિક અને નૈષધિક એ ત્રણમાના કોઈ પણ એક આસનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ સુવે ત્યારે ચત્તા અથવા એક પડખે સુવે બેસે ત્યારે નૈષધિક આસને બેસે નિષદ્યા એ બેસવાની એક રીત છે તે દ્વારા બનતો આસન તે નૈષધિક કહે છે તે નિષદ્યા પાંચ પ્રકારની કહી છે-(૧) સમપાદપુત (૨) ગોનિષદ્યિકા (૩) હસ્તિશુણ્ડિકા, (૪) પર્યંકા અને (૫) અર્ધપર્યંક

सर्वं पूर्ववदेव। एतास्तिस्रः प्रथमा द्वितीया तृतीयेति शब्देन कथ्यन्ते। ता एवाह-अष्टमी नवमी दशमी एतास्तिस्रोऽपि सप्त सप्त रात्रिन्दिवा संपाद्या भवन्ति। "पढमं सत्तराइंदियं" इत्यादि। 'पढमं' प्रथमाम् तत्राष्टम्यां भिक्षुप्रतिमायां चतुर्विधाहारपरित्यागपूर्वक = अष्टम्यादिषु तिसृषु प्रथमाम् = अष्टमीमित्यर्थः "सत्तराइंदिय" सप्तरात्रिन्दिवां = सप्ताहोरात्रसम्पाद्यां भिक्षु-प्रतिमामुपसम्पद्य स्कन्दको विहरतीति सम्बन्धः। 'एवम् 'दोच्चं' द्वितीयां = नवमीमित्यर्थः। "सत्तराइंदिय" सप्तरात्रिन्दिवां = सप्ताहोरात्रसम्पाद्याम्। 'तच्चं" तृतीयां दशमीमित्यर्थः 'सप्तराइंदिय' सप्तरात्रिन्दिवां सप्ताहोरात्रसम्पाद्यां

और पानी की सात-सात दत्तियां होती हैं। बाकी का सब कथन पहिली प्रतिमा की तरह से इन प्रतिमाओं में भी जानना चाहिये। इनके बाद आठवीं भिक्षु प्रतिमा आती है सो यह (प्रथमा) इस शब्द से और नवमीं प्रतिमा (द्वितीया) शब्द से और दसवीं प्रतिमा (तृतीया) शब्द से कही जाती है। ये तीनों ही प्रतिमाएँ सात-सात दिनरात के प्रमाणवाली होती हैं-अर्थात् इनके पालन करने का प्रमाण सात-सात दिनरात का है। यही बात (पढम सत्तराइंदियं) इस पूत्रपाठ द्वारा समझाई गई है। अष्टमीं-नवमीं और दशवीं इनमें से जो पहिली भिक्षु प्रतिमा है अर्थात्-आठवीं भिक्षु प्रतिमा है वह सात दिनरात में आराधित होती है। इस सात दिन रात की मर्यादावाली भिक्षु प्रतिमा को उन स्कन्दक अनगार ने धारण किया। इसी तरह द्वितीय प्रतिमा को अर्थात् नवमी भिक्षु प्रतिमा को कि जो सात दिनरात में आराधित

અવધિવાળી સાતમી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની સાત સાત દત્તિયો લેવાય છે બાકીનુ સમસ્ત કથન આ પ્રતિમાઓમાં પણ પહેલી પ્રતિમા પ્રમાણેજ સમજવું. ત્યાર બાદ આઠમી ભિક્ષુપ્રતિમા આવે છે તેને "પ્રથમા" શબ્દથી ઓળખવામા આવે છે નવમી પ્રતિમાને "દ્વિતીયા" શબ્દથી અને દસમી પ્રતિમાને "તૃતીયા" શબ્દથી ઓળખવામાં આવે છે તે ત્રણ પ્રતિમાઓની આરાધના કરવાની અવધિ સાત સાત દિનરાતની છે એજ વાત 'પઢમં સત્તराइंदिय" સૂત્ર દ્વારા સમજાવવામા આવેલ છે આઠમી નવમી અને દસમી પ્રતિમાઓમાથી જે પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા છે તેનું, એટલે કે આઠમી પ્રતિમાનુ સાત દિનરાત આરાધન કરવું પડે છે તે સાત દિનરાતની અવધિવાળી ભિક્ષુ પ્રતિમાનું પણ સ્કન્દક અણગારે આરાધન કર્યું એજ પ્રમાણે બીજી પ્રતિમા, એટલે કે નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમા કે જેની આરાધના સાત દિનરાત કરવી પડે છે,

न्येन यदासन तत्-लगण्डासनम् । २ उत्कुटुकासने नाम-पुरुषस्य (भोगिमागए) भूमावलगनेनोपवेशनमिति ३ ।

दशम्यां प्रतिमायां तपश्चरण पूर्ववदेव । अत्रेमानि त्रीणि आसनानि-वीरासनं गोदोहिकासन, आम्रकुब्जासन चेति । तत्र वीरासनम्-निरालम्बेऽपि सिंहासनोपविष्टवत् भून्यस्तचरणमुक्तजानुरूपवेशनम् । सिंहासनोपविष्टस्य सिंहासनेऽपसारिते यादृगवस्थान भवति तदाकारेणावस्थान वीरासनमुच्यते वीरपुरुषाचरितो यत्नेनाधिष्ठितरक्षादस्येति । गोदोहिकासनम् - गोदोहिका=गोदोहने तद्वत् यदासन तद्गोदोहिकासनम् , यथा गोदोहको गोदोहनवेलायामास्ते तद्वत् पादा-

सबध रखते हैं और पीठ-पृष्टभाग-जमीन से सबध नहीं रखता, अर्थात् वह उससे अधर-अस्पृष्ट रहता है अब ऐसा जो आसन होता है वह लगण्डासन है २। जिस आसन में बैठने में पुत-बैठक जमीन से न लगें-अधर ही रहें वह आसन उत्कुटुक आसन है ३। दशवीं प्रतिमा में तपस्या पहिले की तरह ही सात दिन रात तक की होती है। इसमें ये तीन आसन होते हैं वीरासन १, गोदोहिकासन २, आम्र कुब्जासन ३। वीरासन यह है कि किसी आदमी को कुर्सी पर बठा दो और फिर उसके नीचे से वह कुर्सी निकाल दो-इस स्थिति में वह व्यक्ति जैसे पहिले कुर्सी पर बैठा था कुर्सी के निकालने पर यदि उसी स्थिति में बैठा रहता है-तो वह वीरासन है। इसको वीरासन इसलिये कहते हैं कि यह आसन वीरपुरुषों द्वारा ही आचरणीय होता है २। जिस प्रकार गाय का दूध निकालने वाला व्यक्ति गाय को दुहते समय बैठता है-ऐसे आसन से जो बैठना होता है वह गोदोहिकासन है।

ભૂમિને સ્પર્શતો નથી એ આસનમાં બેસતી વખતે પુત " કુલા " જમીનથી અદ્ધર જ રહે છે તે આસનને ઉત્કુટુકાસન કહે છે

દસમી ભિક્ષુપ્રતિમામાં પણ પહેલી બે-આઠમી અને નવમી પ્રતિમા પ્રમાણે જ સાત દિવસની તપસ્યા કરાય છે પણ દસમી પ્રતિમામાં ત્રણ આસનો હોય છે-(૧) વીરાસન, (૨) ગોદોહિકાસન અને (૩) આમ્રકુબ્જાસન ખુરશી પર બેઠેલા માણસની નીચેથી ખુરશીને ખસેડી લેવામાં આવે છતાં પણ ખુરશી પર બેઠો હોય એવી રીતે જે આસનમાં બેસવામાં આવે છે તે આસનને વીરાસન કહે છે તેને વીરાસન કહેવાનું કારણ એ છે કે તે આસન વીર પુરુષો દ્વારા આચરણીય છે આમને દોહતી વખતે જે રીતે કોઈ

पादौ पुतौ च भूमिं स्पृशन् सा समपादपुता १, यस्यां गोरिवोपवेशनं सा गोनिषद्यिका २, यस्यां च समपादाभ्यां समपुताभ्यां चोपविश्यैकस्य पादस्य हस्तिशुण्डाकारेण प्रसारणं भवति सा हस्तिशुण्डिका ३। पर्यङ्का=पद्मासनरूपा ४, यस्यामेकं जानुमुत्पादयति सा—अर्धपर्यङ्का ५, इति।

नवम्यां भिक्षुप्रतिमायामपि चतुर्विधाहारपरिहारपूर्वकमेकान्तरोपवाससेवनम्। विशेषस्त्वासनविषयक एव। अत्र दण्डासनं, लगण्डासनम्, उत्कुटुकासनं चेति। तत्र—दण्डासनं नाम पादाग्रादिप्रसारणेन दण्डवत्पतनरूपम्। १ लगण्डं वक्रकाष्ठम्, तद्वत् मस्तक पार्ष्ण्यादि भागानां भूमिसम्बन्धेन, पृष्टस्य च सम्ब-

---

करते हैं वह समपादपुतानिषद्या है। जिस में गाय के जैसा बैठना होता है वह गोनिषद्यिका है। जिस निषद्या में दोनों पैरों से और दोनों पुतों से समान बैठ कर फिर हाथी की सूंड के समान एक पैर फैलाकर जो बैठना होता है वह हस्तिशुण्डि का है। पद्मासन माडकर बैठना यह पर्यङ्का निषद्या है। जिसमें एक पैर को दूसरे पैर पर बैठना होता है वह अर्धपर्यङ्का निषद्या है। नौमी भिक्षुप्रतिमा में भी चतुर्विध आहार का परित्याग करके एकान्तरोपवास किया जाता है। इनमें विशेषता केवल आसन को लेकर होती है। इसमें दण्डासन १, लगण्डासन २ उत्कुटुकासन ३ ये तीन आसन होते हैं। पावों के अग्रभाग आदि के फैलाने से दण्ड की तरह पडजाना यह दण्डासन है १। वक्र काष्ठ का नाम लगण्ड है इस आसन में मस्तक एव पार्ष्णि-ऐडि आदि भाग भूमि से

જે આસનમા બન્ને પગ અને પુત (કુલા) બેસવાની ભૂમિને સ્પર્શે છે, તે આસનને (સમપાદપુત નિષદ્યા) કહે છે જે આસનમાં ગાયની જેમ બેસવું પડે છે તે આસનને " गोनिषद्यिका " કહે છે જે નિષદ્યામા બન્ને પગ અને બન્ને પુતોથી સમાન બેસીને એક પગને હાથીની સૂંઢની જેમ લબાવીને બેસવામા આવે છે તે આસનને (હસ્તિ શુડિકા) કહે છે પદ્માસને બેસવાની રીતને (પર્યંકાનિષદ્યા) કહે છે જે આસનમા એક પગને બીજા પગ પર રાખીને બેસવામા આવે છે તે આસનને " अर्धपर्यंका निषद्या " કહે છે

નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમામા પણ ચાર પ્રકારના આહારનો પરિત્યાગ કરીને અકાન્તર ઉપવાસ કરવા પડે છે જેમાં આસનની જ વિશિષ્ટતા હોય છે. તેમાં (૧) દડાસન, (૨) લગડાસન અને (૩) ઉત્કુટુકાસન એ ત્રણ આસનો હોય છે જે આસનમા પગના અગ્રભાગ આદિને ફેલાવીને દંડની જેમ પડી જવાય છે તે આસનને દડાસન કહે છે " लगंड " એટલે વક્રકાષ્ઠ લગંડાસનમાં મસ્તક અને એડી આદિ ભાગ ભૂમિને સ્પર્શે છે પણ પીઠનો ભાગ

समाराध्य आज्ञया आराधको भवति । तस्यां प्रतिमायां ग्रामादेर्बहिः कायोत्सर्गः करणम् । अपानक षष्ठ भक्तम्-उपवासत्रय करणीयं भवति । ऊर्ध्वस्थानेन स्थितस्य द्वौ पादौ किञ्चित्सङ्कोच्य प्रलम्बितौ हस्तौ जानुपर्यन्तं प्रसारितभुजस्थानस्थानम् ।

अथ द्वादशीं प्रतिमामाह-"एगराइयं" इत्यादि । 'एगराइए'-एकरात्रिकीम्-एकरात्रिप्रमाणा द्वादशीं भिक्षुप्रतिमामुपसम्पद्य स्कन्दको विहरतीति । एषा चतुर्विधाहारपरित्यागपूर्वकमुपवासत्रयेण समाराध्यते । ग्रामादेर्बहिः कायोत्सर्गकरणम् । अस्यामीषन्नता नासाभूमौ दत्ता, एकपुद्गलन्यस्तदृष्टिनिमेषया दृष्ट्या स्थिरीकृतशरीरावयवे पादद्वयसमश्रेणिन्यासेन, अवलम्बितभुजाभ्यामवस्थानं भवति । एतादृशावस्थायां यः कश्चित् दैवमनुष्यतिर्यक्कृता उपसर्गाः समुपस्थिता भवन्ति ते सुप्रणिहितमनोवाक्काये सम्यक्सोढव्या इत्येवं रूपां द्वादशीं भिक्षुप्रतिमां स्कन्दको

એક રાત્રિ સે આરાધિત હોનેવાલી બારહવીં ભિક્ષુપ્રતિમા કો સવિધિ આરાધિત કર વે સ્કન્દક અનગાર આજ્ઞા કે આરાધક બને । યહ બારહવીં પ્રતિમા ગ્યારહવીં પ્રતિમા કે બાદ તેલા કરકે ઉસરાત કો ગામ સે બાહર સ્મસાન આદિ શૂન્યસ્થાન મેં જાકર વહાં એક રાત્રિભર કાયોત્સર્ગ કરકે આરાધના કી જાતી હૈ, ઇસમેં જો અવસ્થાન હોતા હૈ-આગે કા શરીર કુછ ઝુકા સા હોતા હૈ । આંખે ટિમકાર રહિત હોતી હૈ અર્થાત્ આંખોં પલકમાર બિના કી રખી જાતી હૈં, દોનોં પૈર આપસ મેં જુડે હુએ રખે જાત હૈં । હાથ દોનોં લટકતે રહતે હૈં । દૃષ્ટિ એક કિસી પુદ્ગલ પર લગાઈ જાતી હૈં । ઇસ અવસ્થા મેં જો કુછ ભી દેવ, મનુષ્ય, તિર્યંચ કૃત ઉપસર્ગ ઉપસ્થિત હોતે હૈ વે મન વચન ઔર કાયકી એકાગ્રતા કરતે હુએ સહન કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર સ્કન્દક અનગાર ને ઇસ બારહવીં ભિક્ષુ

રાત્રિમા જેની આરાધના થાય છે તે બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ સ્કન્દક અણગાર વિધિપૂર્વક આરાધન કરતા હતા બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાની વિધિ આ પ્રમાણે છે અગિયારમી પ્રતિમાનુ આરાધન કર્યા પછી અટ્ઠમ કરીને-ત્રણ ઉપવાસ કરીને-ગામની બહાર સ્મશાન આદિ નિર્જન જગ્યામા જઈને રાત્રિભર કાયોત્સર્ગ કરીને આ પ્રતિમાની આરાધના કરાય છે તે પ્રતિમાના આરાધકે નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણે ઉભા રહીને કાયોત્સર્ગ કરવો પડે છે-શરીરને આગળ થોડુક ઝુકેલો રાખવુ પડે છે આખો અનિમિષ (અપલક) રહે છે બન્ને પગ બરોબર બાજુ બાજુમાં રાખેલા અને બન્ને હાથ લટકતા રહે છે નજર કોઈ એક પુદ્ગલ પર સ્થિર કરાય છે આ અવસ્થામા મનુષ્ય દેવ અને તિર્યંચો દ્વારા જે ઉપસર્ગો થાય છે તન મન વચન અને કાયાની એકાગ્રતા રાખીને સહન કરે છે સ્કન્દક

ग्रतलाभ्यामवस्थानम् । आम्रकुब्जासनम्=आम्रवत् कुब्जासनम्, सर्वं शरीरं संकोच्योपवेशनमिति । आसु-अष्टमी-नवमी-दशमीरूपासु तिसृषु प्रतिमासु प्रत्येक प्रतिमायामुक्तानामासनानामन्यतमासनावलम्बनेनावस्थानमिति समुदितार्थः । अथैकादशीं भिक्षुप्रतिमामाह—' अहोराइंदियं ' इत्यादि । अहोराइंदियं । अहोरात्रिन्दिवाम्, एकादशी भिक्षुप्रतिमा ' अहोरात्रिन्दिवा ' इति नाम्ना कथ्यते । ताम् एकाहोरात्रसंपाद्या भिक्षुप्रतिमामुपसंपन्न स्कन्दको विहरति। एनां विधिपूर्वकं

इस आसन में दोनों पैरों के अग्रभाग से बैठना होता है २ । समस्त शरीर को संकुचित करके जिस आसन से बैठा जाता है वह आम्रकुब्जासन है ३ । इन आठवीं नौवीं दसवीं भिक्षुप्रतिमाओं में जो ये आसन कहे गये हैं उनमें से किसी एक आसन का अवलम्बन कर बैठना चाहिये (१०) अब ग्यारहवीं भिक्षुप्रतिमा को सूत्रकार कहते हैं (अहोराइंदिए) ग्यारहवीं जो भिक्षुप्रतिमा है वह (अहोरात्रिन्दिवा) इस नाम से कही जाती है । इस (अहोरात्रिन्दिवा) (दिनरात) भिक्षुप्रतिमा को विधिपूर्वक पालन करके वे स्कन्दक आज्ञा के आराधक बनें । इस प्रतिमा में ग्राम से बाहर कायोत्सर्ग किया जाता है । चतुर्विधाहारत्यागपूर्वक षष्ठभक्त की तपस्या की जाती है । इस प्रतिमा में दोनों पैर कुछ संकोच कर और दोनों हाथ जानु पर्यन्त लटकाकर खडेरहनाहोता है। अर्थात् इस रूप से कायोत्सर्ग किया जाता है ११ । अब बारहवीं भिक्षु प्रतिमा का कथन करते हुए सूत्रकार कहते है कि (एगराइयं)

નાર વ્યક્તિ બેસે છે તેવી રીતે જે આસનમા બેસવુ પડે છે તે આસમ્રન ગોદોહિકાસન કહે છે. તે આસનમાં બન્ને પગના અગ્રભાગ પર બેસવું પડે છે. સમસ્ત શરીરને સકુચિત કરીને જે આસનમા બેસાય છે તે આસનને આને કુબ્જાસન કહે છે આઠમી, નવમી, અને દસમી ભિક્ષુપ્રતિમામાં જે આસનો દર્શાવ્યા છે તેમાના કોઈ પણ એક આસને આરાધકે બેસવુ જોઇએ, હવે સૂત્રકાર અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ કથન કરે છે-" अहोराइंदिए " અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાને ' अहोरात्रिन्दिवा " નામથી ઓળખવામા આવે છે. સ્કન્દક અણગારે તે અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું વિધિપૂર્વક આરાધન કર્યું આ પ્રતિમાની આરાધના કરનારે ગામની બહાર જઈને કાયોત્સર્ગ કરવો પડે છે અને ચાર પ્રકારના આહારના પરિત્યાગ પૂર્વક ષષ્ઠભક્તની તપસ્યા કરવી પડે છે, એટલે કે છઠ્ઠ કરવો પડે છે કાયોત્સર્ગ કરતી વખતે બન્ને પગ એક બીજા સાથે સ્પર્શે તેમ ઉભા રહેવુ પડે છે. અને બન્ને હાથ લટકતા રહે છે. હવે સૂત્રકાર બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ વર્ણન કરતાં કહે છે-(एगराइयं) એક જે

उवागच्छइ ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति ' उवागच्छित्ता उपागत्य ' समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता, नमंसित्ता ' श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा ' एवं वयासी ' एवमवादीत् ' इच्छामि णं भंते ! इच्छामि खलु हे भदन्त ! ' तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं ' गुणरत्न संवत्सरं तपःकर्म ' उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए ' उपसंपद्य खलु विहर्तुम्, गुणरत्नसंवत्सरतप

मनिमा का विधिपूर्वक आराधन किया। इस तरह से स्कन्दक अनगार (एगराइयं भिक्खुपडिमं) एक रात की अवधिवाली इस बारहवीं भिक्षु प्रतीमा को ' अहासुत्तं ' सूत्र में इसके आराधन करने की जैसी विधि कही गई है उसके अनुसार 'जाव आराहेत्ता यावत् आराधित करके ' जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ ' जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहां पर आये । (उवागच्छित्ता) श्रमण भगवान् महावीर के पास आ करके उन्हों ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हों ने उनसे इस प्रकार प्रार्थना की (इच्छामि णं भंते !) हे भदन्त ! मैं चाहता हूं कि ' तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे ' आप से आज्ञा प्राप्त कर गुणरयण संवच्छर तवोकम्म ' गुणरत्न संवत्सर नामक तप स्वीकार करूं। अर्थात मैं गुणरत्न संवत्सर नामका तप स्वीकार करना चाहता हूं। ' गुणरयण संवच्छरं ' इसकी संस्कृत छाया

અણગારે તે બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું વિધિપૂર્વક આરાધન કર્યું આ રીતે સ્કન્દક અણગારે (एगराइयं भिक्खुपडिमं) એક રાતની અવધિવાળી બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું (अहासुत्तं) સૂત્રમાં તેના આરાધનની જે વિધિ બતાવી છે તે પ્રમાણે (जाव आराहेत्ता) યાવત્ આરાધન કરીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) ત્યાં જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજતા હતા ત્યાં તેઓ ગયા (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદના નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદના નમસ્કાર કરીને તે બે તેમને આ પ્રમાણે વિનતિ કરી- (इच्छामि णं भंते) હે ભદન્ત ! મારી એવી ઇચ્છા છે કે (तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे) આપની આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરીને (गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं) ગુણરત્ન સંવત્સર નામના તપની આરાધના કરું એ રીતે હું ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા ઇચ્છું છું (गुणरयण संवच्छरं) નો સંસ્કૃત છાયા (गुणरत्न संवत्सरं)

विधिपूर्वकं समराधयतीति । तत किमित्याह–' तएणं से ' इत्यादि । ' तएणं से खंदए अणगारे ' ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः ' एगराइयं भिक्खुपडिमं ' एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमाम् ' अहासुत्तं ' यथासूत्रम् सूत्रमनतिक्रम्य सूत्रप्रदर्शित मार्गानुसारेण ' जाव–आराहेत्ता ' यावत्–आराध्य अत्र यावत्पदेन 'यथाकल्पम्, इत्यारभ्य, आज्ञया इति पर्यन्तानां मासिकी भिक्षुप्रतिमोक्तानां सर्वपदानां संग्रहः कार्यः तेन आराध्येति, आज्ञया आराध्य ' जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव

२१ प्रतिमायंत्र

प्रतिमा	समयः	विशेषविधिः
१ प्रथमा	एकमासिकी	भोजनपानयोरेकैका दत्तिर्ग्राह्या ।
२ द्वितीया	द्वैमासिकी	भोजनपानयोर्द्वेद्वे दत्तिर्ग्राह्ये।
३ तृतीया	त्रैमासिकी	भोजनपानयोस्तिस्रस्तिस्रो दत्तयो ग्राह्याः ।
४ चतुर्थी	चातुर्मासिकी	भोजनपानयोश्चतस्रश्चतस्रो दत्तयो ग्राह्याः ।
५ पञ्चमी	पञ्चमासिकी	भोजनपानयोः पञ्च पञ्चदत्तयो ग्राह्याः ।
६ षष्ठी	षाण्मासिकी	भोजनपानयोः षट् षट् दत्तयो ग्राह्याः ।
७ सप्तमी	सप्तमासिकी	भोजनपानयोः सप्त सप्त दत्तयो ग्राह्याः ।
८ अष्टमी	सप्तरात्रिन्दिवा	अपानकैकान्तरोपवासपारणके आचामाम्ले तपः) ग्रामादेर्बहिः कायोत्सर्गः, उत्तानकेमेकपार्श्विकेनैषधिकमिति त्रिण्वेकस्यासनस्य सेवनम् तत्रागत परिषहोपसर्गसहनं च ।
९ नवमी	सप्तरात्रिन्दिवा	अन्यत्सर्वमष्टमी प्रतिमावत्करणम् । विशेष आसने–दण्डासन–लगण्डासनोत्कुटुकासनेष्वेकस्य सेवनम्।
१० दशमी	सप्तरात्रिन्दिवा	वीरासन गोदोहिकासननाम कुब्जासनमिति । अन्यत्सर्वं पूर्ववत् स्थातव्यम् ।
११ एकादशी	एकाहोरात्रा	अपानकषष्ठं तपः ग्रामादेर्बहिः प्रलम्बितभुजाभ्यां कायोत्सर्गकरणम् ।
१२ द्वादशी	एकरात्रिकी	अपानकमष्टमं तपः ग्रामादेर्बहि एक पुद्गलस्थापित। निर्मेष दृष्टया ईषदवनतकायेन प्रलम्बितभुजाभ्यां कायोत्सर्गः तत्रागत परिषहोपसर्गसहनञ्च —

पडिबंधं करेह ' मा प्रतिबन्धं विलम्बं कुरु, अथ स्कन्दको गुणरत्नसंवत्सरतपः स्वीकरोतीत्याह ' तएणं से ' इत्यादि । ' तएणं से खंदए अणगारे ' ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः ' समणेणं भगवया महावीरेणं ' श्रमणेन भगवता महावीरेण ' अब्भणुण्णाए समाणे ' अभ्यनुज्ञातः सन् 'जाव नमंसित्ता' यावत् नमस्थित्वा अत्र, ' इट्ठ ' इत्यग्रे ' जाव ' पदेन ' तुट्ठचित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता ' इति पदानां संग्रहः । व्याख्यातप्रायमेव प्रकरणं पूर्वं कृतं ततोऽवसेयेति । ' गुणरयण-संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ' गुणरत्नसंवत्सरतपः कर्म उपसं-

---

यह तप गुणरत्न संवत्सर है। इस गुणरत्न संवत्सर तप के विषय में स्कन्दक ने जब प्रभु से पूछा तब प्रभु ने उनसे कहा- अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो-पर शुभकार्य में विलम्ब मत करो। इस तरह प्रभु की आज्ञा प्राप्त कर स्कन्दक ने इस गुणरत्न संवत्सर तप को स्वीकार कर लिया-इसी बात को अब सूत्रकार समझाने के लिये कहते हैं—(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे जाव नमंसित्ता गुणरयणसंवच्छरतवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) जब स्कन्दक अनगार के लिये श्रमण भगवान महावीर ने गुणरत्न संवत्सर तपको आराधित करने की आज्ञा प्रदान कर दी तब वे हृष्ट तुष्ट चित्त में आनन्दित होते हुए मन की प्रसन्नता के साथ हर्षित हृदय होकर उस तप को श्रमण भगवान महावीर को बहुत नमस्कार कर

ગુણરત્ન સંવત્સર છે આ ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા માટે જ્યારે સ્કન્દક અણગારે મહાવીર પ્રભુની આજ્ઞા માગી ત્યારે પ્રભુએ કહ્યું (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) હે દેવાનુપ્રિય ! તમને સુખ ઉપજે તેમ કરો. પણ શુભકાર્ય-માં વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં આ રીતે મહાવીર પ્રભુની અનુજ્ઞા મેળવીને સ્કન્દક અણગારે તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપને અંગીકાર કર્યું એજ વાત સૂત્રકાર હવે પછીના સૂત્રમાં કહે છે-(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे जाव नमंसित्ता गुणरयणसंवच्छरतवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) જ્યારે શ્રમણ ભગવાને સ્કન્દક અણગારને તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવાની રજા આપી ત્યારે સ્કન્દકને બહુ સંતોષ થયો. ચિત્તની પ્રસન્નતા અને મનના આનંદ સહિત તે તપનો સ્વીકાર કર્યો. ભગવાન મહાવીરને વારંવાર નમસ્કાર કરીને તેઓ ત્યાંથી

कर्मस्वीकर्त्तुमिच्छामीत्यर्थः 'गुणरयणं संवच्छरं' इत्यस्य गुणरचनसंवत्सरमिति-च्छाया, तत्र गुणानां कर्मनिर्जराविशेषाणां रचनं संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपोविशेषे भवति तद् गुणरचनं संवत्सरम्-अथवा 'गुणरयणं संवच्छरं' इत्यस्य गुणरत्नसंवत्सरमितिच्छायापक्षे गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन् स गुण-रत्नः गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणरत्नसंवत्सरः गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्नसंवत्सरम्। तदेवं गुणरत्नसंवत्सरतपोविषये स्कन्द-केन पृष्टो भगवान् कथयति 'अहासुहं देवाणुप्पिया' यथासुखं देवानुप्रिय? मा

'गुणरचनं संवत्सरं' ऐसी होती है इसका अर्थ-(गुणानां कर्मनिर्जराविशेषाणां रचनं संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपोविशेषे भवति तत् गुणरचनं संवत्सरं) अपने तीसरे भागसहित एक वर्ष तक अर्थात्-सोलह महिने तक जिस तपविशेष में एक जीव की कर्मनिर्जरा विशेष रूप गुणों की रचना-उत्पत्ति होती है वह तप गुणरचन संवत्सर है। अथवा जब (गुणरत्नं संवत्सरं) ऐसी छाया रखते हैं तब इस पक्ष में इसका अर्थ ऐसा होता है कि— " गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन् स गुणरत्नः, गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणरत्नसंवत्सरः, गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्न संवत्सरम्) अर्थात् निर्जराविशेष गुणरूप रत्न जिसमें हों वह गुणरत्न है, गुणरत्न रूप जो संवत्सर है वह गुणरत्न संवत्सर है। यह गुणरत्न संवत्सर जिस तपविशेष में मौजूद रहता है वह तप गुणरत्न संवत्सर है। तात्पर्य-इस कथन का यह है कि-पूरा एक वर्ष जिस तप में कर्मों की निर्जरा विशेष गुणरूप रत्नों से युक्त हुआ व्यतीत किया जाता है

થાય છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-(गुणाना कर्मनिर्जरा विशेषाणां रचन सवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपो विशेषे भवति तत् गुणरचन संवत्सरं એક પૂર્ણાંક એક તૃત્યાંશ વર્ષ સુધી-એટલે કે ૧૬ માસ સુધી જે તપની આરાધના કરીને કર્મનિર્જરા રૂપ ગુણોની રચના (ઉત્પત્તિ) થાય છે તે તપનુ નામ ગુણરચના સવત્સર છે અને (गुणरत्न संवत्सरं) એ છાયા રાખવામા આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-'गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन्-स गुणरत्न) નિર્જરાવિશેષ ગુણ રૂપ રત્ન જેમા હોય તેને ગુણરત્ન કહે છે (गुणरत्नश्चासौ सवत्सरश्चेति गुणरत्नसवत्सर गुणरत्नसवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्नसंवत्सरम्) તે ગુણરત્ન રૂપ જે સવત્સર છે તેને ગુણરત્ન સવત્સર કહે છે જે તપમા ગુણરત્ન સંવત્સરનુ અસ્તિત્વ હોય છે તે તપને ગુણરત્ન સંવત્સર તપ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે તપની આરાધનામાં આખું વર્ષ કર્મોની નિર્જરા રૂપ ગુણરત્નથી યુક્ત વ્યતીત થાય છે, તે તપનુ નામ

स्वशरीरं तापयन्, तथा ' रत्तिं ' रात्रौ=रात्रिसमये ' वीरासणेणं ' वीरासनेन=पूर्वोक्तप्रकारेण, तथा ' अवाउडेण ' अपावृतेन=सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरण-चोलपट्टकातिरिक्तवस्त्ररहितेन शरीरेण विहरतीति ।

'एवं दोच्चं मासं ' एवं द्वितीयं मासम् एवम्=अनेनैव विधिना द्वितीयमासम् ' छट्ठ छट्ठेणं ' षष्ठं षष्ठेन, द्विकद्विकोपवासेन । शेषं सर्वं प्रथममासवदेव विशेषम् ' एवं तच्चं मासं अट्ठम अट्ठमेणं ' एवं तृतीयं मासम् त्रिकोपवासेन अष्टमाष्टमेन

जाती है। आतापना का अर्थ है सूर्य की धूप से अपने शरीर को तपाना इस तरहकी स्थिति सपक्ष बनकर वे दिवस को व्यतीत करे और रात्रि में शरीर को खुला करके वीरासन से रहे। "अवाउडेण" जो ऐसा पद दिया है—सो इससे यह बात प्रकट की गई है कि उस साधु को सदोरक मुखवस्त्रिका, रजोहरण और चोलपट्टक इनके अतिरिक्त और वस्त्र अपने शरीर पर नहीं रखना चाहिये। " एवं दोच्चं मास " इसी तरह से द्वितीय मास को भी इसी पूर्वोक्त विधि के अनुसार उसे व्यतीत करना चाहिये—पर इस महिने में उसे दो दो उपवास करना चाहिये—बाद में पारणा करना चाहिये—फिर दो उपवास करना चाहिये बाद में पारणा करना चाहिये। इस तरह बीस दिन तपस्या के होते हैं। और दस दिन पारणा के होते हैं। " एवं तच्चं " इसी विधि के अनुसार तृतीय मास को भी समाप्त करना चाहिये। पर यहां " अट्ठम अट्ठमेणं " तीन २ उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह इस मास में चौबीस दिन तपस्या के होते है और आठ दिन पारणा के होते है।

આ રીતે તે આખો દિવસ વ્યતીત કરે છે અને રાત્રે શરીર ખુલ્લુ રાખીને વીરાસને બેસે છે " अवाउडेण " પદ દ્વારા, એ દર્શાવવામાં આવ્યુ છે કે આગમમા મુનિ દોષ રહિતની મુહપત્તિ રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક, સિવાય બીજા પણ વસ્ત્ર પોતાના શરીરપર રાખી શકતો નથી. "एव दोच्चं मास" બીજો માસ પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ તેણે વ્યતીત કરવો પડે છે પણ બીજા માસ દરમિયાન તેણે છઠ (બે ઉપવાસ) ને પારણે છઠ કરવા જોઈએ. આ રીતે બીજા દિવસ ઉપવાસના અને દસ દિવસ પારણાના આવે છે ' एव तच्चं " આ વિધિ પ્રમાણેજ ત્રીજો માસ પણ વ્યતીત કરવો જોઈએ. પણ ત્રીજા માસ દરમિયાન, અઠ્ઠમને પારણે અઠ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને પારણે ત્રણ ઉપવાસ) કરવા જોઇએ આ રીતે ત્રીજે મહિને ચોવીસ દિવસ તપસ્યાના અને આ

म्पद्य खलु विहरति । गुणरत्नतपसा विधिं दर्शयन्नाह-' तं जहा ' इत्यादि । ' तं जहा तद्यथा 'पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं ' प्रथमं मासं चतुर्थं चतुर्थेण, एकान्तरोपवासेन ' अणिक्खित्तेणं ' अनिक्षिप्तेन निरन्तरेण=व्यवधानवर्जितेन ' तवोकम्मेणं ' तपः कर्मणा ' दिया ' दिवा=दिवसे ' ठाणुक्कुडुए ' स्थानोत्कुटुकः स्थानेन=आसनेन उत्कुटुकः उत्कुटुकासनस्थित इत्यर्थ ' सूराभिमुहे ' सूराभिमुखः=सूर्य सम्मुखस्थितः सन् ' आयावणभूमीए ' आतापनभूमौ-आतापनार्थ मेव नियतीकृतप्रमार्जितप्रत्युपेक्षितस्थाने ' आयावेमाणे ' आतापयन् सूर्यातपेन

अंगीकार किया इस गुणरत्नसंवत्सर तप की विधि क्या है इस बात को प्रदर्शित करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं-तं जहा-वह विधि इस प्रकार से है—(पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं आणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) प्रथम महिनों में एकान्तर उपवास-एक दिन उपवास एक दिन पारणा ऐसे निरंतर अर्थात् व्यवधान रहित करना चाहिये। इस तरह प्रथम महिनो में निरन्तर एकान्तर उपवास करना चाहिये—इस कथन के अनुसार यह बात समझ में आ जाती है कि प्रथम महिने में पन्द्रह उपवास और पन्द्रह पारणा हो जाते हैं। इस तपस्या वाले साधु को दिवस में ' ठाणुक्कुडुए ' उत्कुटुक आसन से बैठना चाहिये और सूर्यकी तरफ मुँह करके आतापना भूमि में आतापना लेना चाहिये। यह आतापनभूमि पहिले से ही नियत की हुई होती है। इस भूमि की प्रत्युपेक्षणा प्रमार्जना करके आतापना ली

વિદાય થયા અને ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા લાગ્યા હવે તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપની વિધિ સૂત્રકાર બતાવે છે(तंजहा) તેની વિધિ આ પ્રમાણે છે (पढमं मास चउत्थ चउत्थेणं आणिक्खित्तेण तवोकम्मेण दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेण अवाउडेण य) પહેલે મહિને નિરંતર એકાન્તર ઉપવાસ કરવા જોઈએ-એટલે કે ઉપવાસને પારણે ઉપવાસ કરવા જોઈએ આ રીતે પહેલે મહિને પંદર ઉપવાસ અને પંદર પારણા થાય છે ઉપવાસ અને પારણાને દિવસે આરાધક સાધુએ "ठाणुक्कुडुए" ઉત્કુટુકાસને (ઉભડક આસને-પગના અગ્રભાગને આધારે) સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને તડકા વાળી ભૂમિમા સૂર્યનો તાપ સહન કરવો જોઈએ તે તડકાવાળી જગ્યા પહેલેથી જ નિયત કરવામા આવેલી હોય છે તે ભૂમિની પ્રત્યુપેક્ષણા પ્રમાર્જના કરીને જ ત્યા તાપમાં બેસવામા આવે છે

स्वशरीरं तापयन्, तथा ' रत्तिं ' रात्रौ=रात्रिसमये ' वीरासणेण ' वीरासनेन पूर्वोक्तप्रकारेण, तथा ' अवाउडेण ' अपावृतेन=सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरण-चोलपट्टकादिरिक्तवस्त्ररहितेन शरीरेण विहरतीति ।

'एवं दोच्चं मासं ' एवं द्वितीयं मासम् एवम्=अनेनैव विधिना द्वितीयमासम् ' छट्ठ छट्ठेणं ' षष्ठ षष्ठेन, द्विकद्विकोपवासेन । शेषं सर्वं प्रथममासवदेव विज्ञेयम् ' एवं तच्चं मासं अट्ठम अट्ठमेणं ' एवं तृतीयं मासम् त्रिण्युपवासैरित्यर्थः अष्टमाष्टमेन

जाती है। आतापना का अर्थ है सूर्य की धूप से अपने शरीर को तपाना इस तरह की स्थिति संपन्न बनकर वे दिवस को व्यतीत करे और रात्रि में शरीर को खुला करके वीरासन से रहे। "अवाउडेण" जो ऐसा पद दिया है-सो इससे यह बात प्रकट की गई है कि उस साधु को सदोरक मुखवस्त्रिका, रजोहरण और चोलपट्टक इनके अतिरिक्त और वस्त्र अपने शरीर पर नहीं रखना चाहिये। "एवं दोच्चं मास" इसी तरह से द्वितीय मास को भी इसी पूर्वोक्त विधि के अनुसार उसे व्यतीत करना चाहिये-पर इस महिने में उसे दो दो उपवास करना चाहिये-बाद में पारणा करना चाहिये-फिर दो उपवास करना चाहिये बाद में पारणा करना चाहिये। इस तरह बीस दिन तपस्या के होते हैं। और दस दिन परणा के होते हैं। "एवं तच्चं" इसी विधि के अनुसार तृतीय मास को भी समाप्त करना चाहिये। पर यहां "अट्ठम अट्ठमेण" तीन २ उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह इस मास में चौबीस दिन तपस्या के होते है और आठ दिन पारणा के होते है।

આ રીતે તે આખો દિવસ વ્યતીત કરે છે અને રાત્રે શરીર ખુલ્લું રાખીને વીરાસને બેસે છે ' अवाउडेण " પદ દ્વારા એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે આ સાધુ મુનિ દોરા સહિતની મુહપત્તિ રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક સિવાય કોઈ પણ વસ્ત્ર કપડું પોતાના શરીરપર રાખી શકતો નથી. "एवं दोच्चं मासं" બીજો માસ પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ તેણે વ્યતીત કરવો પડે છે પણ બીજા માસ દરમિયાન તેણે છઠ (બે ઉપવાસ) ને પારણે છઠ કરવા જોઈએ. આ રીતે બીજા દિવસ ઉપવાસના અને દસ દિવસ પારણાના આવે છે ' एवं तच्चं ' આ વિધિ પ્રમાણે જ ત્રીજો માસ પણ વ્યતીત કરવો જોઈએ પણ ત્રીજા માસ દરમિયાન અટ્ઠમને પારણે અટ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને પારણે ત્રણ ઉપવાસ) કરવા જોઈએ. આ રીતે ત્રીજે મહિને ચોવીસ દિવસ તપસ્યાના અને આ

त्रिभुपवासेन 'चउत्थं मासं दसमं दसमेणं' चतुर्थं मास दशमदशमेन, चतुश्चतुरुपवासेन 'पंचमं मासं बारसमं बारसमेण' पंचमं मासं द्वादशद्वादशेन, पंच पंचोपवासेन "छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेण" षष्ठं मास चतुर्दशचतुर्दशेन, षष्ठमासे षड्-पवासेन "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेण" सप्तमं मासं षोडशषोडशेन सप्तसप्तोपवासेन "अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं" अष्टमं मासम्। अष्टा-

"चउत्थं मासं दसमं दसमेणं" चतुर्थमासको भी इसी प्रकारकी विधिके अनुसार व्यतीत करना चाहिये। पर इस में चार चार उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह दस मास में तपस्याके दिनों की संख्या चौवीस २४ आती है और छह दिन पारणाके आते हैं। "पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं" पांचवें महिने में पांच पांच उपवास के बाद पारणा किया जाता है। बाकी सब विधि पहिली जैसी ही है। इसमें तपस्या के दिन पच्चीस होते हैं और पारणा के पांच दिन होते हैं। "छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं" छठे महिने में छह-छह उपवास करने के बाद पारणा किया जाता है। इस तरह इस महिने में तपस्या के दिन चौवीस आते हैं और पारणा के दिन चार होते हैं। "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं" सातवें महीने में सात-सात उपवास करके पारणा किया जाता है। बाकी सबविधि पहिले जैसी ही है। इस महिने में तपस्या के दिनों की संख्या इक्कीस आती है और तीन पारणा के दिन होते हैं। "अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं"

દિવસ પારણુ ના આવે છે (चउत्थं मासं दसमेण) ચોથો મહિને પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ વ્યતીત કરવો જોઇએ પણ ચોથા મહિનામાં ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ ચોથા મહિનામા ઉપવાસના ૨૪ દિવસ અને પારણાના ૬ દિવસ આવે છે (पंचमं मासं बारसमं बारसमेण) પાચમા મહિનામા પાચ ઉપવાસને પારણે પાચ ઉપવાસ કરવા જોઈએ, બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી તેમા તપસ્યાના દિવસ પચીસ અને પારણાના દિવસ પાચ આવે છે. (छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं) છઠ્ઠે મહિને છ ઉપવાસને પારણે છ ઉપવાસ કરવા જોઇએ આ રીતે તપસ્યાના ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ચાર દિવસ આવે છે. (सत्तमं मासं सोलसमं-सोलसमेणं) સાતમાં મહિના દરમિયાન સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી સાતમાં મહિનામા તપસ્યાના દિવસો ૨૧ આવે છે અને પારણાંના દિવસો ૩ આવે છે (अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं) આઠમા મહિના દરમિયાન આઠ ઉપ-

दशाष्टादशेन, अष्टाष्टोपवासेन " नवमं मासं वीसइमं वीसइमेणं " नवमं मास विंशतितमविंशतितमेन, नवनवोपवासेन " दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं " दशमं मास द्वाविंशतितमद्वाविंशतितमेन, दशदशोपवासेन " एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेणं " एकादशं मास चतुर्विंशतितमचतुर्विंशतितमेन, एकादशैकादशोपवासेन । "बारसमंमास छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं" द्वादशं मास षड्विंशतितम

आठवे महिने में आठ-आठ उपवास करके पारणा किया जाता है। बाकी और सबविधि पहिले की तरह से ही है। इसमें तपस्या के दिनों की संख्या चौबीस आती है और पारणा के दिन तीन होते हैं। " नवमं मास वीसइमं वीसइमेणं " नौमे महिने में नौ उपवास करके पारणा किया जाता है, बाकी अवशिष्ट विधि पहिले जैसे ही है। इस मास में तपस्या के दिनों की संख्या सत्ताइस आती है और पारणा के दिन तीन होते हैं। " दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं " दसवें मासमें दस-दस उपवास करके पारणा किया जाता है। इसमें तपस्या के दिनों की संख्या तीस आती है और पारणा के दिन तीन होते हैं। " एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेणं" ग्यारहवें महिने में ग्यारह-ग्यारह उपवास करके पारणा किया जाता है। इसमें तपस्या के दिनों की संख्या तेतीस आती है, और पारणा के दिन तीन होते हैं। (बारसमं मासं छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं " बारहवें महिने में बारह-बारह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस मास में तपस्या के दिनों

બાસને બારણે આઠ ઉપવાસ કરવા પડે છે આ મહિનામાં તપસ્યાના ૨૪ દિવસ આવે છે અને પારણાના ત્રણ દિવસ આવે છે બાકીની બધી વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ છે (नवमं मासं वीसइमं वीसइमेणं) નવમાં મહિને નવ ઉપવાસને પારણે નવ ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની અવશિષ્ટ વિધિ પહેલા મહિના જેવીજ છે આ માસમા તપસ્યાના ૨૭ સત્તાવીશ દિવસો અને પારણાના ત્રણ દિવસો આવે છે (दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं) દસમાં મહિના દરમિયાન દસ ઉપવાસને પારણે દસ ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની વિધિ આગળ મુજબ હોય છે આ માસમાં તપસ્યાના દિવસ ૩૦ ત્રીસ અને પારણાના દિવસ ત્રણ આવે છે (एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेणं) અગિયારમા મહિને અગિયાર ઉપવાસને પારણે અગિયાર ઉપવાસ કરાય છે તે માસમાં ઉપવાસના દિવસો તેત્રીસ અને પારણાના દિવસો ત્રણ આવે છે (बारसमं मासं छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं) બારમાં માસ દરમિયાન બાર ઉપવાસને પારણે બાર ઉપવાસ કરવા પડે છે તે માસમાં તપસ્યાના દિવસ છત્રીસ અને બાર

त्रिष्युपवासेन 'चउत्थं मासं दसमं दसमेणं' चतुर्थं मासं दशमदशमेन, चतुश्चतुरुपवासेन 'पंचमं मासं बारसमं बारसमेण' पंचमं मासं द्वादशद्वादशेन, पंच पंचोपवासेन "छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेण" षष्ठं मासं चतुर्दशचतुर्दशेन, षष्ठमासे षड्-पवासेन "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेण" सप्तमं मासं षोडशषोडशेन सप्तसप्तोपवासेन "अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं" अष्टमं मासम्। अष्टा-

"चउत्थं मासं दसमं दसमेणं" चतुर्थमासको भी इसी प्रकारकी विधिके अनुसार व्यतीत करना चाहिये। पर इस में चार चार उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह दस मास में तपस्याके दिनों की संख्या चौवीस २४ आती है और छह दिन पारणाके आते हैं। "पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं" पांचवें महिने में पांच पांच उपवास के बाद पारणा किया जाता है। बाकी सब विधि पहिलो जैसी ही है। इसमें तपस्या के दिन पच्चीस होते हैं और पारणा के पांच दिन होते हैं। "छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं" छठे महिने में छह-छह उपवास करने के बाद पारणा किया जाता है। इस तरह इस महिने में तपस्या के दिन चौवीस आते है और पारणा के दिन चार होते हैं। "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं" सातवें महीने में सात-सात उपवास करके पारणा किया जाता है। बाकी सबविधि पहिले जैसी ही है। इस महिने में तपस्या के दिनों की संख्या इक्कीस आती है और तीन पारणा के दिन होते हैं। "अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं"

દિવસ પારણાના આવે છે. (चउत्थं मासं दसमेण) ચોથો મહિને પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ વ્યતીત કરવો જોઇએ. પણ ચોથા મહિનામા ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ ચોથા મહિનામા ઉપવાસના ૨૪ દિવસ અને પારણાંના ૬ દિવસ આવે છે (पंचमं मासं बारसमं बारसमेण પાચમા મહિનામા પાચ ઉપવાસને પારણે પાંચ ઉપવાસ કરવા જોઈએ, બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી તેમા તપસ્યાના દિવસ પચીસ અને પારણાના દિવસ પાચ આવે છે. (छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं) છઠ્ઠે મહિને છ ઉપવાસને પારણે છ ઉપવાસ કરવા જોઇએ આ રીતે તપસ્યાના ચોવીસ દિવસ અને પારણાંના ચાર દિવસ આવે છે. (सत्तमं मासं सोलसमं-सोलसमेणं) સાતમાં મહિના દરમિયાન સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી સાતમાં મહિનામાં તપસ્યાના દિવસો ૨૧ આવે છે અને પારણાંના દિવસો ૩ આવે છે. (अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारस) આઠમા મહિના દરમિયાન આઠ ઉપ-

पूर्वोक्ततपसा "दिया ठाणुक्कुडुए" दिवा स्थानोत्कुटुक दिवसे उत्कुटुकासन "सूराभिमुहे" सूर्याभिमुखः "आयावणभूमीए आयावेमाणे" आतापनभूमौ आतापयन् "रत्तिं वीरासणेणं" रात्रौ वीरासनेन "अवाउडेणं" अप्रावृतेन विहरतीति पूर्वेण सम्बन्धः "तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दको ऽनगारः "गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं" गुणरत्नसंवत्सरं तपः कर्म, "अहासुत्तं" यथासूत्रं सूत्रानतिक्रमेण 'अहाकप्पं" यथाकल्पं कल्पानतिक्रमेण 'जाव आराहेत्ता" यावदाराध्य, अत्र यावत्पदेन अहामग्गं अहातच्चं अहाकप्पं काएण फासेइ, पालेइ सोहेइ, तीरेइ, पूरेइ, किट्टेइ, अणुपालेइ, आणाए" इत्येतत्पदसङ्ग्रहस्य ग्रहणं कर्तव्यम् । तथा च यथा सूत्रादिकम् आज्ञया आराधनं कृत्वेत्यर्थः । गुणरत्नसंवत्सर तपो यथा—

तपःकर्म से वे स्कन्दक मुनि अपना समय व्यतीत करते। दिवस में वे उत्कुटुक आसन से स्थिर होकर सूर्य की ओर मुख करके आतापन भूमि में आतापना लेते तथा रात्रि में वीरासन से स्थित रहते और सर्वथा कक्षेहपत्ति, रजोहरण एवं चोलपट्टक के सिवाय और वस्त्र नहीं रखते। इस तरह "तएणं से खंदए अणगारे" वे स्कन्दक अनगार "गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं" गुणरत्न सवत्सर तप कर्म की "अहासुत्तं" सूत्र के अनुसार "अहाकप्पं" कल्प के अनुसार 'जाव आराहेत्ता' यावत् आराधना करके 'जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ' जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे—वहां पर आये। कहने का तात्पर्य यह है कि स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर तपकी आराधना प्रभु की आज्ञा के अनुसार यथासूत्र आदि मर्यादा से की। और करके फिर वे प्रभु महावीर के पास आये।

સવત્સર તપની આરાધના કરવા સ્કન્દક મુનિ પોતાનો સમય પસાર કરતા હતા. દિવસે તેઓ ઉત્કટુક આસને બેસીને સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને આતાપના ભૂમિમાં (तसा वाणी अन्यथा) આતાપના લેતા હતા અને રાત્રે વીરાસને બેસતા હતા સર્વથા કક્ષોપવસ્ત્રિ, રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક સિવાય બીજુ કોઈ વસ્ત્ર રાખતા નહીં આ રીતે (तएणं से खंदए अणगारे) તે સ્કન્દક અનગાર (गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं) ગુણરત્ન સંવત્સર તપની (अहासुत्तं) સૂત્રની આજ્ઞાનુસાર (अहाकप्पं) કલ્પ પ્રમાણે (जाव आराहेत्ता) આરાધના કરીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજતા હતા ત્યાં આવ્યા. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સ્કન્દક અનગારે ગુણરત્નસંવત્સર તપની આરાધના ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર, સૂત્રાનુસાર આદિ મર્યાદાનું પાલન કરીને કરી અને આરાધના પૂરી કરીને તેઓ

पड्विंशतितमेन द्वादशद्वादशोपवासेन "तेरसम मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेण" त्रयोदशं मासमष्टाविंशतितमाष्टाविंशतितमेन, त्रयोदशत्रयोदशोपवासेन "चउद्दसमं मासं तीसइमं तीसइमेण" चतुर्दशं मासं त्रिंशत्तमत्रिंशत्तमेन, चतुर्दशचतुर्दशोपवासेन "पण्णरसमं मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेण" पंचदशमासं द्वात्रिंशत्तम द्वात्रिंशत्तमेन पंचदशपंचदशोपवासेन। "सोलसमं मास चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं" षोडशं मासं चतुस्त्रिंशत्तमचतुस्त्रिंशत्तमेन, षोडशषोडशोपासेन, "अणिक्खित्तेणं" अनिक्षिप्तेन निरन्तरकृतेन "तवोकम्मेणं" तपः कर्मणा

की संख्या चोवीस आती है, पारणा के दिन दो होते हैं। "तेरसमं मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेण" तेरहवे मास में तेरह-तेरह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस महिने में तपस्या के दिनों की संख्या छाईस आती है, और दो दिन पारणा के होते हैं। "चउद्दसमं मासं तीसइमं तीसइमेण" चौदहवें महिने मे चौदह-चौदह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस महिने में तपस्या के दीनों की संख्या अट्ठाईस आती है, और पारणा के दो दिन होते हैं। "पण्णरसम मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेणं" पन्द्रहवें महीने में पन्द्रह-पन्द्रह उपवास कर के पारणा किया जाता है। इस मास में तपस्या के दिनों की संख्या तीस ३० आती है, और पारणा के दो दिन होते हैं। "सोलसमं मासं चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं" सोलहवें मास में सोलह-सोलह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस मास में तपस्या के दिनों की संख्या बत्तीस आती है, और पारणा के दिन दो होते हैं। इन सब उपवासों को "अणिक्खित्तेणं" निरन्तर-उपवधान-रहित करना चाहिये। ऐसे

ણાના દિવસો બે આવે છે, (तेरसम मास अट्ठावीसइम अट्ठावीसइमेणं) તેરમા મહિનામા તેર ઉપવાસને પારણે તેર ઉપવાસ કરવા જોઇએ આ માસમાં તપસ્યાના દિવસો ૨૬ છવ્વીસ અને પારણાના દિવસ બે આવે છે (चउद्दसमं मास तीसइम तीसइमेण) ચૌદમા મહિને ચૌદ ઉપવાસને પારણે ચૌદ ઉપવાસ કરવા પડે છે આ મહિનામા તપસ્યાના ૨૮અઠ્યાવીસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ આવે છે, (पण्णरसम मास बत्तीसइम बत्तीसइमेण) પંદરમા મહિને પંદર ઉપવાસને પારણે પંદર ઉપવાસ કરવા પડે છે તે માસમા તપસ્યાના ૩૦ તીસ અને પારણાના ૨ બે દિવસો આવે છે, (सोलसमं मास चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेण) સોળમે મહિને સોળ ઉપવાસને પારણે સોળ ઉપવાસ કરવા પડે છે, તે મહિનામાં તપસ્યાના ૩૨ બત્રીસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ આવે છે તે બધા ઉપવાસ (अणिक्खित्तेण) નિરંતર-આંતરો પાડયા વિના કરવા જોઇએ. આ પ્રકારની ગુણરત્ન

षष्ठे मासे—षट्षष्ठोपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि चत्वारि च पारणकदिनानि॥९॥
सप्तमे मासे—सप्तसप्तोपवासेन एकविंशतिस्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥
अष्टमे मासे—अष्टाष्टोपवासेन—चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥
नवमे मासे—नवनवोपवासेन सप्तविंशतिस्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥
दशमे मासे—दशदशोपवासेन त्रिंशत्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥१०॥
एकादशे मासे—एकादशैकादशोपवासेन त्रयस्त्रिंशत्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥ ११ ॥

(६) छठे महीनेमें ६–६ छह–छह उपवासकी तपस्यासे २४ चौबीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ४ चार दिन पारणा के होते हैं।

(७) सातवे महिने में ७–७ सात सात उपवास की तपस्या से २१ इकीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ दिन पारणा के होते हैं।

(८) आठवे महिने में ८–८ आठ–आठ उपवास की तपस्या से २४ चौबीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ तीनदिन पारणा के होते हैं।

(९) नवमें महिनेमें नौ–नौ ९–९ उपवासकी तपस्यासे २७ सतावीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ तीन दिन पारणा के होते हैं।

(१०) दशवे महिने में १०–१० दस–दस उपवासकी तपस्यासे ३० तीस दिन तो तपस्याके होते हैं और ३ तिन दिन पारणा के होते हैं।

(११) ग्यारहवे महिनेमें ११–११ ग्यारह–ग्यारह उपवासकी तपस्या से ३३ तेत्तीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ तिन दिन पारणा के होते हैं।

(૬) છઠ્ઠા માસમાં ૬–૬ છ–છ ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ૪ ચારદિવસ હોય છે

(૭) સાતમાં માસમાં ૭–૭ સાત–સાત દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૧ એકવીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૮) આઠમા માસમાં ૮–૮ આઠ–આઠ દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ૩ દિવસ હોય છે

(૯) નવમાં માસમાં ૯–૯ નવ–નવ દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૭ સત્તાવીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૧૦) દસમા માસમાં ૧૦ ૧૦ દસ–દસ ઉપવાસની તપસ્યાના ૩૦ ત્રીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૧૧) અગિયારમા માસમાં ૧૧–૧૧ અગ્યાર અગ્યાર દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૩૩ તેત્રીસ દિવસો અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસહોય છે

प्रथमे मासे एकान्तरोपवासेन पञ्चदश तपोदिनानि पञ्चदशैव पारणकदिनानि भवन्ति ॥ १ ॥

द्वितीये मासे–षष्ठ षष्ठतपसा विंशतिस्तपोदिनानि दश च पारणकदिनानि ॥२॥

तृतीये मासे–अष्टमाष्टमतपसा चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि, अष्टपारणकदिनानि ॥३॥

चतुर्थमासे–चतुश्चतुरुपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि षट् च पारणकदिनानि ॥४॥

पञ्चमे मासे पञ्चपञ्चोपवासेन पञ्चविंशतिस्तपोदिनानि पञ्च च पारणकदिनानि॥५॥

यह गुणरत्न संवत्सर इस प्रकार से आराधित करने पर तपस्या और पारणा के दिनों की संख्या इस प्रकार से है।

(१) प्रथम मास में एकान्तरोपवास के दिन १५ पंदर हहोते हैं और पारणा के दिन भी पन्दरह १५ ही होते हैं।

(२) द्वितीयमासमें २–२ दो–दो उपवास की तपस्या से बीस २० बीस दिन तो तपस्या के होते हैं और दस १० दिन पारणा के होते हैं।

(३) तृतीय मास में ३–३ तीन–तीन उपवास की तपस्या से २४ चौबीस दिन तो तपस्या के होते हैं और आठ ८ दिन पारणा के होते हैं।

(४) चौथे मासमें चार–चार ४–४ उपवासकी तपस्यासे २४ चौबीस दिन तो तपस्या के होते हैं और छह ६ पारणा के दिन होते हैं।

(५) पांचवे महिने में पांच–पांच ५–५ उपवास की तपस्या से २५ पचीस दिन तो तपस्याके होते हैं और पांच ५ दिन पारणा के होते हैं।

મહાવીર પ્રભુની પાસે આવ્યા આ ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના ઉપરોક્ત વિધિથી કરવામા આવે છે. તેમા પ્રત્યેક માસના ઉપવાસ અને પારણાના દિવસોની સંખ્યા નીચે પ્રમાણે છે-

(૧) પહેલા માસમા એકાન્તર ઉપવાસના દિવસો ૧૫ પંદર હોય છે અને પારણાના દિવસ પણ ૧૫ પંદર હોય છે.

(૨) બીજા માસમા ૨–૨ બે–બે ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૦ વીસ દિવસ, અને ૧૦ દસ દિવસ પારણાના હોય છે

(૩) ત્રીજા માસમા ૩–૩ ત્રણ-ત્રણ ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના આઠ ૮ દિવસ હોય છે

(૪) ચોથા માસમાં ૪–૪ ચાર–ચાર ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ, અને પારણાના ૬ છ દિવસ હોય છે.

(૫) પાચમા માસમા ૫–૫ પાચ–પાચ ઉપવાસની તપસ્યા થવાથી ૨૫ પચીસ દિવસો તપસ્યાના અને પાચ દિવસ પારણા ના હોય છે.

तपोदिनानि सप्तोत्तर चतुःशततम् (४०७)		पारणकदिनानि त्र्युत्तरसप्तति (७३)
२२	१६–१६	२
१०	१५–१५	२
२८	१४–१४	२
२६	१३–१३	२
२४	१२–१२	२
२२	११–११–११	३
२०	१०–१०–१०	३
१७	९—९—९	३
१४	८—८—८	३
२१	७—७—७	३
२४	६–६–६–६	४
२५	५–५–५–५–५	५
२४	४–४–४–४–४–४	६
२७	३–३–३–३–३–३–३–३	८
२०	२–२–२–२–२–२–२–२–२–२	१०
१५	१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१	१५
४०७		७३

तपोदिनानि (४०७) पारणकदिनानि (७३) च मिलित्वा सर्वदिनानि-अशीत्युत्तरं चतुःशततम् (४८०) त्रिंशद्दिनैर्भागे हृते आसा षोडशमासाः (१६) एतत्तपः षोडशमासैः सम्पन्नं भवति, अत्र यत्र मासे अष्टमादि तपसो पारणं

से कुल दिन ४८० होते हैं। इनमें ३० दिनों का भाग करने से १६ मास आते हैं। इस तरह यह तप सोलह महिनों में सम्पन्न होता है। यहां पर कोई ऐसी आशंका करसकता है कि महिने के दिन तो कुल ३० ही होते हैं–पर ३२ बत्तीस और तेतीस दिन भी बतलाये गये हैं–

જીને કુલ ૪૮૦ આયંબીલો સૌ દિવસો થાય છે તેને ૩૦ત્રીશ વડે અપવર્તી ૧૬ સોળ માસ આવે છે આ તપ સોળ માસમાં પૂરો થાય છેઅહીં કોઈ એવી શંકા ઉઠાવે કે મહિનાના દિવસ ૩૦ જ હોય છે પ્રન્તુ અહીં ૩૨ અને તેત્રીસ દિવસ પણ બતાવ્યા છે તથા કોઈ કોઈ માસમાં તપસ્યાના દિવસો ૩૦ થી ઓછા પણ

द्वादशे मासे-द्वादश द्वादशोपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥
त्रयोदशे मासे-त्रयोदशत्रयोदशोपवासेन-षड्विंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥ १३ ॥
चतुर्दशे मासे—चतुर्दशचतुर्दशोपवासेन - अष्टाविंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥ १४ ॥
पञ्चदशे मासे—पञ्चदश पञ्चदशोपवासेन-त्रिंशत्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने
षोडशे मासे—षोडशषोडशोपवासेन-द्वात्रिंशत्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥
गुणरत्नसंवत्सरतपः सूचकयन्त्रमिदम्—

---

(१२) बारहवें महिना में १२-१२ बारह-बारह उपवासकी तपस्यासे २४ चौबीस दिन तो तपस्याके होते है और दो २ दिन पारणाके होते हैं।

(१३) तेरहवे महिनामें १३-१३ तेरह-तेरह उपवास की तपस्यासे २६ छब्बीस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणके होते हैं।

(१४) चउदहवें महिने में १४-१४ चौदह-चौदह उपवासकी तपस्या से २८ अठाईस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दीन पारणाके होते हैं।

(१५) पन्द्रहवें महिने में १५-१५ पंदरह-पंदरह उपवासकी तपस्या से ३० तीस दीन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणा के होते हैं।

(१६) सोलहवें महिनेमें १६-१६ सोलह-सोलह उपवासकी तपस्या से ३२ बत्तीस दिन तो तपस्याके होते हैं और२ दो दिन पारणा के होते हैं।

इस प्रकार तपस्या के दिन ४०७ और पारणा के दिन ७३ मिलाने

---

(१२) બારમા માસમા १२-१२ બાર બાર દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના २४ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના २ બે દિવસ હોય છે

(१३) તેરમે મહિને १३-१३ તેર-તેર દિવસાના ઉપવાસની તપસ્યાના २६ છવ્વીસ દિવસ અને પારણાના २ બે દિવસ હોય છે

(१४) ચૌદમા માસમા १४-१४ ચૌદ-ચૌદ દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના २८ અઠ્યાવીશ દિવસ અને પારણાના २ બે દિવસ હોય છે

(१५) પદરમા માસમા १५-१५ પદર-પંદર દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ३० તીસ દિવસ અને પારણાના २ બે દિવસ હોય છે,

(१६) સોળમાં મ સમા १६-१६ સોળ-સોળ દિવના ઉપવાસની તપસ્યાના ३२ બત્રીસ દિવસ અને પારણાના २ બે દિવસ હોય છે,
આ રીતે તપસ્યાના ४०७ ચારસોસાત દિવસો અને પારણાના ७३ તોતેર દિવસો મ-

दसमासखमणेहिं " मासार्द्धमासक्षपणे " विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं " विचित्रैर्नानाप्रकारकैः तप कर्मभिः 'अप्पाणं भावेमाणे विहरइ " आत्मानं भावयन् विहरति तदनन्तरं स स्कन्दकोऽनेकप्रकारकतपसः स्वरूपं ज्ञात्वा भगवतो नमस्कारादिकं कृत्वा नानाविधैस्तपः कर्मभिरात्मानं भावयन् विहरतिस्मेत्यर्थः ॥

पूर्वोक्तैतपः करणात् स्कन्दकस्य कीदृशी स्थितिरभूदिति प्रश्नयितुमाह-' तएणं से खंदए ' इत्यादि ' तएणं से खंदए अणगारे ' ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः ' तेणं ओरालेणं ' तेन उदारेण प्रधानेन-इहलोकपरलोकाशंसारहितत्वात् प्रधानश्च स्वरूपमपि स्यादत आह-' विउलेणं ' विपुलेन विस्तीर्णेन बहुवर्षसहस्रातिरिक्तत्वाद् (विपुलश्च) गुर्वाज्ञामन्तरेण प्रयत्नराहित्येनापि वा भवत आह-' पयत्तेणं ' प्रदत्तेन गुरुभिर्वितीर्णत्वात् अथवा ' पयत्तेण ' इत्यस्य ' प्रयत्नेन ' इति च्छायायां प्रयत्नेन प्रयत्नवता प्रमादरहितत्वात् एवंविधं सामान्यतोऽङ्गीकृतमपि स्यादित्यत आह ' पग्गहिएणं ' प्रगृहीतेन बहुमानेन स्वीकृतत्वात्

स्वीकृतं तु इहलोकपरलोकाशंसा निमित्तमपि स्यादत आह 'कल्लाणेणं' कल्याणेन नैरुज्यकारणत्वात्, नैरुज्यं तु ऐहिकपारलौकिकमपि स्यादत आह-'सिवेणं' शिवेन सर्वदुःखान्तकारकत्वात्। एवंविधंतु सामान्येनापि स्यादत आह-'धन्नेणं' धन्येन भूतचारित्ररूपधनप्रापकत्वात्।

पूर्ववदेव नेत्याह-' मंगल्लेणं ' मङ्गल्येन दुरितोपशमनकारकत्वात्। अतएव 'सस्सिरीएणं' सश्रीकेण सम्यग्ज्ञानायनेन शोभासंपन्नत्वात् सश्रीकंतु सामान्यरूपेणापि स्यादत आह—' उदग्गेणं,' उदग्रेण=वर्धमानपरिणामादुच्चरोत्तरवृद्धि गतत्वात्

उपवासोथी) अनेक पंचोलाओ (पांच उपवासो) थी, अनेक मास क्षमणोथी तथा अनेक अर्धमासक्षमणोथी पोताना आत्माने भावित करता रह्या. આ પ્રકારનાં તપ કરતા કરતા સ્કન્દક અનગારની શારીરિક સ્થિતિ કેવી થઈ તે હવે સૂત્રકાર બતાવે છે

(तएणं से खंदए अणगारे तेणं ओरालेणं विउलेणं पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं सिवेणं धन्नेणं मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं उदग्गेणं उदत्तेणं, उत्तमेणं,

ઓ સે અનેક પંચોલાઓ સે તથા અનેક માસ ક્ષમણો સે તથા અનેક અર્ધમાસક્ષમણો સે અપની આત્મા કો ભાવિત કરતે રહે।

इस तरह पूर्वोक्त इन अनेक तपों के तपते २ स्कन्दक अनगार की शारीरिक स्थिति कैसी हो गई अब सूत्रकार इस बात को प्रकट करने के लिये कहते हैं (तएणं से खंदए अणगारे तेणं ओरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं,

दिनानि न पूर्यन्ते तावन्ति दिनानि–अग्रेतनमासादाकृष्य पूरणीयानि अधिकानि चाग्रेतनमासे क्षेप्तव्यानीति विज्ञेयम् ॥ इति गुणरत्नसंवत्सरनामकं तपः ॥

एवं गुणरत्नसंवत्सरं तपः कृत्वा स्कन्दकोऽनगारः–"जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः "तेणेव उवागच्छइ" तत्रैवोपागच्छति "उवागच्छित्ता" उपागत्य "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" श्रमणं भगवन्तं महावीर वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं" बहुभिश्चतुर्थषष्टाष्टमदशमद्वादशैः "मास-

---

तथा तपस्या के ३० तीस दिनों में से कहीं दो कम भी बतलाये गये हैं तो फिर एक एक मास की तपस्या के दिनों का प्रमाण कैसे माना जा सकता है? तो इसका उत्तर यह है कि इस तप में जिस महिने में अष्टमादितपस्या के दिनों का प्रमाण पूरा न होता हो–घटता हो तो–उतने दिनों को आगे के मास में से लेकर उस प्रमाण को पूरा करना चाहिये, तथा जिस मास में अधिक दिन होते हों उनको आगे के मास में शामिल कर देना चाहिये। इस प्रकार से गुणरत्नसंवत्सर नाम का तप होता है।

इस गुणरत्नसंवत्सरतप को समाप्त कर वे स्कन्दक अनगार श्रमण भगवान महावीर के पास आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्हों ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वंदना और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं) वे अनेक चतुर्थ–उपवासों से अनेक बेलाओं से अनेक तेलाओं से, अनेक चोला-

---

બતાવ્યા છે તો તે પ્રમાણને એક એક માસની તપસ્યાનુ પ્રમાણ કેવી રીતે ગણી શકાય! તો તે શંકાનો ખુલાસો આ પ્રમાણે આપી શકાય–જે માસમા અટ્ઠમ આદિ તપસ્યાના દિનોનુ પ્રમાણ પૂરૂં થતું ન હોય, તે મહિનામાં પછીના માસના ખૂટતા દિવસો લઈને તે પ્રમાણ પૂરૂં કરવું જોઈએ જે માસમા તપસ્યાના અધિક દિવસો– આવતા હોય તે માસના એટલા દિવસોને પછીના માસમાં શામિલ કરી લેવા જોઈએ. આ પ્રકારનુ ગુણરત્ન સવત્સર તપ હોય છે.

તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપ પૂરૂં કરીને સ્કન્દક અણગાર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે આવ્યા. (उवागच्छित्ता) ત્યા આવીને તેમણે (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન! મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા કરીને તેઓ (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं અનેક ઉપવાસોથી, અનેક છઠથી, અનેક અટ્ઠમોથી, અનેક ચોલાઓથી (चार

ऐसी भी होती है-सो इसका तात्पर्य ऐसा होता है कि प्रमाद से रहित होकर ही प्रयत्न पूर्वक यह तपःकर्म आचरित किया था। गुरु द्वारा दिये गये जाने पर भी यह तपःकर्म सामान्यरूप से भी गृहीत अङ्गीकृत हो सकता है-सो यह तप कर्म ऐसा नहीं था किन्तु अनगार स्कन्दक ने इस तपःकर्म को (पगाहिएणं) बहुमान के साथ गुरुमहाराज के समीप स्वीकार किया हुवा था। गुरु महाराज के समीप स्वीकृत किया गया तप कर्म इसलोक तथा परलोक की आशंसा के निमित्त भी हो सकता है सो यह तपःकर्म स्कन्दक अनगार के द्वारा इस निमित्त से स्वीकार नहीं किया गया होने से यह (कल्लाणेणं) कल्याणरूप था अर्थात यह तप निरोगिता का कारण था इसलिये कल्याणरूप था। निरोगिता का जो कारण होता है वह इस लोक संबंधी भी निरोगिता का कारण हो सकता है परलोक संबंधी भी निरोगिता का कारण हो सकता है सो यह तपःकर्म ऐसा नहीं था-यह तो सर्व दुःखों का अन्त कारण होने से (सिवेणं) शिवस्वरूप था। सर्वदुःखों का अन्त करने वाला यह सामान्यरूप से भी हो सकता है-तो इसके लिये कहा गया है कि सामान्यरूप से ऐसा नहीं था-किन्तु (धन्नेणं) श्रुतचारित्र रूप धर्मकी प्राप्ति कराने के कारण यह धन्य था। दुरितों-पापों के

પણ આપ છે તે તપ પ્રમાદથી રહિત થઈને પ્રયત્ન પૂર્વક કરવામાં આવ્યું હતું એવું તેનું તાત્પર્ય છે તે તપ ગુરુદ્વારા દેવામાં આવેલું હોવા છતાં સામાન્ય રીતે ગ્રહીત થયેલું પણ હોઈ શકે છે પણ સ્કંદક અણગારનું તપ એવું ન હતું સ્કન્દક અણગારે તે તપનો (पगाहिएणं) બહુ માન સહિત ગુરુમહારાજ પાસે સ્વીકાર કરેલો હતો. ગુરુમહારાજની સમક્ષ અંગીકૃત કરાયેલું તપ આલોક તથા પરલોકની આકાંક્ષા પરિપૂર્ણ કરવાને માટે પણ કરાયું હોય છે પણ સ્કન્દક અણગારે એવા કોઈ નિમિત્તથી આ તપની આરાધના કરી ન હતી તેથી તેમનું તપ (कल्लाणेणं) કલ્યાણરૂપ-નીરોગી થવા સ્વરૂપ હતું, માટે જ તેને કલ્યાણકારી કહ્યું છે જે વસ્તુ નીરોગીપણા સ્વરૂપ હોય છે તે આલોક સંબંધી નીરોગીપણું અને પારલૌકિક નીરોગીપણા સ્વરૂપ હોય છે પણ સ્કન્દકનું તપઃકર્મ એ પ્રકારનું ન હતું તે તો સમસ્ત દુઃખોનું અન્તકારક હોવાથી (सिवेणं) શિવસ્વરૂપ હતું તે સામાન્ય રૂપે સમસ્ત દુઃખોનું અંતકારક પણ હોઈ શકે છે, પણ સ્કન્દક અણગારનું તપ તે પ્રકારનું ન હતું પણ તે (धन्नेणं) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની પ્રાપ્તિ કરાવનાર હોવાથી (धन्न) હતું, પાપોનું ઉપશમન કરવાના કારણભૂત હોવાથી

उदग्गेण, उदत्तेणं उत्तमेणं, उदारेणं महाणुभावेण तवोकम्मेणं) वे स्कन्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रदत्त, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्यरूप, मंगलरूप, शोभायुक्त, उत्तम, उदात्तसुंदर, उदार बडे प्रभावशाली तप से (सुक्के) शुष्क हो गये (लुक्खे) रूक्ष हो गये। (निम्मंसे) मांस विहीन हो गये, सिर्फ (अट्ठिचम्मावणद्धे) हाड चमडी से ही ढके रहे। तप के यहां जो उदार आदि अनेक विशेषण दिये हैं-उनकी सार्थकता इस प्रकार से है-स्कन्दक अनगार ने इस तप को किसी भी प्रकार की इस लोक परलोक संबधी आशंसा-इच्छा से प्रेरित होकर नहीं किया था अतःआशंसा से रहित होने के कारण यह तपःकर्म (उरालेणं) प्रधान था। प्रधान होकर भी कोई २ अल्प भी होता है-अतःयह तपःकर्म ऐसा नहीं था-किन्तु अनेक वर्षोंतक लगातार सेवित होने के कारण (विउलेणं) विपुल-विस्तृत था। कोइ २ विपुल ऐसा भी होता है कि जिसमें गुरुमहाराज की अनुमती नहीं होती, अथवा-जिसके प्रारंभ करने में विशेष प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती है-तो इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि यह तप कर्म ऐसा नहीं था किन्तु (पयत्तेणं) गुरु महाराज द्वारा दिया हुआ और विशेष प्रयत्न द्वारा साध्य था। अथवा (पयत्तेणं) की संस्कृत छाया (प्रयत्नेन)

उदारेण महाणुभावेण तवोकम्मेण) २४न्६४ अणुगार ते उदार, विपुल, प्रदत्त प्रगृहीत ४८यालुअारी, शिवरूप, धन्यरूप, मंगणरूप, शोलायुक्त, उत्तम, उदात्त, सुंदर, उदार अने अतिशय प्रलावशाणी तपथी (सुक्के लुक्खे) शरीरे शुष्क तथा रुक्ष थई गया (निम्मंसे) तेमनु शरीर मांस रहित थई गयुं. (अट्ठिचम्मावणद्धे) अने हाड अने चामडीना माणखा जेवुं देखावा लाग्युं. हवे (उदार) आदि विशेषणोनी सार्थकता बतावबामा आवे छे स्४न्६४ अणगारे आलोक के परलोकनी कोई पण प्रकारनी आकांक्षाथी प्रेराई ने ते तप कर्युं न हतु आ रीते निःस्वार्थ भावे थयेलु होवाने कारणे तेने माटे योजवामा आवेलुं (उदार) विशेषण सार्थक छे ते तप सामान्य न हतुं. लगातार अनेक वर्षो सुधी तेनी आराधना करी हती ते कारणे ते (विउलेणं) विपुल-विस्तृत हतु. कोई कोई विपुल तप एवु होय छे के जेमां गुरुमहाराजनी अनुमति मळी होती नथी, अथवा जेनो प्रारंभ करवामां विशेष प्रयत्ननी जरूर रहेती नथी पण स्४न्६४ अणुगारनु तप एवुं न हतु ते तप तो (पयत्तेण) गुरुमहाराज द्वारा देवामा आवेलुं हतुं अने विशेष प्रयत्न द्वारा साध्य हतु अथवा (पयत्तेण) नी स४स्कृत छाया (प्रयत्नेन)

अट्ठिचम्मावणद्धे" अस्थिचर्मावनद्धः अस्थीनि चर्मणाऽवनद्धानि आच्छादितानि यस्य स अस्थिचर्मावनद्धः मांसशोणितरहितत्वात्। अतएव "किडिकिडियाभूए" किटिकिटिकाभूतः किटिकिटिकानाम अस्थानोपवेशनादि क्रियासु निष्पन्नः शब्दविशेषः तादृशी किटिकिटिकाभूता भाषा यः स किटिकिटिकाभूतः, अस्थ्यादि क्रियासु किटिकिटिकाशब्द प्रजायते, "किसे" कृशः दुर्बलः-शक्तिहीनः

था। जब मनुष्य के शरीर में मांस और खून नहीं रहता है-तब केवल हाडों का एक पिंजर मात्र ही शेष रह जाता है। वह जब उठता है या बैठता है अथवा चलता है-तब उस समय हाडकों के खोखाडे शरीर में से जो आवाज निकलती है उसका नाम किटि किटिका है। उन स्कन्दक अनगार की हड्डियां उठते बैठते फिरते समय किट किट आवाज करती थीं। मांस और शोणित से रहित जब स्कन्दक का शरीर हो गया तब (अट्ठिचम्मावणद्धे) उनके शरीर की हड्डियां उस समय चर्ममात्र से अवनद्ध-मढी हुई थीं-इससे उनके पृथक् खुल नहीं पाये और न वे आपस में बिखर ही पाई। जैसे पट्टी से कोई वस्तु कस दी जाती है उसी प्रकार से वे सबकी सब आपस में चमडी से कसी रहीं। यही बात (अट्ठिचम्मावणद्धे) इस पद से सूत्रकार ने प्रकट की है। इसी कारण से स्कन्दक अनगार के शारीरिक गतिक्रिया करते समय शरीर में से कट कट-खट खट इस तरह की आवाज निकलने लग गई। (किसे) उनकी शारीरिक शक्ति का बिल्कुल एक तरह से ह्रास

કેટલા કારણે માણસના શરીરમાં માંસ અને લોહી રહેતા નથી ત્યારે તે શરીર હાડપાંજરા જેવું થઈ જાય છે આવો માણસ જ્યારે હલનચલન કરે છે ત્યારે તેના હાડકાંના ઘસવાથી જે અવાજ થાય છે તેને 'કિટિકિટિયા' કહે છે સ્કન્દક મુનિના હાડકા પણ ઉઠતા બેસતા તથા ચાલતાં કિટકિટનો અવાજ કરતા હતા જ્યારે સ્કન્દક અણગારનું શરીર લગભગ માંસ અને લોહીથી રહિત થઈ ગયું ત્યારે 'अट्ठिचम्मावणद्धे' તે શરીર હાડ ચામડીથી મઢેલું ફોર જેવું લાગતું હતું તેથી તે અસ્થિના બંધન છૂટાં પડી ગયાં નહીં અને તે એક બીજાથી અલગ પડી ગયાં નહીં જેમ પટ્ટીની મદદથી કોઈ વસ્તુને બીજી વસ્તુ સાથે બાંધી રાખવામાં આવે છે તેમ સ્કન્દક મુનિનાં અસ્થિ ચામડીથી પૂરી રીતે લોહાયેલા રહ્યાં એજ વાત સૂત્રકારે (अट्ठिचम्मावणद्धे) પદ દ્વારા બતાવી છે આ કારણે શરીરનું હલન ચલન કરતી વખતે તેમનાં હાડકાંના ઘસવાથી ખટ-ખટ અવાજ નીકળતો હતો (किसे) તેમની શારીરિક શક્તિનો

अतएव 'उदत्तेणं' उदात्तेन उच्चपरिणामस्य स्थैर्यात्। एवं तु सामान्येनापि स्यादत आह 'उत्तमेणं' उत्तमेन मलिनभावराहित्यात् एतत्तु सस्पृहमपिस्यादतआह उदारेण" औदार्येण, निस्पृहत्वातिशयात्। एतादृशं सम्भाव्यपि भवेदत आह- 'महाणुभावेणं' महानुभावेन लोकातिशायिप्रभावजनकत्वात्। एतादृशेन तपः कर्मणा "सुक्के" शुष्कः शोणितरहितत्वात् "लुक्खे" रूक्षः क्षुद्भावशेन रूक्षी भूतत्वात् "निम्मंसे" निर्मांसः यथेष्टाहाराभावेन शुष्कमांसत्वात्, अतएव

उपशमन का कारण होने से यह (मंगल्लेण) स्वयं मंगलरूप था। तथा सम्यक आराधना से शोभासंपन्न होने के कारण यह तप कर्म (सस्सिरीएणं) सश्रीक था। इस तप कर्म को आचरित करते समय स्कन्दक अनगार के परिणाम इसकी आराधना करने में उत्तरोत्तर वृद्धिसंपन्न होते रहते थे इसलिये यह तप कर्म (उदग्गेणं) उदग्रउन्नत था। इसकी आराधना में उच्चपरिणामों की स्थिरता होने से (उदत्तेणं) उदात्त था। इस तप के करने में किसी भी प्रकार से परिणामों में मलिनता नहीं आने से यह (उत्तमेणं) उत्तम था। इस तप कर्म में निस्पृहता की पराकाष्ठा होने के कारण यह (उरालेण) उदार था। यह स्कन्दक द्वारा आचरित तपःकर्म सामान्यप्रभाववाला नहीं था किन्तु (महाणुभावेणं) लोकातिशायी प्रभाव का जनक था। ऐसे तपकर्म के निरन्तर करने से स्कन्दक अनगार का शरीर खून रहित होने के कारण काष्ठ के जैसा शुष्क हो गया था। भूख के प्रभाव से वह बिलकुल रूखा हो गया था। (निम्मसे) यथेष्ट आहार के अभाव के कारण वह मांस रहित हो गया

તે (मंगल्लेण) 'मंगलस्वरूप' हतुं, सम्यक आराधनाथी शोभायमान होवाथी ते तप कर्म (सस्सिरीएण) (सश्रीक) हतुं, आ तप कर्म करती वखते स्कन्दक अणुगारना परिणाम तेनी आराधना करवामा उत्तरोत्तर वृद्धि पामता रहेता हता, तेथी ते तप कर्म (उदग्गेण) उदग्र-उन्नत हतुं, तेनी आराधनामा उच्च परिणामोनी स्थिरता होवाथी ते (उदत्तेण) उदात्त हतु आ तपनी आराधना करता परिणामोमा कोई पण प्रकारनी मलिनता प्रवेशवाथी ते (उत्तमेण) उत्तम हतु ते तपमां निस्पृहतानी पराकाष्ठता होवाथी ते (उरालेणं) उदार हतु. ते तप सामान्य प्रभाववाणुं नहतु पण (महाणुभावेण अलौकिक प्रभावनु जनक हतु आ प्रकारनी तपस्या निरंतर कर्या करवाथी स्कन्दक अणुगारनु शरीर लोहीथी रहित थई गयु हतुं तेथी ते काष्ठ जेवुं शुष्क लागतुं हतु भूखना प्रभावथी ते तद्दन रुक्ष थई गयु हतु (निम्मसे) आवश्यक आहारने अभावे तेमनु शरीर मांसरहित थई गयु

विष्ठति, आत्मबलेनैव स्थित्यादि क्रियां करोति न तु शरीरबलेन पुनः "मा मासिसा विगिलाइ" मापां मापित्वाऽपि ग्लायति। "मासं भासमाणे गिलाइ" मापां भाषमाणो ग्लायति "मास मासिस्सामीति गिलायति" मापां मापि इति ग्लायति, अनेन कालत्रयेऽपि मापमाणे ग्लानि सूचिता।

स स्कन्दकोऽनगारः पुनः कीदृशो जात, इति दृष्टान्तेन विशदयति "से जहाणामए" इत्यादि, "से जहानामए" तद् यथा नाम यथा "कट्ठसगडिया वा काष्ठशकटिका इति वा काष्ठेन भृता परिपूरिता शकटिका काष्ठशकटिका, काष्ठपरिपूरितशकटिकत्यर्थः "पत्तसगडियाइ वा" पत्रशकटिका इति वा पत्रैः भृतशकटिका पत्रशकटिका इति वा तिलशकटिका इति वा तिलफलीभृता शकटिका "मंडसगडियाइ वा" मांडशकटिका इति वा, भाण्डानां मृन्मयभाजनानां भृता शकटिका "एरंडकट्ठसगडियाइ वा" एरण्डकाष्ठशकटिका इति वा, एरण्डकाष्ठभृता वा

तरह वे आत्मबल से ही खड़े रहते थे शरीर बल से नहीं। पुनः (भासं भासिस्सा विगिलाइ, भासं भासमाणे गिलाइ, भास भासिस्सामिति गिलाइ) इन पदों से कालत्रय में भी बोलने में उन्हें रुचि नहीं होती थी, अपि तु ग्लानि ही होती थी यह बात सूचित की है। स्कन्दक अनगार की स्थिति-शारीरिकदशा-अब सूत्रकार दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट प्रकट करते हुए कहते हैं-(से जहाणामए कट्ठसगडियाइवा) जैसे मानों कोई काष्ठ समूह से-लकड़ियों से-भरीहुई गाड़ी हो-(पत्तसगडियाइवा) पत्रों के समूह से सघालब भरी हुई कोई गाड़ी हो, (तिलसगडियाइवा) तिलफली से भरी हुई कोइ गाड़ी हो, (मंडसगडियाइवा) भाण्ड-मिट्टी के बने हुए बर्तनों से भरी हुई कोई गाड़ी हो (एरंडसगडियाइवा एरंड के काष्टसे भरी हुई कोइ गाड़ी हो (इंगालसगडियाइ

હતા રહેતા હતા શરીરબલથી નહીં (भास भासित्ता विगिलाइ भास भासमाणे गिलाइ, भास भासिस्सामीति गिलाइ) આ પદો દ્વારા સૂત્રકાર એ દર્શાવવા માગે છે કે ભલે કાળમાં તેમને બોલવાની રુચિ થતી નહીં, પણ બોલ વાનો પ્રસંગ આવે તો ગ્લાનિ જ થતી હતી સ્કન્દક અનગારની શારીરિક દશા કેવી થઈ ગઈ હતી તેનુ સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કરે છે (से जहाणामए कट्ठसगडियाइवा) લાકડાથી ભરેલી કોઈ ગાડી જોય, (पत्तसगडियाइ वा) પાંદડાના સમૂહથી બીજી બીજ ભરેલી કોઈ ગાડી જોય, (तिलसगडियाइ वा) તલની સિંગોથી ભરેલી કોઈ ગાડી જોય, (मंडसगडियाइ वा) માટીનાં વાસણોથી ભરેલી કોઈ ગાડી જોય, (इंगालसगडियाइ वा) કોલસા થી ભરેલી કોઈ ગાડી જોય, (एरंडसगडियाइ वा) એરંડાના કાષ્ઠથી ભરેલી

"धमणिसंतए" धर्मनीसंततः धमनीसंततो नाडीव्याप्तः मांसक्षयेण परिदृश्यमान नाडीक इत्यर्थः" जाए यावि होत्था" जातश्चाप्यभूत् पूर्वोक्तरूपो जातः, घोरातिघोरतपश्चरणात्। ननु यदि तपः करणेन शरीरमेतादृशं जातं तदा उत्थानादि क्रिया तस्य कथं भवतीत्याह-'जीवं जीवेणं' इत्यादि। 'जीवं जीवेणं' जीवजीवेन अत्र प्रथमो जीवशब्दः आत्मबलवाचकः द्वितीयजीवशब्दो बलवाचकस्तेन जीवजीवेन जीवबलेन 'गच्छइ' गच्छति गमनादिक्रियां करोति, आत्मबलेनैव चलनादि क्रियां करोति, न तु शरीरबलेनेति भाव "जीवं जीवेण चिट्ठइ" जीवं जीवेन

हो चुका था-अतएव-वे दुर्बल हो गये थे। (धमणिसंतए) मांसरहित हो जाने के कारण उनके शरीर में नाडियां स्पष्ट नजर पड़ने लगीं थीं। सो यह सब उनके शरीर की हालत घोरातिघोरतपस्या के करने से हुई। अर्थात्-घोरातीघोर तपस्या के करने से उनका शरीर पूर्वोक्त स्थितिवाला बन गया पर उत्थानादि क्रियां वे कैसे करते थे, तो इस आशंका के परिहार निमित्त सूत्रकार कहते हैं-"जीवं जीवेणं गच्छइ" जीव जीवेन गच्छति-वे शरीर के बल से नहीं चलते थे, अपि तु आत्मबल से ही चलते थे। यहां प्रथम जीव शब्द आत्मा का वाचक है और द्वितीय जीव शब्द बल का वाचक है। आत्मबल से ही गमनादि क्रिया करते थे शरीर के बल से नहीं। इस तरह स्कन्दक अनगार शारीरिक बलकी क्षीणता होने पर भी आत्मबल से ही चलनादि रूप क्रिया करते थे-शरीर के बल से नहीं। (जीवं जीवेण चिट्ठइ) इसी

બિલકુલ હ્રાસ થઈ ગયો હતો તેથી તેઓ અતિશય દુર્બળ થઈ ગયા હતા. (धमणिसंतए) તેમના માંસ રહિત શરીરમાથી તેમની નસો સ્પષ્ટ દેખાતી હતી કઠિનમા કઠિન તપસ્યાને કારણે તેમના શરીરની જે એવી હાલત થઈ ગઇ હતી, તો એવા શરીરે તેઓ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ કેવી રીતે કરતા હશે? તો આ શકાના નિવારણ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(जीव जीवेण गच्छइ) जीव जीवेन गच्छति! તેઓ શરીરના બળથી ચાલતા નહીં પણ તેમના આત્મબળથી જ ચાલતા હતા અહીં પહેલો (જીવ) શબ્દ આત્માનો વાચક છે અને બીજો (જીવ) શબ્દ શારીરિક બળનો વાચક છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તેઓ આત્મબળથી જ ગમનાદિ ક્રિયા કરતા હતા, શારીરિક બળથી નહી. શારીરિક બળ ન હોવા છતા તેઓ આત્મબળથી જ ચલનાદિ ક્રિયા કરતા હતા (जीवं जीवेण चिट्ठइ) એજ પ્રમાણે તેઓ આત્મબળથી

अपगतमांसशोणितत्वाद् शरीरतोऽपगतदीप्तिकः अन्तस्तु शुभध्यानतपसा जाज्वल्यमानोऽस्त्यवेति ॥ सू० १४ ॥

अथ विलक्षणामेकत्वकर्मकरणानन्तरं स्कन्दकः किं करोतीत्याह-'तेणं कालेणं तेणं समएणं' इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे समोसरण जाव-परिसा पडिगया तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स अण्णया कयाइ-पुव्वरत्तावरत्त कालसमयंसि धम्म जागरिय जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था एव खलु अहं इमेण एयारूवेण ओरालेण जाव किसे धमणिसंतए जाए जीव जीवेण गच्छामि। जीव जीवेण चिट्ठामि जाव गिलामि। जाव एवामेव अहंपि ससद्द गच्छामि ससद्द चिट्ठामि त अत्थि तामे उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे त जाव। तामे अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे जाव य मे धम्मायरिए

से (अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) बहुत बहुत शोभायमान हो रहे थे। तात्पर्य कहने का यह है कि जिस प्रकार से भस्म से ढकी हुई अग्नि बाहर में तो तेज रहित जैसी प्रतीत होती है, परन्तु भीतर में वह तेज से प्रज्वलित ही रहती है, उसी प्रकार से स्कन्दक अनगार भी मांस और शोणित से रहित होने के कारण बाहर में तेज से रहित थे-परन्तु फिर भी भीतर में शुभध्यान और तप से जाज्वल्यमान ही थे ॥ सू० १४ ॥

(अन्वयी) (अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) અતિશય શોભતા હતા. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમ રાખથી અગ્નિ ઢંકાયેલી હોતાં તો તેજહીન લાગે છે પણ અંદરથી તો તેજથી ઝળહળતો રહે છે તેમ સ્કન્દક અણગારનું શરીર માંસ અને શોણિતથી રહિત હોવાને કારણે બહારથી તો નિસ્તેજ લાગતું હતું પણ તેમનો આત્મા તો શુભ ધ્યાન અને તપથી દેદીપ્યમાન હતો ॥ સૂ. ૧૪ ॥

शकटिका " इंगालसगडिया वा " अङ्गारशकटिका इति वा । अङ्गारपरिपूरिता कोयला इति भाषा प्रसिद्ध वस्तुजात संभृता शकटिका "उण्हे दिण्णा" उष्णे दत्ता उष्णे=आतपादौ दत्ताः प्रसारिता अत एव 'सुक्का समाणी' शुष्कासती " ससद्दं गच्छइ " सशब्दं गच्छति "ससद्दं चिट्ठइ " सशब्दं तिष्ठति, यथा शुष्ककाष्ठादि परिपूरिता शकटिका यदि चलति तिष्ठति वा तदा काष्ठपत्रादीनां शुष्कत्वेन शब्दं करोत्येवेत्यर्थः "एवामेव खंदए वि अणगारे " एवमेव स्कन्दकोऽप्यनगारः " ससद्दं गच्छइ" सशब्दं गच्छति "ससद्दं चिट्ठइ" सशब्दं तिष्ठति उपविशतीत्यर्थः गतिस्थितिसमयेऽस्थिसंघर्षेण शरीरस्य शब्दायमानत्वात् ।

स स्कन्दकोऽनगारः "उवचिएतवेण" उपचितस्तपसा "अवचिए मससोणिएणं" अपचितो मांसशोणितेन, मांसशोणितराहित्येनापचितः क्षीणतां प्राप्तः । "हुयासणेविव भासराशिपडिच्छण्णे " हुताशन इव भस्मराशिप्रतिच्छन्नः 'तवेणं तेएणं " तपसा तेजसा " तवतेयसिरीए " तपस्तेजःश्रिया " अतीव अतीव उवसोभेमाणे चिट्ठइ " अतीवातीवोपशोभमानस्तिष्ठति ।

वा) कोयलों से भरी हुई कोइ गाड़ी हो, (उण्णे दिण्णा) और वह घाम-धूप में सूखाई गई हो, इस प्रकार (सुक्का समाणी) सूख जाने पर जैसे वह (ससद्दं गच्छइ) खट खट शब्द करती हुई चलती है (ससद्दं चिट्ठइ) खट-खट शब्द करती हुइ ठहरती है, उसी तरह स्कन्दक अनगार का शरीर भी गति, और स्थिति के समय में आपस में अस्थियों के संघर्ष से शब्दायमान होता था वे स्कन्दक अनगार (उवचिए तवेण) तप से उपचित पुष्ट थे परन्तु (अवचिए मंससोणिएणं) मांस और शोणित से अपचित-क्षीण थे, (हुयासणे विव भासरासिपडिच्छण्णे) परन्तु फिर वे स्कन्दक अनगार भस्मराशि से प्रच्छन्न अग्नि की तरह (तवेणं तेएणं) तप और तेज की श्री-शोभा

કોઇ ગાડી હોય, (उण्हे दिण्णा) અને તે સૂર્યના તાપથી સૂકાઇ ગયેલી હોય, (सुक्का समाणी) એ રીતે સૂકાઈ જવાને લીધે જેમ તે (ससद्दं गच्छइ) ખટ-ખટ અવાજ કરતી ચાલે છે. (ससद्दं चिट्ठइ) અને તેને ચાલતી અટકા વીએ ત્યારે ખટ ખટ અવાજ કરતી ઉભી રહે છે, એજ પ્રમાણે હલન ચલન કરતી વખતે સ્કન્દક અણુગારના હાડકા પણ એક બીજા સાથે ઘસાવાથી ખટ ખટ અવાજ થતો હતો સ્કન્દક અણુગાર (उवचिए तवेण) તપથી ઉપચિત (પુષ્ટ) હતા, પણ (अवचिए मंससोणिएण) પણ માસ અને રક્તથી અપચિત (ક્ષીણ) હતા (हुयासणे विव भासरासिपडिच्छण्णे) પણ તેઓ રાખની નીચે ઢંકાયેલા અગ્નિની જેમ (तेवेण तएणं) તપ અને તેજની શ્રીથી

पत् परिगता तदा खलु तस्य स्कन्दस्यानगारस्यान्यदा कदाचित् पूर्वरात्रापर रात्रकालसमये धर्मजागरिकां जाग्रत अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितो यावत् समुदपद्यत० अह खलु आनेनेन एतद्रूपेणोदारेण यावत् कृशो धमनीसन्तो जात

अतिविलक्षण अनेक तप करने के बाद स्कन्दक अनगार ने क्या किया सो कहते हैं—(तेणं कालेणं) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे नयरे) राजगृह नगर या यहां (समोसरणं) भगवान का आगमन हुआ (जाव परिसा पडिगया) यावत्-धर्मकथा सुनकर सभा विसर्जित हो गई (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स) इसके बाद उस स्कन्दक अनगार को (अण्णया कयाई) किसी समय (पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि) रात्रीके पिछले प्रहर में (धम्मजागरिय जागरमाणस्स) धर्म जागरण करते समय (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, जाव, समुप्पज्जित्था) इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिंतित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ, (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए) मैं इस प्रकार के उदार तप के आराधन करने से यावत् कृश हो गया हूं-तथा मेरे शरीर की समस्त धमनियां-नाडियां बाहर स्पष्ट

આ પ્રકાર । અનેક અતિ વિલક્ષણ તપ કર્યા પછી સ્કન્દક અણગારે શું કર્યું તે હવે સૂત્રકાર કહે છે 'तेणं कालेणं इत्यादि।'

સૂત્રાર્થ। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे नयरे) રાજગૃહ નામે નગર હતું (समोसरणं) ત્યાં મહાવીર પ્રભુ પધાર્યા ત્યાં સમોસરણ રચાયું (जाव परिसा पडिगया) (પરિષદ ધર્મ કથા સાંભળી ત્યારબાદ થોડું રહીને (धम्मकथा सांभळीने सभा विसर्जन थई) ત્યારબાદ કોઈ પણ સમયે પ્રભાવે સમજવું (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स" ત્યારબાદ તે સ્કન્દક અણગારને अण्णया कयाई એક વખત 'पुव्वरत्तावरत्तकाल-समयंसि" રાત્રિના છેલ્લા પ્રહરે 'धम्मजागरिय जागरमाणस्स" ધર્મજાગરણ કરતી વખતે (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था) આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત મનોગત સંકલ્પ થયો -(અહીં મનોગત સંકલ્પ વિશેષણોનો પ્રભાવ સમજવો) (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए) આ પ્રકારનું ઉદાર તપ કરવાથી હું કૃશ થઈ ગયો છું, મારા શરીરની નસો બહાર સ્પષ્ટ દેખાય છે (जीव शरीरेण

धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे जिणे सुहत्थी विहरइ तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहापंडुरे पभाए, रत्तासोयप्पगासे किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडबोहए, उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता, समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेत्ता समणाय समणीओ य खामेत्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहित्ता मेहघणसंनिगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलापट्टयं परिलेहित्ता दब्भसंथारगं संथरित्ता दब्भसंथारोवगयस्स संलेहणा झोसणा झूसियस्स भत्तपाणपडियाइक्खियस्स, पाओवगयस्स, कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव जाव पज्जुवासइ खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी से णूणं खंदया, पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि, धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जावजलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए से णूणं खंदया अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबन्धं करेह ॥सू०१५॥

छाया-तस्मिन्काले तस्मिन् समये राजगृहे नगरे समवसरणम् यावत् परि-

पत् पडिगता ततः खलु तस्य स्कन्दस्यानगारस्यान्यदा कदाचित् पूर्वरात्रा रात्रकालसमय धर्मजागरिकां जाग्रत अयमेतद्रूप आध्यात्मिकचिंतितो यावत् समुदपद्यत० अहं खलु अनेनेन एतद्रूपेणोदारेण यावत् कृशो धमनीसंतती जात

अतिविलक्षण अनेक तप करने के बाद स्कन्दक अनगार ने क्या किया सो कहते हैं—(तेण कालेणं) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेण कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे नयरे) राजगृह नगर था वहां (समोसरण) भगवान का आगमन हुआ (जाव परिसा पडिगया) यावत्-धर्मकथा सुनकर सभा विसर्जित हो गई (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स) इसके बाद उस स्कन्दक अनगार को (अण्णया कयाई) किसी समय (पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि) रात्रीके पिछले प्रहर में (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्म जागरण करते समय (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, जाव, समुप्पज्जित्था) इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिंतित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ, (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमनिसंत ए जाए) मैं इस प्रकार के उदार तप के आराधन करने से यावत् दुर्बल हो गया हूं-तथा मेरे शरीर की समस्त धमनियां-नाडियां बाहर स्पष्ट

આ પ્રકાર । અનેક અતિ વિલક્ષણ તપ કર્યા પછી સ્કંદક અણગારે જે કર્યું તે હવે સૂત્રકાર કહે છે ' तेणं कालेणं इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे नयरे) રાજગૃહ નામે નગર હતું (समोसरणं) ત્યાં મહાવીર પ્રભુ પધાર્યા ત્યાં સમોસરણ રચાયું (जाव परिसा पडिगया) (પરિષદ ધર્મ કથા સાંભળી ત્યાંથી ચાલ્યા ગયા) (धम्मकहा सोच्चा निसम्म जहा विसर्जन थई) ત્યાં ધર્મોપદેશ સાંભળ્યા પ્રમાણે સમજવું (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स " ત્યારબાદ તે સ્કંદક અણગારને ' अण्णया कयाई એક વખત ' पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि " રાત્રિના છેલ્લા પ્રહરે " धम्मजागरियं जागरमाणस्स " ધર્મજાગરણ કરતી વખતે (इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था) આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત મનોગત સંકલ્પ થયો –(અહો મનોગત પર્યન્તના વિશેષણો આગળ પ્રમાણે સમજવા) (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमनिसंतए जाए) આ પ્રકારનું ઉદાર તપ કરવાથી હું દુબળો થઈ ગયો છું, મારા શરીરની નસો બહાર સ્પષ્ટ દેખાય છે (જીવંત જીવેય

जीवं जीवेन गच्छामि जीवं जीवेन तिष्ठामि यावत् ग्लायामि यावदेवमेवाहमपि सशब्दं गच्छामि सशब्दं तिष्ठामि, तदस्ति तावन्ममोत्थानं कर्मबलं वीर्यं पुरुषकार पराक्रमस्तद् यावत्तावन्ममास्ति उत्थानं कर्मबलं वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमो यावच्च मम धर्माचार्यो धर्मोपदेशकः श्रमणो भगवान् महावीरो जिनः सुहस्ती विहरती तावता मम श्रेयः कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते

रूप से दीख रही हैं (जीवं जीवेण गच्छामि)मैं शरीर बल से नहीं, किन्तु आत्मबल से चलता हूं, (जीव जीवेण चिट्ठामि) आत्मबल से ही ठहरता हूं (जाव गिलामि) यावत् बोलते २ भी ग्लानियुक्त हो जाता हूं (जाव एवामेव अहंपि ससद्दं गच्छामि, ससद्दं चिट्ठामि) यावत् इसी तरह से मैं भी चट-चट शब्द करते हुए चलता हूं और चट-चट शब्द करते हुए ही बैठता हूं (तं अत्थि ता मे उट्ठाणे) फिर भी मुझ में अभी उत्थान शक्ति है (कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) कर्म है बल है, वीर्य है, पुरुषकार पराक्रम है (तं जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) तो जबतक मुझ में उत्थान कर्म, बल, वीर्य, और पुरुषार्थ पराक्रम है और (जाव य मे धम्मायरिए-धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगवं महावीरे) जबतक मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर (जिणे) जिन (सुहत्थी) पुरुषों में गन्धहस्ती जैसे (वीहरइ) विचरते हैं अर्थात् विद्यमान हैं (तावता-मे सेय कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) तबतक अर्थात् भगवान् महावीर

गच्छामि) હું શરીરબળથી નહી પણ આત્મબળથી ચાલુ છુ (जीव जीवेण चिट्ठामि) આત્મબળથી જ સ્થિર રહું છુ, (जाव गिलामि) બોલતાં પણ ગ્લાનિ અનુભવુ છુ (जाव एवामेव अहंपि ससद्द गच्छामि ससद्द चिट्ठामि) હું જ્યારે ચાલુ છું ત્યારે મારા હાડકાના ઘર્ષણથી ચટ-ચટ અવાજ થાય છે, બેસતી વખતે પણ ચટ ચટ અવાજ થાય છે (त अत्थि ता मे उट्ठाणे) છતા પણ હજી મારામાં ઉત્થાન શક્તિ છે (कम्मे' बले, वीरिए पुरिसक्कार-परक्कमे) કર્મ છે, બળ છે વીર્ય છે અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે (तं जावता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) તો જ્યા સુધી મારામા ઉત્થાન શક્તિ, બળ, વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજુદ છે, (जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगव महावीरे जिणे विहरइ) જ્યાસુધી પુરુષોમા ગન્ધહસ્તી સમાન મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, જિને શ્વર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે, (तावता मे सेय कल्ल पाउप्प-भायाए रयणीए) ત્યા સુધી મારૂ શ્રેય છે. તો આવતી કાલે રાત્રિ પૂરી થાય

यथा पांडुरे प्रभाते रक्ताशोकप्रकाशे किंशुकशुकमुखगुंजार्द्धरागसदृशे कमलाकरषंड बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति सति भगवत महावीर वन्दित्वा नमस्थित्वा यावत् पर्युपास्य श्रमणेन भगवता महावीरेणाभ्यनुज्ञातः सन् स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा तथारूपैः स्थविरैः

प्रभु के समक्ष "मे ज्ञेय, मेरे लिये ज्ञेयस्कार है आगामी दिवस जब रात्रि प्रकाशवाली हो जायगी तथा (फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि महापहरे पभाए) जब ऐसा प्रभात हो जावेगा कि जिसमें सामान्य तथा विकसित हुए कमल के दलों का और हरिणविशेष के नेत्रों का उन्मीलन-खिलना हो जावे अर्थात् धवल प्रकाश फैल जावे, तथा (रत्ता सोयप्पगासे) रक्त अशोक वृक्ष के जैसे प्रकाशवाला (किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे) किंशुक-पलाश पुष्प शुकमुख-तोते का मुख एवं गुजार्द्ध-रत्तिका के अर्धभाग जैसा (कमलागरसंडबोहए) सरोवर आदि में कमल समूह को विकसित करने वाला (सहस्सरस्सिम्मि) एक हजार किरणों वाला, (दिनयरे) दिवस करने वाला (तेयसा जलंते सूरे उट्ठियम्मि) तेजसे प्रदिप्त ऐसा सूर्य जब उदित हो जावेगा तब मैं (समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता) श्रमण भगवान् महावीर के पास जाकर उनको वंदना करूंगा और नमस्कार करूंगा। वंदना नमस्कार करके यावत् उनकी पर्युपासना करूं (समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे) उन श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त करूंगा, आज्ञाप्राप्त कर फिर मैं (सयमेव) अपने आप (पंच

फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि महापहरे पभाए) જ્યારે પ્રભાતને તથા વિકસેલા નેત્રોને વિકસાવનાર સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાઈ જાય (रत्तसोयप्पगासे) લાલ અશોકવૃક્ષના જેવા પ્રકાશ વાળો (किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे) કિંશુક પલાશ ખાખરાનું પુષ્પ પોપટ ના મુખ સમાન, અને ચણોઠીના અર્ધ ભાગ સમાન લાલ રંગનો, (कमलागरसंडबोहए) સરોવર આદિમાં કમલ વૃન્દોને વિકસિત કરનારો (सहस्सरस्सिम्मि) એક હજાર કિરણો વાળો (दिनयरे) દિવસ કરનારો (तेयसा जलंते सूरे उट्ठियम्मि) તેજથી દેદીપ્યમાન સૂર્ય જ્યારે ઉદય પામશે ત્યારે (समणं भगवं महावीरं वंदित्ता जाव पज्जुवासित्ता) હું શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે જઈને તેમને વંદના નમસ્કાર કરીશ વંદના નમસ્કાર કરીને તેમની પર્યુપાસના પર્યન્તની વિધિ કરીને (समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे) હું શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા લઈશ. આજ્ઞા લઈને (सयमेव) મારી જાતે જ (पंचमहव्वयाइं आरोवेत्ता)

जीवेन गच्छामि जीवं जीवेन तिष्ठामि यावत् ग्लायामि यावदेवमेवाहमपि
ं गच्छामि सशब्दं तिष्ठामि, तदस्ति तावन्ममोत्थानं कर्मबलं वीर्यं पुरुषकार
क्रमस्तद् यावत्तावन्ममास्ति उत्थानं कर्मबलं वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमो यावच्च
धर्माचार्यो धर्मोपदेशकः श्रमणो भगवान् महावीरो जिनः सुहस्ती विहरती
ता मम श्रेयः कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते

से दीख रही हैं (जीवं जीवेण गच्छामि)मैं शरीर बल से नहीं, किन्तु आत्मबल से चलता हूं, (जीवं जीवेण चिट्ठामि) आत्मबल से ही ठहरता हूं (जाव गिलामि) यावत् बोलते २ भी ग्लानियुक्त हो जाता (जाव एवामेव अहंपि ससद्दं गच्छामि, ससद्दं चिट्ठामि) यावत् इसी तरह से मैं भी चट-चट शब्द करते हुए चलता हूं और चट-चट शब्द करते हुए ही बैठता हूं (तं अत्थि ता मे उट्ठाणे) फिर भी मुझ में अभी उत्थान शक्ति है (कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) कर्म है बल है, वीर्य है, पुरुषकार पराक्रम है (तं जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) तो जबतक मुझ में उत्थान कर्म, बल, वीर्य, और पुरुषार्थ पराक्रम है और (जाव य मे धम्मायरिए-धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगवं महावीरे) जबतक मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर (जिणे) जिन (सुहत्थी) पुरुषों में गन्धहस्ती जैसे (वीहरइ) विचरते हैं अर्थात् विद्यमान हैं (तावता-मे सेय कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) तबतक अर्थात् भगवान् महावीर

गच्छामि) हुं शरीरબળથી નહીં પણ આત્મબળથી ચાલુ છુ (जीव जीवेण चिट्ठामि) આત્મબળથી જ સ્થિર રહું છુ, (जाव गिलामि) બોલતાં પણ ગ્લાનિ અનુભવું છુ (जाव एवामेव अहंपि ससद्द गच्छामि ससद्द चिट्ठामि) હું જ્યારે ચાલુ છું ત્યારે મારા હાડકાંના ઘર્ષણથી ચટ-ચટ અવાજ થાય છે, બેસતી વખતે પણ ચટ ચટ અવાજ થાય છે (त अत्थि ता मे उट्ठाणे) છતા પણ હજી મારામાં ઉત્થાન શક્તિ છે (कम्मे' बले, वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे) કર્મ છે, બળ છે વીર્ય છે અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે (तं जावता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) તો જ્યા સુધી મારામા ઉત્થાન શક્તિ, બળ, વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજુદ છે, (जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगव महावीरे जिणे विहरइ) જ્યાસુધી પુરુષોમા ગન્ધહસ્તી સમાન મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, જિને શ્વર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે, (तावता मे सेय कल्ल पाउप्प-भायाए रयणीए) ત્યા સુધી મારૂ શ્રેય છે. તો આવતી કાલે રાત્રિ પૂરી થાય

मिति कृत्वा एवं संप्रेक्षते संप्रेक्ष्य कल्यं पादुष्प्रभातायां रजन्यां यावत् ज्वलति यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैव यावत्पर्युपास्ते। स्कन्दक इति श्रमणो भगवान् महावीर स्कन्दकमनगारमेवमवादीत्, अद्भूत खलु त्वं स्कन्दक! पूर्वरात्रापररात्र कालसमये धर्मजागरिकां जाग्रतोऽयमेतद्रूपआध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत, एवं खलु अहमनेनैतद्रूपेण तपसोदारेण विपुलेन तदेव यावत्कालमनवकांक्षतो

मैं अपने मरण की आकांक्षा- इच्छा नहीं करूँगा। (सिकटु) इस प्रकार की भावना से प्रेरित होकर उन स्कन्दक अनगार ने (एवं संपेहेइ) ऐसा विचार किया। (संपेहित्ता) इस प्रकार विचार कर के कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलते) जब प्रातःकाल हुआ यावत् सूर्य का प्रकाश फैल चुका तब वे स्कन्दक अनगार (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव जाव पज्जुवासइ) वहां आये। यावत् उनकी वे पर्युपासना करने लगे। (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी) हे स्कन्दक! इस प्रकार संबोधित करते हुए श्रमण भगवान महावीर ने स्कन्दक अनगार से ऐसा कहा-(से णूणं खंदया पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि) हे स्कन्दक रात्री के पिछले प्रहर में (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्मजागरणा करते हुए तुम्हें (इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) यह इस प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि (एवं

મરણની આકાંક્ષા નહીં કરું (સિ કટુ) આ પ્રકારની ભાવનાથી પ્રેરાઈને સ્કન્દક અણગારે (एव संपेहेइ) ઉપર પ્રમાણે સંકલ્પ કર્યો. (संपेहित्ता) આ પ્રકારનો સંકલ્પ કરીને (कल्ल पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलते) જ્યારે પ્રાતઃકાળ થયો જ્યારે સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાયો-જ્યારે સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાયો ત્યાં સુધીનું વર્ણન ઉપર મુજબ સમજવું જોઈએ-ત્યારે સ્કન્દક અણગાર (जेणेव समणे भगवं महावीरे) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજતા હતા (तेणेव जाव पज्जुवासइ) ત્યાં આવ્યા ત્યાં આવીને ભગવાની પર્યુપાસના પર્યન્તની ક્રિયા કરી. (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदय अणगार एव वयासी) ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે સ્કન્દક અણગારને આ પ્રમાણે કહ્યું કે સ્કન્દક! (से णूणं खंदया पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि) રાત્રિના છેલ્લા પ્રહરે (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) ધર્મજાગરણ કરતી વખતે તમને (इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે (एव खलु अह इमेण एयारूवेण उरालेण तवोकम्मेण विपुलेण

कृतादिभिः सार्धं विपुलं पर्वतं शनैः शनैर्दुरुह्य मेघसंनिकाशं देवसन्निपातं पृथिवीशिलापट्टकं प्रतिलेख्य दर्भसंस्तारकं संस्तीर्य, दर्भसंस्तारकोपगतस्य संलेखनाजोषणाजुषितस्य भक्तपानप्रत्याख्यातस्य पादपोपगतस्य कालमनवकांक्षतः विहर्तु-

---

महव्वयाइं आरोवेत्ता) पांच महाव्रतों को स्वीकार करके (समणा य समणीओ य खामेत्ता) श्रमण तथा श्रमणीओं से (क्षमापना) खमतखामणा करूँगा, खमत खामणा करके कराके (तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं) तथारूप स्थविरों के साथ कि जो संथारे में स्थित साधु के संरक्षक होते हैं अर्थात् सहायता करते हैं (विउलं पव्वयं) विपुल पर्वत पर विपुलाचल पर (सणियं सणियं) धीरे२ (दुरुहित्ता) चढकर (मेहघणसंनिगासं) मेघ के समूह जैसे वर्ण वाले (देवसन्निवायं) देवों के सन्निपात वाले ऐसे (पुढवीसिलापट्टयं) पृथवी शिलापट्टक की प्रतिलेखना करूँगा (पडिलेहित्ता) प्रतिलेखना करके उस पर (दब्भ संथारियं संथरित्ता) दर्भका संथारा बिछाऊँगा-बिछाकर (दब्भसंथारोवगयस्स) उस दर्भ के संथारे पर स्थित हुआ मैं (संलेहणा झोसणा झूसियस्स) संल्लेखना को बडे ही आदर भाव से धारण करता हुआ (भत्तपाण पडियाइक्खियस्स) चतुर्विध आहार का परित्याग करूँगा और (पाओवगयस्स) पादपोपगमन संथारे में रहता हुवा (कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए) इस स्थिति में रहा हुआ

પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીશ (समणा य समणीओ य खामेत्ता) અને સાધુ સાધ્વીઓને ખમત-ખમાસણા કરીશ ખમત ખમાસણા કરીને તથા કરાવીને (तहारूवेहिं थेरेहि कडाईहिं सद्धिं) સંથારો કરનારા સાધુઓને જેવો સહાયતા કરે છે તેવા સ્થવિરોની સાથે (विउल पव्वय) વિપુલ પર્વત પર વિપુલાચલ પર (सणियं सणियं) ધીરે ધીરે (दुरुहित्ता) ચઢીશ ત્યા ચઢીને (मेहघण-संनिगासं) મેઘના સમૂહ જેવા વર્ણ વાળા, (देवसन्निवायं) દેવોના નિવાસ સ્થાન વાળા (पुढवीसिलापट्टयं) પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની પ્રતિલેખના કરીશ (पडिलेहित्ता) તેની પ્રતિલેખના કરીને તેના ઉપર (दब्भसंथारियं संथरित्ता) દર્ભનો સંથારો બિછાવીશ (दब्भसंथारोवगयस्स) તે દર્ભના સંથારા પર ઉભા રહીને (संलेहणा झोसणा झूसियस्स) હું ઘણા આદર ભાવ સહિત સંલ્લેખના (સંથારો) અંગીકાર કરીશ (भत्तपाणपडियाइक्खियस्स) ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરીશ (पाओवगयस्स) હું પાદપોપગમન સંથારો કરીશ (काल अणवकंखमाणस्स विहरित्तए) એ સ્થિતિમાં રહેલો હું મારા

समवसरणम् " जाव परिसा पडिगया " यावत् पर्षत् प्रतिगता " तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स " ततः खलु तस्य स्कन्दकस्य तस्मिन्नगारस्य " अण्णया कयाई " अन्यदा कदाचित्, अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्काले इत्यर्थः -" पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि " पूर्वरात्रापररात्रकालसमये पूर्वरात्रश्च रात्रेः पूर्वोभागः अपररात्रश्चापरभागः रात्रि पश्चिमस्तद् भाग इत्यर्थः पूर्वरात्रापररात्रश्च यः कालसमय काल स्वरूपः समयः स पूर्वरात्रापररात्रकालसमयस्तस्मिन् पूर्वरात्रापररात्रकालसमये, रात्रेर्मध्यभागे पश्चिमभागे वा ' धम्मजागरिय जागरमाणस्स " धर्मजागरिकां जाग्रतः धर्मजागरिकां कुर्वत इत्यर्थः ' इमेयारूवे " अयमेतद्रूपः "अज्झत्थिए" आध्यात्मिकः आत्मगतः मनसिस्थित इत्यर्थः "चिंतिए" चिन्तितः "जाव

प्रभुका आगमन हुआ। (जाव परिसा पडिगया) यावत् सभा विसर्जित हुई। (तएणं) तब (तस्स खंदयस्स अणगारस्स) उस स्कन्दक अनगार को (अण्णया कयाइ) किसी समय में (पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि) रात्रि के मध्यभाग में अथवा रात्रि के पश्चिमभाग में जब कि वे (धम्मजागरिय जागरमाणस्स) धर्मजागरणा कर रहे थे—तब इस प्रकार का मनोगत संकल्प-विचार उत्पन्न हुआ, (रात्रि का पूर्व भाग पूर्वरात्र और रात्रि का अपरभाग अपररात्र है। पूर्वरात्र और अपररात्र रूप जो कालसमय-कालस्वरूप समय वह पूर्वरात्रापररात्र कालसमय है-उसमें अर्थात् रात्रि के मध्यभाग में अथवा रात्रि के पश्चिम भाग में धर्म के निमित्त जो की जाती है वह धर्मजागरणा है। धर्म जागरण करते समय स्कन्दक अनगार के (इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था) इस प्रकार के आध्यात्मिक चिन्तित,

આગમન થયું ત્યાંથી શરૂ કરીને ' जाव परिसा पडिगया ' સુધા વિસર્જિત થઈ,-ત્યા સુધીનુ કથન અહી આગળ મુજબ સમજવુ જોઇએ ' तएणं ' ત્યારે અર્થાત્ વિસર્જિત થઈ ત્યાર બાદ तस्स खंदयस्स अणगारस्स " તે સ્કંદક અણગારને ' अण्णया कयाइ " કોઈ એક સમયે ' पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि ' રાત્રિના પાછલા ભાગે (મધ્ય રાત્રિ પછી) " धम्मजागरिय जागरमाणस्स ' ધર્મ જાગરણ કરતા આ પ્રકારનો મનોગત વિચાર ઉત્પન્ન થયો (રાત્રિના અગલા ભાગને પૂર્વરાત્રિ અને પાછલા ભાગને અપરરાત્રિ કહે છે પૂર્વરાત્ર અને અપરરાત્ર રૂપ જે કાળ સમય છે તેને ' पुव्वरत्तावरत्तकाल समय " કહે છે તે સમયે-એટલે કે મધ્યરાત્રે અથવા પાછલી રાત્રે ધર્મને નિમિત્તે જે જાગરણ કરાય છે તેને ધર્મ જાગરણ કહે છે) આ પ્રકારનુ ધર્મ જાગરણ કરતા સ્કન્દક અણગારને ' इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था '

विहर्तुमिति कृत्वा एवं संप्रेक्षसे संप्रेक्ष्य कल्यं प्रादुष्प्रभातायां यावत् ज्वलति यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव शीघ्रमागतः तन्नूनं स्कन्दक ! अर्थः समर्थः ? हन्त अस्ति यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु ॥ सू० १५ ॥

टीका—' तेणं कालेणम् ' इत्यादि " तेणं कालेणं " तस्मिन् काले " तेणं समएणं " तस्मिन् समये " रायगिहे नयरे " राजगृहे नगरे " समोसरणं "

खलु अहम् इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तंचेव जाव कालं अणवकखमाणस्स विहरित्तए) मैं इस प्रकार के पूर्वोक्त उदार विपुल आदि विशेषण वाले तप से बहुत दुर्बल हो गया हूं (यहां सब पहिले जैसा कहा गया है—वैसा कह लेना चाहिये) अतः यावत् काल की आकांक्षा किये विना मैं पादपोपगमन संथारा करूँ इसी में मेरा कल्याण है (त्ति कट्टु एवं संपेहेइ—संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वमागए) इस प्रकार विचार कर तुम प्रातःकाल होते ही यावत् सूर्य का प्रकाश फैलते ही जल्दी मेरे पास आये हो (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे ।) कहो हे स्कन्दक ! यह बात सत्य है न ? तब स्कन्दक कहते हैं (हंता अत्थि) हां भदन्त ! यह बात सच है (अहासुहं देवाणुप्पिा मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसे सुख हो वैसा करो। शुभ कार्यमें विलम्ब मत॥सू०१४॥

टीकार्थ—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' उस काल और उस समय में (रायगिहे नयरे) राजगृह नगर था वहां (समोसरणं) भगवान् महावीर

तं चेव जाव कालं अणवकखमाणस्स विहरित्तए) हु आ प्रकारना पूर्वोक्त उदार, विपुल आदि विशेषणोवाळा तपथी घणो ज दुर्बळ थई गयो छु.-अहीं सघळु आगळ कह्या प्रमाणे स्कन्दकना स कल्प वर्णन करवानु छे-मरणनी अपेक्षा राख्या विना हुं पादपोपगमन स थारो करूं त्या सुधीनु पूर्वोक्त कथन अहीं समजी लेवु तेमां ज मारु कल्याण छे, (त्ति कट्टु एव सपेहेइ-संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वमागए) आ प्रकारनो संकल्प करीने प्रातःकाळ थता ज अने सूर्यनो प्रकाश फेलातांज तमे जल्दी मारी पासे आव्या छो-(से णूणं खंदया ! अट्ठे सम) हे स्कन्दक! मारी वात साची छे ने? त्यारे स्कन्दके कह्युं- (हंता अत्थि) हे भदन्त ! आपनी वात साची छे. (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) भगवान महावीरे तेमने कह्युं हे देवानुप्रिय ! तमने रुचे तेम करो शुभ कार्यमां विलंब करवो जोईओ नहीं ॥सू१५॥

टीकार्थ—विवेचन-" तेणं कालेणं तेणं समएणं " ते काळे अने ते समये " रायगिहे नयरे " राजगृह नगरमा " समोसरण " भगवान महावीरनुं

रूपेण विचार समुत्पद्यत, ' अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं " अहमनेनैतद्रूपेण उदारेण ' जाव किसे धमणिसंतए जाए' यावत् कृशा धमनीसततो जातोऽस्मि, अत्र यावत्पदेन विपुलेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मंगल्येन सश्रीकेणोदग्रेणोदात्तेनात्तमनोदारेण महानुभावेन तप गर्मणा शुष्को रूक्षो निर्मांसोऽस्थिचर्मावनद्धः किटिकिटिका भूत इति पर्यन्तविशेषणानां ग्रहण भवति। " जीव जीवेण गच्छामि " जीवो जीवेन गच्छामि। जीवबलेन गमनादि क्रियां करोमि न तु शरीरबलेनेति " जीवं जीवेण चिट्ठामि " जीवो जीवेन तिष्ठामि "जाव गिलामि यावत् ग्लायामि। अत्र यावत्पदेन भाषां भाषिताऽपि ग्लायामि

कथान ही शाश्वतसिद्धिपद का दायक है) इस तरह की दृढतारूप से युक्त होने के कारण तथा बाहिर अभीतक प्रकाशित न करने के कारण यह मनोगत कहा गया है। इस प्रकार के विचार उत्पन्न होने के कारण क्या था-सो सूत्रकार इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं-उन स्कन्दक अनगार ने जब देखा कि" अह इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए' मैं इस २ प्रकार के उदार आदि पूर्वोक्ति विशेषणों वाले तप से कृश हो गया हूं, शरीर की समस्त धमनिकों-नाडियों का समूह बाहर में बिलकुल स्पष्ट नजर लगा है। (जीव जीवेण गच्छामि) शारीरिक बल तो क्षीण हो गया है मैं आत्मा के ही बल से चलता हूं और (जीवं जीवेण चिट्ठामि) आत्मा के ही बल से ठहरता हूं, शरीर बल से न चलता हूं और न ठहरता हूं (जाव गिलामि) यावत् जप में बोलते २ भी ग्लानियुक्त हो जाता हूं (पोलना पड़ेगा) ऐसा समझकर भी ग्लानियुक्त हो जाता हूं और जैसे सूखे काष्ट से सूखे पत्तों से सूखी तिल-

---

પ્રત્યાખ્યાન શાશ્વત સિદ્ધિપદ અપાવનાર છે" તે પ્રકારની દૃઢતા સહિતની હોવાને કારણે તથા તે વિચાર હજી કોઈની સમક્ષ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો ન હતો તેથી તેને મનોગત કહેવામાં આવેલ છે આ પ્રકારનો વિચાર આવવાનું કારણ શું હતું ? સૂત્રકાર હવે તેનું કારણ બતાવે છે-" अह इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए " સ્કન્દક અણગારે જ્યારે જોયું કે આ પ્રકારના ઉદાર આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળા તપથી મારૂ શરીર દુબળું થઈ ગયું છે શરીરની બધી નસોનો સમૂહ બહારથી પૂરે પૂરો દેખાવા લાગ્યો છે " जीव जीवेण गच्छामि ' મારૂ શારીરિક બળ ક્ષીણ થઈ ગયું છે પણ હું આત્માના બળથી ચાલું છું ' जीवं जीवेण चिट्ठामि " આત્માના બળથી જ સ્થિર રહી શકું છું એટલે કે શારીરિક બળથી શરીરનું હલનચલન આદિ કરું નથી. " जाव गिलामि " બોલતાં બોલતાં પણ ગ્લાનિ

समुपज्जित्था " यावत् समुदपद्यत, अत्र यावत्पदेन कल्पितः प्रार्थितो मनोगतः संकल्पः इत्यस्य ग्रहणं भवति तेन आध्यात्मिकः, चिन्तितः, कल्पितः, प्रार्थितः, मनोगतः संकल्पः, इति संग्रहो भवति । तत्र आध्यात्मिकः, अहं भक्तप्रत्याख्यानं करोमीति-आत्मगतः-अङ्कुर इव समुत्पन्नः । ' चिंतिए ' चिन्तित -स एव पुनः पुनः विचारः स्मरणरूपो विचारः द्विपत्रित इव । ' कप्पिए ' कल्पितः-भगवदाज्ञा पुरस्सरभक्तप्रत्याख्यानकरणेच्छारूपो विचारः पल्लवित इव । 'पत्थिए' प्रार्थितः भक्तप्रत्याख्यानार्थं भगवदग्रे प्रार्थनारूपो विचारः पुष्पित इव "मणोगए संकप्पे" मनोगतः संकल्पः ' इदमेव भक्तप्रत्याख्यानं शाश्वतसिद्धिपददायकम् , इति दृढ-

---

कल्पित प्रार्थित और मनोगत संकल्प उत्पन्न हुए । आध्यात्मिक आदि विशेषणों की सार्थकता यहां इस प्रकार से जानना चाहिये—स्कन्दक अनगार ने जब ऐसा विचार किया कि मैं " भक्त प्रत्याख्यान करूँगा" तब इस प्रकार का यह विचार अंकुर की तरह उनकी आत्मा में उत्पन्न हुआ, इस लिये वह आत्मगत होने के कारण आध्यात्मिक कहा गया। पीछे यही विचार बारंबार होने लगा अतः द्विपत्रित की तरह यही विचार, चिंतित-स्मरणरूप कहा गया । "भगवान् की आज्ञापूर्वक ही मैं भक्तप्रत्याख्यान करूँगा" इस प्रकार से वही विचार भगवदाज्ञापुरस्सर भक्तप्रत्याख्यानकरणेच्छारूप विशेषता वाला होने से पल्लवित हुए की तरह कल्पित कहा गया। "भक्तप्रत्याख्यान के लिये मैं भगवान् के आगे प्रार्थना करूँगा" इस प्रकार वही विचार अधिक विशेषता वाला होने से पुष्पित की तरह प्रार्थितरूप से कहा गया। तथा यह 'भक्तप्रत्या-

---

આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત, કલ્પિત, પ્રાર્થિત અને મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો હવે આધ્યાત્મિક આદિ વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવામા આવે છે-સ્કન્દક અણગારે જ્યારે એવો વિચાર કર્યો કે હું ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન લઈશ " ત્યારે તે વિચાર અંકુરની જેમ તેમના આત્મામા ઉત્પન્ન થયો હતો, તે વિચાર આત્મગત હોવાથી તેને માટે આધ્યાત્મિક વિશેષણ યોગ્ય છે પાછળથી તે વિચાર વારવાર આવવા લાગ્યો તેથી દ્વિપત્રિતની જેમ એજ વિચાર ચિંતિત-સ્મરણરૂપ કહેવાયો ભગવાનની આજ્ઞાપૂર્વક હું ઉપાસના પ્રત્યાખ્યાન કરીશ " આ રીતે તે વિચાર ભગવાનની આજ્ઞા લઈને પ્રત્યાખ્યાન કરવાની ઇચ્છારૂપ વિશેષતા વાળો બની જવાથી પલ્લવિત થયો હોય એવો બનાવથી તેને કલ્પિત વિશેષણ લગાડયુ છે " ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન માટે હું ભગવાનની સમક્ષ પ્રાર્થના કરીશ " આ પ્રકારનો વિચાર વધારે વિશિષ્ટતાવાળો બનવાથી તેને પ્રાર્થિત વિશેષણ લગાડવામા આવ્યું છે. તથા " આ ઉપવાસના

पुरिसक्कारपरक्कमे' उत्थानं कर्म बलं वीर्यं पुरुषकारपराक्रमः तथा 'जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए' यावच्च मे धर्माचार्यः धर्मोपदेशकः 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीर 'जिणे' जिन 'सुहत्थी' सुहस्ती पुरुषवरगन्धहस्ती 'विहरइ' विहरति। एतच्चिन्तनं भगवत्सान्निध्यो विधिर्मदाफलो भविष्यति इत्यभिप्रायेण कृत मनेनेति। अथवा भगवन्निर्वाणे शोकदुःखमागत मा भूदस्माकम् इत्यभिप्रायेण चिन्तितमनेनेति। तावता मे सेयं' तावता मम श्रेयः तावदेव मम श्रेयस्कर हितकरमित्यर्थः। यत् 'कल्ल' इत्यम्-आगामिनिशिनि 'पाउप्पभायाए' प्रादुष्प्रभातायाम् प्रादुर्भविष्यत्प्रभातायाम् 'रयणिए' रजन्यां सति काले इत्यर्थः।

'फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि' फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते फुल्लं सामान्यतया विकसितं तच्चतत् उत्पलं चेति फुल्लोत्पलम् तच्च तथा कमलम्

वीर्य है, पुरुषकार है, पराक्रम है। इसलिये "त जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कम" जबतक मुझ में ये सब उत्थान कर्म, बल वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम अपने हुए हैं, और 'जाव य मे धम्मायरिये धम्मोवदेसए" जबतक मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक "समणे भगव महावीरे" श्रमण भगवान् महावीर जिनसुहस्ती -गन्धहस्ती के समान विचर रहे हैं "तावता मे सेयं" तबतक मेरे लिये श्रेयस्कर है कि मैं "कल्लं" आगामी दिन जब कि "पाउप्पभायाए रयणीए" रात्रि प्रभात के प्रकाश से युक्त हो जायेगी अर्थात् प्रात काल हो जावेगा तथा "फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि" जब यह प्रभात कमल के पत्र खिल जाय और कमल नामक

वले, वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे" अर्थ छे अने छे वीर्य छे अने पुरुषार्थ पराक्रम पण छे 'त जाव ताम मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे' अर्थात् सुधी भारामां उत्थान अर्थ अटा वीर्य अने पुरुषार्थ परा क्रम भोजूद छे अने 'जाव य मे धम्मायरिये धम्मोवदेसए' अर्थात् सुधी भारा धर्माचार्य धर्मोपदेशक "समणे भगव महावीरे" जिनेन्द्र भगवान अ घडी सुधी समान श्रमण भगवान महावीर विद्यमान छे 'तावता मे सेय" त्यां सुधीमां आ प्रभाते करवामां ज भारु हितकारी छे "कल्लं" आवती भडे अर्थात् 'पाउप्पभायाए रयणीए' प्रातः काल थाय (रात्रिना अंधारानी अभावे प्रकाश होय) 'फुल्लुप्पलकमल कोमलुम्मिलियम्मि" अर्थात् कमल पत्र जेवी आप अने कमल नामना दरयाना ज ने कोमल नयनो अर्थात् विकसित थाय,

भापां भापमाणो ग्लायामि भापां भाषिष्ये इति ग्लायामि इति "जाव एवामेव अहंपि" यावदेवमेवाहमपि अत्र यावत्पदेन तद् यथा नाम काष्ठशकटिका तिल-शकटिका भाण्डशटिका एरण्डकाष्ठशकटिका अंगारशटिका उष्णे दत्ताशुष्कासती सशब्दं गच्छति सशब्दं तिष्ठति इत्यंतस्य पदजातस्य ग्रहणं भवति तद्वदहमपि "ससद्द गच्छामि" सशब्दं गच्छामि। काष्ठादिपूरितशकटादिवत् अहमपि सशब्दं गच्छामि इत्यर्थः "ससद्दं चिट्ठामि" सशब्दं तिष्ठामि अस्थि संघर्षजन्यशब्दयु-क्तस्तिष्ठामीत्यर्थः "तं अत्थिताये" तदस्तितावन्मे 'उट्ठाणे' उत्थानम् तदेव-मपि सर्वथा शारीरिकबलरहितस्यापि तावन्मे उत्थानादि न सर्वथा क्षीणमिती "कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे" कर्म बलम् वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमोऽस्ति "तं तावता मे अत्थि" तत् यावत् तावत् मे अस्ति "उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए

फलियों से मिट्टी के भोंडों से भरी हुई गाडी खड खड आवाज करती हुई चलती है और ठहरती है (एवामेव अहंपि) उसी प्रकार से मैं भी अस्थिमात्रावशिष्ट होने के कारण (ससद्द गच्छामि) उनके संघर्ष से होने वाले शब्द से युक्त होकर चलता हूं और (ससद्दं चिट्ठामि) शब्द से युक्त होकर ठहरता हूं इस प्रकार से यह मेरे शरीर की दशा हो रही है अर्थात्-मैं शारीरिक बल से इस समय सर्वथा रहित हो रहा हूं "फिर भी मुझ में उत्थानादिक कर्म सर्वथा क्षीण नहीं हुए हैं" यही बात दिखाने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि वे स्कन्दक अनगार विचारते हैं कि इस स्थिति में भी अभीतक मुझ में "तं अत्थि ता मे उट्ठाणे" उत्थान है "कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे" कर्म है, बल है,

---

મુક્તા થઇ જાઉ છું "બોલવુ પડશે" એવા વિચારથી પણ મનમાં ગ્લાનિ અનુભવું છું અને સૂકા કાષ્ઠ, સૂકા પાન, સૂકી તલ શિંગો, કે માટીનાં વાસણોથી ભરેલી ગાડી જેમ ખટ-ખટ અવાજ કરતી ચાલે છે કે ખટ-ખટ અવાજ કરતી ઉભી રહે છે "एवामेव अहंपि" એજ પ્રમાણે મારા શરીરમા પણ માત્ર હાડકાં જ હોવાને કારણે 'ससद्दं गच्छामि' હું ખટ-ખટ અવાજ કરતો ચાલુ છું-(હાડકાના ઘર્ષણથી તે અવાજ થતો હોય છે) "ससद्दं चिट्ठामि" અને ઉઠતા તથા બેસતા પણ ખટ-ખટ અવાજ થાય છે આ રીતે હું શારીરિક રીતે નિર્બળ થઈ ગયો છુ, મારામા શારીરિક શક્તિ તો બિલકુલ રહી જ નથી છતાં પણ ઉત્થાન આદિ કર્મ કરવા જેટલી શક્તિ તો હજી પણ બાકી રહી હતી તે બતાવવાને સૂત્રકાર કહે છે-"त अत्थि ता मे उट्ठाणे" ૨૬૯૬ અણગાર વિચાર કરે છે કે હજી પણ મારામા ઉત્થાન છે, "कम्मे,

' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरं, ' वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता ' वन्दित्वा नमस्थित्वा यावत् शुश्रूषया विनयेन पर्युपास्य ' समणेणं भगवया महावीरेणं ' श्रमणेन भगवता महावीरेण ' अब्भणुण्णाए ' अभ्यनुज्ञातः सन् ' सयमेव पंचमहव्वयाणि आरोवेत्ता ' स्वयमेव पंचमहाव्रतानि आरोप्य भगवतो महावीरस्याहामादाय पुनः स्वयमेव पंचमहाव्रतानि स्वीकृत्येत्यर्थः ' समणा य समणीओ य खामेत्ता ' श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा ' तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं ' तथारूपैः स्थविरैः कृतादिभिः संस्तारक संस्थितस्य मुनेः सहायैः सार्धम् ' विपुलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहित्ता ' विपुलं तदाख्यं पर्वतं शनैः शनैः मन्दगत्या दृरूढः अधिरूढः ' मेघवण्णसंनिगासं ' मेघवर्ण संनिकाशं घनमेघसदृशं सान्द्रनीलसमानं कृष्णवर्णमित्यर्थः ' देवसन्निवायं '

श्रमण भगवान् महावीर को वंदन करके ' नमंसित्ता ' नमस्कार करके ' जाव पज्जुवासित्ता ' यावत् शुश्रूषाद्वारा-विनयद्वारा उनकी पर्युपासना करके ' समणेणं भगवया महावीरेणं ' उन श्रमण भगवान् महावीर से पादपोपगमन संथारा धारण करने की अनुमति मांग ' अब्भणुण्णाए ' जब वे इसे धारण करने की मुझे अपनी अनुमति दे देंगे तब मैं ' सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेत्ता " अपने आप पांच महाव्रतों को स्वीकार करके (समणाय समणीओ य खामेत्ता) श्रमण और श्रमणीओं से क्षमापन (क्षमतम्यामासणा) करके (तहारूवेहिं थेरेहिं सद्धिं) फिर मैं तथारूप स्थविरों के साथ कि जो (कडाईहिं) संस्तारक में स्थित मुनि के सहायक होते हैं, उनके साथ (विउलं पव्वयं) विपुलाचल-पर्वत पर (सणियं सणियं) धीरे २ चढ़ूं (दुरुहित्ता) चढ़कर फिर मैं (पुढवीसिलापट्टयं) ऐसे पृथिवीशिलापट्टक कि जो (मेहवण्णसंनिगासं) काले मेघ के

વીરને વંદના કરીને " नमंसित्ता " નમસ્કાર કરીને " जाव पज्जुवासित्ता " અને સેવા શુશ્રૂષા દ્વારા-વિનય દ્વારા તેમની પર્યુપાસના કરીને " समणेणं भगवया महावीरेणं " તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે પાદપોપગમન સંથારો કરવાની રજા માગીને " अब्भणुण्णाए " તેઓ તે માટે અનુમતિ આપે તો " सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेत्ता " મારી જાતે પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને " समणा य समणीओ य खामेत्ता " સાધુ તથા સાધ્વીઓની સાથે ક્ષમાપના કરીને " तहारूवेहिं थेरेहिं सद्धिं कडाईहिं " સંથારે કરનારા સાધુને સહાયક થવા જેવા સ્થવિરોની સાથે " विउलं पव्वयं " વિપુલાચલ પર્વત ઉપર " सणियं सणियं दुरुहित्ता " ધીમે ધીમે ચઢીને " पुढवीसिलापट्टयं मेहवण्णसंनिगासं देवसन्नि

हरिणविशेष इतिफुल्लोत्पलकमलौ तयोः कोमलमकठोरम् उन्मीलितम्-उत्पल दलानां मृगनयनयोश्च उन्मीलनं यस्मिन् तत् तथा तस्मिन् फुल्लोत्पलकमलकोमलो न्मीलिते 'अहा' अथेति रजनीविभातानन्तरं 'पंडुरे' पाण्डुरे-धवले प्रकाश-युक्ते एतादृशे 'पभाए' प्रभाते सति तथा—'रत्तासोयप्पगासे' रक्ताशोक प्रकाशे रक्ताशोकसदृशप्रकाशसंपन्ने पुनः 'किंसुय-सुयमुहगुंजद्धरागसरिसे' किंशुकशुकमुखगुञ्जार्द्धरागसदृशे किंशुकस्य पलाशपुष्पस्य शुकमुखस्य गुंजार्द्धस्य च रागेण सदृशः तुल्यस्तस्मिन् किंशुकशुकमुखगुंजार्द्धरागसदृशे पुन 'कमला-गरसंडबोहए' कमलाकरषण्डबोधके कमलाकराः सरोवरादयस्तेषु ये षण्डाः= कमलसमूहाः तेषां बोधको विकाशको यः स कमलाकरषण्डबोधकस्तस्मिन् कमलाकरषण्डबोधके 'उट्ठियम्मि' उत्थिते उदिते 'सूरे' सूर्ये कथंभूते सूर्ये त आह-'सहस्सरस्सिम्मि' सहस्रश्मौ सहस्रकिरणधारके 'दिणयरे दिनं करोति यः स दिनकरस्तस्मिन् दिनकरे पुनश्च 'तेयसा जलंते' तेजसा ज्वलतिसति यदा रात्रिरपगता भविष्यति अथ च तेजसा सूर्यः प्रकाशकरो भविष्यति तदनन्तरं,

---

हरिण विशेष के कोमल दोनों नयन खुल जायेगा और "अहा पंडुरे" रात्रि के समाप्त होजाने के बाद जब वह प्रकाश से युक्त हो जावेगा तथा -"रत्तासोयप्पगासे" लाल अशोक के जैसे प्रकाशसे युक्त, (किंसुय-सुयमुह-गुंजद्धरागसरिसे" किंशुक-पलाशपुष्प, शुकमुखतोते का मुंह और गुंजा के आधे भाग के राग जैसे लाल 'कमलागरसंडबोहए" सरोवर आदि में रहे हुए कमलों को विकसित करने वाले 'सहस्सरस्सि-म्मि' हजारकिरणोंवाले 'दिणयरे' तथा दिवस को करने वाले, एवं, "तेयसा जलंते' तेज से प्रकाशित ऐसे 'सूरे' सूर्य के (उत्थिए) उदित हो जाने पर अर्थात् जब रात्रि व्यतीत हो जायेगी और सूर्य अपने तेज से जब चमकने लगेगा तब उसके बाद 'समणं भगवं महावीरं वंदित्ता'

"अहापंडुरे" રાત્રિ પૂરી થઇને જ્યારે તે પ્રકાશયુક્ત થશે તથા "रत्तासोय-प्पगासे" લાલ અશોકના જેવા પ્રકાશથી યુક્ત, "किंसुय-सुयमुह-गुंजद्धरागस-रिसे" કિંશુક-પલાશપુષ્પ, શુકમુખ (પોપટનુ મુખ) અને ચણોઠીના અર્ધ-ભાગના જેવો લાલ, "कमलागरसंडबोहए" સરોવરોમા રહેલા કમલવૃન્દોને વિકસાવનાર "सहस्सरस्सिम्मि" હજાર કિરણો વાળો, "दिणयरे" દિવસ કર-નારો, "तेयसे जलते" તેજથી પ્રકાશિત એવો "सूरे उत्थिए" સૂર્ય જ્યારે ઉદય પામશે ત્યારે-એટલે કે રાત્રિ વ્યતીત થઇ ગયા પછી જ્યારે સૂર્ય પ્રકા-શવા લાગશે ત્યારે "समण भगव [illegible] वंदित्ता" શ્રમણ ભગવાન મહા

'एवं संपेहेइ' एवं संप्रेक्षते एवं पूर्वोक्तप्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति 'संपेहित्ता' संप्रेक्ष्य पूर्वोक्तप्रकारेण विचार्य 'कल्लं पाउप्पभाए रयणीए' कल्यं प्रादुष्प्रभायां रजन्याम् प्रकाशयुक्तप्रभातप्रायायां रात्रौ आगामिन्यां 'जाव जलंते' यावत् ज्वलिते अत्र यावत् पदेन रक्ताशोकप्रकाशे किंशुकशुकमुखगुञ्जार्द्धरागसदृशे कमलाकरषण्ड बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकर 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीर 'तेणेव' तत्रैव 'जाव पज्जुवासइ' अत्र यावत् पदेन वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा शुश्रूषया विनयेन प्राञ्जलिपुटः 'त्रिविधया पर्युपासनया पर्युपास्ते।

स्कन्दकपर्युपासनाकाले भगवान् यत्कथयति तदाह-'खंदया' इत्यादि-'खंदया' स्कन्दक इति हे स्कन्दक इति एवं रूपेण सम्बोध्य 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीर 'खंदयं अणगारं एवं वयासी' स्कन्दक

निश्चय करके (संपेहेइ) ऐसा पूर्वोक्त रूप से विचार किया (संपेहित्ता) ऐसा विचार करके (कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) वे आगामी दिवस में जब कि रजनी प्रभात प्राय हो रही थी (जाव जलंते) यावत् सूर्य अपने तेज से चमकने लग गया था उस समय (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव जाव पज्जुवासइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराज मान थे वहां आये वहां आकर उन्हों ने यावत् उनकी पर्युपासना की।

स्कन्दक अनगार जब भगवान् की पर्युपासना करने में लगे हुए थे उस समय भगवान ने जो उनसे कहा उसे प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं-(समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने उस समय उनको (खंदया) हे स्कन्दक! इस रूप से सम्बोधित करते हुए (खंदयं अणगारं) उन स्कन्दक अनगार को (एवं वयासी) इस प्रकार कहा-

---

સ્કન્દક અનગારે મનમાં જે પ્રમાણે નિશ્ચય કરીને "संपेहेइ" પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ કર્યો "संपेहित्ता" એવો સંકલ્પ કરીને "कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए" બીજે દિવસે જ્યારે રાત્રિ પ્રકાશ યુક્ત, અને પ્રાત: કાળ થયો "जाव जलंते" જ્યારે સૂર્ય પોતાનો પ્રકાશ ફેલાવવા લાગ્યો ત્યારે "जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव जाव पज्जुवासइ" તેઓ જ્યાં ભગવાન મહાવીર પ્રભુ વિરાજમાન હતા ત્યાં ગયા અને ત્યાં જઈને નમસ્કારથી પ્રભુ પાસના પર્યન્તની વિધિ કરી.

સ્કન્દક અણગાર જ્યારે ભગવાનની પર્યુપાસના કરી રહ્યા હતા ત્યારે ભગવાને તેમને જે વચનો કહ્યા તે સૂત્રકાર આ રીતે કહે છે- "समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ત્યારે "खंदया" હે સ્કન્દક! એવું સંબોધન કરીને "खंदयं अणगारं" સ્કન્દક અણગારને "एवं वयासी"

देवसंनिपातम्-देवानां संनिपातः समागमो रमणीयत्वात् यत्र स देवसंनिपात स्तम् 'पुढवीसिलापट्टयं' पृथिवीशिलापट्टकं पृथिवीशिलारूपमासनं 'पडिलेहित्ता' प्रतिलेख्य 'दब्भसंथारगं संथरित्ता' दर्भसंस्तारकं संस्तीर्य 'दब्भसंथारोवगयस्स' दर्भसंस्तारकोपगतस्य 'संलेहणाझोसणाझूसियस्स' संलेखनाजोषणाजुषितस्य संलिख्यते कृशीक्रियते शरीरं कषायश्चानया इति संलेखनतपोविशेषः तस्यास्तपोरूपायाः जोषणा=सेवनं तया जुष्टः युक्तस्तस्य 'भत्तपाणपडियाइक्खियस्स' भक्तपानप्रत्याख्यातस्य=प्रत्याख्यातभक्तपानकस्य 'पाओवगयस्स' पादपोपगतस्य स्वीकृतपादपोपगमनसंस्तारकस्य 'कालं अणवकंखमाणस्स' कालमनवकांक्षतः उपलक्षणात् जीवितमप्यनिच्छतः 'विहारित्तए' विहर्तुम्-श्रेयइति पूर्वेण सम्बन्धः 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा=इति मनसि निश्चित्य

जैसा कृष्णवर्णवाला है और (देवसंनिवायं) सुन्दरता के कारण जिसपर देवों का समागम होता है उसकी 'पडिलेहित्ता' प्रतिलेखना करके 'दब्भसंथारगं' उस पर दर्भके संस्तारकको बिछाऊ 'संथरित्ता' बिछाकर 'दब्भ संथारोवगयस्स संलेहणा झोसणा झूसियस्स' मैं उस पर बैठ जाऊ और रागद्वेष से रहित बन कर मैं काय एवं कषाय को कृश करनेवाली संल्लेखना को आदर के साथ स्वीकार करूं उस समय मैं 'भत्तपाणपडियाइक्खियस्स' चारों प्रकार के आहार का यावज्जीव प्रत्याख्यान करूं। इस तरह 'कालं अणवकंखमाणस्स' मैं अपने मरण और जीवन की आशंसा से रहित हो कर 'पाओवगयस्स' पादपोपगमन संथारा धारण करूं-तो इसीमें मेरा कल्याण है। 'त्तिकट्टु' इस प्रकार से स्कन्दक अनगार ने धर्मजागरणा करते समय अपने मनमें

वायं" त्यां थडीने કાળા મેઘના જેવા શ્યામ વર્ણવાળા અને જેના પર દેવોનો સમાગમ થાય છે એવા સુંદર પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની "पडिलेहित्ता" प्रतिलेખના કરીને "दब्भ संथारग" તેના ઉપર દર્ભનો સંસ્તારક બિછાવીશ "संथारित्ता" સંસ્તારક બિછાવીને "दब्भसंथारोवगयस्स संलेहणा झोसणा झूसियस्स" તેના પર બેસીશ અને રાગદ્વેષથી રહિત બનીને શરીર અને કષાયને ક્ષીણ કરનારી સંલ્લેખના (સંથારો) આદર સહિત અંગીકાર કરીશ. 'भत्तपाणपडियाइक्खियस्स" ચારે પ્રકારના આહારનો જીવન પર્યન્ત ત્યાગ કરવાના પ્રત્યાખ્યાન કરીશ આ રીતે "काल अणवकंखमाणस्स" હું અને મારા જીવન અને મરણની આશંસા રાખ્યા વિના "पाओवगयस्स" પાદપોપગમન સંથારો અંગીકાર કરું તો તેમા મારું કલ્યાણ છે. "त्तिकट्टु" ધર્મજાગરણ કરતી વખતે

मादुप्पमाताया यावत् ज्वलति यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव शीघ्रमागत इह यावत् पदम् ' रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलम्मिलियम्मि अहापंडुरे पभाए रत्तासोय पगास किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागबंधुजीवग कमलागरसंडबोहए उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा ' इत्यनया ग्रहणं भवति । ' से णूणं खंदया ' तन्नूनं हे स्कन्दक ! ' अट्ठे समट्ठे ' अर्थः समर्थः हे स्कन्दक ! तत् किमयमर्थः समर्थः सत्यः ? स्कन्दकः कथयति ' हंता अत्थि-सत्य अस्ति यद् देवानुप्रियैरुच्यते तत्सर्वं सत्यमिति ।

ततो भगवान् कथयति ' अहासुहं देवाणुप्पिया ' यथा सुखं देवानुप्रिय ! हे देवानुप्रिय ! यथा सुखं यथा तव सुखं भवेत् तथा कुरु ' मा पडिबंधं करेह ' मा प्रतिबन्धं कुरु अत्र शुभकार्ये विलम्बं मा कुरु त्वया संसारतरणविषये यदवधारितं तद् शीघ्रं समाचरति भावः ॥ सू-१५ ॥

भगवता तीर्थंकरेण तपोविषयेऽनुज्ञातः स्कन्दकोऽनगारः किं कृतवान् इत्याह ' तएणं स खंदए ' इत्यादि ।

मूलम्—"तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ,

ही यावत् सूर्यका प्रकाश फैलने पर मेरे पास शीघ्र आवें हो। (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे) तो कहो हे स्कन्दक ! यह बात सच है न ? अब प्रभु का इस प्रकार का कथन स्कन्दक अनगार ने सुना-सुन वे बोले— (हंता अत्थि) हां भदन्त ! यह आपका कथन सर्वथा सत्य है। तब प्रभु ने स्कन्दक अनगार से कहा— (अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो-तुम वैसा ही करो किन्तु इस शुभकार्य में विलम्ब मत करो। अर्थात्-संसार के विषय में जैसा तुमने निश्चय किया है वैसा ही पादपोपगमनसंथारा करके अपना कल्याण करो ॥ १५ ॥

सेवाय इच्छामाए " आयासाने अर्थात् सूर्यनो प्रकाश देखातां ज तमे शीघ्र मारी पासे आवजो छो. ' से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे ' तो कहो, हे स्कन्दक ! ते वात सायी छे ने ? प्रभुनुं आवुं कथन सांभळीने स्कन्दक अणगारे कयुं, " हंता अत्थि " हा, भगवन् ! आपनुं कथन सर्वथा सत्य छे त्यारे प्रभुओ स्कन्दक अणगारने कहुं ' अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह " हे देवानुप्रिय ! तमने जे रीते सुख उपजे तेम करो अा शुभ कार्यमां विलंब करवो जोईओ नहीं अेटले के तमे संसारोत्तरण संबंधे निर्णय कर्यो छे ते निर्णय अमलमां मूकीने तमारुं कल्याण करो ॥ सू. १५ ॥

मनगारमेवमवादीत्-' से णूणं तव खंदया ' तन्नूनं तव हे स्कन्दक ! ' पुव्वत्तावरत्तकालसमयंसि ' पूर्वरात्रापररात्रकालसमये ' धम्मजागरियं जागरमाणस्स ' धर्मं जाग्रिकां जाग्रतः " इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था" अयमेतद्रूपो आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत इह यावत् पदेन चिन्तितः प्रार्थितः कल्पितो मनोगतः संकल्पः, इतिग्रहणम् तदेव दर्शयति ' एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विपुलेण तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए ' एवं खलु अहमनेनैतद्रूपेण तपसोदारेण विपुलेन तदेव यावत्कालमनवकांक्षतो विहर्तुम्। यावत् पदेन ' पयत्तेण ' इत्यारभ्य ' पाओवगयस्स ' इत्यन्तं पूर्वोक्तंसर्वं ग्राह्यम् ' त्तिकट्टु ' इति कृत्वा ' एवं संपेहेसि ' एवं संप्रेक्षसे ' संपेहित्ता ' संप्रेक्ष्य ' कल्लंपाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए ' कल्ये

(से णूणं तव खंदया) हे स्कन्दक ! तुम्हें (पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि) पूर्वरात्र और अपररात्र के समय में-जब तुम (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्मजागरणा कर रहे थे तब (इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) यह इस प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ था कि—(एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तंचेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए) मैं इस प्रकार के तप से कि जो उदार, विपुल आदि विशेषणों वाला है उससे बहुत दुर्बल हो गया हूं। अतः यावत् मरणाशंसा से रहित होकर मैं पादपोपगमन संथारा करूँ तो इसी में मेरा कल्याण है। (त्तिकट्टु) सो तुमने अपने मन में ऐसा निश्चय कर (एवं संपेहेसि) ऐसा विचार किया है और ऐसा (संपेहित्ता) विचार करके (कल्ल पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए) तुम प्रातःकाल होते

આ પ્રમાણે કહ્યું-" से णूणं तव खंदया ! " હે સ્કન્દક ! તમને " पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि " પૂર્વ અને અપરરાત્રિના સમયે " धम्मजागरियं जागरमाणस्स " ધર્મજાગરણ કરતી-વખતે " इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था " એવો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત, કલ્પિત પ્રાર્થિત, મનોગત વિચાર થયો હતો કે " एवं खलु अहं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए " હું આ પ્રકારના ઉદાર, વિપુલ, આદિ વિશેષણોથી યુક્ત તપથી દુર્બળ થઈ ગયો છું ત્યાથી શરૂ કરીને જે હું મરણની આંકક્ષા રાખ્યા વિના પાદપોપગમન સંથારો કરૂં તો તેથી મારૂ કલ્યાણ થશે સુધીનો સૂત્રપાઠ આગળ પ્રમાણે સમજી લેવો. " त्तिकट्टु " તો તમે તમારા મનમાં એવો નિશ્ચય કરીને " एवं संपेहेसि " આ પ્રકારનો સંકલ્પ કર્યો છે (संपेहित्ता) એવો સંકલ્પ કરીને " कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए

वीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्ण परियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता, आलोइय पडिक्कंत समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालं गए ॥ सू० १६ ॥

छाया-ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणेन भगवता महावीरेणाभ्यनुज्ञातः सन् हृष्टस्तुष्ट यावद्धृदय उत्थया उत्तिष्ठति-उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिकृत्व आदक्षिण दक्षिणं करोति (कृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा स्वयमेव पञ्चमहाव्रतानारोपयति) आरोप्य श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयति क्षमयित्वा तथारूपैः

भगवान् नमस्कार के द्वारा स्थविरों के विषय में आज्ञा प्राप्त कर स्कन्दक अनगार ने क्या किया-सो कहते हैं-(तएणं से) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तएणं) इस के बाद (से खंदए अणगारे) वे स्कन्दक अनगार (भगवया महावीरेणं) भगवान् महावीर से (अब्भणुण्णाए समाणे) अनुमति प्राप्त कर (हट्ठतुट्ठ जाव हियए) बहुत अधिक हर्षित हुए, बहुत अधिक संतोष युक्त हुए यावत् बहुत अधिक विकसित हृदयवाले हुए (उट्ठाए उट्ठेइ) बाद में वे अपनी उत्थानशक्ति से उठे (उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं) उठकर उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर को (तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) प्रदक्षिणापूर्वक वंदन किया नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (सयमेव) अपने आप फिर उन्होंने (पंच

ત્રીજા કાર ભગવાન પાસેથી સ્થવિરો વિષેની અનુજ્ઞા પ્રાપ્ત કરીને સ્કન્દક અણગારે શું કર્યું તે સૂત્રકાર કહે છે-"तएणं से" ઇત્યાદિ।

સૂત્રાર્થ—(तएणं) ત્યાર બાદ (से खंदए अणगारे) તે સ્કન્દક અણગારે (भगवया महावीरेणं) ભગવાન મહાવીરની (अब्भणुण्णाए समाणे) આજ્ઞા મેળવીને (हट्ठ तुट्ठ जाव हियए) અતિશય હર્ષ પામ્યા, અતિશય સંતુષ્ટ થયા અને તેમનું હૃદય પ્રફુલ્લિત થયું (उट्ठाए उट्ठेइ) પછી તેઓ તેમની ઉત્થાન શક્તિથી ઊભા (उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं) ઊભા થઈને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને (तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) પ્રદક્ષિણા પૂર્વક વંદના કરી નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદના નમસ્કાર કરીને (सयमेव)—પોતાની જાતે જ (पंचमहव्वय

उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ--करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेइ, आरोवित्ता समणा य समणीओ य खामेइ, खामित्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ दुरुहित्ता मेहघणसंनिगासं देवसंनिवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता उच्चार--पासवणभूमिं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता, दब्भसंथारगं संथरइ, संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी, नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जावसंपत्ताणं नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं ति कट्टु वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी पुव्विं पि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए, जाव मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए, इयाणिं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए एवं सव्वं असणपाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि, जावज्जीवाए जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव मा फुसंतु त्ति कट्टु एयं पि णं चरमेहिं उस्सासनीसासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु संलेहणा झूसणा झूसिए, भत्तपाणपडियाइक्खिए, पाओवगये कालं अणवकंखमाणे विहरइ, तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महा-

एवमवादीत् नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो यावत् भगवद्भ्यो संप्राप्तेभ्य नमोस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय यावत् संप्राप्तुकामाय वंदे खलु भगवन्तं तत्र गतम् इहगतः पश्यतु मां भगवान् तत्रगत इहगतमितिकृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत् पूर्वमपि मया श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके सर्वं

करके पर्यंकासन से विराजमान हो गये। (करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तियं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी) पर्यंकासन से विराजमान होकर दशनख सहित दोनों हाथों को अंजलि के रूप में जोड़कर उन्हें मस्तक पर लगाया और लगा कर फिर इस प्रकार कहा (नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं) अर्हंत भगवंतों को मेरा नमस्कार हो जो आदिकर यावत् सिद्धिगति नाम के स्थान को प्राप्त हो चुके हैं तथा (नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स) सिद्धिगति को प्राप्त करने वाले श्रमण भगवान् महावीर को मेरा नमस्कार हो। (वंदामि णं भगवंतं तत्थ गयं इह गए) यहां पर रहा हुआ मैं वहां पर विराजमान भगवान् महावीर को मैं नमस्कार करता हूं (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयंति) वहां विराजमान श्रमण भगवान् महावीर वहां रहे हुए मुझे देखें। (त्तिकट्टु वंदइ नमंसइ) ऐसा कहकर उन्हों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की—उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन स्कन्दक अनगार ने ऐसा

वत्तिय-मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी) પર્યંકાસને બેસીને દશ નખ સહિત બન્ને હાથોને અંજલિરૂપે જોડીને, તેમને મસ્તક પર જોડીને તેઓ આ પ્રમાણે બોલ્યા-(नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं) સિદ્ધ ગતિ પ્રાપ્ત કરનાર અર્હંત ભગવંતોને મારા નમસ્કાર હો (અહીં સિદ્ધિગતિ પર્યન્તનો સમગ્ર પાઠ અહણ કરવો જોઇએ) "नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स" સિદ્ધિગતિને અવિલમ્બે પ્રાપ્ત કરનારા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને મારા નમસ્કાર હો- "वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए" અહીં રહેલો હું ત્યાં વિરાજતા ભગવાન મહાવીરને નમસ્કાર કરું છું (पासउ मे भगवं तत्थगए इह गयंति) ત્યાં વિરાજતા મહાવીર ભગવાન ત્યાં રહ્યા રહ્યા મને નિહાળે. (त्ति कट्टु वंदइ नमंसइ) આ પ્રમાણે કહીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદના કરી, નમસ્કાર કર્યો (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદના નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) આ પ્રમાણે બોલ્યા (पुव्विं पि मए समणस्स

स्थविरैः कृतादिभिः सार्द्धं विपुलं पर्वतं शनैः शनैरुरो हति दूरुह्य मेघघनसंनिकाशं देवसंनिपातं पृथिवीशिलापट्टकं प्रतिलेखयति प्रतिलेख्योच्चारप्रस्रवणभूमिं प्रतिलेखयति प्रतिलेख्य दर्भसंस्तारकं संस्तृणोति संस्तीर्य पौरस्त्याभिमुखः संपल्यंकनिषण्णः करतलपरिगृहीतं दशनखं शिरसावर्त्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा

महव्वयाइं आरोवेइ) पांच महाव्रतों को स्वीकार किया (आरोवित्ता) पांच महाव्रतों को स्वीकार करके (समणा य समणीओ य खामेइ) श्रमण एवं श्रमणियों आदिसे क्षमापना (खमतखामणा) किया (खामित्ता) खमा कर तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं) बाद में तथारूप स्थविरों के साथ, कि जो संथारा करने वाले के सहायक होत हैं उनके साथ (विउलं पव्वयं) विपुलाचल पर्वत पर (सणियं सणियं) धीरे २ (दुरुहेइ) चढे (दुरुहित्ता) वहां चढ कर (मेहघणसंनिगासं देवसंनिवायं पुढवी सिलावट्टयं पडिलेहेइ) उन्हों ने सान्द्र मेघ के समान वाले तथा देवों के सन्निपात वाले पृथिवीशिलापट्टककी प्रतिलेखना की (पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ) उसकी प्रतिलेखना करके फिर उन्हों ने उच्चारप्रस्रवण भूमि की प्रतिलेखना की (पडिलेहित्ता) उसकी प्रतिलेखना करके फिर उन्होंने (दब्भसंथारगं संथरइ) पृथिवि शिलापट्टक पर अपना दर्भका संथारा बिछाया। (संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंक निसन्ने) संथारा बिछाकर फिर वे उस पर पूर्व दिशाकी तरफ मुँह

थाइं आरोवेइ) પાચ મહાવ્રતો અંગીકાર કર્યા (आरोवित्ता) પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને (समणा य समणीओ य खामेइ) તેમણે સાધુ અને સાધ્વીઓને ખમતખામણા કર્યા (खामित्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं) ત્યાર બાદ સંથારો કરનાર સાધુઓને સહાયરૂપ થાય એવા સ્થવિરોની સાથે (विउलं पव्वयं) વિપુલાચલ પર્વત પર (सणियं सणियं दुरुहेइ) ધીમે ધીમે આરોહણ કર્યું (दुरुहित्ता) તેના ઉપર આરોહણ કરીને (मा हवणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलावट्टय पडिलेहेइ) તેમણે મેઘના જેવા કાળા વર્ણવાળા તથા દેવોના સમાગમ વાળા પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની પ્રતિલેખના કરી (पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ) તેની પ્રતિલેખના કર્યા પછી તેમણે ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ભૂમિની પ્રતિલેખના કરી (पडिलेहित्ता) તેની પ્રતિલેખના કરીને તેમણે (दब्भसंथारगं संथरइ) પૃથ્વીશિલાપટ્ટક પર દર્ભનો સંથારો બિછાવ્યો (संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने) સંથારો બિછાવીને તેઓ તેના પર પૂર્વદિશામાં મુખ રાખીને પર્યંકાસને બેસી ગયા (करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसा

चैरुच्छ्वासनिःश्वासैः व्युत्सृजामि इति कृत्वा संलेखना झोषणा झुषित भक्त-पानप्रत्याख्यातः पादपोपगत कालमनवकाक्षन् विहरति । ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगान्यधीत्य बहु प्रतिपूर्णानि द्वादश वर्षाणि श्रामण्य

हूं । (जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव फुसंतु त्ति कट्टु एयं पि णं चरमेहिं उस्सास नीसासेहिं वोसिरामि) तथा जो यह मेरा शरीर कि जो मुझे पहिले इष्ट था कान्त था प्रिय था यावत् इसे किसी भी प्रकार के उपसर्ग और परीषह पीडित न करें इस भावना से मैंने इस को सुरक्षित रखा था सो अब चरम उच्छ्वास निःश्वासों से-अर्थात् मरने के समय में इसको भी छोड़ता हूं (त्ति कट्टु) इस प्रकार विचार करके उन स्कन्दक अनगार ने (संलेहणा झूसणा झूसिए) काय और कषायको कृश करने वाली संलेखना को आदर पूर्वक धारण कर लिया । (भत्तपाणपडियाइक्खिए) भक्तपान का प्रत्याख्यान कर दिया (पाओवगय कालं अणवकंखमाणे विहरइ) पादपोपगमन संथारे में स्थिर बन गये और मरणाशंसा और जीविताशंसा से बिलकुल रहित हो गये ।

(तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता) इस प्रकार उन

ने इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव मा फुसंतु त्ति कट्टु एयं पि णं चरमेहिं उस्सास नीसासेहिं वोसिरामि) આ મારૂ શરીર કે જે પહેલાં મને ઈષ્ટ હતુ કાન્ત હતુ પ્રિય હતુ અને કોઈ પ્રકારના પરીષહ અને ઉપસર્ગ તેને પીડા પહોંચાડી ન શકે એવી ભાવનાથી હું જે શરીરની રક્ષા કરતો હતો હવે ચરમ ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસો લેતી વખતે છોડું છું મરણ કાળે તેનો પણ હું ત્યાગ કરૂ છું (ત્તિ કટ્ટુ) આ પ્રમાણે વિચાર કરીને સ્કન્દક અણગારે (સંલેહણા ઝૂસણા ઝૂસિએ) કાયા અને કષાયોને કૃશ કરનારી સંલેખના (સંથારો) આદરપૂર્વક ધારણ કરી. (ભત્તપાણપડિયાઇક્ખિએ) અન્નપાન આદિ પ્રકારના આહારના પ્રત્યાખ્યાન કર્યા (પાઓવગય કાલં અણવકંખમાણે વિહરઇ) પાદપોપગમન સંથારામા સ્થિર થઈ ગયા અને મરણની આકાંક્ષા કે જીવનની આકાંક્ષાથી રહિત બની ગયા (तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता) આ રીતે તે સ્કન્દક અણગારે શ્રમણ ભગવન્ મહાવીરના જેના

प्राणातिपातः प्रत्याख्यातः यावज्जीवं यावन्मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यातं यावज्जीवम् इदानीमपिच श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके सर्वं प्राणातिपातं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् यावन् मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् एवं सर्वमशनपानखादिमस्वादिमं चतुर्विधमप्याहारं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् यदपि च खल्विदं शरीरम् इष्टं कान्तं प्रियं यावत् मा स्पृशन्तु इति कृत्वा एतदपि चर-

---

कहा- (पुव्विंपि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए जावज्जीवाए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खाए) मैं पहिले भी श्रमण भगवान् महावीर के समीप यावज्जीव-जीवनपर्यन्त समस्त प्राणातिपात का प्रत्याख्यान कर चुका हूं, (जाव) यावत् (मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) मृषावाद से लेकर मिथ्यादर्शन शल्यतक का भी जीवनपर्यन्त प्रत्याख्यान कर चुका हूं (इयाणिं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खामि) अब भी मैं श्रमण भगवन्त महावीर के समीप समस्त प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता हूं (जावज्जीवाए) जीवन पर्यन्त और (जावज्जीवाए) जीवनपर्यन्त ही (जाव) यावत्-मृषावाद से लेकर (मिच्छा दंसण सल्लं पच्चक्खामि) मिथ्यादर्शन शल्यतक का प्रत्याख्यान करता हूं (एवं सव्वं असणं-पाण-खाइमं-साइम चउव्विहं पि आहारं जावज्जीवाए पच्चक्खामि) इसी प्रकार से समस्त अशन, पान खाद्य जो चार प्रकार का आहार है उसका भी जीवन पर्यन्त प्रत्याख्यान करता

भगवओ महावीरस्स अंतिए जावज्जीवाए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खाए) મે પહેલા પણ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની સમક્ષ જીવનપર્યન્ત સમસ્ત પ્રાણાતિપાતના પ્રત્યાખ્યાન કરેલાં છે (जाव मिच्छादसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) મિથ્યાવાદથી લઇને મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યન્તના પણ જીવનપર્યન્તના મેં પ્રત્યાખ્યાન કરેલાં છે. (इयाणिं पि य ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खामि) અત્યારે પણ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની સમક્ષ સમસ્ત પ્રાણાતિપાતના પ્રત્યાખ્યાન કરૂં છુ -(जावज्जीवाए) જીવનપર્યન્ત તે પ્રત્યાખ્યાન કરૂ છું. (जावज्जीवाए जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि) મૃષા વાદથી લઇને મિથ્યા દર્શન શલ્ય પર્યન્તના જીવન પર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરૂંછુ (एव सव्व असण-पाणं-खाइमं-साइयं चउव्विहंपि आहारं जावज्जीवाए पच्चक्खामि) એજ પ્રમાણે સમસ્ત અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્ય, એ ચારે પ્રકારના આહારનુ પણ જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરૂં છુ (जं पि य

विसर्पद् हृदयः इत्यन्तपदजातस्य ग्रहणं भवति "उट्ठाए उट्ठेइ" उत्थया उत्थि
" उट्ठित्ता " उत्थाय " समणं भगवम् महावीरम् " श्रमण भगवन्तं म
" तिक्खुत्तो " त्रिकृत्व त्रिवारम् "आयाहिणपयाहिणं करेइ " आदक्षिणप्र
करोति ' कत्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता" कृत्वा वंदते नमस्यति वन्दि
नमस्थित्वा "सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवेइ" स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोपय
स्वीकरोति आरोवित्ता आरोप्य "समणाय समणीओय खामेइ" श्रमणांश्च श्रम
क्षमयति 'खामित्ता' क्षमयित्वा तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं तथारूपैः स्थ
कृतादिभिः सार्द्धम् विउलं' विपुलम् 'पव्वयं' पर्वतम् 'सणिय सणिय' शनैः श
'दुरुहेइ' दूरोहति विपुलगिरिनामक पर्वत कृतादिस्थविरै सह मन्दगत्या स
रोहति इत्यर्थ 'मेहघणसन्निगासं' मेघघनसन्निकाशम् घनमेघसदृशं कृष्णवर्णम् 'से

मर गया ' तब वे उसी समय 'उट्ठाए उट्ठेइ ' अपनी ही उत्थान शक्ति
से उठे और 'उट्ठित्ता ' उठकर उन्हों ने 'समण भगवं महावीर तिक्खुत्
आयाहिणपयाहिण करइ ' श्री श्रमण भगवान् महावीर प्रभु को तीन
बार प्रदक्षिणा पूर्वक ' वंदइ नमंसइ ' वंदना की नमस्कार किया
' वंदित्ता नमंसित्ता ' वंदना नमस्कार कर ' सयमेव पंचमहव्वयाइं
आरोवेइ ' अपने आप ही उन्हों ने पांच महाव्रतों को स्वीकार कर
लिया। ' आरोवित्ता ' पांच महाव्रतों को स्वीकार करने के बाद फिर
उन्हों ने ' समणा य समणीओ य खामेइ ' श्रमण और श्रमणीयों से
क्षमतक्षामणा किया। ' खामित्ता ' क्षमतक्षामणा करके फिर वे
' तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ '
विपुलाचल पर्वत पर उन तथारूप कडाई-स्थविरों के साथ

બોલ્યા ' उट्ठाए उट्ठेइ " તેમણે તેમની ઉત્થાનશક્તિથી ઉઠ્યા, અને
" उट्ठित्ता " ઉઠીને ' समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ "
તેમણે ત્રણ વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને " वंदइ नमंसइ "
વંદણા નમસ્કાર કર્યા वंदित्ता नमंसित्ता " વંદણા નમસ્કાર કર્યાને " सयमेव
पंचमहव्वयाइं आरोवेइ " પોતાની મેતે જ તેમણે પાંચ મહાવ્રતોનો સ્વીકાર
કર્યો ' आरोवित्ता " પાંચ મહાવ્રતોનો સ્વીકાર કરીને તેમણે ' समणा य
समणीओ य खामेइ ' શ્રમણ અને શ્રમણિયોની (સાધુ સાધ્વીને) ખમતખા
મણા કર્યા ' खामित्ता ' ખમતખામણા કરીને ' तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं
सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ " એ સ્થવિરો સહિતના (સંઘાડા)
ની વિધિ કરાવવામાં કુશળ હોય એવા સ્થવિરોને સાથે લઈને ધીમે ધીમે

पर्यायं पालयित्वा मासिक्या संलेखनयाऽऽत्मानं जोषयित्वा षष्टिभक्तानि अनशनेन छित्त्वा आलोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः आनुपूर्व्या कालं गतः॥सू० १६॥

टीका—" तएणं से खंदए अणगारे " ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः " समणेणं भगवया महावीरेणं " श्रमणेन भगवता महावीरेण " अब्भणुण्णाए समाणे " अभ्यनुज्ञातः सन् " हट्ठतुट्ठे जाव हियए " हृष्टतुष्ट यावद् हृदय इह यावत् पदेन हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतमनाः परमसौमनस्यितः हर्षवश

स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर के तथारूप स्थविरों के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अच्छी तरह से अध्ययन करके' पूरे बारह वर्षतक श्रामण्य पर्याय का पालन करके (मासियाए संलेहणाए) एक मास की संलेखना से (अत्ताणं झूसित्ता) अपने आप को युक्त कर के'(सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता) साठ भक्तों का अनशन द्वारा छेदन करके' (आलोइयपडिक्कंते) एवं आलोचना तथा प्रतिक्रमण करके (समाहित्ते) समाधि प्राप्तकर (आणुपुव्वीए कालधम्मगए) क्रमशःकाल-धर्म को (मरणको) प्राप्त किया ॥ सू० १६ ॥

टीकार्थ—(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे) इसके बाद अर्थात् संथारा करनेकी आज्ञाजब स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर प्रभु से प्राप्त करली तब वे स्कन्दक अनगार भगवान् की उस आज्ञा की प्राप्ति सेअपने आप बहुत ही अधिक हर्षित हुए' उन्हें चित्त में इतना अधिक संतोष प्राप्त हुआ कि कुछ कहा नहीं जा सकता उनका हृदय आनंदोल्लास से अत्यन्त

સ્થવિરોની પાસે સામાયિક આદિ અગિયાર અંગોનું સારી રીતે અધ્યયન કર્યું અને પૂરાં બાર વર્ષ સુધી શ્રમણ પર્યાયનુ પાલન કરીને (मासियाए संलेहणाए) એક માસના સંથારાથી (अत्ताणं झूसित्ता) પોતાને યુક્ત કરીને (सट्ठिं भत्ताइ अणसणाए छेदेत्ता) સાઠ ભક્તોનુ અનશન દ્વારા છેદન કરીને–એટલે કે ૨૯ ઉપવાસો પૂરા કરીને (आलोइयपडिक्कंते) આલોચના તથા પ્રતિક્રમણ કરીને (समाहिपत्ते) સમાધિ પ્રાપ્ત કરીને (आणुपुव्वीए कालधम्मगए) ક્રમશઃ કાળ-ધર્મ પામ્યા–મરણ પામ્યા ॥ સૂ–૧૬ ॥

ટીકાર્થ—" तएण से खंदए अणगारे समणेण भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे " જ્યારે સ્કન્દક અણગારને શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે સંથારો કરવાની અનુજ્ઞા આપી ત્યારે તેમને મનમા ઘણો જ હર્ષ થયો, તેમના ચિત્તમાં અવર્ણનીય સંતોષ થયો, અને તેમનુ હૃદય આનંદોલ્લાસથી પરિપૂર્ણ થઇ ગયુ'

पस्यासौ शिरस्यावर्तं तम् शिरसि परिभ्रमणयुक्तम् " मत्थए अंजलिं कट्टु " मस्तके अञ्जलिं कृत्वा पूर्वोक्तप्रकारेणाञ्जलिं मस्तके कृत्वेत्यर्थः एवं वयासी " एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् उक्तवान् । किमुक्तवान् तत्राह " नमोत्थुणं " इत्यादि । " नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं " नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो भगवद्भ्यो यावत्सम्प्राप्तेभ्यः सिद्धिगतिनामकस्थानं गतेभ्यो यावत्पदेन " नमोत्थुण " इत्यस्य सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः " नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स " नमोऽस्तु खलु श्रमणाय भगवते महावीराय 'जाव संपाविउकामस्स' यावत् सम्प्राप्तुकामाय सिद्धिगतिनामधेयस्थानं प्राप्तये प्रवर्त्तमानाय " वंदामि णं भगवंत तत्थगयं इहगए " वन्दे खलु भगवन्तं तत्रगतं समवसरणेस्थितमिहगतः सन्नित्यर्थः " पासउ मे भगवं तत्थगये इहगयं " पश्यतु मां भग-

---

के रूप में आवे कि जिससे दशों ही नख आपस में एक दूसरे नखों के साथ मिल जावे-फिर उस अंजलि को उन्हों ने मस्तक के पास से दक्षिण की ओर से लेकर तीन बार घुमाया, घुमाकर फिर उन्हों ने उस अंजलि को अपने मस्तक-ललाट के पास रखा-और इस प्रकार से उच्चारण किया-उन्होंने क्या कहा सो कहा जाता है—(नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं) यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए अर्हन्त भगवंतों को मेरा नमस्कार हो । (नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर को मेरा नमस्कार हो । (जाव संपाविउकामस्स) क्यों कि वे यावत् सिद्धिगति नामक स्थान की प्राप्ति करने वाले हैं । (वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए) यहां पर रहा हुआ मैं समवसरणमें स्थित उन श्रीअमण भगवान महावीरप्रभु को वन्दना करता हूं (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं)

ત્યાર પછી તેમણે પોતાના અંજલિબદ્ધ હસ્તોને મસ્તકની પાસેથી જમણી બાજુથી શરૂ કરીને વધુમાં વધુ ત્રણ વાર ઘુમાવ્યા અને ત્યાર બાદ મસ્તક (લલાટ) ની પાસે અંજલિ રાખીને આ પ્રમાણે બોલ્યા-" नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं ' सिद्धि गति नामना स्थानमा विराजमान अर्हंत भगवंतोने मारा नमस्कार हो। ' नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स ' श्रमण भगवान महावीरने मारां नमस्कार हो। ' जाव संपाविउकामस्स ' भगवान महावीरने नमस्कार शा माटे करे छे ? तेओ सिद्धिगति प्राप्त करवानो होवाथी तेमने नमस्कार करे छे ' वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए ' आ स्थाने रहेलो हुं समोसरणमा विराजमान श्री श्रमण भगवान महावीरप्रभुने वंदणा करूं छु (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं) समोसरणमां

संनिवायं' देवसन्निपातं देवागमनस्थानं रमणीयत्वात् 'पुढवीसिलापट्टयं 'पृथिवीशिलापट्टकम् "पडिलेहेइ" प्रतिलेखयति "पडिलेहित्ता" प्रतिलेख्य प्रतिलेखनं कृत्वा 'उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ' उच्चारप्रस्रवणभूमिं प्रतिलेखयति "पडिलेहित्ता" प्रतिलेख्य" दब्भसंथारगं संथरइ" दर्भसंस्तारकं संस्तृणोति "संथरित्ता" संस्तीर्य 'पुरत्थाभिमुहे" पोरस्त्याभिमुखः पूर्वाभिमुखः " संपलियंकनिसन्ने " संपल्यंक निषण्णः पल्यङ्कासनेनोपविष्टः " करयलपरिग्गहियं " करतलपरिगृहीतम् करतलाभ्यां परिगृहीतम् " दसनहं " दशनखम संयोजितहस्तद्वयस्य दशनखं भवति " सिरसावत्तं " शिरस्यावर्त्तम् । शिरसि आवर्त्तः दक्षिणावर्त्तेनावर्तनं परिभ्रमणं

मन्दगती से यतनापूर्वक चढे कि जो कडाइ स्थविर सलेखना की विधि संपादन कराने में कुशलमति थे । वहां जाकर उन्हों ने 'मेहघणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ' काले मेघ के जैसे वर्णवाले-काले पृथवी शिला पट्ट की जिसकी सुन्दरता से आकृष्ट होकर जिस पर देव आते रहते थे प्रतिलेखना की । (पडिलेहित्ता (उसकी प्रतिलेखना करने के बाद फिर उन्हों ने (उच्चार पासवणभूमिं पडिलेहेइ) उच्चार प्रस्रवण योग्य भूमि की प्रतिलेखना की । (पडिलेहित्ता) इस तरह जब उनका प्रतिलेखना का कार्य समाप्त हो चुका-तब उसके बाद उन्होंने (दब्भसंथारगं संथरइ) दर्भ का संथारा बिछाया (संथारित्ता) बिछाकर फिर वे उस पर (पुरत्थाभिमुहे) पूर्वदिशा की ओर मुँह करके (संपलियंकनिसन्ने) पद्मासन से बैठ गये । बैठकर (करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एव वयासी) उन्हों ने अपने दोनो हाथों को इस प्रकार से अंजलि

યતનાપૂર્વક, તેમણે વિપુલાચલ પર્વત પર આરોહણ કર્યું ત્યાં જઈને " मेहघणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ " કાળા મેઘના જેવા શ્યામ વર્ણવાળા, અને જેની સુંદરતાને કારણે દેવો પણ આકર્ષાઈને ત્યાં આવતાં હતા એવા પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની તેમણે પ્રતિલેખના કરી " पडिलेहित्ता " તેની પ્રતિલેખના કરીને " उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ " ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણને યોગ્ય ભૂમિની પ્રતિલેખના કરી " पडिलेहित्ता " તેની પ્રતિલેખના કરીને ' दब्भसंथारगं संथरइ " દર્ભનો સંથારો બિછાવ્યો " संथारित्ता " સંથારો બિછાવીને તેના પર " पुरत्थाभिमुहे " પૂર્વ દિશા તરફ મુખ કરીને " संपलियंक निसन्ने" પદ્માસન કરીને બેસી ગયા એ આસને બેસીને "करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एव वयासी " તેમણે તેમના બને હાથ એવી રીતે જોડ્યા કે એક-હાથના નખ બીજા હાથના નખના સ્પર્શ કરે

प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् " जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि" यावत् मिथ्या दर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि " एवं सव्वं असणपाणखाइमसाइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए " एवं सर्वमशनपानखादिमं चतुर्विधमप्याहारं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् " जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंत पिय जाव फुसंतु " यदपि च खलु इदं शरीरमिष्टं कान्तं प्रियं यावत् स्पृशन्तु, इह यावत्पदेन "मणुन्नं" मनोज्ञम् इत्यारभ्य 'परीसहोवसग्गा' परीषहोपसर्गाः, इत्यन्तानां पदानां ग्रहणं कर्तव्यम् 'फुसंतु' इति मा स्पृशन्तु इति सम्बन्धः, 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा=इति विचार्य मयत्नेन परिपोषितम् " एयं पि य ' एतदपि खलु शरीरमपि "चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं ' चरमैरन्तिमैः उच्छ्वास-निःश्वासैः "वोसिरामि" व्युत्सृजामि

भी मैं उन्हीं श्रमण भगवान महावीर की साक्षी पूर्वक समस्त प्राणातिपात का यावज्जीव-जब तक जीवन है तब तक-परित्याग करता हूँ (जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि) यावत्-मृषावाद से लेकर मिथ्या दर्शन शल्य तक के अठारह पापों का भी परित्याग करता हूं। (एवं) इसी तरह से सब्ब असणं, पाणं, खाइम साइम चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए) समस्त अशन का, पान का, खादिम, और स्वादिम इन चारों प्रकार के आहार का जीवन पर्यन्त के लिये त्याग करता हूं। तथा-'जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंत पियं जाव फुसंतु' जो यह मेरा शरीर है कि जिसे मैंने परम इष्ट 'कान्त' प्रिय आदि रूप में मान रक्खा था तथा इसे किसी भी परीषह आदि का स्पर्श न हो इस विचार से जिसे मैंने परिपालित किया था सो 'एयं पि य णं चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं' अब इस शरीर को भी मैं चरम उच्छ्वास नि:

પરંતુ સાક્ષીએ હું સમસ્ત પ્રાણાતિપાતનો જીવનપર્યન્ત ત્યાગ કરું છું 'जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि" મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યન્ત અઢાર પાપસ્થાનોનો પણ જીવનપર્યંત પરિત્યાગ કરું છું "एवं" આ રીતે 'सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए' સમસ્ત અશન પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્ય એ ચારે પ્રકારના આહારનો જીવનપર્યન્ત ત્યાગ કરું છું તથા "जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव फुसंतु" આ આ શરીર કે જેને મેં પરમેષ્ટ ઇષ્ટ કાન્ત પ્રિય આદિ રૂપ માનેલું છે અને તેને કોઈ પણ પ્રકારની પીડા સહન કરવી ન પડે તે માટે હું પ્રયત્ન રાખતો રહ્યો અને તે પ્રકારે તેનું પરિપાલન કરતો રહ્યો એ શરીરનો પણ "एयं पि य णं चरमेहिं उस्सास निस्सासेहिं' અમે ઉચ્છ્વ

वान् तत्र गत इह गतम् ज्ञानदृष्ट्या " त्ति कट्टु " इति कृत्वा ' वंदइ नमंसइ " वन्दते नमस्यति " वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " वन्दित्वा नमस्थित्वा एवम वादीत् " पुव्विं पि मए " पूर्वमपि मया " समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए" श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके = समीपे " सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीयाए " सर्वः प्राणातिपातः प्रत्याख्यातो यावज्जीवम् " जावमिच्छादंसण-सल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए " यावत् मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यातं यावज्जीवम् । अत्र यावत्पदेन ' मुसावाए पच्चक्खाए " इत्यारभ्य " मायामोसा पच्चक्खाए" इत्यन्तानां अष्टादशानां पापानां ग्रहणं कार्यम् ' इयाणिं पियणं " इदानीमपि च खलु " समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए श्रमणस्य भगवतो महावीर स्यान्तिके " सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए " सर्वं प्राणातिपातं

समवसरण में स्थित हुए वे भगवान् अपनी ज्ञानदृष्टिद्वारा यहां रहे हुए मुझे देखें । (त्तिकट्टु) ऐसा कहकर उन स्कन्दक अनगार ने (वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वहां से वंदना की उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने (एवं वयासी) इस प्रकार से कहा-(पुव्विं पि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए) मैंने पहिले भी श्रमण भगवान महावीर के समीप (सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए) समस्त प्राणातिपातों का जीवन पर्यन्त त्याग कर दिया था (जाव मिच्छा दंसण सल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) यावत् मृषावाद से लेकर मिथ्यादर्शन शल्य तक के अठारह पापों का भी जीवन पर्यन्त त्याग कर दिया था । (इयाणिं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए) अब इस समय

વિરાજતા ભગવાન મહાવીર તેમની જ્ઞાનદૃષ્ટિ દ્વારા અહીં રહેલા મને જોવે " त्ति कट्टु " એ પ્રમાણે કહીને તે સ્કન્દક અણગારે " वंदइ नमंसइ " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને ત્યાંથી જ વંદણા નમસ્કાર કર્યા " वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " વંદણા નમસ્કાર કરીને આ પ્રમાણે બોલ્યા " पुव्विं पि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए " મે પહેલા ભગવાન મહાવીરની સમક્ષ " सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए " સમસ્ત પ્રાણાતિપાતોનો જીવન પર્યન્ત ત્યાગ કર્યો હતો " जाव मिच्छादसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए " તથા મૃષાવાદથી લઇને મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યન્તના અઢારે પાપોનો મે જીવનપર્યન્ત ત્યાગ કર્યો હતો " इयाणिं पि य ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए " અત્યારે પણ ભગવાન મહા-

विनया " एकारसाइं अंगाइं " एकादशाङ्गानि " बहुपडिपुण्णाइं " बहुप्रतिपूर्णानि " दुवालसवासाइं " द्वादशवर्षाणि " सामण्णपरियागं पाउणित्ता " श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा " मासियाए संलेहणाए " मासिक्या संलेखनया " अत्ताणं झूसित्ता ' आत्मानं जोषयित्वा " सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता " षष्टिं भक्तानि अनशनेन छित्वा " आलोइय पडिक्कन्ते " आलोचितप्रतिक्रान्तः=आलोचितं गुरवे निवेदितं यदतिचारजातं तत्प्रतिक्रान्तम्=अकरणतयोपपादितं येनासौ आलोचितप्रतिक्रान्तः अथवा आलोचितश्चासौ आलोचनापापस्यालोचनादरणात् प्रतिक्रान्तश्चमिथ्यादुष्कृतदानात्। इति आलोचितप्रतिक्रान्तः । " समाहिपत्ते " समाधिप्राप्तः शान्तचित्त "आणुपुव्वीए" आनुपूर्व्या=क्रमेण 'कालगए' कालगतः मरणं प्राप्तः ॥१६॥

भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) तथा रूपवाले स्थविरों के समीप (सामाइयमाइयाइं) सामायिक आदि (एक्कारस अंगाइं) ग्यारह अंगों का (अहिज्जित्ता) अच्छी तरह से अध्ययन करके (बहुपडिपुण्णाइं) ठीक (दुवालसवासाइं) बारह वर्षतक (सामण्णपरियागं पाउणित्ता) श्रामण्यपर्याय का पालन किया-उसे पालन करके (मासियाए संलेहणाए) एक मास की संलेखना द्वारा उन्हों ने 'अत्ताणं झूसित्ता' अपनी आत्मा को युक्त करते हुए अर्थात्-लगातार एक महिने तक संलेखना का पालन करते हुए 'सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता' अनशन द्वारा साठ भक्तों का छेदन करके 'आलोइयपडिक्कन्ते' गुरु के समक्ष अपने अतिचारों का निवेदन करने से, उनसे फिर नहीं करने के कारण प्रतिक्रान्त बन अथवा अपने पापों के प्रकाशन द्वारा गृहीत मिथ्या दुष्कृत से आलोचित होकर प्रतिक्रान्त बन 'समाहिपत्ते' शान्त चित्त होकर 'आणुपुव्वीए' क्रमशः 'कालगए' कालधर्म को प्राप्त किया ॥सू० १६॥

भगवान महावीरना ते प्रसिद्ध स्थविरो पासे "सामाइयमाइयाइं" आभाविक आदि "एक्कारसअंगाइं" अगियार अंगोनु "अहिज्जित्ता" आगी रीते अध्ययन करीने "बहुपडिपुण्णाइं" पूरा "दुवालसवासाइं" बार वर्ष सुधी "सामण्णपरियागं पाउणित्ता" श्रमण्य पर्यायनुं पालन करयु तेनु पालन करीने "मासियाए संलेहणाए" एक मासना संलेखनाथी "अत्ताणं झूसित्ता" पोतानी जातने युक्त करीने—"सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता" अनशन द्वारा साठ भक्तोनु छेदन करीने (६० उपवास पूरा करीने) "आलोइय पडिक्कन्ते" गुरुनी समक्ष पोताना अतिचारो (दोषो) नु निवेदन करीने अने ते रीते तेनी आलोचना द्वारा प्रतिक्रान्त बनीने "समाहिपत्ते" शान्त चित्ते "आणुपुव्वीए" क्रमशः "काल गए" कालधर्म पाम्या ॥ सू० १६ ॥

=परित्यजामि शरीरविषयं मोहमपि परित्यजामीति भावः "त्तिकट्टु" इति कृत्वा=इति परिचिन्त्य "संलेहणा झूसणा झूसिए" संलेखना जोषणा जुष्टः भत्तपाणपडियाइक्खिए" भक्तपानप्रत्याख्यातः=प्रत्याख्यातभक्तपानः "पाओवगए" पादपोपगतः पादपोपगमननामकं संस्तारकं संप्राप्तः "कालं अणवकंखमाणे विहरइ" कालं मृत्युम् अनवकांक्षन् अनिच्छन् विहरति तिष्ठतीति। "तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "समणस्स भगवओ महावीरस्स" श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य "तहारूवाणं थेराणमंतिए" तथारूपाणां स्थविराणामंतिके "सामाइयमाइयाइं" सामायिकादीनि "एक्कारसअंगाइ अहि-

---

श्वास तक छोड़ता हूं। अर्थात् मैं शरीरविषयक मोह का भी परित्याग करताहूं। 'त्तिकट्टु' इसप्रकार मन में विचार कर 'संलेहणा झूसणा झूसिए' काय और कषाय की कृश करनेवाली संलेखना को स्वीकार किया 'भत्तपाणपडियाइक्खिए' उन स्कन्दक अनगार ने भक्त पान का प्रत्याख्यान कर दियाऔर 'पाओवगए' पादपोपगमन नामक संथारे में स्थित हो गये। उस स्थिति में उन्हों ने 'कालं अणवकंखमाणे विहरइ' अपने मरण की चाहना नहीं की, तात्पर्य कहने का यह है कि संलेखना में स्थित हुआ मुनि यदि अपने मरण की या जीवन की आशंका करता है-तो उसमें उसको अतिचार का पात्र होना पड़ता है। इसलिये यहां कहा गया है कि स्कन्दक अनगार ने पादपोपगमन संथारा धारण कर अपने मरण की आकांक्षा नहीं की अर्थात्-वह पादपोपगमन संथारा उनका बिलकुल निरतिचार था। (तएणं से खंदए अणगारे) इस तरह उन स्कन्दक अनगार ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण

વાસ નિશ્વાસ પર્યન્ત ત્યાગ કરૂં છું-એટલે કે એ શરીરનો મોહ પણ છોડું છું. "त्तिकट्टु" મનમાં એવો વિચાર કરીને "संलेहणा झूसणा झूसिए" કાયા અને કષાયોને ક્ષીણ કરનાર સંથારો કર્યો. "भत्तपाणपडियाइक्खिए" તેમણે ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કર્યો "पाओवगए" પાદપોપગમન નામનો સંથારો કર્યો એ સ્થિતિમા તેમણે "काल अणवकंखमाणं विहरइ" પોતાના મરણની પણ આકાક્ષા રાખી નહીં. કારણ કે સંથારો કરનાર મુનિ જો પોતાના મરણની કે જીવનની આકાંક્ષા રાખે તો તેને અતિચાર દોષ લાગે છે. તેથી જ અહી કહ્યુ છે કે સ્કન્દક અણગારે પાદપોપગમન સંથારો કરીને પોતાના મરણની આકાક્ષા કરી નહી. એ રીતે તેમનો પાદપોપગમન સંથારો અતિચાર દોષથી રહિત હતો "तएण से खंदए अणगारे" આ રીતે તે સ્કન્દક અણગારે "समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए

बावीस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता से णं भंते खंदए देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ गोयमा महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणं अंतं करोहिइ ॥ सू०१७ ॥

॥ तिनियसयस्स पढमो उद्देसो समत्तो ॥ २ ॥

छाया—ततः खलु स स्थविरा भगवन्तः स्कन्दकमनगारं कालगतं जानित्वा परिनिर्वाणप्रत्ययिकं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति कृत्वा पात्रकाणि गृह्णन्ति गृहीत्वा विपुलात् पर्वतात् शनैः शनैः प्रत्यवरोहन्ति प्रत्यवरुह्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दन्ते नमस्यन्ति वन्दित्वा

'तएणं से' इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इस के बाद (ते थेरा भगवंतो) उन स्थविर भगवंतों ने (खंदए अणगारं) स्कन्दक अनगार को (कालगयं जाणित्ता) कालगत जान कर (परिनिव्वाणवत्तियं काउस्सग्गं करेंति) उनके परिनिर्वाण निमित्त कायोत्सर्ग किया (करित्ता पत्तगाणि गिण्हंति) कायोत्सर्ग करके फिर उन्हों ने पात्र और कीमती वस्त्रों को लिया (गिण्हित्ता) लेकर फिर वे (विउलाओ पव्वयाओ) उस विपुल पर्वत से (सणियं सणियं) धीरे २-ईर्यापथको धन करते हुए शनैः शनैः से (पच्चोरुहंति) नीचे उतरे। (पच्चोरुहित्ता) नीचे उतर कर (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति)

" तएणं से " इत्यादि ।

सूत्रार्थ— (तएणं) त्यार बाद (ते थेरा भगवंतो) ते स्थविर भगवंतोओ अंदगु ने (खंदए अणगारं) स्कन्दक अनगार (कालगयं जाणित्ता) कालगत थयेला छे ते जाणीने (परिनिव्वाणवत्तियं काउस्सग्गं करेंति) तेमना परिनिर्वाण निमित्ते कायोत्सर्ग करी (करित्ता पत्तगाणि गिण्हंति) कायो त्सर्ग करीने तेमणे तेमना पात्र अने वस्त्रो लीधां (गिण्हित्ता) ते लईने तेओ (विउलाओ पव्वयाओ) विपुलाचल पर्वत उपरथी (सणियं सणियं) धीरे धीरे (पच्चोरुहंति) नीचे उतरी (पच्चोरुहित्ता) नीचे उतरीने (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति) जयां श्रमण भगवान महावीर

मूलम्–तएणं ते थेरा भगवंतो खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति करित्ता पत्तचीवराइं गिण्हंति गिण्हित्ता विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी, एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगइ भद्दए पगइ विणीए पगइ उवसंते पगइ पयणु कोहमाणमायालोभे मिउमद्दवसंपन्ने अल्लीणे भद्दए विणीए से णं देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता समणाय समणीओय खामेत्ता, अम्हेहिं सद्धिं विउलं पव्वयं तं चेव निरवसेसं जाव अणुपुव्वीए कालंगए इमेयसे आयारभंडए भंते, त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी एवं खलु गोयमा मम अंतेवासी खंदए णामं अणगारे पगइभद्दए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं तं चेव सव्वं अवसेसिअं नेयव्वं जाव आलोइअपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता तस्स णं खंदयस्स वि देवस्स

तदेव निरवशेषं यावदानुपूर्व्या कालं गतः इदञ्च तस्याचारभाण्डकम् । भदंत इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्थित्वा एवमवादीत्-एष खलु देवानुप्रियाणामन्तेवासी स्कन्दको नागानगार कालमासे कालं कृत्वा कुत्र गत कुपपन्नः गौतम इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्त गौतमं एवमवादीत् एष खलु गौतम ! ममान्तेवासी स्कन्दको नामानगारः प्रकृतिभद्रक

(तिउत्त पयाहिणं तं चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए काल गए) त्रिपुत पर्वतपर गये थे-(यहां सब अवशिष्ट कथन जैसा पहिले लिखा आनुपूर्वी से समझ लेना चाहिये) अब ये स्कन्दक अनगार क्रमशः कालधर्म को प्राप्त हो चुके हैं (इमेय से आयारभंडए) ये उनके आचारभाण्डक -उपकरण हैं। इतने में (अंतेवासि भगव गोयमे समणं भगव महावीर वंदइ नमंसइ) हे भदन्त! ऐसा कहकर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार कर (एवं वयासी) फिर प्रभु से उन्हों ने इस प्रकार पूछा। (एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए णाम अणगारे कालमासे काल किच्चा कहिंगए, कहिं उववन्ने) हे भदन्त! आप देवानुप्रिय के शिष्य स्कन्दक नामके अनगार काल अवसर में काल करके कहां गये हैं? कहां उत्पन्न हुए हैं? (गोयमा) हे गौतम! इस प्रकार संबोधित करके (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर ने (भगवं गोयमं एवं वयासी) भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा

(अन्नेहिं बहूहिं) अभारी साथे (तिउत्त पव्वय त चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए काल गए) विपुलाचल पर्वत पर गया हता (अहीं सघलु अवशिष्ट वर्णन आगळ कह्या प्रमाणे समजवु) ते स्कन्दक अणगार क्रमशः कालधर्म पाम्या छे (इमे य से आयारभंडए) आ तेमना पात्र वस्त्र आदि उपकरणो छे त्यारे (अंते वासि भगव गोयमे समणं भगव महावीर वंदइ नमंसइ) भगवान गौतमे श्रमण भगवान महावीर ने "हे भदन्त!" एवु संबोधन करीने वंदना नमस्कार कर्या. (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करीने तेमणे महावीर प्रभुने आ प्रमाणे प्रश्न पूछ्यो. (एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए णामं अणगारे कालमासे काल किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने?) हे भदन्त! आप देवानुप्रियना शिष्य स्कंदक नामना अणगार काळ अवसरे काळधर्म पामीने क्यां गया छे? क्यां उत्पन्न थया छे? (गोयमा!) हे गौतम!" एवु संबोधन करीने (समणे भगव महावीरे) श्रमण भगवान महावीरे (भगव गोयम एव

नमस्थित्वा एवमादिषुः । एवं खलु देवानुप्रियाणामन्तेवासी स्कन्दको नामागारः प्रकृतिभद्रकः प्रकृतिविनीतः प्रकृत्युपशान्तः प्रकृति प्रतनु क्रोधमानमायालोभो मृदुमार्दवसंपन्न आलीनो भद्रको विनीतः स खलु देवानुप्रियैरभ्यनुज्ञातः सन् स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा अस्माभिः सार्धं विपुलं पर्वतं

जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर वे आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) उन्हों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की-नमस्कार किया (वदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर (एवं वयासी) फिर वे इस प्रकार से कहने लगे-(एवं खलु देवाणुप्पियाण अंतेवासी खंदए णामं अणगारे पगइभद्दए पगइविणीए ' पगइउवसंते ' पगइपयणुकोहमाणमायालोभे) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के शिष्य स्कन्दक नाम के अनगार कि जो प्रकृति से विनीत थे ' प्रकृति से उपशान्त थे ' प्राकृति से प्रतनु क्रोध मान, माया और लोभ वाले थे (मिउमद्दवसंपन्ने) प्रकृति से अत्यन्त निरभिमानी थे (अल्लीणे भद्दए विणीए) तथा तप संयम आदि अनुष्ठानों के करने में जो सदा तत्पर रहते थे ' भद्रक थे ' और विनीत थे (से णं देवाणुप्पिएणं अब्भणुण्णाए समाणे) वे आप देवानुप्रिय से आज्ञा प्राप्त कर (सयमेव पंच महव्वयाइं अरोवित्ता) अपने आप पांच महाव्रतों को आरोपितकरके (समणा य समणीओ खामेत्ता) तथा श्रमण और श्रमणियांसे (क्षमापना) खमतखामणा करके (अम्हेहिं सद्धिं) हमलोगोंके साथ

વિરાજતા હતા ત્યાં આવ્યા (उवागच्छित्ता) ત્યાં આવીને (समण भगवं महावीर वदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કર્યા (वदित्ता नमंसित्ता)વંદણા નમસ્કાર કરીને (एव वयासी) આ પ્રમાણે કહ્યું— (एवं खलु देवाणुप्पियाण अंतेवासी खंदए णाम अणगारे पगइ भद्दए, पगइ विणीए, पगइ उवसंते, पगइपयणुकोहमाणमायालोभे) હે ભદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિયના શિષ્ય, સ્કન્દક નામના અણગાર કે જે ભદ્ર, વિનીત અને ઉપશાન્ત પ્રકૃતિવાળા હતા જેનામાં સ્વાભાવિક રીતે જ ક્રોધ, માન, માયા અલ્પ પ્રમાણમા જ હતા, (मिउमद्दवसंपन्ने) જેઓ અત્યંત નિરભિમાની હતા, (अल्लीणे भद्दए विणीए) જેઓ તપ, સયમ આદિ અનુષ્ઠાનો કરવા માટે સદા તત્પર રહેતા હતા, જેઓ ભદ્ર અને વિનીત પ્રકૃતિવાળા હતા, (से णं देवाणुप्पिएण अभणुन्नाए समाणे) તેઓ આપ દેવાનુપ્રિયની અનુજ્ઞા લઈ ને (सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता) પોતાની જાતે જ પાચ મહાવ્રતો અગીકાર કરીને (समणा य समणीओ खामेत्ता) સાધુ અને સાધ્વીઓને ખમાવીને

न्तरम् खलु च्युत्वा कुत्र गमिष्यति कुत्र उपपत्स्यते गौतम ! महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति भोत्स्यते मोक्ष्यते परिनिर्वास्यति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति ॥ सू० १७ ॥

टीका—"तएणं ते थेरा भगवंतो" ततः स्कन्दकस्य कालगमनानन्तरम् खलु ते स्थविरा भगवन्तः "खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता" स्कन्दकम् अनगारं कालगतं ज्ञात्वा "परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति" परिनिर्वाणप्रत्ययं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति । परिनिर्वाणं मरणं तस्य मरणे यत् शरीरस्य परिष्ठापनं तदपि परिनिर्वाणमेव तदेव प्रत्ययो हेतुर्यस्य स परिनिर्वाणप्रत्ययस्तम् परिनिर्वाणप्रत्ययम्

कहिं गच्छिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ) हे भदन्त ! वे स्कन्दक देव देव लोक से अपनी आयु के क्षय होने पर, भव के क्षय होने पर, स्थिति के क्षय होने पर च्यवकर कहां जावेंगे, कहां उत्पन्न होंगे ? (गोयमा) हे गौतम ! (महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाणं अंतं करेहिइ) वे स्कन्दक देव अच्युत देवलोक से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होंगे, बुद्ध होंगे मुक्त होंगे परिनिवृत होंगे और समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥ सू० १७ ॥

टीकार्थ—(तएणं ते थेरा) स्कन्दक के कालगत हो जाने के बाद उन स्थविर भगवन्तों ने (खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता) स्कन्दक अनगार को कालगत जानकर (परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति) परिनिर्वाणप्रत्ययवाला कायोत्सर्ग किया । परिनिर्वाण शब्द का अर्थ मरण है । इस मरण में जो शरीर का परिष्ठापन होता है वह भी परिनिर्वाण ही है । यह परिनिर्वाण जिसे कायोत्सर्ग करने में कारण होता है, वह

उववज्जिहिइ) હે ભદન્ત ! તે સ્કન્દકદેવ દેવલોકમાંથી તેમના આયુનો ક્ષય થતા, ભવનો ક્ષય થતા, સ્થિતિનો ક્ષય થતા ત્યાંથી ચ્યવિને કયાં જશે ? કયાં ઉત્પન્ન થશે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणं अंतं करेहिइ) તે સ્કન્દક દેવ અચ્યુત દેવલોકમાંથી ચ્યવીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સિદ્ધ થશે, બુદ્ધ થશે મુક્ત થશે, પરિનિવૃત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરનાર થશે ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

ટીકાર્થ—(तएणं ते थेरा खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता) તે સ્થવિરોએ જ્યારે ખરેખર જ સ્કન્દક અણગાર કાલધર્મ પામ્યા છે, ત્યારે તેમણે (परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति) પરિનિર્વાણ પ્રત્યયવાળો કાયોત્સર્ગ કર્યો પરિનિર્વાણ શબ્દનો અર્થ મરણ છે અને મરણમાં જે શરીરનું પરિષ્ઠાપન થાય છે તેનું નામ પણ પરિનિર્વાણ જ છે આ પરિનિર્વાણ જે કાયોત્સર્ગ કરવામાં કારણરૂપ

यावत् स खलु मयाभ्यनुज्ञातः सन् स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य तदेव सर्वमवशिष्टं नेतव्यं यावदालोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः कालमासे काल कृत्वा अच्युते कल्पे देवतयोत्पन्नः तत्रास्त्येकेषां देवानां द्वाविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । तस्य स्कन्दकस्यापि देवस्य द्वाविंशतिः सागरोपाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । स भदन्त ! स्कन्दको देवस्तस्मात् देवलोकादायुःक्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेणान-

---

-(एवं खलु गोयमा) हे गौतम ! (मम अंतेवासी खंदए णामं अणगारे पगइ भद्दए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं तं चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्वं जाव आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने) मेरा अंतेवासी स्कन्दक अनगार कि जो प्रकृति भद्र आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले थे यावत् वे मुझ से आज्ञा लेकर स्वयं पांच, महाव्रतों को अंगीकार करके यावत् आलोचित प्रतिक्रान्त होकर समाधि प्राप्त कर, काल अवसरमें कालकर अच्युत नामके बारहवें देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं । (तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) वहां पर कितनेक देवों की बाईस सागरोपम प्रमाण स्थिति कही गई है । (तस्स णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) वहां उस स्कन्दक देव की भी बाईस सागरोपम प्रमाण स्थिति है । (से णं भंते ! खंदए देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएण अणंतरं चयं चइत्ता

वयासी) ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું, (एव खलु गोयमा !) હે ગૌતમ ! (मम अंतेवासी खंदए णाम अणगारे पगइ भद्दए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं तं चेव सव्व अवसेसियं नेयव्व जाव आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने) મારા શિષ્ય સ્કન્દક અણગાર કે જેઓ પ્રકૃતિ ભદ્ર આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા હતાં, જેમણે મારી અનુજ્ઞા મેળવીને સ્વય પાચ મહાવ્રતો ધારણ કરીએ (અહીં પૂર્વોક્ત સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવાનુ છે તે કથન કયા સુધી ગ્રહણ કરવુ જોઇએ ?) આલોચન દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત થઇને, શાન્ત ચિત્તે, કાળધર્મ પામીને અચ્યુત નામના બારમા દેવલોકમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે. (तत्थणं अत्थेगइयाण देवाण बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) તે દેવલોકમા દેવોની સ્થિતિ બાવીસ સાગરોપમની કહી છે (तस्स ण खंदयस्स वि देवस्स बावीस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता) તથા આ સ્કન્દક અણગારની કાળસ્થિતી પણ બાવીસ સાગરોપમની છે (से णं भंते ! खंदए देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएण भवक्खएण ठि [illegible] अणंतर चय चइत्ता कहिं गच्छिहिइ, कहिं

'उवागच्छित्ता' उपागम्य "समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति" श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्थित्वा "एवं वयासी" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादिषुः । किमवादिषुरित्याह "एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी" । "थेरे णं अणगारे पगइभद्दए" स्थविरः नामानगारः प्रकृतिभद्रकः प्रकृत्या स्वभावेन भद्रक इति प्रकृतिभद्रकः "पगइविणीए" प्रकृत्या विनीतः स्वभावेनैव विनयवान् "पगइउवसंते" प्रकृत्युपशान्तः प्रकृत्या स्वभावेनैवोपशमप्रधानतया निर्गर्वः । "पगइपयणुकोहमाणमायालोभे" प्रकृत्या प्रतनुक्रोधमानमायालोभः स्वभावत एव प्रतनुक्रोधमानमायालोभवान् "मिउमद्दवसंपन्ने" मृदुमार्दवसंपन्नः परिणामसुखमार्दवयुक्तः "अल्लीण"

जहां श्री श्रमण भगवान महावीरस्वामी विराजमान थे वहां पर आये। 'उवागच्छित्ता' वहां आकर उन्होंने 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमण भगवान महावीर को वंदना की नमस्कार किया 'वंदित्ता नमंसित्ता' वंदना नमस्कार करके 'एवं वयासी' फिर उन्हों ने उनसे इस प्रकार कहा, क्या कहा-सो सूत्रकार इसी बात को प्रकट करते हैं— 'एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी थेरे णं अणगारे पगइभद्दए' हे भदन्त! आप देवानुप्रिय के अन्तेवासी स्थविर नाम के अनगार जो स्वभाव से भद्र थे 'पगइविणीए' स्वभाव से ही विनीत थे 'उवसंत' स्वभाव से ही जो उपशान्त वृत्ति वाले थे 'पगइपयणुकोहमाणमायालोभे' स्वभाव से ही जिनमें क्रोध 'मान' माया और लोभ अतिशय अल्प मात्रा में थे 'मिउमद्दवसंपन्ने' स्वभाव से ही मृदुता परिणामसुख मार्दव धर्म से जो युक्त थे 'अल्लीण' तप और संयम आदि की

ત્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામી વિરાજતા હતા ત્યાં આવ્યા "उवागच्छित्ता" ત્યાં આવીને તેમણે 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता नमंसित्ता" વંદણા નમસ્કાર કરીને "एवं वयासी" આ પ્રમાણે કહ્યું-"एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी थेरे णं अणगारे पगइभद्दए" હે ભદન્ત! આ દેવાનુપ્રિયના શિષ્ય સ્થવિર નામના અણગાર જે જે સ્વભાવે ભદ્ર હતા, "पगइविणीए" જેઓ સ્વભાવે વિનીત હતા, 'उवसंते' જેઓ સ્વભાવે ઉપશાન્તવૃત્તિવાળા હતા" વળી જેઓ (क्रोधमानमाया लोभ) સ્વાભાવિક રીતે જ ક્રોધ, માન માયા અને લોભ અતિશય અલ્પ પ્રમાણમાં હતા, "मिउमद्दवसंपन्ने" સ્વભાવથી જ મૃદુતા પરિણામસુખ માર્દવ ધર્મથી જેઓ યુક્ત હતા, "अल्लीण" તપ, સંયમ

कायोत्सर्गम् मरणनिमित्तं मरणानन्तरं क्रियमाणं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति, अथवा मरणनिमित्तकं ध्यानविशेषं कुर्वन्तीत्यर्थः 'करित्ता' कायोत्सर्गं कृत्वा 'पत्तचीवराइ गिण्हंति' पात्रचीवराणि गृह्णन्ति, तदीयपात्रवस्त्रादीनां ग्रहणं कुर्वन्ति "गेण्हित्ता" गृहीत्वा "विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहन्ति" विपुलात् पर्वतात् शनैः शनैः प्रत्यवरोहन्ति-अधोऽवतरन्ति – विपुलनामकपर्वते स्कन्दकस्य मरणमभूत् । मृतं तदीयं शरीरं परिष्ठाप्य तदीयोपकरणानि – उपादाय ते स्थविरास्ततः पर्वतात् निहृत्ता बभूवुः इति भावः । "पच्चोरुहित्ता" प्रत्यवरुह्य "जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छन्ति

कायोत्सर्ग परिनिर्वाण प्रत्यय कायोत्सर्ग कहलाता है इस कयोत्सर्ग का कारण मरण होता है और यह मरण के अनन्तर किया जाता है। अथवा-(परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं) का तात्पर्य ऐसा भी होता है, कि मरण है निमित्त जिसका ऐसा जो ध्यान विशेष किया जाता है वह परिनिर्वाणप्रत्यय कायोत्सर्ग है। (करित्ता) इस कायोत्सर्ग को करके 'पत्तचीवराइं' स्कन्दक अनगार के जो पात्र वस्त्र आदि थे वे सब उन्हों ने ले लिये 'गेण्हित्ता' उठाकर (विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहंति) वे उस विपुल पर्वत से धीरे २ मन्द चाल से यतनापूर्वक नीचे उतरे। अर्थात्विपुल पर्वत पर स्कन्दक का मरण हो गया सोउनके मृत शरीर की परिष्ठापना करके वे उनके उपकरणों को लेकर वहां से वापिस लौट आये। 'पच्चोरुहित्ता वापिस लौटकर वे 'जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ'

હોય છે, તે કાયોત્સર્ગને (પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ કહે છે તે કાયોત્સર્ગનુ કારણ મરણ હોય છે, અને તે મરણ પછી કરવામા આવે છે અથવા (परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं) નું એવુ તાત્પર્ય થાય છે કે જેનું નિમિત્ત મરણ છે એવા વિશિષ્ટ ધ્યાનને (પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ) કહે છે. (करित्ता) એવો કાયોત્સર્ગ કરીને, (पत्तचीवराइं) સ્કન્દક અણગારનાં પાત્ર, વસ્ત્ર આદિ ઉપકરણ તેમણે લઈ લીધા ((गेण्हित्ता) તે ઉપકરણોને લઈને (विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहंति) તેઓ વિપુલાચલ પર્વત પરથી ધીરે ધીરે–મદ ગતિયે–યતના પૂર્વક નીચે ઉતર્યા એટલે કે વિપુલાચલ પર્વત પર સ્કન્દક અણગાર મરણ પામ્યા પછી તેમના મૃત શરીરની પરિષ્ઠાપના કરીને, તેઓ તેમના ઉપકરણોને લઈને ત્યાથી પાછા ફર્યા (पच्चोरुहित्ता) ત્યાંથી નીચે પાછા ફરીને તેઓ. (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ)

स्कन्दकस्य पारलौकिकं वृत्तान्तं ज्ञातुं भगवन्तं पृच्छति गंते इत्यादि । " अंते वि भगवं गोयमे " भदंत इति संबोध्य भगवान् गौतमः " समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ " श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " वन्दित्वा नमस्थित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् किमवादीत् तदाह 'एवं खलु' इत्यादि एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नाम अणगारे काल मासे काल किच्चा कहिंगए कहिं उववन्ने " एवं खलु देवानुप्रियाणामंतेवासी स्कन्दको नामानगारः कालमासे कालं कृत्वा । कुत्रगतः कुत्रोत्पन्नः ? भगवान् कथयति " गोयमा " हे गौतम इति संबोध्य " समणे भगवं महावीरे " श्रमणो भगवान् महावीरः " भगवं गोयमं एवं वयासी " भगवन्तं गौतममेवमवादीत् " एवं खलु गोयमा " एवं खलु हे गौतम ! " मम अंतेवासी खंदए नाम अणगारे " ममान्तेवासी स्कन्दको नामानगारः "पगइ भद्दए" प्रकृतिभद्रकः 'आत्म'

के मुख से ऐसे वचनों को सुनकर ' भगवं गोयमे ' भगवान् गौतम ने स्कन्दक के पारलौकिक वृत्तान्त को जानने के लिये ' अंते ति ' हे भदन्त ! इस प्रकार संबोधित करके ' समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ ' पहिले श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की, नमस्कार किया । ' वंदित्ता नमंसित्ता ' वंदना नमस्कार कर ' एवं वयासी ' फिर उन्हों ने प्रभु से इस प्रकार पूछा-' एवंखलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे ' हे भदंत ! आप देवानुप्रिय के अंतेवासी स्कन्दक अनगार ' कालमासे कालं किच्चा ' कालमास में-कालके अवसर काल करके (कालं गए) मर और (कहिं गए) कहां गये हैं ' कहिं उववन्ने ' और कहां पर उत्पन्न हुए हैं ? उत्तर देते हुए तब प्रभु ने उनसे कहा -' गोयमा ' हे गौतम ! ' मम अंतेवासी खंदए नामं अणगारे ' मेरा अंतेवासी स्कन्दक अनगार जो ' पगइभद्दए ' प्रकृति से भद्र थे ' से णं

अन्तेवासी (शिष्य) स्कन्दक अणगार ' कालमासे कालं किच्चा ' कालमासे-मरण अवसर आने पामीने-" कालगए " कालधर्म (मरण) पामीने 'कहिं गए' क्यां गया छे ? (कहिं उववन्ने " क्यां उत्पन्न थया छे ? त्यारे प्रभुओ तेमने आ प्रमाणे जवाब आप्यो- " गोयमा ! " हे गौतम ! " मम अंतेवासी खंदए नामं अणगारे " आ अंतेवासी स्कन्दक अनगार, के जेओ पगइ भद्दए '

आलीनः=तपः संयमादितत्परः "भद्दए" भद्रकः=कल्याणस्वरूपः "विणीए" विनीतः=विनयसंपन्नः "सेणं देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे" स खलु देवानुप्रियैरभ्यनुज्ञातः सन् "सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता" स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य "समणाय समणीओय खामेत्ता" श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा "अम्हेहिं सद्धिं" अस्माभिः सार्धम् "विउलं पव्वयं" विपुलं पर्वतम् "तं चेव निरवसेसं" तदेव निरवशेषम्=पूर्वोक्तमेव सर्वम् अत्र वाच्यम्। कियत्पर्यन्तमित्याह="जाव आणुपुव्वीए कालं गए" यावदानुपूर्व्या कालं गतः, अत्र यावत्पदेन "सणियं सणियं दुरुहइ" इत्यारभ्य "समाहिपत्ते" इत्यन्तस्य ग्रहणं कर्त्तव्यम्। आनुपूर्व्या मरणं प्राप्तः। "इमेयसे आयारभंडए" इदञ्च भवदग्रे स्थापितं तस्याचारभण्डकमस्तीति स्थविराणामेतादृशं वाक्यमाकर्ण्य गौतमः

आराधना में ही जिन्हों ने अपना शेष जीवन व्यतीत किया' 'भद्दए' अतएव कल्याण स्वरूप 'विणीए' विनीत ऐसे 'सेणं' वे स्कन्दक अनगार 'देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे' आप देवानुप्रिय से आज्ञा प्राप्त कर 'सयमेव पंचमहव्वयाइं' अपने आप पांच महाव्रतों को आरोपित करके 'समणाय समणीओ य' श्रमण एवं श्रमणियों से क्षमा याचना कर 'अम्हेहिं सद्धिं' हमलोगों के साथ 'विउल पव्वयं' विपुल पर्वत पर 'सणियं सणियं' धीरे २ चढे यहां पर 'तं चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए कालं गए' बाकी का और सब पूर्वोक्त कथन 'जाव आणुपुव्वीए कालं गए' यहां तक लगा लेना चाहिये। 'इमे य से आयारभंडए' ये जो हम लोगों ने लाकर आप के समक्ष स्थापित किये हैं। उन्हीं स्कन्दक अनगार के आचार भाण्डक—उपकरण है। स्थविरों

આદિની આરાધનામા જ જેમણે પોતાનું બાકીનું જીવન વ્યતીત કર્યું હતું, "भद्दए" જેઓ અતિશય ભદ્રિક પ્રકૃતિવાળા હતા, "विणीए" જેઓ વિનીત હતા, એવા "सेणं" સ્કન્દક અણગાર "देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे" આપ દેવાનુપ્રિયની આજ્ઞા લઈને "सयमेव पंचमहव्वयाइं" પોતાની જાતે જ પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને "समणाय समणीओ य" શ્રમણ અને શ્રમણિને (સાધ્વીઓ) ખમાવીને "अम्हेहिं सद्धिं" અમારી સાથે "विउलपव्वयं" વિપુલાચલ પર્વત પર "सणियं सणियं" ધીરે ધીરે આરોહણ કરીને "तं चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए कालं गए" "जाव आणुपुव्वीए कालं गए" સુધી સૂત્રમા આવતુ સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવું "इमे य से आयारभंडए" આ તેમના પાત્ર વસ્ત્ર આદિ ઉપકરણ છે તેમ સ્થવિરોના મુખથી આ પ્રકારનાં વચનો સાભળીને "भगवं गोयमे" ભગવાન ગૌતમે સ્કન્દકનું પારલૌકિક વૃત્તાંત

अच्युतकल्प देवो जाव इमि भावः " तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता " तत्र खलु अस्त्यैकेषां देवानां द्वाविंशति सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता "तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता " तत्र खलु स्कन्दकस्यापि देवस्य द्वाविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। गौतमः पृच्छति " से णं भंते " स खलु भदंत ! " खंदए देवे " स्कन्दको देवः 'ताओ देवलोगाओ" तस्मात् देवलोकात् "आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं' आयुः क्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेण, तत्र आयुः क्षयणायुष्ककर्मदलिक निर्जर मन भवक्षयण, देवभवनिबन्धनकर्मणां गत्यादीनां निर्जरणेन स्थितिक्षयेण आयुष्क र्मणः स्थितिवेदनेन " अणंतरं " अनन्तरात् " चयं " देवशरीरसम्बन्धिनं त्यक्त्वा " चइत्ता " च्युत्वा त्यक्त्वा एत्थं गच्छिहिइ " कुत्र गमिष्यति " कहिं उववज्जिहिइ स्कन्दक अनगार मर कर अच्युत कल्प में देव की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। (तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) यहां पर कई एक देवों की बाईस सागरोपमप्रमाण स्थिति कही गई है सो (तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) उस स्कन्दक देव की भी बाईस सागरोपम प्रमाण स्थिति है। अब भगवान् गौतमस्वामी उस देव के विषय में पुनः प्रभु से पूछते हैं-(से णं भंते ! खंदए देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं, भवक्खएणं, ठिइक्खएणं, अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ) हे भदन्त ! वह स्कन्दक देव उस देवलोक से आयुष्कर्म के दलिकों की निर्जरा होनेसे, देवभव के कार णभूत गत्यादिक कर्मों की निर्जरा होने से तथा आयुष्कर्म की स्थिति का वेदन कर लेने से देव भवसम्बंधी शरीर का परित्याग कर कहां जावेगा, कहां उत्पन्न होगा ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं-

આરમાં દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા ' तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता " તે દેવલોકમાં કોઈક દેવોની બાવીસ સાગરોપમની સ્થિતિ છે 'तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता " એજ પ્રમાણે સ્કન્દક અણગારનું આયુષ્ય પણ બાવીસ સાગરોપમનું સમજવું ગૌતમસ્વામીને દેવના વિષયમાં બીજો પ્રશ્ન પૂછે છે 'से णं भंते ! खंदए देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणं तरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ ' હે ભદન્ત ! તે સ્કંદક દેવ, તે દેવલોકમાં આયુ કર્મના દલિકોની નિર્જરા થતાં, દેવભવના કારણરૂપ ગત્યાદિ કર્મોની નિર્જરા થતાં તથા આયુષ્ય કર્મની સ્થિતિનું વેદન કરી લેવા પછી દેવભવ સંબંધી શરીરનો પરિત્યાગ કરીને કયાં જશે, કયાં ઉત્પન્ન થશે ? તેના ઉત્તર

यावत् अत्र यावत्पदेन 'विगइ विगीए' इत्यारभ्य 'विगीए' इत्यन्त स्कन्दक विशेषणानां ग्रहणं कर्त्तव्यम् "सेणं मए अब्भणुन्नाए समाणे" स स्कन्दकः खलु मयाऽभ्यनुज्ञातः सन् "सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता" स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य "तं चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्वं" तदेव सर्वमवशिष्टं नेतव्यम् समणा य समणीओ य खमित्ता" इत्यारभ्य "सट्ठिभत्ताइं अणसणाए छेदित्ता" इति पर्यन्तं सर्वं ज्ञातव्यम् 'आलोइय पडिक्कंते" आलोचित प्रतिक्रान्तः "समाहिपत्ते" 'समाधिप्राप्त. "कालमासे कालं किच्चा" कालमासे कालं कृत्वा "अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने" अच्युते कल्पे द्वादशदेवलोके देवतया उपपन्नः देवो भूत्वा समुत्पन्नः विलक्षण तपश्चरणयुक्तं संयमं समाराध्य मृत्वा स्कन्दकः

मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं आरोहेत्ता तं चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्वजाव आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने' यावत् मेरी अनुमति से स्वयं पंच महाव्रतों को आरोपित करके (यहां पर बाकी का समस्त कथन पहिले कहे हुए कथन की तरह ही समझ लेना चाहिये) यावत्-आलोचित प्रतिक्रान्त बन समाधि प्राप्त कर कालमास में कालकरके अच्युत देवलोक में गये हैं और वहां देव की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। 'तं चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्वं) ऐसा जो कहा है, सो उससे (समणाय समणीओ य खामेत्ता) यहां से लगाकर (सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता) यहां तक का सब पाठ ग्रहण करलेना चाहिये। तात्पर्य कहने का यह है कि-विलक्षण तपश्चरण से युक्त संयम को आराधित करके

प्रभृतिना हता, "से ण मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पचमहव्वयाइ आरोहेत्ता तं चेव सव्वं अवसेसिय नेयव्व जाव आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने" भारी अनुज्ञा लइने पोतानी जाते જ પાચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને (અહીં બાકીનુ સમસ્ત કથન પૂર્વોક્ત કથન પ્રમાણે જ ગ્રહણ કરવાનું છે) કયા સુધી તે કથન ગ્રહણ કરવાનું છે? તો સૂત્રકાર કહે છે કે "આલોચના દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત બનીને શાન્તચિત્તે કાળધર્મ પામ્યા, ત્યાસુધી પૂર્વોક્ત કથન ગ્રહણ કરવુ કાળધર્મ પામીને તેઓ અચ્યુતદેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે "तं चेव सव्व अवसेसिय नेयव्व" આ પ્રમાણે જે કહેલુ છે તેથી "समणाय समणीओ य खामेत्ता"થી શરૂ કરીને 'सट्ठिं भत्ताइ अणसणाए छेदित्ता" પર્યંતનો પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ, કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિલક્ષણ તપસ્યાથી યુક્ત સંયમની આરાધના કરીને સ્કન્દક અણગાર મરીને અચ્યુત દેવલોક નામના

॥ अथ द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशक प्रारभ्यते ॥

द्वितीय शतकीय द्वितीयोद्देशकस्य सक्षेपेण विचारणीया विषया, कति समुद्घाताः क्रियन्त इति गौतमस्य प्रश्नः । वेदनासमुद्घात-कषायसमुद्घात-मरणसमुद्घात वैक्रियसमुद्घात – तैजससमुद्घात–आहारकसमुद्घात-केवलिसमुद्घातभेदात् सप्तसमुद्घाताः इति भगवतः उत्तरम् भावितात्मानगारस्य वर्णनमिति॥

केन मरणेन मृतस्य जीवस्य ससारो वर्द्धते इति अन्येन शतकस्य प्रथमोद्देशके कथितम् मरणञ्च समुद्घातसमवहतस्य भवति मकारान्तरेणापि भवतीति द्वार

दूसरे शतक का द्वितीय उद्देशक प्रारभ

द्वितीय शतक सबधी द्वितीय उद्देशक में जिन २ विषयों का विचार किया गया है, वे सक्षेप से इस प्रकार हैं ।

प्रश्न—समुद्घात कितने होते हैं–ऐसा गौतम का प्रश्न

उत्तर–समुद्घात सात होते हैं–एक वेदना समुद्घात, दूसरा कषाय समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चौथा वैक्रिय समुद्घात, पांचवां तैजस समुद्घात, छट्ठा आहारक समुद्घात, और सातवां केवली समुद्घात, इस प्रकार से ये सात समुद्घात होते हैं–ऐसा प्रभु का उत्तर, भाविता-त्मा अनगारका वर्णन (किस मरण से मरे हुए जीव का ससार बढता है) ऐसा प्रश्न द्वितीय शतक के प्रथम उद्देशक में किया गया और उसका उत्तर भी वहीं पर दे दिया गया। इसी प्रश्न से यह बात भी सबंध रखती है कि मरण दो प्रकारसे हो सकता है–एक मारणांतिकसमुद्घात-पूर्वक और दूसरा मारणांतिकसमुद्घात के विना, इसलिये मार गाथा

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારભ

બીજા શતક ના બીજા ઉદ્દેશકમાં જે જે વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો સક્ષેપમાં આ પ્રમાણે છે—

ગૌતમનો પ્રશ્ન સમુદ્ઘાત કેટલા હોય છે ?

ઉત્તર—સમુદ્ઘાત સાત હોય છે (૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાય સમુદ્ઘાત (૩) મરણ સમુદ્ઘાત (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત આ પ્રકારનો પ્રભુ નો ઉત્તર ભાવિતાત્મા અનગારનું વર્ણન.

"કયા મરણથી મરતા જીવનો સંસાર વધે છે ?" આવો પ્રશ્ન પહેલા શતકમાં પૂછવામાં આવ્યો છે અને તેનો ઉત્તર આપવામાં આવ્યો છે તે પ્રશ્ન સાથે આ વાતનો પણ સબંધ છે કે મરણ બે પ્રકારના છે-(૧) મારણાંતિક

हिइ" कुत्रोत्पत्स्यते भगवानाह—' गोयमा ' हे गौतम ! " महाविदेहेवासे सिज्झिहिति" महाविदेहे वर्षे महाविदेहक्षेत्रे सेत्स्यति सिद्धो भविष्यति ' बुज्झिहिइ ' भोत्स्यते केवलालोकेन लोकालोकं ज्ञास्यति " मुच्चिहिइ " मोक्ष्यते कर्म बन्धनात् पृथक् भविष्यति " परिणिव्वाहिइ " परिनिर्वास्यति कर्मसंतापाभावेन शीतली भविष्यति " सव्वदुक्खाणं अन्तं करिहिइ " सर्वदुःखानाम्=शारीरमानस दुःखानाम् अन्तं नाशं करीष्यतीति ॥ सू० १७ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-पालापक–पविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त–' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित–कोल्हापुरराज-गुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री–घासीलाल–व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२–१॥

(गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिन्ति, बुज्झहिइ, मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ) हे गौतम ! वह स्कन्दक देव वहां से च्युत होकर महाविदेह क्षेत्र से (सिज्झहिइ) सिद्ध होगे, (बुज्झिहिइ) केवल ज्ञानरूप आलोक से लोकालोकके जानने वाले होंगे, (मुच्चिहिइ) कर्मबन्धन सेसर्वथा पृथक्भूत होजावेंगे (परिनिव्वाहिइ) शारीरिक, मानसिक समस्त दुःखों का अन्त–अभाव–करदेंगे ॥ १७ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के दूसरे शतकका पहला उद्देशक समाप्त ॥२–१॥

આપતાં પ્રભુ કહે છે–" गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिन्ति, बुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिनिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ " હે ગૌતમ ! તે સ્કન્દક દેવ ત્યાંથી ચ્યવીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાથી " सिज्झिहिइ " સિદ્ધ પદ પામશે, ' बुज्झिहिइ " કેવળ જ્ઞાનરૂપ આલોકથી લોકાલોકને જાણનાર થશે, " मुच्चिहिइ " કર્મબંધનથી સર્વથા મુક્ત થઇ જશે, " परिनिव्वाहिइ " કર્મરૂપ સંતાપના અભાવને લીધે નિવકુલ શીતલ થઇ જશે, અને (सव्वदुक्खाणमंत करिहिइ " શારીરિક, માનસિક સમસ્ત દુ ખોનો અન્ત (અભાવ) કરશે ॥ સૂ ૧૭ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨–૧॥

॥ अथ द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशक प्रारभ्यते ॥

द्वितीय उपक्रमे द्वितीयोद्देशकस्य लक्षणं विभाषणीया विषया, तद्यथा सप्तप्रकाराः निक्षेपा इति गौतमस्य प्रश्नः । पदनामसप्तप्रकार-कषायसप्तप्रकार-मरणसप्तप्रकारान् वैक्रियसप्तप्रकारान्-मैथुनसप्तप्रकारान्-आहारसप्तप्रकारान्-कर्मप्रकृतिसप्तप्रकारान्वक्तव्यतया सप्तसप्तप्रकाराः इति भगवतो उत्तरम् आविर्भावनायास्य वर्णनमिति ॥

फल मरणस्य एतस्य जीवस्य मरणा वर्द्धन इति अर्थोद्देशकस्य प्रथमोद्देशक फलितम् मरणस्य सप्तप्रकारत्वप्रकाशस्य सर्वेषि एवाकारकत्वापि भवतीति आर

दूसरे शतक का द्वितीय उद्देशक प्रारंभ

द्वितीय शतक संबंधी द्वितीय उद्देशक में जिस ९ विषयों का विचार किया गया है, वे संक्षेप से इस प्रकार हैं ।

प्रश्न—सप्तप्रकार किसे कहते हैं—इत्यादि गौतम का प्रश्न

उत्तर—सप्तप्रकार सात होते हैं—एक पदना सप्तप्रकार, दूसरा कषाय सप्तप्रकार, तीसरा मरण सप्तप्रकार, चौथा वैक्रिय सप्तप्रकार, पांचवां मैथुन सप्तप्रकार, छट्ठा आहारक सप्तप्रकार, और सातवां कर्मकी सप्तप्रकार, इस प्रकार ये ७ सात सप्तप्रकार होते हैं—ऐसा प्रभु का उत्तर, आविर्भाव रूप आत्मसाक्षात्कार वर्णन (किस मरण से मर कर जीव का संसार बढता है) ऐसा प्रथम द्वितीय शतक के प्रथम उद्देशक में किया गया और उसका उत्तर भी यहीं पर दे दिया गया। इसी प्रथम का यह थोड़ा भी संक्षेप करना है कि मरण दो प्रकारका हो सकता है—एक सांवत्सरिकमरणरूप तथा दूसरा सांवत्सरिकमरणभिन्न के लिया, इसलिये प्रार्थ गाथा

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

બીજા શતક ૧ બીજા ઉદ્દેશકમાં જે ૯ વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો સંક્ષેપમાં આ પ્રમાણે છે—

ગૌતમ ૧ પ્રશ્ન સપ્તપ્રકાર કોને કહે છે ?

ઉત્તર—સપ્તપ્રકાર સાત કહે છે (૧) એક પદના સપ્તપ્રકાર, (૨) કષાય સપ્તપ્રકાર (૩) મરણ સપ્તપ્રકાર (૪) વૈક્રિય સપ્તપ્રકાર (૫) મૈથુન સપ્તપ્રકાર (૬) આહારક સપ્તપ્રકાર અને (૭) કર્મપ્રકૃતિ સપ્તપ્રકાર આ પ્રકારનો પ્રભુ નો ઉત્તર આવિર્ભાવ અવસ્થાનું વર્ણન

આ પ્રથમ પ્રશ્નનો સંક્ષેપ કરવો હોય તો કરવામાં આવે છે કે મરણ બે પ્રકારનું થઈ શકે છે—એક સાંવત્સરિક મરણ અને બીજું સાંવત્સરિક મરણ સિવાયનું, આ કારણે આ ગાથા

गाथोक्तं समुद्घातस्वरूपं निरूपयति "कइणं भन्ते समुग्घाया" इत्यादि।

मूलम्–कइणं भंते ! समुग्घाया पन्नत्ता गोयमा ! सत्त समुग्घाया पन्नत्ता तं जहा वेयणासमुग्घाए एवं समुग्घाय पदं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्वं जाव वेमाणियाणं कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं। अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो केवलिसमुग्घाये जाव सासयं, अणागयद्धं कालं चिट्ठन्ति, समुग्घायपदं नेयव्वं ॥ १ ॥

छाया–कति खलु भदन्त ! समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! सप्त समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः तद्यथा वेदनासमुद्घातः एवं समुद्घातपदं छाद्मस्थिकसमुद्घातवर्जं भणितव्यम् यावद्वैमानिकानाम् कषायसमुद्घाताः अल्पबहुत्वम्। अनगारस्य खलु भदन्त !

में कहे हुए समुद्घात का स्वरूप सूत्रकार निरूपित करते हैं–(कइणं भंते समुग्घाया) इत्यादि।

सूत्रार्थ–(कइणं भंते समुग्घाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! समुद्घात कितने प्रकारके हैं ?। (गोयमा) हे गौतम ! (सत्त समुग्घाया पण्णत्ता) समुद्घात सात प्रकारसे कहे गये हैं। (तं जहा) जो इस प्रकार से हैं (वेयणासमुग्घाए) वेदना समुद्घात, (एवं समुग्घायपदं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्व) इस तरह समुद्घात पद जानना चाहिये। परंतु इसमें आए हुए छाद्मस्थिक–छद्मस्थ सम्बन्धी समुद्घात नहीं कहना चाहिये। (जाव वेमाणियाणं कसायसमुग्घाया अप्पा बहुयं) इस तरह यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये। कषायसमुद्घात तथा अल्पबहुत्व कहना

સમુદ્ઘાતપૂર્વક અને (૨) મારણાતિક સમુદ્ઘાત વગર, તેથી દ્વારગાથામાં કહેલા સમુદ્ઘાતનુ સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—"कइण भंते ! समुग्घाया" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(कइणं भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता ?) હે ભગવન્ સમુદ્ઘાત કેટલા પ્રકારના છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता) સમુદ્ઘાત સાત પ્રકારના કહ્યા છે (तजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (वेयणा समुग्घाए) વેદના સમુદ્ઘાત (एव समुग्घायपद छाउमत्थियसमुग्घयवज्ज भाणियव्वं) આદિના ભેદથી જે પ્રમાણે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા દર્શાવ્યા છે તે પ્રમાણે સાત સમુદ્ઘાત સમજવા પણ તેમા આવતા છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાતનો અહીં સમાવેશ કરવો જોઇએ નહી (जाव वेमाणियाण कसायसमुग्घाया अप्पाबहुय) એજ પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્ત જાણવુ ક ાય સમુદ્ઘાત તથા અલ્પ બહુત્વ કહેવું.

भावितात्मनः केवलिसमुद्घातः यावत् शाश्वतम् अनागताद्धाकालं तिष्ठति समुद्घातपदं नेतव्यम् ॥

टीका-'कइणं भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता' कति खलु भदन्त ! समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः सम् इत्यादेः सम्उत्पूर्वकात् कृतत्यर्थे कृते सति समुद्घात इतिपदं सिध्यति इन् घातोर्हनन मितिरूपं भवति तत्र हननं निर्गमणम् समुपसर्गस्य एकीभावो ऽर्थः 'उत्' इत्युपसर्गस्य प्राबल्यमर्थः तथा चैकीभावेन प्राबल्येन च घातोर्निर्गमनं समुद्घातः अथैकीभावः केन सह कस्यात्र विवक्षित ? इतिचेदुच्यते यदा खलु आत्मा वेदनादिसमुद्घातगतो भवति तदा वेदनादि विषयकानुभवज्ञानाकारेण परि णतो भवतीतिवेदनाद्यनुभवज्ञानेन सहात्मन एकीभावो भवति। अथाय घातः सार-

(अणगारस्स णं भंते ! भाविअप्पणो केवलिसमुग्घाए गए सासयं अणागयद्धं कालं चिट्ठंति ?) हे भदन्त ! भावितात्मा अनगार के केवलिसमुद्घात होता है। यावत् वे सिद्ध शाश्वत अनागताद्धाकालतक रहते हैं क्या ? (समुग्घायपदं नेयव्वं) समुद्घात पद जानना चाहिये ॥

टीकार्थ—(कइणं भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! समुद्घात कितने प्रकार के कहे गये हैं ?। एकीभाव से प्रबलतापूर्वक हनन करना याने आत्मप्रदेशों का बहार निकालना समुद्घात कहलाता है।

शंका-आपने जो समुद्घात का ऐसा शब्दार्थ किया है-सो यह एकी भाव किसका किसके साथ यहां विवक्षित हुआ है ? उत्तर-जब आत्मा वेदना आदि समुद्घातवाला होता है उस समय वह वेदनादि के विषय करने वाला अनुभवरूप ज्ञानके आकारसे परिणत हो जाता है। तात्पर्य इस कथन

(अणगारस्स णं भंते ! भाविअप्पणो केवलिसमुग्घाए गए सासयं अणागयद्धं काल चिट्ठंति ?) હે ભદન્ત ! ભાવિતાત્મા અણગાર કેવલિ સમુદ્ઘાત કરે છે ? (ત્યાંથી યાવત્ કરીને) તે સિદ્ધ શાશ્વત, અનાગતદ્ધાકાલ સુધી રહે છે ? (પર્યન્તનું કથન અહિયાં કરવું) (समुग्घायपदं नेयव्वं) આ પ્રમાણે આપણા પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રના સમુદ્ઘાત પદમાં કહેવામાં આવ્યું છે એમ સમજવું.

ટીકાર્થ—"कइणं भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता ?" હે ભદન્ત ! સમુદ્ઘાત કેટલા પ્રકારના કહ્યા છે ? એકીભાવથી પ્રબલતાપૂર્વક આત્મ નિષ્ક્રમણ કરવું તેનું નામ સમુદ્ઘાત છે.

શંકા—આપે સમુદ્ઘાતમાં અર્થ સમજાવતાં જે એકીભાવની વાત કરી છે તે કોનો કોની સાથેનો એકીભાવ અહીં સમજવો ?

ઉત્તર- જ્યારે આત્મા વેદના આદિ સમુદ્ઘાત વાળો થાય છે ત્યારે તે વેદનાદિને વિષય કરનાર અનુભવ રૂપ જ્ઞાનના આકારે પરિણમે છે એવાર્થ

ल्येन कथं भवतीतिचेदत्र कथ्यते यस्मात्कारणात् वेदनादिसमुद्घाते परिणत आत्मा बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरेऽनुभवयोग्यान् उदीरणाकरणेनाकृष्योदये प्रक्षिप्य अनुभूयच निर्जरयति आत्मप्रदेशैः सह श्लिष्टान् शातयति ततः प्राबल्येन घातइति कथ्यते भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि " गोयमा " हे गौतम!

का यह है कि जिस प्रकार घट को जानने वाला आत्मा घट को जानते समय तद्विषयक ज्ञान केआकारसे परिणत हो जाता है–तभी वह घट को जानता है–इसी प्रकार वेदना आदि समुद्घात करने वाला आत्मा भी जब तक वेदना आदि समुद्घात को विषय करनेवाले ज्ञान से युक्त नहीं होगा, तबतक वह वेदनादि समुद्घात को नहीं जान सकेगा, अतः जब वह उन्हें जानेगा तो यह बात निश्चित है कि वह तद्विषयक ज्ञान के आकार में परिणत हो गया है। तभी वह उन्हें जान सका है। इस तरह से जो वेदनाआदि के अनुभव–ज्ञान केसाथ आत्मा का तदाकाररूप से परिणमन होता है वही आत्मा और वेदना आदि अनुभव ज्ञान का एकीभाव है। तात्पर्य कहने का यही है कि जिस समुद्घात में आत्मा की प्रवृत्ति हो रही हो उसके अनुभव ज्ञान के साथ वह आत्मा एकमेक होकर उन संबंधी कर्मों को आत्मप्रदेशोंसे बहार निकालना यही समुद्घात का शब्दार्थ है। और जब आत्मा वेदना आदि समुद्घात के रूप में परिणत हो जाता है–तब वह वेदनीय आदि कर्म के प्रदेशों को कि जो कालान्तर में अनुभव करनेके योग्य हों उन्हें उदीरणा के द्वारा खींचकर उदय में लाता है–उदय में

તાત્પર્ય એ છે કે જેમ ઘટ (ઘડો) ને જાણનારો આત્મા ઘડાને જાણતી વખતે તે ઘટને જાણે છે– એજ પ્રમાણે વેદના આદિ સમુદ્ઘાત કરનારો આત્મા પણ જ્યાં સુધી વેદના આદિ સમુદ્ઘાત વિષયક જ્ઞાન વાળો નહીં થાય, ત્યા સુધી તે વેદનાદિ સમુદ્ઘાતને જાણી શકશે નહીં જો તે તેને જાણશે તો તે વાત નિશ્ચિત છે કે તે તેના વિષેના જ્ઞાનના આકારમા પરિણત થઇ ગયો છે. ત્યારે જ તે તેને જાણી શકે છે એજ પ્રમાણે વેદના આદિના અનુભવ–જ્ઞાનની સાથે આત્માનું જે તદાકાર રૂપે પરિણમન થાય છે તેને જ આત્મા અને વેદના આદિ અનુભવ જ્ઞાનનો એકીભાવ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે સમુદ્ઘાતમા આત્મા એકમેક થઇને તેની સાથે સંબંધ રાખનારા કર્મોને આત્મપ્રદેશોથી અલગ કરે છે, એનુ નામજ સમુદ્ઘાતછે–એજ સમુદ્ઘાતનો શબ્દાર્થ છે, અને જ્યારે આત્મા વેદના આદિ સમુદ્ઘાતરૂપે પરિણમે છે ત્યારે તે કાલાન્તરે અનુભવવાને યોગ્ય કર્મપ્રદેશોને ઉદીરણા દ્વારા ખેંચીને

'सत्तसमुग्घाया पन्नत्ता' सप्तसमुद्घाताः प्रज्ञप्ता 'तंजहा' तद्यथा 'वेदना समुग्घाए' वेदनासमुद्घातः एवं च वेदना समुद्घातादय यथा प्रज्ञापनासूत्रे कथितास्तथैव इहापि ज्ञातव्या इत्याशयेनाह 'एवं' इत्यादि "एव समुग्घातपद छाउमत्थियसमुग्घायवज्ज भाणियव्व' एव समुद्घातपद छद्मस्थिकसमुद्घातवर्ज भणितव्यम् 'छाउ

लाकर उनका वेदन करता है-फिर उनकी निर्जरा करता है। अर्थात्-आत्मप्रदेशों के साथसम्श्लिष्ट हुए उन वेदनीय आदि कर्म प्रदेशों की वह आत्मा परिशाटना करता है, यही प्रबलता पूर्वक घात है। तात्पर्य यह है कि जो वेदनीय आदि कर्मों के प्रदेश कालान्तर में उदय आने योग्य थे उन्हें वेदनीयादि समुद्घातवाला हुआ आत्मा उदीरणा कर णरूप प्रबलता-के बल से उदय में लाकर खपा देता-दूर कर देता है-सो इस प्रकार से यह खपा देना-दूर करना ही प्रबलता पूर्वक घात है। इस तरह समुद्घात का अर्थ स्पष्ट करके भगवान गौतम स्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि—(गोयमा) हे गौतम! (सत्त समुग्घाया पन्नत्ता) वे समुद्घात सात कहे गये हैं। ये वेदना समुद्घात आदि के भेद से सात हो जाते हैं। और जिस प्रकार से ये प्रज्ञापना सूत्र में कहे गये हैं उसी प्रकार से यहां पर भी जानना चाहिये, इसी आशय से सूत्रकार ने (एव समुग्घायपदं छाउमत्थिय समुग्घायवज्जं भाणियव्वं) ऐसा कहा है (छद्मस्थिक समुद्घातको छोडकर) इसका

ઉદયમા લાવે છે-ઉદયમાં લાવીને તેમનુ વેદન કરે છે અને ત્યાર બાદ તેની નિર્જરા કરે છે એટલે કે આત્મપ્રદેશોની સાથે સંશ્લિષ્ટ (સાથેલા) તે વેદનીય આદિ કર્મ પ્રદેશોની તે આત્મા પરિશાટના કરે છે, એનુ નામ જ પ્રબલતા પૂર્વક ઘાત (નિર્જરણ) છે એ કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વેદનીય આદિ કર્મના જે પ્રદેશો કાળાન્તરે ઉદયમાં આવવા યોગ્ય હતા તેમને વેદનીય આદિ સમુદ્ઘાત યુક્ત થયેલો આત્મા ઉદીરણારૂપ રૂપ પ્રબલતા દ્વારા ઉદયમાં લાવીને ખપાવી નાખે છે-દૂર કરી નાખે છે- એ પ્રમાણે તેને દૂર કરવાની અથવા ખપાવવાની ક્રિયાને જ ' પ્રબલતા પૂર્વક ઘાત " કહે છે

આ પ્રમાણે સમુદ્ઘાતનો અર્થ સ્પષ્ટ કરીને હવે સૂત્રકાર ગૌતમસ્વામીના પ્રશ્નોનો ભગવાન મહાવીરે જે ઉત્તર આપ્યો તે સમજાવે છે (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता) સમુદ્ઘાત સાત કહ્યા છે વેદના સમુદ્ઘાત આદિના ભેદથી તેના સાત પ્રકાર થઈ છે તેનુ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં જે વર્ણન કરેલ છે તે અહીં પણ સમજવુ જોઈએ એમ સમજાવવા માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે (एव समुग्घायपद छाउमत्थियसमुग्घायवज्ज भाणियव्व) છદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાતને

मत्थिय समुग्घायदज्जं ' इति यथा ' कइणं भंते ! छाउमत्थिअसमुद्घायापन्नत्ता ' इत्यादि प्रकरणमत्र न वाच्यम् तेषां षटकत्वात्, अत्रतु सप्तसमुद्घातानां प्रकरण मिति। " समुग्घायपयं " इतिप्रज्ञापनायाः षट्त्रिंशत्तमं समुद्घातपदमिहनेतव्यम् तच्चेत्थम् ' कइणं भन्ते ! समुग्घाया पण्णत्ता ' ' गोयमा ! सत्त समुग्घा पण्णत्ता ' " ते जहा " "वेयणा समुग्घाए इत्यादि समुद्घातविषये भवति इयं गाथा-

" वेयणकसायमरणे वेउव्वियतेउए आहारे ॥
केवलिए चेवभवे, जीवमणुस्साणसत्तेव " ॥

तात्पर्य इस प्रकार से है-(कइणं भंते ! छाउमत्थिय समुग्घाया पन्नत्ता) हे भदन्त ! छाद्मस्थिक समुद्घात कितने कहेगये हैं ? सो इस प्रकरणको यहां छोड देना-अर्थात्-यह प्रकरण यहां ग्रहण नहीं करना चाहिये, क्यों कि छाद्मस्थिक समुद्घात छह होते हैं और यहां प्रकरण चल रहा है सात समुद्घातका सो प्रज्ञापना सूत्र में जो सात समुद्घात का प्रकरण आया है उसे ही यहां समुद्घात प्रकरण समझनेके लिये ग्रहण करना चाहिये, छह समुद्घात का वर्णन करनेवाला प्रकरण यहां ग्रहण नहीं करना चाहिये । शेष सब ग्रहण कर लेना चाहिये । (समुग्घायपयं) यह प्रज्ञापना का छत्तीसवां पद है इसमें समुद्घात संबंधी विवेचन हुआ है सो इस पद को यहां लेना चाहिये, यह पद इस प्रकार से है (कइणं भंते । समुद्घाया पण्णत्ता गोयमा सत्त समुद्घाया पण्णत्ता, ते जहा वेयणा समुद्घाए, कसायसमुद्घाए) इत्यादि । समुद्घातके विषयमें यह गाथा भी है-

---

છોડીને આ કથનનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—(कइणं भंते ! छाउमत्थिय समुग्घाया पन्नत्ता ?) હે ભદન્ત ! છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાત કેટલા છે ? તો તેને લગતા પ્રકરણને અહીં છોડી દેવાનુ છે-તે પ્રકરણ અહી ગ્રહણ કરવાનું નથી, કારણ કે છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાત છ હોય છે અને અહીં સાત સમુદ્ઘાતોનું પ્રકરણ ચાલી રહ્યુ છે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા સાત સમુદ્ઘાતોનુ જે પ્રકરણ છે તે પ્રકરણ જ અહી સમુદ્ઘાત પદથી ગ્રહણ કરવાનું છે, છ સમુદ્ઘાતોનું વર્ણન કરનાર પ્રકરણ અહી ગ્રહણ કરવાનુ નથી કારણ કે સમુદ્ઘાત તો સાત છે. (समुग्घायपय) તે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રનું છત્રીસમુ પદ છે તેમા સમુદ્ઘાતોનું વર્ણન કર્યુ છે તો તે છત્રીસમુ પદ અહી ગ્રહણ કરવાનું છે. તે પદ આ પ્રમાણે છે (कइण भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता ! गोयमा ! सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा-वेयणासमुग्घाए, कसायसमुग्घाए) इत्यादि ! સમુદ્ઘાત વિષે આ ગાથા પણ છે

छाया—वेदनाकषायमरणे वैक्रियतैजसमाहारकम्।
पर्याप्तमनुष्यवद् जीवमनुष्याणां सप्तैव ॥

अत्र जीवपदं मनुष्यपदं च सप्तापि समुद्घाता भवन्ति शेषगतिषु यथा योग्यं निरूपणीयाः। तत्र वेदनासमुद्घातेन समवहतः आत्मा बहूनीयकर्मपुद्गलानां नाशनं विनाशं करोति। १। कषायसमुद्घातेन समवहतः आत्मा कषायपुद्गलानां नाशनं करोति। २। मरणान्तिकसमुद्घातेन समवहतः आत्मा आयुष्यकर्मपुद्गलानां नाशनं करोति। ३। वैक्रियसमुद्घातेन समवहतः आत्मा स्वप्रदेशान् शरीरात् बहिर्निष्काश्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमात्रम्, आयामतश्च संख्येययोजनपरिमितं दण्डं निसृजति निसृज्य

"वेयण कसाय मरणे, वेउव्विय तेजए य आहारे।
केवलिए चेव समे, जीवमणुस्साण सत्तेव ॥ १ ॥

इस गाथा के अनुसार जीव पद और मनुष्यपद में ये सात समुद्घात होते हैं। नारक आदि जीवों में तो इन सातमें से यथायोग्य समुद्घात ही होते हैं। सात नहीं होते हैं।

वेदना समवहत आत्मा जीव वेदनीय कर्मके पुद्गलों का नाश करता है १। कषाय समुद्घातयुक्त जीव कषायके पुद्गलोंका नाश करताहै ३। मारणान्तिक समुद्घात से युक्त हुआ आत्मा आयुष्क कर्म के पुद्गलोंका नाश करता है ३। वैक्रियसमुद्घात से युक्त हुआ जीव अपने आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर उनका एक मोटा संख्यात योजनका लंबा दंड बनाता है, इस दंड की चौडाई दंड बनाने वाले व्यक्ति के शरीर के जितनी ही होती है। दंड करने के बाद यह आत्मा यथास्थूल वैक्रियशरीर नाम कर्मके पुद्गलोंको कि जिन्हें इसने पहिलेसे

वेयण कसाय मारणे वउव्वियतेयआहार ॥
केवलिए चेव समे, जीवमणुस्साण सत्तेव ॥ १ ॥

આ ગાથાના અનુસાર જીવપદ અને મનુષ્યપદમાં સાત સમુદ્ઘાત હોય છે નારકાદિ જીવોમાં તો તે જીવસંબંધી યોગ્યતા અનુસાર સમુદ્ઘાતો જ હોય છે, સાતે સમુદ્ઘાત થતા નથી, વેદના સમુદ્ઘાતવાળો જીવ વેદનીય કર્મોના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે કષાય સમુદ્ઘાત વાળો જીવ કષાયનાં પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત વાળો જીવ આયુષ્કર્મોના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે વૈક્રિય-સમુદ્ઘાત વાળો જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને તેનો જેટલો મોટો, જાડાઈ વાળા દંડ બનાવે છે, તે દંડની પહોળાઈ તે દંડ બનાવનાર વ્યક્તિના શરીર જેટલી જ હોય છે દંડ બનાવ્યા પછી તે આત્મા યથાસ્થૂલ વૈક્રિય શરીર નામ કર્મના પુદ્ગલો કે જેમને તેણે

च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्मपुद्गलान् प्राग्बद्धान् शातयति = विनाशयति, यथा सूक्ष्मांश्चादत्ते ।

"वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहन्नइ संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ अहाबायरे-पोग्गले परिसाडेइ अहासुहुमे पोग्गले आइन्ति"

वैक्रियसमुद्घातेन समवहंति, संख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति यथा बादरान् पुद्गलान् परिशातयति यथा सूक्ष्मान् पुद्गलानाददातीति । छाया--

एवं तैजसाहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयौ केवलिसमुद्घातेन समवहतः केवलि वेदनीयादिकर्म पुद्गलान् शातयति इति ।

एतेषु सर्वेषु समुद्घातेषु शरीरात् जीवप्रदेशानां बहिर्निर्गमनं भवति. सर्वे चैते समुद्घाता अन्तर्मुहूर्त्तमाना भवन्ति । केवलं केवलिसमुद्घातोऽष्टसामयिकः। एते च

बांध रक्खा है नष्ट करता है और उनके नष्ट करनेके बाद वह आत्मा यथासूक्ष्म वैक्रियशरीरनामकर्मके पुद्गलोंको ग्रहण करता है। कहा भी है।

"वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहन्नइ, संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ, अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, अहासुहुमे पोग्गले आइयंति" जीव वैक्रियसमुद्घात करता है। इस समुद्घात में वह संख्यात योजनतक अपने आत्मप्रदेशों को दण्डाकार रूप में लंबा करता है, यथा बादर पुद्गलों की वह परिशाटना करता है और यथासूक्ष्म पुद्गलों को वह ग्रहण करता है। इसी तरह से तैजस समुद्घात और आहारक समुद्घात इन दो समुद्घातों को भी जानना चाहिये।

इन समस्त समुद्घातों में शरीर से जीव के प्रदेशों का बाहर निकलना होता है। इन सब समुद्घातों का काल अन्तर्मुहूर्त का होता है।

પહેલેથી બાંધી રાખ્યાં હોય છે, તેમને નષ્ટ કરે છે અને તેમનો નાશ કર્યા પછી તે આત્મા યથાસૂક્ષ્મ વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે. કહ્યું પણ છે- (वेउव्वय समुग्घाएणं समोहन्नइ, संखेज्जाइ जोयणाइं दंडं निसिरइ, अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ अहासुहुमे पोग्गले आइयंति) જીવ વૈક્રિય સમુદ્ઘાત કરે છે તે સમુદ્ઘાતમાં તે પોતાના આત્મપ્રદેશોને દંડાકારે સંખ્યાત યોજન સુધી લંબાવે છે, યથા બાદર પુદ્ગલોની તે પરિશાટના કરે છે અને યથાસૂક્ષ્મ પુદ્ગલોને તે ગ્રહણ કરે છે એજ પ્રમાણે તૈજસ સમુદ્ઘાત અને આહારક સમુદ્ઘાત વિષે પણ સમજવું તે બધા સમુદ્ઘાતોમા આત્મપ્રદેશોનું શરીરમાંથી બહાર નિર્ગમન (નીકળવાની ક્રિયા) થાય છે તે બધા સમુદ્ઘાતોનો સમય અન્તર્મુહૂર્તનો હોય છે. ફક્ત કેવલિ —નો કાળ આઠ સમયનો કહ્યો છે.

समुद्घाता एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियाणां मारणान्तिक एव भवन्ति । वायुनारकाणांतु चत्वारः समुद्घाताः । देवानां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां च पञ्च । मनुष्याणां तु सप्त समुद्घाता भवन्तीति। एकेन्द्रियादारभ्य मनुष्यपर्यन्त समुद्घातेषु अल्पत्वबहुत्वा विदर्शयितुमाह 'जाव इत्यादि " जाव वेमाणियाणं ' यावत् वैमानिकानाम् एकेन्द्रियादारभ्य वैमानिकपर्यन्तं समुद्घातप्रकरण प्रज्ञापनातो विज्ञेयमिति " कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं " कषायसमुद्घाताः अल्पबहुत्वं च वक्तव्यम् । सप्तसमुद्घाता भवन्ति। तत्र वेदनासमुद्घात पूर्वं कथितः, अन्ये च षट् कषायसमुद्घा-

सिर्फ एक केवलि समुद्घात ही ऐसा है कि जिस का काल आठ समय का कहा गया है । एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवों के आदि के तीन अर्थात्–वेदनीय , कषाय और मारणान्तिक समुद्घात होते हैं । वायु कायिक जीवों के और नारक जीवों के आदिके चार अर्थात्–पूर्वोक्त तीन और चौथा वैक्रिय समुद्घात होते हैं । देव और पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च इन के पांच अर्थात् पूर्वोक्त चार और पांचवा तैजस समुद्घात होते है । मनुष्यों के सातों ही समुद्घात होते है ।

एकेन्द्रिय से लेकर मनुष्यपर्यन्त जो समुद्घात कहे गये है उनमें सूत्रकार अल्पबहुत्व कहने के लिये (जाव वेमाणियाण) ऐसा कहते हैं- इसका तात्पर्य यह है कि एकेन्द्रियसे लेकर वैमानिक देवों तक समुद्घात का प्रकरण प्रज्ञापना सूत्र में कहा गया है सो वहांसे यह प्रकरण जान लेना चाहिये । ' कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं ' कषाय समुद्घात तथा अल्प बहुत्व कहना चाहिये समुद्घात सात होते हैं । इनमें वेदना

ओेइन्द्रिय अने विकेन्द्रिय જીवेां शरीरनाना त्रण-એટલે કે વેદનીય, કષાય અને મારણાન્તિક–સમુદ્ઘાત કરે છે વાયુકાયિક જીવો તથા નારક જીવો ચાર જાતના ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે–એટલે કે પૂર્વોક્ત ત્રણ સમુદ્ઘાત અને ચોથો વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરે છે દેવ અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ શરીરનાના પાંચ-પૂર્વોક્ત ચાર અને તૈજસ–સમુદ્ઘાત કરે છે મનુષ્યો સાતે સાત સમુદ્ઘાત કરે છે

ઓેઇન્દ્રિયથી લઈને મનુષ્ય પર્યન્તના જે સમુદ્ઘાતો કહ્યા છે તેમાં અલ્પ બહુત્વ બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે–(जाव वेमाणियाण) તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઓેઇન્દ્રિયથી લઈનેવૈમાનિક દેવો સુધીના જીવનું સમુદ્ઘાતનું પ્રકરણ પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં આપેલુ છે તો ત્યાંથી તે પ્રકરણમાં આપ્યા પ્રમાણે જાણ લઈલેવું (कसाय समुग्घाया अप्पाबहुय) કષાય સમુદ્ઘાત તથા અલ્પબહુત્વ કહેવુ જોઈએ. સમુદ્ઘાત સાત છે તેમાંથી વેદના સમુદ્ઘાતના વિષયમાં આગળ

तमारणान्तिकसमुद्घात–वैक्रियसमुद्घात-तैजससमुद्घाताहारकसमुद्घातकेवलिसमुद्घातभेदात्. अत्र प्रज्ञापनासूत्रे षट्त्रिंशत्तमं चरमं समुद्घातपदं ज्ञातव्यं केवलं छाद्मस्थिकसमुद्घातो नाध्येतव्यः अनेनैव प्रकारेण यावद्वैमानिकानां वैमानिक पर्यन्तं ज्ञातव्यम् तथा अल्पबहुत्वञ्चापि तत्रत्यमेव विज्ञेयमिति समुदितार्थः इति.

गौतमः पुनः पृच्छतिः 'अणगारस्स इत्यादि " अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो ' अनगारस्य खलु भदन्त ! भावितात्मनः " केवलिसमुग्घाए " केवलि समुद्घातो भवति। अस्य वर्णनं केवलिसमुद्घातगतं प्रज्ञापनासूत्रस्य षट्त्रिंशत्तमसमुद्घातपदोक्तं सर्वं संग्राह्यम् किपत्पर्यन्तमित्याह ' जाव' इति=यावत्–तथाहि–

समुद्घात पहिले कहा गया हैं) अन्य और छह (कषायसमुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात, वैक्रियसमुद्घात तैजस–समुद्घात आहारकसमुद्घात और केवलिसमुद्घात) ये समुद्घात हैं। प्रज्ञापना - सूत्र में अन्तिम छत्तीसवां समुद्घात पद हैं–सो केवल छद्मास्थिक समुद्घात यहां नहीं लेना चाहिये। इसी तरह से वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिये। तथा अल्प बहुत्व भी प्रज्ञापना सूत्र से ही जान लेना चाहिये। गौतम स्वामी भगवानसे पुनः पूछते हैं कि (अणगारस्स णं भंते भावियप्पणो केवलिसमुग्घाए) हे भदन्त ! भावितात्मा अनगार के केवलि समुद्घात होता हैं। इसका वर्णन केवलि समुद्घात प्रकरणगत प्रज्ञापना सूत्र के छत्तीसवें समुद्घात पदमें किया गया हैं। सो वह सब वर्णन यहां ग्रहण कर लेना चाहिये। यह वर्णन कहां तक का ग्रहण करना चाहिये इसके लिये कहा गया है कि (जाव) तात्पर्य यह है कि (तत्थसिद्धो भवइ–तेणं तत्थ सिद्धा भवंति, असरीरा जीवघणा णाणदं

કહેવામા આવ્યુ છે. બાકીના છ સમુદ્ઘાત નીચે પ્રમાણે છે–કષાય સમુદ્ઘાત, મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, વૈક્રિયસમુદ્ઘાત, તૈજસસમુદ્ઘાત, આહારકસમુદ્ઘાત અને કેવલિસમુદ્ઘાત. પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં છેલ્લું સમુદ્ઘાતપદ છે–પણ છાદ્મસ્થિકસમુદ્ઘાત અહીં ગ્રહણ કરવાનો નથી એજ પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્ત સમજી લેવું, તથા અલ્પબહુત્વ પણ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાથી જાણી લેવુ ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે (अणगारस्स णं भंते! भावियप्पणो केवलिसमुग्घाए) હે ભદન્ત ! ભાવિતાત્મા અણગારને કેવલિ સમુદ્ઘાત થાય છે ? તેનુ વર્ણન કેવલિસમુદ્ઘાત પ્રકરણમા પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના છત્રીસમા સમુદ્ઘાત પદમાં કર્યું છે તો તે સમસ્ત વર્ણન અહી ગ્રહણ કરવું, જોઈએ તે વર્ણન કયા સુધી ગ્રહણ કરવું જોઈએ તે બતાવવા માટે કહેવામા આવ્યુ છે કે (तत्थसिद्धो भवइ–तेण तत्थ सिद्धा भवति

"तत्थसिद्धो भवइ तेण तस्य सिद्धा भवंति असरीराजीवघणादंसणणाणोवउत्ता णिट्ठियट्ठाणीरया णिरेयणा विइमिरा विसुद्धा" इति संग्राह्यं "सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति" इत्यनेन संयोजनीयम्। ते सिद्धाःशाश्वताऽनागताद्धा कालपर्यंतं तत्र तिष्ठन्ति इति भावः।

प्रज्ञापनासूत्रस्य षट्त्रिंशत्तमसमुद्घातविषयस्य सविस्तरं विवेचनं कृतमस्ति संक्षेपेण प्रदर्श्यते—"इह सप्तसमुद्घाता तद्यथा वेदनाकषायमरणवैक्रिय तैजसाहारककेवलिसमुद्घातभेदात्।

वेदनासमुद्घातः असद्वेद्यकर्माश्रयः १। कषायसमुद्घातः कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्माश्रयः २। मारणान्तिकसमुद्घातोऽन्तर्मुहूर्तशेषायुषि कर्माश्रयः ३। वैक्रियतैजसाहार

सणोवउत्ता णिट्ठियट्ठा, णीरया, णिरेयणा, विइमिरा विसुद्धा) इस पाठ को लेकर (सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति) इस पाठ के साथ जोड लेना चाहिये। इससे यह अर्थ होता है कि वे सिद्ध शाश्वत अनागताद्धकाल पर्यन्त रहते हैं।

प्रज्ञापनासूत्र के छत्तीसवें समुद्घात पद में समुद्घात विषय का विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है सो वह संक्षेप से यहां प्रकट किया जाता है—यहां समुद्घात सात कहे गये हैं—एक वेदना समुद्घात, दूसरा कषाय समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चतुर्थ वैक्रिय समुद्घात, पांचवां तैजस समुद्घात, छट्ठा आहारकसमुद्घात और सातवां केवलिसमुद्घात।

इनमें जो वेदनासमुद्घात है वह असातावेदनीय कर्म के आश्रय को लेकर होता है १। कषायसमुद्घात कषायनामक चारित्र मोहनीय कर्म के आश्रय को लेकर होता है २। मरणान्तिकसमुद्घात अंतर्मुहूर्त

असरीराजीवघणा णाणद सणोवउत्ता णिट्ठियट्ठा, णीरया णिरेयणा विइमिरा विसुद्धा) આ પાઠથી લઈને (सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठंति) આ પાઠની સાથે જોડી લેવુ જોઈએ. તેથી એવો અર્થ થાય છે કે તેઓ સિદ્ધ શાશ્વત અનાગતાદ્ધાકાલ પર્યન્ત રહે છે

પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રના છત્રીસમાં સમુદ્ઘાત પદમા સમુદ્ઘાતો વિષે પર્યન્ત વિસ્તારથી કરવામા આવ્યુ છે તો તેનુ અહી સંક્ષિપ્ત પર્યન્ત કરવામાં આવે છે અહી સમુદ્ઘાત સાત કહ્યા છે (૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાયસમુદ્ઘાત (૩) મરણસમુદ્ઘાત, (૪) વૈક્રિયસમુદ્ઘાત (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત આહારક સમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત

(૧) વેદના સમુદ્ઘાત અસાતાવેદનીય કર્મનો આધાર લઈને થાય છે (૨) કષાય સમુદ્ઘાત કષાય નામના ચારિત્ર મોહનીય કર્મને આધારે થાય છે (૩) મરણાન્તિક સમુદ્ઘાત અંતર્મુહૂર્ત પ્રમાણ આયુ બાકી રહે ત્યારે થાય છે તેથી

काः समुद्घाताः यथासंख्य वैक्रियशरीरतैजसशरीराहारकशरीरनामकर्माश्रयाः ६। केवलिसमुद्घातः सदसद्वेद्यशुभाशुभनामोच्चनीचैर्गोत्रिकर्माश्रयः७। तत्र वेदनासमुद्घातगतआत्मा असातावेदनीयकर्मपुद्गलानां परिशाटं करोति, तथाहि वेदनाभीडितो जीवः स्वप्रदेशात् अनन्तानन्तकर्मस्कन्धवेष्टितान् शरीराद्बहिरपि निक्षिपति। तैश्च प्रदेशैर्वदनजठरादिरंध्राणि कर्मस्कन्धाद्यवान्तराला निचापूर्य्यायामतो विष्कम्भ-

---

प्रमाण आयु शेष रहने पर कियाजाता है अतःयह अन्तर्मुहूर्त शेषायुकर्म के आश्रय को लेकर किया जाता है३। वैक्रियसमुद्घात४, तैजससमुद्घात५, आहारकसमुद्घात६ यथाक्रम से वैक्रिय शरीर,तैजसशरीर और आहारक शरीर नामकर्म के आश्रय को लेकर किये जाते हैं। केवलि समुद्घात साता वेदनीय,और असाता वेदनीय शुभनाम अशुभनाम,उच्चगोत्र तथा नीचगोत्र इन तीन अघातिया कर्मों के आश्रय को लेकर किया जाता है ७। तात्पर्य इस कथन का यह है कि वेदना समुद्घात में रहा हुआ आत्मा असाता वेदनीय कर्म के पुद्गलों का नाश करता है–अर्थात्–जब कोई जीव वेदना से अत्यंत पीडित हो रहा हो ऐसी स्थिति में वह अपने आत्मा के प्रदेशों को कि जिनपर अनंतानंत कर्मपुद्गल चिपके रहते हैं अपने शरीर से बाहर निकालता है–उन्हें फैलाता है। वे प्रदेश, मुख, जठर आदि के रन्ध्रों छिन्द्रों को और कर्मस्कन्ध आदि के अंतराल को भरकर, अर्थात्–इन सब के छिन्द्रों में अन्तराल में भरकर–व्याप्त हो कर–आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा शरीरमात्रक्षेत्र में व्याप्त हो जाते

તે અનતર્મુહૂર્તશેષ આયુકર્મને આધારે કરાય છે (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત, (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત અને (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અનુક્રમે વૈક્રિય શરીર તૈજસ શરીર અને આહારક શરીર નામકર્મને આધારે કરાય છે. (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય, શુભનામ અને અશુભનામ, ઉચ્ચગોત્ર અને નીચગોત્ર, એ ત્રણ અઘાતિયા કર્મોના આધારે કરાય છે, કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે વેદના સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા અસાતા વેદનીય કર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે. એટલે કે વેદના સમુદ્ઘાત કરતી વખતે વેદનાથી અત્યત પીડાતો જીવ, જેના પર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલો ચોટી રહેલા હોય છે એવા પોતાના આત્મપ્રદેશોને બહાર કાઢે છે-તેમને ફેલાવે છે તે આત્મપ્રદેશો, મુખ, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્મસ્કંધ આદિના અંતરાલોને ભરી દઈને એટલે કે તે સૌના છિદ્રોમા અને અંતરાલોમાં વ્યાપીને–લંબાઇ અને પહોળાઇની અપેક્ષાએ શરીરમાત્ર વ્યાપી જાય છે

शरीरमात्र क्षेत्रमभिव्याप्यान्तर्मुहूर्तं यावद्व्यतिष्ठते। तस्मिन्नन्तर्मुहूर्ते प्रभूतान् असातावेदनीयकर्मपुद्गलान् परिशाटं करोति१। कषायसमुद्घात समवहत आत्मा कषाय नामकचारित्रमोहनीयकर्मपुद्गलान् परिशाटं करोति, तथाहि-कषायोदय समाकुलो जीवः स्वप्रदेशान् शरीराद्बहिर्निसिषति, तै प्रदेशै वदनोदरादिरन्ध्राणि कर्मस्कन्धा पान्तरालानिचापूर्य्यापामतो विस्तारतश्चदेहमात्रं क्षेत्रमभिव्याप्यावस्थितो भवति तथाभूतश्च प्रभूतान् कषायकर्मपुद्गलान् परिशाटयति २। एव मरणसमुद्घात गतो जीवः आयु कर्मपुद्गलान् शाटयति विशेषः केवल मरणसमुद्घातगतो विनिर्ग-

---

हैं और वहाँ पर वे एक अन्तर्मुहूर्तसमय तक ठहरे रहते हैं। इस अन्तर्मुहूर्त काल में ये प्रभूत असातावेदनीय कर्मपुद्गलों की निर्जरा कर डालता है। इस क्रिया के करने का नाम ही वेदनासमुद्घात है १। कषाय समुद्घात में रहा हुआ आत्मा कषायनामक चारित्रमोहनीय कर्मपुद्गलों का नाश करता है, अर्थात्-अब जीव कषाय के उदय से अत्यन्त आकुल व्याकुल हो उठता है, तब वह अपने प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर उन्हें फैलाता है। यह उन प्रदेशों से वदन, उदर आदि के छिद्रों को और कर्मस्कन्ध आदि के अन्तराल को पूर्णकर (भरकर) आयाम और विस्तार की अपेक्षा देहमात्र क्षेत्र को व्याप्त कर ठहरता है। यह इस स्थिति में एक अन्तर्मुहूर्त तक ही रहता है। इतने समय में यह कषायवेदनीय कर्म के पुद्गलों को अपने ऊपर से बिखेर देता है-नष्ट कर देता है २। इस तरह मरणसमुद्घात में रहा हुआ आत्मा आयुकर्म के पुद्गलों को नष्ट करता है। अर्थात्-अपने सम्बन्धमान

અને ત્યાં તેઓ એક અંતર્મુહૂર્ત સમય સુધી રહે છે તે અન્તર્મુહૂર્ત કાળમાં તેઓ વધારે જ અસાતાવેદનીય કર્મપુદ્ગલોની નિર્જરા કરી નાખે છે આ ક્રિયાનું નામજ વેદના સમુદ્ઘાત છે

કષાય સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા કષાય નામના ચારિત્રમોહનીય કર્મ પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે જ્યારે કષાયના ઉદયથી જીવ અત્યંત આકુળ-વ્યાકુળ બની જાય છે, ત્યારે તે પોતાના પ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને ફેલાવે છે તે વદન ઉદર આદિના છિદ્રોને તથા કર્મસ્કંધના અંતરાલોને તે આત્મપ્રદેશોથી ભરી દઈને લંબાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ શરીર પ્રમાણ ક્ષેત્રમાં વ્યાપી જાય છે એ સ્થિતિમાં તે એક અંતર્મુહૂર્તકાળ સુધીજ રહે છે એટલા કાળમા તે કષાયવેદનીય કર્મના પુદ્ગલોની નિર્જરા કરી નાખે છે

એજ રીતે મરણસમુદ્ઘાતમાં રહેલો આત્મા આયુકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે તે સમુદ્ઘાત કરતો છતો પોતે જેટલું આયુષ્ય ક્ષેત્રવર્તી

काः समुद्घाताः यथासंख्यं वैक्रियशरीरतैजसशरीराहारकशरीरनामकर्माश्रयाः ६। केवलिसमुद्घातः सदसद्वेद्यशुभाशुभनामोच्चनीचैर्गोत्रिकर्माश्रयः७। तत्र वेदनासमुद्घातगतआत्मा असातावेदनीयकर्मपुद्गलानां परिशाटं करोति, तथाहि वेदनापीडितो जीवः स्वप्रदेशात् अनन्तानन्तकर्मस्कन्धवेष्टितान् शरीराद्बहिरपि निक्षिपति। तैश्च प्रदेशैर्वदनजठरादिरध्रणि कर्मस्कन्धाद्यवान्तराला निचापूर्य्यायामतो विष्कम्भ-

---

प्रमाण आयु शेष रहने पर कियाजाता है अतःयह अन्तर्मुहूर्त शेषायुकर्म के आश्रय को लेकर किया जाता है३। वैक्रियसमुद्घात४, तैजससमुद्घात५, आहारकसमुद्घात६ यथाक्रम से वैक्रिय शरीर,तैजसशरीर और आहारक शरीर नामकर्म के आश्रय को लेकर किये जाते हैं। केवलि समुद्घात साता वेदनीय,और असाता वेदनीय शुभनाम अशुभनाम,उच्चगोत्र तथा नीचगोत्र इन तीन अघातिया कर्मों के आश्रय को लेकर किया जाता है ७। तात्पर्य इस कथन का यह है कि वेदना समुद्घात में रहा हुआ आत्मा असाता वेदनीय कर्म के पुद्गलों का नाश करता है–अर्थात्–जब कोई जीव वेदना से अत्यंत पीडित हो रहा हो ऐसी स्थिति में वह अपने आत्मा के प्रदेशों को कि जिनपर अनंतानंत कर्मपुद्गल चिपके रहते हैं अपने शरीर से बाहर निकालता है–उन्हें फैलाता है। वे प्रदेश, मुख, जठर आदि के रन्ध्रों छिन्द्रों को और कर्मस्कन्ध आदि के अंतराल को भरकर, अर्थात्–इन सब के छिन्द्रों में अन्तराल में भरकर–व्याप्त हो कर–आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा शरीरमात्रक्षेत्र में व्याप्त हो जाते

તે- અનતર્મુહૂર્તશેષ આયુકર્મને આધારે કરાય છે (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત, (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત અને (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અનુક્રમે વૈક્રિય શરીર તૈજસ શરીર અને આહારક શરીર નામકર્મને આધારે કરાય છે (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય, શુભનામ અને અશુભનામ, ઉચ્ચગોત્ર અને નીચગોત્ર, એ ત્રણ અઘાતિયા કર્મોના આધારે કરાય છે, કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વેદના સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા અસાતા વેદનીય કર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે વેદના સમુદ્ઘાત કરતી વખતે વેદનાથી અત્યંત પીડાતો જીવ, જેના પર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલો ચોટી રહેલાં હોય છે એવા પોતાના આત્મપ્રદેશોને બહાર કાઢે છે-તેમને ફેલાવે છે તે આત્મપ્રદેશો, મુખ, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્મસ્કંધ આદિના અંતરાલોને ભરી દઈને એટલે કે તે સૌના છિદ્રોમા અને અંતરાલોમાં વ્યાપીને–લંબાઇ અને પહોળાઇની અપેક્ષાએ શરીરમાત્ર-વ્યાપી જાય છે

पुद्गलान् पूर्ववदेव शाटयति ४ एवमेव तैजसाहारकसमुद्घातावपि चिन्तनीयौ नवरं तैजससमुद्घातः तेजोलेश्यापरिनिर्गमनकाले भवति, स च तैजसनामकर्मपुद्गलानां शातने कारणम् ५। आहारकसमुद्घातगतस्तु आहारकशरीरनामकर्मपुद्गलान् परिशाटयति ६। कषायसमुद्घातगतो जीवः सदसद्वेद्यादिकर्मपुद्गलानां परिशाटनं करोति ७। नारकद्वीपानामाद्याश्चत्वारः समुद्घाता भवन्ति। असुरकुमाराद्दीनां सर्वेषामपि देवानामाद्या पञ्चसमुद्घाता भवन्ति। वायुकायवर्जितैकेन्द्रियविकलेन्द्रियाणामाद्यास्त्रयः समुद्घाता भवन्ति। वायुकायिकानामाद्यास्त्रयः सह वैक्रियसमुद्घातेन चत्वारः समुद्घाता भवन्ति। पञ्चेन्द्रियतिर्यग्-

---

शरीर नाम कर्म के पुद्गलों की निर्जरा करता है ४। इसी तरह से तैजस-समुद्घात ५ और आहारकसमुद्घात ६ भी जानना चाहिये परन्तु विशेषता यह है, कि तैजस समुद्घात तेजोलेश्या के विनिर्गम-निकलने के काल में होता है, और इसके वश से जीव तैजस नामकर्म के पुद्गलों का विनाश करता है अतः यह तैजस नामकर्म के विनाश करनेमें कारण होता है ६। आहारक समुद्घातमें रहा हुआ जीव आहारक शरीर नामकर्मके पुद्गलों की परिशातना करता है ७ नारक जीवों के आदि के चार समुद्घात होते हैं असुरकुमार आदि सब देवों के आदि के पांच समुद्घात होते हैं। वायुकायिक को छोडकर एकेन्द्रिय जीवो के और विकलेन्द्रिय जीवों के आदि के तीन समुद्घात होते हैं। वायुकायिक जीवों के पहिले के तीन समुद्घात और चौथा वैक्रिय समुद्घात इस तरह चार समुद्घात होते हैं। पंचेन्द्रियतिर्यंचों के आदि

પ્રમાણે વૈજસ સમુદ્ઘાત અને આહારક સમુદ્ઘાતના વિષયમાં પણ સમજવું પણ તેમાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે–તૈજસ સમુદ્ઘાત તેજોલેશ્યા નિકળવાના સમયે થાય છે અને તેના પ્રભાવથી જીવ તૈજસ નામકર્મનાં પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે તેથી તે સમુદ્ઘાત તૈજસ નામકર્મના વિનાશમા કારણ ભૂત બને છે (૬) આહારક સમુદ્ઘાત કરતો જીવ આહારક શરીર–નામકર્મની નિર્જરા કરે છે

નારક જીવો સમુદ્ઘાતના ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે અસુરકુમાર આદિ સઘળા દેવો સમુદ્ઘાતના પાંચ સમુદ્ઘાત કરે છે વાયુકાયિક સિવાયના એકેન્દ્રિય જીવો અને વિકલેન્દ્રિય જીવો સમુદ્ઘાતના ત્રણ સમુદ્ઘાત કરે છે. વાયુકાયિક જીવો સમુદ્ઘાતના ત્રણ અને ચોથો વૈક્રિય એમ ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો સમુદ્ઘાતના પાંચ સમુદ્ઘાત કરે છે મનુષ્યો સઘળ

स्वप्रदेशो वदनोदरादिरंध्राणि स्कन्धाद्यपान्तरालानि चापूर्य्य विष्कम्भबाहल्याभ्यां स्वशरीरप्रमाणमायामतः स्वशरीरव्यतिरेकतोऽङ्गुलासंख्येयभागम् उत्कर्षतोऽसंख्येयानि योजनानि एकदिशि क्षेत्रमभिव्याप्य वर्तते इति ३। वैक्रियसमुद्घातगतो जीवस्तु आत्मप्रदेशान् शरीराद्बहिर्निष्कास्य शरीरविष्कंभबाहल्यमानम् आयामतः संख्येययोजनप्रमाणं दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्म-

आयुकर्म को भोगते हुए किसी जीवका आयुकर्म एक अन्तर्मुहूर्त प्रमाण जब बाकी रहता है तब वह अपने आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकालता है। बाहर निकाल कर वह वदन, उदर आदि के छिद्रों को और कर्मस्कन्धादिक के अंतराल को उनसे पूरित कर फिर वह अपने शरीर की अपेक्षा कम से कम अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण लंबी और अधिक से अधिक असंख्यातयोजन लंबी ऐसी एक दिशा संबंधी जगह में व्याप्त होकर एक अन्तर्मुहूर्ततक ठहरा रहता है। इतने समय में वह आयुष्य कर्म के अनेक पुद्गलों को नष्ट कर देता है। इसका नाम मरण समुद्घात है ३। वैक्रियसमुद्घात में रहा हुवा जीव वैक्रिय शरीर नाम कर्म के पुद्गलों का नाश करता है, अर्थात्-वैक्रियसमुद्घात वाला जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहिर निकाल कर उन्हें शरीर का जितना विष्कंभ और बाहल्य होता है उतने प्रमाण वाले और आयाम की अपेक्षा से संख्यात योजन प्रमाणवाले दण्ड के रूप में बनाता है। बनाकर फिर वह यथास्थूल वैक्रिय

હોય છે તેટલા આયુકર્મને ભોગવતા ભોગવતા જ્યારે એક અંતર્મુહૂર્ત પ્રમાણ આયુકર્મ બાકી રહે ત્યારે પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢે છે અને તે આત્મપ્રદેશોથી મુખ, ઉદર આદિના છિદ્રોને, તથા કર્મસ્કન્ધ આદિના અંતરાલોને ભરી દઈને પોતાના શરીરની અપેક્ષાએ ઓછામાં ઓછા અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ લાંબી અને વધારેમા વધારે અસંખ્યાત યોજન લાંબી એવી એક દિશા સંબંધી જગ્યામા વ્યાપીને એક અંતર્મુહૂર્ત કાળ સુધી તે સ્થિતિ રહે છે એટલા સમયમા તે આયુકર્મના અનેક પુદ્ગલોનો નાશ કરી નાખે છે તે ક્રિયાનું નામ મરણસમુદ્ઘાત છે. વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરતો જીવ વૈક્રિય શરીરનામકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે વૈક્રિયસમુદ્ઘાત વાળો જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને, તેમને શરીર પ્રમાણ વિષ્કંભ (પહોળાઇ) અને બાહલ્યવાળા અને સંખ્યાતયોજન પ્રમાણ લાંબા દંડરૂપ બનાવીને વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે. એમ

पोनिकानामाद्याः पञ्चसमुद्घाता भवन्ति । मनुष्याणां तु सप्तैव समुद्घाता भवन्तीति प्रज्ञापनासूत्रस्य संक्षिप्तो विचारः इति ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलित-ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक- वादिमानमर्दक-श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचिता श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतकस्य द्वितीयोद्देशकः समाप्तः

के पांच समुद्घात होते हैं। मनुष्यों के सात समुद्घात होते हैं- ऐसा प्रज्ञापना सूत्र का यह संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किया है। इस तरह उपर्युक्त यंत्रसे यह स्पष्ट हो जाता है कि किस समुद्घातको कौन जीव करता है, समुद्घात का काल कितना है, किस कर्म से समुद्घात होता है और किस समुद्घात करने का क्या परिणाम-फल है ॥१॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवती सूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्या के द्वितीय शतक के दूसरा उद्देशक समाप्त

સમુદ્ઘાત કરે છે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં કેવલિ આદિની બધી સંક્ષિપ્તમાં બાબતમાં બતાવી છે

એ ઉપરથી એ સ્પષ્ટ થાય છે કે કયો સમુદ્ઘાત કયો જી। કરે છે, તેનો કાળ કેટલો હોય છે, કયા કર્મથી સમુદ્ઘાત થાય છે, અને કયા સમુદ્ઘાતનું શું ફળ મળે છે ॥ ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્ર ની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો બીજો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો

समुद्घातनाम	केषां भवति	कियान् समयः	केन कर्मणा	परिणामः
१ वेदनासमुद्घातः	सर्वछद्मस्थ जीवानाम्	अन्तर्मुहूर्तम्	असातावेदनीय कर्मतः	असातावेदनीयकर्माणूनां विनाशः
२ कषायसमुद्घातः	,,	,,	कषायनामकचारित्र मोहनीय कर्मतः	कषायकर्माणूनां विनाशः
३ मरणसमुद्घात.	,,	,,	आयुष्य कर्मतः	आयुष्यकर्माणूनां विनाशः
४ वैक्रियसमुद्घात.	नैरयिक भवनपति-व्यन्तर० ज्योतिष्क-वैमानिकपञ्चेन्द्रियणाम् तिर्यग् छद्मस्थमनुष्याणाम्	,,	वैक्रियनामकर्मतः	वैक्रियशरीर नामकर्मणां प्राचीन पुद्गलानां विनाशस्तथा नवीन-पुद्गलानां ग्रहणम्
५ तैजससमुद्घातः	भवनपतिव्यंतर ज्योतिष्क वैमानिकपञ्चेन्द्रियतिर्यक् छद्मस्थमनुष्याणाम्	,,	तैजस शारीरनाम कर्मतः	तैजस शरीरनामकर्मपुद्गलानां विनाशः
६ आहारकसमुद्घातः	मनुष्याणां चतुर्दश पूर्व धराणाम्	,,	आहारक शरीर नाम कर्मतः	आहारकशरीरनामकपुद्गलानां विनाशः
७ केवलिसमुद्घातः	मनुष्याणां केवलज्ञान-वताम्	अष्टौ समयाः	आयुष्यवर्जित त्रिभ्योऽ-घातिकर्मभ्यः	आयुष्यवर्ज त्रयाणामघातिकर्म पुद्गलानां विनाशः

पिता॥ तेषु च समुद्घातेषु मारणान्तिक समुद्घातोऽपि विद्यते। मारणान्तिक समुद्घातेन च समवहता केचन पृथिवीषु च समुत्पद्यन्ते इतिजीवोत्पत्तिस्थानभूता पृथिव्यः इतिपृथिवीमतिपादनं तथा द्वितीयशतकस्य द्वारगाथायां "पुढवी" इति कथित तत्प्रतिपादनञ्च भवतीत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्य तृतीयोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम् "कण्ण भंते पुढवीओ" इत्यादि ॥ सू०१ ॥

मूलम्—कइणं भंते पुढवीओ पण्णत्ताओ, जीवाभिगमे नेरइयाण जो बितिओ उद्देसो सो णेयव्वो पुढवी ओगाहित्ता, निरया सठाणमेव बाहल्ल " विक्खभपरिक्खेवो वण्णो गंधोय फासोय ॥ १ ॥ जाव किं सव्वे पाणा४ उव वन्नपुव्वा, इंता गोयमा ! असइ अदुवा अणतक्खुत्तो पुढवी उद्देसो ॥सू०१॥

उद्देशक के साथ इस प्रकार से सम्बन्ध है—द्वितीय उद्देशक में समुद्घातों की निरूपणा हुई है। इन समुद्घातों में एक मारणान्तिक समुद्घात भी है। मारणान्तिक समुद्घात करने वाले कितनेक जीव पृथिवीयों में उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये जीवों की उत्पत्ति के स्थानभूत उन पृथिवियों का प्रतिपादन करना तथा द्वितीयशतक की द्वारगाथा में प्रतिपादित पृथिवी का निरूपण करना यह प्रसङ्गोपात्त ही है अतः इस सम्बन्ध को लेकर इस तृतीय उद्देशक का प्रारंभ हुआ है। इसका सर्व प्रथम यह सूत्र है—(कइणं भंते) इत्यादि।

સંબંધ છે—બીજા ઉદ્દેશકમાં સમુદ્ઘાતોની નિરૂપણા કરવામાં આવી છે તે સમુદ્ઘાતોમાં એક મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત પણ છે મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરનાર કેટલાક જીવો નરકોમાં (પૃથ્વીઓમાં) ઉત્પન્ન થાય છે તેથી જીવોની ઉત્પત્તિના સ્થાન રૂપ તે પૃથ્વીઓનું પ્રતિપાદન કરવાનું તથા બીજા શતકની દ્વારગાથામાં પ્રતિપાદિત પૃથ્વીનું નિરૂપણ કરવાનું પ્રસંગોચિત થાય છે. તો એ પ્રકારનો સંબંધ હોવાથી આ ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરવામાં આવ્યો છે તેનું સૌથી પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—" कइणं भंते ! " ઇત્યાદિ

॥ अथ द्वितीयशतके तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

तृतीयोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविचारः कतिपृथिव्यः सन्ति? इतिप्रश्नः। सप्तपृथिव्यः रत्नप्रभा. शर्कराप्रभा वालुका-प्रभा. पंकप्रभा. धूमप्रभा. तमःप्रभा. तमस्तमःप्रभा इत्युत्तरम्। सर्वे जीवाः पूर्वं नरकेऽनेकवारं समुत्पन्नाः किमिति गौतमस्य प्रश्नः, सर्वे अनेकवारं नरके समुत्पन्ना इत्युत्तरं भगवतः। जीवाजीवाभिगमसूत्रीय द्वितीयोद्देशकस्यातिदेशः। उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति॥

द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशकं समाप्य तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते। अस्य तृतीयोद्देशकस्य द्वितीयोद्देशकेन सहायमभिसंबन्धः-द्वितीयोद्देशके समुद्घाताः निरू-

---

॥ दूसरे शतक के तीसरे उद्देशक का प्रारंभ ॥

तृतीय उद्देशक के विषयों का विवरण संक्षेपमे इस प्रकार से है-पृथिवी कितनी हैं ऐसा प्रश्न।

पृथिवी सात हैं–रत्नप्रभापृथिवी १, शर्कराप्रभापृथिवी २, वालुकाप्रभापृथिवी ३, पंकप्रभापृथिवी ४, धूमप्रभापृथिवी ५, तमःप्रभापृथिवी ६, तमस्तमःप्रभापृथिवी ७, ऐसा उत्तर। समस्त जीव क्या पहिले अनेक बार नरकों में उत्पन्न हुए हैं ऐसा गौतम का प्रश्न। हां, समस्त जीव पहिले अनेक बार नरकों में उत्पन्न हुए हैं ऐसा भगवान् का उत्तर। जीवाजीवाभिगमसूत्र संबंधी द्वितीय उद्देशक का अतिदेश, उद्देशक की परिसमाप्ति।

द्वितीय शतक में द्वितीय उद्देशक को समाप्त करके सूत्रकार अब तीसरे उद्देशक को प्रारंभ करते हैं। इस तृतीय उद्देशक का द्वितीय

બીજા શતકના ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ—

ત્રીજા ઉદ્દેશકના વિષયોનું સક્ષિપ્ત વર્ણન આ પ્રમાણે છે.

પ્રશ્ન–પૃથ્વી કેટલી છે?

ઉત્તર—પૃથ્વી સાત છે–(૧) રત્નપ્રભાવપૃથ્વી (૨) શર્કરાપ્રભા (૩) વાલુકાપ્રભા (૪) પંકપ્રભા (૫) ધૂમપ્રભા (૬) તમઃપ્રભા (૭) તમસ્તમાપ્રભા પૃથ્વી

ગૌતમનો પ્રશ્ન–શું સમસ્ત જીવો પહેલાં અનેકવાર નરકોમાં ઉત્પન્ન થયા હોય છે? ઉત્તર–હા સમસ્ત જીવો અનેકવાર નરકોમા ઉત્પન્ન થાય હોય છે. જીવાજીવાભિગમ સૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકનો અતિદેશ–ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ.

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકની પૂર્ણાહુતિ કરીને હવે સૂત્રકાર ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે આ ત્રીજા ઉદ્દેશકનો બીજા ઉદ્દેશક સાથે આ પ્રકારનો

टीका-"कइणं भंते पुढवीओ पण्णत्ताओ" कति खलु भदन्त! पृथिव्य नारक पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः ? हे भदंत ! नारकजीवानामाधारभूता पृथिव्यः कतिसंख्यकाः सन्तीतिप्रश्नः । भगवानाह-"जीवाभिगमे" इत्यादि "जीवाभिगमे नेरयियाण जो बितिओ उद्देसो सो नेयव्वो' जीवाभिगमे नैरयिकाणां यो द्वितीयउद्देशकः स नेतव्यः=ज्ञातव्य अत्रार्थे संग्रहगाथेयम् 'पुढवी' इत्यादि तस्मिन् द्वितीयोद्देशके पृथिवी संबन्धिविचारः, नारकविषयो विचारः, नारकाणां संस्थानसंबन्धी विचारः। तथा नरकपृथिव्याः स्वरूपादिसकीर्तनंचेतिसर्वं जीवाभिगम द्वितीयोद्देशक एव

टीकार्थ-(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) हे भदन्त नारक पृथिवियां कितनी कही गई हैं ? इस प्रश्न का सारांश यह है कि गौतम महावीर प्रभुसे यह पूछ रहे हैं कि नारक जीव जिन पृथिवियों में रहते हैं वे पृथिवियां कितनी हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में सूत्रकार जीवाभिगम सूत्र का निर्देश करते हैं—" जीवाभिगमे नेरयियाण जो बितिओ उद्देसो सो नेयव्वो " जीवाभिगम सूत्र में जो द्वितीय उद्देशक है-वह इस प्रश्न के उत्तर में जानलेना चाहिये, इसविषय को स्पष्ट करनेवाली संग्रहगाथा इस प्रकार से है- (पुढवी ओगाहेत्ता इत्यादि संग्रह गाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि जीवाभिगमसूत्र के द्वितीय उद्देशक में पृथिवी संबंधी विचार किया गया है, उन पृथिवियों में रहे हुए नरकावासों का विचार किया गया है, नरकावासों के संस्थान का विचार किया गया है। तथा- नरकपृथिवियों के स्वरूप आदि का विचार किया

ટીકાર્થ—(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) હે ભદન્ત ! નરકો (पृथ्वीओ) કેટલી છે ? કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પૃથ્વીઓ (નરકો) માં નારક જીવો રહે છે એ પૃથ્વીઓ કેટલી છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપવા માટે સૂત્રકાર જીવાભિગમસૂત્રનો નિર્દેશ કરે છે (जीवाभिगमे नेरयियाणं जो बितिओ उद्देसो सो नेयव्वो) જીવાભિગમસૂત્ર. બીજા ઉદ્દેશકમાંથી આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપવો જોઈએ આ વિષયને સ્પષ્ટ કરનારી સંગ્રહગાથા આ પ્રમાણે છે— पुढवी ओगाहेत्ता ઇત્યાદિ

આ સંગ્રહગાથામાં એ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવ્યું છે કે જીવાભિગમસૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકમાં પૃથ્વીઓ વિષે વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, તે પૃથ્વીઓમાં રહેનારા નારક જીવોનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે નારક જીવોનાં સંસ્થાનોનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તથા તે નરકો (પૃથ્વીઓ) ના સ્વરૂપ આદિનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેથી

छाया-कति भदंत ! पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः,१जीवाभिगमे नैरयिकाणां यो द्वितीय उद्देशकः स नेतव्यः पृथिवीमवगाह्य निरयाः संस्थानमेव बाहल्यविष्कम्भपरिक्षेपौ वर्णो गन्धश्च स्पर्शश्च ॥ १ ॥ यावत्. किं सर्वे प्राणा उत्पन्नपूर्वाः ? हन्त गौतम! असकृत् अथवा अनन्तकृत्वः पृथिव्युद्देशकः) ६ सू० १॥

द्वितीयशकस्य तृतीयउद्देशः समाप्तः

सूत्रार्थ—(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) हे भदन्त ! पृथिवियां कितनी कहीगई हैं ? (जीवाभिगमे नेरइयाणं जो बितिओ उद्देसो सो णेयव्वो) जीवाभिगम सूत्र में कहा गया जो नारक संबंधी दूसरा उद्देशक है वह यहां जानना चाहिये। यहां द्वारगाथा है

" पुढवी ओगाहित्ता निरया संठाणमेव बाहल्लं ।
विक्खंभ परिक्खेवो वण्णो गंधो य फासो य ॥ १ ॥

इस उद्देशक में पृथिवी संबंधी, (पृथिवी को अवगाहन करके कितनी दूर नारक रहते हैं) इस संबंधी, संस्थान संबंधी, पृथिवियों की मोटाई संबंधी, विष्कंभ परिक्षेप संबंधी, वर्ण, गंध और स्पर्श संबंधी कथन है। (जाव किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) हे भदन्त । वहां क्या समस्त जीव उपपन्नपूर्व-पहले-उत्पन्न होये हुए-हैं क्या ?। (हंता गोयमा ! असइं, अदुवा अणंतक्खुत्तो पुढवी उद्देसो) हां, गौतम ! अनेकवार अथवा अनन्तवार उनपृथिवियों में समस्त जीव उपपन्नपूर्व हैं। इस प्रकार यह पृथिनी उद्देशक है ॥ सू० १ ॥

સૂત્રાર્થ-(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીઓ (નરકો) કેટલી કહી છે ? (जीवाभिगमे नेरइयाण जो बितिओ उद्देसो सो णेयव्वो) જીવાભિગમસૂત્રના નારક વિષેના બીજા ઉદ્દેશકમાથી આ વિષય જાણી લેવો. તેના વિષે આ દ્વાર ગાથા છે—

" पुढवी ओगाहित्ता निरया सठाणमेव बाहल्ल ।
विक्खंभपरिक्खेवो वण्णो गंधो य फासो य ॥ १ ॥

આ ઉદ્દેશકમા પૃથ્વી વિષે " પૃથ્વીની અવગાહના કરીને કેટલે દૂર સુધી નારકો રહે છે " તે વિષે, સંસ્થાન વિષે, પૃથ્વીઓના વિસ્તાર વિષે, પૃથ્વીઓના વિષ્કભ અને પરિક્ષેપ વિષે, વર્ણ ગધ અને સ્પર્શ વિષે વર્ણન કર્યું છે (जाव किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવો શુ ત્યા પહેલાં ઉત્પન્ન થઇ ગયા હોય છે ? (हंता गोयमा ! असइं, अदुवा, अणंतक्खुत्तो पुढवी उद्देसो) હા, ગૌતમ ! અનેકવાર અથવા અનત વાર સમસ્ત જીવો તે પૃથ્વીઓમા ઉત્પન્ન થઇ ચુક્યા હોય છે. પૃથ્વી ઉદ્દેશક આ પ્રકારનો છે ।સૂ०१।

पित्वा तत्र त्रिंशल्लक्षनरकावासाः सन्ति १। एवमेवशर्करा प्रभादि पृथिवीषु यथा योग वक्तव्यमिति तथाहि–द्वितीयायां शर्कराप्रभायां पृथिव्यां द्वात्रिंशत्सहस्रोत्तरो लक्षबाहल्यायामुपर्येक योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येक योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र पञ्चविंशतिलक्षनरकावासाः सन्ति २। तृतीयवालुकाप्रभायां पृथिव्यामष्टाविंशतिसहस्रोत्तरयोजनलक्षबाहल्यायामुपर्येक योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र पञ्चदशलक्षनरकावासा सन्ति३। चतुर्थपङ्कप्रभायां पृथिव्यां विंशतिसहस्रोत्तरयोजन लक्षबाहल्यायामुपर्येक योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र दशलक्षनरकावासाः सन्ति ४॥ पञ्चमधूमप्रभायां पृथिव्या

इसमें से एक हजार योजन ऊपर के भाग को तथा एक हजार योजन नीचेके भागको छोडकर अवशिष्ट स्थान में तीस लाख नरकावास हैं। इसी तरह से शर्करा आदी पृथिवीयों में भी निम्नोक्त प्रकार से समझ लेना चाहिये। जैसे– शर्कराप्रभा नामकी जो दूसरी पृथिवी है–उसकी मोटाई एक लाख बत्तीस हजार योजन की है– सो इसमें भी ऊपर नीचे का एक–एकहजार योजन प्रमाण भाग छोडकर बाकी के स्थान में पच्चीस लाख नरकावास हैं। तीसरी पृथिवी जो वालुकाप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख अट्ठाईस हजार योजन की है सो इसमें ऊपर नीचे के एक–एक हजार योजन प्रमाण भाग को छोडकर बाकी के बीच के भागों में पन्द्रह लाख नरकावास–नारक जीवों के रहने के स्थान हैं। चौथी पृथिवी जो पङ्कप्रभाहै उसकी मोटाई एक लाख बीस हजार योजन की है सो उसका भी एक–एक हजार योजन प्रमाण भाग ऊपर नीचे का छोड़ कर बाकी के भागों में दस लाख नर

તેમાંનો ઉપરનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને અને એક હજાર પ્રમાણ નીચેના ભાગ ને છોડીને બાકીની જગ્યામા ત્રીસ લાખ નરકાવાસ છે એજ પ્રમાણે શર્કરાપ્રભા આદિ પૃથ્વીઓમાં પણ નીચે પ્રમાણે સમજવું– શર્કરા નામની બીજી પૃથ્વીનો વિસ્તાર એક લાખ બત્રીસ હજાર યોજનનો છે તેનો ઉપરનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ અને નીચેનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીની જગ્યામાં પચ્ચીસ લાખ નરકાવાસ છે ત્રીજી વાલુકાપ્રભા પૃથ્વી ની ઊંચાઇ એક લાખ અઠ્ઠાવીસ હજાર યોજનની છે તેમાં ઉપર તથા નીચેનો એક એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીના પંદર લાખ નરકાવાસ છે ચોથી પંકપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઊંચાઈ એક લાખ વીસ હજાર યોજનની છે તેનો પણ ઉપરનો તથા નીચેનો

ज्ञातव्यम् । तत्र (पुढवीओ) पृथिव्यो वाच्याः। ताश्चैवम् "कइणं भंते पुढवीओ पन्नत्ताओ' कति खलु भदंत ! पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः ? इतिपृथिवीसंख्याविषयको गौतमस्य प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा सत्तपुढवीओ पन्नत्ताओ' हे गौतम ! सप्त पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा' तद्यथा 'रयणप्पभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा तमस्तमःप्रभा इमाः सप्त नारकपृथिव्याः प्रज्ञप्ताः=कथिताः "ओगाहित्ता निरया" इति अवगाह्य निरयाः, पृथिवीमवगाह्य कियद्दूरे नारकावसन्तीतिवक्तव्यम् तत्र सप्तसु पृथिवीषु मध्ये या प्रथमा रत्नप्रभापृथिवीतस्याम्-अशीतिसहस्रोत्तरयोजनलक्षबाहल्यायाम्. उपर्य्येकं योजनसहस्रमवगाह्याधोप्येकं योजनसहस्रं वर्ज-

---

गया है। इसलिये जीवाभिगम सूत्र के द्वितीय उद्देशक से ही सब कुछ नरकसंबधि आदि विचार जानना चहिये। पृथिवी संबंध में वहां ऐसा पूछा गया है कि-(भंते) हे भदंत! (कइणं पुढवीओ पन्नत्ताओ) पृथिवियां कितनी कही गई हैं? इस प्रकार से गौतम ने जब पृथिवी की संख्या के विषय में प्रभु से पूछा-तब प्रभु ने उन्हें कहा -(गोयमा सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ) हे गौतम! पृथिवी सात कही गई हैं-(तं जहा) वे इस प्रकार से हैं-(रयणप्पभा) इत्यादि-रत्नप्रभा १, शर्कराप्रभा २, वालुकाप्रभा ६, पंकप्रभा ४, धूमप्रभा५, तमप्रभा६, और सातवीं तमस्तमःप्रभा ७। (ओगाहित्ता निरया) पृथिवी को अवगाहित करके कितनी दूर जाने पर नारक जीव रहते हैं? इस प्रश्न का भाव इस प्रकार से है-कि-कितनी पृथिवी को छोडकर नारक जीवपृथिवी अवशिष्ट भाग में रहते हैं? तो इसका उत्तर इस प्रकार से है-जैसे सात पृथिवीयों में से जो पहिली पृथिवी रत्नप्रभाहै वह एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटी है,

---

જીવાભિગમ સૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકમાંથી નરકો વિષે સમસ્ત વર્ણન વાચવાનું કહેવામા આવ્યું છે પૃથ્વી વિષે અહીં એવુ પૂછવામાં આવ્યુ છે કે (भंते!) હે ભદન્ત, (कइण पुढवीओ पण्णत्ताओ?) પૃથ્વીઓ કેટલી કહી છે? ત્યારે ભગવાન મહાવીર ગૌતમસ્વામીને ઉત્તર આપે છે કે (गोयमा) હે ગૌતમ! (सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ) પૃથ્વી સાત કહી છે (त जहा) તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(रयणप्पभा) ઇત્યાદિ રત્નપ્રભા, શર્કરાપ્રભા, વાલુકાપ્રભા, પંકપ્રભા, ધૂમપ્રભા, તમપ્રભા, અને તમસ્તમા પ્રભા (ओगाहित्ता निरया) કેટલી પૃથ્વીને છોડીને નારક જીવો પૃથ્વીના અવશિષ્ટ (બાકીના) ભાગમાં રહે છે? તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે-સાત નરકો (પૃથ્વીઓ) માંથી પહેલી રત્નપ્રભા નામની પૃથ્વી એક લાખ એંશી હજાર યોજનના વિસ્તાર વાળી છે,

'बाहल्लं' इतिनरकावासानां बाहल्यमपि वक्तव्यम् तच्च बाहल्यं त्रीणियोजन सहस्राणि। तत्कथम्? अध एकम् योजनसहस्रम् मध्ये एक योजनसहस्रं झुषिरम् उपरि च योजनसहस्र संकोचो विद्यते इति='विक्खंभपरिक्खेवो' विष्कंभपरिक्षेपौ वक्तव्यौ तत्र संख्यातविस्तारवतां नरकवासनाम् आयामो विष्कंभःपरिक्षेपश्च प्रत्येक संख्यातयोजनप्रमाणोऽस्ति। तद्वेषां तु आयामविष्कंभपरिक्षेपाविभिन्नप्रमाणकावपि भवन्तीति। "वण्णो गंधो य फासो य" वर्णो गन्धश्च नरकावासनां वर्णगन्धरसस्पर्शा वक्तव्याः ते च वर्णादयोऽत्यन्तमनिष्टाः। इत्यादिकमुक्तव्यं विद्यते तत्सर्वमुद्देशकान्त मिहवक्तव्यम्। "किंसव्वे पाणाउववन्नपुव्वा" किं सर्वे प्राणा उपपन्नपूर्वाः सर्वजीवा-

---

गोल होता है, त्रिकोना होता है और चौकोना होता है तथा इनके सिवाय जो नरकावास हैं वे अनेक आकार वाले होते हैं (बाहल्लं) बाहल्य नाम मोटाई का है सो नरकावासों का बाहल्य-जाडाई-तीन हजार योजन की है। यह किस प्रकार से है? सो कहते हैं-नीचे एक हजार योजन, मध्य में एक हजार योजन शुषिर (पोल) ऊपर में एक हजार योजन संकुचित है। (विक्खंभपरिक्खेवो) संख्यातविस्तार वाले जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये प्रत्येक संख्यात योजन प्रमाण हैं। इनसे अतिरिक्त जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये सब भिन्न २ प्रमाण में हैं। (वण्णो गंधो य फासो य) नरकावासों के वर्ण, गंध, स्पर्श, ये सब अत्यन्त अनिष्ट होते हैं इत्यादि सब इस उद्देशक के अंततक समझ लेना है। (किं सव्वे पाणा० ४ उववन्नपुव्वा) यहां प्रश्न इस प्रकार से करना

આકાર ગોળ, ત્રિકોણીઓ કે ચોકડીઓ હોય છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તે અનેક આકારવાળા હોય છે (बाहल्लं) બાહલ્ય એટલે જાડાઈ નરકાવાસોનું બાહલ્ય પ્રમાણ હજાર યોજનનું હોય છે તે કેવી રીતે હોય છે? તે તેના જવાબમાં કહે છે કે-નીચે એક હજાર યોજન મધ્યમાં એક હજાર યોજન અને ઉપર એક હજાર યોજન

(विक्खंभपरिक्खेवो) સંખ્યાત વિસ્તારવાળા જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ (લંબાઈ) વિષ્કંભ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિધિ) સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ, વિષ્કંભ અને પરિક્ષેપ ભિન્ન ભિન્ન પ્રમાણવાળા છે-(वण्णो गंधो य फासो य) નરકાવાસોના વર્ણ, ગંધ અને સ્પર્શ અત્યંત અનિષ્ટ હોય છે ઇત્યાદિ સમસ્ત આ ઉદ્દેશકના અંતપર્યંત સૂત્રોમાં સમજવાનું છે

(किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) અહીં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સમજવો-

मष्टादशसहस्रोत्तरयोजनलक्षबाहल्यायामुपर्येकं योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं-योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र त्रिलक्षनरकावासाः सन्ति ५॥ षष्ठतमः प्रभायां पृथिव्यां षोडशसहस्रोत्तरलक्षबाहल्यायामुपर्येकं योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं योजन सहस्रं वर्जयित्वा तत्र पञ्चन्यूनैकलक्षनरकावासाः सन्ति६॥ सप्तमतमस्तमः-प्रभायां पृथिव्यामष्टसहस्रोत्तरलक्षबाहल्यायामुपरि सार्धद्विपञ्चाशद्योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽपि सार्धद्विपञ्चाशद्योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र पञ्चसंख्यका नरकावासाः सन्तीति ७। "संठाणमेव" इति-संस्थानमेव तत्र ये आवलिकाप्रविष्टाः पंक्तिप्रविष्टाः नरकवासास्ते वृत्ताः त्र्यास्राः चतुरस्राश्च, इतरेतु नानासंस्थानाः नरकवासा भवन्ति।

कावास हैं। पांचवी पृथिवी जो धूमप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख अठारह हजार योजन की है सो उसमें भी ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन-के भाग को छोड़कर बाकी के भागों में तीन लाख नरकावास हैं। छट्ठी पृथिवी जो तम प्रभा है उसकी मोटाई एक लाख सोलह हजार योजन की है-सो उसके ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन प्रमाण भागको छोड़कर अवशिष्ट भागों में नारकजीवों के रहने के पांचकम एक लाख नरकावास है। तथा सातवीं पृथिवी जो तमस्तमःप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख आठ हजार योजन-की है-सो ऊपर नीचे के साढेबावन-साढेबावन (५२॥-५२॥) हजार योजन प्रमाण भागों को छोड़कर अवशिष्ट भागों में केवल पांच-ही नरकावास हैं। (संठाणमेव) संस्थान नाम आकार का है-सो जो नारक जीवों के आवास आवलिका में प्रविष्ट हैं-पंक्ति में प्रविष्ट हैं-उनका आकार

એક એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીના ભાગમાં દસ લાખ નરકાવાસ છે પાચમી ધૂમપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઉંચાઇ એક લાખ અઢાર હજાર યોજનની છે તેના પણ ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગોને છોડીને બાકીના ભાગમા ત્રણ લાખ નરકવાસ છે. છઠ્ઠી તમપ્રભા પૃથ્વીની ઊચાઈ અકલાખ સોળહજાર યોજનની છે તેના પણ ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજનપ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીની જગ્યામાં ૯૯૯૯૫ નવાણુહજાર નવસોનવ્વાણુ નરકાવાસ છે. સાતમી તમસ્તમપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઊંચાઇ એક લાખ આઠ હજાર યોજનની છે તેના ઉપર સાડા બાવન હજાર (૫૨॥ હજાર) અને નીચેના સાડા બાવન હજાર પ્રમાણ ભાગને છોડીને બાકીના ભાગમા ફક્ત પાચ જ નરકાવાસ છે, (संठाणमेव) સંસ્થાન એટલે આકાર જે નારક જીવોના આવાસ આવલિકા (પંક્તિ) મા આવેલ છે, તેમનો

'बाहल्लं' इतिनरकावासानां बाहल्यमपि वक्तव्यम् तत्र बाहल्यं त्रीणियोजनसहस्राणि। तत्रेयम्? अधः एकम् योजनसहस्रम् मध्ये एकं योजनसहस्रं झुषिरम् उपरि च योजनसहस्रं संकोचो विद्यते इति='विक्खंभपरिक्खेवो' विष्कंभपरिक्षेपौ वक्तव्यौ तत्र संख्यातविस्तारवतां नरकावासानाम् आयामो विष्कंभ परिक्षेपश्च प्रत्येकं संख्यातयोजनप्रमाणोऽस्ति। तद्भेषां तु आयामविष्कंभपरिक्षेपाविभिन्नरूपाएवभवन्तीति। "वण्णो गंधो य फासो य" वर्णो गन्धश्च नरकावासानां वर्णगन्धरसस्पर्शा वक्तव्या ते च वर्णादयोऽत्यन्तमनिष्टा। इत्यादिबहुवक्तव्यं विद्यते तत्सर्वमुद्देशकान्तरादिवक्तव्यम्! "किंसव्वे पाणाउववन्नपुव्वा" किं सर्वे प्राणा उपपन्नपूर्वाः सर्वेजीवा

गोल होता है, त्रिखूटा होता है और चौखूटा होता है तथा इनके सिवाय जो नरकावास हैं वे अनेक आकार वाले होते हैं (बाहल्लं) बाहल्य नाम मोटाई का है सो नरकावासों का बाहल्य-जाडाई-तीन हजार योजन की है। यह किस प्रकार से है? सो कहते हैं-नीचे एक हजार योजन, मध्य में एक हजार योजन झुषिर (पोल) ऊपर में एक हजार योजन संकुचित है। (विक्खंभपरिक्खेवो) संख्यातविस्तार वाले जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये प्रत्येक संख्यात योजन प्रमाण हैं। इनसे अतिरिक्त जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये सब भिन्न २ प्रमाण में हैं। (वण्णो गंधो य फासो य) नरकावासों के वर्ण, गंध, स्पर्श, ये सब अत्यन्त अनिष्ट होते हैं इत्यादि सब इस उद्देशक के अतिरिक्त समझ लेना है। (किं सव्वे पाणा० उववन्नपुव्वा) यहां प्रश्न इस प्रकार से करना

આકાર વાળા, ત્રિકોણવાળા કે ચોકણવાળા હોય છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તે અનેક આકારવાળા હોય છે (बाहल्लं) બાહલ્ય એટલે જાડાઈ નરકાવાસોનું બાહલ્ય ત્રણ હજાર યોજનનું હોય છે તે કેવી રીતે હોય છે? તો તેના જવાબમાં કહે છે કે-નીચે એક હજાર યોજન મધ્યમાં એક હજાર યોજન અને ઉપર એક હજાર યોજન

(विक्खंभपरिक्खेवो) સંખ્યાત વિસ્તારવાળા જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ (લંબાઈ) વિષ્કંભ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિધિ) સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ, વિષ્કંભ અને પરિક્ષેપ ભિન્ન ભિન્ન પ્રમાણમાં છે-(वण्णो गंधो य फासो य) નરકાવાસોના વર્ણ રસ, ગંધ અને સ્પર્શ અત્યંત અનિષ્ટ હોય છે ઇત્યાદિ સમસ્ત આ ઉદ્દેશાના અતિરિક્ત સૂત્રોમાં સમજવામાં આવ્યું છે

(किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) અહીં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સમજવો-

किं रत्नप्रभादिपृथिषु पूर्वं समुत्पन्नाः? अस्य चैवं प्रयोगः-अस्यां रत्नप्रभापृथिव्याम् त्रिंशदन्तरकलक्षेषु किं सर्वे प्राणादयः उत्पन्नपूर्वाः, इतिप्रश्नः। भगवानाह-" हन्त गोयमा " हन्त गौतम! " असइं " असकृत्. अनेकशोऽनेकवारम्.अनेकवारन्तु द्विवारापेक्षयाऽपि स्यादतआह-" अदुवा " अथवा. " अणंतक्खुत्तो " अनन्तकृत्व अनंतवारम्। सर्वे जीवा रत्नप्रभादिषु सर्वासु पृथिवीषु पूर्वं समुत्पन्नाइति ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-पालापक-पविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित-कोल्हापुरराज-गुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाल-व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥२-१॥

चाहिये-रत्नप्रभा पृथिवी में जो तीस लाख नरकावास हैं उनमें समस्त प्राणी पहिले उत्पन्न हुए हैं क्या? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि-(हंता गोयमा!) हां, गौतम! समस्त प्राणी (असइं) अनेक बार (अदुवा) अथवा (अणंतक्खुत्तो) अनंतवार इन पूर्वोक्त रत्नप्रभा आदि पृथिवियों में पहिले उत्पन्न हुए हैं ॥ सू० १ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के दूसरे शतकका तीसरा उद्देशक समाप्त ॥२-१॥

રત્નપ્રભાપૃથ્વીમા જે ત્રીસ લાખ નરકાવાસ છે તેમા સમસ્ત જીવો શુ પૂર્વે ઉત્પન્ન થયેલા હોય છે ? તેનો ઉત્તર દેતા પ્રભુ ગૌતમસ્વામીને કહે છે (हंता गोयमा!) હા, ગૌતમ! સમસ્ત જીવો (असइं) અનેક વાર (अदुवा) અથવા-अणंतक्खुत्तो) અનન્ત વાર રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વીઓમા પહેલા ઉત્પન્ન થયા હોય છે ॥ સૂ ૧ ॥

॥યતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના બીજા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨-૧॥

॥ अथ द्वितीयशतके चतुर्थोद्देशक प्रारभ्यते ॥

चतुर्थोद्देशकोक्ताः संक्षिप्तविषया इमे कति इन्द्रियाणीति गौतमस्य प्रश्नाः पञ्चेन्द्रियाणि श्रोत्रेन्द्रिय-चक्षुरिन्द्रिय-घ्राणेन्द्रिय-रसनेन्द्रिय-स्पर्शनेन्द्रिय भेदादिषु सूत्रम् । प्रज्ञापनासूत्रस्येन्द्रियसंबन्धिप्रथमोद्देशकस्योद्धरणम् । इन्द्रियाणां भेदप्रदर्शनम् इन्द्रियाणां संस्थानम् इन्द्रियाणां दीर्घत्वम् । इन्द्रियविषयादीनां विचारः उद्देशक परिसमाप्तिश्च ।

अथ द्वितीयशतकीयतृतीयोद्देशकं परिसमाप्य चतुर्थोद्देशकः प्रारभ्यते तृतीयोद्देशक निरूपणानन्तरं चतुर्थोद्देशकनिरूपणेऽयमभिसंबन्धः तृतीयोद्देशके नारकाणां निरूपणं

द्वितीय शतक का चतुर्थ उद्देशक प्रारम्भ—

इस चतुर्थ उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया है उनका विवरण इस प्रकार से है—

प्र०—इन्द्रिया कितनी हैं—ऐसा गौतम का प्रश्न ।

उ०—इन्द्रियां पांच हैं—श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसना इन्द्रिय और स्पर्शन इन्द्रिय ऐसा उत्तर ।

प्रज्ञापना सूत्र में इन्द्रियों के संबंध को लेकर जो प्रथम उद्देशक कहा गया है उसका उद्धरण, इन्द्रियों के भेदों का प्रदर्शन, इन्द्रियों का आकार इन्द्रियों की दीर्घता, इन्द्रियों के विषय आदि का विचार, उद्देशक की परिसमाप्ति ।

द्वितीय शतक के तृतीय उद्देशक को समाप्त कर अब सूत्रकार चौथे उद्देशक को प्रारंभ करते हैं । तृतीय उद्देशक के निरूपण के बाद चतुर्थ उद्देशक के निरूपण करने में संबंध इस प्रकार से है—तृतीय

બીજા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશો પ્રારંભ

આ ચોથા ઉદ્દેશકમાં જે વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે તે વિષયોનું સંક્ષિપ્ત વિવેચન આ પ્રમાણે છે

ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—ઈન્દ્રિયો કેટલી હોય છે ?

પ્રશ્નનો ઉત્તર ઇન્દ્રિયો પાંચ છે—શ્રોત્રેન્દ્રિય, ચક્ષુરિન્દ્રિય ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા ઈન્દ્રિયોના વિષયમા જે પહેલો ઉદ્દેશક કહ્યો છે તેનો ઉલ્લેખ ઇન્દ્રિયોના ભેદો, ઈન્દ્રિયોના આકાર ઈન્દ્રિયોની દીર્ઘતા, ઈન્દ્રિયોના વિષયો આદિનું નિરૂપણ-ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ બીજા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક પૂરો કરીને હવે સૂત્રકાર ચોથા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે ત્રીજા ઉદ્દેશક સાથે ચોથા ઉદ્દેશકનો આ પ્રકારનો સબંધ છે—ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં નારક

कृतम्, ते च नारकाः पञ्चेन्द्रिया भवन्तीति-इन्द्रियप्ररूपणाय तथा द्वितीय शतकादौ द्वारगाथायाम् 'इंदिय' इत्युक्तमितीन्द्रियप्रतिपादनाय च चतुर्थोद्देशकः प्रारभ्यते, तदनेन संबन्धेनायातस्य चतुर्थोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम् "कइणं भंते ! इंदिया पन्नत्ता" इत्यादि ॥

मूलम्-" कइणं भंते ! इंदिया पन्नत्ता ? गोयमा ! पंच इंदिया पन्नत्ता । तं जहा-पढमिल्लो इंदियउद्देसओ नेयव्वो, संठाणं, बहुल्लं, पोहत्तं, जाव अलोगो; इंदिय उद्देसो ॥ ॥ सू० १ ॥

॥ बितियसए चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥ २-४ ॥

छाया-कति खलु भदंत ! इन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि ? गौतम ! पञ्चेन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि । तद्यथा-प्रथमः इन्द्रियोद्देशको ज्ञातव्यः संस्थान बाहुल्यं पृथुत्वं यावत् अलोकः इन्द्रियोद्देशकः ॥ सू० १ ॥

॥ द्वितीयशतके चतुर्थ उद्देशः समाप्तः ॥ २-४ ॥

उद्देशक में नारक जीवों का निरूपण किया गया है, वे नारक जीव पांच इन्द्रियों वाले होते हैं अतः इन्द्रियों की प्ररूपणा के लिये तथा द्वितीय शतक की आदि में द्वार गाथा में अभिहित इन्द्रिय पद के प्रतिपादन के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्रारंभ किया गया हैं। इस संबंध से आये हुए इस चतुर्थ उद्देशक का यह पहिला सूत्र है—(कइणं भंते) इ०।

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (कइणं इंदिया पन्नत्ता) इन्द्रियाँ कितनी कही गई हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! पंच इंदिया पन्नत्ता) इन्द्रियाँ पाँच कही गई हैं। (तंजहा) वे इस प्रकार से हैं- (पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो) प्रज्ञापना सूत्र के पंद्रहवें इन्द्रिय पद के प्रथम उद्देशक

બીજા શતકના ચોથા ઉદ્દેશકનો નિરૂપણ કર્યું છે, તે નારકો પાંચ ઇન્દ્રિયો વાળા હોય છે, તેથી ઇન્દ્રિયોની પ્રરૂપણાને માટે તથા બીજા શતકની શરૂઆતમા આવતી દ્વાર ગાથામા આવતા ઇન્દ્રિય પદનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આ ચોથો ઉદ્દેશક શરૂ કર્યો છે તેનું પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે (कइणं भंते ! ઇત્યાદિ !

સૂત્રાર્થ-(भंते) હે ભદન્ત ! (कइणं इंदिया पण्णत्ता !) ઇન્દ્રિયો કેટલી કહી છે ? (गोयमा) હે ગૌતમ ! (पंच इंदिया पण्णत्ता) ઈન્દ્રિયો પાંચ કહી છે. (तंजहा) તે આ પ્રમાણે છે-(पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो) પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના પહેલા ઉદ્દેશકમા પંદરમાં ઇન્દ્રિયપદનું અહીં કથન કરવું જોઈએ

टीका—"कइण भंते इंदिया पन्नत्ता" कति खलु भदन्त ! इन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि । भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! पंच इंदिया पन्नत्ता" पञ्चेन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि "तं जहा" तद्यथा "पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो" प्रथम इन्द्रियोद्देशको नेतव्य प्रज्ञापनायामिन्द्रियपदाभिधानस्य पञ्चदशपदस्य प्रथमउद्देशकोऽत्र नेतव्यो ज्ञातव्य इति ।

अत्र गाथा मदर्शितानीमानि द्वाराणि-"संठाणं" इत्यादि "संठाणं" बाहल्ल पोहत्तं जाव अलोगा इंदिय उद्देसो" संस्थानं बाहल्य पृथुत्वं यावत्

का यहां कथन करना चाहिये (संठाणबाहल्ल पोहत्तं जाव अलोगो) तथा उसमें कहे अनुसार इन्द्रियों का आकार, बाहल्य- पृथुत्व भी कहना चाहिये यावत् अलोक तक का विवेचन वाला समस्त इन्द्रिय उद्देशक यहां कह देना चाहिये ।

टीकार्थ—(कइण भंते ! इंदिया पन्नत्ता) हे भदन्त ! इन्द्रियां कितनी कही गई हैं ? तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि जिनके द्वारा जीव की पहिचान की जाती है वे जीव की लिङ्गरूप इन्द्रियां कितनी होती हैं ?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु महावीर गौतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (इंदिया) वे इन्द्रियां (पंच पन्नत्ता) पांच कही गई हैं । (तंजहा) वे इस प्रकार से हैं—(पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो) प्रज्ञापनासूत्रमें इन्द्रिय पद नाम का पन्द्रहवां पद है, उस पद का प्रथम उद्देशक यहां जानना चाहिये । यह उद्देशक कहां तक लेना चाहिये ? इसके लिये कहते हैं (संठाणबाहल्लं पोहत्तं जाव अलोगो इंदिय उद्देसो) संस्थान बाहल्य पृथुत्वसे लेकर (अलोक) पर्यन्त पच्चीस द्वारों से युक्त दो गाथाएँ ग्रहण करनी चाहिये वे दो गाथाएँ इस प्रकारसे हैं—

(संठाण बाहल्ल पोहत्त जाव अलोगो) તથા તેમાં કહ્યા પ્રમાણે ઇન્દ્રિયોનો આકાર, દીર્ઘતા આદિનું પણ વર્ણન કરવું જોઇએ અહીં પર્યંતના વિવેચન વાળો સમસ્ત ઇન્દ્રિય ઉદ્દેશક અહીં કહેવો જોઇએ.

ટીકાર્થ—(कइण भंते ! इंदिया पन्नत्ता) હે ભદન્ત ! ઇન્દ્રિયો કેટલી કહી છે ? પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમના દ્વારા જીવને ઓળખવામાં આવે છે તે જીવની નિશાની રૂપ ઇન્દ્રિયો કેટલી છે ? આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(गोयमा ! इंदिया पंच पन्नत्ता) હે ગૌતમ ! ઇન્દ્રિયો પાંચ કહી છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે— (पढमिल्लो इंदियउद्देसओ नेयव्वो) પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં (ઇન્દ્રિય) નામનું પંદરમું પદ છે, તે પદનો પહેલો ઉદ્દેશક પ્રકરણથી આ વિષે અનુસરતા જાણવો તે ઉદ્દેશક કયાં સુધી કહેવો ? (संठाण बाहल्ल पोहत्त जाव अलोगो इंदिय उद्देसो) સંસ્થાન બાહુલ્ય પૃથુ

अलोकः इन्द्रियोद्देशः ।

मूले गाथाखण्डमुक्त्वा 'जाव' इत्युक्तमिति यावत्पदेन संपूर्णं पञ्चविंशति द्वारयुक्तं गाथाद्वयं संग्राह्यम् । अत्र कियत्पर्यन्तमित्याह–'अलोगो' अलोकः अलोकशब्दपर्यन्तमिति । गाथाद्वय चेदम्––

"संठाणं वाहल्लं पोहत्तं कइपदेस ओगाढे ।
अप्पाबहुपुट्ठविट्ठ, विसय अणगार आहारे ॥ १ ॥
अदाय असीयमणी, दुद्धपाणे तेल्ल फाणिय वसाय,
कंवल धूणा थिग्गल, दीवोदहि लोगऽलोय ॥ २ ॥

छाया–संस्थानं १, बाहल्यं २, पृथुत्वं ३, कतिप्रदेशाः ४, अवगाढानि ५, अल्पबहुत्वं ६, स्पृष्टानि ७, प्रविष्टानि ८, विषयाः ९, अनगारः१०, आहारः११ ॥ १ ॥ आदर्शश्च १२, असिश्च १३, मणिः १४ दुग्धं १५, पानं १६, तैलं१७, फाणितं १८, वसा च १९, कम्बल २०, स्थूणा २१, थिग्गलं (देशी भित्ति द्वारम् २२, द्वीपोदधि २३, लोकः २४, अलोकः २५ ॥ २ ॥ इति । "इंदिय उद्देसो' इन्द्रियोद्देशः गाथाद्वयोक्त पञ्चविंशति विषययुक्त इन्द्रिय प्रति–

(संठाणं बाहल्लं पोहत्तं कइ पएस ओगाढे ।
अप्पाबहु पुट्ठपविट्ठ, विसय अणगार आहारे ॥ १ ॥
अदा य असी य मणी, दुद्धपाणे तेल्ल फाणिय वसाय ।
कंबल, थूणा थिग्गल दीवोदहि लोगाऽलोय ॥ २ ॥

(इति इंदियउद्देसो) इन दो गाथाओं द्वारा यह कहा गया है कि इन पचीस द्वारों से युक्त इन्द्रियों के प्रतिपादन करने वाले इन्द्रियनामक प्रज्ञापना सूत्र के पन्द्रहवें पद का प्रथम उद्देशक है–सो वह उद्देशक यहां सम्पूर्ण रूप से कह लेना चाहिये । ताकि इन्द्रिय संबंधी समस्त कथन

ત્યથી શરૂ કરીને (अलोक) सुधीनी पचीस द्वारोथी युक्त બે गाथाओ ग्रहण કરવી જોઈએ તે બે गाथाओ नीचे प्रमाणे छे

(संठाणं बाहल्लं पोहत्त कइपएस ओगाढे)
(अप्पाबहु पुट्ठपविट्ठ, विसय अणगार आहारे ॥ १ ॥
(अदाय असीय मणी, दुद्धपाणे तेल्ल फाणिय वसा य ।
(कवल थूणा थिग्गल दीवोदहि लोग ऽ लोय ॥ २ ॥

(इति इंदियउद्देसो) આ બે ગાથાઓ દ્વારા એ કહેવામા આવ્યું છે કે આ પચીશ દ્વારો વાળી, ઈન્દ્રિયોનુ પ્રતિપાદન કરનાર, પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ઇન્દ્રિય નામના પદનો પહેલો ઉદ્દેશક છે, તે ઉદ્દેશક અહી પૂરે પૂરો કહેવો જોઇએ. તેમ કરવાથી ઇન્દ્રિયો વિષેનુ સમસ્ત વર્ણન સમજી શકાશે. તે

पादक इन्द्रियाभिधपञ्चदशपदस्य क्रमप्राप्तस्येदानीं सर्वोऽपि वाच्य इति भावः। तत्र "संठाण" इति संस्थानम् श्रोत्रेन्द्रियादीनां वक्तव्यम् संस्थानमाकारविशेषः तत्र संस्थानमिदम् श्रोत्रेन्द्रियं कदम्बपुष्पसंस्थितम्। चक्षुरिन्द्रियं मसूरकचन्द्र-संस्थितम् मसूरदालिकावत्, चन्द्रवच्च गोलाकार चक्षुरिन्द्रियमिति,घ्राणेन्द्रिय-मतिमुक्तकचन्द्रकसंस्थितम् अतिमुक्तकचन्द्रकाति पुष्पविशेषपटलम् तथा चाति मुक्तकचन्द्रकपुष्पविशेषपटलसन्निभं घ्राणेन्द्रियमिति । रसनेन्द्रिय क्षुरसंस्थितम् क्षुरम् पाशोत्पाटनाय प्रयुज्यमान शस्त्रविशेष 'खुरपा' इति भाषाप्रसिद्धः क्षुराकारवत् रसनेन्द्रियमिति । स्पर्शनेन्द्रिय नानाकार मनवस्थित संस्थानविधायी "बाहल्ल" इति–इन्द्रियाणां श्रोत्रादीनां बाहल्यं वक्तव्यम् तच्चेत्थम्–सर्वाणी-न्द्रियाणि अङ्गुलाऽसंख्येयभागबाहल्यानि २ ॥ 'पोहत्त' पृथुत्वम् इन्द्रियाणाम्,

अच्छी तरह से समज में आ जावे। इन दोनों गाथाओं का अर्थ इस प्रकार से है – (संठाण) द्वार में इन्द्रियों का आकार कैसा होता है यह प्रकट किया है–जैसे–श्रोत्रेन्द्रिय का आकार कदंब पुष्प के समान, चक्षु इन्द्रिय का आकार मसूर की दाल के समान, और चन्द्रमा के समान गोल है। घ्राणेन्द्रिय का आकार अति मुक्तक पुष्प के समान है। रसनेन्द्रिय का आकार क्षुरप्र – खुरपा के जैसा है। स्पर्शन इन्द्रिय का आकार नियत नहीं है। यह अनियत आकार वाली होती है। बाहल्य द्वार में श्रोत्रादिक इन्द्रियोंका बाहल्य-मोटाइपना प्रकट किया गया है जो इस प्रकार से है – जितनी भी इन्द्रियां हैं वे सब अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण मोटी हैं। पोहत्तद्वार में इन्द्रियों का पृथुत्व– विस्तार कहा गया है जो इस प्रकार से है–श्रोत्र, चक्षु और घ्राण इन का पृथुत्व अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। जिह्वा इन्द्रिय का पृथुत्व तो

બન્ને ગાથાઓનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-(સંઠાણ) દ્વારમાં ઇન્દ્રિયોના આકારો કેવા હોય છે તે બતાવ્યું છે જેમકે શ્રોત્રેન્દ્રિય નો આકાર કદંબના પુષ્પ જેવો, ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો અને ચન્દ્રમા જેવો ગોળ હોય છે ઘ્રાણેન્દ્રિયનો આકાર મુક્તક પુષ્પ જેવો, રસના ઇન્દ્રિયનો આકાર ખૂરપી જેવો છે અને સ્પર્શેન્દ્રિયનો કોઈ ચોક્કસ આકાર હોતો નથી (બાહલ્ય દ્વારમાં) ઇન્દ્રિયોની જાડાઈનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે વર્ણન આ પ્રમાણે છે— જેટલી ઇન્દ્રિયો છે તે બધી આત્મ્યના અસંખ્યાત ભાગ પ્રમાણ મોટી છે (પોહત્તદ્વાર) માં ઇન્દ્રિયોની વિશેષતાનું વર્ણન કર્યું છે તે વર્ણન આ પ્રમાણે છે–શ્રોત્ર, ચક્ષુ અને ઘ્રાણેન્દ્રિયની વિશેષતા એક આંગળના

तच्चेदम्-श्रोत्रचक्षुर्घ्राणानाम् अङ्गुलासंख्येयभागपरिमितं पृथुत्वम्. जिह्वेन्द्रियस्य नवाङ्गुलपरिमितं पृथुत्वम्। स्पर्शनेन्द्रियस्य शरीरमानम्. यस्य यादृश शरीरमल्पं वा बहु वा भवति तावदेव पृथुत्वम् तदीय स्पर्शेन्द्रिस्य भवति ३। "कइपएस" कतिप्रदेशम्. अनन्त प्रदेशिकानि पञ्चापीन्द्रियाणि अर्थात् प्रत्येकेन्द्रियेण असंख्याताऽऽसंख्याताऽऽकाशप्रदेशा अवगाढा प्रत्येकमिन्द्रिये अनन्ताऽनन्त पुद्गलाः सन्ति। अत एव पञ्चापीन्द्रियाणि अनन्तप्रदेशकानि सन्ति४॥'ओगाढे त्ति' अवगाढम्. असंख्येय-प्रदेशावगाढानि पञ्चापीन्द्रियाणि ५॥ "अप्पाबहु" इति अल्प बहुत्वम्. सर्वस्तोकं चक्षुरिन्द्रियमवगाहनातः, ततः श्रोत्रेन्द्रियं संख्यातगुणम्। घ्राणेन्द्रियं संख्यातगुणम्। ततो रसनेन्द्रियमसंख्येयगुणम्. ततः स्पर्शने-

---

अंगुल प्रमाण है। स्पर्शन इन्द्रिय का पृथुत्व-अपने २ शरीर के प्रमाण तुल्य होता है जिसका शरीर जैसा छोटा बड़ा होता है उसकी स्पर्शन इन्द्रिय की पृथुता वैसी ही होती है। "कइपएस" द्वार में यह स्पष्ट किया गया है कि पांचों ही इन्द्रियां अनंत प्रदेशों से निष्पन्न हुई हैं। अर्थात् प्रत्येक इन्द्रियने असंख्यात२ आकाशप्रदेशोंका अवगाढ किया हैं, और एक एक इन्द्रियमें अनंत अनंत पुद्गल लगे हुए हैं। ओगाढ द्वार में यह कहा गया है कि ये समस्त इन्द्रियां असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ हैं। अप्पा बहुत द्वार में यह समझाया गया है कि अवगाहना की अपेक्षा सब से स्तोक चक्षु इन्द्रिय है। चक्षु इन्द्रिय से संख्यातगुणी अवगाहना वाली श्रोत्रेन्द्रिय है। श्रोत्रेन्द्रिय से संख्यातगुणी अवगाहनावाली घ्राणेन्द्रिय है। घ्राणेन्द्रिय से असंख्यातगुणी

અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે, જીભની દીર્ઘતા નવ આગળ પ્રમાણ છે, સ્પર્શેન્દ્રિયની દીર્ઘતા પોત પોતાના શરીરના પ્રમાણ જેટલી હોય છે શરીર જેવુ નાનુ કે મોટુ હોય છે તે પ્રમાણે જ સ્પર્શેન્દ્રિય પણ નાની મોટી દીર્ઘતાવાળી હોય છે. (कइपएसे) નામના દ્વારમા એ સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યુ છે. કે પાચે ઇન્દ્રિયો અનત પ્રદેશોથી નિષ્પન્ન છે એટલે કે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને અસંખ્યાત અસખ્યાત આકાશ પ્રદેશ અવગાઢયા છે અને દરેક ઇન્દ્રિયમા અનંત પુદ્ગલ લાગેલા છે (ओगाढ) દ્વારમાં એ બતાવ્યુ છે કે બધી ઇન્દ્રિયો અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢે છે (अप्पाबहुय) દ્વારમાં એ બતાવ્યુ છે કે અવગાહનાની અપેક્ષાએ સૌથી સૂક્ષ્મ ચક્ષુઇન્દ્રિય છે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયથી સખ્યાતગણી અવગાહના શ્રોત્રેન્દ્રિયની હોય છે શ્રોત્રેન્દ્રિયથી સખ્યાતગણી અવગાહના ઘ્રાણેન્દ્રિયની હોય છે ઘ્રાણેન્દ્રિયથી અસખ્યાત ગણી અવગાહના

न्द्रियं संख्येयगुणमिति ६ ॥ "पुट्ठ" स्पृष्टम् श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि चक्षुष्यणि
कानि स्पृष्टमेव गृह्णन्ति चक्षुरिन्द्रियमप्राप्यकारि इतराणि सर्वाण्यपीन्द्रियाणि
प्राप्यकारीणि चक्षुर्विषयमप्राप्यैव विषयं प्रकाशयति इतराणि तु इन्द्रियाणि विषं
प्राप्यैव विषयप्रकाशकानि भवन्तीति भावः ७ ॥ एवमेव "पविट्ठ" प्रविष्ट
चक्षुरिन्द्रियं वर्जयित्वा सर्वेन्द्रियेषु पुद्गला समागत्य पतिष्ठन्ति ।

चक्षुरिन्द्रिये तु पुद्गला न प्रविशन्ति, अप्राप्यकारित्वात् ८ ॥ 'विसये
विषया सर्वेषामिन्द्रियाणां सामान्येन जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागो विषयः । उत्क

अवगाहनावाली रसनाइन्द्रिय है। रसनाइन्द्रियकी अपेक्षा संख्यातगुणी
अवगाहना वाली स्पर्शन इन्द्रिय है। (पुट्ठ द्वार में यह कहा गया है
कि श्रोत्रादिक इन्द्रियाँ केवल चक्षु इन्द्रिय के सिवाय स्पृष्ट हुये
अपने विषय को प्रकाशित करती हैं। चक्षु इन्द्रिय विषय को
स्पर्शकर अपने चाक्ष विषय को प्रकाशित नहीं करती है क्यों कि-
अन्य इन्द्रियों की तरह वह प्राप्यकारी सिद्धान्त में नहीं कही गई है।
जो अपने विषय को स्पर्शकर उसे प्रकाशित करती हैं वे इन्द्रियाँ प्राप्यकारी
मानी गई हैं और ऐसी स्पर्शन रसना घ्राण और कर्ण ये चार इन्द्रियाँ
हैं। (पविट्ठ) इस द्वार में यह समझाया गया है कि चक्षु इन्द्रिय को
छोड़कर बाकी चार इन्द्रियों में पुद्गल आकार प्रविष्ट होते हैं तभी आत्मा
वे अपनेर विषयों को ग्रहण कर सकती हैं। चक्षु इन्द्रिय में पुद्गल
प्रविष्ट नहीं होते हैं-क्यों कि वह अप्राप्यकारी है (विसय) द्वार में
यह स्पष्ट किया गया है कि समस्त इन्द्रियों का विषय सामान्य से

વાળી રસનાઇન્દ્રિય છે અને રસના ઇન્દ્રિય કરતા સંખ્યાત ગણી અવગાહના
સ્પર્શેન્દ્રિયની હોય છે (पुट्ठ) દ્વારમાં એ બતાવવામાં આવ્યુ છે કેવલ
ચક્ષુઇન્દ્રિય સિવાયની શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો સ્પૃષ્ટ કરેલા (સ્પર્શ પામેલા)
પોતાના વિષયને પ્રકાશિત કરે છે ચક્ષુઇન્દ્રિય વિષયનો સ્પર્શ કરીને પોતાના
ચાક્ષ વિષયને પ્રકાશિત કરતી નથી કારણ કે બીજી ઇન્દ્રિયોની જેમ તેને
પ્રાપ્યકારી કહેલ નથી. જે ઇન્દ્રિયો પોતાના વિષયનો સ્પર્શ કરીને તેને પ્રકા
શિત કરે છે તે ઇન્દ્રિયોને પ્રાપ્યકારી જાણવામાં આવે છે સ્પર્શેન્દ્રિય, રસ
ન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને શ્રોત્રેન્દ્રિય પ્રાપ્યકારી છે (पविट्ठ) આ દ્વારમાં એવુ
બતાવવામાં આવ્યુ છે ચક્ષુઇન્દ્રિય સિવાયની બાકી ઇન્દ્રિયોમાં જ્યારે પુદ્ગલો
આવીને પ્રવેશ કરે છે ત્યારે જ તેઓ પોત પોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરી
શકે છે ચક્ષુઇન્દ્રિયમાં પુદ્ગલો પ્રવેશતાં નથી કારણ કે તે અપ્રાપ્યકારી છે (विसय)
આ દ્વારમાં એ બતાવવામાં આવ્યુ છે કે બધી ઇન્દ્રિયોનો વિષય સામાન્ય

पतस्तु श्रोत्रेन्द्रियं शब्दान्तरैर्वातादिभिश्चाप्रतिहतं शब्दं द्वादशयोजनपर्यन्तं शृणोति। चक्षुष्परतु सातिरेकं योजनलक्षं विषयः। शेषाणां घ्राणरसनस्पर्शानां नव योजनानि विषयः ९। "अणगार" अनगार इति। अनगारस्य समुद्घातयुक्तस्य ये निर्जराः पुद्गलाः तान् छद्मस्थो मनुष्यो न पश्यतीति १०॥ "आहारे" आहारः-निर्जरान् पुद्गलान् नारकादयो न जानन्ति न पश्यन्ति न आहारयन्ति च॥

अत्र--द्वारगाथोक्तादर्शाख्यद्वादशद्वारादारभ्य चतुर्विंशतितमश्लोकद्वारपर्यन्तं बहुवक्तव्यमस्ति तत्तु सर्वं प्रज्ञापनासूत्रे इन्द्रियपदे प्रथमोद्देशके विलोकनीयम्

जघन्यरूप में अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। और उत्कृष्टरूप में श्रोत्र इन्द्रिय का विषय बारह योजनतकका है। यदि इसका वह शब्द-रूप विषय शब्दान्तरों द्वारा या प्रतिकूल वायु द्वारा प्रतिहत न किया गया हो तो श्रोत्रेन्द्रिय बारह योजनपर्यन्त के शब्द को विषय कर लेती है और चक्षु का विषय कुछ अधिक एक लाख योजनतक का है बाकी घ्राण, रसना और स्पर्शन इन तीन इन्द्रियों का अपना २ विषय नौ-नौ योजन तक का है। (अनगार) इस द्वार में यह समझाया गया है कि समुद्घात युक्त अनगार के जो निर्जरा संबंधी पुद्गल है उन्हें छद्मस्थ मनुष्य नहीं देख सकता है। (आहारे) इस द्वार में यह व्यक्त किया गया है कि निर्जरा संबंधी पुद्गलों को नारक जीव न जान सकते हैं, न देख सकते हैं किन्तु उनका आहार कर सकते हैं।

इन द्वार प्रदर्शक गाथाओं में कहे गये द्वारों में से ग्यारह द्वारों तक

રીતે ઓછામા ઓછો આગળના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ છે. અને વધારેમાં વધારે શ્રોત્રેન્દ્રિયનો વિષય બાર યોજન સુધીનો છે જો તેનો તે શબ્દરૂપ વિષય શબ્દાન્તરો દ્વારા કે પ્રતિકૂળ પવન દ્વારા પ્રતિહત થયો ન હોય તો શ્રોત્રેન્દ્રિય બાર યોજન પર્યન્તના શબ્દને ગ્રહણ કરી શકે છે ચક્ષુઈન્દ્રિય એક લાખ યોજન કરતા પણ દૂરના વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે. બાકીની ઈન્દ્રિયો-ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય નવ નવ યોજન પર્યન્તના વિષયોને ગ્રહણ કરી શકે છે (અનગાર) આ દ્વારમાં એ વાત સમજાવી છે કે સમુદ્ઘાતથી યુકત અણગારના નિર્જરા સબંધી જે પુદ્ગલો હોય છે તેમને છદ્મસ્થ મનુષ્યો જોઈ શકતા નથી. (આહારે) આ દ્વારમાં એ બતાવવામા આવ્યુ છે કે નિર્જરા સબંધી પુદ્ગલોને નારક જીવો જાણી શકતા નથી, જોઈ શકતા નથી અને તેમનો આહાર પણ કરી શકતા નથી.

એ દ્વારપ્રદર્શન ગાથાઓમાં કહેલા અગિયાર દ્વારોનુ વિવેચન ઉપર

विस्तरभयाद्भनोच्यते अथ 'जाव अलोगो इति पदेन पञ्चविंशतितमद्वारमाह—'अलोगेणं भंते' इत्यादि। "अलोगेणं भंते! किण्णाफुडे कइहिं वा कायहिं पुच्छा, गोयमा! नो धम्मत्थिकाएणं फुडे जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे-आगासत्थिकायस्सदेसेण फुडे आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे, नो पुढवीकाएणं फुडे जाव नो अद्धासमएणं फुडे एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासअणंतभागूणे"

छाया—अलोकः खलु भदन्त! केन स्पृष्टः कतिभिर्वा कायैः "पृष्टा" गौतम! नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टः यावत् नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य देशेन स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य प्रदेशैः स्पृष्टः नो पृथिवीकायेन स्पृष्टः यावत् नो अद्धासमयेन स्पृष्टः एकः अजीवद्रव्यदेशः अगुरुलघुकैरनन्तैः अगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः सर्वाकाशाऽनन्तभागोनः "इति"।

का तो विवेचन इस प्रकार से है बाकी के बारहवें आदेश द्वार से चौबीस वे लोकद्वारतक जो और द्वार हैं उनके विषय में वक्तव्य बहुत है सो यह सब प्रज्ञापना सूत्र में, इन्द्रियपद में, प्रथम उद्देशक में देख लेना चाहिये, विस्तार हो जाने के भय से यहां नहीं कहा जाता है। (जाव अलोगो) इस पद द्वारा सूत्रकार ने पचीसवां द्वार कहा है, इस द्वार में गौतमस्वामी ने प्रभु से ऐसा प्रश्न किया है कि-(अलोगे णं भंते! किण्णा फुडे, कइहिं वा कायहिं पुच्छा?" उत्तर-(गोयमा! नो धम्मत्थिकाएणं फुडे, जाव नो आगासत्थिकाएण फुडे, आगासत्थिकायस्स देसेण फुडे, आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे, नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धा समएणं फुडे एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं संजुत्ते सव्वागास अणंतभागूणे)

પ્રમાણે છે બાકીના બારથી લઈને ચોવીસમા દ્વાર સુધીનું કહેલ છે (બારમાં દ્વાર) થી લઈને (ચોવીસદ્વાર) સુધીનું વિવેચન બધારે હોવાથી વિસ્તાર થઈ જવાના ભયથી તે દ્વારોનું વિવેચન અહીં આપ્યું નથી તે વિવેચન પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના પહેલા ઉદ્દેશાના (ઇન્દ્રિયપદ) માંથી વાંચી લેવું (जाव अलोगो) આ પદ દ્વારા સૂત્રકારે પચીસમાં દ્વારનો ઉલ્લેખ કર્યો છે આ દ્વારમા ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને પૂછયુ છે કે-(अलोगे णं भंते! किण्णा फुडे, कइहिं वा कायहिं पुच्छा) उत्तर- (गोयमा! नो धम्मत्थिकाएणं फुडे, जाव नो आगासत्थिकाएण फुडे आगासत्थिकायस्स देसेण फुडे, आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे नो पुढवीकाएण फुडे जाव नो अद्धासमए ण फुडे, एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागास अणंत

"अलोगेणं भंते किण्णा फुडे" अलोकः खलु भदंत ! केन स्पृष्टः ? "कइहिं काएहिं पुच्छा" कतिभिर्वाकायैः पृच्छा हे भगवन् ! अलोकं कः स्पृशति किन्तः कायाः अलोकं स्पृशन्तीति अलोकस्पर्शविषयकः प्रश्नो गौतमस्य ! भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! 'नो धम्मत्थिकाएणं फुडे जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे" नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टो यावन्नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्टः इह यावत्पदेन अधर्मास्तिकाय-जीवास्तिकाय-पुद्गलास्तिकायानां संग्रहो भवति. किन्तु "आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे. आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे" आकाशास्तिकायस्य प्रदेशैः स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य देशप्रदेशाभ्यां स्पृष्टो भवत्यलोक इत्यर्थः ।

"नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे" नो पृथिवीकायेन

इसका अर्थ इस प्रकार से है-गौतमस्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि-हे भदन्त ! अलोकाकाश किस द्रव्यसे अथवा कितने कायों से स्पष्ट है ? तब गौतम स्वामी को समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि हे गौतम ! अलोकाकाश किसी भी द्रव्य से किसी अस्तिकाय से स्पृष्ट नहीं है, न वह धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट है, और न वह यावत्-आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट है। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) इन तीन अस्तिकायों का ग्रहण किया गया है। तात्पर्य यह कि अलोकाकाश में न कोई द्रव्य है और न कोइ अस्तिकाय ही है-किन्तु वह अलोकाकाश (आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकाय के देश से स्पृष्ट है, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) आकाशास्ति काय प्रदेशों से स्पृष्ट है। (नो पुढवी काएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे) पृथिवीकाय

भागणे) तेनो अर्थ आ प्रमाणे छे गौतम स्वामी पूछे छे-हे भदन्त ! आलोकाकाश कया द्रव्यथी अथवा केटला अस्तिकायोथी स्पृष्ट छे ? उत्तर-हे गौतम ! आलोकाकाश कोइ पण द्रव्यथी, के कोइ पण अस्तिकायथी स्पृष्ट नथी. ते धर्मास्तिकायथी लईने आकाशास्तिकाय पर्यन्तना कोइ पण अस्तिकायथी स्पृष्ट नथी अहीं जे (जाव) पर्यन्त पद आव्युं छे तेना द्वारा अधार्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय अने पुद्गलास्तिकायने ग्रहण करवामां आव्या छे कहेवानुं तात्पर्य ओ छे के अलोकाकाशमा कोइ द्रव्य पण नथी अने कोई अस्तिकाय पण नथी पण ते अलोकाकाश (आगासत्थिकायस्स देसेण फुडे) आकाशास्तिकायना देशथी स्पृष्ट छे, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) आकाशास्तिकायना प्रदेशथी स्पृष्ट छे. (नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धासम

स्पृष्ट यावत् नो अद्धासमयेन स्पृष्ट अयमलोको न पृथिवीकायेन स्पृश्यते न वा यावत् अद्धासमयेन स्पृष्टो भवतीति । यदि न कोऽपि तमलोकं स्पृशति तदा कीदृशोऽसौ पदार्थस्तत्राह " एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते " एक अजीवद्रव्यप्रदेश अगुरुलघुभिरनन्तै अगुरुलघुकगुणैः संयुक्त " सव्वागासअणंतभागूणे " सर्वाकाशोऽनन्तभागोनः अयमलोक । यो धर्मास्तिकायादिभिर्नस्पृष्टो भवति स च न, खरविषाणवत् अत्यन्तमसद् किन्तु

से यह अलोकाकाश स्पृष्ट नहीं है यावत्-अद्धासमय से यह अलोकाकाश स्पृष्ट नहीं है-इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर प्रभु से गौतम स्वामी ने पूछा-हे भदन्त ! जब अलोकाकाश को कोई द्रव्य या कोई अस्तिकाय स्पर्श नहीं करता है तो यह अलोकाकाशरूप पदार्थ कैसा है ? इस विषय को गौतमस्वामी को लिए समझाते हुए प्रभु उनसे कहते हैं-(एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) यह अलोकाकाशरूप पदार्थ एक अजीव द्रव्य का देश रूप पदार्थ है और यह अनंत अगुरुलघुगुणों से संयुक्त है। (सव्वागास अणंतभागूणे) तथा अनंतभाग से न्यून हुआ सर्वाकाशरूप है। यहां पर कोइ ऐसी आशंका न कर सके कि (जब अलोकाकाश धर्मास्तिकायादिकों से स्पृष्ट नहीं है तो फिर यह खरशृंगवत् अत्यन्त असत् हो हुआ-क्यों कि यह अजीव द्रव्य प्रदेशरूप है, तथा अनंत

पर्श કરે) તે અલોકાકાશ પૃથ્વીકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી અદ્ધાસમય પર્યન્તના પણ અસ્તિકાયોથી સ્પૃષ્ટ નથી.

જ્યારે આ પ્રકારનું કથન સાંભળીને ગૌતમ સ્વામીએ પ્રભુને-હે ભદન્ત ! જો અલોકાકાશને કોઇ પણ દ્રવ્ય કે અસ્તિકાય સ્પર્શતા નથી તો તે અલોકાકાશરૂપ પદાર્થ કેવો છે ? તે વિષયનું સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે પ્રભુ તેમને કહે છે કે (एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) તે અલોકાકાશરૂપ પદાર્થ એક અજીવ દ્રવ્યના દેશ રૂપ પદાર્થ છે અને તે અનંત અગુરુલઘુ ગુણોથી યુક્ત છે (सव्वागास अणंतभागूणे) તથા અનંત ભાગથી ન્યૂન થયેલા સર્વાકાશ રૂપ છે અહીં કોઈ એવા પ્રકારની શંકા ન કરી શકે કે (જો અલોકાકાશ ધર્માસ્તિકાય આદિથી સ્પૃષ્ટ નથી તો તે કપનાના ઘોડાના જેવું અત્યંત અસત્ જ માનવું પડે- કારણ કે તે અજીવ દ્રવ્ય પ્રદેશરૂપ છે, તથા અનંત અગુરુલઘુ ગુણોથી તે યુક્ત છે અને

"अलोगेणं भंते किण्णा फुडे" अलोकः खलु भदंत ! केन स्पृष्टः ? "कइहिं काएहिं पुच्छा" कतिभिर्वाकायैः पृच्छा हे भगवन् ! अलोकं कः स्पृशति कियन्तः कायाः अलोकं स्पृशन्तीति अलोकस्पर्शविषयकः प्रश्नो गौतमस्य ! भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! 'नो धम्मत्थिकाएणं फुडे जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे" नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टो यावन्नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्टः इह यावत्पदेन अधर्मास्तिकाय-जीवास्तिकाय-पुद्गलास्तिकायानां संग्रहो भवति. किन्तु "आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे. आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे" आकाशास्तिकायस्य प्रदेशैः स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य देशप्रदेशाभ्यां स्पृष्टो भवत्यलोक इत्यर्थः ।

"नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे" नो पृथिवीकायेन

इसका अर्थ इस प्रकार से है-गौतमस्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि-हे भदन्त ! अलोकाकाश किस द्रव्यसे अथवा कितने कायों से स्पष्ट है ? तब गौतम स्वामी को समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि हे गौतम ! अलोकाकाश किसी भी द्रव्य से किसी अस्तिकाय से स्पृष्ट नहीं है, न वह धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट है, और न वह यावत्-आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट है। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) इन तीन अस्तिकायों का ग्रहण किया गया है। तात्पर्य यह कि अलोकाकाश में न कोई द्रव्य है और न कोइ अस्तिकाय ही है-किन्तु वह अलोकाकाश (आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकाय के देश से स्पृष्ट है, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) आकाशास्ति काय प्रदेशों से स्पृष्ट है। (नो पुढवी काएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे) पृथिवीकाय

भागणे) तेनो अर्थ आ प्रमाणे छे गौतम स्वामी पूछे छे-हे भदन्त ! आलोकाकाश क्या द्रव्यथी अथवा केटला अस्तिकायोथी स्पृष्ट छे ? उत्तर-हे गौतम ! आलोकाकाश कोइ पण द्रव्यथी, के कोइ पण अस्तिकायथी स्पृष्ट नथी. ते धर्मास्तिकायथी लइने आकाशास्तिकाय पर्यन्तना कोइ पण अस्तिकायथी स्पृष्ट नथी अहीं जे (जाव) पर्यन्त पद आव्यु छे तेना द्वारा अधार्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय अने पुद्गलास्तिकायने ग्रहण करवामा आव्या छे. कहेवानु तात्पर्य ओ छे के अलोकाकाशमा कोइ द्रव्य पण नथी अने कोई अस्तिकाय पण नथी पण ते अलोकाकाश (अगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकायना देशथी स्पृष्ट छे, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) आकाशास्तिकायना प्रदेशथी स्पृष्ट छे. (नो पुढवीकाएण फुडे, जाव नो अद्धासम

लोके सत्त्वेन लोकाभावविरोधिनो लोकस्य कथमवस्थानम् अनवस्थाने सति लोकस्यालोके स्पर्शः न हि अविद्यमानस्य स्पर्शः क्वचित् श्रुतः भुवः संभवतीति आकाशास्तिकायस्य देशप्रदेशाभ्यामलोकस्य स्पर्शो भवति आकाशास्तिकाय देशप्रदेशयोरलोकाग्रसलग्नत्वात् एकश्चासौ अलोक अजीवद्रव्यप्रदेश आकाशद्रव्यदेशरूपत्वादिति ॥ सू० १ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक- वादिमानमर्दक-श्रीशाह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालप्रतिविरचितायां श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतकस्य चतुर्थोद्देशकः समाप्तः

अवस्थान कैसे माना जा सकता है। इस लिये जब वहां लोक का अवस्थान (अन्त)ही नहीं है तो फिर लोक का अलोक में स्पर्श कैसा। जो वस्तु जहां अविद्यमान होती है उसका स्पर्श वहां नहीं होता है। अविद्यमान वस्तु का स्पर्श न कहीं सुना गया है और न कहीं देखा भी गया है। आकाशास्तिकाय के देश प्रदेशों द्वारा अलोक का स्पर्श होता है ऐसा जो कहा गया है सो उसका कारण यह है कि आकाशास्तिकाय के देश और प्रदेश में अलोक का अग्रभाग संलग्न है। यह अलोकाकाश एक है और आकाशद्रव्य देशरूप होने के कारण यह अजीव द्रव्य का देश और प्रदेशरूप है ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवती सूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्या के द्वितीय शतक के चौथा उद्देशक समाप्त

કેવી રીતે માની શકાય ? તથી જ ત્યા જો લોકનુ અવસ્થાન જ નથી તો લોકનો અલોકને સ્પર્શ પણ કેવી રીતે ઘટાવી શકે ? જે વસ્તુ જ્યાં વિદ્યમાન જ ન હોય ત્યાં તેનો સ્પર્શ જ સંભવી શકે નહી અવિદ્યમાન વસ્તુનો સ્પર્શ કોઇ પણ કોઇવાર દેખ્યો નથી કે સાંભળ્યો નથી આકાશાસ્તિકાયના દેશ અને પ્રદેશો દ્વારા અલોકનો સ્પર્શ થાય છે એમ જે કહેવામાં આવ્યુ છે તેનું કારણ એ છે કે આકાશાસ્તિકાયના દેશ અને પ્રદેશોમાં અલોકનો અગ્રભાગ સલગ્ન છે તે અલોકાકાશ એક છે અને આકાશદ્રવ્ય દેશરૂપ હોવાને લીધે તે અજીવદ્રવ્યના પ્રદેશરૂપ છે ॥ ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો

अगुरुलघुरूपः अजीवद्रव्यप्रदेशस्तथाऽनन्ताऽगुरुलघुकगुणविशिष्टः सर्वाकाशान्तभागन्यूनः, लोकाकाश विरहात् ' यतोऽयमाकाशस्य स्वरूपभूतोऽनन्ता गुरुलघुकगुणैः स्पृष्टोऽत एव नायमलोकोऽत्यंतमसत् भवति किन्तु सद्रूप एव केवलं पृथिव्यादिकायैः धर्मास्तिकायादिना समयेन च अस्पृष्टः न व्याप्त इत्यर्थः। कुतोऽलोकमाकाशास्तिकायादयो न स्पृशन्ति इति चेदत्रोच्यते, यदि पृथिव्यादयः अलोके भवेयुस्तदा पृथिव्यादय एव लोकपदवाच्याः पृथिव्यादि कायादिना आलोकस्य स्पर्शो भवेत् किन्तु नत्वेवम् तत्रालोके पृथिव्यादि कायादीनामवर्तमानत्वादेवालोकस्यालोकत्वम् यत् तत्र लोकस्याभावो विद्यते। ततश्च लोकाभावस्या-

अगुरुलघुगुणों से यह विशिष्ट है। एवं लोकाकाश के इसमें विरह होने से यह अनंतभागन्यून सर्वाकाशरूप है। अतः जब यह अलोकाकाश आकाश का स्वरूप भूत है और अनत अगुरुलघुगुणों से युक्त है तब यह खरविषाण की तरह अत्यन्त असत् रूप नहीं हो सकता है। किन्तु यह एक सद्रूप पदार्थभूत ही है। लोकाकाश की तरह यह केवल पृथिव्यादिक कायो द्वारा, धर्मास्तिकयादिक द्वारा और समयद्वारा स्पृष्ट नहीं हुआ है-व्याप्त नहीं हुआ है। यह अलोकाकाश आकाशास्तिकायादिकों द्वारा स्पृष्ट क्यों नहीं होता है ? तो इसका उत्तर यह है कि-यदि पृथिव्यादिक कायं अलोकाकाश में होते तो वे उसे स्पर्श करते वहां तो पृथिव्यादिक काय हैं ही नहीं-तब इसे स्पर्श कौन करे। अलोक में अलोकता इसी कारण से तो है कि वहां पर पृथिव्यादिक कायरूप लोक नहीं है। जिस कारण वहां लोक का अभाव है इसी कारण अलोक में लोकाभाव का सत्व है, अतःलोकाभाव के विरोध लोक का वहां

તેમા લોકાકાશનો વિરહ (અભાવ હોવાથી તે અનત ભાગ ન્યૂન સર્વાકાશ રૂપ છે.) તે માટે નીચે પ્રમાણે ખુલાસો કર્યો છે—આ અલોકાકાશ આકાશ ના સ્વરૂપ ભૂત છે અને અનત અગુરુલઘુ ગુણોથી યુક્ત છે તેથી તે કલ્પનાના ઘોડા જેવુ અસત્ રૂપ હોઇ શકે નહી પણ તે એક સદ્રૂપ (અસ્તિત્વ ધરાવનાર) પદાર્થ રૂપ છે લોકાકાશની જેમ તે ફક્ત પૃથ્વી આદિ કાયો દ્વારા, ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્વારા અને સમય દ્વારા સ્પૃષ્ટ નથી—વ્યાપ્ત નથી તે અલોકાકાશ આકાશાસ્તિકાય આદિ દ્વારા સ્પૃષ્ટ કેમ નથી ?

ઉત્તર—જો પૃથ્વીકાય આદિ અલોકાકાશમાં હોત તો તેઓ તેનો સ્પર્શ કરતા હોત પણ ત્યા તો પૃથ્વીકાય આદિ છે જ નહી—તો તેનો સ્પર્શ કોણ કરે ! અલોકમા અલોકતા એ કારણે જ રહેલી છે કે ત્યા પૃથ્વીકાય આદિ કાય રૂપ લોક નથી જે કારણે ત્યા લોકનો અભાવ છે તેજ કારણે અલોકમા લોકાભાવનુ સત્વ છે, તેથી લોકાભાવથી વિરોધી લોકનું ત્યાં અવસ્થાન-અસ્તિત્વ

अण्णेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ, एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेय वेएइ तं जहा इत्थिवेयं पुरिसवेयं च एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च से कहमेयं भंते एवं? गोयमा ज णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च जे ते एवं आहंसु मिच्छं ते एवं आहंसु अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि भासामि पन्नवेमि परूवेमि एवं खलु णियठे कालगए समाणे अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु, दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु, से णं तत्थ देवे भवइ महड्ढिए जाव दसदिसाओ उज्जोवेमाणे, पभासे माणे जाव पडिरूवे सेणं तत्थ अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ, अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय, विउव्विय परियारेइ, एगेवि य णं जाव एगेणं समएणं एग वेयं वेएइ । तं जहा इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा जं समयं इत्थियवेयं वेएइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ जं समयं पुरिसवेयं वेएइ, नो तं समयं इत्थियवेयं वेएइ इत्थियवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेयं वेएइ एवं खलु एगे जीवे

॥ द्वितीयशतके पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

द्वितीयशतके चतुर्थमुद्देशकं निरूप्य तदनन्तरम् पञ्चमोद्देशको निरूप्यते. चतुर्थपञ्चमोद्देशकयोरयं संबन्धः चतुर्थोद्देशके इन्द्रियाणि उक्तानि. इन्द्रियबलादेव विषयभोगरूपा परिचारणासंभवेदित्यतस्तन्निरूपणाय तथा द्वितीयशतकादौ द्वार गाथायम् "अन्नउत्थिय" इति कथितमित्यन्ययूथिकवक्तव्यता प्रतिपादनाय च पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते, तदनेन संबन्धेनायातस्य पञ्चमोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम्–" अण्णउत्थिया " इत्यादि—

मूलम्–अण्णउत्थियाणं भंते ! एवं आइक्खंति भासंति पन्नवेन्ति, परूवेंति, तं जहा–एवं खलु नियंठे कालगए समाणे देवब्भूएणं अप्पाणेणं से णं तत्थ णो अन्ने देवे. नो

दूसरे शतकका पांचवां उद्देशक प्रारम्भ—

द्वितीयशतक में चौथे उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार पंचम उद्देशक निरूपण करते हैं। चतुर्थ उद्देशक का और इस पचम उद्देशक का संबंध इस प्रकार से है – चतुर्थ उद्देशक में इन्द्रियां कही गई हैं – सो उन इन्द्रियों के बल से ही विषय भोगरूप परिचारणा हो सकती है। इसलिये उस विषय भोगरूप परिचारणा को निरूपण करने के लिये तथा द्वितीय – शतक की आदि में द्वार गाथा में (अन्न उत्थिय) इस रूप से कथित अन्य – यूथिकों की वक्तव्यता को प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकार ने इस पंचम उद्देशक का प्रारंभ किया है। इस संबंध से आये हुए इस पंचम उद्देशक का यह आदि सूत्र है—(अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' इत्यादि।

બીજા શતકનો પાંચમો ઉદ્દેશક પ્રારંભ

બીજા શતકના ચોથા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ પૂરૂ કરીને હવે સૂત્રકાર પાચમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે ચોથા ઉદ્દેશક સાથે પાચમા ઉદ્દેશકનો સબધ આ પ્રમાણે છે–ચોથા ઉદ્દેશકમા ઇન્દ્રિયોનુ નિરૂપણ કર્યું છે તે ઇન્દ્રિયો દ્વારા જ વિષય ભોગરૂપ પરિચારણા થઇ શકે છે તેથી તે વિષય ભોગરૂપ પરિચારણાનું નિરૂપણ કરવા માટે તથા બીજા શતકની શરૂઆતમાં આવતી દ્વારગાથામાં (અન્ન ઉત્થિય) અન્ય યૂથિકો (અન્ય મતવાદીઓ) નું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ પાચમો ઉદ્દેશક શરૂ કર્યો છે આ પ્રકારના સંબધથી શરૂ થતા આ પાંચમા ઉદ્દેશકનુ પહેલુ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—(अण्ण उत्थिया णं भंते !) ઇ૦

परिचारयति एकोऽपि च खलु जीवः एकेन समयेन द्वौ वेदौ वेदयति । तद् यथा स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च एवं परतीर्थिकवक्तव्यता नेतव्या, यावत् स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च तत्कथमेतद् भवेत् ! एवम्, गौतम ! यत् खलु ते अन्यतीर्थिका एवमाख्यान्ति यावत् स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च, यत्ते एवमाहुर्मिथ्या ते एवमाहुः अहं पुन गौतम! एवमाख्यामि भाषे प्रज्ञापयामि प्ररूपयामि, एवं खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् अन्य

परिचारेइ) वह देव अपने आप से अर्थात्-अपनी विक्रियाशक्ति से अपने दो रूप बनाता है इनमें एक रूप देव का होता है और दूसरारूप देवी का होता है । इस तरह दो रूप में विभक्त हुआ यह देव स्वयं ही देवीरूपमें विभक्त हुए अपने ही दूसरे रूप के साथ विषयभोग करता है इस तरह (एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेए वेएइ) एक ही जीव एक ही समय में दो वेदों का अनुभव करता है । (तं जहा) वे दो वेद इस प्रकार से हैं (इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) एक स्त्रीवेदका और दूसरे पुरुषवेदका । (एव परतित्थिय वत्तव्वया नेयव्वा) इस प्रकारसे परतीर्थिक जनोंकी वक्तव्यता जाननी चाहिये (जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) यावत् स्त्री वेद और पुरुषवेद तक (से कहमेयं भंते एवं) तो क्या हे भदन्त! यह परतीर्थिक जनों की मान्यता ठीक है ? (गोयमा) हे गौतम ! (जं णं ते अन्नउत्थिया एव आइक्खंति जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) हे गौतम! जो वे अन्यतीर्थिक जन ऐसा कहते हैं यावत् एक जीव एक समयमें दो वेदों को-स्त्रीवेदको और पुरुष वेद-अनुभवता है (जे

परिचारेइ) તે દેવ પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી પોતાના બે રૂપ બનાવે છે તેમાનું એક રૂપ દેવનું અને બીજુ દેવીનું હોય છે આ રીતે બે સ્વરૂપમાં વિભક્ત થયેલો તે દેવ દેવીરૂપે વિભક્ત થયેલા પોતાનાજ બીજા રૂપની સાથે વિષયભોગ સેવે છે આ રીતે (एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेए वेएइ) એક જ જીવ એક જ સમયે બે વેદોનો અનુભવ કરે છે (तंजहा) તે બે વેદ આ પ્રમાણે છે-(इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) (૧) સ્ત્રીવેદને (૨) પુરુષવેદ (एव परतित्थियवत्तव्वया नेयव्वा) આ પ્રમાણેનુ અન્ય મતવાદીઓનુ વક્તવ્ય છે તેમ સમજવુ (जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) સ્ત્રીવેદ પુરુષવેદ પર્યન્તનુ (से कहमेयं भंते एवं) હે ભદન્ત ! અન્યમતવાદીઓની તે માન્યતા શું સાચી છે ? હે (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) અન્યમતવાદિઓ જેનુ કહે છે કે એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનો અનુભવ કરે છે (અહીં

एगेणं समएणं एगं वयं वेएइ तं जहा इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा इत्थाइत्थिवेएणं उदिण्णेणं पुरिसं पत्थेइ, पुरिसो पुरिसवेएणं उदिण्णेणं इत्थिं वेत्थइ, दो वि तं अण्णमण्णं पत्थेंति तं जहा इत्थी वा पुरिसं, पुरिसे वा इत्थिं ॥सू०१॥

छाया—अन्य यूथिका खलु भदत ! एवमाख्यांति भाषन्ते प्रज्ञापयन्ति प्ररूपयन्ति । तद् यथा एवं खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् देवभूतेनात्मना स खलु तत्र नोऽन्यान् देवान् , नोऽन्येषां देवानां देवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति, नो आत्मीया देवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति । आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य

सूत्रार्थ-(भंते ? अन्नउत्थियाणं एवं आइक्खंति, भासंति, पन्नवेंति परूवेंति) हे भदन्त ! अन्यतीर्थिकजन ऐसा कहते हैं, ऐसा भाषण करते हैं, ऐसी प्रज्ञापना करते हैं ऐसी प्ररूपणा करते हैं (तंजहा) कि (एवं खलु नियंठे कालगए समाणे) जब निर्ग्रन्थ कालगत हो जाता है तब वह (देवभूएणं तु अप्पाणेणं) देव की पर्याय से देवलोक में उत्पन्न हो जाता है। उस पर्याय से (से णं) वह (नो अन्ने देवे) न अन्यदेवों को, तथा (नो अन्नेसिं देवाण देवीओ) न अन्य देवों की देवियों को (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) अपने वश में कर करके (परियारेइ) विषयभोग करता है (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) और न अपनी देविओं को वश में करके उनके साथ विषय भोग करता है किन्तु (अप्पणामेव अप्पाणं विउव्वि-

---

સૂત્રાર્થ-(भंते ! अन्नउत्थिकाण एवं आइक्खति भासंति, पन्नवेंति, परूवेंति) હે ભદન્ત ! અન્ય મતવાદીઓ એવું કહે છે, એવું ભાષણ કરે છે, એવી પ્રજ્ઞાપના કરે છે, એવી પ્રરૂપણા કરે છે (तंजहा) કે (एवं खलु नियंठे कालगए समाणे) જ્યારે નિર્ગ્રંથ કાળ પામે છે ત્યારે (देवभूएणं तु अप्पाणेणं) તે દેવલોકમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયેલ (से ण) તે (नो अन्नेदेवे, नो अन्नेसिं देवाण देवीओ) અન્ય દેવોને અથવા અન્ય દેવોની દેવીઓને (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) પોતાને વશ કરીને (परियारेइ) વિષયભોગ ભોગવતો નથી, (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओअहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) અથવા તો પોતાની દેવીઓને વશ કરીને તેમની સાથે વિષયભોગ કરતો નથી પણ (अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय

परिचारयति आत्मीयादेवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति नो आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य परिचारयति। एकोऽपि च खलु जीव एकस्मिन् समये एकं वेदं वेदयति तद्-यथा स्त्रीवेदं वा पुरुषवेदं वा यस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति नो तस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति, यस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति नो तस्मिन्

विक्रियाओं को प्रकाशित करता है देदीप्यमान करता है। यावत् अस्तोक देखने वाले को जिसके रूप में नवीनता ही नवीनता दिखलाई पड़ती है। (से ण तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ) वह वहांपर अन्य दूसरे देवों को तथा देवों कि देवियों को (अभिजुंजिय अभिजुंजिय) अपने वश में करके (परियारेइ) उनके साथ वैषयिक सुख भोगता है। (नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ) अपने आपके विक्रियाशक्ति से देवी और देव के दो रूप बना कर वैषयिक सुखों का भोग नहीं करता है। (एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ) इसी तरह एक जीव एक समयमें एक ही वेदका अनुभव करता है। (तं जहा) जो इस प्रकारसे हैं (इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा) स्त्रीवेद का अथवा पुरुषवेद का दोनों वेदों का एक ही समय में एक जीव अनुभव नहीं करता क्यों कि (जं समयं इत्थिवेयं वेएइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ) जिस समय में वह स्त्री वेद का वेदन करता है उस समय में वह पुरुषवेद का वेदन नहीं करता है (जं समयं पुरिसवेयं वेएइ, नो तं समयं इत्थिवेयं वेएइ) और जिस

ક્રિયાઓને પ્રકાશિત કરતું હોય તથા પ્રત્યેક જોનારને તેના રૂપમાં નવીનતાનાં દર્શન થતાં હોય (से ण तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ) એવો તે દેવ ત્યાં અન્ય દેવોને તથા અન્ય દેવોની દેવીઓને (अभिजुंजिय अभिजुंजिए) પોતાને વશ કરીને (परियारेइ) તેમની સાથે વિષયભોગ ભોગવે છે (नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ) પોતાના શરીરના વૈક્રિય શક્તિથી દેવ અને દેવીના બે રૂપ બનાવીને તે વિષયભોગ ભોગવતો નથી. (एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ) આ રીતે જોઇ એક જીવ એક સમયે કોઇ પણ વેદનો અનુભવ કરે છે (तंजहा) તે વેદ આ પ્રમાણે છે (इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा) સ્ત્રીવેદ અથવા પુરુષવેદ કોઇ પણ એક જીવ કોઇ પણ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનો અનુભવ કરતો નથી કારણકે (जं समयं इत्थिवेयं वेएइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ) જે સમયે તે સ્ત્રીવેદનો અનુભવ કરે છે તે સમયે તે પુરુષવેદનો અનુભવ કરતો નથી, (जं समयं पुरिसवेयं

तरेषु देवलोकेषु देवतया उपपन्नो भवति महर्द्धिकेषु, यावन्महानुभावेषु दूरगतिकेषु चिरस्थितिकेषु स खलु तत्र देवो भवति महर्द्धिको यावत् दशदिश उद्योतयन् प्रभासयन् यावत् प्रतिरूपः । स खलु तत्र अन्यान् देवान् अन्येषां देवानां देवीरभियुज्य-

---

ते एवं आहंसु) सो जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छं ते एवं आहंसु) सो ऐसा वह उन्हों ने मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि भासामि, पन्नवेमि परूवेमि) मैं तो हे गौतम ! ऐसा कहता हूं -ऐसा ही भाषण करता हू ऐसी ही प्रज्ञापना करता हूं ऐसी ही प्ररूपणा करता हूं कि (एवं खलु नियंठे कालगए समाणे) कोई निर्ग्रन्थ - कालगत होकर अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ) किसी एक देवलोक में देवकी पर्याय से उत्पन्न हो जाता है (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु) सो भी वह सामान्य देवलोकों में उत्पन्न नहीं होता किन्तु जो देवलोक बडी बडी ऋद्धियों से संपन्न होते हैं-यावत् महाप्रभावशाली होते हैं, दूरतक जाने की शक्ति से युक्त ऐसे देवों से सहित होते हैं तथा जिनमें आयु बहुत लंबी होती है ऐसे देवलोकों में से किसी एक देवलोक में वह उत्पन्न होता है। (से णं तत्थ देवे भवइ महड्ढिए जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणे पभासेमाणे जाव पडिरूवे) वहाँ उत्पन्न होकर वह निर्ग्रन्थ ऐसा देव होता है कि जिसकी महान् ऋद्धि होती है यावत् जो दशों

પ્રશ્નમાંનુ સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવાનુ) (जे ते एवं आहंसु) તેમણે એવું જે કહ્યુ છે તે (मिच्छं ते एवं आहंसु) તેમણે મિથ્યા (ખોટું) કહ્યુ છે. (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि, भासामि, पन्नवेमि, परूवेमि) હે ગૌતમ ! હું તો એવુ કહુ છુ, એવું ભાષણ કરૂ છું, એવી પ્રજ્ઞાપના કરૂ છું અને એવી પ્રરૂપણા કરૂ છુ કે (एव खलु नियठे कालगए समाणे) કોઇ નિર્ગ્રંથ કાળ પામીને (अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ) કોઇ એક દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઇ જાય છે, (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु) બધે તે સામાન્ય દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો ન હોય, પણ અનેક ઋદ્ધિયોથી ભરપૂર દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો હોય, મહા પ્રભાવશાળી દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો હોય, લાબા આયુષ્યવાળા અને ઘણે દૂર સુધી જવાની શક્તિથી યુક્ત દેવલોકમા તે ઉત્પન્ન થયો હોય, (से णं तत्थ देवे भवइ महड्ढिए जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणे पभासेमाणे जाव पडिरूवे) ત્યા ઉપન્ન થયેલા તે દેવની મહાન ઋદ્ધિ હોય, એવુ દેદીપ્યમાન સ્વરૂપ હોય કે જે દસે

टीका—"अन्नउत्थियाणं भंते !" अन्ययूथिकाः खलु भदंत ! "एवं आइक्खंति" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति-हे भगवन् ! परतीर्थिनाः पापिनो वक्ष्यमाणप्रकारेण कथयन्ति । 'भासंति' भाषन्ते "पन्नवेंति" प्रज्ञापयन्ति "परूवेंति" प्ररूपयंति । किमाख्यान्ति-इत्याह-"तं जहा" तद् यथा-तदेव दर्शयति-"एवं खलु" इत्यादि "एवं खलु निग्गंथे कालगए समाणे" एवं खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् निर्ग्रंथः=साधु "कालगए" कालगत "देवभूएणं अप्पाणेणं" देवभूतनात्मना कारणभूतेन नो परिचारयति-इति अग्रिमेण संबन्धः देवभूतेन देवभाव प्राप्तेन देवीभूत्वेत्यर्थः "से णं तत्थ णो अन्ने देवे" स खलु-निर्ग्रंथ जीवदेवः 'तत्थ' तत्र-देवलोके "णो अन्ने देवे" नो अन्यान् देवान् स्वव्यतिरिक्तान् 'णो अण्णेसिं देवाणं देवीओ" नो अन्येषां देवानां देवी अन्येषामात्मव्यतिरिक्तदेवानां देवी अन्यदेवसम्बन्धिनी देवी "अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ" अभियुज्याभियुज्य स्ववशं कृत्वा नो परिचारयति न परिभुक्ते

टीकार्थ—(अन्नउत्थिया णं भंते) प्रभु से प्रश्न करते हुए गौतम पूछते हैं कि हे भदन्त ! अन्ययूथिकजन (एवं आइक्खंति) जो ऐसा कहते हैं-वक्ष्यमाणरूप से इस प्रकार से कथन करते हैं (भासंति) जनसमुदाय के बीच में ऐसा ही भाषण करते हैं (पन्नवेंति) हेतु दृष्टान्त आदि द्वारा ऐसा ही बताते हैं (परूवेंति) शास्त्रों में वे ऐसी ही प्ररूपणा करते हैं-(तं जहा) कि-(एवं खलु निग्गंथे) कोई भी निर्ग्रन्थ साधु (कालगए) जब मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तब वह परभव में देवगति को प्राप्त करता है अर्थात्-देवगति में जाकर जन्म लेता है वह वहां पर (देवभूएणं अप्पाणेणं) देवरूप हुए अपने शरीर से (सेणं तत्थ) वह देव वहां पर अपने शरीर से (णो अन्ने देवे णो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) वह निर्ग्रन्थ साधु

ટીકાર્થ-ગૌતમસ્વામી મહાવીરસ્વામીને આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે (अन्नउत्थियाणं भंते !) હે ભદન્ત ! અન્ય મતવાદીઓ (एवं आइक्खंति) એવું કહે છે (एवं भासंति) જનસમૂહની વચ્ચે એવું ભાષણ કરે છે, (एवं पन्नवेंति) દૃષ્ટાંતાદિ દ્વારા એવું બતાવે છે, (एवं परूवेंति) શાસ્ત્રોમાં એવી પ્રરૂપણા કરે છે (तंजहा) કે (एवं खलु निग्गंथे) કોઈ પણ નિર્ગ્રન્થ સાધુ (कालगए) મૃત્યુ પામીને દેવલોકમાં દેવગતિ પ્રાપ્ત કરે છે ત્યાં જઈને તે (देवभूएणं अप्पाणेणं) દેવરૂપ બનેલા પોતાના શરીરથી (सेणं तत्थ णो अन्ने देवे णो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) અન્ય દેવોને અને અન્ય દેવીઓને પોતાને વશ કરીને તેમની

समये स्त्रीवेदं वेदयति. स्त्रीवेदस्योदयेन नो पुरुषवेदं वेदयति पुरुषवेदस्योदयेन नो स्त्रीवेदं वेदयति. एव खलु एको जीव एकेन समयेनैकं वेदं वेदयति तद् यथा स्त्रीवेदं वा पुरुषवेदं वा. स्त्री स्त्रीवेदेनोदीर्णेन पुरुषं प्रार्थयते. पुरुषः पुरुषवेदेनोदीर्णेन स्त्रियं प्रार्थयते द्वावपि तौ अन्योन्यं प्रार्थयते. तद् यथा स्त्री वा पुरुषं पुरुषो वा स्त्रियम् ॥ सू० १ ॥

समय में वह पुरुष वेद का वेदन करता है-उस समय में स्त्री वेद का वेदन नहीं करता। (इत्थियवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेयं वेएइ) तथा स्त्रीवेद के उदय से पुरुषवेदका वेदन नहीं करता और न पुरुषवेदके उदयसे स्त्रीवेदका वेदन नहीं करता है। (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ) इस तरह एक जीव एक समय में एक वेद का वेदन करता है। (तंजहा-इत्थियवेयं वा पुरिसवेयं वा) या तो स्त्रीवेदका वेदन करता है या पुरुषवेद का वेदन करता है। (इत्थी इत्थीवेएणं उदिण्णेणं पुरिसं पत्थेइ, पुरिसो पुरिसवेएणं उदिण्णेणं इत्थिं पत्थेइ) स्त्री स्त्रीवेद के उदय होने पर पुरुष की अभिलाषा करती है और पुरुषवेद के उदय में पुरुष स्त्री की अभिलाषा करता है। इस तरह (दो वि ते अण्णमण्णं पत्थेंति-तंजहा-इत्थीवा पुरिसं पुरिसे वा इत्थिं) स्त्री और पुरुष दोनों ही स्त्रीवेद और पुरुषवेद के उदय में एक दूसरे की चाहना किया करते हैं-स्त्री पुरुष की और पुरुष स्त्री की ॥ सू० १ ॥

વેએઇ, નો ; समयं इत्थियवेयं वेएइ) અને જ્યારે તે પુરુષવેદનુ વેદન કરતો હોય છે ત્યારે તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરતો નથી, (इत्थियवेयस्स उदएण नो पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेय वेएइ) તથા સ્ત્રીવેદના ઉદયથી પુરુષવેદનુ વેદન કરતો નથી અને પુરુષવેદના ઉદયથી સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો નથી (एवं खलु एगे जीवे एगेण समएण एग वेयं वेएइ આ રીતે એક જીવ એક સમયે એક જ વેદનુ વેદન કરે છે-(तंजहा इत्थियवेय वा पुरिसवेयं वा) કાંતો સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરે છે કાંતો પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે (इत्थी इत्थीवेएण उदिण्णेण पुरिस पत्थेइ) સ્ત્રીવેદનો ઉદય થતાં સ્ત્રી પુરુષની અભિલાષા કરે છે (पुरिसो पुरिसवेएण उदिण्णेणं इत्थिं पत्थेइ) અને પુરુષવેદનો ઉદય થતા પુરુષ સ્ત્રીનો સમાગમ ઇચ્છે છે આ રીતે (दो वि ते अण्णमण्ण पत्थेंति-तजहा-इत्थी वा पुरिसं पुरिसे वा इत्थी) સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને જ સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદના ઉદયમા એક બીજાની અભિલાષા કરતા હોય છે-સ્ત્રી પુરુષની અને પુરુષ સ્ત્રીની અભિલાષા કરતા હોય છે.

वेदस्य नान्यासामग्री भवति अपितु स्वात्मनैव देव्यादिक सपाद परिहरते इ
अथवा-इदं प्रतिपादयति-"एगे वि य णं जीवे" एकोऽपि
खलु जीव "एगेणं समएणं" एकस्मिन समये "दो वेय वेएइ" द्वौ वे
वेदयति "त जहा" तद् यथा "इत्थिवेय च पुरिसवेय च" स्त्रीवेदं च पु
वेद च" एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा" एवं परयूथिकवक्तव्यता नेतव्
ज्ञातव्या "जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च" यावत् स्त्रीवेद च पुरुषवेदं च प
यूथिक वक्तव्यता च इत्यम्। पाठस्थेन इदं दृश्यम्-"जं समय इत्थिवेयं वे
तं समयं पुरिसवेयं वेएइ, जं समयं पुरिसवेयं वेएइ तं समयं इत्थिवेय वेएइ इत्थि
वेयस्स वेयणाए पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स वेयणाए इत्थिवेयं वेएइ ए
खलु एगे वि य णं जीवे एगेण समएणं दो वेयं वेएइ इत्थिवेय च पुरिसवेयं च

शरीर के दो रूप बनाता है। एक देव का रूप और दूसरा देवीका रूप
सो देव का रूप देवी के साथ वैषयिक सुख का अनुभव करता है।
इस तरह से अपने ही दो रूप होने के कारण वही एक ही समय में
दो वेदों का अनुभव करता है-एक पुरुष वेद का दूसरे स्त्रीवेद का
इस तरह से एक ही जीव एक ही काल में दो वेदों का अनुभव करता
है यह कथन बन जाता है। (एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा) इस
प्रकार से अन्यतीर्थिकों की वक्तव्यता जाननी चाहिये (जाव इत्थिवेयं
च पुरिसवेयं च) इस पाठ को लगाने के लिये (जाव) पदसे सूचित
पाठ इस प्रकार से है—" जं समय इत्थिवेयं वेएइ, तं समयं पुरिस
वेयं वेएइ, जं समयं पुरिसवेयं वेएइ, तं समयं इत्थिवेयं वेएइ, इत्थि
वेयस्स वेयणाए पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स वेयणाए इत्थिवेयं वेएइ,
एव खलु एगे वि य ण जीवे एगेण समएण दो वेयं वेएइ, इत्थिवेयं च

બનાવે છે—એક દેવનુ રૂપ અને બીજુ દેવીનુ રૂપ તે દેવનુ સ્વરૂપ દેવીપણાની
સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે આ રીતે પોતાનાં જ બે રૂપ બનાવવાને લીધે
તે એક બોલ સાથે પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદનો અનુભવ કરે છે આ રીતે બોલ
જ એવ બોલ સમયે બે વેદનુ વેદન કરે છે આ પ્રકારની માન્યતા અન્ય
તીર્થિકો ધરાવે છે

(एव खलु एगे वि य ण जीवे एगेण समएण दो वेयं वेएइ) આ પ્રકારની અન્યતીર્થિકોની
માન્યતા સમજવી (जाव इत्थिवेय च पुरिसवेय च) આ પાઠને જોડવા માટે
(जाव) પદથી સૂચિત થયેલો પાઠ આ પ્રમાણે છે—(ज समय इत्थिवेयं
वेएइ, त समयं पुरिसवेयं वेएइ ज समय पुरिसवेयं वेएइ, त समय इत्थि
वेयं वेएइ, इत्थीवेयस्स वेयणाए पुरिसवेयं वेएइ पुरिसवेयस्स वेयणाए इत्थिवेयं
वेएइ, एव खलु एगे वि य ण जीवे एगेण समएण दो वेय वेएइ, इत्थि

इत्यर्थः "अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ" नो आत्मीयादेवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति. न परकीयादेवीः वशीकृत्य परिभुंक्ते न वा स्वकीयादेवीः वशीकृत्य परिभुंक्ते, किन्तु "अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय परियारेइ" आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य परिचारयति स्वात्मनैव स्वात्मानं देवीरूपेण देवरूपेण वा विकुर्व्य परिचारयति. तत्र देवलोकगतस्य निर्ग्रंथजीव-

---

का जीव जो देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हो गया है वह अन्य देवों को और अन्यदेवों की देवियों को (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) वश में कर कर के उनके साथ विषयसुख नहीं भोगता है यहां पर जो (अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाणं देवीओ) ऐसा पाठ कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि वह अपने से भिन्न देवों के साथ और अपने से भिन्न देवों की देवियों के साथ वैषयिक सुख नहीं भोगता है। और (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) नहीं वह अपनी निज देवियों के साथ भी उन्हें वशीभूत कर वैषयिक सुख भोगता है यदि ऐसा है तो फिर वह किस तरह से वहां वैषयिक सुख भोगता है? इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि-(अप्पाणमेव अप्पाणं विउव्विय परियारेइ) वह देव अपनी वैक्रिय शक्ति के द्वारा अपने निज के ही दो रूप बनाता है और उनके साथ ही वैषयिक सुख भोगता है-तात्पर्य यह कि देवलोक में गये हुए उस निर्ग्रन्थ जीव देव के पास अन्य सामग्री तो होती नहीं है-इसलिये वह (अप्पणामेव) अपने आप ही-अर्थात्-अपनी वैक्रिय शक्ति से ही-अपने

સાથે વિષયસુખ ભોગવતો નથી. અહીં (अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाणं देवीओ) એવો જે પાઠ આવે છે તેનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-તે પોતાનાથી ભિન્ન દેવોની સાથે અને પોતાનાથી ભિન્ન દેવોની દેવીઓ સાથે વિષયસુખ ભોગવતો નથી અને (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) તે પોતાની દેવીઓને વશ કરીને તેમની સાથે પણ વિષયસુખ ભોગવતો નથી તો તે ત્યાં કેવી રીતે વિષયસુખ ભોગવે છે? તે કહે છે-(अप्पाणमेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ) તે દેવ પોતાની વૈક્રિયશક્તિ દ્વારા પોતાના જ બે રૂપ બનાવે છે-એક દેવનું રૂપ અને બીજું દેવીનું રૂપ અને તેની સાથે જ વિષયસુખ ભોગવે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે દેવલોકમાં ગયેલા તે નિર્ગ્રંથજીવ દેવની પાસે અન્ય સામગ્રી તો હોતી નથી તેથી તે (अप्पणामेव) પોતાની જાતે જ-એટલે કે પોતાની વૈક્રિયશક્તિથી પોતાના શરીરનાં બે રૂપ

"जाव इत्थिवेदं च पुरिसवेदं च" यावत् स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च। इह यावत् करणात् भाषन्ते प्रज्ञापयन्ति, प्ररूपयन्ति यदी निर्ग्रन्थदेवो न परकीयां देवीमात्मनि स्त्री कृत्वा आत्मना परिचारयन्ति किन्तु स्वात्मानमेव विकुर्व्य देवी रूपतया परिणम्य तया एकोऽपि एकस्मिन् समये स्त्रीवेदं पुरुषवेदमुभयमपि वेदयतीत्यादीनां ग्रहणं कर्तव्यमिति "जे ते एवं आहंसु" यत् ते परतीर्थिका एवमाहुः "मिच्छं ते एवं आहंसु" मिथ्या ते एवमाहुः, यतो हि-स्त्रीरूपकरणेऽपि तस्य निर्ग्रन्थ स्त्रीवेदस्य पुरुषरूपत्वात् पुरुषवेदस्यैव एकस्मिन् समये उदय समवेत् न तु स्त्री वेदस्य स्त्रीवेदपरिवर्तने स्त्रीवेदस्यैवोदयः स्यात् न पुरुषवेदस्योदयः कथमपि सम्भवति स्त्रीवेदपुरुषवेदयोः परस्परविरुद्धत्वेनैकस्य एकसमय उदयस्यासंभवात् यतोः

इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) कि यावत् एक समय में स्त्रीवेद और पुरुषवेद इन दो वेदों का वेदन करता है, (जे ते एवं आहंसु) सो अन्यतीर्थिक जनों ने जो ऐसा कहा है (मिच्छं ते एवं आहंसु) वह उन्हों ने मिथ्या कहा है। क्योंकि वह देव जब स्त्री का रूप करता है तब भी स्वयं पुरुष होने के कारण उसके पुरुष वेद का ही उस समय में उदय संभवता है स्त्रीवेद का नहीं। स्त्रीवेद के परिवर्तन होने पर स्त्री वेद का ही उदय होता है पुरुष वेद का नहीं। क्यों कि पुरुष वेद और स्त्री वेद ये दोनों वेद आपस में एक दूसरे से विरुद्ध होते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि देव अपने मूल शरीर में रहता हुआ भी एक समय में अनेकरूप बना सकता है। एक ही समय में यह स्त्री और पुरुष दोनों रूपों में बन जाया करता है परन्तु जब इसका स्त्री और पुरुष दोनों का रूप होगा-तब भी उस समय उस रूप को-कृत्रिम स्त्री को एक पुरुष

વેદ) કે એક જ કાળ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનું વેદન કરે છે (અહીં ગૌતમના પ્રશ્નમાં આવતું સમગ્ર કથન સમજી લેવું જોઈએ) (જે તે एवं आहंसु) અન્ય મતવાદીઓએ જે કહ્યું છે કહ્યું છે તે (मिच्छं ते एवं आहंसु) તેમણે મિથ્યા કહેલું છે એમનું કહેવું સાચું નથી કારણકે તે દેવ જ્યારે સ્ત્રીનું રૂપ ધારણ કરે છે ત્યારે પણ પોતે પુરુષ હોવાથી તે સમયે તેના પુરુષવેદનો જ ઉદય સંભવી શકે છે-સ્ત્રીવેદનો નહીં સ્ત્રીવેદનું પરિવર્તન કરવામાં આવે ત્યારે સ્ત્રીવેદનો જ ઉદય થાય છે પુરુષવેદનો નહીં કારણકે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એ બંને પરસ્પર વિરુદ્ધ જ હોવાનું તાત્પર્ય એ છે કે દેવ પોતાના મૂળ શરીરમાં રહેવા છતાં પણ એક સમયે અનેક રૂપ બનાવી શકે છે એક સમયે તે સ્ત્રી અને પુરુષ બંને બની જઈ શકે છે પણ જ્યારે તેને સ્ત્રી અને પુરુષનું રૂપ ધારણ કરવું હોય ત્યારે પણ તે કૃત્રિમ સ્ત્રીરૂપના એકમાં પુરુષવેદનો જ ઉદય થાય છે

इति। यस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति तस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति यस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति तस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति स्त्रीवेदस्य वेदनया पुरुषवेदं वेदयति पुरुषवेदस्य वेदनया स्त्रीवेदं वेदयति एवम् एकोऽपि च खलु जीव एकस्मिन् समये द्वौ वेदौ वेदयति स्त्रीवेदश्च पुरुषवेदश्चेति एवं हि परतीर्थिकाः निर्ग्रंथजीवदेवविषये कथयन्ति तत्र गौतमो भगवन्तं पृच्छति "से कहमेयं भंते एवं" तत् कथम् एतत् भदंत ! एवम्। हे भगवन् ! तत् उक्त प्रकारेण परतीर्थिकोपन्यस्तं किमेवं यथा कथयति तथा संभवेदिति प्रश्नः। भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! "जं णं तं अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति" यत् खलु ते अन्य यूथिका एवमाख्यान्ति एवं पूर्वोक्तरूपेण कथयन्ति.

पुरिसवेयं च" जिस समय जीव स्त्रीवेद को वेदताहै उसी समय वह पुरुषवेद को भी वेदता है, और जिस समय जीव पुरुष वेद को वेदता है उसी समय वह स्त्रीवेद को भी वेदता है। पुंरुषवेद के वेदन से जीव स्त्रीवेद को वेदता है, (१) और स्त्रीवेद के वेदन से जीव पुरुषवेद को वेदता है (२) इस प्रकार से एक जीव एक समय में दो वेदों को वेदता है। एक :स्त्रीवेद को और दूसरे पुरुषवेदको। इस तरह से परतीर्थिक जन निर्ग्रन्थ जीव देव के विषय में कहते हैं-सो गौतम स्वामी भगवान् से पूछते हैं कि-'से कहमेयं भंते एवं' हे भदंत ! ऐसा अन्यतीर्थिकजनों का कहना जैसा वे कहते हैं उस प्रकार से वह संभवित होता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतम स्वामी से कहते हैं (गोयमा) हे गौतम! (जं णं तं अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति) जो वे अन्यतीर्थिक जन ऐसा कहते हैं (जाव

वेय च पुरिसवेय च) જે સમયે જીવ સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો હોય છે તે સમયે તે પુરુષવેદનું પણ વેદન કરતો હોય છે જે સમયે જીવ પુરુષવેદનું વેદન કરતો હોય છે તે સમયે તે સ્ત્રીવેદનુ પણ વેદન કરતો હોય છે. (૧) પુરુષ વેદના વેદનથી જીવ સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરે છે અને (૨) સ્ત્રીવેદના વેદનથી જીવ પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે. આ રીતે જીવ એક સમયે બે વેદનું વેદન કરે છે-(૧) સ્ત્રીવેદનુ અને (૨) પુરુષવેદનુ જે નિર્ગ્રંથ મરીને દેવગતિમા ઉત્પન્ન થયો હોય, તેને વિષે પરતીર્થિકો ઉપરોક્ત જે મતવ્ય બતાવે છે તે વિષે ગૌતમ સ્વામી ભગવાન મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે-(से कहमेय भते एव) હે ભદન્ત ! અન્ય તીર્થિકોનું તેમના વિષેનુ તે કથન શુ સભવિત છે ? તેનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે-(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जं णं तं अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति) તે અન્ય તીર્થિકો એવું જે કહે છે (जाव इत्थियवेय च पुरिसवेयं

णियंठे कालगए समाणे" एष खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् "अत्थेगइए देवलो
एसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ" अन्यतरेषु देवलोकेषु देवतया उपपत्ता भवति
कीदृशेषु देवलोकेषु तत्राह-"महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु" महर्द्धिकेषु यावत्
महानुभावेषु "महड्ढिएसु" महर्द्धिकेषु=विशिष्टविमानपरिवारादियुक्तेषु 'जाव
महाणुभावेसु' यावत् महानुभावेषु=अचिन्त्यप्रभावयुक्तेषु अत्र यावत् पदेन 'महज्जु
इएसु महब्बलेसु महायसेसु महासोक्खेसु' छाया-महाद्युतिकेषु महाबलेषु महायशस्सु
महासौख्येषु इति संग्रह कार्यः "महज्जुइएसु" महाद्युतिकेषु=विशिष्टप्रभा
भास्वरेषु 'महब्बलेसु" महाबलेषु=विशिष्टबलसंपन्नेषु 'महायसेसु' महाय
शस्सु=विशाल कीर्तियुक्तेषु 'महासोक्खेसु' महासौख्येषु = विशिष्टसुखसंपन्नेषु
"दूरगइएसु" दूरगतिकेषु=दूरगमनशक्तिसंपन्नदेवयुक्तेषु 'चिरट्ठिइएसु' चिर
स्थितिकेषु चिर=अभूतकालं स्थिति=अवस्थान यत्र, तेषु एकसप्तत्यादि सागरोपम

करता हुआ कि (एष खलु निर्ग्रंथे कालगए समाणे) निर्ग्रन्थ-साधु काल
गत होकर सामान्य देवलोकों में उत्पन्न नहीं होता है-किन्तु वह तो
(महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु देवलोएसु अण्ण
यरेसु देवलोएसु उववत्तारो भवइ) उन देवलोकों में से किसी एक
देवलोक में उत्पन्न होता है कि जिन देवलोकों में विशिष्ट विमान परि
वार आदिरूप ऋद्धि होती है, यावत् जो अपने अचिन्त्य प्रभाव से सदा
युक्त बने हुए रहते हैं तथा (जाव) शब्द गृहीत (महज्जुईएसु, महब्ब
लेसु, महाजसेसु महासोक्खेसु) इन पदों के अर्थानुसार जो अपनी
विशिष्टप्रभा से सदा चमकते रहते हैं, जो विशिष्ट बल से संपन्न होते
हैं, विशालकीर्ति के जो भंडार होते हैं, और जो विशिष्टसुखों के
विधान होते हैं तथा-दूर दूर तक गमन करने वाले देवों से जो सर्वदा

ઉત્તર કહે છે (एष खलु निग्गंथे कालगए समाणे) નિર્ગ્રન્થ સાધુ કાલધર્મ પામીને સામાન્ય
દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થતો નથી, પણ તે તો (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरग
इएसु चिरट्ठिएसु देवलोएसु अण्णयरेसु देवलोएसु उववत्तारो भवइ) એવા દેવલોકમાં
ઉત્પન્ન થાય છે કે જ્યાં વિશિષ્ટ વિમાન પરિવાર આદિ રૂપ ઋદ્ધિ હોય છે જે
દેવલોકો પોતાના અચિન્ત્ય પ્રભાવથી સદા યુક્ત હોય છે અહીં (जाव)
(પર્યન્ત) પદ દ્વારા (महज्जुइएसु महब्बलेसु, महाजसेसु महासोक्खेसु) આ
પદોનો સંગ્રહ કરાયો છે તેમનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-જે દેવલોકો પોતાની
વિશિષ્ટ પ્રભાથી સદા ચમકતા રહે છે જે વિશિષ્ટ બલથી યુક્ત હોય છે
જે વિશાળ કીર્તિના ભંડાર હોય છે, જે વિશિષ્ટ સુખોના ભંડાર હોય છે,
તથા દૂર દૂર ગમન કરનારા દેવોથી જે સદા ભરેલા રહે છે અને અન્ય દેવોના

परस्पर विरोधो न तयोरेकत्रैकदाऽवस्थानं दृश्यते यथा तमः प्रकाशयोः तथैव प्रकृतेऽपि स्त्रीवेदपुरुषवेदयोः परस्परविरुद्धतया नैकस्मिन्नधिकरणे सहावस्थानं संभवत्यतः परयूथिकमतं मिथ्येति। एतदेव भगवान् सविस्तरं प्रतिपादयति-'अहं पुण' इत्यादि। 'अहं पुण गोयमा' अहं पुनर्गौतम! 'एवं आइक्खामि' एवमाख्यामि 'भासामि पन्नवेमि परूवेमि' भाषे प्रज्ञापयामि प्ररूपयामि. किं तत् तत्राह 'एवं खलु

उदय माना जावेगा-क्यों कि यह रूप मूल में जिसके पुरुषवेद का उदय है-उसी वेद वाले का एक रूपान्तर हैं। इसलिये एक समय में दो वेदों का उदय मानना न्यायसंगत नहीं है। क्यों कि एक ही समय में एक जगह दो वेदों का उदय होना विरुद्ध है। जिनका आपस में विरोध होता है-उनका एक ही जगह एक समय में अवस्थान होना नहीं देखा जाता है। जैसे-अन्धकार और प्रकाश का। उसी प्रकार से प्रकृत में भी स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये दोनों आपस में विरुद्ध होने के कारण एक ही समय में एक साथ एक ही जगह किसी तरह से उदित नहीं हो सकते हैं। अत परयूथिकों का एक ही जगह एक ही काल में दोनों स्त्रीवेद और पुरुषवेद का उदय मानना मिथ्या है ऐसा जानना चाहिये। इसी विषय को विस्तार पूर्वक समझाने के लिये भगवान् कहते हैं—(अहं पुण) इत्यादि। (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि भासामि पन्नवेमि परूवेमि) हे गौतम! मैं तो ऐसा कहता हूं ऐसा भाषण करता हूं ऐसी प्रज्ञापना करता हूं और ऐसी प्ररूपणा

છે, કારણકે પુરુષવેદનો જેનામા ઉદય છે એવા જીવનુ તે એક રૂપાતર જ હોય છે. તેથી એક જ સમયે બે વેદોનો ઉદય માનવો તે ન્યાયસગત લાગતું નથી કારણકે એક જ સમયે એક જ જગ્યાએ બે વેદનો ઉદય થવો શકય નથી જેમની વચ્ચે પરસ્પર વિરોધ હોય છે તેમનું એક જ જગ્યાએ એક જ સમયે અસ્તિત્વ જોવામા આવતુ નથી. જેમકે જ્યા પ્રકાશ હોય ત્યા અંધકાર ન હોય કુદરતી રીતે જ સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એક બીજાના વિરોધી હોવાથી એક જ સમયે અને એક જ જગ્યાએ તે બન્નેનુ અસ્તિત્વ સભવી શકતુ નથી તેથી 'એક જ જગ્યાએ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ બે બન્નેનો ઉદય થાય છે," એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા મિથ્યા છે આ વિષયને વિસ્તારથી સમજાવવા માટે ભગવાન મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि, भासामि, पन्नवेमि, परूवेमि) હે ગૌતમ! હું તો એવુ કહું છુ, એવું ભાષણ કરૂં છુ, એવી પ્રજ્ઞાપના કરૂ છું, અને એવી પ્રરૂપણા

विशेष पसत्थासी ' महाजसे ' महायशाः = विशालकीर्तिसंपन्नः, ' महासोक्खे ' महासौख्य =विविधं सुखवाली ' महाणुभावे ' महानुभावा=अचिन्त्यप्रभावयुक्तः " हारविराइयवच्छे " हारविराजितवक्षा =हारशोभितवक्षस्थला "कडयतुडियथंभियभुए " कटकत्रुटितस्तम्भितभुजः, तत्र कटकै =वलयै , त्रुटितैः = बाहुरक्षक भूषणविशेषैः स्तम्भिता=स्तब्धीभूता सञ्जिततेत्यर्थः भुजा यस्य स तथा बलयबाहु रक्षिकाभिधाभूषणयुक्त इत्यर्थः । " अंगय कुंडलमट्ठगंडयकण्णपीठधारी " अङ्गद कुण्डलमृष्टगण्डतकर्णपीठधारी—अङ्गदानि बाहाभरणानि, कुण्डलाभ्यां मृष्टे= घर्षिते गण्डतले=कपोलयुगले, कर्णपीठं=कर्णाभरणञ्च, तेषां धर तच्छीलो यः स तथा बाह्वाभरणकुण्डलकर्णपीठाभिधभूषणभूषित इत्यर्थः 'विचित्तवत्थाभरणे' विचित्रवस्त्राभरण =विचित्राणि नानाप्रकाराणि वस्त्राणि आभरणानि च यस्य स तथा " विचित्तमाल्लामउलिमउडे " विचित्रमाल्यामौलिमुकुट अत्र प्राकृतत्वाद् मौलिशब्दस्य परनिपातस्तेन मौलिशब्दो विविधपरत्वात्पूर्वं प्रयोज्यः । अत्र मौलिविचित्रमाल्यामुकुट इति, तथा च मौलौ = मस्तके विचित्रा = नानाप्रकारा माल्या=पुष्पस्रजः मुकुटञ्च यस्य स तथा " कल्लाणगपवरवत्थपरिहिए " कल्याणक प्रवरवस्त्रपरिहितः, अत्रापि 'परिहित ' शब्दस्य व्यत्ययस्तेन परिहित कल्याणक

अचिन्त्य प्रभाव से जो युक्त होता है, जिसका वक्षःस्थल सदा हारसे सुशो भित रहा करता है जिसकी दोनों भुजाएँ बलय और त्रुटित-बाहुरक्षक भूष णविशेषों से सज्जित रहती हैं, अर्थात् को, भुजाओं के भूषणों से, कुण्डलों से मृष्ट दोनों कपोलों को, तथा कर्णपीठ-कर्ण के आभूषण विशेष को जो सदा धारण किये रहता है-अर्थात्-जिसके दोनों भुजा अंगदों से सदा मंडित रहते हैं, गोल कपोलवाली जिसकी कुण्डलों की कांति से सदा चमकती रहती है और कर्णाभरणविशेषों से जिसके दोनों कान विशेषरूप से विभूषित रहते हैं, वस्त्र और आभरण जिसके विविध प्रकार के होते हैं, जिसके मस्तक ऊपर नाना प्रकार की पुष्प

હોય છે જેનું વક્ષસ્થળ સદા હારથી શોભતુ હોય છે જેની બને ભુજાઓ વલય અને ત્રુટિત (બાહુ રક્ષક આભૂષણો) થી વિભૂષિત હોય છે, જેના બને હાથ અંગદો (બાજુબંધ વિશેષ) થી સદા વિભૂષિત હોય છે જેના બાલ યુગ્મોની કાન્તિથી સદા ચમકતા રહે છે અને કર્ણપીઠ (કર્ણના આભૂષણ) થી જેના બને કર્ણ સદા વિભૂષિત રહે છે, જેના વસ્ત્ર અને આભૂષણો વિવિધ પ્રકારના હોય છે, જેમના મસ્તક પર વિવિધ પ્રકારની પુષ્પમાળાઓ બને મુકુટ રહે છે, બાબતિક બને કેશ વગેરેને જે સદા ધારણ કરે છે

स्थितिकेषु इत्यर्थः । एतादृशेषु देवलोकेषु निर्ग्रन्थो देवतया उपपत्ता भवति इति संबन्धः । तत्र स कीदृशो भवतीत्याह–' से णं ' इत्यादि ' से णं तत्थ ' स खलु तत्र–देवलोकेषु कस्मिंश्चिद्देवलोके ' देवे भवइ' देवो भवति देवतयोत्पद्यते । सदेव स्तत्र कीदृशो भवतीत्याह–' महड्ढिए ' महर्द्धिकः विमानपरिवारादि ऋद्धियुक्तः ' जाव ' यावत्, यावत्पदेन ' महज्जुइए महाबले महाजसे महासोक्खे महाणुभावे हारविराइयवच्छे कडयतुरियथंभियभुए अंगयकुंडलमट्ठगंडयलकण्णपीठधारी विचित्तवत्थाभरणे विचित्तमालामउलिमउडे कल्लाणगपवरवत्थपरिहिए कल्लाणगपवर मल्लाणुलेवणे भासुरबोंदी पलंबवणमालधरे दिव्वेणं वण्णेणं दिव्वेणं गंधेणं दिव्वेणं रूवेणं एवं फासेणं संघाएणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए जुईए पभाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेस्साए ॥

छाया—महाद्युतिकः महाबलः महायशा. महासौख्यः महानुभावः हारविराजितवक्षाः कटकत्रुटितस्तम्भितभुजः अङ्गदकुण्डल मृष्ट गण्डतलकर्णपीठधारी विचित्रवस्त्राभरणः विचित्र मालामौलिमुकुट. कल्याणकप्रवरवस्त्रपरिहितः कल्याणकप्रवरमाल्यानुलेपनः भास्वरबोन्दिः प्रलम्बवनमालाधरः दिव्येन वर्णेन दिव्येन गन्धेन दिव्येन रूपेण एवं स्पर्शेन संघातेन, संस्थानेन दिव्यया ऋद्ध्या द्युत्या प्रभया छायया दिव्येन अर्चिषा दिव्येन तेजसा दिव्यया लेश्यया ' इति संग्रहः " महज्जुइए " महा तिकः=विशिष्टशरीराभरणादि प्रभाभास्वरः, ' महाबले ' महाबलः

भरे हुए रहते हैं एव जहां पर रहने वाले देवों की स्थिति एक दो आदि सागरोपम की होती है । ऐसे देवलोकों में से किसी एक देवलोक में वह निर्ग्रन्थ साधु का जीव देव की पर्याय से उत्पन्न होता है । वहां पर वह कैसा देव होता है तो इसके लिये समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि (से णं तत्थ देवे भवइ महिड्ढिए जाव महज्जुइए) वह वहां पर ऐसा देव होता है कि जिस की विमानपरिवारादिरूप ऋद्धि बहुत अच्छी होती है–जिसकी द्युति बहुत अधिक होती है, जो विशिष्ट बलशाली होता है, विशाल कीर्ति से जो संपन्न होता है, विशिष्ट सुखशाली होता है,

દેવોની ભવસ્થિતિ એક,બે આદિ સાગરોપમની હોય છે એવા દેવલોકોમાંના કોઇ એક દેવલોકમા તે નિર્ગ્રંથ સાધુનો જીવ દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવની ઋદ્ધિ કેવી હોય છે તે બતાવવાને માટે પ્રભુ ગૌતમને કહે છે કે (से ण तत्थ देवे भवइ महिड्ढिए जाव महज्जुइए) ત્યા તે એવા દેવ બને છે કે જેની વિમાન પરિવાર આદિ રૂપ ઋદ્ધિ ઘણી જ સારી હોય છે, જેની દ્યુતિ ઘણી જ વધારે હોય છે, જે વિશિષ્ટ બળસ પન્ન હોય છે, જે વિશિષ્ટ કીર્તિ અને વિશિષ્ટ સુખસ પન્ન હોય છે, અને જે અચિન્ત્ય પ્રભાવવાળો

'पभाए' प्रभया-दिव्यया प्रभया=विमानदीप्त्या 'छायाए' छायया-दिव्यया छायया=शरीरशोभया "दिव्वाए अच्चीए" दिव्येन अर्चिषा शरीरस्थरत्नादि समुद्भूत तेजसा, 'दिव्वेणं तेएणं' दिव्येन तेजसा = शरीरसम्बन्धिकान्त्या "दिव्वाए लेस्साए" दिव्यया लेश्यया=देहसौन्दर्येण, इति समासः ॥

'दस दिसाओ' दशदिशः=दिग्विदिगूर्ध्वाधोरूपाः दशापिदिशः "उज्जोवेमाणे" उद्योतयन्=प्रकाशयन् 'पभासेमाणे' प्रभासमान=दीप्यमान 'जाव पडिरूवे' यावत् प्रतिरूपः=द्रष्टार द्रष्टार प्रतिरूपं=नानारूपं यस्य स तथा, अत्र यावत्पदेन "पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे" इति संग्रहः, तत्र 'पासाइए' प्रासादीय दर्शकानां चित्त प्रसादजनक 'दरिसणिज्जे' दर्शनीय यद्दर्शने चक्षु श्रमो न जायते। 'अभिरूवे' अभिरूपः=मनोहरूपः इति ॥

"से णं तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ" स खलु तत्र अन्यान् देवान् अन्येषां देवानां देवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति 'से णं' स खलु निर्देश ईशदेवः "तत्थ" तत्र-देवलोके "अन्ने देवे" अन्यान् देवान् आत्मव्यतिरिक्तान् देवान् "अन्नेसिं देवाणं देवीओ"

शरीर में पहिने हुए रत्नादि की दिव्यकान्ति से, तथा शरीर संबंधी कांति से एवं देह के सौन्दर्य से (दस दिसाओ) दशों दिशाओं को-चार पूर्वादिदिशाओं को, तथा चार पूर्वादिदिशाओं के चार कोनों को एवं ऊपर और नीचे को-(उज्जोवेमाणे) उद्योतित करता हुआ (पभासेमाणे) प्रकाशित करता हुआ, (जाव पडिरूवे) यावत्-वह देखने वालों के चित्त में प्रसन्नता का जनक होता है, देखने वालोंको आंखें उसे देखते २ कभी अघाती नहीं हैं वह मनोज्ञ रूप वाला होता है और प्रतिरूप देखनेवालों के लिये क्षण २ में नवीन २ रूप से युक्त हुआ ज्ञात होता है। (से णं तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय, अभिजुंजिय परियारेइ) इस प्रकारके देवलोकों में से किसी एक देवलोक

શરીર પહેરેલાં રત્નાદિની દિવ્ય કાન્તિથી તથા શરીરની કાંતિ અને દેહ સૌંદર્યથી (दस दिसाओ) દસે દિશાઓને (પૂર્વાદિ ચાર દિશા, અગ્નિ આદિ ચાર ખૂણા તથા ઉપરની અને નીચેની દિશાઓ) (उज्जोवेमाणे) પ્રકાશિત કરતા (पभासेमाणे) પ્રભાયુક્ત કરતા, (जाव पडिरूवे) જોનારના ચિત્તને પ્રસન્ન કરતા-તેમનું રૂપ જોઈએ જ્યાં મનોજ્ઞ હોય છે કે તેમને જોનારની આંખો તેમનું રૂપ જોતા તૃપ્તિ અનુભવતી નથી. તેઓ જોનારની નજરે જાણે જાણે નવીન રૂપ ધારણ કરતા હોય એવું લાગે છે (से णं तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ) ઉપરોક્ત પ્રકારે

वरवस्त्रः—परिहितानि = यथास्थानं धृतानि कल्याणकानि = माङ्गलिकानि प्रवराणि श्रेष्ठानि वस्त्राणि येन स तथा – समीचीनधृतश्रेष्ठवस्त्र इत्यर्थः, " कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणे " कल्याणकप्रवरमाल्यानुलेपनः कल्याणकानि=कल्याणकारीणि प्रवराणि=सुन्दराणि माल्यानि = पुष्पमाला· अनुलेपनानि=चन्दनादिविलेपनानि च यस्य स तथा । सुन्दराति सुन्दरपुष्पमाला चन्दनादि विलेपन युक्त इत्यर्थः । 'भासुर बोंदी" भास्वरबोन्दिः=भास्वारा=देदीप्यमाना बोन्दिः=शरीरं यस्य स तथा भासमानदेहधारीत्यर्थ· । " पलंबवणमालधरे " प्रलम्बवनमालाधरः, प्रलम्बः=झुम्बनकं तद् युक्ता वनमाला पादपर्यन्तलम्बमाना माला तस्याः धरः—धारकः—झुम्बनकयुक्तपादपर्यन्तलम्बमानमालायुक्त इत्यर्थः । एतादृशः स देवः " दिव्वेणं वण्णेणं " दिव्येन वर्णेन देवसम्बन्धिवर्णेन, " दिव्वेणं गंधेणं " दिव्येन गन्धेन=देवसम्बन्धि सुरभिगन्धेन " दिव्वेणं रूवेणं " दिव्येन रूपेण=दिव्याकारेण, एवम्-अनेन पूर्वोक्तेक दिव्यविशेषणयुक्तप्रकारेण " फासेणं " स्पर्शेन=दिव्येन स्पर्शेन सुकुमारादि रूपेण, " संघाएणं " संघातेन दिव्येन संघातेन दिव्येन देवयोग्येन संहननेन = शरीररचनारूपेण " संठाणेणं " संस्थानेन दिव्येन संस्थानेन = शरीराकारेण, तथा ' दिव्वाए इड्ढिए ' दिव्यया ऋद्धया विमानपरिवारादिरूपया, 'जुईए' द्युत्या ' दिव्यया ' इति विशेषणमग्रेऽपि योज्यम् , तेन दिव्यया द्युत्या=शरीरदीप्त्या,

---

मालएँ और मुकुट रहता है, मांगलिक एवं श्रेष्ठ ऐसे वस्त्रों को जो सदा पहिने रहता हैं,कल्याणकारी पुष्पमालाओं से एवं चन्दन आदि के सुगंधिवाले लेपोंसे जो हमेशा विराजित रहता है, शरीर जिसका सर्वदा चमकीला बना रहता है, (पलंबवणमालधरे) और झुम्बनयुक्त ऐसी पैरोतक लटकती हुइ वनमाला से जो युक्त रहता है। ऐसा वह देव अपनेदिव्यवर्णसे, दिव्यगन्ध से–देवसंबन्धि सुरभिगंध से–दिव्य आकार से, दिव्य स्पर्श से,–सुकुमार आदि रूप स्पर्श से–दिव्यसंघात से, दिव्यसंहनन से, दिव्य संस्थान से, विमानपरिवार आदिरूप दिव्य ऋद्धि से, दिव्यद्युति से–

કલ્યાણકારી પુષ્પમાળાઓથી તથા ચન્દન આદિના સુગંધિત લેપથી જેઓ સદા શોભતા હોય છે, જેનુ શરીર સદા દેદીપ્યમાન હોય છે, (पलंबवणमालधरे) પગ સુધી લટકતી અને ઝોલા લેતી વનમાળાથી જે યુક્ત હોય છે, એવો તે દેવ પોતાના દિવ્ય વર્ણથી દિવ્યગંધથી–દેવસંબંધી સુરભિગંધથી, દિવ્ય આકારથી, દિવ્ય સ્પર્શથી–સુકુમાર આદિરૂપ સ્પર્શથી દિવ્ય સંઘાતથી, દિવ્ય સંહનનથી, દિવ્ય સંસ્થાનથી, વિમાન પરિવાર આદિરૂપ દિવ્ય ઋદ્ધિથી, દિવ્ય દ્યુતિથી–શારીરિક દીપ્તિથી, દિવ્ય વિમાનના પ્રભાવથી દિવ્ય શરીર સૌંદર્યથી,

यस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति नो तस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति । 'जं समयं' इत्यत्र द्वितीया सप्तम्यर्थे "जं समयं पुरिसवेयं वेएइ नो तं समयं इत्थिवेयं वेएइ" यस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति नो तस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति, "इत्थिवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेएइ" स्त्री वेदस्योदयेन नो पुरुषवेदं वेदयति "पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थिवेयं वेएइ" पुरुषवेदस्योदयेन नो स्त्रीवेदं वेदयति "एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ" एवं खलु एको जीवः एकस्मिन् समये एकं वेदं वेदयति "तं जहा" तद् यथा 'इत्थीवेयं वा' "पुरिसवेयं वा" स्त्रीवेदस्या पुरुषवेदस्या एकेन जीवेन एकदा एक एव वेदो वेद्यते न तु वेदान्तर मित्यत्र कारणमाह-"इत्थीइत्थिवेएणं" इत्यादि । "इत्थी

कि (जं समयं इत्थियवेयं वेएइ) जिस समय में वह स्त्री वेदका वेदन करता है (णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ) उस समय में वह पुरुषवेद का वेदन नहीं करता है (जं समयं पुरिस वेयं वेएइ) और जिस समय में वह पुरुष- वेद का वेदन करता है (तं समयं इत्थिवेयं नो वेएइ) उस समय में वह स्त्रीवेद का वेदन नहीं करता है । (इत्थिवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेएइ) स्त्रीवेद के उदय से पुरुषवेद का वेदन वह नहीं करता है और (पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थिवेयं वेएइ) पुरुषवेद के उदय से स्त्रीवेद का वेदन वह नहीं करता है। (एवं खलु एगे जीवे) इस तरह एक जीव (एगेणं समएणं) एक समय में (एगं वेयं वेएइ) एक ही वेद का वेदन करता है । (तं जहा इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा) जैसे - या तो वह स्त्री वेद का वेदन करता है या पुरुषवेद का वेदन करता है । एक जीव एक समय में एक ही वेद का वेदन करता है- दूसरे वेद का नहीं इसमें क्या कारण है ? सो

જીવ જે સમયે જોડે સાથે વેદન કરતો નથી. કારણ કે (જં સમયં ઇત્થિવયેયં વેએઇ) જે સમયે તે સ્ત્રિવેદનું વેદન કરતો હોય (જો તં સમયં પુરિસવેયં વેએઇ) તે સમયે તે પુરુષવેદનું વેદન કરતો નથી, (જં સમયં પુરિસવેયં વયઇ તં સમયં જો ઇત્થિવયેયં વેએઇ) જ્યારે તે પુરુષવેદનું વેદન કરતો હોય છે ત્યારે તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરતો નથી (ઇત્થિવયેયસ્સ ઉદયણં નો પુરિસવેયં વેએઇ) સ્ત્રીવેદના ઉદયથી તે પુરુષવેદનું વેદન કરતો નથી અને (પુરિસવેયસ્સ ઉદયણં નો ઇત્થિવયેયં વેએઇ) પુરુષવેદના ઉદયથી તે સ્ત્રીવેદનું કરતો નથી (એવ ખલુ એગે જીવે એગેણં સમયણ એગ વેય વેએઇ) આ રીતે જોડ એક જોડ સમયે જોડ જ વેદનું વેદન કરે છે (તજહા-ઇત્થીવયેય વા પુરિસવેય વા) કોતો સ્ત્રીવેદનું વેદન કરે છે, અને પુરુષવેદનું વેદન કરે છે જોડ એક જોડ જ સમયે જોડ જ વેદનું વેદન કરે છે,

अन्येषां स्वात्मव्यतिरिक्तानां देवानां सम्बन्धिनीः देवीः "अभिजुंजिय अभिजुंजिय" अभियुज्याभियुज्य वशीकृत्य वशीकृत्य परिचारयति, तैः सह वैषयिकं भोगं परिभुंक्ते इत्यर्थः २। "अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ" आत्मीयादेवीः स्वसम्बन्धिनीः देवीः अभियुज्याभियुज्य परिचारयति २। "अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ" आत्मनैव स्वेनैव आत्मानं स्वं देवत्वेन देवीत्वेन वा विकुर्व्य विकुर्व्य.नो परिचारयति। ३। "एगे वि य णं जीवे" एकोऽपि च खलु जीवः "एगेणं समएणं एगं वेदं वेएइ" "एकस्मिन् समये एकमेव वेदं वेदयति." "तं जहा इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा" स्त्रीवेदं वा पुरुषवेदं वा "जं समयं इत्थिवेयं वेएइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ"

में उत्पन्न हुआ वह देव अन्यदेवों को तथा अन्य देवों की देवियों को वार वार अपने वश में करके उनके साथ परिचारणा करता है। तथा-(अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ) अपनी देवियों को वार वार अपने वशमें करके उनके साथ परिचारणा करता है। (अप्पणामेव अप्पाणं) अपने आप से अपने आपको (विउव्विय विउव्विय) वैक्रियशक्ति द्वारा देव और देवी के रूप में उत्पन्न कर के (नो परियारेइ) परिचारणा नहीं करता है। अतःइस कथन से यही निष्कर्ष निकलता है कि (एगे वि य णं जीवे) एकजीव (एगेणं समएणं) एकसमय में (एगं वेयं वेएइ) एक ही वेद का वेदन करता है। (तं जहां) जैसे (इत्थियवेयं वा पुरिसवयं वा) या तो वह एक समय में स्त्री वेद का वेदन करेगा या पुरुषवेद का -दो वेदों का युगपत् एक समय में वह वेदन नहीं करेगा। क्यों

આદિથી યુક્ત દેવલોકોમાંના કોઈ પણ એક દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયેલો તે દેવ, અન્ય દેવોને તથા અન્ય દેવોની દેવીઓને વાર વાર પોતાને વશ કરીને તેમની સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે તથા (अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ) પોતાની દેવીઓને વશ કરીને વાર વાર તેમની સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે (अप्पणामेव अप्पाणं) પોતે જ પોતાની જાતને (विउव्विय विउव्विय) વૈક્રિય શક્તિથી દેવ અને દેવી રૂપે ઉત્પન્ન કરીને (नो परियारेइ) વિષયસુખ ભોગવતા નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે-કે- (एगे वि य णं जीवे) એક જીવ (एगेणं समएणं) એક સમયે (एगं वेयं वेएइ) એક જ વેદનું વેદન કરે છે (तं जहा-इत्थियवेयं वा पुरिसवेयं वा) કાતો તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરે છે, કાતો પુરુષવેદનું વેદન કરે છે બન્ને વેદનું

(कइविहेणं भंते! वेए पण्णत्ते) कतिविधः खलु भदन्त! वेदः प्रज्ञप्तः?–हे भदन्त! वेद कितने प्रकार का होता है? (गोयमा! तिविहे वेए पण्णत्ते) गौतम त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः–हे गौतम! वेद तीन प्रकार का होता है–(तं जहा) तद्यथा–वे प्रकार ये हैं (इत्थीवेए,पुरिसवेए नपुंसगवेए) स्त्रीवेदः पुरुषवेदः नपुंसकवेदः–स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। (णेरइयाणं भंते! किं इत्थीवेया, पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता)हे भदंत ! नैरयिका किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ता–हे भदंत! नारकजीव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद वाले कहे गये है? (गोयमा! णो इत्थीवेया, णो पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता) गौतम! नो स्त्रीवेदाः नो पुंवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–हे गौतम ! नारक जीव न स्त्री वेदवाले कहे गये हैं, न पुरुषवेद वाले कहे गये हैं, किन्तु नपुंसक वेद वाले कहे गये हैं। (असुरकुमाराणं भंते! किं इत्थीवेया णपुंसगवेया?) असुरकुमाराः खलु भदन्त! किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः?–हे भदंत ! असुरकुमारदेव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद वाले होते हैं? (गोयमा! इत्थीवेया पुरिसवेया णो णपुंसगवेया) हे गौतम! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नो नपुंसकवेदाः–असुरकुमार देव स्त्रीवेद और पुरुषवेद वाले ही होते हैं नपुंसकवेदवाले नहीं होते हैं।(जाव थणियकुमारा)यावत्स्तनितकुमाराः–इसी तरह

शब्दार्थ–(कइविहेणं भंते ! वेए पण्णत्ते) कतिविधः खलु भदन्त ! वेदः प्रज्ञप्तः ?–હે ભદંત ! વેદ કેટલા પ્રકારના હોય છે ? (गोयमा ! तिविहे वेए पण्णत्ते) गौतम ! त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः–હે ગૌતમ ! વેદ ત્રણ પ્રકારના છે (तंजहा) तद्यथा –પ્રકારો આ પ્રમાણે છે–(इत्थीवेए, पुरिसवेए, नपुंसगवेए) સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુંસકવેદ णेरइयाणं भंते ! किं इत्थीवेया, णपुंसगवेया पण्णत्ता ?) किं स्त्रीवेदाः, पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–નારકીજીવો સ્ત્રીવેદ,પુરુષવેદવાળા છે ?(गोयमा! णो इत्थीवेया,णो पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता) गौतम ! नो स्त्रीवेदाः, नो पुवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–હે ગૌતમ ! નારકીજીવો સ્ત્રીવેદવાળા નથી, પુરુષવેદવાળા પણ નથી નપુંસકવેદવાળા કહેલા છે (असुरकुमाराणं भंते ! किं इत्थीवेया,पुरिसवेया, णपुंसगवेया ?) असुरकुमाराः खलु भदन्त ! किं स्त्रीवेदाः, पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः ? હે ભદંત ! અસુરકુમાર દેવો સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે, કે પુરૂષવેદવાળા હોય છે કે નપુંસકવેદવાળા હોય છે ? (गोयमा! इत्थीवेया, पुरिसवेया, णो णपुंसगवेया) हे गौतम ! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नो नपुंसकवेदाः–હે ગૌતમ ! અસુરકુમાર દેવો સ્ત્રીવેદ વાળા અને પુરૂષવેદવાળા હોય છે નપુંસકવેદવાળા હોતા નથી. (जाव थणियकुमारा) यावत् स्तनितकुमाराः–

से स्तनित कुमारान्तक जो नौ प्रकार के भवनपति देव हैं वे भी इन दोनों वेदवाले ही होते हैं नपुंसक वेद वाले नहीं। (पुढवीआउ तेउ वाउ वणस्सइ बितिचउरिंदिय संमुच्छिम पंचिंदियतिरिक्खसमुच्छिममणुस्सा णपुंसगवेया) पृथिव्यप्तेजो वायुवनस्पति द्वि त्रि चतुरिन्द्रिय सम्मुच्छिममनुष्याः—पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय चौ इन्द्रिय, संमूर्च्छिम पंचेन्द्रियतिर्यंच और समूर्च्छिममनुष्य ये सब नपुंसक वेद वाले होते हैं। स्त्रीवेद पुरुषवेद वाले नहीं होते हैं। (गब्भवक्कंतियमणुस्सा पंचिंदियतिरिया य तिवेया) गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्या पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च त्रिवेदा—तथा जो गर्भजमनुष्य और पंचेन्द्रियतिर्यंच हैं वे तीनों ही वेदवाले होते हैं। (जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोइसिय वेमाणिया वि) यथा असुरकुमारास्तथाव्यन्तर ज्योतिषिक वैमानिका अपि—जिस प्रकार असुरकुमार देव पुरुष और स्त्रीवेद वाले होते हैं, उसी प्रकार से व्यन्तर देव, ज्योतिषिकदेव, और वैमानिक देव भी होते हैं। देवों में नपुंसक वेद नहीं होता है ॥सू १९४॥

टीकार्थ—'कइविहेणं भंते! वेए पण्णत्ते' इत्यादि—हे भदन्त! वेद

એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમાર સુધીના જે નવ ભવનપતિ દેવો છે તેઓ પણ બે વેદવાળા દેવ છે નપુંસક વેદવાળા હોતા નથી पुढवी आउ तेउ वाउ वणस्सइ बितिचउरिंदिय संमूच्छिम पंचिंदिय तिरिक्ख संमूच्छिम मणुस्सा णपुंसगवेया) पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पति द्वित्रिचतुरिन्द्रिय संमूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यक संमूर्च्छिममनुष्या ः—पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय संमूर्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच, अने संमूर्छिम मनुष्यो એ બધા નપુંસક વેદવાળા હોય છે પણ સ્ત્રીવેદ કે પુરુષવેદવાળા હોતા નથી (गब्भवक्कंतिया मणुस्सा पंचिंदिय तिरिया य तिवेया) गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्या पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च त्रिवेदाः ગર્ભજ જ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો ત્રણે વેદ વાળા હોય છે (जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोइसिय वेमाणिया वि) यथा असुरकुमारास्तथा व्यन्तर ज्योतिषिक वैमानिकाश्चि—જેમ અસુરકુમાર દેવો પુરુષ અને સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે તે જ પ્રમાણે વ્યંતર દેવો અને વૈમાનિક દેવો પણ પુરુષ અને સ્ત્રીવેદ વાળા હોય છે દેવોમાં નપુંસકવેદ હોતો નથી ॥સૂ. १९४॥

ટીકાર્થ—'कइविहेणं भंते! वेए पण्णत्ते' इत्यादि—હે ભદન્ત! વેદ કેટલા

टीका–'कइविहेणं भंते' इत्यादि–'कइविहेणं भंते ! वेए पण्णत्ते' कतिविधः खलु भदन्त ! वेदः प्रज्ञप्तः ? 'गोयमा ! तिविहे वेए पण्णत्ते' त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः, 'तं जहा' तद्यथा–'इत्थीवेए' स्त्रीवेदः–पुंस्कामिता, 'पुरिसवेए' पुरुषवेदः–स्त्रीकामिता, 'नपुंसयवेए' नपुंसकवेदः–स्त्रीपुंस्कामिता । 'नेरइयाणं भंते !' नैरयिकाः खलु भदन्त ! 'किं इत्थीवेया पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता' किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः? स्त्रीवेदादयो मत्वर्थीयान्तप्रत्ययान्तास्तेन स्त्रीवेदवन्तः पुरुषवेदवन्तो नपुंसकवेदवन्त इत्यर्थो बोध्यः । भगवानुत्तरयति–'गोयमा !' हे गौतम ! 'णो इत्थीवेया णो पुवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता' नो स्त्रीवेदाः नो पुवेदाः अपि तु नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः । 'असुरकुमारा णं भंते असुरकुमाराः खलु भदन्त ! 'किं इत्थीवेया पुरिसवेया णपुंसगवेया' किं स्त्रीवेदा पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः ? गोयमा ! इत्थीवेया पुरिसवेया णो णपुंसगवेया' हे गौतम ! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नो नपुंसकवेदाः । 'जाव थणियकुमारा' यावत्स्तनितकुमाराः–असुरकुमारातिरिक्ताः स्तनितकुमारान्ताः शेषा नव भवनपतयो देवा अपि स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नो नपुंसकवेदाः । तथा–'पुढवी आउ तेउ वाउ वणस्सई विति चउरिंदियसंमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खसंम-

---

कितने प्रकार का होता है ? हे गौतम ! वेद तीन प्रकार का होता है। वे प्रकार ये हैं–स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। हे भदंत नारक जीव क्या स्त्रीवेद या पुरुषवेद अथवा नपुसकवेदवाले कहे गये हैं हे गौतम ! नारक जीव न स्त्रीवेदवाले कहे गये है न पुरुषवेद वाले कहे गये हैं, किन्तु नपुसक वेद वाले कहे गये हैं। हे भदंत! असुरकुमार देव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद वाले होते है ? हे गौतम असुरकुमार देव स्त्रीवेद और पुरुषवेद वाले ही होते है–नपुसकवेद वाले नहीं होते है। इसी तरह से स्तनितकुमारान्ततक जो नौ प्रकार के भवनपति देव है वे भी इन दोनों वेद वाले ही होते है– नपुसक वेद वाले नहीं। पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक,

---

પ્રકારના હોય છે ? હે ગૌતમ ! વેદના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે–સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુ સકવેદ હે ભદ ત ! નારકજીવો સ્ત્રીવેદવાળા છે કે પુરુષવેદવાળા છે અથવા નપુ સકવેદવાળા છે ? હે ગૌતમ! નારકજીવો પુરુષવેદવાળા નથી, સ્ત્રીવેદવાળા પણ નથી તેઓ નપુ સક વેદવાળા હોય છે હે ભદ ત ! અસુરકુમાર દેવો પુરૂષવેદ વાળા હોય છે, કે સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે કે નપુ સકવેદવાળા હોય છે ? હે ગૌતમ ! અસુરકુમાર દેવો પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદવાળા જ હોય છે નપુ સક વેદવાળા હોતા નથી એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમાર સુધીના જે નવ ભવનપતિ દેવો છે તેઓ પણ એ જેજ વેદવાળા હોય છે, પણ નપુ સક વેદવાળા હોતા નથી

च्छिममणुस्सा' पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिद्वित्रिचतुरिन्द्रियसम्मूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यक्सम्मूर्च्छिममनुष्या, 'अपुमगवेया' नपुंसकवेदाः । तथा- गब्भवक्कंतियमणुस्सा पंचिंदियतिरिया य तिवेया' गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च त्रिवेदाः । 'अहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोइसियवेमाणिया वि' यथा असुरकुमारास्तथा व्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका अपि-असुरकुमारवद् व्यन्तरज्योतिष्कवैमानिका अपि स्त्रीवेदाः पुंवेदा नो नपुंसकवेदा इति भावः ॥सू १९४॥

पूर्वोक्ताः सर्वेपदार्थाः समवसरणे स्थितेन भगवता प्रोक्ताः, अतः समवसरणवक्तव्यतां कथयति—

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं, जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा ॥सू १९५॥

वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय चौइन्द्रिय, संमूर्च्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यंच, और संमूर्च्छिम मनुष्य ये सब नपुंसकवेदवाले होते हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद वाले नहीं होते हैं तथा जो गर्भज मनुष्य और पंचेन्द्रियतिर्यंच हैं वे तीनों ही वेदवाले होते हैं जिस प्रकार असुरकुमार देव पुरुष और स्त्रीवेदवाले होते हैं, उसी प्रकार से वानव्यन्तर देव ज्योतिष्क देव और वैमानिकदेव भी होते हैं। देवों में नपुंसकवेद नहीं होता है॥सू०१९४॥

ये पूर्वोक्त समस्तपदार्थ समवसरण में स्थित हुए भगवानने कहे हैं अतः समवसरण के विषय में सूत्रकार कहते हैं—

शब्दार्थ—(तेणं कालेणं) तस्मिन् काले-उस काल में-दुःषम सुषम नामके चतुर्थआरे में जब कि (तेणं समएणं) तस्मिन् समये-भगवान्

પૃથિવી અપ્કાયિક તેજસ્કાયિક વાયુકાયિક વનસ્પતિકાયિક, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય ચતુરિન્દ્રિય સંમૂર્છિમ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને સંમૂર્છિમ મનુષ્યો તે સર્વ નપુંસકવેદવાળા જ હોય છે સ્ત્રીવેદ કે પુરુષવેદવાળા હોતા નથી તથા ગર્ભજ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો ત્રણે વેદવાળા હોય છે વ્યંતર જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક દેવો, અસુરકુમાર દેવોની જેમ પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે દેવોમાં નપુંસક વેદ હોતો નથી ॥સૂ ૧૯૪॥

પૂર્વોક્ત સમસ્ત પદાર્થોનું કથન સમવસરણમાં ભગવાન દ્વારા કહેવામાં આવ્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર સમવસરણનું વર્ણન કરે છે—

શબ્દાર્થ—(तेणं कालेणं) तस्मिन् काले-તે કાળે-દુઃષમ સુષમ નામના ચોથા આરામાં જ્યારે (तेणं समएणं)तस्मिन् समये-ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિહાર

टीका-'तेणं' इत्यादि-'तेणं कालेणं' तस्मिन् काले खलु=दुःषमसुषम नामके चतुर्थेऽरे 'तेणं समयेणं' तस्मिन् समये खलु भगवान् महावीरस्वामी यदा विचरति स्म तस्मिन समये इत्युपक्रम्य'कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं' कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्=कल्पे यथा समवसरणवक्तव्यता प्रोक्ता तथैव वक्तव्या, कियत्पर्यन्तं वक्तव्या ? इत्याह-'जाव गणहरा सावच्चानिरवच्चा वोच्छिण्णा' यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः=शिष्यप्रशिष्यसहितगणधरस्य सुधर्मस्वा-

---

महावीर स्वामी विहार कर रहे थे उस समय में-इस पाठ से लेकर (कप्पस्स समोसरण णेयव्वं) कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्-कल्पसूत्र में जिस प्रकार से समवसरण के विषय में कथन किया गया है उसी प्रकार का कथन (जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा)यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः-यावत् शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी और दूसरे गणधर और उनके शिष्य प्रशिष्य दूसरे गणधर मोक्ष चले गये यहां तक का ग्रहण करना चाहिये।सू०१९५।

टीकार्थ—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' इत्यादि—उस काल में दुःषम सुषम नामके चतुर्थ आरे में-जब कि भगवान् महावीर स्वामी विहार कर रहे थे-उस समय में-इस पाठ से लेकर कल्पसूत्र में जिस प्रकार से समवसरण के विषय में कथन किया गया है उसी प्रकार का कथन यावत् शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी और दूसरे गणधर शिष्यप्रशिष्य रहित दूसरे गणधर मोक्ष चले गये यहां तक का ग्रहण करना चाहिये। तात्पर्य इसका यह है कि समवसरण के विषय का कथन कल्पसूत्र में किया गया है-सो वह सब कथन "तेणं कालेणं तेणं समएणं" यहां से लेकर-"गणहरा

કરતા હતા ત્યારે-આ પાઠથી શરૂ કરીને (कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं) कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्-કલ્પસૂત્રમાં જે રીતે સમવસરણ વિષે વર્ણન કર્યું છે તે પ્રકારનું વર્ણન (जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा) यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः-શિષ્ય પ્રશિષ્ય સહિત સુધર્માસ્વામી અને તે સિવાયના બીજા ગણધરો મોક્ષે સિધાવ્યા ત્યા સુધીનું કથન ગ્રહણ કરવુ ।।સૂ ૧૯૫।।

ટીકાર્થ—'तेणं कालेणं तेणं समएण' इत्यादि—'તે કાળે-દુઃષમ નામના ચોથા આરામાં જ્યારે ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિહાર કરતા હતા ત્યારે' ત્યાથી શરૂ કરીને કલ્પસૂત્રમાં જે પ્રકારે સમવસરણ વિષે કથન કર્યું છે એ જ પ્રકારનું કથન શિષ્યપ્રશિષ્યો સહિત સુધર્માસ્વામી અને બીજા ગણધરો મોક્ષ ગયા' ત્યા સુધીનું કથન ગ્રહણ કરવુ જોઇએ. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે સમવસરણ વિષેનું કથન કલ્પસૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. તો તે સમસ્ત કથન 'तेणं कालेणं तेणं

मितस्तद्वर्तिगणधराणां च मासत्रकल्पत्वात् यत्पर्यन्तं तत्पर्यन्तं कल्पस्य समवसरण वक्तव्यमित्यर्थः ॥ सू १९५ ॥

एतत्समवसरणनायको भगवान् महावीर कुलकरस्य वंशे समुत्पन्नो महापुरुषश्चासीत्, अत कुलकराणां महापुरुषाणा च वक्तव्यतामाह—

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीव भारहे वासे तीयाए उस्सप्पिणीए सत्त कुलगरा होत्था, त जहा—मित्तदामे सुदामे य, सुपासे य, सयपमे। विमलघोसे सुघोसे य, महाघोसे य सत्तमे॥१॥ जम्बुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दस कुलगरा होत्था, त जहा—सयजले सयाऊ य अजियसेणे अणतसेणे य। कज्जसेणे भीमसेणे, महाभीमसेणे य सत्तमे॥२॥ दढरहे दसरहे सयरहे॥ जम्बुद्दीवे ण दीव भारहे वासे इमीसे ण ओसप्पिणीए समाए सत्त कुलगरा होत्था, त जहा—पढमेत्थ विमलवाहण (चक्खुमजसमचउत्थमभिचदे। तत्तोय पसेणईए मरुदेव चेव नाभी या॥३॥) एतेसि ण सत्तण्ह कुलगराण सत्त भारिया होत्था, त जहा—चदजसा चदकता (सुरूव पडिरूव चक्खुकता य। सिरिकता मरुदेवी कुलगर पत्तीण णामाइ ॥४॥) ॥ सू० १९६ ॥

सावया निरवया वोच्छिण्णा" यहांतक समवसरण के विषय का है। सो उसे वहां से लगाकर "गणहरा सावया" आदि पाठतक यहां लगा लेना चाहिये ॥सू० १९५॥

इस समवसरण के नायक भगवान् महावीर कुलकर के वंश में उत्पन्न हुए थे और महापुरुष थे। अब कुलकरों और महापुरुषों का कथन

समवाय' थी લઈને 'गणहरा सावया निरवया वोच्छिण्णा' सुधी સમવસરણ વિષે કહેવામા આવ્યુ છે ત્યાથી શરૂ કરીને 'गणहरा सावया' આદિ પાઠ સુધીનુ વક્તવ્ય ત્યાંથી જોઈ લેવુ ॥સૂ ૧૯૫॥

આ સમવસરણના નાયક ભગવાન મહાવીર કુલકરના વંશમાં જ ઉત્પન્ન થયા હતા અને મહાપુરુષ હતા તેથી હવે સૂત્રકાર કુલકરો અને મહાપુરુષોનુ કથન કરે છે—

अब सूत्रकार करते हैं—

शब्दार्थ—(जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में (तीयाए उस्सप्पिणीए) तृतीयस्यामुत्सर्पिण्याम्-तीसरे उत्सर्पिणी काल में (सत्तकुलगरा होत्था) सप्त कुलकराः आसन्-सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-वे इस प्रकार हैं(मित्तदामे) मित्रदामा-मित्रदामन्१, (सुदामे)सुदामा-सुदामन्२(सुपासे) सुपार्श्वः-सुपार्श्व३, (सयंपभे) स्वयंप्रभः-स्वयंप्रभ४, (विमलघोसे) विमलघोषः-विमलघोष५, (सुघोसे) सुघोषः-सुघोष६, (सत्तमे महाघोसे य) सप्तमः महाघोषश्च-सातवें महाघोष७। (जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दसकुलगरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्यां दस कुलकरा-आसन्-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में तृतीय अवसर्पिणीकाल में दस कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार हैं-(सयंजले सयाऊ य) स्वयं जलः शतायुश्च-स्वयंजल१, शतायु२(अजियसेणे)अजितसेनः-अजितसेन३(अणंतसेणे य)अनन्तसेनश्च-अनंतसेन४(कज्जसेणे)कार्यसेनः कार्यसेन५(भीमसेणे) भीमसेनः-भीमसेन६ (सत्तमे महाभीमसेणे य)सप्तमः महाभीमसेनश्च-सातवें महाभीमसेन७(दढ

शब्दार्थ—(जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतवर्षे-જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા (तीयाए उस्सप्पिणीए) तृतीय स्यामुत्सर्पिण्याम्-ત્રીજા ઉત્સર્પિણી કાળમા (सत्त कुलगरा होत्था) सप्त-कुलकराः आसन्-સાત કુલકરો થઈ ગયા છે (तंजहा) तद्यथा તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(मित्तदामे) मित्रदामा-(१) મિત્રદામન્ (सुदामे) सुदामा- (२)સુદામન્ (सुपासे)सुपार्श्वः-(३) સુપાર્શ્વ, (सयंपभे-स्वयंप्रभः (४) સ્વયં પ્રભ, (विमलघोसे) विमलघोषः-(५) વિમલઘોષ, (सुघोसे) सुघोषः-(६) સુઘોસ અને (सत्तमे-महाघोसे य) सप्तमः महाघोषश्च-(७) મહાઘોષ (जंबूदीवेण दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दसकुलगरा होत्था)-જમ્બૂ દ્વીપે खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्यां दसकुलकरा आसन्-જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા ત્રીજા અવસર્પિણી કાળમા દસ કુલકરો થઈ ગયા છે, (तंजहा) तद्यथा-તેમનાનામ આ પ્રમાણે છે- (सयजले सयाऊ य) स्वयं जल शतायुश्च-(१) સ્વયં જલ (૨) શતાયુ ((अजियसेणे) अजितसेन -(૩) અજિતસેન, (अणंतसेणे य) अनन्तसेनः-(४) અનન્તસેન, (कज्जसेणे) कार्यसेनः-(५) કાર્યસેન, (भीमसेणे) भीमसेनः-(६) ભીમસેન, (सत्तमे महाभीमसेणे य) सप्तमः महाभीमसेनश्च-

रहे) दसरथो-दशरथ८(दसरहे) दशरथः-दशरथ९ (सयरहे) शतरथ-दशवें शतरथ। (जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए सत्त कुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां सप्तापि सप्तकुलकराः आसन्-इस जंबूद्वीप नामक प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस चालु अवसर्पिणी काल में सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं-(पढमेत्थ विमलवाहणे) प्रथमोऽत्र विमलवाहन-प्रथम विमलवाहन (चक्खुम) चक्षुष्मान्-द्वितीयश्चक्षुष्मान् (जसम) यशोमान्-तृतीय यशोमान् (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्र-चतुर्थ अभिचन्द्र (तओ य) ततश्च-इनके बाद (पसेणईए) प्रसेनजित्-पांचवें-प्रसेनजित् (मरुदेवे) मरुदेव-छठवें मरुदेव (चेव नाभी य) चैव नाभिश्च-और सातवें नाभिराय। (एतेसि णं सत्तण्हं कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-इन सात कुलकरों की (सत्त भारिया होत्था) सप्तभार्याः आसन्-सात स्त्रीयां थीं। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं-(चंदजसा) चन्द्रयसा-चंद्रयशा१, (चंदकंता) चन्द्रकान्ता-चन्द्रकान्ता२ (सुरूवपडिरूवचक्खुकंता य) सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च-सुरूपा३, प्रतिरूपा४ चक्षुष्कान्ता५ (सिरिकंता मरुदेवी) श्रीकान्ता मरुदेवी-श्रीकांता६ और मरुदेवी७। (कुलगर

---

(७) महाबीलसेन, (दसरहे) दसरथो-(८) दशरथ, (दसरहे) दशरथः-दशरथ (सयरहे) शतरथः-अने (१०) शतरथ. (जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीसमाए सत्तकुलगराहोत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षे अस्या अवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकराः आसन्-आ जंबूद्वीप नामना पहेला द्वीपमा आवेला भारतवर्षमां आ चालु अवसर्पिणी कालमा सात कुलकरो थया छे (तं जहा) तद्यथा-तेमनां नाम आ प्रमाणे छे (पढमेत्थ विमलवाहणे) प्रथमोऽत्र विमल वाहनः-(१) विमलवाहन, (चक्खुम) चक्षुष्मान्-(२) चक्षुष्मान्, (जसम) यशोमान्-(३) यशोमान, (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्र-(४) अभिचन्द्र, (तओय पसेणईए) ततश्च प्रसेनजित्-(५) प्रसेनजित, (मरुदेव) मरुदेवः-(६) मरुदेव अने (चेवनाभीय) चैवनाभिश्च-(७) नाभिराय (एतेसिणं सत्तण्हं कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-आ सात कुलकरोनी (सत्तभारिया होत्था) सप्तभार्याः आसन-सात पत्नीओ हती (तं जहा) तद्यथा-तेमनां नाम आ प्रमाणे छे-(चंदजसा) (१) चन्द्रयशा (२) (चंदकंता) चन्द्रकान्ता, (सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य) (३) सुरूपा (४) प्रतिरूपा (५) चक्षुष्कान्ता (सिरिकंता

टीका-'जंबुदीवेणं' इत्यादि-'जबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे' जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे 'तीयाए उस्सप्पिणीए' अतीतायामुत्सर्पिण्याम् 'सत्तकुलगरा' सप्तकुलकराः 'होत्था' आसन, 'तं जहा' तद्यथा-मित्तदामे सुदामेय सुपासे य सयंपभे। विमलघोसे सुघोसे य महाघोसे य सत्तमे मित्रदामा सुदामा च सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः। विमलघोषः सुघोषश्च महाघोषश्च सप्तमः ॥१॥ 'जंबुदीवे णं दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दस कुलगरा होत्था' जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्या दश कुलकरा आसन, 'त जहा' तद्यथा-'सयंजले सयाऊय, अजियसेणे अणतसेणे य। कज्जसेणे भीमसेणे, महाभीमसेणे य सत्तमे॥ दढरहे दसरहे सत्तरहे॥' स्वयंजलः शतायुश्च, अजितसेनोऽनन्तसेनश्च। कार्यसेनो भीमसेनो महाभीमसेनश्च सप्तमः॥२॥ दृढरथो दशरथः शतरथः। 'जबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणी समाए

पत्तीण णामाइ) कुलकर पत्नीना नामानि-कुलकरपत्नीनां नामानि-ये कुलकरों की पत्नियों के नाम हैं ॥सू० १९६॥

टीकार्थ—'जंबुदीवे ण दीवे' इत्यादि—जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में भूतकाल की उत्सर्पिणीकाल में सात कुलकर हुए। वे इस प्रकार से हैं। मित्रदामन१ सुदामन२ सुपार्श्व३ स्वयंप्रभ४ विमलघोष५ सुघोष६ और सातवें महाघोष७। इस जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में भारतवर्ष में तृतीय अवसर्पिणीकाल में दस कुलकर हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से हैं-स्वयंजल१, शतायु२ अजितसेन३, अनतसेन४ कार्यसेन५ भीमसेन६ सातवें महाभीमसेन७ दृढरथ८ दशरथ९ दशवें शतरथ१०। इस जम्बुद्वीप-नामके प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस चालू अवसर्पिणी काल में सात कुलकर-

---

मरुदेवी) (६) श्रीकान्ता अने (७) भद्रदेवी (कुलगरपत्तीणणामाइं) कुलकर पत्नीना नामानि-એ પ્રમાણે કુલકરોની પત્નીઓના નામો હતાં ॥સૂ ૧૯૬॥

ટીકાર્થ—जबूद्दीवेणं दीवे इत्यादि-જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા ત્રીજા ઉત્સર્પિણીકાળમા સાત કુલકરો થયા હતા તેમના નામ આ પ્રમાણે હતા-(૧) મિત્રદામન્ (૨) સુદામન્ (૩) સુપાર્શ્વ, (૪) સ્વયંપ્રભ, (૫) વિમલઘોષ, (૬) સુઘોષ, અને (૭) મહાઘોષ. આ જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા ત્રીજા અવસર્પિણીકાળમાં દસ કુલકરો હતા તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) સ્વયજલ, (૨) શતાયુ, (૩) અજિતસેન, (૪) અનંતસેન,(૫) કાર્યસેન, (૬) ભીમસેન, (૭) મહાભીમસેન, (૮) દૃઢરથ, (૯) દશરથ અને (૧૦) શતરથ આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમાં વર્તમાન અવસર્પિ-

रहे) दसरथो-दसरथ८(दसरहे) दशरथा-दशरथ९ (सयरहे) शतरथा-दशवें शतरथा (जंबूदीवेण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणी समाए सत्त कुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्-इस जंबूद्वीप नामक प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस चालु अवसर्पिणी काल में सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं-(पढमेत्थ विमलवाहण) पथमोऽत्र विमलवाहनः-प्रथम विमलवाहन (चक्खुम) चक्षुष्मान्-द्वितीय चक्षुष्मान् (जसम) यशोमान्-तृतीय यशोमान् (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्रः-चतुर्थ अभिचंद्र (तओ य) ततश्च-इनके बाद (पसेणईए) प्रसेनजित्-पांचवें-प्रसनजित् (मरुदेवे) मरुदेव - छठवें मरुदेव (चेव नाभी य) चैव नाभिश्च-और सातवें नाभिराय। (एतेसि ण सत्तण्हं कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-इन सात कुलकरों की (सत्त भारिया होत्था) सप्तभार्या आसन्-सात स्त्रीयां थीं। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं-(चंदजसा) चन्द्रयसा-चंद्रयशा१, (चंदकंता) चन्द्रकान्ता-चन्द्रकान्ता२ (सुरूवपडिरूवचक्खु कंता य) सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च-सुरूपा३, प्रतिरूपा४ चक्षुष्कान्ता५ (सिरिकंता मरुदेवी) श्रीकान्ता मरुदेवी-श्रीकान्ता६ और मरुदेवी७। (कुलगर

---

(७) महाबीमसेन, (दसरहे) दसरथो-(८) दशरथ (दसरहे) दशरथा-दशरथ (सयरहे) शतरथा-अने (१०) शतरथ. (जंबूदीवेण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीसमाए सत्तकुलगराहोत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षे अस्यां अवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्-आ जंबूद्वीप नामना पहेला द्वीपमां आवेला भारतवर्षमां आ चालु अवसर्पि णीकालमां सात कुलकरो थया छे (तं जहा) तद्यथा-तेमनां नाम आ प्रमाणे छे (पढमेत्थ विमलवाहण) पथमोऽत्र विमल वाहन-(१) विमलवाहन, (चक्खुम) चक्षुष्मान्-(२) चक्षुष्मान्, (जसम) यशोमान्-(३) यशोमान, (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्रः-(४) अभिचन्द्र, (तओ य पसेणईए) ततश्च प्रसेनजित्-(५) प्रसेनजित, (मरुदेव) मरुदेव - (६) मरुदेव अने (चेव नाभी य) चैव नाभिश्च-(७) नाभिराय (एतेसिं ण सत्तण्हं कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-आ सात कुलकरोनी (सत्तभारिया होत्था) सप्तभार्या आसन्-सात पत्नीओ हती (तं जहा) तद्यथा-तेमनां नाम आ प्रमाणे छे—(चंदजसा) (१) चन्द्रयशा (२) (चंदकंता) चन्द्रकान्ता, (सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य) (३) सुरूपा (४) प्रतिरूपा (५) चक्षुष्कान्ता (सिरिकंता

चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था, तं जहा–मरुदेवी विजयासेणा [सिद्धत्था मंगला सुसीमा य। पुहवी लक्खणा रामा नंदा विण्हू जया सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा सिरियादेवी पभावई पउमा । वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया ॥१०॥ ॥सू. १९७॥

शब्दार्थ–(जंबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकराणां पितर आसन्–इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थंकरों के पिता हुए हैं। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से है–[णाभी य) नाभि१, (जियसत्तू य) जितशत्रुश्च–जितशत्रु२ (जियारी) जितरिः–जितारि३, (संवरे इय) संवर इति–संवर४, (मेहे धरे) मेघो धरः–मेघ५, धर६, (पइट्ठे य) प्रतिष्ठश्च–प्रतिष्ठ७ (महासेणे य) महासेन८ (खत्तिए) क्षत्रियः–क्षत्रिय (सुग्गीवे) सुग्रीवो–सुग्रीव९ (दढरहे) दृढरथो–दृढरथ१०, (विण्हू) विष्णुः–विष्णु११ (वसुपूज्जे य) वसुपूज्यश्च–वसुपूज्य१२ (खत्तिए) क्षत्रियः–क्षत्रिय, (कयवम्मा) कृतवर्मा–कृतवर्मा१३, (सीहसेणे) सिंहसेनो–सिंहसेन१४ (भाणू) भानुः–भानु, (विस्ससेणे इय) विश्वसेन इति–विश्वसेन१६, (सूरे, सुदंसणे, कुंभे सुमित्त विजए समुद्दविजए य) सूर सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रो विजयः समुद्रविजयश्च–सूर१७ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२

शब्दार्थ—जंबुद्दीवे ण दीवे भारहेवासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकराणां पितर आसन्–આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા ૨૪ તીર્થંકરોના પિતા થઇ ગયા છે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(णाभी य) (૧) નાભિ, (जियसत्तू य) (૨) જિતશત્રુ, (जियारी) (૩) જિતારિ, (संवरेइय) (૪) સંવર, (मेहे धरे) (૫) મેઘ, (૬) ધર, (पइट्ठेय) (૭) પ્રતિષ્ઠ, (महासेणे य) (૮) મહાસેન (खत्तिए) (૯), ક્ષત્રિય, (सुग्गीवे) સુગ્રીવ, (दढरहे) (૧૦) દૃઢરથ, (विण्हू) (૧૧) વિષ્ણુ (वासुपुज्जेय) (૧૨) વાસુપૂજ્ય, (खत्तिए कयवम्मा) (૧૩) ક્ષત્રિય કૃતવર્મા, (सीहसेणे) સિંહસેનો (૧૪) સિંહસેન, (भाणू) (૧૫) ભાનુ (विस्ससेणे इय) (૧૬) વિશ્વસેન, (सूरे, सुदंसणे,, कुंभे, सुमित्त विजए समुद्दविजए य) (૧૭) સૂર, (૧૮) સુદર્શન, (૧૯) કુંભ, (૨૦) સુમિત્ર, (૨૧) વિજય, (૨૧) સમુદ્રવિજય, (रायाय

मत्तकुञ्जरा होत्था' जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां सप्त कुञ्जरा आसन्, 'त जहा' तद्यथा-'पढमत्थविमलवाहण चक्खुमन्नसम चउत्थमभिचदे। तत्तो य पसणईए मरुदेवे चेव नाभी य। पढमोऽत्थविमलवाहण नामेणं चक्खुप्पमान चक्खुपाऽभिचन्दः। ततश्च प्रसेनजित् मरुदेवश्चैव नाभिश्च॥३॥ 'एतासिणं सत्तण्ह कुञ्जराणं' एतेषां खलु सप्तानां कुञ्जराणां 'सत्त भारिया होत्था' सप्तभार्या आसन, 'त जहा' तद्यथा-'चदजसा चदकता सुरूवपडिरूव चक्खुकता य। सिरिकता मरुदेवीकुञ्जरपत्तीणं णामाइं ॥४॥' चन्द्रयशाचन्द्र कान्ता सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च। श्रीकान्ता मरुदेवी कुञ्जरपत्नीनां नामानि ॥४॥ सू १९६ ॥

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ण ओसिप्पणीए चउवीस तित्थगराण पियरो होत्था, त जहा—णाभी य जियसत्तू य (जियारी सवरे इय। मेहे धरे पइट्ठे य, महसेणे य खत्तिए ॥५॥ सुग्गीव दढरहे विण्हू वसुपुज्जे य खत्तिये। कयवम्मा सीहसेणे भाणू विस्ससेणे इय॥६॥ सूरे सुदसणे कुभे सुमित्तविजए समुद्दविजए य। राया य आससेणे य सिद्धत्थे त्रिय खत्तिए॥७॥) उदितोदियकुलवसा विसुद्धवसा गुणेहि उववेया। तित्थप्पवत्तयाण एए पियरो जिण वराण ॥८॥ जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ण ओसप्पिणीए

हुए हैं उनके नाम ये हैं—प्रथम विमल वाहन, द्वितीय चक्षुष्मान् तृतीय यशोमान चतुर्थ अभिचन्द्र इनके बाद पाँचवे प्रसेनजित् छठवें मरुदेव और सातवें नभिराया इन सात कुलकरों की सात स्त्रीयां थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं—चन्द्रयशा१ चन्द्रकान्ता२ सुरूपा३ प्रतिरूपा४ चक्षुष्कान्ता५, श्री कान्ता६ और मरुदेवी७ ये कुलकरों की पत्नियों के नाम हैं ॥सू० १९६॥

શ્રીકાળમાં સાત કુલકરો થયા છે તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) વિમલવાહન, (૨) ચક્ષુષ્માન્ (૩) યશોમાન્ (૪) અભિચન્દ્ર, (૫) પ્રસેનજિત, (૬) મરુદેવ અને (૭) નભિ એ સાત કુલકરોની સાત સ્ત્રીઓનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) ચન્દ્રયશા (૨) ચન્દ્રકાન્તા (૩) સુરૂપા (૪) પ્રતિરૂપા, (૫) ચક્ષુષ્કાન્તા, (૬) શ્રીકાન્તા અને (૭) મરુદેવી ॥સૂ ૧૯૬॥

चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था, तं जहा–मरुदेवी विजयासेणा [सिद्धत्था मंगला सुसीमा य। पुहवी लक्खणा रामा नंदा विण्हू जया सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा सिरियादेवी पभावई पउमा । वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया ॥१०॥ ॥सू. १९७॥

शब्दार्थ–(जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकराणां पितर आसन्–इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौवीस तीर्थंकरों के पिता हुए हैं। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से हैं–[णाभी य) नाभि१, (जियसत्तू य) जितशत्रु श्च–जितशत्रु२ (जियारी) जितारिः–जितारि३, (सवरे इय) सवर इति–संवर४, (मेहे धरे) मेघो धरः–मेघ५, धर६, (पइट्ठे य) प्रतिष्ठश्च–प्रतिष्ठ७ (महासेणे य) महासेन८ (खत्तिए) क्षत्रियः–क्षत्रिय (सुग्गीवे) सुग्रीवो–सुग्रीव९ (दढरहे) दृढरथो–दृढरथ१०, (विण्हू) विष्णुः–विष्णु११ (वसुपूज्जे य) वसुपूज्यश्च–वसुपूज्य१२ (खत्तिए) क्षत्रियः–क्षत्रिय, (कयवम्मा) कृतवर्मा–कृतवर्मा१३, (सीहसेणे) सिंहसेनो–सिंहसेन१४ (भाणू) भानुः–भानु, (विस्ससेणे इय) विश्वसेन इति–विश्वसेन१६, (सूरे, सुदंसणे, कुंभे सुमित्त विजए समुद्दविजए य) सूर सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रो विजयः समुद्रविजयश्च–सूर१७ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२

शब्दार्थ—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहेवासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकराणां पितर आसन्–આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા ૨૪ તીર્થંકરના પિતા થઇ ગયા છે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(णाभी य) (૧) નાભિ, (जियसत्तू य) (૨) જિતશત્રુ, (जियारी) (૩) જિતારિ, (सवरेइय) (૪) સવર, (मेहे धरे) (૫) મેઘ, (૬) ધર, (पइट्ठेय) (૭) પ્રતિષ્ઠ, (महासेणे य) (૮) મહાસેન (खत्तिए) (૯), ક્ષત્રિય, (सुग्गीवे) સુગ્રીવ, (दढरहे) (૧૦) દૃઢરથ, (विण्हू) (૧૧) વિષ્ણુ (वासुपुज्जेय) (૧૨) વાસુપૂજ્ય, (खत्तिए कयवम्मा) (૧૩) ક્ષત્રિય કૃતવર્મા, (सीहसेणे) सिंहसेनो (૧૪) સિંહસેન, (भाणू) (૧૫) ભાનુ (विस्ससेणे इय) (૧૬) વિશ્વસેન, (सूरे, सुदंसणे,, कुंभे, सुमित्त विजए समुद्दविजए य) (૧૭) સૂર, (૧૮) સુદર્શન, (૧૯) કુંભ, (૨૦) સુમિત્ર, (૨૧) વિજય, (૨૧) સમુદ્રવિજય, (रायाय

(राया य आससेणे य सिद्धत्थे खत्तिए य खत्तिए) राजा च अश्वसेन सिद्धार्थ क्षत्रिय च क्षत्रिय—राजा अश्वसेन२३ और क्षत्रियसिद्धार्थ२४। (तित्थप्पवत्तयाणं जिणवराणं तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्—तीर्थ प्रवर्तक जिनवरों के (एए पियरो) एते पितरो—ये पिता (उदिओदिए—कुलवंसा) उदितोदित कुलवंश। —उत्तरोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूप वंश वाले थे। (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया) विशुद्धवंशा गुणैरुपेताः—मातृपितृसंबंधी वंश की निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनादि तथा दयादान आदि सद्गुणों से संपन्न थे। जंबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽवसर्पिण्याम्—जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में(चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थंकराणां मातर आसन्—चौबीस तीर्थंकरों की माताएँ हुई हैं (तं जहा) तद्यथा—जो इस प्रकार हैं—(मरुदेवी, विजया—सेणा सिद्धत्था, मंगला, सुसीमा य, पुहवी, लक्खणा, रामा, नंदा, विष्णु जया, सामा) मरुदेवी विजया सेना सिद्धार्था मङ्गला सुसीमा च पृथिवी लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णुर्जया श्यामा—मरुदेवी१, विजया२ सेना३ सिद्धार्था४ मङ्गला५ सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नंदा१० विष्णु११ जया१२ श्यामा१३ (सुव्वया सुव्वय अइरा सेवीपभावई पउमा वप्पा सिवा वामा—सुव्रता सुव्रता अचिरा श्रीदेवीप्रभावती पद्मा वप्रा शिवा वामा—तिसला त्रिशला

आससेणे य सिद्धत्थे खत्तिए) (२३) राजा अश्वसेन अने (२४) क्षत्रिय सिद्धार्थ (तित्थप्पवत्तयाणं जिणवराणं) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्—तीर्थप्रवर्तक जिनवरोना (एए पियरो) एते पितरो—ओ पिता (उदिओदिए—कुलवंसा) उदितोदित—कुलवंश —उत्तरे उत्तर जे उच्च प्रकारना कुलरूपवंश ने पामता हता (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया)विशुद्धवंशा गुणैरुपेता—मातृपक्षनी अने पितृपक्षनी विशुद्धतायी युक्त हता सम्यग्दर्शन आदिथी तथा दया, दान आदि सद्गुणोथी युक्त हता (जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽवसर्पिण्याम्—आ जम्बूद्वीप नामना आ द्वीपमां आवेला भारत वर्षमा आ अवसर्पिणी कालमां (चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थंकराणां मातर आसन्—२४ तीर्थंकरोनी २४ माताओ थई छे (तं जहा) तद्यथा—तेमना नाम आ प्रमाणे छे—(मरुदेवी विजया, सेणा, सिद्धत्था, मंगला, सुसीमा य पुहवी, लक्खणा, रामा नंदा, विष्णु, सामा) (१) मरुदेवी ( ) विजया (३) सेना, (४) सिद्धार्था, (५) मङ्गला, (६) सुसीमा (७) पृथिवी, (८)लक्ष्मणा (९)रामा, (१०) नंदा, (११) विष्णु (१२) जया, (१३) श्यामा

टीका-'जंबुद्दीवे णं'इत्यादि-'जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था' जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्याम वसर्पिण्या चतुर्विंशतिस्तीर्थकराणां पितरआसन, 'तं जहा' तद्यथा-'णाभी य १ जियसत्तू य२ जियारी३ सवरे इय४। मेहे५ धरे६ पइट्ठे य७ महसेणे य ८ खत्तिए॥५॥' नाभिश्च जितशत्रुश्च जितारिः संवर इति। मेघो धरः प्रतिष्ठश्च महासेनश्च क्षत्रियः॥५॥ 'सुग्गीवे९ दढरहे१० विण्हू११ वसुपुज्जे य खत्तिए१२। कयवम्मा१३ सीहसेणे१४ भाणू१५ विस्ससेणे१६ इय ॥६॥' सुग्रीवो दृढरथो विष्णुर्वसुपूज्यश्च क्षत्रियः। कृतवर्मा सिंहसेनो भानुर्विश्वसेन इति॥६॥ 'सूरे१७ सुदंसणे१८ कुंभे१९ सुमित्त२० विजए२१ समुद्दविजए य२२। राया य आससेणे य२३ सिद्धत्थेक्खिय२४ खत्तिए॥७॥' सूरः सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रोविजयः

य जिणमाया) सुयशाः सुव्रता श्री र्देवी प्रभावती पद्मावप्रा शिवा च वामा त्रिशला देवी च जिनमातरः-सुयशा१४, सुव्रता१५, अचिरा१६, श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा २० वप्रा२१ शिवा२२ वामा२३ और त्रिशला २४ ये चौवीस२४ तीर्थंकरो की माताएँ है ॥ सू० १९७॥

टीकार्थ—'जंबूद्दीवे णं दीवे' इत्यादि—इस जंबूद्वीप नामके प्रथम द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौवीस तीर्थंकरों के पिता हुए है। उनके नाम इस प्रकार से है-नाभि१ जितशत्रु२ जितारि३ संवर४ मेघ५ धर६ प्रतिष्ठ७ महासेन८ क्षत्रिय सुग्रीव९ दृढरथ१० विष्णु ११ वसुपूज्य१२ क्षत्रिय कृतवर्मा१३, सिंहसेन१४ भानु१५ विश्वसेन१६ सूर१९ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२ राजा

(सुजया सुव्वय,अइरादेवी पभावइ पउमा-वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया) (१४) सुयशा, (१५) सुव्रता, (१६) अचिरा, (१७) श्री, (१८) देवी (१९) प्रभावती, (२०) पद्मा, (२१) वप्रा, (२२) शिवा, (२३) वामा अने त्रिशला चोवीस तीर्थंकरोनी २४ माताओना नाम ઉપર મુજબ છે. ॥ સૂ ૧૯૭॥

ટીકાર્થ—"जंबुद्दीवे णं दीवे" इत्यादि—આ જંબૂદ્વીપમાં આવેલા આ ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા થયેલા ૨૪ તીર્થંકરોના પિતાના નામ આ પ્રમાણે (૧) નાભિ, (૨) જિતશત્રુ (૩) જિતારિ, (૪) સંવર, (૫) મેઘ) (૬) ધર (૭) પ્રતિષ્ઠ, (૮) મહાસેન, (૯) ક્ષત્રિય સુગ્રીવ, (૧૦) દૃઢરથ, (૧૧) વિષ્ણુ (૧૧)વસુપૂજ્ય, (૧૩) કૃતવર્મા, (૧૪) સિંહસેન, (૧૫) ભાનુ, (૧૬) વિશ્વસેન (૧૭ સૂર ૧૮) સુદર્શન (૧૯) કુંભ, (૨૦) સુમિત્ર, (૨૧) વિજય,[૨૨] સમુદ્રવિજય (૨૩) રાજા અશ્વસેન અને

(राया य आससेणे य सिद्धत्थेखिय खत्तिए) राजा च अश्वसेन सिद्धार्थ इतिच क्षत्रिय-राजा अश्वसन२३ और क्षत्रियसिद्धार्थ२४। (तित्थप्पवत्ताणं जिणवराणं) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्-तीर्थ वर्तक जिनवरों के (एए पियरो) एते पितरो-ये पिता (उदितोदिय-कुलवंसा) उदितोदित कुलवंशा-उत्तरोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूप वंश वाले थे। (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया) विशुद्धवंशा गुणैरुपेता-मातृपितृसम्बन्धी वंश की निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनादि तथा दयादान आदि सद्गुणों से संपन्न थे। जंबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्-जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में(चउवीस तित्थगराण मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थंकराणां मातर आसन्-चौबीस तीर्थंकरों की माताएँ हुई हैं (त जहा) तद्यथा-जो इस प्रकारहैं-(मरुदेवी, विजया-सेणा सिद्धत्था, मंगला, सुसीमा य, पुहवी, अकम्मणा, रामा, नंदा, विण्हु जया, सामा) मरुदेवी विजया सेना सिद्धार्था मङ्गला सुसीमा च पृथिवी लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णुर्जया श्यामा-मरुदेवी१, विजया२ सेना३ सिद्धार्था४ मंगला५ सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नंदा१० विष्णु११ जया१२ श्यामा१३ (सुव्वया सुव्वय आरा देवीपभावई पउमा वप्पा सिवा वामा-सिवता वप्री

आससेणे य सिद्धत्थे खत्तिए य खत्तिए) (२३) राजा अश्वसेन अने (२४) क्षत्रिय सिद्धार्थ (तित्थप्पवत्ताणं जिणवराणं) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्-तीर्थप्रवर्तक जिनवरोना (ए ते पियरो) एते पितरो-એ પિતા (उदितोदिय कुलवंसा) उदितोदित-कुलवंशा-उत्तरोत्तर जे ते उत्कर्ष पामता कुलरूपवंश वाला हता (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया)विशुद्धवंशा गुणैरुपेता-मातृपक्ष संबंधी अने पितृ पक्ष संबंधी विशुद्धपणायुक्त हता अथवा दया दान आदि सद्गुणोथी युक्त हता (जंबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्-जम्बूद्वीप नामना आ द्वीपमां आवेला भारत वर्षमां आ अवसर्पिणी कालमा (चउवीसं तित्थगराण मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थंकराणां मातर आसन्-२४ तीर्थंकरोनी २४ माताओ थई छे, (तं जहा) तद्यथा-तेमना नाम आ प्रमाणे छे-(मरुदेवी विजया, सेणा, सिद्धत्था, मंगला, सुसीमा य पुहवी, अकम्मणा, रामा नंदा, विण्हु, सामा) (१) मरुदेवी ( ) विजया, (३) सेना, (४) सिद्धार्था, (५) मंगला, (६) सुसीमा, (७) पृथिवी (८)लक्ष्मणा,(९)रामा (१०) नंदा (११) विष्णु (१२) जया (१३) श्यामा

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा-उसभ१, अजिय२, संभव३, अभिनंदण४, सुमइ५, पउमप्पह६, सुपास७, चंदप्पह८, सुविहिपुप्फदंत९, सीयल१०, सिज्जंस११, वासुपुज्ज१२, विमल१३, अनंत१४, धम्म१५, संति१६, कुंथु१७, अर१८, मल्लि१९. मुनिसुव्वय२०, णमि२१, णेमि२२, पास२३, वड्ढमाणो२४ य। एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था। तं जहा-पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव। तत्तो य धम्मसीहे सुमित तह धम्ममित्ते य ॥११॥ सुंदरबाहु तह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य। दिण्णे य इंददत्ते सुंदर माहिंदे चेव ॥१२॥ सीहरहे मेहरहे रुप्पि य सु संणे य बोद्धव्वे। ततो य नंदणे खलु सीहगिरी चेव वीसइमे॥१३॥ अदीणसत्तू संखे सुदंसणे नंदणे य बोद्धव्वे। ओसप्पिणीए एए तित्थयराणं तु पुव्वभवा ॥१४॥ एएसिं चोवीसाए तित्थगराणं चोवीसं सीयाओ होत्था, तं जहा-सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य। विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया चेव ॥१५॥ अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभ अग्गिसप्पभा चेव। विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य ॥१६॥ अभय निव्वुयकरा मणोरमा तह मणोरहा चेव। देवकुरूत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया ॥१७॥ एयाओ सीयाओ सव्वेसि चेव जिणवराणं। सव्वजग-

---

१५, अचिरा१६ श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा२० वप्रा२१ शिवा२२ वामा२३ और त्रिशला२४ ये चौवीस तीर्थंकरों की२४ माताएँ हैं ॥सू० १९७॥

શ્રી, (૧૮) દેવી, (૧૯) પ્રભાવતી, (૨૦) પદ્મા, (૨૧) વપ્રા, [૨૨] શિવા, (૨૩) વામા અને (૨૪) ત્રિશલા એ પ્રમાણે ૨૪ તીર્થંકરોની માતાઓના નામ હતા ॥સૂ ૧૯૭॥

समुद्रविजयश्च । रामा च अश्वसेनः सिद्धाय इति च क्षत्रियाः॥७॥ 'उदितोदिय कुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया । तित्थप्पवत्तयाणं एए पियरो जिणवराणं॥८॥' उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशागुणैरुपपेता । तीर्थप्रवर्तकानामेते पितरो जिनवराणाम् ॥ 'उदितोदियकुलवंसा' उदितोदितकुलवंशाः=उदितोदित =उच्चैः प्राप्तुत्कर्षं प्राप्ताः कुलवंशो येषां ते तथोक्ताः, तथा–'विसुद्धवंसा विशुद्धवंशाः– विशुद्ध =निर्मल , वंश –मातृपितृवंशो यषां ते तथोक्ता , तथा–'गुणेहिं उववेया गुणैरुपपेता =गुणयुक्ता 'एए' एते नाभ्यादय 'तित्थप्पवत्तयाणं' तीर्थप्रवर्तकानां जिणवराणं' जिनवराणाम् ऋषभादीनां 'पियरो' पितरो ज्ञेयाः इति भाव । जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए' जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्, 'चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था' चतुर्विंशति तीर्थकराणां मातर आसन, 'तं जहा' तद्यथा– मरुदेवी-विनया सेना सिद्धार्था मंगला सुसीमा च । पृथिवी लक्ष्मणा-रामा नन्दाविष्णु जया सामा॥९॥ सुयसा सुव्वयअइरा देवी पभावई तिलगा । दप्पा सिवा य वामातिसलाहेवीय जिणमाया ॥१०॥ मरुदेवीविजया सेनासिद्धार्थामङ्गला सुसीमा च । पृथिवी लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णुर्जया श्यामा ॥९॥ सुयशा सुव्रता अचिरा श्रीर्देवी प्रभावतीपद्मा । दमा शिवा च श्यामा त्रिशला देवी च जिनमातर ॥सू १९७॥

अश्वसेन२३ और क्षत्रिय सिद्धार्थ २४। तीर्थप्रवर्तक जिनवरों के ये पिता उत्तरोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूपवंश वाले थे। मातृपितृ पक्षों की निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनादि तथा दयादान आदि सद्गुणों से सपन्न थे। जम्बूद्वीप नामके इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में तीर्थंकरों की चौबीस माताएँ हुई हैं। वे इस प्रकार से हैं– मरुदेवी१ विजया२, सेना३ सिद्धार्था४ मगला ५ सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नंदा१० विष्णु११ जया१२ श्यामा१३। सुयशा१४, सुव्रता

---

[१८] क्षत्रिय सिद्धार्थ तीर्थप्रवर्तक जिनवरोना ते पिता उत्तरोत्तर उत्कर्षता ना प्राप्त गुणोथी रूपवंशथी युक्त हता अने मातृपक्ष अने पितृपक्षनी विशुद्धताथी युक्त हता सम्यक्त्व दर्शन आदि तथा दयादान आदि सद्गुणोना हता अने जंबूद्वीपमां आवेला भारत वर्षमां आ अवसर्पिणी कालमां २४ तीर्थंकरोनी जे २४ माताओ हती तेमना नाम आ प्रमाणे छे–(१) मरुदेवी (२) विजया, (३) सेना (४) सिद्धार्था (५) मगला, (६) सुसीमा (७) पृथिवी (८) लक्ष्मणा (९) रामा (१०) नंदा, (११) विष्णु (१२) जया, (१३) श्यामा (१४) सुयशा (१५) सुव्रता (१६) अचिरा (१७)

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा-उसभ१, अजिय२, संभव३, अभिनंदण४, सुमइ५, पउमप्पह६, सुपास७, चंदप्पह८, सुविहिपुप्फदंत९, सीयल१०, सिज्जंस११, वासुपुज्ज१२, विमल१३, अनंत१४, धम्म१५, संति१६, कुंथु१७, अर१८, मल्लि१९, मुनिसुव्वय२०, णमि२१, णेमि२२, पास२३, वड्ढमाणो२४ य। एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था। तं जहा-पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव। तत्तो य धम्मसीहे सुमित तह धम्ममित्ते य ॥११॥ सुंदरबाहु तह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य। दिण्णे य इंददत्ते सुंदर माहिंदे चेव ॥१२॥ सीहरहे मेहरहे रुप्पि य सु सणे य बोद्धव्वे। ततो य नंदणे खलु सीहगिरी चेव वीसइमे॥१३॥ अदीणसत्तू संखे सुदंसणे नंदणे य बोद्धव्वे। ओसप्पिणीए एए तित्थयराणं तु पुव्वभवा ॥१४॥ एएसिं चोवीसाए तित्थगराणं चोवीसं सीयाओ होत्था, तं जहा-सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य। विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया चेव ॥१५॥ अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभ अग्गिसप्पभा चेव। विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य ॥१६॥ अभय निव्वुयकरा मणोरमा तह मणोरहा चेव। देवकुरूत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया ॥१७॥ एयाओ सीयाओ सव्वेसि चेव जिणवराणं। सव्वजग-

---

१५, अचिरा१६ श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा२० वप्रा२१ शिवा२२ वामा२३ और त्रिशला२४ ये चौबीस तीर्थंकरों की२४ माताएँ हैं ॥सू० १९७॥

શ્રી, (૧૮) દેવી, (૧૯) પ્રભાવતી, (૨૦) પદ્મા, (૨૧) વપ્રા, [૨૨] શિવા, (૨૩) વામા અને (૨૪) ત્રિશલા એ પ્રમાણે ૨૪ તીર્થંકરોની માતાઓના નામ હતા ॥સૂ ૧૯૭॥

वण्णाण सव्वोउगसुभाए छायाए ॥१८॥ पुव्वि ओक्खित्ता माणुसेहिं साहट्ठु रोमकूवेहिं। पच्छा वहति सीय असुरिंद सुरिंद नागिंदा ॥१९॥ चलचवलकुण्डलधरा सच्छंद विउविया भवणधारी। सुर असुरवहियाण वहति सीय जिणिंदाण ॥२०॥ पुरओ वहतिदेवा नागा पुण दाहिणम्मि। पच्चत्थिमेण असुरा गरुला पुण उत्तरे पासे ॥२१॥ उसभो य विणीयाए बारवईए अरिट्ठनेमी। अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्ममूमीसु ॥२२॥ सव्व वि एगदूसेण णिग्गया जिणवरा चउव्वीस। ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य ॥२३॥ एक्को भगव वीरो पासो मल्लि य तीहि तीहि सएहिं। भगव पि वासुपुज्जो छहि पुरिससएहिं णिक्खतो ॥२४॥ उग्गाण भोगाण राइण्णाण य खत्तियाण य। चउहि सहस्सेहिं उसभो सेसा उ सहस्स परिवारा ॥२५॥ सुमइत्थ णिच्चभत्तेण णिग्गओ वासुपुज्ज चोत्थेण। पासो मल्ली य अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेण ॥२६॥सू० १९८॥

शब्दार्थ—(जंबुदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जंबूद्वीप नामक द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे भारत वर्ष (इमीसेणं आसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल में (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा आसन्—चौबीस तीर्थंकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम ये हैं (उसभ—अजिय—संभव—अभिनंदण—सुमइ—पउमप्पह सुपास—चंदप्पह, सुविहि—पुप्फदंत—सीयल—सिज्जंस—वासुपुज्ज—विमल—अनंत

शब्दार्थ—(जंबुदीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (भारहे वास) भारते वर्षे—ભારતવર્ષમાં (इमीसेणं ओसप्पिणीए) अस्या अवसर्पिण्याम्—આ અવસર્પિણી કાળમાં (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशति स्तीर्थंकरा अभवन् ચોવીસ તીર્થંકરો થઈ ગયા છે (तं जहा) તેમના નામ આ પ્રમાણે છે (उसभ) अजित संभव अभिनंदन सुमई पद्मप्रभसुपार्श्व प्रभ, सुविधि पुष्पदंत शीतल श्रेयांस वासुपुज्य विमल अनंत धर्म शांति

धम्म-संतिकुंथु-अर-मल्लि-मुनिसुव्वय णमि णेमि पास वड्ढमाणो य) ऋषभः अजितः, संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः पुष्पदन्तः, शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्ति. कुन्थु. अरः मल्लिः मुनिसुव्रतः नमिः नेमिः पार्श्व, वर्द्धमानश्च-ऋषभ१, अजित२. संभव३, अभिनंदन४, सुमति५. पद्मप्रभ६ सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८ सुविधि-पुष्पदन्त९, शीतल१० श्रेयांस११, वासुपूज्य१२, विमल१३, अनंत १४, धर्म१५, शान्ति१६, कुन्थु१७ अर१८, मल्लि१९, मुनिसुव्रत२० नमि २१ नेमि२२ पार्श्व२३ और वर्धमान२४। (एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधीनाम चौवीस थे (तं जहा) तद्यथा-वे इसप्रकार से हैं-(पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-वज्रनाभ१, विमल२ विमलवाहन३ (धम्मसीहे) धर्मसिंहः धर्मसिंह४ (सुमित्ते) सुमित्रः-सुमित्र५, । (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च-धर्म-मित्र६,(सुंदरबाहुतह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य) सुन्दरबाहुस्तथा दीर्घबाहु. जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-सुंदरबाहु७ दीर्घबाहु८ जुगबाहु९ लष्टबाहु१० (दिण्णे

कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्वय णमि णेमि पासवड्ढमाणो य) ऋषभ.:अजित,: संभव,: अभिनन्दनः, सुमतिः. पद्मप्रभ,: सुपार्श्व, चन्द्रप्रभा,: सुविधि.: पुष्पदन्त,: शीतल,: श्रेयास,: वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्म, शान्ति.: कुन्थु.: अर,: मल्लि,: मुनिसुव्रत,: नमि,: नेमि,: पार्श्व, वर्द्धमानश्च-( ) ऋषभ, (२) अजित, [३] संभव, (४) अभिनंदन, (५) सुमति, (६) पद्मप्रभ, (७) सुपार्श्व, (८) चंद्रप्रभ (९)सुविधिपुष्पदन्त, [१०] शीतल, (११) श्रेयांस, (१२) वासुपूज्य, [१३] विमल, (१४) अनंत, (१५) धर्म, [१६] शान्ति, (१७) कुन्थु, (१८) मल्लि. (१९) अर, (२०) मुनिसुव्रत, (२१) नमि, (२२) नेमि, (२३) पार्श्व, अने (२४) वर्धमान.(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन्-ते तीर्थंकरोना पूर्वभवना चोवीस नामो (तं जहा) ते आ प्रमाणे हता (पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव)प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमल स्तथा विमलवाहनश्चैव-(१) वज्रनाभ, (२) विमल, (३) विमलवाहन, (धम्म-सीहे) धर्मसिंहः-(४) धर्मसिंह, (५) (सुमित्ते) सुमित्र, (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च (६) धर्ममित्र, (सुंदरबाहुतहदीहबाहुजुगबाहू लट्ठबाहू य)सुन्दर-बाहुस्तथादीर्घबाहुः जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-(७) सुंदरबाहु, (८) दीर्घबाहु, (९)

वच्छलाण सव्वोउगसुभाए छायाए ॥१८॥ पुव्वि ओक्खित्ता माणु सेहि साहू रोमकूवेहिं। पच्छा वहति सीय असुरिंद सुरिंद नागिंदा ॥१९॥ चलचवलकुंडलधरा सच्छंद विउव्विया भरणधारी। सुर असुरवंदियाण वहति सीय जिणिंदाण ॥२०॥ पुरओ वहंतिदेवा नागा पुण दाहिणम्मि। पच्चत्थिमेण असुरा गरुला पुण उत्तरे पासे ॥२१॥ उसभो य विणीयाए बारवईए अरिट्ठनेमी। अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमीसु ॥२२॥ सव्वे वि एगदूसेण णिग्गया जिणवरा चउव्वीस। ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य॥२३॥ एक्को भगव वीरो पासो मल्लि य तीहि तीहि सएहिं। भगव पि वासुपुज्जो छहि पुरिससएहिं णिक्खंतो ॥२४॥ उग्गाण भोगाण राइण्णाण य खत्तियाण य। चउहि सहस्सेहिं उसभो सेसा उ सहस्स परिवारा ॥२५॥ सुमइरथ णिच्चभत्तेण णिग्गओ वासुपुज्ज चोत्थेण। पासो मल्ली य अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेण ॥२६॥सू० १९८॥

शब्दार्थ—(जंबुदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जंबूद्वीप नामक द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे भारत वर्ष (इमीसेणं आसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल में (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा आसन्—चौबीस तीर्थंकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम ये हैं (उसभ—अजिय—संभव—अभिनंदण—सुमइ—पउमप्पह सुपास—चंदप्पह, सुविहि—पुप्फदंत—सीयल—सिज्जंस—वासुपुज्ज—विमल—अनंत

शब्दार्थ—(जंबुदीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—ए नामना द्वीपमा (भारहे वास) भारते वर्षे—भरतक्षेत्रमां (इमीसेणं ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणी कालमां (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा अभवन् चोवीश तीर्थंकरो थया छे (तं जहा) तेमना नाम आ प्रमाणे छे (उसभ) अजित संभव अभिनंदन सुमई पद्मप्रभसुपार्श्वचन्द्रप्रभ, सुविधि पुष्पदंत शीतल श्रेयांस वासुपूज्य विमल अनंत धर्म शांति

धम्म-संतिकुंथु-अर-मल्लि-मुनिसुव्वय णमि णेमि पास वड्ढमाणो य) ऋषभः अजितः, संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः पुष्पदन्तः, शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्तिः कुन्थुः अरः मल्लिः मुनिसुव्रतः नमिः नेमिः पार्श्व, वर्द्धमानश्च-ऋषभ१, अजित२, संभव३, अभिनंदन४, सुमति५, पद्मप्रभ६ सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८ सुविधि-पुष्पदन्त९, शीतल१० श्रेयांस११, वासुपूज्य१२, विमल१३, अनंत १४, धर्म१५, शान्ति१६, कुन्थु१७ अर१८, मल्लि१९, मुनिसुव्रत२० नमि २१ नेमि२२ पार्श्व२३ और वर्धमान२४। (एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन् चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधीनाम चौवीस थे (तं जहा) तद्यथा-वे इसप्रकार से हैं-(पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-वज्रनाभ१, विमल२ विमलवाहन३ (धम्मसीहे) धर्मसिंहः धर्मसिंह४ (सुमित्ते) सुमित्रः-सुमित्र५, । (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च-धर्ममित्र६,(सुंदरबाहुतह दीहबाहू जुगबाहू लट्ठबाहू य) सुन्दरबाहुस्तथा दीर्घबाहु. जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-सुंदरबाहु७ दीर्घबाहु८ जुगबाहु९ लष्टबाहु१० (दिण्णे

कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्वय णमि णेमि पासवड्ढमाणो य) ऋषभ,:अजित,: संभव,: अभिनन्दनः, सुमतिः, पद्मप्रभ,: सुपार्श्व, चन्द्रप्रभा,: सुविधि,: पुष्पदन्त,: शीतल,: श्रेयांस,: वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्म, शान्ति,: कुन्थु,: अर,: मल्लि,: मुनिसुव्रत,: नमि,: नेमि,: पार्श्व, वर्द्धमानश्च-(૧) ઋષભ, (૨) અજિત, [૩] સંભવ, (૪) અભિનંદન, (૫) સુમતિ, (૬) પદ્મપ્રભ, (૭) સુપાર્શ્વ, (૮) ચંદ્રપ્રભ (૯)સુવિધિપુષ્પદન્ત, [૧૦] શીતલ, (૧૧) શ્રેયાંસ, (૧૨) વાસુપૂજ્ય, [૧૩] વિમલ, (૧૪) અનંત, (૧૫) ધર્મ, [૧૬] શાન્તિ, (૧૭) કુન્થુ, (૧૮) મલ્લિ, (૧૯) અર, (૨૦) મુનિસુવ્રત, (૨૧) નમિ, (૨૨) નેમિ, (૨૩) પાર્શ્વ, અને (૨૪) વર્ધમાન.(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन्-તે તીર્થંકરોના પૂર્વભવના ચોવીસ નામો (तं जहा) તે આ પ્રમાણે હતા (पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव)प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-(૧) વજ્રનાભ, (૨) વિમલ, (૩) વિમલવાહન, (धम्मसीहे) धर्मसिंहः-(૪) ધર્મસિંહ, (૫) (सुमित्ते) સુમિત્ર, (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च (૬) ધર્મમિત્ર, (सुंदरबाहुतहदीहबाहुजुगबाहू लट्ठबाहू य)सुन्दरबाहुस्तथादीर्घबाहुः जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-(૭) સુંદરબાહુ, (૮) દીર્ઘબાહુ, (૯)

य इंददत्ते सुन्दरमाहिंदे चेव) दत्तश्च इन्द्रदत्त सुन्दरो माहेन्द्रश्चैव-दत्त११, इन्द्रदत्त१० सुन्दर १२ माहेन्द्र१४, (सीयरे) सिंहरथा-सिंहरथ१५ (मेहरहे रुप्पिय सुदंसणे य बोद्धव्वे) मेघरथ रुक्मी च सुदर्शनश्च बोद्धव्य-मेघरथ१६ रुक्मी१७ सुदर्शन१८ (नदणे) नन्दन-नन्दन१९ (सीहगिरी) सिंहगिरि-सिंहगिरि२० (अदीणसत्तू संखे सुदंसणे अदणे य बोद्धव्वे) अदीनशत्रु शङ्ख सुदर्शनो नन्दनश्च बोद्धव्य-अदीनशत्रु२१ शङ्ख२२ सुदर्शन२३ और नदन२४। (एए ओसप्पिणीए तित्थगराण तु पुव्वभवा) अवसर्पिण्यामेते-तीर्थकराणां तु पूर्वभवा-ये अवसर्पिणी काल के तीर्थंकर के पूर्वभव के नाम हैं। (एएसिं चउवीसाए तित्थगराण चउवीस सीयाओ होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशति शिविका आसन्-इन चौबीस तीर्थंकरों की चौबीस शिविकाएँ (पाठान्तर) थीं (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं-(सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धित्थ सुप्पसिद्धा य विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया चेव, अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभा चेव, विमला य पवरणा नागदत्ता य णागदत्ता य, अभयनिसढ्ढ एकरा मणोरमा तह मणोरहा चेव, देवकुरुत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सिया) शिविका सुदर्शना-सुप्रभाच सिद्धार्था सुप्रसिद्धा च, विजया च वैजन्ती जयन्ती

सुदंसणा (०) सुदर्शना (दिण्ण य इंददत्ते सुंदरमाहिंदे चेव) दत्तश्च इन्द्रदत्त सुन्दरो माहेन्द्रश्चैव (११) दत्त [१२] इन्द्रदत्त (१३) सुन्दर [१४] माहेन्द्र (सिंहरहे) सिंहरथ -(१५) सिंहरथ (मेहरहे रुप्पियसुदंसणे य बोद्धव्वे) मघरथ, रुक्मी च सुदर्शनश्च बोद्धव्य -[१६] मेघरथ [१७] रुक्मी, [१८ सुदर्शन (नदणे) (१९) नन्दन (सीहगिरी) (०) सिंहगिरि (अदीणसत्तू संखे सुदंसणे णंदणे य बोद्धव्वे) अदीनशत्रुः शंख सुदर्शनो नन्दनश्च बोद्धव्य -(२१) अदीनशत्रु (२२) शंख (२३) सुदर्शन, अने (२४) नन्दन (एए ओसप्पिणीए तित्थगराण तु पुव्वभवा) अवसर्पिण्यामेते तीर्थंकराणां तु पूर्वभवा -अवसर्पिणीकालना तीर्थंकरोना पूर्वभवना उपरोक्त नामो छे। (एए सिं चउवीसाए तित्थगराण चउवीस सीयाओ होत्था)एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशति शिविका आसन्-ते चोवीश तीर्थंकरोनी चोवीश शिबिकाओ हती (त जहा) तद्यथा-तेमनां नाम आ प्रमाणे छे-(सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थसुप्पसिद्धा य, विजया य वेजयंतीजयंती अपराजिया चेव, अरुणप्पभ चंदप्पभ अग्गिप्पभा चेव, विमला य पवरणा नागदत्ता य अभयनिसढ्ढएकरामणोरमा तह मणोरहा चेवदेवकुरुत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया)शिविकासुदर्शना सुप्रभाच सिद्धार्था सुप्रसिद्धा च,

अपराजिता चैव, अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा चैव विमला च पञ्चवर्णा सागरदत्ता च नागदत्ता च, अभयकरा निर्वृत्तिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव, देवकुरा-उत्तरकुरा विशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिबिका-सुदर्शना१ सुप्रभा१, सिद्धार्था३ सुप्रसिद्धा४ विजया५ वैजन्ती६ जयन्ती७ अपराजिता८ अरुणप्रभा९ चन्द्रप्रभा१० सूरप्रभा ११ अग्निप्रभा१२, विमला१३ पचवर्णा, १४ सागरदत्ता१५ नागदत्ता१६, अभयकरा१७, निर्वृत्तिकरा१८, मनोरमा१९ मनोहरा२० देवकुरा२१, उत्तरकुरा२२, विशाला २३ और चन्द्रप्रभा२४। (एयाओ सीयाओ सव्वेसिं चेव जिणवरिंदाण सव्वजगवच्छलाणं सव्वोउग सुभाए छायाए) एताः शिविकाः सर्वेषामेव जिनवराणाम् सर्वजगद्वत्सलानां सर्वऋतुक शुभया छायया-ये शिविकाएँ सर्वजगत के वत्सल जिनवरों की थीं, समस्त ऋतुओं के सुखों से ये युक्त थीं, शुभ छाया से ये सब अन्वित थीं। (पुव्विं) पूर्वं-पहिले इन शिविकाओं को (रोमकूएहिं माणुसेहिं) रोमकूपैः मानुषैः-रोमकूपयुक्त अर्थात् हर्ष से युक्त मनुष्य (साहट्टु) संहृत्य -लाकरके (ओविखत्ता) अवक्षिप्ताः-उपस्थित करते हैं, अर्थात् सबसे पहिले इन शिविकाओं को मनुष्य उठाते हैं (पच्छा) पश्चात् बाद में (असुरिंद-

---

विजया च वैजयन्तीजयन्ती अपराजिताचैव, अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा अग्निप्रभा चैव विमला च पञ्चवर्णासागरदत्ता च नागदत्ता च, अभयकरा निर्वृतिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव, देवकुराविशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिविका-(१) सुदर्शना, (२) सुप्रभा, (३) सिद्धार्था, (४) सुप्रसिद्धा, (५) विजया, (६) वैजयन्ती, (७) जयन्ती, (८) अपराजिता, (९) अरुणप्रभा (१०) चद्रप्रभा, (११) सूरप्रभा, (१२) अग्निप्रभा, (१३) विमला (१४) पचवर्णा, (१५) सागरदत्ता, (१६)नागदत्ता, (१७) अभयकरा, (१८) निर्वृत्तिकर (१९) मनोरमा, (२०) मनोहरा, (२१) देवकुरा, (२२) उत्तरकुरा, (२३) विशाला अने (२४) चन्द्रप्रभा (एयाओ सीयाओ सव्वेसिं चेव जिणवरिंदाणं सव्वजगवच्छलाणं सव्वो उग सुभाए छायाए) एताः शिविकाः सर्वेषामेव जिनवराणाम् सर्वजगद्वत्सलानां सर्वऋतुकशुभया छायया-સમસ્ત જગત પર વાત્સલ્યભાવ ગણનારા તે જિનવરોની તે શિબિકાઓ સમસ્ત ઋતુઓના સુખથી અને શુભ છાયાથી યુકત હતી. (पुव्विं) पूर्वं પહેલા તે શિબિકાઓને (रोमकूएहिं माणुसेहिं) रोमकूपः मानुषैः-હર્ષથી યુકત મનુષ્યો (साहट्टु) संहृत्य-લાવીને (ओविखत्ता) अवक्षिप्ता -ત્યા સુધી કરે છે એટલે કે-સૌથી પહેલ તે શિબિકાઓને મનુષ્યો ઉપાડે છે (पच्छा) पश्चात्-ત્યાર બાદ (असुरिंदसुरिंद नागिंद-

सुरिंदनागिंदा सीयंवहंति) असुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्राः शिबिकां वहन्ति-इन शिबिकाओं को असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र उठाते हैं। (सुरअसुरवंदियाण जिणिंदाण चलचवलकुंडलधरा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी) सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां चलचपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्वितामरण धारिणः-सुर और असुर से वंदित उन जिनेन्द्रों की शिबिका का चलचपल कुण्डलधारी देव कि जो अपनी इच्छानुसार विकुर्वित आभूषणों को धारण करने वाले होते हैं पूर्व की तरफ आगे २ गमन करते हैं 'उठाते)। (नागा पुणो दाहिणम्मि पासम्मि) नागकुमारा देवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे नागकुमारदेव दक्षिणपार्श्व में (पच्छिमेण असुरा) पश्चिमेन असुराः-असुरकुमारा पश्चिमपार्श्व में (गरुला पुण उत्तरे-पासे गरुडा पुनः उत्तरे पार्श्वे-और उत्तर पार्श्व में सुपर्णकुमार नाम के भवनपति देव उस शिबिका को वहन करते हैं। अब सूत्रकार तीर्थंकरों के दीक्षा स्थान का वर्णन करते हैं-(उसभो य विणीयाए) ऋषभश्च विनीतायां-ऋषभ देव ने विनीतानगरी में दीक्षा धारण की है (अरिट्ठणेमी बारवईए) अरिष्टनेमि द्वारावत्याम्-अरिष्टनेमि-भगवान ने द्वारवती में-दीक्षा धारण की है (अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमिसु) अवशेषाः तीर्थंकराः

सोयवहंति) असुरेन्द्र सुरेन्द्र नागेन्द्र शिबिकां वहन्ति-તે શિબિકાને અસુરેન્દ્ર સુરેન્દ્ર અને નાગેન્દ્ર ઉપાડે છે (सुरअसुरवंदियाण जिणिंदाण चलचवलकुंडलधरा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी) सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां चलचपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्वितामरणधारिणः-સુર અને અસુરોથી વંદિત તે જિનેશ્વરોની શિબિકાને ચલચપલ (હોલાયમાન) કુંડલધારી દેવો કે જે પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે વિકુર્વિત આભૂષણોને ધારણ કરતા હોય છે પૂર્વ તરફથી વહન કરીને આગળને આગળ ચાલે છે (नागा पुणो दाहिणम्मि पासम्मि) नागकुमारदेवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे-નાગકુમારદેવો દક્ષિણપાર્શ્વમાં, (पच्छिमेण असुरा) पश्चिमेन असुराः-અસુરકુમારદેવો પશ્ચિમ તરફથી (गरुला पुण उत्तरे पासे) गरुडाः पुनः उत्तरे पार्श्वे-અને ઉત્તર તરફથી સુપર્ણકુમાર નામના ભવનપતિ દેવો તે શિબિકાને ઉપાડે છે હવે સૂત્રકાર તીર્થંકરોનાં દીક્ષાસ્થાનનું વર્ણન કરે છે (उसभो य विणीयाए) ऋषभश्च विनीतायां-ઋષભદેવે વિનીતા નગરીમાં દીક્ષા લીધી હતી (अरिट्ठणेमी बारवईए) अरिष्टनेमिः द्वारावत्याम्-અરિષ્ટનેમિ ભગવાને દ્વારાવતીમાં દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमिसु) अवशेषास्तीर्थंकराः निष्क्रान्ता जन्मभूमिषु-બાકીના બાવીસ

निष्क्रान्ता जन्मभूमिसु–बाकी के बावीस २२ तीर्थंकरों ने अपने २ जन्मस्थान में दीक्षा धारण की है। अब सूत्रकार यह कहते हैं कि किस रीति से इन तीर्थंकरों ने दीक्षा धारण की हैं (सव्वे वि चउव्वीस जिणवरा एगदूसेण णिग्गया) सर्वेऽपि चतुर्विंशति जिनेन्द्रा एक दूष्येण निर्गताः–समस्त चौवीस तीर्थंकरोंने एक दूष्य वस्त्र धारण करके दीक्षा धारणकी है। (णय णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य) न च नाम अन्यलिङ्गे न च गृहिलिङ्गे कुलिङ्गे च इनतीर्थंकरोंने जो दीक्षा धारण की सो वे स्थविर कल्पित आदिरूप अन्यलिङ्ग में–दीक्षित नही हुए, न गृहस्थरूपलिङ्ग में दीक्षित हुए और न शाक्यादिरूप कुलिङ्ग में ही दीक्षित–हुए किन्तु तीर्थंकर रूप में ही दीक्षित हुए। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि कौन २ से तीर्थंकर कितने २ परिवार के साथ दीक्षित हुए है (एक्को भगवं वीरो)एकाकी भगवान वीरः–भगवान् महावीर ने एकाकी दीक्षा धारण की है (पासो मल्ली य तिहि तिहि सएहिं) पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभिः शतैः–तथा पार्श्वनाथ भगवान् और मल्लिनाथ भगवान ने तीन २ सौ परिवारों के साथ दीक्षा धारण की है। (भगवंपि वासुपूज्जो छहिं पुरिससएहिं णिक्खंतो)भगवान् वासुपूज्यो षड्भिः पुरुषशतैः निष्क्रान्तः–भग-

---

तीर्थंकरोએ પોતપોતાના જન્મસ્થાનોમા દીક્ષા લીધી હતી. હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે તીર્થંકરોએ કેવી રીતે દીક્ષા ધારણ કરી હતી (सव्वे वि चउव्वीसं जिणवरा एगदूसेण णिग्गया) सर्वेऽपि चतुर्विंशति जिनेन्द्रा एक दूष्येण निर्गताः-સમસ્ત તીર્થંકરોએ એક જ દૂષ્યવસ્ત્ર ધારણ કરીને દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (णयणामअण्णलिंगे णं य गिहिलिंगे कुलिंगे य) नचनाम अन्यलिङ्गे नच गृहलिङ्गे कुलिङ्गे च–તે તીર્થંકરોએ સ્થવિરકલ્પક આદિરૂપ અન્યલિંગમા દીક્ષા લીધી ન હતી. ગૃહસ્થરૂપલિંગમા પણ દીક્ષા લીધી ન હતી, શાક્યાદિરૂપ કુલિંગમા પણ દીક્ષા લીધી ન હતી પણ તીર્થંકરરૂપે જ દીક્ષિત થયા હતા. હવે સૂત્રકાર એ વાત બતાવે છે કે કયા કયા તીર્થંકર કેટલા કેટલા પરિવાર સહિત દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી. (एक्को भगवंवीरो) एकाकि भगवान् वीरः–ભગવાન મહાવીરે એકલા જ દીક્ષા લીધી હતી (पासो मल्लीय तिहि तिहि सएहिं)पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभिः शतैः–તથા પાર્શ્વનાથ ભગવાને અને મલ્લિનાથ ભગવાને ૩૦૦–૩૦૦ ત્રણસો–ત્રણસોના પરિવાર સહિત દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી (भगवं पि वासुपूज्जो छहिं पुरिससएहिं णिक्खंतो) भगवान् वासुपूज्यो षड्भिः पुरुषशतैः निष्क्रान्तः–ભગવાન વાસપૂજ્યે ૬૦૦ છસો પુરુષો સાથે

टीका–'जंबुद्दीवे ण' इत्यादि–जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतवर्षे अस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतितीर्थंकरा अभूवन्, तद्यथा—ऋषभः१, अजितः२ संभवः३, यान् वासुपूज्य ने छह सौ पुरुषों के साथ दीक्षा धारण की है। (उग्गाण भोगाण राइण्णाण य खत्तियाणं च चउहिं सहस्सेहिं उसभो) उग्राणां भोगानां राज्ञां च क्षत्रियाणां च चतुर्भिः सहस्रैः ऋषभः– उग्रवंश के भोगवंश के राजाओं और क्षत्रियों के चार ४ हजार परिवार के साथ ऋषभदेव ने दीक्षा धारण की है। (सेसाइ अट्ठसपरिवारा) शेषास्तु सहस्रपरिवारैः—तथा इनसे अवशिष्ट जो तीर्थंकर हैं उन्होंने एक एक १–१ हजार परिवार के साथ दीक्षा धारण की है। (सुमइत्थ णिच्चभत्तेण णिग्गओ) सुमतिरत्र नित्यभक्तेन निर्गतः–भगवान सुमतिनाथ ने बिना उपवास के ही जिनदीक्षा धारण की है। (वासुपूज्जचउत्थेणं) वासुपूज्य चतुर्थेन–वासुपूज्य भगवान् ने एक उपवास करके जिन दीक्षा धारण की है (पासो मल्ली य अट्ठमेण)पार्श्वो मल्लिश्चाष्टमेन–तथा पार्श्वनाथ भगवानने और मल्लिनाथ भगवान् दो उपवास करके (सेसाउ छट्ठेणं) शेषास्तु षष्ठेन–अवशिष्ट तीर्थंकरों ने छट्ठ की तपस्या करके जिनदीक्षा धारण की है॥सू० १९८॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवेणं' इत्यादि जंबूद्वीप नामक द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं। उनके नाम ये हैं–

दीक्षा अहण કરી હતી (उग्गाणं भोगाण राइण्णाणं य खत्तियाणं च चउहिं सहस्सेहिं उसभो) उग्राणां भोगानां राज्ञां च क्षत्रियाणां च चतुर्भिः सहस्रैः ऋषभः–ઉગ્રવંશના ભોગવંશના રાજાઓ અને ક્ષત્રિયોના ચાર હજારના પરિવાર સહિત ભગવાન ઋષભદેવે દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (सेसाइ सहस्स परिवारा) शेषास्तु सहस्रपरिवारैः–તે સિવાયના તીર્થંકરોએ એક એક હજાર પુરુષો સાથે દીક્ષા લીધી હતી (सुमइत्थणिच्चभत्तेण णिग्गओ) सुमतिरत्र नित्यभक्तेन निर्गतः–ભગવાન સુમતિનાથે ઉપવાસ કર્યા વિના જ દીક્ષા લીધી હતી (वासुपूज्ज चउत्थेणं) वासुपूज्यचतुर्थेन–ભગવાન વાસુપૂજ્યે એક ઉપવાસ કરીને દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (पासोमल्ली य अट्ठमेणं) पार्श्वो मल्लिश्चाष्टमेन–પાર્શ્વનાથ ભગવાને તથા મલ્લિનાથ ભગવાને અટ્ઠમ કરીને (सेसाउ छट्ठेणं) शेषास्तु षष्ठेन–બાકીના તીર્થંકરોએ છઠ્ઠની તપસ્યા કરીને જિનદીક્ષા ધારણ કરી હતી॥ સૂ. ૧૯૮॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवे दीवे' इत्यादि—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભરતવર્ષના આ અવસર્પિણી કાળમાં નીચે પ્રમાણે ૨૪ તીર્થંકરો થયા છે (१)

अभिनन्दनः४, सुमतिः५, पद्मप्रभः६, सुपार्श्वः७, चन्द्रप्रभः८, सुविधिः, तायै-वापरनामपुष्पदन्तः९, शीतलः१०, श्रेयांसः११, वासुपूज्यः१२, विमलः१३, अनन्तः१४, धर्मः१५, शान्तिः१६, कुन्थुः१७, अरः१८, मल्लिः१९, मुनिसु व्रतः२०, नमिः२१, नेमि२२, पार्श्व२३, वर्द्धमानश्च२४। एतेषां चतुर्विंशतेस्ती-र्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन, तद्यथा—प्रथमोऽत्र वज्र-नाभो१, विमलस्तथा२, विमलवाहनश्चैव३ । ततश्च धर्मसिंहः४, सुमित्रस्तथा५, धर्ममित्रश्च६॥११॥ सुन्दरबाहुस्तथा७, दीर्घबाहुः८, जुगबाहुः९, लष्टबाहुश्च१०। दत्तश्च११, इन्द्रदत्तः१२, सुन्दरो१३, माहेन्द्रश्चैव१४ ।१२॥ सिंहरथः१५, मेघ-रथः१६, रुक्मी१७ च सुदर्शनश्च बोद्धव्यः । ततश्च नन्दनः१९ खलु सिंहगिरि-श्चैव विंशतितमः ॥१३॥ अदीनशत्रु.२१ शंखः२२ सुदर्शनो२३ नन्दनश्च२४ बोद्धव्यः । अवसर्पिण्यामेते तीर्थंकराणा तु पूर्वभवाः ।१४।। एतेषा चतुर्विंशते-

---

ऋषभ१, अजित२, सभव३ अभिनंदन४, सुमति५, पद्मप्रभ६, सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८ सुविधि-पुष्पदन्त ९ शीतल १०, श्रेयास ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनत १४, धर्म १५, शान्ति १६, कुन्थु १७, अर १८, मल्लि १९ मुनि-सुव्रत २० नमि २१ नेमि २२ पार्श्व २३ और वर्धमान २४ । इन चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबधी नाम चौवीस थे। वे इस प्रकार से हैं–वज्र-नाभ१, विमल २, विमलवाहन ३ धर्मसिंह ४ सुमित्र ५, धर्ममित्र ६, सुंदरबाहु ७. दीर्घबाहु ८, जुगबाहु ९, लष्टबाहु १० दत्त ११, इन्द्रदत्त १२ सुन्दर १३ माहेन्द्र १४ सिंहरथ १५, मेघरथ १६ रुक्मी १७, सुदर्शन १८ नंदन१९, सिंहगिरि२० अदीनशत्रु२१, शंख २२, सुदर्शन २३, और नंदन२४। ये अवसर्पिणीकाल के तीर्थंकरों के पूर्वभव के नाम हैं। इन चतु

ऋषभ, (२) अजित, (३) सभव, (४) अभिनंदन, (५) सुमति, (६) पद्मप्रभ, (७) सुपार्श्व, (८) चन्द्रप्रभ, (९) सुविधि-पुष्पदन्त, (१०) शीतल, (११) श्रेयास, (१२) वासुपूज्य, (१३) विमल,(१४) अनत, (१५) धर्म (१६) शान्ति, (१७) कुन्थु, (१८) अर, (१९) मल्लिनाथ, (२०) मुनिसुव्रत, (२१) नमि, (२२) नेमि, (२३) पार्श्व, अने (२४)वर्धमान એ ૨૪ તીર્થંકરોના પૂર્વભવના નામો અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતાં— (૧) વજ્રનાભ, [૨] વિમલ, (૩) વિમલવાહન, (૪) ધર્મસિંહ, (૫) સુમિત્ર, [૬] ધર્મમિત્ર, (૭) સુંદરબાહુ,(૮) દીર્ઘબાહુ (૯) જુગણાહુ, (૧૦) લષ્ટબાહુ (૧૧) દત્ત (૧૨) ઇન્દ્રદત્ત,(૧૩)સુંદર, (૧૪) માહેન્દ્ર, (૧૫)સિંહરથ, (૧૬) મેઘરથ, (૧૭) રુકમી, (૧૮) સુદર્શન, (૧૯) નંદન, (૨૦) સિંહગિરિ, [૨૧] અદીનશત્રુ, (૨૨) શંખ, (૨૩) સુદર્શન અને (૨૪) નન્દન. અવસર્પિણી કાળના તીર્થંકરોના પૂર્વભવના નામ ઉપર

स्तीर्थकराणां पञ्चविंशतिः शिबिकाऽभवन्, तद्यथा-'सीया सुदंसणा' सुदर्शनाऽभया शिविका, तथा-सुप्रभा च सिद्धार्था सुप्रसिद्धा च। विजया च वैजयन्ती अपरा जिता चैव॥१५॥ अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा अग्निसप्रभा चैव। विमला च पञ्चवर्णा सागरदत्ता च नागदत्ता च॥१६॥ अभयकरा निर्वृतिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव। देवकुरा विशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिविका॥१७॥ 'एयाओ सीयाओ' एता शिविका सर्वेषामेवजिनवराणम्। सर्वजगद्वत्सलानां सर्वशत्रुक्षयकरा शुभया छायया=सर्वशत्रुशुभसपन्ना सच्छायाम् जिनवराणां शिविका भवन्तीति भावः। 'पुव्विं' पूर्वं 'रोमकूवेहिं माणुसेहिं' रोमकूपैः मानुषैः=सहर्षैः पुरुषैः 'साहटु' संहृत्य आनीत्य 'सीयाओ विणिम्मिया' शिबिकाः स्थापिताः। ततः परं 'सीयं' शिविकाम् 'असुरिंदनागिंदा' असुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्रा वहन्ति॥१९॥ सूत्र

तिसति तीर्थंकरों की २५ शिविकाएँ (पालखियां) थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं—सुदर्शना, १, सुप्रभा २, सिद्धार्था ३, सुप्रसिद्धा ४, विजया ५, वैजयन्ती ६ जयन्ति ७, अपराजिता ८, अरुणप्रभा ९, चन्द्रप्रभा १०, सूरप्रभा ११, अग्निसप्रभा १२, विमला १३, पञ्चवर्णा १४, सागरदत्ता १५, नागदत्ता १६, अभयकरा १७, निर्वृतिकरा १८, मनोरमा, १९, मनोहरा २०, देवकुरा २१, उत्तरकुरा २२ विशाला २३ और चन्द्र प्रभा २४। यहां 'सीया' शब्द शिविका अर्थका बोधक है। ये शिविकाएँ सर्वजगत के वत्सल जिनवरों की थीं। समस्त शत्रुओं के सुखों से ये पृथक् थीं। शुभ छाया से ये सदा अन्वित थीं। पहिले इन शिविकाओं को रोमकूप युक्त अर्थात् हर्ष से युक्त मनुष्य ला करके उपस्थित करते हैं—अर्थात सब से पहिले इन शिविकाओं को मनुष्य उठाते हैं बाद में इन शिविकाओं को असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र उठाते हैं। बाद में

પ્રભાવે છે તે ૨૪ તીર્થંકરોની ૨૪ શિબિકાઓ હતી તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) સુદર્શના (૨) સુપ્રભા (૩) સિદ્ધાર્થા, (૪) સુપ્રસિદ્ધા, (૫) વિજયા (૬) વૈજયન્તી (૭) જયન્તી, (૮) અપરાજિતા, (૯) અરુણપ્રભા (૧૦) ચન્દ્રપ્રભા (૧૧) સૂરપ્રભા (૧૨) અગ્નિસપ્રભા, (૧૩) વિમલા, (૧૪) પંચવર્ણા, (૧૫) સાગરદત્તા (૧૬) નાગદત્તા (૧૭) અભયકરા (૧૮) નિવૃત્તિકરા, (૧૯) મનોરમા (૨૦) મનોહરા (૨૧) દેવકુરા (૨૨) ઉત્તરકુરા (૨૩) વિશાલા અને (૨૪) ચન્દ્રપ્રભા અહીં "सीया" શબ્દનો અર્થ શિબિકા (પાલખી) થાય છે તે શિબિકાઓ બાળા જગતપર વાત્સલ્ય ભાવ ધારણકરનાર જિનવરોની હતી તે શિબિકાઓ સઘળી શત્રુઓનાં સુખથી પૃથક્ હતી તે શુભ છાયાથી યુક્ત હતી પ્રથમ રોમરૂપ હર્ષ-થી યુક્ત મનુષ્યો તે શિબિકાઓને ઉપાડે છે ત્યાર બાદ અસુરેન્દ્ર સુરેન્દ્ર અને નાગેન્દ્ર તે શિબિકાઓને ઉપાડે છે ત્યાર બાદ

चपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्विताभरणधारिणः-स्वेच्छानुसारविकुर्वितभूषणधारिणो देवाः सुरासुरवन्दिताना जिनेन्द्राणां शीविकां वहन्ति ॥२०॥ 'पुरओ' पुरतो देवा वहन्ति, 'नागापुणो दाहिणम्मि पासम्मि' नागकुमारा देवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे। 'पच्छिमेण असुरा' असुरकुमाराः पश्चिमे खलु वहन्ति। 'गरुलापुणउत्तरे पासे' पुनः उत्तरे पार्श्वे गरुडाः-सुपर्णकुमाराख्या भवनपतिदेवाः वहन्ति॥२१॥ अथ तीर्थकराणा दीक्षास्थानं वर्ण्यते-'उसभो य विणीयाए' ऋषभश्च विनीतायां नगर्यां निष्क्रान्तः, 'बारवईए अरिट्ठनेमी' अरिष्टनेमिर्भगवान् द्वारावत्याम्। 'अवसेसातित्थयरा' अवशेषास्तीर्थकराः 'निक्खंता जम्मभूमिसु' निष्क्रान्ता जन्मभूमिषु=अवशिष्टास्तीर्थकृतः स्व स्व जन्मस्थाने दीक्षां गृहीतवन्तइत्यर्थः॥२२॥ कया रीत्या निष्क्रान्ताइत्याह-'सव्वेवि' सर्वेऽपि चतुर्विंशतिर्जिनेन्द्रा 'एगदूसेण' एकदूष्येण-एकं वस्त्रमादाय 'निग्गया' निर्गताः-निष्क्रान्ताः दीक्षिता इत्यर्थः,

---

सुर और असुर से वंदित उन जिनेन्द्रों की शिविका को चलचपल कुंडल धारी देव कि जो अपनी इच्छानुसार विकुर्वित आभूषणों को धारण करनेवाले होते हैं पूर्व की तरफ आगे २ वहन करते है। अर्थात् आगे २ चलते है। दक्षिण पार्श्व में नागकुमार देव, पश्चिम पार्श्व में असुरकुमार, और उत्तर पार्श्व में सुपर्णकुमार नाम के भवनपतिदेव उस शिविका को वहन करते है-अब सूत्रकार तीर्थंकरों के दीक्षास्थान का वर्णन करते है-ऋषभदेव ने विनीता नगरी में दीक्षा धारण की है। अरिष्टनेमि भगवानने द्वारावती में दीक्षा धारण की हैं। बाकी के बाईस २२ तिर्थकरों ने अपने २ जन्मस्थान में दीक्षा धारण की हैं। अबसूत्रकार यह कहते हैं कि किस रीति से इन तीर्थकरोंने दीक्षा धारण की है। समस्त चौवीस तीर्थंकरों ने एक दूष्यवस्त्र धारण कर दीक्षा धारण की है। इन तीर्थकरोंने जो दीक्षा धारण की सो वे स्थवि-

---

પોતાની ઇચ્છ નુસાર વિકુર્વિત આભૂષણોને ધારણ કરનાર, ચલચપલ કુંડલધારી દેવો; સુર અને અસુરો દ્વારા વદાતા એવા તે જિનેન્દ્રોની શિબિકાઓને પૂર્વની તરફથી વહન કરે છે, દક્ષિણ તરફથી નાગકુમાર દેવો, પશ્ચિમ તરફથી અસુરકુમાર દેવો અને ઉત્તર તરફથી સુપર્ણકુમાર નામના ભવનપતિ દેવો તે શિબિકાઓને વહન કરે છે હવે સૂત્રકાર તીર્થંકરોના દીક્ષાસ્થાનોનું વર્ણન કરે છે- ઋષભદેવે વિનીતા નગરીમા, અને અરિષ્ટનેમિ ભગવાને દ્વારાવતી નગરીમા દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી બાકીના બાવીસ તીર્થંકરોએ પોતપોતાના જન્મસ્થાનોમાં દીક્ષા લીધી હતી. હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે તીર્થંકરોએ કેવી રીતે દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી-સમસ્ત ચોવીસે ચોવીસ-તીર્થંકરોએ એક એક દૂષ્ય વસ્ત્ર ધારણ કરીને દીક્ષા ગ્રહણ કરી

न च नाह–नाम इति निश्चय, अन्नलिंगे' न च दव्वलिंगे=स्थविरकल्पिकादिरूपे, 'न य गिहिलिंगे' न च गृहिलिङ्गे=गृहस्थरूपे तथा–न च कुलिंगे=शाक्यादिरूपे निष्क्रान्ताः। किन्तु तीर्थङ्करूपेणैव निष्क्रान्ताः ॥२३॥ कस्तीर्थङ्कर कियद्भिः परिवारैः सह निष्क्रान्त इत्याह–'एको भगवं वीरो' भगवान् महावीर एकाकी निष्क्रान्त। तथा–पासोमल्लीय तिहिं तिहिं सएहिं' पार्श्वोमल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभिः शतैः परिवारैः सह निष्क्रान्त। भगवं पि वासुपुज्जो' वासुपूज्यो भगवान् 'छहिं पुरिससएहिं छट्ठेण भत्तेणं सह निक्खन्तो ॥२४॥ तथा–'छण्णाण मोगाण राइण्णाण च खत्तियाण च 'चउहिं सहस्सेहिं' चतुर्भिः सहस्रैः सह 'उसभो' ऋषभो निष्क्रान्तः। 'सेसाओ सहस्सपरिवारा' शेषास्तु तीर्थङ्करा सहस्रपरिवारैः सह निष्क्रान्ता इत्यर्थः ॥२५॥ 'सुमइस्स णिक्खमणेणं णिग्गओ' सुमतिरभिनिष्क्रमणेन निर्गत=भगवान् सुमतिनाथोऽनुपोप

कल्पिक आदिरूप अन्यलिङ्ग में दीक्षित नहीं हुए, न गृहस्थरूपलिङ्ग में दीक्षित हुए और न शाक्यादिरूप कुलिङ्ग में ही दीक्षित हुए किन्तु तीर्थंकररूप में ही दीक्षित हुए। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं–कि कौन २ से तीर्थंकर कितने २ परिवार के साथ दीक्षित हुए हैं–भगवान् महावीर ने एकाकी दीक्षा धारण की है। तथा पार्श्वनाथ भगवान् और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन २ सौ परिवारों के साथ दीक्षा धारण की है। भगवान वासुपूज्य ने छह सौ पुरुषों के साथ दीक्षा धारण की है। उग्रवंश के भोगवंश के राजाओं और क्षत्रियों के ४ हजार परिवार के साथ ऋषभदेवने दीक्षा धारण की है। तथा इनसे अवशिष्ट जो तीर्थंकर हैं उन्होंने एक एक हजार परिवार के साथ धारण की है। भगवान् सुमतिनाथ ने बिना उपवास के ही जिन दीक्षा धारण की है। तथा–पार्श्वनाथ

હતી. તે વીસ કરોડ સ્થવિર કલ્પિક આદિરૂપ અન્યલિંગમાં દીક્ષા લીધી ન હતી ગૃહસ્થરૂપ લિંગમાં પણ તેઓ દીક્ષિત થયા ન હતા અને શાક્યાદિરૂપ કુલિંગમાં પણ તેઓ દીક્ષિત થયા ન હતા પણ તેઓ તીર્થંકરરૂપે જ દીક્ષિત થયા હતા અને સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે કયા તીર્થંકરે કેટલા પરિવાર સહિત દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી–શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે એકાકી (કોઈ પણ પરિવાર વિના) દીક્ષા ધારણ કરી હતી પાર્શ્વનાથ ભગવાને તથા મલ્લિનાથ ભગવાને ૩૦૦ ત્રણસો સાથે દીક્ષા લીધી હતી ભગવાન વાસુપૂજ્યે ૬ છસો પુરુષો સહિત દીક્ષા લીધી હતી ઉગ્રવંશ અને ભોગવંશના રાજા ઓમાં અને ક્ષત્રિયોના પરિવાર સાથે ભગવાન ઋષભદેવે ૪ ચાર હજાર સાથે દીક્ષા લીધી હતી તથા આમના સિવાય જે બીજા તીર્થંકરો હતા તેઓએ પોતપોતાના પરિવાર સહિત દીક્ષા લીધી હતી–ભગવાન સુમતીનાથે ઉપવાસ કર્યા વિના જ દીક્ષા ધારણ કરી હતી વાસુપૂજ્ય

वासएव निष्क्रान्त इत्यर्थः। 'वासुपुज्जचउत्थेणं' वासुपूज्यश्चतुर्थेन=वासुपूज्यो भगवानेकमुपवासं कृत्वा दीक्षितः। 'पासोमल्लीय अट्ठमेण' पार्श्वो मल्लिश्चाष्टमेन, 'सेसा उ छट्ठेणं'शेषास्तु षष्ठेन=अवशिष्टास्तीर्थङ्कराः षष्ठं कृत्वा निष्क्रान्ताः।सू.१९८।

मूलम्—एएसिं णं चउवीसाए तीत्थगराणं चउवीसं पढमभिक्खा दायारो होत्था, तं जहा--सिज्जंस बंभदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य। पउमे य सोमदेवे माहिंदे तह सोमदत्ते य॥२७॥ पुस्से पुणव्वसू पुण्णणंदे सुणंदे जए य विजए य। तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह वग्गसीहे य॥२८॥ अपराजिय विस्ससेणे वीसइमे होइ उसभसेणे य। दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य अणुपुव्वीए ॥२९॥ एए विसुद्धलेसा जिणवरभत्तीए अंजलिउडा उ। तं कालं तं समयं पडिलाभेइ जिणवरिंदे॥३०॥ संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोयणाहेण। सेसेहि बीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ ॥३१॥ उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स। सेसाणं परमण्णं अमियरसरसोवमं आसि ॥३२॥ सव्वेसिं जिणाणं जहियं लद्धाउ पढमभिक्खाउ। तहियं वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ३३ ॥सू० १९९॥

भगवान् ने और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन उपवास अट्ठम कर के और अवशिष्ट तीर्थंकरों ने छट्ठ की तपस्या करके जिनदीक्षा धारण की है॥सू० १९८॥

शब्दार्थ—(एएसिणं चउवीसाए तित्थगराणं)एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां इन चौवीस तीर्थंकरों के लिये (पढमभिक्खा दायारो चउवीसं होत्था) प्रथम भिक्षादातारः चतुर्विंशतिः आसन्-सब से पहिले

ભગવાને દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી પાર્શ્વનાથ તથા મલ્લિનાથ ભગવાને ત્રણ ઉપવાસ કરીને અને બાકીના તીર્થંકરોએ બે ઉપવાસ-છઠ્ઠ-ની તપસ્યા કરીને દીક્ષા ધારણ કરી હતી ॥ સૂ૦ ૧૯૮॥

શબ્દાર્થ—(एए सिणं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां-ને ચોવીસ તીર્થંકરોને (पढमभिक्खा दायारो चउवीसं होत्था) प्रथमभिक्षादातारः चतुर्विंशतिः अभूवन्-સૌથી પહેલા ભિક्षा

भिक्षा देने वाले चौबीस २४ हुए हैं (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं (सिज्जंसबंभदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य, पउमेय सोमदेवे माहिंदे तह सोमदत्ते य) श्रेयांसो ब्रह्मदत्तः सुरेन्द्रदत्तश्च, इन्द्रदत्तश्च, पद्मश्च सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च-श्रेयांस १ ब्रह्मदत्त २, सुरेन्द्रदत्त ३, इन्द्रदत्त ४ पद्म ५, सोमदेव ६, माहेन्द्र ७ सोमदत्त ८, (पुस्से, पुणव्वसू पुण्णनंदे सुणंदे जए य विजए य, तत्तो य धम्मसीहे सुमित्ते तह वग्गसीहे य) पुष्य पुनर्वसुश्च पूर्णानन्द सुनन्दो जयश्च विजयश्च, ततश्च धर्मसिंहः सुमित्रस्तथा वर्गसिंहश्च-पुष्य ९, पुनर्वसु १०, पूर्णानन्द ११, सुनन्द १२, जय १३ विजय १४, धर्मसिंह १५ सुमित्र १६ वर्गसिंह १७, (अपराजिय विस्ससेणे बीसइमे होइ उसभसेणे दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य आणुपुव्वीए) अपराजितो विश्वसेनो विंशतितमो भवति ऋषभसेनश्च, दत्तो वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या—अपराजित १८, विश्वसेन १९ तथा बीसवें ऋषभसेन २० दत्त २१ वरदत्त २२ धन २३ और बहुल २४। ये क्रमशः २४ प्रथम भिक्षा दाता हैं। (एए) एते-इन २४ प्रथम भिक्षा दाता जनोंने(जिणभत्तीए) जिनभक्त्या-प्रभु भक्ति के वश से (विसुद्ध छेसा) विशुद्ध लेश्या युक्त होकर (पंजलिउडा) प्राञ्जलिपुटाः-और दोनों हाथ

દેનારા જે ચોવીસ ભિક્ષાદાતાઓ હતા (तंजहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે- (सिज्जंसबंभदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य पउमे य सोमदेवे माहिंदे तह सोमदत्ते य) श्रेयांसो ब्रह्मदत्तः सुरेन्द्रदत्तश्च इन्द्रदत्तश्च पद्मश्च सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च-( ) શ્રેયાંસ, (१) બ્રહ્મદત્ત, (२) સુરેન્દ્રદત્ત, (३) ઇન્દ્રદત્ત (४) પદ્મ (५) સોમદેવ [६] માહેન્દ્ર (७) સોમદત્ત (पुस्से, पुणव्वसू पुण्णनंदे जए य विजए य तत्तो य सुणंदे धम्मसीहे सुमित्ते तह वग्गसीहे य) पुष्य, पुनर्वसुश्च पूर्णानन्दः सुनन्दो जयश्च विजयश्च ततश्च धर्मसिंहः सुमित्रस्तथा वर्गसिंहश्च-(८) પુષ્ય (९) પુનર્વસુ [१०] પૂર્ણાનન્દ (११) સુનન્દ (१२) જય (१३) વિજય (१४) ધર્મસિંહ (१५) સુમિત્ર (१६) વર્ગસિંહ (अपराजिय विस्ससेणे बीसइमे होइ उसभसेणे दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य आणुपुव्वीए) अपराजितो विश्वसेनो विंशतितमो भवति ऋषभसेनश्च दत्तो वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या (१७) અપરાજિત (१८) વિશ્વસેન (१९) ઋષભસેન (२०) દત્ત (२१) વરદત્ત (२२) ધન (२३) અને (२४) બહુલ ઉપર પ્રમાણે ક્રમથી ૨૪ પ્રથમ ભિક્ષાદાતાઓ હતા. (एए) एते-તે ચોવીસ ભિક્ષાદાતાઓએ (जिणभत्तीए) जिनभक्त्या-પ્રભુભક્તિની અનન્ય ભક્તિથી કરીને (विसुद्धछेसा) विशुद्धलेश्या-વિશુદ્ધ લેશ્યાથી યુક્ત થઈને (पंजलिउडा) प्राञ्जलिपुटाः-બન્ને હાથ જોડીને (त्र ज्यार्ट तं

जोडकर (तं कालं त समयं) तस्मिन् काले तस्मिन समये–उसकाल मे और उससमय में (जिणवरिंदे पडिलाभेइ) जिनवरेन्द्रान् प्रतिलम्भयति–जिनेन्द्रों को आहारदान दिया था। (संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोयणाहेण) संवत्सरेण भिक्षालब्धा ऋषभेण लोकनाथेन–लोक के नाथ ऋषभनाथ भगवान् ने एक वर्ष में प्रथम भिक्षा प्राप्त की है (सेसेहि बीय दिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ) शेषैर्द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथमभिक्षा बाकी के तेवीस २३ तीर्थकरों ने दूसरे दिन भिक्षा प्राप्त की हैं। (उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स)ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षु रस आसीत् लोकनाथस्य—लोकनाथ ऋषभदेव की प्रथम भिक्षा इक्षु रसकी थी (सेसाणं परमण्णं अमिय रस रसोवमं आसि) शेषाणां परमान्नं अमृतरसरसोपमं आसीत्–तेवीस तीर्थकरों की प्रथम भिक्षा अमृतरसके समान खीर की थी।(सव्वेसिं जिणाण जहिय लद्धा उ पढमभिक्खाउ तहियंवसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ) सर्वैरपि जिनैर्यत्रलब्धाः प्रथमभिक्षाः–तत्र वसुधाराः शरीरमात्राः वृष्टा–समस्त तीर्थकरों ने जहां २ प्रथमभिक्षा ग्रहण की, वहां २ शरीर प्रमाण द्रव्य की वर्षा हुई है॥सू०१९९॥

समयं)तस्मिन् काले तस्मिन् समये–તે કાળે અને તે સમયે (जिणवरिंदे पडिलाभेइ) जिनवरेन्द्रान् प्रतिलम्भयति જિનેન્દ્રોને આહારદાન દીધું હતું (संवच्छरेण भिक्खालद्धा उसभेण लोयणाहेण) सवत्सरेण भिक्षा लब्धा ऋषभेण लोकनाथेन–લોકના નાથ ભગવાન ઋષભદેવે એક વર્ષે પહેલી ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરી હતી (सेसेहिं वीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ) शेषैर्द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथम भिक्षाः–બાકીના તીર્થંકરે એ બીજે દિવસે જ પ્રથમ ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરી હતી. (उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स)ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुरस आसीत्–लोकनाथस्य–લોકનાથ ઋષભદેવને પ્રથમ ભિક્ષા ઇક્ષુરસ (શેરડીનો રસ) ની મળી હતી (सेसाणं परमण्णं अमियरसरसोवमं आसि) शेषाणां परमान्नं अमृतरस रसोपमं आसीत्–બાકીના તેવીસ તીર્થંકરોને પ્રથમ ભિક્ષામા અમૃતરસ જેવી ખીર મળી હતી (सव्वेसिं जिणाणं जहियं लद्धाउ पढम भिक्खाउ, तहिय वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ) सर्वैरपि जिनैर्यत्रलब्धाः प्रथमभिक्षाः तत्र वसुधाराः शरीरमात्राः वृष्टा–સમસ્ત તીર્થંકરોએ જ્યા જ્યા પહેલી ભિક્ષા ગ્રહણ કરી, ત્યા ત્યાં શરીરપ્રમાણ દ્રવ્યની વૃષ્ટિ થઈ હતી ॥ સૂ ૧૯૯ ॥

टीका-'एएसि णं' इत्यादि-एतेषां खलु चतुर्विंशतस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिः 'पढमभिक्खादायारो' प्रथमभिक्षादातारः 'होत्था' अभूवन्, तद्यथा-श्रेयांसो ब्रह्मदत्त सुरेन्द्रदत्तश्च इन्द्रदत्तश्च । पद्मश्च सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च॥२७॥ पुष्प पुनर्वसुश्च पूर्णानन्द सुनन्दो जयश्च विजयश्च । तत्रश्च धर्मसिंह सुमित्र स्तथा वर्गसिंहश्च॥२८॥ अपराजिता विश्वसेना विंशतितमो भवति ऋषभसेनश्च । दत्तो वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या ॥२९॥ 'एए' एते उपरि निर्दिष्टाभवुरि अस्मिन्नः 'जिणभत्तीए' जिनभक्तिवशाद् 'विसुद्धलेसा' विशुद्ध लेश्याः-विशुद्धलेश्यावन्तः 'पंजलिउडा' प्राञ्जलिपुटाः-कृताञ्जलय 'तं काल तं समयं' तस्मिन् काले तस्मिन् समय 'पडिलाभई जिणवरिंदे' प्रतिलम्भयति जिनवरेन्द्रान् । ३ ॥ सवत्सरेण भिक्षा लब्धा ऋषभेण लोकनाथेन। शेषैर्विंशति

टीकार्थ—'एएसि णं चउवीसाए' इत्यादि—इन चौबीस तीर्थंकरों के लिये सब से पहिले भिक्षा देनेवाले चौबीस २४ हुए हैं उनके नाम ये हैं-श्रेयांस १, ब्रह्मदत्त २, सुरेन्द्रदत्त ३, इन्द्रदत्त ४, पद्म, ५, सोम देव ६, माहेन्द्र ७ सोमदत्त ८, पुष्प ९, पुनर्वसु १०, पूर्णानंद ११, सुनन्द १२, जय १३, विजय १४, धर्मसिंह १५ सुमित्र १६ वर्गसिंह १७ अपराजित १८ विश्वसेन १९ तथा २० वें ऋषभसेन, दत्त २१ वरदत्त २२ धन २३ और बहुल २४। ये क्रमशः २४ प्रथम भिक्षा दाता हैं। इन २४ प्रथम भिक्षादाता जनोंने प्रभुभक्ति के वश से विशुद्ध लेश्या युक्त होकर और दोनों हाथ जोडकर उसकाल में और उस समय में जिनेन्द्रों को आहार दान दिया था। लोक के नाथ ऋषभनाथ भगवान ने एक वर्ष में प्रथमभिक्षा पाई है। लोकनाथ ऋषभदेव की प्रथमभिक्षा

ટીકાર્થ—'एएसिणं चउवीसाए' इत्यादि—તે ચોવીસ તીર્થંકરોને સૌથી પહેલી ભિક્ષા આપનાર ૨૪ ચોવીસ ભિક્ષુદાતાઓના નામ આ પ્રમાણે છે- (૧) શ્રેયાંસ (૨) બ્રહ્મદત્ત, (૩) સુરેન્દ્રદત્ત (૪) ઇન્દ્રદત્ત, (૫) પદ્મ, (૬) સોમદેવ (૭) માહેન્દ્ર, (૮) સોમદત્ત (૯) પુષ્પ, (૧૦) પુનર્વસુ, (૧૧) પૂર્ણાનંદ, (૧૨) સુનંદ (૧૩) જય (૧૪) વિજય (૧૫) ધર્મસિંહ, (૧૬) સુમિત્ર, (૧૭) વર્ગસિંહ (૧૮) અપરાજિત (૧૯) વિશ્વસેન (૨૦) ઋષભસેન, (૨૧) દત્ત, (૨૨) વરદત્ત, (૨૩) ધન અને (૨૪) બહુલ. એ પ્રમાણે અનુક્રમે ૨૪ તીર્થંકરોના ૨૪ ભિક્ષુદાતાઓ થયા છે. તે ૨૪ પ્રથમ ભિક્ષાદાતાઓએ પ્રભુભક્તિથી પ્રેરાઈને વિશુદ્ધ લેશ્યાયુક્ત થઈને અને બન્ને હાથ જોડીને, તે કાળે અને તે સમયે જિનેન્દ્રદેવોને આહારદાન દીધું હતું લોકનાથ ઋષભદેવે પ્રથમ ભિક્ષા જેટલા વર્ષે પ્રાપ્ત કરી હતી

दिवसे लब्धाः प्रथमभिक्षाः ॥३१॥ ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुरस आसीत् लोकनाथस्य । शेषाणां तीर्थकराणा 'परमण्णं' परमान्नम्=पायसम् 'अमियरसरसोवमं' अमृतरसरसोपमम्=अमृतरसतुल्यं प्रथमा भिक्षा आसीत् ॥३२॥ सर्वैरपि जिनैर्यत लब्धाः पथमभिक्षाः । तत्र वसुधाराः वृष्टा शरीरमात्राः ॥३३॥ सू १९९॥

मूलम्—एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था, तं जहा—णग्गोह सत्तिवण्णे साले पियए पियंगु छत्ताहे । सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलंक्खु रुक्खे य ॥३४॥ तिंदुक पाडल जंबू आसत्थे खलु तहेव दहिवण्णे । णंदीरुक्खे तिलए अंबयरुक्खे असोगे य ॥३५॥ चंपय वउले य तहा वेडसरुक्खे य धायईरुक्खे । साले य वड्ढमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराणं॥३६॥ वत्तीसं धणुयाइं चेइयरुक्खो य वद्धमाणस्स । णिच्चोउगो असोगो ओच्छण्णो सालरुक्खेणं॥३७॥ तिण्णेव गाउआइं चेइयरुक्खो जिणस्स उसभस्स । सेसाणं पुण रुक्खा सरीरओ वारसगुणा उ ॥३८॥ सछत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया । सुरअसुर गरुल महिया चेइयरुक्खा जिणवराणं ॥३९॥सू० २००॥

इक्षुरस की थी ! और २३ तीर्थंकरों की प्रथमभिक्षा अमृतरस के समान खीर की थी । समस्त तीर्थंकरों ने जहां २ प्रथमभिक्षा ग्रहण की, वहां २ शरीर प्रमाण द्रव्य की वर्षा हुई है ॥सू० १९९॥

शब्दार्थ—(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्–चौवीस तीर्थ-

---

અને બાકીના ૨૩ તીર્થંકરોએ બીજે દિવસે જ પ્રથમ ભિક્ષા મેળવી હતી. લોકનાથ ઋષભદેવને પહેલી ભીક્ષામાં ઇક્ષુરસ મળ્યો હતો, અને બાકીના ૨૩ તીર્થંકરોને પહેલી ભિક્ષામા અમૃતરસ સમાન ખીર મળી હતી સમસ્ત તીર્થંકરોએ જે જે સ્થાને પહેલી ભિક્ષા ગ્રહણ કરી, તે તે સ્થાને શરીર પ્રમાણ દ્રવ્યનો વરસાદ થયો હતો, ॥સૂ. ૧૯૯॥

શબ્દાર્થ–(एए सिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्—

करोक चौवीस चैत्यवृक्ष-ये जिनके नीचे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ व वृक्ष (तजहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं (णग्गोह सत्तिवण्णे साले पियए पियंगु छत्ताहे सिरिसे य णागरुक्खे मोली य पिलक्खुरुक्खे य) न्यग्रोध सप्तपर्ण शालः प्रियक प्रियङ्गु छत्राम शिरीषश्च नागवृक्षः मालीच पिलङ्खुवृक्षश्च-न्यग्रोध, सप्तपर्ण, शाल, प्रियक, प्रियङ्गु, छत्राभ, शिरीष, नागवृक्ष, मालो, पिलंखुवृक्ष, (तिंदुकपाडल जंबू आसत्थे खलु तहेव दधिवण्णे,णंदीरुक्खे तिलए अयपरुक्खे असोगे य) तिन्दुक पाटलो जम्बूरश्वत्थः खलु तथैव दधिपर्ण नन्दीवृक्षस्तिलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च तिन्दुक, पाटल, जम्बू अश्वत्थ, दधिपर्ण, नंदीवृक्ष, तिलक, आम्रवृक्ष अशोक, (धवए बउले य तहा वेडसरुक्खे य पाईयरुक्खे, साले य वद्धमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराणं) धवको बकुलश्च तथा वेतसवृक्षो धातकी वृक्षश्च,सालश्च वर्द्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्-धवक, बकुल, वेतसवृक्ष धातकीवृक्ष और वर्द्धमान भगवान का सालवृक्ष ये जिनवरों के चैत्यवृक्ष हैं। (वत्तीस धणुयाइं चेइयरुक्खो य वद्धमाणस्स) द्वात्रिंशद् धनूंषि चैत्यवृक्षश्च वर्द्धमानस्य-वर्द्धमान भगवान का चैत्यवृक्ष बत्तीस ३२ धनुष ऊंचा था। (णिग्गोहतरू असोगो सोत्तिवण्णो सालरुक्खेण)

ते ओगीश वीर्थंकरोना ओगीश चैत्यवृक्ष हता ने वृक्षनां नामो नीचे प्रमाणे छे- ते वृक्षने चैत्यवृक्ष कहे छे (त जहा) तद्यथा-तेमना नाम आ प्रमाणे छे- (णग्गोहसत्तिवण्णे साल पियए पियंगु छत्ताहे सिरिसे य णागरुक्खे मोली य पिलखु रुक्खे य)न्यग्रोध सप्तपर्ण शालः प्रियक प्रियङ्गु छत्राभ शिरीषश्च नागवृक्षः मालो च पिलङ्खुवृक्षश्च-न्यग्रोध, सप्तपर्ण, शाल प्रियक, प्रियङ्गु छत्राभ शिरीष, नागवृक्ष, मालो, पिलङ्खुवृक्ष,(तिंदुक पाडलजंबू आसत्थे खलु तहेव दधिवण्णे णंदीरुक्खे तिलए अयपरुक्खे असोगे य)तिन्दुक, पाटलो जम्बू अश्वत्थ खलु तथैव दधिपर्ण, नन्दीवृक्षस्तिलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च— तिंदुक पाटल जम्बू अश्वत्थ दधिपर्ण, नंदीवृक्ष, तिलक, आम्रवृक्ष, अशोक (धवए बउले य तहा वेडसरुक्खे य पाईयरुक्खे, साले य वद्धमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराणं) धवकोबकुलश्च तथा वेतसवृक्षो धातकीवृक्षश्च, सालश्च वर्द्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्—धव, बकुल वेतसवृक्ष, धातकी वृक्ष अने वर्धमान भगवाननु सालवृक्ष जिनवरोनां ते चैत्यवृक्षो हता (वत्तीस धणुयाइं चेइयरुक्खो य वद्धमाणस्स) द्वात्रिंशद् धनूंषि चैत्यवृक्षश्च वर्द्धमानस्य—वर्धमान भगवाननु चैत्यवृक्ष बत्रीश (३२) धनुषप्रमाण ऊंचु हतु (णिग्गोहतरू असोगो सोत्तिवण्णो सालरुक्खेण) निग्रोधवृक्षोऽशोकोऽवस्थिन्नः

टीका—'एएसिं' इत्यादि–एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्, तद्यथा–न्यग्रोधः सप्तपर्णः शालः प्रियकः प्रियङ्गुः छत्राभः । शिरीषश्च नागवृक्षः मालीं च पिलङ्क्षुवृक्षश्च ।३४॥ तिन्दुकः पाटलो जम्बुरश्वत्थः खलु तथैव

नित्यर्तुकोऽशोकोऽवच्छिन्नः सालवृक्षैः–समस्त ऋतुओं से वह युक्त था। शोकउपद्रव आदि से वह रहित था, तथा सालवृक्षों से वह घिरा हुआ था (तिण्णेव गाउयाइं चेइयरुक्खो जिणस्स उसभस्स) त्रीण्येव गव्यूतानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य–ऋषभनाथ भगवान् का चैत्य वृक्ष तीनकोश को ऊँचा था। (सेसाणं पुणरुक्खा सरीरओ बारस गुणाउ) शेषाणां पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादश गुणास्तु–अवशिष्ट तीर्थंकरों के चैत्यवृक्ष उनकी शरीर की ऊँचाई से बारह गुणी ऊँचाईवाले थे। (सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया)सच्छत्राः सपताका सवेदिकास्तोरणोपपेताः–ये सब चैत्यवृक्ष छत्र सहित थे पताका सहितथे, वेदिकासहित थे, और तोरण सहित थे। (सुर असुर गरुल महिया चइयरुक्खा जिणवराणं) सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्–सुर, असुर और गरुल–सुपर्णकुमारों से ये सब जिनेन्द्रों के चैत्यवृक्ष सेवितथे ॥सू० २००॥

टीका—'एएसिचउव्वीसाए' इत्यादि इन चौवीस तीर्थंकरों के चौवीस चैत्यवृक्ष थे। उनके नाम ये हैं–न्यग्रोध १, सप्तवर्ण २, शाल ३, प्रियक ४, प्रियंगु ५, छत्राभ ६, शिरीष ७, नागवृक्ष ८ माली ९, पिलङ्क्षुवृक्ष १०

सालवृक्षैः–તે સમસ્ત ઋતુઓથી યુકત હતુ, શોક–ઉપદ્રવ આદિથી રહિત હતું અને સાલવૃક્ષોથી ઘેરાયેલુ હતું (तिण्णेव गाउयाइं चेइयरुक्खो जिणस्स उसभस्स) त्रीण्येवगव्यूतानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य–ઋષભદેવ ભગવાનનુ ચૈત્યવૃક્ષ ત્રણ કોશ ઊચુ હતુ (सेसाणं पुणरुक्खा सरीरओ बारसगुणाउ) शेषाणं पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादशगुणास्तु–બાકીના તીર્થંકરોના ચૈત્યવૃક્ષો તેમના શરીરની ઊચાઈ કરતા બાર ગણી ઊચાઇવાળા હતા (सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया) सच्छत्राः सपताका सवेदिकास्तोरणैरुपपेताः–તે બધા ચૈત્યવૃક્ષો છત્ર, પતાકા, વેદિકા અને તોરણોથી યુકત હતા. (सुरअसुर गरुलमहिया चेइयरुक्खा जिणवराण) सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्–તે બધા ચૈત્યવૃક્ષો સુર, અસુર, અને સુપર્ણકુમારો દ્વારા સેવાતાં હતાં ॥સૂ.૨૦૦॥

ટીકાર્થ—'एएसिं चउव्वीसाए' इत्यादि–તે ચોવીસ તીર્થંકરોનાં ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો હતા. તે ચૈત્યવૃક્ષોનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(૧), ન્યગ્રોધ, (૨) સપ્તવર્ણ, (૩) શાલ, (૪) પ્રિયક, (૫) પ્રિયગુ, (૬) છત્રાભ, (૭) શિરીષ, (૮)

दधिपर्णः । नन्दीवृक्षतिलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च ॥३५॥ चम्पकश्चूतश्च तथा बकुलश्च वेतसवृक्षो धातकीवृक्षश्च । साल्मलिश्च वर्द्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम् ॥३६॥ द्वात्रिंशद् धनूंषि चैत्यवृक्षश्च पद्मानन्दस्य । नित्यर्तुकाऽऽकाऽजस्रपुष्पसमृद्धो ॥३७॥ कोऽप्यत्र गव्यूतानि चैत्यवृक्षा जिनस्य ऋषभस्य । शेषाणां पुनर्वृक्षाः स्वकीयदेहोच्चतोद्वादशगुणाम्तु ॥३८॥ सच्छत्रा सपताका सवेदिकातोरणैरुपेता । सुरासुरगरुडमहितास्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम् ॥३९॥ सू २० ॥

मूलम्—एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीस पढमसीसा होत्था, त जहा—पढमेत्थ उसभसेणे बीइए पुण होइ सीहसेणे य । चारु य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विदब्भे ॥४०॥ दिण्णे य वराहे

सिद्धार्थ ११ पाटल १२, जम्बू १३, अश्वत्थ १४ दधिपर्ण १५, नंदीवृक्ष १६, तिलक १७, आम्रवृक्ष १८, अशोक १९ चम्पक २० बकुल २१, वेतस वृक्ष २२, धातकीवृक्ष २३, और वर्द्धमान भगवान् का सालवृक्ष २४। ये जिनवरों के चैत्यवृक्ष हैं। वर्द्धमान भगवान का चैत्यवृक्ष ३२ धनुष ऊंचा था। समस्त ऋतुओं से वह युक्त था। शोक-उष्ट्रवृक्ष आदि से वह रहित था तथा सालवृक्षों से वह घिरा हुआ था। ऋषभनाथ भगवान का चैत्यवृक्ष तीन कोश का ऊंचा था। तथा अवशिष्ट तीर्थंकरों के चैत्यवृक्ष उनकी शरीर की ऊँचाई से बारह गुणी ऊँचाईवाले थे ये सब वृक्ष छत्र सहित थे, पताका सहित थे वेदिका सहित थे और तोरण सहित थे। सुर असुर और गरुड-सुपर्णकुमारों से ये सब जिनेन्द्रों के चैत्यवृक्ष सेवित थे ॥सू० २०॥

नागवृक्ष (९) धाडी, (१०) पिलक्षुवृक्ष,(११) वि दृ० (१२) पटल (१३) जम्बू (१४) अश्वत्थ, (१५) दधिपर्ण, (१६) नंदीवृक्ष, (१७) तिलक, (१८) आम्रवृक्ष (१९) अशोक (२०) चम्पक (२१) बकुल (२२) वेतसवृक्ष (२३) धातकीवृक्ष अने (२४) वर्द्धमान भगवानનુ સાલવૃક્ષ આ પ્રકારે જિનવરોનાં ચૈત્યવૃક્ષોનાં નામ હતાં વર્દ્ધમાન ભગવાનનુ ચૈત્યવૃક્ષ બત્રીસ ધનુષપ્રમાણ ઊંચુ હતુ તે બધી ઋતુઓ થી યુક્ત હતુ તે શોક-ઉષ્ટ્ર વૃક્ષાદિથી રહિત હતુ તથા સાલવૃક્ષોથી ઘેરાયેલુ હતુ ઋષભનાથ ભગવાનનુ ચૈત્યવૃક્ષ ત્રણ કોશ ઊંચુ હતુ બાકીના તીર્થંકરોના ચૈત્યવૃક્ષો તેમના શરીરથી બારગણા વધારે ઊંચાઈના હતાં તે બધાં ચૈત્યવૃક્ષો છત્ર પતાકા વેદિકા અને તોરણથી યુક્ત હતાં તે બધાયે જિનેશ્વરોના ચૈત્યવૃક્ષો સુર અસુર અને ગરુડસુપર્ણકુમારો દ્વારા સેવિત હતા ॥સૂ ૨૦ ॥

पुण आणंदे गोथुभे सुहम्मे य। मंदर जसे अरिट्ठे चक्काह सयंकु कुंभे य ॥४१॥ इंदकुभे य सुभे वरदत्ते दिण्ण इंदभूई य। उदितोदिय कुलवंसा गुणेहि उववेया। तित्थपवत्तयाणं पढमा सिस्सा जिणवराणं ॥४२॥सू० २०१॥

शब्दार्थ-(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां इन चौवीस तीर्थंकरों के (चउव्वीसं पढमसीसा होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या अभूवन्-चौवीस प्रथमशिष्य थे (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम ये है (पढमेत्थ उसभसेणे) प्रथमोऽत्र ऋषभसेनो-प्रथमऋषभसेन (बीइए पुण होइ सीहसेणे य) द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनश्च द्वितीय सिंहसेन (चारुसेन (चारू य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विदब्भे) चारुश्च वज्रनाभश्चमरस्तथा सुव्रतोविदर्भः तृतीयचारू, चतुर्थ वज्रनाभ, पंचम चमर, छठवें सुव्रत, सातवें विदर्भ, (दिण्णे य वराहे पुण आणंदे गोथुभे सुहम्मे य, मंदर जसे अरिट्ठे चक्काह सयंकुभे य) दत्तश्च वराहः पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्माच, मंदरो यशा अरिष्टश्चक्राभः स्वयम्भु कुम्भश्च-आठवें दत्त, नौवे वराह, दशवें आनंद, ग्यारहवें गोस्तुभ, बारहवें सुधर्मा, तेरहवें मन्दर, चौदहवें यश, पन्द्रहवे अरिष्ट, सोलहवे चक्राभ, सत्रहवे स्वयंभू, अट्ठारहवे कुभ, (इंदकुंभे य सुभे, वरदत्त दिण्ण इंदभूईय) इन्द्रःकुम्भश्च शुभो वरदत्तो दत्त इन्द्र-

शब्दार्थ-(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां-એ ચોવીસ તીર્થંકરોના જે (चउव्वीसं पढमसीसा होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या अभूवन्-ચોવીસ પહેલા શિષ્યો થયા (तं जहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(पढमेत्थउसभसेणे) प्रथमोऽत्र ऋषभसेनो-પહેલો ઋષભસેન (बीइए पुण होइ सीहसेणेय) द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनश्च-બીજો સિંહસેન, (चारु य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वयविदब्भे) चारुश्च वज्रनाभश्च चमरस्तथा सुव्रतोविदर्भः-(૩) ચારુ (૪) વજ્રનાભ, (૫) ચમર (૬) સુવ્રત (૭) વિદર્ભ, (दिण्णे य वराहे पुणआणंदे गोथुभे सुहम्मे य मंदरजसे अरिट्ठे चक्काहसयंकुकुंभे य) दत्तश्च वराह पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्मा च, मंदरो यशा अरिष्टश्चक्राभः स्वयम्भुः कुम्भश्च-(૮) દત્ત, (૯) વરાહ (૧૦) આનંદ, (૧૧) ગોસ્તુભ, (૧૨) સુધર્મા, (૧૩) મન્દર, [૧૪] યશ, (૧૫) અરિષ્ટ (૧૬) ચક્રાભ, (૧૭) સ્વયંભૂ, (૧૮) કુભ, (इंदकुंभे य सुभे, वरदत्तेदिण्ण इंदभूईय) इन्द्रः कुम्भश्च शुभो

टीका—'एएसि' इत्यादि—एतेषां चतुर्विंशतस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या अभूवन्, तद्यथा—प्रथमो ऋषभसेनो द्वितीय पुनर्मतान्तरे सिंहसेन इत्यपि नाम । चारुश्च वज्रनामप्रथमस्तथा सुव्रतो विदर्भः ॥४१॥ दत्तश्च वराहः पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्मा च । मन्दरो यक्ष अरिष्टश्चक्राख्य स्वयम्भूः कुम्भश्च ॥४२॥ इन्द्रः कुम्भश्च शुभो वरदत्तो दत्त इन्द्रभूतिश्च । उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशा गुणैरुपेता । तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम् ॥४२॥सू २०१॥

भूतिश्च—१९वें इन्द्र २०वें कुम्भ, २१वें शुभ, २२वें वरदत्त, २३वें दत्त और २४वें इन्द्रभूति। (उदितादितकुलवंशा गुणेहिं उववेया, तित्थवत्तयाणं पढमा सिस्सा जिणवराणं) उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशा गुणैरुपेता तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम् ये सब शिष्या उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त हुए कुलरूपवंश वाले थे मातृपितृसम्बन्धीवंश की निर्मलता से युक्त थे। तथा सम्यग्दर्शन आदिगुणों से विराजित थे। इस प्रकार तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों के ये प्रथम शिष्य थे ॥सू० २०१॥

टीकार्थ—'एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं' इत्यादि—इन चौबीस तीर्थंकरों के चौबीस प्रथम शिष्य थे उनके नाम ये हैं—प्रथम ऋषभसेन, द्वितीय सिंहसेन, तृतीय चारु चतुर्थ वज्रनाम, पञ्चम चमर, छठवें सुव्रत सातवें विदर्भ, आठवें दत्त, नौवें वराह, दशवें आनन्द, ग्यारहवें गोस्तुभ बारहवें सुधर्मा, तेरहवें मन्दर चौदहवें यक्ष, पन्द्रहवें अरिष्ट सोलहवें चक्राम, सत्रहवें स्वयंभू अट्ठारहवें कुम्भ, उन्नीसवें इन्द्र बीसवें कुम्भ इक्कीसवें

वरदत्तोदत्त इन्द्रभूतिश्च—(१९) ઈન્દ્ર (२०) કુમ્ભ, (२१) શુભ, [२२] વરદત્ત, (२३) દત્ત, અને (२४) ઇન્દ્રભૂતિ (उदितोदितकुलवंसा गुणेहिं उववेया तित्थ वत्तयाणं पढमासिस्सा जिणवराणं) उदितोदितकुलवंशाः विशुद्धवंशा गुणैरुपेताः तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम्—તે બધા શિષ્યો ઉત્તરોત્તર ઉત્કર્ષ પામતા કુળરૂપ વંશવાળા હતા અને માતૃપક્ષ અને પિતૃપક્ષની વિશુદ્ધતાવાળા હતા, તથા તેઓ સમ્યગ્દર્શન આદિ ગુણોથી યુક્ત હતા તીર્થપ્રવર્તક જિનેન્દ્ર ભગવાનોના જે પ્રથમ શિષ્યો હતા તે પ્રકારના હતા ॥સૂ. २०१॥

टीकार्थ—"एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं" इत्यादि—એ ચોવીસ તીર્થંકરોના જે પહેલા ચોવીસ શિષ્યો હતા તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(१) ઋષભસેન (२) સિંહસેન, [३] ચારુ, (४) વજ્રનામ [५] ચમર (६) સુવ્રત, (७) વિદર્ભ, (८) દત્ત, (९) વરાહ [१०] આનંદ (११) ગોસ્તુભ, (१२) સુધર્મા, (१३) મન્દર (१४) યક્ષ (१५) અરિષ્ટ (१६) ચક્રાભ, (१७) સ્વયંભૂ (१८) કુંભ (१९) ઈન્દ્ર,

मूलम्--एएसि णं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था, तं जहा-बंभी य फग्गु सामा अजिया कासवीरई सोमा। सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणीय धरणिधरा ॥४३॥ पउमा सिवा सुयी तह अंजुया भावियप्पा य रक्खी य। वंधुवती पुप्फवती अज्जा अमिला य अहिया य ॥४४॥ जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य आहियाउ। उदितोदियकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया। तित्थप्पवत्तया णं पढमा सिस्सिणी जिणवराणं॥सू.२०२॥

शुभ थाईसवें वरदत्त तेईसवें दत्त औ। चौवीसवें इन्द्रभूति। ये सब शिष्य उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त हुए कुलरूपवंश वाले थे मातृपितृ संबंधी वंश की निर्मलता से युक्त थे। तथासम्यग्दर्शन आदि गुणो से विराजित थे। इस प्रकार तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवों के ये प्रथम शिष्य थे ॥सू० २०१॥

शब्दार्थ—(एएसि ण चउवीसाए तित्थगराण)एतेषां खलु चतुर्विंशतेरतीर्थंकराणां इन चौवीस तीर्थंकरों की (चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या आसन्-चौवीस प्रथम शिष्या थीं (तंजहा)तद्यथा उनके नाम इस प्रकार से है-(बंभी य फग्गु सामा अजिया कासवीरई सोमा, सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणी य धरणिधरा) ब्राह्मी च फल्गुः श्यामा अजिता काश्यपी रतिः सोमा, सुमना वारुणी सुलसा धारणी धरणी च धरणीधरा-ब्राह्मी १ फल्गु २ श्यामा ३, अजिता ४,

(२०) કુબ્જ, (२१) शुभ, (२२) वरदत्त, (२३) दत्त अने २४) इन्द्रभूति ते सघळा शिष्यो उत्तरोत्तर उत्कर्ष पामता कुळरूप वंशवाळा हता तेओ मातृ अने पितृ पक्षनी निर्मळताथी युक्त हता, अने सम्यग्दर्शन आदि गुणोथी शोभता हता એ પ્રકારના તીર્થપ્રવર્તક જિનેન્દ્રદેવોના પ્રથમ શિષ્યો હતા ॥સૂ. ૨૦૧॥

शब्दार्थ—(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां—તે ચોવીસ તીર્થંકરોની (चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या आसन्-ચોવીસ પહેલી શિષ્યાઓ હતી (तं जहा) तद्यथा-જેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(बंभीय फग्गुसामा अजियाकासवीरई सोमा, सुमणावारुणि सुलसाधारणिधरणी य धरणिधरा) ब्राह्मी च फल्गुः श्यामा अजिता काश्यपी रतिः सोमा सुमनावारुणी सुलसाधारणीधरणी च धरणिधरा-(१) બ્રાહ્મી, (२) ફલ્ગુ, (३) શ્યામા, (४) અજિતા, (५) કાશ્યપી,

टीका-'एएसि ण' इत्यादि-एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या आसन्, तं जहा-बम्भी य फग्गू' इत्यादि अभिलाप काश्यपीरतिः

काश्यपी ५, रति ६ सोमा ७ सुमना ८ वारुणी ९ सुलसा १० धारणी ११ धरणि १२ धरणिधरा १३ (पउमा सिवा सुयी तह अजुया मावियप्पा य रुक्मीव वंधुमती पुप्फवती अच्चा अमिला य अहिया य) पद्मा शिवा शुचिस्तथाऽञ्जुका भाविताऽत्मा रक्षी च, बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽभिला चाभिहिता-पद्मा १४ शिवा १५ शुचि १६ अञ्जुका १७ रक्षी १८ बन्धुमती १९ पुष्पवती २० अभिला २१ (जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य भाहिया) यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याता -यक्षिणी २२ पुष्पचूला २३ और चन्दना २४। ये आर्याएँ भाविताऽत्मार्या। "उदिओ दियकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया" इन पदों का अर्थ पहिले स्पष्ट कर दिया गया है। सो उसी के अनुसार जानना चाहिये (तित्थप्पवत्तयाणं पढमा सिस्सिणी जिणवराणं) तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम्-ये सब पूर्वोक्त आर्याएँ तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों की प्रथम शिष्याएँ थीं ॥सू० २०२॥

टीकार्थ—'एएसि ण चउवीसाए' इत्यादि-इन चौबीस तीर्थंकरों की चौबीस प्रथम शिष्या थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं—ब्राह्मी १

---

(६) रति (७) सोमा (८) सुमना, (९) वारुणी, (१०) सुलसा (११) धारणी, (१२) धरणि (१३) धरणिधरा, (पउमासिवासुयी तह अजुया भाविप्पा य रुक्मी य बंधुमती, पुप्फवती अच्चा अमिला य अहिया य) पद्मा शिवा शुचिस्त्वाऽञ्जुका भाविताऽत्माऽरक्षी च, बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽभिला चाभिहिता-(१४) पद्मा, (१५) शिवा, [१६] शुचि, (१७) अञ्जुका, (१८) रक्षी (१९) बन्धुमती (२०) पुष्पवती, (२१) अभिला, (जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य अहिया य) यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याता -(२२) यक्षिणी (२३) पुष्पचूला, अने (२४) चन्दना ते आर्याओ भाविताऽत्मा हती. 'उदिओदिय कुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया" આ પદોના અર્થની જે રીતે આ પ્રકરણમાં સ્પષ્ટતા કરવામાં આવી છે તે રીતે એમનો અર્થ જે સ્પષ્ટતા જોઈએ (तित्थप्पवत्तयाणं पढमा सिस्सिणी जिणवराणम्)तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमा शिष्या जिनवराणाम्-પૂર્વોક્ત તે આર્યાઓ તીર્થપ્રવર્તક જિનેશ્વરોની પ્રથમ શિષ્યા હતી ॥સૂ ૨૦૨॥

ટીકાર્થ—'एएसि ण चउवीसाए' ઇત્યાદિ-તે ચોવીસ તીર્થંકરોની પ્રથમ ચોવીસ શિષ્યાઓના નામ આ પ્રમાણે હતાં-[૧] બ્રાહ્મી (૨) ફલ્ગુ (૩) શ્યામા (૪)

सोमा। सुमना वारुणी सुलसा धारणी धरणी च धरणीधरा ॥४३॥ पद्मा शिवा श्रुतिस्तथाऽञ्जुका भावितात्मारक्षी च। बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽमिला चाभिहिता। यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याताः। उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशा गुणैरुपेताः। तीर्थप्रवर्त्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम्॥४५॥सू.२०२॥

सम्प्रति द्वादशचक्रवर्तिनां पितृनामान्याह—

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारसचक्कवट्टिपियरो होत्था, तं जहा—उसभे सुमित्ते विजए समुद्दविजए य आससेणे य। विस्ससेणे य सूरे सुदंसणे कत्तवीरिए चेव॥४६॥ पउमुत्तरे महाहरि विजए राया तहेव य। बंभे बारमे उत्ते पिउनामा चक्कवट्टीणं ॥४७॥ सू. २०३॥

फल्गु २ श्यामा ३ अजिता ४ काश्यपी ५ रति ६ सोमा ७ सुमना ८ वारुणी ९ सुलसा १० धारणी ११ धरणि १२ धरणिधरा १३ पद्मा १४ शिवा १५ श्रुति १६ अञ्जुका१७ रक्षी १८ बंधुमती १९ पुष्पवती २० अमिला२१, यक्षिणी२२, पुष्पचूला२३, और चन्दना२४। ये आर्याएँ भावितात्मा थीं। 'उदितोदितकुलवंसा विशुद्धवंसा गुणेहिं उववेया' इन पदों का अर्थ पहिले स्पष्टकर दिया गया है। सो उसी के अनुसार जानना चाहिये। ये सब पूर्वोक्त आर्या ये तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों की प्रथम शिष्याएँ थीं॥सू.२०२॥

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जंबुद्वीप नामके इस द्वीप में(भारहे वासे)भारते वर्षे—भारत वर्ष मे(इमीसे ओसप्पिणीए)अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणीकाल में(बारस चक्कवट्टिपियरो होत्था)द्वादश-

---

अजिता, (५) काश्यपी, (६) रति, (७) सोमा, (८) सुमना, (९) वारुणी, [१०] सुलस, (११) धारणी, (१२) धरणि, (१३) धरणिधरा. (१४) पद्मा, (१५) शिवा, (१६) श्रुति, (१७) अञ्जुका, (१८) रक्षी, (१९) बंधुमती, (२०) पुष्पवती, (२१) अमिला, (२२) यक्षणी, (२३) पुष्पचूला, अने (२४) चन्दना ते आर्याओ भावितात्मा हती "उदितोदितकुलवंसा विशुद्धवंसा गुणेहिं उववेया" ते पदोनो अर्थ आगळ आपी दीधो छे तेथी त्यां जोई लेवो. ए सघळी पूर्वोक्त आर्याओ तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवोनी पहेली शिष्याओ हती. ॥ सू. २०२॥

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जंबूद्वीप नामना आ द्वीपमा (भारहे वासे) भारते वर्षे—भारतवर्षमा (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणीकाळमां (बारसचक्कवट्टिपियरो होत्था)

टीका-'जंबुदीवे ण' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्तिपितर आसन्, तद्यथा-ऋषभः सुमित्र विजय समुद्रविजयश्चाश्व सेनश्च । विश्वसेनश्च शूरः सुदर्शनः कार्तवीर्यश्चैव ४६॥ पद्मोत्तरो महाहरि विजयो राजा तथैव च । ब्रह्मा द्वादशः उक्तानि पितृनामानि चक्रवर्तिनाम् ॥४७॥सू २०३॥

चक्रवर्ति पितर आसन्-बारह चक्रवर्तियों के पितृजन हुए हैं(त जहा)तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं-(उसभे) ऋषभ -ऋषभ (सुमित्ते) सुमित्र -सुमित्र, (विजए) विजया-विजय (समुद्दविजए य) समुद्रविजयश्च समुद्र विजय, (आससेणे य) अश्वसेनश्च-अश्वसेन (विस्ससेणे य) विश्वसेनश्च-विश्वसेन (सूरे) शूर -शूर (सुदंसणे) सुदर्शन, (कत्तवीरिए चेव) कार्त वीर्यश्चैव-कार्तवीर्य (पउमुत्तरे) पद्मोत्तर -पद्मोत्तर, (महाहरी) महाहरि -महाहरि (तह विजए) तथा विजय -राजा विजय (बारसमे य) द्वादश ब्रह्मा-बारहवें ब्रह्म (चक्कट्ठ ण पिउनामा उ ते) चक्रवर्तिनां पितृनामानि उक्तानि-ये चक्रवर्तियों के पितृजनों के नाम कहे हैं ॥सू० २ ॥

टीकार्थ—जंबुदीवे ण दीव भारहे वास' इत्यादि—जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में बारह चक्रवर्तियों के पिता हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से हैं-ऋषभ, सुमित्र विजय, समुद्रविजय अश्वसेन, विश्वसेन, शूर सुदर्शन, कार्तवीर्य पद्मोत्तर, महाहरि, राजा विजय और बारहवें ब्रह्मा ये चक्रवर्तियों के पिता के नाम कहे हैं॥सू २०३॥

द्वादशचक्रवर्तिपितर आसन्—बारह चक्रवर्तियोंके पिताओं के नाम कहे हैं (त जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं-(उसभे) ऋषभ -ऋषभ, (सुमित्ते) सुमित्र -सुमित्र, (विजए) विजय-विजय, (समुद्दविजए य) समुद्रविजयश्च-समुद्रविजय, (आससेणे य) अश्वसेनश्च-अश्वसेन, (विस्ससेणे य) विश्वसेनश्च-विश्वसेन (सूरे) शूरः शूर (सुदंसणे) सुदर्शन -सुदर्शन, (कत्तवीरिए चेव) कार्त वीर्यश्चैव-कार्तवीर्य (पउमुत्तरे) पद्मोत्तरः-पद्मोत्तर, (महाहरी) महाहरिः-महाहरि (तह विजए)तथाविजयः -राजाविजय, (बारसमे य)द्वादशश्च ब्रह्मा-बारहवें ब्रह्मा (चक्कट्ठीण पिउनामा उ ते) चक्रवर्तिनां पितृनामानि उक्तानि-ये चक्रवर्तियों के पिताओं के नाम कहे हैं ॥सू० २ ॥

टीकार्थ—'जंबुदीवे णं दीवे भारहे वास' इत्यादि—जम्बूद्वीपनाम के द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी कालमें ये बारह चक्रवर्तियोंके पिता तथा उनके नाम इस प्रकार से हैं—ऋषभ सुमित्र, विजय समुद्रविजय अश्वसेन विश्व सेन शूर सुदर्शन, कार्तवीर्य पद्मोत्तर महाहरि राजाविजय तथा बारहवें ब्रह्म उपलक्षित नामके चक्रवर्तियोंके पिता हैं ॥सू २ ॥

संप्रति चक्रवर्तिना मातृनामान्याह--

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारसचक्कवट्टीमायरो होत्था, तं जहा-सुमंगला जसवती भद्दा सहदेवी अइरा सिरिदेवी । तारा जाला मेरा वप्पा चुल्लणि य पच्छिमा ॥ सू० २०४ ॥

टीका-'जंबुद्दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां

चक्रवर्तियों की माताओं के नाम अब सूत्रकार कहते हैं-

शब्दार्थ--जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां-इस अवसर्पिणी काल में (चक्कवट्टिमायरो बारस होत्था) द्वादश चक्रवर्ति मातरोऽभूवन्-चक्रवर्तियों की बारह माताएँ थीं। (तंजहा) तद्यथा.-उनके ये नाम है (सुमंगला जसवती भद्दा सहदेवी अइरासिरि देवी, तारा जाला मेरा वप्पा चुल्लणि य पच्छिमा) सुमङ्गला यशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्री देवी, तारा ज्वाला मेरा वप्राचुल्लनी च पश्चिमा सुमंगला १ यशस्वती २, भद्रा ३ सहदेवी ४ अचिरा ५ श्री ६ देवी ७ तारा ८ ज्वाला ९ मेरा १० वप्रा ११ और अन्तिम चुल्लनी १२ ॥सू०२०४॥

टीका--'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारत

હવે સૂત્રકાર ચક્રવર્તિઓની માતાના નામ કહે છે –

શબ્દાર્થ--(जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए चक्कवट्टिमायरो बारस होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्त्तिमातरोऽभूवन्-જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળમાં જે ચોવીસ તીર્થંકરો થયા તેમની માતાઓના નામ અનુક્રમે આ પ્રમાણે છે (तं जहा) तद्यथा-આ પ્રમાણે--(सुमंगला, जसवती, भद्दा, सहदेवी, अइरा, सिरिदेवी, तारा, जाला, मेरा, वप्पा, चुल्लणि य पच्छिमा) सुमङ्गला यशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्रीदेवी, तारा ज्वाला मेरा वप्रा चुल्लनी च पश्चिमा-(૧) સુમંગલા, (૨) યશસ્વતી, (૩) ભદ્રા, (૪) સહદેવી, (૫) અચિરા, (૬) શ્રી, (૭) દેવી, (૮) તારા, (૯) જ્વાલા, (૧૦) મેરા, (૧૧) વપ્રા, અને છેલ્લાં (૧૨) ચુલ્લની. ॥સૂ ૨૦૪॥

ટીકાર્થ-'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-આ જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં

द्वादश चक्रवर्तिमातरोऽभूवन्, तद्यथा-सुमङ्गलायशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्रीर्देवी। तारा ज्वाला मेरा तथा वप्रनन्दी च पश्चिमा ॥सू २०४॥

सम्प्रति चक्रवर्तिनां तत्स्त्रीरत्नानां च नामान्याह--

मूलम्--जंबुदीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारसचक्कवट्टी होत्था, तं जहा-भरहो सगरो मघव सणकुमारो य रायसद्दूलो। संती कुंथू य अरो हवइ सुभूमो य कोरव्वो॥४८॥ नवमो य महापउमो हरिसेणे चेव रायसद्दूलो। जयनामो य नरवई बारसमो बम्भदत्तो य ॥४९॥ एएसिं बारसण्ह चक्कवट्टीण बारस इत्थिरयणा होत्था, तं जहा-पढमा होइ सुभद्दा भद्द सुणंदा जया य विजया य। कण्हसिरी सूरसिरी पउमसिरी वसुंधरादेवी ॥५०॥ लच्छिमई कुरुमई इत्थिरयणाण नामाइ ॥सू २०५॥

वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चक्रवर्तियों की बारह माताएँ थीं। उनके ये नाम हैं-सुमंगला यशस्वती भद्रा, सहदेवी, अचिरा, श्री, देवी तारा, ज्वाला, मेरा, तथा, और अन्तिम वप्रनन्दी ॥सू० २०४॥

अब सूत्रकार चक्रवर्तियों के तथा उनके स्त्री रत्नों के नाम प्रकट करते हैं--

शब्दार्थ--(जंबुदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे-वासे) भारते वर्षे-भारत वर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्याम अवसर्पिण्यां-इस अवसर्पिणी काल में (बारस चक्कवट्टि होत्था) द्वादश चक्र

આપેલા ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળે ૧૨ ચક્રવર્તિઓની ૧૨ માતાઓનાં નામ અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતાં-સુમંગળા, યશસ્વતી ભદ્રા, સહદેવી, અચિરા, શ્રી દેવી તારા, જ્વાલા મેરા વપ્રા અને છેલ્લાં વપ્રનન્દી ॥સૂ ૨૦૪॥

હવે સૂત્રકાર ચક્રવર્તિઓનાં તથા તેમનાં સ્ત્રીરત્નોનાં નામ બતાવે છે--

શબ્દાર્થ--(जंबुदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા (भारहे वासे)भारतेवर्षे-ભારતવર્ષમાં (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्-આ અવસર્પિણીકાળમાં (बारस चक्कवट्टि होत्था) બે બાર

वर्तिनोऽभूवन–बारह चक्रवर्ती हुए है (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम ये है भरहो सगरोमघव सणकुमारो य रायसद्दूलो संती कुंथु य अरो य हवइ सुभूमो य कोरव्वो) भरतः सगरो मघवा सनत्कुमारश्च राजशार्दूलः शान्तिः कुन्थुश्च अरो भवति सुभूमश्च कौरव्यः–भरत १ सगर २, मघवा३ सनत्कुमार ४ शांति ५ कुन्थु ६ अर ७ सुभूम ८ (नवमो य महापउमो हरिसेणे चेव रायसद्दूलो जयनामो य नरवई बारमो बंभदत्तो य) नवमश्च महापद्मो हरिषेणश्चैव-राजशार्दूलः जयनामा च नरपति र्द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च–महा पद्म ९, हरिषेण १०, जय ११ और ब्रह्मदत्त १२। (एएसिं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारसइत्थिरयणा होत्था) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादश स्त्रीरत्नान्यासन्–इन बारह चक्रवर्तियों के बारह स्त्री रत्न थे। (तंजहा) तद्यथा–उनके नाम ये है–(पढमो होइ सुभद्दा, भद्द सुणंदा, जया य विजया य किण्हसिरी सूरसिरी पउमसिरी वसुंधरा देवी लच्छी मई कुरुमई) प्रथमा भवति सुभद्रा, भद्रा सुनन्दा जया च विजया च, कृष्ण श्रीः सूर श्रीः पद्मश्री वसुन्धरा देवी लक्ष्मीवती कुरुमती–पहिली सुभद्रा फिर दूसरी भद्रा, तीसरी सुनंदा, चौथी जया, पांचवी विजया छठवीं कृष्णश्री सातवीं सूर श्री आठवी पद्मश्री नववी वसुधरा दसवीं देवी

चक्रवर्तियो थया तेमना नाम आ प्रमाणे छे–(भरहोसगरो मघवंसणंकुमारो य रायसद्दूलो, संतीकुंथु य अरो य हवइ सुभूमो य कोरव्वो)भरतः सगरोमघवासनत्कुमारश्च राजशार्दूलः, शान्तिः कुन्थुश्च अरो भवति सुभूमश्च कौरव्यः–(१) भरत, (२) सगर, (३) मघवा, (४) सनत्कुमार, (५) शान्ति, [६] कुन्थु, (७) अर, (८) सुभूम (नवमो य महापउमो हरिसेणे चेव रायसद्दूलो, जयनामो य नरवई बारमो बंभदत्तो य) नवमश्च महापद्मो हरिषेणश्चैव राजशार्दूलः जयनामा च नरपतिर्द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च–(९) महापद्म, (१०) हरिषेण, (११) जय अने (१२) ब्रह्मदत्त (एएसिं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारस इत्थिरयणा होत्था)एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनाम् द्वादशस्त्रीरत्नान्यासन्–
તે ण २अढ निर्योनां भार स्त्रीरत्नोना हता (तं जहा) तेओना नाम आ प्रमाणे हता–(पढमो होइ सुभद्दा, भद्द सुणंदा, जया य विजया य, किण्हसिरी सूरसिरी, पउमसिरी वसुंधरादेवीलच्छीमईकुरुमई) प्रथमा भवति सुभद्रा,भद्रा सुनंदा जया च विजया च, कृष्णश्रीः सूरश्रीः पद्मश्रीः वसुन्धरादेवी, लक्ष्मीवती कुरुमती–(१) सुभद्रा, (२) भद्रा, (३) सुनंदा (४) जया, (५) विजया, (६) कृष्णश्री, (७) सूरश्री, (८) पद्मश्री, (९) वसुधरा, (१०) देवी, (११) लक्ष्मीवती,

टीका-'जंबुदीवे ण' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्तिनोऽभूवन् तद्यथा-भरत सगरो मघवा सनत्कुमारश्च राजवर्यः । शान्ति कुन्थु अरो मल्लि सुभूमश्च कोरव्य ॥४८॥ नवमश्च महापद्मो हरिषेण श्चैव राजसार्दूलः । जयनामा च नरपतिर्द्वादशा ब्रह्मदत्तश्च ॥४९॥ एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादशस्त्रीरत्नान्यासन्, तद्यथा-प्रथमा भवति सुभद्रा भद्रा सुनन्दा जया च विजया च । कृष्णश्री सुरभी पद्मश्रीः सुन्दरी तथा ॥५०॥ लक्ष्मीवती कूर्मवती स्त्रीरत्नानां नामानि ॥सू० २०५॥

सम्प्रति चक्रवर्तिबलदेववासुदेवानां मातृपितृनामान्याह-

मूलम्-जंबुदीवे ण दीवे भारहे वासे-इमीसे ओसप्पिणीए नव बलदेव नव वासुदेवपियरो होत्था, तं जहा-पयावई य बंभे य

ग्यारहवीं लक्ष्मीवती और बारहवीं कूर्मवती (इत्थी रयणाण नामाइं) स्त्रीरत्नानां नामानि इस प्रकार उन चक्रवर्तियों के स्त्री रत्नों के ये नाम हैं ॥सू० २०५॥

भावार्थ- जंबुदीवे ण दीवे इत्यादि-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में बारह चक्रवर्ती हुए हैं। उनके नाम ये हैं-भरत सगर, मघवा, सनत्कुमार, शांति, कुंथु, अर, सुभूम, महापद्म, हरिषेण जय और ब्रह्मदत्त ये सब चक्रवर्ती राजाओं सिंह जैसे विशिष्ट शक्ति शाली होते हैं। ये बारह चक्रवर्तियों के नाम हैं। इन बारह चक्रवर्तियों के बारह स्त्री रत्न थे। उनके नाम ये हैं-पहिली सुभद्रा, फिर दूसरी भद्रा, तीसरी सुनंदा, चौथी जया, पांचवी विजया छठी कृष्णश्री, सातवीं सुरभी आठवीं पद्मश्री, नवमी सुंदरी, दसवीं देवी, ग्यारहवीं लक्ष्मीवती और बारहवीं कूर्मवती, इस प्रकार उन चक्रवर्तियों के स्त्री रत्नों के ये नाम हैं ॥सू० २०५॥

अन (१) कूर्मवती (इत्थीरयणाण नामाइं) स्त्रीरत्नानां नामानि-इत्थीरत्न प्रभावना ने अहं निमेनी ये नीना नाम हतां तात्र २०५॥

टीकार्थ-'जंबुदीवे ण दीवे' इत्यादि-आ अवसर्पिणीकालमां ए जंबूद्वीप नामना द्वीपमां अर्थात् भरतक्षेत्रमां बार चक्रवर्तियो थया छे तेमना नाम आ प्रमाणे छे भरत, सगर, मघवा, सनत्कुमार शान्ति कुंथु अर सुभूम, महापद्म हरिषेण जय अने ब्रह्मदत्त तो आ चक्रवर्ति बारजणामां सिंह समान विशिष्ट शक्ति धरता ते आ बारे चक्रवर्तिओनां बार स्त्रीओनां नाम अनुक्रमे आ प्रमाणे छे-प्रथम सुभद्रा, भद्रा सुनंदा जया विजया, कृष्णश्री, सुरभी पद्मश्री सुंदरी देवी लक्ष्मीवती अने कूर्मवती ए प्रमाणे ॥सू० २०५॥

हो सोमो सिवेइ य । महासीहे अग्गिसीहे दसरह नवमे य वसुदेवे॥५१॥ जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव वासुदेवमायरो होत्था, तं जहा—मियावई उमा चेव पुढवी सीया य अम्मया । लक्खिमई सेसमई केकेइ देवई तहा॥५२॥ जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णवबलदेवमायरो होत्था, तं जहा—भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा । विजया वेजयंती य जयंती अपराजिया ॥५३॥ णवमीया रोहिणी य बलदेवाण मायरो ॥ सू० २०६ ॥

अब सूत्रकार बलदेव और वासुदेव आदिकों के मातापिताओं के नाम स्पष्ट करते हैं-

शब्दार्थ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—इस जम्बूद्वीप नाम द्वीप में (भारहेवासे) भारतवर्षे—जो भरत नाम का क्षेत्र है उसमें—(इमीसे ओसप्पिणीए)अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल मे(नव बलदेव नव वासुदेव पियरो होत्था) नवबलदेवनववासुदेवपितरोऽभूवत्—नौबलदेव के और नौ वासुदेव के पिता हुए हैं। (तंजहा)तद्यथा उनके नाम इस प्रकार हैं (पयावई य, बंभे य रुद्दो सोमो सिवेइ य, महासीहे अग्गिसीहे दसरह नवमें य वसुदेवे)प्रजापतिश्च ब्रह्मा च रुद्रः सोमः शिव—इति च, महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च वसुदेवः—प्रजापति १, ब्रह्मा २, रुद्र ३, सोम

હવે સૂત્રકાર બલદેવો અને વાસુદેવો આદિના માતાપિતાના નામ કહે છે—

શબ્દાર્થ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) જંબૂદ્વીપે ખલુ દ્વીપે—આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા (भारहे वासे) भारतवर्षे—જે ભરત નામનુ ક્ષેત્ર છે તેમાં (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्—આ અવસર્પિણીકાળમા (नव बलदेव नव वासुदेव पियरो होत्था) नवबलदेव नववासुदेव पितरोऽभूवन्—નવ બળદેવના અને નવ વાસુદેવના પિતા થયા છે, (तं जहा) तद्यथा—તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(पयावई य, बंभे य रुद्दो सोमो सिवेइय, महासीहे अग्गिसीहे दसरह नवमे य वसुदेवे) प्रजापतिश्च ब्रह्मा च, रुद्रः सोमः शिवइति च, महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च वसुदेवः-(१) प्रजापति, (२) ब्रह्मा

४, शिव ५, महासिंह ६, अग्निसिंह ७, दशरथ ८ और नवमां-वसुदेव ९। (जंबुदीवे ण दीवे) जम्बूद्वीप खलु द्वीपे-इस जम्बूद्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए) इस अवसर्पिणी काल में (णव वासुदेवमायरो होत्था) नव वासुदेवमातरोऽभूवन नौ वासुदेव की माताएँ हुई हैं (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं-(मियावइ उमावेव पुढवी सीया य अम्मया,लच्छिमई सेसमइ केकई देवई तहा)मृगावती उमा चैव पृथिवी सीता च अम्बिका लक्ष्मीवती शेषमती कैकेयी देवकी तथा मृगावती १ उमा २ पृथिवी ३ सीता ४ अम्बिका ५, लक्ष्मीवती ६ शेषमती७ कैकेयी८ और नवमी देवकी ९। (जंबुदीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव बलदेवमायरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नव बलदेव मातरो बभूवुः-इस जम्बूद्वीप नाम क द्वीप में भारत वर्ष में अवसर्पिणीकाल में नौ बलदेव की माताएँ हुई हैं। (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार हैं-(भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा विजया वेजयंती य जयंती अपराजिया) भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना, विजया वैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता-भद्रा १ सुभद्रा २, सुप्रभा ३, सुदर्शना ४, विजया ५, वैजयंती ६, जयंती

(३) २६, (४) शेष (५) शिव, (६) मह सिंह, (७) अग्निसिंह, (८) दशरथ अने (९) वसुदेव (जंबुदीवेण दीवे) जम्बूद्वीप खलु द्वीपे-આ જંબૂદ્વીપમાં (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष नामना क्षेत्रमा, (इमीसे ओसप्पिणीए) આ અવસર્પિણી કાળમાં (णव वासुदेवमायरो होत्था)नव वासुदेवमातरोऽभूवन्-નવ વાસુદેવની માતાઓ થઈ છે (तं जहा) તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(मियावई उमावेव पुढवीसीया य अम्मयालच्छिमईसेसमई केकईदेवई तहा)मृगावती उमाचैव पृथिवी सीता च अम्बिकालक्ष्मीवतीशेषमतीकैकेयी देवकी तथा-(१) મૃગાવતી, (२) ઉમા, (३) પૃથિવી, (४) સીતા (५) અંબિકા (६) લક્ષ્મીવતી (७) શેષમતી, (८) કૈકેયી અને (९) દેવકી (जंबुदीवे ण दीवे) जम्बूद्वीपेऽस्मिन् द्वीपे-આ જંબૂદ્વીપમાં (भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव बलदेवमायरो होत्था) भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नव बलदेवमातरो बभूवुः-ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવોની જે નવ માતાઓ થઈ તે (तं जहा) तद्यथा-તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा विजया वेजयंती य जयंती अपराजिया)-भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना, विजया वैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता-(१) ભદ્રા (२) સુભદ્રા (३) સુપ્રભા (४) સુદર્શના (५) વિજયા, (६) વૈજયન્તી (७) જયંતી

टीका–'जंबुद्दीवेणं' इत्यादि–जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववलदेवनववासुदेवपितरोऽभूवन्, तद्यथा–प्रजापतिश्च ब्रह्मा च रुद्रः सोमः शिव इति च। महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च–वासुदेवः ॥५१॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववासुदेवमातरोऽभूवन्, तद्यथा–मृगावती उमा चैव पृथिवी सीता च अम्बिका लक्ष्मीवतीशेषमती कैकेयी देवकीतथा॥५२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववलदेवमातरो बभूवुः, तद्यथा–भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना। विजयावैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता। नवमिका रोहिणी च बलदेवानां मातरः ॥५३॥ सू. २०६॥

७, अपराजिया ८ (णवमीया रोहिणी य) नवमिका–रोहिणी च–नौमी रोहिणी। (बलदेवाण मायरो) बलदेवानां मातरः–इस प्रकार ये नौ बलदेवों की नौ माताएँ हैं ॥सू० २०६॥

टीकार्थ––'जंबुद्दीवेणं दीवे' इत्यादि–इस जंम्बूद्वीप नामके द्वीप में जो भरत नामका क्षेत्र है उसमें इस अवसर्पिणी कालमें नौ बलदेव और नौ वासुदेव के पिता हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से है–प्रजापति, ब्रह्मा, रुद्र, सोम, शिव, महासिंह, अग्निशिख, दशरथ और नवमां वसुदेव। इस जंबूद्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में नौ वासुदेव की माताए हुई हैं। उनके नाम ये है मृगावती १, उमा २ पृथिवी ३ सीता ४ अम्बिका ५ लक्ष्मीवती ६ शेषमती७, कैकेयी८ और नववीं देवकी९। इस जंबूद्वीप नाम के द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में नौ बलदेव की माताएँ हुई हैं। उनके नाम इस प्रकार से है

(८) अपराजिता (णवमीया रोहिणी य) नवमिका रोहिणी च––अने (९) रोहिणी (बलदेवाण मायरो) बलदेवानां मातरः–એ નવ બળદેવોની નવ માતાઓનાં નામ હતાં ॥સૂ ૨૦૬॥

ટીકાર્થ–'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि—આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભરત નામના ક્ષેત્રમા આ અવસર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવ અને નવ વાસુદેવના પિતા થયા છે, તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–પ્રજાપતિ, બ્રહ્મા, રૂદ્ર, સોમ, શિવ, મહાસિંહ, અગ્નિશિખ. દશરથ અને નવમા વસુદેવ. આ જંબૂદ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા નવ વાસુદેવોની જે નવ માતાઓ હતી તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(૧) મૃગાવતી, (૨) ઉમા, (૩) પૃથિવી, (૪) સીતા, (૫) અમ્બિકા, (૬) લક્ષ્મીવતી, (૭) શેષમતી, (૮) કૈકેયી અને (૯) દેવકી આ જંબૂદ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્રમા આ અવસર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવની જે નવ

अधुना बलदेवगमुदेवानां गुणनिर्देशपूर्वकं नामान्याह-

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए नव दसारमडला होत्था, त जहा—उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयसी तेयसी वच्चसी जससी छायसी कता सोमा सुभगा पियदसणा सुरूवा सुहसीलसुहाभिगमसव्वजणणयणकता ओहबला अतिबला महाबला अनिहता अपराइया सत्तुमद्दणा रिपु सहस्समाणमहणा साणुक्कोसा अमच्छरा अचवला अचडा मियमजुलपलावहसियगभीरमधुरपडिपुण्णसच्चवयणा अब्भुवगयवच्छला सरणा लक्खणवजणगुणोववेया माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजाय सव्वगसुदरगा ससिसोमागारकतपियदसणा अमरिसणा पयडदड प्पयारा गभीरदरिसणिज्जा तालद्ध आविद्धगरुलकेऊ महाधणुविकड्ढा महासत्तसायरा दुद्धरा धणुद्धरा धीरपुरिसा जुद्धकित्तिपुरिसा विउल कुलसमुब्भवा महारयणविहाडगा अद्धभरहसामी सोमा रायकुलव सतिलया अजिया अजियरहा हलमुसलकणकपाणी सखचक्कगय सत्तिनदगधरा पवरुज्जलसुकतविमलगोरयुमसिरीडधारी कुडलउज्जोइया णणा पुडरीयणयणा एकावलिकठलइयवच्छा सिरिवच्छसुलछणा वरजससव्वोउय सुरभिकुसुमरचिसपलवसोभतकतविकसतविचित्त वरमालरइयवच्छा अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुदरविरइयमगा मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई सारयनवथणियमहुरगभीर

भद्रा, सुभद्रा सुप्रभा, सुदर्शना, विजया, वैजयन्ती जयन्ती अपराजिता और नौवी रोहिणी। इस प्रकार ये नौ बलदेवों की नौ माताएं है ॥ सू०२०६॥

माताओ એવ રહ તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-ભદ્રા સુભદ્રા સુપ્રભા સુદર્શના, વિજયા વૈજયન્તી જયન્તી અપરાજિતા અને રોહિણી ૧૫ ૬ ૫॥

कुचनिग्घोसदुंदुभिसरा कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा पवरदित्त-तेया नरसीहा नरवई नरिंदो नरवसहा मरुयवसभकप्पा अब्भहिय-रायतेयलच्छीए दिप्पमाणा नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो होत्था, तं जहा--तिविट्ठ जाव कण्हे अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे ॥५४॥ सू० २०७॥

अब सूत्रकार बलदेव और वासुदेवों के गुण निर्देशपूर्वक नामो का कथन करते हैं--

शब्दार्थ--(जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां-इस जंबूद्वीप के वर्तमान भरतक्षेत्र के अन्दर इस अवसर्पिणी काल में (नव दसारमंडला होत्था) नव दशा-रमण्डलानि आसन्-नौ वासुदेव और बलदेव हुए है (तंजहा) तद्यथा-(उत्तम-पुरिसा) उत्तमपुरुषाः-तीर्थंकरादिक ५४ उत्तमपुरुषों के मध्यवर्ती होने के कारण उत्तमपुरुष, (मज्झिम पुरिसा) मध्यमपुरुषाः-तीर्थंकर चक्रवर्ती और वासुदेव आदिकों के बल आदि की अपेक्षा मध्यवर्ती होने के कारण मध्यमपुरुष,(पहाणपुरिसाः) प्रधानपुरुषाः-उनके समय में उत्पन्न हुए पुरुषों में शौर्य आदि की अपेक्षा प्रधान होने के कारण प्रधानपुरुष माने जाते है (ओजंसी)ओजस्विनः-ओजस्वी प्रतापशाली थे,(तेयंसी)तेजस्विनः-तेजस्वी थे,

---

હવે સૂત્રકાર બળદેવો અને વાસુદેવોના ગુણોના નિર્દેશ સહિત તેમના નામો કહે છે—

શબ્દાર્થ—(जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बू-द्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां—આ જંબૂદ્વીપના ભરતક્ષેત્રમા આ અવસર્પિણી કાળમા (नवदसारमंडला होत्था) नव दशारमण्डलानि आसन्—નવ વાસુદેવ અને બળદેવ થયા છે (तं जहा) तद्यथा—(उत्तमपुरिसा) उत्तम-पुरुषा.—તીર્થંકરાદિ ૫૪ ઉત્તમ પુરુષોમાં મધ્યવર્તી હોવાને કારણે ઉત્તમપુરુષ, (मज्झिमपुरिसा) मध्यमपुरुषाः—તીર્થંકર, ચક્રવર્તી અને વાસુદેવ આદિના બળની અપેક્ષાએ મધ્યવર્તી હોવાને કારણે મધ્યમપુરુષ અને (पहाणपुरिसा)प्रधानपुरुषाः—તેમના સમકાલીન પુરુષોની અપેક્ષાએ શૌર્ય આદિ બાબતમા પ્રધાન હોવાને કારણે તેમને પ્રધાન પુરુષો ગણવામા આવે છે (ओजंसी) ओजस्विनः—તેઓ ઓજસ્વી, (तेयंसी) तेजस्विनः—તેજસ્વી, (वचंसी) वर्चस्विनः—વર્ચસ્વી,

(यशस्सी) यशस्विन यशस्वी थे (अर्यसी) यशस्विन -यशस्वी थे। (छायासी) छाया वन्त छायावन्त-समधीछे शरीरवाछे थे (कन्ता) कान्ता कान्त थे (सोमा) सौम्या सौम्य थे (सुभगा) (सुभगा -सुभग थे। (पियदंसणा) प्रियदर्शना -प्रियदर्शन थ (सुरूवा) सुरूपा -सुरूपवाछे थे, (सुहसीम सुहाभिगमसव्वजणनयणकन्ता शुभशीम सुखाभिगम्य सर्वजननयनकान्ता -इनका स्वभाव बड़ा अच्छ था, हरएक प्राणी इनसे बिना किसी झिझक के मिल सकता था। सब मनुष्य उन्हें देखकर बहुत खुश होते थे। (ओहबला) ओघबला -ओघ बलवाछे (स्वाभाविक) थे (अहबला) अतिबला -अतिशय बलिष्ठ थे (महाबला) महाबला -इनका पराक्रम प्रशस्त था (अनिहता) अनिहता -निरुपक्रम आयुवाछ होने के कारण ये घातसे रहित थे (अपराइया) अपराजिता -अपराजित थ (सत्तुमद्दणा) शत्रुमर्दना -शत्रुओं के ये मर्दक थे (रिपुसहस्समाणमद्दणा) रिपु सहस्रमानमर्दना -हजारों शत्रुओं का इनके समक्ष मान मर्दित हो जाता था (मातुक्कोसा) मातृकाशा -जो इनके समक्ष झुक जाता था उनके ऊपर ये बड़ा दयालु रहते थे। (अमच्छरा) अमत्सरा -मत्सरभाव से ये रहित थे। (अचवला) अचपला -मन, वचन और काय की चपलता इनमें नहीं थी। (अचण्डा) अचण्डा -ये बिना कारण किसी के ऊपर कभी भी क्रोध

(यसंसी) यशस्विनः-यशस्वी (अर्यसी) छायावन्त -छायावन्त-देहप्रमाण शरीरवाळा (कन्ता) कान्ताः-सुन्दर (सोमा) सौम्य -सौम्य (सुभगा) सुभगाः-सुभग (पियदंसणा) प्रियदर्शना -प्रियदर्शन-जेमनु दर्शन प्रिय लागे तेवा अने (सुरूवा) सुरूपाः-सुरूपवाळा हता (सुहसीम सुहाभिगमसव्वजणनयणकन्ता) शुभशीलसुखाभिगम्यसर्वजननयनकान्ताः-तेमनो स्वभाव भलो सारो हतो दरेक मनुष्य तेमने कोईपण जातना संकोच विना भळी शकता हता अने तेमने जोईने सघळा लोको खुश थता हता (ओहबला) ओघबलाः-तेमनामां अजबनो तेज ओघ हतो (अहबला) अतिबला-तेओ बहु बळवान हता (महाबला) महाबलाः-तेओ प्रशस्त पराक्रमवाळा हता, (अनिहता) अनिहता -निरुपक्रम आयुष्य होवाथी तेओथी पण तेमनी हत्या थई शकती नहीं (अपराइया) अपराजिता -तेमने कोई हराबी शकतु नहीं, (सत्तुमद्दणा) शत्रुमर्दना -तेओ शत्रुओनु मर्दन करनार हता (रिपुसहस्स माणमद्दणा) रिपुसहस्रमानमर्दनाः-हजारो शत्रुओना दर्प-मान-नु मर्दन करनारा हता (मातुक्कोसा) मातृकाशा -तेमना समक्ष जेओ नम्र थई जता तेओ पर ते बहु दयालु रहेता हता (अमच्छरा) अमत्सरा -अभिमानथी रहित हता (अचवला) अचपलाः-मन वचन अने प्रवृत्ति चञ्चलतारहित हता (अचण्डा) अचण्डाः-क्रोधरहित

नहीं करते थे (मियमंजुलपलावहसिया) मितमञ्जुलप्रलापहसिताः-ये परिमित बातचीत करते थे तथा जो भी कुछ कहते वह बहुत आनंददायक होता था इनका जो हास्य होता था वह भी परिमित एवं बडा मनोमुग्धकारी होता था। (गभीरमधुरपडिपुण्णसच्चवयणा) गम्भीर मधुरप्रतिपूर्णसत्यवचनाः-रोषतोष और शोक आदि विकार से वर्जित होने के कारण गभीर श्रवण-सुखकारी होने के कारण मधुर और अर्थ बोधजनक होने के कारण प्रतिपूर्ण ऐसे इनके सत्यवचन होते हैं। (अब्भुगयवच्छला) अभ्युपगतवत्सला ये शरणागतवत्सल होते हैं। (सरण्णा) शरण्याः-दीन हीनजनों की रक्षा करने में ये कटिबद्ध रहते हैं (लक्खण-वंजणगुणोववेया) लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेताः-वज्र स्वस्तिक और चक्र आदि चिह्नरूप लक्षणों तथा तिल, मसा आदिरूप व्यंजनों के महर्द्धिलाभादि रूप गुणों से ये युक्त होते है। (माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंग सुंदरंगा) मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः-मान, उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण होने के कारण यथोचित सन्निवेशवाले हैं अंग जिसमें ऐसे सुन्दर शरीरवाले ये होते है। (ससि सोमागारकंतपियदंसणा) शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः-जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान

વ્યક્તિ પર તેઓ વિના કારણ ક્રોધ કરતા નહતા, (मियमंजुलपलावहसिया) मितमञ्जुलप्रलापहसिताः--તેઓ પરિમિત વાતચીત કરનારા, આનંદદાયક વચનવાળા અને પરિમિત તથા મને હર હાસ્યવાળા હતા (गंभीरमधुरपडिपुण्ण-सच्चवयणा) गम्भीर मधुर प्रतिपूर्ण सत्यवचनाः-રોષ, શોક આદિ વિકારથી રહિત હોવાને કારણે ગંભીર, સાંભળનારને સુખદાયી હોવાથી મધુર, અને અર્થ-બોધક હોવાને કારણે પ્રતિપૂર્ણ એવા સત્યવચન બોલનારા હતા (अब्भुगयवच्छला) अभ्युपगतवत्सला-તેઓ શરણાગતવત્સલ હતા, (सरण्णा) शरण्याः-દીન, અને નિરાધારનું રક્ષણ કરવાને માટે સદા તત્પર રહેતા હતા, (लक्खणवंजण गुणोववेया) लक्षण व्यञ्जनगुणोपपेता-વજ્ર, સ્વસ્તિક, ચક્ર આદિ શુભ લક્ષણો તથા તલ, મસા આદિરૂપ વ્યંજનોના મહર્દ્ધિલાભાદિરૂપ ગુણોથી તેઓ યુક્ત હોય છે, (माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा) मानोन्मानप्रमाण प्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः--માન, ઉન્માન અને પ્રમાણની પરિપૂર્ણતાને લીધે તેમના અવયવો સપ્રમાણ અને સુડોળ લાગે છે. અને સપ્રમાણ અંગોને લીધે તેમના શરીર અતિશય સુંદર લાગે છે (ससिसोमागारकंतपियंदसणा) शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः--જેમનું દર્શન ચન્દ્રમાની જેમ આનંદજનક

आह्लादजनक और चित्त को हरण करनेवाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आह्लाद का कारण होता है। (अमरिसणा) अमर्षणाः—अपकारी जनों पर भी इन्हें रोष नहीं आता है। (पयंडदंडप्पयारा) प्रकाण्डदण्डप्रकारा—इनका नीतिका भेदरूप दण्ड प्रहार उत्कृष्ट होता है। (गम्भीरदरिसणिज्जा) गम्भीरदर्शनीयाः—इनकी मनःवृत्ति अलक्ष्यमाण होने से ये बहुत ही गम्भीर दिखलाई देते हैं। (सावद्ध ओविद्ध गरुलकेऊ) सालक्ष्यजोद्विद्धगरुडकेतवः—बलदेवों की पताकाएँ—ध्वजाएँ—तालवृक्ष के चिह्नों से अंकित होती हैं और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। (महाधिक्कुडगा) महाधिक्कुटकाः—बड़े से बड़े वीर भी जिस धनुष को नहीं चढ़ा सकते हैं ऐसे धनुष को ये चढ़ाते हैं। (महासत्तसागरा महासत्त्वसागराः—विशिष्टबल के ये धारी होते हैं (दुद्धरा) दुर्धराः—रण प्रांगण में प्रहार के समय कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का वार नहीं होता है। (धणुद्धरा) धनुर्धराः—ये बड़े भारी धनुर्धारी होते हैं (वीरपुरिसा) वीरपुरुषाः—वीर पुरुषों में ही इनका पुरुषोद्धार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। (जुद्ध कित्तिपुरिसा) युद्ध कीर्तिपुरुषाः—ये युद्ध जनितकीर्ति प्रधान पुरुष होते हैं। (विउलकुलसमुग्गया) विपुलकुलसमुद्गताः—ये बड़े ऊँचे खानदान के

અને ચિત્તાકર્ષક હોય છે અને હર્ષકને (દિનારને) મનમાં અપૂર્વ આહ્લાદકારક હોય છે (अमरिसणा) अमर्षणा—અપકારી હોવા પર પણ તેમને ક્રોધ આતો નથી (पयंडदंडप्पयारा) प्रकाण्डदण्डप्रकाराः—તેમનો નીતિના ભેદરૂપ દંડપ્રહાર ઉત્કટ હોય છે (गम्भीरदरिसणिज्जा) गम्भीरदर्शनीयाः— તેમની મનોવૃત્તિ અલક્ષ્યમાણ હોવાથી તેવી હોતી નથી, તેથી તેઓ બહુ ગંભીર દેખાય છે (सावद्ध ओविद्ध गरुलकेऊ) सालक्ष्यजोद्विद्धगरुडकेतवः—બલદેવની ધ્વજાઓ તાલવૃક્ષનાં ચિહ્નવાળી હોય છે અને વાસુદેવની ધ્વજાઓ ગરુડના ચિહ્નવાળી હોય છે (महाधिक्कुडगा) महाधिक्कुटकाः—જે ધનુષ્યને વીરમાં વીર પુરુષ પણ ચઢાવી શકતો નથી તે ધનુષ્યને તેઓ ચઢાવી શકે છે (महासत्तसागरा) महासत्त्वसागराः—તેઓ વિશિષ્ટ બળથી યુક્ત હોય છે (दुद्धरा) दुर्धराः—સમરાંગણમાં કોઇપણ ધનુર્ધારી પોતાના ધનુષ્યબાણથી તેમના પર પ્રહાર કરી શકતો નથી. અથવા કોઇપણ ધનુર્ધારી ધારણ ન કરી શકે તેવા ધનુષ્યને ધારણ કરનારા હોય છે (धणुद्धरा) धनुर्धराः—તેઓ બહુ મોટા ધનુર્ધારી હોય છે (वीरपुरिसा) वीरपुरुषाः—વીરપુરુષોમાં જે તેમનો પુરુષકાર વિશિષ્ટ હોય છે, કાયરોમાં નહીં (जुद्धकित्तिपुरिसा) युद्धकीर्तिपुरुषाः— તેઓ યુદ્ધજનિત કીર્તિવાળા પુરુષો હોય છે (विउलकुलसमुग्गया) विपुलकुल

होते हैं (महारणविहाडगा) महारणविघाटकाः-अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर रण को छिन्न भिन्न कर डालते हैं। (अद्धभरहसामी) अर्द्धभारतस्वामिनः-आधे भरतक्षेत्र के ये स्वामी होते हैं। (सोमा) सौम्याः-समस्त मनुष्यों को इनसे बडा सुख-आनंद मिलता है। (रायकुलवंसतिलया) राजकुलवंशतिलकाः-राजवंश के तिलक समान थे। (अजिया) अजिताः-इन्हें कोई भी नहीं जीत सकता था। (अजियरहा) इनके रथ पर कोई शत्रु कब्जा नहीं कर सकता था। (हलमुसलकणकपाणी) हलमुसलकणकपाणयः--हल, मुसल और बाण इनके हाथों में रहा करते हैं। (संखचक्कगयनंदणधरा) शङ्खचक्रगदानन्दकधराः-शंख, चक्र, गदा और नन्दक-तलवार को ये धारण किये रहते थे (पवरुज्जलसुकंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी) प्रवरोज्ज्वलशुक्लान्तविमलकौस्तुभतिरीटधारिणः-इनका स्वभाव श्रेष्ठ, देदीप्यमान, और शुभ्र अवयवों से युक्त कौस्तुभमणि को और मुकुट को धारण करने का होता है। (कुंडलउज्जोइयाणणा) कुण्डलोद्योतिताननाः-कुंडलों की चमक से इनका मुख सदा प्रकाशित रहता है। (पुंडरीयणयणा) पुण्डरीकनयनाः-इनके नेत्रकमल जैसे होते हैं। (एकावलिकण्ठलइयवच्छा) एकावलिकण्ठ-

---

समुद्धराः-તે ઘણા બળવાન કુટુંબના હોય છે (महारणविहाडगा) महारणविघाटकाः-તેઓ પોતાના પરાક્રમથી ભયંકરમા ભયંકર સંગ્રામને પણ છિન્નભિન્ન કરી શકે છે (अद्धभरहसामी) अर्द्धभारतस्वामिनः-તેઓ અર્ધા ભરતક્ષેત્રના શાસક હોય છે (सोमा) सौम्या-સૌમ્ય હોય છે સઘળા લોકોને સુખદાયી હોય છે (रायकुलवंसतिलया) राजकुलवंशतिलकाः-રાજવંશમા તિલક સમાન હતા (अजिया) अजिताः-તેઓ અજેય હતા. (अजियरहा) કોઈપણ શત્રુ તેમનો રથ કબ્જે કરી શકતો નહી. (हलमुसलकणकपाणी) हलमुसलकणकपाणयः-તેઓ હલ, મુસળ અને બાણને પોતાના હાથમા ધારણ કરતા હતા, (संखचक्कगयनंदणधरा] शङ्खचक्रगदानन्दकधराः-તેઓ શંખ, ચક્ર, ગદા અને તલવારને ધારણ કરતા હતા (पवरुज्जलसुकंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी) प्रवरोज्ज्वलशुक्लान्तविमलकौस्तुभतिरीटधारिणः- તેઓ શ્રેષ્ઠ, દેદીપ્યમાન અને શુભ્ર કૌસ્તુભમણિને તથા મુગટને ધારણ કરતા હતા (कुंडलउज्जोइयाणणा) कुण्डलोद्योतिताननाः-કુંડળોની દ્યુતિ (તેજ) થી તેમના વદન સદા પ્રકાશિત રહેતા હતા (पुंडरीयणयणा) पुण्डरीकनयनाः-તેમના નયન કમળ જેવા સુંદર હતા. (एकावलिकण्ठलइयवच्छा) एकावलिकण्ठलग्नवक्षसः-તેમનો એક સેરનો

एगनयक्खस –ये जिस एकावली हार को अपने कण्ठ में धारण किये रहते है वह इनकी छातीपर लटकता रहता है (सिरीवच्छसुलच्छणा) श्रीवत्ससुलाञ्छना –श्रीवत्सस्वस्तिक का इनके चिह्न होता है (वरजसा) वरयशसः –ये बड़े यशस्वी होते हैं। (सव्वउयसुरभिकुसुमरइयपलम्बसोभमानकन्तविकसतविचित्तवरमालारइयवच्छा) सर्वऋतुसुरभिकुसुमरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसद्विचित्रवरमालारचितवक्षस्का –इनका वक्षः स्थल सर्वऋतुसंबंधी सुरभित कुसुमों से रचितलम्बी२ मालाओं से कि जिनकी रचना विचित्रप्रकार की होती है और जो बड़ी सुहावनी लगती हैं उनसे युक्त रहा करता है। (अहुत्तरसयविभत्तलक्खणपसत्थसुन्दरविरइयंगमगा) अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविरचिताङ्गाः —इनके प्रत्येक अंग पृथक २ अवस्थित एकसौ आठ १०८ शंख, चक्र आदि चिह्नों से युक्त रहा करते थे अतः ये बड़े प्रशस्त और सुन्दर होते हैं। (मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई) मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमगतयः –मदोन्मत्त श्रेष्ठ गजराजों की मनोहर गति जैसी इनकी गति–चाल विलास युक्त होती है। (सारयनवथणियमहुरगंभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिसरा) शारदनवस्तनितमधुरगंभीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वराः —इनकी दुन्दुभियों का निर्घोष शरदऋतुसंबंधी मेघ के समान तथा क्रौंच पक्षी के शब्द जैसा होता

હાર તેમની છાતી ઉપર લટકતો હતો (सिरीवच्छसुलच्छणा) श्रीवत्स सुलाञ्छना– તેમને શ્રીવત્સ સ્વસ્તિક ચિહ્ન હોય છે (वरजसा) वरयशसः–તેઓ બધા યશસ્વી હતા (सव्वउयसुरभिकुसुमरइयपलम्बसोभमानकन्तविकसतविचित्तवरमालारइयवच्छा) सर्वऋतुसुरभिकुसुमरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसद् विचित्रवरमालारचितवक्षस्का–સર્વ ઋતુના સુરભિત પુષ્પોથી બનાવેલી અનેક પ્રકારની રચનાવાળી અને અતિશય સુંદર, અને લાંબી લાંબી માળાઓથી તેમના વક્ષઃસ્થળ હંમેશા શોભતાં હતાં (अहुत्तरसयविभत्तलक्खणपसत्थसुन्दरविरइयंगमगा) अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविरचिताङ्गाः– ઉત્તમ જાતના આઠસો ૧૦૮ શંખો આદિ ચિહ્નોથી તેમના અંગો અલંકૃત હોય છે તેથી તે બધા બહુ સુંદર હોય છે (मत्तगयवरिंदललिय विक्कमविलसियगई) मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमगतयः– મદોન્મત્ત શ્રેષ્ઠ ગજરાજોની મનોહર ગતિ જેવી તેમની ગતિ–ચાલ વિલાસયુક્ત હોય છે (सारयनवथणियमहुरगंभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिसरा) शारदनवस्तनितमधुरगंभीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वराः—તેમના દુંદુભીઓનો નાદ શરદ ઋતુના મેઘના જેવો તથા ક્રૌંચ પક્ષીના અવાજ જેવો હોય છે (कडिसुत्तग

है। (कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा) कटिसूत्रकनीलपीतकौशेयवाससः–इनके नील पीत रेशमीवस्त्र कणदोरे–करधनी से युक्त होते हैं। (पवरदित्ततेया) प्रवरदीप्ततेजसः––इनका प्रवरतेज सदा दीप्त रहता है। (नरसीहा) नरसिंहा–ये मनुष्यों में सिंह जैसे रहा करते हैं (नरवई) नरपतयः–ये नरपति (नरिंदा) नरेन्द्राः–नरेन्द्र (नरवसहा) नरवृषभाः–और नरवृषभ कहलाते हैं। (मरुयवसभकप्पा) मरुद्वृषभकल्पाः–देवराज इन्द्र जैसे होते हैं। (अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणा) अभ्यधिकराजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः–ये राजलक्ष्मी के तेजसे बहुत अधिक दीपते रहते हैं। (नीलगपीयगवसणा) नीलकपीतकवसनाः–ये जिनवस्त्रों को पहिरते हैं वे नीले और पीले होते हैं। [दुवे दुवे रामकेसवा भायरो] द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ–"ऐसे ये दो दो राम और केशव आपस में भाई२ होते है" इस क्रम से नव वासुदेव और नव बलदेव होते हैं। [तिविट्ठ जाव कण्हे) त्रिपिष्टो यावत् कृष्णः–त्रिपृष्ठ से लेकर कृष्णतक तो नौ वासुदेव हुए हैं [अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे] अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः–अचलसे लेकर रामतक नौ बलदेव हुए हैं ॥सू. २०७॥

नीलपीयकोसेज्जवाससा) कटिसूत्रक नील पीतकौशेयवाससः–तेमना नील, पीळा, रेशमी वस्त्रो कटिदोराथी युकत होय छे. (पवरदित्ततेया) प्रवरदीप्ततेजसः–तेओ श्रेष्ठ प्रकारना सदा देदीप्यमान तेजवाळा होय छे. (नरसीहा) नरसिंहाः–तेओ माणुसोमा सिंह जेवा बळवान होय छे (नरवई) नरपतयः–तेमने नरपति, (नरिंदा) नरेन्द्राः–नरेन्द्र, (नरवसहा) नरवृषभाः–अने नरवृषभ कहेवामा आवे छे (मरुयवसभकप्पा) मरुद् वृषभकल्पाः–तेओ देवराज इन्द्रना जेवा होय छे. (अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणा) अभ्यधिकराजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः–राजलक्ष्मीना तेजथी तेओ अधिक देदीप्यमान लागे छे (नीलगपीयगवसणा) नीलकपीतकवसनाः–तेओ नील अने पीळां वस्त्रो धारण करे छे (दुवेदुवे रामकेसवा भायरो) द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ–"उपरोकत प्रकारना राम अने केशव ओ बन्ने भाईओ होय छे आ क्रम प्रमाणे नव वासुदेव अने नव बळदेव थया छे. (तिविट्ठ जाव कण्हे) त्रिपृष्ठो यावत् कृष्णाः–त्रिपृष्ठथी लइने कृष्ण सुधीना नव वासुदेवो थया छे (अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे) अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः–अने अचळथी लइने राम सुधीना नव बळदेव थया छे ॥सू. २०७॥

टीका-'जबुदीवे ण' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नव 'दसारमंडला' दशाराण्यतिरिक्तत्वाद् दशारा वासुदेवबलदेवास्तेषां मण्डलानि=समुदायाः=वासुदेवबलदेवद्वयसमुदाया इत्यर्थः, 'होत्था' आसन् 'त जहा' तद्यथा-'उत्तमपुरिसा' उत्तमपुरुषाः, तीर्थंकरादीनां चतुष्पञ्चाशत उत्तमपुरुषाणां मध्यवर्तित्वात्, 'मज्झिमपुरिसा' मध्यमपुरुषाः—तीर्थंकराणां चक्रवर्तिनां वासुदेवादीनां च बलापेक्षया मध्यवर्तित्वात्, 'पहाणपुरिसा' प्रधानपुरुषाः—तत्कालोद्भवपुरुषेषु शौर्यादिभिः प्रधानत्वात्, 'ओयंसी' ओजस्विनः=मनोबलयुक्ताः, 'तेयंसी' तेजस्विनः-देदीप्यमानशरीराः 'वच्चंसी' वर्चस्विनः-शारीरबलयुक्ताः 'जसंसी' यशस्विनः-पराक्रमित्वात्प्रसिद्धि प्राप्ताः, 'छायंसी'

टीका—'जबूदीवे ण दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप के वर्तमान भरत क्षेत्र के अन्दर इस अवसर्पिणीकाल में नौ वासुदेव और बलदेव हुए हैं। यहां दशारशब्द अपने से अभ्यतिरिक्त-अभिन्न होने के कारण वासुदेव और बलदेव का वाचक है। मंडल शब्द समुदाय का वाचक है। अर्थात् एक बलदेव और एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल हुए हैं। ये तीर्थंकरादिक ५४ चोपन उत्तमपुरुषों के मध्यवर्ती होने के कारण उत्तमपुरुष, तीर्थंकरचक्रवर्ती और वासुदेव आदिकों के बल आदि की अपेक्षा मध्यवर्ती होने के कारण मध्यपुरुष तथा उनके समय में उत्पन्न हुए पुरुषों में शौर्य आदि की अपेक्षा प्रधान होने के कारण प्रधानपुरुष माने जाते हैं। ये मनोबल से युक्त थे-अतः ओजस्वी थे, इनका शरीर देदीप्यमान था इसलिये तेजस्वी थे। शारीरिक बल से ये सपन्न थे इसलिये वर्चस्वी थे। पराक्रमी होने के

ટીકાર્થ- 'जबूदीवे ण दीवे' इत्यादि—આ જંબૂદ્વીપમાં આવેલા ભારતક્ષેત્રમાં આ અવસર્પિણી કાળમાં નવ વાસુદેવ અને નવ બલદેવ થયા છે અહીં 'દશાર' શબ્દ અભિન્ન હોવાને કારણે વાસુદેવ અને બલદેવનો વાચક છે એટલે કે એક બલદેવ અને એક વાસુદેવ એ પ્રમાણે તેમના બબ્બેનાં નવ યુગલ થયા છે તીર્થંકરાદિ ૫૪ ચોપન પુરુષોમાં તેમની અવના થતી હોવાથી તે ઉત્તમ પુરુષો કહ્યા છે તીર્થંકર ચક્રવર્તી વગેરેની અપેક્ષાએ બલ આદિની અપેક્ષાએ તેઓ મધ્યવર્તી હોય છે તેથી તેમને મધ્યમપુરુષ કહ્યા છે તથા તેમના સમયવર્તી પુરુષોમાં શૌર્ય આદિની અપેક્ષાએ તેઓ જેષ્ઠ હતા તેથી તેમને પ્રધાનપુરુષો કહ્યા છે તેઓ મનોબળવાળા હોવાને કારણે ઓજસ્વી હતા તેમનું શરીર દેદીપ્યમાન હોવાથી તેઓ તેજસ્વી હતા. શારીરિક બળયુક્ત હોવાથી તેઓ વર્ચસ્વી

छायावन्तः-शोभासंपन्नशरीराः, अतएव 'कंता' कान्ताः=कमनीयरूपलावण्यसंपन्नाः 'सोमा' सोम्याः-आल्हादकाकारसंपन्नाः 'सुभगा' सुभगाः-जगद्वल्लभाः 'पियदसणा' प्रियदर्शनाः-दर्शकजननयनानन्दजनकाः 'सुरूवा' सुरूपाः-सर्वातिशायिरूपलावण्योपेताः, तथा-'सुहसीलसुहाभिगमसव्वजणनयणकंता-शुभशीलसुखाभिगम्यसर्वजननयनकान्ताः-शुभशीलाः=सुस्वभावाः, सुखाभिगम्याः=सर्वजनप्राप्याः, सर्वजननयनकान्ताः-सर्वजननयनानन्दजनकाः, एतेषां कर्मधारयः। तथा-'ओहबला' ओघबला.-पराक्रमप्रवाहयुक्ताः, 'अइबला' अतिबलाः-शेषपुरुषापेक्षया प्रबलबलवन्तः, 'महाबला' महाबलाः=प्रशस्तपराक्रमयुक्ताः, 'अनि

कारण इनकी बहुत अधिक प्रसिद्धि थी इसलिये ये यशस्वी थे। इनका शरीर विशिष्ट प्रकार की शोभा से सहित था इसिलिये ये छायंसी-छायावन्त थे। और इसी कारण से ये कमनीय रूप, लावण्य से मनोहर थे अतः कान्त थे। लोगों को इनके देखने से बडा आह्लाद होता था इसलिये ये सौम्य थे। जगज्जनो को विशेष प्रिय होने के कारण ये सुभग थे। दर्शकजनों के नेत्रों को आनंदजनक होने के कारण ये प्रियदर्शन थे। सर्वातिशायीरूप और लावण्य से युक्त होने के कारण सज्जनोचित याने सुरूपवाले थे। तथा इन का स्वभाव बडा अच्छा था, हरएक प्राणी इनसे विना किसी झिझक के मिल सकता था। समस्तजन इन्हें देखकर बहुत खुश होते थे। इनके पराक्रम का प्रवाह सदा एकसा रहता था-इसलिये ये ओघबलवाले थे। शेष मनुष्यों की अपेक्षा ये अधिक बलिष्ट थे। इनका पराक्रम प्रशस्त था। निरुपद्रव आयुवाले

હતા. તેઓ પરાક્રમી હતા, તેથી તેમની પ્રસિદ્ધિને કારણે તેઓ યશસ્વી હતા. તેમનુ શરીર વિશિષ્ટ પ્રકારની શોભાવાળું હોવાથી તેમને છાયાંસી-છાયાવન્ત કહેલ છે, અને એજ કારણે કમનીયરૂપ અને લાવણ્યથી તેઓ મનોહર હતા તથા તેઓ કાન્ત હતા. તેમના દર્શનથી લોકોના હૃદયમા આનંદ થતો તેથી તેમને સૌમ્ય કહ્યા છે. જગતના લોકોને તેઓ ઘણા પ્રિય હોવાથી સુભગ હતા. દર્શકોના નેત્રોને અત્યંત આનંદજનક હોવાથી તેઓ પ્રિયદર્શન હતા. સર્વાતિશાયીરૂપ અને લાવણ્યવાળા હોવાથી તેઓ સુરૂપ હતા. તેમનો સ્વભાવ એટલો બધો સારો હતો કે દરેક મનુષ્ય કોઇ પણ પ્રકારના ડર સિવાય તેમને મળી શકતા હતા. તેમને જોઇને સઘળા લોકોને ઘણો આનંદ થતો હતો. તેમના પરાક્રમનો પ્રવાહ સદા એકધારો રહેતો હતો તેથી તેમને ઓઘબળવાળા કહ્યા છે. બીજા મનુષ્યો કરતા તેઓ વધારે બળવાન હતા. તે પ્રશસ્ત પરાક્રમવાળા હતા. નિરુપદ્રવ આયુ-

हता' अनिहताः निरुपद्रवापुष्कत्वाद् घातवर्जिताः, 'अपराजिया' अपराजिताः-शत्रुकृतपराभवरहिताः 'सत्तुमद्दणा' शत्रुमर्दनाः-शत्रुमर्दका इत्यर्थः, 'रिपुबलस्समानमद्दणा' रिपुबलस्यमानमर्दनाः-रिपुमानमर्दका इत्यर्थः, 'साणुक्कोसा' सानुक्रोशाः-प्राणिषु दयाकारका इत्यर्थः, 'अमच्छरा' अमत्सराः-परगुणलवस्यापि ग्राहकाः, 'अचवला' अचपला =मनोवाक्कायचापल्यवर्जिताः, 'अचण्डा' अचण्डाः-निष्कारणकोपवर्जिताः, 'मियमंजुलपलावहसिया' मितमञ्जुलप्रलापहसिताः मितमञ्जुले प्रलापहसिते येषां ते तथोक्ताः-परिमितकोमलवचनवन्तः परिमितमनोहरहास्यवन्तश्चेत्यर्थः, तथा-'गंभीरमधुरपडिपुण्णसत्थवयणा' गम्भीरमधुरप्रतिपूर्णसत्यवचनाः-तत्र गम्भीरम्-रोषतोषशोकादिविकारवर्जितम्, मधुरं=श्रवणसुखकरम्, प्रतिपूर्णम्-अर्थघोषजनकम्, सत्य=यथार्थं वचनं येषां ते तथोक्ताः,

होने के कारण ये घातवर्जित थे। शत्रुओं द्वारा ये कभी पराजित नहीं हो सकने के कारण अपराजित थे। शत्रुओं के ये मर्दक थे। हजारों शत्रुओं का इनके समक्ष मानमर्दित हो जाता था। जो इनके समक्ष झुक जाता था उनके ऊपर ये सदा दयालु रहते थे। मत्सरभाव से ये रहित थे। दूसरों में थोडा सा भी यदि कोई गुण होता था तो उसे ये ग्रहण कर लेते थे। मन, वचन, और काय की चपलता इनमें नहीं थी। ये बिना कारण किसी के ऊपर कभी भी क्रोध नहीं करते थे। ये परिमित बातचीत करते थे तथा जो भी कुछ कहते थे वह बहुत आनन्दायक होता था। इनका जो हास्य होता था वह भी परिमित एवं बडा मनोहारी होता था। रोष, तोष और शोक आदि विकारों से वर्जित होने के कारण गम्भीर, श्रवणसुखकारी होने के कारण मधुर और अर्थबोधजनक होने के कारण प्रतिपूर्ण ऐसे इनके सत्यवचन

थता હોવાથી તેમને અવરોધિત કરેલા છે શત્રુઓ દ્વારા તેમનો પરાભવ કરાતો નહીં હોવાથી તેમને અપરાજિત કહ્યા છે તેઓ શત્રુઓનું મર્દન કરનારા હતા તેઓ હજારે શત્રુઓનું માનમર્દન કરનારા હતા તેમને નમનારા પ્રત્યે તેઓ સદ્ દયદૃષ્ટિ રાખતા હતા મત્સર ભાવ (અભિમાન) થી રહિત હતા અન્યના જે કંઈ ગુણવાળા પણ હતા તેઓ ગ્રહણ કરતા હતા મન વચન અને કાયાની ચંચલતા તેમનામાં ન હતી તેઓ વિના કારણ કોઈના ઉપર રોષ કરતા નહીં તેઓ મિતભાષી હતા તેમની બધી જ વાતચીત હતી તેમનું હાસ્ય પણ પરિમિત અને મનને મુગ્ધ કરનારું હતું રોષ તોષ અને શોક આદિ વિકારોથી રહિત હોવાને કારણે ગંભીર હતા શ્રવણસુખકારી હોવાથી મધુર અને અર્થબોધ કરાવવાને કારણે પ્રતિપૂર્ણ એવા તેમના સત્યવચનો હતા તેઓ સત્યવાદી હતા તીન દુઃખોનો મિટા દેનેવાલે

'अब्भुवगयवच्छला' अभ्युपगतवत्सला=शरणागतवत्सला इत्यर्थः, तथा-'सरण्णा' शरण्याः=दीनहीनजनपरित्राणपरायणाः तथा-'लक्खणवंजणगुणोववेया' लक्षण-व्यञ्जनगुणोपपेताः-तत्र लक्षणानि=वज्रस्वस्तिक चक्रादीनि चिह्नानि व्यञ्जनानि= तिलकमशकादीनि तेषा ये गुणाः-महर्द्धिलाभादयस्तैरुपपेताः=युक्ताः, तथा-'माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वगसुंदरंगा' मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजात-सर्वाङ्गसुन्दराङ्गा=तत्र-मानम्-मीयते परिच्छिद्यते पदार्थोऽनेनेतिमानम्, तुलाङ्गुली-प्रस्थादिना तोलनम्, यद्वा-जलपरिपूर्णकुण्डादिप्रविष्टे पुरुषादौ यदा द्रोणपरिमित जलं निस्सरति तदा स पुरुषादिर्मानवानित्युच्यते तदेव, उन्मानम्=ऊर्ध्वमान, यद्वा-अर्द्धभाररूपः परिमाणविशेषः, प्रमाणं=सर्वतो मानम्, यद्वा-निजाङ्गुलीभि-रष्टोत्तरशताङ्गुलिपरिमितोच्छ्रायः, इत्थं च मानं चोन्मानं च प्रमाणं चेत्येतेषा

होते है। ये शरणागतवत्सल होते है। दीनहीनजनो की रक्षा करने में ये सदा कटिबद्ध रहते है। वज्र, स्वस्तिक और चक्र आदि चिह्नरूप लक्षणों, तथा तिल, मस्सा आदिरूप व्यञ्जनो के महर्द्धिलाभादिरूप गुणों से ये युक्त होते हैं। मान, उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण होने के कारण यथोचित अवयवसन्निवेशवाले हैं अंग जिसमे ऐसे सुन्दर शरीर वाले ये होते हैं। जल से परिपूर्ण कुण्ड आदि में प्रविष्ट होने पर द्रोणपरिमित जल यदि उस कुंड से बाहिर निकल जाता है तो वह प्राणी मानवाला कहा जाता है। अथवा पदार्थ का वजन जिससे मापा जावे उसका नाम मान है। तुला, अंगुली और प्रस्थादि से जैसे व्यवहार में माप किया जाता है। इस मान का ही नाम उन्मान है। अथवा अर्धभाररूप परिमाणविशेष का नाम उन्मान है। अपनी अंगुलियों से १०८ एकसौआठ अंगुलीप्रमाण शरीर की ऊंचाई का नाम प्रमाण है।

તેઓ સદા તત્પર રહેતા હતા વજ્ર, સ્વસ્તિક, ચક્ર આદિ ચિહ્નરૂપ લક્ષણો તથા તલ, મસા આદિરૂપ વ્યંજનોના મહાઋદ્ધિ, લાભ આદિથી તે યુકત હતા માન, ઉન્માન અને પ્રમાણથી પરિપૂર્ણ હોવાને કારણે યોગ્ય અવયવ સન્નિવેશ વાળા અંગોથી યુકત સુંદર શરીરવાળા હતા એટલે કે તેમના અંગ ઉપાંગો સપ્રમાણ હતા. પાણિથી પરિપૂર્ણ કુંડ આદિમા પ્રવેશ કરતા દ્રોણ પરિમિત જળ જે ને કુંડ આદિમાથી બહાર નીકળે તો તે મનુષ્યને માનવાળો કહેવાય છે અથવા પદાર્થનુ વજન જેનાથી માપી શકાય તેને માન કહે છે તુલા, અંગુલી આદિથી જેવી રીતે વ્યવહારમા માપ લેવામા આવે છે તે માનને જ ઉન્માન કહે છે અથવા અર્ધભારરૂપ પરિમાણ વિશેષને ઉન્માન કહે છે પોતાની આંગળી કરતાં ૧૦૮ એકસો આઠ ગણી શરીરની ઉંચાઈને પ્રમાણ કહે છે માથાથી પગ સુધીના

द्वे माना-मानसमाणानि, ते परिपूर्णानि=सम्पन्नानि अतएव सुजातानि=यथाचितावयवसन्निवेशवन्ति सर्वाणि=सकलानि अङ्गानि-मस्तकादारभ्य चरणान्तानि यस्मिन् शरीरे तत्तथोक्तं मानोन्मानप्रमाणपरिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दरमङ्गं यस्य स तथोक्तः, तथा-'ससिसोमागारकंतपियदंसणा' शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः, शशिवत्सौम्यम्=आह्लादकम् कान्तं=कमनीयं=चित्तहारि, प्रियं=दर्शनमनसामाह्लादजनकं, दर्शनम्=अवलोकनं यस्य स तथोक्तः, तथा-'अमरिसणा' अमर्षणाः=कार्येष्वनलसा यद्वा-अमर्षणाः=निरन्तरापकारिष्वपि क्रोधरहिताः, तथा-'पयडदण्डगारा' प्रकाण्डदण्डकाराः-प्रकाण्डः=उत्कोदण्डकारः=दण्डनीतिभेदो यस्य ते तथोक्ताः, तथा-'गंभीरदरिसणिज्जा' गम्भीरदर्शनीयाः-अमङ्गलमाशान्तर्हितत्वेन गभीरा इवाने ये ते तथोक्ताः, तथा-'तालुज्जोइयगयकक्कडा' तालध्वजोद्विद्धगरुडकेतवः-तालः=तालध्वजाङ्कितो

मस्तक से लगाकर चरणतक के अवयवों का नाम अंग है। तात्पर्य कहने का यह है कि इनके शारीरिक अवयवों की रचना बड़ी सुन्दर प्रमाणोपेत होती है। शरीर की अपेक्षा जिस अंग की जितनी लम्बाई चौड़ाई होनी चाहिये उस अंग की उतनी ही लम्बाई चौड़ाई और मोटाई होती है। किसी भी अंग में किसी भी प्रकार की मान उन्मान आदि की अपेक्षा हीनाधिकता नहीं रहती है। जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान आह्लादजनक और चित्त को हरण करने वाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आह्लाद का कारण होता है। ये सदा कार्य में आलस्य रहित होते हैं-अथवा-अपकारीजनों पर भी इन्हें क्रोध नहीं आता है। इनकी नीति का भेदरूप दण्डप्रकार उत्कट होता है। इनकी अन्तर्वृत्ति अमङ्गलरूपमाण होने से ये बहुत ही गंभीर दिखलाई देते हैं।

અવયવોને અંગ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તેમના શારીરિક અવયવોની રચના બહુ સુંદર અને પ્રમાણયુક્ત હોય છે શરીરની અપેક્ષાએ જે અંગની જેટલી લંબાઈ અને પહોળાઈ હોવી જોઈએ તેટલી જ તે અંગની લંબાઈ પહોળાઈ અને જાડાઈ હોય છે પણ અંગના માપમાં કોઈપણ પ્રકારની ન્યૂનતા કે અધિકતા હોતી નથી તેમનું દર્શન ચન્દ્રમાની દર્શનની જેમ હર્ષદાયક હોય છે અને દર્શકોના મનમાં અપૂર્વ આહ્લાદ ઉત્પન્ન કરે છે તેઓ કામમાં આળસ રહિત હોય છે-અથવા અપકારી હોય તો પણ તેમને ક્રોધ થતો નથી તેમની નીતિનો દંડરૂપ પ્રકાર ઉત્કટ હોય છે તેમના મનોભાવોને અમંગલ છુપાવેલ હોવાથી તેઓ ગંભીર લાગે છે અને

ध्वजो येषां ते तालध्वजा बलदेवाइत्यर्थः, उद्विद्धः=उच्छ्रितो गरुडः=गरुडरक्षितः केतुः पताका येषां ते-उद्विद्धगरुडकेतव, अनयोर्द्वन्द्वसमासः, तथा-'महाविकट्टया' महाविकृष्टकाः-महाधनुर्विकर्षकाः-महाप्राणादुर्धरधनुरुत्तोलिन इत्यर्थः, तथा-'महासत्तसायरा' महासत्त्वसागराः=महासत्त्वानामक्षयाधारस्थानानीत्यर्थः, तथा-'दुद्धरा' दुर्धराः-रणाङ्गणे महरणसमये केनापि धनुर्धरेण धारयितुमशक्याः, 'धणुद्धरा' धनुर्धराः=धनुर्धारिणः अथवा-'दुद्धरधणुद्धरा' दुर्धरधनुर्धराः=अन्यधनुष्मदशक्यधारणधनुर्धरा इत्यर्थः, 'धीरपुरिसा' धीरपुरुषाः-धीरेष्वेव पुरुषाः=पुरुषकारवन्तो न तु कातरेषु, 'जुद्धकित्तिपुरिसा' युद्धकीर्त्तिपुरुषाः=युद्धजनिता या कीर्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषाः इत्यर्थः, 'विउलकुलसमुब्भवा' विपुलकुलसमुद्भवाः, 'महारणविहाडगा' महारणविघाटकाः स्वपराक्रमेण महारणविघटनपरायणाः,

---

बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नो से अंकित होती हैं और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। बडे से बडे वीर भी जिस धनुष को नहीं चढा सकते हैं उस धनुष को ये चढाते हैं। विशिष्टबल के ये धारी होते है। रणाङ्गण में प्रहार के समय कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का वार नहीं होता है। ये बडे भारी धनुर्धारी होते हैं। अथवा-"दुद्धर धणुद्धरा" जिस धनुष को अन्य धनुषधारी धारण नहीं कर सकते हैं उस धनुष को ये धारण करते है। धीर पुरुषों में ही इनका पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। अर्थात् धीर पुरुषों की अपेक्षा ही इनका पुरुषकार-सामर्थ्य विशिष्ट माना गया है। कातरों की अपेक्षा नहीं। ये युद्धजनित कीर्तिप्रधान पुरुष होते हैं। ये बडे ऊँचे खानदान के होते हैं। अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर

બેની પતાકાઓ-ધ્વજાઓ-તાલવૃક્ષોના ચિહ્નોથી અંકિત હોય છે અને વાસુદેવની ધ્વજાઓ ગરુડના ચિહ્નથી અંકિત હોય છે જે ધનુષ્ય ચડાવવાને વીરમા વીર પણ સમર્થ હોતા નથી તે ધનુષને તેઓ ચડાવી શકે છે તેઓ વિશિષ્ટ બળવાળા હોય છે. સમરાંગણમા કોઈ પણ ધનુર્ધર તેમના ઉપર ધનુષમાથી તીરનો પ્રવાહ કરી શકતો નથી. તેઓ મહાન ધનુર્ધર હોય છે. અથવા 'दुद्धर धणुद्धरा' જે ધનુષને અન્ય ધનુર્ધર ધારણ કરી શકતા નથી તે ધનુષને તેઓ ધારણ કરે છે. ધીરપુરુષોમા જ તેમનો પુરુષકાર વિશિષ્ટ થાય છે. કાયરોમા નહીં એટલે કે ધીરપુરુષોની અપેક્ષાએ જ તેમનું સામર્થ્ય વિશિષ્ટ મનાય છે-કાયરોની અપેક્ષાએ નહી. તેઓ યુદ્ધજનિત કીર્તિપ્રધાન પુરુષો હોય છે તેઓ ઊચા કુળના હોય છે. પોતાના પરાક્રમથી ભયંકરમાં ભયકર શત્રુસન્યને પણ અસ્તવ્યસ્ત કરી નાખે છે તેઓ

इन्द्रे मानोन्मानप्रमाणानि, ते परिपूर्णानि=सम्पन्नानि भवन्ति सुजातानि=प्रधानिताप्रयत्ननिर्वर्तनानि सर्वाणि=सकलानि अङ्गानि=मस्तकादारभ्य पादा वानि यस्मिन शरीरे तन्मानोन्मानप्रमाणपरिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दरम् भवति तत्सर्वं सुन्दरमङ्गं यस्य स तथोक्तः, तथा-'ससिसोमागारकंतपियदंसणा' शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः, शशिवत्सौम्यम्=आह्लादकम् कान्तम्=रमणीयम्=चित्तहारि, प्रियम्=दर्शकमनोमनआह्लादजनकम्, दर्शनम्=प्रत्यक्षकरणं यस्य ते तथोक्ताः, तथा-'अमरिसणा' अमर्षणाः=कार्येष्वनलसाः यद्वा-अमर्षणाः=निरन्तरापकारिष्वपि क्रोधरहिताः, तथा-'पयइदढपयारा' प्रकृतिदृढप्रकाराः-प्रकृतेः=उत्कर्षेः दृढप्रकाराः=दृढनीतिमयाः यद्वा स तथोक्तः, तथा-'गंभीरदरिसणिज्जा' गम्भीरदर्शनीयाः-अवयवानान्तर्निक्षिप्तत्वेन गभीरा दृश्यन्ते ये ते तथोक्ताः, तथा-'तालजंघाविडगलंबकडप' तालजङ्घाविटपलम्बकटप —तालः=तालवृक्षादिनो

मस्तक से लगाकर चरणतक के अवयवों का नाम अंग है। तात्पर्य कहने का यह है कि इनके शारीरिक अवयवों की रचना बड़ी सुन्दर प्रमाणोपेत होती है। शरीर की अपेक्षा जिस अंग की जितनी लंबाई चौडाई होनी चाहिये उस अंग की उतनी ही लम्बाई चौडाई और मोटाई होती है। किसी भी अंग में किसी भी प्रकार की मान उन्मान आदि की अपेक्षा हीनाधिकता नहीं रहती है। जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान आह्लादजनक और चित्त को हरण करने वाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आह्लाद का कारण होता है। ये सदा कार्य में आलस्य रहित होते हैं-अथवा-अपकारीजनों पर भी इन्हें क्रोध नहीं आता है। इनकी नीति का मेरुरूप दृढप्रकार उत्कृष्ट होता है। इनके अवयव सूक्ष्मदृष्टि से देखने से ये बहुत ही गंभीर दिखलाई देते हैं।

અવયવોને અંગ કહે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તેમના શારીરિક અવયવોની રચના બહુ સુંદર અને પ્રમાણયુક્ત હોતી શરીરની અપેક્ષાએ જે અંગની જેટલી લંબાઈ પહોળાઈ હોવી જોઈએ તેટલી જ તે અંગની લંબાઈ પહોળાઈ અને પહોળાઈ હોય છે કોઈ પણ અંગમાં કોઈપણ પ્રકારની ન્યૂનતા કે અધિકતા હોતી નથી તેમનું દર્શન ચન્દ્રમાની સમાનની જેમ હંમેશાં આનંદદાયક અને ચિત્તને હરી લેનાર હોય છે અને દર્શકોના મનમાં અપૂર્વ આહ્લાદ ઉત્પન્ન કરે છે તેઓ હંમેશા કાર્યમાં આળસ રહિત હોય છે-અથવા અપકારી હોય ત્યારે પણ તેમને ક્રોધ થતો નથી તેમની નીતિનો મેરુરૂપ દૃઢપ્રકાર ઉત્કટ હોય છે તેમના મનોભાવોને સમજવા મુશ્કેલ હોવાથી તેઓ ગંભીર લાગે છે અર્થાત્

ध्वजो येषां ते तालध्वजा बलदेवाइत्यर्थः, उद्विद्धः=उच्छ्रितो गरुडः=गरुडचिह्नितः केतुः पताका येषां ते-उद्विद्धगरुडकेतव, अनयोर्द्वन्द्वसमासः, तथा-'महाविकट्टया' महाविकृष्टकाः-महाधनुर्विकर्षकाः-महाप्राणाद्दुर्धरधनुरुत्तोलिन इत्यर्थ, तथा-'महासत्तसायरा' महासत्त्वसागराः=महासत्त्वानामक्षयाधारस्थानानीत्यर्थः, तथा-'दुद्धरा' दुर्धराः-रणाङ्गणे प्रहरणसमये केनापि धनुर्धरेण धारयितुमशक्याः, 'धणुद्धरा' धनुर्धराः=धनुर्धारिणः अथवा-'दुद्धरधणुद्धरा' दुर्धरधनुर्धराः=अन्यधनुष्मदशक्यधारणधनुर्धरा इत्यर्थः, 'धीरपुरिसा' धीरपुरुषाः-धीरेष्वेव पुरुषाः=पुरुषकारवन्तो न तु कातरेषु, 'जुद्धकित्तिपुरिसा' युद्धकीर्त्तिपुरुषाः=युद्धजनिता या कीर्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषाः इत्यर्थः, 'विउलकुलसमुब्भवा' विपुलकुलसमुद्भवाः, 'महारणविहाडगा' महारणविघाटकाः स्वपराक्रमेण महारणविघटनपरायणाः,

---

बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नो से अंकित होती हैं और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। बडे से बडे वीर भी जिस धनुष को नहीं चढा सकते हैं उस धनुष को ये चढाते हैं। विशिष्टबल के ये धारी होते है। रणाङ्गण में प्रहार के समय कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का वार नहीं होता है। ये बडे भारी धनुर्धारी होते हैं। अथवा-"दुद्धर धणुद्धरा" जिस धनुष को अन्य धनुषधारी धारण नहीं कर सकते हैं उस धनुष को ये धारण करते है। धीर पुरुषों में ही इनका पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। अर्थात् धीर पुरुषों की अपेक्षा ही इनका पुरुषकार-सामर्थ्य विशिष्ट माना गया है। कातरों की अपेक्षा नहीं। ये युद्धजनित कीर्तिप्रधान पुरुष होते हैं। ये बडे ऊँचे खानदान के होते हैं। अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर

વોની પતાકાઓ-ધ્વજાઓ-તાલવૃક્ષોના ચિહ્નોથી અંકિત હોય છે અને વાસુદેવની ધ્વજાઓ ગરુડના ચિહ્નથી અંકિત હોય છે જે ધનુષ્ય ચડાવવાને વીરમાં વીર પણ સમર્થ હોતો નથી તે ધનુષને તેઓ ચડાવી શકે છે તેઓ વિશિષ્ટ બળવાળા હોય છે. સમરાંગણમા કોઈ પણ ધનુર્ધર તેમના ઉપર ધનુષમાથી તીરનો પ્રવાહ કરી શકતો નથી. તેઓ મહાન ધનુર્ધર હોય છે. અથવા 'दुद्धर धणुद्धरा' જે ધનુષને અન્ય ધનુર્ધર ધારણ કરી શકતા નથી તે ધનુષને તેઓ ધારણ કરે છે. ધીરપુરુષોમાં જ તેમનો પુરુષકાર વિશિષ્ટ થાય છે. કાયરોમા નહી એટલે કે ધીરપુરુષોની અપેક્ષાએ જ તેમનું સામર્થ્ય વિશિષ્ટ મનાય છે-કાયરોની અપેક્ષાએ નહી. તેઓ યુદ્ધજનિત કીર્તિપ્રધાન પુરુષો હોય છે તેઓ ઊંચા કુળના હોય છે. પોતાના પરાક્રમથી ભયંકરમાં ભયંકર શત્રુસન્યને પણ અસ્તવ્યસ્ત કરી નાખે છે તેઓ

तथा-'महब्बलरामा' महाबलरामा, तथा-'सोमा' सौम्या -सकलजना ह्लादजनका, 'रायकुलवसहिलया' राजकुलवृषभिलका -राज्ञां तिलक भूता इत्यर्थः, 'अजिआ' अजिता -न केनापि जिता इत्यर्थः, 'अजिअरहा अजितरथा -न केनापि जिता रथा यया ते तथोक्ता, 'हल्लमुसलकणगपाणी' हलमुसलकनकपाणय -हलमुसले कनका=गदा पाणौ यया ते तथोक्ता, सायव कणयनदगधरा शार्ङ्गकनकनन्दकधरा, नन्दक खड्ग, 'पवरुल्लसुकतविमल गा धुमलिरिडधारी पवराऽऽजस्मुज्ज्वलकौस्तुभमतिरीटधारिण -प्रवर-श्रेष्ठ उल्लसत्-देदीप्यमानम् सुकृत-शुभावयवयुक्तम् कौस्तुभ-मणिविशेषम्, मकुट-मुकुट च धर्तुशीलम् यया ते तथोक्ता, 'कुडलउज्जोइयाणणा' कुण्डलोद्योतितानना -कुण्डलोद्योतितमानने-मुखं यया ते तथोक्ता, कुण्डलप्रकाशित मुखा इत्यर्थः, पुंडरीयनयणा' पुण्डरीकनयना -पद्मनेत्रा इत्यर्थः, एकावलि कण्ठलयधरा' एकावलिकण्ठलतावक्षसा-एकावलीहारविशेष, सा कण्ठे लतेव यया वक्षसि वर्तते यया ते तथोक्ता, 'सिरिवच्छसुलंछणा' श्रीवत्ससुलाञ्छना -

रण को छिन्नभिन्न कर डालते हैं। आधे भरतक्षेत्र के ये स्वामी होते हैं। समस्त मनुष्यों को इनसे बड़ा सुख-आनंद मिलता है। राजवंश के तिलक समान हैं। इन्हें कोई भी नहीं जीत सकता है। इनके रथ पर कोई भी शत्रु कब्जा नहीं कर सकता है। हल, मुसल, और बाण इनके हाथों में रहा करते हैं। शार्ङ्ग, धनुष, गदा और नन्दक-तलवार को ये धारण किये रहते हैं। इनका स्वभाव श्रेष्ठ, देदीप्यमान और शुभ अवयवों से युक्त कौस्तुभमणि को और मुकुट को धारण करने का होता है। कुंडलों की चमक से इनका मुख सदा प्रकाशित रहता है। इनके नेत्र कमल जैसे सुन्दर होते हैं। ये जिस रत्नमय एकावली हार को अपने कण्ठ में धारण किये रहते हैं वह इनकी छातीतक लटकता रहता है।

અથવા બલદેવના સ્વામી હોય છે અથવા લોઢાને તેમના તરફથી બધુ શુભ પ્રાપ્ત થાય છે તેઓ રાજવંશમાં તિલક સમાન હોય છે. તેઓ અજેય હોય છે કોઈ પણ શત્રુ તેમનો રથ કબજે કરી શકતો નથી તેમના હાથોમાં હલ મુશલ અને બાણ રહે છે શાર્ઙ્ગ ધનુ અને તલવારને તેઓ ધારણ કરતા હોય છે અને દેદીપ્યમાન અને શુભ અવયવોથી યુક્ત એવા બળદેવો અને વાસુદેવોનો સ્વભાવ કૌસ્તુભમણિ અને મુકુટને ધારણ કરવાનો હોય છે કુંડલોના પ્રકાશથી તેમનું વદન સદા પ્રકાશિત રહે છે તેમનાં નયન કમળ જેવાં સુંદર હોય છે જેણે હારને તે રત્નમય હાર તેઓ ગળામાં પહેરે છે તે તેમની છાતી સુધી પહોંચે છે શ્રીવત્સ

श्रीवत्सस्वस्तिकस्य मुलाञ्छन येषा ते तथोक्ताः, 'वरजसा' वरयशसः=वरं श्रेष्ठं यशो येषां ते तथोक्ता', महायशस्विन इत्यर्थः, तथा-'सव्वउयसुरभिकुसुमरइयपलंबसोभंतकंतविकसतविचित्तवरमालरइयवच्छा' सर्वर्तुकसुरभिकुसुमरचित प्रलम्बशोभमानकान्तविकसद्विचित्रवरमालारचितवक्षस्काः-तत्र सर्वर्तुकानि= सर्वर्तुसम्बन्धीनि यानि सुरभिकुसुमानि, तै रचिताः प्रलम्बा लम्बायमानाः शोभमानाः कान्ताः-क्रमनीयाः विकसन्त्या विचित्राः विचित्रगुम्फाः या वरमालास्ताभिः रचितानि वक्षांसि=वक्षस्थलानि येषा ते तथोक्ताः, 'अट्ठुत्तरसय विभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविरइयंगमगा' अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविरचिताङ्गाङ्गाः=तत्र-अष्टोत्तरशतसंख्यकानि विभक्तानि=पृथक्पृथगवस्थितानि यानि लक्षणानि=शङ्खचक्रादीनि तैः प्रशस्तानि=माङ्गल्यानि सुन्दराणि=मनोहराणि च विरचितानि=विहितानि अङ्गाङ्गानि-प्रत्यङ्गानि येषा ते तथोक्ताः, अष्टोत्तरशतप्रशस्तलक्षणधारिण इत्यर्थः, तथा-'मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई' मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमगतयः-मत्तगजवरेन्द्राणां यो ललितो-मनोहरो विक्रमः= पादविक्षेपः, तद्वत् विलासिताः=विलासयुक्ता गतिर्येषा ते तथोक्ताः, तथा-'सारयनवथणियमहुरगभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिसरा' शारदनवस्तनितमधुरगभीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वराः-शारदो यो नवस्तनितः=शरदृतुसम्बन्धी मेघशब्दः, तथा-मधुरगम्भीरो यः क्रौञ्चनिर्घोषः=क्रौञ्चपक्षिशब्दः, दुन्दुभीनां-भेरीणां स्वरः=शब्द-

---

ચિહ્ન સ્વસ્તિક કા इनके चिह्न होना है। ये बडे यशस्वी होते है। इनका वक्षःस्थल सर्वऋतुसंबधी **सुरभित कुसुमों से रचित लम्बी माला**ओं **से कि जिनकी रचना विचित्र प्रकार** की होती है और जो देखने मे बडी **सुहावनी लगती है** युक्त रहा करता है। इनके प्रत्येक अंग पृथक् २ अवस्थित शख, चक्र आदि १०८ एकसौ आठ चिह्नों से युक्त रहा करते हैं अत. वे बडे प्रशस्त और सुन्दर होते है। मदोन्मत्त श्रेष्ठ गजराजों की मनोहर गति जैसी इनकी गति-चाल विलासयुक्त होती है। इनकी स्वर शरदऋतु संबंधी मेघ के गर्जन के समान तथा क्रौंच

સ્વસ્તિક ચિહ્ન તેમને હોય છે તેઓ ઘણા યશસ્વી હોય છે સર્વઋતુના સુગંધયુક્ત પુષ્પોમાથી બનાવેલી અપૂર્વ શોભાવાળી લાબી લાબી માળાઓથી તેમનુ વક્ષ.સ્થલ યુકત હોય છે તેમના પ્રત્યેક અગ પર શંખ, ચક્ર, આદિ ૧૦૮ એકસો આઠ લક્ષણો અલગ અલગ સ્થાને હોય છે તેથી તેઓ ઘણા પ્રશસ્ત અને સુદર હોય છે તેમની ચાલ મદોન્મત્ત શ્રેષ્ઠ ગજરાજોની મનોહર ગતિ જેવી વિલાસયુકત હોય છે તેમનો અવાજ શરદઋતુના મેઘની ગર્જના જેવો, ક્રૌચ પક્ષીના મધુર ગભીર

स्थङ्कृत् यथा ते तथोक्ताः तथा- कटिपुत्तगनासपीयकासेज्जवाससा' कटिपुत्त कनीलपीतकौशेयवाससः-कटिसदृक्-कटिपूरण 'कणदोरा' इति प्रसिद्धम्, तेन युक्तानि नीलानि पितानि कौशेयवासांसि 'रयणी' ति मापाप्रसिद्धत्वात्तानि यैषां ते तथोक्ता', तथा-'पवरदीततेया' प्रवरदीप्ततेजसः -प्रवर दीप्तं तेजो यथा ते तथोक्ता, तथा-'नरसीहा' नरसिंहा-नरेषु सिंहा इव ये ते तथोक्ताः, 'नर वई' नरपतयः 'नरिंदा' नरेन्द्राः नरवसहा' नरवृषभा'-नरश्रेष्ठा 'मरुयवसभ कप्पा' मरुद्वृषभकल्पाः=मरुतो देवास्तेषु वृषभ श्रेष्ठ-देवराजस्तस्य कल्पा सदृशा, 'अब्भहियरायतेयसमुच्छीए दिप्पमाणा' अभ्यधिकराजतेजोलक्ष्म्या दीप्य माना' 'नीलगपीयगवसणा' नीलकपीतकवसना -नीलपीतवस्त्रधारिणः 'दुवे दुवे रामकेसवा भायरो' द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ, इतिक्रमेण नवबासुदेवा नव बलदेवाः 'होत्था' बभूवुः 'तं जहा' तद्यथा-'तिविट्ठू जाव कण्हे' त्रिपृष्ठो यावत्- कृष्णा,'अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे' अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः॥सू २०७॥

पक्षी के मधुर, गंभीर शब्द के समान और दुन्दुभी के स्वर के समान होता है। इनके नीलपीत रेशमीवस्त्र कमदोरे-करधनी से युक्त होते हैं। इनका प्रवर तेज सदा दीप्त रहता है। ये मनुष्यों में सिंह जैसे रहा करते हैं। ये नरपति नरेन्द्र और नरवृषभ कहलाते हैं। एवं देवराज इन्द्र जैसे होते हैं। यहां वृषभ शब्द श्रेष्ठ अर्थका वाचक है। ये राज लक्ष्मी के तेज से बहुत अधिक दिपते रहते हैं। ये जिनवस्त्रों को पहिरते हैं वे नीले और पीले होते हैं। अर्थात् बलदेव नीलाम्बर कहलाते हैं और वासुदेव पीताम्बर होते हैं। देव ये 'दो दो राम और केशव आपस में भाई होते हैं' इस क्रम से नव वासुदेव और नव बलदेव होते हैं। त्रिपृष्ठ से लेकर कृष्णतक तो नौ वासुदेव हुए हैं और अचल से लेकर रामतक नौ बलदेव हुए हैं॥सू २०७॥

શબ્દ સમાન અને દુંદુભીના નાદ સમાન હોય છે તેમનાં નીલ અને પીતાં વસ્ત્રો પર કટીસૂત્ર હોય છે તેમનું તેજ સદા દેદીપ્યમાન રહે છે મનુષ્યોમાં તેઓ સિંહ જેવા હોય છે. તેમને નરપતિ, નરેન્દ્ર અને નરવૃષભ કહે છે ત તે દેવરાજ ઇન્દ્રના જેવા હોય છે અહીં વૃષભ શબ્દ 'શ્રેષ્ઠ' અર્થવાચક છે તેઓ રાજ લક્ષ્મીના તેજને લીધે બહુ શોભે છે તેમનાં વસ્ત્રો નીલાં કે પીળાં હોય છે જેઓ બલદેવને નીલામ્બર હોય છે અને વાસુદેવને પીતામ્બર હોય છે જેઓ 'રામ અને કેશવ' બન્ને ભાઈ-ભાઈનું સમબન્ધ હોય છે આ પ્રમાણે નવ વાસુદેવ અને નવ બલદેવ થયા છે ત્રિપૃષ્ઠથી લઈને કૃષ્ણ સુધીના નવ વાસુદેવ અને અચલથી લઈને રામ સુધીના નવ બલદેવ થયા છે ॥સૂ, ૨૦૭॥

बलदेववासुदेवाना पूर्वभविकानि नामान्याह—

मूलम्—एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था, तं जहा—विस्सभूई पव्वयए धनदत्त समुद्ददत्त इसिवाले । पियमित्त ललियमित्ते, पुणव्वसु गंगदत्ते य ॥५५॥ एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं । एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि ॥५६॥ विसनंदी य सुबंधू सागरदत्ते असोगललिए य । वाराह धम्मसेणे अपराइयरायललिए य ॥५७॥ सू० २०८॥

शब्दार्थ—(एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां खलु नवानां बलदेव वासुदेवानां—इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था) पूर्वभविकानि नव नामधेयानि आसन्—पूर्वभवसंबंधी जो नाम थे (तं जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं—(विस्सभूई पव्वयए) विश्वभूतिः पर्वतश्च—विश्वभूति१, पर्वतक२ (धनदत्त समुद्ददत्त इसिवाले) धनदत्तः समुद्रदत्त ऋषिपालः—धनदत्त३, समुद्रदत्त४, ऋषिपालः५, (पियमित्त ललियमित्ते) प्रियमित्रो ललितमित्रः—प्रियमित्र६, ललितमित्र७, (पुणव्वसु गंगदत्ते य) पुनर्वसुर्गङ्गदत्तश्च—पुनर्वसु८ और गंगदत्त९ । (एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं) एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम्—ये पूर्वभव संबंधी नाम वासुदेवों के हैं। (एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि) इतो बलदेवानां यथाक्रमं कीर्तयिष्यामि—अब बलदेवों के पूर्वभवके नाम

शब्दार्थ—(एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां—ने नव बलदेव अने वासुदेवोना (पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था) पूर्वभविकानि नवनामधेयानि आसन्—पूर्वभवना नव नाम हता. (तं जहा) तद्यथा—ते नामो आ प्रमाणे हता—(विस्सभूई पव्वयए) विश्वभूतिः पर्वतश्च—विश्वभूति१, पर्वतक२, (धनदत्त समुद्ददत्त इसिवाले) धनदत्तः, समुद्रदत्तः, ऋषिपालः—धनदत्त३, समुद्रदत्त४, ऋषिपाल५, (पियमित्तललियमित्ते) प्रियमित्रो ललितमित्रः—प्रियमित्र६, ललितमित्र७, (पुणव्वसु गंगदत्तेय) पुनर्वसुर्गङ्गदत्तश्च—पुनर्वसु८ अने गंगदत्त९ (एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं) एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम्—वासुदेवोना पूर्वभवनां ते नामो हता (एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि) इतो बलदेवानां यथाक्रमं कीर्तं

टीका—'एएसि ण' इत्यादि। एतेषां खलु नवानां बलदेवकसुदेवानां पूर्वभविकानि नव नामधेयानि 'होत्था आसन्, तंजहा-विस्सभूती पव्वतए धणदत्त समुद्ददत्त इसिपालए। पियमित्ते ललियमित्त पुणव्वसू गंगदत्ते य।५५॥ एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम्। इतो बलदेवानां पूर्वभवनामानि 'जहक्कम' यथाक्रम 'किंचासंसामि' कीर्तयिष्यामि ॥५६॥ तानि नामान्याह-विस्सनंदी य सुबंधू सागरदत्ते असोगललिए य वराहधम्मसेणे अपराइय रायललिए य) विश्वनन्दी च सुबन्धुः सागरदत्तोऽशोकोललितश्च, वाराहो धर्मसेनोऽपराजितो राजललितश्च—विश्वनंदी१ सुबंधु२, सागरदत्त३, अशोक४, ललित५, वाराह६, धर्मसेन७, अपराजित८ और राजललित९। ॥ सू २०८॥

टीकार्थ—'एएसि ण णवण्ह' इत्यादि—इन नौ वासुदेवों के पूर्वभव संबंधी जो नाम थे, वे इस प्रकार से हैं-विश्वभूति१, पर्वतक२, धनदत्त३, समुद्रदत्त४, ऋषिपाल५, प्रियमित्र६, ललितमित्र७, पुनर्वसु८ और गंगदत्त९। अब बलदेवों के पूर्वभव के नाम यथाक्रम से कहते हैं-विश्वनंदी, सुबंधु, सागरदत्त, अशोक, ललित, वाराह, धर्मसेन, अपराजित और राजललित ॥सू २०८॥

विष्यामि-હવે બળદેવોના પૂર્વભવનાં નામો અનુક્રમે કહીએ (विस्सनंदी य सुबंधू सागरदत्ते असोगललिए य वराहधम्मसेणे अपराइयरायललिए य) विश्वनन्दी च सुबन्धुः सागरदत्तोऽशोकोललितश्च, वाराहो धर्मसेनोऽपराजितो राजललितश्च-विश्वनंदी सुबंधु सागरदत्त, अशोक, ललित वाराह धर्मसेन, अपराजित अने राजललित ॥सू २०८॥

टीकार्थ—'एएसि णं णवण्ह' इत्यादि-તે નવ વાસુદેવોનાં પૂર્વભવનાં નામો અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતાં-(१) વિશ્વભૂતિ, (२) પર્વતક (३) ધનદત્ત (४) સમુદ્રદત્ત, (५) ઋષિપાલ (६) પ્રિયમિત્ર (७) લલિતમિત્ર, (८) પુનર્વસુ અને (९) ગંગદત્ત બળદેવોના પૂર્વભવનાં નામો અનુક્રમે નીચે પ્રમાણે હતાં-(१) વિશ્વનંદી (२) સુબંધુ (३) સાગરદત્ત, (४) અશોક (५) લલિત, (६) વારાહ, (७) ધર્મસેન (८) અપરાજિત (९) રાજલલિત ॥સૂ, ૨૦૮॥

मूलम्—एएसि नवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव धम्मायरिया होत्था, तं जहा—संभूय सुभद्दसुदंसणे य सेयंस कण्ह गंगदत्ते। सागरसमुद्दनामे दुमसेणे य णवमए ॥५८॥ एए धम्मायरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं। पुव्वभवे एयासिं जत्थ नियाणाइं कासी य ॥५९॥ सू० २०९॥

शब्दार्थ—(एएसिं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां नवानां बलदेववासुदेवानां—इन नौ बलदेव और वासुदेवों के (पुव्वभविया) पूर्वभविका—पूर्वभव में जो (नव धम्मायरिया होत्था) नव धर्माचार्य हुए है (तं जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं—(संभूयसुभद्दसुदंसणे य सेयंस कण्ह गंगदत्ते, सागरसमुद्दनामे दुमसेणे य णवमए, संभूतः सुभद्रः सुदर्शनश्च श्रेयांसः कृष्णो गङ्गदत्तश्च, सागरः समुद्रनामा द्रुमसेनश्च नवमकः—संभूत, सुभद्र, सुदर्शन, श्रेयांस, कृष्ण, गंगदत्त, सागर, समुद्र और नौमे द्रुमसेन। (एए धम्मायरिया कित्ती पुरिसाण वासुदेवाणं, पुव्वभवे एयासिं जत्थ नियाणाइं कासी य) एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्, पूर्वभवे आसन् यत्र निदानान्यकार्षुश्च—ये नौ धर्माचार्य इन कीर्तिपुरुष वासुदेवों के पूर्वभव में हुए है ॥सू० २०९॥

शब्दार्थ—(एएसिं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव धम्मायरिया होत्था) एतेषां नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविकाः नव धर्माचार्याः अभवन्—તે નવ બળદેવો અને વાસુદેવોના પૂર્વભવના જે નવ ધર્માચાર્યો હતા. (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(संभूयसुभद्दसुदंसणे य सेयंसकण्हगंगदत्ते, सागरसमुद्दनामे दुमसेणे य णवमए) संभूतः सुभद्रः सुदर्शनश्च श्रेयांसः कृष्णो गङ्गदत्तश्च, सागरः समुद्रनामा द्रुमसेनश्च नवमकः—(૧) સંભૂત, (૨) સુભદ્ર, (૩) સુદર્શન, (૪) શ્રેયાંસ, (૫) કૃષ્ણ, (૬) ગંગદત્ત, (૭) સાગર, (૮) સમુદ્ર અને (૯) દ્રુમસેન (एए धम्मायरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं, पुव्वभवे एयासिं जत्थनियाणाइं कासी य) एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् पूर्वभवे आसन् यत्र निदानान्यकार्षुश्च—એ કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પૂર્વભવમા તે નવ ધર્માચાર્યો થયા હતા ॥સૂ. ૨૦૯॥

टीका—'एएसिं' इत्यादि-एतेषां नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविका नव धर्माचार्या आसन्, तद्यथा-संभूत सुभद्र सुदर्शन श्रेयांस कृष्ण गङ्गदत्त सागर समुद्रनामा तुमसेनश्च नवमः ॥५८। एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्। पूर्वभव 'एयासिं' आसन् यत्र निदा नान्यकापुत्र ॥५९॥ सू २०९॥

मूलम्—एएसिं नवण्ह वासुदेवाणं नवनियाणभूमीओ होत्था, तं जहा—मथुरा य कणगवत्थू सावत्थी पोयण च रायगिह। कायदी कोसवी मिहिलपुरी हत्थिणपुर च ॥६०॥ एएसि ण णवण्ह वासुदेवाणं नव नियाणकारणा होत्था, त जहा—गावी जुवे सगाम तह इत्थीपराइओ रगे। भज्जाणुरागपरइट्ठी माउया इय ॥६१॥ एएसिं णवण्ह वासुदेवाण नव पडिसत्थू होत्था, त जहा—अस्सग्गीवे तारए मेरए मधुकेढवे निसुभे य। बलिपहराए तह रावणे य जरासधे॥६२॥ एए खलु पडिसत्तु किण्हिपुरिसाण वासुदेवाण। सव्वेवि चक्कजोही सव्वे वि हया सचक्केहिं ॥६३॥ एक्को य सत्तमीए पच य छट्ठीए पच मीए एक्को। एक्को य चउत्थीए कण्हो पुण तच्च पुढवीए ॥६४॥ अणियाणकडारामा सव्वे वि य केसवा णियाणकडा। उड्ढगामी

टीकार्थ—'एएसिं णवण्ह' इत्यादि-इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव में जो नौ धर्माचार्य हुए हैं। वे इस प्रकार से हैं—संभूत, सुभद्र सुदर्शन श्रेयांस, कृष्ण, गंगदत्त, सागर, समुद्र और नौवे तुमसेन। ये नौ धर्माचार्य इन कीर्तिपुरुष वासुदेवों के पूर्वभव में हुए हैं ॥सू० २०९॥

टीकार्थ—'एएसिं णवण्ह' इत्यादि-તે નવ બલદેવ અને વાસુદેવોના પૂર્વભવમાં જે નવ ધર્માચાર્યો થયા હતા તેમના નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) સંભૂત, (૨) સુભદ્ર, (૩) સુદર્શન, (૪) શ્રેયાંસ, (૫) કૃષ્ણ (૬) ગંગદત્ત, (૭) સાગર (૮) સમુદ્ર અને (૯) તુમસેન તે કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પૂર્વભવમા તે નવ ધર્માચાર્યો થયા હતા ॥ સૂ. ૨૦૯ ॥

रामा केसवा सव्वे अहोगामी॥६५॥ अट्ठुत्तरकडा राम एगो पुणबंभलोय कप्पम्मि। एक्कासे गब्भवसही सिज्झिस्सइ आगमिस्सेणं॥६६॥ सू.२१०॥

अब हम इन वासुदेवों की इन निदानभूमियों को कहते हैं कि जहां पर इन्होंने निदान किया था—

शब्दार्थ-(एएसिं नवण्हं वासुदेवाणं) एतेषां नवानां वासुदेवानां-इन नौ वासुदेवों की (नव नियाणभूमीओ होत्था) नव निदानभूमय आसन्-नौ निदानभूमियां थीं (तं जहा) तद्यथा-वे इस प्रकार से हैं (महुरा य कणगवत्थू सावत्थीपोयणं च रायगिहं, कायंदी कोसंबी, मिहिलपुरी हत्थिणपुर च) मथुरा कनकवास्तुश्च श्रावस्ती पोतनं च राजगृहम्, काकनन्दी कौशाम्बी मिथिलापुरी हस्तिनापुरं च-मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती, पौतन, राजगृह, काकन्दी, कौशाम्बी, मिथिलापुरी और हस्तिनापुर। (एएसिं णं णवण्हं वासुदेवाणं णव नियाणकारणा होत्था) एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नव निदानकारणान्यभूवन्-इन नौ वासुदेवों के नौ नौ निदान कारण हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-वे इस प्रकार से हैं (गावी जुवे संगामे तह इत्थीपराइओ रंगे, भज्जाणुरागपरइड्ढी माउयाइय) गौर्यूपः संग्रामः स्त्रीपराजित रङ्गः, भार्यानुरागो गोष्ठीपरऋद्धिर्मातेति-गाय, यूप, सग्राम, स्त्रियों से पराजय, रङ्ग, भार्यानुराग, गोष्ठी, परऋद्धि और माता।

હવે સૂત્રકાર તે વાસુદેવોની તે નિદાનભૂમિયો વિષે કહે છે કે જ્યા તેમને નિદાન કર્યું હતું-

શબ્દાર્થ—(एएसिं नवण्ह वासुदेवाणं) एतेषां नवानां वासुदेवानां-તે નવ વાસુદેવોની (नवनियाणभूमिओ होत्था) नव निदानभूमय आसन्-નવ નિદાનભૂમિયો હતી, (तं जहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(महुरा य कणगवत्थू सावत्थीपोयणं च रायगिहं, कायंदीकोसंबी, मिहिलपुरी हत्थिणपुरं च) मथुराकनकवास्तुश्च श्रावस्तीपोतनं च राजगृहम् काकन्दी कौशाम्बीमिथिलापुरी हस्तिनापुरं च-મથુરા, કનકવાસ્તુ, શ્રાવસ્તી, પોતન, રાજગૃહ, કાકન્દી, કૌશામ્બી, મિથિલાપુરી અને હસ્તિનાપુર (एएसिं णं णवण्हं वासुदेवाणं णव नियाणकारणा होत्था)एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नव निदानकारणान्यभूवन्-તે નવ વાસુદેવોનાં જે નવ નિદાનકારણો હતા (तं जहा) तद्यथा-તે આ પ્રમાણે છે-(गावीजुवे संगामे तह इत्थीपराइओ रंगे, भज्जाणुरागपरइड्ढीमाउयाइय) गौर्यूपः संग्रामः स्त्रीपराजितं रङ्गः, भार्यानुरागो गोष्ठीपरऋद्धिर्मातेति-ગાય, યૂપ (બીલો), સંગ્રામ, સ્ત્રીઓ દ્વારા પરાજય,

(एएसिं णवण्हं वासुदेवाणं णव पडिसत्तू होत्था) एतेषां नवानां वासुदेवानां नव प्रतिशत्रव आसन्–इन नव वासुदेवों के जो प्रतिशत्रु प्रतिनारायण हुए हैं, (तं जहा) तद्यथा–अर्थात् नाम इस प्रकार से हैं (अस्सग्गीवे तारए मेरए मेहुकेढवनिसुंभे य, बलिपहराए तह रावणे जरासंधे) अश्वग्रीवस्तारको मेरको मधुकैटभा निशुम्भश्च, बलिप्रभराजस्तथा रावणश्च नवमो जरासंधः–अश्वग्रीव१, तारक२, मेरक३ मधुकैटभ४ निशुम्भ५, बलि६, प्रभराज७, रावण८ और जरासंध९। (एए खलु पडिसत्तू किण्हपुरिसाणं वासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कृष्णपुरुषाणां वासुदेवानाम्–इस प्रकार ये कृष्ण पुरुष वासुदेवों के प्रतिशत्रु हुए हैं (सव्वे वि चक्कजोही सव्वे वि य णं सएहिं सएहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिन सर्वे हता स्वकैकेन–ये सब प्रतिवासुदेव वासुदेवों के साथ चक्र से युद्ध करते हैं और अपने उसी चक्र से अन्त में मारे जाते हैं। (एक्को य सत्तमीए पंच य छट्ठीए पंचमीए गओ, एक्को य चउत्थीए कण्हो पुण तच्च पुढवीए) एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठ्यां पञ्च पञ्चम्यामेकः, एकश्च चतुर्थ्यां कृष्ण पुनस्तृतीयपृथिव्याम्–वासुदेवों में से एक-प्रथम वासुदेव सप्तमनरक में गये हैं, पांच वासुदेव अर्थात्–द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम और षष्ठ वासुदेव छठे नरक में गये हैं, एक–सातवें वासु

---

४ आयोनु ॥ गेमनी पारुढि अने भत॥ (एएसिं णवण्हं वासुदेवाणं नव पडिसत्तू होत्था) एतेषां नवानां वासुदेवानां नव प्रतिशत्रव आसन्–ते नव वासुदेवना જે પ્રતિશત્રુઓ પ્રતિનારાયણો હતા તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે– (अस्सग्गीवे तारए मेरए मेहुकढवे निसुंभे य, बलिपहराए तह रावणे जरासंधे) अश्वग्रीवस्तारको मेरको मधुकैटभो निशुम्भश्च, बलि प्रभराजस्तथा रावणश्च नवमो जरासंधः–(१) अश्वग्रीव (२) तारक (३) मेरक (४) मधुकैटभ (५) निशुम्भ, (६) बलि (७) प्रभराज, (८) रावण (९) जरासंध (एए खलु पडिसत्तू किण्हपुरिसाणं वासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कृष्णपुरुषाणां वासुदेवानाम् આ પ્રમાણે કૃષ્ણપુરુષ વાસુદેવોના પ્રતિશત્રુઓ હતા છે (सव्वे वि चक्कजोही सव्वे वि य णं सएहिं सएहिं)सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हताः स्वक चक्रेण–એ બધા પ્રતિવાસુદેવો વાસુદેવોની સામે ચક્ર વડે યુદ્ધ કરતા હતા અને પોતાના તેજ ચક્રથી આખરે માર્યા જતા (एक्कोय सत्तमीए पंचे य छट्ठीए पंचमीए गओ, एक्कोय चउत्थीए कण्हो पुणरवि पुढवीए) एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठ्यां, पञ्चम्यामेकः, एकश्च चतुर्थ्यां कृष्ण पुनस्तृतीय पृथिव्याम्–આમાં કૃષ્ણના એક પ્રથમ વાસુદેવ સાતમી નરકમાં ગયા છે બીજા પ્રીજા પાંચમા અને છઠ્ઠા એ પાંચ વાસુદેવો છઠ્ઠી નરકમાં ગયા છે આઠમાં વાસુદેવ

टीका-'एएसिं' इत्यादि-एतेषां नवानां वासुदेवानां पूर्वभवे नव निदानभूमय आसन्, 'तं जहा'-तद्यथा-मथुरा कनकवास्तुश्च श्रावस्तीपोतनं च राज-

---

देव पंचम नरक में गये हैं, एक-आठवें वासुदेव चतुर्थनरक में गये हैं, और नवमें वासुदेव कृष्णवासुदेव तृतीय नरक में गये हैं। (अणियाणकडा रामा सव्वे वि य केसवा नियाणकडा, उड्ढगामी रामा केसवा सव्वे अहोगामी) अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवा निदानकृताः, उर्द्धगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः--जितने भी बलदेव होते हैं वे सब विना निदान के होते हैं अर्थात् ये निदानबंध नहीं करते हैं। तथा जितने भी वासुदेव होते हैं ये सब निदान करके होते हैं, बलदेव उर्ध्वगामी और केशव-वासुदेव नरकगामी होते हैं। (अट्ठतकडारामा एगो पुण बंभलोयकप्पम्मि, एक्का से गब्भवसहीसिज्झिसइ आगमिस्सेणं) अष्टावन्तकृता रामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे, एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यति आगमिष्यति खलु (काले)-आठ बलदेव तो मोक्षगामी हुए हैं, एक ब्रह्मलोककल्प में गये हैं। अतः ये ब्रह्मलोकगत बलदेव भी मनुष्यपर्याय पाकर आगामीकाल में मोक्ष जावेंगे ॥सू. २१०॥

टीकार्थ—'एएसिं णवण्ह वासुदेवाणं' इत्यादि-इन नौ वासुदेवों की नौ निदानभूमियां थीं। वे इस प्रकार से है-मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती,

---

પાંચમી નરકમા ગયા છે, આઠમા વાસુદેવ ચોથી નરકમા ગયા છે, અને નવમા કૃષ્ણ વાસુદેવ ત્રીજી નરકમા ગયા છે (अणियाणकडा रामासव्वे वि य केसवा नियाणकडा, उड्ढगामीरामाकेसवा सव्वे अहोगामी) अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवाः निदानकृताः, उर्ध्वगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः-જેટલા બળદેવો થાય છે તેઓ નિદાન વિનાના હોય છે-એટલે કે નિયાણુ બાંધતા નથી પણ જેટલા વાસુદેવો થાય છે તે બધા નિયાણું બાંધીને થાય છે બળદેવો ઉર્ધ્વગામી હોય છે પણ કેશવ-વાસુદેવો અધોગામી-નરકગામી હોય છે (अट्ठंतकडारामा एगोपुण बंभलोयकप्पम्मि, एक्का से गब्भवसहीसिज्झिसइ आगमिस्सेणं) अष्टावन्तकृतारामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे, एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यतिः आगमिष्यति खलु (काले)-આઠ બળદેવો તો મોક્ષે ગયા છે, એક બળદેવ બ્રહ્મલોક કલ્પમા ગયા છે, તેથી તે બ્રહ્મલોકમા ગયેલ બળદેવ પણ મનુષ્યપર્યાય પામીને આગામીકાળે મોક્ષે જશે ॥સૂ. ૨૧૦॥

ટીકાર્થ—'एएसिं णवण्ह वासुदेवाणं' इत्यादि-તે નવ વાસુદેવોની નવ નિદાનભૂમિ હતી તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-મથુરા, કનકવાસ્તુ, શ્રાવસ્તી પોત-

सूरम्। काकन्दी कौशाम्बी मिथिलापुरी हस्तिनापुरं च ॥६०॥ एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नवनिदानकारणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-गोपुरा सङ्ग्रामः स्त्रीभि राजिता रङ्गः। मातृपितृरागो गोष्ठी परऋद्धिर्मातेति ॥६१॥ एतेषां नवानां वासुदेवानां नवप्रतिशत्रव आसन तद्यथा--अश्वग्रीवस्तारकः मेरकः मधुकैटभो निशुम्भश्च। बलिः प्रभराजस्तथा रावणश्च नवमो जरासन्ध ॥६२॥ एते खलु प्रतिशत्रवःकीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम। सर्वेऽपि चक्रयोधिन सर्वे हताः स्वचक्रेण ॥६३॥ एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठ्यां पञ्चम्यामगः। एकश्च षष्ठ्यां कृष्ण पुनस्तृतीयपृथिव्याम् ॥६४॥ अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवा

पोतन रामराज, काकन्दी, कौशाम्बी मिथिलापुरी और हस्तिनापुर। इन नौ वासुदेवों के जो नौ निदानकारण हुए हैं, वे इस प्रकार से हैं-गाय, पुर संग्राम, स्त्रीयों से पराजय, रङ्ग, मातृपितृराग, गोष्ठी, पर ऋद्धि और माता। इन नव वासुदेवों के जो प्रतिशत्रु-प्रतिनारायण थे हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से हैं-अश्वग्रीव, तारक, मेरक, मधुकैटभ, निशुम्भ, बलि, प्रभराज, रावण और जरासंध। इस प्रकार ये कीर्तिपुरुष वासुदेवों के प्रतिशत्रु हुए हैं। ये सब प्रतिवासुदेवों के साथ चक्र से युद्ध करते हैं और अपने उसी चक्र से अन्त में मारे जाते हैं। वासुदेवों में से एक-प्रथमवासुदेव सप्तम नरक में गये हैं, पांच वासुदेव अर्थात्--द्वितीय, तृतीय चतुर्थ, पंचम, और षष्ठ वासुदेव छठे नरक में गये हैं एक-सातवें वासुदेव पंचम नरक में गए हैं एक-आठवें वासुदेव चतुर्थ नरकमें गये हैं और नवमें वासुदेव कृष्णवासुदेव तृतीय पृथिवीमें गये हैं। जितने भी बलदेव होते हैं वे सब बिना निदान के होते हैं अर्थात्-वे निदानबंध नहीं करते हैं। तथा जितने भी वासुदेव

तथा પુર ઇ ગોશામ્બી, મિથિલાપુરી અને હસ્તિનાપુર તે નવ વાસુદેવોના નિદાન ના જે નવ નીચે પ્રમાણે હતાં-ગાય, પુર, સંગ્રામ, સ્ત્રીઓથી પરાજય રંગ માતૃપિતૃરાગ ગોષ્ઠી પરઋદ્ધિ અને માતા. તે નવ વાસુદેવોના જે નવ પ્રતિશત્રુ-પ્રતિનારાયણ થયા તેમનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે--અશ્વગ્રીવ, તારક, મેરક મધુકૈટભ નિશુમ્ભ બલિ પ્રભરાજ રાવણ અને જરાસંધ તે કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પ્રતિવાસુદેવો ઉપર પ્રમાણે હતા. તે બધા પ્રતિવાસુદેવો વાસુદેવોની સાથે પોતાનું યુદ્ધ કરતાં હતાં અને પોતાનાં જ તે ચક્રથી આખરે માર્યા જતાં વાસુદેવોમાંનો એક-પ્રથમ વાસુદેવ સાતમી નરકમાં ગયા છે, પાંચ વાસુદેવો-બીજો ત્રીજો ચોથો છઠ્ઠો પાંચમો વાસુદેવો છઠ્ઠી નરકમાં ગયા છે, સાતમાં વાસુદેવ પાંચમી નરકે ગયા છે આઠમાં વાસુદેવ ચોથી નરકે અને નવમાં વાસુદેવ કૃષ્ણવાસુદેવ ત્રીજી નરકે ગયા છે બેસતા બલદેવો થાય છે તે બિના નિદાનના હોય છે-બેસતા

निदानकृताः। ऊर्ध्वगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः ॥६५॥ अष्टावन्तकृताः रामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे। एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यति आगमिष्यति खलु (काले) ॥६६॥ सू. २१०॥

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे एरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थयरा होत्था, तं जहा--चंदाणणं सुचंदं अग्गीसेणं च नंदिसेणं च। इसिदिण्णं वयहारिं वंदिमो सोमचंदं च ॥६७॥ वंदामि जुत्तिसेणं अजियसेण तहेव सिवसेणं। बुद्धं च देवसम्मं सययं निक्खित्तसत्थं च॥६८॥ असंजलं जिणवसहं वंदे य अणंतयं अमियणाणिं। उवसंतं च धुयरयं वंदे खलु गुत्तिसेणं च॥६९॥ अतिपासं च सुपासं देवेसरवंदियं च मरुदेवं। निव्वाणगयं च धरं खीणदुहं सामकोट्ठं च ॥७०॥ जियरागमग्गिसेणं वंदे खीणमग्गि उत्तंच। वोकसियपिज्जदोसं वारिसेणं गयं सिद्धि ॥७१॥ सू० २११॥

होते हैं ये सब निदान करके होते हैं। बलदेव ऊर्ध्वगामी और केशव-वासुदेव-पृथिवीगामी होते हैं। आठ बलदेव तो मोक्षगामी हुए हैं, एक ब्रह्मलोककल्प में गये हैं। अतः ये ब्रह्मलोकगत बलदेव भी मनुष्यपर्याय पाकर आगामीकाल में मोक्ष जावेंगे ॥सू. २१०॥

शब्दार्थ--(जबुद्दीवे णं दीवे ऐरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थयरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्करा आसन्-जम्बूद्वीप नामक द्वीप में ऐरवतक्षेत्र में

કે નિયાણુ ગ ધતા નથી. પણ જેટલા વાસુદેવો થાય છે તે બધા નિયાણુ બાધીને થાય છે બ દેવ ઉર્ધ્વ .ામી હોય છે, વાસુદેવ નરકગામી હોય છે આઠ બળદેવ તો મોક્ષ ગયા છે, અને એક બળદેવ બ્રહ્મલોક કલ્પમા ગયા છે. તે બ્રહ્મકલ્પમા ગયેલ બળદેવ પણ મનુષ્યભવ પામીને મોક્ષે જશે ॥સૂ. ૨૧૦॥

શબ્દાર્થ--(जबुद्दीवे णं दीवे ऐरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थयरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्करा आसन्-જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા અરવતક્ષેત્રમા

इस उत्सर्पिणीकाल में चौथे तीर्थंकर हुए (त जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं (चंदाणणं, सुचंदं, अग्गीसेणं च नंदिसेणं च) चन्द्रानन सुचन्द्राग्निसेन नन्दिसेन च—चन्द्रानन[1] सुचन्द्र[2], अग्निसेन[3], नन्दिसेन[4] (इसिदिण्णं वयहारिणंदेवी सोमचंदं च) ऋषिदत्त व्रतधारिण चन्द्रा महे सोमचन्द्र च—ऋषिदत्त[5] व्रतधारी[6] और सोमचन्द्र[7] मैं उनको लिए नमस्कार करता हूं। (वंदामि जुत्तिसेणं अजियसेणं तहेव सिवसेणं) वन्दे युक्तिसेनमजितसेन तथैव शिवसेनम्—तथा युक्तिसेन[8] अजितसेन[9] शिवसेन[10], (बुद्धं देवसम्मं सयंपं निम्मिचसत्थं च) बुद्ध च देवशर्माण सतत निर्मितशास्त्रं च—बुद्ध—तत्त्वज्ञदेवशर्मा[11], तथा निर्मितशास्त्र नामक जिन देव[12] को नमस्कार करता हूं। (अममलं जिणवसहं वंदे य अमलप्पभमियाणामिं, उवसंतं पुयरयपं वंदे खलु गुत्तिसेणं च) अमलजस जिन वृषभं वन्दे चातकप्रभमिनज्ञानिनम्, उपशान्त च पुतरजसं वन्दे खलु गुप्तिसेनं च अमलजस[13] जिनवृषभ[14] को मैं नमस्कार करता हूं। अभिनज्ञानी अमलनाथ को मैं नमस्कार करता हूं[15]। जिन्होंने कर्मरज का नाशकर दिया है—ऐसे उपशान्त नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूं[16]। गुप्तिसेन को मैं नमस्कार करता हूं[17]। (अतिपासं च सुपासं दवेसर

आ उत्सर्पिणीकालमां चोथा तीर्थंकरो थया छे (त जहा) तद्यथा—तेमना नाम आ प्रमाणे छे (चंदाणणं सुचंदं, अग्गीसेणं, च नंदिसेणं च) चन्द्रानन सुचन्द्राग्निसेन नन्दिसेनं च—(१) चन्द्रानन, (२) सुचन्द्र, (३) अग्निसेन (४) नन्दीसेन (इसिदिण्णं वयहारीवेदिमो सोमचंदं च)ऋषिदत्त व्रतधारिण चन्द्रा महे सोमचन्द्र च—(५) ऋषिदत्त, (६) व्रतधारी (७) सोमचन्द्र तेमने हुं नम स्कार करुं छु (वंदामि जुत्तिसेणं अजियसेणं तहेव सिवसेणं)वन्दे युक्ति सेनमजितसेन तथैव शिवसेन—तथा (८) युक्तिसेन, (९) अजितसेन अने (१०) शिवसेनने हुं वंदन करुं छु (बुद्धं देवसम्मं सयंपं निम्मिचसत्थं च) बुद्धं च देवशर्माण सततं निर्मितशास्त्र च—(११) बुद्ध तत्त्वज्ञदेवशर्मा, अने (१२) निर्मितशास्त्र नामना जिनदेवने पण नमस्कार करुं छु (अममलं जिणवसहं वंदे य अमलप्पभमियाणामिं, उवसंतं पुयरयपं वंदे खलु गुत्तिसेणं च)अमल जसं जिनवृषभं वन्दे चातक प्रभमिनज्ञानिनम् उपशान्त च पुतरजसं वन्दे खलु गुप्तिसेनं च—(१३) अमलजसने (१४) जिनवृषभ, ने नमस्कार करुं छु (१५) अभिनज्ञानी अमलनाथने हुं नमन करुं छु (१६) जेमणे कर्मरजनो नाश कर्यो छे एवा उपशान्त नामना जिनेश्वरने हुं नमन करुं छु (१७) गुप्ति

टीका-'जंबुद्दीवे णं' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्करा आसन, तद्यथा-चन्द्रानन सुचन्द्रमग्निसेन नन्दिसेन च। ऋषिदत्तं व्रतधारिण वन्दामहे सोमचन्द्रं च ६७॥ वन्दे युक्तिसेनमजितसेनं तथैव शिवसेनम्। बुद्ध च देवशर्माणं सततं निक्षिप्तशस्त्रं च ॥६९॥

(जियं च मरुदेवं, निव्वाणगय च धर खीणदुह सामकोट्ठ च) अतिपार्श्वं सुपार्श्वं देवेश्वरवन्दितं च मरुदेवम्, निर्वाणगत क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठं धरं जिनं वन्दे-अतिपार्श्व१८, सुपार्श्व१९ और देवेश्वरवंदित मरुदेव २० जिन को मैं नमस्कार करता हूं। निर्वाणगत, दुःख का क्षयकरने वाले और श्यामकोष्ठवाले धर नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूं २१। (जियरायमग्गिसेणं वंदे खीणरायमग्गि उत्त च, वोक्कसियपिज्जदोस वारिसेणं गयं सिद्धिं) जितरागमग्निसेननामानं जिन वन्दे, क्षीणरागमग्निपुत्रनामानं जिनं च वन्दे, व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष वारिसेन गतं सिद्धिम्-जितरागवाले अग्निसेन को२२, क्षीणरागवाले अग्निपुत्र को२३ एव रागद्वेषरहित होकर सिद्धिगति को प्राप्त हुए वारिसेन२४जिनको मैं नमस्कार करता हू॥सू.२११॥

टीकार्थ- जंबूद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीप नामक द्वीप में ऐरवतक्षेत्र में इस उत्सर्पिणीकाल में चौवीस तीर्थंकर हुए, उनके नाम इस प्रकार है-चंद्रानन१, सुचंद्र२, अग्निसेन३, नदिसेन४, ऋषिदत्त५, व्रतधारी६ और सोमचद्र७ मैं इनको नमस्कार करता हू। तथा युक्तिसेन८ अजि

सेनने हुं नमन કરું छु (अतिपास च सुपासं देवेसर वंदेयं च मरुदेवं, निव्वाणगय च धर खीणदुहं सामकोट्ठच) अतिपार्श्व च सुपार्श्व देवेश्वर वन्दितं च मेरुदेवं, निर्वाणगतं क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठं धरं जिनं वन्दे-(१८) અતિપાર્શ્વ, (૧૯) સુપાર્શ્વ, (૨૦) દેવેશ્વર વંદિત મરુદેવ, એ જિનદેવોને હું વંદન કરું છું (૨૧) નિર્વાણ પામેલા, દુઃખનો ક્ષય કરનારા અને શ્યામ કોઢવાળા ધર નામના જિનદેવને હું નમું છું (जियरायमग्गिसेण वंदे खीणरायमग्गिउत्तं च, वोक्कसिय पिज्जदोसवारिसेण गयं सिद्धिं) जितरागमग्निसेननामान जिन वन्दे, क्षीणरागमग्निपुत्रनामान जिनं च वन्दे, व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष वारिसेन गतं सिद्धिम्-(૨૨) રાગને જિતનાર અગ્નિસેનને (૨૩) ક્ષીણરાગવાળા અગ્નિપુત્રને અને (૨૪) રાગદ્વેષ રહિત થઇને સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરનાર વારિસેન જિનદેવને હું નમસ્કાર કરું છું ।। સૂ ૨૧૧ ।

ટીકાર્થ—'जंबूद्दीवे ण दीवे' इत्यादि-જંબૂદ્વીપના ઐરવતક્ષેત્રમા આ ઉત્સર્પિણીકાળમાં જે ચોવીસ તીર્થંકરો થઇ ગયા તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) ચંદ્રાનન, (૨) સુચંદ્ર, (૩) અગ્નિસેન, (૪) નદિસેન (૫) ઋષિદત્ત, (૬) વ્રતધારી, અને (૭) સોમચન્દ્ર, એ જિનદેવોને હું નમસ્કાર કરું છું (૮) યુક્તિસેન,

असञ्चल जिनवृषभं च वन्दे ज्ञानेन्द्रसमितज्ञानिनम्। उच्छ्राय च घुतरजसं च वन्दे खलु घृतिसेन च॥६७॥ अतिपार्श्वं च सुपार्श्वं देवेश्वरवन्दितं च मरुदेवम्। निर्वाणगतं क्षीणदुःखश्यामकोष्ठं वर=वरनामकं जिनं वन्दे॥७०॥ जितरागमग्निसेननामानं जिनं वन्दे क्षीणरागमग्निपुत्रनामानं जिनं च वन्दे। व्युत्सृष्टमेमत्वेष० रागद्वेषरहितं सिद्धिं गतं वारिसेननामानं च जिनं वन्दे॥७१॥ सू २११॥

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे सत्त कुलगरा भविस्सति, तं जहा—मियवाहणे सुभूमे य सुप्पभे य सयपभे। दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमिस्सा णं होक्खंति॥७२॥ जंबुद्दीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए एरवए वासे दस कुलगरा

नसेन९ शिवसेन१०, बुद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा११ तथा निक्षिप्तशस्त्र नामक जिनदेव१२ को नमस्कार करता हूं। असञ्चल१३, जिनवृषभ१४ को मैं नमस्कार करता हूं। अमितज्ञानी मनंतनाथ को मैं नमस्कार करता हूं१५। जिन्होंने कर्मरज का नाश कर दिया है—ऐसे उपशांत नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूं१६। घृतिसेन को मैं नमस्कार करता हूं १७ अतिपार्श्व१८ सुपार्श्व१९ और देवेश्वर वंदित मरुदेव२० जिनको मैं नमस्कार करता हूं। निर्वाणगत, दुःख का क्षय करनेवाले और श्यामकोष्ठ वाले वर नामक जिनको मैं नमस्कार करता हूं २१। जितराग वाले अग्निसेन को२२, क्षीणराग वाले अग्निपुत्र को२३ एवं रागद्वेष रहित होकर सिद्धिगति को प्राप्त हुए वारिसेन२४ जिनको मैं नमस्कार करता हूं॥सू २११॥

---

(९) नसेन, (१०) शिवसेन, (११) बुद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा, तथा (१२) निक्षिप्त शस्त्र नामना जिनदेवने हुं नमन करुं छुं (१३) असञ्चलने (१४) जिन वृषभने हुं वंदन करुं छुं (१५) अमितज्ञानी अनंतनाथने हुं नमस्कार करुं छुं (१६) कर्मरजनो नाश करनार उपशांत नामना जिनदेवने हुं वंदन करुं छुं (१७) धृतिसेनने हुं नमुं छुं (१८) अतिपार्श्व, (१९) सुपार्श्व अने २०) देवेश्वर वंदित मरुदेव जिनेन्द्रने हुं वंदन करुं छुं (२१) निर्वाण पामेल, दुःखनो क्षय करनार श्याम कोष्ठवाळा वर नामना जिनदेवने हुं नमस्कार करुं छुं (२२) राग पर विजय मेळवनार अग्निसेनने (२३) रागनो क्षय करनार अग्निपुत्रने तथा (२४) रागद्वेष रहित थई सिद्धिगति प्राप्त करेल वारिसेन नामना जिनदेवने हुं नमन करुं छुं॥सू २११॥

भविस्संति, तं जहा–विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे दढधणू, दसधणू, सयधणू, पडिसुई सुमइत्ति ॥७३॥ सू० २१३॥

शब्दार्थ-(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे–आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में (सत्त कुलगरा भविस्संति) सप्त कुलकरा भविष्यन्ति–सात कुलकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से है (मियवाहणे सुभूमेय सुप्पभे य सयंपभे. दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमिस्सा ण होक्खंति) मितवाहनः सुभूमा च सुप्रभश्च स्वयंप्रभः, दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च आगमिष्यति खलु भविष्यन्ति–मितवाहन१, सुभूम२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म६ और सुबंधु ये आगामीकाल में होवेंगे। (जंबूदीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए ऐरवए वासे दस कुलगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति–जंबूद्वीप नामके द्वीप में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होवेंगे। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम ये हैं–(विमलवाहणे सीमंकरे सीमधरे खेमंकरे खेमंधरे दढधणू दसधणू सयधणू पडिसूई सुमइत्ति) विमलवाहनः सीमङ्करः

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जंबूद्वीपे खलु द्वीपे–જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમા (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे—આગામી ઉત્સર્પિણીકાળે ભારતવર્ષમા (सत्तकुलगरा भविस्संति) सप्तकुलकरा भविष्यन्ति–સાત કુલકર થશે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે-(मियवाहणे सुभूमेय सुप्पभे य सयंपभे दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमिस्सा ण होक्खंति) मितवाहनः सुभूमा च, सुप्रभश्च स्वयंप्रभः, दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च आगमिष्यति खलु भविष्यन्ति–(૧) મિતવાહન, (૨) સુભૂમ, (૩) સુપ્રભ, (૪) સ્વયંપ્રભ, (૫) દત્ત, (૬) સૂક્ષ્મ અને (૭) સુબંધુ, તે કુલકરો આગામી કાળમા થશે (जंबूदीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए ऐरवए वासे दस कुलगरा भविस्सति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ઐરવતક્ષેત્રે દસ કુલકર થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-વિમલવાહણે सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमधरे दढधणू दसधणू सयधणू पडिसूई सुमइत्ति)विमलवाहनः सीमङ्करः सीमन्धरः

टीका—'जबुद्दीव ण' इत्यादि जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भागामिन्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे सप्त कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—मितवाहनः सुभूमश्च सुप्रभश्च स्वयंप्रभः। दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च 'आगमिस्साए' आगमिष्यति खलु काले 'होक्खति'=भविष्यन्ति ॥७२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यत्याम् उत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—विमलवाहनः सीमङ्करः क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दृढधनुः दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति ॥७३॥ सू० २१२

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्सति, तं जहा—महापउमे सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे। सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ॥७३॥ उदए पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति' य। मणिसुव्वय य अममे,

---

सीमन्धरः क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दृढधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति-विमलवाहनः१, सीमङ्कर२, सीमधर ३, क्षेमङ्कर४ क्षेमधर५ दृढधनु६ दृढधनु७ शतधनु८ प्रतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू २१२॥

टीकार्थ—'जंबूदीवे णं दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में आने वाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में सात कुलकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार से हैं-मितवाहन१ सुभूम२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म६ और सुबंधु। ये आगामीकाल में होवेंगे। जंबूद्वीप नामक द्वीप में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होंगे। उनके नाम ये हैं-विमलवाहन१, सीमंकर२, सीमंधर३, क्षेमंकर ४, क्षेमंधर५ दृढधनु ६, दृढधनु७, शतधनु८, प्रतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू २१२॥

क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दृढधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति-( ) विमलवाहन, (२) सीमंकर (३) सीमंधर (४) क्षेमंकर (५) क्षेमंधर (६) दृढधनु (७) दृढधनु (८) शतधनु (९) प्रतिश्रुति अने (१०) सुमति। सू. २१२॥

टीकार्थ—'जंबूदीवे ण दीवे' इत्यादि—આ જંબૂદ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં ભરતક્ષેત્રમાં સાત કુલકરો થશે તેમના નામ આ પ્રમાણે કહ્યા છે—(१) મિતવાહન, (२) સુભૂમ (३) સુપ્રભ (४) સ્વયંપ્રભ, (५) દત્ત, (६) સૂક્ષ્મ અને (७) સુબંધુ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં ઐરવત ક્ષેત્રમાં દસ કુલકર થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે કહ્યા છે-(१) વિમલવાહન (२) સીમંકર (३) સીમંધર (४) ક્ષેમંકર, (५) ક્ષેમંધર (६) દૃઢધનુ (७) દૃઢધનુ (८) શતધનુ (९) પ્રતિશ્રુતિ અને (१०) સુમતિ, ॥સૂ. ૨૧૨॥

सव्वभावविऊ जिणे॥७४॥ अरहा णिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे अणियट्टी य विजए विमलेति च। देवोववाए अरहा अणंतविजए इय ॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली। आगमिस्से णं होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूद्दीवेणं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से है—(महापउमे, सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवसुए य होक्खइ) महापद्मः—सूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, सूरदेव २, सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टीले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभावविऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद्जिनः—उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९, सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३ (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભરતક્ષેત્રમા આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે—(महापउमे सूरदेवे सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवसुए य होक्खइ) महापद्मः सूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) મહાપદ્મ, (२) સૂરદેવ, (३) સુપાર્શ્વ, (४) સ્વયંપ્રભ, (५) સર્વાનુભૂતિ, (६) દેવશ્રુત (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभाव विऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद् जिनः—(७) ઉદય, (८) પેઢાલપુત્ર, (९) પોટ્ટિલ, (१०) સપ્તકીર્તિ, (११) મુનિસુવ્રત (१२) અમમ, (१३) સર્વભાવવિત (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुला

सव्वभावविऊ जिणे॥७४॥ अरहा णिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे चित्तउत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे[१५] अतियंट्टी य विजेए[१६] विमलेति च। देवोववाए[१७] अरहा अणंतविजेए[१८] इय ॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली। आगमिस्से णं होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थे—जंबूद्दीवेणं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतितिर्थंकरा भविष्यन्ति–जम्बूद्वीप नामके द्वीप से भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से है–(महापउमे, सुरदेवे, सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवसुए य होक्खइ) महापद्मः–सुरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति महापद्म १, सुरदेव २, सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टीले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभावविऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद्जिनः–उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९ सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३ (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्तो समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतितिर्थंकरा भविष्यन्ति–જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભરતક્ષેત્રમા આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે–(महापउमे सुरदेवे सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवसुए य होक्खइ)महापद्मःसुरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति–(१) મહાપદ્મ, (२) સૂરદેવ, (३) सुपार्श्व, (४) स्वयंप्रभ, (५) सर्वानुभूति, (६) देवश्रुत (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभाव विऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च,मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभाववित् जिनः– (७) उदय, (८) पेढालपुत्र, (९) पोट्टिल, (१०) सप्तकीर्ति, (११) मुनिसुव्रत (१२) अमम, (१३) सर्वभाववित (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुला

टीका—'जबुद्दीवे ण' इत्यादि जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारतेषु वर्षेषु सप्त कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—विमलवाहनः सुदृशश्च सुप्रभश्च स्वयंप्रभः॥ दत्त इत्यादयः सुगमत्वात् 'आगमिस्साए' आगमिष्यति खलु काले 'होत्थइ'=भविष्यन्ति ॥७२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेषु आगमिष्यत्यामुत्सर्पिण्यामैरवतेषु वर्षेषु दश कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—विमलवाहनः सीमङ्करः क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुरदृढधनुः दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति ॥७३॥ सू० २१२

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए ओस्सप्पिणीए चउवीस तित्थगरा भविस्सति, त जहा—महापउमे सुरदेवे, सुपासे य सयपभे। सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ॥७२॥ उदए पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति' य। मणिसुव्वय य अममे,

सीमङ्करः क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति-विमलवाहनः१, सीमङ्करः२, सीमन्धरः३, क्षेमङ्करः४ क्षेमन्धरः५ दृढधनुः६ दशधनुः७ शतधनुः८ प्रतिश्रुतिः९ और सुमति१० ॥सू० २१२॥

टीकार्थ—'जंबूदीवे ण दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप नामक द्वीप में आगामी आने वाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में सात कुलकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार से हैं-विमलवाहन१ सुदृशः२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म और सुघोष। ये आगामीकाल में होवेंगे। जंबूद्वीप नामक द्वीप में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होवेंगे। उनके नाम यहाँ-विमलवाहन१, सीमङ्कर२, सीमन्धर३, क्षेमंकर४, क्षेमंधर५, दृढधनु६, दृढधनु७, शतधनु८, प्रतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू० २१२॥

क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति-(१) विमलवाहन (२) सीमङ्कर (३) सीमन्धर (४) क्षेमङ्कर (५) क्षेमन्धर (६) दृढधनु (७) दशधनु (८) शतधनु (९) प्रतिश्रुति अने (१०) सुमति। सू० २१२॥

टीकार्थ—'जंबूदीवे ण दीवे' इत्यादि-આ જંબૂદ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ઐરવતક્ષેત્રમાં સાત કુલકરો થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે હશે—(૧) વિમલવાહન, (૨) સુદૃશ (૩) સુપ્રભ (૪) સ્વયંપ્રભ (૫) દત્ત, (૬) સૂક્ષ્મ અને (૭) સુઘોષ. આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં ઐરવત ક્ષેત્રમાં દસ કુલકરો થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે હશે-(૧) વિમલવાહન (૨) સીમંકર (૩) સીમંધર (૪) ક્ષેમંકર, (૫) ક્ષેમંધર (૬) દૃઢધનુ (૭) દશધનુ (૮) શતધનુ (૯) પ્રતિશ્રુતિ અને (૧૦) સુમતિ. ॥સૂ. ૨૧૨॥

सव्वभावविऊ जिणे॥७४॥ अरहा णिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे वि उत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे अणियट्टी य विजए विमलेति च। देवोववाए अरहा अणंतविजए इय ॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली। आगमिस्से णं होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति–जम्बूद्वीप नामके द्वीप मे भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से है–(महापउमे, सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवसुए य होक्खइ) महापद्मः–सूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, सूरदेव २, सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टीले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभावविऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद्जिनः–उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९ सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३ (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्तो समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति–જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભરતક્ષેત્રમા આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે–(महापउमे सूरदेवे सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवसुए य होक्खइ)महापद्मःसूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति–(१) મહાપદ્મ, (૨) સૂરદેવ, (૩) સુપાર્શ્વ, (૪) સ્વયંપ્રભ, (૫) સર્વાનુભૂતિ, (૬) દેવશ્રુત (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभाव विऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च,मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभाववित् जिनः–(૭) ઉદય, (૮) પેઢાલપુત્ર, (૯) પોટ્ટિલ, (૧૦) સપ્તકીર્તિ, (૧૧) મુનિસુવ્રત (૧૨) અમમ, (૧૩) સર્વભાવવિત (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्त समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुला

टीका—'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति, तद्यथा-महापद्मः१ सुरदेवः२ सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः ४। सर्वानुभूतिर्देवश्रुतश्च६ भविष्यति ॥७३॥ उदयश्च ७ पेढालपुत्रश्च८ पोट्टिलः ९ शतकीर्तिश्च१०। सुनिव्रतश्च११ अमश्च १२ 'सत्तमाणंदिऊ' सप्तमानन्दिद्१३ जिनः ॥७४॥ अर्हन्

ण होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुलाकश्च निर्ममः। चित्रगुप्तः समाधिश्च आगमिष्यति काले भविष्यति-अर्हन् निष्कषाय १४, निष्पुलाक १५, निर्मम १६ चित्रगुप्त १७, समाधि १८, सवरे अणियट्टी य विजए विमलेति य देवोववाए अरहा अणंतविजए इय) संवरोऽनिवृत्तिश्च विमलो विजय इति च, देवोपपातोऽर्हन्ननन्त विजय इति-संवर १९, अनिवृत्ति २० विजय २१ विमल २२ देवोपपात और अर्हत अनन्तविजय २३ (एए खुडा चउवीस भरहे वासम्मि केवली, आगमिस्से ण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशति र्भरते वर्षे केवलिन आगमिष्यति काले भविष्यन्ति धर्मतीर्थस्य देशका ये पूर्वोक्त चौबीस तीर्थंकर भारतवर्ष में आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक केवली होंगे ॥सू० २१३॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवेण दीवे' इत्यादि—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार से हैं—महापद्म १, सुरदेव २ सुपार्श्व ३ स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५ देवश्रुत ६ उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९ शतकीर्ति १०, सुनिव्रत

कश्च निर्ममः चित्रगुप्तः समाधिश्च आगमिष्यतिकाले भविष्यति-(१३)अर्हन्त निष्कषाय (१४) निष्पुलाक (१५) निर्मम (१६) चित्रगुप्त (१७) समाधि (सवरे अणियट्टी य विजए विमलेति य देवोववाए अरहा अणंतविजए इय) संवरोऽनिवृत्तिश्च विमलो विजय इति च देवोपपातोऽर्हन्ननन्त विजय इति-(१८) संवर (१९) अनिवृत्ति, (२०) विजय, (२१) विमल, (२२)विमल (२३) देवोपपात, (२४) अर्हन्त अनन्तविजय (एए खुडा चउवीस भरहे वासे केवली, आगमिस्स ण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा) एते उक्तांश्चतुर्विंशतिर्भरते वर्षे केवलिनः, आगमिष्यतिकाले भविष्यन्ति धर्मतीर्थस्य देशकाः-पूर्वोक्त २४ चौवीस तीर्थंकरो आगामीकाले भारतवर्षमां धर्मतीर्थना उपदेशक केवली थशे. ॥सू. २१३॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भारतवर्ष मा आगामी उत्सर्पिणीकालमा चोवीस तीर्थंकर थशे. तेमनां नाम आ प्रमाणे छे—(१) महापद्म, (२) सुरदेव, (३) सुपार्श्व, (४) स्वयंप्रभ (५) सर्वानुभूति (६) देवश्रुत, (७) उदय (८) पेढालपुत्र, (९) पोट्टिल (१०) शतकीर्ति

निष्कषायश्च१४ निष्पुलाकश्च१५ निर्ममः१६ । चित्रगुप्तः १७ समाधिश्च १८ 'आगमिस्सेण' आगमिष्यति काले भविष्यति ॥७५॥ संवरोऽनिवृत्तिश्च २० विमलो२१ विजय२२ इति च । देवोपपातोऽर्हन्त२३ नन्तविजय२४ इति॥७६॥ एते उक्ताश्चतुर्विंशतिर्भारते वर्षे केवलिनः । आगमिष्यति काले भविष्यन्ति धर्मतीर्थस्य देशका. ॥७७॥ सू. २१३॥

मूलम्—एएसि णं चउव्वीसाए तित्थकराणं पुव्वभविया चउव्वीसं नामधेज्जा भविस्संति, तं जहा—सेणिए सुपास उदए पोट्टिल्ले अणगार तह दढाऊ य । कत्तिय संखे य तहा नंद सुनंदे य सतए य ॥७८॥ बोद्धव्वा देवई य कण्हे य तह सच्चई य बलदेवे । रोहिणि सुलसा चेव तत्तो खलु रेवई चेव॥७९॥ ततो हवइ सयाली बोद्धव्वे, खलु तहा भयाली य । दीवायणे य कण्हे, तत्तो खलु नारए चेव॥८०॥ अंबडे दारुमंडे य साई कुद्धे य होइ बोद्धव्वे । भावी तित्थगराणं णामाइं पुव्वभवियाइं॥८१॥ एएसि णं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउव्वीसं मायरो भविस्संति, चउव्वीसं पढमसीसा भविस्संति, चउव्वीसं पढमसिस्सिणीओ भविस्संति, चउव्वीसं पढमभिक्खादायगा भविस्संति, चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति ॥ सू० २१४ ॥

११, अमम १२ सर्वभाववित् १३ अर्हत निष्कषाय १४, निष्पुलाक १५ निर्मम १६ चित्रगुप्त १७ समाधि १८ संवर १९ अनिवृत्ति २० विजय २१, विमल २२, देवोपपात २३ और अर्हत अनंत विजय २४ । ये पूर्वोक्त चौबीस तीर्थंकर भारतवर्ष में आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक केवली होंगे । सू० २१३॥

---

[११] મુનિસુવ્રત, (૧૨) અમમ, (૧૩) સર્વભાવવિત, (૧૪) અર્હંત નિષ્કાય,(૧૫) નિષ્પુલાક, (૧૬) નિર્મમ, (૧૭) ચિત્રગુપ્ત, (૧૮) સમાધિ, (૧૯) સંવર, (૨૦) અનિવૃત્તિ, (૨૧) વિજય, (૨૨) વિમલ, (૨૩) દેવોપપાત અને (૨૪) અર્હંત અનંતવિજય. તે પૂર્વોક્ત ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો ભારતવર્ષમા આગામીકાળમાં ધર્મતીર્થના ઉપદેશક કેવલી થશે ।સૂ ૨૧૩।

शब्दार्थे—(एएसि ण चउव्वीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां इन चौबीस तीर्थंकरों के (पुव्वभविया चउव्वीसं नामधेज्जा भविस्संति) पूर्वभविकानि चतुर्विंशति नामधेयानि भविष्यन्ति—पूर्वभव सम्बन्धी जो चौबीस नाम थे वे ये हैं (सेणिए सुपास उदए पोट्टिल अणगारे तहदाढ़ए य, कत्ति य संखे य तहा नंद सुनंदे य सयए य) श्रेणिकः सुपार्श्वः उदयः पोट्टिलोऽनगारस्तथा दृढायुः, कार्तिक शंखश्च तथानन्दः सुनन्दश्च शतकश्च-श्रेणिक १, सुपार्श्व २, उदय ३ अनगार पोट्टिल ४ दृढायु ५ कार्तिक ६ शंख ७ नंद ८ सुनंद ९ शतक १० (बोद्धव्वा देवई य कण्हे य तह सच्चई य बलदेवे रोहिणि सुलसा चेव तओ खलु रेवईचेव-बोद्धव्या देवकी च कृष्णश्च तथा सात्यकिश्च बलदेव रोहिणी सुलसा चैव ततःखलु रेवती चेव-)देवकी ११ कृष्ण १२ सात्यकि १३ बलदेव १४ रोहिणी १५ सुलसा १६ रेवती १७ (तओ इहं सयाली बोद्धव्वे खलु तहा भयाली य दीवायणे य कण्हे तओ खलु नारए चेव) ततो भरति इतः सकाशात् बोद्धव्यः खलु तथा भयालिश्च द्वैपायनश्च कृष्णस्ततः खलु नारदश्चैव-इतश्च्युत्वा १८ भयालि १९ कृष्णद्वैपायन २० नारद २१ (अवर विदेहे य साइपुत्ते य होइ बोद्धव्वे आगमेसी तित्थगराणं णामाइं पुव्वभवियाणं-अपरविदेहे च साइपुत्रे च भवति बोद्धव्यः आगमिष्यतीर्थंकराणां नामानि पूर्वभविकानि

शब्दार्थ—(एएसि ण चउव्वीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां—उन चौबीस तीर्थंकरों के (पुव्वभविया चउव्वीसं नामधेज्जा भविस्संति) पूर्वभविकानि चतुर्विंशति नामधेयानि भविष्यन्ति—पूर्वभव सम्बन्धी जो चौबीस नाम थे वे ये हैं (सेणिए सुपास उदए पोट्टिल अणगारे तहदाढ़ए य, कत्ति य संखे य तहा नंद सुनंदे य सयए य)श्रेणिकः सुपार्श्व उदयः पोट्टिलोऽनगारस्तथा दृढायुश्च, कार्तिक शंखश्च तथा नन्दः सुनन्दश्च शतकश्च-(१) श्रेणिक, (२) सुपार्श्व ( ) उदय, (४) अनगार पोट्टिल (५) दृढायु (६) कार्तिक (७) शंख (८) नंद (९) सुनंद (१) शतक (बोद्धव्वा देवई य कण्हे य तह सच्चई य बलदेवे, रोहिणि सुलसा चेव, तओ खलु रेवईचेव) बोद्धव्या देवकी च कृष्णश्च तथा सात्यकिश्च बलदेव, रोहिणी सुलसाचैव ततः खलु रेवती चेव-(११) देवकी (१२) कृष्ण (१३) सात्यकि, (१४) बलदेव (१५) रोहिणी (१६) सुलसा (१७) रेवति (तओ इहं सयाली बोद्धव्व खलु तहा भयाली य दीवायणे य कण्हे तओ खलु नारए चेव) ततो भरति इतः सकाशात् बोद्धव्यः खलु तथा भयालिश्च, द्वैपायनश्च कृष्णस्ततः खलु नारदश्चैव-(१८) इतश्च्युत्वा (१९) भयालि (२) कृष्णद्वैपायन, (२१) नारद, (अवरविदेहे य साइपुत्ते य होइ बोद्धव्वे, आगमेसीतित्थगराणं णामाइं पुव्वभवियाणं) अपरवि-

बुद्धश्च भवति बोद्धव्यः भाविनि तीर्थंकराणां नामानि पूर्वभविकानि) अम्बड २२ दारुमृत २३ और स्वातिबुद्ध २४। ये भावितीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधी नाम हैं। (एएसिणं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउवीसं मायरो भविस्संति) एतेषां चतुर्विंशतेः तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशति मातरो भविष्यन्ति–इन चौवीस तीर्थंकरों के २४ पिता होंगे और चौवीस माताएँ होंगी (चउव्वीसं पढमसीसा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति–वृषभसेन आदि की तरह चौवीस प्रथम शिष्य होंगे। (चउव्वीस पढमसिस्सीणीओ भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति–ब्राह्मी आदि की तरह २४ प्रथमशिष्याएँ होंगी। (चउव्वीस पढमभिक्खादायगा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमभिक्षादायका भविष्यन्ति–श्रेयांस आदि की तरह चौवीस प्रथम भिक्षा के दाता होंगे। (चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति) चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा भविष्यन्ति–जिनके नीचे तीर्थंकरों को केवलज्ञान उत्पन्न होता है, ऐसे वट्टवेदिकावाले वृक्ष चैत्यवृक्ष कहलाते हैं। ये चैत्यवृक्ष इन तीर्थंकरों के २४ चौवीस होंगे ॥सू० २१४॥

दारुमृतः स्वातिबुद्धश्च भवति बोद्धव्यः, भावितीर्थंकराणां नामानि पूर्वभविकानि–[२२] अम्बड, (२३) दारुमृत अने (२४) स्वातिबुद्ध, એ ભાવિ તીર્થંકરોના પૂર્વભવના નામો છે (एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउवीस मायरो भविस्संति) एतेषां चतुर्विंशतेतीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशतिर्मातरो भविष्यन्ति–તે ચોવીસ તીર્થંકરોના ૨૪ પિતા થશે અને ૨૪ માતા થશે (चउव्वीसं पढमसीसा भविस्सति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्याः भविष्यन्ति–વૃષભસેન આદિની જેમ ચોવીસ શિષ્યો થશે. (चउव्वीस पढमसिस्सीणीओ भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति–બ્રાહ્મી આદિની જેમ ૨૪ પ્રથમ શિષ્યાઓ થશે. (चउव्वीस पढमभिक्खादायगा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमभिक्षादायका भविष्यन्ति–શ્રેયાંસ આદિની જેમ ચોવીસ પ્રથમ ભિક્ષાદાતાઓ થશે (चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति) चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा भविष्यन्ति–તે તીર્થંકરોના ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો હશે જેની નીચે તીર્થંકરોને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે, એવાં બાંધેલી વેદિકાવાળા વૃક્ષને ચૈત્યવૃક્ષ કહે છે ॥ સૂ. ૨૧૪॥

टीका—'एएसि णं' इत्यादि-एतेषां चतुर्विंशतितीर्थंकराणां 'पुव्वभविया' पूर्वभविकानि चतुर्विंशतिनामधेयानि भविष्यन्ति, तद्यथा-श्रेणिकः१ सुपार्श्व २ उदयः३ पोट्टिलोऽनगारस्तथा४ दृढायुष५। कार्तिकः६ शङ्खश्च७ तथा नन्द ८ सुनन्दश्च९ शतकश्च१० ॥७८॥ द्वादश्यां देवकी११ च कृष्णश्च१२ तथा सात्यकिश्च१३ बलदेव १४। रोहिणी१५ सुलसा१६ चैव रेवती१७ चैव ॥७९॥ शतालिः१८ द्वैपायनश्च तथा मयालिश्च१९। द्वीपायनश्च कृष्णस्तत स्वङ्ग नारदश्चैव ॥८०॥ अम्बडश्च२२ दारुमुनिश्च२३ स्वातिबुद्धश्च२४ भवति बोद्धव्य। भाविनीर्थंकराणां नामानि पूर्वभविकानि ॥८१॥ अयं भावः-श्रेणिकादयो महापद्मादिनामानस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति। तत्र-श्रेणिको प्रथमो महापद्मनामा जिनो भविष्यति, तथा-सुपार्श्व सुरदेवो द्वितीयः, उदयः सुपार्श्वनामकस्तृतीयः, पोट्टिलानगार स्वयंप्रभनामकश्चतुर्थः, दृढायु सर्वानुभूति

टीकार्थ—'एएसि णं चउव्वीसाए' इत्यादि—इन चौबीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधी जो चौबीस नाम थे वे ये हैं-श्रेणिक सुपार्श्व उदय अनगार पोट्टिल दृढायु कार्तिक शङ्ख नन्द सुनन्द शतक देवकी कृष्ण सात्यकि बलदेव रोहिणी सुलसा रेवती शतालि भयालि कृष्णद्वीपायन नारद अम्बड दारुमुनि और स्वातिबुद्ध। ये भावि तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधी नाम हैं। इसका तात्पर्य यह है-श्रेणिक आदि ये पूर्वोक्त नामधारी मनुष्य भविष्यत्काल में अर्थात् आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में महापद्म आदि नामके तीर्थंकर होंगे। इनमें श्रेणिक प्रथम महापद्म नामके जिन होंगे। सुपार्श्व सुरदेव नामके द्वितीय जिन होंगे। उदय सुपार्श्व नामके तीसरे जिन होंगे। पोट्टिल अनगार स्वयंप्रभ नामके चौथे जिन होंगे। दृढायु सर्वा

ટીકાર્થ—'एएसिण चउव्वीसाए' इत्यादि—ते चोवीस तीर्थंकरोना पूर्व भवना नामो आ प्रमाणे छे-श्रेणिक सुपार्श्व उदय, अनगार पोट्टिल, दृढायु कार्तिक शङ्ख नन्द, सुनन्द, शतक, देवकी, कृष्ण, सात्यकि बलदेव, रोहिणी, सुलसा, रेवती, शतालि भयालि, कृष्णद्वीपायन नारद, अम्बड, दारुमुनि, अने स्वातिबुद्ध आ आगिती तीर्थंकरोना पूर्वभवना नामो छे तेनु तात्पर्य एवो छे के-श्रेणिक आदि पूर्वोक्त नामना मनुष्यो अविष्यकालमा एटले के आवती उत्सर्पिणी कालमां महापद्म आदि नामना तीर्थंकर थशे श्रेणिक महापद्म नामना पहेला तीर्थंकर थशे, सुपार्श्व, सुरदेव नामना त्रीजा जिनदेव थशे उदय, सुपार्श्व नामना त्रीजा जिनेश्वर थशे. पोट्टिल अनगार स्वयंप्रभ नामना चोथा तीर्थंकर थशे दृढायु

नाम पञ्चमः, तथा-कार्तिको देवश्रुतनामा षष्ठः, शंखः उदयो नामसप्तमः, नन्दः पेढालपुत्राख्योऽष्टमः, सुनन्दः पोट्टिलो नाम नवमः, शतकः शतकीर्त्तिर्नाम दशमस्तीर्थङ्करो भविष्यति। तथा-देवकीसुनि सुव्रतनामा एकादशोऽर्हन् भवि ष्यति, कृष्णश्च अममो नाम द्वादशो भविष्यति, तथा-सात्यकिः सर्वभावविद् नाम त्रयोदशः, बलदेवो निष्कषायो नाम चतुर्दशः, रोहिणी निष्पुलाको नाम पञ्चदशः, सुलसा निर्ममो नाम षोडशः, रेवती चित्रगुप्तो नामसप्तदशः, शतालिः समाधिर्नाम अष्टादशः, भयालिः संवरो नामैकोनविंशतितमः, कृष्णद्वीपायनो ऽनिवृत्तिर्नामविंशतितमः, नारदो विजयो नामैकविंशतितमः, अम्बडो विमलो नाम द्वाविंशतितमो, दारुमृतो देवोपपातनामत्रयोविंशतितमस्तथा स्वातिबुद्धश्चा

सुभूति नामके पांचवें जिन होंगे। कार्तिक देवश्रुति नामके छठवें जिन होंगे। शंख उदय नामके सातवें जिन होंगे। नन्द पेढालपुत्र नामके आठवें जिन होंगे। सुनन्द पेट्टिल नामके नौवें जिन होंगे। शतक शतकीर्ति नामके दशवें जिन होंगे। देवकी मुनिसुव्रत नामके ग्यारहवें तीर्थंकर होंगी। कृष्ण अमम नामके बारहवें तीर्थंकर होंगे। सात्यकि सर्वभावविद् नामके तेरहवें तीर्थंकर होंगे। बलदेव निष्कषाय नामके चौदहवें तीर्थंकर होंगे। रोहिणी निष्पुलाक नामके पन्द्रहवें तीर्थंकर होंगी। सुलसा निर्मम नामके सोलहवें तीर्थंकर होंगी। रेवती चित्रगुप्त नामके १७ वें तीर्थंकर होंगी। शतालि समाधि नामके १८ वें तीर्थंकर होंगे। भयालि संवर नामके १९ वें तीर्थंकर होंगे। कृष्णद्वैपायन अनिवृत्ति नामके बीसवें तीर्थंकर होंगे। नारद विजय नामके इक्कीसवें तीर्थंकर होंगे। अम्बड विमल नामके बाईसवें तीर्थंकर होंगे। दारुमृत देवोपपात नामके तेईसवें तीर्थंकर होंगे। तथा स्वातिबुद्ध अनन्तविजय नामके

સવાનુભૂતિ નામના પાચમા તીર્થંકર થશે કાર્તિક, દેવશ્રુતિ નામના છઠ્ઠા જિનદેવ થશે શંખ, ઉદય નામના સાતમા તીર્થંકર થશે નન્દ, પેઢાલપુત્ર નામના આઠમા જિન થશે સુનન્દ પોટ્ટિલ નામના નવમા જિનદેવ થશે શતક, શતકીર્તિ નામે દસમા તીર્થંકર થશે દેવકી, મુનિસુવ્રત નામે અગીયારમા તીર્થંકર થશે કૃષ્ણ, અમમ નામે બારમા તીર્થંકર થશે સાત્યકિ બળદેવ અને રોહિણી અનુક્રમે સર્વ ભાવવિત, નિષ્કષાય અને નિષ્પુલાક નામના તેરમા ચૌદમા અને પંદરમા તીર્થંકર થશે સુલસા, અને રેવતી અનુક્રમે નિર્મમ અને ચિત્રગુપ્ત નામના સોળમા અને સત્તરમા તીર્થંકર થશે શતાલિ ભયાલિ અને કૃષ્ણદ્વૈપાયન અનુક્રમે સમાધિ અને અનિવૃત્તિ નામના ૧૮મા ૧૯મા અને ૨૦ મા તીર્થંકર થશે નારદ, અમ્બડ, દારુમૃત અને સ્વાતિબુદ્ધ અનુક્રમે વિજય, વિમલ, દેવોપપાત અને અનન્તવિજય

नन्तविजयनामा चतुर्विंशतितमो जिनो भविष्यतीति । 'एएसि चउव्वीसाए तित्थयराणं एतेषां चतुर्विंशतेः महापद्मादीनां भाविनीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशतिर्मातरो भविष्यन्ति, वृषभसेनादिवत् चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या भविष्यन्ति, तथा 'चउव्वीस पढमभिक्खादाओ भविस्संति' ब्राह्मीवदिवत् चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति, श्रेयांसादिवत् चतुर्विंशतिः प्रथम भिक्षादायका भविष्यन्ति, 'चउव्वीस चेइयरुक्खा भविस्संति' चतुर्विंशतिश्चैत्य वृक्षा भविष्यन्ति=एषामपरभाविनीर्थंकराणां केवलज्ञानमुत्पद्यते ते वृक्षपीठा वृक्षा श्चैत्यवृक्षा उच्यन्ते, ते च ऋषभादि तीर्थंकराणां न्यग्रोधादिवत् भाविनीर्थंकरागामपि चतुर्विंशतिसङ्ख्यका भविष्यन्ति ॥सू २१४॥

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति, तं जहा—भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य । सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे॥८२॥ पउमे य महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चेव । रिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमिस्सा भरहाहि या ॥८३॥ एएसि णं बारसण्हं चक्कवट्टीणं

२४ वें तीर्थंकर होंगे। इन चौबीस तीर्थंकरों के २४ पिता होंगे और २४ माताएँ होंगी। वृषभसेन आदिकी तरह चौबीस शिष्य होंगे। ब्राह्मी आदि की तरह २४ प्रथम शिष्याएं होंगी। श्रेयांस आदि की तरह चौबीस प्रथम भिक्षा देनेवाले होंगे। जिनके नीचे तीर्थंकरों को केवलज्ञान उत्पन्न होता है ऐसे वृत्त वर्तिकावाले चौबीस वृक्ष चैत्यवृक्ष कहलाते हैं। ये चैत्यवृक्ष इन चौबीस तीर्थंकरों के चौबीस होंगे। जैसे पहिले ऋषभ आदि तीर्थंकरों के न्यग्रोध आदि चैत्यवृक्ष २४ हुए हैं ॥सू० २१४॥

નાનન્ય ૨૧મા ભાવીસમાં, તેવીસમાં અને ચોવીસમાં તીર્થંકર થશે. તે ચોવીસ તીર્થંકરોના ૨૪ પિતા અને ૨૪ માતા થશે. વૃષભસેન આદિની જેમ ચોવીસ પ્રથમ શિષ્ય થશે બ્રાહ્મી આદિની જેમ ચોવીસ પ્રથમ શિષ્યાઓ થશે શ્રેયાંસ આદિની જેમ ૨૪ પ્રથમ ભિક્ષાદાતા થશે જેની નીચે તીર્થંકરોને કેવલજ્ઞાન થાય છે એવા અર્ત વર્તિત વૃક્ષ વૃક્ષને ચૈત્યવૃક્ષ કહે છે જેવીરીતે ઋષભદેવ આદિ તીર્થંકરોના ન્યગ્રોધ આદિ ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો થયા છે તે પ્રમાણે ઉપરોક્ત તિર્થંકરોના પણ ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો હશે. ॥સૂ. ૨૧૪॥

वारसपियरो भविस्संति, बारस मायरो भविस्संति, बारस इत्थीरयणा भविस्संति ॥ सू० २१५ ॥

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) भारते वर्षे आगमिष्यन्त्या मुत्सर्पिण्यां-भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में (बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति-बारह चक्रवर्ती होंगे। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं (भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे) भरतश्च दीर्घदन्तो गूढदन्तश्च शुद्धदन्तश्च, श्रीपुत्रः श्रीभूतिः श्रीसोमश्च सप्तमः-भरत दीर्घदन्त, गूढदन्त, शुद्धदन्त, श्रीपुत्र, श्रीभूति, सप्तम श्रीसोम, (पउमेय महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चेव, वरिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमिस्साभरहाहि वा) पद्मश्च महापद्मो विमलवाहनो विपुलवाहनश्च वरिष्ठो द्वादशउक्तः आगमिष्यन्तो भरताधिपाः-पद्म महापद्म विमलवाहन विपुलवाहन और बारहवें वरिष्ठ। ये आगामीकाल में भरतक्षेत्र के-अधिपति होंगे। (एएसि ण बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारस पियरो भविस्संति) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादश पितरो भविष्यन्ति-इन बारह चक्रवर्तियों के बारह पिता होंगे बारस

शब्दार्थ— (जंबुदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (भारहे वासे) भारत वर्षे-ભરતક્ષેત્રમાં (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં (बारसचक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति-બાર ચક્રવર્તિઓ થશે (तंजहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે (भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे) भरतश्च दीर्घदन्तो गूढदन्तश्च शुद्धदन्तश्च श्रीपुत्र श्रीभूति श्री सोमश्च सप्तमः-(१) ભરત, (२) દીર્ઘદન્ત, (३) ગૂઢદન્ત, (४) શુદ્ધદન્ત (५) શ્રીપુત્ર, (६) શ્રીભૂતિ, (७) શ્રી સોમ, (पउमे महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणेचेव वरिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमिस्सा भरहाहिवा)पद्मश्च महापद्मो विमलवाहनो विपुलवाहनश्चैव वरिष्ठो द्वादश उक्तः आगमिष्यन्तो भरताधिपाः (८)પદ્મ, (९)મહાપદ્મ (१०) વિમલવાહન, (११)વિપુલવાહન, અને (१२] વરિષ્ઠ, તેઓ આગામી કાળમાં ભરતક્ષેત્રના અધિપતિ થશે (एएसि ण बारसण्हं चक्कवट्टीण बारस पियरो भविस्संति) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनाम् द्वादशपितरो भविष्यन्ति તે બાર ચક્રવર્તિઓના બાર પીતા થશે,

टीका-'जंबुदीवे णं दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, तद्यथा--भरतः दीर्घदन्तो २ गूढदन्तश्च ३ शुद्धदन्तश्च ४। श्रीपुत्रः ५ श्रीभूतिः ६ श्रीसोमश्च७ सप्तम ॥८२। पद्मश्च८ महापद्मो९ विमलवाहनो१० विपुलवाहनश्चैव। चरिष्टो१२ द्वादश उक्त, एते द्वादश 'आगमिस्सा भरहाहिवा'=आगमिष्यन्तो भारताधिपा ॥८३॥ एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादशपितरो भविष्यन्ति, द्वादश मातरो भविष्यन्ति, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति ॥सू २१५॥

मूलम्—जबुदीवे ण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए नवबलदेववासुदेवपियरो भविस्सति, नव वासुदेवमायरो भविस्सति, नव बलदेवमायरो भविस्सति, नव दसारमडला भविस्सति, त जहा—उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयसीतेयसी एव सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जाव नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्सति, त जहा—नदे' य नदिमित्ते दीहबाहू तहा महाबाहू। अइबले महाबले बलभद्दे य सत्तमे॥८४॥ तुविंदे य

मायरो भविस्सति(द्वादश मातरो भविष्यन्ति-बार माताएँ होंगे (बारस इत्थीरयणा भविस्सति)द्वादश स्त्री रत्नानि भविष्यन्ति-बार स्त्री रत्न होंगे॥सू २१५॥

टीकार्थ—'जंबुदीवेण दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भरतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में बारह चक्रवर्ती होंगे उनके नाम इस प्रकार से हैं-भरत दीर्घदन्त गूढदन्त शुद्धदन्त श्रीपुत्र श्रीभूति सप्तम श्रीसोम एवं महापद्म विमलवाहन विपुलवाहन और बारहवें चरिष्ट। ये आगामीकाल में भरतक्षेत्र के अधिपति होंगे ॥सू० २१५॥

(बारस मायरो भविस्सति) द्वादशमातरो भविष्यन्ति-અને બાર માતાઓ થશે (बारस इत्थीरयणा भविस्सति) द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ती-અને બાર સ્ત્રીરત્નો થશે ॥સૂ, ૨૧૫॥

ટીકાર્થ—'जंबुदीवेण दीवे' इत्यादि—જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભારતવર્ષમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં બાર ચક્રવર્તિઓ થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે થશે-ભરત, દીર્ઘદન્ત ગૂઢદન્ત શુદ્ધદન્ત શ્રીપુત્ર, શ્રીભૂતિ શ્રીસોમ સપ્તમ મહાપદ્મ, વિમલવાહન વિપુલવાહન અને બારમા ચરિષ્ઠ તેઓ આગામી કાળમાં બારેયના અધિપતિ થશે ॥સૂ ૨૧૫॥

तिविट्ठं य आगमिस्साण विण्हुणो। जयंते विजए भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे। आणंदे नंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे ॥८५॥ एएसि णं नवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा भविस्संति, नव धम्मायरिया भविस्संति, नवनियाणभूमीओ भविस्संति नव नियाणकारणा भविस्संति, नव पडिसत्तू भविस्संति, तं जहा—तिलए य लोहजंघे वइरजंघे य केसरी पहरोए। अपराइए य भीमे महाभीमे य सुग्गीवे ॥८६॥ एए खलु पडिसत्तू किण्हपुरिसाण वासुदेवाणं। सव्वे वि चक्कजोही हम्मिहिंति सचक्केहिं॥८७॥ सू० २१६॥

शब्दार्थ-(जंबूद्दीवे णं दीवे)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारत वर्ष में (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) आगामिन्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां-आगामी उत्सर्पिणीकाल में (नव बलदेव वासुदेव पियरो भविस्संति) नव बलदेववासुदेव पितरो भविष्यन्ति-नौ बलदेव और नौ वासुदेव के नौ पिता होंगे। (नव वासुदेव मायरो भविस्संति) नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति- नौ वासुदेव की माताए होंगी, (नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति-नौ बलदेव की माताए होंगी, (नव दसारमंडला भविस्संति) नव दशार्ह मण्डलानि भविष्यन्ति-इस तरह नौ बलदेव और नौ वासुदेव के मंडल होंगे-अर्थात्-एक बलदेव एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल होंगे। (उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा

શબ્દાર્થ--(जंबूद्दीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમા (भारहे वासे) भारते वर्षे-ભારતવર્ષમાં (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां-આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમા (नव बलदेव वासुदेव पियरो भविस्संति) नव बलदेव-वासुदेवपितरो भविष्यन्ति-નવ બળદેવ અને નવ વાસુદેવના નવ પિતા થશે (नव वासुदेवमायरो भविस्संति) नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति-નવવાસુદેવોની નવમાતાઓ થશે (नव बलदेव मायरो भविस्संति) नव बलदेवमायरो भविष्यन्ति-નવબળદેવોની નવ માતાઓ થશે (नव दसारमंडला भविस्संति) नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति-આ રીતે નવ બળદેવ અને નવવાસુદેવના નવ મંડળ થશે-એટલે કે એક બળદેવ અને એક વાસુદેવ, એમ બબ્બેના નવ યુગલ થશે (उत्तमपुरिसा, मज्झिम

पुरिसा ओयसी तेयसी एव सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जा। नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषा मध्यमपुरुषा प्रधानपुरुषा ओजस्विनः तेजस्विन एवं स एव वर्णको भणितव्यः यावत् नीलक पीतक वसना द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्त इन सब पदोंका अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या करते समय लिख दिया गया है। (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से होंगे। (नंदे य नंदमित्ते दीहबाहू तहा महाबाहू, अइपढे महापढे पढमरामे य सत्तमे दुविट्ठ य तिविट्ठ य) नन्दश्च नन्दमित्रो दीर्घबाहुस्तथा महाबाहुः अतिपद्मो महापद्मो पद्मश्च सप्तम द्विपृष्टश्च त्रिपृष्टश्च-नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु महाबाहु, अतिपद्म, महापद्म, सातवें पद्मराम, द्विपृष्ट और त्रिपृष्ट। (आगमिस्साण विण्हुणो) आगमिष्यन्त खलु विष्णव -ये नाम आगामीकाल में उत्पन्न होने वाले विष्णु-वासुदेव के होंगे। (जयंते विजये भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे आणंदे, नंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे) जयन्तः विजयोभद्र सुप्रभश्च सुदर्शन आनन्दो नन्दन पद्म सङ्कर्षणश्च अपश्चिम-जयन्त विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनन्द, नन्दन, पद्म और अन्तिम संकर्षण। ये नौ नाम आगामीकाल में उत्पन्न होनेवाले बलदेवों के होंगे। (एएसि णं नवण्ह

पुरिसा, पढमपुरिसा ओयसी तेयसी एव सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जाव नीलग पीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषा मध्यमपुरुषा प्रधानपुरुषा ओजस्विनः तेजस्विनः एव स एव वर्णको भणितव्यः यावत् नीलकपीतकवसना द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरो भविष्यन्ति- આ બધા પદોના અર્થ સૂત્ર ૨૧૩મા આપી દીધેલ છે (तंजहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે-(नंदेय नंदमित्ता दीहबाहू तहा महाबाहू, अइपढे महापढे पढमरामे य सत्तमे दुविट्ठ य तिविट्ठय) नन्दश्च नन्दमित्रो दीर्घबाहु स्तथा महाबाहुः अतिपद्मो महापद्मो पद्मश्च सप्तमः द्विपृष्टश्च त्रिपृष्ट-(१) નન્દ (૨) નન્દમિત્ર (૩) દીર્ઘબાહુ (૪) મહાબાહુ (૫) અતિપદ્મ (૬) મહાપદ્મ (૭) પદ્મરામ, (૮) દ્વિપૃષ્ઠ અને (૯) ત્રિપૃષ્ઠ (आगमिस्साण विण्हुणो) आगमिष्यन्त खलु विष्णवः-આગામી કાળમાં ઉત્પન્ન થનારા વિષ્ણુ-વાસુદેવના તે નામો હશે.(जयंते विजय भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे आणंदे नंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे) जयन्तो विजयो भद्र सुप्रभश्च सुदर्शन आनन्दो नन्दन पद्मः सङ्कर्षणश्च अपश्चिमः-(૧) જયન્ત (૨) વિજય (૩) ભદ્ર (૪) સુપ્રભ (૫) સુદર્શન (૬) આનન્દ (૭) નન્દન (૮) પદ્મ અને (૯) છેલ્લા સંકર્ષણ આ નવ આગામી કાળમા બળદેવો હશે (एएसि णं नवण्हं बलदेव-वासु

बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा भविस्संति, णव धम्मायरिया भविस्संति, (णव णियाण भूमीओ भविस्संति णव णियाण करणा भविस्संति) एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभवकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति, नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति, नव निदानभूमयो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति–इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव संबंधी नौ नौ नाम होंगे, नौ धर्माचार्य होंगे, नव निदानभूमियां होंगी, नव निदान कारण होंगे (नव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति–नौ प्रतिशत्रु होंगे, (तं जहा) तद्यथा–उन नौ प्रतिशत्रुओं के ये नाम हैं(तिलए य लोहजंघे य वइरजंघे य केसरी पहराए अपराइए य भीमे महाभीमे य सुग्गीवे)तिलको लोहजङ्घो वज्रजङ्घश्च केसरी, प्रह्लादः अपराजितश्च भीमो महाभीमश्च सुग्रीवः– तिलक १, लोहजंघ २, वज्रजंघ ३ केशरी ४, प्रह्लाद ५, अपराजित ६, भीम ७, महाभीम ८, सुग्रीव ९, (एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाणवासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम–ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। (सव्वेवि चक्कजोही हम्मिहिंति सचक्केहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे

देवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा भविस्संति णव धम्मयरिया भविस्संति णवनियाणभूमीओ भविस्संति णवनियाणकारणा भवस्सति) एतषां खलु नवानां बलदेववासुदेवाना पूर्वभवकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति नव निदानभूमियो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति–તે બળદેવો અને વાસુદેવોના પૂર્વભવના નવ નામ હશે, નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિયો થશે અને નવ નિદાનકારણો થશે (णव पडिसत्तू भविस्संति) नवप्रतिशत्रवो भविष्यन्ति–નવ પ્રતિશત્રુ વાસુદેવો થશે, (तं जहा) तद्यथा–તે નવ પ્રતિવાસુદેવોનાં નામ આ પ્રમાણે હશે–(तिलए य लोहजंघे वइरजंघे य केसरी पहराए अपराइए भीमे महाभीमे य सुग्गीवे) तिलको लोहजङ्घो वज्रजङ्घश्च केशरीपह्लादः अपराजितश्च भीमो महाभीमश्च सुग्रीवः- (૧) તિલક, (૨) લોહજંઘ, (૩) વજ્રજંઘ, (૪) કેશરી, (૫) પ્રહ્લાદ, (૬) અપરાજિત, (૭) ભીમ, (૮) મહાભીમ અને (૯) સુગ્રીવ (एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाण वासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानां–પૂર્વોક્ત પ્રતિવાસુદેવો કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પ્રતિશત્રુઓ થશે. (सव्वेवि चक्कजोही हम्मिहिंति सचक्केहिं) सर्वेपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते

टीका—'जंबुदीवे णं दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यत्युत्सर्पिण्यां नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा—उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः ओजस्विनः तेजस्विनः 'एतत्=अनेन प्रकारेणाग्रे 'सो चेव वण्णओ भणियव्वो' स एव वर्णको भणितव्यः—पूर्वं यथा बलदेववासुदेवानां वर्णनं कृतं तथैवात्रापि विशेषम्। किमत्रापि तदत्सदृशं विशेषमित्याह ? 'णवरं' यावत् 'नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो' नीलकपीतकवसनौ द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ इति कृत्वा नव बलदेवा नव वासुदेवा 'भविस्संति' भविष्यन्ति, इदं सर्वं व्याख्यातं

हनिष्यन्ते स्वचक्रेण—ये सब प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से मरेंगे और अन्त में अपने उसी चक्र से मारे जावेंगे ॥ सू० २१६ ॥

टीकार्थ—'जंबूदीवे ण दीवे' इत्यादि—इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भरत क्षेत्र के अन्दर आगामी उत्सर्पिणीकाल में नौ बलदेव और नौ वासुदेव के नौ पिता होंगे। बलदेव और वासुदेव के पिता एक ही होते हैं। और माता भिन्न २ होती हैं। इसलिये यहां पर नौ पिता इन दोनों के कहे गये हैं। तथा—नौ वासुदेव की माताएँ होंगी और नौ बलदेव की माताएँ होंगी ऐसा सूत्रकार ने माताओं के विषय में अलग २ कहा है। इस तरह नौ बलदेव और नौ वासुदेव के मंडल होंगे—अर्थात् एक बलदेव एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल होंगे। यहां पर 'उत्तमपुरिसा" से लेकर("दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति)" यहां तकका पाठ भविष्यकाल का प्रयोग करते हुए लगा लेना चाहिए।

સ્વચક્રેણ—તે બધા પ્રતિવાસુદેવો યુદ્ધમાં પોતાની ભમરથી હણાશે અને અંતે પોતાના જ તે ચક્રથી માર્યા જશે ॥ સૂ ૨૧૬ ॥

ટીકાર્થ—'जंबूदीवे ण दीवे' इत्यादि—આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ભરતક્ષેત્રની અંદર આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં નવ બલદેવ અને નવ વાસુદેવના નવ પિતા થશે બલદેવ અને વાસુદેવના પિતા એક જ હોય છે, અને માતા જુદી જુદી હોય છે તેથી અહીં તે બન્નેના નવ પિતા કહેલ છે તથા નવ વાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને નવ બલદેવોની નવ માતાઓ થશે એમ સૂત્રકારે કહેલ છે આ રીતે નવ બલદેવ અને નવ વાસુદેવના મંડળ થશે-એટલે કે એક બલદેવ અને એક વાસુદેવ એ પ્રમાણે બન્નેના નવ-નવ યુગલ થશે અહીં 'उत्तमपुरिसा' થી લઈને 'दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति' અહીં સુધીનો પાઠ સૂત્ર ૨૧૬ પ્રમાણે ભવિષ્યકાળનો પ્રયોગ કરીને સમજી લેવો જોઈએ

पूर्वम्। किमभिधानास्ते भविष्यन्तीत्याह- तं जहा' तद्यथा-नन्दश्च१ नन्दमित्रो२ दीर्घबाहुस्तथा३ महाबाहुः४। अतिबलो५ महाबलो६ बलभद्रश्च७ सप्तमः॥८४॥ द्विपृष्ठश्च८ त्रिपृष्ठश्च९ एते 'आगमिस्साणं विण्हुणो' आगमिष्यन्तः खलु विष्णवः= भाविनो वासुदेवा विज्ञेया इत्यर्थः। अथ नव बलदेव नामान्याह--जयन्तो१ विजयो२ भद्रः३ सुप्रभश्च४ सुदर्शनः५। आनन्दो६ नन्दनः७ पद्मः८ सङ्कर्षणश्च९ 'अपच्छिमे' अपश्चिमः=न विद्यते पश्चिमो यस्मादसौ अपश्चिम=अन्तिमो बलदेवो विज्ञेयः॥८५॥ एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति, नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति, नव निदानभूमयो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति, नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति, तद्यथा-तिलको१ लोहजङ्घो२ वज्रजङ्घश्च३ केशरी४ प्रह्लादः५। अपराजितश्च६ भीमो७ महा-

---

इन सब पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या करते समय लिख दिया गया है। भविष्यत् काल में इनके क्या २ नाम होंगे? इस शंका का निवारण करने के लिये सूत्रकार कहते है कि-उनके नाम इस प्रकार से होंगे-नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु, महाबाहु, अतिबल, महाबल सातवें बलभद्र, द्विपृष्ठ और त्रिपृष्ठ। ये नाम आगामीकाल मे उत्पन्न होने वाले विष्णु-वासुदेव के होंगे। जयत, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनंद, नंदन, पद्म, और अन्तिम संकर्षण। ये नौ नाम आगामीकाल में उत्पन्न होने वाले बलदेवों के होंगे। इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव संबंधी नौ नौ नाम होंगे, नौ धर्माचार्य होंगे, नौ निदानभूमियां होगी, नौ प्रतिशत्रु होंगे, उन नौ प्रतिशत्रुओं के ये नाम हैं-तिलक, लोहजघ, वज्रजंघ, केशरी, प्रहाद, अपराजित, भीम, महाभीम

જે બધા પદોના અર્થ સૂત્ર ૨૧૩ની વ્યાખ્યા કરતી વખતે આપી દીધેલ છે ભવિષ્યકાળમાં તેમના કયા કયા નામ હશે? તેનો જવાબ આપતા સૂત્રકાર કહે છે કે તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે—નન્દ, નન્દમિત્ર, દીર્ઘબાહુ, મહાબાહુ, અતિબલ, મહાબલ, બલભદ્ર, દ્વિપૃષ્ઠ અને ત્રિપૃષ્ઠ એ નવ વિષ્ણુ-વાસુદેવો આગામીકાળમા થશે. જયત, વિજય, ભદ્ર, સુપ્રભ, સુદર્શન, આનદ, નદન, પદ્મ અને સકર્ષણ એ નવ બળદેવો આગામીકાળમા થશે તે નવ બળદેવો અને નવ વાસુદેવોના પૂર્વભવના નવ, નવ નામ હશે, તેમના નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિયો હશે, નવ નિદાનકારણો હશે અને નવ પ્રતિવાસુદેવો થશે. તે નવ વાસુદેવોના નવ પ્રતિશત્રુઓ-પ્રતિવાસુદેવો-નાં નામ આ પ્રમાણે હશે--તિલક, લોહજંઘ, વજ્રજંઘ, કેશરી, પ્રહ્લાદ, અપરાજિત, ભીમ, મહાભીમ, અને સુગ્રીવ. કીર્તિપુરુષ

मीमम८ सुग्रीवः९। ८५॥ एते खलु प्रतिशत्रवः=प्रतिवासुदेवाः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् । सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे इनिष्यन्ते स्वचक्रेण॥८७॥सू ९१५॥

पुण्यम्—जबुद्दीवे ण दीवे एरवए वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीस तित्थगरा भविस्सति, त जहा—सुमगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे । धम्मज्झोए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥८८॥ सिरिचदे पुप्फकेऊ महाचदे य केवली । सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥८९॥ सिद्धत्थे पुण्णघोसे य, महाघोसे य केवली । सच्चसेणे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ॥९०॥ सूरसेणे य अरहा, महासेणे य केवली । सव्वाणदे य अरहा, देवउत्ते य होस्सइ॥९१॥ सुपासे सुव्वए अरहा, अरहे य सुकोसले । अरहा अणत विजए आगमिस्साण होस्सइ ॥९२॥ विमले उत्तरे अरहा, अरहा य महाबले । देवाणदे य अरहा, आगमिस्साण होस्सइ॥९३॥ एए वुत्ता चउव्वीस, एरवयम्मि केवली । आगमिस्साण होस्सति, धम्मतित्थस्स देसगा ॥९४॥ सू० ११७॥

और सुग्रीव। ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। ये सब प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से लड़ेंगे और अत में अपने उसी चक्र स मारे जावेंगे। प्रतिवासुदेव युद्ध में वासुदेव के ऊपर मारने के लिये चक्र चलाते है—सो वह चक्र वासुदेव का कुछ भी बिगाड नहीं कर सकता है—परन्तु वापिस होकर अपने चलानेवाले प्रतिवासुदेव का हनन कर देता है। ऐसा शास्त्रीय कथन है। उसी का यह सूचन है ॥सू० ११६॥

વ સુદેવોના તે નવ પ્રતિવાસુદેવો હશે તે સઘળા પ્રતિવાસુદેવો યુદ્ધમાં ચક્રથી હણાશે અને અન્તે પોતાના જ તે ચક્રથી તેઓ માર્યા જશે. પ્રતિવાસુદેવ યુદ્ધમા વાસુદેવને મારવાને માટે ચક્ર ફેકે છે પણ તે ચક્ર વાસુદેવને કાંઈ પણ હાનિ પણ કરી શકતુ નથી પણ તે પાછુ ફરીને પ્રતિવાસુદેવની જ હત્યા કરે છે એવુ શાસ્ત્રીય કથન છે તે કથનનુ જ અહીં સૂચન કરવામાં આવ્યુ છે ॥સૂ.૨૧૬॥

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–जम्बूद्वीप नामके इसद्वीप में (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे–ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि सातवां क्षेत्र है (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्सति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति आगामीउत्सर्पिणी में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार हैं (सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे, धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति–सुमंगल१ सिद्धार्थ २, निर्वाण ३, महायश ४ धर्मध्वज ५, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ–महाचंदे य केवली, सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्पकेतु र्महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति–श्रीचंद्र, ६ पुष्पकेतु ७ महाचंद ८ अर्हंत श्रुतसागर ९ (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साणहोस्स इ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन आगामिष्यति काले भविष्यन्ति–सिद्धार्थ १० पुण्यघोष ११, महाघोष १२ सत्यसेन १३ (सूरसेणे य अरिहा महासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे–ऐरवतेक्षेत्र नामना सातमा क्षेत्रमां (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति–આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति खलु काले भविष्यन्ति–(१) सुमंगल, (२) सिद्धार्थ, (३) निर्वाण, (४) महायश, (५) धर्मध्वज, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्पकेतुः महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति–(६) श्रीचन्द्र, (७) पुष्पकेतु, (८) महाचन्द्र, (९) अर्हंत श्रुतसागर (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली, सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति–(१०) सिद्धार्थ, (११) पुण्यघोष, (१२) महाघोष, (१३) सत्यसेन, (सूरसेणे य अरिहामहासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होस्सइ) सूर

मीमयट सुग्रीवः९। ८६॥ एते खलु मतिशत्रवः=प्रतिवासुदेवा कीर्तिपुरुषाः वासुदेवानाम् । सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते स्वचक्रेण॥८७॥सू २१६॥

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीवे एरवए वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीस तित्थगरा भविस्सति, त जहा—सुमगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे । धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥८८॥ सिरिचदे पुप्फकेऊ महाचदे य केवली । सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥८९॥ सिद्धत्थे पुण्णघोसे य, महाघोसे य केवली । सच्चसेणे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ॥९०॥ सूरसेणे य अरहा, महासेणे य केवली । सव्वाणदे य अरहा, देवउत्ते य होस्सइ॥९१॥ सुपासे सुव्वए अरहा, अरहे य सुकोसले । अरहा अणत विजए आगमिस्साण होस्सइ ॥९२॥ विमले उत्तरे अरहा, अरहा य महाबले । देवोणदे य अरहा, आगमिस्साण होस्सइ॥९३॥ एए वुत्ता चउव्वीस, एरवयम्मि केवली । आगमिस्साण होस्सति, धम्मतित्थस्स देसगा ॥९४॥ सू० २१७॥

और सुग्रीव। ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। ये सब प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से मरेंगे और नरक में अपने इसी चक्र से मार आवेंगे। प्रतिवासुदेव युद्ध में वासुदेव के ऊपर मारने के लिए चक्र चलाते हैं—सो वह चक्र वासुदेव का कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकता है—परन्तु लज्जित होकर अपने चलानेवाले प्रतिवासुदेव का हनन कर देता है। ऐसा शास्त्रीय कथन है। उसी का यह सूचन है ॥सू० २१६॥

આ સુત્રોમાં તે નવ પ્રતિશત્રુઓ કહ્યા તે સઘળા પ્રતિવાસુદેવો યુદ્ધમાં ચક્રથી હણાઈ જઈને અન્તે પોતાના જ તે ચક્રથી તેઓ મારાં જાય છે પ્રતિવાસુદેવ યુદ્ધમાં વાસુદેવને મારવાને માટે ચક્ર ઉગામે છે પરંતુ તે ચક્ર વાસુદેવને કાંઈ પણ હાનિ પહોંચાડી શકતુ નથી પણ તે પાછુ ફરીને પ્રતિવાસુદેવનો જ હત્યા કરે છે એવુ શાસ્ત્રીય કથન છે તે સમજવુ જ અહીં સૂચન કરવામાં આવ્યુ છે ॥સૂ૨૧૬॥

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-जम्बूद्वीप नामके इसद्वीप में (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे-ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि सातवां क्षेत्र है (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति आगामीउत्सर्पिणी में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार हैं (सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे, धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति-सुमंगल१ सिद्धार्थ २, निर्वाण ३, महायश ४ धर्मध्वज ५, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ-महाचंदे य केवली, सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्यकेतु महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति-श्रीचंद्र, ६ पुष्पकेतु ७ महाचंद ८ अर्हंत श्रुतसागर ९ (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साणहोस्स इ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन आगामिष्यति काले भविष्यन्ति-सिद्धार्थ १० पुण्यघोष ११, महाघोष १२ सत्यसेन १३ (सूरसेणे य अरिहा महासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-જમ્બૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમા (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे-ऐरवतेक्षेत्र नामना सातमा क्षेत्रमा (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति-આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा-तेमना नाम आ प्रमाणे छे-(सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति खलु काले भविष्यन्ति-(१) सुमंगल, (२) सिद्धार्थ, (३) निर्वाण, (४) महायश, (५) धर्मध्वज, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्पकेतुः महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति-(६) श्रीचन्द्र, (७) पुष्पकेतु, (८) महाचंद्र, (९) अर्हंत श्रुतसागर (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली, सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति-(१०) सिद्धार्थ, (११) पुण्यघोष, (१२) महाघोष, (१३) सत्यसेन, (सूरसेणे य अरिहामहासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होस्सइ) सर

टीका—'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति, तद्यथा-सुमङ्गलः१ सिद्धार्थः२ निर्वाणभद्र३ महायशा ४। धर्मध्वजभ५ अर्हन आगमिष्यति काले

सूरसेनश्चार्हन महासेनश्च केवली, सर्वानन्दश्चार्हन् देवगुप्तश्च भविष्यति-सूरसेन १४, महासेन १५ सर्वानंद १६, (सुपास सुव्वए अरहा अरहे य सुकोसले) सुपार्श्वः सुव्रतोऽर्हन् अर्हंश्च सुकोसलः-सुपार्श्व १७ सुव्रत १८ सुकोशल १९ (अरहा अणंत विजए) अर्हन्ननन्तविजय -अनन्तविजय २० (विमले-उत्तरे अरहा अरहा य महाबले, देवाणंदे य अरहा आगमिस्साण-होस्सइ) विमल उत्तरोऽर्हन् अर्हंश्च महाबल देवानन्दश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यन्ति-विमल २१, उत्तर २२ महाबल २३ देवानन्द २४ (एए खुत्ता चउव्वीस एरवयम्मि केवली, आगमिस्साण-होस्संति धम्मतित्थस्स देसगा)एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिनः, आगमिष्यति काले खलु भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य देशकाः -ये ऐरवतक्षेत्र के भविष्यत् काल में होनेवाले तीर्थंकर कहे गये हैं। ये वहां आगामीकाल में धर्म तीर्थ के उपदेशक होंगे ॥ सू० २१७॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवे ण' इत्यादि-जंबूद्वीप नाम के इस द्वीप में ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि मानवा क्षेत्र है। आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार हैं। सुमंगल, सिद्धार्थ,

---

सेनश्चार्हन महासेनश्च केवली, सर्वानन्दश्चार्हन् देवगुप्तश्च भविष्यन्ति-(१४) सूरसेन (१५) महासेन (१६) सर्वानंद, (सुपासे सुव्वए अरहा अरहे य सुकोसले) सुपार्श्व सुव्रतोऽर्हन्, अर्हंश्च सुकोसले-(१७) सुपार्श्व (१८) सुव्रत (१९) सुकोशल (अरहा अणंतविजए) अर्हन्ननन्तविजय -(२०) अनन्तविजय, (विमले उत्तरे अरहा अरहा य महाबले, देवाणंदे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) विमल उत्तरोऽर्हन् अर्हंश्च महाबलः देवानन्दश्च अर्हन, आगमिष्यति काले खलु भविष्यन्ति-(२१) विमल, (२२) उत्तर (२३) महाबल अने (२४) देवानंद 'एए खुत्ता चउव्वीस एरवयम्मि केवली, आगमिस्साण होस्संति, धम्मतित्थस्स देसगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिन, आगमिष्यति काले भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य देशकाः जे भविष्यकालमां ऐरवतक्षेत्रमां थनारा तीर्थंकरोना नाम कहेला छे तेओ त्यां आगामीकालमां धर्मतीर्थना उपदेशक थशे ॥सू.२१७॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवेण'' इत्यादि—ए जंबूद्वीप नामना द्वीपमां आवेल ऐरवत नामना क्षेत्रमां हैरवत आगामी उत्सर्पिणी कालमां चोवीश तीर्थंकर थशे. तेमनां नाम आ प्रमाणे कहे सुमंगल, सिद्धार्थ निर्वाण, महायश धर्मध्वज अर्हन

खलु भविष्यति ॥८८॥ श्रीचन्द्रः६ पुष्पकेतु७ महाचन्द्रश्च८ केवली। श्रुतसागरश्चार्हन्९, आगमिष्यतिकाले खलु भविष्यति॥८९॥ सिद्धार्थः१० पुण्यघोषश्च११ महाघोषश्च१२ केवली। सत्यसेनश्चार्हन१३ आगमिष्यति काले भविष्यन्ति॥९०॥ सूरसेनश्चार्हन् महासेनश्च१५ केवली। सर्वानन्दश्चार्हन् देवगुप्तश्च=देवगुप्तः=देववृन्दसेवितः सर्वानन्दनाम यः षोडशस्तीर्थंकरो भविष्यति॥९१॥ सुपार्श्वः१७ सुव्रतोऽर्हन्१८, अर्हंश्च सुकोशलः१९। अर्हन्ननन्तविजयः२० आगमिष्यति काले भविष्यति॥९२॥ विमल२१ उत्तरोऽर्हन२२, अर्हंश्च महाबलः२३। देवानन्दश्च२४ अर्हन, आगमिष्यतिकाले खलु भविष्यति॥९३॥ एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिनः। आगमिष्यति काले खलु भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य देशकाः=धर्मोपदेशका इत्यर्थः ॥९४॥ सू २१७॥

निर्वाण, महायश, धर्मध्वज, श्रीचंद्र, पुष्पकेतु, महाचद्र, अर्हतश्रुतसागर, सिद्धार्थ, पुण्यघोष, केवली महाघोष, अर्हत सत्यसेन, अर्हत सूरसेन केवली महासेन, अर्हत सर्वानद ये देववृन्दों से सेवित १६ वें तीर्थंकर होंगे। सुपार्श्व, सुव्रत, सुकोशल, अर्हत अनंतविजय, विमल, अर्हत उत्तर, अर्हत महाबल और अर्हत देवानद। यहा पर प्रत्येक गाथा में जो "आगामिस्साण होस्सइ" ऐसा पाठ आया है उसका तात्पर्य ऐसा है कि ये भविष्यत् काल में तीर्थंकर होंगे। "देवगुप्त" यह विशेषण सर्वानन्द तीर्थंकर के साथ जो आया है वह सर्व तीर्थंकरों के साथ भी सुघटित होता हैं। क्यों कि सब ही तीर्थंकर देववृन्दो से सेवित होते हैं। अर्हन् विशेषण चार घातियाकर्मो को नाश करने के अर्थ का द्योतक है। सो यह भी प्रत्येक तीर्थंकर के साथ लगाया जा सकता है। पादपूर्ति के निमित्त ही इन विशेषणों की सूत्रकार ने कहीं २ पर इनकी घटना

પુષ્પકેતુ, મહાચ૮, અર્હંત શ્રુતસાગર, સિદ્ધાર્થ, પુણ્યઘોષ, કેવલી મહાઘોષ, અર્હંત સત્યસેન, અર્હંત સૂરસેન, કેવલી મહાસેન, અર્હંત સર્વાન૬, તે દેવવૃન્દેાથી સેવિત ૧૬મા તીર્થંકર થશે સુપાર્શ્વ, સુવ્રત, સુકેાશલ અર્હંત અનતવિજય, વિમલ, અર્હંત ઉત્તર અર્હંત મહાબલ અને અર્હંત દેવાનંદ. આ સૂત્રમાં પ્રત્યેક ગાથામા જે "आगमिस्साण होस्सइ" એવેા પાઠ આવ્યેા છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે તેઓ ભવિષ્યકાળમા તીર્થંકર થશે "देवगुप्त" આ વિશેષણ 'સર્વાનન્દ' તીર્થંકરની સાથે આવેલુ છે છતા તેને બધા તીર્થંકરો સાથે લઈ શકાય છે કારણ કે સઘળા તીર્થંકરોને દેવવૃન્દો વદન કરે છે-તેમની સેવા કરે છે 'अर्हन्' વિશેષણ ચાર ઘાતિયા કર્મોનેા નાશ કરવાના અર્થનુ દર્શક છે તે વિશેષણ પણ સર્વે તીર્થંકરોને લગાડી શકાય છે પાદપૂર્તિ [illegible] સૂત્રકારે તે વિશેષણો કોઈ કોઈ

मूलम्—बारस चक्कवट्टिणो भविस्सति, बारस चक्कवट्टिपियरो भविस्सति, बारस चक्कवट्टिमायरो भविस्सति, बारस इत्थीरयणा भविस्सति, नव बलदेववासुदेवपियरो भविस्सति, नव वासुदेवमायरो भविस्सति, नव बलदेवमायरो भविस्सति, नव दसारमंडला भविस्संति, त जहा—उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति, णव पडिसत्तू भविस्सति, नव पुव्वभवणामधेज्जा, नव धम्मायरिया, नव नियाणभूमीओ, नव नियाणकारणा, आयाए एरवए आगमिस्साए भाणियव्वा। एव दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा ॥सू० २१८॥

की है। ये ऐरवतक्षेत्र के भविष्यत् काल में होनेवाले तीर्थंकर कहे गये हैं। ये वहां आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक होंगे ॥ सू० २१७॥

शब्दार्थ—(बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति बारह चक्रवर्ती होंगे (बारस चक्कवट्टि पियरो भविस्संति) द्वादशचक्रवर्ति पितरो भविष्यन्ति बारहचक्रवर्तियों के पिता होंगे। (बारसचक्कवट्टिमायरो भविस्संति) द्वादशचक्रवर्ति मातरो भविष्यन्ति—चक्रवर्तियों की बारह माताएँ होंगी। (बारस इत्थीरयणा भविस्संति) द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति बारह स्त्री रत्नो होंगे। (नव बलदेव वासुदेव पियरो भविस्संति) नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति—नव बलदेवों और नव वासुदेवों

અભાવે થાય છે ઐરવત ક્ષેત્રમાં ભવિષ્યકાલમાં ઉપદેશક તીર્થંકરો થવાના છે અને તેઓ આગામી કાલમાં ત્યાં ધર્મતીર્થના ઉપદેશક થશે ॥સૂ ૨૧૭॥

શબ્દાર્થ—(बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति—બાર ચક્રવર્તિઓ થશે (बारस चक्कवट्टिपियरो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्ति पितरो भविष्यन्ति—બાર ચક્રવર્તિઓના બાર પિતા થશે (बारस चक्कवट्टिमायरो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिमातरो भविष्यन्ति—ચક્રવર્તિઓની બાર માતાઓ થશે (बारस्थीरयणा भविस्संति) द्वादशस्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति—બાર સ્ત્રીરત્નો હશે (नव बलदेववासुदेवपियरो भविस्संति) नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति—નવ બલદેવો અને નવ વાસુદેવોના નવ પિતા થશે (नव वासुदेवमायरो

के नौ पिता होंगे। (नव वासुदेव मायरो भविस्संति, नव बलदेव मायरो भविस्संति) नव वासुदेव मातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति–नव वासुदेवों की नौ माताए होंगी और नव बलदेवोंकी नो माताएँ होंगी। (नव दसार मंडला भविस्संति) नव दशार्ह मण्डलानि भविष्यन्ति नौ दशार्हमंडल होंगे। (तं जहा) तद्यथा–(उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहां पर भविष्यत्काल परक लगा लेना चाहिये (णव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति–नौ प्रतिवासुदेव होंगे। (नव पुव्वभवणामधेज्जा) नव पूर्वभव नामधेयानि–नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम (नव धम्मायरिया) नव धर्माचार्याः–नौ इनके धर्माचार्य, (नव णियाणभूमीओ) नव नव निदान भूमयः–नौ इनकी निदानभूमियां (नव णियाणकारणा) नव निदान कारणानि च–नौ निदान कारण, (आयाए एरवए) आदाय ऐरवतम्–ऐरवत क्षेत्र के बीच में (आगमिस्साए) आगमिष्यन्त्याम्–आने वाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा (भाणियव्वा) भणितव्यानि–कथन कर लेना

भविस्संति, नव बलदेवमायरो भविस्संति) नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नवबलदेवमातरो भविष्यन्ति–નવ વાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને નવ બળદેવોની નવ માતાઓ થશે (नवदसारमंडला भविस्संति) नवदशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति–નવ દશાર્હ મંડલ થશે.(तं जहा) तद्यथा–(उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा, पहाणपुरिसा, जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति–આ પદોના અર્થ ૨૧૩મા સૂત્રમા આપી દીધા છે. અહી ત્યા તેમને ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ સમજવા જોઈએ. (णव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति–તે વાસુદેવોના પ્રતિશત્રુ નવ પ્રતિવાસુદેવો થશે. (नव पुव्वभवणामधेज्जा) नव पूर्वभवनामधेयानि–તેમનાં પૂર્વભવના નવ નામ હશે. (नव धम्मायरिया) नव धर्माचार्याः–તેમના નવ ધર્માચાર્યો હશે, (नव णियाणभूमीओ) नव निदानभूमयः–તેમની નવ નિદાનભૂમિયો હશે (नव णियाण कारणा) नवनिदान कारणानि–નિયાણાના નવ કારણો હશે (आयाए एरवए) आदाय ऐरवतम्–તેઓ ઐરવતક્ષેત્રમા (आगमिस्साए–आगमिष्यन्त्याम्–આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા થશે એમ (भाणियव्वा) भणितव्यानि–

टीका--'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि-द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, द्वादश चक्रवर्तिपितरो भविष्यन्ति, द्वादशचक्रवर्तिमातरो, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति। नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा-उत्तमपुरुषा मध्य मापुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरावितिकृत्वा नव बल देववासुदेव भविष्यन्ति। नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति। नव पूर्वभवनामधेयानि, नव धर्माचार्याः, नव निदानभूमयः, नव निदानकारणानि च 'आयाए परसए' चाहिये। (एवं दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा) एवं द्वयोरपि आगमिष्यन्त्यां-मणितव्या -इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र के बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये॥सू २१८॥

टीकार्थ—'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि। बारह चक्रवर्ती होंगे। बारह चक्रवर्तियों के पिता होंगे। चक्रवर्तियों की बारह माताएँ होंगी। बारह स्त्री रत्न होंगे। नव बलदेवों के और नव वासुदेवों के नौ पिता होंगे। नव वासुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवो की नौ माताए होंगी। नौ दशार्हमंडल होंगे। "उत्तमपुरिसा" से लेकर "रामकेसवा भायरो भविस्संति" यहां तक इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहां पर भविष्यत् काल परक लगा लेना चाहिये। नौ प्रतिशत्रु होंगे। नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम नौ इनके धर्माचार्य, नौ इनकी निदान भूमियां, और नौ निदानकारण, ऐरवतक्षेत्र

ક્રમના સમજી લેવાનું છે (एवं दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा) एवं द्वयोरपि आगमिष्यन्त्यां मणितव्या -આ પ્રમાણે બલદેવો અને વાસુદેવો ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં થશે તેમ સમજવું ॥સૂ. ૨૧૮॥

ટીકાર્થ—'बारसचक्कवट्टिणो' इत्यादि—બાર ચક્રવર્તિ થશે. બાર ચક્રવર્તિ ઓના બાર પિતા થશે. બાર ચક્રવર્તિ ઓની બાર માતાઓ થશે અને બાર સ્ત્રીરત્નો થશે નવ બલદેવો તથા નવ વાસુદેવોના નવ પિતા થશે. નવવાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને બલદેવોની નવ માતાઓ થશે નવદશાર્હ મંડળ થશે એટલે કે એક બલદેવ અને એક વાસુદેવ એમ બન્નેના નવ યુગલ થશે. "उत्तमपुरिसा" થી "रामकेसवा भायरो भविस्संति" સુધીના પદોના અર્થ ૨૧૩માં સૂત્રમાં આપી દીધા છે તો અહીં ભવિષ્યકાળમાં તેમને સમજવાનાં છે તે વાસુદેવોમાં નવ પ્રતિશત્રુ-પ્રતિવાસુદેવો થશે. તે વાસુદેવોના પૂર્વભવનાં નવ નામ હશે નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિઓ અને નવ નિદાનકારણો થશે, તેઓ આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં

आदाय ऐरवतम्–ऐरवतक्षेत्रमधिकृत्य=एरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् द्वितीयास्थाने सप्तमी, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भणितव्यानि=कथनीयानि। उक्तमपि अर्थं पुनरपि स्पष्टयति–'एवम्' अनेन प्रकारेण 'दोसु वि' द्वयोरपि=भरतैरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां रामवासुदेवादयो भणितव्याः ॥ सू० २१८ ॥

अनेन प्रकारेण अनेकविधपदार्थान् प्रदर्श्य संप्रति अधिकृतशास्त्रस्य गुणनिष्पन्ननामान्याह––

मूलम्––इच्चेइयं एवमाहिज्जइ, तं जहा–कुलगरवंसेइ य एवं तित्थगरवंसेइ य गणधरवंसेइ य चक्कवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य ईसिवंसेइय जइवंसेइ य। मुणिवंसेइ य। सुएइवा सुअंगेइ वा सुयसमासे वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा संमत्तमंगमक्खायं अज्झयणंति बेमि ॥सू. २१९॥

॥ इय समवायं चउत्थमंगं समत्तं ॥

के बीच में आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा कथन कर लेना चाहिये। इस प्रकार से उक्त अर्थ को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि–इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये ॥सू०२१८॥

इस प्रकार से अनेकविध पदार्थों का कथन करके अब सूत्रकार इस अधिकृत शास्त्र के गुणनिष्पन्न नामों का कथन करते हैं।—

शब्दार्थ––(इच्चेइयं एवमाहिज्जइ)(इत्येतत् एवमाख्यायते–यह शास्त्र इस प्रकारसे इन नामों द्वारा कहा जाता है (तं जहा) तद्यथा–वे नाम ये

રવતક્ષેત્રમાં થશે એ પ્રમાણે સમજી લેવું જોઈએ. આ પ્રમાણે ઉકત અર્થને ફરીથી સ્પષ્ટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રની અંદર ઉપરોકત વાસુદેવ, બળદેવ આદિ થશે ॥સૂ ૨૧૮॥

આ પ્રમાણે અનેક પ્રકારના પદાર્થોનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર આ અધિકૃત શાસ્ત્રના ગુણયુકત નામોનું કથન કરે છે—

શબ્દાર્થ—(इ इयं एवमाहिज्जइ) इत्येतत् एवमाख्यायते–આશાસ્ત્ર જે નામોથી ઓળખાય છે. (तंजहा) तद्यथा–તે નામો આ પ્રમાણે છે—(कुलगरवंसे

टीका—'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि-द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, द्वादश चक्रवर्तिपितरो भविष्यन्ति, द्वादशचक्रवर्तिमातरो, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति। नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा-उत्तमपुरुषा मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातराविति कृत्वा नव बल देववासुदेव भविष्यन्ति। नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति। नव पूर्वभवनामधेयानि, नव धर्मोचार्याः, नव निदानभूमयः, नव निदानकारणानि च 'आयाए परवए'

चाहिए। (एवं दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा)एए द्वयोरपि आगमिष्यन्त्यां-भणितव्या -इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र के बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये॥सू २१८॥

टीकार्थ—'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि। बारह चक्रवर्ती होंगे। बारह चक्रवर्तियों के पिता होंगे। चक्रवर्तियों की बारह माताएँ होंगी। बारह स्त्री रत्न होंगे। नव बलदेवों के और नव वासुदेवों के नौ पिता होंगे। नव वासुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवों की नौ माताए होंगी। नौ दशार्हमंडल होंगे। "उत्तमपुरिसा" से लेकर "रामकेसवा मायरो भविस्संति" यहां तक इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहां पर भविष्यत् काल परक लगा लेना चाहिये। नौ प्रतिवासुदेव होंगे। नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम नौ इनके धर्माचार्य, नौ इनकी निदान भूमियां, और नौ निदानकारण, ऐरवतक्षेत्र

બધન સમજી લેવાનુ છે (एवं दोसुवि आगमिस्साए भाणियव्वा) एवं द्वयोरपि आगमिष्यन्त्यां भणितव्या -આ પ્રમાણે બલદેવો અને વાસુદેવો ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં થશે તેમ સમજવુ ॥સૂ. ૨૧૮॥

ટીકાર્થ—"बारस चक्कवट्टिणो" इत्यादि—બાર ચક્રવર્તિઓ થશે. બાર ચક્રવર્તિઓના બાર પિતા થશે. બાર ચક્રવર્તિઓની બાર માતાઓ થશે અને બાર સ્ત્રીરત્નો થશે નવ બલદેવો તથા નવ વાસુદેવોના નવ પિતા થશે. નવવાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને બલદેવોની નવ માતાઓ થશે નવ દશાર્હ મંડળ થશે એટલે કે એક બલદેવ અને એક વાસુદેવ એમ બન્નેના નવ યુગલ થશે "उत्तमपुरिसा" થી "राम केसवा मायरो भविस्संति" સુધીના પદોના અર્થ ૨૧૩મા સૂત્રમાં આપી દીધા છે તો અહીં ભવિષ્યકાળમાં તેમને સમજવાના છે તે વાસુદેવોમાં નવ પ્રતિશત્રુ-પ્રતિવાસુદેવો થશે. તે વાસુદેવોના પૂર્વભવનાં નવ નામ હશે, નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિઓ અને નવ નિદાનકારણો થશે, તેઓ આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં

आदाय ऐरवतम्-ऐरवतक्षेत्रमधिकृत्य=ऐरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् द्वितीयास्थाने सप्तमी, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भणितव्यानि=कथनीयानि। उक्तमपि अर्थं पुनरपि स्पष्टयति-'एवम्' अनेन प्रकारेण 'दोसु वि' द्वयोरपि=भरतैरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां रामवासुदेवादयो भणितव्याः ॥ सू० २१८ ॥

अनेन प्रकारेण अनेकविधपदार्थान् प्रदर्श्य संप्रति अधिकृतशास्त्रस्य गुणनिष्पन्ननामान्याह--

मूलम्--इच्चेइयं एवमाहिज्जइ, तं जहा-कुलगरवंसेइ य एवं तित्थगरवंसेइ य गणधरवंसेइ य चक्कवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य ईसिवंसेइय जइवंसेइ य। मुणिवंसेइ य। सुएइवा सुअंगेइ वा सुयसमासे वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा संमत्तमंगमक्खायं अज्झयणंति बेमि ॥सू. २१९॥

॥ इय समवायं चउत्थमंगं समत्तं ॥

के बीच में आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा कथन कर लेना चाहिये। इस प्रकार से उक्त अर्थ को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि-इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये ॥सू०२१८॥

इस प्रकार से अनेकविध पदार्थों का कथन करके अब सूत्रकार इस अधिकृत शास्त्र के गुणनिष्पन्न नामों का कथन करते हैं।—

शब्दार्थ—(इच्चेइयं एवमाहिज्जइ)(इत्येतत् एवमाख्यायते-यह शास्त्र इस प्रकारसे इन नामों द्वारा कहा जाता है (तं जहा) तद्यथा-वे नाम ये

રવતક્ષેત્રમા થશે એ પ્રમાણે સમજી લેવું જોઈએ. આ પ્રમાણે ઉકત અર્થોને ફરીથી સ્પષ્ટ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રની અંદર ઉપરોકત વાસુદેવ, બળદેવ આદિ થશે ॥સૂ ૨૧૮॥

આ પ્રમાણે અનેક પ્રકારના પદાર્થોનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર આ અધિકૃત શાસ્ત્રના ગુણયુકત નામોનું કથન કરે છે—

શબ્દાર્થ—(इ इयं एवमाहिज्जइ) इत्येतत् एवमाख्यायते—આશાસ્ત્ર જે નામોથી ઓળખાય છે. (तंजहा) तद्यथा—તે નામો આ પ્રમાણે છે—(कुलगरवंसे

है-(कुलगर वसेइ य एव तित्थगर वसेइ य गणहर वसेइ य चक्कवट्टिवसेइ य दसार वसेइ य) कुलकर वंशेति च एवम् तीर्थंकरवंशेति च-गणधर वंशेति च चक्रवर्तिवंशेति च दशार्हवंशेति च-कुलकरों के वंश का प्रतिपादक होने के कारण इस शास्त्र का नाम कुलकर वंश है। तीर्थंकरों के वंश का कथन करनेवाला होने के कारण इस शास्त्र का नाम तीर्थंकर वंश है। इसी तरह से गणधरों के वंश का प्रतिपादक होने के-कारण इस शास्त्र का नाम गणधर वंश है। चक्रवर्तियों के वंश का प्रतिपादक होने से इसका नाम चक्रवर्तिवंश, तथा दशार्हवंश का प्रतिपादक होने से दशार्हवंश (इसि वसइ य मइ वसेइ य मुनिवसइ य) ऋषिवंश इति च, यतिवंश इति च, मुनि वंश इति च-ऋषियों-गणधरों से अतिरिक्त तीर्थंकर शिष्यों के वंश का प्रतिपादक होने से ऋषिवंश तथा ऋषि मुनि, यति ये शब्द समान अर्थ वाले होने से यतिवंश मुनिवंश है। (सुया वा सुअंगेइ वा सुयसमासेइ वा सुयक्खंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा) श्रुतेति वा श्रुताङ्गेति वा श्रुतसमासेति वा श्रुतस्कन्धेति वा समवायेति वा संख्येति वा-तथा त्रिकाल संबंधी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम श्रुत है। प्रवचन पुरुष का अंग होने के कारण इसका नाम श्रुतांग ऐसा भी है। समस्त सूत्रों के अर्थों का यहां संक्षेप में प्रतिपादन होने से इसका नाम श्रुतसमास ऐसा भी है। श्रुत समुदायरूप होने से इसका नाम श्रुत

इ य एव तित्थगरवंसइ य गणहरवंसेइ य चक्कवट्टिवंसइ य दसारवंसइ य) कुलकर वंशति च एवम् तीर्थंकरवंशेति च गणधरवंशेति च चक्रवर्तिवंशति च दशार्ह वंशेति च-कुलकरोना वंशनु प्रतिपादक होवाथी आ शास्त्रनु नाम कुलकरवंश छे तीर्थंकरोना वंशनु प्रतिपादक होवाथी आ शास्त्रनु नाम तीर्थंकरवंश छे એ જ પ્રમાણે ગણધરોના વંશનુ કથન કરનાર હોવાથી આ શાસ્ત્રનુ નામ ગણધરવંશ છે ચક્રવર્તિયોના વંશનુ પ્રતિપાદક હોવાથી આ શાસ્ત્રનુ નામ 'ચક્રવર્તિવંશ' છે તથા દશાર્હવંશનુ પ્રતિપાદક હોવાથી તેનુ નામ દશાર્હવંશ પણ છે (इसिवंसइय जइवंसेइय मुनिवंसइय) ऋषिवंश इति च, यतिवंश इति च, मुनिवंश इति च-ऋषियो-ऋषभदेव सिवायना तीर्थंकरोना शिष्योना वंशनु प्रतिपादक होवाथी तेनु नाम ऋषिवंश छे ऋषि, मुनि, यति, એ શબ્દો સમાન અર્થવાળા હોવાથી તેનુ નામ યતિવંશ મુનિવંશ છે (सुयाइ वा सुअंगेइवा सुय समासेइ वा सुयक्खंधेइ वा समवाएइ वा संखइवा)श्रुतेति वा, श्रुताङ्गेति वा श्रुतस मासेति वा श्रुतस्कन्धेति वा समवायेति वा संख्येति वा=तथा भूत अने भावि કાળના અર્થનુ બોધન કરાવવામાં સમર્થ હોવાથી તેનુ નામ "श्रुतसमास" પણ છે श्रुतसमुदायरूप होवाथी तेनु

टीका--'इच्चेइय' इत्यादि-'इच्चेइयं' इत्येतत् शास्त्रम् 'एवं' अनेन प्रकारेण वक्ष्यमाणनामभिः 'आहिज्जइ' आख्यायते-कथ्यते, 'त जहा' तद्यथा-'कुलगरवंसेइ य' कुलकरवंशेति च-कुलकराणां वंशस्य प्रतिपादकत्वादयं 'कुलकरवंश' इति नाम्ना कथ्यते, इति शब्दःस्वरूपप्रतिपादकः, च शब्दः समुच्चयार्थः, अप-

---

स्कंध ऐसा भी है। तथा समग्र जीव और अजीव आदि पदार्थों को यहां अभिधेयरूप मिलने के कारण इसका नाम समवाय ऐसा भी है। एक आदि संख्याक्रम से पदार्थों का इसमें प्रतिपादन हुआ है इससे इसका नाम संख्या ऐसा भी है। (सम्मत्तमंगमक्खायं) समस्तमङ्गमाख्यातं-भगवान् इस समवायाङ्ग को संपूर्णरूप से कहा है। (अज्झयणं) अध्ययनमिति-यह एक ही अध्ययन है। (त्तिबेमि) इति ब्रवीमि-जंबूस्वामी से सुधर्मास्वामी कहते हैं कि हे जंबू! जैसा यह समवायाङ्ग सूत्र भगवान् से मैंने सुना है वैसा ही मैंने यह तुम से कहा है। अपनी तरफ से मैंने इस में कुछ भी-घटाया बढाया नहीं है। "इति" यह शब्द शास्त्र की समाप्ति का बोधक है ॥सू० २१९॥

टीकार्थ—'इच्चेइयं एवमाहिज्जइ' इत्यादि-यह शास्त्र इस प्रकार से इन नामो द्वारा कहा जाता है-वे नाम ये हैं-कुलकर वंश-इसशास्त्र में कुलकरों के वंश का प्रतिपादन हुआ है अतः उनके वंश का प्रतिपादक होने के कारण इस शास्त्र का नाम कुलकर वंश है। यहां इति शब्द स्वरूप का और "च" शब्द समुच्चय अर्थ का प्रतिपादक है। इसी तरह से

નામ 'श्रुतस्कंध' પણ છે. તથા સમગ્ર જીવ અને અજીવ આદિ પદાર્થોનો આ અંગમા સમાવેશ થતો હોવાથી તેનું નામ 'समवाय' પણ છે એક બે આદિ સંખ્યાક્રમથી પદાર્થોનું આ અંગમા પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યું હોવાથી તેનુ નામ "संख्या" પણ છે (सम्मत्तमंगमक्खायं)समस्तमङ्गमाख्यातम्-ભગવાનને આ સમવાયાગને સંપૂર્ણરૂપે કહેલ છે (अज्झयणं) अध्ययनमिति તેમાં એક જ અધ્યયન છે (त्तिबेमि) इति ब्रवीमि-સુધર્માસ્વામી જ બૂસ્વામીને કહે છે કે 'હે જંબૂ! જે પ્રમાણે આ સમવાયાગ સૂત્ર મેં ભગવાન પાસેથી સાભળ્યુ છે તે પ્રમાણે જ તમને તે કહુ છું મારી તરફથી મે તેમા કઇ પણ વધારો ઘટાડો કર્યો નથી" "इति" આ પદ શાસ્ત્રની સમાપ્તિનુ બોધક છે ॥સૂ ૨૧૯॥

ટીકાર્થ—"इच्चेइय एवमाहिज्जइ" ઇત્યાદિ—આ શાસ્ત્રના આ પ્રમાણે જુદા જુદા નામો છે—કુલકરવંશ-આ શાસ્ત્રમા કુલકરોના વંશનું પ્રતિપાદન કરાયું છે તેથી તેમના વંશનુ પ્રતિપાદક હોવાને કારણે આ શાસ્ત્રનું નામ 'કુલકરવંશ' છે. અહી 'इति' શબ્દ સ્વરૂપનો અને 'च' શબ્દ સમુચ્ચય અર્થનો પ્રતિપાદક છે.

रत्नानि इति शब्दभेदमर्थकथनाभिप्रायेणेति बोध्यम्। 'पवम्' अनेनैव प्रकारेण तित्थगरवंसेइ य' तीर्थकरवंशेति च-तीर्थकरवंशप्रतिपादकत्वादिदं 'तीर्थकरवंश' इति नाम्ना कथ्यते, तथा-गणधरवंशप्रतिपादकत्वादिदं शास्त्रं 'गणहरवंसेइ य' गणधरवंश इति नाम्ना च कथ्यते। तथा-चक्रवर्तिवंशप्रतिपादकत्वादिदं 'चक्कवट्टिवंसेइ य' चक्रवर्तिवंश इति च, तथा दशार्हवंशप्रतिपादकत्वादिदं 'दसारवंस' इति, तथा-गणधरातिरिक्तास्तीर्थकरशिष्या ऋषय उच्यन्ते, तत्प्रतिपादकत्वादिदं शास्त्रं 'इसिवंसेइ य' ऋषिवंश इति च, ऋषिमुनियतीनां समानार्थकत्वादिदं 'जइवसेइ य'='यतिवंश' इति च, 'मुणिवंसेइ य'=मुनिवंश इति कथ्यते। तथा-त्रिकालार्थबोधने समर्थत्वादिदं 'सुयइत्ति' श्रुतेति वा-श्रुतमिति बोध्यते। श्रुतस्य प्रवचनपुरुषस्याङ्गत्वादिदं 'सुयंगेइत्ति' श्रुताङ्गेति वा=श्रुताङ्गमिति, तथा-समस्त

"तित्थगरवंसेइ य" इत्यादि पदों के साथ आये हुए इन "इति" और "च" के विषय में जानना चाहिये। तीर्थंकर वंश-तीर्थंकर के वंश का कथन करने वाले होने के कारण इस शास्त्र का नाम तीर्थंकरवंश है। इसी तरह से चक्रवर्तियों के वंश का प्रतिपादक होने से इसका नाम चक्रवर्तिवंश, तथा दशार्हवंश का प्रतिपादक होने से दशार्हवंश, ऋषियों के गणधरों से अतिरिक्त तीर्थंकर शिष्यों यहां ऋषि कहे गये हैं उनके वंश का प्रतिपादक होने से ऋषिवंश, तथा ऋषि, मुनि और यति ये शब्द समान अर्थवाले होने से यतिवंश एवं मुनिवंश है। तथा-त्रिकाल संबंधी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम श्रुत है। प्रवचन पुरुष का अंग होने के कारण इसका नाम श्रुताङ्ग ऐसा भी है। समस्त सूत्रों के अर्थों का यहां

'तित्थगरवंसेइ य' ઇત્યાદિ પદોની સાથે વપરાયેલ 'इति' અને 'च'ની જાણવા યોગ્ય બાબત અંગે પ્રમાણે જ સમજવું **તીર્થંકરવંશ**-તીર્થંકરોના વંશનું કથન કરનાર હોવાથી આ શાસ્ત્રનું નામ તીર્થંકરવંશ પણ છે એજ પ્રમાણે ચક્રવર્તિઓના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી તેનું નામ ચક્રવર્તિવંશ છે, તથા દશાર્હવંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી તેનું નામ દશાર્હવંશ છે પ્રભુશ્રીના શિષ્યમાં તીર્થંકરોને બાદ કરતાં બાકીના ઋષિઓ કહેલ છે તે ઋષિઓના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી આ શાસ્ત્રને 'ઋષિવંશ,' તથા ઋષિ, મુનિ અને યતિ, એ સમાનાર્થી શબ્દો હોવાથી 'યતિવંશ' અને 'મુનિવંશ' એ નામે પણ આ શાસ્ત્રને ઓળખાય છે તથા ત્રણે કાળના અર્થનું બોધક હોવાને કારણે તેનું નામ 'શ્રુત' પણ થયું છે પ્રવચનપુરુષનું એ અંગ હોવાથી તેનું નામ 'શ્રુતાંગ' છે સમસ્ત સૂત્રોના અર્થનું આ શાસ્ત્રમાં સવિસ્તર પ્રતિપાદન

सूत्रार्थानामत्र संक्षेपेण प्रतिपादनादिदं 'सुयसमासेइ वा' श्रुतसमासेति वा श्रुतसमासमिति, तथा—श्रुतसमुदायरूपत्वादिदं 'सुयक्खंधेइ वा' श्रुतस्कन्धेतिवा—श्रुतस्कन्धमिति, तथा समग्राणां जीवाजीवादि पदार्थानामभिधेयतयेह समवायतान्मीलनादिदं 'समवाएइ वा' समवायेतिवा=समवायमितिवा, तथा—एकादिसंख्याक्रमेण पदार्थानामत्र प्रतिपादनादिदं 'संखेइ वा' संख्येति वा आख्यायते। तथा 'सम्मत्तमंगमक्खायं' समस्तमङ्गमाख्यातं=भगवता, इदं समवायाङ्गं संपूर्णमुक्तम्, न तु आचाराङ्गवदत्रापि विभागद्वयमस्ति। तथा—'अज्झयणं' अध्ययनमिति—इदं सम्पूर्णमेकमेवाध्ययनम्, अत्र आचाराङ्गादिसूत्रस्य शस्त्रपरिज्ञादिवद् अध्ययनोद्देशादि विभागो नास्ति, 'त्तिबेमि' इति ब्रवीमि—इति शब्दः शास्त्र समाप्तिसूचकः, सुधर्मास्वामी ब्रवीति—हे जम्बूः! यथेदं समवायाङ्गं भगवतः सकाशान्मया श्रुतम्, तथैव त्वां प्रतिब्रवीमि ॥ सू. ११९॥

इतीश्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित–
कलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्री
शाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त–'जैनशास्त्राचार्य'–पदभूषित–
कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारिजैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर–
पूज्यश्री–घासीलाल–व्रतिविरचिता श्री चतुर्थाङ्गस्य
समवायाङ्गसूत्रस्य भावबोधिनीटीका समाप्ता ॥
॥ शुभं भूयात् ॥
॥ श्रीरस्तु ॥

संक्षेप में प्रतिपादन होने से इसका नाम श्रुत समास ऐसा भी है। श्रुत समुदायरूप होने से इसका नाम श्रुतस्कंध सा भी है। तथा समग्रजीव और अजीव आदि पदार्थों को यहां अभिधेयरूप मिलने के कारण इसका नाम समवाय ऐसा भी है। एक आदि संख्याक्रम से पदार्थों का इसमें प्रतिपादन हुआ हैं। इससे इसका नाम संख्या ऐसा भी है। भगवान इस समवायाङ्ग को संपूर्णरूप से कहा है। आचाराङ्ग की तरह इस में दो विभाग नहीं है।यह एक ही अध्ययन है। आचाराङ्ग आदि सूत्र के

थयेल होवाथी तेनु नाम 'श्रुतसमास' पण छे. श्रुतसमुदायरूप होवाथी तेनुं नाम 'श्रुतस्कंध' पण छे समग्र जीव अने अजीव आदि पदार्थोनो आ अंगमा अभिधेयरूपे समावेश थतो होवाथी तेनुं नाम 'समवाय' पण छे. एक, बे आदि संख्याक्रमथी तेमा पदार्थोनु प्रतिपादन थयुं छे, तेथी तेनु नाम 'संख्या' पण छे भगवाने पोते सपूर्णरीते आ समवायागनु कथन कर्युं छे. आचारांगनी जेम तेमां बे विभाग नथी, ते एक ज अध्ययननुं बनेलुं छे. आचारांग आदि शास्त्रना

पञ्चपरिज्ञा आदि की तरह अध्ययन उद्देश आदि का इसमें कोई विभाग नहीं है। "त्तिबेमि" यहां "इति" यह शब्द शास्त्र की समाप्तिका द्योतक है। जम्बूस्वामी से सुधर्मास्वामी कहते हैं-कि हे जंबू! जैसा यह समवायाङ्ग सूत्र भगवान् से मैंने सुना है वैसा ही मैंने यह तुमसे कहा है। अपनी तरफ से मैंने इस में कुछ भी घटाया बढाया नहीं है ॥सू० २१९॥

समवायाङ्गसूत्र का हिन्दी अनुवाद संपूर्ण हुआ ॥

॥ श्रीरस्तु ॥

સમવયરિંગ આદિ અધ્યયનો જેવા કોઈ ભેદ વિભાગો આ સમવાયાંગમાં નથી, 'ત્તિબેમિ' અહીં 'ઇતિ' શબ્દ શાસ્ત્રની સમાપ્તિનો દ્યોતક છે સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે જંબૂ! મેં જે પ્રમાણે આ સમવાયાંગનું ભગવાન પાસે શ્રવણ કર્યું છે એ પ્રમાણે જ તમને તે કહી બતાવ્યું છે બાકી પોતાની તેમાં કોઈપણ પ્રકારનો વધારો ઘટાડો કરવામાં આવ્યો નથી" ॥સૂ ૨૧૯॥

—સમવાયાંગસૂત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ સમાપ્ત—

॥ શ્રીરસ્તુ ॥